

DUE DATE SLIP

GOVT. COLLEGE, LIBRARY

KOTA (Raj.)

Students can retain library books only for two weeks at the most.

BORROWER'S Nb.	DUE DTATE	SIGNATURE

हलायुधकोशः

102342

U. G. C. BOOKS

हिन्दी समिति प्रभाग ग्रन्थमाला—१५०

हलायुधकोशः

102342

(अभिधानरत्नमाला)

U. G. C. BOOKS

सम्पादकः
जयशङ्करजोशी



श्रीमद्देवी प्रकाशन सं. १
दुर्गा नं. १०, १०१, १०२, १०३

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

(हिन्दी समिति प्रभाग)

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन

महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ-२२६००१

प्रकाशक :

विनोद चन्द्र पाण्डेय

निदेशक,

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन,

महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ-२२६००१

प्रथम संस्करण : १९५७

द्वितीय संस्करण : १९६७

तृतीय संस्करण : १९९३



102342

① उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

प्रतियाँ : २१००

मूल्य : २२०.०० रुपये

मुद्रक :

धिवम् प्रिन्टर्स,

सो. २७/२७३, इण्डियन प्रेस कालोनी, मलदहिया

वाराणसी—२२१००२



प्रकाशकीय

शब्दों के ज्ञान के लिए किसी भी भाषा में कोशों का उल्लेखनीय योगदान होता है। वस्तुतः भाषा की समृद्धि का ज्ञान कोशों के माध्यम से किया जा सकता है। विद्यार्थियों, शोधार्थियों और जिज्ञासुओं के लिए भी शब्द कोशों की महत्ता निर्विवाद है।

भारत में अतीत काल से ही कोशों की उपादेयता और उपयोगिता का अनुभव किया जा रहा है। फलस्वरूप संस्कृत भाषा के कोशकारों में अमर सिंह, हलायुध भट्ट आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। इन्होंने शब्दों के विभिन्न पर्यायों को ललित शैली में श्लोकबद्ध कर कोशों की रचना की है। शब्दार्थ के लिए आज भी विद्वत् समाज में कोश प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं।

‘हलायुध कोशः’ का तृतीय संस्करण सुविज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हर्ष को अनुभूति स्वाभाविक है। विश्वास है कि पूर्व संस्करणों की भाँति तृतीय संस्करण का भी स्वागत होगा और इससे भाषा और साहित्य के अध्येता लाभान्वित होंगे।

विनोद चन्द्र पाण्डेय
निदेशक

दो शब्द

भाषा का आधार शब्द है और शब्दों की व्युत्पत्ति और अर्थ के संज्ञान का माध्यम है शब्द कोश। भाषा अपनी हो या कोई अन्य भाषा, जिसे हम सीखना चाहते हों, या जिसका निरन्तर प्रयोग करना चाहते हों, उसके शब्द कोश की व्यावहारिक आवश्यकता हमें सदा रहती है।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही संस्कृत-विद्वानों ने भाषा-परिमार्जन के लिए जहाँ व्याकरण को सुगठित किया, वहीं शब्दकोशों की भी रचना की गई। क्योंकि उस समय 'स्मृति' पर विशेष बल था, अतः शब्दकोशों की रचना भी विभिन्न ब्लोकों में की गई, जिससे वे कंठस्थ हो सकें। संस्कृत भाषा के "अमर कोश" और 'अभिधान रत्नमाला' ऐसे ही शब्दकोश हैं। अमरकोश की रचना अमर सिंह ने की तथा "अभिधान रत्नमाला" की रचना हलायुध भट्ट ने की। परन्तु हलायुध भट्ट का कोश "अभिधान रत्नमाला" के स्थान पर उसके रचयिता हलायुध के नाम पर "हलायुधकोशः" के रूप में ही विख्यात हुआ।

भारत की प्रायः समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत है। हिन्दी तो उसकी उत्तराधिकारिणी है ही। अतः इन सभी भाषाओं के शब्दों को ठीक से समझने के लिए संस्कृत के शब्दकोश अपरिहार्य ही हैं।

"हलायुध कोश" को सुसंपादित रूप में परिश्रमपूर्वक प्रस्तुत करने का कार्य संस्कृत के विद्वान् श्री जयशंकर जोशी ने किया और हिन्दी समिति ने इसका प्रकाशन सन् १९५७ में किया। इसका द्वितीय संस्करण सन् १९६७ में प्रकाशित हुआ। और अब उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, जिसमें हिन्दी समिति का अन्तर्भाव हो चुका है, इसका तृतीय संस्करण प्रकाशित कर हर्ष का अनुभव कर रहा है।

"हलायुधकोश" की विशेषता यह है कि इसमें ग्रन्थ को मूल रूप में प्रकाशित किया गया है जिसमें संपादन के माध्यम से हाशिये में अंग्रेजी में टिप्पणी देकर वर्ण्य शब्द का अर्थ और उसके पर्यायों की संख्या दे दी गई है। क्रमिक संख्या मूल पाठ में शब्दों के ऊपर भी अंकित की गई है, जिससे अंग्रेजी जानने वाले भी इसका लाभ उठा सकें। मूल ग्रन्थ के पश्चात् हलायुध कोश के शब्दों को

अकारादि क्रम से निवृत्ति सहित प्रस्तुत किया गया है। जहाँ-तहाँ उसके लोक-भाषाओं के पर्याय भी दे दिये गये हैं। इससे ग्रन्थ परम उपयोगी बन गया है और समस्त देश के विद्वान् इसका लाभ उठा सकते हैं, उठा रहे हैं।

मनीषियों की सेवा में प्रस्तुत संस्करण का समर्पण करते हुए गौरव की अनुभूति होना स्वाभाविक है।

मार्ग शीर्ष शुक्ल द्वादशी-२०४७

६ दिसम्बर, १९९२

डा० शरण विहारी गोस्वामी

कार्यकारी उपाध्यक्ष

भूमिका

प्रस्तुतोऽयं श्रीमतो भट्टहलायुधस्य “अभिधानरत्नमाला” नामा ग्रन्थः। प्रकाशिताप्रकाशित-समुपलब्धानामस्य संस्करणानां मयात्र समुचित उपयोगः कृतः। अकारादिक्रमेण मूलग्रन्थस्य समस्तानां शब्दानामनुक्रमणिकापि समुपस्थापिता च। अनेनैव प्रस्तुतस्स ग्रन्थभागः “हलायुधकोशस्य शब्दानुक्रमकोशः” इति नामधेयः।

विदितमेव यत् संस्कृतवाणी भारतभूमेर्न केवलं प्राचीनतमा भाषा अपि तु भारतीयसभ्यतायाः संस्कृतेश्च द्योतिकाप्यस्ति। ज्ञानविज्ञानयोर्विविधग्रन्थराशिभिः सुसम्पन्ना चास्ति भाषेयम्।

तत्र भाषायाः सम्पन्नता शब्देष्वेवाश्रिता। तत्समुच्चितवाक्यानि तु भावानां द्योतकमात्राणि सन्ति। अतः शब्दैर्विना वाक्यानामसम्भव आत्मलाभः। तेन चोपजीव्यानां शब्दानामुपयोगिता स्पष्टैव। साकल्येन तत्संग्रहात्मकशब्दकोशानां प्रचुरतैव भाषायाः सुसम्पन्नतां द्योतयति।

संस्कृतभाषायां सन्ति बहवः कोशग्रन्थाः। कोशास्तु संग्रहप्रतिबोधकः शब्दः। यथा स्वर्णादि-कोशेन-विना मनुष्यो दरिद्रः कथ्यते तथैव शब्दकोशेन विना भाषापि दरिद्रमवाप्नोति। धनकोशेन विना न सम्पाद्यन्ते यथा सांसारिककार्याणि तथैव शब्दकोशेन विना भाषाया अपि भवति कठिनतरः प्रयोगो दुर्लभञ्च ज्ञानम्। प्राचीनकालेनैव कोशग्रन्थानामुपयोगितां विचार्य विद्वद्भिः भगं प्रयतितमस्ति। सुविख्यातेषु कोशग्रन्थेषु विपश्चिद्भूषणस्य भट्टहलायुधस्य कोशोऽयं मल्लिनाथप्रभृतिभिष्टीकाकारैष्टीका-ग्रन्थेषु स्थाने स्थाने विशिष्टार्थबोधनार्थमुद्धृतः।

मम क्षुद्रप्रयासोऽयं श्रीमतो भट्टहलायुधस्य सुविख्यातग्रन्थसम्पादने। यद्यपि मूलग्रन्थस्य “अभिधानरत्नमाला” इति भट्टहलायुधेन नामकरणं कृतं तथापि मया ग्रन्थकारस्य नामानुसरणं कृत्वा तथा टीकाकारैर्ग्रन्थकारस्य नाम्नेवास्य ग्रन्थस्य श्लोका यथोचितेषु स्थानेषु उद्धृता इङ्गिताश्चेति विचार्य ग्रन्थोऽयं “हलायुधकोशः” इति नाम्ना प्रकाशितः।

प्रस्तुतोऽयं ग्रन्थो द्वयोर्भगियोर्विभक्तः। तत्र प्रथमभागात्मको “मूलग्रन्थः”, तत्पृष्ठप्रान्तयोराङ्गल-भाषायां शब्दार्थो लिखितः। पर्यायवाचिनां शब्दानां संख्यापि तत्रैव लिखिता। प्रत्येकस्तु पर्यायवाची शब्दोऽङ्कितश्च। यथा—‘घोषवती’, वीणा^२, विपञ्ची^३, परिवादिनी^४, वल्लकी^५, एते पञ्च शब्दा वीणापर्यायवाचिनः, तत्प्रान्तभागेआङ्गलभाषायां “flute 5” इति लिखितम्। शक्नुवन्ति ज्ञातुं सरल-तयानेनाङ्गलभाषापाठिनो जना अपि यद् वीणायाः पञ्च पर्यायवाचिनः शब्दाः। यत्र पाठभेदोऽस्ति स मया पादटिप्पणीरूपेण निर्दिष्टः। भागे च द्वितीये मूलग्रन्थस्याकारादिक्रमेण शब्दानुक्रमणिकास्ति। मया तत्र यथाशक्ति प्रत्येकः शब्दो व्याख्यातः, तथा प्राचीनार्वाचीनेभ्यो ग्रन्थेभ्यः समुचितप्रयोगा अप्युद्धृताः। मूलग्रन्थस्य श्लोकाङ्का अपि निर्दिष्टा येन पाठकाः सरलतया मूलग्रन्थेऽपेक्षितं शब्दं तस्य पर्यायवाचिशब्दानपि च ज्ञातुं शक्नुवन्ति।

प्रथमोऽयं मम प्रयासः। त्रुटयस्त्वत्र भविष्यन्त्येव। मयात्र कियत्साफल्यं प्राप्तं विद्वज्जना एवास्य निर्णयं कर्तुं समर्थाः। तथापि यदि ममानेन क्षुद्रप्रयासेन कश्चिदपि संस्कृतानुरागिणामुपकारोऽभविष्यत्तदाहमात्मानं पूर्णरूपेण पुरस्कृतममंस्ये।

स्वकर्तव्यच्युतो भविष्याम्यहं यदि कृतज्ञताभारं न स्वीकरोमि समस्तानां पण्डितानां संस्कृतप्रेमिणाञ्च, येषां कृतीनां मया समुचितोपयोगः कृतस्तथा येषां सुकार्यैर्मया देववाण्याः सेवार्थं प्रेरणा प्राप्ता।

सन्ति मम कोटिशो धन्यवादा माननीयमुख्यमन्त्रिश्रीसम्पूर्णानन्दमहोदयेभ्यः। श्रीमद्भूरेते-ग्रन्थस्य प्रकाशने ममोपरि निजवरदहस्तः कृतः। समानरूपेण धन्यवादार्हाः सन्ति पण्डितवर्यश्रीजनार्दन जोशी येषां कृपादृष्टिर्मया वाल्यतः प्राप्ता। ग्रन्थस्यास्य रचनाकाले न केवलं श्रीमद्भ्यः साहाय्यं परन्तु निर्देशनमपि मया प्राप्तम्। न विस्मरणीया महती सहायता या मया सर्वश्रीलक्ष्मणसीताराम खेर, भगवतीशरण सिंह, पण्डितवर्यभोलानाथ शर्मा, चन्द्रलाल साह, देवकीनन्दन जोशी प्रभृतिमहोदयेभ्यः प्राप्ता। सर्व एते महोदयाः सन्ति धन्यवादार्हाः। महामहोपाध्यायपण्डितवर्य नारायणशास्त्री खिस्ते-महोदयैर्ममोत्साहो वर्द्धतोऽतएव धन्यवादार्हास्ते।

सर्वश्री पण्डित लीलाधरशर्मा 'पर्वतीय' तथा ज्योतिपाचार्य पण्डित निशाकान्त पाठक महोदयैर्ग्रन्थस्यास्य मुद्रणप्रसङ्गे महानुपकारः कृतः, तदर्थं धन्यवादार्हास्ते महानुभावाः।

अन्ते चेमं ग्रन्थं विदुषां पुरतो निधाय प्रार्थये यदत्र ये केचन दोषा मुद्रणेऽन्यथा वा सञ्जातास्तान् सर्वान् मां सूचयित्वा कृतार्थीकरिष्यन्ति। ग्रन्थस्योपयोगिताविवर्धनाय विद्वज्जनानां सम्मतिं च सधिनयमभ्यर्थये।

लखनऊ

श्रीकृष्णजन्माष्टमी, वि० सं० २०१४

विदुषामनुचरः

जयशङ्कर जोशी

हलायुधकोशः

हलायुधकोशः

(अमिधानरत्नमाला)

प्रथमं स्वर्गकाण्डम्

शब्दब्रह्म यदेकं यच्चैतन्यं च सर्वभूतानाम् ।
यत्परिणामस्त्रिभुवनमखिलमिदं जयति सा वाणी ॥ १ ॥
इयमभरदत्तवररुचिभागुरिवोपालितादिशास्त्रेभ्यः ।

अभिधानरत्नमाला कविकण्ठविभूषणार्थमुद्ध्रियते ॥ २ ॥

Heaven 11.

1 2 3 4 5 6
स्वः स्वर्गः सुरसद्य त्रिदशावासस्त्रिविष्टपं त्रिदिवम् ।

7 8 9 10 11
द्यौर्गौरमर्त्यभुवनं नाकः स्याद्दूर्ध्वलोकश्च ॥ ३ ॥

A god, a deity 21.

1 2 3 4 5 6
आदित्यास्त्रिदशाः सुराः सुमनसः स्वर्गोकसो देवता,

7 8 9 10 11 12
गीर्वाणा ऋभवोऽमराश्च मरुतो वृन्दारका निजराः ।

13 14 15 16 17
अस्वप्ना विबुधास्त्रिविष्टपसदो लेखाः सुपर्वाण इ-

18 19 20 21
त्याख्याता अमृताशना अनिमिषा देवास्तथा दैवतम् ॥ ४ ॥

A demon 8.

1 2 3 4 5
असुरा दानवा दैत्या दैतेयाः सुरशत्रवः ।

6 7 8
पूर्वदेवाः शुक्रशिष्याः पातालनिलयाः स्मृताः ॥ ५ ॥

Brahma, the creator
of the universe 20.

1 2 3 4 5 6
ब्रह्मा स्रष्टा परमेष्ठी धाता पद्मभूः सुरज्येष्ठः ।
7 8 9 10 11
वेधा विधिर्विरिञ्चो हिरण्यगर्भः शतानन्दः ॥ ६ ॥
12 13 14 15 16
शम्भुः स्वयम्भूर्द्रुहिणश्चतुर्वक्त्रः प्रजापतिः ।
17 18 19 20
पितामहो जगत्कर्ता विरञ्चिः कमलासनः ॥ ७ ॥

The goddess of
speech 8.

1 2 3 4 5 6 7 8
वाग्वाणी भारती भाषा गौर्गीर्वाही सरस्वती ।

'Om' one mystic
syllable 2.

1 2
ओङ्कारः प्रणवः प्रोक्तस्त्रयो वेदास्त्रयी स्मृताः ॥ ८ ॥

The vedas, the
oldest sacred
writings 6.

1 2 3 4 5 6
वेदः श्रुतिस्तथाम्नायः स्वाध्यायश्छन्द आगमः ।

Upanishad the
scope of vedas 3.

a 1 2 3
वेदान्तश्च रहस्यं च बुधैरुपनिषन्मता ॥ ९ ॥

Reasoning logic 3.

1 2 3 1 2
ऊहस्तर्कोऽनुमानोक्तिर्मीमांसा स्याद्विचारणा ।

Investigation or
discussion of the
vedas 2.

Established truth
or doctrine, a
dogma 4.

1 2 3 4
स्मृताः कृतान्तराद्धान्तसिद्धान्तसमयाः समाः ॥ १० ॥

1 2 3 4 5 6
ईशानः वाशिशेखरः पशुपतिः शूली शिवः शङ्करः ,

7 8 9 10 11 12 13
शर्वः शम्भुरुमापतिश्च गिरिजाः श्रीकण्ठ उग्रो हरः ।

14 15 16 17 18 19
सर्वशस्त्रपुरान्तकस्त्रिनयनो रुद्रः कपर्दी भवो ,

20 21 22 23
भूतेशः परमेश्वरोऽन्धकरिपुर्दक्षाध्वरध्वंसकृत् ॥ ११ ॥

Name of Shiva 45.

24 25 26 27
स्थाणुः स्रष्टा धूर्जटिर्वाग्मिदेवः ,

28 29 30
कामध्वंसी व्योमकेशः कपाली ।

31 32 33
नीलग्रीवो वह्निरेताः पिनाकी ,

34 35 36 37
भीमो भर्गः कृत्तिवासा वृषाङ्कः ॥ १२ ॥

b 38 39 40 41
अहिर्बुध्नो विरूपाक्षः शिपिविष्टो गणाधिपः ।

42 43 44 45
गङ्गाधरो महादेवो मृडः स्यान्नीललोहितः ॥ १३ ॥

Shiva's bow 2. ² पिनाकं ² स्यादजगत्वं ¹ प्रमथास्तु ² गणाः ² स्मृताः ।

Braided and matted hair of Lord Shiva. ¹ कपर्दोऽस्य ^{2 a} जटावन्वस्तण्डुः ¹ स्यान्नन्दिकेश्वरः ॥ १४ ॥

One of the chief attendants of Shiva.

Name of Shiva's wife 21. ¹ रुद्राणी ² शर्वाणी ³ काली ⁴ कात्यायनी ⁵ भवानी च ।

⁶ आर्याम्बिका ⁷ मृडानी ⁸ हैमवती ⁹ पार्वती ¹⁰ गौरी ॥ १५ ॥

¹² उमा ¹³ भगवती ¹⁴ दुर्गा ¹⁵ चण्डी ¹⁶ दाक्षायणी ¹⁷ शिवा ।

¹⁸ अपर्णा ¹⁹ स्यान्महादेवी ²⁰ गिरिजा ²¹ मेनकात्मजा ॥ १६ ॥

¹ ब्रह्माण्याद्याः ² स्मृताः ³ सप्त ⁴ देवतामातरो ⁵ बुधैः ।

An incarnation of Durga. ¹ चामुण्डा ² कर्णमोटी ³ च ⁴ चर्चा ⁵ स्याद्भैरवी तथा ॥ १७ ॥

Name of Ganesh 9. ¹ हेरम्बो ² लम्बोदर ³ आखुरयो ⁴ गणपतिश्च ⁵ गजवदनः ।

⁶ परशुधर ⁷ एकदन्तो ⁸ विनायको ⁹ विघ्नराजश्च ॥ १८ ॥

¹ गौरीपुत्रः ² षण्मुखः ³ शक्तिपाणिः,

⁴ क्रौञ्चारातिः ⁵ कार्तिकेयो ⁶ विशाखः ।

Name of Kartikeya 20.

⁷ स्कन्दः ⁸ स्वामी ⁹ तारकारिः ¹⁰ कुमारः ,

¹¹ सेनानीः ¹² स्यादग्निभूर्वाहुल्यैः ॥ १९ ॥

¹⁴ गाङ्गेयो ¹⁵ ब्रह्मचारी ¹⁶ च ¹⁷ गुहो ¹⁸ वर्हिणवाहनः ।

¹⁸ महासेनो ¹⁹ महातेजाः ²⁰ शरजन्मा ²¹ च ²² कथ्यते ॥ २० ॥

Name of Vishnu 56.

¹ विष्णुः ² कृष्णः ³ केशवो ⁴ मञ्जुकेशी ,

⁵ श्रीवत्साङ्कः ⁶ श्रीपतिः ⁷ पीतवासाः ।

⁸ विष्वक्सेनो ⁹ विश्वरूपो ¹⁰ मुरारिः ,

¹¹ शौरिः ¹² शार्ङ्गी ¹³ पद्मनाभो ¹⁴ मुकुन्दः ॥ २१ ॥

हलायुधकोशः

15	16	17		
गोविन्दो	घरणिघरः	सुपर्णकेतु-		
	18	19	20	
	वैकुण्ठो	जलशयनश्चतुर्भुजश्च	।	
21	22	23		
दैत्यारिर्मघुमथनो	रथाङ्गपाणि-			
	24	25	26	
दशार्हः	ऋतुपुरुषो	वृषाकपिः	स्यात् ॥ २२ ॥	
27	28	29	30	31 32
जनार्दनाघोक्षजवासुदेवं	दामोदरं	श्रीघरमच्युतं च ।		
33	34	35	36	37
उपेन्द्रमिन्द्रावरजं च	बभ्रं	हरिं	हृषीकेशमुदाहरन्ति ॥ २३ ॥	
38	39	40	41	
आत्मभूः	पुण्डरीकाक्षः	श्र्वत्सो	विष्टरश्रवाः ।	
42	43	44	45	
नारायणो	जगन्नाथो	वनमाली	गदाधरः ॥ २४ ॥	
46	47 a	48 49	50	51
सनातनो	जितः	शम्भुर्विधिवेधा	गदाग्रजः ।	
52	53	54	55	56
कैटभारिरंजो	जिष्णुः	कंसजित्पुरुषोत्तमः ॥ २५ ॥		
	1	Vishnu's bow 1	1 b	
The disc of Vishnu.	चक्रं	सुदर्शनं	चापं	शाङ्गं कौमोदकी गदा ।
	1	1		
Vishnu's sword.	खड्गोऽस्य	नन्दकः	शङ्खः	पाञ्चजन्यः प्रकीर्तितः ॥ २६ ॥
	1	1		
The jewel suspended on Vishnu's breast.	कौस्तुभो	वक्षसि	मणिः	श्रीवत्सोऽस्य च लाञ्छनम् ।
Name of Krishna's father 2.	1		2	
	वसुदेवस्तु	कथितो	बुधैरानकदुन्दुभिः ॥ २७ ॥	
Name of Krishna's elder brother 18.	1	2	3	4 5
	बलदेवो	बलभद्रो	मुशली	नीलाम्बरः प्रलम्बघ्नः ।
	c 6	7	8	9 10
	सीरी च	सात्वतः	स्यातालध्वज	एककुण्डलोऽनन्तः ॥ २८ ॥
	11	12	13	14
	सङ्कर्षणो	रौहिणेयः	कालिन्दीकर्षणो	बलः ।
	15	16	17	18
	रेवतीरमणो	रसमः	कामपालो	हलायुधः ॥ २९ ॥
	1	2	3	
	विहङ्गराजो	गरुडो	गरुत्मान् ,	
	4 d	5	6	
	ताक्ष्यः	सुपर्णोत्तनयः	सुपर्णः ।	

Vishnu's mace.

Vishnu's conch.

A starlike mark on Vishnu's breast.

a जितः b कौमुदकी c शारी च सावतः, शीरी च स्यात्वतः d तार्क्षः ।

Name of Gatuda,
the mount of
Vishnu 10.

7
स्याद्वनतेयः 8
पवनाशनाशः ,

9 10
सुरेन्द्रजित्कश्यपनन्दनश्च ॥ ३० ॥

Name of Vishnu's
wife 9.

1 2 3 4 5 6
लक्ष्मीः श्रीः कमला पद्मा पद्मवासा हरिप्रिया ।

7 8 9
क्षीरोदतनया मा च शब्दज्ञैरिन्दिरा स्मृता ॥ ३१ ॥

1 2 3 4 5
प्रद्युम्नो मकरध्वजो मनसिजः सङ्कल्पजन्माङ्गजः ,

6 7 8 9 10 11
पञ्चेषुः कुसुमायुषश्च मदनो मारः स्मरो मन्मथः ।

Cupid, the god
of love 30.

12 13 14 15 16
कान्दर्पो क्षपकेतनो रतिपतिः श्रीनन्दनो हृच्छयः ,

17 18 19 20
कामः शम्बरसूदनो मधुसखः शृङ्गारयोनिः स्मृतः ॥ ३२ ॥

21 22 23 24
दर्पकः शूपकारातिरतज्ञो विषमायुधः ।

25 26 27 28
आत्मभूर्मनसिशयः पुष्पधन्वा मनोभवः ॥ ३३ ॥

29 30 1 2
मापत्यमिरजश्चैव कामपत्नी रतिः स्मृता ।

Cupid's wife 2.

Cupid's son 2.

1 2 c
अनिरुद्धश्च तत्सूनुरुषारमण इष्यते ॥ ३४ ॥

1 2 3 4 5
आदित्यः सविता सहस्रकिरणः प्रद्योतनो भास्कर-

6 7 8 9 10 11
स्तिग्मांशुस्तरणिस्तथा दिनमणिर्भस्वान्विवस्वान्हुरिः ।

12 13 14 15 16 17 18
मार्तण्डस्तपनो विकर्तन इनः पूषा पतङ्गो भगः ,

19 20 21 22 23 24 25
सूर्यो गोपतिर्यमा दिनकरः सूर्योऽशुमाली रविः ॥ ३५ ॥

The sun 47.

d 26 27 28 29 30 31 32
मिहिरो विरोचनोऽर्कस्तिमिररिपुर्द्युमणिरंशुमानंशुः ।

33 34 35 36 37
हरिदश्वः सप्ताश्वः प्रभाकरो भानुमान्भानुः ॥ ३६ ॥

38 39 40 41 42 33
ऋणो हंसः खगो मित्रदिचत्रभानुरहर्षतिः ।

44 45 46 47
कर्मसाक्षी जगच्चक्षुर्द्वादशात्मा त्रयीतनुः ॥ ३७ ॥

a शम्बरसूदन b सूर्यका, सूर्यका, c रमणमुच्यते d मिहरो ।

- A ray of light 32. ¹ रोचिः ² शोचिरभीशुः ³ प्रद्योतगभस्तिरश्मिघृणिकिरणाः ⁴ ⁵ ³ ⁷ ⁸ 1
⁹ ¹⁰ ¹¹ ¹² ¹³ ¹⁴ ¹⁵ ¹⁶ ¹⁷ रुचिरुदीधितिदीप्तिद्युतिप्रभाभाविभाभासः ॥ ३८ ॥
¹⁸ ¹⁹ ²⁰ ²¹ ²² ²³ ²⁴ ^a ²⁵ ²⁶ उल्लघामवसुकेतुमरीचिप्रग्रहोपघृतिवृष्णिमयूखाः 1
²⁷ ²⁸ ²⁹ ³⁰ ³¹ ³² अंशुमानुकरपादविरोका गाव इत्यभिहितास्तु समानाः ॥ ३९ ॥
- Fiery hot 7. ¹ तिग्मं ² तीक्ष्णं ³ खरं ⁴ तीव्रं ⁵ चण्डमुष्णं ⁶ पटु ⁷ स्मृतम् ।
- Heat of the sun 4. ¹ आतपः ² कथ्यते ³ रौद्रं ⁴ निदाघो ⁵ घर्मं ⁶ उच्यते ॥ ४० ॥
- The halo round the sun or the moon. ¹ परिधिः ² परिवेषः ³ स्यान्मण्डलं ⁴ चोपसूर्यकम् ।
- An eclipse 3. उच्यते ¹ राहुसंस्पर्शं ² उपराग ³ उपप्लवः ॥ ४१ ॥
- The moon 21. ¹ इन्दुश्चन्द्रश्चन्द्रमा ² ³ ⁴ ओषधीशः ,
⁵ ³ ⁷ ⁸ सोमो राजा रोहिणीवल्लभोऽञ्जः ।
⁹ ¹⁰ ऋक्षेशः स्यादत्रिनेत्रप्रसूतः ,
¹¹ ¹² ¹³ प्रालेयांशुः श्वेतरोचिः शशाङ्कः ॥ ४२ ॥
¹⁴ ^c ¹⁵ ¹⁶ ¹⁷ द्विजराजो रजनिकरः पीयूषरुचिनिशीथिनीनाथः ।
^d ¹⁸ ¹⁹ ²⁰ ²¹ जैवातृको मृगाङ्को विधुश्च दाक्षायणीरमणः ॥ ४३ ॥
- Moonlight 4. ¹ चन्द्रिका ² कौमुदी ³ ज्योत्स्ना ^{c 4} तथा चन्द्रातपः स्मृतः ।
- The disc round the sun or moon (see परिधि in 41 sloka). ¹ मण्डलं ² बिम्बमाख्यातं ^f हृदये ¹ लाञ्छनं ¹ भृगः ॥ ४४ ॥
- Mark, token, symbol 7. ¹ अङ्कश्चिह्नमभिज्ञानं ² लाञ्छनं ³ लक्ष्म ⁴ लक्षणम् ।
⁷ कलङ्कश्चेति विज्ञेया नातिनानार्थवाचकाः ॥ ४५ ॥
- The planet mars 5. ¹ वक्रमङ्गारकं ² भौमं ³ लोहिताङ्गं ⁴ धरात्मजम् ।
- The planet Mercury. ¹ रोहिणेयं ² बुधं ³ सौम्यमाहुश्चान्द्रमसायनम् ॥ ४६ ॥

The spots on the moon represented as a hart.

a धिष्य, घृष्णि b तपः स्मृतम् c रजनिकरः d जौकारिको e चन्द्रतपः

f हृदयं g सायनिः ।

The planet Jupiter,
the preceptor of
gods 8.

1 2 3 4 5
वाचस्पतिराङ्गिरसो बृहस्पतिः कथ्यते गुरुर्जीवः ।
6 7 8
धिषणस्त्रिदशाचार्यश्चित्रशिखण्डिप्रसूतश्च ॥ ४७ ॥

The planet Venus,
the preceptor of
demons 7.

1 2 3 4 5 6 7
उशना शुक्रः काव्यो दैत्यगुरुर्भर्गवः कविधिष्यः ।

The planet Saturn
6.

1 2a 3 4 5 6
असितः क्रोडः पङ्कश्लयातनयः शनैश्चरः शौरिः ॥ ४८ ॥

A name of Rahu,
ascending node 5.

1 2 3 4 5
स्वर्भानुः सैहिकेयश्च तमो राहुर्विघ्नतुदः ।

A comet,
descending node 3.

1 2 b 3
केतवः शिखिनः प्रोक्ता आर्द्रालुब्धक उच्यते ॥ ४९ ॥

The constellation
Ursa Major,

1 2
सप्तर्षयस्तु विद्वद्भिः स्मृताश्चित्रशिखण्डिनः ।

Pleiades 2.

1 2 1 1 2
कृत्तिका बहुला प्रोक्ताः पक्षस्तु बहुलोऽसितः ॥ ५० ॥

Fortnight 1.
The dark half of
the lunar month 2.

A star 9.

1 2 3 4 5 6 7 8 c 9
भं नक्षत्रं तारकं तारका च,
ज्योतिस्तारा धिष्यमृक्षं तथोडु ।

The eighth lunar
asterism 2.

1 2 1 2
पुष्यस्तिष्यः स्याद्धनिष्ठा श्रविष्ठा ,

The 23rd lunar
asterism 2.

27 Lunar asterism.

d 1 2
दाक्षायष्यः कीर्तिताश्चन्द्रदाराः ॥ ५१ ॥

Indra, the god
of heaven.

1 2 3 4 5 6
इन्द्रो दुश्च्यवनो हरिः सुरपतिः सङ्कन्दनो वासवो ,

7 8 9 10 11
वृत्रारिर्बलसूदनः शतमखो वृद्धश्रवाः कौशिकः ।

12 13 14 15 16
जिष्णुर्वज्रधरः सहस्रनयनो वास्तोष्पतिर्गोपतिः ,

17 18 19 20 21
पर्जन्यो मघवा वृषा हरिहयः प्राचीनबर्हिः स्मृतः ॥ ५२ ॥

22 23 24 25 26
पुरुहूतः पृतनाषाट् पुरन्दरः पूर्वदिक्पतिः स्वाराट् ।

27 28 29 c 30 31
आखण्डलस्तुराषाट् सूत्रामा गोत्रभित्सुनासीरः ॥ ५३ ॥

32 f 33 34 35
शक्रः स्यादुग्रधन्वा च हरिवान्पाकशासनः ।

36 g 37 38 39
दिवस्पतिर्विडौजाश्च मरुत्वान्मेघवाहनः ॥ ५४ ॥

a क्रोडः b शिखिनः c मृक्षमयो d दाक्षायष्यः, दाक्षरायष्यः,
दक्षगायष्यः, e सूत्रामा f स्यादुग्रधन्वा g विडौजाश्च ।

Indra's wife 3.	¹ इन्द्राणी ² पौलोमी ³ शची ¹ जयन्तश्च तत्सुतो ज्ञेयः ।	Indra's son.
Indra's city 1.	¹ अमरावती च ¹ नगरी नन्दनमुद्यानमिन्द्रस्य ॥ ५५ ॥	Indra's garden 1.
Indra's thunder-bolt 12.	¹ पविरशनिः ² शतधारं ³ वज्रं ⁴ कुलिशं च ⁵ भवति ⁶ दम्भोलिः । ⁷ गौभिदुरं ⁸ व्याधामः ⁹ स्वरुरिन्द्रप्रहरणं ¹⁰ तथा ¹¹ शम्बः ^{12 a} ॥ ५६ ॥	
Clap of thunder 2.	¹ स्फूर्जधुर्वज्रनिर्वोषो ² वज्रज्वालाऽतिभीः स्मृता ।	The flash of lightning 2.
Indra's bow, } 3. rain-bow.	¹ ऋजु ² रोहितमिच्छन्ति ³ वुधाः शक्रशारासनम् ॥ ५७ ॥	
A cloud 10.	¹ अभ्रमब्धो ² घनो ³ मेघः ⁴ स्तनयिल्लुः ⁵ पयोधरः । ⁷ धाराधरो ^{8 b} धूमयोनिर्जामूतश्च ⁹ बलाहकः ॥ ५८ ॥	
Heavy fall of rain 2.	¹ धारासम्पात ² आसारो ¹ वातास्तं ² वारिसीकरः ।	Rain driven by wind 2.
The cloudy day 2.	¹ दुर्दिनं ² मेघतिमिरं ^{c 1} करकः ² स्याद्द्वनोपलः ।	Hail 2.
	^d चलन्नवाभ्रमाला ¹ च ² वुधैः कादम्बिनी स्मृता ॥ ५९ ॥	A series of clouds 2.
Lightning 10.	¹ शम्पा ² चपला ³ क्षणिका ⁴ शतहृदा ^{e 5} ह्लादिनी ⁶ तडिद्विद्युत् । ⁸ सौदामिन्यचिरांशुः ⁹ प्राज्ञैरैरावती ¹⁰ च ¹¹ विज्ञेया ॥ ६० ॥	
Indra's elephant 3.	¹ ऐरावतोऽभ्रमातङ्गः ² स ³ चैरावण उच्यते ।	
Indra's horse 2.	¹ उच्चैःश्रवास्तु ² देवाश्वो ¹ मातलिः ² शक्रसारथिः ॥ ६१ ॥	Indra's charioteer 2.
	¹ सप्तार्चिर्वहुलः ² शिखी ³ हुतवहो ⁴ वैश्वानरोऽग्निर्वसु- ⁸ वंह्लिर्वायुससः ⁹ सितेतरगतिः ¹⁰ स्वाहाप्रियः ^{11 f} पावकः । ¹³ अर्चिष्मान् ¹⁴ ज्वलनः ¹⁵ कृशानुरनलो ¹⁶ धूमध्वजो ¹⁷ ह्यव्याट्, ¹⁹ बर्हिज्योतिरपर्वुधश्च ²⁰ दहनः ²¹ स्याच्चित्रभानुः ²² शुचिः ²³ ॥ ६२ ॥	

a सम्ब शम्बुः, दातुः b धूमज्योति c करस्तु, करका d चरभ्रमाला
e ह्लादिनी, हादिनी f स्वाहापतिः ।

	24	25	a	26	27		
	कृपीटयोनिर्दमुनाः			कृष्णवल्गुशिशुक्षणिः ।			
	28	29		30	31		
	विभावसुरपापित्तं			जातवेदास्तनूनपात् ॥ ६३ ॥			
	b	32		33	34	35	
	वीतिहोत्रो		वृहद्भानुराश्रयाशो	घनञ्जयः ।			
	36	37		38	39		
	हिरण्यरेतास्तमोघ्नो		रोहिताश्वो	हुताशनः ॥ ६४ ॥			
Flame 14.	1	2	3	4	5	6	
	अर्चिः कीला ज्वाला वर्चस्तेजस्त्विषस्तथा ज्योतिः ।						
	8	9	10	11	12	13	
	हेतिद्युतिदीप्तिरुचः शिखाप्रभारश्मयः समानार्थाः ॥ ६५ ॥						
	1	2	3				
Light 3.	स्मृतः प्रकाश आलोक उद्द्योतरुच समास्त्रयः ।						
	c	1	2	1	2		
Wife of Agni.	अग्नायी कथ्यते स्वाहा धूम्या स्याद्धूमसंहतिः ॥ ६६ ॥					Mass of smoke 2.	
	1	2	1	Spark	2	1	
Steam, vapour 2.	ऊष्मा वाष्पः स्फुलिङ्गरुच कणा जिह्वास्तथाचिषः ।						Tongue of the fire 2.
	1	2	1	2			
A fire brand.	अलातमुल्मुकं ज्ञेयमुल्का ज्वालास्य निर्गता ॥ ६७ ॥					High flame of fire 2.	
	1	2	3	4	5		
Names of the seven tongues of Agni.	भवति हिरण्या कनका रक्ता कृष्णा सुप्रभा चान्या ।						
	6	7					
	अतिरक्ता बहुरूपेति सप्त सप्तार्चिषो जिह्वाः ॥ ६८ ॥						
	1	2	3	4	5	6	
Fuel 6.	एधस्तर्पणमिन्धनमधः समिदिष्म इत्यभिन्नार्थाः ।						
	1	2	3	4	5		
Ashes 5.	भूतिर्भसितं भस्म क्षारं रक्षा च निर्दिष्टा ॥ ६९ ॥						
	1	2	3	1	2		
A wood on fire Sylvan fire Forest fire.	घनवह्निर्दवो दावो मेघवह्निरिरंमदः ।					Flash of lightning 2.	
	1	2	3	4	5		
Submarine fire 4.	और्वः समुद्रवह्निः स्याद्वाडवो वडवामुखः ॥ ७० ॥						
	1	2	c	3	4	5	
Name of Pluto, the God of death 16.	शमनः समवर्ती च प्रेतपतिः पितृपतिश्च कीनाशः ।						
	6	7		8	9		
	वैवस्वतः कृतान्तः कालिन्दीसोदरः कालः ॥ ७१ ॥						
	10	11		12	13	14	
	अन्तको धर्मराजश्च यमो दण्डधरो हरिः ।						
	15			16			
	दक्षिणाशापतिः सद्भिः श्राद्धदेवश्च कथ्यते ॥ ७२ ॥						

a दंमुना, दमना b वीतहोत्रो c आग्नेयो d वडवानलः, वाडवानलः
e शमवर्ती ।

	1	2	3	4	5	
Evil spirits or demons 9.	यातूनि	यातुधानाः	ऋव्यादा	राक्षसाश्च	रक्षांसि ।	
	6	7 ^a	8	9		
	नक्तञ्चरनैऋतकौणपास्तथा		नैकषेयाः	स्युः	॥ ७३ ॥	
Name of the god of the waters and the regent of the west 6.	1	2	3	4		
	वरुणं	यादसा	नाथं	पाशापाणिं	प्रचेतसम् ।	
	5		6			
	जलाधिदैवतं	प्राहुः	प्रत्यगाशापतिं	बुधाः	॥ ७४ ॥	
	1	2	3 4	5	6	7
	पवनः	श्वसनो	वायुमरुदनिलो	मारुतो	जगत्प्राणः ।	
	8	9	10	11	b 12	
	पृषदश्वः	पवमानः	प्रभञ्जनः	स्पर्शनो	वातः	॥ ७५ ॥
	13	14	15	16		
	नभस्वान्मातरिश्वा	च	समीरश्च	समीरणः ।		
	17	18 ^c	19	20		
	सदागतिर्गन्धवहो	हरिः	प्रोक्तो	महाबलः	॥ ७६ ॥	Air, wind 20.
	d		1	2		
Wind with rain.	कङ्कावातः	सवृष्टिः	स्याद्वात्या	वातस्य	मण्डली ।	A whirlwind 2.
	1	2	3	4		
Fragrance.	आमोदः	स्यात्परिमलः	सौरभ्यं	च सुगन्धिता	॥ ७७ ॥	
	1	2	3	4	5	
	ऐलविलः	पौलस्त्यो	वैश्रवणः	किन्नरेश्वरो	धनदः ।	
	6	7	8	9		
	श्रीदः	श्रीकण्ठसखो	मनुष्यधर्मा	धनाध्यक्षः	॥ ७८ ॥	
	10	11	12	13		
	उत्तराशापतिर्यक्षः	कुवेरो	नरवाहनः ।		Name of Kubera the treasurer, the god of wealth 17.	
	14	15	16	17 ^e		
	गुह्यको	राजराजश्च	घनी	पुण्यजनेश्वरः	॥ ७९ ॥	
	1	2	3	4	5	6 f 7 8
Wealth, riches 15.	धुम्नं	द्रव्यं	द्रविणं	राः	सारं	स्वापतेयमर्थः
	8 9	10	11	12	13	14 15
	ऋक्थं	पृक्थं	वित्तं	घनं	हिरण्यं	च वसु विभवः
	1	2				
Gold or silver.	अकुप्यं	रूप्यहेमाख्यं	कुप्यमन्यद्धनं	भवेत् ।		Other than gold or silver.
	1		2			
Cattle, live stock.	गोमहिष्यादिकं	सर्वं	बुधैर्जीविघनं	स्मृतम्	॥ ८१ ॥	
	1	2	1	2		
A deposit, a trust 2.	निक्षेपः	स्यादुपनिधिः	कथ्यते	शेवर्धिनिधिः ।		Treasure 2.
	1	2	3	4		
An attendant of Kubera 4.	किन्नरः	स्यात्किम्पुरुषो	मयुरश्वमुखस्तथा	॥ ८२ ॥		

a नैरतकोपा, नैऋतकोणपा, नैऋतकोणपा b स्पर्शनो वायुः c गववाहो
d कङ्कावातः झञ्झानिलः, झञ्झामदत् e पुण्यजनेश्वरः f मर्थं g रिक्तं
पृक्थं, ऋक्थं, पित्तं, ऋच्छं पुच्छं ।

Kubera's garden.	उद्यानं ¹ स्याच्चैत्ररथं ¹ विमानं ¹ चास्य ¹ पुष्पकम् ।	Kubera's acro- plane.
Kubera's city.	अलका ¹ नगरी ¹ ज्ञेया ¹ पुत्रस्तु ¹ नलकूवरः ॥ ८३ ॥	Kubera's son.
The architect of the gods 2.	विश्वकृद्विश्वकर्मा ¹ च ² त्वष्टा ³ स्याद्देववर्धकिः ।	
God's doctors or physicians 4.	नासत्यावश्विनौ ¹ दस्यौ ² प्रोक्तौ ³ देवचिकित्सकौ ⁴ ॥ ८४ ॥	
Name of Gautam Buddha 11.	शौद्धोदनिर्दंशबलो ¹ बुद्धः ² शाक्यस्तथागतः ³ सुगतः ⁴ ।	
A Jain saint.	मारजिदद्वयवादी ⁷ समन्तभद्रो ⁸ जिनश्च ⁹ सिद्धार्थः ¹⁰ ॥ ८५ ॥	
Misfortune 2.	जिनेन्द्री ¹ वीतरागोऽर्हन् ² केवली ³ च ⁴ त्रिकालवित् ।	
Different Devayonies 11.	अलक्ष्मीर्निर्ऋतिर्ज्ञेया ¹ नियतिर्विधिरुच्यते ² ॥ ८६ ॥	Fate, luck 2.
A nymph of Indra's heaven 7.	यक्षराक्षसगन्धर्वसिद्धकिन्नरगुह्यकाः ¹ ।	
Contempt.	विद्याधराप्सरोभूतपिशाचा ⁷ देवयोनयः ¹¹ ॥ ८७ ॥	
(1) Prurience.	घृताची ¹ मेनका ² रम्भा ³ उर्वशी ⁴ च ⁵ तिलोत्तमा ।	
(2) Coquettishness.	सुकेशी ⁶ मञ्जुघोषाद्याः ⁷ कथ्यन्तेऽप्सरसो ⁷ बुधैः ॥ ८८ ॥	
(3) Affectation of indifference.	हेलाविलासबिम्बोकलीलाललितविभ्रमाः ¹ ।	
(4) Imitation	स्त्रीणां ^d शृङ्गारचेष्टाः ⁷ स्युर्हविर्पर्यायवाचकाः ॥ ८९ ॥	
(5) Gracefulness of gait.	बाह्यार्थलिम्बनो ^e यस्तु ¹ विकारो ¹ मानसो ¹ भवेत् ।	
(6) Flurry.	स भावः ^c कथ्यते ¹ सद्भिस्तस्योत्कर्षो ¹ , रसः ¹ स्मृतः ॥ ९० ॥	
(7) Feminine action, emotion.	रतिर्हासश्च ¹ शोकश्च ² क्रोधोत्साही ³ भयं ⁴ तथा ।	
(1) Love (2) Laughter (3) Grief (4) Anger (5) Effort (6) Fear (7) Disgust (8) Wonder (9) Quietness.	जुगुप्साविस्मयशमाः ⁷ स्थायिभावाः ⁸ प्रकीर्तिताः ॥ ९१ ॥	
1. Emotion of love, Erotic.	शृङ्गारहास्यकरुणा ¹ रौद्रवीरभयानकाः ⁴ ।	Nine 'rasas' used in drama
2. The emotion of laughter. Comic.	बीभत्साद्भुतशात्ताश्च ⁷ नव नाट्ये ⁸ रसाः ⁴ स्मृताः ॥ ९२ ॥	5. The emotion of heroism, heroic.
3. The emotion of pathos or tender grief Pathetic.		6. The emotion of fear or terror.
4. The emotion of anger. Furious.		7. Odious, the emotion of disgust.
	a बुधः b सुमन्तभद्रो c तुल्यार्थाः d शृङ्गारचेष्टाः स्युः, शृङ्गारचेष्टा च e स्वभावः, भावकः f समाः ।	8. Marvellous, the emotion of wonder or admiration.
		9. Pacific.

Singing, song 2.	¹ गीतं ² गानमिति ¹ प्रोक्तं ² वाद्यमातोद्यमिष्यते ।	A musical instrument 2.
Dancing 3.	¹ नृत्यं ² तु ³ ताण्डवं ¹ लास्यं ² त्रितयं ^a नाट्यमुच्यते ॥ ९३ ॥	
Measure, musical time 2.	¹ तालः ^b कालक्रियामानं ² लयः ¹ साम्यमुदाहृतम् ।	Equal time of music and dancing 2.
Gesticulation 2	¹ अङ्गहारो ² अङ्गविक्षेपः ¹ सूच्योऽर्थोऽभिनयः ² स्मृतः ॥ ९४ ॥ ¹ प्रेक्षार्थं ² गीतवाद्यं ¹ तु ² सङ्गीतमभिधीयते ।	
A flute.	¹ आदावेव ² तु ³ यन्नाट्यं ¹ पूर्वरङ्गः ² स ³ उच्यते ॥ ९५ ॥ ¹ प्रोक्ता ² घोषवती ³ वीणा ⁴ विपञ्ची ⁵ परिवादिनी ।	Prelude to drama.
A stage, a dancing place 2.	⁵ वल्लकी ¹ चेति ² तद्भेदास्तन्त्रीभेदसमुद्भवाः ॥ ९६ ॥ ¹ रङ्गः ² स्यान्नर्तनस्थानं ¹ मृदङ्गो ² मुरजः ³ स्मृतः ।	A small drum 2.
A drum 4.	¹ आनकः ² पटहो ³ ज्ञेयो ⁴ डिण्डिमः ⁵ पणवस्तथा ॥ ९७ ॥	
The bow of a lute, a drum stick 2.	¹ कोणो ² वादनदण्डः ¹ स्याद्भेरी ² दुन्दुभिरिष्यते ।	A large kettle-drum.
The queen 2.	¹ नाट्ये ² राज्ञी ¹ स्मृता ² देवी ³ कुमारो ⁴ भर्तृदारकः ॥ ९८ ॥	The heir-apparent, the prince.
A learned man.	¹ भाव ² इत्युच्यते ¹ विद्वान् ² भावुको ³ भगिनीपतिः ।	Sister's husband 2.
A father 2.	¹ आवुकस्तु ² पिता ¹ ज्ञेय ² आर्यो ³ मारिष ⁴ उच्यते ॥ ९९ ॥	A venerable person.

a मुच्यते b कालः क्रियामानं c भद्रदारकः, भट्टदारक

d × श्रीरागो	वसन्तस्य	पञ्चमो	भैरवस्तथा ।
मेघरागस्तु	विज्ञेयो	षष्ठो	नटनरायणः ॥ १ ॥
गौडी	कोलाहलो	धारी	द्रविडी
पष्टीस्याद्देवगान्धारा	श्रीरागा	च	विनिमिता ॥ २ ॥
आदोला	कौशिकी	चैव	तथा
गुडकुटी	चैव	देशाख्या	रामकरी
त्रिगुणा	स्तम्भतीर्थी	ञ्ज	आमेरी
विद्यराडी	तथा	वेरी	पडेताः
भैरवी	गुर्जरी	चैव	भाषा
कर्णाटी	रक्तहंसा	च	पडेताः
वङ्गुला	मयुरा	चैव	कामोदा
देवगिरी	च	देवाला	पडेताः
त्रोटकी	मोटकी	चैव	दुविनिट्ट
मल्लारी	सैधवी	चैव	एता

नटनरायणे ॥ ७ ॥

5 Region, quarter.	1 2 3 4 5 आशाः ककुभः काष्ठा हरितश्च दिशः समाख्याताः ।	
1 The regent of the east, Indra. 2 The regent of south-east, fire 3 The regent of the south, Pluto.	1 2 3 4 5 6 7 8 इन्द्रानलयमनैर्ऋतवरुणमरुद्धनदरुद्रदिवपालाः ॥१००॥	8 The regent of the north-east, Shiva.
East, belonging to Indra.	4 The regent of south-west, Neptune. 5 The regent of the west, Varuna. 6 The regent of the north west-Marut. 7 The regent the of the north-Kubera.	South, belonging to Pluto (Yama).
West, belonging to Varuna.	1 2 3 1 2 3 ऐन्द्री पूर्वा प्राची याम्या दिग्दक्षिणा तथाऽवाची ।	North, belonging to Kubera.
Intermediate quarters.	1 2 3 स्याद्धारुणी प्रतीची कौवेरी चोत्तरोदीची ॥१०१॥	
Above 3.	1 2 3 a अन्तराला दिशश्चान्या विदिशः प्रदिशः स्मृताः ।	Below, down, down-wards 3.
Eastern.	1 2 3 उपरिष्ठादुपर्यूर्ध्वं तथाधस्तादवागधः ॥१०२॥	
Western.	1 2 1 2 प्राचीनं प्राक् स्मृतं प्राज्ञैरुदीचीनमुदक् तथा ।	Northern 2.
	1 2 1 2 प्रत्यक् चैव प्रतीचीनमपाचीनमपागिति ॥१०३॥	Southern.
	1 2 3 b 4 5 ऐरावतः पुण्डरीकः कुमुदाञ्जनवामनाः ।	
	1 Indra's elephant placed at the east quarter. 2 Agni's elephant placed at the south-east quarter. 3 Pluto's elephant placed at the south quarter. 4 Nairit's elephant placed at the south-west quarter. 5 Neptune's elephant placed at the west quarter.	
	6 7 8 पुण्डरन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः ॥१०४॥	
	6 Wind's elephant placed at the north-west quarter. 7 Kubera's elephant placed at the north quarter. 8 Shiva's elephant placed at the north-east quarter.	
Time 3.	1 2 3 1 दिष्टः कालस्तथानेहास्तद्भेदाः स्युः कलादयः ।	A measure of time.
Day and night 1.	1 2 अहोरात्रं च विद्वद्भिः कथ्यते षष्टिनाडिकम् ॥१०५॥	
Day 7.	1 2 3 4 5 6 7 दिवसो दिवा दिनं द्युः प्रोक्तमहर्वासरस्तथा घस्रः ।	
A period of 3 hours 1.	1 2 1 2 c प्रहरो यामः सन्ध्ये रजनीदिनयोः प्रवेशनिष्कासौ ॥१०६॥	Twilight 2.
	1 2 3 तमी तमिस्रा कथिता तमस्विनी ,	
	4 5 6 विभावरी नक्तमुखा च शर्वरी ।	

a प्रदिशस्तया, b कुमुदोञ्जनवामनौ c निष्कासौ ।

	7	8	9	10	
	क्षपा	त्रियामा	क्षणदा	निशीथिनी,	
		11	12	13	14
		निशा च	दोषा	रजनी च	यामिनी ॥१०७॥
	15	16	17	18	
	वसतिवसितेयी	च	श्यामा	रात्रिश्च	कथ्यते ।
any nights 3.	1	2	3		
	गणरात्रौ	निशा	बह्वचश्चिररात्रस्ततः	परम् ॥१०८॥	
In the evening 2.	1	2	1	2	
	सार्यं	दिवावसानं	स्यात्प्रदोषो	रजनीमुखम् ।	The first hour after sunset 2.
	1	2	3		
	निशीथो	मध्यमा	रात्रिः प्रोक्ता	सा च महानिशा ॥१०९॥	Mid-night 3.
Darkness 10.	1	2	3	4	5
	अवतमसमन्धतमसं	संतमसं	ध्वान्तमन्धकारं	च ।	
	6	7	8	9	10
	तिमिरं	तमस्तमिस्रां	तमिस्रमिच्छन्ति	भूछायाम् ॥११०॥	
Dawn, morning, day-break 10.	1	2	3	4	5
	कल्यमुषः	प्रत्यूषं	प्रगे	प्रभातं	भवेद्विभातं च ।
	7	8	9	10	
	दिवसमुखं	गोसर्गः	प्रातर्व्युष्टं	च निर्दिष्टम् ॥१११॥	
First moonlit night.	c	1	1	2	
	शशिनि	सिनीवाली	स्याद्दृष्टे नष्टे	कुहूरमावास्या ।	The new-moon 2.
	1	1	1		
	अनुमतिरूने	राका	सम्पूर्णे	पूर्णमासी च ॥११२॥	Full-moon day.
A Month.	1	2	1		
	त्रिशदहोरात्रः	स्यान्मासस्ताम्यामृतुर्वसन्ताद्याः ।			Season, 1 spring,
	2	3	4 autumnal, 5 winter, 6 cold season.		
2 summer, 3 rainy,	प्रीष्मः	प्रावृट्	शरदा	हेमन्तः	शिशिर इति ते षट् ॥११३॥
	c	1	1		
	चैत्रादिमासा	मघुमाघवौ	द्वौ,		
	ततः	परं	शुक्रशुची	क्रमेण ।	
Names of months and seasons beginning with spring.	नभोनभस्यौ	कथिताविषोर्जो,			
	सहःसहस्यौ	च	तपस्तपस्यौ ॥११४॥		
	मासेन	मनुष्याणां	पित्र्यमहोरात्रमेकमिच्छन्ति ।		Measurement of time in human & divine.
	अब्देन	तु	देवानां	ब्राह्मं	देवयुगसहस्राम्याम् ॥११५॥

a तिमिस्रा, तमिस्रा b गोत्सर्गः c शशिर्ना d शरदे
शरदो e चैत्रादिमासौ f ब्राह्मं ।

Year 6.	1 2 3 4 5 a 6	हायनाब्दशरद्वर्षसंवत्सरसमाः	समाः 1	
Summer 2.	1 2 1 2 3	निदाघः कथ्यते श्रीष्मो वर्षाः प्रावृद् तपात्ययः ॥११६॥		Rainy season.
The periodical destruction of the universe 9.	1 2 3 4 5	संवर्तः परिवर्तः क्षयो युगान्तो जगद्विनाशश्च ।		
The immediate result of actions 2.	6 7 8 9	कल्पान्तः समसृष्टिः संहारः स्यान्महाप्रलयः ॥११७॥		
Present time 2.	b 1 2 1 2	सान्द्रष्टिकं फलं सद्य उदकः फलमुत्तरम् ।		The future result of action 2.
	1 2 1 2	तत्कालं तु तदात्वं स्यादुत्तरः काल आयतिः ॥११८॥		future time 2.
		दितिरदितिर्दनुकद्रूनिकपाविनताश्च मातरः प्रोक्ताः ।		
		दैत्यसुरदानवोरगपिशिताशनपक्षिराजानाम् ॥११९॥		
दिति Mother of दैत्य (Demons)		कद्रू Mother of उरग (Snakes, Serpents)		
दिति " " सुर (Gods)		निकश " " पिशाच(Ghost, eaters of raw flesh)		
दनु " " दानव (Devils)		विनता " " पक्षिराज (Garuda, the mount of Vishnu)		
The sun and the moon.	1 d 2	चन्द्राकविकवाक्येन पुष्पदन्तौ प्रकीर्तितौ ।		
Man and his wife 3.	1 2 3	जायापती च विद्वद्भिर्जम्पती दम्पती तथा ॥१२०॥		Husband and wife.
Heaven and earth 4.	e 1 2 3 4	द्यावाभूमी च रोदस्यौ रोदसी रोदसीति च ।		
Food or clothing 2.	1 2 1 2	कशिपुर्भोजनाच्छादावौशीरं शयनासने ॥१२१॥		Couch or chair 2.
	f 1 2 g 3 4 5	श्वः श्रेयसं स्यात्कल्याणं श्वोवशीयं शिवं शुभम् ।		
	6 h 7 8 9 10 11	भविकं भावुकं श्रेयो भव्यं भद्रं च मङ्गलम् ॥१२२॥		Auspicious 11.
Joy, delight, gay, happiness 13.	i 1 2 3 4 5 6	प्रमोदप्रमदौ हर्षः प्रीतिस्तर्ष उद्धवः ।		
	7 8 9 10 11 12 13	सम्मदो मुत्तथानन्दः शर्मं जोषं च शं सुखम् ॥१२३॥		
Salvation, eternal emancipation, final beatitude 11.	1 2 3 4 5 6	कैवल्यं निर्वणिं निःश्रेयसममृतमक्षरं ब्रह्म ।		
	7 8 9 j 10 11	अपुनर्भवोऽपवर्गो मुक्तिर्मोक्षो महानन्दः ॥१२४॥		

a संवत्सरसमयाः b सांमृष्टिकं, सांमृष्टिकं c निषपादचनताश्च
d पुष्पदन्ती e द्यावाभूम्यौ f स्वश्रेयसं, श्वोवशीयं, प्वाःश्रेय, प्श्वोवशीयं,
प्वःश्रेयं, g श्वोवशीयं h भावुकं i प्रमोदः प्रमदो j मुक्तिर्मोक्षा ।

Eternal, everlasting 5.	1	2	3	4	a	5	स्यादनस्वरम् ।	
Righteousness, virtue 5.	1	2	3	4	5		धर्मः पुण्यं वृषः श्रेयः सुकृतं च समं स्मृतम् ॥१२५॥	
Fate, luck, destiny 4					b	1	इष्टानिष्टफलं प्राज्ञैः स्मृतं दैवमयानयम् ।	Good luck, bad luck.
A portent, foreboding evil omen, even omen 7.	1	2	3	4	5		भागधेयं तथा भाग्यं विपाको भवितव्यता ॥१२६॥	
Worship 3.	1	2	3	4	5		उपलिङ्गमरिष्टं स्यादुपसर्गं उपद्रवस्तथोत्पातः ।	
Deep or profound meditation 3.	6	7	1	2 c	3		ईतिरजन्यं च बुधैर्दमरो ढिम्बश्च विप्लवः कथितः ॥१२७॥	A scuffle or turmoil 3.
Diligent service.	1	2	3	4	5		अर्चा पूजा सपर्या स्यादुपहारो बलिः स्मृतः ।	Present, gift 2.
Reflection image 11.	1	2	3	d 4	5		प्रणिधानं समाधानं समाधिश्च समास्त्रयः ॥१२८॥	
Brass or iron image.	6	7	8	9 e	10	11	वरिवस्या परिचर्या शुश्रूषोपासना परीष्टिः स्यात् । सेवा भक्तिरुपास्तिः प्रसादनाराधनोपचाराश्च ॥१२९॥	
The universe 4.	1	2	3	4 f	5		प्रतिविम्बं प्रतिरूपं प्रतिमानं प्रतिकृतिं प्रतिच्छन्दम् ।	
Ambrosia, nectar 4.	6	7	8	g	9		प्रतिकार्यं च प्रतिनिधिमाहुः प्रतियातनां प्रतिच्छायाम् ॥१३०॥	
Life, creature 5.	10	11		h 1			अर्चा तु प्रतिमा प्रोक्ता हरिणी स्याद्विरण्मयी ।	A gold image 1.
The soul 3.			1	2			अन्यलोहमयी प्राज्ञैः सूर्मिं स्थूणा च कथ्यते ॥१३१॥	
	1	2	3	4	5		शुचिर्मैध्यं पवित्रं च पुण्यं पावनमुच्यते ।	
	6	7	8	9	10		विमलं विशदं वीध्रमुज्ज्वलं स्यादनाविलम् ॥१३२॥	Holy, pure 10.
	1	2	3	4			भुवनं विष्टपं लोको जगदेकार्यवाचकाः ।	
	1	2	3	4 i			अमृतं त्रिदशाहारः सुधा पीयूषमुच्यते ॥१३३॥	
	1	2	3	4	5		असवो जीवितं प्राणा जीवो जीवा च कथ्यते ।	
	1	2	3	1	2		क्षेत्रज्ञः पुरुषो ह्यात्मा संसारी चेतनो मतः ॥१३४॥	A sentient being 2.

a स्यादनुस्वरम्, स्यादनस्वरम् b देवभयानयम्, दैवभयानयम्,
c ढम्बश्च, ढिम्बश्च d पासनं e प्रसाधना f प्रतिकृतं g प्रतियातना,
प्रतिच्छायम् h हिरण्यी स्याद्विरणायाम् i पीयूष उच्यते ।

The five trees of the heaven.	1 2 3 4 5	मन्दारपारिजातकहरिचन्दनकल्पवृक्षसन्तानाः ।	
The Meru mountain 2.		पञ्चैते 1 सुरतरवो 2 मेरुः 3 सुरपर्वतो 4 ज्ञेयः 5 ॥१३५॥	
The mountain Sumeru or Meru 7.	1 2 3 4	शक्रक्रीडाचलो 2 मेरुः 3 सुमेरुर्मपर्वतः 4 ।	
The sky 15.	5 6 ^a 7	रत्नसानुरिति 5 ख्यातो 6 हेमाद्रिस्त्रिदशालयः 7 ॥१३६॥	
	1 2 3 4	नभो 1 मरुद्वर्त्म 2 वियद्विहाय— 3 4	
	5 6 7	स्तारापथः 5 पुष्करमन्तरिक्षम् 6 । 7	
	8 9 10 11 12	व्योमाम्बरं 8 विष्णुपदं 9 च 10 खं 11 द्यौ- 12	
	13 14 15	विहायसा 13 स्याद्गगनं 14 तथा 15 द्युः ॥१३७॥	
Sound, noise 8.	1 2 3 4 5 6 7 8	ह्लादो नादः 1 शब्दः 2 स्वानो 3 ध्वानः 4 स्वरो 5 रवो 6 घोषः 7 । 8	
Speaking, speech, saying 4.	1 2 3 4 b	अभिधानव्याहारोदीरणकथनादयस्तु 1 तद्भेदाः 2 ॥१३८॥	
An uproar 4.	1 2 3 4	कोलाहलः 1 कलकलस्तुमुलो 2 व्याकुलो 3 रवः 4 ।	
Unconnected speech 2.	1 2 ^c	उच्चावचमिति 1 प्रोक्तमनिबद्धं 2 तु यद्वचः ॥१३९॥	
Higher 2.	1 ^d 2	उच्चैस्तरौ 1 ध्वनिस्तारौ 2 मन्द्रौ 1 गम्भीर उच्यते । 2	Deep 2.
Shrill inarticulate.	1 2	कलश्च 1 मधुरोऽव्यक्तो 2 विक्रुष्टो 1 निष्ठुरो 2 मतः ॥१४०॥	Harsh 2.
Pleasing.	1 2	सान्त्वं 1 स्यान्मधुरं 2 वाक्यं 1 प्रियं 2 सत्यं च 1 सूनृतम् । 2	Sweet and true.
Indistinct 2.	1 2	ख्यातं 1 म्लिष्टमविस्पष्टमबद्धं 2 वियुतार्थकम् ॥१४१॥	Senseless 2.
Spoken rapidly 2.	1 2	तूर्णोदितं 1 निरस्तं 2 स्याद् 1 ग्रस्तं 2 लुप्तपदं 1 स्मृतम् । 2	Uttered with omission 2.
Sputtered 2.	1 2	अम्ब्रुकृतं 1 सनिष्ठीवं 2 ग्राम्यमश्लीलमुच्यते ॥१४२॥	Vulgar 2.
Significative alteration of voice 1.	1	भिन्नकण्ठो 1 ध्वनिर्धोरैः 1 काकुरित्यभिधीयते । 1	
Consisting of compound words.	1 2	समासप्रायमाख्यातं 1 पदजातं 2 च 1 तण्डकम् ॥१४३॥	A period containing many compound words.

a भीमाद्रि, धीमाद्रि b दयश्च c भिवद्धं च d उच्चैः स्वरो e श्लीलमिष्यते ।

True, correct 6.	१ २ ३ ४ ५ ६ ऋतं सत्यं समीचीनं सम्यक् तथ्यं यथातथम् ।	
Lie, falsehood 5.	१ २ ३ ४ ५ अलीकं वितथं मिथ्या मूषा स्यादनृतं तथा ॥१४४॥	
Praise 10.	१ २ ३ ४ ५ ६ अर्थवादः प्रशंसा च स्तोत्रमीडा स्तुतिर्नृतिः । a 7 8 9 10 विकल्पनं स्तवः श्लाघा वर्णना च निगद्यते ॥१४५॥	
Pleasing discourse 2.	१ २ १ २ चटु चाटु प्रियं वाक्यं हृद्यार्थं हृदयङ्गमम् ।	Congenial 2.
News, tidings 4.	१ २ ३ ४ वार्त्तोदन्तः प्रवृत्तिश्च वृत्तान्तश्च समाः स्मृताः ॥१४६॥	
Legend 2.	१ 2 b १ २ अनादिवार्त्ता ह्यैतिह्यं किंवदन्ती जनश्रुतिः ।	Rumour 4.
Censure, blame, obloquy, taunt, reproach 8.	३ ४ १ २ कौलीनं जनवादः स्याद्विगानं वचनीयता ॥१४७॥	Ill report, defamation 2.
	१ २ ३ ४ ५ अपवाद उपक्रोशो निर्वदावर्णवादपरिवादः ।	
	६ ७ ८ एकार्थाः कथ्यन्ते गर्हा निन्दा जुगुप्सा च ॥१४८॥	
Curse 5.	१ २ c ३ ४ ५ शाप आक्रोश आक्षेपः क्षारणा स्याद्विद्वेषणम् ।	
Exaggerating with latent irony 3.	१ d २ ३ स्मृताः सोल्लुण्ठसोत्प्रास सोपहासाः समास्त्रयः ॥१४९॥	
Tautology and repetition 2.	१ २ १ २ अनुलापो मुहुर्भाषा प्रलापोऽनर्थकं वचः ।	Senseless talk 2.
An outcry.	१ २ काक्वा वर्णनमुल्लापः संलापो भाषणं मिथः ॥१५०॥	Conversation 2.
The rustling of dry leaves.	१ १ मर्मरः शुष्कपर्णानां विस्फारो घनुषां ध्वनिः ।	The twang of a bow-string
The roaring of elephant.	१ १ २ वृहितं वारणानां च हेषा ह्लेषा च वाजिनाम् ॥१५१॥	The neighing of horses 2.
Name 6.	१ २ ३ ४ ५ ६ आख्या संज्ञाभिधाह्वानं नामधेयं च नाम च ।	
A tale, a legend 3.	१ २ ३ e १ २ आख्यायिका कथाख्यानं प्रह्वलीका प्रहेलिका ॥१५२॥	A riddle 2.
Repeating twice or thrice.	f विदुरात्रेडितं प्राज्ञा द्विस्त्रिव्याहरणं च यत् ।	
Praise fame 5.	१ २ ३ ४ ५ कीर्तिः श्लोको यशोऽभिख्यासमाख्यास्तुत्यलक्षणाः ॥१५३॥	

a कविकल्पनं च b ह्यैतिह्यं, ह्यैतिह्यं, ह्यैतिह्यं c आक्षेप आक्षेकोशः, शाप आऽक्रोशः, आपदश्चाक्रोश आक्षेपः d सोत्प्रासोपहासाः, सोत्प्रासः सोपहासाः e प्रवह्लिका f द्विस्त्रिव्या ।

- A question 2. ¹प्रश्नः ²स्यादनुयोगः ¹पर्यनुयोगो ²भवेदुपालम्भः । Reproach 2.
- Calling 3. ¹आकारणमा ²ह्वानं ³कथयन्त्यभिमन्त्रणं ³प्राज्ञाः ॥१५४॥
- Venerable. ¹तत्रभवान् ²भगवानिति शब्दो ¹वृद्धैः ²प्रयुज्यते पूज्यै ।
- A title added to names by way of respect. पादा इति नामान्ते ¹देवो ²भट्टारको वापि ॥१५५॥

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालायां
स्वर्गकाण्डं प्रथमं समाप्तम् ॥ १ ॥

द्वितीयं भूमिकाण्डम्

	1	2	3	4	5	6	7	8		
	भूर्भूमिर्वसुधावनिर्वसुमती				धात्री	घरित्री	घरा			
	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18
	गौर्गोत्रा जगती रसा क्षितिरिला क्षोणी क्षमा क्षमाचला ।									
The earth 37.	19	20	21	22	a	23	24	25		
	कुः पृथ्वी पृथिवी स्थिरा च धरणी विश्वम्भरा मेदिनी ,									
	26	27	28	29	30	31	32			
	ज्यानन्ता विपुला समुद्रवसना सर्वसहोर्वी मही ॥१५६॥									
	33	34	35	36						
	काश्यपी भूतधात्री च रत्नगर्भा वसुधरा ।									
	37									
	घराघारा च विज्ञेया तद्विशेषान्निबोधत ॥१५७॥									
Fertile soil 2.	1	2				1	b	2		
	उर्वरा		सर्वसस्या		भूर्भवेदिरिणमूषरम् ।				A spot with saline soil 2.	
	c									
	खिलमप्रहतं स्थानं मरुर्धन्वा स्थलं स्थली ॥१५८॥									
Clay 2.	1	2			1	2				
	मृन्मृत्तिका		प्रशस्तासौ		मृत्सा मृत्स्नेति		कथ्यते ।			
Green with young grass.	1	d			1	2				
	शाद्वलं		हरितं		प्रोक्तं नड्वलं		नलसंयुतम् ॥१५९॥			
A country with black soil.	1					1				
	कृष्णभूमः		प्रदेशोऽसौ		यत्र स्यात्कृष्णमृत्तिका ।		Black soil.			
A country with yellowish soil.	1				1					
	पाण्डुभूमस्तथा		प्रोक्त		उदग्भूमश्च		पण्डितैः ॥१६०॥			
A country which lives on river water.										
	नद्यम्बुजीवनो		देशो		नदीमातृक		उच्यते ।			
	वृष्टिनिष्पाद्यसस्यस्तु		विज्ञेयो		देवमातृकः ॥१६१॥		Crop which depends on rains.			

a धरिणी b दिरणम् c खिलमप्रहितम् d शाद्वलम् ।

A field which grows 'Moong' a pulse.

मुद्गादीनां क्षेत्रं मौद्गीनां कौद्रवीणमित्यादि ।
त्रैहेयं शालेयं भवति पुनर्त्रीहिशाल्योर्यत् ॥१६२॥

A field which grows "Kodon" a variety of rice. A field of rice or beans, fit for being sown with beans. A field of a variety of beans called 'Mash' 'urada'. A field of barley.

A field of sesame.

तिल्यं तैलीनं स्यान्माष्यं माषीणमुम्यमौमीनम् -1

A field of hemp.

भङ्ग्यं भाङ्गीनं वा यव्यं षष्टिक्यमेषां च ॥१६३॥

A field of vegetables.

शाकशाकटमाख्यातमथवा शाकशाकिनम् ।

शाकस्य क्षेत्रमन्येषामेवं क्षेत्रेषु संहतिः ॥१६४॥

Mountain 14.

अचलशिलोच्चयशैलक्षितिधरगिरिगोत्रपर्वताहार्याः ।

नगशिखरिसानुमन्तो धराद्रिकुघ्राश्च तुल्यार्थाः ॥१६५॥

A side or ridge of a mountain.

नितम्बः कटको ज्ञेयः सानु प्रस्थं तटं भृगुः ।

The top of a mountain 3.

शृङ्गं च शिखरं कूटं निर्झरः प्रस्रवोऽम्भसाम् ॥१६६॥

A cave 5.

गुहा पाषाणसन्धिः स्यात्कन्दरः कन्दरा दरी ।

A bush 2.

निकुञ्जं गह्वरं प्रोक्तं पादाः प्रत्यन्तपर्वताः ॥१६७॥

A stone, a rock 7.

शिलोपलाश्मपाषाणग्रावाणः प्रस्तरो दृषत् ।

A rock fallen from a mountain 1.

गलिताः स्थूलपाषाणा गण्डशैला इति स्मृताः ॥१६८॥

Loadstone, magnet 3.

अयस्कान्तविशेषाः स्युश्चुम्बकभ्रामकादयः ।

A mine 3.

आकरः स्यात्खनिर्गञ्जा रुमा च लवणाकरः ॥१६९॥

A salt-pit 2.

उच्यते गैरिकं धातुस्ताम्रं शुत्वमुदुम्बरम् ।

Copper 3.

Brass 2.

आरकूटः स्मृतो रीतिः कास्यं सौराष्ट्रकं तथा ॥१७०॥

Bell-metal 2.

Iron 8.

गिरिसारमश्मसारं लोहं कालायसं तथा शस्त्रम् ।

तीक्ष्णमयः पारशवं कवयः कथयन्त्यभिन्नार्थम् ॥१७१॥

Lead 2.

सीसकं सीसपत्रं स्याद्ब्रह्मं च मधुकं त्रपु ।

Tin 3.

Silver 4.

रजतं कलधौतं च रूप्यं तारं च कथ्यते ॥१७२॥

a सानुः b प्रस्रवो, प्रश्रवो c पर्यन्तपर्वताः d मुदुम्बरम् ।

- 1 2 3 4
हेम स्वर्णं जातरूपं सुवर्णं ,
a 5 6 7 8
भर्मं रुक्मं हाटकं शातकुम्भम् ।
- Gold 25. 9 10 11 12
गाङ्गेयं स्याद्गौरिकं भूरि चन्द्रं ,
13 14 15 16
राः कल्याणं निष्कमण्डापदं च ॥१७३॥
17 18 19 20 21
जाम्बूनदं हिरण्यं कनकमहारजतकाञ्चनानि स्युः ।
22 23 24 25
कार्तस्वरचामीकरकर्बुरतपनीयनामानि ॥१७४॥
- Emerald 3. 1 2 3
अश्मगर्भं मरकतं हरिन्मणिरिति स्मृतः ।
- Ruby 2. 1 2 1 b 2
शोणाश्मा पद्मरागः स्याद्द्वैदूर्यं वालवायजम् ॥१७५॥ The lapis lazuli 2.
- Crystal 4. 1 2 3 4
स्फटिकः सूर्यकान्तः स्यादकश्मिा दहनोपलः ।
- A gem, a jewel 3. 1 2 3 c 1 2
रत्नं वसु मणिः सर्वं सर्वं लोहं च तैजसम् ॥१७६॥ Any metal 2.
1 2 d 3 4 5
वृक्षोऽङ्घ्रिपः क्षितिरुहः शिखरी च शाखी ,
6 7 8 9 10 c
A tree 19. शालो वनस्पतिरगो विटपी कुठश्च ।
11 12 13 14
अद्रिः कुजस्तररनोकह इत्यभिन्नाः ;
f 15 16 17 18 19
शब्दा द्रुविष्टरनगद्रुमपादपाश्च ॥१७७॥
- A tree with fruit 1. 1
अवकेशी स विज्ञेयः फलैर्वन्ध्यस्तु यो भवेत् ।
- A shrub. 1 g 1 2 3 h
क्षुपो ह्रस्वशिफाशाखी फलवान् फलिनः फली ॥१७८॥ Bearing fruit 3.
- A tree bearing fruit from blossoms. 1 i
वानस्पत्याः स्मृता वृक्षा ये पुष्प्यन्ति फलन्ति च ।
1
फलन्ति ये विना पुष्पं तान्वदन्ति वनस्पतीन् ॥१७९॥ A tree that bears fruit without any apparent blossoms.
- An annual plant or herb which dies after becoming ripe 1
फलपाकावसानास्तु वृधैरोषधयः स्मृताः ।
- A creeper 5. 1 2 3 4 5
लता प्रतानिनी वल्ली प्रततिर्ब्रततिस्तथा ॥१८०॥

a भस्म, हर्म्यं b स्याद्द्वैदूर्यं c सर्वलोहं d घ्नियः
c कुठश्च f रनोकुह, द्रुविष्टरं g ह्रस्वशिखः शाखी, ह्रस्वशिख-
शाखी, ह्रस्वशाखः शाखी h स्मृतः i पुष्प्यन्ति ।

The part below 2.	¹ अवाग्भागो ² भवेद् ¹ बुध्नः ² प्राग्रं ³ तु ² शिखिरं ¹ शिरः ।	The highest point 3.
The spreading branches and foliage of a tree 2.	¹ विस्तारो ² विटपः ¹ प्रोक्त ² आरोहस्तु ³ समुच्छ्रयः ॥१८१॥	The height of a tree 2.
The trunk of a tree from the root to the branches 2.	¹ स्कन्धादधः ² प्रकाण्डः ¹ स्यात्प्रधानः ² स्कन्धे उच्यते ।	The upper part of the stem of a tree 2.
The upper main branch of a tree 2.	^a ¹ स्कन्धशाखा ² तु ¹ शाला ² स्यान्निष्कुटः ¹ कोटरः ² स्मृतः ॥१८२॥	The hollow of a tree 2.
Bark 3.	¹ त्वग्वल्कं ² वल्कलं ³ प्रोक्तं ¹ मज्जा ² सार उदाहृतः ।	Marrow, pith 2.
The bulbous root 2.	¹ करहाटं ² भवेत्स्कन्दः ¹ पादो ² मूलं ³ जटा ⁴ शिफा ॥१८३॥	The root of a tree 4.
A trench for water dug at the root of a tree 4.	¹ आवाल ² आलवालः ³ स्यादावापः ⁴ स्थानकं तथा ।	
A shoot, a sprout, a germ 4.	¹ लतोद्गमोष्परोहस्तु ² प्रवालः ¹ पल्लवाङ्कुरः ॥१८४॥	
A leaf 7.	³ पल्लवः ⁴ स्यात्किसलयं ¹ वल्लरी ² मञ्जरी तथा ।	A branching footstalk 2.
A sprout 1. A shoot 2.	^b ¹ वह् ² पर्णं ³ दलं ⁴ पत्रं ⁵ पलाशं ⁶ छदनं ⁷ छदः ।	
Flower 5.	¹ अङ्कुरश्चाङ्कुरः ² प्रोक्तो ¹ वृत्तं ² प्रसवबन्धनम् ॥१८५॥	The stalk of flowers or fruit.
An opening bud 5.	¹ पुष्पं ^c ² प्रसवः ³ कुसुमं ⁴ प्रसूनकं ⁵ सुमनसः समाख्याताः ।	
Budded, blown 8.	¹ कोरकजालककलिकाकुड्मलमुकुलानि ² तुल्यानि ॥१८६॥	
The pollen of flowers 2.	¹ उन्मोलितमुन्मिषितं ² स्मितमुन्मिद्रं ³ विजृम्भितं ⁴ हसितं ⁵ मु ।	
A cluster of flowers 4.	^d ⁷ उद्बुद्धं ⁸ व्याकोशं ^e ¹ पुष्पेषु ² विकाशवाचकाः ³ शब्दाः ॥१८७॥	
A new fruit.	¹ पौष्पं ² रजः ¹ परागः ² स्यान्मकरन्दो ¹ मधुः ² स्मृतः ।	The nectar of flowers 2.
A pod 3.	¹ स्तवको ² गुच्छको ³ गुच्छो ^f ⁴ गुलुञ्छः ¹ परिकीर्तितः ॥१८८॥	
	^g ¹ शलाटुः ² कोमलं ¹ प्रोक्त ² वानं ¹ शुष्कफलं ² भवेत् ।	A dry fruit 2.
	¹ बीजकोशी ² शमी ³ शिम्वा ^h ¹ ग्रन्थिः ² पर्व ³ परस्तथा ॥१८९॥	A joint or knot of a tree 3.

a स्कन्धशाखास्तु, स्कन्धशाखासु. b वह् पत्रं दलं पर्णं c प्रसवः
d. उद्बुद्धं e विकाशं f गुच्छो गुलुञ्छः, गुच्छोगुलुञ्छः, गुत्सोगुलुञ्छः, ग्लुछोगुलुञ्छः,
गुच्छोगुलुञ्छः g शिलाटुः, शलाटुः, शलाटुः h शंवा, शंवा, सिंवा पर्व परः स्मृतः ।

A shrub, a bush 3.	¹ उलपस्तम्बगुल्माश्च	²	³	¹ वीरुधो	² विटपाः	स्मृताः ।	A far spreading creeper 2.	
A young grass.	¹ शष्पं	² बालतृणं	प्रोक्तं	सर्वं	च	¹ तृणमर्जुनम् ॥१९०॥	A grass 4.	
	³ घासस्तु	^{4 a} यवसः	प्रोक्तो	^{b 1} वर्हिर्दंभः	² कुथः	³ कुशः ।	Kush grass.	
A sort of grass 2.	¹ उलपो	^{2 c} वल्वजः	प्रोक्त	^{d 1} इषीका	² काश	उच्यते ।	A kind of reed 2.	
A sort of grass 2.	¹ हरिताली	² भवेद्दूर्वा	¹ शरो	² मुञ्ज	इति	स्मृतः ॥१९१॥	A sort of grass.	
Plantain, banana 3.	¹ रम्भा	² कदली	³ मोचा	¹ तृणराजः	कथ्यते	^{2 3} तलस्तालः ।	The palmyra tree 3.	
A kind of tree 2.	¹ कङ्कलिरशोकः	²	¹ स्यादाम्रश्चूतश्च	²	³ सहकारः ॥१९२॥		The mango tree 3.	
The vine 4.	¹ मृद्रीका	² गोस्तनी	³ द्राक्षा	⁴ हारहूरा	च	कथ्यते ।		
A medicinal plant 3.	¹ प्रियङ्गुः	^{2 e} फलिनी	³ श्यामा	¹ कुटजो	² गिरिमल्लिका ॥१९३॥		A kind of tree 2.	
A shrub oleander 2.	¹ करवीरो	² ह्यमारो	¹ मालूरः	² श्रीफलो	³ भवेद्विल्वः ।		A sort of tree 3.	
A lime tree 2.	^{f 1} करुणो	² जम्बीरः	¹ स्याद्ददरी	^{g 2} कुवली	³ च	³ कर्कन्धुः ॥१९४॥	The jujube tree, an edible berry 3.	
A sort of tree 2.	¹ अर्जुनं	² ककुभं	^{1 h} प्राहुः	² शालं	¹ सर्जं	² च	³ सूरयः ।	A kind of tree 2.
A tree 2.	¹ झावुकः	² पिचुलः	प्रोक्त	^{i 1} इज्जलो	^{j 2} निचुलः	स्मृतः ॥१९५॥	A plant 2.	
A neem tree 2.	¹ अरिष्टः	² पिचुमन्दः	स्यान्न्यग्रोधो	¹ वट	² उच्यते ।		Banyan tree 2.	
The holy fig tree 4.	¹ श्रीवृक्षः	² पिप्पलोऽश्वत्थो	³ बुधैर्बोधिश्च	⁴ कथ्यते ॥१९६॥				
A kind of tree 4.	¹ ब्रह्मवृक्षः	² पलाशः	³ स्यात्किंशुकश्च	⁴ त्रिपत्रकः ।				
A plant 2.	¹ महावृक्षः	² स्नुहिः	प्रोक्तः	^{1 k} शैलुः	² श्लेष्मातकः	स्मृतः ॥१९७॥	A sort of tree 2.	
A kind of tree 2.	¹ नक्तमालः	² करञ्जः	स्याद्दृषा	¹ वासाटरूपकः ।	^{2 3}		A kind of tree 3.	
A sort of tree 2.	¹ आररवधः	² कृतमालः	³ स्वर्णपुष्पी	च	कथ्यते ॥१९८॥			

a यवसं प्रोक्तं b वर्हिर्दंभक्यः स्मृतः, वर्हिर्दंभक्यः स्मृतः, कुथः कुशः c विल्वजः, विल्वजः d ईषिका काय, इषीका कास e पलिनी f करुणो g कुवला h शालं i इज्जुलः j इचुलः, प्रोक्तः गञ्जलो, प्रोक्तवजलो k शैलुः शलुः ।

A sort of tree 2.	¹ वृक्षोत्पलः	² कर्णिकारः	^{1 a} पीतशालोऽसनः	² स्मृतः ।	A sort of tree 3.
A plant 2.	¹ दण्डोत्पलः	^{2 b} सहदेवा	¹ सल्लकी	² स्याद् गजप्रिया ॥१९९॥	A plant.
A shrub 2.	¹ निर्गुण्डी	^{2 c} सिन्धुवारः	¹ स्यान्मन्दारः	² पारिभद्रकः ।	A tree 2.
The betel plant.	¹ ताम्बूली	² नागवल्ली	¹ स्याद् गूवाकः	² पूग उच्यते ॥२००॥	The betelnut tree 2.
The ratan 5.	¹ वानीरो	² वञ्जुलः	^{d 3} शीतो	⁴ विदुलो	⁵ वेतसः स्मृतः ।
A plant 4.	¹ गोक्षुरः	^{e 2} स्थलशृङ्गाटः	³ श्वदंष्ट्रा	⁴ स्यात्त्रिकण्टकः ॥२०१॥	
The cotton plant 5.	¹ पिचव्यो	² वादरः	³ प्रोक्तः	⁴ कर्पासस्तूलकं	⁵ पिचुः ।
A creeper 2.	^{f 1} कोशातकी	² पटोली	¹ स्याद् गिरिकर्ण्यपराजिता	² ॥२०२॥	A plant 3.
A plant 2.	¹ कथ्यते	² कृष्णला	¹ गुञ्जा	² तापिच्छः	² काकतुण्डिका ।
A tree 2.	¹ किम्पाकः	² स्यान्महाकाल	¹ ओष्ठी	² विम्बी	³ च तुण्डिका ॥२०३॥
A bamboo tree 5.	¹ त्वचिसारश्च	² यो	³ वंशो	⁴ वेणुत्वक्सारमस्कराः ।	⁵
	¹ स्वनन्ति	¹ येऽनिलोद्धूता	¹ वेणवस्ते	¹ तु	¹ कीचकाः ॥२०४॥
A species of barleria with blue blossoms 1.	¹ नीला	¹ शिण्ठी	¹ भवेद्वाणः	¹ पीता	¹ सहचरी
Jasmine 4.	¹ मालती	² कथ्यते	³ जातिर्मागधी	⁴ यूथिका	⁴ तथा ॥२०५॥
	¹ हेमपुष्पमिह		² नागकेसरं ,		A kind of tree 2.
	¹ केसरं	¹ च	² वकुलं	² प्रचक्षते ।	A kind of tree 2.
	¹ कोविदारमपि		² काञ्चनारकं ,		A kind of tree 2.
	¹ मल्लिकां	² विचकिलं	² विचक्षणाः ॥२०६॥		Arabian jasmine 2.
The blossoms of blue amaranth 4.	¹ वर्णपुष्पममलानकं	^{g 2} तथा ,			
	³ किङ्किरातमुदितं	^{4 h} कुरण्टकम् ।			

a पीतशालो b सहदेवी c शन्धुवारः, सिन्धुवारः d शीतो e स्थूल-
शृङ्गाटः f कोशातकी, शाकातकी पटोला g ममिलानकं, ममिलातकं,
मसिलातकं, अमलातकं h कुरण्टकं, करण्टकं, कुण्टकं ।

- The china rose 2. ओड्रपुष्पमभिधीयते ¹ जम्बू ² ,
- Many flowered nyktanthes 2. सप्तला ¹ च ² नवमालिका स्मृता ॥२०७॥
- A plant 2. वन्धूकं ¹ वन्धुजीवं ² स्यात्पुत्रागः ¹ सुरपणिका ² । A tree 2.
- A plant 4. अतिमुक्तकमिच्छन्ति ¹ वासन्तीं ² माधवीं ³ लताम् ^{a 4} ॥२०८॥
- A sort of cucumber 4. एर्वाश्चिर्भटः ^{b 1} प्रोक्तो ² वालुकी ^{3 c} कर्कटी ⁴ तथा ।
- A pumpkin gourd 2. कर्कारथ ¹ कूष्माण्डस्तुम्ब्यलावृश्च ² दुग्धिका ^{3 d} ॥२०९॥ A long white gourd 3.
- Forest, wood 8. अरण्यमटवी ¹ सत्रं ² कान्तारं ³ काननं ⁴ वनम् ⁵ ।
विपिनं ⁷ गहनं ⁸ चेति ^e नातिभिन्नार्थमिष्यते ॥२१०॥
- A land at the foot of a mountain. तटोपकण्ठे ¹ या जाता ¹ वनराजी ¹ महीभृताम् ।
उपत्यकां ¹ तु ¹ तामाहुरपरिष्ठादधित्यकाम् ॥२११॥
नगरान्नातिदूरेण ¹ यः ¹ सद्भिरुपरोपितः ।
- तरुषण्डः ^f स ¹ आरामस्तथोपवनमुच्यते ² ॥२१२॥ A grove, a plantation 2.
विज्ञेयं ^f प्रमदवनं ¹ नृपस्तु ² यस्मिन् ,
शुद्धान्तैः ⁸ सह ⁸ रमते ⁸ गृहोपकण्ठे ।
- A garden. उद्यानं ¹ स्वयमपरैः ¹ समं ¹ च ¹ लोकै—
रन्येषां ¹ विभववतां ¹ च ¹ पुष्पवाटी ॥२१३॥
- Elephant 14. मातङ्गद्विदद्विपाः ¹ करिगजस्तम्बेरमानेकपाः ⁷ ,
कुम्भीकुञ्जरवारणेभरदिनः ⁸⁻⁹ सामोद्भवः ¹⁰⁻¹¹ सिन्धुरः ¹²⁻¹⁴ ।
- Lion 9. तुल्यार्थाः ¹ कथिता ² हरिर्मृगपतिः ³ पञ्चाननः ⁴ कैसरी ,
हर्यक्षो ⁵ नखरायुधो ⁶ मृगरिपुः ⁷ सिंहश्च ⁸ कण्ठीरवः ⁹ ॥२१४॥
- One of the 3 divisions of elephants. भद्रो ¹ मन्दो ² मृगश्चेति ³ विज्ञेयास्त्रिविधा ⁴ गजाः ।
वनप्रचारसारूप्यसत्त्वभेदोपलक्षिताः ¹ ॥२१५॥

a माधवीलता, माधवीं माधवीं लतां, माधवी लता,
b ईर्वाश्चिर्भटः, एर्वाश्चिर्भटः, एर्वाश्चिर्भटः, एर्वाश्चिर्भटः,
एर्वाश्चिर्भटः, c वालुकी d दुग्धिका, दुग्धिका
दुग्धिका, e नातिनातार्थं f तरुषण्डः तरुषण्डः g कण्ठम् ।

A lump upon the head of an elephant in rut 2.

a 1 2
मूर्धपिण्डौ स्मृतौ कुम्भौ कुम्भयोरन्तरं विदुः ।

An elephant's cheek, elephant's temple 3.

b 1 2 c 3 1 d 2
करटः स्यात्कटो गण्डो वमथुः करसीकरः ॥२१६॥

Ichor or juice that exudes from the temple of an elephant in rut 2.

1 2 1 2 1 2
दानं मदो विषाणौ च दशनौ स्कन्ध आसनम् ।

1 2 1 2
अपाङ्गदेशो निर्याणं कर्णमूलं तु चूलिका ॥२१७॥

The forehead of an elephant 2.

1 2 1 2
अवग्रहो ललाटं स्यादांरक्षः कुम्भयोरधः ।

The part of an elephant's head between the tusks.

1
दन्तयोरुभयोर्मध्यं प्रतिमानं प्रचक्ष्यते ॥२१८॥

The tip of an elephant's trunk 4.

1 2 3 4
कराग्रं पुष्करं प्रोक्तमङ्गुलिः कर्णिका मता ।

The tip or root of an elephant's tail 2

1 e 2 1 2
पेचकः पुच्छमूलं तु पद्मं स्याद् विन्दुजालकम् ॥२१९॥

An elephant in rut 3.

1 2 3 1 f 2
लग्नः प्रभिन्नो मत्तः स्यादुपात्तो मदवर्जितः ।

Arranged for war 2.

g 1
तिर्यग्दन्तप्रहारस्तु गजः परिणतो मतः ॥२२०॥

An elephant's girth 3.

h 1 2
सज्जितः कल्पितो ज्ञेयो ब्रह्मणा घटना घटा ।

Spurring of an elephant by means of the rider's feet 2.

i 1 2 3 h
चूषा कक्ष्या वरत्रा स्यादालानं स्तम्भ उच्यते ॥२२१॥

Pricking an elephant with the goad and striking with the legs.

1 j 2 1 2
पादकर्म यतं प्रोक्तं यातमङ्गुशवारणम् ।

The root of the teeth 2.

k 1 1
उभयं वीतेमाख्यातं भेदः स्थूलोच्चयो गतेः ॥२२२॥

The chain used to secure the hind feet of an elephant 4.

1 2 1 2
करीरी दन्तमूलं स्याद्वारी च गजबन्धनम् ।

A young elephant.

1 2 3 4
निगडः पादबन्धश्च हिञ्जीरः शृङ्खलोऽन्दुकः ॥२२३॥

A royal elephant 2.

1 2 1 2 1
कलभः करिपोतः स्यादङ्गुशः सृणिरुच्यते ।

A vicious elephant 2.

1 2 m 1
औपवाहो राजवाह्यः सन्नाह्यः समरोचितः ॥२२४॥

1 2 1 2
व्यालो दुष्टगजः प्रोक्तो हस्तिनी तु वशा स्मृता ।

Water thrown out by an elephant's trunk 2.

The trunk of an elephant 2.

Front part of an elephant's body 2.

The outer corner of the eye of an elephant 2.

The root of an elephant's ear 2.

The junction of the frontal sinuses of an elephant 2.

The coloured marks on the trunk and face of an elephant 2.

An elephant out of rut 2.

An elephant stooping to strike with his tusks or giving a side blow with his tusks.

Guiding an elephants, with the hook 2.

The middle pace of elephants, a hollow at the root of an elephant's tusk.

The place where elephants are tied up 2.

A goad for driving an elephant 2.

An elephant fit for war 1.

The female elephant 2.

a मूर्ध्नि b करकः c कंटोगुस्तो, फटो गञ्जो d करशीरः e पेचुकः, पचकः, पेयुकः f स्यादुद्धातो g तिर्यग्दन्त h सज्जितः i भूषा, कक्षा, वक्षा j युतं, पादकमायातं, पादकमायतं k उभयो, उभय l शृणि, श्रेणि m सान्नाह्यः, सनाह्यः ।

An elephant-driver 4.	1 आधोरणा	2 हस्तिपका	3 हस्त्यारोहा	4 निषादिनः ।
An elephant keeper 2.	1 गजाजीवास्तु	2 शास्त्रज्ञैर्महामात्रा	इति	स्मृताः ॥२२५॥
A hog, a boar 8.	1 कोलः	2 क्रोडः	3 शूकरः	4 स्याद्वराहः ,
		5 पोत्री	6 दंष्ट्री	7 घृष्टिरुक्तः
			8 a किरिश्च ।	
Tiger, a hyena 7.	1 व्याघ्रो	2 द्वीपी	3 पुण्डरीकस्तरक्षुः ,	4
		5 शार्दूलः	6 स्याच्चित्रकायो	7 मृगारिः ॥२२६॥
Buffalo 5.	1 महिषः	2 b सैरिभ	3 उक्तो	4 रक्ताक्षः
			5 कासरो	लुलायश्च ।
A rhinoceros 3.	1 वाघ्रीणसश्च	2 खड्गी	3 गण्डक	इति कथ्यते सद्भिः ॥२२७॥
A bear 4.	1 ऋक्षाच्छभल्लभाल्लूकभल्लूकाश्च	2 समाः	3 स्मृताः ।	
A wolf 4.	1 अरण्यश्वा	2 बुधैज्ञेयः	3 कोक	4 ईहामृगो वृकः ॥२२८॥
A jackal, a fox 10.	1 गोमायुभूरिमायः	2 d स्याच्छृगालो	3 जम्बुकः	4 शिवा ।
	f 6 फेरण्डः	7 फेरवः	8 फेरुः	9 क्रोष्टा
			10 च	मृगघूर्तकः ॥२२९॥
	1 एणः	2 कुरङ्गो	3 हरिणो	4 मृगः
			5 स्यात्	
A kind of deer, an antelope 13.		6 g सारङ्ग	7 ऋष्यः	8 पृषतो
			9 रुश्च ।	
	9 न्यङ्कुस्तथा	10 रङ्कुरिति	प्रसिद्धा ,	
		11 वातप्रमीशम्बरकृष्णसाराः	12 h 13	॥२३०॥
	1 बलीमुखो	2 मर्कटको	3 वनौकाः ,	
An ape, a monkey 11.		4 प्लवङ्गमः	5 स्यात्प्लवगः	6 प्लवङ्गः ।
	7 हरिः	8 कपिः	9 कीश	इमे च शब्दाः ,
		10 शाखामृगो	11 वानर	इत्यभिन्नाः ॥२३१॥

a करिश्च, किरिश्च, विडिश्च b सेरभ, सेरिभ c भाल्लूकं d भूरिमायु
e स्यात् शृगालो, स्याच्छृगालो f फेरण्डः g ऋष्यः
h तप्तसाराः, तप्तसाराः ।

A kind of monkey 1.
Monkey tricks,
monkey like be-
haviour.

1
गोलाङ्गूल इति प्रोक्तः कृष्णवक्त्रस्तु मर्कटः ।

कपेः क्रीडादिकं किञ्चित्कापेयमिति कथ्यते ॥२३२॥

Porcupine 3.

1 2 a 3 1 2 3
शललः शल्लकः श्वावित्तसूची शललं शलम् ।

The quill of a
Porcupine 3.

Beast of prey,
wild beast.

व्याघ्रादयो वनचराः पशवः श्वापदाः स्मृताः ॥२३३॥

A kind of lizard 2.

1 b 2 c
गोधा मुशालिका प्रोक्ता गोधेरास्तत्सुता मताः ।

The gecko 3.

1 2 3
सरटः कृकलासः स्यात्प्रतिसूर्यशयानकः ॥२३४॥

A mouse, a rat 5.

1 2 3 d 4 5
आखूर्वृषो मूषकः स्यादुन्दुरः खनकस्तथा ।

The musk rat.

1 2
छुच्छुन्दरी च विज्ञेया विद्वद्भिर्गन्धमूषिका ॥२३५॥

The cat 4.

1 2 3 4
ओतुविडालो माजरो वृषदंशश्च कथ्यते ।

A pole cat 3.

1 2 3
जाहको गात्रसङ्कोची मण्डली च बुधैः स्मृतः ॥२३६॥

1 2 3 4
पतन्पतङ्गः पतगः पतत्री ,

5 6 7 8
पतत्री शकुन्तिः शकुनिः शकुन्तः ।

A bird 26.

9 10 11 12
वयो विहायो विहगो विहङ्गो ,

13 14 15
विहङ्गमः पत्ररथो गरुत्मान् ॥२३७॥

16 17 18 19 20 21 c 22
शकुनः खगो नगौकाः पक्षी विविष्किरस्तथा विकिरः ।

23 24 25 26
अण्डजनीडजवाजिद्विजाश्च कथिताः समानार्थाः ॥२३८॥

The wing of a
bird 9.

1 2 3 4 5 6
तनूरुहं गरुत्पत्रं पत्रं छदनं छदः ।

7 8 f 9 1 2
पिच्छं वाजस्तथा पक्षः पक्षमूलं तु पक्षतिः ॥२३९॥

The tip of a
bird's wing 2

An egg 2.

1g 2 1 2
पेशीकोशः स्मृतोण्डश्च कुलायो नीड उच्यते ।

A nest 2.

The beak or bill
of a bird 3.

1 2 3 1
चञ्चुश्चञ्चूस्तथा त्रोटिडंयनं गगने गतिः ॥२४०॥

Flying in the air 1

a शल्यकः b मुशली c गोवेरा, गोवेरा d स्यादुंदुरः, स्यादंदरः
e विविक्करस्तथा f वाजिस्तथा g पेशी कोशः ।

	1	2	3	4	5	6	
	केकी	शिखी	शिखण्डी	प्रचलाकी	वर्हिणः	कलापी	च ।
A peacock 10.	7	8	9	10			
	सर्पाशिनो	मयूरः	शिखावलः	श्यामकण्ठश्च			॥२४१॥
A peacock's crest 2.	1	2	1	2			
	वाणी	केका	शिखा	चूडा	चन्द्रको	मेचकः	स्मृतः ।
A peacock's tail 4.	1	2	3	4			
	प्रचलाकः	शिखण्डश्च	कलापो	वर्ह	उच्यते		॥२४२॥
The cuckoo 5.	1	2	3	4	5		
	अन्यभूतः	परपुण्डः	कलकण्ठः	कोकिलः	पिकः	प्रोक्तः ।	
A sparrow 4.	1	2	3	4			
	कलविद्धश्चटकः	स्याद्	गृहवलिभुक्	नीलकण्ठश्च			॥२४३॥
A heron 2.	1	2	1	2			
	क्रीञ्चः	क्रुद्ध	स्यात्खञ्जनः	खञ्जरीटः			A wagtail 2.
	1	2	3				
	कोकश्चक्रश्चक्रवाको		रथाङ्गः				The ruddy goose.
	1	2	3				
	दावर्षाघाटः	सारसः	पुष्कराख्यः				The crane, wood-pecker 3.
The female crane 2.	1	2					
	प्रोक्ता	सद्भिः	सारसी	लक्ष्मणा	च		॥२४४॥
A crow 10.	1	2	3	4	5		
	अरिष्टः	करटः	काको	बलिपुष्टः	सकृत्प्रजः ।		
	6	7	8	9	10		
	एकदृग्बलिभुक्	घ्वाङ्क्षश्चिचरञ्जीवी	च	वायसः			॥२४५॥
An owl 4.	1	2	3	4			
	उलूकः	कौशिकः	प्रोक्तो	घ्वाङ्क्षारातिर्निशादनः ।			
A raven 5.	1	a 2	3	4	5		
	काकोलो	मौकलिद्रोणः	कृष्णकाको	वनाश्रयः			॥२४६॥
A cock 4.	1	2	3	4			
	कृकवाकुस्ताम्रचूडः		कुक्कुटश्चरणायुधः ।				
The blue jay 2.	1	2	1	b 2			
	किकिदीविः	स्मृतश्चापः	शकुन्तो	भास	उच्यते		॥२४७॥
The fork tailed shrike 3.	1	2	3	1	2		
	भृङ्गः	कलिङ्गो	धूम्याटः	सारङ्गश्चातको	मतः ।		A kind of bird 2.
A skylark 2.	1	2	1	2			
	व्याघ्राटस्तु	भरद्वाजः	शुकः	कीर	उदाहृतः		॥२४८॥
A kind of bird 3.	1	c 2	3	1	2		
	आटिः	शाररिरातिः	स्यादुत्क्रोशः	कुररो	मतः ।		An osprey 2.
A species of water bird.	1	2	1	2			
	दात्यहो	जलरङ्गुः	स्यात्कोयष्टिः	शिखरी	स्मृतः		॥२४९॥
							A sort of aquatic bird 2.

a मौकलि, मौकलि, मोद्गवि b भास c शाररिरात्यात
उत्क्रो ।

A crane.	¹ वको ² वकोटो ¹ विज्ञेयो ² वलाका ¹ विस्रकण्ठका ।	A sort of female crane 2.
A kite 3.	^{1a} आतापी ² शकुनिश्चिल्लो ³ मद्गुः ¹ स्याज्जलवायसः ॥२५०॥	The diver bird 2.
A swan, a gander 4.	¹ हंसाः ² श्वेतच्छदाः ³ प्रोक्ताश्चक्राङ्गा ⁴ मानसौकसः ।	
A goose 4.	¹ वारला ² हंसकान्ता ³ स्याद्वरला ⁴ वरटा तथा ॥२५१॥	
A flamingo, a sort of goose with red legs and bill.	¹ आताम्रै ² राजहंसाश्च ¹ धार्तराष्ट्राः ¹ सितेतरैः ।	A sort of goose with black legs & bill.
	¹ मलिनैर्मल्लिकास्याश्च ¹ कथ्यन्ते ¹ चरणाननैः ॥२५२॥	A sort of goose with brown legs and bill.
A drake, a duck.	¹ पक्षैराधूसरैर्हंसाः ¹ कलहंसा इति ¹ स्मृताः ।	
A sort of falcon 2.	¹ प्रोच्यन्ते ^b प्राचिकाः ² श्येनाश्चटिकाः ¹ क्षुद्रपक्षिकाः ² ॥२५३॥	A small bird 2.
	^c जीवञ्जीवकपिञ्जलचकोरहारीतवञ्जुलकपोताः ।	
	^c कारण्डवकादम्बक्रकराद्याः ¹ पक्षिजातयो ¹ ज्ञेयाः ॥२५४॥	
A bee 13.	¹ मधुकरमधुपमधुव्रतशिलीमुखभ्रमरभृङ्गपुष्पलिहः ² ³ ⁴ ⁵ ⁶ ⁷ ।	
	⁸ इन्दिरालिषट्चरणचञ्चरीकालिनो ⁹ ¹⁰ ^d ¹¹ ¹² ¹³ द्विरेफाः स्युः ॥२५५॥	
A cricket.	¹ शिल्लीका ² चीरी ¹ स्यात्सरघा ² मधुमक्षिका ³ भवेत्क्षुद्रा ।	A bee 3.
A spider 5.	¹ लूतोर्णनाभमर्कटजालिककृमयश्च ² ³ ⁴ ^e ⁵ तुल्यार्थाः ॥२५६॥	
A moth 2.	¹ पतङ्गः ² शालभः ¹ प्रोक्तः ² खद्योतो ¹ द्योतिरिङ्गणः ।	A glow-worm, a fire-fly 2.
A sort of lizard.	¹ हालाहलश्चाञ्जनिका ² ज्येष्ठा ¹ स्याद् ² गृहगोधिका ॥२५७॥	A house-lizard.
A village 4.	¹ ग्रामः ² संवसथो ³ ज्ञेयो ⁴ ग्रामाधानं ¹ च ² खेटकम् ।	
Born or living in a village 3.	¹ ग्रामीणास्तु ² निगद्यन्ते ³ ग्राम्या ⁴ ग्रामेयका इति ॥२५८॥	
	¹ ग्रामान्तिकमुपशल्यं ² पर्यन्तः ³ परिसरः ⁴ कटः ¹ प्रोक्तः ।	Out skirts of a village or town.
Limit, boundary 5.	¹ अवधिर्मर्यादा ² स्यादाघाटः ³ सीम ⁴ सीमा ⁵ च ॥२५९॥	

a आतापी b प्राचिका सेना चटिका, सेनाश्चिटिका, सेनाश्चिटिकाः
c कारण्डवकादम्बक्रकराद्याः, कारण्डवकादम्बकराद्याः, कादवः
कदम्बकः, क्रकराद्याः, कारण्डवकादम्बकः कृकराद्याः, कारण्डवकादम्बकक्र-
राद्याः d चिचिरीका, चिचरीका, चिरीका e क्रिमयश्च, क्रमयश्च
f ज्योतिरिङ्गणः; ज्योतिरिङ्गणः; द्योतिरिङ्गणः; द्योतिरिङ्गणः ।

A way, the road (also सृतिः)	1 2 3 4 5 6 7 अध्वा पन्थाः पद्धतिरेकपदी वर्त्म वर्तनी सरणिः ।	
	8 9 10 11 12 अयनं पदवी मार्गः पद्या च निगद्यतं निगमः ॥२६०॥	
	ग्रामयोरन्तर दीर्घं प्रान्तरं परिकीर्त्यते ।	A long lonesome or solitary path.
A hamlet, a station of cowherds 2.	1 2 1 2 घोष आभीरपल्लीस्यात्पक्कणः शवरालयः ॥२६१॥	The hut of a barbarian or chāndāla.
A cowpen 5.	1 2 3 4 5 व्रजः स्याद् गोकुलं गोष्ठं गोवृन्दं गोधनं धनम् ।	
Rich in cattle.	1 2 3 1 गोमान् गोमी च गोस्वामी गोविन्दोऽधिकृतो गवाम् ॥२६२॥	The superintendent of cows 1.
An ox, a bull 11.	1 2 3 4 5 6 उक्षानड्वान्वलीवर्दः ककुच्चान्वृषभो वृषः ।	
	7 8 9 10 11 ऋषभः सौरभेयो गौर्वाडिवेयोऽथ शाक्वरः ॥२६३॥	
A calf 2.	1 2 1 2 तर्णकः स्मर्यते वत्सो दम्यो वत्सतरः स्मृतः ।	A steer 2.
A bull fit for castration.	1 आर्षभ्यः स च विज्ञेयः पण्डत्वे यस्य योग्यता ॥२६४॥	
A large bull 2.	1 2 1 2 महोक्षः स्यादुक्षतरौ वृद्धोक्षस्तु जरद्गवः ।	An old ox 2.
The bullock attached to the shaft.	1 धुरं वहति यो धुर्यो धीरेयः स च कथ्यते ॥२६५॥	
An ox carrying burden on his back 2.	b 1 2 1 2 स्यूरी स्यात्पृष्ठवाह्यस्तु स्कन्धिकः स्कन्धवाहकः ।	An ox carrying burden on his shoulders 2.
A bull's hump 2.	1 2 1 2 अंसकूटस्तु ककुदं सास्ता स्याद् गलकम्बलः ॥२६६॥	A dewlap 2
The head of an ox.	c 1 1 नीचकी च शिरोदेशः स्कन्धदेशो वहः स्मृतः ।	The shoulder of an ox.
Nozzled with a string (नस्या) through the nose 2.	1 2 1 2 नस्योतो नस्तितः प्रोक्तः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥	A young ox that has got the first six teeth.
An ox whose horns are broken.	1 2 1 2 भग्नशृङ्गस्तु कूटः स्याद्विषाणं शृङ्गमुच्यते ॥२६७॥	A horn 2.
A cow 11.	1 2 3 4 5 6 अध्न्या गौर्माहियी सुरभिर्वहुला च सौरभेयी च ।	
	7 8 9 10 11 उन्नार्जुनी च रोहिण्युक्तानडुही बुधैरनड्वाही ॥२६८॥	
A cow that has taken the bull 2. A cow for the first time with a calf 2.	1 2 1 1 1 2 वेहृद्वृषभोपगता प्रष्ठोही गभिणी वशा बन्ध्या ।	A barren cow 2.
A milch cow.	1 2 1 2 d धेनुर्वप्रसूता वष्कयणी प्रौढवत्सा स्यात् ॥२६९॥	A cow that has full grown calves.

a परिकीर्तितम् b स्यूरी स्यात्पृष्टि c नीचिकी d च ।

A cow which has miscarried 2.	¹ अवतोका	² स्रवद्गर्भा	¹ भद्रा	² गौर्गोमतल्लिका	;	An excellent cow 2
A tractable cow 2.	¹ अचण्डी	^{a 2} सूरता	¹ प्रोक्ता	² वत्सकामा तु वत्सला	॥२७०॥	A cow fond of her calf 2.
An udder 2.	¹ ऊधः	² स्यादापीनं	¹ पीनोधनी	² पीवरस्तनी	प्रोक्ता ।	A cow with a large udder 2.
An excellent cow 2.	¹ श्रेष्ठा	^{2 b} च नैचिकी	¹ स्याद्द्रोणदुग्धा	² प्रचुरदुग्धा	च ॥२७१॥	A cow yielding much milk 2.
A cow fit to receive the bull 2.	¹ काल्योपसर्या	² प्रजने	प्रसिद्धा ,			
A cow that has many calves 2.		¹ परेष्टुका	च	^{c 2} प्रचुरप्रसूतिः ।		
	विजायते	¹ या	प्रतिवत्सरं	गौः ,		
A cow bearing a calf every year.		¹ समांसमीनेति		निगद्यतेऽसौ	॥२७२॥	
A cow which has had only one calf, young cow.	¹ गृष्टिः	¹ सकृत्प्रसूता	² स्यात्पलिकनी	बालगर्भिणी ।		A cow for the first time with calf 2.
Coming or got from a cow as milk, curd etc 2.	¹ गव्यं	² गोसम्भवं	¹ सर्वं	² करीषं गोमयं	स्मृतम् ॥२७३॥	Cow dung 2.
Milk 6.	¹ ऊधस्यं	² क्षीरं	³ स्याद्दुग्धं	⁴ स्तन्यं	⁵ पयश्च	⁶ पीयूषम् ।
Fresh butter 3.	¹ दधिसारं	² नवनीतं	³ ब्रुवते	ह्यैङ्गवीनं	च ॥२७४॥	
Name of butter-milk 6.	¹ तक्रमरिष्टमुदशिवदृण्डाहतकालशेयमथितानि	²	³	⁴	⁵	⁶
Thin curd 2.	¹ द्रप्सं	² दध्यघनं	¹ स्यात्सर्पिर्घृतमाज्यमाधारः	²	³	⁴
Thick, congealed 2.	¹ शीनं	² स्त्यानं	¹ शृतं	² पक्वं	¹ विलीनं	² द्रुतमुच्यते ।
A churning stick 5.	¹ मन्था	² मन्थश्च	³ मन्थानो	⁴ त्रैशाखः	⁵ खजकस्तथा	॥२७६॥
A rope for tying a cattle 3.	¹ सन्दानं	^{2 d} दामनी	³ दाम	पशूनां	बन्धनं	मतम् ।
A ram 2.	¹ अजः	² प्रोक्तः	स्तभो	^{1 e 2} वस्तश्छागश्छगलकश्छगः	³	⁴
Any young domestic animal.	¹ वर्करः	कथ्यते	सद्भिः	सर्वोऽपि	तरुणः	पशुः ।
An animal without horns.	¹ तूवरः	शृङ्गहीनस्तु	पुमानव्यञ्जनश्च	यः		॥२७८॥

a सूरिना, सूरिता b नीचकी, नैचका c प्रचूरप्रवृत्तिः d दामिनी
e वस्तः छागः, गछः छागः, वस्तुः छागः, वत्सश्छागः गछछागछगल,
f व्यंजनस्तु ।

A sheep 8.	1 2 3 4 5 6 7 8 अविरुर्णायुरध्रो हुडुरणो वृष्णिमेषमेण्डाः स्युः ।	
A ewe's milk 3.	1 2 3 अविसोढमविमरीसं स्यादविदूसं च दुग्धमवेः ॥२७९॥	
A camel 7.	1 2 3 4 5 6 7 दासेरकः क्रमेलक उष्ट्रो मयरवणकरभशृङ्खलकाः ।	
An ass 5.	1 2 3 4 5 बालेयश्चक्रीवान् खरगर्दभरासभाश्च तुल्यार्थाः ॥२८०॥	
A dog 8.	1 2 3 4 5 a कौलेयकः सारमेयो भषणः श्वा च कुकुरः । 6 7 8 शुनको मृगदंशश्च बुधैः शालावृको मतः ॥२८१॥	
A hunting dog 1.	1 b मृगव्ये कुशलः श्वा च विश्वकद्रुरिति स्मृतः ।	
A mad dog 1.	1 2 अलर्को रोगितो ज्ञेयः शुनकी सरमोच्यते ॥२८२॥	A bitch 2.
A yoke of six.	1 c पशूनां षट्कसंख्यायां षड्गवं स्मर्यते बुधैः ।	
A pair, a couple.	1 द्वित्वे च गोयुगं तेषां नामोच्चारणपूर्वकम् ॥२८३॥	
A country 4.	1 2 3 d 4 नीवृज्जनपदो देश उपवर्तनमिष्यते ।	
People, man 3.	1 2 3 जनो लोकः प्रजा प्रोक्ता विषयो ग्रामसंख्यया ॥२८४॥	
A town 11.	1 2 3 4 पत्तनं स्यादधिष्ठानं निगमः पुटभेदनम् । 5 6 7 8 9 10 11 नगरं नगरी द्रङ्गः स्थानीयं पूः पुरी पुरम् ॥२८५॥	
Capital 2.	1 2 स्कन्धावार इति प्राज्ञै राजधानी निगद्यते ।	
Suburb 2.	1 2 शाखानगरमाख्यातं तथोपनगरं बुधैः ॥२८६॥	
	1 2 विदेहा मिथिला प्रोक्ता काशिर्वाणसी स्मृता ।	
	1 c 2 1 2 अवन्त्युज्जयिनी ज्ञेया कन्यकुब्जा महोदया ॥२८७॥	
An embankment at the gate of a city 2.	f 1 2 1 2 हस्तिनखः परिकूटं च कथ्यते गोपुरं पुरद्वारम् ।	Gate of a city 2.
Rampart 3.	1 2 3 g 1 2 वप्रं शालं प्राकारमाहुरररं कपाटं च ॥२८८॥	The leaf of a door 2.

a कुकुरः b द्रुरिति, विश्वदभूरिति c पटत्वं, पद्म, पद् d उपवर्तत ।

e ज्जयनी f हस्तिनखं g हुररकं, हुररि, हुरररीं, हुररं, हुररवि ।

Carriage road 3.	¹ प्रतोली ² विशिखा ³ रथ्या ¹ मुखं ² निःसरणं स्मृतम् ।	The entrance, egress or outlet from a building 2.
A place where several roads meet.	¹ शृङ्गाटकः ² पथां ^a श्लेषः ³ संस्थानं तु ³ चतुष्पथम् ॥२८९॥	
Building site 2.	¹ गृहभूमिस्तु ^{2 b} वास्तुः ¹ स्याद्वाट ² आवेष्टको ³ वृतिः ।	A wall, an enclosure 3.
A royal tent.	गृहस्थानं स्मृतं राज्ञामुपकार्योपकारिका ॥२९०॥	
A dwelling place or a dwelling house 30.	¹ आवासावसथं ² गृहं ³ च ⁴ भवनं ⁵ स्थानं ⁶ निशान्तं ⁷ कुलं , ⁸ संस्त्यायो ⁹ निलयो ¹⁰ निकाय्यमुट्जं ¹¹ गेहं ¹² कुटं ¹³ मन्दिरम् । ¹⁵ धिष्ण्यं ¹⁶ धाम ¹⁷ निकेतनं ¹⁸ च ¹⁹ सदनं ²⁰ पस्त्यं ²¹ च ²² वास्तु ²³ क्षयः . ²⁴ शाला ²⁵ वेश्म ²⁶ निवेशनोदवसिते ²⁷ प्रोक्ते ²⁸ च ²⁹ सन्नौकसी ॥२९१॥ ³⁰ शरणमगारं ³⁰ निवसनमालय एकार्थवाचकाः शब्दाः ।	
A lying in chamber 2.	¹ अपवरकं ² गर्भगृहं ¹ संजवनं ² स्याच्चतुःशालम् ॥२९२॥	A square formed by four houses 2.
A palace, a temple 1.	गृहमिष्टकादिरचितं प्रासादो देवतानरेन्द्राणाम् ।	
A shed for sacrifice 1.	^{c 1} आयतनं ^d देवानामन्येषां ¹ धनवतां ¹ हर्म्यम् ॥२९३॥	Mansion, a palace.
A palace.	सुधाधवलितं सौधं कुट्टिमं बद्धभूमिकम् ।	Paved floor 2.
A platform 2.	^{c 1} इन्द्रकोशस्तमङ्गः ² स्याददृश्चाट्टालको ¹ मतः ॥२९४॥	An attic 2.
A kitchen 3.	¹ पाकस्थानं ² रसवती ³ कथ्यते ³ तन्महानसम् ।	
Sleeping room 2.	उशन्ति ¹ शयनस्थानं ² वासागारं ³ विशारदाः ॥२९५॥	
A workshop 2.	¹ आवेशनं ² शिल्पिशाला ¹ वाजिशाला ² तु ² मन्दुरा ।	A stable 2.
A shop, a stall 3.	¹ पण्यविक्रयशाला ² स्यादापणो ³ विपणिस्तथा ॥२९६॥	
A manufactory 2.	¹ कर्मशाला ² च ² कारूणामन्वासनमुदाहृतम् ।	
A shed on the road for accommodating passengers with water 2	¹ प्रपा ² पानीयशाला ¹ स्यात्सत्त्रशाला ² प्रतिश्रयः ॥२९७॥	A poor house 2.

a च b वास्तुं c आयतनं च d धनवतां च
e इन्द्रकोशस्तु, आवेशिनं ।

A shelter.	¹ उपघ्न ² आश्रयः प्रोक्तो मुनीनां स्थानमाश्रमः ।	Abode of mendicants.
The hut of an ascetic.	¹ मठश्च ^a व्रतिनां ¹ स्थानं ¹ मण्डपः स्याज्जनाश्रयः ॥२९८॥	A pavilion.
A terrace before a house 3.	¹ वेश्मैकदेशः ² प्रघणः ³ प्रघाणः स्यादेलिन्दकः ।	
A court yard 2.	¹ अजिरं ² प्राङ्गणं ¹ प्रोक्तं ² वेदिका च ² विर्तादिका ॥२९९॥	A raised square ground 2.
The gate of a city 3.	¹ द्वाद्द्वारं ³ बलजं ¹ ज्ञेयमर्गला परिघः ² स्मृतः ।	A bolt 2.
The rentil of a door.	¹ उत्तरङ्गं ¹ मतं ¹ तिर्यक् ² द्वारस्योपरि ¹ दारु यत् ॥३००॥	
Buntings 2.	¹ बुधैर्वन्दनमाला ^b तु ² तोरणं ¹ परिकीर्त्यते ।	
A ladder flight of stairs 4.	¹ आरोहणं ² स्यात्सोपानं ³ निःश्रेणिरधिरोहिणी ⁴ ॥३०१॥	
Threshold 2.	^d ¹ गृहावग्रहणी ² प्रोक्ता ² देहली ^c तु ¹ मनीषिभिः ।	
A brush, a broom 2.	¹ संमार्जनी ² वर्धनी ¹ स्यात्सङ्करोज्वकरः ^f ² स्मृतः ॥३०२॥	Dustsweepings 2.
The wooden frame of a roof 2.	¹ आच्छादनं ² स्याद्वलभी ¹ गृहाणां ,	
A beam supporting the frame-work of a roof.	¹ गोपानसी ¹ दारु च ¹ वक्रसंस्थम् ।	
Eaves.	^g ¹ नीर्घं ² वलीकं ³ पटला तमाहुः ,	
A dove cot.	¹ कपोतपाली ^h च ² विटङ्कसंज्ञा ⁱ ॥३०३॥	
An airhole, a little round window 4.	¹ वातायनो ² गवाक्षश्च ³ जालकं ⁴ जालमुच्यते ।	
An inner court of a palace 2.	¹ कक्षान्तरं ² प्रकोष्ठं च ¹ चन्द्रशाला ² शिरोगृहम् ॥३०४॥	An upper storey 2.
A kind of palace.	¹ स्वरितको ² वर्धमानश्च ³ नन्द्यावतदियस्तथा ।	
	⁴ विच्छन्दकविशेषाः ¹ स्युरमी ¹ भूपतिवेश्मनाम् ॥३०५॥	
	¹ परिवारः ² परिकरः ³ परिस्पन्दः ⁴ परिग्रहः ।	
Retinue, follower, family 7.	^m ⁵ तयोपकरणं ⁶ प्रोक्तं ⁷ परिवर्हः ⁿ परिच्छदः ॥३०६॥	

a व्रतिनां शाला b च c रोहणी d गृहावग्रहणी e च
f वस्करः, विक्ररः g नीर्घं h पालीं i संज्ञाम् j गवाक्षस्तु
k प्रकोष्ठं स्यात्, प्रकाष्ठं तु l परिस्पन्द m तयोपकरणं n परिच्छदः ।

Bed 5.	पर्यङ्कः शयनं शय्या तल्पं च तलिनं स्मृतम् ।	
A fence 2.	अपाश्रयस्तु विद्वद्भिः कथ्यते मत्तवारणः ॥३०७॥	
A blanket.	प्रवेण्यास्तरणं वर्णः परिस्तोमः कुयः कुथा ।	
	नवतं चेति तुल्यार्थाः प्रच्छदश्चोत्तरच्छदः ॥३०८॥	A cover, a wrapper 2
A screen surrounding a tent 2.	अपटी काण्डपटः स्यात्प्रतिसीरा जवनिका तिरस्करिणी ।	A curtain 3.
A pillow 3.	उच्छीर्षकमुपधानं धीरैरुपवर्हमाख्यातम् ॥३०९॥	
An awing, a canopy 4.	चन्द्रोदयो वितानं स्यादुल्लोचः कदकस्तथा ।	
A fan 2.	व्यञ्जनं तालवृन्तं च विष्टरः पीठमासनम् ॥३१०॥	A seat, a chair 3.
A couch 2.	वेत्रासनं तथासन्दी कङ्कतं केशमार्जनम् ।	A comb 2.
A wooden shoe 4.	पादुकानुपदीना स्यादुपानत्पादरक्षणम् ॥३११॥	
A wooden spoon or ladle 4.	दर्वी तर्दूश्च खजिका कथ्यते दारुहस्तकः ।	
A basket 2.	पेटां वदन्ति मञ्जूषां कुशूलं धान्यकोष्ठकम् ॥३१२॥	A granary 2.
A frying pan 2.	अम्बरीषो भवेद् भ्राष्ट्रः कन्दुः स्वेदनिका स्मृता ।	An iron plate for baking cakes (त्वा)
An oven 4.	चुल्लयश्मन्तकमुद्धमानं स्मृताधिश्रयणी बुधैः ॥३१३॥	
A portable stove 3.	अङ्गारशकटीं प्राहुर्हसन्तीं च हसन्तिकाम् ।	
A pot 6.	उखा स्थाली चरुः कुम्भी पिठरं कुण्डमुच्यते ॥३१४॥	
A boiler 2.	कटाहः कर्परो ज्ञेयो भृङ्गारः कनकालुका ।	A golden vase 2.
A dish 3.	शालाजिरो वर्धमानः शरावः स्मर्यते बुधैः ॥३१५॥	

a उपाश्रयस्तु, आयाश्रयस्तु, अपाश्रयस्तु · b नवतं c खजक, खजक, खदिका, खजाका d मुद्धमानं, मुद्धानं, मुद्धानं, मध्वानं ।

A kind of drinking vessel 2.	a 1 2 1 2 कोशिका मल्लिका प्रोक्ता पिधानं स्यादुदञ्चनम् ।	A lid, a cover 2.
A water-jar 14.	1 2 3 4 5 6 घटः करीरः कलशः कुटः कुम्भो निपः स्मृतः ॥३१६॥	
	7 8 9 10 कर्करी करकः प्रोक्तो वर्धनी च गलन्तिका ।	
	11 b 12 13 14 गर्गरी मन्यनी प्रोक्ता मणिकः स्यादलिञ्जरः ॥३१७॥	
Sour gruel 9.	1 2 3 c 4 5 घान्याम्लमारनालं सन्धानं काञ्चिकं च सौवीरम् ।	
	6 7 8 9 d अभिषवमवन्तिसोमं तुषोदकं शुक्तमिच्छन्ति ॥३१८॥	
Boiled rice 7.	1 2 e 3 4 5 6 f 7 अन्धः कूरं भक्तं दिदीविरन्नं तथोदनो भिस्ता ।	
Food 2.	1 2 1 2 g 3 अशनं स्यादाहारः पूपापूपौ च पूपलिका ॥३१९॥	A ricecake 3.
Rice gruel 5.	1 2 3 4 h 5 यवागूसृष्णिका श्राणा तरला च विलेपिका ।	
Savoury food, a dainty dish made of milk 3.	i 1 2 3 क्षैरेयी पायसं पोक्तं परमान्नं च सूरिभिः ॥३२०॥	
Sweets 2.	j 1 2 k 1 2 मिष्टान्नं व्यञ्जनं ज्ञेयं वेषवार उपस्करः ।	Condiment 2.
Whey 2.	1 2 1 2 दधिमण्डो भवेन्मस्तु करम्भो दधिसक्तवः ॥३२१॥	Barley meal mixed with coagulated milk 2.
A kind of broth; made of or from or mixed or sprinkled with coagulated milk 3.	1 2 3 1 2 दाधिकं संस्कृतं दध्ना सार्षिषं सार्षिषा स्मृतम् ।	Dressed or cooked with clarified butter 2.
Salted prepared with brine, briny.	l 1 2 लवणोदकसेसिद्धमुदलावणिकं मतम् ॥३२२॥	
	1 2 3 अङ्गारेषु विपक्वं मांसं भूतिर्भूटकं भृष्टम् ।	Roasted meat 3.
Dressed or boiled in a pot 2.	n 1 2 1 2 उख्यमुखासंसिद्धं शूले शूल्यं भट्टित्रं च ॥३२३॥	Roasted on a spit 2.
Coagulated milk 2.	1 2 किलाटः कूचिका चेति क्षीरस्य विकृती उभे ।	
Raw sugar 1.	o 1 1 1 2 फाणितविकृतिर्गौडी मत्स्यण्डी खण्डशर्कराः ॥३२४॥	Granulated sugar 2.
Gauze Spirit distilled from molasses 1.		

a कोशिका b मन्यनी c काञ्चिकं d शुक्ति, सुक्त, शिक्ल e कूरं f तथोदनं भिस्ता, तथोदनो भिस्ता, तथोदनी भिस्ता g पूपिका h तरणं, तरुणं, नरणं i क्षैरेयी, क्षैरेयं, क्षैरेयं j मिष्टान्नं भोजनं ज्ञेयं k वेषवार, वेषापार l करंबो m स्मृतम् n उख्यमुखायां, उख्यमुखाया o फाणितं, फणितं ।

	1	2	3	4	5	
	वल्भनमभ्यवहारः	प्रत्यवसानं	च	जेमनं	जग्धिः ।	
Eating 11.	6	7	8	9	10	11
	खादनमशनं	भक्षणमाहारो	भोजनं	स्वदनम्	॥३२५॥	
Enough 2.	1	2	1	2		
	पर्याप्तमुपसम्पन्नं	तृप्तिः	सौहित्यमुच्यते ।		Satisfaction 2.	
The remnants of food 2.	1	2	1	2		
	विघसो	भुक्तशेषं	स्याद्भुक्तोच्छिष्टं	तु	फेलिका	॥३२६॥
A vessel 4.	1	2	3	4		
	अमत्रं	भाजनं	पात्रं	स्थालं	तुल्यार्थमिष्यते ।	
A goblet.	1	a 2	3	4		
	गल्वर्कश्चानुतर्षश्च	चषकः	सरकः	स्मृतः	॥३२७॥	
Liquor shop.	1	2	b 1	2		
	आपानं	पानगोष्ठी	स्यात्सपीतिः	सहपानकम् ।	Drinking in company 2.	
A relish, a stimulant to drink 3.	c 1	2	3			
	उपदंशावदंशौ	च	चक्षणं	सम्प्रचक्षते	॥३२८॥	
	1	2	3 d	4	5	
	मध्वासवः	शीघ्रु	सुरा	प्रसन्ना ,		
Intoxicating drink 24.	e 6	7	8			
	परिश्रुता	स्यान्मदिरा	मदिष्ठा ।			
	9	10	f 11			
	कादम्बरी	स्वादुरसा	च	शुण्डा ,		
	12	13	14			
	गन्धोत्तमा	माधवकश्च	हाला	॥३२९॥		
	15	g 16	17	18	19	
	कल्यं	कश्यं	तथा	मद्यं	मैरेयं	कापिशायनम् ।
	20	21	22 h	23	24	
	माध्वीकमासवः	प्रोक्तः	परिश्रुद्धारुणी	मधु	॥३३०॥	
Man, people 12.	1	2	3	4	5	6
	मनुष्यो	मानुषो	मर्त्यो	मनुजो	मानवो	नरः ।
	7	8	9	10	11	12
	पुमान्पञ्चजनो	ना	च	पुरुषः	पूरुषश्च	विद् ॥३३१॥
Learned, intelligent, wise 28.	1	2	3	4		
	धीरो	धीमान्	लब्धवर्णो	विपश्चिद् ,		
	5	6	7	8		
	वृद्धो	विद्वान्	प्राप्तरूपोऽभिरूपः ।			
	9	10	11	12	13	
	सूरिः	प्राज्ञः	पण्डितः	सन्मनीषी ,		
	14	15	16	17		
	ज्ञो	दोषज्ञः	कोविदः	स्यात्प्रबुद्धः	॥३३२॥	

a चानुकर्षश्च b स्यात्सम्पीतिः c उपदंशौ d शीघ्रु e परिश्रुता, परिश्रुता f सुण्डा, सुडा g कस्यं h परिश्रुद्वा, परिश्रुद्वा, परिश्रुद्वा ।

	18	19	20	21	22	23	24	
	वुधः	सुधीः	कृती	कृष्टिः	कविर्व्यक्तो	विशारदः	।	
	25		26		27	28		
	विचक्षणश्च	मेघावी	संख्यावान्मतिमान्मतः	॥३३३॥				
Understanding, intellect 13.	1	2	3	4	5	6	7	
	प्रेक्षा	प्रज्ञा	प्रतिभा	धीविषया	शेमुषी	मनीषा	च ।	
	8	9	10	11	12	13		
	बुद्धिर्मतिश्च	मेघा	संख्या	संवित्तिरूपलब्धिः	॥३३४॥			
Skilful, clever, dexterous, accomplished 11.	1	2	3	4	5			
	चतुरः	स्यात्क्षेत्रज्ञः	कृतहस्तः	कृतमुखश्च	कृतकर्मा	।		
	6	7	8	9	10	11		
	दक्षः	कुशलोऽभिज्ञो	निष्णातः	शिक्षितः	प्रवीणश्च	॥३३५॥		
Stupid, foolish, ignorant 11.	1	2	3	4	5	6		
	वैधेयो	वाल्लिशो	धालो	जडो	जात्मो	यथोद्गतः	।	
	7	8	9	10	11			
	मूढो	मन्दो	विवर्णश्च	मूर्खः	स्यान्मातृशासितः	॥३३६॥		
Bad, inferior, low, vile 13.	1	2	3	4	5	6	7	
	अवणिमणकमपसदमवमवद्यं	निकृष्टमपकृष्टम्	।					
	8	9	10	11	12	13		
	अधमं	चेलं	काण्डं	खेटं	पापं	च रेफसं	प्राहुः	॥३३७॥
A thief, a robber 10.	1	2	3	4	5			
	ऐकागारिकतस्करदस्युप्रतिरोधकाः	परास्कन्दी	।					
	6	7	8	9	10			
	चौरो	मल्लिभ्लुचः	स्यात्परिमोषी	पारिपन्थिकः	स्तेनः	॥३३८॥		
A thief who steals in the very sight of the possessor.					1			
	पश्यतो	यो	हरत्यर्थं	स	चौरः	पश्यतोहरः	।	
			1	2	3			
	द्रव्यं	ह्यपहृतं	लोप्यं	स्तेयं	चौर्यमिति	स्मृतम्	॥३३९॥	Theft, stolen property 3.
A shoplifter, a cloth-stealer 2.	b 1	2	1	2	3			
	पाटच्चरः	पटचौरो	बद्धो	नद्धश्च	संयतः	।		Bound, tied 3.
Conferring happiness 4.	1	2	3	4				
	क्षेमङ्करो	रिष्टतातिः	शिवतातिः	शिवङ्करः	॥३४०॥			
Dependent, sub- missive 8.	1	2	3	4				
	परवांस्तु	पराधीनो	निघ्नः	परवशस्तथा	।			
	5	6	7	8				
	परतन्त्रः	परायत्तः	परच्छन्दश्च	गृह्यकः	॥३४१॥			
Cruel, hard 6.	1	2	3	c 4	5	6		
	कठोरः	कठिनः	क्रूरः	कक्खटः	कर्कशो	दृढः	।	
Fat 5.		d 1	2	3	4	5		
	उच्यते	बहुलः	स्थूलः	पीनः	पीवा	च पीवरः	॥३४२॥	

a पशदम b पाटचरः पटचौरो c कक्खटः कपटः कपटः,
कर्कशो दृढ उच्यते d बहुल ।

	a	1	2	3	4	5	6	
Master, lord 10.		अर्यः	परिवृढः	स्वामी	प्रभुर्नेता	च	नायकः	।
		7	8		9	10		
		अधिभूरधिपः	प्रोक्तो		ह्यधीशोऽधिपतिस्तथा		॥३४३॥	
An ascetic 7.		1	2	3	4	5	6	7
		तपस्वी	संयतः	शान्तो	मुनिर्लिङ्गी	यतिर्ब्रती		।
A Buddhist mendicant 7.	b	1		2		3		
		रजोहरणधारी	च	श्वेतवासाः	सिताम्बरः		॥३४४॥	
		4	5	6	7 c	1	2	
		नगनाटो	दिग्वासाः	क्षपणः	श्रमणश्च	जीवको	जैनः	।
		3	d 4	5 e				
		आजीवो	मलधारी	निर्ग्रन्थः	कथ्यते	सद्भिः	॥३४५॥	
A wicked person 10.		1	2	3	4	5	6	
		दुर्जनः	पिशुनः	क्षुद्रो	नीचः	कर्णेजपः	खलः	।
		7	8	9	10			
		दोषग्राही	पुरोभागी	द्विजिह्वो	मत्सरी	मतः	॥३४६॥	
Mean, miserly stingy 9.		1	2	3	4	5		
		कदर्यहीनकीनाशकिम्पचानमितम्पचाः					।	
		6	7	8	9			
		कृपणक्षुल्लकक्लीवक्षुद्रा			एकार्थवाचकाः		॥३४७॥	
Poor 6.		1	2	3	4	5	6	
		क्षुद्रदरिद्राकिञ्चनदुर्विघदुःस्थाश्च	दुर्गताः	प्रोक्ताः			।	
Low, vile 5.	f	1, 2	3	4	5			
		इतरप्राकृतपामरपृथग्जना	वर्वराश्च	तुल्यार्थाः	॥३४८॥			
	g	1	2	h 3	4	5		
		दाण्डाजिनिकः	कुहकः	कार्पटिको	जालिकश्च	कौसृतिकः	।	
Hypocrite, illusive, crafty 10.		6	7	8	9	10		
		धूर्तो	व्यंसक	उक्तो	मायावी	मायिको	मायी	॥३४९॥
Voracious 5.		1	2	3	4	5		
		आहूतः	स्यादौदरिको	भक्षको	घस्मरोऽम्बरः		।	
Insatiable.		1						
		तमसेचनकं	प्राहुस्तृप्तिर्यस्य	न	जायते	॥३५०॥		
Maintained by others 4.		1	2	3	4 i			
		परान्नः	परपिण्डादः	परजातः	परैधितः		।	
Eating all kinds of food 2.		1	2	1	2 j			
		सर्वाग्नीनः	सर्वभक्षो	मांसादी	शौष्कलः	स्मृतः	॥३५१॥	Meat-eater 2.

a आर्यः परिवृढः b ऋजोहरण, ररोहरण c श्रवणश्च
d मषमारी e निर्ग्रन्थः, निर्ग्रन्थः f इतरः g दण्डाजिनिका,
दांडाजिनिकः, दंडाजिनिकः, दांडोजिनिकः, दंडाजिनिकः h कापटिकः
i परैधिकः, परैधृतः। j शौष्कलः, मोष्कलः, मौष्कलः, मोष्कलः।

Prone or inclined to, bent on or intent upon, engrossed by 4.

उच्यते 1 प्रवणः 2 3 प्रह्वस्तत्परश्च 4 परायणः ।

Conversant with 4.

व्युत्पन्नः 1 प्रहतः 2 क्षुण्णः 3 संस्कृतश्च 4 निगद्यते ॥३५२॥

Hankering after, addicted to, longing for 5.

लोलुभं 1 लोलुपं 2 लोलं 3 लालसं 4 लम्पटं 5 विदुः ।

Quick 3.

प्रतूर्णस्त्वरितस्तूर्ण 1 उत्सुकः 2 प्रसृतः 3 स्मृतः ॥३५३॥

Desiring 2.

A valorous warrior 5.

शूरो 1 वीरश्च 2 विक्रान्तो 3 भटश्चारभटो 4 भवेत् 5 ।

Timid, frightened, afsaid, agitated 8.

दरितश्चकितो 1 भीतस्त्रस्तो 2 भीरुश्च 3 कातरः ॥३५४॥

क्षुभितः 7 शङ्कितश्चेति 8 नातिनानार्थवाचकाः ।

Generous, noble 8.

महोत्साहो 1 महोद्योगो 2 महेच्छः 3 स्यान्महामनाः ॥३५५॥

उदात्तश्च 5 तथोदीर्णो 6 महात्मोदार 7 उच्यते ।

Rich, wealthy 7.

आढ्यः 1 समृद्धो 2 घनवानिन 3 ईशो 4 घनीश्वरः ॥३५६॥

Diligent in supporting ones family 2.

अभ्यागारिकमिच्छन्ति 1 कुटुम्बव्यापृतं 2 जनाः ।

A traveller 5.

पान्योऽध्वगोऽध्वनीनः 1 स्यादध्वन्यः 2 पथिकेस्तथा ॥३५७॥

Light footed, swift 3.

जङ्घालो 1 जवनो 2 वेगी 3 पाथेयं 4 शम्बलं 5 स्मृतम् ।

Provender for journey 2.

A guest 4.

आवेशिकः 1 प्राघुणक 2 आगन्तुरतिथिः 3 स्मृतः ॥३५८॥

Hospitality 3.

आतिथेयं 1 तथातिथ्यमातिथेयी 2 च 3 कथ्यते ।

A beggar 4.

अर्थी 1 मार्गणकः 2 प्रोक्तो 3 याचकश्च 4 वनीपकः ॥३५९॥

Begging, solicitation 5.

अध्येषणैषणा 1 याच्ना 2 याचना 3 प्रार्थना 4 स्मृता ।

Hungry 5.

क्षुद्धान्क्षुभुक्षितः 1 प्सातो 2 जिघत्सुः 3 क्षुधितस्तथा ॥३६०॥

a प्रहितः b प्रोक्तं c उत्सुकः d प्रस्ततः, प्रसितः e महात्म्यो, माहात्म्यो f अभ्यागा g कुटुम्ब h जंवालो, जांघालो, जंघाजो i आवेशिकः j प्राघुणिक, प्राघुणिक k वनीयकः l क्षुद्धान् क्षुभुक्षितप्सातो, क्षुद्धान् क्षुभुक्षितप्सातो ।

Hunger 6.	1 2 3 4 5 6 अशनाया बुभुक्षा प्सा जिघत्साक्षुत्क्षुधाः समाः ।	
Angry 5.	1 2 3 4 5 कोपनः क्रोधनः क्रोधी रोषणः स्यादमर्षणः ॥३६१॥	
Anger 5	1 2 3 4 5 a कोपः क्रोधस्तथामर्षो रोषः प्रतिघ उच्यते ।	
Thirsty 4	1 2 3 4 तृषितस्तृषितः प्रोक्तः पिपासुश्च पिपासितः ॥३६२॥	
Thirst 5	1 2 3 4 5 उदन्या तर्षतृटृष्णापिपासाश्च समाः स्मृताः ।	
Covetous, greedy 6	b 1 2 3 4 5 6 तृष्णको गर्धनो गृध्नुर्लिप्सुर्लुब्धोऽभिलाषुकः ॥३६३॥	
Covetousness, desire 6.	1 2 3 c 4 5 6 तृष्णाभिलाषो लिप्साशा घनाया गर्धनोच्यते ।	
Dumb, speechless 2.	1 2 1 d 2 अधरो हीनवादी स्यात्प्रसक्तः प्रसृतः स्मृतः ॥३६४॥	Longing for 2.
A slave, a servant.	1 2 3 4 5 दासो दासेरकश्चेटो भुजिष्यः किङ्करो मतः ।	
Gentle or pleasant discourse 2.	1 2 1 2 श्लक्ष्णो मधुरवाक् प्रोक्तः स्थूललक्षो बहुव्ययी ॥३६५॥	Munificent 2.
Affable in address.	1 2 प्रियवाग्दानशीलश्च वदान्यः परिकीर्तितः ।	
Despised 4.	1 2 e 3 4 भवेदक्षिगतो द्वेष्यः प्रणाय्योऽसंमतो मतः ॥३६६॥	
Handsome plea- sing 5.	1 2 3 4 5 चक्षुष्यः सुभगो ज्ञेयो वल्लभो दयितः प्रियः ।	
A poltroon, a dunghill-cock 3.	1 2 3 गेहेनर्दी गेहेशूरः पिण्डीशरश्च कथ्यते ॥३६७॥	
The dog in the manger 1.	1 स्थानस्थो यो परान् द्वेष्टि गोष्ठश्च तं विदुर्बुधाः । असौ पञ्चजनीनः स्याद्यो भाण्डादिरतो नरः ॥३६८॥	An actor, a mimic.
A passionless saint 2.	1 2 1 f 2 वैरङ्गिको विरागाहो घनवानस्तिमान्मतः ।	Rich 2.
A messenger 2.	g 1 2 1 2 प्रेष्यः प्रोक्तः परिस्कन्दः कर्मशूरश्च कर्मठः ॥३६९॥	A careful worker, one who works scrupulously.
Skilful, clever.	1 अलङ्कर्मिण इत्युक्तः कर्मशीलस्तु यः पुमान् ।	
Swift, quick 2.	1 2 1 2 उत्तालस्त्वरितो ज्ञेयो विश्रम्भः स्थिर उच्यते ॥३७०॥	Trustworthy, reliable 2.

a इष्यते b तृक्षिको c लिप्सा च शायनाया, लिप्सा च शाघनाया, लिप्सा स्याद्घनाया, लिप्सास्याद्घनाया d प्रसितः e प्राणघः, प्रेणायः, प्राणाच्छायः, प्रोणाद्यः, प्राणाय्ये f स्तिमान्स्मृतः, स्तिवान्मतः, स्तिभवामतः g प्रेषः प्रेष्यः ।

	तीक्ष्णोपायेन ¹ योऽन्विच्छेत्स ¹ आयःशूलिको ¹ मतः ।	A man who, in order to gain an object, uses forcible instead of gentle means. Bold, impudent.
Painful.	अरुन्तुदः ¹ स्याद्वच्यको ² वियातो ¹ घृष्ट ² उच्यते ॥३७१॥	
Hurtful.	शाररुर्घातिको ^{1 2} हिंस्रो ³ नृशंसः ⁴ क्रूरकर्मकृत् ⁵ ।	
Righteous 3.	साधुः ¹ सज्जन ² आर्यः ³ स्याद्गृहमेधी ¹ गृहाधिपः ² ॥३७२॥	A house holder 2.
Intelligent, thoughtful 2.	कुशाग्रीयमतिः ¹ प्रोक्तः ² सूक्ष्मदर्शी ¹ च यः पुमान् ।	Acute, sharp-minded 2.
An eloquent.	चिद्रूपः ¹ स्यात्सहृदयः ² सहस्तः ¹ शिक्षितायुधः ² ॥३७३॥	Skilled in handling weapons 2.
Unsteady in affection or attachment.	समुखः स खलु प्रोक्तो यो वक्ति प्रतिभान्वितः । नीलीरागः स विज्ञेयः स्थिरप्रेमा च यः पुमान् ॥३७४॥	Firm and constant in affection or attachment.
Best 2.	क्षणमात्रानुरागी ^{b 1} च हरिद्राराग ^{2 1} उच्यते । शाली ¹ श्रेयानघृष्टौ ² च प्रोक्तौ शालीनशारदौ ॥३७५॥	Diffident, bashful.
Quick witted.	दूरार्थनिर्यसन्दर्शी ¹ दीर्घदृष्टिः ¹ प्रकीर्तितः ।	Foresighted.
Fatalist.	प्रत्युत्पन्नमतिर्ज्ञेयस्तत्कालोत्पन्नधीर्नरः ¹ ॥३७६॥	Talking no matter, deserving no matter, deserving no reply, talking nonsense.
Stupid 2.	यद्भविष्यो ¹ दैवपरो ¹ यद्वदः ² स्यादनुत्तरः ।	
Speaking improperly 2. At the end of compounds, anything excellent or prominent of its kind.	अज्ञो ¹ मातृमुखः ² प्रोक्तो दुर्मुखो ¹ मुखरः ² स्मृतः ॥३७७॥	A foul-mouthed 2.
Proud 2.	कद्वदो ¹ गर्हवादी ² स्यात्कट्वरः ^{c 1} कुत्सितो ² भवेत् ।	Contemptible despised 2.
Independent.	प्रकाण्डोद्धौ ^{d 1} प्रशंसायामाक्षेपे ¹ हतकः ¹ स्मृतः ॥३७८॥	Taunt.
Searching, enquiring 2.	अहंयुः ¹ स्यादहङ्कारी ² शुभंयुः ¹ शुभसंयुतः ² ।	Happy 2.
Convalescent 3.	यथाकामी ¹ स्वरुचिः ² स्यात्स्वच्छन्दो ¹ निरवग्रहः ² ॥३७९॥	
Long lived 2.	अन्वेष्टानुपदी ¹ प्रोक्तः ² प्रतिभूर्लनकः ^{1 2} स्मृतः ।	Surety sponsor 2.
Gost-herd 2.	रोगादुन्मुक्त ¹ उल्लाघः ² कल्यो ¹ वार्त्तो ^{e 2} निरामंयः ³ ॥३८०॥	Healthy 3.
	जैवातृकः ¹ स्यादायुष्मान् ² बलवानंसलो ^{1 f 2} मतः ।	Strong 2.
	जावालः ¹ स्यादजाजीवः ² कम्प्रः ¹ कामी च कामुकः ^{2 3} ॥३८१॥	Lustful 3.

a सुमुखः b शीली c स्यात्कट्वरः, करद्वरः, कांडूरः
d प्रकांडोद्धौ, प्रकांडोद्यौ, प्रकांडाब्धौ e नापंश्च कथ्यते, वात्तश्च कथ्यते,
नात्तंश्च कथ्यते f बलवान्मांसलो ।

Libertine, a gallant.	वे ¹ श्यापतिर्भु ² जङ्गः स्याद्वि ³ टः पल्ल ^a वकः स्मृतः ।	
Confused 2.	विह ¹ स्तो व्याकुलः प्रोक्तः कुण्ठो ¹ मन्दः क्रियासु यः ॥३८२॥	Slow at work 2.
Active 2.	क्रियावा ¹ न्कर्मसू ² द्युक्तो दीर्घ ^b सूत्रो जड ² क्रियः ।	Delatory, sluggard 2.
Insulted 2.	नि ^c कृतो विप्रल ² ब्धः स्यात्समु ¹ न्नद्धोऽतिग ² र्वितः ॥३८३॥	Conceited 2.
Respected, honoured 4.	प्रतीक्ष्यः कथ्यते पूज्यः पूजितोऽपचितो भवेत् ।	
Envious 2.	ईर्ष्या ¹ लुः कुहनः प्रोक्तो जारो ह्युप ² पतिः स्मृतः ॥३८४॥	A paramour 2.
Straight for ward 2.	सरलो दक्षिणो ज्ञेयो विदग्ध ¹ श्छेक उच्यते ।	Shrewd, clever 2.
Looking up wards 2.	उत्पश्यमु ¹ न्मुखं विद्यान् ¹ युञ्जं विद्यादधो ² मुखम् ॥३८५॥	Bent downwards 2
Sitting 2.	आसीन उपविष्टः स्याद्दूर्ध्वं ऊर्ध्वं ^d न्दमः स्थितः ।	Erect, raised, standing up 3.
Drunk, intoxicated 2.	क्षीवो मत्तः क्षमः शक्तः प्रगल्भः प्रौढ उच्यते ॥३८६॥	Able 2; bold 2.
Desiring, longing for 2.	उत्क उत्कण्ठितः प्रोक्तो विकलवो विह्वलः स्मृतः ।	Agitated 2.
Indolent, lazy 6.	अलसः शीतको मन्दो जडो जिह्वाश्च मन्थरः ॥३८७॥	
Deformed 2.	पोगण्डो विकलाङ्गः स्याल्लोहलोऽव्यक्तवाग्भवेत् ।	Speaking indistinctly 2.
Gambler 2.	कितवः स्याद्घूतकारो घूतमक्षवती भवेत् ।	Gambling 2.
Playing with dice 2.	अक्षो दुरोदरं प्रोक्तं सभिको घूतकारकः ॥३८८॥	The keeper of a gambling house 2.
Examiner 2.	परीक्षकः कारणिको गृह्यः पक्ष उदाहृतः ।	A partisan, a follower 2.
Noble, well-born 2.	अभिजातः कुलीनः स्यात्कुचरः कुटिलाशयः ॥३८९॥	Malevolent 2.
An elephant rider 2.	निषादिनो गजारोहा अश्वारोहास्तु सादिनः ।	A horse rider.
Charioteer 2.	रथिनः स्यन्दनारोहा नावारोहास्तु नाविकाः ॥३९०॥	A boatman.

a पल्लविकः b दीर्घसूत्री c निष्कृतो, निःकृतो, निःकुण्ठो
d स्याद्दूर्ध्वंमूढ्वंदमः स्थितः, स्याद्दूर्ध्वंमूढ्वंमवस्थितः, स्यात् ऊर्ध्वंमूर्ध्वमद-
स्थितः, स्यात् ऊर्ध्वंमूर्ध्वमदस्थितः, स्याद्दूर्ध्वंऊर्ध्वंदमस्थितिः e शीतको, शीतगो
f विपुलांगः g दरोदरं h कुलीनश्च कुचरः ।

A Brahman 10.	1 ब्राह्मणो	2 वाडवो	3 विप्रो	4 भूमिदेवो	5 द्विजोत्तमः ।
	6 अग्रजन्मा	7 द्विजन्मा	8 च षट्कर्मा	9 सोमपा	10 द्विजः ॥३९१॥
The three superior castes.	1 ब्राह्मणः	2 क्षत्रियो	3 वैश्यस्त्रयो	(3) वर्णा	द्विजातयः ।
The sudra caste 2.	1 शूद्रस्तुरीयवर्णः	2 स्यात्तद्भेदास्वत्यजाः	1 स्मृताः	॥३९२॥	
	ब्रह्मचार्यादयो	वेदे	प्रोक्ताश्चत्वार	आश्रमाः ।	
	शूद्रोऽगृहस्थ	एव	स्यात्क्षत्रियो न	यतिर्भवेत् ॥३९३॥	
	ब्रह्मचारी	भवेद्वर्णा	1 गृहस्थः	2 स्नातकस्तथा ।	
A hermit; one in the third order of his religious life 2.	1 वैखानसो	2 वानप्रस्थः	a कर्मसंन्यासिको	1 यतिः	2 ॥३९४॥
One well versed in vedas 4.	1 अनूचानः	2 सर्ववेदः	3 श्रोत्रियश्छान्दसो	4 मतः ।	
The son of a famous father.	1 प्रख्यातात्पितुरुत्पन्न	2 आमुष्यायण	3 इष्यते ॥३९५॥		
Lineage, family, race 6.	1 अन्ववायोऽन्वयो	2 वंशो	3 गोत्रं	4 चाभिजनः	5 कुलम् ।
Conduct, character, behaviour 4.	1 चरित्रं	2 चरितं	3 शीलं	4 चारित्रं	5 च समं स्मृतम् ॥३९६॥
Religious student-ship, celibacy, self-restrained.	वृत्ताध्ययनसम्पत्तिरिष्यते	ब्रह्मवर्चसम् ।			
	ब्रह्मचर्यं	बुधाः	प्राहुः	समस्तेन्द्रियसंयमम् ॥३९७॥	
	संज्ञेय	1 उपसङ्ग्राह्यो	योऽभिवाद्यो	यथाविधि ।	
Respectful salutation.	उपसङ्ग्रहणं	चापि	प्राहुः	सन्तोऽभिवादनम् ॥३९८॥	
	निवृत्तेन्द्रियलौल्यस्तु	श्रान्तः	शान्तश्च	कथ्यते ।	
Patient of bodily, mortifications or austerities etc. 2.	1 तपःक्लेशसहो	2 दातो	1 ह्यन्तर्वाणिश्च	2 शास्त्रवित् ॥३९९॥	
A teacher 2.	1 अध्यापक	2 उपाध्यायो	1 व्याख्या	2 विवरणं	स्मृतम् ।
A pupil 5.	1 शिष्यान्तेवासिनौ	2 छात्रः	3 शैक्षः	4 प्रायमकल्पिकः ॥४००॥	
An obstacle 4.	1 विघ्नोऽन्तरायः	2 प्रत्यूहो	3 व्यवायश्च	4 प्रकीर्तितः ।	
A complete perusal 2.	1 साकल्यवचनं	प्राज्ञैः	2 पारायणमुदाहृतम् ॥४०१॥		

A kind of sudra caste

The four Ashramas as specified in Vedas.

(1) Brahmacharya
(2) Grihastha
(3) Vānprastha,
(4) Sanyāsa.

A house-holder; Brahman just returned from the house of his preceptor and became an initiated house holder 2.

An ascetic, one who has renounced the world and controlled his passions 2.

Divine glory, spiritual pre-eminence resulting from sacred knowledge.

To be respectfully saluted, respectable, venerable.

Calm, peace-loving, free from lust.

Skilled or versed in scriptures, very learned 2.

Commentary 2.

a कर्मसां, कर्मसो b चाभिजनं, चाभिजनकुलम् c शांतः श्रान्तश्च
d शैक्ष्यः, शिष्यः, शैष्यः e मितिस्मृतम् ।

Oral tradition 4.	1 आगनायः	2 सम्प्रदायः	3 स्यात्पारम्पर्यं	4 गुरुक्रमः ।	
Moral 2.	1 प्रयतः	2 स्यादनुच्छिष्टः	1 a शंसितश्च	2 सुनिश्चितः ॥४०२॥	Decided 2.
An astronomer, an astrologer 8. A man of the first three classes who has lost his caste owing to non-performance of the principal purificatory rites 2.	1 सांवत्सरो	b 2 ज्योतिषिको	3 ज्ञानी	4 मौहूर्तिकस्तथा ।	
	5 कार्तान्तिकस्तु	6 दैवज्ञ	7 आदेशी	8 गणकः स्मृतः ॥४०३॥	
wicked 2.	1 ब्राह्मणः	2 संस्कारहीनः	1 स्यादवकीर्णः	2 क्षतव्रतः ।	A religious student who has committed an act against his vow of celibacy 2. A brahman who has allowed his sacred fire to become extinct. A Brahman who neglects his duties of his caste 2
Religious hypocrite, an imposter 2. One who lives by arms, a warrior, a soldier 2. One who gets a living only by the merit of his caste. An exclamation uttered by a brahman in the sense of "help ! help !"	1 शिशिवदानो	2 दुराचारस्त्यक्ताग्निर्वीरहा	1 द्विजः ॥४०४॥		A religious student who has committed an act against his vow of celibacy 2. A brahman who has allowed his sacred fire to become extinct. A Brahman who neglects his duties of his caste 2
	c 1 धर्मध्वजो	2 लिङ्गवृत्तिरस्वाध्यायो	1 निराकृतिः ॥		An unworthy brahman, a contemptuous term for a brahman.
	1 शस्त्राजीवः	d 2 काण्डस्पृष्टो	1 ब्रह्मबन्धुद्विजोऽधमः ॥४०५॥	2 e द्विजोऽधमः	
	1 जातिमात्रोपजीवी	2 च	1 कथ्यते	f 2 ब्राह्मणब्रुवः ।	
The holy sacrificial cord worn by the Hindus over their left shoulder and under the right.	g 1 अब्रह्मण्यमवध्यं	2 स्याद्	1 ब्रह्मण्यं	2 ब्रह्मणे	हितम् ॥४०६॥
	1 उपवीतं	2 ब्रह्मसूत्रं	3 प्रक्षिप्तं	4 दक्षिणे	करे ।
	1 प्राचीनावीतमन्यस्मिन्निवीतं	2 कण्ठलम्बितम् ॥४०७॥			
Washed 3.	1 आचमनमुपस्पर्शनमाप्लवनं	2 स्नानमिष्यते	3 सवनम् ।		Bathing, purificatory ablution, extracting the somā juice & drinking it.
	1 निर्णिकतं	2 प्रक्षालितमाहुधौतं	3 च	4 तुल्यार्थम् ॥४०८॥	
A religious mendicant 9.	1 पाराशरी	2 व्रती	3 भिक्षुर्मस्करी	4 पारिरक्षिकः ।	
An upper garment 3	6 परिव्राजकस्तपस्वी	7 कर्मन्दी	8 तापसः	9 स्मृतः ॥४०९॥	
Loin cloth.	i 1 वैकक्षमुत्तरासङ्गः	2 प्रोक्ता	3 वृहतिका	4 तथा ।	
A cloth to cover the privities 2,	1 पर्यस्तिका	2 परिकरः	3 पर्यङ्कुश्चेति	4 कथ्यते ॥४१०॥	
A staff.	1 कक्षापटः	2 स्यात्कौपीनं	3 कुण्डिका	4 च	5 कमण्डलुः ।
	1 आषाढो	2 व्रतिनां	3 दण्डो	4 व्रतिनामासनं	5 वृषी ॥४११॥
	a शंसितश्च	b ज्योतिषिको	c धर्मध्वजो	d काण्डस्पृष्टो, काण्ड- स्पृष्टे	e द्विजोत्तमः, द्विजोत्तमः
	f अब्रह्मण्यमवध्यं	g अब्रह्मण्यमवध्यं	h पारिरक्षकः, पारिरक्षकः	i वैकक्ष, वैकष्य,	j वृषी, भृषी ।

A sage

Name of Valmiki the reputed author of the Ramayan,

Name of Agastya,

Name of Vyas.

Sacrifice 12.

Fire producing wooden stick 2,

An altar especially, prepared for sacrifice 2,

An oblation of rice or barley of the boiled in milk for presentation to Gods 2.
Curd of milk and whey, a mixture of boiled and coagulated milk.

Offered as an oblation to fire 1.

One who offers a sacrifice to Brahaspati.

Gift, donation 10.

One who performs sacrifice 5,

Performer of many sacrifices 2,

A king 12.

१ ऋषिस्त्रिकालदर्शी २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२
 १ प्राचेतसस्तु २ वाल्मीकिर्मैत्रावरुण उच्यते ॥४१२॥
 १ उक्तोजास्तिरगस्त्यो २ लोपामुद्रापतिश्च ३ घटयोनिः ४
 १ सात्यवतेयः २ पाराशर्यो ३ द्वैपायनो ४ व्यासः ॥४१३॥
 १ यागो यज्ञः २ ऋतुः ३ स्तोमः ४ सप्ततन्तुर्मखोज्वरः ५
 ६ सत्रं ७ च ८ कथ्यते ॥४१४॥

१ वितानं २ संस्तरो ३ बर्हिः ४ सवः ५ सत्रं ६ च ७ कथ्यते ॥४१४॥
 १ निर्मन्थकाष्ठमरणिः २ प्रणीतोऽग्निश्च ३ संस्कृतः ४
 १ वेदी २ परिष्कृता ३ भूमिः ४ पात्रमुक्तं ५ ऋगादिकम् ॥४१५॥
 १ हव्यपाकश्चरुः २ प्रोक्तः ३ साध्नाय्यं ४ हविरुच्यते ५
 १ शृते २ क्षीरे ३ दधिक्षिप्तमामिक्षा ४ कथ्यते ५ बुधैः ॥४१६॥
 १ उपाकृतस्तु २ विज्ञेयो ३ मन्त्रेण ४ प्रोक्षितः ५ पशुः १
 १ हुतं २ वषट्कृतं ३ ज्ञेयं ४ यज्ञान्तोज्वभृथः ५ स्मृतः ॥४१७॥

१ वृहस्पतिसवेनेष्टं २ येनासौ ३ स्वपतिर्भवेत् ४ ५
 १ सर्ववेदास्तु २ विज्ञेयो ३ दत्तसर्वस्वदक्षिणः ४ ५ ॥४१८॥
 १ विश्राणनं २ विहापितमंहतिरपवर्जनं ३ वितरणं च ४ ५
 १ निर्वपणं च २ स्पर्शनमुत्सर्गः ३ स्यात्प्रदेशनं ४ दानम् ५ ॥४१९॥

१ यष्टा च यजमानः २ स्यादादेष्टा ३ दीक्षितो ४ व्रती ५ ॥४२०॥
 १ इज्याशीलो २ यायजूको ३ यज्वा ४ स्यादासुतीवलः ५ ॥४२१॥
 १ राजा २ राजन्यो ३ राट् ४ प्रजापतिः ५ क्षत्रियो ६ नृपः ७ क्षत्रम् ८
 १ मूर्धाभिषिक्तमूपतिपाद्यिवनरदेवलोकापालाः २ स्युः ३ ॥४२१॥

a परिष्कृता b साध्नाय्यं, साध्नाय्यहविरुच्यते c आमिष्या, आमसः
 d विहायनमंहि, विहायितमं, विहायतमं, विहायनमं e निर्वापणं
 निव्रापणं f पालाश्च ।

Fire consecrated by prayers.

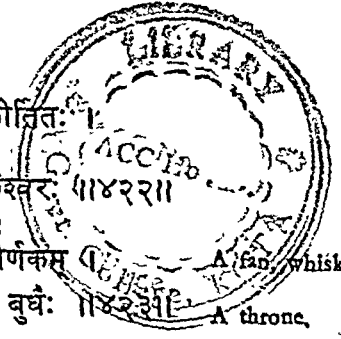
A sort of wooden ladle used for pouring clarified butter on Sacrificial fire.

An oblation of burnt offering, also of clarified butter, rice or barley mixed with Ghee.

A sacrificial animal killed during the recitation or prescribed prayers. The end or completion of a principal sacrifice.

One who performs a sacrifice by giving away all his wealth.

One who performs sacrifices in accordance with vedic precepts 2.



- An emperor. येनेष्टं¹ राजसूयेन स² सम्राट्³ परिकीर्तितः⁴ ।
 चक्रवर्ती² सार्वभौमो³ मध्यमो⁴ मण्डलेश्वरः⁵ ॥४२२॥
- Umbrella 2. आतपत्रं¹ भवेच्छत्रं² चामरं³ तु⁴ प्रकीर्णकम्⁵ ।
 हैमं¹ सिंहासनं² राज्ञां³ स्मृतं⁴ भद्रासनं⁵ बुधैः⁶ ॥४२३॥
- A door-keeper 8. द्वास्थो¹ दौवारिकः² क्षत्ता³ दण्डी⁴ वैत्रधरस्तथा⁵ ।
 उत्सारको⁶ द्वारपालः⁷ प्रतिहारो⁸ बुधैः⁹ स्मृतः¹⁰ ॥४२४॥
- A spy 9. अपसर्पश्चरश्चारः¹ प्रणिधिर्गूढपूरुषः² ।
 यथार्थवर्णो³ मन्त्रज्ञः⁴ स्पशो⁵ हेरक⁶ उच्यते⁷ ॥४२५॥
- A minister 4. मन्त्री¹ बुद्धिसहायः² स्यादमात्यः³ सचिवस्तथा⁴ ॥ 102342
- Domestic priest 3. सौवस्तिक¹ इति² प्रोक्तः³ पुरोधश्च⁴ पुरोहितः⁵ ॥४२६॥
- Principal 2. महामात्रः¹ प्रधानं² स्यादध्यक्षोऽधिकृतः³ स्मृतः⁴ । A superintendent 2.
- An attendant on women's apartment 4. सौविदः¹ सौविदल्लश्च² स्थापत्यः³ कञ्चुकी⁴ मतः⁵ ॥४२७॥
- A friend 5. मित्रं¹ सखा² वयस्यश्च³ सुहृत्स्निग्धश्च⁴ कथ्यते⁵ ।
- A follower 5. अनुजीवी¹ सहायः² स्या³ सेवकोऽनुचरोऽनुगः⁴ ॥४२८॥
- A judge 3. प्राड्विवाकोऽक्षदृक्¹ स्तेयो² न्यायोक्ष³ इति⁴ कथ्यते⁵ । Justice, equity 2.
- A superintendent of the harem. अन्तःपुरेऽधिकृतः¹ स्मृतोऽन्तर्वेशिको² नरः³ ॥४२९॥
- A eunuch 8. क्लीवो¹ वर्षधरः² षण्डः³ पण्डकश्च⁴ नपुंसकः⁵ ।
 उभयव्यञ्जनं⁶ पोटा⁷ तृतीयाप्रकृतिः⁸ स्मृताः⁹ ॥४३०॥
- A cook 4. आरालिकः¹ सूपकारः² सूदः³ स्य⁴ दल्लवस्तथा ।
- A kitchen superintendent 2. पौरोगवस्तु¹ विज्ञेयः² सूदाध्यक्षो³ मनीषिभिः⁴ ॥४३१॥

a च प्रकीर्तितम् b गूढपूरुषः, गूढपोरुषः c हरक, घेरिक, हैरिक
 d महामात्यः प्रधानः e स्तेयो, स्तयो, ज्ञेयो f वर्षधरः g उभय
 व्यंजनं h पोटा योषीया, योषोया ।

A jester 3,	¹ वैहासिकः	^{2 a} केलिकिलो	³ बुधैर्वासन्तिको	मतः ।		
Play, jest, merri- ment 6.	¹ परिहासो	² द्रवो	³ नर्म	⁴ केलिः	⁵ क्रीडा च	⁶ खेलनम् ॥४३२॥
A body guard 2,	¹ रक्षिवर्गो	² ह्यनीकस्थः	¹ सेनानी	² र्वाहिनीपतिः ।	A commander, a general 2,	
Income 2,	¹ अर्थगमो	² भवेदायो	¹ भागधेयो	² वलिः	³ करः ॥४३३॥	Tax 3.
A present, bribe 9.	¹ उपदा	² प्राभृतं	³ प्रोक्तमुपग्राह्यमुपायनम् ।	⁴		
	^{b 5} लञ्चोत्कोचमुपादानमुपचारस्तथामिपम्	⁶	⁷	⁸	⁹ ॥४३४॥	
A bard 6.	¹ प्रबोधका	² मागधवन्दिसूता ,	³	⁴		
	⁵ वैतालिका	⁶ मङ्गलपाठकाश्च ।				
Hunting, chase 5.	^{c 1} अच्छोटनं	² स्यान्मृगया	³ मृगव्यं ,			
	⁴ पापद्विराखेटक	^{5 d} इत्यभिन्नम् ॥४३५॥				
A horse, a pony 14.	¹ अर्वा	³ गन्धर्वोऽश्वः	⁴ सप्तिवर्जा	⁵ तुरङ्गमस्तुरगः ।	⁶	⁷
	^{c 8} ताक्ष्यो	⁹ हरिस्तुरङ्गो	¹⁰ युयुक्त्वो	¹¹ घोटको	¹² ह्यो	¹³ वाहः ॥४३६॥
Different varieties of horses accord- ing to their qualities.	¹⁴ गुणदेशकृतास्तेषां	संज्ञाः	स्युरनेकधा	लोके ।		
	कर्कः	श्वेतः	शोणो	रक्तो	हेमश्च	कृष्णवर्णोऽश्वः ॥४३७॥
	मल्लिकाक्षः	सितेनेत्रैः	कृष्णैरिन्द्रायुधो	मतः ।		
	श्रीवृक्षकी	स विज्ञेयः	श्रीवृक्षो	यस्य	लाञ्छनम् ॥४३८॥	
	आजानेयाः	कुलीनाः	स्युः	पारसीका	वनायुजाः ।	
	काम्बोजा	वाह्लिकाः	प्रोक्ताः	सैन्धवाः	सिन्धुपारजाः ॥४३९॥	
Ill-trained or un- broken horse 2,	^{f 1} शूलको	² दुर्विनीतोऽश्वः	¹ पोतः	² प्रोक्तः	किशोरकः ।	Colt 2.
A mare 5.	¹ अर्वती	² वडवा	³ वामी	⁴ प्रसूता	⁵ वाजिनी	स्मृता ॥४४०॥

a केलिकलो, केलिकिरो, केलिकरो b लंबोत्को, नृबोत्को, लंबोत्को
c आछोटनं, अच्छोटनं, आछोटनं d खोटकमि, खेटकमि - e ताक्ष्यो
f शूलको, शूलको ।

A tail 3.	¹ लूनं ² पुच्छं ³ तु ¹ लाङ्गूलं ² बालहस्तरश्च ¹ बालधिः ।	A hairy tail 2.
The nostril of a horse 2.	¹ प्रोथ ² इत्युच्यते ² घोणा ¹ मध्यं ^a कश्यं ¹ खुरः ^b शफः ॥४४१॥	Hoof 2.
A saddle 2.	¹ पर्याणं ² स्यात्पल्ययनं ¹ खलीनं ² कविकं ¹ स्मृतम् ।	The bit of a bridle 2.
A whip 2.	¹ चर्मदण्डः ^{c 2} कशा ¹ प्रोक्ता ² वल्गारश्मिकुशाः ^{d 3} स्मृताः ॥४४२॥	Bridle, rein 3.
Speed, velocity 8.	¹ रंहस्तरः ² स्थदः ³ स्यात्प्रसरो ⁴ वेगो ⁵ रयो ⁶ जवो ⁷ वाजः ।	
Dust, powder, sand 5.	¹ पांशुः ² क्षोदो ³ रेणुश्चूर्णं ⁴ धूली ⁵ रजश्च ⁶ तुल्यार्थाः ॥४४३॥	
A cart 3.	¹ अनः ² शताङ्गः ³ शकटः ¹ स्यन्दनः ² कथ्यते ¹ रथः ।	A chariot 2.
A cart drawn by oxen.	¹ गन्त्री ² कम्बलिवाह्यस्तु ¹ कूवरी ² च ¹ निगद्यते ॥४४४॥	
A carriage employed at Military exercise.	¹ योग्यारथो ² वैनयिको ^{c 1} ह्यध्वन्यः ^{2 f} पारियातिकः ।	A carriage fit for travelling 2.
A litter borne on men's shoulders.	¹ कर्णिरथः ² प्रवहणं ^{3 g} डयनं ⁴ चेति ⁵ कथ्यते ॥४४५॥	
A car for carrying images of gods 2.	¹ देवतार्थो ² देवरथो ¹ युद्धार्थः ^{h 2} साम्परायिकः ।	A war chariot 2.
A pleasure van 2.	¹ क्रीडारथः ² पुष्परथो ¹ जेता ² जैत्ररथः ¹ स्मृतः ॥४४६॥	A triumphal car.
A wheel 2.	¹ चक्रं ² रथाङ्गमाख्यातं ¹ कूवरं ² च ¹ युगन्धरम् ।	The pole of a carriage 2.
The periphery of a wheel 3.	¹ चक्रधारा ^{2 3} प्रधिर्नेमिर्नाभिश्चक्रस्य ² पिण्डिका ॥४४७॥	The nave of a wheel 2.
Any part of a carriage 2.	¹ अपस्करो ² रथाङ्गः ¹ स्यादणि ² रक्षाग्रकीलिका ।	The pin of an axle 2.
A charioteer 5.	¹ नियन्ता ² प्राजिता ³ क्षत्ता ⁴ दक्षिणस्थश्च ⁵ सारथिः ॥४४८॥	
The charioteer who stands on the left of a champion 2.	¹ सव्येष्ठः ² कथ्यते ³ सूतो ¹ वरुथं ² रथगोपनम् ।	
A vehicle, a carriage 5.	¹ वाहनं ² धोरणं ^{i 3} युग्यं ⁴ यानं ⁵ पत्रमिति ¹ स्मृतम् ॥४४९॥	

a कश्यं b खुराः शफाः, खराः शफाः c कसा, कसाः

d वल्गारश्मिकशाः, वल्गुरश्मिकशाः, बलारश्मिकुशाः, वल्यारश्मिकुशाः

e अध्वन्यः, वैनयिकोऽध्वन्यः, वैनयिको अध्वन्यः f पारियातिकः,

पारियातिकः g तनयं, नयनं h साम्परायिकः i युग्मं, युग्धं, युग्धं ।

A litter, a palanquin 2.	¹ शिविका	² याप्ययानं	¹ ² स्याद्वेसरोऽश्वतरो	मतः ।	A mule 2.
A foot soldier, a pedestrian 8.	^{a 1} ² ³ ⁴ ⁵	पदात्पत्तिपादात्पदातिकपदात्तयः ।			
	⁶ ⁷ ⁸	पद्गश्च पद्गश्चेति कथ्यन्ते	पादचारिणः ॥४५०॥		
A tent 5.	¹ ² ³ ⁴ ⁵	दूष्यं स्थूलं पटकृटी गुणलयनी	केणिका च निर्दिष्टा ।		
S a pole, a post, a stake 5.	¹ ² ³ ⁴ ^{5 b}	ध्रुवकः शिवकः शङ्कुः पुष्पलकः	कीलकः प्रोक्तः ॥४५१॥		
A march 3.	¹ ² ³ ¹ ²	यात्रा प्रयाणं प्रस्थानं निवेशः	शिविरं स्मृतम् ।		A camp 2.
An attack 3.	¹ ² ³	अवस्कन्दः प्रपातश्च सौप्तिकं	च निगद्यते ॥४५२॥		
War, battle, contest, combat, conflict, quarrel 36.	¹ ² ³ ⁴ ⁵ ⁶ ⁷	सङ्ग्रामः समितिः समिच्च समरं	संख्यंसमीकरणं,		
	⁸ ⁹ ¹⁰ ¹¹ ¹² ^{13 c} ¹⁴ ¹⁵	युद्धं युत्प्रघनं मृषं समुदयः	संयत्कलिः संयुगम् ।		
	¹⁶ ¹⁷ ¹⁸ ¹⁹ ²⁰ ²¹ ²²	द्वन्द्वायोधनसम्प्रहारकलहाक्रन्दहवाभ्यागमाः,			
	^{d 23} ²⁴ ²⁵ ²⁶ ²⁷ ²⁸	संस्फोटप्रविदारणप्रहरणानीकाजयः	सङ्गरः ॥४५३॥		
	²⁹ ³⁰ ³¹ ³²	सम्परायः समाघातः प्रघातश्च	समाह्वयः ।		
	³³ ³⁴ ³⁵ ³⁶	जन्यं स्यादभिसम्पातः सम्मर्दो	विग्रहस्तथा ॥४५४॥		
An enemy, a foe, an adversary 23.	^{e 1} ² ³ ⁴	अभियातिररातिरमित्ररिपू,			
	⁵ ⁶ ⁷ ⁸	प्रतिपक्षविपक्षविरोध्यरयः ।			
	⁹ ¹⁰ ¹¹	अहितोऽसहनश्च जिघांसुरिति,			
	¹² ¹³	प्रथिताः परिपन्थिपरासुहृदः ॥४५५॥			

a पदात्तिपादात्तिपादिकपदात्तयः, पदात्तिपत्तिपादात्तिपादिकपदात्तयः,
 पदात्तिः पादति पत्तिः पदातिकः पदात्तयः, पादाकः पदिकश्चेति
 पादाकः पदिक पदिकश्चेति, पादातः पदिकश्चेति, पदातः पदिकश्चेति
 b केलिका c संजितकलिः d संस्फोटः, संस्फोटो प्रविदारणं
 e अभिजाति ।

- 14 15 16 17 a 18
प्रत्यर्थी पर्यवस्थाता द्वेषी वैरी च शात्रवः ।
19 20 21 22 23
शत्रुः सपत्नो भ्रातृव्यः प्रत्यनीको द्विषन्मतः ॥४५६॥
- 1 2 3 4 5 6 7
An army 12. पृतना सेना ध्वजिनी पताकिनी दाहिनी वलं सैन्यम् ।
8 9 10 11 12
चक्रं चमूर्वरुथिन्यनीकिनी स्यादनीकं च ॥४५७॥
- 1 2 3 4 5
A flag, banner 5. वैजयन्ती पताका च केतुः स्यात्केतनं ध्वजः ।
An ornament on the top of a flag. अस्योच्चूलावचूलाख्यावूर्ध्वाधोमुखकूर्चकी ॥४५८॥
- b 1 2 3 4 5
An armour, mail 10. सन्नाहः कवचं वर्मं तनुत्राणमुरश्छदः ।
6 7 8 9 10
जगरः कङ्कटो माठी दंशनं जालिका स्मृता ॥४५९॥
- 1 2 3 4
A shield. खेटकं फलकं चर्मं प्रोक्तमावरणं बुधैः ।
1 2 3 4
Armed, accoutred. वर्मितः स्यात्कवचितः सन्नद्धो दंशितस्तथा ॥४६०॥
- 1 2
A comple attack. सर्वाभिसारमिच्छन्ति सर्वसन्नहनं बुधाः ।
1 2
यत्सेनयाभिनिर्याणं स्मृतं तदभिषेणम् ॥४६१॥
- 1 2 3 4 5
Weapon 5. हेतिः शस्त्रं प्रहरणमायुधमस्त्रं चतुर्विधं तच्च ।
मुक्तामुक्तममुक्तं करमुक्तं यन्त्रमुक्तं च ॥४६२॥
- शक्त्यादि पाणिमुक्तं स्यादमुक्तं क्षुरादिकम् ।
मुक्तामुक्तं तु यष्ट्यादि यन्त्रमुक्तं शरादिकम् ॥४६३॥
- 1 2 3 4 5 6 7
A bow 7. अस्त्रं धनुरिष्वासं कोदण्डं घन्व कार्मुकं चापम् ।
1 2 d 3 4 5 6 7
A bow-string 7. बाणासनं वृणा स्यान्मूर्वी ज्या सिञ्जिनी गुणो जीवा ॥४६४॥
- 1 2 3 4 5 6
A quiver 8. तूणीरमुपासङ्गस्तूणं तूणी निषङ्ग इषुधिश्व ।
7 8 1 e 2
चाणाश्रयः कलापः कार्मुककोटिर्भेदटनिः ॥४६५॥
- 1 2 3 4 5 6 7 f 8
An arrow 14. कङ्कपत्रशरमार्गणवाणारिचत्रपुङ्खविशिखेषुकलम्बाः ।
9 10 11 12 13 14 15 16
सायकप्रदरकाण्डपृपत्काः पट्टिणः खगशिलीमुखरोपाः ॥४६६॥

Marching against an enemy, encountering a foe 2.

Kinds of weapon in accordance with their method of using.

The notched end of a bow 2.

a तु b संनाहं c क्षुरकादिकम् d स्यान्मूर्वी e वेदटनिः, वेदटनी, वेदटिनः f कदम्बा ।

	सर्वायसस्तु वाण ¹ प्रदवेडन ² एषणश्च ³ नाराचः ।	An iron arrow.
	तीरीतह्लदण्डासनादयः ¹ काण्डभेदाः ² स्युः ॥४६७॥	Kinds of arrow.
The feather of an arrow 2.	पत्रपाली ¹ भवेद्वाजः ² कर्तरी ¹ पुङ्ख ² उच्यते ।	The feathered part of an arrow 2.
An aim, a butt	वेद्यं ¹ लक्ष्यं ² शरव्यं ³ च निमित्तं ⁴ च समं विदुः ॥४६८॥	
An arrow with a crescent shaped head.	अर्धचन्द्रधुरप्रादि ¹ धाराग्रं ² मुखमुच्यते ।	The broad edged head of an arrow.
Shooting, letting fly an arrow exercise or practice in general 2.	आराग्रं ¹ तु मुखं ² तेषां ¹ पुष्पपत्रादिभेदतः ॥४६९॥	The point of an awl, an iron thong at the end of a whip.
	वाणमुक्तिर्व्यवच्छेदो ¹ दीप्तिर्वेगस्य ² तीव्रता ।	The flash-like flight of an arrow.
	ग्रम्यासः ¹ कथ्यते योग्या ² श्रमस्थानं ¹ खलूरिका ² ॥४७०॥	A place for military exercise.
An expert or skilful, archer 2.	लघुहस्तः ¹ शीघ्रवेधी ² कृतपुङ्खस्तु ¹ शिक्षितः ² ।	Skilled in archery 2.
	स भवेदपराद्वेषुर्यस्य ¹ लक्ष्याच्च्युतः ² खगः ॥४७१॥	
A sword 10.	निस्त्रिशः ¹ करदालः ² खङ्गः ³ कौक्षेयकः ⁴ कृपाणः ⁵ स्यात् ।	
	रिण्टिरसिचन्द्रहासौ ⁶ तरवारिर्मण्डलाग्रं ⁷ च ॥४७२॥	A handle 2.
A sheath, a scabbard 3.	कोशः ¹ प्रत्याकारः ² खङ्गपिधानं ³ त्सरुर्मवेन्मुण्टिः ¹ ॥	
A knife 5.	असिपुत्रिकासिधेनुः ¹ क्षुरिका ² पत्रं ³ च शस्त्रिका ⁴ ज्ञेया ॥४७३॥	
An axe, a hatchet 4.	परश्वधः ^a कुठारः ² स्यात्परशुः ³ स्वधितिस्तथा ।	
Sharpened, whettened 4.	निशातं ^b निशितं ¹ धौतं ² तेजितं ³ च समं ⁴ स्मृतम् ॥४७४॥	A mallet, hammer 2.
Lance 2.	प्रासो ¹ निगदितः ² कुन्तो ¹ मुद्गरो ² द्रुघणः ¹ स्मृतः ।	An iron club.
A saw 2.	ककचं ¹ करपत्रं ² स्यात्परिघः ¹ परिघातनः ² ॥४७५॥	
	यण्टिपट्टिसदुःस्फोटमुखण्डीशङ्कुशक्तयः ^c ।	
	भिन्दमालगदादण्डचक्राद्याः ^e शस्त्रजातयः ॥४७६॥	Kinds of different weapons.

a परश्वधः b निसानं, निशानं, निशातं, निशात्ता c पट्टिश
d मुखडी, मुशंडी, मुखंडी, मुखंडी, मुखंडी e भिडिमाला, भिडिभाल,
भिडुमाल, भिडिपाल ।

	1	2a	3	
	मारणं	निशरणं	निवर्हणं ,	
Killing, slaughter, slaying 21.		4	5	6
		सूदनं	निरसनं	निशुम्भनम् ।
	7	8	9	
	घातनं	प्रशमनं	प्रमापणं ,	
		10	11	12
		वर्जनं	विशसनं	प्रवासनम् ॥४७७॥
	13	14	15	16
	निर्वापणनिर्वासनकदनव्यापादनानि			तुल्यानि ।
	17	18	c 19	20
	निर्ग्रन्थनमालम्भः	प्रमया	हिंसा च	संज्ञपनम् ॥४७८॥
A runaway.	1	2	3	4
	नष्टो	गृहीतदिक्	प्रोक्तः	कान्दिशीको भयद्रुतः ।
Defeated in battle 2.	1	2	b 1	2
	प्रस्कन्नः	पतितो	ज्ञेयो	जितकाशी जिताहवः ॥४७९॥
A royal harem.	1	2	3	
	शुद्धान्तमवरोधश्च		राज्ञोऽन्तःपुरमुच्यते ।	
Anointed queen,	1	2		
	कृताभिषेका	सहिषी	भट्टिन्य	इतराः स्मृताः ॥४८०॥
	1	2	3	4
	रामा	वामा	वामनेत्रा	पुरन्ध्री ,
		5	6	7
		नारी	भीरुर्भामिनी	कामिनी च ।
A woman 29,	9	10	11	12
	योषा	योषिद्वासिता	वर्णिनी	स्त्री ,
		14	15	16
		स्यात्सीमन्तिन्यङ्गनां	सुन्दरी	च ॥४८१॥
	17	18	19	20
	अवला	महिला	ललना	प्रमदा
				रमणी
				नितम्बिनी
				वनिता ।
	24	25	26	27
	दयिता	प्रतीपदशिन्युक्ता	कान्ता	वधूर्वशा
				युवतिः ॥४८२॥
A girl 2.	1	2	1	2
	कुमारी	कथिता	कन्या	किञ्चित्प्रौढा
				सुवासिनी ।
A girl who chooses her husband 2.	1	2	1	2 d
	वर्या	पतिंवरा	प्रोक्ता	नग्ना प्रोक्ता च
				कौटवी ॥४८३॥
A woman married or single who continues to reside after maturity in her father's house; a young woman in general	1	2	1	2
	अदृष्टरजसं	नारीं	नग्निकां	ब्रुवते
				बुधाः ।
A woman who has married a second time 2.	1	2	3	
	वधूटी	च	चिरण्टी	च
				द्वितीयवयसौ
				स्त्रियौ ॥४८४॥
An elderly or middle-aged widow.	1	2	1	2
	अर्द्धवृद्धा	तु	या	नारी
				सा
				कात्यायनिका
				स्मृता ।
Lustful, lascivious 2.	1	2	1	2
	पुनर्भूदिधिषूः	प्रोक्ता	वृषस्यन्ती	रतार्थिनी ॥४८५॥

a निःसरणं, निसरणं b जितकाशी c प्रमयः d कौटवी ।

A woman whose husband is living ² .	¹ पतिवल्नी	² जीवत्पतिर्जीवतोका	¹ च	² जीवसुः ।	A woman whose children are living 2.	
A woman without husband and children.	रहिता	पतिपुत्राम्यां	¹ निर्वीरित्यभिधीयते	॥४८६॥	A woman who does not get menstruation.	
A widow 2.	¹ विश्वस्ता	² विधवा	¹ प्रोक्ता	^{a 2} पुष्पहीना च निष्कला ।	A woman's female friend 3.	
A female beggar 3.	¹ श्रमणा	² भिक्षुकी	³ मुण्डा	¹ वयस्याली	² सखी	³ स्मृता ॥४८७॥
A woman in her monthly courses 5.		¹ अवीरुदक्या	² च	³ रजस्वला	स्यात् ,	
		⁴ आत्रेयिका	⁵ पुष्पवती	च	नारी ।	
A girl in whom the menstruation has just commenced 2,	¹ राका	² भवेज्जातरजास्तु	कन्या ,			
		¹ नश्यत्प्रसूतिः	कथिता	^{2 c} च भिन्दुः	॥४८८॥	
A woman of excellent qualities	¹ मुख्या	² नारी	³ वरारोहा	^{d 4} वरस्त्री	मत्तकाशिनी ।	
(i) A clever or intriguing woman.		⁽ⁱ⁾ स्त्री	⁽ⁱⁱ⁾ विदग्धा	¹ च मत्ता	च वाणिनीत्यभिधीयते ॥४८९॥	
(ii) A drunken woman.		¹ रूपाजीवा	² वेश्या	³ गणिका	⁴ पण्याङ्गना	⁵ तथा क्षुद्रा ।
A harlot, a prostitute 5.		¹ राजकुलप्रतिवद्धा	² वारस्त्री	³ वारमुख्या	च ॥४९०॥	
A royal courtesan.		¹ गाणिक्यं	^c गणिकानां	च समूहः	कथ्यते वुधैः ।	
A group of harlots.		¹ असिकन्यन्तःपुरप्रेष्या	² दूती	¹ सञ्चारिका	स्मृता ॥४९१॥	
A woman in attendance in a harem.	^{f 1}	²	^{3g}	¹	²	
A procuress 3.	कुट्टिनी	शम्भली	चुन्दी	सैरन्ध्री	गन्धकारिका ।	
A female servant, a female slave 5.	¹	²	³	⁴	^{h 5}	
	पोटा	वोटा	तथा	चेटी	दासी स्यात्कुट्टहारिका ॥४९२॥	
A doll 2.	¹	²	स्यात्काष्ठदन्तादिनिर्मिता ।			
	पाञ्चालिका	पुत्रिका				
An earthen doll 2.	स्मृता	¹ लेप्यमयी	स्त्री	ⁱ तु	² वुधैरञ्जलिकारिका ॥४९३॥	
	¹	²	³	⁴	⁵	
	दाराः	क्षेत्रं	कलत्रं	च भार्या	सहचरी	⁶ वधूः ।
A wife 11,	⁷	⁸	⁹	^{j 10}	¹¹	
	सधर्मचारिणी	पत्नी	जाया	च गृहिणी	गृहाः ॥४९४॥	

a च निष्कला, तु निष्कली b श्रवणा, भ्रमणा c विडुः, विडुः, किडुः, भिडुः, निडुः d मत्तकामिनी, मत्तगामिनी e तु f कुहिनी, कुट्टिनी g चुन्दी, चंडी h कुट्टि, कुट्टि i च j गृहिणी ।

Marriage, wedding 5.	1 2 3 4 5 उपयामः परिणयनं पाणिग्रहणं विवाह उद्वाहः ।	
A respectable woman 2.	a 1 2 1 2 3 4 कुलबालिका कुलस्त्री पतिव्रता सुचरिता सती साध्वी ॥४९५॥	A faithful wife 4.
An unchaste woman 8.	1 b 2 3 4 5 6 पांशुला बन्धुकी स्वैरिण्यसती पुंश्चलीत्वरी ।	
	c 7 8 d 1 2 घर्षिणी कुलटा प्रोक्ता त्वविनीताभिसारिका ॥४९६॥	An impertinent woman 2.
A husband 14.	1 2 3 4 5 6 7 कान्तः स्यात्कमिता पतिर्वरयिता भर्ता च भोक्ता धवो ,	
	8 9 10 11 12 13 14 रुच्याभीकवराभिकाश्च रमणः प्राणाधिनाथोऽनुगः ।	
A son 12.	1 2 3 4 5 6 7 सूनुः सन्ततिरात्मजश्च तनुजः पुत्रः प्रसूतिः सुतः ,	
	8 9 10 11 12 तुक् तोकं तनयश्च नन्दन इति प्राज्ञैरपत्यं स्मृतम् ॥४९७॥	
A pregnant woman 4.	1 2 3 4 आपन्नसत्त्वा गुर्वी स्यादन्तर्वत्नी च गर्भिणी ।	
The longing of a pregnant woman 4.	1 2 3 4 c दोहदं दौहदं श्रद्धा लालसा च समाः स्मृताः ॥४९८॥	
The last month of oregnancy 2.	1 2 1 2 सूतिमासो वैजननो गर्भो भ्रूण इति स्मृतः ।	An embryo 2.
A lying in-chamber 2,	1 2 अरिष्टगृहमिच्छन्ति सूतिकाभवनं बुधाः ॥४९९॥	
A woman who has born a child 3,	1 2 3 विजाता च प्रजाता च प्रसूता स्त्री निगद्यते ।	
The womb.	1 2 1 f 2 गर्भाशयो जरायुः स्यादुल्वं च कललं स्मृतम् ॥५००॥	Foetus; the bag which surrounds the embryo 2.
The son of an unmarried girl 2.	1 2 1 2 कन्यापुत्रस्तु कानीनो नाटेरः स्यान्नटीसुतः ।	The son of a dancing girl 2.
A bastard 2.	1 2 1 2 बन्धुको बन्धुकीपुत्रो गोप्यो दासीसुतः स्मृतः ॥५०१॥	The son of a female slave 2,
The young of any animal 9.	1 2 3 4 5 6 7 बालः पाकोऽर्भको गर्भः पोतश्च पृथुकः शिशुः ।	
	8 9 1 2 शावो डिम्भश्च विज्ञेयो वटुर्माणवको मतः ॥५०२॥	A lad.
Old 4.	1 2 3 4 प्रवयाः स्थविरो वृद्धो यातयामश्च कथ्यते ।	
Old age 2.	1 g 2 h 1 2 3 जरा तु विस्रसा प्रोक्ता दारकस्तरुणो युवा ॥५०३॥	Young 3.

a कुलबाधिका कुलपालिका b बन्धका c घर्षणी d दुविनीता, ह्यविनीता
e समा स्मृता f फलिलं, कलिलं g विश्रसा, विश्रसा h दाक् ।

Mother 4. माँ के नाम ४	1 अम्बा	2 सवित्री	3 जननी	4 च	माता ,	
Father 4. बाप के नाम ४		1 वप्ता	2 च	3 तातो	4 जनकः	पिता च ।
A daughter-in-law 4	1 स्तुषा	2 जनी	3 पुत्रवधूर्वधूः	4 स्यात् ,		
A brother's wife 2.		1 प्रजावती	2 भ्रातृवधूः	स्मृता च ॥५०४॥		
A daughter 3.	1 दुहिता	2 तनया	3 पुत्री	1 जामाता	2 दुहितुः	पतिः ।
	1 दौहित्रस्तत्सुतो	2 a नप्ता	3 b स च	पौत्रश्च	कथ्यते ॥५०५॥	A son-in-law 2. Daughter's son,
An elder brother 3.	1 अग्रजः	2 पूर्वजो	3 ज्येष्ठः	1 कनिष्ठोऽवरजोऽनुजः ।		A younger brother 3,
A brother's son.	1 भ्रातृव्यो	2 भ्रातृपुत्रः	3 स्याद्	4 भ्रात्रीयो	भ्रातृजस्तथा ॥५०६॥	
A nurse.	1 घात्री	2 स्यादुपमाता	3 भगिनी	4 जामिः	स्वसा च विज्ञेया ।	A sister 3.
A sister's son 3.	1 तत्पुत्रः	2 स्वस्रायो	3 जामेयो	भागिनेयः	स्यात् ॥५०७॥	
A brother by the same mother.	1 समानोदर्यसोदर्यसगर्भाः	2 सोदराः	3 समाः ।			A husband's brother's wife,
Related 9,	1 भ्रातृवर्गस्य	2 या	3 जाया	4 यातरस्ताः	5 परस्परम् ॥५०८॥	
	1 आत्मीयः	2 स्वजनो	3 वन्धुराप्तो	4 ज्ञातिश्च	5 वान्धवः ।	
	7 सनाभयः	8 सपिण्डाश्च	9 सगोत्राश्च	समाः	स्मृताः ॥५०९॥	
	1 तनुस्तनूः	2 संहननं	3 शरीरं ,			
		5 कलेवरं	6 विग्रहदेहकायाः ।	7 8		
The body 17.	9 अङ्गं	10 वपुर्वर्ष्मं	11 पुरं	12 च	13 पिण्डं ,	
		14 क्षेत्रं	15 च	16 गात्रं	17 च	घनश्च मूर्तिः ॥५१०॥
Foot 3.	e 1 अङ्घ्रिः	2 पादश्चरणः	3 पाणिः	f 2 शयपञ्चशाखकरंहस्ताः ।	3 4 5	Hand 5.
A finger-nail 6.	1 कामाङ्कुशाः	2 कररुहाः	3 पुनर्नवाः	4 पाणिजा	5 नखा	6 नखराः ॥५११॥

a ज्ञेयो नप्ता पौत्रश्च b पौत्रस्तु c भ्रातृजः स्मृतः d स्मृताः
e अङ्घ्रिः, अङ्घ्रिः f पाणिशय ।

The hips and loins.	1 2 3 4 5 काञ्चीपदं कलत्रं जघनं श्रोणी ककुद्मती ज्ञेया ।	
The buttocks 5.	a 1 3 3 4 5 आरोहश्च नितम्बः कटी कटीरं त्रिकस्थानम् ॥५१२॥	
The anus 3.	1 2 3 1 2 b 3 गुदः पायुरपानं स्यात्कटिप्रोथौ स्फिजौ पुतौ ।	The buttocks.
The cavities of the loins.	c 1 2 कुकुन्दरो समाचष्टे जनो जघनकूपको ॥५१३॥	
The penis.	1 2 3 4 5 भगो योनिरुपस्थश्च वराङ्गं स्मरमन्दिरम् । शिरः शोफोऽथ मेढ्रश्च तुल्ये मेहनशोफसी ॥५१४॥	Vagina; Pudendum muliebre.
The knee 2. The leg 2.	1 2 1 2 1 2 जानुः स्यादष्ठीवान् प्रसृता जङ्घा च घुटको गुल्फः ।	An ankle 2.
The thigh 2.	1 2 1 d 2 3 4 e 5 6 ऊरुः सक्थि पिचण्डं जठरोदरतुन्दकुक्षिगर्भाः स्युः ॥५१५॥	The belly 6.
The finger 2.	1 2 1 f 2 3 4 5 अङ्गुल्यः करशाखाः कर्णः श्रोत्रं श्रुतिः श्रवः श्रवणम् ।	An ear 5.
The neck 5. A conch shaped neck, a neck marked with three lines like a shell and is considered as a sign of great fortune 1.	1 2 3 4 g 5 1 2 ग्रीवा घमनिर्मन्या शिरोधरा कन्धरा गलः कण्ठः ॥५१६॥ रेखात्रयाङ्किता ग्रीवा कम्बुग्रीवेति कथ्यते ।	The throat 2.
The waist 4.	1 2 3 4 अवलग्नं विलग्नं च मध्यमं मध्यमुच्यते ॥५१७॥	
The head 7.	1 2 3 4 5 6 7 मुण्डोत्तमाङ्गमस्तकमौलिशिरःशीर्षमूर्धकानि स्युः ।	
The mouth 7.	1 2 3 4 5 6 7 तुण्डं वदनं वक्त्रं लपनं मुखमास्यमाननं च समम् ॥५१८॥	
The eye 9.	1 2 3 4 5 6 7 8 9 दृग्दृष्टिनेत्रलोचनचक्षुर्नयनाम्बकेक्षणाक्षीणि ।	
The tears 6.	1 2 3 4 5 h 6 अश्रुणि वाष्परोदननयनजलाश्रासुनामानि ॥५१९॥	
The outer corner of the eye 2.	1 i 2 1 2 नयनोपान्तमपाङ्गः कनीनिका नयनमध्यतारा च ।	The pupil of the eye 2.
The part between the eye-brows. The corner of the mouth 2.	1 2 k कूर्पं भ्रुवोश्च मध्यं सूक्व स्यादोष्ठपर्यन्तः ॥५२०॥	

a आरोहस्तु b युतौ c ककुन्दरो, ककुन्दरा d पित्त्रिंडं e तुट्ट, तुंड f कर्णश्रोत्रं g कन्धरो h जङ्घाश्रुतामानि, जलालाशिश्निगमानि, जलास्ताशुनामानि, जलाश्रुतामानि i प्रपाङ्गः स्यात् j सूक्कः, सूक्कि, सूक्कं, सूक्वा k पर्यन्तम् ।

The nose 5.	a 1 2 3 4 5 सिद्धिनी नासिका नासा घ्राणं घोणा च कथ्यते ।	
The tongue 3.	1 2 3 1 2 रसज्ञा रसना जिह्वा तालु काकुदमुच्यते ॥५२१॥	The palate 2.
The arm 5.	1 2 3 4 5 दोः प्रवेष्टो भुजो बाहुर्भुजा च स्मर्यते वुधैः ।	
The cheek 4.	1 2 3 4 गण्डो गल्लः कपोलश्च हनुस्तुल्यार्थवाचकाः ॥५२२॥	
The testicles,	1 2 3 4 1 2 b मुष्कोऽण्डं वृषणः कोशः सङ्ग्राहो मुष्टिरुच्यते ।	The fist 2.
The collar bone, the clavicle.	1 2 3 4 1 2 c 2 जत्रु वक्षोऽस्योः सन्धिरुसन्धश्च वङ्क्षणः ॥५२३॥	The joint of the thigh 2.
Hair on the body 2.	1 2 1 1 रोम तनूरुहमुक्तं नयनगतं पक्ष्म मुखगतं श्मश्रु ।	An eye-lash. The beard.
The lips 4.	1 2 3 4 अधरो दन्तच्छद ओष्ठ उच्यते दन्तवासश्च ॥५२४॥	
The chin,	d1 1 2 1 2 ओष्ठस्याधश्चिबुकं ललाटमलिकं भुजाग्रमंसं च ।	The forehead 2. The shoulder 2.
Armpit 2.	e. 1 2 1 2 3 कक्षां च बाहुमूलं घाटामवटुं कृकाटिकामाहुः ॥५२५॥	Nape of the neck 3.
The female breast 5.	1 2 3 4 5 f उरसिजकुचवक्षोरुहपयोधराः स्तनसमाननामानि ।	
Nipple 4.	1 2 3 4 g उक्ताः कुचमुखचूचुकवृन्तानि शिखा च तुल्यानि ॥५२६॥	
The chest, the breast 5,	1 2 3 4 h5 भुजमध्यमुरो वक्षो हृदयस्थानं च वत्समिच्छन्ति ।	
A tooth 5.	1 2 3 4 5 एकार्थाः कथ्यन्ते दशनद्विजदन्तरदरदनाः ॥५२७॥	
The lap 3.	1 2 3 कोडमङ्गस्तथोत्सङ्गः प्राग्भागो वपुषः स्मृतः ।	
The back, hinder part 2.	1 2 1 2 पृष्ठं स्यात्पश्चिमो भागः कटौ च कटिशिर्षकौ ॥५२८॥	The loins.
A vital member or organ 2.	1 2 1 2 जीवस्थानं भवेन्मर्म पादाग्रं प्रपदं मतम् ।	The extremity of a foot 2.
The parting line of the hair, the hair parted on each side of the head so as to leave a line.	1 सीमन्तः कथ्यते स्त्रीणां केशमध्ये तु पद्धतिः ॥५२९॥	
The hair of the head 7.	1 2 3 4 5 6 7 केशाः शिरसिजमूर्धजकचचिकुरशिरोरुहाः स्मृता बालाः । तद्वन्धविशेषाः स्युर्वेणी घम्मिल्लकुन्तलकवर्यः ॥५३०॥	Different forms of braid or lock.

a संधिनी, सिंधिनी b मुष्टिरिष्यते, मुष्टिरिच्यते c वंक्षणः, वक्षणः
d श्चुदुकं, श्चुवकं e कक्षा f नामानः g भवन्ति h वक्षमिच्छन्ति ।

Much or ornamented hair.

A curl lock of hair 1.

A lock of hair left on the crown of the head, a tuft 3.

Grey hair 2.

Wrist, the extremity of the arm 2.

The fore arm, the part between the wrist and elbow 1.

The mind.

Intent upon one object 3.

Mental pain.

An organ of sense 6.

The distance from the elbow to the tip of the middle finger taken as a measure of length equal to 24 thumb. The closed fist, the distance from elbow to the end of the closed fist. The fist, a measure of capacity equal to one handful. The span of the thumb and fore finger 2.

A span from the tip of the thumb to that of the ring finger.

An ornament, a decoration 9.

Smearing the body with fragrance 5.

A mark on the forehead.

A mark made with sandal or any other fragrant powder on the fore-head.

हस्तः पक्षः पाशः केशेषु बहुत्ववाचकाः शब्दाः ।

अलकं कुटिलाः केशा अमरकमुक्तं ललाटस्थम् ॥५३१॥

वालानां तु शिखा प्रोक्ता काकपक्षः शिखण्डिका ।

पलितं पाण्डुराः केशा व्रतिनां तु जटा सटा ॥५३२॥

मणिवन्धः पाणिमूलं कफणिः कूर्परः स्मृतः ।

तयोर्मध्यं प्रकोष्ठः स्यात्प्रकाण्डः कूर्परांसयोः ॥५३३॥

चेतश्चित्तं मनः स्वान्तं हृदयं मानसं समम् ।

एकायनं तथैकाग्रमेकतानं च तद्गतम् ॥५३४॥

आधिस्तु मानसी पीडा वाञ्छितार्थो मनोरथः ।

खमक्षमिन्द्रियं श्रोतो हृषीकं करणं स्मृतम् ॥५३५॥

मध्याङ्गुलीकूर्परयोर्मध्ये प्रामाणिकः करः ।

वद्धमुष्टिकरो रत्निररत्नः सकनिष्ठिकः ॥५३६॥

सम्पिण्डिताङ्गुलिर्मुष्टिः प्रसृतिः कुञ्चिताङ्गुलिः ।

प्रसारिताङ्गुलिः पाणिः कथ्यते प्रतलस्तलः ॥५३७॥

प्रादेशः स्यात्प्रदेशिन्या तालो मध्यमया भवेत् ।

गोकर्णोऽनामया प्रोक्तो वितस्तिः स्यात्कनिष्ठया ॥५३८॥

आकल्पो मण्डनं वेषः प्रतिकर्म प्रसाधनम् ।

भूषणं स्यादलङ्कारो नेपथ्याभरणे तथा ॥५३९॥

समालभनमिच्छन्ति चर्चां माष्टिं च सुरयः ।

स्थसकं हस्तविम्बं स्यात्परिष्कारश्च भूषणम् ॥५४०॥

तिलकं तमालपत्रं चित्रकमुक्तं विशेषकः पुण्ड्रम् ।

रचिता ललाटपट्टे ललाटिका कथ्यते रेखा ॥५४१॥

A lock of hair or curl hanging down on the fore-head,

An ascetics' matted hair 2.

An elbow 2.

The upper part of the arm 2.

A desired object a wish 2.

A cubit of the middle length from the elbow to the tip of the little finger

The palm of the hand stretched out and hollowed, a handful considered as a measure equal to two palas.

The palm of the hand 2.

A short span.

A measure of length equal to 12 "angulis" being the distance between the extended thumb and the little finger.

An ornament 2.

a कफणः, कफणिः, केणिः b प्रगण्डः c वाञ्छितार्थो d श्रोतो

e सकनिष्ठिकः, रत्निरकनिष्ठिकः f समालभ g परिष्कारश्च ।

Drawing lines or figures of painting on the face, arms, chest, cheek, neck etc with fragrant and coloured. Substance as a mark of decoration. Saffron 7.

भुजुशिखरस्तनमण्डलकपोलकण्ठेषु विरचिता कुशलैः ।

अनुलेपनेन ¹ लेखा ² निगद्यते ³ पत्रवल्लीति ॥५४२॥ ⁴

कुङ्कुमं ¹ घुसृणं ² वर्णं ³ प्रोक्तं ⁴ लोहितचन्दनम् ।

काश्मीरजं ⁵ च ⁶ विद्वद्भिः ⁷ कालेयं ⁸ जागुडं ⁹ स्मृतम् ॥५४३॥

Sandal wood tree

चन्दनं ¹ स्यान्मलयजं ² श्रीखण्डं ³ रोहणद्रुमः ।

Musk 3.

मृगनाभिर्मृगमदः ¹ प्रोवता ² कस्तूरिका ³ बुधैः ॥५४४॥

Camphor 2.

कर्पूरो ¹ घनसारः ² स्यात्काकतुण्डोऽग्रहः ³ स्मृतः ।

The betelnut 2.

ताम्बूलं ¹ क्रमुकं ² प्रोक्तमङ्गरागो ³ विलेपनम् ॥५४५॥

A lower garment 4.

उपसंव्यानं ¹ परिधानमन्तरीयं ² च ³ निवसनं ⁴ तुल्यम् ।

An upper garment 4.

प्रावरणं ¹ संव्यानं ² प्रच्छादनमुत्तरीयं ³ च ⁴ ॥५४६॥

A sort of petticoat 2.

अर्धोरुकं ¹ वरस्त्रीणां ² वासश्चण्डातकं ³ स्मृतम् ।

The ends of the cloth tied into a knot in front; the knot of the wearing garment 3.

परिधानांशुकग्रन्थिः ¹ प्रोक्ता ² नीवी ³ तथोच्चयः ॥५४७॥

A cloth 12.

चेलं ¹ चीरं ² वासः ³ कर्पटमाच्छादनं ⁴ निवसनं ⁵ च ।

अम्बरमंशुकमुक्तं ⁷ वस्त्रं ⁸ सिचयः ⁹ पटः ¹⁰ पोटः ^{11 d} ॥५४८॥ ¹²

The four sources of cloth (1) the bark and (2) fruit of trees and plants (3) hair of insects (4) and animals.

चतुर्विधं ¹ तु ² विज्ञेयं ³ त्वक्सूनकृमिरोमजम् ।

(i) (ii) Also skirt.

Silken cloth, woven silk 4.

पत्रोर्णं ^{c 1} धौतकौशेयं ² दुकूलं ^{3 (i)} क्षौममिष्यते ^{4 (ii)} ॥५४९॥

Cotton cloth 2.

कापसिं ¹ वादरं ² प्रोक्तं ³ वस्त्रस्यान्तो ⁴ मतोऽञ्चलः ।

The extreme end of the cloth 2.

New cloth 2.

अहतं ¹ स्यान्नवं ² वासो ³ जीर्णमुक्तं ⁴ पटच्चरम् ॥५५०॥

Old cloth 2.

Washed 2.

धौतमुद्गमनीयं ¹ च ² वर्तिर्वस्तिर्दशाः ³ सिचः ।

The skirt of a web or dress 4.

एकार्या ^h आविकीरम्भ्रल्लकोर्णायुकाम्बलाः ॥५५१॥

Woollen garments, also blanket 2.

a पत्रवल्ली तु b जागुडं, जागुडो, जागुडीं c मन्तरीय च
d पटपोटः पटःप्रोतः e पत्रोर्णं, प्रतूर्णं, प्रतूर्णं f पटच्चरः
g दशा, देशां h आविको ।

An armour, a mail 2. Also a dress fitting close to the upper part of the body, bodice.

A garland, wreath, chaplet 3.

A garland worn over the left shoulder and under the right arm like the sacred thread.

A chaplet tied on the crown of the head 5.

An earring 3.

Lac 4.

Lamp-black, collyrium 2.

A large earring 4.

Any ornament for the ear 2.

A bracelet worn up on the upper arm 2.

A bracelet 4.

An amulet, a string tied round the wrist at weddings etc. 3.

An ornament for the neck 2.

A finger-ring 3.

A seal ring, a signet ring.

A girdle, a zone 7.

Anklet, any ornament for the feet 7.

कञ्चुको¹ वारवाणः² स्यात्कूपसिश्च¹ निचोलकः² ।
 स्रग्माला^{1 2} माल्यमाख्यातं³ केशमध्ये¹ तु गर्भकः² ॥५५२॥
 प्रभ्रष्टकं¹ शिखालम्बि² पुरो न्यस्तं ललामकम् ।
 तिर्यग्वक्षसि^a विक्षिप्तं¹ वैकक्षकमुदाहृतम् ॥५५३॥
 ग्रीवायां¹ लम्बितं प्राज्ञैः प्रालम्बकमिति स्मृतम् ।
 आपीडः^b शेखरोत्तंसावतंसाः^{2 3 4} शिरसि⁵ स्रजः ।
 कर्णपुरेऽपि¹ दृश्येते² तथोत्तंसावतंसकौ³ ॥५५४॥
 जतुयावकलाक्षाऽलक्तकाः¹ समाः² सिक्थकं मधूच्छिष्टम् ।
 कज्जलमञ्जनमभिहितमादर्शो¹ दर्पणो मुकुरः^{2 3} ॥५५५॥
 ताडङ्कस्ताडपत्रं^c स्यात्कुण्डलं³ कर्णवेष्टनम् ।
 कर्णलिङ्करणं¹ सर्वं² कर्णिकेत्यभिधीयते ॥५५६॥
 केयूरमङ्गदं^{1 2} प्रोक्तं³ बाहुमूलविभूषणम् ।
 आवापः¹ परिहार्यः² स्यात्कटको³ वलयं⁴ तथा ॥५५७॥
 कङ्कणं¹ हस्तसूत्रं² च विदुः³ प्रतिसरं बुधाः ।
 ग्रीवालङ्करणं¹ सर्वं² ग्रैवेयकमितीष्यते ॥५५८॥
 अङ्गुल्याभरणं¹ प्रोक्तमङ्गुलीयकमूर्मिका ।
 कथ्यतेऽङ्गुलिमुद्रा¹ च भवेद्या² लिखिताक्षरा ॥५५९॥
 कलापः¹ सप्तकी² काञ्ची³ मेखला⁴ रसना^d तथा ।
 कटिसूत्रं⁶ सारसनं⁷ किङ्कणी¹ क्षुद्रघण्टिका ॥५६०॥
 सिञ्जिनी^e पादकटकस्तुलाकोटिस्तु^{2 3} नूपुरम् ।
 मञ्जीरं⁵ हंसकं⁶ स्त्रीणां चरणाभरणं स्मृतम् ॥५६१॥

A sort of bodice worn by woman 2.

Chaplet of flowers worn on the hair.

A chaplet of flowers leaning downwards on the forehead 2.

A garland worn round the neck.

Bee wax 2.

A mirror 3.

A small bell 2.

a वैकक्षि b आपीडशेखरो c ताडकं ताडपत्रं d रसना, दशमा, दशना e शिजिनी, शिजिनी ।

A pearl-necklace
having hundred
strings 2.
गुच्छ-Pearl-necklace
of 32 strings.
अर्धगुच्छ-A pearl-
necklace of
24 strings.
हार-Necklace.
A single string of
pearls 3.

A necklace of 27
pearls 2.

The central gem
of a necklace 3.

A jewel of the
crest or diadem.

Crown, diadem 4.

Beauty 5.

Seeing, sight 8.

A side glance 2.

Shame, bash-
fulness 6.

Embracing 7.

Sexual inter-
course 7.

Name of the third
or agricultural and
mercantile class,
"Vaishtyas" 5.

Living sub-
sistence 4.

A trader, a mer-
chant 5.

A usurer 4.

1 2 a 1
देवच्छन्दः शतयष्टिरर्धो माणवकः स्मृतः ।

b 1 1 1
हारो गुच्छार्धगुच्छौ च गोपुच्छश्च भवेत्क्रमात् ॥५६२॥

1 2 3
एकावल्येकयष्टिः स्यात्कथ्यते सा च कण्ठिका ।

1 2 c
प्रोक्ता नक्षत्रमाला च सप्तविंशतिमौक्तिका ॥५६३॥

1 2 3
हारमध्यस्थितं रत्नं नायकं तरलं विदुः ।

1
चूडामणिं च विद्वांसो वदन्ति शिरसि स्थितम् ॥५६४॥

1 2 3 4
आहुः किरीटमुष्णीषं कोटीरं मुकुटं समम् ।

1 2 3 4 5
रादा शोभा विभूषा स्यादभिव्या सुषमा समाः ॥५६५॥

1 2 3 4
निभालनं निशामनं निघ्यानमवलोकनम् ।

5 6 7 8
ईक्षणं दर्शनं दृष्टिद्योतनं च समं स्मृतम् ॥५६६॥

1 2 1 2
कटाक्षो दृष्टिविक्षेप ईषच्च हसितं स्मितम् ।

1 2 3 4 5 6
हीर्लज्जापत्रपा व्रीडा त्रपा मन्दाक्षमुच्यते ॥५६७॥

1 2 3 4
आलिङ्गनमुपगूहनमाहुः परिरम्भणं परिष्वङ्गम् ।

5 6 7
आश्लेषमङ्गपालीं क्रोडीकरणं च तुल्यार्थम् ॥५६८॥

1 2 3 4 5
संवेशनं निघुवनं सम्प्रयोगो रहो रतिः ।

6 7 1 d 2
गुरतं मोहनं प्रोक्तं मणितं रतकूजितम् ॥५६९॥

1 2 3 c 4 5
आर्या भूमिस्पृशो वैश्या उरुव्याश्च विशः स्मृताः ।

1 2 3 4
जीवनं वृत्तिराजीवो वार्त्ता चेति निगद्यते ॥५७०॥

1 2 3 4 5
पण्याजीवा वणिजः प्रापणिका नैगमाश्च वैदेहाः ।

1 2 3 f 4
द्वैगुणिको वार्धुपिको वृद्ध्याजीवः कुसीदिकः प्रोक्तः ॥५७१॥

A pearl-necklace
having twenty
strings.

गोपुच्छ-A pearl-
necklace consisting
of four strings.

Smiling 2.

An inarticulate
murmuring sound
uttered in
cohibition 2.

a अर्धमाणकः, अर्धमाणकः b हारो c मौक्तिकः, मौक्तिके
d रतिकूजितम् e औख्याश्च, औख्याश्च, उख्याश्च, उव्याश्च
f कुसीदिकः कुसीदकः, कुसीदः ।

Debt 4.	1	2	3	4		
	अपमित्यकमुद्धार	ऋणं	स्यात्पर्युदञ्चनम् ।			
Interest on money 2.	1	2	1	2		
	वृद्धिः कलान्तरं	प्रोक्तं	कुसीदं	वृद्धिजीवनम् ॥५७२॥	Usury 2.	
Exchange, barter 3.	1	2	3			
	परिवृत्तिर्विनिमयो	वैमेषश्च	निगद्यते ।			
Bought purchased 2.	1	a 2	1	2	b	
	प्रक्रयः क्लृप्तिकं	प्रोक्तं	भाटकोऽवक्रयः	स्मृतः ॥५७३॥	Price 2.	
A farmer 5.	1	2	3	c 4	5	
	क्षेत्राजीवः कृषिकः	कृषीवलः	कर्षकः	कुटुम्बी च ।		
Corn, grain 2.	d 1	2	1	2	3	
	सीत्यं सस्यं	प्रोक्तं	वप्रं	क्षेत्रं च	केदारम् ॥५७४॥	A field, a farm 3.
A plough 3.	1	2	c 3	1	2	
	हलं स्याल्लाङ्गलं	सीरः	फालः	कुशिक	उच्यते ।	Ploughshare 2.
A bridle 3	1	2	3	1	2	
	योक्त्रं तु	रश्मिराबन्धः	शम्या च	युगकीलकः ॥५७५॥	The pin of a yoke 2.	
The clod of earth 2.		1	2	1 g	2	
	कथितो	लोष्टको	लोष्टः	कोटीशं	लोष्टभेदनम् ।	A harrow 2.
Ploughed or furrowed twice 2.	1	2	1	2		
	शम्बाकृतं	द्विसीत्यं	स्यात्सीता	लाङ्गलपद्धतिः ॥५७६॥	A furrow 2.	
A spade.	1	2	1	2		
	गोदारणं च	कुद्दालं	लवित्रं	दात्रमुच्यते ।	A sickle	
A goad for driving cattle 3.	1	2	3	1	h 2	
	प्रतोदः	प्राजनं	तोत्रं	लूनं	दातमिति स्मृतम् ॥५७७॥	Cut, reaped 2.
A post of a threshing floor 2.	1	2 i	1	2		
	खलेवाली	भवेन्मेठिः	खलधान्यं	खलं	स्मृतम् ।	Threshing floor 2.
Chaff, husk 2.	1	2	1	2		
	बुशः	कडङ्गरः	प्रोक्तः	कणः	स्यात्क्षुद्रतण्डुलः ॥५७८॥	A single grain of rice 2.
The beard of corn 2.	1	2	1	2		
	धान्यशूकं च	किशारः	कणिशं	धान्यशीर्षकम् ।	An ear of corn 2.	
A stalk 2.	1	2	1	2		
	नालं	काण्डं	क्षुपो गुच्छो	व्रीहिः	स्तम्बकरिः स्मृतः ॥५७९॥	A corn, a grain 2.
क्षुपो गुच्छो						
A clump of grass 2,						
Name of a plant, Condia Myxa or Latifolia 3.	1	2	3			
	उद्दालः	कथितः	प्राज्ञैः	क्रोद्रवः	कोरदूषकः ॥५८०॥	Varieties of rice, रक्तशालः A red species of rice. महाशालः A kind of large and sweet smelling rice. कलमः Rice sown in May-June which ripens in December-January.

a क्लृप्तिकं b तथा c कर्षकः कुटुम्बी d सैत्यं सैन्यं e सीरं, शीरं f कीलिका किलिकम्, g कोटीरं, कीटिशं, काटीशं h दात्र, दान i मेठिः, मेठि, मेधि, मेधि j गुच्छो, गुण्डो, गुण्डो ।

A kind of pulse, Lentil 2.	^a 1 मङ्गल्यको	² मसूरः	¹ स्यात्सिद्धार्थः	² सर्षपः	स्मृतः ।	White mustard 2.
Black-mustard 3.	¹ आसुरी	² राजिका	चेति	कथ्यते	³ राजसर्षपः ॥५८१॥	
A sort of millet 2.	¹ प्रियङ्गुः	कथ्यते	² कङ्कुरतसी	¹ स्यादुमा	² क्षुमा	³ Linsed flax 3.
Peas 3.	¹ कलायः	² खण्डिको	³ ज्ञेयः	सातीनश्च	मनीषिभिः ॥५८२॥	
Wild sesamum 2.	¹ जर्तिलः	कथ्यते	² सद्भिररण्यप्रभवस्तिलः ।			
Barren sesamum 3.	¹ b तिलपिञ्जस्तिलपेजस्तथा	²	³ षण्ढतिलः	स्मृतः ॥५८३॥		
Rice growing wild or without culti- vation 2.	¹ तृणधान्यं	² तु	¹ नीवारः	² श्यामाकः	श्यामको भवेत् ।	A kind of edible grain or corn, also graminaceous plant 2.
A sort of pulse, also the wind caused by winnow- ing 2.	¹ वल्ला	² निष्पावकाः	¹ प्रोक्ता	² आढकी	तुवरी स्मृता ॥५८४॥	A kind of pulse 2. (अरहर)
हाजा parched or fried grain, rice parched and flatten- ed 2.	¹ भृष्टं	¹ धान्यं	² लाजाः	² पृथुकाश्चिपिटाश्च	¹ कुट्टितास्ते स्युः ।	कुट्टिता - Pounded, rice.
धाना Fried barley.	^c भृष्टा	यवास्तु	¹ धाना	² दरपक्वा	कथ्यतेऽभ्यूपः ॥५८५॥	Half parched barley 2.
A person of the low class 5.	¹ शूद्रोऽन्त्यवर्णो	² वृषलः	³ पद्यः	⁴ पञ्जश्च	⁵ कथ्यते ।	
A writer 4.	¹ लेखकः	² स्याल्लिपिकरः	³ कायस्थोऽक्षरजीवकः	⁴	॥५८६॥	
A cow-herd 4.	¹ आभीरः	² स्यान्महाशूद्रो	³ गोपालो	⁴ वल्लवस्तथा ।		
A carpenter 5.	¹ त्वष्टा च	² काष्ठतद्	³ तक्षा	^d 4 रथकारश्च	⁵ वर्धकिः ॥५८७॥	
A goldsmith.	¹ नाडिन्धमः	² कलादः	³ सुवर्णकारश्च	⁴ मुष्टिको	ज्ञेयः ।	
A jeweller 2.	¹ वैकटिको	² मणिकारो	¹ ध्माकारो	² लोहकारः	स्यात् ॥५८८॥	A Black-smith 2.
A barber 4.	¹ क्षुरमर्दी	² दिवाकीर्तिश्चण्डिलो	³ नापितः	^e	स्मृतः ।	
A gardener 3.	¹ मालाकारस्तु	² विज्ञेयो	² मालिकः	^f 3 प्रातिहारिकः	॥५८९॥	
A potter 2	¹ कुम्भकारः	² कुलालः	¹ स्यात्तन्नुवायः	² कुविन्दकः ।		A weaver 2.
A shampooer 2.	^g 1 संवाहकोऽङ्गमर्दी	²	¹ स्यात्तन्नुवायश्च	² सौचिकः	॥५९०॥	A tailor 2,

a मांगल्यको b पिङ्ग c भ्रष्टं, भ्रष्टा d रथकारस्तु e श्चंडालो,
श्चाडिलो f प्रातिहारिकः, प्रतिहारिकः g संवाहकोऽङ्गमर्दः ।

A plasterer 2.	1 लेपकः	2 पलगण्डः	1 स्याद्भ्राजीवस्तु	2 a चित्रकृत् ।	A painter 2.
Plastering, painting in general.	कर्म	लेप्यादिकं सर्वं	1 पुस्तकर्म	स्मृतं	बुधैः ॥५९१॥
An actor, mime, a dancer 5.	1 शैलाली	2 शैलूषः	3 कुशीलवश्चारणः	4 कृशाश्वी	5 च ।
	6 जायाजीवो	7 भरतो	8 नटस्तथा	1 स्यान्नटी	2 क्षुद्रा ॥५९२॥
An artisan, a mechanic 3.	1 शिल्पिनः	2 कारवः	3 प्रोक्ताः	प्रकृतिश्च	मनीषिभिः ।
A washerman 2.	1 निर्णोजकः	2 स्याद्रजकः	1 कल्पपालस्तु	2 b शीण्डिकः	॥५९३॥
A fisherman 5.	1 कैवर्तो	2 धीवरो	3 दासो	4 मत्स्यबन्धी	5 तु जालिकः ।
A net 2.	1 आनायः	2 कथ्यते	1 जालं	c कुवेणी	2 मत्स्यबन्धनी ॥५९४॥
A butcher 2.	1 वैतंसिकः	2 d सौनिकः	1 स्यात्कौटिको	2 मांसविक्रयी ।	A meat seller 2,
A slaughter-house 2.	e 1 सूना	2 स्याद्	1 घातनस्थानं	2 कृपाणीली	3 च कर्तरी ॥५९५॥
A shoe-maker 2.	1 चर्मकृत्पादुकाकारो	2 नद्धी	3 वद्धी	4 च	5 कथ्यते ।
A fowler, a hunter 4.	1 मृगयुर्बुधको	2 व्याधो	3 बुधैर्वागुरिकः	4 स्मृतः	॥५९६॥
A rope 6.	1 शुल्वा	2 रज्जुर्वराटश्च	3 वटस्तन्त्रीगुणः	4 स्मृतः ।	
A noose.	1 पाशः	2 स्याद्वन्धनग्रन्थिर्वागुरा	1 मृगजालिका	2 ॥५९७॥	A trap for catching beasts 2.
Chāndāla, an outcaste 8.	1 अन्तावसायी	g 2 चण्डालो	3 निषादश्च	4 जनङ्गमः ।	
	5 श्वपचः	6 h पक्वशश्चैव	7 मातङ्गः	i 8 प्लवकः	स्मृतः ॥५९८॥
Different sects of 'Antijati' belonging to lowest caste.	j किराताः	शबरा	निष्ट्याः	पुलिन्दा	नाहला भटाः ।
	माला	म्लेच्छादयो	भिल्लाः	कथ्यन्ते	ह्यन्तजातयः ॥५९९॥
Disease, sickness, invalidity 12.	1 रोगो	2 रुक्	3 व्याधिराकल्यं	4 गदो	5 मान्द्यमपाटवम् ।
	8 आम	9 आमय	10 आतङ्क	11 उपतापो	12 रुजा स्मृता ॥६००॥

a चित्रकर्मादिकं b सौंडिकः c मत्स्यबन्धिनी d शौनिकः
e सूना f रज्जुर्वराटश्च, रज्जुर्वराकरटश्च, वटारक, वटस्तन्त्रीगुणः,
वटस्तन्त्रीगुणः, वटस्तन्त्रीगुणस्तथा g चांडालो h पुलकसः, पुक्कसः,
पुक्कशः, बुक्कसः i प्लवगः j शिविरा ।

Cough 2.	¹ क्ष्वयुः कथ्यते ² कासो ¹ वेपयुः ² कम्प उच्यते ।	Tremor 2.
Burning fever 2.	¹ दवयुः ² परितापः ¹ स्याद् ² र्लानिश्च ¹ क्लमयुः ² स्मृतः ॥६०१॥	Fatigue, languor 2.
Consumption 3.	¹ राजयक्ष्मा ² क्षयः ³ शोषः ¹ शोफः ² श्वययुरिष्यते ।	Swelling 2.
A sort of cutaneous eruption 2.	¹ किलासं ² कथ्यते ¹ सिध्म ² पामा ³ कच्छूः ^a ससः ² स्मृतः ॥६०२॥	Itch, scab 2,
	⁴ कण्डूतिः ⁵ कण्डूया ⁶ कण्डूः ⁷ कण्डूयनं ⁸ तथा ^b खर्जूः ।	
Waking.	¹ जागर्या ² जागरणं ³ प्रजागरो ⁴ जागरा ⁵ च ⁶ विज्ञेया ॥६०३॥	
Boil, pimple, blister 3.	¹ पिटकः ² स्फोटको ³ गण्डः ¹ शिवत्रं ² कुष्ठं ³ च ⁴ पाण्डुरम् ।	White leprosy 3.
Elephantiasis 2.	¹ श्लीपदं ² पादवल्मीकः ¹ पृष्ठप्रन्यिर्गंडुः ² स्मृतः ॥६०४॥	Hump on the back 2.
A disease producing baldness 2.	¹ कोशधनमिन्द्रलुप्तं ² स्यादर्शश्च ¹ गुदकीलकः ² ।	Piles 2.
Bile 2. Phlegm 2.	¹ मायुः ² पित्तम् ¹ कफः ² श्लेष्मा ¹ प्रतिशयायश्च ² पीनसः ॥६०५॥	Catarrh affecting the nose 2.
Afflicted with rheumatism 2. Pained with phlegm and scab, scabby, pained with leprosy, leprous.	¹ वातकी ² वातरोगी ¹ स्यात्सातिसारोऽतिसारकी ।	Afflicted with diarrhoea or dysentery 2.
Afflicted with ringworms 2.	¹ सिध्मश्लेष्मार्शसंयोगात्सिध्मलः ² श्लेष्मलोऽर्शसः ॥६०६॥	Afflicted with piles 2.
	^c दद्रुणो ¹ दद्रुरोगी ² स्यान्नःक्षुद्रः ¹ क्षुद्रनासिकः ² ।	Small-nosed 2.
	¹ किलन्ने ² यस्याक्षिणी ³ पित्तलश्चिल्लश्चुल्लश्च ⁴ स स्मृतः ॥६०७॥	Blar-eyed 3.
Big bellied; gorbellied 2.	^f पिचण्डिलो ¹ वृहत्कुक्षिस्तुन्दिलोदरिलौ ² च ³ सः ।	Fat, corpulent 2.
Bald-headed 3.	¹ खलतिः ² शिपिविष्टः ³ स्यादैन्द्रलुप्तिक एव च ॥६०८॥	
Blind 2.	¹ अन्धो ² ह्यनेडमूकः ¹ स्यादेडो ² वधिर उच्यते ।	Deaf 2,
A dumb 3.	¹ जडः ² कडः ³ स्मृतो ^g मूकः ¹ कल्लमूकस्त्ववावश्रुतिः ² ॥६०९॥	Deaf and dumb 2.
Lame 3.	¹ खञ्जः ² पद्भुस्तथा ³ श्रोणः ¹ कुणिविकलपाणिकः ² ।	Maimed 2.
Having prominent navel 2.	¹ तुण्डिरुन्नतनाभिः ² स्याद्विग्रो ¹ विगतनासिकः ² ॥६१०॥	Nozeless 2.

n ससः b खर्जूः c गंडः d प्रतिशयायश्च, प्रतिक्रयायश्च ।
e दद्रुणे दद्रुरोगी, दद्रुणो दद्रुरोगी f पिचिण्डिलो, पिण्डिलोचि,
पिचिकोलि g कलम् ।

Hump-backed 2.	1 गडुलः	2 कथ्यते	1 कुब्जः	2 खर्वशाखस्तु	2 वामनः ।	Dwarfish 2.
Dwarf 3.	1 पृश्निः	2 स्वल्पशरीरः	3 स्यात्किरातः	3 स च	5 कथ्यते ॥६११॥	
A physician 5.	1 आयुर्वेदी	2 भिषग्वैद्यो	3 दोषज्ञः	4 स्याच्चिकित्सकः ।	5	Diagnosis, primary cause of disease 2.
Treatment, the practice of medicine 2.	1 उपचर्या	2 चिकित्सा	1 स्यान्निदानं	2 हेतुरुच्यते ॥६१२॥		
A poison-doctor 2.	1 जाङ्गुलिको	2 विषभिषक्	1 a व्यालग्राह्याहितुण्डिकः ।	2		A snake-catcher 2.
Medicine 6.	1 भैषज्यं	2 भेषजं	3 जायुरगदस्तन्त्रमौषधम् ॥६१३॥	4 5 6		
A sort of salt.	1 सिन्धूत्थं	2 b माणिमन्थं	3 च	4 सैन्धवं	5 लवणोत्तमम् ।	
Long pepper 6.	1 कृष्णोपकुल्या	2 वैदेही	3 मागधी	4 पिप्पली	5 कणा ॥६१४॥	
Dry ginger 5.	1 c शुण्ठी	2 नागरमुक्ता	3 महीषधं	4 विश्वभेषजं	5 विश्वा ।	
Liquorice root 2.	1 मधुकं	2 यष्टिमधु	1 स्यादमृता	2 वत्सादनी	3 d गुडूची च ॥६१५॥	A kind of plant 3.
Ginger 2.	1 आर्द्रकं	2 शृङ्गवेरं	1 स्यादजाजी	2 जीरकः	3 स्मृतः ।	Cumin seed 2.
Black pepper 3.	1 वेल्लजं	2 मरिचं	3 प्रोक्तमूषणं	4 च	5 मनीषिभिः ॥६१६॥	
A kind of salt 2.	1 सौवर्चलस्तु	2 रुचकः	3 कुस्तुम्बुर	4 च	5 घान्यकम् ।	Coriander seed 2.
The aggregate of (1) black pepper (2) long pepper and (3) dry ginger 3.	1 त्रिकटु	2 श्रूषणं	3 व्योषं	4 हिङ्गु	5 रामठ उच्यते ॥६१७॥	Asafoetida 2.
Yellow myrobalan 3	1 हरीतक्यभया	2 पथ्या	3 घात्री	4 चामलकी	5 शिवा ।	Emblie my- robalan 3. (अँवला)
A kind of tree 3.	1 कलिरक्षो	2 विभीतः	3 स्यात्त्रितयं	4 त्रिफला	5 स्मृता ॥६१८॥	A mixture of (1) हरीतकी, विभीतक and आमलकी ।
A ringworm shrub 4.	1 एडगजः	2 प्रपुनाटो	3 दद्गुध्नश्चक्रमर्दकः	4 प्रोक्तः ।		
Asparagus race- mosus 2. शतावरी in Hindi,	1 शतमूलिका	2 त्वभीरुर्निदिग्धिका	3 कण्टकारिका	4 व्याघ्री ॥६१९॥		Name of a medici- nal plant शतमूला in Hindi 3.

a व्यालग्राह्योहि b माणिवधं c सुंठी, शुंठी, शंठी d गडूची
e प्रोक्तं श्रूषणं, प्रोक्तं पूषणं . f कुस्तम्बर, कस्तम्बर, कुस्तम्बर,
कुस्तम्बर g रामठी हिङ्गुरुच्यते, हिगु व्योषं रामठ उच्यते,
h प्रपुनाटो, प्रमुनाटो i निदिग्धिका, निदिग्धिका (गुणैः कण्टकैर्वा
निदिह्यते स्म उपचिता, दिह उपचये, निदिग्धा कनि निदिग्धिका)

A particular fragrant; gum resin, bedellium.	a 1	2	3	4	
	पुराव्यो	महिषाक्षश्च	गुग्गुलः	स्यात्पलङ्कषः ।	
Safflower, कर्कम in Hindi.	b 1		c 2		
	महारजनमिच्छन्ति		कुसुम्भं च	सुमेघसः ॥६२०॥	
Vermillion 3, मोया in Hindi.	1	2	d 3	c	
	हिङ्गुलं	हंसपादं	च कुरुविन्दं	निगद्यते ।	
Honey 5,	1	2	3	4	5
	सारघं	माक्षिकं	क्षौद्रं	मधु	पुष्परसस्तथा ॥६२१॥
A fragrant root 2,	1 f	2	1	2	3
	उशीरं	वीरणीमूलं	ह्रीवेरं	वालकं	जलम् ।
A kind of plant 4,	1	2	3	4	
	मुस्तकः	कुरुविन्दः	स्याद् गुन्द्रा च	जलदाह्वयः ॥६२२॥	

A sort of perfume 3,

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालायां
भूमिकाण्डं द्वितीयं समाप्तम् ॥२॥

a नुराव्यो महिषाक्षश्च b महारजत c कुसुम्भं d कुरुविन्दं
e प्रचक्षते f उशीरं ।



तृतीयं पातालकाण्डम्

102342

The infernal regions 6.	1 वडवामुखं	2 पातालं	3 वैरोचननिकेतनम् ।	
	4 तथाधोभुवनं	5 प्रोक्तं	6 नागलोको रसातलम् ॥६२३॥	
A hole 16.	1 निम्नमगाधो	2 गर्तः	3 श्वभ्रं	4 शुषिरं
	5 वपा	6 विलं	7 विवरम् ।	8
	a 9 अन्तरमवटु	10 च्छिद्रं	11 निर्व्यथनं	12 रन्ध्ररोककुहरदराः ॥६२४॥
The hell 3.	1 निरयो	2 दुर्गतिश्चैव	3 नरकः	परिकीर्तितः ।
An (evil) spirit subject to the torments of hell.	नारका	1 जन्तवः	2 प्रेता	3 b यात्याश्चैवातिवाहिकाः ॥६२५॥
Torment 2.	1 यातना	2 कारणा	1 प्रोक्ता	2 कारा बन्धनमुच्यते ।
Pain 6.	1 आबाधा	2 वेदना	3 c दुःखमार्तिः	4 पीडा
	5 व्यथा	6 तथा ॥६२६॥		
Sin, wrong 14.	1 वृजिनं	2 दुरितं	3 दुष्कृतमघमंहः	4 किल्बिषं
	5 तमः	6 कल्कम् ।	7	8
	9 एनः	10 d कल्मषमशुभं	11 पापं	12 स्यात्पातकं
	13 पाप्मा ॥६२७॥	14		
Death 11.	1 निधनं	2 नाशो	3 मृत्युर्मरणं	4 पञ्चत्वमत्ययः
	5 कालः ।	6	7	
	8 संस्था	9 स्याद्दृष्टान्तो	10 निमीलनं	11 दीर्घनिद्रा च ॥६२८॥
Dead 7.	1 परासुरूपसम्पन्नः	2 प्रमीतः	3 संस्थितो	4 मृतः ।
	5 प्रेतः	6 परेतश्च	7 तथा	8 कुण्ठयः
	9 शब्दमुच्यते ॥६२९॥	10	11	12

Confinement 2.

Corpse. 2.

a अन्तरमवाक्, अंतरमवट - b श्चैवात्यवाहकाः, श्चैवातिवाहकाः
c दुःखमार्तिः d कलुष ।

Headless trunk retaining some power of action 2.	1 कवन्धः कथ्यते / 2 रुग्डः 1 2 3 4 क्षतमीर्ममरुर्गणः ।	Wound 4.
The skin, hide 5.	1 2 3 4 5 असुग्धराजिनं चर्मं कृत्तिस्त्वक् परिकीर्तिता ॥६३०॥	
Flesh 8.	1 2 3 4 5 6 पल्लं जाङ्गलं मांसं पलं पिशितमामिषम् ।	
	7 8 1 b 2 क्रव्यं तरसमेकार्यं विश्रं स्यादामगन्धिकम् ॥६३१॥	The smell of raw meat 2.
Blood 7.	1 2 3 4 5 6 7 क्षतजं लोहितमल्लं रुधिरमसृक् शोणितं च रक्तं स्यात् ।	
A bone 4.	1 2 3 4 अस्थीनि धातुकौकसकुल्यानि भवन्ति तुल्यानि ॥६३२॥	
A skeleton 3.	1 2 3 शरीरस्यास्थि कङ्कालं तथा स्यादस्थिपञ्जरम् ।	
The skull 3.	1 2 3 शिरसोऽस्थि करोटिः स्यात्कपालं शकलं च तत् ॥६३३॥	
The radius of the arm 2.	1 2 1 2 शाखास्थि नलकं प्रोक्तं पृष्ठस्यास्थि कसेरु च ।	Backbone 2.
The principal artery of the body 2.	1 2 1 2 3 कण्डरा स्यान्महास्नायुः स्नासा स्नायुः शिरा स्मृता ॥६३४॥	Sinew 3.
The brain 2.	d 1 2 1 2 3 मस्तिष्कं मस्तकस्नेहो वपा मेदो वसा स्मृता ।	The serum or the lymph of the flesh 3.
An entrail 2.	1 2 1 2 अन्नं पुरीतत्कथितं कालखण्डं यकृन्मतम् ॥६३५॥	Liver 2.
The heart 2.	1 2 1 2 c वृक्कं स्यादग्रमांसं च तिलकं क्लोम कथ्यते ।	The lungs 2.
A worm.	1 2 3 4 कृमिः कीटस्तु नीलङ्गुः पुलकश्च समः स्मृतः ॥६३६॥	
Excrements, ordure 12.	1 2 3 4 5 उच्यते वर्च उच्चारो वर्चस्कोऽवस्करः शकृत् ।	
	6 7 8 9 10 11 12 गूथं कीटं च विद् विष्ठा पुरीषं शमलं मलम् ॥६३७॥	
Semen, virile 6.	1 2 3 4 5 6 शुक्रं वीर्यं वलं बीजमिन्द्रियं रेत उच्यते ।	A funeral pile 2, a pile of fuel on which the dead body is cremated 2.
Crematorium, cremation ground; burning ghat 2.	1 2 1 2 श्मशानं स्यात्पितृवनं चिता चित्या च कथ्यते ॥६३८॥	
Crying 2.	1 2 1 2 क्रन्दितं रुदितं प्रोक्तं विलापः परिदेवनम् ।	Lamentation 2.
Bathing after the performance of funeral ceremony 2.	1 2 1 2 अपस्नानं मृतस्नानं निवापः पितृतर्पणम् ॥६३९॥	Presents given to the deceased 2.

a जागरं b विश्रं c यत् d मस्तक्यं; मस्तिवु, मस्तिक्चं
e क्लोममिष्यते ।

	1	2	3 a	4	5	6	7 b	
	* विषधरदन्दशूकपवनाशनसर्पसरीसृपोरगव्याल-							
	8	9	10	11	12	13		
	भुजगभुजङ्गकुम्भीनसपन्नगनागभोगिनः ।							
	14	15	16	17	18	19	20	
A snake, a serpent 29.	अहिफणभृत्पृदाकुकाकोदरकञ्चुकिचक्रिगूढपाद् ,							
	21	22	23	24	25			
	द्विरसनकाद्रवेयदर्वीकरदृक्श्रुतयो भुजङ्गमाः ॥६४०॥							
	c	26	27	28	29			
	आशीविषो दीर्घपृष्ठः कुण्डली जिह्वागः स्मृतः ।							
	1	2	3	1	2	3		
The hood of a snake 3.	फणः फणा फटा प्रोक्ता विषं स्याद्गरलं गरः ॥६४१॥							Poison 3.
			1	d	1, 2			
The coil of a snake.	अहेः शरीरं भोगः स्यादाशीर्दष्ट्राभिधीयते ।							A serpent's fang.
	e	1	2	1	2	3 f		
A sort of snake 2.	भवेत्तिलित्तो गोनासो वाहसोऽजगरः शयुः ॥६४२॥							The boa 3.
	1	2	1	g	2			
A water snake 2.	अलगदो जलव्यालो राजिलो दुण्डुभः स्मृतः ।							A kind of snake 2.
	h	1	i	2	1	2		
A sort of snake 2.	अहीरणी स्याद्द्विमुखो राजसर्पश्च सर्पभुक् ॥६४३॥							A large species of serpent 2.
	j	1	2	3	4			
The cast off skin or slough of a snake.	नित्त्वयनी निर्मोकः कञ्चुक उक्ता भुजङ्गमुक्ता त्वक् ।							
	k	1	2	3	4			
Ant-hill 4.	वस्त्रीकूटं नाकुर्वल्मीको वामलूरश्च ॥६४४॥							
	1	2	3	1	4			
A sort of ant 4.	उपजिह्वोपदीका च वस्त्री स्यादुपदेहिका ।							
	1	2	1	2	3			
The sting of scorpion 2.	अलं वृश्चिकलाङ्गूलं द्रुत आलिश्च वृश्चिकः ॥६४५॥							A scorpion 3.
	1	2 m	3	4				
A sort of poison 9.	ब्रह्मपुत्रः शौलिकेयो दारदश्च प्रदीपनः ।							
	5	6	7	8	9			
	रसः सौराष्ट्रिकः क्ष्वेडस्तीक्ष्णश्च विपमुच्यते ॥६४६॥							

* The metre (छन्द) of this stanza is called घृतश्री or according to others पञ्चकवली । It consists of 4 tetras-tichs, each containing 28 short syllables, arranged in the following order; ~~~~~

~~~~~। It occurs again in IV । (६८६) see माष ३-८२ ।

a पवनाशसर्प b व्यालः, c आशीविषो d आशीर्दशा, आसीर्दष्ट्रा  
e भवेत्तिलंगो, भवेत्तिलंसो, भवेत्त्रिलंगो f स्मृतः g दुण्डुभः दुण्डुभिः h अहीरणी  
अहीरणी i द्विजिह्वः स्यात् j नित्त्वयनी, नित्त्वयनी k वस्त्रीकूटं, वल्मीकूटं,  
वोल्मीकूटं l वस्त्री m शौलिकेयः ।

|                                                                                                                           |                                              |                                            |                                       |                      |                   |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----------------------------------------------|--------------------------------------------|---------------------------------------|----------------------|-------------------|
| Different kinds of<br>poison 6.                                                                                           | a 1<br>शृङ्गिको                              | 2<br>वत्सनाभश्च                            | 3<br>कालकूटो                          | 4<br>हलाहलः ।        |                   |
|                                                                                                                           | 5<br>काकोलो                                  | b 6<br>विस्फुलिङ्गश्च                      | तद्भेदाः                              | स्युरनेकधा ॥६४७॥     |                   |
| Water 26.                                                                                                                 | 1<br>आपस्तोयं                                | 2<br>घनरसपयः                               | 3<br>पुष्करं                          | 4<br>मेघपुष्पं ,     |                   |
|                                                                                                                           | 7<br>कं पानीयं                               | 8<br>सलिलमुदकं                             | 9<br>वारि वाः                         | 10<br>शम्बरं च ।     |                   |
|                                                                                                                           | 14<br>अर्णः पाथः                             | 15<br>कुशजलवनं                             | 16<br>क्षीरमम्भोऽम्बु                 | 17<br>नीरं ,         |                   |
|                                                                                                                           | 23<br>प्रोक्तं                               | 24<br>प्राज्ञैर्भुवनममृतं                  | 25<br>जीवनीयं                         | 26<br>दकं च ॥६४८॥    |                   |
| Deep 5.                                                                                                                   | 1<br>अतलस्पर्शमगाधं                          | 2<br>गम्भीरं                               | 3<br>स्याद्                           | 4<br>गभीरमस्थायाम् । |                   |
| Navigable 2.                                                                                                              | 1<br>नावा तार्यं                             | 2<br>नाव्यं                                | 3<br>द्रागभूतकं                       | 4<br>तत्क्षणोद्धृतं  | 5<br>तोयम् ॥६४९॥  |
| Frost, cold 8                                                                                                             | 1<br>प्रालेयमवश्यायस्तुहिनं                  | 2<br>शिशिरं                                | 3<br>हिमं                             | 4<br>तुषारं च ।      |                   |
|                                                                                                                           | 7<br>मिहिका                                  | 8<br>स्यान्नीहारो                          | 1<br>हिमसंघातो                        | 2<br>हिमानी च ॥६५०॥  | A mass of snow 2. |
| Erection of the<br>hair of the body 8.                                                                                    | 1<br>रोमाञ्चः                                | 2<br>पुलकः                                 | 3<br>स्यात्कण्टकमुद्गुपणमुल्लकसनं च । |                      |                   |
|                                                                                                                           | 6<br>रोमोद्गमरोमविकाररोमहर्षाः               | 7<br>समानार्थाः ॥६५१॥                      |                                       |                      |                   |
|                                                                                                                           | 1<br>रत्नाकरः                                | 2<br>सरस्वानुदधिरुदन्वान्सरित्पतिरकूपारः । |                                       |                      |                   |
| The sea, an ocean 12.                                                                                                     | 7<br>पारावारस्तोयनिधिरर्णवजलराशिसागरसमुद्राः | 8<br>॥६५२॥                                 |                                       |                      |                   |
| A wave, a billow 3.                                                                                                       | 1<br>वीची                                    | 2<br>भङ्गस्तरङ्गः                          | 3<br>स्यात्तन्महत्त्वे च              | 4<br>कथ्यते ।        |                   |
| A great wave 5.                                                                                                           | 1<br>ऊर्मिरुत्कलिकोल्लोलः                    | 2<br>कल्लोलो                               | 3<br>लहरी                             | 4<br>तथा ॥६५३॥       |                   |
| A shore 2.                                                                                                                | 1<br>मर्यादा                                 | 2<br>कूलदेशोऽस्य                           | 3<br>वेला                             | 4<br>वृद्धिश्च       | 5<br>वारिणः ।     |
| A wood on the<br>sea-coast.                                                                                               | 1<br>वेलावनं                                 | 2<br>तु                                    | 3<br>विज्ञेयमुपकण्ठेऽस्य              | 4<br>यद्वनम् ॥६५४॥   |                   |
| A sea-trader 2                                                                                                            | 1<br>सांयात्रिकः                             | 2<br>पोतवणिक्                              | 3<br>पोतः                             | 4<br>प्रवहणं         | 5<br>स्मृतम् ।    |
| The mast of a ship,<br>also a stake to<br>which a boat is<br>moored; also a<br>rock or tree in the<br>midst of a river 2. | 1<br>कूपको                                   | 2<br>गुणवृक्षः                             | 3<br>स्यान्निर्यामः                   | 4<br>कर्णधारकः ॥६५५॥ | A sailor 2.       |

a शृङ्गिका b विस्फुलिङ्गः स्यात् तद्भेदा अप्यनेकधा c कुशजलवनम्  
d मस्ताङ्गं e रोमोद्गमरोमविकारो, रोमरोमविकारो, रोमोद्गमरोम-  
विकारो f कूलदेशस्य, कूलदेशश्च g प्रोतः ।

Any large aquatic animal, a sea-monster 3.

अन्तर्जलचरं<sup>1</sup> सत्त्वं<sup>2</sup> क्रूरं<sup>3</sup> यादोऽभिधीयते ।

A shark 2.

अवहारः स्मृतो<sup>1</sup> ग्राहः<sup>2</sup> कुम्भीरो<sup>1</sup> नक्र उच्यते ॥<sup>2</sup>

A crocodile 2.

A tortoise 3.

कच्छपः<sup>1</sup> कमठः<sup>2</sup> कूर्मस्तद्भार्या च<sup>3</sup> डुली<sup>1</sup> स्मृता ॥६५६॥

The female tortoise.

वैसारिणो विसारः पृथुरोमा जलचरो जषो मत्स्यः ।

A fish 11.

तिमिरनिमिषश्च<sup>7</sup> मीनः<sup>8</sup> शकली<sup>9</sup> शल्की<sup>10</sup> च विज्ञेयः ॥६५७॥<sup>11</sup>

A sort of fish 2.

सहस्रदंष्ट्रः<sup>1</sup> पाठीनः<sup>2</sup> प्रोष्ठी<sup>b 1</sup> च शफरी<sup>2</sup> स्मृता ।

A shrimp or prawn; a sort of fish 2.

नलमीनश्चिलिचिमः<sup>1</sup> कुलीरः<sup>2</sup> कर्कटो<sup>1</sup> मतः ॥६५८॥<sup>2</sup>

A crab 2.

Which are large, a sort of fish.

शालः<sup>1</sup> शकुलः<sup>2</sup> कुलिशो<sup>3</sup> राजीवो<sup>4</sup> रोहितश्च<sup>5 c</sup> पल्लवकः<sup>6 d</sup> ।

शृङ्गीमद्गुरवागुसनन्धावर्तादियो<sup>7</sup> महामत्स्याः ॥६५९॥<sup>8 9 10</sup>

A kind of sea-animal, a crocodile, a shark 2.

मत्स्यविशेषो<sup>1</sup> मकरः<sup>2</sup> करिमकरो<sup>1</sup> भवति तद्विशेषस्तु ।

A fabulous sea-monster.

A sort of large fish.

चीरिल्लितिभितिभिङ्गिलगिलादयो<sup>f 1 2 3</sup> महामत्स्याः ॥६६०॥

Having recently come out of a small egg, also a shoal of fish, a multitude of fish 2. A worm 2.

क्षुद्राण्डो<sup>1</sup> मत्स्यसंघातः<sup>2 g</sup> पोताधानं च कथ्यते ।

गण्डूपदः<sup>1</sup> किञ्चुलको<sup>2 h</sup> जलौकाः<sup>1 i</sup> स्युर्जलौकसः ॥६६१॥<sup>2</sup>

A leech 2.

A frog 8.

मण्डूकः<sup>1</sup> प्लवको<sup>2</sup> भेकः<sup>3</sup> शालूरो<sup>4</sup> दर्दुरो<sup>5</sup> हरिः<sup>6</sup> ।

प्लवङ्गमः<sup>7</sup> प्लवगः<sup>8</sup> स्याद्वर्षाभूस्तद्वधूः<sup>1</sup> स्मृता ॥६६२॥

The female frog.

यावन्तो दृश्यन्ते नरकरितुरगादयः स्थले जीवाः ।

तावन्तः सलिलेष्वपि जलपूर्वास्ते तु विज्ञेयाः ॥६६३॥<sup>j</sup>

A pearl 3.

उक्ता मुक्ता मौक्तिकं शौक्तिकेयं ,

Pearl-oyster 2.

मुक्तास्फोटः<sup>1</sup> शुक्तिराख्यायते च ।<sup>2</sup>

a वैसारिणो, वैशारणो b प्रोष्ठी c लोहितश्च  
d पल्लविकः e मद्गुरु f चिरिल्लि g पोताधानं  
h कञ्चुलको, किञ्जलको i जलीकाश्च, जलौकसः,  
जलौकाः स्युः j तेषु ।

|                                                          |                       |                            |                     |                         |                   |                                  |                                         |                      |
|----------------------------------------------------------|-----------------------|----------------------------|---------------------|-------------------------|-------------------|----------------------------------|-----------------------------------------|----------------------|
| A conch, shell 2.                                        | 1<br>कम्बुः           | 2<br>शङ्खः                 | 1<br>क्षुल्लकाः     | 2<br>क्षुद्रशङ्खाः      | ,                 | A small shell 2.                 |                                         |                      |
|                                                          |                       |                            | 1<br>शम्बूकास्ते    | 2<br>स्युः              | 1<br>कपर्दो       | 2<br>वराटः ॥६६४॥                 | A small shell used<br>as a coin (कड़ी). |                      |
|                                                          | 1<br>सिन्धुः          | 2<br>स्रवन्ती              | 3<br>तटिनी          | 4<br>तरङ्गिणी           | ,                 |                                  |                                         |                      |
| A river 24.                                              | 5<br>नदी              | 6<br>घृणी                  | 7<br>निर्झरिणी      | 8<br>च                  | निम्नगा ।         |                                  |                                         |                      |
|                                                          | 9<br>कूलङ्कषा         | 10<br>शैवलिनी              | 11<br>सरस्वती       | ,                       |                   |                                  |                                         |                      |
|                                                          |                       | 12<br>समुद्रकान्ता         | 13<br>हृदिनी        | 14<br>तथापगा ॥६६५॥      |                   |                                  |                                         |                      |
|                                                          | 15<br>स्रोतः          | 16<br>स्रोतस्विनी          | 17<br>कर्षूः        | 18<br>कुल्या            | 19<br>द्वीपवती    | 20<br>सरित् ।                    |                                         |                      |
|                                                          | 21<br>रोधो            | 22<br>वप्रस्तु             | a<br>विज्ञेयो       | 23<br>भिद्य             | 24<br>उद्द्यो     | नदः स्मृतः ॥६६६॥                 |                                         |                      |
| A bank, a shore 6.                                       | 1<br>तीरं             | 2<br>कूलं                  | 3<br>तटं            | 4<br>कच्छः              | 5<br>प्रपातो      | 6<br>रोध उच्यते ।                |                                         |                      |
| Near bank 2.                                             | b 1<br>अर्वाकूलमपारं  | 2<br>स्यात्परं             | 1<br>पारमिति        | 2<br>स्मृतम् ॥६६७॥      |                   | Opposite shore 2.                |                                         |                      |
| The swelling or<br>rising of a river<br>or sea, flood 2. |                       | 1<br>पात्रं                | 2<br>तु             | 1<br>कूलयोर्मध्यमावर्तः | 2<br>पयसां        | भ्रमः ।                          | A whirl, an pool,<br>eddy whirl 2.      |                      |
|                                                          | 1<br>पूरः             | c<br>स्यादम्भसो            | 2<br>वृद्धिः        | 1<br>फेनो               | d<br>डिण्डीर      | 2<br>उच्यते ॥६६८॥                | Froth, foam 2.                          |                      |
| A stream 6.                                              | 1<br>ओघः              | 2<br>प्रवाहो               | e 3<br>वेणी         | 4<br>च                  | 5<br>घारा         | 6<br>स्रोतो रयः स्मृतः ।         |                                         |                      |
| Confluence or<br>junction of two<br>rivers 3.            | 1<br>सम्भेदः          | 2<br>सङ्गमो                | 1<br>नद्योः         | f 3<br>संवेद्यश्च       | निगद्यते ॥६६९॥    |                                  |                                         |                      |
| A mound in the<br>middle of a river 2                    | 1<br>सैकतं            | 2<br>पुलिनं                | 3<br>द्वीपं         | 1<br>सिकतो              | 2<br>वालुका       | स्मृता ।                         | Sand, gravel 2.                         |                      |
| An island, a cape.                                       |                       | 1<br>मध्ये                 | 2<br>द्वीपमन्तरीपं  | 1<br>हृदस्तोयाशयो       | 2<br>मतः ॥६७०॥    |                                  | A lake 2.                               |                      |
| The bend of a<br>river 2.                                | 1<br>चक्राणि          | 2<br>पुटभेदाः              | 1<br>स्युः          | g 2<br>सेतुवरण          | उच्यते ।          |                                  | A bridge 2.                             |                      |
| Fare 2.                                                  | 1<br>आतरस्तरपण्यं     | 2<br>च                     | h 1<br>तल्पं        | 2<br>स्यादुडुपः         | 3<br>प्लवः ॥६७१॥  |                                  | A raft, float 3.                        |                      |
| A boat, a ship 4.                                        | 1<br>तरौर्नौर्मङ्गिनी | 2<br>वेडा                  | 3<br>नौदण्डः        | 1<br>क्षेपणी            | 2<br>स्मृता ।     |                                  | Aa oar 2.                               |                      |
| A rudder 2                                               | 1<br>अरित्रं          | 2<br>कोटिपात्रं            | 1<br>स्यात्पुलिन्दो | i<br>मङ्ग               | 2<br>उच्यते ॥६७२॥ |                                  | The head of<br>a boat 2.                |                      |
|                                                          | a                     | उघ्यो, उयो, उद्यो, उद्द्यो | b                   | अवाकूल                  | c                 | स्यादम्भसां                      |                                         |                      |
|                                                          | d                     | डिडिम                      | e                   | वेणी तु                 | f                 | संवेद्यस्तु, संवेद्यरवत निगद्यते | g                                       | सेतुवा-<br>रणमुच्यते |
|                                                          | h                     | तत्त्वं                    |                     | स्यादुडुपं              | i                 | पत्वणं ।                         |                                         |                      |

|                                                 |                     |                            |                 |                               |                        |                       |                      |
|-------------------------------------------------|---------------------|----------------------------|-----------------|-------------------------------|------------------------|-----------------------|----------------------|
| The ganges 9.                                   | 1<br>भागीरथी        | 2<br>सुरसरिद्विष्णुपदी     | 3<br>जाह्नवी    | 4<br>तथा                      | 5<br>गङ्गा ।           |                       |                      |
|                                                 | 6<br>मन्दाकिनी      | 7<br>त्रिपथगा              | 8<br>सरिद्वरा   | 9<br>त्रिदशदीधिका             | प्रोक्ता ॥६७३॥         |                       |                      |
| The river Goda-<br>wari 2.                      | 1<br>गोदावरी        | 2<br>च                     | 1<br>गोदा       | 2<br>कालिन्दी                 | 3<br>दिनकरात्मजा       | The river Yamuna 3.   |                      |
| The river Sone 2.                               | 1<br>शोणो           | 2<br>हिरण्यबाहुर्भेकलकन्या | 1<br>च          | 2<br>नर्मदा                   | 3<br>रेवा ॥६७४॥        | The river Narbada 3.  |                      |
| A small pond 3.                                 | 1<br>वेशन्तः        | a 2<br>पल्वलं              | 3<br>तल्लं      | 1<br>कासारः                   | 2<br>सरसी              | 3<br>सरः ।            | A large pond 3.      |
| A natural pond 2.                               | b 1<br>आखातो        | 2<br>देवखातः               | 1<br>स्यात्वाता | 2<br>पुष्करिणी                | भवेत् ॥६७५॥            | An artificial pond 2. |                      |
| A pond 2.                                       | 1<br>आधारश्च        | 2<br>तडागं                 | 1<br>स्यादाली   | 2<br>पाली                     | च कथ्यते ।             | A bridge 2.           |                      |
| A moat, a ditch 2.                              | 1<br>परिखा          | 2<br>दीधिका                | प्रोक्ता        | खाता                          | या परितः               | पुरम् ॥६७६॥           |                      |
| A drain 2.                                      | 1<br>परीवाहो        | 2<br>जलोच्छ्वास            | 1<br>उत्सः      | c 2<br>प्रस्रवणं              | स्मृतम् ।              | A spring 2.           |                      |
| Drop.                                           | 1<br>विप्रुषो       | 2<br>विन्दवः               | 3<br>प्रोक्ताः  | 4<br>पृषतः                    | पृषतास्तथा ॥६७७॥       |                       |                      |
| Liquidated food;<br>also mud 2.<br>Mud, mire 6. | 1<br>पिच्छिलं       | d 2<br>स्याद्विजपिलं       | 1<br>पङ्कः      | 2<br>शादो                     | 3<br>निषद्वरः ।        |                       |                      |
|                                                 | 4<br>जम्बालः        | 5<br>कर्दमः                | प्रोक्तो        | e 6<br>बुधैरिचिकिलस्तथा ॥६७८॥ |                        |                       |                      |
|                                                 | 1<br>सहस्रपत्रं     | 2<br>कुशेशयं               | 3<br>तामरसं     | 4<br>सरोरुहम् ।               |                        |                       |                      |
| A lotus 17.                                     | f 7<br>विसप्रसूनं   | 8<br>कमलं                  | 9<br>महोत्पलं ; | 10<br>सरोजमल्लं               | 11<br>नलिनं            | 12<br>च               | 13<br>पुष्करम् ॥६७९॥ |
|                                                 | 14<br>राजीवमरविन्दं | 15<br>च                    | 16<br>पद्मं     | 17<br>पङ्कजमिष्यते ।          |                        |                       |                      |
| Red lotus,                                      | 1<br>रक्तं          | 2<br>कोकनदं                | प्रोक्तं        | 1<br>पुण्डरीकं                | 2<br>सिताम्बुजम् ॥६८०॥ | A white lotus 2.      |                      |
| The white water<br>lily 2.                      | 1<br>सौगन्धिकं      | 2<br>च                     | कह्लारं         | 1<br>स्यादिन्दीवरमुत्पलम् ।   |                        | A blue lotus 4.       |                      |
|                                                 | 3<br>नीलोत्पलं      | 4<br>कुवलयं                | 1<br>कैरवं      | 2<br>कुमुदं                   | विदुः ॥६८१॥            | White lotus 2.        |                      |

a पल्वणं b अखातो c प्रवहणं d स्याद्विजवलं e बुधै-  
रिचिकिल f विसप्रसूनं ।

A pericarp of lotus 2.

Fibrous root of a lotus; a lotus fibre 3.

(a) lotus plant bearing white lotuses

(b) place or pond abounding in white lotuses

(c) an assemblage of white lotuses.

A water plant moss.

A well 2

प्रधिर्नेष्टि A pulley, the periphery or circumference of a wheel 2.

A small pool or pond near a well or a well itself 2.

The rope and bucket of a well 2.

A canal 2;

कणिका<sup>1</sup> बीजकोशः<sup>a</sup> स्यात्किञ्जल्कं<sup>b</sup> केसरं<sup>1</sup> स्मृतम्<sup>2</sup> ।

मृणालं<sup>1</sup> स्याद्विसं<sup>2</sup> कन्दो<sup>3</sup> विसिनी<sup>1</sup> नलिनी<sup>2</sup> भवेत् ॥६८२॥

कुमुद्वती<sup>1</sup> कुमुदिनी<sup>2</sup> वुधैः<sup>3</sup> कैरविणी<sup>3</sup> स्मृता ।

शैवालं<sup>d</sup> शैवलं<sup>1</sup> प्रोक्तं<sup>2</sup> जलशूकं<sup>1</sup> च नीलिका<sup>2</sup> ॥६८३॥

अन्धुः<sup>1</sup> कूपः<sup>2</sup> प्रधिर्नेष्टि<sup>1</sup> मिश्चुरी<sup>2</sup> चुण्डी<sup>2</sup> च चूतकः<sup>3</sup> ।

निपानमुदपानं<sup>1</sup> च वाप्याहावश्च<sup>1</sup> कथ्यते<sup>2</sup> ॥६८४॥

उद्धाटकं<sup>f</sup> घटीयन्त्रं<sup>2</sup> पादावर्तोत्तरघट्टकः<sup>1</sup> ।

पानं<sup>1</sup> तु सारणिः<sup>g</sup> प्रोक्ता<sup>1</sup> प्रणाली<sup>2</sup> जलपद्धतिः<sup>2</sup> ॥६८५॥

The filament of a flower 2

A lotus plant, an assemblage of lotuses, lotus fibre; also a lake abounding in lotuses 2.

Moss 2.

A small well or reservoir 3.

A trough near a well for watering cattle 2.

A wheel or machine for raising water from a well 2.

A channel, a drain, a gutter 2.

इति श्रीभट्टहलायुषकृतायामभिधानरत्नमालायां

पातालकाण्डं तृतीयं समाप्तम् ॥३॥

a बीजकोशं b किञ्जल्कः किजः c स्याद्विसकन्दो d शैवालं  
e चण्डी, चुण्डी f उद्धाटकं g सारणैः, सारणं ।



## चतुर्थ सामान्यकाण्डम्

\* 1 2 3 4 5 6 7 8  
निकरनिकायनिवह्विसरत्रजपुञ्जसमूहसञ्चयाः ,

9 10 11 a 12 13 14 15  
समुदयसार्ययूयनिकुरम्बकदम्बकपूगराशयः ।

16 17 18 19 20 21 22  
चयसमवायवृन्दसन्दोहसमाजवितानसंहति-

23 24 25 26 27 28 29 30

Heap, collection 40.

प्रकरणौघसंघसंघातव्रातकुलोत्कराः स्मृताः ॥६८६॥

31 b 32 33 34 35  
पटलं पेटकं चक्रं चक्रवालं च मण्डलम् ।

36 37 38 39 40

जालं जातं तथा व्यूहवारस्तोमाश्च ते स्मृताः ॥६८७॥

1 2 3 4 5 6 7 8

Small, little,  
minute 15.

सूक्ष्मलेशलवश्लक्षणाक्षुद्रदभ्रकणाणवः ।

9 10 11 12 13 14 15

किञ्चिन्मात्रतनुस्तोक ह्रस्वाल्पत्रुटयः समाः ॥६८८॥

c 1 2 3 4 5 6 7  
प्राग्रचं प्राग्रहरं प्रवेकमपरं वर्यं वरेण्यं वरं ,

8 9 10 11 12 13 14

Fine, pleasing 42.

श्रेष्ठं प्रेष्ठमनुत्तमं च मधुरं मञ्जु प्रियं मञ्जुलम् ।

15 16 17 18 19 20 21

हृद्यं हारि मनोहरं च रुचिरं कान्तं परं सुन्दरं ,

22 23 24 25 26 27 28 29

सौम्यं साधु च वल्गु चारु सुषमं वामं शुभं पेशलम् ॥६८९॥

\* This छन्द is called द्वितश्री or पञ्चकवली consisting 4 tetrastichs each containing 28 short syllables arranged in the following order  
it also occurred in sloka 640. It is also used by the poet माघ in शिशुपालवध ३-८२ ।

a निकरव b पेटलं c प्राग्रं ।

|                      |                  |                                          |                                             |                                |                               |
|----------------------|------------------|------------------------------------------|---------------------------------------------|--------------------------------|-------------------------------|
| Chief, Principal.    | 30<br>अग्रघं     | 31<br>प्रधानं                            | 32<br>प्रमुखं                               | 33<br>पुरोगं ,                 |                               |
|                      |                  | 34<br>मुख्यं                             | 35<br>परार्ध्यं                             | 36<br>प्रवरं                   | 37<br>प्रवर्हम् ।             |
|                      | 38<br>अग्रेसरं   | a 39 40<br>सत्तममुत्तमं                  |                                             | च ,                            |                               |
|                      |                  | 41 42<br>ग्रामप्यमग्रप्यमुदाहरन्ति       |                                             |                                | ॥६९०॥                         |
| Doubt, hesitation 9. | 1<br>शङ्का       | 2<br>वितर्कः                             | 3<br>सन्देहः                                | 4 b 5 6<br>संशयारेकविभ्रमाः ।  |                               |
|                      | 7<br>विचिकित्सा  | 8<br>विकल्पश्च                           | 9<br>भ्रान्तिरेकार्थवाचकाः                  |                                | ॥६९१॥                         |
|                      | 1<br>समीपं       | 2<br>सनीडं                               | 3 4<br>समयदिमारात् ,                        |                                |                               |
| Near 19.             |                  | 5<br>सदेशं                               | 6<br>सवेशं                                  | 7 8<br>ससीमोपकण्ठम् ।          |                               |
|                      |                  | 9 10 c 11<br>तथाभ्यर्णमभ्यग्रमभ्याशमाहु— |                                             |                                |                               |
|                      |                  | 12<br>वृधाः                              | 13<br>सन्निधानान्तिके                       | 14<br>सन्निकृष्टम् ॥६९२॥       |                               |
|                      | 15<br>आसन्नं     | 16<br>सविधं                              | 17 18 19<br>पार्श्वमुपान्तमपदान्तरम् ।      |                                |                               |
| Remote, distant 5.   | 1<br>विप्रकृष्टं | 2<br>परं                                 | 3 4 5<br>दूरमाराद् व्यवहितं स्मृतम् ॥६९३॥   |                                |                               |
| Like, similar 11.    | 1<br>सदृक्       | 2<br>समानः                               | 3<br>सदृशः                                  | 4<br>सदृक्षः ,                 |                               |
|                      |                  | 5<br>प्रख्यः                             | 6<br>प्रकाशः                                | 7 8<br>प्रतिमः प्रकारः ।       |                               |
|                      | 9<br>तुल्यः      | 10<br>समः                                | 11<br>सन्निभ इत्यभिन्नाः ,                  |                                |                               |
|                      |                  | शब्दाः                                   | प्रयोगेषु                                   | गवेपणीयाः ॥६९४॥                |                               |
| Fickle 10.           | 1<br>लोलं        | 2<br>चपलं                                | 3<br>चटुलं                                  | 4<br>प्रचलं                    | 5 6 7<br>तरलं परिप्लवमधीरम् । |
|                      | 8<br>पारिप्लवं च | 9<br>घीराश्चलाचलं                        | 10<br>चञ्चलं च                              |                                | कथयन्ति ॥६९५॥                 |
|                      | 1<br>वक्रं       | 2<br>वृजिनं                              | 3 4<br>भङ्गुरमाविद्धं                       | 5 6 7<br>वैलिलतं नतं जिह्वम् । |                               |
| Crooked 12.          | 8<br>भुग्नमरालं  | 9<br>कुटिलं                              | 10 11<br>व्याकुञ्चितमूर्ध्निमत्कथितम् ॥६९६॥ | 12                             |                               |

a सत्तममुत्तमं, सतममुत्तमं, सत्तमुत्तमं    b संशयारेक, संशयावेक,  
संशयोद्रेक    c न्यासमा ।

|                                              |                            |                         |                    |                          |                  |          |            |             |    |    |
|----------------------------------------------|----------------------------|-------------------------|--------------------|--------------------------|------------------|----------|------------|-------------|----|----|
|                                              | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        | 7          | 8           | 9  | 10 |
|                                              | द्राक्                     | चपलं                    | लघु                | मङ्गक्षु                 | स्नाक्           | तूर्णं   | त्वरितमाशु | शीघ्रमरम् । |    |    |
| Soon, quickly 16.                            | 11                         | 12                      |                    | 13                       | 14               | 15       | 16         |             |    |    |
|                                              | अह्लाय                     | सत्वरं                  | च                  | क्षिप्रं                 | द्रुतमञ्जसा      | झटिति    | ॥६९७॥      |             |    |    |
| Always, continual,<br>unceasing 11.          | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        | 7          |             |    |    |
|                                              | सततं                       | सन्ततमनिशं              | नित्यमजस्रं        | च                        | शश्वदश्रान्तम् । |          |            |             |    |    |
|                                              | 8                          | 9                       |                    | 10                       | 11               |          |            |             |    |    |
|                                              | अविरतमनवरतं                | स्यादेकार्थमनारतमसक्तम् | ॥६९८॥              |                          |                  |          |            |             |    |    |
| Large, great 13.                             | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        | 7          | 8           | 9  |    |
|                                              | बृहद्गुरु                  | गुरु                    | विस्तीर्णं         | पुरु                     | पृथु             | पृथुलं   | महद्विशालं | च           | ॥॥ |    |
|                                              | 10                         | 11                      | a 12               | 13                       |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | व्यूढं                     | विपुलं                  | रुद्रं             | वरिष्ठमेकार्थमुद्दिष्टम् | ॥६९९॥            |          |            |             |    |    |
| A pair, a couple 7.                          | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        | 7          |             |    |    |
|                                              | युग्मं                     | युगं                    | च                  | युगलं                    | द्वन्द्वं        | द्वितयं  | यमं        | यमलम् ।     |    |    |
| Couple of male<br>and female.                | b                          |                         |                    | 1                        |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | स्त्रीपुंसयोस्तु           | युग्मं                  | मिथुनं             | परिकथ्यते                | सद्भिः           | ॥७००॥    |            |             |    |    |
| Abundant; much 10.                           | c 1                        | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        |            |             |    |    |
|                                              | प्राज्यं                   | भूरि                    | प्रभूतं            | च                        | प्रचुरं          | बहुलं    | बहु ।      |             |    |    |
|                                              | d 7                        | 8                       | 9                  | 10                       |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | पुरुजं                     | पुष्कलं                 | पुष्टमदम्रमभिधीयते | ॥७०१॥                    |                  |          |            |             |    |    |
| Full of, gathered,<br>accumulated 9.         | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                | 6        |            |             |    |    |
|                                              | आचितं                      | निचितं                  | व्याप्तं           | छन्नं                    | कीर्णं           | च        | सङ्कुलम् । |             |    |    |
|                                              | 7                          | 8                       | 9                  |                          |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | आकुलं                      | भरितं                   | पूर्णं             | नातिनानार्थवाचकाः        | ॥७०२॥            |          |            |             |    |    |
| Rejected, set aside 7.                       | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | प्रत्याख्यातं              | प्रतिक्षिप्तं           | प्रत्यादिष्टं      | निराकृतम् ।              |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | 5                          | 6                       | 7                  |                          |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | निरस्तमपविद्धं             | च                       | प्राज्ञाः          | परिहृतं                  | वेदुः            | ॥७०३॥    |            |             |    |    |
| Disrespect, dis-<br>honour, con-<br>tempt 7. | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | अत्याकारः                  | परिभवो                  | निकारश्च           | पराभवः ।                 |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | 5                          | 6                       | 7                  |                          |                  |          |            |             |    |    |
|                                              | अनादरश्चाभिभवस्तिरस्कारश्च | कथ्यते                  | ॥७०४॥              |                          |                  |          |            |             |    |    |
| Terrible, fearful 10.                        | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                |          |            |             |    |    |
|                                              | घोरं                       | प्रतिभयं                | भीमं               | दारुणं                   | स्याद्भयानकम् ।  |          |            |             |    |    |
|                                              | 6                          | 7                       | 8                  | 9                        | 10               |          |            |             |    |    |
|                                              | आभीलं                      | भीषणं                   | भीष्मं             | भैरवं                    | च                | भयावहम्  | ॥७०५॥      |             |    |    |
| Friendship 10.                               | 1                          | 2                       | 3                  | 4                        | 5                |          |            |             |    |    |
|                                              | सख्यं                      | साप्तपदीनं              | सौहार्दं           | सौहृदं                   | तथा              | स्नेहः । |            |             |    |    |
|                                              | 6                          | 7                       | 8                  | 9                        | 10               |          |            |             |    |    |
|                                              | मैत्री                     | प्रीतिरर्ज्यं           | सभाजनं             | सङ्गतं                   | प्रोक्तम्        | ॥७०६॥    |            |             |    |    |

a वृन्दं, भद्रं, वड् । b स्त्रीपुंसयोश्च c प्रायं d पुरुहं ।

|                                    |                                                                                                                                    |                      |
|------------------------------------|------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----------------------|
| First 7.                           | 1 2 3 4 5 6 7<br>आदिरग्रं पुरा पूर्वं प्रथमं प्राक् पुरः स्मृतम् ।                                                                 |                      |
| Beginning 3.                       | 1 2 3 1 2<br>उपज्ञोपक्रमारम्भौ परञ्च चरमं भवेत् ॥७०७॥                                                                              | Final, last 2.       |
| Solitude 7.                        | 1 2 3 4 5<br>रहः प्रच्छन्नमेकास्ति निःशलाकमुपह्वरम् ।<br>6 7 1 2<br>उपांशु विजनं प्रोक्तं रहस्यं गुह्यमुच्यते ॥७०८॥                | Secret, concealed 2. |
| Trick, deceit, deception 10.       | 1 2 3 4 5 6 7<br>कैतवं कपटं कूटं व्याजच्छद्योपधिच्छलम् ।<br>8 9 10<br>मिषं निभं च निर्दिष्टं व्यपदेशश्च सूरिभिः ॥७०९॥              |                      |
| Wish, desire 8.                    | 1 2 3 4 5 6 7<br>इच्छा वाञ्छा स्पृहा काङ्क्षा कामनेप्सा रुचिस्तथा ।<br>8 1 2<br>आशंसा चेति तुल्यार्था निश्चितं नियतं स्मृतम् ॥७१०॥ | Positiyely 2.        |
| Old, ancient 6.                    | 1 2 3 4 5 6<br>जीर्णं जरत्पुराणं प्रत्नं प्रतनं पुरातनं प्रोक्तम् ।                                                                |                      |
| New, fresh 6.                      | 1 2 3 4 5 6<br>नव्यं नवं नवीनं स्यान्नूतनमभिनवं नूतनम् ॥७११॥                                                                       |                      |
| Enclosed, encircled; surrounded 5. | 1 b 2 3 4 5<br>निवृत्तं वेष्टितमुक्तं परिवृत्तं वलयितं परिक्षिप्तम् ।                                                              |                      |
| Eradicated 4.                      | 1 2 3 4<br>आवहितमुन्मूलितमुत्पाटितमुद्धृतं च समम् ॥७१२॥                                                                            |                      |
| All, whole, entire 8.              | 1 2 3 4<br>कृत्स्नं समग्रं सकलं समस्तं ,<br>5 6 7 8<br>सर्वं च विश्वं निखिलाखिले च ।                                               |                      |
| Fragment, a part 7.                | 1 2 3 4 5<br>खण्डार्धनेमाः शकलं च भित्तं ,<br>6 7<br>सामीत्यसम्पूर्णसमानसंज्ञाः ॥७१३॥                                              |                      |
| Scattered 2.                       | 1 2 3<br>अवकीर्णमवध्वस्तं त्यक्तमुत्सृष्टमुज्झितम् ।                                                                               | Left, thrown away 3. |
| Dispised 3.                        | 1 2 3<br>अनादृतमवज्ञातमपहस्तितमिप्यते ॥७१४॥                                                                                        |                      |
| Promise 6.                         | 1 2 3 4 5 6<br>आगूः सङ्गरसन्धाप्रतिश्रवाः संश्रवः प्रतिज्ञा च ।                                                                    |                      |
| Disregard, contempt 5.             | 1 2 3 4 5<br>हेला स्यादवहेलं रोढावज्ञावलीढा च ॥७१५॥                                                                                |                      |

a कामना स्यादु b निवृत्तं वेष्टितमुक्तं c लीढा, रोढा ।

चतुर्थकाण्डम्

Sorcery.

मूलीकर्म<sup>1</sup> प्रोक्तं<sup>2</sup> संवननं<sup>3</sup> कामर्णं<sup>4</sup> वशीकरणम् ।

Repentance 4.

विप्रतिसारोज्जुशयः<sup>1</sup> पश्चातापोऽनुतापः<sup>2</sup> स्यात् ॥७१६॥

Thin, spare 7.

क्षामं<sup>1</sup> शातं<sup>2</sup> कृशं<sup>3</sup> क्षीणं<sup>4</sup> पेलवं<sup>5</sup> तलिनं<sup>6</sup> तनु ।

Dense, thick 9.

निरन्तरं<sup>1</sup> घनं<sup>2</sup> सान्द्रं<sup>3</sup> बहुलं<sup>4</sup> विरलेतरम् ॥७१७॥

Abundant 5.

निविडं<sup>1</sup> निविरीशं<sup>2</sup> च<sup>3</sup> दृढं<sup>4</sup> गाढं<sup>5</sup> प्रचक्षते ।

Excessive 3.

कामं<sup>1</sup> प्रकामं<sup>2</sup> पर्याप्तं<sup>3</sup> नितान्तं<sup>4</sup> भृशमुच्यते ॥७१८॥

Concealment 4.

व्यवधानं<sup>1</sup> अत्यर्थमतिमर्यादमतिवेलं<sup>2</sup> च<sup>3</sup> कथ्यते ।

Mutual, reciprocal 4.

परस्परं<sup>1</sup> मिथः<sup>2</sup> प्रोक्तमन्योन्यमितरेतरम् ।

Sport, play 4.

कौतूहलं<sup>1</sup> विनोदः<sup>2</sup> स्यात्कौतुकं<sup>3</sup> च<sup>4</sup> कुतूहलम् ॥७२०॥

Line, row, range 6.

आली<sup>1</sup> श्रेण्यावली<sup>2</sup> पङ्क्तिर्वीथी<sup>3</sup> राजी<sup>4</sup> च<sup>5</sup> कथ्यते ।

Shaving, tonsure 4.

क्षौरं<sup>1</sup> च<sup>2</sup> भद्राकरणं<sup>3</sup> मुण्डनं<sup>4</sup> वपनं<sup>5</sup> स्मृतम् ॥७२१॥

Pride, haughtiness 11.

दर्वो<sup>1</sup> मदोऽवलेपो<sup>2</sup> मानो<sup>3</sup> गर्वो<sup>4</sup> भवेदहङ्कारः ।

Power, strength, might 13.

आवेशः<sup>1</sup> संवेगः<sup>2</sup> संरम्भः<sup>3</sup> सम्भ्रमस्तथाटोपः<sup>4</sup> ॥७२२॥

Pity, kindness, compassion 6.

प्राणः<sup>1</sup> स्थाम<sup>2</sup> बलं<sup>3</sup> धुम्नमोजः<sup>4</sup> शुष्म<sup>5</sup> तरः<sup>6</sup> सहः<sup>7</sup> ।

Repeatedly 5.

प्रतापः<sup>1</sup> पौरुषं<sup>2</sup> तेजो<sup>3</sup> विक्रमः<sup>4</sup> स्यात्पराक्रमः<sup>5</sup> ॥७२३॥

Terror, fear 6.

अनुक्रोशः<sup>1</sup> कृपा<sup>2</sup> शूकं<sup>3</sup> दया<sup>4</sup> च<sup>5</sup> करुणा<sup>6</sup> घृणा ।

Forbearance patience 5.

प्रतिक्षणमभीक्षणं<sup>1</sup> च<sup>2</sup> भयमाशङ्का<sup>3</sup> भूयः<sup>4</sup> दरस्त्रासश्च<sup>5</sup> साध्वसम् ।

आतङ्को<sup>1</sup> क्षमा<sup>2</sup> तितिक्षा<sup>3</sup> च<sup>4</sup> क्षान्तिरुक्ता<sup>5</sup> सहिष्णुता ॥७२५॥

a मूलकर्म परिवारणम् ।

b क्षामं शांत

c तिवदं निवडीशं

d तदि-

|                                            |                                                                  |                         |
|--------------------------------------------|------------------------------------------------------------------|-------------------------|
| A staff, a stick 5.                        | 1 2 3 4 5<br>वैणवो लगुडो रम्भो दण्डो यष्टिश्च कथ्यते ।           |                         |
| Walking about, going, moving 5.            | 1 2 3 4 5<br>गतिर्वीखा विहारः स्यात्परिसर्पः परिक्रमः ॥७२६॥      |                         |
| Corner 5.                                  | 1 2 3 4 5<br>अगिरश्चिस्तथा कोटिरश्चः कोणश्च कथ्यते ।             |                         |
| Foul, dirty 4.                             | 1 2 3 4<br>कश्मलं मलिनं म्लानं मलीमसमुदाहृतम् ॥७२७॥              |                         |
| Wages, cost price 6.                       | 1 2 3 a 4 5 6<br>भृतिर्भृत्या च कर्मण्या वेता मूल्यं च वेतनम् ।  |                         |
| A line of a letter or writing 3.           | b 1 2 c 3<br>लिपिरालेख्यलेखा स्याल्लिपिलेखाक्षरस्य च ॥७२८॥       |                         |
| Cutting, clipping 4.                       | 1 2 3 4<br>कल्पनं कर्तनं प्रोक्तं वर्धनं छेदनं तथा ।             |                         |
| Reverse 4.                                 | 1 2 3 4<br>व्यत्ययः स्याद्विपर्यासो वैपरीत्यं विपर्ययः ॥७२९॥     |                         |
| Concealment of knowledge 4.                | 1 2 3 4<br>अपह्नवोऽपलापः स्यादपज्ञानमपात्ययः ।                   |                         |
| Composition 5.                             | 1 2 3 4 5<br>श्रन्थनं ग्रन्थनं गुम्फः सन्दर्भो रचना स्मृता ॥७३०॥ |                         |
| Rubbing the body with fragrant unguents 2. | 1 d 2 1 2<br>उद्धर्तनमुत्सादनमाहुः सोत्प्रासहसितमुपहसितम् ।      | Ridiculing, derision 2. |
| Confused 2.                                | 1 2 3<br>उत्पिञ्जलमाकुलकं स्यादनुपदमन्वगन्वक्षम् ॥७३१॥           | Following 3.            |
| White 7.                                   | 1 2 3 4 5 6 7<br>गौरः श्वेतः सितः शुभ्रो वलक्षो धवलोऽर्जुनः ।    |                         |
| Yellowish, white pale 5.                   | 1 2 3 4 e 5<br>हरिणः पाण्डुरः पाण्डुरवदातश्च पाण्डरः ॥७३२॥       |                         |
| Red 7.                                     | 1 2 3 f 4 5 6<br>अरुणः शोणो रक्तो माञ्जिष्ठः पाटलस्तथा ताम्रः ।  |                         |
| Black 9.                                   | 7 8<br>लोहित इत्येकार्थाः कविभिः शब्दाः प्रयुज्यन्ते ॥७३३॥       |                         |
| Tawny, brown 4.                            | 1 h 2 3 4 5 6<br>असितं शिति कृष्णं च कालं नीलं च मेचकम् ।        |                         |
| Yellow 2.                                  | 7 8 9 1 2 3<br>श्यामं तु श्यामलं रामं पालाशं हरितं हरित् ॥७३४॥   | Green 3.                |
|                                            | 1 2 3 4<br>हरिः कद्रुः कडारश्च पिङ्गलः परिकीर्तितः ।             |                         |
|                                            | 1 2 1 2<br>पीतं हारिद्रमाख्यातं श्यावं तु कपिशं स्मृतम् ॥७३५॥    | Dark brown 2.           |

a वेचा b लिविराले c लिपिलेखाक्षरस्य d मुखादनमाहुः e पाण्डुरः, पाण्डुकः f माञ्जिष्ठः g शब्दाः कविभिः h सिति, सित ।

|                                            |                                                                    |                                                        |
|--------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------|
| Brown tawny 5.                             | 1 2 3 4 5<br>पिङ्गः पिशङ्ग इत्युक्तो बभ्रुः कपिलः पिङ्गलः ।        |                                                        |
| Variegated, speckled 2.                    | 1 2 1 2<br>सारङ्गः शबलो वर्णः कल्माषः कृष्णपाण्डुरः ॥७३६॥          | Greyish white 2.                                       |
| Reddish yellow 2.                          | a 1 2 1 2<br>पिञ्जरः पीतरक्तः स्याद्भूसरः स्तोत्रपाण्डुरः ।        | Greyish white 2.                                       |
| Dark red 2.                                | b 1 2 3<br>रक्तश्यामो भवेद्भ्रुवो धूमलः स च कथ्यते ॥७३७॥           |                                                        |
| Lilyleaf like lady 2.                      | 1 2 1 2<br>श्यामी कुमुदपत्राभा शुकाभा हरिणी स्मृता ।               | Parrot like lady 2.                                    |
| The lotus leaf like lady; rose red lady 2. | 1 2<br>जपाकुसुमसंकाशा लोहिनी परिकीर्तिता ॥७३८॥                     |                                                        |
| Regular course 2.                          | 1 2 c 1 2<br>परिपाटयानुपूर्वी स्यादुपशायोऽनुपात्ययः ।              | 1. Sleeping in turn, rotation for sleeping with other. |
| Progression, succession 2.                 | 1 2<br>अनुक्रमश्च पर्यायो विशायः परिकीर्तितः ॥७३९॥                 | 2. Absence of neglect following the appointed order.   |
| Envy, hypocrisy 5.                         | 1 2 3 4 d 5<br>ईर्ष्या स्यात्कुहना दम्भो मिथ्याचर्या च कुक्कुटिः । |                                                        |
| Jugglery, delusion 5.                      | 1 e 2 3 4 f 5<br>कुसृतिनिकृतिर्माया शाम्बरी पथकल्पना ॥७४०॥         |                                                        |
| Variegated, mixed 6.                       | g 1 2 3 4 5 6<br>चित्रकिर्मीरकल्माषशबलोन्मिश्रकर्बुराः ।           |                                                        |
| Combined, mixed 5.                         | 1 2 3 4 5<br>करम्बः कवरः शारः सम्पृक्तः खचितः समाः ॥७४१॥           |                                                        |
| Longing, strong desire 7.                  | 1 2 3 4 5<br>आयल्लकमुत्कण्ठा स्यादुत्कलिका रतिश्च रणरणकम् ।        |                                                        |
| Contrary, opposed 4.                       | 6 7 1 2<br>औत्सुक्यं हल्लेखो विरहवियोगौ च तुल्यार्थौ ॥७४२॥         | Separation 2.                                          |
| Covered, concealed 5.                      | 1 2 3 4 5<br>प्रतिकूलं प्रतिलोमं प्रतीपमुक्तं प्रसव्यमेकार्थम् ।   |                                                        |
| A part, a limb, a portion 5.               | 1 2 3 4 5<br>अपवारितं च पिहितं संवीतं संवृतं स्थगितम् ॥७४३॥        |                                                        |
| Exceeding much 4.                          | 1 2 3 4 5<br>आहुः प्रतीकमवयवमपघनमङ्गं तथैकदेशं च ।                 |                                                        |
| Assembly 6.                                | 1 2 3 4 5 6<br>उल्लङ्घनमुद्धतमुद्भटमुत्कटमिति नातिनानार्थाः ॥७४४॥  |                                                        |
| Wonder, surprise 5.                        | 1 2 3 4 5<br>समाजः संसदास्थानी सभा स्यात्परिषत्सदः ।               |                                                        |
|                                            | 1 2 3 4 5<br>चित्रमद्भुतमाश्चर्यं विस्मयश्चोद्यमुच्यते ॥७४५॥       |                                                        |

a पिञ्जरः, पिजिरः परिरक्तः b रक्तश्याम c स्यादुदाशयो, स्यादुपशायो d कुक्कुटिः, कुकुटिः e निष्कृति, निःकृति f-पृथुकल्पनी g चित्रकिर्मीर ।

|                                           |                                                                                                                             |                          |
|-------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------|
| Shaking, trembling 4.                     | प्रेङ्खोलितं <sup>1</sup> तरलितं <sup>2</sup> प्रेङ्खितं <sup>3</sup> लुलितं <sup>4</sup> स्मृतम् ।                         |                          |
| Proper, fit 5.                            | युक्तं <sup>1</sup> स्यादुचितं <sup>2</sup> न्याय्यं <sup>3</sup> प्राप्तमौपयिकं <sup>4</sup> तथा <sup>5</sup> ॥७४६॥        |                          |
| Placed in or upon 4.                      | आहितं <sup>1</sup> निहितं <sup>2</sup> न्यस्तमारोपितमिति <sup>3</sup> स्मृतम् ।                                             |                          |
| Put on, dressed 4.                        | द्वंद्वं <sup>1</sup> पिनद्धमामुक्तमपिनद्धं <sup>2</sup> च <sup>3</sup> कथ्यते <sup>4</sup> ॥७४७॥                           |                          |
| Cheating 4.                               | वञ्चनं <sup>1</sup> चातिसन्धानं <sup>2</sup> व्यलीकं <sup>3</sup> स्यात्प्रतारणम् ।                                         |                          |
| Infraction of an engagement, deception 3. | विप्रलम्भो <sup>1</sup> विसंवादो <sup>2</sup> विप्रलापश्च <sup>3</sup> कीर्तितः <sup>4</sup> ॥७४८॥                          |                          |
| Offence, fault 5.                         | व्यलीकमपराधः <sup>1</sup> स्यादागो <sup>2</sup> मन्तुश्च <sup>3</sup> विप्रियम् <sup>4</sup> ।                              |                          |
| Courtesy 4.                               | प्रणतिः <sup>1</sup> स्यादनुनयः <sup>2</sup> प्रणिपातश्च <sup>3</sup> सान्त्वनम् <sup>4</sup> ॥७४९॥                         |                          |
| Introduction; resolution; beginning 2.    | उद्धात उक्तः <sup>1</sup> प्रस्तावो <sup>2</sup> वारश्चावसरः <sup>3</sup> क्षणः <sup>4</sup> ।                              | Opportunity 3.           |
| Approached, near 3.                       | वदन्त्युपगतं <sup>1</sup> प्राज्ञा <sup>2</sup> उपसन्नमुपस्थितम् <sup>3</sup> ॥७५०॥                                         |                          |
| High, tall 5.                             | प्रांशूच्चमुन्नतं <sup>1 2 3</sup> तुङ्गमुदग्रं <sup>4 b 5</sup> दीर्घमायतम् <sup>1 2</sup> ।                               | Long 2.                  |
| Unfettered, unrestrained 4.               | अयन्त्रितं <sup>1</sup> स्यादुद्दाममुच्छृङ्खलमनर्गलम् <sup>2</sup> ॥७५१॥                                                    |                          |
| Clear, manifest 5.                        | विशदं <sup>1</sup> प्रकटं <sup>2</sup> स्पष्टं <sup>3</sup> प्रकाशं <sup>4</sup> स्फुटमिष्यते <sup>5</sup> ।                |                          |
| Forth with 2.                             | तत्क्षणैकपदे <sup>1</sup> तुल्ये <sup>2</sup> सद्यः <sup>1</sup> सपदि <sup>2</sup> च <sup>3</sup> स्मृते <sup>c</sup> ॥७५२॥ | On the spot 2.           |
| Large, broad 4.                           | विशङ्कटं <sup>d 1</sup> विशालं <sup>2</sup> स्यात्करालं <sup>3</sup> विकटं <sup>4</sup> तथा ।                               |                          |
| Globular, round 3.                        | निस्तलं <sup>1</sup> वर्तुलं <sup>2</sup> वृत्तं <sup>3</sup> स्थपुटं <sup>1 e</sup> विषमोन्नतम् <sup>2</sup> ॥७५३॥         | Unevenly raised 2.       |
| A bucket 2.                               | अवगाहो <sup>f 1</sup> जलद्रोणी <sup>2</sup> निर्वेदः <sup>1</sup> खेद उच्यते <sup>2</sup> ।                                 | Grief 2.                 |
| Carelessness 2.                           | प्रमादोजनवधानं <sup>1</sup> स्यादत्याधानमतिक्रमः <sup>2</sup> ॥७५४॥                                                         | Transgression 2.         |
| Enjoyment 2.                              | निर्वेश उपभोगः <sup>1</sup> स्यादाभोगः <sup>2</sup> परिपूर्णता ।                                                            | Fulness, completeness 2. |
| Well known, censured.                     | अवगीतं <sup>1</sup> मुहुर्दृष्टमुपलब्धं <sup>h 2</sup> च यद्भवेत् ॥७५५॥                                                     |                          |

a कीर्त्यते, कीर्त्यन्ते. b तुगं उदतं c स्मृतम् d विसंकटं  
e छपुटं, सपुटं f अवगाहो g स्यादग्याधान, स्यादत्याधान  
h मुहुर्दृष्ट, मुहुर्दृष्ट ।



|                                                                                                                |                                                                       |                                    |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------|------------------------------------|
| Left 2                                                                                                         | 1 2 1 2<br>वामं सव्यं विदुः प्राज्ञा अपसव्यं च दक्षिणम् ॥             | Not left, right 2.                 |
|                                                                                                                | a 1 2<br>प्रतिकूलानुकूलार्थे अपष्ठु त्वनपष्ठु च ॥७५६॥                 | 1. Unfavourable.<br>2. Favourable. |
| Turned away, averted 4.                                                                                        | 1 b 2 3 4<br>विपरीतं पराचीनमपाचीनं पराङ्मुखम् ।                       |                                    |
| Indolence, laziness 2.<br>A lath provided with slings at each end for carrying burden 4.<br>A looped string 2. | 1 2 1 2<br>स्मृतं कौसीद्यमालस्यमुपधा तु परीक्षणम् ॥७५७॥               | Trial of honesty 2.                |
|                                                                                                                | 1 2 3 4<br>विवधो वीवधो भारः पर्याहारश्च कथ्यते ।                      |                                    |
|                                                                                                                | 1 c 2 1 2<br>काचं शिष्यमिति प्रोक्तं भारयष्टिर्विहङ्गिका ॥७५८॥        | A pole for carrying burdens 2.     |
| Excellence 2.                                                                                                  | 1 2 1 d 2<br>सौष्ठवं स्यादवष्टम्भो हठः प्रसभमुच्यते ।                 | Force, violence 2.                 |
| Captive, prisoner 2.                                                                                           | 1 2 3 e 1 2<br>प्रग्रहो ग्रहको वन्दी पणोऽक्षेषु ग्लहः स्मृतः ॥७५९॥    | A stake at gambling 2.             |
| Abstinence from all food 4.                                                                                    | 1 2 3 4<br>प्रायः स्याद्भोजनत्यागः संन्यासोऽनशनं स्मृतम् ।            |                                    |
| In vain, useless, to no purpose 2.<br>Fruitless 2.                                                             | 1 2 1 2 1 2 3<br>मोघं मुघाऽफलं बन्ध्यं नतं नम्रं च बन्धुरम् ॥७६०॥     | Bent 3.                            |
| Trade traffic 3.                                                                                               | 1 2 3<br>स्मृतं वणिज्यं वाणिज्यं वणिज्या च समं त्रयम् ।               |                                    |
| Fight, battle 3.                                                                                               | 1 f 2 3<br>युद्धार्थे द्वे प्रयुज्येते दौर्मध्यं च करीरकम् ॥७६१॥      |                                    |
| Intention, purpose 2.                                                                                          | 1 2 1 2<br>आकूतं स्यादभिप्रायो व्याकूतिर्भङ्गिरुच्यते ।               | Deception, crookedness 2.          |
| A piece of ground purified by sacrifice 2.                                                                     | 1 2 1 g 2<br>स्थण्डिलं संस्कृता भूमिरयनं स्थानमुच्यते ॥७६२॥           | Site 2.                            |
| New, recent 2.                                                                                                 | 1 2 1 2<br>प्रत्यग्रमुक्तं सदस्कमुपाग्रमुपसर्जनम् ।                   | Inferior 2.                        |
| A swing 3.                                                                                                     | 1 2 3 1 2 3<br>दोला प्रेङ्खीलनं प्रेङ्खा उत्सवः स्यान्महः क्षणः ॥७६३॥ | A festival 3.                      |
| A buffalo's horn 2.                                                                                            | 1 2 1 b 2<br>गवलं माहिषं शृङ्गं दृतिश्चर्मप्रसेवकः ।                  | A pair of bellows 2.               |
| A casket, a box 2.                                                                                             | 1 2 1 2<br>समुद्गाः सम्पुटौ ज्ञेयो वडिशं मत्स्यबाधनम् ॥७६४॥           | A fish-hook 2.                     |

a प्रतिकूलानुकूलार्थो अपष्ठुरमपष्ठु च, प्रतिकूलानुकूलार्थे अपष्ठुर-  
मपष्ठु च b पराचीनपाचीनं, पराचीनं पराङ्मुखम् c शिष्यमिति  
d प्रसभ उच्यते e पणाक्षेषु, पण्यक्षेषु, पण्याक्षेषु f प्रयुज्येतां  
दौर्मध्यं g स्थानमिष्यते h प्रसेवकः ।

|                                                                 |                                                                                                                                         |                                            |
|-----------------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------|
| Retaliated.                                                     | कृते <sup>1</sup> प्रतिकृतं <sup>1</sup> प्राज्ञैः <sup>1</sup> प्रतिनियतितं <sup>1</sup> स्मृतम् ।                                     | Retaliation.                               |
| Worrying to death.                                              | सपत्राकरणं <sup>1</sup> प्रोक्तं <sup>1</sup> यत्परस्यातिपीडनम् ॥७६५॥                                                                   |                                            |
| Conciseness 4.                                                  | समासः <sup>1</sup> स्यात्समाहारः <sup>2</sup> संक्षेपः <sup>3</sup> सङ्ग्रहस्तथा <sup>4</sup> ।                                         |                                            |
| Expansive 3.                                                    | व्यासः <sup>1</sup> प्रपञ्चो <sup>2</sup> विस्तारः <sup>3</sup> स च शब्दस्य <sup>1</sup> विस्तरः <sup>1</sup> ॥७६६॥                     | Copiousness.                               |
| Whet 2; thrown 2.                                               | उन्नं <sup>1</sup> क्लिन्नं <sup>2</sup> स्मृतं <sup>a1</sup> नुन्नं <sup>2</sup> क्षिप्तं <sup>1</sup> तुन्नं <sup>2</sup> च पीडितम् । | Hurt, injured 2.                           |
| Fallen 2.                                                       | पन्नं <sup>1</sup> तु <sup>2</sup> पतितं <sup>b1</sup> प्रोक्तं <sup>2</sup> सन्नं <sup>2</sup> शान्तं <sup>2</sup> च सूरिभिः ॥७६७॥     | Becalmed 2:                                |
| Cast down 2.                                                    | न्यञ्चितं <sup>1</sup> स्यादधःक्षिप्तं <sup>2</sup> क्षिप्तमूर्ध्वमुदञ्चितम् ।                                                          | Thrown upwards 2.                          |
| Suspended.                                                      | काचितं <sup>1</sup> सज्जितं <sup>c 2</sup> प्रोक्तं <sup>1</sup> रूषितं <sup>1</sup> गुण्डितं <sup>d 2</sup> स्मृतम् ॥७६८॥              | Crushed, pounded 2.                        |
| Obstacle, impediment 2.                                         | विष्कम्भः <sup>1</sup> प्रतिबन्धो <sup>2</sup> विश्रम्भः <sup>1</sup> कथ्यते च विश्वासः <sup>2</sup> ।                                  | Trust, confidence 2.                       |
| Pounding of fragrant substances 2.                              | सम्मर्दः <sup>1</sup> स्यात्परिमल <sup>2</sup> उपमर्दो <sup>1</sup> विप्रकारः <sup>2</sup> स्यात् ॥७६९॥                                 | Hurt, injury 2.                            |
| Consideration of moral duties 2.                                | उपाधिर्धर्मचिन्ता <sup>1</sup> स्यान्निःशोध्यमनवस्करः <sup>1 2</sup> ।                                                                  | Clean, unsoiled 2.                         |
| Wicked 2.                                                       | कुप्रियं <sup>1</sup> च <sup>2</sup> जघन्यं <sup>1</sup> स्यान्निःशेषं <sup>2</sup> न्यक्षमिष्यते ॥७७०॥                                 | Whole 2.                                   |
| Offence, injury 2.                                              | अपकारो <sup>1</sup> भवेद् <sup>2</sup> ब्रोहो <sup>1</sup> दोष <sup>2</sup> आदीनवो <sup>1</sup> मतः ।                                   | Fault 2.                                   |
| Astringent 2.                                                   | कषायं <sup>1</sup> तुवरं <sup>2</sup> प्रोक्तं <sup>c 1</sup> सुरङ्गा <sup>2</sup> सन्धिरुच्यते ॥७७१॥                                   | A tunnel 2.                                |
| Dissimulation, concealing or biding one's mental disposition 2. | असौम्यं <sup>1</sup> यद्भ्रूवेच्चक्षुरचक्षुस्तत्प्रचक्षते ।                                                                             | A bad or miserable eye; eye-less or blind. |
| Familiarity 2.                                                  | अवहित्यं <sup>1</sup> च <sup>2</sup> शब्दज्ञा <sup>1</sup> आकारस्य <sup>2</sup> निगूहनम् ॥७७२॥                                          | Affection, favour 2.                       |
| Grant of all things desired 2.                                  | संस्तवः <sup>1</sup> स्यात्परिचयः <sup>2</sup> प्रसादः <sup>1</sup> प्रणयः <sup>2</sup> स्मृतः ।                                        |                                            |
| Readily prepared 2.                                             | प्रवारणं <sup>1</sup> महादानं <sup>2</sup> सङ्कल्पः <sup>1</sup> कर्म <sup>2</sup> मानसम् ॥७७३॥                                         | Resolve 2.                                 |
| Independence 3.                                                 | अनायासार्थकं <sup>1</sup> फाण्टमन्तर्गडु <sup>2</sup> निरर्थकम् ।                                                                       | Useless 2.                                 |
|                                                                 | स्वाच्छन्द्यं <sup>1</sup> निर्निमित्तं <sup>2</sup> च <sup>3</sup> यदृच्छेत्यभिधीयते ॥७७४॥                                             |                                            |

|                                                                                                            |                                                                                                                     |                                                                                                                                  |
|------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| First 2.                                                                                                   | आद्यमादिममन्त्यं <sup>1</sup> स्यादन्तिमं <sup>2</sup> चाग्रमग्रिमम् <sup>1</sup> ।                                 | Last 2; prior 2.                                                                                                                 |
| Middle 2.                                                                                                  | मध्यमं <sup>1</sup> मध्यमीयं <sup>2</sup> च मध्यन्दिनमुदाहृतम् ॥७७५॥                                                | Midday, noon.                                                                                                                    |
| Adoration, reverence 2.<br>Renunciation of the world; ascetic devotion; religious austerity 2.<br>Empty 2. | नमस्या <sup>1</sup> वन्दना <sup>2</sup> प्रोक्ता <sup>1</sup> तपस्या <sup>2</sup> नियमस्थितिः ।                     | Steady observance of religion 2.<br>Walking, or the habit of roaming as a religious mendicant 2<br>Vain 2.<br>Result, product 2. |
| Inaccessible 2.                                                                                            | परिव्रज्या <sup>1</sup> व्रतादानं <sup>2</sup> ब्रज्याऽट्या <sup>1</sup> च गतिः <sup>2</sup> स्मृता ॥७७६॥           | Loose, lax 2.                                                                                                                    |
| Independence of action 2.                                                                                  | रिक्तं <sup>1</sup> तुच्छमसारं <sup>2</sup> तु फल्गु <sup>1</sup> व्युष्टिः <sup>2</sup> फलं <sup>1</sup> स्मृतम् । | Loose, lax 2.                                                                                                                    |
| Disposition 2.                                                                                             | कलिलं <sup>1</sup> गहनं <sup>2</sup> प्रोक्तं <sup>1</sup> श्लथं <sup>2</sup> शिथिलमुच्यते ॥७७७॥                    | Dignity, respect 2.                                                                                                              |
| Conversation 2.                                                                                            | स्वतन्त्रवृत्तिर्व्युत्थानमभ्युत्थानं <sup>1</sup> च गौरवम् <sup>2</sup> ।                                          | Dignity, respect 2.                                                                                                              |
| Effort 2.                                                                                                  | संस्थानं <sup>1</sup> संनिवेशः <sup>2</sup> स्यादास्थानं <sup>1</sup> नृपतेः <sup>2</sup> सभा ॥७७८॥                 | A royal waiting room 2.                                                                                                          |
| Disunion 2.                                                                                                | सङ्कथान्योन्यसङ्गीतिः <sup>1</sup> प्रतिपत्तिः <sup>2</sup> प्रगल्भता ।                                             | Decision 2.                                                                                                                      |
| Trust, confidence 2.                                                                                       | उच्यत <sup>1</sup> ऊर्ज <sup>2</sup> उत्साहो <sup>1</sup> भृकुटिभ्रूकुटिस्तथा ॥७७९॥                                 | Frown 2.                                                                                                                         |
| Got, obtained.                                                                                             | उपजापो <sup>1</sup> भवेद्भेदः <sup>2</sup> साम <sup>1</sup> सान्त्वमिति <sup>2</sup> स्मृतम् ।                      | Conciliation 2.                                                                                                                  |
| Covered 2.                                                                                                 | तथेति <sup>1</sup> प्रत्ययः <sup>2</sup> श्रद्धा <sup>1</sup> संस्कारो <sup>2</sup> वासना <sup>1</sup> स्मृता ॥७८०॥ | The realising of past perception 2.                                                                                              |
| Snare, a trap 2.                                                                                           | स्मृतमास्थितमाक्रान्तं <sup>1</sup> प्रतीष्टं <sup>2</sup> पतदाहृतम् ।                                              | Accepted, received.                                                                                                              |
| Nature 3.                                                                                                  | प्रच्छादितं <sup>1</sup> स्यात्संवीतं <sup>2</sup> प्रशस्तं <sup>1</sup> संस्कृतं <sup>2</sup> स्मृतम् ॥७८१॥        | Excellent 2.                                                                                                                     |
| Unkind, harsh 2.                                                                                           | उन्माथः <sup>1</sup> कूटयन्त्रं <sup>2</sup> स्यादवपातोऽवटः <sup>1</sup> स्मृतः ।                                   | A hole or cavity 2.                                                                                                              |
| Quick, expeditious 2.                                                                                      | धर्मः <sup>1</sup> स्वभावः <sup>2</sup> आत्मा <sup>3</sup> स्यादवेक्षा <sup>1</sup> प्रतिजागरः <sup>2</sup> ॥७८२॥   | Attention, watchfulness 2.                                                                                                       |
|                                                                                                            | स्मृतं <sup>1</sup> परुषमस्निग्धमाचारातिक्रमः <sup>2</sup> क्रिया ।                                                 | Areligious rite.                                                                                                                 |
|                                                                                                            | उच्चपडमप्रलम्बं <sup>1</sup> स्यान्माढिः <sup>2</sup> पत्रशिरा <sup>1</sup> स्मृता ॥७८३॥                            | The vein of a leaf 2.                                                                                                            |

a नियमः स्थितिः b ब्रज्याद्या, मीज्याज्या c व्युष्ट्युफलं, व्युष्टिफलं, व्युष्टफलं d भृकुटिभ्रूकुटि, उत्साहो भृकुटि, भृकुटिभ्रूकुटि  
e प्रतिष्टं तु पदाधृतं, प्रतिष्टं तु यदाधृतं, प्रतीष्टं पतदाहृतं  
f स्यादवपातो, स्यादवपानो, स्यादवटः स्मृतः g स्यादवेक्षा, स्यादवेक्षा  
h माचारातिक्रमः, माचारातिः कमक्षया i पत्रशिरा ।

Emulation, Competition, assertion of superiority.

अहमहमिका तु सा स्याच्चतिक्रयते स्पर्द्धयाधिकं किञ्चित् ।

यत्र वृथाभिनिवेशस्तामाहोपुरुषिकां विदुः प्राज्ञाः ॥७८४॥

Great self conceit or pride.

A war-cry 2.

सिहनादो भवेत् क्ष्वेडा गण्डूषो मुखपूरणम् ।

A handful of water for rinsing the mouth 2.

Power 3.

प्रभावतां वदन्त्यायाः प्रभुतां प्रभविष्णुताम् ॥७८५॥

Superiority 2.

परभागो गुणोत्कर्षः स्पर्द्धा संहर्ष उच्यते ।

Rivalry 2.

Length 2.

आयामः स्मृत आनाहः परिणाहो विशालता ॥७८६॥

Width, breadth 2.

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालयां  
सामान्यकाण्डं चतुर्थं समाप्तम् ॥ ४ ॥

a स्पर्द्धया किञ्चित्, स्पर्द्धयाधि किञ्चित् b प्रभावती ।

## पञ्चममनेकार्थकाण्डम्

|                                                                  |                                                                                                          |                                |
|------------------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------|
|                                                                  | एकोऽर्थो <sup>a</sup> बहुभिः शब्दैः कथितः कथ्यतेऽधुना ।                                                  |                                |
|                                                                  | एकस्यैव तु शब्दस्य बहुष्वर्थेषु वर्तनम् <sup>1</sup> ॥७८७॥                                               |                                |
| (1) Shiva.                                                       | रुद्रेऽपि <sup>1</sup> खण्डपरशुर्वैश्रवणेऽप्येककुण्डलः <sup>1</sup> प्रोक्तः ।                           | (1) Kubera.                    |
| (1) Door, gate.                                                  | द्वारेऽपि <sup>1</sup> प्रतिहारः <sup>b</sup> प्राकाराग्रेऽपि <sup>c</sup> कपिशोर्धम् <sup>1</sup> ॥७८८॥ | (1) The coping of a wall.      |
| (1) Enough.                                                      | पर्याप्तेऽपि <sup>1</sup> कृतं स्यादाहवनीयादिषु त्रिषु त्रेता ।                                          | (1) The three sacred fires.    |
| (1) Doubt.                                                       | सन्देहेऽपि <sup>1</sup> द्वापरमाहुः <sup>1</sup> कलहेऽपि <sup>1</sup> फलिशब्दम् ॥७८९॥                    | (1) War, battle.               |
| (1) An army.                                                     | सेनायामपि <sup>1</sup> कटकं प्राणिद्यूतं वदन्ति युद्धेऽपि <sup>1</sup> ।                                 | (1) War.                       |
| (1) Demons.                                                      | रक्षस्यपि <sup>1</sup> पुण्यजनं <sup>1</sup> मृद्भाण्डेऽप्युष्टिकामार्याः <sup>1</sup> ॥७९०॥             | (1) An earthen vessel.         |
| (1) Silver.                                                      | श्वेतं रजतेऽप्युक्तं रजतं हारे शरेऽपि <sup>1</sup> किंशारः <sup>1</sup> ।                                | (1) Necklace.<br>(1) An arrow. |
| (1) Hypocrisy.                                                   | दम्भेऽपि <sup>1</sup> गह्वरं स्यादुपह्वरं सन्निधानेऽपि <sup>1</sup> ॥७९१॥                                | (1) Vicinity.                  |
| (1) An eyelid.                                                   | नयनच्छदेऽपि <sup>1</sup> वर्त्म प्रतिग्रहः <sup>1</sup> सैन्यपृष्ठभागेऽपि <sup>1</sup> ।                 | (1) The rear of an army.       |
| (1) Phlegm.                                                      | श्लेष्मण्यपि <sup>1</sup> खेटः स्याज्जामिः <sup>1</sup> कुलबालिकायां च ॥७९२॥                             | (1) A respectable woman.       |
| (1) A little, the mere scent of a thing.                         | गन्धो लेशेऽप्युक्तः <sup>1</sup> करुणाप्रतिपादने तपस्वी च ।                                              | (1) Exciting pity, pitiable.   |
| (1) The distance from the wrist to the tip of the little finger. | मणिबन्धकनिष्ठिकयोर्मध्यविभागेऽपि <sup>1</sup> करभः स्यात् ॥७९३॥                                          |                                |

a एकार्थो b प्रतीहारः c प्राकाराग्रेऽपि कीर्तितम् ।

|                                                                |                                                        |                                                     |
|----------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------|
| (1) Consideration, reflexion.                                  | चिन्तायामपि चर्चा जगती राजप्रधानलोकेऽपि ।              | (1) The king and his subjects.                      |
| (1) The menses.                                                | ऋतुरङ्गनारजस्यपि विकटं श्रेष्ठेऽपि निर्दिष्टम् ॥७९४॥   | (1) Excellent.                                      |
| (1) Mail, amour.                                               | कवचेऽपि वारवाणं जीमूतं पर्वतेऽपि कथयन्ति ।             | (1) a muntains.                                     |
| (1) The array or arrangement of troops in particular position. | व्यूहं रचनायामपि दार्वाघाटेऽपि शतपत्रम् ॥७९५॥          | (1) The wood-peckers.                               |
| (1) The body.                                                  | करणं कायेऽपि स्यादुष्णीषो मूर्धवेष्टनेऽप्युक्तः ।      | (1) A turban.                                       |
| (1) Goods, property.                                           | मात्रा परिच्छेदेऽपि क्षुद्रः क्रूरे श्रुतौ निगमः ॥७९६॥ | (1) Cruel.<br>(1) The vedas.                        |
| (1) Curled hair.                                               | वृजिनः केशेऽप्युक्तः स्थाणुः कीलेऽपि कुञ्जरे नागः ।    | (1) A stake,<br>(1) An elephant.                    |
| (1) A store room.                                              | गञ्जो भाण्डागारे गोमुखमुपलेपनेऽपि स्यात् ॥७९७॥         | (1) Ointment,                                       |
| (1) Splendour, light.                                          | तेजस्यपि धाम स्यादाधारेऽप्याशयो घटा गोष्ठ्याम् ।       | (1) A receptacle.<br>(1) An assembly.               |
| (1) A noble, woman.                                            | कुल्या कुलिस्त्रियामपि तारो मुक्तागुणेऽप्युक्तः ॥७९८॥  | (1) A large pearl.                                  |
| (1) The result of actions.                                     | कर्मविपाकेऽपि दशागती स्मृते काननेऽपि दक्षदावौ ।        | (1) A forest.                                       |
| (1) The head.                                                  | चूडाशिखे शिरस्यपि हस्तिन्यां धेनुकागणिके ॥७९९॥         | (1) The female elephant.                            |
| (1) Intellect; intelligence.                                   | प्रतिपत्प्रतिपत्तावपि शादः शण्पे घृणा जुगुप्सायाम् ।   | (1) Young grass<br>(2) Disgust.                     |
| (1) High, tall.                                                | उत्तालमुन्नतेऽपि श्रेष्ठेऽपि निगद्यते सुरभिः ॥८००॥     | (1) Excellent.<br>(1) Sky, heaven.                  |
| (1) A year.                                                    | संवर्तः परिवर्तश्च हायने कथ्यतेऽम्बरे नाकः ।           | (1) The universal spirit.                           |
| (1) A measure of quantity.                                     | परिमाणेऽपि प्रस्थः सर्वात्मनि सर्वसन्नाहः ॥८०१॥        | (1) Kusha grass.<br>(1) A pit, a hole.              |
| (1) a wife.                                                    | पत्न्यामपि द्वितीया दर्भेऽपि पवित्रमवधिरवटेऽपि ।       | (1) Handsome.                                       |
| (1) Natured.                                                   | प्रकृतावपि प्रधानं विवक्षितं शोभनेऽपि स्यात् ॥८०२॥     | (1) The body.<br>(1) A flag carried by an elephant. |
| (1) Excessive.                                                 | अतिमात्रेऽप्यतिवेलं कायेऽप्युत्सेध इष्यते सद्भिः ।     | (1) The body.<br>(1) A flag carried by an elephant. |
| (1) The spine.                                                 | पृष्ठास्थन्यपि वंशः रुदली करिवैजयन्त्यां च ॥८०३॥       |                                                     |

a रा प्रधानं, राप्रधानं b तारा, घातारो c धेनुका गणिका  
d प्रस्त्रं e पृष्ठास्थन्यपि ।

|                                                        |                                                                                                                      |                                                                      |
|--------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------|
| (1) Deception.                                         | जालं <sup>1</sup> कपटेऽप्युक्तं <sup>1</sup> कपालमुक्तं <sup>1</sup> घटादिशकलेऽपि ।                                  | (1) A fragment of earthen pot.                                       |
| (1) Sin.<br>(2) Misfortune.                            | रिष्टं <sup>1</sup> पापाशुभयोररिष्टमशुभेऽपि <sup>2</sup> निर्दिष्टम् <sup>1</sup> ॥८०४॥                              | (1) Misfortune.                                                      |
| (1) Diffusion.                                         | व्यासेऽपि <sup>1</sup> विग्रहः <sup>1</sup> स्यान्मानविशेषेऽपि <sup>1</sup> पौष्टव्यामौ ।                            | (1) Measure.                                                         |
| Resolution.                                            | हेला <sup>1</sup> प्रस्तावेऽपि <sup>1</sup> प्रग्रह <sup>1</sup> आवन्धनेऽप्युक्तः ॥८०५॥                              | Captive, prisoner.                                                   |
| (1) An elephant's trunk.                               | कुञ्जरकरेऽपि <sup>1</sup> शुण्डा <sup>a</sup> श्रावा <sup>1</sup> शैले <sup>1</sup> भवश्च <sup>1</sup> संसारे ।      | (1) A mountain.<br>(1) The world.                                    |
| (1) Young.                                             | बालेऽपि <sup>1</sup> बालिशः <sup>1</sup> स्यात्कलधौतं <sup>1</sup> शातकुम्भेऽपि ॥८०६॥                                | (1) Gold.                                                            |
| Branch.                                                | शाखायामपि <sup>1</sup> परिधिर्वसतिर्जेनाश्रमेऽपि <sup>1</sup> निर्दिष्टा ।                                           | A Jain monastery.                                                    |
| (1) Searching.                                         | अन्वेषणेऽपि <sup>1</sup> मार्गो <sup>1</sup> भद्रो <sup>b</sup> वृषभे <sup>1</sup> वके <sup>1</sup> ध्वाङ्क्षः ॥८०७॥ | (1) A bull.<br>(1) A crane.                                          |
| (1) A defect in a jewel.                               | मणिदोषेऽपि <sup>1</sup> त्रासो <sup>1</sup> वत्सः <sup>1</sup> संवत्सरेऽपि <sup>1</sup> निर्दिष्टः ।                 | (1) A year.                                                          |
| (1) Adverse.                                           | वामः <sup>1</sup> प्रतिकूलेऽपि <sup>1</sup> प्रोक्तौ <sup>1</sup> शुक्लेऽपि <sup>1</sup> शुचिरामौ ॥८०८॥              | (1) White, bright.                                                   |
| (1) Yesterday.                                         | ह्यस्तनदिनेऽपि <sup>1</sup> कल्यं <sup>1</sup> नेत्रं <sup>1</sup> मूले <sup>1</sup> रजस्यपि <sup>1</sup> परागः ।    | (1) Dust, powder.                                                    |
| (1) Pregnant.                                          | भ्रूणो <sup>1</sup> गर्भिण्यामपि <sup>1</sup> भूर्तिर्विभवे <sup>1</sup> बलः <sup>c</sup> काके ॥८०९॥                 | (1) Grandeur.<br>(1) A crow.                                         |
| (1) A tableland.                                       | गिरिसानुन्यपि <sup>1</sup> वप्रं <sup>1</sup> तल्पं <sup>1</sup> दारेषु <sup>1</sup> चक्षुषि <sup>1</sup> ज्योतिः ।  | (1) A wife.<br>(1) Eye.                                              |
| (1) Injuring by theft.                                 | चौर्योदावपि <sup>1</sup> हिंसा <sup>1</sup> प्रसरः <sup>1</sup> प्रणयेऽपि <sup>1</sup> निर्दिष्टः ॥८१०॥              | (1) Affectionate solicitation.                                       |
| Group, mass.                                           | संघातेऽपि <sup>1</sup> ग्रामो <sup>1</sup> भूतेन्द्रियशब्दविषयकरणानाम् ।                                             | (1) The complex of visible objects.                                  |
| Combined with names of trees it signifies a multitude. | खण्डश्च <sup>d</sup> - पादपानां <sup>1</sup> स्कन्धः <sup>1</sup> करिनरतुरङ्गाणाम् ॥८११॥                             | (1) Senses.<br>(1) Signifying a multitude after करि, नर and तुरङ्ग । |
| 10 Different kinds of trees.                           | नन्दावर्तः <sup>1</sup> सरलः <sup>c</sup> शालः <sup>1</sup> काको <sup>1</sup> धवोऽञ्जनस्तिलकः <sup>1</sup> ।         |                                                                      |
|                                                        | पद्मस्पन्दनमोक्षा <sup>1</sup> वृक्षविशेषेऽपि <sup>1</sup> दृश्यन्ते ॥८१२॥                                           |                                                                      |
| Fragrant.                                              | कटुतिक्तकषायास्तु <sup>1</sup> सौरम्येऽपि <sup>1</sup> प्रकीर्तिताः ।                                                |                                                                      |
| Splendour, elegance, beauty.                           | शोभार्थेऽपि <sup>1</sup> प्रयुज्यन्ते <sup>1</sup> लक्ष्मीश्रीकान्तिविभ्रमाः ॥८१३॥                                   |                                                                      |

a सुंडा b ह्रदो वृषभे c बलः काले, बलिः काके, बलिकाले  
d खंड पादानां e सरलः शालः शाकोयवार्जुनस्तिलकः, सरलः शाकोय-  
वार्जुनस्तिलकः, सरलः शालः शाको धवोऽञ्जनस्तिलकः ।

|                                                               |                        |                     |                                     |                                                      |
|---------------------------------------------------------------|------------------------|---------------------|-------------------------------------|------------------------------------------------------|
| (1) A guard of the woman's apartment.                         | आर्यः                  | स्यात्सौविदल्लेऽपि  | त्रीहावप्यगुरिष्यते ।               | (1) A kind of grain.                                 |
| (1) A man of a low and impure tribe.                          | चण्डालेऽपि             | विवाकीर्तिविवस्वान् | देवतास्वपि ॥८१४॥                    | (1) A deity, a god.                                  |
| (1) Affection.                                                | स्नेहेऽप्यपह्नवः       | प्रोक्तो            | द्वेषेऽप्यनुशयः स्मृतः ।            | (1) Enimity.                                         |
| (1) Sexual intercourse.                                       | सुरतेऽपि               | व्यवायः             | स्यान्नैगमश्च ऋतावपि ॥८१५॥          | (1) A road.<br>(2) The vedas.<br>(3) A trader.       |
| (1) A difficult road.                                         | दुर्गमार्गेऽपि         | कान्तारं            | गृहवाट्यां च निष्कृतः ।             | (1) A garden attached to a house.                    |
| (1) An animal, a beast.                                       | रूपं मृगेऽपि           | विज्ञेयं बभ्रुः     | स्यान्नकुलेऽपि च ॥८१६॥              | (1) A mongoose.                                      |
| (1) The intestines.                                           | अन्तर्द्वेहेऽपि        | कोष्ठः              | स्याच्चत्वरं प्राङ्गणेऽपि च ।       | (1) A court yard.                                    |
| (1) Leprous.                                                  | दुश्चर्मण्यपि          | निर्दिष्टः          | शिपिविष्टो मनीषिभिः ॥८१७॥           |                                                      |
| (1) A couch                                                   | संस्तरः                | प्रस्तरेऽप्युक्तो   | हनौ कुञ्जो रणे स्पशः ।              | (1) The jaw.<br>(1) War, battle.                     |
| (1) A thunder cloud.                                          | गर्जन्मेघेऽपि          | पर्जन्यः            | सन्धा स्यादवघावपि ॥८१८॥             | (1) A limit.                                         |
| (1) Settled occupations, proper conduct.                      | व्यवस्थायां च          | संस्था              | स्यात्संवित्तावपि वेदना ।           | (1) Perception, experience.                          |
| A march on.                                                   | यात्रा                 | स्यादनुवृत्ती च     | संज्ञायां च समाह्वयः ॥८१९॥          | (1) Name, appellation.                               |
| (1) Impotent.                                                 | क्लीबो                 | विक्रमहीनेऽपि       | समयेऽपि कटः स्मृतः ।                | (1) Time.                                            |
| (1) A stain, spot.<br>(2) A fault.                            | कलङ्कः                 | लाञ्छने             | दोषेऽप्यद्विः प्रोक्तो रवावपि ॥८२०॥ | (1) The sun.                                         |
| (1) Meeting.<br>(2) Assembly,                                 | समितिः                 | सङ्गतिसभयोः         | ककुदं शृङ्गे विदुः प्रधानेऽपि ।     | (1) The top of a mountain (2) Eminence, superiority. |
| (1) Pride, conceit.<br>(2) An instrument for cleaning stones. | टङ्कः                  | स्यादभिमाने         | प्रस्तरघटनोपकरणे च ॥८२१॥            |                                                      |
| (1) A sign.<br>(2) Consciousness.                             | सङ्केते                | चैतन्ये च           | सूरिभिः कथ्यते तथा संज्ञा ।         |                                                      |
| (1) Punishment.<br>(2) An army.                               | दण्डो                  | दमने सैन्ये         | कृतपो दर्भेऽपराह्णे च ॥८२२॥         | (1) Kush grass.<br>(2) After noon.                   |
| (1) Compassion, pity, kindness.                               | कारुण्येऽप्यनुषङ्गः    | स्यात्प्रोक्तो      | गुह्येऽप्यवस्करः ।                  | (1) A privity.                                       |
| (1) Signet ring.                                              | वेदिकाऽङ्गुलिमुद्रायां | लाक्षायां च         | कृमिस्तथा ॥८२३॥                     | (1) Lac.                                             |



- (1) Capital, stock, नीवी परिपणेऽप्युक्ता कटिदेशेऽपि मेखला । (1) Loins.
- (1) Privation. (2) Separation. प्रत्यवायेऽपि विश्लेषे विधुरं स्मर्यते बुधैः ॥८२४॥ (1) A master, 2 lord.
- (1) End. निदानमवसानेऽपि स्वामिन्यपि भवेदिनः ।
- (1) Bard. (2) Old, ripe. जठरः कठिनेऽप्युक्तः प्राज्ञैः परिणतेऽपि च ॥८२५॥
- (1) Time. (2) Ordinance. काले कल्पेऽपि विधिर्घनाघनः शक्रवर्षुकाम्बुदयोः । (1) Indra. (2) Rainy cloud.
- (1) Distress. (2) Transgression. अत्ययशब्दः प्राज्ञैः कृच्छ्रे चातिक्रमे च निर्दिष्टः ॥८२६॥
- (1) The belly. (2) Water. उदरे जले कृपीटं सम्बाधः सङ्कटे भगेऽप्युक्तः ।
- (1) The rear of an army (2) The rear of a battle. पाणिः प्रत्यासारे च रणस्य च पश्चिमे भागे ॥८२७॥
- (1) Sexual intercourse. (2) Enjoyment. रतिभुक्तयोः सम्भोगः पथिदेये स्त्रीघने च शुल्कं स्यात् । (1) Toll, custom, duty. (2) The property of the wife.
- (1) The shoot of a bamboo. (2) A sh: b. वंशाङ्कुरे करीरं वृक्षविशेषेऽपि कथयन्ति ॥८२८॥
- (1) Race, family. (2) Disposition. अनूकमन्वये शीले गोत्रं नाम्नि तथान्वये । (1) Name. (2) Race, family.
- (1) A lump of boiled rice. पुलाकं भक्तसिक्थे च क्षुद्रघान्ये च कथ्यते ॥८२९॥ (2) Shrivelled grain.
- (1) An improper act. (2) A privy part. अकार्ये गुह्ये कौपीनं कीलालं रुधरे जले । (1) Blood. (2) Water.
- (1) A hole filled with stake. (2) Conflagration of husk. कुकूलं शङ्कुमद्गते तुषाग्नौ च निगद्यते ॥८३०॥
- (1) A building containing an image of Buddha. चैत्यं बुद्धाण्डकेऽप्युक्तं देवतायतने तथा । (2) A temple.
- (1) Mushroom. (2) A sort of tree. छत्रके वृक्षजातौ च शिलीन्ध्रं स्मर्यते बुधैः ॥८३१॥
- (1) Prodigal. (2) A beast of prey. अर्थव्ययसहे व्यालस्तथा हिस्रपशौ स्मृतः ।
- (1) A ploughshare (2) The snout of a hog. पोत्रमित्युच्यते प्राज्ञैर्हिलशूकरयोर्मुखम् ॥८३२॥ (1) The hem of an ornament or garment. (2) The creeper.
- (1) Slow. (2) Free. मन्दस्वच्छन्दयोः स्वरं कक्षः स्यात्कच्छवीरुधोः । (1) The elephant. (2) A kind of tree.
- (1) The male elephant. (2) The female elephant. करेणुर्गजहस्तिन्योः पीलुरुच गजवृक्षयोः ॥८३३॥

a प्युक्तः, युक्तः b विधिर्घनाघनः, विधिनाघनः, विविधि-  
नाघनः, विधिनाघनः c शक्रवर्षं d बुद्धाण्डके, बुद्धाण्डके,  
बुधाण्डक e शिलीन्ध्रं, शिलीन्ध्रं, f हिस्रः ।

|                                                                                |                                                                                                                                                                                                                                 |                                     |                                                                                                       |
|--------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-------------------------------------|-------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| (1) A Spike.<br>(2) A Javelin.                                                 | 1 2<br>शलाकायुधयोः शल्यं बाधा                                                                                                                                                                                                   | 1 2<br>दुःखनिषेधयोः ।               | (1) Pain, trouble.<br>(2) Hindrance, prohibition, opposition.                                         |
| (1) A pillar.<br>(2) Fixedness in stupor.                                      | 1 2<br>स्थूणास्तव्यत्वयोः स्तम्भ इला                                                                                                                                                                                            | 1 2<br>वागघ्नयोरपि ॥८३४॥            | (1) Speech.<br>(2) A cow.                                                                             |
| (1) Worship.<br>(2) Price.                                                     | 1 2<br>अर्चनामूल्ययोरर्घो दिसर्गो                                                                                                                                                                                               | 1 2<br>मुक्तिवर्चसोः ।              | (1) Giving up.<br>(2) Excrements.                                                                     |
| (1) Name of a saint.<br>(2) A cock.                                            | 1 2<br>मुनिकुक्कुटयोर्दक्षः सन्धिः                                                                                                                                                                                              | 1 2<br>संश्लेषरन्ध्रयोः ॥८३५॥       | (1) Union.<br>(2) A crack.                                                                            |
| (1) Surely, positively.<br>(2) Much, exceedingly.                              | 1 a 2<br>अवश्यभृशयोर्वाढं                                                                                                                                                                                                       | 1 2<br>दायादस्तुक्सपिण्डयोः ।       | (1) Male offspring.<br>(2) A kinsman.                                                                 |
| (1) Of noble descent.<br>(2) Excellent.                                        | 1 2<br>कुलीनश्रेष्ठयोजित्थं                                                                                                                                                                                                     | 1 b 2<br>कोटिरुत्कर्षसंख्ययोः ॥८३६॥ | (1) Excellence.<br>(2) Ten millions.                                                                  |
| (1) One of Shiva's attendant.<br>(2) Shiva.                                    | c 1 2<br>ब्रध्नस्तण्डुगिरिशयोः स्थितिः                                                                                                                                                                                          | 1 2<br>स्थानव्यवस्थयोः ।            | (1) Standing place.<br>(2) A rule management.                                                         |
| (1) Manifestation.<br>(2) Privacy.                                             | d 1 2<br>वीकाशः स्फुटरहसोः काष्ठा                                                                                                                                                                                               | 1 2<br>कालप्रकर्षयोः ॥८३७॥          | (1) A measure of time.<br>(2) Excellence.                                                             |
| (1) A river.<br>(2) A sea.                                                     | 1 c 2<br>नदीसमुद्रयोः                                                                                                                                                                                                           | 1 2<br>सिन्धुर्देशपर्वतयोर्भरुः ।   | (1) A desert.<br>(2) A mountain.                                                                      |
| (1) Pairing connection.<br>(2) Sexual intercourse.                             | 1 2<br>मैथुनं कथ्यते सद्भिः                                                                                                                                                                                                     | 1 2<br>सम्बन्धग्राम्यधर्मयोः ॥८३८॥  |                                                                                                       |
| (1) Crookedly.<br>(2) Binding.                                                 | 1 2<br>प्रह्ववन्धनयोः प्राध्वं मोहः                                                                                                                                                                                             | 1 f 2<br>स्यान्मौढ्यमूर्च्छयोः ।    | (1) Folly. (2) Loss of consciousness.                                                                 |
| The ebb and flow of the Sea.                                                   | 1 g 2<br>व्यवस्थानेऽम्भसो वेला                                                                                                                                                                                                  | h 1 2 3<br>रविः पर्वतसूर्ययोः ॥८३९॥ | (1) Mountain.<br>(2) The sun.                                                                         |
| (1) Fire. (2) Meteor.                                                          | 1 2<br>अग्न्युत्पाती धूमकेतु                                                                                                                                                                                                    | 1 2<br>श्वशुर्यौ श्यालदेवरो ।       | (1) Wife's brother.<br>(2) Husband's brother.                                                         |
| (1) An ordeal.<br>(2) A treasury.                                              | 1 2<br>दिव्यार्थसंग्रही कोशौ                                                                                                                                                                                                    | 1 2<br>नरेन्द्रौ नृपवात्तिकौ ॥८४०॥  | (1) A king. (2) A conveyor of news or intelligence.                                                   |
| (1) Planet. (2) An imp, evil spirit<br>(3) Perseverance.                       | i 1 2<br>आडम्बरो गजानां पटहरवे                                                                                                                                                                                                  | 2 3<br>गजिते प्रपञ्चे च ।           | (1) The sounding of a trumpet. (2) The roaring of elephants (3) A show.                               |
| (1) The supreme spirit (2) A fool<br>(3) Indistinct, unclear.                  | 1 2<br>ग्रहशब्दः सूर्यादिषु                                                                                                                                                                                                     | 2 3<br>भूतादिष्वभिनिवेशे च ॥८४१॥    |                                                                                                       |
| (1) Elaboration, preparation.<br>(2) Desire, wish.<br>(3) The taking prisoner. | 1 2<br>अव्यक्तः परमात्मनि मूर्खे                                                                                                                                                                                                | 2 3<br>स्पष्टेतरे च निर्दिष्टः ।    |                                                                                                       |
| (1) The arming for a battle.<br>(2) An attack.<br>(3) Robbing.                 | 1 2<br>कक्षा गुह्यपिधाने काञ्च्यां                                                                                                                                                                                              | 2 3 j<br>गेहे प्रकोष्ठे च ॥८४२॥     | (1) A piece of cloth worn between the legs to conceal privities (2) A girdle (3) A court in a palace. |
|                                                                                | 1 2 3<br>प्रतियत्नः संस्कारे लिप्सोपग्रहणयोश्च                                                                                                                                                                                  | 3<br>निर्दिष्टः ।                   |                                                                                                       |
|                                                                                | 1 2 3<br>अभिहारः सन्नाहे स्यादभियोगे                                                                                                                                                                                            | 3<br>परस्वहरणे च ॥८४३॥              |                                                                                                       |
|                                                                                | a अवश्यं b कोटिरुत्कर्षसंख्ययोः c वुध्नस्तण्डु, ब्रध्नस्तण्डि,<br>ब्रध्नस्तण्डु d विकाश e समुद्रनदयोः f मूर्खयोः, मोर्ष्ययोः<br>g हसो वला, हसोर्वला, h सूर्यपर्वतयो रविः i पटहः स्वे, पटहः स्ते<br>j गेहप्रकोष्ठे इत्यपि पाठः । |                                     |                                                                                                       |

(1) A special present.  
(2) Taking,  
receiving.

दानविशेषे लब्धौ दायो भार्गहपितृव्यरिवधे च ।

(3) Patrimony.

(1) A line in a man-  
uscript consisting  
of about 32 syllab-  
les.

लिपिसंख्यायां शास्त्रे द्रव्ये च ग्रन्थशब्दमिच्छन्ति ॥८४४॥

(2) A code.  
(3) Substance.

(1) Gambling (2) Die.

द्यूताक्षसारिफलकास्त्रयोऽप्याकर्षसंज्ञकाः ।

(3) A draught-board.

(1) Connexion, asso-  
ciation (2) Defeat.

संसर्गाभिभवाक्रोशेष्वभिषङ्गः प्रकीर्तितः ॥८४५॥

(3) Reviling, im-  
precation.

(1) A son of त्वष्ट्र  
the perpetual  
enemy of Indra.

त्वाष्ट्रे तमसि शत्रौ च वृत्रशब्दस्त्रिषु स्मृतः ।

(2) Darkness.  
(3) An enemy.

(1) Depréssion,  
sorrow (2)  
Sacrifice (3) Anger.

मन्युर्दैन्ये क्रतौ कोपे नाडीस्वर्गक्षितिष्विडा ॥८४६॥

(1) An artery (2)  
Heaven (3)  
The earth.

उक्तानामप्यनुक्तानां शब्दानामिह संग्रहः ।

(1) Pleasure (2)  
Wind (3) Water.

कशब्दः सुखवाय्वम्बुज्रहामस्तकवाचकः ॥८४७॥

(4) The god Brahma.  
(5) Head.

(1) An oath,  
(2) understanding.  
(3) Cause.

प्रत्ययाः शपथज्ञानहेतुविश्वासनिश्चयाः ।

(4) Trust.  
(5) Certainty.

(1) Expansion.  
(2) Awning.  
(3) Empty.

विस्तारे कदके शून्ये वितानं स्यात्क्रतौ क्षणे ॥८४८॥

(4) Sacrifice.  
(5) Opportunity.

(1) A side (2) Fort-  
night.

देहावयवमासार्धपतत्रगृहभित्तिषु

(3) Wing (4) The  
wall of a house.

(5) A follower.

परिग्रहे समीपे च पक्षः षट्सु निगद्यते ॥८४९॥

(6) Neighbourhood.

(1) Fire (2) Wealth  
(3) The rays of the  
sun.

अग्निघनरश्मिरत्नत्रिदशविशेषेषु भवति षसुशब्दः ।

(4) A jewel, gem.  
(5) A class of gods  
8 in number.

(1) Motion, action  
(2) Nature, charac-  
ter (3) Origin.

चेष्टात्मजन्मसत्ताभिप्रायेष्वभिहितो भावः ॥८५०॥

(4) Existence (5)  
meaning, purport.

(1) A measure of  
time equal to 4  
minutes.

कालविशेषेष्वसरेऽव्यापारे पारतन्त्र्ये च ।

(2) Opportunity.  
(3) Leisure.  
(4) Dependence.

(5) Middle.

मध्ये तथोत्सवे च क्षणशब्दः कथ्यते सद्भिः ॥८५१॥

(6) Festival.

(1) Custom.  
(2) Senses.

आचारे नयनादौ द्यूतविशेषे तथा रथावयवे ।

(3) Playing at  
dice (4) An axle.

(5) Terminelia  
Balaria.

अक्षं विभीतकेऽपि प्रयुञ्जते पञ्चसु प्राज्ञाः ॥८५२॥

(1) Trouble (2) End  
(3) Good conduct.

निष्ठा क्लेशोऽवसाने च व्यवस्थोत्कर्षयोर्व्रते ।

(4) Excellence.  
(5) A vow.

(1) Excellent (2)  
Power (3) Wealth.

श्रेष्ठे स्थाग्नि घने शुक्रे मज्जि सार उदाहृतः ॥८५३॥

(4) Semen, vitile.;  
(5) Marrow.

a दाने विशेषे, दाने विशेषलब्धौ b पितृकृत्ये, पितृरिवधे c ग्रन्थ-  
मिच्छन्ति d भिष्वङ्गः e प्रत्ययः f जन्ममत्वाभिप्रायेष्व g कथ्यते  
कृतिभिः h प्रयुज्यते i शुक्ले, शुक्ले ।

(1) A quarter (2) Eye (3) Rays of the sun (4) Heaven.

1 2 3 4 5 6 7 8  
दिवदृष्टिदीधितिस्वर्गवज्रवाग्वाणवारिषु

(9) The earth.  
(10) A cow.

9 10  
भूमौ पशौ च गोशब्दो विद्वद्भिर्दशसु स्मृतः ॥८५४॥

(1) An ornament.  
(2) A tail.  
(3) Excellent

1 2 3 4 5 6  
भूषायां लाङ्गले प्रधानशृङ्गप्रभावपुण्ड्रेषु ।

(7) A flag (8) Mark, sign (9) Horse.

7 8 9 10  
ध्वजलक्ष्मणतुरङ्गेषु च नवसु ललामं प्रचक्षते प्राज्ञाः ॥८५५॥

(1) The sun (2) A monkey (3) Frog.

1 2 3 4 5 6  
अर्कमर्कटमण्डूकविष्णुवासववायवः ।

(7) A horse.  
(8) Lion.

7 8 9 10  
तुरङ्गसिंहशीतांशुयमाश्च हरयो दश ॥८५६॥

(1) An element of which five are enumerated

1 2 3 4 5  
पृथिव्यादिषु भूतेषु शरीरेषु रसादिषु ।

(3) A metal (4) Natural condition,

3 4 5 6  
लोहेषु च स्मृतो घातुः स्वभावे गैरिकादिषु ॥८५७॥

(1) The tip of an elephant's trunk  
(2) A lotus (3) The blade of a sword.

1 2 3 4 5  
द्विरदकराग्रे पद्मे खड्गफले व्योम्नि वाद्यभाण्डमुखे ।

(6) A medicine.  
(7) Water.

6 7 8 9 10  
अगदे जले च तीर्थे पुष्करमण्डासु निर्दिष्टम् ॥८५८॥

(1) A living being.  
(3) Passed (4) An evil spirit in attendance on Rudra.

1 2 3 4 5  
चतुर्विधेषु जीवेषु पृथिव्यादिषु पञ्चसु ।

(1) Colour (2) Caste  
(3) Beauty, splendour.

3 4 5 6  
अतीते देवयोनी च भूतशब्दं प्रचक्षते ॥८५९॥

(6) Arrangement of a song (7) Praise (8) Dress.

1 2 3 4 5  
शुक्लादौ ब्राह्मणादौ च शोभायामक्षरे व्रते ।

(1) A sentiment of which 9 are enumerated.

6 7 8 9 10  
गीतक्रमे स्तुतौ वेषे वर्णशब्दं प्रचक्षते ॥८६०॥

(5) Juice (6) Semen, virile (7) Quality (8) Any constituent part of the body

1 2 3 4 5  
शृङ्गारादिषु नवसु च लवणादिषु षट्सु पारदे रागे ।

(1) Vulva (2) A landing place at a river's side.  
(4) A holy place.  
(5) Avessel.

f 5 6 7 8 9 10  
निर्यासवीर्यगुणघातुविषघृतादौ रसः प्रोक्तः ॥८६१॥

1 2 3  
योनी जलावतारे च मन्त्र्याद्यष्टादशस्वपि ।

4 5 6  
पुण्यक्षेत्रे तथा पात्रे तीर्थे स्यादर्शनेषु च ॥८६२॥

(5) Thunder bolt  
(6) Speech (7) An arrow (8) Water.

(4) Horn (5) Power.  
(6) A mark on the forehead.

(4) Vishnu (5) Indra (6) Wind.

(9) The moon.  
(10) Pluto, Yama.

(2) A constituent part of the body.

(5) Mineral ore.

(4) The sky (5) The head of a drum.

(8) A place of pilgrimage.

(2) An element.

(4) Letter (5) Vow.

(2) Taste (3) Mercury, quicksilver affection (4) Love.

(9) Poison (10) Melting butter, Ghec.

(3) A minister and 18 other officers of state.

(6) A school of Philosophy.

a ललामं च b सीताशूर्यमा हरयो, सीताशूर्यमा हरयो  
c वर्ये d प्रयुजते e लवणादिषु पारदे, लवणादिकषट्सु पारदे,  
लवणादिषु न सु, नवसु, लवणादिषु षट्सु पारदे च f निर्यासि गुणवीर्ये,  
गुणवीर्ये, घातुगुणघृतादौ रसः शब्दः, निर्यासगुणवीर्ये घातुविषघृतादौरसः  
प्रोक्तः, निर्यासवीर्यगुणघातुविषघृतादौ रसः प्रोक्तः ।

|                                                           |                                                                                                                |                                                                                |
|-----------------------------------------------------------|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------------------------|
| (1) A vowel (2) A musical note.                           | अकारादिषु <sup>1</sup> वर्णेषु <sup>a</sup> षड्जादिषु <sup>2</sup> च सप्तसु ।                                  |                                                                                |
| (3) Accent (4) Articulate sound.                          | उदात्तादिषु <sup>3</sup> विज्ञेयः प्राणिनां <sup>4</sup> च स्वने स्वरः ॥८६३॥                                   |                                                                                |
| (1) The equipoise of the 3 qualities of nature viz. *     | सत्त्वादीनां <sup>1</sup> साम्यावस्थां प्रकूर्तिं वदन्ति तत्त्वज्ञाः ।                                         | * (i) Goodness (ii) foulness and (iii) darkness.                               |
| (2) A citizen. (3) A minister. (4) A cause.               | पौरमात्यादीनि <sup>2</sup> च कारणकारुस्वरूपाणि <sup>4 5 6</sup> ॥८६४॥                                          | (5) A mechanic (6) The natural form.                                           |
| (1) The 3 qualities of nature (2) Shape. (5) A bowstring. | सत्त्वादी <sup>1</sup> रूपादी <sup>2</sup> शौर्यादी <sup>3</sup> तन्तुषु <sup>4b</sup> प्रयोगज्ञाः ।           | (3) Heroism. (4) Cord or string. (6) A subordinate quality or inferior degree. |
| (1) A tool (2) An agent (3) Wealth.                       | शुणशब्दं <sup>1</sup> सिञ्जिन्यां <sup>5</sup> प्रयोजयन्त्यप्रधानेऽपि <sup>6</sup> ॥८६५॥                       | (4) Penis. (5) Torture.                                                        |
| (6) A component part of an army.                          | उपकरणे <sup>1</sup> करणे <sup>2</sup> च द्रविणे <sup>3</sup> लिङ्गे <sup>4</sup> च यातनायां <sup>5</sup> च ।   | (4) Penis. (5) Torture.                                                        |
| (1) Meaning. (2) Purpose. (3) Motive.                     | सेनाङ्गे <sup>6</sup> संसिद्धौ <sup>7</sup> साधनशब्दप्रयोताः स्यात् ॥८६६॥                                      | (7) Accomplishment.                                                            |
| (1) Opportunity. (2) Multitude.                           | अभिधेयाभिप्रायप्रयोजनद्रव्यवाचकैर्ध्वर्यः <sup>1 2 3c 4</sup> ।                                                | (4) Wealth.                                                                    |
| (1) The holy scripture, the Vedas (2) The supreme spirit. | प्रस्तावे <sup>1</sup> संघाते <sup>2</sup> कुत्सायामायुधे <sup>3</sup> जले <sup>4</sup> काण्डम् ॥८६७॥          | (3) Censure (4) An arrow (5) Water.                                            |
| (1) The 3 qualities of nature (2) Existence (3) Power.    | वेदाध्यात्मब्राह्मणहिरण्यगर्भेषु <sup>1 2 3 4</sup> कथ्यते ब्रह्म ।                                            | (3) A Brahman. (4) The creator of the universe.                                |
| (1) The earth. (2) Speech (3) Food.                       | प्रकृतिगुणे <sup>1</sup> सत्तायां <sup>2</sup> स्थामनि <sup>d 3</sup> भूते <sup>4</sup> च सत्त्वं स्यात् ॥८६८॥ | (4) Living being.                                                              |
| (1) Time (2) Pluto.                                       | हराशब्दो <sup>1</sup> बुधैर्ज्ञेयो <sup>2</sup> भुवि <sup>3</sup> वाच्यशनेऽम्भसि ।                             | (4) Water.                                                                     |
| (1) Time. (2) Convention.                                 | निमेषादौ <sup>1</sup> यमे <sup>2</sup> वर्णे <sup>3</sup> कालो <sup>4</sup> मृत्यो <sup>5</sup> च कीर्त्यते ॥  | (3) Black. (4) Death.                                                          |
| (1) A thread. (2) Mystic prayer.                          | कालसङ्केतकाचारसिद्धान्ताः <sup>1 2 c 3 4</sup> समयाः <sup>f</sup> समाः ॥८६९॥                                   | (3) Practice. (4) Dogma.                                                       |
| (1) Effort (2) informing against.                         | तन्त्रं <sup>g</sup> तन्तुषु <sup>1</sup> मन्त्रेषु <sup>2</sup> सिद्धान्तपरिच्छदप्रधानेषु <sup>3 4 5</sup> ।  | (3) Established doctrine. (4) Retinue. (5) Chief.                              |
| (1) Clothing (2) The middle (3) A hole.                   | उत्साहनसूचनयोः <sup>1 2</sup> प्रकाशने <sup>3</sup> गन्धनं <sup>4</sup> प्रोक्तम् ॥८७०॥                        | (3) Manifestation.                                                             |
| (6) Opportunity. (7) Connexion with the exterior.         | वस्त्रे <sup>1</sup> मध्ये <sup>2</sup> तथा <sup>3</sup> छिद्रे <sup>4</sup> व्यवधानेऽन्तरात्मनि ।             | (4) Intervention. (5) The soul. (8) Difference. (9) Occasion.                  |
|                                                           | अवकाशे <sup>6</sup> बहियोगे <sup>7</sup> विशेषेऽवसरेऽन्तरम् ॥८७१॥                                              |                                                                                |

a खड्गादिषु b तन्तुषु च c प्रयोजद्रव्य प्रयोजनकचकचकचर्चायः  
d स्थाम्नि e चारे, सिद्धान्तसमयाः f स्मृताः g तन्त्रेषु ।

|                                                         |                                                                                                     |                                                |
|---------------------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------|------------------------------------------------|
| A particle.                                             | प्रागेव नामपर्याये निपाताः कोऽपि कीर्तिताः ।                                                        |                                                |
| Auspiciously.                                           | कथ्यन्ते केचिदन्येऽपि दिष्ट्या स्यान्मङ्गलादिषु ॥८७२॥                                               |                                                |
| A long time.                                            | चिराय चिररात्राद् दीर्घकाले प्रयुज्यते ।                                                            |                                                |
| (1) An alternative.<br>(2) Analogy.                     | चिरं चिराच्चिरेणेति वा विकल्पोपमानयोः ॥८७३॥                                                         |                                                |
| All round.                                              | परितः सर्वतो विष्वक् समन्ताच्च समन्ततः ।                                                            |                                                |
| (1) Visible.<br>(2) Similar.                            | प्रत्यक्षसदृशोः साक्षाद्दार्तासम्भाव्ययोः किल ॥८७४॥                                                 | (1) As reported<br>(2) Probably.               |
| (1) Grief (2) Joy.                                      | शोचने सम्प्रहर्षे च हन्तशब्दः प्रयुज्यते ।                                                          |                                                |
| (1) Grief (2) Anger.<br>(3) Evidently.<br>(4) Vicinity. | ई दुःखभावने क्रोधे प्रत्यक्षे सन्निधावपि ॥८७५॥                                                      |                                                |
| Without.                                                | पृथग्विनान्तरेणते व्यतिरेकार्थवाचकाः ।                                                              |                                                |
| Repeatedly.                                             | प्रत्यारम्भे मुहुः प्रोक्तो हुं सम्प्रश्नवितर्कयोः ॥८७६॥                                            | (1) A question.<br>(2) A doubt.                |
| (1) According to tradition.<br>(1) Together.            | इतिह स्यात्सम्प्रदाये प्रेत्यामुत्र भवान्तरे ।<br>साकं साधं समं सत्रं सहार्थं सम्प्रकीर्तिताः ॥८७७॥ | (1) In the life to come (2) In a future world. |
| (1) Below, beneath.                                     | अधरस्तादधरतः स्यादधस्तादधोऽधरे ।                                                                    |                                                |
| (1) Therefore.                                          | अत इत्युच्यते हेतौ निन्दायां विस्मये च ॥८७८॥                                                        | (1) Disapproval.<br>(2) Surprise.              |
| (1) Near.                                               | समयानिकषाशब्दौ सामीप्ये कीर्तितौ बुधैः ।                                                            |                                                |
| (1) Perhaps.<br>(2) Surely.                             | तर्कनिश्चययोर्नूनं कञ्चित्स्यात्प्रश्नकामयोः ॥८७९॥                                                  | (1) A question.<br>(2) Wish, desire.           |
| (1) Doubt.                                              | आहो उताहो सन्देहे नु स्वित्प्रश्नवितर्कयोः ।                                                        | (1) Question.<br>(2) A doubt.                  |
| (1) At present.<br>(2) Fit, proper.                     | वर्तमाने च युक्ते च साम्प्रतं सम्प्रचक्षते ॥८८०॥                                                    |                                                |
| (1) Manifestly.<br>(2) Origin.                          | प्रकाशे सम्भवे प्रादुः प्रधानसदृशोः प्रति ।                                                         | (1) Chief.<br>(2) Like.                        |
| (1) Distinction.<br>(2) Cause.                          | हि स्याद्विशेषणे हेतौ तु स्याद्भेदेऽवधारणे ॥८८१॥                                                    | (1) Difference.<br>(2) Indeed.                 |

a चिराच्चिरेण b च विकल्पोपमानयोः, च विकल्पोपमानयोः  
c संभोव्यपे किल d हन्त शब्दं प्रचक्षते e महः, हन्तः  
f तर्कनिश्चययोः, तर्कनिश्चययोः g काम्ययोः h नु श्चित् प्रश्नः ।

|                                               |                                                                                                                             |                              |
|-----------------------------------------------|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|------------------------------|
| (1) A question.<br>(2) A kind enquiry.        | अधि <sup>1</sup> प्रश्ने <sup>a 2</sup> सानुनये <sup>1</sup> सत्ये <sup>2</sup> शीघ्रे <sup>1</sup> तथाञ्जसा <sup>2</sup> । | (1) Truly.<br>(2) Quickly.   |
| Some, little.                                 | ईषत्किञ्चिन्मनाक् <sup>1</sup> प्रोक्ताः <sup>2</sup> किञ्चनस्तोकवाचकाः <sup>3</sup> ॥८८२॥                                  |                              |
| (1) Silently.                                 | तूष्णीं <sup>1</sup> जोषं <sup>2</sup> भवेन्मौने <sup>3</sup> स्म <sup>1</sup> स्यात्संस्मरणादिषु <sup>1</sup>              | (1) Remembrance.             |
| Calling to, addressing a person.              | अङ्गेत्यामन्त्रणे <sup>1</sup> हं हो भो भो इति च कथ्यते ॥८८३॥                                                               |                              |
| (1) Variously.                                | अनेकार्थे <sup>1</sup> भवेन्नाना <sup>2</sup> ननु <sup>1</sup> प्रश्नेऽवधारणे <sup>2</sup> ।                                | (1) Question.<br>(2) Surely. |
| (1) Suddenly.<br>(2) Instantly.               | आकस्मिकार्थे <sup>1</sup> सहसा <sup>b 2</sup> तत्काले च निगद्यते ॥८८४॥                                                      |                              |
| (1) Expansion.<br>(2) Acceptance.             | विस्तारेऽङ्गीकृतावूरी <sup>1</sup> कथ्यत उररी तथा ।                                                                         |                              |
| (1) Surely.<br>(2) Together.<br>(3) Vicinity. | असंशये <sup>1</sup> भवेदद्धा <sup>2</sup> सहार्थान्तिकयोरमा <sup>3</sup> ॥८८५॥                                              |                              |
| (1) Then.<br>(2) Auspicious.<br>(3) Question. | अथानन्तरकल्याणसम्प्रश्नादिषु <sup>1</sup> कथ्यते ।                                                                          |                              |
|                                               | अथो इति तथा प्रोक्तो नामाम्युपगमादिषु <sup>1</sup> ॥८८६॥                                                                    | (1) Granting.<br>allowing.   |
| (1) Always.                                   | सदा सना च नित्यत्वे <sup>1</sup> स्वस्ति स्यान्मङ्गलादिषु <sup>1</sup> ।                                                    | (1) Hail.                    |
| (1) Cause.<br>(2) Similarity.<br>(3) End.     | इतिशब्दः स्मृतो हेतौ <sup>1</sup> प्रकारादिसमाप्तिषु <sup>2</sup> ॥८८७॥                                                     |                              |

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालाया-  
मनेकार्थकाण्डं पञ्चमं समाप्तम् ॥ ५ ॥

हलायुधकोशस्य  
विवृतिसहितोऽकारादिशब्दानुक्रमकोशः



# हलायुधकोशस्य अकारादिशब्दानुक्रमकोशः

## विवृतिसहितः

अ

अंशुः पुं. [ अंशयति इति । अंश् विभाजने, मृग्यवादि-  
त्वात् कु ] सूर्यः; किरणः ( ३९ ); प्रभा; वेशः; सूत्रादि-  
सूक्ष्मांशः; लेशः; ऋषिविशेषः; लतावयवः; सोम-  
लतावयवः; भागः । ३६

अंशुकम् बली. [ अंशून् कायति । अंशु + कै शब्दे, आत् इति  
क, यद्वा अंशुभिः काशते, काश् दीप्तौ, अन्येष्वपीति ड ]  
वस्त्रमात्रं; मूक्षमवस्त्रम्; उत्तरीयवस्त्रं; शुक्लवस्त्रम्;  
अधोवस्त्रम्; पत्रम् । ५४८

अंशुमान् [ त् ] पुं. [ अंशवो विद्यन्ते अस्य इति । तदरया-  
स्तीति मत्तुप् ] सूर्यः; असमञ्जसपुत्रः सूर्यवंशीय-  
राजविशेषः; यथा—'सगरस्यासमञ्जस्तु असमञ्जा-  
दयांशुमान् ।' सूर्यवंशीयासमञ्जसो . राजपौत्रः; यथा-  
'ततश्चकारासमञ्जा गङ्गानयनकारणम् । लक्षवर्ष  
तपस्तप्त्वा ममारु कालयोगतः ॥ दिलीपस्तस्य तनयो  
गङ्गानयनकारणम् । तपः कृत्वा लक्षवर्षं ययौ लोकान्तरं  
नृपः । अंशुमांस्तस्य पुत्रोऽभूद्—इत्यादि ब्रह्मवैवर्ते  
प्रकृतिखण्डे ८ अध्यायः । विद्वव्यापिप्रकाशः पर-  
मात्मा; अंशुयुक्ते त्रि., सोमलताया अवयवविशिष्टः । ३६

अंशुमाली [ न् ] पु. [ अंशूनां माला अस्ति अस्य इति ।  
त्रीह्यादित्वाद् इनि ] सूर्यः; यथा—'आदित्य इवांशुमाली  
चचार'—इति विष्णुपुराणम् । ३५

अंसः पुं.—बली. [ अंस्यते समाहन्यते । अंस् समाघाते,  
घञ् । यद्वा अमति अम्यते वा भारदिना, अम् गती,  
अमः सन् ] विभागो पुं., स्कन्धः । वस्त्रेकदेशः; रिक्त-  
भागः; चतुर्थभागः; भाज्याङ्कः; रविमूर्तिविशेषः;  
आदित्यविशेषः; यथा—'धाता मित्रोऽर्षमा शक्रो वरुण-  
स्त्वंस (श) एव च । भगो विवत्त्वान् पूषा च सचिता

दशमस्तथा । एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरेव  
च । जघन्यजस्तु सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः— इति  
महाभारते । ५२३

अंसकूटः पुं. [ अंसे स्कन्धे कूट इव ] ककुत्; 'दिल्ला'  
इति भाषा । २६६

अंसलः त्रि. [ अंसोऽस्मास्तीति । 'वत्सांसाभ्यां कामबले'  
इति लच् ] बलवान् । ३८१

अंहतिः स्त्री. [ हन्ति दुरितमनया । 'हन्तेरंह च' इति अति ]  
दानं; रोगः; त्यागः । ४१९.

अंहतो स्त्री. [ 'हन्तेरंह च' इति अति, वृह्यादित्वाद् ङोप् ]  
दानम् । ४१९

अंहितिः स्त्री. [ हन् अति, अंहादेशः इडागमश्च ]  
दानम् । ४१९

अंहः [ स् ] बली. [ अमति गच्छति प्रायश्चित्तादिना । अम्  
गत्यादिपु, 'अमेहुक् च' इति असुनु, हुगागमश्च । अमति  
गच्छति अधोऽनेन वा । अहेरसुना सिद्धे अघेरसुनि अङ्घ्र  
इति मा भूदिति अमेहुक् चेति. सूत्रम् । तथा च—'स्या-  
न्मध्योष्मचतुर्थत्वमंहसो रंहसस्तथा'—इति द्विरूपकोषः ।  
एवं च 'दत्तार्थाः सिद्धसङ्घैर्विदधतु घृणयः शीघ्रमङ्घो-  
विघातम्'—इति सूर्यशतके पाठ अनुप्रासरसिकानां  
प्रामादिक इति वदन्ति ] पापं; दुःखं; विघ्नः; स्वधर्म-  
त्यागः । ६२७

अंहिः पुं. [ अहि, क्रिन्, 'वङ्गयादयश्च' इति उणादि-  
सूत्रम् ] पादः; वृक्षमूलम् । ५११.

अंहिपः पुं. [ अंहिभिः पिबति इति । पा पाने, सुपीति  
योगविभागात् क. ] वृक्षः । १७७

अकारः पुं. [ 'वर्गात्कारः' इति कारप्रत्ययः ] आद्यस्वर-  
वर्णः । अस्य तत्त्वं यथा—'शृणु तत्त्रमकारस्य अति-

गोप्यं वरानने ! शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पञ्चकोणमयं सदा—इति कामधेनुतन्त्रम् । ८६३

अकार्यम् क्ली. [ न कार्यम्, नञ्समासः ] कुकार्यम्; दुष्कर्म; अकर्म; अकृत्यं, यथा—'किमकार्यं कदर्याणां दुस्त्यजं किं धृतात्मनाम्'—इति भागवतम् । कार्याभावः । ८३०

अकिञ्चनः त्रि. [ नास्ति किञ्चन यस्य । मयूरव्यंसकादित्वाद् बहुव्रीहिसमासः ] दरिद्रः; 'अकिञ्चनः सन् प्रभवः स सम्पदाम्'— इति कुमारसम्भवे ( ५-७७ ) । ३४८

अकुप्यम् क्ली. [ न कुप्यं, कुप्यादन्यदित्यर्थः । नञ्समासः ] स्वर्णं; रूपां; 'कुरुनकुप्यं वसु वासवोपमः'— इति भारविः ( १-३५ ) । ८१

अकूपारः पुं. [ न कूपारः । नञ्समासः । कुं पृथिवीं पिपति इति । पृ पालनपूरणयोः, कर्मणि अण्, अन्येषामपीति दीर्घः ] समुद्रः; कूर्मराजः; पापाणादिः; कमठः । ६५२

अक्षः पुं.—क्ली. [ अक्षणोति अक्षति अक्ष्यते वा अतनं अत्र वा । अक्षू व्याप्ती, पचाद्यच् घञ् वा । अश्नुते अत्यर्थम् । अशू व्याप्ती, अशोर्देवने इति सो वा ] पाशक्रीडा; यथाह मनुः—'भृगयाक्षो दिवास्वप्नः परीवादः स्त्रियो मदः । पाशकः; 'अक्षैरक्षान् वा दीव्यति'—इति सिद्धान्तकीमुदी । व्यवहारः ( ४२९ ); शकटः ( ४४८ ); अक्षं क्ली., इन्द्रियम् ( ५३५ ); यथा विष्णुपुराणे—'शब्दादिष्वनुरक्तानि निगृह्याक्षाणि योगवित् । कुर्याच्चित्तानुंकारीणि प्रत्याहारपरायणः ॥' ( ६१८ ) कलिद्रुमः; विभीतकवृक्षः, यथा छान्दोग्ये—'यथा वै द्वे आमलके द्वे कोले द्वौ वाक्षौ मुष्टिमनुभवति ।' व्यवहारः ( ८५२ ); चक्षुः; यथा रामायणे—'सर्वे तेऽनिमिषैरक्षैस्तमनुद्रुतचेतसः ।' रथावयवः; सौवर्चलं; तुत्यं; पुं; कर्षपरिमाणं; यथा—'ति षोडशाक्षः कर्षोऽस्त्री पलं कर्षचतुष्टयम् ।' ज्ञातार्थः; रुद्राक्षः; इन्द्राक्षः; सर्पः; चक्रं; चक्रधारणदारुभेदः; 'छिन्ननास्ये भग्नयुगे तिर्यक् प्रतिमुखागते । अक्षभङ्गे च यानस्य चक्रभङ्गे तथैव च ॥' आत्मा; रावणपुत्रः; यथा—'निशम्य राजा समरे सहोत्सुकं कुमारमक्षं प्रसमैक्षताथ वै'—इति रामायणे । जातान्वः; गरुडः; शिवः; 'अक्षश्च रथयोगी च

सर्वयोगी महाबलः'—इति महाभारते । संस्कृतपलभा; 'चन्द्राश्विनघना पलभाद्धिता च लङ्कावधिः स्यादिह दक्षिणोऽक्षः'—इति भास्वती । 'प्रभा शरघना स्वतुरीययोगादक्षः सदा दक्षिणदिक्प्रदिष्टः'—इति जातकार्णवः । 'दक्षिणोत्तररेखायां सा तत्र विपुवत्प्रभा । शङ्कुच्छायाहते त्रिज्ये विपुवत्कर्णभाजिते ॥ लम्बाक्ष्ये तयोश्चापे लम्बाक्षीदक्षिणी सदा'—इति सूर्यसिद्धान्तः । ३८८ अक्षदृक् [ श् ] पुं. [ अक्ष+दृश्, क्विप् ] अक्षदर्शकः; व्यवहारस्य ज्ञाता । ४२९

अक्षरम् क्ली. [ न क्षरति इति ] मोक्षः; ब्रह्म; कूटस्थः; नित्यः; आत्मा; गगनं; धर्मः; तपस्या; अपामार्गः; जलम् इति वेदप्रयोगः । पुं., शिवः; अजः; जीवः; अकारादिक्षकारान्तैकपश्चाशद्वर्णाः ( ८६० ); यथा बृहस्पतिः—'पाण्मासिके तु सम्प्राप्ते भ्रान्तिः संजायते यतः । घात्राक्षराणि सृष्टानि पत्रारूढान्यतः पुरा ॥' १२४ अक्षरजीवकः पुं. [ अक्षरैः जीवति इति । ण्वुल् ] लिपिकरः; 'लेखके क्षरपूर्वाः स्युश्चणजीवकचुञ्चवः'—इति हेमचन्द्रः । ५८६

अक्षरजीविकः पुं. [ अक्षरैर्जीविका यस्य स ] कायस्थः; लेखकः; लिपिकरः; अक्षरजीवकः; अक्षरजीविनि त्रि. । ५८६

अक्षवती स्त्री. [ अक्षाः पाशकाः सन्ति अस्याम् इति । मतुप्, लोकात् स्त्रीत्वम् ] द्यूतक्रीडा; 'जूआ' इति भाषा । 'पराजितं सौवलेनाक्षवत्याम्'—इति महाभारते । ३८८

अक्षाप्रकीलकः पुं. [ अक्षस्य नाभिक्षेप्याकाष्ठस्य अग्रे अन्ते वन्वन्तार्थं कीलकः ] शकटचक्रपुरोर्वर्तकीलकः; अणिः; अणी; आणिः । ४४८

अक्षाप्रकीलिका स्त्री. अक्षाप्रकीलकः [ स्त्रियां टाप् ] अर्थः पूर्ववत् । ४४८

अक्षि क्ली. [ अश्नुते अनेन । अशू व्याप्ती संघाते च अशोनिदिति विस । यद्वा अक्षति । अशू व्याप्ती, इन् ] चक्षुः; चक्षुर्गोलकः । ५१९

अक्षिगतः त्रि. [ सप्तमीसमासः, अक्षिविषय इव खेदकृदित्यर्थः ] द्वेष्यः । ३६६

अखिलम् त्रि. [ न खिलमस्य ] सर्वम् ( खिलमप्रहृतं स्थानम् । तत् न भवति इति ) कृष्टस्थानम् । ७१३

अगः पुं. [ न गच्छति । गम्च् गती, अन्येभ्योऽपीति,

अन्येष्वपि इति वा ड । नगोऽप्राणिषु इति पाक्षिको-  
ऽप्रकृतिभावः] वृक्षः; पर्वतः; सर्पः; सूर्यः । १७७  
अगदः पुं. [ गदविच्छ्रः, न गदः अस्मात् इति] औषधम्;  
आयुर्वेदोक्ताष्टशाखान्तर्गतशाखाभेदः; 'औषधान्यगदो  
विद्या दैवी च विविधा स्थितिः । तपसैव प्रसिध्यन्ति'—  
इति मनुः । नीरोगे त्रि. । ६१३

अगरु क्ली. —पुं. [ न गरुः दुर्भरः अस्मात् इति] अगुरु;  
सुगन्धिद्रव्यविशेषः । ५४५

अगस्तिः पुं. [ विन्ध्याख्यमगम् अस्यति इति । अस्यतेः क्तिच्  
बाहुलकात् ति वा] अगस्त्यमुनिः; वक्रवृक्षः; यथा  
वैद्यके—'अगस्तिः पित्तकफजित् चतुर्यकहरो हिमः ।  
रुक्षो वातकरस्तिकतः प्रतिशयानिवारणः ॥' ४१३

अगस्त्यः पुं. [ अगं विन्ध्यं स्वययति स्तम्नाति वा । अग +  
स्त्यं संघाते, आतोऽनुपसर्गे इति क] मुनिविशेषः;  
मित्रावरुणयोः पुत्रः; कुम्भसम्भवः; मैत्रावरुणिः;  
अगस्तिः; पीताम्बुः; वातापिष्टिद्; आग्नेयः; और्व-  
शीयः; आग्निमास्तः; घटोद्भवः । ४१३

अगाधः पुं. [ न गाधः स्थितिः अत्र । गाधृ प्रतिष्ठायाम्,  
घञ्, नञ्समासः] छिद्रम्; निम्नः; गर्तः; श्वभ्रं; शुषिरं;  
त्रिलं; रन्ध्रं; दरम् । अमरमते क्ली. । ६२४

अगाधः त्रि. [ नास्ति गाधः स्थितिरत्र, नगोऽस्त्यर्याना-  
मिति बहुव्रीहिः] अतिगभीरः; अतलस्पर्शः; अति-  
गम्भीरः; दुर्बोधाशयः । ६४९

अगारम् क्ली. [ अगान् ऋच्छति । ऋ गती, कर्मण्यण् ]  
आगारं; गृहं; 'शून्यानि चाप्यगाराणि वना-  
न्युपवनानि च'—इति मनुः । २९१

अगरु क्ली. [ न गरुः दुर्भरः अस्मात् इति बहुव्रीहिः]  
शिशपावृक्षः; कालागरुः; सुगन्धिकाष्टविशेषः; वंशिकं;  
राजार्हं; लोहं; कृमिजं; जोङ्गकं; शृङ्गजं; कृष्णं;  
लोहाख्यं; लघुः; पीतकं; वर्णप्रसादनम्; अनार्यकम्;  
असारं; कृमिजग्धं; काष्ठकम् । 'अगर' इति भाषा । ५४५

अग्नयी स्त्री. [ अग्नेः स्त्री इत्यस्मिन्नर्थे वृषाकप्यग्नि-  
कुसितेत्यादिसूत्रेण अग्निशब्दस्यकारादेशो ङीप् च ]  
अग्निभार्या; 'अग्नयी स्वाहा च हुतभुक्प्रिया'—  
इत्यमरः । ऋतायुगम् । ६६

अग्निः पुं. [ अङ्गयन्ति अग्र्यं जन्म प्रापयन्ति इति व्युत्पत्त्या  
हविःप्रक्षेपाधिकरणेषु गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्निसम्भ्या-

वसथ्यौपामनाख्येषु पडग्निषु । यद्वा अङ्गति ऊर्ध्वं  
गच्छति इति । अग्नि गती, अङ्गेर्नलोपश्चेति नि, नलो-  
पश्च] तेजःपदार्थविशेषः; धर्मस्य वसुभार्यायां जातः  
प्रथमोऽग्निः; तस्य पत्नी स्वाहा, पुत्रास्त्रयः—१ पावकः—  
२ पवमानः—३ शुचिः । पष्ठमन्वन्तरे अग्नेः वसोर्धा-  
रायां द्रविणकादयः पुत्राः, एतेभ्यः पञ्चचत्वारिंशदग्नयः  
जाताः । सर्वे मिलित्वा एकोनपञ्चाशदग्नयः ।  
अस्य पर्यायाः— वैश्वानरः; वह्निः; वीतिहोत्रः;  
धनञ्जयः; कृपीटयोनिः; ज्वलनः; जातवेदाः;  
तनूनपात्; तनूनपाः; वह्निःशुष्मा; वह्निः; शुष्मा;  
कृष्णवर्त्मा; उपर्वधः; आश्रयाशः; शोचिष्केशः; आश-  
याशः; बृहद्भानुः; कृशानुः; पावकः; अनलः; रोहि-  
ताश्वः; वायुसखा; वायुसखः; शिखावान्; शिखी;  
आशुशृक्षणिः; हिरण्यरेताः; हुतभुक्; हव्यभुक्;  
दहनः; हव्यवाहनः; सप्ताचिः; दमुनाः; दमूनाः;  
शुकः; चित्रभानुः; विभावसुः; शुचिः; अँपिपत्तः;  
वृषाकपिः; जुहवालः; कपिलः; पिङ्गलः; अरणिः;  
अगिरः; पाचनः; विश्वप्साः; छागवाहनः; कृष्णाचिः;  
जुहवारः; उर्दाचिः; भास्करः; वसुः; शुष्मः; हिमा-  
रातिः; तमोनुत्; सुशिक्षः; सप्तजिह्वः; अपपारिकः;  
सर्वदेवमुखः । ६२

अग्निभूः पुं. [ अग्निर्भवतीति । अग्नि + भू + क्विप् ]  
कातिकेयः; जले क्ली., 'अग्नौ दत्ताहुतिः सम्यग्  
आदित्यमुपतिष्ठते । आदित्याज्जायते वृष्टिवृष्टेरन्नं  
ततः प्रजाः ।' १९

अग्रः त्रि. [ अग्र्यते अगति वा । अग् कुटिलायां गतौ,  
ऋज्जेन्देति साधुः] प्रथमः; श्रेष्ठः; उत्तमः; प्रधानम् ।  
क्ली. उपरिभागः; शिरः; शिखरं; पुरस्तात्; अव-  
लम्बनं; पलपरिमाणं; प्रान्तं; समूहः; भिक्षाविशेषः;  
'ग्रासचतुष्टयम्; 'ग्रासप्रमाणा भिक्षा स्यादग्रं ग्रासचतु-  
ष्टयम्'—इति स्मृतेः । ७०७

अग्रजः पुं. [ अग्रे जातः इति । सप्तम्यां जनेर्डः] ज्येष्ठ-  
भ्राता; पूर्वजः; अग्रियः; 'सर्वेषां घनजातानामाद-  
दीताग्रचमग्रजः'—इति मनुः । ब्राह्मणः; अग्रे जाते  
त्रि. । ५०६

अग्रजन्मा [ न् ] पुं. [ अग्रे जन्म यस्य सः । बहुव्रीहिः, जन् +  
भावे मनिन् ] ब्राह्मणः; 'अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं

तथा । दानं प्रतिग्रहश्चैव पट् कर्माण्यग्रजन्मनः—इति मनुः । ज्येष्ठभ्राता; ब्रह्मा । ३९१

अग्रणीः त्रि. [अग्रे नीयतेऽपी । अग्र+नी+क्विप् । 'अग्रग्रामाम्यामिति' णत्वम्] अग्रिमः; श्रेष्ठः । (वह्नी च पुं., यथा चास्वाग्रणीस्त्वं तयाग्निशब्दे निस्वत-व्याख्यायामुक्तम् ।) ६९०

अग्रमांसम् क्ली. [अग्रं भक्षयत्वेन प्रधानं मांसम्] वृक्कम् । ६३६

अग्रिमः त्रि. [अग्रे भवः । अग्र+डिमन्] प्रधानम्; उत्तमः; ज्येष्ठः; अग्रजः । ७७५

अग्रेसरः त्रि. [अग्रे सरति गच्छतीति । अग्रे+सृ+ट] अग्रे गमनकर्ता; पुरोगः; प्रेष्ठः; अग्रतःसरः; पुरःसरः; अग्रगामी; अग्रसरः; अग्रगः; पुरोगमः; पुरोगामी । ६९०

अग्र्यः त्रि. [अग्रे भवः । अग्र+यत्] प्रधानम्; उत्तमः; ज्येष्ठभ्रातरि पुं., ज्येष्ठः; अग्रजः; प्रधानम्; उत्तमः (७७५) । ६९०

अघम् क्ली. [अङ्घते गच्छति दानादिना । अधि गती, अच्, आगमानित्यत्वान्न नुम्] पापं; दुःखं; व्यसनम् । ६२७

अघनम् क्ली. [न घनं, नञ्समासः] दधि; द्रव्यम् । २७५

अघ्न्या स्त्री. [न हन्यते या । हन्+अघ्न्यादयश्च इति यक्, स्त्रियां टाप् । 'पतिवो अघ्न्यानां धेनूनामिति' वेदः । 'अवघ्न्यां च स्त्रियं प्राहुस्तिर्यग्योनिगतामपि'—इति निषेधात्] गौः; स्त्रीगवी । २६८

अङ्कः पुं. [अङ्कयति चिह्नयति, अङ्क लक्ष्यणि, अच्] चिह्नम्; 'स्वनामकाङ्कं निचखान सायकम्'—इति रघुवंशे । क्रोडम् (५२२); 'सपत्नीतनयं दृष्ट्वा तमङ्कारोहणोत्सुकम्'—इति विष्णुपुराणे । रूपकविशेषः; अपराधः; रेखा; विमूषणं; समीपं; स्थानं; नाटकांशः; 'प्रत्यक्षनेतृचरितो रसभावसमुज्ज्वलः । भवेद्गूढशब्दार्थः क्षुद्रचूर्णकसंयुतः । अन्तनिष्क्रान्तनिखिलपात्रोऽङ्क इति कीर्तितः'—इति साहित्यदर्पणे । चित्रयुद्धं; शरीरं; नवसंख्या; कुचभूपायां; अग्रे; कटिप्रदेशे; कलङ्के; 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः'—इति कुमारसम्भवे । ४५

अङ्कपाली स्त्री. [अङ्केन क्रोडेन पालयति । अङ्क+पालि-

इ, स्त्रियां वा झेप्, पक्षे अङ्कपालिः] आलिङ्गनं; धानी; वेदिकाख्यगन्धद्रव्यं; तस्य नामान्तरं कोटिः । ५६८

अङ्करः पुं. [अङ्क+उरच्] वीजोद्भवः; नूतनोत्पन्न-तृणादिः; अभिनवोद्भिद्; उद्भेदः; प्ररोहः; अकुरः; रोहः; अङ्करः; 'दर्भाङ्कुरेण चरणः क्षत इत्यकाण्डे, तन्वी स्थिता कतिचिदेव पदानि गत्वा'—इति शाकुन्तले । 'चूताङ्कुरास्वादकपायकाठः'—इति कुमारसम्भवे । जलं; रक्तं; लोम । १८५

अङ्कुशः पुं.-क्ली. [अङ्कयते हस्तिचालनार्थमाहन्यतेऽनेन । अङ्क+उशच्] हस्तिचालनार्थलोहमयवक्रापाश्रं; शृणिः; सृणिः; अङ्कूनः; 'उष्ट्रान् ह्यान् खरान् नागान् जघ्नुर्दण्डकापाङ्कुशैः । कम्पना अङ्कुशा भल्लाः कालचक्रा गदास्तथा ॥'—इति रामायणे । २२२

अङ्कुशवारणम् क्ली. [अङ्कुशेन वारणम् । वृ+ल्युट्] अङ्कुशद्वारा गजस्य पयप्रदर्शनं नियन्त्रणं वा । २२२

अङ्कूरः पुं. [अङ्क+खजूर,दित्वाद् ऊरच्] अङ्कुरः; अभिनवोद्भिद् । १८५

अङ्गम् क्ली. [अङ्गं विद्यतेऽस्य । अङ्ग+अशं आद्यच्; अम् गत्यादौ वा, गन् । अङ्गमङ्गनाद् अञ्चनाद् वा] गात्रम्; 'अङ्गानि चम्पकदलैः स विधाय धाता'—इति शृङ्गारतिलके । ५१०

अङ्गम् क्ली. [अग्नि गती, पचाद्यच्] शरीरादेरेकदेशः; अवयवः; प्रतीकः; अपघनः; अप्रधानम्; 'एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा । अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कार्यनिर्वहणेऽद्भुतम्'—इति साहित्यदर्पणे । उपायः (अङ्गयते विषयो बुध्यते अनेन । अङ्ग+करणे घञ्, इति व्युत्पत्त्या) मनः; अङ्गं मनसि काये चेत्यभिधानान्तरदर्शनात्, यथा—'हिरण्यगर्माङ्गमु' मुनि हरिः—इति माघः । वेदाङ्गशास्त्राणि पदः; 'शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दसां चयः । ज्योतिषामयनं चैव वेदाङ्गानि पदेव तु ॥' पुं. अङ्गदेशः; यथा—'वैद्यनाथं समारम्य भुवनेशान्तर्गं शिवे । तावदङ्गामिधो देशो यात्रायां न हि दुप्यति ॥' 'अनङ्ग इति विख्यातस्ततः प्रभृति राघव । स चाङ्ग-विषयः श्रीमान् यत्राङ्गं स मुमोच ह ॥' त्रि., अङ्गवि-शिष्टः; निकटः; 'अङ्गं गात्रे प्रतीकोपाययोः पुं-

भूमिनी वृत्ति । क्लीवकत्वे त्वप्रधाने त्रिष्वङ्गवति चान्तिके—इति भेदिनीकारः । ७४४

अङ्ग अर्थ.—सम्बोधनम्; 'अङ्गावेक्षस्व सौमित्रे कस्येषां मन्यसे चमूम्—इति रामायणे । पुनरर्थः । ८८३

अङ्गजः पुं. [ अङ्गाद् जातः । अङ्ग + जन्, 'पञ्चम्यामजातौ' इति ड ] कामदेवः; पुत्रः; केशः; मदः; गदः; स्त्रीणां यौवने सात्त्विकभावविशेषः; 'यौवने सत्त्वजास्तासामष्टाविंशतिसंख्यकाः । अलङ्कारास्तत्र भावहावहेलास्त्रयोऽङ्गजाः—इति साहित्यदर्पणे । क्ली. रवतम् । शरीरजे त्रि. । ३२

अङ्गवम् क्ली. [ अङ्गं दयते, दायति, द्यति वा । देङ् पालने, दैप् शोधने, दोऽत्रलण्डने, अङ्ग + दा + क ] केयूरम् । 'बाजूबंद' इति भाषा । 'धूमनैश्च वासोभिः श्लक्ष्णैरङ्गदभूषणैः—इति रामायणे । पुं. कपिभेदः; बालिनामवानरराजपुत्रः; 'कुमुदं पञ्चदशभिर्जाम्बवन्तं च सप्तभिः । अशौल्या बालिनः पुत्रमङ्गदं विभेदे शरैः—इति रामायणे । ५५७

अङ्गना स्त्री. [ प्रशस्तानि अङ्गानि अस्याः ] कामिनी; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः—इति मनुः । सुन्दराङ्गी; सावर्भौमनाम्न उत्तरदिग्गजस्य पत्नी; वृषकर्कटककन्यावृषिककमकरमीनराशयः । ४८१

अङ्गपालिः पुं. [ अङ्गेन पाति सुखयति । अङ्ग + पा + अलि ] आलिङ्गनम्; अङ्कपाली; अङ्कपालिः । स्त्रियां डीप्, वेदिकाख्यगन्धद्रव्ये । ५६८

अङ्गनारजः [ स् ] क्ली [ अङ्गनायाः रजः । षष्ठीसमासः ] स्त्रीणां ऋतुः; आर्तवम् । ७९४

अङ्गमर्दो [ न् ] पुं. [ अङ्गं साधुं मर्दयति संवाहयति यः । अङ्ग + मर्द + णिनि ] अङ्गमर्दः; अङ्गमर्दनकारकभृत्यः; संवाहकः; अङ्गमर्दकः । ५९०

अङ्गरागः पुं. [ रज्यतेऽङ्गमलङ्कियतेऽनेन । रञ्ज् + करणे घञ्, 'घञि च भावकरणयोरिति' नलोपो वृद्धिश्च । अङ्गस्य रागः, षष्ठीतत्पुरुषः ] यात्ररञ्जनम्; अङ्गे चन्दनादिलेपनं; विलेपनं; 'स्नानानि चाङ्गरागाश्च माल्यानि विविधानि च—इति रामायणे । ५४५

अङ्गविक्षेपः पुं. [ वि + क्षिप् + भावे घञ् । अङ्गस्य विक्षेपः, एकस्थानादन्यस्थाने चालनं, षष्ठीतत्पुरुषः ] अङ्गहारः; अङ्गचालनरूपनृत्यम् । 'अङ्गहारोऽङ्ग-

विक्षेपः—इत्यमरः । ९४

अङ्गहारः पुं. [ अङ्गानां हारः । एकस्थानादन्यस्थाने चालनं, षष्ठीतत्पुरुषः ] अङ्गानां स्थानात् स्थानान्तरनयनम्; अङ्गविक्षेपः; अङ्गहारिः (स्विरहस्तपर्यस्तकादिको द्वान्निशत्रकारः—इति मधुः, वृद्धिषकभ्रमरादिद्वान्निशत्रूपः—इति रायः, अङ्गुल्यादिविन्यासस्त्रिशत्रूपः—इति कौमुदी) ९४

अङ्गारः पुं.-क्ली. [ अगि + आरन् । इदिस्वान्तुम् ] दग्धकाष्ठलण्डं; तत्तु निरग्निं सान्निं च; अलातम्; उत्लुकम्; आलातम्; रत्नमूर्कं; 'घृतकुम्भसमा नारी तप्ताङ्गारसमः पुमान् ।' ३२३

अङ्गारकः पुं.-क्ली. [ अङ्गार + स्वार्थे क ] मङ्गलग्रहः; 'घरात्मजः कुजो भीमो भूमिजो भूमिनन्दनः । अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः—इति. वराहपुराणम् । 'दिवीव ग्रहयोर्धोर बुधाङ्गारकयोर्महत् । कौशलानां च नक्षत्रं ज्येष्ठा मैत्राग्निर्देवतम् ॥ आश्रम्याङ्गारकस्तस्यौ विशास्त्रामपि चाम्बरे—इति रामायणे । अङ्गारः; कुरुण्टकवृक्षः; मङ्गलराजः । ४६

अङ्गारशकटी स्त्री. [ शक्नोति वोढुं शकटम् । शकट + स्त्रियां डीप्, अल्पार्थे शकटी, अङ्गारस्य शकटी, षष्ठीतत्पुरुषः ] अङ्गारघानिका । 'अँगौठी' इति भाषा । ३१४

अङ्गीकृतिः स्त्री. [ अङ्गीति च्यन्तं तत्पुर्वकात् कृ + कर्मणि क्त ] स्वीकृतिः । ८८५

अङ्गुरिः स्त्री. [ अगि गती, ऋतन्यञ्जीति उलि, बालमूलेति लस्य र ] पाणिपादाङ्गुली । ५१६

अङ्गुरी स्त्री. [ अङ्ग + उलि पक्षे डीप् ] अङ्गुली । ५१६

अङ्गुलिः स्त्री. [ अङ्ग + उलि ] करशाखा; 'कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे देवं पित्र्यं तयोरेवः—इति मनुः । गजकर्णिका; हस्तिशुण्डाग्रभागः; अङ्गुष्ठः । ५१६.

अङ्गुलिमुद्रा स्त्री. [ अङ्गुलेः मुदं लक्षणया धारयितुर्हर्षं राति ददाति या । अङ्गुलिमुद् + रा + कर्तरि क ] साक्षरोमिका; प्रभुनाम्ना स्वनाम्ना वा अङ्कितम् अङ्गुरीयकम् । 'मोहरछाप अँगूठी' इति भाषा । ५५९

अङ्गुली स्त्री. [ अङ्ग + उलि स्त्रियां वा डीप् ] शरीरावयवविशेषः; 'कनिष्ठायांमध्यङ्गुल्यां भ्रातुर्मम स राक्षसः । 'ज्वालाङ्गुलीभिर्भगवान् विष्टम्यः स हुताशनः—इति रामायणे । तस्याः पर्यायाः—करशाखा;

अङ्गुरिः; अङ्गुरी; अङ्गुलः। सा च क्रमेण पञ्चधा,  
यथा—१ अङ्गुलः, २ तर्जनी, ३ मध्यमा, ४ अनामिका,  
५ कनिष्ठा। हस्तिशुण्डाग्रम्। ५१६

अङ्गुलीयकम् क्ली.-पुं. [ अङ्गुली भवम्। जिह्वामूला-  
ङ्गुलेश्च; अङ्गुलीय + स्वार्थे क] अङ्गुलिभूषणम्;  
ऊर्मिका; अङ्गुरीयकम्; अङ्गुरीयः; अङ्गुलीयः;  
करारोटः; अङ्गुलीकः; 'अयं मैथिल्यभिज्ञानं काकुत्स्थ-  
स्याङ्गुलीयकः'—इति भट्टिः। ५५९

अङ्घ्रिः पुं [ अङ्घ्रयते गम्यतेऽनेन। अधि + करणे इक्]  
अङ्घ्रिः; पादः। ५११

अङ्घ्रिः पुं. [ अङ्घ्रयते गम्यतेऽनेन। अधि + करणे रि]  
पादः; 'शीर्षाणाङ्घ्रिपाणीन्'—इति सूर्यशतके।  
वृक्षमूलम्। ५११

अङ्घ्रिपः पुं. [ अङ्घ्रिणा पिवति। अङ्घ्रि + पा + ड]  
वृक्षः। १७७

अचक्षुः [ स् ] क्ली. [ असौम्यं चक्षुः। नञोऽस्त्यर्थाना-  
मिति समासः] असौम्यं नेत्रम्; दुष्टनेत्रम्। ७७२

अचण्डी स्त्री. [ चडि कोपने, पचाद्यच्, इदित्वात्प्रुम्,  
स्त्रियां झेप्, नञ्समासः] सुशीला गौः 'सीधी गाय'  
इति भाषा। अकोपना स्त्री। २७०

अचलः पुं. [ न चलति यः। चल् + पचाद्यच्, नञ्समासः]  
पर्वतः; 'आससाद ततो रामं स्थितं शैलमिवाचले'—  
इति रामायणे। कीलकः; अकम्पे त्रि., शिवः; स्थिरः;  
यदुक्तम्—'न स्वरूपात्र सामर्थ्यान्न च ज्ञानादिकाद्  
गुणात्। चलनं विद्यते यस्येत्यचलः कीर्तितोऽच्युतः'  
अविकारी; कूटस्थः। १६५

अचला स्त्री. [ न चला। नञ्समासः] पृथिवी; 'पृथिवीमपि  
कामं तं ससागरवनाचलाम्'—इति रामायणे। १५६

अचिरांशुः स्त्री. [ अचिराः क्षणस्थायिनः अंशवः किरणाः  
यस्याः सा। बहुव्रीहिः] विद्युत्। ६०

अच्छः पुं. [ न च्छति निर्मलत्वाद् दृष्टिं नावृणोति। न +  
छो + कर्तरि क; उपपदसमासः] भालूकः; स्फटिकः,  
त्रि. (न च्छति) स्वच्छः; निर्मलः; 'अच्छकपोल-  
मूलंगलितैः'—इत्यमरशतके। अच्छम् अव्य. (न च्छति  
सम्मस्रत्वाद् दृष्टिं नावृणोति। न + छा + धञर्थे क,  
नञ्त्वरूपः) २२८

अच्छभल्लः पुं. [ अच्छाः निर्मलाः भल्लाः शस्त्राणीव

नखा यस्य सः। बहुव्रीहिः। यथा मेदिन्याम्—'भल्लः  
स्यात्पुंसि भल्लके शस्त्रभेदे पुनर्द्वयोः।' भालूकः  
( अच्छो भल्लश्चेति शब्दद्वयमपि )। २२८

अच्छोटनम् क्ली. [ आ समन्तात् छोटनं छेदनम्। छुट्  
छेदने, पृषोदरादित्वादाडो ह्रस्वः] मृगया; मृगव्यं;  
पापद्विः; आखेटकम्; आच्छोटनम्। ४३५

अच्युतः पुं. [ न च्यवते स्वरूपतो न गच्छति यः, नित्य  
इति यावत्। च्यु + कर्तरि क्त, नञ्समासः] विष्णुः;  
'पीताम्बरोऽच्युतः शाङ्गो'—इत्यमरः। 'तत्रावतीर्याच्युत-  
दत्तहस्तः'—इति कुमारसम्भवे। स्थिरे त्रि. 'सोऽन्त्य-  
वेलायामेतत्त्रयं प्रतिपद्येताक्षितमस्यच्युतमसि प्राण-  
संशितमसीति'—छान्दोग्योपनिषत्। २३

अजः पुं. [ न जायते नोत्पद्यते यः। नञ् + जन् +  
'अन्वेष्वपि दृश्यते' इति कर्तरि ड, उपपदसमासः]  
विष्णुः; 'न हि जातो न जायेऽहं न जनिष्ये कदाचन।  
क्षेत्रजः सर्वभूतानां तस्मादहमजः स्मृतः'—इति भारते।  
'यो मामजमनादि च वेत्ति लोकमहेश्वरम्'—इति  
भगवद्गीता। ब्रह्मा; शिवः; कामदेवः; सूर्य-  
वंशीयराजविशेषः; रघुराजपुत्रः; दशरथपिता; मेपः;  
माक्षिकवातुः; जन्मरहिते वाच्यलिङ्गः, त्रि.।  
छागः (२७७)। २५

अजगरः पुं. [ अजं गिरति ग्रसते यः। गृ + पचाद्यच्.  
अजस्य गरः, पष्ठीतत्पुरुषः] स्वनामख्यातवृहत्सर्पः;  
शयुः; वाहसः। ६४२

अजगवम् क्ली. [ अजयोविष्णुब्रह्मणोर्मं, त्रिपुरामुरवधे  
गीतं, तादृशं गीतं वाति सम्ब्रुवन्ति यत्। अजग + वा +  
कर्तरि क, उपपदसमासः। 'गं च गीतं च गौश्चैव गूश्च  
धेनुः सरस्वती'—इत्येकाक्षरीयकोषे] पिनाकः; शिवधनुः;  
अजकवम्; अजकावम्; अजोकम्; अजगावम्। १४

अजन्यम् क्ली. [ न जन्यते सम्पाद्यते केनापि। न + जन् +  
णिच् + यत्] उत्पातः; शुभाद्युभनूचकभूकम्पादिः,  
अजननीये त्रि.। १२७

अजर्यम् क्ली. [ न जोर्यति। जृ + कर्तरि 'अजर्यं सङ्गत-  
मिति' सूत्रेण यत्। 'तेन सङ्गतमायेण रामाजर्यं  
द्रुतमिति' भट्टिः] सङ्गतं; सौहार्दम्; अजराहं  
त्रि., यथा रघुवंशे—'मृगैरज्यं' जरतोपदिष्टमदेहवन्वाय  
पुनर्वन्व।' ७०६

अजस्रम् क्ली. [ नञ्+जस्+‘नमिकम्पिस्म्यजस’  
इत्यादिना र, नञ्समासः ] निरन्तरं; सततम्;  
‘अजस्रदीक्षाप्रयतस्य मद्गुरोः क्रियाविधाताय कथं  
प्रवर्तसे’—इति रघुवंशे । ६९८

अजाजी स्त्री. [ अजम्, अजति अत्युत्कटगन्धतया दूर-  
क्षिपति । कर्मण्यण्, ङीप्, बहुलं तणीति व्यभावः । अजेन  
आजिरिति तृतीयातत्पुरुषो वा, ङीप् ] जीरकः;  
श्वेतजीरकः; कृष्णजीरकः; काकोदुम्बरिका । ६१६

अजाजीवः पुं. [ अजेन अजव्यवसायेन आजीवति सम्यक्  
प्राणान् धारयति यः । आ+जीव्+पचाद्यच् । अजेन  
आजीवः, तृतीयातत्पुरुषः ] जादालः; छागोपजीवी । ३८१

अजिनम् क्ली. [ अजति धूल्यादिम् आवृणोति यत् । अज्+  
‘अजेरजच्’ इति वीभावं वाधित्वा इनच् ] चर्म;  
‘गजाजिनं शोणितविन्दुवर्षि च’—इति कुमारसम्भवे ।  
ब्रह्मचर्यादिधार्यकृष्णसारादित्वक् । जिनभिन्ने त्रि. । ६३०

अजिरम् क्ली. [ अजति गृहान्निःसरति यत्र । अज्+  
अधिकरणे किरच् ] चत्वरम् । ‘आंगन’ इति भाषा ।  
यथा विष्णुपुराणे—‘पुनश्च भरतस्याभूदाश्रयस्योट-  
जाजिरे’ (अजति गच्छति यः) वायुः; (अजति  
गच्छति, क्षणभङ्गुरमिति यावत्) शरीरं; (अजन्ति  
इन्द्रियाणि गच्छन्त्यत्र) विषयः; मण्डूकः । २९९

अज्ञः त्रि. [ ज्ञा+कर्तरि क, न ज्ञः, नञ्समासः ] जडः;  
मूर्खः; यदुक्तम्—‘अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति  
मन्त्रदः । अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम् ॥’  
‘यथा चाज्ञेऽकलं दानं तथा विप्रोऽनुचोऽकलः ।’ ‘इदं  
शरणमज्ञानाम् ।’ ‘अज्ञेभ्यो ग्रन्थिनः श्रेष्ठा ग्रन्थिम्यो  
धारिणो वराः । धारिम्यो ज्ञानिनः श्रेष्ठा ज्ञानिम्यो  
व्यवसायिनः ॥’ ३७७

अञ्चलः पुं. [ अञ्चति प्रान्तभागं गच्छति । अञ्च्+  
अलच् ] वस्त्रप्रान्तभागः । ‘आंचल’ इति भाषा । ‘ऊरुः  
कुरङ्गकदृशश्चञ्चलचेलाञ्चलो भाति’—इति साहि-  
त्यदर्पणे । ५५०

अञ्जनः पुं. [ अनक्ति प्रतीच्यां दिशि रक्षकत्वेन प्रकाशते  
यः । अञ्ज्+कर्तरि ल्युट् ] परिचमदिग्गजः; नैर्ऋत्य-  
दिहस्ती । १०४

अञ्जनम् क्ली. [ अञ्जू व्यक्तिभक्षणकान्तिगतिपुं+  
भावे ल्युट्, कञ्जले तु गम्यमाने करणे ल्युट् ] अक्षणं;

गमनं; व्यक्तीकरणम् इति करणार्थकप्रत्ययान्ताञ्ज्-  
धात्वर्थः । कञ्जलम्; ‘दिवा न तु प्रयोवतच्चं नेत्रयो-  
स्तीक्ष्णमञ्जनम् । विरेकदुर्वला दृष्टिरादित्यं प्राप्य  
सोदति’—इति आगमः । ‘सौवीरं जाम्बलं तुत्यं मयूरश्री-  
करं तथा । दर्विका नीलमेघश्च अञ्जनानि भवन्ति पट् ।’  
सौवीराञ्जनं; रसाञ्जनम्; अक्ति; मसी; अग्निः;  
आलङ्कारिकभाषया व्यञ्जनाव्यवृत्तिः; ‘अनेकार्थस्य  
शब्दस्य वाचकत्वे नियन्त्रिते । संयोगार्थवाच्यार्थधी-  
कृद्द्वयापृतिरञ्जनम्—इति काव्यप्रकाशः । ५५०

अञ्जनः पुं. [ अञ्जयति रवेण शुभाशुभे सूचयति । अञ्ज्+  
णिच्+ल्युट् ] वृक्षविशेषः; ज्येष्ठी । ८१२

अञ्जनिका स्त्री. [ अञ्जनम् अञ्जनवद् वर्णो विद्यतेऽस्याः  
सा । अञ्जन+अर्शाद्यच्, स्त्रियां टाप्, स्वार्थे क ]  
ज्येष्ठीविशेषः; अञ्जनाधिका; हालिनी; हलाहलः;  
क्षुद्रमूषिका । २५७

अञ्जनी स्त्री. [ अनक्ति चन्दनकुङ्कुमादिभिः शोभते ।  
अञ्ज्+कर्तरि ल्युट्, स्त्रियां ङीप् ] कटुकावृक्षः; काला-  
ञ्जनीवृक्षः; लेप्यनारी; चन्दनादिलेपने योग्या । ८१२

अञ्जलिकारिका स्त्री. [ अञ्जलेः कारिका ] पुत्तलिका;  
लज्जालुलता । ४९३

अञ्जसा अव्य. [ अञ्जं गतिं विलम्बं वा स्यति नाशयति ।  
अञ्ज्+पो+कर्तरि क्विप् ] द्रुतं; शीघ्रम्; ‘वासमाप्तेः  
शरीरस्य यस्तु शुश्रूषते गुस्म् । स गच्छत्यञ्जसा विप्रो  
ब्रह्मणः सप्त शाश्वतम्’—इति मनुः । ६९०

अञ्जसा अव्य.—ययार्थं; प्रकृतं; सत्यं; शीघ्रम् । ८८२

अटनिः स्त्री. [ अटति तथागच्छति ज्या यत्र । अट्+  
अधिकरणे अवि ] घनुरग्रभागः । ‘घनुष की नोक’  
इति भाषा । ४६५

अटनी स्त्री. [ अटनि+स्त्रियां वा ङीप् ] अटनिः; घनु-  
ष्कोटिः; ‘ध्वनदगुरुगुणाटनीकृतकरालकोलाहलम्’—  
इति उत्तरचरिते । ४६५

अटरूपकः पुं. [ अटति मृत्युप्राप्ते पतत्यनेन । अट्+  
घञर्थे क, अटं कासाह्यरोगं रोपति नाशयति । रूप्+  
कर्तरि क । अटस्य रूपो वा, पष्ठीतत्पुरुषः । ‘वासकः  
कासनाशकः’—इति वैद्यके ] वासकवृक्षः; अटरूपः । १९८

अटविः स्त्री. [ अटति चार्द्धकथे गच्छति यत्र । अट्+  
अधिकरणे अवि, ‘पञ्चाशति वनं ब्रजेदिति’ ] वनम् । २१०

अटवी स्त्री. [ अटवि + स्त्रियां ङीष् ] वनम्; 'आनतश्चैव मार्गं च कान्ताराण्यटवीस्तथा'—इति रामायणे । २१०

अट्टः पुं. [ अट्टते एकं गृहमतिक्रम्य अन्योपरि गच्छति । अट्ट + अधिकरणे घञ् ] गृहविशेषः; क्षीमः; हर्म्यादि-गृहम्; प्राकाराग्रस्थितरणगृहं; प्राकारमण्डपस्योपरि-शाला; हर्म्यादिवातकुटिका; मण्डपोपरि हर्म्यपृष्ठं; प्राकारधारणार्थोऽम्पन्तरे क्षीमारुहोऽट्टः—इति भट्टः; अतिशयः; हट्टः । अट्टं क्ली. (अट्ट + अच्) शुष्कं; भक्तम्; अन्नम्; 'अट्टशूला जनपदाः'—इति भागवत-माहात्म्ये । २९४

अट्टालकः पुं. [ अट्टवत् प्रासादगृहवत् अलति भवति । अट्ट + अल् + अच् स्वार्थे कन् ] उपरितनगृहम्; अट्टालिकोपरिगृहं; क्षीमः; अट्टः । २९४

अट्टा स्त्री. [ अट्टनम्, अट्ट + भावे क्यप्, स्त्रियां टाप्, समस्या इतिवत् ] परिभ्रमणं; पर्यटनं; 'तीर्थत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः'—इति स्मृतिः । ७७६  
अणकः त्रि. [ अण् + अच् + कुट्टायां कन् ] कुतिसतः; अधमः । ३३७

अणिः पुं.—स्त्री. [ अणति शब्दायते । अण् + इन्, स्त्रियां वा ङीष् ] अक्षायकीलकः; रथचक्राग्रस्थितकीलः । ४४८

अणिः पुं.—स्त्री.—अश्रिः; सूच्याद्यग्रभागः; सीमा । तस्य रूपान्तरम् अणी, आणिः [ अणति शब्दायते, अण् + 'इज्जादिभ्यः' इति इज्, आजिः इतिवत् ] ७२७

अणु त्रि. [ अणति सूक्ष्मत्वं गच्छति । अण् + उन् ] क्षुद्रं; सूक्ष्मं; 'लवलेशकणाणवः'—इत्यमरः । 'न गृह्णीया-च्छुल्कमण्वपि'—इति मनुः । ६८८

अणुः पुं. [ अण् + उन् ] व्रीहिविशेषः; सूक्ष्मघन्यं; लेशः । ८१४

अण्डम् क्ली. [ अम् संयोगे, भावे क्विप्, अम् संयोगं ह्यन्ते गच्छन्त्यनेन । अम् + ङी + करणे ङ, पुंसोऽन्यव-भेदे मुञ्के पक्षिडिम्बे ] पक्ष्यादिप्रादुर्भाविककोपः; पेशी; कोपः; पेशिः; कोशः; पेशीकोपः; डिम्बः; 'तदण्डमभव-द्वैमं सहस्रांशुसमप्रभम्'—इति मनुः । 'नातिस्निग्धानि वृष्याणि स्वादुपाकरसानि च । वातघ्नान्यतिशुक्राणि गुरूपण्डानि पक्षिणाम्'—इति वैद्यके । ( ५२३ )  
मुष्कः; अण्डकः; अण्डकोपः । वीर्यं; मृगनाभिः । २४०  
अण्डजः पुं. [ अण्डे जातः । अण्ड + जन् + कर्तरि ङ, उपपदसमासः ] पक्षी; सर्पः; मत्स्यः; कृकलासः; अण्डजमात्रे त्रि. । 'अण्डजाः पक्षिणः सर्पा नक्रा मत्स्याश्च कच्छपाः । यानि चैवंप्रकाराणि स्थलजान्यौदकानि च'—इति मनुः । २३८

अतलस्पर्शः त्रि. [ नास्ति तलस्य अधोभागस्य स्पर्शो, यस्य सः । बहुव्रीहिः ] अगाधः; अतिगभीरः; अतल-स्पृक् [ श् ] ; आस्या; आस्थागम्; अस्ताघम् । ६४९  
अतः [ स् ] अव्य. [ एतस्मात्, एतद् + एतदोऽशिति पञ्चम्यर्थे तस्, एतद्दशब्दस्य अशादेशः ] कारणम्; अपदेशः; निदशः । ८७८

अतसी स्त्री. [ अत् + असच्, स्त्रियां ङीष् ] कृष्णपुष्प-क्षुद्रवृक्षविशेषः; चणका; उमा; क्षीमी; रुद्रपत्नी; सुवर्चला; पिच्छिला; देवी; मदगन्वा; मदोत्कटा; क्षुमा;—हैमवती; सुनीला; नीलपुष्पिका; 'अतसी नील-पुष्पी च पार्वती स्यादुमा क्षुमा । अतसी मचुरा तिक्ता स्निग्धा पाके कटुर्गुरुः ॥ उष्णा दृक्शुक्रवातघ्नी कफ-पित्तविनाशिनी'—इति भावप्रकाशः । शणवृक्षः । ५८२

अतिक्रमः पुं. [ अतिक्रान्तः क्रमः नियमः । अति + क्रम् + भावे घञ् वृद्धवभावः ] क्रमोलङ्घनम्; अतिपातः; उपात्ययः; पर्यायः; अभिक्रमः; रणे शत्रून् प्रति अभी-तयोवादेर्गमनम् । ७५४

अतिगर्वितः त्रि. [ अति अधिको गर्वः, कर्मधारयः, सोऽस्य जातः । अति गर्वं + इतच् ] महाहृङ्कृतः; अतिशय-गर्वयुक्तः; समुन्नद्धः; 'अतिदाने वल्लिर्वदः अतिगर्वेण रावणः । अतिरूपे हता सीता सर्वमत्यन्तवर्जितम्'—इति चाणक्यः । ३८३

अतिथिः त्रि. [ अतति सातत्येन गच्छति, न तिष्ठति । अत् + इथिन् ] अज्ञातपूर्वगृहागतव्यक्तिः; आगन्तुः; आगन्तुकः; आवेशिकः; गृहागतः; आवेशिकी; अतिथी; आगान्तुः; प्रधूर्णः; अम्भ्रागतः; प्राधूर्णिकः; प्राधुणिकः; प्राधुणः; 'यस्य न ज्ञायते नाम न च गोत्रं न च स्थितिः । अकस्माद् गृहमायाति सोऽतिथिः प्रोच्यते बुधैः ॥' 'अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते । स तस्मै दुष्कृतं दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति'—इति पुराणम् । कुशपुत्रः; कोपः । ३५८

अतिभीः स्त्री. [ अतिविभेत्यस्याः । अति + भी + अपादाने क्विप् ] वज्रज्वाला । ५७



**अतिमर्यादः** त्रि. [ मर्यादामतिक्रान्तः । प्रादिसमासः ]

अतिशयितः; अतिशये क्ली. । ७१९

**अतिमात्रम्** क्ली. [ मात्रामल्पमतिक्रान्तम्, प्रादिसमासः ]

अतिशयः; तद्युक्ते त्रि. । 'अतिमात्रलोहिततलौ बाहू घटोरक्षेत्रणात्'—इति शाकुन्तले । ८०३

**अतिमुक्तकः** पुं. [ मुच्+भावे क्त, अतिशयेन मुक्तं

बन्धशैथिल्यं यस्य सः । बहुश्रीहिः, कप् ] माघवीलता;

अतिमुक्तः; तिन्दुकवृक्षः; तिनिशवृक्षः; पुष्पवृक्षविशेषः;

पुण्ड्रकः; मल्लिनी; भ्रमरानन्दा; कामुककान्ता;

'कर्णिकारान् कुस्वकान् चम्पकान् अतिमुक्तकान्'—

इति रामायणे । २०८

**अतिर(रि)क्ता** स्त्री. [ अत्यन्तं रक्ता, तीव्रज्वलनाद्

इति भावः (अथवा रिक्ता, सर्वभस्मीकरणाद् इति

भावः) प्रादिसमासः ] अग्नेः सप्तजिह्वासु एका । ६८

**अतिवाहिकः** पुं. [ अतीत्य देहम् अन्यदेहे, बाहूः प्रापणम्,

अतिवाहोऽस्त्यस्थ, ठन् ] प्रेतः । ६२५

**अतिवेलम्** क्ली. [ वेलां मर्यादां कूलं वा अतिक्रान्तम्,

अव्ययीभावसमासः ] अतिशयिते त्रि., 'जलमतिवेलं

पयोराशेः'—इति नीतिमाला । ७१९, ८०३

**अतिसन्धानम्** क्ली. [ अत्यधिकं सन्धानम्, भावे ल्युट् ]

वञ्चनं; व्यलीकं; प्रतारणम् । ७४८

**अतिसारः** पुं. [ अतिशयेन मलं द्रवीकृत्य सरति निःसार-

यति । अति+सृ+व्याधिमतस्यबलेष्विति वक्तव्यमिति

कर्त्तरि घञ्, वृद्धिः दीर्घश्च ] बहुद्रवमलनिःसरणरोगः;

अन्नगन्धिः; उदरामयः; अतीसारः; 'संशम्यापां

धानुराग्निं प्रवृद्धः शकृन्मिश्रो वायुनाधः प्रणुन्नः ।

सरत्यतीवासारं तमाहुर्द्व्याधिं घोरं षड्विधं तं

वदन्ति ॥ आमपक्वकर्मं हित्वा नातिसारक्रिया यतः ।

अतोऽतिसारे सर्वस्मिन्नामं पक्वं च लक्षयेत्'—इति

वैद्यके । ६०६

**अतिसारकी** [ न् ] त्रि. [ अतिसार+स्वार्थे कन् । ततो

मत्वर्थे इन् ] सातिसारः; अतिसाररोगयुक्तः; उदराम-

यी । ६०६

**अतीतः** त्रि. [ अति+इण्+कर्त्तरि क्त ] गतः; भूतः;

अतिक्रान्तः; यथा—'न नस्यं न्यूनसप्ताब्दे नातीता-

शीतिवत्सरे'—इति वैद्यकपरिभाषा । मानप्रभेदः

(सङ्गीतशास्त्रमते); क्ली. भूतकालः । ८५९

**अतीसारः** पुं. [ उपसर्गस्य घञीति बाहुलकादीर्घः ]

अतिसाररोगः; 'गुर्वतिस्निग्धरूक्षोष्णद्रवस्यूलातिशीत-

लैः । विरुद्धाध्यशनाजीर्णै विषमैश्चापि भोजनैः ॥

स्नेहाद्यैरतियुक्तैश्च मिष्टप्रायुक्तैर्विषैर्भयैः । शोका-

दुष्टाम्बुमद्यातिपानैः सात्पदुर्तु पर्ययैः ॥ जलाभिरमणैर्वेग-

विघातैः कृमिदोषतः । नृणां भवत्यतीसारो लक्षणं तस्य

वक्ष्यते ॥' ६०६

**अत्ययः** पुं. [ अति+इण्+भावे अच् ] मृत्युः । (८२६)

कृच्छ्रम्; अतिक्रमः; 'जीवितात्ययमापन्नो योऽन्नमत्ति

यतस्ततः । आकाशमिव पङ्केन न स पापेन लिप्यते'—

इति मनुः । दण्डः; दोषः । ६२८

**अत्यर्थम्** क्ली. [ अर्थमतिक्रान्तम् । अत्यादीति समासः ]

अतिशयः; तद्विशिष्टे त्रि., 'लक्ष्मणो राममत्यर्थमुवाच

हितकाम्यया'—इति रामायणे । ७१९

**अत्याकारः** पुं. [ अति, आधिक्येन आकारः तिरस्कारः ।

आ+कृ+भावे घञ् ] तिरस्कारः; अतिशयितः;

(अति आकारो देहः, कर्मधारयः) वृहद्देहः; (अतिशयितः

आकारो यस्य सः । तद्विशिष्टः); न्यक्कारः । ७०४

**अत्याधानम्** क्ली. [ अत्यन्तमाधानम्, प्रादिसमासः ]

अतिक्रमः; कपटः; छलम् । ७५४

**अत्रिनेत्रप्रसूतः** पुं. [ अत्रिनेत्रात् प्रसूतः । पञ्चमी-

तत्पुरुषः ] चन्द्रः; अत्रिनेत्रभूः; अत्रिनेत्रजः; अत्रिदृग्जः;

अत्रिजातः; अत्रिपुत्रः । ४२

**अथ** अव्य. [ अर्थ्+ड, पृषोदरादित्वाद् रस्य लोपः ]

अनन्तरं; मङ्गलं; प्रश्नः; आरम्भः; कात्स्न्यम्;

अधिकारः; संशयः; विकल्पः; समुच्चयः; 'अथ तस्य

विवाहकौतुकं ललितं विभ्रत एव पार्थिवः'—इति

रघुवंशे । ८८६

**अथो** अव्य. [ अर्थ्+डो, पृषोदरादित्वाद् रलोपः ]

आनन्तर्यं; मङ्गलं; प्रश्नः; समुच्चयः; आरम्भः;

कात्स्न्यम्; अधिकारः; संशयः; विकल्पः; 'स्त्रियो

रत्नान्यथो विद्या धर्मः शौचं सुभाषितम् । विविधानि

च शिल्पानि समादेयानि सर्वतः'—इति मनुः । ८८६

**अदभ्रः** त्रि. [ दभ्र्+रक् अनिदित्वात्त्रलोपः, दभ्रमल्पं, न

दभ्रं, नञ्समासः ] प्रचुरः; बहुः; किरातार्जुनीये—

'अदभ्रदर्भाभिः शिष्यैः स स्थलीं जहासि निद्रामशिवैः

शिवास्तैः ॥' ७०१

अदितिः स्त्री. [ दितिभिन्ना अदितिः, नञो दात्रो ङित्तिरिति शाकटायनोक्तोऽदितिप्रत्ययान्तो वा, अदनाददितिः वा ] दक्षप्रजापतिकन्या; कश्यपपत्नी; देवमाता; भूमिः; अखण्डः । ११९

अद्वा अव्य. [ अतं सततं गमनं ज्ञानं वा दधाति । अत् + धा + क्विप् ] यथार्थं; तत्त्वम्; अञ्जसा; 'अद्वा श्रियं पालितसङ्गराय प्रत्यर्पयिष्यत्यनघां स साधुः'— इति रघुवंशे । ८८५

अद्भुतः पुं. [ अततीति, अत् + क्विप्, आकस्मिकार्य-मव्ययं, तथा भाति, भा + डुत् ] शृङ्गारादिनवरत्नानां मध्ये रसविशेषः । ९२

अद्भुतम् क्ली.—अपूर्वं; विस्मयः; आश्चर्यं; चित्रं, तद्विशिष्टे वाच्यलिङ्गं त्रि., आश्चर्यम्; इङ्गम् । ७४५

अधरः त्रि. [ अद् भक्षणो, सृषस्यदः कमरच् ] भक्षकः; भक्षणपरः । ३५०

अद्रिः पुं. [ अदिशादीति क्त्वि ] पर्वतः; वृक्षः ( १७७ ) ; सूर्यः ( ८२० ) ; परिमाणविशेषः; शाखी; मानभेदः; सप्ताङ्कः; पर्वतमूषिका । १६५

अद्र्यवादी [ न् ] पुं. [ अद्र्यं सर्वमेव चित्स्वरूपं नात्मनोऽन्यत् किञ्चनेति वदति । अद्र्य + वद् + णिनि ] वैदान्तिकः; बुद्धः; अद्र्यः; तथागतः; सुगतः । ८५

अद्रिजः पुं. [ न द्विजः, नञ्समासः । नञोऽत्र षड्येषु नित्यी रसान्गित्याग्रहणम् अप्राशास्त्वयमर्थः ] त्यक्तान्निः; वीरहा । ( वह निन्दित ब्राह्मण जिसने नित्यहोम की अग्नि को त्याग दिया हो ) । ४०४

अधमः त्रि. [ अच् पालने + अध, वस्य धादेशः ] न्यूनः; निन्दितः; अपकृष्टः; निकृष्टः; प्रतिकृष्टः; अर्वा; रेफः; याप्यः; अवमः, कुरित्तः; अवधः; कुपूयः; खेटः; गर्ह्यः; अणकः; रेपः; अरमः; आणकः; अनकः; 'याञ्चरा मोधा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा'— इति मेघदूते । उपपत्तिभेदे पुं. । ३३७

अधरः त्रि. [ न धरः, नञ्समासः ] हीनवादी । ३६४

अधरः पुं. [ न धियनेऽसौ । धृ + अच्, ततो नञ्समासः ] मुक्तावयवविशेषः; ओष्ठः; रदनच्छदः; दशनवासः । पुरुषस्य रक्ताधरः प्रसस्तः, यथा—'पाणिपादतली रक्ती नेत्रान्तरनखानि च । तालुकोऽधरजिह्वा च सप्त रक्तं प्रदास्यते' ॥ स्त्रियास्तु—'पाटलावर्तुलः स्निग्धो रेखा-

भूषितमध्यभूः । सीमन्तिनीनामधरो राज्ञां चैव प्रियो शवेत् ॥ इयामः स्थूलोऽधरोष्ठः स्याद् वैधव्यकालहृप्रदः । मसृणो मत्तकाशिन्याश्चोत्तरोष्ठः सुभोगदः'—इति सामुद्रकम् । 'पिवसि रतिसर्वस्वमधरम्'—इति शाकुन्तले । ( ८७८ ) अधरतः; अधस्तात्; , अधोभागः; अधः; नीचः; तलः; हीनः; अपकृष्टः ( पुं., क्ली. न धियते, कामुकस्य धैर्यं न तिष्ठति यत्र ) स्मरागारं; रतिगृहं; योनिः । ५२४

अधरतः [ स् ] अव्य. [ अधर + तसिल् । प्रथमापञ्चमी-सप्तम्यर्थवृत्तौ ] अधस्तात्; अधोभागः । ८७८

अधरस्तात् अव्य. [ अस्ताति ] अधरतः । ८७८

अधः [ स् ] अव्य. [ अधरस्य अधादेशः ततः असिच् ] अधोभागः; 'लोकानुपूर्व्युपयस्तिऽधोऽधोऽध्यधि च माधवः'—इति बोपदेवः । तलं; नीचः; पातालं; योनिः । ८७८

अधःक्षिप्तः त्रि. [ अधः, अधोभागे क्षिप्तः पतितः ] अधस्त्यक्तवस्तु । ७६८

अधस्तात् अव्य. [ अधर + अस्ताति ] अधोभागः; 'तस्या-धस्ताद् वयमपि रतास्तेषु पर्णोत्तजेषु—इति उत्तरचरितम् । 'तथा निमज्जतोऽधस्तादज्ञौ दातृप्रतीच्छकौ'—इति मनुः । पश्चाद्भागः ( ८७८ ) ; रतिगृहं; भगम् । १०२

अधिकम् त्रि. [ अध्यारूढ एव । अधि + स्वार्थे कन् ] अतिरिक्तः; अनेकः; 'पुमान् पुंसोऽधिके शुक्रे स्त्री भवत्यधिके स्त्रियाः'—इति मनुः । क्ली., काव्या-लङ्कारभेदः, तस्य लक्षणम्—'अधिकं पृथुलाधारा-दाधेयाधिक्यवर्णनम् । उदाहरणं यथा—'ब्रह्माण्डानि जले यत्र तत्र मान्ति न ते गुणाः'—इति कुवलयानन्दे अप्यदीक्षितः । ७८४

अधिकृतः पुं. [ अधि + कृ + क्त ] अध्वक्षः; आयव्यया-वेक्षकः; 'आचार इत्यधिकृतेन मया गृहीता या वेत्रयट्टि-खरोधगृहेषु राज्ञः'—इति शाकुन्तले । ( ४२९ ) त्रि. कृताधिकारद्रव्ये । ४२७

अधित्यका स्त्री. [ अधिरूढा पर्वतोपरिभागम् । अधि + त्यक्त्, स्त्रियां टाप् ] पर्वतोपरि भूमिः; 'उपत्य-कात्रेरानघा भूमिरुर्ध्वमधित्यका'—इत्यमरः । 'अधित्य-कायामिव धानुमध्यं लोभ्रद्रमं नान्मत्तः प्रफुल्लम्'— इति न्युक्ते ( २-२९ ) । २११

**अधिपः** त्रि. [ अधिपाति रक्षति । अधि + पा + क ]  
 अधिपतिः; स्वामी; राजा; यथा रघुवंशे—'अथ  
 प्रजानामधिपः प्रभाते ।' ३४३  
**अधिपतिः** पुं. [ अधिपाति रक्षति । अधि + पा + उति ]  
 प्रभुः; स्वामी; 'वचो निशम्याधिपतिदिवौकसाम्—  
 इति रघुवंशे । ३४३  
**अधिभूः** पुं. [ अधि + भू + कर्तरि विवप् ] स्वामी;  
 प्रभुः । ३४३  
**अधिरोहिणी** स्त्री. [ अधिरोहः आरोहणं तदेव साधनत्वेन  
 विद्यतेऽस्य । अधि + रोह् + इन्, स्त्रिया + डीप् ]  
 वंशकाप्टादिनिर्मितारोहणमार्गः; निःश्रेणि, निःश्रेणी  
 [अधिरोहणी इत्यपि पाठः + अधिरुह्यते अनया । अधिरुह्  
 + करणे ल्युट्, स्त्रियां डीप् ] 'सौदी' इति भाषा । ३०१  
**अधिध्रयणी** स्त्री. [ अधिध्रियते पच्यतेऽत्र । अधि +  
 ध्रि + अधिकरणे ल्युट्, स्त्रियां डीप् ] चुल्ली । 'चूल्हा'  
 इति भाषा । ३१३  
**अधिष्ठानम्** क्ली. [ अधिष्ठीयतेऽत्र । अधि + स्था +  
 अधिकरणे ल्युट् ] नगरं; चक्रं; प्रभावः; अध्यासनम्;  
 अवस्थानम् । 'यद्भूमात् सम्परित्यज्य स्वमधिष्ठान-  
 मृद्धिमत् । कैलासं पर्वतश्रेष्ठमध्यास्ते नरवाहनः—  
 इति रामायणे । २८५  
**अधीरः** त्रि. [ न धीरः स्थिरः । नञ्समासः ] चञ्चलः;  
 कातरः; यथा नागानन्दे—'निर्व्याजं विधुरेष्वधीर इति मां  
 येनाभिषत्ते भवान् ।' ६९५  
**अधीशः** त्रि. [ अधिक ईशः । कर्मधारयः ] अधिपतिः;  
 प्रभुः; स्वामी; 'चन्द्रे मण्डलसंस्थे विगृह्यते राहुणा  
 दिनाधीशः—इति पञ्चतन्त्रे । ३४३  
**अधुना** अव्य. [ अस्मिन्काले । इदंशब्दस्य रूपं निपातनात् ]  
 अस्मिन् काले; इदानीं; सम्प्रति; साम्प्रतम् । ७८७  
**अधृष्टः** त्रि. [ धृष् + क्त, न धृष्टः, नञ्समासः ] सलज्जः;  
 अप्रगल्भः; शारदः; अप्रतिभः; शालीनः । ३७५  
**अधोक्षजः** पुं. [ अधः ज्ञातृत्वाभावात् हीनम् अक्षजं प्रत्यक्ष-  
 ज्ञानं यस्मै सः । अक्षात् इन्द्रियात् जातम् । अक्ष + जन् +  
 ड ] विष्णुः; 'अधो न क्षीयते जातु यस्मात्तस्मा-  
 दधोक्षजः—इति महाभारते । २३  
**अधोभवनम्** क्ली. [ अधः नीचदेशस्थं भुवनं लोकः,  
 कर्मधारयः ] पातालम् । ६२३

**अधोमुखः** पुं. [ अधो मुखं यस्य सः ] अधोवदनः; पाताल-  
 मुखः; अवाङ्मुखः; अवाचीनः; अधोमुखनक्षत्रगणः;  
 'अश्लेषवह्निमपिष्यविशाखयुक्तं पूर्वत्रयं शतभिषा  
 च नवाप्युड्नि । एतान्यधोमुखगणानि शुभानि नित्यं  
 विद्यार्थभूमिखननेषु च शोभितानि—इति ज्योतिःसार-  
 सङ्ग्रहः । ३८५, ४५८  
**अध्यक्षः** त्रि. [ अक्षमिन्द्रियमधिगतः, प्रादिसमासः ] अधि-  
 कृतः; आयव्ययादिनिरीक्षकः; प्रत्यक्षः; इन्द्रियजन्य-  
 ज्ञानं; कुमारसम्भवे—'यदध्यक्षेण जगतां वयमारो-  
 पितास्त्वया ।' पुं. [ अध्यष्णोति समन्ताद् व्याप्नोति ।  
 अधि + अक्ष् + अच् ] छत्रधारणादिव्यवहारेष्वधिकृतः;  
 व्यापकः; क्षीरिकावृक्षः । ४२७  
**अध्ययनम्** क्ली. [ अधि + इङ् + भावे ल्युट् ] पठनं; ब्राह्मणस्य  
 पट्टकर्मान्तर्गतमिदम्, गुरुमुखादानुपूर्वीश्रवणम् । ३९७  
**अध्यात्मम्** क्ली. [ आत्मनः सम्बद्धम्, आत्मनि अधिकृते  
 वा ] ब्रह्म; 'अक्षरं परमं ब्रह्म स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते—  
 इति भगवद्गीतायाम् (८-३) । ८६८  
**अध्यापकः** त्रि. [ अधि + इङ् + णिच् + ष्वल् ] अध्यापन-  
 कर्ता; पाठगुरुः; अध्यापयिता; उपाध्यायः । ४००  
**अध्येषणा** स्त्री. [ अधि + इष् + णिच्, भावे युच्,  
 स्त्रियां टाप् ] यात्रा; आराध्यस्यादरपूर्वकं कर्मणि  
 नियुक्तकरणं; गुणदिः सत्कारपूर्वकं नवचिदर्थं नियोजनं  
 सनिः; सनी । ३६०  
**अध्वगः** पुं. [ अध्वना पथा गच्छति । अध्वन् + गम् +  
 ड, उपपदसमासः ] पथिकः; उष्ट्रः; सूर्यः; खेसरः ।  
 'खच्चर' इति भाषा । ३५७  
**अध्वा [ न् ]** पुं. [ अत्ति गमनेन बलं नाशयति । अद् +  
 बाहुलकात् क्वनिप्, पूषोदरादित्वाङ्कारस्य घः ]  
 पत्न्याः; कालः; संस्थानम्; अवस्कन्दः; शास्त्रं;  
 स्कन्धः; अध्वगमनजन्यगुणः; मेदःकफस्थूलतासौकुमा-  
 र्यनाशित्वम् । २६०  
**अध्वनीनः** त्रि. [ अध्वनि साधुः । अध्वन् + ख तस्य ईन् ]  
 पथिकः; पान्यः; अध्वगः । ३५७  
**अध्वन्यः** त्रि. [ अध्वनि साधुः । अध्वन् + यत् ] पथिकः;  
 'अध्वन्येन विमुक्तकण्ठमखिलां रात्रिं तथा क्रन्दिताम्'  
 —इति अमरशतकम् । पारियानिकः (४४५); 'वर्धी-  
 गाडी' इति भाषा । ३५७

**अध्वरः** पुं. [ अध्वानं सन्मार्गं राति ददति । अध्वन् + रा + क । उपपदसमासः ] यज्ञः; 'तमध्वरे विश्वजिति क्तितीशम्'—इति रघुवंशे । वसुभेदः; सावधानः । ४१४

**अनङ्गः** पुं. [ नास्ति अङ्गं कायो यस्य सः ] कामदेवः; क्ली. (नास्ति अङ्गमवयवो यस्य तत्) आकाशः; मनः । अङ्गरहिते नाच्यलिङ्गः । 'अनङ्गो मदनेऽनङ्गमाकाशमनसोरपि'—इति मेदिनी । ३३

**अनड्वान्** । [ डुह् ] पुं. [ प्रथमैकवचनम् । अनः शकटं वहति । अनस् + वह् + क्विप् + डादेशः ] वृषः; गौः; भद्रः; बलीवर्दः; दम्प्यः; दान्तः; स्थिरः; बली; उक्षा; ककुधान्; ऋषभः; वृषभः; धुर्यः; धुरीयः; धौरेयः; शाङ्करः; शिववाहनः; रोहिणीरमणः; बोढा; गोनाथः; सौरभेयकः । 'अजमेपावनड्वाहं खरं हत्वैकहायनम्'—इति मनुः । २६३

**अनडुही** स्त्री. [ अनडुह् + गौरादित्वाद् डीप् ] अनड्वाही । 'गाय' इति भाषा । २६८

**अनड्वाही** स्त्री. [ अनडुह् + गौरादित्वाद् डीप्, आमागमश्च, आमभावपक्षेकेवलं डीप् ] अनडुही; स्त्रीगवी । 'गाय' इति भाषा । २६८

**अनन्तः** पुं. [ नास्ति अन्तः विनाशो यस्य सः ] शेषनागः; बलदेवः; बलरामः; विष्णुः; अनन्तजिन्नाम जिनः; वासुकिः; सिन्दुवारवृक्षः । क्ली. (नास्ति अन्तः सीमा यस्य तत्) आकाशम्; अभ्रकम् । त्रि. (नास्ति अन्तः सीमा विनाशो वा यस्य सः) अन्तरहितः; अनवधिः; अशेषः; असीमः; यथा कुमारसम्भवे—'अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य' । २८

**अनन्ता** स्त्री. [ नास्ति अन्तो यस्याः सा ] पृथिवी; पार्वती; अग्निशिखावृक्षः; श्यामलता; दूर्वा; पिप्पली; दुरालभा; हरीतकी; आमलकी; गुडूची; यवासः; श्वेतदूर्वा; नीलदूर्वा; अग्निमन्यवृक्षः; अनन्तमूलः; गोपवल्ली; कराला; सुगन्वा; भद्रवल्लिका; भद्रा; नागजिह्वा; गोपी; श्यामा; शारिवा; उत्पलशारिवा । १५६

**अनन्तरम्** त्रि. [ नास्ति अन्तरमवकाशो यस्य तत् ] अनवकाशम्; अन्तररहितम्; अव्यवहितं; संसक्तम्; अपटान्तरम् । क्ली. पश्चादर्थे, पश्चात्; ततः परं; यथा रघुवंशे—'पितुरनन्तरमुत्तरकोशलान्' । ८८६

**अनपठ** क्ली. [ न अपठ्, अप + स्या + कु ] अनुकूलम्;

अवामम् । ७५६

**अनयः** पुं. [ अयः शुभावहो विधिस्तद्धिन्नः । नवसमासः ] विपद्; 'अनयो नयसम्पन्ने यत्र ते विकृता मतिः'—इति रामायणे । दैवम्; अशुभं; व्यसनम् । १२६

**अनर्गलम्** त्रि. [ नास्ति अर्गलं प्रतिबन्धो यस्य तत् ] निरर्गलं; प्रतिबन्धकरहितम्; अवाधम्; उच्छृङ्खलम्; उदाम; अनियन्त्रितं; निरङ्कुशं; यथारघुवंशे (३-३९)—'ततः परं तेन मेखाय यज्वना तुरङ्गमुत्सृष्टमनर्गलं पुनः' । ७५१

**अनर्थकम्** क्ली. [ नास्ति अर्थः यस्य तत् । समासान्तः कप्रत्ययः ] निरर्थकम्; अर्थशून्यवाक्यम्; अवद्धम्; अवध्यम् । १५०

**अनलः** पुं. [ नास्ति अलः बहुदाह्यवस्तुदहनेऽपि तृप्तिर्यस्य सः । कृत्तिकानक्षत्रे, वत्सरे, भगवति वासुदेवे ] अग्निः; आग्नेयदिवस्वामी; वसुभेदः; चित्रकः; रक्तचित्रकः; भल्लातकः; पित्तम् । ६२, १००

**अनवधानम्** क्ली. [ न अवधानं मनोयोगः । नवसमासः ] चित्तस्य विक्षेपः; अमनोयोगः; अप्रणिधानं; तद्विशिष्टे त्रि. । ७५४

**अनवधानता** स्त्री. [ नास्ति अवधानं मनोयोगो यस्य सः, तस्य भावः । ततस्तल्, स्त्रियां टाप् ] मनोयोगशून्यता; चित्तस्यानन्यविषयाभावत्वं; कार्ये अनवहितत्वं; प्रमादः; 'कर्तव्याकरणं यत्र समर्थस्य क्वचिद्भवेत् । उच्यते द्वितयं तत्र प्रमादोऽनवधानता'—इति शब्दरत्नावली । ७५४

**अनवरतम्** क्ली. [ अव + रम् + भावे क्त, नास्ति अवरतं विरतिर्यत्र तत् ] निरन्तरं; सततम्; अनारतम्; अश्रान्तं; सन्ततम्, अविरतम्, अनिशं; नित्यम्; अजस्रं; प्रसक्तम्, आसक्तम्; अनद्धं, तद्विशिष्टे वाच्यलिङ्गम् । 'अनवरतघनुज्यस्फालनक्रूरकर्मा'—इति शाकुन्तले । ६९८

**अनवस्करम्** त्रि. [ अव अधोवर्त्मना कीर्यते क्षिप्यते । अव + कृ + अप् 'वचस्केऽवस्करः' इति सुडागमः, नास्ति अवस्करो मलं यस्य तत् ] निर्मलं; शोधितम् । ७७०

**अनशनम्** क्ली. [ अश्, भावे ल्युट्, न अशनं भोजनं, नवसमासः ] भोजनाभावः; उपवासः । तद्वति त्रि. । प्रायोपवेशनम्—'तदहमनशनं कृत्वा प्रातः प्राणानुत्सृजामि'—इति पञ्चतन्त्रे । ७६०

अनश्वरम् त्रि. [ नश् + कर्तरि ष्वच्, न नश्वर, नञ्-समासः ] सनातनं; नित्यं; ध्रुवं; शाश्वतम्; 'मत्वा विश्वमनश्वरं निविशते संसारकारागृहे'—इति वैराग्य-शतके । १२५

अनः [ स् ] वञ्जी. [ अनिति जीवत्यनेन, जीविकोपायत्वात् । अन् + असुन् ] शकटं; यया मनुः—'होता वापि हरेद-श्चमुद्गाता चाप्यनः क्रमे ।' अन्नं; जननी; जन्म; जन्मी । ४४४

अनादरः पुं. [ आ + दृ + भावे अप्, न आदरः, नञ्-समासः ] निरादरः; परिभवः; परिभावः; तिरस्क्रिया; रीढा; अवमानना; अवज्ञा; अवहेलम्; असूक्षणम्, असुक्षणम्; असुक्षणम्; असूक्षणम् । 'गुणेषु रागो व्यसनेष्वनादरः'—इति पञ्चतन्त्रम् । ७०४

अनाविवाता स्त्री. [ अनादेः अज्ञातकालस्य वार्ता ] ऐतिह्यं; परम्परागतकथा । १४७

अनादृतः त्रि. [ आ + दृ + कर्मणि क्त, न आदृतः, नञ्-समासः ] कृतनिरादरः; अवज्ञातः; अवमानितः । ७१४

अनामा स्त्री. [ नास्ति ब्रह्मशिरश्छेदनसाधनतया प्रशस्तं नाम यस्याः सा । अनया अङ्गुल्या शिवेन ब्रह्मशिर-दिच्छन्नम् । डाप् ] अनामिकाङ्गुली । ५३८

अनायासायकम् क्ली. [ अनायासः पेपणकुट्टनादिरहितः अर्थः प्रयोजनं यस्य ] फाण्टम्; अनायासकृतम् । ७७४

अनायासकृतम् त्रि. [ अनायासेन अक्लेशेन कृतं, तृतीया-त्त्पुरुषः ] अनायासेन यत् क्रियते स्म तत्; विना यत्नेन कृतं; फाण्टम् । ७७४

अनारतम् क्ली. [ आ + रत् + क्त, ततो नञ्समासः ] अनवरतं; सततं; नित्यम्; 'अनारतं तेन पदेषु लम्बिता विभज्य सम्यग् विनियोगसत्क्रियाः'—इति किरातार्जुनीये । ६९८

अनार्तः पुं. [ नञ्समासः ] कृत्यः; वार्तः; निरामयः; रोगमुक्तः । ३८०

अनाविलः त्रि. [ न आविलः । नञ्समासः ] आविलशून्यः; निर्मलः; स्वच्छः; 'पद्मगन्धि शिवं चारि सुखं शीतम-नाविलम्'—इति रामायणे । स्वास्थ्यकरः; 'जाङ्गलं सस्यसम्पन्नमार्यप्रायमनाविलम्'—इति मनुः । १३२

अनिबद्धम् क्ली. [ न निबद्धम्, योग्यता काङ्क्षादिरहित-मित्यर्थः ] उच्चावचम्; असम्बद्धवचनम् । १३९

अनिमिषः पुं.—स्त्री. [ नास्ति निमिषः निमेषः चक्षुस्पन्दनं यस्य सः ] देवता; मत्स्यः (६५७); निमेषरहितः; स्थिरदृष्टिः; सावधानः; अप्रमत्तः; 'सुरेषु नापश्य-दवैक्षताक्ष्णो नृपे निमेषं निजसम्मुखे सति'—इति नैषधे । ४

अनिरुद्धः पुं. [ न निरुध्यतेऽसौ । नि + रुध + कर्मणि क्त, ततो नञ्समासः ] कामदेवपुत्रः; उषापतिः; ब्रह्मसूः; विश्वकेतुः; भगवतश्चतुर्व्यूहान्तर्गतव्यूहः; 'तमसो ब्रह्म सम्भूतं तमोमूलामृतात्मकम् । तद्विश्वभावसंज्ञान्तं पीरुषीं तनुमाश्रितम् ॥ सोऽनिरुद्ध इति प्रोक्तस्तत् प्रधानं प्रचक्षते'—इति महाभारते । त्रि. रोषशून्यः; अप्रतिबद्धः; चरः । ३४

अनिलः पुं. [ अनिति जीवत्यनेन । अन् + इलच् ] वायुः; वसुविशेषः; शरीररूपप्राणादिवायुः; वातरोगः; स्वाति-नक्षत्रम् । १५

अनिशम् क्ली. [ निशा रात्रिः, उपचाराद् व्यापारराहित्यम्, नास्ति निशा यस्मिन् तत् । क्रियाविशेषणत्वे अस्य क्लीवत्वं, द्रव्यविशेषणत्वे तु त्रिलिङ्गत्वम् ] अनवरतं; सततम्; 'निजमैक्षि मन्दमनिशं निशितैः कशितं शरीर-मशरीरशरैः'—इति माघे । ६९८

अनिष्टः त्रि. [ इष् + कर्मणि क्त । न इष्टः, नञ्समासः ] अनभिलषितः; अवाञ्छितः । 'इष्टनाशादनिष्टाप्तेः करुणास्यो रसो भवेत्'—इति साहित्यदर्पणे । १२६

अनीकः पुं.—क्ली. [ नास्ति नीः स्वर्गप्रापको यस्मात्, कन्, अर्द्धच्चादित्वात् पुंस्त्वं क्लीवत्वं च ] युद्धं; सैन्यम् (४५७) । ४५४

अनुकूलः त्रि. [ अनुकूलं करोति । अनुकूल + करोत्यर्थे णिच्, पचाद्यच् ] अप्रतिकूलः; दक्षिणः; सहायः; 'मयानुकूलेन नभस्वतेरितम्'—इति भागवते । [ पुं. अनुकूलयति केवलं स्वपत्नीं सुखयति । अनुकूल + करो-त्यर्थे + णिच् + अच् ] पतिभेदः; 'एकस्यामेव न्यायिका यामासक्तोऽनुकूलनायकः'—इति साहित्यदर्पणे । ७५६

अनुक्रमः पुं. [ क्रममनुगतः, प्रादिसमासः ] यथाक्रमम्; आनुपूर्वी; परिपाटी; आवृत्; पर्यायः; प्रतिसंक्रमणम्; अनुक्रमणिका; यथा—'द्वादशे तु पुराणोक्तसर्वाधिक्रमः कृतः । प्रथमस्कन्वमारम्य प्राधान्येन समासतः'—इति भागवते १२ स्कन्वे १२ अध्यायटीकायां श्रोधरः ।

'कनिष्ठा देशिन्यङ्गुष्ठमूलान्यग्रं करस्य च । प्रजापति-  
पितृब्रह्मदेवतीर्यान्यनुक्रमात्'—इति याज्ञवल्क्यः । ७३९  
अनुक्रोशः पुं. [ अनु + क्रुश् + घञ् ] करुणा; दया;  
'सोहादाद्वा विधुर इति वा मय्यनुक्रोशवृद्ध्या'—इति  
मेघदूते । ७२४

अनुगः त्रि. [ अनुगच्छति, अनु + गम् + ड ] पश्चाद्गामी;  
अनुचरः; अनुसरः; अन्वक्; अन्वक्षः; अनुपदः;  
सेवकः; दासः; 'येषां शास्त्रानुगा वृद्धिर्न ते मुह्यन्ति  
भारत'—इति महाभारते । पतिः (४९७) । ४२८

अनुचरः त्रि. [ अनु पश्चात् साहित्येन वा चरति गच्छति ।  
अनु + चर् + ट ] सहचरः; सहायः; दास; 'अनु-  
चरेण घनाविपतेरथो'—इति भारविः । 'पतुकं वाञ्छतो  
राज्यं पार्थस्यानुचरा व्यवुः'—इति रामायणे । ४२८

अनुच्छिष्टः त्रि. [ उत् + शिप् + क्त, नञ्समासः ]  
उच्छिष्टमिन्नः; पवित्रः; 'लक्ष्म्या निमन्त्रयाञ्चक्रे  
तमनुच्छिष्टसम्पदा'—इति रघुवंशे । ४०२

अनुजः पुं. [ अनु पश्चात् जातः । अनु + जन् + ड ]  
कनिष्ठभ्राता; जघन्यजः; कनिष्ठः; यवीयान्;  
अवरजः; कनीयान्; यविष्ठः; जघन्यः; क्ली. प्रपोण्ड-  
रीकनाम सुगन्धद्रव्यम् । ५०६

अनुजीवी [ न् ] त्रि. [ अनुजीवति, अनु + जीव् + णिनि ]  
दासः; सेवकः; अर्थी; अनुचरः; 'अनुजीविना परा-  
धिकारचर्चा न कर्तव्या'—इति हितोपदेशः । ४२८

अनुतर्पः पुं. [ अनु + तृप् + भावे करणे वा घञ् ]  
मद्यपानपात्रं; तृष्णा; अभिलाषः । ३२७

अनुतापः पुं. [ अनु + तप् + भावे घञ् ] पश्चात्तापः;  
'पछत्ताना' इति भाषा । 'चिरसम्प्रेहशयनादुत्थितस्य य  
आत्मनः । हाहाकारोऽनुतापः स्यात्स्वकर्मस्मृतिसम्भवः ॥'  
'स्वापननानुतापेन तपसाध्ययनेन च । पापकृन्मुच्यते  
पापात्तया दानेन चापदि'—इति मनुः । ७१६

अनुत्तमः त्रि. [ नास्ति उत्तमः उत्कृष्टो यस्मात् सः ] श्रेष्ठः;  
प्रधानम्; 'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुत्तमिष्ठन् हि मानवः ।  
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्'—इति  
मनुः (२१९) । (नञ्समासे तु अवमः) । ६८९

अनुत्तरम् त्रि. [ नास्ति उत्तरः प्रधानं यस्मात्, न उत्तरम्  
इति नञ्समासे वा ] प्रत्युत्तरहीनः; मुख्यः; श्रेष्ठः;  
प्रतिपक्षविवाजितः; स्थिरम्; अचः; दक्षिणदिक् ।

प्रत्युत्तराभावे क्ली., यथा—'भवत्यवज्ञा च भवत्य-  
नुत्तरात्' ३७७

अनुनयः पुं. [ अनु + नी + भावे अच् ] विनयः; प्रणिपातः;  
प्रणतिः; 'कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षेर्विथरणनाच्चान्य-  
पयस्वितीनाम्'—इति रघुवंशे । सदाचारः; मोघो-  
पनयः; 'एवं रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणानुनयं तथा'—इति  
रामायणे । ७४९

अनुपदम् अव्य. [ पदस्य पश्चात् इति, अव्ययीभावे ]  
अन्वक्; अनन्तरम्; अव्यवहितोत्तरकालम्; 'अमोवाः  
प्रतिगृह्णन्तावर्ध्यानुपदमाशिषः ।' 'आशिषामनुपदं  
समस्पृशत् दर्मपाटिततलेन पाणिना ।'—इति  
रघुवंशे । ७३१

अनुपद्वी [ न् ] त्रि. [ अनुपदमन्वेष्टा, अनुपद + इन् ]  
अन्वेष्टा; अन्वेषणकर्ता । ३८०

अनुपदीना स्त्री. [ अनुपद + अनुपदं वद्धा इत्यर्थे स्व,  
तस्य ईन्, स्त्रियां टाप् ] पदायत्तोपान्तः; 'जूता' 'वूट'  
इत्यादि भाषा । ३११

अनुपात्ययः पुं. [ उप + अति + इण् गतौ, एरच् भावे ।  
ततो नञ्समासः ] क्रमानुसरणम्; आज्ञापालनम्; अपे-  
क्षणम् । ७३०

अनुमतिः स्त्री. [ कलाहीनत्वेऽपि पूर्णिमाविहितयागादि-  
करणाय अनुज्ञायतेऽस्याम् । अनु + मन् + अधिकरणे  
भावे वा कित्तन् ] न्यूनन्दुकला पूर्णिमा, चतुर्दशीयुक्तता  
पूर्णिमा; 'कुहूँ चैवानुमत्यं च प्रजापतय एव च ।  
सह द्यावापृथिव्योश्च तथा स्विष्टकृतेऽन्ततः'—इति  
मनुः (३१८६) । ११२

अनुमानोक्तिः स्त्री. [ अनुमानेन उक्तिः कथनं, तत्पुरुषः ]  
तर्कः; ऊहः । १०

अनुयोगः पुं. [ अनु + युज् + घञ् ] प्रयत्नः । १५४

अनुलाप पुं. [ अनु वारं वारं लपनम् । अनु + लप् + भावे  
घञ् ] पुनः; पुनः कथनं; पुनरुक्तिः; मुहुर्भाषा । १५०  
अनुलेपनम् क्ली. [ अनु + लिप् + भावे स्युद् ] मस्तकादौ  
गन्धद्रव्यादिलेपनं तद् द्रव्यं च । 'निरस्तमात्याभरणानु-  
लेपनाः'—इति ऋतुसंहारे । ५४२

अनुवृत्तिः स्त्री. [ अनु + वृत् + क्तिन् ] अनुवर्तनम्;  
अनुरोधः; पूर्ववृत्तस्थितपदस्य परमूर्ध्वपस्थितिः; अधि-  
कारः; अनुसरणम्; अनुमोदनम्; अनुरञ्जनम्;

'अमङ्गलाम्पासरति विचिन्त्य तं तवानुवृत्ति न च कर्तुमुत्सहे'—इति कुमारसम्भवे । अनुकरणम्; 'यासां सत्यपि सद्गुणानुसरणे दोषानुवृत्तिः परा'—इति साहित्यदर्पणे । ८१९

अनुशयः पुं. [ अनु+शी+भावे अच्, शयं हस्तमनुगतः, प्रादिसमासः ] अनुतापः; 'अनुशयादनुरोदिगि चोत्सुकः।' 'अनुशयदुःखायेदं हतहृदयं सम्प्रति विबुद्धम्'—इति शाकुन्तले । द्वेषः (८१५); दीर्घद्वेषः; पूर्ववैरिता; अनुबन्धः; श्लेषः; विप्रतिपत्तिः (पश्चात्तापादिकारणात्); 'ऋषिविक्रयानुशयो विवादः स्वामिपालयोः'—इति मनुः । ७१६

अनुषङ्गः पुं. [ अनु+सञ्ज्+भावे घञ् ] कार्ण्यः; दया; एकत्रान्वितपदस्यान्यत्रान्वयः; तर्कशास्त्रे उपनयस्थायामितिशब्दोपलक्षितस्य निगमनेऽनुषङ्गः; यथा—'वह्निव्याप्यधूमवाश्चायं, तस्माद्वह्निमान् । प्रसङ्गः; अन्योद्देशेन प्रवृत्तावन्यस्यापि सिद्धिः; यथा—'नित्यक्रियां तथा चान्ये ह्यनुषङ्गफलां श्रुतिम्'—इति स्मृतिः । ८२३

अनूकम् क्ली. [ अनु+उच्, घञर्थे क, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम् ] वंशः; कुलं; शीलं; स्वभावः; पुं. गतजन्म; पूर्वजन्म; 'अनूकं तु कुले शीले पुंसि स्याद् गतजन्मनि'—इति मेदिनी । ८२९

अनूचानः त्रि. [ अनु+वच्+लिट् तस्य कानच्, वेदस्यानु-वचनं कृतवान् । उपेयिबानित्यादिना साधुः ] साङ्गवेद-विचक्षणः; शिक्षाकल्पादिपङ्क्तिसहितवेदाध्ययनकारी; यथा—'इदमूचुरनूचानाः प्रीतिकण्टकितत्वचः'—इति कुमारसम्भवे । 'ऋषयश्चकिरे धर्मं योऽनूचानः स नो महान्'—इति मनुः । विनीतः; सविनयः; 'अनूचानो विनीते स्यात् साङ्गवेदविचक्षणो'—इति मेदिनी । ३९५

अनृतम् क्ली. [ न ऋतं, नञ्समासः ] मिथ्या; 'विवाहकाले रतिसम्प्रयोगे प्राणात्यये सर्वचनापहारे । विप्रस्य चार्थे ह्यनृतं वदेत पञ्चानृतान्याहुरपातकानि'—इति महाभारते कर्णपबणि अर्जुनं प्रति श्रीकृष्णवचनम् । कृषिः । १४४

अनेकधा अव्य. [ प्रकारार्थे धा ] अनेकप्रकारं; बहुधा; 'पाटीमूत्रोपमं बीजं गूढमित्यवभाषते । नास्ति गूढमगूढानां नैव पोडेत्यनेकधा'—इति लीलावती । अनेकवारार्थेऽपि दञ्चित् प्रयोगः । ४३७, ६४७

अनेकपाः पुं. [ अनेकाम्नां मुखशुण्डाम्नां पिबति । अनेकं+पा+क, उपपदसमासः ] हस्ती । २१४

अनेकार्थः पुं. [ अनेके अर्थाः यस्य ] बहुव्यर्थः; नानार्थः; विविधार्थद्योतकः । ८८४

अनेकमूकः त्रि. [ नास्ति एङः वधिरः मूकः वाक्शक्ति-रहितश्च यस्मात् सः ] श्रुतिवाग्विहीनः; 'गूंगा-बहरा' इति भाषा । घूर्तः; घटः । ६०९

अनहा [ स ] पुं. [ न हन्यते, न+हन्+असुन् । पूषोद-रादित्वात् हन्स्थाने एहादेशः, ततः सी कृते अनङादेशः ] कालः; समयः; 'तस्युस्तस्यान्तिके द्रोहनिद्रानेहः प्रतीक्षिणः'—इति राजतरङ्गिणी । १०५

अनोकहः पुं. [ अनसः शकटस्य अकं गमनं, षष्ठीतत्पुरुषः, तत् हन्ति । अनोक+हन्+ङ ] वृक्षः; 'पूतस्तुपारिगिरिनिर्झराणाम् अनोकहाकम्पितपुण्यगन्धी'—इति रघुवंशे । १७७

अन्तपुरम् क्ली. [ अन्तर्मध्यवर्ति पुरं गृहं, कर्मधारयः ] राज्ञः स्त्रीगृहम्; अत्ररोधनम्; अत्ररोधः; शुद्धान्तः; 'दाक्षिण्येन ददाति वाचमुचितामन्तःपुरेभ्यो यदा'—इत्यभिज्ञानशाकुन्तलम् । ४२९, ४९१

अन्तःपुरप्रख्या स्त्री. [ अन्तःपुरस्य प्रख्या ] चेटो; दासी; संचारिका; असिकनी । ४९१

अन्तःपुरेष्वधिकृतः त्रि. [ अन्तःपुरेषु राजपत्नीवर्गे अधिकृतः अवेक्षणाधिकारी ] वर्षवरः; क्लीवः; वृद्धो विश्वस्त-सेवकः । ४२९

अन्तकः पुं. [ अन्तं विनाशं करोति । अन्त+करोत्यर्थे णिच्, ततोऽनुल् ] यमः; 'ऋषिप्रभावान्मयि नान्तकोऽपि प्रभुः प्रहर्तुं किमुतान्यहिंसाः'—इति रघुवंशे । ७२

अन्तरम् क्ली. [ अन्तं राति ददाति । अन्त+रा+क, उपपदसमासः ] छिद्रं; (८७१) परिधानं; मध्यं; व्यवधानम्; अन्तरात्मा; अवकाशः; बहिर्योगः; भेदः; विशेषः; अवसरः; अवधिः; अन्तर्धानं; तादर्थ्यं; आत्मीयः; विना; सद्दशः । अवकाशो—'मृणालसूत्रान्तरमप्यलन्त्यम्'—इति कुमारसम्भवे । अवधी—'निरन्तराम्यन्तरवातवृष्टिषु ।' परिधाने—'अन्तरे शाटकाः; परिधानीयाः' इत्यर्थः । अन्तर्द्धी—'पर्वतान्तरितो रविः ।' भेदे—'यदन्तरं सर्वपशूलराजयोः, यदन्तरं वायसवैन-तेययोः'—इति रामायणे । तादर्थ्यं—'त्वामन्तरेण ऋर्ण

गृहीतम्, त्वदर्थमित्यर्थः । छिद्रे—'प्रहरेदन्तरे रिपुम्' । आत्मीये—'अयमप्यन्तरो मम ।' विनार्थे—'हरे त्वदालोकनमन्तरेण ।' बहिरर्थे—'अन्तरे चण्डलगृहाः, बाह्याः' इत्यर्थः । अवसरे—'अत्रान्तरे च कुलटा कुलवल्मपातेत्यादि ।' मध्ये—'आवयोरन्तरे जाताः पर्वताः परितो हुमाः ।' सदृशे—'हकारस्य घकारोऽन्तरात्माः'—इति भरतः । ८७१

अन्तरात्मा [ न् ] पुं. [ अन्तः हृदयमध्ये स्थितः आत्मा । शाकपायिवादिः ] प्रत्यगात्मा; साक्षी—ईश्वरः । ८७१

अन्तरायः पुं. [ अन्तरं व्यवधानम् एति । अन्तर+इण्+अच्, दृष्टीतत्पुरुषः ] विघ्नः; 'स चेत्स्वयं कर्मसु धर्मधारिणां त्वमन्तरायो भवसि ज्युतो विधिः'—इति रघुवंशे । ४०१

अन्तरालम् क्ली. [ अन्तरा मध्यं लाति । अन्तरा+ला+क ] मध्यदेशः; अम्यन्तरम्; अन्तरालकम्; 'मुहुरन्तरालभुवमस्तगिरिः सवितुश्च योषिदमिमीत दृशा'—इति माघे । 'उदेति भानुर्गंगानन्तराले'—इति पद्यमाला । १०२

अन्तरि (री) क्षम् क्ली. [ अन्तर्मध्ये ऋक्षाणि नक्षत्राणि यस्य तत् । पृषोदरादित्वाद् ऋकारस्य ईकारः । अन्तरीक्षमिति पाठे, ऋकारस्य ईकारः ] अन्तरीक्षम्; आकाशः; 'अन्तरिक्षगतांश्चैव मुनीन् देवांश्च पीडयेत्'—इति मनुः । १३७

अन्तरीपम् क्ली.—पुं. [ अन्तर्गता आंषोऽत्र, समासान्तः अ, द्व्यन्तरूपसंगम्य इति अप ईदादेशः ] द्वीपम् । ६७०

अन्तरीयम् क्ली. [ अन्तरस्य परिधानस्य इदम् । अन्तर+छ तस्य ईय ] अधोवस्त्रं; परिधानवस्त्रम्; 'नाभीधृतञ्च यद्वस्त्रम् आच्छादयति जानुनी । अन्तरीयं प्रशस्तं तद् अच्छिन्नमुभयोस्तयोः ।' ५४६

अन्तरीक्षम् क्ली. [ अन्तर्मध्ये ऋक्षाणि नक्षत्राणि यस्य तत् । पृषोदरादित्वाद् ऋकारस्य ईकारः ] गगनं; अभ्रकधातुः । १३८

अन्तर्गडुः त्रि. [ अन्तर्मध्ये गडुः ग्रीवांप्रदेशजातगलमांसपिण्डमिव निरर्थकः ] निरर्थकः; वृथा; 'काव्यान्तर्गडुभूता या सा तु नेह प्रशस्यते'—इति साहित्यदर्पणे । ७७४

अन्तर्बहम् क्ली. [ देहस्य अन्तः मध्यम् । अव्ययीभावः ] अक्षितपीतादेः पाचनस्थानं; कोष्ठः । ८१७

अन्तर्दिः पुं. [ अन्तर्+धा+भावे कि ] अन्तर्दानम्; अपवारणम्; अदर्शनम् । ७१९

अन्तर्वंशिकः पुं. [ वंशः स्वावलम्बनयष्टिविद्यतेऽस्य । वंश+ठक्, तस्य इक्, अन्तः नृपान्तःपुरे वंशिकः यष्टिधारी नियुक्तः पुरुषः ] अन्तःपुराधिकृतः; अन्तःपुराध्यक्षः । ४२९

अन्तर्वन्ती स्त्री. [ अन्तर्गर्भमध्यस्थमपत्यं विद्यतेऽस्याः । अन्तर्+मत्तुप्, 'अन्तर्वत्पतितवतोर्नुक्' इति डीप् नृगागमश्च ] गर्भिणी; 'तस्यामेवास्य यामिन्यामन्तर्वन्ती प्रजावती । सुतावसूत सम्पन्नौ कोपदण्डाविव क्षितिः'—इति रघुवंशे । ४९७

अन्तर्वीणिः त्रि. [ अन्तः अन्तःकरणे वाणी शास्त्रविहिता वाक् यस्य सः, समासे ह्रस्वः ] शास्त्रवित्; शास्त्रज्ञः । ३९९

अन्तावशायी [ न् ] पुं. [ अन्ते नीचजातितया ग्रामसीमायामवशेते तिष्ठति । अन्त+अव+शी+णिनि, उपपदसमासः ] चण्डालः; मुनिविशेषः; नापितः । ५९८

अन्तिकम् त्रि. [ अन्तः सामीप्यं विद्यतेऽस्य । अन्त+ठन्, तस्य इक् ] निकटम्; क्ली. सामीप्यम् (८८५); 'अन्तर्गतप्रार्थनमन्तिककथम्' 'स्वनसि मृदु कर्णान्तिकचरः'—इति शाकुन्तले । 'ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकम्'—इति कुमारसम्भवे । ६९२

अन्तिमः त्रि. [ अन्त+डिमच्, अन्ते भवः ] चरमः; अन्त्यः; 'अजातमृतमूर्खाणां वरमाद्यौ न चान्तिमः । सकृद् दुःखकरावाद्यावन्तिमस्तु पदे पदे'—इति हितोपदेशः । अन्तिकटः । ७७५

अन्तेवासी [ न् ] पुं. [ अन्ते विद्यामध्येतुमध्यापकसमीपे वसति । चण्डालपक्षे तु नीचजातितया ग्रामप्रान्ते वसति । शयवासेत्यलुक्, अन्त+वस्+णिनि ] शिष्यः; छात्रः; 'कृशाश्वान्तेवासी कुशिकपतिराज्ञापयति वः'—इति महावीरचरिते । 'तात ! प्राचेतसान्तेवासी लवोऽभिवदयते'—इति उत्तरचरिते । चण्डालः । प्रान्तस्थायिनि त्रि. । ४४०

अन्त्यः त्रि. [ अन्ते भवः । अन्त+यत् ] अन्तिमः; चरमः; शेषः; 'असह्यपीडं भगवन् ऋणमन्त्यमवेहि मे ।'—इति रघुवंशे । अन्ते भवः; शेषोत्पन्नः; अधमः; जघन्यः; पुं. मुस्ता; म्लेच्छः; क्ली. अन्ते भवम्; दशसागरसंख्या;



सहस्रलक्षकोटिः; 'वृन्दं खर्वो निलर्वश्च शंङ्गं पथश्च सागरः । अन्त्यं मध्यं परार्धञ्च दशवृद्ध्या यथाक्रमम् ॥' द्वादशलक्षणम् । ७७५

**अन्त्यजः** पुं. [ अन्त्याद् विराट्चरणदेशात् जातः । अन्त्य + जन् + ड ] शूद्रः; रजकादिसप्तजातयः, यथा— 'रजकश्चर्मकारश्च नृपो वरुड एव च । कैवर्तमेद- भिल्लाश्च सप्तैते अन्त्यजाः स्मृताः—इति यमवचनम् । जघन्यजे त्रि. । ३९२

**अन्त्यजातिः** पुं. [ अन्त्या जातिर्जन्म यस्य सः ] चाण्डालादिः । ५९९

**अन्त्यवर्णः** पुं. [ अन्त्यः वर्णः जातिः, कर्मधारयः ] शूद्रः । ५८६

**अन्त्रम्** क्ली. [ अन्त्यते कायः सम्बध्यतेऽनेन । अति वन्धने, करणे ष्टन् ] पुरीतत् । 'अंतडी, अंत' इति भाषा । ६३५  
**अन्तुकः** पुं. [ अन्धते बध्यतेऽनेन । अदि + करणे उण् बाहुलकात् ततः स्वार्थे कन् ] हस्तिनिगडः; हस्तिपादबन्धनशृङ्खलः; निगडः; पादालङ्कारविशेषः; पादकटकः; स्त्रीपादमूषणम् । २२३

**अन्धः** त्रि. [ अन्ध् + अच् ] चक्षुर्ह्यहीनः; अदृक्; 'वृद्धोऽन्धः पतिरेष मञ्चकगतः—इति साहित्यदर्पणे । 'अन्धो मत्स्यानिवाश्नाति स नरः कण्टकैः सह । यो भायते-ऽर्धवैकल्पमप्रत्यक्षं सभाङ्गतः—इति मनुः (८।९५) । क्ली. अन्धकारः; 'सीदन्नन्धे तमसि विधुरो मज्जती-वान्तरात्मा—इति उत्तरचरिते । जलम् । ६०६

**अन्धकारिणुः** पुं. [ अन्धकस्य असुरस्य रिपुः नाशकतया शत्रुः । षष्ठीतत्पुरुषः ] शिवः । ११

**अन्धकारः** पुं.-क्ली. [ अन्धमन्धवत् करोति । अन्ध् + कृ + अण् ] तेजःसामान्याभावः; ध्वान्तः; तमिच्छं; तिमिरं; तमः; भ्रूच्छायं, (महान्धकारे अन्धतमसं; सर्वव्यापकान्धकारे सन्तमसम्; अल्पान्धकारे अवत-मसम्) । ११०

**अन्धतमसम्** क्ली. [ अन्धयति, अन्ध् + अच्, अन्धं तमः, कर्मधारयः, समासान्तः अच् ] निविडान्धकारम्; 'प्रध्वंसितान्धतमसस्तत्रोदाहरणं रविः—इति माघे । ११०

**अन्धः** [ स् ] क्ली. [ अन्ध् + असुन् ] अन्नम् । ३१९

**अन्धुः** पुं. [ अन्धु + उण् ] कूपः । ६८४

**अन्नम्** क्ली. [ अद् + कर्मणि + क्त ] स्वन्नतण्डुलः;

भक्तम्; अन्धः; भिस्ता, ओदनं; दीदिविः; भिस्ता; क्रूरम्; अट्टं; कसिपुः; जीवातुः; क्रूरम्; आपूपिकं; जीवन्तिः; प्रसादनं; धान्यम्; अदनीयद्रव्यमात्रम् । 'सत्यं क्षेत्रगतं प्राहुः सतुषं धान्यमुच्यते । आमं वितुषमित्युक्तं स्वन्नमन्नमुदाहृतम् ॥' 'वारिदस्त्वृप्तिमायाति सुख-मक्षय्यमन्नदः ।' 'ब्रह्महत्याकृतं पापमन्नदानात् प्रणश्यति । अन्नदः पापकर्मापि पूतः स्वर्गं महीयते ॥' 'अन्धे प्रतिष्ठिता लोका अन्नमाश्वक्षयं परम् । तस्मादन्नं प्रशंसन्ति सदैव पितृमानवाः ॥' 'अन्नस्य हि प्रदानेन नरो याति परां गतिम् । सर्वकामसमायुक्तः प्रेत्य चेहाधिकं शुभम् ॥' 'अन्नमूर्जस्वल्पं लोके दत्त्वोर्जस्वी भवेन्नरः । सतां पन्थानमाश्रित्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' 'अन्नदः पशुमान् पुत्री धनवान् भोगवानपि । प्राणवाश्चापि भवति रूपवांश्च तथा नृप ! ॥' 'अन्नदस्य मनुष्यस्य बलमोजो यशांसि च । कीर्तिश्च बद्धंते शश्वत्त्रिषु लोकेषु पाण्डव ! ॥' 'तस्मादन्नं सदा देहि श्रद्धया नृपसत्तम ! ब्रह्महत्यादिकं पापमन्नदस्य प्रणश्यति ॥' 'अन्नदानात् परं दानं न भूतं न भविष्यति । पुण्यं यशस्यमायुष्यं बलपुष्टिविबद्धनम् ॥' 'तरुणादित्यसङ्काशं विमानं हंसवाहनम् । अन्नदो लभते तिस्रः कल्पकोटीस्तथैव च ॥ अन्नदानात् परं दानं न भूतं न भविष्यति । अन्नाद् भूतानि जायन्ते जीवन्ति च न संशयः ॥ जीवदानात् परं दानं न किञ्चिदपि विद्यते । अन्नाज्जीवति त्रैलोक्यं त्रैलोक्यस्येह तत्फलम् ॥' ३१९

**अन्योन्यम्** पुं. [ अन्यया स्वमातृभिन्नया भूतः पालितः तृतीयातत्पुरुषः ] कोकिलः; 'कलमन्यभृतासु भाषितं कलहंसीषु मदालसं गतम्—इति रघुवंशे । २४३

**अन्योन्यम्** त्रि. [ अन्य + व्यतिहारार्थे द्वित्वं, ततः पूर्व-पदात्परः सुच्च ] उभयतः; इतरेतरं; परस्परम्; 'अन्योन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलैः—इति उत्तरचरिते । ७२०

**अन्योन्यसंगीतिः** स्त्री. [ अन्योन्यं परस्परं संगीतिः ] संकथा; परस्परवार्ता; परस्परकथा । ७७९

**अन्धक्** [ च् ] त्रि. [ अनु पश्चाद् अञ्चति गच्छति । अनु + अञ्च् + क्विन् ] पश्चाद्गामी; अनुपदं; पश्चात्; 'तां देवतापित्रतिथिक्रियार्थमन्धम् ययौ मध्यमलोकपालः—इति रघुवंशे । ७३१

**अन्धः** त्रि. [ अनु + अञ्च् + पचाद्यच् । अक्षमिन्द्रिय-

मनुगतः। प्रादिसमासः, प्रत्यक्षे, अनुगते, अनुपदे।  
पश्चाद्गामी। ७३१

अन्वयः पुं. [ अनु + इण् + भावे अच् ] वंशः; कुलम्;  
'तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः'—इति रघुवंशे। वंश-  
परम्परा; 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन्'  
—इति रघुवंशे। 'काव्यदेव्यभिषा शूरवधूः शुद्धान्वया'  
—इति राजतरङ्गिणी। वंशजाताः; पुत्रपौत्रादयः;  
'भानुर्दुहितरोऽभावे दुहितृणां तदन्वयः'—इति नारदः।  
'स जीवन्नेव शुद्धस्वभावां गच्छति सान्वयः'—इति  
मनुः। पदानां परस्परकाङ्क्षा योग्यता च; परस्पर-  
सम्बन्धः। ३९६

अन्वयायः पुं. [ अनु + अव + इण् + भावे अच् ] वंशः;  
कुलं; 'कथमेकान्वयायोऽयमस्माकम्'—इति शकु-  
न्तले। ३९६

अन्वासनम् क्ली. [ अनु + आस् + ल्युट् ] शिल्पादिगृहं;  
स्नेहवस्तिः; अनुशोचनम्; उपासना; अनुवासनं;  
पश्चात्तापः। २९७

अन्वेषणम् क्ली. [ अनु + इष् + ल्युट् ] अन्वेषणा; परीष्टिः;  
पर्येषणा; गवेषणा; अनुसन्धानम्; 'सुग्रीवो राम-  
मित्रं क्व जनकस्त्वन्यान्वेषणे प्रेषितोऽहम्'—इति महा-  
नाटकम्। 'दोषान्वेषणमेव मत्सरजुषां नैसर्गिको दुर्ग्रहः'  
—इत्युद्धटः। ८०७

अन्वेष्टा [ ऋ ] त्रि. [ अनु + इष् + तृच् ] अन्वेषणकर्ता;  
आनुपद्यः; 'अन्वेष्टारो ब्राह्मणाश्च भ्रमन्ति शतशो  
महीम्'—इति नलोपाख्यानम्। ३८०

अपकारः पुं. [ अप + कृ + भावे घञ् ] दुष्कृतिः; मन्दक-  
रणम्; अनिष्टसाधनम्; असद्व्यवहारः; अत्याचारः;  
द्वेषः; 'उपकर्त्रारिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा। उपका-  
रापकारी हि लक्ष्यं लक्षणमेतयोः'—इति माघे। ७७१

अपकृष्टम् त्रि. [ अप + कृष् + क्त ] जघन्यम्; अधमं;  
निकृष्टम्; अणकं; गर्ह्यम्; अवद्यं; काण्डं; कुत्सितं;  
प्रतिकृष्टं; याप्यं; वैषः; वैफः; अवमं; भ्रुवं; खेटं;  
पापम्; अपशब्दं; कृप्यं; चेतम्; अर्बचम्। ३३७

अपघनः पुं. [ अपहत्य मिलित्वा वियुज्यते। अप + हन् +  
'अपघनोऽङ्ग' मिति पाणिनिसूत्रेण अप् हस्याने घ ]  
देहावयवः; अङ्गम्; 'घृणिभिरपघनैर्घर्षव्यक्तघोपान्'  
—इति सूर्यशतके। ७४४

अपचितः त्रि. [ अप + चाय् + पूजार्थे कर्मणि क्त,  
'अपचितश्चेति' पक्षे चायस्थाने चिभावः। अप + चि +  
क्त ] पूजितः; हीनः; व्ययितः; अवयवाद्यपचययुक्तः;  
क्षीणः; कृशः; 'अपचितमपि गात्रं व्यायतत्वादलक्ष्यम्'  
—इति शाकुन्तले। ३८४

अपज्ञानम् क्ली. [ अपह्लुतं ज्ञानम्, शाकपायिवादिः ]  
ज्ञानापनयनम्; अपलापः; अपात्ययः। ७३०

अपटी स्त्री. [ अप्लः पटः, अल्पार्थे नञ्समासः, गौरा-  
दित्वाद् डीप् ] वस्त्रप्रावरणं, चन्द्रः; जवनिका। 'पर्दा'  
इति भाषा। ३०९

अपत्यम् क्ली. [ न पतति वंशो यस्मात्। पत् + बाहु-  
लकाद् यत् ततो नञ्समासः ] पुत्रः; कन्या; सन्तानः;  
तोकं; सन्ततिः; प्रसूतिः; 'अस्मिस्तु निर्गुणे-गोत्रे  
नापत्यमुपजायते'—इति हितोपदेशे। 'महीभृतः पुत्र-  
वतोऽपि दृष्टिस्तस्मिन्नपत्ये न जगाम तृप्तिम्'—  
इति कुमारसम्भवे। ४९७

अपशपा स्त्री. [ अपत्रपणम्, त्रपूप् + पित्वाद्ङ टाप् ]  
अन्यस्मात् पित्रादेः लज्जाकरणम्; लज्जामात्रम्।  
(अपगता त्रपा अन्यतो लज्जा यस्याः सा), लज्जाहीना;  
लज्जाशून्या। ५६७

अपदान्तरः त्रि. [ नास्ति पदान्तरं व्यवधानं यत्र सः ]  
सन्निकर्षः; सान्निध्यं; सामीप्यं; नैकट्यम्; अव्य-  
वहितः; संयुक्तः; अभिन्नपदे क्ली.। ६९२

अपमित्यकम् क्ली. [ अपमित्यापमानं स्वीकृत्य गृह्यते।  
अप + मेङ् प्रणिदाने, क्त्वा तस्य ल्यप्, 'मयतेरि-  
दन्यतरस्या' मिति आस्थाने इत्, ततः कन् ] ऋणम्। ५७२

अपश्य् क्ली. [ नास्ति परो यस्मात् ] प्राश्यं; (न पूर्यते,  
पृ + अप्, ततो नञ्समासः) हस्तिपश्चाद्भागः;  
गजान्त्यजङ्घादिभागः; त्रि. (न पूणाति प्रीणयति।  
पृ + पचाद्यच्, ततो नञ्समासः) अन्यः; इतरः;  
अर्वाचीनः। ६८९

अपराजिता स्त्री.—आस्फोता; गिरिकर्णो; विष्णुक्रान्ता;  
आस्फोटा; गवाक्षी; अश्वत्थुरी; श्वेता; श्वेतभण्डा;  
गवादनी; अद्रिकर्णो; कटभी; दधिपुणिका; गर्दभी;  
सितपुष्पी; श्वेतस्वन्दा; भद्रा; सुपुत्री; विपहन्त्री;  
नगपर्यायकर्णो; अश्वाह्वादिक्षुरी; पुष्पलताविशेषः;  
जयन्तीवृक्षः; अशनपर्णो; स्वल्पफला; शेफाली;

शमीभेदः; षाङ्गिनी; हपुषाभेद। दुर्गा; यथा—  
'दशम्यां च नरैः सम्यक् पूजनीयाऽपराजिता। मोक्षार्थं  
विजयार्थं च पूर्वोक्तविधिना नरैः॥ नवमीशेषयुक्तायां  
दशम्यामपराजिता। ददाति विजयं देवी पूजिता  
जयवर्द्धिनी'—इति स्कान्दे। २०२

अपराद्धेः पुं. [ अपराद्धः लक्ष्यात् च्युतः इषुः बाणो यस्य  
सः ] लक्ष्यच्युतसायकः; अपराद्धपृषत्कः; यस्य बाणो  
लक्ष्याच् च्युतः सः। ४७१

अपराधः पुं. [ अप+राध्+भावे घञ् ] अकार्यादि-  
दोषः; आगः; मन्तुः; 'अहन्यहनि यो मर्त्यो गीताध्यायं  
तु संपठेत्। द्वात्रिंशदपराधैस्तु अहन्यहनि मुच्यते॥  
तुलस्या कुरुते यस्तु शालग्रामशिलार्चनम्। द्वात्रिंशद-  
पराधांश्च क्षमते तस्य केशवः॥ द्वादश्यां जागरे  
विष्णोर्यः पठेत्तुलसीस्तवम्। द्वात्रिंशदपराधानि क्षमते  
तस्य केशवः॥ यः करोति हरेः पूर्वां कृष्णशस्त्राङ्कितो  
नरः। अपराधसहस्राणि नित्यं हरति केशवः'—  
इति हरिभक्तिविलासे ८ विलासः। ७४९

अपराहणः पुं. [ अहः अपरः; एकदेशिसमासः, समासान्तः  
टच्, अहः स्थाने अह्लादेशः ] शेषम् अहः; दिनशेषभागः;  
'रामाणां रमणीयतां विदधति ग्रीष्मापराह्लागमे'—  
इति अमरशतके। 'तथा श्राद्धस्य पूर्वाह्लादपराह्लो  
विशिष्यते'—इति मनुः। ८२२

अपर्णा स्त्री. [ नास्ति पर्णं तपस्यायां पर्णभक्षणवृत्तिर्वा  
यस्याः सा। टाप् ] दुर्गा; पार्वती; 'स्वयंविशीर्णद्रुम-  
पर्णवृत्तिता पत्न हि काष्ठा तपसस्तया पुनः। तदप्यपा-  
कीर्णमतः प्रियंवदा वदन्त्यपर्णाति च तां पुराविदः'—  
इति कुमारसम्भवे (५-२८)। पत्रशून्ये त्रि.। १६

अपलापः पुं. [ अप+लप्+भावे घञ् ] सतोऽप्यसत्त्वेन  
कथनं; ज्ञातस्य गोपनं; निह्नुतिः; अपह्नुतिः; अपह्लवः;  
निह्लवः; प्रेम। ७३०

अपवरकः पुं. [ अपत्रियन्ते लोकाः सम्भज्यन्तेऽत्र। अप+  
वृ+ 'ग्रहवृद्धनिषिङ्गमश्च' इति अप्, ततः स्वार्थे कन्।  
अथवा अप्+वृ+क्रादिभ्यः संज्ञायां वुन् तस्य अक]  
अन्तर्गृहं; गर्भागारं; वासीकः; शयनास्पदं;  
'दीपोऽपवरकस्यान्तर्वर्तते तत्प्रभा बहिः।' २९२

अपवर्गः पुं. [ अपवृज्यते संसारः मुच्यतेऽनेन। अप+  
वृज्+घञ् कुत्वम् ] मोक्षः; त्यागः; क्रियावसान-

साफल्यं; कर्मफलं; क्रियान्तः; कार्यसमाप्तिः;  
पूर्णता; निर्वाणं; मुक्तिः; 'अपवर्गमहोदयार्थयोर्भुव-  
नंशाविव धर्मयोगंतौ'—इति रघुवंशे। समाप्तिः;  
अवसानम्; 'क्रियापवर्गेष्वनुजीविसात्कृताः कृतज्ञतामस्य  
वदन्ति सम्पदः'—इति भारविः। १२४

अपवर्जनम् पुं. [ अप+वृज्+भावे ल्युट् ] दानं; मोक्षः;  
त्यागः। ४१९

अपवायः पुं. [ अप+वद्+भावे घञ् ] निन्दा; अवर्णः;  
आक्षेपः; निर्वादः; परीवादः; उपक्रोशः; जुगुप्सा;  
कुत्सा; गर्हणं; वचनीयम्; 'लोकापवादाद्भयम्'—इति  
नीतिशतके। 'देव्यामपि हि वेदेह्यां सापवादो यतो  
जनः।' 'हा कथं सीतादेव्या ईदृशमचिन्तनीयं जनापवादं  
देवस्य कथयिष्यामि'—इति उत्तरचरिते। आज्ञा;  
अनुमतिः; आदेशः; 'ततोऽपवादेन पताकिनी-  
पतेश्चचाल निह्लादिवती महाचमूः'—इति भारविः।  
विश्वासः; विशेषः; बाधकं; 'क्वचिदपवादविषये-  
ऽप्युत्सर्गोऽभिनिविशते'—इति व्याकरणम्। रज्जु-  
विवर्त्तस्य सर्पस्य रज्जुमात्रत्ववद् वस्तुविवर्त्तस्यावस्तुनो-  
ऽज्ञानादेः प्रपञ्चस्य वस्तुमात्रत्वम्; तदुक्तं—'सत्त्व-  
तोऽन्यथा प्रथा विकार इत्युदीरितः। अतत्त्वतोऽन्यथा  
प्रथा विवर्त्त इत्युदाहृतः।' अस्य फलम्, आम्त्याम्-  
घ्यारोपापवादाभ्यां तत्त्वम्पदार्थसोधनमपि सिद्धं  
भवति'—इति वेदान्तसारः। १४८

अपवारणम् क्ली. [ अप+वृ+णिच् भावे ल्युट् ]  
व्यवधानम्; अन्तर्धानम्। ७१९

अपवारितम् त्रि. [ अप+वृ+णिच्, कर्मणि क्त ]  
अन्तर्हितम्। ७४३

अपविद्धः त्रि. [ अप+व्यव्+क्त ] प्रत्याख्यातः; निरा-  
कृतः; त्यक्तः; प्रतिक्रिप्तः; 'कुवेरस्य मनःशल्यं शंसतीव  
पराभवम्। अपविद्धगदो बाहुभंगशास्त्र इव ह्रमः'—इति  
कुमारसम्भवे। चूर्णीकृतः; दलितः; 'मृदिताश्चापवि-  
द्धाश्च दृश्यन्ते कमलस्रजः'—इति रामायणे। ७०३

अपष्टुः पुं. [ अप+स्था+कु, सुषामादित्वात् पत्वम् ]  
प्रतिकूलः; विपरीतः; 'तव धर्मराज इति नाम कथमि-  
दमपष्टु पठयते। भौमदिनमभिदधत्यथवा भृशमप्रशस्त-  
मपि मङ्गलं जनाः'—इति माघे। वामः; दक्षिणोत्तरः;  
समयः; असत्यः; विरुद्धार्थः। वामे त्रि.। ७५६.

अपठ्ठ् अन्व. [अप+स्था+अपठ्ठ्+स्युः स्यः] इति कु, सुषामादित्वात् पत्वम् ] विपरीतं; शोभनं; निरवद्यम् । ७५६

अपसदः पुं. [अपसीदति अपकृष्टत्वं प्राप्नोति । अप+सद्+पचाद्यच्] नीचः; इतरलोकः; 'विप्रस्य त्रिषु वर्णेषु नृपतेर्वर्णयोर्द्वयोः । वैश्यस्य वर्णं चैकस्मिन् पडतेऽपसदाः स्मृताः'—इति मनुः (१०-१०) । इति मनुक्ते अनुलोमस्त्रीजाते वर्णसङ्करभेदे क्षत्रियादी पुं. स्त्री. । ३३७

अपसर्पः त्रि. [अपसर्पति, अप+सृप्+कर्तरि अच्] चरः; 'हरकारा' इति प्रसिद्धः; गूढचरः; स्पशः; 'सर्पाधिराजोऽरुभुजोऽपसर्पं पप्रच्छ भद्रं विजितारिः भद्रः'—इति रघुवंशे । 'यथार्हवर्णः प्रणिधिरपसर्पश्चरः स्पशः । चारश्च गूढपुरुषश्चाप्तः प्रत्ययितस्त्रिषु'—इत्यमरः । ४२५

अपसव्यः त्रि. [सव्यादपक्रान्तः, 'निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्याः' इति समासः] शरीरदक्षिणभागः; प्रतिकूलः; विपरीतः; 'वाता मण्डलिनश्चैनमपसव्यं प्रचक्रमुः'—इति रामायणे । ७५६

अपस्करः पुं. [अपकीर्यते, अप+कृ+अप्, 'अपस्करो रथाङ्गमिति' सुडागमः] रथाङ्गम्; असयुगचक्रादिः गुह्यद्वारं; विष्ठा । ४४८

अपस्नानम् क्ली. [अप+स्ना+भावे ल्युट्] मृतस्नानं; मृतोद्देश्यरुस्नानम्; अपवित्रस्नानं; स्नानावशिष्टजलेन स्नानं; स्नानोदकं; स्नानावशिष्टं जलम्; 'उद्धतं नमपस्नानं विषमूत्रे रक्तमेव च । श्लेष्मनिष्ठचूतवान्तानि नाधितिष्ठेत्तु कामतः'—इति मनुः (४-१३२) । ६३९

अपहस्तितः त्रि. [अपहस्त्यतेऽसौ, तत्करोतीति ष्यन्तात् क्त] अनादृतः; अवज्ञातः; तिरस्कृतः । ७१४

अपहृतम् क्ली. [अप+हृ+क्त] कृतचौर्यं वस्तु । ३३९

अपह्लवः पुं. [अप्+ह्लु+भावे अप्] अपलापः; स्नेहः (८१५); 'ऋणे देये प्रतिज्ञाते पञ्चकं शतमर्हति । अपह्लवे तद् द्विगुणं तन्मनोरनुशासनम्'—इति मनुः (८-१३९) । ७३०

अपाक् [च्] त्रि. [अप+अञ्च्+क्विन् न लोपः] दक्षिणदिग्भववस्तु; अपाचीनम्; अपाची । १०३

अपाङ्गः पुं. [अपाञ्चति वक्रं गच्छति चक्षुर्यत्र । अप+

अञ्च्+अधिकरणे घञ्] नेत्रयोरन्तः; चक्षुष्कोणः; 'चलापाङ्गां दृष्टिं स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीम्'—इति शाकुन्तले । 'कुचलयदृशां लोललोलेरपाङ्गैः'—इति शान्तिशतके । तिलकः; अङ्गहीने त्रि. । ५२०

अपाचीनम् त्रि. [अपाच्यां दक्षिणस्यां दिशि भवम् । अपाची+ख, तस्य ईन] दक्षिणदिक्स्थम्; अपाची-भवं; अपाक्; विपरीतं (७५७); विपर्यस्तम् । १०३

अपाटवम् क्ली. [पटोर्भावः; पटु+भावे अण्, नास्ति पादत्रं पटुता यत्र] रोगः; (पटोर्भावः पाटवं ततो नञ्-समासः) अपटुता; जडता । ६००

अपात्ययः पुं. [अप+अति+इण् भावे अप्] अपलापः; ज्ञातस्यापह्लवः; अपज्ञानम्; अपव्ययः । ७३०

अपानम् क्ली. [अपानयति मलादिनिःसारणेन जीवयति । अप+अन्+णिच्+पचाद्यच्] मलद्वारं; गुदं; पायुः; गुह्यं; गुदवर्त्म; तनुहृदः; मार्गः; चूतिः; चूतः; चुतः; पुं. गुदस्थवायुः; 'अवागमनवान् पाय्वादित्स्थानवर्ती वायुः'—इति वेदान्तसारः । 'अधो नयत्यपानं तु आहारं च नृणामवः । मूत्रशुक्रवहो वायुरपान इति कथ्यते । 'प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ'—इति भगवद्गीतायाम् । ५१३

अपाम्पित्तम् क्ली. [अपां पित्तमिव । अलुक्समासः, तदुत्पन्नत्वात्] अग्निः; चित्रकवृक्षः; वह्निसंज्ञकः; इत्यमरेणोक्तत्वात् । ६३

अपारम् क्ली. [नास्ति पारं यस्य तत्] अवारं, नद्यादेरवकिपारम्; असीमे त्रि. । ६६७

अपाश्रयः पुं. [अपाश्रियते आच्छाद्यतेऽनेन । अप+आ+श्रि+करणे अच्] प्राङ्गणावरणं; मत्तालम्बः; प्रथीवः; मत्तवारणः । 'सामियाना, चंदोवा' इति भाषा । आश्रय-शून्ये त्रि., चन्द्रातपः; निराश्रयः; आश्रितः; अधीनः; 'ब्राह्मणापाश्रयो नित्यमुत्कृष्टां जातिमनुते'—इति मनुः । ३०७

अपिनद्धम् त्रि. [अपि+नह्+कर्मणि क्त; भागुरिमते पिनद्धं च] परिहितवस्त्रादिः; आमुक्तः; प्रतिमुक्तः; पिनद्धः । ७२७

अपुनर्भवः पुं. [न पुनर्भवति न पुनरुत्पद्यतेऽस्मात् । न पुनर्+भू+अपादाने अप्, मयूरव्यसकादित्वात् समासः] मुक्तिः; कैवल्यं; पुनर्जन्माभावः; हितौ

लिङ्गे प्रशमने रोगाणामपुनर्भवे । ज्ञानं चतुर्विधं यस्य स राजार्हो भिषक्तमः—इति चरकः । कर्त्तरि अचि तु पुनर्जन्मशून्यः; मुक्तः इति यावत् । १२४

अधुपः पुं. [ न पूयते विशीर्यति । न+पूय्+बाहुलकात् प, यलोपः ] पिष्टकः; 'भीमेनातिबलेन मत्स्यभवनेऽपूपा न संघट्टिताः ।' गोधूमः; 'वृथा कृसरसं यावं पायसापूपमेव च'—इति मनुः । ३१९

अप्रधानम् क्ली. [ न प्रधानं, नञ्समासः ] प्राधान्यरहितम्; अप्राश्रयम्; उपसर्जनं, वाच्यलिङ्गोऽप्ययम् । ८६५  
अप्रलम्बम् क्ली. [ प्र+लम्ब्+घञ्, नञोऽस्त्यर्थानामिति समासः ] अचिलम्बं; शीघ्रं; तद्वति त्रि., सत्वरः; विलम्बरहितः; झटिति । ७८३

अप्रहतम् त्रि. [ न प्रहृष्यते स्म । प्र+हृन्+क्त, नञ्समासः ] अकृष्टभूमिः; खिला भूमिः; वस्त्रविशेषः; 'ईषद्वीतं नवं श्वेतं सदशं यन्नधारितम् । निर्णेजकाक्षालितं चाप्रहतं वास उच्यते ।' १५८

अप्सरसः स्त्री. [ अद्भ्यः समुद्रजलात् सरन्ति उद्यन्ति । अप्+सृ+असुन् ] स्वर्वेद्याः उर्वशीमेनकाद्याः । बहुवचनान्तोऽयं शब्दः । ८८

अप्सरा स्त्री.—स्वर्वेद्याः; 'स्त्रियां बहुष्वप्सरसः स्यादेकत्वेऽप्सरा अपि'—इति शब्दार्णवे । ८७

अफलः त्रि. [ नास्ति फलं वृक्षोत्पन्नं धर्मोत्पन्नं वा यस्य सः ] विफलः; निष्फलः; बन्ध्यः; अवकेशी; फलकाले अनुत्पन्नफलकवृक्षः; झावुकवृक्षः । ७६०

अबद्धम् त्रि. [ बन्ध्+क्त, नञ्समासः ] प्रकृतानुपयोगिवचनं; समुदायार्थशून्यवाक्यम्; अनर्थकं; यथा—'जरद्गवः कम्बलपादुकाम्यां द्वारि स्थितो गायति मङ्गलानि । तं ब्राह्मणी पृच्छति पुत्रकामा राजन् हमायां लशुनस्य कोऽर्थः ॥' अनिन्वितः; स्वाधीनः; मुक्तः; बन्धनशून्यम् । १४१

अबला स्त्री. [ नास्ति बलं यस्याः सा ] नारी; 'तस्मिन्नद्री कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी'—इति मेघदूते । ४८२

अब्जः पुं. [ अब्ज्यः जातः । अप्+जन्+ङ ] चन्द्रः; धन्वन्तरिः; निचुलवृक्षः; पुं.—क्ली. शङ्खः; जलभवशुक्तिमुक्तादिकम्; 'अब्जमश्ममयञ्चैव राजतञ्चानुपस्कृतम् ।' 'अब्जेषु चैव रत्नेषु सर्वेष्वश्ममयेषु च'—इति मनुः । ४२

अब्जम् क्ली. [ अप्सु जातम् । अप्+जन्+कर्त्तरि ङ, उपपदसमासः ] पर्णः; दशार्बुदसंख्या; शतकोटिः । ६७९  
अब्जः पुं. [ आप्यते, आप्लू व्याप्तौ, 'अब्जादयश्च' इति दन् ह्रस्वश्च । मेघपर्वतविशेषपक्षे तु अपो ददाति, अप्+दा+कर्त्तरि क ] मेघः; वत्सरः (११६); मुस्ता; पर्वतप्रभेदः । ५८

अब्रह्मण्यम् क्ली. [ ब्रह्मणि, ब्राह्मणोचितकर्मणि, अहिंसादौ साधु । ब्रह्मन्+यत्, नञ्समासः ] अवध्ययाञ्जा; अवध्योक्तिः; नाटयोक्तौ नायं वध्य इत्याकारोक्तिः; 'नेपथ्ये अब्रह्मण्यमब्रह्मण्यम्, अत्रान्तरे ब्राह्मणेन मृतं पुत्रमुत्क्षिप्य राजद्वारे सोरस्ताडनमब्रह्मण्यमुद्धोषितम्'—इति उत्तरचरिते । वेदविस्मयः; अतिनिन्दितं कर्म; निरतिशयव्यसनशोकादिप्रकाशोक्तिरियम् । ४०६

अभया स्त्री. [ नास्ति भयं यस्याः सकाशात् सा ] हरीतकी; चम्पादेशजातपञ्चशिरा हरीतकी, सा नेत्ररोगे प्रशस्ता; दुर्गा । ६१८

अभिकः त्रि. [ अभिकामयते इति । 'अनुकामिके' तिसाधुः ] कामी; कामुकः । ४९७

अभिख्या स्त्री. [ अभि+ख्या+अङ् ] कीर्तिः; शोभा (५६५); नाम; आख्यानं; सौन्दर्यं; रमणीयता; 'काप्यभिख्या तयोरासीद् व्रजतोः शुद्धवेशयोः'—इति रघुवंशे । 'कामप्यभिख्यां स्फुरितैरपुष्य—दासन्नलावण्यफलोऽघरोष्ठः'—इति कुमारसम्भवे । १५३

अभिजनः पुं. [ अभिजायतेऽत्र । अभि+जन्+आधारे ङ, वृद्धचभावः ] वंशः; अन्वयः; कुलम्; 'अभिजनतपोविद्यावीर्यक्रियातिशयनिर्जैः'—इति महावीरचरिते । 'कथं दशरथाज्जातः शुद्धाभिजनकर्मणः'—इति रामायणे । ख्यातिः; जन्मभूमिः; कुलध्वेषः । ३९६

अभिजातः त्रि. [ अभि+जन्+भावे क्त, अभिमतं प्रशस्तं जातं जन्म यस्य सः ] कुलीनः; श्रेष्ठवंशोद्भवः; 'जातस्तेनाभिजातेन शूरः क्षौर्यवता कुशः । अमन्यतैकमात्मानमनेकं वशिनां वशी'—इति रघुवंशे । 'न म्लेच्छितव्यं यज्ञादौ, स्त्रीषु नापकृतं वदेत् । सङ्कीर्णं नाभिजातेषु नाप्रबुद्धेषु संस्कृतम्'—इति मनुः । सुन्दरः; न्याय्यः; कुलजः; बुधः; पण्डितः; उचितः; उपयुक्तः; योग्यः; सुरूपः; मनोहरः; मान्यः; पूज्यः; धन्यः; इलाध्यः; भगवान्; समृद्धः । ३८९

अभिज्ञः त्रि. [ अभि साकल्येन जानाति । अभि+ज्ञा+कर्त्तरि क ] प्रवीणः; निपुणः; विज्ञः; बोद्धा; दक्षः; कुशलः । 'अभिज्ञाश्छेदपातानां क्रियन्ते नन्दनद्रुमाः' 'अभिज्ञास्तमिस्त्राणां दुदिनेष्वभिसारिकाः ।' ३३५

अभिज्ञानम् क्ली. [ अभिज्ञायतेऽनेन । अभि+ज्ञा+करणे ल्युट् ] चिह्नम्; अङ्कः; लक्षणम्; 'एतस्मान्मां कुशलिनमभिज्ञानदानाद्विदित्वा, मा कौलीनाच्चकित्तनयने मय्यविश्वासिनी भूः'—इति मेघदूते । 'एवमुक्त्वास्तु रामेण हनूमान् वानरर्षभः । पूर्ववृत्तमभिज्ञानं नूयः संप्रत्यभाषत'—इति रामायणे । सोऽयनितिज्ञानसाधनं चिह्नं; स्मरणार्थमङ्गुरीयादिकं चिह्नम्; 'अयं मथिल्याभिज्ञानं काकुत्स्थस्याङ्गुरीयकः'—इति भट्टिकाव्ये । ४५

अभिज्ञा स्त्री. [ अभि+घा+करणे भावे च अच्, स्थियां टाप् ] नाम; आख्या; आह्ला; अभिधानं; नामधेयम् । न्यायमते शब्दशक्तिः; मीमांसामते विधिसमवेतविधिव्यापारीभूतपदार्थः; 'स मुख्योऽर्थस्तत्र मुख्यो व्यापारोऽस्याभिधोच्यते'—इति काव्यप्रकाशः । 'सङ्केतितार्थस्य बोधनादग्निमामिधा' इति साहित्यदर्पणम् । १५२

अभिधानम् क्ली. [ अभिधीयते अनेन । अभि+घा+करणे ल्युट् ] कथनम्; उक्तिः; 'तवाभिधानाद्ब्रह्मण्यते नताननः'—इति भारविः । नाम; आख्या; नामधेयम्; 'आख्या ह्यभिधानं च नामधेयं च नाम च'—इत्यमरः । 'शिखरिणि क्व नु नाम क्रियच्चिरं किमभिधानमसाचकरोत्तपः'—इति साहित्यदर्पणे । उल्लेखः; निर्देशः । १३८

अभिधेयम् क्ली. [ अभिधीयते अनेनेति, करणे यत् ] अभिधानं; नाम; 'इति प्रयोजनाभिधेयसम्बन्धाः' इति वोपदेवः । त्रि. (अभि+घा+कर्मणि यत्) अभिधागम्यं; वाच्यं; प्रतिपाद्यम् । ८६७

अभिनयः पुं. [ अभिनयति हृद्गतक्रोधादिभावं प्रकाशयति । अभि+नी+अच् ] व्यञ्जकः; हृद्गतक्रोधादिभावामिव्यञ्जकः; अङ्गुल्यादिना व्यक्तीकृतमनःकार्यं; दृश्यकाव्यं; रङ्गादिभिर्नटैः रामयुधिष्ठिरादीनामवस्थानुकरणम्; 'तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तस्था नुवाः, शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतप्रज्ञस्य वाणीमिनाम्'—इति उत्तरचरिते । ९४

अभिनयः त्रि. [ अभि+नु+भावे अप् ] नूतनः; 'अभिनयमधुलोलुपस्त्वं तथा परिवृन्ध्य चूतमञ्जरीम्'—इति शाकुन्तले । ७११

अभिनयिष्णु क्ली. [ अश्रुमभिलक्षीकृत्य निर्याणं निगमः ] विजिगीषोः प्रयाणं; युक्तयान्ता; जिगीषया गमनम् । ४६१

अभिनयिषः पुं. [ अभि+दि+विश्+भावे घञ् ] दूढसङ्कल्पः; 'इत्युक्तवन्तं जनकात्मजायां नितान्तरूक्षाभिनवेशमीशम्'—इति रघुवंशे । 'अथानुल्पाभिनवेशतोषिणा कृताभ्यनुज्ञा गुरुणा गरीयसा'—इति कुमारसम्भवे । आसक्तिः (८४१); अनुरागः; अभिलाषः; 'वलीयान् खलु मेऽभिनयिषः'—इति शाकुन्तले । मनःसंयोगविशेषः; मनोनिवेशः; आवेशः; शास्त्रादी प्रवेशः; निबन्धः । योगशास्त्रमते 'मरणजन्यभयजनकाविद्याविशेषः' आग्रहः; अवश्यमिदं कर्तव्यमित्यादिरूपोऽध्यवसायः । ७८४

अभिज्ञम् त्रि. [ न भिज्ञं, नञ्समासः ] भेदहीनं; भिन्नरहितम् । ४३५

अभिप्रायः पुं. [ अभि+प्र+इष्+भावे अच् ] इच्छाविशेषः; आशयः; छन्दः; आकृतं; भावः; अभिसन्धिः; हृद्गतो भावः; 'दुर्योधन! ममाप्येतद् हृदि सम्परिबतते । अभिप्रायस्य पापत्वात्प्रैवंतु त्रिवृणोम्यहम्'—इति महाभारते । 'तेषां त्वं स्वमभिप्रायमुपलम्प्य पृथक् पृथक्'—इति मनुः । ७६२

अभिभवः पुं. [ अभि+भू+भावे अप् ] गर्वनाशः; परिभवः; पराभवः; तिरस्कारः; 'रपोरभिभवाशङ्क चुक्षुभे द्विवंतां मनः'—इति रघुवंशे । 'बलवानपि निस्तेजाः कस्य नाभिभवास्पदम्'—इति हितोपदेशे । पराजयः (८४५) । ७०४

अभिमन्त्रणम् क्ली. [ अभि+मन्त्र्+करणे ल्युट् ] मन्त्रपाठेन संस्कारकरणम्; 'दत्वाभ्रं पृथि पात्रमिति पात्राभिमन्त्रणम्'—इति याज्ञवल्क्यः । आह्वानम्; आकारणम् । १५४

अभिमानः पुं. [ अभि+मन्+भावे घञ् ] अवलेपः; अवश्यायः; टङ्कः; दर्पः; अहङ्कारः; गर्वः; स्मयः; ज्ञानं; बोधः; प्रणयः; प्रेमप्रार्थना; हिंसा; हननं; 'गर्वो मदोऽभिमानः स्यादहङ्कारस्त्वहङ्कृतिः । स्यादु-

द्धतमनस्कत्वे मानश्चित्तसमुन्नतिः ॥ अहङ्कारस्य पथ्याया  
इति केचित्प्रचक्षते—इति शब्दरत्नावली । ८२१

अभियातिः पुं. [ युद्धार्थमभिमुखं-याति, गच्छति । अभि+  
या + क्तिच् ] अरातिः; शत्रुः । ४५५

अभियोगः पुं. [ अभि+युज्+भावे घञ् ] अभिग्रहः;  
अपकारकरणेच्छापूर्वकाक्रमणम्; उद्योगः; 'स प्रापद-  
प्राप्तपराभियोगं नरेन्द्रगुप्तं नगरं मुहुतात्'—इति कुमार-  
सम्भवे । अपराधादियोजनम्; अन्येन विरोधे स्वार्थ-  
सम्बन्धितया राजसमीपे कथनम्; 'रपट, नालिश'  
इति भाषा । 'अभियोगमनिस्तीर्य नैनं प्रत्यभियोजयेत्'  
इति याज्ञवल्क्यः । युद्धार्थाह्वानम् । ८४३

अभिरूपः त्रि. [ अभिरूपयति शास्त्रार्थं निरूपयति,  
अभिरूप + णिच् + अच् ] पण्डितः; 'इयं हि रत्नभाव-  
विशेषदीक्षागुरोः विक्रमादित्यस्याभिरूपभूयिष्ठा  
परिषद्'—इति शाकुन्तले । मनोहरः । ३३२

अभिलाषः पुं. [ अभि+लष्+भावे घञ् ] लोभः;  
आकाङ्क्षा; स्पृहा; ईहा; तृट्; वाञ्छा; लिप्ता;  
कामः; तर्षः; मनोरथः; काङ्क्षतः; कान्तिः; रुक्;  
रुचिः; दोहदः; अभिलासः; श्रद्धा; तृष्णा; मतिः;  
छन्दः; इच्छा; सङ्गमेच्छा; 'भव हृदय साभिलाषं  
सम्प्रति सन्देहनिर्णयो जातः'—इति शाकुन्तले ।  
'अतोऽभिलाषे प्रथमं तथाविधे'—इति रघुवंशे । ३६४

अभिलाषुकः त्रि. [ अभि+लष्+शीलार्थे उक्ञ् ]  
अभिलाषयुक्तः; लुब्धः; गृध्नुः; गर्दनः; लोभी;  
विलासविभवमानसः; 'जयमत्रभवान् नूनमरातिष्व-  
भिलाषुकः'—इति भारविः । ३६३

अभिवादनम् क्ली. [ अभिमुह्येन वाद्यते आशोः कार्यतेऽनेन ।  
प्यन्ताद् वदेः करणे ल्युट् ] नामोच्चारणपूर्वकनमस्कारः;  
'अभिवाद्ये भो अमुकशर्माहम्' इत्येवं रूपः; पादस्पश-  
पूर्वकनमस्कारः; पादग्रहणम्; 'अभिवादनशीलस्य नित्यं  
वृद्धोपसेविनः । चत्वारि सम्प्रवर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो  
बलम्'—इति मनुः । ३९८

अभिवाद्यः त्रि. [ अभिवादयितुं योग्यः । यत् ] अभिवाद-  
नीयः; अभिवादनपूर्वकं वन्दनीयः; अभिनन्दनीयः;  
प्रणम्यः ३९८

अभियङ्गः पुं. [ अभि+सन्ज्+घञ्, उपसर्गादिति  
पः ] सर्वतोभावेन सङ्गः; पराजयः; आक्रोशः; शपथः;

मिथ्यापवादः; आलिङ्गनं; भूताद्यावेशः; 'अभिघाताभि-  
चाराभ्यामभियङ्गाभिशापतः'—इति माधवकरः । परा-  
भवः; परिभवः; परिभूतिः; 'जाताभिषङ्गो नृपति-  
निषङ्गादुद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृतातिः'—इति रघुवंशे ।  
'तीव्राभिषङ्गप्रभवेण वृत्ति मोहेन संस्तम्भयतेन्द्रिया-  
णाम्'—इति कुमारसम्भवे । शोकः; दुःखम्; 'अभि-  
षङ्गजं विजशिवान् इति शिष्येण किलान्ववोधयत्'  
इति रघुवंशे । ८४५

अभियवः पुं. [ अभि+सु+अप्, गुणः, षत्वं च ]  
काञ्जिकम् । 'काजी' इति भाषा । स्नानं; यज्ञः;  
सुरासंधानम् । ३१८

अभियेणगन् क्ली. [ सेनया अभियानम्, सेनाघान्वाद्  
णिच्, ल्युट्, उपसर्गात् सुनोतीति षत्वम् ] शत्रुं प्रति  
सेनासहितगमनं; सेनया सह करणभूतया वा विजिगीषोः  
शत्रोराभिमुख्येन गमनम्; 'यत् सेनयाभिगमनमसौ  
तदभियेणनम्'—इत्यमरः । ४६१

अभिसम्भातः पुं. [ अभिसम्पात्यते योद्धा यत्र । अभि+  
सम्+पत्+आधारे घञ् ] युद्धम् । ४५४

अभिसारः पुं. [ अभि+सृ+आधारे घञ् ] युद्धं; बलं;  
सहायः; साधनं; स्त्रीपुंसयोरन्यतरस्यान्यतरार्थं सङ्केत-  
स्वलगमनम्; 'रतिद्युत्सारे गतमभिसारे मदनमनोहर-  
वेशम्'—इति गीतगोविन्दे । 'एवं कृताभिसाराणां  
पुंश्चलीनां विनोदने'—इति साहित्यदर्पणे । ४६१

अभिसारिका स्त्री. [ अभिसरति कान्तनिदिष्टसङ्केत-  
स्थानं गच्छति या । अभि+सृ+प्नुल्, त्रिषयां टाप् ]  
स्वीयादिषोडशनायिकामध्ये नायिकाभेदः; जुलटा ।  
'कान्ताधिनी तु या याति सङ्केतं साभिसारिका'  
—इत्यमरः । 'अभिसारयते कान्तं या मन्मथवशांवदा ।  
स्वयं वाभिसरत्येषा धीरैस्क्ताभिसारिका'—इति  
साहित्यदर्पणे । ४९६

अभिहारः पुं. [ अभि+हृ+घञ्, ] सन्नहनं; कवच-  
धारणं; चौर्यं; सम्मुखे हरणम्; अभिग्रहणम्;  
अभियोगः; अपचिकीर्षयाभिगम्याक्रमणं; साहचं;  
अपहरणम्; 'यस्याभिहारं कुर्याच्च स्वयमेव नराधिपः ।'  
—इति महाभारते । ८४३

अभ्रीकः पुं. [ अभि+कृन् 'अनुकामिकाभीकः कमिता'  
इति निपातितः ] स्वामी; कविः; पतिः; कामुकः;

कामी; 'दृक्षे पर्णशालायां राक्षस्याभीकयाथ सः—  
इति भट्टिकाव्ये। उत्सुकः; क्रूरः; निष्ठुरः; निर्भयः;  
निःशङ्कः; 'अभीकः कामुके क्रूरे निर्भये त्रिपु ना कवी—  
इति मेदिनी। ४९७

अभीक्षणम् अव्यं. [ अभि + क्षु तेजने; डमु, पृषोदरादि-  
त्वाद् दीर्घः; 'स्वरादिनिपातमव्ययम्' इति अव्ययद्वयम् ]  
पुनः पुनः; अनारतम्; अभीक्षणं; क्ली. (क्षणमभिगतं,  
प्रादिसमासः पृषोदरादित्वाद् दीर्घः, अलोपश्च) भृशं;  
नित्यम्; तद्युक्तक्रिययोस्त्रि.। पुनः पुनः; शश्वत्;  
अविरत्तं, निरन्तरम्; 'उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनैः  
अभीक्ष्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम्'—इति माघे। 'इच्छन्त्य-  
भीक्षणं क्षयमात्मनोऽपि न ज्ञातयस्तुल्यकुलस्य लक्ष्मीः।'  
—इति भट्टिकाव्ये। ७२४

अभीष्टः स्त्री. [ भी + कर्तरि ऋः शीलार्थे नञ्समासः ]  
शतमूली; शतमूलिका। पुं. भैरवः; यथा—'अभीष्टभैरवो  
भीष्टभूतपो योगिनीपतिः'—इति वटुकभैरवस्तवः। निर्भये  
त्रि. निर्भीकः; भयहीनः; निःशङ्कः; 'स्थाने युद्धे च कुश-  
लानभीरुनविकारिणः'—इति मनुः (७-१९०)। ६१९

अभीष्टुः पुं. [ अभितः इति, मुखं तनूकरोति। अभि + शो +  
कु, पृषोदरादित्वाद् दीर्घः ] किरणः; प्रग्रहः; 'बाग-  
डोर' इति भाषा। 'स्थिरा वसन्तु नेयो रथो अश्वा स  
एषां सुसंस्कृता अभीशवः'—इति ऋग्वेदे। स्त्री. (अभितः  
अश्नुते व्याप्नोति। अभि + अश् + कर्तरि उन्, पृषो-  
दरादित्वाद् अलोपो दीर्घः) अङ्गुलिः। ३८

अभीषुः पुं. [ अभि + इष् + उ ] किरणः; कामः;  
अनुरागः। ३८

अभ्यग्रम् त्रि. [ अभिमुखमग्रं यस्य तत् ] समीपं; निकृ-  
टम्। ६९२

अभ्यर्णम् त्रि. [ अभि + अर्द् + क्त, आविद्वयं इडभावः,  
णत्वम् ] निकटं; समीपं; सन्निधानम्; अन्तिकम्;  
'अभ्यर्णं परिरम्य निर्भरमुरः प्रेमान्धया राधया'—इति  
गीतगोविन्दे। ६९२

अभ्यवहारः पुं [ अभि + अव + ह् + भावे घञ् ] भक्ष-  
णम्; आहारः। ३२५

अभ्यागमः पुं. [ अभि + आ + गम् + अप् ] युद्धं; समीपम्;  
अन्तिकं; सन्निधानं; मारणं; घातः; प्रहारः;  
वैरं; शत्रुता; विरोधः; अभ्युत्थानम्; अभ्युद्गमनं;

सम्भुवागमनम्; उपस्थितिः; 'का त्वं शुभे कस्य परिग्रहो  
वा किं वा मदभ्यागमकारणं ते'—इति रघुवंशे। ४५३

अभ्यागारिकः त्रि. [ अभ्यागारे तद्गतकर्मणि व्यापृतः, ठन्  
तस्य इक् ] कुटुम्बव्यापृतः; पुत्रदारादिपोषणव्यग्रः। ३५७

अभ्याशः त्रि. [ आभिमुख्येनाश्रयते व्याप्यते, अशू व्याप्तो,  
घञ् ] समीपम्। ६९२

अभ्यासः त्रि. [ आभिमुख्येनाश्रयते क्षिप्यते, असु क्षेपे,  
कर्मणि घञ् ] समीपम्; अभ्यसनम्; आवृत्तिः; शरा-  
भ्यासः; चित्तस्थैकस्मिन्नभ्यन्तरे बाह्ये वा प्रतिमादा-  
वालम्बने सर्वतः समाहृत्य पुनः पुनः स्थापनमभ्यासः।  
यथा—'अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय!'—  
इति भगवद्गीताटीकायां नीलकण्ठः। ६९२

अभ्यासः पुं. [ भावे घञ् ] खुरली; योग्या; शरा-  
भ्यासः। ४७०

अभ्युत्थानम् क्ली. [ अभि + उत् + स्था + भावे ल्युट् ]  
गौरवम्; आसनादेरुत्थान; यथा—'यदा यदा हि धर्मस्य  
ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं  
सृजाम्यहम्।'—इति भगवद्गीता। ७७८

अभ्युपगमः पुं. [ अभि + उप + गम् + भावे अप् ]  
स्वाकारः; अङ्गीकारः; प्रतिज्ञा; 'प्रसीदेति ब्रूयामिद-  
मसति कोपे न घटते, करिष्याम्येवं नो पुनरिति भवेदभ्यु-  
पगमः'—इति रत्नावली। अनुमतिः; अनुमोदनं;  
निकटागमनम्। ८८६

अभ्युषः पुं. [ अभ्युष्यते अग्निना दहतेऽप्तौ। अभि +  
उप् + बाहुलकात् कर्मणि क ] अभ्युषः; पौलिः। ५८५

अभ्युषः पुं. [ अभि + ऊप् + बाहुलकात् कर्मणि क ]  
पाकावस्थागतकलायादिः; आरव्वपाकयवसर्पपादिः;  
वह्निना ईषद्गन्धः 'चुट-चुट' शब्दवान् इति केचित्;  
दरदग्धः; आपक्वं; पौलिः; अभ्युषः; अभ्युषः;  
पौलिका। 'रोटी, रोट' इति भाषा। ईषत्पक्वम्;  
'आपक्वमवपक्वं स्थादाभ्युषः पौलिपौलिके। अभ्युषो-  
ऽभ्युष इत्येते ईषत्पक्ववादिषु'—इति शब्दरत्ना-  
वली। ५८५

अभ्युषः पुं. [ अभ्युष्यते अग्निना दहतेऽप्तौ। अभि +  
ऊप् + कर्मणि घञ् ] अभ्युषः; अभ्युषः; पौलिः। ५८५

अभ्रम् क्ली. [ अपो विभति इति। अप् + भृ + क। अयवा  
न भ्रश्यन्त्यापो यस्मात्, अन्येभ्योपीति इ ] मेघः; मेघः;



(२७९); आकाशं; स्वर्गम्; उपधातुविशेषः; अभ्रक-  
धातुः; 'अभ्रं कषायं मधुरं सुशीतम्, आयुष्करं धातु-  
विवर्द्धनं च । हन्यात्त्रिदोषं व्रणमेहकुष्ठं, प्लीहोदरग्रन्थि-  
विषकृमीश्च ॥ रोगान् हन्ति द्रवयति वपुवीर्यवर्द्धि विघत्ते,  
तारुण्याढ्यं रमयति शतं योषितां नित्यमेव । दीर्घायुष्कान्  
जनयति सुतान् विक्रमेः सिंहतुल्यान्, मृत्योर्भीतिं हरति  
सततं सेव्यमानं मृताभ्रम् ॥ पीडां विघत्ते विविधां  
नराणां, कुष्ठं क्षयं पाण्डुगदं च शोथम् । हृत्पादर्वपीडाञ्च  
करोत्यशुद्धम्, अभ्रं ह्यसिद्धं गुस्तापदं स्यात् ॥' ५८

अभ्रमातङ्गः पुं. [ अभ्रस्य मेघस्य अधिष्ठाता मातङ्गः ।  
शाकपायिवादित्वात् समासः ] ऐरावतः; इन्द्रहस्ती;  
समुद्रजातः; पूर्वदिङ्नागः । ६१

अभ्रमाला स्त्री. [ अभ्राणां माला श्रेणी, षष्ठीतत्पुरुषः ]  
मेघश्रेणी; मेघसमूहः; घनघटा; कादम्बिनी । ५९  
अमत्रम् क्ली. [ अमति प्राप्नोति अभ्रमत्र । अम् गत्यादिषु,  
आधारे अत्रन् ] पात्रं; भाजनं; भोजनपात्रं; स्यालं;  
स्यानमित्यपि पाठः । ३२७

अमरः पुं. [ म् + कर्तरि अच्, नञ्समासः ] देवः; 'विषभौ  
देवसङ्घाभौ वज्रपाणिरिवामरैः'—इति महाभारते ।  
'फलं कर्मायतं किममरगणैः किञ्च विधिना'—इति  
शान्तिशतके । कुलिशवृक्षः; अस्थिसंहारवृक्षः; पारदः;  
अमरसिंहः; आदिशाब्दिकः; नागलिङ्गानुशासननामक-  
कोषकारः; विक्रमादित्यनवरत्नान्तर्गतरत्नविशेषः; 'इन्द्र-  
श्चन्द्रः काशकृस्नापिपली शाकटायनः । पाणिन्यमरजैने-  
न्द्रा जयन्त्यष्टादिशाब्दिकाः'—इति कविकल्पद्रुमः । ४

अमरावती स्त्री. [ अमरा विद्यन्तेऽस्याम् । अमर + मतुप्,  
वत्वं दीर्घश्च ] इन्द्रनगरी; पूषभासा; देवपूः; अमरा;  
सुरपुरी; सहस्राक्षपुरी; महेन्द्रनगरी; 'निष्प्रत्यूहं  
ऋतुशतं यः कश्चित् कुर्वतेऽजनी । जितेन्द्रियोऽमरावत्यां  
स प्राप्नोति पुलोमजाम्'—इति स्कान्दे काशीखण्डे  
१० अध्यायः । ५५

अमर्त्यभवनम् क्ली. [ अमर्त्यानां देवानां भुवनं वास-  
स्थानम् ] स्वर्गः । ३

अमर्षः पुं. [ मृष् + भावे घञ्, नञ्समासः, नास्ति मर्षः  
तितिक्षा यस्य ] क्रोधः; 'कश्चित्पितृवधामर्षात् पुनर्नोत्सा-  
दयिष्यति'—इति रामायणे । अक्षमा; असहिष्णुता;  
इष्टघाते असहिष्णुत्वम्; 'यस्मान्नोद्विजते लोको

लोकान्नोद्विजते च यः । हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स  
च मे प्रियः'—इति भगवद्गीता । ३६२

अमर्षणः त्रि. [ मृष् + बाहुलकात् कर्तरि ल्युट्, नञ्-  
समासः ] क्रोधी; क्रोवनः; कोपनस्वभावः; अतिसंक्रुद्धः;  
प्रकोपितः; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि क्षतो  
गोत्रभिदप्यमर्षणः'—इति रघुवंशे । असहनः; असहिष्णुः;  
परकृतापमानादेरसहनशीलः; 'गत्वा हृदे वासुदेवेन  
सार्द्धममर्षणं घर्षयतः सुतं मे'—इति महाभारते ।  
'अमर्षणः शोणितकाञ्क्षया किं पदा स्पृशन्तं दशति  
द्विजिह्वः ।'—इति रघुवंशे । ३६१

अमलानकम् क्ली. [ न म्लायति न शीर्यते, ल्युट्, पृषो-  
दरादिः ] अम्लानपुष्पवद्वृक्षविशेषः; वर्णपुष्पम् । २०७  
अमा अव्य. [ न मा + स्वरदित्वादव्ययत्वम् ] सह;  
निकटम् । ८८५

अमात्यः पुं. [ अमा सह विद्यते । अमा + त्यप् ] मन्त्री;  
'शान्तो विनीत कुशलः सत्कुलीनः शुभान्वितः ।  
शास्त्रार्थतत्त्वगोऽमात्यो भवेद्भूमिभुजाभिह'—इति  
युक्तिरत्नतरुः । 'भूता हि पाण्डुनामात्या बलं च सततं  
भूतम् । मान्यानन्यानमात्याश्च ब्राह्मणाश्च तपोधनान् ।'  
—इति महाभारते । ४२६

अमावस्या स्त्री. [ अमा साहित्येन वसतश्चन्द्रार्कौ यस्याम् ।  
अमा + वस् + आवारे ष्यत्, स्त्रियां टाप् ] कृष्णपक्षान्त-  
तिथिः; अमावास्या, दशः; सूर्येन्दुसङ्गमः; पञ्चदशी;  
अमावसी; अमावासी; अमामसी; अमामासी । ११२  
अमावास्या स्त्री. [ अमा सह चन्द्रार्कौ वसतो यत्र तिथौ  
सा । अमा + वस् + आवारे ष्यत्, स्त्रियां टाप्, णित्वाद्  
वृद्धिः ] अमावसीतिथिः; 'अमावास्यां भवेद्द्वारो यदि  
भूमिसुतस्य च । गोसहस्रफलं दद्यात् स्नानमात्रेण जाह्नवी ।'  
'अमावास्यां तु कन्यार्कौ तीर्थप्राप्तौ तथा नृप ! कृत्वा  
श्राद्धं विधानेन दद्यात् षोडशपिण्डकम् ।' ११२

अमित्रः पुं. [ अम् रोगे, इत्रच् ] शत्रुः; रिपुः; शत्रुपक्षीयः;  
प्रतिकूलः; 'भातृरूपे ममामित्रे नृशंसे राज्यकामुके ।  
अमित्रो मित्ररूपेण भ्रातुस्त्रमसि लक्ष्मण !'—इति  
रामायणे । ४५५

अमुक्तम् क्ली. [ मुच् + क्त, न मुक्तम्, विरोधे नञ्समासः ]  
छुरिकादिशस्त्रम्; मुक्तिरहिते अत्यक्ते च त्रि. । अप्राप्त-  
मोचनः; अस्वतन्त्रः; 'अमुक्ता भवता नाय मुहूर्तमपि

सा पुरा—इति साहित्यदर्पणे। 'अमुक्तो मानसैर्दु-  
खैरिच्छाद्वेषसमुद्भवैः—इति महाभारते। खड्गादिकम्;  
'खड्गादिकममुक्तं च नियुद्धं विगतायुधम्।' ४६२  
अमुत्र अव्य. [अमुष्मिन्, अवस्+त्रल् उत्त्वमत्वे]  
जन्मान्तरं; परलोकः; अमुष्मिन् इत्यर्थस्य वाचकः;  
'अनेनैवाभंकाः सर्वे नगरेऽमुत्र भक्षिताः—इति कथा-  
सरित्सागरे। भवान्तरे; जन्मान्तरे; 'तथैवयः क्षमाकाले  
क्षत्रियो नोपशाम्यति। अप्रियः सर्वभूतानां सोऽमुत्रेह च  
नश्यति ॥' 'इच्छद्भिः सततं श्रेय इह चामुत्र चोत्तमम्—  
इति महाभारते। ८७७

अमृतम् क्ली. [ मृ+भावे क्त। नास्ति मृतं मरणं यस्मात्  
तत्, तत्पायिनां मरणाभावात् तस्य तथात्वम् ] मुक्तिः।  
(१३३) पीयूषं; पेयूषं; सुधा; समुद्रोद्भवदेवभक्ष्या-  
मरत्वजनकद्रव्यविशेषः; निर्जरं; समुद्रनवनीतकम्; 'यदा  
पृथुराजभयेन पृथ्वी गौर्भूता तदा देवा इन्द्रं वत्सं कृत्वा  
हिरण्यपात्रेऽमृतरूपं पयोऽद्भुदुहन्, तत्तु दुर्वाससः शापात्  
समुद्रमध्ये गतं पश्चात् समुद्रमघनेऽमृतपूर्णकलसं गृहीत्वा  
धन्वन्तरिरुत्थितः—इति भारत-भागवते। जलं (६४८);  
घृतं; यज्ञशेषद्रव्यम्; अयाचितवस्तु; दुग्धम्; औषधं;  
विषसामान्यं; वत्सनाभः; पारदः; अन्नं; वनं; स्वर्णं;  
भक्षणीयद्रव्यं; हृद्यं; स्वाद्द्रव्यं; पुं. धन्वन्तरिः;  
देवता; वाराहीकन्दः; वनमुद्गः; हृद्यः; सुन्दरः;  
अतिहृद्यः; आत्मा; सूर्यः; सुरपतिः; इन्द्रः; मरणर-  
हिते त्रिः; 'अमृते जारजः कुण्डः—इत्यमरः। आत्मनि;  
'इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः। मनसस्तु  
परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान्परः। महतः परमव्यक्त-  
मव्यक्तादमृतः परः। अमृतान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा  
सा परा गतिः।' १२४

अमृता स्त्री. [ नास्ति मृतं मरणं यस्याः सा ] गुडूची;  
मदिरा; इन्द्रवारुणी; ज्योतिष्मती; गोरक्षदुग्धा;  
अतिविषा; रक्तत्रिवृत्; हूर्वा; आमलकी; हरीतकी;  
मुलसी; पिप्पली; चम्पादेशजस्यूलमांसा हरीतकी;  
सूर्यदीधितिविशेषाः; 'सौरीभिरिवे नाडीभिरमृता-  
स्याभिरम्मयः।'—इति रघुवंशे। ६

अमृताशनः पुं. [ अमृतम् अश्नाति भुङ्क्ते। अश्+बाहु-  
लकात् कर्तरि ल्युट्। अमृतस्य अशनः, पष्ठीतत्पुरुषः ]  
देवता। ४

अम्बकम् क्ली. [ अम्बति नक्षत्रपर्यन्तं गच्छति। अम्ब+  
ण्वुल्। वा अम्ब्यते भूगर्भे प्राप्यते। अम्ब+कर्मणि  
घञ्, स्वार्थे कञ् ] नेत्रं; चक्षुः; 'आसीनमासन्न-  
शरीरपातः त्रियम्बकं संयमिनं ददर्श—इति कुमार-  
सम्भवे। ताम्रम्। ५१९

अम्बरम् क्ली. [ अवि शब्दे + भावे घञ्, अम्बः शब्दस्तं  
राति आदत्ते। अम्ब+रा+क ] वस्त्रम्; 'एवमुक्त्वा  
सुमित्रां सा विवर्णा मलिनाम्बरा—इति रामायणे।  
आकाशं, (१३७); 'दावाग्निः कथमम्बरे—  
इति साहित्यदर्पणे। कार्पासः; सुगन्धिद्रव्यविशेषः;  
अभ्रघातुः। ५४८

अम्बरिपम् क्ली. [ अम्ब्यते पच्यतेऽत्र। अवि+अरिप  
वा दीर्घः निपातनात् ] भ्राष्ट्रः; भर्जनपात्रम्। ३१३

अम्बरीषम् क्ली. [ अवि गती+कर्मणि घञ् अम्बा  
लब्धा ईर्ष्या यस्मात् तत्, सिंहवत् पृषोदरादित्वात्  
रवर्णविपर्ययेण साधु ] भ्राष्ट्रः; भर्जनपात्रं; युद्धम्;  
पुं. (अम्ब्यते पच्यते अत्र, निपातनात् साधुः) विष्णुः;  
शिवः; किशोरः; भास्करः; नृपभेदः; सूर्यवंशीय-  
नाभागराजपुत्रः; 'भगीरथसुतो राजा श्रुत इत्यभि-  
विश्रुतः। नाभागस्तु श्रुतस्यासीत् पुत्रः परमधार्मिकः॥  
अम्बरीषस्तु नाभागिः सिन्धुद्वीपपिताऽभवत्—इति  
हरिवंशे। नरकभेदः; आन्नतिकवृक्षः; अनुतापः। ३१३

अम्बा स्त्री. [ अम्ब्यते स्नेहेनोपगम्यते। अत्रि गती+घञ्,  
स्त्रियां टाप् ] जननी; 'अम्ब ! यत्त्वमिदं प्रात्य प्रथमाय  
वचो मम।' 'नान्यदत्तमभीप्सामि स्थानमम्ब ! स्व-  
कर्मणा—इति विष्णुपुराणे। पाण्डुराजमानुः स्वसा;  
अम्बष्ठा; दुर्गा। ५०४

अम्बिका स्त्री. [ अम्बा+स्वार्थे कञ्, स्त्रियां टाप् ]  
दुर्गा; पार्वती; शिवा; 'ईप्सितार्थक्रियोदारं तेऽभिनन्द्य  
गिरेवंचः। आशीभिरेषयामासुः पुरःपाकाभिरम्बि-  
काम्—इति कुमारसम्भवे। माता; जैनदेवीविशेषः;  
कटुकीवृक्षः; अम्बष्ठा; काशीराजस्य मध्यमदुहिता;  
विचित्रवीर्यस्य पत्नी; धृतराष्ट्रमाता; 'अम्बा ज्येष्ठा-  
ऽभवत्तासामम्बिका त्वय मध्यमा। अम्बिकाम्बालिके  
भार्ये प्रादाद् भ्रात्रे यवीयसे ॥ मीप्सो विचित्रवीर्याय  
विधिदृष्टेन कर्मणा—इति महाभारते। १५

अम्बु क्ली. [ अवि शब्दे, उण् ] जलं; पानीयं; 'भुक्ता-

मृणालपटली भवता निपीतान्म्वूनि यत्र नलिनानि तिषेवितानि—इति भामिनीविलासे । 'अम्बुजमम्बुनि जातं ववचिदपि न जायतेऽम्बुजादम्बु'—इत्युद्धटः । 'गङ्गामम्बु सितमम्बु यामुनम्'—इति काव्यप्रकाशे । बालनामौषधिः । ६४८

अम्बुजम् क्ली. [ अम्बुनि जातम् । अम्बु + जन् + ड ] पञ्चम् ; 'इन्द्रीवरेण नयनं मुखमम्बुजेन'—इति शृङ्गार-तिलके । वञ्चं ; पुं. [ अम्बुसमीपे जातः ] हिज्जलवृक्षः ; निचुलवृक्षः ; 'अम्बुजं कमले क्लीवं हिज्जले तु पुमानयम्'—इति शब्दरत्नावली । 'अम्बुजो निचुले पुंसि कमले तु नपुंसकम्'—इति मेदिनी । ६७९

अम्बुदः पुं. [ अम्बु जलं ददाति । दा दाने + क ] मेघः ; 'सदा मनोज्ञाम्बुदनादसोत्सुकम्'—इति ऋतुसंहारे । 'शशाकं निर्वापयितुं न वासवः स्वतरश्चतुर्वल्लिमिवाद्भिरम्बुदः'—इति रघुवंशे । सुस्तकं ; 'कणीसविश्वानलदं सहाम्बुदम्'—इति वैद्यकम् । ८६२

अम्बुकृतम् क्ली. [ अम्बु अम्बु सम्पद्यमानं कृतम् । अम्बु + कृ + क्त, अभूततद्भावे च्चि ] 'श्लेषकणनिर्गमसहित-वाक्यं ; सनिष्ठीवं ; सयूत्कारं ; सनिष्ठीवमुखरावः ; 'दधति' कुहरभाजामत्र भल्लूकयनामनुरसितगुरुणि स्थानमम्बुकृतानि'—इति उत्तरचरिते । १४२

अम्भः [ स् ] क्ली. [ आप्यते, आप् + 'उदके नुम्भो च' इत्यसुन् ह्रस्वः ] जलं ; बालनामौषधं ; ज्योतिषे लग्नादितश्चतुर्थराशिः ; अङ्गशास्त्रे चतुर्थसंख्या ; वैदिकच्छन्दोभेदः । १६६, ६४८, ६६८

अयः पुं. [ एति सुखमनेन । इण् + करणे अच् ] शुभावह-विधिः ; मङ्गलानुष्ठानं ; कल्याणदायकं ; ईवम् ; 'स गुप्तमूलप्रत्यन्तः शुद्धपाणिणरयान्वितः'—इति रघुवंशे । नरकभेदः ; अयःपानम् । १२६

अयः [ स् ] क्ली. [ इण् गतो, असुन् ] लीहं ; गुडुच्चादिली हम् ; 'आयुः प्रदाता बलवीर्यघाता, रोगापहर्ता मदनस्य कर्ता । अयःसमानं न हि किञ्चिदस्ति, रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम् ॥' 'गुडूचोसारसंयुक्तं त्रिकत्रयसमन्वयः । वातरक्तं निहन्त्याशु सर्ववातहरं परम् ॥' १७१

अयनम् क्ली. [ अय् + भावे ल्युट् ] पन्थाः ; सूर्यस्य उत्तरद-क्षिणदिग्गमनं ; यथा—माघादिषण्मासा उत्तरायणं, श्रावणादिषण्मासा दक्षिणायनम् । गमनम् ; स्थानम्

(७६२) ; रविसंक्रान्तिविशेषः ; शास्त्रं ; 'ज्योतिषामयनं नेत्रं निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । २६०

अयन्वितः त्रि. [ न यन्वितः, नञ्समासः ] अवाचः ; अनर्गलः ; अनियन्त्रितः ; अनियमितः ; स्वाधीनः ; 'सावित्री मात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुयन्वितः । नायन्वित-स्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी'—इति मनुः । ७५१

अयस्कान्तः पुं. [ अयस्सु कान्तः रमणीयः ] लौहविशेषः ; कान्तलोहं ; कान्तं ; लौहकान्तकं ; कान्तायसं ; कृष्ण-लोहं ; महालोहं ; चुम्बकप्रस्तरः ; चुम्बकः ; प्रस्तर-प्रभेदः ; स तु चतुर्विधः—भ्रामकः, चुम्बकः, रोमकः, स्वेदकः । एते रसायने उत्तरीतरगुणिनः । 'उमारूपेण ते यूयं संयमस्तिमितं मनः । शम्भोर्यतश्चक्रमाकृष्टमयस्कान्तेन लोहवत्'—इति कुमारसम्भवे । १६९

अयानयम् क्ली. [ अयश्च अनयश्च तयोः समाहारः ] इष्टानिष्टफलम् । १२६

अयि अव्य. [ इण् + इन् ] प्रश्ने ; अनुनये ; सम्बोधने ; अनुरागे । 'अयि कठोर ! यशः किल ते प्रियम्'—इति उत्तरचरिते । 'अयि धनोह ! पदानि शनैः शनः'—इति वेणीसंहारे । 'अयि जीवितनाथ !' जीवसीत्यभि-धायोत्थितया तया पुरः, । 'अयि सम्प्रति देहि दर्शनम्'—इति च कुमारसम्भवे (४-२७) । ८८२

अरम् क्ली. [ इयति गच्छत्यनेन, ऋ + अच् ] शीघ्रं ; चक्राङ्गं ; शीघ्रगे त्रि. । पुं, जिनानां कालचक्रस्य द्वादशांशः ; स तु अवसर्पिण्याः षष्ठभागः ; जिनाना-मष्टादशतीर्थङ्करः । ६९७

अरघट्टकः पुं. [ अरं शीघ्रं घटयते चालयतेऽसौ । अर + घट्ट + अच्, अरघट्ट + स्वार्थे कन् ] जलोदञ्चनयन्त्रं ; पादावर्तः । 'रहट' इति भाषा । ६८५

अरणिः पुं.-स्त्री. [ ऋ + अनि ] निर्मन्थ्यदारः ; अग्नि-संघिनीभूतकाष्ठं ; घर्षणद्वाराग्निजनककाष्ठम् ; अग्नि-मन्यनकाष्ठम् ; अग्न्युत्पादनाय यत्काष्ठं काष्ठाक्षरेण घृण्यते तदरणिनामकं काष्ठम् ; 'विपक्षवधोऽरणि-मन्यनोत्थः प्रतापवह्नेरिव धूमलेखा'—इति धनञ्जय-विजयव्यायोगे । गणिकारिकावृक्षः ; सूर्यः । (इयन्तत्वेन दीर्घान्तोऽपि) अरणी ; यथा—'विधिना मन्त्रयुक्तेन रूक्षापि मथितापि च । प्रयच्छति फलं भूमिररणीव हुताशनम् ॥'—इति पञ्चतन्त्रे । ४१५

अरण्याम् क्ली. [ अर्यते मृगैः । ऋ गती, अर्त्तेनिञ्चेति अन्य] वनम्; मोक्षप्रदं दण्डकादिकं नवारण्याम्; 'दण्डकं सैन्धवारण्यां जम्बुमार्गञ्च पुष्करम् । उत्पलावर्तकारण्यां नैमिषं कुण्डजाङ्गलम् । हिमवानवर्द्ध-श्चैव नवारण्यां विमुक्तिदम् ॥' कट्फलवृक्षः; स्वनाम-ख्यातो रैवतस्य मनोः पुत्रः; 'अरण्याश्च प्रकाशश्च निर्मोहः सत्यवान् कृती । रैवतस्य मनोः पुत्राः पञ्चमं चैतदन्तरम्—इति हरिवंशे । २१०

अरण्याश्चा [ न ] पुं. [ अरण्यां श्वेव हिंस्रः ] वृक्षः । 'भेडिया' इति भाषा । २२८

अरतिः स्त्री. [ रम् + क्तिन्, नञ्समासः ] औत्सुक्यम्; उद्वेगः; अनवस्थितचित्तत्वं; क्रीडाभावः; रतिविरहः; विरक्तिः; प्रीतिविरहः; अनुरागराहित्यम्; उत्साह-हीनता; उद्यमाभावः; उद्योगराहित्यं; निश्चेष्टता; सुखाभावः; दुःखं; क्लेशः; इष्टवियोगाच्चित्तस्या-कुलीभावः; यदुक्तं—'स्वाभीष्टवस्त्वलाभेन चेतसो यानवस्थितिः । अरतिः सा तु विज्ञेया ।' सुस्थताभावः; अस्वास्थ्यम्; 'श्रमोऽरतिविवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः—इति सुश्रुते । पुं. क्रोधः । ७४२

अरत्निः पुं. [ ऋ + कत्निः, रत्निः बद्धमुष्टिकरः, स नास्ति यस्य ] विस्तृतकनिष्ठाङ्गुलिमुष्टिकहस्तः; कूर्परः; कफोणिः; 'एकविंशतियूपास्ते एकविंशत्यरत्नयः—इति रामायणे । हस्तः; करंतलपार्श्वः; बद्धमुष्टिकहस्तः; 'धूसा' इति भाषा । 'पदा मूर्ध्न महाबाहुः प्राहरद् विलपिष्यतः । तस्य जानु ददौ भीमो जघ्ने नैनमरत्निना'—इति महाभारते । ५३६

अररम् त्रि. [ ऋ + अरच् ] कवाटं; कपाटम्; अररिः; शरीरकोषः; आच्छादनं; पुं. रणः; युद्धं; यशाङ्गं; चसंकर्तनञ्छुरिकाभेदः । २८८

अरविन्दम् क्ली. [ अराकाराणि दलानि तत्सादृश्यात् अराः, तान् विन्दति लभते इत्यर्थे विद् + श ] पद्मं; कमलं; ताम्रं; रक्तकमलं; नीलोत्पलं; सारसपक्षी । कमले—'उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्याशुभिभिन्न-मिवारविन्दम्—इति कुमारसम्भवे । 'अरविन्दमिदं वीक्ष्य खेलत्स्वञ्जनमञ्जुलम् । स्मरामि वदनं तस्या-श्चारुचञ्चललोचनम् ।—इति साहित्यदर्पणे । ६८०

अरातिः पुं. [ न राति ददाति सुखम् । रा + क्तिच्, नञ्-

समासः ] शत्रुः; 'अरातिविक्रमालोकविकस्वरविलोचनः—इति साहित्यदर्पणे । 'अनेकयुद्धविजयी सन्वानं यस्य गच्छति । तत्रभावेण तस्याशु वशं गच्छन्त्यराण्यः ।—इति पञ्चतन्त्रे । ४५५

अरालम् त्रि. [ ऋ + विच्, अरम् आलाति । अर + आ + ला + क ] कुटिलं; वक्रम्; 'अरालैः स्वाभाव्या-दलिकरभकश्रीभिरलकैः—इति आनन्दलहरी । पुं. सर्जरसः; मत्तहस्ती; वक्रहस्तः । ६९६

अरिः पुं. [ ऋ + इन् ] शत्रुः; रिपुः; वैरी; 'उपकर्त्रीरिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा—इति हितोपदेशे । 'अनन्तर-मरि विद्यादरिसेविजमेव च—इति मनुः (७-१५८) । चक्रं; खदिरभेदः; सन्दानिका; दाली; खदिर-पत्रिका । ४५५

अरिभ्रम् क्ली. [ ऋच्छत्यनेन । ऋ + इत्रे ] कर्णः; कोटि-पात्रं; केनिपातकः; केनिपातः; 'डांडा' इति भाषा । 'लोलैररिर्त्रैश्चरणैरिवाभितः—इति माघे । ६७२

अरिष्टम् क्ली. [ रिप् हिंसायां, वत्, नञ्समासः ] उपद्रवः; उपलिङ्गः; उपसर्गः; अजन्यम्; ईतिः; उत्पातः; तर्क (२७५); अशुभं (८०४); सूतिका-गृहम्; 'अरिष्टशय्यां परितो विसारिणा सुखन्मनस्तस्य निजेन तेजसा—इति रघुवंशे । मरणचिह्नम्; 'रोगिणो मरणं यस्मादवश्यंभावि लक्ष्यते । तल्लक्षणमरिष्टं स्याद्विष्टमप्यभिधीयते ॥' मद्यं; यथा—द्राक्षारिष्टं; दशमूलारिष्टं; वञ्जूलारिष्टम्; 'अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतश्च गुणाधिकम् । अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया वीजद्रव्य-गुणैः समाः ।—इति वैद्यके । १२७

अरिष्टः पुं. [ न रिष्टम् अशुभं यस्मात् । रिप् हिंसायां, वत्, नञ्समासः ] पिचुमन्दः; निम्बवृक्षः; काकः (२४५); लशुनः; फेनिलवृक्षः; अरिष्टकः; 'रीठा' इति भाषा । कङ्कपक्षी; वृषभामुरः; मद्यविशेषः; 'द्रवेषु चिरकालस्यं द्रव्यं यत्सहितं भवेत् । आसवारिष्टभेदेस्तत् प्रोच्यते भेष-जोचितम् ॥ यदपक्वोपधाम्बुम्यां सिद्धं मद्यं स आसवः । अरिष्टः क्वायसिद्धः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम्—इति शाङ्गधरः । 'अरिष्टो द्रव्यसंयोगसंस्कारादधिको गुणैः । बहुदोषहरश्चैव दोषाणां शमनश्च सः ॥ दीपनः कफ-वातघ्नः सरः पित्तविरोधनः । शूलाधमानोदरप्लीहज्व-राजीर्णाशंसां हितः ॥—इति सुश्रुतश्च । १९६



फाल्गुनः; धन्वी; 'अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं दद्याद् घृदामये'—इति वैद्यके । पाण्डुराजस्य तृतीयपुत्रः; फाल्गुनः; जिष्णुः; किरीटी; श्वेतवाहनः; वीभत्सुः; विजयः; कृष्णः; सव्यसाची; धनञ्जयः; पार्थः; शक्रानन्दनः; गाण्डीवी; मध्यपाण्डवः; मध्यमपाण्डवः; श्वेतवाजी; कपिध्वजः; राधाभेदी; सुभद्रेशः; गुडा-केशः; बृहन्नलः; ऐन्द्रिः । कार्तवीर्यार्जुनः; मयूरः; मातुरेकसुतः; श्वेतवर्णः । १९५

**अर्जुनः** त्रि. [ अर्ज् + उजन् ] श्वेतः । ७३२  
**अर्जुनी** स्त्री. [ अर्ज् + उजन्, गौरादित्वाद् डीष् ] घेनुः; करतोयानदी; कुट्टनी; उपा । २६८  
**अर्णः** [ स् ] क्ली. [ ऋच्छति, ऋ गती, 'उदके नुट् च' त्यत्तरसुन् तस्य च नुट् ] जलम् । ६४८  
**अर्णवः** पुं. [ अर्णासि जलानि सन्त्यस्मिन् । 'अर्णसो लोप-श्चेति' च सलोपश्च ] समुद्रः; 'अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवाणवः—' इति रघुवंशे । ६५२  
**अर्तिः** स्त्री. [ अर्त् + क्तिन् ] पीडा; 'चूर्णं समं रुचक-हिङ्गुमहौषधानां शुण्ठधम्बुना कफसमीरणसम्भवासु । हृत्पाश्वर्षपृष्ठजठरातिविसूचिकासु पेयन्तथा यवरसेन च विड्विवधे'—इति वैद्यके । धनुरग्रभागः । ६२६  
**अर्थः** पुं. [ अर्थ् + धञ् ] धनम्; 'अर्थेन बलवान् सर्वः अर्थान्ब्रूवति पण्डितः—' इति हितोपदेशे । (८६७) अभि-धेयः; शब्दप्रतिपाद्यः; 'वागर्थोविव सम्पृक्ती वागर्थ-प्रतिपत्त्ये'—रघुवंशे (१-१) । कारणम्; अभिप्रायः; प्रयोजनं; वस्तु; द्रव्यं; पदार्थः; विषयः; याचना; निवृत्तिः; प्रकारः । ८०

**अर्थवादः** पुं. [ अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः । अर्थ् + वद् + करणे घञ् ] निन्दाप्रशंसाकरणम्; 'विरोधे गुणवादः स्यादनुवादोऽन्वधारिते । भूतार्थ-वादस्तद्धानावर्थवादस्त्रिधा मतः—' इति भट्टः । १४५

**अर्थव्ययसहः** पुं. [ अर्थव्ययस्य सहः । अर्थ् + व्यय + सह् + अच् ] अपव्ययी; व्यालः । ८३२  
**अर्थसंग्रहः** पुं. [ अर्थस्य संग्रहः ] धनसञ्चयः; कोशः; हेमरूप्यम् । ८४०

**अर्थागमः** पुं. [ अर्थस्य आगमः । पञ्चीतत्पुरुषः ] धनागमः; आयः; 'अर्थागमो नित्यमरोगिता च प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च । वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या

पद् जीवलोकस्य सुखानि राजन्!—इति हितोपदेशे । ४३३

**अर्थी** [ न् ] त्रि. [ अर्थयते इत्यर्थी ] याचकः; धनी [ अर्थो विद्यतेऽस्येति ]; सहायः; सेवकः; विवादी । ३५९

**अर्थम्** क्ली. [ ऋष् + घञ् ] समानांशः; समभागः; 'आधा' इति भाषा । समभागेऽर्द्धशब्दः पुमान् क्लीवं च । अर्द्धशब्दः पुल्लिङ्गः खण्डपर्यायः एव, विभागीकृत्य वण्टितस्य तुल्यवण्टिते क्लीवमेवेति । ५६२

**अर्थः** पुं. [ ऋष् + घञ् ] एकदेशः; भित्तः; शकलः; खण्डः; 'पश्चाद्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद्भयसा पूर्व-कायम्—' इति शाकुन्तले । 'सर्वनाशो समुत्पन्ने अर्थ त्यजति पण्डितः । अर्थेन कुहते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः—' इति पञ्चतन्त्रे । ७१३

**अर्थगुच्छः** पुं. [ अर्थचन्द्रसमः गुच्छः ] चतुर्विंशतिगुच्छ-कहारः । ५६२

**अर्थचन्द्रः** पुं. [ अर्थ चन्द्रस्य ] वाणविशेषः; 'चतुर्भिरर्थ-चन्द्रैश्च जघान चतुरो 'हयान्—' इति रामायणे । नखक्षतं; गलहस्तः; 'शृगालाः सर्वेऽर्थचन्द्रं दत्त्वा निःसारिताः—' इति पञ्चतन्त्रे । 'गर्दनिया' इति यस्य प्रसिद्धिः । चन्द्रकः; चन्द्रखण्डम्; मयूरपुच्छशीर्ष-कम् । ४६९

**अर्थारकम्** क्ली. [ अर्थमूरोः अर्द्धोश्च, तत्र काशते । काश् + ड ] उत्तमस्त्रीणाम् अर्थोत्पत्त्यन्तं चेलनाकारपरिधेय-वस्त्रं; चण्डातकम् । 'लहंगा' इति भाषा । ५४७

**अर्थकः** पुं. [ ऋष् वृद्धी, वुन् भान्तादेशश्च ] शिशुः; 'अभूच्च नम्रः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्थकः—' इति रघुवंशे । मूर्खः; कृशः; स्वल्पः; सदृशः । ५०२

**अर्थः** पुं. [ ऋ + यत् ] स्वामी; प्रभुः; वैश्यः; त्रिः श्रेष्ठः; उत्कृष्टः; न्याय्यः । ३४३

**अर्थमा** [ न् ] पुं. [ अर्थं श्रेष्ठं मिमीते । अर्थ् + मा + कनिन् ] सूर्यः; 'प्रोपितायमणं मेरोरन्धकारस्तटीमिव—' इति माघे । 'सूर्योऽर्थमा भगस्त्वष्टा पूषाकः सविता रविः । गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः—' इति महा-भारते । द्वादशादित्यविशेषः; 'मारीचात् कश्यपाज्जा-तास्तेऽदित्या दक्षकन्यया । तत्र शक्रश्च विष्णुश्च जज्ञाते पुनरेव ह ॥ अर्थमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा च भारता ।

फाल्गुनः; घन्वी; 'अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं दद्याद् घृदामये'—इति वैद्यके । पाण्डुराजस्य तृतीयपुत्रः; फाल्गुनः; जिष्णुः; किरीटी; श्वेतवाहनः; वीभत्सुः; विजयः; कृष्णः; सव्यसाची; घनञ्जयः; पार्थः; शक्रनन्दनः; गाण्डीवी; मध्यपाण्डवः; मध्यमपाण्डवः; श्वेतवाजी; कपिध्वजः; राधाभेदी; सुभद्रेशः; गुडा-केशः; बृहन्नलः; ऐन्द्रिः । कार्तवीर्यार्जुनः; मयूरः; मातुरेकसुतः; श्वेतवर्णः । १९५

अर्जुनः त्रि. [ अर्ज् + उनन् ] श्वेतः । ७३२

अर्जुनी स्त्री. [ अर्ज् + उनन्, गौरादित्वाद् डीप् ] धेनुः; करतोयानदी; कुट्टनी; उपा । २६८

अर्णः [ स् ] क्ली. [ ऋच्छति, ऋ गतौ, 'उदके नुद् चे' त्यत्तरसुन् तस्य च नुद् ] जलम् । ६४८

अर्णवः पुं. [ अर्णासि जलानि सन्त्यस्मिन् । 'अर्णसो लोप-श्चेति' च सलोपश्च ] समुद्रः; 'अघृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः'—इति रघुवंशे । ६५२

अर्तिः स्त्री. [ अर्त् + क्तिन् ] पीडा; 'चूर्णं सभं रुचक-हिङ्गुमहौषधानां शूण्ठयम्बुना कफसमीरणसम्भवासु । हृत्पाश्वर्षपृष्ठजठरातिविसूचिकासु पेयन्तथा यवरसेन च विड्विबन्धे'—इति वैद्यके । धनुरग्रभागः । ६२६

अर्थः पुं. [ अर्थ् + घञ् ] धनम्; 'अर्थेन बलवान् सर्वः अर्थार्द्धवति पण्डितः'—इति हितोपदेशे । (८६७) अभि-धेयः; शब्दप्रतिपाद्यः; 'वागर्थ्याविव सम्पृक्ती वागर्थ-प्रतिपत्तये'—रघुवंशे (१-१) । कारणम्; अभिप्रायः; प्रयोजनं; वस्तु; ब्रह्मं; पदार्थः; विषयः; यात्रा; निवृत्तिः; प्रकारः । ८०

अर्थवादः पुं. [ अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः । अर्थ् + वद् + करणे घञ् ] निन्दाप्रशंसाकरणम्; 'विरोधे गुणवादः स्यादनुवादोऽवधारिते । भूतार्थ-वादस्तद्दानावर्थवादस्त्रिधा मतः'—इति भट्टः । १४५

अर्थव्ययसहः पुं. [ अर्थव्ययस्य सहः । अर्थ् + व्यय + सह् + अच् ] अपव्ययी; व्यालः । ८३२

अर्थसंग्रहः पुं [ अर्थस्य संग्रहः ] धनसञ्चयः; कोशः; हेमरूप्यम् । ८४०

अर्थगमः पुं. [ अर्थस्य आगमः । पञ्चीतत्युत्पः ] धनागमः; आयः; 'अर्थगमो नित्यमरोगिता च प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च । वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या

पद् जीवलोकस्य सुखानि राजन् !'—इति हितोपदेशे । ४३३

अर्थी [ न् ] त्रि. [ अर्थयते इत्यर्थी ] याचकः; धनी [ अर्थो विद्यतेऽस्येति ]; सहायः; सेवकः; विवादी । ३५९

अर्थम् क्ली. [ ऋध् + घञ् ] समानांशः; समभागः; 'आधा' इति भाषा । समभागेऽर्द्धशब्दः पुमान् क्लीवं च । अर्द्धशब्दः पुंल्लिङ्गः खण्डपर्यायः एव, विभागीकृत्य वण्टितस्य तुल्यवण्टिते क्लीवमेवेति । ५६२

अर्थः पुं. [ ऋध् + घञ् ] एकदेशः; भित्तः; शकलं; खण्डं; 'पश्चाद्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद्भयसा पूर्व-कायम्'—इति शाकुन्तले । 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्थ त्यजति पण्डितः । अर्थेन कुस्ते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः'—इति पञ्चतन्त्रे । ७१३

अर्थगुच्छः पुं. [ अर्थचन्द्रसमः गुच्छः ] चतुर्विंशतिगुच्छ-कहारः । ५६२

अर्थचन्द्रः पुं. [ अर्थ चन्द्रस्य ] वाणविशेषः; 'चतुर्भिरर्थ-चन्द्रैश्च जघान चतुरो 'हयान्'—इति रामायणे । नखक्षतं; गलहस्तः; 'शृगालाः सर्वेऽर्थचन्द्रं दत्त्वा निःसारिताः'—इति पञ्चतन्त्रे । 'गर्दनिया' इति यस्य प्रसिद्धिः । चन्द्रकः; चन्द्रखण्डम्; मयूरपुच्छशीर्ष-कम् । ४६९

अर्थोरुक्कम् क्ली. [ अर्थमूरोः अर्द्धोः, तत्र काशते । काश् + ड ] उत्तमस्त्रीणाम् अर्थोरुपयन्तं चेलनाकारुपरिधेय-वस्त्रं; चण्डातकम् । 'लहंगा' इति भाषा । ५४७

अर्थकः पुं. [ ऋध् वृद्धौ, वृन् भान्तादेशश्च ] शिशुः; 'अभूच्च नमः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽभंकः'—इति रघुवंशे । मूर्खः; कृशः; स्वल्पः; सदृशः । ५०२

अर्थः पुं. [ ऋ + यत् ] स्वामी; प्रभुः; वैश्यः; त्रि. श्रेष्ठः; उद्गृह्यः; न्याय्यः । ३४३

अर्थमा [ न् ] पुं. [ अर्थ श्रेष्ठं मिमीते । अर्थ् + मा + कनिन् ] सूर्यः; 'प्रोषितार्थमणं भेरोरन्धकारस्तटीमिव'—इति माघे । 'सूर्योऽर्थमा भगस्त्वष्टा पूषाकः सविता रविः । गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः'—इति महा-भारते । द्वादशादित्यविशेषः; 'मारोचात् कश्यपाज्जा-तास्तेऽदित्या दक्षकन्यया । तत्र शक्रश्च विष्णुश्च जघाते पुनरेव ह ॥ अर्थमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा च नारता

विवस्वान् सविता चैव मित्रो वरुण एव च ॥ अंशो  
'भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश स्मृताः'—इति  
हरिवंशे । अर्कवृक्षाः; पितृदेवविशेषः । ३५

अर्घ्यः पुं. [ ऋ + यत् ] स्वामी; प्रभुः; 'अर्घ्यः प्रेम्णा नो  
तथा बलभस्य'—इति माघे (१८-५२) । वैश्यः ।  
त्रि. श्रेष्ठः; उत्कृष्टः; न्याय्यः । ३४३

अर्वती स्त्री. [ अर्व् + वनिप् + डीप् ] घोटकी; कुट्टनी ।  
४४०

अर्श [ न् ] त्रि. [ ऋ + वनिप् ] कुत्सितः; (४३६)  
पुं., घोटकः; माघे (१२-३१) । इन्द्रः; गोकर्णपरि-  
माणम् ४४०

अर्शकूलम् क्ली. [ अर्वाक् च तत्कूलम् ] अवारम्;  
अर्वाक्तीरम् । 'इस पार' इति भाषा । ६६७

अशंम् क्ली. [ ऋश् + अच् ] अशौरोगः; कलिकाकार-  
गुह्यस्यरोगभेदः । ६०६

अशः [ स् ] क्ली. [ ऋ + असुन् + शृट् ] पायुरोगः;  
दुर्नामिकं; दुर्नामि; गुदकीलः; गुदाङ्कुरः; अनामकम्;  
अशौरोगः । 'मरिचमहौषधचित्रकशूरणभागो यथोत्तरं  
द्विगुणः । सर्वसमो गुडभागः सेव्योऽयं मोदकः प्रसिद्धफलः ।  
ज्वलनं ज्वलयति जाठरमुन्मूलयति शूलगुल्मगदान् ।  
निःशेषयति श्लेपदमर्शांसि विनाशयत्याशु'— इति  
वैद्यके । ६०५

अशंसः त्रि. [ अशंस् + अस्त्यर्थे अच् ] अशौरोगयुक्तः;  
'अन्नपानीषधं सर्वं तत्सेव्यं नित्यमशंसाम् । हस्ते  
पादे मुखे नाम्यां गुदे वृषणयोस्तथा ॥ शोथो हृत्पाश्वशूलं  
च यस्यसाध्योऽशंसो हि सः'—इति भावप्रकाशः । ६०६

अहंन् [ त् ] पुं. [ 'अहंः प्रशंसायामिति' शत् ] क्षपणकः;  
बुद्धः; जिनः; पारगतः; त्रिकालवित्; क्षीणाष्टकर्मा;  
परमेश्ठी; अधीश्वरः; शम्भुः; स्वयम्भुः; भगवान्;  
जगत्प्रभुः; तीर्थङ्करः; तीर्थकरः; जिनेश्वरः; वादी;  
अभयदः; साकं; सर्वज्ञः; सर्वदर्शी, केवली, देवाधिदेवः,  
बोधदः, पुरुषोत्तमः, वीतरागाप्तः; त्रि. पूज्यः; मान्यः;  
स्तुत्यः; 'यदध्यासितमहंद्भिस्तद्धि तीर्थं प्रचसते'—इति  
कुमारसम्भवे । 'त्वमहंतामग्रसरः स्मृतोऽसि नः'—इति  
शाकुन्तले । ८६

अलम् क्ली. [ अल् + अच् ] वृश्चिकपुच्छकण्टकः ।  
'विच्छू का डक' इति भाषा । हरितालम्; अव्य.

भूषणं; पर्याप्तिः; चारणं; निरर्थकं; शक्तिः; अव्यर्थः;  
'सर्वं मे विमलं वदामलमलं गोलं विजानासि  
चेत्'—इति लीलावती । ६४५

अलफः पुं.—क्ली. [ अलति भूषयति मुखम् । अल् + ववुन् ]  
कुटिलकुन्तलः; चूर्णकुन्तलः; भङ्गियुतः केशः;  
[ कर्पूरादेः क्षोदश्चूर्णं तत्सहिताः कुन्तलाश्चूर्णकुन्तलाः,  
तद्धि तत्र न्यस्यते । अलति भूषयति मुखमित्यलकम् । ]  
'कर्णेषु योग्यं तवकर्णिकारं स्तनेषु हारा अलकैष्वशोकम्'—  
इति ऋतुसंहारे । 'हस्ते लीलाकमलमलके बाल-  
कुन्दानुविद्धम्'—इति मेघदूते । पुं. [ अल् + ववुन् ]  
अलकः; विक्षिप्तकुक्कुरः । ५३१

अलका स्त्री. [ अल् + ववुन् + टाप् ] कुवेरनगरी; अष्ट-  
वर्षावधि दशवर्षपर्यन्तवयस्का कन्या । ८३

अलक्तकः पुं. [ न रक्तोऽस्मात् । रस्य लत्वम् । अलक्तः,  
स्वार्थे कन् ] निर्भर्त्सनम्; अलक्तः; लाक्षा; वृक्ष-  
निर्यासविशेषः; राक्षा; जतु; यावः; द्रुमामयः; रक्षा;  
अरक्तः; जतुकं; यावकः; रक्तः; पलङ्कषा; कृमिः;  
वरवर्णिनी; लाक्षारसः; जतुरसः; रागः; जननी;  
जनकरी; सम्पद्या; चक्रवर्तिनी; 'अलक्तकाङ्कानि पदानि  
पादयोः'—इति कुमारसम्भवे । 'पादालक्तकरक्तमौक्ति-  
कशिलः सिद्धाङ्गनानाङ्गतैः'—इति नागानन्दे । ५५५

अलक्ष्मीः स्त्री. [ न लक्ष्मीः, नम्र विरोधे ] नरकदेवता;  
निर्कृतिः; कालकर्णी; कालकर्णिका; ज्येष्ठा देवी;  
दरिद्रा देवी; 'अलक्ष्मीस्त्वं कुरुपासि कुत्सितस्थान-  
वासिनी । सुखरात्री मयादत्तां गृह्णु पूजां च शाश्वतीम् ॥'  
'एवं गते निशीथे तु नारीभिः स्वगृहाङ्गनात् । अलक्ष्मीश्च  
वहिष्कार्या अमन्त्रं च ययाविधि ॥' 'एवं गते निशीथे तु  
जने निद्रार्थलोचने । तावन्नगरनारीभिः शूर्पडिण्डिम-  
वादने । निष्काश्यते प्रहृष्टाभिरलक्ष्मीः स्वगृहाङ्ग-  
नात्'—इति निर्णयसिन्धौ भदनरत्नघृतभविष्य-  
पुराणम् । ८६

अलगर्वः पुं. [ लगति स्पृशति, विवप्, ल्ग । अर्दयति, अर्द् +  
अच्, अर्दः, लक् चासी अर्दश्चेति लगदः, लनः  
सन् पीडकः इत्यर्थः; नञ्समासे अलगर्वः । निर्विषत्वात्  
तद्भिन्नः ] जलसर्पः (जलबोडा, अलाध); सविषो  
जलव्यालभेदः । 'तत्र सविषाः कृष्णाः कर्बुरा अलगर्दा  
इन्द्रायुषाः सामुद्रिका गोचनन्दाश्चेति'—सुश्रुते ।



अलङ्कारः, पुं. [ अलं गृह्यति इति, गृष्+अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] जलव्यालः । ६४३

अलङ्कारणम् क्ली. [ अलम्+कृ+भावे ल्युट् ] भूषणम् । ५५८

अलङ्कर्मणः त्रि. [ अलं समर्थः कर्मणे, ख ] कार्यकुशलः; कर्मक्षमः; चतुरः । ३७०

अलङ्कारः पुं. [ अलम्+कृ+भावे घञ् ] भूषणम्; आभरणं; परिष्कारः; विभूषणं; मण्डनम्; अलङ्किका; भूषा; अलङ्कारणं; कलापः । 'रेवत्यशिवधनिष्ठासु हस्तादिष्वपि पञ्चसु । गुरुशुकुमुधस्याह्नि वस्त्रालङ्कारधारणम् ।' काव्यालङ्कारः; स च द्विविधः, शब्दालङ्कारः अर्थालङ्कारश्च । तस्य लक्षणं 'काव्यशोभाकारो धर्मः'—इति काव्यादर्शः । ५३९

अलङ्कः पुं. [ अलमर्कतेऽच्यते वा । अर्कं+अच्, अर्कं+घञ् वा ] क्षिप्तकुक्कुरः, विक्षिप्तकुक्कुरः । 'पागल कुक्कुर' इति भाषा । 'अलङ्कं विषमिव संवृतः प्रसृतम्'—इति उत्तरचरिते । श्वेतार्कवृक्षः; 'अलङ्को गुणरूपः स्यान् मन्दारो वसुकोऽपि च । श्वेतपुष्पः सदापुष्पः स बालार्कः प्रतापसः ॥ रक्तोऽपरोऽर्कनामा स्यादर्कपर्णो विकीरिणः । रक्तपुष्पः शुक्लफलः तथास्फोटः प्रकीर्तितः'—इति भावप्रकाशः । तत्पर्यायाः—प्रतापसः; राजार्कः; गणरूपी; 'सफेद मदार' इति भाषा । शूकराकाराष्टपादतीक्ष्णदन्तसूच्याकृतिलोमजन्तुविशेषः । दंशनामासुरो भृगुशापाद् अयं जन्तुर्भूत्वा कर्णस्पोहं भित्त्वा परशुरामदृष्टिपातात् शापमुक्तः पूर्वल्पो बभूव । यथा—'ददर्श रामस्तं चापि कृमि शूकरसन्निभम् । अष्टपादं तीक्ष्णदंष्ट्रं सूचीभिरिव संवृतम् ॥ रोमभिः सनिश्चिदाङ्गमलकं नाम नामतः । सोऽज्रवीदहमांसं प्राग् दंशो नाम महामुरः । पुरा देवयुगे तात ! भृगोस्तुल्यवया इव ॥ सोऽहं भृगोः सुदयितां भार्यामपहरं बलात् । महर्षेरभिशापेन कृमिभूतोऽपतं भुवि'—इति महाभारते राजधर्मो । नृपतिविशेषः—स्वनामख्यातो राजा; 'शैब्यः श्वेनकपोतीये स्वमांसं पक्षिणे ददौ । अलङ्कंश्चक्षुषी दत्त्वा जगाम गतिमुत्तमाम्'—इति रामायणे । स्वनामख्यातकाशिराजः; 'वत्सपुत्रस्त्वलङ्कस्तु सन्नतिस्तस्य चात्पजः । अलङ्कः काशिराजस्तु ब्रह्मण्यः सत्यसङ्गरः ॥ पष्टिवर्षसहस्राणि

पष्टिवर्षशतानि च । तस्यासीत् सुमहद्राज्यं रूपयौवनशालिनः'—इति हरिवंशे । २८२

अलसः त्रि. [ न लसति व्याप्रियते । लस्+अच् ] आलस्ययुक्तः; मन्दः; तुन्दपरिमृजः; आलस्यः; शीतकः; अनुष्णः; शीतलः; कुण्ठः; मुखनिरीक्षकः; क्रियामन्दः; क्रियाजडः; अवश्यकर्तव्येषु अप्रवृत्तिशीलः; 'अव्यवसायिनमलसं देवपरं साहसाच्च परिहीनम् । प्रमदेव वृद्धपति नेच्छत्युपगृहीतुं लक्ष्मीः'—इति हितोपदेशे । पुं. वृक्षविशेषः; पादरोगभेदः; 'दुष्टकर्मसंस्पर्शाः कण्डूक्लेदान्वितान्तराः । अङ्गुल्योऽलसमित्याहुः'—इति वाग्भटः । 'करञ्जवीजं रजनी कासीसं पथकं मधु । रोचना हरितालं च लेपोऽग्रमलसे हितः'—इति भावप्रकाशः । ३८७

अलातम् क्ली. [ ला+क्त, नृसमासः ] अङ्गारः; अर्द्धदंघकाष्ठः; 'कुस्तेऽस्मिन्नमोघेऽपि निर्वाणालातलाघवम्'—इति कुमारसम्भवे । ६७

अलादूः पुं.—स्त्री. [ न लम्बते । न+लवि+ऊणित् नलोपश्च वृद्धिः ] लताविशेषः; तत्फलं च; तुम्बः; तुम्बकः; तुम्बा; तुम्बी; पिण्डफला; महाफला; आलादुः; एलादुः; लाबुः; लाबुका; तुम्बिका; तुम्बिः; 'लाउ, लौकी, तुमडी' इति भाषा । 'अलादुः कथिता तुम्बी द्विधा दीर्घा च वर्तुला । मिष्टं तुम्बीफलं दीर्घं पित्तफलेष्मापहं गुह ॥ वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं घातुपुष्टिविवर्धनम्'—इति भावप्रकाशः । 'वर्चोभेदीन्यलाबूनि रूक्षशीतगुरुणि च'—इति चरकः । 'अलाबुभिन्नविट्का तु रूक्षा गुर्वृत्तिशीतला'—इति सुश्रुतः । २०९

अलिः पुं.—स्त्री. [ अलति दंशे समयो भवति यः । अल+इन् ] भ्रमरः; 'अलिपक्षितरत्नेकशस्त्वया गुणकृत्ये धनुषो नियोजिता'—इति कुमारसम्भवे । 'अनुगतमलिवृन्दैर्गण्डभित्तीविहाय'—इति रघुवंशे । वृश्चिकः; काकाः; कोकिलः; मदिरा; वृश्चिकराशिः । २५५

अलिकम् क्ली. [ अत्यते भूष्यते, अल्+कर्मणि इकन् ] ललाटम्; 'अलिकेन च हेमकान्तिना'—इति भाभिनीचिलासे (२-१७१) । ५२५

अलिङ्जरः पुं. [ अल्+इन्, अलि सामर्थ्यं जरयति जृणाति वा । अलि+जृ+अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] मणिकः; मृण्मयः; बहुजलपरयात्रम्;

अलंजरः; मृदादिनिमित्तजलाधारविशेषः; 'घड़ा' इति भाषा । 'उदकान्तमुपानीय मत्स्यं वैवस्वतो मनुः । अलिञ्जरे प्राक्षिपत् चन्द्रांशुसदृशप्रभम्'—इति महाभारते । ३१७

अलिवकः पुं. [ अल्यते, भूष्यते, अल्+कर्मणि बाहुलकात् किन्दच्+स्वार्थे कन् ] बहिर्द्वारसंलग्नचतुरस्रकृत्रिमभूमिः; प्रघाणः; प्रघणः; बहिर्द्वारप्रकोष्ठः; आलिवकः; अलिवकः; गृहद्वारपिण्डकः; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारवाह्यप्रकोष्ठके । गृहाम्यन्तरशय्यार्थपिण्डकायामपि त्रयम् ॥ आलिवकः स्यादलिवन्दोऽपि स्यादलिवक इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । २९९

अली [ न् ] पुं. [ अलं वृश्चिकपुच्छस्यकण्टकं विद्यतेऽस्य । इनि ] भ्रमरः; 'अलिनि मालिनि माधवयोषिताम्'—इति माघे । वृश्चिकः । २५५

अलीकम् क्ली. [ अल्+ईकन् ] मिथ्या; मृषा; 'ज्ञातेऽलीकनिमालिते नयनयोः'—इति अमरशतके । अभ्रियं; 'तद्यथा स महाराजो नालीकमधिगच्छति'—इति रामायणे । स्वर्गः; ललाटम् । १४४

अल्पम् त्रि. [ अल्+प ] किञ्चित्; ईप्त्; मनाक्; स्तोकं; खुल्लकं; श्लक्ष्णं; दंभ्रं; कृशं; तनुः; तनूः; त्रुटिः; त्रुटी; मात्रा; लवः; लेशः; कणः; कणी; कणिका; अणुः; सूक्ष्मं; क्षुल्लं; क्षुल्लकं; खुल्लं; कणा; अतिसामान्यः; 'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्'—इति रघुवंशे । संक्षिप्तम्; अदीर्घम्; 'अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रं स्वल्पं तथायुर्वहवश्च विघ्नाः'—इति पञ्चतन्त्रम् । ६८८

अवकरः पुं. [ अव+कृ+अप् ] सम्मार्जन्यादिनिक्षिप्तधूल्यादिः; सङ्करः; अवस्करः; सङ्कारः; 'कूड़ा' इति भाषा । 'अवकरनिकरं विकिरति तत् किं कृकवाकुरिव हंसः'—इति नीतिशतके । ३०२

अवकाशः पुं. [ अव+काश्+घञ् ] अवसरः; अवस्थानदेशः; व्याप्तिरहितस्थानम्; 'न सूक्ष्मतन्तोरपि तावकस्य तत्रावकाशो भवतः कथं स्यात्'—इति रत्नावली । 'अवकाशेषु चोक्षेषु नदीतीरेषु चैव हि । विविक्तेषु च तुष्यन्ति दत्तेन पितरः सदा'—इति मानवे (३-२०७) । प्रशस्तप्रदेशः; 'अवकाशो विविक्तेऽयं महानद्योः समागमे'—इति रामायणे । द्रव्यादिसञ्चय-

स्थानम्; अवस्थानं; स्थितिः; 'अवकाशं किलोदन्वान् रामायाम्यर्थितो ददौ'—इति रघुवंशे । ८७२

अवकीर्णः त्रि. [ अव+कृ+क्त ] अवचूर्णितः; अवध्वस्तः; विस्तृतः; प्रसृतः; विक्षिप्तः; 'मुक्तानि यौवनसुखानि यशोऽवकीर्णं, राज्ये स्थितं स्थिरधिया चरितं तपोऽपि'—इति नागानन्दे । उल्लङ्घितः; अतिक्रान्तः । ७१४

अवकीर्णी [ न् ] त्रि. [ अवकीर्णमनेन । अव+कृ+क्त+इनि । अवकीर्णं ध्वस्तं व्रतमिति शेषः, अस्यास्तीति ] क्षतव्रतः; स्त्रीसंसर्गादिना त्यक्तनियमः; 'कुशीलवोऽवकीर्णी च वृषलीपतिरेव च । पीनभवंश्च काणश्च यस्य चोपपतिर्गृहे'—इति मनुः । ४०४

अवकृष्टः त्रि. [ अव+कृष्ट+क्त ] नीचः; निकृष्टः; 'प्रतिकर्तुं प्रकृष्टस्य नावकृष्टेन युज्यते'—इति रामायणे । हीनजातीयः; नीचजातीयः; अपकृष्टवर्णः; 'चान्द्रायणं चरेत् सर्वानवकृष्टान् निहन्त्य तु'—इति याज्ञवल्क्यः । गृहादिसम्मार्जनोदकवाहादि-कर्मकरः; 'पणो देयोऽवकृष्टस्य षड्कृष्टस्य वेतनम् । पाण्मासिकस्तयाच्छादो घान्यद्रोणस्तु मासिकः'—इति मनुः । बहिष्कृतः; दूरीकृतः; निष्काशितः; निःसारितः; निर्गमितः; बहिष्कारितः; निर्गलितः, आकृष्टः; 'एकाकिंनापि हि मया रभसावकृष्टनिस्त्रिशदीधितिसटाभरभांसुरेण'—इति नागानन्दे । ३३७

अवकेशी [ न् ] त्रि. [ अवच्युतं कं मुखं यस्मात्, अवकं फलशून्यतामीशितुं शीलमस्य । अवक+ईश्+णिनि ] बन्ध्यः; अफलः; फलकालेऽप्यनुत्पन्नफलो वृक्षादिः । १७८

अवक्रयः पुं. [ अवक्रीयते प्रतिरूपदानेन स्वाधीनं क्रियतेऽनेन । अव+क्री+अच् ] एतावत्कालमुपयोगार्थं भाण्डवस्त्राश्वादिर्मया दीयते, मह्यं च युष्माभिरेतावद्धनं देयमित्येवंविधं भाटकम्; 'भाड़ा' इति भाषा । क्रयसाधनद्रव्यं; मूल्यं; राजप्राह्यं द्रव्यं; वणिग्भिः शुल्कस्थाने प्रतिभाण्डमधिपतये देयम्; 'विक्रयावक्रयाधान्याचितेषु पणान् दश'—इति याज्ञवल्क्यः । ५७३

अवगाहः पुं. [ अव+गद्+घञ् ] जलद्रोणी; नौकाजलसेचनकाष्ठपात्रम् । 'अवगाहः' इत्यपि पाठः क्वचित्तु-स्तके । ७५४

अवगीतः त्रि. [ अव+गी+क्त ] सुहृद्दृष्टः; ख्यातः

गर्हणः; निन्दितः; 'विधुरं किमतः परं परैरवगीतां गमिते दशामिमाम्'—इति भारविः। दृष्टः; क्ली. निर्वादः; लोकापवादः; गीतादिना निन्दाख्यापनम्; असाधुगीतम्; -अशोभनगानम्। 'अवगीतं तु निर्वेदेऽनूक्तदृष्टे विगहिते'—इत्यजयः। ७५५

**अवग्रह** पुं. [ अव + ग्रह् + घञ् ] हस्तिललाटं; वृष्टि-रोधः; अनावृष्टिः; 'वृष्टिर्भवति सस्यानामवग्रह-विशोषिणाम्।' 'नभोनभस्ययोर्वृष्टिमवग्रह इवान्तरे'—इति रघुवंशे. प्रतिबन्धकः; गजसमूहः; स्वभावः; 'तो स्थास्यतस्ते नृपतेनिदेशे परस्परावग्रहनिर्विकारौ'—इति मालविकाग्निमित्रे। ज्ञानविशेषः; शापः; ग्रहणं; स्वीकारः; हरणम्; अपसारणं; निरोधः; अवरोधः; 'स रोचयामास परश्च बन्धं, प्रसह्य रक्षोभिरवग्रहं च'—इति रामायणे। अवान्तरपदसंज्ञा सूचयित् पदपाठकाले किञ्चित् कालमवसानम्; अनादरः; निन्दासूचकवाक्यप्रयोगः। २१८

**अवग्रह** पुं. [ अवनता चूडा यस्य, वा डस्य लः ] ध्वजाग्र-वद्धाधोमुखवस्त्रम्। ४५८

**अवज्ञा** स्त्री. [ अव + ज्ञा + अङ् ] अनादरः; अवहेला; 'आत्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार'—इति रघुवंशे। ७१५

**अवज्ञातम्** त्रि. [ अव + ज्ञा + क्त ] अवमानितम्; अना-दृतं; तिरस्कृतम्; 'अवज्ञाता भविष्यामो लोकस्य जगतीपते'—इति महाभारते। ७१४

**अवटः** पुं. [ अट् + अटन् ] गर्तः; खिलं; कूपः; 'रक्षसां गतसत्त्वानाम् एष धर्मः सनातनः। अवटे ये निधीयन्ते तेषा लोकाः सनातनाः'—इति रामायणे। कुहक-जीवी। ७०२

**अवट्टः** पुं-स्त्री. [ अव + टोक् + मित् + द्वा + दित्वाङ् डु ] श्रीवापश्चाद्भागः; गर्तः (६२४); कूपः; वृक्ष-विशेषः। ५२५

**अवर्तसः** पुं-क्ली. [ अव + तस् + घञ् ] शेखरः; शिरो-भूषणं; वर्तसः; उत्तसः; मुकुटं; मकुटं; मौलिः; मौलीकः; उष्णीषकः; कौटीरकं; कोटीरं; शिरोमणिः; कर्णभूषणं; कर्णपूरः; कर्णपुरः; कुण्डलं; कर्णवेष्टनम्; दन्तपत्रं; कर्णकम्। ५५४

**अवतमसम्** क्ली. [ अवततं व्याप्तं तमः, प्रादिसमासः, अच् ] अल्पान्धकारः; 'क्षीणेऽवतमसं तमः'—इत्यमरः।

'अवतमसभिदायै भास्वताभ्युद्गमेन प्रसभगुणगणोऽसौ दर्शनीयोऽप्यास्तः'—इति माघे (११-५७)। ११०  
अदतोफा स्त्री. [ अवपतितं तोकमस्याः सा ] पतद्गर्भा गीः; स्रवद्गर्भा। २७०

**अवदंशः** पुं. [ अव + दंश् + घञ् ] चक्षणं; विदंशः; सन्धानं; रोचकः; सुरापानश्चिजनकचर्वणद्र-व्यम्। ३२८

**अवदातः** त्रि. [ अव + दै + क्त ] पाण्डुरः; शुक्लगुण-विशिष्टः; 'कुन्दैः संविभ्रमवधूहसितावदातैः'—इति ऋतुसंहारे। पीतवर्णयुक्तं; निर्मलं; 'तत्त्वं क्रमेण विदुषां करुणावदाते, श्रद्धावतां हृदि मदं स्वयमादधाति'—इति शान्तिशतके। मनोज्ञम्; पुं. श्वेतवर्णः; पीतवर्णः। ७३२

**अवद्यम्** त्रि. [ ने वदति परं गुणम्। 'अवद्यावमाधमावं-रेफाः कुत्सिते'—इति वदेर्नवि कर्तरि यत् ] अधमं; कुत्सितं; गहितं; निष्कृष्टम्; क्ली. अनिष्टं; पापम्; 'उदवहदनवद्यां तामवद्यादपेतः'—इति रघुवंशे। ३३७

**अवधारणम्** क्ली. [ अव + धृ + णिच् + ल्युट् ] निश्चयः; 'हि हेतावधारणे'—इत्यमरः। ८८१, ८८४

**अवधिः** पुं. [ अव + धा + कि ] सीमा; विलम् (८०२); कालः; 'अय चेदवधिः प्रतीक्ष्यते'—इति भारविः। अवधानम्। २५९

**अवध्यम्** त्रि. [ वधमर्हति, यत्, ततो नञ्समासः ] मार-णानर्हं; वधायोग्यम्; अनर्थकवाक्यम्। ४०६

**अवध्यस्तः** त्रि. [ अव + ध्वस् + क्त ] अवचूर्णितः; परि-त्यक्तः; निन्दितः। ७१४

**अवनिः** स्त्री. [ अच् + अनि ] पृथिवी; 'तामुन्निद्रामव-निशयनां सीधवातायानस्यः'—इति मेघदूते। १५६

**अवनी** स्त्री. [ अच् + अनि + ङीप् ] पृथ्वी; आयमाणा लता। १५६

**अवन्तिः** पुं. [ अच् + ङिच् ] अवन्तीदेशः; नदी-विशेषः। २८७

**अवन्तिसोमम्** क्ली. [ अवन्तिषु अभिपुतं सोमम्। शक-पार्थिवादित्वात् समासः ] काञ्चिकम्; 'काञ्जी' इति भाषा। ३१८

**अवन्ती** स्त्री. [ अच् + ङिच् + ङीप् ] मालवदेशस्य नगरी; उज्जयिनी; विशाला; पुष्करण्डीनी; अवन्तिका;

‘प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्’—इति मेघ-  
दूते । ‘उत्पन्नोऽर्कः कलिङ्गे तु यमुनायां च चन्द्रमाः ।  
अवन्त्यां च कुजो जातो मागधे च हिमांशुजः’—इति  
मत्स्यपुराणम् । २८७

अवपातः पुं. [ अव + पत् + घञ् ] रन्ध्रं; गर्तः; अध-  
पतनं; गजादीनां ग्रहणार्थं कृतस्तृणादिप्रच्छन्नो गर्तः;  
‘अवपातस्तु हस्त्यर्थे गर्तश्छन्नस्तृणादिना’—  
इति यादवः (वैजयन्तीकोशः) । ‘रोधांसि निघ्नन्नव-  
पातमग्नः करीव वन्यः परुषं ररास’—इति रघुवंशे ।  
नाटकादौ भयादिजनितपलायनसम्भ्रमादिवर्णनेन  
प्रस्तुतस्य परिवर्तः; ‘अवपातं तु निष्कामप्रवेश-  
प्रासविद्रवैः’—इति दशरूपके । ७८२

अवभूयः पुं. [ अवभिभूयते अनेन, अव + भृ + क्यन् ]  
दीक्षान्तयज्ञः; प्रधानयागसमापकापरयज्ञः; यज्ञादेर्व्यू-  
नाधिकदोषशान्तिनिमित्तकशेषकर्तव्यहोम इति यावत्;  
यज्ञावशेऽस्नानं; ‘ततश्चकारावभूयं विधिदृष्टेन  
कर्मणा’—इति भारते । ‘भुवं-कोष्णेन कुण्डोष्नी  
मेघेनावभूयादपि’—इति रघुवंशे । ४१७

अवमः त्रि. [ अवति अस्माद् आत्मानम् । अ व रक्षणार्थे,  
‘अवद्येति’ सूत्रेण अवतेः अमप्रत्ययो निपातितः ]  
अधमः; निन्दितः; ‘अनलकान् अलकान् अवमां  
पुरीम्’—इति. रघुवंशे । क्ली. तिथ्यन्तद्वयस्पृष्टैक-  
दिनवारः । ३३७

अवयवः पुं. [ अवयवैति इति, ‘यु मिश्रणे’ + पचाद्यच् ]  
अङ्गं; ‘स्वैरेवावयवैः प्रियस्य विशतस्तन्व्या कृतं  
मङ्गलम्’—इति अमरशतके । उपकरणम्; अंशः;  
एकदेशः; ‘तेषामवयवान् सूक्ष्मान् घण्टांमप्यमितौ-  
जसाम्’—इति मनुसंहितायाम् । न्यायमते आरम्भद्रव्यं  
च, तद् उपादानकारणतया च व्यवहियते, यदुक्तम्—  
‘अनित्या तु तदन्या स्यात् सैवावयवयोगिनी’—इति  
भाषापरिच्छेदे । ‘प्रतिज्ञाहेतुदाहरणोपनयनिगमान्य-  
नुमानावयवाश्च ।’ ७४४

अवरजः पुं. [ वृ + अप्, ततो नञ्समासः, अवर + जन् +  
ड ] कनिष्ठभ्राता; ‘अस्य चावरजं विद्धि भ्रातरं मां  
तु लक्ष्मणम्’—इति रामायणे । हीनवंशजातः; ‘द्वौ  
शूरावरजौ धीरवित्रपाख्यौ निजाह्वया’—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् । शूद्रः; ‘यदि स्त्री यद्यवरजः श्रेयः

किञ्चित् समाचरेत् । तत्सर्वमाचरेद् युक्तो यत्र वास्य  
रमेन्मनः’—इति मानवे । ५०६

अवरोधः पुं. [ अव + रुध् + अधिकरणे घञ् ] राजस्त्री-  
गृहं; राजगृहम्; ‘आपानभूमिगमनमवरोधस्य दर्शनम्’  
—इति रामायणे । राजदाराः; ‘यस्यावरोधस्तन-  
चन्दनानां प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले । कलिन्दकन्या  
मथुराङ्गतापि गङ्गोर्मिसंसक्तजलेव भाति’—इति  
रघुवंशे । निरोधः; बाधा; अन्तरायः; आच्छादनं;  
केदारादिवेष्टनं; [ भावे घञ् ] तिरोधानम् । ४८०

अवरोहः पुं. [ अव + रुह् + कर्तरि संज्ञायां घञ् ] लतोद्-  
गमः; वृक्षमूलादप्रपर्यन्तं गता लता; शाखा; शिफा;  
‘सुदूरमथ गत्वा तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ । अवरोहशता-  
कीर्णं वटमासाद्य तस्थुः’—इति रामायणे । स्वर्गः;  
[ अव + रुह् + भावे घञ् ] अवतरणम्; आरोह-  
णम् । १८४

अवर्णवादः पुं. [ वर्ण्यते प्रशस्यते अनेन इति वर्णः, ततो  
विरोधे नञ्समासः । अवर्णः + वादः ] निन्दा; परी-  
वादः; ‘सोढुं न तत्पूर्वमवर्णमीशो आलानिकं स्थाणुमिव  
द्विपेन्द्रः’—इति रघुवंशे । १४८

अवलग्नः पुं.-क्ली. [ अवलग्न्यते इति, अव + लग् + क्त,  
लञ् + क्त वा ] मध्यदेशः; ‘विपुलतरोन्मुखलोचना-  
वलग्नम्’—इति माघः । त्रि. संलग्नः; संयुक्तः । ५१७

अवलीढा स्त्री. [ अव + लिह् + भावे क्त, टाप् ]  
अवज्ञा; अवहेलनम् । ७१५

अवलीला स्त्री. [ अवरा लीला ] हेला; अनायासः;  
‘रतिज्ञं नूतनं प्राप्य विषतुल्यं पुरातनम् । कान्तं दृष्ट्वा  
हिनस्त्येव सोपायेनावलीलया’—इति ब्रह्मवैवर्ते । ‘शूलं  
च भ्रमणं कृत्वा पपात दानवोपरि । चकार भस्मसात्तञ्च  
सरथं चावलीलया’—इति च ब्रह्मवैवर्ते । ७१५

अवलेपः पुं. [ अव + लिप् + भावे घञ् ] अहङ्कारः;  
‘दिङ्नागानां पथि परिहरन् स्थूलहस्तावलेपान्’—इति  
मेघदूते । लेपनं; दूषणं; सङ्गः । ७२२

अवलोकनम् क्ली. [ अव + लुक् + भावे ल्युट् ] दर्शनम्;  
आलोकनं; ‘जलवेलावलोकनकुतूहली’—इति नागा-  
नन्दे । ५६६

अवश्यम् अव्य. [ न वश्यं ] निश्चयः; नूनं; निश्चितम्;  
‘अवश्यं याति तिर्यक्त्वं जग्ध्वा चैवाहुतं हविः’—इति

मनुः। वि. [ न + वश् + ण्यत् ] अनायतः; स्वाधीनः;  
स्वतन्त्रः। ८३६

अवश्यायः पुं. [ अवश्यायते शैत्यमापद्यते इति । 'शयैः  
गती' श्याद्वधेति ण, ततो 'आतो युगिति' युक् ]  
हिमम्; 'अवश्यायनिपातेन किञ्चित्प्रकिलन्नशाद्वला'—  
इति रामायणे। गर्वः। ६५०

अवष्टम्भः पुं. [ अव + ष्टम्भि प्रतिवन्धे, षञ् पत्वं च ]  
सौष्टवम्; स्तम्भः; प्रारम्भः; अवलम्बनं; बौवनं;  
निष्पन्दता; स्वर्णं; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि  
घतो गोत्रभिद्रव्यमर्षणः'—इति रघुवंशे। ७५९

अवत्सरः पुं. [ अव + नृ + अच् ] अवकाशः; अणम्;  
योग्यकालः; क्रियास्थितियोग्यतासम्पादकरूपः कालः;  
'कामस्तु वाणावत्सरं समीक्ष्य'—इति कुमारसम्भवे।  
शिष्यजिज्ञासानिवृत्तावश्यकवक्तव्यरूपः सङ्गतिविशेषः;  
अनन्तरवक्तव्यम्; 'उपमानेऽवत्सरसङ्गतिः' इति जगदीशः।  
प्रस्तावः; मन्त्रविशेषः; वर्षणं; वत्सरः। ७५०

अवसानम् क्ली. [ अव + सो + ल्युट् ] क्रियासमाप्तिः;  
सातिः; विरामः; मृत्युः; 'पुंसोऽवसानं ब्रजतोऽपि  
निष्कुरैरिष्टिर्धनैः पञ्चपदीनमुच्यते'—इति पञ्चतन्त्रे।  
सीमा। ८२५

अवस्कन्दः पुं. [ अव + स्कन्द + अच् ] विजिगीषुणां  
निवेशस्थानं; शिविरम्; अवगाहनम्; अवस्कन्दनं;  
'लतानृपातं कुसुमान्यगृह्णात् स नद्यवस्कन्दमुपास्पृशच्च ।  
कुतूहलान्चारुशिलोपवेशं काकुत्स्य ईपत् स्मयमान  
आस्त'—इति मट्टो (२-११) (नद्यामवस्कन्दोऽन्नगाहो  
यत्र स्नानक्रियायाम्)। आक्रमणम्; 'अवस्कन्दनयाद्  
राजा प्रजागरकृतथमम् । दिवासुप्तं समाह्वयान्निद्रा-  
व्याकुलमन्तिकम्'—इति हितोपदेशे। ४५२

अवस्करः पुं. [ अवकीर्षते क्षिप्यते इति । अव + कृ +  
अप् + सुट् ] विष्ठा; गुह्यं (८२३); संमार्जेन्यादि-  
निक्षिप्तवृत्त्यादिः। ६३७

अवहारः पुं. [ अव + ह + घञ् ] ग्राहनामा जलजन्तुः;  
नकराजः; अवग्राहः; अवहारकः; चौरः; छूतयुद्धा-  
दिविग्रामः; निमन्त्रणम्; उपनेतव्यद्रव्यं; धर्मान्तरम्;  
आह्वानम्; स्वधर्मपरित्यागपूर्वकधर्मान्तरग्रहणम्;  
अन्वयमग्रहणम्; प्रत्यर्पणम्। ६५६

अवहितम् क्ली. [ न वहिस्तिष्ठतीति । अवहिः + स्या +

क, पृषोदरादित्वम् ] आकारगुप्तिः; अवहित्या। ७७२  
अवहित्या स्त्री. [ न वहिस्तिष्ठतीति । अवहिः + स्या +  
क + टाप् ] आकारगुप्तिः; रत्यादिसूचको मुखरागा-  
दिराकारः; अङ्गवैकृतं; भयलज्जादिना तस्य गोपनं;  
'भयगौरवलज्जादेर्हर्षाद्याकारगुप्तिरवहित्या । व्या-  
पारान्तरसक्त्यान्ययाभाषणविलोकनादिकरी'— इति  
साहित्यदर्पणे। यथा कुमारसम्भवे—'एवं वादिनि देवर्षी  
पार्वे पितुरधोमुखी । लीलाकमलपत्राणि गणयामास  
पार्वती ।' 'लज्जावशात् । कमलदलगणनाव्याजेन हर्षं  
जुगोप इत्यर्थः । अनेन अवहित्याख्यसञ्चारी भाव उक्तः,  
तदुक्तम्—'अवहित्या तु लज्जादेर्हर्षादाकारगोपनम्'—  
इति मल्लिनाथः। ७७२

अवहेलम् क्ली.—स्त्री. [ अव + हेङ् + घञ्, उस्य लः;  
डलयोरैकत्वस्मरणात् ] अनावरः; अवज्ञा; अवहेलनम्;  
अवमानना, अवहेला। ७१५

अवाक् [ च् ] वि. [ नास्ति वाक् यस्य सः । विवदन्तवच्  
घातोर्नञ्समासेऽयं प्रयोगः ] अघोमुखं [ अवपूर्वं—  
अञ्च्घातोः प्रयोगः ] दक्षिणं; वाक्यरहितः; मूकः।  
'गूंगा' इति भाषा। १०२

अवाक्यभ्रुतिः वि. [ नास्ति वाक् उच्चारणशक्तिः, भ्रुतिः  
श्रवणोद्भ्रियं च यद्य ] कल्लमूकः; एडमूकः ६०९।

अवाग्भागः पुं. [ अवाक् अवश्चासौ भागश्च ] बुध्नः;  
निम्नभागः; मूलम्। १८१

अवाची स्त्री. [ अव + अञ्च् + विवद् + डीप् ] दक्षिण  
दिक्; अघोमुखी। १०१

अविः पुं. [ अच् + इन् ] मेघः; 'श्वयूकरत्तरोष्म्याणां  
गोऽजाविमृगपक्षिणाम्'—इति मनुः। 'मृशाणि हस्ति-  
करमहिषीत्तरवाजिनाम् । गोजावीनां स्त्रियां पुंसां  
मश्रवणं उदाहृतः'—इति वैशके। मूर्यः; पर्वतः; नाथः;  
मूषिककम्बलः; प्राचीरः; वायुः; स्त्री. ऋतुमती;  
अवी। २७९

अविद्वसम् क्ली. [ अवेर्दुष्या दुग्धम् । 'अवेर्दुग्धे सोऽद्वस-  
मरीसचः' इति द्रुसप्रत्ययः ] मेपीदुग्धम्। २७९

अविनीता स्त्री. [ न विनीता, नञ्त्तुल्यः ] पुंश्चली;  
अमती; कुलटा। ६९६

अविमरीसम् क्ली. [ अवि + मरीसच्, अवेर्दुग्धे मरीसच्  
प्रत्ययः ] मेपीदुग्धम्। २७९

अविरतम् क्ली. [ न विरतम्, नञ्प्रत्ययः ] सततम्; अनवरतम्; 'अविरतोऽञ्जितवारिविपाण्डुभिः, विरहितै-  
रचिरद्युतितेजसा'—इति किरातार्जुनीये । ६९८  
अवितोढम् क्ली. [ अवेर्दुग्धम्, अवि+सोढच् ] मेघो-  
दुग्धम् । २७९  
अविस्पष्टम् क्ली. [ वि+स्पश्+क्त, ततो नञ्समासः ]  
अस्पष्टवाक्यं; म्लिष्टं; 'नाविस्पष्टमधीयीत न शूद्र-  
जनसन्निवो'—इति मनुः । त्रि. अस्फुटः; यथा—'विवृद्धि  
कम्पस्य प्रययतितरां साध्वसवशादविस्पष्टां दृष्टि  
तिरयति पुनर्वाप्ससिलैः'—इति रत्नावल्याम् । १४१  
अवी स्त्री. [ अवत्यात्मानं लज्जया । अव्+ई ] ऋतु-  
मती; रजस्वला । ४८८  
अवेक्षा स्त्री. [ अव+ईक्ष्+अ+टाप् ] प्रत्यवेक्षणं;  
प्रत्यक्षदृष्टिः; प्रतिजागरः; अवधानम्; अनुसन्धानं;  
यथा—'अलम्बमिच्छेदृण्डेन लब्धं रक्षेदवेक्षया । रक्षितं  
वर्द्धयेद् वृद्ध्या वृद्धं दानेन निक्षिपेत्'—इति मनुः ।  
'यदि रामस्य नावेशा त्वयि स्यान्मातृवत्सदा'—इति  
रामायणे ७८२  
अव्यक्तः पुं. [ वि+अञ्ज्+क्त, ततो नञ्समासः ]  
मूर्खः; क्ली. परमात्मा; त्रि. अस्फुटः; विष्णुः; शिवः;  
कन्दर्पः; क्ली. प्रकृतिः; आत्मा; महादादि; अज्ञात-  
राश्यादिः; अदृश्यः; प्रधानं महादादि; ब्रह्म; पर-  
ब्रह्म । ८४२  
अव्यक्तवाक् पुं. [ अव्यक्ता अस्फुटा वाक् यस्य सः ]  
लोहलः; अस्पष्टभाषणकर्ता । ३८७  
अव्यञ्जनः पुं. [ नास्ति व्यञ्जनं शुभलक्षणं शृङ्गं यस्य ]  
शृङ्गहीनपशुः; अस्फुटे त्रि., अनुद्धिन्नरजस्वलाचिह्ना  
कन्या; यथा—'असम्प्राप्तरजा गौरी प्राप्ते रजसि  
रोहिणी । अव्यञ्जना भवेत्कन्या कुचहीना च नग्निका'—  
इति पञ्चतन्त्रे । २७८  
अव्यापारः पुं. [ न व्यापारः ] व्यापाराभावः; कर्म-  
विरतिः; क्षणः । ८५१  
अशनम् क्ली. [ अश्+त्युट् ] अन्नम्; भक्षणं (३२५);  
'शीतं निर्झरवारि, पानमशनं कन्दाः सहाया मृगाः'—इति  
नागानन्दे । 'विशिष्टमिष्टसंस्कारैः पथ्यरिष्टैस्तादिसिः ।  
मनोजं शुचि नात्युष्णं प्रत्यग्रमशनं हितम्'—इति  
सुश्रुतः । पुं. असनवृक्षः; पीतशालवृक्षः । ३१९

अशानया स्त्री. [ अशन+क्यच् ] भोजनेच्छा; क्षुधा;  
बुभुक्षा । ३६१  
अशानिः पुं.—स्त्री. [ अशनाति संहारं करोति । निप्रत्ययः ]  
वज्रं; विद्युत्; 'अथवा मम भाग्यविप्लवाद् अशानिः  
कल्पित एष वेधसा'—इति रघुवंशे । ५६  
अशुभम् क्ली. [ न शुभम्, नञ्प्रत्ययः । नास्ति शुभं  
यस्येति समासे वाच्यलिङ्गः ] पापम्; अमङ्गलं,  
(८०४); 'न च किञ्चिदुवाचैर्न शुभं वा यदि वाशुभम् ।  
मा च वोऽस्त्वशुभं किञ्चित्सर्वथा पाण्डुनन्दनाः'—इति  
भारते । तद्युक्ते त्रि., यथा—'सर्वाशुभानां परिमोक्षकारि  
सम्पूजनं देववरस्य विष्णोः'—इति ज्योतिषतत्त्वे ।  
'अशुभं सञ्जनं दृष्ट्वा देवब्राह्मणपूजनम् । दानं कुर्वीत  
कुर्याच्च स्नानं सर्वापि जीजलैः'—इति तिथ्यादि-  
तत्त्वे । ६२७  
अशोकः पुं. [ नास्ति शोको यस्मात् ] वृक्षविशेषः;  
शोकनाशः; विशोकः; वञ्जुलद्रुमः; वञ्जलः; मधु-  
पुष्पः; अपशोकः; कङ्कलः; कैलिकः; रक्तपल्लवः;  
चित्रः; विचित्रः; कर्णपूरः; सुभगः; दोहली; ताम्र-  
पल्लवः; रोगितरुः; हेमपुष्पः; रामा, वामाङ्घ्रि-  
घातनः; पिण्डीपुष्पः; नटः; पल्लवद्रुः; 'पादाघाता-  
दशोको विकसति वकुलो योषितामास्यमद्यैः'—इति  
साहित्यदर्पणे । 'पादाहतः प्रमदया विकसत्यशोकः शोकं  
जहाति वकुलो मुखशाशुसिक्तः ।' त्रि. शोकरहितः;  
'त्वामशोक हराभीष्ट मधुमाससमुद्भव । पिवामि शोक-  
सन्तप्तो मामशोकं सदा कुह ॥' पुं. दशरथस्य मन्त्रो;  
यथा—'वृष्टिर्जयन्तो विजयः सिद्धार्थोऽप्यर्थसाधकः ।  
अशोको धर्मपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमोऽभवत्'—इति  
रामायणे । नृपतिविशेषः; 'अशोको नाम राजा-  
भूमहावीर्योऽपराजितः । तस्मादवरजो यस्तु राजन्न-  
श्वपतिः स्मृतः'—इति भारते । क्ली. पारदम् । १९२  
अश्मः पुं.—पर्वतः; मेघः । वैदिकशब्दोऽयम् । १६९  
अश्मगर्भः पुं. [ अश्मेव गर्भो यस्य ] हरिन्मणिः; मरकतम्;  
अश्मगर्भजम् । 'पन्ना' इति भाषा । ७५  
अश्मा [ न् ] पुं. [ अश्नुते इति, अशूङ् व्याप्तौ, मनिन् ]  
शिला; द्रुपत् । १६८  
अश्मन्तकम् क्ली. [ अश्मन्त+स्वार्थे कन् ] चुल्ली;  
मल्लिकाच्छादनं; दीपाधाराच्छादनम् । ३१३

अश्मसारः पुं.—कली. [ अश्मनः सारः ] लौहः; 'प्राणाः सत्वरमश्मसारकठिना गच्छन्ति गच्छन्त्वमी'—इति साहित्यदर्पणे । १७१

अश्मन् क्ली. [ अश्नुते व्याप्नोति नेत्रं कण्ठं वा । अश्+रक् ] नेत्रजलं; 'तामप्यश्रं नवजलमयं मोचयिष्यस्य-वश्यम्'—इति मेघदूते । 'सखीभिरश्रोत्तरमीक्षितामि-माम्'—इति कुमारसम्भवे । रक्तम् । ५१९

अश्रः पुं.—अश्रः; कोणः; अश्रिः । ७२७

अश्रान्तम् क्ली. [ अविद्यमानं श्रान्तमत्र । नञ्समासः ] नित्यम्; अनवरतं; श्रमरहिते त्रि., यथा—'अश्रान्त-श्रुतिपाठपूतरसनाविभूतभूरिस्तवा जिह्वन्नह्यमुखीघ-विघ्नितनवस्वर्गक्रिया केलिना । पूर्वं गाधिसुतेन साभि-घटिता मुक्ता नु मन्दाकिनी यत्प्रासाददुकूलवल्लिरनि-लान्दोलैरखेलद्विवि'—इति नैषधे १ सर्गः । ६९८

अश्रिः स्त्री.—[ अश्नाति अश्नुते वा । अश् भोजने, अशू व्याप्तौ वा । आश्रीयते प्रहारार्थम्, 'आडि श्रिहनिभ्यां ह्रस्वश्चेति' इण् स च डित्, डित्वाट् टिलोप आडो ह्रस्वश्च ] गृहादेः कोणः; अस्त्रादेरग्रभागः । ७२७

अश्र क्ली. [ अश्नुते नेत्रमिति । अश्+रक् । अथवा न श्रयति इति । न+श्रि+ङुन् ] चक्षुर्जलं; नेत्राम्बु; रोदनम्; अश्रम्; अश्रम्; अश्रु; वाष्पं; 'श्रुतदेह-विसर्जनः पितृश्चिरमश्रूणि विमुच्य राघवः'—इति रघुवंशे । ५१९

अश्लीलः त्रि. [ न श्रियं लाति, ला+क ] ग्राम्यः । 'गंवाल्' इति भाषा । १४२

अश्वः पुं. [ अश्नुते मार्गं व्याप्नोति । अशू व्याप्तौ, अशू-श्रुपिलटीति क्वन् ] घोटकः; पीतिः; पीती; वीतिः; घोटः; तुरगः; तुरङ्गः; तुरङ्गमः; वाजी; वाहः; अर्वा; गन्धर्वः; हयः; सन्धवः; सप्तः; 'जितसिंहभया नागा यत्राश्वा विलयोनयः'—इति कुमारसम्भवे । 'गच्छन्त-मुच्चलितचामरचारमश्वम्'—इति माघे । वृष्णिवंशीयो नृपतिश्चित्रकस्य पुत्रः; 'चित्रकस्याभवन् पुत्राः पृथु-चित्रयुरेव च । अश्वग्रीवोऽश्वत्राहुरच सुपाशर्वक-गवेपणौ ॥ अरिष्टनेमिरश्वश्च'—इति हरिवंशे । दानव-विशेषः; अश्वामुरः; 'चत्वारिंशद्विनोः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत । स्वभानुरश्वोऽश्वपतिवृ'पपर्वाजकस्तथा'—इति महाभारते । ४३६

अश्वतरः पुं.—स्त्री. [ तनुः अश्वः । वत्सोऽश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे' इति ष्टरच् । अश्वत्वं च जातिः । तत्सहचरित-स्योक्तवर्मस्य तनुत्वम् अन्यपितृकत्वात् ] अशवायां गर्दभेन जातः पशुविशेषः; वेसरः; 'खच्चर' इति भाषा । 'हयानश्वतरानुष्टांस्तथैव सुरभेः सुतान्'—इति रामायणे । 'सकृद्दुष्टं हि यो मित्रं पुनः सन्धातुमिच्छति । स मृत्युमुपगृह्णाति गर्भादश्वतरी यथा'—इति पञ्च-तन्त्रे । पुं. वेगसरः; नागराजविशेषः; 'कम्बलाश्वतरी चापि नागः कालीयकस्तथा । ऐरावतो महापशुः कम्बलाश्वतरावुभौ'—इति महाभारते । गन्धर्व-विशेषः; पुंवत्सः । ४५०

अश्वत्यः पुं. [ अश्वत्यं जलमस्यास्ति । मूले सिक्तत्वात् । अर्श आद्यच् । अश्वत्यवत् कामकर्मवातेरितनित्य-प्रचलितस्वभावत्वाद् आशुविनाशित्वेन श्वोऽपि स्थास्य-तीति विश्वासानर्हत्वाच्च मायामयः संसारवृक्षः । शालमलिवटाद्यपेक्षया न श्वश्चरं तिष्ठति, अश्व इव तिष्ठति वा । स्या गतिनिवृत्तौ । पृषोदरादित्वात् पूर्वोत्तरपदान्ताद्योः सकारयोस्तकारौ 'सुपिस्यः' इति क ] वृक्षविशेषः; बोधिद्रुमः; चलदलः; पिप्पलः; कुञ्जराशनः; अच्युतावासः; चलपत्रः; पवित्रकः; शुभदः; बोधिवृक्षः; याज्ञिकः; गजभक्षकः; श्रीमान्; क्षीरद्रुमः; विप्रः; मङ्गल्यः; श्यामलः; गुह्यपुष्पः; सेव्यः; गत्यः; शुचिद्रुमः; घनुवृक्षः; 'अश्वत्यं वन्दये-न्नित्यं पूर्वाह्णे प्रहरद्वये । अत ऊर्ध्वं न वन्देत अश्वत्यं तु कदाचन ॥' १९६

अश्वमुखः पुं. [ अश्वस्य मुखमिवं मुखं यस्य ] किन्नरः; स्त्री. किन्नरी; किम्पुल्लस्त्री; 'न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता भिन्द-न्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः'—इति कुमारसम्भवे । ८२

अश्वारोहः त्रि. [ अश्वमारोहतीति । अश्व+आ+रह्+अण् ] अश्ववृष्टस्थितयोधा; सादी; अश्ववाहः; अश्व-वारः; तुरगी; 'घोडसवार' इति भाषा । ३९८

अश्विनौ पुं. द्विव. [ प्रशस्ता अश्वाः सन्ति ययोः, इनि । यद्वा अश्विन्याम् जाती । सन्धिषेलेत्यपो नक्षत्रेभ्यो बहुलमिति लुकि, लुकृतद्वितलुकीति डीपो लुक ] अश्वि-नीकुमारी; देवभियजो; 'त्वाष्ट्री तु सविनुभार्या वडवा-रूपधारिणी । अमृत्यत महाभागा सान्तरीक्षेऽश्विना-वुभौ'—इति महाभारते । ८४

अष्टापदम् पुं.—क्ली. [ अष्टसु धातुषु पदं प्रतिष्ठा यस्य, पङ्कती पङ्कती अष्टौ पदानि यस्येति वा । अष्टनः संज्ञायामिति दीर्घः ] स्वर्णः; धुस्तरः; शारीणां फलकः; 'स रामकरमुक्तेन निहतो द्यूतमण्डले । अष्टापदेन बलवान् राजा वज्रधरोपमः'—इति हरिवंशे । पुं. [ अष्टौ पदानि यस्य ] शरभः; मर्कटः; लूता; चन्द्रमल्ली; क्रिमिः; कैलासपर्वतः; कौलकः; स्त्री. [ अष्टौ पादा यस्याः । संख्यासुपूर्वस्येति पादस्यान्तलोपे पादोऽन्यतरस्यामिति डीपि पादः पत् ] चन्द्रमल्ली । १७३

अष्टीवान् [ त् ] पुं.—क्ली. [ अतिशयितमस्थि यस्मिन् । अस्थि+मत्तुप्, मस्य वः । 'आसन्दीवदष्टीवदिति' निपातनादस्थिशब्दस्याष्टीभावः ] जानु । ५१५

असंशयम् क्ली. [ नास्ति संशयो यत्र ] अद्वा; निश्चितम् । ८८५

असकृत् अव्य. [ न सकृत्, नञ्समासः ] पुनः पुनः; वारं वारम्; 'अनेकस्यैकधा साम्यमसकृद्राप्यनेकधा'—इति साहित्यदर्पणे । 'अन्नाद्येनासकृच्चैतान् गुणेश्च परिचोदयेत्'—इति मानवे । ७२४

असक्तम् अव्य. [ सक्तस्य अभावः, सज्ज्, भावे क्त, नञाव्ययसमासः ] अविरतम्; अनारतं; निरन्तरम्; असज्जनम् । ६९८

असती स्त्री. [ न सती साध्वी, नञ्समासः ] भ्रष्टा; व्यभिचारिणी; पुंश्चली; धर्षिणी; बन्धकी; कुलटा; इत्वरी; स्वैरिणी; पांशुला; घृष्टा; दुष्टा; धर्षिता; लङ्का; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'आवाल्यादसती सती सुरपुरीं कुन्ती समारोहयत्'—इति धर्मविवेके । ४९६

असनः पुं. [ अस्यते इति, अस्+ल्युट् ] वृक्षविशेषः; महासर्जः; सौरिः; बन्धूकपुष्पम्; प्रियकः; नीलकः; बीजवृक्षः; प्रियसालकः; पियाशालः; 'प्रियविमानितमानवतीरुषां निरसनैरसनैरवर्धार्थता'—इति भाषे । 'बीजकः पीतसारश्च पीतशालक इत्यपि । बन्धूकपुष्पः प्रियकः सर्जकश्चासनः स्मृतः'—इति भावप्रकाशे । क्ली. क्षेपणं; 'तृणनिरसने विनियोगः ।' १९९

असम्पूर्णम् त्रि. [ न सम्पूर्णं, नञ्तत्पुरुषः ] समाप्तिरहितम्; असमाप्तम्; अनिष्पन्नम्; अपूर्णम् । ७१३

असम्मतः त्रि. [ न सम्मतः, नञ्समासः ] अनभिमतः;

प्रणाध्यः; 'असम्मतः कस्तव मुक्तिमार्गं पुनर्भवकलेशभयात् प्रपन्नः'—इति कुमारसम्भवे । ३६६

असहनः पुं.—स्त्री. [ न सहनः, नञ्समासः ] शत्रुः; अधीरः; असहिष्णुः; 'कस्मात्प्राप्य तिरस्क्रियामसहनोऽप्यस्यादिति प्रस्तुते'—इति महावीरचरिते । 'प्रिया मुञ्चत्यद्य स्फुटमसहना जीवितमसौ'—इति रत्नावल्याम् । क्षमाराहित्यम्; 'अधिक्षेपापमानादेः प्रयुक्तस्य परेण यत् । प्राणात्ययेऽप्यसहनं तत्तेजः समुदाहृतम्'—इति साहित्यदर्पणे । ४५५

असारम् त्रि. [ नास्ति सारो यस्य ] सारैरहितं वस्तु; स्थिरांशशून्यं; फल्गु; निःसारं; निष्फलं; वार्त्तम् । ७७७  
असिः पुं. [ असतीति, अस् दीप्ती, इन् ] अस्त्रभेदः; खड्गः; निर्विशः; चन्द्रहासः; रिष्टिः; कौक्षेयकः; मण्डलाग्रः; करपालः; कृपाणः; प्रवालकः; भद्रात्मजः; रिष्टः; ऋष्टिः; धाराविषः; कौक्षेयः; तरवारिः; तलवारिः; तरवाजः; कृपाणकः; करवालः; कृपाणीः; शस्त्रः; विशसनः; 'पर्णशालामय क्षिप्रं विकृष्टासिः प्रविश्य सः । वैलुप्यपौनरुक्तेन भीषणां तामयोजयत्'—इति रघुवंशे (१२-४०) 'असिं विशसनः खड्गस्तीक्ष्णवारो दुरासदः । श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपालो नमोऽस्तुते'—इति वाराहीतन्त्रम् । ४७२

असिकनी स्त्री. [ न सिता शुक्लकेशा । छन्दसि वनमेव इति तस्य वन्, नान्तात्वाद् डीप् च ] अवृद्धान्तःपुरचारिणी प्रेष्या; असिकनिका; नदीविशेषः; दक्षपत्नी; वीरणसुता; 'असिकनीभावहृत्पत्नीं वीरणस्य प्रजापतेः । सुतां सुतपसा युक्ताम्'—इति हरिवंशे । ४९१

असितः पुं. [ न सितः शुक्लः । नञ्समासः ] शनिग्रहः, कृष्णपक्षः (५०); त्रि. कृष्णः (७३४); श्यामः, 'असितगिरिनिभं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रम्'—इति पुष्पदन्तः । 'चकाशे विनिविष्टेन स सन्ध्येव निशाऽसिता'—इति रामायणे । कृष्णवर्णः; सूर्यवंशोद्भवभरतपुत्रो राजा; 'भरतात् तु महातेजा असितो समजायत'—इति रामायणे । व्यासशिष्यो मुनिः; 'असितस्यैकपर्णा तु देवलस्य महात्मनः'—इति हरिवंशे । पर्वतप्रभेदः; अद्रिभेदः; गिरिविशेषः; 'तत्र पुण्यङ्गदः ह्यातो मैनाकश्चैव पर्वतः । बहुमूलफलोपेतस्त्वसितो नाम पर्वतः'—इति भारते । ४८



असिधेनुः स्त्री. [ असिर्वेनुरिव यस्याः । असेर्वेनुसादृश्येन छुरिकायास्तद्वत्ससादृश्यम् ] छुरिका; असिधेनुका । 'छुरी' इति भाषा । ४७३

असिपुत्रिका स्त्री. [ असेः पुत्रीव ] छुरिका; असिपुत्री । ४७३

असुः पुं. [ अस्यते इति, अस् + उ ] प्राणः; पञ्चप्राणेषु बहवचनान्तः । असवः । 'तेजस्विनः सुखमसूनपि संत्यजन्ति'—इति नीतिसतके । १३४

असुरः पुं.-स्त्री. [ अस्यति देवान् क्षिपति इति । अस् + उरन् । यद्वा न सुरः, विरोधे नञ्त्तत्पुरुषः । यद्वा नास्ति सुरा यस्य सः ] सुरविरोधी; स तु कश्यपाद् दितिगर्भजातः । दैत्यैः; दैतेयैः; दनुजैः; इन्द्रारिः; दानवः; शुकृशिष्यः; दितिमुतः; पूर्वदेवः; सुरद्विद्वि, देवरिपुः; देवारिः; 'सुराः प्रतिग्रहाद्देवाः सुरा इत्यभिविश्रुताः । अप्रतिग्रहणात्तस्य दैतेयाश्चासुराः स्मृताः—इति रामायणे । [ असति दीप्यते इति, उरन् ] सूर्यैः; राहुः । ५

असुहृत् पुं. [ न सुहृद्, नञ्समासः ] शत्रुः; रिपुः; वैरिः । ४५५

असृक् [ ज् ] क्ली. [ न + सृज् + क्विप् ] रक्तम्; 'पानमप्यसृजः क्षिप्रं स्वपीठाय जलीकसाम्'—इति दृष्टान्तशतकम् । 'रसासृग्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः । तस्य पित्तमसृड्मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते ॥ मङ्गलग्रहः; कुङ्कुमं; विष्कुम्भादि-सप्तविंशति-योगान्तर्गतपोडशयोगैः; यया—'धनी क्रुरूपः क्रुमतिर्दुरात्मा, विदेशनामी रुधिरप्रकोपः । महाप्रलोभी पुरुषो बलीयान् असृक् प्रसूतो किल यस्य जन्तोः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ६३२

असृग्धरा स्त्री. [ असृक् शोणितं धरतीति । असृज् + घृ + अच् ] चर्म । ६३०

असृग्धरा स्त्री.—त्वक्; चर्म । ६३०

असेचनकम् त्रि. [ न सिच्यते मनो यस्मिन् । न सिच् + त्युट् । संज्ञायां कन् ] यस्य दर्शनात् तृप्तेरन्तो नास्ति तत्; अत्यन्तप्रियदर्शनम्; 'नयनमुगासेचनकं मानसवृत्त्यापि दुष्प्रापम्'—इति साहित्यदर्पणे । ३५०

असौम्यम् त्रि.—कठोरं; कठिनम् । ७७२

अस्तिमान् [ त् ] त्रि. [ अस्ति विद्यमानं (धनं) विद्यते यस्य । अस्ति + मनुप् ] धनी; धनवान् । ३६९

यस्त्रम् क्ली. [ अस्यते क्षिप्यते यत् । अस् + ष्ट्र् ] प्रहार-

योग्यद्रव्यमात्रम्; आयुधं, प्रहरणं, शस्त्रं, खड्गः; धनुः; क्षेपणयोग्यवाणादि (४६४); 'प्रयुक्तमप्यस्यमितो वृथा स्यात्'—इति रघुवंशे । 'प्रत्याहतास्त्रो गिरिशा-प्रभावात्'—इति रघुवंशे । ४६२

अस्यागम् त्रि. [ अस्थामस्तिरिति गच्छति प्राप्नोति । न + स्या + गम् + ड ] अगाधम्; अतिगभीरम्; अतलस्पशम् । ६४९

अस्थि क्ली. [ अस्यते क्षिप्यते यत् । अस् + क्विथन् ] शरीरस्थसप्तधात्वन्तर्गतवातुविशेषः; कीकसं; कुल्यं; मेदोजम्; 'मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जातः शुकृ-सम्भवः'—इति सुश्रुतः । ६३२

अस्थिपञ्जरः पुं. [ अस्थि पञ्जर इव ] शरीरास्थि-समूहः; करङ्कः; कङ्कालः । ६३३

अस्निग्धम् त्रि. [ न स्निग्धं, नञ्समासः ] कठोरं; कठिनम् । ७८३

अलम् क्ली. [ अस्यते क्षिप्यते यत् । अस् + र् ] रक्तं; रुधिरम्; 'पिपासादाहपित्तास्त्रयुक्तं पित्तज्वरं जयेत्'—इति शाङ्गधरः । 'क्षीणेऽन्ने मधुराकाङ्क्षा मूर्च्छा च त्वच्चि रूक्षता । शैथिल्यं च शिराणां स्याद्वातादुन्मार्ग-गामिता'—इति भावप्रकाशः । अस्तु; नेत्रजलं; 'कुर्वीतास्त्रं शिराहर्षं तेनाक्ष्युद्धीक्षणाक्षमम्'—इति वाग्भटः । ६३२

अलः पुं. [ अस् + रक् ] कोणः; केशः । ७२१

अलुः क्ली. [ अस्यते क्षिप्यते । अस् + लृ ] चक्षुर्जलं; नेत्राम्बु; रोदनम्; अक्षम्; अश्रु; वाष्पं; 'श्रुत्वा श्रुत्वास्तु-धारां त्यजति'—इति कीचकवधः । 'रागास्तुवेदना-शान्ती परं लेखनमञ्जनम्'—इति वाग्भटः । ५१९

अस्वप्नः पुं. [ नास्ति स्वप्नो निद्रा यस्य ] देवता; निद्रा-भावः; निद्राशून्यम्; 'अस्वप्नः सन्ततारुक् च मज्जास्थि-कुपितेऽनिले'—इति माधवकरः । 'मज्जस्थोऽस्थिपु-सौधिर्यमस्वप्नं स्तव्यतां रुजम्'—इति वाग्भटः । ४

अस्वाध्यायः पुं. [ न विद्यते स्वाध्यायो वेदाध्ययनं यस्य ] विधिपूर्वकवेदाध्ययनहीनः; निराकृतिः; अनध्यायः; अध्ययने निषिद्धदिनम् । ४०५

अहंयुः त्रि. [ अहमस्यास्तीति । अहंभवदात् 'अहंयुभ-भोर्युस्' इति युस् ] अहङ्कारयुक्तः; गर्वीन्वितः; अहङ्कारवान्; 'अहंयुनाथ क्षितिपः शुभंयुः'—इति भट्टिः । ३७३

अहः [ न् ] क्ली. — दिवा, दिनम् । १०६

अहङ्कारः पुं. [ अहमिति ज्ञानं क्रियतेऽनेन । अहम् कृ+घञ् ] अहङ्कृतिः, गर्वः, अभिमानः; मदः; स्मयः; अवलेपः; दर्पः; मानः; उद्धतमनस्कत्वं; समुन्नतिः [ अहमित्यव्ययं तस्य करणम् । अहमिति किरति अत्रेति वा अहङ्कारः । करोतेः किरतेर्वा घञ् कारप्रत्यय इत्यन्ये ] 'गर्वो मवोऽभिमानः स्यादहङ्कारस्त्वहङ्कृतिः । स्यादुद्धतमनस्कत्वे मानश्चित्तसमुन्नतिः ॥ अहङ्कारस्य पर्याया इति केचित्प्रचक्षते'—इति शब्दरत्नावली । ७२२

अहङ्कारी [ न् ] त्रि. [ अहङ्कारो विद्यते यस्येति । अस्त्यर्थे णिन् प्रत्ययेन निष्पन्नः ] गर्वयुक्तः; अभिमानी; गर्वान्वितः; अहङ्कारवान्; अहंयुः; अहङ्कारान्वितः; गर्वितः; 'धीरोद्धतस्त्वहङ्कारी चलश्चण्डो विकल्पनः'—इति दशरूपके । ३७९

अहतम् क्ली. [ हन्+क्त । ततो नञ्समासः ] नवाम्बरं; नूतनवस्त्रम्; 'ईषद्धीतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम् । अहं तद्विजानीयात् पावनं सर्वकर्मसु'—इति महाभारते । 'अहतैश्चैव वासोभिर्माल्यैरुच्चावचैरपि' 'अहतानि च दासांसि रथञ्च शुभलक्षणम्'—इति रामायणे । अनाहते त्रि. । ५५०

अहमहमिका स्त्री. [ अहमहंशब्दोऽस्त्यत्र, वीप्सायां द्वित्वम् । ब्रौह्मादित्वात् ठन् ततप्ताप् ] परस्परहङ्कारः; परस्परं परमपेक्ष्यापरस्यापरमपेक्ष्य परस्य योऽहङ्कारोऽहमेव श्रेष्ठोऽहमेव श्रेष्ठ इति मानः; 'इत्यञ्चाहमहमिकया तयोर्विदतोः'—इति पञ्चतन्त्रे । ७८४

अहर्पतिः पुं. [ अह्नः पतिः । पक्षे अहःपतिः ] सूर्यः; 'घावापृथिव्योः प्रत्यग्रमहर्पतिरिवातपम्'—इति रघुवंशे । ३७

अहार्यः पुं. [ ह्+प्यत्, ततो नञ्समासः ] पर्वतः; त्रि. [ न हार्य, नञ्समासः ] हर्तुमशक्यम्; अहतव्यम्, अहरणीयम्; 'अहार्यं ब्राह्मणद्रव्यं राजा नित्यमिति स्थितिः । तत्रात्मभूतैः कालज्ञैरहार्यैः परिचारकैः'—इति मनुः (९-१०९) । १६५

अहिः पुं. [ आहन्तीति । आ+हन्+ङ्ण् । हन् हिंसागत्योः 'आङि श्रिहनिभ्यां ह्रस्वश्चेति' इण्, स च डित् । डित्वाट् टिलोप आडो ह्रस्वश्च ] सर्पः; वृत्रासुरः;

सूर्यः; पथिकः; राहुः; सीसकं; वप्रः; आश्लेषानक्षत्रं; खलः; 'विषघटतोऽप्यतिविषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः । यदहिर्नकुलद्वेषी स्वकुलद्वेषी पुनः पिशुनः'—इति वासवदत्तायाः प्रस्तावनाश्लोकः । ६४०  
अहितः त्रि. [ न हितः, नञ्समासः ] शत्रुः; माघे (१-५७) । 'स ययौ प्रथमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनर्वाहिषा । अहिता-ननिलोद्धूतैस्तजयन्निव केतुभिः'—इति रघुवंशे (४-२८) अपथ्यम्; 'एकान्ताहितानि दहनपचनमारणादिषु प्रवृत्तान्यग्निक्षारविषादीनि'—इति सुश्रुते । प्रतिकूलः; अशुभकरः; 'लोकास्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम्'—इति वैराग्यशतके । 'परोऽपि हितवान् शत्रुर्बन्धुरप्यहितः परः । अहितो देहजो व्याधिहितमारण्यमौषधम्'—इति हितोपदेशः । ४५५

अहिन्रघ्नः पुं. [ अहिः ब्रधने यस्य ] शिवः; 'अजैकपादहिन्रघ्नः पिनाकी चापराजितः'—इति हरिवंशे । रुद्रविशेषः; 'सुरभिः कश्यपाद्रुद्रानेकादश विनिर्ममे । महादेवप्रसादेन तपसा भाविता सती ॥ अजैकपादहिन्रघ्नस्त्वष्टा रुद्राश्च भारत !'—इति हरिवंशे । १३  
अहीरणिः पुं. [ अहीन् ईरयति दूरीकरोति, अहि+ईर्+अणि ] द्विमुखसर्पः । ६४३

अहोरात्रः पुं. [ अहश्च रात्रिश्च द्वयोः समाहारः । 'रात्रा-ह्लाहाः पुंसि । अहः सर्वैकदेशेति' टच् ] दिवानिशं; सूर्योदयद्वयपरिच्छिन्नत्रिंशन्मूहर्तमकः कालः । १०५

अह्नाय अव्य. [ 'ह्लृञ् अपनयने', बाहुलकाद्भावे घञ्, वृद्धिः । ष्योदरादित्वाद् वस्य यः । ततो नञ्समासः ] झटिति; द्रुतम्; 'झट' इति भाषा । 'अह्नाय सा नियमजं वलममुत्ससर्ज'—इति कुमारसम्भवे । 'अह्नाय तावदरुणेन तमो निरस्तम्'—इति रघुवंशे । 'स्वच्छन्तोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छतेतराम्बुच्छटा मूर्च्छन् मोहमहर्षि-हर्षविहितस्तानाह्निकाह्नाय वः'—इति काव्य-प्रकाशे । ६९७

आ

आकरः पुं. [ आकीर्यन्ते घातवोऽत्र । आङ्+कृ+अप्, यद्वा आकुर्वन्ति सङ्घीभूय कुर्वन्ति खननादिव्यवहारमन्त्रेति वा, आ+कृ+घ ] घातुरत्नादेस्त्यत्तिस्थानं; खनिः;

खानिः; 'आकरे पञ्चरागाणां जन्म काचमणेः कुतः'—इति हितोपदेशे। 'शैलेन्द्रो हिमवान् नाम घातूनामाकरो महान्'—इति रामायणे। समूहः; 'शब्दाकरकरग्राममर्थ-मण्डलमण्डलम्'—इति कविकल्पद्रुमः। श्रेष्ठः। १६९  
आकर्षः पुं. [ आकृष्यते इति। आ+कृप्+घञ् ] अक्ष-क्रीडा; पाशकः; 'पासा' इति भाषा। सारिफलकः; 'आकर्षस्ते वाक्फलः सुप्रणीतो हृदि प्रखडो मन्त्रपदः समाधिः'—इति महाभारते। इन्द्रियं; घनुरम्यास-वस्तु; आकर्षणम्; [ आकृष्यते अनेन, यया—'आकर्ष इव श्वा आकर्षश्वः'—इति मुग्धवोधव्याकरणम्। आकर्षतुल्य इति ज्ञापनार्थम् इव शब्दः ] अयस्कान्तः; निकषोपलः। ८४५

आकल्पः पुं. [ आ+कृप्+घञ् ] मण्डनं; वेशः; 'अकृत-कविधिसर्वाङ्गीनमाकल्पजातं विलसितपदमाढ्यं यौवनं सा प्रपेदे'—इति रघुवंशे। 'स्तोकाप्याकल्परचना विच्छित्तिः कान्तिपोषकृत्'—इति साहित्यदर्पणे। रोगः आकल्पं; कल्पपर्यन्ते अव्ययम्; 'आकल्पं नरकं भुङ्क्ते'—इति स्मृतिः। ५३९

आकल्पम् [ कलयति चेष्टाम्। अघ्न्यादयश्चेति यक्, कल्यः नीरोगः। न कल्यः अकल्यः; अकल्यस्य भावः ] रोगः; गदः; मान्द्यम्। ६००

आकस्मिकम् त्रि. [ अकस्मात् भवम्, अकस्मात्+ठञ् ] अकस्माद्भवः; हठाज्जातम्; 'आकस्मिकप्रत्यवभासां च देवीं वाचमानुष्टुभेन छन्दमा परिणतामभ्युदैरयत्'—इति उत्तररामचरिते। ८८४

आकारः पुं. [ आ+कृ+घञ् ] इङ्गितम्; अभिप्रायानुरूपचेष्टाविष्करणं; सङ्केतः; 'तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च'—इति रघुवंशे। आकृतिः; 'आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषितेन च'—इति हितोपदेशे। मूर्तिः; 'आकारसदृशप्रज्ञः'—इति रघौ (१-१५)। ७७२

आकारणम् क्ली. [ आह+कृ+णिच्+ल्यट् ] आह्वानम्; 'ललकार' इति भाषा। 'तैश्च मणिभद्राकारणाय कश्चित् प्रेषितः'—इति पञ्चतन्त्रम्। १५४

आकुलम् त्रि. [ आह+कुल्+क ] व्याकुलं; व्यस्तम्; अग्रगुणम्; 'विभवगुरुभिः कृत्यैस्तस्य प्रतिक्षणमाकुल'—इति शाकुन्तले। ८०२

आकुलकम् त्रि. [ आह+कुल्+क+स्वार्थे कन् ] व्याकुलं; व्यस्तम्; अग्रगुणम्; आकुलम्। १३१

आकूतम् क्ली. [ आह+कूह+क्त ] अभिप्रायः; आशयः; तात्पर्यम्, इच्छा; 'हसन्नेत्रापिताकूतं लीलापथं निमीलितम्'—इति साहित्यदर्पणे। 'हृदय-निहितं भावाकूतं वमद्भिरिवेक्षणैः'—इति शाकु-न्तले। ७६२

आक्रन्दः पुं. [ आह+क्रन्द+घञ् अच् वा ] दारुण-युद्धम्; मित्रं; भ्राता; रोदनं; 'तासामाक्रन्दशब्देन सहसोद्भ्रान्तलोचनः'—इति रामायणे। ध्वनिः; 'तत्रैव निशि नागानामाक्रन्दः श्रूयते महान्'—इति रामायणे। नाथः; 'पाष्णिग्राहं च संप्रेक्ष्य तथाक्रन्दं च मण्डले'—इति मानवे। आह्वानम्। ४५३

आक्रान्तः त्रि. [ आह+क्रम+क्त ] आक्रमणविशिष्टः; कृताक्रमणः; अधिक्रान्तः; अभिभूतः; पराभूतः; वशीभूतः; 'न पाषण्डिगणक्रान्ते नोपसृष्टेऽन्त्यजै-र्नृभिः'—इति मनुः। ७८१

आक्रोशः पुं. [ आह+क्रुश्+घञ् ] क्रोधकर्तव्यनिश्चयः; आक्षेपः; अभिषङ्गः; शापः; 'आक्रोशं मम मातुश्च प्रमाज्यं पुरुषर्षभ'—इति रामायणे। १४९

आक्षेपः पुं. [ आह+क्षिप्+घञ् ] अपवादः; आक्रो-शनम्; अभिशापः; अभिषङ्गः; अभीषङ्गः; भर्तनं; 'क्षान्तेवाक्षेपस्त्राक्षरमुखरमुखान् दुर्मुखान् दूषयन्तः; सन्तः साश्चर्यचर्यां जगति बहुमताः कस्य नाभ्यर्थनीयाः'—इति नीतिशतके। आकर्षणं; 'नवपरिणयलज्जाभूषणां तत्र गौरौ, वदनमपहरन्तीं तच्छुपाक्षेपमीशः'—इति कुमारसम्भवे (७-९५)। विन्यासः; स्यापनं; 'गोरोचना-क्षेपनितान्तगौरै, तस्याः कपोले परभागलाभात्'—इति कुमारसम्भवे (७-१७)। अपहरणं; 'यत्रांगुकाक्षेपविल-ज्जितानाम्'—कुमारसम्भवे। उपस्थितिः; 'मुन्यायस्ये-तराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये'—इति साहित्यदर्पणम्। काव्यालङ्कारः; 'आक्षेपोऽन्यो विधौ व्यक्ते निषेधे च तिरोहिते। 'आक्षेपे हतकः स्मृतः' (३७८)। १४९

आक्षेपस्तः पुं. [ आह+क्षेप्+कल्च् ] इन्द्रः; 'आख-ण्डलः काममिदं वभाषे'—इति कुमारसम्भवे। ५३

आक्षातम् पुं.—क्ली. [ आह+खन्+क्त ] अक्षातं; देवत्वातम्। ६७५

आखुः पुं. [ आङ्+खन्+कु ] मूषिकः; खनकः; मूषकः; 'कृत्वाखुविवरं स्वयं निपतितो नक्तं मुखे भोगिनः।' शूकरः; चौरः; देवताडवृक्षः। 'आखोर्मासं सपदि बहुधा खण्डखण्डिकृतं यत्, तैले पाच्यं द्रवति निरतं यावदेतन्न सम्यक्'—इति वैद्यके। २३५

आखुरथः पुं. [ आखुः मूषिकः रथो वाहनं यस्य ] गणेशः। १८

आखेटकम् पुं.—क्ली. [ आङ्+खिट्+ण्वुल् ] मृगया, आखेटः; 'शिकार' इति भाषा। 'आखेटकस्य धर्मेण विभवाः स्फुर्वशे नृणाम्। नृप्रजाः प्रेरयत्येको हृत्यन्योऽत्र मृगानिव'—इति पञ्चतन्त्रे। ४३५

आख्या स्त्री. [ आङ्+ख्या+अङ्+टाप् ] नाम; संज्ञा; 'उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम'—इति कुमारसम्भवे (१-२६)। १५२

आख्यानम् क्ली. [ आङ्+ख्या+ल्युट् ] कथनं; 'कथितं षष्ठ्युपाख्यानं ब्रह्मपुत्र ययागमम्। देवी मङ्गलचण्डी या तदाख्यानं निशामय'—इति ब्रह्मवैवर्ते १५२

आख्यायिका स्त्री. [ आङ्+ख्या+ण्वुल्+टाप् ] उपलब्धार्थकथा; इतिहासः; उपन्यासः; 'प्रबन्धकल्पनां स्तोत्रसत्यां प्राज्ञाः कथां विदुः। परस्परश्रयाया स्यात्सा मताख्यायिका क्वचित् ॥' 'आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वशादिकीर्तनम्'—इति साहित्यदर्पणे। १५२

आगः [ स् ] क्ली. [ इ+असुन्+आगादेशः ] पापम्; अपराधः; 'सहिष्ये शतमागांसि सूनोस्त इति यस्त्रया'—इति माघे। १४९

आगन्तुः त्रि. [ आङ्+गम्+तुन् ] अतिथिः; आगमनशीलः; अनियतः; 'अकस्मादागन्तुना सह विश्वाप्तो न युक्तः'—इति हितोपदेशे। आकस्मिकरोगादिः; 'आगन्तवोऽपि शरीरशल्यव्यतिरेकेण यावन्तो भावा दुःखमुत्पादयन्ति'—इति सुश्रुतेः। ३५८

आगमः पुं. [ आ+गम्+अच् ] शास्त्रमात्रं; वेदः; 'आगमादिव तमोपहादितः सम्भवन्ति मतयो भवच्छिदः'—इति किराते। आगमनम्; अर्थादीनामागमः; 'नित्यव्यया प्रचुरनित्य (रत्न) धनागमा च'—इति नीतिशतके। प्राप्तिः; उपाजनं; 'नाघर्मेणागमः कश्चिन्मनुष्यान् प्रति वर्तते'—इति मनुः। साक्षिपत्रादिः; प्रकृतिप्रत्यया-

नुपधाति कार्यं; शास्त्रज्ञानं; श्रुतवत्ता; 'आकारसदृश-प्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः।' 'तामर्पयामास च शोकदीनां तदागमप्रीतिषु तापसीषु'—इति रघौ। ९

आगूः [ र् ] स्त्री.—आगूः; प्रतिज्ञा। ७१५

आगूः स्त्री. [ आ+गमेः क्विप् 'गमः क्वावि'त्यन्तलोपे 'ऊ च गमादीनामि' ट्पूकारादेशः ] प्रतिज्ञा। ७१५

आग्नेयो स्त्री. [ अग्नि+ङ्क्+ङोम् ] स्वाहा; अग्निपत्नी; अग्निकोणम्। ६६

आघाटः पुं. [ आङ्+घट्+घञ् ] सीमा; अपामार्गः। २५९

आघारः पुं. [ आङ्+घृ+घञ् ] घृतम्। २७५

आङ्गिरसः पुं. [ अङ्गिरस्+अण् ] वृहस्पतिः; 'अध्यापयामास पितृन् शिशुराङ्गिरसः कविः। पुत्रका इति होवाच ज्ञानेन परिगृह्य तान्'—इति मनुः (२-१५१)। ४७

आचमनम् क्ली. [ आङ्+चम्+ल्युट् ] वैधकर्मरम्भात् पूर्व वारत्रयं जलपानपूर्वकं यथाक्रमाष्टाङ्गस्पर्शरूपशुद्धिजनकक्रिया; उपस्पर्शः; आचमनं; शुचिप्रणीः; उपस्पर्शनम्। ४०८

आचारः पुं. [ आङ्+चर्+घञ् ] व्यवहारः; चरितं; चरित्रं; चारित्र्यं; चरणं; वृत्तं; शीलं; विचारः; 'आचारेणावसन्नोऽपि पुनर्लैखयते यदि। सोऽभिधेयो जितः पूर्व प्राङ्गन्यायस्तु स उच्यते'—इति व्यवहारतत्त्वम्। चरित्रम्; 'आचारलाजैरिव पौरकन्याः'—इति रघुवंशे (२-१०)। ८५२, ८६९

आचारातिक्रमः पुं. [ आचारस्य अतिक्रमः ] अशिष्टाचारः; असद्व्यवहारः; अयोग्यक्रिया। ७८३

आचितः त्रि. [ आङ्+चि+क्त ] संगृहीतः; छन्नः; एकत्रसन्निवेशितः; आकीर्णः; व्याप्तः; ग्रथितः; गुम्फितः; 'कचाचितौ विष्वग्विवागजी गजौ'—इति भारविः। 'अर्द्धाचिता सत्वरमुत्थितायाः पदे पदे दुनिमिते गलन्ती'—इति रघुवंशे। ७०२

आच्छादः पुं. [ आङ्+छद्+घञ् ] वस्त्रम्; आच्छादनम्। १२१

आच्छादनम् क्ली. [ आङ्+छद्+ल्युट् ] संपिधानम्, अपवृत्तिमात्रं; वलभी; वस्त्रं (५४८); 'तस्मादेताः सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः'—इति मनुः। ३०३

आच्छोदनम् क्ली. [ आङ् + छिद् + ल्युट् ततः पृषोदरा-  
दित्वाद् इत् ओत् ] मृगया; आखेटः। ४६५

आजानेयः पुं.- स्त्री. [ अज् + घञ् + आज् + आनेय ]  
कुलीनाश्वः; श्रेष्ठघोटकः; 'शक्तिभिर्भिन्नहृदयाः  
स्खलन्तोऽपि पदे पदे। आजानन्ति यतः संज्ञामाजाने-  
यास्ततः स्मृताः'—इति अश्वतन्त्रम्। ४३९

आजिः स्त्री. [ अज् + इन् ] युद्धं; रणः; संग्रामः;  
समरः; 'आवृष्वती लोचनमार्गमाजी रजोऽन्धकारस्य  
विजृम्भितस्य'—इति रघुवंशे (७-४२)। आक्षेपः;  
क्षणं; समानभूमिः। ४५६

आजीवः पुं. [ आङ् + जीव् + घञ् ] जैनः (५७०);  
जीविका; वृत्तिः; 'बहुमूलफलो रम्यः स्वाजीवः प्रति-  
भाति मे'—इति रामायणे। ३४५

आज्यम् क्ली. [ आङ्पूर्वात् अञ्जेः संज्ञायामिति  
क्यप् ] घृतं; श्रीवासः; यागक्रियादिसाधनं तैलदुग्धा-  
दिकमपि आज्यशब्देनोच्यते। यदुक्तं गृह्यसंग्रहे—'घृतं  
वा यदि वा तैलं पयो वा दधि यावकम्। आज्यस्थाने  
नियुक्तानामाज्यशब्दो विधीयते'—इति गृह्यसंग्रहे।  
'तत्रार्चितो भोजपतेः पुरोधा हुत्वाग्निमाज्यादिभिरग्नि-  
कल्पः'—इति रघुवंशे (७-२०)। २७५

आटिः पुं. [ आङ् + अट् + इन् ] पक्षिविशेषः; 'शरालि'  
इति स्थातः। 'टिटिहिरी' इति भाषा। २४९

आटोपः पुं. [ आङ् + टुप् + घञ् ] दर्पः, गर्वः, सम्भ्रमः,  
संरम्भः, 'विषं भवतु मावाभूत् फटाटोपो भयङ्करः'—  
इति पञ्चतन्त्रे। 'साटोपमुर्वीमनिशं नदन्तः'—इति माघे।  
'आटोपहृल्लासवमीगुरुत्वस्तैमित्यमावाहकप्रसक्तः'—  
इति माघवकरः। ७२२

आडम्बरः पुं. [ आङ् + दम् + वरच्, ततः द स्थाने ड।  
आडम्ब्यते 'डवि क्षेपे' घञ्, भावे वा। आडम्ब्रं राति  
रमयति वा, आतोनुपेति क, मूलविभुजेति वा क।  
आडम्ब्यति वा, बाहुलकादरन् ] तूर्यरवः; पटहरवः;  
गजेन्द्रगर्जनं; प्रपञ्चः; पटहः; आरन्भः; पक्ष्मः; दर्पः;  
श्रोत्रः; हर्षः; आयोजनम्; एकत्रसन्निवेशः; 'घातः  
किं नु विधौ विधानुमुचितो, धाराधराडम्बरः'—इति  
भामिनीविलासे। युद्धम्; रवार्थे यथा, 'असारस्य  
पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान्। नहि तादृग्ध्वनिः स्वर्णं

यथा कांस्ये प्रजायते।' ८४१

आडकी स्त्री. [ आङ् + ङीकृ गती, अच्, गौरादित्वाद्  
ङीप् ] शमीधान्यविशेषः; तुवरी; वर्षा; करवीरभुजा;  
वृत्तबीजा; पीतपुष्पा; 'अरहर' इति भाषा। 'आडकी  
तुवरी चापि सा प्रोक्ता शणपुष्पिका। आडकी तुवरी  
रूक्षा मधुरा शीतला लघुः। ग्राहिणी वातजननी वर्षा  
पित्तकफाल्लजित्'—इति भावप्रकाशः। 'मृदुः कषाया  
च सरक्तपित्तं निहन्ति कासानतिवातला स्यात्। गुल्म-  
ज्वरारोचककासछर्दिहृद्रोगदुग्निमहराडकी स्यात्'—  
इति हारीतः। 'आडकी कफपित्तघ्नी वातला'—इति  
चरकः। 'आडकी कफपित्तघ्नी नातिवातप्रकोपनी'—  
इति सुश्रुतः। ५८४

आढ्यः त्रि. [ आढीकते, आ, ङीकृ गती, बाहुलकाद् डय ]  
धनवान्; युक्तः; विशिष्टः; अन्वितः; यथा—'धनाढ्यः;  
गुणाढ्यः—'चत्वारस्तूपचीयन्ते विप्र आढ्यो वणिङ्  
नृपः'—इति मनुः (८-१६९)। 'आढ्योऽभिजन-  
वानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया'—इति भगवद्-  
गीता। ३५६

आतङ्कः पुं [ आङ् + तकि + घञ् ] रोगः; 'दृष्ट्वा  
पथि निरातङ्कं कृत्वा वा ब्रह्महा शुचिः'—  
इति याज्ञवल्क्यः। सन्तापः; शङ्का; 'आतङ्कभ्रम-  
साहसव्यतिकरोत्कम्पः क्षणं सहाताम्'—इति महावीर-  
चरिते। मुरजध्वनिः; ज्वरः; 'नानातन्त्रविहीनानां  
भिषजामल्पमेधसाम्। सुखं विज्ञातुमातङ्कमयमेव भवि-  
ष्यति'—इति माघवकरः। 'ज्वरो विकारो रोगश्च  
व्याधिरातङ्क एव च। एकार्यनामपर्ययिविधिर्भ-  
धीयते'—इति चरकः। रोगार्थे उदाहरणम्—'प्रश्नेन  
च विजानीयाद् देशं कालं जातिं सात्म्यमातङ्कसमुत्पत्तिं  
वेदनासमुच्छ्रायं बलमित्यादि'—इति सुश्रुते। ६००  
आतपः पुं [ आङ् + तप् + अच् ] रौद्रः; प्रकाशः; द्योतः;  
दिनज्योतिः; सूर्यालोकः; दिनप्रभा; रविप्रकाशः;  
प्रद्योतः; तमारिः; तापनः; द्युतिः; 'उजाला, धाम'  
इत्यादि भाषा। 'आतपः कटुको रूक्षः स्वेदमूर्च्छातृषावहः।  
दाहवैवर्ण्यजननो नेत्ररोगप्रकोपनः ॥ 'आतपः पित्त-  
तृष्णाग्निस्वेदमूर्च्छाभ्रमासकृत्। दाहवैवर्ण्यकारी. च'—  
इति सुश्रुतः। 'कथमातपे गमिष्यसि परिवाधाकोमलैरङ्गैः'

—इति शाकुन्तले । 'मृगाः प्रचण्डातपंतापिता भृशम्'—  
इति ऋतुसंहारे (११) । ४८

आतपत्रम् क्ली. [ आङ् + तप् + अच् = आतप + त्रै + क ]  
छत्रम्; आतपत्रकम्; आतपवारणम्; 'राज्यं स्वहस्त-  
घृतदण्डमिवातपत्रम्'—इति शाकुन्तले । 'पाण्डुरेगात-  
पत्रेण ध्रियमाणेन मूर्धनि'—इति रामायणे । ४२३

आतरः पुं. [ आङ् + तृ + अप्, आतरत्यनेन, 'पुंति  
संज्ञायामिति' घ ] नद्यादितरणाय देयकपर्दकादिः,  
तरपण्यम्; 'उतराई', 'नौकाभाड़ा' इत्यादि भाषा । ६७१

आतापी [ न् ] पुं. [ आङ् + तप् + णिनि ] आतापी;  
चिल्लः; पक्षिभेदः; 'चील' इति ख्यातः । असुरभेदः । २५०

आतापी [ न् ] पुं. [ आङ् + ताप् + णिनि ] चिल्लः,  
आतापी । २५०

आतिः पुं. [ अत् + इण् ] प्लवजातिकः पक्षी; शरारिः;  
आटिः; आडिः; चिल्लः । २४९

आतिथेयः त्रि. [ अतिथि + ठञ् । अतिथौ साधुः ] अतिथि-  
सेवाकारकः; अतिथिभक्षणादिव्रव्यं; 'प्रत्युज्जगामा-  
तिथिमातिथेयः'—इति रघुवंशे (५-२) । 'तमा-  
तिथेयो बहुमानपूर्वया सपर्यया'—इति कुमारसम्भवे  
(५-३१) । 'देवपित्र्यातिथेयानि तत्प्रवानानि यस्य  
तु'—इति मनुः (३-१८) । ३५९

आतिथेयी स्त्री.—आतिथ्यम्, अतिथ्यर्थवस्तु । ३५९

आतिथ्यम् त्रि. [ अतिथि + ञ्य ] अतिथ्यर्थवस्तु; अतिथि-  
भक्षणादिव्रव्यम्; अतिथिसेवा; 'अरावप्युचितं कार्य-  
मातिथ्यं गृहमागते'—इति हितोपदेशे । पुं. आतिथ्यः;  
अतिथिः । ३५९

आतोद्यम् क्ली. [ आङ् + तुद् + ण्यत् ] जाद्यं तच्चतु-  
विधम् । वीणादिवाद्यं तत् १, मुरजादिवाद्यम् आनन्दं २,  
वंशादिवाद्यं शूपिरं ३, कांस्यतालादिवाद्यं घनम्  
४ । 'स्रजमातोद्यशिरो भिवेशितम्'—इति रघुवंशे  
(८-३४) । 'आतोद्यं ग्राहयामास समत्याजयदा  
युधम्'—इति रघुवंशे (१५-८८) । ९३

आत्मजः पुं. [ आत्मन् + जन् + ड ] 'आत्मा वै जायते  
पुत्र' इति श्रुतेः । पुत्रः; आत्मजन्मा; 'तस्यार्थे सर्व-  
भूतानां गोप्तांरं धर्ममात्मजम्'—इति मनुः (११-  
१४) । 'दिशः प्रस्थापयामास दिदृक्षुर्जनकात्मजाम्'—  
इति रामायणे । ४९७

आत्मभूः पुं. [ आत्मन् + भू + क्विप् ] विष्णुः; कामदेवः  
(३३); ब्रह्मा; शिवः; 'सर्वज्ञस्त्वमविज्ञातः सर्वयोनि-  
स्त्मात्मभूः'—इति रघुवंशे (१०-२०) । २४

आत्मा [ न् ] पुं. [ अतति सन्ततभावेन जाग्रदादिसर्वा-  
वस्यासु अनुवर्तते । 'अत् सातत्यगमने' + मनिन् ] जीवः;  
स्वभावः (७८२); यत्नः; घृतिः; बुद्धिः; ब्रह्म;  
देहः; मनः; परव्यावर्तनं; पुत्रः; अकं; हुताशनः;  
वायुः; 'यदा यदात्मा कृतिमानयं भवेत् तदामनस्तत्त्वधि-  
तिष्ठतीन्द्रियम् । ततो मनोऽधिष्ठितमिन्द्रियं घटे प्रवर्तते  
संशयबुद्धिसम्भवे'—इति वैद्यकवांदाथदर्पणम् ] । १३४

आत्मीयः त्रि. [ आत्मन् + छ ] स्वकीयः; अन्तरङ्गः;  
'प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः'—इति रघुवंशे । 'किमिदं  
द्युतिमात्मीयां न विभ्रति यथा पुरा'—इति कुमार-  
सम्भवे (२-१९) । ५०९.

आत्रेयिका स्त्री. [ अत्रि + ठक् + कन् + टाप् ] ऋतुमती;  
पुष्पवती स्त्री; आत्रेयी; रजस्वला । ४८८

आदर्शः पुं. [ आङ् + दृश् + घञ् ] दर्पणम्; 'धूमेना-  
त्रियते वल्लिर्यथादर्शो मलेन च । यथोल्बेनावृतो गर्भ-  
स्तथा तेनेदमावृतम्'—इति भगवद्गीता । ५५५

आदिः पुं. [ आङ् + दा + कि ] पूर्वः; प्रथमः; पदान्ते  
गणसूचकः; यथा—इत्यादिः । प्रारम्भः; प्राक्सत्ता;  
नियतपूर्ववृत्ति कारणम्; उत्पत्तिहेतुः; सामीप्ये;  
व्यवस्थायां; प्रकारे; अवयवार्थः; 'सामीप्येऽप्य व्यव-  
स्थायां प्रकोरऽत्रयवे तथा । आदिशब्दं तु मेघावी  
चतुर्ष्वर्थेषु लक्षयेत् । 'अप एव ससर्जवीं तामु बीजमवा-  
सृजत्'—मानवे (१-८) । 'जगदादिरनादिस्त्वम्'—  
इति कुमारसम्भवे (१-९) । ७०७

आदित्यः पुं. [ अदितेरादित्यस्य वा अपत्यम् + ण्य ] देवः;  
अदितिपुत्रः; आदितेयः; सूर्यः (३५) । द्वादशा-  
दित्यगणे बहुवचनान्तः; तत्प्रत्येकनामानि—विवस्वान्  
१, अर्यमा २, पूषा ३, त्वष्टा ४, सविता ५, भृगुः  
६, घाता ७, विधाता ८, वरुणः ९, मित्रः १०, शक्रः  
११, उरुक्रमः १२ । एते कश्यपाद् अदित्यां भार्यायां  
जाताः । कल्पान्तरे त्वष्टृकन्या संज्ञा आदित्यपत्नी  
आदित्यस्य तेजः सोढुमसमर्था । अतः तस्याः पितृ-  
कृतादित्यद्वादशखण्डो द्वादशादित्याः, तेषां द्वादशमासेषु  
एकैकस्योदयः—इति पुराणम् । आदित्यमण्डलस्थितो

हिरण्मयो विष्णुः । 'आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितम्'—इति शान्तिशतके (४-२४) । 'आदित्य-चन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च'—इति महाभारते । अर्कवृक्षः । ४

आदिमम् त्रि. [ आदौ भवम्, 'अग्रादिपश्चाद् डिमच्', यद्वा 'मध्यान्म' इत्यत्रादेशेति वचनान् म ] आद्यम्, प्रथमभववस्तु; 'एते पञ्चान्ययासिद्धा दण्डत्वादि-कमादिमम् । आदिमः श्येनशैलादिसंयोगः परिकीर्तितः'—इति भाषापरिच्छेदे । ७७५

आदीनवः पुं. [ दीङ् क्षये, भावे क्त, स्वादय ओदितः, ओदितश्चेति नत्वम्, आदीनस्य वानम् । घञर्थे क इति बाहुलकात् वातेः क ] दोषः; दुरन्तः; 'यद्वासुदेवेना-दीनमनादीनवमीरितम्'—इति भाषे (२-२२) । क्लेशः । ७७१

आदेशी [ न् ] पुं. [ आङ्+दिश्+णिनि ] दैवज्ञः; गणकः; त्रि. आदेशकर्ता; उपदेष्टा; 'कपोलपाटलादेशि वभूव रघुचेष्टितम्'—इति रघुवंशे (४-६८) । ४०३

आदेष्टा [ ऋ ] पुं. [ आदिशति ऋत्विगादीन् यागादिष्विष्टसम्पादनाय प्रेरयति । आङ्+दिश् अति-सर्जने+तृच् ] यागविषये ममेष्टसम्पादनाय ययार्थं कर्म कुर्वति ऋत्विजामादेशकः; व्रती; यष्टा; यजमानः; अन्वादेष्टा; याजकः; आदेशकर्ता; उपदेष्टा । ४२०

आद्यः त्रि. [ आदौ भवः, 'दिगादिम्यो यत्', यद्वा अद्यते यः । अद्+कर्मणि ण्यत् ] प्रथमः; 'तौपितोऽहं नृपश्रेष्ठ त्वयेहाद्येन कर्मणा' । ७७५

आद्यूनः त्रि. [ आङ्पूर्वाद् दीव्यतेरकर्मत्वात् क्त, 'दिवो-विजिगीपायामिति' निष्ठातस्य नत्वं, 'यस्य विभाषेति' नेट्, च्छ्वोरित्यूट् ] औदारिकः; 'पेटू' इति भाषा । 'अद्यूनः स्यादौदारिके विजिगीपाविजिते'—इत्यमरः । 'आद्यूनः सद्गृहिष्येव प्रायो यष्ट्यावलम्बितः'—इति किराते (११-५) । आदिहीनः । ३५०

आधारः पुं. [ आधिगन्ते अस्मिन् आधारः, 'अध्यायन्यायेति' सूत्रे अवहाराधारेत्युपसंख्यानानादधिकरणे घञ् । व्याकरण-शास्त्रे अधिकरणकारकम् । 'आधारोऽधिकरणम्' ] तडागः; आशयः (७९८); अधिकरणम्; आल-वालम्; अम्बुधारणः; क्षेत्रादिसेकार्यं सेतुना बहूनालं जलं निरुद्धय यत्र स्थाप्यते स आधारः बद्धकन्दरादिः;

'बांध' इति ख्यातः । सस्याद्यर्थं जलवन्धनं; क्षेत्रादिसेकार्यं जलाधारस्थानम्; 'आधारवन्धप्रमुखैः प्रयत्नैः संवद्धि-तानां सुतनिर्विशेषम् । कच्चिन्न वाग्वादिस्फुल्लवो वः श्रमच्छिदामाश्रमपादपानाम्'—इति रघुवंशे (५-६) । 'तथात्मकोऽप्यनेकस्तु - जलाधारेष्विवांशुमान्'—इति याज्ञवल्क्यः । ६७६

आधिः पुं. [ आङ्+धा+कि ] मनःपीडा; 'आधि-व्याधिपरीताय अद्य श्वो वा विनाशिने । को हि नाम शरीराय घमपितं समाचरेत्'—इति हितोपदेशे । 'आधिव्याधिशतैर्जनस्य विविधैरारोग्यमुन्मूल्यते'—इति वैराग्यशतके । ५३५

आधोरणः पुं. [ आधोरयति, 'धोर्ऋगतिचातुर्थे', कर्त्तरि ल्यु ] हस्तिपकः; 'महावत' इति भाषा । 'आधोरणा हस्तिपका हस्त्यारोहा निपादिनः'—इत्यमरः । 'आधो-रणानां गजसन्निपाते शिरांसि चक्रैर्निशितैः क्षुराग्नैः'—इति रघुवंशे (७-४६) । २२५

आनकः पुं. [ आङ्+अन्+ण्वल् ] पटहः; भेरी; मृदङ्गः; 'ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः'—इति भगवद्गीता (१-१३) । शब्दयुक्तमेघः । ९७

आनकबुन्दुभिः पुं. [ आनकाः दुन्दुभयो देववाद्यविशेषाः दध्ननुः यस्य जन्मनि । वसुदेवजन्मनि देवा दुन्दुभिर्ध्वनि चक्रुः ] वसुदेवः; कृष्णपिता; 'वसुदेवो महाबाहुः पूर्वमानकदुन्दुभिः । जज्ञे यस्य प्रसूतस्य दुन्दुम्भ्यः प्रानन्दन् दिवि । आनकानां च संज्ञादः सुमहानभवद्वि'—इति हरिवंशे । २७

आननम् क्ली. [ आनिति अनेन । आङ्+अन्+ल्युट् ] आस्थं; लपनं; वक्त्रं; मुखं; 'तदाननं मृत्पुरभि क्षिती-श्वरः'—इति रघुवंशे (३-३) । ५१८

आनन्दः पुं. [ आङ्+नन्+घञ् ] आह्लादः; आनन्दयः; शर्म; शान्तं; सुखं; मृतः; प्रीतिः; प्रमोदः; हर्षः; प्रमदः; आमोदः; संमदः; 'यत्रानन्दाश्च मोदाश्च यत्र स्निग्धाश्च सम्पदः'—इति उत्तरचरिते । 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न विभेति कुतश्चन'—इति तैत्तिरीये । वासुदेवस्य बलविशेषः; त्रि. [ आनन्द+अशं आदित्वा-दच् ] आनन्दविशिष्टः; हर्षयुक्तः; सुखी । १२३

आनायः पुं. [ आङ्+नोञ्+घञ् ] जालम् । ५९४

आनाहः पुं. [ आङ्+नह्+घञ् ] दैर्घ्यं; दीर्घत्वम्;

आयामः; आरोहः; मूत्रपूरीषरोषकरोगः; विबन्धः; विष्टम्भः; मलरोधनः; 'आनाहातं' ततो दृष्ट्वा तत्सैन्यमसुखादितम्—इति महाभारते । 'यस्य वातः प्रकुपितः कुक्षिमाश्रित्य तिष्ठति । नाधो व्रजति नाप्यूष्वं चानाहस्तस्य जायते'—इति चरकः । ७८६

आनुपूर्वी स्त्री.—क्लो. [ अनुपूर्व+अण्, डीप् ] परिपाटी; अनुक्रमः; 'षडानुपूर्व्यां विप्रस्य क्षत्रस्य चतुरोऽवरान्'—मनुः (३-२३) । 'आनुपूर्व्यान् स धर्मज्ञः पप्रच्छ कुशलं कुले ।' ७३९

आपगा स्त्री. [ अपां समूहः आपम्, 'तस्य समूहः' इत्यण्, सत आपेन जलसमूहेन गच्छति प्रचलतीति । न्यप+गम्+ङ+टाप् ] नदी; 'आपगाः कृतपुण्यान्ताः पद्मिन्यश्च सरांसि च'—इति रामायणे । 'सम्भू-याम्भोधिमम्प्रेति महानद्या नगापगा'—इति माघे (२-१००) । ६६५

आपणः पुं. [ आङ्+पण्+अच् ] पण्यविक्रयशाला; निपद्या; विपणिः; पण्यवीथिका; 'डुकान' इति भाषा । (एतच्चतुष्कं हृष्टे; आपणाद्विद्वयं हृष्टे; विपण्याद्विद्वयं हृष्टगृहे—इति केचित् ।) 'माल्यापणेषु राजन्ते नाद्य पण्यानि वै तथा'—इति रामायणे । 'भक्ष्यमाल्यापणानां च ददृशुः श्रियमुत्तमाम्'—इति महाभारते । २९६

आपन्नसत्त्वा स्त्री. [ आपन्नं प्राप्तं सत्त्वं गर्भरूपेण जन्तुरनया ] गर्भवती; 'सममापन्नसत्त्वास्ता रेजुरापाण्डु-रतिवः'—इति रघुः (१०-५९) । 'नार्याश्चापन्न-सत्त्वायास्तथातिद्रुतमश्नतः'—इति सुश्रुतः । ४९८

आपानम् क्ली. [ आपीयते अस्मिन् । आङ्+पा+अधि० ल्युट् ] मद्यपानार्थसभा, पानगोष्ठिको; पानगोष्ठी; 'गन्धर्वाप्सरसो भद्रे मामापानगतं सदा ।' 'आपाने पानकलिता दैवेनाभिप्रणोदिताः ।' 'ददर्श यदुवीराणाम् आपाने वैशसं महत्'—इति च महाभारते । ३२८

आपीडः पुं. [ आङ्+पीड्+पचाद्यच् ] शिखास्थित-माल्यं; शोखरः; 'तस्मिन् कुलापीडनिभे विपीडं सम्यङ् महीं शासति शासनाङ्काम्'—इति रघुवंशे (१८-२९) । ५५४

आपीनम् क्ली. [ ओप्यायी वृद्धौ, आङ्+प्याय्+क्त, 'प्यायः पी' निष्ठायां न ] ऊषः; 'आपीनमारोहहृन्-प्रयत्नाद् गृष्टिर्गृत्वाद्बुधो नरेन्द्रः'—इति रघुवंशे

(२-१८) । पुं. कूपः; त्रि. [ आङ्+प्याय्+क्त ] ईषत्स्यूलः, सम्यक् स्यूलः । २७१

आप्तः त्रि. [ आप्+क्त ] आत्मीयः; सन्निकृष्टः; 'असपिण्डं द्विजं प्रेतं विप्रो निर्हृत्य बन्धुवत् । विशुष्यति त्रिरात्रेण मानुराप्तांश्च बान्धवान्'—इति मनुः (३-१२) । प्रत्ययितः; विश्वस्तः; 'सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहार्येद् बलिम्'—इति मानवे (७-८०) । प्राप्तः; लब्धः; 'तेभ्यः किमाप्तं मया'—इति कालिदासः । सत्यं; हितः; कुशलः; 'कुमारभृत्याकुशलैर-नुष्ठिते भियग्भिराप्तैरथ गर्भभर्षिणः'—इति रघुवंशे (३-१२) । बहुः; अधिकः; 'यजेत राजा ऋतुभिर्वि-विधैराप्तदक्षिणैः'—इति मनुः । (राजा नानाप्रकारान् बहुदक्षिणान् अरवमेवादियज्ञान् कुर्यात्—इति तट्टीका) । ५०९

आप्लयनम् क्ली. [ आङ्+प्लु+ल्युट् ] स्नानम्; आप्लावः; आप्लवः । ४०८

आबन्धः पुं. [ आवध्यतेऽनेन । आङ्+बन्ध्+धन् ] योजनं; भूषणं; प्रेम; बन्धनं; 'गते प्रेमाबन्धे प्रणय-बहुमाने विगलिते'—इति अमरशतके (३८) । ५७५

आबन्धनम् क्ली. [ आङ्+बन्ध्+ल्युट् ] प्रग्रहः । ८०५

आबाधा स्त्री. [ आ+बाध् विलोडने, गुरोश्चेति अ, टाप् ] वेदना; अतिपीडा । ६२६

आबिद्यः त्रि. [ आङ्+व्यध्+क्त ] वक्रः; क्षिप्तः; पराहतः; मूर्खः । ६९६

आभरणम् क्ली. [ आभ्रियतेऽनेन । भृञ् भरणे, ल्युट् ] भूषणम्; अलङ्कारः; 'स्याद्भूषणं त्वाभरणं चतुर्धा परिकीर्तितम् । आवेध्यं बन्धनीयं च क्षेप्यमारोप्यमेव तत्' 'वाहनानि च सर्वाणि शस्त्राप्याभरणानि च'—मनुः (७-२२२) । 'किमित्यपास्याभरणानि यौवने घृतं त्वया वार्धकशोभि वल्कलम्'—इति कुमार-सम्भवे (५१४४) । ५३९

आभीरः पुं. [ आ समन्ताद् भियं राति, रा दाने, वात् इति क ] गोपः । 'अहीर' इति भाषा । ५८७

आभीरपल्लिः स्त्री. [ आभीराणां पल्लिः ] गोपपल्ली । 'अहीरो का गांव' इति भाषा । २६१

आभीरपल्ली स्त्री. [ आभीराणां पल्ली ] गोपगृहसमूहः; गोपग्रामः; गोपगृहं; गोपस्थानं; घोपः । २६१



**आभीलः** त्रि. [ आङ् + भी + ला + क ] भयानकः; 'आभीलं न द्वयोः कृच्छ्रे वाच्यलिङ्गं भयानके'—इति मेदिनी। कष्टयुक्तः; क्ली. [ आ समन्ताद् भिर्यं लाति जनयति; आङ् + भी + ला + क ] कष्टः; कृच्छ्रः; भयावहः; भीतिजनकः; 'रात्रौ निशीये स्वाभीले गतेऽर्द्धसमये नृप। प्रचारे पुरुषादानां रक्षासां घोरकर्मणाम्'—इति महाभारते। ७०५

**आभेरी** स्त्री.— रागिणीविशेषः। १०३ अ.

**आभोगः** पुं. [ आङ् + भुञ् + घञ् ] परिपूर्णता; 'यण्डाभोगात्कठिनविषमामेकवेणीं करेण'—इति मेघदूते। 'अकथितोऽपि ज्ञायत एव यथायमाभोगस्तपोवनस्य'—इति शाकुन्तले। वरुणस्य छत्रं; यत्नः; कविनामयुक्तभानसमापककविता; 'यत्रैव कविनाम स्यात् स आभोग इतीरितः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ७५५

**आभ्रः** पुं. [ अम् + घञ् ] रोगमात्रं; रोगभेदः; मलवैषम्यरोगः; 'पिवेत् स परिकृतमि मले वा दाडिमाभ्रुना, विड्ढेन लवणं पिष्टं विल्वं चित्रकनागरम्'—इति चरकः। ६००

**आभ्रगन्धिकम्** क्ली. [ आमस्यापक्वस्य गन्ध इव गन्धो यत्र, आमगन्धि + स्वार्थे कन् ] आमगन्धि; अपक्वमांसादिगन्धविशिष्टः; विलं; विश्रं; चिताधूमादिगन्धयुक्तम्। ६३१

**आभ्रगन्धि** क्ली. [ आ + मन् + भावे ल्युट् ] सम्बोधनम्; आपृच्छनं; निमन्त्रणं; निमन्त्रणविशेषः। ८८३

**आभ्रयः** पुं. [ अम् रोगे + भावे घञ्। मीञ् हिंसायाम्, करणे अच् वा ] रोगः; 'तद्युक्तं विविधैर्योगैर्निहन्त्यादामयान् बहून्'—इति सुश्रुतः। 'तत्र व्याविरामयो गद आतङ्को यस्मा ज्वरो विकारो रोग इत्यनर्थान्तरम्'—इति चरकः। ६००

**आभ्रमली** स्त्री. [ आङ् + मल + क्वृन् + जातेरिति डीप् ] फलवृक्षविशेषः; तिष्यफला; अमृता; वयस्या; वयःस्था; कायस्था; श्रीफला; धात्रिका; शिवा; शान्ता; धात्री; अमृतफला; वृष्या; वृत्तफला; रोचनी; कर्षफला; तिष्या; 'आवला, आमला' इत्यादि भाषा। 'तुष्यत्यामलकैर्विष्णुरेकादश्यां विशेषतः। श्रीकामः सर्वदा स्नानं कुर्वीतामलकैर्नरः'—इति गारुडे (२१५ अध्यायः)। 'त्रिष्वामलकामस्यातं धात्री तिष्य-

फलामृता। हरीतकीसमन्वात्रीफलं किन्तु विशेषतः ॥ रक्तपित्तप्रमेहहृत् परं वृष्यं रसायनम्। हन्ति वातं तदम्लत्वात् पित्तं माधुर्यंशैत्यतः ॥ कफं रूक्षकषायत्वात् फलं घात्र्यास्त्रिदोषजित्। यस्य यस्य फलस्येह वीर्यं भवति यादृशम् ॥ तस्य तस्यैव वीर्येण मज्जानमपि निर्दिशत्'—इति भावप्रकाशः। ६१८

**आमिक्षा** स्त्री. [ आमिष्यते, आ + मिपु सेचने, बाहुलकात् सक् ] श्रुतोष्णदुग्धेदधियोगसम्भवा या; दधिकूचिका; पयस्या; क्षीरसन्तानिका; तक्रकूचिका। 'छेना' इति ख्याता। ४१६

**आमिषम्** क्ली.—पुं. [ आमिष्यते भुज्यते, आ + मिपु श्लेषणे, घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न गुणः ] उत्कोचः; लञ्चा; मांसम् (६३१); भोग्यवस्तु; संभोगः; सुन्दराकाररूपादि; लोभसञ्चयः; लाभः; कामगुणः; रूपं; भोजनम्। ४३४

**आम्रीक्षा** स्त्री. [ आमिष्यते, आ + मिपु सेचने, बाहुलकात् सक्, दीर्घः ] आमिक्षा; तक्रकूचिका; आर्वातिते तप्ते क्षीरे दधियोगाद् या वटिकाकारा विकृतिः जायते सा। ४१६

**आमृक्तः** त्रि. [ आङ् + मुच् + क्त ] पिनद्धः; परिहितवस्त्रादिः; परिहितकवचव्यक्तिः। ७४७

**आमृष्यायणः** त्रि. [ अमृष्य अपत्यम् + फक् + अलुक् ] ख्यातवंशोद्भवः; सत्कुलजातः। ३९५

**आमोदः** पुं. [ आङ् + मुद् + घञ् ] अतिदूरगामिगन्धः; गन्धः; सुमहद्गन्धः; 'आमोदमुपजिघ्रन्ती स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति रघुवंशे (१-४३)। हर्षः। ७७

**आम्नायः** पुं. [ आङ् + म्ना + घञ्, युक् ] श्रुतिः; वेदः; आगमः; निगमः; 'तृतीयो ह्येष मेध्योऽग्निराम्नायः पञ्चमोऽयवा'—इति महावीरचरिते। 'संसांसो मधुपर्क इत्याग्नार्थं बहु मन्यमानाः'—इति उत्तरचरिते। सम्प्रदायः (४०२); गुरुपरम्पराप्राप्तोपदेशः; उपदेशः; कुलकर्मः; कुलं; शिक्षादानं; तन्त्रशास्त्रम्; अम्यासः; आम्रेडनम्; आलोचनम्। ९

**आमः** पुं. [ अम्यते, अम् गत्यादी, अमितम्योदीर्घश्चेति रक्, दीर्घश्च ] फलवृक्षविशेषः; चूतः; रसालः; अति-सौरभश्चेत् सहकारः; कामशरः; कामवल्लभः; कामाङ्गः; कीरेष्टः; माधवद्रुमः; भृङ्गाभीष्टः;

सीधुरसः; मधूली; कोकिलोत्सवः; वसन्तदूतः; अम्ल-  
फलः; मोदाख्यः; मन्मथालयः; मध्वावासः; सुमदनः;  
पिकरागः; नृपप्रियः; प्रियाम्बुः; कोकिलावासः;  
माकन्दः; षट्पदातिथिः; मधुव्रतः; वसन्तद्वः; पिक-  
प्रियः; स्त्रीप्रियः; गन्धबन्धुः; अलिप्रियः; मदिरा-  
सखः; 'आम्नमामं जलस्विन्नं मर्दितं दृढपाणिना ।  
सिताशीताम्बुसंयुक्तं कर्पूरमरिचान्वितम् ॥ प्रपाणकमिदं  
श्रेष्ठं भीमसेनेन निर्मितम् । सद्यो रुचिकरं बल्यं शीघ्र-  
मिन्द्रियतर्पणम्'—इति राजनिर्घण्टः । १९२

**आग्नेहितम्** क्ली. [ आङ् + ञ्छि + क्त ] द्विस्त्रिभक्तम् ।

'दो-तीन बार कहा हुआ' इति भाषा । १५३

**आयः** पुं. [ आङ् + या + ड ] घनागमः; प्राप्तिः;  
लाभः; 'अहन्यहन्यवेक्षेत कर्मान्तान् वाहनानि च ।  
आयव्ययौ च नियतावाकरान् कोषमेव च'—इति  
मनुः (८-४१९) । स्त्र्यगाररक्षकः; ज्योतिषप्रसिद्ध-  
मेकादशभवनम् । ४३३

**आयःशूलिकः** त्रि. [ अयःशूलेन अर्थानन्विच्छति । 'अयः-  
शूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठवाविति' ठक् ] तीक्ष्णकर्मा;  
क्षिप्रकारी; 'तीक्ष्णोपायेन योऽन्विच्छेत्स आयःशूलि-  
को जनः ।' ३७१

**आयतः** त्रि. [ आङ् + यम् + क्त ] दीर्घः; 'लम्बा'—इति  
भाषा । विस्तृतः; विशालः; आकृष्टः; 'तन्तवोऽप्यायता  
नित्यं तन्तवो बहुलाः समाः'—इति पञ्चतन्त्रे । ७५१

**आयतनम्** क्ली. [ आङ् + यत् + ल्युट् ] यज्ञस्थानं; देव-  
स्थानं; चैत्यम्; 'येभ्यः प्रणमसे पुत्र ! चैत्येण्वायतनेषु  
च ।' 'समित्कुशपवित्राणि वेद्यश्चायतनानि च । स्थण्डि-  
लानि च विप्राणां शैला वृक्षा ह्यदाः क्षुपाः ।' आश्रयः;  
विश्रामस्थानम्; 'नासमीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं  
त्यजेत्'—इति चाणक्यः । 'स्नेहस्तदेकायतनं जगाम'—  
इति कुमारसम्भवे (७-५) । भद्रासनम् भिदा इत्यादि-  
ख्यातो वास्तुदेशः; 'आरामायतनग्रामनिपानोद्यान-  
वेश्मसु'—इति याज्ञवल्क्यः । २९३

**आयतिः** स्त्री. [ आङ् + यम् + क्तिन् ] उत्तरकालः;  
भविष्यत्कालः; 'यदावगच्छेदायत्यामाधिक्यं ध्रुवमा-  
त्मनः । तदात्ते चोत्पिकां पीडां तदा सन्धिं समाश्रयेत्'—  
इति मनुः (७-१६९) । 'आयति सर्वकार्याणां तदात्वं  
च विचारयेत्'—इति मनुः (७-१७८) । प्रभावः;

कोषदण्डजं तेजः; दैर्घ्यं; सङ्गः; प्रापणं; 'प्रतापमार्यति  
शोभां हेमन्ताहस्य वारिदः । स्मृतिशेषां करोत्येव  
लोभश्च पृथिवीभुजाम्'—इति राजतरङ्गिणी । ११८  
**आयत्लकम्** क्ली.—उत्कण्ठा; उत्कलिका; अरतिः । ७४२

**आयामः** पुं. [ आङ् + यम् + घञ् ] दैर्घ्यम्, आनाहः;  
'योजनायामविस्तारमेकैको घरणीतलम्'—इति रामा-  
यणे । 'तेनोदीचीं दिशमनुसरेस्तिर्यगायामशोभी'—  
इति मेघदूते । ७८६

**आयुषः** पुं. [ आयुष्यते अनेनेति । आङ् + युष् + क ]  
अस्त्रम् । आयुधानां त्रयो भेदाः प्रहरणानि, पाणि-  
मुक्तानि, यन्त्रमुक्तानि चेति । तत्र प्रहरणानि खड्गा-  
दीनि, पाणिमुक्तानि चक्रादीनि, यन्त्रमुक्तानि  
शरादीनि । 'घृतायुधो यावदहं तावदन्यैः किमायुधैः',  
'किं वक्ष्यत्ययमेवमद्य विमुखं मामुद्यतेऽप्यायुधे'—इति  
उत्तरचरिते । ४६२

**आयुर्वेदी** [ न् ] त्रि. [ आयुरनेन विन्दति वेत्ति वेत्यायुर्वेदः ।  
आयुस् + विद् + करणे घञ् । आयुर्वेदो ज्ञातव्यत्वेन  
विद्यते यस्य, आयुर्वेद + इनि ] आयुर्वेदज्ञः; चिकित्सकः;  
वैद्यः । ६१२

**आयुष्मान्** [ त् ] त्रि. [ आयुस् + मनुप् ] चिरजीवी;  
दीर्घायुः; जैवातकः; चिरञ्जीवी; 'आयुष्मान् भव  
सौम्येति वाच्यो विप्रोऽभिवादाने'—इति मनुः (२-  
१२५) । 'आयुष्मन्तं सुतं सूते यशोमेधासमन्वितम्'—  
इति मनुः (३-२६३) । ३८१

**आयोधनम्** क्ली. [ आङ् + युष् + ल्युट् ] युद्धम्;  
'आयोधने कृष्णगतिं सहायमवाप्य यः क्षत्रियकाल-  
रात्रिम्'—रघुवंशे (६-४२) । 'आयोधने स्थायुकमस्त्र-  
जातम्'—इति भट्टिः । वधः । ४५३

**आरकूटः** पुं.—क्ली. [ आरं कूटयति स्तूपीकरोति । पचा-  
द्यच् ] पितलम्; 'उत्तप्तस्फुरदारकूटकपिलज्योतिर्ज्वलद्-  
दीप्तिभिः'—उत्तररामचरिते (५-१४) । 'अकाञ्चने  
काञ्चननायिकाङ्गके किमारकूटाभरणेन न श्रियः'—  
इति नैषधे । १७०

**आरक्षः** पुं. [ आङ् + रक्ष् + अच् ] गजकुम्भसन्धिः; त्रि.  
[ आरक्षतीति, आङ् + रक्ष् + अच् ] रक्षायुक्तं; रक्ष-  
णोयम् । २१८

**आरग्वधः** पुं. [ आ + रग् शङ्कायाम्, क्विप्, आरगं

रोगशङ्कामपि हन्ति, अच् ववादेशश्च ] वृक्षविशेषः;  
 राजवृक्षः; सम्पाकः; चतुरङ्गुलः; आरेवतः;  
 व्याधिघातः; कृतमालः; भुवर्णकः; मन्यानः; रोचनः;  
 दीर्घफलः; नृपद्रुमः; हिमपुष्पः; राजतरुः; कण्डुघ्नः;  
 ज्वरान्तकः; अरुजः; स्वर्णपुष्पः; स्वर्णद्रुः; कुष्ठसूदनः;  
 कर्णाभरणकः; महाराजद्रुमः; कर्णिकारः; स्वर्णाङ्गः;  
 प्रग्रहः; 'अमलतास' इति ख्यातः । 'आरुगवो राजवृक्षः  
 सम्पाकश्चतुरङ्गुलः । आरेवतव्याधिघातकृतमालसुव-  
 र्णकाः ॥ कर्णिकारो दीर्घफलः स्वर्णाङ्गः स्वर्णभूषणः ।  
 आरुगवो गुरुः स्वादुः शीतलः संसनीतमः ॥ ज्वरह-  
 द्रोणपित्तास्रवातोदावर्तशूलनुत् । तत्फलं संसनं रुच्यं  
 कुष्ठपित्तकफापहम् । ज्वरे तु सततं पथ्यं कोष्ठशुद्धिकरं  
 परम् ॥'—इति भावप्रकाशे । १९८

आरनालम् क्ली. [ आच्छति, आङ्+ञ्+अच्, आरः ।  
 नल् गन्वे, नलतीति, ण, नालः । आरः नालो गन्वो  
 यस्य ] काञ्जिकम्; आरनालकं; 'क्रांजी' इति भाषा ।  
 'आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुपीकृतैः । पक्वैर्वा  
 सन्वितैस्तसु सौवीरसदृशं गुणैः'—इति राजनिर्घण्टः ।  
 'लाक्षाहरिद्रामञ्जिष्ठाकल्कैस्तैलं विपाचयेत् । पङ्गुणे-  
 नारनालेन दाहशीतज्वरापहम्'—इति वैद्यके । ३१८

आरम्भः पुं. [ आङ्+रभि+घञ् ] प्रथमकृतिः; प्रक्रमः;  
 उपक्रमः; अम्भदानम्; उद्घातः; प्रारम्भः; त्वरा;  
 उद्यमः; वधः; दर्पः; प्रस्तावना; 'आगमैः सदृशारम्भ  
 आरम्भसदृशोदयः'—इति रघुवंशे (१-१५) । ७०७

आराप्रम् क्ली. [ आरायाः अग्रं, षष्ठीतत्पुरुषः ] अर्द्ध-  
 चन्द्राद्यस्त्रमुत्सृज् । ४६९

आरात् अव्य. [ आ राति, रा दाने, बाहुलकादाति-  
 प्रत्ययः ] समीपं; निकटम्; दूरं (६९३); 'मेघमालेव  
 यश्चायमारोदपि विभाव्यते'—इति उत्तरचरिते । 'तमर्च्य-  
 मारादभिवर्तमानम्'—इति रघुवंशे (२-१०) । ६९२

आराघना स्त्री. [ आङ्+राघ्+णिच्+युच्+स्त्री-  
 त्वाद् टाप् ] साघना; सेवा; भक्तिः; परिचर्या;  
 प्रसादना; शुश्रूषा; उपास्तिः; वरिखस्या; परीष्टिः;  
 उपचारः । १२९

आरामः पुं. [ आरम्यतेऽत्र, आङ्+रम्+आवारे घञ् ]  
 उपवनम्; 'क्षेत्रकूपतडागानामारामस्य गृहस्य च'  
 इति मनुः (८-२६२) । 'गृहं तडागसारामं क्षेत्र वा

भीषया हरन्'—इति मनुः (८-२६४) । २१२  
 आरालिकः त्रि. [ अरालं कुटिलं चरति इति, ठक् ]  
 सूपकारः; पाचकः; सूदः; वल्लवः । 'रसोऽया' इति-  
 भाषा । ४३१

आरेकः पुं. [ आ+रिच्+घञ् ] शङ्का । ६९१  
 आरोपितम् त्रि. [ आङ्+रुह्+णिच्+क्त ] न्यस्तः;  
 निहितं; कृतारोपणं; कल्पितं; 'तं देशमारोपितपुष्प-  
 चापे'—इति कुमारसम्भवे (३-३५) । 'समस्तवस्तुवि-  
 पयं श्रौता आरोपिता यदा'—इति काव्यप्रकाशे । ७४७

आरोहः पुं. [ आङ्+रुह्+घञ् ] समुच्छ्रयः; 'आरोह-  
 मिवरत्नानां प्रतिष्ठानमिव श्रियः'—इति रामायण ।  
 वरस्त्रियाः श्रोणिः (५१२); 'आरोहैर्निविडवृहन्नितम्ब-  
 विम्बैः'—इति माघे । नितम्बः; कटी; दैर्घ्यम्;  
 अवरोहः; आरोहणं; गजारोहः; परिमाणविशेषः;  
 आरोहति यः; निषादी; 'अश्वाश्च पर्यधावन्त हृत्तारोहा  
 दिशो दश'—इति हरिवंशे । १८१

आरोहणम् क्ली. [ आरुह्यतेऽनेन । आङ्+रुह्+ल्युट् ]  
 सोपानम्; 'सीढी' इति भाषा । [ भावे ल्युट् ] समारोहः;  
 नीचादूर्ध्वं वगमनम्; 'आरोहणार्थं नवयीवनेन कामस्य  
 सोपानमिव प्रयुक्तम्'—इति कुमारं (१-३९) ।  
 प्ररोहणम्; अङ्कुरादिजननम् । ३०१

आतिः स्त्री. [ आङ्+रि+क्तिन् ] पीडा; वेदना;  
 व्यथा; घनुष्कोटिः; रोगः; 'आपश्चात्तिप्रशमनफलाः  
 सम्पदो ह्युत्तमानाम्'—इति मेघदूते । 'दाहातिसारपि-  
 त्तासृङ्मूर्च्छामद्यविषात्तियु'—इति सुश्रुते । ६२६

आर्द्रकम् क्ली. [ अर्दयति कफम् आर्द्रम् । ततः कन् । यद्वा  
 आर्द्रयति जिह्वायां, वृन् ] कटुमूलविशेषः; शृङ्गवेरं;  
 कटुभद्रं; कटुकटं; गुल्ममूलं; मूलजं; कन्दरं; वरं;  
 महीजं; सैकतेष्टम्; अनूपजम्; अपाकशाकं; चान्द्रास्थं;  
 राहुच्छत्रं; सुशाककं; शाङ्गम्; आर्द्रशाकं; सच्छा-  
 कम्; 'अदरक' इति भाषा । 'वातपित्तकफमानां  
 शरीरवनचारिणाम् । एक एव निहन्तास्ति लवणाद्रक-  
 केशरी ॥' 'आर्द्रकं शृङ्गवेरं स्यात्कटुभद्रं तथादिका ।  
 आर्द्रिका मेदिनीं गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी तथा । कटुका  
 मवुरा पाके रसवातकफापहा । ये गुणाः कथिताः  
 शुष्क्यास्तेऽपि सन्त्यार्द्रके खिलाः ॥ भोजनाग्रे सदा  
 पथ्यं लवणाद्रकमन्नणम् । अग्निसन्दीपनं रुच्यं जिह्वा-

कण्ठविशोधनम् ॥ कुष्ठे पाण्ड्वामये कृच्छ्रे रक्तपित्तं  
व्रणे ज्वरे । दाहे निदाघशरदौर्नैव पूजितमार्द्रकम्—इति  
भावप्रकाशः । 'रोचनं दीपनं वृष्यमार्द्रकं विश्वभेषजम् ।  
वातश्लेष्मविबन्धेषु रसस्तस्योपदिश्यते—इति चरकः ।  
'कफानिलहरं स्वयं विबन्धानाहसूलनुत् । कटूष्णं रोचनं  
हृद्यं वृष्यं चैवार्द्रकं स्मृतम्—इति सुश्रुतः ॥ ६१६

आर्द्रालुब्धकः पुं. [ आर्द्रायां तन्नाम्ना प्रसिद्धनक्षत्रे लुब्धक  
इव ] केतुग्रहः । ४९

आर्यः त्रि. [ अर्तुं प्रकृतमाचरितुं योग्यः । अयंते वा ।  
ऋ + ण्यत् ] पूज्यः; साधुः (३७२); सज्जनः;  
वैश्यः (५७०); सौविदः; सौविदल्लः (८१४);  
सत्कुलोद्भवः; श्रेष्ठः; संगतः; मान्यः; उदार-  
चरितः; शान्तचित्तः; 'थोऽहमार्येण परवान् भ्रात्रा  
ज्येष्ठेन भाविनि—इति रामायणे । न्यायपथावलम्बी;  
प्रकृताचारशीलः; सततकर्तव्यकर्मानुष्ठाता; 'कर्तव्य-  
माचरन् काममकर्तव्यमनाचरन् तिष्ठति प्रकृताचारे  
स तु आर्य इति स्मृतः ॥' धार्मिकः; धर्मशीलः; आर्य-  
रूपमिवानार्यं कर्मभिः स्वैविभावयेत्—मनुः (१०-  
५७) । उचितः; 'भार्गमार्यं प्रपन्नस्य नानुमन्येत  
कः पुमान् ।' नाट्योक्तौ सम्मानसूचकमिदं नाम प्रायेण  
मान्यजना हानेन व्यवह्रियते; 'स्वेच्छया नामभिर्विप्रैर्विप्र  
आर्यैति चेतरेः । 'वाच्यौ नटीसूत्रधाराचार्यनाम्ना परस्पर-  
रम्—इति साहित्यदर्पणे । पुं. स्वामी; बुद्धः; सुहृत्;  
श्रेष्ठवर्णः; म्लेच्छेतरजातिः; 'म्लेच्छाश्चान्ये बहुविधाः  
पूर्वं ये निकृता रणे । आर्याश्च पृथिवीपालाः—इति  
महाभारते । सावर्णमनोः पुत्रः; 'वरीयांश्चावरीयांश्च  
संयतो घृतमान् वसुः । चरिष्णुरार्यो घृष्णुश्च राजः  
सुमतिरेव च ॥ सावर्णस्य मनोः पुत्रा भविष्या दश  
भारत—इति हरिवंशे । ९९

आर्या स्त्री. [ ऋ + ण्यत् + स्त्रियां टाप् ] पार्वती; छन्दो-  
विशेषः; 'यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीये-  
ऽपि । अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या—इति  
श्रुतबोधः । 'लक्ष्मैतत्सप्तगणा गोपेता भवति नेह विषमे  
जः । षष्ठो जश्च न लघुर्वा प्रथमेऽर्द्धे नियतमार्यायाः ॥  
षष्ठे द्वितीयलात्परके नूले मुखलाञ्च स यतिपदनियमः ।  
चरमेऽर्द्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः ॥  
पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च ।

गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिश्च नवधार्या—इति  
छन्दोमञ्जरी । श्रेष्ठा स्त्री । १५

आर्यभ्यः पुं. [ ऋषभस्य प्रकृतिः । ऋषभ + ञ्य ]  
षष्ठोपयुक्तवृषः; षष्ठतायोग्यः (बछड़ा जो इतना  
बड़ा हो कि काम में लाया जा सके या साँड़ बनाकर  
छोड़ा जा सके) । २६४

आलम्भः पुं. [ आङ् + लभि + षब् ] मारणं; वधः;  
'अश्वालम्भं गजालम्भम्—इति स्मृतिः । 'व्यालम्बेयाः  
सुरभितनयालम्भजां मानयिष्यन्—इति मैघदूते ।  
छेदनं; कर्तनम्; 'कृष्टजानामोषधीनां जातानां च  
स्वयं वने । वृथालम्भेऽनुगच्छेद् गां दिनमेकं पयो-  
व्रतः—मनुः (११-१४४) । स्पर्शः; आलिङ्ग-  
नम्; 'द्यूतं च जनवादं च परिवादं तथा । नृतम् ।  
स्त्रीणां च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च—इति  
मनुः (२-१७९) । ४७८

आलयः पुं. [ आलीयतेऽस्मिन् । आ + ली + अधिकरणे  
अच् ] गृहं; 'हिमालयो नाम नगाधिराजः—इति  
कुमारे (१-१) । 'तत्रामरालयमरालमरालकेशी—इति  
नैषधे । 'नहि दुष्टात्मनामार्या निवसन्त्यालये चिरम्'  
—इति रामायणे । २९२

आलवालम् क्ली. [ आ समन्तात् जलस्य लवमालाति ।  
आ + लव + ला + क ] तरुमूलसेचनार्थस्वल्पजलाधारः;  
आवालम्; आवापः; 'धामला' 'थाला' इति भाषा ।  
'विश्वासाय विहङ्गानाम् आलवालाम्बुपायिनाम्—  
इति रघुवंशे (१-५१) । 'विपुलालवालभृतवारिदर्पणः'  
—इति माघे । १८४

आलस्यम् क्ली. [ अलस + ण्यञ् ] अलसस्य भावः;  
अलसता; तन्द्रा; कौसीद्यं; मन्दता; मान्द्यं; कार्य-  
प्रद्वेषः; 'आलस्यं श्रमगर्भाद्यैर्जड्यं जृम्भासितादिकृत् ।  
मुखस्पर्शप्रसङ्गित्वं दुःखद्वेषणलोलता । शक्तस्य  
चाप्यनुत्साहः कर्मण्यालस्यमुच्यते—इति सुश्रुते । त्रि.  
[ अलस एव । अलस + स्वार्थे ष्यञ् ] मन्दः; तुन्द-  
परिमृजः; शीतकः; अलसः; अनुष्णः । ७५७

आलानम् क्ली. [ आलीयतेऽत्र । आङ् + ली + ल्युट् ।  
विभाषा लीयतेरित्यात्वम् ] बन्धनम्; रज्जुः; गज-  
बन्धनस्तम्भः; गजबन्धनरज्जुः; 'अरुन्तुदमिवालानम-  
निर्वाणस्य दन्तिनः ।—इति रघुवंशे (१-७१) । 'इम-

मदमलिनमालानस्तम्भयुगलमुपहसन्तमिवोरुदण्डद्वयेन—  
इति कादम्बरी । २२१

आलिः पुं. [ आलति, दशने समर्थो भवति । आ+अल्,  
वाहुलकाद् इण् ] वृश्चिकः; भ्रमरः; त्रि. विशदाशयः;  
निर्मलान्तःकरणः; अनर्थः । स्त्री. [ आलयति भूषयति,  
अ+अल् भूषणे, अच्, इ ] वयस्या; 'निवार्यतामालि  
किमप्ययं वटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः'—इति  
कुमारसम्भवे (५-८३) । [ आलति निर्वापयति जलम् ।  
अल् वारणे, सर्वधातुम्य इन् ] सेतुः; [ अल्यते अनया ।  
अल्+इञ् ] पङ्क्तिः; सन्ततिः । ६४५

आलिङ्गनम् क्ली. [ आङ्+लिङ्+ल्युट् ] प्रीतिपूर्वक-  
परस्परश्लेषः; अङ्गपालिः; श्लिषा; परिरम्भः;  
परीरम्भः; परिष्वङ्गः; संश्लेषः; उपगूहनम्; 'आलि-  
ङ्गनान्यधिकृताः स्कुटमापुरेव'—इति माघः । 'यत्र स्त्री-  
णां प्रियतमभुजालिङ्गनोच्छ्वासितानाम्'—इति मेघ-  
दूते । ५६८

आली स्त्री. [ आलि+ङीप् ] सखी; वयस्या; सेतुः;  
पाली (६७६); पङ्क्तिः; श्रेणी (७-२१); 'तोयान्त-  
भास्करालीव रेजे भुनिपरम्परा'—इति कुमारे  
(६-४९) । पुं. वृश्चिकः । ४८७

आलेख्यम् क्ली. [ आङ्+लिख्+ण्यत् ] चित्रम्;  
'इति संरम्भणो वाणीर्वलस्यालेख्यदेवताः'—इति  
माघे (२-६७) । ७२८

आलेख्यलेखा स्त्री. [ आलेख्यस्य लेखा ] लिपिः; चित्र-  
कर्म; प्रतिलिपिकरणम् । ७२८

आलोकः पुं. [ आङ्+लुक्+घञ् ] द्योतः; दर्शनं;  
'आलोकाय निशासु चन्द्रकिरणाः सख्यः कुरङ्गैः सह ।'  
—इति शान्तिशतके । 'रुद्रालोके नरपतिपथे सूचि-  
भेद्यैस्तमोभिः'—पूर्वमेघे (३७) । 'यदालोके सूक्ष्मं  
व्रजति सहसा तद्विपुलताम्'—इति शाकुन्तले ।  
'आलोकं ददृशुर्धोरा नीराशा जीविते यदा'—इति  
रामायणे । वन्दिभाषणं; स्तुतिः; 'उदीरयामासुरि-  
वोन्मदानाम् आलोकशब्दं वयसां विरावः'—इति  
रघुवंशे (२-९) । ६६

आवरणम् क्ली. [ आङ्+वृ+ल्युट् ] फलकम्; 'ढाल'  
इति भाषा । आच्छादनम्; 'विचित्राणि च वासांसि  
प्रावारावरणानि च'—इति महाभारते । 'सूर्ये तपस्या-

वरणाय द्रुष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा'—इति  
रघुवंशे (५-१३) । 'स्रोतसां भेदको यश्च तेषाञ्चा-  
वरणे रतः—मनुः (३-१६३) । ४६०

आवर्तः पुं. [ आङ्+वृत्+घञ् ] जलभ्रमः; 'नृपं  
तमावर्तमनोज्ञनाभिः' इति रघुवंशे (६-५२) । 'भेवर'  
इति भाषा । चिन्ता; आवर्तनं; मेघनायकचतुष्टयान्त-  
तमेर्गवाधिपविशेषः; 'जातं वंशे भुवनविदिते पुष्क-  
रावर्तकानाम्'—इति पूर्वमेघे (६) । राजावर्तनामोप-  
रत्नम् । ६६८

आवर्हितः त्रि. [ आङ्+वृह्+क्तः ] उन्मूलितः;  
उत्पाटितः । ७१२

आवलिः स्त्री. [ आङ्+वल्+इन् ] श्रेणी; पङ्क्तिः;  
श्रेणिः । ७२१

आवली स्त्री. [ आङ्+वल्+इन्+ङीप् ] आवलिः;  
पङ्क्तिः; श्रेणी; 'आलोलामलकावलीं विलुलितां  
विभ्रच्चलत्कुण्डलम्'—इति अमरुशतके (३) । 'द्विजाव-  
लीव्याजनिशाकरांशुभिः'—इति माघे (१-२५) । ७२१

आवसथः पुं. [ आवसन्त्यत्र । आ+वस्+अधिकरणे  
अथच् ] गृहम्; 'अस्ति चम्पकाभिधानायां नगर्यां परि-  
त्राजकावसथः'—इति हितोपदेशे । आर्याकोषः; आर्या-  
च्छन्दसो ग्रन्थभेदः; व्रतविशेषः; क्ली. [ आवसन्ति  
आगत्य वसन्ति अस्मिन्, आङ्+वस्+अथच् ] गृहं;  
वसतिस्थानं; विश्रामस्थानम्; अग्निगृहम्; अग्निहोत्र-  
स्थानं; 'निवसन्नावसथे पुराद् वहिः'—इति रघुवंशे  
(८-१४) । 'आसनावसथौ शंथयामनुन्नज्यामुपासनाम्'  
—इति मनुः (३-१०७) । २९१

आवापः पुं. [ आ वपन्ति सलिलमत्र । आङ्+वप्+घञ् ]  
आलवालं; बलयः (५५७); 'मोहात् पपात गाण्डीव-  
मावापं च करादपि'—इति महाभारते । शत्रुचिन्तनं;  
पराष्ट्रचिन्तनं; 'तन्त्रावापविदा योगैर्मण्डलान्यधि-  
तिष्ठता'—इति माघे (२-८८) । पानभेदः; भाण्ड-  
वपनं; परिक्षेपः; निम्नोन्नतभूमिः; प्रधानहोमः । १८४

आवालम् क्ली. [ आङ्+वल्+घञ् ] आलवालं;  
वालकमभिव्याप्य; बालकपर्यन्तम् । १८४

आवासः पुं [ आवसन्ति अत्र इति । आङ्+वस्+अधि-  
करणे घञ् ] गृहम्; 'आवासी विपिनायते प्रियसखीमा-  
लापि जालायते'—इति गीतगोविन्दे (४-१०) । २९१

**आविकः** पुं. [ अविना मेषलोम्ना कृतः । अवि+ठक् ] कम्बलम्; त्रि. मेषलोम्ना निर्मितं; 'वसीरन्नानुपूर्व्येण शाणक्षीमाविकानि च'—मनुः (२।४१) । अविदुग्धम्; 'आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरीप्रणुत् । गुरु कासेऽनिलोद्भूते केवले चानिले वरम्'—इति वैद्यके । ५५१

**आविद्धः** त्रि. [ आङ्+व्यध्+क्तः ] वक्रः; क्षिप्तः; पराहतः; मूर्खः । ६९६

**आवुकः** पुं. [ अवति रक्षतीति, अक्+बाहुलकादुण्+कन् ] नाट्योक्तौ पिता । ९९

**आवेशः** पुं. [ आङ्+विश्+घञ् ] अहङ्कारविशेषः; संरम्भः; आटोपः; अपस्माररोगः; भूतादिना रोगः; भूतसंचारः; भूतक्रान्तिः; ग्रहामयः; आसवितः; अभिनिवेशः; 'तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय'—इति रघुवंशे (५-१०) । ७२२

**आवेशनम्** क्ली. [ आविश्यतेऽस्मिन् । आङ्+विश्+ल्युट् ] शिल्पिशाला; 'जीर्णोद्यानान्यरण्यानि कारुकावेशनानि च'—मनुः (९-२६५) । [ भावे ल्युट् ] भूतावेशः; 'मनःक्षेपस्त्वपस्मारो ग्रहाद्यावेशनादिजः'—इति साहित्यदर्पणे । प्रवेशः; कोपः; परिवेशः । २९६

**आवेशिकः** त्रि. [ आवेशं संरम्भं प्राप्तः । आवेश+ठक् ] आगन्तुः; अतिथिः; स्वीयम्; असाधारणम्; अन्यासाधारणं; प्रातिष्ठितम् । ३५८

**आवेष्टकः** पुं. [ आङ्+वेष्ट्+ण्वल् ] प्राचीरादिः । 'घेरा' इति भाषा । २९०

**आशंसा स्त्री.** [ आङ्+शंस्+अङ्+टाप् ] इच्छा; आकाङ्क्षा; 'निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे'—इति रघुवंशे (१२-४४) । ७१०

**आशङ्का स्त्री.** [ आङ्+शक्ति+अ+टाप् ] भयं; त्रासः; संशयः; वितर्कः; 'नष्टाशङ्का हरिणशिशवो मन्दमन्दं चरन्ति'—इति शाकुन्तले । 'तच्छ्रुत्वा विगताशङ्कस्तामकारणदूषिताम्'—इति कथासरित्सागरे १४ तरङ्गे । ७२५

**आशयः** पुं [ आङ्+शीङ्+अच् ] आधारः; अभिप्रायः; 'तच्चालोक्याशयं बुद्ध्वा तस्य सोऽपि वसन्तकः'—इति कथासरित्सागरे १२ तरङ्गे । चैतः; 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः'—इति भगवद्गीतायाम्

(१०-२०) । पनसवृक्षः; विभवः; किम्पचानः; अजीर्णः; कोष्ठागारं; घर्माघमौ; अदृष्टम्; 'आशयाः सप्त—वाताशयः, पित्ताशयः, श्लेष्माशयः, रक्ताशयः, आमाशयः, पक्वाशयः, मूत्राशयश्च । स्त्रीणां गर्भाशयोऽष्टमः'—इति सुश्रुतः । ७९८

**आशा स्त्री.** [ आ समन्ताद् अश्नुते व्याप्नोतीति । आङ्+अश+पचाद्यच्+टाप् ] दिक्; 'वासवाशामुखे भाति इन्दुश्चन्दनविन्दुवत्'—इति साहित्यदर्पणे । दीर्घाकाङ्क्षा (३६४); 'आशा नाम नदी मनोरथजलातृष्णातरङ्गाकुला'—इति शान्तिशतके (४-२६) । १००

**आशी स्त्री.** [ आङ्+अश्+अच्+ङीप् ] अहिदन्तः; हिताशंसनं; सर्पविषम्; 'आशीतालुगता दंष्ट्रा तथा दष्टो न जीवति'—इति विषविद्या । ६४२

**आशीः** [ स् ] स्त्री. [ आङ्+शास्+क्विप्+उपधाया इत्वम् ] सर्पदन्तः; आशीर्वादः; वृद्धिनामौषधिः; हितप्रार्थनम्; अभीष्टवृद्धिप्रार्थनं; 'वात्सल्याद् यत्र मान्येन कनिष्ठस्याभिधीयते । इष्टावधारकं वाक्यमाशीः सा परिकीर्तिता ॥ 'तस्मै जयाशीः ससृजे पुरस्तात्'—इति कुमारसम्भवे (७-४७) । ६४२

**आशीविषः** पुं. [ आशिषि दंष्ट्रायां विषमस्य सः, पृषोदरादित्वात् साधुः ] सर्पः; 'गरुत्मदाशीविषभीमदर्शनैः'—इति रघुवंशे (३-५७) । ६४१

**आशु क्ली.** [ अश्नते इति, अशुङ् व्याप्ती, उण् ] शीघ्रम्; द्रुतम्; 'तदाशु कृतसन्धानं प्रतिसंहर सायकम्'—इति शाकुन्तले । सत्त्वगामि चेतु त्रि. । अव्ययमपि शीघ्रो । ६९७

**आशुशुक्षणिः** पुं. [ आ समन्तात् शोष्मिच्छति । आङ्+शुष्+सन्+अनि ] अग्निः; 'मन्त्रपूतानि हवीषि प्रतिगृह्णाति एतत्प्रीत्या आशुशुक्षणिः'—इति कादम्बर्याम् । वायुः; इति सिद्धान्तकौमुद्याम् उणादिवृत्तिः । ६३

**आश्चर्यम्** क्ली. [ आङ्+चर्+ण्यत्+सुट् ] निपातनात् ] अपूर्वं; विस्मयः; अद्भुतं; चित्रं; 'गन्धोदधं तदनु ववृषुः पुष्पमाश्चर्यमेघाः'—इति रघुवंशे (१६-८७) । ७४५

**आश्रमः** पुं. क्ली. [ आङ्+श्रम्+घञ् ] मुनीनां वासस्थानं; वनं; मठः । (३९३) शास्त्रोक्तधर्मविशेषः—आश्राम्यन्ति स्वं स्वं तपश्चरन्त्यत्र, स तु चतुर्विधः—ब्रह्मचर्यं १, गार्हस्थ्यं २, वानप्रस्थ्यं ३, संन्यासः ४ ।

ब्रह्मचारी १, गृही २, वानप्रस्थः ३, भिक्षुः सन्ध्यासी ४ । कलियुगे तु ब्रह्मचर्यवानप्रस्थे न स्तः केवलं गृहस्थ-भिक्षुकाश्रमादेव—'गार्हस्थ्यो भिक्षुकश्चैव आश्रमी द्वी कली युगे'—इति महानिर्वाणतन्त्रे । 'स दुष्प्रापयशाः प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः'—इति रघुवंशे (१-४८) । २९८  
 आश्रयः पुं. [ आङ् + श्रि + अच् ] गृहं; राज्ञां सन्ध्यादि-पङ्गुणान्तर्गतगुणविशेषः; व्यपदेशः; 'योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयाद् द्विजः'—इति मनुः (२-११) । सामीप्यम्; आधारः; 'वासो वल्कलमाश्रयो गिरिगुहा शय्या लतावल्लरी'—इति शान्तिशतके (४-६) । संश्रयणम्; अवलम्बनम्; 'श्रीण्याद्यान्याश्रितास्त्वेपां मृगगतीश्रियाप्सराः'—इति मनुः (७-७२) । राज्ञां तन्निर्णयः; 'अस्थितौ यदि कल्याणं भवेत् संश्रयणं तथा । भवति श्रेयसे राज्ञां विपरीतं न कर्हिचित् ॥ उच्छिद्य-मानो बलिना आश्रयेद् बलवत्तरम् । विनीतवत्तत्र कालं नयेदिति मतिर्ध्रुवा ॥ ददद् बलं वा कोषं वा भूमिं वा भूतिसम्भवाम् । आश्रयेदभियोक्तारं समाश्रयगुणा-न्वितम्'—इति युक्तिकल्पतरौ १ अध्यायः । २९८

आश्रयान्नः पुं. [ आश्रयमाधारमपि अश्नाति यः । आश्रय + अश् + कर्मणि उपपदे अण् ] अग्निः; 'दुर्वृत्तः क्रियते वृत्तैः श्रीमानात्मविवृद्धये । किं नाम खलसंसर्गः कुस्ते नाश्रयाशवत्'—इति हितोपदेशे । चित्रकवृक्षः; त्रि. आश्रयनाशकः; आश्रयध्वंसी । ६३

आश्लेषः पुं. [ आङ् + श्लिप् + घञ् ] आलिङ्गनं; 'कण्ठा-श्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे—मेघदूते । एकदेश-सम्बन्धः; [ अश्लेषा एव । अण् + स्त्रियां टाप् ] आश्लेषा; स्त्री. आश्लेषा नक्षत्रम् । ५६८

आपाढः पुं. [ आपाढया नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा यस्मिन् । आपाढा + 'नक्षत्रेण युक्तः कालः' इति अण्, पलाश-दण्डपक्षे आपाढः प्रयोजनमस्य इति 'विशाखापाढादण्-मन्यदण्डयो' रित्यण् ] व्रतिनां दण्डः; वैशाखादिद्वादश-मासान्तर्गततृतीयमासः; 'खेमिथुनराशिस्थितिकालः; पूर्वोत्तरापाढान्यतरनक्षत्रयुक्ता पूर्णिमासी यत्र मासे सः; शुचिः; आंषादङ्कः; 'अनल्पजल्पी प्रमदाभिलाषी प्रमादशीलो गुह्यवृत्तलक्ष्णे । तदुव्ययो मन्दहृताशनः स्याद् आपाढमासप्रभवो मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । मलयपर्वतः; व्रतिनां पलाशदण्डः; 'अयाजिनापाढवरः

प्रगल्भवान् ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा'—इति कुमार-सम्भवे (५-३०) । ४११

आसनम् क्ली [ आस्यते उपविश्यतेऽस्मिन् । आस् + अधिकरणे + ल्युट् ] हस्तिस्कन्वदेशः; यत्र महामात्र उपविशति । पीठः (३१०); उपवेशनाधारः; 'आसनं प्रथमं दद्यात् षीष्यं दारुजमेव वा'—इति पुराणे । विजिगीषोर्दुर्गादीन् धर्षयतः स्थितिः; यात्रानिवर्तनम्; अष्टाङ्गयोगस्य तृतीययोगाङ्गं; तत्तु पञ्चप्रकारकर-चरणादिसंस्थानविशेषः—'पद्मासनं स्वस्तिकाख्यं भद्रं वज्रासनं तथा । वीरासनमिति प्रोक्तं क्रमादासन-पञ्चकम् ॥' पुं. [ असु क्षेपणे + ल्यु + प्रज्ञाद्यण् ] जीव-कवृक्षः; जीवकवृक्षशब्देऽस्य विशेषो ज्ञेयः । २१७

आसन्दी स्त्री. [ आस्यतेऽस्याम् । आस् + अब्दादयश्चेति साधुः ] क्षुद्रखट्वा; 'तस्मादस्मा आसन्दीमाहरन्ति सैषा खादिरी चित्पूणा भवति'—शतपथब्र-ह्मणे (५।४।४।१) ३११

आसन्नः त्रि. [ आङ् + सद् + क्त ] निकटस्थः; समीपवर्ती; 'आसीनमासन्नशरीरपातः'—इति कुमारसम्भवे (३-४४) । अस्ताभिमुखः सूर्यः । ६९३

आसवः पुं. [ आङ् + सुन् + अप् ] मद्यविशेषः; मैरेयं; शीघुः; 'शीघुरिक्षुरसैः पक्वैरपक्वैरासवो भवेत् । मैरेयं घातकीपुष्पगुडधानाम्लसंहितम् ॥' मद्यमात्रम्; 'यस-रक्षःपिशाचात्रं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानमश्नता हविः ॥' 'यदपक्वोषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः'—इति शाङ्गधरः । 'मृष्टो भिक्षशकृद्घातो गौडस्तर्पणदीपनः । छेदी मध्वासवस्तीक्ष्णो मैरेयो मधुरो गुरुः'—इति चरकः । 'तीक्ष्णः सुरासवो हृद्यो मूत्रलः कफघातनुत् । सुखप्रियः स्थिरमदो विज्ञेयोऽ-निलनाशनः'—इति सुश्रुते । ३२९

आसारः पुं. [ आङ् + सू + घञ् ] धारासम्पातः; वेग-वृष्टिः; 'त्वामासारप्रशमितवनोपप्लवं साधुमूर्द्धना'—इति मेघदूते । प्रसरणम्; सैन्यानां सर्वतो व्याप्तिः; 'तस्माद् दुर्गं दृढं कृत्वा सुभटांसारसंयुतम्'—इतिपञ्च-तन्त्रे (३-४९) । सुहृद्वलम्; 'अज्ञातवीथयासारतोय-सस्यो ब्रजेत्तु यः'—पञ्चतन्त्रे (३।२९) । ५९

आसीनम् त्रि. [ आस् + शानच् ] उपविष्टम् । 'वैठा हुवा' इति भाषा । ३८६

आसुतीबलः पुं. [ आसुतिरस्यास्ति, 'रजःकृष्यासुति-परिपदो बलच्' दीर्घः ] यज्वा; शौण्डिकः; कन्यापालः; कन्यापालकः; शूद्रजातिविशेषः । ४२०

आसुरी स्त्री. [ असुरस्य इयम्, असुर+तस्येदमित्यण्, ततो डीप् ] राजिका; राजसर्षपः; 'राई' इति भाषा । त्रिविधचिकित्सान्तर्गतचिकित्साविशेषः; सा च छेद-भेदाद्यात्मिका । ५८१

आस्तरणम् क्ली. [ आस्तीर्यते यत् येन वा । आस् + स्तृ + कर्मणि करणे वा ल्युट् ] हस्तिपृष्ठस्थितचित्रकम्वलं; प्रवेणी; वर्णः; परिस्तोमः; कुथाः; कुथः; प्रवेणिः; परिटोमः; 'झूल' इति भाषा । शय्या; कुशासनम्; 'राङ्गवास्तरणे पूर्वमयोष्यायामिवासने'—इति रामायणे, ३ काण्डे । 'दर्भास्तरणमास्तीर्य निश्चयाद् घृतराष्ट्रजः'—इति महाभारते । ३०८

आस्थानम् क्ली. [ आस्थीयतेऽस्मिन् इति । आङ् + स्था + ल्युट् ] सभा; 'अनेकराज्यन्यराश्वसंकुलं तदीयमास्थाननिकेतनाजिरम्'—इति किरातार्जुनीये (१-१६) । यत्नः; आश्रयः; स्थानम् । ७७८

आस्थानी स्त्री. [ आस्थान डीप् ] सभा; 'आस्थानीं समये समं नृपजनः सायन्तने सम्पतन्'—इति रत्नावली । ७४५

आस्थितः त्रि. [ आस्थीयते यः, आ + स्था + कर्मणि क्त ] आक्रान्तः; घृतः; स्पृष्टः; रुद्धः । ७८१

आस्यम् क्ली. [ अस्यते ग्रासोऽस्मिन् इति । असु क्षेपणे, 'कृत्यलुट्' इति ष्यत्, यदा आस्यन्दते अम्लादिना प्रसन्नति इति, स्यन्द् प्रसवणे + ड ] मुखं; मुखमध्यम्; 'यस्यास्येन सदाश्नन्ति हव्यानि त्रिदिवीकसः । आस्ये भवमास्यं; मुखमवे त्रि । ५१८

आह्वः पुं. [ आह्वयते अरिर्यस्मिन् । आङ् + ह्वे + अप् ] युद्धम्; 'यदाश्रौषं भीष्ममत्यन्तशूरम्, हतं पार्थेना-ह्वेष्वप्रघृष्यम्'—इति महाभारते, आदिपर्वणि (१-१८२) [ आह्वयते आज्यादिकं यत्र, आङ् + हु + अप् ] यज्ञः । ४५३

आहवनीयः पुं. [ आह्वयते आज्यादिरस्मिन् । आङ् + हु + णीयर ] यज्ञाग्निविशेषः; गार्हपत्यादुद्धृत्य होमार्थं यः संस्क्रियते सः; 'गुरुराहवनीयस्तु सान्नित्रता गरीयसी'—इति मनुः (२-२३१) । ७८९

आहारः पुं. [ आङ् + हु + घञ् ] द्रव्यगलाघःकरणं;

जणिवः; भोजनं; जेमनं; लेपः; निघषः; न्यादः; जमनं; विघसः; प्रत्यवसानं; भक्षणम्; अशनम्; अम्यवहारः; स्वदनं; निगरः; 'यदाहारगुणैः पानं विपरीतं तदिष्यते । अत्रानुपानं घातूनां दृष्टं यत्र विरोधि च'—इति चरकः 'आहारः प्रीणनः सद्यो बलकृद्देहधारकः । आयुस्तेजः समुत्साहस्मृत्योर्जोऽग्निविवर्धनः'—इति सुश्रुतः । आहरणम्; 'स पुनर्देवान्योक्तः पुष्पाहारो यदृच्छ्या'—इति महाभारते । ३१९, ३२५

आहावः पुं. [ आङ् + ह्वे + अप्, निपातनाद् वृद्धिः ] कूपसमीपे पश्वादिजलपानार्थं कृतस्वल्पजलाशयः । पशु आदि को जल पिलाने के लिए कूप के पास का हौद । [ आह्वयतेऽरिरत्र इति व्युत्पत्त्या ] युद्धम्; आह्वानम्; [ आह्वयतेऽत्र इति, आ + हु + अधिकरणे घञ् ] अप्तिः । ६८४

आहितः त्रि. [ आङ् + घा + क्त ] न्यस्तः; अपितः; स्थापितः; 'व्यावर्तनैरहिपतेरयमाहिताङ्कः'—इति किरातार्जुनीये । ७४७

आहितुण्डिकः पुं. [ अहितुण्डेन दीव्यति, अहितुण्ड + ठक् ] व्यालग्राही; 'सपेरा' इति ख्यातः । 'वैद्यसावत्सराचार्याः स्वपक्षेऽधिकृताश्चराः । ययाहितुण्डिकोन्मत्ताः सर्वं जानन्ति शत्रुषु ॥' ६१३

आहो अव्य. [ आ हन्तीति । आङ् + हन् + डो ] विकल्पः; प्रश्नः; 'दारत्यागी भवाम्याहो परस्त्रीस्पर्शपांशुलः'—इति शाकुन्तले । विचारः; 'आहो निवत्स्यति समं हरिणाङ्गनाभिः'—इति शाकुन्तले । ८८०

आहोपुरुषिका स्त्री. [ अहो अहमेव पुरुषः । मयूरव्यंसकादित्वात् समासः । अहोपुरुषस्य भावः । अहोपुरुष + वुञ् + स्त्रीत्वात् टाप् ] द्वाद् या आत्मनि सम्भावना सा । अधिकार्यवचनेन शक्तेरप्रतिघाताविष्करणम्; आत्मविषयकार्यसिद्धिजननशक्तघाविष्करणम्; 'आहोपुरुषिकां पश्य मम सद्रत्नकान्तिभिः'—इति मट्टी (५-२७) । 'निजभुजबलाहोपुरुषिकाम्'—भाभिनीविलासे (१-८४) । ७८४

आह्वानम् क्ली. [ आह्वयतेऽनेन करणे ल्युट् ] नाम; संज्ञा; आख्या; [ १५४, भावे ल्युट् ] आवाहनं, हतिः; आकारणम्; 'जन्म ज्येष्ठेन चाह्वानं स्वब्राह्मण्यास्वपि स्मृतम्'—इति मनुः (९-१२६) । १५२



## इ

इः पुं. [ अस्य विष्णोः श्रीकृष्णस्यापत्यम् पुमान् । अ+ इम् ] कामदेवः; 'इः कामे रतिलक्ष्म्योरी उः शिवे ब्रह्मकाय ऊः ।'—आग्नेये एकाक्षराभिधानम् । ३४

इचिकिलः पुं.—कर्ममः; जम्बालः । ६७८

इच्छा स्त्री. [ एषणम् इच्छा । इष् + श+टाप् ] मनो-धर्मविशेषः; आकाङ्क्षा; वाञ्छा; दोहदः; स्पृहा; ईहा; तृट्; लिप्सा; मनोरथः; कामः; अभिलाषः; तर्षः; रुक्; इषा; श्रद्धा; तृष्णा; रुचिः; मतिः; दोहलं; छन्दः; इट्; 'योऽर्हिसकानि भूतानि हित-स्त्यात्मसुखेच्छया' । 'निर्दुःखत्वे सुखे चेच्छा तज्ज्ञानादेव जायते । इच्छा तु तदुपाये स्याद्विष्टोपायत्वधीर्यदि ॥ चिकीर्षाकृतिसाध्यत्वप्रकारेच्छा तु या भवेत् । तद्धेतुः कृतिसाध्येष्टसाधनत्वमतिर्भवेत् ॥' अस्याः प्रतिबन्धः—'बलवद्द्विष्टहेतुत्वमतिः स्यात् प्रतिबन्धिका'—इति भाषापरिच्छेदे (१४८) । ७१०

इज्जलः पुं. [ एतीति, इ+क्विप्+तुक्; इन् जलमस्य ] हिज्जलवृक्षः; निचुलः; अम्बुजः; 'इज्जली हिज्जलश्चापि निचुलश्चाम्बुजस्तथा । जलवेतसवद्वेद्यो हिज्जलोऽयं विषापहः'—इति भावप्रकाशे । १९५

इज्याशीलः पुं [ इज्यां यज्ञं शीलयति पुनः पुनराचरतीति । इज्या + शील + ण ] पुनः पुनर्यज्ञकर्ता; यायजूकः । ४२०

इडा स्त्री. [ इल् + क + टाप् ] शरीरस्य वामभागस्था नाडी; 'इडा नाम सैव गङ्गा धमुना पिङ्गला स्मृता । गङ्गायमुनयोर्मध्ये सुपुम्णा च सरस्वती ॥ एतासां सङ्गमो यत्र त्रिवेणी सा प्रकीर्तिता । तत्र स्नातः सदा योगी सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ इडा च वामनिःश्वासः सोममण्डलगोचरा । पितृयानमिति ज्ञेया वाममाश्रित्य तिष्ठति'—इति उत्तरंगीतायाम् । स्वर्गः; पृथ्वी; 'पतत्रिसङ्घैः स जघन्यरात्रे प्रबोद्धरते नूनमिडातलस्थः'—इति महाभारते । बुधग्रहभार्या; इक्ष्वाकुराजकन्या; 'तत्र दिव्याम्बरधरा दिव्याभरणभूषिता । दिव्यसंहनना चैव इडा जज्ञे इति श्रुतिः'—इति हरिवंशे । गीः; 'इडाज्यहोमाहुतिभिर्मन्त्रशिक्षाविशारदैः'—इति भारते । वचनं; देवीभेदः; 'श्रुतिः प्रीतिरिडा कान्तिः शान्तिः पुष्टिः क्रिया तथा'—इति हरिवंशे । दुर्गा । ८४६

इतरः त्रि. [ इना कामेन तरतीति । इ+तृ+अप्, यद्वा इतेन ज्ञानेन क्षीयते इति । बाहुलकाद् अरः ] नीचः; अन्यः (४८०); 'वामेतरस्तस्य करः प्रहर्तुः'—इति रघुवंशे (२-३१) । 'इतरो दहने स्वकर्मणाम्'—इति रघुवंशे (८-२०) । ३४८

इतरेतरम् त्रि. [ वीप्सायां कर्मव्यतिहारे द्वित्वं, समास-वत्त्वं च ] अन्योऽन्यं; परस्परं; मिथः; 'व्यूहावुभौ तावितरेतरस्माद् भङ्गं जयञ्चापतुरव्यवस्थम्'—इति रघुवंशे (७-५४) । ७२०

इति अव्य. [ इण् + क्तच् ] हेतुः; 'वत्सोत्सुकापि स्तिमिता सपर्या प्रत्यग्रहीत्सेति ननन्दतुस्तौ'—इति रघुवंशे (२-२२) । प्रकारः; समाप्तिः; प्रकरणम्; 'उदितेऽनुदिते चैव समयाध्युसिते तथा । सर्वथा वर्तते यज्ञ इतीयं वैदिकी श्रुतिः'—मनुः (२-१५) । प्रकाशः; 'दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव'—इति रघु-वंशे (१-१२) । आदिः; निदर्शनम्; 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः'—इति मनुः (१-१०) । अनुकर्षः; परकृतिः; विवक्षानियमः; प्रत्यक्षम्; अवधारणं; परामर्शः; मानम्; इत्यमर्यः; एवार्थः; 'गुणानित्येव तान् विद्धि'—इति रामायणे, प्रथम-काण्डे । ८८७

इतिह अव्य. [ इति एवं च, ह किल च ] पारम्पर्योपदेशः; ऐतिह्यम् । ८७७

इत्वरी स्त्री. [ एति परपुरुषं प्राप्नोतीति । इ+क्वरप्+ डीष् ] असती; अभिसारिका । ४९६

इध्मम् बली. [ इन्व+मक् ] अग्निसन्दीपनकाण्डम्; इन्धनम्; 'तत्रेध्मानयने शुक्रो नियुक्तः कश्यपेन ह'—इति भारते । ४६९

इनः पुं. [ एतीति । इ+नक् ] सूर्यः; (३५६) आढ्यः; समृद्धः; (८२५) प्रभुः; स्वामी; 'वसु न इनस्पतिः' ऋग्वेदे (४३।२) । नृपभेदः । ३५

इन्दिवरः पुं. [ इन्दि कमलशोभां दृणाति । इदि परमैश्वर्ये, इन्, दृ, बाहुलकात् खश् ] भ्रमरः—'लोभादिन्दिवरेषु नियत्सु'—इति भामिनीवि-लासे (२-१८३) । ३५५

इन्दिरा स्त्री. [ इन्द्+किरच्+टाप् ] लक्ष्मीः; 'मन्दं मन्दिरादिन्दिरेव'—इति भामिनीविलासे । शोभा;

कान्तिः; 'निशि निःसरदिन्दिरं कथं तुलयामः कलयापि पङ्कजम्'—इति भामिनीविलासे । ३१

इन्दीवरम् क्ली. [ इन्दतीति । इदि परमैश्वर्ये, इगुपधात् किदिति इन्, ततो डीष्, इन्दीलक्ष्मीस्तस्या वरं प्रियम् ] नीलोत्पलम् । ६८१

इन्दुः पुं. [ उन्नति अमृतवारया भुवं विलम्बां करोति इति । उन्द्+उ+आदेरिच्च ] चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'दिलीप इति राजेन्द्रुरिन्दुः क्षीरनिधाविव'—इति रघुवंशे (१-१२) । कर्पूरः; चन्द्रसमसंख्यः; एकसंख्यायुक्तः; मृगशिरानक्षत्रम्; 'दिवार्ककिरणैर्जुष्टं स्पृष्टमिन्दु-कर्नैर्निशि'—इति वैद्यकद्रव्यगुणः । ४२

इन्द्रः पुं. [ इन्दतीति । इदि परमैश्वर्ये, तस्माद् रन् प्रत्ययः ] देवराजः; अदितिपुत्रः; पूर्वदिकपतिः; शचीपतिः । (तस्य पुत्राः—जयन्तः १, ऋषभः २, मीढ्वांश्च । अस्त्रं वज्रम् । वाहनम् ऐरावतः । पुरी अमरावती । वनं नन्दनम् । माता अदितिः । भार्या शची) मरुत्वान्; मघवा; विडौजाः; पाकशासनः; वृद्धश्रवाः; सुनासीरः; पुरुहूतः; पुरन्दरः; जिष्णुः; लेखर्षभः; शक्रः; शतमन्युः; दिवस्पतिः; सुत्रामा; गोत्रभित्; वज्री; वासवः; वृत्रहा; वृषा; वास्तोस्पतिः; सुरपतिः; बलारातिः; जम्भभेदी; हरिहयः; स्वाराट्; नमुचिसूदनः; संक्रन्दनः; दुश्च्यवनः; तुराषाट्; मेघवाहनः; आखण्डलः; सहस्राक्षः; ऋभुक्षा; महेन्द्रः; कौशिकः; पूतक्रतुः; विश्वम्भरः; हरिः; पुरुदंशा; शतधृतिः; पूतनाषाट्; अहिद्विषः; वज्रपाणिः; पर्वतारिः; पर्यन्यः; देवताधिपः; नाकनाथः; पुलोमारिः; अर्हः; प्राचीनवर्हिः; तपस्तक्षः; 'इन्द्रश्च विश्वमुग्ज्यो विंपश्चित्तदनन्तरम् । विभुः प्रभुः शिखिश्चैव तथैव च मनोजवः ।' पूर्वदिकपतिः; दिक्पालविशेषः; दिक्पालभेदः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतषड्विंशद्योगः; 'प्रतापशीलो बलवान् गुणज्ञः श्लेष्माधिकः श्रीकमलाम्बुपेतः । किलेन्द्रयोगो यदि जन्मकाले महेन्द्रतुल्यः पुरुषः प्रसन्नः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । अन्तरात्मा; आदित्यविशेषः; 'तत्र शक्रश्च विष्णुश्च जज्ञाते पुनरेव ह'—इति हरिवंशे । कुटजवृक्षः; रात्रिः; उपद्वीपविशेषः; परमेश्वरः; 'इन्द्रो मायाभिः पुरुषरूप ईयते'—इति श्रुतिः । इन्द्रियं; श्रेष्ठः; प्रथमः; यथा—नरेन्द्रो राजा, पक्षीन्द्रो गरुडः इत्यादिः । सूर्यः; वायुः । १५२

इन्द्रकोपः पुं. [ इन्द्रस्य ऐश्वर्यशालिनः कोपः ] मञ्चः; खट्वा; तमङ्गकः । २९४

इन्द्रप्रहरणम् क्ली. [ इन्द्रस्य प्रहरणम् ] इन्द्रस्यास्त्रं; वज्रम् । ५६

इन्द्रलुप्तम् क्ली. [ इन्द्राणाम् इन्द्रनीलवर्णकेशानां लुप्तं लोपो यस्मात् ] इन्द्रलुप्तकः; केशनाशकरोगः; इन्द्रलुप्तकः; केशघ्नः; केशरोगविशेषः; 'रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम् । प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः ॥ रुणद्धि रोमकूपांस्तु ततोऽन्येषामसम्भवः । तदिन्द्रलुप्तं खालित्यं रुज्येति च विभाव्यते'—इति वैद्यके । ६०५

इन्द्राणी स्त्री. [ इन्द्रस्य ऐश्वर्यशालिनः सुरराजस्य वा पत्नी । इन्द्र + 'इन्द्रवरुणेति' डीप्, आनुक् च ] इन्द्रभार्या; पुलोमजा; शची; पौलोमी; पूतकृतायी; माहेन्द्री; जयवाहिनी; ऐन्द्री; शतावरी; 'यथेन्द्राणी महेन्द्रस्य लक्ष्मीलक्ष्मीपतेर्यथा'—इति भविष्यपुराणे । इन्द्रशक्तिः; 'इहेन्द्राणीमुपह्वये वरुणानीम्'—ऋग्वेदे (१-२२-१२) । 'इन्द्राणीम् इन्द्रस्य सूर्यस्य वायोर्वा शक्तिम्'—इति दयानन्दसरस्वतीकृतभाष्यम् । इन्द्रसुरिसवृक्षः; स्त्रीणां करणं; नीलसिन्दुवारवृक्षः; स्यूलैला; सूक्ष्मैला; दुर्गा; 'ऐश्वर्यं परमं यस्या वशे चैव सुरासुराः । इदि परमैश्वर्ये च इन्द्राणी तेन सा शिवा'—इति देवीपुराणे, ४५ अध्यायः । अष्टमातृकान्तर्गतमातृकाविशेषः । ५५

इन्द्रायुधः पुं. [ इन्द्रस्यायुधमिव, चापाकृतित्वात् ] कृष्णाक्षाश्वः; 'मत्तिकाक्षः सितैर्नेत्रैः स्याद्वाजीन्द्रायुधोऽसितैः ।' क्ली. इन्द्रधनुः; 'स नादं मेघनादस्य धनुश्चेन्द्रायुधप्रभम्'—इति रघुवंशे (१२।७९) । न दिवीन्द्रायुधं दृष्ट्वा कस्यचिद्दर्शयेद्दुःखः'—इति (४।५९) । 'इन्द्रधनुष' इति भाषा । ४३८

इन्द्रावरजः पुं. [ इन्द्रस्य अवरजः, वामनरूपेण अनुजः ] विष्णुः; उपेन्द्रः; चक्रपाणिः; चतुर्भुजः । २३

इन्द्रियम् क्ली. [ इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमनुमापकम्, इन्द्रेण ईश्वरेण स्पृष्टम्, इन्द्रेणात्मना मम चक्षुर्मम श्रोत्रमित्यादिक्रमेण ज्ञातम्, इन्द्रेण जुष्टं वा, इत्याद्यर्थेषु इन्द्रशब्दात् निपातनात् घञ् ] ज्ञानकर्मसाधनं; हृषीकं; विषयिः; असं; करणं; ब्रह्मणम्; 'इन्द्रियाणां विचरतो विषये-

ष्वपहारिपु'—इति मनुः (२-८८) । (६३८) शुक्रं; वीर्यम् । विज्ञानं; 'यथा क्षयाम सर्ववीरया विशातन्त्रः शब्दायि घासयास्विन्द्रियम्'—इति ऋग्वेदे (१।१११२) । 'इन्द्रियं विज्ञानम्'—इति दयानन्दभाष्यम् । ५३५

इन्द्रियग्रामः पुं. [ इन्द्रियाणां ग्रामः ] इन्द्रियसमूहः; इन्द्रियवर्गः । ८११

इन्धनम् क्ली. [ इन्धे दीप्यतेऽग्निरन्नेन । इन्ध् + करणे + ल्युट् ] अग्निसन्दीपनतृणकाष्ठादि; इध्मम्; एधः; समित्; एधे; समिन्धनम्; 'अन्नपानेन्धनादीनि ग्रामिकस्तान्यवाप्नुयात्'—इति मनुः (७-११८) । ६९

इक्षः पुं.- स्त्री. [ एति गच्छतीति । इण् + भन् । औणादिकोऽयं प्रत्ययः ] हस्ती; 'खरांश्चोष्ट्रमृगेभानामजाविकवधन्त्या'—इति मनुः (११-६८) । 'इभदलितविकीर्णप्रत्यिनिष्यन्दगन्वः'—इति उत्तरचरिते । उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः । २१४

इरजः पुं. [ इरायाः सुराया जातः । इरा + उ, बाहुलकाद् ह्रस्वः ] इराजः; कामः । ३४

इरम्मदः पुं. [ इरया उदकेन माद्यति दीप्यते, अविन्धनत्वात् । 'उग्रम्पश्येरम्मदेत्यादिना' खश् प्रत्ययो मुपागमश्च निपातितः ] जग्गानिनः; मेघज्योतिः; मेघाग्निः; अन्योन्यसङ्घट्टनेन मेघान्निःसृत्य यज्ज्योतिर्वृक्षादौ पतति सः; मेघ इत्युपलक्षणं वातजाग्निरपि । ६९.

इरा स्त्री. [ इं कामं राति ददाति इति । इ + रा + क, यद्वा इ + र्न् + टाप, निपातनाद् गुणाभावः ] भूमिः; वाक्यम्; अन्नं; जलम्; 'इरां वहन्तो घृतमुक्षमाणा मित्रेण साकं सह संविशन्तु'—आश्वलायनगृह्यसूत्रे (२-९) । सरस्वती; कश्यपपत्नीविशेषः; 'धर्मपत्न्यः समाख्याताः कश्यपस्य वदाम्यहम् । अदितिदितिर्दनुः काला अमायुः सिहिका मुनिः ॥ कद्रूः प्राधा इरा क्रोधा विनता सुरभिः खशा'—इति गारुडे, ६ अध्यायः । तस्याः सृष्टिर्यथा—'इरा वृक्षलता वल्ली तृणजातिश्च सर्वशः । खशा च यक्षरक्षांसि मुनिरप्सरसस्तथा । दैत्यविशेषः; 'मरीचिर्मघवांश्चैव इराशङ्कुशिरा वृकः । इति हरिवंशे (३-८२) । मद्यम् । ८६९

इराजः पुं. [ इरया नद्येन जातः इति । इरा + जन् + उ ] कन्दर्पः; कामदेवः; मदनः; मन्मथः । ३४

इरिणम् क्ली. [ ऋच्छतीति । ऋ गतिप्राणयोः, किदि-

च्चेति इनन् ] ऊपरभूमिः; 'यद्येरिणे बीजमुप्त्वा न वप्ता लभते फलम्'—इति मनुः (३-४४२) । शून्यम् । १५८

इला स्त्री. [ इलति विष्णुवरात् पुंस्त्वं प्राप्नोति इति । इल् + क + टाप् ] पृथिवी; (८३४) वाक्यं; गौः । वैवश्वतमुनिकन्या; सा च विष्णुवरात् पुंस्त्वं प्राप्य सुद्युम्ननाम्ना ख्याता, पश्चात् शङ्करशप्तकुमारवर्गं प्रविश्य पुनः स्त्रीत्वं गता । बुधस्तां भार्यात्वेन स्वीकृत्य पुरूरवसं जनयामास । ततस्तस्याः पुरोहितो वशिष्ठः शङ्करमाराध्य तस्यै मासं स्त्रीत्वं, मासं पुंस्त्वं दत्तवान्—इति भागवतम् । कर्दमप्रजापतिपुत्र इलः कार्तिकेयजन्मदेशं प्रविश्य स्त्री भूत्वा इला नाम्ना ख्यातः । ततः पार्वतीमाराध्य मासं स्त्रीत्वं, मासं पुंस्त्वं च प्राप्तवान्—इति रामायणम् । १५६

इषः पुं. [ इष्यते गम्यतेऽस्मिन् जिगोषुभिरिति । इष् + क ] आश्विनमासः; 'इषजौ शरत्'—इति सुश्रुतः । 'यच्छरद्दूर्गस ओषधयः पच्यन्ते तेनेहेताविपश्चोर्गच्छ'—इति शतपथब्राह्मणे (४-३) । ११४

इषीका स्त्री. [ इष्यते इति, इषेः किद् ह्रस्वश्चेतीकन् ह्रस्वः टाप् ] तूलिका; इषिका; काशतृणम्; 'पतङ्गानां पुच्छेषु त्वयेषीका प्रवेशिता । 'इषीकां च यथा मुञ्जात् कश्चिन् निष्कृष्य दर्शयेत् । योगी निष्कृष्य चात्मानं तथा पश्यति देहतः'—इति महाभारते । 'तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रं रामो रामावबोधितः'—इति रघुः (१२-२३) । इषीकास्त्रं, काशास्त्रम्; गजचक्षुर्गोलकः; गुजाक्षिकूटकः; हस्तिचक्षुर्गोलकः । १९१

इषुः पुं.- स्त्री. [ इष्यति गच्छतीति । इष् + उ ] वाणः; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले'—इति शाकुन्तले । ४६६

इषुधिः स्त्री. [ इषवो धीयन्तेऽस्मिन् । इषु + धा + कि ] तूणः; 'धनुर्गाण्डीवमादाय तथाक्षय्ये महेषुधौ'—इति महाभारते । ४६५

इष्टका, इष्टिका स्त्री. [ इष् + तकन् + टाप् ] गृहादिनिर्माणार्थदग्धमृत्तिकाखण्डः; 'इष्ट' इति भाषा । 'कूपोदकं वटच्छाया ख्याता स्त्री इष्टकागृहम् । शीतकाले भवेदुष्णमृष्णकाले च शीतलम्'—इति चाणक्यः । 'मृष्णयात् कोटिगुणितं फलं स्याद् दारुभिः कृते । कोटिकोटिगुणं पुण्यफलं स्यादिष्टिकामये ॥ द्विपराद्धागुणं पुण्यं

शैलजे तु विदुर्बुधाः । मृच्छलयोः समं ज्ञेयं फलमाढ्य-  
दरिद्रयोः—इति मठादिप्रतिष्ठातत्त्वे । २९३

इष्वासः पुं. [ इषवो वाणा अस्यन्ते क्षिप्यन्तेऽनेन । इषु +  
अस् + करणे घञ् ] धनुः; 'महोरस्को महेश्वासो  
गूढजनुररिन्दमः—इति रामायणे । 'अत्र शूरा  
महेश्वासा भीमार्जुनसमा युधि—इति भगवद्गीता  
(१-४) । त्रि. [ इषून् वाणान् अस्यतीति, इषु +  
अस् + घञ् ] इषुक्षेपकम् । ४६४

ई

ई अव्य.— दुःखभावनं; क्रोधः; प्रत्यक्षं; सन्निधिः;  
सम्बोधनम्; ईः पुं., कन्दर्पः; ई स्त्री. [ अस्य विष्णोः  
पत्नी, डीप् ] लक्ष्मीः; दीर्घकारः; चतुर्थस्वर-  
वर्णः; 'ई स्त्रीमूर्तिर्महामाया लोलाक्षी वामलोचनम् ।  
गोविन्दः शोखरः पुष्टिः सुभद्रा रत्नसंज्ञकः ॥ विष्णुलक्ष्मीः  
प्रहासश्च वाग्विशुद्धः परापरः । कालोत्तरीयो भेकण्डा  
रतिश्च षोडशवर्धनः ॥ शिवोत्तमः शिवा तुष्टिश्चतुर्थी  
विन्दुमालिनी । वैष्णवी वेन्दवी जिह्वा कामकला  
सनादका ॥ पावकः कोटरः कीर्तिमोहनी कालकारिका ।  
कुचद्वन्द्वं तर्जनी च शान्तिस्त्रिपुरसुन्दरी—इति तन्त्रोक्त-  
वर्णाभिधानम् । ८७५

ईक्षणम् क्ली. [ ईक्ष् + भावे ल्युट् ] दर्शनं; 'कृतान्धा धन-  
लोभान्धा नोयकारेक्षणक्षमाः—इति कथासरित्सागरे ।  
[ ईक्षतेऽनेनेति करणे ल्युट् ] चक्षुः (५१९); 'इत्यद्रि-  
शोभाप्रहितेक्षणेन' इति रघुवंशे (२-२७) । 'अभिमुखे  
मयि संवृतमीक्षणम्—इति शाकुन्तले । 'स्वासक्षा-  
मेक्षणा दीना सुनीतिर्विन्मम।वीत्—इति विष्णुपुराणे  
(१-११-१५) । निरूपणं; पर्यवेक्षणम्; 'स्थापये-  
दासने तस्मिन् खिन्नः कार्येक्षणे नृणाम्—इति  
मनुः (७-१४१) । ५५६

ईडा स्त्री. [ ईड् + क + टाप् ] स्तुतिः; प्रशंसा । १४५  
ईतिः स्त्री. [ ईयतेऽनया । ई + वितन् ] कृषेः षट्प्रकारो-  
पद्रवविशेषः; 'अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभा मूषिकाः  
खंगाः । प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता इतयः स्मृताः ॥'  
डिम्बः; विप्लवः; प्रवासः; नृपतिरहितमुष्टं; कलहभेदः;  
'इतयो व्याधयस्तन्द्रा दोषाः क्रोधादयस्तथा । उपद्रवाश्च  
वर्तन्ते आंधयः क्षद्ध्यं तथा—इति महाभारते । १२७

ईप्सा स्त्री. [ आप्तुम् इच्छा । -अप्रत्ययात्' इति अ, टाप् ]  
कामना; इच्छा; मनोरथः; अभिलाषः । ७१०

ईर्मम् क्ली. [ ईर् + बाहुलकान्मक् ] व्रणः; 'मृगयुमिव  
मृगोऽय दक्षिणेर्मा—इति भट्टिकाव्ये (४-४४) । ६३०  
ईर्वात्तः पुं.-स्त्री. [ ईर् + वृणोतीति । ईर् + वृ + बाहुलकाद्  
उण् ] स्फुटिः । 'फूट' इति भाषा । २०९

ईर्षा स्त्री. [ ईर्ष्यणम्, ईर्ष्य् + अ, 'हसाल्लोपोऽसिति—  
(मु बो. ७७६) इति यलोपः ] अक्षमा; 'कथमीर्षान् कुर्वे  
सुयीवस्य समीपतः—रामायणे (४।२४।३७) । ७४०  
ईर्षालुः त्रि. [ ईर्षा + आलुच् बाहुलकात् ] ईर्षा-  
विशिष्टः । ३८४

ईर्ष्या स्त्री. [ ईर्ष्यणम् । ईर्ष्य् + अ + टाप् ] परोत्कर्षा-  
सहिष्णुता; अक्षान्तिः; 'पैशुन्यं साहसं द्रोह ईर्ष्या-  
सूयार्थद्वेषणम् । वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि  
गणोष्टकः—इति मनुः (७-४८) । स्त्रियः पत्युरन्य-  
प्रियासङ्गदर्शनादिजनितो मानभेदः; 'वचोमिरीर्ष्याकल-  
हेन लीलया समस्तभावैः खलु बन्धनं स्त्रियः ।' ७४०  
ईर्ष्यालुः त्रि. [ ईर्ष्या लाति । ईर्ष्या + ला + लु ] ईर्षा-  
विशिष्टः; अक्षान्तियुक्तः; क्रुहनः; 'दिवसे सन्निधानेन  
पेशुनप्रेरणा यदि । ईर्ष्यालुना स्वरिणीव रक्षितुं यदि  
पायंते—इति राजतरङ्गिणी । ३८४

ईलिः स्त्री. [ ईर्यते इति, ईर् + इन्, रस्य लः ] करपाली;  
गुप्तिका; ह्रस्वगदाकारहस्तदण्डः; 'सोटा' इति ह्यातः ।  
करच्छुरी; एकधारा; यवनास्त्रम् । ५९५

ईली स्त्री. [ ईर् + इन्, कृदिकारादिति डीष् ] ह्रस्व-  
गदाकारहस्तदण्डः; करपालिका; ईलिका; ईलिः;  
कारपाली; गुप्तिका; एकधारा इति ह्यप्ते, यवनास्त्रे  
वा । ५९५

ईशः त्रि. [ ईष्टे इति, ईश् + क ] ईश्वरः; 'जगदीशो  
निरिश्वरः—इति कुमारसम्भवे (२-९) । प्रभुः;  
'कथंविदीशा मनसां बभूवुः—इति कुमारसम्भवे  
(३-३४) । पुं. महादेवः; 'शनेः कृतप्राणविमुक्ति-  
रीशः पर्यङ्कव्रणं निविडं विभेद—इति कुमारे (३-  
५९) । ईशानकोणाधिपतिः । ३५६

ईशानः पुं. [ ईष्टे, ईश् + ताच्छील्यवधोवचनशक्तिषु  
'चानश्' ] महादेवः; 'तस्मिन् मुहूर्ते पुरसुन्दरीणामी-  
शानसंदर्शनलालसानाम्—इति कुमारसम्भवे (७-५६) ।

'तत्रैशानं समम्यर्च्यं त्रिरात्रोपोषितो नरः'—इति भारते । एकादशरुद्रान्तर्गतरुद्रविशेषः; १ हराय; २ मृडाय; ३ शर्वाय; ४ शिवाय; ५ भवाय; ६ शङ्कराय; ७ ईशानाय; ८ उग्राय; ९ भीमाय; १० पशुपतये; ११ रुद्राय महादेवाय स्वाहा'—इति वाश्वलायनगृह्यसूत्रे (४-९) । द्रुतमूर्तिवरः शिवः; घूम्रजटिलः; 'सा चाह घूम्रजटिलमीशानमपराजिता । द्रुत त्वं गच्छ भगवन् पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः'—इति मार्कण्डेये (८८-२३) । शिवाष्टमूर्त्यन्तर्गतसूर्यमूर्तिः; परमेश्वरः; 'सर्वेन्द्रियगुणावासं सर्वेन्द्रियविर्वाजितम् । सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत्'—कृष्णयजुर्वेदे । 'आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुरुष्टुतम् । ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम् । साध्यापुत्रो देवताभेदः; 'धर्माल्लक्ष्म्युद्धवः कामः साध्या साध्यान् व्यजायत । प्रसवं च्यवनं चैव ईशानं सुरभि तया'—इति भारते । शमीवृक्षः; क्ली. ज्योतिः; पुं. तद्विशिष्टे; 'मुषाय सूर्यं कवे चक्रमीशान ओजसा'—इति ऋग्वेदे (१।१७५।४) । ११

ईश्वरः पुं. [ ईष्टे इति, ईश् + वरच् । यद्वा अश्नुते व्याप्नोतीति । अश्वातोर्वरच् उपधाया ईत्वं च ] ऐश्वर्य-हाली; राष्ट्री; अर्यः; नियुत्वान्; इनः; हरिः; 'रुद्र उवाच—हरे कथय देवेश देवदेव क ईश्वरः । को ध्येयः कश्च वै पूज्यः कैर्व्रतैस्तुष्यते परः ॥ हरिस्वाच—'शृणु रुद्र प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा च सुरैः सह । अहं हि देवो देवानां सर्वलोकेश्वरेश्वरः'—इति गरुडे (२ अध्यायः) । नृपतिविशेषः; 'मतिमांश्च मनुष्येन्द्र ईश्वरश्चेति विश्रुतः'—इति महाभारते । कन्दर्पः; विशुद्धसत्त्वप्रधानान्नानोपहितचैतन्यम्; शिवः; 'तद्गीर्वाणमङ्गलमण्डनश्रीः सा पस्पशे केवलमीश्वरेण'—इति कुमारे (७-३१) । त्रि. आढयः; 'दरिद्रान् भर कीर्त्तये मा प्रयच्छेश्वरे धनम्'—इति हितोपदेशे (१-७६) । स्वामी; 'अहं चैव हि यच्चान्यन्ममास्ति वसु किञ्चन । तत्सर्वं तव विस्रव्यं कुरु प्रणयमीश्वर'—इति महाभारते । नियन्ता; प्रभुः; 'ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोषस्य गुप्तये'—इति मनुः (१-९९) । ३५६

ईषत् अव्य. [ ईषणमिति । ईष् + अत् ] अल्पं; किञ्चित्; मनाक्; 'न दृष्ट्वा कुपितं पुत्रं ईषत्प्रस्फुरिताधरम्'—इति विष्णुपुराणे (१-११-१२) । 'ईषत्सहासममलं

परिपूर्णचन्द्रविस्वानुकारि कनकोत्तमकान्ति कान्तम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे । 'हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं रक्तमीषत् सपीतकम्'—इति चरकः । ८८२

ईहामृगः पुं. [ ईहाप्रधानो मृगो वृकः ] कुक्कुरभेदः; वनकुक्कुरः; कुक्कुरप्रमाणहरिणघ्नकपिलवर्णजन्तुविशेषः; कोकः; वृकः; 'भेड़िया' इति भाषा । 'पुलहस्य सुता राजन् शलभाश्च प्रकीर्त्तिताः । सिंहाः किपुरुषा व्याघ्रा यक्षा ईहामृगास्तथा'—इति महाभारते । नाटकरूपकभेदः (नायको मृगवदलम्यामपि नायिका-मीहते वाञ्छत्यत्र इति); 'ईहामृगो मिश्रवृत्तश्चतुरङ्कः प्रकीर्त्तितः'—इति साहित्यदर्पणे । २२८

ईहावृकः पुं. [ ईहाप्रधानो वृकः ] ईहामृगः । २२८

### उ

उक्षतरः पुं. [ उक्षन् + तरच् ] महावृषः । २६५

उक्षा [ न् ] पुं. [ उक्ष् + कनिन् ] वृषः । 'उक्षा मिमाति प्रतियन्ति धेनवः'—इति ऋग्वेदे (८-७१-९) । 'तत्रावतीर्याच्युतदत्तहस्तः शरद्घनाद्दीधितिमानिवोक्षणः'—इति कुमारसम्भवे (७-७०) । ऋषभौषधिः । २६३

उखा स्त्री. [ उख् + क + टाप् ] स्थाली; 'इद्धः स्वतेजसा बह्निस्लागतमिवोदकम्'—इति सुश्रुते । 'बटुली' इति भाषा । ३१४

उख्यम् त्रि. [ उखायां संस्कृतम् । उखा + यत् ] स्थाली-पक्वमांसादि; पैठरम्; 'शूल्यमुख्यं च होमवान्'—इति भट्टिः (४-९) । [ उखायां भवः ] अग्निः; 'उरुप्रान् (अग्नीन्) हस्तेषु विभ्रतः'—इति अथर्ववेदे (४।१४।२) । ३२३

उग्रः पुं. [ उच् + रक् गश्चान्तादेशः ] महादेवः; 'उग्रो वंशकरो वंशो वंशनादो ह्यनिन्दितः'—महाभारते । नृपविशेषः; क्षत्रियात् शूद्रायां जातः जातिविशेषः; 'क्षत्रियात् शूद्रकन्यायां क्रूराचारविहारवान् । क्षत्रशूद्र-वपुजन्तुरग्रो नाम प्रजायते । 'क्षत्रुग्रपुक्कसानान्तु विलीकोवधवन्धनम्'—इति मनुः (१०।१।४९) । नक्षत्र-गणविशेषः—स च पूर्वाफाल्गुनीपूर्वाषाढापूर्वाभाद्रपदा-मघाभरण्यात्मकः; शोभाञ्जनवृक्षः; केरलदेशः; रुद्रः; उग्रो देवः; दानवविशेषः; 'वेगवान् केतुमानुग्रः सोग्रव्यग्रो महासुरः'—इति हरिवंशे । धृतराष्ट्रस्य शतपुत्रेषु एकः;

'उग्रभीमरथो वीरौ वीरबाहुरलोलुपः'—इति महाभारते । नरेन्द्रादित्याख्यस्य कश्मीरराजस्य गुरुः; 'दिव्यानुग्रह-  
भागुप्राभिवो यस्य गुरुर्व्यधात्'—इति राजतरङ्गिणी ।  
विष्णुः; स्त्री. योगिनीभेदः; 'महाकालस्य रुद्राणी  
उग्रा भीमा तथैव च' इति कालिक.पु. ६० अध्यायः ।  
कली. वत्सनाभनामविषम् । त्रि. रौद्रम्; उत्कटम् । ११  
उग्रधन्वा [न्] पुं. [ उग्रं धनुर्न्यस्य । धनुषश्चेत्यनञ् ]  
इन्द्रः; 'स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी संस्रष्टा स युष  
इन्द्रो गणेन । संस्रष्टजित् सोमपा बाहुः शङ्ख्युग्रधन्वा  
प्रतिहिताभिरस्ता'—इति ऋग्वेदे (१०-१०३-३) ।  
शिवः; त्रि. उग्रधनुर्विशिष्टे । ५४  
उचितम् त्रि. [ वच् + 'श्चिवचिकुचिकुटिम्यः कितच्'  
इति कितच्प्रत्ययः ] विदितं; न्याय्यं; परिमितं;  
युक्तं; ग्राह्यम् । ७४६  
उच्चम् त्रि. [ उच्चिनोतीति । उच् + चिच् + 'अन्येभ्योऽ-  
पि' इति ड । उच्चैस्त्वमस्ति अत्र वा, अर्श आद्यच्, अग्य-  
यानामिति टिलोपः ] उपरि; प्रांशु; उन्नतम्; उदग्रम्;  
उच्छ्रितं; तुङ्गम्; उत्तुङ्गम्; 'ग्रहैस्ततः पञ्चभिरुच्च-  
संश्रयैरसूर्यगैः सूचितभाग्यसम्पदम्'—इति रघुवंशे (३-  
१३) । 'अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा क्षपवणिजां च दिवा-  
करादितुङ्गाः । दशशिखिमनुयुक्तिषीन्द्रियांशैस् त्रिनव-  
कविशक्तिभिरुच तेऽस्तनीवाः'—बृहज्जातके । ७५१  
उच्चण्डः त्रि. [ उच् + चण्डतीति, चडि कोपे + अच् ]  
त्वरान्वितः; अविलम्बितः । ७८३  
उच्चयः पुं. [ उच् + चि + अच् ] परिधानवस्त्रग्रन्थिः;  
नीवी; किरातार्जुनीये (८-१५, ५१) । पुष्पादीना-  
मुत्तोलनं; 'करिष्यामि शरैस्तीक्ष्णैस्तच्छिरः कमलो-  
च्चयम्'—इति रघुवंशे (१०-४४) । 'पुष्पोच्चयं  
नाटयति'—इति शाकुन्तले । राशिः; समष्टिः;  
'शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः'—इति रघुवंशे  
(२-५१) । 'वाक्यं स्याद्योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः  
पदोच्चयः'—इति साहित्यदर्पणे (२-१७) । ५४७  
उच्चारः पुं. [ उच्चार्यते परित्यज्यते इति । उच् + चर् +  
णिच् + घञ् ] विष्ठा; 'मूत्रोच्चारसमुत्सर्गं दिवा कुपि-  
दुदङ्गमुवः' इति मनुः (४-५०) । 'यस्योच्चारं विना मूत्रं  
सम्यगवायुश्च गच्छति । दीप्तागर्भेऽयुक्तोऽस्य स्थितस्त-  
स्योदरामयः'—इति सुश्रुते । उच्चारणं; कथनम् । ६१७

उच्चावचः त्रि. [ उदक् च अवाक् च । मयूरव्यंसका-  
दित्वात्. साधुः ] अनेकप्रकारः; नैकभेदः; माघे  
(४-४६) । 'उल्कानिर्घातकेतूश्च ज्योतीष्युच्चावचानि  
च ।' 'उच्चावचेषु भूतेषु स्थितं तं व्याप्य तिष्ठतः'  
—इति च मनुः (१-३८), (६-७३) । १३९  
उच्चूलः पुं. [ उद्गता चूडा यस्य, डस्य लत्वम् ] ध्वजोद्ध-  
मुखकूर्चः; 'ध्वजा का फहरेरा' इति भाषा । अस्य पटुका  
अवचूलः । ४५८  
उच्चैःश्रवाः [ स् ] पुं. [ उच्चैः श्रवो यशो यस्य, यद्वा  
उच्चैः श्रवसी कर्णा यस्य, यद्वा उच्चैः शृणोतीति ।  
उच्चैः + श्रु + असुन् ] इन्द्रघोटकः; स तु श्वेतवर्णः  
समुद्रमन्थनोत्पितः; 'उच्चैरुच्चैःश्रवास्तेन हयरत्नम-  
हारि च'—इति कुमारे (२-४७) । ६१  
उच्चैस्तरः पुं. [ अतिशयार्थे तरप् ] अत्युच्चः; उन्नत-  
तरः । १४०  
उच्छिष्टम् त्रि. [ उत् शिष्यते यत् । उत् + शिष् + क्त ]  
भुक्तावशिष्टम्; 'जूठा' इति भाषा । 'चाण्डालपतिता-  
दीनामुच्छिष्टान्नस्य भक्षणे । द्विजः शुष्येत् पराकेण  
शूद्रः कृच्छ्रेण शुष्यति ॥' ३२६  
उच्छीर्षकम् क्ली. [ उत् ऊर्ध्वस्थापितं शीर्षं मस्तकं येन ।  
बहुव्रीह्यर्थे कन् ] उपधानम्; उपवर्हः; 'तकिया' इति  
भाषा । ३०९  
उच्छूललम् त्रि. [ उद्गतं शृङ्खलं निगडं यस्य ] शृङ्खला-  
रहितम्; अबाधम्; उद्दाम; अनियन्त्रितम्; अनर्गलं;  
निरङ्कुशम्; 'अन्यदुच्छूलं सत्त्वमन्यत् शास्त्र-  
नियन्त्रितम्'—इति हितोपदेशे (३-९७) । 'सम्बुच्छं-  
दुच्छूललशङ्खनिस्वनः'—इति माघे (१२-१३) । ७५१  
उज्जयिनी (उज्जयनी) स्त्री. [ उत् ऊर्ध्वः जयः अस्ति  
अस्याः । इनि, डीप् । अथवा उच्चैर्जयति, ल्युट्, डीप् ]  
विशाला नगरी; अवन्ती; पुष्कररिण्डनी; मालवदेशस्य  
नगरी; मोक्षदसप्तपुर्यन्तर्गतपुरी; अवन्तिका; विक्रमा-  
दित्यराजधानी; 'उज्जैन' इति ख्याता; 'सीघो-  
त्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः'—पूर्व-  
मेवे (२९) । २८७  
उज्ज्वलम् त्रि. [ उच्चैर्ज्वलति प्रकाशते इति । उत् + ज्वल्  
+ अच् ] दीप्तं; विशदं; विकाशितम्; 'अस्माकं सखि  
वासती न रुचिरे प्रैवेयकं नोऽज्ज्वलम्'—इति साहित्य-

दर्पणे । 'विचित्रोज्ज्वलवेशा तु बलघ्नपुरनिःस्वना ।  
क्ली. स्वर्णम् । पुं. शृङ्गाररसः; 'स राशिरासीन्महसां  
महोज्ज्वलः'—इति नैवेद्ये (१-१) । १३२

उज्जितम् त्रि. [ उज्ज् + प्त ] उत्सृष्टं, त्यक्तं; यजितम्;  
'अविरतोऽज्जितवारिविपाण्डुभिः'—इति किराते (५-  
६) । 'उज्जितायास्त्वया नाथ ! तदैव मरणं वरम्'  
इति रामायणे । ७१४

उज्ज्वलः पुं.- क्ली. [ उटास्तृणपर्णद्वयस्तेभ्यो जात इति ।  
उट+जन्+ड ] गृहमात्रम्; मुनीनां पत्ररचितगृहं;  
पर्णशाला; पर्णोटजः; 'आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वार-  
रोषिभिः ।' 'मृगैर्वतितरोमन्थमुटजाङ्गणभूमिषु'—इति  
रघुवंशे (१-५०, ५२) । २९१

उडु क्ली.-स्त्री. [ उ रोषोक्तिपूर्वकं ड्यते इति । उ+डी+  
मितद्रवादित्वाद् डु ] नक्षत्रम्; 'तदोडुराजः ककुभः  
करैर्मुखम्'—इति भागवतम् (१०-२९) । 'इन्दु-  
प्रकाशान्तरितोडुतुल्याः'—इति रघुवंशे (१६।६५) ।  
जले क्ली. । ५१

उडुपः पुं.- क्ली. [ उडुनो जलात् पाति रक्षतीति । उडु+  
पा+क ] भेलकं; प्लवः; कोलः; भेलकः; उडूपः;  
तरणः; तारणः; तारकः; 'तितीर्षुर्दुस्तरं मोहाडुडुपे-  
नास्मि सागरम्'—इति रघुवंशे (१-२) । पुं. चन्द्रः;  
'अपश्यद् वदनं तस्य रश्मिवन्तमिषोडुपम्'—इति महा-  
भारते । चर्माविनद्धपानपात्रम्; 'चर्माविनद्धमुडुपं प्लवः  
काष्ठं करण्डवत्'—इति सज्जनः । ६७१

उडुम्बरम् क्ली. [ उडुं वृणातीति । उडु+वृ+अच् ]  
ताम्रम्; कर्पः । १७०

उत्त अव्य. [ उ शब्दे, क्त ] वितर्कः, अत्यर्थः; विकल्पः;  
समुच्चयः; प्रश्नः; पादपूरणम्; अप्यर्थः; एवार्थः;  
'किमेतदारण्यम् उत्त ग्राम्यम्'—इति पञ्चतन्त्रे ।  
'तत्किमयमातपदोषः स्याद् उत्त यथा मे मनसि वर्तते'—  
इति शाकुन्तले । 'वीरो रसः किमयमित्युत दर्प एषः'—  
इति उत्तरचरिते । त्रि. उत्तम् [ व्ये+क्त, यजा-  
दित्वात् सम्प्रसारणम् ] तन्तुसन्तानः; उक्तं; स्यूतम् ।  
'बुना' इति भाषा । ८८०

उताहो अव्य. [ उत च आहो च अनयोः समाहारः ]  
विकल्पः; सन्देहः; उताहोस्वित्; 'क्षमा स्वित् श्रेयसी  
तात उताहो तेज इत्युत', 'यसी वा राक्षसी वा त्वम्

उताहोऽसि सुराङ्गना'—इति महाभारते । परिप्रश्नः;  
विचारः । ८८०

उत्कः त्रि. [ उद्गतं मनो यस्य । उत्+कन् ] उन्मनाः;  
अन्यमनस्कः; 'तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभ्रं गजितं मान-  
सोत्काः'—इति मेघदूते (११) । 'अगमयदद्विसुतासमा-  
गमोत्कः'—इति कुमारसम्भवे (६-९५) । ३८६

उत्कटम् त्रि. [ उद्गतः कटः आवरणं यस्य ] तीव्रं;  
मत्तं; विषमम्; 'चन्द्रांशुनिकराभासा हाराः कासा-  
ञ्चिदुत्कटाः । स्तनमध्ये सुविन्यस्ता विरेजुर्हसपाण्डराः'  
—इति रामायणे । क्ली. गुडत्वक्; 'दालचीनी' इति  
भाषा । 'त्वक्पत्रं च वराङ्गं स्याद् भृङ्गं चोदन्तमुत्कटम्'—  
इति भावप्रकाशः । पुं. [ उद्गतमदवृत्तेः उच्चब्दात् स्वार्थे  
सम्प्रोदश्चेति कटच् ] मदः; सञ्जातमदहस्ती; शरः;  
रक्तेषुः । ७४४

उत्कण्ठा स्त्री. [ उत्+कठि+अ+टाप् ] उत्कलिका;  
इष्टलाभे कालक्षेपासहिष्णुता; कामादिजातस्मृतिः;  
उद्वाहलकेन स्मरणम्; उत्केन धयितस्मरणं; प्रिया-  
भिलाषादुन्मनस्कत्वम्; 'गाढोत्कण्ठां गुरुषु दिवसेष्वेषु  
गच्छत्सु वालाम्'—इति मेघदूते (८३) । 'यास्यत्यद्य  
शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया'—इति शाकु-  
न्तले । ७४२

उत्कण्ठितम् त्रि. [ उत्कण्ठा जातास्य । उत्कण्ठा+इतच् ]  
उत्कण्ठायुक्तम्; उत्कम्; उत्सुकम्; उन्मनः;  
'साश्रेणास्रद्रुतमविरतोत्कण्ठमुत्कण्ठितेन'—इति मेघ-  
दूते (१०३) । ३८६

उत्करः पुं. [ उत्कीर्यते इति । उत्+कृ+अप् ] धान्यादि-  
राशिः; स्तूपः; 'सिक्तराजपयान् रम्यान् प्रकीर्ण-  
कुसुमोत्करान्'—इति रामायणे । ६८६

उत्कर्षः पुं. [ उत्+कृष्+धव् ] सुखम्; (८३६, ८५३)  
प्राधान्यं; श्रेष्ठता; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिवः  
सिध्यन्ति लक्ष्ये चले'—इति शाकुन्तले । 'नितीषुः  
कुलमुत्कर्षमधमानधमांस्त्यजेत्'—इति मनुः (४-२४४) ।  
वृद्धिः; 'पञ्चानामपि भूतानामुत्कर्षं पुषुर्गुणाः'—  
इति रघुवंशे (४-११) । त्रि. अतिशययुक्तः;  
स्वकालात् परकालकर्तव्यः । १२३

उत्कलिका स्त्री. [ उत्+कल्+बुन्+टाप् ] तरङ्गः;  
'वनावलीरत्कलिकासहस्रप्रतिक्षणोत्कलितशैवलाभाः'—

इति माघे (३-७०) । (७४२) उत्कण्ठा; उत्सुकता; औत्सुनयम्; 'ततोऽन्येषुः' प्रतिपदं तत्तदुत्कलिकाभूता'—इति कथासरित्सागरे (२२-१०५) । कलिका; 'उद्दामोत्कलिकां विषाण्डुररुचं प्रारब्धजृम्भां क्षणात्'—इति रत्नावली । ६५३

उत्कोचः पुं- स्त्री. [ उत्कोचति अशुभं नाशयतीति । उत्+कुच्+क ] प्राभूतं; ढौकनं; लम्बा; कोशलिकम्; आमिषम्; उपाच्चारः; प्रदा; आनन्दा; हारः; ग्राह्यम्; अयनम्; उपदानकम्; अपप्रदानम्; 'उत्कोच-जीविनो द्रव्यहीनान् कृत्वा प्रवासयेत्'—इति याज्ञ-वल्क्ये (१-३-३८) । ४३४

उत्कोशः पुं- स्त्री. [ उत्कोशति प्रहरे प्रहरे शब्दं करो-तीति । उत्+कुश्+अच् ] कुररपक्षी; कुररी । २४९

उत्तंसः पुं. [ उत्तंसयति उत्तंस्यतेऽनेन वा । तसिः सौत्रो भूषार्थः; पचाद्यच् हलश्चेति घञ् वा ] शैलरः; शिरो-भूषणं; मतान्तरे क्लीबलिङ्गोऽपि । 'नोत्तंसं क्षिपति क्षिती श्रवणतः सा मे स्फुटेऽध्यागसि'—इति साहित्य-दर्पणे । कर्णपूरः; कर्णभरणम् । ५५४

उत्तमः त्रि. [ अतिशयेन उत्कृष्टः । उत्+तमप्, द्रव्य-प्रकर्षार्थत्वाभ्राम्, यद्वा उत्ताम्भति, तमु+अच्, उत्तम्यते वा, घञ् । नोदात्तेति न वृद्धिः ] भद्रः; उत्कृष्टः; प्रधानं; प्रमुखः; प्रवेकः; अनुत्तमः; मुख्यः; वर्यः; वरेण्यः; प्रवृद्धः; अनवराध्यः; पराध्यः; अग्रः; प्राग्रहरः; प्राग्रचः; अग्र्यः; अग्रियः; अप्रियः; मुखः; अग्रणीः; 'उत्तमस्यापि वर्णस्य नीचोऽपि गृहमागतः'—इति हितोपदेशे । 'उत्तमाद्देवरात् पुंसः काङ्क्षन्ते पुत्र-मापदि'—इति महाभारते । पुं. वैशिकनामनायकभेदः; प्रियव्रतराजपुत्रः; उत्तानपादस्य राज्ञः स्वनामख्यात-पुत्रभेदः; 'तयोस्तानपादस्य मुरुच्यामुत्तमः सुतः'—इति विष्णुपुराणे । ६९०

उत्तमाङ्गम् क्ली. [ उत्तमं प्रशस्तमङ्गम् ] मस्तकम्; 'कश्चिद् द्विषत्वङ्गहृतोत्तमाङ्गः'—इति रघुवंशे (७-५१) । 'वभौ पतद्गङ्ग इषोत्तमाङ्ग'—इति कुमार-सम्भवे (७-४१) । मुखम्; 'उत्तमाङ्गोद्भववाज्येष्ठधाद् ब्रह्मणश्चैव धारणात् । सर्वस्यैवास्य सगंस्य घर्मतो ब्राह्मणः प्रभुः'—इति मानवे (१-९३) । ५१८

उत्तरः त्रि. [ अतिशयेन उद्गतः । उत्+तरप् ] उदीची;

'उत्तरे जाह्नवीतीरे हिमवन्तं शिलोच्चयम्'—इति रामायणे । उत्तमः; प्रधानं; श्रेष्ठः; 'नृपा इवोपप्लविनः परेभ्यो घर्मोत्तरं मध्यममाश्रयन्ते'—इति रघुवंशे (१३-७) । 'ब्रह्मघर्मोत्तरे राज्ये शान्तनुविनयात्मवान्'—इति महाभारते । अनन्तरम्; 'वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी । एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्य-दुत्तरम्'—इति मनुः (२-१३६) । ऊर्ध्वः । पुं. विराट-राजपुत्रः; 'तमुत्तरं वीक्ष्य रथोत्तमे स्थितम् । 'सहोत्त-रेणास्तु तदद्य मङ्गलम्'—इति महाभारते । पर्वतप्रभेदः; 'दक्षिणस्योत्तरो गिरिः'—इति रामायणे । [ उत्तारयति संसारसागराद् इति व्युत्पत्तेः ] शिवः; हरिः;—भारते (१३।१४९।६६) । क्ली. प्रतिवाक्यम् । १०१

उत्तरकालः पुं. [ उत्तरः कालः ] भविष्यत्कालः; गौण-कालः; 'एवमागामियागीयमुख्यकालादधस्तनः । स्व-कालादुत्तरो गौणः कालः पूर्वस्य कर्मणः'—इति हरिहर-पद्धतिः । ११८

उत्तरङ्गम् क्ली. [ उत्तर+गम्+खञ् ] द्वारोर्ध्व-वक्रदारुः; द्वारस्योपरि तिर्यग्दारुः; त्रि. उद्गततरङ्गः; 'प्रत्यग्रहीत्याधिबवाहिनीं तां भागीरथीं शोण इवो-त्तरङ्गः'—इति रघुवंशे (७-३६) । ३००

उत्तरच्छदः पुं. [ उत्तरम् ऊर्ध्वभागः छाद्यतेऽनेन । छद् संवरणे, घ, छादेर्धे इति ह्रस्वः ] प्रच्छदपटः; दीर्घमा-च्छादनवस्त्रम् । डोलिका-सिंहासनाद्याच्छादकम् । ३०८

उत्तरा स्त्री. [ उत्तर+टाप् ] उत्तरा दिक्; कौवेरी; देवी; उदीची; 'एवं स पुरुषव्याघ्रो विजिग्ये दिशमुत्तराम्'—इति महाभारते । कर्कटवृश्चिकमीनराशयः; 'मेषसिंह-घनुः प्राच्यां दक्षिणस्यां तु तत्परे । प्रतीच्यां तत्परे ज्ञेया उदीच्यां च ततः परे'—इति समयप्रदीपः । विराट-राजकन्या; अभिमन्युपत्नी; 'स तत्र नर्मसंयुक्तमकरोत् पाण्डवो बहु । उत्तरायाः प्रमुखतः सर्वं जानन्नरिन्दमः'—इति महाभारते । १०१

उत्तराशापतिः पुं. [ उत्तराशायाः उत्तरदिशः अधिपतिः अधिष्ठाता ] कुवेरः । ७९

उत्तरासङ्गः पुं. [ उत्तरे ऊर्ध्वभागे आसज्यते । उत्तर+आ+सञ्ज्+घञ् ] उत्तरीयवस्त्रम्; उत्तरीयम् । 'दुपट्टा' इति भाषा । ४१०

उत्सरीयम् क्ली. [ उत्तरस्मिन् ऊर्ध्ववेहभागे भवम् ।



उत्तर+छ] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावारः; उत्तरासङ्गः; वृहत्तिका; संब्यान्तं; कक्षा; 'अथास्य रत्नप्रथितोत्तरीयमेकान्तपाण्डुस्तनलम्बि हारम्'—इति रघुवंशे (१६-४३) । 'उत्तरीयमिवासक्तं सुव्यक्तं सीतया तदा'—इति रामायणे । ५४६

उत्तालः त्रि. [ उत् + तल् + घञ् ] त्वरितः; उन्नतः (८००); उत्कटः; श्रेष्ठः; विकरालः; प्लवङ्गमः; 'लसदुत्तालवेतालतालवाद्यं विवेश तत् । इमशानं कृष्णरजनीनिवासभवनोपमम्'—इति कथासरित्सागरे (२५-१३६) । 'अन्योऽन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोल-फोलाहलैः । उत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्-सङ्गमाः'—इति उत्तररामचरिते । ३७०

उत्पलम् क्ली. [ उत्पलतीति । पल् गती, पचाद्यच् ] नील-कमलम्; कुण्डोपधिः; पुष्पं; जलजपुष्पमात्रं; पक्ष-कुसुमादिः; कुवलयं; कुवलं; कुवेलम्; 'नवावतारं कमलादिवोत्पलम्'—इति रघुवंशे (३-३६) । जलपुष्प-विशेषः; अनुष्णं; रात्रिपुष्पं; जलाह्वयं; हिमाब्जं; निशापुष्पम्; 'उत्पलानि कषायाणि पित्तरक्तहराणि च'—इति चरकः । 'तस्मादल्पान्तरगुणे विद्याल्लुव-लयोत्पले'—इति सुश्रुते । पुं. [ उद्गतं पलं मांसं यस्मात् सः ] मांसशून्यः । ६८१

उत्पश्यम् त्रि. [ उद्दृष्ट्वं पश्यतीति । उत् + दृश् + श ] उन्मुखम्; ऊर्ध्वदृष्टिविशिष्टम् । ३८५

उत्पादितम् त्रि. [ उत् + पट् + णिच् + क्त ] कृतीत्पाटनम्; उन्मूलितम्; उत्खातम्; आवहितम्; उद्धृतम् । ७१२

उत्पातः पुं. [ उत् + पत् + घञ् ] उत्पतति अकस्मा-दायाति यः; प्राणिनां शुभाशुभसूचकमहाभूतविकार-भूकम्पादिः; अजन्यम्; उपसर्गः; उल्कापातः (८४०); 'नरपतिदेशविनाशे केतोरुदयेऽथवा ग्रहेऽर्केन्द्रेः । उत्पातानां प्रभवः स्वर्तुभवश्चाप्यदोषाय'—इति बृहत्संहितायाम् । उत्पतनम्; उल्लम्फः; 'एकोत्पातेन ते लङ्कामेष्यन्ति हरिपुङ्गवाः'—इति रामायणे । उन्नतिः; वृद्धिः; 'करनिहितकन्दुकसमाः पातोत्पाता मनुष्याणाम्'—इति हितोपदेशे । उत्पत्तिः; 'बुद्धि-रात्मानुगातीव उत्पातेन विधीयते । तदाश्रिता हि सा ज्ञेया बुद्धिस्तस्यैषिणी भवेत्'—इति महाभारते । १२७

उत्पिञ्जलः त्रि. [ उदतिशयः पिञ्जलो व्यप्रः ] नृत्तना-

कुलः; अतिशयव्याकुलः; समुत्पिञ्जः; पिञ्जलः । ७३१  
उत्प्रासः पुं. [ उत् + प्र + असु क्षेपणे, भावे घञ् ] उच्चै-र्हासः; सव्याजमुपहासः; उत्क्षेपणम् । ७३१

उत्सः पुं. [ उनत्ति जलेन । उन्द् + 'उन्दिगुधिकुषिभ्य-श्चेति' स, किदित्यनुवृत्तेर्नलोपः ] प्रस्रवणं; गिरे-रपरि निर्झरादिप्रभवजलसङ्घातः; अजस्रं मन्दवेगेन स्रवज्जलम् । ६७७

उत्सङ्गः पुं. [ उत्स्रवते मिलति यत्र । उत् + सञ्ज् + घञ् ] क्रोडम्; 'उत्सङ्गे वा मलिनवसने सौम्य ! निक्षिप्य वीणाम्'—इति मेघदूते । 'प्रणयेनागतं पुत्र-मुत्सङ्गारोहणोत्सुकम्'—इति विष्णुपुराणम् । पर्वता-दीनां शिखरदेशः; सानुः; 'शिलाविभङ्गमृगराज-शावस्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह ।' 'गोद' इति भाषा । सौघादीनामुपरिभागः; 'सौघोत्सङ्गप्रणयविमुखो मासमभूरुज्ययिन्याः'—इति मेघदूते । अभ्यन्तरभागः; 'वनेचराणां वनितासखानां दरीगृहोत्सङ्गनिपक्तभासः'—इति कुमारे (१-१०) । ऊर्ध्वतलः; वहिर्भागः; 'दृषदो वासितोत्सङ्गा निषण्णमृगनभिभिः'—इति रघुवंशे (४-७४) । सङ्गमः; आलिङ्गनं; विवाहः; ब्रणा-धोभागः; 'अभ्यन्तरमुत्सङ्गं कृत्वा भूयोऽपि विकरोति'—इति सुश्रुते । गर्भः; 'आसीनमम भतिः कृष्ण ! पूर्णोत्सङ्गा जनार्दन'—इति महाभारते । ५२८

उत्सर्गः पुं. [ उत् + सृज् + घञ् ] दानम्; उत्सर्जनं; त्यागः; विहापितं; विसर्जनं; विश्रान्तं; वितरणं; स्पर्शनं; प्रतिपादनं; प्रादेशनं; निर्वपणम्; वर्जनम्; अपवर्जनम्; अंहतिः; 'श्रीलक्षणोत्सर्गविनीतवेशाः'—इति कुमारसम्भवे (७-३५) । 'तोयोत्सर्गद्रुततरगति-स्तत्परं वर्त्म तीर्णः'—इति मेघदूते । 'तस्योत्सर्गेण शुध्यन्ति जाप्येन तपसैव च ।' सामान्यविधिः; 'अप-वादैरिवोत्सर्गाः कृतव्यावृत्तयः परैः'—इति कुमारे (२-२७) । साग्निकतं व्यक्रियाविशेषः; अपानवायो-व्यापारः; मलमूत्रादिवर्जनम्; उत्सृज्यते विष्णूत्रमनेनेति व्युत्पत्त्यापाद्यिन्द्रियम्; 'मनसीन्दुं दिशः श्रोत्रे क्रान्ते विष्णुं वले हरम् । वाच्यग्निं मिश्रमुत्सर्गं प्रजने च प्रजापतिम्'—इति मनुः (१२-१२१) । ४१९

उत्सवः पुं. [ उत् + सू + अच् ] नियताह्लादजनक-व्यापारः; क्षमः; उद्वेगः; उद्वेगः; महः; 'तस्मादेताः

सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः । भूतिकामैर्नरेनिदं  
सत्कारेपूस्सवेप च'—इति मनुः (३-५९) । उत्सेकः;  
इच्छाप्रसवः; कोपः; उन्नतिः; अभ्युदयः; 'उत्सवे व्यसने  
चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे'—इति हितोपदेशे । ७६३  
उत्सादनम् क्ली. [ उत् + सद् + णिच् + ल्युट् ] उद्धर्तनम्;  
'उत्सादनं च गात्राणां स्नापनोच्छिष्टभोजने'—इति  
मनुः (२-२०९) । समुल्लेखः; उद्वाहनं; विनाशः;  
उन्मूलनम्; 'पूर्व क्षत्रवधं कृत्वा गतमन्युर्गतज्वरः ।  
क्षत्रस्योत्सादनं भूयो न खत्वस्य चिकीपितम्'—इति  
रामायणे । औपवलेपनादिना व्रणस्य संशोधनम्; 'अपा-  
मार्गोऽवगन्धा च तालपत्री सुवर्चला । उत्सादने  
प्रशस्यन्ते काकोल्यादिश्च यो गणः ।' 'उत्सादनाद्  
भवेत् स्त्रीणां विशेषात्कान्तिमद्वयुः । प्रहर्षसौभाग्य-  
मृजालाघवादिगुणान्वितम्'—इति च सुश्रुते । ७३१  
उत्सारकः पुं. [ उत्सार्यन्ते प्रभुद्वारतोऽनेन इति । उत् +  
सृ + णिच् + वुष् ] द्वारपालः; उत्सारणकर्ता । ४२४  
उत्साहः पुं. [ उत् + सह + घञ् ] उद्यमः; अध्यवसायः;  
सूत्रम्; कल्याणम्; भावविशेषः; 'रतिर्हासश्च शोकश्च  
क्रोधोत्साहो भयं तथा । जुगुप्सा विस्मयश्चेत्यमष्टौ  
प्रोक्ताः शर्मोऽपि च'—इति साहित्यदर्पणे । ध्रुवक-  
विशेषः; 'उत्साहः स्यात् रसे हास्ये ताले केन्दुकसंज्ञके ।  
वंशवृद्धिकरः पादस्त्रयोदशमिताक्षरः'—इति सङ्गीत-  
दामोदरः । १९१, ७३९  
उत्साहनम् क्ली. [ उत् + सह + णिच्, भावे ल्युट् ]  
अध्यवसायः; उद्योगः; उन्नाहवृद्धिः । ८७०  
उत्सुकः त्रि. [ उत् उद्योगं सुवति सीति मुनोति वा ।  
सु प्रसवैश्वर्ययोः । विचि सजापूर्वकत्वाद् गुणाभावः ।  
किन्पि आगमशास्त्रस्यानित्यत्वात् नुगभावो वा । ततः  
संज्ञायां कम् । यद्वा उत् सुवति, पू प्रेरणे, मित्द्रवादित्वाद्  
डु, सत्स्विति क्विप् वा, कर्नि केण इति ह्रस्वः ।  
उत् + सू + क्विप् + कम् ] वाञ्छितकर्मोद्यतः; इष्टा-  
र्थोद्युक्तः; उत्कण्ठितः; 'प्रेषयिष्यति राजा तु कुश-  
लार्थं तवानधे । ज्ञाह्यणान् नित्यशः पुत्रि मोत्सुका भूः  
कदाचन ॥' 'वत्सोत्सुकापि स्तिमिता सपर्याम्'—इति  
रघुवंशे (२-२२) । ३५३  
उत्सृष्टः त्रि. [ उत् + सृज् + क्त ] कृतोत्सर्गः; त्यक्तः;  
हीनः; विधुतः; समुञ्जितः; धूतः; 'महोक्षोत्सृष्ट-

पशवः सूतिकागन्तुकादयः'—इति याज्ञवल्क्यः । ७१४  
उत्सेधः पुं [ उत् + सिध् + घञ् ] शरीरम्; पर्वत-  
वृक्षादीनां दैर्घ्यम्; 'कूर्मस्त्रियोजनोत्सेधो दशयोजन-  
मण्डलः'—इति महाभारते । उच्छ्रयः; 'पयोधरोत्सेध-  
विशीर्णसंहतिः'—इति कुमारसम्भवे (५-८) । उपरि-  
भागः; 'पयोधरोत्सेधनिपातचूर्णिताः'—इति कुमार-  
सम्भवे (५-२४) । संहननम्; 'सोत्सेधमूष्मार्थशिरा-  
तनुत्वम्'—इति भावप्रकाशः । 'उत्सेधं संहतं शोकं  
समाह्वनिचयादतः'—इति वाग्भटः । ८०३

उदक् [ च् ] अव्य - त्रि. [ उद् + अञ्च् + अस्ताति तस्य  
लुक् ] उत्तरदिदेशकालाः; उत्तरा दिक्; उत्तरो देशः;  
उत्तरः कालः । १०३

उदकम् क्ली. [ उनतीति, उन्दी क्लेदने + चिवन् ।  
'उदकमिति सूत्रेण साधु ] जलम्; 'अनीत्वा पङ्कनां  
धूलिमुदक नावतिष्ठते'—इति माधे (२-३४) । 'यावा-  
नर्थ उदयाने सर्वतः संप्लुनोदके'—इति भगवद्गीता  
(२-४६) । [ उदकस्योदः, 'एकह्लादौ' इति विकल्पः ]  
उदकुम्भः; उदककुम्भः; 'तपःकृयाः शान्त्युद-  
कुम्भहस्ताः ।' उदगच्छोऽयुदकपर्याय इति भाष्यटीका ।  
'उदकस्योदः संज्ञायामिति' रक्षितः । 'सहस्ररात्रीरुद्वाम-  
तपरा'—इति कुमारसम्भवे (५-२६) । ६४८  
उदक्या स्त्री. [ उदक जलं शुद्धिस्नानार्थमहतीति ।  
उदक् + संज्ञायामिति यत् ] रजस्वला; ऋतुमती;  
'नोदक्ययाभिभापेन यज्ञं गच्छेन्नचावृतः'—इति  
मनुः (४-५७) । ४८८

उदगभूमः पुं. [ उदगत्तरदिग्वत् प्रशस्ता भूमियत्र । समाने  
अच् ] सद्भूमिः; उत्कृष्टस्थानम् । १६०

उदग्रम् त्रि. [ उदगतमग्रं यस्य ] उच्छ्रितम्; उन्वं-  
विशालं; महत्; दीर्घः; भीमम्; 'नयन् मधलिङ्गः  
श्वैत्यमुदग्रदशानांयुभिः'—इति माधे (२-२१) ।  
'क्षतात्किल त्रायत इवदग्रः क्षत्रस्य चन्द्रो  
भुवनेषु सङ्घः' 'अवन्तिनायांऽग्रमुदग्रवाहुः'—इति  
रघुवंशे (२-५३) (६-३२) । ७५१

उदञ्चनम् क्ली. [ उत् + अञ्च् + ल्युट् ] पिबानपात्रम्;  
'ढकना' इति भाषा । 'प्रतिप्रस्थाना मन्त्रवायानन्मूत्रेणा  
चमसेन वोदञ्चनेन वा'—शनपञ्चशास्त्रेण (१-३-५) ।  
उद्वेक्षणेपणम् । ३१६

उदञ्चितम् त्रि. [ उत् + अञ्च् + क्त ] ऊर्ध्वक्षिप्तम् ;  
'उदञ्चिताक्षोऽञ्चितदक्षिणोरः'—इति भट्टिः । पूजि-  
तम् । ७६८

उदधिः पुं. [ उदानि उदकानि वा धीयन्तेऽस्मिन् । उद वा  
उदक + धा + कि ] समुद्रः ; 'उदधेरिव निम्नगाशते-  
ष्वभवन्नास्य विमानता क्वचित्'—इति रघुवंशे (८-८) ।  
मेघः ; घटः । ६५२

उदन्तः पुं. [ उद्गतो निर्णीतः अन्तो यस्य ] वार्ता ;  
घृत्तान्तः ; उदन्तकः ; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः सङ्गमा-  
त्किञ्चिद्गन्तः'—इति मेघदूते । 'श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं  
मेने तत्सङ्गमोत्सुकः'—रघुवंशे (१२-६६) । साधुः ;  
दृष्टियाजनम् ; त्रि. पाकवशात् प्राप्तान्ते ; 'श्रुतमसदिति  
तदाहुर्यहुर्युदन्तं तर्हि जुहुयात् तद्वैनोदन्तं कुर्यादुप ह देहेत्  
दधुदन्तं कुर्यादप्रजज्ञि वैरेत उपदग्धं तस्मान्नोदन्तं  
कुर्यात्'—इति शतपथब्राह्मणे । १४६

उदन्या स्त्री. [ उदन्यति उदकमिच्छति वा । सुप आत्मनः  
क्यच्, 'अशनायोदन्येति' ईत्वाभावः ; क्यचि उदकस्योद-  
न्भावोऽपि निपात्यते । 'अप्रत्ययादित्य ] पिपासा ;  
'ध्यसन्नूदन्यां शिशिरेः पयोनिः'—इति भट्टिकाव्ये  
(३-४०) । 'अय यत्रैतत्सुरूपः पिपासति नाम तेज एव  
सन्तीतं नयते तद्यथा गोनाथोऽश्वनायः पुरूपनाय इत्येवं  
सरोज आचष्ट उदन्येति'—इति छान्दोग्योप-  
निषदि (६-८-५) । ३६३

उदपानम् [ त् ] पुं. [ उदकानि सन्त्यत्र । उदक + मत्तुप्,  
'उदन्वानुदघो चेत्युदकस्य उदन्भावो निपातितः मत्तुपि ]  
समुद्रः ; 'असह्यविक्रमः सह्यं दूरान्मुक्तमुदन्वता'—  
इति रघुवंशे (४-५२) । ऋषिविशेषः—इति  
पाणिनिः (८।२।१३) । ६५२

उदपानम् क्ली. —पुं. [ उदकं पीयतेऽस्मिन् । उदक + पा +  
वधिकरणे ल्युट्, उदकस्य उदः ] कूपः ; 'तडागान्यु-  
दपानानि वाप्यः प्रस्रवणानि च'—इति मनुः (२-४०) ।  
'निर्जलेषु च देशेषु खनयामासुवत्तमान् । उदपानान्  
सङ्गुदिवान् वेदिकापरिमण्डितान्'—इति रामायणे ।  
[ भावे ल्युट् ] जलपानम् । 'यात्रानर्थे उदपाने सर्वतः  
संप्लुतोदके'—इति भगवद्गीता (२-४६) । ६८५

उदरम् क्ली. [ उद् दृणातीति, 'उदि दृणातेरजली पूर्वपदा-  
न्त्यलोपश्च, उत् + द् + अच् अन्त्यलोपश्च ] नाभि-

स्तनयोर्मध्यभागः ; पिचण्डः ; कुक्षिः ; जठरम् ; तुन्दम् ;  
'पेट' इति भाषा । युद्धम् ; 'उपस्थमुदरं जिह्वा हस्तौ  
पादौ च पञ्चमम्'—इति मनुः (८-१२५) । पुं.  
रोगविशेषः । ५१५

उदरिलः त्रि. [ अतिशयितमुदरमस्य । उदर + 'तुन्दादिभ्य  
इलच्चेति' इलच् ] बृहदुदरयुक्तः ; पिचिण्डिलः ;  
बृहत्कुक्षिः ; तुन्दिः ; तुन्दिकः ; तुन्दिलः ; उदरी । ६०८

उदरकः पुं. [ उत् + ऋच् + घञ् ] उत्तरकालोद्भवफलम् ;  
भविष्यत्कालः ; 'परित्यजेदर्थकामो यी स्यातां धर्मव-  
जिती । धर्मं चाप्यसुखोदकं शोकविकृष्टमेव च'—इति  
मनुः (४-१७६) । 'उदकस्तव कल्याणि ! तुष्टो देवगणे-  
श्वरः'—इति महाभारते । मदनकण्टकम् । ११८

उदलवणिकः त्रि. [ उदलवणेन लवणाम्भसा सिद्धः ।  
उदलवण + ठक् ] लवणोदकसंसिद्धव्यञ्जनादिः । ३२२  
उदलसितम् क्ली. [ उद्द्वचमवसीयतेऽस्मिन् । षो अन्त-  
कर्मणि, यिञ् वन्धने वा । क्त, 'द्यतिस्यती'तीत्वम् ]  
गृहम् । २९१

उदञ्चित् क्ली. [ उदकेन श्वयति वर्द्धते इति । उद + क्वि +  
क्विप् + तुक् ] अर्द्धजलयुक्तदधिद्रवः ; 'अर्द्धोदकमुदशिव-  
त्स्यात्, 'उदशिवच्छ्लेष्मलं वत्यं ध्रमघ्नं परमं मतम्'—  
इति हारीते । २७५

उदात्तम् त्रि. [ उत् + आ + दा + क्त ] दात् ; महत् ;  
हृदयं ; दयात्यागादिसम्पन्नम् ; 'उदात्तदन्तानां कुञ्ज-  
राणाम्'—इति रामायणे । 'अत्युदात्तसुजनयचन्द्रकेतुः'—  
इति उत्तररामचरिते । ३५६

उदात्तः पुं. [ उच्चैरादीयतेऽस्मिन् । उत् + आ + दा + क्त ]  
स्वरभेदः ; स तु वेदगाने उच्चैः स्वरः ; दानं ; वाद्यविशेषः ;  
काव्यालङ्कारभेदः ; 'लोकगतिशयसम्पत्तिवर्णनोदात्तमु-  
च्यते । यद्वापि प्रस्तुतस्याङ्गं महतां चरितं भवेत्'—  
इति साहित्यदर्पणे । ८६३

उदारः त्रि. [ उत्कृष्टमासमन्ताद् राति । रा + आत्-  
श्चेति क । उदर्यते, ऋ गतिप्रापणयोः, कर्मणि घञ् वा ]  
दाता ; महान् ; 'उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे  
मतम्'—इति भगवद्गीतायाम् (७-१८) । 'उदारा  
महान्तो मोक्षभाज एव इत्यर्थः'—इति श्रीधरस्वामी ।  
ऋज्वाशयः ; दक्षिणः ; सरलः ; 'क उदारः समर्थश्च  
त्रैलोक्यस्यापि रक्षणो'—इति रामायणे । गभीरः ;

सारवान्; रम्यः; न्याय्यः; 'इत्यर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य रघोरुदारामपि गां निशम्य'—इति रघुवंशे (५-१२) ।  
असाधारणः; सरलाशयः; शिष्टः; 'स तथेति विनेतु-  
रुदारमतेः प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम्'—इति  
रघुवंशे (८-९१) । ३५६

उदीची स्त्री. [ उत् उत्तरम् अञ्चत्यकम्, उत्क्रान्तं दृष्टि-  
पथम् अञ्चति सूर्यं वा । 'उद ईदि'त्यञ्चैरत् ईकारः ।  
ऋत्विगादिना क्विन् । उगितश्चेति डीप् ] उत्तरा दिक्;  
'यदोदीच्यां गतिर्भानोस्तदा सूर्यबलाधिकम्'—इति  
हारीते । १०१

उदीचीनम् त्रि. [ उदीची + ख ] उदीच्यां भवम्; उत्तर-  
दिग्जातवस्तु; 'उदीचीनप्रवणे करोत्युदीची वै मनुष्याणां  
दिक्'—इति शतपथब्राह्मणे (१३।८।१।६) । १०३

उदीरणम् क्ली. [ उत् + ईर् + ल्युट् ] कथनम्; 'उद्धातः  
प्रणवो यासां न्यायैस्त्रिभिरुदीरणम्'—इति कुमार-  
सम्भवे (२-१२) । प्रेरणम्; क्षेपणम्; 'ब्रह्मास्त्रो-  
दीरणत् शत्रोर्देवदानवकिन्नराः'—इति महाभारते । ३३८

उदीर्णः त्रि. [ उत् + ऋ + क्त ] उदारः; महान्; 'न  
हि राज्ञामुदीर्णानामेवम्भूतैर्नरैः क्वचित् । सख्यं भवति  
मन्दात्मन् ! श्रिया हीनैर्धनच्युतैः'—इति महाभारते ।  
उत्तेजितः; उदीपितः; उद्धतः; 'भवत्लव्वरो-  
दीर्णस्तारकाख्यो महामुरः'—इति कुमारसम्भवे (२-  
३२) । 'ब्रह्म क्षत्रेण संसृष्टं क्षत्रं च ब्रह्मणा सह । उदीर्णं  
दहतः शत्रून् वनानीवाग्निमारुतौ'—इति महाभारते ।  
पुं. विष्णुः; 'उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतः स्थिरः'  
—इति विष्णुसहस्रनामकथने । ३५६

उदुम्बरम् क्ली. [ उं शम्भुं वृणोतीति उम्बरम् । उ + वृ +  
संज्ञायां खच्, 'अरुद्विपदिति' मुम् । उत्कृष्टमुम्बरम् ]  
ताम्रम्; पुं. उदुम्बरवृक्षः; क्षीरवृक्षः; हेमदुग्धः;  
सदाफलः; कालस्कन्धः; यज्ञयोग्यः; यज्ञीयः;  
सुप्रतिष्ठितः; शीतबलकः; जन्तुफलः; पुष्पशून्यः;  
पवित्रकः; सौम्यः; शीतफलः; 'उदुम्बरो जन्तुफलो  
यज्ञाङ्गो हेमदुग्धकः । उदुम्बरो हिमी रूक्षो गुरुः  
पित्तकफास्रजित् । मधुरस्तुवरो वर्णो व्रणशोवनरोपणः'  
—इति भावप्रकाशः । कुष्ठविशेषः; देहली; पण्डकः;  
नपंसकः । 'गूलर का पेड़' इति भाषा । १७०

उद्गमक्रीडम् क्ली. [ उत् + गम् + क्रीडम् ] घातवस्त्र-

द्वयं; 'सा मङ्गलस्नानविशुद्धगात्री गृहीतपत्युद्गमनीय-  
वस्त्रा'—इति कुमारसम्भवे (७-११) । 'घोती जोड़ा'  
इति भाषा । ५५१

उद्घः पुं. [ उद्धन्यते इति, उत् + हन् + कर्मणि अप्,  
टिलोपो घत्वं च निपातनात् । यद्वा उद्धन्ति नीचताम् ।  
उत् + हन् ड ] प्रशस्तः; प्रकाण्डः; हस्तपुटम्;  
अग्निः; शरीरस्थो वायुः । ३७८

उद्घाटकम् क्ली. [ उत् + घट् + णिच् ण्वुल् ] घटीयन्त्रं;  
कृपाञ्जलोत्तोलनार्थं यन्त्रविशेषः । ६८५

उद्घातः पुं. [ उत् + हन् + घञ् ] आरम्भः; 'उद्घातः  
प्रणवो यासां न्यायैस्त्रिभिरुदीरणम्'—इति कुमार-  
सम्भवे (२-१२) । 'आकुमारकथोद्घातं शालिगोप्यो  
जगुर्यशः'—इति रघुवंशे (४-२०) । शस्त्रं; प्रत्य-  
परिच्छेदः; पादस्खलनम्; 'ययावनुद्घातसुखेन मार्गम्'  
—इति रघुवंशे (२-७२) । 'रथेनानुद्घातस्तिमितगतिना'  
—इति शाकुन्तले । समुपक्रमः; योगाम्यासे कुम्भकादि-  
प्रथमम्; उत्तुङ्गः; 'पृथुशृङ्गशिलोद्घातः'—इति रामायणे ।  
मुद्गरम् । ७५०

उद्दामः त्रि. [ दाम्नः उद्गतः ] बन्धनरहितः; स्वतन्त्रः;  
'नदत्याकाशगङ्गायाः स्रोतस्सुद्दामदिग्गजे'—इति रघु-  
वंशे (१-७८) । 'अत्यङ्कुशमिवोद्दामं गजं मद्-  
जलोद्धतम्'—इति रामायणे । महान्; 'उद्दामदन्तु-  
रविधुन्तुददन्तवतैः'—इति प्रज्ञया । 'उद्दामानि प्रप-  
यति शिलावेश्मभिर्यैविनानि'—इति मेघदूते (३७) ।  
गम्भीरः; 'उद्दामभावपिशुनामलवल्गुहास'—इति भागवते  
(१ स्कन्धे) । पुं. [ उद्दीप्तं दाम पाशो यस्य । समासे  
अच् ] वरुणः; दण्डकभेदच्छन्दोविशेषः; 'यदि नयुगलं  
ततः सप्तरैफास्तदा दण्डवृद्धिप्रयातो भवेद्दण्डकः । प्रति-  
चरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णाणवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-  
शङ्खादयः'—इति वृत्तरत्नाकरे । ७५१

उद्दालः पुं. [ उत् + दल् + घञ् ] बहुवारवृक्षः; बहु-  
वारकः; वनकोद्रवः । ५८०

उद्धतम् त्रि. [ उत् + हन् + क्त ] धोरः; निविडः;  
'तुषारवर्षोद्धतप्रवर्षधनधारानिपातसमाहृतम्'—इति  
पञ्चतन्त्रम् । अविनीतम्; 'धीरोद्धता नमयतीव  
गतिर्धरित्रीम्'—इति उत्तरचरिते । 'मदमानसमुद्धतं नृपं  
न विपुङ्गते नियमेन मूढता'—इति किराते (२-

४९) । उत्थितः; उत्क्षिप्तः; आहतः; चालितः;  
 'आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलङ्घनीयाः'—इति शाकुन्तले ।  
 पुं. राजमल्लः । ७४४

उद्धवः पुं. [ उद्ध्वनोति दुःखमिति । उत् + ध्वञ् + अच् ]  
 उत्सवः; यज्ञाग्निः; यादवविशेषः; 'वृष्णीनां सम्मतो  
 मन्त्री कृष्णस्य दयितः सखा । शिष्यो बृहस्पतेः साक्षा-  
 दुद्धवो बुद्धिमत्तमः'—इति भागवतम् । १२३

उद्धानम् क्ली. [ उद्धीयतेऽस्मिन् । उत् + धा + ल्युट् ]  
 चुल्ली; त्रि. उद्गतः; वमितः । ३१३

उद्धारः पुं. [ उत् + ह + घञ् ] ऋणम्; उद्धृतिः;  
 'निमग्नस्य पुनरुद्धार एव दुर्लभः'—इति बृहदारण्यको-  
 पनिषत् । मोचनम्, 'अश्वस्य वयमुद्धारमुद्धारामहै'—  
 इति शतपथब्राह्मणे (१३।३।४।२) । मोक्षः; निर्वाणम्;  
 [ उद्ध्रियते साधारणधनाद् इत्युद्धारः यद्वा साधारणद्रव्यात्  
 यद्गिरिष्ठं तदुद्धारः । उद्ध्रियते साधारणधनाद् निष्कृष्य  
 विशेषनिष्ठतया एव बोध्यते इत्युद्धारः । साधारणत्वेन  
 उद्ध्रियते इति उद्धारः । उद्ध्रियते साधारणधनात् वहि-  
 र्भाव्यते इत्युद्धारः । ] 'ज्येष्ठस्य विश उद्धारः सर्वद्रव्याञ्च  
 यद्द्वरम् । ततोऽहं मध्यमस्य स्वात् तुरीयस्तु यवीयसः'—  
 इति मनुः (९-११२) । 'राज्ञश्च दद्युःस्वारमित्येषा  
 वैदिकी श्रुतिः । राज्ञा च सर्वधीधेभ्यो दातव्यमपृथग्  
 जितम्'—इति मनुः (७-९७) । 'उद्धारं योद्धारः राजे  
 यद्युः । उद्ध्रियते इत्युद्धारः जितधनाद्युत्कृष्टधनं सुवर्ण-  
 रजतभूषादि राज्ञे समर्पणीयम्'—इति तट्टीका । ५७२

उद्ध्वयणम् क्ली. [ उत् + ध्वप् + ल्युट् ] रोमाञ्चः;  
 रामाङ्गनः । ६५१

उद्धृतः त्रि. [ उत् + ह + क्त ] कृतोद्धरणः; समुदकतः;  
 'ताला गया इति भाषा । उत्क्षिप्तः; परिभुक्तोऽजितः;  
 उद्धृतुमैच्छत् प्रसभोद्धतारिः'—इति रघुवंशे (२-३०) ।  
 'इतीव वाहेनिजवेगदाहितैः पयोधिरोधक्षममुद्धृतं रजः'—  
 इति नैषधे (१-६९) । ७१२

उद्धमानम् क्ली. [ उत् घ्मायते अग्निरत्र । घ्मा शब्दा-  
 ग्निसंयोगोः, उत्पूर्वात् तस्माल्ल्युट् ] चुल्ली । ३१३

उद्धयः पुं. [ उज्जाति कूलमिति । उज्ज् + क्यप्, निपात-  
 नान् [ सिद्धम् ] नदः; 'तायदागम इवाद्धयभिययोः'—  
 इति रघुवंशे (११-८) । 'कूलं मिथोद्धयसन्निभौ'—  
 इति भाट्टे (५-६२) । ६६६

उद्धुद्धः त्रि. [ उत् + बुध् + क्त ] विकसितः; प्रबुद्धः;  
 'उद्धुद्धं च जगद्धात्रीं पूजयेद् दीपमालया'—इति तिथि-  
 तत्त्वे । 'उद्धुद्धं कारणैः स्वैः स्वैर्वहिर्भावं प्रकाशयन् ।  
 लोके यः कार्यरूपः सोऽनुभावः काव्यनाटययोः'—इति  
 साहित्यदर्पणे (३-१६२) । १८७

उद्धभटः त्रि. [ उत् + भट् + अप् ] प्रवरः; 'पदे पदे सन्ति  
 भटा रणोद्भटाः'—इति नैषधे । श्लेषशायः; महेच्छः;  
 उदारः; उदात्तः; उदीर्णः; महाशयः; महामनाः;  
 महात्मा; पुं. कच्छपः; सूर्यः; सूर्यः । ७४४

उद्धानम् क्ली. [ उद्याति क्रीडार्थमस्मिन् । उत् + या +  
 ल्युट् ] राज्ञः साधारणं वनम्; आक्रीडः; 'बाह्योद्यान-  
 स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्मा'—इति मेघदूते (७) ।  
 निःसरणं; प्रयोजनम् । २१३

उद्योगः पुं. [ उत् + युज् + घञ् ] यत्नः; चेष्टा; उत्साहः;  
 अध्यवसायः, उद्यमः; 'उद्योगं सर्वसंन्यानां दैत्याना-  
 मादिदेश ह'—इति मार्कण्डेये (८८-२) । 'उद्योगा-  
 दनिवृत्तस्य सुसहायस्य धोमंतः । छायेवानुगता तस्य  
 नित्यं श्रीः सहचारिणी'—इति नीतिवाक्यम् ।  
 'उद्योगः सैन्यनिर्याणं स्वैतोपाख्यानमेव च'—इति महा-  
 भारते । ३५६

उद्योतः पुं. [ उत् + द्युत् + घञ् ] आलोकः; ज्योतिः । ६६

उद्धर्तनम् क्ली. [ उत् + वृत् + णिच् + भावे करणे वा  
 ल्युट् ] धर्षणं; 'त्रिलेपनम्; 'उद्धर्तनमपस्नानं विष्णुत्रे  
 रक्तमेव च । श्लेष्मनिष्ठचूतवान्तानि नाधितिष्ठेतु  
 कामतः ॥' उत्पत्तनम्; 'मोघोर्कृत्तुं चटुलशफरोद्धर्तन-  
 प्रेक्षितानि'—इति मेघदूते (४२) । शरीरनिर्मलीकरण-  
 गन्धद्रव्यादि; उत्सादनम्; 'उवटन' इति भाषा ।  
 'उद्धर्तनं वातहरं कफमदाविलापनम् । स्थिरीकरण-  
 मङ्गानां त्वग्रप्रगादकरं परम् । शिरामुखविधिवत्तत्वं  
 त्वक्स्थस्यानंश्च तेजतम्'—इति सुश्रुते । ७३१

उद्वाहः पुं. [ उत् + वह् + घञ् ] विवाहः; भार्याग्रहणम्,  
 उद्वाहनं; रणरणम् । ४९५

उद्धुरः पुं. [ उद्ध् + उर ] उद्धूरः; उद्धूरः; उद्धूरः;  
 [ बाहुलकाद् ऊर, ऊर, अर वा प्रत्ययो बोध्यः ] मूपिकः;  
 आखुः; मूपकः; मूप. मूपोकः; खनकाः; दध्रुः;  
 वृषः; आखनिकाः; वृषः; अश्रुद्वयेद् गिरिका, बाल-  
 मूपिका, दीना; चियकाः; आकाह्या, अञ्जनिका,

मुषिका; मूषा; मूषीका; मूषिका; विलेशयः;  
शुषिरः; इन्द्रः। क्षुद्रस्य तस्य पर्यायः—चिक्कः;  
वशमनकुलः; 'उन्दूहञ्जान्त्ररहितं तेन वातघ्नकल्क-  
वत्'—इति वाग्भटे। २३५

उन्नः त्रि. [ उन्द् + क्त, 'नुदविदेति' पक्षे नत्वम् ] क्लिन्नः;  
दयापरः। ७६७

उन्नतः त्रि. [ उत् + नम् + क्त ] वर्द्धितः; उच्चः; प्रांशुः;  
उदग्रः; उच्छ्रितः; उत्तुङ्गः; उच्चैः; तुङ्गः; स्थितः  
सर्वोन्नतेनोर्वीं कान्त्वा मेशरिवात्मना—इति रघुवंशे  
(१-१५)। क्ली. दिनपरिमाणज्ञानसाधनोपायः;  
'दिवसस्य यद्गतं यच्च ओषं तयोर्दत्तं तदुन्नतसंज्ञं  
ज्ञेयम्' इति सिद्धान्तशिरोमणी। पुं. चाक्षुषमन्वन्तरे  
ऋषिभेदः; 'सुमेधा विरजाश्चैव हविष्मानुन्नतो मधुः।  
अतिनामा सहिष्णुश्च सप्तासन्निति चर्षयः।' ७५१

उन्नतनाभिः त्रि. [ उन्नता नाभिः यस्य ] उच्चनाभियुक्तः;  
तुण्डलः। ६१०

उन्निद्रः त्रि. [ उद्गता निद्रा स्वप्नो दुःखादिकं वा यस्मात् ]  
प्रफुल्लः; विकसितः; 'उन्निद्रपुष्पचनचम्पकपुष्प-  
भासाः'—इति माघे। प्रबुद्धः; शयनादुत्थितः; 'तामु-  
न्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थः'—इति मेघदूते  
(८८)। 'शय्याप्रान्तविवर्तने विगमयत्युन्निद्र एव क्षपाः'  
—इति शाकुन्तले। १८७

उन्नायः पुं. [ उन्मथ्यतेऽनेनेति । उत् + मथ् + घञ् ]  
कूटग्रन्थः; मृगवधोपयुक्तयन्त्रम्; मृगपक्षिवन्धनार्थं यत्  
सन्धानयन्त्रं निवेश्यते सः; [ भावे घञ् ] मारणं;  
घातः; 'प्रभो मद्वाणानां क इव भुवनोन्माथविधिषु'  
—इति प्रबोधचन्द्रोदये। ७८२

उन्मिध्रः त्रि. [ उन् ऊर्ध्वं मिश्रघते वर्णान्तरैः । घञ् ]  
मिश्रितवर्णः; शैवलः। ७४१

उन्मिधितः त्रि. [ उन् + मिष् + क्त ] प्रफुल्लः; विकसितः;  
'व्यलोक्यन्मिधितैस्तडिन्मधैर्महातपःसाक्ष्य इव स्थिताः  
क्षपाः'—इति कुमारसम्भवे (५-२५)। १८७

उन्मीलितः त्रि. [ उत् + मील् + क्त ] विकसितः;  
अस्फुटितः; 'उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रम्'—इति  
कुमारसम्भवे (१-३२)। 'ते चोन्मीलितमालतीसुरभय-  
प्रीढाः कदम्बानिलाः'—इति साहित्यदर्पणे। १८७

उन्मुखः त्रि. [ उद्दृष्टं मुखं यस्य ] उद्दृष्टमुखः;

उत्पश्यः; 'मनोभिरामाः शृण्वन्तो रथनेमिस्वनोन्मुखैः'  
—इति रघुवंशे (१-३९)। उत्सुकः; 'तस्मिन् संयमिना-  
माद्ये जाते परिणयोन्मुखे'—इति कुमारसम्भवे (६-३४)।  
'पतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियाम्'—इति रघुवंशे  
(३-१२)। 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किं  
स्विदित्युन्मुखीभिः'—इति पूर्वमेघे (१४)। 'इत्या-  
ख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखी सा'—इति पूर्वमेघे  
(३९)। ३८५

उन्मूलितम् त्रि. [ उत् + मूल् + क्त ] उत्पादितम्;  
'लङ्कामुन्मूलितां कृत्वा कदा द्रक्ष्यति मां पतिः'—इति  
रामायणे। 'उन्मूलिता हलधरेण पदावघातैः'—इति  
उद्भटः। ७१२

उपकण्ठः त्रि. [ उपगतः कण्ठः सामीप्यमस्य ] निकटः;  
'तस्योपकण्ठे धननीलकण्ठः कुतूहलादुन्मुखपीरदृष्टः'  
—इति कुमारसम्भवे (७-५१)। क्ली. [ उपगतः०  
कण्ठम्, अत्यादय इति समासः ] शामान्तम्;  
उपशल्यम्; आस्कन्दितम्; अश्वपञ्चमगतिः; कण्ठ-  
समीपम्; 'प्रेमोपकण्ठं मुहुर्दङ्कभाजो रत्नावलीरन्वु-  
धिरावबन्ध-' इति माघे। ६९२

उपकरणम् क्ली. [ उप + कृ + ल्युट् ] नृपादीनां छत्र-  
चामरादिः परिच्छदः; परिवर्हः; तन्त्रं; प्रधानाङ्गी-  
भूतोपकारकद्रव्यं; भोजनादौ व्यञ्जनादिः; 'तस्मादन्नं  
प्रधानं पूपादिकं तु उपकरणत्वेन शक्तानामावश्यकम्'  
—इति श्राद्धतत्त्वम्। पूजादौ नैवेद्यादिः मृगवन्धनादौ  
जालादिः साधनम्। ३-६, ८६६

उपकारिका स्त्री. [ उपकरोतीति । उप + कृ + ण्वुल् +  
टाप्, इत्वम् ] राजगृहम्; उपकार्या; पटभवनम्;  
उपकारकर्त्री; पिण्डभेदः; कुशूलः, 'सराय' इति  
भाषा। २९०

उपकार्या स्त्री. [ उपकरोतीति । उप + कृ + ण्वुल् +  
टाप्, इत्वम् ] राजगृहं; पटभवनम्; 'तस्योपकार्यारिचितोपचारा  
व्येतरा जानपदोपदाभिः'—इति रघुवंशे (५-४१)।  
'शशुचनेप्रतिविहितोपकार्यमार्यः, साकेतोपवनमुदारमध्यु-  
वास'—इति रघुवंशे (१३-७९)। २९०

उपकुल्या स्त्री. [ उपकोलति, कुल संव्याने बन्धुषु च,  
अध्यादिः ] पिप्पली; 'पीपल' (छोटी-बड़ी) इत्यादि  
भाषा। 'कृष्णोपकुल्या मागधी'—इति वैद्यकरत्नमाला।

'उपकुल्योपणा शोण्डी'—इति भावप्रकाशः । त्रि. (उपगतः कुल्याम्) कृत्रिमसरित्समीपम् । ६१४

उपक्रमः पुं. [ उप + क्रम् + घञ्, 'नोदात्तोपदेशस्य' इति न वृद्धिः ] प्रथमारम्भः; आरम्भः; 'रामोपक्रममाचख्यौ रक्षःपरिभवं नवम्'—इति रघुवंशे (१२-४२) । (उपक्रम्यते इत्युपक्रमः, कर्मणि घञ् । रामस्य कर्तुर्युपक्रमः रामोपक्रमम्, रामेणादौ उपक्रान्तमित्यर्थः । 'उप-क्षोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायामिति' क्लीवत्वम् इति तट्टीका ।) ज्ञात्वारम्भः; अयमस्योपायः अनेनैतत् सिध्यतीति ज्ञात्वा प्रथमारम्भः; उपवा; राज्ञां वरमंकामार्थ-भयैः अमगत्यादेः परीक्षणं; भावतत्त्वरूपणम्; प्रक्रमः; विक्रमः; चिकित्सा; पलायनम्; उपायः; 'सामादिभिरुपक्रमैः' इति मनुः (७-१०७) । ७०७

उपक्रोशः पुं. [ उप + क्रुश् + घञ् ] निन्दा; 'राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा'—इति रघुवंशे (२-५३) । २४८

उपग्रहणम् क्ली. [ उप + गृह् + ल्युट् ] आलिङ्गनम्; 'स्मरन्मुकुन्दाञ्ज्वरघुपगूहणं पुनः'—इति भागवते (१।५।१९) । ५६८

उपग्रहणम् क्ली. [ उप + ग्रह् + ल्युट् ] उपाकरणं; 'संस्कारपूर्वकश्रुतिग्रहणं; स्वीकारः; 'वेदोपग्रहणार्थाय चावग्राह्यत प्रभुः'—इति रामायणे (१-४-४) । ८४६

उपग्राह्यः पुं. [ उपगृह्यते इति, उप + ग्रह् + ण्यत् ] उपढौकनम्; घूस, भेट, नजराना' इत्यादि भाषा । ४३४

उपघ्नः पुं. [ उप + हन् + क्त ] निकटाश्रयः; 'छेदादिवोपघ्नतरोर्त्रतयी'—इति रघुवंशे (१५-१) । २९८

उपचर्या स्त्री. [ उप + चर् + क्यप् + टाप् ] चिकित्सा । ६१२

उपचारः पुं. [ उप + चर् + घञ् ] सेवा; 'स मे चिराया-स्खलितोपचाराम्'—इति रघुवंशे (५-२०) । उत्कोचः (४३४); रोगप्रतिकारः; उपचर्या; चिकित्सा; रुक्-प्रतिक्रिया; निग्रहः; वेदनानिष्ठा; क्रिया; उपक्रमः; क्षमः; व्यवहारः; 'प्रयुक्तपाणिग्रहणोपचारौ'—इति कुमारसम्भवे (७-९६) । परस्य रञ्जनार्थम् असत्य-भाषणम्; 'उपचारपदं न चेदिदं त्वमनङ्गः कथमक्षता रतिः'—इति कुमारसम्भवे (४-९) । 'उपचारजता दाक्ष्यम्'—इति चरकः । १२९

उपजापः पुं. [ उप + जप् + घञ् ] भेदः; विच्छेदः; 'तेषु तेषु चाकृतेषु प्रासरन् परोपजापाः'—इति दशकुमारचरिते । 'उपजापः कृतस्तेन तानाकोपव-नस्त्वयि'—इति माघे (२-९९) । ७८०

उपजिह्वा स्त्री. [ उपगता जिह्वा यस्याः ] कीटविलेपः; 'दीमक' इति ह्यातः । उपदेहिका; वम्प्री; उवदीका; आलजिह्वा; 'उपजिह्वा स्फिचौ बाहू' इति याज्ञवल्क्यः । तालुस्थग्रन्थिविशेषः; 'तादृगेवोपजिह्वा तु जिह्वाया उपरि स्थिता', 'उपजिह्वां परिस्राव्य यवक्षारेण घर्ष-येत्'—इति वाग्भटः । [ उपजिह्वा + स्वार्थे कन् ] उपजिह्विका; घण्टिका; प्रतिजिह्वा; 'यदत्युप-जिह्विका यद्वन्नो अतिसर्पति' इति ऋग्वेदे (४-९१-२१) । कीटभेदः; उत्पादिका; वटिः; उद्देहिका; दिवी । 'यस्य श्लेष्मा प्रकुपितो जिह्वामूलेऽवतिष्ठते । आशु संजनयेत् शोथं जायतेऽस्योपजिह्विका'—इति चरके । 'उपजिह्वां तु संलिय क्षारेण प्रतिसारयेत्'—इति सुश्रुते । ६४५

उपज्ञा स्त्री. [ उपज्ञायते ज्ञा अवबोधनेः 'आतश्चोप-सर्गे' इति कर्मणि अञ्. ] आद्यज्ञानम्; प्रथमज्ञानम्; 'अथ प्राचेतसोपज्ञं रामायणमितस्ततः'—इति रघुवंशे (१५-६३) । 'लोकेऽभूद्यदुपज्ञमेव विदुषां सौजन्यजन्यं यशः'—इति मल्लिनाथटीकामुखम् । ७०७

उपतापः पुं. [ उप + तप् + घञ् ] रोगः; त्वरा; उतापः; अशुभं; पीडा; 'विवक्षितं ह्यनुक्तम् उपतापं जनयति'—इति शाकुन्तले । त्रि. पीडादायकः; 'यो वनस्पतीनामु-पतापो बभूव'—इति कौशिकसूत्रे । ६००

उपत्यका स्त्री. [ उप समीपे आसन्ना भूमिः । उप + 'उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नाहृद्योः' इति त्यकन् । 'त्यकनश्च निषेधः' इति इत्वाभावः ] पर्वतनिकटभूमिः; 'मारी-चोद्भ्रान्ताहारीता मलयाद्रेःपत्यकाः'—इति रघुवंशे (४-४६) । २११

उपदंशः पुं. [ उपदश्यते इति । उप + दंश् + कर्मणि घञ् ] मद्यपानरोचकमक्षयद्रव्यम्; अवदंशः; चक्षुः; मद्यपासनम्; 'द्वित्रान् उपदंशान् उपपाद्य', 'ततस्तस्य शाल्योदनस्य दर्वीद्वयं दत्त्वा सपिर्मात्रां सूपम् उपदंशं च उपजहार'—इति च दशकुमारचरिते । मेदुरोग-विशेषः; 'हस्ताभिः पाताभ्रसदन्तपाताद् अघारणा-

दत्तुपसेवनाद्वा । योनिप्रदोषाच्च भवन्ति शिषवे  
पञ्चोपदशा विविधापचारैः—इति भावप्रकाशः ।  
समिष्टिलवृक्षः; शिशुवृक्षः । ३२८

उपवा स्त्री. [ उपदीयते इति । उप+दा+आतश्चो-  
पसर्गं इत्यङ् ] उपढौकनम्; 'उपदा विविशुः शस्यत्  
नोत्सेकः कोशलेश्वरम्', 'प्रत्यर्घ्यं पूजामुपदाच्छटेन'—  
इति च रघुवंशे (४-१०), (७-३०) । 'धूस' 'नज-  
राना' 'भेट' इत्यादि भाषा । ४३४

उपदीका स्त्री. [ उपदीयते क्षिणोति । उप+दीङ् क्षये,  
ईक, टाप् ] उपदेहिका । ६४५

उपदेहिका स्त्री. [ उपदेहो विद्यते यस्याः । उपदेह+ठक् ]  
कीटविशेषः; उपजिह्वा; वम्प्री; उपदीका । ६४५

उपद्रवः पुं. [ उप+द्+अप् ] उत्पातः; रोगारम्भक-  
दोषप्रकोपजन्योऽन्यो विकारः; 'यो व्याधिस्तस्य यो  
हेतुर्दोषस्तस्य प्रकोपतः । योऽन्यो विकारो भवति स  
उपद्रव उच्यते । व्याधेरुपरि यो व्याधिः उपद्रव  
उदाहृतः । सोपद्रवा न जीवन्ति जीवन्ति निरुपद्रवाः'-  
इति हारीते । 'तत्रौपसर्गिको यः पूर्वोत्पन्नं व्याधिं जघन्य-  
कालजातो व्याधिरुपसृजति स तन्मूल एवोपद्रवसंज्ञः'-  
इति सुश्रुते । १२७

उपधा स्त्री. [ उपधीयते शुद्धिज्ञानमत्र । उप+धा+  
'आतश्चोपसर्गं' इत्यङ्+टाप् ] राज्ञां धर्मकामार्थ-  
भयैरमात्यादेः परीक्षणं, धर्मार्थकाममोक्षद्वारा  
परीक्षा; 'धर्मार्थकाममोक्षैश्च प्रत्येकं परिशोधनैः ।  
उपेत्य धीयते यस्मादुपधा परिकीर्तितः । अर्थकामोपधा-  
भ्यां तु भार्याः पुत्रास्तु शोधयेत् । धर्मोपधाभिर्विप्रास्तु  
सर्वाभिः सचिवान् पुनः'—इति कालिकापुराणे ।  
पदानाम् उपान्त्यवर्णः इति व्याकरणम् । ७५८

उपधानम् क्ली. [ उपधीयते आरोप्यते मस्तकमत्र । उप+  
धा+अधिकरणे ल्युट् ] शिरोधानम्; उपवहं;  
गण्डुः; 'तकिया' इति भाषा । 'सोपधानां धियं धीराः  
स्थेयसीं सट्त्वयन्ति ये'—इति माघे (२-७७) । 'पट्टो-  
पधानाध्यासितशिरोभागेन'—इति कादम्बरी । विषं;  
प्रणयः; व्रतम् । ३०९

उपधिः पुं. [ उपधीयते आरोप्यतेऽनेन । उप+धा+  
कि ] कपटः; 'योगाधमनविक्रीतं योगदानप्रतिग्रहम् ।  
यत्र दाप्युपधि पश्येत तत्सर्वं विनिवर्तयेत्'—इति मनुः

(८-१६५) । 'अरिष् ह्य विजयायिनः क्षितीशा विदधति  
सोपधि सन्धिदूषणानि'—इति किराते (१-४५) ।  
रथचक्रम् । ७०९

उपधृतिः स्त्री. [ उप+धृ+धित् ] किरणः; मयूकः;  
अंशुः । ३९

उपनगरम् क्ली. [ नगरमुपगतम् । अत्यादय इति  
समासः ] शास्त्रानगरं; नगरवाह्यवसतिः । २८६

उपनशः त्रि. [ उप+नम्+क्त ] उपस्त्यतः; प्राप्यः;  
'अचिरोपनतां स मेदिनीम्'—इति रघुवंशे (८-७) ।  
नम्रः; 'शौरैः प्रतापोपनतैरितस्ततः समागतैः प्रकृ-  
नम्रमृतिभिः'—इति माघे (१२-३३) । ७५०

उपनिधिः पुं. [ उपनिधीयते इति । उप+नि+धा+  
कि ] उपन्यस्तवस्तु; स्थाप्यद्रव्यं; न्यासः; 'वास-  
स्थमनाख्याय हस्ते न्यस्य यदर्पितम् । द्रव्यमुपनिधिः  
प्रोक्तः स्मृतिषु स्मृतिवेदिभिः ॥ वासुदेवपुत्रः । ८२

उपनिषद् [ द् ] स्त्री. [ उपनिषद्यते प्राप्यते ब्रह्मविद्या  
जनया इति । उप+नि+सद्+क्विप् ] धर्मः;  
वेदान्तशास्त्र; ज्ञानं; निर्जनस्थानं; वेदशिरोभागः;  
तत्र शास्त्राभेदवशात् चतुर्णां वेदानाम् अशीतिसहि-  
शताधिकसहस्रसंख्यका उपनिषदः । तथाहि 'ऋ-  
एकविंशतिः, यजुषो नवाधिकशतम्, साम्नः सहस्रं,  
पञ्चाशदुपनिषदोऽयवर्णस्येति ।' ब्रह्मविद्या; 'समीप-  
सदनं; तत्त्वं; द्विजातिकर्तव्यो व्रतविशेषः; 'प्रथमं  
स्यान् महानाम्नी द्वितीयं च महाव्रतम् । तृतीयं स्यादुप-  
निषद् गोदानं च ततः परम्'—इति वाश्वलायन-  
गृह्यकारिका । मुक्तिकोपनिषदि अष्टाधिकशतोप-  
निषदः—'ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः ।  
ऐतरेयञ्च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा ॥ ब्रह्म-कैवल्य-  
जावाल-श्वेताश्व-हंस आरुणिः । . . . . ॥' ७९

उपपतिः पुं. [ उपमितः पत्या । 'अवादयः ऋष्टाद्यर्षे  
तृतीयया' इति समासः ] जारः; 'पौनर्भवश्च काणश्य  
यस्य चोपपतिर्गृहे'—इति मनुः (३-१५५) । ३८४

उपप्लवः पुं. [ उप+प्लु+अप् ] ग्रहणम्; 'उपप्लवे  
चन्द्रमसो रवेश्च'—इति स्मृतिः । राहुग्रहः; विप्लवः;  
उत्पातः; 'उपप्लवाय लोकानां धूमकेतुरिवोत्पितः—  
इति कुमारसम्भवे (२-३२) । उत्पातसूचकोऽनिलाधिः;  
'कच्चिन्न वाट्वादिरुपप्लवो वः'—इति रघुवंशे (५-६) ।



भीतिः; 'नृपा इवोपल्विनः परेभ्यः'—इति रघुवंशे (१३-७) । 'उपल्विनो भयवन्तः'—इति मल्लिनाथः । ४१

उपवर्हः पुं. [ उप + वृह् + घञ् ] उपवानम् । 'तकिया' इति भाषा । ३०९

उपभोगः पुं. [ उप + भुज् + घञ् ] भोजनातिरिक्त-भोगः; निर्वेशः; 'प्रियोपभोगचिह्नेषु पौरोभाग्य-मिवाचरन्'—इति रघुवंशे (१२-२२) । 'आगमेनोप-भोगेन नष्टं भाव्यमतोऽन्यथा' । 'न जातु कामः कामाना-मुपभोगेन शाम्यति'—इति मनुः (२-९४) । ७५५

उपमर्दः पुं. [ उपसमीपे मर्दनम् । उप + मृद् + घञ् ] विप्रकारः; तिरस्कारः । ७६९

उपमाता [ ऋ ] स्त्री. [ उपमिता मात्रा ] धात्री; मातुः सदृशी; सा पद्भवा, यथाह स्मृतिः—'मातुःष्वसा मातुलानी पितृष्वस्त्री पितृष्वसा । स्वश्रूः पूर्वजपत्नी च मातृतुल्याः प्रकीर्तिताः ॥' त्रि. उपमानकर्त्तरि । ५०७

उपमानम् क्ली. [ उपमीयते इति, उप + मा + ल्युट् ] उपमा; 'उपमानमभूद्विलासिनां करणं यत्तव कान्ति-मत्तया'—इति कुमारसम्भवे (४५) । सादृश्यज्ञानम्; उपमितिकरणं, यथा—'गौर्गव्यस्तथेति वाक्ये । 'प्रसिद्ध-साधर्म्यात् साध्यसाधनमुपमानम्'—इति न्याय-सूत्रम् । ८७३

उपयमः पुं. [ उप + यम् + अप् ] विवाहः । ४९५

उपयामः पुं. [ उप + यम् + घञ् ] विवाहः । यज्ञाङ्ग-पात्रविशेषः; 'उपयामगृहीतोऽसि' [ उपयाम्यतेऽनेन, उप + यम् + णिच् + अच् ] । ४९५

उपरागः पुं. [ उप + रञ्ज् + घञ् ] ग्रहणं; राहुग्रस्त-श्चन्द्रः सूर्यश्च; 'उपरागान्ते शशिनः समुपगता रोहिणी योगम्'—इति शांकुन्तले । निकटस्थितित्वाद् निजगुणा-देरन्यत्रारोपणम्; यथा स्फटिकस्तम्भे रक्तपुष्पाणां रक्ति-मारोपः । राहुः; विगानं; परीवादः; दुर्नयः; ग्रहक-ल्लोलः; व्यसनं, 'विमर्षिं चाकारमनिवृत्तानां मृणालिनी हैमनिवोपरागम्'—इति रघुवंशे (१६-७) । ४१

उपरि अव्य. [ ऊर्ध्व ऊर्ध्वायाम् ऊर्ध्वात् ऊर्ध्वायाः ऊर्ध्वम् ऊर्ध्वां वा वसत्यागतो रमणीयं वा । 'उपर्युपरि-ष्ठात्' इति ऊर्ध्वस्योपादेशो रिट् प्रत्ययश्च ] ऊर्ध्वम्; उपरिष्ठात्; 'त्वय्यासत्रे नयनमुपरिस्पन्दि-शङ्के मृगा-

क्षया, मीनक्षोभाच्चलकुवलयश्रीतुलामेष्यतीति'—इति उत्तरमेघे (३४) । 'अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याघरहस्तमुक्ता'—इति रघुवंशे (२-६०) । 'ऊपर' इति भाषा । १०२

उपरिष्ठात् अव्य. [ ऊर्ध्वे ऊर्ध्वायाम् ऊर्ध्वात् ऊर्ध्वायाः ऊर्ध्वम् ऊर्ध्वां वा वसति आगतो रमणीयं वा । 'उपर्यु-परिष्ठात्' इत्यूर्ध्वस्य उपादेशो रिष्ठात् प्रत्ययश्च ] उपरि; ऊर्ध्वम्; 'नाघस्तात्रोपरिष्ठाच्च गतिर्नाप्सु न चाम्वरे'—इति रामायणे । १०२

उपलः पुं. [ उपलति, उप + ल + क । यद्वा चं शम्भुं पलति यः । उ + पल् + अच् ] पापाणः; 'रिवां द्रक्ष्य-स्युपलविपमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्'—इति पूर्वमेघे (१९) । रत्नम्; 'मणिमुक्ताप्रवालानां तात्रस्य रज-तस्य च । अयःकांस्थोपलानां च द्वादशाहं कणान्ता'—इति मनुः (११-१६७) । बालुका; 'भियगुपला-प्रक्षिणी नना' इति ऋग्वेदे (९।११२।३) 'उपलेषु बालुकासु'—इति भाष्यम् । १६८

उपलब्धिः स्त्री. [ उप + लभ् + क्तिन् ] मतिः; बुद्धिः; प्राप्तिः; 'वृथा हि मे स्यात् स्वपदोपलब्धिः'—इति रघुवंशे (५-५६) । ज्ञानम्; 'कामं तु नः स्वेषु गुणेषु सङ्गः कामं च नान्योन्यगुणोपलब्धिः । अस्मान् विना नास्ति तवोपलब्धिः तावदूते त्वां न भजेत् प्रहर्षः'—इति महाभारते । ३३४

उपलिङ्गम् क्ली. [ उपमितं लिङ्गेन ] उपद्रवः; अरिष्टम्; दुर्भाग्यम्; 'केनचिद् उपलिङ्गानि गायता'—इति हर्षचरिते । १२७

उपलेपनम् क्ली. [ उप + लिप् + ल्युट् ] गोमयादि-लेपनम्; 'तत्रैव देवतायतने संमाज्जनोपलेपनमण्डनादिकं कर्म समाज्ञापयति'—इति षष्ठतन्त्रे । ७९७

उपवनम् क्ली. [ उपमितं वनेन ] कृत्रिमवनम्; आरामः; 'पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः मूचिभिर्नैः'—इति पूर्वमेघे (२४) । 'सा केतुमालोपवना बृहद्भिर्विहार-शैलानुगतेव नागैः'—इति रघुवंशे (१६-२६) । २१२

उपवर्तनम् क्ली. [ उपागत्य वर्तन्ते अत्र । उप + वृत् + ल्युट् ] जनपदः; जनपदसमुदायः; जनपदैकदेशः; सजल-निर्जलस्थानमात्रं; देशः; विषयः; 'तद्योपवर्तनेऽप्येको न श्रुतो गोत्रभित् क्वचित्'—इति काशीखण्डे । २८४

**उपविष्टः** त्रि. [ उप + विश् + क्त ] आसीनः; 'उपविष्टौ कथाः काश्चित् चक्रनुर्वैश्यपार्थिवी'—इति देवी-माहात्म्ये (८१-२८) । ३८६

**उपवीतम्** क्ली. [ उप + वि + इ + क्त ] वामस्कन्धा-पितं यज्ञसूत्रं; यज्ञसूत्रमात्रम्, 'जनेऊ' इति भाषा । 'कृतोपवीतं हिमशुभ्रमुच्चकैः'—इति माघे (१-७) । 'मुक्तायज्ञोपवीतानि विभ्रतो हैमवल्कलाः'—इति कुमा-रसम्भवे (६-६) । 'ऊर्ध्वन्तु त्रिवृतं कार्यं तन्तुत्रयम-धोवृतम् । त्रिवृतं चोपवीतं स्यात्तस्यैको ग्रन्थिरिष्यते'—इति स्मृती । 'यज्ञोपवीतकं कुर्यात् सूत्राणि न वत-न्तवः'—इति देवलः । 'यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रीते स्मार्ते च कर्मणि । तृतीयमुत्तरीयार्थं वस्त्रालाभेऽतिदिश्यते ॥' 'कार्पासमुपवीतं स्याद् विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृतं । शणसूत्रमयं राज्ञो वैश्यस्याविकसौत्रिकम्'—इति मनुः (२-४४) । ४०७

**उपशाल्यम्** क्ली. [ उपगतं शल्यम् ] ग्रामप्रान्तभागः; ग्रामान्तम्; 'उपशाल्यनिविष्टेस्तैश्चतुर्द्वारिमुखी वभौ'—इति रघुवंशे (१५-६०) । 'भ्रमंश्च विशालोपशाल्ये कमप्याकीडमासाद्य'—इति दशकुमारे । २५९

**उपशायः** पुं. [ उप + शी + घञ् ] पर्यायशयनार्थकः; प्रहरिकादीनां क्रमेण शयनं; विशायः । ७३९

**उपसंव्यानम्** क्ली. [ उपसंवीयतेऽनेन । उप + सम् + व्ये + 'कृत्यल्युट्' इति ल्युट् ] परिधानवस्त्रम्; 'बहिर्यो-गोपसंव्यानयोः' इति पाणिनिः (१-१-३६) । ५४६

**उपसंग्रहणम्** क्ली. [ उपगत्य संमानार्थं ग्रहणम् ] चरण-स्पर्शः; उपसंग्रहः; पादग्रहणम्; अभिवादनम्; उपा-करणम् । ३९८

**उपसंग्राहम्** त्रि. [ उपसंगृह्यते इति । उप + सम् + ग्रह + ण्यत् ] उपसंग्रहणीयम्; अभिवाद्यं; पादे ग्रहीतव्यम्; 'भ्रातुर्भार्योपसंग्राह्या सवर्णाऽह्वयह्वयि'—इति मनुः (२-१३२) । ३९८

**उपसन्नः** त्रि. [ उप + सद् + क्त ] उपनतः; उपस्थितः; 'ब्रवीतु भगवांस्तन्मे उपसन्नोऽस्म्यधीहि भोः'—इति महाभारते । ७५०

**उपसम्पन्नः** त्रि. [ उप + सम् + पद् + क्त ] पर्याप्तः; मृतः (६२९); 'ओत्रिये तूपसम्पन्ने त्रिरात्रमशुचि-भवेत्'—इति मनुः (५-८१) । यज्ञार्थहतपशुः; प्रमीतः;

प्रोक्षितः; पाकेन रूपरसादिसम्पन्नव्यञ्जनादिः; प्रणी-तः; संस्कृतः; प्राप्तः । ३२६

**उपसर्गः** पुं. [ उप + सृज् + घञ् ] उपप्लवः; उपद्रवः; 'उपसर्गनिशेषास्तु महामारीसमुद्भवान्'—इति मार्क-ण्डेये (९२-७) । रोगभेदः;—'क्षीणं हन्युश्चोपसर्गाः प्रभूताः'—इति सुश्रुते । धातोः पूर्ववर्तिविशतिसंख्यकः प्रायव्ययगणः—१ प्र, २ परा, ३ अप, ४ सम्, ५ नि, ६ अव, ७ अनु, ८ निर् (स्), ९ दुर् (स्), १० वि, ११ अधि, १२ सु, १३ उत्, १४ परि, १५ प्रति, १६ अभि, १७ अति, १८ अपि, १९ उप, २० आङ् । 'निपात. श्वादयो ज्ञेया उपसर्गास्तु प्रादयः । द्योतकत्वात् क्रिया-योगे लोकादवगता इमे ॥ ते त्रिधा—'धात्वर्थ' वाधते कश्चित्'—यथा आदत्ते । 'कश्चित्तमनुवर्तते'—यथा प्रसूते । 'तमेव विशिनष्टचन्यः'—यथा प्रणमति, 'उपसर्ग-गतिस्त्रिधा ॥' अपि च—'उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते । प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत्'—इति सिद्धान्तकौमुदी । १२७

**उपसर्जनम्** क्ली. [ उप + सृज् + ल्युट् ] प्रधानभिन्नम्; अप्रधानम्; अप्राग्रयम्; 'उपसर्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते'—इति मनुः (९-२११) । विशेषणं; त्यागः; उपद्रवः; 'निघर्ति भूमिचलने ज्योतिषामुपसर्जने'—इति मनुः । ७६३

**उपसर्पा** स्त्री. [ उप + सर् + 'उपसर्पा काल्या प्रजने' इति साधुः ] प्राप्तगर्भग्रहणकाला गीः; ऋतुमती गीः; काल्या; कालप्राप्ता; वृपरता । २७२

**उपसूर्यकम्** क्ली. [ सूर्यमुपगतम् उपसूर्यम् । स्वार्थे कन् ] चन्द्रपक्षे उपसूर्यमिव । उपसूर्यकम्, इवार्थे कन् ] चन्द्रसूर्य-प्रान्तस्थितमण्डलम्; परिवेषः । ४१

**उपस्करः** पुं. [ उप + कृ + अप्, 'समवाये चेति' सुट् ] व्य-ञ्जनादिसंस्कारार्थं धान्याकसर्षपपिण्डादिः; वेसवारः; 'मङ्गलालम्भनीयानि प्राशनीयान्युपस्करान् । उपानि-न्युस्तथापुण्याः कुमारीबहुलाः स्त्रियः ॥' गृहवासोपक-रणं; दृषदुपलसूपादि; कनककुण्डलहारादि; 'गृहोप-स्करबाह्यानां दोह्याभरणकर्मिणाम् । मूल्यं लब्धं तु यत्किञ्चित् शुल्कं तत्परिकीर्तितम्'—इति याज्ञवल्क्यः । 'पञ्च सूना गृहस्थस्य चूली पेपण्युपस्करः'—इति मनुः (३-६८) । 'सज्जोपस्करभेषजः'—इति सुश्रुते । ३२१

उपस्यः पुं. [ उप+स्था+क्त ] भगम्; योनि; लिङ्गं; क्रौडः; 'रथोपस्य उपाविशत्'—इति भगवद्गीता (१-४६) । गुहाद्वारम्; 'उपस्यमुदरं जिह्वा हस्ती पादौ च पञ्चकम्'—इति मनुः (८-१२५) । निकटे त्रिं. ५१४

उपस्थितः त्रि. [ उप समीपे स्थितवान् । उप+स्था+क्त ] समीपस्थितः; उपनतः; उपसन्नः; 'उपस्थितेयं कल्याणो नाम्नि कीर्तित एव यत्'—इति (१-८७), 'हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्'—इति च रघुवंशे (१-४५) । मृष्टः; शोधितः; पाणिनिव्याकरणे वेदा-प्रचलितो लौकिकः शब्दः; यथा—'अप्लुतवदुपस्थिते', अत्र सिद्धान्तकीमुदी—'उपस्थितोऽनार्पः' । ७५०

उपस्पर्शनम् क्ली. [ उप+स्पृश्+ल्युट् ] उपस्पर्शः; आचमनम्; 'उपस्पर्शनकाले तु त्वा रक्षन्तु रघूत्तम!'—इति रामायणे (२।२५।२४) । ४०८

उपहसितम् क्ली. [ उप+हस्+क्त ] हास्यभेदः; 'ज्येष्ठानां स्मितहसिते मध्यानां विहसितावहसिते च । नीचानामपहसितं तथातिहसितं च पद्भेदाः ॥ मधुर-स्वरं विहसितं सांसशिरःकम्पमवहसितम् । अपहसितं साक्षात् विक्षिप्ताङ्गं भवत्यतिहसितम् ॥ अपहसितमत्र उपहसितम् इत्यपि पाठः'—इति साहित्यदर्पणे ७३१

उपहारः पुं. [ उप+हृ+धञ् ] उपढौकनद्रव्यम्; प्राभृतः; प्रदेशनम्; उपायनम्; उपग्राह्यः; उपदा; 'रत्नपुष्पोपहारेण च्छायामानर्चं पादयोः'—इति रघुवंशे (४-८४) । 'वन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः'—इति पूर्वभेदे (३३) । 'ज्योतिषां प्रतिविम्बानि प्राप्नु-वन्त्युपहारताम्'—इति कुमारसम्भवे (६-४२) । हारनिकटस्यद्रव्यम् (उपगतो हारम्); 'उरोभुवा कुम्भयुगेन जृम्भितं नवोपहारेण वयस्कृतेन किम्'—इति नैषधे (१-४८) । १२८

उपह्वरम् क्ली. [ उपह्वरन्त्यत्र । उप+ह्वृ+ध ] निर्जन-स्थानम्; 'उपह्वरे गिरीणाम्'—ऋग्वेदे (८।६।२८) । निकटम् (७९१); 'अभिप्रवाहेर्जाह्वव्याः समानीतमु-पह्वरम्'—इति महाभारते । 'सर्वानाह्वय उपह्वरे वैधान्'—इति हर्षचरिते । पुं. [ उप+ह्वृ+ध ] रथः; प्रान्तभागः; 'उपह्वरेषु यदचिष्टं ययि वय इव मस्तः केनचिद् पया'—इति ऋग्वेदे (१।८।७।२) । ७०८

उपांशु अव्य. [ उपगताः अंशवः यत्र ] विजनं; रहः; 'परिचेतुमुपांशुवारणं कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरम्'—इति रघुवंशे (८-१८) । पुं. जपभेदः; 'जिह्वीष्ठी चालयेत् किञ्चिद्देवतागतमानसः । निजश्रवणयोग्यः स्यादुपांशुः स जपः स्मृतः'—इत्यागमः । त्रि. निगूढे । ७०८

उपाकृतः पुं. [ उप+आ+कृ+क्त ] यज्ञे अभिमन्त्र्य हतः पशुः; 'अनुपाकृतमांसानि देवान्नानि हवींषि च'—इति मनुः । उपद्रवः; त्रि. उपद्रुतम् । ४१७

उपाधम् क्ली. [ अग्रं प्रधानम् उपगतम् ] उपसर्जनम्; गौणम्; अप्रधानम् । ७६३

उपात्तः पुं. [ उप समीपे आत्तः गृहीतः ] निर्मदहस्ती; त्रि. [ उप+आ+दा+क्त ] 'अच उपसर्गतिः' प्राप्तम्; 'क्षयं केचिदुपात्तस्य'—इति भविष्यपुराणम् । २२०

उपादानम् क्ली. [ उप+आङ्+दा+ल्युट् ] उपदा; लञ्जा; स्वस्वविषयेभ्य इन्द्रियाकर्षणं; प्रत्याहारः; ग्रहणम्; 'स्यादात्मनोऽप्युपादानाद् एपोपादानलक्षणा'—इति साहित्यदर्पणे । हेतुः; समवायिकारणं; प्रवृत्तिजनकज्ञानम् । ४३४

उपाधिः पुं. [ उप+आ+धा+कि ] धर्मचिन्ता; कुटुम्बव्यापृतः; छलम्; 'उपाधिर्न भया कार्यो वनवासे जुगुप्सितः'—इति रामायणे । विशेषणम्; 'पदार्थ-विभाजकोपाधिमत्त्वम्'—इति मुक्तावली । नामचिह्नं; हेतोरव्यापकः; यथा धूमवान् वह्निरित्यत्र आर्द्रकाष्ठम् उपाधिः; अस्य प्रयोजनं व्यभिचारस्यानुमानम् । आलङ्कारिकमते जातिगुणक्रियायदृच्छास्वरूपः । ७७०

उपाध्यायः पुं. [ उपेत्य अधीयतेऽस्मात् । उप+अधि+इ+धञ् ] अध्यापकः; वेदैकदेशाध्यापकः; 'एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः । योऽध्यापयति वृत्त्यर्थ-मुपाध्यायः स उच्यते'—इति मानवे (२-१४५) । ४००

उपानत् [ ह् ] स्त्री. [ उपनह्यते पादावनया । उप+नह्+क्विप्, 'नहिवृत्तिवृषीति' पूर्वपदस्य दीर्घः ] चर्मादिनिमित्तपादकोपः; 'नाक्षैः क्रीडेत् कदाचित्तु स्वयं नोपानहौ वहेत् । शयनस्थो न भुञ्जीत न पाणिस्थं न चासने'—इति मनुः (४-७४) । 'कृतावरोहस्य ह्यादुपानहौ'—इति नैषधे (१-१२३) । 'अनारोग्य-मनायुष्यं चक्षुषोश्पधातकृतं । पादाभ्यामनुपानद्भ्यां

सदा चङ्क्रमणं नृणाम्—इति सुश्रुते । 'जूता' इति भाषा । ३११

उपान्तः त्रि. [ उपगतोऽन्तम् ] निकटम्; 'दिशामुपान्तेषु ससर्ज दृष्टिम्—इति कुमारसम्भवे (३-६९) । 'उपान्तवानीरगृहाणि दृष्ट्वा—इति रघुवंशे (१६-२१) । 'शय्योपान्तनिविष्टसस्मितमुखी—इति साहित्यदर्पणे । ६९३

उपायनम् क्ली. [ उपेयते उपाय्यते वा । उप+इण् वा अय्+ल्युट् ] उपहारः; उपढौकनम्; 'तस्योपायनयोग्यानि रत्नानि सरितां पतिः—इति कुमारसम्भवे (२-३७) । व्रतादिप्रतिष्ठा; समीपगमनम्; 'उपायन उषसां गोमतीनाम्—इति ऋग्वेदे (२।२।८।२) । ४३४

उपालम्भः पुं. [ उप+आ+लभ्+घञ्, 'उपसर्गात् खलघ्नोः' इति नुम् ] दुर्वाक्यम्; स च गुणाविष्करणेन स्तुतिपूर्वकः, यथा—'महाकुलस्य भवतः किमिदमुचितमिति ।' निन्दापूर्वकश्च, यथा—'बन्धकीसुतस्य भवतस्तदिदमुचितम्—इति भागुरिः । 'उपालम्भो नाम हेतोर्दोषवचनं यथा पूर्वमहेतवो हेत्वाभासा व्याख्याताः—इति चरकः । 'उचितस्तदुपालम्भः—इति उत्तरचरिते । १५४

उपासङ्गः पुं. [ उपासज्यन्ते शरा अत्र । उप+आङ्+सञ्ज्+घञ् ] तूणीरः; 'इमे च कस्य नाराचा सहस्रं लोमवाहिनः । समन्तात् कलघीताग्रा उपासङ्गे हिरण्मये—इति महाभारते । 'तरकस' इति भाषा । ४६५

उपासना स्त्री. [ उप समीपे आसन्नमिति । उप+आस्+युच्+टाप् ] सेवा; वरिवस्या; शुश्रूषा; परिचर्या; उपासनम्; 'न विष्णुपासना नित्या वेदेनोक्ता तु कुत्रचित् । न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ॥ गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदेः समीरिता । यया विना त्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा ॥ तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि । गायत्रीमात्रनिष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात्—इति देवीभागवतम् । १२९

उपास्तिः स्त्री. [ उप+आस्+क्तिन् ] सेवा; 'मुक्तिर्नर्तेऽच्युतोपास्ति भूतं भूतमभि प्रभुः—इति मुग्धबोधव्याकरणम् । १२९

उपेन्द्रः पुं. [ इन्द्रमुपगतः; कश्यपादृषेः अदितौ वामना-

वतारे इन्द्रस्यानन्तरं जातत्वात् तथात्वम् ] विष्णुः; 'ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं स्थापितो गोभिरिश्वरः । उपेन्द्र इति कृष्ण त्वां गास्यन्ति दिवि देवताः—इति हरिवंशे । २३

उभयव्यञ्जनम् क्ली. [ उभयोः स्त्रीपुरुषयोः व्यञ्जनं चिह्नं यस्य ] पोटा; वमश्वादिचिह्नवती स्त्री । ४३०

उभयः त्रि. [ उभौ अवयवौ अस्य । उभ+तयप् ] युगलम्; 'पूजितं हाशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति । अपूजितं तु तद्भक्तमुभयं नाशयेद्विदम्—इति मनुः (२-५५) । ३२४

उमा स्त्री. [ उ भो, मा तपस्यां कुर्वति, 'उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम—इति कुमारोक्तेः । यद्वा ओर्हरस्य मा लक्ष्मीरिव । उं शिवं माति मिमीते वा । 'आतोऽनुपसर्गेति' क, अजादित्वात् टाप् । अवति ऊयते वा, उङ् शब्दे, 'विभाषो तिलमाषोमेति' निपातनाद् मक् ] दुर्गा; 'उमामुखे विम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि—इति कुमारसम्भवे (३-६७) । अतसी (५८२); कीर्तिः; हरिद्रा; कान्तिः; शान्तिः; 'यतो हि तपसे पुत्रि वनं गन्तुं च मेनका । उमेति तेन सोमेति नाम प्राप तदा सती—इति कालिकापुराणे । १६

उमापतिः पुं. [ उमायाः पतिः ] शिवः; 'तप्यते तत्र भगवान् तपो नित्यमुपापतिः—इति महाभारते । ११

उम्यम् क्ली. [ उमाया अतस्या हरिद्राया वा क्षेत्रम् । उमा+ 'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति यत् ] औमीनम्; अतसीक्षेत्रम्; हरिद्राक्षेत्रम् । १६३

उरगः पुं. [ उरसा गच्छतीति । 'उरसौ लोपश्चेति' ड-प्रत्ययः सकारलोपश्च ] सर्पः; 'अङ्गुलीवोरगक्षता—इति रघुवंशे (१-२८) । सीसकम् । ११९, ६४०

उरणः पुं.-स्त्री. [ ऋ+ 'अर्तः कपुजुच्च' इति क्युच् उत्वं रपरत्वं च ] मेघः; 'य उरणं जघान नवचरव्वांसं नवतिञ्च बाहून्—इति ऋग्वेदे (२।१।४।४) । 'उत्सृष्टावुरणो दृष्ट्वा राजा गृह्यगतो गृहम्—इति हरिवंशे । मेघः । २७९

उरभ्रः पुं.-स्त्री. [ उर कठोरं भ्रमति । भ्रमु चलने, 'अन्येभ्योऽनीति' ड, पृषोदरादित्वात् साधुः ] मेघः । २७९

उररी अब्य. [ व्ये+बाहुलकात् ररीक् सम्प्रसारणञ्च ]

विस्तारः; स्वीकारः; अङ्गीकारः 'इति; काल्पनिक-  
भेदमुररीकृत्य'—इति साहित्यदर्पणे । ८८५

उरश्छदः पुं.— [ उरो वक्षःस्थलं छाद्यतेऽनेनेति । उरस्+  
छद्+थ ] कवचः; 'काञ्चनोरश्छदाश्चेमे पिशाच-  
वदनाः खराः—इति रामायणे । ४५९

उरः [ स् ] क्ली. [ इयति, ऋ गतौ, 'अर्तेरुच्च' इति असुन्  
उरादेशः किञ्च ] वक्षःस्थलं; वंक्षः; वत्सं; क्रोडं;  
हृत्; भुजान्तरम्; 'कौस्तुभाख्यमपां सारं विश्राणं  
बृहतोरसा'—इति रघुवंशे (१०-१०) । 'उरसि  
सरसपादलेखाप्रतिमतयानुययावसंशयानः—' इति माघे  
(७-२२) । त्रि. उत्तमः; श्रेष्ठः । ५२७

उरसिजः पुं. [ उरसि वक्षःस्थले जातः । उरस्+जन्+  
ड, सप्तम्या अलुक् ] स्त्रीस्तनः; 'परिपस्थुशिरे चैनं  
पीनैरुरसिर्जमुहुः'—इति रामायणे । ५२६

उरः त्रि. [ उर्णोति, ऊर्णु + 'महति ह्रस्वश्च' इति कु,  
नुलोपो ह्रस्वश्च ] महान्; वडं; विपुलं; विशङ्कटं;  
पृथु; वृहत्; विशालं; पृथुलं; महत्, विस्तीर्णं, विकटम्;  
'विस्तीर्णं ददृशतुरम्बरप्रकाशं तेषामाधं निधिमुरुमम्भसा-  
मनन्तम्'—इति महाभारते । बहुलम्; 'तुविजिता  
उरुक्षयाम्'—इति ऋग्वेदे 'उरुक्षयो बहुनिवासे' इति  
भाष्यम् । ६९९

उर्वरा स्त्री. [ ऋच्छतीति, ऋ+अच्+टाप्, उरुणाम्  
अरा । यद्वा उर्व्यते, उर्व्+घं, उर्वं राति, उर्व्+रा+  
निवप् ] सर्वसस्याढ्या भूमिः; 'यथा वीजमुर्वरायां कृष्टे  
कालेन रोहति'—इति अथर्ववेदे । भूमिमात्रम्; अप्सरो-  
भेदः; 'कलानिधिगुणनिधिः कर्पूरतिलकोर्वरा'—इति  
काशीखण्डे । १५८

उर्वशी स्त्री. [ उरुन् महतोऽपि अश्नुते व्याप्नोति वशी-  
करोति इति यावत्, यद्वा ऊर्षं नारायणस्य महर्षेरु-  
प्रदेशम् अश्नुते योनित्वेन व्याप्नोतीति । उरु+अश्+क,  
गौरादित्वान् डीप् ] स्वर्गवेश्या; 'ओमित्यादेशमादाय  
नत्वा तं सुरवन्दिनः । उर्वशीमप्सरःश्रेष्ठां पुरस्कृत्य  
दिवं ययुः'—इति भागवते । नदीभेदः; उर्वशीतीर्थम्;  
'उर्वशीं कृत्तिकायोगे गत्वा चैव समाहितः । लौहित्ये  
विधिवत् स्नात्वा पुण्डरीकफलं लभेत्'—इति महा-  
भारते । ८८

उर्वी स्त्री. [ उर्णोति इति । ऊर्णु+ 'महति ह्रस्वश्च'

इति कु, नुलोपो ह्रस्वश्च । 'वोतो गुणवचनादिति'  
डीप् ] पृथिवी; 'हिरण्मयोर्वीरुहवल्लितन्तुभिः—  
इति माघे (१-७) । 'अनन्यशासनामूर्वी' शशाङ्क-  
पुरीमिव'—इति रघुवंशे (१-३०) । १५६

उल्पः पुं.— क्ली. [ वलतीति, वल्+ 'वित्पिपिष्टपविशि-  
पोलपाः' इति कप सम्प्रसारणं च ] विस्तीर्णा लता;  
सा तु त्रपुपीद्राक्षाताम्बुल्यादिः; उल्पः; वीरुत्;  
गुल्मिनी; प्रताना; प्रतानिनी; वीरुधा- वरुत्; शाखा-  
पत्रप्रचययुक्तलता । १९०

उल्पः पुं.—तृणविशेषः; उलूकं; सूच्यग्रः; स्थूलकः;  
दर्व्यः; जूर्णख्यः; खरच्छदः; उल्पः । १९१

उलूकः पुं. [ उचतीति, उच् समवाये, 'उलूकादयः' इति  
साधुः । यद्वा वलते, उलूकादित्वाद् वलेः सम्प्रसारणम्  
ऊकश्च ] पेचकपक्षी; तामसः; धूकः; दिवान्वः;  
कौशिकः; कुशिः; नवतञ्चरः; निशाटः; काकारिः;  
घोरदर्शनः; 'त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः—  
इति माघे (११-६४) । 'श्वगोघ्नो लूककाकांश्च शूद्र-  
हव्यान्नतञ्चरेत्'—इति मनुः (११-३१) । इन्द्रः;  
'उलूकाविन्द्रेपेचकौ' इत्युणादिवृत्तिः । भारतयोषी;  
शकुनिपुत्रः; 'आहूयोपह्वरे राजश्लूलकमिदमन्नवीत् ।  
उलूक गच्छ कैतव्य ! पाण्डवान् सहसोमकान्'—इति  
महाभारते । विश्वामित्रपुत्रः; 'उलूकोऽय मुद्गलश्च  
तथपिः सैन्धवायनः—' इति भारते । त्रि. उलूकदेश-  
वासिनि; 'उलूकानुत्तरांश्चैव तांश्च राज्ञः समानयत्'  
—इति महाभारते । २४६

उल्का स्त्री. [ ओपतीति, उप् दाहे 'शुकवल्कोल्काः' इति  
उणादिसूत्रेण कप्रत्ययात् साधुः ] तेजःपुञ्जः; अग्नि-  
शिखा; अग्निः; 'लक्ष्मीः सम्पूज्यतां लोका उल्काभि-  
श्चापि वेष्टयताम्'—इति तिथितत्त्वे । आकाशात् पति-  
तोऽग्निः; 'तञ्चेद्वायौ सरति सरलत्कन्धसञ्जघट्टजन्मा,  
वाधेतोल्कादापितचमरीवालभारो दवाग्निः—इति  
पूर्वमेघे (५४) । 'उल्कानिर्घातकेऽंश्च ज्योतींष्युच्चा-  
वचानि च'—इति मनुः (१-३८) । ६७

उल्मुकम् क्ली.—पुं. [ ओपतीति, उप् दाहे, 'उल्मुक-  
दवीति' निपातनाद् वातोः पत्य लः मुकप्रत्ययश्च ]  
अङ्गारः; 'अन्वाहायपचनादुल्मुकमादाय'—इति शत-  
पथब्राह्मणे (६।२।७) । वृष्णिवंशीयराजा; 'उल्मुको

निशठश्चैव वीरश्चाङ्गावहस्तथा । वृष्णयो निखिला-  
श्चान्ये समाजमुर्महारथाः—इति महाभारते । ६७

उल्लसनम् क्ली. [ उल्लः ऊर्णा तद्वत् कसनं विकसनम् ]  
रोमाञ्चः । ६५१

उल्लसनकम् क्ली. [ उल्लस + स्वार्थे कन् ] रोमा-  
ञ्चः । ६५१

उल्लाघः त्रि. [ उत् + लाघ्, 'गत्यर्थेति' क्त, निपातनात्  
सिद्धम् ] गदात्रिगतः; नीरोगः; शुचिः; दक्षः; कृष्णः;  
मरीचः; हृष्टम् । ] ३८०

उल्लापः पुं. [ उत् + लप् + घञ् ] शोकरोगादिना ध्वनि-  
विकारः; काकुवाकः; 'खलोल्लापाः सोढाः कथमपि  
तदारोधनपरैः—इति भर्तृहरिः । १५०

उल्लोचः पुं. [ ऊर्ध्वं लोचति । उत् + लोच् + अञ् । यद्वा  
ऊर्ध्वं लोच्यते, लोच् + घञ्, कुत्वं तु 'निष्ठायामनिट्'  
इत्यत्र अनिट् इति निषेधान्न । ] चन्द्रातपः; वितानम् ।  
'तम्बू' इति भाषा । ३१०

उल्लोलः पुं. [ उल्लोडयतीति, लोड् उन्मादे, णिच् +  
पचाद्यच्, डलयोरैक्याद् डस्य लः ] महारङ्गः; कल्लो-  
लः । 'लहर' इति भाषा । ६५३

उल्वम् क्ली. [ उल्लीयते इति । उत् + लीड् श्लेषणे,  
'उल्वादयश्च' इति साधु, षूषो० वत्वम् ] जरायुः;  
कललः; गर्भवेष्टनचर्म; 'यथोल्वेनावृतो गर्भस्तथा  
नेनेदमावृतम्' इति गीतायाम् (३-३८) । 'जातमात्रं  
विशोष्णोल्वाद् बालं सैन्धवसर्पिषा । प्रसूतिक्लेशितं  
चानु बलात्तैलेन सेचयेत्'—इति चाग्भटः । ५००

उल्वणम् त्रि. [ उत् + वण् + अच्, षूषोदरादित्वात् साधु ]  
व्यक्तः; स्पष्टम्; 'श्लेषोल्वणा महामूला घना मन्दरुजः  
सिताः' इति 'हेतुलक्षणसंसर्गाद् विद्याद् दन्तोल्वणानि  
च'—इति च चाग्भटः । प्रकाशः; निर्वाणः; 'तस्यासी-  
दुल्वणो मार्गः पादपरिव दन्तिनः'—इति रघुवंशे  
(४-३३) । ७४४

उशना [ स् ] पुं. [ वश् कान्तो + वशेः कर्त्तृसिः' इति  
कर्त्तृसि, ग्रह्यादित्वात् सम्प्रसारणम् ] 'शुक्राचार्यः;  
द्वैतगुरुः; 'अध्यापितस्योशनसापि नीतिं प्रयुक्तराग-  
प्रणिधिद्विषस्ते'—इति कुमारसम्भवे' (३-६) ।  
'पीरोहित्येन याज्यत्वे काव्यन्तुशनसं परे'—इति महा-  
भारते । ४८

उशीरः पुं.—क्ली. [ वश् कान्तो + 'वशः कित्' इति ईरन्,  
सम्प्रसारणम् ] वीरणमूलम्; अभयः; नलदं; सेव्यम्;  
अमृणालं; जलाशयः; लामज्जकं; लघुलयम्; अवदाहम्;  
इष्टकापयम्; उपीरं; मृणालं; लघु; लयम्; अवदानम्;  
इष्टं; कापयम्; अवदाहेष्टकापयम्; इन्द्रगुप्तं; जल-  
वासं; हरिप्रियं; वीरं; वीरणं; समगन्धिकं; रणप्रियं;  
वीरतरुः; शिशिरं; शीतमूलकं; वितानमूलकं; जल-  
मेदं; सुगन्धिकं; सुगन्धिमूलकं; कम्बु; उशीरकम्;  
'वीरणस्य तु मूलं स्यादुशीरं नलदं च तत् । अमृणालं  
च सेव्यं च समगन्धिकमित्यपि ॥ उशीरं पाचनं शीतं  
स्तम्भनं लघु तित्तकम् । मधुरं ज्वरहृद्धान्तिमदनुत्कफ-  
पित्तहृत् ॥ तृष्णास्रविषवीसर्पदाहकृच्छ्रत्रणापहम्'—इति  
भावप्रकाशे । ६२२

उषर्बुधः पुं. [ उषसि प्रातर्बुध्यते प्रकाशते । उषस् + बुध् +  
क ] अग्निः; रक्तचित्रकः; वृषविशेषः । ६२

उषाः [ स् ] स्त्री.—क्ली. [ ओषति नाशयत्यन्वकारम् ।  
उष् + 'उषः क्तिदिति' असि ] प्रत्यूषः; 'आसी-  
दासन्ननिर्वाणः प्रदीर्घाचिरवोषसि'—इति रघुवंशे  
(१२-१) । 'पुनरुषसि विविक्तमतिरिश्वावचूर्ण्य'—  
इति माघे (१११७) । १११

उषारमणः पुं. [ उषाया रमणः ] उषापतिः; अनिरुद्धः;  
कामदेवपुत्रः । ३४

उशीरः पुं.—क्ली. [ उष् + कीरच् ] उशीरः; वीरणमू-  
लम् । ६२२

उष्ट्रः पुं. [ उष् + 'उषिखनिभ्यां कित्' इति ष्ट्रन् किञ्च ]  
पशुविशेषः; क्रमेलकः; मयः; महाङ्गः; दीर्घगतिः;  
बली; करभः; दासेरकः; घूसरः; लम्बोष्ठः; खणः;  
महाजङ्घः; जवी; जाङ्घिकः; दीर्घः; शृङ्खलकः;  
महान्; महाश्रीवः; महानादः; महाध्वगः; महापृष्ठः;  
बलिष्ठः; दीर्घजङ्घः; श्रीवी; घूस्रकः; शरभः; क्रमेलः;  
कण्टकाशनः, भोलिः, बहुकरः, अश्वगः; मरुद्विपः;  
वक्रश्रीवः; वासन्तः; कुलनाशः; कुशनामा; मरुप्रियः;  
द्विककुत्; दुर्गलङ्घनः; भूतघ्नः; दासेरः; दीर्घश्रीवः;  
केलिकीर्णः; 'नाघीयीताश्वमारुढो न रयं न च हस्तिनम् ।  
न नावं न खरं नोष्ट्रं नेरिणस्यो न यानगः'—इति मनुः  
(४-१२०) । 'उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं तु कामतः'—  
इति मनुः (११-२९) । दाहुरयः । २८०

उष्ट्रिका स्त्री. [ उष्ट्रस्याकृतिरिवावयवो यस्याः; उष्ट्रस्य स्त्री वा ] मृत्तिकाभाण्डभेदः; 'धूर्भङ्गविक्षेपविदारितो-ष्ट्रिका'—इति माघे (१२-१६) । उष्ट्रभार्या; उष्ट्री; वृश्चिकालीवृक्षः । ७९०

उष्णः वि. [ उष् दाहे + 'इणपिञ्जिदीडुष्यविभ्यो नक्' इति नक् ] अशीतः; 'यावदुष्णं भवत्यन्नं यावदशनाति वाग्यतः'—इति मनुः (३-२३७) । निरलसः; उत्साही; दक्षः; चतुरः; पेशलः; पटुः; सूत्यानः; क्ली-युं. ग्रीष्म-द्वतुः; ग्रीष्मः; उष्मकः; निदाघः; उष्णोपगमः; तपः; आतपः; 'उष्णे हैमे वसन्ते कामं ग्रीष्मे तु शीतलम्'—इति सुश्रुते । 'नोष्णं न शिशिरस्तत्र न वायुर्न च भास्करः'—इति महाभारते । अग्निः; सूर्यः; 'उष्णे वर्षति शीते वा भारते वाति वा भृशम्'—इति मनुः (११।११३) । पलाण्डुः । ४०

उष्णिफा स्त्री. [ अल्पमन्नमस्याम् । 'ब्राह्मणकोष्णिके संज्ञायामिति' कन् । निपातनादन्नशब्दस्योष्णादेशः ] यवागुः; 'लप्ती', 'हलुवा' इत्यादि भाषा । ३२०

उष्णीषः पुं-क्ली. [ उष्णमीपते हिनस्ति । उष्ण + ईप् गति-हिसादर्शनेषु । 'इगुपधेति' क । शकन्वादिः ] किरीटः; 'विशीर्णमलिनोष्णीषः प्रकीर्णांस्वरमूर्द्धजः'—इति महाभारते । शिरोवेष्टः (७९९) ; 'पाप' इति भाषा । 'उष्णीषं कान्तिकृत् केश्यं रजोत्रातकफापहम् । लघु चेच्छस्यते यस्माद् गुह्यपिताक्षिरोगकृत्'—इति भाव-प्रकाशः । चिह्नान्तरम् । ५६५

उस्रः पुं. [ वसु + 'स्फायितञ्चिचवञ्चिचक्षिफति' रक् ] रश्मिः; 'शरैरुस्रैरिवोदीच्यानुद्धरिष्यन् रसानिव'—इति रघुवंशे (४-६६) । वृषः; वृषभः; 'वन्वन्क्रत्वान्तन्वो-स्रःपितेव'—इति ऋग्वेदे 'उस्रः वृषभः'—इति भाष्यम् । लताभेदः; सूर्यः; 'प्रमित्रासो न ददुरस्रो अग्रे'—इति ऋग्वेदे (३।५८।४) 'वसति नभसीत्युस्रः सूर्यः'—इति भाष्यम् । अश्विनीपुत्री; 'अनय उस्रा जरन्ते प्रतिवस्तो-रश्विनो'—इति ऋग्वेदे (४।४५।५) । ३९

उस्त्रा स्त्री. [ उस्र + टाप् ] अर्जुनी; सुरभिः; गीः; उपचिया; 'गाय' इति भाषा । २६८

ऊ

ऊधः [ स् ] क्ली. [ उन्द + असुन् + 'ऊधसोऽनद्धिति' निदेशाद् ऊधादेशः ] आपीनम्; 'घन' इति भाषा ।

'मण्डूकनेत्रां स्वाकारां पीनोधसमनिन्दिताम्'—इति महाभारते । 'यदैव स्त्रियै स्तनावाप्यायेते ऊधः पशूनाम्'—इति शतपथब्राह्मणे (२।५।१।५) । २७१

ऊधस्यम् क्ली. [ ऊधसि भवम् । ऊधस् + यत् ] दुग्धम्; 'ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुम्'—इति रघु-वंशे (२-६६) । २७४

ऊरुधः पुं. [ ऊरोर्जातः । ऊरु + 'शरीरावयवाद् यदिति' यत् । वैश्यस्य ब्रह्मणः ऊरोर्जातत्वात् तथात्वम् ] वैश्यः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः । ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति यजुषि (३।१।११) । ५७०

ऊरुः पुं. [ ऊर्णयते आच्छाद्यते इति । ऊर्णु + 'ऊर्णोतिर्नु-लोपः' इति कर्मणि 'कु नुलोपश्च ] जानूपरिभागः; सविथः; 'भुवनत्रितये न विभति तुलामिदमूरुयुगं न चमूर्द्धशः'—इति साहित्यदर्पणे । 'भुजमूर्द्धोर्वाहुल्या-देकोऽपि घनदानुजः'—इति रघुवंशे (१२-८८) । 'लोकानां तु विवृद्धचर्यं मुखवाहृरुपादतः'—इति मनुः (१-३१) । 'जाघ' इति भाषा । ५१५

ऊरुसन्धिः पुं. [ उर्वोः संधिः ] वङ्क्षणः; कट्यङ्गधोः संधिः । ५२३

ऊर्जः पुं. [ ऊर्जयति उत्साहयति जिगीषून् इति । ऊर्ज् + णिच् + अच् ] कार्तिकमासः; उत्साहः (७७९); बलम्; 'वसिष्ठा हि मिहेष्य वस्त्राण्यूर्जां पते'—इति ऋग्वेदे (१।२६।१) 'ऊर्जां बलपराक्रमादीनाम्' इति भाष्यम् । प्राणनः; वीर्यम्; 'पूजनं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति'—इति मनुः (२।५५) । यस्मात् पूजितमन्नं सामर्थ्यं वीर्यं च ददाति—इति कुल्लूकभट्टः । कान्तिकनामसंवत्सरः; स्वारोचिपस्य मनोः पुत्रभेदः; 'प्रथितश्च नभस्यश्च नभ ऊर्जस्तथैव च । स्वारो-चिषस्य पुत्रास्ते मनोस्तात महात्मनः'—इति हरिवंशे (५।१४) । क्ली. [ ऊर्ज + षच् ] जलम्; 'नभ ऊर्ज इषे ऐष्याः पतये यन्नरैतसे । तृप्तिदाय च जीवानां नमः सप्रेरसात्मने'—इति भागवते । स्त्री. हिरण्यगर्भ-कन्या; 'हिरण्यगर्भस्य सुता ऊर्जा नाम सुतेजसः'—इति हरिवंशे । ११४

ऊर्णनाभः पुं. [ ऊर्णैव तन्तुर्नाभौ यस्य । यद्वा मृदुत्वाद्गुणैव नाभिर्यस्य । 'नाभेरुपसहृद्यानभिर्यच्' । 'दयापोरिति'

ह्रस्वः] कीटविशेषः; लूता; तन्तुवायः; मर्कटकः; ऊर्णनाभिः; 'मकड़ी' इति भाषा । 'नाचारेण विना सृष्टिरूर्णनाभेरपीष्यते । न च निःसाधनः कर्ता कश्चित् सृजति किञ्चन ।' धृतराष्ट्रपुत्रभेदः; 'ऊर्णनाभः सुनाभश्च तथा नन्दोपनन्दकौ'—इति महाभारते । दैत्यविशेषः; 'सूक्ष्मश्चैव निचन्द्रश्च ऊर्णनाभो महागिरिः'— इति हरिवंशे । २५६

ऊर्णनाभिः पुं. [ ऊर्णावत् नाभिः यस्य ] मर्कटकः; 'आत्मशक्तिमवष्टभ्य ऊर्णनाभिरिवाक्लमः'—इति प्राग्वते (२।५।५) । २५६

ऊर्णायुः पुं. [ ऊर्णा अस्यास्तीति । ऊर्णा + युस् ] मेषलोमकम्बलः; मेषः; ऊर्णनाभः; क्षणभङ्गः; गन्धर्वविशेषः; 'ऊर्णायुश्चित्रसेनश्च हाहा हृहश्च भारत !'—इति हरिवंशे । ५५१

ऊर्ध्वः त्रि. [ उत् + हा + ड, आदिवर्गस्य ऋरादेशः, पृषोदरादित्वम् ] उपरिष्ठात्; उपरि; 'कुर्वंतीष्पलेस्तुङ्गैर्भुवनं नीचमूर्द्ध्वजैः । तस्या वनालीरन्देति चित्रानागचमूर्द्ध्वजैः'—इति कीचकवधयमकम् । 'पद्मानि यस्याग्रसरोरहाणि प्रबोधयत्यूर्द्ध्वमुखैर्मयूकैः'—इति कुमारसम्भवे (१-१६) । दण्डवत्स्थितः (३८६); 'आसीन ऊर्ध्वः प्रह्लो वा नियमो यत्र नदृशः । तदासीनेन कर्तव्यं न प्रह्लेन न तिष्ठता'—इति छन्दोगपरिशिष्टात् । आसीनः; उपविष्टः; 'ऊर्ध्वो दण्डवत् स्थितः प्रह्लोऽवनतपूर्वकायः'—इति श्राद्धतत्त्वम् । १०२

ऊर्ध्वन्धमः त्रि. [ ऊर्ध्वम् + दम् + अच् ] ऊर्ध्वस्थः; ऊर्ध्वङ्गमः । ३८६

ऊर्ध्वमुखः त्रि. [ ऊर्ध्वं मुखं यस्य, ऊर्ध्वं मुखं वा ] प्रकृते ध्वजस्य उपरितनभागः; उच्चूलः; ऊर्ध्वकोटिस्यगुच्छकः । ४५८

ऊर्ध्वलोकः पुं. [ ऊर्ध्वः उपरिस्थो लोकः ] स्वर्गः; 'रक्षांस्यखादयदनाययदूर्ध्वलोकमाक्रन्दयत्कपिभिराययदाशुरामः'— इति मुग्धवोधव्याकरणे । ३

ऊर्मिः स्त्री- पुं. [ ऋच्छतीति । ऋ गती, 'अर्ते लृच्च' इति उणादिसूत्रेण मि, अर्तेरुरादेशश्च ] तरङ्गः; 'तमाधृतध्वजपटं व्योमगङ्गोर्मिवायुभिः'—इति रघुवंशे (१२-८५) । प्रकाशः; वेगः; मङ्गः; वस्त्रसङ्कोच-

रेखा । वेदना, पीडा, उत्कण्ठा, बुभुक्षादयः षट्, यथा—'बुभुक्षा च पिपासा च प्राणस्य मनसः स्मृती । शोकमोही शरीरस्य जरामृत्यू षडूर्मयः ॥' 'शोकमोही जरामृत्यू क्षुत्पिपासे षडूर्मयः'—इति श्रीधरी । अश्वगतिभेदः; 'पङ्कतीकृतानामश्वानां नमनोन्नमनाकृतिः । अतिवेगसमायुक्ता गतिरूर्मिरुदाहृता'—इति यादवः । 'तूर्णं पयोधर इवोर्मिभिरापतन्तः'—इति माघे (५।४) । ६५३

ऊर्मिका स्त्री. [ ऊर्मिरिव । 'इवे प्रतिकृताविति' कन् । ऊर्मिं प्रकाशं कायतीति वा । 'आतोनुपेति' क ] अङ्गुलीयकम्; अङ्गुलिमुद्रा; उत्कण्ठा; मृङ्गनादः; वस्त्रमङ्गः; वीचिः । ५५९

ऊर्मिमान् [ तु ] त्रि. [ ऊर्मिरस्यास्तीति । ऊर्मि + मतुप् ] वक्रः; तरङ्गयुक्तः; 'दीर्घेषु नीलेष्वथ चोर्मिमत्सु जग्राह केशेषु नरेन्द्रपत्नीम्'—इति महाभारते । ६९६

ऊष्णम् क्ली. [ ऊष् + ल्युट् ] मरिचम्; 'मरिचं वेल्लजं कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम्'—इति भावप्रकाशः । शुष्ठी; 'शुष्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् । ऊष्णं कटुमद्रं च शृङ्गवेरं महौषधम्'—इति भावप्रकाशः । पिप्पलीमूलम्; 'ग्रन्थिकं पिप्पलीमूलमूषणं चटकाशिरः'—इति भावप्रकाशः । ६१६

ऊषरः त्रि. [ ऊष + र ] क्षारभूमिः; ऊषवान्; 'तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं वीजमिवोषरे'—इति मनुः (२।११२) । 'ऊषरा मृतं पित्तं कोपयेत्', 'पित्तमूषरा'—इति वैद्यके । १५८

ऊष्मा [ न् ] पुं. [ ऊष् + मनिन् ] उतापः; वाष्पः; उष्मा । ६७

ऊहः पुं- स्त्री. [ ऊह् + घञ् ] पूर्वाप्राप्तस्य उत्क्षेपणम्; अध्याहारः; तर्कः; वितर्कः; ब्रूहः; व्यूहः; वितर्कणम्; अध्याहरणम्; ऊहनं; प्रतर्कणम्; अपूर्वोत्प्रेक्षणम्; असमवेतार्थकपदत्यागपूर्वकसमवेतार्थकपदसमभिव्याहारकरणम्; साकाङ्क्षवाक्यस्य पदान्तरेण आकाङ्क्षापूरणम्; ऊहनम्; आरोपः; 'इमे मनुष्या दृश्यन्ते ऊहापोहविशारदाः । ज्ञानविज्ञानसम्पन्नाः प्रजावन्तोऽप्य कोविदाः'—इति महाभारते (१३।१४५।४३) । परीक्षणं; सिद्धिभेदः । १०



ऋ

ऋणम् क्ली. [ ऋच् + स्तुती + पातृत्विवचिर्-  
चिर्निगिभ्यस्यक् ] इति थक् ] घनम्; 'हिरण्यं द्रविणं  
घुम्नं विवममृच्यं घनं वसु'—इति शब्दार्णवः । स्वर्णम्;  
'पुत्रहीनस्य ऋक्षियनः'—इति याज्ञवल्क्यः । दायभागः;  
'ऋचयमूलं हि कुटुम्बम्'—इति दायभागे पितृघन-  
विभागकालेऽभिहितम् । ८०

ऋक्षम् क्ली.—पुं. [ ऋष् + सच्, 'स्तुवश्चिकृत्युषिभ्यः  
कित्' इति कित् ] नक्षत्रम्; 'पूर्वा सन्ध्यां जपस्तिष्ठेत्  
सावित्रीमार्कदर्शनात् । पश्चिमान्तु समासीनः सम्य-  
गृक्षविभावात्'—इति मनुः (२-१०१) । राशिः;  
'प्रयथावातिथेषु वसन्नृषिकुलेषु सः । दक्षिणां दिशमृक्षेषु  
दार्पिकेष्विव भास्करः'—इति रघुवंशे (१२-२५) ।  
'मृक्षेषु नक्षत्रेषु राशिषु वा भास्कर इव'—इति  
तट्टीकायां मल्लिनाथः । ५१

ऋक्षः पुं. [ ऋक्ष् + अच् ] भल्लूकः; 'वृको मृगेभ्यं व्याघ्रोऽश्वं  
फलमूलं तु-मर्कटः । स्त्रीमृक्षः स्तोकको वारि यानान्युष्टः  
पशूनजः'—इति मनुः (१२-६७) । पर्वतविशेषः;  
'माहेन्द्रशक्तिमलयक्षकपारियात्राः सह्यः सविन्ध्य  
इह सप्त कुलाचलाख्याः'—इति सिद्धान्तशिरोमणी ।  
शोणाकवृक्षः; श्योनाकप्रभेदः; अजमीठपुत्रः; 'धूमिन्या  
स तया देव्या त्वजमीढः समेयिवान् । ऋक्षं स जनयामास  
धूमवर्णं सुदर्शनम्'—इति हरिवंशे । विदूरथस्य पुत्रः;  
'विदूरथस्य दायाद ऋक्ष एव महारथः'—इति हरिवंशे  
(३२-१०४) । अरिहस्य पुत्रः; 'अरिहः खल्वाङ्गेयी-  
मुपयेमे तुदेवां नाम तस्यां पुत्रमजीजनदृक्षम्'—इति  
हरिवंशे (९५-२४) । एतेन पुरुवंशे त्रय एव  
ऋक्षनामानो राजानः सम्भूताः । २२८

ऋक्षेशः पुं. [ ऋक्षाणां नक्षत्राणामीशः ] चन्द्रः; जाम्ब-  
वान् । ४२

ऋजु त्रि. [ अर्जयति गुणान् । अर्ज् अर्जने, 'अर्जिदृशीति'  
साधु ] अवक्रमः; अर्जिह्वः; प्रगुणः; प्राञ्जलः; सरलः;  
'उमां स पश्यन् ऋजुनैव चक्षुषा'—इति कुमारसम्भवे  
(५-३२) । 'ऋजवस्ते तु सर्वे स्युरव्रणाः सौम्यदर्शनाः'  
—इति मनुः (२-४७) । स्त्रियां डीप्पक्षे—'ऋज्वीर्द-  
धानैरवतत्य कन्धराश्चलावचूहाः कलघघरारवैः'—

इति माघे (१२-१८) । अनुकूलम्; 'ऋजुहस्त ऋजुवनिः'  
'ऋजुहस्तस्तदनुकूलहस्तः'—इति भाष्यम् । शोभनम्;  
'धारवाकेष्वृजुगायः', 'ऋजुगायः शोभनस्तुतिकः' इति  
भाष्यम् । पुं. वसुदेवपुत्रभेदः; 'ऋजुं समदर्शनं भद्रं सङ्कर्ष-  
णमहीश्वरम्'—इति भागवते (१।२।५४) । ५७

ऋणम् क्ली. [ ऋ + क्त, 'ऋणमाघमर्ष्ये' इति णत्वम् ]  
धारः; उद्धारः; पर्युदञ्चनम्; 'देवानां च पितॄणां च  
ऋषीणां च तथा नरः । ऋणवान् जायते यस्मात् तन्मोक्षे  
प्रयतेत् सदा ॥ देवानाम् अनृणो जन्तुयज्ञैर्भवति मानवः ।  
अल्पवित्तश्च पूजाभिरुपवासन्नतैस्तया ॥ श्राद्धेन प्रजया  
चैव पितॄणामनृणो भवेत् । ऋषीणां ब्रह्मचर्येण श्रुतेन  
तपसा तथा'—इति विष्णुधर्मोत्तरे । जलदुर्गमभूमिः;  
'दशाणो देशः, दशाणां नदी, उभयत्र ऋणशब्देन जल-  
दुर्गमभूमिरुच्यते'—इति मुग्धवोधे टीकायां दुर्गादांसः ।  
'ऋणशब्दो दुर्गभूमौ जले च'—इति सिद्धान्तकौमुदी ।  
अङ्कशास्त्रोक्तः कुतश्चिदपि राश्यन्तराद् वियोज्यः  
संख्यावान् पदार्थः; 'योगे युतिः स्यात् क्षययोः स्वयोर्वा,  
घनर्णयोरन्तरमेव योगः'—इति भास्कररीयवीज-  
गणिते । [ ऋणतीति, ऋण् गती, तस्मात् क ] त्रि.  
गन्ता; गमनशीलः; शीघ्रगन्ता; 'सद्यो यः स्यन्द्रो  
विपितो यवीयानृणो न तायुरतिधन्वा राट्'—इति  
ऋग्वेदे (६।१।५) । 'ऋणः शीघ्रगन्ता'—इति  
भाष्यम् । ५७२

ऋतम् क्ली. [ ऋ + क्त ] सत्यम्; 'साक्ष्येऽनृतं वदन्  
पाशैर्बध्यते वारुणैर्भृशम् । विवशः शतमाजातीस्त-  
स्मात् साक्ष्यं वददृत्तम्'—इति मनुः (८-८२) ।  
उञ्छशिलम्; 'ऋतामृताभ्यां जीवेत्तु मृतेन प्रमृतेन वा ।  
सत्यानृताभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कदाचन ॥ ऋत-  
मुञ्छशिलं ज्ञेयम् अमृतं स्यादयाचितम् । मृतन्तु याचितं  
भैक्षं प्रमृतं कर्षणं स्मृतम्'—इति मनुः (४-४, ५) ।  
जलम्; 'तन्म ऋतं पातु शतशारदाय'—इति ऋग्वेदे  
(७।१०।१६) 'ऋतमुदकम्'—इति भाष्यम् । कर्म-  
फलम्; 'ऋतं पिबन्ती सुकृतस्य लोके'—इति श्रुतिः ।  
विष्णुः; 'भगवान् वासुदेवश्च कीर्त्यतेऽत्र सनातनः ।  
स हि सत्यमृतञ्चैव पवित्रं पुण्यमेव च । शाश्वतं ब्रह्म  
परमं ध्रुवं ज्योतिः सनातनम्'—इति महाभारते  
(१।१।२५३) । सूर्यः; 'ब्रह्म वा ऋतं ब्रह्म हि मित्रे

ब्रह्म ऋतं ब्रह्म एवायुः—इति शतपथब्राह्मणे । परब्रह्म ;  
 'ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म'—इति श्रुतिः । सत्याचारः ; 'सुतो  
 मित्राय वरुणाय पीतये चारुऋताय पीतये'—इति  
 ऋग्वेदे (१।१३।७।२) 'ऋताय सत्याचाराय'—इति  
 दयानन्दभाष्यम् । रुद्रः ; 'ऋतमित्यस्य कालाग्नी रुद्र  
 ऋपिरनुष्टुप्छन्दो रुद्रो देवता रुद्रोपस्थाने विनियोगः'—  
 इति सामगानां सन्ध्यामन्त्रे । देवभेदः ; 'ऋतस्य हि  
 सुरपः सन्ति पूर्वोऋतस्य धीतिवृजिनानि हन्ति'—इति  
 ऋग्वेदे (४-२३-८) 'ऋतस्य ऋतदेवस्य'—इति  
 भाष्यम् । यज्ञः ; 'ऋतचिद्धिः सत्यम्'—इति ऋग्वेदे  
 (१।१४।५) 'ऋतस्य यज्ञस्य जलस्य वा चिद् ज्ञाता'—  
 इति सायणभाष्यम् । अग्नेऋषिभेदः ; 'ऋतं च सत्यं च'—  
 इति यजुषि (१।७।८२) । त्रि. पूजितः ; दीप्तः । १४४  
 ऋतिः स्त्री. [ ऋ + करणे क्तिन् ] वर्त्म ; कल्याणं ;  
 जुगुप्सा ; स्पर्द्धा ; [ भावे क्तिन् ] गमनम् ; अशुभं ;  
 पुरुषमेधयज्ञायदेवभेदः ; 'ऋतये स्तेन हृदयम्'—इति  
 यजुर्वेदे (३०।१३) । पुं. शत्रौ इति निरुक्तिः । ८१५  
 ऋतुः पुं. [ ऋ + अर्त्तश्च तुः ] इति तु चकारात् क्ति च ]  
 कालविशेषः ; मासद्वयं ; स तु षड्विधः—मार्गशीर्षो  
 हिषः १, माघफाल्गुनी शिशिरः २, चैत्रवैशाखौ वसन्तः  
 ३, ज्येष्ठाषाढौ ग्रीष्मः ४, श्रावणभाद्रौ वर्षाः ५, आश्विन-  
 कार्तिकौ शरत् ६ । 'शिशिरः पुष्पसमयो ग्रीष्मो वर्षा-  
 शरद्विमाः । माघादिमासयुग्मैः स्युऋतवः षट् क्रमादमी'—  
 इति भावप्रकाशः । (७९४) स्त्रीकुसुम ; रजः ;  
 पुष्पम् ; आर्तवम् ; 'ऋतुकालाभिगामी स्यात् स्वदार-  
 निरतः मदा । पर्ववजं ब्रजेद्वैनां तद्व्रतो रतिकाम्यया ॥  
 ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडश स्मृताः ।  
 चतुर्भित्तरेः साद्वेमहोभिः सद्भिर्गहितैः—इति मनुः  
 (३।४५।४६) । शिवः ; 'ऋतुः संवत्सरो मासः  
 पक्षः संह्यासमापनः—इति महादेवसहस्रनामकथने ।  
 विष्णुः ; 'ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः—  
 इति विष्णुसहस्रनामकथने । दीप्तिः ; मासः ;  
 सुवीरः । ११३  
 ऋते अव्य. [ ऋत + के ] विना ; 'वर्जनम्' 'अवेहि मां  
 प्रीतमुत्तुरङ्गमात्'—इति : रघुवंशे—(३-६३) ।  
 'अंशादृते निषिक्तस्य नीललोहितरेतसः'—इति कुमार-  
 रसम्भवे (२।५७) ।

ऋतुः पुं. [ ऋ स्वर्गो देवमातुरदितेर्वा भवति यः । ऋ +  
 भू + डु ] देवता ; 'ऋभुर्न रथ्यं नवं दधतो केतुमादिशे'—  
 इति ऋग्वेदे (१।२।१।६) । देवानामपि देवः ; 'ऋभवो  
 नाम तत्रान्ये देवानामपि देवताः । तेषां लोकाः परतरे  
 यान्यजन्तीह देवताः'—इति महाभारते । चाक्षुष-  
 मन्वन्तरे देवगणभेदः ; 'आद्याः प्रभूता ऋभवः पृथुकाश्च  
 दिवीकसः'—इति हरिवंशे । ४  
 ऋश्यः पुं.-स्त्री. [ ऋश् + क्यप् ] मृगविशेषः ; 'ऋश्यो न  
 तृष्यन्नव पानमागहि'—इति ऋग्वेदे (८।४।१०) । २३०  
 ऋषभः पुं. [ ऋप् + 'ऋषिवृषिभ्यां क्ति' इति अभच्  
 किच्च ] वृषः ; 'उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये'—  
 इति ऋग्वेदे (६।२।८।८) । कर्णरन्ध्रं ; कुम्भीरपुच्छः ;  
 उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः—'स्युत्तरपदे व्याघ्रपुङ्गवर्षभ-  
 कुञ्जराः । सिंहशार्दूलनाभाघाः पुंसि श्रेष्ठार्थवाचकाः'—  
 इत्यमरः । पर्वतविशेषः ; वराहपुच्छः ; आदिजिनः ;  
 भगवदवतारविशेषः ; 'तस्य ह वा एवं मुक्तलिङ्गस्य  
 भगवत ऋषभस्य योगमायावासनया देह इमां जगती-  
 मभिमानाभासेन चङ्क्रममाणः'—इति भागवते  
 (५।६।७) । स तु सत्ययुगे अन्नोद्भ्रसूतनाभिराजपुत्रत्वेन  
 जातः । तस्य पुत्रः जडभरतः—'अग्नीध्रसूनोर्नाभेस्तु  
 ऋषभोऽभूत् सुतो द्विजः । ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः  
 पुत्रशताद्वरः'—इति मार्कण्डेये । स्वारोचिषे मन्वन्तरे  
 ऋषिभेदः ; 'ऊर्जस्तम्बस्तथा प्राणो दत्तो लिङ्ग-  
 भस्तथा'—इति मार्कण्डेये । ऋषभसहस्रदक्षिण  
 एकाहनिष्पाद्यो यागभेदः ; 'पूर्वं ऋषभसंज्ञो  
 राज्ञः'—इति गर्गः । यज्ञतुरपुत्रो नृपभेदः ; 'एक-  
 विशस्तोमेन ऋषभो याज्ञतुर ईजे शिवतानां राजा  
 तदेतद्गाथयाऽभिगीतम्'—इति शतपथब्राह्मणे (१३।  
 ५।४।१५) । अष्टवगन्तिर्गतीषधिविशेषः ; वृषः ; ऋष-  
 भकः ; वीरः ; गोपतिः ; धीरः ; विषाणी ; दुर्दुरः ;  
 ककुष्मान् ; पुङ्गवः ; वोढा ; शृङ्गो ; धूर्यः ; भूपतिः ;  
 कामी ; रक्षप्रियः ; उक्षा ; लाङ्गूली ; गौः ; बन्धुरः ;  
 गोरक्षः ; वनवासी । 'ऋषभो वृषभो धीरो विषाणी  
 द्राक्ष इत्यपि'—इति भावप्रकाशः । सप्तस्वरान्तर्गत-  
 द्वितीयस्वरः ; 'षड्जं रौति मयूरो हि गावो नर्दन्ति  
 चर्षभम्'—इति नारदसंहितायाम् । 'स्वरमृषभं चातको  
 ब्रूते'—इति सङ्गीतदर्पणे । 'नाभिमूलाद्यदा वर्ण उत्थितः

कुष्ठे ध्वनिम् । वृषभस्येव नियाति हेलया । ऋषभः स्मृतः—इति सङ्गीतदामोदरः । 'ऋग्वेदात् षड्ज-ऋषभौ यजुषो मध्यवैवती । सामवेदात् समृद्भूती तथा गान्धारपञ्चमी—इति रत्नावल्याम् । २६३

**ऋषिः** पुं. [ ऋषति प्राप्नोति सर्वान् मन्त्रान् ज्ञानेन, पश्यति संसारपारं वा इति । ऋष् + 'इगुपधात् कित्' इति इन् किञ्च ] ज्ञानसंसारयोः पारगन्ता । शास्त्र-कृदाचार्यः; 'अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैस्त । स देवा एह वक्ष्यति—इति ऋग्वेदे (१।१।२) । रिपि-हंलादिश्च; 'विद्याविदग्धमतयो रिपयः प्रसिद्धा—इति प्रयोगात् । 'सप्त ब्रह्मर्षि-देवर्षि-महर्षि-परमर्षयः । काण्डर्षिश्च श्रुतर्षिश्च राजर्षिश्च क्रमावराः—इति रत्नकोशे । वेदः; किरणः; भृगवादिमहर्षिसन्तानः; 'भृगुर्गुरीचिरविश्च अङ्गिराः पुलहः क्रतुः । मनुर्दक्षो वशिष्ठश्च पुलस्त्यश्चेति ते दश ॥ ब्रह्मणो मनसा ह्येते उत्पन्नाः स्वयमीश्वराः । परत्वेनर्षयस्तस्माद्भू-तास्तस्मान्महर्षयः—इति मत्स्यपुराणे । ४१२

**ऋष्यः** पुं.—स्त्री. [ ऋप् यत्, निपातनात् सिद्धम् ] मृगविशेषः; 'ऋष्यशृङ्गः कथं मृग्यामुत्पन्नः काश्य-पात्मजः—इति महाभारते । 'ऋष्यस्य मृगविशेषस्य शृङ्गमिव शृङ्गं यस्य स ऋष्यशृङ्गः । 'ऋष्यो नीला-ङ्गको लोकं स दोह इति कीर्तितः—इति भावप्रकाशः । कुरुवंशीयो देवातिथिपुत्रः; 'ततश्च क्रोधनस्तस्माद् देवातिथिरमुष्य च । ऋष्यस्तस्य दिलीपोऽभूत् प्रतीपस्तस्य चात्मजः—इति भागवते (१।२।११) । २३०

## ए

**एकम्** त्रि. [ एजोति, इण् गतो, 'इणभीकापाशत्यतिम-चिभ्यः कन्' इति कन् ] केवलं; मुख्यम्; अन्यत्; 'त्वमेको ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयम्भुवः—इति मनुः (१-३) । 'एकात्पत्रं जगतः प्रभुत्वम्—इति रघुवंशे (२-४७) । 'ममात्र भावैकरसं मनः स्थिरम्—इति कुमारसम्भवे (५-८२) । आदिसंख्या; परमात्मा; विष्णुः; क्षितिः; गणेशदन्तः; शक्रचक्षुः; अग्निः; सूर्यः; देवराजः; यमः । पुं. ऐलवंशीयो नृपतिभेदः; 'धृतायोर्वंशुमान् पुत्रः सत्यायोश्च श्रुतजयः । रयश्च सुत एकश्च जयश्च तनयोऽमितः—इति भागवते

(१।१५।२) । परमेश्वरः; विष्णुः; 'एको नैकः सवः कः किम्', 'परमार्थतः सजातीयविजातीयस्वगत-भेदराहित्यादेकः—इति भाष्यम् । ७८७

**एककुण्डलः** पुं. [ एकं कुण्डलं यस्य ] बलरामः; कुबेरः । (७८८) २८

**एकतानः** त्रि. [ एकं भावरसं तनोति इति । तनु विस्तारे, कर्मण्यण् ] एकाग्रः; एकविषयासक्तचित्तः; 'ब्रह्माद्यः सुरगणा मुनयोऽथ सिद्धाः सत्सैकतानमतयो वचसां प्रवाहैः । नाराधितुं पुरुगुणैरधुनापि पिशुः किं तोष्टुमर्हति स मे हरिरुग्रजातेः ॥' [ एकस्तानो विस्तृतिर्यस्येति ] एकताले पुं. । ५३४

**एकदंष्ट्रः** पुं. [ एका दंष्ट्रा यस्य । परशुरामेण एकदन्तस्य उत्पाटनात् तथात्वम् ] गणेशः । १८

**एकदन्तः** पुं. [ एको दन्तो यस्य ] गणेशः; 'एकदा रहसि स्थितयोः शिवाशिवयोर्द्वारपालत्वम् अङ्गीकृतं गजाननेन । एतस्मिन्नन्तरे परशुरामः शिवं द्रष्टुमागतः । शिवदर्शन-व्याकुलस्यान्तर्जगमिषोर्द्वाररोधे कृते गणपतिना सह तस्य तुमुलं युद्धमभवत् । परशुरामक्षितेन परशुना च गजाननस्यैकदन्तो भग्नः । तदा प्रभृत्येव असौ एकदन्तः कथ्यते—इति ब्रह्मवैवर्ते । १८

**एकदृक्** [ श् ] पुं. [ एकं सर्वमभिन्नं पश्यति यः । एकदृश् + चित्रप्, अथवा एका दृक् यस्य । रामबाणमोक्षणेन नष्टे एकचक्षुषि काकस्य तथात्वम् ] काकः; शिवः; महादेवः; काणे त्रि. । ब्रह्मज्ञानी; [ एकमेव सर्वं ब्रह्मत्वेन पश्यति यः इति व्युत्पत्त्या ] तत्त्ववेत्ता । (एकमेव पक्षं पश्य-तीत्यर्थे) एकपक्षाश्रयी । २४५

**एकदेशः** पुं. [ एकश्चासौ देशः ] एकभागः; अवयवः; अंशः । ७४४

**एकपदम्** क्ली. [ एकं पदं पदमात्रोच्चारणकालो यस्मिन् ] तत्कालः; तत्क्षणम्; 'कथमेकपदे निरागसं जनमा-भाष्यमिमं न मन्यसे—इति रघुवंशे (८-४८) 'एकपदे तत्क्षणे—'स्यात् तत्क्षण एकपदमिति—विद्वः' इति तट्टीका । एकं प्रशस्तं पदं स्थानम्, इत्यमरोक्तेस्तथात्वम् । वैकुण्ठं; सुप्तिहन्तरूपं पदम् 'निहन्त्यरीनेकपदे य उदात्तः स्वरातिव'—इतिःःमाधे १ (२-९५) । एकं श्रेष्ठं पदं कोष्ठरूपपूजास्थानम् ऋष्यावास्तुमण्डलस्य मेककोष्ठात्मकं स्थानम्; 'इन्द्रश्चेन्द्रान्मज्जज्जोभावेकैकपदमस्थितौ—

इति देवीपुराणे । पुं. शृङ्गारबन्धविशेषः; 'पादमेकं हृदि स्थाप्य द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम् । स्तनी धृत्वा रमेत् कामी बन्धस्त्वेकपदः स्मृतः'—इति रतिमञ्जरी । वास्तुयागमण्डलैकोष्ठपूजनीयो देवभेदः; 'भृगुश्चैकपदो ज्ञेयः'—इति देवीपुराणे । एकपदविशिष्टः [ एकं पदं चरणं यस्य इति विग्रहे त्रि. ]; 'पादैर्न्यूनं शोचसि मैकपादम् आत्मानं वा वृत्रलैर्भोक्ष्यमाणम्'—इति भागवते (१।१६।२२) । एकेन पदा चरन् वृषरूपधरो घर्मो गोरूपधरो पृथ्वी रुदतो दृट्त्वोवाच—'हे भद्रे ! पादैर्न्यूनम् एकपादं मां तथा शूद्रैर्भोक्ष्यमाणमात्मानं वा शोचसि किम् ।' ७५२

**एकपदी** स्त्री. [ एकः पादो यस्याम् । 'कुम्भपदीषु चेति' निपातः । यद्वा 'संख्यासुपूर्वस्येति' पादस्यान्तलोपः । 'पादोऽन्यतरस्यामिति' डीप्, 'स्वाङ्गाच्चेति' डीप् वा, पादः पत् ] पन्थाः । २६०

**एकपष्टिः** स्त्री. [ एका यष्टिरिव ] हारविशेषः; एकावली; एकयष्टिका, 'एकलड़ा हार' इति भाषा । ५६३

**एकाग्रः** त्रि. [ एकं एकस्मिन् वा अग्रं पुरोगतं ज्ञेयमस्य ] अनन्यचित्तः; एकतानः; अनन्यवृत्तिः; एकायनः; एकसागः; एकाग्रचः; एकायनगतः; 'मनुमेकाग्रमासीनमभिगम्य महर्षयः'—इति मनुः (१-१) 'एकाग्रं विषयान्तराख्याक्षिप्तचित्तम्'—इति कुल्लूकभट्टः । 'मनश्चैकाग्रया बुद्ध्या भगवत्यखिलात्मनि । वासुदेवे समाधाय चचार ह परब्रतम्'—इति भागवते (८।१६।३) । 'तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः । उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये'—इति भगवद्गीता (६-१२) । 'एकाग्रं विक्षेपरहितं मनः कृत्वा'—इति स्वामिटीका । अनाकुलः । ५३४

**एकान्तः** त्रि. [ एकस्मिन्नेव अन्तः समाप्तिर्यस्य ] निर्जनम्; 'अथ केनापि सस्यरक्षकेण धूम्ररकम्बलकृततनुत्राणेन धनुःकाण्डं सज्जीकृत्यावनतकायेन एकान्ते स्थितम्'—इति हितोपदेशे । ७०८

**एकायनः** त्रि. [ एकम् अयनं विषयो यस्य ] एकाग्रः; एकविषयासक्तचित्तः; 'तानि हैतानि संङ्कल्पैकायनानि सङ्कल्पात्मकानि सङ्कल्पे प्रतिष्ठितानि'—इति छान्दोग्योपनिषदि (७-४-२) । एकमयनं गतियंत्र, एकमात्र-गमनयोग्यः; 'अनेनेव पथा मा वै गच्छेदिति विचार्य

सः । आस्त एकायने मार्गे कदलीपण्डमण्डिते'—इति महाभारते (३।१४।६।६६) । 'एकायनोऽग्नी द्विफलस्त्रिमलः'—इति भागवते । ५३४

**एकार्यः** त्रि. [ एकः अर्थः यस्य ] अभिन्नार्थः; तुल्यार्थः; समानार्थवाचकः । ६३१

**एकावलिः** स्त्री. [ एका आवलिः पङ्क्तिः हारविशेषः; एकयष्टिका । ५६३

**एकावली** स्त्री, [ एका श्रेष्ठा आवली माला ] एकयष्टिका; 'एकलड़ा हार' इति भाषा । अलङ्कारविशेषः; 'पूर्वं पूर्वं प्रति विशेषणत्वेन परं परम् । स्थाप्यतेऽरीह्यते वा चेत्स्यात्तदैकावली द्विधा ॥' क्रमेणोदाहरणम्—'सरो विकसिताम्भोजमम्भोजं भृङ्गसङ्गतम् । भृङ्गा यत्राससङ्गीताः सङ्गीतं सस्मरोदयम् ॥' 'न तज्जलं यत्र सुचारिपङ्कजं, न पङ्कजं तद्यद्यलीनषट्पदम् । न पट्पदोऽसौ न जुगुञ्जयः कलं, न गुञ्जितं तत्र जहार यन्मनः'—इति भट्टिः (२-१९) । 'क्वचिद्विशेष्यमपि यथोत्तरं विशेषणतया स्थापितमपोहितञ्च दृश्यते—'वाप्यो भवन्ति विमलाः स्फुटन्ति कमलानि वापीषु । कमलेषु पतन्त्यलयः करोति सङ्गीतमलिषु पदम् ॥' एवमपोहने अपि । ५६३

**एडः** त्रि. [ इलति, इल् स्वप्ने, अच्, डलयोरैक्यम् । यद्वा आ सर्वतः ईड्यते, ईड् स्तुती, घञ् ] वधिरः; एडकः; मेपः; 'श्वेडवरहापूदधारा प्राचीदं विष्णुः'—इति कात्यायनः । ६०९

**एडगजः** पुं. [ एडो मेप एव गजो यस्य, भञ्जकत्वात् ] चक्रमर्दकः; 'चक्रमर्दः प्रपुष्पाटो ददुध्नो मेपलोचनः । पश्चाटः स्यादेडगजश्चक्री पुष्पाट इत्यपि'—इति भावप्रकाशे । 'सलोमशः सैडगजः करञ्जः'—इति चरके ।

६१९

**एणः** पुं.-स्त्री. [ एति द्रुतं गच्छतीति । इ+वाहुलकाद्ण ] हरिणः; मृगविशेषः; एणकः; 'अष्टावेषस्य मांसेन रौरवेण नवैव तु'—इति मनुः (३-२६९) । 'एणः कृष्णः प्रकीर्तितः'—इति भावप्रकाशः । २३०

**एषः** पुं. [ इष्यतेऽनेनाग्निः । इन्ध्+हल्श्च' इति करणे घञ् । 'अवोदैवैश्वरश्रथहिमश्रथाः' इति घञि नलोपो गुणश्च निपातितः ] इन्धनम्; 'एध्मान् हुताशनवतः स मुनिययाचे'—इति रघुवंशे (९-८१) । ६९

**एषः** [ स् ] क्ली. [ एध्+असुन् ] इन्धनम्; 'यथैधांसि

समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुस्तेऽर्जुन'—इति भगवद्गीता  
(४-३७) । ६९

एनः [ स् ] क्ली. [ एति गच्छति प्रायश्चित्तेन । इण् +  
आगसीत्यसुन् नुडागमश्च ] पापम्; अपराधः; निन्दा;  
'एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिरेनं जगाद भूयो जगदेकनाथः—  
इति रघुवंशे (५।२३) । ६२७

एर्वाकः स्त्री. [ एरणमिति ] आ + ईर् + सम्पदादित्वात्  
क्विप् । एरं वृणोति वारयति वा । वृञ् + बाहुलकात्  
उण् ] कर्कटीभेदः; व्यालपत्रा; लोमशा; स्थूला;  
तोयफला; हस्तिदन्तफला; कर्कटी; 'एर्वाकं स्वादु  
शीतं सक्षारं कफत्रातकृत् । नार्तिपित्तकर रुच्य दीपनं  
दाहनाशनम्'—इति हारीतः । 'त्रपुषैर्वाकं स्वादु  
गुरु विष्टम्भि शीतलम् । एर्वाकं च सम्पक्वं दाहतृष्णा-  
क्लमार्तिनुत्'—इति चरकः । एलाविलः (७८); पुं.  
ऐलविलः; कुवेरः । २०९

एवण पुं. [ इष् गतो, ल्यु ] लौहमयवाणः । ४६७

एवणा स्त्री. [ इपु इच्छायाम्, ल्युट् ] इच्छा; कामना;  
पुत्र-वित्त-लोकेप्सात्रितयम्; 'कामातुरं हर्षशोकभयैप-  
पार्तं तस्मै कथं तव पतिं विमृशामि दीनः'—इति  
भागवते (७।१।३८) । ३६०

## ऐ

ऐकागारिकः त्रि. [ एकमसहायमगारं प्रयोजनमस्य ।  
'ऐकागारिकद् चौरै' इति इकट् वृद्धिश्च निपातनात् ]  
चौरः; एकागारवासी । ३३८

ऐतिह्यम् क्ली. [ इतिह उपदेशपारम्पर्यम्, तदेवा इतिह +  
'अनन्तावसथेतिहभेपजाञ् व्यः' इति स्वार्थे व्य ]  
पारम्पर्योपदेशः; इतिह; 'ऐतिह्यमनुमानं च प्रत्यक्ष-  
मपि चागमम् । ये हि सम्यक् परीक्षन्ते कुतस्तेषाम-  
बुद्धिता—इति रामायणे (५।८७।२३) । 'ऐतिह्यं नाम  
आप्तोपदेशो वेदादिः'—इति चरकः । १४७

ऐन्द्रलुप्तिकः त्रि.—केशघ्नरोगाविशिष्टः; खल्लीटः;  
खलतिः; 'गंजा' इति भाषा । ६०८

ऐन्द्री स्त्री. [ इन्द्रस्य शक्रस्य इयम् । इन्द्र + 'तस्येदम्'  
इत्यण् 'टिड्हेति' ङीप् ] पूर्वा दिक्; शची; 'वज्रहस्ता  
तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता'—इति मार्कण्डेये ।  
[ इन्द्रस्य योगेश्वर्यंशालिनो महादेवस्य पत्नी ] दुर्गा;  
अलक्ष्मीः; इन्द्रवारुणी; एला; 'इलायची' इति भाषा ।

'यष्ट्या ह्वमैन्द्री नलिनानि हूर्वा'—इति चरकः । १०१  
ऐरावणः पुं. [ इरया जलेन वणति शब्दायते । इरा + वण्,  
पचाच्च, तत इरावण एव, स्वार्थे प्रज्ञाद्यण् । यद्वा इरा  
सुरा वनमुदकं यस्मिन्; 'पूर्वपदादिति' णत्वम् । तत्र  
भवः; इरावण + अण् ] ऐरावतहस्ती; 'श्वेतैर्दन्तै-  
श्चतुर्भिस्तु महाकायस्ततः परम् । ऐरोवणो महानागोऽ-  
भवद्वज्रभृता वृतः'—इति महाभारते (१।१८।४१) । ६१

ऐरावतः पुं. [ इरा जलानि विदन्तेऽस्मिन्, मत्पु, इरावान्  
समुद्रः, तत्र भवः इति । इरावत् + अण् । समुद्रमथनो-  
स्थितत्वादस्य तथात्वम् । यद्वा इरावत्या विद्युत् अयम्,  
'तस्येदमि' त्यण् ] इन्द्रहस्ती; अभ्रमातङ्गः; ऐरावणः;  
अभ्रमुवल्लभः; श्वेतहस्तीः; चतुर्दन्तः; मल्लनागः;  
इन्द्रकुञ्जरः; हस्तिमल्लः; सदादानः; सुदामा;  
श्वेतकुञ्जरः; गजाग्रणीः; नागमल्लः; 'ऐरावता-  
स्फालनकर्कशेन'—इति कुमारसम्भवे (३-२२) ।  
'प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव'—इति रघुवंशे  
(१-३६) । पूर्वदिग्गजः (१०१); स तु इन्द्रहस्ती  
शुक्लवर्णः चतुर्दन्तः समुद्रमथनोत्थितः । नागरङ्गः;  
लकुचवृक्षः; 'ऐरावतं दन्तशठमल्लं शोणितपित्तकृत्'—  
इति सुश्रुतः । नागभेदः; इरावत्या नद्याः सप्तिकृष्टो  
देशः [ इरावती + अण् ] 'बभूव परमाश्वानामैरावतपथे  
यथा'—इति महाभारते (३।१६।३३) । क्ली.

इन्द्रस्य ऋजुदीर्घं धनुः; 'इन्द्रधनुष' इति भाषा । ६१  
ऐरावती स्त्री. [ इरा जलानि विदन्तेऽस्य, इरावान् मेघः  
तस्य इयम् । इरावत् + 'तस्येदम्' इति अण् + ङीप् ]  
विद्युत्; विद्युद्विशेषः; ऐरावतभार्या; वटपत्रीवृक्षः;  
पञ्चालदेशीय नदीविशेषः; अधुना 'रावी' इति ख्याता ।  
उत्तरमार्गे नक्षत्रविशेषाणां संज्ञाभेदः; 'पुण्याश्लेषा  
तयादित्या वीची चैरावती स्मृता ।' ६०

ऐसविलः पुं. [ इलविलाया अपत्यं पुमान् । इलविल +  
अण् ] इलविलापुत्रः; कुवेरः; ऐडविडः; ऐडविलः;  
ऐलविलः; एलविलः । ७८

## ओ

ओक्म् क्ली. [ उचेरिगुपधलक्षणं के गुणः कुत्वं च 'ओक्  
उचः के' इति निपस्यते ] गृहम्; आश्रयः; पुं. पत्नी;  
वृषलः । २९७

**ओकः** [ स् ] क्ली. [ उच्यते समवैति अस्मिन् । उच् + असुन्, गुणः, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम् ] आश्रयः; गृहम्; 'जलीका अथ भल्लुके'—इति अमरकोषः । 'सप्तर्षीणां तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम्'—इति विष्णुपुराणम् (१।६३७) । २९७

**ओषः** पुं. [ उच् समवाये + घञ्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] समूहः; द्रुतनृत्यगीतवाद्यं; जलवेगः; 'रविपीतजला तपात्यये पुनरोषेन हि युज्यते नदी'—इति कुमारसम्भवे (४-४४) । परम्परा; उपदेशः । ६८६

**ओङ्कारः** पुं. [ ओम् + कारप्रत्ययः ] प्रणवः; ओम्, 'ओङ्कारं पूर्वमुच्चार्यततो वेदमधीयते'—इति स्मृतिः । 'ओङ्कारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा । कण्ठं भित्त्वा विनिर्याती तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥' 'प्राणायामैस्त्रिभिः प्रतस्तत ओङ्कारमर्हति'—इति मनुः (२-७५) । ८

**ओजः** [ स् ] क्ली. [ उञ्जत्यनेन । उञ्ज् आजंवे, 'उञ्जेर्वले बलोपश्च' इति असुन् बलोपश्च, गुणः ] बलम्; 'रुद्रौजसा तु प्रहृत्स्वं त्वयास्याम्'—इति रघुवंशे (२-५४) । 'तेषामिदं तु सप्तानां पुरुषाणां महौजसाम्'—इति मनुः (१।१९) । दीप्तिः; अवष्टम्भः; प्रकाशः; प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमेनवमैकादशराशयः; गौडी रीतिः; काव्यगुणः; बहुसमाससंयुक्तवर्णपदाडम्बरः; 'ओजः प्रसादमाधुर्यगुणत्रितयभेदतः । गौडवैदर्भपाञ्चालीरीतयः परिकीर्तिताः । ओजः समासभूयस्त्वं मांसलं पदडम्बरम् ।' तस्योदाहरणम्—'गङ्गोत्तुङ्गतरङ्गसङ्गतजटाजूटाग्रजाप्रत्फणस्फूर्जत्फूत्कृतिभीतिसंभृतचमत्कारस्फुररस्मभ्रमा । आनन्दामृतवापिकां विदधती चित्तं गिरीशप्रभोस्त्वां पायाश्रवसङ्गमे भगवती लज्जावती पार्वती'—इति काव्यचन्द्रिका । रसादिसप्तधातुसारभागजघातुविशेषः; 'हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं रक्तमीषत् सरीतकम् । ओजः शरीरे संजातं तन्नाशान्नाशमृच्छति ॥ भ्रमरैः फलपुष्पेभ्यो यथा सम्भ्रयते मधु । तद्वदोजः शरीरेभ्यो धातुः संभ्रयते नृणाम्'—इति वैद्यकम् । अकारान्तोऽपि — 'हृदयं चेतनास्थानमोजश्चाश्रयमुच्यते'—इति शाङ्गधरः । ७२३

**ओड्रपुष्पम्** क्ली. [ ओड्रं पुष्पम् ] जवा; जपा; 'ओड्रस्यादोड्रपुष्पञ्च जत्राय हयमारकः'—इति रायमुकुटः ।

'ओड्रपुष्पकुसुमप्रियेऽम्बिके'—इति हरानन्दः । २०७  
**ओतुः** पुं. — स्त्री. [ अवति गृहमाखुभ्यः । अच् रक्षणे + 'सितनिगमिससिच्यवीति' तुन् 'ज्वरत्वरेति' ऊट् ततो गुणः ] विडालः; यथा सिद्धान्तकौमुद्याम् 'स्थूलोतुः; स्थूलोतुः ।' २३६

**ओदनः** पुं. — क्ली. [ उन्द् + 'उन्देर्नलोपश्च' इति युच् नलोपश्च ] अन्नं; भक्तम्; 'भात' इति भाषा । 'ओदनः क्षालितः स्विन्नः प्रलुतो विशदो लघुः । भृष्टतण्डुलजोऽत्यर्थमन्यथा स्याद् गुरुश्च सः'—इति वैद्यके । 'ओदनस्तैः शृतो द्विस्त्रिः प्रयोक्तव्यो यथायथम् । दोषद्वय्यादिवलतो ज्वरघ्नः क्वाथसाधितः'—इति वाग्भटः । भक्तमन्नं तथान्यश्च क्वचित् कूरं च कीर्तितम् । ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्ता दीदिविः पुंसि भाषितः ।

३१९

**ओषधिः** स्त्री. [ ओषो दाहो दीप्तिर्वा वीयतेऽत्र । ओष + धा + क्ति ] फलपाकान्तवृक्षादिः; कदली-धान्यमित्यादिः; 'उद्भिज्जाः स्थावरा ज्ञेया बीजकाण्डाप्ररोहिणः । ओषधयः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः'—इति मनुः (१-४६) । 'भवन्ति यत्रौषधयो रजन्याम्'—इति कुमारसम्भवे (१-१०) । 'अथौषधीनामधिपस्य वृद्धौ'—इति कुमारे (७-१) । 'ओषधयः प्रशुष्यन्ति गवादीनां पर्यासि च'—इति हारीते । १८०

**ओषधी** स्त्री. [ ओषधि + डीप् ] ओषधिः; फलपाकान्तवृक्षः । १८०

**ओषधीशः** पुं. [ ओषधीनामीशः ] चन्द्रः; ओषधीपतिः; 'ओषधीशः क्रियायोनिरम्भोयोनिरनुष्णभाक्'—इति हरिवंशे । कर्पूरः । ४२

**ओष्ठः** पुं. [ उष्यते दह्यते उष्णाहारेणेति । उष् दाहे + 'उषिकुषीति' थन् ] दन्ताच्छादकावयवः; रदनच्छदः; दशनवासः; दन्तवासः; दन्तवस्त्रं; रदच्छदः; 'अवनिष्ठीवतो दर्पाद् द्वावोष्ठी च्छेदयेन्नृपः'—इति मनुः (८-२८२) । 'उमामुखे विम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि'—इति कुमारसम्भवे (३-६७) । 'ओष्ठ' इति भाषा । ५२४

**ओष्ठी** स्त्री. [ ओष्ठ इवाचरति पक्वावस्थायाम् । ओष्ठ + क्विप् ततोऽच् डीप् च ] विम्बफलम्; 'कुन्दरु' इति भाषा । २०३

औ

**औत्सुक्यम्** क्ली. [ उत्सुकस्य भावः, उत्सुक+ष्यञ् ]  
उत्कण्ठा; 'औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना  
हिया'—इति रत्नावली । 'रथचरणसमाह्वस्तावदौ-  
त्सुक्यनुन्ना'—इति माघे (११-२६) । 'इत्यौत्सुक्याद-  
परिगणयन् गृह्यकस्तं ययाचे'—इति पूर्वमेघे (५) ।  
व्यभिचारिभावभेदः; 'औत्सुक्योन्मादशङ्काः स्मृतिमति-  
सहिता व्याधिसन्त्रासलज्जाः'—इति साहित्यदर्पणे ।  
इच्छा; 'औत्सुक्यमिच्छा सा च इष्यमाणप्राप्ती निवर्तते  
इष्यमाणश्च स्वार्थं इष्टलक्षणत्वात् फलस्य'—इति  
तत्त्वकौमुद्याम् । ७४२

**औदरिकः** त्रि. [ उदरे प्रसितः । उदर+ठक् ] उदरमात्र-  
पूरकः; आद्यन्ः; विजिगीषाविर्वजितः; 'आद्यन्ः  
स्यादौदरिके विजिगीषाविर्वजिते'—इत्यमरः । ३५०

**औपयिकः** त्रि. [ उपायेन सञ्जातः । उपाय+ठक्+  
ह्रस्वश्च ] न्याय्यः; उपयुक्तः; 'एतत्तव महाराज तेपु  
पुत्रेषु चैव ह । वृत्तमौपयिकं मन्ये भीष्मेण सह भारत'—  
इति महाभारते (१।२०५।१२) । 'वासमौपयिकं मन्ये  
तव राम महाबल'—इति रामायणे (२।५४।३९) ।  
स्त्रियां तु डीप्—'न वैश्यशूद्रौपयिकीः कयास्ता  
न च द्विजानां कथयन्ति वीराः'—इति महाभारते  
(२।१९४।११) । [ स्वार्थे विनयादित्वात् ठक्प्रत्यये कृते  
उपाय एव औपयिकम् ] 'शिवमौपयिकं गरीयसीम्'  
—इति भारविः (३५) । ७४६

**औपवाह्यः** पुं. [ उपवाह्य, स्वार्थे अण् ] राजवाह्यः । २२४

**औमीनम्** त्रि. [ उमानां भवनं क्षेत्रं 'विभाषा तिलमापोमेति'  
पक्षे खञ् ] उन्म्यम्; उमाक्षेत्रम् । 'अलसी, तीसी का  
खेत' इति भाषा । १६३

**औरभ्रः** पुं. [ उरभ्रस्य मेघस्य इदम् । उरभ्र+अण् ]  
कम्बलः; ऊर्णागुः; उर्णागुः; आविकः, रत्नकः;  
मेघमांसम्; 'द्वौ मासी मत्स्यमांसेन त्रीन् मासान् हारिणेन  
तु । औरभ्रेणाथ चतुरः शाकुनेनाथ पञ्च वै'—इति मनुः  
(३।२६८) । मेघदुग्धम्; 'औरभ्रं मधुरं ह्रस्वमुष्णं  
वातकफापहम् । न शस्तं रक्तपित्तानां वातिकानां हितं  
भवेत्'—इति हारीते । धन्वन्तरि प्रति प्रदनकारकः  
ऋषिभेदः; 'अथ खलु भगवन्तममरवरमूषिगणपरिवृत्-

माश्रमस्थं काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरिमौपघेनव-  
वैतरणीरभ्रपौष्कलावतकरवीर्यगोपुररक्षितमुश्रुतप्रभृतय  
ऊचुः'—इति सुश्रुते । ५५१

**और्वः** पुं. [ और्वीत् भृगुवंशीयाद् ऋपेर्जातः । और्वं+  
अण् । और्वपि क्रोधजत्वात्तथात्वम् ] वाडवानलः; स  
तु भूगोलस्य दक्षिणसीमा । तत्र सर्वे नरका देव्याश्च  
वसन्ति । 'स्वादूदकान्तर्वडवानलोऽसी पाताललोकाः  
पृथिवीपुटानि'—इति सिद्धान्तशिरोमणिः । भृगुवंशीय-  
ऋषिभेदः; पञ्चप्रवरान्तर्गतमुनिविशेषः; 'ततश्च क्रोधजं  
तात और्वोऽग्निं वरुणालये । उत्ससर्ज स चैवाप  
उपयुङ्क्ते महोदधौ'—इति पुराणे । उर्वस्यापत्यम्; क्ली.  
[ उर्व्या भवम्, उर्वी+अण् ] पांशुवलवणम् । ७०

**औशीरम्** क्ली. [ उश्यते, वश्+ईरन्, प्रजाद्यण् ।  
यद्वा उशीरस्येदं, 'तस्येदम्' इत्यण् ] शयनासनं; शयनं;  
स्वापः; शय्या वा आसनम्; 'छत्रं वेष्टनमीशीर-  
मुपानद्व्यजनानि च । यातयामानि देयानि शूद्राय  
परिचारिणे'—इति महाभारते (१।२।६०।३१) ।  
उशीरजं; चामरं; दण्डः; पुं. चामरदण्डः । १२१

**औषधम्** क्ली. [ औषधेरिदम् । औषधिरेव वा, 'औषधेर-  
जातो' इत्यण् ] रोगनाशकद्रव्यम्; [ औषधिभवं, भवार्थे  
णप्रत्ययः; ] भेषजं; भैषज्यम्; अगदः; जायुः जैत्रम्;  
आयुर्वेगः; गदारारिः; अमृतम्, आयुर्द्रव्यम्; 'शोधनं  
शमनं चेति समासादौषधं द्विधा । शरीरजानां दोषाणां  
क्रमेण परमौषधम्'—इति वाग्भटः । ६१३

क

**कम्** क्ली. [ कायति शब्दो निर्गच्छति यतः यस्मिन्  
सतीत्यर्थः, सजि ह्वादास्यशिरोऽन्तर्वर्तित्वात् । यद्वा  
कायति वर्णात्मकं वन्यात्मकं वा शब्दं करोति जीवः  
यस्मिन् सतीति वाच्यत् । कं शब्दे, 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते'  
इति ड । कायति शब्दायते स्तोत्रेवेगेनालोडनेन वेति  
यावत् ] जलम्; 'सूर्योऽग्निः खं मरुदावः सोमः सन्ध्या-  
हनी दिशः । कं कुः कालो धर्म इति ह्येते दैह्यस्य-  
साक्षिणः ॥' शिरः; 'द्वाम्यामोर्षो द्विकन्मूज्य चैकेन धाल-  
येत्करम् । मुखत्राणनेत्रश्रोत्रान्पुरस्कं भुजी क्रमात्'—  
इति तन्त्रसारे । मुखम् [ कायन्ति आनन्दोत्सववर्चानि  
कुर्वन्ति यस्मिन् समागते उपस्थिते इत्यर्थः, गृह्णिण इति

शेषः । आनन्दध्वनेस्तु सुखानुवर्तित्वात् ] 'प्राणो ब्रह्म कं ब्रह्म खं ब्रह्मोति स होवाच विजानाम्यहं यत् प्राणो ब्रह्म कञ्च तु खञ्च तु न विजानामीति । ते होचुर्यद् वाव कं तदेव खं यदेव खं तदेव कमिति प्राणं च हास्मै तदाकाशं चोचुः'—इति छान्दोग्योपनिषदि (४।१।०।५) । केशः [ कचते दीप्यते मस्तकोपरि शोभते इति भावः । यद्वा कच्यते वध्यते सयम्यते कराम्याम् । कच् वन्धने, ङ ] ; पुं. ब्रह्मा; विष्णुः; प्रजापतिः; दक्षः; कामदेवः; अग्निः; वायुः; यमः; सूर्यः; आत्मा; राजा; ग्रन्थिः; मयूरः; मनः; शरीरं; कालः; धनं; शब्दः; प्रकाशः; कः; त्रि. सर्वनाम । (८४७) सुखं; वायुः; जलं; ब्रह्म; मस्तकः (शेषार्था उपरि द्रष्टव्याः) । ६४८

कंसजित् पुं. [ कंसं जयति जितवान् वा । कंस+जि, कर्तरि क्विप् ] श्रीकृष्णः । २५

ककुदः पुं.—वली. [ कं सुखम् उत्कर्षं वा कौति प्रकाशयति । धातूनामनेकार्थत्वात् कुधातुरत्र प्रकाशनार्थः अन्तर्पण्यन्तार्थश्च । कु+क्विप्+तुक् च, पृषोदरादित्वात् तस्य दः । यद्वा कस्य सुखस्य शरीरस्य वा कुं भूमि-मूलम् आकरमिति यावत्, ददातीति । ककु+दा+क । यद्वा 'ककुदस्यावस्थायां लोपः', अर्द्धर्चादिः । वृषाङ्गम्; वृषपृष्ठस्थमांसपिण्डम्; 'सुपाश्वं विपुलस्कन्धं सुरुपं चारुदशनम् । ककुदं तस्य चाभाति स्कन्धमापूर्यं धिष्ठितम्'—इति महाभारते (३।१४।२३९) । (८२१) पर्वताग्रभागः; शृङ्गम्; प्राधान्यम्; 'इन्द्राकुर्वरयः ककुदं नृपाणां ककुत्स्य इत्याहितलक्षणोऽभूत् । काकुत्स्यशब्दं यत् उन्नतेच्छाः श्लाघ्यं दधत्युत्तरकोशलेन्द्राः'—इति रघुवंशे (६-७१) । 'ऊर्ध्वो विन्दुहृदचरद् ब्रह्मणः ककुदादधि'—इति अथर्ववेदे (१।१०।१९) । राज-चिह्नम्; तत्तु श्वेतच्छत्रादि; 'अथ स विपयञ्चावृत्तात्मा यथाविधि सूतवे । नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम्'—इति रघुवंशे (३।७०) । २६६

ककुद्धान् [त्] पुं. [ ककुदस्यास्तीति । मत्तुप्, 'मादुपशयाश्च मतोर्वोऽथवादिभ्यः' इति न मस्य वकारत्वम् ] वृषः; 'तुपारसंघातशिलाः खुराग्रेः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुद्धान्'—इति कुमारे (१-५९) । पर्वतः; 'ककुद्धान् पर्वतवदः सरिन्नामानि मे शृणु'—इति विष्णुपुराणे (२।४।२) । ऋषभोपघमः ऊर्मिः;

'ऊर्मिः प्रतूर्तिः ककुद्धान्'—इति यजुर्वेदे (१।६) । २६३ ककुपती स्त्री. [ ककुदिव वृषस्कन्धवत् अतिशयितो मांस-पिण्डः अस्त्यस्याम् । मत्तुप्, यवादित्वान्न मस्य वत्त्वं, स्त्रियां डीप् ] कटिः; 'कमर' इति भाषा । ५१२

ककुप् [ भ् ] स्त्री. [ कं वातं स्कुम्नाति विस्तारयति या । स्कुम् इति सौत्रः, क्विप्, पृषोदरादित्वात् सलोपः ] दिक्; प्रवेणी; शोभा; चम्पकमाला; शास्त्रम् । १००

ककुभः पुं. [ कस्य वातस्य कुः भूमिः स्थानं प्रकाशस्य-विशेष इति यावत्, भारस्मात् । ककु+भा+क । यद्वा कं वातं स्कुम्नाति विस्तारयति, कं+स्कुम्+क, पृषोदरादित्वात् सलोपः ] अर्जुनवृक्षः; 'शोधून-ककुभवूर्णं छागपथो गव्यसपिषा पववम् । मधुशर्करा-समेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम् ॥ मूलं नागबलायास्तु चूर्णं दुग्धेन पाययेत् । हृद्रोगश्वासकासघ्नं ककुभस्य च वत्कलम् ॥ रसायनं परं वल्यं वातजिन्मासयोजितम् । संवत्सरप्रयोगेण जीवेद् वर्षशतं नरः'—इति चक्रदत्तः । वीणाङ्गं; प्रसेवकः; वीणाप्रान्तवक्रकाष्ठम्; दण्डाधः शब्दगाम्भीर्यार्थं दारुमयं भाण्डं यच्चर्मणाच्छाद्य दीयते तदित्यन्ये । वीणास्थितालवुफले—इत्यपरे । राग-विशेषः; शिवः; 'हयंक्षः ककुभो वज्री शतजिह्वः सहस्रपात्'—इति शिवसहस्रनामकीर्तने । १९५

ककुभा स्त्री. [ केन आदित्येन कुत्सितानि भानि नक्षत्राण्यस्याम् ] रागिणीविशेषः; दिक्; [ केन सूर्येण दिनप्रकाशनेति भावः; कुत्सिता भाति । भा दीप्ती इति धातोः सुपीति क भिदाद्यद् वा । रात्रा-वेवास्या माधुर्यस्याधिक्यमिति तात्पर्यार्थः ] १०४ अ.

कक्खटः त्रि. [ कक्खति हसति यः । प्रफुल्लमुखो जनः इति व्युत्पत्त्यर्थः; अन्यस्तु रुढ्यर्थः । कक्ख+अट् । अथवा कक्खं प्रसन्नभावं अटति कर्कशान्तवृत्तित्वात्, कक्ख+अट्+अच् । यदा कठिन्यां वर्तते तदा कक्खति कृष्ट्या प्रकाशयति वर्णान्, अन्तर्गिजर्थः ] कठिनः । ३४२

कक्षः पुं. [ कषतीति, कप् हिंसायाम्, 'वृत्त्वदिहनि-क-मिकपिभ्यः सः' इति स ] कच्छः; 'कक्षघ्नः शिशिरघ्नश्च महाकक्षे विलोकसः । न दहेदिति चात्मानं यो रक्षति स जीवति'—इति महाभारते 'महाकक्षे वृहत्कच्छे' इत्यर्थः । तृणं; वीरुत्; 'यथोद्धरति निर्दाता कक्षं धान्यं च रक्षति'—इति मनुः (७।११०) । बाहुमूलम्;



'काँख, बगल' इत्यादि भाषा । कक्षा (५२५); 'वदर्य-  
रूपान् प्रतिगृह्य काञ्चनानक्षान् स कक्षे परिरम्य  
वाससा'—इति महाभारते (४।६।१) । शुष्कतृणम्;  
'प्रक्षिप्योर्दक्षिणं कक्षे शेरते तेऽभिमास्तम्'—इति माघे  
(२-४२) । शुष्कवनं; पापम्; अरण्यम्; 'अयमग्नि-  
दहन् कक्षमित आयाति भीषणः'—इति महाभारते  
(१।२३।१३) । भित्तिः; पार्श्वः; 'तस्य वानरसिंहस्य  
क्रममाणस्य सागरम् । कक्षान्तरगतो वायुर्जोमूत इव  
गर्जति'—इति रामायणे । ८३३

कक्षा. स्त्री. [ कप् हिंसादौ + स टाप् च ] बाहुमूलम्;  
कक्षः; हस्तिरज्जुः; काञ्ची; गेहप्रकोष्ठकः;  
'तस्मिन्नतीत्य मुनयः षडसज्जमानाः कक्षाः समानवय-  
सावय सप्तमायाम्'—इति भागवते (३।१।५।२७) ।  
भित्तिः; साम्यं; रथभागः; अन्तरीयपश्चिमाञ्चलम्;  
परिधानवस्त्रस्य पृष्ठतो निहिताञ्चलम्; उद्ग्राहिणी;  
'आँचल' इति भाषा । 'परिधानाद् वहिः कक्षा निवद्धा  
ह्यांसुरी भवेत्'—इति याज्ञवल्क्यः । 'एभिः कक्षैः परीवृत्ते  
यो विप्रः स शुचिः स्मृतः'—इति स्मृतिः । स्पष्टापदं;  
रुद्रः; कक्ष्या; हस्तिमध्यदेशवन्धनरज्जुः; क्षुद्ररोगवशेषः;  
'कक्षाञ्च गन्धनाम्नी च चिकित्सति चिकित्सकः ।  
पैतक्तस्य विसर्पस्य क्रियया पूर्वमुक्तया'—इति भाव-  
प्रकाशः । 'बाहुवाश्वसिकक्षेपु कक्षमित्यभिनिदिशेत् ।  
पित्तप्रकोपसम्भूतां कृष्णस्फोटां सवेदनाम्'—इति  
माधवकरः । ५२५

कक्षापटः पुं. [ कक्षाकारः हस्तिरज्जुतुल्यः पटो वस्त्रम् ]  
कोपीनम्; गृहभित्तिस्वपटः; कक्षायाः गृहप्रकोष्ठस्य  
पटः । ४११

कक्ष्या स्त्री. [ कक्षे भवा । कक्ष + शरीरावयवत्वात्  
यत् टाप् च ] गजमध्यवन्धनचर्मरज्जुः; चूपा; वस्त्रा;  
वृषा; दृष्या; दूष्या; कक्षा; कक्षरज्जुः; चर्मरज्जुः;  
हर्म्यादिप्रकोष्ठः; राजगृहादेवैष्णवावच्छिन्नो देशः; 'महल'  
इति भाषा । 'प्रविश्य प्रथमां कक्ष्यां द्वितीयायां ददर्श सः'  
इति रामायणे (२।२०।११) । काञ्ची; अन्तर्गृहम्;  
'क्रान्तानि पूर्वं कमलासनेन कक्षान्तरारण्यद्विपतेविवेश'  
इति कुमारसम्भवे (७-७०) । सादृश्यम्; उद्योगः;  
वृहत्तिका; उत्तरीयवस्त्रं; गुञ्जा । २२१

कक्ष्ण्टः पुं. [ कं देहं कटति आवृणोतीति । क + कट् +

अच्, अथवा ककि लौल्ये, कङ्कते क्षणेन नाशतां  
याति अचिरस्यायित्वात्, ककि + अट् ] कवचः;  
कङ्कटकः; 'सर्वायुर्वः कङ्कटभेदिभिश्च'—इति रघु-  
वंशे (७-५९) । ४५९

कङ्कणम् क्ली. [ कं शुभं कणतीति । क + कण् शब्दे,  
कर्त्तरि अच्, पृषोदरादित्वाण्णत्वम् ] हस्ताभरणभेदः;  
करभूषणं; कौशुकं; हस्तसूत्रम्; 'मृणालग्रीरं सिति-  
वाससं स्फुरत् किरीटकेयूरकटिचक्रङ्कणम्'—इति  
भागवते (६।१६।३०) । मण्डनं; श्लेरः । ५५८

कङ्कतम् क्ली. [ कङ्कते शिरोमलं प्राप्नोतीति । ककि गती,  
+ अतच् ] कङ्कतिका; 'कंधी' इति भाषा । ३११

कङ्कतः पुं. [ कङ्कते भूमिं भित्त्वा उदगच्छति झटिति नाशं  
गच्छति वा । 'ककि गती' इति धातोः अतच् ] केश-  
प्रसाधनी; कङ्कती; प्रसाधनी; प्रसाधनं; फली;  
फलिका; फलिः; नागवला । ३११

कङ्कपत्रः पुं. [ कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्रमेव पत्रं पक्षो  
यस्य ] वाणविशेषः; 'विव्यवुर्षोररुपास्ते कङ्कपत्रैर-  
जिह्वगैः'—इति रामायणे (१-२८-४) । कङ्कस्य पक्षि-  
विशेषस्य पत्रम्; 'नखप्रभाभूपितकङ्कपत्रे'—इति  
रघुवंशे (२-२१) । ४६६

कङ्कालः पुं. [ कं सुखं शिरो वा कालयति क्षिपतीति ।  
कम् + कालि + अच् ] शरीरास्थि; समुदितशरीरा-  
स्थिसंघातस्त्वङ्मांसरहितः; करङ्कः; अस्थिपञ्जरः;  
'अस्थिकङ्कालसंकीर्णं भूर्ध्रमूव'—इति मुन्दोपमुन्दोपा-  
स्थाने । ६३३

कङ्कावातः पुं. —अञ्जावातः । ७७

कङ्कैलिः पुं. [ कं सुखं तस्मै कैलिः यत्र ] अगोकवृक्षः ।

१९२

कङ्कैलिः पुं. [ कङ्क + बाहुलकात् एलिः पृषोदरादित्वा-  
ल्लश्च ] अगोकवृक्षः । १९२

कङ्गः स्त्री. [ कं मुक्त्वं अङ्गति अङ्गयति वा । क + अङ्गि  
गती + ण्यन्तादंसाम्नामृगश्वादित्वात् कु, शकण्वादित्वात्-  
रल्पम् ] पीततण्डुलाः; प्रियङ्गुः; कङ्गुः; प्रियङ्गुः;  
'कांगनी' इति भाषा । कङ्गुनी; चीनकः; अत्यन्त-  
सुकुमारः धान्यविशेषः; 'स्थियां कङ्गुप्रियङ्गु कृष्ण-  
रक्तसितास्तथा । पीता चतुर्विधा कङ्गुस्नामां पीता  
वरा स्मृता ॥' ५८२

कचः पुं. [ कचते शोभते शिरसीति । कच् + पचाद्यच् ।  
कच्यते वच्यते इति, कच् वन्धने + कर्मणि अच् वा ] केषाः;  
'कचेषु च निगृह्यतान् विनिहृत्य बलाद्वली । चकर्ष  
क्रोशतो भूमौ घृष्टजानुशिरोंसकान्'—इति महाभारते  
(१।१२८।१९) । [ कचते दीप्यते तपस्तेजसि, कच्  
दीप्तौ + पचाद्यच् ] बृहस्पतिपुत्रः; वन्धः; शुष्क-  
व्रणः; मेघः । ५३०

कच्चित् अव्य. [ कच्च + चिच्च अनयोः समाहारः,  
कोः कदादेशः, अथवा काम्यते इति कच्, चीयते निधीयते  
यस्मात्, कम् + विच्, चि + क्विप्, ततः पृषोदरादित्वा-  
न्मस्य दकारत्वम् ] इष्टपरिप्रश्नः; 'कच्चिज् जीवति  
मे तातः ।' 'आपद्यते न व्ययमन्तरायैः कच्चिन्महर्षे-  
स्त्रिविवं तपस्तत्'—इति रघुवंशे (५-५) । काम-  
प्रवेदनम् । ८७९

कच्छः पुं. [ केन जलेन छृणति दीप्यते छाद्यते वा । उच्छृद्विर्,  
दीप्तिदेवनयोः, छद् वा, 'अन्येष्वपि' इति ड । कं जलं  
छ्यति परिछिनत्ति इति वा, छो छेदने + 'आतोनुपेति'  
क ] अनूपप्रायस्यानगः; 'कछार' इति भाषा । 'कच्छान्ते  
सुरसरितो निषाय सेनामन्वीतः स कतिपर्यैः किरातवयैः'  
—किराते (१२-५४) । परिधानाञ्चलं (८३३); (तत्स-  
र्यायाः—कक्षा, कच्छा, कच्छोटिका, कच्छटिका, कच्छा-  
टिका ।) सिन्धूनां सरसां च प्रान्तभागः; कूलः; तटः;  
तीरं; जलाशयप्रान्तदेशः; नदीपर्वतादिसमीपम्; 'नदी-  
कच्छोद्भवं कान्तमुच्छ्रितध्वजसन्निभम्'—इति महा-  
भारते (१।७०।१६) । तुष्यवृक्षः; नौकाङ्गः; देशविशेषः;  
'गणेश्वरात् पूर्वभागे समुद्राद्गतरे शिवे । कच्छदेशः  
समाख्यातस्तन्त्रे श्रीशक्तिसङ्गमे ॥' त्रि. [ केन जलेन  
छृणति दीप्यते । छद् वाहुलकाड्ड ] जलप्रान्तः । ६६७

कच्छपः पुं. [ कच्छम् आत्मनो मुखसम्पुटं पाति, स हि  
किञ्चिद् दृष्ट्वा शरीरे एव मुखसम्पुटं प्रवेशयति,  
सम्पुटे च कच्छशब्दः प्रसिद्धः । यद्वा कच्छे अनूपदेशे  
पाति आत्मानं रक्षतीति । कच्छ + पा + कर्तरि ड ]  
कूर्मः; कमठः; गुढाङ्गः; धरणीधरः; कच्छेष्टः;  
पल्लवावासः; कठिनपृष्ठकः; पञ्चसुप्तः; क्रोडाङ्गः;  
पञ्चनखः; गुह्यः; पीवरः; जलगुल्मः । अंवतार-  
विशेषः; 'सुरासुरेन्द्रभुजवीर्यवेपितं परिभ्रमन्तं गिरि-  
मङ्गपृष्ठतः । विभ्रतदावतं नमादिकच्छपो मेनेऽङ्ग-

कण्डूयनमप्रमेयः'—इति भागवते (८-७-१०) । नन्दी-  
वृक्षः; कुबेरस्य निधिविशेषः; मल्लस्य बन्धविशेषः;  
मदिरायन्त्रविशेषः; ऋषिविशेषः; विश्वामित्रपुत्रः;  
'विश्वामित्रस्य पुत्रास्तु देवराजादयः स्मृताः । विख्याता-  
स्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु । देवश्रवाः कति-  
श्चैव यस्मात् कात्यायनाः स्मृताः । शालाबल्यां  
हिरण्याक्षो जज्ञे रेणौ तु रेणुमान् । साङ्कृतिगालवश्चैव  
मुद्गलश्चेति विश्रुताः । मधुच्छन्दादयश्चैव देवलश्च  
तथाष्टकः । कच्छपः पूरितश्चैव विश्वामित्रस्य वै सुताः ।  
तेषां ख्यातानि गोत्राणि कौशिकानां महात्मनाम्'—  
इति हरिवंशे (२७-४७-५०) । नागविशेषः; 'कर्कोटकोऽय  
सर्पश्च वासुकिश्च भुजङ्गमः । कच्छपश्चाप्य कुण्डश्च  
तक्षकश्च महोरगः'—इति महाभारते । ६५६

कच्छुः स्त्री. [ कषति देहं, कप्. हिंसायाम् + 'कपेश्छ-  
श्चेति' ऊ छान्तादेशश्च, पृषोदरादित्वाद् वा ह्रस्वः ]  
रोगविशेषः; 'सूक्ष्मा बह्व्यः पिडिकाः स्नावत्यः पामे-  
त्युक्ता कण्डुमत्यः सदाहाः । सैव स्फोटैस्तीव्रदाहैरुपेता  
ज्ञेया पाण्योः कच्छुरुग्रा स्फिचोश्च ।' 'अकंपत्ररसे  
पक्वं हरिद्राकल्कसंयुतम् । नाशयेत् सार्धं तैलं पामा-  
कच्छुविचर्चिकाः'— इति चक्रदत्तः । ६०२

कच्छुः स्त्री. [ कषति हिनस्ति देहम्, 'कपेश्छश्च' इति  
ऊ छादेशश्च ] रोगविशेषः; पामः; पामा; विचर्चिका;  
'स्नाज' 'खुजली' इति भाषा । ६०२

कज्जलम् क्ली. [ कु कुत्सितं जलं यस्मात्, शुभ्रमपि जलं  
संयोगात् स्ववर्णत्वं नयतीति यावत् । यद्वा कुत्सितम्  
ऊर्द्ध्वं चक्षुषोर्जलं दूरीभूतं भवत्यस्मात् । कोः कदादेशः ]  
अञ्जनं; लोचकः; 'काजल' इति भाषा । 'ततः साकार-  
यद् भूरि चेटीभिः कुण्डकस्थितम् । कस्तूरिकादिसंयुक्तं  
कज्जलं तैलमिश्रितम्'—इति कथासरित्सागरे (४-  
४७) । 'धिङ् मां विगर्हितं सद्भिर्दुष्कृतं कुलकज्जलम्'—  
इति भागवते (६।२।२७) । पुं. [ कत् कुत्सितं यथा  
तथा जालयति आच्छादयति आतपादिकं, यद्वा कुत्सित-  
मपि लतागुल्मादिकं चेति यावत्, जालयति जीवयति  
वर्षणेनेतिशेषः । कु + जल् + णिच् + अच्, ततो ह्रस्वः ]  
मेघः । ५५५

कञ्चुकः पुं. [ कञ्चते आपुच्छात् सकृणमुखपर्यन्तम्,  
अमिती दीप्यते प्रकाशते शोभते वा, कञ्चते आवृणाति

शत्रुनिक्षिप्तास्त्रादीनि वारणाय, कच्चि + बाहुल-  
कादुकन् ] भटादेशचोलाकृतिसत्राहः; वारवाणः;  
वाणवारः; 'कवच' इति भाषा । 'कञ्चुकोष्णीषिणस्तत्र  
वेत्रककशपाणयः । उत्सारयन्तः सहसा समन्तात्परि-  
चक्रमुः—इति रामायणे । (६४४) सर्पत्वक्; निर्मेकः;  
'साँप की केंबुल' इति भाषा । 'भोगिनः कञ्चुकाविष्टाः  
कुटिलाः क्रूरचेष्टिताः । सुदृष्टा मन्त्रसाध्याश्च राजानः  
पत्रगा इव—इति पञ्चतन्त्रे । चोलकं; चोलः;  
कञ्चुलिका; कूर्पासकः; अङ्गिका; वद्वपिकगृहीताङ्ग-  
स्थितवस्त्रम्; 'सख्यः किं करवाणि यान्ति शतधा  
यत्कञ्चुके सन्वयः—इत्यमरशतके (८१) । वस्त्रम्;  
'देवांश्च तच्छ्वासशिखाहतप्रभान् धूम्राम्बरस्रग्वर-  
कञ्चुकाननान्—इति भागवते (८-७-१५) । ५५२  
कञ्चुकी [ न ] पुं. [ कञ्चुकोऽस्यास्तीति, कञ्चुक +  
अस्त्यर्थे इति ] सर्पः; कञ्चकालुः; महल्लरक्षकः;  
अन्तःपुराध्यक्षः; सौविदल्लः; स्थापत्यः; सौविदः;  
'नष्टं वर्षवर्षैर्मुष्यगणनाभावादपास्यत्रपामन्तः कञ्चुकि-  
कञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः—इति रत्नावली ।  
'अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गूणगणान्वितः । सत्रंकार्यार्थ-  
कुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते—इति भरतः । यवः;  
चणकः; पिङ्गः; जोङ्गकद्रुमः । स्त्री. [ कञ्चयति  
शरीरकान्त्यादिकं प्रकाशयति, रोगादिकम् उपशमयति  
वा । कञ्चु + णिच्, बाहुलकादुकन्, गौरादित्वाद् डीष् ]  
ओपधिभेदः; क्षीरीशवृक्षः । ६४०  
कटः पुं. [ कटति मदवारि वर्षति यः । कट् वर्षणे,  
कर्तर्यच् ] हस्तिगण्डस्थलम्; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचिद्  
वन्यद्विपेनोन्मथिता त्वगस्य'—इति रघुवंशे (२-३७) ।  
कटिदेशः (२५९); किलिञ्जकः; समयः (८२०);  
अतिशयः; शरः; तृणम्; 'गोऽश्वोष्ठयानप्रासादस्व-  
स्तरेषु कटेषु च । आसीत् गुरुणा साद्धं शिलाफलकनौपु  
च'—इति मनुः (२-२०४) । 'कटेषु तृणादिनिमित्तेषु,  
इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । शवः; शवरथः;  
ओषधी; दमशानं; तक्षितकाष्ठं; 'तस्ता' इति भाषा ।  
'तां निष्ठितां वद्वकटां दृष्ट्वा रामः सुदर्शनाम् ।  
गुश्रूपमाणाभेकाग्रमिदं वचनमब्रवीत्—इति रामायणे ।  
राक्षसविशेषः; 'शकनासस्य वक्रस्य कटस्य विकटस्य च ।  
रक्षसो लोमहर्षस्य दंष्ट्रालहस्वकर्णयोः—इति रामा-

यणे । त्रि., क्रियाकारः [ कट् + णिच् + अच् । ] २१६  
कटकः पुं.—वली. [ कटति वर्षति अस्मिन् मेघ इति, अथवा  
कटयते निर्गम्यते अस्मात्. निर्झरिण्यादिभिः । 'कृवा-  
दिम्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन् ] पर्वतमध्यभागः;  
नितम्बः; मेखला; 'मार्गपिणी सा कटकान्तरेषु  
वन्येषु सेना बहुधा विभिन्ना—इति रघुवंशे (१६-३१) ।  
वलयः (५५७); माघे (१६।७७) । सेना (७९०); माघे  
(५।५९) । हितोपदेशे (१।३३२) । चक्रं; हस्तिदन्त-  
मण्डनं; सामुद्रलवणम्; 'राजधानी; नगरी; सानुः;  
पर्वतस्य समभूभागः; 'गिरिकूटेषु दुर्गेषु नानाजनपदेषु च ।  
जनाकीर्णेषु देशेषु कटकेषु परेषु च—इति महाभारते ।  
१६६

कटाक्षः पुं. [ कटावतिशयितौ अक्षिणी यत्र । कट +  
अक्षि + अच् । यद्वा कटं गण्डम् अक्षति व्याप्नोति ।  
अक्षु व्याप्तौ + अच् कर्मण्यण् वा ] अपाङ्गदर्शनम्;  
'तिरछा देखना' इति भाषा । 'आमोक्ष्यन्ते त्वयि  
मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्—इति मेघदूते (३५) ।  
५६७

कटाहः पुं. [ कटम् उत्तापादिकम् आहन्ति निवारयतीति ।  
कट् + आ + हन् + ड । कटं कटुगन्धादिकम् आहन्ति,  
तैलादिकदुर्गन्धः आहन्त्येऽथ वा ] तैलादिपाकपात्रम्;  
[ कटं शत्रुम् आहन्त्यसौ ] जायमानविपाणाग्रमहिषी-  
शावकः; [ कटः पापी आहन्त्ये यत्र ] नरकः; कर्बुरः;  
कूपः; 'प्रस्थं सम्भवति प्रार्थिकः. कटाहः—इति  
सिद्धान्तकौमुद्याम् (५।१।५२) । ३१५

कटिः पुं.—स्त्री. [ कटयते वस्त्रादिना त्रियतेऽसौ । 'सर्व-  
घातुम्य इन्' इति कट् + इन् ] शरीरावयवविशेषः;  
कटः; शोणिफलकं; श्रोणी; ककुब्धती; श्रोणिफलं;  
कटी; श्रोणिः; कलत्रं; कटीरं; काञ्चीपदं; करभः;  
कटिपाश्वः; 'येषां बृहत्कटितटाः स्मिन्नशोभिमुख्यः  
कृष्णात्मनां न रज आदधुस्तमयाद्यैः—इति भागवते  
(३-१५-२०) । ५१२, ५२८

कटिदेशः पुं. [ कटिश्चासौ देशः ] मेखलास्थानम्;  
तात्त्व्यान् मेखलाशब्दवाच्योऽपि सः । ८२४  
कटिप्रोथः पुं. [ प्रोथतीति, प्रोथ् पर्याप्तौ, 'पुंसीति' घ,  
कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः ] कटिदेशस्थमांसपिण्डं;  
स्फिक्; पूलकः; कटीप्रोथः; कटिः; प्रोथः; पूलः । ५१३

कटिशीर्षकः पुं. [ कटिः शीर्षमिव । संज्ञायां कन् ] कटि-  
देशः । ५२८

कटिसूत्रम् क्ली. [ कट्यां धार्यं सूत्रम् । शाकपाथिवादि-  
त्वान्मध्यपदलोपः ] कट्यलङ्कारविशेषः ।

‘स्फुटकिरणप्रवरमणिमयमुकुटकुण्डलकटककटिसूत्रहारके-  
यूरनूपुराद्यङ्गभूषणविभूषितमृत्विक्सदस्यगृहपतयोऽधना  
इव’—इति भागवते (५।३।४) । ५६०

कटी स्त्री. [ कट्यते कटुरसेषु गृह्यतेऽस्त्री, कट्यते आत्रियते  
वस्त्रादिना । ‘सर्वधातुभ्य इन् ।’ ‘कटात् श्रोणिवचने’  
इति गौरादिषु पाठाद् वा ङीष् ] श्रोणिदेशः;  
‘सव्येन च कटीदेशे गृह्य वाससि पाण्डवः । तद्रक्षो  
द्विगुणं चक्रे स्वन्तं भैरवं रवम्’—इति महाभारते ।  
पिप्पली; पुं. कटी [ न् ]; हस्ती । ५१२, ५२८

कटीरम् पुं.—क्ली. [ कट्यते आत्रियतेऽस्त्री वाससेतिशेषः ।  
कट् + ‘कृशपुकटिपटिशौटिभ्य ईरन्’—इति ईरन् ]  
कटिः; जघनं; कन्दरः । ५१२

कटुः त्रि. [ कटति परलक्ष्मोदर्शनेन कृपणतां गच्छतीति ।  
कट् + उ ] कटुरसयुक्तः; ‘कषायो मधुरस्तिक्तः  
कट्वम्ल इति नैकधा । भौतिकानां विकारेण रस एको  
विभ्रद्यते’—इति भागवते (३।२६।४२) । मत्सरः;  
तीक्ष्णः; ‘क्षारतिक्तकटुरुक्ष्मैस्तीक्ष्णविपाकैश्चक्षुष्यु-  
पहतोऽन्धो बभूव’—इति महाभारते । अप्रियः; ‘इति  
समगुणयोगप्रीतयस्तत्र पीराः श्रवणकटु नृपाणामेक-  
वाक्यं विवृणुः’—इति रघुवंशे (७।८५) । ‘कटु  
वचणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृङ्खला  
इव’—इति कादम्बरी । दुर्गन्धः; सुगन्धिः; ‘सप्त-  
च्छदक्षीरकटुप्रवाहमसह्यमाघ्राय मदं तदीयम्’-रघौ (५-  
४८) । क्ली. [ कटति सदाचारमावृणोतीति, कट् + उन् ]

अकार्यः; दूषणम् [ पुं. कटति तीक्ष्णतया रसनां मुखं  
वा आवृणोति । यद्वा कटति वर्षति चक्षुर्मुखनासादिभ्यो  
जलं सांख्यतीति । कट् + उन् ‘कटिवटिभ्यां चैति’ ]  
सविशेषः; ‘कटु रुक्षः स्तन्यमेदःश्लेष्मकण्डूविपापहः ।  
वातपित्तकृदाग्नेयः शोषी पाचनरोचकृत्’—इति  
भावप्रकाशः । चम्पकवृक्षः; चीनकर्पूरः; पटोलः;  
कट्वी लता । ८१३

कट्वरः त्रि. [ कटे वर्षाविरणयोः, ‘छित्वरछत्वरधीवर’  
इत्यादिना ष्वरच् ] कुत्सितः; क्ली. [ कटति वर्षति

रसान्तरम् इति व्युत्पत्तेः ] दधिसरः; व्यञ्जनं; तक्रम्;  
‘दध्नः ससारकस्यात्र तक्रं कट्वरमुच्यते’—इति  
चक्रदत्तः । ३७८

कठिनम् त्रि. [ कठ् + इनन् । उणादिमते तु इनच् ‘बहुल-  
मन्यत्रापि’ इत्यनन ] कठरं; कक्खटं; कूरं; कठोरं;  
निष्ठुरं; दृढं; जठरं; मूर्तिमत्; मूर्तं; खक्खटं;  
कठोलं; जरठं; ककरं; काठरं; कमठायितं; स्तब्धम्;  
‘उन्मूलयंश्च कठिनान् नृपान् वायुरिव द्रुमान्’—  
इति कथासरित्सागरे । ‘न विदीर्ये कठिनाः खलु स्त्रियः’  
—इति कुमारसम्भवे (४।५) । ‘भक्ष्याश्चाति-  
कठिनान् दन्तुरोगी विवर्जयेत्’—इति सुश्रुते । ३४२  
कठोरः त्रि. [ कठति पार्श्वमाचरति । ‘कठिरकिम्या-  
मोरन्’ इति कट् + ओरन् ] कठिनः; ‘प्रवृद्धरोषः स  
कठोरमुष्टिना नदन् प्रहत्यान्तरधीयतासुरः’—इति  
भागवते (३।११।१५) । दारुणः; ‘कठोरदंशमंशकैरुप-  
द्रुतः’—इति भागवते (५।१३।३) । अतिविस्तृतः;  
‘युगान्ताग्निं कठोरजिह्वाम्’—इति भागवते (६।१२।  
२) । पूर्णः; ‘स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्बरः कठोर-  
ताराधिपलाञ्छनच्छविः’—इति माघे (१।२०)  
‘कठोरताराधिपस्य पूर्णन्दोः’—इति तट्टीकायां  
मल्लिनाथः । ३४२

कडः त्रि. [ कडति माद्यतीति, कड् + मदे + पचाद्यच् ]  
मूर्खः । ६०९

कडङ्गरः पुं. [ कडाद् भक्षणीयतण्डुलादेः सकाशाद्  
प्रियते क्षिप्यते दूरीक्रियते इति भावः । कड +  
गिरतेः कर्मणि खच् । यद्वा कडं भक्षणीयं सस्यादि  
गिरति उद्गिरति आत्मनः सकाशात् । कड + गृ +  
अच् ] बुधम्; ‘भूसा’ इति भाषा । ‘नीवारपाकादि  
कडङ्गरीयैरामुह्यते जानपदेनं कन्चित्’ इति—  
रघुवंशे (५।९) । ‘कडङ्गरं बुधम् अर्हन्तीति कडङ्गरीयाः  
वृषादयः’—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ५७८

कडारः पुं. [ गड् सेचने, इति ‘गडेः कड् च’ इति आरन्  
कडादेशश्च धातोः ] पिङ्गलवर्णः । तद्युक्ते त्रि.  
‘सविव्युरम्बरविकाशि चमूसमृत्यं पृथ्वीरजः करभ-  
कण्ठकडारभासाः’—इति माघे (५।३) । ‘कडार-  
स्तृणवह्निवत्’—इत्यन्ये । दासः । ७३५

कणः पुं. [ कणति अग्निभूषमत्वं गच्छति । कण् +

पचाद्यच् ] अग्निकणः; धान्यांशः (५७८); 'कणान् वा भक्षयेद्वदं पिण्याकं वा सकृन्निशि'—इति मनुः (१११२२) । अतिसूक्ष्मः (६८८); 'आनन्दाश्रुकणान् पिबन्ति शकुना निःशङ्कमङ्गेशयाः'—इति शान्ति-शतके (५) । वनजीरकः । ६७

कणा स्त्री. [ कण + स्त्रियां टाप् ] पिप्पली; जीरकं; कुम्भीरमक्षिका । ६१४

कणिशम् क्ली. [ कणो विद्यतेऽस्य इति । इनि, तं श्यति । कणिन् + शो + क । यद्वा कणिनः शेरसेऽस्मिन् । [ कणिन् + शी + ट ] सत्यमञ्जरी । ५७९

कण्टकः पुं - क्ली. [ कण्टति इति, कटि + ण्वुल् + अर्द्ध-च्चादिः ] रोमाञ्चः; क्षुद्रशत्रुः; 'प्रह्लादः कथ्यतां सम्यक् तथा कण्टकशोधने'—इति विष्णुपुराणे (१११९। ३१) । मत्स्याद्यस्थि; नैयायिकादिदोषोन्तिः; द्रुमाङ्गम्; 'कांटा' इति भाषा । 'उपकारगृहीतेन शत्रुणा शत्रुमुद्धरेत् । पादलग्नं करस्थेन कण्टकेनेव कण्टकम्'—इति चाणक्यशतके (२२) । केन्द्रम् । पुं. [ कटि + ण्वुल् ] सूच्यग्रं; क्षुद्रशत्रुः; लोमहर्षः; कुण्डल्यां कर्मस्थानं; दोषः; मकरः; वेणुः; लोकोपद्रवकारी । ६५१

कण्टकारिका स्त्री. [ कण्टकान् इयति ऋच्छति वा । कण्टक + ऋ + कर्तरि ण्वुल्, स्त्रियां टाप्, इत्वं च । यद्वा कण्टकम् ऋच्छति, ऋ + कर्मण्यण् ततः कन् च, ततः प्राग्वत् । तत्कले तु अणि कृते हरीतक्यादित्वाल्लुक् ] क्षुद्रवृक्षविशेषः; निदिग्धका; स्पृशी; व्याघ्री; वृहती; प्रचोदनी; कुली; क्षुद्रा; दुष्पशा; राष्ट्रिका; अनाक्रान्ता; भण्टाकी; सिही; धावनिका; कण्ट-कारी; कण्टकिनी; दुष्प्रघाषिणी; निदिग्धा; धावनी; क्षुद्रकण्टका; बहुकण्टा; क्षुद्रफला; कण्टालिका; चित्रफला; 'मुस्तामृतामलक्षयश्च नागरं कण्टकारिका । कणाचूर्णान्वितः क्वाथस्तथा मधुसमन्वितः । एका-हिकं वा वेलाद्यं ज्वरजातं व्यपोहति'—इति हारीतः ।

६१९

कण्टः पुं. [ कटि + अच्, इदित्वाश्रुम् । कण् शब्दे, 'कण्टः' इति ठ वा ] श्रीवापुरोभागः; गलः; 'विकच-सरतिजायाः स्तोकिनर्मुक्तकण्ठं निजमिव कमलिन्याः कर्मांगं वन्तजालम्'—इति शाकुन्तले । निकटः; ध्वनिः;

मदनवृक्षः; होमकुण्डाद् वहिरङ्गलिपरिमितस्थानम्; 'खाताद वाह्येऽङ्गुलः कण्ठः सर्वकुण्डेष्वयं विधिः'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । ५१६

कण्ठिका स्त्री. [ कण्ठो भूष्यतयास्त्यस्याः । कण्ठ + ठन् + टाप् । यद्वा कण्ठयति कण्ठं भूषयति या । कठि + णिच् + ण्वुल् + टाप्, अत इत्यञ्च ] कण्ठाभरणम् । 'एकलङ्गी, कंठी'—इति भाषा । ५६३

कण्ठीरवः पुं. [ कण्ठ्यां रवो यस्य ] सिंहः; पारावतः; मत्तहस्ती । २१४

कण्ठरा स्त्री. [ कडि + अर्न् + टाप् च ] महास्नायुः; महानाडी; 'महत्यः स्नायवः प्रोक्ताः कण्ठरास्तास्तु षोडश'—इति भावप्रकाशः । 'तलं प्रत्यङ्गुलीनां याः कण्ठरा बाहुपृष्ठतः'—इति सुश्रुतः । ६३४

कण्ठुः स्त्री. [ कण्ठते शरीरं माद्यति अस्माद् उष्णशोणित-त्वात् । यद्वा कण्ठयति कण्ठयुक्तं करोति शरीरम् । कडि मदे, 'मृगय्वाद्यश्च' इति कु ] कण्ठुः; खर्जुः; कण्ठूया; कण्ठूतिः; पुं. ऋपिविशेषः; 'कण्ठुनमिमुनिः पूर्व-भासीद् वेदविदां वरः । सुरभ्ये गोमतीतीरे स तेषु परमं तपः'—इति विष्णुपुराणे (११५।११) । ६०३

कण्ठुः स्त्री. [ कण्ठुञ् + सम्पदादित्वात् विवप् ] रौग-विशेषः; खर्जुः; कण्ठूया; कण्ठूतिः; कण्ठूयनम्; 'खुजली' इति भाषा । 'अमृतवृषपटोलं मुस्तकं सन्त-पणं खदिरमसितवेश्रं निम्बपत्रं हरिद्रे । विविध-विषयिसर्पान् कुष्ठविस्फोटकण्डूरपनयति मसूरीं शीतपित्तं ज्वरं च'—इति भैषज्यरत्नावली । ६०३

कण्ठूतिः स्त्री. [ कण्ठुञ् + कितन् ] कण्ठुः; 'राज्ञ्या दप्यटदेव्याः स निदर्यैः सुरतोत्सवैः । खण्डयामास कण्ठूति साप्यस्यायै घणां धनैः'—इति राजतरङ्गि-ण्याम् । ६०३

कण्ठूयनम् क्ली. [ कण्ठुञ् + भावे ल्युट् ] कण्ठुः; 'यन्मैघुनादिगृहमेघिसुखं हि तुच्छं, कण्ठूयनेन करयोरिव दुःखदुःखम्'—इति भागवते (७।१।४५) । ६०३

कण्ठूया स्त्री. [ कण्ठु + 'कण्ठ्वादिभ्यो यक्', 'अ प्रत्य-यात्', स्त्रीत्वात् टाप् च ] कण्ठुः । ६०३

कथनम् क्ली. [ कथ्यते इति, कथ वाक्यप्रबन्धे, भावे ल्युट् ] कथा; 'कहना' इति भाषा । 'मिथ्याक्रम-कथनं कूटनुत्यामानम्'—इति पञ्चतन्त्रे । १३८

कथा स्त्री. [ कथ् + चित्पूजिकथिकुम्बिचचित् ] अङ्, टाप् च ] प्रबन्धकल्पना; स्वयंरचना; 'प्रबन्ध-कल्पनां स्तोकसत्यां प्राज्ञाः कथां विदुः। परम्पराश्रया या स्यात् सा मताख्यायिका क्वचित्—इति कोलाहलाचार्यः। 'यद्यद्रोचेत विप्रेभ्यस्तत्तद्द्यादमत्सरः। ब्रह्मोद्याश्च कथाः कुर्यात्पितृणामेतदीप्सितम्—इति मनुः (३।२३१)। वार्ता; वाक्यम्; 'अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते क्व कथा शरीरिषु—इति रघुवंशे (८।४३)। विवरणम्; 'सनत्कुमारो भगवान् पुरा कथितवान् कथाम्। भविष्यं विदुषां मध्ये तव पुत्र-समुद्भवम्—इति रामायणे (१।८।६)। १५२

कदकः पुं. [ कदः मेघ इव कारयति प्रकाशते उपरिभागे।

कद+कै+क ] वितानम्; 'चैदवा' इति भाषा। ३१०

कदनम् क्ली. [ कदयति दुःखं वैक्लव्यं वा प्राप्नोत्यनेन, कद्यते दुःखं प्राप्यतेऽनेन वा। कद् + णिच् + करणे ल्युट्, घटादित्वात् वृद्धिः। कद्यते इति भावे ल्युट्, कद्यते आहन्यते विह्वलीक्रियते निहन्यते वा यत्र। अधिकरणे णिच् ल्युट्, यद्वा कद्यते म्रियते यत्र ] मारणम्; उत्तररामचरिते (५।१०)। पापम्; 'नस्तोऽस्म्यहं कृपणवत्सल ! दुःसहोऽप्रसंसारचक्रकदनाद् प्रसतां प्रणीतः—इति भागवते (७।१।१६)। मर्दः; 'क्रोधेन कदनं चक्रे वानराणां युत्युत्सताम्—इति रामायणे (६।२।२०)। युद्धम्; 'इति ते भर्तृनिर्देश-मादाय शिरसादृताः। तथा प्रजानां कदनं विदधुः कदनप्रियाः—इति भागवते (७।२।१३) ४७८

कदम्बम् क्ली. [ 'कृकदिकडिकटिम्योऽम्बच्' इति कद् + अम्बच् ] निकुरम्बं; समूहः। पुं. [ कद्यते दर्शनाद् विरहिणां चित्तवैक्लव्यं जायतेऽनेन, कद् + करणे अम्बच् ] वृक्षविशेषः; नीपः; प्रियकः; हलिप्रियः; कादम्ब; षट्पदेषुः; प्रावृषेण्यः; हरिप्रियः; वृत्त-पुष्पः; सुरभिः; ललनाप्रियः; कादम्बर्यः; सीधु-पुष्पः; महाद्वयः; कर्णपूरकः; 'कदम्बो मधुरः शीतः कषायो लवणो गुरुः। सरो विष्टम्भकृद् रुक्षः कफस्तन्यानिलप्रदः—इति भावप्रकाशे। ६८६

कदम्बकम् क्ली. [ कदम्ब + संज्ञायां कन् ] समूहः; 'गाहन्तां महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहस्ताडितं, छाया-वदकदम्बकं मृगकुलं रोमन्धमभ्यस्यतु— इति शाकु-

न्तले। पुं. कदम्बवृक्षः; सर्षपः; हरिद्रुः। ६८६

कदर्यः त्रि. [ कुत्सितोऽर्यः स्वामी। 'कुगतीति' समासः ]

क्षुद्रः, कृपणः; 'आत्मानं धर्मकृत्यं च पुत्रदाराश्च पीडयन्। यो लोभात् सञ्चिनोत्यर्थान् स कदर्य इति स्मृतः—इति स्मृतिः। 'तेभ्योऽप्राप्तेभ्यः पृथगर्हाणि कारयाञ्चकार स ह प्रातः सञ्जिहान उवाच 'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः। नानाहिताग्निर्नाद्विद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः—इति छान्दोग्योपनिषदि (५।१।१-

५)। ३४७

कदली स्त्री. [ कदल + गौरादित्वाद् डीष्, यद्वा काय

जलाय दत्यते त्वगस्य, गौरादित्वाद् डीष् ] ओषधि-

विशेषः; रम्भा; मोचा; अंशुमत्फला; काष्ठीला;

कदलः; वारणदुषा; सुफला; सुकुमारा; सङ्क-

त्फला; गुच्छफला; हस्तिविषाणी; गुच्छदन्तिका;

निःसारा; राजेष्टा; बालकप्रिया; ऊरुस्तम्भा;

भानुफला; वनलक्ष्मीः; कदलकः; मोचकः; रोचकः;

लोचकः; वारदृषा; वारणवल्लभा; चर्मवती;

'केला' इति भाषा। 'कदलीशुण्डसदृशं सर्वलक्षण-

संयुतम्। गजहस्तप्रतीकाशं वज्रप्रतिमगौरवम्—इति

महाभारते। करिवैजयन्ती (८०३); हरिणविशेषः;

पताका। १९२

कद्रुः पुं. [ कद् + रु ] पिङ्गलवणः; तद्वति त्रि.। ७३५

कद्रुः स्त्री. [ कद् + रु, यद्वा मृगव्यादित्वात् साधुः 'संज्ञा-

याम्' इत्युङ् ] नागमाता; दक्षकन्या; कश्यपपत्नी;

'रोहिण्यां जज्ञिरे गावो गन्धर्व्यां वाजिनस्तथा। सुर-

साजनयन्नागान् राम ! कद्रुश्च पन्नगान्—इति रामा-

यणे। (३।२०।२९)। ११९

कद्रवः त्रि. [ कुत्सितं वदति यः। वदेः पचाद्यच् । कुत्सितः

वदः इति वा। 'रयवदयोश्च' इति कदादेशः ] कुत्सित-

वक्ता; गह्वंवादी; दुर्वाक्; अतिकुत्सितः; 'सर्वत्र

दयिताधीनं सुव्यक्तं रामपीयकम्। येन जातं प्रियाग्रये

कहदं हंसकोकिलम्—इति भट्टिः (६।१५)। ३७८

कनकम् क्ली. [ कनति दीप्यते इति, कनी दीप्तौ +

'कृजादिभ्यो वुन् ] स्वर्णम्; 'तस्मिन्नद्री कतिचिदवला-

विप्रयुक्तः स कामी, नीत्वा मासान् कनकवलय-

भ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः—इति मेघदूते (२)। पुं. पलाश-

वृक्षः; नागकेशरवृक्षः; घूस्तूरवृक्षः; 'कपालं मानुषं

गृह्य कनकस्य फलानि च—इति इन्द्रजालतन्त्रे । काञ्चनालवृक्षः; कालीयवृक्षः; चम्पकवृक्षः; कास-मर्दवृक्षः; कणगुग्गुलवृक्षः; लाक्षातरुः; शिवः; 'उपकारः प्रियः सर्वः कनकः काञ्चनच्छविः'—इति महाभारते । यदुवंशीयदुर्दमपुत्रः; 'दुर्दमस्य सुतो धीमान् कनको नाम नामतः'—इति हरिवंशे (३३।६) ।

१७४

कनका स्त्री. [ कनति दीप्यते । कन् + वुन्, टाप् ] अग्नेः सप्तजिह्वासु एका । ६८

कनकालुका स्त्री. [ कनकनिर्मित आलुः । सलिलाद्याधार-पात्रविशेषः, संज्ञायां कन् टाप् च ] स्वर्णकलसः; भृङ्गारः । ३१५

कनिष्ठः त्रि. [ अतिशयेन युवा अल्पो वा, इष्टन् कनादेशश्च ] पश्चाज्जातः; यवीयान्; अवरजः; अनुजः; कनीयान्; कन्यसः; यविष्ठः; 'ज्येष्ठश्चैव कनिष्ठश्च संहरेतां यथोदितम् । येऽप्ये ज्येष्ठकनिष्ठाम्यां तेषां स्यान्मध्यमं धनम्'—इति मनुः (९।११३) । शिवः; 'पवित्रं त्रिक-कुन्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिङ्गलः'—इति महाभारते । ५०६

कनिष्ठा स्त्री. [ कनिष्ठ + डीपादिकं वाधित्वा अजादि-त्वाद् टाप् ] दुर्बलाङ्गुली; दुर्बलाङ्गुलिः; 'कनिष्ठाया-मप्यङ्गुल्यां भ्रातुर्मम स राक्षसः । दुःखं कर्तुमपर्याप्तो देवि ! कस्माद्विपीदसि'—इति रामायणे (३।५।१७) । घोरादितिसृणां द्विषाभेदान्तर्गतनायिकाविशेषः । त्रि. 'पुत्रः कनिष्ठो ज्येष्ठायां कनिष्ठायां च पूर्वजः—इति मनुः (९।१२२) । 'यदि प्रथमोढायां कनीयान् पुत्रो जातः पश्चाद्ढायां च ज्येष्ठः'—इति कुल्लूकभट्टः ।

५३८

कनिष्ठिका स्त्री.—कनिष्ठा; कनीनिका; कनीनी; कनिष्ठाङ्गुलिः । ५३६

कनीनिका स्त्री. [ कन् + ईन, संज्ञायां कन्, ततष्टाप् अत इत्वम् ] चक्षुस्तारा; कनिष्ठाङ्गुलिः । ५२०

कन्दम् क्ली.—पुं. [ कन्दयति जिह्वायां वैकल्यं जनयति रोदयति वा भक्षयन्तं जनम् । कदि + णिच् + अच् । यद्वा कन्दते कन्द इति नाम्ना ज्ञायते । कदि + कर्मणि घञ् ] सूरणः; सस्यमूलः; गृञ्जनम्; 'वन निवसतां नित्यं कन्दमूलफलशिनाम्'—इति महाभारते । 'शीतं निक्षारवारिपानमशनं कन्दः सहाया मृगाः'—इति शान्ति-

शतके (२।२०) । पुं. [ कं जलं ददातीति, क + दा + क, कन्दति कन्दयति कन्दते वा, कदि आह्वाने रोदने च, अच् घञ् वा ] मेघः; योनिरोगविशेषः; 'गैरिका-मास्थि जन्तुघ्नं रजन्यञ्जनकटफलाः । पूरयेद्योनि-मेतेपां चूर्णैः क्षौद्रसमन्वितैः । त्रिफलायाः कषायेण सक्षौद्रेण च सेवयेत् । प्रमदा योनिकन्देन व्याधिना परिमुच्यते'—इति भावप्रकाशः । ६८२

कन्दरः पुं.-स्त्री. [ केन जलेन दीर्यते विदीर्यतेऽसौ । दृ + कर्मणि अप् ] गुहा; 'निर्हृदिश्चेन्मुरज इव ते कन्दरेषु ध्वनिः स्यात्'—इति मेघदूते (५८) । कृत्रिमोऽकृत्रिमो वा सजलो निर्जलो वा गृहाकारो गिरिनितम्बदेशः; दरी; कन्दरी; कन्दरा; दरः; 'नानामलप्रलवणैर्नाना कन्दरसानुभिः'—इति भागवते (४।६।११) । पुं. [ कं मातङ्गशिरो दीर्यतेऽनेन, दृ + करणे अप् ] अङ्कुशः; क्ली. [ केन जलेन दीर्यते, दृ विदारणे + कर्मणि अप् । कं जलं श्लेष्मजनितं दृणाति नाशयतीति वा । दृ + अच् ] आर्द्रकम् । १६७

कन्दरा स्त्री. [ कन्दर + टाप् ] गुहा (जीवन्ते कन्दरी इत्यपि) । १६७

कन्दर्पः पुं. [ कमित्यव्ययं कुत्सायां, कं कुत्सितो दर्पः यस्मात् । यद्वा, कं सुखं तेन तत्र वा दृष्यति । कम् + दृप् + अच् । कं ब्रह्माणं प्रति दर्पितवान् वा ] कामदेवः; 'साहन्त्वामभिषेकार्थमवतीर्णं समुद्रगाम् । दृष्ट्वैव पुरुषव्याघ्र ! कन्दर्पेणाभिमूर्च्छता'—इति महा-भारते । ध्रुवकभेदः; 'त्रयोविंशतिवर्णाङ्घ्रिध्रुवः कन्दर्पसंज्ञकः । वीरे वा करुणे वा स्यात् खण्डताले विधीयते'—इति सङ्गोतदामोदरः । ३२

कन्दुः पुं.-स्त्री. [ स्कन्दति शोषयति जलादिकं, 'स्कन्देः सलोपश्चेत्सु ] लौहमयपाकपात्रं; स्वदनी; 'तन्दूर' इति भाषा । ३१३

कन्धरा स्त्री. [ कं शिरो धरतीति, कम् + धृ + अच् + टाप् ] कन्धिः; ग्रीवा; 'कन्धरावाहुसवयनां च भङ्गे मध्यमसाहसः'—इति याज्ञवल्क्यः । ५१६

कन्धकुब्जा स्त्री.—कन्याकुब्जः, देशविशेषः । २८७

कन्या स्त्री. [ कन् दीप्ती + अघ्न्यादित्वाद् यक्, 'कन्यायाः कनीन् चेति' निर्देशात् न डीप् ततष्टाप् ] कुमारी; दशवर्षीया; कन्यका; कन्याका; 'यस्मात् कामयते

सर्वान् कमेधतिश्च भाविनि ! तस्मात् कन्येह सुश्रोणि ! स्वतन्त्रा वरवर्णिनि'—इति महाभारते । अविवाहिता (४८८); नारी; ओषधिविशेषः; धृतकुमारी; 'कान्तैर्द्वादशभिः पत्रैर्मयूराङ्गरूपोपमैः । कन्दजा काञ्चनक्षीरी कन्या नाम महोषधी'—इति सुश्रुते । स्थूलैला; वाराहीकन्दः; वन्ध्याकर्कोटकी; मेपादिद्वादशराश्यन्तर्गतषष्ठराशिः—'पाण्डुद्विपात् स्त्री-द्वितनुर्यमाशा निशामरुच्छीतसमोदयक्षमा । कन्याद्वं-शब्दा शुभभूमिवैश्यरूक्षाल्पसङ्गप्रसवा शुभा च'—इति नीलकण्ठीजातके । 'कन्यालग्नोद्भवो मर्त्यो नाना-शास्त्रविशारदः । सौभाग्यगुणसम्पन्नः सुन्दरः सुरतप्रियः—इति कोष्ठीप्रदीपः । सुता; पुत्री; 'कन्याया निष्कमो नास्ति वृद्धिश्राद्धं न विद्यते । नामान्नप्राशनं चूडां कुर्यात् स्त्रीणाममन्त्रकम्'—इति महानिर्वाणतन्त्रे । तीर्थ-विशेषः; 'ततो गच्छेत् धर्मज्ञ ! कन्यातीर्थमनुत्तमम् । कन्यातीर्थे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्'—इति महाभारते । ४८३

कन्याकुब्जः पुं. [ कन्याः कुब्जाः यत्र देशे सः, वायुना हि अस्मिन् देशे कन्याः कुब्जीकृता अतोऽस्य तथात्वम् ] कान्यकुब्जदेशः; कुशस्थलम् (अयं कालीनदीतटे स्थितः); 'कन्याकुब्जेऽपि वत्सोममिन्द्रेण सह कौशिकः'—इति महाभारते । २८७

कन्यागर्भः पुं. [ कन्यायाः गर्भः ] कानीनः; कन्यापुत्रः ।

५०१

कन्यापुत्रः पुं. [ कन्यायाः पुत्रः ] कन्यकया जातः; अनूढा-पत्यम् । ५०१

कपटः पुं.—क्ली. [ पटतीति पटः, पट्+अच्, कस्य सतो ब्रह्मणोऽपि पटः आवरकः । यद्वा कप्+अट् ] अयथार्थ-व्यवहारः; प्रतारणा; व्याजः; दम्भः; उपधिः; छद्म; कैतवं; कूटं; कल्कं; छलम्; मिषं; कैरवम्; 'नरेन्द्रसिंह ! कपटं न वोढुं त्वमिहार्हसि'—इति महर्षि-भारते । दनुपुत्रः; 'निचन्द्रश्च निकुम्भश्च कुपटः कपट-स्तथा । एते ह्योता दनोर्वशे दानवाः परिकीर्तिताः'—इति महाभारते । ७०९

कपर्दः पुं. [ पत्रे पूरणे+सम्पदादित्वाद् भावे विवप्, 'राल्लोपः' इति बलोपे पर् पूर्तिः । केन सुखेन जलेन वा परं पूर्ति दादाति इति । क+पर्+दा+सुपीति'

योगविभागात् क । कस्य गङ्गाजलस्य परा पूरणेन दापयति शोधयति वा । क+पर्+दैप् शोधने, 'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क ] शिवजटा; 'कमनीय-जला कम्पा कपर्दिषु कपर्दगा'—इति काशीखण्डे (२९। ४४) । वराटकः (६६४); 'पञ्चभिः कपर्दैः पञ्चिका नाम द्यूतमस्ति'—इति पाणिनि (२।१।१०) सूत्रस्य सरला टीका । १४

कपर्दी [ न् ] पुं. [ कपर्दी जटाजूटोऽस्त्यस्य । इनि ] शिवः; 'अजश्च बहुरूपश्च गन्धधारी कपर्द्यपि'—इति महाभा-रते । 'कपर्दी कैलासं करिवरमथोऽयं कुलिशभूत'—इति कालिदासः । 'शुनमष्ट्रा व्यचरत् कपर्दी'—इति ऋग्वेदे (१०।१०।२।८) । ११

कपाटम् त्रि. [ कं वायुं मस्तकं वा पाटयतीति । पट् गतौ +णिच्+कर्मणि-उपपदे अण् ] द्वाराच्छादककाष्ठ-फलकविशेषः; अररं; कवाटः; कपाटी; कंवाटी; अररी; अररिः; द्वारकण्टकम्; असारम्; 'चक्रे च वेश्मनस्तस्य मध्ये नाति महाबिलम् । कपाटयुक्तमज्ञातं समं भूम्याश्च भारत'—इति महाभारते । [ कं शिरः इत्युपलक्षणेन मनुष्यादीनां ग्रहणमिति बोध्यम् । कं वातं वा पाटयति वारयति गृहद्वारदेशं आवृणोतीत्यर्थः; मनुष्यवातादीनां गर्ति रणद्धि वा । क+पट्+णिच्+अण् ] 'द्वाराणि समुपावृण्वन् कपाटान्यवघट्टयन्'—इति रामायणे । २८८

कपालः पुं.—क्ली. [ कं मस्तकं पालयतीति, क+पालि+अण् । यद्वा कम्पते यः, कपि चलने+तमिविशि-विडिगृणिकुलिकपिपलिपञ्चिन्म्यः कालन् इति कालन् । कपिनिर्देशाद् नलोपः ] शिरोऽस्थि; कर्परः; 'द्वौ शङ्खौ कपालानि चत्वारि शिरसस्तथा'—इति याज्ञवल्क्यः (३।९०) । घटादेः खण्डम् (८०४); 'घटादीनां कपालादौ द्रव्येषु गुणकर्मणोः । तेषु जातेश्च सम्बन्धः समवायः प्रकीर्तितः ॥' समूहः; मृण्मयकर्परादिभिक्षा-पात्रम्; 'कपालं वृक्षमूलानि कुचैलमसहायता । समता चैव सर्वस्मिन्नेतन्मुक्तस्य लक्षणम्'—इति मनु. (६।४४) । पुरोडाशः; 'कपालानि चोपदधाति पुरोडाशं चाधिश्रयति'—इति शतपथब्राह्मणे । कुष्ठरोगविशेषः; 'कृष्णारुणकपालाभं यद्रक्षं परुषं तनु । कापालं तोदबहुलं तत्कुष्ठं विपमं स्मृतम्'—इति माघवकरः । ६३३



कपिः पुं. [ कम्पते यः सदा । कपि चलने, 'कुण्डिकम्प्योर्न-  
लोपश्च' इति इप्रत्ययः ] वानरः; 'विड्वराहखरोप्राणां  
गोमायोः कपिकाकयोः । प्राश्य मूत्रपुरीषाणि द्विज-  
श्चान्द्रायणं चरेत्—इति मनुः (११।१५४) । सिंहाकः;  
मधुसूदनः; 'सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः'—  
इति महाभारते । धात्रिका; करञ्जभेदः; [ कादुदकात्  
पृथ्वीं पाति इति ] वराहः; रक्तचन्दनं; पिङ्गलम्;  
तद्वर्णवति त्रि. । [ 'कं जलं पिबति किरणैः इति कपिः  
सूर्यः'—इत्युपनिषद्व्याख्यायां रामानुजाचार्याः ] । २३१  
कपिञ्जलः पुं. [ कपिरिव जवते वेगेन गच्छति, यद्वा कम्  
श्रुतिमुत्तमं शब्दम् पिञ्जयति, कपिवत् पिञ्जलो वा,  
ईपत्पिङ्गलवर्णो हरितालवर्णो वा । पृषोदरादित्वात्  
साधुः ] चातकपर्णी; पक्षिविशेषः; तेजलः; तित्तिरि-  
पक्षी; 'कपिञ्जल इति प्राज्ञैः कथितो गौरतित्तिरः ।  
कपिञ्जल इति ख्यातो लोके कपिशतित्तिरः' ('तित्तिरः'  
अदन्तोऽपि)—इति भावप्रकाशः । 'पित्तश्लेष्मदिकारेषु  
सरक्तेषु कपिञ्जलाः । मन्द्वातेषु शस्यन्ते शैत्यमाधुर्य-  
लाघवात्—इति चरकः । 'रक्तपित्तहरः शीतो लघु-  
श्चापि कपिञ्जलः । कफोत्थेषु च रोगेषु मन्द्वाते च  
शस्यते ।' ऋषिकुमारभेदः; श्वेतकेतुपुत्रस्य पुण्डरीकस्य  
वन्धुः; 'सखे ! कपिञ्जल ! किं मामन्यथा सम्भावयसि'  
—इति कादम्बर्याम् । २५४

कपिलः पुं. [ कम् कान्ती, 'कमेः पश्च' इति इलच्  
पश्चान्तादेशः ] पिङ्गलवर्णः; तद्युक्ते त्रि. । नीलपीतः;  
'कपिलो रोचनाच्छविरित्यन्ये'—इति भरतः । 'अनन्तः  
कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः'—इति महाभारते ।  
महादेवः; 'कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः'—  
इति महाभारते । विष्णुः; 'सनात्सनातनतमः कपिलः  
कपिरव्ययः'—इति महाभारते । नागविशेषः; 'शङ्खश्च-  
शङ्खपालश्च कपिलो वामनस्तथा'—इति हरिवंशे  
(३।११४) । दानवभेदः; 'अयामुखः शम्बरश्च कपिलो  
वामनस्तथा'—इति हरिवंशे (३।८०) । मुनिविशेषः;  
'गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः'—इति  
भगवद्गीता (१०।२६) । कश्चिन् स्वनामख्यातो मुनिः;  
रघुवंशे (३।५०) । अग्निः; कुक्कुरः; सिंहाकनाम-  
गन्धद्रव्यम् । ७३६

कपिशः पुं. [ कपिः तद्वद् वर्णः अस्त्यस्त्य, कपिनामास्यास्ति

वा । लोमादित्वात् श ] श्यावः; कृष्णपीतमिश्रितवर्णः;  
तद्युक्ते त्रि. ; 'सन्ध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम  
राक्षसः । अतिष्ठन्मार्गमावृत्य रामस्येन्दोरिव ग्रहः'—  
इति रघुवंशे (१२।२८) । शिवः (सर्ववर्णमयत्वात्);  
'कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः'—इति  
महाभारते । सिंहाकनामगन्धद्रव्यम् । ७३५

कपोतः पुं. [ को वायुः पोतः नीरिवास्य । यद्वा कवृ वर्णे +  
'कवेरोतच् पश्च' इति ओतच् वस्य पश्च ] गृहकपोतः;  
कलरवः; पारावतः; पारापतः; छेद्यः; रक्तलोचनः;  
गृहकुक्कुटः; 'कन्नूतर' इति भाषा । यथा चरके—  
'कषायमधुराः शीता रक्तपित्तनिवर्हणाः । विपाके  
मथुराश्चैव कपोता गृहवासिनः ।' 'श्रूयते हि कपोतेन  
शत्रुः क्षरणमागतः । अर्चितश्च यथान्यायं स्वैश्च  
मांसैर्निमन्त्रितः'—इति रामायणे । वनकपोतः; चित्र-  
कण्ठः; कोकदेवः; धूसरः; धूम्रलोचनः; दहनः;  
अग्निसहायः; भीषणः; गृहतागनः; 'कपोतो वृहणो  
बल्यो दातपित्तविनाशनः । तर्पणः शुक्रजननो हितो  
नृणां रुचिप्रदः'—इति हारीतः । २५४

कपोतपाली स्त्री. [ कपोतान् पालयति इति । कपोत +  
पाल् + कर्मण्यण् डीप् च । केचित्तु पाल् + अच्,  
गौरादित्वान् डीप् ] कपोतपालिका; विटङ्कः; सौधादि-  
प्रान्तकाष्ठादिरर्चितपक्षिस्थानम्; 'चिक्रंसया कृत्रिम-  
पत्रिपद्भक्तेः कपोतपालीषु निकेतनानाम्'—इति माघे  
(३।५१) । ३०३

कपोलः पुं. [ कम्पते, 'कपिगण्डकटिपटिन्य ओलच्'  
इति ओलच्, कपि इति निर्देशात् नलोपः । कं नुङ्  
पोलतीति वा, पुन्त् महत्त्वे, कर्मण्यण् ] नृवतित्यक्-  
सन्निधिभागः; गण्डः; गल्लः; 'गाल' इति भाषा ।  
'तत्र दृणावरोधानां भर्तृषु व्यवतिद्रमम् । कपोल-  
पाटलादेशि वभूव रघुचेष्टितम्'—इति रघुवंशे (४।६०) ।  
५२२

कफः पुं. [ केन जलेन फलति इति । फल् निष्पत्ती, 'अन्य-  
प्वपि' इति ड । के धारसि फलति वा, प्राग्वद् ड ] शरीर-  
स्वयानुविशेषः; श्लेष्मा; संघातः; सौम्यधातुः; घनः;  
बली; 'कफधाम्नान्तु दोषाणां यत्करोत्यवलम्बनम् ।  
ततोऽलम्बकाख्याति श्लेष्मा प्राप्नोत्युरःस्थितः' ।

कफणिः पुं.—स्त्री. [ केन सुखेन फणति अनायासेन सङ्कोच-  
विकोचनत्वं प्राप्नोति स्फुरति वा । फण् गतौ, स्फुर्  
संचलने इति वा धातोः इन्, पृषोदरादित्वात् साधुः ]  
कफोणिः; कूर्परः । ५३३

कफोणिः पुं. [ कं सुखं स्फोरयति, स्फुर् स्फुरणे संचलने  
च, प्यन्तात् 'अच इः ।' अथवा केन सुखेन फणति स्फुरति  
वा, स्फुर् फण् वा + इन् उभयत्र पृषोदरादित्वात्  
साधुः ] भुजमध्यग्रन्थिः; कूर्परः; 'कुहनी' इति भाषा ।

५३३

कवन्धः पुं.—क्ली. [ केन प्राणवायुना पुनर्वध्यते सम्बध्यते,  
मस्तकहीनस्यापि प्राणावेशात् जीवतो नरस्येव क्रिया-  
कारित्वशक्तित्वात् तथात्वम् । क + बन्ध + घञ् ]  
क्रियायुक्तापमूर्द्धकलेवरम्; 'कवन्धाश्छिन्नशिरसः खड्ग-  
शक्त्युष्टिपाणयः'—इति मार्कण्डेये । 'नानानागयुतं  
तुरङ्गनियुतं सार्द्धं रथानां शतं, पत्तीनां दशकोटयो  
निपतिता एकः कवन्धो रणे । तादृक् कोटिकवन्ध-  
नर्त्तनविधौ खेलच्चलत्क्षेशिरस्तेषां कोटिनिपातने  
रघुपतेः कोदण्डघण्टारवः ।' पुं. राहुः; रक्षोविशेषः;  
उदरं; धूमकेतुः; क्ली. जलम् । ६३०

कबरः, कवरः त्रि. [ कवृ वर्णे, बाहुलकादरन् ] चित्रः,  
मिश्रवर्णः । ७४१

कबरी, कवरी स्त्री. [ कुड् शब्दे, 'कोरन्' इत्यरन्, जान-  
पदेति डीप् ] केशवेषः; सीमन्तः, 'जूडा' इति भाषा ।

५३०

कमठः पुं. [ के जले मठति वसतीति । क + मठ् निवासे,  
पचाद्यच् ] कच्छपः; कूर्मः; 'कमठपृष्ठकठोरमिदं धनु-  
र्मधुरमूत्रिसौ रघुनन्दनः'—इति हनुमन्नाटके । 'कमठा-  
त्कामठं मांसं रामठन समन्वितम् । यदि सर्पिःसमा-  
युक्तं का सुधा वसुधातले'—इत्युद्भटः । भगवद्विष्णो-  
द्वितीयावतारः; 'अशेषतापत्पानां समाश्रयमठो हठः ।  
अशेषयोगयुक्तानामाधारकमठो हठः'—इति हठयोग-  
दीपिकायाम् । वंशः; दैत्यविशेषः; मुनिभाजनं;  
शल्लकी; नृपविशेषः; 'कक्षसेनः क्षितिपतिः क्षेमक-  
श्चापराजितः । काम्बोजराजः कमठः कम्पनश्च महा-  
बलः'—इति महाभारते । ६५६

कमण्डलुः पुं.—क्ली. [ कस्य प्रजापतेः जलस्य वा मण्डः  
सारः तं लाति आदत्ते । क + मण्ड + ला + मित-

द्रवादित्वात् ङु ] संन्यासिनां मृत्काष्ठादिमयात्रं;  
कुण्डी; करकः; 'मैखलामजितं दण्डमुपवीतं कमण्डलुम् ।  
अप्सु प्रास्य विनष्टानि गृह्णीतान्यानि मन्त्रवित्'—  
इति मनुः (२।६४) । प्लक्षवृक्षः; कमण्डलतरः । ४११

कमलम् क्ली. [ कमेः णिङ्भावे वृषादित्वात् कलच् । कम्  
जलम् अलति अलङ्करोति वा । कम् + अल् + अच् ।  
अन्तर्णिजन्तो वा ] जलपुष्पविशेषः; पद्मं; पाथोजं;  
नलं; नलिनम्; अम्भोजम्; अम्बुजम्; अम्बुजन्म;  
श्रीः; अम्बुरुहम्; अम्बुपद्मं; सुजलम्; अम्बोरुहं;  
सारसं; पङ्कजं; सरसीरुहं; कुटपं; पाथोरुहं; पुष्करं;  
वाजं; तामिरसं; कुशेशयं; कज्जं; कजम्; अरविन्दः  
शतपत्रं; विसकुसुमं; सहस्रपत्रं; महोत्पलं; वारिरुहं;  
सरसिजं; सलिलजं; पङ्केरुहं; राजीवम्; 'अगच्छ-  
दंशेन गुणाभिलाषिणी नवावतारं कमलादिवोत्पलम्'—  
इति रघुवंशे (३।३६) । 'कमलं शीतलं वर्णं मधुरं  
कफपित्तजित्'—इति भावप्रकाशः । जलं; ताम्रं;  
क्लोम; औषधं; सारसपक्षी । पुं. [ कमेः कलच्,  
यद्वा को वायुः तस्य अमः गतिः तं लाति आदत्ते ।  
क + अम् + ला + क ] मृगभेदः; ध्रुवकविशेषः; 'उक्तो  
मलयतालेन लघुमध्ये स्फुरद्गुरुः । सप्तदशाक्षरैर्युक्तः  
कमलोऽयं भयानके'—इति सङ्गीतदामोदरः । ६७९

कमला स्त्री. [ काम्यतेऽती, कमेः वृषादित्वात् कलच्,  
कमलम् अस्त्यस्याः इति वा, अर्श आद्यच् टाप् च ]  
लक्ष्मीः; 'कमला श्रीर्हरिप्रिया'—इत्यमरः । वरस्त्री;  
कमलानिम्बुकः; 'रम्भाफलं तिन्तिडीकं कमला नाग-  
रङ्गकम् । फलान्येतानि भोज्यानि एम्योऽन्यानि  
विवर्जयेत्'—इति तन्त्रसारे । छन्दोविशेषः; 'द्विगुणन-  
गणसहितः सगण इह हि विहितः । फणिपतिमतिविमला  
क्षितिप भवति कमला'—इति वृत्तरत्नाकरे । नर्तकी-  
विशेषः; 'नर्तकी कमला नाम कान्तिमन्तं ददर्श तम् ।  
असामान्याकृतेः पुंसः सा ददर्श सविस्मया'—इति  
राजतरङ्गिण्याम् (४।४२४) । पुरीविशेषः; 'राजा  
मह्नाणपुरकृतं चक्रे विपुलकेशवम् । कमला सा स्वना-  
म्नापि कमलाख्यं पुरं व्यधात्'—इति राजतरङ्गिण्याम्  
(४।४८३) । गङ्गा; 'कमला कल्पलतिका काली  
कलुषवैरिणी'—इति काशीखण्डे (२९।४४) । ३१

कमलासनः पुं. [ कमलमासनमस्य, विष्णोर्नाभिपद्मजात-

त्वात् तथात्वम्] ब्रह्मा; 'यस्मिन् बृहत्पुष्करं ज्वलन-  
पिखामलकनकपद्मायुतायुतं भगवतः कमलासनस्या-  
ध्यासनं परिकल्पितम्'—इति भागवते (५।२०।३०) ।  
स्त्री. (कमलाया लक्ष्म्या असनं क्षेपणं दानमित्यर्थः)  
'तात्पर्यं कमलासने विचरितं गौरीहितैः पालिता'—  
इति राजेन्द्रकर्णपुरे (५३)। ७

कम्बिता [ ऋ ] त्रि. [ कम् + णिङ्भावे तृच् ] कामुकः ।

४९७

कम्पः पुं. [ कपि चलने + भावे षच् ] गात्रादिवचनं;  
'शेषपुः; शेषनं; शेषः; कम्पनम्; 'न कम्पो वायुना  
दिना'—इति वैद्यकम् । 'मुञ्चति न तावदस्या भयकम्पः  
कुसुमकोमलं हृदयम्'—इति विक्रमोर्वशीये । ६०१

कम्बलः पुं. [ कं कुत्सितं शिरो वा कं सलिलं वा बलते,  
बल् संवरणे सञ्चारणे च, अच् । यद्वा कम्बु गतो  
इति धातोः वृषादित्वात् कलच् ] मेघादिलोमरचित-  
वस्त्रासनादिरूपः; रल्लकः; वैशकः; रोमयोनिः;  
रेणुका; प्रावारः; 'न तथा सुखयत्यग्निर्न प्रावारा न  
कम्बलाः । शीतवातादितं लोकं यथा तव मरीचयः'  
—इति महाभारते (३।३।५१) । सास्ना; कृमिः;  
उत्तरासङ्गः; मृगविशेषः; नागभेदो; अनयोरेकः  
अधस्तात् पाताले वासुकिप्रमुखो निवसति, अपरस्तु  
वरुणदेवसमास्यः । यथा—'ततोऽधस्तात् पाताले  
नागलोकपतयो वासुकिप्रमुखाः शङ्खकुलिकमहाशङ्ख-  
श्वेतवनञ्जयवृतराष्ट्रशङ्खचूडकम्बलाश्वतरदेवदत्तादयो  
महाभोगिनो महामर्षा निवसन्ति'—इति भागवते  
(५।२४।३१) । 'कम्बलाश्वतरौ नागौ धृतराष्ट्रवला-  
हकौ'—इति भागवते (२।९।१९) । कम्बलाद्यधिष्ठित-  
प्रयागान्तर्वतिनागतीर्थविशेषः; 'प्रयागं सम्प्रतिष्ठानं  
कम्बलाश्वतरौ तथा । तीर्थं भोगवती चैव वेदिरेया  
प्रजापतेः'—इति महाभारते (३।८।५।७५) । ५५१

कम्बलिवाह्यम् क्ली. [ कम्बलः सास्ना अस्ति एषाम्  
इति । इति, कम्बलिनिर्वूर्परह्यम् । वह् + कर्मणि ण्यत् ]  
वृषवहनीयशकटं; गन्त्री; गान्त्री; कम्बलिवाह्यकम् ।

४४४

कम्बुः पुं. - क्ली. [ कम् + 'जश्वाद्यश्चेति' निपातनात्  
त्तष्; कम् + उन् वृक् चैति वा ] शङ्खः; माघे (१।८।  
५४) । 'कम्बुञ्जकृषारचापगदासिचर्मव्यर्त्रैर्हरण्य-

भुजैरिव कर्णिकारः'—इति भागवते (४।७।२०) ।  
पुं. बलयं; शम्बुकः; हस्ती; कर्बुरवर्णः; श्रीवा;  
नलकम् । ६६४

कम्बुश्रीवा स्त्री. [ कम्बुवत् रेखात्रयशोभिता श्रीवा ]  
कम्बुवाकृतिरेखात्रययुक्ताश्रीवा; कम्बुः शङ्खः तद्वत्  
रेखात्रययुक्ता श्रीवा यस्येति विग्रहे वाच्यलिङ्गः, यथा—  
'कम्बुश्रीवः पुष्कराक्षो भर्ता युक्तो भवेन्मम'—इति  
महाभारते (१।१५३।१८) । ५१७

कम्पः त्रि. [ कामयतीति, कम् + 'नमिकम्पीति' र ]  
कामुकः; (काम्यतेऽस्ती) कमनीयः; सुन्दरः; स्त्री.  
गङ्गा, यथा काशीखण्डे (२९।२४) 'कमनीयजला  
कम्पा कपदिषु कपदंशा । 'जहृन् प्रतीपं शान्तनुं कामितवती  
कम्पा कामुका'—इति तट्टीका । 'लोलां दृष्टिमितस्ततो  
वित्तनुते सभ्रूलताविभ्रमामाभुग्नेन विवर्तिना वलिमता  
मध्येन कम्पस्तनी'—इति शाकुन्तले (१ अङ्के) । ३८१

करः पुं. [ कं सुखं राति ददातीति । क + रा + क ]  
किरणः; 'तीक्ष्णः पटुदिनकरः करैस्तापयते जगत्'—  
इति रामायणे (६।११।४४) । (४३३) राजस्वं;  
भागधेयः; बलिः; कारः; प्रत्यायः; 'यथात्पाल्यमद-  
न्याद्यं वार्योकोवत्सपटपदाः । तथात्पाल्यो ग्रहीतव्यो  
राष्ट्राद्राज्ञाब्दिकः करः'—इति मनुः (७।१२७।१३३) ।  
हस्तः (५११); हस्तिशुण्डः । [ कीर्यते विक्षिप्यतेऽस्ती,  
वत्याद्यर्थे कर्मणि अप्, हस्तकिरिशुण्डयोस्तु करणे अप् ]  
'एवन्तु ब्रुवतस्तस्य मैत्रेयस्य विशाम्यते । ऊहं गजकरा-  
कारं करेणाभिजघान सः ।' कर्मोपपदे कर्तृवाचकः,  
यथा—सुखकर इत्यादिः । 'तीक्ष्णः पटुदिनकरः करैस्तापयते  
जगत् । प्रतिलोमश्च ते वायुस्त्वत्पराभवलक्षणम्'—  
इति रामायणे (६।११।४४) । वर्षोपलः । ३९

करकम् क्ली. - पुं. [ किरति विक्षिपति जलम् अस्मात्,  
करोति जलमत्र वा । कृ वा कृ 'कृबादिभ्यः संज्ञायां  
वुन्' इति वुन् ] वर्षोपलः; धनोपलः; कमण्डलुः  
(३१७); करङ्कः; 'उपानही च वासश्च धृतमन्येन  
धारयेत् । उपवीतमलङ्कारं स्रजः करकमेव च'—इति  
मनुः (४।६६) । पुं. [ करोति वाय्वादिजनितदोषाभावं,  
कृणोति फलपत्रादिभिः वायुपित्तादिदोषं नाशयति वा ।  
कृन् हिंसायाम्, 'कृबादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन् ]  
दाडिमवृक्षः; राजकरः; पक्षिविशेषः; लट्वाकरश्च-

वृक्षः; पलाशवृक्षः; कोविदारवृक्षः; वकुलवृक्षः; करीरवृक्षः; नारिकेलास्थि; 'हिरण्यमयश्च करकर्मजिनः स्फाटिकैरपि'—इति रामायणे (५।१४।४९) । ५९  
**करञ्जः** पुं. [ कं सुखं शिरो जलं वा रञ्जयतीति । क + रञ्ज् + णिच् + अण् ] करजवृक्षः; वृक्षविशेषः; 'कंजा' इति भाषा । 'करञ्जकः स्यात् करजः पत्रसूची फलाशनः । अङ्गारमञ्जी षड्ग्रन्थो मर्कटयङ्गारवल्लरी । करञ्जभेदाश्चत्वारो विज्ञेया लोकतस्त्वमे'—इति शब्द-रत्नावली । 'चिरदिल्लो नक्तमालः करञ्जश्च करञ्जकः । सोमवल्कः कलिङ्गस्तुः पूतिकः कलिकारकः । प्रकीर्यः पूतिकरजः पट्टिलः सुमना अपि । करञ्जभेदाः षड्ग्रन्थो मर्कटयङ्गारवल्लरी'—इति जटाधरः । 'पादपानां च या माता करञ्जनिलया हि सा । वरदा सा हि सौम्या च नित्यं भूतानुकम्पिनी । करञ्जे तां नमस्यन्ति तस्मात् पुत्रार्थिनो नराः'—इति महाभारते (३।२२९।३५) । [ किरति विक्षिपति धार्मिकानिति, कृ विक्षेपे + बाहुलकादौपादिकोऽञ्जन्प्रत्ययः ] चर्मद्वेष्टरि त्रि.; 'त्वं करञ्जमुत पर्य' ; वधोस्तेजिष्ठयातिथिगवस्य वर्तनी'—इति ऋग्वेदे (१।५३।८) । १९८

**करटः** पुं. [ किरति विक्षिपति मदवारि इति । कृ + अट् । कं कुत्सितं रटति शब्दं करोतीति । रट् शब्दे, पचाद्यच् वा ] हस्तिगण्डः; 'कथं हि भिन्नकरटं पश्चिनं वन-गोचरम् । उपस्थाय महानागं करेणुः शूकरं स्पृशेत्'—इति महाभारते (३।२७७।३८) । काकः (२४५); 'वरमिहं गङ्गातीरे सरटः करटः'—इति गङ्गास्तोत्रे । कुसुम्भवृक्षः; निन्द्यजीवनः; एकादशाहादिश्राद्धं; दुर्दुर्लभः; नास्तिक इति यावत् । इदं तु क्षत्रियभेदाभि-प्रायेणोक्तम् । 'मालवा वल्लवाश्चैव तथैवापरवर्तकाः । कुलिन्दाः कालदाश्चैव दण्डकाः करटास्तथा'—इति महाभारते (६।९।६२) । वाद्यविशेषः । २१६

**करणम्** क्ली. [ क्रियतेऽनेन, कृ + करणे ल्युट् ] इन्द्रियम्; 'अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१८।१४) । गात्रम् (७९६); कुमारसम्भवे (४।५) । साधकतमं, षट्कारकान्तर्गत-कारकविशेषः (८६६); तिथ्यद्वन्द्वपरिमितवर्षाद्येका-दशसंज्ञककालविशेषः; तन्नामानि - १ ववः, २ बालवः, ३ कौलवः, ४ तैतिलः, ५ गरः, ६ वणिजः,

७ विष्टिः, ८ शकुनिः, ९ चतुष्पदः, १० किस्तुघ्नः, ११ नागः । क्षेत्रं; हेतुः; कर्म; हस्तलेपः; नृत्य-प्रभेदः; गीतविशेषः; ताले व्यवस्थापकस्ताडनविशेषः; यदुक्तं राजकन्दर्पेण—'नृत्यवादिव्रगीतानां प्रयोगवशा-भेदिनाम् । संस्थानं ताडनं रोधः करणानि प्रचक्षते ॥' 'शिलरासक्तमेघानां व्यज्यन्ते यत्र वेदमनाम् । अनु-गजितसन्दिग्धाः करणैर्मुं रजस्थनाः'—इति कुमारसंभवे (६।४०) । क्रियाभेदः; संवेशनं; कायस्थः; कायस्थ-संहतिः; लिपिवर्णानां स्पृष्टादि; योगिनाम् आसनादि; कृतादि; विष्णुः (सर्वेषामादिकारणत्वात्); 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४) । लेख्यपत्रसाक्षिदिव्यादि; 'अर्थोऽप्यव्यय-मानं तु करणेन विभावितम् । दापयेद्वनिकस्याथ दण्ड-लेशं च शक्तितः'—इति मनुः (८-४१) । [ भावे ल्युट् ] कृतिः; 'धर्मतः शेषकरणे प्रतीक्षिष्यामहे वयम्'—इति रामायणे (४।१७।५६) । ५३५

**करणप्राप्तः** पुं. [ षष्ठीसमासः ] इन्द्रियप्राप्तः; इन्द्रिय-समूहः । ८११

**करपत्रम्** क्ली. [ करेण कराद् वा पततीति । पत् + 'सर्व-घातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन् ] ऋकच । 'आरी, आरा' इत्यादि भाषा । (करो पत्रमिव नौरिव यत्र) जलश्रीडा ।

४७५

**करबालः** पुं. [ करस्य बालः पुत्र इव । नखस्य करजातत्वात् तथत्वम् । करं बलति संवृणोति, बल् + अण् ] खङ्गः; तरवारिः; 'तलवार' इति भाषा । 'म्लेच्छनिवहनिघने कलयसि करबालम्'—इति गीतगोविन्दे । नखम् । ४७२

**करभः** पुं. [ कृणाति कांयतेऽनेन वा । कृञ् हिसायां, कृ विक्षेपे वा, कृशूशलिकलिंगदिभ्योऽभच्' इति अभच् । करे भाति शोभते इति वा, भा + क ] उष्ट्रः; मणि-बन्धावधिकनिष्ठापर्यन्तं करस्य बहिर्भागः (७९३); 'धात्रीकराम्या करभोपमोरुः'—इति रघुवंशे (६।८३) । उष्ट्रशिशुः; नखनामगन्धद्रव्यं; कटिः । २८०

**करमुक्तम्** क्ली. [ करेण घृत्वा शत्रुं प्रति मुच्यते । कर + मुच् + कर्मणि क्त ] अस्त्रविशेषः; शक्त्याद्यस्त्रम्; (यथा चक्रम्) । ४६२.

**करम्बः** त्रि. [ कृञ्, करणे + 'कृकादिकडी'त्यम्बच् ] मिश्रितः; पुं. करम्बः । ७४१

करम्मः पुं. [ केन जलेन रम्यते मिश्रीक्रियते । रभि  
घातोरनेकार्यत्वात् 'अकर्तरि चेत' घञ्, 'रभेशव्-  
लिटोः' इति नुम् ] दधिमिश्रितसक्तुः; 'अतुपानिव  
यवान् कृत्वा तानीपदीवोपतप्य तेषां करम्मपात्राणि  
कुर्वन्ति'—इति शतपथब्राह्मणे (२।५।२।४) । उदमन्यः;  
'घानाः करम्मः सक्तवः परिवापः पयो दधि' इति  
यजुर्वेदे (१९।२१) । 'करम्मः उदमन्यः'—इति वेद-  
दोषितिः । भृष्टयवमात्रम्; 'करम्मवालुकातापान्  
कुम्भीपाकांश्च दारुणान्'—इति मनुः (१२।७६) ।  
मिश्रगन्धः; 'करम्मपूतिसौरम्यशान्तोदग्रादिभिः पृथक् ।  
द्रव्यावयववैषम्याद् गन्ध एको विभिद्यते'—इति भागवते  
(३।२६।४५) । ३२१

कररुहः पुं. [ करे रोहति कराङ्गुलीम्य उत्पद्यते इत्यर्थः ।  
कर+रुह्+ 'इगुपवेति' क ] नखः; 'अस्याः कररुह-  
खण्डितकाण्डपटप्रकटनिर्गता दृष्टिः'—इति आर्या-  
सप्तशती (३७) । खङ्गः । ५११

करवीरः पुं. [ करं वीरयति । वीर् विक्रान्ती + कर्म-  
ण्यण् ] वृक्षविशेषः; प्रतिहासः; शतप्रासः; चण्डातः;  
हयमारकः; 'दाडिमान् करवीरांश्च अशोकांस्तिल-  
कांस्तया'—इति रामायणे (३।११।१०) । तत्पर्यायाः—  
प्रतीहासः; अश्वघ्नः; ह्यारिः; अश्वमारकः; शीत-  
कुम्भः; तुरङ्गारिः; अश्वहा; वीरः; हयमारः;  
हयघ्नः; शतकुन्दः; अश्वरोषकः; वीरकः; कुन्दः;  
शकुन्दः; श्वेतपुष्पकः; अश्वान्तकः; नखराह्वः;  
अश्वनाशनः; स्थलकुमुदः; दिव्यपुष्पः; हरिप्रियः;  
गौरीपुष्पः; सिद्धपुष्पः । 'करवीरः श्वेतपुष्पः शीत-  
कुम्भोऽश्वमारकः । द्वितीयो रक्तपुष्पश्च चण्डातो  
लगुडस्तथा । करवीरद्वयं तिक्तं कपायं कटुकं च तत् ।  
ब्रणलाघवकृद्येदकोपकुष्ठब्रणापहम् । वीर्योष्णं किमि-  
कण्डूघ्नं भक्षितं विषवन्मतम्'—इति भावप्रकाशः ।  
नागविशेषः; खङ्गः; दैत्यविशेषः; श्मशानं; ब्रह्मावर्तं  
दृशद्वतीनदीतीरे चन्द्रक्षरराजपुरं; पर्वतप्रभेदः;  
'एवमपरेण पवनपारियात्री दक्षिणेन कैलासकरवीरो  
प्रागायती'—इति भागवते (५।१६।२७) । नागविशेषे  
उदाहरणम्—'करवीरः पुष्पदंष्ट्रो विल्वको विल्व-  
पाण्डरः'—इति महाभारते (१।३५।१२) । १९४  
करशाखाः स्त्री. [ करस्य शाखाः इव ] अङ्गुल्यः (एकत्वे

अङ्गुली); अग्रवः; अल्यः; क्षिपः; त्रिशाः; शर्याः;  
रशानाः; धीतयः; अथर्यः; विपः; कक्ष्याः; अवनयः;  
हरितः; स्वसारः; जामयः; सनाभयः; योवत्राणि;  
योजनानि; घुरः; शाखाः; अमीशवः; दीधितयः;  
गमस्तयः । 'अष्टभिस्तैर्भवेज्ज्येष्ठं मध्यम सप्तभिर्यवैः ।  
कन्यसं षड्भिर्दृष्टिष्टमङ्गुलं मुनिसत्तम'—इति कात्या-  
यनदर्शनात् । ५१६

करशीकरः पुं. [ करात् करिशुण्डात् निःसृतः शीकरः ।  
करस्य गजशुण्डस्य शीकरो वा ] हस्तिशुण्डनिर्गत-  
जलकणसमूहः; वमथुः; 'उद्यन्तमग्निं शमयाम्बभूवु-  
र्गंजा विविग्नाः करशीकरेण'—इति रघुवंशे (७।४८) ।  
२१६

करहाटः पुं. [ करेण किरणेन सूर्यस्येति यावत् हाट्यते  
दीप्यते इति । हट्+णिच्+कर्मण्यण् ] पद्ममूलम्;  
मदनवृक्षः; महापिण्डीतरुः । १८३

कराग्रम् क्ली. [ करस्य अग्रम् ] हस्तिशुण्डाग्रम्; हस्ता-  
ग्रम्; 'कराग्रे वसते लक्ष्मीः' । २१९

करालः त्रि. [ कराय क्षेपाय भयप्रदर्शनाय अलति पर्या-  
प्नोति ] तुङ्गः; 'ऊँचा' इति भाषा । दन्तुरः; 'कराल-  
वदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम्'—इति चामुण्डा-  
ध्यानेम् । भीषणः; भयानकः; 'तद्वचोमिनि शतवा  
भिन्नं ददृशे दीप्तिमन्मुखम् । वपुर्महोरगस्येव कराल-  
फणमण्डलम्'—इति रघुवंशे (१२।९८) । क्ली. [ कराय  
चक्षुरोगादिनाशाय अलति पर्याप्नोति । अल्+अच् ]  
कृष्णकुठेरकः; 'काली तुलसी' इति भाषा । पुं. [ करम्  
आलाति गृह्णाति, आ+ला+क । कराय क्षेपाय  
अलति पर्याप्नोति वा ] सर्जरसयुक्ततैलं; तैले घृते वा  
पक्ववेसवारः; क्वचित् क्लीवेऽपि; 'तप्तनेहे पचेत्  
पूर्वं वेसवारकसंज्ञकम् । पाकप्रापितसौरम्यं करालं  
सूदकैर्मतम् । गन्धर्वभेदः; 'सद्धा बृहद्वा बृहकः करालश्च  
महामनाः'—इति महाभारते (१।१२३।५४) । ७५३

करिपोतः पुं. [ करिणः पोतः शिशुः ] करिशावकः;  
गजशिशुः । २२४

करिमकरः पुं. [ करोव मकरः ] मत्स्यविशेषः; जलजन्तुः ।  
६६०

करिवैजयन्ती स्त्री. [ करिणः उपरि प्रतिष्ठिता वैजयन्ती ]  
महापताका; उत्तुङ्गो घ्वजः । ८०३

करिस्कन्धः पुं. [ करिणां स्कन्धः ] हस्तिसमूहः । ८११  
 करी [ न् ] पुं. [ करः शुण्डः अस्यास्तीति, इनि ] हस्ती;  
 'स धर्मतप्तः करिभिः करेणुभिर्वृतो मदच्युत्कलभैर-  
 नुद्रुतः'—इति भागवते (८।२।२२) । २१४  
 करीरः पुं. [ कीर्यते क्षिप्यते जलमत्र, 'कृशपुकटीति'  
 ईरन् ] घटः । [ कीर्यते दूरे निक्षिप्यते दूरतः त्यज्यते  
 कण्टकादिभयादिति यावत् ] मरुभूमिजकण्टकिवृक्षः;  
 क्रकरः; ग्रन्थिलः; क्रकवः; निष्पत्रिका; करिरः;  
 गूढपत्रः; करकः; तीक्ष्णकण्टकः; 'करील' इति भाषा ।  
 [ ईरन् प्रत्ययपक्षे ] 'करिरः' इत्यपि । 'करीरः  
 कटुकस्तिक्तः खेद्युष्णो भेदनः स्मृतः । दुर्नामकफवाता-  
 मगरशोथन्नप्रणुत्'—इति भावप्रकाशे । ३१६  
 करीरः पुं.—कली. [ किरति विक्षिपति स्वदेहजावरणादी-  
 निति । 'कृशपुकटिपटिशौटिम्य ईरन्' इति ईरन् ]  
 वंशशङ्कुरः; 'रत्नैः पुनर्यत्र रचा रचं स्वामानिन्यिरे  
 वंशकरीरलीलैः'—इति माघे (४।१४) । 'वेणोः करीराः  
 कफला मधुरा रसपाकतः । विदाहिनो वातकराः सक-  
 षाया विरूक्षणाः'—इति सुश्रुतः । ८२८  
 करीरकम् क्ली. [ संज्ञायां कन् ] दौर्मद्यं; युद्धम् । ७३१  
 करीषः पुं.—कली. [ कीर्यते विक्षिप्यते इति, 'कृतूम्या-  
 मीषन्' इति कृ+ईषन् ] शुष्कगोमयं; छगणः;  
 गोप्रन्थिः; 'कंडा' 'उपले' इत्यादि भाषा । 'ददशं च वने  
 तस्मिन् महतः सञ्चयान् कृतान् । मृगाणां महिषीणां च  
 करीषैः शीतकारिणात्'—इति रामायणे (२।१०।७) ।  
 २७३  
 कर्षणः पुं. [ करोति मनः आनुकूल्याय, कृ+ 'कृवृदादिभ्य  
 उनन्' इति उनन् ] शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गततृतीयरसः;  
 'इष्टनाशादनिष्टाप्लेः करुणाह्यो रसो भवेत् । धीरैः  
 कपोतवर्णोऽयं कथितो यमदैवतः ।' वृक्षविशेषः (१९४);  
 बुद्धभेदः; सर्वजीवेषु दयावान्; 'यदृच्छयोपलब्धेन  
 सन्तुष्टो मितभुग् मुनिः । विविक्तशरणः शान्तो मैत्रः  
 करुण आत्मवान्'—इति भागवते (३।२।७।) । ९२  
 कर्षणा स्त्री. [ 'कृवृदादिभ्य उनन्' इति कृ+उनन्  
 टाप् च ] परदुःखहानेच्छा; कारुण्यं; घृणा; कृपा;  
 दया; अनुकम्पा; अनुक्रोशः; शूकः; 'करुणा विमुखेन  
 मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृत्तम्'—इति रघुवंशे  
 (८।६७) । गङ्गानामविशेषः; 'कूटस्थां करुणां कान्ता

कूर्मयाना कलावती'—इति काशीखण्डे (२९।४३)  
 'करुणा दयास्वरूपा'—इति तट्टीका । ७२४  
 करेणुः पुं. [ 'कृहुम्यामेनुः' इति कृ+एनु । के मस्तके  
 रेणुः पांशुर्यस्य वा । मस्तके शुण्डाकृष्टधूलीनिक्षेपणात्  
 तथात्वम् ] हस्ती; माघे (५-४८) । 'उत्क्षिप्तगात्रः  
 स्म विडम्बयन्नभः समुत्पतिष्यन्तमगेन्द्रमुच्चकैः । आकु-  
 ञ्चितप्रोहिनिरूपितक्रमं करेणुरारोहयते निपादिनम्'—  
 इति माघे (१२।५) । कर्णिकारवृक्षः । ८३३  
 करेणुः स्त्री. [ कृ+एनु ] हस्तिनी; रघुवंशे (१६।१६) ।  
 'शुश्रुवे चाग्रतः स्त्रीणां रुदतीनां महास्वनः । यथा नाघः  
 करेणूनां वद्धे महति कुञ्जरे'—इति रामायणे (२।४०।  
 २९) । 'ददौ सरःपङ्कजरेणुगन्धिं गजाय गण्डूषजलं  
 करेणुः'—कुमारसम्भवे (३।३७) । ८३३  
 करोटम् क्ली. [ कं वायुम् अन्तर्वायुम् रोटते प्रतिहन्ति,  
 के मस्तके रोटते दीप्यते वा । रुट्+अच् ] शिरोऽस्थि;  
 'खोपडी' इति भाषा । ६३३  
 करोटिः स्त्री. [ केन वायुना अन्तर्वायुना रुट्यते प्रतिहन्त्यते,  
 के शिरसि रोटते दीप्यते शोभते वा । रुट्+इन् ]  
 शिरोऽस्थि; 'खोपडी' इति भाषा । ६३३  
 करोटी स्त्री. [ करोट्+गौरादित्वाद् डीष् ] शिरोऽस्थि ।  
 ६३३  
 कर्कः पुं. [ करोति आदिष्टं पालयति । 'कृदाधाराच्चिकलिभ्यः  
 कः' इति क, बहुलवचनान्न ककारस्येत संज्ञा ] शुक्लाश्वः;  
 कुलीरः; दर्पणः; [ क्रियतेऽस्ती ] घटः; कर्कटराशिः;  
 [ कृणोति हिनस्ति ] अग्निः; कर्कटवृक्षः; कर्कटरा-  
 श्युदाहरणम्—'कर्कलग्ने समुत्पन्नो भोगी सर्वजनप्रियः ।  
 मिष्टान्नपानभोगी च जायते स्वजनप्रियः'—इति  
 कोष्ठीप्रदीपः । 'श्रुतकलामलनिर्मलवृत्तयः सकृशयन्ध-  
 जलाशयकेलयः । किल नरास्तु कुलीरगते विधौ वसुमतः  
 सुमतोऽर्थितलव्ययः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ४३७  
 कर्कटः पुं. [ कर्क+अट् प्रत्ययः ] जलजन्तुविशेषः;  
 कर्कटकः; कुलीरः; कुलीरकः; सदंशकः; पङ्कवासः;  
 तिर्यंगामी; 'कैकड़ा' इति भाषा । 'अयमुद्गृहीतवडिशः  
 कर्कट इव मर्कटः पुरतः'—इति आर्याशप्तशती (३२२) ।  
 पक्षिविशेषः; पद्मकन्दः; तुम्बी; मेयादिद्वादशराश्य-  
 न्तर्गतचतुर्थराशिः; कर्कः; नागविशेषः; 'अनन्तो वासुकिः  
 पद्मो महापद्मस्तु तक्षकः । कुलीरः कर्कटः शङ्ख-

श्चाष्टी नागाः प्रकीर्तिताः—इति पुराणम् । ६५८  
कर्कटिः स्त्री. [ कर्क कटति प्राप्नोति, कट् + 'सर्वधातुस्य  
इन्', कर्क + अट् + इन् वा ] कर्कटी । २०९

कर्कटी स्त्री. [ कर्क कण्टकम् अटति गच्छति, कर्क + अट् +  
इन् । शकन्वादित्वात् साधुः, ततो डीप् । कर्क कटति  
वा, कटे + इन् ततो डीप् ] फललताविशेषः; कट्ट-  
दली; छर्दापनिका; पीनसा; मूत्रफला; बहुकन्दा;  
कर्कटाक्षः; शान्तनुः; विर्भटी; बालुकी; एर्वाहः;  
त्रपुषी; 'ककड़ी'—इति भाषा । 'कर्कटी शीतला  
रूक्षा ग्राहिणी मधुरा गुरुः । रुच्या पित्तहरा सामा  
पक्वा तृष्णाग्निपित्तकृत् ॥ त्वग्नीजरहिता प्रीढा  
गुलिकाकारखण्डिता । तलिता सुधृते तप्ते कर्कटी  
वाऽवलेहिता'—इति भावप्रकाशः । शाल्मलिफलं;  
सर्पः; देवदालीलता; कर्कटमृङ्गीवृक्षः; घोटिका-  
वृक्षः । २०९

कर्कन्धुः पुं.—स्त्री. [ कर्क कण्टकं दधातीति । कर्क + धा +  
निपातनात् कु, नुम् च ] वदरीफलं; कोलिवृक्षः । १९४

कर्कन्धुः पुं.—स्त्री. [ कर्क कण्टकं दधातीति, धा + 'अन्धू-  
दम्भूजम्भूकम्भूफलकर्कन्धूदिधिषु'—इति कू निपात-  
नात् साधुः ] वदरीवृक्षः; 'कललं त्वेकरात्रेण पञ्च-  
रात्रेण बुद्बुदम् । दशाहेन तु कर्कन्धुः पेश्यण्डं वा  
ततः परम्'—इति भागवते (३।३।१२) । १९४

कर्करी स्त्री. [ कर्क हासं हास्यप्रकाशवत् निर्मलसलिलं  
रातीति । रा + क गौरादित्वाद् डीप् ] स्वल्पवारि-  
घानिका; आलुः; गलन्तिका; अलुः; आहः;  
कर्करीका; 'शारी' इति भाषा । ३१७

कर्कशः त्रि. [ कर्कात् लोभादित्वात् श ] कठोरः; 'खाराश्च  
कर्कशैः क्षतः खुरैर्धन्तो धरातलम्—'इति भागवते  
(३।१७।११) । साहसिकः; अमसृणः; 'हरेः  
कुमारोऽपि कुमारविक्रमः सुरद्विपास्फालनकर्कशाङ्गु-  
लो'—इति रघुवंशे (३।४।५) । दुष्पशः; क्रूरः;  
निर्दयः; 'तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राक्षसाः कोपकर्कशाः'  
—इति रामायणे (५।४।९।५) । कृपणः । ३४२

कर्करिः पुं. [ कर्क हास्यवत् शौक्यम् ऋच्छति प्राप्नो-  
तीति । कर्क + ऋ + बाहुलकाद् उण् ] कूष्माण्डः;  
'कम्पाण्डो तु भृशं लघ्वी कर्करिपकीर्तिता । कर्करिर्ग्रा-  
हिणी शीता रक्तपितहरा गुरुः । पक्वा तिक्ताग्नि-

जननी सक्षारा कफवातनुत्'—इति भावप्रकाशः । २०९  
कर्णः पुं. [ कीर्यते क्षिप्यते शब्दो वायुना यत्र । किरति  
शब्दग्रहणेन मनसि सुखं क्षिपति ददातीत्यर्थः । कू  
विक्षेपे + 'कू वृजूसीति' नन् निच्च । यद्वा कर्ण्यते आक-  
र्ण्यते अनेन । कर्ण + करणे अच् ] श्रवणन्द्रियं; शब्द-  
ग्रहः; श्रोत्रं; श्रुतिः; श्रवणं; श्रवः; श्रोत्रं; वचोग्रहः;  
'तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः'—इति  
रघुवंशे (१।९) । युधिष्ठिराग्रजः; राधेयः; वसु-  
षेणः; अर्कनन्दनः; घटोत्कचान्तकः; चाप्येशः;  
सूतपुत्रः; चम्पाधिपः; अङ्गराट्; राधासुतः; अर्क-  
तनयः; अङ्गाधिपः; 'प्राङ् नाम तस्य प्रथितं वसुषेण  
इति क्षितौ । कर्णो वैकतंनश्चैव कर्मणा तेन सोऽभवत्'  
—इति महाभारते (१।११।३१) । सुवर्णाविवृक्षः;  
धृतराष्ट्रशतपुत्रेषु एकः पुत्रः; 'दुर्मर्षणो दुर्मुखश्च  
दुष्कर्णः कर्ण एव च'—इति महाभारते (१।११।७।३) ।  
नीकायाः क्षेपणीविशेषः; 'हतप्रवीरा विध्वस्ता  
निरुत्साहा निरुद्यमाः । सेना भवति सङ्ग्रामे हतकर्णैव  
नीर्जले'—इति रामायणे (६।२३।३०) । [ कर्णः  
अस्त्यस्य प्राशस्त्येन । अशं आद्यच् ] दीर्घकर्णं त्रि. ।  
'खड्गो वैश्वदेवः श्वाकृष्णा कर्णो गर्दभः'—इति यजुर्वेदे  
(२।४।४०) । ५१६

कर्णधारकः पुं. [ कर्णं धरति धारयति वा । कर्ण + धृ +  
'कर्मण्यण्'—इति अण्, ष्यन्तादच् वा संज्ञायां कन् ]  
नाविकः; कर्णधारः; 'यदि न स्यान्नरपतिः सम्यङ्  
नेता ततः प्रजा । अर्कणधारा जलधौ विप्लवेतेह  
नीरिव'—इति हितोपदेशे (३।४) । ६५५

कर्णपूरः पुं. [ कर्णं पूरयति अलङ्करोतीति । कर्ण + पूर +  
'कर्मण्यण्' इति अण् ] अवतंसः; 'ज्याकृष्टिवद्धखटका-  
मुखपाणिपृष्ठप्रेक्षन्नखांशुचयसंवलितोऽम्बिकायाः । त्वां  
पातु मञ्जरितपल्लवकर्णपूरलोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रम-  
मूकटाक्षः'—इति अमरशतके (१) । अशोकवृक्षः;  
शिरीषवृक्षः; नीलोत्पलं; कदम्बवृक्षः । ५५४

कर्णमूलम् क्ली. [ कर्णस्य मूलम् ] हस्तिनां कर्णमूलं;  
चूलिका । २१७

कर्णमोटी स्त्री. [ कर्णं कर्णोपलक्षितरोगविशेषं मोटयति  
नाशयति । यद्वा कर्णं शरीरभेदिरोगविशेषं मोटयति  
नाशयति । कर्ण + मुट् + इन् वा डीप् ] चामुण्डादेवी । १७

कर्णवेष्टनम् क्ली. [ कर्णां वेष्टयेतेऽनेन । वेष्ट् + करणे ल्युट् ] कुण्डलम् । ५५६

कर्णाटी स्त्री. [ कर्णाट् + स्त्रियां ङीप्, खोऽयं शब्दः ] रागिणीविशेषः; सा तु मालवरागस्य पत्नी । हंसपदीवृक्षः । १०४ अ.

कर्णालङ्करणम् क्ली. [ कर्णयोः अलङ्करणम् । कर्णं + अलम् + कृ + करणे ल्युट् ] कर्णभूषणं; कर्णिका । ५५६

कर्णिका स्त्री. [ कर्णं + इकन् + टाप् च, यद्वा, कर्णं + प्वल्, ततष्ठाप्, अत इत्वम् ] कर्णभरणविशेषः; तालपत्रं; ताडङ्कः; दन्तपत्रम् (२१९) । करमध्याङ्गुलिः; मध्यमा; करिहस्ताङ्गुलिः; पञ्चवीजकोषी (६८२); 'तस्यां सचाम्भोरुहकर्णिकायामवस्थितो लोकमपश्यमानः'—इति भागवते (३।८।१६) । करिणः शुण्डाग्रवर्त्यङ्गुलाकृतिः; क्रमुकादिच्छटांशः; लैखनी; अग्निमन्यवृक्षः; अजम्बुङ्गीवृक्षः; अप्सरोभेदः; 'मेनका सहजन्या च कर्णिका पुञ्जिकस्थला'—इति महाभारते (१।१२३।६१) । सेवती; 'गुलाव का फूल' इति भाषा । 'शतपत्री तरुण्युक्ता कर्णिका चारुकेशरा । महाकुमारी गन्धाढया लक्षपुष्पातिमञ्जुला'—इति भावप्रकाशः । योनिरोगविशेषः; 'अकाले वाहमनाया गर्भेण पिहितोऽनिलः । कर्णिकाञ्जनयेद्योनौ श्लेष्मरक्तेन मूर्च्छतः'—इति चरकः । ५५६

कर्णिकारः पुं. [ कर्णिं भेदनं करोतीति । कर्णिं + कृ + कर्मण्यण् । उदरमलभेदकत्वाद् अस्य तथात्वम् ] वृक्षविशेषः; द्रुमोत्पलः; परिव्यधः; वृक्षोत्पलः; 'तच्छालतालाभ्रमधूकनीपकदम्बसर्जर्जुनकर्णिकारैः । तपात्यये पुष्पधरैरुपेतं महाबलं राष्ट्रपतिदंश'—इति महाभारते (३।२४।१७) । 'कर्णिकारैरशोकैश्च केशरैरतिमुक्तकैः'—इति महाभारते (१।१२५।२) । कर्णिकारस्य पुष्पम् [ 'अवयवे च प्राण्यौषधि वृक्षेभ्यः'—इति उत्पन्नस्य तद्धितस्य 'पुष्पमूलेषु बहुलम्' इति लुक् ] 'वर्णप्रकर्षे सति कर्णिकारम्'—इति कुमारसम्भवे (३।२८) । आरग्वधविशेषः; राजतरुः; प्रप्रहः; कृतमालकः; सुफलः; चक्रुः; परिव्याधः; व्याधिरिपुः; पिण्डवीजकः; लघ्वारग्वधः । १९९

कर्णोरथः पुं. [ कर्णसाध्या श्रवणक्रिया उपचारात्

कर्णाः । कर्णाऽस्यास्ति इति । कर्णी चासौ रथश्चेति शब्दमात्रेण रथो न वस्तुतः । यद्वा सामीप्यात् कर्णशब्देन स्कन्धो लक्ष्यते । सोऽस्त्यस्य वाहकत्वेन, इति । कर्णी चासौ रथश्च, 'अन्येषामपीति' दीर्घः ] श्रीशार्ङ्गनिर्मितस्वल्परथः; पुरुषस्कन्धनीयमानरथः; स्त्रीवह्नार्थमुपरिवस्त्राच्छादितरथविशेषः; चतुर्दालः; स्त्रीरत्नवह्नार्थमुपरिवस्त्राच्छादितमनुष्यवाह्यायानविशेषः; प्रवहणं; ह्यनं; प्रहरणं; ह्यनं; 'पालकी'—इति भाषा । ४४५

कर्णोज्ज्वः त्रि. [ कर्णे जपति यः । जपादित्वात् स्तम्बकर्णयोरित्यच्, हलदन्तादित्यलुक् ] अप्रकाशो नानुचितप्रवोधकः; कर्णे लगित्वा परापकारं वदति यो जनः; सूचकः; पिशुनः; दुर्जनः; खलः । ३४६

कर्तनम् क्ली. [ कृत् + भावे ल्युट् ] छेदनं; 'काटना' इति भाषा । सूत्रनिर्मितिः; 'कातना' इति भाषा । ७२९

कर्तरी स्त्री. [ कृन्ततीति, कृती छेदने + बाहुलकादरप्रत्ययः ततो ङीष् । यद्वा कृत् + घञ् । कर्तं रावीति, 'आतोनुपेति' क, गौरादित्वान् ङीष् ] पुङ्खः; कृपाणी, (५९५); पत्रीकृतस्वर्णदिः कर्तनास्त्रम्; केशकर्तनिका; 'कैची' इति भाषा । ग्रहयोगविशेषः; 'क्रूरमध्यगतश्चन्द्रो लग्नं वा क्रूरमध्यगम् । कर्तरी नाम योगोऽयं कन्यानिघनकारकः'—इति ज्योतिषशास्त्रे । ४६८

कर्दमः पुं. [ कर्दं, कृत्सितरवे + 'कलिकर्धोरमः' इति अम ] कर्दः; निषद्वरः; जम्बालः; पङ्कः; शादः; 'रथ्याकर्दमतोयानि स्पृष्टान्यन्त्यश्ववायसैः । भास्तेनैव शुष्यन्ति पक्वेष्टकचितानि च'—इति याज्ञवल्क्यः (१।१९७) । 'कर्दमो दाहपित्तातिशोयघ्नः शीतलः सरः'—इति भावप्रकाशः । 'स्वायम्भुवमन्वन्तरे प्रजापतिविशेषः; पापं; छाया; वेदेषु कर्दमः शब्दश्छायायां वर्तते स्फुटम् । वभूव कर्दमाद्बालः कर्दमस्तेन फीतितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे २२ अध्यायः । नागविशेषः; 'कर्दमश्च महानागो नागश्च बहुमूलकः'—इति महाभारते । (१।३५।१६) । ६७८

कर्पटः पुं. [ कीर्यते क्षिप्यते इति, कृ + कर्मणि विच्, कर् चासौ पटश्च इति कर्मधारयः । यद्वा करस्यः पटः । पूषोदरादित्वाद् अलोपे साधुः ] मलिनत्वादि-



दुष्टजीर्णवस्त्रखण्डं; लक्तकः; नक्तकः; 'चिथड़ा' इति भाषा । 'चीरखण्डैककर्पटः'—इति कथासरित्सागरे (४।६१) । पर्वतप्रभेदः; 'नीलशैलस्य पूर्वस्मिन् स्वरूपं प्रतिपादितम् । नाभिमण्डलपूर्वस्यां भस्मकूटस्य दक्षिणे । पूर्वस्यां कर्पटो नाम पर्वतो गमरूपधृक् । तत्र याम्यशिला कृष्णा नीलाञ्जनसमप्रभा । अनेनैव तु मन्त्रेण शमनं यस्तु पूजयेत् । कर्पटाख्येऽचलवरे नामपृत्युं समाप्नुयात्'—इति कालिकापुराणे, ८१ अध्यायः । ५४८

कपर्पः पुं. [ कृप्+वाहलकात् अरन् लत्वाभावश्च ] कटाहः; कपालः; शिरोऽस्थि; 'खोपड़ी' इति भाषा । शस्त्रभेदः; उडुम्बरः । ३१५

कर्पासः पुं.—क्ली. [ 'कृजः, पासः' इति कृधातोः पास ] कार्पासः; 'कपास' इति भाषा । २०२

कर्पूरः पुं.—क्ली. [ कृप्+खजूरादित्वाद् ऊर ] सुगन्धिद्रव्यविशेषः; 'कपूर' इति भाषा । तत्पर्यायाः—घनसारः; चन्द्रसंज्ञः; सिताभ्रः; हिमबालुका; सिताभः; घनसारकः; सितकरः; शीतः; शशाङ्कः; शिला; शीतांशुः; हिमबालुकः; हिमकरः; शीतप्रभः; शाम्भवः; शुभ्रांशुः; स्फटिकाभ्रः; कार्मिहिका; ताराभ्रः; चन्द्राद्रकः; चन्द्रः; लोकतुषारः; गौरः; कुमुदः; हनुः; हिमाह्वयः; चन्द्रभस्म; वेधकः; रेणुसारकः । 'कर्पूरो नूतनस्तिवतः स्निग्धश्चोष्णास्त्रदाहदः । चिरस्थो दाहशोषघ्नः स धीतः शुभकृत्परः'—इति राजनिर्घण्टः । 'कर्पूरः शीतलो वृष्यश्चक्षुष्यो लेखनो लघुः । सुरभिर्मधुरस्तिवतः कफपित्तविषापहः ॥ दाहतृष्णास्यवैरस्यमेदोदीर्घन्ध्यानाशनः । कर्पूरो द्विविधः प्रोक्तः पक्वापक्वप्रभेदतः । पक्वात् कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्तरम्'—इति भावप्रकाशः । ५४५

कर्बुरम् क्ली. [ कर्बति गर्बत्यस्मात्, यस्मिन् सति वा गर्बो भवति, कर्बत्यनेन वा । कर्बं दपे, 'मद्गुरादयश्च' इति उरच् ] स्वर्णः; धुस्तूरवृक्षः; जलम् । १७४

कर्बुरः पुं. [ कर्बति नानावर्णतां गच्छति, कर्बं गती, उरच् ] नानावर्णः; चित्रः; किमीरः; कल्माषः; शबलः; एतः; 'इति चैनमुवाच दुःखिता सुहृदः पश्य वसन्त ! किं स्थितम् । तदिदं कणशो विकीर्यते पवनैर्भस्म कपोतकर्बुरम्'—इति कुमारसम्भवे (४।२७) ।

तद्वति त्रि. । शटी; पापं; नदीनिष्पावधान्यं; [ कर्बति हिनस्ति जीवं, कर्बं हिंसायाम्, 'मद्गुरादयश्च' इति उरच् ] राक्षसः । ७४१

कर्भ [ न् ] क्ली. [ क्रियते तत्, कृ+मनिन् ] यत् क्रियते तत्; क्रिया; कर्तव्यम् । ५९१

कर्भठः त्रि. [ कर्मणि घटते इति । 'कर्मणि घटोऽच्' इति अठच् ] कर्मकुशलः; प्रयत्नेन प्रारब्धं कर्म समापयति यः; कर्मशूरः; कर्मशीलः; 'ज्ञाताशयस्तस्य ततो व्यतानीत् स कर्मठः कर्मसुतानुबन्धम्'—इति भट्टिः (१।११) । ३६९

कर्भण्या स्त्री. [ कर्मणा सम्पाद्यते, 'तत्र साधुरिति' यत् टाप् च ] वेतनं; मूल्यम् । ७२८

कर्भन्दी [ न् ] पुं. [ कर्मन्देन स्वनामख्यातऋषिर्विशेषेण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते यः । कर्मन्द+इति ] भिक्षुः; सन्यासी । ४०९

कर्भविपाकः पुं. [ कर्मणः अधर्ममूलकस्य अशुभफलजनकस्येति यावत्, विपाकः परिणामः । इह रोगादिभोगजनकदुःखमयपरिणामः । अमुत्र नरकभोगादिजनकदुःखमयपरिणामश्च ] अशुभकर्म; कर्मजन्यफलस्य विपाकः; रोगादिरूपजन्मान्तरीयाशुभकर्मफलभोगः । ( गारुडे कर्मविपाकः २२९ अध्याये द्रष्टव्यः । ) ७९९

कर्भशाला स्त्री. [ षष्ठीसमासः ] कारुणामन्वासनम्; कारुशाला; 'कारखाना' इति भाषा । २९७

कर्भशूरः त्रि. [ कर्मणि शूरः दक्षः ] कर्मठः; फलपर्यन्तकर्मसमापकः; कर्मशीलः; कार्मः । ३६८

कर्भसंन्यासिकः पुं. [ कर्मणां सन्यासः, स अस्त्यस्य इति ठन् ] यतिः; संन्यासी । ३९४

कर्भसाक्षी [ न् ] पुं. [ कर्मणां साक्षी, यद्वा कर्म साक्षात् पश्यति प्रत्यक्षं करोति ] सूर्यः; 'सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च । एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः'—इति वैदिकक्रियापद्धती । क्रियासाक्षात्कारिणि त्रि. । 'हृदि स्थितः कर्मसाक्षी क्षेत्रज्ञो यस्य तुष्यति'—इति महाभारते (१।४७।२९) । ३७

कर्षकः त्रि. [ कर्षति भूमिमिति । कृप्+ण्वल् ] कृषिजीवी; क्षेत्राजीवः; कृषिकः; कृषीवलः; कार्षकः; 'सुखमापतितं सेवेद दुःखमापतितं सहेत् । कालप्राप्तमुपासीत सत्यानामिव कर्षकः'—इति महाभारते

(३१२५८१५) । आकर्षणकर्त्तरि त्रि. । ५७४

कर्षूः स्त्री. [ कृष् विलेखने, 'कृषिचमितनीति' ऊ ]  
नदीमात्रं; कुल्या; अल्पा कृषिमा सरित्; इष्टखातः;  
'तथाघःखाता वितस्त्यायतास्तिस्रः कर्षूः कुर्यात्  
कर्षूसमीपे अग्नित्रयमुपसमाधाय परिस्तीर्य तत्रकै-  
कस्मिन्नाहुतित्रयं जुहुयात्' —इति श्राद्धविवेकधृत-  
विष्णुसूत्रम् । पुं. वार्ता; करीषाग्नि; कृषिः;  
जीविका । ६६६

कलः पुं. [ कल् + भावे घञ् वृद्धयभावः ] मधुरास्फुट-  
ध्वनिः; 'जगौ कलं वामदृशां मनोहरम्'—इति भाग-  
वतम् । 'सारसैः कलनिर्ह्वदैः क्वचिदुन्नमिताननौ'—  
—इति रघुवंशे (१।४१) । सालवृक्षः; क्ली. [ कडति  
माद्यति अनेन, कड् मदे + 'हलश्च' इति घञ्,  
संज्ञापूर्वकत्वाद् वृद्धयभावः डलयोरेकत्वम् ] शुकः;  
कोलिबृक्षः; त्रि. [ कलयति मान्द्यं नयति जाठराग्निम्,  
कल् + णिच् अच् । घातूनामनेकार्थत्वाद् विशेषतः  
कलिहलिरित्युक्तेश्च तथात्वम् ] अजीर्णः । १४०

कलकण्ठः पुं. [ कलप्रधानः कण्ठो यस्य ] पिकः;  
'युष्माकं रतिकान्तकार्मुकलताक्रेङ्कारकान्ते स्ते,  
सोत्कण्ठं कलकण्ठकण्ठकुहरीभूतेऽपि मा भून्मनः'  
—इति राजेन्द्रकर्णपूरे । २४३

कलकलः पुं. [ कलादपि कलः युगपत्समुत्थितबहुल-  
शब्दानामेकीभूततया तुमुलत्वात्तथात्वम् । कल् शब्दे,  
घञ्, वृद्धयभावः । यद्वा कलः नानाप्रकारः, गुण-  
वचनत्वात् प्रकारे द्वित्वम् ] कोलाहलः; 'उन्मीलन्-  
मधुगन्धलुब्धमधुपव्याधूतचूताङ्कुरक्रीडत्कोकिलकाकली-  
कलकलैर्घद्गीर्णकर्णज्वराः'—इति गीतगोविन्दे (१।  
३८) । सालनिर्वासः । १३९

कलकूः पुं. [ कलयति इति, कल् + क्विप्, कल् चासौ  
अङ्कुरश्चेति ] चिह्नम्; अपवादः (८२०); 'उत्तमस्य  
विशेषेण कलकूत्पादको जनः'—इति कथासरित्सागरे  
(२।४२०४) । दोषः; भर्तृहरिश्वातके (३।४८) ।  
लौहमलम् । ४५

कलत्रम् क्ली. [ गड सेचने + 'गडैरादेश्च कः' इति अत्रन्  
गकारस्य ककारश्च, डलयोरेकत्वस्मरणात् डस्य लः ।  
यद्वा कलं त्रायते । त्र + क । यद्वा कडचते शिष्यते इति,  
कड् शासने, बाहुलकात् अत्रन् ] भार्या; 'तां कस्या-

ञ्चिद् भवनवलभौ सुप्तपारावतायां नीत्वा रात्रि  
चिरविलसनात् खिन्नविद्युत्कलत्रः'—इति मेघदूते  
(४०) । श्रोणिः (५१२) । ४१४

कलघीतम् क्ली. [ कलेन अवयवेन घीतम् । घूतं शुद्धं  
कलघूतम् इत्यपि ] कलघूत्रं; रूप्यं; रजतम्; माषे  
(४-४१, १२-५१) । स्वर्णम् (८०६); 'कत्येयं  
कलघीतकोमलसचिः कीर्तिस्तु नातः परा'—इति हनुम-  
शाटकम् । 'इमे च कस्य नाराचाः सहस्रं लोमवाहिनः ।  
समन्तात्कलघीताग्रा उपासङ्गे हिरण्यमे'—इति महा-  
भारते (४।४०।६) । कलध्वनिः; अस्फुटमधुरध्वनिः ।

१७२

कलभः पुं. [ कलेन करेण शुण्डेनेति यावत्, भाति । कल्  
+ भा + क, यद्वा, कल् गती 'कृश्रृशलिकलिर्गादिभ्योऽभच्  
इति अभच् । कलं, भायते वा, ड ] करिशावकः;  
तर्णगजः; दुर्दान्तः; व्यालः; 'महोक्षतां वत्सतरः  
स्पृशन्निव द्विपेन्द्रभावं कलभः श्रयन्निव'—इति रघुवंशे  
(३।३२) । घत्तूरवृक्षः । २२४

कलमः पुं. [ कलते कलयति वा, अक्षरं प्रकाशयति जन-  
यति वा । कल् + 'कलिकर्चोरमः' इति अम ] शालि-  
धान्यविशेषः; 'आपादपश्चप्रगताः कलमा इव ते  
रघुम् । फलैः संवद्धयामासुस्त्वातप्रतिरोपिताः'—इति  
रघुवंशे (४।३७) । 'रवतशालिमहाशालिः कलमः  
षष्टिकोऽपरः'—इति हारीते । 'शूकजेषु वरस्तत्र रवत-  
तृष्णात्रिदोषहा । महास्तस्यानुकलमस्तञ्चाप्यनु ततः  
परे'—इति वाग्भटः । चौरः; लिपिसाधनवस्तु;  
लेखनी; वर्णतूली; अक्षरतूलिका; लेखनिका । ५८२

कलम्बः पुं. [ कलयते क्षिप्यते शत्रुं प्रति । कल् क्षेपे +  
अम्बच् ] शरः; शाकनाडिका; कदम्बः । ४६६

कललः पुं. क्ली [ कलयते वेष्टयतेऽनेन । कल् + वृधा-  
दिभ्यः कलच् ] जरायुः; गर्भवेष्टनचर्म; 'ऋतुस्नाता तु  
या नारी स्वप्ने मैयुनमावहेत् । आर्तवं वायुरादाय कुक्षी  
गर्भं करोति हि । मासि मासि विवर्द्धेत गर्भिण्या गर्भ-  
लक्षणम् । कललं जायते तस्या वजितं पैतृकगुणैः'  
—इति सुश्रुते शारीरस्थाने २ अध्यायः । ५००

कलविद्ः पुं. [ कलं मधुरास्फुटं वद्धते रीति । वकि  
गती + अच्, पृषोदरीदित्वात् अत इत्वे साधुः ]  
चटकः; 'कलविद्धं प्लवं हंसं चक्राङ्गं ग्रामकुक्कुटम्'

—इति मनुः (५।१२) । कलिङ्गकवृक्षः; कलङ्कः; श्वेतचामरः; त्वष्टृपुत्रविश्वरूपस्य शिरोभेदः (एतद्विवरणं तु श्रीमद्भागवते ६।९ अध्याये द्रष्टव्यम्) । २४३ कलशः त्रि. [ कलं मधुराव्यक्तशब्दं शवति जलपूरणसमये प्राप्नोति । कल + शु गतो + ड ] जलाधारविशेषः; तत्पर्यायाः—घटः; कुटः; निपः; कलसः; कलसिः; कलसी; कलसं; कलशिः; कलशी; कलशं; कुम्भः; करीरः । पञ्चाशदङ्गुलव्याम उत्सेधः षोडशाङ्गुलः । कलशानां प्रमाणं तु मुखमष्टाङ्गुलं स्मृतम् । षट्त्रिंशदङ्गुलं कुम्भं विस्तारोन्नतशालिनम् । षोडशं द्वादशं वापि ततो न्यूनं न कारयेत्—इति तन्त्रसारे । ३१६

कलहः पुं. —क्लो. [ कलं कामं हन्त्यत्र । कल + हन् + अधिकरणे ड ] कलिः; विवादः; युद्धम्; आयोधनं; जन्यं; प्रधनं; प्रविदारणं; मृधम्; आस्कन्दनं; संख्यं; समीकं; साम्परायिकं; समरः; अनीकः; रणः; विग्रहः; सम्प्रहारः; अभिसम्पातः; संस्फोटः; संयुगः; अम्यामर्दः; समाघातः; संग्रामः; अम्यागमः; आहवः; समुदायः; संयत्; समितिः; आजिः; समित्; युध्; शमीकं; साम्परायिकं; संस्फोटः; युत्; पुं. वाटः; खड्गकोशः; मण्डनम् । ४५३, ७८९

कलहंसः पुं. [ कलेन मधुरास्फुटध्वनिना विशिष्टो हंसः । शाकपाथिवादित्वान्मध्यपदलोपी समासः । हंसविशेषः; कादम्बः; कलनादः; मरालकः; राजहंसः । 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः प्रतीथिरे श्रोत्रमुखैर्निनादैः'—इति भट्टिः । नृपोत्तमः; परमात्मा; ब्रह्म; सिंहनादः; अतिजगती वृत्तिः (सा च त्रयोदशाक्षरा); 'सजसाः सगौ च कथितः कलहंसः । 'यमूनाविहारकुतुके कलहंसो ब्रजकामिनीकमलिनीकृतकेलिः । जनचित्तहारिककलकण्ठनिनादः प्रमदं तनोत् तव नन्दतनूजः'—इति छन्दोमञ्जरी । २५३ कला स्त्री. [ कलयति वृद्धितो घनं संगृह्णाति, सञ्चिनोतीत्यर्थः । कल + अच् + टाप् ] कालमानम्; त्रिशत्काष्ठात्मकः; 'त्रिशत्काष्ठाः कलाः'—इति सुश्रुते ६ अ. । मूलघनवृद्धिः; 'सूद, व्याज' इत्यादि भाषा । शिल्पादिः; 'गीतवादित्रकुशला नृत्येषु कुशलास्तथा । उपायज्ञाः कलाज्ञाश्च वैशिके परिनिष्ठिताः'—इति रामायणे

(१।१।८) । अंशमात्रं; चन्द्रस्य षोडशांशः; 'सालङ्कारतया त्वया मम कथं नेन्दोः कला दृश्यते । पश्यामीन्दुकलां स्फुटं पुनरिदं लङ्कारता नास्मिं यत्'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् । शरीरस्यांशविशेषः; 'मांसासृङ्गभेदसां तिस्रो यकृत्प्लीहोश्चतुर्थिका । पञ्चमी च तथाभ्रानां षष्ठी चाग्निघरा मता । रेतोघरा सप्तमी स्यादिति सप्तकलाः स्मृताः'—इति पूर्वखण्डे पञ्चमेऽध्याये शाङ्ख्यरेणोक्तम् । स्त्रीरजः; नौका; कपटः; राशेस्त्रिंशद्भागोऽशस्तस्य षष्टिभागः;—'विकलानां कला षष्टया तत्षष्ट्या भाग उच्यते । त्रिंशता भवेद्वाशिर्भगणो द्वादशैव ते'—इति सूर्यसिद्धान्तः । जिह्वा; 'कलां पराङ्मुखीं कृत्वा त्रिपथे परियोजयेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (३।३७) । 'कलां जिह्वां पराङ्मुखामस्यं यस्याः सा तथा, तां प्रत्यङ्मुखीं कृत्वा तिसृणां नाडीनां पन्थाः तस्मिन् कपालकुहरे संयोजयेत्'—इति तट्टीका । शिवः; 'कलाः काष्ठा लवा मात्रा मुहूर्ताहःक्षपाः क्षणाः'—इति महाभारते ।

अथ शैवतन्त्रोक्ताश्चतुःषष्टिकला लिख्यन्ते—

१ गीतं, २ वाद्यं, ३ नृत्यं, ४ नाट्यम्, ५ आलेख्यं, ६ विशेषकच्छेद्यं, ७ तण्डुलकुसुमवलिविकाराः, ८ पुष्पास्तरणं, ९ दशनवसनाङ्गरागाः, १० मणिभूमिकाकर्म, ११ शयनरचनम्, १२ उदकवाद्यम्, १३, उदकघातः, १४ चित्रायोगाः, १५ माल्यप्रथनविकल्पाः, १६ शेखरापीडयोजनं, १७ नेपथ्ययोगाः, १८ कर्णपत्रभङ्गाः, १९ गन्धयुक्तिः, २० भूषणयोजनम्, २१ ऐन्द्रजालं, २२ कौचुमारयोगाः, २३ हस्तलाघवं, २४, चित्रशाकूपभक्ष्यविकारक्रिया, २५ पानकरसरगासवयोजनं, २६ सूचीवापककर्माणि, २७ सूत्रक्रीडा, २८ प्रहेलिका, २९ प्रतिमाला, ३० दुर्बचनकयोगाः, ३१ पुस्तकवाचनं, ३२ नाटिकाख्यायिकादर्शनं, ३३ काव्यसमस्यापूरणम्, ३४ पट्टिकावेत्रबाणविकल्पाः, ३५ तर्कुं कर्माणि, ३६ तक्षणं, ३७ वास्तुविद्या, ३८ रूप्यरत्नपरीक्षा, ३९ धातुवादः, ४० मणिरागज्ञानम्, ४१ आकरज्ञानं, ४२ वृक्षायुर्वेदयोगाः, ४३ मेघकुक्कुटलावकयुद्धविधिः, ४४ शुकशारिकाप्रलापनम्, ४५ उत्सादनं, ४६ केशमार्जनकौशलम्, ४७ अक्षरमुष्टिकाकथनं, ४८ म्लेच्छतकविकल्पाः, ४९ देशभाषाज्ञानं, ५० पुष्पशकटिकानिमित्तज्ञानं, ५१

यन्त्रमातृका, ५२ धारणामातृका, ५३ सम्पाटवं, ५४ मानसी काव्यक्रिया, ५५ क्रियाविकल्पाः, ५६ छलितक-  
योगाः, ५७ अभिधानकोषच्छन्दोज्ञानं, ५८ वस्त्रगोप-  
नानि, ५९ द्यूतविशेषः, ६० आकर्षकीडा, ६१ बालक-  
क्रीडनकानि, ६२ वैनायिकीनां विद्यानां ज्ञानं, ६३  
वैजयिकीनां विद्यानां ज्ञानं, ६४ वैतालिकीनां विद्यानां  
ज्ञानम् । १०५

कलावः पुं. [ अलङ्कारनिर्माणाय गृहस्थैः सर्मापितानां  
स्वर्णादीनां कलाम् अंशम् आदत्ते गृह्णाति । अलङ्कार-  
निर्माणहेतुना गृहस्थोपाजितधनांशं वा आदत्ते । आ-  
दा + क ] स्वर्णकारः । ५८८

कलान्तरम् क्ली. [ अन्या कला अंशः । 'सुप्सुपेति'  
समासः ] वृद्धिः; लाभः; 'व्याज, सूद' इति भाषा ।  
'भासे शतस्य यदि पञ्च कलान्तरं स्यात्' —इति  
लीलावती । चन्द्रस्य अन्यकला; 'पुषोष लावण्यमयान्  
विशेषान् ज्योत्स्वान्तराणीव कलान्तराणि'—इति  
कुमारसम्भवे (११२५) । ५७२

कलापः पुं. [ कलां मात्राम् आप्नोति । कला + आप् +  
'कर्मण्यण्' इति अण् । यद्वा कला आप्यतेऽनेन, 'हलश्च'  
इति घञ् ] मयूरपिच्छः; 'सम्प्रदीप्तकलापाया विप्र-  
कीर्णाश्च वह्निः'—इति रामायणे (५।५२।१३) ।  
तूणः (४६५); 'ततः कलापान् सन्नह्य खड्गौ बद्ध्वा  
च घन्विनी'—इति रामायणे (२।५२।११) । काञ्ची  
(५६०); समूहः; 'क्रियाकलापैरिदमेव योगिनः श्रद्धा-  
न्विताः साधु यजन्ति सिद्धये'—इति भागवते (४।२।४।  
६२) । भूषणम्; 'कण्ठस्य तस्याः स्तनवन्धुरस्य  
मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य'—इति कुमारसम्भवे  
(१।४२) तट्टीकायां 'मुक्ताकलापस्य मुक्ताभूषणस्य'  
—इति मल्लिनाथः । चन्द्रः; विदग्धः; व्याकरण-  
विशेषः; 'अधुना स्वल्पतन्त्रत्वात् कातन्त्राख्यं भविष्यति ।  
तद्वाहनकलापस्य नाम्ना कलापकं तथा'—इति  
बृहत्कथासारः । ग्रामविशेषः; 'देवापिर्योगिमास्थाय  
कलापग्राममाश्रितः । सोमवंशे कली नष्टे कृतादौ  
स्थापयिष्यति'—इति भागवते (१।१२।६) । अस्त्र-  
विशेषः; 'खड्गांश्च दीप्तान् दीर्घांश्च कलापांश्च  
महाषनान् । विपाठान् क्षुरधारांश्च घनूर्भिनिदधुः सह'  
—इति महाभारते (४।५।२८) । २४२

कलापी [न्] पुं. [ कलापाः फलपत्रसमूहाः सन्त्य-  
स्मिन् । कलाप + इनि । कलापो वहः अस्ति अस्य,  
इनि ] मयूरः; 'पुरोपकण्ठोपवनाश्रयाणां कलापिना-  
मुद्धतनृत्यहेतौ'—इति रघुवंशे (६।९) । प्लक्षवृक्षः;  
कोकिलः; त्रि. तूणवान्; कलापव्याकरणाध्यायी । २४१

कलायः पुं. [ कलाम् अयते । 'कर्मण्यण्' इति अण् ]  
शमीधान्यविशेषः; सतीलकः; हरेणुः; खण्डिकः;  
त्रिपुटः; अतिवर्तुलः; मुण्डचणकः; शमनः; नीलकः;  
कण्ठी; सतील हरेणुकः; सतीनः; सतीनकः;  
'विकसत्कलायकुसुमासितधुतेः'—इति भावे (१३।  
२१) । 'कलायो वर्तुलः प्रोक्तः सतिलश्च हरेणुकः ।  
कलायो मधुरः स्वादुः पाके रूक्षश्च वातलः'—इति  
भावप्रकाशः । ५८२

कलिः पुं. [ कलते कलेराश्रयत्वेन वर्तते इति । कल् +  
'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन् ] युद्धम्; [ कल्पते पापेषु  
निक्षिप्यते अनेन, यद्वा कलयति पापेन जडयति कल्पितं  
करोति । कल् + इन् ] विभीतकवृक्षः (६१८);  
'इत्येवमुक्तो देवेन ब्रह्मणा कलिरण्ययः । दीनान् दृष्ट्वा  
च शक्रादीन् विभीतकवनं ययौ'—वामने २७ अध्याये ।  
(७८९) विवादः; कलहः; 'तासां कलिरभूद्भूयास्त-  
दर्थेऽपोह्य सौहृदम् । ममानुरूपो नायं च इति तद्गत-  
चेतसाम्'—इति भागवते (१।६।४४) । [ कलते स्पन्दते  
इति, कल् + 'सर्वधातुभ्यः इन्' इति इन् ] शूरः; अन्त्य-  
युगम्; कलियुगम् । स्त्री. [ कलयति ईषत्प्रकाशते  
उद्भिद्यते वा, कल् + इन् ] कलिका । ४५३

कलिका स्त्री. [ कलिरेव, स्वार्थे कन् टाप् च ] अस्फुटित-  
पुष्पं; कोरकः; कलिः; कली; कोरकम्; 'मृग्वाम-  
जातरजसं कलिकामकाले व्यर्थं कदर्थयसि किं नय-  
मल्लिकायाः'—इति साहित्यदर्पणे (३।१६०) । यीणा-  
मूलं; पदसंततियुक्तरचनाविशेषः; 'स्युर्महाकलिका-  
रम्भे श्लोकास्तु युगशः स्मृताः । अन्यासां कलिकानान्तु  
भवन्त्येकैकशो हि ते । पूर्ती द्वौ कलिकाभिस्तु विरु-  
दास्तुल्यसङ्घकाः । 'कला नाम भवेत्तलनियता  
पदसन्ततिः । कलाभिः कलिका प्रोक्ता तद्भेदाः षट्  
समीरिताः । कलिका चण्डवृत्ताख्या द्विगादिगणवृत्तका ।  
तथा त्रिभङ्गी वृत्ताख्या मध्या मिश्रा च केवला ।'  
छन्दोभेदः; 'प्रथममपरचरणसमुत्पन्नं श्रयति स यदि

लक्ष्म । इतरदितरगदितमपि 'यदि च तूर्यम् चरणयुगल-  
कमविकृतमपरमिति कलिका सा'—इति वृत्तरत्नाकरे  
४ अध्याये । कला; 'तन्यन्ते कलिका यस्मात्तस्मा-  
त्तास्तिथयः स्मृताः'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ । १८६

**कलिङ्गः** पुं. [ के मस्तके लिङ्गं पीतादिचिह्नमस्य ]  
धूम्याटपक्षी; [ कलिं पूतिगन्धादिकं गच्छति प्राप्नोति ।  
कलि+गम्+ङ, निपातनात् साधुः ] पूतिकरञ्जवृक्षः;  
देशविशेषः; नृपतिविशेषः; 'अङ्गो वङ्गः कलिङ्गश्च  
पुण्ड्रः सुहृश्च ते सुताः । तेषां देशाः समाख्याताः  
स्वनामप्रथिता भुवि । अङ्गस्याङ्गोऽभवदेशो वङ्गो  
वङ्गस्य च स्मृतः । कलिङ्गविषयश्चैव कलिङ्गस्य च स  
स्मृतः'—इति महाभारते (१।१०।४।४९-५०) ।  
'कलिङ्गः पूतिकरजे धूम्याटे भूमिर्न नीवृति'—इति  
मेदिनी । 'ततः शकपुलिन्दाश्च कलिङ्गाश्चैव मार्गतः  
—इति रामायणे (४।४०।२१) । तद्देशवासिमान-  
वादयः; 'ततः समुद्रतीरेण जगाम वसुधाधिपः ।  
भ्रातृभिः सहितो वीरः कलिङ्गान् प्रति भारत'—इति  
महाभारते (३।११।४।३) । कुटजवृक्षः; कलिङ्गकः;  
इन्द्रयवम्; 'उक्तं कुटजवीजं तु यवमिन्द्रयवं तथा ।  
कलिङ्गश्चापि कालिङ्गं तथा भद्रयवा अपि ।' 'विल्वं  
छागमयःसिद्धं सितामोचरसान्वितम् । कलिङ्गचूर्ण-  
संयुक्तं रक्तातीसारनाशनम्'—इति चक्रपाणि संग्रहः ।  
शिरीषवृक्षः; प्लक्षवृक्षः । २४८

**कलिलः** त्रि. [ कल्पते मिश्रयते इति । 'सलिकलि'  
इति हल्च् ] गहनः; 'यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यति-  
तरिष्यति'—इति भगवद्गीतायाम् (२।५२) । मिश्रः;  
'न यत्पुनः कर्मसु सज्जते मनो रजस्तमोभ्यां कलिलं  
ततोऽज्यया'—इति भागवते (६।२।४६) । ७७७

**कलेवरम्** क्ली. [ कले शुके वरं श्रेष्ठं देहोत्पत्तिहेतुक-  
त्वात् पवित्रम् । सप्तम्या अलुक् ] शरीरम्; 'यं यं  
भावं स्मरन् देही त्यजत्यन्ते कलेवरम् । तं तमेवैति  
कौन्तेय ! सदा तद्भ्रवभावितः'—इति भगवद्गीतायाम्  
(८।६) । ५१०

**कल्कः** पुं.-क्ली. [ कल् गतौ+कृदाधाराच्चिकलिस्यः  
कः'—इति क ] पापम्; 'विधूतकल्कोऽथ हरेरुदस्तात्  
प्रयाति चक्रं नृप ! शैशुमारम्'—इति भागवते (२।२।  
२४) । यस्म कस्यचिद् वस्तुनो चूर्णम्; 'तां लोध्र-

कल्केन हृताङ्गुतैलामाश्यानकालेयकृताङ्गरागाम्'—  
इति कुमारसम्भवे (७।९) । कर्णमलः; तुरुष्कनाम-  
गन्धद्रव्यं; घृततैलादिपाके देयमौषधद्रव्यं; पिष्टः;  
विनीयः; आवापः; प्रक्षेपः; 'द्रव्यमात्रं शिवापिष्टं  
शुष्कं वा जलमिश्रितम् । तदेव सूरिभिः पूर्वैः कल्क  
इत्यभिधीयते ।' 'द्रव्यमाद्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सजलं  
भवेत् । प्रक्षेपावापकल्कास्ते तन्मानं कर्षसम्मिमतम्'—  
इति शाङ्गधरः । शाठ्यं; विभीतकवृक्षः; विष्ठा;  
किट्टं; दम्भः; 'तपो न कल्कोऽध्ययनं न कल्कः स्वाभा-  
विको वेदविधिर्न कल्कः । प्रसह्यवित्ताहरणं न कल्कः  
तान्येव भावोपहतानि कल्कः'—इति महाभारते  
(१।१।२७।१) । त्रि. [ कल्पति पापमाचरति, कल्+  
क ] पापाशयः; पापात्मा । ६२७

**कल्पः** पुं. [ कल्प्यते विधीयते असौ । कृप्+कर्मणि  
घञ् ] विधिः; 'एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हृद्यकव्ययोः ।  
अनुकल्पस्त्वयं ज्ञेयः सदा सद्भिरनुष्ठितः'—इति मनु  
(३।१।४७) । [ कल्प्यते सृष्टिर्नाशो वा अत्र । कृप्+  
णिच्, अधिकरणे घ ] प्रलयः; 'युगानां सप्ततिः सैका  
मन्वन्तरमिहोच्यते । कृताब्दसंख्यस्तस्यान्ते सन्धिः  
प्रोक्तो जलप्लवः । ससन्ध्यस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्च-  
तुर्दश । कृतप्रमाणकल्पादौ सन्धिः पञ्चदश स्मृतः ।'  
[ कल्पते स्वक्रियायै समर्थो भवत्यत्र । कृप्+अधिकरणे  
घ ] ब्राह्मं दिनं; दैवद्विसहस्रयुगम्; 'कल्पान् कल्प-  
विकल्पांश्च चतुर्युगविकल्पितान् । कल्पान्तस्य स्वरू-  
पञ्च युगधर्माश्च कृत्स्नशः'—इति विष्णुपुराणे  
(१।१।१२) । ८२६

**कल्पनम्** क्ली. [ कृप्+भावे ल्युट् ] कल्पितः; छेद-  
नम् । ७२९

**कल्पपालः** पुं. [ कल्प्यते इति कल्पः मद्यं तस्य पालः ]  
शौण्डिकः; कल्पपालकः । ५९३

**कल्पवृक्षः** पुं. [ कल्पस्य सङ्कल्पस्य दाता वृक्षः; कल्प-  
स्थायी वृक्ष इति वा ] देवतरुः; 'नमस्ते कल्पवृक्षाय  
चिन्तितान्नप्रदाय च । विश्वम्भराय देवाय नमस्ते  
विश्वमूर्तये'—इति दानसागरे । १३५

**कल्पान्तः** पुं. [ कल्पस्य अन्तो यत्र ] ब्रह्मणो दिनान्तः;  
प्रलयः; 'उपवासरताश्चैव जले कल्पान्तवासिनः'—इति  
रामायणे (३।१०।४) । ११७

**कल्पितः** पुं. [ कल्प्यते सञ्जीक्रियते असौ । कृप्+णिच्+कर्मणि क्त ] सञ्जितहस्ती; रचिते त्रि., 'ब्रह्मादित्पुण-पर्यन्तं मायया कल्पितं जगत् । सत्यमेकं परं ब्रह्म विदित्वैवं सुखी भवेत्'—इति महानिर्वाणोक्तात्म-ज्ञाननिर्णये । २२१

**कल्मषम्** क्ली. [ कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति । रस्य लत्वे पत्वे च पूर्वोदरादित्वात् साधु ] पापम्; 'यामीस्ता यातनाः प्राप्य स जीवो वीतकल्मषः । तान्येव पञ्च-भूतानि पुनरप्येति भागशः'—इति मनुः (१२।२२) । हस्तिपुच्छं; मालिन्यम्; 'न हि कञ्चन पश्यामो राघवस्यागुणं वयम् । दुर्लभो ह्यस्य निरयः शशाङ्कस्येव कल्मषम्'—इति रामायणे (२।३६।२७) । पुं. नरक-विशेषः; मलिनं त्रि. । ६२७

**कल्माषः** पुं. [ कलयति इति, विवप्, कल् । माषयति स्वभासा अभिभवति अन्यवर्णान् । मष् हिंसायाम्, णिच्+अच् । कल् चासौ माषश्चेति ] कृष्णपाण्डुरवर्णः, तद्वति त्रि. । चित्रवर्णः; (७४१), तद्वति त्रि. । कृष्णवर्णः; [ कलं शुभकर्म माषयति हिनस्ति, कल्+मप्+णिच्+अच् ] राक्षसः; गन्धशालः; नाग-विशेषः; 'नीलानीलौ तथा नागौ कल्माषशबलौ तथा'—इति महाभारते (१।३।५।७) । ७३६

**कल्पम्** क्ली. [ कल्पते आगम्यते, कल् गती+कर्मणि यत् ] प्रत्यूषः; अहर्मुखम्; 'इदं यः कल्प उत्थाय प्राञ्जलिः श्रद्धयान्वितः । शृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यां मुच्यते कर्मबन्धनैः'—इति भागवते (४।२।४।७८) । (३३०) मद्यम्; आसवः; ह्यस्तनदिनं (८०९); [ कलयति मिष्टतां सम्पादयति । अघ्न्यादित्वाद् यक् ] मधु; त्रि. [ कलासु साधुः इत्यर्थे यत् ] सज्जः; 'कययस्व कयामेतां कल्याः स्म श्रवणे तव'—इति महाभारते (१।५।३) । निरामयः; वाक्श्रुतिवर्जितः; दक्षः; कल्याणवचनम्; उपायवचनम् । १११

**कल्पपालः** पुं. [ कल्पं मद्यं पालयतीति । कल्प+पाल्+अण् ] शौण्डिकः; कल्यापालः; कल्पपालकः; प्रातराशः । ५९३

**कल्याणम्** क्ली. [ कल्पे प्रातः अण्यते शब्दधते इति । कल्प + अण् + 'अकर्तरि चेत' घञ् ] मङ्गलं; स्वश्रेयसं; शिवं; भद्रं; शुभं; भावुकं; भविकं;

भव्यं; कुशलं; क्षेमं; शस्तं, तद्युक्ते त्रि. । 'प्राति-वेश्यानुवेश्यौ च कल्याणे विशतिद्विजे'—इति मनुः (८।३९२) । स्वर्णम् (१७३) । १२२

**कल्यापालः** पुं. [ कल्यां मद्यं पालयतीति । कल्या+पाल्+अण् ] शौण्डिकः; कल्पपालः; कल्पपालकः ।

५९३

**कल्लमूकः** त्रि. [ कल्लः वधिरः मूकः अवाक् ] वाक्श्रुति-वर्जितः; अवाक्श्रुतिः; 'गूंगा-ब्रह्मरा' इति भाषा । ६०९

**कल्लोलः** पुं. [ कल्+वाहुलकात् ओलच् । यद्वा कं जलं लोलं चपलं यस्मात्, निपातनात् साधुः ] महातरङ्गः; उल्लोलः; 'कालिन्दी जलकल्लोलकोलाहलकुतूहली'—इत्युद्भूतः । हर्षः; शत्रौ त्रि. । ६५३

**कवचः** पुं.—क्ली. [ कं देहं वञ्चति विपक्षास्त्रेभ्यः वञ्चयित्वा रक्षति इति शेषः । क+वञ्च्+अच्, कं वातं वञ्चति वा, अन्तर्यर्थो वा । यद्वा कवते इति कुधातोरच प्रत्यय इति केचित् ] सन्नाहः, तत्पर्यायाः—तनुत्रं; वर्मं; दंशनम्; उरश्छदः; कङ्कटकः; जगरः; दंसनं; जागरः; अजगरः; कटकः; योगः; कञ्चुकः; 'शराश्च दिव्या नभसः कवचं च पपात ह'—इति विष्णुपुराणे (१।१३।४०) । 'यथा शस्त्रप्रहाराणां कवचं प्रति वारणम् । तथा दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम्'—इति मलमासतत्त्वम् । लीहादिवर्मवद् अङ्गादिरक्षणार्थं देवतामन्त्रविग्रहः । तत्तु पूजायां पाठयं (यथा देवीकवचम्) भूर्जे विलिख्य कण्ठादौ धार्यं च—इति तन्त्रम् । पटह्वाद्यम् । ४५९

**कवचितः** त्रि. [ कवचं संजातम् अस्य । इतच् ] वर्मितः; सन्नद्धः; दंशितः । ४६०

**कवरम्** त्रि. [ के मरुतके वरं शोभमानत्वात् श्रेष्ठम् ] संपूक्तं; खचितं; पुं. केशपाशः; 'बल्लुस्पन्दनस्तन-कलशकवरभाररशनां देवीम्'—इति भागवते (५।२।७) । पुं.—क्ली. [ कं जलं वृणोति, क+वृ+अच् ] लवणः; अम्लः । [ कौतीति, कु शब्दे+ 'कोररन्' इति अरन् ] पाठकः; कर्चुरवर्णः; 'दृष्ट्वैव निर्जितकलापभ्रामघस्ताद्वाचाकीर्णमाल्यकवरीं कवरीं तरुण्याः'—इति माघे (५।१९) । ७४१

**कवरी** स्त्री. [ कं शिरः वृणोति आच्छादयति । क+वृ+अच्, जानपदेत्यादिना डीप् । कु+अरन् डीप् वा ]

केशविन्यासः; केशवेशः; कवरः; केशगर्भकः; केश-  
पाशः; 'अमरीकवरीभारभ्रमरी'—इति चन्द्रालोके ।  
'गोपीभर्तुर्विरहविवुरा काचिदिन्दीवराक्षी, उन्मतेव  
स्खलितकवरी निःश्वसन्ती विशालम्'—इति पदाङ्क-  
दूते (१) । वर्वरा; कारवी । ५३०

कविः पुं. [ कवते सर्वं जानाति, सर्वं वर्णयति, सर्वं सर्वतो  
गच्छति वा । कव् इन् । यद्वा कुशब्दे, 'अच इः'  
इति इ ] शुक्राचार्यः; 'ब्रह्मणो हृदयं भित्त्वा निःसृतो  
भगवान् भृगुः । भृगोः पुत्रः कविविद्वान् शुकः कवि-  
सुतो ग्रहः'—इति महाभारते (१।६६।४२) । त्रि  
[ कवते श्लोकान् ग्रथते वर्णयति वा, कव्+इन् ]  
पण्डितः (३३३); 'अध्यापयामास पितृन् शिशुराङ्गि-  
रसः कविः'—इति मनुः (२।१५१) । ब्रह्मा; 'तेने  
ब्रह्म हृदाय आदिकवये'—इति भागवते (१।१) ।  
वाल्मीकिमुनिः; 'एकोऽमूर्खलिनात् ततस्तु पुलिनात्  
वल्मीकितश्चापरस्ते ह्येव प्रथिताः कवीन्द्रगुरवस्तेभ्यो  
नमस्तुर्महे'—इत्युद्धटः । सूर्यः; काव्यकरः; 'मन्दः  
कवियशःप्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्'—इति कालि-  
दासः, रघो (१।३) । [ कवति शब्दायते इति, कु शब्दे  
'अच इः' इति इ, अश्वमुखे शब्दायमानत्वात् ] खलीने  
स्त्री । विष्णुः; 'वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित्  
कविः'—इति महाभारते (१।३।१४९।२७) । कल्कि-  
देवस्य ज्येष्ठभ्राता; 'कल्केज्येष्ठास्त्रयः शूराः कवि-  
प्राज्ञसुमन्त्रकाः । तातमातृप्रियकरा गुरुविप्रप्रतिष्ठिताः'  
—इति कल्किपुराणे २ अध्याये । चौरयोद्धा; 'वेधस्थान  
रणे भङ्गो दुर्गे खण्डिः प्रजायते । कविप्रवेशनं यत्र  
योवाघातश्च तत्र वै'—इति सर्वतोभद्रचक्रे ज्योति-  
स्तत्त्वम् । ४८

कविकम् क्ली. [ कवि+स्वार्थे कन् ] खलीनः; कविः;  
कविका; 'लगाम' इति भाषा । ४४२

कविका स्त्री. [ कवि+स्वार्थे कन् टाप् च ] खलीनः;  
केविकापुष्पं; कवयीमत्स्यः; 'कविका मधुरा स्निग्धा  
कफघ्ना रञ्जिकारिणी । किञ्चित् पित्तकरी वातनाशिनी  
वह्निवर्द्धिनी'—इति भावप्रकाशः । ४४२

कशा स्त्री. [ कशति शब्दायते लाडयति वा । कश्+करणस्य  
कर्त्विक्सया कर्तरि अच् टाप् च । लाडयत्यनया वा ]  
अश्वादेस्ताडनी; 'कोड़ा, चाबुक' इत्यादि भाषा ।

'जघान कशया मोहात् तदा राक्षसवन्मुनिम्'—इति  
महाभारते (१।१७७।१०) । मांसरोहिणी । ४४२  
कशिपुः पुं. [ कशति दुःखं, कश्यते वा, कश् गतिशासनयोः ।  
कश्+मृगध्वादित्वाद् निपातनात् सावुः ] भवतम्;  
आच्छादनम्; एकोक्त्यान्नवस्त्रे कशिपू इति द्विवचनान्तं;  
शय्या; 'सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासैः'—इति  
भागवते (२।२।४) । १२१

कशेरुः पुं.—क्ली. [ के देहे शीर्यते, क+शु+के श्र एरु  
चास्य' इति उ एरुः चान्तादेशः ] पृष्ठास्थि; 'किं  
कुर्वता वराहेण खाद्यन्ते हि कशेरवः'—इत्युणादि-  
धृतचन्द्रवचनम् । क्ली. [ कं जलं वातं वा शृणाति,  
क+शु+उणादित्वाद् उ एरुः चान्तादेशः ] कशेरुका;  
तृणकन्दः; 'कसेरु' इति भाषा । 'कशेरु द्विविधं तत्तु  
महद्राजकशेरुकम् । मुस्ताकृति लघु स्याद् यत् तच्चि-  
वोटमिति स्मृतम्'—इति वैद्यकम् । पुं. [ क+  
शु+उ+एरुः ] जम्बूद्वीपस्य खण्डविशेषः । ६३४  
कश्मलम् क्ली. [ कश् गतिशासनयोः+कल 'कुटिकशि-  
कौतिम्यः प्रत्ययस्य मुट्' इति मुट् ] मलिनं त्रि. । मूच्छां;  
मोहः; 'कुतस्त्वाकश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्'  
इति भगवद्गीता (२।२) । पापम् । ७२७

कश्यम् क्ली. [ कशति अनेन, कश्+वाहुलकात् करणे  
यत् ] मद्यम्; 'ब्रह्मणस्तनयो योऽभून् मरीचिरिति  
विश्रुतः । कश्यपस्तस्य पुत्रोऽभूत् कश्यपानात् स कश्यपः'  
इति मार्कण्डेयपुराणे (१०।४।३) । [ कशाम् अर्हतीति ।  
कशा+दन्तादित्वाद् यत् ] अश्वमध्यभागः (४४१);  
कशाहं त्रि. । ३३०;

कश्यपनन्दनः पुं. [ कश्यपस्य नन्दनः ] गरुडः; देवा-  
सुरादयः । ३०

कषायः पुं.—क्ली. [ कषति कष्टम्, कष्+आय ] रस-  
विशेषः; तुवरः; कुवरः; तूवरः; तद्युक्ते त्रि. । 'कषैला'  
इति भाषा । 'शुक्तानि च कषायांश्च पीत्वा मेघ्यान्यपि  
द्विजः'—इति मनुः (१।१।१५३) । 'कषायः शोषणः  
स्तम्भी व्रणपाकातिनाशनः । कफशोणितवातघ्नो रुक्षः  
शीतो गुरुस्तथा । 'कषायनामा निरुणद्धि शोफं  
वर्णन्तनोदीपनापचनश्च । सत्त्वापहोऽसौ शिथिलत्व-  
कारी निषेवितः पाण्डुकरोऽतिमात्रम्'—इति राज-  
निर्घण्टः । त्रि. [ कष+आयः ] सुरभिः (८।३);

‘प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः’—इति मेघ-  
दूते (३३) । पाचनादिः; क्वाथः; निर्यूहः; स्वरसः;  
कल्कः; क्वथितः; शीतः; फाण्टम् । ‘जिह्वां कण्ठं  
ग्रसति नितरां ग्राहकश्चातिसारे, श्लेष्मव्याधेरुपशमकरः  
श्वासकासापहर्ता । हिक्कां शूलं हरति नितरां शोषनं  
स्याद् घणानां, प्रोक्तश्चायं समधिकगुणो नाम श्रेष्ठः  
कषायः’—इति हारीतः । निर्यासः; ‘घृष्टो वटकषायेण  
अनुलिप्तः प्रियङ्गुणा । क्षीरेण षष्टिकान् भुक्त्वा  
सर्वपापैः प्रमुच्यते’—इति महाभारते अनुशासन-  
पर्वणि । विलेपनम्; ‘कर्णापितो लोध्रकषायरूक्षे  
गोरोचनाक्षेपेनितान्तगौरे’—इति कुमारसम्भवे (७-  
१७) । तट्टीकायां ‘लोध्रस्य वृक्षविशेषस्य कषायेण  
विलेपनेन’—इति मल्लिनाथः । अङ्गरागः; पुं. श्योनाक-  
वृक्षः; रागः; कलियुगं; निर्विकल्पसमाधेर्विघ्नभेदः;  
त्रि. लोहितः; ‘चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः पुंस्कोकिलो  
यन्मधुरं चुकूज’—इति कुमारसम्भवे (३।३२) ।  
रक्तपीतमिश्रितवर्णः; धववृक्षः । ७७१

कसेरुः पुं. [ कं शृणातीति, श्रु हिंसायां बाहुलकादुप्रत्यये  
प्रकृतेरेरङ्गदेशः, निपातनात् शस्य सत्वम् ] कसेरुका;  
पृष्ठास्थिः; कशेरुः; गुण्डकन्दः; क्षुद्रमुस्ता; शूकरेष्टः;  
सुगन्धिः; सुकन्दः; कसेरुकः । ६३४

कस्तूरिका स्त्री. [ कसति गन्धोऽस्याः । कस् गतौ,  
सर्जूरदित्वाद् ऊर, डीप्, कस्तूरी + स्वार्थे कन् टाप्,  
पृषोदरादित्वात् साधुः ] कस्तूरी; कस्तूरिका; मृग-  
नाभिः; मृगमदः; मृगः; मृगी; नाभिः; मदः;  
वातामोदः; योजनगन्धिका; मदनी; गन्धकेलिका;  
वेधमुख्या; मार्जारी; सुभगा; बहुगन्धदा; सहस्र-  
वेधी; श्यामा; कामान्धा; मृगाङ्गना; कुरङ्गनाभिः;  
ललिता; श्यामला; मोदिनी; नाभी; लता; योजन-  
गन्धा; मार्गः; गन्धबोधिका; कालाङ्गी; धूपसञ्चारी;  
मिश्रा; गन्धपिशाचिका । ‘मृगनाभिमृगमदः कथितस्तु  
सहस्रभित् । कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा  
स्मृता । ‘कस्तूरिका कटुस्तिक्ता क्षारोष्णा शुक्ला  
गुरुः । कफवातविषच्छंदिशीतदोर्गन्धशोषहृत्’—इति  
भावप्रकाशः । ५४४

कङ्गारम् क्ली. [ कस्य जलस्य हार इव, के जले ह्लादते  
वा इति । क + ह्लाद् + पचाञ्च्, पृषोदरादित्वात्

साधुः ] श्वेतोत्पलं; सौगन्धिकं; कत्तुणं; गन्धकम्;  
‘कुमुदोत्पलकङ्गारशतपत्रवनद्विभिः’—इति भागवते  
(४।६।१७) । ६८१

कांक्ष्यम् क्ली. [ कंसाय पानपात्राय हितं कंसीयं, तस्य  
विकारः इति । ‘कंसीयपरशान्ययोरिति’ यञ्; छस्य लुङ्  
च । यद्वा कंसमेव इति स्वार्थे यञ् प्रत्ययः ] ताम्ररङ्ग-  
मिश्रितघातुः; कंसं; कंसास्थिः; ताम्रादं; सौराष्ट्रकं;  
घोषं; कांसीयं; वह्निलोहकं; दीप्तिलोहं; चोर-  
घुष्यं; दीप्तिकांस्यं; कांस्यम् । ‘उपघातु भवेत् कांस्यं  
द्वयोस्तरणिरङ्गयोः । कांस्यस्य तु गुणा श्रेयाः स्वयोनिस-  
दृशा जनैः’—इति भावप्रकाशः । १७०

काफः पुं. [ कायते शब्दायते, कै शब्दे, ‘इण्मीकापाद्यात्यति-  
मचिभ्यः कन्’ इति कन् ] पक्षिविशेषः; करटः; अरिष्टः;  
बलिपुष्टः; सकृत्प्रजः; ध्वाह्लजः; आत्मघोषः; परभृत्;  
बलिभुक्; वायसः; वासजवः; वलः; दीर्घीपुः;  
सूचकः; कृष्णः; भ्रामीणः; पिशुनः; फट्टेखादकः;  
द्विकः; कागः; काणः; धूलिजक्ष्वः; निमित्तकृत्;  
कौशिकारिः; चिरायुः; मुखरः; खरः; महालोलः;  
चिरञ्जीवी; चलाचलः; करटकः; नागवीरकः;  
गाढमैथुनः; लुण्टीकः; श्रावकः; रतञ्ज्वरः । ‘अधोच्यते  
काकस्तं स्तानां मूर्ध्न स्थितं शाकुनभाषितानाम् ।  
‘अचिन्तितावेदितकार्यसिद्धिं पूर्वोदिकाष्ठाप्रहरक्रमेण’—  
इति शाकुने काकचरित्रम् । पीठसर्पा; द्वीपविशेषः;  
परिमाणभेदः; वृक्षविशेषः; शिरोऽजसालनः; तिलकः;  
अतिघृष्टः । २४५

काकतुण्डः पुं. [ काकतुण्डस्येव वर्णोऽस्त्यस्य । अर्शो  
आदित्वाद् अच् ] कालागरु; अगुरुविशेषः । ५४५

काकतुण्डिका स्त्री. [ काकतुण्डस्येव वर्णः फलांशो अस्याः  
इति । ठन्, स्त्रियां टाप् च ] काकचिञ्चा; गुञ्जा ।  
२०३

काकपक्षः पुं. [ काकस्य पक्ष इव आकारोऽस्त्यस्य ।  
काकपक्ष + अच् ] मस्तकपार्श्वद्वये केशरचनाविशेषः;  
शिक्षण्डकः; शिक्षण्डकः; शिक्षण्डः; ‘जुल्फी’ इति  
भाषा । ‘कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वर-  
विधातशान्तये । काकपक्षधरमेव याचितस्तेजसां हि  
न वयः समीक्ष्यते’—इति रघुवंशे (११।१) । ५३२

काका स्त्री. [ काकवदाकारोऽस्त्यस्याः काफ, अच् उत्तटाप् ]



काकनासालता; काकोलीवृक्षः; काकजङ्घावृक्षः; 'काकजङ्घा नदीकान्ता काकतिक्ता सुलोमशा । पारावतपदी दासी काका चापि प्रकीर्तिता'—इति भावप्रकाशे । रक्तिकालता; मलपूवृक्षः; काकनाची-वृक्षः । ८०९

**काकुः** स्त्री. [ कक् लौत्ये + उण् ] शोकभयादिभिर्ध्व-  
निविकारः; 'भिल्लकण्ठवनिर्धीरेः काकुरित्यभिधीयते'—  
इति साहित्यदर्पणे (२।२३) । 'गुरुपरतन्त्रतया वत  
दूरतरं देशमुद्यतो गन्तुम् । अलिकुलकोकिलललिते  
नेष्यति सखि ! सुरभिसमयेऽसी ?' नैष्यति, अपि तु  
एष्यति एवेति काक्वा व्यज्यते । इति काकुं लक्ष्यीकृत्य  
उदाहृतं तत्रैव । १४३

**काकुवम्** क्ली. [ काकुं ददातीति । काकु + दा + क् ]  
तालु । ५२१

**काकोदरः** पुं. [ कु कुत्सितम् अकति । कु + अक् वक्रगती +  
अच्, कोः कादेशः, काकं कुटिलगतिकारि उदरं यस्य ]  
सर्पः; 'यः पूतनामारणलब्धवर्णः काकोदरो येन विनीत-  
दर्पः । यशोदयालङ्कृतमूर्तिरव्यान्नाथो यदुनामथवा  
रघूणाम्'—इति राघवपाण्डवीये । ६४०

**काकोलः** पुं. [ कं जलमाकोलति संस्त्यायतीति । क + आ +  
कुल् संस्त्याने + अण् । कक् लौत्ये, स्वार्थे णिच् +  
बाहुलकाद् ओल वा ] द्रोणकाकः; 'वकं चैव बलाकां  
च काकोलं खञ्जरीटकम् । मत्स्यादान् विड्वराहांश्च  
मत्स्यानेव च सर्वशः'—इति मनुः (५।१४) । सर्पः;  
शूकरभेदः; काकोलीनाम्ब्यातीषधिविशेषः; कुलालः ।  
पुं.—क्ली. [ कु कुत्सितं तीव्रतरं यथा स्यात् तथा कोलति  
पीडयति विह्वलीकरोति वाऽनेन । करणे घञ् ] कृष्ण-  
वर्णस्यावरविषविशेषः (६४७); 'काकोलमुग्रतेजः  
स्यात् कृष्णच्छविमहाविषम्'—इति वैद्यके । अस्य  
पर्याया यथा—'काकोलो गरलः क्ष्वेडो वत्सनाभः  
प्रदीपनः । शौक्लिकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो  
विषः'—इति वैद्यकरत्नमाला । क्ली. [ काकयति  
लोलयति दुःखदत्वात् । कक् लौत्ये + णिच् + ओल ।  
काकेन उल्लायते भक्षयते अत्र वा । आधारे घञर्थे क,  
पृषोदरादित्वात् साधु ] नरकविशेषः; 'महानरक-  
काकोलं सञ्जीवनमहायसम्'—इति मनुः । २४६

**काङ्क्षा** स्त्री. [ काङ्क्ष + अ ] इच्छा । ७१०

**काचः** पुं. [ कच् दीप्ती + णिच् + घञ् ] शिक्यं; क्षारः;  
मृत्तिकाविशेषः; 'काच्' इति भाषा । मणिविशेषः;  
'आकरे पद्मरागाणा जन्म काचमणेः कुतः'—इत्युद्भूटः ।  
नेत्ररोगविशेषः; 'अस्मिन्नपि तमोभूते नातिरूढे महागदे ।  
चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रावन्तरिक्षे च विद्युतः । निर्मलानि  
च तेजांसि भ्राजिष्णूनीव पश्यति । स एव लिङ्गनाशस्तु  
नीलिका काचसंज्ञितः'—इति माधवकरः । ७५८

**काचितम्** त्रि. [ कच्यते वध्यतेऽसी । कच् + णिच्,  
कर्मणि क्त ] सिक्वितं; शिक्वितं; शिक्वियारोपितवस्तु ।  
७६८

**काञ्चनम्** क्ली. [ काञ्चते दीप्यते इति । काचि दीप्ती +  
ल्यु ] स्वर्णम्; 'अमित्रादपिस दृत्तमभेध्यादपि काञ्चनम्' ।  
—इति मनुः (२।२३९) । पद्मकेसरः; घनं; नागकेसर-  
पुष्पं; [ भावे ल्युट् ] दीप्तिः; काञ्चनमये त्रि. ।  
'निलेपं काञ्चनं भाण्डमद्भूरेव विशुध्यति'—इति  
मनुः (५।११२) । पुं. [ काञ्चते दीप्यते इति कर्तरि  
ल्यु ] पुष्पवृक्षविशेषः; रक्तश्वेतभेदेन स द्विविधः ।  
आद्यस्य पर्यायाः—रक्तपुष्पः; कोविदारः; युगमपत्रः;  
कुण्डलः । द्वितीयस्य पर्यायाः—काञ्चनालः; कर्बुदारः;  
पाकारिः; चम्पकः; नागकेसरः; उदुम्बरः; धुस्तूरः;  
पुरूरवसो वंश उद्भूतस्य भीमस्य पुत्रः; 'भीमस्तु विजय-  
स्याथ काञ्चनी हीत्रकस्ततः'—इति भागवते  
(१।१५।३) । १७४

**काञ्चनारकः** पुं. [ काञ्चनं तद्वर्णम् ऋच्छति पुष्पैः ।  
काञ्चन + ऋ + अण् + कन् ] कोविदारवृक्षः; काञ्च-  
नारः; काञ्चनालः; काञ्चनकः; गण्डारिः;  
शोणपुष्पकः; 'कचनार' इति भाषा । २०६

**काञ्चिः** स्त्री. [ काञ्चते इति, 'सर्वं धातुभ्य इन्' इति  
इन् ] काञ्ची; 'हृतकाञ्चिवल्लिवन्धोत्तरजघनाद-  
परभोगभुक्तायाः । उल्लसति रोमराजिः स्तनशम्भो-  
र्गरलरेखेव'—इति आर्यासप्तशती (६९३) । ५६०

**काञ्ची** स्त्री. [ काञ्चि + कृदिकारान्तत्वाद् वा ङीप् ]  
स्त्रीकटचाभरणं; मेखला; सप्तकी; रसना; सारसनं;  
काञ्चिः; रक्षणा; कक्षा; कक्ष्या; सप्तका; सारशनं;  
रसनं; वन्धनम्; 'वीचिक्षोभस्तनितविहंगश्रेणिकाञ्ची-  
गुणायाः'—इति मेघदूते (३०) । केचित्तु—'एकयष्टि-  
भवेत् काञ्ची मेखला त्वष्टयष्टिका । रसना पीडश

ज्ञेया कलापः पञ्चविंशकः ।' मोक्षदसप्तपुर्यन्तगत-  
पुरीविशेषः; 'अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची  
अवन्तिका । पुरी द्वारवती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ।'  
गुञ्जा । ५६०

काञ्चीपदम् क्ली. [ काञ्च्याः पदं स्थानम् ] जघनम् ।

५१२

काञ्जिकम् क्ली. [ अञ्ज् + धात्वर्थनिर्देशे ष्वल्, टाप्  
अत इत्वञ्च । अञ्जिका । कु कुत्सिता अञ्जिका  
व्यक्तिर्षस्य, कोः कादेशः ] वारिपयुषितान्नाम्लजलम्;  
आरनालकं; सौवीरं; कुल्माषम्; अभिषुतम्; अन्नित्त-  
सोमं; धान्याम्लं; कुञ्जलं; कुल्मासं; कुल्माषाभियुतं;  
काञ्चिकं; काञ्जीकं; काञ्जिका; कञ्जिकं;  
काञ्जी; भक्तवारि; धान्यमूलं; धान्ययोनि; तुषाम्बु;  
गृहाम्लं; महारसं; तुपोदकं; शुक्लं; चुक्रं; धातु-  
घ्नम्; उन्नाहं; रक्षोघ्नं; कुण्डगोलकं; सुवीराम्लं;  
वीरम्; अभिषवम्; अम्लसारकं; 'कांजी' इति भाषा ।  
'काञ्जिकं दधि तैलं तु बलीपलितनाशनम् । दाहकं  
गात्रशैथिल्यं बल्यं सन्तर्पणं परम्'—इति राजनिर्घण्टः ।  
'कुल्माषधान्यमण्डेन चाशृतं काञ्जिकं भवेत् । यन्म-  
स्त्वादि शुची भाण्डे सगुडसौद्रकाञ्जिकम् । धान्यराशौ  
त्रिरात्रस्यं शुक्तं चुक्रं तदुच्यते'—इति वैद्यकपरिभाषा ।

३१८

काण्डः पुं.- क्ली. [ कनी दीप्तौ + 'अमन्ताद् डः' 'क्वादिभ्यः  
कित्', 'अनुनासिकस्येति' दीर्घः ] अर्वा; कुत्सितः; बाणः  
(४६६); 'विषये काशिराजस्य ग्रामान्निष्कम्य लुब्धकः ।  
सविधं काण्डमादाय मृगयामास वै मृगम्'—इति महा-  
भारते (१३।५।३) । नालं (५७९); प्रस्तावः (८६७);  
वृन्दः; समूहः; कुत्सा; दण्डः; 'पृषता वरत्राकाण्डेना-  
हन्ति'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (८।७।२७) । 'वरत्रा-  
काण्डेन वंशदण्डेन'—इति कर्कः । जलं; वारि; 'तास्तु  
गत्वा परं तीरमवरोप्य च तं जनम् । निवृताः काण्ड-  
चित्राणि क्रियन्ते दाशवन्धुभिः'—इति रामायणे (२।  
८९।१०) 'क्रीडार्थं काण्डचित्राणि, काण्डे जले चित्राणि  
चित्रगमनानि लघुत्वात् क्रियन्ते स्मेत्यर्थः' इति तट्टीका ।  
शरवृक्षः; वर्गः; एकजातीयसमवायः; 'क्रियाकाण्डेषु  
निष्णातो योगेषु च कुरुद्वह'—इति भागवते (४।२।४।९) ।  
परिच्छेदः; 'इदं प्रापमुत्तम काण्डमस्य यस्माल्लोकात्पर-

मेष्ठी समाप'—इति अथर्ववेदे (१२।३।४५) । अवसरः;  
स्तम्बः; 'ऊरुद्वयं मृगदृशः कदलस्य काण्डौ मध्यं व  
वेणिरतुलं स्तनयुग्ममस्याः—इति अमरशतके (९५) ।  
तृणादिगुच्छः; 'दूर्वाकाण्डमिव श्यामा न्यग्रोगपरि-  
मण्डला'—इति भट्टिः (५।१८) । तरस्कन्धः; 'वृक्ष-  
काण्डमितो भाति ।' वृक्षाणां शाखा; 'उद्भिज्जाः स्थावराः  
सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः'—इति मनुः (१।४६)  
'केचित्काण्डात् शाखा एव रोपिता वृक्षतां यान्ति'—  
इति तट्टीका । रहः; निर्जनस्थानं; श्लाघा; पापीयान् ।  
क्ली. [ कणतीति, कण् शब्दे + ड, बाहुलकाद् दीर्घः ]  
सन्धिः; 'विच्छिन्नैकखण्डास्थि; 'भग्नं संमासाद्विविधं  
दुताशकाण्डे च सन्धौ च हि तत्र सन्धौ । उत्पिष्ट-  
विश्लिष्टविवर्तितं च तिर्यगतं क्षिप्तमघश्च षट् च'—  
इति रोगविनिश्चयः । सन्धिविच्छिन्नमेकखण्डमस्थि-  
काण्डं, काण्डेन च ललककपालवलयतरुणरुचकानां  
ग्रहणम् । तत्र भग्नं काण्डभग्नम्—इति तट्टीका मधु-  
कोषः । ३३७

काण्डपटः पुं. [ काण्डे, काष्ठादिनिमित्तस्तम्भे आवरकत्वात्  
स्थितः पटः ] जवनी; जवनिका; तिरस्करिणी;  
'कनात' इति भाषा । ३०९

काण्डपृष्ठः त्रि. [ काण्डः बाणः पृष्ठे यस्य ] काण्डस्पृष्टः;  
शस्त्राजीवः; 'स्त्रीपूर्वाः काण्डपृष्ठाश्च यावन्तो भरतर्षभ ।  
अजपा ब्राह्मणाश्चैव श्राद्धे नार्हन्ति केतनम्'—इति  
महाभारते (१३।२३।२२) । वैश्यापतिः; क्ली. [ काण्डं  
तरस्कन्ध इव स्थूलं पृष्ठं यस्य ] कर्णघनुः । ४०५

काण्डस्पृष्टः त्रि. [ स्पृष्टं गृहीतं काण्डं येन, निष्पान्तत्वात्  
परनिपातः ] काण्डपृष्ठः; शस्त्राजीवी; शस्त्राजीवः । ४०५

कातरः त्रि. [ कु कष्टेन तरतीति । कु + तु + अच्, कोः  
कादेशः ] व्यसनाकुलचित्तः; व्याकुलः; अधीरः;  
'कातरोऽसि यदि वोद्गताचिषा तजितः परशुधारया  
मेम'—इति रघुवंशे (१।१७८) । पुं. [ कं जलम्  
ओतरति, क + आ + तु + अच् ] कातलमत्स्यः । ३५४  
कात्यायनिका स्त्री. [ कतस्यापत्यं स्त्री, 'गर्गादिभ्यो  
यल्' इति यम्, 'सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः' इति ष्फ ।  
पित्वाद् डीष्, क, इत्वं, टाप् ] अद्धेवृद्धा; काषायवसना  
विधवा; दुर्गा; याज्ञवल्क्यमुनेः पत्न्योरेका; कात्यायनस्य  
ऋषेः पत्नी । ४८५

**कात्यायनी** स्त्री. [ कतस्यापत्यं स्त्री । 'गर्गादिभ्यो यञ्' इति यञ् । 'सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः' इति फ्, षित्वाद् डीष् ] दुर्गा; पार्वती; 'एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् । पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते'—इति मार्कण्डेये (११।२३) । अर्द्धवृद्धा; काषायवसना विधवा; याज्ञवल्क्यमुनेः पत्न्योरेका । यया वृहदारण्यकोपनिषदि—'याज्ञवल्क्यस्य द्वे भायौ बभूवतुः मैत्रेयी कात्यायनी च । तयोर्हि मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव स्त्रीप्रज्ञैव तर्हि कात्यायनी ।' [ पत्न्यां डीप् ] कात्यायनस्य ऋपेः पत्नी । १५

**कादम्बः** पुं. [ कदम्बे समूहे भवः । कदम्ब + अण्. ] कलहंसः; 'क्वचित् खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसर्गवतीव पङ्क्तिः'—इति रघुवंशे (१३।१५) । [ कदम्ब एव स्वार्थे अण् ] कदम्बवृक्षः; [ कदम्बस्येदमिति व्युत्पत्त्या अण् ] कदम्बसम्बन्धिनि त्रि., कदम्बकुसुमम्; 'गन्धश्च धाराहृतपल्लवानां कादम्बमर्द्धोद्गतकेसरं च'—इति रघुवंशे (१३।२७) । वाणः; कादम्बकः; शरः । २५४

**कादम्बरी** स्त्री. [ कु कृष्णवर्णा नीलवर्णमित्यर्थः, अम्बरं वस्त्र यस्य, कोः कदादेशः, कदम्बरो बलरामस्तस्य प्रिया । कदम्बर + अण् ततः स्त्रियां डीप् । यद्वा कदम्बे जातो रसः कादम्बः, 'तत्र जातः' इत्यण् । कादम्बं राति ददातीति, रा दाने + 'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क, गीरादित्वान् डीष् ] मदित्रा; 'कादम्बरीमदविधूर्णतलोचनस्य युक्तं हि लाङ्गलभृतः पतनं पृथिव्याम्'—इत्युद्भटः । कोकिला; सरस्वती; सारिकापक्षिणी; वाणभट्ट-विरचितकाव्यविशेषः (स्वनायिकानाम्नेव प्रसिद्धोऽयं ग्रन्थः । इयं कादम्बरी तु वाणभट्टेन असमापिता पुनरस्य पुत्रेण समाप्तिं नीता) । नायिकाविशेषः (सा तु तुम्बुरुप्रभृतीनां पण्णां गन्धर्वाणां ज्येष्ठस्य हंस इत्याख्यया प्रसिद्धस्य गन्धर्वस्य कन्या । अस्या जन्तुनी सोममयूखसम्भवाप्सरसां कुले जाता गीरीति नाम्ना प्रसिद्धा) । ३२९

**कादम्बिनी** स्त्री. [ कादम्बाः कलहंसाः सन्ति अस्याम्, कादम्ब + इनि + डीप् ] मेघमाला; मेघश्रेणिः । ५९  
**काद्वेयः** पुं. [ कद्र्वा अत्यं पुमान् । कद्र् + 'शुभ्रादिभ्यश्च' इति ढक्, 'डे लोपोऽकद्र्वाः' इति भस्य न लोपः ] कद्र्-सन्तानः; नागाः; 'शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तक्षकश्च

भुजङ्गमः । कूर्मश्च कुलिकश्चैव काद्वेयाः प्रकीर्तिताः'—इति महाभारते (१।६५।४१) । ६४०

**काननम्** क्ली. [ कं जलम् अननं जीवनमस्य । यद्वा कानयति दीपयति, कन् दीप्ता + णिच् + ल्युट् ] वनम्; 'शीतो वायुः परिणमयिता काननोदुम्बराणाम्—इति मेघदूते (४४) । ब्रह्मणो मुखम्; गृहम् । २१०

**कानीनः** पुं. स्त्री. [ कन्यायाम् अनूढायां जातः, कन्याया जातो वा । कन्या + 'कन्यायाः कनीन च' इति अण् कनीनादेशश्च ] अनूढापुत्रः; कन्यकाजातः; सा कन्या यद्यनूढा पितृगृह एव तिष्ठति तदा तत्पुत्रो मातामहस्यैव, यथा—'कानीनः कन्यकाजातो मातामहसुतो मतः'—इति याज्ञवल्क्यः । यद्यूढा तदा बौद्धरेव, यथा—'पितृ-वेदमनि कन्या तु यं पुत्रं जनयेद्ब्रह्मः । तं कानीनं वदेन्नाम्ना बोटुः कन्यासमुद्भवम्'—इति मनुः । पुं. व्यासः; कर्णः । ५०१

**कान्तः** पुं. [ कम् + क्त ] पतिः; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः सङ्गमात् किञ्चिदूनः'—इति मेघदूते (१०१) । श्रीकृष्णः; चन्द्रः; चन्द्रकान्तसूर्यकान्तायस्कान्तादयः; हिज्जल-वृक्षः; वसन्तऋतुः; विष्णुः; 'कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः'—इति महाभारते (१३।१४९। ४५) । शिवः; 'गुहः कान्तो निजः सर्पः पवित्रं सर्वपावनः'—इति महाभारते (१३।१७।१४८) । कार्तिकेयः; 'काम-जित् कामदः कान्तः सत्यवाग् भुवनेश्वरः'—इति महा-भारते (२।२३।१४) । ४९७

**कान्तः** त्रि. [ काम्यते इति, कम् + कर्मणि क्त, 'यस्य विभाषा' इति नेट्, 'अनुनासिकस्येति' दीर्घः ] मनोरमः; शोभनः; 'मलिनमपि मृगाक्ष्या बल्कलं कान्तरूपं न मनसि रुचिभङ्गं स्वल्पमप्यादधाति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । क्ली. [ कनते दीप्यते इति, कन् + कर्तरि क्त ] कुङ्कुमं; लौहविशेषः; 'स्वादुर्यत्र भवेन्निम्ब-कल्को रात्रिन्दिबोषितः । कान्तं तदुत्तमं यच्च रूप्येणा-वर्तितं मिलेत् ।' 'पात्रे यस्मिन् विसरति जले तैल-विन्दुर्निषिक्तो, विद्धं गन्धं विसृजति निजं रूपितं निम्ब-कल्कैः । पाके दुग्धं भजति शिखराकारतां नेति भूमौ, कान्तं लोहं तदिदमुदितं लक्षणोक्तं न चान्यत्'—इति सुखबोधः । ६८९

**कान्ता** स्त्री. [ काम्यते असौ, कम् + णिच् + कर्मणि क्त +

टाप् ] नारी; 'क्षटिति प्रविश गेहं मा बहिस्तिष्ठ कान्ते ! ग्रहणसमयवेला वर्तते शीतरश्मेः । अयि ! सुविमल-कान्तिं वीक्ष्य नूनं स राहुर्ग्रसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय'—इति शृङ्गारतिलके (६) । प्रियङ्गुवृक्षः; सर्वाङ्गसुन्दरी स्त्री; गङ्गा; 'कूटस्था करुणा कान्ता कूर्मयाना कलावती'—इति काशीखण्डे (२९।४३) । वृहदेला; रेणुका; नागरमुस्ता । ४८२

**कान्तारम् क्ली.** [ कस्य मुखस्य अन्तम् ऋच्छति गच्छ-तीति । कान्त + ऋ + 'कर्मण्यण्' इति अण् । कान्तं मनोज्ञम् ऋच्छति प्राप्नोति वा । 'कर्मण्यण्' ] काननम्; 'सीते विमुच्यतामेषा वनवासकृता मतिः । बहुदोषं हि कान्तारं वनमित्यभिधीयते'—इति रामायणे (२।२।१५) । पशुविशेषः; पुं. [ कान्तं मनोज्ञं रसम् ऋच्छति प्राप्नोति, कान्त + ऋ + अण् ] इक्षुविशेषः; कान्तारकः; कान्तारी; 'कान्तारतावसाविक्षुवंशकानुगुणी मती'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ४५ अध्यायः । कीविदारवृक्षः; वंशः; पुं-क्लो. [ कस्य-सुखस्य अन्तम् ऋच्छति यत्र, हिल्लसंकुल-त्वात् । कान्त + ऋ + आधारे + घञ् ] महावनम्; 'कैकेयान् सिन्धुसौवीरान् कान्तारगिरयश्च ये । गिरि-जालावृतां दुर्गां मार्गध्वं पश्चिमां दिशम्'—इति रामायणे (४।४३।११) । दुर्गमपयः (८१६); 'सिंहक्षुण्णकरीन्द्रकुम्भगलितं रक्ताशितमुक्ताफलम्, कान्तारे बदरीभ्रमाद् द्रुतमगाद्भिल्लस्य पत्नी मुदा' विलं; छिद्रम् । २१०

**कान्तिः स्त्री.** [ कम् कान्तौ, कन् दीप्ती वा + भावे क्तिन् ] दीप्तिः; शोभा; द्युतिः; छविः; शुभा; भा; श्रीः; भासा; भाः; अभिरुह्या; 'शशाङ्कः श्रीधरः कान्तिः श्रीस्तस्यैवानपायिनी'—इति विष्णुपुराणे (१।८।२३) । स्त्रीशोभा; 'रूपयौवनलालित्यं भोगाद्यैरङ्गभूषणम् । शोभा प्रोक्ता सैव कान्तिर्मन्मथाप्यायिता द्युतिः'—इति साहित्यदर्पणे (१३०) । इच्छा [ स्पृहार्थ-कम्धातोर्भावे क्तिन् प्रत्ययः ] दुर्गा; 'स्तुतिः सिद्धिरिति ख्याता श्रिया संश्रयणाच्च या । लक्ष्मीर्वा ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति देवीपुराणे देवीनामनिरुक्ती ४५ अध्याये । गङ्गा; 'कुमुदती कमलिनी कान्तिः कल्पितदायिनी'—इति काशीखण्डे गङ्गास्तोत्रे (२९।४०) । 'कान्तिश्चन्द्रतेजोरूपा'—इति तट्टीका । ८१३

**कान्विशीकः** त्रि. [ कां दिशं यामि इत्याह, 'तदाहेति मा शब्दादिभ्य उपसङ्ख्यानमिति' ठक्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] भयद्रुतः; भयेन पलायितः । ४७९

**कान्यकुब्जम् क्ली.** [ कन्याः कुब्जा न्युब्जीकृता वायुना यत्र, ततः स्वार्थे अण् ] गङ्गातीरस्थपुरविशेषः; महोदयं; कन्याकुब्जं; गाधिपुरं; कौशं; कुशस्थलं; 'कन्नौज' इति भाषा । 'एतस्मिन्नेव काले तु पृथिव्याः पृथिवीपतिः । कान्यकुब्जे महानासीत् पार्थिवः सुमहाबलः । गाधीति विश्रुतो लोके वनवासं जगाम ह'—इति महाभारते (३।११५।१९) । २८७

**कापटिकः** त्रि. [ कपटेन चरति इति, ठक् ] मायिकः; शठः; धूर्तः; छात्रः; अन्यमर्मज्ञः; 'तत्र परममज्ञः प्रगल्भच्छात्रः कपटव्यवहारित्वात् कापटिकः, तं वृत्त्ययिनमर्थमानाभ्यामुपगृह्य रहसि राज्ञा ब्रूयात् यस्य दुर्वृत्तं पश्यसि तत् तदानीमेव मयि वक्तव्यम्'—इति मनुसंहितायां ७।१५४ श्लोकस्य टीकायां कुल्लूकभट्टः । ३४९

**कापिशायनम् क्ली.** [ कपिशैव, स्वार्थे अण्, तत्र जातम् । 'कापिश्याः षफक्' इति षफक् ] मयं; देवता । ३३०  
**कापेयः** त्रि. [ कपेर्भाविः कर्म वा, कपि + ढक् ] कपि-सम्बन्धी; स्त्रियां प्रमाणम्—'कच्चिन्नु खलु कापेयी सैव ते चलचित्तता ।' २३२

**कामः** पुं. [ काम्यते असौ, कर्मणि घञ् ] कामदेवः; मदनः; श्रीकृष्णपुत्रः; मन्मथः; मारः; प्रद्युम्नः; मीनकेतनः; कन्दर्पः; दर्पकः; अनङ्गः; पञ्चशरः; स्मरः; शम्बरारिः; मनसिजः; कुसुमेपुः; अनन्यजः; पुष्पधन्वा; रतिपतिः; मकरध्वजः; आत्मभूः; ब्रह्मसूः; विश्वकेतुः । 'कामस्तु वाणावसरं प्रतीक्ष्य पतङ्गवद्वह्नि-मुखं विविक्षुः'—इति कुमारे (३।६४) । इच्छा (८७९); 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवर्त्मैव भूय एवाभिवर्धते ।' कामस्तु ब्रह्मणो हृदयाज्जातः, यथा—'हृदि कामो भ्रुवोः क्रोधो लोभश्चाधोरदच्छदात्'—इति भागवतम् । वरः; 'सन्तानकामाय तथेति कामं राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सां'—इति रघुवंशे (२।६५) 'कामं वरं प्रतिश्रुत्य प्रतिज्ञाय' इत्यर्थः । मनोरथः; 'तथेति कामं प्रति-शुश्रुवान् रघोर्यथागतं मातलिसारधियंथौ'—इति रघुवंशे (३।६७) । महादेवः; 'गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम

एव च'—इति महाभारते (१३।१७।४१) । विष्णुः;  
'कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः'—इति  
महाभारते (१३।१४९।४५) । बलदेवः; महाराजचूतः;  
काम्यः। क्ली। [ कामाय हितं, काम+अण् ] रेतः;  
निकामं; काम्यं; वाढम्; अनुमतिः; 'मनागनम्या-  
वृत्त्या वा कामं क्षयाम्यतु यः क्षमी'—इति माघे (२।४३) ।  
कामम् अव्य.। अम्यनुज्ञा। ३२

कामध्वंसी [ न् ] पुं. [ कामं कन्दर्पं ध्वंसयतीति, काम+  
ध्वंस+णिच्, णिनि ] शिवः। १२

कामना स्त्री. [ कम्+'अनुदात्तादेशचेति' णिङन्ताद्  
भावे युच् टाप् च ] इच्छा। ७१०

कामपत्नी स्त्री. [ कामस्य पत्नी ] कामदेवपत्नी; काम-  
कला; रतिः। ३४

कामपालः पुं. [ कामान् पालयति, काम+पाल्+अण् ]  
बलदेवः। २९

कामम् अव्य. [ कमेर्णिङन्ताद् अमु ] प्रकामम्; अकामानु-  
मतिः; 'महाभागः कामं नरपतिरभिन्नस्थितिरसी, न  
कश्चिद्वर्णानामपथमपकृष्टोऽपि भजते'—इति शाकुन्तले  
५ अङ्के। अनुमतिः; असूया; अनुगमनम्। ७१९

कामाङ्कुशः पुं. [ कामे कामोद्दीपने अङ्कुश इव, नखा-  
घातेन कामोद्दीपनादस्य तथात्वम् ] नखः; [ कामस्य  
अङ्कुश इव ] शिरः। ५११

कामिनी स्त्री. [ अतिशयेन कामः अस्या अस्ति इति ।  
काम+इनि+ङीप् ] स्त्रीसामान्यम्; 'कर्णं इव  
कामिनीनां न शोभते निर्भरः प्रेमा'—इति आर्या-  
सप्तशती (२७०) । अतिशयकामयुक्ता नारी; 'कामि-  
नीषु विवाहेषु गवाम्भक्ष्ये तथेन्धने। ब्राह्मणाम्युपपत्ती  
च शपथे नास्ति पातकम्'—इति मनुः (८।११२) ।  
भीक्ष्वी; वन्दा; दारुहरिद्रा; मदिरा। ४८१

कामी [ न् ] पुं. [ अतिशयेन कामयते, कम्+णिच्+  
णिनि ] कामुकः; 'सभ्रूभङ्गं प्रहितनयनैः कामि-  
लक्ष्येष्वमोवैः'—इति मेघदूते (७४) । चक्रवाकः;  
पारावतः; चटकः; चन्द्रः; ऋषभौघिः; सारसपक्षी;  
(सर्वकामदत्वात्) विष्णुः; 'कामदेवः कामपालः कामी  
कान्तः कृतागमः'—इति महाभारते (१३।१४९।८३) ।

३८१

कामुकः त्रि. [ कामयते इति, 'लषपतपदत्यादिना' उकञ् ]

कामी; कमिता; अनुकः; कन्नः; कामयिता; अभीकः;  
कमनः; कामनः; अभिकः; 'दुष्यन्तः स पुनर्भजे स्ववंशं  
राज्यकामुकः'—इति भागवते (१।२३।१७) । पुं.  
[ कम्+उकञ् ] अशोकवृक्षः; अतिमुक्तलता; चटकः।

३८१

कामोवा स्त्री. [ कुत्सितो मोदो आमोदो यस्याः । सहृदय-  
मनोहरत्वाभावात् ] रागिणीविशेषः। १०५ अ.

काम्बोजः पुं. [ कम्बोजदेशे भवः इति, अण् ] कम्बोज-  
देशजघोटकः; सोमवलकः; पुष्पागवृक्षः; [ कम्बोजः  
अभिजनो यस्य, सिन्ध्वादित्वाद् अण् ] म्लेच्छजाति-  
विशेषः; 'अर्द्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत् ।  
यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानां तथैव च'—इति  
हरिवंशे। ४३९

कायः पुं. [ कायति प्रकाशते इति, अच् ] मूर्तिः; देहः;  
शरीरम्; 'कायः सन्निहितापायः सम्पदः पदमापदाम् ।  
समागमाः सापगमाः सर्वमुत्पादि भङ्गुरम्'—इति हितो-  
पदेशः। संघः; लक्ष्यः; स्वभावः; प्राजापत्यविवाहः;  
'आर्षोढाजः सुतस्त्रींस्त्रीन् पट् पट् कायोढजः सुतः'—  
इति मनुः (३।३८) । मूलधनम्; 'कायाविरोधिनी  
शश्वत् पणार्द्धाद्या तु कायिका'—इति नारदः। क्ली.  
मनुष्यतीर्थः; [ कः प्रजापतिर्देवतास्य, 'कस्येत्' इत्यण्  
इदन्तादेशश्च ततः आदिवृद्धिः ] प्राजापत्यतीर्थः; स्वल्पा-  
ङ्गुल्योर्मूलः; कनिष्ठानामिकयोर्धोभागः; 'अङ्गुष्ठ-  
मूलस्य तले ब्राह्मं तीर्थं प्रचक्षते। कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे  
देवं पित्र्यं तयोरधः'—इति मनुः (२।५९) । ५१०

कायस्थः पुं. [ कायेषु सर्वभूतशरीरेषु अन्तर्यामितया  
तिष्ठतीति। काय+स्था+क । काये ब्रह्मकाये  
तिष्ठतीति ] जातिविशेषः; कूटकृतः; पञ्जीकरः;  
करणः; पञ्जिकारकः। 'क्षणं ध्यानस्थितस्यास्य सर्व-  
कायाद्विनिर्गतः। दिव्यरूपः पुमान् हस्ते मसीपात्रं च  
लेखनी। चित्रगुप्त इति ख्यातो धर्मराजसमीपतः।  
प्राणिनां सदसत्कर्मलेखाय स निरूपितः। ब्रह्मणा-  
तीन्द्रियज्ञानी देवान्योर्यज्ञभुक् स वै। भोजनाच्च सदा  
तस्मादाहुतिर्दीयते द्विजैः। ब्रह्मकायोद्भवो यस्मात्  
कायस्थो वर्ण उच्यते। नानागोत्राश्च तद्वंश्याः कायस्था  
भुवि सन्ति वै'—इति पद्मपुराणे सृष्टिखण्डम्।  
परमात्मा; 'कायस्थोऽपि न कायस्थः कायस्थोऽपि न

जायते । कायस्थोऽपि न भुञ्जानः कायस्थोऽपि न बध्यते'  
—इति उत्तरगीतायाम् । ५८६

**कारणम्** क्ली. [ कार्यतेऽनेन । णिजन्तात् कृञो ल्युट् ]  
येन विना यन्न भवति तत्; हेतुः; बीजं; निमित्तं;  
प्रत्ययः; 'यतः प्रधानपुरुषी यतश्चैतच् चराचरम् ।  
कारणं सकलस्यास्य स नो विष्णुः प्रसीदतु'—इति  
विष्णुपुराणे (१।१७।३०) । करणं; [ कृञ् हिंसायाम् +  
स्वार्थे णिच्, भावे ल्युट् ] वधः; मूलम्, आदिः; 'ब्राह्मणः  
सम्भवेनैव देवानामपि दैवतम् । प्रमाणं चैव लोकस्य  
ब्रह्मात्रैव हि कारणम्'—इति मनुः (१।१।८४) । ८६४

**कारणा** स्त्री. [ कृञ् हिंसायाम्, णिजन्तात् कृञो 'प्यास-  
श्रन्येति' युच्, ततः टाप् ] यातना; गाढवेदना; नरक-  
रुजा; यमयातना । ६२६

**कारणिकः** त्रि. [ करणैः कारणैर्वा चरति । 'चरतीति'  
ठक् ] परीक्षकः । ३८९

**कारण्डवः** पुं.-स्त्री. [ 'अमन्ताड्डः' इति रमेडं, रण्डः ।  
ईषत् रण्डः, 'ईषदर्थे' इति कोः कादेशः । कारण्डं वाति,  
वा गती + 'आतोऽनुपेति' क । कारण्डस्येदं कारण्डं तदाकारं  
वाति वा ] हंसविशेषः; 'कारण्डवाननविघट्टितवीचि-  
मालाः, कादम्बसारसकुलाकुलतीरदेशाः'—इति ऋतु-  
संहारे शरद्वर्णने (८) । २५४

**कारा** स्त्री. [ कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्हो यस्याम् । कृ विक्षेपे,  
भिदादित्वाद् अङ्, 'ऋदृशोऽङीति' गुणे दीर्घत्वं निपात्यते ]  
कारागारं; बन्धनालयः; बन्धनं; बन्धनगृहं; दूती;  
प्रसेवकः; पीडा; सुवर्णकारिका । ६२६

**कारु** त्रि. [ करोति इति, कृ + उण् ] शिल्पी; कारुकः;  
'कारयित्वा तु कर्माणि कारं पश्चान्न बन्धयेत्'—इति  
कूर्मपुराणे । 'कारुकां प्रजां हन्ति बलं निर्णोजकस्य च ।  
गणां गणिकां च लोकेभ्यः परिक्रन्ति'—मनुः  
(४।२।१९) । कारुकः; 'राघवस्य ततः कार्यं कारुर्वा नर-  
पुङ्गवः । सर्ववानरसेनानामाश्वगमनमादिशत्'—इति  
भट्टिः । पुं. विश्वकर्मा; [ भावे उण् ] शिल्पम् । ५९३

**कारुण्यम्** क्ली. [ करुणः करुणावान् तस्य भावः, करुणैव  
वा, प्यञ् ] करुणा; 'मुनेः शिष्यसहायस्य कारुण्यं  
समजायत'—इति रामायणे (१।२।१५) । ८२३

**कार्तस्वरम्** क्ली. [ कृतस्वरे आकरभेदे भवम्, अण् ।  
कृताः पठिताः स्वरा येन स कृतस्वरः सामगानकर्ता,

तस्मै दक्षिणात्वेन देयं वा । 'शेषे' इत्यण् ] स्वर्णम्;  
'स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्बरः'—इति माघे (१।२०) ।  
धूसूरः । १७४

**कार्तान्तिकः** पुं. [ कृतान्तं वेत्ति, 'ऋतूक्यादिसूत्रान्ताद् ठक्'  
इति ठक् ] ज्योतिर्वित्; दैवज्ञः; ज्योतिषी । ४०३

**कार्तिकेयः** पुं. [ कृत्तिकानामपत्यम्, 'स्त्रीम्यो ठक्' इति  
ठक् ] शिवपुत्रः; अग्निपुत्रः; 'कुमारश्चाभवत् तत्र  
तरुणार्कसमद्युतिः । वह्नितेजोभवः श्रीमान् गङ्गा-  
कुक्षिपरिच्युतः । ततस्ता देवता ऊचुः कार्तिकेय इति  
प्रभुः । पुत्रोऽयं जगति ख्यातो भविष्यति न संशयः'—  
इति वाल्मीकिरामायणम् । 'कार्तिकेयं महाभागं मयूरो-  
परि संस्थितम् । तप्तकाञ्चनवर्णं शक्तिहस्तं वरप्रदम् ।  
द्विभुजं शत्रुहन्तारं नानालङ्कारभूषितम् । प्रसन्नवदनं  
देवं सर्वसेनासमावृतम्'—इति कार्तिकेयपूजापद्धतिः ।  
अथ कार्तिकेयपर्यायाः— महासेनः; शरजन्मा;

षडाननः; पार्वतीनन्दनः; स्कन्दः; सेनानीः; अग्निभूः;  
गुहः; बाहुलेयः; तारकजित्; विशाखः; शिखिवाहनः;  
षाण्मातुरः; शक्तिधरः; कुमारः; क्रौञ्चदारणः;  
आग्नेयः; दीप्तकीर्तिः; अनमेयः; मयूरकेतुः; धर्मात्मा;  
भूतेशः; महिषार्दनः; कामजित्; कामदः; कान्तः;  
सत्यवाक्; भुवनेश्वरः; शिशुः; शीघ्रः; शुचिः;

चण्डः; दीप्तवर्णः; शुभाननः; अमोघः; अनघः;  
रौद्रः; प्रियः; चन्द्राननः; दीप्तशक्तिः; प्रशान्तात्मा;  
भद्रकृतः; कूटमोहनः; षष्ठीप्रियः; पवित्रः; मातु-  
वत्सलः; कन्याहर्ता; विभक्तः; स्वाहेयः; रेवतीसुतः;  
प्रभुः; नेता; नैगमेयः; सुदुश्चरः; सुवतः; ललितः;  
बालक्रीडनप्रियः; खचारी; ब्रह्मचारी; शूरः;

शरवणोद्भवः; विश्वामित्रप्रियः; देवसेनाप्रियः; वासु-  
देवप्रियः; प्रियकः; गाङ्गः; स्वामी; द्वादशलोचनः;  
सिद्धसेनः; शम्भुतनयः; देवसेनापतिः; बालचर्यः;  
कृकवाकुष्वजः; महाबाहुः; युद्धरङ्गः; शिखिध्वजः;  
पावकात्मजः; रुद्रधनुः; पटशिराः; दितिजान्तकः । १९

**कार्पटिकः** पुं. [ कार्पटम् अन्तस्तत्त्वं वेत्ति इति, कर्पटेन  
चरति इति वा । ठक् । कार्पटोऽस्त्यस्य वा, ठन् ] मर्म-  
वेत्ता; तीर्थसेवी; 'सायं च तत्रैव बहिः सकुटुम्बस्त-  
रोस्तले । समावसत् कार्पटिकैः सोऽन्यदेशागतैः सह'—  
इति कथासरित्सागरे । ३४९.

**कार्पासम्** त्रि. [ कर्पास्याः विकारे अवयवे वा अण्, बिल्वाद्यण् वा ] कार्पासजातवस्त्रादि; फालं; वादरम्; 'श्लक्ष्णं वस्त्रमकार्पासमाविकं मृदु चाजिनम्'—इति महाभारते (२।५०।२४) । पुं.—क्ली. [ कर्पास एव, स्वार्थे अण् ] कर्पासवृक्षः; 'कपास' इति भाषा । अस्य पत्रादिना सर्पदष्टः पुरुषो नीरोगो भवति, इदानीं पत्रादीनां व्यवहारक्रम उच्यते । दंशनानन्तरमेव दष्टं पुरुषं साङ्घद्वितोलकपरिमितः कार्पासरसः पाययितव्यः । अथ क्षतप्रदेशं विधौतं परिष्कृतं च विधाय तत्र पत्ररसः प्रदेयः । एवं कृतेऽपि यदि शरीरस्य कश्चिदंशः स्फीतो भवेत् तदा तत्रैव एतत्पत्ररसेन पेषयितव्यम् । आरोग्याप्तिपर्यन्तम् प्रतिस्पान्दण्डमेवं कृते सर्पदष्टः पुरुषः सुस्थो भविष्यतीति निश्चयः । ५५०

**कार्मणम्** क्ली. [ कर्मव इति, कर्मन् + 'तद्युक्तात् कर्मणोऽण्' इति अण् । कर्मणे हितमिति, अण् वा ] मूलकर्म; ओषध्यादिमूलकं यत् त्रासनोच्चाटनस्तम्भनवशीकरणादिकर्म तत्; 'चाटु चाकृतकसभ्रममासां कार्मणत्वमगमन् रमणेषु'—इति माघे (१०।३७) । 'काचित्कार्मणतत्त्वज्ञा काचिन्मीकितकगुम्फिका'—इति काशीखण्डे (४५।९) । [ कर्म साध्वत्वेन अस्त्यस्य इति, अण् ] कर्मठे त्रि. ७१६

**कार्मुकम्** क्ली. [ कर्मणे प्रभवतीति, 'कर्मण उकञ्' इति उकञ् ] धनुः; 'धनुष' इति भाषा । 'कार्मुकेणव गुणिना वाणः सन्धानमेष्यति'—इति माघे (२।९७) । पुं. [ कार्मुकं धनुः साध्यत्वेनास्त्यस्य इति, अच् । कर्मणे कार्याय प्रभवतीति, कर्मन् + उकञ् ] कर्मक्षमे त्रि. । श्वेतखदिरः; हिज्जलः; महानिम्बः । ४६४ ।

**कार्मुककोटिः** स्त्री. [ कार्मुकस्य धनुषः कोटिः ] अटनिः । ४६५

**कालः** पुं. [ कलयति आयुः । कल् संख्याने, पचाद्यच् ततः प्रज्ञाद्यण् । यद्वा कालयति सर्वाणि भूतानि, कल् प्रेरणे, ष्यन्तात् पचाद्यच् ] यमः; 'आपतन्तीं च तां दृष्ट्वा कालदण्डोपमां गदाम्'—इति रामायणे (३।३५। ४३) । (१०५) क्षणदण्डमुहृतं प्रहरदिनरात्रिपक्षमासायनवत्सरादिः; दिष्टः; अनेहा; समयः; 'जन्यानां जनकः कालो जगतामाश्रयो मतः । परापरत्ववीहेतुः क्षणादिः स्यादुपाधितः ।' 'परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरुषः

प्रथमं द्विज । व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम्'—इति विष्णुपुराणे (१।२।१४) । मृत्युः (६२८); 'दिलीपस्तत्सुतस्तद्वदशक्तः कालमेयिवान् । भगीरथस्तस्य पुत्रस्तेपे स सुमहत्तपः'—इति भागवते (९।९।२) । कृष्णवर्णः (७३४); कृष्णगुणवति त्रि. । 'उद्यतायुधनिस्त्रिंशो रथे च समलङ्कृते । कालाश्वयुक्ते महति स्थितः कालान्तकोपमः'—इति रामायणे (६।६।१२) । महाकालः; शनिः; कासमर्दः; रक्तचित्रकः; रालः; कोकिलः; शिवः; (सर्वकलनात्); विष्णुः (कालनियन्तृत्वात्); पर्वतविशेषः; क्ली. लौहं; कक्कोलं; कालीयकम् । ७१

**कालक्रियामानम्** क्ली. [ गीतिवाक्ये कालः क्रिया च मीयेते अनेन इति । मा + करणे ल्युट् ] तालः । ९४

**कालकटम्** क्ली. [ कालं शिवमपि कूटयति अवसादयति, यद्वा कालस्य मृत्योः कूटम् आयोजनं समष्टिः दूत इव वा ] विषम्; 'न भेतव्यं कालकूटाद् विषाज्जलधिसम्भवात्'—इति भागवते (८।६।२५) । बोलं; पुं.—क्ली. [ कालस्य मृत्योः कूटः छद्मदूतः इव ] स्थावरविषभेदः; 'अहो वकी यं स्तनकालकूटं जिघांसयाऽपाययदप्यसाध्वी'—इति भागवते (३।२।२३) । 'देवासुररणे देवैर्हृतस्य पृथुमालिनः । दैत्यस्य रुधिराज्जातस्तरुस्त्वत्थसन्निभः । नियसिः कालकूटोऽस्य मुनिभिः परिकीर्तितः । सोऽहिक्षेत्रे शृङ्गवेरे कोङ्कणे मलये भवेत्'—इति भावप्रकाशः । देशविशेषः; 'कुरुम्यः प्रस्थितास्ते तु मध्येन कुरुजाङ्गलम् । रम्यं पद्मसरो गत्वा कालकूटमतीत्य च'—इति महा-महाभारते (२।२०।२६) । ६४७

**कालखण्डम्** क्ली. [ कालं कृष्णं खण्डम् ] यकृत; दक्षिणकुक्षिस्थमांसपिण्डम् । ६३५

**कालशेयम्** क्ली. [ कलश्यां भवम्, कलशी + डक् ] कालसेयं; तक्रम् । २७५

**कालसेयम्** क्ली. [ कलस्यां + भवम्, कलसी + डक् ] कालशेयं, तक्रम् । २७५

**कालायसम्** क्ली. [ कालं च तत् अयश्चेति, 'अनोऽमायः सरसां जातिसंज्ञयोः'—इति टच् ] लीहम्; 'ददर्श वीक्षमाणश्च परिधं तोरणाश्रयम् । तमादाय महाबाहुः कालायसमयं दृढम्'—इति रामायणे

(५।४९।३२)। 'लोहोऽस्त्री शस्त्रकं तीक्ष्णं पिण्डं कालाय-  
सायसी।' १७१

**कालिन्दी स्त्री.** [कलिन्दाख्यपर्वते तत्सन्निहितदेशे वा  
जाता, कलिन्दात् निःसृता वा, 'तत्र भवः' इति अण्,  
ततो डीप्] यमुनानदी; 'उपकूलं स कालिन्द्याः  
पुरीं पौरुषभूषणः। निर्ममे निर्ममोऽर्थेषु मधुरां मधुरा-  
कृतिः'—इति रघुवंशे (१५।२७)। रक्तत्रिवृत्। ६७४  
**कालिन्दीकर्षणः** पुं. [कालिन्दीं कर्षति यः। कृष् +  
कर्त्तरि ल्यु। कालिन्द्याः कर्षणो वा] बलदेवः;  
कालिन्दीभेदनः। २९

**कालिन्दीभेदनः** पुं. [कालिन्दीं भिनत्ति, भिद् + कर्त्तरि  
ल्यु, कालिन्द्या भेदतो वा] बलदेवः। २९

**कालिन्दीसोदरः** पुं. [कालिन्द्याः सोदरः सहोदरः]  
यमुनाभ्राता; यमः। ७१

**काली स्त्री.** [कालः कृष्णवर्णोऽस्त्यस्याः, काल +  
'जानपदकुण्डगोण' इत्यादिना डीप्, कालः शिवः  
तस्य पत्नीति, डीप्] कालिका; अम्बिकाललाटनि-  
निष्कान्ता देवी; 'ततः कोपं चकारोऽवैरम्बिका तान-  
रीन् प्रति। कोपेन चास्या वदनं मसीवर्णमभूत्तदा।  
भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद् द्रुतम्। काली  
करालवदना विनिष्कान्तासिपाशिनी'—इति मार्कण्डेय-  
पुराणे (८।७।५)। शान्तनुराजपत्नीः; वृश्चिकाली-  
वृक्षः; लता; भीमसेनपत्नी; मातृका। १५

**कालेयम्** क्ली. [कं सुखम् आलेयम् आदेयं यस्मात्]  
कालेयकं; कालीयनामपीतवर्णमुगन्धिकण्डं; कालीय-  
कम्; 'तां लोघ्नकलेन हृताङ्गतैलामाश्यानाकालेय-  
कृताङ्गरागाम्'—इति कुमारसम्भवे (७।१९)। [कलायै  
रक्तधारिण्यै हितम् इति ढक्] कालखण्डं; यकृत्;  
पुं. [कालाया अपत्यं, ढक्] दैत्यभेदः; 'कालायाः  
प्रथिताः पुत्राः कालकल्पाः प्रहारिणः। प्रविख्याता  
महावीर्या दानवेषु परन्तपाः। विनाशनश्च क्रोधश्च  
क्रोधहन्ता तथैव च। क्रोधशत्रुस्तथैवान्यः कालेया  
इति विभ्रुताः।' ५४३

**काल्या स्त्री.** [कालः प्राप्तोऽस्याः, 'उपसर्गा काल्या  
प्रजने' इति कालाद्यत्, टाप् च] गर्भप्रहणप्राप्तकाला  
ऋतुमती गोः; उपसर्गा। २७२

**काव्यः** पुं. [कवेः भृगोरपत्यं पुमान् इति, 'कुर्वादिभ्यो

प्यः' इति प्य, यक् इति केचित्] शुक्राचार्यः;  
'जिगीषया ततो देवा वन्नरेऽङ्गिरसं मुनिम्। पीरो-  
हित्येन याज्यत्वे काव्यं तूशनसं परे'—इति महाभारते  
(१।७६।६)। तामसमन्वन्तरीयऋषिविशेषः; 'ज्योति-  
धामिा पृथुः काव्यश्चैत्रोऽग्निर्बलकस्तथा। पीबरश्च  
तथा ब्रह्मन् सप्त सप्तर्षयोऽभवन्'—इति मार्कण्डेये  
(७।४।५९)। क्ली. [कवेरिदं कर्म भावो वा, ष्यञ्]  
ग्रन्थः; रसयुक्तवाक्यम्; 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं  
दोषास्तस्यापकर्षकाः। उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणा-  
लङ्काररीतयः'—इति साहित्यदर्पणे। ४२

**काशः** पुं.- क्ली. [काशते दीप्यते शोभते इति यावत्,  
काशृ दीप्ती, पचाद्यच्] तृणभेदः; 'कास' इति  
भाषा। तत्पर्यायाः—काशकः; इक्षुगन्धा; पीटगलः;  
कासः; काशी; काशा; वायुसेक्षुः; काण्डेक्षुः;  
अमरपुष्पकः; काशकः; वनहासकः; इक्ष्वरिः;  
काकेक्षुः; इक्षुरः; इक्षुकाण्डः; शारदः; सितपुष्पकः;  
नादेयः; दर्भपत्रः; लेखनः; काण्डकाण्डकः; कच्छल-  
कारकः; 'काशः काकेक्षुर्दृष्टः स स्यादिक्षुरसस्तथा।  
इक्ष्वालिकेक्षुगन्धा च तथा पीटगलः स्मृतः। काशः  
स्यान्मधुरस्तिकतः स्वादुपाके हिमः सरः। मूत्रकृच्छ्राश्म-  
दाहास्रदयपित्तजरोरगजित्'—इति भावप्रकाशः। पुं.  
[केन जलेन कफात्मकेन अश्यते व्याप्यतेऽत्र। क + अश् +  
अधिकरणे घञ्] क्षुत्तम्; रोगविशेषः; क्षवयुः;  
काशिका; कासः [कासु कुशब्दे, ण्यन्तात् पचाद्यच्,  
कासो दन्त्यान्तः। काशयति कुत्सितशब्दं कारयति  
काशः। कश् शब्दे इत्यस्मात् ण्यन्तात् पचाद्यच् काश-  
स्तालव्यान्तश्च। 'शालूरकाशशाल्लवय' इत्युष्मभेदे  
दन्त्यतालव्यान्तमध्ये पाठात्। 'वाराणस्यां भवेत्  
काशी क्षवथौ ना तृणोऽस्त्रियाम्'—इति तालव्यान्तेषु  
रभसः।] 'पिप्पली कटफलं शुष्ठी शृङ्गी भाङ्गा  
तथोपणम्। कारवी कण्टकारी च सिन्धुवारी यवानिका।  
चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत् कृतम्।  
कफकाशविनाशाय पिवेत् कृष्णारजोयुतम्'—इति  
भावप्रकाशः। 'अभयामलकं द्राक्षा पिप्पली कण्ट-  
कारिका। शृङ्गं पुनर्नवा शुष्ठी जग्धा काशं निहन्ति  
वै'—इति गरुडे १९९ अध्यायः। १९१

**काशिः स्त्री.** [काश + 'सर्भघातुन्य इन्' इति इन]



काशी; काशिका; वाराणशी; शिवपुरी; 'तथा काशिपति स्निग्धं सततं श्रियवादिनम् । सदृत्तं देवसङ्काशं स्वयमेवानयस्व हि ।' मुष्टिः; 'आप इव काशिना संगृहीतो असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता'—इति ऋग्वेदे (७।१०।४।८) 'काशिना मुष्टिना' इति भाष्यम् । सूर्ये पुं । २८७

काशी स्त्री. [ काशते शिवत्रिशूलोपरि । काश दीप्तौ + अच्, गौरादित्वाद् डीष्, काश् + इन् डीष् वा । अथवा काशयति प्रकाशयति इदं सर्वं या, काश् + णिच्, अच्, डीष् ] तीर्थविशेषः; शिवपुरी; वाराणसी; तीर्थराजी; तपःस्थली; काशिका; काशिः; अविमुक्तम्; आनन्दवनम्; आनन्दकाननम्; अपुनर्भवभूमिः; रुद्रावासः; महाश्मशानं; चिच्छक्तिः; सुवृष्णाख्या नाडी; काशतृणं; मुष्टिः । २८७

काश्मीरजम् क्ली. [ काश्मीरे जातम्, जन् + 'सप्तम्यां जनेर्डे' इति ड ] कुडकुमं; कश्मीरजन्म; काश्मीरं; कुष्ठं; पुष्करमूलम् । ५४३

काश्यपी स्त्री. [ कश्यपस्थेयम्, 'तस्येदम्' इत्यण्, स्त्रियां डीष् ] पृथिवी; 'अथागम्य महाराज ! नमस्कृत्य च कश्यपम् । पृथिवी काश्यपी जज्ञे सुता तस्य महात्मनः'—इति महाभारते (१३।१५।४।७) । प्रजा । १५७

काष्ठम् क्ली. [ काशते दीप्यते, काशत्यनेन वा, काश् + 'हनिक्वपी' त्यादिना क्यन्, 'व्रश्चेति' षत्वम्, 'तितुत्रेति' नेट् ] दारु, 'काठ' इति भाषा । 'ससारमतिशुष्कं यद् मुष्टिमध्ये समेष्यति । तत्काष्ठं काष्ठमित्याहुः खदिरादिसमुद्भवंम् ।' ४९३

काष्ठतट् [ क्ष् ] पुं. [ काष्ठं तक्षति, तक्षू तनूकरणे, क्विप् ] वर्णसङ्करजातिविशेषः; तक्षा; वर्धकिः; त्वष्टा; रथकारः; काष्ठतक्षकः, 'वढई' इति भाषा । ५८७

काष्ठा स्त्री. [ काशते प्रकाशते, काश् दीप्तौ, 'हनिक्वपिनीरमिकाशिभ्यः क्यन्' इति क्यन् । 'व्रश्चेति' षत्वं ततः टाप् ] दिक्; 'स्फुरति विशदमेषा पूर्वकाष्ठाङ्गनायाः'—इति माघे (११।१२) । स्थितिः; सीमा; कुमारसभवे (५।३८) । उत्कर्षः; 'इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः । मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः । महतः परमव्यक्तम्

अव्यक्तात् पुरुषः परः । पुरुषान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा सा परा गतिः'—इति कठश्रुती । अष्टादशनिमेषात्मककालः; 'निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत् ताः कला'—इति मनुः (१।६४) । पञ्चदशनिमेषात्मककालः; 'काष्ठा पञ्चदश ख्याता निमेषा मुनिसत्तम'—इति विष्णुपुराणे (१।३।७) । दारुहरिद्रा; कश्यपपत्नीभेदः; 'अदितिदितिर्दनुः काष्ठा अरिष्ठा सुरसा इला'—इति भागवते (६।६।२५) । (८३७) कालविशेषः; प्रकर्षः; उत्कर्षः । १००

कासः पुं. [ कासतेऽनेन । कासू शब्दकुत्सनयोः, 'हलश्च' इति घञ् ] काशतृणं; (६०१) रोगविशेषः; क्षवथुः; 'खांसी' इति भाषा । 'पञ्च कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः । क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम्'—इति माधवकरः । शोभाञ्जनम् । १९१

कासरः पुं. [ के जले आसरति, आ + सृ + अच् । महिषस्य प्रायेण जलत्रासात्तयात्वम् ] महिषः; 'व्यारोषं मानिन्यास्तमो दिवः कासर कलमभूमेः । बद्धमालि च नलिन्याः प्रभातसन्ध्यापसारयति'—इति आर्यासप्तशती (५२१) । २२७

कासारः पुं. [ कास् + 'तुपारादयश्च' इति आरन् प्रत्ययः । कस्य जलस्य आसारो यत्र वा । अथवा कासं शब्दम् ऋच्छति प्राप्नोति जलगमनपतनादिकाले । ऋ + 'कर्मण्यण्' इति अण् ] सपन्नो निष्पन्नो वा महाजलाशयः; सरोवरः; 'दुरालोकस्तोकस्तवकनवकाशोकलतिका-विकासः कासारोपवनपवनोऽपि व्यथयति'—इति गीतगोविन्दे (२।२०) । ६७५

किवदन्तिः स्त्री. [ किम् + वद् + क्षिच् ] किवदन्ती, जनश्रुतिः । १४७

किवदन्ती स्त्री. [ किम् + वद् + क्षिच्, डीष् ] जनश्रुतिः; सत्यः असत्यो वा लोकवादः; 'अस्ति किलैषा किवदन्ती अस्माकं कुले कालरात्रिकल्पा विद्या नाम राक्षसी समुत्पत्स्यते'—इति प्रबोधचन्द्रोदयनाटकम् । १४७

किशारः पुं. [ किं किञ्चित् कुत्सितं वा शृणातीति, शृ हिंसायाम् + 'किञ्जरयोः श्रिणः'—इति वुण् ] सस्यशूकम् । बाणः (७९१); कङ्कपक्षी । ५७९

किशुकः पुं. [ किञ्चित् अवयवैकदेशः शुक इव, शुक-

तुण्डामपुष्पत्वात् तथात्वमिति बोध्यम् ] पलाशवृक्षः;  
'पलाशः किंशुकः पर्णो यज्ञियो रक्तपुष्पकः । क्षारश्रेष्ठो  
वातहरो ब्रह्मवृक्षः समिद्धरः'—इति भावप्रकाशः ।  
'तयोः कृतव्रणी देहो शुशुभाते महात्मनोः । पुष्पिता-  
विव निष्पन्नो यथा शाल्मलिंकिशुकौ'—इति रामायणे  
(६।६८।३१) । पलाशपुष्पादयोऽपि; 'रूपयौवनसम्पन्ना  
विशालकुलसम्भवाः । विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्वा  
इव किशुकाः'—इति चाणक्ये (७) । नन्दीवृक्षः । १९७

किङ्किदीविः पुं. [ किङ्किती अस्फुटनाद् कुर्वन् दीव्यति ।  
'कृविधृष्विच्छविस्यविकिकीदिविः' इति क्विन् निपात-  
नात् ह्रस्वदीर्घव्यत्ययेन सिद्धम् ] स्वर्णचातकः;  
नीलकण्ठः; चापः; चासः; किङ्कीदीविः; किङ्की;  
दिविः; किङ्किः; किङ्किदिवः; किङ्कीदिविः; किङ्की-  
दिवः; स्वर्णचूडः । [ अकारान्तपक्षे कप्रत्ययान्तः,  
शिष्टप्रयोगाद् इकारे ह्रस्वदीर्घव्यत्यास ऊह्यः ] २४७

किङ्करः त्रि. [ किञ्चित् करोति, 'दिवाविभेत्यत्र'  
कियत्तद्दृष्ट्वित्यच् ] दासः; 'विप्रस्य किङ्करो भूपो  
वैश्यो भूपस्य भूमिप । सर्वेषां किङ्कराः शूद्रा ब्राह्मणस्य  
विशेषतः'—इति पुराणे । ३६५

किङ्किणी स्त्री. [ किमपि किञ्चिद् वा कणति ।  
कण् शब्दे + इन् + डीप् च, पृषोदरादित्वात् साधुः ]  
कट्याभरणविशेषः; क्षुद्रघण्टिका; कङ्किणी; किङ्कि-  
णिका; किङ्किणिः; क्षुद्रघण्टी; प्रतिसरा; किङ्किणीका;  
कङ्किणिका; क्षुद्रिका; घर्घरी, 'धुंधुरु' इति भाषा ।  
'किङ्किणीस्वननिर्घोषो युक्तस्तोरणकल्पनैः'—इति  
महाभारते (१३।५३।३१) । विकङ्कितवृक्षः । ५६०

किङ्किरातः पुं. [ किङ्किरं रक्तवर्णत्वम् अतति पुष्पकाले  
निरन्तरं प्राप्नोति, किङ्किर + अत् + अण् ] वृक्ष-  
विशेषः; पुष्पवृक्षविशेषः; हेमगौरः; पीतकः;  
पीतभद्रकः; विप्रलोभी; पीताम्लानः; षट्पदानन्दः;  
'किङ्किरातो हेमगौरः पीतकः पीतभद्रकः । किङ्किरातो  
हिमस्तिक्तः कषायश्च हरेदसौ । कफपित्तपिपासास्र-  
दाहशोषवमिक्रिमीन्'—इति भावप्रकाशः । अशोकवृक्षः;  
कामदेवः; शुकपक्षी; कोकिलः; रक्ताम्लानः । २०७

किञ्चन अव्य. [ किम् च चन च ] असाकल्यम्;  
अकात्स्न्यम् । पुं. [ किम् + चन् + अच् ] हस्तिकर्ण-  
पलाशः । 'असाकल्ये तु किञ्चन'—इत्यमरः । ८८२

किञ्चित् अव्य. [ किम् च चित् च, पदद्वयम् ] अल्पम्;  
ईषत्; मनाक्; असाकल्यम्; 'चित्तस्य शुद्धये कर्म  
न तु वस्तूपलब्धये । वस्तुसिद्धिविचारेण न किञ्चित्  
कर्मकोटिभिः'—इति विवेकचूडामणी (११) । ६८८

किञ्चिलकः पुं. [ किञ्चित् चुलुम्पति, चुलुम् इति  
सौत्रघातुः, डु, संज्ञायां कन्, पृषोदरादित्वाद् उभयत्र  
उस्थाने इत्वम् ] किञ्चुलुकः । ६६२

किञ्चुलुकः पुं. [ किञ्चित् चुलुम्पति, चुलुम् + डु +  
संज्ञायां कन् ] कीटविशेषः; महीलता; गण्डूपदः;  
'कंचुआ' इति भाषा । 'बाह्या यूकाः प्रसिद्धाः स्युः  
किञ्चुलूकास्तथान्तराः'—इति हारीते चिकित्सित-  
स्थाने ५ अध्याये । ६६२

किञ्जल्कः पुं. [ किम् + जल + बाहुलकात् क ] केसरः;  
पक्षकेसरः; 'किञ्जल्कः केसरः प्रोक्तश्चाभ्येयश्चापि  
स स्मृतः । किञ्जल्कः शीतलो रूक्षः कषायो ग्राहकोऽपि  
सः । कफपित्ततृपादाहरक्ताशोविपशोयजित्'—इति  
भावप्रकाशः । 'द्वौसोत्पलकिञ्जल्कमञ्जिष्ठाशैलवा-  
लुका'—इति वैद्यचक्रदत्तः । क्ली. [ किञ्चित् जलति,  
जल् अपवारणे + बाहुलकात् क ] नागकेशरपुष्पं;  
पद्माम्यन्तरस्थकेशकारं करहाटकवेष्टनं; मकरन्दः;  
केसरं; किञ्जं; पीतपरागः; तुङ्गं; चाभ्येयकम्;  
'स तद्वक्त्रं हिमकिलष्टकिञ्जल्कमिव पङ्कजम् । ज्योतिष्क-  
णाहतश्मश्रु कण्ठनालादपातयत्'—इति रघुवंशे  
(१५।५२) । ६८२

किट्टम् क्ली. [ केदति निर्गच्छति, गत्यर्थेति क्त, आगम-  
शास्त्रानित्यत्वान् नेट् ] पुरीपम्; 'शेषं किट्टं च यत्तस्य  
तत्पुरीषं निगद्यते'—इति भावप्रकाशः । ६३७

कित्तवः पुं. [ कित्तं वायति कित्तेन वाति वा । कित्त + वा +  
क ] अक्षदेवी; 'जटिलञ्चानधीयानं दुर्बलं कित्तवं  
तथा । याजयन्ति च ये पूगांस्तांश्च श्राद्धे न भोजयेत् ।  
—इति मनुः (३।१५१) । धुस्तूरः; 'कित्तवाडशयो-  
र्वीजं नागरं सहरीतकम् । चूर्णीकृत्यार्द्रकरसैः' इति  
वैद्यककषायसंग्रहे । मत्तः; वञ्चकः; 'स चाहं  
वित्तलोभेन प्रत्याचक्षे कथं द्विजम् । प्रतिश्रुत्य वदा-  
मीति प्राह्लादिः कित्तवो यथा । धूर्तः; 'अस्थिररागः  
कित्तवो मानो चपलो विदूषकस्त्वमसि । मम सख्याः  
पतसि करे पश्यामि यथा ऋजुर्भवसि'—इति आर्या-

सप्तशती (३३) । खलः; 'यदाश्रीषं वाससां तत्र राशि समाक्षिपत् कितवो मन्दबुद्धिः'—इति महाभारते (१।१।१५६) । रोचनानामगन्धद्रव्यम् । ३८८

**किन्नरः** पुं.—स्त्री. [ किं कुत्सितो नरः; अश्वमुखत्वात् तयात्वम् ] देवयोनिविशेषः; स तु अश्वमुखत्वात् कुत्सितनरः; स्वर्गागायकः; तुम्बुहप्रभृतिः; किम्पुरुषः; तुरङ्गवदनः; मयुः; अश्वमुखः; गीतमोदी, हरिणनर्तकः; 'राक्षसाश्च पुलस्त्यस्य वानराः किन्नरास्तथा । यक्षाश्च मनुजव्याघ्र ! पुत्रास्तस्य च वीमतः'—इति महाभारते (१।६६।७) । अर्हदुपासकविशेषः । ८२, ८७

**किन्नरेश्वरः** पुं. [ किन्नराणाम् ईश्वरः ] किन्नरेशः; कुबेरः; किम्पुरुषेश्वरः । ७८

**किम्पचानः** त्रि. [ किं कुत्सितं कस्मैचिदपि न दत्त्वा केवलम् आत्मार्थं पचतीति । पच् + आनच् ] किम्पचः; कृपणः । ३४७

**किम्पाकः** पुं. [ कुत्सितः पाकः परिणामो यस्य ] महाकाललता; 'न लुब्धो वृध्यते दोषान् किम्पाकमिव-मक्षयन्'—इति रामायणे (२।६६।६) । त्रि. [ किं कयमपि पाकः शिक्षाप्रकारो यस्य ] मातृशासितः । २०३

**किम्पुरुषः** पुं. [ कुत्सितः पुरुषः ] किन्नरः; 'पुष्पास-वाघूणितनेत्रशोभि प्रियामुखं किम्पुरुषश्चुचुम्बे'—इति कुमारसम्भवे (३।३८) । लोकभेदः; आग्नीध्रस्य नव-पुत्राणामेकः; 'जम्बूद्वीपेश्वरो यस्तु आग्नीध्रो मुनिसत्तम ! तस्य पुत्रा वभूवुस्ते प्रजापतिसमा इव । नाभिः किम्पुरुष-श्चैव हरिवर्ष इलावृतः । हेमकूटं तथा वर्षं द्रवी किम्पुरु-षाय सः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।१६-१७) । ८२

**किरः** पुं. [ किरति विक्षिपति मलोपलक्षितस्थलम् । कृ + क ] शूकरः । २२६

**किरणः** पुं. [ कीर्यते विक्षिप्यते इति । 'कृपुवृजिमन्दनि-घालः क्युः' इति क्यु ] सूर्यरश्मिः; चन्द्ररश्मिः; रत्न-रश्मिः; सामान्तरश्मिः; अक्षः; मयूखः; अंशुः; गभस्तिः; घृणिः; घृणिः; भानुः; करः; मरोचिः; दीधितिः; त्विट्; द्युतिः; आभा; प्रभा; विभा; रुक्; रुचिः; भाः; छविः; दीप्तिः; रश्मिः; अमीपुः; महः; ज्योतिः; सहः; रोचिः; रोचिः; त्विषाः; पृश्निः; प्रकाशः; आतपः; द्योतः; पादः; आलोकः; वसुः; ऋषिः; भामः; धर्मः; लोकः; अचिः; भासः; वीचिः; हेतिः;

धाम; वचंः; शुष्म; तेजः; ओजः; 'भवति विरल-भक्तिग्लानपुष्पोपहारः, स्वकिरणपरिवेवोद्भेदशून्याः प्रदीपाः'—इति रघुवंशे (५।७४) । सूर्यः । ३८

**किरातः** पुं. [ किरं अवस्करादेनिक्षेपस्थानभूमिम् अतति सततम् अटतीति । अत् + अण् । यद्वा किरं शूकरादिकम् अतति हिनस्तीति, अच् ] म्लेच्छभेदः; निपादः; 'कच्छान्ते सुरसरितो निधाय सेनामन्वीतः स कतिपर्यः किरातवर्गः'—इति किराताजुनीये (१२।५५) । अल्पतनुः (६१६); भूनिम्बः; 'चिरा-यता' इति भाषा । 'पर्यटाब्दामृताविश्वाकिरातैः साधित जलम् । पञ्चभद्रमिदं ज्ञेयं वातपित्तज्वरापहम्'—इति शाङ्गवरे (२।२१७) । ५९९

**किरिः** पुं. [ किरति समलभूमिम्, 'कृगृगृपकुटिभिदिच्छि-दिम्यः'—इति इ प्रत्ययः ] शूकरः । २२६

**किरीटः** पुं.—क्ली. [ किरति कीर्यतेऽनेन वा । 'कृत-कृषिम्यः कीटन्' इति कीटन् ] मुकुटः । ५६५

**किमीरः** पुं. [ कृ + गम्भीरादित्वाद् ईरन्, निपातनात् साधुः ] कर्तुरवर्णः; तद्वर्णयुक्ते त्रि. । नागरङ्गवृक्षः; राक्षसविशेषः; 'प्रत्युवाचाथ तद्रक्षो धर्मराजं युधि-ष्ठिरम् । अहं वकस्य वं भ्राता किमीर इति विश्रुतः'—इति महाभारते (३।११।२२) । ७४१

**किल अव्य.** [ किल् + क ] वार्ता, संभाव्यम्; अनुनयार्थं; निश्चयः; 'इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपःधर्मं साध-यितुं य इच्छति । द्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेतुमृषिविष्वस्यति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । ८७४

**किलाटः** पुं. [ किलेन इवैत्येन अटति । किल + अट्, अच् ] क्षीरविकृतिः; दधिकूर्चिकातत्रकूर्चिकयोः पिण्डः; किलाटकः; किलाटी; कूर्चिका; 'नष्ट-दुग्धस्य पक्वस्य पिण्डः प्रोक्तः किलाटकः'—इति भावप्रकाशः । 'पीयूषो मोरटं चैव किलाटा विविधाश्च ये । दीप्तारनीनाम् अनिद्राणां सर्वं एते सुखप्रदाः । गुरवस्तपंगा वृष्या वृहणाः पवनापहाः'—इति चरके सूत्रस्थाने २७ अध्याये । ३२४

**किलासम्** क्ली. [ किलं वर्णम् अस्यति क्षिपति विकृतं करोति इति यावत् । किल + अस् + 'कर्मण्यण्' इति अण् ] रोगविशेषः; सिध्मा; सिध्मं; त्वक्पुष्पं; त्वक्पुष्पी; 'वचांस्यतथ्यानि कृतघ्नभावो निन्दा

सुराणां गुरुवर्षणं च । पापक्रिया पूर्वकृतं च कर्म हेतुः  
किलासस्य विरोधि चान्नम्—इति चरके चिकित्सा-  
स्थाने- ६ अध्याये । ६०२

**किल्बिषम्** क्ली. [ 'किलेर्बुक् च' इति टिषच् वुगागमश्च ]  
पापम्; अपराधः; 'यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते  
सर्वकिल्बिषैः'—इति गीता । रोगः । ६२७

**किशलयम्** क्ली.-पुं. [ किञ्चित् शलति । शल् चलने +  
बाहुलकात् क्यन् प्रत्ययः, पृषोदरादित्वान्मलोपे साधुः ]  
पल्लवः; किशलः; किसलयम्; 'कुल्याम्भोभिः  
पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः, भिन्नो रागः किशलय-  
रुचामान्यवूमोद्गमेन'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । १८५

**किशोरकः** पुं. [ किञ्चित् शृणाति, शृ हिसायाम्  
'किशोरादयश्च' इति ओरन्, निपातनात् साधुः । संज्ञायां  
कन् ] अश्वशिशुः; तैलपण्यौषधिः; सूर्यः; तरुणावस्थः;  
एकादशदशवर्षाविधपञ्चदशवर्षपर्यन्तवयस्कः; केशोराव-  
स्थायुक्ते त्रि. । 'कौमारं पञ्चमाब्दान्तं पीगण्डं दशमा-  
वधि । केशोरमापञ्चदशाद् यौवनं च ततः परम् ।' १८५

**कीकसम्** क्ली. [ की इति कृत्सितेन रक्तादिना देहाम्यन्तरे  
कसति उत्पद्यते । की + कस् + अच् ] अस्थि । ६३२

**कीचकः** पुं. [ कीकयति शब्दायते, कीक् मर्षणे 'कीकयते-  
राद्यन्तविपर्ययश्च' इति वुन् आद्यन्तविपर्ययश्च ] अनि-  
लयोगात् शब्दायमानवंशः; सरन्ध्रकवंशः; 'यः पूरयन्  
कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन'—इति  
कुमारसम्भवे (११८) । राक्षसविशेषः; दैत्यभेदः;  
वृक्षविशेषः; नलः; केकयराजपुत्रः; स च विराट-  
राजस्य श्यालः सेनापतिश्च । 'सेनापतिविराटस्य  
ददर्श द्रुपदात्मजाम् । तां दृष्ट्वा देवर्गभिर्भां चरन्तीं  
देवतामिव । कीचकः कामयामास कामंवाणप्रपीडितः'—  
इति महाभारते (४।१३।५) । देशविशेषः; तत्र बहु-  
वचनान्तोऽयम् । 'मत्स्यान् त्रिगतान् पञ्चालान् कीच-  
कानन्तरेण च । रमणीयान्नोद्देशान् प्रेक्षमाणाः सरांसि  
च'—इति महाभारते (१।१५७।२) । २०४

**कीटः** पुं. [ कीट् + अच् ] कृमिजातिः; 'कृमिकीटपत-  
ञ्जांश्च यूकामक्षिकमत्कुणम्'—इति मनुः (१।४०) ।  
'सर्पाणामेव विष्णुत्रशुक्राण्डशवकोयजाः । दोषैर्व्यस्तेः  
समस्तैश्च युक्ताः कीटाश्चतुर्विधाः । दष्टस्य कीटैर्वी-  
व्यैर्दशस्तोदरुजोल्बणः ।' ६३६

**कीटम्**, किट्टम् क्ली. [ केटति लोहादिधात्ववयवाद्  
निर्गच्छतीति । गत्यर्थेति क्त । आगमशास्त्रस्यानित्य-  
त्वात् नेट् ] मलः; पुरीषम्; 'बाह्यरस्य रसः सारः  
सारहीनो मलद्रवः । शिराभिस्तज्जलं नीतं वस्तिं मूत्र-  
त्वमाप्नुयात् । शेषं किट्टञ्च यत्तस्य तत्पुरीषं निगद्यते'  
—इति भावप्रकाशस्य पूर्वखण्डे प्रथमे भागे । ६३७

**कीनाशः** पुं. [ किलनातीति, किलश्च विबाधने वधे वा,  
'किलशेरीचोपधाया लोपश्च लो नाम च' इति कन्  
उपधाया इत्वं ललोपो नामागमश्च ] यमः; 'विषेहि  
कीनाशनिकेतनातिथिम्'—इति माघे (१।७२) । वान-  
रविशेषः; त्रि. कर्पकः; 'कीनाशो गोवृषो यानमल-  
ङ्कारश्च वेश्म च । विप्रस्योद्धारिकं देयमेकांशश्च  
प्रधानतः'—इति मनुः (१।१५०) । क्षुद्रः (३।४७);  
पशुघाती । ७१

**कीरः** पुं. [ कीति अव्यक्तम् ईरयतीति । की + ईर् +  
णिच्, अच् ] शुकपक्षी; 'खगवागियमित्यतोऽपि किं  
न मुदं धास्यति कीरगीरिव'—इति नैषधे (२।१५) ।  
क्ली. [ कीलति वध्नाति शरीरम् । कील् + अच् लस्य  
र ] मांसम् । २४८

**कीर्णः** त्रि. [ कीर्यतेऽसौ, कृ + कर्मणि 'क्त ] आच्छन्नः;  
विक्षिप्तः; 'श्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने  
दत्तदृष्टिः, पश्चाद्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा  
पूर्वकायम् । शम्भैरर्द्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः  
कीर्णवर्त्मा, पश्योदग्रप्लुतत्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां  
प्रयाति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । हिंसितः । ७०२

**कीर्तिः** स्त्री. [ कृ + क्तिन् । यद्वा कृत् संशब्दने, 'हृपि-  
धिह्रीति' इरादिकार्येऽन् ] सुख्यातिः; यशः; समाज्ञा;  
समाज्ञा; समाख्या; समज्या; अभिख्या; श्लोकः;  
वर्णः; कीर्तना; 'दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं  
यशः'—इति माघवी । प्रसादः; शब्दः; दीप्तिः; मातृ-  
काविशेषः; विस्तारः; कर्ममः । १५३

**कीलः** पुं.- स्त्री. [ कील्यते रघ्यतेऽसौ अनेनात्र वा,  
कील् वन्धने + कर्मणि करणेऽधिकरणे च यथायथं घञ्,  
पुंसीति घ वा ] अग्निशिखा; चह्निज्वाला; - शङ्कुः  
(७९७); 'या लुप्तकीलभावं याता हृदि वहिरदृश्यापि'  
—इति आर्यासप्तशती (३७४) । 'परिखाश्चापि  
कौरव्य ! कीलैः सुनिचिताः कृताः'—इति महा-

भारते (३।१५।१५) । स्तम्भः; लेगः; कफोणिः; कफोणिनिर्घातः; मूढगर्भस्य प्रकारभेदः; 'तत्र ऊर्ध्व-बाहुगिरः पादो यो योनिमुखं निरुणद्धि कील इव स कीलः'—इति सुश्रुते निदानस्थाने ८ अध्याये । ६५

**कीलकः** पुं. [ कीलति वध्नाति अनेन । करणे घञ्, स्वार्थे क ] कीलः; कीला; 'खूटा, मेख' इत्यादि भाषा । गवां गात्रकण्डूयनार्थं गोष्ठे निखातः स्तम्भः; कण्डूयनार्थं काष्ठं; बन्धनखण्डः; यत्र बद्ध्वा गौर्दुह्यते सः; शिवकः; शङ्कुः । ४५१

**कीलालम्** क्ली. [ कीलं वह्निज्वालाम् अलति वारयतीति । कील + अल् + कर्मण्यण् । यद्वा कीलात् वह्निशिखायाः (शिखाग्रहणेनाथ वह्नेरेव ग्रहणमिति ध्येयम्) अत एवान्नेः सकाशान् अलति पर्याप्नोति उत्पद्यते इति यावत्, 'अग्नेरापः' इति श्रुतेः । कील + अल् + अच् ] रक्तं; रुधिरं; जलम्; 'कूलातिगामिभ्यत्तूलावलिज्वलनकीलानिजस्तुतिविधाकोलाहल — क्षपितकालाभरी कुशलकीलालपोषणनिभाः' — इति शङ्करकविकृते अम्बाष्टके (२) । [ और्वाग्नेः कीलम् आलाति, आ ला + क ] अमृतं; मधु; पुं. [ कीलाय बन्धाय अलति पर्याप्नोतीति ] पशुः । ८३०

**कीलिका** स्त्री. [ कीलक + स्त्रीत्वे टाप् इत्वम् ] अक्षाग्रं या कीलिका; चक्रावरोधिनी; अणिः; अणी । ४४८

**कीशः** पुं. [ की इति शब्दं ईप्ते । की + ईश् + क । यद्वा कस्य वायोरपत्यं (अत इञ्) किः हनुमान् ईशो यस्य ] वानरः; 'रासभैः करभैः कीशैः श्येनैरश्वतरैर्वकैः'— इति काशीखण्डे (४२।३१) । [ के आकाशे ईप्ते प्रभवतीति, क + ईश् + क ] सूर्यः; पक्षी; जग्ने त्रि. । २३१

**कुः** स्त्री. [ कु + मितद्रवादित्वात् डु ] पृथिवी; पृथ्वी । १५६

**कुकुन्दरम्** क्ली.— पुं. [ स्कुन्धते कामिनाऽत्र । स्कुदि आप्लवने, 'मद्गुरादयश्चेति' निपातनात् साधु ] पृष्ठवंशादयो गर्तद्वयं; नितम्बस्थकूपकद्वयम् । कुकुन्दरे इति द्विवचनान्ततोऽपि प्रयोगः । 'पार्श्वजघनवहिर्भागि पृष्ठवंशमुभयतो नातिनिम्ने कुकुन्दरे नाम मर्मणी तत्र स्पर्शाज्ञानमधःकाये चेष्टोपघातश्च'—इति सुश्रुते शारीरस्थाने । 'पृष्ठवंशं ह्युभयतो यी सन्धी कटिपार्श्वयोः । जघनस्य वहिर्भागे मर्मणी ती कुकुन्दरी'—इति वाग्भटे शारीरस्थान ४ अध्याये । ५१३

**कुकुभा** स्त्री. [ कु ईपत् कुः पृथ्व्यधिष्ठात्री देवता इव भा यस्याः ] रागिणीविशेषः । १०४

**कुकूलम्** क्ली. [ कोः भूमेः कूलं, कुतिसतं कूलं वा ] शङ्कुभिः सङ्कीर्णं श्वभ्रम्; तनुत्रम्; पुं. [ कु + ऊलच् कुगागिमश्च ] तुपानलः; 'शिरीषादपि मृद्वङ्गी व्वेय-मायतलोचना । अयं व्व च कुकूलाग्निकर्कशो मदनानलः'—इति उद्भटः । ८३०

**कुक्कुटः** पुं.— स्त्री. [ कुक् + सम्पदादित्वात् विवप् । कुका आदानेन कुटतीति, कुट् + क ] पक्षिविशेषः; कृकवाकुः; ताम्रचूडः; चरणायुधः; कालज्ञः; नियोद्धा; विष्किरः; नखरायुधः; ताम्रशिखी; रान्निवेदः; उपाकरः; वृताक्षः; काहलः; दक्षः; यामनादी; शिखण्डिकः; 'मुर्गा' इति भाषा । 'कुक्कुटो वृंहणःस्निग्धो वीर्योष्णोऽनिलकृद्गुरुः । चक्षुष्यः शुक्रकफकृद्बल्यो रूक्षःकपायकः । आरण्यकुक्कुटः स्निग्धो वृंहणः श्लेष्मलगुरुः । वातपित्तधयवमिविषमज्वरनाशनः'—इति भावप्रकाशः । निषादपुत्रः; शूद्रपुत्रः; तूणोल्का; कुक्कुभपक्षी; वह्निर्कणः; आसतविशेषः; 'पचासनं तु संस्थाप्य जानूर्वोरन्तरे करी । निवेद्य भूमौ संस्थाप्य व्योमस्थं कुक्कुटासनम्'—इति हठयोगटीपिकायाम् (१।२३) । २४७

**कुक्कुटिः** स्त्री. [ कुक्कुट इव आचरति, तस्य भावः । आचारे विवपि इन् ] दम्भचर्या; मिथ्याचारः । ७४०

**कुक्षिः** पुं. [ कुष् निष्कर्षे + 'प्लुपिकुपिशुपिम्यः किमः' इति क्ति ] उदरम्; 'यत्रोपितं विशालाक्षि ! त्वया चन्द्रनिभानने । तत्राहमुषितो भद्रे कुक्षी काव्यस्य भाविनि'—इति महाभारते (१।७७।१३) । दानविशेषः; 'कुक्षिस्तु राजन् विख्यातो दानवानां महावलः'—इति महाभारते (१।९७।५७) । ५१५

**कुडकुमम्** क्ली. [ कुम् कुम् इति शब्दोऽस्ति वाचकत्वेनास्य, अशं आचच् । यद्वा कुक्वते आदीयतेऽसौ, कुक् आदाने, उमक् निपातनात् मुम् ] गन्धद्रव्यविशेषः; कश्मीरजन्म; अग्निशिखं; वरं; वाल्मीकं; पीतनं; रक्तं; सङ्कोचं; पिशुनं; धीरं; लोहितचन्दनं; चारु; वाल्मीकं; वरवाल्मीकं; रक्तचन्दनम्; अग्निशेखरम्; असूक; काश्मीरजं; पीतकं; काश्मीरं; रुचिरं; गठं; शोणितं; घुसृणं; वरेण्यम्; अरुणं; कालेयकं; जागुडं; कान्तं; वह्निशिखं; केशरवरं; गीरं; केसरं;

हरिचन्दनं; खलं; रजं; दीपकं; लोहितं; सौरभं; चन्दनम् । 'कश्मीरदेशे क्षेत्रे कुङ्कुमं यद्भवेद्धि तत् । सूक्ष्मकेसरमारक्तं पद्मगन्धि तदुत्तमम् । बालहीक-देशसंजातं कुङ्कुमं पाण्डुरं भवेत् । केतकीगन्धयुक्तं तन्मध्यमं सूक्ष्मकेसरम् । कुङ्कुमं पारसीकेयं मधुगन्धि तदीरितम् । ईषत्पाण्डुरवर्णं तदधमं स्थूलकेसरम्'—इति भावप्रकाशः । ५४३

**कुचः** पुं. [ कुचति संकुचतीति । कुच् संकोचे, 'इगुपधेति' क ] स्तनः; 'अन्या वक्षसि चान्यस्यास्तस्याश्चाप्यपरा-कुचे । ऊरुषाश्वकटीपृष्ठमन्योऽप्यं समुपाश्रिताः'—इति रामायणे (५।१३।५७) । ५२६

**कुचमुखम्** क्ली. [ कुचस्य स्तनस्य मुखम् अग्रभागः ]

कुचाग्रं; स्तनाग्रभागः; चुचुकं; चुचुकम् । ५२६

**कुचरः** त्रि. [ कुत्सितः चरतीति । कु + चर् + अच् ] कुवादः; परदोषकथनशीलः; दुर्गमदेशगन्ता; 'प्रत-द्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरि-ष्ठाः'—इति ऋग्वेदे (१।१५४।२) । [ कुस्थाने चर-तीति ] कान्तारादिपर्यटकः; [ कौ पृथ्व्यां चरतीति ] भूमिचरः; 'दृष्ट्वा त्वादित्यमुद्यन्तं कुचराणां भयं भवेत् । अध्वगाः परित्यजेयुर्हृष्णतो दुःखभागिनः । आदित्यः सत्त्वमुद्रिक्तं कुचरस्तु तथा तमः । परितापोऽध्वगानां च रजसो गुण उच्यते'—इति महाभारते (१४।३८।१३-१४) । ३८९

**कुजः** पुं. [ कोः पृथिव्याः जातः । कु + जन् + ड ] वृक्षः; मङ्गलग्रहः; 'अङ्गारकः कुजो भीमः'—इति मङ्गलग्रहस्तुतौ । नरकासुरः; 'तत्राहतास्ता नरदेव-कन्याः कुजेन दृष्ट्वा हरिमातवन्धुम्'—इति भागवते (३।३।८) । १७७

**कुञ्जः** पुं.-क्ली. [ कौ जातः, जन् + ड, पृषोदरादि-त्वान्मुमि साधुः ] हनुः; हस्तदन्तः; पर्वतादेर्ला-पल्लवादिभिः समन्तादाच्छादितगर्भो गह्वरादिदेशः; उपरिचतुर्दिक्षु च लतादिभिराच्छादितस्य स्थानस्य मध्ये शून्यदेशः; निकुञ्जः; 'गोपीभर्तुर्विरहविधुरा काचिदिन्दीवराक्षी, उन्मत्तेव स्वलितकवरी निःश्वसन्ती विशालम् । अत्रैवास्ते मुररिपुरिति भ्रान्तिद्वृत्तिसहाया, त्यक्त्वा गेहं क्षटिति यमुनामञ्जुकुञ्जं जगाम'—इति पदाङ्कद्वये (१) । ८९८

**कुञ्जरः** पुं. [ प्रशस्तः कुञ्जः हनुर्दन्तो वा अस्त्यस्य । कुञ्ज + 'रप्रकरणे स्वमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम्' इति र ] हस्ती; 'कुञ्जरस्येव संग्रामे परिगृह्याङ्कुश-ग्रहम्'—इति महाभारते (३।२६।१५) । उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः; यथा पुरुषकुञ्जरः इत्यादि । सर्पविशेषः; 'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः'—इति महाभारते (३।५।१५) । केशः; देशभेदः; पर्वत-विशेषः; 'ततः शक्रध्वजाकारः कुञ्जरो नाम पर्वतः । अगस्त्यभवनं तत्र निर्मितं विश्वकर्मा'—इति रामा-यणे (४।४।१।५०) । ८०६

**कुञ्जरकरः** पुं. [ कुञ्जरस्य गजस्य करः इव ] हस्ति-शुण्डः । ८०६

**कुटः** पुं. [ कुट् + क ] कोटः; शिलाकुट्टं; वृक्षः; पर्वतः; कुटिले त्रि.; 'हविषांजरो अपां पिपति पपुरि-र्नरा पिता कुटस्य चर्षणिः'—इति ऋग्वेदे (१।४६।४) । पुं.-क्ली. कलशः (३।१६) । २९१

**कुटजः** पुं. [ कुटे पर्वते जातः । जन् + ड ] पुष्पवृक्ष-विशेषः; शक्रः; वत्सकः; गिरिमल्लिका; कौटजः; वृक्षकः; शक्रपर्यायः; कुटजः; काही; कालिङ्गः; मल्लिकापुष्पः; प्रावृष्यः; शत्रुपादपः; वरातैक्तः; यवफलः; संग्राही; पाण्डुरद्रुमः; प्रावृषेण्यः; महागन्धः; पाण्डरः; 'कुटजः कूटजः कौटो वत्सको गिरिमल्लिका । कालिङ्गः शत्रुशाखा च मल्लिकापुष्प इत्यापि । इन्द्रो यवफलः प्रोक्तो वृक्षकः पाण्डुरद्रुमः । कुटजः कटुको रूक्षो दीपनस्तुवरो हिमः'—इति भावप्रकाशः । अगस्त्यमुनिः; द्रोणाचार्यः । १९३

**कुटहारिका** स्त्री. [ कुटं कलशं हरति जलाद्यानयनार्थं गृह्णाति या । कुट + ह + ष्वल् + टाप् इत्वं च ] दासी । ४९२

**कुटिलम्** त्रि. [ कुट् वक्रीभावे + बाहुलकाद् इलच् ] अनृजुः; अरालः; वृजिनः; जिह्वाम्; ऊर्मिमत्; कुञ्चितं; नतम्; आविद्धं; भुग्नं; वेत्तितं; वक्रं; भङ्गुरं; वेङ्कु; विन्तम्, उन्दुरम् 'ज्वलज्जटाकलापस्य भृकुटीकुटिलं मुखम् । निरीक्ष्य कस्त्रिभुवने मम यो न गतो भयम्'—इति विष्णुपुराणे (१।९।२३) । क्ली. तगरपुष्पे; 'कालानुसारिवा वक्रं तगरं कुटिलं शठम् । महौर्यं नतं जिह्वं दीनं तगरपादिकम्'—इति वैद्यक-

रत्नमालायाम् छन्दोभेदः। ६९६

**कुटिलाशयः** त्रि. [ कुटिलः आशयो यस्य ] परदोषकयन-  
शीलः। ३८९

**कुटुम्बव्यापृतः** त्रि. [ कुटुम्बभरणाय व्यापृतः नियुक्तः ]  
कुटुम्बपोषणासक्तः; अम्यागारिकः; उपाधिः; कुटुम्बेन  
पुत्रदारारदिपोष्यवर्गेण व्यापृतः संयुक्तः; बहुपरिवार-  
विशिष्टः पुरुषः। ३५७

**कुटुम्बी** [ न् ] त्रि. [ कुटुम्बः पोष्यवर्गोऽस्त्यस्य, अस्त्यर्थे  
इति ] कृषकः; कुटुम्बविशिष्टः; गृही; गृहमेयी;  
गृहस्यः; गार्हस्थ्यशाश्रमविशिष्टः; 'शैलः सम्पूर्णकामोऽपि  
मेनामुखमुदैक्षत। प्रायेण गृहिणीनेत्राः कन्यार्थेषु  
कुटुम्बिनः'—इति कुमारसम्भवे (६।८५)। ५७४

**कुटुनी** स्त्री. [ कुट्टयति छिनत्ति नाशयति स्त्रीणां शीलं या।  
कुट्ट + स्वार्थे णिच्, ततः ल्युट्, डीप्। यद्वा कुट्टयते  
छिद्यते स्त्रीणां शीलम् अनया। कुट्ट छेदने, करणे  
ल्युट् डीप् च ] पुरुषेण सह परस्त्रीयोगकर्त्री; शम्भली;  
कुटुनी; सम्भली; माधवी; रङ्गमाता; अर्जुनी;  
कुम्भदासी; गणेशका; 'कुटनी' इति भाषा। 'तदालिङ्ग-  
नमवलोक्य समीपवर्तिनी कुट्टन्यचिन्तयत्'—इति हितो-  
पदेशे (१।२४३)। ४९२

**कुट्टितः** त्रि. [ कुट्ट + कर्मणि क्त ] चूर्णितः; मुशलादिना  
क्षुण्णः; यथा तण्डुलपृथुकाः। ५८५

**कुट्टिमः** पुं.-कली. [ कुट्ट + भावे घञ्। तेन निर्वृत्तः  
निष्पन्नः इत्यर्थे इमप् ] वद्धभूमिः; मणिभूः; 'मम्लतुर्न  
मणिकुट्टिमोचितौ मातृपाश्वपरिवर्तिनाविव'— इति  
रघुवंशे (१।१९)। सुधाघटितभूतलं; कुटीरः; दाडिम-  
वृक्षः। २९४

**कुट्टहारिका** स्त्री [ कुट्टयते यत्, कुट्ट + घ, कुट्टं  
मत्स्यमांसादिकं हरति। कुट्ट + ह् + ण्वुल्, टाप् अत्  
इत्वं च ] दासी। ४९२

**कुट्टमलः** पुं.-कली. [ कुट्टति ईषद् विकासोन्मुखीभवतीति।  
'कुट्टिकशीति' कल मुट् च ] मुकुलः। १८६

**कुठः** पुं. [ कुठयते छिद्यतेऽसी। कुठ् छेदने + कर्मणि  
घञर्थे क ] वृक्षः। १७७

**कुठारः** पुं.-स्त्री. [ कोठत्यनेन। कुठ् + करणे आरन् ]  
शस्त्रविशेषः; सुधितिः; परशुः; परश्वधः; कुठारी;  
पर्शुः; पश्वधः; कुठाटङ्कः; द्रुघनः; द्रुघणः; 'त्

त्वागताहं शरणं शरण्यं स्वमृत्युसंसारतरोः कुठारम्'—  
इति भागवते (३।२५।१२)। पुं. [ कुठयते छिद्यतेऽसी।  
कुठ् + कर्मणि आरन् ] वृक्षः। ४७४

**कुडमलः** पुं. [ कुड् बाल्ये + 'कुट्टिकशी' त्यत्र 'कुडेरपी'-  
त्यनेन कल मुट् च ] कुट्टमलः; मुकुलः; कोषः; विकासो-  
न्मुखप्रौढकलिका; ईषद्विकसिता कलिका; 'द्योति-  
तान्तः सभैः कुन्दकुडमलाध्रदतःस्मितैः'— इति माघे  
(२।७)। १८६

**कुणपः** पुं. [ क्वणोः + कपन् सम्प्रसारणं च ] शवं; मृत-  
शरीरम्; एतदर्थं नपुसंकलिङ्गोऽपि। 'नारद उवाच—  
'उन्मत्तवेशं विभ्रत् स चञ्जमीति यथासुखम्। वारा-  
णस्यां महाराज! दर्शनेऽसुमंहेश्वरम्। तस्या द्वारं  
समासाद्य न्यसेथाः कुणपं क्वचित्। तं दृष्ट्वा यो  
निवर्तेत स संवर्तो महीपते'—इति महाभारते  
(१।४।६।२२-२३)। पूतिगन्धिः; अस्त्रविशेषः। पूति-  
गन्धौ त्रिलिङ्गोऽपि, यथा—'कुणपं मस्तुलुङ्गामं सुगन्धं  
क्वथितं बहु'—इति माघवकरः। रोगविशेषः; 'कुण-  
पञ्चास्रपित्ताभ्याम्'—इति शाङ्गधरे मध्यखण्डे १  
अध्यायः। ६२९

**कुणिः** त्रि. [ कुण + इन् ] कुकरः; कुत्सितहस्तयुक्तः;  
रोगादिना कुञ्चितकरः; कूणिः; कोणिः; विकल-  
पाणिकः। ६१०

**कुण्डः** त्रि. [ कुण्डति क्रियासु मन्दीभवति। कुठि +  
अच् ] क्रियासु मन्दः; अकर्मण्यः; 'वैकुण्ठीयेऽत्र कण्डे  
वसतु मम मतिः कुण्डभावं विहाय'—इति शङ्करकविकृते  
विष्णुस्तोत्रे (३४)। मूखः। ३८२

**कुण्डम्** कली.-स्त्री. [ कुण्डयते रक्षयते भक्ष्यादि अस्मिन्।  
कुडि रक्षणे, अच् ] स्थाली; कुण्डी; पुं. [ कुण्डयते  
दह्यते कुलम् अनेन, कुडि दाहे + करणे घञ ] अमृते  
भर्तारि जारजः; जीवति भर्तारि उपपतिजातः; 'पत्यो  
जीवति कुण्डः स्यान्मृते भर्तारि गोलकः'— इति मनुः  
(३।१७४)। सर्पविशेषः; 'कच्छपश्चाय कुण्डश्च तक्षकश्च  
महोरगः'—इति महाभारते (१।१२३।६८)। कली.  
[ कुणतीति, 'अमन्ताड् डः' इति ड ] मानभेदः; [ कुण्डयते  
रक्षयते जलं यत्र, कुडि + अधिकरणे अप् ] देवजलाशयः;  
जलाधारविशेषः; पात्रविशेषः; 'भुवं कोष्णेन कुण्डी-  
घ्नी मेघ्येनावभृयादपि'— इति रघुवंशे (१।८४)।

होमीयान्यालयः, चतुरस्रं चतुष्कोणम्; 'सहस्रे त्वथ होतव्ये कुर्यात्कुण्डं करात्मकम् । द्विहस्तमयुते तच्च लक्षहोमे चतुष्करम्'—इति भविष्योत्तरम् । द्विहस्तादिके यामलः—'पूर्वपूर्वस्य कुण्डस्य कोणसूत्रेण निर्मितम् । उत्तरोत्तरकुण्डानां मानं तत्परिकीर्तितम् ।' ३१४

**कुण्डलम्** क्ली. [ कुण्डयते रक्षयते इति, कुडि रक्षायाम् + वृषादित्वात् कलच् । यद्वा कुण्डं तवाकारं लाति गृह्णातीति, ला + क ] कर्णभूषणविशेषः; कर्णवेष्टनम्; 'ध्वेयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः । केयूरवान् कनककुण्डलवान् किरीटी'—इति विष्णुध्याने । पाशः; वलयः; पुं. कौरव्यकुलजसर्पविशेषः; 'एकः कुण्डलो वेणी वेणीस्कन्धः कुमारकः । बाहुकः शृङ्गवेरश्च धूर्तकः प्रातरातकौ । कौरव्यकुलजास्त्वैते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।१३) । रक्तकाञ्चनवाचकः; 'रक्तपुष्पः कोविदारो युगमपत्रस्तु कुण्डलः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । ५५६

**कुण्डली** [ न् ] पुं. [ कुण्डलम् अस्त्यस्य इति, इनि । कुण्डलाकारेण स्थितेरस्य तथात्वम् ] सर्पः; वरुणः; [ कुण्डलं कुण्डलवदाकारं शरीरे अस्त्यस्य ] मयूरः; चित्रलमृगः; विष्णुः; 'अरोद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्युजितशासनः'—इति महाभारते (१३।१४९।११०) । कुण्डलयुक्ते त्रिः; 'इमे च पुरुषा दिव्या यान्त्यस्य रथमन्तिकत् । परं शुभाः कुण्डलिनी युवानः खड्गपाणयः'—इति रामायणे (३।९।११) । ६४१

**कुण्डिका** स्त्री [ कुण्ड् + स्वार्थे कन्, टाप् अत इत्वं च ] कमण्डलुः; पिठरः; ताम्रकुण्डं; स्थाली; सामवेदान्तर्गत-उपनिषद्विशेषः; 'अव्यक्तैकाक्षरं पूर्णा सूर्याक्षयध्यात्मकुण्डिकाः'—इति मुक्तिकोपनिषदि । ४११

**कुतपः** पुं.—क्ली. [ कुं भुवं तपति, संज्ञायाम् इति खच्; आगमशास्त्रानित्यत्वेन न मुम् ] कुशतृणम्; अह्नोऽष्टमोऽंशः; दिवसस्याष्टमे मुहूर्तः; अपराह्णः; एकोद्दिष्ट-श्राद्धारम्भकालः; 'अह्नो मुहूर्ता विख्याता दश पञ्च च सर्वदा । तत्राष्टमो मुहूर्तो यः स कालः कुतपः स्मृतः'—इति मत्स्यपुराणे । 'मध्याह्नः खड्गपात्रं च तथा नेपालकम्बलः । रोप्यं दभींस्तिला गावो दौहित्रश्चाष्टमः स्मृतः । पापं कुत्सितमित्याहुस्तस्य सन्तापकारिणः ।

अष्टावैते यतस्तस्मात् कुतपा इति विश्रुताः'—इति मिताक्षरायाम् । 'आरभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः । विधिज्ञो विधिमास्थाय रौहिणं तु न लडधयेत्'—इति श्राद्धतत्त्वम् । 'दिवसस्याष्टमे भागे मन्दीभवति भास्करः । स कालः कुतपो ज्ञेयः पितृणामन्नमक्षयम्'—इति शातातपः । दौहित्रः; दुहितृपुत्रः; पुत्रीपुत्रः; वाद्यं; छागलोमजकम्बलः; पुं. [ कुत्सितं पापं तपति, कुं भूमिं तपति वा, कु + तप् + अच्, कुत् + कपन् वा ] सूर्यः; द्विजन्मा; वंशवानरः; अग्निः; अतिथिः; गौः; भागिनेयः । ८२२

**कुतूहलम्** क्ली. [ कुतू चर्ममयतैलादिपात्रं हलति विलिखति, तद्वद् अन्तःकरणम् उकण्ठापूर्णं करोति इति । कुसू + हल् + मूलविभुजादित्वात् क ] अपूर्ववस्तुदृक्कायतिशयः;—कौतूहलं; कौतुकं; कुतुकं; चित्रम् । 'प्रियावियोगाद्विधुरोऽपि निर्भरं कुतूहलाक्रान्तमना मनागभूत्'—इति नैषधे (१।११९) । नायिकालङ्कारविशेषः; 'रम्यवस्तुसमालोके लोलता स्यात्कुतूहलम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।११९) । त्रि. प्रशस्तः; अद्भुतः । ७२०

**कुत्सा** स्त्री. [ कुत्स् निन्दने + भावे अप् टाप् च ] कुत्सनम्; अवर्णः; आक्षेपः; निर्वादिः; परीवादः; अपवादः; उपक्रोशः; जुगुप्सा; निन्दा; गर्हणं; गर्हा; निन्दनं; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; अपक्रोशः; भर्त्सनम्; अपवादः; उपरागः; अवध्वंसः; घृणा; धिक्; सामि । ८६७

**कुत्सितः** त्रि. [ कुत्स् + कर्मणि क्त ] निन्दितः; निकृष्टः; प्रतिकृष्टः; अर्वा; रेफः; याप्यः; अवमः; अचमः; कुपूयः; अवद्यः; खेटः; गर्ह्यः; अणकः; रेपः; अवमः; आणकः; अनकः; कुप्रियः; आखेटः; रेपसः; काण्डः; गर्हितः; अपकृष्टकः । ३७८

**कुयः** पुं. — स्त्री. [ कुन्यति अशीभां क्लेशं वा । कुथि हिंसायाम्, अच् । आगमविधेरनित्यत्वात् न नुमागमः ] गजपृष्ठस्थितचित्रकम्बलः; प्रवेणी; आस्तरणं; वर्णः; परिस्तोमः; प्रवेणिः; परिष्टोमः; कुथा; कुथं; वोलः, आस्तरः; 'कुथा कन्या समाख्याता कुयः स्यात्करिकम्बलम् । कुयः कुशः कुयः कीटः प्रातःस्नायी द्विजः कुयः'—इति शब्दार्थचिन्तामणौ । पुं. [ कुथ् + अच् ] कुशतृणम्—'शाद्वलेषु यदा शिष्ये वनान्ते वनगोचरा । कुथास्तरणतल्पेषु किं स्यात्सुखतरं ततः'—इति



रामायणे (२।३०।१४) । ३०८

**कुदारः** पुं. [ कुं पृथ्वीं दारयति विदारयति । कु + दृ + णिच् + कर्मण्यण्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] कुदालः; 'कुदार' इति भाषा । काञ्चनवृक्षः; वृक्षमात्रम् (भूविदारणेन समुत्थितत्वात्) । ५७७

**कुदालः** पुं. [ कुं भूमिं दालयति, कु + दल् + णिच् + षण्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] भूमि दारणशस्त्रं; 'कुदार' इति भाषा । 'समासाद्य विलं तच्चाप्यखनन् सगरात्मजाः । कुदालै ह्येषुकैश्चैव समुद्रं यत्नमास्थिताः'—इति महाभारते (३।१०७।२३) । कोविदारवृक्षः; 'कोविदारश्च मरिक्कः कुदालो युगपत्रकः । कुण्डली ताम्रपुष्पश्च स्मन्तकः स्वल्पकेशरी'—इति भावप्रकाशः । ५७७

**कुध्रः** पुं. [ कुं पृथ्वीं भूमिं धरति । कु + धृ + मूलविभुजादित्वात् क ] पर्वतः; 'वाचारिड्वजध्वृत्तोड्वधिपतिः कुध्रेड्जगानिर्गण्डे, गोराडारुडुरःसरेड्डुतरग्रैवेयकभ्राडडम् । उड्वीड्खनरकाग्निभिश्रदृग्भिडेड्राजिनाच्छच्छविः, स स्तादम्बुमदम्बुदालिगलरुन्देवो मुदेवो मूडः'—इति कालिदासः । १६५

**कुन्तः** पुं. [ कुं भूमिम् उनत्ति क्लेदयति, कुं शरीरम् उनत्ति भेदयति दारयति वा, धातूनामनेकार्थत्वात् । कु + उन्द् + बाहुलकात् त, शकन्त्रादिवत् साधुः ] प्रासास्त्रं; भल्लास्त्रं; 'भाला' इति भाषा । 'कुन्तदन्ता कथं कुर्याद् राक्षसीव हि सा शिवम्'—इति कयासरित्सागरे । गवेधुका; चण्डभावः; क्षुद्रजन्तुः; क्षुद्रकोटः; उत्कुणम्; उत्कुणम्; 'जूआं, केशकीट' इत्यादिभाषा । ४७५

**कुन्तलः** पुं. [ कुन्तम् उत्कुनं लाति गृह्णाति / कुन्त + ला + क ] केशः; 'कापि कुन्तलसंव्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनी नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१२४) । ह्वीरेरं; चपकः; यवः; [ कुन्तस्य अग्राकारमिव लाति ] लाङ्गलः; ध्रुवकभेदः; 'वर्णैः षोडशभिः कार्यः कुन्तलो लघुशेखरे । शृङ्गारे च रसे प्रोक्त आनन्दफलदायकः'—इति सङ्गीतदामोदरः । दाक्षिणात्यजनपदविशेषः; 'आकर्षः कुन्तलश्चैव मालवाश्चान्द्रकास्तथा । द्राविडाः सिंहलाश्चैव राजा काश्मीरकस्तथा'—इति महाभारते (२।३४।११) । ५३०

**कुपिन्दकः** पुं. [ कुप्यति ग्राहकेभ्यः इति । कुप्. क्रोधे, कुपेर्वा वश्च' इति किन्दच्, संज्ञायां क ] तन्त्रवायः;

कुपिन्दः; तन्त्रवापः; तन्त्रुवापः; तन्त्रुवायः; कुपिन्दः । ५९०

**कुप्यम्** क्ली. [ गुप्यते रक्ष्यते द्रव्यादिकमत्र । गुप् रक्षणे, 'राजसूयसूर्यमृषोधरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः' इति क्यवन्तो निपातितः, गुपेरादेः कत्वं च संज्ञायाम् ] स्वणरूप्यभिन्नधातुः; ताम्रादिधातुः; 'भूमिरल्पफला देया विपरीतस्य भारत ! हिरण्यं कुप्यभूयिष्ठं भिन्नं क्षीणमथो वलम्'—इति महाभारते (१।५।६।११) । ८१

**कुप्रियः** त्रि. [ कुत्सितं प्रीणातीति, कु + प्री + 'इगुपवञ्जोति' क ] जघन्यः (बहुव्रीही तु कुत्सितप्रियः) । ७७०

**कुवेरः**, **कुवेरः** पुं. [ कुम्बति धनम् अन्यस्यैश्वर्यं वा इति । कुवि आच्छादने, 'कुम्बेनलोपश्च' इति एरक् नलोपश्च । यद्वा कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य 'वेरं कलेवरे क्लीवम्'—इति मेदिनी । पिङ्गलनेत्रत्वात्तथात्वम् ] यक्षराजः; स च विश्रवस ऋषेरिलविलायां जातः, स तु त्रिपाद् अष्टदन्तः केकराक्षश्च । 'कुत्सायां क्विति शब्दोऽयं शरीरं वेरमुच्यते । कुवेरः कुशरीरत्वाद् नाम्ना तेनैव सोऽङ्कितः;—इति वायुपुराणे । 'कुवेरो भव नाम्ना त्वं मम रूपेर्षया सुत !'—इति काशीखण्डे । ७९

**कुमारः** पुं. [ कुत्सितो मारः कन्दर्पो यस्मात् ] कार्तिकेयः; 'अग्नेः पुत्रः कुमारस्तु श्रीमान् शरवणालयः । तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः । कृत्तिकाभ्युपपत्तेश्च कार्तिकेय इति स्मृतः'—इति महाभारते (१।६६।२३-२४) । [ कौ पृथिव्यां मारयति दुष्टान्, कु + मृ + णिच् + अच् ] नाट्योक्ती युवराजः; राजकुमारः (९८); 'ततः त्रियोपात्तरसेऽधरोष्ठे निवेश्य दध्मी जलजं कुमारः'—इति रघुवंशे (७।६३) । अश्ववारकः; शुकः; [ कुमारयति क्रीडति इति, कुमार क्रीडने + अच् ] पञ्चवर्षीयवालकः; 'कन्यानां सम्प्रदानं च कुमारानां च रक्षणम्'—इति मनुः (७।१७५) । वरुणवृक्षः; अर्हदुपासकविशेषः; सिन्धुनदः; सनकसनातनसनत्सनन्दना एते चत्वारोऽपि बाल्यत एव ब्रह्मचारित्वात् कुमारा इत्युच्यन्ते । त इव ये च कौमारतो ब्रह्मचारिणस्तेऽपि विज्ञेयाः । 'अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम् । दिवं गतानि विप्राणामकृत्वा कुलसन्ततिम्'—इति मनुः (५।१५९) । मङ्गलग्रहः; 'धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्पुञ्जसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च लोहिताङ्गं

नमाम्यहम्—इति नवग्रहस्तोत्रे । शुकितमत्वर्वतोद्भूत ऋषिकुल्याविशेषः; 'ऋषिकुल्याः कुमाराद्याः शुकितमत्वादसम्भवाः—इति विष्णुपुराणे । शाकद्वीपाधिपतेः सप्तपुत्राणामेकः । तन्नाम्ना तद्वर्षस्यापि तथा सज्ञा; 'शाकद्वीपेश्वरस्यापि भवस्य सुमहात्मनः । सप्तैव तनयास्तेषां ददौ वर्षाणि सप्त सः । जलदश्च कुमारश्च सुकुमारो मनीचकः । कुसुमोदश्च मौदाकिः सप्तमश्च महाद्रुमः । तत्संज्ञात्पेव तत्रापि सप्तवर्षाण्यनुक्रमत्—इति विष्णुपुराणे (२।४।५९-६०) । मन्त्रविशेषः; 'हृतवीर्यश्च भीमश्च प्रध्वस्तो बालकः पुनः । कुमारश्च युवा प्रौढो वृद्धो निस्त्रिसकस्तथा—इति तन्त्रसारधृत-विश्वसारवचनम् । स्वरोदयोक्तबालचक्रस्थस्वरभेदः; बालोपद्रवकग्रहभेदः; 'स्कन्दः सृष्टो भगवता देवेन त्रिपुरारिणा । विभक्तिं चापरां संज्ञां कुमार इति स ग्रहः—इति सुश्रुते । वि. सुन्दरः । १९

**कुमारी स्त्री.** [कुमार+प्रथमवयोवचनत्वात् स्त्रियां ङीप्] द्वादशवर्षीया कन्या; कुमारिका; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी दशवर्षा च कन्यका । सम्प्राप्ते द्वादशे वर्षे कुमारीत्यभिधीयते—इति स्मृतिः । परीक्षितपुत्रस्य भीमसेनस्य पत्नी; 'भीमसेनः खलु कैकेयीमुपयेमे कुमारीं नाम तस्यामस्य जज्ञे प्रतिश्रवा नाम—इति महाभारते (१।९।५।४३) । पार्वती; नवमल्लिका; नदीविशेषः । इयं हि शाकद्वीपान्तर्गतसप्तनदीनामेका, 'नद्यश्चात्र महापुण्याः सर्वपापभयापहाः । सुकुमारो कुमारी च नलिनो धेनुका च या—इति विष्णुपुराणे (२।४।६५) । सहा; धृतकुमारी; अपराजिता; जम्बूद्वीपः; सीता; बन्ध्याककर्ण्टकी; स्थूलैला; मोदिनीपुष्पं; तरुणीपुष्पं; श्यामापक्षी । ४८३

**कुमुदः** पुं. [ कुरिसते निऋतिकोणे मोदते इति । कु+मुद्+क ] नैऋत्यकोणस्थदिग्गजः; दक्षिणकोणस्थदिग्गजो वा; वानरविशेषः; कपिभेदः; 'नाम्ना संकोचलो नाम नानाद्विजयुतो गिरिः । तत्र राज्यं प्रशास्येष कुमुदो नाम वानरः—इति रामायणे (६।२।२८) । नागविशेषः; 'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः । कुमुदः कुमुदाक्षश्च तित्तिरिहलिकस्तथा—इति महाभारते (१।३।५।१५) । दैत्यभेदः; सितोत्पलं; कर्पूरः; ध्रुवकभेदः 'एकविंशतिवर्णाब्धिर्भवेत् शृङ्गार-

के रसे । कुमुदोऽभीष्टदश्चैव ताले तुरगलोलके—इति सङ्गीतदामोदरः । [ कुं पृथ्वीं मोदयति सुखयति । अन्तर्भूतणिजन्तान्मुदः क ] विष्णुः; 'शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः—इति महाभारते (१३।१४९।१६) । विष्णुपार्षदः; 'कुमुदः कुमुदाक्षश्च विष्वक्सेनः पत्त्रिराट्—इति भागवते (८।२।१।१०) । मेरोरुपष्टम्भगिरिविशेषः; 'मन्दरो मेरुमन्दारः सुपार्वः कुमुद इति । अयुतयोजनविस्तारोन्नाहा मेरोरुचतुर्दिशमवष्टम्भगिरय उपकल्पताः—इति भागवते (५।१६।१२) । शात्मलिद्वीपान्तर्गतप्रथमपर्वतः; कुमुदश्चोन्नतश्चैव तृतीयश्च वलाहकः—इति विष्णुपुराणे (२।४।२६) । आनूपजन्तुविशेषः; 'हंससारसचक्राद्याः कुमुदाश्च कपिञ्जलाः । आनूपास्तेषु विज्ञेयाः श्लेषमला वातकोपनाः—इति हारीते प्रथमस्थाने ११ अध्यायः । १०४

**कुमुवम्** क्ली. [ को मोदते, 'कु+मुद्+ 'इगुपधेति' क ] श्वेतोत्पलं; कैरवं; चन्द्रकान्तं; गर्दभं; कुमुत्; धवलोत्पलं; कल्लारं; शीतलकं; शशिकान्तम्; इन्दुकमलं; चन्द्रिकाम्बुजं; गन्धसोमम् । 'श्वेतं कुवलयं प्रोक्तं कुमुदं कैरवं तथा । कुमुदं पिच्छिलं स्निग्धं मधुरं ह्लादि शीतलम्—इति भावप्रकाशः । रक्तपद्मं; रूप्यम् । ६८१

**कुमुदपत्राभा स्त्री.** [ कुमुदपत्रमिव आभा यस्याः ] पाण्डरवर्णा; श्येनी; श्येतवर्णा; धवलवर्णा । ७३८

**कुमुदिनी स्त्री.** [ कुमुदानि सन्त्यस्याम् । कुमुद+इनि, डोर् ] कुमुदलता; कुमुद्वती; उत्पलिनी; 'अलिरसौ नलिनीवनवल्लभः कुमुदिनी कुलकेलि कलारसः । विधिवशेन विदेशमुपागतः कुटजपुष्परस बहु मन्यते—इति भ्रमराष्टके (७) । कुमुदसमूहः । ६८३

**कुमुद्वती स्त्री.** [ कुमुद+ 'कुमुदनडवेतसेम्योड्मतुप्' ] इति ड्मतुप्, 'मादुपधायाश्च' इति मस्य व; 'उगितश्चेति' ङीप् ] कुमुदिनी; 'कुमुद्वती कैरविका तथा कुमुदिनीति च—इति भावप्रकाशः । 'प्रभातवाताहतकम्पिताकृतिः कुमुद्वतीरेणुपिशङ्गविग्रहम् । निरास भृङ्गं कुपितेव पद्मिनी न मानिनी ससहतेऽन्यसङ्गमम्—इति भट्टिकाव्ये (२।६) । कुमुदाख्यनागराजस्य यवीयसी स्वसा, सा तु रामचन्द्रपुत्रस्य कुशस्य पत्नी; 'त स्वसा नागराजस्य कुमुदस्य कुमुद्वती । अन्वगात् कुमुदानन्द शशाङ्क-

मिव कौमुदी—इति रघुवंशे (१७।६) । कौञ्चद्वीपान्त-  
गंतानां सप्तनदीनामेका नदी; 'गौरी कुमुदती चैव  
सन्ध्यारात्रिमंनोजवा । क्षान्तिश्च पुण्डरीका च सप्तैता  
वर्गनिम्नगाः'—इति विष्णुपुराणे (२।४।५५) । ६८३

कुम्भः पुं. [ कुं भूमिम् उम्भति जलेन । उम्भ् + अच्,  
शकन्ध्वादित्वात् साधुः ] घटः; गजकुम्भः; हस्ति-  
शिरसः पिण्डद्वयम् (२१६); 'तैः किं मत्तकरीन्द्र-  
कुम्भकुहरे नारोपणीयाः कराः'—इति प्रसन्नराववे ।  
कुम्भकर्णपुत्रः; 'सुतोऽथ कुम्भकर्णस्य कुम्भः परम-  
कोपनः । अन्नवीत् परमकुट्टो रावणं लोकरावणम्'—  
इति रामायणे (५।७९।१५) । वेद्यापतिः; समाधि-  
विशेषः; प्राणायामाङ्गकुम्भकः; प्रह्लादपुत्रः; 'प्रह्लादस्य  
त्रयः पुत्राः स्याताः सर्वत्र भारत ! विरोचनश्च कुम्भश्च  
निकुम्भश्चेति भारत !'—इति महाभारते (१।६५।१९)  
विष्णुः; 'अचिष्मानचितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोषनः'—  
इति महाभारते (१३।१४९।८१) । द्रोणद्वयपरिमाणं;  
शूर्पः; मेघादिद्वादशराशयन्तर्गतैकादशराशिः; हृद्रोगः;  
लग्नविशेषः; 'कुम्भलग्ने समुद्रभूतश्चलचिन्तोऽति-  
सीहदः । परदाररतो नित्यं सत्त्वकायो महासुखी'—  
इति कोष्ठीप्रदीपः । ३१६

कुम्भकारः पुं. [ कुम्भं करोति, कुम्भ + कृ + कर्मण्यण्  
इति अण् ] जातिविशेषः; कुलालः; चक्री; 'कुम्हार'  
इति भाषा । 'वेद्यायां विप्रतश्चौरात् कुम्भकारः स  
उच्यते । 'मालाकाराच्चर्मकार्यां कुम्भकारो व्यजायत ।'  
'पट्टीकाराच्च तैलिक्यां कुम्भकारो बभूव ह ।' कुक्कुम-  
पक्षी । ५९०

कुम्भी [ न् ] पुं. [ कुम्भोऽस्यास्तीति । इनि ] हस्ती;  
कुम्भीरः; जलजन्तुविशेषः; गुग्गुलुः; अग्निप्रकृति-  
विषकीटविशेषः; 'बाह्यकी पिञ्चितः कुम्भी'— इति  
सुश्रुते कल्पस्थाने ८ अध्याये । २१४

कुम्भी स्त्री. [ कुम्भ + अल्पार्थे ङीप् ] क्षुद्रकुम्भः; उखा;  
पाटलावृक्षः; वारिपर्णी; कट्फलः; 'कायफल' इति  
भाषा । वृक्षविशेषः; कुम्भीपुष्पः; रोमालुविटपी;  
रोमशः; पर्यट्टुमः; दन्तीवृक्षः । ३१४

कुम्भीनसः पुं. [ कुम्भीव नसा नासा यस्य ] क्रूरसर्पः;  
वायुप्रकृतिकविषकीटविशेषः; 'कुम्भीनसस्तुण्डिकेरी'—  
इति सुश्रुते कल्पस्थाने ८ अध्याये । ६४०

कुम्भीरः पुं. [ कुम्भिनं हस्तिनमपि ईरयति । ईर् +  
कर्मण्यण् ] जलजन्तुविशेषः; नक्रः; कुम्भीलः; गिल-  
ग्राहः; महाबलः; वार्भटः; अम्बुकिरातः; अम्बु-  
कण्टकः; 'गर्दभत्वं तु संप्राप्य दश वर्षाणि जीवति,  
संवत्सरं तु कुम्भीरस्ततो जायेत मानवः'—इति महा-  
भारते (१३।१११।५८) । ६५६

कुरङ्गः पुं. [ कौ पृथिव्यां रङ्गति चलति । रगि + अच् ।  
यद्वा 'विडादिभ्यः किञ्च' इति अङ्गच् वाहुलकात् उत्वं  
रपरत्वं च । 'कुरङ्गविहङ्गादयः सर्वे निपात्यन्ते' इति वा ]  
हरिणः; 'कुरङ्गमातङ्गपतङ्गमृङ्गमीना हताः पञ्चभिरेव  
पञ्च'—इति भागवतटीकायां स्वामी । २३०

कुरण्टकः पं. [ कुप्यते शब्धते इति, कूर् + कर्मणि वाहुल-  
कात् अण्टक्, स्वार्थे कन् ] पीताम्लानः; पीतझिण्टी;  
वृक्षविशेषः; [ पृषोदरादित्वात् कुरण्टकः इत्यपि ]  
'कुरण्टकोऽत्र पीते स्याद्रक्ते कुरवकः स्मृतः'—इति  
भावप्रकाशः । २०७

कुररः पुं. [ कुड् शब्दे 'कुवः करच्' इति करच् प्रत्ययः ]।  
जलचरान्तर्गतपक्षिविशेषः; कुरलपक्षी; उत्कोशः;  
खरशब्दः; कौञ्चः; पङ्क्तिचरः; खरः; 'प्रोद्धुष्टां  
कौञ्चकुररैश्चक्रवाकोपकूजिताम्'— इति महाभारते  
(३।६४।११०) । 'कुररवकमकराः कङ्कचटकपिकमृङ्ग-  
सारसाः । आडिदात्पूहहंसा जलकरटिकपिङ्गटिट्टि-  
भायाः । जलेचरा विहङ्गास्ते भासकाः खञ्जरीटकाः'  
—इति हारीते प्रथमे स्थाने ११ अध्याये । २४९

कुरलः पुं. [ कुरर इति रस्य लः ] कुररपक्षी; चूर्ण-  
कुन्तलः । २४९

कुरण्टकः पुं. [ कु + णटि स्तेये + अचकुण्टः + स्वार्थे कन् ]  
पीताम्लानः । २०७

कुरुविन्दः पुं. [ कुरुन् विन्दति, विद् लाभे, 'अनुपसर्गा-  
ल्लिम्पविन्द' इति श, मुचादित्वात् नुम् च ] मुस्तकम्;  
हिङ्गुलं (६२१); भापः; 'मुस्तकं न स्त्रियां मुस्तं  
त्रिपु वारिदनामकम् । कुरुविन्दश्च सङ्घातोऽपरः क्रोड-  
कसेरकः । भद्रमुस्तं च गुन्द्रा च तथा नागरमुस्तकः'—  
इति भावप्रकाशः । पुं.— बली. काचलवर्णः; माणिक्यं;  
कुरुविल्वरत्नं; कुल्मापसस्यम्; 'कासीससैन्धवं किण्वं  
कुरुविन्दो मनःशिला'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ३६  
अध्याये । ६२१

**कुंकुरः** पुं.—स्त्री. [ कुर इत्यस्फुटं रुढं कुरति शब्दायते ।  
 कुर्+कुर्+क ] कुंकुरः । २८१  
**कुलम्** क्ली. [ कुल्+इगुपधेति' क ] गृहम् । वंशः  
 (३९६); रघो (१६।८६) । 'आचारो विनयो विद्या  
 प्रतिष्ठा तीर्थदर्शनम् । निष्ठा वृत्तिस्तपो दानं नवधा  
 कुललक्षणम्'—इति शिष्टोक्तौ । कुलनाशकारणम्—  
 'गोभिश्व देवतैर्विप्रकृष्या राजोपसेवया । कुलान्यकुलतां  
 यान्ति यानि हीनानि वृत्ततः । कुविवाहैः क्रियालोपैर्वेदान-  
 ध्ययनेन च । कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण वै ।  
 अनृतात् पारदार्याच्च तथाऽभक्ष्यस्य भक्षणात् । अश्रौत-  
 धर्माचरणात् क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् । अश्रोत्रिये वै  
 वेदानां वृषलेषु तथैव च । विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं  
 नश्यति वै कुलम्'—इति कूर्मपुराणे । समूहः;  
 सजातीयगणः (६८६); [ कुं भूमिं लाति गृह्णाति ।  
 ला+क ] जनपदः; [ कौ भूमौ लीयते, 'अन्येभ्योऽपीति'  
 ड ] शरीरम्; अप्रम्; मध्यमहलद्वयेन यावती भूमिः  
 कृष्यते तावती भूमिः; 'दशी कुलं तु भुञ्जीत विशी  
 पञ्चकुलानि च'—इति मनुः (७।१११) । पुं.  
 [ कुल्+क ] कुलिकः; शिल्पिकुलप्रधानः । २९१  
**कुलटा** स्त्री. [ कुलानि अटतीति । कुल+अट्+अच् ।  
 शकन्धादित्वात् साधुः ] व्यभिचारिणी; भ्रष्टा;  
 पुंश्चली; धर्षिणी; बन्धकी; असती; इत्तरी;  
 स्वैरिणी; पांशुला; धर्षणी; पांसुला; धृष्टा; दुष्टा;  
 धर्षिता; लङ्का; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'परपति-  
 निदंयकुलटाशोषितशठ ! नेर्षया न कोपेन । दग्ध-  
 ममतोपतप्ता रोदिमि तव तानवं वीक्ष्य'—इति आर्या-  
 सप्तशती (३९३) । परकीयान्तर्गतनायिकाविशेषः;  
 'एते वारिकणान् किरन्ति पुष्टान् वर्षन्ति नाम्भोधराः,  
 शैलाः शाद्वलमुद्गहन्ति न सृजन्त्येते पुनर्नायकान् ।  
 त्रैलोक्ये तरवः फलानि मुञ्चते नैवारभन्ते जनान्, धातः !  
 कातरमालपामि कुलटाहेतोस्त्वया किं कृतम्'—इति  
 रसमञ्जरी । ४९६  
**कुलबालिका** स्त्री. [ कुलस्य सदाचारवत्कुटुम्बस्य बालिका ।  
 पालिकापक्षे कुलं कुलमर्थादां पालयति । पालि+  
 ष्वल्+टाप् इत्वम् । यद्वा कुलपाली+स्वार्थे कन्,  
 टाप् ] कुलस्त्री; कुलवती; कुलपालिः; कुलपालिका;  
 जामिः; कुलाङ्गना (७९२) । ४९५

**कुलस्त्री** स्त्री. [ कुले स्थिता स्त्री ] कुलपालिका; कुलवती;  
 अनन्यगामिनी; कुलरक्षिका स्त्री; 'असन्तुष्टा द्विजा  
 नष्टाः सन्तुष्टा इव प्रार्थिताः । सलज्जा गणिका नष्टा  
 निर्लज्जाश्च कुलस्त्रियः'—इति चाणक्यः । [ कुले  
 कुलचक्रे मूलाधारे विराजते या ] कुलकुण्डलिनीशक्तिः;  
 'कुलस्त्रीज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः'—इति  
 कुलार्णवे । ४९५

**कुलायः** पुं. [ कुलानां पक्षिसमूहानाम् अयः वासस्थानम् ]  
 नीडः; 'खगकुलायकुलायनिलायिताम्'—इति माघे ।  
 स्थानमात्रम् । २४०

**कुलालः** पुं. [ कुलं घटादिनिर्माणोपयोगिमृदाद्युपादानम्  
 आलाति सम्यगादत्ते । आ+ला+क । कुलं वंशं  
 घटादिसमूहं वा अलति पर्याप्नोति वा । अल्+  
 कर्मण्यण्, कुल्+तमिचिशिबिडीति' कालन् वा ]  
 कुम्भकारः; कुक्कुभपक्षी । ५९०

**कुलिशम्** क्ली.—पुं. [ कुलौ हस्ते शते अवतिष्ठते । कुलि+  
 शी+ड । यद्वा कुलिनः पर्वतान् श्यति दारयतीति ।  
 शी+ड, 'आतोनुपसर्गे कः' इति क वा ] वज्रम्; 'क्रुद्धेऽपि  
 पक्षिच्छिदि वृत्रशत्राववेदनाजं कुलिशशतानाम्'—इति  
 कुमारसम्भवे (१।२०) । [ कु ईषत् कुत्सितं वा लिशति,  
 कु+लिश् अल्पीभावे गती च+क ] मत्स्यविशेषः;  
 कण्टकाष्ठीलः (६५९); 'तिमितमिङ्गलकुलिशा-  
 पाकमत्स्यनिरालकान्दिवारलकमकरगर्गकचन्द्रकमहा-  
 मीनराजीवप्रभृतयः सामुद्राः'— इति सुश्रुते सूत्र-  
 स्थाने ६४ अध्याये । अस्थिसंहारवृक्षः [ कौ भूमौ  
 लिशति अल्पीभवति, कुं भूमिं लिशति गच्छति ह्रस्वतया  
 प्राप्नोति वा ] । ५६

**कुलीनः** पुं. [ कुले प्रशस्तवंशे जातः, 'कुलात् खः' इति ख ]  
 (तन्त्रशास्त्रोक्तकुलाचारव्रते स्थितः कौलः) त्रि.  
 उत्तमकुलोद्भवः; महाकुलः; आर्यः; सम्यः; संज्जनः;  
 साधुः; 'कुलीनस्य सुतां लब्ध्वा कुलीनाय सुतां ददौ ।  
 पर्यायक्रमतश्चैव स एव कुलदीपकः ।' (४३९) पुं.  
 श्रेष्ठघोटकः; आजानेयः; स्वजानेयः; जात्यः;  
 बालादिवः । ३८९

**कुलीरः** पुं. [ कुल् संस्त्याने+ईरन् किच्च ] कर्कटः;  
 'कंकडा' इति भाषा । कर्कटराशिः । ६५८

**कुल्यम्** क्ली. [ कुल् बन्धने+क्यप् ] अस्थि; 'हड्डी'

इति भाषा । अष्टद्रोणपरिमाणं; शूर्पम्; आमिषम्; त्रिं । [ कुलस्यापत्यम्, 'अपूर्वपदादन्यरस्यामिति' यत्, यद्वा कुले भवः, कुलाय हितः, कुले साधुः वा; दिगादित्वात् तत्र साधुरिति वा यत् ] कुलोद्भवः; कुलहितः; 'गृहान् मनोज्ञोऽपरिच्छदांश्च वृत्तींश्च कुल्याः पशुभृत्यवर्गात्'—इति भागवते (७।६।१३) । मान्ये पुं । ६३२

कुल्या स्त्री । [ कुले प्राणिगणे साधुः, 'तत्र साधुरिति' यत् ] नदीमात्रम्; 'सैन्धवारण्यमासाद्य कुल्यानां कुरु दर्शनम्'—इति महाभारते ३ पर्वणि । कुलस्त्री (७९८); ध्रुवा कृत्रिमा नदी; 'कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । पयःप्रणाली; 'पनाला' इति भाषा । जीवन्तिकौषधिः; स्थूलवार्ताकुः ।

६६६

कुवलयम् क्लो । [ कोः पृथिव्याः वलयमिव शोभाकारकत्वात् ] नीलोत्पलम्; 'ज्योतिर्लैखावलयि गलितं यस्य वहि भवानी, पुत्रप्रेम्णा कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति'—इति मेघदूते (४६) । उत्पलम् । ६८१

कुवली स्त्री । [ कुवल + स्त्रियां गौरादित्वान् डीप् ] कोलिवृक्षः । १९४

कुविन्दकः पुं । [ कुत्सितं भक्तादिभक्षितसूत्रादिकं कुत्सितवृत्या वा जीविकां विन्ददीति । श, स्वार्थे संज्ञायां वा क ] तन्त्रवायः; तन्तुवायः; कुविन्दः; कुपिन्दः । ५९०

कुवेणी स्त्री । [ कु ईपत् वेणन्ते गच्छन्ति मत्स्या अस्याम् । कु + वेण् + इन् । ततः कृदिकारान्तादिति वा डीप् ] मत्स्यधानी; मत्स्यवन्धनी; [ कुत्सिता वेणी यस्याः ] निन्दितवेणी नारी च । ५९४

कुवेरः पुं । [ कुत्सितं वेरं शरीरमस्य ] देवताविशेषः; स तु विश्रवोमुनेरिडविडाभार्यायां जातः । घनयक्षोत्तरदिशा पतिश्च । त्रिचरणोऽष्टदंष्ट्रोऽयं जातः । त्र्यम्बकसखः; यक्षराट्; गुह्यकेश्वरः; मनुष्यवर्मा; घनदः; राजराजः; घनाधिपः; किन्नरेशः; कुवेरः; वैश्रवणः; पोलस्त्यः; नरवाहनः; यक्षः; एकपिङ्गः; घनी; ऐलविलः; श्रीदः; पुण्यजनेश्वरः; हर्यक्षः; अलकाधिपः; नन्दीवृक्षः; अहं दुपासकविशेषः; त्रि । [ कुत्सितं वेरं क्षेपणदानादिकं गतिर्वा यस्य ] मन्दः; [ कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य ] कुशरीरः । ७९

कुशम् क्लो.—पुं । [ कु पापं श्यति नाशयति । कु + शो + ड,

यद्वा को भूमौ शेते राजते शोभते इत्यर्थः ] तृणविशेषः; कुयः; दर्भः; पवित्रं; यान्निकः; ह्रस्वगर्भः; वहिः; कुतपः; 'कुशो दर्भस्तथा वहिः सूच्यप्रो यत्र भूषणम् । ततोऽन्यो दौर्घपत्रः स्यात् क्षुरपत्रस्तथैव च ।' 'पूजाकाले सर्वदैव कुशहस्तो भवेच्छुचिः । तर्जन्या रजतं धार्यं स्वर्णं धार्यमनामया । कुशकार्यकरं यस्मान्न तु वन्याः कुशाः कुशाः । कुशेन रहिता पूजा विफला कथिता मया । नान्यस्य रजतं स्वर्णं धार्यं हि निजमङ्गले'—इति वरदातन्त्रे १ पटलः । क्लो । [ को भूमौ शेते, भूलग्नत्वात् तथात्वम् ] जलम् (६४८); पुं । [ कु पापं श्यति नाशयति विहितराजघर्मानुष्ठानेन ] रामसुतः; 'यस्तयोः पूर्वजो जातः स कुशैर्मन्त्रसत्कृतैः । निर्माजनीयस्तु तदा कुश इत्यस्य नाम तत्'—इति रामायणे । पुराणोक्तसप्तद्वीपेषु द्वीपभेदः; कुशद्वीपः; 'ज्योतिष्मतः कुशद्वीपे सप्तपुत्राः शृणुष्व तान्'—इति विष्णुपुराणे (२।४।३६) । त्रि । [ कु कुत्सिते कर्मणि शेते अवतिष्ठते, कु + शो + क ] पापिष्ठः; [ कुत्सिते मदशय्यायां शेते इति ] मत्तः । १९१

कुशलः त्रि । [ को पृथिव्यां शलति शलाघां प्राप्नोतीति । शल् + अच् ] शिक्षितः; चतुरः; 'समुद्रयानकुशला देशकालार्थदर्शिनः । स्थापयन्ति तु यां वृद्धिं सा तत्राधिगमं प्रति'—इति मनुः (८।१५७) । [ कुशं लाति गृह्णाति, कुश + ला + क ] कुशाग्राहकः; क्लो । [ कुश् + वृषादित्वात् कलन् । यद्वा कु पापं तस्मात् शलति गच्छति पृथक्त्वं प्राप्नोतीति । कु + शल् + अच् ] कल्याणम्; 'पप्रच्छ कुशलं राज्ये राज्याश्रममुनिं मुनिः—इति रघुवंशे (१।५८) । 'ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रवन्धुमनामयम् । वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च'—इति मनुः (२।१२७) । पर्याप्तिः; पुष्यं; तद्वति त्रि । 'न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुपज्जते'—इति भगवद्गीता (१८।१०) । ३३५

कुशा स्त्री । [ कुश् संश्लेषे + क टाप् च ] बल्गा; रज्जुः; मधुकर्कटिका; छन्दोगाः स्तोत्रीयगणनाथानौदुम्बरान् शङ्कुन्-कुशा इति व्यवहरन्ति । ४४२

कुशाप्रोयमतिः त्रि । [ कुशाग्रमिव तोदणा कुशाप्रोया, तथा भूता मतिः यस्य । कुशाग्र + छ ततो बहुव्रीहिः ] कुशाग्रबुद्धिः; सूक्ष्मदर्शी । ३७३

**कुशिकः** पुं. [ कुशः कुशसंज्ञको महीपालो जनकत्वेनास्त्यस्य । कुश+ठन् ] फालः; कुशी; नृपविशेषः; विश्वामित्र-पितामहः; गाधेः पिता; सर्जवृक्षः; विभीतकवृक्षः; अश्वकर्णवृक्षः; तैलशेषः; केकरे त्रि. । ५७५

**कुशीदम्** क्ली. [ कुसीद+पृषोदरादित्वात् सस्य शत्वम् ] वृद्धिजीविका; रक्तचन्दनम् । ५७२

**कुशीलवः** पुं. [ कुत्सितं शीलम् अस्य इति कुशीलः । कुगतीति समासः, 'अन्यत्रापि दृश्यते' इति व । यद्वा कुशीलं वाति गच्छति प्राप्नोतीति यावत् । वा+क ] चारणः; मटविशेषः; कथकादिः; देशान्तरे कीर्तिं प्रचारयति यो नटः; 'कुशीलवोऽवकीर्णो च वृषलीपतिरेव च'—इति मनुः (३।१५५) । रामायणात्मना नाट्य-शास्त्रप्रचारकत्वाद् वाल्मीकिमुनिः । ५९२

**कुशूलः** पुं. [ कुसूल+पृषोदरादित्वात् शत्वम् ] धान्या-गारम्; अन्नकोष्ठकः; व्रीह्यगारम्; 'कुशूलधान्यको वा स्यात् कुम्भीधान्यक एव वा । अथैहिको वापि भवेदश्व-स्तनिक एव वा'—इति मनुः (४।७) । तुषानलः । ३१२

**कुशेशयम्** क्ली. [ कुशे जले शेते । कुश+शी+अच्, अलुक्समासः ] पद्मं; कमलम्; 'कुशेशयाताम्रतलेन कश्चित् करेण रेखाध्वजलाञ्छनेन'—इति रघुवंशे (६।१८) । सारसपक्षी; पुं. [ कुशेशयं पद्ममिव आकृति-विद्यतेऽस्य, अशं आद्यच् ] कर्णिकारवृक्षः; कुशद्वीपस्थ-पर्वतविशेषः । ६७९

**कुषीदम्** क्ली. [ कुसीद+पृषोदरादित्वात् षत्वम् ] कुसीदं; वृद्ध्याजीवनम्; ऋणदानजीविका; अर्थप्रयोगः । ५७२

**कुष्ठम्** क्ली. [ कुष्णाति रोगम् । कुष्+ 'हनिकुषीति' क्यन् ] विषभेदः; ओषधिविशेषः; व्याधिः; पारि-भव्यं; वाप्यं; पाकलम्; उत्पलम्; आप्यं; जरणं; रजा; गदः; आमयः; रामं; पारिभद्रकं; वाणीरजं; पावनं; कुत्सितं; पद्मकं; गदाह्वं; कौवेरं; भासुरं; काकलं; नीरुजम् । 'कुष्ठं रोगाह्वयं वाप्यं पारिभव्यं तयोत्पलम् । कुष्ठमुष्णं कटुं स्वादुं शुक्रलं तिक्तकं लघु । हन्ति वातास्रवीसर्पकासकुष्ठमस्तकफान्'—इति भाव-प्रकाशः । ६०४

**कुष्ठः** पुं. [ कुष्णाति शरीरस्थशोणितं विकुस्ते । निष्कर्षार्थकस्य कुष्धातोरत्र विकारार्थत्वं बोध्यते धातूनामनेकार्थत्वात् । कुष् निष्कर्षे, 'हनिकुषीति'

वथन् ] रोगविशेषः; शिवत्र; श्वेतं; श्वेत्रम् । 'सर्वकुष्ठेषु वमनं रेचनं रक्तमोक्षणम् । वचावासापटोलानां निम्बस्य फलिनीत्वचः ।' ६०४

**कुसीदम्** क्ली. [ कुस्+ 'कुसेरुम्भोमेदेताः' इति ईद प्रत्ययः । यद्वा कुत्सितं निकृष्टरूपवृद्धिदानेनेत्यर्थः, सीदति अघमर्णो यत्र, पृषोदरादित्वात् साधु ] ऋण-दानजीविका; वृद्ध्याजीवनम्; अर्थप्रयोगः; वृद्धि-जीविका; 'सूद' इति भाषा । 'कुत्सितात् सीदतरश्चैव निर्विशङ्कैः प्रगृह्यते । चतुर्गुणं वाष्टगुणं कुसीदाह्य-मृणन्ततः ।' 'कुसीदकृषिवाणिज्यं प्रकुर्वीतास्वयं कृतम् । आपत्काले स्वयं कुर्वन्नैनसा युज्यते द्विजः'—इति बृहस्पतिः । ५७२

**कुसीदिकः** त्रि. [ कुसीदं वृद्धिस्तदर्थं द्रव्यं कुसीदं तत्, प्रयच्छति । 'कुसीददशैकादशात् षठ्ठञ्चौ' इति षठ्ठ् ] वृद्धिजीवी; वार्द्धिकः; वृद्ध्याजीवः; वार्द्धिषिः; कुसीदः; कुसीदी; 'वणिक् कुसीददोषः स्यात् ब्राह्मणानां च पूजनात्'—इति आह्निकतत्त्वे । ५७१

**कुसुमम्** क्ली. [ 'कुसेरुम्भोमेदेताः' इति उम, निपातनात् गुणाभावः ] पुष्पम्; 'वापीजलानां मणिमेखलानां शशाङ्कभासां प्रमदाजानानाम् । चूतद्रुमाणां कुसुमानतानां ददाति सौरभ्यमयं वसन्तः'—इति ऋतुसंहारे वसन्त-वर्णने (४) । फलं; नेत्ररोगविशेषः; स्त्रीरजः; 'यदा नार्याः पितुर्गृहे कुसुमस्तनसम्भवः'—इति ज्योतिषशास्त्रे । १८६

**कुसुमायुधः** पुं. [ कुसुमानि आयुधानि अस्त्राणि अस्य ] कामदेवः; 'भगवन् मन्मथ ! कुतस्ते कुसुमायुधस्य सतस्तैक्ष्ण्यमेतत्'—इति शाकुन्तले ३ अङ्के । 'कुसुमायुध-पत्नि ! दुर्लभस्तव भर्ता न चिराद्भविष्यति'—इति कुमारसम्भवे (४।४०) । ३२

**कुसुम्भः** पुं. [ 'कुसेरुम्भोमेदेताः' इति उम्भ प्रत्ययः ] महारजनवृक्षः; 'पद्मोत्तमविकाशः स्यात् कुसुम्भः शरटस्तथा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'कटुविपाके कटुकः कफघ्नो विदाहिभावादहितः कुसुम्भः ।' कमण्डलुः; 'कलृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भ-वान्'—इति मनुः (६।५२) । क्ली. [ कौ पृथिव्यां सुम्भति शोभते दीप्तिं प्राप्नोतीत्यर्थः । कु+सुभि+अच्, इदित्वान् नुम् ] स्वर्णं; सुवर्णं; पुष्पविशेषः

(६२०); तत्पर्यायाः—कमलोत्तमं; वह्निशिवं; महारजनं; पावकं; पीतं; पद्मोत्तरं; रक्तं; लोहितं; वस्त्ररञ्जनम्; अग्निशिवम्; 'कुसुम्भं ललिताशाक वृन्ताकं पूतिकं तथा। भक्षयन् पतितस्तु स्यादपि वेदान्तगो द्विजः'—इति तिथितत्त्वम्। ६२०

कुसूतिः स्त्री. [ कुत्सिता सृतिः उपायः व्यवहारो वा ] इन्द्रजालं; शाठ्यं; [ कुत्सितपथः इति कर्मधारये व्युत्पत्तिलव्योऽर्थः। कुत्सितासृतिराचारो यस्येति विग्रहे दुराचारे त्रि. ] 'कस्माद्वयं कुसृतयः खलयोनयस्ते दाक्षिण्यदृष्टिपदवीं भवतः प्रणीताः'—इति भागवते (८।२३।७)। ७४०

कुस्तुम्बुर क्ली. [ कुत्सितं तुम्बति अर्दयति यत्। तुवि अर्दने + बाहुलकात् उरुप्रत्ययः। जातिनिर्देशात् सुट् ] घन्याकम्; 'घन्याकं घान्यकं घान्यं कुस्तुम्बुरु घनीयकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। पुं. यक्षविशेषः; 'कुस्तुम्बुरुःपिशाचश्च गजकर्णो विशालकः। एते चान्ये च बहवो यक्षाः शतसहस्रशः'—इति महाभारते (२।१०।१५)। ६१७

कुहकः त्रि. [ कुह्, विस्मापने + 'बहुलमन्यत्रापि' इति क्वृन् ] घूर्तः; वञ्चकः; व्यसकः; दाण्डाजिनिकः, मायी; जालिकः; दाम्भिकः; माया; इन्द्रजालं; जालं; कुसूतिः; 'जन्माद्यस्य यतोऽन्यथादितरतश्चा-र्थेष्वभिन्नः स्वराट्, तेन ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरयः। तेजोवारिमृदां यथा त्रिनिमयो यत्र त्रिसर्गो मृपा, धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि'—इति भागवते (१।१।१)। सर्पविशेषः; 'इत्युक्तास्तेन ते सर्पाः कुहकास्तस्रकान्धकाः। अदशन्त समस्तेषु गात्रेष्वतिविषोल्बणाः'—इति विष्णुपुराणे (१।१७।३८)। ३४९

कुहनम् त्रि. [ कु + ईपत् प्रयत्नेन हन्यते इति। हन् + कर्मणि अच्। कुत्सिताचारेण हन्तीति। हन् + अच् ] ईर्ष्यालुः; क्ली. मृद्भाण्डविशेषः; काचभाजनम्; पुं. [ कुं पृथ्वीं हन्ति खनतीत्यर्थः, हन् + अच् ] मूषिकः; [ कौ पृथिव्यां कुत्सितं वा हन्ति दशतीति + अच् ] धर्मः। ३८४

कुहना स्त्री. [ कुह् + 'ण्यासश्चान्यो युव्' इति युच् ] दम्भ-चर्या; लोभान्मिथ्यापचकल्पना; अर्थलिप्सया मिथ्या-

चारभेदस्य सम्पादना; दम्भमात्रकृतध्यानमीनादिः; अर्थलिप्सया धर्माश्रयणं; कुहनिका। ७४०

कुहरम् क्ली. [ कुं भूमिं हरतीति। कु + ह् + अच् ] गह्वरं; छिद्रम्; 'तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भकुहरे नारो-पणोयाः कराः'—इति प्रसन्नराघवे। कर्णः; कण्ठशब्दः; गलः; अन्तिकम्; पुं. [ कुह्, विस्मायने + क। कुहं विस्मायनं भयम् इत्यर्थः, राति ददाति, भयं जनयतीति भावः, रा + क ] नागविशेषः। ६२४

कुहुः स्त्री. [ कुह् + मृग्यवादित्वात् कु ] कुहुः; पिक-ध्वनिः; 'कोकिलानां कुहुरवैः सुखैः श्रुतिमनोहरैः'—इति महाभारते। ११२

कुहुः स्त्री. [ कुह्, बाहुलकात् कू प्रत्ययः ] कुहुः; नष्टेन्दुकलामावास्या; 'दृष्टचन्द्रा सिनीवाली नष्ट-चन्द्रा कुहूरिति'—इति व्यासः। तदधिष्ठात्री देवपत्नी; अङ्गिरसः सुता; 'सिनीवाली कुहूरिति देवपत्न्या-विति'—निरुक्ते। 'श्रद्धा त्वङ्गिरसः पत्नी चतस्रोऽसूत कन्यकाः। सिनीवाली कुहुराका चतुर्थ्यनुमतिस्तथा'—इति भागवते (४।१।२९)। कोकिलालापः; 'केना-श्रावि पिकानां कुहं विहायेतरः शब्दः'—इति आर्या-सप्तशती (६३०)। ११२

कूटः पुं. — क्ली. [ कूट + घञ् ] पर्वतशृङ्गम्; 'अद्रीणा-मिव कूटानि धातुरक्तानि शेरते'—इति महाभारते आनुशासनिके। भग्नशृङ्गपण्डः ( २६७ ) ; कैतवम् ( ७०९ ) ; 'वाचः कूटं तु देवर्षेः स्वयं विममृशुधिया।' तद्वति त्रि. 'न कूटेरायुर्धैर्हन्वात् युज्यमानो रणे रिपून्'—इति मनुः ( ७।९० ) । त्रि. मिथ्याभूते; 'द्विगुणा वान्यथा ब्रूयुः कूटाः स्युः पूर्वसाक्षिणः'—इति याज्ञ-वल्क्यः। पुरद्वारम्; 'इयं कूटे मनुष्येन्द्र ! गहने महती शमी। भीमशोखा दुरारोर्हा इमशानस्य समीपतः'—इति महाभारते ( ४।५।१४ ) । अग्रभागमात्रम्; 'किरो-टकूटैर्ज्वलितं शृङ्गारं दीप्तकुण्डलम्।' 'स वज्रकूटाङ्ग-निपातवेगविशीर्णकुक्षिः स्तनयन्नुदन्वान्। उत्सृष्ट-दीर्घोमिभुजैरिवार्तः चुक्रोश यजेस्वर ! पाहि मेति'—इति भागवते ( ३।१३।२९ ) । निश्चलः; राशिः; 'अत्रकूटाश्च दृश्यन्ते, बहवः पर्वतोपमाः'—इति रामायणे ( १।१४।१५ ) । लौहमृद्गरः;—'एतं त्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव। संपरेतमयकूटैश्छि-

न्दन्त्युत्थितमन्यवः—इति भागवते (४।२।५।८)। माया; नैव धर्मेण तद्राज्यं नार्जवेन न चीजसा। अक्षकूटमधि-  
प्टाय हतं दुर्योधनेन नै—इति महाभारते वनपर्वणि।  
तुच्छः; सीरावयवः; यन्त्रम्; 'वागुराभिश्च पाशैश्च  
कूटैश्च विविधैस्तथा—इति रामायणे। अनृतम्; पुं-  
-स्त्री। [ कूटयते दातुं न शक्यते स्थावरत्वादिति। कूट  
अप्रदाने + कर्मणि घञ् ] गृहम्; पुं. [ कूटयति दग्धी-  
करोति शापप्रभावेण सापराधान् इति। कूट दाहे +  
णिच् + अच् ] अगस्त्यमुनिः। १६६

कूटयन्त्रम् क्ली. [ आमिषं दत्त्वा मृगपक्षिवन्धनार्थं यत्  
सन्धानयन्त्रं निवेश्यते तत् ] उन्माथः। ७८२

कूपः पुं. [ कु ईषत् आपो यत्र। 'ऋकूपूरित्य। यद्वा  
कुवन्ति मण्डूकाः अत्र। 'कुपुम्पाञ्च' इति प दीर्घश्च ]  
जलाधारविशेषः; अन्वुः; प्रहिः; उदपानम्; अवटः;  
कोट्टारः; कातः; कर्तः; वज्रः; काटः; खातः; अवतः;  
क्रिविः; सूदः; उदतः; ऋष्यदात्; कारोतरात्; कुशेषः;  
केवटः; 'भूमौ स्यातोऽल्पविस्तारो गम्भीरो मण्डला-  
कृतिः। बद्धोऽबद्धः स कूपः स्यात्तदम्भः कौपमुच्यते'  
—इति भावप्रकाशः। गर्तः; गुणवृक्षः; नदीमध्य-  
स्थितो वृक्षः पर्वतो वा; कूपकः; नौकागुणवन्धनस्तम्भः;  
'मस्तूल' इति भाषा। मृन्मानम्। ६८४

कूपकः पुं. [ कूपे गर्ते कायते प्रकाशते इति। कै + क ]  
गुणवृक्षः; नौकागुणवन्धनस्तम्भः; तैलपात्रं; 'कुप्पा'  
इति भाषा। कुकुन्दरम्; उदपानं; चिता; शुष्कनद्यादौ  
जलार्थं कृतो गर्तः। ६५५

कूरः पुं. [ वेञ् तन्तुसंताने + भावे क्विप्, ऊः। कौ  
भूमौ उत्रं वयनं लाति गृह्णातीति, ला + क, लस्य रः ]  
भक्तम्। ३१९

कूर्चकः पुं. [ कुरति, कुर शब्दे, बाहुलकाच्चट्, संज्ञायां  
क। कूर्च विकारे (आकृतिगणत्वात्) ष्वल् वा ]  
ध्वजोपरिभागस्थमलङ्करणम्। ४५८

कूर्चिका स्त्री. [ कूर्चः तद्वदाकारः अस्त्यस्याः। कूर्च +  
ठर् ] क्षीरविकृतिः; 'दव्ना सह च यत् पक्वं क्षीरं सा  
दधिकूर्चिका। तत्रेण पक्वं यत् क्षीरं सा भवेत्तक्र-  
कूर्चिका—इति भरतः। 'कूर्चिका विकृता भक्ष्या  
गुरत्रो नातिपित्तलाः—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ४६  
अध्याये। सूचिका; तूलिका; 'तूली' इति भाषा।

कुड्मलः; 'कली' इति भाषा। कुञ्जिका; कुञ्चिका।  
'कुञ्जी' इति भाषा। ३२४

कूर्पम् क्ली. [ कुरं पाति, कुर + पा + क ] भ्रूह्यमध्यस्थ-  
लम्। अस्मिन्नर्थे अमरमते कूर्चशब्दः। ५२०

कूर्परः, कूर्परः पुं. [ कुप् क्रोधे, बाहुलकादरन्, पृषो-  
दरादिः ] कफोणिः; जानु। ५३३

कूर्पासः पुं. [ कूर्परे शरीरे अस्यते आस्ते वा। अस् + घञ्,  
पृषोदरादित्वात् साधुः ] अर्द्धचोलकः; कूर्पासकः;  
कञ्चुकः; वारवाणः; कूर्पासः; 'चोली' इति भाषा।  
'प्रस्वेदवारिसविशेषविषवतमङ्गे कूर्पासकं क्षतनखक्षत-  
मुत्क्षिपन्ती—इति माघे (५।२३)। ५५२

कूर्मः पुं. [ कु कुत्सितः ईषद् वा ऊर्मिः वेगो यस्य, के जले  
ऊर्मियस्येति वा। पृषोदरादित्वात् साधुः ] जलजन्तु-  
विशेषः; कच्छपः; कमठः; पञ्चनखः; गुह्यः; पञ्च-  
गुप्तः; पीवरः; जलगुल्मः। 'यदा संहरते चायं कूर्मोऽ-  
ङ्गानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा  
प्रतिष्ठिता—इति भगवद्गीता (२।५८)। परमेश्वरः;  
'परमेश्वरेणेदं सकलं जगत्क्रियते तस्मात् तस्य कूर्म  
इति संज्ञा—इति ऋग्वेदभाष्योपक्रमणिकायां दयान-  
न्दः। प्रजापतेरवतारविशेषः; 'स यत् कूर्मो नाम  
एतद्वा रुरं कृत्वा प्रजापतिः प्रजाः असृजत् यदसृजता-  
करोत्तद् यदकरोत् तस्मात् कूर्मः कश्यपो वै कूर्मस्तस्मा-  
दाहुः सर्वाः प्रजाः काश्यप्य इति—इति शतपथब्राह्मणे  
(१।५।१।५)। वायुविशेषः; 'उन्मीलने स्मृतः कूर्मो  
भिन्नाञ्जनसमप्रभः—इति शारदातिलकटीका। मुद्रा-  
विशेषः; 'कूर्मपृष्ठसमं कुर्यादक्षपाणिं च सर्वतः।  
कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि—इति तन्त्र-  
सारः। आसनविशेषः; 'गुदं निरुह्य गुल्फार्थ्यां  
व्युत्क्रमेण समाहितः। कूर्मासनं भवेदेतदिति योग-  
विदो विदुः—इति हठयोगदीपिकायाम्। समुद्र-  
मन्थनकाले मन्दरपर्वतधारणार्थं कच्छपरूपभगवद-  
वतारविशेषः; 'क्षीरोदमध्ये भगवान् कूर्मरूपी स्वयं  
हरिः—इति पद्मपुराणे। 'विलोक्य विघ्नेशविधिं तदे-  
श्वरो दुरन्तवीर्योऽवितयाभिसन्धिः। कृत्वा वपुः  
काच्छपमद्भुतं महत् प्रविश्य तोयं गिरिमुज्जहार—इति  
भागवतम्। कश्यपपत्न्याः कद्रवाः पुत्रेषु एकः; नाग-  
विशेषः 'शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तस्यकश्च भुजङ्गमः।



कूर्मश्च कुलिकश्चैव काद्रवेयाः प्रकीर्त्तिताः—इति  
महाभारते (१६।५।४१) । ६५६

कूलम् क्ली. [ कूलति जलप्रवाहम् आवृणोतीति । कूल् +  
अच् ] नद्याः जलसमीपस्थानं; रोधः; तीरं; तटं;  
प्रतीरं; तटः; तटी; रोधं; वेला । 'इत्यध्वनः  
कैश्चिदहोभिरन्ते कूलं समासाद्य कुशः सरयवाः'—इति  
रघुवंशे (१६।३५) । [ कूलयते आत्रियतेऽसौ । कूल् +  
घञर्थे क ] स्तूपः; सैन्यपृष्ठं; तडागः । ६६७

कूलदेशः पुं. [ कूलस्य देशः ] तीरप्रान्तदेशः । ६५४  
कूलङ्कषा स्त्री. [ कूलानि कषति, कूल + कष् + 'सर्व-  
कूलाभ्रे' ति खश्, मूम्, कूलङ्कष + टाप् ] नदी; 'व्यपदेश-  
माविलयितुं समीहसे माञ्च नाम पातयितुम् । कूलङ्क-  
षेव सिन्धुः प्रसन्नमोघं तटतश्च'—इति शाकुन्तले  
५ अङ्के । ६६५

कूवरः पुं.- स्त्री. [ कु शब्दे + वरच् ] युगन्धरः; यत्र  
रथस्य यूपकाष्ठमासज्यते सः । 'हिमचन्द्रमसम्बाधं  
वैदूर्यमणिकूवरम्'—इति रामायणे (३।१८।३०) ।  
रथमित्यर्थः । विकृतपृष्ठः; 'कुवडा'—इति भाषा । ४४७

कूवरी. स्त्री. [ कूवर + गौरादित्वाद् डीष् ] कम्बला-  
च्छादितरथः । भुग्नपृष्ठवती स्त्री; कुब्जा । ४४४

कूष्माण्डः पुं. [ कु ईषत् ऊष्मा अण्डेषु बीजेषु यस्य ]  
कूष्माण्डकः; ककरिः; घृणावासः; तिमिषः; ग्राम्य-  
कर्कटी; पुष्पफलः । गणदेवताविशेषः; 'कूष्माण्डा-  
कारत्वात् शिवगणोऽपि तन्नाम्नाख्यायते; 'अन्ये च  
ये प्रेतपिशाचभूतकूष्माण्डयादोमृगपक्ष्यवीशाः'—इति  
भागवते (२।६।४२) । ऋषिविशेषः; 'कूष्माण्डो राज-  
पुत्रश्चेत्यन्ते स्वाहा समन्वितैः'—इति याज्ञवल्क्यः ।  
यजुर्मन्त्रविशेषः;—'कूष्माण्डैर्वापि जुहुयाद् घृतमग्नी  
ययाविधि'—इति मनुः (८।१०६) । 'कूष्माण्डमन्त्राः  
'यद्देवा देवहेलनमि' त्येवमादयः । तैर्मन्त्रदेवतायै घृत-  
मग्नी जुहुयात्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । २०९

कृकलाशः पुं. [ कृकं कण्ठं लासयति शोभायुक्तं करोति ।  
कृक + लस् + णिच् + अच् । पृथोदरादित्वात् तालव्य-  
शकारः ] कृकलासः; सरटः । २३४

कृकलासः पुं. [ कृकं कण्ठं लासयति शोभान्वितं करोति ।  
कृक + लस् + णिच्, अच् ] जन्तुविशेषः; सरटः;  
वेदारः; कृकचपात्; तूणाञ्जनः; प्रतिसूर्यः; प्रतिसूर्य-

शयानकः; वृत्तिस्थः; कण्टकागारः; दुरारोहः; द्रुमा-  
श्रयः; कृकलासः; सूर्यवंशोद्भवो नृगनामको राजा  
ब्रह्मगोहरणेन कृकलासत्वं गतस्तद्विवरणं महाभारते  
(१३।७० अध्याये) । २३४

कृकवाकुः पुं. [ कृकेन गलेन वक्ति । 'कृके वचः कश्च'  
इति कृकशब्द उपपदे वच् धातोः वृण् कश्चान्तादेशः ]  
कुक्कुटः; 'अनुनयमगृहीत्वा व्याजसुप्ता पराची स्तमथ  
कृकवाकोस्तारमाकर्ण्य कल्पे'—माघे (१।१९) । मयूरः;  
सरटः । २४७

कृकाटिका स्त्री. [ कृकंकण्ठम् अटति आप्नोति, कण्ठं  
व्याप्यास्तीति भावः । कृक + अट् + ण्वल्, टाप् अत  
इत्वं च ] घाटा; 'घाटी' इति भाषा । 'जत्रूर्ध्वमर्माणि  
चतस्रो धमन्योऽष्टौ मातृका द्वे कृकाटिके'—इति  
सुश्रुते । 'जानुकूर्परसीमन्ताधिपतिगुल्फमणिबन्धकुकुन्दरा-  
वर्तकृकाटिकाश्चेति सन्विमर्माणि ।' ५२५

कृच्छ्रम् क्ली. [ कृन्तति सुखम् । कृती छेदने, 'कृतेश्छः  
कृच' इति रक् छश्चान्तादेशः ] कष्टम्; 'नदीकूलं यथा  
वृक्षो वृक्षं वा शकुनिर्यथा । तथा त्यजन्निमन्देहं कृच्छ्राद्-  
ब्राह्माद्विमुच्यते'—इति मनुः (६।७८) । 'सितोपला  
वा समयावशूका कृच्छ्रेषु सर्वेष्वपि भेषजं स्यात् ।  
रेतोविघातप्रभवे तु कृच्छ्रे समीक्ष्य दोषं प्रतिकर्म  
कुर्यात्'—इति चरके चिकित्सास्थाने २६ अध्याये ।  
तद्वति त्रि. [ कृन्तत्यनेन पापमिति ] सान्तपनादि-  
व्रतम्; 'गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ।  
जग्ध्वा परेह्ययुपवसेत् कृच्छ्रं सान्तपनं चरन्'—इति  
स्मृती । व्रते पुंल्लिङ्गोऽप्ययम् । पापं; मूत्रकृच्छ्ररोगः;  
व्यसनम्; 'अनृतं नोक्तपूर्वं मे चिरं कृच्छ्रेऽपि तिष्ठता ।  
धर्मलोपपरीतेन न च वक्ष्ये कथञ्चन'—इति रामयणे  
(४।१४।१४) । ८२६

कृतम् क्ली. [ क्रियते सत्यमेवानुष्ठीयतेऽस्मिन्, यद्वा  
क्रियते सत्ये स्थाप्यते लोको यत्र । कृ + क्त ] पर्याप्तम्;  
अलमर्थः; 'अथवा कृतं सन्देहेन'—इति शाकुन्तले  
१ अङ्के । सत्ययुगम्; 'कृतत्रेतादिसर्गेण युगाख्यां  
ह्येकसप्ततिः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।४३) । फलम्;  
पुं. वसुदेवस्य रोहिण्यां जातः पुत्रविशेषः; 'बलं गदं  
सारणं च दुर्मदं विमलं ध्रुवम् । वसुदेवस्तु रोहिण्यां  
कृतादीनुदयादयत्'—इति भागवते (९।२।४।४६) । ७८९

**कृतकर्मा** [ न् ] त्रि. [ कृतं कर्म येन सः ] कार्यक्षमः; प्रवीणः; शिक्षितः; निष्णातः; निपुणः; दक्षः; कृत-हस्तः; कृतमुखः; कुशलः; चतुरः; अभिज्ञः; विज्ञः; वैज्ञानिकः; पटुः; छेकः; विदग्धः; कृती; 'अथवा-प्यहमेवैनं हनिष्यामि वृकोदर। कृतकर्मा पश्चिन्तः साधु तावदुपारम'—इति महाभारते (१।१५५।२९)। पुं. विष्णुः; 'इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः'—इति महाभारते (१३।१४९।९७)। ३३५।

**कृतपुङ्खः** त्रि. [ कृतः अम्यस्तः पुङ्खः पुङ्खयुक्तो वाणो येन ] वाणशिक्षाविचक्षणः; कृतहस्तः; सुप्रयोगविशिवः। ४७१

**कृतमालः** पुं. [ कृता माला अस्य। मालावदुत्पन्नप्रसून-त्वादस्य तथात्वम् ] आरग्वधवृक्षः; कर्णिकारवृक्षः; स तु लघ्वारग्वधः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहश्च तुरङ्गुलः। आरग्वधोऽथ शम्पाकः कृतमालः सुवर्णकः'—इति वैद्यक-रत्नमालायाम्। 'आरग्वधो राजवृक्षः सम्पाकश्चतुरङ्गुलः। प्रग्रहः कृतमालश्च कर्णिकारोऽश्वातकः'—इति चरके कल्पस्थानेऽष्टमेऽध्याये। १९८

**कृतमुखः** त्रि. [ कृतं संस्कृतं मुखं यस्य ] कृतकर्मा; कृती। ३३५

**कृतहस्तः** त्रि. [ कृतः अम्यस्तः हस्तः वाणादिनिक्षेप-लाघवरूपा शिक्षा येन सः ] कृतपुङ्खः; सुशिक्षित-शरमोक्षयोधादिः; 'अप्राप्तांश्चैव तान् पार्थश्चिच्छेद कृतहस्तवत्'—इति महाभारते (४।५६।२०)। ३३५

**कृतान्तः** पुं. [ कृतः अन्तः नाशः शास्त्रनिर्णयः विपर्ययो वा येन। यथायथं व्युत्पत्तिर्दर्शनीया ] सिद्धान्तः; 'पञ्चेमानि महाबहो कारणानि निबोध मे। साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्'—इति भगवद्-गीतायाम् (१।४।१३)। यमः (७।१); 'ऐश्वर्ये वा सुविस्तीर्णे व्यसने वा सुदाहणे। रज्ज्वेव पुरुषो बध्वा कृतान्तेनोपनीयते'—इति रामायणे (५।३५।३)। दैवं; पूर्वदेहकृतं फलोन्मुखीभूतं शुभाशुभकर्म; अकुशलकर्म; शनिवारः; 'कृतान्तकुजयोरिः यस्य जन्मदिनं भवेत्'—इति तिथितत्त्वे। यमदैवत्यभरणीनक्षत्रम्। तेन द्वित्वसङ्ख्या। १०

**कृतान्निषेका** स्त्री. [ कृतः राज्ञा सह-अभिषेकः यस्याः ] महिषी; पट्टराज्ञी। ४८०

**कृती** [ न् ] त्रि. [ कृतं कर्म प्रशस्तमस्यास्तीति। अत इति ] निपुणः; पण्डितः; साधुः; पुण्यवान्; कृतक्रियः; 'गृहाण शस्त्रं यदि सर्ग एष ते नखल्वनिर्जित्य रघुं कृती भवान्'—इति रघुवंशे (३।५१)। ३३३

**कृत्तिः** स्त्री. [ कृत्यते-इति, कृत् + कर्मणि क्तिन् ] त्वक्; कृष्णसारादिचर्म; 'पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममर-गणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्'—इति महादेवध्याने। भूर्जः; कृत्तिकानक्षत्रम्। ६३०

**कृत्तिकाः** स्त्री. [ कृन्तन्ति उग्रत्वात्। कृत् + कृत्तिभिदि-लतिभ्यः कित् इति तिकन् किञ्च ] (एकत्वे) अश्विन्यादि-रुप्तविशत्यन्तर्गततृतीयनक्षत्रम्; बहुला; अग्निदेवा; कृत्तिः। 'क्षुधाधिकः सत्यधनैर्विहीनो वृथादनोत्पन्न-मतिः कृतघ्नः। कठोरवाक् चाहितकर्मकृत् स्यात् चेत्कृत्तिकायां मनुजः प्रसूतः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ५०

**कृत्तिवासाः** [ स् ] पुं. [ कृत्तिर्गजासुरस्य चर्म वासोऽस्य ] शिवः; शङ्करः। [ कृत्तिवासः—इत्यकारान्तपक्षे कृत्ति वसते इति, वस् आच्छादने, 'कर्मष्यण्' ]। १६

**कृत्स्नम्** क्ली. [ कृत् + कृत्स्नप्रत्ययः ] सर्वम्; 'तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा। अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१।१३)। कुक्षिः; जलम्। ७।१३

**कृपणः** त्रि. [ कल्पते स्वल्पमपि दातुम्, कृप् + बाहुल-कात् क्युन्, अत एव न लत्वम् ] अदाता; कदर्यः; किम्प-चानः; मितम्पचः; क्षुद्रः; किम्पचः; अनमितम्पचः; मन्दः; कीकटः; कुमुत्; कीनाशः; 'दाता लघुरपि सेव्यो भवति न कृपणो महानपि समृद्ध्या। कूपोऽन्तः स्वाद्गुलः प्रीत्यै लोकस्य न समुद्रः'—इति पञ्चतन्त्रे (२।७५)। 'दातारं कृपणं मन्ये मृतोऽप्यर्थं न मुञ्चति'—इति व्यासः। दीनः; 'ततः स पुरुषव्याघ्रस्तद्धनं सहलक्ष्मणः। द्विजैर्म्यो बालवृद्धैर्म्यः कृपणैर्म्यो ह्यदाप-पयत्।' पारिभाषिक कृपणानाह—महाव्यसनप्राप्तो दीनः; 'आदितः कृशवृत्तिर्यः कृपणो न स राघव! महात्मा व्यसनं प्राप्तो दीनः कृपण उच्यते'—इति रामायणे (४।२१।१९)। यो हि अक्षरं ब्रह्म अविज्ञाय लोकान्तरगामी भवति सः—'यो वा एतदक्षरमविदित्वा गाग्र्यस्माल्लोकात् प्रीतिं स कृपणः'—इति बृहदारण्यके याज्ञवल्क्यः। दुहिता हि कृपापात्रत्वात् कृपणा;

'भ्राता ज्येष्ठः समः पित्रा भार्या पुत्रः स्वका तनुः ।  
छाया स्वी दासवर्गश्च दुहिता कृपणं परम्—इति  
मनुः (४।१८५) । कुत्सितः; पुं. कृमिः । ३४७  
कृपा स्त्री. [ कृपेः सम्प्रसारणञ्चेति भिदादिपाठादङ्  
टाप् च ] कृपा; दया; 'उवाच भीमं कल्याणी कृपा-  
न्वितमिदं वचः—इति महाभारते । ७२४  
कृपाणः पुं. [ कृपां नुदति प्रेरयति हूरीकरोतीत्यर्थः ।  
कृपा + नुद् प्रेरणे + 'अन्त्येभ्योऽपीति' ड, पूर्वपदादिति  
णत्वम् ] खड्गः; कृपाणकः; 'जघान दैत्यमतिरवत-  
लोचना कृपाणपाशाङ्कुशशूलपट्टिशैः—इति कालिका-  
पुराणे । ४७२  
कृपाणी स्त्री. [ कृपाण + गौरादित्वाद् डीष् ] कर्तरी;  
छुरिका; कृपाणिका । ५९५  
कृपीटम् क्ली. [ कृप + 'कृतकृपिभ्यः कीटन्' इति कीटन्,  
बाहुलकात् लत्वाभावः ] उदरं; जलं; विपिनम्;  
इन्धनम् । ८२७  
कृपीटयोनिः पुं. [ कृपीटरय जलस्य योनिः कारणम्,  
'वायोरग्निरग्नेरायः—इति श्रुतौ । यद्वा कृपीटं काष्ठं  
योनिरुत्पत्तिस्थानं यस्य ] अग्निः; वह्निः । ६३  
कृमिः पुं. [ कामतीति, क्रमु पादविक्षेपे + 'कमितमिशति-  
स्तम्भामत इच्च' इति इन् 'अमेः सम्प्रसारणञ्च' इति  
अनुवृत्तेः सम्प्रसारणं च ] कीटः; नीलाङ्गः; नीलाङ्गुः;  
क्रिमिः; पुण्ड्रः । (८२३) लाक्षा; कृमिलः; खरः;  
उदरजातकीटरोगः । 'बदरीकारवीमूलं गुडाज्येन  
समन्वितम् । अग्निना साधितं जग्ध्वा कृमीन्सर्वान्  
हरेच्छिव—इति गारुडे १९४ अध्यायः । 'क्षीराणि  
मांसानि घृतानि चैव दधीनि शाकानि च पर्वन्ति ।  
समासतोऽम्लान् मवुरान् हिमांश्च कृमीन् जिघांसुः  
परिवर्जयेत्—इति सुश्रुते उत्तरतन्त्रे ५४ अध्यायः । ६३६  
कृशः त्रि. [ कृश् धातोः क्त प्रत्यये 'अनुपसर्गात्कुल्लक्षा-  
वेति' निपातनात् साधुः ] सूक्ष्मः; क्षीणः; 'व्यायाममति-  
सौहित्यं क्षुत्पिपासामथीपथम् । कृशो न सहते तद्वदति-  
शीतोष्णमैथुनम् ।' 'प्लीहा कासः क्षयः श्वासो गुल्मा-  
र्शास्युदराणि च । कृशं प्रायोऽभिधावन्ति रोगाश्च  
ग्रहणीमुखाः—इति चरके सूत्रस्थाने २१ अध्याये ।  
अल्पः; आकाशेशाश्च विज्ञेया वालवृद्धकृशापुराः'  
—इति मनुः (४।१८४) । मक्षमः; 'क्षयिर्यं चैव सर्प

च ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम् । नावमन्येत वै भूष्णुः कृशानपि  
कदाचन—इति मनुः (४।१३५) । पुं. विष्णुः (सर्वाका-  
रवत्वात्); 'अणुवृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो  
महान्—इति महाभारते (१३।१४९।१०३) । मुनि-  
पुत्रविशेषः; स तु परीक्षिच्छापप्रदानुः शृङ्गणः सखा;  
'स तं कृशमभिप्रेक्ष्य सूनृतां वाचमुत्सृजन् । अपृच्छत्  
कथं तातः स मेऽद्य मृतधारकः—महाभारते (१।४१।  
२) । ऐरावतकुलोत्पन्नो नागविशेषः; 'पारावतः पारि-  
जातः पाण्डरो हरिणः कृशः । ऐरावतकुलादेते प्रविष्ठा  
हव्यवाहनम्—इति महाभारते आस्तीकपर्वणि  
(५७।११) । ७१७  
कृशानुः पुं. [ कृश्यति तनुकरोति तृणकाष्ठादिवस्तु-  
जातमिति । 'ऋतन्यञ्जीति' आनुक् प्रत्ययः ] अग्निः;  
'प्रदक्षिणप्रक्रमणात् कृशानोर्दक्षिणस्तन्मिथुनं चकाशे'  
—इति रघुवंशे (७।२४) । चित्रकवृक्षः । [ पृषोदरा-  
दित्वात् पत्वे कृपाणुः इत्यपि ] । ६२  
कृशाश्वी [ न् ] पुं. [ कृशाश्वेन धुन्धुमारवंश्यनुपविशेषेण  
प्रोक्तं नाट्यसूत्रादिकम् अधीते वेत्ति वा । 'कर्मन्द  
कृशाश्वदिनिः—इति इनि ] नटः । ५९२  
कृषकः त्रि. [ कृपति भूमि यः; 'कृषेवृद्धिश्चोदीचाम्'  
इति क्वन् ] कृषिजीवी; कर्षकः; पुं. [ कृपति भूमि-  
मनेन इति करणे क्वन् ] फालः; वृषः । ५७४  
कृषिकः पुं. [ कृषत्यनेन, 'वृश्चिकृष्योः किकन्' इति  
किकन् ] कृषिजीवी; कर्षकः; फालः । ५७४  
कृषीबलः त्रि. [ कृषिरस्यप्रैस्त वृत्तित्वेन इति । 'रजः-  
कृष्यासुतिपरिपदो बलच्' इति बलच्, 'बले' इति दीर्घः ]  
कर्षकः; कृषिजीवी; 'कचिन्न चीरैर्लुब्धैर्वा कुमारीः  
स्त्रीबलेन वा । त्वया च पीडयते राष्ट्रं कच्चित्तुष्टाः  
कृषीबलाः—इति महाभारते (२।५।७७) । काक-  
जङ्घावृक्षः । ५७४  
कृष्टिः पुं. [ कृषत्यन्तंभुवं विद्यालोचनाभ्यासादिभिरसौ ।  
कृष् + कर्तरि क्तिच्, बाहुलकात् ति वा ] पण्डितः;  
यथा ऋग्वेदे (६।१८।२) 'बृहद्रेणुश्चपवनो मानुषीणा-  
मेकः कृष्टीनामभवत् सहावा ।' स्त्री. कर्षणे [ कृष् +  
भावे क्तिन् ] आकर्षणं; जनमात्रम्; 'विदवा नमन्त  
कृष्टयः—इति ऋग्वेदे (८।६।४) । 'कृष्टयः प्रजाः—  
इति भाष्यम् । ३३३

कृष्णः पुं. [ कर्षत्यरीन् महाप्रभावशक्त्या । यद्वा कर्षति  
 आत्मसात् करोति आनन्दत्वेन परिणमयति भक्तानां  
 मनः इति यावत् । 'कृषेर्वर्ण' इति बाहुलकात् वर्ण  
 विनापि न कृ णत्वं च । यद्वा कर्षति सर्वान् स्वकुक्षी  
 प्रलयकाले—'कर्षणात् कृष्णो रमणाद् रामो व्यापनाद्  
 विष्णुः' इति श्रुतेस्तथात्वम् ] भगवदवतारविशेषः—  
 'कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्चनिर्वृति वाचकः । कृष्णस्त-  
 द्भावयोगाच्च कृष्णो भवति सात्वतः'—इति महाभारते  
 (५।७०।५) । 'उच्चस्थाः शशिभौमचान्द्रिशनयो लग्नं  
 वृषो लाभगो जीवः सिंहतुलालिषु क्रमवशात् पूषोशनो-  
 राहवः । नैशीथः समयोऽष्टमी बुधदिनं ब्रह्मक्षमत्रक्षणे  
 श्रीकृष्णाभिधमम्बुजेक्षणमभूदाविः परं ब्रह्म तत् ।'—इति  
 खमाणिक्ये ज्योतिर्ग्रन्थे । 'अथ भाद्रपदे मासि कृष्णा-  
 ष्टम्यां कलौ युगे । अष्टाविंशतिमे जातः कृष्णोऽक्षी  
 देवकीसुतः'—इति ब्रह्मपुराणे । व्यासः; 'यो व्यस्य  
 वेदांश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः । लोके व्यासत्वमापेदे  
 काष्णात् कृष्णत्वमेव च ।'—इति महाभारते ( १।  
 १०५।१४) । शिवः; 'दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण  
 एव च'—इति महाभारते ( १।१०५।१४) । अर्जुनः;  
 (अयं तु तृतीयपाण्डवः; अस्य दशनामस्वन्यतमं नाम)  
 'कृष्णावदातस्य सदा प्रियत्वाद् बालकस्य वै । कृष्ण  
 इत्येव दशमं नाम चक्रे पिता मम'—इति महाभारते  
 ( ३।४२।२२) । [ कृष्णो वर्णोऽस्यास्तीति मतुवन्ताद्  
 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिति' लुक् ] कोकिलः; काकः;  
 [ कर्षति पापानि शरणागतानाम्, बाहुलकात् कृषेर्नक् वर्ण  
 विनापि णत्वं च ] परब्रह्म; 'कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य  
 वाचि प्रवर्तते । भस्मीभवन्ति राजेन्द्र ! महापातकको-  
 ट्यः'—इति पौराणिकी गाथायाम् । चन्द्र ह्लासकरप्रथ-  
 मादिपञ्चदशकलाक्रियारूपः; प्रतिपदादिदशान्तात्मकप-  
 ञ्चदशतिथ्यात्मकः कालभेदोऽद्वैतमासः; 'चन्द्रवृद्धिकरः  
 शुक्लः कृष्णश्चन्द्रक्षयात्मकः'—इति तिथितत्त्वे । कृष्णा-  
 पक्षाभिमानिदेवताविशेषः; 'धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः  
 पण्मासा दक्षिणायनम्'—इति भगवद्गीतायाम् । कृष्ण-  
 सारमृगः; 'धनुश्च सशरं दृष्ट्वा तथा कृष्णजिनानि  
 च'—इति महाभारते ( १।१३०।१५) । अशुभकर्म;  
 वेदोक्तसुरविशेषः; ऋषिविशेषः; अथर्ववेदान्तगर्वो-  
 पनिषद्विशेषः; 'गोपालतापनकृष्णहयग्रीवदत्तात्रेयगार-

डानामथर्ववेदगतानामेकत्रिंशत्सङ्ख्यकानाम् उपानषदां  
 भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः ।'—इति मुक्तिकोपनिषदि ।  
 करमदकः; कृष्णपाकफलः । ( ७३४ ) वर्णविशेषः;  
 कालवर्णः; नीलः; असितः; श्यामः; कालः; श्यामलः;  
 मेचकः; बहुलः; रामः; शितिः; तद्वति त्रि. । २१  
 कृष्णकाकः पुं.— द्रोणकाकः । २४६  
 कृष्णपाण्डुरः त्रि.— कन्माषः । ७३६  
 कृष्णभूमः पुं. [ कृष्णा कृष्णवर्णा भूमिर्मुक्तिका यत्र  
 देशे, समासे अच् ] कृष्णवर्णमृत्तिकायुक्तो देशः;  
 कृष्णमृत्तिकः । १६०  
 कृष्णमृत्तिकः पुं. [ कृष्णा मृत्तिका भूमिर्यत्र ] कृष्णभूमः ।  
 १६०  
 कृष्णमृत्तिका स्त्री. [ कृष्णा काली मृत्तिका भूमिः ]  
 कालमृत्तिका; श्लक्ष्णभूमिः । १६०  
 कृष्णला स्त्री. [ कृष्णल + टाप् ] गुञ्जा; 'साङ्गुष्ठा  
 कृष्णला गुञ्जा रक्तिका काकणन्तिका । काकादनी  
 काकतिक्ता कागकजड्धा शिखण्डनी'—इति वैद्यकर-  
 त्तमालायाम् । २०३  
 कृष्णवदन्नः पुं. [ कृष्णं कृष्णवर्णं वक्त्रं मुखं यस्य ]  
 वानरः; कृष्णवानरः; कालवानरः; गोलाङ्गूलः;  
 गौरास्यः; कपिः; कृष्णमुखः । २३२  
 कृष्णवर्णः त्रि.— कालवर्णः । ४३७  
 कृष्णवर्णोऽश्वः पुं.— कालहयः । ४३७  
 कृष्णवर्त्म [ न् ] पुं. [ कृष्णं कृष्णवर्णं वर्त्म यस्य,  
 वायुप्रसारितधूमपथाभ्यन्तरं एव गतिरस्येति भावः ]  
 अग्निः; वह्निः; 'हविषा कृष्णतर्मेव भूय एवाभिवर्धते'  
 —इति महाभारते ( १।८५।१२) । चित्रकवृक्षः;  
 [ कृष्णम् अपवित्रं कर्म आचरणं यस्य ] दुराचारः; राहुः;  
 [ कृष्णः वासुदेवः परब्रह्म इत्यर्थः वर्त्म गतिर्यस्य ]  
 ब्रह्मनिष्ठपुरुषः । ६३  
 कृष्णशारः पुं. [ कृष्णः शारः शवलश्च ] कृष्णसारमृगः;  
 'काला हिरन' इति भाषा । २३०  
 कृष्णसारः पुं. [ कृष्णश्चासौ सारः शवलश्चेति ] हरिण-  
 भेदः; कृष्णशारङ्गः; कृष्णवर्णमृगः । 'कृष्णसारस्तु  
 चरति मृगो यत्र स्वभावतः । स जेयो यजियो देशो म्लेच्छ-  
 देगस्ततः परः'—इति मनुः ( २।२३) । स्नुहीवृक्षः;  
 शिशपावृक्षः; खदिरवृक्षः । २३०

कृष्णा स्त्री. [ कृषर्नक् णत्वं ततः टाप् ] अग्नेः सप्त-  
जिह्वाभेदः । ६८

कृष्णा स्त्री. [ कृषर्नक् णत्वं ततः टाप् ] पिप्पली;  
'पिप्पली चपला शौण्डी वैदेही मागधी कणा । कृष्णोप-  
कुल्या मगधी कोला स्यात्तिक्ततण्डुला'—इति  
वैद्यकरत्नमालायाम् । द्रौपदी; पञ्चपाण्डवमहिषी;  
(कृष्णवर्णत्वादेव अस्या नाम तथा) 'कृष्णेत्येवान्नुवन्  
कृष्णां कृष्णाभूत् सा हि वर्णतः । तथा तन्मियुनं  
जज्ञे द्रुपदस्य महामखे'—इति महाभारते (१।१६८।  
४४) । नीलीवृक्षः; द्राक्षा; नीलपुनर्नवा; कृष्णजीरकः;  
गम्भारी; कटुका; सारिवाविशेषः; राजसर्पपः; पर्पटी  
काकोली; सोमराजी; द्वादशप्रकाराणां जलीकसां  
मध्ये सविषप्रकारीयजलीकोविशेषः; 'तास्वञ्जनचूर्ण-  
वर्णां पृथुशिराः कृष्णा'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने १३  
अध्याये । नदीविशेषः; दुर्गा । ६१४

क्लृप्तिकः त्रि. [ क्लृप्तं मल्यदानेन सत्त्वं देयत्वेनास्ति  
अस्य । क्लृप्त + ठन् ] क्रीतः । ५७३

केका स्त्री. [ के मूर्द्धि कायति शब्दायते, के + क + क,  
टाप्, अलुक्समासः । यद्वा 'अभ्येभ्योऽपीति' कर्मणि  
ङ, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक् ] मयूर-  
वाणी; 'षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डि-  
भिः'—इति रघुवंशे (१।३९) । २४२

केकी [ न् ] पुं. [ केका ध्वनिभेदः अस्यास्तीति । 'ब्री-  
ह्यादिभ्यश्चेति' इनि ] मयूरः; 'केकी केकां परित्यज्य  
मौनं तिष्ठति तद्भ्रूयात् । चकोरश्चन्द्रिकाभोक्ता नक्त-  
व्रतमिवास्थितः'—इति काशीखण्डे (३।७१) । २४१

केणिका स्त्री. [ के शिरसि कुत्सितो वा अणकः, ततः  
टाप्, अत इत्वम् । स्त्रीत्वं लौकिकम् ] पटकुटी; वस्त्र-  
गृहं; 'कनात्' इति भाषा । ४५१

केतनम् क्ली. [ कित् निवासाद्यर्थेषु + कर्मभावकरणा-  
धिकरणादिषु यथायथं ल्युट् ] ध्वजः; 'अपतुपारतया  
विशदप्रभैः सुरतसङ्गपरिश्रमनोदिभिः । कुसुमचापम-  
तेजयदंशुभिर्हिमकरो मकरोजितकेतनम्'—इति रघुवंशे  
(९।३९) । कार्यः; चिह्नः; निमन्त्रणम्; 'प्रतिगृह्य  
द्विजो विद्वान् एकोद्दिष्टस्य केतनम् । ग्रहं न कीर्तयेद्  
ग्रहं राज्ञो राहोश्च सूतके'—इति मनुः (४।११०) ।  
गृहम्; 'स त्वं धर्मपरो भूत्वा कश्यपाय वसुधराम् ।

दत्त्वा वनमुपागम्य महेन्द्रकृतकेतनः'—इति रामायणे  
(१।७४।८) । स्थानम्; 'एतद्वाजासनं सर्वभूभृतसंश्रय-  
केतनम्'—इति विष्णुपुराणे (१।११।९) । ४५८

केतुः पुं. [ चायते दूराद् ज्ञायते, चायृ + चायः किः'  
इति तुप्रत्ययः क्यादेशश्च ] रश्मिः; किरणः; 'उदुत्यं  
जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम्'  
(४९) । नवग्रहान्तर्गतग्रहविशेषः; राहोः शरीरं;  
शिखी; 'अर्द्धोनेन्द्रकंसौराराः पापाः सौम्यास्तथापरे ।  
पापयुक्तो बुधः पापो राहुकेतू च पापदौ' । ३९

केतुः पुं.—पत्नीका; 'सशोणितैस्तेन शिलीमुखाप्रैः निक्षे-  
पिताः केतुषु पाथिवानाम्'—इति रघुवंशे (७।६५) ।  
रोगः; दीप्तिः; उत्पातः; 'उल्कानिर्घातकेतूश्च ज्योतीं-  
ष्युच्चावचानि च'—इति मनुः (१।३८) । चिह्नम्;  
'तमार्यगृह्यं निगृहीतधेनुर्मनुष्यवाचा मनुवंशकेतुम् ।  
विस्माययन् विस्मितमात्मवृत्तौ सिंहोऽसत्त्वं निजगाद  
सिंहः'—इति रघुवंशे (२।३३) । सूर्यः 'प्रकेतुना वहता  
यात्यग्निः'—इति ऋग्वेदे (१०।८।१) । 'प्रारोचयन्  
मनवे केतुमह्नाम्'—इति ऋग्वेदे (३।३४।४) । ४५८

केदारः पुं. [ के जले दार आदरो यस्य, यद्वा केन जलेन  
द्रियते धिदीर्यते । कर्मणि घञ्, निपातनाद् एत्वम् ]  
क्षेत्रम्; 'क्यारी' इति भाषा । 'भूमावप्येककेदारे कालो-  
प्तानि कृषीवलयैः । नानारूपाणि जायन्ते बीजानीह  
स्वभावतः'—इति मनुः (९।३८) । क्षेत्रस्थक्षुद्र-  
जलाधारविशेषः; 'वृषः पिवति केदारे निश्वासा-  
कुलितं पयः'—इति रामायणे (३।२२।१८) । [ के-  
मस्तके शिखरदेशे द्वारः प्रस्रवणादिकारणस्वरूपविदीर्ण-  
स्थानम् अस्य ] पर्वतविशेषः; [ के मस्तके शिरः-  
स्थितजटाम्यन्तरे गङ्गारूपिणी दाराः पत्नी यस्य । सर्वत्र  
निपातनात् एत्वम् ] शिवः; भूमिभेदः; आलवालं;  
भूमध्यस्थानविशेषः; 'कालपाशमहाबन्धविमोचन-  
विचक्षणः । त्रिवेणीसङ्गमं धत्ते केदारं प्रापयेन्मनः'  
—इति हठयोगदीपिका (३।२४) । 'केदारभ्रुवोर्मध्ये  
शिवस्थानं केदारशब्दवाच्यं तं मनः स्वान्तं प्रापयेत्'  
—इति तट्टीका । तीर्थविशेषः; 'केदारे चैव राजेन्द्र,  
कपिलस्य महात्मनः । ब्रह्माणमधिगत्वा च शुचिः  
प्रयतमानसः । सर्वपापविशुद्धात्मात्र ह्यलोकं प्रपद्यते'  
—इति महाभारते (३।८३।६६) केदारनामकशिव-

लिङ्गभेदः; 'नमस्ते देवदेवेश ! प्रणमत्करुणानिधे ! ।  
वद केशरमाहात्म्यं भक्तेतानामनुकम्पया । तस्मिन्  
लिङ्गे सदा प्रीतिस्तव काश्यामनुत्तमा । तद्भक्ताश्च  
जना नित्यं देवदेव ! महाधियः'—इति काशीखण्डे  
७७ अध्याये । ५७४

**केयूरम् क्ली.**—पुं. [ के बाहुशिरसि भूषणतां याति ।  
या प्रापणे+ऊर, अलुकुसमासः ] अलङ्कारविशेषः;  
अङ्गदं; बाहुमूलविभूषणम्; 'पादानां भूषणानां च  
केयूराणां च सर्वशः । राशयश्चात्र दृश्यन्ते भीष्मभीम-  
समागमे'—इति महाभारते (६।६७।२१) । पुं.  
रतिबन्धविशेषः; 'स्त्रीजङ्घे चैव सम्पीडय दोर्म्या-  
मालिङ्ग्य सुन्दरीम् । कारयेत् स्थापनं कामी बन्धः  
केयूरसंज्ञकः'—इति स्मरदीपिका । 'स्त्रीणां जङ्घान्तरा-  
विष्टो गाढमालिङ्ग्य सुन्दरीम् । कामयेद्विपुलं कामी  
बन्धः केयूरसंज्ञकः'—इति रतिमञ्जरी । ५५७

**केलिः** पुं.—स्त्री. [ केल्+इन् परीहासः; द्रवः; क्रीडा;  
नर्म; लीला । नायिकालङ्कारविशेषः; 'विहारे सह  
कान्तेन क्रीडितं केलिरुच्यते'—इति साहित्यदर्पणे ।  
'मालत्याः कुसुमेषु येन सततं केलिः कृता हेत्या'—इति  
भ्रमराष्टके (४) । स्त्री. [ केलति सदा गच्छतीति,  
'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन् ] पृथिवी । ४३२

**केलिकिलः** पुं. [ केलिना लीलया किलतीति । किल्  
क्रीडायाम्+क ] नाट्ये नायकवयस्यः; विदूषकः;  
वासन्तिकः; वैहासिकः; प्रहासी; प्रीतिदः; कूष्मा-  
ण्डकः; शिवस्यानुचरविशेषः; [ केलिना परीहासेन  
किलतीति विग्रहे वाच्यलिङ्गः ] 'स तु केलिकिलो  
विप्रो भेदशीलश्च नारदः'—इति हरिवंशे । ४३२

**केवली** [ न् ] पुं. [ केवलं शुद्धं ज्ञानमस्यास्तीति । इनि ]  
जैनविशेषः; स्त्री. [ केवल+डीप् ] ज्ञानभेदः; ग्रन्थ-  
विशेषः । ८६

**केशः** पुं. [ के मस्तके शेते । शी+अच् । अलुकुसमासः ]  
चिकुरः; कुन्तलः; बालः; कचः; शिरोरुहः; शिरसिजः;  
मूढंजः; अस्त्रः; वृजिनः; 'वटावरोहकेशिन्योश्चूर्ण-  
नादित्यपाञ्चितम् । गुडूचीस्वरसेतलमम्यङ्गात्केश-  
रोहणम् ।' तत्समूहार्थवाचकः; 'बालाः स्युस्तत्परा  
पाशो रचनाभार उच्चयः । हस्तः पक्षः कलापश्च  
केशभूयस्त्ववाचकाः'—इति हेमचन्द्रः । [ कस्य जलस्य

ईशः ] वरुणः; ह्रीवैरम्; 'बालं ह्रीवैरर्वाहृष्टोदीच्यं  
केशोऽम्बुनाम च'—इति बंधंकरत्नमालायाम् । दैत्य-  
विशेषः; [ कस्य ब्रह्मणोऽपि ईशः । के जले शेते वा ]  
विष्णुः; [ काशते प्रकाशते लोके, लोकं काशयति वा ।  
काश्+अच्, पृषोदरादित्वाद् एत्वे साधुः ] सूर्याग्नि-  
प्रभृतिरश्मिः; परब्रह्मशक्तिः; 'ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-संज्ञाः  
शक्तयः केशसंज्ञिताः'—इति भागवते । ब्रह्मा; 'केशो  
योनी तथा भावे हावलावण्ययोरपि । लम्पटे पुरुषे  
चैव प्रमदाया विशेषतः ।' 'प्रजापतौ कचे चैव केशशब्दः  
प्रकीर्त्यते'—इति महाभारतटीकाकृष्णिलकण्ठः । ५३०

**केशघ्नम् क्ली.** [ केशं हन्ति नाशयतीति । हन्+टक् ]  
इन्द्रलुप्तकं, केशरोगः । ६०५  
**केशपक्षः** पुं. [ केशानां पक्षः समूहः, बाहुलकात् पक्षा-  
देशो वा ] केशपाशः; केशकलापः; केशसमूहः; 'उत्तरं  
तु प्रधावन्तमनुद्रुत्य धनञ्जयः । गत्वा शतपदं तूष्णं  
केशपक्षे परामृशत्'—इति महाभारते (४।३६।४१) ।

५३१  
**केशपाशः** पुं. [ केशानां पाशः समूहः ] केशसमूहः; 'पाशः  
पक्षश्च हस्तश्च कलापार्थाः कचात् परे'—इत्यमरः ।  
'तं केशपाशं प्रसमीक्ष्य कुर्युः बालप्रियत्वं शिथिलं चमयः  
—इति कुमारसम्भवे (१।४८) । ५३१

**केशमार्जकम् क्ली.** [ केशान् मार्ष्टि, केश+मृजूप् शुद्धौ+  
कर्तरि ण्वुल् ] कङ्कतिका; 'कंधी' इति भाषा । ३११  
**केशमार्जनम् क्ली.** [ केशा मृज्यन्तेऽनेन । केश+मृजू+  
करणे ल्युट्, वृद्धिश्च ] कङ्कतिका; [ भावे ल्युट् ]  
केशशोधनक्रियाभात्रं; केशशुद्धिः । ३११

**केशरः** पुं. [ केश इव केशाकृतिपदार्थः अस्यास्तीति,  
मत्वर्थीयो र ] नागकेशरवृक्षः; 'मदनमहीपतिकनक-  
दण्डरुचिकेशरकुसुमविकाशे'—इति गीतगोविन्दे  
(१।३१) । वकुलवृक्षः; 'सस्तां नितम्बादवलम्बमाना  
पुनः पुनः केशरदामकाञ्चीम्'—इति कुमारसम्भवे  
(३।५५) । पुत्रागवृक्षः; 'पलाशैस्तिलकैश्चूतैश्चम्पकैः  
पारिभद्रकैः । कर्णिकारैरशोकैश्च केशरैरतिमुक्तकैः'—  
इति महाभारते (१।१२५।३) । सिंहजटा; 'मृगपतिरिव  
स्कन्धावलम्बितकेशरमालः'—इति कादम्बर्याम् । हिङ्गु-  
वृक्षः; नीपः; 'नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केशरैरद्रुहैः'  
इति मेघदूते (२२) । २०६

केशरी [ न् ] पुं. [ केशराः सन्त्यस्य इति, इनि ] सिंहः ;  
 'स पाटलायां गवि तस्थिवासं वनुर्धरः केशरिणं ददर्श'—  
 इति रघुवंशे (२।२९) । घोटकः ; पुन्नागवृक्षः ; नाग-  
 केशरवृक्षः ; वीजपूरकवृक्षः । २१४  
 केशवः पुं. [ कः ब्रह्मा, ईशः रुद्रः तौ आत्मनि स्वरूपे वयति,  
 प्रलये उपाधिरूपमूर्तित्रयं मुक्त्वा एकमात्रपरमात्म-  
 स्वरूपेणावतिष्ठते इति । यथा भागवते (२।९।३३)  
 चतुःश्लोक्याम् । तथा केशं केशिनं वाति हन्ति, केश+  
 वा+क । यथा हरिवंशे (८०।६६) 'यस्मात्त्वया हतः  
 केशो तस्मान्मच्छाशनं शृणु । केशवो नाम नाम्ना त्वं  
 ख्यातो लोके भविष्यति ।' यद्वा के जले शववत् भातीति ।  
 प्रलयकाले क्षीरोदशाधितया तथात्वम् । कश्च अश्च  
 ईश्च ते केशाः ब्रह्मविष्णुरुद्राः नियम्यतया सन्त्यस्य ।  
 यद्वा कश्च ईशश्च तौ केशौ पुत्रपौत्रत्वेन भवतोऽस्य ।  
 'केशाद्दोऽन्यतरस्याम् ।' इति व प्रत्ययः । अथवा वाति  
 गच्छति तद्वत्तया, वा+क । स्वरूपतस्तेषां भेदाभावादपि  
 वासुदेवे सर्वात्मनि परमेश्वरेऽस्य वृत्तिः । यथा—  
 'नरसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ।'—इति  
 विष्णुसंहितायाम् । अभिरूपाः केशाः यस्य सः केशवः ।  
 कश्च अश्च ईशश्च केशास्त्रिमूर्तयस्ते वशे वर्तन्ते यस्य  
 सः । केशिदानं वहननाद्वा केशवः । यथा—'यस्मात्त्वयैव  
 दुष्टात्मा हतः केशो जनार्दन ! । तस्मात्केशवनाम्ना त्वं  
 लोके ज्ञेयो भविष्यति ।' केशसंज्ञिताः सूर्यादिसक्रान्ता  
 अंशवः तद्वत्त्वेन केशवो वा । 'अंशवो ये प्रकाशन्ते मम  
 ते केशसंज्ञिताः । सर्वज्ञाः केशवं तस्मात्प्राहुर्मां द्विज-  
 सत्तमाः ॥'—इति महाभारते । 'त्रयः केशिनः' इति  
 श्रुतेश्च ब्रह्मविष्णुशिवाख्या हि शक्तयः केशसंज्ञिताः ।  
 'मत्केशा वसुधातले' इति पुराणोक्तेः । तद्वान् केशवः ।  
 'को ब्रह्मेति समारुधात् ईशोऽहं सर्वदेहिनाम् । आवां  
 तवांशसम्भूतौ तस्मात्केशवनामवान्'—इति हरिवंशे ।  
 तेनास्य बहुवा निरुक्तिः ] विष्णुः ; केशिनिपूदनः ;  
 केशिसूदनः ; केशिहा ; केशी ; पुन्नागवृक्षः ; [ केशाः  
 प्रशस्ताः सन्त्यस्य, 'केशाद्वाऽन्यतरस्याम्' इति व ]  
 केशवति त्रि । जलस्थशवदेहः ; पानीयस्यमृतशरीरम् ;  
 'केशवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणा हर्षमुपागताः । रुदन्ति  
 पाण्डवाः सर्वे हा ! हा ! केशव ! केशव ! ।' ( के  
 जले शवं मृतदेहं पतितं दृष्ट्वा द्रोणाः काकाः हर्षं

प्राप्तदन्तः, किन्तु पाण्डवाः शृगालाः रुदन्ति चीत्कारं  
 कुर्वन्ति ) । २१  
 केशहस्तः पुं. [ केशानां केशस्य वा हस्तः समूहः । हस्ता-  
 दयश्च केशात् समूहार्थे ] केशसमूहः । ५३१  
 केसरः पुं. [ के वृक्षाक्षिरोऽत्रच्छेदे उच्छ्रितदेशे इत्यर्थः  
 सरति, सृ+अच् ] वकुलवृक्षः ; 'ललितविभ्रमवन्ध-  
 विचक्षणं सुरभिगन्धपराजितकेसरम्'—इति रघुवंशे  
 (९।३६) । नागकेशरवृक्षः ; तुरङ्गस्कन्धकेशाः ; 'विनी-  
 ताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः । दुधुवूर्वाजिनः  
 स्कन्धान् लग्नकुड्कुमकेसरान्'—इति रघुवंशे  
 (४।६७) । सिंहस्कन्धकेशाः ; 'व्याकीर्णकेसरकरालमुखा  
 मृगेन्द्रा नागाश्च भूरि मदराजिविराजमानाः'—इति  
 पञ्चतन्त्रे पुन्नागवृक्षः ; किञ्जल्कः ( ६८२ ) । २०६  
 केसरः पुं.—कली. [ के जले सरतीति, के+सृ+पचाद्यच्,  
 'हलदन्तादिति' अलुक् ] किञ्जल्कः ; हिङ्गुनि पुं.—  
 स्त्री. । [ के शीर्षते, शृ हिंसायाम्+ 'ऋदोरप्' इत्यन्वा,  
 ततः शकारमध्योऽपि ] ६८२  
 केसरी [ न् ] पुं. [ केसराः जटाः सन्त्यस्य, केसर+  
 इनि ] सिंहः ; घोटकः ; पुन्नागः ; नागकेशरः ; रक्त-  
 शिशुः ; वानरविशेषः ; हनूमत्पिता ; 'अहं केसरिणः  
 क्षेत्रे वायुना जगदायुना । जातः कमलपत्राक्ष ! हनूमान्  
 नाम वानरः'—इति महाभारते (३।१४७।२७) ।  
 'सूर्यदत्तवरः स्वर्णः सुमेरुर्नाम पर्वतः । यत्र राज्यं  
 प्रशास्त्यस्य केसरी नाम वै पिता'—इति रामायणे  
 ( ७।४०।१९ ) । २१४  
 कैटभारिः पुं. [ कैटभासुरस्य अरिः शत्रुः । पक्षे कैटभस्य  
 तमसः अरिर्दमयिता । सगुणावस्थायामपि ईश्वरस्य  
 विष्णोः सत्त्वगुणप्राधान्यात् तथात्वम् ] विष्णुः । २५  
 कैतवम् क्ली. [ कितवस्य भावः कर्म वां, युवादित्वाद्यण् ]  
 कपटः ; द्यूतम् ; वैदूर्यमणिः ; [ कितवस्य भावः ] कपटता ;  
 'धर्मः प्रोज्जितकैतवोऽत्रपरमो निर्मत्सराणां सतां वेद्यं  
 वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनम्'—इति भाग-  
 वते ( १।२।२ ) । ७०९  
 कैरवम् क्ली. [ के जले रीति कलनादं करोतीति । र+  
 अच्, कैरवः हंसः, तत्पुरुषे कृतीत्यलुक्, तस्य प्रिय-  
 मित्यण् ] कुमुदं ; श्वेतोत्पलम् ; 'पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुति-  
 ज्योत्स्नाः प्रकाशिताः । नृचुदिकैरवाणां च कृतमेत-

स्प्रकाशनम्—इति महाभारते (१।१।८६)। पुं. [ कुत्सितो रवो यस्य, स एव, स्वार्थे अण् पृषोदरादित्वाद् औकारस्य ऐकारत्वम् ] शत्रुः; कितवः। ६८१

**कैरविणी** स्त्री. [ कैरव+पुष्करादित्वाद् इनि, ततो डीप् ] कुमुदिनी; [ कैरवाणि सन्त्यस्याम् इति, इनि डीप् च ] कुमुदयुक्ता पुष्करिणी। ६८३

**कैवर्तः** पुं. [ के जले वर्तते, वृत्+अच् अलुक्समासः, ततः स्वार्थे अण् ] वर्णसङ्करजातिविशेषः; वैश्यागर्भे क्षत्रियस्यौरसजातः; दाशः; दासः; धीवरः; दाशेरकः; जालिकः; कैवर्तकः; मत्स्यबन्धी; 'निषादो मार्गवं सूते दाशं नौकर्म जीविनम्। कैवर्तमिति यं प्राहुरायौवर्तनिवासिनः'—इति मनुः (१०।३४)। ५९४

**कैवल्यम्** क्ली. [ केवलस्य सर्वोपाधिर्वजितस्य भावः इति। केवल+प्यञ् ] मुक्तिः; 'यदाज्ञयैव कैवल्यं विनोपायैः प्रजायते। तमेकमजमीशानं चिदानन्दमयं-स्तुमः।' कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'कठवल्ली-तैत्तिरीयकन्नह्यकैवल्यस्वेताश्वतरेत्युपक्रम्यकृष्णयजुर्वेदग-तानां द्वाविंशत्सहस्रयकानामुपनिषदां सहनाववत्त्विति शान्तिः'—इति मुक्तिकोपनिषदि। १२४

**कोकः** पुं. [ कोकते आदत्ते क्षुद्रपशून् इति। कुक् आदाने+पचाद्यच् ] वृकः; 'वने यूथपरिभ्रष्टा मृगी कोकै-रिवादिता'—इति रामायणे (५।२।१९)। चक्रवाकः (२४४); 'कोकानां करुणस्वरेण सदृशी दीर्घा मदं-भ्यर्चना'—इति गीतगोविन्दे (५।१७)। ज्येष्ठी; खजूरोवृक्षः; भेकः; विष्णुः। २२८

**कोकनवम्** क्ली. [ कोकान् चक्रवाकान् नदति नादयति वात्मविकासेन। कोक+नद+अन्तर्भावितष्यन्तादच्, मूलविभुजादित्वात् क वा ] रक्तकुमुदः; रक्तपद्मः; रक्तराजीवम्; 'रक्तं कोकनदं पद्ममल्पमन्यदलोहितम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'नीलनलिनाभमपि तन्वि ! तव लोचनं धारयति कोकनदरूपम्'—इति गीतगोविन्दे (१०।५)। ६८०

**कोकिलः** पुं. [ कुक् आदाने+मलिकल्पनिमहिभडि-भण्डिशण्डिपिण्डितुण्डिकुभिभूम्य इलच् इति इलच् ] कृष्णवर्णमधुरस्वरपक्षिविशेषः; वनप्रियः; परभृतः; पित्रः; परपुष्टः; कालः; वसन्तदूतः; ताम्राक्षः; गन्धर्वः; मधुगायनः; वामन्तः; कलकण्ठः; कामान्वः;

काकलीरवः; कुहरवः; अन्यपुष्टः; मत्तः; मदनपाठकः; 'कोकिलः श्लेषमलो ज्ञेयः पित्तसंशमनस्तथा'—इति हारीते १ स्थाने ११ अध्याये। मूषिककल्पान्तर्गत-शुक्रविषजातीयविशेषः; 'ग्रन्थयः कोकिलेनोप्रा ज्वरो दाहश्च दारुणः'—इति सुश्रुते कल्पस्थाने षष्ठाध्याये। अङ्गारः; छन्दोविशेषः; कोकिलकम्; (अस्य सप्तमे षष्ठं चतुर्थं च यतिः) 'ह्यक्रतुसागरैर्यतिपुत्रं यदि कोकिलकम्'। 'अलिललितद्युति रविमुतावनकोकिलकम्। ननु कलयामि तं सखि ! संदा हृदि नन्दमुतम्। २४३

**कोटरम्** क्ली.-पुं. [ कोटं कौटिल्याकारं स्थानं गर्तमिति यावत्, रातीति। रा+क ] वृक्षस्थितगह्वरं; निष् हः; निर्गूढः; प्रान्तरम्; [ कोट शब्दात् चतुरध्यां वुञ्जण्-ठेल्यश्मरादित्वाद् र दुर्गसन्निहितदेशादी नि. ]। १८२

**कोटवी** स्त्री. [ कोटं कौटिल्यं निर्लज्जनां वाति गच्छ-तीति। कोट+वा+क, डीप् ] कौटवी; नग्ना। ४८३

**कोटिः** स्त्री. [ कोटयते छिद्यतेऽनया। कुट् छेदने, 'सर्व-धातुभ्य इन्' इति इन्, बाहुलकाद् गुणः ] अस्त्रादेः कोणः; 'हृतान्यापि श्येननखाग्रकोटिन्यासक्तकेशानि चिरेण पेतुः'—इति रघुवशे (७।४६)। उत्कर्षः (८३६); शतलक्षसङ्ख्या; 'करोड' इति भाषा। 'एकं दशं शतं चैव सहस्रमयुतं तथा। लक्षं च नियुतं चैव कोटिरवुदमेव च'—इत्यङ्कशास्त्रे। धनुरग्रम्; 'तस्य स्कन्धे मृतं सर्पं क्रुद्धो राजा समासुजत्। समुत्क्षिप्य धनुष्कोटया स चैनं समुपैक्षत'—इति महाभारते (१।४०।२२)। रेखा; 'आवजितजटामौलिविलम्बिशिकोटयः। ह्द्राणा-मपि मूर्धानः क्षतहङ्कारशांसिनः'—इति कुमारसम्भवे (२।२६)। वादविचारः; संशयनिर्णयाय पूर्वपक्षः; 'विप्रतिपत्ति वाक्यजन्यकोट्युपस्थितिः'—इति गादाधरी-संशय हेतुक्तिः। त्रिकोणादिशेनावयवरेखाभेदः; 'इष्टा-द्वाहोयः स्यात् तत्स्पष्टिन्यां दिशीतरो बाहुः। श्यस्त्रे चतुरस्रे वा सा कोटिः कीर्तिता तज्जैः'—इति लीलावती। राशिचक्रस्य तृतीयशः; 'त्रिभिर्भैः पदं तानि चत्वारि चक्रे, क्रमात् स्यादयुग् युग्मसंज्ञा च तेषाम्।

अयुग्मे पदे यातमेष्यन्तु युग्मे, भुजे बाहुहीनं त्रिभं कोटि र्वता'—इति सिद्धान्तशिरोमणी। छायानिरूपणार्थं कल्पमानक्षेत्रावयवरेखाभेदः; 'दिवसूत्रसम्पातगतस्य शङ्कोः छायाग्रपूर्वापरसूत्रमध्यम्। दीर्घः प्रभा वर्ग-



विद्योगमूलं कोटिनरात् प्रागपरा ततः स्यात्—इति सिद्धान्तशिरोमणी । 'द्विक्सम्पातस्यस्य शङ्कोर्भाषिं यत्र पतति तंस्य पूर्वापरसूत्रस्य च यदन्तरं स दोरित्युच्यते । दोश्लाययोर्वर्गान्तरपदं पूर्वपरा कोटिः' इति । चन्द्रस्य शृङ्गोन्नतिज्ञानार्थं क्षेत्रावयवविशेषः; 'योऽधो नरो दिनकृतः स विधोरुदग्रशङ्कन्नन्वितो मम मता खलु सैव कोटिः'—इति सिद्धान्तशिरोमणी । अर्कस्य योऽसौ अधः शङ्कुः यस्य ऊर्ध्वशङ्कुना युक्तश्चेत् तद्धैव कोटिमतेति । यो रवेरधः शङ्कुरसौ विधोरुर्ध्वशङ्कुना युतः । सैव कोटिर्मम मता । उदयास्तसूत्रकल्पित क्षेत्रावयवविशेषः; 'तदन्तरैत्र्यं समवृत्तखेटमध्यांशजीवां भुवि बाहुमाहुः । दृग्ज्यां श्रुति चाथ तयोस्तु कोटि पूर्वापरां वर्गविद्योगमूलम् ।' पृक्का । ७२७

कोटिपात्रः पुं. [ कोटिः अग्रभागः पात्रं पत्राकारम् अस्य । यद्वा कोटिः अग्रं पात्रे जलांशेऽस्य, जलक्षेपणादिति भावः ] केनिपातकः; 'डाँडा' इति भाषा । ६७२

कोटिशः पुं. [ कोट्या अग्रेण श्यति नाशयति चूर्णीकरोतीत्यर्थः । कोटि+शो+क ] लोष्टभङ्गसाधनमुद्गरः; लेष्टुभेदनः; लेष्टुघ्नः; कोटीशः; लेष्टुभेदी; चूर्णदण्डः; लोष्टभङ्गार्थमुद्गरः; लोष्टघ्नः । [ कोटिरस्यास्तीति, लोमादित्वात् श ] कोटियुक्ते त्रिः; वासुकिवंशीयनागविशेषः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलोमकः'—इति महाभारते (१।५।१५) । कोटिशः [ स् ] अव्य. [ कोटि+वारार्थे शस् ] कोटिः कोटिः; 'गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोघ्नोः'—इति रघुवंशे (२।४९) । ५७६

कोटी स्त्री. [ कुट्, 'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन् ततो वा डीष् ] कोणः; उत्कर्षः (८३६); शतलक्षसंख्या; 'प्रतोदेश्चापकोटीभिर्हृङ्कारैः साधुवाहितैः । कथापार्थ्यभिप्रातैश्च वाग्भिरुप्राभिरेव च'—इति महाभारते (७।८।३०) । खड्गादेरग्रभागः; पृक्काशाकम् । ७२७

कोटीरः पुं. [ कोटिभिः ईरयति प्रेरयति । कोटि+ईर्+णिच्+अच् ] किरोटं; जटा; 'किरीटं वैरञ्चं परिहर पुरः कौटभभिदः, कठोरे कोटीरे स्वलसि जहि जम्भारिमुकुटम्'—इति आनन्दलहरीम् (३०) । ५६५

कोटीशः पुं. [ कोटीं लोष्टादीनां कोटिसंख्यां श्यति चूर्णयतीति । कोटी+शा+क ] कोटिशः । ५७६

कोट्टवी स्त्री.—नग्ना स्त्री; नग्निका; दुर्गा; नग्नमुक्तकेशी नारी; 'या त्ववासा मुक्तकेशी कोट्टवी नग्निका च सा'—इति जटाधरः । [ कोट्टं कुट्टनं छेदनं स्वपुत्रस्येति यावत्, वाति हिनस्ति निवारयतीति भावः । यद्वा कोट्टे कुट्टने संग्रामे स्वसुतस्य रक्षार्थं वाति गच्छतीति । कोट्ट+वा गतिर्हिसयोः+क्, गौरादित्वाद्, डीष् ] नग्ना स्त्रीरूपिणी दुर्गा; 'तन्माता कोट्टवी नाम नग्ना मुक्तशिरोरुहा । पुरोऽवतस्थे कृष्णस्य पुत्रप्राणरिरक्षया'—इति भागवते (१०।६३।२०) । नहीयं स्वयमाद्याशक्तिरूपिणी दुर्गा, किन्त्वस्याः लम्बास्योऽष्टमो भागः । 'व्याविध्यमाने चक्रे तु कृष्णेनाप्रतिमीजसा । कुमाररक्षणार्थाय विभ्रती सुतनुं तदा दिग्वासा देववचनात् प्रातिष्ठत्तत्र कोट्टवी । लम्बा नाम महाभागा भागो देव्यास्तथाष्टमः । चित्राकनकशक्तिस्तु सा च नग्ना स्थितान्तरे'—इति हरिवंशे वाणकृष्णयुद्धे '१८२ अध्याये (२।२।३) । ४८३

कोणः पुं. [ कुणति वादयत्यनेन । कुणति वादयतीति वा । कुण् शब्दे+करणे घञ्, कर्तरि अच् वा ] वीणादिवादनम्; 'भेरीमृदङ्गवीणानां कोणसंघटितः पुनः'—इति रामायणे (२।७।१२९) । (७२७) अस्त्रादेरग्रभागः; पालिः; अश्रिः; कोटिः; 'कनककोर्णरभिहन्यमानः'—इति कादम्बर्याम् । वाद्यप्रभेदः; गृहादेरकदेशः; 'स्वगृहस्याङ्गणे तेन चत्वारः स्वर्णपूरिताः । कुम्भाश्चतुर्षु कोणेषु निगूढाः स्थापिता भुवि'—इति कथासरित्सागरे (१९।३३) । लुगुडः; मङ्गलग्रहः; शनिः; द्वयोर्दिशोर्मध्यभागः; विदिक्; कोणमात्रम्; 'विन्दुत्रिकोणवसुकोणदशारयुगम्'—इति तन्त्रसारे । ९८

कोदण्डम् क्ली.—पुं. [ कु शब्दे+विच्, गुणः, ओदन्तकोशब्दः । कौः शब्दायमानो दण्डोऽस्य ] धनुः; 'विस्रुर्जञ्चण्डकोदण्डो रथेन त्रासयन्नधान्'—इति भागवते (३।२।५२) । पुं. [ कोदण्ड धनुः तत्सदृश आकारो विद्यते अस्य, अर्श आदित्वादच् ] भ्रूः; जनपदविशेषः । ४६४

कोद्रवः पुं. [ कु+विच्, कौः सन् द्रवतीति, द्रु+अच्, कौद्रव इति कर्मधारयो वा । केन वायुना द्रवति वा, पृषोदरादित्वात् पूर्वस्य ओकारादेशे साधुः ] धान्यविशेषः; कोरद्रूपकः; कुद्रवः; कोरद्रूपः; उद्दालः; मदनाग्रकः; कोद्रवः; कोरद्रुक्कः; वनकोद्रवः; 'कोदो' इति

भाषा । 'कोद्रवः कोरद्वेषः स्यादुद्दलो वनकोद्रवः । कोद्रवो वातलो ग्राही हिमः पित्तकफापहः । उद्दालस्तु भवेदुष्णो ग्राही वातकरो भृशम्'—इति भावप्रकाशः । ५८०

कोपः पुं. [ कुप्यते इति, कुप्+भावे घञ् ] क्रोधः; 'वत्स ! कः कोपहेतुस्ते कश्च त्वां नाभिनन्दति'—इति विष्णुपुराणे (१।१।१।३) । ३६२

कोपनः त्रि. [ कुप्+यच् ] कोपविशिष्टः; 'आसीद्विभावमुर्नाम महर्षिः कोपनो भृशम्'—इति महाभारते (१।२९।१६) । पुं. बलिवंशीयः कोपनो नामासुरः; 'गरभः शलभश्चैव कुपनः कोपनः क्रयः'—इति हरिवंशे (४।१।८४) । क्ली [ कुप्+णिच् भावे ल्युट् ] दोष-विकारकारकव्यापारविशेषकोपनिष्पादनम्; 'स्वदोषकोपनाद्रोगं लभते मरणान्तिकम् । अपि वोद्वन्धनादीनि परीतानि व्यवस्यति'—इति महाभारते अनुगीतायाम् (१।४।१७।१३) । ३६१

कोपी [ न् ] त्रि. [ अवश्यं कुप्यति इति, आवश्यके णिनि ] क्रोधनः; पुं. जलपारावते । ३६१

कोमलम् क्ली. [ कौति शब्दायते वाट्वादियोगेन स्रोतोवेगेन वा । कु शब्दे, वृषादित्वात् कलच्, तस्य मुट् च, बाहुलकाद् गुणः ] जलम्; त्रि. [ क्रमु कान्ती+बाहुलकात् कलच् अत उन्वं गुणश्च ] अकठिनः; सुकुमारः; मृदुलः; मृदुः; पलवः; मनोज्ञः; 'श्रुतिमुखभ्रमरस्वनगीतयः कुसुमकोमलदन्तरुहो वभुः । उपवनान्तलताः पवनाहृतैः किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः'—इति रघुवंशे (९।३५) । १८९

कोयष्टिः पुं. [ कं जलं यष्टिरिवास्य । पृषोदरादित्वाद् अत उत्वे गुणत्वे च साधुः ] जलकुक्कुभपक्षी; 'प्रतुदान् जालपादांश्च कोयष्टिं नखविष्कारान्'—इति मनु (५।१३) । २४९

कोरकः पुं. [ कुल् संस्थानं +कर्तरि ष्वल्, लस्य रत्वम् ] कलिका; 'कली' इति भाषा । 'कलिका कोरकः पुमान् इत्यमरः । पुं.—कली. [ कुल्+ष्वल् । लस्य रः ] मुकुलं; 'कोरकोऽस्त्री कुट्मले स्यात् । 'मरुद्वनिरुहां रजो-चधूम्यः सप्तपहरन् विचकार कोरकाणि'—इति माघे (७।२६) । ककालः; मृणालम्; 'कोरकं कुट्मलेऽपि रथात् ध्वजकोलकमृणालयोः'—इति विश्वसेदित्योः चारुतामगन्धद्रव्यम् । १८३

कोरद्वेषकः पुं. [ कोलं संस्थानं द्वेषयति । द्वेष+णिच्

'कर्मण्यण्' इत्यण्, लस्य रत्व, संज्ञायां कन् ] कोद्रवः; धान्यविशेषः; कोरद्वेषः; 'कोदो' इति भाषा । 'ईदृशो भविता लोको युगान्ते पर्युपस्थिते । वस्त्राणां प्रवरा शाणी धान्यानां कोरद्वेषकः । भार्यामित्राश्च पुरुषा भविष्यन्ति युगक्षये'—इति महाभारते (३।१९०।१८-१९) । 'स कोरद्वेषः श्यामाकः कपायमधुरो लघुः । वातलः कफपित्तघ्नः शीतसंग्राहि शोषणः'—इति चरके सूत्रस्थाने सप्तविंशोऽध्याये । ५८०

कोलः पु. [ कोलति कामपि दाधां न मत्तैव शत्रु प्रति धावतीति । कुल्+अच् ] शूकरः; [ कोलति प्लवते जले इति ] प्लवः; 'तरणसाधनकाष्ठादिः; अङ्कपालिः; शनिः; चित्रः; [ कोलन्ति आलिङ्गन्त्यङ्गान्यत्र । कुल्+अधिकरणे हलश्चेति घञ् ] क्रोडः; देशविशेषः; अस्त्र-भेदः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'पाण्ड्यश्च केरलश्चैव कोलश्चोलश्च पाथिव ! तेषां जनपदाः स्फीताः पाण्ड्याश्चालाः सकेरलाः'—इति हरिवंशे (३।२।१२३) । स तु लेटात् तीवरकन्यायां जातः । श्मश्रुधारिर्मलेच्छजाति-विशेषः । २१६

कोलाहलः पुं. [ कोल एकोभूताव्यक्तशब्दविशेषः तम् आहलति आलिखतीति । हल् विलेखने+अच् ] बहुवि-धद्वाराव्यक्तध्वनिः; कलकलः; कालकीलः; 'ततो हलहलाशब्दः पुनः कोलाहलो महान् । महान् राक्षसना-दस्तु पुनस्तूर्ध्वो महान्'—इति रामायणे (३।३।१।४१) । १३९

कोल्या स्त्री. [ कोलमहतीति यत् ] पिप्पली । ६१४

कोविदः त्रि. [ कुङ्क शब्दे, विच्, को. वेदः तं वेत्ति जानातीति । को+विद्+इगुपधेति क. ] पण्डितः; 'इति राज्ञ उपाधिष्य विप्रा जानककोविदा । लब्धा-पचितयः सर्वे प्रतिजग्मुः स्वकान् गृहान्—इति भागवते (१।१२।२९) । ३३२

कोविदारः पु. [ कुं भुवं विदूणाति विदारयति, भूमि विदार्योद्भवतीत्यर्थः । इ+कर्मण्यण् इति अण्, ततः पृषोदरादित्वात् साधुः ] रत्नकाञ्चनवृक्षः; चमरिकः; कुडालः; युगपत्रकः; काञ्चनारः; कणकारकः; कान्तपुष्पः; करकः; कान्तारः; यमलच्छदः; काञ्च-नालः; ताम्रपुष्पः; कुदारः; रत्नकाञ्चनः; विदलः; 'कचनार' इति भाषा । 'कोऽप्ययं दाहिरित्याहुरजानन्तो

यतो जनाः। कोविदार इति स्थितस्ततः स सुमहातरुः।  
मन्दारः कोविदारश्च पारिजातश्च नामभिः। स वृक्षो  
ज्ञायते दिव्यो यस्यैतत्कुसुमोत्तमम्—इति हरिवंशः  
(१२४।७०-७१)। २०६

कोशः पुं. [ कुश्यते संश्लिष्यते अत्र। कुश् संश्लेषणे +  
'अकर्तरिं चेति' अधिकरणादौ घञ् ] खड्गपिधानं;  
'म्यान' इति भाषा। 'कस्यायं विपुलः खड्गो गव्ये कोशे  
समर्पितः'—इति महाभारते (४।४०।१३)। अण्डम्  
(५२३); दिव्यम् (८४०); 'ततो निक्षिप्य चरणं  
रक्ताक्ते भेषचर्मणि। कोशं चक्रतुरन्योऽन्यं सखड्गौ  
नृपडामरौ'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।३३५)। घन-  
संहतिः; अर्थसंग्रहः; 'कोशो बलं चापहतं तत्रापि  
स्वपुरे ततः'—इति मार्कण्डेयपुराणे देवीमाहात्म्ये।  
[ कुष्यते-आकृष्यते आयस्थानेभ्यः कोषः, कुष् निष्कर्षे,  
घञ्। कोषो मूर्द्धन्यान्तः, तालव्यान्त इत्यन्थे ] कृताकृतं  
हेमरूप्यम्; हिरण्यम्; आवरणविशेषः; 'अव्यक्तमाहु-  
र्हृदयं मनश्च स चन्द्रमाः सर्वविकारकोशः'—इति  
भागवते (२।१।३४)। मुकुलम्; 'तिरश्चकार भ्रमरा-  
भिलीनयोः सुजातयोः पङ्कजकोशयोः श्रियम्'—इति  
रघुवंशे (३।८)। ४७३

कोशातकी स्त्री. [ कोशम् अततीति, अत्+क्वुन्, ततः  
कोशातक+गौरादित्वाद् डीष् ] पटोली; घोषकः;  
फलशाकविशेषः; कृतच्छिद्रा; जालिनी; कृतवेधना;  
क्ष्वेडा; सुतिक्ता; घण्टाली; मृदङ्गफलिनी; कर्कश-  
च्छदा। 'कोशातकीफलं स्वादु मधुरं वातपित्तनुत्।  
विपाके च कफं हन्ति ज्वरे शस्तं प्रदिश्यते'—इति  
हारीते प्रथमस्थाने १० अध्याये। कोशातकी [ न् ]  
पुं. [ कोशातकोऽस्यास्तीति, इनि ] वाणिज्यं; वणिक्;  
बाडवाग्निः। २०२

कोशिका स्त्री. [ कोश+संज्ञायां क, टाप्, इत्वम् ]  
मल्लिका; 'कुल्हड, पुरवा' इत्यादि भाषा। ३१६

कोषः पुं.-कली. [ कुष्यन्ते आकृष्यन्ते अस्यादयोऽस्मात्।  
कुष् निष्कर्षे + 'अकर्तरिं चेति' अपादाने घञ् ] खड्ग-  
पिधानम्; 'कस्य पाञ्चनखे कोषे सायको हेमविग्रहः।  
प्रमाणरूपसम्पन्नः पीत आकाशसन्निभः। कस्य हेममये  
कोषे सुतप्ते पावकप्रभे। निस्त्रिशोऽयं गुरुः पीतः शैव्यः  
परमनिर्घ्रणः'—इति महाभारते (४।४०।१४-१५)।

अण्डं (५२३); दिव्यम् (८४०); अर्थसमूहः;  
'तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशं निःशेषविश्राणितकोष-  
जातम्'—इति रघुवंशे (५।१)। कृताकृतं हेमरूप्यं;  
पात्रं; जातीकोषः; 'जायफल' इति भाषा। शब्दादि-  
संग्रहः; यथा—अमरकोषः। भाण्डागारं; पानपात्रचपकः;  
योनिः; शिम्बा; पनसादिफलस्यान्तः; शब्दान्तर-  
संयोगे गोलकवाचकः; घनसंहतिः। ४७३

कोषातकी स्त्री. [ कोषातक+गौरादित्वाद् डीष् ]  
घोषालता; राजकोषातकी; ज्योत्स्निका; ज्योत्स्नावती  
रात्रिः। २०२

कोष्ठः पुं. [ कुप् निष्कर्षे + 'उपिकुपिगतिम्यस्थन्'  
इति थन् ] कुक्षिमध्यम्; 'स्थानान्यामाग्निपक्वानां  
मूत्रस्य रुधिरस्य च। हृद्गण्डुकः फुफ्फुपश्च कोष्ठ  
इत्यभिधीयते।' उदरम्; 'पतिं भार्योपतिष्ठेत् ध्यायेत्-  
कोष्ठगतं च तम्'—इति भागवते (६।१८।५३)।  
नाभेरुपरिस्थितमणिपुरपद्मम्; 'संपीड्य पायुं पाणिभ्यां  
वायुमुत्सारयन् शनैः। नाम्यां कोष्ठेष्ववस्थाप्य हृदुर-  
कण्ठशीर्षणि'—इति भागवते (४।२३।१४) प्राकारः;  
'पञ्चारामं नवद्वारमेकपालं त्रिकोष्ठकम्। षट्कुलं  
पञ्चविपणं पञ्चप्रकृति स्त्रीधवम्'—इति भागवते  
(४।२८।५६)। कुसूलः; 'कच्चित् कोपश्च कोष्ठश्च  
वाहनं द्वारमायुधम्। आयश्च कृतकल्याणैस्तव भक्तैर-  
नुष्ठितः।' गृहमध्यम्; 'सा वानरेन्द्रबलरुद्धविहार-  
कोष्ठश्रीद्वारगोपुरसदोवलभीविटङ्का'—इति भागवते  
(१।१०।१७)। आत्मीये त्रि.। ८१७

कौक्षेयकः पुं. [ कुक्षी कोपे तिष्ठति इति, ङकञ् ] खड्गः।  
४७२

कौटिकः त्रि. [ कूटमेव इति स्वार्थे कन्, कूटकं मासं  
पण्यमस्य इति, ठञ् ] मांसिकः मांसविक्रयी। ५९५

कौटवी, कौटवी स्त्री.-विवस्त्रा स्त्री; तग्ना, दुर्गा। ४८३

कौटिकः त्रि. [ कूटेन मृगादिवन्धनयन्त्रेण चरति। 'चरति'  
इति ठक् ] मांसविक्रेता; कौटिकः; वैतसिकः;  
मांसिकः; 'कसाई' इति भाषा। ५९५

कौणपः पुं. [ कुणपः शरीरं शंबो वा, तं भक्षयितुं शीलमस्य।  
अण् ] राक्षसः; 'न कौणपाः शृङ्गिणो वा न च देवाञ्जन-  
सृजः'—इति महाभारते (१।१७।१।१४)। वासुकि-  
वंशोद्भवः सर्पविशेषः; 'पिच्छलः कौणपश्चक्रः काल-

वेगः प्रकालनः । हिरण्यबाहुः शरणः कक्षकः काल-  
दण्डकः । एते वासुकिजा नागाः प्रविष्टा हव्यवाहने—  
इति महाभारते (१५७७५) । ७३

**कौतुकम्** क्ली. [ कुतुक+प्रज्ञादित्वात् स्वार्थे अण् ।  
कुतुकस्य भावः इति युवादित्वाद् अण् वा ] कुतूहलम् ;  
कौतूहलम् ; 'चक्रतुः कौतुकोद्ग्रीवां सभां चित्रार्पितामिव  
—इति राजतरङ्गिणी (१५।३६४) । अभिलाषः ;  
'पश्यन्त्यास्तं नृपं तस्या लज्जाकौतुकयोर्दृशि । अभूदन्यो-  
ऽन्यसंमर्दो रचयन्त्या गतागतम्'—इति कथासरित्सागरे ।  
उत्सवः ; 'कथं सुतायाः पितृगृहेकौतुकं निशम्य देहः  
सुरवर्ष ! नेङ्गते'—इति भागवते (४।३।१३) । नर्म ;  
हर्षः ; 'इयं च भूर्भगवता न्यासितोरुभरा सती ।  
श्रीमद्भिस्तत्पदन्यासैः सर्वतः कृतकौतुका'—इति भागवते  
(१।१७।२५) । परस्परयातंमङ्गलं ; विवाहसूत्रम् ;  
'वैवाहिकैः कौतुकसंविधानैर्गृहे गृहे व्यग्रपुरन्धिर्वगम्'—  
इति कुमारसंभवे (७।२) । गीतादिभोगः ; गीतादिः ;  
भोगकालः । ७२०

**कौतूहलम्** क्ली. [ कुतूहलस्य भावः कर्म वा । युवादित्वाद्  
अण् । यद्वा कुतूहलमेव इति, प्रज्ञाद्यण् ] कुतूहलम् ;  
अपूर्ववस्तुदिदक्षाद्यतिशयः ; 'भवद्भिरिदमाख्यातं यथा-  
प्रश्नमनुक्रमात् । महत् कौतूहलं मेऽस्ति हरिश्चन्द्रकथां  
प्रति'—इति मार्कण्डेये (८।१) । ७३०

**कौद्रवीणम्** त्रि. [ कुत्सितं यथा तथा द्रवति इति । पृषोदरा-  
दित्वात् सिद्धे कौद्रवं कुत्सितध्यानभेदः, तस्य भवनम्  
उत्पत्तिस्थानम् । 'धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्' इति  
खञ् ] कौद्रवधान्योद्भवयोग्यक्षेत्रम् । १६२

**कौपीनम्** क्ली. [ कूपपतनमर्हतीति । 'शालीनकौपीने  
अवृष्टाकार्ययोः' इति साधुः ] कच्छटिका ; कच्छा ;  
मेखलाबद्धपरिषेयवस्त्रखण्डं ; कक्षा ; घटी ; 'बिभूयाद्  
यद्यसौ वासः कौपीनाच्छादनं परम्'—इति भागवते  
(७।१३।२) । अकार्यं (८३०) ; गुह्यदेशः ; चीरं ;  
पापम् ; 'तत्साधनत्वात् तद्द्वं गोप्यत्वात् पुरुषलिङ्ग-  
मपि, तत्सम्बन्धात् तदाच्छादनमपि'—इति सिद्धान्त-  
कौमुदी । ४११

**कौपीनकी** स्त्री. [ कौपीनकी इति, पृषोदरादित्वाद् मस्य  
पत्वम् ] कौपीनकी ; विष्णुगदा । २६

**कौमयी** स्त्री. [ कुमुदस्य इयं प्रकाशकत्वात् । 'तस्येदम्'

इत्यण् ततो डीप् ] ज्योत्स्ना ; 'शशिना सह याति  
कौमुदी सह मेघेन तडित्प्रलीयते । प्रमदाः पतिवर्त्मगा  
इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि'—इति कुमारसम्भवे  
(४।३३) । उत्सवः ; 'अकालकौमुदीञ्चैव चक्रतुः सार्व-  
कालिकीम्'—इति महाभारते १३ पर्वणि । [ कुमुदस्य  
कार्तिकमासस्य इयम्, 'तस्येदम्' इति अण् ततो डीप् ]  
'कु शब्देन मही ज्ञेया मुद हर्षे ततो द्वयम् । धातुञ्ज-  
नियमैश्चैव तेन सा कौमुदी स्मृता ।' कार्तिकोत्सवः ;  
कार्तिकीपूर्णिमा ; आश्विनीपूर्णिमा ; कोजागरपूर्णिमा ;  
शारदी ; 'आश्विने पौर्णमास्यां तु चरेज्जागरणं निशि ।  
कौमुदी सा समाख्याता कार्या लोकविभूतये ।' 'कौ  
मोदन्ते जना यस्यां तेनासौ कौमुदी स्मृता ।' दीपोत्सव-  
तिथिः ; कुमुदान्येव कौमुदी । ४४

**कौमोदकी** स्त्री. [ कोः पृथिव्याः पालकत्वान् मोदकः  
इति कुमोदको विष्णुः, तस्येयम् । 'तस्येदम्' इत्यण्  
ततो डीप् ] कौमोदी ; कौपीनकी ; विष्णुगदा ; 'श्रीवत्सं  
कौस्तुभं मालां गदां कौमोदकीं मम'—इति भागवते  
(८।४।१९) । २६

**कौलीनम्** क्ली. [ कौ पृथिव्यां लीनम्, भूलीनपदार्था-  
नामिव एतेषामप्रकाशतया तथात्वम् । ली, भावे क्त,  
तस्य नत्वम् । लीनं लयः कौ पृथिव्यां लीनं लयो यस्मात्,  
कुलीनं भूमिलयमर्हतीति अण् वा ] लोकापवादः ; 'कौली-  
नभीतेन गृहान्निरस्ता न तेन वैदेहसुता मनस्तः'—इति  
रघुवंशे (१४।८४) । निन्दा ; 'कौलीनमात्माश्रयमाचक्षे  
तेभ्यः पुनश्चेदमुवाच वाक्यम्'—इति रघुवंशे (१४।३६)  
गुह्यं ; जन्म ; कुकर्म ; [ कुलीनस्य भावः, युवादित्वाद् अण् ]  
कुलीनत्वं ; कुलीनता ; 'सदश्व इव मर्यादां कौलीनां  
नाभ्यवर्तत'—इति रामायणे । पश्वहिपक्षिणां युद्धं ;  
पुं. कौलेयकः । १४७

**कौलेयकः** पुं. [ कुले भवः, 'कुलकुक्षिग्रीवाम्यः स्वास्यलङ्का-  
रेषु' इति ढकञ् ] कुकुरः ; [ कुलस्यापत्यम्, 'अपूर्वप्रदा-  
दन्यतरस्यां यड्ढकञ्' इति ढकञ् ] कुलीने त्रि. । २८१

**कौवेरी** स्त्री. [ कुवेरः देवता अस्याः । 'सास्य देवता'  
इत्यण् ततो डीप् ] उत्तरादिक् ; 'दिग्विभागे तु कौवेरी  
दिक् शिवा प्रीतिदायिनी'—इति तिथ्यादितत्त्वम् ।  
कुवेरशक्तिः । १०१

**कौशिकः** पुं. [ कुशिकस्यापत्यम्, ऋण्यण् । कुशिके तद्वंशे

भवो वा, अण् ] इन्द्रः; 'कुशिकस्तु तपस्तेपे पुत्रमिन्द्रसमं विभुः । लभेयमिति तं शक्रश्चासादभ्येत्य जजिवान्'— इति हरिवंशे (२७।१३) । उल्लूकः (२४६); गुग्गुलुः; व्यालग्राही; कौशजः; मगवराजजगामन्वस्य सेनापति- हंसनामा नरपतिरपि कौशिकनाम्ना विश्रुत आसीत्; 'स तु सेनापतिं राजा सस्मार भरतर्षभ ! कौशिकं चित्रसेनं च तस्मिन् युद्धे उपस्थिते । ययोस्तु नामनो राजन् ! हंनेति डिम्भकेति च । पूर्वं संकथिते पुम्भिर्नृ- लोके लोकमत्कृते'—इति महाभारते (२।२२।३१-३२) । [ कुशिकस्य गोत्रापत्यम् इति, विदाद्यञ् । कुशिकस्य पुत्रो गाधिस्तत्पुत्रो विश्वामित्रोऽपि कुशिक- वंशजान्त्वान् कौशिकः ] विश्वामित्रमुनिः; 'तच्छूत्वा वचनं तस्य स्नेहपर्याकुलाक्षरम् । समन्युः कौशिको वाक्यं प्रत्युवाच महापतिम्'—इति रामायणे (१।१२।१) । पुरुवंशीयनृपविशेषः; 'प्रतिपद्याच्च द्वौ पुत्रौ पैपला- दिश्च कौशिकः'—इति हरिवंशे । [ कौशं करोतीति, कौश+उक् ठञ् वा बाहुलकात् ] कोपकारः; गृह्णार- म्. मग्जा; अश्वकर्णवृक्षः; नकुलः; [ कौशात् कृमिकोनाज्जातम् ] कृमिकोपोद्भवे त्रि । 'या त्वाहं कौशिकैर्वस्त्रैः गुभैराच्छादितं पुरा । दृष्टवत्यस्मि राजेन्द्र ! सा त्वां पश्यामि चौरिणम्'—इति महाभारते (३।२७।१४) । ५२

कौसीद्यम् कर्त्वा [ कुत्सितं नीदति अस्मिन् इति कु+सीद् +श, ततः स्वार्थे ष्यञ् ] आलस्यं; तन्द्रा; [ कुनीदस्य कर्म भावो वा, ष्यञ् ] कुनीदत्वम् । ७५७

कौसूतिकः त्रि । [ कुसूत्या कुत्सितगत्या चरति इति । ठक् ] मायाकारः । ३४९

कौस्तुभः ३ । [ कुं भुवं स्तुभ्नाति व्याप्नोति इति कुस्तुभः नागरः । 'तत्र भव' इत्यण् । यद्वा कुं भूमिं जगदित्यर्थः, स्तुभने व्याप्नोति नर्वमाक्रम्य तिष्ठतीति भावः, कुस्तुभो विष्णुः । तस्यायं नगिरित्यण् ] विष्णुवक्षःस्थो मणिः; 'कौस्तुभाश्वमभूद्रत्नं पक्षरागो महोदधेः । तस्मिन् हरिः स्तुहां चक्रे वक्षोऽलङ्कृरजे मणौ'—इति भागवते (८।८।५) । 'कौस्तुभस्तु महातेजाः कोटिर्मुखसमप्रभः । इदं किमुत वक्तव्यं प्रदीपादीप्तिमानिति'—इति भागवतामृतम् । मुद्राविशेषः; 'अनामाङ्गुष्मलंग्ना दक्षिणस्य कनिष्ठिका । कनिष्ठयान्यथा बद्धा तर्जण्यां

दक्षया तथा । वामानामाञ्च वक्ष्णीयाद् दक्षिणाङ्गुष्म- मूलके । अङ्गुष्ममध्यमे भूयः संयोज्य सरलाः पराः । चतस्रोऽप्यश्रसंलग्ना मुद्रा कौस्तुभसंज्ञिका'—इति तन्त्रसारः । २७

ऋकचः पु.—वली । [ ऋ इति कृत्वा कचति शब्दायते, कच् शब्दे, पचाद्यच् ] करपत्रं; काष्ठविदारणास्त्रविशेषः; 'करवत्, आरा' इति भाषा । 'मध्येन पाटयामास ऋकचो दावित्रोच्छ्रितम्'—इति महाभारते (३।२।३४) । ग्रन्थिलवृक्षः; ज्योतिषोक्तयोगभेदः; 'पण्ड्यादितिययो मन्दाद् विलोमं ऋकचः स्मृतः । 'त्रयोदशस्य मिलने संख्ययोस्मिन्धिवारयोः । ऋकचो नाम योगोऽयं मङ्गल- ज्वतिर्गाहितः'—इति नारदीयितः । ४७५

ऋकरः पुं । [ ऋ इति शब्दं कर्तुं शीलमस्य इति । ऋ+ कृ+ताच्छील्ये ट् ] ऋकणपथी; पक्षिविशेषः; 'पत्रोर्ण चोरयित्वा तु ऋकरत्वं नियच्छति' 'चकोरकलविङ्क- मयूरऋकर' इत्याद्युपक्रम्य 'लघवः ऋकरा ह्य्यास्तथा चैवोपचक्रकाः'—इति सुश्रुते । दीनः; ऋकचः; कुरपत्रं; काष्ठविदारणास्त्रविशेषः; करीरवृक्षः । २५४

ऋतुः पुं । [ त्रियतेऽसी इति, कृ+कृयः ऋतुः इति कर्मणि क्तु प्रत्ययः ] यजः; नन्त्यन्तर्गतब्रह्ममानसपुत्रविशेषः; 'ब्रह्मणो मानसाः पुत्रा विदिताः पण् महर्षयः । मरीचिर- च्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः ऋतुः । 'क्तोऽपि क्रिया भार्या बालविल्यानसूयत । ऋयीन् पटिनहन्ताणि ज्वलतो ब्रह्मतेजसा'—इति भागवते (४।१।३८) । विश्वेदेवविशेषः; 'दक्षं मरीचिमत्रिञ्च.पुलस्त्यं पुलहं ऋतुम् । वशिष्ठं गांतमं चैव भृगुमङ्गिरसं मनुम् । सूपमहितः सोमसाध्यां यजः; विष्णुः 'यज ईज्यो महैज्यश्च ऋतुः सय ननां गतिः'—इति विष्णुसहस्रनामम् । अश्वमेधयजः; 'यजेन राजा ऋतुभिर्विधैराप्तदक्षिणः । धर्मार्थञ्चैव विधेभ्यो दद्याद्भोगान् धनानि च'—इति मनुः (३।३९) । 'आपादमानः; 'वाजाय स्वाहा, प्रसवाय स्वाहा, अपिजाय स्वाहा, क्रतवे स्वाहा, वसवे स्वाहा'— इति यजुर्वेदे (१।८।२८) । 'क्रतवे यागत्रयाय, चानुमस्वादि- यागप्राचुर्यात् ऋतुरापादः'—इति वेददीधितिः । प्रजा; 'अथ चतुः ऋतुमयः पुरुषो यश्चाऋतुरस्मिन् लोकं पुरुषो भवति । तथेनः प्रत्य भवति स ऋतुं कुर्वीत'—इति छान्दोग्योपनिषदि । ४१४

ऋतुपुरुषः पुं. [ ऋतुः यज्ञः तन्मयः तदधिष्ठाता वा पुरुषः ]  
विष्णुः । २२

ऋन्दितम् क्ली. [ ऋदि+भावे क्त ] रोदनम्; आह्वानं;  
योधचीत्करणम् । ६३९

ऋमुकः पुं. [ ऋमु+संज्ञायां कन् ] गुवाकवृक्षः; माघे  
(३।८१) । पट्टिकालोष्ठः; ब्रह्मदाखवृक्षः; भद्रमुस्तकं;  
कार्पासिकाफलम् । ५४५

ऋमेलकः पुं. [ ऋममालम्ब्य इलति क्षिपतीति । इल् क्षेपे  
+ण्वल् । यद्वा क्रामतीति ऋम्, विच् । इलतीति एल्;  
अच् । ऋम् चासी एल् । ऋमेल+स्वार्थे कन् ] उष्ट्रः;  
ऋमेलः; 'भो ममाग्रेऽपि ऋमेलकहृदयं भक्षयित्वा अधुना  
मम मुखमवलोकयसि'—इति पञ्चतन्त्रे (१।४।१४) ।  
२८०

ऋव्यम् क्ली. [ वल्व्+यत् । लस्य रत्वम् ] मांसम्;  
'ऋव्यादाः प्राणिनः ऋव्यं दुदुदुः स्वे कलेवरे । सुपर्णवत्सा  
विहगाश्चरं वाऽश्चरमेव च'—इति भागवते (४।१८।  
२४) । ६३१

ऋव्यात् [ ङ् ] पुं. [ ऋव्यं मांसम् अतीति । 'ऋव्ये चेति'  
विट् ] राक्षसः; त्रि. मांसाशिनि; गृध्रादिमांसभुक्पक्षि-  
विशेषः; 'धूमधूमो वसागन्धी ज्वालावभ्रुशिरोरुहः ।  
ऋव्याद्गणपरीवारश्चित्ताग्निरिवजङ्गमः'—इति रघुवंशे  
(१५।१६) । तट्टीकायां 'ऋव्यादो गृध्रादयः'—इति  
मल्लिनाथः । व्याघ्रादिहिंस्रपशुभेदः; 'श्वभिर्हृतस्य  
यन्मामं शुचि तन्मनुरब्रवीत् । ऋव्याद्भिश्च हतस्यान्यै-  
श्चाण्डालाद्यैश्च दस्युभिः'—इति मनुः (५।१३१) ।  
'ऋव्याद्भिः व्याघ्रश्वेनादिभिः'—इति तट्टीकायां कुल्लू-  
कभट्टः । शवदाहकाग्निभेदः; 'अपारने ! अग्निमामादं  
जहि निष्क्रव्यादं सेध इत्ययं वा आमाद् येनेदं मनुष्याः  
पक्त्वाश्नन्ति अथ येन पुरुषं दहन्ति स ऋव्याद् एतावेवै-  
तदुभावतोऽपहन्ति । हे अग्ने ! गार्हपत्य ! आमादमग्नि-  
मपजहि परित्यज, ऋव्यादमग्निं निःसेध निःशेषं  
दूरे गमय'—इति भाष्यम् । 'योऽग्निं ऋव्यात् प्रविवेश  
यो गृहम्'—इति ऋग्वेदे (१०।१६।१०) । ७३

ऋव्यादः पुं. [ ऋव्यं मांसमिति, अद्+उपपदे 'कर्म-  
ण्यण्' इति अण् । कृत्तं छिन्नं तदेव पुनर्विशेषतः  
कृत्तं पक्वं च भुङ्क्ते इति, कृत्तविकृत्तपक्वशब्दस्य पृषोद-  
रादित्वात् ऋव्यादेशः ] राक्षसः; सिंहः; श्वेनः; शवभक्ष-

काग्निः; 'ऋव्यादो मृतभक्षणे'—इति तिथ्यादितत्त्वम् ।  
मांसाशिनि त्रि. । ७३

ऋमिः पुं. [ ऋम् पादविक्षेपे, 'ऋमितमिशतिस्तम्भामत-  
इच्च' इति इन्, कित् अत इच्च ] कीटः; कृमिः; द्रुमामयः;  
रोगविशेषः; 'ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगश्छर्दनं  
भ्रमः । भवतद्वेषोऽतिसारश्च संजातः क्रिमिलक्षणम्'—इति  
माधवकरः । ६३६

ऋव्या स्त्री. [ क्रियते अनया, असौ अस्याम् इति वा ।  
डुकृन् करणे, करणकर्माधिकरणादौ च यथायथं श  
प्रत्ययः, 'रिड शयणिलङ्क्षु' इति रिडादेशः; 'अचि-  
श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवडौ' इति इयङ् ] कर्म;  
आरम्भः; निष्कृतिः; शिक्षा; पूजनं; सम्प्रधारणम्;  
उपायः; चेष्टा; चिकित्सा; 'आरम्भो निष्कृतिः शिक्षा  
पूजनं सम्प्रधारणम् । उपायः कर्म चेष्टा च चिकित्सा  
च नव क्रियाः'—इति भावप्रकाशे । कारणं; श्राद्धं;  
शौचम् । आचारातिक्रमः (७।८३) । ३८२

ऋव्यावान् [ त् ] त्रि. [ क्रिया अस्यास्तीति, मत्तुप्, मस्य  
वः ] कर्मसूद्यतः; क्रियासु नियुक्तः; 'पुत्रीयता तेन  
वराङ्गनाभिरानायि विद्वान् ऋतुषु क्रियावान्'—  
इति भट्टिः (१।१०) । ३८३

ऋीडा स्त्री. [ ऋीड्+भावे अप् ततष्ठाप् ] परीहासः;  
खेला; 'स वै भागवतो राजा पाण्डवेयो महारथः ।  
बालक्रीडनकैः क्रीडन् कृष्णक्रीडां य आददे'—इति  
भागवते (२।३।१५) । अवज्ञानम् । ४३२

ऋीडारयः पुं. [ ऋीडार्ये रथः ] ऋीडार्थरयः; पुरुपरयः ।  
४४६

ऋञ्चः पुं. [ ऋञ्च्+अच् ] वक्त्रविशेषः; पक्षिभेदः;  
ऋञ्चः; क्रुडः; ऋञ्चा; ऋञ्चा; कालिकः; कलिकः;  
'वायवे बलाका इन्द्राग्निभ्यां ऋञ्चान्'—इति यजुर्वेदे  
(२।४।२२) । ऋञ्चपर्वतः; अयं हिमवतः पौत्रः मैना-  
कस्य पुत्रः । २४४

ऋरः त्रि. [ कृत् छेदन + 'कृतेश्छः कू च' इति रक्प्रत्ययः  
धातोः कृवादेशश्च ] निर्दयः; नृशंसः; धातुकः; पापः;  
'स्त्रियो ह्यकरुणाः कूरा दुर्मपाः प्रियसाहसाः'—इति  
भागवते (१।१४।३७) । 'तस्मिन्नुपायाः सर्वे नः  
कूरे प्रतिहतक्रियाः । कठिनः; 'तस्याभिधेकसम्भारं  
कल्पितं कूरनिश्चया'—इति रघुवंशे (१२।४) । पर-

द्रोहकारी; 'क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते सङ्गमं नो कृतान्तः'  
—इति मेघदूते (१०७)। घोरः; 'क्रूरो लुब्धोऽलतोऽ-  
सत्यः प्रमादी भीरुरस्थिरः'—इति पञ्चतन्त्रे (३२५)।  
उष्णः; प्रथम-तृतीय-पञ्चम-सप्तम-नवमैकादशराशयः;  
'ओजोऽथ युगं विषमः समश्च क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽ-  
ङ्गना च। चरस्थिरद्वयात्मकनामधेया मेषादयोऽमी  
क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति दीपिका। पुं. भूताङ्कुश-  
वृक्षः; रक्तकरवीरवृक्षः; श्येनपक्षी; कङ्कपक्षी। ३४२

क्रूरकर्मकृतं पुं. [ क्रूरकर्म + कृ + विवप् तुक् ] उग्र-  
कर्मकारी। ३७२

क्रूरकर्मा [ न् ] पुं. [ क्रूरं कर्म यस्य ] भयानककर्मकर्ता;  
हिंस्रः। ३७२

क्रोडः पुं. [ क्रुड् + घञ् ] क्रोडोऽस्यास्तीति, अर्श आदि-  
न्वादच् वा ] शनिः; शूकरः (२२६); वाराही-  
कन्दः; 'नदीशैवालदिग्घाङ्गं हरिश्मश्रुजटाधरम्।  
नग्नैः शङ्खनखैर्गात्रैः क्रोडैश्चित्रैरिवापितम्'—इति  
महाभारते (१३।५०।२०)। ४८

क्रोडम् क्ली.-स्त्री. [ क्रुड् + घञ् ] बाह्योर्मध्यम्; भुजा-  
न्तरम्; उरः; वत्सः; वक्षः; उत्सङ्गः; भोगः; वपुषः  
प्राक्; 'इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यम्'—इति यजु-  
वेदे (२।५।८)। 'शेषमिडापाश्यामासिच्य क्रोडमन-  
स्थीनि च पास्यति'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (६।८।  
१३)। 'तत्र तरोर्निर्मितनीडक्रोड पक्षिणः सुखं वर्षासु  
निवसन्ति'—इति हितोपदेशे। ५२८

क्रोडीकरणम् क्ली. [ क्रोड + कृ + भावे ल्युट् । अभूत-  
तद्भावे च्चि ] आलिङ्गनं; क्रोडीकृतिः। ५६८

क्रोधः पुं. [ क्रुव् + भावे घञ् ] प्रतिकूले सति तैक्ष्ण्यस्य  
प्रबोधः; कोपः; अमर्षः; रोषः; प्रतिघः; रुट्;  
क्रुत्; आमर्षः; भीमः; क्रुधा; रुषा; हेलः; हरः; हृणिः;  
त्यजः; भामः; एहः; ह्वरः; तपुषी; जूणिः; मन्युः;  
व्यथिः। 'काम एव क्रोध एव रजोगुणसमुद्भवः।  
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्'—इति भग-  
वद्गीतायां ३ अध्याये। ३६२

क्रोधनः त्रि. [ क्रुव् + 'क्रुधमण्डार्येभ्यश्च'—इति युक् ]  
क्रोधविशिष्टः; अमर्षणः; कोपी; क्रोधी; रोषणः;  
'यद्गामेण कृतं तदेव कुर्वते द्रोणायनिः क्रोधनः'—इति  
वेणीसंहारे तृतीयाङ्के। क्रुधंक्षीयन्पविशेषः; 'ततश्च

क्रोवनस्तस्माद् देवातिथिरमुष्य च'—इति भागवते  
(१।२।२।२१)। पष्टिर्षान्तगंतोनपष्टितमवर्षभेदः;  
'रोगो मरणदुर्भिक्षं विरोधोत्तरसङ्कुलम्। क्रोधने विषयं  
सर्वं समाख्यातं हरप्रिये'—इति तन्त्रे। भैरवभेदः; 'असि-  
ताङ्गो रुद्रश्चण्ड उन्मत्तः क्रोवनस्तथा'—इति तन्त्रे। ३६१  
क्रोष्टा [ ष्टु ] पुं.-स्त्री. [ क्रोशति रीतीति। क्रुश् +  
'सितनिगमिमसीति' तुन्, 'तृज्वत् क्रोष्टुः'—इति  
तृज्वत् ] शृगालः; 'ब्राह्मणस्य प्रशान्तस्य हविर्घ्वाडक्षैः  
प्रलुप्यते। शार्दूलस्य गुहां शून्यां नीचः क्रोष्टाभिमर्दति'  
—इति महाभारते (१।२।१।४।८)। यदुर्वशीयो 'राज-  
विशेषः; 'क्रोष्टोस्तु शृणु राजेन्द्र वंशमुत्तमपीक्ष्यम्।  
यदोर्वशधरस्याथ यज्वनः पुण्यकर्मणः। क्रोष्टोहि  
वंशं श्रुत्वेमं सर्वपापैः प्रमुच्यते'—इति हरिवंशे (३३।  
६१)। २२९

क्रौञ्चः पुं. [ क्रुञ्च + प्रजाद्यण् स्वार्थे ] पक्षिभेदः; क्रुङ्;  
क्रुञ्चः; क्रुञ्चा; क्रौञ्चा; कालिकः; कालीकः;  
कलिकः; 'क्रौञ्चो वृष्योऽतिरुचिकृदश्मरीं हन्ति नित्यशः।  
शोषमूर्च्छाहरो दीप्यो हन्ति कासमरोचकम्।' पर्वत-  
विशेषः; 'एतेषां मानसी कन्या मेना नाम महागिरेः।  
पत्नी हिमवतः श्रेष्ठा यस्या मैनाक उच्यते। मैनाकस्य  
सुतः श्रीमान् क्रौञ्चो नाम महागिरिः। पर्वतप्रवरः  
शुभ्रो नानारत्नसमन्वितः'—इति हरिवंशे (१९।१३।  
१४)। कुरुरपक्षी; द्वीपभेदः; 'क्रौञ्चद्वीपः समुद्रेण  
दधिमण्डोदकेन च। आवृतः सर्वतः क्रौञ्चद्वीपतुल्येन  
मानतः। दधिमण्डोदकश्चापि शाकद्वीपेन संवृतः।  
क्रौञ्चद्वीपस्य विस्ताराद् द्विगुणेन महामुने!'—इति  
विष्णुपुराणे (२।४।५७-५८)। क्रौञ्चद्वीपावपतिः प्रिय-  
व्रतराजपुत्रो घृतपृष्ठः; 'तथा च बहिः क्रौञ्चद्वीपो द्विगुणः  
स्वमानेन क्षीरोदेन परीत उपकल्पतो वृतो यथा, कुण्डद्वीपो  
घृतोदेन यस्मिन् क्रौञ्चो नाम पर्वतराजो द्वीपनामनिर्वर्तक  
आस्ते। तस्मिन्नपि प्रैयव्रतो घृतपृष्ठो नामाधि-  
पतिः—इति भागवते (५।२०।१८-२०)। दैत्यविशेषः;  
मयदानवपुत्रः; 'ईहामृगगणाकोर्णा पवनावृगतद्रुमाम्।  
निर्मितां स्वेन पुत्रेण क्रौञ्चेन दिवि कामगाम्'—इति  
हरिवंशे (४६।२४)। 'क्रौञ्चे क्रौञ्चो हतो दैत्य  
क्रौञ्चाद्री हेमकन्दरे। स्कन्देन युद्ध्वा मुचिरं चित्रमायी  
सुमायिना। सु शैलस्तस्य दैत्यस्य ख्यातिश्चित्रेण कर्मणा।

केतुतामगमत्तस्य नाम्ना कौञ्चः स उच्यते—इति मृगेन्द्रसंहितायाम् । अर्हतां ध्वजः; राक्षसविशेषः । २४४  
 कौञ्चारातिः पुं. [ कौञ्चस्य कौञ्चपर्वतस्य दैत्यस्य वा अरातिः शत्रुः ] कार्तिकेयः; कौञ्चारिः; परशुरामः । १९  
 क्लमयः, क्लमयुः पुं. [ क्लम् + 'शमादिभ्योऽयच्' इति अथच् (१), बाहुलकादथुच् अट्वत्त्वात् (२) ] आयासः; क्लमः; (६०१) क्लम्यन् त्रि. [ क्लिच् + कर्त्तरि क्त ]; आर्द्रम्; गङ्गायाः सलिलक्लिन्ने भस्मन्येषां महात्मनाम् । स्वर्गं गच्छेदुरत्यन्तं सर्वं च प्रपितामहाः—इति रामायणे (१।४२।१९) । 'गीला' इति भाषा । ६०१

क्लिन्नाक्षः त्रि. [ श्लेष्मादिक्लेदेन क्लिन्ने क्लेदयुक्ते अक्षिणी यस्य ] श्लेष्मादिना क्लिन्नचक्षुः; कफादिजनितक्लेदयुक्तं चक्षुर्यस्य सः; चुल्लः; चिल्लः; पिल्लः [ कर्मधारयेण क्लिन्ने चक्षुषि क्ली. ] ६०७

क्लीवः पुं-क्ली. [ क्लीव् अघ्याष्ट्ये, 'इगुपघेति' क, पृषोदरादित्वाद् वत्वम् ] स्त्रीपुरुषभिन्नः; पण्डः; नपुंसकं; तृतीयप्रकृतिः; षण्डः; सण्डः; शण्डः; पुरुषत्वहीनः; 'न मूत्रं फेनिलं यस्य विष्ठा चाप्सु निमज्जति । मेढ्रश्चोन्मादशुक्राम्यां हीनः क्लीवः' स उच्यते—इति उद्गाहत्त्वे । 'नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते पतौ । पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते—इति पराशरसंहितायाम् । त्रि. विक्रमहीनः (८२०); कचिवद्राजन् न निर्वेदादापन्नः क्लीवजीविकाम्—इति महाभारते ( ३।३३।३३ ) । धर्मकार्यादौ निरुत्साहः; 'आचारहीनः क्लीवश्च नित्यं याचनकस्तथा—इति मनुः ( ३।१६५ ) । ३४७

क्लेशः पुं. [ क्लिश् + भावे घञ् ] दुःखम्; आदीनवः; आस्रवः; 'क्लेशोऽधिकतरस्तेषामग्न्यक्तासक्तचेतसाम्—इति भगवद्गीतोयाम् ( १२।५ ) । कोपः; व्यवसायः । ८५३

क्लोम [ न् ] क्ली. [ क्लुङ् गतौ + मनिन् ] फुफ्फुसं; पुफ्फुसं; तिलकं; क्लोमं; कोमम्; 'फेफड़ा' इति भाषा । 'वाह्लोर्दयोर्मध्ये वक्षः तन्मध्ये हृदयं तत्पार्श्वे क्लोम पिपासास्थानम्—इति वैद्यकम् । 'उदकवहे द्वे तयोर्मूलं तालु क्लोम च—इति सुश्रुते शारीरस्थाने नवमोऽध्यायः । ( क्लोमम् इत्यकारान्तोऽपि ) । ६३६

क्षणः पुं. [ क्षणोति हन्ति नाशयति वा सर्वं यथाकालम्

आयुरवसानं वा । काल एव युगान्ते सर्वमात्मसात् करोतीत्यर्थः । स एवांशभेदेन नानाख्यो भवतीत्यर्थः ] अवसरः; [ क्षणोति दुःखं नाशयति उत्सवकाले, क्षणु हिंसायाम् + अच् ] उत्सवः ( ७६३ ); 'नवानचोऽधो बृहतः पयोधरान् समूढकर्पूरपरागपाण्डुरम् । क्षणं क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना—इति माघे ( १।४ ) । ( ८५१ ) त्रिशत्कलापरिमितकालः; दशपलपरिमितः; निमेषक्रियावच्छिन्नस्य कालस्य चतुर्थभागः; 'आयुषः क्षण एकोऽपि न लभ्यः स्वर्णकोटिभिः । स चेत्तु विफलो याति का नो हानिस्ततोऽधिका—इति शब्दार्थचिन्तामणिः । 'क्वचित्तुष्टः क्वचित्तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे । अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयावहः—इति शिष्टोपदेशः । अवसरः; निर्वापारस्थितिः; परतन्त्रत्वं; मध्यम्; उत्सवः; पर्वः; प्रशस्तमुहूर्तः; 'अथ काले शुभे प्राप्ते तिथौ पुण्ये क्षणे तथा—इति नलोपाख्याने ( ५।१ ) । ७५०

क्षणवा स्त्री. [ क्षणम् उत्सवं ददाति । क्षणद + स्त्रियां टाप् ] रात्रिः; 'इमं लोकममुं चैव रमयन् सुतरां यदून् । रेमे क्षणदया दत्तक्षणस्त्रीक्षणसौहृदः—इति भागवते ( ३।३।२१ ) । हरिद्रा । १०७

क्षणमात्रानुरागी [ न् ] त्रि. [ क्षणमात्रं स्वल्पकालम् अनुरागो यस्य ] हरिद्रारागः; हरिद्रारागकः । ३७५

क्षणिका स्त्री. [ क्षणिक + स्त्रियां टाप् ] विद्युत्; क्षणकालमात्रस्यायिनी; 'योऽस्ति यस्य यदा मांसमुभयोः पश्यतान्तरम् । एकस्य क्षणिका प्रीतिरन्यः प्राणैर्वियुज्यते—इति हितोपदेशे ( १।१५४ ) । ६०

क्षतम् क्ली. [ क्षण्यते वध्यतेऽनेन । क्षण् + करणे क्त ] 'स्रवद्रक्तपूयादि; व्रणः; अरुः; ईर्म; क्षणनुः; तद्वति त्रि. । विदारणम्; 'नखक्षतानीव वनस्थलीनाम्—इति कुमारसम्भवे ( ३।२९ ) । विनाशः; 'क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः' । त्रि. ताडितः; विद्धः; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि क्षतो गोत्रभिदप्यमर्षणः—इति रघुवंशे ( ३।५३ ) । क्षतियुक्तः; 'रुद्राणामपि मूर्धानः क्षतहुङ्कारशंसिनः ।' रोगविशेषः; 'मधुकाष्ठपलं द्राक्षा प्रस्थक्वाथे घृतं पचेत् । पिप्पल्यष्टपले कल्के प्रस्थं सिद्धे च शीतले । पृथगष्टपलं क्षौद्रशर्कराभ्यां विमिश्रयेत् । समं सन्तु-



क्षतक्षीणे रक्तगुल्मेपु तद्धितम्—इति चरकः । ६३०  
क्षतजम् क्ली. [ क्षतात् व्रणात् जातम् उत्पन्नम् इति ।  
जन्+ङ ] रक्तः; 'सच्छिन्नमूलः क्षतजेन रेणुः  
तस्योपरिष्ठात् पवनावधूतः' पूयम् । ६३२  
क्षतव्रतः त्रि. [ क्षतं भ्रष्टं व्रतमस्य ] ध्वस्तनियमः;  
अवकीर्णी । ४०४

क्षत्ता [ ऋ ] पुं. [ क्षद् संवृती । सौत्रधानुरयम् । 'तून्तृचौ  
शंसिक्षदादिभ्यः संज्ञायां चानिटी' इति संज्ञायां तृच्  
स चानिट् ] द्वाःस्थः; सारथिः (४४८); दासीपुत्रः;  
'ततः प्रीतमनाः क्षत्ता धृतराष्ट्रं विशाम्पते ! उवाच  
दिष्ट्या कुरवो वर्द्धन्त इति विस्मितः'—इति महा-  
भारते (११२०११७) । नियुक्तः; ब्रह्मा; क्षत्रियायां  
शूद्राज्जातः; 'शूद्रादायोगवः क्षत्ता चाण्डालश्चाधमो  
नृणाम् । वैश्यराजन्यविप्रासु जायन्ते वर्णसङ्कराः'—  
इति मनुः (१०११२) । मत्स्यः । ४२४

क्षत्रः पुं. [ क्षद्+गुधुवीपचिचिचयमिसदिकदिभ्यस्त्रः' इति  
त्र । यद्वा क्षतः क्षतात् त्रायते इति, त्रै+क ] क्षत्रियः;  
'क्षतात् किल त्रायत इत्युदयः क्षत्रस्य शब्दो भूवनेषु  
रूढः'—इति रघुवंशे (२१५३) । 'नाश्वकर्णादिवत् केवल-  
रूढः किन्तु पङ्कजादिवद् योगरूढः'—इति मल्लिनाथः ।  
क्ली. [ क्षतः त्रायते इति, क्षत्+त्रै+क ] शरीरं;  
तगरं; क्षत्रियकुलं; 'अक्रदिहस्ता सुकृते परस्पायं  
त्रासाये वरुणेना स्वन्तः । राजानां क्षत्रमहणीयमाना  
सहस्रस्युणं विभूयः सह द्वौ'—इति ऋग्वेदे  
(५।६२।६) । ४२१

क्षत्रियः पुं. [ क्षत्रे राष्ट्रे साधुः, क्षत्रस्यापत्यं वा, 'क्षत्राद्  
घः' इति जातो घ । क्षदति रक्षति जनान् इति क्षत्रः ।  
क्षद् संवृती सौत्रः, ततः 'गुधीत्यदिना' त्र । क्षतात्  
त्रायते इति डे पृषोदरादित्वात् क्षतान्त्याकारलोपे वा  
क्षत्रः । क्षत्रो द्वितकारः । पुनर्पुंसकयोः क्षत्रः । 'पतिर्मम  
क्षत्रमशेषभूमृत्प्रभाभिरामो भरतश्च जिष्णुः'—इति  
राघवपाण्डवीये । क्षत्र एव क्षत्रियः, स्वार्थे अपत्यार्थे  
वा घ इत्यन्ये ] ब्रह्मवाहुजवर्णविशेषः; 'लोकानां तु  
विवृद्धयर्थं मुखवाहुरुपादतः । ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं  
शूद्रं च निरवर्तयत्'—इति मनुः (१-३१) । (४२१)  
मूर्द्धाभिपिक्तः; राजन्यः; वाहुजः; विराट्; क्षत्रः;  
द्विजलिङ्गी; राजा; त्राभिः; नृपः; मूर्द्धकः; पाथिवः;

सार्वभौमः; 'ब्राह्मयत्तं क्षत्रियैर्मानवानां लोकश्रेष्ठं  
धर्ममासेवमानैः । सर्वे धर्माः सोपधर्मास्त्रियाणां राज्ञो  
धर्मादिति वेदात् शृणोमि'—इति भागवतम् । वटुक-  
भैरवः; 'क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट् ।  
इमशानवासी मांसागो खर्पराशी मखान्तकृत्'—इति  
विश्वसारोद्धारतन्त्रे आपद्द्वारकल्पे वटुकभैरवस्तो-  
त्रम् । ३१२

क्षपणः त्रि. [ क्षपयति क्षिपति दूरीकरोति लज्जाम् इति ।  
क्षप्+प्रेरणे, कर्त्तरि ल्यु । क्षपयति विषयरागम् इति  
वा ] क्षपणकः; जैनः; निर्लज्जः; बौद्धसंन्यासी;  
[ भावे ल्युट् ] क्षपणम्; 'भुवत्वास्तोऽन्यतमस्यान्नममत्या  
क्षपणं ऋहम्'—इति मनुः (४।२२२) । ३१५

क्षपा स्त्री. [ क्षपयति दूरयति चेष्टामिन्द्रियाणाम् ।  
क्षप्+अच् टाप् ] रात्रिः; 'राजानं तु कुरुश्रेष्ठ ते  
हंसमधुरस्वराः । आश्वामयन्तो विप्राग्रचाः क्षपां सर्वा  
व्यनोदयन्'—इति महाभारते (३।१।४३) । हरिद्रा ।  
१०७

क्षमः त्रि. [ क्षमते इति, क्षम्+अच् ] शक्तः; सहः;  
प्रभूष्णः; रघुवंशे (११।६) । 'इदं किलाव्याजं मनोहरं  
वपुः तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति'—इति शाकुन्तले ।  
हितः; क्ली. [ क्षम्+पचाद्यच् ] युक्तम्; 'यदि यथा  
वदति क्षितिपस्तथा त्वमसि किं पुनरुत्कुल्या त्वया ।  
अथ तु वेत्सि शुचिब्रतमात्मनः पतिगृहे तव दास्यमपि  
क्षमम्'—इति शाकुन्तले । ३८६

क्षमा स्त्री. [ क्षमते आत्मोपरिस्थितानां जीवानाम् अपराधं  
या । क्षम्+अच्+पित्वादङ् वा तत्तृष्ठाप् ] पृथिवी;  
'विभूषणान्युन्मुमुक्षुः क्षमायां पेतुर्वभञ्जुर्वलयानि चैव'  
इति भट्टिः (३।२२) । धान्तिः (७२५); 'बाह्ये  
चाध्यात्मिके चैव दुःखे चोत्पादिते क्वचित् । न कुप्यति  
न वा हन्ति सा क्षमा परिकीर्तिता'—इत्येकादशी-  
तत्त्वम् । रात्रिः; दुर्गा; 'जयन्ती मङ्गला काली  
भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा शिवा क्षमा धात्री स्वाहा  
स्वधा नमोऽस्तु ते'—इति दुर्गावार्तनम् । 'क्षमा तु  
श्रीमुखे कार्या योगपट्टोत्तरीयका । पद्मासनकृताधारा  
वरदोद्यतपाणिनी । शूलमेखलसंयुक्ता प्रगान्ता योग-  
संस्थिता । सितपुष्पोपहारेण सितहोमेन सिद्धिदा'  
इति देवीपुराणे । खदिरः; गोर्पाविशेषः; 'मया पूर्व

च त्वं दृष्टो गोप्या च क्षमया सह । सुवेशयुक्तो मालावान्  
गन्धचन्दनसंयुतः—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे । १५६

क्षयः पुं. [ क्षि क्षये, 'नन्दिप्रहिपचादिभ्यः' इति अच् ]  
लयः; संवर्तः; प्रलयः; कल्पः; कल्पान्तः; निलयः  
(२९१); नीतिवेदिनां त्रिवर्गान्तर्गतप्रथमवर्गः; क्षयः  
स्थानं च वृद्धिश्च त्रिवर्गो नीतिवेदिनाम्—इत्यमरः ।  
कासरोगविशेषः; यक्ष्मा; शोषः; राजयक्ष्माः रोग-  
राजः; गदाग्रणीः; उष्मा; अतिरोगः; रोगाधीशः;  
नृपामयः; 'श्रुणुत गुणगरिप्टा व्याधियोरं नराणां  
भवति रहितवेष्टो वानुलः प्रणिनां वै । चिरनिरय-  
करोऽप्यं प्राकृतैः कर्मपाकैरिह परिभवकारी मानुषस्य  
क्षयोऽयम् ।' [ क्षयत्यस्मादनेन वा, क्षि+क्षये, अप् ।  
क्षयति विनाशयति इति अन्तर्भूतणिजन्तादच् ] रोग-  
मात्रम् । ११७

क्षय्युः पुं. [ क्षु+द्वितोऽयुच् इति अयुच् ] कासः;  
'भवन्ति गाढं क्षययोर्विघाताच्छिरोऽक्षिनासाश्रवणेषु  
रोगाः । कण्ठास्यपूर्णत्वमतीवतोदः कूजश्च वायोरयवा  
प्रवृत्तिः—इति उत्तरतन्त्रे । क्षुतः; कण्डूयनम् । ६०१

क्षान्तिः स्त्री. [ क्षम्+भावे नितन् ] सत्यपि सामर्थ्ये  
अपकारिणि अपकाराचिकीर्षा; तितिक्षा; सहिष्णुता;  
क्षमा । 'शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च'—  
इति भगवद्गीतायाम् ( १८।४२ ) । ७२५

क्षामः त्रि. [ क्षं+कर्तरि क्त, 'क्षायो मः' इति निष्ठातस्य  
मत्वम् ] क्षीणः; अवलः; 'विद्योतमानं वपुषा तपस्युग्र-  
युजा चिरम् । नातिधामं भगवतः स्निग्धापाङ्गावलीक-  
नात्—इति भागवते ( ३।२।१।८६ ) । विष्णुः ( सर्वरूप-  
त्वान् ); 'आश्रमः ध्रमणः धामः नृपणो वायुवाहनः—  
इति महाभारते ( १३।१४९।१०४ ) । [ स्त्रिया टाप् ]  
'आधिष्णामां विरहयने सन्निपण्णैकपास्वाम्— इति  
मेघदूते ( ८९ ) । ७१७

क्षारः पुं. [ क्षर्+सञ्चलने+ज्वलादित्वाद् ण ] भस्म;  
रसविशेषः; 'क्षारः क्लेदं जनयति मुने त्वाद्गुण्यो  
विदाही शूलश्लेष्मारुचिभूयानुधामूवृच्छोपणश्च ।  
आनाहं सञ्जनयति पुनर्वह्निमन्युक्षणः स्यादेवं प्रोक्तं  
विदितगुणकैः कोविदैः क्षारवीर्यम्—इति हारीते प्रथम-  
स्वाने ६ अध्याये । लवणम्; 'दुःखे मे दुःखमकरोत्रणे  
क्षारमिवाद्दाः । राजानं प्रेतभावस्यं कृत्वा रामं च

तापसम्—इति रामायणे ( २।७३।३ ) । काचः; गुडः;  
टङ्कणः; 'सौभाग्यं टङ्कणं क्षारो घातद्रावकमुच्यते—'  
इति भावप्रकाशः । सर्जिहारः । ६९

क्षारणा स्त्री. [ क्षर् सञ्चलने, ण्यन्ताद् भावे युच्, टाप् ]  
निन्दा; आक्रोशः । १४९

क्षितिः स्त्री. [ क्षियति वसत्यस्याम्, क्षि निवासगत्योः,  
संज्ञायां क्तिच् ] पृथ्वी; 'महालये क्षयं याति क्षितिस्तेन  
प्रकीर्तिता । काश्यपी कश्यपस्येयमचला स्थिररूपतः—  
इति ब्रह्मवैवर्ते । 'मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्टसंमं  
क्षितौ । विमुक्ता वान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति—  
इति मनुः ( ४।२४१ ) । वासः; क्षयः; कालभेदः;  
प्रलयः । रोचनानामग्रघट्टव्यम् । १५६

क्षितिधरः पुं. [ धरतीति धरः, धृ+अच्, क्षितेः धरः;  
षष्ठीसमासः ] पर्वतः; 'अथ विबुधगणास्तानिन्दु-  
मौर्लिविसृज्य क्षितिधरपतिकन्यामाददानः करेण—इति  
कुमारसम्भवे ( ७।९४ ) । कूर्मवासुकिदिग्गजाः । १६५

क्षितिरुहः पुं. [ क्षितौ रोहतीति, रुह्+क ] वृक्षः;  
'सन्धान वः कारिष्यामि सह क्षितिरुहैरहम्—इति  
विष्णुपुराणे । ( १।१५।६ ), १७७

क्षिप्तः त्रि. [ क्षिप्+कर्मणि क्त ] त्यक्तः; नुत्तः; नुन्नः;  
अस्तः; निष्फुतः; विद्धः; ईरितः; निक्षेपकृतवस्तु;  
उद्गोर्णः; 'क्षिप्ता इवेन्दोः स रुचोर्विवेलं मुक्तावली-  
राकलयाञ्चकार—इति भाषे ( ३।७३ ) । पतितः;  
'क्षिप्तमायतमदर्शयदुर्व्यां काञ्चिदामजघनस्य महत्त्वम्—  
इति भाषे ( १०।७७ ) । 'रतेषु उर्व्यां क्षिप्तं पतितम्—  
इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । हतः; 'केशरी निष्ठुर-  
क्षिप्तमृगयूधो मृगाधिपः ।' अवज्ञातः; 'तिरस्कृता  
विप्रलब्धाः शप्ताः क्षिप्ता हता अपि—इति भागवते  
( २।१८।४८ ) । विस्रस्तः; 'नारसिंही नृसिंहस्य विभ्रती  
सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः—  
इति मार्कण्डेये ( ८८।१९ ) । वायुप्रस्तः; विक्षिप्तः ।  
'पागल' इति भाषा । ७६७

क्षिप्रम् क्ली. [ क्षिप्+स्फायितञ्चिच्चञ्चीति' इति रक् ]  
शीघ्रः; तद्युक्ते त्रि. 'विनाशं व्रजति क्षिप्रमामपात्र-  
मिवाम्भसि—इति मनुः ( ३।१७९ ) । मर्मविशेषः;  
'तत्र पादाङ्गुष्ठाङ्गुल्योर्मध्ये क्षिप्रं नाम मर्मं, तत्र  
विद्धस्याक्षेपकेण मरणम्—इति सुश्रुते शारीरस्थाने

पण्डेऽध्याये । ६९७

क्षीणः त्रि [ क्षि + क्त, 'निष्ठायामप्यदर्थे' इति दीर्घः, 'क्षियो दीर्घात्' तस्य नः ] अवलः; दुर्वलः; कृशः; क्षामः; तनुः; छातः; तलिनः; अमांसः; पेलवः; 'ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।' पुं. राजयक्ष्मान्तर्गतरोगविशेषः; 'क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटीग्रहः ।' 'यद्यत् सन्तर्पणं शीतम् अविदाहि हितं लघु । अन्नपानं निषेव्यन्तत् क्षतक्षीणैः सुखार्थिभिः'—इति चरकः । ६९८

क्षीरम् क्ली. [ अद्यते इति, 'घसेः किच्च' इति ईरन् उपधालोपे क्त्वं घत्वं च ] दुग्धं; 'स्त्रीक्षीरं चैव वज्यानि सर्वशुक्तानि चैव हि'—इति मनुः (५।९)। जलं (६४८) : 'अव त्मना भरते केतवेदा अव त्मना भरते फेन मुदन् । क्षीरेण स्नातः कुयवस्य योषे हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः'—इति ऋग्वेदे (१।१०।४।३) । सरलद्रवः; 'जटाः कृत्वा गमिष्यामि न्यग्रोवक्षीरमानय । तत्क्षीरं राजपुत्राय गुहः क्षिप्रमुपाहरत्'—इति रामायणे (२।५२।६९) । २७४

क्षीरोदतनया स्त्री. [ क्षीरोदस्य क्षीरसमुद्रस्य तनया ] क्षीरसगरसुता; लक्ष्मीः । ३१

क्षीवः त्रि. [ क्षीवृ मदे, कर्तरि क्त, 'अनुपसर्गात् फुल्ल-क्षीवैति' तलोपो निपातनात् ] सुरामत्तः; 'मत्ते शौण्डो-त्कटक्षीवाः'—इत्यमरः । 'उन्मत्तभूताः प्लवगा मघुपान-प्रहृषिताः । क्षीवाः कुर्वन्ति हास्यं च कलहांश्च तथापरे'—इति रामायणे (५।६०।१२) । ३८६

क्षुण्णम् त्रि. [ क्षुद्यते इति, क्षुद् संपेपणे, कर्मणि क्त ] प्रहतम्; अम्यस्तम्; 'रेखामात्रमपि क्षुण्णादामनोर्वत्मनः परम्'—इति रघुवंशे (१।१७) । 'उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनैः, अजीर्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम् । उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विनः, त्वमग्रभूमिर्निरपायसंश्रया'—इति माघे (१।३२) । चूर्णीकृतम्; 'सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुर-क्षुण्णमहीतलः । शृङ्गाम्यां पर्वतानुच्चाश्चिक्षेप च ननाद च । वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत'—इति मार्कण्डेये (८।३।२४-२५) । ३५२

क्षुत् [ ध् ] स्त्री. [ क्षुध् + संपदादित्वाद् भावे क्विप् ] क्षुधा; 'तात ! तात ! ददस्वान्नम् अम्बाम्ब ! भोजनं दद । क्षुन्मे बलवती जाता जिह्वाप्रं शुष्यते तथा'—

इति मार्कण्डेयपुराणं (२।९।५४) । ३६१

क्षुद्रः त्रि. [ क्षुणत्ति सौजन्यं चूर्णीकरोति । क्षुद् + 'स्फायितञ्चीति' इति रक् ] अवमः; 'क्षुद्रेऽपि नूनं शरणं प्रपन्ने ममत्वमुच्चैः शिरसां सतीव'—इति कुमार-सम्भवे (१।१२) । कृपणः (३४७); दरिद्रः (३४८); अल्पः (६८८); 'तं भीमः समरश्लाघी बलेन बलि-नाम्बरः । जघान पशुमारेण व्याघ्रः क्षुद्रमृगं यथा'—इति महाभारते (३।१०।२४) । क्रूरः (७९६); तुच्छः; 'क्षुद्रं हृदयदीर्घत्यं त्यवत्वोत्तष्ठि परन्तप !'—इति भगवद्गीतायाम् (२।३) । ३४६

क्षुद्रघण्टिका स्त्री. [ घण्टा + अल्पार्थे कन्, टाप् इत्वञ्च, तत. क्षुद्रा घण्टिका इति कर्मधारयः ] कट्यलङ्कार-विशेषः; किङ्किणी; क्षुद्रघण्टी; प्रतिसरा; किङ्किणीका; कङ्कणी; कङ्कणिका; क्षुद्रिका; घर्घरी । 'घटी' 'धूधरु' इत्यादि भाषा । ५६०

क्षुद्रतण्डुलः पुं. [ क्षुद्रः हीनश्चासौ तण्डुलः ] कणः; कण-रूपो व्रीहिः । ५७८

क्षुद्रधान्यम् क्ली.—पुलाकः; अणु-अन्नम् । ८२९

क्षुद्रनासिकः त्रि. [ क्षुद्रा नासिका नासाऽस्य ] स्वल्प-नासायुक्तः; नःक्षुद्रः । ६०७

क्षुद्रपक्षिका स्त्री.—चटकिका; ग्रामचटका; कलविद्धी । २५३

क्षुद्रशङ्खः पुं. [ क्षुद्रः शङ्खः स्वल्पशङ्खजातिः ] शङ्खनखः; शङ्खनकः; शूलकः; शम्बूकः; मयशङ्खकः । ६६४

क्षुद्रा स्त्री. [ क्षुद् + स्फायितञ्चिचञ्चिचकिक्षिपि-क्षुदीति' इति रक् ततष्टाप् ] सरधा; मधुमक्षिका; वेश्या (४९०); नदी (५९२); व्यङ्गा; कण्ट-कारिका; 'अनाक्रान्ता स्पृही व्याघ्री भण्टाकी च निदिग्धिका । सिही धामनिका क्षुद्रा बृहती कण्टकारिका । 'कण्टकारी तु दुष्पशा क्षुद्रा व्याघ्री निदिग्धिका । कण्टा-लिका काण्टकिनी धावनी बृहती तथा ।' चाङ्गेरिका; हिस्त्रा; मक्षिकामात्रं; वादरता; गवेधुका । २५६

क्षुद्रण्डः त्रि. [ अण्डाद् अण्डसंघाताद् उत्पन्नः क्षुद्रः मत्स्यशिशुसंघः । 'वाहिताग्न्यादिपु' इति पूर्वनिपातः ] मत्स्यशिशुसमूहः; पोताघानम् । ६६१

क्षुधा स्त्री. [ क्षुध् वुभुक्षायाम्, सम्पदादित्वात् क्विप्, हलन्तत्वाद् वा टाप् ] भोजनेच्छा; अशानाया; बुभुक्षा;

क्षुत्; जिघत्सा; 'व्याधयो निर्जिताः सर्वे क्षुधया नृप-  
सत्तम! कुण्डली मुकुटी स्रग्वी तथैवालङ्कृतो नरः।  
क्षुधातो न विराजेत प्रेतवत्पितो नृणाम्। स्त्रीरत्नं  
विविधान् भोगान् वस्त्राण्याभरणानि च। न चेच्छति  
नरः कश्चित् क्षुधया कलुषीकृतः। यथा भूमिगतं  
तोयं रविरश्मिभिः शुष्यति। शरीरस्थस्तथा धातुः  
शुष्यते जाठराग्निना। न शृणोति न चाघ्राति चक्षुषा  
न च पश्यति। दह्यते वेपते मूढः शुष्यते च क्षुधादितः।  
मूकत्वं बधिरत्वं च जरान्वत्त्वं तु पङ्गुताम्। रौद्रं  
मर्यादहीनत्वं क्षुधा सर्वं प्रवर्तते। भगिनीं जननीं पुत्रं  
भार्यां दुहितरं तथा। भ्रातरं स्वजनं वापि क्षुधाविष्टो  
न विन्दति—इति वह्नपुराणे। ३६१

क्षुधितः त्रि. [ क्षुध् + कर्त्तरि क्त, यद्वा क्षुधा जातास्य  
इति। तारकादित्वादितच् प्रत्ययः ] क्षुधान्वितः;  
बुभुक्षितः; जिघत्सुः; अशनायितः। ३६०

क्षुपः पुं. [ क्षुप् + 'इगुपधेति' क ] क्षुपकः; ह्रस्वशाखा-  
क्षिफः; क्षुद्रवृक्षः; 'तस्या रूपेण स गिरिवंशेन च  
विशेषतः। स सवृक्षक्षुपलतो हिरण्मय इवाभवत्—  
इति महाभारते (१।१७२।२८)। गुच्छः (५७९);  
श्रीकृष्णात् सत्यभामायां जातपुत्रविशेषः; 'जशिरे सत्य-  
भामायां भानुर्भीमरयः क्षुपः। रोहितो दीप्तिमाश्चैव  
ताम्रजाक्षो जलान्तकः—इति हरिवंशे १६३ अध्यायः।  
इक्ष्वाकुराजपिता; 'आसीत् कृतयुगे तात! मनुर्दण्डधरः  
प्रभुः। तस्य पुत्रो महाबाहुः प्रसन्धिरिति विश्रुतः। प्रस-  
न्धेरभवत् पुत्रः क्षुप इत्यभिसंज्ञितः। क्षुपस्य पुत्रस्त्वक्षा-  
कुर्महीपालोऽभवत्प्रभुः—इति महाभारते (१।४।४।२-  
४) द्वारकापश्चिमदिक्स्थपर्वतः; 'दक्षिणस्यां लतावेष्टः  
पञ्चवर्णो विराजते। इन्द्रकेतुप्रतीकाशः पश्चिमस्यां  
तथा क्षुपः—इति हरिवंशे १५७ अध्यायः। १७८

क्षुधितः त्रि. [ क्षुध् + कर्त्तरि क्त ] भीतः; रुषाद्याविष्टः;  
सञ्चलितः (इति क्षुध्धात्वर्थदर्शनात्)। ३५५

क्षुमा स्त्री. [ क्षु + मक् + टाप् ] अतसी; शणः; नीलिका;  
लताभेदः। ५८२

क्षुरप्रः पुं. [ क्षुर इव पूर्णाति हिनस्ति छेदनक्रियां पूरयति  
वा। पू + क, कित्वाभ्र गुणः ] वाणविशेषः; 'स तु द्रोणं  
त्रिसप्तत्या क्षुरप्राणां समार्पयत्—इति महाभारते  
(४।५३।४६)। क्षुरपानामकषासच्छेदनास्त्रम्। ४६९

क्षुरमूर्त्वी [ न् ] पुं. [ क्षुरं मृदनातीति। क्षुर + मृद् +  
णिनि ] नापितः; 'पुस्तं लेप्यादिकर्म स्यात् नापि-  
तश्चण्डिलः क्षुरो। क्षुरमर्दी दिवाकीर्तिर्मूण्डकोऽन्ताव-  
साय्यपि—इति हेमचन्द्रः। ५८९

क्षुरिका स्त्री. [ क्षुर + डीप् स्वार्थे कन्, टाप्, पूर्वह्रस्वश्च ]  
क्षुरी; छुरिका; शस्त्री; असिपुत्री; असिधनुका; क्षुरी;  
छूरी; कृपाणिका; धेनुपुत्री; छूरिका; पालङ्क्यशार्क;  
मृत्पात्रविशेषः; कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'अमृ-  
तनादकालाग्निस्त्रक्षुरिकासर्वसारेत्युपक्रम्य सरस्वतीरह-  
स्यानां कृष्णयजुर्वेदगतानां द्वात्रिंशत्सङ्ख्याकानाम्  
उपनिषदां सहनाववत्विति शान्तिः—इति मुक्तिकोप-  
निषदि। ४७३

क्षुल्लकः त्रि. [ क्षुल्लं लाति, क, क्षुल्ल + स्वार्थे कन् ]  
क्षुद्रः; स्वल्पः; नीचकः; कनिष्ठः; दरिद्रः; दुःखितः;  
पामरः; 'येनोपशान्तिर्भूतानां क्षुल्लकानामपीहताम्।  
अन्तहितोऽन्तर्हृदये कस्मान्नो वेद नाशिषः—इति  
भागवते (४।३०।२९)। खलः। ३४७

क्षुल्लकः पुं. [ क्षुल्ल + संज्ञायाम् स्वल्पार्थे वा कन् ] क्षुद्र-  
शङ्खः; 'कङ्कुकुण्डं गैरिकं शङ्खं कासीसं टङ्कणं तथा।  
नीलाञ्जनं शुक्तिभेदाः क्षुल्लकाः सवराटकाः।  
जम्बीरवारिणा स्वन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा।  
शुद्धिमायान्त्यमी योज्या भिषग्भिर्योगसिद्धये—इति  
भावप्रकाशः। ६६४

क्षेत्रम् क्ली. [ क्षि + ष्टृन् ] कलत्रम्; 'क्षेत्रभूता स्मृता  
नारी बीजभूतः स्मृतः पुमान्। क्षेत्रबीजसमायोगात्  
सम्भवः सर्वदेहिनाम्—इति मनुः (९।३३)। शरीरम्  
(५१०); 'इदं शरीरं कौन्तेय! क्षेत्रमित्यभिधीयते—  
इति भगवद्गीता (१।३।१)। (५७४) भूमिः; वप्रं;  
केदारः; बलजं; निष्कुटः; राजिका; पाटीरः;  
'कैदारकं तु कैदार्यं क्षेत्रं कैदारकं तथा। वारदं चेति  
पर्यायः क्षेत्रवृन्दे निगद्यते—इति शब्दरत्नावली।  
मेवादिद्वादशराशयः; 'राशिनामानि च क्षेत्रं भूमिं  
गृहनाम च। मेवादीनां च पर्यायं लोकादेव विचिन्तयेत्।'  
ग्रहाणां क्षेत्राणि—'कुजशुक्रबुधेन्द्रकौसौम्यशुक्रावनी-  
भुवाम्। जीवाकिमानुजेज्यानां क्षेत्राणि स्युरजादयः—  
इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'मेघमङ्गारकक्षेत्रं वृषं शुक्रस्य  
कीर्तितम्। मिथुनस्य वृषो ज्ञेयः सोमः कर्कटकस्य तु।

सूर्यक्षेत्रं भवेत्सिंहः कन्याक्षेत्रं बुधस्य च । धनुः सुर-  
गुरोश्चैव शनेर्मकरकुम्भकौ । मीनः सुरगुरोश्चैव ग्रहक्षेत्रं  
प्रकीर्तितम्—इति गारुडे ६० अध्यायः । महाभू-  
तादि-धृत्यन्तगीतापरिभाषितः पदार्थसमूहः । यथा—  
'महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च । इन्द्रियाणि  
दर्शकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः । इच्छा द्वेषः सुखं  
दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः । एतत् क्षेत्रं समासेन  
सविकारमुदाहृतम्' (१३।६) । मनः; सप्तद्वीपा  
पृथिवी; 'यावत् सूर्य उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति ।  
सर्वं तद्यौवनाश्वस्य मान्धातुः क्षेत्रमुच्यते'—इति  
भागवते (१।६।३७) । सिद्धस्थानम्; 'पाटलिपुत्रं क्षेत्रं  
लक्ष्मीसरस्वत्योः'—इति कथासरित्सागरे (३।७८) ।  
गृहं; नगरम् । ४९४

क्षेत्रज्ञः पुं. [ क्षेत्रं शरीर ममेति कृत्वा यो जानाति, आपा-  
दतलमस्तकं ज्ञानेन विपयीकरोति, स्वाभाविकेन औप-  
देशिकेन वेदनेन विपयीकरोति वा, कृषीवलवत् तत्फल-  
भोक्तृत्वादित्यर्थः । जा+इगुपयज्ञाप्रोक्तिरः कः' इति  
क ] शरीराधिदैवतम्; आत्मा; पुरुषः; क्षेत्रेषु सर्वदेहेषु  
सर्वान्तर्गमितया विराजमानः सन् 'सर्वज्ञः सर्वशक्ति-  
मान् सर्वक्षेत्रपालयिता' इत्यात्मस्वरूपं जानाति अनु-  
भवति यः प्रज्ञानधनः परमपुरुषः स सर्वान्तरात्मा  
असंसारी परमेस्वरः [ क्षेत्रं शरीरं जानातीति, क्षेत्रं  
शरीरे जानाति ज्ञानवान् भवतीति वा क्षेत्रज्ञः ];  
सुबीजः; पुरुषः; अन्तर्यामी; ईश्वरः; पुद्गलः;  
परसंज्ञकः; प्रधानम्; 'इदं शरीरं कीन्तेय ! क्षेत्रमित्य-  
भिधीयते । एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ।  
क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत । क्षेत्रक्षेत्रज्ञ-  
योर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम'—इति भगवद्गीता (१३।  
१।२) । विष्णुः; 'पूनात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा-  
गतिः । अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च'—  
इति महाभारते (१३।१४९।१५) । वटुकभैरवः;  
'क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्' इति वटुकभैरवस्तोत्रे । छेकः;  
कृषकः; त्रि. विदग्धः; कुशलः; चतुरः (३३५) । १३४  
क्षेत्राजीवः त्रि [ क्षेत्रेण क्षेत्रोद्भवसस्यादिना आजीव-  
तीति । क्षेत्र+आ+जीव्+कर्त्तरि अच् ] कर्षकः । ५७४  
क्षेपणिः, क्षेत्रणी स्त्री. [ क्षिप्+वाहुलकाद् अणि, डीप्  
वा ] नौकादण्डः; 'डॉडा' इति भाषा । जालभेदः;

अस्त्रविशेषः; 'क्षेपण्यस्तोमराश्चोप्रयश्चक्राणि मुश-  
लानि च'—इति रामायणे (६।७।२४) । ६७२  
क्षेमङ्करः त्रि. [ क्षेमं करोतीति । क्षेम+कृ+क्षेम-  
प्रियमद्रेण् च' इति अण् चात् खच् मुम् च ] मङ्गल-  
कारकः; अरिप्टतातिः; शिवतातिः; शिवङ्करः;  
क्षेमकारः; भद्रङ्करः; शुभङ्करः । ३४०  
क्षैरेयी स्त्री. [ क्षीरे संस्कृतं यदन्नम् । ढक् ततः स्त्रियां  
डोप् ] परमान्नं; क्षीरसम्बन्धिनि त्रि. । ३२०  
क्षोणिः, क्षोणी स्त्री. [ क्षै+वाहुलकात् डोनि, वां डीप् ]  
पृथिवी, 'अक्रन्दयो नद्योऽरीरुवह्नुना कथा न क्षोणी-  
भिर्ग्रमा समारत'—इति ऋग्वेदे (१।५।४।१) । १५६  
क्षोदः पुं. [ क्षुद्यते इति, क्षुद्. संपेषणे+कर्मणि भावे च  
घञ् ] चूर्णः; 'सापि प्राग्वासनायोगाल्लिङ्गाचनरता  
सती । हित्वा मलयजक्षोदं विभूतिं बह्वमंस्त वै'—इति  
काशीखण्डे (३३।२३) । रजः; पेषणम्; 'कीर्णः'  
पिप्टातकौषैः कृतदिवसमुखैः कुड्कुमक्षोदगीरहेगा-  
लङ्कारभाभिर्भस्ममितशिरःशेखराङ्कैः किरातैः'—इति  
रत्नावलीनाटिका । ४४३  
क्षोणिः, क्षीणी स्त्री. [ क्षु+वाहुलकात् नि, णत्वं, वृद्धिः;  
वा डीप् च ] पृथिवी; 'इज्या च यागघाराच्च क्षोणी  
क्षीणालये च या । महालये क्षयं याति क्षितिस्तेन  
प्रकीर्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिस्रष्टे । 'तस्य  
चोद्धरतः क्षीणीं स्वदंष्ट्राप्रेण लीलया'—इति भागवते ।  
१५६  
क्षीद्रम् क्ली. [ क्षुद्राभिः पिङ्गलवर्णमक्षिकाभिः सरथाभि-  
निमित्तम् । क्षुद्र+क्षुद्राभ्रमरवटरपादपादव्' इति  
अञ् ] मधु; जलं; पिङ्गलवर्णक्षुद्रमक्षिकाकृतकपिल-  
वर्णमधु; 'माक्षिकाः कपिलाः सूक्ष्माः क्षुद्राह्यास्तत्कृतं  
मधु । मुनिभिः क्षीद्रमित्युक्तं तद्वर्णात् कपिलं भवेत् ।  
गुणैर्माक्षिकवत् क्षीद्रं विशेषान्मेहनायानम्'—इति भाव-  
प्रकाशः । पुं. [ क्षुद्र+अण् ] चम्पकवृक्षः; वर्णसङ्कर-  
विशेषः; 'चतुरो मागवी मूते क्रूरान् मायोपजीविनः ।  
मांसं स्वादुकरं क्षीद्रं सौगन्ध्यनिधि विश्रुतम्'—इति  
महाभारते (१३।४८।२२) । क्षुद्रता । ६२१  
क्षीभम् पुं-कन्धो. [ क्षु+भम् । ततोऽण् वृद्धिश्च ] पट्टवस्त्रं;  
दुकूलम्; 'क्षीममट्टे दुकूले स्यादन्तर्वासनेऽपि च'—इति  
विश्वप्रकाशः । अट्टालकः; अट्टः; अतसोवस्त्रम् ।

‘स गौरसर्पैः क्षीमं पुनः पाकान्महीमयम् । कारुहस्तः शुचिः पण्यं भिक्षं योषिन्मुखं तथा’—इति याज्ञवल्क्यः । शणजवस्त्रं; [ क्षुमाया विकारः; स्त्रियां क्षीमी ] कन्था इत्यादिः । ‘क्षीमं द्रुकूले स्याददृष्टं पुंनपुंसकयोरिह । क्षीमं तु शणजेषुपि स्यादतसीजे नपुंसकम्’—इति शब्द-रत्नावल्याम् । ‘कृष्णा च क्षीमसंवीता कृतकौतुकमङ्गला । कृताभिवादानाश्वश्रवास्तस्थौ प्रह्ला कृताञ्जली’—इति महाभारते (११२००१३) । ५४९

क्षौरम् क्ली। [ क्षुरस्य कार्यं कर्म, क्षुरकृतं कर्मोति भावः, क्षुरस्येदं वा ] क्षुरकर्म; मुण्डनं; भद्राकरणं; वपनं; परिव्रापनम्; ‘स्वयं माल्यं स्वयं पुष्पं स्वयं घृष्टं च चन्दनम् नापितस्य गृहे क्षौरं शक्रादपि हरेत् श्रियम् । रवी दुःखं सुखं चन्द्रे कुजे मृत्युर्बुधे धनम् । मानं हन्ति गरोवारे शुक्रे शुकलयो भवेत् । शनी च सर्वदोषाः स्युः क्षौरमत्र विवर्जयेत्’—इति कर्मलोचनम् । ७२१

क्षमा स्त्री। [ क्षमते सहते भारम् अपराधजनितं वात्मस्थानां जीवानां चतुर्विधानाम् इति । क्षम्+अच् उपधाया लोपश्च ] पृथ्वी; ‘द्यौस्तत्सटोत्सिप्तविमानसङ्कुला प्रोत्सर्पत क्षमा च पदातिपीडिता’—इति भागवते (७।८।३३) । १५६

क्ष्वेडः पुं। [ क्ष्वेड्+भावादी घञ्, क्ष्वेडते इति अच् वा ] विषम्; ‘करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना न शम्भोरत्तन्मूलं जननि तव ताटङ्कमहिमा’—इति आनन्दलहरीयाम् (२९) । ध्वनिः; कर्णामयः; कर्णरोगः; पीतघोषावृक्षः; त्रि. दुरासदः; कुटिलः; क्ली. घोषापुष्पं; लोहितार्कपर्णफलम् । ६४६

क्ष्वेडा स्त्री। [ क्ष्विड्+घञ्+टाप् ] सिहनादः; शब्द-विशेषः; ‘एषा सागरमङ्गताभिमततां याता न मे कर्हि-चित्, मुग्धे कण्ठभुवं ब्रवीषि मम किं सक्ष्वेडतामीयुपीम् । क्ष्वेडाराव इहोचितस्तत्रगणत्रतैः सह क्रीडतो, यष्मात्री-रुगतोऽत्रतादिति गिरा गीर्वा कृतोऽनुत्तरः’—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (३६) ‘क्ष्वेडा जनस्य शब्द-विशेषः’—इति तट्टीका । वंशशलाका; कोपातकी । ७८५

ख

खम् क्ली। [ खर्वति मनोऽस्मिन्, खन्यते क्षुभ्यते मनोऽनेन वा । खर्वं गतौ, खन अवदारणे वा, अन्धेभ्योऽनीति ड ] आकाशम्; ‘खं सन्निवेशयेत् खेषु चेष्टनस्पर्शनेऽनिलम्’—

इति मनुः (१२।१२०) । इन्द्रियम्; ‘त्रिराचामेदपः पूर्व द्विः प्रमूज्यात् ततो मुखम् । खानि चैव स्पृशेदद्भि-रात्मान शिर एव च’—इति मनुः (२।६०) । पुरं; क्षेत्रं; शून्यम्; ‘पतस्युदीर्णाम्बुधरान्धकारात् खात्के-चराणां प्रवरो यथाकं’—इति महाभारते (१।८।१७) । विन्दुः; ‘वेदाग्निबाणलाश्वेशच खखाभ्राभ्ररसैः क्रमात्’—इति लीलावत्यां क्षेत्रव्यवहारे । संवेदनं; देवलोकः; शर्म; लग्नाद् दशमराशिः; ‘तनुनिधनखभेशाः केन्द्र-कोणे त्रिलाभे’ इति—जातकप्रकरणे । अभ्रकं; छिद्रम्; ‘खे खानि वायी निःश्वासांस्तेजस्युष्माणामात्मवान्’—इति भागवते (७।१२।२५) । शब्दतन्मात्रम्; ‘एतस्मा-ज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च । खं वायुर्ज्योतिरापः पृथ्वी सर्वस्य धारिणी’—इति माण्डूक्योपनिषदि । चिदानन्दमयब्रह्माकाशम्; ‘कं ब्रह्म खं ब्रह्म यद् वाव कं तदेव खं यदेव खं तदेव कमिति प्राणं च हास्मै तदाकाशं चोचुः’—इति छान्दोग्योपनिषदि । पुं. [ खर्वयति स्वरश्मि-भिरिति, खर्वं+अन्तर्भूतणिच्+ड ] सूर्यः; खकारः; व्यञ्जनद्वितीयवर्णः; ‘खकारं परमाश्चर्यं शङ्खकुन्द-समप्रभम् । कोणत्रययुतं शून्यं विन्दुत्रयसमन्वितम् । गुणत्रययुतं देवि ! पञ्चदेवमयं सदा । त्रिशक्तिसंयुतं वर्णं खकारं प्रणमाम्यहम्’—इति कामधेनुतन्त्रे । ‘खः प्रचण्डः कामरूपी ऋद्धिर्वह्निः सरस्वती । आकाश-मिन्द्रियं दुर्गा चण्डीशस्तापिनी गुरुः । शिखण्डी दन्त-जातीशः कफोणिगंस्तो यदि । शून्यं कपाली कल्याणी सूर्पकर्णोऽजरामरः । शुभ्राग्नेया चण्डलिङ्गो जना व्यञ्जारखङ्गकौ’—इति नानातन्त्रेषु । १३७

खगः पुं। [ खे आकाशे गच्छति । ख+गम्+ड ] सूर्यः; पक्षी (२३८); ‘तं ब्रजन्तं खगश्रेष्ठं वज्रेगेन्द्रोऽम्भ-ताडयत् । वाणः (४४६); ग्रहः; ‘आपोविलमे यदि खगाः स किलेन्दुवारः’—इति ज्योतिषे । देवः; वायुः; ‘तमांसीव यथा सूर्यो वृक्षानग्निर्घनान् खगः’ इति महाभारते वनपर्वणि । शलभः; ‘मांसं गृध्रो वपां मद्गुस्तैलं तैलपकः खगः’—इति मनुः (१२।६३) । महादेवः; ‘आकाशनिर्विरूपश्च निपाती ह्यवशः खगः’—इति महाभारते (१३।१७।६६) । ३७

खचितम् त्रि. [ खच्+क्त ] संयुक्तं; करम्बितं; लुपितं; गुह्यगुण्डितं; करम्बं; कवरं; मिश्रं; सम्पृक्तं; व्याप्तं;

गुण्डितं; छुरितम् । ७४१

खजकः पुं. [ खजति मथ्नातीति । खज्+ण्वल् ] मन्थान-  
दण्डः । २७६

खजाका स्त्री.—पुं. [ खजति मथ्नाति पाकम् । खज् मन्थे+  
'खजेराकः' इति आकः ततष्टाप् ] दर्वी; चमसः;  
'खजाकः पक्षिणि ख्यातः खजाका दविरुच्यते—'  
इत्युणादिवृत्तिटीका । ३१२

खञ्जः त्रि. [ खजि गतिवैकल्ये+अच् ] विकलगतिः;  
खोडः; खोलः; खोरः; खञ्जकः; खोटः; 'लंगड़ा'  
इति भाषा । 'खञ्जो वा यदि वा काणो दातुः प्रेष्योऽपि  
वा भवेत्'—इति मनुः (३।२४२) । 'वायुः कट्याश्रितः  
सकथनः कण्डरामाक्षिप्रेद्यदा । खञ्जस्तदा भवेज्जन्तुः  
पङ्गुः सकथोर्द्वयोर्बधात्'—इति माधवकरः । ६१०

खञ्जनः पुं. [ खजि+कर्त्तरि ल्यु ] पक्षिविशेषः;  
खञ्जरीटः; कणाटीनः; काकच्छदिः; खञ्जखेलः;  
तातनः; मुनिपुत्रकः; भद्रनामा; रत्ननिधिः; खञ्ज-  
खेटः; गूढनीडः; तण्डकः; चरः; काकच्छदः; नील-  
कण्डः; कणाटीरः; कण्णारकः; 'वित्तं ब्रह्मणि  
कार्यसिद्धिरतुला शक्रे हुताशे भयं, याम्यामग्निभयं सुर-  
द्विषि कलिर्लाभः समुद्रालये । वायव्यां बरवस्यगन्व-  
सलिलं दिव्याङ्गना चोत्तरे, ऐशान्यां मरणं ध्रुवं  
निगदितं दिग्लक्षणं खञ्जने ।' २४४

खञ्जरीटः पुं. [ खञ्ज इव ऋच्छतीति । ऋ गती+  
बाहुलकात् कीटन् ] खञ्जनपक्षी; 'तन्वी शरत्  
त्रिपयगापुलिने कपोलौ लोले दृसौ रुचिरचञ्चल-  
खञ्जरीटौ'—इति अमरशतके (१९) । २४४

खङ्गः पुं. [ खडति भिनत्ति । खङ्+छापूखडिम्यः कित्  
इति गन् ] अस्त्रविशेषः; निस्त्रिशः; चन्द्रहासः; असिः;  
रिष्टिः; कौक्षेयकः; मण्डलाग्रः; करवालः; कृपाणः;  
ऋष्टिः; करपालः; विशसनः; तीक्ष्णवारः; दुरासदः;  
श्रीगर्भः; विजयः; धर्मपालः; कौक्षेयः; तरवारिः;  
तलवारिः; तबराजः; कृपाणीः; कृपाणकः; शस्त्रम् ।  
'यस्त्वयं विपुलः खङ्गो गव्ये कोपे समर्पितः । सहदेवस्य  
विद्वयेन सर्वभारसहं दृढम्'—इति महाभारते (४।  
४१।२५) । गण्डकः; 'गैडा' इति भाषा । 'कालशाकं  
महाशक्ताः खङ्गलोहामियं मधु । आनन्त्यायैव  
कल्पन्ते मुन्यन्नानि च सर्वथा'—इति मनुः (३।२७२) ।

'खङ्गो गण्डकः' लोहो लोहितवर्णश्छागः—इति  
तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । गण्डकशृङ्गः; बुद्धभेदः; चोर-  
कनामगन्वद्रव्यम् । ४७२

खङ्गपिधानम् क्ली. [ खङ्गस्य पिधानम् आच्छादनम् ]  
खङ्गकोषः; प्रत्याकारः; परीवारः; कोशः; खङ्गा-  
घारः; खङ्गपिधानकं; 'म्यान'—इति भाषा । ४७३  
खङ्गफलम् क्ली. [ खङ्गस्य फलम् ] पुष्करं; खङ्ग-  
वारा; करवालकोटिः । ८५८

खङ्गी [ न् ] पुं. [ खङ्गस्तदाकार शृङ्गमस्यास्तीति ।  
इति ] वनजन्तुविशेषः; गण्डकः; खङ्गः; खङ्गमृगः;  
श्रीडीमुखः; तुङ्गमुखः; वली; वज्रचर्मा; वार्द्धीणसः;  
एकचरः; गण्डः; गणोत्साहः; 'गैडा' इति भाषा ।  
'कफघ्नं खङ्गिपिशितं कषायमनिलापहम् । पित्र्यं  
पवित्रमायुष्यं वद्धमूत्रं विरूक्षणम्'—इति सुश्रुते  
सूयस्थाने । महादेवः; 'अशनी शतघ्नी खङ्गी पट्टिशी  
चायुधी महान्'—इति महाभारते (१३।१७।४२) ।  
[ खङ्गो विद्यतेऽस्य इति व्युत्पत्त्या वाच्यलिङ्गः ]  
'सुत्रगघरोऽय सन्नह्य घन्वी खङ्गी घृतेपुषिः'—इति  
भागवते (८।१५।१८) । १२२७

खण्डः पुं.—क्ली. [ खडि+घञ्, इदित्वान् नुम् ] एक-  
देशः; भित्तं; शकलम्; 'धृतशृङ्गविभिन्नाश्च खण्डं  
खण्डं ययुर्धनाः'—इति मार्कण्डेये (८३।२६) । अञ्जा-  
दिसमूहः; पुं. इक्षुविकारः; 'खांड' इति भाषा ।  
'खण्डं तु मधुरं वृष्यं चक्षुष्यं बृंहणं हिमम् । वातपित्त-  
हरं स्निग्धं बल्यं वान्तिहरं परम्'—इति भावप्रकाशः ।  
पुं. मणिदोषः; योगिविशेषः; 'भानुकी नारदेवश्च  
खण्डः कापालिकस्तया'—इति हठयोगदीपिकायाम्  
(१।८) । क्ली., विहलवणम् । ७१३ ।

खण्डपरशुः पुं. [ खण्डयति शत्रून् इति, तादृशः परशु-  
रस्य ] शिवः; 'पिताकिनं खण्डपरशुं लोकानां पति-  
मीस्वरम्'—इति महाभारते (७।२००।४१) । विष्णुः;  
'सुधन्वा खण्डपरशुर्द्वारिणी द्रविणप्रदः'—इति महा-  
भारते (१३।१४९।७४) । ७८८

खण्डशर्करा स्त्री. [ खण्डरूपा कणस्या शर्करा ।  
मध्यपदलोपी कर्मधारयः ] मत्स्यण्डी; फाणितम्;  
'खणसारी चीनी' इति भाषा । ३२४

खण्डिकः पुं. [ खण्डोऽस्यास्तीति, ठन् ] कलायः; त्रिपुटः;

‘मटर’ इति भाषा । ‘त्रिपुटः खण्डिकोऽपि स्यात् कथ्यन्ते तद्गुणा अयं’—इति भावप्रकाशः । कक्षः; ‘बगल’ इति भाषा । ५८२

खद्योतः पुं. [ खम् आकाशं द्योतयति, खे आकाशे द्योतते वा । द्युत्+अच् ] कीटविशेषः; ज्योतिरिङ्गणः; खज्योतिः; प्रभाकीटः; उपसूर्यकः; ध्वान्तोन्मेषः; तमोमणिः; दृष्टिबन्धुः; तमोज्योतिः; ज्योतिरिङ्गः; निमेषकः; ‘विदितमनन्तसमस्तं तव जगदात्मनो जनैरिहाचरितम् । विज्ञाप्यं परमगुरोः कियदिव सवितुरिव खद्योतैः’—इति भागवते (६।१६।४६) । सूर्यः; ‘खद्योताविर्मुखी चात्र नेत्रे एकत्र निर्मिते । रूपं विभ्राजितं ताम्यां विचष्टे चक्षुषेस्वरः’—इति भागवते (४।२९।१०) । २५७

खनकः पुं. [ खन्+‘शिल्पिनि ध्वन्’ इति ध्वन् स च वित् ] उन्दुरुः; मूषकः; सन्धितस्करः; भूमिवित्तज्ञः; स्वर्णाद्युत्पत्तिस्थानज्ञः; विदुरस्य बन्धुविशेषः; ‘विदुरस्य सुहृत्करिचत् खनकः कुशलो नरः’—इति महाभारते (१।१४।८१) । त्रिः; अवदारकः; खननकर्ता; ‘स्यापत्ये वेह स्याप्यन्तां वृद्धाः परमर्षामिकाः । कर्मान्तिका लिपिकरा वर्षकाः खनका अपि’—इति रामायणे (१।१२।६) । २३५

खनिः स्त्री. [ खन् अवदारणे, ‘खनिकष्यञ्जघसीति’—इन् ] रत्नाद्युत्पत्तिस्थानम्; आकरः; खानी; खनी; खानिः; गञ्जा; ‘खान’ इति भाषा । १६९

खनी स्त्री. [ खनि+वा डीष् ] रत्नाद्युत्पत्तिस्थानम् । १६९

खरम् क्ली. [ खाय अन्तरिन्द्रियाय खस्य वा तीव्रतारूपगुणं रातीति । ख+रा+क ] तीव्रं; तिग्मं; तीक्ष्णं; ‘कृत्वाट्टहासं खरमुत्स्वनोल्बणं निमीलित्वासं जगृहे महाजवः’—इति भागवते (७।८।२८) । तद्वति त्रिः, ‘न खरो न च भूयसा मुहुः पवमानः पृथिवीरहानिव’—इति. रघुवंशे (८।१९) । ४०

खरः पुं. [ खं मुखकुहरं छिद्रमतिशयेनास्यास्तीति । र ] गर्दभः; ‘परीवादात् खरो भवति श्वा वै भवति निन्दकः’—इति मनुः (२।२०।१) । अश्वतरः; ‘उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं तु कामतः’—इति मनुः (१।१।२०) । घर्मः; निष्पूरः; राक्षसविशेषः; रावणभ्राता;

‘वर्षं खरत्रिंशिरसोश्स्थानं रावणस्य । च’—इति रामायणे (१।३।२७) । दैत्यः; ‘ये च प्रलम्बखरदुर्दुर-केश्यरिष्टमल्लेभकसयवनाः कुजपौण्ड्रकाद्याः’—इति भागवते (२।७।३४) । कण्टकिवृक्षविशेषः; कङ्कः; काकः; कुररपक्षी; वत्सरविशेषः; ‘उपद्रुतं जगत् सर्वं तस्करैर्मूषिकैः खरैः । पीडिताश्च प्रजाः सर्वाः देशभङ्गः खरे प्रिये’—इति ज्योतिषतत्त्वे । कठिनः; रविपाश्वंगः; पश्चिमद्वारगृहम् । २८०

खर्जुः पुं. [ खर्ज्+उन् ] कण्डुः; खर्जूरीः; कीटः । ६०३  
खर्जूः स्त्री. [ खर्ज् व्ययने+‘कृषिचमितनीति’ क ] कण्डुः; कीटः । ६०३

खर्षशास्त्रः त्रि. [ खर्षा शास्त्रा हस्तपादाद्यवयवा यस्य ] वामनः; खर्वः; ह्रस्वः । ६११

खलः त्रि. [ खं छिद्रं लाति, आत इति क ] नीचः; अधमः; क्रूरः; दुर्जनः; पिशुनः; दुर्विधः; विद्वकद्रुः; नृशंसः; घालुकः; पापः; ‘खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृपः’—इति मृच्छकटिके १ अङ्के । पुं. [ खल्+अच् ] सूर्यः; तमालवृक्षः; घत्तूरवृक्षः; प्रवाहिकारोगे भेषजादिविहितपथ्यविशेषः; ‘कल्को बिल्वशलाटूनां तिलकल्कश्च तत्समः । दध्नः सरोऽम्लः सस्नेहः खलो हन्ति प्रवाहिकाम्’—इति वाग्भटः । क्ली. भूः; स्थानं; कल्कः; खलाधानं (५७८); ‘खलिहान’ इति भाषा । ३४६

खलतिः पुं. [ खलन्ति केशाः अस्मात् । खल् सम्प्रसारणे +‘खलतिः’ इति निपातनात् साधुः ] इन्द्रलुप्तरोमयुक्तः; खल्वाटः; ऐन्द्रलुप्तिकः; शिपिविष्टः; बभ्रुरयः; खल्लीटः; खल्लिटः; ‘रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम् । प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः । रोमकूपान् रणद्धस्य तेनान्येषामसम्भवं । तदिन्द्रलुप्तं रूपाञ्च प्राहुरश्वाचेति चापरे । खलतेरपि जन्मैवं सदनं तत्र तु क्रमात्—इति वाग्भटः । ६०८

खलमान्यम् क्ली. [ धान्यार्थं खल्म् । वाहिताग्न्यादित्वात् पूर्वनिपातः ] खलं; खलाधानम्; ‘खलिहान’ इति भाषा । ५७८

खलिनः पुं-क्ली. [ खे अश्वमुखछिद्रे लीनः । पृषो-दरादित्वाद् वा ह्रस्वः ] खलीनः; ‘लगाम’ इति भाषा । ‘उभयतः खलिनकनककटकावलग्नान्मां पदे पदे कृता-



कुञ्चनप्रयत्नाभ्यां . पुरुषाभ्यामवकृष्यमाणम्—इति कादम्बर्याम् । ४४२

खलीनः पुं.- क्ली. [ खे अश्वमुखच्छिद्रे लीनः ] कविका; वल्गा; 'शतं रथानां वरहेममालिनां वतुर्युजां हेमखलीनशालिनाम्'—इति महाभारते (१।१९९।१५) । ४४२

खलु अव्य. [ खलु+वाहलकाद् उन् ] निश्चितम्; 'दयितास्वनवस्थितं नृणां न खलु प्रेम चलं सुहृज्जने'—इति कुमारसम्भवे (४।२८) । निषेधः; वाक्यालङ्कारः; 'सम्प्रत्यसाम्प्रतं वक्तुमुच्यते मुशालपाणिना । निद्वारितेऽर्धे लेखेन खलूक्त्वा खलु वाचिकम्'—इति माघे (२।७०) 'अत्राद्यः खलुशब्दः प्रतिषेधार्थे द्वितीयो वाक्यालङ्कारे' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । जिज्ञासा; 'स खल्वधीते वेदम्?' इति गणरत्ने । अनुनयः; 'न खलु न खलु मुग्धे साहसं कार्यमेतत्'—इति गणरत्ने । पदवाक्यादिपूरणम्; 'वध्याः खलु न वध्यन्ते सचिवास्तव रावण ! ये त्वामुत्पयमारूढं न निगृह्णन्ति सर्वशः'—इति रामायणे (३।४१।६) । वीप्सा; 'न खलु न खलु वाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्, मृदुनि मृगशरीरे तूलराशाविवाग्निः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । ३७४

खलूरिका स्त्री. [ खलु+रिप्+निपातनात् साधुः ] शस्त्राभ्यासभूमिः; व्यूहशिक्षास्थानम् । ४७०

खलेयानी स्त्री. [ खले धीयन्ते वृषभा अस्मिन् । धा+अधिकरणे ल्युट्, ततो डीप् ] मेघिः; खले पशुवन्वन्-दारु । ५७८

खलेवाली स्त्री. [ खले बाल्यन्ते चाल्यन्तेऽत्र वृषभा इति । वल्+अधिकरणे घञ्, गौरादित्वाद् डीप् ] खले गोवन्वन्-दारु; 'खलेवालीयूपो लाङ्गलेपा'—इति कात्यायन-श्रौतसूत्रे (२।२।३।४८) । ५७८

खसः पुं. [ खं हस्तादीन्द्रियं स्याति निश्चलीकरोतीति । ख+सौ+क ] पामा; पामः; कच्छूः; चिर्चिका; 'खाज' इति भाषा । देशविशेषः; 'पौण्ड्रकाश्चीद्र-द्रविडाः काम्बोजा यवनाः शकाः । पारदाः पल्लवा-श्चोनाः किराता दरदाः खसाः (शाः)'—इति मनुः (१०।८८) । ६०२

खातम् क्ली. (खाता स्त्री.) [ खन्यते इति, खन्+कर्मणि

क्त ] पुष्करिणी; 'यस्य खातस्य वेधोऽपि द्विचतुस्त्रिकरः सखे । तत्र खाते कियन्तः स्युर्घनहस्ताः प्रचक्ष्व मे'—इति लीलावत्याम् । ६७५

खादनम् क्ली. [ खाद्+भावे ल्युट् ] भक्षणम्; आहारः; [ खादति चर्वत्यनेन इति ] दन्ते पुं. । ३२५

खिलम् त्रि. [ खिल्+क ] अकृष्टभूमिः; अप्रहतं; 'वंजर भूमि' इति भाषा । सारसंक्षिप्ते वेधसि च पुं. 'खिलो नारायणः प्रोक्त इषवस्तद्गुणाः स्मृताः'—इति नीलकण्ठः । १५८

खुरः पुं. [ खूर् छेदने+क ] शफं; गवादीनां पादाग्रम्; 'न भिन्नशृङ्गाक्षिखुरेनं बालघिविरूपितैः'—इति मनुः (४।६७) । कोलदलं; नखीनामगन्धद्रव्यं; छेदन-वस्तु; नापितस्य क्षुरः; खट्वादीनां पादुकं; 'खाट का पाया' इति भाषा । ४४१

खेटः त्रि. [ खिट्+अच् ] अधमः; घोटकः; सुनिन्दकः; सुनन्दकः; बलरामस्य गदा । ३३७

खेटः पुं.- क्ली. [ खिट्घते भयमुत्पद्यते अस्मादनेन वा । खिट्+अपादाने करणे वा घञ् ] कफः; मृगया; [ खेटघते भक्षोपयोगिसस्यादिना उपजीव्यते अस्मात् ] ग्रामभेदः; कर्षकग्रामः; 'खेटखर्वटवाटीश्च धनान्यु-पवनानि च', 'खेटाः कर्षकग्रामाः' इति तट्टीकायां श्री-धरस्वामी । चर्म; पुं. [ खे आकाशे अटति, खे+अट्+अच् ] ग्रहः; 'यस्मिन् राशौ स्थितः खेटस्तेन तं परि-पूरयेत्'—इति भावविवेके । क्ली. [ खे+अट्+अच् ] तृणं; खेट्टम् । ७९२

खेटकः पुं. [ खेट+स्वार्थे क ] ग्रामभेदः । (४६०) फलकं; चर्म; खेटः; 'खेटकं वसुनन्दके'—इति हारा-वली । वसुनन्दको धनवृद्धिर्जीवकः । 'खेटकं तु सुनं दके' इति पाठान्तरे 'सुनन्दकः बलदेवस्य गदा' इति । पुं. [ खेटति भयमुत्पादयत्यनेन । खिट्+करणे घञ्, खेट+स्वार्थे क ] यष्टिः; 'यष्टिरपेण खेट त्वमरिसंहारकारकः । देवीहस्तस्थिता पितृयं मम रक्षां कुरुष्व च'—इति शारदीयदुर्गापूजापद्धतौ अस्त्रपूजाप्रकरणे । 'खेटकं पूर्णचापं च पाशमङ्कुशमेव च'—इति तत्र दुर्गाया व्यानम् । २५०

खेदः पुं. [ खिद्+भावे घञ् ] शोकः; अवसन्नता; विपण्णता; 'अथापीदं वनं दुर्गं विचिन्वन्तु वर्नाकसः ।

खेदं त्यक्त्वा पुनः सर्वं वनमेव विचिन्वताम्—इति  
रामायणे (४।४९।७) । ७५४

खेलनम् क्ली. [ खेल्+भावे ल्युट् ] क्रीडनं; खेला; क्रीडा;  
कूर्दनम्; 'कापि विलासविलोलविलोचनखेलनजनित-  
मनोजम्'—इति गीतगोविन्दे (१।४१) । ४३२

### ग

गगनम् क्ली. [ गं गानं शब्दात्मकं गुणं गच्छति । यद्वा  
गकार भूतेषु प्रथमभूतत्वात् प्राधान्यं गच्छति । यद्वा  
गच्छन्त्यस्मिन् देवादय इति । 'गमेर्गश्च' इति ध्रुव्  
गश्चान्तादेशः ] आकाशम् । (वहिः; घन्वः; आपः;  
पृथिवी; भूः; स्वयम्भूः; अध्वा; सगरः; समुद्रः;  
अध्वरः—एतेऽर्था वेदे प्रसिद्धा इति निघण्टुः । )  
'गगनाम्बु त्रिदोषघ्नं गृहीतं यत्सुभाजने । बल्यं रसायनं  
मेध्यं पात्रापेक्षि ततः परम् । रक्षोघ्नं शीतलं ह्लादि  
ज्वरदाहविषापहम्'—इति सुश्रुते । 'प्रेक्षिष्यन्ते गगन-  
गतयो नूनमावर्ज्यं दृष्टी—रेकं मुक्तागुणमिव भुवः  
स्थूलमध्येन्द्रनीलम्'—इति मेघदूते (४८) । १३७

गङ्गा स्त्री. [ गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पदं  
या शक्तिः । यद्वा गम्यते प्राप्यते ज्ञाप्यते मोक्षार्थिभिर्या ।  
गम्ल् गती+गन् गम्यद्योः' इति गन् ततष्टाप् ]  
नदीविशेषः; विष्णुपदी; जहनुतनया; सुरनिम्नगा;  
भागीरथी; त्रिपथगा; त्रिलोता; भीष्मसूः; अध्व-  
तीर्थ; तीर्थराजः; त्रिदशदीधिका; कुमारसूः; सरिद्धरा;  
सिद्धापगा; स्वरापगा; स्वर्गापगा; स्वापगा; ऋषि-  
कुल्या; हैमवती; स्वर्वापी; हरशेखरा; सुरापगा;  
धर्मद्रवी; सुधा; जहनुकन्या; गान्दिनी; रुद्रशेखरा;  
नन्दिनी; अलकनन्दा; सितसिन्धुः; अध्वगा; उग्र-  
शेखरा; सिद्धसिन्धुः; स्वर्गसरिद्धरा; मन्दाकिनी;  
जाह्नवी; पुण्या; समुद्रसुभगा; स्वर्णदी; सुरदीधिका;  
सुरनदी; स्वर्धुनी; ज्येष्ठा; जहनुसुता; भीष्मजननी;  
शुभ्रा; शैलेन्द्रजा; भवायना; गङ्गाका; गङ्गाका गङ्गाका ।  
'गङ्गा सरस्वती कोनं यमुना सरयूः सची । वेणा इरा-  
वती नीला उत्तरात् पूर्ववाहिनी । हिमवत्प्रभवा ह्येता  
हिमसम्भवगतलाः । समाः सर्वगुणनद्यो वातश्लेष्महरा  
नृणाम् । आसां नवशतैर्युक्ता गङ्गा पूर्वसमुद्रगा'—  
इति हारीते प्रथमस्थाने सप्तमेऽध्याये । ६७३

गङ्गाधरः पुं. [ धरतीति धरः, धृ+अच् । गङ्गाया  
धरः स्वशिरोजटाभिरिति शेषः ] शिवः; समुद्रः;  
जीर्णातिसाररोगनाशकीपधिशेषः; 'घातक्यामलकी-  
पयोधरवृकीकट्वङ्गयष्टीमधु, श्रीजम्बवाम्बफलास्थिना-  
गरविषाह्वीवैरलोघ्रेन्द्रजैः । तुल्यांशं विहितं सतण्डुलजलं  
गङ्गाधराख्यं महत्, चूर्णं तूर्णमपाकरोति सकलं जीर्णाति-  
सारं परम्'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः । १३

गजः पुं. [ गजति मदेनं मत्तो भवतीति । गज्+अच् ]  
हस्ती; 'भद्रो मन्दो मृगश्चैव विज्ञेयास्त्रिविधा गजाः'  
—इति शब्दार्थचिन्तामणिः । 'हया जिहेषिरं ह्यपि-  
गम्भोरं जगजुर्गजाः'—इति भट्टिः (१।४।५) परिमाण-  
विशेषः; स तु हस्तद्वयं पादोनहस्तद्वयं च; 'अरत्नीनां  
शतान्यष्टावेकः षष्ठ्यधिकानि च । गजप्रमाणमाख्यातं  
मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः ।  
वास्तुनः स्थानभेदः; 'प्रस्तारे दैर्घ्यमानं तु स्वहस्तेन  
तथा नरैः । कृत्वा त्रिघ्नं गजैर्हत्वा वास्तुस्थाननिरूप-  
णम् । ध्वजो धूमश्च सिंहश्च श्वा वृषः खर एव च ।  
गजः काकपदं चैव स्थानान्यष्टौ च वास्तुनः । 'ध्वजे  
विभूतिर्भरणं च धूमे सिंहे जयः श्वा च करोत्यनर्थम् ।  
वृषे च भोगी क्षयणं खरे च पुष्टिर्गजे काकपदे विनाशः'  
—इति ज्योतिषम् । औषधपाकार्थगतविशेषः; 'हस्त-  
प्रमाणगतौ यः पुटः स तु गजाह्वयः । इत्थं चारत्नके  
कुण्डे पुटो वाराह उच्यते'—इति वैद्यकप्रयोगामृतम् ।  
असुरविशेषः; महिषासुरपुत्रः; 'महिषासुरपुत्रोऽसौ  
समायाति गजासुरः । प्रमथन् प्रमथान् सर्वान् निजवीर्य-  
मदोद्धतः'—इति काशीखण्डे (६८।३) । २१४

गजप्रिया स्त्री. [ गजस्य प्रिया ] शल्लकीवृक्षः; गज-  
भक्ष्या । १९९

गजबन्धनम् क्ली. [ गजः हस्ती वध्यते अत्र । बन्ध्+  
ल्युट् ] गजबन्धनस्थानम् । २२३

गजबन्धनी स्त्री. [ गजः हस्ती वध्यते लौहशृङ्खलादिभिः  
रुध्यतेऽस्याम् । बन्ध्+ल्युट् डीप् च ] गजबन्धन-  
स्थानं; वारी; वारिः; प्रारब्धः । २२३

गजवदनः पुं. [ गजस्य वदनमिव वदनं यस्य ] गणेशः । १८

गजाजीवः पुं [ गजैः आजीवति, इगुपधेति क । गजः आजीवः  
जीवनोपायोऽस्य । गजपरिचालनपालनादिकार्यमालम्ब्य  
आजीवतीति । जीव+कर्त्तरि अच् वा ] हस्तिपालकः;

आधोरणः; हस्तिपकः; इभपालकः। २२५  
 गजारोहः पुं. [ गजम् आरोहति, गज+आ+रुह्+अच् ]  
 गजारूढः; निपाटी। ३९१  
 गजः पुं. [ गजि+भावे घञ् ] भाण्डागारम्; अवज्ञा;  
 खनिः; खानिः; गोष्ठागारम्। 'गोठ', 'गोशाला'  
 इत्यादिभाषा। भाण्डागारे क्लीबमपि। ७९७  
 गञ्जा स्त्री. [ गञ्ज+टाप् ] खनिः; खानिः; मदिरा-  
 गृहं; पामरसञ्च; मद्यभाण्डम्। १६९  
 गङ्गुः पुं. [ गङ्+वाहुलकाद् उन् ] पृष्ठग्रन्थिः; गलगण्डः;  
 घाटामस्तकयोर्मध्ये मांसवृद्धिः; कुञ्जत्वकरः पिण्डः;  
 शल्यास्त्रं; किञ्चुलुकः; विषमग्रन्थिः; 'न च अजागल-  
 स्तनवदन्तर्गदुना तेन किं वेति वाच्यम्'—इति वेदान्त-  
 भाष्यम्। ६०४  
 गङ्गुः त्रि. [ गङ्गुल+रस्य लत्वम् ] कुञ्जकः; मेघः। ६११  
 गङ्गुलः त्रि. [ गङ्गुः स्थूलमांसपिण्डविशेषः अस्यास्तीति।  
 गङ्गु+सिध्मादिभ्यश्चेति लच् ] कुञ्जः; न्युञ्जः। ६११  
 गणः पुं. [ गणयते गणयति वा, कर्मण्यप् कर्तरि अच् वा ]  
 प्रमथः; 'भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः'  
 —इति मेघदूते (३५)। समूहः (६८६); 'न गणस्या-  
 ग्रतो गच्छेत् सिद्धे कार्ये समं फलम्'—इति हितोपदेशे।  
 रुद्रानुचरः; 'धनाध्यक्षसभां देवः प्राप्तो हि वृषभध्वजः।  
 उमासहायो देवेशो गणेश्वर बहुभिवृत्तः'—इति रामायणे  
 (५।८।१।७)। सेनासंख्याविशेषः; तद्यथा—गजाः २७,  
 रथाः २७, अश्वाः ८१, पदातिकाः १३५; समुदायेन  
 २७०। 'त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः'  
 —इति महाभारते। संख्या; चोरकनामगन्धद्रव्यं;  
 गणेशः; 'गाणपस्तु महेशानि! गणदीक्षाप्रवर्तकः'  
 —इति महानिर्वाणतन्त्रे। अश्विन्यादिजन्मनक्षत्रानुसा-  
 रेण देवमानुषराक्षसगण इति तु पारिभाषिकम्। दे  
 म रा म दे म दे दे रा रा म म द रा द रा।  
 दे रा रा म म दे रा रा म म देतिगणत्रयम्—इति  
 ज्योतिषरत्नमाला। धातुसमूहः; 'भ्वाद्यदादिजु-  
 होत्यादिदिवादिः स्वादिरेव च। तुदास्थातनुक्र्यादि-  
 श्चुरादिश्च गणा दश'—इति मनोरमा। छन्दः-  
 शास्त्रोक्तपारिभाषिकाक्षरविशेषः; स तु 'म-न-भ-य-  
 ज-र-स-त-ग-ल-संज्ञः'—इति छन्दोमञ्जरी। मंहादेवः;  
 'विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरो बलो गणः'—इति

महाभारते (१३।१७।४०)। दैत्यविशेषः, स तु  
 अभिजिदिति नामान्तरस्य दैत्यस्य गुणवतो भार्यायां  
 गुणवत्यां सम्भूतः। एषा कथा स्कन्दपुराणे गणेश-  
 खण्डे ३ अध्याये विस्तरशो द्रष्टव्या। १४  
 गणकः पुं. [ गणयति शुभाशुभग्रहभोगजनितफल निरु-  
 पयतीति। गण सङ्ख्यानं+कर्तरि ण्वुल् ] दैवज्ञः;  
 ज्योतिर्वित्; सांवत्सरः; ज्योतिषिकः; दैवज्ञः;  
 मोहूर्तिकः; मोहूर्तः; ज्ञानीः; कार्तान्तिकः; ज्योति-  
 षिकः। वर्णसङ्करजातिविशेषः; देवलाद् वैश्यागर्भजातः।  
 तस्य कर्म तिथिवारादिज्ञापनं, स तु अस्पृश्यः; 'कलि-  
 काले महेशानि! पापण्डा बहवो जनाः। सङ्गदोपान्-  
 महेशानि! तत्क्षणाद्धानितां व्रजेत्। तस्मात् प्रयत्नतो  
 देवि! संसर्गं वर्जयेत् सुधीः। वरं चाण्डालसंस्पर्शं  
 कुर्यात्तु साधकोत्तमः। तथाप्यस्पृश्यगणकं सर्वदा  
 तं परित्यजेत्'—इति महिषमदिनीतन्त्रवचनम्।  
 'ज्योतिःशास्त्रविशेषज्ञः सुन्दराङ्गः सभापटुः। कुलक-  
 मागतः शुद्धो गणकः स्यान्महीपतेः'—इति युक्ति-  
 कल्पतरुः। यच्च शास्त्रविशेषे गणकस्य निन्दादिकं  
 श्रूयते तत्तु केवलं नक्षत्रजीविन एवेति बोध्यम्। प्रकृत-  
 ज्योतिःशास्त्रं तु द्विजातिभिरेवावश्यमध्येतव्यं वेदाङ्ग-  
 त्वात्, यथा—'संयुतोऽपीतरैः कर्णनासादिभिश्चक्षु-  
 पाङ्गेन हीनो न किञ्चित् करः। तस्माद् द्विजैर-  
 ध्ययनीयमेतत् पुण्यं रहस्यं परमं च तत्त्वम्'—इति  
 सिद्धान्तशिरोमणिः। प्रजापतिपुत्रास्ताराविशेषाः  
 केतवः; 'ताराः पुञ्जनिकाशा गणका नाम प्रजापते-  
 र्पटौ पुत्राः'—इति बृहत्संहिता (१।१।२५)। संकीर्ण-  
 जातिविशेषः; 'चर्मकारस्य द्वौ पुत्रौ गणको वाद्यपूरकः।'  
 ४०३  
 गणपतिः पुं. [ गणानां गणसंज्ञकानां देवानां पतिः अधीश्वरः  
 स्वामी वा ] गणेशः; 'अत्तुं वाञ्छति शाम्भवो गणपते-  
 राखुं क्षुधात्तः फणी। तं च क्रीञ्चरिपोः शिखी गिरि-  
 सुतासिंहोऽपि नागोशनम्'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१७०)।  
 अप्रपूजनीयप्रधानदेवताविशेषः; 'नमो गणेश्यो गणपति-  
 म्यश्च वो नमो नम इति'—यजुर्वेदीयसंहितायाम्  
 (१६।२६)। बृहस्पतिः; 'गणानां त्वा गणपतिं हवामहे  
 कवि कवीनामुपश्रवस्तमम्'—इति ऋग्वेदे (२।२३।१)।  
 शिवः; 'गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च। मन्त्र-

वित् परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः—इति महाभारते (१३।१।१४१) । आथर्वणोपनिषद्विशेषः; 'त्रिपुरातपन-  
'देवीभावनाभस्मजावालगणपतिमहावाक्यगोपालतपन-  
कृष्णहयग्रीदेति'—मीकितकोपनिषदि प्रथमाध्याये । १८  
गणरात्रः पुं. [ गणानां वह्नीनां रात्रीणां समाहारः ।  
गणशब्दस्य सङ्ख्यावत्त्वात् तद्धितार्थेति समासः—'अह-  
सर्वैकदेशसङ्ख्यातपुण्याच्च रात्रेः' इत्यच् । 'रात्राह्लाहाः  
पुंसि' इति पुंस्त्वम् ] रात्रिसमूहः । १०८  
गणाधिपः पुं. [ गणानाम् अधिपः अधीश्वरः ] शिवः;  
गणेशः । १३  
गणिका स्त्री. [ गणः लम्पटगणः उपपत्तित्वेनास्त्यस्याः  
इति । ठन् ] वेश्या; 'गणिकानां पृथङ् मञ्चाः शुभैरास्त-  
रणाम्बरैः'—इति हरिवंशे । हस्तिनी (७९९); यूथिका;  
गणिकारिकावृक्षः । ४९०  
गण्डः पुं. [ गडि आस्यैकदेशे + अच् । यद्वा गम् + 'अमन्ता-  
ड्डः' इति ड् ] हस्तिकपोलः; कटः; करटः; कटकः;  
हस्तिगण्डकः, कपोलः (५२२); 'गाल' इति भाषां ।  
'तदीपवाद्रास्त्रगण्डलेखम् उच्छ्वासिकालाञ्जनराग-  
मक्षणेः'—इति कुमारसम्भवे (७।८२) । पिटकः (६०४);  
खड्गी; वीथ्यङ्गः; चिह्नं; स्फोटकः; वीरः; हयभूषणं;  
वुद्बुदः; ग्रन्थिः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गत-  
दशमयोगः; 'गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा'  
—इति ज्योतिषवचने । 'स्वकार्यकर्ता परकार्यहर्ता गण्डो-  
द्भवः स्यादिति गण्डवाक्यः । अत्यन्तधूर्तः पुरुषः कुरूपः सुह-  
द्गणानामतितापदाता'—इति कोष्ठीप्रदीपः । दोषजन-  
कोऽश्विन्यादिनक्षत्राणां भागविशेषः; 'अश्विनीमघमू-  
लानां तिलो गण्डाद्यनाडिकाः । अन्त्याः पौष्णोरगेन्द्राणां  
पञ्चैव यवना जगुः । मूलेन्द्रयोर्दिवा गण्डो निशायां  
पितृसर्पयोः । संध्याह्णवे तथा ज्ञेयो रंवेतीतुरगर्क्षयोः ।'  
'सन्ध्यारात्रिदिवाभागे गण्डयोर्गोद्भवः शिशुः । आत्मानं  
मातरं तातं विनिहन्ति यथाक्रमम् ।' 'दिवा जाता तु या  
कन्या निशि जातस्तु यः पुमान् । नोभयोर्गण्डदोषः स्यात्  
नाचलो हन्ति पर्वतम्'—इति ज्योतिषतत्त्वम् । २१६  
गण्डकः पुं. [ गण्ड + स्वार्थे कन् ] खड्गी; 'गैडा' इति  
भाषा । खड्गः; संख्याप्रभेदः; 'गण्डा' इति भाषा ।  
विद्याविशेषः; अन्धच्छेदः; अन्तरायः; दशाविशेषः; 'ततः  
स गण्डकान् शूरो विदेहान् भरतर्षभः'—इति महाभारते

(२।२९।४) । भूषणम्; 'व्याघ्रनखपङ्क्ति मण्डिता  
गण्डकाभरणा च'—इति कादम्बर्याम् । ग्रन्थिः;  
'गोरोचनालिखितभूर्जपत्रगर्भान् मन्त्रगण्डकान्'—इति  
कादम्बर्याम् । स्फोटकरोगविशेषः; 'अनेकवेवाघात-  
निर्मितवहुगात्रगण्डकम्'—इति कादम्बर्याम् । २२७  
गण्डशैलः पुं. [ गण्ड इव शैलः, स्वलितस्थूलोपलः ।  
शैलशब्दोऽत्र शैलावयवे वर्तते । 'विशेषणं विशेष्येण  
बहुलम्'—इति समासः । यद्वा शैलस्य पर्वतस्य गण्ड इव  
राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः ] गिरेश्च्युतः स्थूलोपलः;  
भूकम्पादिना पर्वताद् गलितो महान् प्रस्तरः; 'किं  
पुत्रि ! गण्डशैलभ्रमेण नवनीरदेषु निद्रासि । अनुभव  
चपलाविलसितगर्जितदेशान्तरभ्रान्तीः'—इति आर्या-  
सप्तशत्याम् (१७९) । ललाटम् । १६८  
गण्डूपदः पुं. [ गण्डूवः श्लथयः पदानि यस्य ] किञ्चु-  
लुकः; 'गण्डूपदस्य रूपाणि पिच्छिलानि मूढानि च'  
—इति माधवकररोगविनिश्चये अर्शाऽधिकारे । ६६१  
गण्डूपः पुं. [ गडि + 'गण्डेश्च' इति ऊषन् ] मुखपूरणम्;  
'भीमस्तु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्ततः । तस्य जहन्नुः  
सुतो गङ्गां गण्डूपीकृत्य योऽपिबत्'—इति भागवते  
(९।१५।३) । हस्तिशुण्डाग्रभागः; प्रसृतिपरिमितम्;  
'अगाधजलसञ्चारी विकारो न च रोहितः । गण्डूप-  
जलमात्रेण शफरी फर्फरायते ।' ७८५  
गण्डूषा स्त्री. [ गण्डूष + टाप् ] मुखपूर्णतोयं; मुखपूरणं;  
गण्डूषः । [ पुल्लिङ्गस्तु गण्डूपशब्दश्चुलुकपरिमाणे,  
यथा—'अपां द्वादशगण्डूपैर्मुखशुद्धिविधीयते' । ७८५  
गतिः स्त्री. [ गम् + भावे नितन् ] गमनकर्म । तदर्थक-  
वर्तमानकालिकक्रियापदानि निघण्टुप्रोक्तानि—'वर्तते,  
अयते, लोटते, लोठते, स्यन्दते, कसति, सर्पति,  
स्यमति, स्रवति, संसते, अवति, श्चोतति, ध्वंसति,  
वेनति, माप्टि, गुरण्यति, शवति, कालयति, पेलयति,  
कण्टति, पित्यति, विस्यति, मिस्यति, प्रवते, प्लवते,  
च्यवते, कवते, गवते, नवते, क्षोदति, नक्षति, सक्षति,  
म्वक्षति, सचति, ऋच्छति, तुरीयति, चतति, अतति,  
गाति, इयक्षति, सञ्चति, सरति, रंहति, यतते, भ्रमति,  
घजति, रजति, लजति, क्षिपति, धमति, मिनाति,  
ऋण्वति, ऋणाति, स्वरति, सिसति, वेपिप्टि, योपिप्टिः,  
ऋणाति, ऋयते, तेजति, दध्यति, दघ्नोति, युध्यति,

घन्वति, अरुपति, आर्यन्ति, डीयते, तकति, टीयते, ह्यति, फणति, हनति, अह्वति, मर्दति, समृते, नसते, हर्षति, इर्यति, ईर्ते, ईह्वते, ज्रपति, स्वात्रति, गन्ति, आगनीगन्ति, जङ्गन्ति, जिन्वति, जसति, गमति, घ्रति, घ्नाति, प्रयति, बहते; रघर्षति, जेहते, स्वःकति, क्षुम्पति, प्वाति, वाति, याति, दृयति, द्राति, डूलति, एजति, जमति, जवति, वञ्चति, अनिति, पवते, हन्ति, सेवति, अगन्, अजगन्, जिगाति, पतति, इन्वति, द्रमति, द्रवति, वेति, ह्यन्तात्, एति, जगायात्, अयूयुः—इति द्वाविंशं घतं गतिकर्म—इति वेदनिघण्टौ २ अध्याये । कर्म-फलम् (७१९); 'गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः धरणं सुहृत्—इति भगवद्गीतायाम् (१।१८) । 'गतिः कर्मफलम्' इति शाङ्करभाष्यम् । दशा; 'अयतिः श्रद्धयो-पेतो योगान्बलितमानसः । अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृणु ! गच्छति—इति भगवद्गीतायाम् (६-३७) । [ गम्यतेऽस्थामिति । गम् + अधिकरणे क्तिन् ] भागः;—'शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगत्तः साऽश्वते मते । एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः—इति भगवद्गीतायाम् (८।२६) । [ गम्यते ज्ञायतेऽनया, करणे क्तिन् ] जानम्; 'न ते विदुः स्वार्थं गतिं हि विष्णुं दुराशया वे बहिर्यमानिजः । अन्धा यथान्द्वेषनीय-मानास्तेऽसीगतत्रामुद्दाम्नि बद्धाः—इति भागवते (७।५।३१) 'स्वस्मिन्नेव आत्मन्येव अर्थः प्रयोजनं येषां ते स्वार्थास्तत्रविदस्तेषां गतिं जानस्वत्सं विष्णुं ते दुराशया बहिर्यमानिनो न विदुः जानन्ति—इति तद्वीकायां स्वामी । [ गम्यते प्राप्यतेऽनया इति, गम् + करणे क्तिन् ] यात्रा; अन्युपायः; 'यज्ञं इज्यां महेज्यश्च ऋतुः सत्रं सतां गतिः—इति महाभारते (१३।१४९।६१) । नाडीव्रणः; सरणी; [ गम् + भावे क्तिन् ] परिगतिः; 'मदनमुपदधे स एव तासां दुरवि-गमा हि गतिः प्रयोजनायाम्—इति किराताजुनीये (१०।४०) 'गतिः परिगतिः—इति तद्वीकायां मल्लिनाथः । प्रमाणम्; 'ह्येति चेदस्तु मृगः अतः अगादनेन पूर्वं न मयेति का गतिः—इति किराते (१४।१५) 'मया नेत्यत्र का गतिः किं प्रमाणम्' इति तद्वीकायां मल्लिनाथः । [ गम्यते इति, गम् + कर्मणि क्तिन् ]

स्वरूपम्; 'चरतस्तपस्तव वनेषु सहा न वयं निरूपयितु-मस्य गतिम्—किराते (६।३६) 'तव वनेषु तपश्च-रतोऽस्य गतिं स्वरूपं निरूपयितुम्' इति तद्वीकायां मल्लिनाथः । विषयः; 'तपः क्लिष्टं तदवाप्तिसाधनं मनो-रयानामगतिर्न विद्यते—इति कुमार (५।६४) 'मनो-रयानां कामानाम् अगतिः अविषयः—इति तद्वीकायां मल्लिनाथः । ग्रहभेदेन गतिभेदः; 'अदृश्यरूपाः कालस्य मूर्तयो भगणाश्रिताः । शीघ्रमन्दोच्चपातात्या ग्राहणां गतिहेतवः—इति सूर्यसिद्धान्तः । ७२६, ७७६

गदः पुं. [ गद्यते रक्ष्यतेऽनेन, गदयति वा । गद् + करणे अप्, णिजन्तादच् वा ] रोगः; 'शत्रुः स्थानबलं प्राप्य विक्रमं कुरुते बली । तथा धात्वन्तरं प्राप्य विक्रमं कुरुते गदः । 'यावत्स्थानं समाश्रित्य विकारं कुरुते गदः । तावत्तस्य प्रतीकारः स्थानत्यागाद् बलीयसः—इति हारीते चिकित्सास्थाने द्वितीयोऽध्याये । श्रीकृष्णभ्राता; 'हृदीकः समुतोऽक्रूरो जयन्तगदसारणाः—इति भागवते (१।१४।२८) । भाषणम्; औपवम्; 'अथ श्रुथाव गच्छन् स तजको जगतीपतिम् । मन्त्रैर्गदैर्विपहरं रक्ष्य-माणं प्रयत्नतः—इति महाभारते (१।४३।२१) । अनुरन्विशेषः; 'गदो नामासुरो ह्यासीद् ब्रज्याद्व्यतरौ दृष्टः—इति वायुपुराणे ५ अध्याये । बली. [ गद्यते पीडयतेऽस्मादनेन वा । गद् + अपादाने करणे वा अप् ] विषयम् । ६००

गदा स्त्री. [ गदयति पीडयत्यनया, विषयमितिशेषः । गद् + णिच् + करणे अप् टाप् च । गदयतीति णिच् अच् वा ] लौहमयास्त्रभेदः; 'तं महात्मा महात्मानं गदामुद्यम्य पाण्डवः । अभिदुद्राव वेगेन धात्रं राष्ट्रं वृकोदरः—इति महाभारते (१।५६।४५) । विष्णु-गदा तु देवशिल्पिना गदसंज्ञकस्यामुरविशेषस्यास्थां निर्माता; 'गदो नामामुरो ह्यासीद् ब्रज्याद् व्यतरौ दृष्टः । प्रायितो ब्रह्मणे प्राशान् स्वमरीरास्थि दुस्त्यजम् । ब्रह्मोक्तो विश्वकर्मापि गदां चक्रेऽद्भुतां तदा । योग-विशेषः; 'अनन्तरयोः केन्द्रयोर्बन्दा सर्वे प्रहा भवन्ति तदा गदानाम् योगो भवति—इति लघुजातके (१०।३) । पाटलवृक्षः । ४७६

गदाप्रज्ञः पुं. [ गदस्य वसुदेवपुत्रभेदस्य अग्रजः ] श्रीकृष्णः;

‘तावन्न योगगतिभिर्यतिरप्रमत्तो यावद् गदाग्रजकयासु रतिं न कुर्यात्’—इति भागवते (४।२३।१२) । २५  
 गदाधरः पुं. [ गदां धरति धारयति वा । धृ+अच् । यद्वा धरति इति धरः, गदायाः धरः । धृ+अन्तर्निजन्तात् अजित्येके ] विष्णुः; गदाभृत्; ‘नेयं शोभिष्यते तत्र यथेदानीं गदाधर । त्वत्पदैरङ्किता भाति स्वलक्षणविलक्षितैः’—इति भागवते (१।८।३८) । गदाधारणकथा वायुपुराणे गयामाहात्म्ये ५ अध्याये द्रष्टव्या । ‘मनस्तत्त्वात्मकं चक्रं बुद्धितत्त्वात्मिकां गदाम् । धारयन् लौकरक्षार्थमुक्तश्चक्रगदाधरः’—इति विष्णुसहस्रनामभाष्ये । महादेवः; ‘भोजपुरे भोजनाथो गयायां च गदाधरः’—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे शिवशतनामस्तोत्रे । गदाधारिणि त्रि. । २४  
 गन्ता [ ऋ ] त्रि. [ गच्छतीति, गम्+कर्त्तरि तृच् ] गमनकर्ता । ४४४  
 गन्त्री स्त्री. [ गम्यतेऽनया इति । गम्+करणे ष्टृन् ततो ङीप् ] वृषवहनीयशकटं; ‘बैलगाडी’ इति भाषा । [ गच्छतीति, गम्+कर्त्तरि तृन्+स्त्रियां ङीप् ] गमनशीला; गमनकारिणी; ‘गन्त्री वसुमती नाशमुदधिदैवतानि च । फेनप्रस्थः कथं नाशं मर्त्यलोको न यास्यति’—इति याज्ञवल्क्यः (३।१०) । ४४४  
 गन्धः पुं. [ गन्ध्+पचाद्यच् ] लेशः; आमोदः; ‘घ्राणग्राहो भवेद् गन्धो घ्राणरथैवोपकारकः । सौरभश्चासौरभश्च स द्वेषा परिकीर्तितः’—इति भाषापरिच्छेदे (१०३) । ‘गन्धो मलयजो यस्तु दैवे पैथ्ये च सम्मतः । तत्पङ्को वा रसो वापि चूर्णो वा विष्णुतुष्टिदः । सर्वेषु गन्धजातेषु प्रशस्तो मलयोद्भवः । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन दद्यान्मलयजं सदा । कृष्णाग्रः सर्कूरः सहितो मलयोद्भवैः । वैष्णवीप्रीतिदो गन्धः कामाख्यायाश्च भैरव ! । कुङ्कुमागस्कस्तूरीचन्द्रभागैः समीकृतैः । त्रिपुराप्रीतिदो गन्धस्तथा चण्ड्याश्च शम्भुना । दैवतोद्देशपूर्वेण गन्धान् सम्पूज्य साधकः । देवयिज्याय वितरेत् सर्वसाध्येषु पूजकः । गन्धेन लभते कामं गन्धो धर्मप्रदः सदा । अर्थानां साधको गन्धो गन्धे मोक्षः प्रतिष्ठितः । अयं वा कथितो गन्धः पुत्री वैतालभैरवी’—इति कालिकापुराणे ६८ अध्यायः । प्रतिवेशी; सम्बन्धः; गन्धकः; ‘क्षोधितो यस्तु गन्धः स्यात्

जरामृत्युरुजापहः । अग्निसन्दीपनः श्रेष्ठो वीर्यवृद्धिकरोऽस्थिकृत्’—इति प्रयोगामृते । गर्वः; शोभाञ्जनः; घृष्टचन्दनम्; ‘घृष्टो मलयजो गन्धः’ इति शुद्धितत्त्वम् । क्ली. [ गन्धो विद्यतेऽस्य, अर्शादित्वाद् ] कृष्णाग्रः ।

७९३

गन्धकारिका स्त्री. [ गन्धं सुरभिप्रधानं मण्डनं करोतीति । गन्ध+कृ+ण्वल् ततष्टाप् अत इत्वञ्च ] सैरन्धी; सैरन्धी; सा तु परवेशमस्था स्ववशा शिल्पकारि । १ ।

४९२

गन्धनम् क्ली. [ गन्ध् गतिर्हिंसायाचनेषु+भावे ल्युट् ] उत्साहः; सूचनं; प्रकाशनं; हिंसा । ८७०

गन्धमूषिका स्त्री. [ गन्धा दुर्गन्धप्रधाना मूषी, ततष्टान् ] छुच्छुन्दरी; गन्धमूषिकः । २३५

गन्धर्वः पुं. [ गन्धं सङ्गीतवाद्यादिजनितप्रमोदम् अर्पति प्राप्नोतीति । गन्ध+अर्वाङ्गता+अण्, शकन्वादिष्वाप् अलोपे साधुः ] स्वर्गगायकः; गातुः; दिव्यगायनः; ‘आतरो स्वरसम्पन्नो गन्धर्वाविव रूपिणौ’—इति रामायणे (१।४।११) । घोटकः (४३६); ‘रघुं संयोजयामासुर्गन्धर्वैर्हममालिभिः’—इति महाभारते (३।१६।१२३) । पशुजातिविशेषः; कस्तूरीमृगः; अन्तराभवसत्त्वः; अन्तराभवसत्त्वस्तु जन्ममरणयोर्मध्यभवः प्राणी, यो मृतो नैव कायान्तरं प्राप्नुः नापि जन्म, सः । मरणजन्मनोरन्तरा भवत्वादन्तराभवसत्त्वम्, तच्च यातनाशरीरम् । गुप्तप्राणीति केचित्; ‘गन्धर्वः पतयो मम’—इति विराटे । ‘न चाप्यहं चालयितुं शक्या केनचिदङ्गने ! दुःखशीला हि गन्धर्वास्ते च ये बलवत् प्रियाः । प्रच्छन्नाश्चापि रक्षन्ति ते मां नित्यं शुचिस्मिते’—इति महाभारते (४।८।३४) । पुंस्कोकिलः; गायनमात्रं; शिवः; ‘गन्धर्वो हृदितिस्ताक्ष्यः सुयिक्षेयः सुशारदः’—इति महाभारते (१३।१७।९७) । प्रह्वविशेषः; ‘देवास्तथा शत्रुगणाश्च तेषां गन्धर्वयक्षाः पितरो भुजङ्गाः । रक्षांसि या चापि पिशाचजातिरेपोऽष्टधा देवगणो ग्रहाख्यः’—इति सुश्रुते । [ गाः रसमीन् वर्षणोपयोगीनि वारीणि वा धारयति इति । गो+धृ+व, गोर्गमादेशश्च ] सोमः; ‘गन्धर्वो अस्य रक्षनामगृष्णात् सूरादश्वं वसवो नितरष्ट ।’ ‘गन्धर्वः सोमः’ इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (१।१६।३।२) ।

रश्मिमात्रधारकः; 'ऊर्ध्वो गन्वर्वो अविनाके अस्यात् विश्वारूपा प्रतिचक्ष्णाणो अस्य' । 'गन्वर्वो रश्मीनां धारकः' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (१।५८६।१२) । उदकधारकसूर्याशादित्यविशेषः; सूर्यश्च, एते सर्वे एव बोधिताः; 'गन्वर्व इत्या पदमस्य ऋकति पाति देवानां जनिमान्यद्भुतः' । 'गन्वर्वः उदकानां स्तुतीनां वा धारकः आदित्यः' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (१।८३।४) । 'वहत् कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुः त्सरद्-गन्वर्वमस्तूतम्' । 'गन्वर्वं गवां रश्मीनां धर्तारं सूर्यम्' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (८।१।११) । अहः; दिवससमूहः; 'तस्याहानीह गन्वर्वा गन्वर्व्यो रात्रयः स्मृताः'—इति भागवते (४।२।१।२१) । राज्ञां स्तुतिपाठकः; 'नटनर्तकगन्धर्वाः सूतमागधवन्दिनः । गायन्ति चोत्तमश्लोकचरितान्यद्भुतानि च'—इति भागवते (१।१।१२०) । शरीराधिष्ठातृदेवविशेषः; 'सोमः प्रथमो विविदे गन्वर्वो विविद उत्तरः । तृतीयो अग्निप्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः'—इति ऋग्वेदे (१०।५०।४०) । तथा च पञ्चतन्त्रे (३।२।१०-२।३) । ८७

गन्धवहः पुं. [ गन्धं वहतीति, वह्+अच् । गन्धस्य वहो वा ] वायुः; 'मन्दाराणामुदारानां वनानि परि-लोडयन् । सौगन्धिकवनानां च गन्धं गन्धवहो वहन्'—इति महाभारते (२।१०।७) । गन्धयुक्ते त्रि. । ७६

गन्धवाहः पुं. [ गन्धं वहतीति । गन्ध+वह्+ 'कर्मण्यण्' ] वायुः; 'इह हि दहति चेतः केतकीगन्धवन्धुः प्रसर-दसमवाणप्राणवद् गन्धवाहः'—इति गीतगोविन्दे (१।३६) । मृगविशेषः; कस्तूरीमृगः । ७६

गन्धोत्तमा स्त्री. [ गन्धेन उत्तमा, गन्धप्रधानेत्यर्थः ] मदिरा । ३२९

गभस्तिः पुं. [ गम्यते ज्ञायते इति गः विपयः । गम्+ङ् । तं वभस्ति दीपयति प्रकाशयतीति । भस्+ 'क्त्विच्' क्वीति' क्वित्च् ] किरणः; 'मामुपसृतमृगतनयं शिशिर-शान्तानुरागगुणितनिजवदनसलिलामृतमयगभस्तिभिः स्वधयतीति च'—इति भागवते (५।८।२२) । [ गम्यते ज्ञायते इति, गम्+ङ्, गम् इदं सर्वं जगत् वभस्ति भासयति निजकिरणजालैरिति शेषः । ग+भस्+क्त्विच् ] सूर्यः; 'गभस्तिमान् गभस्तिश्च विदवात्मा भासकस्तथा । त्वं योनिर्वेदविद्यानां वेदयेद्यस्तयैव च'—इति सूर्यस्तोत्रे ।

शिवः; 'गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः'—इति महाभारते (१३।१७।१३३) । स्त्री. [ गच्छति प्राप्नोति हव्यादिकमिति गः अग्निस्तं वभस्त्यनया इति । ग+भस्+करणे क्वित्च् ] स्वाहा । ३८

गभीरम् त्रि. [ गच्छति जलमत्र । गम्+ 'गभीरगम्भीरो' इति ईरन् भश्चान्तादेशः ] गम्भीरं; नीचस्थानं; निम्नं; गम्भीरकम्; अगाधं; गहनं; प्रचण्डम् । १४१

गम्भीरम् त्रि. [ गच्छति जलमत्र, गच्छतेरीरन् भश्चान्ता-देशः नुमागमश्च ] गभीरं; नीचस्थानं; निम्नं; गभीरकम्; 'ततः सागरगम्भीरो वानरः पवनो जवे'—इति रामायणे (५।१।५०) । पुं. जम्बीरः; पङ्कजम्; ऋद्धमन्त्रः; शिवः; 'गम्भीरघोषो गम्भीरो गम्भीरवल्वाहनः'—इति महाभारते (१३।१७।५२) । स्त्रियां हिक्कारोगः; 'नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गम्भीरनादिनी । शुष्कोष्ठ-कण्ठजिह्वास्यश्वासपाश्वरुजाकरी । अनेकोपद्रवयुता गम्भीरा नाम सा स्मृता'—इति सुश्रुते उत्तरतन्त्रे ५० अध्याये । १४०

गरं पुं. [ गीर्यते इति, गृ+कर्मणि अप् ] विषयम्; 'विद्वेष-नष्टमंतयः स्त्रियो दारुणचेतसः । गरं ददुः कुमाराय दुर्मर्षा नृपति प्रति'—इति भागवते (६।१।४।४३) । उपविषं; रोगः । क्ली. [ गिरति दोषवहुलं नाशयति स्वस्मिन् जातस्य दालस्येति भावः । गृ+पचाद्यच् ] ववाद्येकादशकरणान्तर्गतं पञ्चमकरणम्; 'वववालव-कौलवतैतिलालस्यगरवणिजविष्टसंज्ञानाम्'—इति बृह-त्संहितायाम् (९।१।४) । 'विचारदक्षो विजितारिपक्षः शूरोऽतिधीरो मृदुहास्ययुक्तः । दाता दयालुगुणवान्, नरः स्याद् गरे परेषामुपकारकर्ता'—इति कौष्ठी-प्रदीपः । 'कृपिवीजगृहाश्रयजानि गरे वणिजि ध्रुवकार्य-वणिग्युतयः'—इति बृहत्संहितायाम् (९।१।७) । [ गीर्यते भक्ष्यते इति, गृ+कर्मण्यप् ] विषयम्; 'तस्मादिदं गरं भुञ्जे प्रजानां स्वस्तिरस्तु मे'—इति भागवते (८।७।४१) । वत्सनाभाह्यविषयं; सम्मोहजं विषयम् । ६४१

गरलम् क्ली. [ गिरति ग्रसति नाशयति । गृ+अलच् । गरात् भक्षणत् लाति आदत्ते जीवनं वा । गर+ला+क ] विषयम्; 'व्यालनिलयमिलनेन गरलमिव कलयति मलयसमीरम्' । पन्नगविषयं; परिमाणम्; तृणपूलकम् । ६४१

गर्हः पुं. [ गर्ह्ण्वां पक्षाभ्यां डयते उड्डीयते इति । गर्हत्+डी+ड । षोढरादित्वात् तलोपे साधुः । यद्वा 'गिर उडच्' इति उडच् ] पक्षिविशेषः; गर्हत्मान्; ताक्ष्यः; वैनतेयः; खगेश्वरः; नागान्तकः; विष्णुरथः; सुपर्णः; पन्नगाशनः; महावीरः; पक्षिसिंहः; उरगाशनः; शाल्मली; हरिवाहनः; अमृताहरणः; नागाशनः; शाल्मलिस्थः; खगेन्द्रः; भुजगान्तकः; तरस्वी; ताक्ष्य-नायकः; 'प्रतिगृह्य वरो तो तु गर्हो विष्णुमब्रवीत् । भवतेऽपि वरं दक्षि वृणोतु भगवानपि'—इति महा-भारते (१।३।१।३३) । व्यूहविशेषः; 'वराहमकराम्यां वा सूच्या वा गर्हणेन वा'—इति मनुः (७।१८७) । 'सूक्ष्ममुखपश्चाद्भागः पृथुमध्ये वराहव्यूहः । एष एव पृथुतरमध्ये गर्हव्यूहः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । ३०

गर्हत् पुं. [ गृणाति शब्दायते वायुवेगवशादिति । ग् शब्दे, 'मृगोरुतिः' इति उति ] पक्षः; 'पंख' इति भाषा । [ गिरतीति, गृ+निगरणे+उति ] निगरणः; भक्षणः; 'सुपर्णोऽसि गर्हत्मान् पृष्ठे'—इति यजुर्वेदे (१७।७२) 'अग्ने ! त्वं सुपर्णोऽसि सुपर्णपक्षाकारो गर्होऽसि गर्हत्मान् गर्हत् गरणं गिलनं भक्ष अस्यास्तीति गर्हत्मान् अशनायत्वानित्यर्थः'—इति वेददीधितिः । २३९

गर्हत्मान् [ त् ] पुं. [ गर्हतः पक्षाः सन्त्यस्य । गर्हत्+मतुप् ] गर्हडः; 'जग्राह लीलया प्राप्तां गर्हत्मानिव पन्नगीम्'—इति भागवते (३।१९।११) । पक्षिमात्रम् (२३७) । ३०

गर्गरी स्त्री. [ गर्ग शब्दं रातीति । गर्ग+रा+क, गौरादि-त्वाद् डीष् ] मन्यनी; दधिमन्यनपात्रं; 'कलसी, गगरी' इति भाषा । 'मेषादी सक्तवो देया वारिपूर्णां च गर्गरी'—इति तिथ्यादितत्त्वे । ३१७

गर्जन्मेघः पुं. [ गर्जनं यः मेघः; कर्मधारयः ] नादवन्मेषः; स च पर्जन्यः कथ्यते । ८१८

गर्जितम् क्ली. [ गर्ज्+भावे क्त ] मेघशब्दः; रणादौ आस्फालनम्; 'वाण ! किं गर्जसे मोहात् शूराणां नास्ति गर्जितम्'—इति हरिवंशे (१८२।४९) । कृतशब्दे त्रि. 'सन्ध्यायां गर्जिते मेघे शास्त्रचिन्तां करोति यः । चत्वारि तस्य नश्यन्ति आयुर्विद्या यशो बलम्'—इति स्मृतौ । पुं. [ गर्जो गर्जनं जातोऽस्य, जातार्थे इतच् ] मत्तहस्ती । ८४१

गर्तः पुं. [ गिरति ग्रसति स्वस्मिन् पतितं जीवजातादिक-

मिति । गृ निगरणे+ 'हसिमृगिण्वामिदमीति' तन् ] अवटः; भूरुध्रं; दरः; श्वभ्रम्; आवटिः; आवट्टः; पृथिवीरुध्रं; 'गड्डा' इति भाषा । 'घरण्यां विवृते गर्ते निपपात लघुक्रमः'—इति मार्कण्डेये (२१।९) । त्रिगतदेशः; कुकुन्दरः; रोगभेदः; मातृगभंरूपग ह्वरम्; 'शेते विष्णुश्रयोर्गते स जन्तुर्जन्तुसम्भवे'—इति भागवते (३।३।१।५) । कूपः; 'यद्रोमगतोपु निलिल्युरध्वरास्तस्मै नमः कारणशूकराय ते । नरकविशेषः; 'निपपात महागर्ते तिमिरोघसमावृते'—इति मार्कण्डेये (२१।१०) । अष्टधनुःसहस्रेभ्यो न्यूनगतिदेवखातभेदः; 'धनुःसहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां न विद्यते । न तानदीशब्दवहा गतास्ते परिकीर्तिताः'—इति छन्दोगपरिशिष्टे । 'नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च । स्नानं समाचरे-न्नित्यं गर्तप्रसवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३) । [ गीर्यंते स्तूयते वेदस्तुतिं कुर्वतां जनेनेति, गृ+तन् गुणश्च ] देवरथः; 'आरोहयो वरुण ! मित्र ! गर्त-मतश्चाक्षाये अदिति दिति च । 'गर्तं रथम्' इति भाष्ये—इति ऋग्वेदे (५।६२।७) । ६२४

गर्दभः पुं. [ गर्दति गर्दयति वा, कर्कशशब्दं करोतीत्यर्थः । गर्दं रवे+ 'कशूशलिक्लीति' इति अभच् ] पशुविशेषः; चक्रीवान्; वालेयः; रासभः; खरः; राशभः; शङ्कुकर्णः; भारगः; भूरिगमः; धूसराह्वयः; केशवः; धूसरः; स्मरसूर्यः; चिरमेही; पशुचरिः; चारपुह्वः; चारटः; ग्राम्याश्वः । 'गर्दभं वा घनं मूत्रं तैलयोग्यं क्वचिद्भवेत् । सक्षारं तिक्तकटुकमुन्मादकुष्ठरोगजित्'—इति हारीते । 'गरचेतोविक्रमरुध्नं तीक्ष्णं ग्रहणिरोगनुत् । दीपनं गर्दभं मूत्रं कृमिवातकफापहम्'—इति सुश्रुते । 'अविश्रामं वहेद्भारं शीतोष्णं च न विन्दति । ससन्तोष-स्तथा नित्यं श्रीणि शिक्षेत गर्दभात्'—इति चाणक्ये (७०) । २८०

गर्धनः त्रि. [ गृध्यति स्पृहयतीति । गृष्+ 'जुचङ्कम्प-दन्द्रम्यसृगृधीति' इति युच् ] लुब्धः । ३६३

गर्धना स्त्री. [ भावे युच् ] तृष्णा; अभिलाषः । ३६४

गर्भः पुं. [ गीर्यंते जीवसञ्चितकर्मफलदात्रा ईश्वरेण प्रकृतिबलाद् जठरग ह्वरे स्थाप्यते पुरुषशुक्रयोगेणासी । गृ+ 'अतिगृम्यां भन्' इति कर्मणि भन् ] भ्रूणः; 'स्वर्गाच्च नरकान्मुक्तः स्त्रीणां गर्भो भवत्यपि'—इति



गारुडः २२९ अध्यायः । 'वातसम्प्रेरिते गर्भे अपूर्णे दिवसे यदि । प्रसूतये वाप्यय तद्गर्भे बालः प्रदृश्यते'— इति हारीते । शिशुः (५०२); [ गीर्यते निर्गीर्यते निःक्षिप्यते वीर्यं योनिरुद्धेण अस्मिन् । गिरति सिञ्चति निपेकं करोति रेतोऽत्र वा । गृ गृ वा + भन् ] कुक्षिः (५१५); 'यथा लोहस्य निस्पन्दो निपिक्तो विम्ब- विग्रहम् । उपैति तद्विजानीहि गर्भे जीवप्रवेशनम्'— इति महाभारते (१४।१८।९) । सन्धिः; पनसकण्ठकं; मध्यम्; 'केतकगर्भे गन्वादरेण दूरादमी द्रुतमुपेताः'— इति आर्यासप्तशत्याम् (१७६) । अपवरकः; गङ्गादि- सन्निहितदेशः; 'भाद्रकृष्णचतुर्दश्यां यावदाक्रमते जलम् । तावद् गर्भं विजानीयात् तद्दूर्ध्वं तीरमुच्यते'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । आम्यन्तरिकवस्तुमात्रम्; 'अष्ट- मासवृत्तं गर्भं भास्करस्य गभस्तिभिः । रसं सर्वसमुद्राणां ज्योः प्रसूते रसायनम्'—इति रामायणे (३।२७।३) ।

४९९

वर्णकः पुं. [ गर्भे केशगर्भे केशमध्ये इति यावत्, कायते प्रकाशते शोभते इत्यर्थः; यद्वा गर्भं इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृती' इति कन् ] केशमध्यस्थितमाल्यं; क्ली. [ गर्भं + संजायां कन्, यद्वा चन्द्रस्य गर्भद्वयमिव काय- तीति, कौ + क ] रजनीद्वन्द्वम्; 'रात्रियुग्म' इति भाषा ।

५५२

वर्णकः क्ली. [ गर्भरूपम् आम्यन्तरं गृहम् ] अपवरकं; गर्भभवनं; गर्भवेश्म; 'भीतरी घर' इति भाषा । २९२ वर्णकः पुं. [ आशोतेऽस्मिन्निति । आ + शी + अधिकरणे अन् । गर्भस्य भ्रूणस्य आशयः शय्यावदाश्रयस्थानम् ] जरायुः; येन वेष्टितो गर्भः कुक्षौ तिष्ठति सः; गर्भ- शय्या; 'शुक्रं शोणितसंसुष्टं स्त्रिया गर्भाशयं गतम् । क्षेत्रं कर्मजमानोति शुभं वा यदि वाशुभम्'— इति महाभारते (१४।१८।५) । 'पूर्णपोडशवर्षा स्त्री पूर्णत्रिंशेन सङ्गता । शुद्धे गर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिले हृदि । वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनाब्दयोः पुनः । रोग्यस्यायुरघन्यो वा गर्भो भवति नैव वा'—इति वाग्भटे शारीरस्थाने प्रथमेऽध्याये । ५००

गर्भिणी स्त्री. [ गर्भोऽस्त्यस्याम् । गर्भं + 'अत इनिठनो' इति इनि, ततो ङीन् ] गर्भवती; 'सुवासिनीः कुमारांश्च रोगिणी गर्भिणीस्तथा । अतिभिर्म्योऽप्र एवैतान् भोजये-

दविचारयन्'—इति मनुः (३।११४) । 'गर्भिणीकुञ्ज- राश्वदिशैलहर्म्यादिरोहणम् । व्यायामं शीघ्रगमनं शकटारोहणं त्यजेत् । शोकं रक्तविमोक्षं च साध्वसं कुक्कुटाशनम् । व्यवायं च दिवास्वप्नं रात्रौ जागरणं त्यजेत्'—इति काश्यपः । क्षीरावीवृक्षः । ४९८

गर्वः पुं. [ गर्व मदे + भावे घञ्, यद्वा गिरति मदमत्त- स्यात्मानमुद्गिरतीव इति । गृ निगरणे + 'कृ गृ शृ- दृभ्यो वः' इति व ] अहङ्कारः; 'यदि दुःस्थो न रक्षेत भरतो राज्यमुत्तमम् । प्राप्य दुर्मनसा वीर ! गर्वेण च विशेषतः'—इति महाभारते । व्यभिचारिभाव- विशेषः; 'गर्वो मदः प्रभावश्रीविद्यासत्कुलतादिजः । अवज्ञासविलासाङ्गदर्शनाविनयादिकृत्'—इति साहित्य- दर्पणे (३।१५०) । ७२२

गर्हणम् क्ली. [ गर्ह कुत्सने + भावे ल्युट् ] निन्दा । १४८ गर्हा स्त्री. [ गर्हाते निन्दते इति । गर्ह् + 'गुरोश्च हलः' इति स्त्रियां अ ततष्टाप् ] निन्दा; 'कुलपतनं जनगर्ही वन्वनमपि जीवितव्यसन्देहम् । अङ्गीकरोति कुलटा सततं परपुरुषसंसक्ता'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१८७) ।

१४८

गर्हाबादी [ न् ] त्रि. [ गर्ह्यं वदतीति, गर्ह्यं + वद् + 'सुप्यजातो णिनिस्ताच्छीत्ये' इति णिनि ] कद्वदः; निन्द्यवादी । ३७८

गलः पुं. [ गलति भक्षयत्यनेन । गल् + करणे अप् । यद्वा गीर्यतेऽनेन । गृ + करणे अप् ] कण्ठः; 'प्रजा न रञ्जयेद् यस्तु राजा रक्षादिभिर्गुणैः । अजागलस्तनस्येव तस्य राज्यं निरर्थकम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१६४) ।

[ गलति क्षरति शालवृक्षादेरिति । गल् + पचाद्यच् ] सर्जरसः; 'राल' इति भाषा । वाद्यभेदः; [ गलति निःसरति जालादेरिति ] गडकमत्स्यः; गलकः । ५१६ गलकम्बलः पुं. [ गले कम्बल इव ] गवां गलस्थितकम्बला- कृतिमांसम्; सास्ना; 'सास्ना गोगलकम्बलः'—इत्यु- ज्ज्वलदत्तः । २६६

गलन्तिका स्त्री. [ गलतीति । गल् + शतृ, उगित्वाङ्गीप्, नुम्, स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च ] कर्करी; स्वल्पवारिधानिका; 'प्रपा कार्या च वैशाखे देवे देया गलन्तिका'—इति काशीखण्डे । ३१७

गलितः त्रि. [ गल् + क्त ] पतितः; स्रस्तः; ध्वस्तः;

भ्रष्टः; स्कन्नः; पन्नः; च्युतः; 'निगमकल्पतरुर्गलितं फलं शुक्रमुखादमृतद्रवसंयुतम्'—इति भागवते (२।१।३) ।

१६८

गल्लः पुं. [ गमनं गत्, संपदादित्वात्क्विप् । गतं लाति, गत्+ला+क ] गण्डः; 'गाल' इति भाषा । ५२२

गल्वर्कः पुं. [ गलुर्मणिविशेषः स इव अर्को दीप्तिर्यस्य ] चषकः; मद्यपानपात्रं; मसारवन्मणिः; 'मसारगल्वर्क-सुवर्णरूपैर्वज्रप्रवालस्फटिकैश्च मुख्यैः'—इति महाभारते (७।१५।५३) । ३२७

गवलम् क्ली. [ गुञ्ज शब्दे, गवनं गवः, गवं लाति । क ] महिषशृङ्गः; पुं. वनमहिषः; 'गवलालिकुलाहिनिभा विसृजन्ति पयः पयोवाहाः'—इति बृहत्संहितायाम् (२३।१७) । ७६४

गवाक्षः पुं. [ गवामक्षीव, 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इत्यच् । यद्वा गावः रश्मयः अक्ष्णुवन्ति व्याप्नुवन्ति अनेन इति । अक्षू व्याप्तौ, अकर्तयंथ घञ् ] गवामक्षीव यः; वातायानं; वधूद्गयनं; जालं; जालकं; 'खिडकी, जाली' इति भाषा । 'उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षा-दलक्तकाङ्क्षां पदवीं ततान्'—इति रघुवंशे (७।७) । वानरविशेषः; वैवस्वतपुत्रः; 'पुत्रा वैवस्वतस्यात्र पञ्च कालान्तकोपमाः । गयो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः'—इति रामायणे । ३०४

गव्यम् त्रि. [ गोरिदं गोविकारो वा । 'गोपयसोर्यत्' इति यत्, 'वान्तोयि प्रत्यये' इति अच् ] गवां सर्वः; गोसम्बन्धिः; दुग्धगोमयादिः; 'संवत्सरं तु गव्येन पयसा पायसेन च'—इति मनुः (३।७१) । गोहितं; क्ली. [ गवि वाणे साधुः । गो+यत् ततोऽच् ] ज्या; [ गवि नेत्रे साधु इति ] रागद्रव्यम् । २७४

गहनम् क्ली. [ गाह्यते दुर्गम्यतेऽस्मिन्निति । गाह्+बहुल-मन्यत्रापि' इति युच्; कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद् वा ह्रस्वः ] वनम्; 'सखीस्नेहेन तद्भीरु मया सर्वं प्रति-श्रुतम् । निलीय गहने शून्ये भयमुत्सृज्य रावणात्'—इति रामायणे (६।१।६) । गह्वरं; दुःखं; पुं. विष्णुः (दुर्ज्ञेयत्वादस्य तथात्वम्); 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४) । (७७७) त्रि. [ गाह्यते दुःखेन गम्यते इति । गाह्+युच् । कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद् वा ह्रस्वः ] दुर्गमः;

दुष्प्रवेशः; कलिलः; 'गहनेष्वाश्रमान्तेषु लीलाविकृत-दर्शनाः । रमन्ते तापसास्तत्र त्रासयन्तः भुदारुणाः'—इति रामायणे (३।१।२३) । २१०

गह्वरम् क्ली. [ गाह्यते विलोड्यते आत्मानेन इति ] गाह्+ 'छित्त्वच्छित्त्वरेति' वरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधु ] दम्भः; [ गाह्यते इति ] गुहा; 'गङ्गाप्रपातात्त-त्रिल्लडशय्यं गीरीगुरोर्गह्वरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६) । वनं; रोदनं; गहने त्रि., 'नलवेणुशरस्तम्ब-कुशकीचकगह्वरम् । एक एवातिथातोऽहमद्राक्षं विपिनं महत्'—इति भागवते (१।६।१३) । ७९१

गाङ्ग्येयः पुं. [ गङ्गाया अपत्यं पुमान् । 'शुभ्रादिम्यश्च' इति ढक् ] कार्तिकेयः; 'आग्नेयः कृत्तिकापुत्रो रौद्रो गाङ्ग्येय इत्यपि । श्रूयते भगवान् देवः सर्वदेवमयो गुहः'—इति महाभारते (१।१३।१३) । इल्लीशमत्स्यः; भद्रमुस्ता; भीष्मः; 'वसुदेवं विदित्वैनं सुखं भुङ्क्ष्व सुतोद्भवम् । गाङ्ग्येयोऽयं महाभाग ! भविष्यति बला-धिकः ।' क्ली. स्वर्णम् (१७३); 'यं गर्भं सुपुत्रे गङ्गा पावकाद्दीप्ततेजसम् । तदुत्वं पर्वते न्यस्तं हिरण्यं समपद्यत ।' धुस्तूरः; कशेरुः; मुस्तम्; 'मिघाख्यं मुस्तकं मुस्ता गाङ्ग्येयं भद्रमुस्तकम् ।' गङ्गाजातजलादौ त्रि., योगमास्थाय धर्मात्मा वायुभक्ष्यो जितेन्द्रियः । गाङ्ग्येयं वार्युपस्पृश्य प्राणायामेन तस्थिवान्'—इति महाभारते (३।३।३४) । २०

गाढम् क्ली. [ गाह्यते स्म इति, गाह् विलोडने+क्त ] दृढम्; 'आलिङ्गति सा गाढं पुनः पुनर्यामिनीप्रथमे'—इति आर्यासिप्तरथ्याम् । अतिशयः; तद्युक्ते त्रि. दृढम्; 'श्रमफेनमुचा तपस्विगाढां तमसां प्राप नदीं तुरङ्गमेण'—इति रघुवंशे (१।७२) । ७१८

गाणिक्यम् क्ली. [ गणिकानां वेद्यानां समूहः । 'गणि-काया यविति वक्तव्यम्' इति यच् ] गणिकासमूहः; बहुवेद्याः । ४९१

गात्रम् क्ली. [ गच्छत्यनेन, गम्+ 'गमेरा च' इति ञ्न् आकारादेशश्च ] हस्तपादाद्यवयवसमुदायः; कलेवरं; वपुः; संहननं; शरीरं; वर्ष्मं; विग्रहः; कायः; देहः; मूर्तिः; तनुः; तनूः; इन्द्रियायतनम्; अङ्गं; क्षेत्रं; भूषणम्; मत्करणं; वेरं; सञ्चरः; घणाः; वन्धः; पुरं; पिण्डः; पुद्गलं; भूतात्मा; स्वर्गलोकेशः;

स्कन्वः; पञ्जरः; कुलं; वल्म। 'गात्रवक्त्रनखैर्वाधिं  
हृत्केशावधूनतम्। तोयाग्निपूज्यमघ्येन यानं धूमं  
शवाश्रयम्। मद्यातिसर्कित विश्रम्भस्वातन्त्र्ये स्त्रीषु  
च त्यजेत्—इति वाग्भटे। हस्तिपूर्वजङ्घादिदेशः;  
हस्त्यप्रपादादिसम्मुखभागः; 'आपस्काराल्लूनगात्रस्य  
भूमि निःसाधारङ्गच्छतोऽत्राङ्गमुखस्य'—इति माघे  
(१८।४६) 'लूनगात्रस्य छिन्नजङ्घस्य' इति तट्टीकायां  
मल्लिनाथः। [ गच्छति मरणात् परं स्वकारणभूत-  
पञ्चत्वं प्राप्नोति, यद्वा गम्यते स्थानात् स्थानान्तरं  
प्राप्यते सञ्चाल्यते वाऽनेन ] अङ्गम्। ५१०

गात्रसङ्कोची [ न् ] पुं. [ गात्रं सङ्कोचयतीति। सम्+  
कुच्+णिच्+णिनि, यद्वा गात्रस्य सङ्कोची ] जाहक-  
जन्तुः; गन्धमार्जारः; विडालविशेषः। २३६

गानम् क्ली. [ गीयते इति, गै+भावे ल्युट् ] गीतम्;  
गोयं; गीतिः; गान्धर्वम्; 'जपकोटिगुणं ध्यानं ध्यान-  
कोटिगुणो लयः। लयकोटिगुणं गानं गानात् परतरं  
न हि।' ध्वनिः। ९३

गिरा स्त्री. [ गृ+भावे क्विप्, स्त्रियां टाप् ] वचनम्;  
'तां गिरां करुणां श्रुत्वा'—इति दशरथविलापनाटके। ९-

गिरिः पुं. [ गिरति धारयति पृथ्वीं, गिरियते स्तूयते गुरुत्वाद्वा।  
'कृशुशुपुकुटिभिदिच्छिदिम्यश्च' इति इ किच्च ) पर्वतः;  
'भेरुमन्दरकैलासमलया गन्धमादनः। महेन्द्रः श्रीपर्वतश्च  
हेमकूटस्तथैव च।' गण्डुकः; चक्षुरोगविशेषः; पारदस्य  
वोपविशेषः; 'नागो वङ्गो मलो वह्निश्चाञ्चत्यं च  
विषं गिरिः। असह्याग्निर्महादोषा निसर्गात् पारदे  
स्थिताः।' संन्यासिनां भेदविशेषः; 'सदोर्ध्ववाहुर्यो  
वीरो मुक्तकेशो दिगम्बरः। सर्वत्र समभावेन भावयेद्यो  
नरोत्तमः। इष्टदेवीधिया नारीं स गिरिः परिकीर्तितः'—  
इति तन्त्रशास्त्रम्। शङ्कराचार्यकृतदशनामपरिव्राजका-  
नामन्यतमः; 'तीर्थाश्रमवनारण्यगिरिपर्वतसागराः।  
पुरिः सरस्वती चैव भारती च तथा दश।' 'वासो  
गिरिवरे नित्यं गीताम्यासे हि तत्परः। गम्भीराचल-  
बुद्धिश्च गिरिनामा स उच्यते।' यदुवंशीयश्वफल्कस्य  
द्वादशपुत्राणामन्यतमः; 'अक्रूरप्रमुखा आसन् पुत्रा द्वादश  
विश्रुताः। आसङ्गः सारमेयश्चः मृदुरो मृदुविद् गिरिः'—  
इति भागवते (१।२।१५)। स्त्री. निगरणं;  
बालमूपिका; पूज्ये त्रि.। १६५

गिरिकर्णी स्त्री. [ गिरेर्बालमूपिकायाः कर्णं इव पत्र-  
मस्याः ] अपराजिता; 'गवाक्ष्यश्वखुरीश्वेता श्वेतभण्डा-  
पराजिता। द्विविधा सा सिता नीला गिरिकर्णी  
गवादिनी। गिरिकर्णी महाश्वेता स्थूलपुष्पा सिता  
क्वचित्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। यवासः इति  
शब्दचन्द्रिका। २०२

गिरिजा स्त्री. [ गिरेर्हिमालयपर्वतात् जाता। जन्+ङ,  
स्त्रियां टाप्च ] पार्वती; 'स्त्रीषु प्रवीरजननी जननी तत्रैव  
देवी स्वयं भगवती गिरिजापि यस्य'—इति अनर्थ-  
राघवे (४।३३)। गायत्रीरूपा देवी; 'गिरिजा गुह्य-  
मातङ्गी गरुडघ्वजवल्लभा'—इति देवीभागवते (१२-  
।६।४३)। [ गिरौ पर्वते जाता इति, जन्+ङ ]  
गङ्गा; मातुलुङ्गी; 'मातुलुङ्गी सुगन्धान्या गिरिजा  
पूतिपुष्पिका। अत्यम्ला देवदूती च सा क्वचिन्मधु-  
कुक्कुटी'—इति वैद्यकरत्नमाला। श्वेतबुद्धा; क्षुद्र-  
पाषाणभेदः; त्रायमाणा लता; कंठीवृक्षः; मल्लिका;  
गिरिकदली। १६

गिरिमल्लिका स्त्री. [ गिरौ जाता मल्लिकेव, मध्यपदलो-  
पिसमासः ] कुटजवृक्षः; 'वृक्षकः शक्रपर्यायो वत्सको  
गिरिमल्लिका। कुटजस्तत्फलं चेन्द्रयवश्चापि कलिङ्गकः'  
—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। १९३

गिरिशः पुं. [ गिरिराश्रयत्वेन वसतित्वेनास्त्यस्य इति।  
'लोभादिपामादिपिच्छादिम्यः शनेलचः' इति श।  
यद्वा गिरौ कैलासारूपपर्वते, आध्यात्मिकार्थे तु नित्य-  
शुद्धमनसीत्यर्थः, शोते विराजते इति। यद्वा गिरिं  
त्रिगुणवृत्तात्मकं मनः इयति तनूकरोति विशुद्धं करोति  
शरणागतभक्तसाधकानाम्। शीङ् शयने, शो तनूकरणे  
वा, 'गिरौ डश्छन्दसि'। छान्दसानां क्वचिद्भ्राषायामपि  
प्रयोग आशुशुक्षणिवदित्याह स्वामी ] शिवः; 'इति  
प्रगल्भं पुरुषाधिराजो मृगाधिराजस्य वचो निशम्य।  
प्रत्याहृतास्त्रो गिरिशप्रभावाद आत्मन्यवन्जां शिथिली-  
चकार'—इति रघुवंशे (२।४१)। ११

गिरिसानु क्ली. [ पष्ठीसमासः ] वप्रः; गिरिशिखरः।  
८१०

गिरिसारः पुं. [ गिरेः सार इव ] लौहम्; 'तत्तैलवीतं  
विमलं गिरिसारमयं महत्। दास्त्रं परमसंक्रद्धो बालिपुत्रे  
न्यपातयत्'—इति रामायणे (६।७८।१९)। वङ्गः;

मलयपर्वतः । १७१

गिरीशः पुं. [ गिरेः कैलासस्य ईशः ] शिवः; 'चिन्ता मेऽत्र न वेश्मनि प्रियतमे किं चिन्तया स्यान्नवग्राष्णीत्यद्रि-सुतां जयन्नवतु वः सूतथा गिरीशोऽनिशम्'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (३३) । [ गिरीणां पर्वतानाम् ईशः श्रेष्ठः ] हिमालयपर्वतः; [ गिरां वाचां शास्त्राणां वा ईशः ] बृहस्पतिः । ११

गीतम् क्ली. [ गीयते इति, गौ शब्दे+भावे क्त ] गानम्; 'घातुमातुसमायुक्तं गीतमित्युच्यते बृधैः । तत्र नादात्मको घातुर्मातुरक्षरसञ्चयः ।' 'गीतं च द्विविधं प्रोक्तं यन्त्रगात्रविभागतः । यन्त्रं स्याद्वेणुवीणादि गात्रं तु मुखजं मतम् ।' 'गीतं पीनपयोधरा समदना नारी विचित्रा कथा, रम्यं हर्म्यतलं सुधांशुकिरणप्रदीपिता यामिनी । चित्तज्ञाः सुहृदः सुता सुमनसो भक्ताः पुनः सेवकाः, शुद्धं गीतफलं कवित्वमतुलं संसारसारा मताः ।' ९३

गीः [ र् ] स्त्री. [ गृ+सम्पदादित्वात् क्विप् ] वाणी; वचनं; सरस्वती । ९

गीतक्रमः पुं. [ षष्ठीसमासः ] गीतारम्भः; गानारम्भो-पक्रमः । ८६०

गीतवाद्यम् क्ली. [ समाहारद्वन्द्वः ] संगीतम्; 'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते ।' ९५

गीर्वाणः पुं. [ गीर्वाणैव वाणोऽस्त्रं यस्य, अव्यर्थवाक्यत-यास्य तथात्वम् । अन्तःस्थवकारमध्यपाठे तु गिरं वनुते याचते कांडशक्तीत्यर्थः, स्तुतिप्रियत्वादिति । वन् युञ्जाम्+कर्मण्यण् इत्यण्, 'पूर्वपदात् संज्ञायाम्-गः' इति णत्वम् ] देवता; 'एवं सुमन्त्रितार्थास्ते गुरुणार्थानुर्दाशना । हित्वा त्रिविष्टपं जग्मुर्गीर्वाणाः कामरूपिणः'—इति भागवते (८।१५।३२) । ४

गुग्गुलुः पुं. [ गुजति शब्दायतेऽनेनेति । गुज्+क्विप्, गुक् रोगस्तस्मात् गुडति रक्षतीति । गुड्+इगुपघञ्जेति क, डलयोरैक्याड्ङस्य लत्वम् ] गुग्गुलुः । ६२०

गुग्गुलुः पुं. [ गुज्यतेऽनेनेति, गुज् शब्दे+क्विप्, गुक् रोगस्तस्माद् गुडतीति । गुड् रक्षणे+बाहुलकात् कु । डलयोरैक्याड्ङस्य लत्वम् ] वृक्षविशेषः; गोमूत्रोद्भवः; अस्य निर्यासः; सुगन्धद्रव्यम्, तत्पर्यायाः—कुम्भम्; उलूलकं; कौशिकः; पुरः; कुम्भोलुः; खलकं; कुम्भोलू-

खलकं; गुग्गुलुः; जटायुः; कालनिर्यासः; देवघूपः; सर्वसहः; महिषाक्षः; पलङ्कपा; यवनद्विष्टः; भवा-भीष्टः; निशाटकः; जटालः; पुटः; भूतहरः; शिवः; शाम्भवः; दुर्गः; यातुघ्नः; महिषाक्षकः; देवेष्टः; मरुदिष्टः; रक्षोहा; रूक्षगन्धकः; दिव्यम् । 'माघुर्याच्छ-मयेद्वातं कषायत्वाच्च पित्तहा । तिकतत्वात् कफजित्तेन गुग्गुलुः सर्वदोषहा ।' 'महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पथ इत्यपि । हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्च जातयः ।' ६२०

गुच्छः पुं. [ गुञ्ज् शब्दे+क्विप्, गुत् शब्दं छद्यति नाशय-तीति । गुत्+छो+आतोऽनुपसर्गे कः' इति क ] स्तवकः; 'फूल आदि का गुच्छा' इति भाषा । 'अक्षोर्नि-क्षिपदञ्जनं श्रवणयोस्तापिच्छगुच्छावलीम्'— इति गीतगोविन्दे (११।११) । मुक्ताहारः (५६२); स्तम्भः (५७९); 'तृण, शाक आदि का गुच्छा या मूठा' इति भाषा । उद्भिद्विशेषः; मल्लिकादिः; 'गुच्छगुल्मं तु विविधं तथैव तृणजातयः' इति मनुः (१।४९) । 'मूलत एव यत्र लतासमूहो भवति न च प्रकाण्डानि ते गुच्छा मल्लिकादयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । कलापः; 'मोरपंख' इति भाषा । द्वात्रिंशद्यष्टिकहारः । १८८

गुच्छकः पुं. [ गुच्छ+स्वार्थे कन् ] स्तवकः; गुलञ्चः; स्तम्भः; कुसुमोच्चयः; गुच्छः; गुत्सः; गुत्सकः; रीठाकरञ्जः [ स्वार्थे कप्रत्ययाद् गुच्छशब्दार्थोऽप्यत्र ] क्ली. [ गुच्छ+संज्ञायां कन् ] ग्रन्थिपर्णम् । १८८

गुञ्जा स्त्री. [ गुञ्जतीति, गुजि+अच् टाप् । अस्याः पक्वफलगुच्छे शब्दबाहुल्यात्तथात्वम् ] लताविशेषः; काकचिञ्ची; कृष्णला; साङ्गुष्ठा; रक्तिका; काक-णन्तिका; काकादनी; काकतिक्ता; काकजङ्घा; शिखण्डिनी; चूडामणिः; सौम्या; शिखण्डी; अरुणा; ताम्रिका; शीतपाकी; उच्चटा; रक्ता; कृष्णचूडिका; काम्बोजी; भिल्लभूषणा; वन्या; गुञ्जिका; श्यामल-चूडा; काकचिञ्चिका; 'श्वेतारक्तप्रभेदेन ज्ञेयं गुञ्जा-द्वयं बृधैः । गुञ्जाद्वयं तु केश्यं स्याद् वातपित्तज्वरापहम् । मुखशोषश्चमशवास्तृष्णामदविनाशनम् । नेत्रामयहरं वृष्यं बल्यं कण्डूत्रणं हरेत् । कृमीन्द्रलुप्तकुष्ठानि रक्ता च घवलापि च'—इति भावप्रकाशे । 'अन्तर्विपमया ह्येता बहिश्चैव मनोरमाः । गुञ्जाफलसमाकाराः

स्वभावादेव योषितः।' चतुर्थवपरिमाणं; 'स्ती' इति भाषा; 'यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम्'—इति शाङ्गवरे प्रथमेऽध्याये । चतुर्घान्यपरिमाणं; गोधूमद्वयमानं; पटहः; [ गुञ्जनमिति, भावे अप् ] कलञ्चनिः; [ गुञ्ज्यते भ्रमरादिभिर्मद्यपायिभिर्वा यत्र । अधिकरणे अप् घञ् वा ] मदिरागृहं; चर्चा । २०३ गुडकरी स्त्री. [ गुडं गुडवत्सुमिष्टं श्रुतिसुखकरमित्यर्थः, करोतीति । गुड+कृ+कृत्रो हेतुताच्छीलानुलोभ्येषु' इति ट, स्त्रियां डीप् ] रागिणीविशेषः । १०२

गुडची स्त्री. [ चि+क्विप् निपातनाद्दीर्घत्वे साधुः । गुडवत् ची चयनं क्षरितो रसो यस्याः । अमृतोद्भवत्वादेवास्यास्तथात्वम् ] गुडूची । [ गुडूची+निपातनाद्दुत्वागमः ] गुडुची । ६१५

गुडूची स्त्री.—लताविशेषः; वत्सादनी; छिन्नरूहा; तन्त्रिका; अमृता; जीवन्तिका; सोमवल्ली; विशल्या; मधुपर्णी; गुडची; कुण्डली; चक्रलक्षणा; अमृतवल्ली; ज्वरारिः; श्यामा; वरा; सुरकृता; मधुपर्णिका; छिन्नोद्भवा; अमृतलता; रसायनी; छिन्ना; सोमलतिका; भिषक्प्रिया; कुण्डलिनी; वयःस्था; छदिका; नागकुमारिका; चन्द्रहासा; अमृतवल्लरी; सुधा; जीवन्ती; सोमा; चक्रलक्षणा; वयस्या; मण्डली; देवनिर्मिता । 'गुडूची क्वायकल्काम्यां सपयस्कं घृतं घृतम् । हन्ति वातं तथारक्तकुष्ठं जयति दुस्तरम्'—इति चक्रपाणिः । ६१५

गुणः पुं. [ गुण्यते मन्त्रघृते, मन्त्रणादिभिर्निश्चीयते राजभिरिति शेषः । गुण् आमन्त्रणे+घञ् ] घनुराकर्षणरज्जुः; मीर्वी; ज्या; शिञ्जनी; शिञ्ज्या; ज्यावा; प्रसञ्चिका; जीदा । 'वय नमस्य इव त्रिदशायधं कनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतम् । घनुरोधज्यमनाधिरुपादे नरवरो रवरोषितकेशरी'—इति रघुवंशे (१।५४) । (८६१) द्रव्याभितः; शौर्यादिः; रसगन्धादिः; रूपं, रसः, गन्धः, स्पर्शः, शब्दः । (८६५) सत्त्वरजस्तमांसि; 'सत्त्वं रजस्तम इति प्रकृतेगुणास्तैर्युक्तः परः पुरुष एक इहास्य घत्ते । स्थित्यादये हरिविरिञ्चिहरेति संज्ञाः श्रेयांसि तत्र खलु सत्त्वतनोर्णां स्युः'—इति भागवते (१।२।२३) । रूपादयः, तद्यथा—रूपं, रसः, गन्धः, स्पर्शः, संख्या, परिमाणं, पृथक्त्वं, संयोगः, विभागः, परत्वम्, अपरत्वं,

बुद्धिः, सुखं, दुःखम्, इच्छा, द्वेषः, यत्नः, गुरुत्वं; द्रवत्वं, स्नेहः, संस्कारः; धर्मः; अधर्मः; शब्दः । तन्तुः; शिञ्जनी; अप्रधानं; सूदः; इन्द्रियं; त्यागः; वटी; रज्जुः; 'गुणवन्तोऽपि सीदन्ति न गुणप्राहको यदि । सगुणोऽपि पूर्णकुम्भो यथा कूपे निमज्जति ।' सूत्रम्; 'काञ्चीगुण इव पतितः स्थितैकरत्नः फणी स्फुरति'—इति आर्यासप्तशत्याम् । शुक्लकृष्णरक्तपीतादिः; दोषान्वयविशेषणं; विद्यादि; व्यञ्जनम्; 'गुणांश्च सूपशाकाद्यान् पयो दधि घृतं मधु । विन्यसेत् प्रयतः सम्यक् भूमावेव समाहितः'—इति मनुः (३।२२६) 'गुणान् व्यञ्जनानि अन्नापेक्षयाऽप्राधान्याद् गुणयुक्तान् वा' इति तट्टीकायां कुल्लुकभट्टः । आवृत्तिः; 'आहारो द्विगुणः स्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा । षड्गुणो व्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणः स्मृतः'—इति महाभारते । व्याकरणोक्तसंज्ञाविशेषः; यथा—'अदेङ् गुणः ।' काव्यगुणः; 'ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः । उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचल स्थितयो गुणाः'—इति काव्यप्रकाशः । ४६४

गुणलयनी स्त्री. [ गुणाः गुणमयपटाः लीयन्ते यत्र । गुण+ली+ल्युट्, डीप् ] गुणलयनिका; वस्त्रनिमित्तगृहं; केणिका; पटकुटी । ४५१

गुणवृक्षः पुं. [ गुणानां तरणीस्थरज्जुनां वृक्ष इव ] गुणवृक्षकः, नीकागुणवन्वनस्तम्भः; कूपकः; 'मस्तूल' इति भाषा । ६५५

गुणोत्कर्षः पुं. [ गुणानाम् उत्कर्षः उत्कर्षणं प्राधान्यमित्यर्थः ] गुणप्राधान्यम्; 'स्वभावजैर्गुणैर्दिव्यैः कामजैर्बहुलैर्वृतः । भूयस्तव गुणोत्कर्षमेते विद्ये करिष्यते'—इति रामायणे (१।२५।१९) । अतिशयः; परभागः ।

७८६

गुण्डितः त्रि. [ गुण्डि वेष्टने+कर्मणि क्त ] गुण्डितः; रूपितः; घृत्यादिभिर्घूसरितः; 'यत्र युद्धेन मे कार्यं न प्राणैर्नापि सीदया । लक्ष्मणं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं पांशुगुण्डितम्'—इति रामायणे (६।८२।८) । आवृतः ।

७६८

गुण्डितः त्रि. [ गुण्डि वेष्टने, कर्मणि क्त ] रूपितः; घृत्यादिभिः घूसरितः; चूर्णीकृतः । ७६८ गुस्तः पुं. [ गुण्यते तृणपत्रपुष्पादिभिः परिवेष्टयतेऽर्थी । गुष् परिवेष्टने+उन्दिगुषिकृषिम्यश्च' इति कर्मणि

स किञ्च ] स्तवकः; स्तम्बः; [ हारादौ तु गुध्यते  
परिवेष्टयते कण्ठवक्षःस्थलादिकमनेन ] द्वात्रिंशद्यष्टिक-  
हारः; ग्रन्थिपर्णवृक्षः । १८८

गुदम् क्ली. [ गोदते खेलति चलतीत्यर्थः; अपानसंज्ञकवायुः  
अनेन । गुद् + 'इगुपधेति' क ] मलत्यागद्वारम्;  
अपानं; पायुः; गुह्यं; गुदवर्त्म; चूतः; गुदद्वारं;  
च्युतिः । ५१३

गुदकीलकः पुं. [ गुदकील + स्वार्थे कन् । गुदस्य अपानस्य  
मलद्वारस्येत्यर्थः; यद्वा गुदे, कील इव गुदकीलः ] अशौ-  
रोगः; गुदकीलः । ६०५

गुन्द्रः पुं. [ गुद्रि + अच् ] शरतृणं; वृक्षविशेषः; पटरकः;  
अच्छः; शृङ्गवेरा ह्वमूलकः; 'गुन्द्रान् द्रध्वा कृतं भस्म  
हरितालं मनःशिला । उपदंशविसर्पणामेतच्छान्तिकरं  
परम्'—इति सुश्रुतः । ६२२

गुम्फः पुं. [ गुम्फ् + घञ् ] ग्रन्थनम्; 'सततमरुणित-  
मुखे सखि ! निगरन्ती गिरां गुम्फम्'—इति आर्यासप्त-  
शत्याम् (६०६) । 'निगुम्फनिर्भरक्षरन्मधूलकामनो-  
हरम्'—इति रावणकृतशिवताण्डवस्तोत्रे (१३) ।  
बाहोरलङ्कारः; श्मश्रु । ७३०

गुरुः पुं. [ गृणाति उपदिशति वेदादिशास्त्राणि इन्द्रादि-  
देवैर्म्यः इति । यद्वा गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वमनुष्यादिभिः ।  
गृ + 'कृप्रोश्च' इति उत् ] बृहस्पतिः; 'इत्याश्वास्य  
गुरुं शक्रो दूतं वक्तुं विचक्षणः'—इति देवीभागवते  
(१।१।४४) । निषेकादिकृतः; 'निषेकादीनि कर्माणि  
यः करोति यथाविधि । सम्भावयति चात्रेण स विप्रो  
गुरुश्च्यते'—इति मनुः (२।१४२) । निषेको गर्भाधानम्,  
आदिना सीमन्तोन्नयनादिर्मन्त्रविद्यादानादेश्च ग्रहणम् ।  
तत्कर्ता पित्रादिर्गुरुः; मन्त्रदाता; 'अभिषप्तमपत्रं च  
सप्तद्वं कितवं तथा । क्रियाहीनमकल्पान् वामन गुरु-  
निन्दकम् । सदा मत्सरसंयुक्तं गुरुं मन्त्रेषु वर्जयेत् ।  
गुरुर्मन्त्रस्य मूलं स्यान्मूलशुद्धौ सदा शुभम्'—इति  
कर्णिकपुराणे । कपिकच्छः; द्विमात्रः; दीर्घः;  
[ गृणाति उपदिशति वेदान् ] वेदाध्यापयिताचार्यः;  
'षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्यं गुरो ऋग्वेदिकं व्रतम् । तदद्विकं  
पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा'—इति मनुः (३।१) ।  
[ गृणाति उपदिशति किञ्चिदपि यः ] उपाध्यायः;  
'अस्य वा बहु वा यस्य श्रुतस्योपकरोति यः । तमपीहगुरुं

विद्याच्छ्रुतोपक्रियया तथा' इति मनुः ( २।१४९ ) ।  
[ गीर्यते स्तूयतेऽसौ ज्ञानतपोवृद्धत्वात् ] ज्ञान-  
प्रभावान्वितत्वात् तपोबलप्राधान्याद् वा पूज्यतमो  
महात्मा । 'मातुलांश्च पितृव्यांश्च श्वशुरानृत्विजो  
गुरुन्'—इति मनुः ( २।१३० ) । 'भूयिष्ठाः खलु गुरुव-  
इत्युपक्रम्य ज्ञानवृद्धतपोवृद्धयोरपि हारीतेन गुरुत्व-  
कीर्तनात् तयोश्च कनिष्ठयोरपि सम्भवात् तद्विषयोऽयं  
गुरुशब्दः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । [ गृणाति  
उपनीय सन्ध्योपासनाचारादीनि कर्माणि उपदिशति ]  
उपनेता; सन्ध्योपासनाद्युपदेष्टा; 'उपनीय गुरुः शिष्यं  
शिक्षयेच्छौचमादितः । आचारमग्निकार्यं च सन्ध्यो-  
पासनमेव च—' इति मनुः ( २।६९ ) । पिता; 'गतो  
दशरथः स्वर्गं यो नो गुरुतरो गुरुः'—इति रामायणम्  
( २।७९।२ ) । चक्रवर्ती सम्राट्; 'गुरुर्पाणां गुरुवे  
निवेद्य'—इति रघुवंशे ( २।६८ ) । [ गिरति अज्ञानमन्त-  
र्याभिरूपेणाविद्यां नाशयतीत्यर्थः । गीर्यते स्तूयते  
जीवनिकरैरिति वा ] विष्णुः; 'आदिदेवो महादेवो देवेशो  
देवभृद् गुरुः'—इति महाभारते ( १३।१४९।६५ ) । शिवः;  
'सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः'—इति महाभारते  
( १३।१७।१३० ) । ब्रह्मा; माननीयः; 'विभ्रत् सहज-  
काठिन्यं जातो गौरीगुरुर्गुरुः । शम्भुं प्रपूज्य सुतया सजा  
विश्वगुरोरपि'—इति काशीखण्डे ( ६६।७१ ) 'विश्व-  
गुरोर्ब्रह्माणोऽपि गुरुर्माननीयः पूज्यो वा' इति तट्टीका ।  
ज्येष्ठभ्राता; मातुलादिः; 'उपाध्यायः पिता ज्येष्ठ-  
भ्राता चैव महोपतिः । मातुलः श्वशुरस्त्राता माता-  
महोपितामही । बन्धुज्येष्ठः पितृव्यश्च पुंस्येते गुरुवः  
स्मृताः ।' मातुलानीत्यादिः; 'मातामही मातुलानी तथा  
मातुश्च सोदरा । श्वश्रूः पितामही ज्येष्ठा धात्री च  
गुरुवः स्त्रियु ।' ४७

गुरुः त्रि. [ गीर्यते स्तूयते महत्त्वात् । गृ + 'कृप्रोश्च'  
इति उत् ] महान्; 'इदं मे अग्ने ! क्रियते पावकामिनते  
गुरुं भारं न मन्म'—इति ऋग्वेदे ( ४।५।६ ) । दुर्जरः;  
बलघुः; 'प्राप्तो बन्धनमप्ययं गुरुमृगस्तावत् त्वया मे  
हृतः'—इति पञ्चतन्त्रम् ( २।१९८ ) । पराक्रान्तः;  
'सोत्साहशक्तिरसम्पन्नो हन्याच्छत्रुं लघुर्गुरुम्'—इति  
पञ्चतन्त्रे ( ३।२८ ) । भारायमाणः; 'अथ मदगुरु-  
पक्षैर्लोकपालद्विपानाम्'—इति रघुवंशे ( १२।१०२ ) ।

‘अथ मदेन गजगण्डसञ्चारसंक्रान्तेन गुरुपक्षैः भाराय-  
माणपक्षैः अलिवृन्दैः’ इति तट्टीकायां मल्लिनाथः ।  
अतिशयः; ‘कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकार-  
प्रमत्तः। शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः—  
इति मेघदूते (१११) । ६९९

गुरुक्रमः पुं. [ गुरुरेव क्रमः पारम्पर्यं यत्र ] इतिह; पारम्पर्यो-  
पदेशः; सम्प्रदायः । ४०२

गुर्विणी स्त्री. [ गर्वति कुक्षी सन्तानम् प्राप्नोति । गर्व-  
गतौ, ‘गर्वेरत उच्च’ इति उतु इनन् च, गौरादित्वात्  
डीप् । यद्वा गुरुर्गुरुभारयुक्तो गर्भोऽस्त्यस्याः । गुरु+  
‘व्रीह्यादिभ्यश्च’ इति इनि ] गर्भिणी; ‘वन्वकी-  
पद्मशरभशूलिकागुर्विणीस्तनात् ।’ प्रज्ञा नृपेण चादेया  
तथा गोपालयोपितः—इति मार्कण्डेये (२७।२०) ।

४९८

गुर्वी स्त्री. [ गुरुभारयुक्तो गर्भोऽस्त्यः । गुरु+डीप् ]  
गर्भवती; ‘न हि वन्व्या विजानाति गुर्वी प्रसववेदनाम्’—  
इति हितोपदेशः । गुरुपत्नी [ गुरोः पत्नीति, गुरु+  
डीप् ]; गौरवयुक्ता [ गुरु+‘वोतो गुणवचनात्’ इति  
विभाषया डीप् ] ‘अनन्यगुर्व्यास्तव केन केवलः पुराण-  
मूर्तेर्महिमावगम्यते’—इति माघः । गुरुभारविशिष्टा;  
‘ततः शाल्वं गदां गुर्वीमाविध्यन्तं महाहवे । द्विधा चकार  
सहसा प्रजज्वाल च तेजसा’—इति महाभारते  
(३।२२।३७) । गायत्री; ‘गुहावासा गुणवती गुरु-  
पापप्रणाशिनी । गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुण-  
रूपिणी’—इति देवीभागवते (१२।६।४२) । ४९८

गुलुच्छः पुं. [ गुच्छ+पृषोदरादित्वात् साधुः ] गुच्छः;  
स्तवकः; गुलुच्छः । १८८

गुलुञ्चः पुं. [ गुण्डति गोलाकारेण वेष्टयतीति ।  
गुड्+क्विप्, गुड्, त तदाकारम् उञ्चति आदत्ते उपार्ज-  
यति वा । ‘कर्मण्यण्’, ततो ङस्य लत्वे साधुः ] गुच्छः;  
गुलुञ्चकः; गुलुञ्चः । १८८

गुल्फः पुं. [ गुल्+‘कलिगलिभ्यां फगस्योच्च’ इति फक्  
अकारस्योत्वं च ] पादग्रन्थिः; घुटिका; चरणग्रन्थिः;  
घुटिकः; घुण्टकः; घुण्टः; ‘समवेतौ करो पादौ गुल्फौ  
चावनतौ मम ।’ ५१५

गुल्मः पुं. [ गुडति वेष्टयति, गुडघते वेष्टघते वानेन। गुड्+  
करणे बाहुल्यरान्मक्, डलयोरैक्याद् ङस्य लत्वे साधुः ]

अप्रकाण्डवृक्षः; स्तम्बः; ‘गुच्छगुल्मं तु विविधं तथैव  
तृणजातयः’—इति मनुः (१।४८) ‘यत्र लतासमूहा  
भवन्ति न च प्रकाण्डानि ते गुच्छा मल्लिकादयः, गुल्मा  
एकमूलाः सङ्घातजाताः’ इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः ।  
सेनासंख्याविशेषः; ‘एको रथो गजश्चैको नराः पञ्च  
पदातयः । त्रयश्च तुरगास्तज्जैः पत्तिरित्यभिधीयते ।  
पत्तिन्तु त्रिगुणामेतामाहुः सेनामुखं बुधाः । त्रीणि सेना-  
मुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते ।’ अत्र गजा नव, रथा  
नव, अश्वाः सप्तविंशतिः, पदातयः पञ्चचत्वारिंशत्,  
समुदायेन नवन्तिः । प्लीहा; उदरजरोगविशेषः;  
‘श्वययूत्योपचारैश्च दोषैः संकुप्यतेऽनिलः । मन्दाग्निना  
हि जठरे जायते गुल्मरुद्धं नृणाम् ।’ ‘शुष्ठी सौवर्चलं  
जीरे द्वे वा हिङ्गुसमन्वितम् । काञ्जिकं पानमेतेषां  
रुक्षणं गुल्मशान्तये । गुल्मचिकित्सिते क्षारपाकोऽत्र  
प्रतियुज्यते’—इति सुश्रुतः । षट्भेदः; सैन्यरक्षणं;  
रक्षितपुरुषसमूहः; ‘द्वयोस्त्रयाणां पञ्चानां मध्ये गुल्म-  
मविष्टितम् ।’ गुल्मं रक्षितपुरुषसमूहमित्यस्य टीकायां  
कुल्लूकभट्टः । ‘सैन्यैकदेशः; ‘गुल्माश्च स्थापयेदाप्वान्  
कृतसंज्ञान् समन्ततः ।’ ‘गुल्मान् सैन्यैकदेशान्’ इति  
तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । १९०

गुवाकः पुं. [ गुवति मलवत् क्वायमुत्सृजतीति । गु+  
‘पिनाकादयश्च’ इति आक्, तुदादित्वाद् गुणाभावः  
निपातनाद् दीर्घोऽपि दृश्यते ] घोष्टा; पूगः; क्रमुकः;  
खपुरः; गुवाकः; पूगवृक्षः; दीर्घपादपः; वल्कतः;  
दृढवल्कः; चिक्कणः; पूगी; सुरञ्जनः; गोपदलः;  
राजतालः; छटाफलः । एतत्फलस्य पर्यायाः—  
क्रमुकफलं; पूगं; चिक्कणी; चिक्का; चिक्कणं;  
दलक्षणकम्; उद्वेगं; पूगफलं; पूगीफलम् । ‘ताम्बूलं  
न मुखे दत्त्वा गुवाकं भक्षयेद्यदि । तावन्चापडालतां याति  
यावद् गङ्गां न पश्यति ।’ २००

गुहः पुं. [ गूहति रक्षति देवसेनाम् । गुह्+‘इगुपवज्ञा-  
प्रीकिरः कः’ इति क । नामनिश्चयो तु गुहा आवा-  
सत्वेनास्त्वस्येति अच् ] कार्तिकेयः; ‘रुद्रसूनुं ततः  
प्राहुर्गुहं गुणवतां व्रतम्’—इति महाभारते (३।२२८) ।  
‘दिव्यं शरवणं प्राप्य ववृधेऽद्भुतदर्शनः । ददृशुः कृति-  
कास्तन्तु वालाकंसदृशद्युतिम् । स्कन्धत्वात् स्कन्द-  
ताञ्चापि गुहावासाद् गुहोऽभवत्’—इति महाभारते

(१३।८३) । घोटकः, श्रीरामसखः; शृङ्गवेरपुरवासी निषादाधिपतिः; 'तत्र राजा गुहो नाम रामस्यात्मसमः सखा । निषादजात्यो बलवान् स्थपतिश्चेति विश्रुतः'—इति रामायणे (२।५०।३३) । [ गूहते संवृणोति स्वरूपादीनि मायया इति । गुह् + क ] विष्णुः; 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४) । महादेवः; 'व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरङ्गवित्'—इति महाभारते (१३।१७।६०) । कायस्थानां पद्धतिविशेषः; 'अयं गुहकुलोद्भवो दशरथाभिधानो महान् कुलाम्बुजमधुव्रतो विविधपुण्यपुञ्जान्वितः'—इति कायस्थकुलदीपिका । २०

गुहा स्त्री. [ गुह् + क टाप् च ] गर्तः; पर्वतादेर्गह्वरं; बिलं; शिलासन्धिः; देवखातं, गह्वरम्; 'किष्किष्ठां रामसुग्रीवौ जग्मतुस्तौ गुहां तदा'—इति रामायणे (१।१।७०) । सिंहपुच्छीलता; शालपर्णीवृक्षः; हृदयम्; 'तस्मादिदं गुहाहृदयम्'—इति शतपथब्राह्मणे (१।१।६।५) । [ गूढा ज्ञातृज्ञानज्ञेयपदार्थाः अस्यां, गूहतेऽस्यामात्मा इति वा । गुह् + भिदादित्वादिधकरणे अङ्ग टाप् च ] बुद्धिः; 'अणोरणीयान् महतो महीयान् आत्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः'—इति श्वेताश्वतरोपनिषदि । १६७

गुह्यम् त्रि. [ गुहां गोपनम् अहंति, वस्त्राद्यभ्यन्तरस्थानं लब्धुमर्हतीति यावत् । गुहा + 'तदर्हति' इति यत्, गुह् + कर्मणि क्यवित्येके ] रहस्यं; गोप्यं; विविक्तः; विजनः; छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशुः; गूढम्; उपह्वरम्; 'राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्'—इति भगवद्गीतायाम् । 'पुराणगुह्यं सकलं समेतं गुरोः प्रसादात् करुणानिधेश्च'—इति देवीभागवते (१।३।३७) । क्ली. उपस्थः (८२३); स तु भगं लिङ्गञ्च । भगार्थे यदुक्तम्—'कामार्तः पुरुषो ह्यत्र चुम्बयेद् गुह्यमादृतः ।'—पुं. [ गुहां सरस्यादेर्गतंमर्हतीति, गुहा + 'दन्तादिभ्यो यत्' इति यत् ] कमठः; दम्भः; [ गूहितुमर्हति योग्यो भवति उपनिषद्वेद्यत्वात्, यद्वा गुहावां बुद्धौ हृदयाकाशे वस्तुमर्हति ध्यानायाहंतीति यावत् ] विष्णुः; 'गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः'—इति महाभारते (१३।१४९।७१) । महादेवः; 'यजुःपादभुजो गुह्यः प्रकाशो जङ्गमस्तथा'—इति महाभारते (१३।१७।९१) । गुणशालिभ्रवावाङ्म्वितजीवविशेषः;

'गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति' इति । 'अध्वयं वो घमिणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न केचित्'—इति ऋग्वेदे (७।१०३।८) । उपदेवताविशेषः; 'गुह्याः पितृगणाः सप्त ये दिव्या ये च मानुषाः'—इति महाभारते (३।३।४३) । [ स्त्रियां टाप् ] गायत्रीस्वरूपा देवी; 'गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुणदायिनी'—इति देवीभागवते (१२।६।४२) । गोपनीये त्रि., 'स गुह्योऽन्यस्त्रिवृद् वेदो यस्तं वेद स वेदवित्'—इति मनुः । 'प्रणवाख्यो गुह्यो गोपनीयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकमट्टः । ७०८

गुह्यफः पुं. [ गूहति निधिं घनविशेषं रक्षतीति । गुह् + ण्वल्, पृषोदरादित्वाद् यगागमे साधुः ] कुवेरः । (८७) देवयोनिविशेषः; कुवेरानुचरः; निधिरक्षकः; मणिभद्रादियक्षभेदः; 'निधिं रक्षन्ति ये यक्षास्ते स्युर्गुह्यकसंज्ञकाः'—इति व्याडिः । [ गुह्यं कुत्सितं कायति शब्दायते प्रकाशयति वा । कै + क । यद्वा गुह्यं गोप्यं कं सुखं यस्य । 'शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति' काशिकोक्तेः क्यप् वा । यद्वा गुह्यात् सृष्टिं चिकीर्षोः परब्रह्मणः कृष्णस्य गुह्यदेशात् कायति आविर्भवतीति ] यदुक्तं ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे (५।६०)—'आविर्भवूव कृष्णस्य गुह्यदेशात्ततः परम् । पिङ्गलश्च पुमानेकः पिङ्गलश्च गणैः सहः । आविर्भूता यतो गुह्यात् तेन ते गुह्यकाः स्मृताः ।' पक्वान्नविशेषः; 'समितो सर्पिषा भृष्टं सिताद्राक्षादिसम्भृताम् । एलालवङ्गकपूर्मरीचपरिवांसिताम् । क्षिप्तान्यसमितालम्बपुटे वेष्ट्य धृते पचेत् । ततः खण्डे न्यसेत् पक्वे गुह्यकोऽयमुदाहृतः । 'गुह्यको बृंहणो हृद्यो वृष्यः पित्तानिलापहः । मधुसोऽतिगुरुः पाके किञ्चित् सन्धानकृत्सरः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः । ७९

गुह्यबीपकः पुं. [ गुह्येन गुह्यस्यज्योतिषा दीपयति प्रकाशयतीति । स्वयं गुह्यः सन् दीपयतीत्येके । दीप् + ण्वल् ] खद्योतः । २५७

गुह्यपिधानम् क्ली [ पष्ठीसमासः ] कक्षा; कौपीनम् । ८४२

गूढपात् [ द् ] पुं. [ गूढं पादयति, पद् गतौ + णिजन्तात् क्विप् । यद्वा गूढाः पादा अस्य, पृषोदरादित्वादलोपे साधुः ] सर्पः । ६४०



‘अथ मदेन गजगण्डसञ्चारसंक्रान्तेन गुरुपक्षैः भाराय-  
माणपक्षैः अलिवृन्दैः’ इति तट्टीकायां मल्लिनाथः ।  
अतिशयः; ‘कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकार-  
प्रमत्तः । शापेनास्तद्भ्रमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः’—  
इति मेघदूते (१११) । ६९९

गुरुक्रमः पुं. [ गुरुरेव क्रमः पारम्पर्यं यत्र ] इतिह; पारम्पर्यो-  
पदेशः; सम्प्रदायः । ४०२

गुविणी स्त्री. [ गर्वति कुक्षी सन्तानम् प्राप्नोति । गर्व-  
गती, ‘गर्वरेत उच्च’ इति उत् इनन् च, गौरादित्वान्  
ङीप् । यद्वा गुरुर्गुर्भारयुक्तो गर्भोऽस्त्यस्याः । गुरु+  
‘व्रीह्यादिभ्यश्च’ इति इनि ] गर्भिणी; ‘वन्वकी-  
पद्मशरभशूलिकागुविणीस्तनात् । प्रज्ञा नृपेण चादेया  
तथा गोपालयोपितः’—इति भाकण्डेये (२७।२०) ।

४९८

गुर्वी स्त्री. [ गुरुर्भारयुक्तो गर्भोऽस्याः । गुरु+ङीप् ]  
गर्भवती; ‘न हि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम्’—  
इति हितोपदेशः । गुरुपत्नी [ गुरोः पत्नीति, गुरु+  
ङीप् ]; गौरवयुक्ता [ गुरु+‘वोतो गुणवचनात्’ इति  
विभाषया ङीप् ] ‘अनन्यगुर्व्यास्तव केन केवलः पुराण-  
मूर्तेर्महिमावगम्यते’—इति माघः । गुरुभारविशिष्टा;  
‘ततः शाल्वं गदां गुर्वीमाविध्यन्तं महाहवे । द्विधा चकार  
सहसा प्रजज्वाल च तेजसा’—इति महाभारते  
(३।२२।३७) । गायत्री; ‘गुहावासा गुणवती गुरु-  
पापप्रणाशिनी । गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुण-  
रूपिणी’—इति देवीभागवते (१२।६।४२) । ४९८

गुलुच्छः पुं. [ गुच्छ+पृषोदरादित्वात् साधुः ] गुच्छः;  
स्तवकः; गुलुच्छः । १८८

गुलुञ्चः पुं. [ गुण्डति गोलाकारेण वेष्टयतीति ।  
गुड्+क्विप्, गुड्, त तदाकारम् उञ्छति आदत्ते उपार्ज-  
यति वा । ‘कर्मण्यण्’, ततो ङस्य लत्वे साधुः ] गुच्छः;  
गुलुञ्चकः; गुलुञ्चः । १८८

गुल्फः पुं. [ गुल्+‘कलिगलिभ्यां फगस्योच्च’ इति फक्  
अकारस्योत्वं च ] पादप्रन्यः; घुटिका; चरणप्रन्यः;  
घुटिकः; घुटकः; घुटः; ‘समवेती करो पादो गुल्फो  
चावनतो मम ।’ ५१५

गुल्मः पुं. [ गुडति वेष्टयति, गुडयते वेष्टयते वानेन। गुड्+  
करणे बाहुल्यकान्मक्, इलयोरैक्याद् इत्य लत्वे साधुः ]

अप्रकाण्डवृक्षः; स्तम्बः; ‘गुच्छगुल्मं तु विविधं तथैव  
तृणजातयः’—इति मनुः (१।४८) ‘यत्र लतासमूहा  
भवन्ति न च प्रकाण्डानि ते गुच्छा मल्लिकादयः, गुल्मा  
एकमूलाः सङ्घातजाताः’ इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः ।  
सेनासंख्याविशेषः; ‘एको रथो गजश्चैको नराः पञ्च  
पदातयः । त्रयश्च तुरगास्तज्जैः पत्तिरित्यभिधीयते ।  
पत्तिन्नु त्रिगुणामेतामाहुः सेनामुखं बुधाः । त्रीणि सेना-  
मुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते ।’ अत्र गजा नव, रथा  
नव, अश्वाः सप्तविंशतिः, पदातयः पञ्चचत्वारिंशत्,  
समुदायेन नवंतिः । प्लीहा; उदरजरोगविशेषः;  
‘श्वययूत्योपचारैश्च दोषैः संकुप्यतेऽनिलः । मन्दाग्निना  
हि जठरे जायते गुल्मरुद्धं नृणाम् ।’ ‘शुष्ठी सौवर्चलं  
जीरे द्वे वा हिङ्गासमन्वितम् । काञ्जिकं पानमेतेषां  
रक्षणं गुल्मशान्तये । गुल्मचिकित्सिते क्षारपाकोऽत्र  
प्रतियुज्यते’—इति सुश्रुतः । घट्टभेदः; सैन्यरक्षणं;  
रक्षितपुरुषसमूहः; ‘द्वयोस्त्रयाणां पञ्चानां मध्ये गुल्म-  
मधिष्ठितम् ।’ गुल्मं रक्षितपुरुषसमूहमित्यस्य टीकायां  
कुल्लूकभट्टः । सैन्यकदेशः; ‘गुल्माश्च स्थापयेदाप्तान्  
कृतसंज्ञान् समन्ततः ।’ ‘गुल्मान् सैन्यकदेशान्’ इति  
तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । १९०

गुवाकः पुं. [ गुवति मलवत् क्वाथमुत्सृजतीति । गु+  
‘पिनाकादयश्च’ इति आक, तुदादित्वाद् गुणाभावः  
निपातनाद् दीर्घोऽपि दृश्यते ] घोष्ठा; पूगः; क्रमुकः;  
खपुरः; गुवाकः; पूगवृक्षः; दीर्घपादपः; वल्कतरुः;  
दृढवल्कः; चिक्कणः; पूगी; सुरञ्जनः; गोपदलः;  
राजतालः; छटाफलः । एतत्फलस्य पर्यायाः—  
क्रमुकफलं; पूगं; चिक्कणी; चिक्का; चिक्कणं;  
इलङ्गणकम्; उद्द्वेगं; पूगफलं; पूगीफलम् । ‘ताम्बूलं  
न मुखे दत्त्वा गुवाकं भक्षयेद्यदि । तावच्चाण्डालतां याति  
यावद् गङ्गां न पश्यति ।’ २००

गुहः पुं. [ गूहति रक्षति देवसेनाम् । गुह्+‘इगुपघञा-  
प्रीकिरः कः’ इति क । नामनिर्दत्तो तु गुहा आवा-  
सत्वेनास्त्यस्येति अच् ] कार्तिकेयः; ‘रुद्रसूनुं ततः  
प्राहुर्गुहं गुणवतां व्रम्’—इति महाभारते (३।२२८) ।  
‘दिव्यं शरवणं प्राप्य ववृषेऽद्भुतदर्शनः । ददृशुः कृत्ति-  
कास्तन्तु वालाकंसदृशद्युतिम् । स्कन्धत्वात् स्कन्द-  
ताञ्चापि गुहावासाद् गुहोऽभवत्’—इति महाभारते

(१३।८३)। षोटकः, श्रीरामसखः; शृङ्गवेरपुरवासी निषादाधिपतिः; 'तत्र राजा गुहो नाम रामस्यात्मसमः सखा । निषादजात्यो बलवान् स्यपतिश्चेति विश्रुतः'— इति रामायणे (२।५०।३३)। [ गूहते संवृणोति स्वरूपादीनि मायया इति । गुह् + क ] विष्णुः; 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४)। महादेवः; 'व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरङ्गवित्'—इति महाभारते (१३।१७।६०)। कायस्थानां पद्धतिविशेषः; 'अयं गुहकुलोद्भवो दशरथाभिधानो महान् कुलाम्बुजमधुव्रतो विविधपुण्यपुञ्जान्वितः'—इति कायस्थकुलदीपिका । २०

गुहा स्त्री. [ गुह् + क टाप् च ] गर्तः; पर्वतादेर्गुह्वरं; बिलं; शिलासन्धिः; देवखातं, गह्वरम्; 'किष्किष्वां रामसुग्रीवी जग्मतुस्तौ गुहां तदा'—इति रामायणे (१।१।७०)। सिंहपुच्छोलता; शालपर्णीवृक्षः; हृदयम्; 'तस्मादिदं गुहाहृदयम्'—इति शतपथब्राह्मणे (१।१।२।६।५)। [ गूढा ज्ञातृज्ञानज्ञेयपदार्याः अस्या, गूहतेऽस्यामात्मा इति वा । गुह् + भिदादित्वादिधिकरणे अङ्ग टाप् च ] बुद्धिः; 'अणोरणीयान् महतो महीयान् आत्मा गुहाया निहितोऽस्य जन्तोः'—इति श्वेताश्वतरोपनिषदि । १६७

गुह्यम् त्रि. [ गुहा गोपनम् अर्हति, वस्त्राद्यम्पन्तरस्थानं लब्धुमर्हतीति यावत् । गुहा + 'तदहति' इति यत्, गुह् + कर्मणि क्यवित्येके ] रहस्यं; गोप्यं; विविक्तः; विजनः; छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशुः; गूढम्; उपह्वरम्; 'राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्'—इति भगवद्गीतायाम् । 'पुराणगुह्यं सकलं समेतं गुरोः प्रसादात् करुणानिधेश्च'—इति देवीभागवते (१।३।३७)। क्ली. उपस्थः (८२३); स तु भगं लिङ्गञ्च । भगार्थे यदुक्तम्—'कामार्तः पुरुषो ह्यत्र चुन्वयेद् गुह्यमादृतः' । पुं. [ गुहां सरस्यादेर्गर्तं मर्हतीति, गुहा + 'दन्तादिभ्यो यत्' इति यत् ] कमठः; दम्भः; [ गूहितुमर्हति योग्यो भवति उपनिषद्वैद्यत्वात्, यद्वा गुहायां बुद्धौ हृदयाकाशे वस्तुमर्हति ध्यानायाहतीति यावत् ] विष्णुः; 'गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः'—इति महाभारते (१३।१४९।७१)। महादेवः; 'यजुःपादभुजो गुह्यः प्रकाशो जङ्गमस्तथा'—इति महाभारते (१३।१७।९१)। गुणशालिप्रभावान्वितजीवविशेषः;

'गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति' इति । 'अध्वयं वो घर्मिणः सिध्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न केचित्'—इति ऋग्वेदे (७।१०३।८)। उपदेवताविशेषः; 'गुह्याः पितृगणाः सप्त ये दिव्या ये च मानुषाः'—इति महाभारते (३।३।४३)। [ स्त्रियां टाप् ] गायत्रीस्वरूपा देवी; 'गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुणदायिनी'—इति देवीभागवते (१।२।६।४२)। गोपनीयं त्रि., 'स गुह्योऽन्यस्त्रिवृद् वेदो यस्तं वेद स वेदवित्'—इति मनुः। 'प्रणवाख्यो गुह्यो गोपनीयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । ७०८

गुह्यफः पुं [ गूहति निर्धि घनविशेषं रक्षतीति । गूह् + ष्वल्, पृषोदरादित्वाद् यगागमे साधुः ] कुवेरः । (८७) देवयोनिविशेषः; कुवेरानुचरः; निर्धिरक्षकः; मणिभद्रादियक्षभेदः; 'निर्धि रक्षति ये यक्षास्ते स्युर्गुह्यकसंज्ञकाः'—इति व्याडिः । [ गुह्यं कुत्सितं कायति शब्दायते प्रकाशयति वा । कै + क । यद्वा गुह्यं गोप्यं कं सुखं यस्य । 'शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति' काशिकोक्तेः क्यप् वा । यद्वा गुह्यात् सृष्टि चिकीर्षोः परब्रह्मणः कृष्णस्य गुह्यदेशात् कायति आविर्भवतीति ] यदुक्तं ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे (५।६०)—'आविर्भव कृष्णस्य गुह्यदेशात्ततः परम् । पिङ्गलश्च पुमानेकः पिङ्गलैश्च गर्गैः सहः । आविर्भूता यतो गुह्यात् तेन ते गुह्यकाः स्मृताः ।' पक्वान्नविशेषः; 'समितां सर्पिषा भृष्टां सितद्राक्षादिसम्भृताम् । एलावङ्गकपूरमरीचपरिवासिताम् । क्षिप्तान्यसमितालम्बपुटे वेष्ट्य घृते पचेत् । ततः खण्डे न्यसेत् पक्वे गुह्यकोऽपमुदाहृतः ।' 'गुह्यको वृंहणो हृद्यो वृष्यः पित्तानिलापहः । मधुरोऽस्ति-गुहः पाके किञ्चित् सन्धानकृत्सरः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः । ७९

गुह्यवीपकः पुं. [ गुह्येन गुह्यस्थज्योतिषा दीपयति प्रकाशयतीति । स्वयं गुह्यः सन् दीपयतीत्येके । दीप् + ष्वल् ] सद्योतः । २५७

गुह्यपिधानम् क्ली [ षष्ठीसमासः ] कक्षा; कौपीनम् । ८४२

गूढपात् [ ड् ] पुं. [ गूढं पादयति, यद् गतौ + णिजन्तात् क्विप् । यद्वा गूढाः पादा अस्य, पृषोदरादित्वादलोपे साधुः ] सर्पः । ६४०

गूढपादः पुं. [ गूढाः संवृताः पादा अस्य ] सर्पः । 'पादानामपि विज्ञेये द्वे शते द्वे च विशती'—इत्यागमः । आच्छादितपादे त्रि., 'सन्तोपामृततृप्तस्य विश्वैश्वर्यं करे स्थितम् । उपानद्गूढपादस्य सर्वा चर्मावृतेव भूः'—इति महाभारते । ६४०

गूढपुरुषः पुं. [ गूढः गुप्तः पुरुषः, छद्मवेशी राजप्रेरितो जनः इत्यर्थः ] चरः; प्रणिधिः; स्पशः । ४२५

गूयम् क्ली.-पुं. [ गवते शब्दायते, गूयते उत्सृज्यते वा । गूह्य शब्दे विष्टोत्सर्गे वा + 'तियपृष्टगूययूथप्रोयाः' इति थक् दीर्घश्च ] विष्टा । शरीरादिमलेऽपि, कर्ण-गूयादिशब्ददर्शनात् । ६३७

गूवाकः पुं. [ गुवति पुरीषमुत्सृजत्यनेन, यद्वा गुवति बहुलभक्षणैः मुखविवरात् पुरीषवदुत्सृजतीति । गु विष्टोत्सर्गे + 'पिनाकादयश्च' इति आक, कुटादित्वाद् गुणाभावः । निपातनाद् दीर्घत्वम् ] गुवाकः; क्रमुकः; पूगः । २००

गूधुः त्रि. [ गूधयति कामयते लिप्सति वा घनमिति शेषः । गूध् + त्रिसिगूधिवृषिधिषेः क्तुः' इति क्तु ] लुब्धः; 'न वयं प्रभवस्तां त्वामनुकर्तुं गूहेश्वरि ! अप्यायुषा वा कात्सर्पेण ये चान्ये गुणगूधनवः'—इति भागवते (३।१४।२०) । (क्वचिद् गूध्नोऽपि पाठः) । ६३६

गूष्टिः स्त्री. [ गूह्णाति सकृद् गर्भमिति । ग्रह् उपादाने + कर्तरि क्तिच्, पृषोदरादित्वात् सावुः ] एकवारप्रसूता गौः; सकृत्प्रसूतिका; 'प्रष्टोहीनां पीवरीणां च तावत् अग्र्या गूष्टयो वेनवः सुव्रताश्च'—इति महाभारते (१३।९३।३३) । सकृत्प्रसूतस्त्रीमात्रं; वराहकान्ता; वदरवृक्षः; काश्मरी । २७३

गूहम् क्ली. [ गूह्णाति घान्यादिकं जीवनाथम् । ग्रह् + 'गेहे कः' इति क ] इष्टकादिरचितवासस्थानं; गेहम्; उदवसितं; वेश्म; सभ्र; निकेतनं; निद्यान्तं; वस्त्यं; सदनं; भवनम्; अगारं; मन्दिरं; गृहाः; निकाय्यः; निलयः; आलयः; षासः; कुटः; शाला; सभा; पत्स्यं; सादनम्; आगारं; कुटिः; कुटी; गेहः; निकेतः; साला; मन्दिरा; ओकः; निवासः; संवासः; आवासः; अषिवासः; निवसतिः; वसतिः; केतनं; गयः; कृदरः; यतं; हर्म्यम्; अस्तम्; दुरोणे; नीलं; दुर्म्यं; स्वसराणि; अमा; दमे; कृत्तिः; योनिः;

शरणं; वरुयं; छदिः; छदिः; छाया; शर्म; अजम् । 'घर' इति भाषा । 'वैशाखश्रावणापाढमार्गफाल्गुनकार्तिकाः । सुप्रशस्ता गृहारम्भे पत्नीपुत्रसमृद्धिदाः । [ गृह्यते स्वीक्रियते धर्माचरणायासी ] कलत्रम् (४९४); 'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते । तथा हि सहितः सर्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते'—इति स्मृती । [ गृह्यते निर्दिश्यतेऽनेन इति ] नाम । २९१

गृहगोषिका स्त्री. [ क्षुद्रा गोवा, अल्पार्थे क, अत इत्वं टाप् च । गृहस्य गोविका गोविरिव ] ज्येष्ठी; 'छिपकली' इति भाषा । 'शिवा श्यामा रला छुच्छुः पिङ्गला गृहगोषिका । शूकरी परपुष्टा च पुत्रामानश्च वामतः'—इति बृहत्संहितायाम् (८६।३७) । 'मार्जारश्ववानरमकरमण्डूकपाकमत्स्यगोवाशम्बूकप्रचलाकगृहगोषिकाचतुष्पादकीटास्तथान्ये दंष्ट्रानखविपाः'—इति सुश्रुतः ।

२५७

गृहगोलिका स्त्री. [ गृहे गृहस्या वा गोधिकेव । निपातनात् साधुः ] ज्येष्ठी । २५७

गृहबलिभुक् [ ज् ] पुं. [ गृहे दत्तं बलिं भक्ष्यद्रव्यं भुङ्क्ते' इति । भुज् + विवप् ] चटकः; वकः; काकः । २४३  
गृहभित्तिः स्त्री. [ गृहस्य भित्तिः; गृह + भिद् + क्तिच् ] पक्षः; 'भौत, दीवाल' इति भाषा । ८४९

गृहभूमिः स्त्री. [ गृहयोग्या भूमिः ] वास्तुः; वेदमभूः । २९०

गृहमेधी [ न् ] पुं. [ गृहैर्दरिमेधते सङ्गच्छते इति । गृह + मेवृ सङ्गमे + 'मुप्यजाताविति' णिनि ] गृहस्थः; 'वेदविद्यान्नतस्नातान् श्रोत्रियान् गृहमेधिनः । पूजयेद्भव्यकव्येन विपरीतांश्च वर्जयेत्'—इति मनुः (३।४१) ।

३७२

गृहवादी स्त्री. [ गृहसमीपस्था वादी आरामः ] गृहवाटिका; गृहसमीपवनम्; निष्कृतः । ८१६

गृहस्थः पुं. [ 'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते', अत एव गृहेषु दारेषु तिष्ठति अभिरमते इति । गृह + स्था + 'सुपि स्थः' इति क ] गृही; द्वितीयाश्रमी; ज्येष्ठाश्रमी; गृहमेधी; स्नातकः; गृहपतिः; सत्री; गृहयाय्यः; गृहाधिपः; कुटुम्बी; गृहायनिकः । 'गृहस्थो ब्रह्मचारी च वानप्रस्थोऽप्य मिक्षुकः । चत्वार आश्रमाः प्रोक्ताः सर्वे गार्हस्थ्यमूलकाः ।' गृहस्थानम् (२९०) । ३९३

गृहाधिपः पुं. [ गृहस्य अधिपः ] गृहस्यः । ३७२  
 गृहावप्रहणी स्त्री. [ गृहमवगृह्यतेऽनया इति । गृह+  
 अव+ग्रह्+करणे ल्युट् ततो डीप् ] देहली । ३०२  
 गृहिणी स्त्री. [ गृहं गृहस्वामित्वमस्त्यस्या इति । इनि डीप्  
 च ] भार्या; 'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या  
 ललिते कलाविधौ । करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां  
 वद किं न मे हृतम्'—इति रघुवंशे (८।६७) । [ गृहं  
 गृहकार्यं साध्यतयाऽस्त्यस्या इति, इनि डीप् च ]  
 गृहकर्मकुशला स्त्री; 'शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखीवृत्ति  
 सपत्नीजने, भर्तुविप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं  
 गमः । भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेऽनुत्सेकिनी,  
 यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः'—  
 इति शकुन्तलायां चतुर्थाङ्के । ४९४  
 गृहोत्तदिक् [ श् ] त्रि. [ गृहीता आश्रिता दिक् हन्तुः  
 प्रहर्तुर्वा भयाद्येन ] पलायितः; तिरोहितः । ४७९  
 गृह्यः त्रि. [ गृह्यते स्वाम्यादिभिरिति । ग्रह्+क्यप् ]  
 पक्षः; 'ननु वक्तृविशेषनिस्पृहा गुणगृह्या वचने  
 विपरिचतः'—इति भारविः । अस्वैरी; अस्वतन्त्रः;  
 गृह्यकः; पराधीनः; [ गृहं भव इति यत् ] गृहोत्पन्न-  
 वस्तु; क्ली. [ गृह्यते आक्रम्यते अर्श-आदिभौ रोगैरिति ।  
 ग्रह्+पदास्वैरिवाह्यापक्षेषु च' इति क्यप् ] गुदं;  
 [ गृह्यन्ते संगृह्यन्ते सामवेदाद्युक्तानि कर्मविधानान्यत्र  
 इति । ग्रह्+क्यप् ] कात्यायनगोभिलादिकृतसूत्र-  
 ग्रन्थभेदः । तत्र तु गोभिलादिकृतसामवेदाद्युक्तकर्म-  
 काण्डनिर्णयः । पुं. [ गृह्यते मानवेनेति, ग्रह्+पदा-  
 स्वैरिवाह्यापक्षेषु च' इति क्यप् । पञ्जरादिवन्धनेन  
 परस्वीकृतत्वादस्य तथात्वम् ] गृहांसक्तमृगादिः; अग्निः;  
 'वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नी विधिपूर्वकम् । आभ्यः  
 कुर्याद्वेवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम्'— इति मनुः  
 (३।८४) । ३८९  
 गृह्यकः त्रि. [ गृह्य+स्वार्थे अनुकम्पायां वा कन् ] गृह्यः;  
 अस्वतन्त्रः; पराधीनः । ३४१  
 गेहम् क्ली. [ गो गन्धर्वो गणेशश्च । गेन गन्धर्वेण गणेशेन  
 वा ईहते काम्यते इति । ग+ईह्+कर्मणि घञ् ।  
 यद्वा गो गन्धर्वो गणेशो वा ईहः ईप्सितो यस्मिन् ]  
 गृहम्; 'तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ।  
 एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन'—इति

हितोपदेशः । २९१  
 गेहेर्नदी [ न् ] पुं. [ गेहे नर्दति गर्जतीति । गेह्+नर्द्+  
 णिनि, अलुक्समासः । अस्य गृह एव गर्जनं नान्यत्र ।  
 अतस्तथात्वम् ] कापुरुषः; गेहेशूरः; पिण्डीशूरः । ३६७  
 गेहेशूरः पुं. [ गेहे एव शूरः । अलुक्समासः । अन्यत्र  
 शूरत्वाभावादस्य तथात्वम् ] गेहेनदी; पिण्डीशूरः;  
 कापुरुषः । ३६७  
 गैरिकम् क्ली. [ गिरौ भवतीति । अध्यात्मादित्वात् ठञ् ]  
 रक्तवर्णघातुभेदः; रक्तघातुः; गिरिघातुः; गवेचुकं;  
 घातुः; सुरङ्गघातुः; गिरिमूड्वर्षः; वनालक्तं; गवेरुकं;  
 प्रत्यश्मा; गिरिमृत्; लोहितमृत्तिका; गिरिजं; 'गेह'  
 इति भाषा । 'गैरिकं रक्तघातुश्च गैरेयं गिरिजं तथा ।  
 सुवर्णगैरिकं त्वन्यत्ततो रक्ततरं हि तत् । गैरिकाद्वितयं  
 स्निग्धं मधुरं तुवरं हिमम् । चक्षुष्यं दाहपितास्रक-  
 फहिक्काविषापहम्'—इति भावप्रकाशः । १७०  
 गोकर्णः पुं. [ गोः कर्ण इव । तत्तुल्यपरिमाणवत्त्वादस्य  
 तथात्वम् ] परिमाणविशेषः; अनामिकायुक्तविस्तृता-  
 ङ्गुष्ठम्; वितस्तिः; [ गोः कर्णाविव कर्णौ  
 यस्य ] मृगभेदः; 'मुनिविनियोगविलूनप्ररूढमृदुशाद्वलानि  
 बर्हीषि । गोकर्णतर्णकोऽयं तर्णोत्पुपकण्ठकच्छेषु'—इति  
 अनर्घराघवे (२।२३) । 'गोकर्णमांसं मधुरं स्निग्धं मृदु  
 कफापहम् । विषाके मधुरं चापि रक्तपित्तविनाशनम्'—  
 इति सुश्रुते । अश्वतरः; [ गोरुचक्षुरेव कर्णौ यस्य ]  
 सर्पभेदः; [ गोरुव कर्णौ यस्य ] गणदेवताविशेषः;  
 तीर्थविशेषः; 'ततोऽभिन्नय भगवान् केरलांस्तु त्रिगर्त-  
 कान् । गोकर्णख्यं शिवक्षेत्रं साभिध्यं यत्र धूर्जटेः'—  
 इति भागवते । पीठस्थानम्; 'केदारपीठे सम्प्रोक्ता  
 देवी सन्मार्गदायिनी । मन्दा हिमवतःपृष्ठे गोकर्णं भद्र-  
 कर्णिका'—इति देवीभागवते (७।३०।६०) । ५३८  
 गोकुलम् क्ली. [ गवां कुलम् ] गोसमूहः; गोघनं; गवां  
 ब्रजः; 'गोकुलाकुलतीराया स्तमसाया विद्वरतः । अवसत्  
 तत्र तां रात्रिं रामः प्रकृतिभिः सह ।' गोस्थानम्;  
 'गोकुले कन्दुशालायां तैलयन्त्रेक्षुयन्त्रयोः । अमीमांस्यानि  
 शौचानि स्त्रीषु बालातुरेषु च ।' मथुरेकदेशे श्रीनन्दस्य  
 वासस्थानम्; 'कालेन ब्रजता तात ! गोकुले राम-  
 केशवौ । जानुम्यां सह पाणिभ्यां रिङ्गमाणो विजहतुः'—  
 इति भागवतम् । 'गोकुले गोपिनीपूज्यो गोपीश्वर

इतीरितः—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे शिवशतनाम-  
स्तोत्रे । पण्डितविशेषः; (अयं तु सप्तदशशतपरिमित-  
शकाब्दप्रारम्भे एव मिथिलादेशान्तर्वर्तिनि 'मगरोणी'  
संज्ञकग्रामे विद्यानिधिपीताम्बरपण्डितात् जातः ।  
अद्यावधि ज्ञाता अनेन विरचिता ग्रन्थास्त्वेते—१ दीधिति-  
विद्योतः (शिरोमणिटीका), २ न्यायसिद्धान्ततत्त्वं,  
३ पदवाक्यरत्नाकरः, ४ मासमीमांसा, ५ मिथ्यात्व-  
निरुक्तिः, ६ रश्मिचक्रम् (चिन्तामणिटीका), ७ रस-  
महार्णवः, ८ लाघवगौरवरहस्यं, ९ शिवशतकम्) ।

२६२

**शोभरः** पुं. [ क्षुरति विलिखतीति । क्षुर् विलेखने+  
'ङ्गुपघञेति' क । ततो गोः पृथिव्याः क्षुरः अस्त्र-  
विशेषः इव । बहुकण्टकाकीर्णत्वात् तथात्वम् ] क्षुद्र-  
क्षुपविशेषः; त्रिकण्टकः; स्थलशृङ्गाटः; गोकण्टः;  
त्रिकण्टकः; त्रिपुटः; कण्टकफलः; क्षुरः; गोक्षुरकः;  
पलङ्कपा; इक्षुगन्धा; श्वदंष्ट्रा; स्वादुकण्टकः;  
गोकण्टकः; वनशृङ्गाटः; क्षुरकः; भक्ष्यकण्टः; इक्षु-  
गन्धिका; क्षुरङ्गः; श्वदंष्ट्रकः; कण्टकी; भद्रकण्टः;  
व्यालदंष्ट्रः; पडङ्गः; गोक्षुरः; त्रिकटः; त्रिकः;  
इक्षुरः । २०१

**शोत्रः** पुं. [ गां पृथिवीं त्रायते रक्षतीति । गो+त्रै+  
'धातोऽनुपसर्गे कः' इति क ] पर्वतः; 'नाड्यो नदनदी-  
नान्तु गोत्राणामस्त्रियसंहतिः'—इति भागवते (२।६।९) ।

१६५

**शोत्रम्** क्ली. [ गवते शब्दायति पूर्वपुरुषान् यत् । गु+  
'गृधृवीपतीति' त्र ] सन्ततिः; जननं; कुलम्;  
अभिजन; अन्वयः; वंशः; अन्ववायः; सन्तानः ।  
(८२९) आरूपा; नाम; 'स्मरसि स्मरमेखलागुणैस्त  
गोत्रस्त्रलितेषु वन्धनम्'—इति कुमारसम्भवे (४।८) ।  
सम्भावनीयवीधः; काननं; क्षेत्रं; वर्त्म; छत्रं;  
सङ्घः; वृद्धिः; वित्तं; भेवः । 'स्वं गोत्रमङ्गिरोम्योऽ-  
वृणोस्पोतात्रये शतदूरेषु गातुवित्'—इति ऋग्वेदे  
(१।५।१।३) । ३९६

**शोत्रभित्** [ द् ] पुं. [ गोत्रं पर्वतं भिनत्तीति । गोत्र+  
भिद्+'भित्'द्विषे'त्यादिना क्विप् ततस्तुगागमः ]  
इन्द्रः; 'यो गोत्रभिदूञ्जमृद्यो हरिष्ठाः स इन्द्र चित्राँ  
अभितृण्णि वाजान्'—इति ऋग्वेदे (६।१७।२) । 'सहासनं

गोत्रभिदाध्यवात्सीत्'—इति भट्टिः (१।३) । ५३  
**शोत्रा** स्त्री. [ गाः पशून् सर्वान् जीवानित्यर्थः, त्रायते  
इति । त्रै+क स्त्रियां टाप् च ] पृथिवी; [ गवां समूहः  
'इनित्रकट्यचश्च' इति त्र टाप् च ] गोसमूहः; गायत्री-  
स्वरूपा महादेवी; 'गन्धर्वी गह्वरी गोत्रा गिरिशा गहना  
गमी'—इति देवीभागवते (१२।६।४१) । १५६

**शोदा** स्त्री. [ गां जलं स्वर्गं वा ददाति स्नानेनेति । गो+  
दा+क, स्त्रियां टाप् ] गोदावरी नदी; गायत्रीस्वरूपा  
महादेवी; 'गवांपहारिणी गोदा गोकुलस्था गदाधरा'—  
इति देवीभागवते (१२।६।४३) । [ गाः ददातीति, दा+  
क्विप् ] गोदातरि त्रि. । 'गोदा इन्द्रेवतो मदः'—इति  
ऋग्वेदे (१।४।२) 'गोदाश्चक्षुरिन्द्रियव्यवहारप्रदः'—  
इति दयानन्दभाष्यम् । ६७४

**शोदारणम्** क्ली. [ गीर्भूमिर्दाप्यतेऽनेनेति । गो+दृ+  
णिच्+करणे ल्युट् ] कुदालः; लाङ्गलम् । ५७७

**शोदावरी** स्त्री. [ गां जलं स्वर्गं वा ददतीति गोदाः,  
तासु वरी श्रेष्ठा । गोदा+वर+डीप् संज्ञायाम् ।  
यद्वा गां स्वर्गं ददाति, गो+दा+वनिप्+डीप् रान्ता-  
देशश्च ] नदीविशेषः; गोदा; गीतमसम्भवाः; ब्रह्माद्रि-  
जाता; गीतमी; 'विप्रो रोपेण तत्याज तं च पुत्रं स्वका-  
मिनीम् । सरिद् बभूव योगेन सा च गोदावरी स्मृता'—  
इति ब्रह्मवैवर्ते । 'गोदावर्या त्रिसन्ध्या तु गङ्गाद्वारे  
रतिप्रिया'—इति देवीभागवते (७।३।०।६८) । ६७४

**शोधनम्** क्ली. [ गवां घनं समूहः ] गोसमूहः; 'स आत्मनो  
दृढां कक्षां बद्ध्वा सम्भ्रान्तमानसः । दण्डमुद्यम्य सहसा  
प्रतस्थे शोधनं प्रति'—इति रामायणे (२।३२।४२) ।  
पुं. [ घन् शब्दे, अप्, घनं शब्दः । गोर्वञ्चस्येव घन यस्य ]  
स्थूलाग्रवाणः; 'तुक्का' इति भाषा । २६२

**शोधा** स्त्री. [ गुह्यते परिवेष्टयते वाहुर्यया । गुध्+  
'हल्श्चेति' करणे घञ् ] जन्तुविशेषः; निहाका;  
गोघिका; दारुमुह्या ह्या; 'गोह' इति भाषा । 'गोधा  
त्रिपाके मधुरा कपायकटुका रसे । वातपित्तप्रशमनी  
वृंहणी बलवर्द्धनी'—इति चरके । धनुर्गुणाघातवारणाय  
प्रकोष्ठवद्धा चमकृतपट्टिका; तस्या; ज्याघानवारणा;  
तलम् । 'विक्षिपन्नादयश्चापि धनुःश्रेष्ठं महावर्कः ।  
तूणखङ्गधरः शूरो बद्धगोधाङ्गुलित्रवान्'—इति महा-  
भारते (३।१७।३) । २३४

गोनसः पुं. [ गोरिव नासिका यस्य । 'अब् नासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलत्' इति अच् नसादेशश्च ] संप-  
विशेषः; तिलित्सः; गोनासः; धोनसः; मण्डली-  
वोडः; वोडः; 'मिलिन्दको गोनसो वृद्धगोनसः  
पनसी'—इति सुश्रुतः । वैक्रान्तमणिः । ६४२

गोनासः पुं. [ गोनासा इव नासा यस्य ] गोनससर्पः ।  
६४२

गोपतिः पुं. [ गवां रक्षिणीनां पतिः ] सूर्यः; 'परिभ्रमन्त-  
मुक्ताभां भ्रामयन्तं गदां मुहुः । अस्त्रतेजः स्वगदया  
नीहारमिव गोपतिः ।' शक्रः इन्द्रः (५२); [ गोवृष-  
भस्य पतिः, यद्वा गवां पशूनां जीवानां पतिः ] महादेवः;  
शिवः रुद्रः । 'गोपालिर्गोपतिर्ग्रामो गोचर्भवसनी  
हरिः'—इति महाभारते । [ गां पृथ्वीं जगदित्यर्थः,  
पाति पालयतीति । गो+पा+इति ] विष्णुः; 'उत्तरो  
गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः'—इति महाभारते  
(१३।१४९।६६) । गोपेन्द्रनन्दनकृष्णः; 'अमानुषाणि  
कर्माणि पश्यामस्तव गोपते'—इति हरिवंशे (७६।४) ।  
असुरभेदः; 'गोपतिस्तालुकेतुश्च त्वया विनिहता-  
वुभौ'—इति महाभारते (३।१२।३५) । [ गोः पृथिव्याः  
पतिः ] राजा; [ गवां सौरभेयीणां पतिः ] वृषः;  
'शार्दूलहंससमद्विपगोपतीनां तुल्या भवन्ति गतिभिः  
शिखिनां च भूपाः । येषां च शब्दरहितं स्तिमितं च यातं  
तेऽपीश्वरा द्रुतपरिप्लुतगादरिद्राः'—इति बृहत्संहिता-  
याम् (६८।११५) । ऋषभनामौषधिः । ३५

गोपानसी स्त्री. - [ गोपायति रक्षति गृहमिति । गुप्  
रक्षणे+बाहुलकाद् नसद्, यलोपस्ततो डीप् च ]  
गृहाणामग्रभागे दत्तवक्रकाष्ठं; बलमी; बडमी,  
गृहचूडा; बडमी, चतुष्पिकादिचूडा, एतयोश्च्छादनार्थं  
चक्रीकृत्य यत्काष्ठं दीयते सा; पटलाघोवंशपञ्जरं;  
कणिकाविष्कम्भि दाहः; वक्रीभूतं धरणकाष्ठम्; 'गोपान-  
नसीपु क्षणमास्थितानामालम्बिभिश्चन्द्रकिणां क लापैः ।  
हरिन्मणिश्यामतृणाभिरामैर्गृहाणि नीघ्रैरिव यत्र रेजुः'  
—इति माधे (३।४९) । ३०३

गोपालः पुं. [ गाः पालयतीति । गो+पाल्+ 'कर्मण्यण्'  
इत्यण् ] गवां पालकः; वृन्दावनस्यगोपालानां स्वरूपम्;  
'गोपाला मुनयः सर्वे वैकुण्ठानन्दमूर्तयः'—इति पद्म-  
पुराणे । [ गां पृथिवीं पालयतीति । गो+पाल्+

अण् ] राजा; [ गां पृथिवीं देवं वा पालयतीति ]  
नन्दनन्दनः; कृष्णः; 'गोवर्द्धनं तथापश्यं कृष्णवाम-  
करोद्घृतम् । महेन्द्रदर्पनाशाय गोगोपालसुखावहम् ।  
दृष्ट्वा विहृष्टो ह्यभवं सर्वभूषणभूषणम् । गोपालम-  
वलासङ्गमुदितं वेणुनादितम्'—इति पद्मपुराणे । ५८७

गोपुच्छः पुं. [ गोः पुच्छ इव आकृतियस्य, गोपुच्छाकार-  
त्वादस्य तथात्वम् ] हारभेदः; वाद्यविशेषः; गोलाङ्गूल-  
वानरः; 'शार्दूलमृगसंघुष्टं सिंहैर्भीमवर्लवृत्तम् । ऋक्ष-  
वानरगोपुच्छमैर्जिरिश्च निषेवितम्'—इति रामायणे ।  
गवां लाङ्गूलम् क्लीः; 'गोपुच्छस्ये वल्मीकगोऽथवा  
दर्शनं भुजङ्गस्य'—इति बृहत्संहितायाम् । ५६२

गोपुरम् क्ली. [ गोपायति नगरं रक्षतीति । गुप्+  
बाहुलकाद् उरच्, यद्वा गाः पिपतीति, पृ पालन-  
पूरणयोः+ 'मूर्ध्विभुजादिभ्यः' इति क ] नगरद्वारं;  
पुरद्वारं; दुर्गपुरद्वारं; द्वारमात्रम्; 'द्विपक्षगुरुद्वारद्वारैः  
सौधैश्च शोभितम् । गुप्तमभ्रचयप्रखरैर्गोपुरैर्मन्दरोपमैः'  
—इति महाभारते (१।२०।८।३१) । [ गौर्जलं पुरमस्य,  
यद्वा गवा जलेन पिपति पूरयति आत्मानमिति । पृ+  
क ] क्वैवर्तीमुस्तकम्; वैद्यकशास्त्रप्रणेतृऋषिभेदः; 'अथ  
खलु भगवन्तमभरवरमृषिगणपरिवृतम् आश्रमस्यं  
काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरिमीपधेनववैतरणीरभ्र-  
पीष्कलावतकरवीर्यगोपुररक्षितसुश्रुतप्रभृतय ऊचुः'  
—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने १ अध्याये । २८८

गोप्यः पुं. [ गोप्यते रक्ष्यतेऽस्ती इति । गुप् रक्षणे+  
'ऋहलोर्ण्यत्' इति ष्यत् ] दासीपुत्रः; दासः; रक्षणीये  
त्रि., 'सहदेवं समीपस्थं नित्यमेव समादिशत् । तेन  
गोप्यो हि नृपतिः सर्वावस्थो विशाम्पते !'—इति  
महाभारते (१२।४१।१५) । [ गोप्यतेऽस्माविति । गुप्  
गोपने+कर्मणि ष्यत् ] गोपनीयः; 'आयुर्वित्तं गृह-  
च्छिद्रं मन्त्रमैथुनभेपजम् । अपमानान्तपो दानं नव  
गोप्यानि यत्नतः'—इति पुराणम् । गोपीसमूहश्च [ तत्र  
गोपीशब्दात् प्रथमाविभक्तैर्बहुवचनप्रयोगः ] । ५०१

गोमतल्लिका स्त्री. [ प्रशस्ता गौर्गोजातिः, 'प्रशंसावचनैश्च'  
इति नित्यसमासेन परनिपातः ] सुशीला गोः । २७०  
गोमयम् क्ली.—पुं. [ गोः पुरीषम् । 'गोश्च पुरीषे' इति  
मयट् ] गवां मूषं; गोविट्; जगलं; गोह्रं; गोशकृत्;  
गोपुरीषं; गोविष्ठा; गोमलं; 'गोवर्' इति भाषा । २७३

गोमान् [त्] त्रि. [वहवो गावोऽस्यास्मिन् वा सन्तीति ।  
'तदस्यास्तीति' मतुप् ] वहूनां गवां स्वामी; गवीश्वरः;  
गोमी; 'येनावपत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो  
वरुणस्य विद्वान् । तेन ब्रह्मणो वपते दमस्य गोमानश्व-  
वानयमस्तु प्रजावान्'—इति अथर्ववेदे. (६।६।३) ।

२६२

गोमायुः पुं. [ गां विकृतां वाचं मिनोतीतिप्पो+ङुमिञ्+  
कृत्रापेत्युण् ] शृगालः; 'ततो राज्ञो धृतराष्ट्रस्य गेहे  
गोमायुरुच्वैर्वाहिरदग्निहोत्रे'—इति महाभारते (२।६७।  
२३) गन्धर्वविशेषः; गोपित्तं सान्तक्लीवोऽयम् । २२९

गोमी [न्] त्रि. [ गौरस्त्यस्य । 'ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणो-  
र्जस्त्रिभ्रिति' इति मिनि ] गोमान्; 'यद्यन्यगोषु वृषभो  
वत्सानां जनयेच्छतम् । गोमिनामेव ते वत्सा नोद्यं  
स्कन्दितमार्षभम्'—इति मनुः (९।५०) । [ गौर्वीज-  
मन्त्रवाक्यम् अस्यास्तीति ] उपासकः । २६२

गोमुखम् क्ली. [ गोर्मुखमिव मुखं प्रवेशद्वारमस्य ] लेपनम्;  
'शुकाङ्गनीलोपलनिर्मितानां लिप्तेषु भासा गृहदेहलीनाम् ।  
यस्यामलिन्देषु न चक्रुरेव मुग्धाङ्गना गोमयगोमुखानि'—  
माघे (३।४८) । वाद्यभाण्डम् पुं.-क्ली.; 'ततः शङ्खाश्च  
भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः । सहस्रैवाम्यहन्यन्त सशब्द-  
स्तुमूलोऽभवत्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१३) ।  
'आडम्बरान् गोमुखांश्च डिण्डिमांश्च महास्वनान्'—  
इति महाभारते (९।४६।५७) । चौरक्रियमाणसुरङ्गा-  
भेदः; 'सैव' इति भाषा । आसनविशेषः; 'सव्ये दक्षिण-  
गुल्फं तु पृष्ठपाद्वै नियोजयेत् । दक्षिणेऽपि तथा सव्यं  
गोमुखं गोमुखाकृति'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् ।  
जपमालागोपनार्थं वस्त्रनिमित्तयन्त्रम्; 'चतुर्विंशद्गुल-  
मितं पट्टवस्त्रादिसम्भवम् । निर्मायाष्टाङ्गुलिमुखं श्रीवां  
तत् पट्टं दशाङ्गुलम् । ज्ञेयं गोमुखयन्त्रं च सर्वतन्त्रेषु  
गोपितम् । तन्मुखे स्थापयेन्मालां श्रीवासध्यगतः करः ।  
प्रजपेद्विधिना गुह्यं वर्णमालाधिकं प्रिये'—इति मुण्ड-  
मालातन्त्रम् । 'गोमुखादौ ततो मालां गोपयेन्मादृ-  
जारवत्'—इति मायातन्त्रे । पुं. [ गोर्मुखमिव मुखं  
यस्य ] नक्रः; यज्ञविशेषः; मातलिपुत्रः; 'बहुशो  
मातले ! त्वं च तव पुत्रश्च गोमुखः'—इति महाभारते  
(५।१००।८) । वत्सराजमन्त्रिपुत्रविशेषः; 'ततो नित्यो-  
दितास्यस्य प्रतीहाराधिकारिणः । इत्यकापरसंज्ञस्य पुत्रो-

ऽजायत गोमुखः'—इति कथासरित्सागरे (२३।५७) ।

७९७

गोयुगम् क्ली. [ 'द्वित्वे गोयुगच्' इति विहितोऽयं प्रत्ययः  
पशुमात्रद्वित्वसंख्यायां भवति । उष्ट्रगोयुगम् इतिवत् ।  
गोः युगं युग्मम् इति समासपक्षे तु ] पशुद्वयम्; पशु-  
युग्मं; धेनुयुग्मम् । २८३

गोलाङ्गूलः पुं. [ गोर्लाङ्गूलवल्लाङ्गूलमस्य ] वानरः;  
कपित्थास्यः; दधिशोणः; नगाटनः; 'निरुजो निव्रणान्-  
श्चैव संपन्नवल्पीरुपान् । गोलाङ्गूलान् तथैवर्क्षान्  
द्रष्टुमिच्छामि मानद'—इति रामायणे (६।१०५।८) ।  
कृष्णवानरः । २३२

गोविन्दः पुं. [ गां पृथ्वीं धेनुं वा विन्दतीति । विन्द्+  
'अनुपसर्गाल्लिम्प' इत्यस्य 'गवादिषु विन्देः संज्ञायाम्'  
इति वार्तिकोक्त्या श ] श्रीकृष्णः; विष्णुः; 'किं नो  
राज्येन गोविन्द ! किं भोगैर्जीवितेन वा'—इति  
भगवद्गीतायाम् (१।३२) । 'युगे युगे प्रनष्टां गां  
विष्णो ! विन्दसि तत्त्वतः । गोविन्देति ततो नाम्ना  
प्रोच्यसे ऋषिभिस्तथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते । [ विन्दतीति  
विन्दः पालकः स्वामी वा । विन्द्+श । गवां गो-  
समूहस्य विन्दः ] गवाध्यक्षः; [ गवां शास्त्रमयीनां  
वाणीनां विन्दः पतिः ] बृहस्पतिः; गौडपादाचार्यशिष्यः  
योगिविशेषः; 'तस्योपर्दाशितवतश्चरणी गुहायां द्वारे  
न्यपूजयदुपेत्य स शङ्करायः । आचार इत्युपदिदेश  
स तत्र तस्मै गोविन्दपादगुरवे स गुरुर्यतीनाम्'—इति  
माधवीये संक्षिप्तशङ्करजये (५।१०१) । पञ्जावस्थ-  
सिक्खजातीनां गुरुभेदः; गुरुगोविन्दसिंहः; [ गाः  
मनःप्रधानानीन्द्रियाणि तेषां विन्दः प्रवर्तयिता चेतयिता  
वा । अन्तर्यामी आत्मेत्यर्थः ] परब्रह्म; 'फुल्लेन्दी-  
वरकान्तिमिन्दुवदनं वहवितसंप्रियं, श्रीवत्साङ्गमुदारकौ-  
स्तुभधरं प्रीताम्बरं सुन्दरम् । गोपीनां नयनोत्पलार्चित-  
तनुं गोपोपसङ्घावृतं, गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्या-  
ङ्गभूषं भजे'—इति वह्निपुराणे । २२

गोवृन्दम् क्ली. [ गवां वृन्दं सङ्घः ] गोसमूहः । २६२

गोष्ठम् क्ली. [ गावस्तिष्ठन्त्यत्र इति । स्था+ 'सुपि  
स्थः' इति घञर्थे क ] गोसङ्घातः; गोवृन्दं; गोस्थानं;  
'गोठ' इति भाषा । 'सिंहेन निहतं गोष्ठे गौः सर्वत्सेव  
गोपितम् । दृष्ट्वा संग्रामयज्ञेन रामनागमहाम्भसा'—

इति रामायणे (४।२।३१)। प्रत्ययविशेषः। स तु स्थानार्थे पशुवाचकशब्देभ्यो भवति, यथा—गोगोष्ठं, महिषगोष्ठम्। गोष्ठीश्राद्धम्; 'पिथ्ये स्वदितमित्येव वाच्यं गोष्ठे तु सुश्रुतम्। सम्पन्नमित्यभ्युदये दैवे हचित्तमित्यपि'—इति मनुः (३।२।५४)। २६२

गोष्ठश्वः त्रि. [ गोष्ठे श्वा, 'अचतुरविचतुरेति' समासे अच्। षष्ठीतत्पुरुषसमासे तु गोष्ठश्वा इत्येव स्यात् ] स्वगृहाङ्गणे स्थितो यः प्ररान् द्वेषि सः (न च भीतो बहिर्ह्यति); स्थानस्यः परद्वेषी। ३६८

गोसम्भवम् क्ली. [ गावः सम्भवो यस्य ] गव्यं; गोजात-वस्तु। २७३

गोसर्गः पुं. [ गवां सर्गो वनगमनाय मोचनं, यद्वा गवां सूर्यकिरणानां सर्गो विसृष्टिः यस्मिन् ] प्रभातम्; 'गोसर्गो चार्द्धरात्रे च तथा मध्यन्दिनेषु च'—इति सुश्रुते। १११

गोस्तना स्त्री. [ गोः स्तन इव फलमस्याः। डीषोऽभावपक्षे टाप् ] गोस्तनी; द्राक्षा। १९३

गोस्तनी स्त्री. [ गोः स्तन इव फलमस्याः। 'स्वाङ्गाच्चो-पसर्जनादसंयोगोपधात्' इति डीष ] द्राक्षा; कपिल-द्राक्षा; 'दाख' 'मुनक्का' इति भाषा। 'द्राक्षा स्वादुफला प्रोक्ता तथा मधुरसापि च। मृद्वीका हारहूरा च गोस्तनी चापि कीर्तिता। वृष्या स्याद्गोस्तनी द्राक्षा गुर्वी च कफपित्तनुत्'—इति भावप्रकाशः। कुमारानुचारिणी मातृगणानामन्यतमा; 'प्रभावती विशालाक्षी पलिता गोस्तनी तथा'—इति महाभारते (१।४।६।३)। १९३

गोस्वामी [ न् ] त्रि. [ गवां स्वामी ] गोपतिः; 'गोपः क्षीरभृतो यस्तु स दुह्याद्दशतो वराम्। गोस्वाम्यनुमते भृत्यः सा स्यात् पालेऽभृते भृतिः'—इति मनुः (८।२।३१)। स्वर्गस्य भुवो वा प्रभुः; गवाम् इन्द्रियणां स्वामी (जितेन्द्रियतया एव तथात्वम्)। यथा—'श्रीसनातन-गोस्वामी प्रिया श्रीरतिमञ्जरी'—इत्यन्तसंहिता। २६२

गौः [ गो ] पुं. —स्त्री. [ गच्छतीति। गम्+गमेडोः ] इति डो। यद्वा गच्छत्यनेनेति करणे डो। वृषस्य यानसाधन-त्वात् स्त्रीगव्या दानेन स्वर्गगमनसाधनत्वाच्च उभयोरपि दानेन स्वर्गगमनत्वाद्वा तथात्वम्। वस्तुतस्त्वयं रूढ एव शब्दः; यदुक्तम्—'रूढा गवादयः प्रोक्ता यौगिकाः पाचकादयः। योगरूढाश्च विज्ञेयाः पङ्कजाद्या मनीषि-

भिः।' ] पशुविशेषः; 'गौर' 'गाय' इति भाषा। २६८

गौः [ गो ] पुं. [ गम्यते कर्मभिः यज्ञदानपरोपकारादि-धर्ममूलककर्मफलैर्यस्मिन् । गम्+गमेडोः—इति अधिकरणे डो ] स्वर्गः; [ गम्यते ज्ञायते चित्ताभि-प्रायो यथा, करणे डो ] वाक् (८); 'इत्यर्घ्यपात्रानुमित-व्ययस्य रघोरुदारामपि गां निशम्य'—इति रघुवंशे (५।१२)। [ गम्यन्ते ज्ञायन्ते विषया येन, यद्वा गच्छति शीघ्रमिति करणे कर्तरि वा डो। किरणसम्पर्केण विना चाक्षुषज्ञानाभावात् किरणस्य ज्ञानप्रकाशधर्मवत्त्वात् शीघ्रगामित्वाच्च तथात्वम् ] रश्मिः (३९); 'त्रयोदशद्वीपवतीं गोभिर्भासयसे महीम्। त्रयाणामपि लोकानां हितायैकः प्रवत्तसे'—इति महाभारते (३।३।५२)। वज्रः (५६); (१५६) भूः; भूमिः; 'दुदोहं गां स यज्ञाय सस्याय मधवा दिवम्। सम्पद्धि-निमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्'—इति रघुवंशे ( १। २६) पुं. वृषः ( २६३ ); ( २६८ ) स्त्री. माहेयी; सौरभेयी; उस्ता; माता; शृङ्गिणी; अर्जुनी; अघ्न्या; रोहिणी, माहेन्द्री; इज्या; घेतुः; अघ्ना; दोग्धी; भद्रा; भूरिमही; अनडुही; कल्याणी; पावनी; गौरी; सुरभिः; महा; निलिनाचिः; सुरभी; अनड्-वाही; द्विडा; अधमा; बहुला; मही; सरस्वती; उस्त्रिया; अही; अदितिः; इला; जगती; शर्करी। 'पराशरः प्राह वृहद्दथाय गोलक्षणां यत्क्रियते ततोऽयम्। मया समासः शुभलक्षणास्ताः सर्वास्तथाप्यागमतोऽभिधास्ये'—इति बृहत्संहितायाम् ६१ अध्याये। ३

गौः [ गो ] स्त्री. दिक्; [ गम्यते विषयज्ञानं यथा, 'गमेडोः' इति करणे डो ] चक्षुः; रश्मिः; स्वर्गः; वज्रः; वाक्; [ गच्छति शीघ्रमिति कर्तरि डो ] वाणः; [ गच्छति निम्नदेशमिति कर्तरि डो, निम्नप्रवणादेवास्य तथात्वम् ] जलं; भूमिः; पशुविशेषः; [ गम्यते पुण्यवद्भिर्यस्मिन् । अधिकरणे डो, इष्टपूर्तादिसकामं-कर्मभिः पुण्यवतां चन्द्रलोकगमनात् तथात्वम् ] चन्द्रः; [ गच्छति प्राप्नोति विश्वं प्रकाशकात्मकेन स्वतेजसेति, जानाति सर्वमिति वा। कर्तरि डो ] सूर्यः; गोमेवयज्ञः; ऋषभनामीपथिः; जलम्। जले बहुवचनान्तोऽयम् इति मेदिनीकोपः। जले एकवचनान्तोऽपि इति भरतः। 'स्वमिव भुजं गवि शेषं व्युपधाय स्वपिति यो भुजङ्ग-



विशेषम् । नवपुष्करसमकरया श्रियोमिपङ्क्त्या च सेवितः समकरया—इति वृन्दावनयमके (२) । माता; शुक्रदीहित्रस्य ब्रह्मदत्तस्य भार्या; 'स कीर्त्या शुक्रकन्यायां ब्रह्मदत्तमजीजनत् । स योगी गवि भार्यायां विष्वक्सेनमवात् सुतम्'—इति भागवते (१।२।२५) । [ गवि सरस्वत्यां भार्यायाम्—इति कश्चिद् व्याचष्टे ] पुं.—क्ली. [ गम्यते ज्ञायते स्पर्शसुखमनेन । त्वचि जातत्वादेवास्य तथात्वम् ] लोम । ८५४

गौडी स्त्री. [ गुडस्य विकारः, गुडविकारेण सम्पादिता इत्यर्थः । गुड+अण् स्त्रियां डीप् ] गुडादिकृता सुरा; बालकली; 'गौडी पैण्टी च माण्वी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।' 'गौडी कषाया मधुराम्लशीता सन्दीपनी शूल-रुजापहन्त्री । हृद्या त्रिदोषं शमयत्यजीर्णं पाण्ड्वामयाशःश्वसनं निहन्ति'—इति हारीते प्रथमस्थाने ११ अध्याये । रागिणीविशेषः; मेघरागस्य पत्नी; गौडानां गौडदेशवासिनां प्रिया; काव्यरीतिविशेषः; 'ओजः प्रसादमाधुर्यं—गुणत्रितयभेदतः । गौडवैदर्भ-पाञ्चाल—रीतयः परिकीर्तिताः—इति काव्यचन्द्रिका । 'ओजःप्रकाशकैवर्णं वन्ध आडम्बरः पुनः । समास-बहुला गौडी'—इति साहित्यदर्पणे (१।४) । 'बहुतर-समासयुक्ता सुमहाप्राणाक्षरा च गौडीया । रीतिरनु-प्रासमहिमपरतन्त्रा स्तोभवाक्या च'—इति पुरुषो-त्तमः । ३२४

गौघेरः पुं. [ गोघाया अपत्यम्, 'गोघाया दुक्' इति दुक् ] गोघिकात्मजः; गोघिकासुतः । २३४

गौरः पुं. [ गवते अव्यक्तं शब्दयतीति । गुडः शब्दे+ 'ऋञ्जेन्द्रेति' रन्प्रत्ययेन निपातनात् सिद्धः ] श्वेतवर्णः; तद्व्रति त्रि. 'तरुणादित्यगौरैश्च शरगौरैश्च वानरैः'—इति रामायणे (४।३१।१४) । 'कैलासगौरं वृषमारुह्योः पादापणानुग्रहपूतपृष्ठम् । अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः कुम्भोदरं नाम निकुम्भमिन्द्रम्'—इति रघुवंशे (२।३५) । चैतन्यदेवः; मृगविशेषः; 'खरोऽश्वोऽश्वतरो गौरः शरभश्चमरी तथा । एते चैकशफाः क्षतः ! शृणु पञ्चनखान् पशून्'—इति भागवते (३।१०।२२) । त्रि. विशुद्धः; क्ली. [ गुरते चित्तं यत्र । गुरी उद्य-मने+हलश्चेति घञ् । ततः स्वार्थे अण् । यद्वा गवते इति ] गुडः शब्दे+ 'ऋञ्जेन्द्रेति' रन् प्रत्ययेन निपात-

नात् साधुः ] पञ्चकेशरः; कुङ्कुमं; स्वर्णं; पुं. [ गवते अव्यक्तं शब्दयतीति ] श्वेतसर्पपः; 'गौरस्तु सर्पपः प्राज्ञः सिद्धार्थ इति कथ्यते । सर्पपस्तु रसे पाके कटु-स्निग्धः सतिक्तकः । तीक्ष्णोष्णः कफवातघ्नो रक्त-पित्ताग्निवर्द्धनः । रक्षोहरो जयेत्कण्डूं कुष्ठकोष्ठकृमिग्र-हान् । यथा रक्तस्तथा गौरः किन्तु गौरो वरो मतः'—इति भावप्रकाशे । चन्द्रः; धववृक्षः; पीतवर्णः; पीतवर्ण-करणीषधम्; 'कूष्माण्डनालक्षारस्तु समोमूत्रश्च तत्त्वचः । जलपिप्ता हरिद्रा च सिद्धा मन्दानलेन हि । माहिषेण पुरीषेण वेष्टिता वृषभध्वज । अस्या उद्वर्तनं कुर्यादङ्गुलीरत्वमीश्वर'—इति गरुडे १९४ अध्यायः । अरुणवर्णः । ७३२

गौरवम् क्ली. [ गौरवं साधनत्वेनास्त्यस्य । 'अर्श आदि-भ्योऽच्' इत्यच् ] अभ्युत्थानं; [ गुरोर्भाविः, गुरु+ 'इगन्ताच्च लघुपूर्वात्' इत्यण् ] गुरुत्वम्; 'शरीर-गौरवादस्य शिला गात्रैर्विचूर्णिता'—इति महाभारते (१।१६३।१८) । उत्कर्षः; 'शुश्राव तेभ्यः प्रभवादिवृत्तं स्वविक्रमे गौरवमादधानम्'—इति रघुवंशे (१।४।१९) । आदरः; 'प्रयोजनापेक्षितया प्रभूणां प्रायश्चलं गौरव-माश्रितेषु'—इति कुमारसम्भवे (३।१) । ७७८

गौरा स्त्री. [ गौरादिगणे वर्णवाचिन एव गौरशब्दस्य ग्रहणाद् अत्र विशुद्धार्थपरत्वे टाप् ] गौरी । १५

गौरी स्त्री. [ गौर+ 'षिद्गौरादिभ्यश्च' इति डीप् ] पार्वती; 'गौरीगुरोगं ह्वरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६) । 'गौरी प्रोक्ता कान्यकुब्जे रम्भा तु मलया-चले'—देवीभागवते ( ७।३।०५ ) । असञ्जातरजः-कन्या; अष्टवर्षवयस्ककन्यका; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा तु रोहिणी'—इति स्मृती । 'स्त्रीणां सहस्रं गौरीणां सुवेशानां सुवर्चसाम्'—इति महाभारते (१।१२।४७) । हरिद्रा; दारुहरिद्रा; गौरीचनः; प्रयङ्गुवृक्षः; वसुधा; नदीविशेषः; 'वस्तु सुवर्णा गौरीं च किम्पुनां सहिरण्वतीम्'—इति महाभारते (६।१।२५) । गङ्गा; 'गङ्गा गन्धवती गौरी गन्धर्व-नगरप्रिया'—इति काशीखण्डे ( २.१।४९ ) । वरुण-भार्या; सूर्यवंशीयप्रभेनजिद्राजभार्या; 'लेभे प्रसेन-जिद् भार्या गौरीं नाम पतिव्रताम् । अभिशस्ता तु सा भर्त्रा नदी वै बाहुदाभवत्'—इति हरिवंशे । बुद्ध-

शक्तिविशेषः; मञ्जिष्ठा; श्वेतदूर्वा; मल्लिका; तुलसी; सुवर्णकवली; आकाशमांसी; रागिणी-विशेषः; मालवरागपत्नी; 'आराममध्यगता कुमारिका शारदेन्दुमुखलक्ष्मीः । राडी दाडिमबीजं दधती कीरानने गौरी'—इति सङ्गीतदामोदरे । केषाञ्चिन्मते तु इयं कौशिकरागपत्नी; 'तोडी खाम्बावती गौरी गुणक्री ककुभा तथा । रागिणी रागराजस्य कौशिकस्य वराङ्गनाः'—इति सङ्गीतदर्पणे रागाध्याये (३३) । केषाञ्चिन्मते इयं श्रीरागस्य पत्नी; 'मालश्री त्रिवणी गौरी केदारी मवुमाधवी । ततः पाहाडिका ज्ञेया श्रीरागस्य वराङ्गनाः'—इति सङ्गीतदर्पणे रागाध्याये (१४) । अस्या रागवेला तृतीयप्रहरात् परम् अर्द्धरात्रावधिः । १५

गौरीपुत्रः पुं. [ गौरीयाः पुत्रः ] कात्तिकेयः । १९

ग्रन्थः पुं. [ ग्रन्थं संदर्भे+भावे घञ् ] अनृष्टमृच्छन्द-श्लोकः; द्वात्रिंशद्वर्णनिमित्तः; [ ग्रन्थेने विन्च्यते इति, ग्रन्थ्+कर्मणि क ] शास्त्रम्; 'ग्रन्थग्रन्थि तदा चक्रे मुनिगूढकुतूहलात्'—इति महाभारते (११।१८०) । धनं; गुम्फः; ग्रन्थना । ८४४

ग्रन्थनम् क्ली. [ ग्रन्थ्+भावे ल्युट् ] गुम्फनं; ग्रन्थना; सन्दर्भः; रचना; गुम्फः; ग्रन्थनम् । ७३०

ग्रन्थना स्त्री. [ ग्रन्थ्+भावे घृच् । स्त्रियां टाप् ] ग्रन्थनम् । ७३०

ग्रन्थिः पुं. [ ग्रन्थ् मन्दर्भे+ 'खनिकप्यञ्ज्यमिवमिवनि-सनिध्वनिग्रन्थिचारिभ्यञ्च' — इति भावकरणादौ यथायथम् इ ] वनादिसन्धिः; काण्डसन्धिः; पर्वः; पङ्क्तः; 'गण्ड' इति भाषा । 'इक्षोरिव मुन्दरि ! मानस्य ग्रन्थिरपि काम्यः'—इति आर्योत्तमशतक्याम् (१६८) । भद्रमुस्ता; हितावली; पिण्डालुः; अन्योऽन्याध्यासः; मायापाराः; 'भियते हृद्यग्रन्थिरिच्छद्यन्ते सर्वसंशयाः'—इति भागवते (१।२।२१) । कौटिल्यं; ग्रन्थिपर्णवृक्षः; 'मनःशिला त्वक् कुटजात् सकुण्डः मलोमशः सैडगजः कश्चजः । ग्रन्थिञ्च भोजं करवीरमूलं चूर्णानि साध्वानि तुषोदकेन'—इति चरके । बन्धनं; हम्भेदः; 'वाता-दयो मांसमसृक् प्रदुष्टाः सन्दूष्य मेदाञ्च तथा शिराश्च । वृत्तोद्यतं विग्रथितं तु शोथं कुर्वन्त्यतो ग्रन्थिरिति प्रदिष्टः'—इति माधवकरः । १८९

ग्रस्तम् त्रि. [ ग्रस्यते स्म इति । ग्रस्+क्त, 'यस्य विभाषा'—इति इडभावः ] लुप्तवर्णपदम्; असम्पूर्ण-वाक्यं; भुक्तम्; 'राज्ञो नातिवभौ रूपं ग्रस्तस्यांशुमतो यथा'—इति रामायणे (२।४२।१२) । खादितम्; आक्रान्तम्; 'दीर्घतीव्रामयग्रस्तं ब्राह्मणं गामथापि वा'—इति याज्ञवल्क्ये (३।२४४) । १४२

ग्रहः पुं. [ गृह्णाति गतिविशेषानिति । यद्वा गृह्णाति फलदातृत्वेन जीवानिति । ग्रह+ 'विभाषा ग्रहः' इति पक्षे अच् ] सूर्यादयो नवः; 'सूर्यश्चन्द्रो मङ्गलश्च बुधश्चापि बृहस्पतिः । शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेति नव ग्रहाः ।' भूतादिः; पूतनादयः; बालग्रहाः; अभिनिवेशः; [ गृह्यते अनुगृह्यते अभ्युपपद्यते इति, ग्रह्+ 'ग्रहवृद्धनिश्चिगमश्च' इति अप् ] अनुग्रहः; निर्वन्धः; महति स्नेहे निहितः कुसुमं बहु दत्तमार्चितो बहुशः । वक्रस्तदपि शनैश्चर इव सखि ! दुष्टग्रहो दयितः—इति आर्योत्तमशतक्याम् । 'दुष्टः ग्रह आग्रहो यस्य, पक्षे दुष्टश्चासौ ग्रहश्चेति विग्रहः'—इति तट्टीका । ग्रहणम्; 'सद्यो हरेरनुचराबुह बिभ्यतुस्तत्, पादग्रहावपततामति-कातरेण'—इति भागवते (३।१५।३५) । रणोद्यमः; सैहिकेयः; 'सन्ध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम राक्षसः । अतिष्ठन्मार्गमावृत्य रामस्येन्दोरिव, ग्रहः'—इति रघुवंशे (१२।२८) । उपरागः; चन्द्रसूर्ययोर्ग्रहणम्; 'भ्रविपादान्तरे राहोः केतोर्वा संस्थितो रविः । चतुष्पा-दान्तरे चन्द्रस्तदा सम्भाव्यते ग्रहः'—इति तिथितत्त्वे । ग्रहाणां नवसंख्यात्वेन ग्रहशब्देनापि नवसंख्या बोध्यते; 'चतुर्दशसहस्रं च मात्स्यमाद्यं प्रकीर्तितम् । तथा ग्रहसहस्रं तु मार्कण्डेयं महाद्भुतम्'—इति देवी-भागवते (१।३।३) । महादेवः; 'चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्ग्रहो ग्रहपतिर्वरः'—इति महाभारते (१३।१७। ३७) । १८४१

ग्रहकः पुं. [ गृह्यते, कर्मण्यप्, संज्ञायां क ] वन्दी । ७५९

ग्रामः पुं. [ ग्रस्+ 'ग्रसेरात्'—इति मन् धातोराका-रान्तादेशश्च ] विप्रादिवर्णप्राया प्राकास्परिखादिरहिता बहुजनवसतिः; संवसथः; हट्टादिशून्यवसतिः; 'तथा शूद्र-जनप्राया मुसमृद्धकूपीवला । क्षेत्रोपयोगभूमध्ये वसति-ग्रामसंज्ञिका'—इति मार्कण्डेयपुराणे । 'अन्नमेषां परा-धीनं देयं स्याद्भिन्नभाजने । रात्रौ न विचरेयुस्ते ग्रामेषु

नगरेषु च—इति मनुः (१०।५४) । शब्दादिपूर्वकश्चेत् समूहार्थः (८११), यथा—शब्दग्रामः, भूतग्रामः, गुणग्रामः इत्यादि । 'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति'—इति मनुः (२।२१५) । शिवः; 'गोपालिगोपतिग्रामो गोचर्मवसनो हरिः'—इति महाभारते (१३।१७।११३) । स्वरभेदः; 'षड्जमध्यमगान्धारस्त्रयो ग्रामा मता इह । षड्जग्रामो भवेदत्र मध्यमग्राम एव च । सुरलोके च गान्धारो ग्रामः प्रचरति स्वयम् ।' २५८

ग्रामणीः त्रि. [ ग्रामं संवसथं तत्रत्यान् जनान् नयति द्रोषगुणविचारादिभिः परिचालयति प्रेरयति वा विवृप् ] प्रधानम्; अधिपतिः; 'दानामोदविनोदलुब्धमधुपप्रोत्सारणाविर्भवत्, कर्णान्दोलनखेलनो विजयते देवो गणग्रामणीः'—इति महागणपतिस्तोत्रे (८) । 'दक्षिणावान् प्रथमो हूत एति दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति'—इति ऋग्वेदे (१०।१०७।५) । [ ग्रामेण ग्राम्येण भोग्यद्रव्येण आयुर्नयति क्षपयतीति । ग्रामान् भोग्यवस्तूनि नयति आत्मानं प्रापयतीति वा ] भोगिकः । ३९०

ग्रामाधानम् क्ली. [ आधीयते उपजीविका यत्र तत् । आ+घा+ल्युट् । ग्रामस्य मृगयुसमूहस्य आधानं पोषणकम् ] मृगया । २५८ ।

ग्रामान्तिरुम् क्ली. [ ग्रामस्य अन्तिकं समीपम् ] ग्रामसमीपम्; उपशलयं; ग्रामान्तम् । २५९

ग्रामीणः त्रि. [ ग्रामे भवः, 'ग्रामाद्यखलौ' इति खञ् ] ग्रामोत्पन्नः; 'ग्रामीणस्य प्रथमतः पश्यतो गवयादिकम् । सादृश्यधीर्गवादीनां या स्यात् सा करणं मतम्'—इति भाषापरिच्छेदे (७९) । पुं. ग्राम्यशूकरः; कुक्कुरः; काकः । २५८

ग्रामेयकः त्रि. [ ग्रामे भव, ग्राम+कर्म्यादिभ्यो ढकञ् ] इति ढकञ् ] ग्राम्यः । २५८

ग्राम्यम् त्रि. [ ग्रामे भवम्, हालिकशाकटिकप्रधानत्वात् ] भण्डादिवचनम्; अश्लीलम्; [ ग्रामे भवः, 'ग्रामाद् यखलौ' इति य ] ग्रामोत्पन्नः; ग्रामेयकः; ग्रामीणः (२५८); 'इवश्रृगालस्वरैर्दंष्ट्रो ग्राम्यैः ऋग्याद्भिरेव च'—इति मनुः (११।१९९) । 'ग्राम्यानपश्यत् कपिशपिपासतः'—इति माघे (१२।३) । मूढः; प्राकृतः । 'ग्राम्यभावमपहातुमिच्छवो योगमार्गपतितेन चेतसा'

—इति माघे (१२।३८) । काव्यस्य दोषविशेषः, स च शब्दगतः अर्थगतश्च । तत्र शब्दगतो यथा—'दुःश्रवत्रिविधाश्लीलानुचितायाप्रियुक्तताः' । ग्राम्यापतीतसन्दिग्धनेयार्थनिहतार्थता;—इति साहित्यदर्पणे (७।३) । अस्य उदाहरणं तत्रैव; 'कटिस्ते हरते मनः' अत्र कटिशब्दो ग्राम्यः । अर्थगतो यथा—'अपुष्टदुष्कमग्राम्यव्याहताश्लीलकष्टताः'—इति साहित्यदर्पणे (७।५) । उदाहरणं तत्रैव—'स्वपिहि त्वं समीपे मे स्वपिभ्येवाधुना प्रिय' अत्रार्थो ग्राम्यः । १४२

ग्राम्यधर्मः पुं. [ ग्राम्यस्य इतरादेर्धर्मः ] मथुनम्; 'प्रमत्तो ग्राम्यधर्मेषु मन्दात्मा पापनिश्चयः । मम पुत्रः सुदुर्वृद्धिः पृथिवीं घातयिष्यति'—इति महाभारते (३।४९।४) । ८३८

ग्रावा [ न् ] पुं. [ ग्रसते इति ग्रः, ग्रस्+अन्वभ्योऽधीति डः । आवनति शब्दायते इति, आ+वन् शब्दे+वनिप् । ततो ग्रश्चासी ग्रावा चेति ] प्रस्तरः; 'सर्व एवत्वजो दृष्ट्वा सदस्याः सदिवोकसः । तैरर्द्धमानाः सुभृशं ग्रावभिर्नैकधाद्रवन्'—इति भागवते (४।५।१८) । पर्वतः (८०६); 'पृथ्वी तावत् त्रिकोणा विपिननदनदी-ग्रावरुद्धं तदद्वयम्'—इत्युद्भटः । मेघः; दृढे त्रि. । १६८

ग्राहः पुं. [ गृह्णातीति, ग्रह+विभाषा ग्रहः ] इति व्यवस्थितविभावया ण, घञ् वा भावे ] जलजन्तुविशेषः; जलहस्ती; अवहारः; 'भीषणविकृतैरप्येधोर्रेजलचरैस्तथा । उग्रैरित्यमनाधृष्यं कूर्मग्राहसमाकुलम्'—इति महाभारते (१।२।१५) । ग्रहणं; शिशुकः; आग्रहः; 'मूढग्राहेणात्मनो यत् पीडया क्रियते तपः'—इति भगवद्गीता (१७।१९) । 'मूढग्राहेणाविवेककृतेन दुराग्रहेण'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । ६५६

ग्रीवा स्त्री. [ गौर्यतेऽनया, गृ निगरणे+शेवय ह्वजि ह्वा-ग्रीवा' इति वन्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] गलघाटादिसमुदिता; शिरोविः; कन्धरा; कन्धिः; शिरोधरो; कन्धराशिरा । ५१६

ग्रीवालङ्कुरणम् क्ली. [ ग्रीवाया अलङ्कुरणम् ] कण्ठभूषा; ग्रैवेयकं; ग्रैवेयं; कण्ठभूषणम् । ५५८ ।

ग्रीष्मः पुं. [ ग्रसते रसान् इति । ग्रसु अवने+ग्रीष्मः ] इति मक्, ग्रीभावः षुगागमश्च निपात्यते ] ऋतु-

विशेषः; ज्येष्ठापाढी; उष्णकः; निदाघः; उष्णो-  
पगमः; उष्णः; उष्मागमः; तपः; धर्मः; तापनः;  
उष्णागमः; उष्णकालः; 'श्रीष्मे पञ्चतपास्तु स्याद्वर्षा-  
स्वभावकाशिकः'—इति मनुः (६।२३) । 'श्रीष्मोद्-  
भवो भोगभवानुरक्तो वक्ता सुशीलो जलकैलिशीलः ।  
विद्याधनैश्वर्ययशोमनोज्ञो धन्वी सुवेशः परदारचित्तः'—  
इति कोष्ठीप्रदीपे । ११६

प्रैवेयकम् फली. [ श्रीवायां भवम्, 'कुलकुक्षिप्रीवाभ्यः  
श्वास्यलङ्कारेषु'—इति ठकञ् ] कण्ठभूषा; प्रैवेयं;  
कण्ठभूषणम्; 'नूपुरी विमलौ तद्वद् प्रैवेयकमनुत्तमम्'—  
इति मार्कण्डेयपुराणे (८२।२५) । ५५८

ग्लहः पुं. [ ग्लह्, ग्रह्, वा+ 'अक्षेपु ग्लहः' अक्षशब्देन  
देवनं लक्ष्यते, तत्र यत् पणरूपेण ग्राह्यं तत्र ग्लह इति  
निपात्यते ] अक्षक्रीडासु पणः; 'दाँव' इति भाषा ।  
'पाञ्चालस्य द्रुपदत्यात्मजाभिमं सभामध्ये यो व्यदेवीद्  
ग्लहेषु'—इति महाभारते (२।६७।६) । ७५९

ग्लानिः स्त्री. [ ग्लायति अनेनास्मिन् वा । ग्लै+  
'वह्निश्चुद्रुग्लहात्वारिम्यो नित्' इति नि ] बल-  
हीनता; 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत !'  
—इति भगवद्गीतायाम् (४।७) । रोगः; 'देहवैषर्ण्य-  
दौर्गन्ध्यस्वेदकलमग्लानिरिति वयोऽवस्थाश्च भवन्ति'—  
इति भागवते (५।२४।१३) । ६०१

### घ

घटः पुं. [ घटते मृदादिसंघातैः जलादिग्रहणाय । घट्+  
पचाद्यच् ] कलसः; 'यस्तु रज्जुं घटं कूपाद्धरेद्भिन्वाच्च  
यः प्रपाम् । स दण्डं प्राप्नुयान्मापं तच्च तस्मिन् समा-  
हरेत्'—इति मनुः (८।३१९) । समाधिभेदः (घटस्य-  
वारिवत् निश्चलत्वात्तथात्वम्); कुम्भकम्; इभ-  
शिरः (आकृतिसादृश्यात्तथात्वम्); कूटकुटः; कुम्भ-  
राशिः; 'सिंहे वा यदि गोघटे गतनरः सर्वार्थसिद्धि-  
लभेत्'—इति समयप्रदीपः । द्रोणपरिमाणम्; 'चतु-  
भिराढकद्रोणः कलशोनत्वणोर्मलः । उन्मानश्च घटो  
राशिद्रोणपर्यायसंज्ञितः'—इति शाङ्गधरे पूर्वखण्डे  
प्रथमेऽध्याये । 'कंसश्चतुर्गुणो द्रोणः अर्मणोनत्वणं च  
तत् । स एव कलशः स्यातो घट उन्मानमेव च'—इति  
चरके । योगावस्थाभेदः; 'आरम्भश्च घटश्चैव तथा

परिचयोऽपि च । निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्था-  
चतुष्टयम्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (४।६९) । ३१६  
घटना स्त्री. [ घट्+णिच्+युच् टाप् च ] संघातीकरणं;  
समूहीकरणम्; 'करिणां घटना घटा'—इत्यमरः ।  
योजना; मेलनम्; 'अघटनघटनापटीयसी माया'—इति  
मायालक्षणम् । 'शक्तिः काप्यपरोक्षितास्ति महतां स्वैरं  
दविष्टान्यहो, यन्माहात्म्यवशेन यान्ति घटनां कार्याणि  
निर्यन्त्रणम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् । २२१

घटयोनिः पुं. [ घटः कुम्भः योनिः कारणम् उत्पत्ति-  
स्थानं यस्य ] अगस्त्यमुनिः; कुम्भसम्भवः; लोपामुद्रा-  
पतिः । ४१३

घटा स्त्री. [ घट्+भावे पित्वाद्ब्र तत्पटाप् ] करिणां  
घटना; हस्तिनां युद्धादावेकत्र संघातीकरणम्; 'तुरुष्क-  
तुरगत्राताः क्षुब्धस्याब्धेरिवोर्मयः । तद्गजेन्द्रघटा वेला-  
वनेषु दलशो ययुः'—इति कथासरित्सागरे (११।१०९) ।  
घटनं; (७९८) गोष्ठी; सभा; समूहः; 'यदगार-  
घटाद्दुकुट्टिमस्रवदिन्दूपलतुन्दिलापयाः'—इति श्रीहर्षः ।  
२२१

घटीयन्त्रम् फली. [ घटीनां यन्त्रम् ] कूपाज्जलोत्तोल-  
नार्थं रज्जुसहितघटः; जलोत्तोलनार्थं चक्राहवा घटी-  
माला; उद्घाटनम्, उद्घाटकः; 'तान्येव तत्र चक्राणि  
घटीयन्त्राणि चान्यतः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१२।  
२०) । [ घटी क्षुद्रघटस्तदधस्तनार्द्धाकारं यन्त्रम् ।  
यद्वा घटघाः दण्डरूपकालस्य ज्ञापकं यन्त्रम् कालपरि-  
माणज्ञापको यन्त्रविशेषः; 'घडी'—इति भाषा । ६८५  
घण्टिका स्त्री. [ घण्टा+अल्पार्थे कन् तत्पटापि ] अत  
इत्वं, घण्टिका क्षुद्रघण्टा तद्वत् आकृतिरस्त्यस्याः ।  
अशं आदित्वाद्बच् ] क्षुद्रघण्टा; लम्बिका; तालूर्ध्वसूक्ष्म-  
जिह्वा; गलरोगविशेषः; 'तिलपिच्छलगोल्यादिसे-  
वनात्तिद्रवादपि । नवोदकेन कफजो जायते घण्टिकागदः'  
—इति हारीते । ५६०

घनः पुं. [ घनति दीप्यते इति । घन् दीप्ती+अच् ]  
मेघः; 'ततः स्नेहाद्धरिहयं दृष्ट्वा रङ्गावलोकनम् ।  
भास्करोऽप्यनयन्नाशं समीपोपगतान् घनान्'—इति  
महाभारते (१।१३।२४) । शरीरम् (५१०);  
ओषः (६८६); दार्ढ्यं; विस्तारः; [ हन्यते वध्यते-  
ऽनेन । हन्+ 'मूर्ती' घनः'—इति अप् घनादेशश्च ]

लोहमुद्गरः; 'घनुरपास्य सवाणघि शङ्करः प्रतिजघान घनैरिव मुष्टिभिः'—इति भारविः (१८।१) । कफः; अन्नकं; सजातीयाङ्कत्रयस्य पूरणम्; 'समत्रिघातश्च घनः प्रदिष्टः स्थाप्यो घनोऽन्यस्य ततोऽन्यवर्गः । आदि-त्रिनिघनस्तत आदिवर्गस्यन्त्याहृतोऽथादिघनश्च सर्व'— इति लीलावती । वेदपाठविशेषः; 'जटामुक्तां विपर्यस्य घनबाहुर्मनीषिणः ।' ५८

घनः त्रि. [ हन्यते इति, हन् + अप् घनादेशश्च ] निविडः; निरन्तरः; सान्द्रः; 'स तथेति विनेतुस्वारमतेः प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम् । तदलब्धपदं हृदि शोकघने प्रतियातमिवान्तिकमस्य गुरोः'—इति रघुवंशे (८। ९१) । दृढः; 'घञ्कार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स रामसायकः'—इति रघुवंशे (११।१८) । पूर्णः 'किंस्विदापूर्यते व्योम जलधाराघनैर्घनैः'—इति महा-भारते (१।१३६।२८) । सम्पुटः; निरवकाशः; 'किं गाण्डीवस्फुरदुरघनास्फालनक्रूरपाणिर्नासील्लीलानटनविलसन् मेखली सव्यसाची'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२३६) । क्ली. [ हन्यते ताडयते यत् इति । हन् + 'मूर्ता' घनः' इति अप् घनादेशश्च ] कांस्यतालादिकं वाद्यं; कांस्यतालः; 'करताल' इति भाषा । - मध्यमनृत्यं; लौहः; त्वचम् । ७१७

घनरसः पुं. [ घनः सान्द्रो रसः, घनस्य मेघस्य रसो वा ] जलं; कर्पूरं; फौलुपर्णी; सम्यक् सिद्धरसः; सान्द्र-निर्यासः; [ घनो रसो यस्य ] मोरटः; जले क्लीव-लिङ्गोऽपि, यथा—'घनरसमन्धं क्षीरं घृतममृतं जीवनं भुवनम्'—इति रत्नकोषे । ६४८

घनसारः पुं. [ घनः शुक्लमेघस्तद्वत् शुभ्रः सारो यस्य ] कर्पूरम्; 'घनीस्तनोरुजघना घनसारदिग्वास्ता एव-माद्रवसनाः सह संविशेयुः'—इति सुश्रुते । 'द्विक्रान्ता-घनसारचन्दनरसासारोः श्रयन्तां मनः ।' [ घनी निविडः सारो यस्य ] दक्षिणावर्तपारदः; वृक्षभेदः; [ घनस्य मेघस्य सारः ] जलम् । ५४५

घनाघनः पुं. [ हन्तीति, हन् + पचाद्यच्, 'हन्तेर्घश्च' इति द्वित्वम्, आक् चान्यासस्य ] इन्द्रः; वर्षुकमेघः; 'अम्मोजानि घनाघनव्यवहितोऽप्युल्लाघयत्यंशुमान् दूर-स्वोऽपि पयोधरोऽतिशिरस्पर्शं करोत्यातपम्'— इति राजतरङ्गिण्याम् (४।३६५) । घातुकमत्तहस्ती; अन्यो-

ज्यघट्टनम् । ८२६

घनोपलः पुं. [ घनस्य मेघस्य उपलः ] करका; 'ओला' इति भाषा । ५९

घर्मः पुं. [ घरति क्षरति स्वेदः अङ्गादनेनेति । घृ क्षरणे + 'घर्मः' इति करणे मन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] आतपः; [ घरति क्षरति शरीरादिनेति, घृ + मन् ] श्रमवारि; अङ्गजलं; निदाघः; स्वेदः; सिप्रः; स्रवणं; ग्रीष्मः; ऊष्माः; 'सरांसि सरितो वापि वनानि रुचि-राणि च । चन्दनानि परार्घ्याणि स्रजः सकमलोत्पलाः । तालवृन्तानिलाहारांस्तथाशीतगृहाणि च । घर्मकले निषेवेत वासांसि सुलघूनि च'—इति सुश्रुते । ४०

घस्मरः त्रि. [ घस् + 'सृघस्यदः क्मरच्' इति क्मरच् ] अक्षरः; भक्षकः; 'गौर्यो बृहत्यो निर्हीका भद्रिकाः कम्बलावृताः । घस्मरानप्टशोचश्च प्राय इत्यनुशुश्रुमः'—इति महाभारते (८।४०।३९) । ३५०

घस्रः पुं. [ घसति भक्षयति अन्वकारम् । घस् + रक् ] दिनम्; 'रात्रिघस्रौ सुप्तबोधवुन्मीलननिमीलने । तूष्णीम्भावमनोराज्य इव सुष्टिलयाविमौ'—इति पञ्च-दश्याम् (६।१८५) । हिले त्रि. । क्ली. कुङ्कुमम् । १०६

घाटः पुं. [ घटते सङ्गच्छते शिरोऽनेन देहे इत्यर्थः । घट् + करणे घञ् ] घाटा; [ घाटा अस्यास्तीति, 'अंशं आदित्वाद्च् ] घाटाविशिष्टे त्रि. । ५२५

घाटा स्त्री. [ घाटा विद्यतेऽस्मिन् इति घाटः; ततः टाप् ] ग्रीवापश्चाद्भागः; अवटुः; कृकाटिका; शिरः-पश्चात्सन्निः; घाटः; कृकाटी; घाटिका; 'दोपास्तु दुष्टास्त्रय एवमन्यां सम्पीड्य घाटां सुरुजां सुतीव्राम्'—इति सुश्रुते । ५२५

घातफः त्रि. [ हन्तीति, हन् ष्वुल् । णिति तागतादेशे कुत्वम् ] हननकर्ता; 'गौरीमाधवयोभंतां राघिका शिवसन्निधौ । इन्दुः कुमुदहन्ता च सूर्यः कमलघातकः'—इति विदग्धमुखमण्डनम् । 'संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः'—इति मनुः (५।५१) । ३७२

घातनम् क्ली. [ हन् + णिच् + भावे ल्युट् ] हननं; वधः; यज्ञार्थं पशुवधः; 'पशुवद्घातनं वा मे दहनं वा कटाग्निना'—इति महाभारते (२।४४।४०) । त्रि. [ हन्ति मारयतीति, हन् + स्वार्थणिजन्तात् कर्तरि ल्यु ] वधकर्ता । ४७७

घातनस्थानम् क्ली. — वधस्थानम् । ५९५

घातुकः त्रि. [ हन्ति- इति, हन्+ 'लघपतपदस्थाभूवृ-  
हनकमगमशृम्य उकम्'—इति उकम् ] हिंस्रः; क्रूरः;  
'ततः किशोरा भ्रियन्ते वत्सांसच घातुको वृकः'—इति  
अथववदे (१२।४।७) । ३७२

घासः पुं. [ अद्यतेऽसौ पशुभिरित्यर्थः । अदो घस्+कर्मणि  
घञ् ] गवाद्यदनीयतृणविशेषः; यवसः; यवसः; जवसः;  
यवासम्; पञ्चतन्त्रे (४।५३) । १९१

घासिः पुं. [ घसति भक्षयति हव्यमिति । घस्+ 'जनि-  
घसिभ्यामिण्' इति इण् ] घासः; अग्निः; 'यच्च  
पपौ यच्च घासि जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु'  
—इति ऋग्वेदे (१।१६२।१४) । १९१

घुटिकः पुं. [ घुट्+ठन् ] गुल्फः; घुटिः; घुटः; चरण-  
ग्रन्थिः; घुण्टः; घुण्टकः । ५१५

घुटिका स्त्री. [ घुटिक+टाप् ] गुल्फः; घुटी; चरण-  
ग्रन्थिः; घुण्टः; घुण्टकः । ५१५

घुण्टकः पुं [ घुण्ट+स्वार्थे कन् ] गुल्फः । ५१५

घुसृणम् क्ली. [ घष्यते, स्तूयते इति भावः । घृष्+वाहृ-  
लकाद् ऋणक् । पृषोदरादित्वात् साधु । यद्वा घुष्यते  
कान्तिविशिष्टं क्रियते शरीरमनेन । घुषि अलङ्करणे+  
ऋणक् ] कुङ्कुमम्; 'घुसृणापिञ्जरतनुर्धर्मराघर्षरस्वना'  
—इति काशीखण्डे (२९।५७) । 'चन्दनं घुसृणोपेतं  
मृगनाभिसमायुतम् । न चोष्णं न च वा शीतं वर्षाकाले  
तदिष्यते'—इति भावप्रकाशे । ६१९

घृणा स्त्री. [ ध्रियते सिच्यते हृदयमनया । घृ सेके+  
बाहुलकाद् नक्, स्त्रियां टाप् । दयारसेन हि हृदयं सिक्त-  
मिवाद्भ्रं भवतीति-तथात्वम् ] कर्षणा; 'मन्दमस्यग्निपु-  
लतां घृणया मुनिरेष वः । प्रणुंदत्यागतावन्नं जघनेपु  
पशूनिव'—इति किराताजुनीये (१५।१३) । [ ध्रियते  
आच्छाद्यते-गुणादिकमनयेति ] (८००) जुगुप्सा;  
अर्तनम्; ऋतीया; ह्री; हृणीया; रीज्या; हृणिया;  
ह्रिणीया, ह्रणीया; 'सां विलोक्य वनितावधे घृणां  
पत्रिणा सह मुमोच राघवः'—रघुवंशे (११।१७) । ७२४

घृषिः पुं. [ जघति दीप्यते इति । घृ+ 'घृणिपृषि-  
पाणिचूर्णिभूणि' इति निप्रत्ययेन निपातनात् साधुः ]  
किरणः; सूर्यः; [ धरति सिञ्चति, घृ सेके+नि,  
गुणाभावश्च ] जलम्; [ जघति दीप्यते ] दीप्ति-

शालिनि त्रि. । 'तस्य त्यक्तस्वभावस्य घृणेर्मायावनौ-  
कसः'—इति भागवते (७।२।७) । ३८

घृतः पुं.—क्ली. [ जघति क्षरतीति, घृ+ 'अञ्जिघृसिभ्यः-  
क्तः' इति क्त ] पक्ववनीतम्; आज्यं; हविः; सर्पिः;  
पवित्रं; नवनीतकम्; अमृतम्; अभिघारः; होम्यम्;  
आयुः; तैजसम्; आजम् । 'घृतोऽञ्ज्री चाजमाज्यं च  
सर्पिः स्यादमृतं हविः'—इति अटाषरः । 'स्मृतिबुद्धघग्नि-  
शुक्लीजःकफमेदोविवर्द्धनम् । वातपित्तविषोन्मादशोषा-  
लक्ष्मीज्वरापहम् । सर्वस्नेहोत्तमं शीतं मधुरं रसपाकयोः ।  
सहस्रवीर्यं विषिभिर्घृतं कर्मसहस्रकृत् । मदापस्मार-  
मूर्च्छयिशोफोन्मादगरज्वरान् । योनिकर्णशिरःशूलं घृतं  
जीर्णमपोहति'—इति चरके । 'पुराणं तिमिरश्वास-  
पीनसज्वरकासनृत् । मूर्च्छाकुष्ठविषोन्मादग्रहापस्मार-  
नाशनम् । एकादशशतं चैव वत्सरानुपितं घृतम् ।  
रक्षोघ्नं कुम्भसर्पिः स्यात्परतस्तु महाघृतम् । पेयं महा-  
घृतं भूतैः कफघ्नं पवनाधिकैः । बल्यं पवित्रं मेघ्यं च  
विशेषात्तिमिरापहम् । सर्षभूतहरं चैव घृतमेतत्  
प्रशस्यते'—इति सुश्रुते । क्ली. सलिलं; जलं; नि.  
[ जघति दीप्यते, धरति सिञ्चतीति वा ] दीप्तः;  
सेचकः । ७७५

घृताची स्त्री. [ घृतेन अमृतेन अञ्चति तृप्ति गच्छतीति ।  
घृत+अञ्च+क्विप्, नलोपे स्त्रियां झीप् । सर्वपा  
मनुष्याहारवर्जितानां देवजातीनां ह्यमृतमयघृतभोजनं  
महाभारतपुराणादिप्रसिद्धम् ] अप्सरोविशेषः; 'घृताची-  
प्रमुखा ब्रह्मन् ननुतुश्चाप्सरोगणाः'—इति विष्णु-  
पुराणे । गायत्रीस्वरूपा महादेवी; 'घनारिमण्डला  
घूर्णा घृताची घनवेगिनी'—इति देवीभागवते (१२।  
६।४६) । ८८ ।

घृष्टिः पुं. [ घर्षतीति, घृष्+कर्तरि क्तिच् ] शूकरः;  
स्त्री. [ घृष्यतेऽसौ, घृष्+कर्मणि क्तिच् ] वाराही  
(कन्दः); [ घृष्+भावे क्तिच् ] घर्षणं; स्पर्द्धा; अप-  
राजिता । २२६

घोटकः पुं.—स्त्री. [ घोटते, गत्वां प्रत्यागच्छतीति ।  
घुट्परिवर्तने, ष्वल् ] पशुविशेषः; पीतिः; सुरंगः;  
तुरङ्गः; अश्वः; तुरङ्गमः; वाजी; बाहुः; अर्वा;  
गन्धर्वः; हयः; सन्धवः; सप्तिः; घोटः; पीती;  
पीथिः; ताक्ष्यः; हरिः; वीती; मुद्गमोजी; धाराट;

जवनः; जितवः; जवी; वाहनश्रेष्ठः; श्रीभ्राता; अमृतसोदरः; मुद्गभुक्; शालिहोत्रः; लक्ष्मीपुत्रः; प्रकीर्णकः; वातायनः; श्रीपुत्रः; चामरीः; हेपी; शालिहोत्री; मरुद्रथः; वाजस्कन्धः; हरिद्राक्तः; एकशफः; किन्धी; ललामः; विमानकः; अत्यः; वह्निः; दधिका; दधिकावा; एतग्वः; एतशः; पैद्वः; दौर्गहः; उच्चैःश्रवसः; आशुः; व्रध्नः; अरुषः; मांश्चत्वः; अव्यययः; श्येनासः; सुपर्णाः; पतङ्गाः; नरः; ह्यार्याणाम्; हंसास्यः; 'घोड़ा' इति भाषा। ४३६।

घोणा स्त्री. [ घोणते गृह्णाति वस्तुगन्धम्। घुण्+अच् टाप् च। घोणतेऽन्या इति करणे घञ् वा ] अश्वनासिका; प्रोथः; 'नासाच्छिद्राक्षिमध्ये तु घोणास्यः समुदाहृतः। घोणापार्श्वगतौ गण्डौ क्षीरिके च ततः परम्'—इति अश्ववैद्यके (२।७)। नासा (५२१); दीर्घघोणं महोरस्कं विकटोद्बद्धपिण्डकम्—इति महाभारते (१।१५६।३३)। ४४१

घोरम् त्रि. [ घोरयति भयानकरसनितिभ्रतीति। घूर्+अच्। यद्वा हन्ति विनाशयति स्वरूपेण इति। 'हन्तेरच् घूर्च्' इति अच् घातोर्बुरादेशश्च ] भयानकम्; 'बहून् वर्षगणान् घोरान्नरकान् प्राप्य तत्क्षयात्। संसारान् प्रतिपद्यन्ते महापातकिनस्त्विमान्'—इति मनुः (१।२।५४)। पुं. शिवः; क्ली. [ हन्यते वष्यतेऽनेनेति ] विषम्। ७०५

घोषः पुं. [ घोषन्ति शब्दायन्ते गावो यस्मिन्। घुषिर् विशब्दने+ 'हलश्च' इति घञ् ] ध्वनिः; [ घुष्+भावे घञ् ] 'तत्र भुक्त्वा पुनः किञ्चित् तूर्यघोषैः प्रहर्षितः। संविशेत् यथाकालमुत्तिष्ठेच्च गतकलमः'—इति मनुः (७।२२५)। आभीरपल्ली (२६१); 'ह्यैङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्। नामधेयानि पृच्छन्ती वन्यानां मांशाखिनाम्।' [ घोषिति शब्दायते इति, घुष्+कर्तरि अच् ] गोपालः; घोषकलता; मेघशब्दः; मशकः; वर्णोच्चारणवाह्यप्रयत्नविशेषः; 'संवृतं मात्रिकं ज्ञेयं विवृतं तु द्विमात्रिकम्। घोषा वा संवृताः सर्वे अघोषा विवृताः स्मृताः'—इति शिक्षायाम्। कायस्थादीनां पद्धतिविशेषः; 'वसुवंशे च मुखौ द्वौ नाम्ना लक्षणपूपणौ। घोषेषु च समाख्यातश्चतुर्भुजमहाकृती'—इति कुलदीपिका। बलीं. [ घोषति शब्दायते इति,

घुष्+अच् ] कांस्यम्। १३८.

घोषवती स्त्री. [ घोषो विद्यतेऽस्याः। घोष+मनुष्य, मस्य वः। स्त्रियां डीप् ] वीणा; 'स बभूव शनै राजा सुखेष्वेकान्ततत्परः। सदा सिपेवे मृगयां वीणां घोषवतीं च ताम्।' दत्तां वासुकिना पूर्वं नक्तंदिनमवादयत्—इति कथासरित्सागरे (१।१।३)। 'अङ्गे घोषवती तस्य कण्ठे गीतश्रुतिस्तथा'—इति कथासरित्सागरे (१।२।३२)। शब्दविशिष्टे त्रि. 'त्वं वज्रमनुलं घोरं घोषवास्त्वं बलाहकः'—इति महाभारते (१।२।५।११)। ९६  
घ्राणम् क्ली. [ जिघ्रत्यनेनेति, घ्रा+करणे ल्युट्। यद्वा घ्रा+क्त, 'नुदविदोन्द्रघ्राणैति' निष्ठातस्य नो वा ] नासिका; 'घ्राणकान्तमधुगन्धकर्षिणीः पानभूमिरचनाः प्रियासखः'—इति रघुवंशे (१।१।११)। [ घ्रा+भावे ल्युट् ] आघ्राणम्; 'आलिलिङ्गं मुहुर्घ्राणं मूर्ध्नि तस्य चकार ह'—इति देवीभागवते (१।१।४।२४)। घ्राते त्रि. घ्रातः; शिक्षितः। ५२१

## च

चकितम् त्रि. [ चक् भ्रान्ती+क्त ] भीतम्; 'दत्त्वा दिशि दिशि दृष्टिं याचकचकितोऽवगुण्ठनं कृत्वा। चौर इव कुटिलचारी पलायते विकटरस्याभिः'—इति कलाविलासे (२।८)। क्ली. [ भावे क्त ] भयम् (३।५४); नायिकालङ्कारविशेषः; यथा साहित्यदर्पणे (३।१२१) 'कुतोऽपि दयितस्याग्रे चकितं भयसम्भ्रमः।' 'प्रियाग्रे चकितं भीतेरस्थानेऽपि भयं महत्'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। स्त्री. छन्दोविशेषः; यथा छन्दोमञ्जर्याम्—'भात् समतनगैरष्टच्छेदे स्यादिह चकिता' ३३४

चकोरः पुं.—स्त्री. [ चकते चन्द्रकिरणैः तृप्यतीति। चक् तृप्ती+ 'कठिचकिम्यामोरन्' इति ओरन् ] पक्षिविशेषः; चन्द्रिकापायी; कौमुदीजीवनः; चकोरकः; चकोरपक्षी; 'चाटकं शीतलं रुच्यं वृष्यं कापिञ्जलामिपम्। तद्वच्चकोरजं मांसं वृष्यं च बलपुष्टिदम्। बातश्लेष्माधिको ज्ञेयः शीतलः शुक्रवर्द्धनः। अश्मरीं हन्ति विशदो बलकृन्मांसलक्षणः। चकोरः शुक्रशारी च समदोषा गुणागुणैः। घातं राप्चकोराणां दक्षाणां शिक्षिनामपि। घटकानां च यानि स्युरण्डानि च

हितानि च । रेतःक्षीणेषु कासेषु हृद्रोगेषु क्षतेषु च ।  
मधुराप्यविपाकौनि सद्यो बलकराणि च—इति हारीते ।

२५४

चक्रः पुं. [ करोति अस्फुटशब्दम् । कृ+बाहुलकात् क, ततो  
निपातनाद् द्वित्वे साधुः ] चक्रवाकपक्षी; क्ली. [ क्रियते-  
ऽनेनेति, कृ+घञर्थे क, कृवादीनामिति द्वित्वञ्च ]  
रथाङ्गम् (४४७) ; 'पहिया' इति भाषा । 'यथाह्येकेन  
चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् । तथा पुरुषकारेण  
विना देवं न सिध्यति'—इति याज्ञवल्क्ये (१३५१) ।  
सैन्यम् (४५७) ; अस्त्रविशेषः (४७६) ; 'आघोरणानां  
गजसन्निपाते शिरांसि चक्रैर्निशितैः क्षुराग्रैः—इति  
रघुवंशे (७।४६) । (६७१) जलावर्तः; पुटभेदः;  
समूहः; (६८७) ; व्रजः; राष्ट्रः; दम्भविशेषः; कुम्भ-  
कारोपकरणम्; 'मृदण्डचक्रसंयोगात् कुम्भकारो यथा  
घटम् । करोति तृणमृत्काष्ठैर्गृहं वा गृहकारकः—इति  
याज्ञवल्क्यः (३।१४६) । भगवतः सुदर्शनचक्रम्;  
'ततो भगवता तस्य शिरच्छिन्नमण्डकृतम् । चक्रायुधेन  
चक्रेण पिबतोऽमृतमोजसा'—इति महाभारते (१।१९।-  
६) । २४४

चक्रधारा स्त्री.—प्रधिः; नेमिः; 'पहिया का किनारा'  
इति भाषा । ४४७

चक्रमर्दकः पुं. [ चक्रं दद्रुरोगविशेषं मृदनातीति । मृद+  
ण्वुल् ] चक्रमर्दः; क्षुपविशेषः; एडगजः; अडगजः;  
गजाख्यः; मेपाह्वयः; एडहस्ती; व्यावर्तकः; चक्रगजः;  
चक्री; पुन्नाटः; पुन्नाडः; विमर्दकः; दद्रुघ्नः; तर्बटः;  
चक्राह्वः; शुकनाशनः; दृढबीजः; प्रपुन्नाडः; खर्जन्तः;  
पद्माटः; उरणाख्यः; प्रपुन्नाडः; प्रपनाडः; उरणाक्षः ।  
[ स्त्रियां तु कपि अत इत्वं च ] राजमातृविशेषः;  
'ललितादित्यभूर्भुक्तुर्वल्लभा चक्रमर्दिका ।' ६१९

चक्रवर्ती [ न् ] पुं. [ चक्रं पद्माकारशुभचिह्नं करे, वर्तते  
यस्य । वृत्+णिनि । यद्वा चक्रं पृथ्वीचक्रं तेन वर्तते  
इति । वृत्+णिनि ] समुद्रपरिवृतायाः सर्वभूमेरीश्वरः;  
सार्वभौमः; 'जन्म यस्य पुरोर्वशे युक्तरूपमिदं तव ।  
पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि'—इति शाकुन्तले  
१ अङ्के । वास्तूकः; श्रेष्ठः; 'वाग्देवताचरितचित्रित-  
चित्तसया पद्मावतीचरणचारणचक्रवर्ती'—इति गीत-  
गोविन्दे । 'चारणचक्रवर्ती नर्तकश्रेष्ठः'—इति तट्टीकायां

चैतन्यदासः । यद्वा 'पद्मावती महालक्ष्मीः राधा तस्या-  
श्चरणचारणे परिचर्यायां यच्चक्रं मण्डलं तत्र वर्तते'  
इति व्युत्पत्त्या वैष्णवसम्प्रदायिविशेषः । ४२२

चक्रवाकः पुं.—स्त्री. [ चक्रइत्याख्यया उच्यतेऽस्ती । वच्+  
कर्मणि घञ्, ततो 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम् ]  
पक्षिविशेषः; कोकः; चक्रः; रथाङ्गाह्वयनामकः;  
भूरिप्रेमा; इन्द्रचारी; सहायः; कान्तः; कामी; रात्रि-  
विश्लेषगामी; रामावसोजोपमः; कामुकः । 'चक्रवाका-  
स्तयान्ये च खगाः सन्त्यम्बुचारिणः'—इति चरकः । २४४  
चक्रवालम् क्ली. [ चक्रमिव वाडते वेष्टयतीति । वाङ्+  
अच्, डस्य लत्वम् ] मण्डलाकारेण परिणतं समूहमात्रं;  
मण्डलाकारो दिक्समूहः; मण्डलम्; 'हित्वा गृहं  
संसृतिचक्रवालं नृसिंहपादं भजतां कुतोऽभयम्'—इति  
भागवते (५।१८।१४) । पुं. [ चक्रेण चक्राकारेण वलते  
लोकालोकौ परिवेष्ट्य विराजते इत्यर्थः । वल+  
वाहुलकात् ण । अस्य पर्वतस्य लोकालोकपरिवेष्टन-  
कारितया विराजमानत्वात्तथात्वम् ] लोकालोकपर्वतः;  
मनुष्यादीनां मण्डलाकारेण स्थितिः; 'एवं स कृष्णो  
गोपीनां चक्रवालैरलङ्कृतः । शारद्वीषु सचन्द्रासु निशासु  
मुमुदे सुखी'—इति हरिवंशे (७६।३५) । ६८७

चक्राङ्गः पुं.—स्त्री. [ चक्रेण चक्राकारेण अङ्गतिगच्छतीति ।  
अङ्ग+अच् ] हंसः; 'इदमूचुः स्म चक्राङ्गा वचः काकं  
विहङ्गमाः'—इति महाभारते (८।४।१२१) । रथः  
[ चक्रमङ्गमस्येति ] ; चक्रवाकः; 'कलविङ्कं प्लवं हंसं  
चक्राङ्गं ग्राम्यकुक्कुटम्'—इति मनुः (५।१२) । २५१

चक्री [ न् ] पुं. [ चक्रं फणा अस्त्यस्य इति ] सर्पः; सूचकः;  
अजः; तैलिकभेदः; चक्रवर्ती; चक्रमर्दः; तिनिशः;  
व्यालनखः; काकः; खरः; [ चक्रं घटादिनिर्माण-  
करणयन्त्रविशेषः, सोऽस्त्यस्य इति ] कुलालः; 'स्नेह-  
मयान् पीडयतः किं चक्रेणापि तैलकारस्य । चालयति  
पायिवानपि यः स कुलालः परं चक्री'—इति आर्या-  
सप्तशत्याम् (५९२) । [ चक्रं सुदर्शनास्त्रं मनस्तत्त्वा-  
त्मकमिति यावत्, अस्यास्तीति । चक्र+इनि ] विष्णुः;  
'अरीद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्युजितशासनः'—इति महा-  
भारते (१३।१४९।११०) । [ चक्रं ग्रामसमूहः अधि-  
कारितयास्त्यस्य इति । इनि ] ग्रामजालिकः; [ चक्रं  
चक्राकारचिह्नविशेषोऽस्त्यस्य ] चक्रवाकः; चक्रविशिष्टे



त्रि. । चक्रपुक्तरथादियानारूढः; 'चक्रिणो दशमीस्थस्य रोगिणो भारिणः स्त्रियाः'—इति मनुः (२।१३८) । 'चक्रिणः चक्रपुक्तरथादियानारूढस्य'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । ६४०

चक्रोवात् [त्] पुं.- स्त्री. [ 'आसन्दीवदष्ठीवच्चक्रोवदिति' चक्रशब्दस्य चक्रोभावः, ततो निपातनात् साधुः ] गर्दभः; माघे (५।८) । राजविशेषः । २८०

चक्षणम् क्ली. [ चक्ष्यते कथ्यते मद्यपानाय मद्यपानेन सह वा । चक्ष्+ल्युट् । यद्वा चष्यते भक्ष्यते मद्यमनेनेति, चष्+ल्युट्, निपातनात् कान्तागमश्च ] मद्यपानरोचक-भक्ष्यद्रव्यम्; [ चक्ष्+भावे ल्युट् ] कथनं; दर्शनम्; 'स्तृणीत बहिरानुषगृहतपृष्ठं मनीषिणः । यत्रामृतस्य चक्षणम्'—इति ऋग्वेदे (१।१३।५) । ३२८

चक्षाः [स्] क्ली.—दर्शनम्; 'इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूत्रं रोहयद्विवि । वि गोभिरद्रिमैरयत्'—इति ऋग्वेदे (१।७।३) पुं. बृहस्पतिः; उपाध्यायः । ८१०

चक्षुः [स्] क्ली. [ चष्टे पश्यत्यनेनेति । चक्ष्+चक्षेः 'शिच्व' इति उसि, शित्वेनानार्धधातुकत्वात् स्यान्ना-देशाभावः ] दर्शनेन्द्रियम्; लोचनं; नयनं; नेत्रम्; ईक्षणम्; अक्षि; दृक्; दृष्टिः; अम्बकं; दर्शनं; तपनं; विलोचनं; दृशा; वीक्षणं; प्रेक्षणं; दैवदीपः; देवदीपः; दृशिः; दृशी । 'पाणिभ्यां न स्पृशेच्चक्षुश्चक्षुषी नैकपाणिना । चक्षुः परहिताकाङ्क्षी न स्पृशेदेक-पाणिना'—इति कर्मलोचने । ज्योतिः (८।१०); मेघ-शृङ्गीवृक्षः । ५१९

चक्षुष्यः त्रि. [ चक्षुषे हितः । चक्षुप्+यत् ] प्रियदर्शनः; 'धिया भाग्यानुगामिन्या चेष्टमानो न याचितम् । अभूत् सर्वस्य चक्षुष्यः स तु दुर्लभवर्द्धनः'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (३।४९५) । चक्षुजः; 'चक्षुष्यः खलु महताम्परैरलङ्घ्यः'—इति माघे (८।५७) । 'चक्षुषि भवश्चक्षुष्यः प्रियोऽक्षिजश्च'—इति तट्टीकायां मल्लि-नाथः । चक्षुहितः; 'दक्षिणो मारुतः श्रेष्ठश्चक्षुष्यो बलवर्द्धनः'—इति सुश्रुते । क्ली. [ चक्षुषे लोचनाय हितं, चक्षुस्+शरीरावयवाद् यत् इति यत् ] प्रपौण्ड-रीकम्; 'प्रपौण्डरीकं चक्षुष्यं शीतं श्रुपुष्पपुण्डरी'—इति वैद्यकरत्नमाला । सीवीराञ्जनं; स्वपरीतुत्यम्; पुं. केतकवृक्षः; पुण्डरीकवृक्षः; शोभाञ्जनवृक्षः;

रसाञ्जनम् । ३६७

चञ्चरीकः पुं. [ चरति पुनः पुनरिति । 'पफंरीकादयश्च' इति यङ्लुगन्तेन साधुः ] भ्रमरः; द्विरेफः; अलिः । २५५  
चञ्चलम् त्रि. [ चञ्चं गतिं लातीति । ला+क ] अस्थिरं; चलनं; कम्पनं; कम्पनं; चलं; लोलं; चलाचलं; तरलं; पारिप्लवं; परिप्लवं; चपलं; चटुलम् । 'एवं वत्सान् पालयन्तौ शोभमानौ महावनम् । चूर्णयन्तौ रमन्तौ स्म किशोराविव चञ्चलौ'—इति हरिवंशे (६।४।७) । पुं. वायुः । ६९५

चञ्चुः स्त्री. [ चञ्चति प्राप्नोति गृह्णाति भक्ष्यमनया । वाहुलकादु ] पक्षिणामोष्ठः; त्रोटिः; चञ्चूः; त्रोटिः; चञ्चुका; सृपाटिका; 'चौच', इति भाषा । 'भ्रात-श्चातक ! पातकं किमपि ते सम्यङ् न जानीमहे । यत्तेऽस्मिन्न पतन्ति 'चञ्चुपुटेके द्वित्राः पयोविन्दवः'—इति चातकाष्टके । पत्रशाकविशेषः; विजला; चञ्चूः; कलभीः; चीरपत्रिका; चञ्चुरः; चञ्चुपत्रः; सुशाकः; क्षेत्रसम्भवः; 'चिञ्चश्चञ्चुश्चिञ्चुकी च दीर्घपत्रा स तित्तिका । चञ्चुः शीता सरा रुच्या स्वाद्वी दीप-त्रयापहा'—इति भावप्रकाशः । २४०

चञ्चुः स्त्री. [ चञ्चुः 'ऊङुतः' इत्यस्य 'अप्राणि जाते-श्चारज्ज्वादीनामुपसंख्यानम्' इति वार्तिकोक्त्या ऊङ् ] चञ्चुः; चञ्चुका; त्रोटिः; पक्षिणामोष्ठः । २४०

चटकः पुं. [ चटति भिनत्ति धान्यादिकं चञ्चुपुटेनेति । चट्भेदे+नन्दि ग्रहीति' पचादित्वादच्, ततः स्वाथे कन् ] पक्षिविशेषः; कलविङ्कः; चित्रपृष्ठः; गृहनीडः; वृषायणः; कामुकः; नीलकण्ठकः; कालकण्ठकः; काम-चारी; कलाविकलः । 'चटकाः श्लेष्मलाः स्निग्धा वातघ्नाः शुक्रलाः परम् । गुरुष्णस्निग्धमधुरा वर्गश्चातो यथोत्तरम्'—इति वाग्भटे । 'चटका मधुराः स्निग्धा बलशुक्रविवर्धनाः । सन्निपातप्रशमनाः क्षमना मारुतस्य च'—इति चरकः । 'गौरैया' इति भाषा २४३

चटका स्त्री. [ चटक+टाप् ] चटकपत्नी; [ चटकस्य 'चटकाया वा स्थ्यपत्यम् । स्त्रियामपत्ये लुगन्तव्यः । तत्र टावन्तात् तद्धिते लुप्ते 'लुक् तद्धितलुकि' इति टापौ लुकि पुनष्टाप् स च जाति लक्षणज्ञेयो वाधकः ] चटकस्थपत्यं; पिप्पलीमूलं; श्यामापत्नी । २५३  
चटिका स्त्री. [ चटति भिनत्ति धान्यादिकं स्वचञ्चु-

पुटनेति ] चटका; [ चटति भिनत्ति रोगादिकं नाशयति, चट्+वाहुलकाद् इकन् ] पिप्पलीमूलम् । २५३

चटुः पुं. [ चटति शोकसन्तापादिकं भिनत्तीति । चट् भेदे+मृगय्वाद्यश्च' इति कु ] प्रियवाक्यं, प्रियभाषणे क्लीवलङ्गोऽपि; 'छायां निजस्त्रीचटुलालसानां मदेन किञ्चित् चटुलालसानाम्'—इति माघे (४।६) । उदरं; व्रतिनामासनभेदः । १४६

चटुलः त्रि. [ चटतीति, चट्+वाहुलकादुलच् । यद्वा चटु+ 'सिध्मादिभ्यश्च' इति मत्वर्थे लच् ] चञ्चलः; 'त्रासातिमात्रचटुलैः स्मरतः सुनेत्रैः प्रौढप्रियानयन-विभ्रमचेष्टितानि'—इति रघुवंशे (९।५८) । सुन्दरः । ६९५

चण्डः त्रि. [ चण्डते रुण्डो भवतीति । चण्डि+पचाद्यच् ] तीक्ष्णताविशिष्टः; 'दहन्तमिव तीक्ष्णांशुं चण्डवायु-समीरितम्'—इति महाभारते । (१।३२।२३) । अत्यन्त-कोपनः । पुं. [ चणति चणयति वा, अम्लरसं ददातीत्यर्थः । चण्+ 'अमन्ताड्डः' इति ड ] तिन्तिडोवृक्षः; [ चण्डते कुप्यतीति । चण्डि+अच् ] यमकिङ्करः; दैत्यविशेषः; कार्तिकेयः; 'शिशुः शीघ्रः शुचिश्चण्डो दीप्तवर्णः शुभाननः'—इति महाभारते (३।२३।१४) । ४०

चण्डा स्त्री. [ चम् चण् वा+ड, चण्डि+अच् वा, तत-ष्टाप् ] दुर्गा; चण्डवती; अष्टनायिकान्तर्गतनायिका-विशेषः; चण्डनायिका; 'चण्डा चण्डवती चण्डनायिका-प्यतिचण्डिका'—इति देवीपुराणे । 'उग्रचण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका । चण्डा चण्डवती चैव चामुण्डा चण्डिका तथा । आभिः शक्तिभिरष्टाभिः सततं परिवेष्टिताम् । चिन्तयेत् सततं दुर्गा धर्मकार्थ-मोक्षदाम्'—इति दुर्गाध्यानम् । १६

चण्डातकम् क्ली.-पुं. [ चण्डां स्त्रियम् अतति सततं गच्छति प्राप्नोति । चण्डा+अत्+पञ्चल् ] अद्धोरकं; वर-स्त्रीणामद्धोरपर्यन्तं वासः । ५४७

चण्डालः पुं. [ चण्डते कुप्यतीति । चण्डि कोपे+पति-चण्डिभ्यामालञ्' इत्यालञ् । यद्वा चण्डं विकटं अलम् अलङ्कारो यस्य ] वर्णसङ्करजातिविशेषः; प्लवः; मातङ्गः; दिवाकीर्तिः; जनङ्गमः; निषादः; श्वपचः; अन्तेवासी; चाण्डालः; पुक्कसः; जलङ्गमः; निशादः; श्वपक्; पुक्कशः; पुक्कयः; क्रूरकर्मा । [ स्त्रियां

डीप् ] तन्त्रोक्तशक्तिविशेषः । ५९८, ८१४

चण्डिलः पुं. [ चण्डते कोपयुक्तो भवतीति । चण्डि कोपे +इलच् । चण्ड+अस्त्यर्थे इलच् वा ] नापितः; रुद्रः; वास्तूकम् । ५८९

चण्डी स्त्री. [ चण्डि+ 'बह्नादिभ्यश्च' इति वा डीप्-दुर्गा; चण्डिः; चण्डा; चण्डिका; 'चण्डीमामन्त्रये द्विद्वान् नात्र पष्ठी पुरस्क्रिया'—इति तिथितत्त्वे । हिंसा; कोपना; 'सा किलाश्वासिता चण्डी भर्त्रा तत् संश्रुती वरी'—इति रघुवंशे (१२।५) । छन्दोविशेषः; 'नयुगलसयुगलगौरिति चण्डी'—इति छन्दोमञ्जयाम् । १६

चतुःशालम् क्ली.-स्त्री. [ चतसृणां शालानां समाहारः ] परस्पराभिमुखगृहज्जतुष्टयं; चतुःशालकम्; 'तत्र गत्वा चतुःशालं गृहं परमसंवृतम्'—इति महाभारते (१-१४।५।८) । २९२

चतुरः त्रि. [ चत्यते याच्यते इति । चत्+ 'मन्दिवाशि-मथिचतिचङ्कत्यङ्किम्य उरच्' इत्युरच् ] कार्यक्षमः; निरालस्यः; दक्षः; पेशलः; पटुः; सूत्यानम्; उष्णः; पेशलः; पेपलः; निपुणः; 'चतुरो नैव मुह्येत मूर्खः सर्वत्र मुह्यति'—इति देवीभागवते (१।१७।४४) । उपभोगक्षमः; 'त्यजत मानमलं वत विग्रहैर्न पुनरेति गतं चतुरं वयः'—इति रघुवंशे (९।४७) 'चतुरस्म उपभोगक्षमम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । नेत्रगोचरः; पुं. चक्राण्डुः; हस्तिशाला । ३३५

चतुर्भुजः पुं. [ चत्वारो भुजा यस्य ] विष्णुः; 'विष्णुं प्रबोधयाम्यद्य शोषे सुप्तं जनार्दनम् । चतुर्भुजं महावीर्यं दुःखहा स भविष्यति'—इति देवीभागवते (१।७।५) । वटिकौषधविशेषः; 'चतुर्भुजो रसो नाम महेशेन प्रकाशितः । क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यया'—इति वैद्यकम् । स्त्रियां गायत्रीरूपा महाशक्तिः; 'चतुर्भुजा चारुदन्ता चातुरी चरितप्रदा । त्रिः चतुर्भुजविशिष्टः; 'तदा शान्ता भगवती प्रादुरास चतुर्भुजा । शङ्खचक्र-गदापद्मवरायुधवरा शिवा'—इति देवीभागवते (१।१५।५६) । २२

चतुर्विधम् पुं. [ चत्वारि वक्त्राणि अस्य, वस्तुतस्तु चत्वारो वेदा एव वक्त्राणि मुखानिवास्य ] चतुर्मुखः; ब्रह्मा । ७  
चतुर्विधम् त्रि. [ चतस्रः विधाः प्रकारा यस्य ] भेद-

चतुष्टयवत्; चतुष्प्रकारकम्, यथा—चतुर्विधम् आयु-  
धम्, चतुर्विधं वस्त्रम्, चतुर्विधं वाद्यम् । ४६२, ५४८  
चतुष्पथम् क्ली. [ चतुर्णां पयां समाहारः । 'तद्धितार्थेति'  
समासे 'ऋक्पूरव्वू' रित्य, 'इदुदुपवस्येति' पत्वम् ।  
यद्वा चत्वारः पन्थानो यत्र-इति ] एकत्र मिलितपथ-  
चतुष्टयं; शृङ्गाटकं; 'चौराहा' इति भाषा । 'मृदङ्गान्  
दैवतं विप्रं घृतं मधु चतुष्पथम् । प्रदक्षिणानि कुर्वति  
प्रज्ञातांश्च वनस्पतीन्'—इति मनुः (४।३९) । २८९  
चत्वरम् क्ली. [ चत्यते स्वीक्रियते इति । चत्+ 'कृ  
गृध्रवृचतिभ्यः प्वरच्' इति प्वरच् ] अङ्गनं; प्राङ्गणं;  
कुट्टिमं; स्थण्डिलं; होमार्यपरिष्कृता भूमिः । 'चदूतरा'  
—इति भाषा । चतसृणां रथ्यानां सङ्गमः; 'अनुरथ्यासु  
सर्वासु चत्वरेषु' च कौरव । वलं वभूव राजेन्द्र ।  
प्रभूतगजवाजिमत्—इति महाभारते (३।१५।२०) ।  
नानाजनपदभ्यः समागतानामकिञ्चनानां वासस्थानम्;  
'कृत्वा तांश्चणकान् पिष्टान् गृह्णित्वा जलकुम्भिकाम् ।  
अतिष्ठं चत्वरे गत्वा छायायां नगराद्वहिः'—इति  
कथासरित्सागरे (६।४१) । ८१७

चन्दनः पुं.—क्ली. [ चन्दयति आह्लादयति । चदि आह्लादे+  
णिच्+ल्यु ] वृक्षविशेषः; गन्धसारः; मलयजः;  
भद्रश्रीः; श्रीखण्डं; महार्हः; श्वेतचन्दनं; गोशीर्ष;  
तिलपत्रं; मङ्गल्यं; मलयोद्भवं; गन्धराजं; सुगन्धं;  
सर्पावासं; शीतलं; गन्धाद्यं; भोगिवल्लभं; पावनं;  
शीतगन्धः; तैलपणिकः; चन्द्रद्युतिः; भद्रश्रियं;  
हितं; हिमं; पटीरुः; वर्णकः; भद्राश्रयः; सेव्यः;  
रीहिणः; ग्राम्यः; पीतसारः । 'स्वादे तिक्तं कपे पीतं  
छेदे रक्तं तनी सितम् । ग्रन्थिकोटरसंयुक्तं चन्दनं श्रेष्ठ-  
मुच्यते'—इति भावप्रकाशः । वानरविशेषः; स्त्री.  
[ चन्दते आह्लाद्यते अस्या जन्या वा टाप् ] भद्रकाली ।

५४४

चन्द्रः पुं. [ 'चन्दयति आह्लादयति, चन्दति दीप्यति इति वा  
चन्+ 'स्फायितञ्चोति' रक् ] देवताविशेषः; हिमांशुः;  
चन्द्रमाः; इन्दुः; कुमुदवान्धवः; विवुः; सुवांगुः;  
शुभ्रांगुः; ओषधीशः; निशापतिः; अजः; जैवातुकः;  
सोमः; ग्लौः; मृगाङ्कः; कलानिधिः; द्विजराजः;  
शश्वरः; नक्षत्रेशः; क्षपाकरः; दोषाकरः; निशीथिनी-  
नाथः; शर्वरीशः; एणाङ्कः; शीतरदिमः; समुद्र-

नवनीतः; सारसः; श्वेतवाहनः; नक्षत्रनेमिः; उडुपः;  
सुवासूतिः; तित्थिप्रणीः; अमितिः; चन्द्रिः; चित्राटीरः;  
पक्षवरः; अजः; नभश्चमसः; राजा; रोहिणीशः;  
अत्रिनेत्रजः; पक्षजः; सिन्धुजन्मा; दशाश्वः;  
हरचूडामणिः; माः; तारसपीडः; निशामणिः; मृग-  
लाञ्छनः; दर्शपिवत्; छायामृगधरः; ग्रहनेमिः;  
दाक्षायणीपतिः; लक्ष्मीसहजः; सुधाकरः; सुधावारः;  
शीतभानुः । तमोहरः; तुपारकिरणः; हरिः; हिमद्युतिः;  
द्विजपतिः; विश्वप्ता; अमृतदीधितिः; हरिणाङ्कः;  
रोहिणीपतिः; सिन्धुनन्दनः; तमोमुत्; एणतिलकः;  
कुमुदेशः; क्षीरोदनन्दनः; कान्तः; कलावान्; सिप्रः;  
यामिनीपतिः; मृगपिच्छुः; सुधानिधिः; तुङ्गी; पक्ष-  
जन्मा; चन्द्रः; अश्विनवनीतकः; पीयूषमहाः; शीत-  
मरीचिः; शीतलः; त्रिनेत्रचूडामणिः; अत्रिनेत्रभूः;  
सुधाङ्गः; परिजाः; वलक्षगुः; तुङ्गीपतिः; यज्वना-  
म्पतिः; पर्वधिः; क्लेदुः; जयन्तः; तपसः; खचमसः;  
विकसः; दशवाजी; श्वेतवाजी; अमृतसूः; कौमुदी-  
पतिः; कुमुदिनीपतिः; भूपतिः; दक्षजापतिः;  
ओषधीपतिः; कलाभृत्; शशभृत्; एणभृत्; अत्रि-  
दृजः; निशारत्नम्; निशाकरः; अमृतः; श्वेतद्युतिः ।  
क्ली. स्वर्णम् (१७३); 'उतनः सुद्योत्मा जीराश्वो होता  
मन्द्रः शृणवचन्द्ररथः'—इति ऋग्वेदे (१।१४।१।२) ।  
कर्पूरं; जलं; काम्पिल्लः; द्वीपविशेषः; विसर्गः;  
कमनीयः; भेचकः; वहचन्द्रकः; रक्तरजतं; शोण-  
मुक्ताफलं; योगोक्तेडा नाडी; 'वद्वपद्यासो योगी प्राणं  
चन्द्रेण पूरयेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् । 'चन्द्रेण  
चन्द्रनाड्यडवा'—इति तट्टीका । भ्रूमध्यभागस्यसोम-  
मण्डलम्; 'चन्द्रात् ऋवति यः सारः स स्यादमरवारुणी'  
इति हठयोगप्रदीपिकायाम् । 'चन्द्रात् भ्रुवोरन्तर्वामि-  
भागस्थात् सोमात्'—इति तट्टीका । आह्लादजनकद्रव्ये  
त्रि. । ४२

चन्द्रम् क्ली. [ चन्दति दीप्यते इति, चदि+ रक् ] स्वर्णं;  
चुक्रं; वृत्तविशेषः; 'द्विजवरगणयुगमुपवाय परिकलय  
कर, मयनगणयुगलमिह गन्धयुगमपि वितर । फणि-  
नृपतिमणितमिति चन्द्रमिदमिति शृणुत, सकलकविकुल-  
हृदयमोदकरमवतनुत'—इति वृत्तग्रन्थे । १७३

चन्द्रकः पुं. [ चन्द्र इव कायति प्रकाशते इति । चन्द्र+

कै+क] वर्हनेत्रं; मेघकः; 'भोरपंख का चांद' इति भाषा । 'चन्द्रकचारुमयूरशिखण्डकमण्डलवल्लयितकेशम्'—इति गीतगोविन्दे (२।३) । नखः; मत्स्यविशेषः; चलत्पूर्णिमा; चन्द्रचञ्चला; चन्द्रिका; मण्डलम्; 'यां चन्द्रकैर्मदजलस्य महानदीनां नेत्रश्रियं विकसतो विदयुराजेन्द्राः'—इति माघे (५।४०) । 'चन्द्रकैश्चन्द्राकारैर्मण्डलैर्महानदीनाम्'—इति मल्लिनाथः । [ चन्द्रशब्दात् स्वार्थे के ] चन्द्रश्च । २४२

चन्द्रवाराः पुं. [ चन्द्रस्य दाराः पत्न्यः ] अश्विन्यादि-  
नक्षत्राणि [ बहुवचनः ] । ५१

चन्द्रमाः [ स् ] पुं. [ चन्द्रमानन्दं मिमीते, यद्वा चन्द्रं कर्पूरं सादृश्येन माति परिमातीति । चन्द्र+मा+'चन्द्रे मो डित्' इति असि स च डित् । चन्द्रं रजतम् अमृतं च, तदिव मीयते, चन्द्र इति वा मीयते ] चन्द्रः; 'एकोऽपि कोऽपि सेव्यो यः क्षीणं क्षीणं पुनर्नवम् । अनुद्विग्नः करोत्येव सूर्यश्चन्द्रमसं यथा'—इति पञ्चतन्त्रे (३।६८) । ४२

चन्द्रशाला स्त्री. [ चन्द्रेण शालते शोभते इति । चन्द्र+शाल्+अच् ततष्ठाप् । चन्द्र इव शालते शलाघते इति, उच्चस्थानस्थितत्वादेव तथात्वम् ] प्रासादोपरिगृहं; शिरोगृहं; चन्द्रशालिका; बलभी; कूटागारम्; 'तस्यायमन्तहितसौधभाजः प्रसक्तसङ्गीतमृदङ्गधोषः । चियद्गतः पुष्पकचन्द्रशालाः क्षणं प्रतिश्रुमुखराः करोति'—इति रघुवंशे (१३।४०) । ३०४

चन्द्रहासः पुं. [ चन्द्रस्येव शुक्लो हासो दीप्तिर्यस्य ] खड्गः; रावणखड्गः । ४७२

चन्द्रातपः पुं. [ चन्द्र इव आतपति शीतलं करोति छायादानेन । चन्द्र+आ+तप्+अच् । चन्द्रस्य आतपः रश्मिः ] ज्योत्स्ना; चन्द्रिका; चन्द्रिमा; कौमुदी; 'चन्द्रातपमिव रसतानुपेतम्'—इति कादम्बर्याम् । आच्छादनविशेषः; उल्लोचः; वितानं; चन्द्रा; 'चंदोत्रा' इति भाषा । ४४

चन्द्रिका स्त्री. [ चन्द्र आश्रयत्वेनास्त्यस्याः । 'अत इनिठिनी' इति ठन् ] ज्योत्स्ना, चन्द्रिमा, कौमुदी, चन्द्रातपः; 'अन्वभुङ्क्वत सुरतश्रमापहां मेघमुक्तविशदां ऽ चन्द्रिकाम्'—इति रघुवंशे (१९।३९) । स्यूलैला; चन्द्रकमत्स्यः; चन्द्रभागानदी; कर्णस्फोटाः मल्लिका; श्वेतकण्टकारी; मेघिका; सूक्ष्मैला; चन्द्रशूरः; पीठस्य-

देवीविशेषः; 'सह्याद्रावेकवीरा तु हरिश्चन्द्रे तु चन्द्रिका'—इति देवीभागवते (७।३०।६७) । छन्दोविशेषः; 'ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाऽऽवर्तुभिः'—इति छन्दोमञ्जरी । वासपुष्पा; 'चन्द्रिका चर्महन्त्री च पशुमेहनकारिका । नन्दिनी कारवी भद्रा वासपुष्पा सुवासरा'—इति भाव-  
प्रकाशः । ४४

चन्द्रोदयः पुं. [ चन्द्रस्य उदयः । चन्द्रस्य वस्त्रखण्डादिर-  
चितचन्द्राकृतेरातपो यत्र ] चन्द्रातपः; वितानम्; 'चंदोत्रा' इति भाषा । आकाशे चन्द्रस्य प्रकाशः; औपधविशेषः; मकरध्वजास्वरससिन्दूरम्; 'वली-  
पलितनाशनस्तनुभृतां वयःस्तम्भनः समस्तगदखण्डनः प्रचुररोगपञ्चाननः । गृहेषु रसराडयं भवति यस्य चन्द्रोदयः स पञ्चशरदर्पितो मृगदृशां भवेद् दुर्लभः'—  
इति सारकौमुदी । ३१०

चपलः त्रि. [ चोपति भन्दं मन्दं गच्छति । चुप्+कल  
घातोकारस्याकारादेशश्च ] तरलः; चञ्चलः; 'विच-  
रति परितः कृष्णे राधायां रागचपलनयनायाम् । दशदिग्बेधविशुद्धं विशिखिं विदधाति विषमेपुः'—इति  
आर्यासप्तशत्याम् (५३०) । दोषमनिश्चित्य वध-  
वन्धनादेः कर्ता; चिकुरः; विकलः । ६९५

चपलन् इली. [ चपं सान्त्वनां लाति प्राप्नोतीति । ला+  
'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क ] शीघ्रं; क्षणिकं; पुं.  
पारदः; 'पारदो रसघातुश्च रसेन्द्रश्च महारसः । चपलः  
शिववीर्यं च रसः सूतः शिवा ह्वयः'—इति भावप्रकाशः ।  
मीनः; चोरकः; प्रस्तरविशेषः; क्षवः; मूषिकविशेषः;  
'पूर्वमुक्ताःशुक्रविषा मूषिका ये समासतः । नामलक्ष-  
णभैषज्यैरष्टादश निबोध तान् । कुलिङ्गश्चाजितश्चैव  
चपलः कपिलस्तथा'—इति सुश्रुते । 'चपलेन भवेच्छदि-  
मूर्च्छा च सह तृष्णया । स भद्रकाष्ठं सजटां क्षौद्रेण  
त्रिफलां लिहेत्'—इति च सुश्रुते । ६९७

चपला स्त्री. [ चपल+टाप् ] विद्युत्; तडित्; सौदामिनी;  
चञ्चला; 'किं पुत्रि ! गण्डशैलभ्रमेण नवनीरदेपु  
निद्रासि । अनुभव चपलाविलासितगजितदेशान्तर-  
भ्रात्तीः । लक्ष्मीः; 'निलयः श्रियः सततमेतदिति  
प्रथितं यदेव जलजन्म तथा । दिवसात्ययात्तदपि मुक्तमहो  
चपलाजनं प्रति न चोद्यमदः'—इति माघे (९।१६) ।  
'चपला चापलवती स्त्री कमला च'—इति तट्टीकायां

मल्लिनाथः। पुश्चली; पिप्पली; 'पिप्पली मागधी कृष्णा वैदेही चपला कणा । उपकुट्योपणा शौण्डी कोला स्यात्तीक्ष्णतण्डुला'—इति भावप्रकाशः। जिह्वा; विजया; मदिरा; आर्याच्छन्दोविशेषः; 'उभयाद्धयोर्जकारौ द्वितीयतुथी' गमद्यगौ यस्याः। चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन—इति वृत्तरत्नाकरे। ६०

चमूः स्त्रीः [ चमति भक्षयति शत्रून् नाशयतीत्यर्थः । चम्+कृपिचमितनीति ऊ ] सेनामात्रम्; 'पश्यैतां पाण्डुपुत्राणाम् आचार्यः महतीं चमूम्'—इति भगवद्गीतायाम्। सेनाविशेषः; तत्र ७२९ हस्तिनः, ७२९ रथाः, २१८७ अश्वाः, ३६४५ पदातयः=समुदायेन ७२९० द्विशतनवत्यधिकसप्तसहस्रम्। ४५७

चयः पुं. [ चीयते इति, चि+ 'एरच्' इति कर्मणि अच् ] समूहः; 'चयस्त्वपामित्यवधारितं पुरा'—इति माघे (११३)। वध्रं; प्राकारादिमूलवद्धं; यदुपरि प्राकारो निरूप्यते सः; समाहृतिः; प्राकारः; 'शैलादम्युच्छ्रयवता चयाट्टालकशोभिना'—इति महाभारते (३।१६०।३७)। पीठं; दोषाणां सञ्चयप्रकोपप्रशमादिषु प्रकारविशेषः; 'चयकोपशमान् दोषा विहाराहारसेवनैः। समानैरान्त्यकालेऽपि विपरीतैर्विपर्ययम्'—इति शाङ्गधरः। शोयः; 'कटुतैलान्वितैर्लोपात् सर्पनिर्मोकमस्मभिः। चयः शाम्यति गण्डस्य प्रकोपः स्फुटति द्रुतम्'—इति वैद्यके। ६८६

चरः पुं. [ चरति स्वपरराष्ट्रस्य शुभाशुभज्ञानाय भ्राम्यतीति। चर्+अच् ] राष्ट्रादेः शुभाशुभादिज्ञानार्थं सगोपनं नियुक्तः राजपुरुषः। परतत्त्वज्ञानार्थं भ्रमणकर्ता; यथाह्वर्णः; प्रणिधिः; अपसर्पः; चारः; स्पशः; गूढपुरुषः; अपसर्पकः; प्रतिष्कः; प्रतिष्कसः; गुप्तगतिः; मन्त्रगूढः; हितप्रणीः; उदस्थितः; भिक्षुवणिगादिवेशेन नित्यस्थायी; पञ्चस्वदेशपरदेशभ्रमणशीलः; 'विवस्त्रानिव तेजोभिर्नभस्वानिव वेगतः। राजा चरैर्जगत् सर्वं प्राप्नुयात्लोकसम्मतैः'—इति भोजराजकृतपुस्तिकल्पतरुः। अक्षदूतभेदः; भीमः; चलः; खञ्जनेपक्षी; कपर्दकः; मेपककटतुलामकरलग्नानि; 'अस्थिरविभूतिमित्रं चलमटनं स्वलित्तिनियममपि चरभे' इति दीपिका। 'चरलग्ने चराशे वा स्थापनं च विसर्जनम्, —इति तिथितत्त्वे। जङ्गमे त्रि.। 'तस्य सर्वाणि भूतानि

स्थावराणि चराणि च'—इति मनुः (७।१५)। 'चरः शरीरावयवाः स्वभावो घातवः क्रिया। लिङ्गं प्रमाणं संस्कारो मात्रा चास्मिन् परीक्ष्यते। चरोऽनूपजलाकाशधन्वाद्यो भक्षसंविधिः। जलजानूपजाश्चैव जलानूपचराश्च ये। गुरुभक्ष्याश्च ये सत्त्वाः सर्वे ते गुरवः स्मृताः'—इति चरके। ४२५

चरणम् पुं.-क्ली. [ चरतीति, चर्+ल्यु, चरत्यनेनेति करणे ल्युट् वा ] अधमाङ्गं; पादः; पत्; अङ्घ्रिः; अङ्घ्रिः; विक्रमः; पदः; आक्रमः; क्रमणः; चलनः; क्रमः; पदं; पात्। 'अङ्गुलीग्रन्थिभेदस्य च्छेदयेत् प्रथमे ग्रहे। द्वितीये हस्तचरणौ तृतीये वधमर्हति'—इति मनुः (१।२७७)। श्लोकचतुर्थभागः; 'शेषं गायस्त्रिभिः पङ्क्तिश्चरणैश्चोपलक्षिताः'—इति वृत्तरत्नाकरे। बहुवृत्तादिशाखा; 'नपृच्छेच्चरणं गोत्रं न च विद्यां कुलं न च। अतिथि वैश्वदेवान्ते श्राद्धे च मनुरब्रवीत्'—इति पञ्चतन्त्रे (४।३)। 'सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या गोत्रं च चरणैः सह'—इति महाभाष्यवचनम्। मूलं; गोत्रम्। ५११

चरणाभरणम् क्ली. [ चरणस्य पादस्य आभरणं भूषणम् ] नूपुरः। ५६१

चरणायुधः पुं. [ चरण एवायुधम् अस्त्रविशेषो यस्य ] कुक्कुटः; 'कुक्कुटः कृकवाकुः स्यात् कलयश्चरणायुधः। ताम्रचूडस्तथा दक्षो यामनादी शिखण्डिकः'—इति इति भावप्रकाशः। चरणास्त्रे त्रि.। 'तुण्डपक्षप्रहारेण जटायुश्चरणायुधः'—इति रामायणे। २४७

चरमः त्रि. [ चरतीति, 'चरेश्च' इति अमच् ] अन्तः; अन्तिमः; पश्चिमः; 'उत्तिष्ठेत् प्रथमं चास्य चरमं चैव संविशेत्'—इति मनुः (२।१९४)। ७०७

चरितम् क्ली. [ चर्+भावे+क्त ] चरित्रम्; 'कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः। राज्ञाञ्चोभयवंशयानां चरितं परमाद्भुतम्'—इति भागवते (१०।१।१)। त्रि. आचरितम्; 'श्रुत्वा पूर्वं काव्यबीजं देवर्षेर्नारदादृषिः। लोकादन्विष्य भूयश्च चरितं चरितव्रतः'—इति रामायणे (१।३।१)। ३९६

चरित्रम् क्ली. [ चर्+ 'अतिलूधूसूखनसहचर इत्रः' इति इत्र ] स्वभावः; चरितं; चारित्र्यं; चरीत्रम्; 'अचिन्त्यं शीलगुप्तानां चरित्रं कुलयोपिताम्'—इति कथा-

सरित्सागरे । ३९६

चरुः पुं. [ चरन्ति भक्षयन्ति देवा इमं, चर्यते भक्ष्यते अग्न्यादिभिर्देवैरिति वा, चरति होमादिकमस्मादित्येके । चर्+‘भृमृशीति’ उ ] हव्यान्नपाकभाण्डं; हव्यान्नम् (४१६); ‘ततश्च संस्कृते वल्ली गोक्रीरेण चरं पचेत्’—इति शारदातिलके । ३१४

चर्चा स्त्री. [ चर्चयते विचार्यते वेदवेदान्तादिशास्त्रैरसी इति । चर्च्+णिच्+अङ् ] दुर्गा; [ भावे अङ् ] लेपनम् (५४०); ‘भृगमदकृतचर्चा पीतकौशेयवासाः’—इति छन्दोमञ्जरी । चिन्ता (७९४); चार्चिक्यं; विचारणा; गायत्रीरूपा महाशक्तिः; ‘ज्ञानधातुमयी चर्चा चर्चिता चारुहासिनी’—इति देवीभागवते (१२।६।४६) । १७

चर्मम् क्ली. [ चर्म साधनतयास्त्यस्य । अच् ] अजिनं; त्वक्; असृग्धरा; फलकः; ‘स्यन्दनाश्वैः समे युध्येदनुपे नोद्विपैस्तथा । वृक्षगुल्मावृते चापैरसिचर्मायुधैः स्थले’—इति मनुः (७।१९२) । ‘ढाल’ इति भाषा । ६३०

चर्म [ न् ] क्ली. [ चर्+‘सर्वधातुमथो मनिन्’ इति मनिन् ] त्वक्; असृग्धरा; कृत्तिः; अजिनं; देहचर्म; रक्ताधारः; रोमभूमिः; शरीरावरणम्; असृग्धरा; ‘निभिन्नास्य चर्माणि लोकपालोऽनिलोऽविशत्’—इति भागवते (३।६।१६) । इन्द्रियविशेषः; शरीरावरकं शस्त्रं; फलकः; फलं; फरं; चर्म; ‘ढाल’ इति भाषा । ‘शरीरावरकं शस्त्रे चर्म इत्यभिधीयते । तत्पुनर्द्विविधं काष्ठचर्मसम्भवभेदतः’—इति युक्तकल्पतरौ । ‘चक्षूषि चर्मन् शतचन्द्र छादय’—इति नारायणवर्म । ब्रह्मचारि-धार्म्यं कृष्णसारचर्म; ‘काष्णं रौरववास्तानि चर्माणि ब्रह्म-चारिणः’—इति मनुः (२।४१) । ६३०

चर्मकृत् पुं. [ चर्म करोति, चर्मचटितं पादुकादिकमुत्पादयतीत्यर्थः । चर्म+कृ+क्विप् ] चर्मकारः; पादुकृत्; पादुकृत्; चर्मार; चर्महः; पादुकाकारः; कुरटः; ‘चमार, मोची’ इत्यादि भाषा । ‘चर्मकृत् कोऽपि न प्रादात् कुटौ क्षेत्रोपयोगिनीम्’—इति राजतरङ्गिण्याम् । ५९६

चर्मदण्डः पुं. [ चर्मभिश्चर्मणा वा निर्मितो दण्डः ] कशा; ‘चावुक’ इति भाषा । ‘चर्मदण्डाहतो विप्रः शशापाति-

रुषा च तम्’—इति शान्तिपर्वणि । ४४२

चर्मप्रसेवकः पुं. [ चर्मणा प्रसीव्यते इति । पिवु तन्तु-सन्ताने+‘संज्ञायाम्’ इति कर्मणि ण्वुल्, बाहुलकाद् वुन् वा ] भस्त्रा; चर्मप्रसेविका; दृतिः । ७६४

चर्मप्रसेविका स्त्री. [ चर्मप्रसेवक+टाप् अत इत्वञ्च ] अग्निसन्दीपनार्थं चर्मनिर्मितयन्त्रं; भस्त्रा; ‘भाधी’ ‘धौकनी’ इति भाषा । ७६४

चलन्नवाभ्रमाला स्त्री. [ चलन्ती या नवानाम् अभ्राणां माला ] मेघमाला; कादम्बिनी; नवजलदचञ्चल पङ्क्तिः । ५९

चलाचलः त्रि. [ चलतीति, चल+अच्, ‘चरिचलिपति-वदीनां वा द्वित्वमिति द्वित्वे अभ्यासस्य आगागमश्च ] चञ्चलः; ‘जन्मिनोऽस्य स्थितिं विद्वान् लक्ष्मीमिव चलाचलाम्’—इति किरातार्जुनीये (१।३०) । पुं. काकः । ६९५

चषकः पुं.—क्ली. [ चपति भक्षयति पिवत्यनेनेत्यर्थः । चप्+‘क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोरपूर्वस्यापि’ इति क्वुन् ] गत्वकः; सरकः; अनुतर्पणं; मद्यपानपात्रम्; ‘यत्पान-पात्रं भूपानां तज्जेयं चपकं बुधैः’—इति युक्तकल्पतरौ । सुरापात्रं; मद्यु; मद्यप्रभेदः । ३२७

चाटुः पु.—क्ली. [ चटति मनस्तोषामोदं वाक्येनेति । चट्+‘दृसनीति’ लुण् ] प्रियवाक्यं; चटुः; प्रियप्रायं; मिथ्याप्रियवाक्यम्; ‘प्रथमसमागमलज्जितया पटुचाटु-शतैरनुकूलम्’—इति गीतगोविन्दे (२।१२) । चाटू-क्त्यादौ त्रि. । ‘उपनिन्दे च संगृह्य पुटकैश्चाटुसीकृतैः’—इति राजतरङ्गिण्याम् । १४६

चाण्डालः पु. [ चण्डति कुप्यति सततमिति । ‘पतिचण्डि-भ्यामालञ्’ इति आलञ् । यद्वा चण्डाल एवेति, ‘प्रज्ञा-दिभ्योऽण्’ ] चण्डालः; ‘न संवसेच्च पतितैर्न चाण्डालैर्न पुक्कशैः’—इति मनुः (४।७९) । कर्मदोषतो ब्राह्मणा-नामपि पारिभाषिकचाण्डालत्वम्—‘आह्वायका देव-लका नक्षत्रप्रामयाजकाः । एते ब्राह्मणचाण्डाला महा-पथिकपञ्चमाः’—इति महाभारते (१२।७५) । ५९८

चातकः पुं. [ चतते याचते जलमम्बुदमिति । चत् याचने+ ण्वुल् ] पक्षिविशेषः; स्तोककः; सारङ्गः; मेघजीवनः; तोककः; शारङ्गः; ‘वामश्चायं नुदति मधुरं चातकस्ते सगर्वः’—इति मेघदूते (९) । २४८

चान्द्रमसायनः पुं. [ चन्द्रमसोऽपत्यं पुमान् । चन्द्रमस्+फक् ] बुधग्रहः; चान्द्रिः । ४६

चान्द्रमसायनिः पुं. [ 'तिकादिभ्यः फिब्' इति फिब् ] बुधग्रहः; चान्द्रमसायनः; सौम्यः । ४६

चापः पुं.—कली. [ चपस्य वंशविशेषस्य विकारः । 'अवयवे च प्राण्योवधिवृक्षेभ्यः' इत्यण् ] घनुः; 'क्रमशस्ते पुनस्तस्य चापात् सममिवोद्युः'—इति रघुवंशे (१२।४७) । वृत्तक्षेत्रार्द्धम्; 'दलीकृतं चक्रमुशन्ति चापं कोदण्डखण्डं खलु तूर्यगोलम्'—इति सिद्धान्तशिरोमणी । नवमराशिः; 'चापगते गृहीयात् कुङ्कुमशङ्खप्रवालकाचानि'—इति बृहत्संहितायाम् । ४६४

चाप्यरन् पुं.—कली. [ चमरी भृगुविशेषस्तस्या इदम् । चमरी+अण् ] चमरीपुच्छलोमनिमित्तव्यजनं; प्रकीर्णकं; चमरं; चामरा; चामरी; बालव्यजनं; रोम गुच्छकम्; 'गुणेषु रागो व्यसनेष्वनादरो रतिः सुभृत्येषु च यस्य भूपतेः । चिरं स भुङ्क्ते चलचामरांशुकां सित्तातपत्राभरणां नृपश्रियम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२६६) । ४२३  
चामीकरम् कली. [ चमीकरः रत्नाकरविशेषः, तत्र भवमित्यण् ] स्वर्णम्; 'ददृशुर्मुनयो देवा देवविगणसेवितम् । शुद्धचामीकरप्रख्यं सर्वाभरणभूषितम्'—इति शिवपुराणे (२।१३) । धुस्तूरः । १७४

चामुण्डा स्त्री. [ महासंग्रामे चण्डमुण्डाख्यौ द्वौ शुम्भनिशुम्भसेनाप्यक्षौ अनया शक्त्या निहंतौ, अतः परितुष्ट्या भगवत्या कौशिक्या अस्याश्चामुण्डेति सज्ञा छता ] दुर्गा; मातृकाभेदः; चर्चिका; चर्ममुण्डा; मार्जारकर्णिका; कर्णमोटी; महागन्धा; भैरवी; कपालिनी; 'यस्मान्चण्डं च मुण्डं गृहीत्वा चमुपागता । चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि ! अविष्यसि'—इति चण्डीपाठे । १७

चारः पुं. [ चर्यते मरुयते कोपद्वेषादिवशादिति । चर+कर्मणि घञ्, चरति वा ] अपसर्पः; पियालनृक्षः; गतिः; बन्वः; कारागारं; गूढपूरुषः; चरः; 'नृपो निहन्त्याच्चारणपरराष्ट्रं विचक्षणः'—इति युक्तिकल्पतरौ । कापटिकपुरुषादयः; 'उपगृह्यास्पदश्चैव चारान् सम्यग्विधाय च' इति मनुः (७।१८४) 'चारांश्च कापटिकादीन्' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । प्रचारः; 'निवृत्तचारः सहसा गतो रविः प्रवृत्तचारा रजनी ह्युपस्थिता'—इति

रामायणे (२।६६।२६) । 'निवृत्तचारः निवृत्तकिरणप्रचारः, प्रवृत्तचारा प्रवृत्ततमःप्रचारा'—इति तट्टीकायां रामानुजः । वाणिज्यादिव्यवहारः; 'भृत्यर्वाणिज्यचारञ्च पुत्रैः सेवेत च द्विजान् ।' सञ्चारः; प्रवृत्तिः; 'न स्त्री दुष्यति चारेण न विप्रो वेदकर्मणा ।' 'चारेण रजः—सञ्चारेण' इति टीकाकृत्नीलकण्ठः । कली. कृत्रिमविषम् । ४२५

चारणः पुं. [ चारयति प्रचारयति नृत्यगीतादिविद्यां तज्जन्यकीर्तिं वा । चर+णिच्+ल्यु ] नटविशेषः; कुशीलवः; 'चारणाश्च सुपर्णाश्च पुरुषाश्चैव दाम्मिकाः । रक्षांसि च पिशाचाश्च तामसीयूत्तमा गतिः'—इति मनुः (१२।४४) 'चारणा नटादयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । गन्धर्वविशेषः; 'गन्धर्वाणां ततो लोकः परतः शतयोजनात् । देवानां गायनास्ते च चारणाः स्तुतिपाठकाः'—इति पाद्मे पातालखण्डम् । देवयोनिविशेषः; 'गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरःस्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः'—इति भागवते (४।१६।१२) । चारपुरुषः; 'अन्तर्वहिश्च भूतानां पश्यन् कर्माणि चारणः । उदासीन इवाध्यक्षो वायुरात्मेव देहिनाम्'—इति भागवते (४।१६।१२) । ५९२

चारभट्टः पुं. [ चारेषु चरेषु भट्टः । यद्वा चारे बुद्धिकौशलादिप्रचारे भट्टः ] वीरः; 'कश्चुम्बति कुलपुरुषोऽवेश्याधरपल्लवं मनोज्ञमपि । चारभट्टचौरचेटकनटवितनिष्ठीवनशारावम्'—इति भर्तृहरिः (१।९१) । ३५४

चारित्र्यम् कली. [ चरित्रमेव इति, स्वार्थे अण् ] चरित्रम्; 'कुलाक्रोशकरं लोके धिक् ! ते चारित्र्यमीदृशम्'—इति रामायणे (३।५९।१९) । मरुद्गणानामन्यतमः; 'जयोनेश्चाद्भुतिञ्चैव चारित्र्यं बहुपन्नगम्'—इति हरिवंशे (१२६।५४) । [ चरतीति, 'चरेवृत्ते' इति णिन् ] वृत्तान्तम् । ३९६

चारुः त्रि. [ चरति देवेषु गुह्येन, चरति चित्ते इति वा । चर+दृसनिजनिचरीति' अण् ] मनोज्ञः; 'इति चटुलचाटुपटुचारसुरवैरिणो राधिकामधिवचनजातम्'—इति गीतगोविन्दे (१०।९) । पुं. बृहस्पतिः; श्रीकृष्णस्य रुक्मिणीगर्भसम्भूतपुत्रः नामन्यतमः; 'चारुञ्च बलिनां श्रेष्ठं सुताञ्चापन्ता'—इति हरिवंशे (११७।३९) ।

चाषः पुं. [ चाषयति भक्षयति कणादिकमिति । चप्+  
स्वार्थं णिच्+अच् । यद्वा चष्यते भक्षयतेऽसौ मांसा-  
शिभिरिति । चप्+कर्मणि घञ् ] स्वर्णचातकः;  
नीलकण्ठः, किकीदिविः; नीलाङ्गः; पुण्यदर्शनः । २४७  
चासः पुं. [ चाप+पृषोदरादित्वेन सत्वम् ] चापपक्षी;  
इक्षुः । २४७

चिकित्सकः पुं. [ चिकित्सति रोगमपनयतीति । कित्+  
'गुप्तिज्कित्म्यः सन्' इति स्वार्थं सन्+ण्वल् ]  
चिकित्साकर्ता; रोगहारी; अगदङ्कारः; भिषक्; वैद्यः;  
'चिकित्सकानां सर्वेषां मिथ्या प्रचरतां दमः'—इति  
मनुः (१।२८४) । तस्य लक्षणं चाणक्ये—'आयुर्वेद-  
कृताभ्यासः सर्वेषां प्रियदर्शनः । आर्यशीलगुणोपेत एष  
वैद्यो विधीयते ।' ६१२

चिकित्सा स्त्री. [ चिकित्सनमिति, कित् व्याधिप्रतीकारे+  
'गुप्तिज्कित्म्यः सन्', ततः अप्रत्ययः ] रोगप्रतीकारः;  
रुचप्रतिक्रिया; उपचारः; उपचर्या; निग्रहः; वेदना-  
निष्ठा; क्रिया; उपक्रमः; शमः; चिकित्सितं;  
प्रतीकारः; भिषग्जितं; रोगप्रतिकारः; 'आसुरी मानुषी  
दैवी चिकित्सा सा त्रिधा मता'—इति वैद्यके । ६१२

चिकुरः पुं. [ चि इत्यव्यक्तशब्दं कुरतीति । कूर् शब्दे+  
'इगुपघञेति' क ] केशः; 'चिकुरनिचये यत्कौटिल्यं  
विलोचनयोश्च या'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।३६७) ।  
सर्पः; अयं हि ऐरावतकुलजातस्य सुमुखस्य पिता;  
'एतस्य हि पिता नागश्चिकुरो नाम मातले ! न चिरात्  
वैनतेयेन पञ्चत्वमुपपादितः'—इति महाभारते  
(५।१०३।२४) । पर्वतः; पक्षिभेदः; वृक्षविशेषः;  
गृहवधुः; तरलः; त्रि. चपलः । [ निपातनादीर्घत्वे  
चिकूरः इत्यपि । ] ५३०

चिता स्त्री. [ चीयते श्मशानाग्निरस्यां, यद्वा चीयते  
उन्वीयतेऽसौ प्रेतस्य परलोकशर्मणे इति । चि+  
अधिकरणे वा कर्मणि क्त, ततः ष्टाप् ] शवदाहाधार-  
चुल्ली; चित्या; काष्ठमठी; चैत्यं; चिताचूडकं;  
चित्यं; चितिः; 'चिताग्नेरुद्बह्नाज्जं पक्षाम्यां तत्प्रवर्तते'  
—इति महाभारते (३।२११।१७) । संहतिः । ६३८  
चित्तम् क्ली. [ चेतत्यनेनेति, चित्+करणे क्त ] मनः;  
अनुसन्धानः; निम्नकान्तःकरणवृत्तिः; 'यत्तत् सत्वगुणं  
स्वच्छं स्वान्तं भगवतः पदम् । यदाहुर्वासुदेवाख्यं चित्तं

तन्महदात्मकम्'—इति भागवते । ५३४

चित्यम् क्ली. [ चीयते इति, चि+चित्याग्निचित्ये च'  
इति कर्मणि य, निपातनात्तुगागमे साधुः । यद्वा क्यप्  
प्रत्यये पिति तुगागमः ] चिता; चित्या; चैत्यं;  
चितिः; चिताचूडकं; काष्ठमठी । ६३८

चित्या स्त्री. [ चीयतेऽग्निरस्यां प्रेतस्य । चि+य,  
निपातनात् साधुः, क्यप् वा ] चिता; चित्यम् । ६३८  
चित्रम् क्ली. [ चित्र्यते इति, चित्र+कर्मणि अप् । यद्वा  
चीयते इति, 'अमिचिमिशमिम्यः क्वः' । इति क्व ]  
कर्बुरवर्णः; 'निसर्गचित्रोज्ज्वलसूक्ष्मपक्ष्मणा'—इति  
माघे (१।८) । तद्युक्ते त्रि. । अद्भुतम् (७४५);  
'चित्रं संक्रीडमानास्ताः क्रीडनैर्विधिधैस्तथा'—इति  
रामायणे (१।१०) । तिलकम्; आलेख्यम्; 'उत्त-  
माधमभावेन वर्तन्ते पटचित्रवत्'—इति पञ्चदश्याम्  
(६।५) । अलङ्कारविशेषः; 'तच्चित्रं यत्र वर्णानां  
खङ्गाद्याकृतिहेतुता ।' अष्टिसंज्ञकपोडशाक्षरावृत्ति-  
च्छन्दोभेदः; 'चित्रसंज्ञमीरितं समानिकापदद्वयम्'  
इति छन्दोमञ्जरीम् । 'विद्रुमारुणाधरोष्ठशोभिवेणु-  
वाद्यहृष्ट, वल्लवीजनाङ्गसङ्गजातमुग्धकण्टकाङ्ग !, त्वां  
सदैव वासुदेव ! पुण्यलम्पपाद ! देव ! वन्यपुष्पचित्रकेश !  
संस्मरामि गोपवेश !' आकाशः; कुष्ठविशेषः;  
आश्चर्यान्वितः; त्रि. । 'चित्राः श्रोतुं कथास्तत्र परि-  
व्रुस्तपस्विनः'—इति महाभारते (१।१।३) । पुं.  
[ चित्रयति पापपुण्ये विचार्यं चित्रं करोति लिखतीत्यर्थः ।  
चित्र+णिच्+अच् ; यद्वा चीयन्ते उपचीयन्ते प्रेत-  
लोका येन ] यमविशेषः; 'वृकोदराय चित्राय चित्र-  
गुप्ताय वै नमः'—इति तिथ्यादित्त्वे । सर्पविशेषः;  
'कृष्णश्च लोहितश्चैव पद्मश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति  
महाभारते (२।१।८) । एरण्डवृक्षः; अशोकवृक्षः; चित्रक-  
वृक्षः; धृतराष्ट्रपुत्रभेदः; 'चित्रोपचित्रौ चित्राक्षश्चारु-  
चित्रः शरासनः'—इति महाभारते (१।११७।४) । ७४१  
चित्रकम् क्ली. [ चित्र+स्वार्थं कन्, यद्वा चित्रमिव  
कायति । चित्र+कं+क ] तिलकं; वृक्षविशेषः;  
'त्रिफला चित्रकं चित्रं तथा कटुकरोहिणी'— इति  
गारुडे १८७ अध्याये । पुं. व्याघ्रः; व्याघ्रभेदः;  
चित्रकायः; उपव्याघ्रः; मृगान्तकः; शूरः; क्षुद्र-  
शार्दूलः; चित्रव्याघ्रः; 'चीता' इति भाषा । वृक्ष-



विशेषः; अग्निः; शार्दूलः; चित्रः; पाचीकटुः; शिखी; कृशानुः; दहनः; व्यालः; ज्योतिष्कः; पालकः; अनलः; दारुणः; वह्निः; पावकः; शम्बरः; पाची; द्वीपी; चित्राङ्गः। 'चित्रकः कटुकः पाके वह्निकृत् पाचनो लघुः। रुक्षोष्णो ग्रहणीकुष्ठशोथार्शःकृमिकास-  
नुत्। वातश्लेष्महरो ग्राही वातार्शःश्लेष्मपित्तहृत्। विचित्रं चैत्रकं शाकं काशमर्दविमर्दितम्। तप्ततैले सवाह्लीके पाचितं - तत्रसम्भृतम्—इति शब्दार्थ-  
चिन्तामणिः। ओषधिविशेषः; 'पूतिकश्चित्रकः पाठा विडङ्गलाहरेणवः—इति सुश्रुते। एरण्डवृक्षः; [ चित्र+  
क्वन् ] चित्रकारः; मुचुकुन्दः; 'मुचुकुन्दः क्षत्रवृक्ष-  
श्चित्रकः प्रतिविष्णुकः—इति भावप्रकाशः। ५४१

चित्रकायः पुं. [ चित्रो नानावर्णयुक्तः कायो देहो यस्य ]  
व्याघ्रः; चित्रव्याघ्रः। २२६

चित्रकृत् पुं. [ चित्रं नानावर्णं करोतीति । कृ+क्विप् ]  
चित्रकरः; चित्रकारः; रङ्गाजीवः; रङ्गजीवकः;  
वर्णी; वर्णाटः; वर्णसङ्करजातिविशेषः [ चित्रमालेख्यं  
करोतीति ] ; तिनिशवृक्षः। ५९१

चित्रपुङ्खः पुं. [ चित्रः पुङ्खो यस्य ] शरः; बाणः। ४६६

चित्रभानुः पुं. [ चित्रा नानावर्णा भानवो रश्मयो यस्य ]  
सूर्यः; अग्निः (६२); 'चित्रभानुः सुरेशश्च अनलस्त्वं  
विभावसो!'—इति महाभारते (२।३।१४२)।

चित्रकवृक्षः; अर्कवृक्षः; भैरवः; संवत्सरविशेषः;  
'श्रेष्ठं चतुर्थस्य-युगस्य पूर्वं यच्चित्रभानुं कथयन्ति  
वर्षम्—इति बृहत्संहितायाम् (८।३५)। ३७

चित्रशिखण्डी [ न् ] पुं. [ चित्रः शिखण्डः शिखा अस्त्यस्य ।  
'अत इनिठनी' इति इनि । बहुत्वे प्रयुज्यते ] सप्तर्षयः;  
'मरीचिरङ्गिरा अत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः। वशिष्ठ-  
श्चेति सप्तैते ज्ञेयाश्चित्रशिखण्डिनः—इति भरतः।  
'ये हि ते ऋषयः स्याताः सप्त चित्रशिखण्डिनः। तैरेक-  
मतिभिर्भूत्वा यत्प्रोक्तं शास्त्रमुत्तमम्। वेदैश्चतुभिः  
समितं कृतं मेरौ महागिरौ। आस्यैः सप्तभिरुद्गीर्णं  
लोकवर्ममनुत्तमम्। मरीचिरथ्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः  
क्रतुः। वशिष्ठश्च महातेजास्ते हि चित्रशिखण्डिनः—  
इति महाभारते (१२।३३।२६-२८)। ५०

चित्रशिखण्डिप्रसूतः पुं. [ चित्रशिखण्डिष्वन्यतमेनाङ्गिरसा  
प्रसूतः जातः ] बृहस्पतिः; सुराचार्यः। ४७

चिद्रूपः त्रि. [ चित् संज्ञानवत् सहानुभूतिमदिति यावत्,  
रूपं हृद्भावो यस्य ] हृदयालुः; सहृदयः; [ चिद्  
ज्ञानमेव रूपं यस्य ] ज्ञानमयः; 'चिद्रूपे परमात्मनीति'  
योगशास्त्रम्। ३७३

चिन्ता स्त्री. [ चिन्तनमिति । चिति चिन्तायाम्+  
'चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च' इति अङ् ] चिन्तना;  
चिन्तनं; स्मृतिः; आध्यानम्; आध्या; ध्यानं;  
चिन्तितः; चिन्तिया; 'चिता चिन्ता द्वयोरमध्ये चिन्ता  
नाम गरीयसी। चिता दहति निर्जावं चिन्ता हि जीवितं  
तथा।' दर्शनसम्भोग्योः प्रकारभावना; व्यभिचारि-  
भावविशेषः; 'ध्यानं चिन्ता हितानाप्तेः शून्यताश्वास-  
तापकृत्—इति साहित्यदर्पणे (३।१७०)। ७९४

चिपिटः पुं. [ चयतीति, चि+वाहुलकात् पिटच् स च  
कित् ] भक्ष्यद्रव्यविशेषः; पृथुकः; चिपिटकः; चिपुटः;  
धान्यचमसः; चिपीटकः; 'चिउड़ा' इति भाषा।  
'शालयः सतुषा आर्द्रा भ्रष्टा अस्फुटितास्ततः। कुट्टिता-  
श्चिपिटाः प्रोक्तास्ते स्मृताः पृथुका अपि—इति भाव-  
प्रकाशः। 'शालेया यावनालाद्याश्चिपिटाः पुष्टिवर्द्धनाः—  
इति राजनिर्घण्टः। [ नि नता नासिका विद्यतेऽस्य,  
'इनच्पिटच्चिकचि च' इति पिटच् प्रकृतेश्चिरादेशश्च ]  
नतनासिके त्रि.। 'दिग्दक्त्रं चिपिटं चैव व्यङ्गजं  
सुरजन्तथा।' 'तुङ्गहीनं च चिपिटं व्यङ्गं चानर्थदर्शनम्—  
इति विश्वकर्मप्रकाशे (१३।२.५)। चिपिटाकार-  
मुखादौ; 'वक्रो ह्रस्वश्च चिपिटः सुखसंभाष्य-  
भञ्जकः—इति काशीखण्डे (३७।१४)। 'चिपिटः  
चिपिटाकाकारः—इति तट्टीका। ५८५

चिपुटः पुं. [ चिपिट+पृषोदरादित्वात् साधुः ] चिपिटकः;  
चिपिटः। ५८५

चिबुकम् क्ली. [ चि+मृग्यादित्वात् कु, बुक्, चिवु+  
स्वार्थे कन्, अभिवानात् क्लीवत्वम् ] अधरावोभागः;  
'उत्तम्य चिबुकं वक्षस्युत्थाप्य पवनं शनैः—इति  
हठयोगप्रदीपिकायाम् (१।४६)। ५२५, ८७३।

चिरजीवी [ न् ] पुं. [ चिरं जीवतीति । चिरम्+जीव्+  
णिनि ] काकः; विष्णुः; जीवकवृक्षः; शालमलिवृक्षः;  
'अश्वत्थामा बलिव्यासो हनूमांश्च विभीषणः। कृपः  
परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः। सप्तैतान् संस्मरेत्  
प्रातः मार्कण्डेयमघाष्टमम्—इति प्रातःकृत्ये। बहुकाल-

जीविनि त्रि. । 'अथ राज्ञो बभूवैव वृद्धस्य चिरजीविनः'  
—इति रामायणे (२।१।३६) । २४५

चिरञ्जीवी [ न् ] पुं. [ चिरं जीवतीति । चिरम्+जीव्+  
णिनि ] काकः; विष्णुः; जीवकवृक्षः; शाल्मलिवृक्षः;  
चिरजीविनि त्रि. । २४५

चिराष्टी स्त्री. [ चिरात् चिरेण वा अटति पितृगृहादिति ।  
चिर+अट्+अच्, 'वयसि प्रथमे' इति डीप्, ततः  
पृषोदरादित्वात् साधुः ] द्वितीयवयाः स्त्री; युवती;  
स्ववासिनी; ऊढा अनुढा वा पितृगृहस्थिता कन्या;  
सुवासिनी । ४८४ ।

चिरम् अव्य. [ चि+रमुक् ] चिरार्थः; दीर्घकालार्थः;  
चिराय; चिरस्य; चिररात्राय; चिरात्; चिरेण;  
'तथापि शस्त्रव्यवहारनिष्ठुरे द्विपक्षभावे चिरमस्य  
तत्स्युषः'—इति रघुवंशे (३।६२) । ८७३

चिररात्रम् क्ली. [ चिरा रात्रिरिति । योगविभागाद्  
अच् समासे ] दीर्घकालः; 'चिररात्रोपिताः स्मेहं ब्राह्म-  
णस्य निवेशने'—इति महाभारते (१।१६८।३) । ८७३

चिररात्राय अव्य. [ चिररात्रं अयते इति । चिरात्र+  
अय्+ 'कर्मण्यण्' इत्यण् ] दीर्घकालः; 'हृद्विर्यचिचिरत्राय  
यच्चानन्त्याय कल्पते । पितृभ्यो विधिवद्दत्तं तत्रवक्ष्याम्य-  
शेषतः'—इति मनुः (३।२६६) । ८७३

चिरस्य अव्य. [ चिरमस्यते इति । अस्+यत्, शकन्च्वा-  
दित्वात् साधुः ] दीर्घकालः; 'चिरस्य खलु कृष्णेन  
संस्मृतोऽस्मि महात्मना'—इति हरिवंशे (१२६।२३) ।  
८७३

चिरात् अव्य. [ चिरम् अततीति । चिर+अत्+क्विप् ]  
चिरे; दीर्घकालः; 'भो भगिनीसुत ! किमिति चिराद्  
दृष्टोऽसि'—इति पञ्चतन्त्रे । पुं. [ चिरं चिरेण वा अत्ति ।  
अद्+क्विप् ] गरुडः । ८७३

चिराय अव्य. [ चिरम् अयते । चिर+अय्+अण् ]  
दीर्घकालः; 'पुरा धर्मो वर्तते नेह या-त् तावद् गच्छामः  
सुरलोकं चिराय'—इति महाभारते । ८७३

चिरेण अव्य. [ चिरम्+इण् ] चिरम्; 'भावावबोधकलुषा  
दयितेव रात्रौ निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव'  
—इति रघुवंशे (५।६४) । ८७३

चिर्भट्टी स्त्री. [ चिरेण भट्टतीति, । चिर+भट्+अच् ।  
गौरादित्वाद् डीप्, पृषोदरादित्वात् साधुः ] कर्कटी;

'अहो अविवेकोऽमद्भूपतेर्यः पुरीषोत्सर्गमाचरंश्चिचभटी-  
भक्षणं करोति'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१६७) । २०९

चिलिचिमः पुं. [ चिरिं हिंसां चिनोतीति । चिरि+चि+  
मक् । रस्य लत्वम् ] मत्स्यविशेषः; नलमीनः; तलमीनः;  
चिलीचिमिः; चिलीचिमः; चिलिचीमः; चेलिचीमः;  
चिलीमः; चिलिमीनकः; चिलिचीमिः; कवलः;  
विलोटकः; चेङ्गमत्स्यः । ६५८

चिल्लः पु. [ चिल्लति हावभावेन उड्डीयते इति । चिल्ल्+  
अच् ] पक्षिविशेषः; आतापी; शकुनिः; आतापी;  
खभ्रान्तिः; कण्ठनीडकः; चिरम्भणः; 'चील' इति  
भाषा । 'गृध्रः कङ्कः कपोतश्च उल्लूकः श्येन एव च ।  
चिल्लश्च चर्मचिल्लश्च भासः पाण्डर एव च'—इति  
द्विष्णुधर्मोत्तरे । (६०७) [ विल्लन्ने चक्षुषी अस्य,  
'विल्लस्य चिल् पिल् लश्चास्य चक्षुषी' इति चिलादेशो  
लप्रत्ययश्च ] त्रि. विल्लनेत्रयुक्तः; विल्लन्नक्षुः । २५०

चिवुकम् क्ली. [ चीव्+मृगव्यादित्वात् कु, ह्रस्वः, चिवु+  
स्वार्थे कन्, अभिधानात् क्लीबत्वम् ] अधराधोभागः;  
'ठोड़ी' इति भाषा । पु. [ चिवुरिव कायतीति । चिवु+  
कै+क ] मुचुकुन्दवृक्षः । ५२५

चिल्लम् क्ली. [ चिल्लचतेऽनेनेति । चिल्ल लक्षणे+करणे  
घञ् ] कलङ्कः; अङ्कः; लाञ्छनः; लक्ष्मः; लक्षणं;  
लिङ्गं; लक्ष्मणः; अभिज्ञानम्; 'वैन्यस्य दक्षिणे हस्ते  
दृष्ट्वा चिल्लं गदाभृत । पादयोररविन्द च त वै मेने  
हरेः कलाम्'—इति भागवते (४।१।५।९) । पतिका ।  
४५

चौरम् क्ली. [ चिनोति आवृणोति वृक्षं कटिदेशादिकं  
वा । चि+ 'शुस्विचिमीनां दीर्घश्च' इति ऋन् दीर्घश्च ]  
वस्त्रम्; वृक्षत्वकः; 'प्रागेव तु महाबुद्धिः सौमित्रिभ्रातृ-  
वत्सलः । पूर्वजस्थानुयात्रार्थं द्रुमचौरैरलङ्कृतः'—इति  
रामायणे (५।३।१२२) । जीर्णवस्त्रखण्डः; 'चौराणि  
किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां, नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः  
सरितोऽप्यशुष्यन्'—इति भागवते (२।२।५) । गोस्तनः;  
वस्त्रभेदः; 'चौरवासां द्विजोऽरण्ये चरेद् ब्रह्महृणो व्रतम्'  
—इति मनुः (१।१।१०१) । रेखाभेदः; लेखनभेदः;  
चूडा; 'मुञ्जवज्जंजीरभूता बहवस्तत्र पादपाः । चौरा-  
णीव व्युदस्तानि रेजुस्तत्र महावने'—इति महाभारते  
(३।१।१।४९) । सीसकम् । ५४८

चीरिल्लः पुं.—सहामत्स्यः । ६६०

चीरो स्त्री. [ चीरि+‘कृदिकारादिति’ वा डीप् ] शिल्ली; चीरिका; चीलिका; चील्लका; कच्छा-टिका । २५६

चुचुकम् क्ली.—चुचुकं, चूचुकं, कुचाननं, स्तनवृत्तम् । ३२६

पुष्टा स्त्री. [ चुष्टयतेऽसाविति । चुष्ट् छेदे+घञ् । नृत्तिकाखननेन जायमानत्वात्तथात्वम् ] कूपः । ६८४

पुष्टी स्त्री.—कूपः; उपकूपं; कूपसमीपे स्वल्पजलाधारः । ६८४

पुन्दी स्त्री. [ चोदयति प्रेरयति घटयतीत्यर्थः; नायकादी-निति । चुद्+क । निपातनात् नुमागमः, ततः स्त्रियां डीप् ] कुट्टनी । ४९२

चुम्बकः पुं. [ चुम्बति आकर्षति लौहमिति । चुम्ब्+घञ् ] कान्तलोहभेदः; कान्तपाषाणः; अयस्कान्तः; लोहकर्षकः; घटस्योर्ध्वावलम्बनं; त्रि. [ चुम्बतीति, चुम्ब्+घञ् ] चुम्बनपरः; धूर्तः; बहुग्रन्थकदेशज्ञः; पल्लवप्राहिर्विद्वान् । १६९

चुरी स्त्री. [ चूर्+क, स्त्रियां डीप् ] उपकूपः; कूप-समीपस्थाल्पजलाधारः । ६८४

चुल्लः त्रि. [ किल्ले चक्षुषी अस्य । ‘चुल् चेति’ किल्लस्य चुलादेशो लप्रत्ययश्च ] किल्लचक्षुर्भुक्तः; पुं. किल्ल-घञ् । ६०७

चुल्लिः स्त्री. [ चुल्लयते प्रज्वाल्यते अग्निरत्र । चुल्ल्+‘सर्वधातुस्य इन्’ इति इन्, यद्वा चुद्यते प्रेर्यते अग्नियत्र । चुद्+बाहुलकात् लिक् ] पाकार्थमग्निस्थानम्; अश्म-न्तम्; उद्दमानम्; उद्धानम्; अधिश्रयणी; अन्तिका; अश्मन्तम्; उष्मानम्; उद्धारं, चुल्ली, आन्दिका; उद्धानिः । ‘चूल्हा’ इति भाषा । ३१३

चुल्सी स्त्री. [ चुल्लि+‘कृदिकारादवितनः इति’ वा डीष् ] उद्धानं; चिंता । ३१३

चूचुकम् स्त्री.—पुं. [ चूष्यते पीयते इति, चूष पाने+बाहुलकात् उक् पस्य चत्वञ्च ] चुचुकं; चुचुकं; कुचाननं; स्तनवृत्तम्; ‘स्तनौ च विरली पीनो समौ मे मग्नचूचुकौ’—इति रामायणे (६।२३।१३) । ५२६

चुचुकम् क्ली. [ चुचुक+पृषोदरादित्वाद् दीर्घः ] चुचुकं;

कुचाग्रम् । ५२६

चूडा स्त्री. [ चोलयति मस्तकाद्युपरि उन्नता भवतीति । चुल् समुच्छ्राये+भिदादित्वादङ् ततो दीर्घस्ततो लस्य डत्वे साधुः ] मयूरशिखा; (७९९) शिरोमध्यस्थ-शिखामात्रं; शिखा; केशपाशी; जूटिका; जुटिका; ‘शिखा चूडा केशपाशी जूटिका जुटिकेत्यपि । शिरोमध्य-बद्धचूडे भवेदेतत्तु पञ्चकम्’—इति शब्दरत्नावल्याम् । वलभी (वडभी); बाहुभूषणम्; अग्रम्; ‘अस्ताचल-चूडावलम्बिनि भगवति चन्द्रमसि’—इति हितोपदेशे । कूपः; दशसंस्कारान्तर्गतसंस्कारविशेषः; चूडाकरणम्; ‘चूडा कार्या यथाकुलम्’—इति मलमासतत्त्वम् । ‘अयुग्माब्दे तथा मासि चूडा भीमशनीतरे । अर्केन्दुकाल-शुद्धी च जन्ममासेन्द्रभादृते’—इति संस्कारतत्त्व-घृतज्योतिषवचनम् । शिरोभूषणं; मुकुटकिरीटादि-कम् । २४२

चूडामणिः पुं. [ चूडा शिरोभूषणं मुकुटकिरीटादिकं तत्र स्थितो मणिः । शाकपार्थिवादित्वात् समासः ] शिरो-रत्नम्; ‘ततश्चूडामणिं निष्कमङ्गदे कुण्डलानि च । [ चूडायामग्रभागे मणिरिव यस्य ] काकचिञ्चाफलं; योगविशेषः; स तु ग्रहणकाले एव भवति—‘सूर्यग्रहः सूर्यवारे सोमे सोमग्रहस्तथा । चूडामणिरयं योगस्तत्रानन्तं फलं स्मृतम् । अन्यस्माद्ग्रहणात् कोटिगुणमत्र फलं लभेत्’—इति तिथ्यादितत्त्वम् । शुभाशुभगणनाविशेषः; योग्यतोपाधिविशेषः । ५६४

चूतः पुं. [ चूष्यते पीयते इति । चूप्+कर्मणि क्त, पृषोदरादित्वात् षलोपः; रसालत्वादेवास्य तथात्वम् ] आम्रवृक्षः; चूतकः; ‘परिचुम्बति संविश्य भ्रमरश्चूत-मञ्जरीम् । नवसङ्गमसंहृष्टः कामी प्रणयिनीमिव’—इति रामायणे (३।७९।१७) । [ चोतति क्षरति शोणितादिकमस्मादिति । चूत् क्षरणे+बाहुलकात् घञर्थे क दीर्घश्च ] गुदद्वारं; च्यूतः । १९२

चूतकः पुं. [ चूत एव । चूत+स्वार्थे कन् ] कूपकः; आम्रः । ६८४

चूर्णः पुं. [ चूर्ण्यते सम्पिप्यते इति । चूर्ण्+कर्मणि घञ् ] क्षोदः; चूर्णः; रजः; ‘कन्याश्चन्दनचूर्णैश्च लार्जर्मा-ल्यैश्च सर्वशः । अवाकिरञ्छान्तनवं तत्र गत्वा सहस्रशः’ इति महाभारते (६।११८।३) । ‘अभावे शालिचूर्णं वा’

इति सत्यव्रतविधाने । घृलिः; क्षारविशेषः; 'पर्णानि शीर्णवर्णानि सीदन्त्याकर्णलोचने ! चूर्णमानीयतां तूर्णं पूर्णचन्द्रनिभानने!' क्ली. सम्पेषणेन जातरजः; 'अत्यन्त-शुष्कं यद् द्रव्यं सुपिष्टं वस्त्रगालितम् । तत् स्याच्चूर्णं रजः क्षोदस्तन्मात्रा कर्षसम्मिता । चूर्णं गुडः समो देयः शर्करा द्विगुणा मता । चूर्णेषु भजितं हिङ्गु देयं नोत्कलेद-कृद्भवेत् । लिहेच्चूर्णं द्रवैः सर्वैः घृताद्यैर्द्विगुणोन्मितैः'— इति भावप्रकाशः । अवीरं; गन्धगुडा; वासयोगः; वासयुक्तिः; गन्धयुक्तिः; पटयुक्तिः; कुङ्कुमादिरजः; 'अलकेषु चमूरेणुश्चूर्णप्रतिनिधीकृतः'—इति रघुवंशे (४।५४) । ४४३

**चूलिका** स्त्री. [ चोलयति सन्निहितचर्ममांसराशिम् उन्नयतीति । चुल्+ण्वुल्+कपि अत् इत्वञ्च, पूपो-दरादित्वाद् दीर्घत्वे साधुः ] हस्तिकर्णमूलं; गजकर्ण-मूलं; नाटकाङ्गविशेषः । २१७

**चूषा** स्त्री. [ चूप्यते पीयते पृष्ठमांसेनादृश्यतां नीयते इति । चूष्+घञर्थे क ] कक्ष्या; 'तंग' इति भाषा । २२१  
**चेटः** पुं. [ चेटतीति, चिट् परप्रेष्ये+अच् ] दासः; चेटकः; 'एतत्तस्य मुखाच्छ्रुत्वा राजचेटस्य दुर्मनाः ।' स तु काव्ये शृङ्गारसहायः; 'शृङ्गारस्य सहाया विटचेटवि-दूयकाद्याः स्युः'—इति साहित्यदर्पणे (३।४६) । ३६५

**चेटी** स्त्री. [ चेट+डीप् ] दासी । ४९२

**चेडः** पुं. [ चेटति परप्रेष्यत्वं करोतीति । चिट्+अच् । टस्य डत्वञ्च ] दासः; चेडकः; चेटः; चेटकः । ३६५

**चेडी** स्त्री. [ चेड+डीप् ] दासी । ४९२

**चेतः** [ स् ] क्ली. [ चेतत्यनेन इति । चित्+करणेऽनुन् ] चित्तम्; 'ताभ्यां निर्विकचित्सेऽर्थे चेतसः स्थापितस्य यत्'—इति पञ्चदश्याम् (१।५४) । ५३४

**चेतनः** पुं. [ चेतति जानाति सर्वम् इति । चित्+कर्त्तरि ल्यु ] प्राणी; 'रथादौ नियता चेष्टा चेतनेनाधि-तिष्ठते । न दृष्टा चेतनस्तेन प्राणादीनां प्रवर्तकः'— इति शब्दार्थचिन्तामणिः । मनुष्यः; आत्मा, यथा पञ्चदश्याम्—'चेतना चेतनभिदा कूटस्थात्मकृता नहि । किन्तु बुद्धिकृताभासकृतैवेत्यवगम्यताम्' (६।४५) । [ चेतनं चैतन्यं विद्यतेऽस्य इति । 'अशं आदिभ्योऽच्' इत्यच् ] प्राणयुक्ते त्रि. । 'कामार्ता हि प्रकृतिरुपणाश्चे-तनाचेतनेषु'—इति मेघदूते । १३४

**चेल्म** क्ली. [ चेल्यते विस्तार्यते तन्तुभिरिति । चेल् चलने+कर्मणि घञ् । यद्वा चित्यते परिधीयते यत् इति । चिल्+कर्मणि घञ् ] वस्त्रं; 'चेल्चर्माभिषाणां च त्रिरात्रं स्यादभोजनम्'—इति मनुः (११।१६६) । त्रि. अघमः (३३७) । ५४८

**चेष्टा** स्त्री. [ चेष्ट्+भावे अङ् टाप् च ] कायिकव्यापारः; 'आकारमिङ्गितं चेष्टां भृत्येषु च चिकीर्षितम्'—इति मनुः (७।६७) । 'प्रवृत्तिरत्र चेष्टा ज्ञानेच्छाप्रयत्नादीनां देहेऽभावस्योक्तप्रायत्वाच् चेष्टायाश्च यत्नवानात्माप्य-नुमीयते'—इति सिद्धान्तमुक्तावली (५५) । ८५०

**चैतन्यम्** क्ली. [ चेतनस्य भावः । प्यञ् ] सञ्ज्ञा; चेतना; पुं. वङ्गदेशे भगवदवतारविशेषः; चैतन्यदेवः । ८२२

**चैतन्यम्** क्ली. [ चेतन एवेति । स्वार्थे भावे वा प्यञ् ] चेतना; सञ्ज्ञा; 'चैतन्यं परमाणूनां प्रधानस्यापि नेप्यते । ज्ञानक्रिये जगत्कर्त्र्यां दृश्यते चेतनाश्रये'— इति शब्दार्थचिन्तामणिः । 'मनश्चैतन्ययुक्तोऽसौ नाडी-स्नायुशिरायुतः । सप्तमे चाष्टमे चैव त्वङ्मांसस्मृति-मानपि'—इति याज्ञवल्क्ये (३।८१) । प्रकृतिः । ८२२

**चैत्यम्** क्ली. पुं. [ चित्यस्य इदम्, 'तस्येदम्' इत्यण् ] बुद्धस्मारकम्; बुद्धाण्डकं; देवायतनम्; आयतनं; यज्ञस्थानं; केचित्तु मुखरहितं देवकुलसदृशं यज्ञायतनं सचित्यमचित्यमपीत्याहुः । मृदा देवकुलम् । 'यत्र यूपा मणिमयाश्चैत्याश्चापि हिरण्मयाः'—इति महाभारते (२।३।१२) । चिता; पुं. [ चैत्ये देवायतनादिस्याने तिष्ठतीति । चैत्य+अण् ] बुद्धः; विग्नः; उद्देशवृक्षः; देवतरुः; देवावासः; करिभः; कुञ्जरः; वृक्षाः पतन्ति चैत्याश्च ग्रामेषु नगरेषु च'—इति महाभारते (६।३।४०) । क्षेत्रजः पुरुषः; 'अहंकारस्तयो रुद्रश्चित्तं चैत्यस्ततोऽभवत्'—इति भागवते (३।२६।६०) । ८३१

**चैत्रः** पुं. [ चित्रानक्षत्रयुक्ता पीर्णमासी यत्र सः । चित्रा+ 'विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकातिकीचैत्रीभ्यः' इति पक्षे अण् ] मासभेदः; मीनराशिस्थरविकः सौरः; मीन-स्थरविप्रारम्भशुक्लप्रतिपदादिदर्शान्तश्चान्द्रः; चैत्रिकः; मघुः; चैत्री; कालादिकः; चैत्रकः; चित्रिकः; चैत्रमासः; 'चैत्रे मास्यय माघे वा योऽर्चयेत् शङ्करं व्रती । करोति नर्तनं भक्त्या क्षेत्रपाणिदिवानिशम् । मासं वाप्यर्द्धमासं वा दशसप्त दिनानि वा । दिनमानं

युगं सोऽपि शिवलोके महीयते'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृति-  
खण्डम् । क्ली. [ चीयन्ते जीवाः स्थानात् स्थानान्तर-  
मनेनेति । चि+वाहुलकात् करणे ञ्, ततः स्वार्थे  
अण् ] मृतं; देवकुलं; यज्ञस्थानं; 'भीष्मेण धर्मतो  
राजन् ! सर्वतः परिरक्षिते । वभूव रमणीयश्च चैत्रयूप-  
शताङ्कितः'—इति महाभारते (१।१०।१।१३) । ११४  
चैत्ररथम् क्ली. [ चित्ररथेन गन्धर्वेण निर्वृत्तम्, 'तेन  
निर्वृत्तम्' इत्यण् ] कुबेरस्योपवनं; तत्तु चित्ररथ-  
गन्धर्वनिर्मितम्; 'एको ययौ चैत्ररथप्रदेशान् सौराज्य-  
रम्यानपरो त्रिदर्भान्'—इति रघुवंशे (५।६०) ।  
पुं. कुरुपुत्रविशेषः; 'अविक्षितमभिष्वन्तं तथा चैत्ररथं  
मुनिम् । जनमेजयं च विख्यातं पुत्रांश्चास्यानुशुश्रुम्'—  
इति महाभारते (१।१९।४।९) । ८३

चोद्यम् क्ली. [ चोदयति प्रेरयति चित्तं रसविशेषे अनेनेति ।  
चुद्+णिच्+ण्यत् ] अद्भुतं; प्रश्नः; 'सत्यं ध्यानं  
समाधानं चोद्यं वैराग्यमेव च । अस्तेयं ब्रह्मचर्यं च तथा  
संग्रहमेव च'—इति महाभारते (५।४३।३४) । त्रि.  
[ चोदयितुं प्रेरयितुं योग्यः । 'अर्हे कृत्यतृचश्च' इति  
यत् ] चोदनाहं; प्रेरणयोग्यः; 'नीवारमूलेऽगुदशाक-  
वृत्तिः सुसंयतो चाग्निकार्येषु चोद्यः । वने वसन्नतिथिष्व-  
प्रमतो घुरन्वरः पुष्यकृदेप तापसः'—इति महा-  
भारते (५।३८।७) । ७४५

चौरः पुं.-स्त्री. [ चोरयतीति, चुर+णिच्+पचाद्यच् ]  
स्तेयकर्ता; चौरः; दस्युः; तस्करः; प्रतिरोधी; मलि-  
म्लुचः; स्तेनः; ऐकागारिकः; स्तैन्यः; प्रच्छन्नजनः;  
मोषकः; पाटच्चरः; परास्कन्दी; कुम्भिलः; खनकः;  
शङ्कितवर्णः; खानिकः; प्रचुरपुरुषः; तृपुः; तक्का;  
रिम्बा; रिपुः; रिक्का; विहायाः; तायुः; वनर्गुः;  
हुरश्चित्; मूषीवान्; अधशांसः; वृकः । 'चोरेषु  
चौरबुद्धिस्ते साधुबुद्धिस्तु तापसे । स्वपरत्वं तवाप्यस्ति  
विदेहस्त्वं कथं नृप !'—इति देवीभागवते (१।१९।६) ।  
पश्यतोहरः (३३९); कृष्णशटी; गन्धद्रव्यविशेषः;  
'चौरकुङ्कुमरोचना' इत्यष्टगन्धकयने आगमः । ३३८

चौरः पुं.-स्त्री. [ चोर एव, प्रज्ञादिभ्योऽण्, यद्वा चुरा  
शीलमस्य इति, 'छत्रादिभ्यो णः' ] चौरः; 'चौरं वा  
तापसं वापि समानं मन्यते कथम्'—इति देवीभागवते  
(१।१६।५९) । पश्यतोहरः (३३९); असुरविशेषः;

'किरातीं चौरवसनां चौरसेनानमस्कृताम्'—इति हरि-  
वंशे (१७६।१०) कविभेदः; 'कविरमरः कविरमरः  
कविश्चौरो मयूरकः'—इत्युद्भटः । चोरपुष्पी; सुगन्धि-  
द्रव्यविशेषः; शङ्कितः; खङ्गः; दुष्पत्रः; क्षेमकः;  
रिपुः; चपलः; कितवः; धूर्तः; पटुः; नीचः; निशाचरः;  
गणहासः; कोपनकः; चोरः; फलचोरकः; दुष्कुलः;  
ग्रन्थिलः; सुग्रन्थिः; पर्णचोरकः; ग्रन्थिपर्णः; ग्रन्थि-  
दलः; ग्रन्थिपत्रः । ३३८

चौर्यम् क्ली. [ चौरस्य कर्म भावो वा । 'गुणवचन-  
ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' इति प्यञ् ] चौरधर्मः;  
स्तैन्यं; स्तेयं; चौरिका; चोरी; चोरिका; 'चोरी'  
इति भाषा । 'सन्धिं छित्त्वा तु ये चौर्यं रात्री कुर्वन्ति  
तस्कराः । तेषां छित्त्वा नृपो हस्ती तीक्ष्णशूले निवेशयेत्'—  
इति मनुः (९।२७६) । ३३९

## छ

छगः पुं.-स्त्री. [ छं यज्ञादी छेदनं गच्छति प्राप्नोतीति ।  
छ+गम्+ङ ] छागः; छगलकः; छगलः; अजः । २७७  
छगलकः पुं.-स्त्री. [ छगल+स्वार्थे कन् ] छागः;  
छगलः । २७७

छत्रम् क्ली. [ छादयत्यनेनातपादिकमिति । छद्+सर्व-  
धातुभ्यः ष्ट्रन् इति ष्ट्रन् ] धर्मवृष्टिनिवारणार्थावरण-  
भेदः; आतपत्रं; छायामित्रं; पटोत्जं; आतपवारणं;  
राजछत्रं; 'छाता' इति भाषा । 'छत्रे कनकदण्डे तु  
रागशृङ्गमुदाहृतम् । नृपलक्ष्म भवेत्तत्तु यच्छत्रं पृथिवी-  
भुजाम्'—इति शब्दरत्नावल्याम् । पुं [ छद्+णिच्+  
ष्ट्रन् ह्रस्वश्च ] मूलेन पत्रेण च वचाकारवृक्षः; अति-  
च्छत्रः; कटुः; भूततृणं; 'कुकुरमुत्ता' इति भाषा । ४२३  
छत्रकः पुं. [ छत्रमिव कायति इति । कै+क ] अतिच्छत्रः;  
मत्स्यरङ्गपक्षी; ईश्वरगृहविशेषः । ८३१

छदः पुं. [ छदति आच्छादयतीति । छद्+अच् ] पत्रम्;  
'ततो न्यग्रोधमासाद्य महान्तं हरितच्छदम्'—इति  
रामायणे (२।५।५।६) । पक्षः (२३९); ग्रन्थिपर्ण-  
वृक्षः; तमालवृक्षः । १८५

छद्म [ न् ] क्ली. [ छद्यते आव्रियते स्वरूपमनेनेति ।  
छद्+सर्वधातुभ्यो मनिन् इति मनिन् ] कपटः;  
व्याजः; 'तं कर्णमूलमागत्य रामे श्रीन्यस्यतामिति ।  
कैकेयीशङ्कयेवाह पलितच्छयना जरा'—इति रघुवंशे

(१२१२)। शाठ्यम्; अपदेशः; स्वरूपाच्छादनम्। ७०९  
छन्दः [ स् ] क्ली. [ चन्दयति आह्लादयति, चन्दतेऽनेन  
वा। चदि आह्लादे+‘चन्देरादेश्च छः’ इति असुन्  
चस्य छश्च ] वेदः; ‘आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्द-  
सामिव’—इति रघुवंशे (११११)। स्वैराचारः;  
अभिलापः; ‘कामात्मकाश्छन्दसि कर्मयोगा एभिर्वि-  
मुक्तः परमश्नुवीत’—इति महाभारते (१२१२०११२)।  
नियतवर्णभात्रादिः शब्दगुणभेदः; पद्यम्। ९

छन्नः त्रि. [ छद्+क्त ] व्याप्तः; ‘न ह्या न रथो वीर !  
न यन्ता मम दारुकः। अदृश्यन्त शरैश्छन्नास्तथाहं  
सैनिकाश्च मे’—इति महाभारते (३।२०।२४)।  
छादितः; क्ली. रहः; निर्जनस्थानम्। ७०२

छलम् क्ली. [ छो+वृषादित्वात् कलच् । यद्वा छल्+  
अच् ] व्याजः; ‘सा वै मदालसा पुत्रं बालमुत्तानशायि-  
नम्। उल्लापनच्छलेनाह रुदमानमविस्वरम्’—इति  
भार्कण्डेये (२५।१०)। स्खलितं; शाठ्यम्; ‘धर्मण  
व्यवहारेण च्छलेनाचरितेन च। प्रयुक्तं साधयेदर्थं  
पञ्चमेन बलेन च’—इति मनुः (८।४९)। तात्पर्यान्त-  
रेण प्रयुक्तस्य शब्दस्यार्थान्तरेण कथनम्; ‘वचन-  
विधातोऽर्थविकल्पोपपत्त्या च्छलम्’—इति अक्षपाद-  
सूत्रे। ७०९

छागः पुं-स्त्री. [ छायते छिद्यते देवबलये इति । छो+  
‘छापूखडिभ्यः कित्’ इति गन् ] पशुविशेषः; वस्तः;  
छगलकः; अजः; स्तुभः; छगः; छगलः; छागलः;  
तभः; स्तभः; शुभः; लघुकामः; क्रयसदः; वर्करः;  
पर्णभोजनः; लम्बकर्णः; मेनादः; वुक्कः; अल्यायुः;  
शिवाप्रियः; अवुकः; मेध्यः; पशुः; पयस्वलः। ‘छागलो  
वर्करश्छागो वस्तोऽजश्छेकः शुभः। छागमांसं लघु  
स्निग्धं स्वादुपाकं त्रिदोषणुत्’—इति भावप्रकाशः। २७७

छात्रः पुं. [ छात्रं गुरोर्दोषाणामावरणं तच्छीलमस्येति ।  
‘छत्रादिभ्यो णः’ इति ण ] शिष्यः; ‘भूभुजा दानशौण्डेन  
पैत्रिके स्थण्डिले कृतः। छात्राणामार्थदेश्यानां तेन  
विद्यार्थिनां मठः’—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।८७)।  
क्ली. वरटाच्छत्रसम्भवं मधु; ‘वरटाः कपिलाः पीताः  
प्रायो हिमवतो वने। कुर्वन्ति छात्रकाकारं तज्जं छात्रं  
मधुस्मृतम्’—इति भावप्रकाशः। ४००

छान्दसः पुं. [ छन्दो वेदं अधीते वेत्ति वा। छन्दस्+

‘तदधीते तद्वेद’ इत्यण् ] वेदाध्येता; [ छन्द एवेति,  
स्वार्थे अण् ] वेदः; ‘मन्ये त्वां विषये वाचां स्नातमन्यत्र  
छान्दसात्’—इति भागवते (१।४।१३)। त्रि. [ छन्दसो  
व्याख्यानं, तत्र भवः, ‘छन्दसो यदणौ’ इत्यण्। छन्द-  
सोऽयम्, ‘तस्येदम्’ इत्यण् ] वेदसम्बन्धी; वेदभवः;  
स्त्रियां तु डीप्। ‘छान्दसीभिरुदाराभिः श्रुतिभिः सम-  
लङ्कृतः’—इति हरिवंशे (२।१५।७)। ३९५

छायात्तनयः पुं. [ छायायाः सूर्यपत्यास्तनयः पुत्रः ] शनिः;  
छायात्मजः; शनिग्रहः; छायासुतः। ४८

छिद्रम् क्ली. [ छिद्यते भिद्यते यत्। छिदिर्+ ‘स्फायित-  
ञ्चिवञ्चीति’ रक् ] भेदः; कुहरं; शुषिरं; विवरं;  
विलं; निर्व्यथनं; रोकं, रन्ध्रं; श्वभ्रं; वपा; शुषिः;  
स्वभ्रं; शुषी; ‘छेद’ इति भाषा। ‘ततो गच्छेत धर्मज्ञ !  
हिमवत्सुतमर्वुदम्। पृथिव्यां यत्र वै छिद्रं पूर्वमासीत्  
युधिष्ठिर !’—इति महाभारते ( ३।८२।५३ )।  
अवकाशः; नवमसंख्या; द्वयणम्; ‘वहुविघ्नश्च नृपते !  
ऋतुरेष स्मृतो महान्। छिद्राण्यस्य तु वाञ्छन्ति यज्ञान्ना  
ब्रह्माराक्षसाः’—इति महाभारते ( २।१२।२९ )।  
लग्नादष्टमस्थानम्; ‘छिद्राख्यमष्टमं स्थानम्’—इति  
ज्योतिस्तत्त्वम्। ६२४

छुच्छुन्दरो स्त्री. [ छुच्छुमित्यव्यक्तशब्दो दीर्यति निर्गच्छ-  
त्यस्याः। छुच्छुम्+द्+‘सर्वधातुम्य इन्’ ततः कृदि-  
कारादिति डीप् ] जन्तुविशेषः; गन्धमूषा; चिक्कः;  
वेरमनकुलः; पुंवृषः; गन्धमूषिकः; गन्धमूषिका;  
सुगन्धिमूषिका; गन्धशुण्डिनी; शुण्डिमूषिका; गन्वासुः;  
गन्वनकुलः; चुञ्चुः; छुच्छुन्दरिः। ‘अम्यङ्गान्नाशयेत्  
क्षिप्रं गण्डमालां सुदारुणाम्। छुच्छुन्दर्या विपक्वन्तु  
क्षणान्तैलवरं ध्रुवम्’—इति वैद्यके। २३५

छेकः त्रि. [ छद्यति वनवासादिदुःखं छिनत्ति नाशयतीति ।  
छो छेदने+बाहुलकात् डेकन् ] विदग्धः; गृहासक्त-  
पक्षिमृगौ; गृह्यकः; नागरः; शब्दालङ्कारविशेषः;  
अनुप्रासभेदः; ‘छेको व्यञ्जनसङ्घस्य सकृत्साम्यमने-  
कघः’—इति साहित्यदर्पणे (१०।४)। ३८५

छेदनम् क्ली. [ छिद्+भावे ल्युट् ] अस्त्रेण द्विधा करणं;  
वद्धनं; कर्तनं; कल्पनं; छेदः; ‘फलदानां तु वृक्षाणां  
छेदने जप्यमृक्षतम्’—इति मनुः (११।१४२)।  
नाशः; अपनोदनम्; ‘श्रुत्वाैव तु महारत्मानो मुनयोऽग्न्य-

द्रवन् द्रुतम् । सनत्कुमारं घर्मज्ञं संशयच्छेदनाय वै—  
इति महाभारते (३।१८।२४) । भेदः; [ छिनत्तीति ।  
छिद्+यु ] छेदके त्रि । 'प्रच्छन्नो वा प्रकाशो वा  
योगो योर्ऽरि प्रवाधते । तद्वै शस्त्रं शस्त्रविदां न शस्त्रं  
छेदनं स्मृतम्—इति महाभारते ( २।५४।९ ) ।  
'ज्वलनार्कप्रभं घोरं छेदनं सोमहारिणाम् । घोररूपं  
तदत्यर्थं यन्त्रं देवैः सुनिमित्तम्—इति महाभारते  
( २।५४।९ ) । ७२९

## ज

जगच्चक्षुः [ स् ] पुं. [ जगतां भुवनानां चक्षुरिव प्रकाश-  
कत्वात् ] सूर्यः; भानुः; 'इति काशीप्रभावज्ञो जगच्चक्षु-  
स्तमोनुदः । कृत्वा द्वादशघातमानं काशीपुर्यां व्यवस्थितः—  
इति काशीखण्डे ( ४६।४४ ) । ३७

जगत् क्ली. [ गच्छतीति, गम्+ 'द्युतिगमिजुहोतीनां  
द्वे च' इति क्विपि द्वित्वे च 'गमः क्वी' इति मलोपे तुक् ]  
विश्वः; जगती; लोकः; पिष्ट्यं; भुवनं, विष्ट्यं;  
संसारः; 'यदा स देवो जागर्ति तदेदं चेष्टते जगत् ।  
यदा स्वपिति शान्तात्मा तदा सर्वं निमीलति—इति  
मनुः ( १।५२ ) । पुं. वायुः [ गच्छति इतस्ततो वातीति ];  
महादेवः [ गच्छन्त्यस्मिन् जीवा इति ]; 'विमुक्तो  
मुक्ततेजाश्च श्रीमान् श्रीवर्द्धनो जगत्—इति महा-  
भारते ( १३।१७।१५१ ) । जङ्गमे त्रि । १३३

जगत्कर्ता [ ऋ ] पुं. [ करोतीति, कृ+तृच्, ततो जगतः  
कर्ता कारकः ] सृष्टिकर्ता; ब्रह्मा । ७

जगत्प्रायः पुं. [ जगतां विश्वस्यजीवानां प्राणो जीवनम् ]  
वायुः; समीरणः; सदागतिः; गन्धवहः; अनिलः;  
आशुगः; वातः; पवनः; मासतः । ७५

जगती स्त्री. [ गच्छति कार्यत्वात् नष्टा भवतीति । गम्+  
'वर्तमाने पृषद्वृहन्महज्जगच्छतृवच्' इति ङीप् ]  
पृथ्वी; 'तमायान्तं ततो देवी सर्वदेत्यजनेश्वरम् ।  
जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि—इति  
मार्कण्डेये ( ९।२२ ) । भुवनम् ( ७९४ ) ; 'स्वप्नेऽपि  
सागरं शुष्कं चन्द्रं च पतितं भुवि । उपरुद्धां च जगतीं  
तमसेव समावृताम्—इति रामायणे ( २।६९।११ ) ।  
जनः; छन्दोविशेषः; द्वादशाक्षरा वृत्तिः; त्रिष्टुप् च  
जगती चैव तथातिजगती मता—इति छन्दोमञ्जर्याम् ।

जम्बूद्वीपम् । १५९

जम्बूद्वीपः पुं. [ जगतां विनाशो ध्वंसः अखिलकार्यनाशः  
इत्यर्थः; यस्मिन् ] युगान्तः; प्रलयः । ११७

जम्बूद्वीपः पुं. [ जगतां नाथः ईश्वरः ] विष्णुः; नारा-  
यणः; 'देवदेव ! जगन्नाथ ! भूतभव्यभवत्प्रभो !  
तपश्चरसि कस्मात्त्वं किं ध्यायसि जनार्दन—इति  
देवीभागवते ( १।४।३६ ) । पुरुषोत्तमक्षेत्रम्; 'आवि-  
र्भूव भगवान् भूतभव्यभवत्प्रभुः । गत्वा देवं जगन्नाथं  
स्थापयिष्यति च प्रभो ! ' देवविशेषः; 'शालग्रामो  
हरेर्मूर्तिर्जगन्नाथश्च भारतम् । कलेर्दशसहस्रान्ते ययौ  
त्यक्त्वा हरेः पदम्—इति ब्रह्मवैवर्ते । पण्डितविशेषः ।  
अयं तैलङ्गदेशोद्भवः, एतद्विरचिता ग्रन्था यथा—  
रसगङ्गाधरः, यमुनावर्णनचम्पूः, रतिमन्मथनाटकं, वसु-  
मतीपरिणयनाटकं, जगदाभरणकाव्यं, प्राणाभरणका-  
व्यं, पीयूषलहरी, अमृतलहरी, सुवालहरी, करुणालहरी,  
लक्ष्मीलहरी, भामिनीविलासः, मनोरमाकुचमदिनी,  
वाक्वघाटीकाव्यम्, आसफविलासः । अमुना अन्तकाले  
छृतः श्लोको यथा 'केचिद् ब्रह्म निराकारं नराकारं च  
केचन । वयन्तु दीर्घयोगेन नीराकारमुपास्महे । २४

जम्बूद्वीपः पुं. [ जागर्ति संग्रामेऽनेनेति । जागृ+अप् । पृषो-  
दरादित्वात् साधुः ] कवचः; वारवाणः । ४५९

जम्बूद्वीपः स्त्री. [ अद् भक्षणो+क्तिन्, 'अदो जग्धिः'  
—इति जग्ध्यादेशः ] भक्षणम्; 'अदत्त्वा तु य एतेभ्यः  
पूर्वं भुङ्क्तेऽविचक्षणः । स भुञ्जानो न जानाति  
स्वगृध्रंजग्धिमात्मनः—इति मनुः ( ३।१।१५ ) । ३२५  
जम्बूद्वीपः क्ली. [ हन्यते, इति, हन्+ 'हन्तेः शरीरावयवे  
द्वे च' इत्यच् द्वित्वं च, 'अभ्यासाच्च' इति कुत्वम् ]  
स्त्रीकट्याः पुरोभागः; 'भाभिहृदैः परिगृहीतरथाणि  
यत्र स्त्रीणां बृहज्जघनसेतुनिवारितानि—इति माघे  
( ५।२९ ) । कटिः; 'भगवान् द्विगुणं चक्रे जघनं विस्मिता  
तदा । शीर्षं सन्दधतां तत्र जघने परमाद्भुते—इति  
देवी भागवते ( १।९।८१ ) । ५१२

जम्बूद्वीपः पुं. [ जघनकूपे इव कायतः इति । कृ+क ]  
कुकुन्दरी; कटिस्थसुद्रगती । ( द्विवचनान्तोऽयं शब्दः )

जम्बूद्वीपः त्रि. [ कुटिलं हन्यते निन्द्यते इति । हन्+यच्-  
न्तात् अचो यत् । यद्वा जघननिन्दं, 'शास्त्रादिभ्यो यत्'

—इति यत् ] गहितः; 'तत्र द्यूतमभवन्नो जघन्यं तस्मिन् जिताः प्रव्रजिताश्च सर्वे'—इति महाभारते (३।३।५।१३) । चरमः; 'उत्तमस्य पलं मात्रा त्रिभिर-रक्षश्च मध्यमे । जघन्यस्य पलाद्धेन स्नेहक्वाथ्योपघेषु च'—इति वैद्यके । [ जघने कटिदेशे भवं, दिगादित्वाद् यत् ] क्ली. मेहनम्; पुं. शूद्रः; हीनजातिमात्रम्; 'उत्तमां सेवमानस्तु जघन्यो वधमर्हति ।' 'हीनजाति-स्तृष्टजातीयां कन्यामिच्छन्तीमनिच्छन्तीं वा गच्छन् जात्यपेक्षयाऽङ्गच्छेदनमारणात्मकं वधमर्हति'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । पृष्ठभागः; 'ततो जघन्यं सहितैः स्वमन्त्रिभिः पुरप्रधानैश्च तथैव सैनिकैः । जनेन धर्मज्ञतमेन धर्मवानुपोपविष्टो भरतस्तदाग्रजम्'—इति रामायणे (२।१०।४।२९) 'जघन्यं जघनभागं पृष्ठभागमाश्रितः सन्'—इति तट्टीकायां रामानुजः । राजानुचरविशेषः; 'पञ्चापरे वामनको जघन्यः कुब्जोऽपरो मण्डलकोऽय सामी । पूर्वोक्तभूपानुचरा भवन्ति सङ्कीर्णसंज्ञाः शृणु लक्षणंस्तान् ।' 'मालव्य-सेवी तु जघन्यनामा खण्डेन्दुतुल्यश्रवणः सुगन्धिः । शुक्रेण सारः पिशुनः कविश्च रुक्षच्छविः स्थूलकराङ्गु-लीकः । क्रूरो घनी स्थूलमतिः प्रतीतस्ताम्रच्छविः स्यात्परिहासशीलः । उरोऽग्निहस्तेष्वसिंशक्तिपाशपर-श्वधाङ्कश्च जघन्यनामा'—इति बृहत्संहितायाम् (६९। ३१—३४) । ७७०

जङ्घा स्त्री. [ जङ्घन्यते कुटिलं गच्छतीति । हन्, यङ्-लुगन्तात्+ 'अन्येभ्योऽपीति' ड ] गुल्फोर्ध्वजान्वधो-भागः; प्रसृता; टङ्का; टङ्कः; टक्किका; 'पिडली'—इति भाषा । 'शत्रुनिमज्जता ग्राह्यो जङ्घायां प्रपतिष्यता'—इति महाभारते (५।१३।३।१९) । ५१५  
जङ्घालः त्रि. [ प्रसस्ता जङ्घास्त्यस्येति । जङ्घा+ 'सिध्यादिभ्यश्च' इति लच् । जङ्घाबलेनैव वेगस्य जननात्तयात्वम् ] अतिवेगवान्; अतिजवः; 'जाह्न-वीज्या जगन्माता जघ्या जङ्घालवीचिका'—इति काशीखण्डे । (२९।६४) । हरिणः; एणः; कुरङ्गः; ऋष्यः; पृपतः; न्यङ्कुः; शम्बरः; राजीवः; मुण्डी; 'जङ्घालाः प्रायशः सर्वे पितृश्लेष्महराः स्मृताः । किञ्चिद्वातकराश्चापि लघवो बलवर्धनाः'—इति भावप्रकाशः । ३५८

जटा स्त्री. [ जटति परस्परं संलग्ना भवतीति । जट्+ अच् । यद्वा जायते प्रादुर्भवतीति । जन+ 'जनेष्टन् लोपश्च'—इति टन् अन्त्यलोपश्च ] मूलम्; 'यदि न समुद्भ्रान्ति यतयो हृदि कामजटा, दुरधिगमोऽज्ञतां हृदि गतोऽस्मृतकण्ठमणिः'—इति भागवते । (५।३।२) व्रतिनां शिखा; लग्नकचः; शटा; जटिः; जटी; जूटः; जुटकं; शटं; कौटीरं; जूटकं; हस्तम्; 'नीलाः प्रसन्नाश्च जटाः सुगन्वा हिरण्यरज्जुप्रथिताः सुदीर्घाः'—इति महाभारते (३।११।२।२) । जटामांसी; नलदं; वह्निनी; पेयी; मांसी; कृष्णजटा; जटी; किरातिनी; जटिला; लोमशा; तपस्विनी; भूतजटा; पेशी; क्रव्यादिः; पिशिता; पिशी; पेशिनी; हिल्ला; मांसिनी; जटाला; नलदा; मेयी; तापसी; चक्र-वर्तिनी; माता; अमृतजटा; जननी; जटावती; मृगभक्ष्या; जडामासी; मिसी; मिसिः; मिसी; मिषिका; मिषिः; सुगन्धिद्रव्यविशेषः । १८३

जटाबन्धः पुं. [ जटानां बन्धः बन्धनम् ] जटाजूटः; व्रतिनां यतीनां वा जटाकलापः । १४

जठरः पुं.— क्ली. [ जायते गर्भो मलं वा अस्मिन्निति । जन्+ 'जनेररष्ठ च'—इति अर ठश्चान्तादेशः ] उद-रम्; 'पृष्ठतः सेवयेदर्कं जठरेण हुताशनम् । स्वामिनं सर्वभावेन परलोकममायाया'—इति हितोपदेशे (२। ४४) । पुं. देशविशेषः; 'आग्नेय्यां दिशि कोशल-कलिङ्गवङ्गोपवङ्गजठराङ्गाः'—इति बृहत्संहितायाम् (१।४।८) । 'अत ऊर्ध्वं जनपदान् निबोध गदतो मम । 'जठराः कुरुकाश्चैव सदशाणश्च भारत !'—इति महाभारते । पर्वतविशेषः; 'जठरदेवकूटो मेरुं पूर्वणा-ष्टादशयोजनसहस्रमुदगायती द्विसहस्रपृथुङ्गी भवतः'—इति भागवते (५।१६।२७) । उदररोगविशेषः; 'राजो जन्म बलीनाशो जठरे जठरेषु तु'—इति वाग्-भटः । 'कोष्ठादुपस्नेहवदन्नसारो निःसृत्य दुष्टोऽनिल-वेगानुन्नः । त्वचः समुब्रम्य शनैः समन्ताद्विधर्ममानो जठरं करोति'—इति सुश्रुते । ५१५

जठरम् त्रि. [ जटति एकत्री भवतीति । जट्+ बाहुलका-दर ठान्तादेशश्च ] कठिनम्; 'इदानीम् अस्माकं जठर-कमठपृष्ठकठिना, मनोवृत्तिस्तत् किं व्यसनिविमुखैश्च सपयसि'—इति शान्तिशतके (४।१३) । बद्धम् । ८२५



जडः त्रि. [ जलति वृद्धि कठोरीकरोति । जल् घातने + अच् ] अग्रजः; मूढः; 'अस्याः सर्गविधौ प्रजापति-  
रभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः, शृङ्गारैकरसः स्वयं नु मदनो  
मासो नु पुष्पाकरः । वेदाभ्यासजडः कथं नु विषय-  
व्यावृत्तकौतूहलो निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो  
मुनिः ।' मन्थरः ( ३८७ ); मूकः ( ६०९ ); 'नापृष्टः  
कस्यचिद् वृथाद् न चान्यायेन पृच्छतः । जानन्नपि हि  
मेधावी जडवल्लोक आचरेत्—इति मनुः ( २।११० ) ।  
हिमग्रस्तः; शीतलः; 'परामृशन् हर्षजडेन पाणिना  
तदीयमङ्गं कुलिशप्रणाङ्कितम्—इति रघुवंशे ( ३।  
६८ ) 'हर्षजडेन हर्षशिशिरेण—इति तट्टीकायां मल्लि-  
नाथः । वधिरः; 'उन्मत्तजडमूकाश्च ये च केचिन्निरि-  
न्द्रियाः—इति मनुः ( २।११० ) । 'अन्वो जडः पीठ-  
सर्पी सप्तत्या स्यविरश्च यः—इति मनुः ( ८।३९४ )  
'अन्वो वधिरः पङ्गुः सम्पूर्णसप्ततिवर्षः—इति तट्टी-  
कायां कुल्लूकभट्टः । निष्पन्दः; 'जडीकृतस्त्रयम्बक-  
वीक्षणेन वज्रं मूमुक्षन्निव वज्रपाणिः—इति रघुवंशे  
( २।४२ ) । मोहितः; 'अयं तं सवनाय दीक्षितः प्रणि-  
घानाद् गुरुराश्रमस्थितः । अभिपङ्गजडं विजज्ञिवान्  
इति शिष्येण किलान्वबोधयत्—इति रघुवंशे ( ८।७५ ) ।

३३६

जडक्रियः त्रि. [ जडस्य मोहितस्यैव क्रिया कार्यं यस्य ]  
दीर्घसूत्री; चिरक्रियः । ३८३

जटु क्ली. [ जायते वृक्षादिभ्य इति । जन् + 'फलि-  
पाटिनमिमनिजनामिति' उ, तोऽन्तादेशश्च ] वृक्ष-  
निर्यासविशेषः; राक्षा; लाक्षा; यावः; अलक्तः;  
द्रुमामयः; रक्षा; रभसः; कौटजा; क्रिमिजा; जतुका;  
जन्तुका; गवापिका; जतुकं; यावकः; रक्तः; अलक्त-  
कः; पलङ्कपा; कृमिः; वरवर्णिनी । 'जिघ्रन्  
सोऽस्य वसागन्वं सर्पिर्जतुपिमिश्रितम्—इति महाभारते  
( १।१४।१३ ) । ५५५

जत्रु क्ली. [ जायते बाहुरस्मात् । जन् + 'अश्र्वा-  
दयश्च' इति रु, नकारस्य तकारश्च ] जत्रुकं; स्कन्व-  
सन्धिः । ५२३

जनः पुं. [ जायते इति, जन् + अच् ] लोकः; 'अयं  
प्रवाते तुमूले निशि सुप्ते जने तथा । तदुपादीपयद्  
भीमः शते यत्र पुरोचनः—इति महाभारते ( १।१४।९।

९) । महर्लोकौदृश्वलोकः; पामरः; असुरविशेषः;  
'समुद्रान्तवासिनो जननाम्नोऽमुगान् अदितवान् जना-  
र्दनः ।' २८४

जनकः पुं. [ जनयति इति, जन् + णिच् + ण्वुल ] पिता;  
जनयिता; राजभेदः; स तु मिथिलाधिपतिः । 'एवं  
विदेहराजस्तु पूर्वको जनकोऽभवत् । मिथिनाम महा-  
वीर्यो येन सा मिथिलाभवत्—इति रामायणम् ।  
ऋषिविशेषः; वैद्यसन्देहभञ्जनग्रन्थस्य प्रणेता;  
'चकार जनको योगी वैद्यसन्देहभञ्जनम्—इति ब्रह्म-  
वैवर्ते ( १।१६।१९ ) । शम्भुरासुरस्य पुत्रविशेषः;  
'श्रुत्वा तु शम्भुराद्राक्यं सुतास्ते शम्भुरस्य च । सन्नद्धा  
निर्ययुर्हृष्टाः प्रद्युम्नवचकाम्यया । सेनस्कन्धोऽति सेनश्च  
सेनको जनकस्ततः—इति हरिवंशे ( १६।१४४ ) ।  
उत्पादके त्रि. । 'जनकः सर्वरोगाणां दुर्वारो दारुणो  
ज्वरः—इति ब्रह्मवैवर्ते ( १।१६।२७ ) । ५०४

जनङ्गमः पुं. [ जनेभ्यो गच्छतीति । 'गमश्च' इति खच्  
मुगागमश्च ] चाण्डालः; 'अववीज्जनङ्गम इवैव यदि  
हतवृषो वृषं ननु । स्पर्शमशुचिवपूरुहति न प्रतिमानना-  
न्तु नितरां नृपोचित्ताम्—इति माधे ( १।५।३५ ) । ५९८  
जननी स्त्री. [ जनयतीति । जनि + बाहुलकादिनि, कृदि-  
कारादिति वा डीप् । यद्वा 'कृत्यल्पुटो बहुलमिति' ल्युट्,  
टित्वाद् डीप् ] माता; प्रभूः; 'निरतिशयं गरिमाणं  
तेन जनन्याः स्मरन्ति विद्वांसः । यत् कमपि वहति गर्भं  
महतामपि यो गुरुर्भवति—इति पञ्चतन्त्रे ( १।३६ ) ।  
दया; जनीनामगन्धद्रव्यं; वृक्षनिर्यासविशेषः; 'लाक्ष'  
इति भाषा । 'पर्पटी रञ्जना कृष्णा जतुका जननी  
जनी । जतुकृष्णाग्निसंस्पर्शा जतुकृच्चक्रवर्तिनी—इति  
भावप्रकाशः । चर्मचटो; यूथिका; कटुका; मञ्जिष्ठा;  
अलक्तकः; जटामांसी । ५०४

जनपदः पुं. [ जनस्य लोकस्य पदम् आश्रयस्यानं यत्र ।  
जनः पदं वस्तु यस्येति वा ] देशः; राष्ट्रम्; 'त्यजेदेकं  
कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत् । ग्रामं जनपदस्यार्थे  
आरामार्थे पृथिवीं त्यजेत्—इति चाणक्यशतके ( ३।१ ) ।  
जनः । २८४

जनवादः पुं. [ जनेषु लोकेषु वादोऽप्रवादः ] जनप्रवादः;  
लोकाप्रवादः; कौलीनः; विगानः; वचनीयता;  
'भस्मपरुषेऽपि गिरिशे स्नेहमयी त्वमुन्वितेन सुभगासि ।

मोवस्त्वयि जनवादो यदोषधिप्रस्यदुहितेति—  
इति आर्यासप्तशत्याम् । १४७

जनश्रुतिः स्त्री. [ जनेभ्यः श्रुतिः श्रवणम् ] सत्यमसत्यं  
वा लोकप्रवादः; किंवदन्ती; 'पुंसां दर्शय सुन्दरि!  
मुखेन्दुमीषत्त्रपामपाकृत्य। जायाजितइति रूढा जनश्रुति-  
र्मे यशो भवतु'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३६५)। १४७

जनार्दनः पुं. [ समुद्रान्तर्वासिनो जननाम्नोऽमुरान् अदि-  
तवान् जनार्दनः । जन+अर्द गतौ याचने च, नन्द्यादि-  
त्वात् ल्यु। किं वा जनैर्लोकैरद्यते याच्यते पुरुषार्थानसौ  
जनार्दनः । कर्मणि ल्युट् । किं वा जननं जनः भावे घन् ।  
अर्दं, हिंसायाम् । जनं जन्म अर्दयति हन्ति भक्तस्य  
मुक्तिदत्त्वादिति जनार्दनः । किं वा जनान् लोकान्  
अर्दति हररूपेण संहारकत्वादिति जनार्दनः । किं वा  
जनयति उत्पादयति लोकान् ब्रह्मरूपेण सृष्टिकर्तृत्वा-  
दिति जनः; जनेर्षन्तात् पचाद्यच् । अर्दति हन्ति लोकान्  
हररूपेण संहारकारित्वादिति अर्दनः । जनश्चासौ  
अर्दनश्चेति जनार्दनः । किं वा जनान् लोकान् अर्दति  
गच्छति प्राप्नोति रक्षणार्थं पालकत्वादिति जनार्दनः ]  
विष्णुः; 'सशङ्खचक्राब्जगदं जनार्दनमिहो नमः । उपेन्द्रं  
गदिनं साविपपशङ्ख ! नमोऽस्तु ते'—इति पाद्मे ।  
'आरोग्यं भास्करादिच्छेद्वेदनमिच्छेद्भुताशानात् । ज्ञानं च  
शङ्करादिच्छेन्मुक्तिमिच्छेज्जनार्दनात्'—इति कर्मलोच-  
नम् । २३

जनाश्रयः पुं. [ जनानां लोकानाम् आश्रयः ] मण्डपः । २९८  
जनी स्त्री. [ जायते सन्ततिर्यस्यामिति । जन्+जनि-  
घसिन्म्यामिण् ] इतोण्, 'जनिवच्योश्चेति वृद्धिनिषेधः ।  
ततः 'कृदिकारादिति' डोच् ] ववूः; पुत्रववूः; सीमन्तिनी;  
नारी; स्त्री; [ जन्+भावे इण् ] उत्पत्तिः; [ जायते  
आरोग्यमनया, करणे इण् ] ओषधिभिन् ; जतुका;  
रजनी; जतुकृत्; चक्रवर्तिनी; संस्पर्शा; जतुका;  
जनिः; जननी; 'लाज' इति भाषा । ५०४

जन्तुः पुं. [ जायते उद्भवतीति । जन्+कमिमनिज-  
नीति' तु ] प्राणी; 'एकः प्रजायते जन्तुरेक एव प्रली-  
यते । एकोऽनु भुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम्'—इति  
मनुः (४।२४०) । मनुष्येषु बहुवचनान्तः । 'विशां  
गोपा अस्य चरन्ति जन्तवो द्विपञ्च यदुत चतुष्यदक्तुभिः'  
—इति ऋग्वेदे (१।९।५) । सोमकस्य राज्ञः पुत्र-

विशेषः; 'ततस्ता मातरः सर्वाः प्राक्शोशन् भृशदुःखिताः ।  
प्रावार्यं जन्तुं सहिताः स शब्दस्तुमुलोऽभवत्'—इति  
महाभारते (३।१२७) । ६२५

जन्म [ न् ] क्ली. [ जायते इति, जन्+सर्वधातुम्यो  
मनिन्' इति मनिन् ] उत्पत्तिः; जनुः; जननं; जनिः;  
उद्भवः; जन्मं; जनी; प्रभवः; भावः; भवः; सम्भवः;  
जनुः; प्रजननं; जातिः । 'शुभानामशुभानां च कर्मणा  
जन्म जायते । पुण्यक्षेत्रे च सर्वत्र नान्यत्र भुञ्जते  
जनाः'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिस्रष्टे । ८५०

जन्मम् क्ली. [ जायते इति, जन् याहुलकात् मन् ]  
उत्पत्तिः; [ अनन्तरं नाम्नीति मप्रत्यये जन्ममदन्तञ्च ।  
जन्ममदन्तमपीत्युणादाविति ] 'जन्मे पञ्चनवस्थिते  
कलहरिपुमयम्'—इति ज्योतिषे । ८५०

जन्म्यम् क्ली. [ जन्त्यते इति, जनि+तकिशसिचतियति-  
जनिम्यो यद्वाच्यः' इति यत् ] संग्रामः; 'तत्र जन्मं  
रधोर्धोरं पर्वतीयगणैरभूत्'—इति रघुवंशे (४।७७) ।  
हङ्; परीवादः; पुं. [ जायते जनयति वा, जन्+  
'भव्यगेयेति' कर्तरि यत् ] जनकः; महादेव; 'उग्रतेजा  
महातेजा जन्यो विजयकालवित्'—इति महाभारते  
(१३।१७।५६) । देहः; 'निवृत्तसर्वेन्द्रियवृत्ति विभ्रमः  
तुष्टाव जन्मं विसृजन् जनार्दनम्'—इति भागवते  
(१।१।३१) । [ जनस्य जल्पः इत्यर्थे जन्+मत-  
जनह्लादिति' यत् ] जनजल्पः; त्रि. [ जन्त्यते इति,  
जन्+णिच्+कर्मणि यत् ] उत्पाद्यः; 'जनकस्य  
स्वभावो हि जन्त्ये तिष्ठति निश्चितम् । यथा श्रीकृष्ण-  
पादाङ्कं कालीयवंशमस्तके'—इति ब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्ण-  
जन्मखण्डम् । 'जन्यानां जनकः कालो जगतामाश्रयो  
मतः'—इति भाषापरिच्छेदे (४५) । जनयिता;  
[ जनीं वधूं वहति प्रापयति वा, संज्ञायामिति साधुः ]  
नवोढाज्ञातिः; नवोढाभृत्यः; चरस्य स्निग्धः; स तु  
जामातृवत्सलः; [ जनाय हितः, यत् ] जनहितः । ४५०

जपा स्त्री. [ जपन्ति तान्त्रिका अनयेति । जप्+अप्  
तत्तष्टाप् ] प्रतिका; हरिखल्लभा; जवापुष्पवृक्षः;  
ओङ्गाख्या; रक्तपुष्पी; अकंप्रिया; रागपुष्पी;  
'ओङ्गपुष्पं जपा चाद्य त्रिसन्ध्या सारणा सिता । जपा  
संग्राहिणी केश्या त्रिसन्ध्या कफवातजित्'—इति भाव-  
प्रकाशः । ७३८ ।

जपाकुसुमसंकासा स्त्री. [ जपाकुसुम इव सम्यक् कासते शोभते । अच्. टाप् ] लोहिनी; रक्तवर्णा । ७३८ ।  
जम्पती पुं. [ जाया च पतिश्च । राजदन्तादिगणे पाठात् जायाशब्दस्य जम्भावो निपात्यते ] जायापती; दम्पती । द्विवचनान्तोऽयं शब्दः । १२० ।

जम्बालः पुं. [ जमु अदने+वाहुलकाद्वाल् । यद्वा जम्ब+भावे घञ्, जम्बं आलातीति, ला+क ] पङ्कः, कर्दमः; 'अवद्यजम्बालगवेषणाय कृतोद्यमानां खलसैरिभाणाम् । कवीन्द्रवसिर्जरनिर्झरिण्यां संजायते व्यर्थमनोरथत्वम्'—इति श्रीकण्ठचरिते (२।१०) ।  
शैवालः; केतकवृक्षः । ६७८ ।

जम्बीरः पुं. [ जम्बीर, निपातनाद् ह्रस्वः ] जम्बीरः । १९४ ।

जम्बीरः पुं. [ जम्यते भक्ष्यते इति, जमु+अदने, 'गम्भीरादयश्च' इति निपातनात् ईरन्प्रत्यये साधुः ] फलवृक्षविशेषः; दन्तशठः; जम्भः; जम्भीरः; जम्भलः; जम्भी; रोचनकः; शोवी; जाड्यारिः; दन्तहर्षणः; गम्भीरः; जम्बिरः; दन्तकर्षणः; रेवतः; वक्रशोवी; दन्तहर्षकः । 'जम्बीरमुष्णं गुर्वम्लं वातश्लेष्मविवन्वनुत् । शूलं कासकफश्लेष्मच्छदितृष्णामदोपजित् । आस्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमान्द्यकृमीन् हरेत् । स्वल्पजम्बीरिका तद्वत् तृष्णाच्छदिनिवारिणी'—इति भावप्रकाशः । मरुकः; अर्जकः; सितार्जकः; क्षुद्रपत्रतुलसी; 'खरपर्णस्तु जम्बीरः प्रस्यपुष्पः फणिज्जकः—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १९४ ।

जम्बुकः पुं. [ जमतीति, जमु भक्षणं+मृगय्यादयश्च' इति कुप्रत्यये निपातनात् साधुः । ततः स्वार्थे कन् ] शृगालः; 'एवं तेषु प्रयातेषु जम्बुको हृष्टमानसः । खादति स्म तदा मांसमेकः सन्मन्त्रनिश्चयात् । वरुणः; [ जम्बुः इव कायतीति, कै+क ] वृक्षविशेषः; त्रि. नीचः; श्योनाकप्रभेदः; सुवर्णकेतकी; 'केतकः सूचिकापुष्पो जम्बुकः क्रकचच्छदः । सुवर्णकेतकी त्वन्या लघुपुष्पा सुगन्विनी'—इति भावप्रकाशः । २२९ ।

जयन्तः पुं. [ जयतीति, जि+तृभृवहिवसीति' झच् ] ऐन्द्रिः; इन्द्रपुत्रः; पाकशासनिः; जयदत्तः; 'उमावृषाङ्गी शरजन्मना यथा यथा जयन्तेन शची-पुरन्दरी । तथा नृपः सा च सुतेन मागधी नन-

न्दस्तुस्तत्सदृशेन तत्समी'—इति रघुवंशे (३।२३) । विष्णुः; 'अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ।' [ अतिशयेनारीन् जयते जयहेतुरिति वा जयन्तः ] शिवः; 'सावित्रश्च जयन्तश्च पिनाकी चापराजितः । एते रुद्राः समाख्याता एकादश गणेश्वराः'—इति मात्स्ये (५।३०) । चन्द्रः; चन्द्रमाः; भीमः (एतन्नाम तु छयना विराटगृहवासकाले जातम्); जयो जयन्तो विजयो जयत्सेनो जयद्वलः । इति गुह्यानि नामानि चक्रे तेषां युधिष्ठिरः—इति महाभारते (४।५।३४) । उपेन्द्रः; 'मरुत्वांश्च जयन्तश्च मरुत्वत्या बभूवतुः । जयन्तो वासुदेवांश्च उपेन्द्र इति यं विदुः'—इति भागवते (६।६।८) । राज्ञो दशरथस्य मन्त्रिविशेषः; 'अष्टौ बभूवूर्वीरस्य तस्यामात्या यशस्विनः । शुचयश्चानु-रक्ताश्च राजकृत्येषु नित्यशः । वृष्टिर्जयन्तो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अकोपो धर्मपालश्च सुमन्त्र-श्चाष्टमोऽर्थवित्'—इति रामायणे (१।७।२-३) । पर्वतविशेषः; 'ततश्च पर्वताः सप्त केशवं समुपस्यताः । जयन्तो वैजयन्तश्च नीलो रजतपर्वतः । महामंरुः सकैलास इन्द्रकूटश्च नामतः'—इति हरिवंशे (१७०-१४) । ज्योतिषोक्तयात्रिकयोगविशेषः; 'यत्र स्वोच्च-गतश्चन्द्रो लग्नादेकादशे स्थितः । जयन्तो नाम योगोऽयं शत्रुपक्षत्रिणाशकृत् ।' पौडशाध्रुवकान्तर्गतध्रुवविशेषः; 'आदिताले जयन्तः स्यात् शृङ्गाररससंयुतः । रुद्र-संख्याक्षरपद आयुर्वृद्धिकरः परः'—इति सङ्गीत-दामोदरः । ५५

जरत् त्रि. [ जृ+अतृन् ] जीर्णं; पुरातनं; पुं. वृद्धः । ७११  
जरद्गवः [ जरश्चासी गौश्चेति । 'गौरतद्वितलुकि' इति टच् ] जीर्णवृषः; वृद्धोक्षः; 'अकृत्वा पौरुषं या श्रीः किं तयापि सुभांग्यया । जरद्गवः समश्नाति दैवाद्युपगतं तृणम्'—इति पञ्चतन्त्रे । [ जरन् क्षीयमाणो गौर्वृषरूपो धर्मः ] धर्मरूपजीर्णवृषः; 'नैतस्येह यथा-स्माकं शश्वच्छास्यं जरद्गवः । अलसः क्षुत्परो मूर्खस्तेन पीवाञ्छुना सह'—इति महाभारते (१३।९३।६८) । गृध्रपक्षिविशेषः; 'अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित् । मार्जारस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गवः'—इति हितोपदेशे । २६५

जरा स्त्री. [ जीर्णतनया । जृ+पिद्मिदादिभ्योऽङ्

इत्यङ्, 'ऋदृशोऽङि' इति गुणः ] वाद्धक्यं; विस्रसा; वयःकृतश्लथमांसाद्यवस्थाभेदः; कालकन्या [ जीर्यत्यनया जरा, जृष् वयोहानौ, पित्वाद्दङ्, इत्यमरटीकायां भरतः ] 'कालकन्या जरा साक्षात् लोकस्तां नाभिनन्दति । स्वसारजगृहे मृत्युः क्षयाय यवनेश्वरः'—इति भागवतम् । 'श्लक्ष्णीकृतं भृङ्गराजस्य चूर्णं तिलाद्धकम् आमलकाद्धकं च । सशकरं भक्षयते गुडैर्वा न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः ।' 'या च भार्या विरूपाक्षी कश्मला कलहप्रिया । वचनोत्तरवक्ष्त्री च सा जरा न जरा जरा'—इति चाणक्यः । क्षीरिकावृक्षः; राक्षसीविशेषः; 'अन्य-स्वाभयि भार्यायां शकले द्वे बृहद्रथात् । ते मात्रा वहि-रुसृष्टे जरया चाभिसन्धिते'—इति भागवतम् । ५०३

जरायुः पुं. [ जरामेतीति । जरा+इण्+किञ्जरयोः श्रौणः' इति ऋण् ] येन वेष्टितो गर्भः कुक्षौ तिष्ठति सः; गर्भवेष्टनचर्म; गर्भाशयः; उत्वं; कललः; 'या तु चमोक्तः सूक्ष्मा जरायुः सा निगद्यते'—इति महा-भागवते भगवत्गीता । ५०० ।

जतिलः पुं. [ जरन् यः तिलः; पृषोदरादित्वम् ] वनोद्भवतिलः; 'श्यामाकास्त्वथ नीवारा जतिलाः सगवेधुकाः । तथा वेणुयवाः प्रोक्तास्तद्वन् मर्कटका मुने !'—इति विष्णुपुराणे ( १।६।२५ ) । ५८३

जलम् क्लो. [ जलति जीवयति लोकान्, जलति आच्छाद-यति भूम्यादीनि । वा । जल्+पचाद्यच् ] पानीयं; पञ्चभूतान्तर्गतभूतविशेषः; आपः (स्त्रीलिङ्गबहुवचनान्तोऽपम्); वाः; वारिः; सलिलं; कमलं; पयः; कीलालम्; अमृतं; जीवनं; भुवनं; वनं; कबन्धम्; उदकं; पायः; पुष्करं; सर्वतोमुखम्, अम्भः; अर्णः; शोयं; नीरं; क्षीरम्; अम्बुः; सम्बरं; मेघपुष्पं; घनरसः; आपः (सान्तक्लीवोऽपम्); सरिलं; सलं; जडं; कम्; अन्वं; कपन्वम्; उदं; दकं; नारं; शम्बरम्; अम्ब्रपुष्पं; घनरसं; घृतं; पीपलं; कुशं; विषं; काण्डं; सवरं; सरं; कृपीटं; चन्द्रोरसं; सदनं; कर्बुरं; व्योम; सम्बः; सरः; इरा; वाजं; तामरं; कम्बलः; स्यन्दनं; सम्बलं; जलपीथं; क्षरम्; ऋतम्; ऊर्जं; कोमलं; सोमम् । 'जलं चतुर्विधं प्राहुर्न्तरी-क्षेद्भवं बुधाः । धारं च कारकं चैव तीषारं हैममित्यपि'—इति राजनिर्घण्टः । गोकलनं; ह्रीवैरम्; 'जलं

सकृष्णागुरुभृङ्गकेसरम्'—इति भाद्रप्रकाशः । त्रि. [ जलति आच्छादयति विनाशयति वा ज्ञानं बुद्धि-प्रतिभां वेति । जल्+अच् ] जडः; 'जाड्यविध्वंसन-करी जगद्योनिर्जलाविला'—इति काशीखण्डे ( २९। ६६ ) । 'जलानां जडानामज्ञानानामित्यर्थः अत्रित्वेव कलुषितेव आवृतेवेति वा'—इति तद्राका । ६८८ ।

जलचरः त्रि. [ चरेष्टः ] जलजन्तुः; जलचारो । ६५७ ।

जलचारो [ न् ] पुं. [ जले चरतीति, चर्+णिङ् ] मत्स्यः; त्रि. जलचरः; 'ददृशुः सहिता रम्य तडागं योजनायतम् । शरारिहंसकुरुरैरार्काणं जलचारिभिः'—इति रामायणे ( ३।१५।६ ) । ६५७ ।

जलदः पु. [ जल ददातीति, दा+क ] मुस्तकम्; 'अमृता-नागर-सहचर-भद्रात्कट-पञ्चमूल-जलदजलम् । शृतशीतं मधुयुक्तं निवारयति सूतिकातङ्गम्'—इति वैद्यके । मेघः; 'मार्गं तावत् शृणु कथयतस्त्वत्प्रयाणानुरुह्यं, सन्देशं मे तदनु जलद ! श्रोष्यसि श्रोत्रपेयम्'—इति मेघदूते ( १३ ) । शाकद्वीपान्तर्गवर्षावशेषः; 'द्रप्याणि तेषु कौरव्य ! सप्ताक्तानि मनोषिभिः । महामेरुमहाकायो जलदः कुमुदोत्तरः'—इति महाभारते ( ६।१।२२ ) । ६२२

जलदाद्वयः पु.—मुस्तकम्; मघास्यम् । ६२२

जलद्रोनी स्त्री. —अवग्रहः; 'बाल्टी' 'डोल' इत्यादि भाषा । ७५४ ।

जलपद्धतिः स्त्री.— [ जलस्य पद्धतः मार्गः ] प्रणाली; कुल्या । ६८५ ।

जलरङ्गुः पुं. [ जले रङ्गुरिष ] दात्यूहपक्षी; जलचर-विशेषः । २४९

जलराशिः पुं.—समुद्रः; जलधिः; अपानिधिः । ६५२

जलवायसः पु. [ जले वायसः काक इव, कृष्णवर्णत्वात् ] मद्गुपज्ञो । २५०

जलध्यालः पु. [ जलस्थितो व्यालो हिलजन्तुः ] अलगद-सर्पः; क्रूरकर्मा जलजन्तुः । ६४३ ।

जलशयनः पु. [ जले क्षीरोदसलिले शोते इति । क्षी+ल्यु ] विष्णुः; जलशयः; जलशायी । २२

'जलमव्य वराहं च जलशयनं च पापके'—इति पुराणे ।

जलशूकम् क्ली.—पुं. [ जले शूकं सूक्ष्माप्रमिव ] क्षेवालं; जम्बालम्; 'जलशकः स्वयं गुप्ता रजन्यौ बृहतीद्वयम्'—इति वाग्मटः । ६८३ ।

जलाधिदेवतम् क्ली. [ जलस्याधिदेवतम् अधिष्ठात्री देवता ] वरुणः; [ जलम् अधिदेवतं यस्य ] पूर्वाषाढानक्षत्रम् । ७४ ।

जलावतारः पुं. [ जले अवतरन्ति अनेन । घञ् ] जलाशय-सोपानमार्गः; तीर्थम्; 'स्नानार्थं घाट' इति भाषा ।

८६२

जलोच्छ्वासः पुं. [ जलानाम् उच्छ्वासः ] जलाशयं परिपूर्णं समधिकजलस्य सर्वतो वहनम्; समधिक-जलस्योपायैर्निष्कासनं; जलात्पुपचये पुष्करिण्यादावु-पायेन जलनिष्कासनं; सेतुभङ्गादि भयेन जलाशया-दुपायैर्जलवहिष्करणं; पुष्करिण्यादौ जलप्रवेशार्थमुपायः; परीवाहः । ६७७

जलौकसः [ स ] पुं. - स्त्री. [ जले ओको वासस्थानं येषाम् ] जलौकाः । सान्तवहवचनान्तोऽयम् । ६६१

जलौकसः पुं. - स्त्री. [ जलमेव ओको वासस्थानं तदस्त्य-स्येति, अर्शआदित्वादच् ] जलौकाः अकारान्तोऽयम् । ६६१

जलौकाः [ स् ] स्त्री. [ जलमेव ओको वसतिस्थानं यस्याः ] जलौका; 'जौक' इति भाषा । 'गृह्णाति साधुरपरस्य गुणं न दोषं दोषान्वितो गुणिगुणं परिहाय दोषम् । बालः स्तनात् पिबति दुग्धमसृग्विहाय त्यक्त्वा पयो हविरेमेव न किं जलौकाः ।' जलवासिनि त्रि. । यथा महाभारते ( १३।५०।१० ) 'जलौकसा च सत्त्वानां बभूव प्रियदर्शनः ।' ६६१

जलौका स्त्री. [ जलमेव ओकं वसतिस्थानं यस्याः ] रक्तपा; जलौकसः; जलूका; जलाका; जलौकाः; जलोरगी; जलायुका; जलिका; जलामुका; जल-जन्तुका; वेणी; जलालोका; जलौकसी; जलौकसं; जलौकसा; रक्तपायिनी; रक्तसन्दशिका; तीक्ष्णा; वमनी; जलजीवनी; रक्तपाना; बोधिनी; जल-सपिणी; जलसूचिः; जलाटनी; जलाका; जल-पटात्मिका; जलिका; जलालुका; 'जौक' इति भाषा । 'सिराविषाणतुम्बैस्तु जलौकामिः पदेस्तया । अवगाहं यथापूर्वं निर्हरेद् दुष्टशोणितम्'—इति सुश्रुते । ६६१

जवः पुं. [ जवनमिति, जु गतौ+भावे ल्युट् ] इति अच् । वेगः; 'यस्य बाहुबले तुल्यः प्रभावे च पुरन्दरः । जवे वायुमुखे सोमः क्रोधे मृत्युः सनातनः'—इति महाभारते ( ३।१४।१२१ ) । वेगवृत्ति-त्रि. । ४४३

जवनम् त्रि. [ जु गतौ+भावे ल्युट् ] वेगयुक्तम्; 'अपा-याज्जवनरद्वैः शाम्बवाणप्रपीडितः'—इति महाभारते ( ३।१६।१६ ) । क्ली. वेगः; पुं. [ जु+ 'जुचक्रम्येति' युच् ] वेगः वेगयुक्तावः; श्रीकारीनृगाः; घोटकः; स्कन्दस्य सैनिकविशेषः; 'शृणु नामानि चाप्येषां येऽप्ये स्कन्दस्य सैनिकाः ।' 'लोहाजवकत्रो जवनः कुम्भवकत्रश्च कुम्भकः'—इति महाभारते ( १।४५।७२ ) । ३५८

जवनिक्ता स्त्री. [ जवनं वेगेन प्रतिरोधनमस्त्यस्याः । जवन+ठन् टाप् च ] व्यवधायकवस्त्रं; प्रतिसीरा; तिरस्कारिणी; तिरस्कारिणी; अन्तःपटः; पटी; चित्रा; काण्डपटः; जवनी; अपटी; 'कनात्' इति भाषा । 'समीरशिशिरः शिरःसु वसतां सता जवनिक्ता निकाम-सुखिनाम्'—इति भाषे ( ४।५४ ) । ३०९ ।

जागरणम् क्ली. [ जागृ+भावे ल्युट् ] निद्रामावः; जागर्या; जागरा; जागरः; जाग्रिया; जागतिः; 'रात्रिजागरणात् श्रान्तः सौद्युम्निः समतीत्य तान्'—इति महाभारते ( ३।१२६।१२ ) । ६०३

जागरा, जागरः पुं.- स्त्री. [ जागृ निद्राक्षये+भावे घञ् ] 'जाग्रोऽविचीति' गुणः ] जागरणम्; 'प्रोञ्छति तवापरार्थं मानं मर्दयति निवृत्तिं हरति । स्वकृताभिहन्ति क्षपयान् जागरदीर्घा निशां सुभग'—इति आर्यासप्तशत्याम् ( ३६० ) । पुं. कवचः [ जागति जीवति संग्रामस्थले ऽनेनेति । जागृ+करणे घञ् ] । ६०३

जागर्या स्त्री. [ जागृ+ 'जागर्त्तरकारो वेति' यक् । 'जाग्रोऽविचीति' गुणः ] जागरणम् । ६०३

जाग्रिया स्त्री. [ जागृ+ 'जागर्त्तरकारो वा' इति पक्षे शस्ततो रिङादेशः ] जागरणम् । ६०३

जागुडम् क्ली. [ जागुडे तदाख्यया प्रसिद्धे देशे भव-मित्यण् ] कुङ्कुमं; देशविशेषः; 'अभिचैद्यमगाद्रथोऽपि शौरैरवानि जागुडकुङ्कुमाभित्तार्भः'—इति भाषे ( २०।३ ) । [ जागुडोऽभिजनोऽस्त्येत्यण् ] तद्देशवासिनि त्रि. । 'जागुडान् रामठान् मुण्डान् स्त्रीराज्यानप जङ्गान्'—इति महाभारते ( ३।५।१२४ ) । ५४३

जाङ्गलम् क्ली. [ जाङ्गलेषु स्थलजपशुविशेषेषु भवम् । जाङ्गल+अण् ] मांसम्; पुं. [ जङ्गले भवः, जङ्गल+अण् ] कपिञ्जलपक्षी; निर्वादिदेशः; 'स्वल्पोदकतृणो यस्तु प्रवातः प्रचुरातपः । स ज्ञेयो जाङ्गलो देशः बहु-

धान्यादिसंयुतः।' जङ्गलदेशोद्भवे त्रि. । स्थलज-  
पशुविशेषः; 'हरिणेणकुरङ्गर्ष्यपृषतन्यङ्कुशम्बराः।  
राजीवोऽपि च मुण्डी चेत्याद्या जाङ्गलसंज्ञकाः—इति  
राजवल्लभः। ६३१

जाङ्गुलिकः पुं. [ जाङ्गुलो विषप्रधानः सर्पादिप्राह्य-  
तयास्त्यस्येति । जाङ्गुल+ठन् ] व्यालप्राही; जाङ्गुलिः।

६१३

जातम् क्ली. [ जन्+कर्तरि क्त ] समूहः; 'अन्याहुति  
हावयितुं सविप्रारिचचीषयन्तोऽध्वरपात्रजातम्—इति  
भट्टिः। व्यक्तं; [ भावे क्तः ] जन्म; पुं. पारिभाषिक-  
पुत्रविशेषः; 'जातः पुत्रोऽनुजातरश्च अतिजातस्ययैव च।  
अपजातरश्च लोकेऽस्मिन् मन्तव्याः शास्त्रवेदिभिः। मातृ-  
तुल्यगुणो जातस्त्वनुजातः पितुः समः। अतिजातोऽधिक-  
स्तस्मादपजातोऽधमाधमः—इति पञ्चतन्त्रे (१४४१-  
४४२) । उत्पन्ने त्रि. । 'कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न  
विद्वान् न धार्मिकः। काणेन चक्षुषा किं वा चक्षुःपीडैव  
केवलम्—इति हितोपदेशे (११४) । ६८७

जातरजाः [ स् ] स्त्री. [ जातमृत्यसं रजः यस्याः ]  
राका (कन्या); रजस्वला। ४८८

जातरूपम् क्ली. [ जातं प्रशस्तं रूपं यस्य स्वर्णम्;  
'पुनश्च याचमानाय जातरूपमदात् प्रमुः—इति भाग-  
वते (११७।३९) । घुस्तूरः; त्रि. उत्पन्नरूपः; 'न  
जातरूपच्छदजातरूपता द्विजस्य दृष्ट्येमिति स्तुबन्  
मुहुः—इति नैषधे (११२९) । १७३

जातवेदाः [ स् ] पुं. [ विद्यते लभ्यते इति । विद्  
लामे+असुन् । जातं वेदो धनं यस्मात् ] अग्निः;  
'पावनात् पावकश्चासि वहनाद्व्यवाहनः। वेदास्त्व-  
दर्थं जाता वै जातवेदास्ततो ह्यसि—इति महाभारते  
(२।३।१४१) । चित्रकवृक्षः; [ जाते जाते, सर्व-  
प्रपञ्चस्य स्वस्मिन् अध्यस्ततया विद्यते यो जीवरूपः।  
यद्वा जातानि सर्वाणि कारणत्वेन विदन्ति यमिति।  
विद् ज्ञाने+असुन् ] अन्तर्यामी परमेश्वरः; 'परोरजः  
सवितुर्जातवेदो देवस्य भर्गो मनसेदं जजानः—इति  
भागवते (५।७।१४) 'जातं वेदो धनं कर्मफलं यस्मात्,  
कर्मफलदमित्यर्थः—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ६३  
जातिः स्त्री. [ जायतेऽयामिति । जन्+अधिकरणे क्तिन्  
वा । जन्+भावे क्तिन् ] मालती; 'बमेली' इति

भाषा 'जातिर्जाती च सुमना मालती राजपुत्रिका।  
चेतिका हृद्यगन्धा च सा पीता स्वर्णजातिका—इति  
भावप्रकाशः। गोत्रं; जन्म; अश्मन्तिका; आमलकी;  
सामान्यं; तत्तु ब्राह्मणक्षत्रियवैदयसूत्रात्मकम्। छन्दः;  
जातीफलं; जातीकोषं; जातिफलं; जातिसस्यं; शालुकं;  
जातिसारं; 'जायफलं—इति भाषा। काम्पिल्लः;  
गोत्वादिः; 'आकृतिग्रहणाजातिलिङ्गानां च न  
सर्वभाक्। सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या गोत्रं च चरणैः सह'  
—इति सिद्धान्तकौमुदी। २०५

जातिमात्रोपजीवी [ न् ] पुं. [ जातिमात्रेण, ब्राह्मण-  
त्वनाम्नैव, न तु कर्मणा, जीवति यः । णिनि ] ब्राह्मण-  
श्रुवः; निन्दितब्राह्मणः। ४०६

जाती स्त्री. [ जन्+क्तिन् ततो वा डीप् ] जातीपुष्पं;  
सुमनाः; सुरभिगन्धा; सुरप्रिया; चेतकी; सुकुमारा;  
सन्ध्यापुष्पी; मनोहरा; राजपुत्री; मनोज्ञा; मालती;  
तैलभाविनी; जनेष्टा; हृद्यगन्धा। 'पुष्पेषु जाती  
नगरीषु काञ्ची—इति उद्भटः। २०५

जात्यः त्रि. [ जाती भवः इति, यत् ] कुलीनः; श्रेष्ठः;  
'स्वजात्यानधिपिष्ठामि नक्षत्राणीव चन्द्रमाः—इति  
महाभारते (१३।१६।९)। कान्तः; 'अतीव स जायते  
जातिमध्ये महामणिर्जात्य इव प्रसन्नः—इति महाभारते  
(५।३३।२२२)। ८३६

जानु क्ली. [ जायते इति, जन्+द्वसनिजनिचरिचटिम्यो  
बुण् इति बुण् ] ऊरुजङ्घयोर्मध्यभागः; ऊरुपर्वः;  
अष्ठीबत्; अष्ठीवान्; चक्रिका; 'घोट्ट' इति भाषा।  
'तस्य जानु ददौ भीमो जघ्ने चैनमरस्मिना—इति  
महाभारते (४।३२।३९)। ५१५

जाबालः पुं. [ जवम् आलाति, क, जवालः अजः, तस्या-  
यम्। अथवा जबालाया अपत्यं पुमानिति, अण् ]  
अजाजीवः; मुनिविशेषः; जाबालिः; 'जाबालो  
याजलिः पैलः करयोऽगस्त्य एव च। एते वेदाङ्ग-  
वेदज्ञाः षोडश व्याधिनाशकाः—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।९।  
१४)। उपनिषद्विशेषः; 'ब्रह्मकैवल्यजाबालश्चेताश्रयो  
हस आरुणिः—इति मुक्तिकोपनिषदि। दर्शनशास्त्र-  
विशेषः; 'अधीत्य कूटजाबालं शार्गलीं योनिभान्पुयात्'  
—इति रामचन्द्रदत्तशापप्रकरणे। ३८१

जामाता [ ऋ ] पुं. [ जायां माति मिमीते मिनीति

वा । 'नन्नेष्टदष्टहानृपात्त्रातृजामात्रिति' निपात-  
नात् साधुः । दुहितृपतिः; 'जामाता त्वभवत्तस्य कंस-  
स्तास्मिन् हते युधि'—इति हरिवंशे (११६।२५) ।  
सूर्यावृत्तेः; वक्रः । ५०५

जामिः स्त्री. [ जम्+इञ् । इन् निपातनात् साधुरित्ये-  
के ] स्वसा; भगिनी; कुलस्त्री (७९२); 'शोचन्ति  
जामयः यत्र विनश्यत्याद्यु तत्कुलम्'—इति मनु  
(३।५७) । ५०७ ।

जामी स्त्री. [ जामि+वाङीप् ] जामिः; 'जामीशप्तानि  
गर्हानि निष्कृत्तानीव कृत्यया'—इति महाभारते (१३।  
४६।७) । ५०७

जाम्येयः पुं. [ जाम्या अपत्यमिति, 'स्त्रीम्यो ढक्'—इति  
ढक् ] भागिनेयः; भगिनीसुतः; 'भानजा' इति भाषा ।  
५०७

जाम्बूनदम् क्ली. [ जम्बूनद्यां भवमिति, अण् ] स्वर्णं;  
घुस्तूरः; स्वर्णविशेषः; यथा भागवते—'भेरुमन्दर-  
पर्वतस्थजम्बूफलानामत्युच्चनिपातनविशोर्णानाम् अन-  
स्थिप्रायाणाम् इभकायनिभानां रसेन जम्बूनामनदी  
इलावृतं वहति । तस्या उभयोस्तीरयोर्मृत्तिका जम्बू-  
सेनानुविध्यमाना वाय्वर्कसंयोगविपाकेन सदा मरलोका-  
भरणं जाम्बूनदं नाम स्वर्णं भवति ।' १७४

जाया स्त्री. [ जायते पुत्ररूपेणात्मास्यामिति । जन्+  
यक् आत्वञ्च ] भार्या; 'पतिर्भाषी संप्राविश्य गर्भो  
भूत्वेह जायते । जायायास्ताद्वि जायात्वं यदस्यां जायते  
पुनः'—इति मनुः (१।८) । ४९४

जायाजीवः पुं. [ जाया आजीवः जीवनोपायो यस्य इति,  
जायया जीवतीति वा । जीव्+अच् । जायायाः  
सङ्गीतनर्तनादिना जीवनादस्य तथात्वम् ] नटः;  
वक्रपक्षी; वेद्यापतिः । ५९२

जायापती पुं. [ जाया च पतिश्चेति तौ ] भार्यापती;  
दम्पती । नित्यद्विवचनान्तोऽयम् । १२०

जायुः पुं. [ जयति रोगान् इति, जि+उण् ] औषधं;  
[ जयतीति ] वि. जयशीलः । ६१३

जारः पुं. [ जीर्यति स्त्रियाः सतीत्वमनेन । जृ+करणे  
घञ् ] उपपतिः; 'जारं चौरैत्यभिवदन् दाप्यः पञ्चशतं  
दमम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।३०) । जारयति  
नाशयति इति, जृ+णिच्+अञ् ] हन्ता; 'यमो ह जातो

यमो जनित्वं जारः कनीनां पतिर्जनीनाम्'—इति  
ऋग्वेदे (१।६६।४) । ३८४

जालम् क्ली. [ जलयते आच्छाद्यतेऽनेनेति । जल संव-  
रणे+करणे घञ् । यद्वा जले क्षिप्यते इति, जल्+  
'शेषे' इत्यण् ] गवाक्षः; 'प्रासादजालैर्जलवेणिरम्यां  
रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः'—इति रघुवंशे (६।४३) ।  
(५९४) आनायः; जालकं; सूत्रादिनिर्मितमत्स्यादि-  
धारणोपायः; 'वंशावलम्बनं यद् यो विस्तारो गुणस्य  
यावनतिः । तज्जालस्य खलस्य च निजाङ्गसुप्तप्रणा-  
शाय'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५८) । समूहः  
(६८७); 'ततो घनुष्कर्षणमूढहस्तम् एकांशपर्यन्तशि-  
रस्त्रजालम्'—इति रघुवंशे (७।६२) । दम्भः (८०४);  
क्षारकः; स तु अस्फुटकालिका कूष्माण्डादिक्षुद्रफलं च ।  
वंशलीहादिनिर्मितजालवद्द्रव्यविशेषः; 'अन्तर्निविष्टो-  
ज्वलरत्नभासो गवाक्षजालैरभिनिष्पतन्त्यः'—इति  
भट्टिः । पुं. [ जालयति शाखाप्रशाखादिभिः संवृणातीति,  
जल् संवरणे+णिच्+ 'नन्दिग्रही' त्यच् ] कदम्बवृक्षः ।  
३०४

जालकम् क्ली. [ जल् संवरणे+भावे घञ् । जालेन  
ईपदावरणेन कायति प्रकाशते इति । जाल+कं+क ।  
स्वार्थे कन् वा ] कोरकः; पुं. गवाक्षः (३०४);  
अस्फुटकालिका; 'तामुत्याप्य स्वजलकणिका शीतले-  
नानिलेन प्रत्याश्वस्तां सममभिनर्वजालकैर्मालतीनाम्'  
—इति मेघदूते (९९) । कूष्माण्डादिक्षुद्रफलं; क्षारकः;  
दम्भः; कुलायः; आनायः; 'दृष्टिर्भृशं विह्वलति  
द्वितीयं पटलं गते । मक्षिकान् मशकान् केशान् जाल-  
कानि च पश्यति'—इति सुश्रुते । समूहः; 'वदं कण-  
शिरीषरोधि वदने घर्माभसां जालकं, वन्धे त्र्यंशिते  
चैकहस्तयमिताः पर्याकुला मूर्द्धजाः'—इति शाकुन्तले  
प्रथमाङ्के । वंशलीहादिनिर्मितजालाकृतिद्रव्यविशेषः;  
'ततो यष्टि शलाकाञ्च जालकं पञ्जरं तथा । वभञ्ज  
लुब्धको दीनां कपोतीं च मुमां च ताम्'—इति पञ्च-  
तन्त्रे (३।१७।९) । क्ली.—स्त्री. मोचकफलं; पुं.  
[ जालेन वंशलीहादिनिर्मितजालाकृतिद्रव्यविशेषेण काय-  
तीति ] गवाक्षः । १८६

जालिकः पुं. [ जालेन जीवतीति । जाल+ 'वेतनादिम्यो  
जीवति' इति ठन् । यद्वा जालेन चरतीति, 'पर्पादिम्यः

ष्ठन्' इतिष्ठन्] मर्कटकः; मर्कटः; ऊर्णनाभः; लूता;  
एन्द्रजालिकः (३४९); कैवर्तः; (५९४) वागुरिकः;  
जालेन मृगवन्धनकर्ताः त्रि. ग्रामजाली; जालोपजीवी।

२५६

जालिका स्त्री. [ जालं जालवदाकृतिरस्ति अस्याः ।  
जाल+ 'अत इनिठनी' इति ठन् ] भटानामश्मरचिताङ्ग-  
रक्षिणी; वस्त्रविशेषः; गिरिसारः; [ जलमेवेति स्वार्थे  
अण्, ततो जालं सलिलम् उत्पत्तित्वेनास्त्यस्या इति,  
ठन् ] जलीकाः; 'जोक' इति भाषा। विथवा। ४५९  
जाल्मः वि [ जालयति द्वरीकरोति हिताहितज्ञानमिति ।  
जल्+णिच्+वाहुलकात् म ] मूर्खः; पामरः; 'क्षणं  
विश्रम्यनां जाल्म ! स्कन्धं ते यदि बाधति । न तथा  
बाधते स्कन्धं यथा बाधति बाधते ।' क्रूरः; असमीक्ष्य-  
कारी; 'स्वयि पूजनं जगति जाल्म ! कृतमिदमपाकृते  
गुणैः । हासकरमेघटते नितरां शिरसीव कङ्कतमपेत-  
मूर्धजे'—इति माघे (१५।३३) । ३३६

जाहकः पुं. [ पुनः पुनः जहाति मूपकादि भक्षणलीलार्थम्  
इति भावः । यद्गलुगन्तादोहाक् त्यागे इत्यस्माद् ल्यु ]  
विडालविशेषः; गन्धमाजरीः; गात्रसङ्कोची; मण्डली;  
बहुरूपकः; कामरूपी; विलुपी; बिलवासः; विलेशय-  
जन्तुविशेषः; घातकः; मार्जारः; खट्वा; कारुण्डिका।

२३६

जाह्ववी स्त्री. [ जह्वोरप्यं स्त्री, जह्वु+अण्+ङीप् ]  
गङ्गा; 'जानुद्वारा पुरा दत्त्वा जह्वुः संवीय कोपतः ।  
तस्य कन्यास्वरूपा च जाह्ववी तेन कीर्तिता'—इति  
ब्रह्मवैवर्तखण्डे । ६७३

जिघत्सा स्त्री. [ अनुमिच्छा । अद् भक्षणे+सन्+अ,  
'लुङ्सतोर्धेन्लृ' इति घन्ल् ] क्षुधा; बुभुक्षा। ३६१  
जिघत्सुः त्रि. [ अत्तुमिच्छुः । अद्+सन्, घसादेशः,  
'सनाशंसभिक्ष उः' ] क्षुधितः; बुभुक्षितः। ३६०

जिघांसुः पु. [ हन्तुमिच्छुः । हन्+सन्, 'सनाशंसभिक्ष उः' ]  
शत्रुः; घातेषुः; हननेच्छी त्रि. । 'प्रशान्तचेष्टं हन्ति  
जिघांसुः'— इति भट्टिः । 'जिघांसवः क्रोधवशाः सुभीमा  
भीमं समन्तात् परिवद्रुष्याः'—इति महाभारते (३।  
१५४।१८) । ४५५

जितकाशी [ न् ] त्रि. [ जितेन जयेन काशते इति ।  
काश्+णिनि ] जययुक्तः; जिताहवः; 'अनिरुद्धं रणे

वासो जितकाशी मंहाबलः । वाच प्रांवाच संक्रुद्धो  
गृह्यतां हन्यतामिति'—हरिवंशे (१७५।१४१) । ४७९  
जिताहवः पुं. [ जित आहवो युद्धं येन ] जितकाशी;  
जययुक्तः । ४७९

जिनः पुं. [ जयतीति । जि+ 'इण्पिञ्जीति' नक् ]  
विष्णुः; बुद्धः (८५); अहंन्; अतिवृद्धः; जित्वरे  
त्रि. । २५

जिनेन्द्रः पुं. [ जिनानाम् इन्द्रः ] बुद्धः; अहं द्विशेषः । ८६  
जिष्णुः पुं. [ जयतीति, जि जये+ 'ग्लान्जिस्वश्च र्स्तुः'  
—इति रस्तु ] विष्णुः; 'विष्णुविक्रमणाद्देवो जयना-

ज्जिष्णुश्च्यते । शाश्वतत्वादनन्तश्च गोविन्दो वेदनाद्-  
गवाम्'—इति महाभारते (४।४२।२१) । इन्द्रः  
(५२); 'जयंश्च जिष्णुश्चामित्रा जयतामिन्द्रमेदिनी'  
—इति अथर्ववेदे (११।१।१८) । अर्जुनः; 'अहं  
दुरापो दुर्द्धपो दमनः पाकशासिनः । तेन देवमनुष्येषु  
जिष्णुर्नामास्मि विश्रुतः'—इति महाभारते (४।४२।  
२१) । भौतस्यस्य मनोः पुत्राणामन्यतमः; 'तरङ्ग-  
भीरुवर्ष्मश्च तरस्वानुग्र एव च । अभिमानी प्रवीरश्च  
जिष्णुः संक्रन्दनस्तथा । तेजस्वी सबलश्चैव भौतस्यस्यैते  
मनोः सुताः'—इति हरिवंशे (७।८८) । जेतारि त्रि. ।  
'इति जित्वा दिशी जिष्णुर्गर्वतंतं रथोद्धतम् । रजो  
विश्रामयन् राज्ञां छत्रशून्येषुमालिपु'—इति रघुवंशे  
(४।८५) । २५

जिह्वः त्रि. [ जहाति परित्यजति सारत्यमिति । हा+  
'जहातेः सन्वदालोपश्च' इति मन् ] मन्दः; कुटिलः  
(६९६); 'सक्रोवामर्षजिह्वभ्रुकपायीकृतलीचनाः'  
—इति महाभारते (१।१०२।१८) । क्ली. तगरवृक्षः । ३८७

जिह्वगः पुं. [ जिह्वं कुटिलं वक्रमित्यर्थः, यथा स्यात्  
तथा गच्छतीति, गम+ङ ] सर्पः; 'स लब्ध्वा दुर्लभां  
भार्यां पश्चकिञ्जल्कवर्चसम् । व्रतं चक्रे विनाशाय  
जिह्वगानां धृतव्रतः'—इति महाभारते (१।१।१९) ।  
[ जिह्वं मन्दं गच्छतीति ] मन्दगे त्रि. । ६४१

जिह्वा स्त्री. [ जयति रसमनयेति । जि+ 'शेवायह्व-  
जिह्वाप्रीवाप्वामीवाः'—इति वनप्रत्ययेन हुगागमे  
निपातनात् साधुः ] अर्चिः; (५२१) रसज्ञानेन्द्रियं;  
रसज्ञा; रसना; रशना; रसनः; जिह्वः; रसालः;  
सुवाल्लवा; रसिका; रसाङ्का; रसा; लोला; रसाला;



रसला; ललना । 'जिह्वे ! कीर्तय केशवं मुररिपुं  
चेतो ! भज श्रीवरं, पाणिद्वन्द्व ! समर्चयाच्युतकथां  
श्रोत्रद्वय ! त्वं शृणु । कृष्णं लोकय लोचनद्वय ! हरे-  
गच्छाङ्घ्रियुग्मालयं, जिघ्र घ्राण ! मुकुन्दपादतुलीं  
मूर्द्धन्नमाधोक्षजम्—इति मुकुन्दमालायाम् । ६७

**जीमूतः** पुं. [ जीवनं जलं मूत्रयति स्त्रावयतीति । पृषो-  
दरादित्वम् ] मेघः; 'राजानमन्वयुः पश्चाज्जीमूता इव  
वापिकाः—इति महाभारते (६।१९।३१) । [ जयति  
आकाशमिति । जि+ 'जेर्मूदोदात्तः—इति क्त,  
मूडागमो घातोर्दीर्घश्च ] पर्वतः (७९५); 'जीमूतो  
द्रावणश्चैव मैनाकश्चन्द्रपर्वतः । आयतास्ते महाशैलाः  
समुद्रं दक्षिणं प्रति—इति मत्स्यपुराणे (१२०।७५) ।  
मुस्ता; देवताडवृक्षः; इन्द्रः; भूतिकरः; घोषकलता;  
'वामार्गवमयेक्ष्वाकुं जीमूतं कृतवेधनम्—इति चरके ।  
सूर्यः; 'वरुणः सागरोऽभुंश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा'  
—इति महाभारते (३।३।२२) । ऋषिविशेषः;  
'जीमूतस्यात्र विप्रर्वैरुपतस्थे महात्मनः—इति महाभारते  
(५।११।२४) । मल्लविशेषः; 'ततस्तु वृत्रसङ्काशं  
भीमो मल्लं समाह्वयत् । जीमूतं नाम तं तत्र मल्लं  
विख्यातविक्रमम्—इति महाभारते (४।१२।२२) ।  
दशार्हस्य पौत्रः; 'दशार्हस्य सुतो व्योमा व्योमनो जीमूत  
उच्यते—इति हरिवंशे (३।२।२५) । वपुष्मत्पुत्रः;  
'शाल्मलस्येश्वराः सप्त सुतास्ते तु वपुष्मतः । श्वेतश्च  
हरितश्चैव जीमूतो रोहितस्तथा ।' ऊनचत्वारिंश-  
दक्षरवृत्तिविशेषः; छन्दोभेदः, यथा—'III, III, S, S, S,  
S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S, S'  
५८

**जीरकः** पुं. [ जीर+संज्ञायां कन् ] वणिग्द्रव्यविशेषः;  
जरणः; अजाजी; कणा; जीर्णः; जीरः; दीप्यः; जीरणः;  
अजाजिका; वह्निशिखः; मागधः; दीपकः; 'जीरा' इति  
भाषा । 'जीरको जरणेऽजाजी कणा स्यादीर्घजीरकः ।  
कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गारशोधनः—इति  
भावप्रकाशः । ६१६

**जीरणः** पुं. [ जीरकः पृषोदरादित्वात् कस्य णः ] जीरकः;  
'जीरा' इति भाषा । ६१६

**जीणः** त्रि. [ जीर्णंतीति, जृ+ 'गत्यर्थिकर्मकश्लिषेति'  
कर्तरि क्त ] पुरातनः; 'तत्याज देहं धर्मात्मा देही जीर्ण-  
मिवाम्बरम्—इति देवीभागवते । 'वासांसि जीर्णांनि

यथा विहाय—इति भगवद्गीतायाम् । वृद्धः; गत-  
बहुवयाः; जराविशिष्टः; पक्वः; पाकविशिष्टः;  
'जीर्णमन्नं प्रशंसीयात् भार्याञ्च गतयीवनाम् । रणात्  
प्रत्यागतं शूरं सस्यं च गृहमागतम्—इति चाणक्यः  
(७९) । पुं. [ जीर्णंतीत्यनेनेति । जृ+करणे क्त ]  
जीरकः; वृक्षः; क्ली. [ जीर्णंति स्मेति, जृप् वयोहानी+  
गत्यर्थेति क्त, निष्ठातस्य नत्वम् ] शैलजः; वयः प्रकार-  
विशेषः; 'तद्वयो यथा स्थूलभेदेन त्रिविधम् । बालं  
मध्यं जीर्णमिति—चरके । ५५०, ७११

**जीवः** पुं. [ जीवनमिति, जीव्+वाहुलकाद् भावे घञ् ]  
असुधारणम्; 'त्वमेव चिन्तय सखि ! नोत्तरं प्रतिभाति  
मे । स्वकार्ये मुह्यते लोको यथा जीवं लभाम्यहम्—  
इति हरिवंशे (१७।४।३) । [ जीवयति मन्त्रीपध्या-  
दिना शिष्यान् ] वृहस्पतिः; 'अस्माल्लिङ्गार्चनास्त्रित्यं  
जीवभूतोऽसि मे यतः । अतो जीव इति ख्यातिं त्रिपु  
लोकेषु यास्यसि—इति काशीखण्डे (१७।४४) ।  
[ जीवतीति, जीव् प्राणधारणे+ 'इगुपधञेति' क ]  
प्राणी; 'अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम् ।  
फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्—इति  
भागवते (१।१३।४४) । वृत्तिः; वृक्षविशेषः; महा-  
निम्बवृक्षः; 'महानिम्बः स्मृतोद्रेका रम्यको विपमुष्टिकः ।  
केशामुष्टिनिम्बकश्च कार्मुको जीव इत्यपि—इति भाव-  
प्रकाशः । कर्णः; क्षेत्रज्ञः; आत्माः; पुरुषः; पुद्गलः;  
अन्तर्यामीः; ईश्वरः; 'कर्मणा जीवरूपश्च सन्ततं तत्फल-  
प्रदः । कर्मरूपश्च भगवान् श्रीकृष्णः प्रकृतेः परः—इति  
ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिलखण्डम् । [ जीवयति लोकानन्तर्या-  
म्यात्मकरूपेणेति । जीव्+णिच्+अच् ] विष्णुः; 'जीवो  
विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः—इति महा-  
भारते (१३।१५९।६९) । जीवनविशिष्टे त्रि. ।  
'मृते वा त्वयि जीवे वा यदा मोक्षयति वै जनः ।' पुं.-  
क्ली. [ जीव्+भावे घञ् ] जीवितं; जीवनम्; 'जीवस्य  
तत्त्वजिज्ञासा नार्थो यश्चेह कर्मभिः—इति भागवते  
(१।२।१०) । 'जीवस्य जीवनस्य च पुनर्दमनिष्ठान-  
द्वारा कर्मभिर्यं इह प्रसिद्धः स्वर्गादिः सोऽर्थो न भवति'  
—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । ४७

**जीवकः** पुं. [ जीवयति आरोग्यं करोतीति । जीव्+  
णिच्+ण्वल् ] जैनः; अष्टवर्गान्तगतौषधिविशेषः;

कूर्चशीर्षः; मधुरकः; शृङ्गः; ह्रस्वाङ्गः; जीवनः; दीर्घायुः; प्राणदः; जीव्यः; भृङ्गाह्वः; प्रियः; चिरञ्जीवी; मधुरः; मङ्गल्यः; कूर्चशीर्षकः; वृद्धिदः; आयुष्मान्; जीवदः; बलदः; 'जीवकर्षभकौ ज्ञेयौ हिमाद्रि-शिखरोद्भवौ। रसोनकन्दवत्कन्दौ निःसारौ सूक्ष्मपत्रकौ।' 'जीवकः कूर्चकाकारः ऋषभो वृषशृङ्गवत्।' 'जीवकर्षभकस्थाने विदारीमूलम्'—इति भावप्रकाशः। प्राणकः; पीतशालः; क्षपणः; त्रि. '[ जीवति प्रभुसे-वावृत्या इति। जीव्+ण्वल् ] सेवकः; वृद्ध्याशीः; जीवी; 'त्रैविद्यो ब्राह्मणो चिद्रान् न चाध्ययनजीवकः।' अहिनुण्डिकः। ३४५

जीवञ्जीवः पं. [ जीवेन भक्ष्यक्षुद्रकीटादिना जीवतीति। जीव्+अच्। यद्वा जीवञ्जीव्+पृषोदरादित्वात् साधुः ] जीवञ्जीवपक्षी; चकोरपक्षी। २५४

जीवञ्जीवः पं. [ जीवं जीवयति विपदोषं नाशयतीति। 'कृत्यन्वुटो बहुलमिति' चाहलकात् खच् ] चकोरपक्षी; अपरः पक्षिविशेषः; विषादिविकृतस्यान्नादेः परीक्षार्थ-मस्यावश्यकत्वं भवति। 'हंसः प्रस्त्रलति ग्नानिर्जीव-ञ्जीवस्य जायते। चकोरस्याक्षिवैराग्यं क्रौञ्चस्य स्यान्मदोदयः'—इति वाग्भटः। वृक्षविशेषः। २५४

जीवत्तोका स्त्री. [ जीवत् तोकम् अपत्यम् अस्याः ] जीवत्युत्रिका; जीवसूः। ४८६

जीवत्पतिः स्त्री. [ जीवन् पतियंस्याः ] पतिवत्नी; सधवा। ४८६

जीवधनम् क्ली. [ जीव एव धनमिति ] गवादिकम्; पशुधनम्। ८१

जीवनम् क्ली. [ जीव्यतेऽनेनेति। जीव्+करणे ल्युट् ] वृत्तिः; जीविका; 'अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम्। फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्'—इति भागवते (१।१३।४४)। 'जीवनं जीविकेति' तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। जलम्; 'यमुनाया इव तस्याः सखि ! मलिनं जीवनं मन्ये'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४६३)। [ जीव्+भावे ल्युट् ] प्राणधारणम्; 'यावद्वायुः स्थितो देहे तावञ्जीवनमुच्यते'—इति हठयोग-प्रदीपिकायाम् (२।३)। 'प्राणान् हन्ति जगत्प्राणो जीवनं हन्ति जीवनम्। किमाश्चर्यं क्षारभूमौ प्राणदा यमदूतिका'—इत्युद्भटः। हैयङ्गवीनं; मञ्जा; गङ्गा;

'जीवनं जीवनप्राणा जगज्ज्येष्ठा जगन्मयी'—इति काशीखण्डे (२९।६५)। पं. [ जीवयति सेवनादिना। जीव्+कर्तरि ल्यु ] जीवकौषधं; वातः; क्षुद्रफलकवृक्षः; पुत्रः; [ सर्वान् प्राणरूपेण जीवयतीति। जीव्+णिच्+कर्तरि ल्यु ] विष्णुः; 'वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः'—इति महाभारते (१३।१४९।१२२)। शिवः; 'निर्जीवो जीवनो मन्त्रः शुभाज्ञो बहुकर्कशः'—इति महाभारते (१३।१७।१२१)। ५७०

जीवनीयम् क्ली. [ जीव्यतेऽनेन अस्माद्वा। जीव्+करणे अपादाने वा अनीयर् ] जलं; जीवनप्रदे त्रिः। 'गोक्षीर-मनभिष्यन्दि स्निग्धं गुरु रसायनम्। जीवनीयं यथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतम्'—इति सुश्रुते (१।४५)। ६४८

जीवसूः स्त्री. [ जीवं प्राणिनं सूते इति। सू+क्विप् ] जीवत्तोका; जीवत्युत्रिका; 'जीवसूर्वोरसूभ्रदे ! बहु-सौख्यगुणान्विता। सुभगा भागसम्पन्ना यज्ञपत्नी पति-व्रता।' ४८६

जीवस्थानम् क्ली. [ जीवस्य जीवनस्य स्थानम् ] मर्मं; देहस्थकोमलाङ्गम्। ५२९

जीवा स्त्री. [ जीवयतीति, जीव्+णिच्+अच् ततष्टाप ] जीवितम्; मौर्वी (४६४) 'निर्गुण इति मृत इति च द्वावेकार्याभियांयिनो विद्धि। पश्य धनुर्गुणशून्यं निर्जीवं तदिह शंसन्ति'—इति आर्यासप्तशत्याम्। 'निर्गता जीवा ज्या यस्मात् तत्, 'जीवा ज्या शिञ्जनीत्यपि' इत्यभिधानात्'—इति तट्टीका। वचा; शिञ्जितं; भूमिः १३४।

जीवितम् क्ली. [ जीव्+भावे क्त ] जीवनम्। 'त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं त्वं कौमुदी नयनयोरमृतं त्वमङ्गे। इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरुद्धय मुग्धां तामेव शान्तमथवा किमिहोत्तरं'—इति उत्तररामचरिते ३ अङ्के। [ कर्तरि क्त ] जीवनयुक्ते त्रिः। 'कामं जीवति मे नाथ इति सा विजहौ शुचम्। प्राड् मत्वा सत्यमस्यान्तं जीवितास्मीति लज्जिता'—इति रघुवंशे (१२।७५)। १३४

जुगुप्सा स्त्री. [ गुपेनिन्दायां सन्, भावे अ, ततष्टाप ] जुगुप्सनं; निन्दा; 'दोषेक्षणविभिर्गर्हा जुगुप्सा विषयो-द्भवा'—इति साहित्यदर्पणे (३।१७६)। ६१, १४८

जेता [ ऋ. ] त्रि. [ जयतीति, जि+तृच् ] जयशीलः; विष्णुः; जित्वरः; जैत्रः; 'जेतारं लोकपालानां स्वमुखैरचितेश्वरम्'—इति रघुवंशे (१२।८९) । विष्णुः; 'अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः'—इति महाभारते (१३।१४९।२९) । ४४६

जेमनम् क्ली. [ जिम् अदाने+भावे ल्युट् ] भोजनं; भक्षणम् । ३२५

जैत्ररथः पुं. [ जैत्रो जयशीलो रथो यस्य ] जयशीलः; जिष्णुः; जित्वरः; जैत्रः । ४४६

जैनः पुं. [ जिन एव, यद्वा जिनः उपास्यदेवतास्येति । जिन+अण् ] जिनोपासकः । ३४५

जैनाश्रमः पुं.— वसतिः; जैनमठः । ८०७

जैवातृकः पुं. [ जीवयति ओषधिप्रभृतीनीति । जीव्+णिच्+आतृकन् वृद्धिश्च—इति आतृकन् ईकारस्य वृद्धिश्च ] चन्द्रः; चन्द्रमाः; कर्पूरः; पुत्रः; भेषजम् ।

त्रि. [ जीवतीति, जीव्+आतृकन् वृद्धिश्च ] दीर्घायुः (३८१); 'जैवातृक ! ननु श्रूयते पतिरस्या मिथिलायां प्रहारवर्मासीत्'—इति दशकुमारचरिते । कृशः । ४३

जोषम् क्ली. [ जुप् प्रीतिसेवनयोः+भावे षञ् ] सुखं; प्रीतिजनकव्यवहारः; 'का राघवोत्राश्विना वां को वां जोष उभयोः'—इति ऋग्वेदे (१।१२०।१) । 'जोषे प्रीतिजनके व्यवहारे'—इति दयानन्दभाष्यम् । १२३

जोषम् अव्य. [ जुष्+वाहुलकात् अम् ] तूष्णीम्; 'मैवमित्यब्रवीच्चैनं जोषमास्वेति भारत'—इति महाभारते (२।६८।१६) । सुखम् । ८८३

ज्ञः पुं. [ जानातीति, ज्ञा+इगुपघज्ञाप्रोक्तिरः कः—इति क ] बुधः; पण्डितः; 'पशुः पशूनां दीर्घत्यात् कश्चिन्मध्यं वृकायते । ससत्त्वं वृकमासाद्य प्रकृतिं भजते पशुः । तद्वदज्ञो ज्ञमध्यस्थः कश्चित् मौख्यसाधनः । स्थापयत्यात्ममात्मानमाप्तं त्वासाद्य भिद्यते'—इति चरके । महीसुतः; ब्रह्मा । ३३२

ज्ञातिः पुं. [ जानाति ङिद्रं कुलस्थितिञ्च । क्तिच् ] सपिण्डादिः; सगोत्रः; वान्धवः; बन्धुः; स्वः; स्वजनः; अंशकः; गन्धः; दायदः; सकुल्यः; समानोदकः; 'यानि कानि च पापानि ब्रह्महृत्यादिकानि च । ज्ञातिद्रोहस्य पापस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे । [ ज्ञायते विद्यतेऽस्मादिति, ज्ञा+

अपादाने क्तिन् ] पिता । ५०९

ज्ञानम् क्ली. [ ज्ञा+भावे ल्युट् ] विशेषेण सामान्येन चावबोधः; 'मोक्षे धीज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः'—इत्यमरः । विष्णुः; सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम्—इति महाभारते (१३।१४९।६१) । 'ज्ञानं प्रकृष्टमजन्मनवच्छिन्नं सर्वस्य साधकमिति ज्ञानमुत्तमं सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' इति श्रुतेः—इति तद्भाष्यम् । ८४८

ज्ञानी [ न् ] पुं. [ ज्ञानमस्त्यस्येति, ज्ञान+अत इनिठनी' इति इनि ] दैवजः; ज्योतिषिकः; त्रि. सामान्यबोधयुक्तमात्रः; 'ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किञ्च ते नहि केवलम् । यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपधिमृगादयः'—इति मार्कण्डेये (८।१३६) । ज्ञानयुक्तः; 'चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन । आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ'—इति भगवद्गीतायाम् ।

४०३

ज्या स्त्री. [ ज्या+अन्येभ्योऽनीति ङ तत्पटाप् ] वसुधा; पृथ्वी; पृथिवी । (४६४) धनुर्गुणः; मीर्वा; शिञ्जनी; गुणः; शिञ्ज्या; जीवा; प्रत्यञ्चा; पतञ्चिका; गव्या; वाणासनः; दूणा; 'जग्राह वलमास्थाय ज्यया च युयुजे धनुः'—इति महाभारते (१।२२६।२०) । माता । १५६

ज्येष्ठः त्रि. [ अयमेषामतिशयेन वृद्धः प्रशस्यो वा इति । वृद्ध वा प्रशस्य+इष्टन् ततो ज्यादेशः ] अग्रजः; 'दृढभक्तिरिति ज्येष्ठे राज्यतूष्णापराङ्मुखः'—इति रघुवंशे (१२।१९) । अधिकवयाः; अतिवृद्धः; श्रेष्ठः; 'ज्येष्ठं वर्णमनुप्राप्य तस्माद्रक्षेत वै द्विजः'—इति महाभारते (१३।१४३।७) । पुं. [ ज्येष्ठा नक्षत्रयुक्ता पीर्णमासीत्यण्, ज्येष्ठी । सा अस्मिन् मांसीति पुनरण्, संज्ञापूरवस्य विधेरनित्यत्वान्न वृद्धिः ] ज्येष्ठमासः । ५०६

ज्येष्ठा स्त्री. [ ज्येष्ठ+टाप् ] गृहगोधिका; अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गताष्टादशनक्षत्रम् । सा तु शूकरदन्ताकृतितारकत्रियात्मिका; 'सत्कीर्तिपुत्रं त्रिविधैः समेतो वित्तान्वितोऽत्यन्तलसत्प्रतापः । श्रेष्ठप्रतिष्ठी विकलस्वभावो ज्येष्ठा भवेद्यस्य च जन्मकाले'—इति कोष्ठीश्रदीपः । 'कुवन्तश्चानुराधामु लभन्ते चक्रवर्तिताम् । आधिपत्यं च ज्येष्ठासु मूले चारोग्यमुत्तमम्'—इति

मार्कण्डेयपुराणे (३४।१३) । मध्यमाङ्गुलिः; गङ्गा; धीरादिनायिकाभेदः; तस्या लक्षणम्—‘परिणीतत्वे सति भर्तुरधिकस्नेहा’ इति रसमञ्जरी । अलक्ष्मीः; ‘मां प्रणम्य पुनर्देवा ममन्युः क्षीरसागरम् । तस्मिन् प्रमथ्यमाने तु मया देवैश्च भाविनि । जेष्ठा देवी समुत्पन्ना रक्तस्रग्वाससावृता । उत्पन्ना सात्रवीदेवान् किं कर्तव्यं मयेति वै । तामब्रुवंस्तदा देवीं सर्वे देवगणा भृशम् । येषां गृहान्तरे नित्यं कलहः संप्रवर्तते । तत्ते स्थानं प्रयच्छामो वासस्तत्र शुभानने’—इति पाद्मे ।

२५७

ज्योतिरिङ्गणः पुं. [ ज्योतिरिव इङ्गतीति । इगि गती + ल्यु ] कीटविशेषः; खद्योतः; ध्वान्तोन्मेषः; तमोमणिः; दृष्टिवन्धुः; तमोज्योतिः; ज्योतिरिङ्गः; निमेषकः; ज्योतिर्बीजं; निमेषक २५७

ज्योतिषिकः पुं. [ ज्योतिर्ज्योतिःशास्त्रम् अधीते इति । ऋतुवथादित्वात् ठक्, संज्ञापूर्वस्य विधेरनित्यत्वान् न वृद्धिः ] ज्योतिषिकः; ज्योतिषी; ज्योतिषशास्त्रज्ञः ।

४०३

ज्योतिः [ स् ] क्ली. [ द्युत् दीप्तौ + ‘द्युतेरिसन्नादेश्च जः’ इति इसन् दस्य च जः ] नक्षत्रम्; ‘ज्योतींष्य- निञ्चामेध्यमशस्तञ्च नाभिवीक्षते’—इति चरके । प्रकाशः; (६५); दृष्टिः (८१०); पुं. द्युत् + कर्तरि ह्रसन् ] अग्निः; ‘तस्यान्तरेण नाभेस्तु ज्योतिःस्थानं ध्रुवं स्मृतम् । तदा धमति वातस्तु देहस्तेनास्य वर्द्धते’—इति सुश्रुते । सूर्यः; मेथिका; विष्णुः; ‘स्वज्ञः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः’—इति महा- भारते (१३।१४९।७९) । ५१

ज्योत्स्ना स्त्री. [ ज्योतिरस्त्यस्यामिति । ‘ज्योत्स्नातमि- स्तेति’ निपातनात् नप्रत्यय उपवालोपश्च ] चन्द्रज्योतिः; चन्द्रिका; कौमुदी; चन्द्रिमा; चान्द्री; कामवल्लभा; चन्द्रातपः; चन्द्रकान्ता; शीता; अमृततरङ्गिणी; ‘चांदनी’ इति भाषा । ‘पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुतिज्योत्स्नाः प्रकाशिताः’—इति महाभारते (१।१।८६) । ज्यो- त्स्नायुक्तरात्रिः; पटोलिका; श्वेतघोषा; दुर्गा; ‘प्रभाप्रसादशीलत्वाज्ज्योत्स्ना चन्द्रार्कमालिनी’—इति देवीपुराणे ४५ अध्याये । ‘रौद्राय नमो नित्याय गीर्वाणाय नमो नमः । ज्योत्स्नाय चन्द्ररूपिण्यै सुखाय सततं

नमः’—इति मार्कण्डेये ‘देवीमाहात्म्ये । प्रभातकालः; ‘ज्योत्स्ना समभवत् सापि प्राक्सन्ध्या यामिधीयते ।’ ४४ ज्योतिषिकः पुं. [ ज्योतिषं ज्योतिषशास्त्रमधीते वेद वा इति, ठक् वृद्धिश्च ] दैवज्ञः; ज्योतिषी; ज्योतिष- शास्त्रज्ञः । ४०३

ज्वलनः पुं. [ ज्वलतीति, ज्वल् + ‘जुचङ्कम्यदन्द्रम्य- सुगृधिज्वलशुचलषपतपदः’ इति युच् ] अग्निः; ‘यत्र त्रिनयननयनज्वलनज्वालावलीशालभवृत्तिः, जीवति मानसजन्मा शशिवदनावदनकान्तिपीयूषः’—इति कलाविलासे (१।४) । चित्रकवृक्षः; क्ली. [ ज्वल् + भावे ल्युट् ] दहनम् । ६२

ज्वालः पुं. स्त्री. [ ज्वलतीति, ज्वल् + ‘ज्वलितिकसन्ते- म्यो णः’ इति ण, पक्षे स्त्रियां टाप् ] अग्निशिखा; ‘दीप्तो ज्वालैरनेकाभैरग्निरेषोऽथ वीर्यवान्’—इति महाभारते (३।२।८।३७) । दीप्तिप्रविशिष्टे त्रि. । ६५

ज्वाला स्त्री. [ ज्वलतीति, ज्वल् + ण + टाप् ] अग्नि- शिखा; ज्वालः; ‘अभ्युद्यतोप्रश ज्वालामालाकुलै- र्मुखैः’—इति विष्णुपुराणे । दाहः; ऋक्षस्य पत्नी; ‘ऋक्षः खलु तक्षकदुहितरमुपयेगे ज्वालां नाम । तस्यां पुत्रं मतिनारं नामोत्पादयामास’—इति महाभारते (१।९५।२५) । ६५

इ

झञ्झानिलः पुं. [ झञ्झाघ्वनियुक्तोऽनिलः ] प्रावृष्य- वायुः; वर्षन्मेषवेगवद्वायुः; झञ्झावातः; झञ्झामरुत् ।

७७

झञ्झावातः पुं. [ झञ्झाघ्वनियुक्तो वातः ] प्रावृषि- जवायुः; झञ्झानिलः; ‘झञ्झावातः सवृष्टिकः’ । ‘झञ्झावातं रक्तवृष्टिं वात्यां च वृक्षपातनम्’—इति ब्रह्मवैवर्ते गणपतिखण्डे ३५ अध्याये ७७ ।

झटिति अव्य. [ झट् सङ्घाते + क्विप्, इण् गती + क्तिन् ] द्रुतं; शीघ्रं; सार्क; अञ्जसा; अह्लाय; सपदि; द्राक्; मङ्क्षु; ‘तत्त्वविस्तृतिमात्राननयः किन्तु विपर्यायात् । विपर्येतुं न कालोऽस्ति झटिति स्मरतः क्वचित्’—इति पञ्चदशी (७।१२५) । ६९७

झषः पुं. [ झष्यते वष्यते भक्षणाय, झष्यते गृह्यते इति वा । झष् + ‘खनो घ च’ इति अन्यतोऽपि घ ] मत्स्यः; ‘झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी’—इति

भगवद्गीता (१०।३१) । मकरः; मत्स्यविशेषः; 'लीनमीनक्षपग्राहां कृशां गिरिनदीमिव'—इति रामायणे (२।११।४।) । तापः; वनः; मीनराशिः; 'सार्द्ध-सप्तदशवे भेवे वसुसार्द्धो घटे वृषे'—इति समयप्रदीपः । मकरराशिः । ६५७

अक्षकेतनः पूं. [ अक्षो मकरो मीनो वा केतनं केतुरस्य ] कन्दर्पः; कामदेवः । ३२

ज्ञाबुकः पूं. [ ज्ञा इति शब्दं वेति । ज्ञा+वी+मितद्र्वा-दित्वाङ्ङु, बत्वं बाहुलकेन, ज्ञाबुरेव, स्वार्थे कन् ] वृक्षविशेषः; पिचुलः; ज्ञानुः; ज्ञावूः; 'ज्ञाळ' इति भाषा । १९५

झिण्टी स्त्री. [ झिमिति कृत्वा रटतीति । झिम्+रट्+अच् ङीप् च, पृषोदरादित्वात् साधुः ] पुष्पवृक्षविशेषः; सैरीयकः; कण्टकुरण्टकः; सैरीयकः; झिण्टिका । २०५

झिरिका स्त्री. [ झिरीति अव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते इति । झिरि+कै+क टाप् च ] झिल्ली; झिरी; झिञ्झी; वाद्यविशेषः । २५६

झिल्लिका स्त्री. [ झिर् इत्यव्यक्तशब्दं लिशतीति । झिर्+लिश्+ङि, रस्य लत्वे साधुः ततः स्वार्थे कन् ] झिल्ली; 'झींगुर' इति भाषा । 'झिल्लिकाविस्तै-दीर्घे' रुदतीव समन्ततः—इति रामायणे (२।९६।११) । आतपस्य सचिः; विलेपनमलं; झिल्लिकारावः; उद्धतंन-वस्त्रसचिः; उद्धतंनवस्त्रं; झिण्टी । २५६

झिल्लीका स्त्री. [ झिल्ली+संज्ञायां कन् ततष्टाप् ] झिल्लिका; झिल्ली । २५६

## ट

टङ्गुः पूं. [ टकि+घञ् ] दर्पः; प्रस्तरघटनोपकरणं; कोपः; कोपः; असिः; जङ्घा; श्रावदारणः; 'यः क्षत्रदेहं परितक्ष्य टङ्गुस्तपोमयैर्ब्राह्मणमुच्चकार'—इति अनघंराघवे (१।२२) । परिमाणविशेषः; स तु चतुर्मापिकरूपश्चतुर्विंशतिरक्षितकारूपो वा । पूं.—क्ली. [ टकि+घञ् अच् वा ] दर्पः; टङ्गुणः; सनित्रं; नीलकपित्थः; 'शीतं कषायं मधुरं टङ्गुं मांशत-कृद् गुर्ह'—इति सुश्रुते । ८२१

## ड

डमरः पूं. [ डेन भयेन मरो मृतिरिव यत्र ] अस्त्रकलहः; डिम्बः; विप्लवः; डिम्बः; विम्बः; डामरः; 'तल्लक्ष-

णोऽस्थिकेतुः स तु रूक्षः क्षुद्रयावहः प्रोक्तः । स्निग्ध-स्तादृक् प्राच्यां शास्त्राख्यो डमरभरकाय'—इति गर्गः । परचक्रादिभयं; क्ली. भीत्या पलायनं; शृगालिका; विद्रवः; डिम्बः । १२७

डयनम् क्ली. [ डीयते आकाशमार्गे गम्यतेऽनेनेति । डी+करणे ल्युट् ] नभोगतिः; गगनगतिः । कर्णोरयः (४४५) । २४०

डिण्डिमः पूं. [ डिण्डीति शब्दं मातीति । डिण्डि+मा+क ] वाद्यप्रभेदः; डेङ्गरी; माहेश्वरदण्डी; 'भेरीश्चाम्य-हनन् हृष्टा डिण्डिमांश्च सहस्रशः'—इति महाभारते (७।१९३।४४) । [ डिण्डिम इव आकृतिरस्यस्येति, अर्शं आदित्वाद् ] कृष्णपाकफलः । ९७

डिण्डिरः पूं. [ हिण्डिरः; पृषोदरादित्वात् ह्रस्य ङः ] समुद्रफेनः; हिण्डीरः । ६६८

डिम्बः पूं. [ डिबि नोदे+भावे घञ् ] विप्लवः; भय-ध्वनिः; अण्डं; फुफ्फुसः; प्लीहा; डिम्भः । १२७

डिम्भः त्रि. [ डिम्भयति संहतो भवतीति । डिम्भ्+पचाद्यच् ] शिशुः; 'शुभारम्भेऽदम्भे महितंमतिडिम्भे-ङ्गितशतं, मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम्'—इति रसिकरञ्जने । मूर्खः । ५०२

डुण्डुमः पूं. [ डुण्डुः सन् भातीति । डुण्डु इत्यनुकरण-शब्देन भाति वा, भा+क ] सर्पविशेषः; राजिलः; दुण्डुभः; नागभृत्; डुण्डुः; 'एकदा स वने घोरं डुण्डुमं जरसान्वितम् । अपश्यदण्डमुद्यम्य हन्तुं तं समुपाययौ'—इति देवीभागवते (२।११।२८) । ६४३

## त

तक्रम् क्ली. [ तनक्ति सङ्कोचयति दुग्धम्, पादाम्बुदधिरूपेण परिणमयतीत्यर्थः । 'स्फायितञ्चीति'—रक् न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वं च ] पादाम्बुसंयुतदधि; गोरसजं; घोलं; कालसेयं; विलोडितं; दण्डाहतम्; अरिष्टम्; अम्लम्; उदशिवत्; मथितं; द्रवः; 'न तक्रसेवी व्ययते कदाचित् न तक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः । यया सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः'—इति भावप्रकाशः । २७५

तक्षा [ न् ] पूं. [ तक्षति तनूकरोतीति । तक्ष्+कनिन् युवृथितक्षिराजीति' कनिन् ] त्वष्टा; 'सस्ताङ्गसन्धो

विगताक्षपाटवे रजा निकामं विकलीकृते रथे । आप्तेन  
तक्षणा भिषजेव तत्क्षणं प्रचक्रमे लङ्घनपूर्वकः क्रमः'  
—इति माघे (१२।२५) । ५८७

तटम् क्ली. [ तटति उच्छ्रितं भवतीति । तट् उच्छ्राये+  
पचाद्यच् ] पार्श्वप्रदेशः; 'गोकर्णे' पुष्करारण्ये तथा  
हिमवतस्तटे'—इति महाभारते (१।३६।२) । क्षेत्रम् ।  
१६६

तटः त्रि. [ तटति उच्छ्रितो भवतीति । तट्+अच् ]  
तीरं; तटी; 'कर्तव्यमार्गौ' भ्राजेते ह्रदस्यास्य तटा-  
चुभौ—इति हरिवंशे (६७।५५) । पुं. महादेवः;  
'नमस्तटाय तटयायः तटानाम्पतये नमः'—इति महा-  
भारते (१२।२८४।३६) । ६६७

तटिनी स्त्री. [ तटमस्त्यस्या इति । तट्+ 'अत इनि-  
ठनी'—इति इनिस्ततो ङीप् ] नदी; 'हृत्वा तटिनि !  
तरङ्गभ्रमितश्चक्रेषु नाशये निहितः । फलदलवल्कल-  
रहितस्त्वयान्तरिक्षे तरुस्त्यक्तः'—इति आर्यासप्त-  
शत्याम् (६९२) । ६६५

तटी स्त्री. [ तटति उच्छ्रिता भवतीति । तट्+अच्+  
ङीप् ] तीरम्; 'मालयं च श्मशानं च नद्यादीनां तटी  
तथा'—इति साहित्यदर्पणे (३।८६) । ६६७

तडाकः, तडागः पुं.—क्ली. [ तड् आघाते+ 'तडागादयश्च'  
इति आगप्रत्ययेन निपातनात् साधुः । तण्डयते आह-  
न्यते ऊर्मिमालाभिरिति । तडि+ 'पिनाकादयश्च' इति  
कर्मणि आकप्रत्ययोऽपि ] पश्चादियुक्तं सरः; पश्चाकरः;  
तटाकः; तडागः; पञ्चशतधनुःपरिमाणजलाशयः;  
'चतुर्दिक्षु पञ्चचत्वारिंशद्वस्तान्यूनतायां सहस्रद्वितय-  
हस्तान्यूनत्वेन तडागः' कथ्यते । यन्त्रकूटकः । ६७६

तडित् स्त्री. [ ताडयत्यभ्रमिति । तड् आघाते+ 'ताडे-  
णिलुक् च' इति इतिप्रत्ययः णेलुक् च ] विद्युत्; 'अथ  
नभस्य इव त्रिदशायुधं' केनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतम् ।  
धनुर्धिज्यमनाधिरुपाद्वे नरवरो रवरोपितकेशरी'—  
इति रघुवंशे (९।५४) । ६०

तण्डकः पुं. [ तण्डते आहन्तीति । तण्ड्+ण्वल् ] समास-  
प्रायवाक्; खञ्जनपक्षी; फेनः; गृहदारु; तस्त्कान्धः;  
मायावहुलके त्रि. । पुं.—क्ली. परिष्कारः । १४३

तण्डुः पुं. [ ताडयति, तड् आघाते+ण्यन्तादुप्रत्ययः ]  
शिवद्वारपालविशेषः; रुद्रानुचरः; रङ्गमञ्चे गायन-

निर्देशकः । १४, ८३६

तत्कालः पुं. [ स चासौ कालश्चेति. ] वर्तमानकालः;  
तदात्वम्; 'वर्षस्य वेश्मवसुभिः स किलादरेण तत्कालमेव  
समपूरयदुन्नतश्रीः'—इति कथासरित्सागरे (२।८३) ।  
सहसा (८८४) । ११८

तत्कालधीः त्रि. [ तस्मिन्काले कार्यकाले धीरुपस्थिता  
बुद्धिर्यस्य ] प्रत्युत्पन्नमतिः; उपस्थितबुद्धिः । ३७६  
तत्परः त्रि. [ सः परोऽस्य । यद्वा तदेव परं सर्वोत्तम-  
मस्य ] आसक्तः; 'एष साक्षाद्वरेणो जातो लोकरिर-  
क्षया । इयं च तत्परा हि श्रीरनुजज्ञेऽनपायिनी'—इति  
भागवते (४।१५।६) । ३५२

तत्रभवान् [ त् ] त्रि. [ 'इतराम्योऽपि दृश्यन्ते' इति  
तच्छब्दात् प्रथमार्थे ऋल् । ततः सुप्सुपेति समासः ]  
श्लाघ्यः; पूज्यः; (८६४) तत्त्वज्ञः; तत्त्ववेत्ता । १५५  
तथा अव्य. [ तेन प्रकारेण । तद्+ 'प्रकारवचने थाल्' ]  
तेन प्रकारेण; 'स तैः पृष्टस्तथा सम्यगमितौजा महात्म-  
भिः । प्रत्युवाचार्च्यं तान् सर्वान् महर्षीन् श्रूयतामिति'  
—इति मनुः (१।४) । साम्यम्; 'यथा नदीनदाः  
सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम् । तथैवाश्रमिणः सर्वे गृह-  
स्थे यान्ति संस्थितिम्'—इति मनुः (६।९०) । अम्यु-  
पगमः; पृष्टप्रतिवाक्यं; समुच्चयः; 'सपादलक्षं च  
तथा भारतं मुनिना कृतम् । इतिहास इति प्रोक्तं पञ्चमं  
वेदसम्मतम्'—इति देवीभागवते (१।२।२६) ।  
निश्चयः; 'तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना ।  
तथा हि सर्वे तस्यासन् परार्थैः कफला गुणाः'—इति  
रघुवंशे (१।२९) । ७८०

तथागतः पुं. [ यथा पुनरावृत्तिर्न भवति तथा तेन प्रका-  
रेण गतः । यद्वा तथा सत्यं गतं ज्ञानं यस्य । सुप्सुपेति  
समासः ] बुद्धः; 'यथा गतास्ते मुनयः शिवां गतिं तथा  
गतिं सोऽपि गतस्तथागतः'—इति सर्वदर्शनसङ्ग्रहे ।  
'तथा तेन प्रकारेणगतः ।' पूर्वोक्तप्रकारेणागते त्रि. ।  
'ततो बभूव नगरे सुमहान् हर्षजः स्वनः । जनस्य संप्र-  
हृष्टस्य नलं दृष्ट्वा तथागतम्'—इति महाभारते  
(३।७७।५) । ८५

तथ्यम् क्ली. [ तथा साधु । तथा+ 'तत्र साधुः' इति  
यत् ] सत्यम्; 'काणं वाप्ययवा खञ्जमन्यं वापि तथा-  
विधम् । तथ्येनापि ब्रुवन् दाप्यो दण्डं कार्षापणादरम्'

—इति मनुः ( ८।२७४ ) । 'यदर्जुनगुणास्तथ्यान् कीर्तयानं नराधम ! शूरद्वेषात् सुदुर्बुद्धे ! त्वं भर्त्सयसि मानुलम्'—इति महाभारते ( ७।१५७।३ ) । १४४

तदात्वम् क्ली. [ तदा इत्यस्य भावः । तदा + 'तस्य भाव-स्त्वतलौ'—इति त्व ] तत्कालः; वर्तमानकालः । ११८ तद्गतम् त्रि. [ तस्मिन्नेव गतम् ] तत्परं; तदासक्तम् ।

५३४

तद्बलः पुं. [ तस्मिन् लक्ष्ये एव बलं यस्य ] बाणविशेषः ।

४६७

तदनयः पुं. [ तनोति विस्तारयति कुलमिति । तन् + 'वलि-मलितनिभ्यः कयन्'—इति कयन् ] पुत्रः; सुतः; 'शूद्रावेदी पतत्यत्रेष्टथ्यतनयस्य च'—इति मनुः ( ३।१६ ) । ४९७

तनया स्त्री. [ तनोति कुलमिति । तन् + कयन् + टाप् ] कन्या; 'स उत्तरस्य तनयामुपयेमे इरावतीम्'—इति भागवते ( १।१६।२ ) । चक्रकुल्यालता । ५०५

तनुः स्त्री. [ तनोति तन्यते इति वा । तन् + 'भृमृशी-तृचरीति' उ ] शरीरम्; 'देवाः स्वर्गं परित्यज्य तन्त्रासान् मुनिसत्तम । विंचरुदनी सर्वे विभ्राणा मानुषीं तनुम्'—इति विष्णुपुराणे ( १।१७।५ ) । त्वक्; स्त्री । ५१०.

तनुः त्रि. [ तन् + 'भृमृशीति' ] अल्पः; कृशः ( ७।१७ ) ; 'वितरन्ती रसमन्तर्ममाद्र्भावं तनोषि तनुगात्रि !' इति आर्यासप्तशत्याम् ( ५२५ ) । विरलः; 'तनुलोम-केशदशनां मृद्वङ्गीमुदहेत् स्त्रियम्'—इति मनुः ( ३।१० ) । ६८८

तनुजः पुं. [ तनोः शरीरात् जातः इति । जन् + 'अन्ये-ष्वपि दृश्यते' इति ड ] पुत्रः; तनूजः; 'स्वामी द्वेषि सुसेवितोऽपि सहसा प्रोज्ज्वन्ति सद्गन्धवा, द्योतन्ते न गुणास्त्यजन्ति तनुजाः स्फारीभवन्त्यापदः । भार्या नोतमवंशजापि भजते नो यान्ति मित्राणि च, न्याया-रोपितविक्रमानपि नरान् येषां न हि स्याद्धनम् ।' ४९७

तनुत्राणम् क्ली. [ त्रायतेऽनेनेति, त्रै + करणे ल्युट्, तनोः शरीरस्य त्राणम् ] तनुत्रं; वर्म; 'इदं च मे तनु-त्राणं प्रायच्छमघवान् प्रभुः'—इति महाभारते ( ३।१७।४ ) । शरीररक्षणम् । ४५९

तनुः स्त्री. [ तनु + ऊङ् ] शरीरं; देहः । ५१०

तनूजः पुं. [ तन्वाः शरीरात् जातः इति, जन् + ड ] पुत्रः; 'अवेहि गन्धर्वपतेस्तनूजं प्रियंवदं मां प्रियदर्शनस्य'—इति रघुवंशे ( ५।५३ ) । स्त्री. कन्या । ४९७

तन्मुः पुं. [ तन्यते विस्तीर्यते इति, तनोति वा । तन् + 'सितनिगमीति' तुन् ] सूत्रम्; 'यस्मिन् नित्यं तते तन्तो दृढे सगिव तिष्ठति'—इति महाभारते ( १२।४७।२२ ) । ग्राहः; सन्ततिः; 'अन्तःस्थः सर्वभूतानामात्मा योगेश्वरो हरिः । स्वभाययावृणोद्गर्भं वैराटपाः कुरुतन्तवे'—इति भागवतम् । ८६५, ८७०

तन्मुवायः पुं. [ तन्तून् वयति विस्तारयति जालाकारे-णेति । वे + 'संज्ञायाञ्च' इत्यण् । 'कर्मण्यण्' वा ] तन्त्रवायः; कौलिकः; 'जुलाहा' इति भाषा । 'तन्तुवायो दशपलं दद्यादेकपलाधिकम्'—इति मनुः ( ८।३९७ ) । लूता । ५९०

तन्त्रम् क्ली. [ तनोति तन्यते इति वा, तन् + कर्त्रादी यथा-यथं ष्टून् । तत्रि कुटुम्बधारणे, धन् वा ] तन्तुः; मन्त्रः; सिद्धान्तः; परिच्छदः; प्रधानम्; 'कुटुम्बकृत्यं; कुल-प्रतिष्ठादिकस्थितिः; 'सर्वानुपायानथस म्रघाय समुद-रेत् स्वस्य कुलस्य तन्त्रम्'—इति महाभारते ( १।३।४८।६ ) । ओषधिः; तन्त्रवायः; श्रुतिशाखाविशेषः; हेतुः; उभयार्थप्रयोजकम्; इतिकर्तव्यता; राष्ट्रं; परच्छन्दः; करणं; अर्थसाधकः; सैन्यं; स्वराष्ट्रचिन्ता; 'तन्त्रा-वापविदा योग्यमण्डलान्यधितिष्ठता'—इति माघे ( २।८८ ) । प्रबन्धः; शपथः; धनं; गृहं; वयन-साधनम्; 'तदापश्यत् स्त्रियो तन्त्रे अधिरोप्य सुवेधे पटं वयन्तो'—इति महाभारते ( १।३।१४० ) । कुलं; शास्त्रम्; 'अवैरज्ञमतन्त्रज्ञं बालचेष्टासमन्वितम्—इति देवीभागवते ( २।११।१९ ) । व्यवहारः; नियमादिः; 'श्रुत्वा त्वं प्रतिपद्यस्व प्राज्ञः सह पुरोहेतैः । आपद्धमर्थिकुशलैर्लोकतन्त्रमवेक्ष्य च'—इति महाभारते ( १।१०।३।२६ ) । शिवोक्तशास्त्रं; तच्च चतुःषष्टि-संख्यकम्; 'चतुःषष्टिश्च तन्त्राणि यामलादीनि पाद्वति ! सफलानीह वाराहे ! विष्णुकान्तासु भूमिषु । कल्पभेदेन तन्त्राणि कथितानि च यामि च । पाषण्ड-मोहनायैव विफलानीह सुन्दरि !'—इति महाविश्व-सारतन्त्रम् । कालतन्त्रं; वासनाजालम्; 'तन्त्रं चेदं विश्वरूपे युवत्यौ वयतस्तन्तून् सततं वर्तयन्तो'—इति

महाभारते (१।३।१४२) । 'तन्त्रं कालतन्त्रं विश्वो-  
पादाननिमित्तादिकारणसमूहसम्बन्धम्'—इति दुर्घटाथ-  
प्रकाशिन्यां विमलबोधः । 'इह तन्त्रं वासनाजालम्'  
—इति नीलकण्ठः । ८७०

तन्त्रवायः पुं. [ तन्त्रेण वयतीति, वेञ् तन्तुसन्ताने  
+ 'ह्वावामश्च' इत्यण् ] वर्षसङ्करजातिविशेषः;  
कुविन्दः; तन्त्रवापः; तन्तुवापः; तन्तुवायः; 'जुलाहा'  
इति भाषा । 'ताम्रकुट्टाञ्छङ्कायां मणिकारश्च  
जायते । मणिकारात् ताम्रकुट्टयां मणिबन्धोऽप्यजायत ।  
मणिबन्धान्मणिकायां तन्त्रवायश्च जायते'—इति पराशर-  
पद्धती । लूता । ५९०

तन्त्रीः स्त्री. [ तन्त्रयति मोहयति लोकानिति । तन्त्र+  
'अवितृस्तृत्तन्त्रिम्य ई' इति ई ] वीणागुणः; 'नातन्त्री-  
विद्यते वीणा नाचक्रो विद्यते रयः'—इति रामायणे  
(२।३।१२९) । वीणा; 'पादशब्दोऽक्षरसमस्तन्त्रीलय-  
समन्वितः । शोकार्तस्य प्रवृत्तो मे श्लोको भवतु  
नान्यथा'—इति रामायणे (१।२।१८) । गुडूची;  
देहशिरा; नदीविशेषः; युवतीभेदः; रज्जुः; 'न  
लज्जयेद् वत्सतन्त्रीं न प्रधावेच्च वर्षति । न चोदके  
निरीक्षेत स्वं रूपमिति धारणा'—इति मनुः  
(४।३।८) । १९६

तन्त्रीगणः पुं. [ तन्त्रीणां रज्जूनां गणः समूहः ] महा-  
रज्जुः; वरत्रा । ५९७

तपनः पुं. [ तपतीति । तप्+कर्तरि ल्यु ] सूर्यः; भानुः;  
'सहस्ररश्मिरादित्यस्तपनस्त्वं गवां पतिः'—इति महा-  
भारते (३।३।६२) । भल्लातकवृक्षः; अग्नघादि-  
दाहात्मकनरकः; ग्रीष्मः; तापः; अर्कवृक्षः; क्षुद्राग्नि-  
मन्यवृक्षः; सूर्यकान्तमणिः; 'अनयनपथे प्रिये ! न  
व्यथा यथा दृश्य एव दुष्प्रापे । म्लानैव केवलं निशि  
तपनशिला वासरे ज्वलति'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(२६) । अग्निविशेषः; 'ते जातवेदसः सर्वे कल्पायः  
कुसुमस्तथा । दहनः शोषणश्चैव तपनश्च महाबलः'  
—इति हरिवंशे (१७।८।३१) । स्त्रीणां सत्त्वजै  
अलङ्कारविशेषे क्ली. । 'तपनं प्रियविच्छेदे स्मरावेशोल्प-  
चेष्टितम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।११६) । तत्रैव  
उदाहरणं यथा—'स्वासान्मुञ्चति भूतले विलुठति  
स्वन्मायांमालोकते, दीर्घं रोदिति विक्षिपत्यत इतः ज्ञामां

भुजावल्लरीम् । किञ्च प्राणसमान काङ्क्षितवती  
स्वप्नेऽपि ते सङ्गमं, निद्रां वाञ्छति न प्रयच्छति पुनर्दग्धो  
विधिस्तामपि ।' ३५

तपनीयम् क्ली. [ तप्+अनीयर् । वह्नी शोधनीय-  
परीक्षणीयत्वादस्य तथात्वम् ] स्वर्णः; तपनीयकं;  
सुवर्णम्; 'तस्मादधः किञ्चिद्विवावतीर्णवसंस्पृशन्ती  
तपनीयपीठम्'—इति रघुवंशे (१।८।१) । १७४

तपः [ स् ] क्ली. [ तापयति तपति वा । तप् संतापे+  
'सर्वेषातुभ्योऽसुनु' इति असुन् ] माघमासः; माघे  
(६।६३) । वैश्वलेशजनकं कर्म; 'उमेऽतिचपले  
पुत्रि ! न क्षमं तावकं वपुः । सोढुं क्लेशस्वभावस्य  
तपसः सौम्यदर्शनं'—इति मत्स्यपुराणे । तपस्या;  
जनलोकाद्भ्रूलोकः; चान्द्रायणादिन्नतं; धर्मः । पुं.  
[ तपति तापयति वा, तप् सन्तापे+पचाद्यच् ] ग्रीष्मः;  
'तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो वसन्तलक्ष्म्या शिशिरः  
समेत्य च । प्रसूनबलृप्ति दधतः सदत्तवः पुरेऽस्य वास्तव्य-  
कुटुम्बितां ययुः'—इति माघे (१।६६) । ११४  
तपस्यः पुं. [ तपसि ग्रीष्मे साधुः । तपस्+तत्र साधुः'  
इति यत् ] फाल्गुनमासः; 'तत्र माघादयो द्वादशमासाः  
द्विमासिकमृतुं कृत्वा षडृतवो भवन्ति । ते शिशिरवसन्त-  
ग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्ताः । तेषां तपस्तपस्यौ शिशिरः ।  
'तपः माघः, तपस्यः फाल्गुनः ।' अर्जुनः; तामसस्य  
मनोः पुत्रविशेषः; 'द्युतिस्तपस्यः सुतपास्तपोमूलस्त-  
पोशनः । तपोरतिरकल्पापस्तन्वी धन्वी परन्तपः ।  
तामसस्य मनोरेते दशपुत्रा महाबलाः'—इति हरिवंशे  
(७।२४) । ११४

तपस्या स्त्री. [ तपश्चरति, तस्य भावः । 'कर्मणो रोमन्य-  
तपोभ्यां वर्तिचरोः' इति क्यङ् ततः 'अ प्रत्ययात्'—इति  
अ, ततष्टाप् ] तपः; व्रतादानं; परिब्रज्या; नियम-  
स्थितिः; व्रतचर्या । ७७६

तपस्वी [ न् ] पुं. [ तपस्+अस्त्यर्थे विनि ] मुनिः;  
नारदः; मत्स्यविशेषः; तपःकरः; चेष्टकः; चेष्टः;  
चाक्षुषस्य मनोः पुत्रविशेषः; 'ऊरुः पुरुः शतद्युमस्तप-  
स्वी सत्यवान् कविः'—इति हरिवंशे (२।१९) ।  
घृतकरञ्जवृक्षः । ३४४

तपस्वी [ न् ] त्रि. [ तपोऽस्यास्तीति, तपस्+तप-  
'सहस्राभ्यां विनीनी'—इति विनि ] तपोयुक्तः; तापसः;



पारिकाङ्क्षी; पारिकाङ्क्षी; पारिकाङ्क्षकः; तपोघनः;  
'न हि स्याद् ब्राह्मणान् गाश्च सर्वाश्चैव तपस्विनः'—इति  
मनुः (४।१६२) । आनुकम्प्यः (७९३) । ४०९  
तपः [स्] पुं. [तपत्प्रस्मिन्निति, तप्+असुन्] माघ-  
मासः; शिशिरकालः; तेषां तपस्तपस्यौ शिशिरः'  
इति सुश्रुते । ग्रीष्मः । ११४

तपात्ययः पुं. [तपस्य ग्रीष्मस्य अत्ययो यत्र] वर्षाकालः;  
'तपात्यये वारिभिरुक्षिता नवैर्धुंवा सहोष्माणममुञ्च-  
द्वर्ध्वगम्'—इति कुमारसम्भवे (५।२३) । ११६

तमः पुं. [ताम्यत्यनेनेति, तम्+संज्ञायां घ] राहुः;  
तमोगुणः । ४९

तमङ्गः पुं.—इन्द्रकोशः; मञ्चकः; इन्द्रकोषः; तमङ्गकः;  
मञ्चः; 'मचान्' इति भाषा । २९४

तमः [स्] क्ली. [ताम्यत्यनेनेति, तम्+सर्वधातुम्यो-  
ऽसुन्' इति असुन्] अन्धकारः; तमसं; निशाचर्म;  
नीलपङ्कः; रजोबलं; दिवान्तकः; वियद्भूतिः; खलुकः;  
वृत्रः; रजोरसं; दिनान्तरम्; अन्धकम्; 'तमसा  
लोकमावृत्य नौगतामेव भारत'—इति महाभारते  
(१।१०५।१०) । पापं (६२७); राहुः (४९);  
'निमिमील नरोत्तमप्रिया हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी'  
—इति रघुवंशे (८।३७) । शोकः; प्रकृतेर्गुणविशेषः;  
'सत्त्वं रजस्तम इति दृश्यन्ते पुरुषे गुणाः'—इति गारुडे ।  
११०

तमस्विनी स्त्री. [तमो विद्यतेऽस्यामिति । विनि डीप्  
च] रात्रिः; 'अदृश्यमानस्तस्याद्य तमस्विन्याम-  
निन्दिते ! । नागो विलमिवाक्रम्य पोययिष्याम्यहं  
शिरः'—इति महाभारते (४।२।३८) । हरिद्रा । १०७

तमा स्त्री. [तमोऽस्त्यस्यामिति । तम्+अच् टाप् च]  
रात्रिः; तमालवृक्षः । १०७

तमालपत्रम् क्ली. [तमालस्य पत्रमिव वर्णोऽस्यास्तीति ।  
अर्शादित्वाद् अच्] तिलकं; तमालः; पत्रकम्;  
'पत्रं तमालपत्रं च तथा स्यात् पत्रनामकम्'—इति  
भावप्रकाशः । तमालवृक्षः; तमालस्य पत्रम्; 'तमाल-  
पत्रास्तरणासु रन्तुं प्रसीद शश्वन्मलयस्थलीषु'—इति  
रघुवंशे (६।६४) । ५४१

तमिः स्त्री. [तम्यते भ्लायते च, तम्+सर्वधातुम्य इन्  
इतीन्] रात्रिः । १०७

तमिस्रम् क्ली. [तमोऽस्त्यऽत्र, 'ज्योत्सनातमिस्रेति'  
निपातनात् साधुः । यद्वा तमिस्रा अस्त्याश्रयत्वे-  
नास्य, अच्] अन्धकारम्; 'यदेतन्नर्तनागारं मत्स्यराजेन  
कारितम् । दिवात्र कन्या नृत्यन्ति रात्रौ यान्ति यथा-  
गृहम् । तमिस्रे तत्र गच्छेया गन्धर्वास्तत्र जानते'  
—इति महाभारते (४।२।१७) । क्रोवः; नरक-  
विशेषः; 'अमङ्गलानां च तमिस्रमुत्वनं विपर्ययः केन  
तदेव कस्यचित्'—इति भागवते (४।७।४४) । ११०  
तमिस्रा स्त्री. [तमोवहुत्वमस्ति अस्याम् । 'ज्योत्सनात-  
मिस्रेति' निपातनात् साधुः] अन्धकारवती रात्रिः;  
कृष्णपक्षनिशा; तमोयुक्तरात्रिमात्रम्; (११०) तम-  
स्ततिः; अन्धकारसमूहः; 'सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः  
कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा'—इति रघुवंशे (५।१३) ।  
१०७

तमी स्त्री. [तमि+कृदिकारादिति वा डीप्] रात्रिः;  
'ददृशेऽपि भास्कररुचाह्नि न यः, स तमीं तमोभिर-  
भिगम्य तताम्' हरिद्रा । १०७

तमोघ्नः पुं. [तमोऽन्धकारं मोहमज्ञानं वा हन्तीति ।  
हन्+टक्] वह्निः; सूर्यः; 'स देवशत्रूनिव देवराजः  
किरीटमाली व्यवमत् समन्तात् । यथा तमांस्यभ्यु-  
दितस्तमोघ्नः पूर्वप्रतिज्ञां समवाप्य वीरः'—इति  
महाभारते (७।१४४।१३६) । चन्द्रः; बुद्धः; केशवः;  
शम्भुः । ६४

तरः [स्] क्ली. [तृ प्लवनतरणयोः+करणदी यथा-  
यधम्; असुन्] बलं; वेगः (४४३); तीरं; प्लवगः । ७२३

तरक्षः पुं. [तरक्षु+पृषोदरादित्वात् अकारः] तरक्षुः;  
'चीता' इति भाषा । 'शैलकूटैस्तरक्षर्क्षार्दूलशाखा-  
मृगाध्यासितैः'—इति बृहत्संहिता (१२।६) । २२६

तरक्षुः पुं. [तरं बलं मार्गं वा क्षिणोति । क्षिणु हिंसा-  
याम्+मितद्वादित्वात् -ङु] व्याघ्रविशेषः; तक्षुः;  
मृगादनः; तरक्षुकः । 'ततो मायां परां चक्रे देवशत्रुः  
प्रतापवान् । मिहान् व्याघ्रान् वराहांश्च तरक्षुगुक्ष-  
वानसन'—इति हरिवंशे (१-६३।१४) । २२६

तरङ्गः पुं. [तरति प्लवते इति । तृ+तरत्यादिभ्यश्च'  
इति अङ्गच्] वायुना नद्यादिजलस्य तिर्यगूर्ध्वप्लवनम्;  
भङ्गः; अग्निः; वीचिः; उर्मी; वीची, विचिः; लहरी;  
हली; विलिः; लहरिः; जललता; मृण्डिः; उत्कलिका;

ऊर्मिका; 'लहर' इति भाषा। वस्त्रं; हयादीनां समुत्फालः। ६५३

तरङ्गिणी स्त्री। [ तरङ्गो वोचिरस्त्यस्या इति। तरङ्ग + 'अत इनिठनी' इति इनि ] नदी; 'तरङ्गिणी वेणिरिवायता भुवः'—इति माघे। ६६५

तरणिः पुं। [ तरति पापमनेनेति। तृ + जनि ] सूर्यः; 'इत्युक्त्वा तरणिः कुन्तीं तन्मवस्कां सुलज्जिताम्। भुक्त्वा जगाम देवेशो वरं दत्त्वाभिवाञ्छितम्'—इति देवीभागवते (३।६।२८)। अर्कवृक्षः; भेलकः; किरणः; नौका; तरिणी। ३५

तरपण्यम् क्ली। [ तृ + भावे अप्, तरस्तरणं तस्य पण्यम् ] आतरः; 'नौका भाड़ा', 'उतराई' इत्यादि भाषा। ६७१

तरलः पुं। [ तृ + 'वृषादिभ्यश्चित्' इति कलप्रत्ययश्चित् ] हारमव्यमणिः; 'प्रकीर्णका विप्रकीर्णश्च राजन् ! प्रवालमुक्तातरलाश्च हाराः'—इति महाभारते (८।१४।१९)। हारः; तलं; जनपदविशेषः; तद्देशवासिनि बहुवचनान्तः—'वत्सान् कलिङ्गान् तरलानश्मकानृषिकानपि'—इति महाभारते (८।८।२०)। ५६४

तरलः त्रि। [ तृ + कलच् ] चलः; 'आः स्वभावमधुरं रनु-भावेऽस्तावकैरतितरां तरलाः स्मः'—इति नैषधे (५।२४)। षिङ्गः; भास्वरः; मध्यशून्यद्रव्यं; द्रवी-भतः। ६९५

तरला स्त्री। [ तृ + कलच् टाप् च ] यवागूः; सुरा; मधुमक्षिका। ३२०

तरलितम् त्रि। [ तरलं तारल्यमस्य जातम्। तरल + इतच्। तरल इवाचरति तरलं करोतीति। तरल + क्विप् + णिच् + वत् ] जाततारल्यं; प्रेङ्गोलितं; लुलितं; प्रेङ्खितं; हुतं; चलितं; कम्पितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम्; 'व्यालोलः केशपाशास्तरलितमलकैः स्वेदलोलो कपोलौ'—इति गीतगोविन्दे (१२।१५)। ७४६

तरवारिः पुं। [ तरं समागतविपक्षबलं वारयतीति। तर + वृ + णिच् + इन् ] खड्गः; तलवारिः; 'ऋष्टिः खड्गस्तरवारिः शस्त्रो भद्रात्मजश्च सः। धाराविपो विशसनो न्युब्जखड्गः कटीतलः'—इति त्रिकाण्डशेषे। तत्परीक्षा—'अङ्गं रूपं तथा जातिर्नैत्रारिष्टे च भूमिका। च्वनिर्मानमिति प्रोक्तं खड्गानामष्टकं शुभम्। दीर्घता

लघुता चैव खरविस्तीर्णता तथा। दुर्भेद्यता सुघटता खड्गाना गुणसग्रहः'—इति युक्तिकल्पतरु भोजः 'तलवार' इति भाषा। ४७२

तरसम् क्ली। [ तृ + बाहुलकाद् असच् ] मांसम्; 'तर-समयाः पूर्वोक्तभागाः'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे 'तरसमया मांसमयाः'—इति कर्कः। ६३१

तरिः स्त्री। [ तरत्यनया इति। तृ + 'अच इः'—इति इ ] नौका; 'सात्रवीद्वाशकन्यास्मि घर्मार्थं वाहये तरिम्'—इति महाभारते (१।१००।४८)। दशा; वस्त्रादि-पेटकः। ६७२

तरीः स्त्री। [ तरत्यनया इति। तृ + 'अवितृस्तृत्तन्निभ्य ईः' इति ई ] नौका; 'तरीषु तत्रत्यमफल्गुभाण्डम्'—इति माघे (३।७६)। गदा; वस्त्रादिपेटकः; धूमः; द्रोणी; दशा। ६७२

तहः पुं। [ तरति समुद्रादिकमनेनेति। तृ + 'भृमृशीतृ-चरीति' उ ] वृक्षः; 'मुनिवनतच्छायां देव्या तथा सह शिश्रिये'—इति रघुवंशे (३।७०)। १७७

तरुणः त्रि। [ तरति प्लवते प्रमोदसलिले इति। तृ + 'त्रो रश्च लो वा' इति उनन् ] नूतनः; 'तरुणं सर्वप-शाकं नवीदनं पिच्छिलानि च दधीनि। स्वल्पव्ययेन सुन्दरि ! ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति'—इति छन्दो-मञ्जर्याम्। युवा (५०३); 'तरुणस्तस्य पुत्रोऽभू-त्तिग्मतेजा महातपाः'—इति महाभारते (१।४०।२०)।

पुं। [ तृ + उनन् ] स्थूलजीरकः; एरण्डः। २७८

तरुण्डः पुं। [ सनोति, षणु दाने, 'अमन्ताड्डः' इति ड, बाहुलकात्पत्वभावः। तरुणां षण्डः ] तरुण्डः; वृक्ष-समूहः। २१२

तर्कः पुं। [ तर्क् + भावे षञ् ] ऊहः; वितर्कः (८७९); आकाङ्क्षा; व्यभिचारशङ्कानिवर्तकः; 'शुक्तर्कं परित्यज्य आश्रयस्व श्रुति, स्मृतिम्'—इति महाभारते (३।१९९।१०८)। हेतुशास्त्रं; 'मीमांसादिः, 'आर्षं धर्मोपदेशं च वेदशास्त्राविरोधिना। यस्तर्कानु-सन्धत्तं स धर्मं वेद नेतरः'—इति मनुः (१२।१०६)। न्यायशास्त्रम्; 'यत्काव्यं मधुर्वपि धर्षितपरंस्तर्केषु यस्योक्तयः'—इति नैषधे। ज्ञानम्; 'तं वै. फला-यिनं मन्ये भ्रातरं तर्कचक्षुषा'—इति महाभारते (१।१६८।१८)। १०

तर्षकः पुं. [ तर्ष एव । स्वार्थे कन ] सद्योजातवत्सः;  
तर्षः; वत्सः; 'बल्लडा', 'बल्लवा' इत्यादि भाषा ।  
'म्लानक्षीरां वरां पत्नीं रुद्धद्वारां निपात्यते । आलिङ्ग्य-  
मानां क्रन्दद्भिस्तर्षकैरिव दारकैः'—इति राजतरङ्गि-  
ण्याम् (५।४३६) । बालकः; 'मुनिविनियोगलून-  
प्ररूढमृदुशाद्वलानि बर्ही'पि । गोकर्णतर्षकोऽयं तर्षोत्युप-  
कण्ठकच्छेषु'—इति अनर्घराघवे (२।२३) । २६४  
तर्षः स्त्री. [ तरति प्लवते इति । तृ+त्रो दुक् च'  
इति ऊ द्रुगागमश्च ] दारुहस्तकः; 'काठ की करछी'  
इति भाषा । ३१२

सर्षणम् क्ली. [ तृप् प्रीणने+भावे ल्युट् ] यज्ञकाष्ठं;  
[ तृप्यन्ति पितरो येन । तृप्+करणे ल्युट् ]  
देवविषितमनुष्याणां जलाञ्जलिदानेनतृप्तिसम्पादनम्;  
'वसित्वा वसनं शुक्लं स्यले चास्तीर्णवर्हिषि । विधिज्ञा-  
स्तर्षणं कुर्युर्न पात्रे तु कदाचन'—इति गरुडे । तृप्तिः;  
प्रीणनम्; 'तत्राह्वय तरोरमूले वेतालं नृकलेवरे । पूज-  
यित्वाकरोत्तस्य नृमांसबलितर्षणम्'—इति कथासरि-  
त्सागरे (२६।२३६) । देवतर्षणं यथा—'ब्रह्माणं तर्ष-  
येत्पूर्वं विष्णुं रुद्रं प्रजापतिम् । देवा यक्षास्तथा नागा  
गन्धर्वाप्सरसोऽसुराः । क्रूराः सर्पाः सुपर्णाश्च तरवो  
जम्भकाः खगाः । विद्याधरा जलाधारास्तथैवाकाश-  
गामिनः । निराहाराश्च ये जीवाः पापे धर्मो रताश्च ये ।  
तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया ।' इदमुपवीतिना  
प्राङ्मुखेन देवतीर्थेन कार्यम् । मनुष्यतर्षणं यथा—  
'सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः । कपिलश्चा-  
सुरिश्चैव वोढुः पञ्चशिखस्तथा । सर्वे ते तृप्तिमायान्तु  
मद्दत्तेनाम्बुना सदा ।' इदं निवीतिना मनुष्यतीर्थेन  
सामगेन प्रत्यङ्मुखेन कार्यम् । अन्यवेदिना उदङ्मुखेन  
कार्यम् । ततः ऋषितर्षणं प्राङ्मुखेन उपवीतिना देव-  
तीर्थेन कार्यम् । ततो दिव्यपितृतर्षणं दक्षिणाभिमुखेन  
प्राचीनावीतिना सतिलजलेन पितृतीर्थेन कार्यम् ।  
भीष्माष्टम्यां भीष्मतर्षणं तस्य मन्त्रो यथा—'वैयाघ्र-  
पदगोत्राय साङ्कृत्यप्रवराय च । अपुत्राय ददाम्येतज्जलं  
भीष्माय वर्मणे ।' प्रार्थनामन्त्रो यथा—'भीष्मः शान्त-  
नवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः । आभिरङ्गिरवाप्नोतु  
पुत्रप्राप्तौचितां क्रियाम् ।' यमतर्षणं नरकचतुर्दश्याम्—  
'यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च । वैवस्वताय

कालाय सर्वभूतक्षयाय च । औदुम्बराय दधनाय नीलाय  
परमेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ।'

६९

तर्षः पुं. [ तृप् पिपासायाम् +भावे घञ् ] तृष्णा; पिपासा;  
तर्षणम्; 'लवणार्णवपानेन तर्षोत्कर्षमिवोद्वहन् ।  
यत्प्रतापो रिपुस्त्रीणां सनेत्राम्भोऽभजन्मुखम्'—इति  
राजतरङ्गिण्याम् (३।४८०) । 'काश्मर्यशर्करायुक्तं  
चन्दनोशीरपद्मकम् । द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततर्षे जलं  
पिबेत् ।' [ तीर्यतेऽनेनेति, तृ प्लवनतरणयोः+वृत्-  
वदिहनीति' स ] प्लवः; [ तीर्यतेऽसौ इति कर्मणि स ]  
समुद्रः; सूर्यः; अभिलाषः; तर्षणम्; 'तर्षच्छेदो न भवति  
पुरुषस्येह कल्मषात् । निवर्तते तदा तर्षः पापमन्तगतं  
यदा'—इति महाभारते (१२।२०४।६) । ३६३

तर्षितः त्रि. [ तर्षोऽस्य जातः । तर्ष+तारकादित्वात्  
इत्च् ] तृषितः; 'राजा तद्यज्ञसदनं प्रविष्टो निशि  
तर्षितः । दृष्ट्वा शयानान् विप्रांस्तान् पर्षी मन्त्रजलं  
स्वयम्'—इति भागवते (९।६।२७) । जाताभिलाषः;  
'वशिष्ठः पुरतः कृत्वा दारान् दशरथस्य च । अभिच-  
क्राम तं देशं रामदर्शनतर्षितः'—इति रामायणे (२।  
१०४।१) । ३६२

तर्षुलः त्रि.— तृषितः; पिपासितः । ३६२

तलः पुं. [ तलतीति, तल् प्रतिष्ठायाम् +पचाद्यच् ] ताल-  
वृक्षः; चपेटः; 'स मुष्टि पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः ।  
देव्यास्तञ्चापि सा देवी तलेनोरस्यत्राडयत्'—इति  
मार्कण्डेये (९०।१६) । करतलाघातजन्यशब्दः; 'ततः  
प्रहसिताः सर्वे तेऽन्योन्यस्य तलान् ददुः'—इति महा-  
भारते (३।२७७।२४) । त्सरुः; सव्यपाणिना तन्त्री-  
घातः; स्वभावः; आधारः; महादेवः; 'तलस्तालः  
करस्थाली ऊर्ध्वसंहननो मंहान्'—इति महाभारते  
(१३।१७।१८८) । क्ली. [ तलतीति, तल्+अच् ]  
ज्याघातवारणः; 'ततः समुत्पेतुरुद्धायुधास्ते महीक्षितो  
बद्धतलाङ्गुलित्राः'—इति महाभारते (१।१९०।१५) ।  
काननं; कार्यबीजं; गर्तः; पादतलस्य मध्यम्; 'रसाम-  
चष्टाङ्घ्रितलेऽय पादयोर्महीं महीघ्रान् पुरुषस्यं जङ्ग-  
योः । पतत्रिणो जानुनि विश्वमूर्तैर्वीरिणं मारुतमिन्द्रसेनः'  
—इति भागवते (८।२०।२३) । हस्तस्य' मध्यम्;  
'स्पृष्ट्वैतानशुचिनित्यमद्भिः प्राणानुपस्पृशेत् । गात्राणि

चैव सर्वाणि नाभि पाणितलेन तु—इति मनुः (४।  
१४३) । १९२

तलवारिः पुं. [ तलं हस्तप्रहारं वारयति । तल+वृ+  
णिच्, इन् ] तरवारिः; खड्गः; असिः । ४७२

तलिनः त्रि. [ तल+इनन् ] विरलः; स्तोकः;  
स्वच्छः; दुर्बलः; क्ली. [ तल्यते शयनार्थं गम्यतेऽत्र ।  
तल् +तलिपुलिभ्यां च' इति इनन् ] शय्या । ७१७

तल्पम् क्ली.—पुं. [ तल्यते शयनार्थं गम्यतेऽत्र । तल  
+ 'खष्पशिल्पशष्पवाष्परूपपर्यतल्पाः' —इति पप्रत्ययेन  
निपातनात् साधु ] शय्या; 'स्रग्विणं तल्प आसीन-  
मर्हयेत् प्रथमं गवा'—इति मनुः (३।३) । अट्टालिका;  
दाराः (८१०); (६७१) प्लवः; तल्ली । 'पितृव्यदार-  
गमने भ्रातृभार्यागमे तथा । गुस्तल्पव्रतं कुर्यात् नान्या  
निष्कृतिरुच्यते'—इति संवर्तकसंहितायाम् । ३०७

तल्लः पुं. [ तस्मिन् लीयते इति । ली+ड ] जलाधार-  
विशेषः; 'ताल' 'तलाव' इति भाषा । ६७५

तत्स्करः पुं. [ तत्करोतीति, कृ+ 'दिवाविभे'त्यस्य 'कि  
यत्तद्बहुषु कृञोऽङ्गविधानम्' इति वार्तिकोक्तेरच् । ततः  
'तद्वृहतोः करपत्योः' इति सुदतलोपो ] चौरः; चोरः;  
पृक्काशाकः; मंदनवृक्षः; कर्णः; 'व्यावृत्ता यत्परस्वैभ्यः  
श्रुतौ तत्स्करता स्थिता ।' 'तत्स्करः कर्णचौरयोः'  
—इति कोषान्तरम् । ३३८

ताडङ्कः पुं. [ ताडङ्क+पूपोदरादित्वात् साधुः ] ताडङ्कः;  
कर्णभूषा; 'कान का बाला' इति भाषा । ५५६

ताडङ्कः पुं. [ तालं तालपमिव अङ्कयते लक्ष्यते इति ।  
अङ्क+घञ् लस्य डत्वम् । शकध्वादित्वात् साधुः ]  
कर्णभूषा; कर्णदर्पणः; ताडङ्कः; कर्णिका; तालपत्रं;  
ताडपत्रं; कर्णमुकुरः; 'ताडङ्काङ्गदमेखलागुणरणन्म-  
ञ्जीरतां प्रापितां, कैरातीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं  
त्रिनेत्रां भजे'—इति मनसाध्याने । ५५६

ताडपत्रम् क्ली. [ तालस्य पत्रमिव । लस्य डत्वम् ]  
ताडङ्कः; कर्णभूषा । ५५६

ताण्डवः पुं.—क्ली. [ ताण्डेन मुनिना कृतं ताण्डं नृत्य-  
शास्त्रं, तदस्यास्तीति । तण्डुना प्रोक्तमिति वा ] नृत्यम्;  
'पुंनृत्यं ताण्डव प्राहुः स्त्रीनृत्यं लास्यमुच्यते' —इति  
शब्दार्थचिन्तामणिघृतवचनेन पुंनृत्यम् । तृणविशेषः;  
उद्धतनृत्यम्; 'प्रचण्डताण्डवाटोपे प्रक्षिप्ता येन दिग्गजाः ।

भवन्तु विघ्नभङ्गाय भवस्य चरणाम्बुजाः'—इतिमत्स्य-  
पुराणे (१।१) । ९३

तातः पुं. [ तनोति विस्तारयति गोत्रादिकमिति । तन्+  
'दुतनिभ्यां दीर्घश्च' इति क्त दीर्घश्च, अनुदात्तेति न-  
लोपः ] पिता; 'हा तातेति क्रन्दितमाकर्ष्यं विषण्ण-  
स्तस्यान्विष्यन् वेतसगूढं प्रभवं सः । शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य  
सकुम्भं मुनिपुत्रं तापादन्तःशल्य इवासीत् क्षितिपोऽपि'  
—इति रघुवंशे (९।७५) । अनुकम्प्यः; 'कच्चित्तोऽ  
नामयं तात ! अष्टतेजा विभासि मे । अलव्वसानोऽव-  
ज्ञातः किं वा तात ! चिरोपितः'—इति भागवते  
(१।१४।३९) । पूज्ये त्रि. । 'तस्मान् मुच्ये यथा  
तात ! संविधातुं तयार्हसि । इक्ष्वाकूणां दुरापेऽयं  
त्वदधीना हि सिद्धयः ।' ५०४

तापसः त्रि. [ तपः शीलमस्य, 'छत्रादिभ्यो णः'—इति  
ण ] तपस्वी; 'तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रिकं भैक्षमाहरेत्'  
इति मनुः (६।२७) । तपःसम्बन्धी; 'तापसं व्रतमा-  
श्रित्य ततो गुहमुवाच ह'—इति रामायणे (२।५२।५) ।  
पुं. दमनकवृक्षः; वकपक्षी; इक्षुविशेषः; 'कान्तारस्ताप-  
सेक्षुश्च काष्ठेषु सूचिपत्रकः । इत्येता जातयः स्थौल्याद्  
गुणान् वक्ष्याम्यतः परम् । कान्तारतापसाविक्षू वंशका-  
नुगुणौ मती'—इति सुश्रुते । क्ली. तमालपत्रं; 'तेज-  
पात' इति भाषा । ४०९

तापिच्छः पुं. [ तापिनं सन्तप्तं छदति आच्छादयतीति ।  
तापिन्+छद्+अन्येष्वपीति ड, पूपोदरादित्वात् साधुः ]  
तमालवृक्षः; 'अक्षोर्निक्षिपदञ्जनं श्रवणयोस्तापिच्छ-  
गुच्छावलीम्'—इति गीतगोविन्दे (१।१।११) । क्ली.  
तापिच्छस्य पुष्पम् [ फले लुगिति तद्धितलुक् । 'द्विहीनं  
प्रसवे सर्वं' मिति नपुंसकत्वम् ] तापिच्छपुष्पम्;  
'प्रफुल्लतापिच्छनिर्भरभीषुभिः शुभेश्च सप्तच्छदपाशु-  
पाण्डुभिः'—इति माघे (१।२२) । २०३

तामरसम् क्ली. [ तामरे जले सस्तीति । 'सस्+ड ।  
यद्वा काङ्क्षार्थात्तमेर्घञ्, रस आस्वादाने, ष्यन्तादेरच्,  
तामं च तद्रसम् ] पचम्; 'जाता तामरसोदरे भगवतो  
घातुः कृतार्था स्थितिः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (५४) ।  
सारसः; स्वर्णः; ताम्रः; द्वादशाक्षरच्छन्दोविशेषः । ६७९  
ताम्बूलम् क्ली. [ तम्+ 'खजिपिञ्जादिभ्य ऊरोलर्चा'  
इति ऊलच् वुगागमो दीर्घश्च । ततस्ताम्बूलाय हितम्

इत्यणि पूगवाचकम् ] क्रमुकं; नाचदल्लीफलं; पर्णं; 'पान' इति भाषा । 'ताम्बूलं विश्वास्त्रीणो यतीषो ब्रह्मचारिणाम् । तपस्विनां च विश्रेष्ठ ! गोवांससुशुभं ध्रुवम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मसंहितायाम् । ५४५

ताम्बूली स्त्री. [ ताम्बूल+गौरादिस्त्वान् संज्ञायौ वा डीष् ] ताम्बूलवल्ली; ताम्बूलरत्ना; भागवल्ली; पर्णलता; सप्तशिरा; सर्पलता; ऊषिदल्ली; शृङ्गलता; भक्ष्यपत्रा; ताम्बूलदहिलिका; पर्णदल्ली; ताम्बूलिः; नागिनी; नागवल्लरी; 'पान की वेल्' इति भाषा । 'ताम्बूलवल्ली ताम्बूली चाग्निनी तायवल्ली । ताम्बूलं विशद रच्यं तीक्ष्णोष्णं सुखं तारम् । वश्यं तित्तकटुकारं रक्तपित्तकरं लघु । यस्यं श्लेष्मास्यदोग्न्ध्यमलवातश्रमापहम्'—इति भावप्रकाशे । 'ताम्बूलीश्च सहाम्लानि-मालातिलकयुक्तिरिति'—इति कथं-सरित्सागरे-(१।९१) । २००

ताम्रम् क्ली. [ तम्यते आकाङ्क्षयति इति । सयु फलप्रदायाम् + 'अमितम्योदीर्घश्च' इति रक्त् ऊपधाया दीर्घश्च ] तैजसघातुविशेषः; ताम्रकं; शुल्वं; श्लेष्मण्युलं; द्व्यष्टं; वरिष्ठं; उडुम्बरं; श्लिष्म्यु; उदध्वरम्; औदुम्बरम्; उदुम्बरं; औडुम्बरं; तयवेष्टम्; अम्नकम्; अरविन्दं; रविलोहं; रविधियं; रक्तं; नैपालिकं; रक्तघातु; मुनिपित्तलक्ष्; अक्षै; शृङ्गाक्षै; लोहितायसं; 'तामा' 'तांवा' इत्यादि भाषाया । 'शुकं यत्कातिकेयस्य पतितं घरणीकले । दस्मान् तत्राञ्जं समुत्पन्नमिदमाहुः पुराविदः'—इति भावप्रकाशः । (७३३) शुल्बनिमः; अरुणवर्णः; लक्ष्मिः कि. । 'न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं च विशशुच्यते । एको दोषो विषे त्वण्टी दोषास्ताम्रे प्रकीर्तिताः'—इति वैद्यके । पुं. [ ताम्रस्यैव वर्णोऽस्त्यस्य । अयु, ताम्रवर्णत्वादस्य तथात्वम् ] कुष्ठरोगविशेषः; द्वीपभेदः; 'द्वीपे ताम्रदह्यञ्चैव पर्वतं रामकं तथा'—इति यद्भूभाष्ये (३।३१।६५) । ३७०

ताम्रचूडः पुं.- स्त्री. [ ताम्रा ताम्रवर्णी कूडा शिला अस्य ] कुक्कुटः; 'अपरेणाग्निदत्तादस्ताम्रचूडे शुभेन सः । महाकायमुपरिलष्टं कुक्कुटे क्लीमां यरम्'—इति महाभारते (३।२२।४।२४) । ताम्रचूडस्य दक्षिणपिबदा मद्यमुत्तमम्—इति सुश्रुते । कुक्कुटः २४७

तारः पुं.- स्त्री. [ तार्यते पिस्तागते इति । तु+णिच्+फञ् ] अत्युच्चशब्दः; 'नृणां सुरसि शब्दस्तु ह्यौषधिसि विधो ध्वनिः । ए एव फञ्जशब्दः स्यात् तारः शिरसि गीयते ।'—इति हेमचन्द्र दीक्षा । शुद्धमौषितकः (७९८); फली. रूप्यम् (१७२); 'दग्धोतीर्णं सुशीतं यन्निर्मलं कुन्दसन्निभम् । सुरस्निग्धकुमारं च तारमुत्तममिष्यते । 'शायुः शुक्रं बलं हन्ति रोगसंघं करोति च । अणुदं चामृतन्तारं शुद्धमार्द्यमतो दुर्धः'—इति वैद्यके । मुक्ता; 'हारं सुपर्णं सुभूतं च तारम्'—इति रसेन्द्रसारसंग्रहे । 'तारं मौषितकं तारमाद्येन मौषितकमेपोच्यते न तु रजतम्'—इति तर्हीका । शौषित्तदिभेदः; चतुस्तारा; तारकम्; 'तारे ऽप्योतिषि संगोज्य किष्किण्डुप्रमयेद् भ्रुवो'—इति हृद्योगप्रदीपिका । पुं. धारणरिषिकेवः; मुक्ताविशुद्धिः; [ तार्यते जस्यते जयसागरायनेन; तु+णिच्+घञ् । यद्वा तारयति स्पोच्चारण्ययपदिभिल्लोकान् । तु+णिच्+घञ् ] प्रणयः; 'तारयेद् यद् अजाश्वोः स्वजपासधत-यामसम् । तारस्तार इति ख्यातो यस्तं ग्रह्या व्यजोऽयम्'—इति क्षारीखण्डे । 'तारयोपरसहितकामयसुषास्त्राभुगं यं विदुस्तस्मै स्तात्प्रणतिर्गोविन्दतये यो रागिणाम्भ्यर्थते'—इति यद्वागण्यतित्तोये । तरणं; कूर्न्वीलं; विष्णुः; 'असोकस्तारयस्तारः शूरः सौरिजेनेवपरः'—इति महाभारते (१।३।१४१।११७) । राजसविशेषः; 'सुषुपे लक्ष्यपरसापि सश्लेष्मजिता सह । विरुपाक्षेण सुभीय-स्वारेण च निवर्जतः'—इति यद्वाभारते (३।२८।१९) । देवविशेषः; 'तारस्तु क्रोशविस्तारस्वायसं पागसध्वजम्'—इति हरिवंशे (४३।९) । यहादेवः; 'काश्यां विश्वेकरोड्डे गिरिपतिलक्ष्या सपुत्रो यामभागं, युष्ठा-दक्षेण दशो विषयगतद्वितीरशुभाभुभागे । मायावीजं च कर्णं सुस्युनिसहिततो ध्यानयुक्तं यदापि प्रीत्मा लोकस्य सत्मात् सुरसुमिगणकेश्यते तारनाय'—इति दय्यावर्गेचन्तापथिः । वि. अत्युच्चशब्दविशिष्टः; स्फुरितकिरणः; निर्मलः; [ तारं युक्तास्वजेति अच् ] युक्ताविशिष्टः; 'सरसि निहितस्तारो ह्यारः कृता जयते घने'—इति जयस्तके । १४०

तारकम् क्ली. [ तारयेत्+स्वार्थे फञ् ] नक्षत्रं; अशु-स्तारा; [ तारेण कर्मीनिकया कापतोति, क्त+क ] अशुः; पुं. [ तारयति देव्यानिनि, तु+णिच्+ङ् ]

द्वादशमन्वन्तरीयेन्द्रशुभुरसुरविशेषः; 'ब्रह्मपाशा प  
तन्नेन्द्रस्तारको नाम तद्विपुः। हरिर्नपुंसको भूत्वा घात-  
यिष्यति शकूर!'—इति गारुडे। अपरोऽसुरविशेषः;  
'तस्मात्तु सं समुद्भूतो गुहो दिनकरप्रभः। स सप्तदिवसो  
वालो निजघ्ने तारकासुरम्'—इति गारुडे। [ तारय-  
तीति, तृ+णिच्+प्पुल ] कर्णधारः; भेरुलः; तरणो-  
पायः; 'केचिदागमजालेन केचिन्निगमसङ्कुलैः। के-  
चित्तर्कणं मुह्यन्ति नैव जानन्ति तारकम्'—इति ह्य-  
योगप्रदीपिकायाम् (४।४०)। 'तारयतीति तारकस्तं  
तारकं तरणोपायं नैव जानन्ति'—इति तद्गीता।  
महादेवः; 'गर्भमांससृगालाय तारकाय तराय च।  
नमो यस्माय यजिने हुताय प्रहुताय च'—इति महाभारते  
(१।२।२८।३५)। वातरि द्विः। 'कथयति भग-  
वान् इहान्तकाले भवभयकातरतारकं प्रबोधम्'—इति  
प्रबोधचन्द्रोदये (२।१३)। ५१

तारका स्त्री। [ तरति. तारयति वा, तृ+णिच्+प्पुल,  
टाप्, 'तारका ज्योतिषि' इत्युक्त्या नेत्वम् ] नक्षत्रम्;  
'अप-बिन्दवो यषाम्मोषी यषा वा पियि तारकाः।  
यषा वा वर्षतो धारा गङ्गायां सिकता यषा'—इति  
मार्कण्डेये (१५।७१)। कनीनिका; 'लक्ष्मणोपदहना-  
चिबं ततः सन्धे दूषामुद्रतारकाम्'—इति रघुवंशे  
(११।६९)। इन्द्रधारणी। ५१

तारकादिः पुं. [ तारकत्वं तारकासुरस्य कतिः एतुः ]  
कातिकेयः। ११

तारा स्त्री। [ तारयतीति, तृ+णिच्+अच् ] नक्षत्रम्;  
'चन्द्रादित्यौ ब्रह्मस्तारा नक्षत्राणि विधीकृतः'—इति  
महाभारते (१।२।१।२६)। अक्षिमर्ष्यः; बिम्बिनी;  
कनीनिका; तारका; [ तारयति टापादिति, तृ+णिच्+  
अच्+टाप् ] बुद्धदेवताभेदः; बृहस्पतिभार्या; 'ततः  
कालेन कियता तारासूतं सुतं सुन्दम्'—इति देवीभागवते  
(१।१।१।७५)। बालिभार्या, सा सुशेषचारकन्या;  
'हेममालो तजो बाली तार्यं ताराधिपान्नाम्। उवाच  
बृहन्नं बाम्नी तां जानरपतिः पतिः'—इति महाभारते  
(३।२७।१।१८)। चीटा; मुक्ता; द्वितीयाशक्तिः;  
'लीलाया बाह्रदा वेति तेन लीलात्तरुणे। तारकाया  
सया तारा सुखनोक्षप्रदाचिनी। उवाचतारिणी नम्य-  
तुषवारा प्रकीर्तिता।' 'प्रत्यासीत्परापितामहीमिवहृद्-

पीराहृतासा परः; खड्गेन्दीवरकतुं खपरंमुजा कूङ्कार-  
वीधोऽयथा। राक्षींशोर्लक्षिशालपिङ्गलजटाजूटकनागैर्युता,  
पाठयं न्यस्य रथारुहो विजयतां हन्त्युग्रतारा स्वपम्'  
—इति ताराव्याजम्। ५१

तारापयः पुं. [ ताराणां नक्षत्राणां पन्थाः। समासे अ ]  
आकारः; देशदिशेषः; 'अङ्गदं चन्द्रकेतुं च लक्ष्मणो  
उप्यात्मसम्पद्यौ। एतन्नात् रघुनायस्य चक्रे तारापये-  
स्वरी'—इति रघुवंशे (१५।१०)। १३७

तार्यः पुं. [ तृप्त एव, स्वार्थे अण् ] विनतायां जातः  
कश्यपपुत्रविशेषः; 'तार्यश्चारिष्टनेमिश्च गरुडश्चामि-  
तशब्दः। अरुणश्चारिष्टश्चैव वनतेया व्यवस्थिताः'—  
इति महाभारते (१।१२।३।७०)। कश्यपः; 'प्रमथ्य  
तरसा राक्षः एतस्वारीश्चैवपक्षगान्। पश्यतां सर्वलो-  
कानां तार्यपुत्रः सुधामिव'—इति भागवते। ३०

तार्यः पुं. [ तार्यत्वं कश्यपस्य अपत्यम्। तार्यं+'गर्गा-  
दिभ्यो ङ्' इति ङङ् ] गरुडः; 'स्वस्ति नस्तास्योर्गिष्टि-  
नेमिः स्वस्ति नोऽब्रुहस्पतिर्देवतु' इति ऋग्वेदे (१।८।१।६)।  
'वस्तो न तार्यति किल कालिनेन मणिं विसृष्टं यमुनी-  
रसायः'—इति रघुवंशे (६।४९)। अश्वः (४।३६);  
मरुदाश्वः; तृप्तपुत्रोऽत्रापत्यम्; 'जगमुश्चारिष्टनेमोऽय  
तार्यंस्वायमनस्यज्जा'—इति महाभारते (३।१।८।४।८)।  
'एवमुद्रतस्तदा तार्यः सर्वशास्त्रविदां वरः। विबुध्य  
सर्वरश्चाद्युषां तद्वाच्यमिदमब्रवीत्'—इति महाभारते  
(१।२।२८।४)। कालवृक्षः; स्वर्णम्; अश्वकर्णवृक्षः;  
स्वयं; अश्विदिशेषः; 'अम्बष्टाः कौकुरास्तास्यविश्रपाः  
पल्लवैः सह'—इति महाभारते (२।५।१।१५)। महादेवः;  
'दन्वर्षो ह्यदिक्षिस्तास्यैः सुविज्ञेयः सुशारदः'—इति  
महाभारते (१।३।१।७।९७)। पर्वतविशेषः; पक्षिमात्रं;  
शर्पः। ३०

तारुः पुं. [ तल्लयव। तल्ल+'हलङ्व' इति षच् ] गीत-  
कालक्षिरादानम्; 'अर्धमात्रं द्रुतं ज्ञेयम् एकमात्रं लघु  
स्मृतम्। द्विमात्रं तु पुरु ज्ञेयं त्रिमात्रं तु प्लुतं मतम्।'  
हाके चर्चंत्तुदे ज्ञेयं गुरुद्वन्द्वं लघुः प्लुतः। गुरुलघुः  
प्लुतश्चैव ध्वेन्वास्तुदाभिधेयः।' (१।९२) वृक्षविशेषः;  
तारुदुषः; शरीः; दीर्घस्कन्धः; ध्वजद्रुमः; तुणराजः;  
बभ्रुदः; बदाह्वः; दीर्घपादपः; चिरायुः; तरराजः;  
दीर्घवः; वृक्षरजः; आसद्युः; लेह्यपत्रः; महोन्नतः;

अङ्गुष्ठमध्यमाभ्यां सम्मितं (५३८); करतलं; करास्फालः; तालः सिञ्जावलयसुभगैर्नतितः कान्तया मे, यामध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्—इति मेघदूते (७९) । कांस्यनिर्मितवाद्यभाण्डं; त्सरः; महादेवः; 'तलस्तालः करस्थाली ऊर्द्धसंहननो महान्'—इति महाभारते (१३।१७।१२८) । क्ली. [ तल-त्यनेनेति, तल् प्रतिष्ठायाम्, 'हलश्च' इति घञ् ] हरि-तालं; तालकम्, अस्य नामानि यथा—'हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम् । पिञ्जकं रोमहरणं तालकं पातमित्यपि'—इति रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे । तालीशपत्रं; दुर्गासिंहासनं; [ तालस्य विकारः; 'ताला-दिभ्योऽण्' इत्यस्य तालाद्धनुषि इति वार्तिकोक्त्या अण् ] धनुः; [ फले लुक् ] तालफलम्; 'शिरोभिः प्रपतद्भिश्चाप्यन्तरीक्षान्महीतलम् । तालैरिव महाराज ! वृन्ताद्भ्रष्टैरदृश्यत'—इति महाभारते (३।१०।१।५) ।

९४

तालध्वजः पुं. [ तालो ध्वजे यस्य ] बलदेवः; ताललक्ष्मा; तालाङ्कः; 'नातिदूरं ततो गत्वा नगं तालध्वजो बली । पुण्यं तीर्थवरं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गतः'—इति महा-भारते (१।५४।१०) । पर्वतविशेषः; 'शत्रुञ्जयो रैवतश्च सिद्धिक्षेत्रं सुतीर्थराट् । टङ्कः कपर्दी लौहित्य-स्तालध्वजकदम्बकौ'—इति शत्रुञ्जयमाहात्म्ये (१।३५२) । २८

तालवृन्तम् क्ली. [ तालस्य तालपत्रस्य वृन्तं कारणत्वेन अस्ति अस्य । अच् ] व्यजनं, तालवृन्तकम्; 'ताडु का पंखा' इति भाषा । 'परे ब्रह्मणि विज्ञाते समस्तैर्निय-मैरलम् । तालवृन्तेन किं कार्यं लब्धे मलयमारुते । पुं. सोमविशेषः; 'प्रतानवांस्तालवृन्तः करवीरोऽशवा-नपि'—इति सुश्रुते । ३१०

ताल क्ली. [ तरन्त्यनेन वर्णा इति । त्+त्रोरश्च लः ] इति ब्रुण्, रस्य लश्च ] जिह्वेन्द्रियाधिष्ठानं; काकुदं; तालकम् । ५२१

तिक्तः पुं. [ तेजयतीति । तिज्+चुरादीनां णिजभावे गत्यर्थार्कमेति क्त ] सुगन्धः; सुरभिः; 'नादानुमन्य-करिमुक्तमदाम्बुतिक्तं घृताङ्कुशेन न विहातुम-पीच्छताम्'—इति भाषे (५।३३) । षड्रसान्यतमः; [ तिक्तस्तिक्तरसोऽस्यास्तीति, अर्श आदित्वात् अच् ]

कुटजवृक्षः; वरुणवृक्षः; रसविशेषः; 'तीता' इति भाषा । 'तिक्ताख्यो बत वातलोऽपि हि नृणां कुष्ठादि-दोषापहः सोऽन्तः सर्वरुजापहो भ्रमहरो रुच्योऽपि संक्ले-दहृत् । जिह्वास्फोटकनाशनोऽय भवति क्षीणक्षतानां हितो वक्त्रोत्त्वलान्तिहरः प्रकृष्टगुणधृक् निम्बादिकानां रसः'—इति हरीते । क्ली. पर्पटिकोपधिः; तिक्तरस-युक्ते त्रि. । ८१३

तिग्मम् क्ली. [ तेजयति उत्तेजयतीति, तिज्+युजिर्-जितिजां कुश्च' इति मक्, कवर्गश्चान्तादेशः ] तीक्ष्णं; खरं; तद्वति त्रि. । 'तिग्मवीर्यविषा ह्येते दन्द-शूका महाबलाः'—इति महाभारते (१।२०।११) । वज्रं; पुं. क्षत्रियविशेषः; 'ततो मृदुस्तस्मात् तिग्मस्ति-ग्मात् बृहद्रथः'—इति विष्णुपुराणे (४।२।१।३) । ४०

तिग्मांशुः पुं. [ तिग्मास्तीक्ष्णा; अंशवः किरणाः यस्य ] सूर्यः; 'धौम्योपदेशात् तिग्मांशुप्रसादादन्नसम्भवः'—इति महाभारते (१।२।१३९) । अग्निः; 'इदं वै सद्म तिग्मांशो वरुणस्य परायणम्'—इति महाभारते (१।२।३३।१८) । तीक्ष्णकरणे त्रि. । ३५

तितिक्षा स्त्री. [ तिज्+स्वार्थे सन्+अ प्रत्ययात् ] इति अ ततष्टाप् ] क्षान्तिः; परापराधसहनम्; 'शमो दमस्तपः साम्यं तितिक्षोपरतिः श्रुतम्'—इति भागवते (१।१६।२६) । शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता; 'यमैर-कार्मेर्नियमैश्चाप्यनिन्दया निरीहया द्वन्द्वतितिक्षया च'—इति भागवते (४।२।२।२४) । ७२५

तिमिः पुं. [ तिम्यतीति, तिम् क्लेदने +इन्, यद्वा ताम्यति आकाङ्क्षतीति, तमु काङ्क्षायाम् +कर्मितमिशति-स्तम्भामत इच्च' इति इन्, अकारस्य इकारादेशश्च ] मत्स्यः; मत्स्यविशेषः (६६०); तिमिर्महाकायः कश्चित्सामुद्रः मत्स्यः; 'अस्ति मत्स्यो तिमिर्नाम शत-योजनविस्तरः'—इति भरतः । 'ससत्त्वमादाय नदी-मुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात् । अमी शिरो-भिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्ध्वं विन्तन्वन्ति जलप्रवाहान्'—इति रघुवंशे (१३।१०) । समुद्रः; राजविशेषः; 'नृपञ्ज-यस्ततो हूर्वतिमिस्तस्माज्जनिप्यति'—इति भागवते (१।२।१।४२) । 'तिमिं पुत्रं ततो राज्ये न्यस्य स्वर्गं स्वयं गतः । मुनिवेदमितान् वर्षान्नवमासाधिकान् तिमिः । पालयित्वाखिलं राज्यं भुवत्वा भोगमनुत्तमम् । पुत्रं

बृहद्रथ राज्ये सोऽभिषिच्य वन ययौ—इति राजा-  
वत्याम् १ परिच्छेदे । ६५७

तिमिङ्गलगिलः पुं. [ तिमिङ्गलमपि गिरतीति । तिमि-  
ङ्गल + गु + क । तिमिङ्गल = तिमि गिरतीति, गु + क ;  
रस्य लः । गिलेऽगिलस्येति मुम् ] महामत्स्यविशेषः ;  
तिमिङ्गलाशनः ; 'तिमिङ्गलगिलोऽप्यस्ति तदग्नि-  
लोऽप्यस्ति राघव ।' ६६०

तिमिरम् क्ली. [ तिम्यतीति, तिम् + 'इषिमदिमुदीति'  
'किरच्' ] अन्धकारः ; 'अतीववातस्तिमिरं बुभुक्षा  
चास्ति नित्यशः । भयानि च महान्त्यत्र अतो दुःखतरं  
वनम्—इति रामायणे (२।२।१८) । पुं. [ तिम्य-  
ति क्लियति चक्षुरनेन । तिम् + 'इषिमदिमुदीति'  
'किरच्' ] चक्षुरोगविशेषः ; 'तिमिराख्यः स वै दोष-  
श्चतुर्यं पटलं गतः । रुणद्धि सर्वतो दृष्टिं लिङ्गनाशमतः  
परम्—इति माधवकरः । 'वदने कृष्णसर्पस्य निहितं  
मासमञ्जनम् । ततस्तस्मात् समुद्धृत्य सशुष्कं चूर्णयेद्  
बुधः । सुमनःक्षारकैः शुष्करुद्धांशैः सैन्धवेन च ।  
एतन्नित्याञ्जनं कार्यं तिमिरघ्नमनुत्तमम्—इति चरके ।  
'कतकस्य फलं शङ्खं सैन्धवं श्युषणं वचा । फेनो रसा-  
ञ्जनं क्षौद्रं विडङ्गानि मनःशिला । एषां वर्त्तिर्हन्ति  
कासं तिमिरं पटलं तथा—इति गारुडे (११८ अध्याये) ।

११०

तिमिररिपुः पुं. [ तिमिरस्य अन्धकारस्य रिपुः शत्रुः ]  
सूर्यः । ३६

तिरस्करिणी स्त्री. [ तिरोऽन्तर्धानं करोतीति । तिरस् +  
कृ + 'नन्दिग्रहीति' णिनि, संज्ञापुर्वकविधेरनित्यत्वात्  
वृद्धभावात् ततो डीप् ] व्यवधायकपटः ; 'कनात—  
इति भाषा । 'यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां यदृच्छया  
किम्पुरुषाङ्गनानाम् । दरीगृहद्वारविलम्बिबिम्बास्तिर-  
स्करिण्यो जलदा भवन्ति—इति कुमारै (१।१४) । ३०९

तिरस्कारः पुं. [ तिरस् + कृ + घञ् ] अनादरः ; तिर-  
स्क्रिया । ७०४

तिरस्कारिणी स्त्री. [ तिरोऽन्तर्धानं करोतीति । तिरस् +  
कृ + णिनि डीप् ] तिरस्करिणी ; 'कनात' इति भाषा । ३०९  
तिरोधानम् क्ली. [ तिरस् + धा + भावे ल्युट् ] अन्तर्धा-  
नम् ; 'सिद्धान् विद्याधरांश्चैव तिरोधानेन सोऽसृजत्'  
—इति भागवते (३।२।१४४) । ७१९

तिर्यक् [ च् ] अव्य.—वक्रं ; साचि ; तिरः ; 'तिर्यगूर्ध्वं  
शरीरे च पातयित्वा शिरोधराम्—इति रामायणे  
(२।२।३४) । तिरोऽर्थः ; निरुद्धार्थः । ३००

तिलः पुं. [ तिलति स्निह्यति तैलेन पूर्णाभवतीति ।  
तिल् + 'इगुपघञेति' क ] सस्यविशेषः ; होमधान्यं ;  
पवित्रः ; पितृतर्पणः ; पापघ्नः ; पूतघान्यं ; स्नेहफलः ;  
स्नेहफलपूरफलः ; 'कृष्णः पथ्यतमः सितोऽप्यगुणदः  
क्षीणाः किलान्ये तिलाः—इति राजनिघण्टुः । 'कृष्णः  
श्रेष्ठतमस्तेषु शुक्लो मध्यमः सितः । अन्ये हीनतराः  
प्रोक्तास्तज्जै रक्तादयस्तिलाः ।' 'ब्राह्मणः प्रतिगृह्णी-  
याद् वृत्त्यर्थं साधुतस्तथा । अव्यश्वमपि मातङ्गतिल-  
लौहांश्च वर्जयेत्—इति ब्रह्मपुराणे । ५८३

तिलकम् क्ली. [ तिलति स्निह्यतीति, तिल् + 'क्वुन्  
शिल्पिसञ्ज्ञयोः—इति क्वुन् ] क्लोमः ; कृष्णवर्णसौ-  
वर्चलं ; सौवर्चलम् । (८।१२) पुं. [ तिल इव कायतीति,  
कै + क ] पुष्पवृक्षविशेषः ; विशेषकः ; मुखमुण्डनकः ;  
पुण्ड्रकः ; पुण्ड्रः ; स्थिरपुष्पी ; छिन्नरुहः ; दग्धरुहः ;  
मृतजीवः ; तरुणीकटाक्षकामः ; वासन्तसुन्दरः ; दुग्धरुहः ;  
पुष्पागः ; भालविभूषणसंज्ञः ; रेठकः ; क्षुरफः ; श्रीमान् ;  
पुरुषः ; छत्रपुष्पकः ; 'न खलु शोभयति स्म वनस्थलीं  
न तिलकस्तिलकः प्रमदामिव—इति रघुवंशे (१।४१) ।  
ध्रुवकभेदः ; 'पञ्चविंशतिवर्णाङ्घ्रितिलको ध्रुवको  
भवेत् । इष्टदचच्चत्पुटे ताले रसे वीरेऽद्भुतेऽपि वा—  
इति सङ्गीतदामोदरः । प्रधाने वि. । पुं.—क्ली.

[ तिलवत् तिलपुष्पवत् कायतीति । कै + क ] चन्दनादिना  
ललाटादिद्वादशाङ्गकर्तव्यचिह्नविशेषः ; तमालपत्रं ;  
चित्रकं ; विशेषकम् ; 'विशेषको वा विशिशेष यस्याः  
श्रियं तिलोकीतिलकः स एव—इति माघे (३।६३) ।  
'द्वादशाङ्गे ललाटादौ तिलकं हरिमन्दिरम् । स्नानान्ते  
वैष्णवः कुर्यात् प्रत्येकं कृष्णनाभिमिः । वामे वक्षसि  
नेत्रान्ते गण्डेऽसे शङ्खचिह्नितम् । तथैव दक्षिणे कुर्याद्विरे-  
श्चक्राङ्कितं मुने ।' ५४१

तिलपिञ्जः पुं. [ तिल + 'तिलान्निष्फलात् पिञ्जपेजौ'  
इत्युक्तया पिञ्ज ] निष्फलतिलवृक्षः ; निष्फलतिलः ।

५८३

तिलपेजः पुं. [ 'तिलान्निष्फलात् पिञ्जपेजौ' इति पेज ]  
निष्फलतिलः । ५८३



तिस्रिस्तः पुं. [ तिल् गती, तेलनं तिलिः, कृष्यादित्वात् इक् । तिलि गति त्सरति, त्सर छद्यगती, 'अन्त्येभ्यो-ज्जीति'ड ] गोनससर्पः । ६४२

तिलोत्तमा स्त्री. [ तिलैः तिलप्रमाणैः सर्वरत्नानामं-शैवत्तमा ] स्ववैश्या; 'तिलं तिलं समानीय रत्नानां यद्वि-निमिता । तिलोत्तमेति तत्तस्या नाम चक्रे पितामहः'—इति महाभारते (१२१२।१७) । ८८

तिस्यम् क्ली. [ तिलानां भवनं क्षेत्रम् । तिल+ 'विभाषा तिलमाषोमामङ्गाणुभ्यः' इति यत् ] तिलक्षेत्रं; तैलीनं; [ तिलाय हितम्, 'खल्यवमासतिलकृषभ्रह्मणश्च' इति यत् ] तिलहिते त्रि. । १६३

तिष्यः पुं. [ तुष्यन्त्यस्मिन्निति । तुष्+क्यप्, निपातनात् साधुः ] पुष्यनक्षत्रम्; 'यदा सूर्यश्च चन्द्रश्च तथा तिष्यबृहस्पती । एकराशौ समेष्यन्ति प्रवत्स्यति तदा कृतम् ।' [ तिष्यः पुष्यनक्षत्रं पौर्णमास्यामस्त्यस्येति । अच् ] पौषमासः; कलियुगं; क्लीवेऽपि, यथा— 'चत्वारि भारते वर्षे युगानि भरतवर्षम् ! । कृतं त्रेता द्वापरं च तिष्यञ्च कुसवर्द्धन !'—इति महाभारते (६।१०।४) । ५१

तीक्ष्णः त्रि. [ तिज् + 'तिजेदीर्घश्च' इति क्लृप्त दीर्घश्च ] तिग्मः; उग्रः; 'तीक्ष्णश्चैव मृदुश्च स्यात् कार्यं वीक्ष्य महीपतिः'—इति मनुः (७।१४०) । असह्यः; 'नम-स्तीक्ष्णेषुवे चायुधिने'—इति यजुः संहितायाम् (१६। ३६) । 'तीक्ष्णाः असह्याः इषवः बाणाः यस्य, तस्मै नमः' इति तट्टीकायां महीषरः । आत्मत्यागी; निरा-लस्यः; सुबुद्धिः; योगी । क्ली. [ तेजयति तेज्यतेऽनेन वा ] लौहम् (१७१); 'कृष्णायसं काललोहं रुमं तत्तीक्ष्णमन्यया'—इति वैश्वकरलमाला । विषं; (६४६); खरं; युद्धं; मरणं; शस्त्रं; धीघ्नं; सामुद्रलवणं; मुष्ककः; चव्यङ्गं; मरुतः; तीक्ष्णवस्तूनि, मया—प्रतिभा; हीरकं; कटाक्षः; दुर्वस्त्रिं; नखः; रुषणं; रविकरः; पुं. यवक्षारः; 'बावसूको यवक्षारो यवसूको यवाप्रजः । क्षारस्तीक्ष्णस्तीक्ष्णरसो कषणो भवनालजः'—इति वैश्वकरलमाला । श्वेतकुक्षः; कुम्भुरकः । तीक्ष्णगणो कषा—आस्तेया, ज्वेष्ठा, मूलम् । ४०

तीक्ष्णोपायः पुं. [ तीक्ष्णस्यासौ उपायः ] कूपेणम्;

मयान्तिककर्म । ३७१

तीर्थम् क्ली. [ तीरयति समापयति नद्यादिकमिति । तीर् + अच् ] नदीफूलं; सायकः (४६७); गङ्गातीरम्; 'साह्रहस्तशतं यादद् गर्भतरतीर्युच्यते । भ्राद्रकृष्ण-चतुर्दश्यां यावदाक्रमते जलम् । तावद् गर्भं विजानीयात् तदन्यतीरमुच्यते ।'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । पुं. त्रपु. । ६६७

तीरी स्त्री. [ तीर+ङीप् ] दायकः; दायः । ४७३

तीर्थम् क्ली. [ तरति पापादिकं यस्मात् । तृ + 'पातृ-तुदिवधीति' थक् ] पुण्यस्थानादिः; 'निपाताद्बुद्धं पुण्यं ततः प्रस्रवणादिकम् । तलोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते । तीर्थतोयं ततः पुण्यं गङ्गातोयं ततोऽधिकम्'—इति बह्निपुराणे । योनिः (८६२); जलसमी-पस्थारत्निमाश्रयानम्; 'अरत्निमात्रं जलं त्यक्त्वा कुर्याच्छीचमनुद्धृते । पश्चाच्च शोधयेत्तीर्थमन्यथा न शुचिर्भवेत्'—इति आदित्यपुराणे । मन्त्रिप्रभृत्यष्टादश-राष्ट्रसम्पत्; 'कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च । त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वैत्सि तीर्थानि चारकैः'—इति महाभारते (२।५।३८) । यथा नीतिशास्त्रे— 'मन्त्री पुरोहितश्चैव युवराजश्च भूपतिः । पञ्चमो द्वारपालश्च षष्ठोऽन्तर्दक्षिकस्तथा । कारागाराधिकारी च द्रव्यसञ्चयकृतथा । कृत्याकृत्येषु चार्थानां नवमो विनियोजकः । प्रदेष्टा नगराध्यक्षः कार्यनिर्माणकृतथा । धर्माध्यक्षः सभाध्यक्षो दण्डपालस्त्रिपञ्चमः । षोडशो-दुर्गपालश्च तथा राष्ट्रान्तपालकः । अटवीपालकान्तानि तीर्थान्यष्टादशैव तु । चारान् विचारयेत्तीर्थे स्वात्मनश्च परस्य च । पाषण्डादीनविज्ञातानन्योऽन्यमितेरेवपि । मन्त्रिणं युवराजं च हित्वा स्वेषु पुरोहितम्'—इत्येषां तीर्थशब्दवाच्यत्वं, तथा च हलामुपः—'योनी जलाव-तारे च मन्त्राद्यष्टादशस्वपि । पुण्यक्षेत्रं तथा पात्रे तीर्थं स्याद् दर्शनेष्वपि'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । पुण्यक्षेत्रं; पात्रम्; 'दूरादेव परीक्षेत ब्राह्मणं वेदपारगम् । तीर्थं तद्व्यकल्पानां प्रदाने सोऽप्रतिभिः स्मृतः'—इति मनुः (३।१३०) । दर्शनं; घट्टः; विप्रः; बागमः; निषतनम्; अग्निः; पुण्यकालः; 'हिरण्यं वां महौ ज्ञानान् हस्तस्वान् नृपतिर्वरान् । प्रादान् स्वत्रञ्च विधेयः त्रयातीर्थे च तीर्थं च'—इति बागवते

(११२११४) । शास्त्रम्; अक्षरः; क्षेत्रम्; उपायः; 'वासुदेवेन तीर्थेन जात ! गच्छस्य संशयम् ।' तीर्थेन उपायेन' इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । अवसरः; 'स तथा सञ्चतीर्थोऽपि न उपाये निरायुधम् । मानयन् स मूषे धर्मं विष्वक्सेनं प्रकोपनम्'—इति भागवते (३।११।४) । नारीरजः; अवतारः; श्रद्धिचुष्टाम्बु; 'अकर्ममिदं तीर्थं भरताज ! निशाभय । रमणीयं प्रसन्नाम्बु सन्मनुष्य- मनो यया'—इति रामायणे (१।२।४) । उपाध्यायः; 'शिक्षितो ह्यसि सारथ्ये तीर्थतः पुरुषर्षभ !'—इति महाभारते (४।४०।१९) । तीर्थतो गुरुतः' इति नील- कण्ठः । गन्धो । ८५८

तीर्थः वि. [ तीव् स्थीत्ये+वाहुलकात् रन् ] अत्युष्णः; नितान्तः; 'तान् हत्वा गजकुलवदतीव्रवैरान् काकुत्स्थः कुटिलनखाप्रलग्नमुक्तान्'—इति रघुवंशे (१।६५) । रुद्धः; दुःसहः; 'हन्त विरह समन्ताज्जलयति दुर्वार- तीव्रसंवेगः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९१) । तीक्ष्णम्; 'कृतकस्वाप भदीयश्वासध्वनिदत्तकर्ण ! किं तीर्थैः । विष्यसि मां निश्वासैः स्मरः शरैः शब्दवेधोव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९५) । पुं. शिवः; क्ली. [ तिञ् निशाने+वाहुलकात् रन्, दीर्घत्वं, जकारस्य चकारः ] अतिशयः; तीरं; तीक्ष्णं; श्रेणु; लोहम् । ४० तीक्ष्णता स्त्री.—अतिशयत्वं; वेगाधिक्यम् । ४७०

तु अव्य. [ तुद् व्ययने, मितद्वादिवाङ्ङु ] भेदः; अवधारणं; समुच्चयः; 'उद्भयानं समारुह्य सूरयानं तु कामतः । स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुष्यति'—इति मनुः (११।२०२) । पक्षान्तरं; नियोगः; प्रशंसा; विनिग्रहः; पादपूरणम्; 'अयमूयं त्वन्दशतं सहस्रमभिहत्य च । जिघांसया ब्राह्मणस्य नरकं प्रतिपद्यते'—इति मनुः (११।२०७) । ८८१ तुक् [ ज् ] पुं तुञ्ज्यते जीव्यतेऽनेनेति । तुञ्+द्विप् ] अपत्यं; श्लोकः । ४९७

तुङ्गः वि. [ तुजि द्विसायाम् +ङ् ] उन्नतः; 'शिला- विभङ्गं गराजशापस्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवाचरोह'—इति रघुवंशे (६।३) । उन्नतः; प्रधानं; प्रचुरः; 'तेषां सदसवभूयिष्ठास्तुङ्गा ब्रविणराशयः'—इति रघुवंशे (४।७०) । किञ्चल्लो फली । पुं. पुढायवृक्षः; 'कुम्भीक- प्ररुपस्तुङ्गः पुढायो रसते तीर्थः'—इति वैदिकरत्नमाला ।

पर्वतः; बुधग्रहः; नारिकेलः; गण्डकः; योगभेदः; स तु ग्रहाणाम् उच्चराशिः; 'आदित्यमेव बुधमे शशाङ्के कन्या- यते ज्ञे च गुरो कुलीरे । मीने च द्युक्ते मकरे महीजे शनौ तुलायामिति तुङ्गोद्गः'—इति समयामृतम् । ७५१ तुङ्गः वि. [ तुद्+द्विप्, तेन तं वा छद्यतीति । छो+ क ] दून्धः; हीनः; 'किमेतैरात्मनस्तुच्छैः सह देहेन नश्यरैः !' अल्पः । ७७७

तुञ्जम् फली. [ तुञ्जते निष्पीडयति अम्यन्तरस्यद्रव्यमिति । तुण्+पचाद्यच् ] मुखं; चञ्चुः; 'आमिषं स तु विज्ञाय शीघ्रमम्यद्रवत् खगम् । तुण्डयुद्धमयाकाशे तावुभी समचक्रतुः'—इति देवी भागवते (२।१।२६) । पुं. महादेवः; 'नमस्तुण्डाय तुष्याय नमस्तुटितुटाय च'—इति हरिवंशे । राक्षसविशेषः; 'तुण्डेन च नलस्तत्र पट्टशः पनसेन च'—इति महाभारते (३।२८।४९) । ५१८ तुण्डिः स्त्री. [ तुण्डते निष्पीडयति मध्यस्यद्रव्यमिति । तुण्+सर्वधातुम्यो इन् इतीन् ] नामिः; तुण्डिका; पुं. मुखं; चञ्चुः । ६७०

तुण्डिका स्त्री. [ तुण्डिरेव । तुण्डि+स्वार्थे कन् टाप् च । ] विम्बिका; तुण्डिकेरी; तुण्डिकेरिका; तुण्डिकेरी; तुण्डिकेरी; तुण्डिकेरिः; 'तुण्डी रक्तफला विम्बी तुण्डि- केरी च विम्बिका'—इति वैदिकरत्नमालायाम् । नामिः । २०३

तुन्दम् क्ली. [ तुदतीति । तुद्+अल्वादयश्च' तुदेर्नुम् च क्षुप्तेर्नुम्, लतो दस्य लोपः ] उदरं; जठरम् । ५१५ तुन्दिः स्त्री. [ तुद्+इन्, वाहुलकात् नुम् च ] नामिः । ६७०

तुन्दिकः वि. [ अतिशयितं तुन्दमुदरमत्यत्यम् । 'तुन्दा- दिभ्य इलञ्च'—इति चकारात् ठन् ] विशालजठरो जनः; तुन्दिलः; महोदरः । ६०८

तुन्दिकः वि. [ तुन्दिष्ठा नामिरस्येति । तुन्दि+वलि- कटेमं, इति भ ] तुन्दिलः । ६०८

तुन्दिलः वि. [ तुन्दं विशालमुदरमत्यत्येति । तुन्द+ 'तुन्दादिभ्य इलञ्च' इतीलच् ] विशालजठरो जनः; पिचिण्डिलः; बृहत्कुक्षिः; तुन्दिका; तुन्दिमः; तुन्दी । ६०८

तुम्बः वि. [ तुदते इति, तुद्+क्त ] व्ययितः; 'स तुम्ब इव तीक्ष्णेन प्रतोदेन ह्योतमः । राजा प्रचोदितोऽ- भीक्षं कंकेयीमिदमभवीत्' इति रामायणे (२।१४।२३) ।

छिन्नः; द्विधाकृतः; पुं. नन्दीवृक्षः। ७६७

**तुन्नवायः** पुं. [ तुन्नं छिन्नं वयतीति। तुन्न+वे+ 'ह्लावामश्च' इत्यण् ] सौचिकः; 'दर्जी' इति भाषा। 'शैलूषतुन्नवा-यात्रं कृतघ्नस्यात्रमेव च'—इति मनुः (४।२।१४)। ५९०  
**तुमुलम्** क्ली. [ तु सौत्री घातुः+बाहुलकात् मुलक् ] व्याकुलो रवः; रणसङ्कुलं; सङ्कीर्णयुद्धं; परस्परसम्बाधो रणसंघट्टः; 'तत्राभूत्तुमुलं युद्धं देवदानवसैन्ययोः'—इति देवीभागवते (५।४।१२८)। पुं. [ तु+बाहुलकान्मुलक् ] कलिवृक्षः। व्याकुलो रवः (रणः); इति त्रिकाण्डशेषः। प्रचण्डे उग्रे सङ्कुलमात्रे च त्रि.। 'एकस्य करुणाक्रन्दैः सैन्यस्यान्यस्य गर्जितैः। सरित्तरङ्गघोषैश्च वभूवस्तुमुला दिशः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। 'ववौ गन्धश्च तुमुलो दह्यतामनिशं तदा'—इति महाभारते (१।५३।१२)। १३९

**तुम्बः** पुं.-स्त्री. [ तुम्बति नाशयत्यरुचिमिति। तुम्ब अर्दने +अच् ] अलावुः; तुम्बकः; तुम्बा; तुम्बिः। २०९

**तुम्बा** स्त्री. [ तुम्ब+टाप् ] अलावुः; 'कुम्बावती समविहम्बा गलेन नवतुम्बाभवीणसविधा, शं बाहुलेयश-शिविम्बाभिराममुखसम्बाधितस्तनभरा'—इति अम्बाष्टके। धेनुः। २०९

**तुम्बिः** स्त्री. [ तुम्बति नाशयत्यरुचिमिति। तुवि अर्दने + 'सर्वघातुम्य इन्' इतीन् ] अलावुः; तुम्बिका; तुम्बुकः। २०९

**तुम्बी** स्त्री. [ तुम्बि+कृदिकारादिति वा डीप् ] अलावुः; 'अलावुः कथिता तुम्बी द्विधा दीर्घा च वर्तुला। मिष्टं तुम्बीफलं हृद्यं पित्तश्लेष्मापहं गुरु। वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं घातुपुष्टिविवर्धनम्'—इति भावप्रकाशः। 'अरे चेतोमीन! भ्रमणमधुना योवनजले, त्यज त्वं स्वच्छन्दं युवतिजलघौ पश्यसि न किम्। तनूजालीजालं स्तन-युगलतुम्बीफलपुगं, मनोभूकैवर्तः क्षिपति परितस्त्वां प्रति मुहुः'—इति शान्तिशतके (३।१६)। कुलिक-वृक्षः। २०९

**तुरगः** पुं. [ तुर् वेगे+भावे घञर्थे क, तुरेण वेगेन गच्छतीति। गम्+अन्येष्वपीति ङ ] घोटकः; 'मृगा मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरङ्गैः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३।१४)। 'ततः प्रहस्यापभयः पुरन्दरं पुनर्भापे तुरगस्य रक्षिता'—इति रघुवंशे (३।५१)।

चित्तम्। ४३६

**तुरङ्गः** पुं.-स्त्री. [ तुरेण वेगेन गच्छतीति। तुर+गम्+ 'गमेः सुप्ति वाच्यः' इत्युक्त्या स्रच्, 'स्रच्च ङिद्वा वाच्यः' इति ङित्, मुम् ] घोटकः; 'मृगाः मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरङ्गैः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३।१४)। चित्तम् ४३६

**तुरङ्गस्कन्धः** पुं. [ तुरङ्गाणां स्कन्धः समूहः ] अश्व-सङ्घातः। ८११

**तुराषाद्** [ ह् ] पुं. [ तुरं वेगवन्तं साहयति अभिभवतीति। तुर+सह्+णिच्+न्विप् ] 'सहेः साहः सः' इति षत्वम्, 'अन्येषामपीति' पूर्वपदस्य दीर्घः] इन्द्रः 'तुराषा-डपि तच्छ्रुत्वा क्रोधयुवतो वभूव ह'—इति देवीभागवते (१।१।१६३)। ५३

**तुरीयवर्णः** पुं. [ तुरीयश्चतुर्थो वर्णः ] शूद्रः; अन्त्यजः। ३९२

**तुलाकोटिः** स्त्री. [ तुलां सादृश्यं कोटयते इति। तुला+कुट्+इन् ] नूपुरः; 'लीलाचलत्स्त्रीचरणारुणोत्पल-स्वलत्तुलाकोटिनिनादकोमलः'—इति माघे (१।२।४४)। [ तुलया मानेन कुटतीति। कुट् कौटिल्ये +इन् ] मान-भेदः; अर्बुदः। ५६१

**तुलाकोटी** स्त्री. [ कृदिकारादिति वा डीप् ] तुलाकोटिः। ५६२

**तुल्यः** त्रि. [ तुलया सम्मितः। 'नौवयोवर्मेति' यत् ] सादृश्ययुक्तः; समः; सदृशः; सदृक्षः; सदृक्; साधारणः; समानः; सवर्मः; सम्मितः; स्वरूपः; 'तुल्यार्थं तुल्यसामर्थ्यं मर्मज्ञं व्यवसायिनम्। अर्द्धराज्यहरं भृत्यं यो न हन्यात् स हन्यते'—इति पञ्चतन्त्रे (१।२।१८)। उत्तरपदस्यास्तुल्यवाचकाः—निभः, सङ्काशः, नीकाशः, प्रतीकाशः, उपमा, भूतः; रूपः, कल्पः, प्रभः। पुं. गन्धर्वविशेषः; 'गन्धर्वराजो बलवांस्तुल्यनामान्य-यात्तदा'—इति महाभारते (१।१०।१७)। २५६

**तुवरः** पुं. क्ली. [ तवति हिनस्ति रोगानिति। तु+बाहुलकात् ष्वरच् प्रत्ययेन साधुः ] कपायरसः; त्रि. कपाययुक्तः; 'नातिसान्द्रद्रवं तक्रं स्वाह्रस्त्रं तुवरं रसे'—इति सुश्रुते (१।४५)। इमश्रुहीनः। ७७१

**तुवरी** स्त्री. [ तुवर+पितृत्वान् डीप् ] आढकी; 'तुवरी ग्राहिणी शीता लघ्वी कफविषास्रजित्। तीक्ष्णोष्णा

वह्निवा कण्डूकृच्छकोऽङ्गमिप्रवृत्—इति भावप्रकाशः ।  
 'आहकी तुवरी ज्ञेया—इति वैद्यकरत्नमाला । बर्वरी;  
 तुलसी; 'बर्वरी तुवरी तुङ्गी खरपुष्पाजमन्बिका—इति  
 भावप्रकाशः । सौराष्ट्रमृत्तिका; मृत्; सौराष्ट्री;  
 मृत्सना; आसङ्गः; मसी; सुराष्ट्रया; मृत्तालकं;  
 काली; मृत्तिका; सुरमृत्तिका; स्तुत्या; क्षापी;  
 सुजाता । ५८४

तृष्याग्निः पूं. [ तुष्यत्याग्निः ] तुषानलः; कुकूलः । ८३०  
 तुषारः पूं. [ तुष्यत्यनेव सस्यादिरिति । तुष् तुष्टी+  
 'तुषारादयश्च' इति आरन् स ऋ क्ति ] हिमम्;  
 'विलीनयशः प्रपततुषारो हेमन्तकालः स पुष्पगतः प्रिये—  
 इति ऋतुसंहारे (४११) । 'तुषाराद्यु हिमं स्वां  
 स्याद्वातलभपित्तलम् । कफोऽस्तम्भकण्ठाग्निभेद्व्यवहृदि-  
 रोगवृत्—इति; भावप्रकाशः । देशभेदः; तद्देशेऽप्युदे  
 पूं. भूमिन्, 'तुषारान् बर्वरान् कारान् पल्लवान् पारवान्  
 शकान्—इति मात्स्ये (१२०४५) । शीकरः;  
 हिमभेदः; 'न यावदेतानुदपश्यदुत्थितौ जनस्तुषाराभ्यन-  
 पर्वताविव—इति माघे (११५) । कर्पूरभेदः;  
 शीतले त्रि. । 'अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः  
 क्षुण्णः स्वदते तुषारा—इति नैषधे (३१३) । ६५०  
 तुषोदकम् क्ली. [ तुषादुरियतमुदकम् ] काञ्जिकं;  
 काञ्जिकभेदः; 'तुषोदकं यवैरामैः सुतुषैः क्षालीकृतैः  
 —इति भावप्रकाशः (यवैरदकसहितैः सन्धानधर्मागत-  
 स्वात्) । 'तुषोदकं वातहरं प्रमेदि प्रकोपयोदकतपितं  
 सदैव । विपाचनं स्याज्जरणं कृमिघ्नमजीर्णहन्तु कटुकं  
 विपाके—इति हारीते । ३१८

तुहिनम् क्ली. [ तोहति अर्दति, तुह्यतेजनेनेति वा ।  
 तुह्+वेपितुहोह्रस्वश्च' इति इनन्, गुणे कृते ह्रस्वश्च ]  
 हिमम्; 'सा श्यामा तन्वङ्गी दहसा शीतोपचारतीव्रेण ।  
 विरहेण पाण्डिमानं नीता तुहिनेन दूर्वेव—इति आर्या-  
 सप्तशत्याम् (६३२) । चन्द्रतेजः; 'किं चन्द्रैः सक-  
 पूर्स्त्वुहिनेः शीतलैश्च किम् । सर्वे ते मित्र गात्रस्य कलां  
 नाहन्ति षोडशीम्—इति पञ्चतन्त्रे (२१५९) ।  
 शीतले त्रि. । 'प्रसरतु शरत्त्रियामा जगन्ति धवलयतु  
 धाम तुहिनांसोः । पञ्चरत्नकोरिकाणां कणिकाकल्पोऽपि  
 न विशेषः—इति आर्यासप्तशत्याम् (३६६) ।

तृणः पूं.—स्त्री. [ तृष्यते पूयंते बाणरिति । तृण् पूरणे+  
 षम् ] बाणाधारः; उपासङ्गः; तृणीरः; निषङ्गः;  
 इशुभिः; तृणी; 'तृणसङ्गवरः शूरो बद्गोषाङ्गुलिम-  
 यान्—इति महाभारते (३१७१३) । ४६५

तृषी स्त्री. [ तृष्यते पूयंते बाणरिति । तृण+कर्मणि  
 षम्, गौरादित्वाद् जीष् ] तृणः; 'तृणीमुखोद्गतशरेण  
 विशीर्णपङ्क्ति—इति रघुवंशे (९१५६) । वेदना-  
 विशेषः; रोगभेदः; 'अथो या वेदना याति कर्चोमन्ना-  
 शयोत्थिता । भिन्दन्तीव गुदोपस्थं सा तृणीत्युपदिश्यते'  
 —इति सुश्रुते । ४६५

तृषीरः पूं. [ तृष्यते पूयंते बाणरिति । तृण्+बहुलकाद्  
 ईरन् ] तृणः; 'तस्य पार्थो बनुदित्वा तृणीरान् सन्निकृत्त  
 च । त्वरमाणो द्विसप्तत्या सर्वममस्वताडयत्—इति  
 महाभारते (७२८११६) । क्लीबलिङ्गोऽपि; 'तृणी-  
 राण्यथ यन्त्राणि विचित्राणि धनुषि च—इति महा-  
 भारते (६१५१५१) । ४६५

तृषुम् क्ली. [ त्वर् संभ्रमे+क्त । पक्षे इडभावः, 'ज्वर-  
 त्वरेति' ऊठ्, निष्ठातस्य नः ] शीघ्रम्; 'तां दृष्ट्वा  
 चपलापाङ्गी समीपस्थां वराप्सराम् । पञ्चवाणपरी-  
 ताङ्गस्तूर्णमासीद्व्रततः—इति देवीभागवते (१११०  
 ३१) । तद्वति त्रि. । ३५३

तृषुर्दित्तम् त्रि. [ तृणम् उदितम् ] शीघ्रकथितं; निरस्तम् ।

१४२

तृल्लकम् क्ली. [ तृल+त्वार्थे कन् ] तूलः; कापिसादि-  
 तूलः; पिचुः; पिचुलः; पिचुतूलः; तृलापिचुः; पिचु-  
 तूलम् । २०२

तृवरः पूं. [ तु सौत्रो घातुः+बाहुलकात् प्वरच् दीर्घश्च ]  
 काले अजातशृङ्गो गौः; अरमश्रुपुष्पः; पुरुषव्यञ्जन-  
 त्यक्तः; कषायरसः । २७८

तृष्णीम् अव्य. [ तुष् तुष्टी+त्राहुलकात् नीम्, उपधा-  
 वृद्धिश्च ] मौनं; जोषम्; 'यत्किञ्चिद्दशवर्षाणि  
 सन्निधी प्रेक्षते धनी । भुज्यमानं परैस्तृष्णीं न स  
 तल्लब्धुमर्हति—इति मनुः (८११४७) । ८०३

तृष्ट् [ ष् ] स्त्री. [ तृष्+क्विप् ] इच्छा; तृष्णा; 'मृगाः  
 प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्कतालवः'  
 —इति ऋतुसंहारे (११११) । पिपासा; कामकन्या ।

तृणम् क्ली. [ तृण्यते भक्ष्यते गवादिभिरिति । तृण्+  
भक्, संज्ञापूर्वकत्वान् न गुणः । यद्वा तृह हिंसा-  
याम् + 'तृहेः क्तो हलोपश्च' इति क्त प्रत्ययो  
हकारलोपश्च ] नडादिः; अर्जुनः; त्रिणः; खटः; खट्टः;  
हरितः; ताण्डवम्; 'अग्निचौरभयं रोगो राजपीडा  
घनक्षतिः । सङ्ग्रहे तृणकाष्ठानां कृते वस्वादिपञ्चके'  
—इति ज्योतिःसारसङ्ग्रहः । गन्धद्रव्यविशेषः; 'कुतृणं  
च सुगन्धं च तृणं शीतं सुशीतलम्'—इति वैद्यक-  
रत्नमालायाम् । १९०

तृणमान्यम् क्ली. [ तृणवहुलं घान्यम् ] घान्यविशेषः;  
नीवारः; । 'तिष्ठी घान' इति भाषा । ५८६

तृणराजः पुं. [ तृणेषु राजते शोभते इति । तृण+राज्+  
अच् । तृणानां राजा वा, समासे टच् ] तालवृक्षः;  
'श्रीः श्रीफलेन राज्यं तृणराजेनाल्पसाम्यतो लब्धम् ।  
कुचयोः सम्यक् साम्याद् गतो घटश्चक्रवर्तित्वम्'—इति  
आर्यासप्तशत्याम् (५६७) । नारिकेलः । १९२

तृतीयप्रकृतिः स्त्री. [ तृतीया स्त्रीपुंसातिरिक्ता प्रकृतिः ]  
तृतीया प्रकृतिः; षष्ठः । ४३०

तृतीया प्रकृतिः स्त्री. [ इति व्यस्तरूपम्, समस्तपक्षे  
'संज्ञापूरण्योश्च' इति न पुंनद्भावः ] नपुंसकम् । ४३०

तृप्तिः स्त्री. [ तृप् प्रीणने+भावे क्तिन् ] भक्षणादिना-  
कारुणानिवृत्तिः; सौहित्यं; तर्पणं; प्रीणनम्; आसि-  
तम्भवम्; 'श्रुतान्यन्यानि सर्वज्ञ त्वन्मुखाग्निःसृतानि च ।  
नैव तृप्तिं ब्रवामोऽद्य सुधापानेऽपरा यथा'—इति देवी-  
भागवते (१।१।२०) । ३२६

तृषितः त्रि. [ तृट् तृषा वा सञ्जातास्य । तारकादित्वाद्  
इतच् ] तृष्णायुक्तः; तर्षितः; सतृट्; 'तृषितश्च परि-  
धान्तः क्षुषितश्चोत्तरासुतः'—इति देवीभागवते (२।८।  
२०) । भावे क्तप्रत्यये तृषार्थे क्लीबम् । ३६२

तृष्णम् [ ज् ] त्रि. [ तृष्यति आकारुक्षतीति । तृष्+  
'स्वपितपोर्नजिङ्' इति नजिङ् ] 'लुष्णः; तृषितः; अस्-  
ञ्चनुत्सं गोतमाय तृष्णंज'—इति ऋग्वेदे (१।८।५।  
११) । ३६३

तृष्णा स्त्री. [ तृष्+ 'तृषिशुषिरादिभ्यः कित्' इति न,  
स च कित् ] पानेच्छा; उदन्या; पिपासा; तृट्;  
तर्षः; तृषा; तर्पणम् । (३६४) अनास्मीयस्त्रीका-  
रेच्छा; लिप्सा; 'तदुपस्थितमग्रहीदजः पितुराज्ञेति-न

भोगतृष्णया'—इति रघुवंशे (८।२) । रोगविशेषः;  
'वातात् पित्तात् कफात् तृष्णा सक्षिपातात् ब्रवक्षयात् ।  
षष्ठी स्यादुपसर्गाच्च वातपित्ते तु कारणम्'—इति  
गारुडे । 'स्नेहाञ्जनस्वेदनधूमपानव्यायामनस्यातप-  
दन्तकाष्ठम् । गुर्वभ्रमम्लं लवणं कषायं कटु स्त्रियं दुष्ट-  
जलानि तीक्ष्णम् । एतानि सर्वाणि हितामिलापी तृष्णा-  
तुरो नैव भजेत् कदाचित्'—इति वैद्यकपथ्यापथ्य-  
विधिग्रन्थे । ३६३

तेजः [ स् ] क्ली. [ तेजयति तेज्यतेऽनेन वा । तिज्  
निशाने+ 'सर्वधातुस्योऽसुन्' इति असुन् ] दीप्तिः;  
'अन्यदुच्छृङ्खलं सत्त्वमन्यच्छास्त्रनियन्त्रितम् । सामाना-  
धिकरण्यं हि तेजस्तिमिरयोः कुतः'—इति माघे (२।  
६२) । पराक्रमः (७२३); 'न श्रेयः सततं तेजो न  
नित्यं श्रेयसी क्षमा । इति तात ! विजानीहि द्वयमे-  
तदसंशयम्'—इति महाभारते (३।२।१६) । प्रभावः;  
'तस्मान्नूनं महावीर्याद् भागंवाद् युद्धमुन्मात् । तेजोवीर्य-  
वलैर्भूयान् शिखण्डी द्रुपदात्मजः'—इति महाभारते  
(६।१४।४८) । रेतः; 'अथ नयनसमुत्थं ज्योतिर-  
त्रेरिव द्यौः सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठयूतमंशम्'  
—इति रघुवंशे । सारः; 'रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां  
यत्परं तेजस्तत् सत्वो जस्तदेव बलमित्युच्यते स्वशास्त्र-  
सिद्धान्तात् । 'यत्परं तेजः इति यदुच्छृष्टं सारः' इत्यर्थः ।  
शारीराग्निसम्भूतपदार्थविशेषः; 'तेजोऽप्यानेयं क्रमशः  
पच्यमानानां धातूनामभिनिर्वृतमन्तरस्थं स्नेहजातं  
वसास्थं स्त्रीणां विशेषतो भवति । तेन मार्दवसौकुमा-  
र्यंमृदल्परोमतोत्साहदृष्टिस्थितिपक्विकान्तिदीप्तयो भव-  
न्ति । तत्कषायतिक्तशीतरूक्षविष्टग्निभवेगविघातव्यवा-  
यव्यायामव्याधिकर्षणश्च विक्रियते'—इति सुश्रुते ।  
देहजकान्तिः; 'तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि । घामना-  
मासि प्रियं देवानामनाघुष्टं देवयजनमसि'—इति यजु-  
संहिता (१।३१) । 'हे आज्य ! त्वं तेजोऽसि शरीर-  
कान्तिहेतुत्वात्तेजस्त्वम्'—इति तट्टीकायां महीधरः । नव-  
नीतम्; अग्निः; सुवर्णः; मज्जा; पित्तम्; असहनम्;  
'अधिक्षेपापमानादेः प्रयुक्तस्य परेण यत् । प्राणात्यये-  
ऽप्यसहनं तत्तेजः समुदाहृतम्'—इति साहित्यदर्पणे  
(३।६४) । पृथिव्यप्तेजोवाग्वाकाशाख्यपञ्चमहाभूता-  
न्तर्गततृतीयमहाभूतम् । विष्णुः; 'भोजस्तेजो धृतिमत्

प्रकाशात्मा प्रतापनः—इति महाभारते (१३।१४९। ४३) । शिवः; तेजोऽपहारी बलहा मुदितोऽर्षोऽजितोऽजरः—इति महाभारते (१३।१७।५२) । ६५ ।  
तेजितः त्रि. [ तिज्+क्त ] तीक्ष्णीकृतः; निशितः; क्षुतः; शाणितः; शान्तः; शाणादिमार्जितः; क्षुतः; निशातः; शितः; शातः । ४७४

तैजसम् क्ली. [ तेजसो विकारः । तेजस् + तस्य विकारः इत्यण् ] घातुद्रव्यम्; 'तैजसानां मणीनां च सर्वस्याश्रममयस्य च'—इति मनुः (५।१११) । घृतं; तीर्थ-विशेषः; 'तैजसं नाम तत्तीर्थं यत्र पूर्वमपाम्पतिः । अभिषिक्तः सुरगणैर्वरुणो भरतर्षभ'—इति महाभारते (१।४६।१०३) । तेजःसम्बन्धिनि त्रि. । 'तैजसस्य घनुषः प्रवृत्तये तोयदानिव सहस्रलोचनः'—इति रघु-वंशे (१।१।४३) । पुं. सूक्ष्मशरीरव्यष्ट्युपहितचैतन्यम्; 'एतद्व्यष्ट्युपहितं चैतन्यं तैजसो भवति तेजो-मयान्तःकरणोपहितत्वात्' इति वेदान्तसारः । तैजसाह-ङ्कारविशेषः; 'सोऽहङ्कार इति प्रोक्तो विकुर्वन् समभूत् त्रिधा । वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेति यद्भिदा'—इति भागवते (२।५।२४) । घोटकविशेषः; 'ये क्रोवशीला भृशवेगयुक्ता मुक्ता दिनात् क्रोशशतं व्रजन्ति । ते तैजसाः पुण्यवतां प्रदेशे भवन्ति पुण्यैरपि ते मिलन्ति'—इति भोजराजकृतयुक्तिकल्पतरौ । सुमतिपुत्रः; 'तैज-सस्तत्सुतरुचापि प्रजापतिरभिप्रजित्'—इति ब्रह्माण्डे ३६ अध्याये । १७६

तैलीनम् क्ली. [ तिलानां भवनं क्षेत्रम् । तिल + विभाषा तिलमाषेति पक्षे खञ् ] तिलक्षेत्रम्; 'तिलोद्भवोचितं यत्तु तिल्यं तैलीनमित्यपि'—इति शब्दरत्नावल्याम् । १६३

तोकम् क्ली. [ तौति पूरयति गृहमिति । तुपूती + बाहुलकात् क ] अपत्यं; पुत्रो दुहिता च; 'तोकं पुष्येभ तनयं शतं हिमाः'—इति ऋग्वेदे (१।६४।१४) । शिशुः; बालकः; 'तोकेन जीवहरणं यदुलूकिकायास्त्रैमासिकस्य च पदा शकटोऽपवृत्तः'—इति भागवते (२।७।२७) । ४९७

तोत्त्रम् क्ली. [ तुद्यते ताडयतेऽनेनेति । तुद्+दाम्नीश-सयुजस्तुतुदेति ष्ट्रन् ] अश्वादिताडनदण्डः; प्राजनं; तोदनम्; गजस्य तोदनदण्डः; वैणुकं; वेणुकम्;

'न हि तत्सुरष्वप्याघ्नो दुःखजं दशनं पितुः । मातुष्वच सहितुं शक्तस्तोत्रैर्नृष इव द्विपः'—इति रामायणे (२।४०।४१) । ५७७

तोयम् क्ली. [ तौति वर्द्धते वर्षासु । तवतेर्द्विकर्मणः 'अध्न्यादयश्च' इति यत्प्रत्ययो निपातितो द्रष्टव्यः । 'तुदति तोयम्' इति क्षीरस्वामी । तुदतेः पूर्ववत् यत्प्रत्यये निपातनाद् दकारलोपे गुणः ] जलम्; 'तया ततमिषं तोयं तदाधारं च तिष्ठति'—इति देवीभागवते (१।१। २९) । पूर्वाषाढानक्षत्रं; जलदैवतत्वादस्य तथात्वम् । ६४८

तोयनिधिः पुं. [ तोयानि निधीयन्तेऽत्र । नि+घा+रि, तोयानां निधिर्वा ] समुद्रः; 'पूर्वापरी तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव नानदण्डः'—इति कुमारसम्भवे (१।१) । ६५२

तोयाशयः पुं. [ तोयस्य आशयः ] जलाधारः; सरः । ६७०  
तोरणः पुं.— क्ली. [ तुतोति त्वरया गच्छत्यनेनेति । तुर् त्वरणे+करणे ल्युट् ] द्वाराग्रे निखातस्तम्भयोरुपरि-निबद्धं नानावस्त्ररत्नादिमयं घनुराकारं यत्प्रत्ययं तत्तोरणमिति बहवः । उपरि स्रगादियुक्तस्तम्भादिद्वय-निमित्तपुरादिबहिर्द्वारं; वन्दनमाला; वन्दनमाला; बहिर्द्वारम्; 'भासोऽज्वलत्काञ्चनतोरणानां स्थानान्तरं स्वर्गं इवावभासे'—इति कुमारसम्भवे (७।३) । मूल-द्वाराद् बाह्यद्वारं; पुं. महादेवः; 'तोरणस्तारणो वातः परिधीपतिखेचरः'—इति महाभारते (१३।१७।१७) । ३०१

त्यक्तम्-त्रि. [ त्यज्यते स्मेति । त्यज् त्यागे+क्त ] कृत-त्यागं; हीनं; विधृतं; समुज्झितं; धूतम्; उत्सृष्टं; विनाकृतं; विरहितं; निर्व्यूढम्; 'त्यक्तभोगस्य जे राजन् ! वने वन्येन जीवतः । किं कार्यमनुयात्रेणं त्यक्तसङ्गस्य सर्वतः'—इति रामायणे (२।३।७।२) । ७१४

त्यक्तग्निः पुं. [ त्यक्तः अग्निः नित्योपासनाग्निः येन ] त्यक्ताग्निहोत्रः; वीरहा द्विजः । ४०४

त्रपा स्त्री.— पुं. [ त्रप्यते इति, त्रप्+पिद्धिदादिभ्योऽङ् इत्यङ् ततष्टाप् ] लज्जा; ह्रीः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्य-गणनाभावादपास्य त्रपामन्तः कञ्चुकिक्ञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः'—इति रत्नावल्याम् । [ त्रपते

अनया अस्याः वा । करणे अपादाने वा अङ् ] कुलटा;  
कुलं; कीर्तिः । ५६७

**त्रपु** क्ली. [ त्रपते अग्निस्पर्शेन लज्जते इव । त्रप्+  
'शुस्वस्तिन्नित्रपीति' उ ] रङ्गम्; 'कनकभूषणसंग्रहणो-  
चित्तो यदि मणिस्त्रपुणि प्रतिवध्यते । न स विरोति न  
चाप्युपशोभते भवति योजयितुर्वचनीयता'—इति  
पञ्चतन्त्रे (१८५) । सीसकम् । १७२

**त्रपुः** [ स् ] क्ली. [ त्रपते वीह्य प्राप्य लज्जते इव ।  
त्रप्+उणादित्वाद् उस् ] रङ्गम्; 'भौमे त्रपुः शनौ  
लौहं राहावश्मानि कीर्तयेत्'—इति ग्रहभावप्रकाशे ।  
१७२

**त्रयी** स्त्री. [ त्रय+ 'टिड्ढेति डीप् ] ऋक्सामयजुर्वेदाः—  
एतन्त्रितयम्; 'त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिञ्च  
शाश्वतीम् । आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वातारिम्भाश्च  
लोकतः'—इति मनुः (७।४३) । पुरन्धी; सुमतिः;  
सोमराजोवृक्षः; दुर्गा; 'ऋग्यजुःसामभागेन साङ्गवेद-  
गतापि वा । त्रयीति पठंचते लोके दृष्टादृष्टार्थसाविनी'  
—इति देवीपुराणे ४५ अध्याये । ८

**त्रयीतनुः** पुं. [ त्रयी वेदाः एव तनुः शरीरं यस्य । 'त्रय्या  
विद्यया भगवन्तं त्रयीमयं सूर्यमात्मानं यजन्ते' इति  
भागवतवाक्याद् (५।२०।४) अस्य तथात्वम् ] सूर्यः ।  
३७

**त्रस्ताः** त्रि. [ त्रस् भये+क्त ] भीतः; 'प्रत्यञ्चायां विमु-  
क्तायां मुक्ता कोटिस्तयौत्तरा । शब्दः समभवद् घोर-  
स्तेन त्रस्ताः सुरास्तदा'—इति देवीभागवते (१।५।  
२६) । शीघ्रे क्ली. । 'सविरामं त्रितालं च एकं शून्यं  
तथापरे । शेषे त्रस्ते त्रितालं च देवन्नार इतीर्यते'—इति  
सङ्गीतदासोदरः । ३५४

**त्रासः** पुं. [ त्रस्+भावे वञ् ] भयम्; 'प्रणयचलितोऽपि  
सकपटकोपकटाक्षभयाहितस्तम्भः । त्रासतरलो गृहीतः  
सहासरभसं प्रियः कण्ठे ।' मणोदोषः (८०८) । ७२५

**त्रिकटु** क्ली. [ त्रयाणां कटूनां शुण्ठीमरीचपिप्पलीनां  
समाहारः ] मिश्रितशुण्ठीमरीचपिप्पल्यः; त्र्युपणं;  
व्योषं; कटुत्रयं; कटुत्रिकम्; 'विश्वोपकुल्या मरिचं  
त्रयं त्रिकटु कथ्यते । कटुत्रयं तु त्रिकटु त्र्युपणं व्योप-  
मुच्यते । त्र्युपणं दीपनं हन्ति श्वासकासत्वगामयान् ।  
गुल्ममेहकफत्सौल्यमेदःश्लीपदपीनसान्'—इति भाव-

प्रकाशः । ६१७

**त्रिकण्टकः** पुं. [ त्रीणि कण्टकानि यस्य ] गोक्षुरकवृक्षः;  
'त्रिकण्टः स्थलशृङ्गाटो गोकण्टोऽथ त्रिकण्टकः'—इति  
वैद्यकरत्नमालायाम् । लघुगर्गमत्स्यः । २०१

**त्रिकस्थानम्** क्ली. [ त्रयाणाम् अस्थिदेशानां समाहारः  
त्रिकं, तस्य स्थानम् ] कटी; पृष्ठवंशाघोभागः । ५१२  
**त्रिकालदर्शी** [ न् ] पुं. [ त्रिकालं वर्तमानातीतभविष्य-  
द्रूपं पश्यतीति । दृश्+णिनि ] ऋषिः; योगसिद्धः;  
दैवज्ञः; भूतभविष्यद्वर्तमानवेतरि त्रि. । 'प्रध्वंसिन्यपि  
काले त्रिकालदर्शी कलौ भवति'—इति बृहत्संहितायाम्  
(२१।४) । ४१२

**त्रिकालवित्** पुं. [ त्रीन् कालान् वेत्तीति । विद्+क्विप् ]  
बुद्धः; त्रिकालज्ञे त्रि. । ८६

**त्रितयम्** क्ली. [ त्रयः अवयवाः अस्य । त्रि+ 'संख्याया  
अवयवे तयप्' इति तयप् ] त्रयम्; 'वर्मश्चार्थश्च  
कामश्च त्रितयं जीविते फलम् । एतन्त्रयमवाप्तव्यम-  
घर्मपरिवर्जितम्'—इति महाभारते (१३।११।११८) ।  
त्रिप्रकारे त्रि. । 'त्रितयीमपि तां मुक्त्वा परस्पर-  
विरोधिनीम् । अखण्डं सच्चिदानन्दं महावाक्येन  
लक्ष्यते'—इति पञ्चदश्याम् (१।४६) । ९३, ६१८—

**त्रिदशः** पुं. [ तृतीया यौवनाख्या दशा यस्य । त्रिशब्द-  
स्यात्र त्रिभागवत् तृतीयार्यकता । यद्वा तिस्रः जन्मसत्त्वा-  
विनाशाख्याः, न तु मर्त्यानामिव वृद्धिपरिणामक्षयाख्याः,  
दशाः यस्य । यद्वा त्रीन् तापान् दशति नाशयतीति ।  
त्रि+दंश+मूलविभुजादित्वात् क, पृषोदरादित्वात्-  
लोपः । यद्वा त्र्यधिकोस्त्रिरावृत्ताश्च दश (त्रयस्त्रिंशद्-  
भेदा इत्यर्थः) अस्य । समासे डच् । शाकपाथिवादित्वान्म-  
ध्यलोपः ] देवः; 'न्यवसत् परमप्रीतो ब्रह्मा च त्रिदर्शः  
सह'—इति महाभारते (३।८५।१९) । ते च अर्का  
द्वादश, रुद्रा एकादश, वसवोऽष्टौ, अश्विनौ द्वौ; समु-  
दायेन त्रयस्त्रिंशत् । त्रिंशत्परिमिते त्रि. । 'ततः स  
कौरवो राजा विहृत्य त्रिदशा निशाः'—इति महाभारते  
(१।११३।२१) । ४

**त्रिदशदीपिका** स्त्री. [ त्रिदशानां देवानां दीपिका ]  
स्वर्गङ्गा । ६७३

**त्रिदशाचार्यः** पुं. [ त्रिदशानां देवानाम् आचार्यः गुरुः ]  
बृहस्पतिः । ४७

त्रिदशालयः पुं. [ त्रिदशानां देवानाम् आलयः निवास-  
स्थानम् ] सुमेरुपर्वतः; स्वर्गः; 'गुरोरुष्य सकाशे तु  
दश वर्षशतानि सः । अनुज्ञातः कचो गन्तुमियेष त्रिद-  
शालयम्'—इति महाभारते (११७६।६६) । १३६

त्रिदशावासः पुं. [ त्रिदशानां सुराणाम् आवासो वास-  
स्थानम् ] स्वर्गः । ३

त्रिदशाहारः पुं. [ त्रिदशानां देवानाम् आहारः ] सुधा;  
अमृतम् । १३३

त्रिदिवः पुं. [ त्रयो ब्रह्मविष्णुरुद्रा दीव्यन्त्यत्रेति । त्रि+  
दिव्- 'हलश्च' इति घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न गुणः ।  
यद्वा दीव्यन्तीति दिवाः, 'इगुपवञ्जेति' क, त्रयः सस्वरज-  
स्तमोरूपाः दिवाः क्रीडकाः विलासकाः इत्यर्थः, यत्र ।  
'तृतीया द्यौस्त्रिदिवः घनर्थे कविधानं, वृत्तिविषये  
संख्याशब्दस्य पूरणार्थत्वं त्रिभागवत्'—इति माघका-  
व्यस्य टीकायां मल्लिनाथः (११२६) ] स्वर्गः; 'रक्षण-  
दार्यवृत्तानां कण्टकानां च शोधनात् । नरेन्द्रास्त्रि-  
दिवं यान्ति प्रजापालनतत्पराः'—इति मनुः (९।  
२५३) । क्ली. आकाशः । ३

त्रिनयनः पुं. [ त्रीणि चन्द्रसूर्याग्निरूपाणि नयनानि यस्य ।  
'क्षुम्नादिषु च' इति निषेधान्न णत्वम् ] शिवः; (त्रिण-  
यनः) 'त्रिपुरघ्नं त्रिनयनं त्रिलोकेशं महीजसम्'—इति  
महाभारते (१४।८।२७) । नयनत्रये स्त्री. । लोचन-  
त्रयविशिष्टे त्रि. । 'मृद्रामोक्षगुणं सुधाढ्यकलसं  
विधां च हस्ताम्बुजैर्विभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां  
वाग्देवतामाश्रये'—इति मातृकासरस्वतीध्याने । ११

त्रिपत्रकः पुं. [ त्रीणि त्रीणि पत्राणि यस्य ] पलाशवृक्षः;  
[ त्रयाणां पत्राणां समाहारः । ततः कन् ] तुलस्यादि-  
पत्रत्रये क्ली. । 'तुलसीकुन्दमालूरपत्राण्याहुस्त्रिपत्रकम्'  
—इति देवीपुराणे । १९७

त्रिपथगा स्त्री. [ त्रिपथे स्वर्गमर्त्यपातालमार्गं गच्छतीति ।  
गम्+ड ] गङ्गा; 'गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागी-  
रथीति च । त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा  
स्मृता'—इति रामायणे (१।४३।६) । ६७३

त्रिपिष्टपम् क्ली. [ त्रिदशानां सुराणां पिष्टपं वासस्था-  
नम् । पृषोदरादित्वाद् दशशब्दस्य लोपः । यद्वा मर्त्य-  
पातालापेक्षया तृतीयं पिष्टपं भुवनम् । वृत्तौ त्रिशब्दस्य  
त्रिभागवत् पूरणार्थता ] स्वर्गः; 'तत् त्रिपिष्टपसङ्काश-

मिन्द्रप्रस्थं व्यरोचत'—इति महाभारते (१।२०।  
३५) । आकाशम् । ३

त्रिपिष्टपसत् [ द् ] पुं. त्रिपिष्टपे स्वर्गं सीदतीति ।

त्रिपिष्टप + सद् + क्विप् ] देवता । ४

त्रिपुरान्तकः पुं. [ त्रिपुरस्य त्रिपुरासुरस्य अन्तकः ]  
शिवः; 'लाङ्गलीशमयालोक्य ततस्तु त्रिपुरान्तकम्'  
—इति काशीखण्डे १०० अध्याये । 'आशुतोषो  
मित्रमध्ये शत्रूणां त्रिपुरान्तकः'—इति महालिङ्गेश्वर-  
तन्त्रे शिवशतनामस्तोत्रे । ११

त्रिफला स्त्री. [ त्रयाणां फलानां समाहारः । अजादि-  
त्वात् 'द्विगोः' इति न डीप् ] फलत्रयं; फलत्रिकं; मिलित-  
समभागहरीतकीविभीतकामलकीफलानि; 'त्रिफला  
कफपित्तघ्नी महाकुण्डविनाशिनी । आयुष्या दीपनी  
चैव चक्षुष्या व्रणशोधिनी । वर्णप्रदायिनी षुष्ट्वा विषम-  
ज्वरनाशिनी । सर्वरोगप्रशमनी मेघास्मृतिकरी परा'  
—इति ह्यारीते । 'त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहुकुण्डहरा  
सरा । चक्षुष्या दीपनी ह्य्या विषमज्वरनाशिनी'  
—इति भावप्रकाशः । ६१८

त्रियामा स्त्री. [ त्रयो यामाः प्रहराः दस्याः । 'त्रियामो  
रजनी प्राहुस्त्यवःवाद्यन्तवतुट्यम्' इति वचनात् आद्य-  
न्तयोरद्वयामयोश्चेष्टाकालवेन दिनमायत्नात् तथा-  
त्वम् ] रात्रिः; 'स मत्तो बलिनां श्रेष्ठो रराजाधुणि-  
ताननः । शैशिरीषु त्रियामासु यथा खेदालसः शशी ।'  
त्रिप्रहरान्विते त्रि. । 'त्रियामाणि भृशातंस्य सा रात्रि-  
रभवत्तदा । तथा विलपतस्तस्य राज्ञो वर्षशतोपमा'  
—इति रामायणे (२।१०।१७) । हरिद्रा; यमुना;  
नीली; कृष्णत्रिवृत् । १०७

त्रिविष्टपम् क्ली. [ तृतीयं विष्टपं भुवनम् ] त्रिपिष्टपं;  
स्वर्गः; 'विहर त्वमयोध्यायां यथाशक्तस्त्रिविष्टपे'  
—इति रामायणे [ २।१०।१९) । त्रिभुवनम् । ३

त्रिविष्टपसत् [ द् ] पुं. [ त्रिविष्टपे स्वर्गं सीदतीति ।  
सद् + क्विप् ] त्रिपिष्टपसत्; देवः । ४

त्रुटिः स्त्री. [ त्रुटयते इति, त्रुट् + 'इगुपधात् कित्'  
इति इन्, सच कित् ] अलनं; क्षुद्रला; 'उत्कारिकां सर्पिषि  
नागराढ्यां पक्वां समूलेस्त्रुटिकोलपत्रैः'—इति सुश्रुते ।  
'वयस्था तीक्ष्णगन्धा च सूक्ष्मला त्रिपुटा त्रुटिः'—इति  
वैद्यकरत्नमालायाम् । संशयः; कालभेदः; क्षणद्वयात्मकः;



'बणुद्धी' परमाणु स्यात् त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः । जालाकर-  
स्त्रयवगतः खमेवानुपतन्नगात् । त्रसरेणुत्रिकं भुङ्क्ते यः  
कालः सा त्रुटिः स्मृता—इति भागवते (३।१।१५) ।

६८८

शुद्धी स्त्री. [ त्रुटि + 'कृदिकारादन्तितनः' इति वा झीष् ]  
त्रुटिः । ६८८

श्रेता स्त्री. [ त्रीन् भेदान् एति प्राप्नोतीति । यद्वा त्रित्व-  
मिता, पृषोदरादित्वात् साधुः ] दक्षिणाग्निः, गार्ह-  
पत्यः, याहवनीयः — एकोक्त्या इदमग्नित्रयम्;  
'त्रिषा प्रणीतो ज्वलनो मुनिमिवेदपारसैः । अतस्त्रे-  
ह्यास्वमापन्नो यदेकस्त्रिविधः कृतः'—इति हरिवंशे  
(२०।५।५) । द्वितीययुगम्; 'त्रिचत्वारिंशत्संज्ञेण  
विंशत्सहस्राधिकेन च । चतुर्युगं परिमितं नरमानक्रमेण  
च । त्रिषट्कषपरिमितं षण्णवतिसहस्रकम् । त्रेतायुगं  
परिमितं कालविद्भिः प्रकीर्तितम्—इति ब्रह्मवैवर्ते  
प्रकृतिलखण्डम् । ७८९

श्रीदकी स्त्री.— रागिणीविशेषः । १०७

श्रीदः स्त्री. [ श्रोदघते मिद्यतेऽनयेति । श्रोदि + 'अञ्  
इ' इति इ ] चञ्चुः; कटफलं; पक्षी; मीनभेदः । २४०  
श्रीदो स्त्री. [ श्रोदि + कृदिकारादिति वा झीष् ] श्रोदिः;  
चञ्चुः । २४०

श्रूषणम् क्ली. [ उष् दाहे, ल्युट्, उषणम् । त्रयाणां  
उषणानां समाहारः । पात्रादित्वात् स्त्रीत्वं न ] यूषणं;  
मिलितशुष्ठीपिप्पलीमरिचम्; 'यमानी चित्रकं धान्यं  
श्रूषणं जीरकं तथा—इति गारुडे । ६१७

श्रूषणम् क्ली. [ ऊष् दाहे, ल्युट् । त्रयाणां ऊषणानां  
पिप्पलीमरिचशुष्ठीनां समाहारः ] श्रूषणं; 'पिप्पली  
मरिचं शुष्ठी त्रयमेतद्विमिश्रितम् । त्रिकटु श्रूषणं व्योषं  
कटुत्रयमपोष्यते—इति वैद्यके । 'श्रूषणं दीपनं हन्ति  
श्वासकासत्वगामयान् । गुल्ममेहकफस्तौल्यमेदहलीपद-  
पीनसान्—इति भावप्रकाशे । घृतविशेषः । 'श्रूषणां  
त्रिफलां द्राक्षां कासमर्याणि परुषकम् । द्वे पाठे सरलं  
व्याघ्रीं स्वगुप्तां चित्रकं शटीम् । ब्राह्मीं तामलकीं  
भेदां काकनासां शतावरीम् । त्रिकण्टकां विदारीं च  
पिष्ट्वा कर्षसमं घृतात् । प्रस्थं चतुर्युगं क्षीरं सिद्धं  
कासहरं पिबेत् । ज्वरगुल्मारुचिप्लीहसिरोहृत्पाव-  
क्षुस्तुत् । कामलाशोत्रिलाष्ठीकासतप्तोषणयापहम् ।

श्रूषणं नाम विख्यातमेतद्धृतमनुसामम्—इति चरके  
चिकित्सास्थाने । ६१७

त्वक् [ च् ] स्त्री. [ त्वचति संवृणोति भेदशोणितादिक-  
मिति । त्वच् संवरणे + क्विप् । यद्वा तनोति विस्तार-  
यति, तन् + 'तनोतेरनश्च वः' इति चिक् अनश्च व ]  
वल्कलं; त्वचा; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचिद् वन्यद्वि-  
पेनोन्मथिता त्वगस्य'—इति रघौ (२।३७) । (६३०)  
चर्मं; असुग्धरा; असुग्धरा; त्वचं; छली; छल्ली;  
'त्वचं स मेध्यां परिधाय रीरवीमशिक्षतास्त्रं पितुरेव  
मन्त्रवत् । न केवलं तद्गुहरेकपायिवः क्षितावसूदेक-  
धनुर्द्वरोऽपि सः—इति रघुवंशे (३।३१) । इन्द्रिय-  
विशेषः; 'पूर्ववन्तित्यतायुक्तं देहव्यापि त्वगिन्द्रियम् ।  
प्राणादिस्तु महावायुपर्यन्तो विषयो मतः । 'उद्भूत-  
स्पर्शवद् ब्रह्मं गोचरः सोऽपि च त्वचः । रूपान्यच्चक्षुषो  
योयं रूपमत्रापि कारणम् । ब्रह्माध्यक्षे त्वचो योनो  
मनसाज्ञानकारणम्—इति भाषापरिच्छेदः । त्वचं;  
'शालचीनी' इति भाषा । कञ्चुकः; 'महतोऽप्येनसो  
मासात् स्ववेवाहिदियमुच्यते—इति मनुः (२।७९) ।

१८३

त्वक्सारः पुं. [ त्वचि सारो यस्य ] वंशः; 'बांस' इति  
भाषा । 'चण्डालात् पाण्डुसोपाकस्त्वक्सारव्यवहारवान्'  
—इति मनुः (१०।३७) । वंशस्य त्वक्; 'अनुशस्त्रा-  
णि तु त्वक्सारस्कटिककाचकुम्बिन्दुजलीकागिनिकार-  
नक्षत्रगोत्रीशोफालिकाशाकपत्रकरीरबालाङ्गुलयः—इति  
सुश्रुते (१।८) । गुडत्वक्; शोणवृक्षाः; रुध्रवंशः ।  
'त्वक्साररुध्रपरिपूरितलञ्चनीतिरस्मिन्मसौ मृदित-  
पद्मलरल्लकाङ्कः—इति माघे (४।६१) । २०४

त्वचिसारः पुं. [ त्वचि सारो यस्य । 'हलदन्तात् सप्तम्याः  
संज्ञायाम्' इति सप्तम्या अलुक् ] वंशः; 'बांस' इति भाषा ।

२०४

त्वचिरितम् क्ली. [ त्वच् + क्त ] शीघ्रम्; (३।५३, ३।७०)  
[ त्वरते स्मेति । त्वच् + 'गत्यर्थाकर्मकेति' कर्तरि, क्त ।  
यद्वा त्वरा सञ्जातास्य । तारकादित्वाद् इतच् ] तद्वि-  
शिष्टे त्रि. । 'बह्वन्तराययुक्तस्य धर्मस्य त्वरिता गतिः'  
—इति पञ्चतन्त्रे (३।१०२) । ६९७

त्वष्टा [ ऋ ] पुं. [ त्वक्षति काष्ठादिकं शिल्पकार्यत्वात् ।  
त्वक्ष् तनूकरणे, तृच् ] विहवकर्मा; 'त्वष्टुः सदाभ्यास-

गृहीतशिल्पविज्ञानसम्पत्प्रसवस्य सीमा—इति भाषे (३।३५) । काष्ठत् (५८७); वर्णसङ्करजाति-विशेषः; असुरभेदः—इति ऋग्वेदभाष्ये सायणः (३।४८।४) । इन्द्रः इति तत्रैव सायणः (१।११७।२२) । महादेवः; 'घाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।१०३) । प्रजापतिविशेषः; 'त्वष्टा प्रजापतिर्ह्यसीत् देवश्रेष्ठो महा तथाः । स पुत्रं वै त्रिशिरसमिन्द्रब्रह्मात् कृत्वा सृजत्'—इति महाभारते (५।१।३) । विष्वकर्माणः पुत्र-विशेषः; 'तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु । अजैकपादहिर्यन्स्त्वष्टा रुद्रश्च बुद्धिमान्'—इति विष्णु-पुराणे (१।१५।१२२) । [ त्वेषति दीप्यतीति, त्विष् दीप्ती+ 'नप्तुनेष्ट्वष्ट्रहोत्रिति' तृष्, इतोऽत्वष्ट्च ] आदित्यविशेषः; एकादशादित्यः; 'अदित्यां द्वादशा-दित्याः सम्भूता भुवनेश्वराः । ये राजसामतस्तांस्ते कृतं विष्णुमि भारत ! घाता मित्रोऽर्जमा शक्रो वरुण-स्त्वष्ट एव च । भगो विवस्वान् पूषा च सविता दश-मस्तथा । एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुश्च्यते' इति महाभारते (१।६५।१४-१५) । ८४

लघुः पुं. [ त्वष्टुरपत्यं पुमान् । अण् ] दृष्टातुरः; 'उद्यमेन हतस्त्वाष्ट्रो नमुचिर्बल एव च'—इति देवी-भागवते (५।५।४) । विश्वरूपः; 'वृतः पुरोहित-स्त्वाष्ट्रो महेन्द्रायानुपृच्छते'—इति भागवते (६।८।३) । त्वष्ट्रसम्बन्धिनि त्रि. । 'ततोऽत्रं त्वाष्ट्रमादाय विश्वेप प्रति दानवान्'—इति मार्कण्डेये (२।१।८५) । 'अप-मित्वा चहं त्वाष्ट्रं त्वष्टारमयजतिमुः'—इति भागवते (६।१४।२७) । चित्रानसत्रम्; 'बोरा अरणस्त्वाष्ट्रं बसुदेवं वारुणं चैव'—इति बृहत्संहितायाम् (७।११) । ८४६

त्विष् [ ष् ] स्त्री. [ त्विष् दीप्ती+सम्पदादित्वात् त्विष् ] प्रभा; 'चयस्त्विष्वामित्यवधारितं पुरा ततः घरीरीति विभाविताकृतिम्'—इति भाषे (१।३) । वाक्; व्यवसायः; जिगीषा; शोभा; 'अपश्यं द्वारकां बाहं महाराज ! हतत्विष्म्'—इति महाभारते (३।२०।२) । दीप्यमाने त्रि. । 'तव त्विषो जनिमत्रेजत घीरेजद् मूमिभिर्षसा स्वस्य भन्योः । हि इन्द्र त्विषो दीप्यमानस्य तव त्वदीये जनिमन् जन्मनि तति'—इति तन्त्राभ्ये साय-

णाचार्यः । ६५

त्वष्टः पुं. [ त्वरति कौटिल्यं गच्छतीति+त्सर+ 'मृ-शीतुचरित्सीति' उ ] खड्गमुष्टिः; मुष्टिः; तालतलः; 'ज्योत्स्नाभिसारसमुचितदेशे ! ध्याकोशमलिकोत्तरे ! विशसि मनो निशितेव स्मरस्य कुमुदत्तरुच्छुरिका'—इति आर्यासप्तशत्याम् । सर्पः; 'मा मां पद्येन रपसा विदत् त्वरः'—इति ऋग्वेदे (५।५०।१) 'तया त्वर-क्षुद्रमगामी जिह्वगः सर्पं इत्यर्थः मां पद्येन पादभवेन रपसा रपि शब्दकर्मा शब्देन मा विदत् मा जानातु'—इति तन्त्राभ्ये सायणाचार्यः । ४७३

द्व

दंशन् स्त्री. [ दशातीव घरीरमिति । दंश्+ल्यु ] बर्धः; कथयन्; 'संनह्यध्वं सर्वं एवेन्द्रकल्पा महान्ति पाह्यधि च दंशानि'—इति महाभारते (३।२६।१८) । [ दंश+भाये ल्युट् ] दन्तादिना सण्डनम्; 'दंशान्ध्या-हिमिः दुर्णदाहृक्षश्च जतुवेममनि'—इति महाभारते (८।८।३।४) । ४५९

दंशितः त्रि. [ दंशो बर्धं सम्भ्यातोऽप्य, परिहितत्वादिधि । दंश+तारकावित्वाच् इतच् ] बर्धितः; 'महता यत्-कृते परराष्ट्रावमदिना । हस्त्यश्वरयपूर्णेन दंशितेष प्रसापवान्'—इति महाभारते (२।२।२) । [ दंश्यते इति, दंश्+णिच्+भाये षत् ] दष्टः; भासमानः; 'धारणा यत्र सीवर्णाः पृष्ठे भासन्ति दंशिताः । सुपादं युद्धं चैव कस्यैतदनुवृत्तमम्'—इति महाभारते (७।४।२) । 'दंशिताः भासमानाः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । ४६०

दंष्ट्रा स्त्री. [ दश्यतेऽनयेति । दंश्+ 'दाम्नीशसेति' करणे ष्टृन् । यद्वा 'सर्वंघातुम्यः ष्टृन्' इति ष्टृन् । गौरादि-पाठे पितामहीशब्दस्य पाठात् पितां डीषोऽनित्यत्वात् टाप् ] आशी; दन्तविशेषः; दंष्ट्रिका; 'दाढ' इति भाषा । 'यस्यालीयत शल्कसीभिर्न जलधिः पृष्ठे दण-न्सण्डलम्, दंष्ट्रायां घरणी नखे दितिसुताधीशः एते रोदसी'—इति साहित्यदर्पणे (१।३) । ६४२

दंष्ट्री [ न् ] पुं- स्त्री. [ प्रशस्ता दंष्ट्रा अस्यस्येति । दंष्ट्रा+ 'श्रीहादिभ्यश्च' इति इनि ] शूकरः; सर्पः; 'वितानि दंष्ट्रिणः सर्वे सानुनि मृगपक्षिणः । त्यजन्त्यस्म-

द्रुयाद्गीता गजाः सिंहा वनान्यपि—इति रामायणे (२।३३।२३) । दंष्ट्राविशिष्टे त्रि. । 'दंष्ट्रिभिः शृङ्गिभिर्वापि हता म्लेच्छैश्च तस्करैः । ये स्वाम्यर्थे हता यान्ति राजन् ! स्वर्गं न संशयः'—इति शुद्धितत्त्वे अग्निपुराणम् । २२६

दक्षम् क्लो. [ उदक+पृषोदरादित्वात् साधुः ] जलं; पानीयम् । ६४८

दक्षः त्रि. [ दक्ष्, कर्तरि अच् ] पटुः; चतुरः; 'सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रजावती । सा भार्या या पति-प्राणा सा भार्या या पतिव्रता'—इति महाभारते (१।७४।३९) । समर्थः; 'बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः'—इति ऋग्वेदे (१।५९।४) । प्रवृद्धः; 'युवं दक्षं घृतव्रत मित्रावरुण द्रुलभम्'—इति ऋग्वेदे (१।१५।६) 'दक्षं प्रवृद्धम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । दक्षिणः; अपसव्यम्; 'प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलेन प्रणवेन वा । मध्यमानामिकाम्याञ्च दक्ष-हस्तस्य पार्वति'—इति महानिर्वाणे (३।४४) । पुं. [ दक्षते सृष्टिप्रवृद्धये समर्थो भवतीति । दक्ष्+अच् ] प्रजापतिविशेषः (८३५); 'शरीरानय वक्ष्यामि मातृहीनान् प्रजापतेः । अङ्गुष्ठाद्दक्षिणाद्दक्षः प्रजापतिरजायत'—इति मत्स्यपुराणे (३।९) । ताम्रचूडः; 'घातं राष्ट्र-चकोराणां दक्षाणां शिखिनामपि । चटकानां च यानि स्युरण्डानि च हितानि च'—इति चरके । मुनिभेदः; 'कणादो गौतमः कण्वः पाणिनिः शाकटायनः । ग्रन्थं चकार यद्वृत्वा दक्षः काल्यायनः स्वयम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । 'पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगोतमौ । शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः ।' हरवृषः; द्रुमभेदः; वह्निः; महेशः; 'घृतिमान् मतिमान् दक्षः सत्कृतश्च युगाधिपः'—इति महाभारते (१३।१७।११३) । विष्णोर्नामविशेषः; 'अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।१११) । बलम्; [ दक्ष शौच्ये, चकाराद् वृद्धौ, दक्ष गतिर्हिंसनयोः, दक्षतिरुत्साहायः । असुन्, शत्रुविजये क्षिप्री भवत्यनेन, हिंस्यन्ते वानेन शत्रवः, प्रोत्साहितो वा भवति शत्रुविजये । दक्ष इति सकारान्तं बलनाम, अकारान्तमपि, तस्यैव मर्यान्तरे द्रष्टव्यम् ] 'स दक्षाणां दक्षपतिर्वभूव'—इति ऋग्वेदे (१।९५।६) । 'सोऽग्निर्दक्षाणां सर्वेषां बलानां

दक्षपतिर्वलाधिपतिर्वभूव'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । गरुडस्य पुत्राणामन्यतमः; 'मेषहृत् कुमुदो दक्षः सर्पान्तः सोमभोजनः'—इति महाभारते (५।१०।१।१२) । ३३५ दक्षाध्वरध्वंसकृत् पुं. [ दक्षाध्वरस्य दक्षयज्ञस्य ध्वंसं नाशं करोतीति । कृ+क्विप् तुगागमश्च ] शिवः; वीरभद्रः । ११

दक्षिणः त्रि. [ दक्षते इति, दक्ष वृद्धौ + 'द्रुदक्षिम्यामिन्' इति इनन् ] सरलः; उदारः; 'दक्षिणां दक्षिणाचारो दिशं येनाजयत् प्रभुः'—इति महाभारते (४।५।२७) । अपसव्यम् (७५६); 'दाहिना' इति भाषा । 'ओङ्कार-मुच्चरन् प्राज्ञो द्रविणं सवतुमोदकम् । गृह्णीयाद्दक्षिणे हस्ते तदन्ते स्वस्ति कीर्तयेत्'—इत्यादित्यपुराणम् । दक्षिणोद्भूतः; दक्षिणदिग्भवः; 'स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः । आददे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः'—इति रघुवंशे (४।८) । दक्षिणदिक्स्थितः; 'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्'—इति मनुः (५।९२) । परच्छन्दानुवर्ती; आरामः; 'दक्षिणः सरलवामपरच्छन्दानुवर्तिषु । वाच्यवद्दक्षिणावाटीयज्ञ-दानप्रतिष्ठयोः'—इति विश्वः । दक्षः; प्रदक्षिणः; 'शस्ताः कुर्वन्ति मां सव्यं दक्षिणं पशवोऽपरे । वाहंश्च पुरुषव्याघ्र ! लक्षये रुदतो मम'—इति भागवते (१।१४।१३) । पुं. चतुर्विनायकान्तर्गतनायकविशेषः; 'एषु त्वनेकमहिलासु समरागो दक्षिणः कथितः'—इति साहित्यदर्पणे (३।४०) । क्ली. तन्त्रोक्ताचारविशेषः; 'सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णवं महत् । वैष्णवाद्दु-त्तमं शैवं शैवाद्दक्षिणमुत्तमम् । दक्षिणादुत्तमं वामं वामात् सिद्धान्तमुत्तमम् । सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं न हि'—इति कुलार्णवे ५ खण्डे । ३८५

दक्षिणस्यः पुं. [ दक्षिणे भागे तिष्ठतीति । स्या+क ] सारथिः; दक्षिणस्थिते त्रि. । ४४८

दक्षिणा स्त्री. [ दक्षते इति, दक्ष वृद्धौ + 'द्रुदक्षिम्यामि- नन्' इति इनन् तत्पटाप् ] दक्षिणदिक्; अवाची; शामनी; यामी; वैवस्वती; 'दिग्दक्षिणा गन्धर्वहं मुखेन व्यलीकनिश्वासमिवोत्ससर्ज'—इति कुमार-सम्भवे (३।२५) । प्रतिष्ठा; यज्ञादिसम्पादकतदन्त-विहितदानम् (४१८); 'कृत्वा कर्म च तस्यैव तूर्णं दद्याच्च दक्षिणाम् । तत्कर्मफलमाप्नोति वेदेरुक्तिमिदं

मुने !—इति ब्रह्मवैवर्ते । नायिकाविशेषः; 'या गौरवं भयं प्रेम सद्भ्रावं पूर्वनायके । न मुञ्चत्यन्यसक्तेऽपि सा ज्ञेया दक्षिणा बुधैः—इति विष्णुपुराणटीकायां स्वामी । अव्य. [ 'दक्षिणादाच्' इति आच् ] दक्षिणस्यां दिशि दक्षिणा दिग् वा । १०१

दक्षिणाशापतिः पुं. [ दक्षिणाशाया दक्षिणस्या दिशः अधिपतिः ] यमः; प्रेतराजः; पितृपतिः । ७२

दण्डः पुं.— क्ली. [ दण्डयति अनेनेति । दण्ड्+घञ् । यद्वा दाम्यत्यनेनेति, दम्+'अमन्तान् डः' इति ड ] यति- ब्रह्मचारिघायलंगुडाकारपदार्थः; 'दण्डाजिनकृता चिन्ता यया तव वनेऽपि च । तथैव राज्यचिन्ता मे चिन्तयानस्य वा न वा—इति देवीभागवते ( १।१९। ३.१ ) । लगुडः ( ४७६, ७२६ ); 'यथा दण्डहतः सर्पो दण्डाकारः प्रजायते—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् । 'पुनः सरोसृपव्यालविषाणिभ्यो भयापहम् । श्रमस्खलन- दोषघ्नं स्थविरे च प्रशस्यते । सत्त्वोत्साहवल्स्यैर्घ- घैर्वीर्यविवर्धनम् । अवष्टम्भकरं चापि भयघ्नं दण्ड- धारणम्—इति सुश्रुते । शरणागतस्त्राणादि; 'शरणा- गतसंभ्राणं भूतानामप्यहितनम् । बहिर्वेदि च यद्दानं दण्डमित्यभिधीयते—इति मोक्षधर्मकथने । दण्डाकार- त्वात् छत्रादीनामङ्गविशेषः; 'युवराजनृपतिपत्न्याः सेनापतिदण्डनायकानाञ्च । दण्डोऽर्षपञ्चहस्तः सम- पञ्चकृताङ्गविस्तारः—इति बृहत्संहितायाम् ( ७३।४। ६ ) । चामरादीनामङ्गविशेषश्च; 'अध्यर्षहस्तप्रमितो- ऽस्य दण्डो हस्तोऽयवारत्निसमोऽय वान्यः । काष्ठाच्छुभात् काञ्चनरूप्यगुप्तात् रत्नैर्विचित्रैश्च हिताय राज्ञाम् । यष्ट्यातपत्राङ्कुशवेत्रचापवितानकुन्तध्वजचामराणाम् । व्यापीततन्त्रोमधुकृष्णवर्णा वर्णक्रमेणैव हिताय दण्डाः— इति बृहत्संहितायाम् ( ७३।३।४ ) । बाणनिक्षेप- कालीनस्थानविशेषे क्ली. । 'तिर्यग्भूतो भवेद्दामो दक्षि- णेऽपि भवेद्दुजुः । गुल्फौ पाष्णिर्ग्रही चैव स्थितौ पञ्चा- ङ्गुलान्तरी । स्यान् दण्डं भवेदैतद् द्वादशाङ्गुलमायतम्—इति आग्नेय धनुर्वेदे । ४११

दण्डः पुं. [ दण्डयत्यपराधिनमनेनेति । दण्ड्+घञ् । यद्वा दाम्यति शान्तं करोत्यनेन, दम्+ड, भावे घञ् वा ] दमनम्; 'वाग्दण्डोऽयं मनोदण्डः कायदण्डस्तथैव च—इति मनुः ( १२।१० ) । सैन्यं; कालावयवः;

घटी; 'घड़ी' इति भाषा । 'घट् पलं पात्रनिर्माणं गभीरं चतुरङ्गुलम् । स्वर्णभाषैःकृतच्छिद्रं कुण्डैश्च चतुरङ्गुलैः । यावज्जलप्लुतं पात्रं तत्कालं दण्डमेव च—इति ब्रह्मवै- वर्ते मानभेदः; 'हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः—इति लीलावती । चण्डांशोः पारिपाश्विकः; 'ये च तेऽनुचराः सर्वे पादोपान्तं समाश्रिताः । माठारुणदण्डाद्यास्तां- स्तान् वन्देऽशनिक्षुमान्—इति महाभारते ( ३।३।६८ ) । यमः; अभिमानः; राज्ञां चतुर्योपायः; साहसं; दमः; 'विनादण्डं कथं राज्यं करोति जनकः किल । धर्मं न वर्तते लोको दण्डश्चेन्न भवेद्यदि—इति देवीभागवते ( १।१७। ३ ) । [ दण्ड इवाचरतीति, दण्ड्+क्विप् ततो भावे घञ् ] ऊर्ध्वस्थितिः; व्यूहभेदः; 'मण्डलासंहती भागी दण्डास्ते बहुधा शृणु । तिर्यग्भृत्तिस्तु दण्डः स्याद् भोगोऽ- न्या वृत्तिरेव च—इति अग्निपुराणे । प्रकाण्डः; अश्वः; कोणः; मन्यानः; ग्रहभेदः; इक्ष्वाकुराजपुत्रः; 'घृष्टकश्चाम्बरीधश्च दण्डश्चेति सुतास्त्रयः । यश्चकार महात्मा वै दण्डकारण्यमुत्तमम्—इति हरिवंशे ( १०।२२ ) । नृपविशेषः; 'क्रोधहन्तुरसुरस्यांशेनावतीर्णः नृपभेदः; 'क्रोव हन्तेति यस्तस्य बभूवावरजोऽसुरः । दण्ड इत्यभि- विख्यातः स आसीन्नृपतिः क्षिती—इति महाभारते ( १।६७।४६ ) । विष्णुः; 'धनुर्द्वरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः—इति महाभारते ( १३।१४९।१०५ ) । महादेवः; 'शत्रुन्दमाय दण्डाय पर्णचीरपटाय च—इति महाभारते ( १२।२८४।१६ ) । हस्तिशुण्डः । ८२२

दण्डधरः पुं. [ दण्डस्य धरः । दण्डं धारयति, घृञ् धारणे+पचाद्यचि णिलुक् ] यमः; 'ब्रह्मदण्डकृतं दण्डं भुक्त्वा दण्डधराधिपः । अकाण्डदण्डस्रष्टाय यया दण्ड धरान्तिकम्—इति राजतरङ्गिण्याम् ( ४।६५९ ) । राजा; 'बलनिपूदनमर्थपतिं च तं श्रमनुदं मनदण्डधरा- न्वयम्—इति रघुवंशे ( ९।३ ) । शासकः; 'एवमेत- तन्मया कार्यं नाहं दण्डधरस्तव—इति महाभारते ( १२।२३।४३ ) । त्रि. लगुडधारकः; चतुर्योपाय- युक्तः; 'अहं दण्डधरो राजा प्रजांनामिव योजितः—इति भागवते ( ४।२।१।२२ ) । ७२

दण्डाहतः पुं.— बाणविशेषः । ४६७  
दण्डाहतम् क्ली. [ दण्डेन मघ्ना आहतम् ] तक्रं; धोलम्; दण्डेन ताडिते त्रि. । २७५

**दण्डी** [ न् ] पुं. [ दण्डोऽस्त्यस्येति । दण्ड+‘अत इनि-  
ठनी इति इनि ] द्वाःस्थः; सूरिविशेषः । स तु कवीनाम-  
न्यतमः काव्यादर्शदशकुमारचरितावन्तिसुन्दरीत्रितय-  
ग्रन्थप्रणेता । शङ्कराचार्यसमकालीनोऽयम् । ‘जाते  
जगति वाल्मीकी कविरित्यभिधाभवत् । कवी इति ततो  
व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि’—इति कालिदासः । ‘स  
कथाभिरवन्तिषु प्रसिद्धान् विबुधान् बाणमयूरदण्डि-  
मुख्यान् । शिथिलीकृतदुर्मताभिमानान् निजभाष्यश्रव-  
णोत्सुकांश्चकार’—इति शङ्करविजये ( १५१४० ) ।  
दमनकवृक्षः; यमः; ‘तं वृक्षमादाय रिपुप्रमाथी दण्डीव  
दण्डं पितृराज उग्रम्’—इति महाभारते ( १।१९०।१७ ) ।  
चतुर्याश्रमी; ‘स्थितायां यौवनयुतकान्तायां परमेश्वरि !  
सर्वं हि विफलं तस्य यः कुर्याद्दण्डधारणम् । विद्येते  
पितरौ देवि ! यः कुर्याद्दण्डधारणम् । सन्न्यासं विफलं  
तस्य रौरवाख्यं गमिष्यति । विद्यते बालभावेन यस्य  
कान्ता सुतस्तथा । संन्यासधारणं तस्य वृथा हि परमे-  
श्वरि । स गुरुश्चापि शिष्यश्च रौरवाख्यं प्रपद्यते’—इति  
महानिर्वाणतन्त्रे १३ पटले । महादेवः; ‘मुण्डो विरूपो  
विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः ।’ योगाचार्यविशेषः;  
‘युगावर्तेषु सर्वेषु योगाचार्यच्छलेन तु । अवताराणि  
शर्वस्य शिष्यांश्च भगवन् ! वद । महाकालश्च शूली  
च दण्डी मुण्डी स एव च’—इति शिवपुराणे । घृतराष्ट्र-  
पुत्राणामेकतमः; ‘निषङ्गी कवची दण्डी दण्डधारो  
घनुग्रहः’—इति महाभारते । दण्डयुक्ते त्रि. । ‘दण्डी  
मुण्डी कुशी चीरी घृताक्तो मेखलीकृतः’—इति  
महाभारते ( १३।१४।३७४ ) । ४२४

**दण्डोत्पलम्** क्ली. [ दण्डयुक्तमुत्पलमिव ] वृक्षविशेषः;  
गोवन्दनी; गन्वल्ली; सहदेवी; सहा; विश्वदेवा;  
दण्डोत्पला । १९९

**दद्रुघ्नः** पुं. [ दद्रुं दद्रुरोगं हन्तीति । हन्+टक् ] चक्र-  
मर्दकः; ‘वाकुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमर्दी हरीतकी ।  
‘दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नममलं वातकफापहम् । कण्डूकास-  
कृमिदवासदद्रुकुष्ठप्रणुल्लघु’—इति भावप्रकाशः । ६१९

**दद्रुणः** त्रि. [ दद्रुरस्त्यस्येति । दद्रु+‘लोमादिपामादि-  
पिच्छादिभ्यः शतृलचः’ इति न ] दद्रुरोगी; दद्रुणः;  
दद्रुरोगविशिष्टः । ६१९

**दद्रुरोगी** [ न् ] त्रि. [ दद्रुरोगोऽस्त्यस्येति, दद्रुरोग+

इति ] दद्रुरोगविशिष्टः; दद्रुणः; दद्रुणः । ६०७

**दद्रुघ्नः** पुं. [ दद्रुं हन्तीति । हन्+टक् ] दद्रुघ्नः; चक्र-  
मर्दकः । ६१९

**दद्रुणः** त्रि. [ दद्रुरस्त्यस्येति । दद्रु+‘पामादित्वात् न ]  
दद्रुणः; दद्रुरोगी । ६०७

**दधि क्ली.** [ दधातीति । धा+भाषायां धाक् ‘कृसृगमि-  
जनिनमिभ्यः’ इत्युक्त्या कि; स च लिङ्घत् ] दुग्ध-  
परिणतिः; क्षीरजं; मङ्गल्यं; विरलं; पयस्यं; ‘दही’  
इति भाषा । ‘हिक्काश्वासप्लीहाशःस्वतिसारे भग-  
न्दरे । शस्तं प्रोक्तं दधि ह्येषां लवणेन विमूर्च्छितम्’  
—इति हारीते । श्रीवासः; वसनं; धारणकर्तारि  
त्रि. । २७५, ४१६

**दधिमण्डः** पुं. [ दघ्नः मण्डः ] मस्तु; ‘छाछ’ इति भाषा ।  
३२१

**दधिसक्तवः** पुं. [ दध्युपसिक्ताः सक्तवः ] करम्भः;  
नित्यबहुवचनान्तोऽयम् । ‘न पाणी लवणं विद्वान्  
प्रादनीयात्र च रात्रिषु । दधिसक्तान् न भुञ्जीत वृथा-  
मांसं च वज्रयेत्’—इति महाभारते ( १३।१०४।९१ ) ।

**दधिसारम्** क्ली. [ दघ्नः सारम् ] नवनीतं; हैयङ्गवीनम् ।  
२७४

**दनुः** स्त्री.—‘कश्यपपत्नी; सा दक्षकन्या दानवमाता च;  
‘कश्यपस्य प्रवक्ष्यामि पत्नीम्य पुत्रपौत्रकान् । अदिति-  
दितिर्दनुश्चैव अरिष्टा सुरसा तथा’—इति मत्स्यपुराणे ।  
दानवविशेषे पुं. ‘श्रियो मां मध्यमं पुत्रं दनुं नाम्ना च  
दानवम्’—इति रामायणे । ११९

**दन्तः** पुं. [ दम्+‘हसिमृगिणि’ इति तन् ] चर्वणसाध-  
नास्थि; रदनः; दशनः; रदः; द्विजः; खरः; ‘दांत’  
इति भाषा । ‘हरितालं यवक्षारं पत्राङ्गं रक्तचन्दनम् ।  
जातीं हिङ्गुलकं लाक्षां पक्वतैलेन पेपयेत् । हरीतकी-  
कपायेण मृष्ट्वा दन्तान् प्रलेपयेत् । दन्ताः स्युर्लोहिताः  
पुंसः श्वेता रद ! न संशयः’—इति गारुडे । अद्रिकटकः;  
कुञ्जः; शैलशृङ्गम् । ५२७

**दन्तच्छब्दः** पुं. [ दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेनेति’ छद् संवरणे+  
णिच्+‘पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण’ इति घ । ‘छादेर्घेऽद्युप-  
सर्गस्य’ इति ह्रस्वः ] ओष्ठः; ‘दन्तच्छद्दन्तविधातत्रि-  
शोः स्तनेषु पाप्यश्रुताभिलेहैः । संसूच्यते निर्दयमङ्ग-

नानां रतोपभोगो नवपौवनानाम्—इति ऋतुसंहारे ।

४२४

दन्तमूलम् ऋगी.—दन्तमांसम् । 'मसूडा' इति भाषा । २२३

दन्तवासः [ स् ] पुं. [ दन्तस्य वासो वस्त्रमिवावरक-  
त्वात् ] ओष्ठः; 'अपि त्वदावर्जितवारिसम्भृतं प्रबाल-  
मासामनुबन्धि वीरुषाम् । चिरोज्जितालक्तकपाटलेन ते  
तुलां यदारोहति दन्तवाससा'—इति कुमारसम्भवे ।

( ५।३४ ) । ५२४

दन्तशूकः पुं. [ गहिर्तं दशतीति । दंश्+यञ्+यजपदशां  
यञ्ः इति ऊक् ] सपं; 'शक्षुःश्रवा दन्दशूको गूढपात्प-  
क्षगोरयाः'—इति वैद्यकरलमालायाम् । राक्षसः; हिल्ले  
त्रि., 'इषुमति रघुसिंहे दन्दशूकान् जिघांसौ घनुररिभि-  
रसह्यं मुष्टिपीडं दवाने'—इति भट्टिः ( १।२६ ) । ६४०

दध्रम् त्रि. [ दध्नोतीति, दध्मु दध्मने+ 'स्फायितञ्चीति'  
रक् ] अल्पम्; ऋहन्; ह्रस्वः; निघृष्वः; मायुकः;  
प्रतिष्ठा; कृषु; वस्त्रकः; अमकः; क्षुल्लकः; 'असि  
दध्रस्य चिद्वृधः'—इति ऋग्वेदे ( १।८।१२ ) । पुं.  
समुद्रः । ६८८

दधन्म् क्ली. [ दध्+भावे ल्युट् ] दण्डः; 'अत्युच्छि-  
तस्य दमनमुचितं च श्रुती श्रुतम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते ।  
पुं. [ दाम्यतीति, दध्+ल्यु ] पुष्पविशेषः; पुष्पचामरः;  
'दोना' इति भाषा । 'दमनस्तु वरस्तिक्तो हृद्यो वृष्यः  
सुगन्धिकः । ग्रहणीविषकुष्ठालकलेदकण्डूत्रिदोषजित्'  
—इति भावप्रकाशः । वीरः; उपशान्तः; कुन्दवृक्षः;  
ऋषिविशेषः; 'तमम्यगच्छद् ब्रह्मर्षिर्दमनो नाम भारत !  
तं स भीमः प्रजाकामस्तोषयामास धर्मवित्'—इति  
महाभारते ( ३।५।३।६ ) । भीमस्य पुत्रविशेषः; 'कन्या-  
रत्नं कुमारारश्च श्रीनुदारान् महायशाः । दमयन्तीं दमं  
दान्तं दमनं च सुवर्चसम्'—इति महाभारते ( ३।५।३।९ ) ।  
विष्णुः; 'भरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।'  
'स्वाधिकारात् प्रमाद्यन्तीः प्रजा दमयितुं शीलं यस्य  
वैवस्वतादिरूपेण स दमनः' इति तंद्गाण्ये शङ्कराचार्यः ।  
महादेवः; 'महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिङ्गलः'  
—इति महाभारते ( १।३।१७।१३६ ) ! ८२२

दध्मुनाः [ स् ] पुं. [ दाम्यतीति । अन्तर्भूतव्ययाद् दध्-  
घातोः 'दमेरुनसिः' इति उनसि ] अग्निः; शुक्राचार्यः ।

दध्मुनाः [ स् ] पुं. [ दध्मुनस्+ 'अन्येषामपि दृश्यते' इति  
पक्षे दीर्घः । यद्वा दमेरुनसिरिति पठित्वा ऊनसिप्रत्ययः ]  
अग्निः; त्रि. दमनीयः; 'अस्मे रयि न स्वर्थं दध्मुनसं  
भगं दक्षं न पपृचासि घर्णसिम्'—इति ऋग्वेदे ( १।१४।१।  
११ ) । दानमनाः; दान्तचित्तः; 'जुष्टो दध्मुना अतिथि-  
र्दुरोण इमं नो यज्ञमुपयाहि विद्वान्'—इति ऋग्वेदे  
( ५।४।५ ) । ६३

दध्मती पुं. [ जाया च पतिश्च । राजदन्तादिगणे पाठात्  
जायाया दध्भावो वा निपात्यते ] भार्यापती; जध्मती;  
जायापती; 'भुक्तवत्स्वथ विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि ।  
भुञ्जीयातां ततः परचादवशिष्टन्तु दध्मती'—इति  
मनुः ( ३।१।१६ ) । १२०

दध्मः पुं. [ दध्मते इति, दध्मु दध्मने+घञ् ] कपटः;  
'सुगुप्तस्यापि दध्मस्य ब्रह्माप्यन्तं न गच्छति'—इति  
पञ्चतन्त्रे ( १।२२२ ) । अयं तु अधर्मात् मृषागर्भे  
संजातः; 'मृषाधर्मस्य भार्यासीद्दध्मं मायां च शत्रुहन् !  
असूत मियुनं तत्तु निर्ऋतिर्जगृहेऽप्रजाः'—इति  
भागवते ( ४।८।२ ) । कल्कः; साटोपाहङ्कृतिः;  
'आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः । यजन्ते  
नाम येशैस्ते दध्मनेनाविधिपूर्वकम्'—इति गीतायाम्  
( १।६।१७ ) । धर्मानुत्साहः; 'नास्तिक्यं वेदनिन्दां  
च देवतानां च कुत्सनम् । द्वेषं दध्मं च मानं च क्रोधं  
तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्'—इति मनुः ( ४।१।६३ ) । महादेवः;  
'दध्मो ह्यदध्मो वैदध्मो वश्यो वशकरः कलिः'—इति  
महाभारते ( १।३।१७।७।८ ) । ७४०

दध्मोलिः पुं. [ दध्म्+भावे असुन् । दध्मसि प्रेरणे अलति  
पर्याप्नोतीति । दध्मस्+अल्+इन् ] वज्रम् । ५६

दध्म्यः पुं. [ दध्मते इति, दध्+यत् ] वत्सतरः; प्राप्त-  
दमनकालो गौः; अनड्वान्; 'शकटं दध्मसंयुक्तं दत्तं  
भवति चैव हि'—इति महाभारते ( १।३।६।१४ ) ।  
दमनीये त्रि. । २६४

दद्या स्त्री. [ दय्+भिदाद्यञ् ततष्ठाप् ] कृपा; 'यत्ना-  
दपि परक्लेशं हर्तुं या हृदि जायते । इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ!  
सा दद्या परिकीर्तिता'—इति पाद्मे । 'आत्मवत् सर्व-  
भूतेषु यो हिताय शुभाय च । वर्तते सततं हृष्टः क्रिया  
ह्येषा दद्या स्मृता'—इति मत्स्यपुराणे । 'परे वा वन्धु-  
वर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा । आत्मवद्वर्तितव्यं हि

**दण्डी** [ न् ] पुं. [ दण्डोऽस्त्यस्येति । दण्ड+‘अत इनि-  
ठनी’इति इनि ] द्वाःस्थः; सूरिविशेषः । स तु कवीनाम-  
न्यतमः काव्यादर्शदशकुमारचरितावन्तिसुन्दरीप्रियतय-  
ग्रन्थप्रणेता । शङ्कराचार्यसमकालीनोऽयम् । ‘जाते  
जगति वाल्मीकी कविरित्यभिधाभवत् । कवी इति ततो  
व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि’—इति कालिदासः । ‘स  
कथाभिरवन्तिषु प्रसिद्धान् विबुधान् बाणमयूरदण्डि-  
मुख्यान् । शिथिलीकृतदुर्मताभिमानान् निजभाष्यश्रव-  
णोत्सुकाश्चकार’—इति शङ्करविजये (१५।१४०) ।  
दमनकवृक्षः; यमः; ‘तं वृक्षमादाय रिपुप्रमाथी दण्डीव  
दण्डं पितृराज उग्रम्’—इति महाभारते (१।१९०।१७) ।  
चतुर्थाश्रमी; ‘स्थितायां यौवनयुतकान्तायां परमेश्वरि ! ।  
सर्वं हि विफलं तस्य यः कुर्यादण्डधारणम् । विद्यते  
पितरी देवि ! यः कुर्यादण्डधारणम् । सन्न्यासं विफलं  
तस्य रौरवाख्यं गमिष्यति । विद्यते बालभावेन यस्य  
कान्ता सुतस्तथा । संन्यासधारणं तस्य वृथा हि परमे-  
श्वरि । सगुरुश्चापि शिष्यश्च रौरवाख्यं प्रपद्यते’—इति  
महानिर्वाणतन्त्रे १३ पटले । महादेवः; ‘मुण्डो विरूपो  
विकृतो दण्डी कुण्डो विकुर्वणः ।’ योगाचार्यविशेषः;  
‘युगावर्तेषु सर्वेषु योगाचार्यच्छेलेन तु । अवताराणि  
शर्वस्य शिष्याश्च भगवन् ! वद । महाकालश्च शूली  
च दण्डी मुण्डी स एव च’—इति शिवपुराणे । घृतराष्ट्र-  
पुत्राणामेकतमः; ‘निषङ्गी कवची दण्डी दण्डधारो  
घनुग्रहः’—इति महाभारते । दण्डयुक्ते त्रि. । ‘दण्डी  
मुण्डी कुशी चीरी घृताक्तो मेखलीकृतः’—इति  
महाभारते (१३।१४।३७४) । ४२४

**दण्डोत्पलम्** क्ली. [ दण्डयुक्तमुत्पलमिव ] वृक्षविशेषः;  
गोवन्दनी; गन्धवल्ली; सहदेवी; सहा; विश्वदेवा;  
दण्डोत्पला । १९९

**दद्रुघ्नः** पुं. [ दद्रुं दद्रुरोगं हन्तीति । हन्+टक् ] चक्र-  
मर्दकः; ‘बाकुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमदीं हरीतकी ।  
‘दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नमम्लं वातकफापहम् । कण्डूकास-  
कृमिश्वासदद्रुकुष्ठप्रणुल्लघु’—इति भावप्रकाशः । ६१९

**दद्रुणः** त्रि. [ दद्रुरस्त्यस्येति । दद्रु+‘लोमादिपामादि-  
पिच्छादिभ्यः शनेलच’ इति न ] दद्रुरोगी; दद्रुणः;  
दद्रुरोगविशिष्टः । ६१९

**दद्रुरोगी** [ न् ] त्रि. [ दद्रुरोगोऽस्त्यस्येति, दद्रुरोग+

इनि ] दद्रुरोगविशिष्टः; दद्रुणः; दद्रुणः । ६०७

**दद्रुघ्नः** पुं. [ दद्रुं हन्तीति । हन्+टक् ] दद्रुघ्नः; चक्र-  
मर्दकः । ६१९

**दद्रुणः** त्रि. [ दद्रुरस्त्यस्येति । दद्रु+‘पामादित्वात् न ]  
दद्रुणः; दद्रुरोगी । ६०७

**दधि** क्ली. [ दधातीति । धा+भाषायां घाञ् ‘कृसृगमि-  
जनिनमिभ्यः’ इत्युक्त्या कि; स च लिङ्वात् ] दुग्ध-  
परिणतिः; क्षीरजं; मज्जल्यं; विरलं; पयस्यं; ‘दही’  
इति भाषा । ‘हिककाश्वासप्लीहाशःस्वतिसारे भग-  
न्दरे । शस्तं प्रोक्तं दधि ह्येषां लवणेन विमूर्च्छितम्’  
—इति हारीते । श्रीवासः; वसनं; धारणकर्तारि  
त्रि. । २७५,४१६

**दधिमण्डः** पुं. [ दघ्नः मण्डः ] मस्तु; ‘छाछ’ इति भाषा ।  
३२१

**दधिसक्तवः** पुं. [ दध्युपसिक्ताः सक्तवः ] करम्भः;  
नित्यबहुवचनान्तोऽयम् । ‘न पाणी लवणं विद्वान्  
प्राशनीयान्न च रात्रिषु । दधिसक्तून् न भुञ्जीत वृथा-  
मांसं च वर्जयेत्’—इति महाभारते (१३।१०४।९१) ।  
३२१

**दधिसारम्** क्ली. [ दघ्नः सारम् ] नवनीतं; हैयङ्गवीनम् ।  
२७४

**दनुः** स्त्री.—‘कश्यपपत्नी; सा दक्षकन्या दानवमाता च;  
‘कश्यपस्य प्रवक्ष्यामि पत्नीम्य पुत्रपौत्रकान् । अदिति-  
दितिर्दनुश्चैव अरिष्ठा सुरसा तथा’—इति मत्स्यपुराणे ।  
दानवविशेषे पुं. । ‘श्रियो मां मध्यमं पुत्रं दनुं नाम्ना च  
दानवम्’—इति रामायणे । ११९

**दन्तः** पुं. [ दम्+‘हसिमृप्रिणि’ इति तन् ] चर्वणसाध-  
नास्थि; रदनः; दशनः; रद्ः; द्विजः; खरुः; ‘दांत’  
इति भाषा । ‘हरितालं यवक्षारं पत्राङ्गं रक्तचन्दनम् ।  
जातौ हिङ्गुलकं लाक्षां पक्वतैलेन पेययेत् । हरीतकी-  
कषायेण मृष्ट्वा दन्तान् प्रलेपयेत् । दन्ताः स्युर्लोहिताः  
पुंसः श्वेता रुद्र ! न संशयः’—इति गारुडे । अद्रिकटकः;  
कुञ्जः; शैलशृङ्गम् । ५२७

**दन्तच्छवः** पुं. [ दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेनेति’ छद् संवरणे+  
णिच्+‘पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण’ इति घ । ‘छादेशेऽद्युप-  
सर्गस्य’ इति ह्रस्वः ] ओष्ठः; ‘दन्तच्छददन्तविघातत्रि-  
श्वैः स्तनेश्च पाष्यवकृतामिलेखैः । संसूच्यते निर्दयमङ्ग-

नानां रतोपभोगो नवयौवनानाम्—इति ऋतुसंहारे ।

४२४

वन्तमूलम् क्ली.—दन्तमांसम् । 'मसूडा' इति भाषा । २२३

दन्तबासाः [ स् ] पुं. [ दन्तस्य बासो वस्त्रमिवावरक-  
त्वात् ] ओष्ठः; 'अपि त्वदावर्जितवारिसम्भृतं प्रबाल-  
मासामनुबन्धि वीरधाम् । चिरोज्जितालक्तकपाटलेन ते  
तुलां यदारोहति कस्तबाससा'—इति कुमारसम्भवे ।

(५।३४) । ५२४

दन्तशूकः पुं. [ गर्हितं दशतीति । दंश्+यङ्+यजजपदशां  
यङ् इति ऊक ] सपं; 'धक्षुःश्रवा दन्दशूको गूढपातप-  
घ्नगोरगाः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । राक्षसः; हिंसे  
त्रि., 'इपुमति रघुसिंहे दन्दशूकान् जिघांसौ घनुररिभि-  
रसह्यं मुष्टिपीडं दवाने'—इति भट्टिः (१।२६) । ६४०

वभ्रम् त्रि. [ दम्नोतीति, दम्भु दम्भने+स्फायितञ्चीति  
रक् ] अल्पम्; ऋहन्; ह्रस्वः; निघृष्वः; मायुकः;  
प्रतिष्ठा; कृषु; वभ्रकः; अभकः; क्षुल्लकः; 'असि  
दभ्रस्य चिद्वधः'—इति ऋग्वेदे (१।८।१२) । पुं.  
समुद्रः । ६८८

वमनम् क्ली. [ दम्+भावे ल्युट् ] दण्डः; 'अत्युच्छि-  
तस्य दमनमुचितं च श्रुतौ श्रुतम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते ।  
पुं. [ दाम्यतीति, दम्+ल्यु ] पुष्पविशेषः; पुष्पचामरः;  
'दोना' इति भाषा । 'दमनस्तु वरस्तिक्तो हृद्यो वृष्यः  
सुगन्धिकः । ग्रहणीविपकुष्ठासक्लेदकण्डूत्रिदोपजित्'  
—इति भावप्रकाशः । वीरः; उपशान्तः; कुन्दवृक्षः;  
ऋषिविशेषः; 'तमम्यगच्छद् ब्रह्मापिदमनो नाम भारत !  
तं स भीमः प्रजाकामस्तोषयामास धर्मवित्'—इति  
महाभारते (३।५।३।६) । भीमस्य पुत्रविशेषः; 'कन्या-  
रत्नं कुमारान्श्च त्रीनुदारान् महायशाः । दमयन्तीं दमं  
दान्तं दमनं च सुवर्चसम्'—इति महाभारते (३।५।३।९) ।  
विष्णुः; 'भरीचिदमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।  
'स्वाधिकारात् प्रमाद्यन्तीः प्रजा दमयितुं शीलं यस्य  
वैवस्वतादिरूपेण स दमनः' इति तद्वाङ्मये शङ्कराचार्यः ।  
महादेवः; 'महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिङ्गलः'  
—इति महाभारते (१।३।१७।१३६) । ८२२

वमूनाः [ स् ] पुं. [ दाम्यतीति । अन्तर्भूतण्ययाद् दम्-  
घातोः 'दमेरुनसिः' इति उनसि ] अग्निः; शुक्राचार्यः ।

६३

वमूनाः [ स् ] पुं. [ दमूनस्+अन्येषामपि दृश्यते ] इति  
पक्षे दीर्घः । यद्वा दमेरुनसिरिति पठित्वा ऊनसिप्रत्ययः ]  
अग्निः; त्रि. दमनीयः; 'अस्मे रयिं न स्वयं दमूनसं  
भगं दक्षं न पपृचासि घर्णासिम्'—इति ऋग्वेदे (१।१४।१।  
११) । दानमनाः; दान्तचित्तः; 'जुष्टो दमूना अतिथि-  
र्दुरोण इमं नो यज्ञमुपयाहि विद्वान्'—इति ऋग्वेदे  
(५।४।५) । ६३

दम्पती पुं. [ जाया च पतिश्च । राजदन्तादिगणे पाठात्  
जायाया दम्भावो वा निपात्यते ] भार्यापती; जम्पती;  
जायापती; 'भुक्तवत्स्वय विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि ।  
भुञ्जीयातां ततः पश्चादवशिष्टन्तु दम्पती'—इति  
मनुः (३।१।१६) । १२०

दम्भः पुं. [ दम्यते इति, दम्भु दम्भने+घञ् ] कपटः;  
'सुगुप्तस्यापि दम्भस्य ब्रह्माप्यन्तं न गच्छति'—इति  
पञ्चतन्त्रे (१।२२२) । अयं तु अवर्मात् मृपागर्भे  
संजातः; 'मृपाऽधर्मस्य भार्यासीद्दम्भं मायां च शत्रुहन् !  
असूत मियुनं तत्तु निःकृतिर्जगृहेऽप्रजाः'—इति  
भागवते (४।८।२) । कल्कं; साटोपाहृङ्कृतिः;  
'आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः । यजन्ते  
नाम येशैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्'—इति गीतायाम्  
(१।६।१७) । धर्मानुत्साहः; 'नास्तिक्यं वेदनिन्दां  
च देवतानां च कुत्सनम् । द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं  
तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्'—इति मनुः (४।१।६३) । महादेवः;  
'दम्भो ह्यदम्भो वैदम्भो वश्यो वशकरः कलिः'—इति  
महाभारते (१।३।१७।७८) । ७४०

दम्भोलिः पुं. [ दम्भु+भावे असुन् । दम्भसि प्रेरणे अलति  
पर्याप्नोतीति । दम्भस्+अल्+इन् ] वज्रम् । ५६

दम्यः पुं. [ दम्यते इति, दम्+यत् ] वत्सतरः; प्राप्त-  
दमनकालो गौः; अनड्वान्; 'शकटं दम्यसंयुक्तं दत्तं  
भवति चैव हि'—इति महाभारते (१।३।६।४) ।  
दमनीये त्रि. । २६४

दया स्त्री. [ दय्+भिदाद्यङ् ततप्टाप् ] कल्याणः; 'यत्ना-  
दपि परक्लेशं हर्तुं या हृदि जायते । इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ !  
सा दया परिकीर्तिता'—इति पाद्मे । 'आत्मवत् सर्व-  
भूतेषु यो हिताय शुभाय च । वर्तते सततं हृष्टः क्रिया  
ह्येषा दया स्मृता'—इति मत्स्यपुराणे । 'परे वा बन्धु-  
वर्गो वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा । आत्मवद्द्वैतित्यं हि



दयिषा परिकीर्तिता'—इत्येकादशीतत्त्वम् । इयं हि शक्तीनामन्यतमा; 'श्रद्धा मेधा स्वधा स्वाहा क्षुधा निद्रा दया गतिः । संस्थिताः सर्वतः पार्श्वे महादेव्याः पृथक् पृथक्'—इति देवीभागवते ( १।१५।६० ) । ७२५ दयितम् त्रि. [ दय्यते स्मेति । दय्+क्त ] प्रियम्; 'दृष्टम-दृष्टप्रायं दयितं कृत्वा प्रकाशितन्त्वनया । हृदयं करेण ताडितमय मिथ्याव्यञ्जितत्रयया'—इति आर्यासप्त-शत्याम् ( २।८।८ ) । 'दयितजनविप्रयोगा वित्तवियोगा-श्च केन सह्याः स्युः । यदि सुमहौषधकल्पो वयस्यजन-सङ्गमो न स्यात्'—इति पञ्चतन्त्रे ( २।१८९ ) । पुं. पतिः । ३६७

दयिता स्त्री. [ दयित+टाप् ] भार्या; पत्नी; 'निवर्त्य राजा दयितां दयालुः तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः'— इति रघुवंशे ( २।३ ) । ४८२

दर अव्य. [ दीर्यते इति, दृ+अप् ] ईपदर्यः; 'दरतरले-ऽक्षिणि वक्षसि दरोरन्ते ब्रव मुखे च दरहसिते । आस्ता कुसुमं वीरः स्मरोऽधुना चित्रधनुषापि'—इति आर्या-सप्तशत्याम् ( ३०० ) । 'अक्षिणि नेत्रे ईपच्चञ्चले सति तवेपदुन्नमिते वक्षसि मुखे च किञ्चिद्वसितवति सति'—इति तट्टीका । ५८५

दरः पुं.- क्ली. [ दीर्यते वक्षोऽनेन । दृ+ 'ग्रहृद्दृश्चिगमश्च' इति अप् ] भयम्; 'दरनिद्राणस्यापि स्मरस्य शिल्पेन निर्गतासून् मे । मुग्धे ! तव दृष्टिरसावर्जुनयन्त्रेपुर्वि हन्ति'—इति आर्यासप्तशत्याम् ( २९५ ) । गतः ( ६२४ ); शङ्खः; 'स उच्चकाशे धवलोदरो दरोऽप्युरु-क्रमस्याधरशाणशोणिमा । दाघमायमानः करकञ्ज-सम्पुटं यथावज्जयण्डे कलहस उत्त्वनः'—इति भागवते ( १।११।२ ) । कन्दरे पुं.-स्त्री. [ स्त्रियां डीप् ] 'ध्वनति पवनविद्धः पर्वताना दरोपु, स्फुटति पटुनिनादः शुष्कवशस्थलीपु'—इति ऋतुसंहारे ( १।२५ ) । क्ली. शङ्खः; 'त्रिष्णु वन्दे दरकमलकौमोदकोचक्रपाणिम्'— इति क्रमदीपिका । ७२५

दारः स्त्री. [ दृ+इन् ] दरी; कन्दरा; पुं. तक्षककुलो-त्पन्नसर्पः । १६७

दरितः त्रि. [ दरो भयमस्य सञ्जातः । दर+तारका-दित्वाद् इतच् ] भित्तः । ३५४

दरिद्रः पुं. [ दरिद्राति दुर्गच्छतीति । दरिद्रा+अच् ]

निर्धनः; निस्वः; दुर्विधः; दीनः; दुर्गतः; कीकटः; दुस्यः; अस्तमितः; 'अनुपोष्य त्रिरात्राणि तीर्थान्यन-भिगम्य च । अदत्त्वा हेमधेनूश्च दरिद्रो जायते नरः'—इति पाद्मे । 'दरिद्रो यस्त्वसन्तुष्टः कृपणो योऽजिते-न्द्रियः'—इति भागवतम् । ३४८

दरो स्त्री. [ दृ+स्त्रियां डीप् ] कन्दरा; गुहा । १६७ वरोदरम् पुं.-क्ली. [ दरो भयं तज्जनकम् उदरं यस्य । प्रायशः सर्वश्रासकत्वादेवास्य तथात्वम् ] दुरोदरं; द्यूतम्; 'आश्रित्य दुर्गं गिरिकन्दरोदरं क्रीडन्त्यमुस्मिन् सततं दरोदरम् ।' ३८८

दर्दुरः पुं. [ दृणाति कर्णौ शब्देनेति । दृ+ 'मकुरदर्दुरौ' इति उरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] भेकः; 'भद्रं कृतं कृतं मौनं कोकिलैर्जलदागमे । दर्दुरा यत्र वक्तारस्तत्र मौनं हि शोभनम्'—इत्युद्भटः । मेघः; वाद्यभाण्ड-विशेषः; पर्वतविशेषः; 'स निर्विशय यथाकामं तट्टेष्वा-लानचन्दनो । स्तनाविव दिशस्तस्याः शैली मलयदर्दुरौ'—इति रघुवंशे ( ४।५ ) । राक्षसः; अभ्रकवातुभेदः; 'पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रञ्चेति चतुर्विधम् । दर्दुरं स्व-ग्निनिक्षिप्तं क्रुस्ते दर्दुरध्वनिम् । गोलकान् बहुशः कृत्वा स स्यान्मृत्युप्रदायकः'—इति भावप्रकाशे । ६६२

दर्पः पुं. [ दृप्यते इति, दृप्+भावे घञ् ] अहङ्कृतिः; गर्वः; अहङ्कारः; अवलिप्तता; अभिमानः; ममता; मानः; चित्तोन्नतिः; समयः; 'प्राणाधिकाया राधाया अन्येषामपि का कथा । हत्वा दर्पं च सर्वेषां प्रसादं च चकार सः'—इति ब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे । उच्छृङ्खलत्वं; कस्तूरी; ऊष्मा । ७२२

दर्पकः पुं. [ दर्पयति हर्षयति मोहयति वेति । दृप् हर्ष-मोहनयोः+णिच्+ण्वल् ] कामदेवः । ३३

दर्पणः पुं.- क्ली. [ दर्पयति सन्दीपयतीति । दृप्+णिच् + 'नन्दिप्रहीति' ल्यु ] रूपदर्शनाधारः; मुकुरः; आदर्शः; आत्मदर्शः; नन्दरः; दर्शनं; प्रतिविम्ब्रातं; कर्कः; कर्करः; 'यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम् । लोचनाभ्यां विहानस्य दर्पणः किं करि-ष्यति'—इति चाणक्ये ( १०९ ) । पुं. पर्वतप्रभेदः; नदविशेषः; 'ततः पूर्वं महाराज ! दर्पणो नाम पर्वतः । कुवेरो यत्र वसति धनपालः समं सदा । यस्मिन्नास्ते मध्यभागे रोहिणो रोहिताकृतिः । यस्मिँल्लोहादिकं

स्पृष्टं स्वर्णतां याति तत्क्षणात् । यन्नातिदूरे स्रवति  
दर्पणो नाम वै नदः—इति कालिकापुराणे ८१ अध्याये ।  
क्ली. [ दर्पयति सन्दीपयतीति । दृप्+णिव्+ल्यु ]  
चक्षुः; [ भावे ल्युट् ] सन्दीपनम् । ५५५

**दर्भः** पुं. [ दृणाति विदारयतीति । 'दृदलिभ्यां भः' इति भ ]  
कुशः; उलपतृर्णः; काशः; 'कुशो दर्भस्तथा बर्हिः सूच्यप्रो  
यज्ञभूपणः । ततोऽन्यो दीर्घपत्रः स्यात् क्षुरपत्रस्तथैव  
च'—इति भावप्रकाशः । १९१

**दर्विः** स्त्री. [ दृणाति विदारयत्यनेनेति । दृ+वृदभ्यां  
विन्' इति विन् ] व्यञ्जनाविदारकः; कम्बिः; खजाका;  
दर्वी; कम्बी; खजाकजः; दर्विकः; दर्विका; दार्विका;  
'कलछी, चमचा' इति भाषा । फणा । ३१२

**दर्वी** स्त्री. [ दर्वि+वा डीष् ] दर्विः । ३१२

**दर्वीकरः** पुं. [ दर्वी' फणां करोतीति । कृ+कृत्रो हेतु-  
ताच्छीलानुलोम्येषु' इति ट, यद्वा दर्वी फणा कर इवास्य ]  
सर्पः; 'दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तश्च पन्नगाः ।  
तेषु दर्वीकरा ज्ञेया विशतिः षट् च पन्नगाः'—इति  
सुश्रुते । खजाकाकारके त्रि. । ६४०

**दर्शनम्** क्ली. [ दृश्यतेऽनेनेति । दृश्+करणे ल्युट् ] चाक्षु-  
षज्ञानं; निर्वर्णनं; निष्यानम्; आलोकनम्; ईक्षणं,  
निभालनम्; 'आहूत इव मे शीघ्रं दर्शनं याति चेतसि'—  
इति भागवते (१।६।३४) । पुण्यदर्शनानि; 'सुब्राह्म-  
णानां तीर्थानां वैष्णवानां च दर्शने । देवताप्रतिमादर्शात्  
तीर्थस्नायी भवेन्नरः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । नयनं; स्वप्नः;  
बुद्धिः; धर्मः; उपलब्धिः; दर्पणः; [ दृश्यते यथार्थतत्त्व-  
मनेनेति ], शास्त्रम्; इज्या; वर्णः; (८६२) शास्त्रं,  
तत्तुषड्विषम—'द्वे न्याये द्वे च मीमांसे द्वे योगे' इति  
षड् विदुः । ५६६

**दरुम्** क्ली. [ दलतीति, दल्+अच् ] पत्रम्; 'हृत्वा तटिनि!  
तरङ्गैर्भ्रमितश्चक्रेषु नाशये निहितः । फलदलवत्कल-  
रहितस्त्वयान्तरिक्षे तरस्त्यक्तः'—इति आर्यासप्तश-  
त्यम् (६९२) । उत्सेधः; खण्डम्; 'भार्या पुत्रश्च दासश्च  
शिष्यो भ्राता च सोदरः । प्राप्तापरावास्ताडघाः स्यु  
रज्ज्वा वेणुदलेन वा । शस्त्रीच्छदः; अपद्रव्यं; घनं;  
तमालपत्रं; अदं; पुं. इक्ष्वाकुकुलोत्पन्नपरिक्षिप्ताम-  
राज्ञः पुत्रः; स च मण्डूकराजकन्यासम्भूतः । 'अय कस्यचित्  
कालस्य तस्यां कुमारारक्षत्रयस्तस्य राज्ञः सम्बभूवुः ।

शलो, दलो, बलश्चेति'—इति महाभारते (३।१९२।  
४४) । वृक्षविशेषः; 'वातपोतः पलाशः स्याद्धान-  
प्रस्थश्च किंशुकः । राजादनो ब्रह्मवृक्षो हस्तिकर्णो  
दलोऽपरः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १८५

**दवः** पुं. [ दुनोति पीडयतीति । दु+अच् ] वनाग्निः;  
'दृष्ट्वा गता निवृ' तिमद्य सर्वे गजा दवार्ता इव गाङ्गमम्भः'  
—इति भागवते (८।६।१३) । वनम् (७९९);

अग्निः; [ दु उपतापे+ 'ऋदोरप्' इत्यप् ] उपतापः । ७०

**दवपुः** पुं. [ दवनमिति, दु दु उपतापे+ 'ट्वित्तोऽयुच्'  
इति भावे अयुच् ] परितापः; 'दुरोदरघ्नी दावार्चिर्द्रव-  
द्रव्यैकशोवधिः । दीनसन्तापशमनी दात्री दवयुर्वैरिणी'  
—इति काशीखण्डे । [ द्रुयतेऽनेनेति करणे अयुच् ] चक्षु-  
रादिदाहः । ६०१

**दशनः** पुं.—क्ली. [ दश्यतेऽनेनेति । दंश्+ल्युट्, 'दहदशेति'  
निर्देशाद् अत्र अकित्यपि नलोपः ] दन्तः; 'उवाच  
वाग्मी दशनप्रभाभिः संवर्द्धितोरःस्थलतारहारः'—इति  
रघुवंशे (५।५२) । क्ली. [ दश्यते इव शरीरमने-  
नेति । दंश्+करणे ल्युट्, दहदशेति निर्देशात् क्वचि-  
दकित्यपि नलोपः ] कवचं; शिखरे पुं. । ५२७

**दशबलः** पुं. [ दशसु दिक्षु बलं यस्य, यद्वा 'दानशीलक्षमा-  
वीर्यध्यानप्रज्ञाबलानि च । उपायः प्रनिधिज्ञानं दश बुद्ध-  
वलानि च' इति वचनात् दश बलान्यस्य ] बुद्धः । ८५

**दशा** स्त्री. [ दशतीव, दंश्+मूलविभुजादित्वात् क,  
जपजमदहदशेति निर्देशात् अकित्यपि नलोपः । यद्वा  
दश्यते इति, गुरोरश्चेत्यङ् ततप्ताप् ] वतिः; वस्त्रान्ते  
बहुवचनान्तोऽयं शब्दः; 'वसनस्य दशा ग्राह्या शूद्रयो-  
ल्लुष्टवेदने'—इति मनुः (३।४४) । कर्मविपाकः  
(७९९); अवस्था; 'आपदि येनोपकृतं येन च हसितं  
दशासु विषमासु । उपकृत्य तयोर्हभयोः पुनरपि जातं  
नरं मन्ये'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३।८१) । दीपवतिः;  
'अहमस्य दशोव पश्य मां अविषह्यव्यसननेन धूमिताम्'  
—इति कुमारसम्भवे (४।३०) । चेतः; शरीरस्य  
दश दशाः—गर्भवासः १, जन्म २, वाल्यं ३, कौमारं  
४, पीगण्डं ५, यौवनं ६, स्याविर्यं ७, जरा ८, प्राण-  
रोवः ९, नाशः १० । कामजदशदशाः; 'चक्षूरागस्त-  
दनु मनसः सङ्गतिर्भाविना च, व्यावृत्तिः स्यात्तदनु विषय-  
ग्रामतश्चेतसोऽपि । निद्राच्छेदस्तदनु तनुता निष्प्रपत्वं

ततोऽनूमादो मूर्च्छा तदनु मरणं स्युर्दशाः प्रक्रमेण'  
—इत्यलङ्कारशास्त्रम् । वर्षाणां सूर्याद्यष्टग्रहभोग्याष्ट-  
भागविशेषाः; नाक्षत्रिकी दशा; 'षट् सूर्यस्य दशा  
ज्ञेयाः षशिनो दशपञ्च च । अष्टावङ्गारके  
प्रोक्ता बुधे सप्तदश स्मृताः । शनैश्चरे दश प्रोक्ता  
गुरोरेकोनविंशतिः । राहोर्द्वादशवर्षाणि भृगोरप्येक-  
विंशतिः । युगभेदे दशाविशेषाः; 'सत्ये लग्नदशा चैव  
त्रेतायां हरगौरिका । द्वापरे योगिनी चैव कलौ नाक्ष-  
त्रिकी दशा'—इति समयामृतम् । दशवा दशा;  
योगिनी १, वार्षिकी २, नाक्षत्रिकी ३, लाग्निकी  
४, मुकुन्दा ५, विशोत्तरा ६, त्रिशोत्तरा ७, पताकी  
८, हरगौरी ९, दिनदशा १० । ५५१

**दस्युः** पुं. [ दस्यति परस्वान् नाशयतीति । दस्+ 'यजि-  
मनिशुन्विदसिजनिम्यो युच्' इति युच्, बाहुलकादना-  
देशाभावः ] चौरः; 'विक्रोशन्त्यो यस्य राष्ट्राद्धियन्ते  
दस्युभिः प्रजाः । संपश्यतः समृत्यस्य मृतः स न तु  
जीवति'—इति मनुः (७।१४३) । रिपुः; 'यः शर्वते  
नानुददाति क्षुभ्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्रः'—इति  
ऋग्वेदे (२।१२।१०) । 'दस्योर्षपयितुः शत्रोर्हन्ता  
घातकः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । महासाहसिकः;  
असुरः; 'कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युर्हणा'—इति  
ऋग्वेदे (१।४७।२) । दस्युर्हणा दस्युनामसुराणां  
हणा'—इति तद्भाष्ये सायणः । कर्मवर्जिते त्रि. । 'न  
वीलवे नमते न स्थिराय न शर्वते दस्यु जूताय स्तवान्'  
—इति ऋग्वेदे (६।२४।८) । 'शर्वते उत्सहमानाय  
दस्युजूताय कर्मवर्जितैः प्रेरिताय'—इति तद्भाष्ये साय-  
णाचार्यः । ३३८

**दस्युः** पुं. [ दस्यति उरिक्षपति पांशूनि । दस उत्क्षेपे+  
स्फायितञ्चीति' रक् । दस्यति रोगान् क्षिपतीति ]  
अश्विनोसुतः; 'नासह्यश्चैव दसश्च स्मृती द्वावश्विनी-  
सुतौ'—इति हरिवंशे ( १।५३ ) । खरः दशनीये  
त्रि. । यथा ऋग्वेदे (६।६९।७) 'इन्द्राविष्णु पिवतं  
मध्वो अस्य सोमस्य दक्षा जठरं पृणेषाम्', 'दक्षा हे  
दशनीयाविन्द्राविष्णु'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः ।  
क्ली. [ दंशयते तृणादीन् दशतीति, दसि दंशे+ 'स्फायित-  
तञ्चिञ्चिञ्चि' इति रक् ] शिशिरम् । ८४

**दस्युः** पुं. [ दस्यतः क्षिपती रोगानिति । दस्+ 'स्फायित-

ञ्चीति' रक् ] अश्विनौ (द्विवचनान्तोऽयं शब्दः);  
'दक्षादवीत्य दस्यौ वितनुतः संहितां स्वीयाम् । सकल-  
चिकित्सकलोकप्रतिपत्तिविवृद्धये धन्याम् ।' देवासुर-  
रणे देवा दैत्यैर्वै सक्षताः कृताः । अक्षतास्ते कृताः  
सद्यो दक्षाम्यामद्भुतं महत् । वज्रिणोऽभूद्भुजस्तम्भः स  
दक्षाम्यां चिकित्सतः । सोमाक्षिपतितद्वचन्द्रस्ताम्यामेव  
सुखीकृतः'—इति भावप्रकाशे । ८४

**दहनः** पुं. [ दहतीति, दह्, भस्मीकरणे+ल्यु ] अग्निः;  
'धूमैरश्रु निपातय दह शिखया दहन ! मलिनयाङ्गारैः ।  
जागरयिष्यति दुर्गतगृहिणी त्वां तदपि शिशिरनिशि'—  
इति आर्यासप्तशत्याम् (३०४) । त्रिसंख्या; 'ख-  
याव्विदहनाः कक्षा तु हिमदीधितेः'—इति सूर्यसिद्धान्ते ।  
कृत्तिकानक्षत्रस्य अविष्ठातृदेवत्वात् कृत्तिकानक्षत्रम्;  
'दहनविधिशताख्या मैत्रं सौम्यवारे'—इति ज्योतिष-  
तत्त्वे । चिक्रकः; भल्लातकः; द्रुष्टचेतसि त्रि. ।  
[ दह्यते कामाग्निना इति, दह्+ल्युट् ] कपीतः;  
रुद्रविशेषः; 'दहनोऽयेश्वरश्चैव कपाली च महाद्युतिः ।  
स्थानुर्भगश्च भगवान् रुद्रा एकादश स्मृताः'—इति  
महाभारते (१।६६।३) । स्कन्दस्यानुचरविशेषः;  
'दहति दहनं चैव प्रचण्डी वीर्यसम्मती, अंशोऽप्युपा-  
चरन् पञ्च ददौ स्कन्दाय धीमते'—महाभारते  
(१।४५।३३) । दाहकमात्रे त्रि. । 'त्राहि नः शरणा-  
पन्नांस्त्रैलोक्यदहनाद्विधात्'—इति भागवते (८।७।२१) ।  
क्ली. [ भावे ल्युट् ] दाहः; भस्मीकरणं; 'जलन' इति  
भाषा । 'इतरो दहने स्वकर्मणां ववृते ज्ञानमयेन वद्विना'  
—इति रघुवंशे (८।२०) । ६२

**दहनौपलः** पुं. [ दहनाय बह्व्युत्पादनाय य उपलः  
प्रस्तरखण्डः ] सूर्यकान्तमणिः । १७६

**दाक्षायणी** स्त्री. [ दक्षस्यापत्यं स्त्री. । दक्ष+फिञ् ।  
गौराद्वित्वाद् डीप् ] दुर्गा; अश्विन्यादयो रेवत्यन्ताः  
सप्तविंशतिस्ताराः (५१); रोहिणीनक्षत्रं; दक्षकन्या-  
मात्रम्; 'बुद्धिलज्जा वपुः शान्तिः सिद्धिः कीर्तिस्त्रयो-  
दशी । पत्न्यै प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः'  
—इति मार्कण्डेये (५०।२१) । अदितिः; 'त्रयो-  
दशानां पत्नीनां या तु दाक्षायणी वरा । मारीचः  
कश्यपस्तस्यामादित्यान् समजीजनत्'—इति महा-  
भारते (१।७५।९) । कद्रुः; विनता; 'जग्मतुः

परया प्रीत्या परं पारं महोदधेः । कद्रुश्च विनता चैव  
दाक्षायणी विहायसः—इति महाभारते (१२२।५) ।  
दन्तीवृक्षः । १६

दाक्षायणीरमणः पुं. [ रमयतीति, रम्+ल्यु, दाक्षायणीनां  
रमणः ] दाक्षायणीपतिः; चन्द्रः । ४३

दण्डाजिनिकः त्रि. [ दण्डाजिनेन शाठ्येन दम्भेन वा  
अर्थानन्विच्छतीति । दण्डाजिन+‘अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां  
ठक्ठौ’ इति ठक् ] दम्भी; कुहकः; पाषण्डी । ३४९

दातम् त्रि. [ दीयते स्म इति । दाप् लवने+क्त ] छिन्नं;  
दैप् शोषने, कर्तरि क्त ] शुद्धम् । ५७७

दात्यूहः पुं.- स्त्री. [ दाप् लवने+क्तिन् । दाति  
मारणम् ऊहते इति । दाति+ऊह+अण् ] यद्वा दो  
अवखण्डने+ क्तिन्, दाति वहतीति । वह्+क+  
ऊह्, दित्यूहः । ततः स्वार्थे अण्, ततः ‘देविकाशिशपा-  
दित्यवाङ्दोर्घसत्रश्रेयसामात्’—इति आत्वम् ] पक्षि-  
विशेषः; कालकण्ठकः; अत्यूहः; दात्योहः; मासङ्गः;  
शितिकण्ठः; कचाटुरः; काकमद्गुः; ‘दात्यूहो मरुतश्च  
नाशनकरो वृष्योऽतिशुक्रप्रदः; श्रेष्ठः सर्वगुणः श्रमोपशमन-  
स्तुष्टिप्रदो वातहा’—इति हारीते । ‘प्रावृट्काले सुखी-  
भूत्वा को वा कुत्र न गच्छति । इति वदति दात्यूहः  
को वा को वा क्व वा क्व वा’—इत्युद्भटः । जलकाकः;  
चातकः; मेघः । २४९

दात्योहः पुं.- स्त्री. [ दित्यूह+स्वार्थे अण् । ‘देविका-  
शिशपे’त्यादिना आत्वम् ] दात्यूहः । २४९

दात्रम् क्ली. [ द्यति दाति वानेनेति । दो अवखण्डने,  
दाप् लवने वा+‘दाम्नीशसेति’ ष्ट्रन् । ‘दादिभ्य-  
श्छन्दसीति ञन् वा ] अस्त्रविशेषः; लवित्रं; खङ्गीकं;  
‘हेसिया’ इति भाषा । ‘सशूर्पपिटकाः सर्वे सदात्राङ्कुशतो  
मराः’—इति महाभारते (५।१५।७) । [ भावे ञन् ]  
दानम्; ‘तद् वा दात्रं महिकीर्तन्यम्’ इति ऋग्वेदे (१।  
११६।६) ‘तद्दात्रं दानं महि महदतिगम्भीरम्’ इति  
तद्भाष्ये सायणाचार्यः । दानकर्तरि त्रि. । ‘सोमस्य  
दात्रमसि’—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१०।६) । ५७७

दाधिकम् त्रि. [ दधि दध्ना वा संस्कृतम् । दध्ना चरति ।  
दधि+‘चरति’ इति ठक् । दध्ना उपसिक्तम्, ‘व्यञ्जनै-  
रुपसिक्ते’ इति ठक् वा ] दधिसंस्कृतवस्तु; औषध-  
विशेषे क्ली. । ‘बीजपूररसोपेतं सपिदैधि चतुर्गुणम् ।

साधितं दाधिकं नाम गुल्महृत् प्लीहशूलजित्’—इति  
सुश्रुते । ३२२

दानम् क्ली. [ दा दाने, दो अवखण्डने, दैप् शोषने,  
भावादौ ल्युट् ] गजमदः; ‘दानं ददत्यपि जलैः सहसाधि-  
रूढे को विद्यमानगतिरासितुमुत्सहेत’—इति भाष्ये  
(५।३७) । ‘दीयते इति दानं घनं गजमदश्च’ इति  
तट्टीकायां मल्लिनाथः । (४१९) देवब्राह्मणादिसम्प्र-  
दानकद्रव्यमोचनं; त्यागः; विहापितम्; उत्सर्जनं;  
विसर्जनं; विश्राणनं; वितरणं; स्पर्शनं; प्रतिपादनं;  
प्रादेशनं; निर्वपणम्; अपवर्जनम्; अंहतिः; दायः; प्रदानं;  
ददनं; विश्राणनं; दत्तिः; अंहती; उत्सर्गः; अति-  
सर्जनं; स्पर्शः; विसर्गः; क्षणनं; प्रादेशनम् । सम्प्रदान-  
स्वत्वापादकद्रव्यत्यागो दानम्; ‘अर्थानामुदिते पात्रे  
श्रद्धया प्रतिपादनम् । दानमित्यभिनिदिष्टं व्याख्यानं  
तस्य वक्ष्यते । ‘दाता प्रतिग्रहीता च श्रद्धादेयं च घर्म-  
युक् । देशकालौ च दानानामङ्गान्येतानि षड्विदुः ।  
मनसा पात्रमुद्दिश्य भूमौ तोयं विनिःक्षिपेत् । विद्यते  
सागरस्यान्तो दानस्यान्तो न विद्यते’—इति शुद्धि-  
तत्त्वम् । २१७

दानवः पुं. [ दनोरपत्यं, दनु+‘तस्यापत्यम्’ इति अण् ]  
असुरः; ‘नि मायिनो दानवस्य भाया अपादयत् पपिवान्त  
सुतस्य’—इति ऋग्वेदे (२।११।१०) । ‘चत्वारिंशद्दतोः  
पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत ! तेषां प्रथमजो राजा  
विप्रचित्तिर्महायशाः । शम्बरो नमुचिश्चैव पुलोमा  
चेति विश्रुतः । असिलोमा च केशी च दुर्जयश्चैव दानवः’  
—इति महाभारते (१।६५।२-२२) । ५

दानशीलः त्रि. [ दानं शीलं स्वभावो यस्य, यद्वा दानस्य  
शीलं सन्ततमनुष्ठानं यस्य ] दाता; वदान्यः; वदन्यः;  
दानशीलः; बहुप्रदः; ‘यत्फलं दानशीलस्य क्षमाशीलस्य  
यत्फलम् । यच्च मे फलमाधाने तेन संयुज्यतां भवान्’  
—इति महाभारते (५।१२२।५) । ३६६

दान्तः त्रि. [ दाम्यतीति, दम्+कर्तरि क्त ] तपःक्लेश-  
सहः; ‘क्लृप्तकेशनखश्मश्रुदान्तः शुभलाम्बरः शुचिः’  
—इति मनुः (४।३५) । दमितः; ‘तर्थादवतरीणां  
च दान्तानां वातरंहसाम्’—इति महाभारते (१।  
२२२।४६) । [ दन्तेन निर्वृत्तम् । दन्त+तेन निर्वृत्तम्  
इति अण् ] दन्तनिमित्तम्; ‘श्चिरेरासनेस्तीर्णां काञ्चनै-

दीरवैरपि । अश्मसारमयैर्दान्तैः स्वास्तीर्णैः सोत्तरच्छदैः  
—इति महाभारते (५।४६।५) । दाता; पुं. दमनक-  
वृक्षः; शिक्षितवृक्षः; विदर्भराजपुत्रविशेषः; 'तस्मै  
प्रसन्नो दमनः सभार्याय वरं ददौ । कन्यारत्नं कुमारंश्च  
श्रीनुदारान् महायशाः । दमयन्तीं दमं दान्तं दमनं  
च सुवर्चसम्'—इति महाभारते (३।५३।८-९) ।  
स्त्री. अप्सरोविशेषः; 'विद्युता प्रशमी दान्ता विद्योता  
रतिरेव च'—इति महाभारते (१३।१९।४५) । ३९९

दाम [ न् ] क्ली. —स्त्री. [ दीयते इति । दाब् दाने, दो  
अवखण्डने वा + 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन् ]  
यत्रैकस्मिन् बहुप्रग्रहयुक्ते अनेकगावो वध्यन्ते तत्;  
सन्दानं; रज्जुः; 'गोप्याददे त्वयि कृतागसि दाम  
तावन् या ते दशाश्रुकलिलाञ्जनसम्भ्रमाक्षम् । वक्रं  
निलीय भयभावनया स्थितस्य सा मां विमोहयति भीरपि  
यद्विभेति'—इति भागवते (१।१।३१) । माला;  
'क्षणमलवुविलम्बिपिच्छदाम्नः शिखरशिखाः शिखि-  
शेखरानमुप्य ।' दातरि त्रि. । 'यः शम्भस्तुविशम्म ते  
रायो दामा मतीनाम्' इति ऋग्वेदे (६।४।१२) ।  
'रायो धनस्य दामा दाता भवति'—इति तद्भाष्ये सायणा-  
चार्यः । २७७

दामनी स्त्री. [ दामैव, दामन् + स्वार्थे प्रज्ञादित्वात्  
अण्, 'अन्' इति प्रकृतिभावः, 'टिड्ढेति' डीप् ] पशु-  
वन्धनरज्जुः; पशुरज्जुः; 'कीलैरारोप्यमाणैश्च दामनी-  
पाशापाशितैः'—इति हरिवंशे (६।५।२४) । २७७

दाम्ना स्त्री. [ दामन् + 'डावुभाम्यामन्यतरस्याम्' इति  
पक्षे डाप् ] दाम; सन्दानं; पशुरज्जुः । २७७

दामोदरः पुं. [ दमादिसाधनेनोदारा उत्कृष्टामतिर्या,  
तया गम्यते प्राप्यते इति दामोदरः । 'दाम्ना दामोदरं  
विदुः' इति भगवद्वचनाद् यशोदया दाम्नोदरे बद्ध इति  
वा दामोदरः । 'दामानि लोकनामानि तानि यस्योदरा-  
न्तरे । तेन दामोदरो देवः श्रीधरस्तु रमाश्रितः ।' इति  
वा । इति विष्णुसहस्रनामभाष्ये शङ्करः (५३) ।  
'देवानां स्वप्रकाशत्वाद् दमाद्दामोदरो विभुः ।' ] विष्णुः;  
श्रीकृष्णः; 'दामोदरो भ्रातरमुग्रवीर्यं हलायुधं वाक्यमिदं  
वभाषे'—इति महाभारते (१।१९०।१९) । 'दाम्ना  
चैवोदरे बद्ध्या प्रत्यवन्वद्बुद्धखले । यदि शक्तोऽसि गच्छेति  
तमुवत्वा कर्म साकरोत्'—इति हरिवंशे (६३।१४) ।

'स च तेनैव नाम्ना तु कृष्णो वै दामवन्वनात् । गोष्ठे  
दामोदर इति गोपीभिः परिगीयते'—इति हरिवंशे  
(६३।२६) । शालग्राममूर्तिविशेषः; 'स्यूलो दामो-  
दरो ज्ञेयः सूक्ष्मचक्रो भवेत्तु सः । चक्रे तु मध्यदेशेऽस्य  
पूजितः सुखदः सदा'—इति पद्मपुराणे । भूताहर्द्विशेषः;  
कश्मीरस्य नृपविशेषः; 'गतिं प्रवीरसुलभां तस्मिन्  
सुक्षत्रिये गते । श्रीमान् दामोदरो नाम तत्पुत्रभृत  
क्षितिम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।६४) । २३  
दायः पुं. [ दीयते इति, दा दाने + घञ्, 'आतो युक्  
चिण्कृतोः' इति युक् ] यौतुकादिदेयधनम्; 'दायन्तु  
विविधं तस्मै शृणु मे गदतोऽनघ !' यज्ञार्यं राजभिदत्तं  
महान्तं धनसञ्चयम्'—इति महाभारते (२।५।११) ।  
विभक्तव्यपितृव्यम्. 'आरतो विभजन् दायं पित्र्यं  
पञ्चममेव वा'—इति मनुः (२।१।६४) । विभागाह-  
धनयात्रम्; 'संवत्सरं प्रतीक्षन् द्विपन्तीं योषितं पतिः ।  
ऊर्ध्वं संवत्सरात्त्वेनां दायं हृत्वा न संवसेत्'—इति मनुः  
(९।७७) । [ भावे घञ् ] दानम्; 'अस्वामिना कृतो  
यस्तु दायो विक्रय एव वा । अकृतः स तु विज्ञेयो व्यवहारे  
यथा स्थितिः'—इति मनुः (८।१९९) । कन्यादान-  
काले जामातृभ्यो व्रतभिक्षादौ ब्राह्मणादिभ्यश्च यद्द्रव्यं  
दीयते तत्; हरणं; सोल्लुण्ठभाषणं; स्थानं; [ दो  
छेदे + घञ् ] खण्डनं; लयः; [ ददातीति, दा + 'श्याहच-  
धेति' ण ] दातरि त्रि. । ८४४

दायादः पुं. [ आदत्ते इति । आ + दा + 'आतश्चोपसर्गे'  
इति क । दायस्य आदः ग्राहकः ] पुत्रः; 'पुरुषा तु  
कृतं वाक्यं मानितं च विशेषतः । कनीयान् मम दायोदो  
धृता येन जरा मम'—इति महाभारते (१।८।५।२) ।  
सपिण्डः; स्त्री. दायादी = कन्या । ८३६

दाराः पुं. [ दारयन्ति भ्रातृवन्वृत्तिः । दृ + 'दार-  
जारी कर्तरि णिल्लुक् च' इत्युक्त्या घञ् णिल्लुक् च ]  
भार्या; 'आपदयो धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि ।  
आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि'—इति महाभारते  
(१।१५९।२७) । बहुवचनान्तोऽयं शब्दः । ४९४

दारा स्त्री. [ दारयति ज्ञातिवन्वृत्तिः, दृ + णिच् +  
अच् + टाप् ] दाराः; भार्या; 'अप्येकामात्मनो दारां  
नृणां स्वत्वगृहो यतः'—इति भागवते (७।१४।११) ।  
४९४

दारुकः त्रि. [ दारयतीति, दृ+णिच्+ण्वुल् । [ दारयति नाशयति जनकस्य पितृणमिति । दृ+णिच्+ण्वुल् ] बालकः; 'शर्मिष्ठां मातरञ्चैव तथाचरुयुश्च दारुकाः'—इति महाभारते (११८३।१६) । पुत्रः; 'कश्यपे दारुका राजन् देवपुत्रोपमाः शुभाः । वचंसा रूपतश्चैव सदृशा मे भतास्तव'—इति महाभारते (११८३।१३) । दारुकः; ग्राम्यशूकरः; भेदकः त्रि. । 'अशेषदुर्नाम-करोगदारुकं करोति वृद्धं सहसैव दारुकम्'—इति वैद्यके । ५०३

दारुदः पुं. [ दरदे देशविशेषे भवः । दरद+अण् ] दरद-देशोद्भवविषभेदः; पारदः; हिङ्गुलं; समुद्रः । ६४६  
दारु क्ली.—पुं. [ दीर्यते इति, दृ+दृसनिजनीति' ब्रूण् ] काष्ठम्; 'शर्णं तैलं घृतं चैव जतु दारुणि चैव हि । तस्मिन् वेश्मनि सर्वाणि निक्षिपेयाः समन्ततः'—इति महाभारते (११४५।११) । क्ली. दृ+ब्रूण् ] देवदारु; पित्तलं; त्रि. शिल्पी; दारुकः; दाता । ३००, ३०३

दारुणः त्रि. [ दारयतीति, दृ+णिच्+कृवृदारिभ्य उन्नन्' इति उन्नन् ] भयहेतुः; 'हाहाकारो महानासीत् सम्प्रहारश्च दारुणः । उत्पपात ततः सिंहो नृपस्योपरि दारुणः'—इति देवीभागवते (५।४।२७) । कठोरः; 'दारुणं देहदमनं सर्वलोकभयङ्करम्'—इति देवीभागवते (१।४।५२) । पुं. चित्रकः; भयानकरसः; विष्णुः; 'सुघन्वा खण्ड-परशुर्दारुणो द्रविणप्रदः'—इति महाभारते (१३।१४।१। ७४) । ७०५

दारुहस्तकः पुं. [ हस्त इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृती' इति कन्, दारुणो हस्तकः ] काष्ठनिर्मितहस्तः; तद्वैः ३११

दार्वाघाटः पुं. [ दारु काष्ठम् आहन्तीति । आ+हन्+ 'दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम्' इत्युक्त्या अण् टश्चान्तादेशः ] सारसः; शतपत्रकपक्षी (७९५); 'दार्वा-घाटमुखश्चापि चासवकत्राश्च भारत !'—इति महा-भारते (१७।७।१८) । २४४

दार्वाघातः पुं. [ दारुणि आघातो यस्मात् ] दार्वाघाट-पक्षी । ७९५

दावः पुं. [ दुनोति उपतापयतीति । दु+ 'दुन्योरनुपसर्गे' इति ण ] वनवह्निः; 'उत्सृज्य दमयन्तीं तु नलो राजा दिशांपते ! ददर्श दावं दहन्तं महान्तं गहने वने'—इति

महाभारते (३।६६।१) । वनम् (७९९); 'इदमिन्द्रः सदा दावं स्नाण्डवंपरिरक्षति'—इति महाभारते (१।२२।६) । अग्निः; उपतापः । ७०

दाशार्हः पुं. [ दाश् दाने+भावे घञ । दाशं दानमर्हतीति । अर्ह+अच् ] विष्णुः; 'विजयो जयः सत्यसन्धो दाशार्हः सात्वतां पतिः'—इति महाभारते (१३।१४।१।६७) । दशार्हदेशजश्च । २२

दासः पुं. [ दसतीति, दसि+ 'दंसेष्टटनौ न आत्' इति ट, नकारस्य चाकारः । दास्यते दीयते भूमिमूल्यादिकं यस्मै सः ] भृत्यः; दासेरः; दासेयः; गोप्यकः; चेटकः; नियोज्यः; किङ्करः; प्रैष्यः; भुजिष्यः; परिचारकः; प्रेष्यः; प्रेषः; प्रेषः; परिकर्मा; परिचरः; सहायः; उपस्थाता; सेवकः; अभिसरः; अनुगः । घीवरः (५९४); शूद्रः; 'यो दासं वर्णमघरं गुहाकः'—इति ऋग्वेदे (२।१२।४) । ज्ञातात्मा; दानपात्रं; शूद्राणां नामान्तप्रयोज्यपद्धतिविशेषः; 'शमन्ति ब्राह्मणस्य स्याद वर्मान्तं क्षत्रियस्य च । गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इत्युद्वाहत्त्वम् । ३६५

दासी स्त्री. [ दासति ददात्यात्मानमिति । दास्+अच् । गौरादित्वाद् डीप् ] भुजिष्या; कर्मकरी; 'न गता च वधूस्तत्र प्रेष्या संप्रेषिता तथा । तस्यां च विदुरो जातो दास्यां घर्माशतः शुभः'—इति देवीभागवते (१।२०।७२) काकजड्या; नीलाम्लानः; नीलक्षिप्टी; पीतक्षिप्टी; वेदी; [ दास+डीप् ] शूद्रपत्नी; कैवर्तपत्नी; नदीभेदः; 'सुरसां तमसां दासीं सामान्यां वरणामसीम्'—इति महाभारते (६।१।३१) । ४९२

दासीसुतः पुं. [ दास्याः सुतः ] दासीपुत्रः; गोप्यः । ५०१  
दासेरकः पुं. [ दास+इक्, दासेर+स्वायं कन् ] उष्ट्रः; 'दासेरकः सपदि संवलितं निपादैर्विप्रं पुरा पतगराडिव निर्जंगार'—इति माघे (५।६६) । दासीसुतः (३६५); जातिभेदः; 'दशार्णकाः प्रयागाश्च दासेरकगर्णः सह'—इति महाभारते (६।४७।४६) । २८०

दिक् [ श् ] स्त्री. दिशति अवकाशं ददाति या । दिष्+ 'ऋत्विग्द्वृगिति' क्विन्प्रत्ययेन साधुः ] पूर्वपश्चिम-दक्षिणोत्तरादिरूपा; ककुर्; काष्ठा; आशा; हरित्; निदेशिनी; दिशाः गीः; आता; उपरा; आष्ठा; घोमः । 'कृत्वैवमर्वाधि तस्मादिदं पूर्वञ्च पश्चिमम् ।

इति देशो निदिश्येत यथा सा दिगिति स्मृता । सा दशधा, यथा—पूर्वा १, आग्नेयी २, दक्षिणा ३, नैऋती ४, पश्चिमा ५, वायवी ६, उत्तरा, ७, एशानी ८, ऊर्ध्वम् ९, अधः १० । १००

**दिग्पालः** पुं. [ दिशः पालयतीति । दिश्+पालि+अण् ] पूर्वादिदशदिगीशान्यतमः, यथा 'पूर्वस्यां दिशि इन्द्रः, अग्निकोणे वह्निः, दक्षिणस्यां दिशि यमः, नैऋतकोणे निर्ऋतिः, पश्चिमस्यां दिशि वरुणः, वायुकोणे मरुत्, उत्तरस्यां दिशि कुवेरः, ईशानकोणे ईशः, ऊर्ध्वदिशि ब्रह्मा, अधोदिशि अनन्तः ।' इति पुराणम् । यथा पद्मपुराणे—'यत्रार्चयन्ति विधिना दिक्पालादींस्तु कर्मिणः । तत्र प्रपूजयेदेनं विधिं भागवतं शुक्म् ।' १००

**दिग्गजः** पुं. [ दिशो गजः ] दिग्हस्ती । एते क्रमेण पूर्वाद्यष्टदिशां हस्तिनः; 'ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः । पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः'—इत्यमरः । १०४

**दिग्वासाः** [ स् ] पुं. [ दिगेव वासो वस्त्रं यस्य ] दिग्म्बरः; क्षपणः; श्रमणः । शिवः; 'गणकर्ता गणपतिदिग्वासाः काम एव च'—इति महाभारते (१३।१७।४१) । नग्ने त्रि. । 'स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुध्यति'—इति मनुः (१।१२०२) । ३४५

**दितिः** स्त्री. [ दो अवखण्डने+कर्तरि क्तिच्प्रत्ययः ] दैत्यमाता; सा दक्षकन्या, 'अदितिदितिर्दनुः काला दनायुः सिंहिका तथा'—इति महाभारते (१।६५।१२) । इयं कश्यपपत्नी च । [ दो+भावे क्तिच् ] खण्डनं; पुं. राजविशेषः; त्रि. दाता । 'राये च नः स्वपत्याय देव दिति च रास्वादितिमुर्ष्य'—इति ऋग्वेदे (४।२।११) 'दिति दातारं च रास्व देहि' इति तद्भाष्ये । ११९

**दिधिषुः** स्त्री. [ दिधि धैर्यं स्यतीति, षो+बाहुलकात् कु । यद्वा दिधिषूम् आत्मन इच्छतीति, 'सुप आत्मनः क्यच्', क्विप्, बाहुलकात् ह्रस्वः ] द्विरूढा स्त्री; पुं. द्विरूढापतिः; गर्भाधानकर्ता; 'हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूय'—इति ऋग्वेदे (१०।१८।८) । 'दिधिषोर्गर्भस्य निघातुः' इति तद्भाष्ये । 'ब्राह्मणो वीक्ष्य दिधिषुं पुरुषादेन भक्षितम् । शोचन्त्यात्मानमुर्वीशमशपत् कुपिता सती'—इति आगवते (१।१।२५) । त्रि. धारकः; 'अश्वासो न ये ज्येष्ठास

आशवो दिधिषवो न रथ्यः सुदानवः'—इति ऋग्वेदे (१०।७।८।५) । 'तथा दिधिषवो न वसूनां धारका इव' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ४८५

**दिधिषुः** स्त्री. [ दधाति पापं, यद्वा दिधि धैर्यम् इन्द्रिय-दौर्बल्यात् स्यति त्यजतीति । दा वा सो+अद्दुदुन्भूज-म्ब्वति' कू प्रत्ययेन साधुः ] द्विरूढा; वारद्वयविवाहिता स्त्री; दिधिषुः; पुनर्भूः; दिधिषुः; विवाहितायां कनिष्ठायां सत्याम् अविवाहिता ज्येष्ठा भगिनी; 'ज्येष्ठायां विद्यमानायां कन्यायामुह्यतेऽनुजा । सा चाग्रे दिधिषुर्ज्ञेया पूर्वा च दिधिषुः स्मृताः'—इत्युद्वाहृतत्वे । त्रि. धारकः; 'दधन्नृतं घनयन्नस्य धीतिमादिदय्यो दिधिषवो विभृत्राः'—इति ऋग्वेदे (१।७।१३) । [ 'दिधिषुः' इति दीर्घ-मध्योऽपि ] । ४८५

**दिनम्** क्ली. [ द्यति खण्डयति महाकालमिति । दो अव-खण्डने+बहुलमन्यत्रापि' इति इनच् ] कालविशेषः; घ्नः; अहः; दिवसः; वासरः; भास्वरः; दिवा; वारः; अंशकः; धुः; अंशकम्; 'दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम्'—रघुवंशे (३।८) । तत्तु मनुष्याणां पष्टिदण्डात्मकम् । पितृणां गौण-चान्द्रमासात्मकम् । देवासुराणां वत्सरात्मकम् । ब्रह्मणो द्विव्यद्विसहस्रयुगात्मकम् । मनुष्यमानेन ब्रह्मणो दिनस्य संख्या ८,६४०,०००,००० । सूर्यकिरणावच्छिन्नकालः; वस्तीः; धुः; भानुः; वासरः; स्वसराणि; घ्नसः; घर्मः; घृणः; दिवेदिवे; द्यविद्यवि; सिंहकन्यातुला-वृश्चिककुम्भमीनलग्नानि; 'अजगोपतियुग्मश्च कर्कि-घन्विमृगास्तथा । निशासंज्ञाः स्मृताश्चैते शोषाश्चान्ये दिनात्मकाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । १०६

**दिनकरः** पुं. [ करोतीति, कृ+अच् । दिनस्य करः ] सूर्यः; 'दिनकरपरितापात् क्षीणतोयाः समन्तात्, विदधति भयमुच्चैर्वीक्षमाणा वनान्ताः'—इति ऋतुसंहारे (१।२२) । १५

**दिनकरात्मजा** स्त्री. [ दिनकरस्य सूर्यस्य आत्मजा कन्या ] यमुना । ६७५

**दिनप्रणीः** पुं. [ दिनं प्रणयतीति । प्र+नी+क्विप् ] सूर्यः; अर्कवृक्षः सूर्यपर्यायत्वात् । ३५

**दिग्मणिः** पुं. [ दिनस्य मणिरिव ] सूर्यः; 'दिग्मणि-मण्डलमण्डन ! अबसण्डन ! मुनिजनमानसहंस !

जय जयदेव हरे !—इति गीतगोविन्दे (११८) ।

अर्कवृक्षः; सूर्यपर्यायित्वात् । ३५

दिवसः पुं.—कली. [ दीव्यन्त्यत्रेति । दिव्+‘दिवः कित्’  
इति असच् स च कित् ] दिनम् । ‘द्राघयता दिवसानि  
त्वदीयविरहेण तीव्रतापेन । प्रीष्मेणैव नलिन्या जीवन-  
मत्पीकृतं तस्याः’—इति आर्यासप्तशत्याम् (२७८) ।

१०६

दिवसमुखम् कली. [ दिवसस्य दिनस्य मुखम् ] प्रभातं;  
प्रातः । १०६

दिवस्पतिः पुं. [ दिवः पतिः । अलुकुसमासः ] इन्द्रः;  
‘इन्द्रागोमानयिष्यामो यथेच्छसि दिवस्पते !’—इति  
महाभारते (५१२१९) । ५४

दिवा अव्य. [ दीव्यन्त्यत्र, बाहुलकात् काप्रत्ययः ]  
दिनम्; ‘क्षणं लवा मुहूर्ताश्च दिवा रात्रिस्तथैव च’—  
इति महाभारते (२११३४) । १०६

दिवा [न्] पुं. [ दीव्यत्यस्मिन्निति । दिव्+‘कनिन्’  
युवृषीति’ सूत्रे बहुलवचनात् केवलादपि कनिन् ] दिनम् ।  
१०६

दिवाकीर्तिः पुं. [ दिवा दिवसे एव कीर्तियस्य, रात्रौ  
क्षौरकर्मनिषेधात् ] नापितः; चण्डालः (८१४) ।  
‘रात्रौ न विचरेयुस्ते प्रामेषु नगरेषु च । दिवा चरेयुः  
कार्यार्थं चिह्निता राजशासनैः’—इति मनुः (१०१५४) ।  
‘दिवाकीर्तिमुदक्यां च पतितं सूतिकां तथा । शवन्तत्-  
स्पृष्टिनं चैव स्पृष्ट्वा स्नानेन शुष्यति’—इति मनुः  
(५१८५) । ‘दीक्षितो वा दिवाकीर्तिः पण्डितो वाप्य-  
पण्डितः । तुल्यो मे मोक्षदीक्षायां सम्प्राप्य मणिकण्ठि-  
काम्’—इति काशीखण्डे (७९१८७) । उलूकः । ५८९

दिवावसानम् कली. [ दिवा दिनस्य अवसानम् अन्तः ]  
दिनान्तः; सायम् । १०९

दिव्यम् त्रि. [ दिवि भवम्; यत् ] दिवि भवं; स्वर्ग्यम्  
‘दिव्यमालाम्बरधरा स्नाता भूपण भूषिता । पश्यतां  
सर्वदेवानां यथी वक्षःस्यलं हरेः’—इति विष्णुपुराणे  
(११११०४) । मनोज्ञः; पुं. [ दिवे वने भवः; दिव्+  
यत् ] यवः; गुग्गुलुः; भावविशेषः; ‘श्रुणु भावत्रयं  
देवि ! दिव्यवीरपशुकृमात् । दिव्यस्तु देववत् प्रायो  
वीरश्चोद्धतमानसः । सत्यत्रेताद्वर्षयन्तं दिव्यभाव-  
विनिर्णयः । त्रेताद्वापरपर्यन्तं वीरभाव इतीरितम् ।

मद्यं मत्स्यं तथा मांसं मुद्रां मय्युनमेव च । इमशानसाधनं  
भद्रे ! चितासाधनमेव च । एतत्ते कथितं सर्वं दिव्य-  
वीरमतं प्रिये ! दिव्यवीरमतं नास्ति कलिकाले  
सुलोचने’—इति कालीविलासतन्त्रे । नायकभेदः;  
सात्वतस्य पुत्राणामन्यतमः; ‘भजमानो भजिदिव्यो  
वृष्टिदवावृषोऽन्धकः । सात्वतस्य सुताः सप्त महा-  
भोजश्च मारिष !’—इति भागवते (१२४१६) ।  
कलीः लवङ्गं; हरिचन्दनं; शपयः; गङ्गाजलादिस्पर्श-  
पूर्वकशपयस्तत्र मिथ्या कथने दोषश्च । ८४०

दिष्टः पुं. [ दिशतीति, दिश्+संज्ञायां क्त ] कालः;  
वैवस्वतमनोः पुत्रविशेषः; ‘नरिष्यन्तोऽय नाभागः सप्तमं  
दिष्ट उच्यते’—इति भागवते (८१३१२) । दारु-  
हरिद्रा; कली. [ दिशति इष्टानिष्टफलं ददातीति ।  
दिश्+‘क्तिच्क्ती च संज्ञायाम्’ इति क्त ] भाग्यम्;  
‘ततस्ते निघनं प्राप्ताः सर्वे समुतवान्धवाः । न दिष्ट-  
मत्यतिक्रान्तुं शक्यं बुद्ध्या बलेन वा’—इति महाभारते  
(१४१५३१६) । [ दिश्+कर्मणि क्त ] त्रि. उपदिष्टः;  
कथितः; ‘गाधेयदिष्टं विरसं रसन्तं, रामोऽपि मायाचन-  
मस्त्रचञ्चुः’—इति भट्टिः (२१३२) । १०५

दिष्टान्तः पुं. [ दिष्टस्य भाग्यस्य अन्तो यत्र ] मरणम्;  
‘मोक्षयित्वा तु भुजगान् सर्पसत्राद् द्विजोत्तमः । जगाम  
काले धर्मात्मा दिष्टान्तं पुत्रपौत्रवान्’—इति महाभारते  
(१५८१७) । ६२८

दिष्ट्या अव्य. [ दिशतीति, सम्पदादित्वाद् भावे क्विप् ।  
दिशं देशनं स्त्यायति । स्त्यै+क्विप्, ष्टुत्वम् । संज्ञा-  
पूर्वकत्वात् जश्त्वं न । यद्वा दिशतीति, दिश्+‘अध्या-  
दिभ्यश्चेति’ यक् प्रत्ययेन साधुः ] आनन्दः; भाग्येन;  
‘दिष्ट्याम्ब ! ते कुक्षिगतः परः पुमान्’—इति भाग-  
वतम् । ८७२

दीक्षितः त्रि. [ दीक्ष्+कर्त्तरि क्त । यद्वा दीक्षा सञ्जाता  
अस्येति, इत्च् ] सोमपानविशिष्टयागकर्ता; गृहमुखाद्  
गृहीतमन्त्रः; ‘अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः  
क्रियाः । न भवन्ति प्रिये ! तेषां शिलायामुप्तवीजवत् ।  
देवि ! दीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिः । तस्मात्  
सर्वप्रयत्नेन गुरुणा दीक्षितो भवेत् । अदीक्षितोऽपि  
मरणे रीरवं नरकं व्रजेत्’—इति तन्त्रसारः । ४२०

दीर्घिकः पुं.—कली. [ दीव्यन्त्यनेनेति । दिव्+‘दिवो



द्वे दीर्घंश्चाभ्यासस्य' इति क्विन् अभ्यासस्य दीर्घश्च ]  
अन्नम् [ दीव्यतीति, क्विन् ] पुं. बृहस्पतिः; स्वर्गः;  
भक्ष्ये त्रि. । उदितः; पुनःपुनर्द्योतकः; 'राजन्तमध्वराणां  
गोपामृतस्य दीदिविम्'—इति ऋग्वेदे (१।१।८) ।  
'दीदिवि पीनःपुन्येन भृशं वा द्योतकम्'—इति तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । ३१९

दीर्घितिः स्त्री. [ दीधीते दीप्यते इति । दीधी+संज्ञायां  
क्तिच्, इट्, 'यीवर्णयोर्दीधीवेव्योः' इति अन्त्यस्य लोपः ]  
किरणः; 'पुपोष वृद्धि हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव  
बालचन्द्रमाः'—इति रघुवंशे (३।२२) । ३८

दीप्तिः स्त्री. [ दीप्+भावे क्तिन् ] किरणः । ३८

दीप्तिः स्त्री. [ दीप्+क्तिन् ] दीपनं; प्रभा; रुक्;  
रुचिः; त्विट्; भा; भाः; छविः; द्युतिः; रोचिः;  
शोचिः; बाणवेगस्य तीव्रता (४७०); स्त्रीणा-  
मयत्नजगुणाः; 'कान्तिरेव वयोभोगदेशकालगुणादिभिः ।  
उदीपितातिविस्तारं प्राप्ता चेद्दीप्तिरुच्यते'—इत्युज्ज्वल-  
नीलमणिः । 'कान्तिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभि-  
धीयते'—इति साहित्यदर्पणे (३।१३१) । लाक्षा;  
कांस्यम् । ६३

दीर्घम् त्रि. [ दृणातीति, दू विदारणे+बाहुलकाद् घञ् ]  
आयतम्; 'दीर्घोच्छ्वासं समधिकतरच्छ्वासिना दूरवर्ती,  
सङ्कल्पेस्ते विशति विधिना वैरिणा रुद्धमार्गः'—इति  
मेघदूते (१०३) । पुं. लताशालवृक्षः; 'ताक्ष्योऽश्व-  
कर्णः कुशिको बल्यो दीर्घो लताद्रुमः'—इति वैद्यकरत्न-  
मालायाम् । इत्कटः; रामशरः; उष्ट्रः; पञ्चम-  
पष्ठसप्तमाष्टमराशयः, यथा—'वृश्चिककन्यामृगपति-  
वणिजो दीर्घाः'—इति ज्योतिषतत्त्वम् । द्विमात्रवर्णः;  
यथा—आ, ई, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ । गुरुवर्णः । ७५१

दीर्घकालः पुं. —चिराय; चिररात्राय । ८७३

दीर्घवृष्टिः पुं. [ दीर्घा दृष्टिर्दर्शनं यस्य ] दीर्घदर्शी; दूर-  
दर्शी । ३७६

दीर्घनिद्रा स्त्री. [ दीर्घा निद्रेति नित्यकर्मधारयः ] मृत्युः;  
महानिद्रा । 'सोऽथ मत्कार्मुकाक्षेपविदीपितविगन्तरैः ।  
शरैर्विभ्रसत्सर्वोद्भो दीर्घनिद्रां प्रवेक्ष्यति'—इति मार्कण्डेये  
(७।१३) । ६२८

दीर्घपृष्ठः पुं. [ दीर्घम् आयतं पृष्ठं यस्य ] सर्पः । ६४१

दीर्घसूत्रः त्रि. [ दीर्घेण बहुकालेन सूत्रं कार्यारम्भो यस्य ]

चिरक्रियः; 'अदीर्घसूत्रश्च भवेत् सर्वकर्मसु पाथिवः ।  
दीर्घसूत्रस्य नृपतेः कर्महानिर्धुवं भवेत् । रागे द्वेषे च  
कामे च द्रोहे पापे च कर्मणि । अप्रिये चैव कर्तव्ये दीर्घ-  
सूत्रश्च शस्यते'—इति मत्स्यपुराणम् । आयततन्तुकम्;  
'भेखलागुणविलग्नमसूयां दीर्घसूत्रमकरोत् परिधानम्'—  
इति माघे (१०।६१) । क्ली. विस्तृते तन्तौ । ३८३

दीर्घसूत्री [ न् ] त्रि. [ दीर्घसूत्रं बहुकालं व्याप्य कर्मारम्भो-  
ऽस्त्यस्येति । दीर्घसूत्र+इनि ] दीर्घसूत्रः; 'विपादी  
दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते'—इति भगवद्गीता-  
याम् (१८।२८) । ३८३

दीर्घिका स्त्री. [ दीर्घेव । दीर्घा+संज्ञायां कन् । टापि  
अत इत्वम् ] त्रिशतधनुःपरिमितजलाशयः; वापी;  
'वनैरिदानीं महिषैस्तदम्भः शृङ्गाहतं क्रोशति दीर्घिका-  
णाम्'—इति रघुवंशे (१६।१३) । हिङ्गुपत्री । ६७६

दुःखम् क्ली. [ दुर् दुष्टं खनतीति । खन्+ङ । यद्वा  
दुःखयतीति । दुःख+पचाद्यच् ] पीडा; बाधा; व्यथा;  
अमानस्यं; प्रसूतिजं; कष्टं; कृच्छ्रम्; आभीलम्;  
अर्तिः; आर्तिः; पीडनम्; आवाधा; बाधनम्;  
आमनस्यम्; आमानस्यं; विवाधनं; पीडितं; विहे-  
ठनम्; 'सुखं दुःखं च हर्षं च शोकं मङ्गलमालयम् ।  
मया दत्तं च तत्त्वं च योगिनामपि दुर्लभम्'—इति  
ब्रह्मवैवर्ते । संसारः; रोगः; 'भेकाभः पीडयते दुःखैः  
शोणितश्रयसम्भवैः'—इति भावप्रकाशः; 'दुःखैः रोगैः'  
इति तट्टीका । दुःखदानि यथा—'पारतश्च्यम्, आधिः,  
व्याधिः, मानच्युतिः, शत्रुः, कुभार्या, नैःस्वम्, कुग्रामवासः,  
कुस्वामिसेवनम्, बहुकन्याः, वृद्धत्वम्, परगृहवासः, वर्षा-  
प्रवासः, भार्याद्वयम्, कुभृत्यः, दुर्हलकरणकृपिः'—इति  
कविकल्पलता । तद्विशिष्टे त्रि., 'सुसुखा न च दुःखा  
सा न शीता न च धर्मदा'—इति हरिवंशे (२२९।४९) ।  
६२६

दुःखभावनम् क्ली. [ दुःखस्य भावनम् अनुभावकम् ]  
शोकः । ८७५

दुःस्यः त्रि. [ दुर्दुःखेन दुष्टं वा तिष्ठतीति । स्था+क ]  
मूर्खः; दुर्गतः; लुब्धः; दुःखेन तिष्ठति यः; 'त्वा-  
दुःस्यमूनपदमात्मनि पौरुषेण, सम्पादयन् यदुपु रम्यम-  
त्रिभ्रदङ्गम्'—इति भगवते (१।१६।३४) । ३४८

दुःस्फोटः पुं. [ दुर्दुष्टं स्फोटयतीति । स्फोटि+अच् ]

शस्त्रभेदः । ४७६

दुकूलम् क्ली. [ दुष्टं कूलात् आवृणोतीति । कूल् + 'इगु-  
पघज्ञाप्रोक्तिः कः' इति क । पृषोदरादित्वात् साधुः ।  
यद्वा दु + 'खजिपिञ्जादिभ्य उरोलचौ' इति ऊलच् ।  
घातोः कुक् च ] क्षौमवस्त्रम् ; 'दुकूलवासाः स वधू-  
समीपं निन्ये विनीतैरवरोवरक्षैः'—इति रघुवंशे  
(७।१९) । सूक्ष्मवस्त्रम् । ५४९

दुकूलम् क्ली. [ दुकूल + पृषोदरादित्वात् कस्य गः ] दुकूलं ;  
पट्टवस्त्रम् । ५४९

दुग्धम् क्ली. [ दुह्यते स्मेति, दुह् + कर्मणि क्त ] स्त्रीजाति-  
स्तननिःसृतद्रव्यविशेषः ; क्षीरं ; पीयूषम् ; ऊषस्यं ;  
स्तन्यं ; पयः ; अमृतं ; बालजीवनम् ; कत्तृणम् ; 'कत्तृणं  
ध्यामकं दुग्धम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । त्रि.  
प्रपूरितः ; कृतदोहः ; 'तेनेयं गोमंहराज ! दुग्धा  
सस्यानि भारत !' [ दुह् + भावे क्त ] दोहने क्ली. ।  
२७४

दुग्धिका स्त्री. [ दुग्धं निर्यासो बहुलतया विद्यते यस्याः ।  
दुग्ध + ठन् + टाप् ] वृक्षविशेषः ; स्वादुपर्णी ; क्षीरावी ;  
क्षीरिणी ; दुग्धी ; क्षीरी ; क्षीरात्मिका ; वृक्षभेदः ;  
उत्तमा ; युग्मफला ; उत्तमफलिनी ; गन्धिका । २०९

दुग्धुभः पुं. [ द्रोडति मज्जतीति, द्रुड् मज्जने + 'उभः  
क्ति कुकिद्रुडिभ्यां कन्णुनी रलोपश्च' इति उभ,  
णुन् रलोपश्च ] दुग्धुभसर्पः । 'शरमीनां महारोद्रां  
प्रासशक्त्युग्रदुग्धुभाम् । शोणितीधवहां घोरां द्रोणिः  
प्रावर्तयन्नदीम्'—इति महाभारते (६।१५४।१७०) ।  
६४३

दुन्दुभः पुं. [ दुन्द इत्यव्यक्तशब्देन मणति शब्दायते इति ।  
मण् शब्दे + ड ] दुन्दुभिः । ९८

दुन्दुभिः पुं. [ दुन्दु इत्यव्यक्तशब्देन भातीति । दुन्दु +  
भा + ञाहलकात् कि ] बृहद्वक्त्रा ; भेरी ; आनकः ;  
'आकाशे दुन्दुभानां च बभूव तुमुलः स्वतः'—इति  
महाभारते (१।१२३।४६) । वरुणः ; दैत्यभेदः ; दानव-  
विशेषः ; 'अभवन् दनुपुत्राश्च शतं तीव्रपराक्रमाः ।  
शङ्कुकर्णो विदारश्च गवेष्ठो दुन्दुभिस्तथा'—इति  
हरिवंशे (३।८१) । रक्षोभेदः ; वाद्यभेदः ; विषम् ।  
कुङ्कुर्वशोयस्य अन्वकस्य पुत्रः ; 'अन्वकाद् दुन्दुभिस्त-  
स्मादविद्योतः पुनर्वसुः'—इति भागवते (१।२।४।२०) ।

श्रीञ्चद्वीपाधिपतेद्युतिमतः पुत्रापामन्यतमः ; श्रीञ्च-  
द्वीपस्य देशभेदः ; 'मुनिश्च दुन्दुभिश्चैव सुता द्युतिमतस्तु  
वै । तेषां च नामभिर्देशाः श्रीञ्चद्वीपाश्रयाः स्मृताः'—  
इति ब्रह्माण्डे ३६ अध्याये । 'मुनेस्तु वै मुनिदेशो  
दुन्दुभेर्दुन्दुभिः स्मृतः ।' पर्वतविशेषः ; 'स एव दुन्दुभिर्नाम  
श्यामपर्वतसन्निभः । शब्दमृत्युः पुरा तस्मिन् दुन्दुभि-  
स्ताडितः सुरैः'—इति मत्स्यपुराणे (१२।१।१३) ।  
असुरविशेषः ; 'मायावी नाम तेजस्वी पूर्वजो दुन्दुभेः  
सुतः । तेन तस्य महद्द्वैरं बलिनः स्त्रीकृतं पुरा'—इति  
रामायणे (४।१।४) । स्त्री. अक्षः ; पाशकः ; अक्ष-  
विन्दुत्रिकद्वयम् ; विन्दुन्वितचतुष्पाश्वस्वर्णशृङ्गादि-  
मयद्युतोपकरणम् । ९८

दुराचारः पुं. [ आचर्यते इति, भावे घञ् । दुर्दुष्टः आचारः  
इति प्रादिसमासः ] विरुद्धाचरणम् ; 'प्राप्ते कलियुगे  
घोरे नराः पुण्यविर्जिताः । दुराचाररताः सर्वे सत्य-  
वार्तापिराड्मुखाः'—इति अव्यात्मरामायणे । त्रि.  
[ दुष्ट आचारो यस्य ] निन्दिताचारवान् ; 'महापातक-  
युक्तस्त्वं दुराचारोऽतिगर्हितः'—इति देवीभागवते  
(१।१।१।१६) । ४०४

दुरितम् क्ली. [ इण् + भावे क्त । दुष्टमितं गमनं नरकादि-  
दुर्गतिप्राप्तियस्मात् ] पापम् ; 'दुरितैरपि कर्तुमात्मसात्  
प्रयतन्ते नृपसूनवो हि यत्'—इति रघुवंशे (८।२) ।  
तद्वति त्रि. । ६२७

दुरोवरम् क्ली. [ दुर्दुष्टमासमन्तादुदरं यस्य । दुष्टमुदरमस्य  
वा । पृषोदरादित्वात् साधुः ] द्यूतभेदः ; पाशकश्रीढा ;  
'व्यर्थं किं तनुषे दुरोदरमिदं न स्वापतेयं तव'—इति  
वक्रोक्तिपञ्चाशिका (२६) । पुं. द्यूतकृत् ; 'दुरोदरा  
विहिता ये तु तत्र महात्मना घृतराष्ट्रेण राज्ञां'—इति  
महाभारते (२।५६।९) । पणः । ३८८

दुर्गंतः त्रि. [ दुर् दुरवस्थां गच्छति स्मेति । दुर् + गम् +  
'गत्यर्थो कर्मकश्चिद्वेति' कर्तरि क्त ] द्रिष्टः ; 'दुर्गंतगृहिणी  
तनये करुणाद्रां प्रियतमे च रागमयी । मुग्धा रताभियोगं  
न मन्यते न प्रतिक्षिपति'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(२९६) । ३४८

दुर्गतिः स्त्री. [ दुष्टा क्लेशदायिनी गतिः ] नरकः ; 'कृत्वा  
यज्ञं विधानेन दत्त्वा पुण्यं मर्त्याजितम् । समुद्रमहाराज !  
पितरं दुर्गतिं गतम्'—इति देवीभागवते (३।१२।६८) ।

वास्त्रिधमम्; 'कथं भवान् दुर्गतिमीदृशीं गतो नरेन्द्र तद्दृष्ट्वि किमेतदीदृशम्'—इति महाभारते (१३।७०।८)

६२५

दुर्गवार्गः पुं. [ दुर्ःखेन गम्यते इति दुर्गः, दुर्गमः । स चासौ मार्गः ] कान्तारम् । ८१६

दुर्गा स्त्री. [ दुर्ःखेन गम्यते प्राप्यतेऽसौ । गम्+अन्य-

भापि दृश्यते' इति ङ । दुर्ःखेन गम्यतेऽस्यामिति वा । दुर्+गम्+सुदुरोरधिकरणे' इत्युक्त्या ङ+टाप् ]

हिमालयकन्या; उमा; कात्यायनी; गौरी; काली;

हैमवती; ईश्वरी; शिवा; भवती; रुद्राणी; धर्वाणी;

शर्कमङ्गला; अपर्णा; पार्वती; मृडानी; चण्डिका;

अम्बिका; नीली; अपराजिता; श्यामापक्षी; नववर्षा-

कुमारी; 'नववर्षा भवे दुर्गा सुभद्रा दशवर्षिकी'—

इति देवीभागवते (३।२६।४३) । अस्याः पूजा फल-

माह—'दुःखदारिद्र्यनाशाय संग्रामे विजयाय च ।

ऋशत्रुविनाशार्थं तयोप्रकर्मसाधने । दुर्गां च पूजयेद्भक्त्या

परलोकसुखाय च'—इति देवीभागवते (३।२६।५०) ।

अस्याः पूजामन्त्रः—'दुर्गात् प्रायति भक्तं या सदा

दुर्गातिनाशिनी । दुर्गेया सर्वदेवानां तां दुर्गां पूजयाम्यहम्'—

इति देवीभागवते (३।२६।५०) । १६

दुर्जनः त्रि. [ दुर्दुष्टो जनः । 'कुगतिप्रादयः' इति समासः ]

खलः 'दुर्जनः प्रियवादी च नैतद्विश्वासकारणम् । मधु

तिष्ठति जिह्वाग्रे हृदये तु हलाहलम् ।' 'दुर्जनः परि-

हर्तव्यो विद्ययालङ्कृतोऽपि सः । मणिना भूषितः सर्पः

किमसौ न भयङ्करः'—इति चाणक्यशतके (२।४।२५) ।

३४६

दुर्बिनम् क्ली. [ दुर्दुष्टं दिनम् ] मेघाच्छन्नदिनम्; 'तुमुलं

बुद्धिं चासीत् सविद्यस्तनयित्नुमत् । तद्दुर्दिनतलं

मिन्त्वा नारदः प्रत्यदृश्यत'—इति हरिवंशे (१६।७।१८) ।

घनान्वकारः; 'यत्रोषधिप्रकाशेन नक्तं दशितसञ्चराः ।

अनभिशास्तमिस्राणां दुर्दिनेष्वभिसारिकाः'—इति कुमारे

(६।४३) । वृष्टिः; 'घनान्वकारे वृष्टौ च दुर्दिनं

कवयो विदुः ।' 'द्विषां त्रिषह्यः काकुत्स्थस्तत्र नाराच-

दुर्दिनम् । सन्मङ्गलस्नात इव प्रतिपेदे जयश्रियम्'—

इति रघुवंशे (४।४१) । कुत्सितदिनम्; 'सुदिनं दुर्दिनं

चैव सर्वं कर्मोद्भवे भवेत् । तत्कर्म तपसा साध्यं कर्मणा

च शुभाशुभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । 'यदध्युतकथा-

लापरसपीयूषवर्जितम् । तद्दिनं दुर्दिनं मन्ये मेघाच्छन्नं

न दुर्दिनम्'—इत्युद्घटः । [ दुर्दिनं वर्षः घनान्वकारो वा

अस्त्यस्येति । अच् ] वर्षयुक्ते घनान्वकारविशिष्टे

च त्रि., यथा हरिवंशे (६।७।६६) । 'सम्प्राप्ते दुर्दिने

काले दुर्दिनं भाति वै नभः ।' 'जीमूतेश्च दिशः सर्वाश्चक्रे

तिमिरदुर्दिनाः'—इति महाभारते (८।१९।२३) । ५९

दुर्मुखः त्रि. [ दुर्दुःखजनकं मुखं मुखनिःसृतवचनादिकं

यस्य ] अप्रियवादी; मुखरः; अवद्धमुखः । अप्रिय-

दर्शनम्; 'चक्रे वसन्तकस्यापि रूपं दन्तुरदुर्मुखम्'—

इति कथासरित्सागरे (१२।५२) । पुं. [ दुर्निन्दितं

मुखं यस्य ] वानरविशेषः; 'अयुतेन वृत्तश्चैव सहस्रेण

शतेन च । ततो यूथपतिर्वीरो दुर्मुखो नाम वानरः'—

इति रामायणे (४।३९।३३) । नागभेदः; 'कुहरः

पुष्पदंष्ट्रश्च दुर्मुखः सुमुखस्तथा'—इति हरिवंशे (३।११४)

अश्वः; सर्पः; महिषासुरसेनापतिविशेषः; 'दुर्द्धरं

दुर्मुखं चोभौ शरैर्नित्ये यमक्षयम्'—इति मार्कण्डेये

(८।३।१९) । नृपविशेषः; 'संग्रामजिद्दुर्मुखश्च उग्रसेनश्च

वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।४।२१) । घृतराष्ट्रस्य

पुत्रविशेषः; दुर्मुखो दुर्मुखश्च दुष्कर्णः कर्ण एव च'—

इति महाभारते (१।११।७।३) । राक्षसविशेषः; 'रक्षः-

पतिस्तदवलोक्य निकुम्भकुम्भधूम्राक्षदुर्मुखसुरान्तनरा-

न्तकादीन्'—इति भागवते (९।१०।१८) । यक्ष-

विशेषः; गणपतेर्गणानामन्यतमः; 'षट्कोणास्त्रिषु षट्सु

षट्गजमुखाः पाशाङ्कुशाभीरवान् बिभ्राणाः प्रमदा-

सखाः पृथुमहाशोणाशममुञ्जत्विवः । आमोदः पुरतः

प्रमोदसुमुखौ तं चाभितो दुर्मुखः, पश्चात्पार्श्वगतोऽस्य

विघ्न इति यो यो विघ्नकर्तेति च'—इति महागणपति-

स्तोत्रे । वर्षविशेषः; 'तुषवान्यक्षयो देवि ! सर्वसस्य-

महार्घता । व्यवहाराश्च नश्यन्ति दुर्मुखे दुर्मुखाः प्रजाः'—

इति भविष्यपुराणे । ३७७

दुर्बिषः त्रि. [ दुर्दुष्टा विषा यस्य ] दरिद्रः; खलः; मूर्खः;

'शास्त्रेष्वन्येषु मुख्येषु विद्यमानेषु दुर्बिषाः । बुद्धि-

मान्त्वोक्षिकीं प्राप्य निरर्थान् प्रवदन्ति ते'—इति रामायणे

(२।१०।९।३०) । ३४८

दुर्बिनीतः पुं. [ वि+नी+भावे क्त । दुर्दुष्टं विनीतं विनयो

यस्य । यद्वा दुर्+वि+नी+क्त ] अविनीताश्वः; शूकलः;

अविनीतमात्रे त्रि । 'कुपुत्रोऽपि भवेत्पुसां हृदयानन्द-

कारकः । दुर्विनीतः कुरूपोऽपि मूर्खोऽपि व्यसनी खलः—  
इति पञ्चतन्त्रे (५।१७) । ४४०

बुविनदः पुं. — रागिणीभेदः । १०६ अ  
दुलिः स्त्री. [ दौलतीति, दुल्+इगुपघात् कित् ] इति इन् ]  
कमठी; कच्छपी; पुं. मुनिविशेषः । ६४६  
दुली स्त्री. [ दुल्+इन् वा डीष् ] दुलिः; कमठी; कूर्मी;  
कच्छपी । ६४६

दुश्चर्मा [ न् ] पुं. [ दुष्टं चर्म यस्य ] अप्रावृतभेदः;  
द्विगनकः; चण्डः; शिपिविष्टः । यथा 'दुश्चर्मा गुं-  
त्स्पागः—इति स्मृतिः । चर्मरोगः । ८१७

दुश्चयवनः पुं. [ दुर्दुःखेन चयवनं बहुकालानन्तरं पतनं यस्य ।  
दुर्दुष्टश्चयवनः शिवो यस्य । शिवेन अभिभूतत्वात्  
तथात्वम् । यद्वा दुःसहः चयवनो मुनिः यस्य ] इन्द्रः ।  
अविचाल्ये त्रिः । 'युक्ताकारेण दुश्चयवनेनघृष्णुना' इति  
ऋग्वेदे (१०।१०३।२) । ५२

दुष्कृतम् क्ली. [ दुष्टं कृतम् ] पापम्; 'गृहादर्या निवर्तन्ते  
श्मशानादपि बान्धवः । सुकृतं दुष्कृतं लोके गच्छन्त-  
मनुगच्छति । तस्माद्विद्वत् समासाद्य देवाद्वा पौरुषादय ।  
दद्यात् सम्पत् द्विजातिभ्यः कौर्तनानि च कारयेत्—  
इति बह्विपुराणे । ६२७

दुष्कृतिः स्त्री. [ दुष्टा कृतिः । प्रादिसमासः ] दुष्कर्म;  
पापं; दुष्कृतम् । ६२७

दुष्टगजः पुं. [ दुष्टो गजः ] व्यालः; मत्तहस्ती । २२५

दुहिता [ ऋ ] स्त्री. [ दोग्धि विवाह दिकाले घनादि-  
कमाकृष्य गृह्णीतीति । यद्वा दोग्धि गाः इति, पुराकाले  
कन्यासु एव गोदोहनभारस्थितेस्तथात्वम् । दुह्+  
'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ' इति  
त्त्वं, निपातनाद् गुणाभावः ] कन्या; तनुजा । ५०५  
दूतिः स्त्री. [ दूयते नायकादिवाताहरणादिना । दु+  
बाहुलकात् ति दीर्घश्च ] दूती; 'प्रतिकृतिरचनाम्यो  
दूतिसन्दर्शिताभ्यः समधिकतररूपाः शुद्धसन्तानकार्मः—  
इति रघुवंशे (१८।५३) । ४९१

दूती स्त्री. [ दूति+कृदिकारादिति' वा डीष्, दूतश-  
ब्दाद् वा ] दौत्यकर्मणि नियुक्ता स्त्री; स्त्रीपुंसोः  
सन्देशप्रापिका; सञ्चारिका; दूतिः; दूतीका;  
दूतिका; दौत्यव्यापार- पारङ्गमा । ४९१

दूरम् त्रि. [ दुर्दुःखेनेयते प्राप्यते इति । दुर्+इण्+

'दुरीणो लोपश्च' इति रक्, धातोर्लोपश्च ] अनिकटम्;  
असन्निकृष्टं; विप्रकृष्टम्; अनासन्नम्; आके; पराके;  
पराचैः; आरे; परावतः । 'शरीरस्य गुणानां च  
दूरमत्यन्तमन्तरम् । शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्त-  
स्यायिनो गुणाः—इति हितोपदेशे (१।४३) । ६९३  
दूर्वा स्त्री. [ दुर्वतेदुर्व्यते वा, दुर्व् हिंसायाम्+अच् घञ्  
वा । 'उपघायाम्च' इति दीर्घः ] घासविशेषः; शत-  
पत्रिका; सहस्रवीर्या; भार्गवी; रहा; अनन्ता;  
तिक्तपर्वा; दुर्मरा; बहुवीर्या; हरिता; हरिताली;  
कच्छरहा; 'कुशाकारेव दूर्वेयं संस्तीर्णैव च भूरियम्—  
इति महाभारते (३।११०।१७) । १९१

दूष्यम् क्ली. [ दूष्यते इति, दुष्+णिच्+अचो यत्'  
इति यत्, 'दोषो णी' इति उपघाया ऊत्वम् ] वस्त्रगृहं;  
वस्त्रं; पूयम्; त्रि. दूषणीयः । 'स्त्रीरत्नं दुष्कुलाच्चापि  
विषादप्यमृतं पिबेत् । अदूष्या हि स्त्रियो रत्नमाप इत्येव  
धर्मतः—इति महाभारते (१२।१६५।३२) । निन्द्यः ।

४५१

दृक् [ श् ] स्त्री. [ पश्यत्यनेनेति, दृश्+करणे क्विप् ]  
चक्षुः; 'दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः ।  
विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुमो वामलोचनाः—इति  
साहित्यदर्पणे । [ भावे क्विप् ] दर्शनं; बुद्धिः; 'तां  
नाच्यगच्छद् दृशमत्र सम्मतां प्रपञ्चनिर्माणविधिर्यया  
भवेत्—इति भागवते (२।१।५) । त्रि. [ पश्यतीति ।  
दृश्+कर्त्तरि क्विन् ] वीक्षकः; 'यथा सर्वदृशं सर्वं  
आत्मानं येऽस्य हेतवः—इति भागवते (४।२।१९) ।  
ज्ञाता । ५१९

दृक्श्रुतिः पुं. [ दृशौ एव श्रुती कर्णौ यस्य ] सर्पः । ६४०

दृढः त्रि. [ दृह्+क्त् । निपातनात् साधुः ] कठिनः;  
प्रगाढः (७।१८); 'तदाकाशे श्रुतं ताम्यां वाग्बीजं  
मनोहरम् । गृहीतं च ततस्ताम्यां तस्याम्यासो दृढः  
कृतः—इति देवीभागवते । स्पूलः; अतिशयः; बलवान्;  
पुं. रूपकभेदः । 'दृढः प्रौढोऽय खचरो विभवश्चतुरक्रमः ।  
निशाहकः प्रतितालः कथिताः सप्तरूपकाः ।' तल्ल-  
क्षणम्—'दृढाख्यः स्याल्लयुद्धं ताले हंसलीलके ।  
चतुर्दशाक्षरैर्युक्तः शृङ्गारे परिकीर्तितः—इति सङ्गीत-  
दामोदरः । त्रयोदशमनोः रीच्यस्य पुत्रविशेषः; 'सुनेत्रः  
क्षत्रवृद्धिश्च सुतपा निभयो दृढः । रीच्यस्यैतं मनोः

पुत्रा अन्तरे तु त्रयोदशो—इति हरिवंशे (७।८३) ।

३४२

दृतिः पुं. [ दृणातीति, दृ विदारणे + 'दृणातेर्ह्रस्वश्च' इति ति ह्रस्वश्च ] चर्मप्रसेविका; चर्मपुटकः; स्वल्लः; 'इन्द्रियाणां तु सर्वेषां यद्येकं क्षरतीन्द्रियम् । तेनास्य क्षरति प्रज्ञा दृतेः पात्रादिवोदकम्'—इति मनुः (२।९९) । मत्स्यः; गलकम्बलः; 'सवत्सां पीवरीं दत्त्वा दृति-कण्ठामलङ्कृताम् । वैश्वदेवमसंवाधं स्यान् श्रेष्ठं प्रपद्यते'—इति महाभारते (१३।७९।१८) । 'दृतिकण्ठां प्रलम्ब-गलकम्बलाम्'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । मेघः; 'दिव्या आपो अभि यदेवमायन् दृति न शुष्कं सरसी घायानम्'—इति ऋग्वेदे (७।१०३।२) । ७६४

दृशत् [द्] स्त्री. [ दृ विदारणे, 'दृणातेः पुर्णह्रस्वश्च' इत्यदि, पृषोदरादित्वात् साधुः ] पाषाणः; निष्पेप-णशिलापट्टम् । १६८

दृशिः, दृशी स्त्री. [ दृश्यतेऽनयेति । दृश्+इन् स च कित्, वा डीष् ] चक्षुः; 'किं सम्भूतं रुचिरयोर्द्विज शृङ्गयोस्ते मध्ये कृशो वहसि यत्र दृशिः श्रिता मे'—इति भागवते (५।२।१२) । ५१९

दृष्टिः स्त्री. [ पश्यत्यनेनेति । दृश्+करणे कित्न् ] चक्षुः; 'दृष्टा दृष्टिमघो ददाति कुश्ले नालापमाभापिता'—इति साहित्यदर्पणे (३।६८) । [ दृश्+भावे कित्न् ] दर्शनम् (५६६); 'दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्'—इति मनुः (६।४६) । बुद्धिः; ग्रहाणां दृष्टिकथनम्; 'तृतीयं दशमे चैव पाददृष्टिरुदाहृता । अर्द्धदृष्टिश्च नवमे पञ्चमे च प्रकीर्तिता । चतुर्थे चाष्टमे चैव पादोना परिकीर्तिता । सप्तमे परिपूर्णां च फलमेवं प्रकल्प्यते । तृतीयदशमार्वाकः पश्यन् पूर्णफलप्रदः । त्रिकोणगान् गुरुश्चैव चतुर्थाष्टमगान् कुजः । सुतमदन-नवान्त्ये पूर्णदृष्टिः सुरारैर्युगलदशमराशी दृष्टिमात्रा-त्रयाहं । सहजरिपुचतुर्थेऽवष्टमे चार्द्धदृष्टिः स्थिति-मवनमुपान्त्यं नैव दृश्यं हि राहोः । स्वस्थानं च द्वितीयं च षष्ठमेकादशं तथा । द्वादशाख्यं न पश्यन्तिशेषं पश्यन्ति 'ते प्रहाः'—इति ज्योतिषतत्त्वे । ५१९

दृष्टिविक्षेपः पुं. [ दृष्टेर्विक्षेपः ] कटाक्षः । ५६७

देवः पुं. [ दीव्यति आनन्देन क्रीडतीति । दिव्+अच् ] देवता; 'देवानृषीन् मनुष्याश्च पितृन् गृह्याश्च देवताः ।

भूजयित्वा ततः पश्चाद् गृहस्थः शेषभुग् भवेत्'—इति मनुः (३।११७) । नाट्योक्तौ राजा । (१५५); मेघः; 'क्षेत्रे सुकृष्टे ह्युपिते च वीजे देवे च वर्षत्यु-तुकालयुक्तम्'—इति महाभारते (३।२३।५।२३) । इन्द्रः; पारदः; ब्राह्मणानामुपाधिभेदः; 'देवपूर्वं नराख्यं स्यात् शर्मवर्मादिसंयुतम्'—इति स्मृतिः । ऋत्विक्; 'ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगा-णाम्'—इति ऋग्वेदे (९।९६।६) । महादेवः; 'पर-श्ववायुधो देवः अनुकारी सुवान्धवः'—इति महा-भारते (१३।१७।९८) । त्रि. दाता; द्योतयिता; दीपयिता; 'अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्'—इति ऋग्वेदे (१।१।१) । 'देवशब्दो दानदीपनद्योत-नानामन्यतममर्थमाचष्टे, यज्ञस्य दाता दीपयिता द्योत-यिता यमग्निरित्युक्तं भवति'—इति तद्भाष्ये सायणः । विष्णुः; 'उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४) । ४

देवखातम् क्ली. [ देवैः खातम् । अकृत्रिमत्वादस्य तथा-त्वम् ] अखातं; देवखातकम्; 'नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च । स्नानं समाचरेन्नित्यं गतं प्रस्रवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३) । ६७५

देवगान्धारी स्त्री.—श्रीरागस्य भार्या; 'गान्धारी देवगान्धारी मालवश्रीश्च सारदी । रामकिर्युपि रागिण्यः श्रीरागस्य प्रिया इमाः'—इति सङ्गीतदामोदरः । अस्या गानसमयः शिशिरर्तौ तृतीयप्रहरावधि-अर्धरात्रपर्यन्तम् । १०१ अ

देवगिरी स्त्री.—रागिणीविशेषः; वसन्तरागस्य भार्या । वसन्ते सदा गेया । अस्या गानसमयः हेमन्ते दिवा चतुर्थ-प्रहरावधि अर्धरात्रपर्यन्तम् । १०५ अ

देवचिकित्सकी पुं. [ देवानां चिकित्सकी ] अश्विनी-कुमारी । द्विवचनान्तोऽयं शब्दः । ८४

देवच्छन्दः पुं. [ देवैश्छन्द्यते आकाङ्क्ष्यते इति । छन्द्+घञ् ] हारभेदः; स शतग्रन्थिकः । अष्टोत्तरशतयष्टिको-ऽयमिति भरतः; 'शतमष्टयुतं हारो देवच्छन्दो ह्यशीति-रेकयुता । अष्टाष्टकोऽर्द्धहारो रश्मिकलापश्च नवपट्टकः'—इति बृहत्संहितायाम् । ५६२

देवता स्त्री. [ देव एव, स्वार्थे तल् । देवं द्युतिं क्रीडां वा तनोति या ] निर्जरः; देवः; त्रिदशः; विबुधः; मुरः;

सुपर्वा; सुमनाः; त्रिदिवेशः; दिवोकाः; आदित्यः; दिविषत्; लेखः; अदितिनन्दनः; आदित्यः; ऋभुः; अस्वप्नः; अमर्त्यः; अमृतान्वाः; वहिर्मुखः; ऋनुमुक्; दनुजद्विद; द्युषत्; दौषत्; स्वर्गी; शौभः; निलिम्पः; मुचिरायः; स्थिरः; [ देव+भावे तल् ] देवत्वम्; 'मधुमन्मे परायणं मधुमत् पुनरायनम् । ता नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम्'—इति ऋग्वेदे (१०-२४६) । 'हे देवा देवो द्योतमानो ता तौ युवं युवां नोऽस्मान् मधुमतः प्रीतियुक्तान् कृतम् कुरुतम् । केनेति उच्यते । देवतया देवत्वेन अणिमादिदेवतैश्वर्ययोगेनेत्यर्थः'—इति तज्ज्ञाप्ये-सायणाचार्यः । ४

देवतायतनम् क्ली. [ देवतायाः आयतनं स्थानम् ] देवा-लयः । ८३१.

देवमातृकः त्रि. [ देवो वृष्टिमातिव सस्योत्पादनेन पालकत्वात् जननीव यस्य । कप् ] वृष्ट्यम्बुसम्पन्नप्रोहि-पालितदेशः; 'कच्चिद्राष्ट्रे तडागानि पूर्णानि च बृहन्ति च । भागशो विनिविष्टानि न कृषिदेवमातृका'—इति महाभारते (२।५।७८) । १६१

देवयुगम् क्ली. [ देवानां युगम् ] मानुषं युगचतुष्टयम्, ए तद् महायुगशब्दवाच्यमपि । एतद् देवानां युगसहस्रद्वयम् ब्रह्मणो दिनं भवति; 'देवे युगसहस्रे द्वे ब्राह्मः कल्पौ तु तौ नृणाम्'—इत्यमरः । 'चतुर्युगसहस्रेण ब्रह्मणो दिनमुच्यते ।' ११५

देवयोनयः पुं.-स्त्री. बहुवचनान्तः [ देवाः योनिरुत्पत्तिकारणं येषां ते ] विद्याधराः, अप्सरसः, यक्षाः, राजसाः, गन्धर्वाः, किन्नराः, पिशाचाः, गुह्यकाः, सिद्धाः, भूतगणः । [ देवानां योनिः ] देवस्थानम् (८५९); 'अन्यथा हि कुरुश्रेष्ठ ! देवयोनिरपांपतिः । कुशाश्रेणापि कौन्तेय ! न प्रष्टव्यो महोदविः'—इति महाभारते (३।११४।२८) । ८७

देवरः पुं. [ दीव्यत्यनेनेति । दिव् क्रीडायाम्+अतिक्रमि-भ्रमोति' अर ] पत्युः कनिष्ठभ्राता; देवा; दवारः; देवानः; तुरागावः; देवल्ली । 'देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्बद्धं नियुक्तया । प्रजेपिस्ताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिभय'—इति मनुः (९।५९) । ८४१

देवरयः पुं. [ देवानां रयः ] देवाना विमानः स च पुष्प-कादिः । ४४६

देववर्द्धकिः पुं. [ देवानां वर्द्धकिस्त्वष्टा ] विश्वकर्मा । ८४ देवा [ ऋ ] पुं. [ दीव्यत्यनेनेति, दिव्+दिवेर्द्धः' इति ऋ ] देवरः; 'ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी व्यधि देवेषु'—इति ऋग्वेदे (१०।८५।४६) । रण्डापतिः । ८४०

देवाला स्त्री. [ देवानपि आलाति स्वायत्तीकरोतीति । [ आ+ला+क ] रागिणीविशेषः । १०५ अ

देवालयः पुं. [ देवस्य इन्द्रस्य अयवः ] इन्द्रयोदकः; उच्चैःश्रवाः । ६१

देवी स्त्री. [ दीव्यतीति, दिव्+अच्+ङोप् ] नाट्योत्तरी कृताभिषेका राजपत्नी; दुर्गा; 'दिव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्तया निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या'—इति मार्कण्डेये (८४।२) । मूर्वा; 'मूर्वा मधुरसादेवी मोरटा तेजती स्रुवा'—इति भावप्रकाशे (१।१) । पूक्का; [ देवानां पत्नी, ङीप् ] सामान्यदेवपत्नी । 'देवीनां वक्षिणायने'—इति स्मृतिः । ब्राह्मणस्त्री-नामोपपदम्; यथा—'दिव्यन्ता हि स्त्रियो मताः—इत्युद्वाहतत्त्वम् । 'दिव्यन्ताश्च स्त्रियः सर्वा दास्यन्ताः शूद्रयोनयः'—इति कर्मविषाके । आदित्यभक्ता; लिङ्गिणी; बन्ध्याकर्कोटकी; शालिपर्णी; महाद्रोणी; पाठा; नागरमुस्ता; मृगेवर्द्धः; हरीतकी; अतसी; श्यामानाम पक्षिजातिः; उपनिषद्विशेषः; स तु अथर्व-वेदान्तगंतः; 'त्रिपुरातापनं देवो त्रिपुराकटभावन'—इति मुक्तिकोपनिषदि । ९८

देशः पुं. [ दिश्यते निर्दिश्यते इति । दिश् अतिसर्जने+कर्मणि घञ् ] भूगोलभागविशेषः; जनपदे; जनपद-समुदाये; जनपदकदेशे; सजलनिर्जलस्थानमात्रे च । जाङ्गलः; अनूपः; जनपदः; नीवृत्; विषयः; उपवर्तनं; प्रदेशः; राष्ट्रम् । २८४

देशाख्या स्त्री.—रागिणीविशेषः । १०३ अ  
देहः पुं.-क्ली. [ देहि प्रतदिनम् । दिह् उपचये+अच् ] शरीरम् । ५१०

देहलिः पुं. [ दिह्+भावे घञ् । देहो लेपस्तं लाति गृह्णातीति । देह+ला+वाहलकात् कि ] देहली, गृहावग्रहणी; द्वाराप्रस्थानम् । ३०२

देहली स्त्री. [ देहं लेपं लातीति । देह+ला+आतो-ऽनुपसर्गे क् ] इति क । शौरादित्वाद् ङीप् । गृहावग्रहणी;

द्वारपिण्डिका; द्वाराग्रस्थानं; अव उडुम्बरं तत् शिलाया  
अधोदारुपापाणो वा; 'शेषान् मासान् गमनदिवस-  
स्थापितस्यावधेर्वा, विन्यस्यन्ती भुवि गणनया देहली-  
दत्तपुमैः'—इति मेघदूते (८७) । ३०२

दैतेयः पुं. [ दितेरपत्यं पुमान् । दिति+स्त्रीभ्यो ढक्'  
इति ढक् ] दैत्यः; 'जय वाणं महावाहो ! दैतेयं देव-  
पूजित ! यदर्थमवतीर्णोऽसि तत्कर्म सफलीकुर'—  
इति हरिवंशे (१८२।७६) । ५

दैत्यः पुं. [ दितेरपत्यम्, 'दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्यः'  
इति ण्य ] असुरः; 'तापसा यतयो विप्रा ये च वैमानिका'  
गणाः । नक्षत्राणि च दैत्याश्च प्रथमा सात्विकी गतिः—  
इति मनुः (१२।४८) । दितिसम्बन्धिनि त्रि. । ५

दैत्यगुरुः पुं. [ दैत्यानां गुरुः ] शूक्राचार्यः; 'आज्ञार्थ-  
मानास्पदभूतिवस्त्रशत्रुक्षयान् दैत्यगुरुस्तृतीये'—इति  
बृहत्संहितायाम् (१०४।३४) । ४८

दैत्यारिः पुं. [ दैत्यानाम् असुराणाम् अरिः शत्रुः ] विष्णुः;  
'दैत्यारिः कमलाकपोलमकरीलेखाङ्कितोरःस्थलः, शतेऽ-  
न्वावितरेषु जन्तुषु पुनः का नाम शान्तेः कया'—इति  
प्रबोधचन्द्रोदये (२।२८) । देवता । २२

दैत्यम् क्ली. [ दीनस्य भावः । दीन+प्यञ् ] दीनता;  
'याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मियस्त्वं वृणु,  
त्वं वृषिवत्यमितो मुखानि स दशग्रीवः कथं कथ्यताम्'—  
इति मुरारिमिश्रः । कार्पण्यम्; अलङ्कारोक्तव्यभि-  
चारिगुणभेदः; 'दौर्मत्याद्यैरनौजस्यं दैन्यं मलिनतादि-  
कृत्'—साहित्यदर्पणे. (३।१४१) । ८४६

दैवम् क्ली.—पुं. [ देवात् नियतादागतम् । देव+अण् ]  
भाग्यम्; 'देवावीनं जगत् सर्वं जन्मकर्मशुभाशुभम् ।  
संयोगाश्च वियोगाश्च न च देवात् परं बलम् । कृष्णा-  
यत्तञ्च तदैवं स देवात् परतस्ततः । भजन्ति सततं सन्तः  
परमात्मानमीश्वरम् । दैवं वद्वैयितुं शक्तः क्षयं कर्तुं  
स्वलीलया । न दैववद्वस्तद्भक्तश्चाविनाशी च निर्गुणः'—  
इति ब्रह्मवैवर्ते । 'नालसाः प्राप्नुवन्त्यर्थाश्च च दैवपराय-  
णाः । तस्मात् सदैव यत्नेन पीरुषे यत्तमाचरेत्'—  
इति मत्स्यपुराणे (१९५ अध्याये) । १२६

दैवतम् क्ली. [ देवता एव । स्वार्थे अण् ] देवता; 'आपृच्छे  
त्वां पुरिश्चेष्टे ! काकुत्स्थपरिपालिते । दैवतानि च यानि  
त्वां पालयन्त्यावसन्ति च'—इति रामायणे (२।५०।२) । ४

दैवपरः त्रि. [ देवमेव परं प्रधानं यस्य ] दैवनिष्ठः;  
यद्भ्रविष्यः; 'साद्वं न बलिभिः कुर्यान्न च न्यूनं  
निन्दितैः । न सर्वशङ्किभिनित्यं न च दैवपरं नरैः—  
कुर्वीत सावुभिर्मैत्रीं सदाचारावलम्बिभिः'—इति मार्क-  
ण्डेये (४३।८९) । ३७७

दोः [ स् ] पुं. [ दाम्यत्यनेनेति । दमु उपशमे+ 'दमेर्दोसिः'  
इति डोसि ] बाहुः; हस्तः; भुजः; 'दातव्येयमवश्यमेव  
दुहिता कस्मैचिदेनामसौ 'दोर्लीलामसृणीकृतत्रिभुवनो  
लङ्कापतिर्याचते'—इति अनर्घराधवे (२।४४) । ५२२

दोला स्त्री. [ दोल्यते अस्यामिति । दोलि+घञ्+टाप् ]  
उद्यानादिषु क्रीडार्थं काष्ठादिमयो हिन्दोलकः; बाह्य-  
खट्वा; प्रेङ्गा; दोली; खट्वाला; दोलिका; प्रेङ्गः;  
हिन्दोला; 'द्विवेव हृदयं तस्य दुःखितस्याभवत् तदा ।  
दोलेव मुहुरायाति याति चैव सर्मां प्रति'—इति महा-  
भारते (३।६२।२०) । नीलिनी । ७६३

दोषः पुं. [ दूष्यते इति, दुष् वैकृत्ये+णिच्+भावे घञ् ]  
दूषणम्; 'अदाता वंशदोषेण कर्मदोषाद्दृष्टता । उन्मादो  
मातृदोषेण पितृदोषेण मूर्खता'—इति चाणक्यः (४८) ।  
[ दूष्यत्यनेनेति करणे घञ् ] पापं; वातपित्तकफाः;  
'नास्ति रोगो विना दोषैर्यस्मात्स्माद्विचक्षणः । अनुक्त-  
मपि दोषाणां लिङ्गैर्व्याधिमुपाचरेत्'—इति सुश्रुते ।  
गोवत्सः; [ दूष्यतेऽन्वकारेणेति । दुष्+घञ् ] प्रदोषः;  
'देवोऽपराह्णे मधुहोप्रघन्वा, सायं त्रिघामावतु माधवो  
माम् । दोषे हृषीकेश उताद्वंरात्रे, निशीय एकोऽवतु  
पद्मनाभः'—इति भागवते (४।८।१९) । काव्यगुणे-  
तरः; स च रसाद्यपकर्षकः 'मुख्यार्थहृतिदोषो रसश्च  
मुख्यस्तदाश्रयाद्वाच्यः ।' ७७१

दोषग्राही [ न् ] त्रि. [ दोषं गृह्णातीति । ग्रह्+णिनि ]  
दोषग्रहणकर्ता; खलः; पुरोभागी; द्विजिह्वः; मत्सरी;  
'विसृज्य शूर्पवदोषान् गुणान् गृह्णन्ति साधवः । दोषग्राही  
गुणत्यागी चालनीव हि दुर्जनः'—इत्युद्भटः । ३४६

दोषज्ञः त्रि. [ दोषं जानातीति । दोष+ज्ञा+ 'आतोऽनु-  
पसर्गे कः' इति, क ] पिण्डितः; 'अथ प्रदोषे दोषज्ञः संवेशाम  
विशांपतिम् । सूनुः सूनृतवाक् स्रष्टुः विससर्जोदितश्रि-  
यम्'—इति रघुवंशे (१।९३) । [ दोषान् वातपित्त-  
कफान् जानातीति, क ] चिकित्सकः (६१२); दोषविष-  
यकज्ञानयुक्तः । ३३२

**दोषा स्त्री.** [ दुष्यतेऽन्धकारेणेति । दुष्+घञ्+टाप् ] रात्रिः; 'दोषदशा कुलधुवतिर्वं दग्ध्यैव मलिनतामेति । दोषा अपि भूषायै गणिकायाः शशिकलायाश्च'—इति आर्यासप्तशत्याम् [ दाम्यत्यनेनेति । दम्+दमेडोसिः' इति डोसि, टाप् वा ] भुजः । १०७

**दोषा अव्य.** [ दुष्यत्यत्रेति, दुष्+बाहुलकात् 'दिविदुषि-म्याञ्च' इति आ । 'स्वरादिनिपातमव्ययम्' इति स्वरादि-पाठात् अव्ययत्वम् ] नक्तम्; रजनी; रात्रिः; 'दोषापि नूनमहिमांशुरसो किलेति, व्याकोशकोकनदतां दधते नलिन्यः!'—इति माघे (४।४६) । निशामुखम् । १०७

**दोहदः पुं.-** क्ली. [ दोहमाकर्षं ददातीति । दा+क ] गर्भिण्यभिलाषः; दोहदं; श्रद्धा; लालसा; जातुजः; 'दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात् । वैरूप्यं मरणं वापि तस्मात् कार्यं प्रियं स्त्रियाः'—इति याज्ञवल्क्य-संहिता । (३।७९) । गर्भचिह्नं; पुष्पोद्गमकौषधम्; 'कुसुमं कृतदोहदस्त्वया, यदशोकोऽयमुदीरयिष्यति । अलकाभरणं कथं नु तत्, तवनेष्यामि निवापमाल्यताम्'—इति रघुवंशे (८।६२) । क्ली. [ दोहमारुपणं ददातीति । दोह+दा+ 'आतोऽनुपसर्गे कः'—इति क ] इच्छा । ४९८

**दोर्मद्यम्** क्ली. [ दुर्धर्षो मदो येषां ते दुर्मदाः योद्धारः; तेषां कर्म ] 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः' इति ष्यञ् ] युद्धम् । ७६१

**दोहदम्** क्ली. [ दुहदो भावः । युवादित्वाद् अण् । बाहुलकात् न द्विपदवृद्धिः ] गर्भिणीच्छा; दोहदं; 'लघ्वदोहदा हि वीर्यवन्तं चिरायुपञ्च पुत्रं जनयति'—इति सुश्रुते । इच्छा; दूषितहृदयत्वम्; 'दुर्भाषिणो मन्मु-वशानुगस्य कामात्मनो दोहदे भावितस्य'—इति महा-भारते (५।२६।१४) । ४९८

**दोवारिकः** पुं. [ द्वारि नियुक्तः । 'तत्र नियुक्तः' इति ठक् । ततः 'द्वारादीनाञ्च' इत्यैजागमश्च ] द्वाररक्षकः; द्वास्थः; क्षत्ता; दण्डी; वेष्टधरः; प्रतीहारः; प्रतिहारः; दर्शकः; द्वारी; वेतालः; द्वारपालः; द्वारपालकः; दौसाधिकः; वर्तारूढः; गर्वाटिः; दण्डपांशुलः; द्वास्थितः; वेष्टधारकः; वर्तारूढः; दण्डवासी; 'राज-दोवारिकः श्रीमाञ्छूरस्यासीन्महोदयः'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (५।२८) । ४२४

**दोहियः** पुं.- स्त्री. [ दुहित्+ 'अनृष्यान्तये विदादिभ्योऽञ्' इति अञ् ] दुहितुरपत्यम्; कुतुपः; दुहितुसुतः; 'श्रीणि श्राद्धे पवित्राणि दोहियः कुतुपस्तिलाः । दोहियं खड्गमित्याहुरपत्यं दुहितुस्तिलाः । कपिलाया घृतञ्चैव दोहियमिति चोच्यते'—इति मार्कण्डेयपुराणम् । ५०५

**द्यावाभूमी स्त्री.** [ द्यौश्च भूमिश्चेति 'दिवो द्यावा' इति द्यावादेशः ] स्वर्गपृथिवी; स्वधे; पुरन्वी; धिपणे; रोदसी; क्षोणी; अम्भसी; नभसी; रजसी; सदसी; सद्यनी; घृतवती; बहुले; गभीरे; गम्भीरे; ओम्प्यी; चम्वी; पाश्वी; मही; ऊर्वी; पृथ्वी; अदिति; अही; दूरे; अन्ते; अणारे; अरे; पारे । (द्विचचनान्तोऽय शब्दः) 'को वस्त्राता वसवः को वरुता द्यावाभूमी अदिते आसीयां नः'—इति ऋग्वेदे (४।५।१) । १२१

**द्युः** पुं. [ द्यु अभिगमने, क्विप्, बाहुलकात् तुगभावः ] दिनः; गगनं (१३७); स्वर्गः (३); अग्निः । १०६

**द्युतिः** स्त्री. [ द्योततेऽनयेति । द्युत् दीप्तौ+ 'इगुपघात् कित्' इति इन् स च कित् ] रश्मिः; किरणः; दीप्तिः (६५); शोभा; 'लोभोऽघरात् प्रीतिरुपयंभूद्द्युति-नस्तः पशव्यः स्पशेन काम'—इति भागवते (८।५।४२) । पुं. चतुर्यस्य मनोः ऋषिबिषेपः; 'चतुर्यस्य तु सावर्णेऋषीन् सप्त निवोव मे । द्युतिर्वंशिष्ठपुत्रश्च आत्रेयः सुतपास्तया'—इति हरिवंशे (७।७५) । ताम-सस्य मनोः पुत्रविषेपः; 'पुत्रांश्चैव प्रवक्ष्यामि तामसस्य मनोर्नृप । द्युतिस्तपस्यः सुतपास्तपोमूलस्तपोशनः'—इति हरिवंशे (७।२३) । ३८

**द्युपतिः** पुं. [ दिक् पति । 'दिव उत्' इत्युकारः ] सूर्यः; द्युमणिः; [ द्युनो स्वर्गस्य पतिः ] इन्द्रः । ३६

**द्युमणिः** पुं. [ दिवः गगनस्य मणिरिव ] सूर्यः; द्युपतिः; 'रेणुदिशः खं द्युमणिञ्च छादयन् न्यवन्ततासृक्लुतिभिः परिप्लुतात्'—इति भागवते (८।१०।३८) । अर्क-वृक्षः; परिशोधितताम्रम्; मारितं ताम्रं; 'विपमही-पथभागमधिकोपणा द्युमणिरक्तकामाद्रकमदितम्'—इति भावप्रकाशः । ३६

**धुम्नम्** क्ली. [ द्युमनिं मनति अम्यसत्यस्मै इति । म्ना+क'घनमिच्छेत् हुताशानात्' इति वचनाद् घनकामानाम् अन्याराधनादस्य तथात्वम् दिवं । मनतीति वा ] घनम्;



'अस्नाकं द्युम्नमधि पञ्च कृष्टिपूच्चा स्वर्णं शुशुचीत  
दुष्टरम्'—इति ऋग्वेदे. (२।२।१०) । [ द्युं तेजो मन-  
तीति ] वलं (७२३); (वलाधायकत्वात्) अन्नं;  
'कृष्टि दिवः परि लव द्युम्नं पृथिव्या अधि'—इति  
ऋग्वेदे (१।०।८) । ८०.

छूतः पुं.—क्ली. [ देवनिमिति । दिवु क्रीडायाम्+भावे  
क्त, ऊठ् च ] पाशकादिक्रिया; अप्राणिकरणक्रिया;  
अक्षवर्ती; कतवः; पणः; 'द्युतक्रीडा तथा प्रोक्ता व्रतानि  
विविधानि च'—इति देवीभागवते (१।१०।५१) ।

'द्युतं समाह्वयं चैव राजा राष्ट्राभिवर्तयेत् । राजान्त-  
करणावेतौ द्वौ दोषौ पृथिवीक्षिताम् । प्रकाशमेतत्ता-  
स्कर्यं यद्देवनसमाह्वयौ । तयोर्नित्यं प्रतीघाते नृपतिर्यत्न-  
वान् भवेत् । अप्राणिभिर्यत् क्रियते तल्लोके द्युतमुच्यते ।  
प्राणिभिः क्रियते यस्तु स विज्ञेयः समाह्वयः । द्युतं  
समाह्वयं चैव यः कुर्यात् कारयेत् वा । तान् सर्वान्  
घातयेद्राजा शूद्राश्च द्विजलिङ्गिनः । द्युतमेतत् पुराकल्पे  
सृष्टं वैरकरं महत् । तस्माद्-द्युतं न सेवेत हास्यार्थमपि  
बुद्धिमान्'—इति मनुः (१।२२।१२२) । 'किं ते द्युतेन  
राजेन्द्र ! बहुदोषेण मात्तन्द ! । देवने बहवो दोषास्त-  
स्मात् तत्परिवर्जयेत् । श्रुतस्ते यदि वा दृष्टः पाण्डवो  
हि युधिष्ठिरः । स राज्यं सुमहत् स्फीतं भ्रातृश्च  
त्रिदशोपमान् । द्युते हारितवान् सर्वं तस्माद्-द्युतं न  
रोचये'—इति महाभारते (४।६६।३३-३५) । ३८८

छूतकरः त्रि. [ करोतीति, कृ+अच्, द्युतस्य करः ]  
द्युतकर्ता; घातः; धूर्तः; अक्ष धूर्तः; अक्षदेवी; दुरोवरः;  
द्युतकृत्; कितवः; कृष्णकोहलः । ३८८

छूतकारः त्रि. [ द्युतं कारयतीति । कृ+णिच्+अण् ]  
द्युतकारयिता; सभिकः; सभिकः; 'मुहुर्विघ्नितक-  
र्माणं द्युतकारं पराजितम्'—इति पञ्चतन्त्रे (१।  
४३१) । ३८८

छूतकारकः त्रि. [ द्युतं कारयतीति । द्युत+कृ+णिच्+  
+प्बुल् ] द्युतकारयिता । ३८९

द्योतनम् क्ली. [ द्युत्+भावे ल्युट् ] दर्शनं; प्रकाशनं;  
[ द्युत्+युच् ] द्योतमाने त्रि. । 'विलोक्य द्योतनं चन्द्रं  
लक्ष्मणं शोचनोऽवदत्'—इति भट्टिः (७।१५) । पुं.  
[ द्योतते इति । द्युत्+वहुलमन्यत्रापि ] इति युच् । दीपः ।  
५६६

द्यौः [ ओ ] स्त्री. [ द्योतन्ते देवा यत्र । द्युत्+बाहुल-  
कात् डो ] स्वर्गः; 'आदित्यचन्द्रावनिर्लोऽनलश्च, द्यौर्भूमि-  
रापो हृदयं यमश्च । अहश्च रात्रिश्च उभे च सन्ध्ये,  
धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम्'—इति महाभारते (१।  
७।४।२८) । आकाशं (१३७); पुं. अष्टवसूनामन्यतनः;  
'पृथ्वादीनां वसूनां च मध्ये कोऽपि वसूतमः । द्यौर्नामा  
तस्य भार्या या नन्दिनी गां ददर्श ह'—इति देवीभागवते  
(२।३।३५) । ३

द्रङ्गः त्रि. [ द्रियन्ते इति द्रा; दृङ् आदरे, बाहुलकात् क ।  
द्रान् गच्छति, 'गमश्च' इति खच्, 'खच्च डिद् वा  
वाच्यः' ] पुरी; 'तेन स्वनाम्ना भाण्डेषु द्रङ्गे सिन्धुरमुद्रणा'  
—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२०।११) । २८५

द्रप्सम् क्ली. [ दृष्यन्त्यनेन, दृप् हर्षादौ, बाहुलकात् स,  
'अनुदात्तस्य चेति' अम् ] घनेतरदधि; सरः । २७५  
द्रप्स्यम् क्ली. [ तृष्यन्त्यनेनेति । तृप्+अध्यादयश्च'  
इति निपातनात् साधु ] घनेतरदधि; द्रप्सं; द्राप्सं;  
त्रप्स्यं; शुक्रं; त्रि. द्रुतगमनशीलः; द्रुतहननशीलः;  
'पवमानः सन्तनिः प्रघ्नतामिव मधुमान् द्रप्स्यः परिवार-  
मर्षति'—इति ऋग्वेदे (१।६९।२) । २७५

द्रवः पुं. [ द्रु+ऋदोरप्' इति भावे अप् ] परीहासः;  
पलायनं; 'ततो दैत्यद्रवकरं पीराणं शङ्खमुत्तमम्'—इति  
हरिवंशे (२।१।१०) । रसः; गतिः; वेगः; 'तत्र  
शब्दगतिर्भूत्वा मारुतद्रवसम्भवः'—इति हरिवंशे (१९।  
५) । द्रवत्वरूपो गुणविशेषः; 'गुरुणी द्वे रसवती द्वयो-  
र्नैमित्तिको द्रवः'—इति भाषापरिच्छेदे (२८७) ।

आर्द्रं त्रि. । 'प्रसाधिका लम्बितमग्रपादम् आक्षिप्य  
काञ्चित् द्रवरागमेव'—इति रघुवंशे (७।७) । ४३२  
द्रविडी स्त्री.— रागिणीविशेषः । १०२ अ

द्रविणम् क्ली. [ द्रवति गच्छति द्रूयते प्राप्यते वेति ।  
द्रु+द्रुदक्षिम्यामिनन्' इति इनन् ] घनम्; 'द्रविणं  
परिमितममितव्ययिनं जनमाकुलीकुसते । क्षाणाञ्चल-  
मिव पीनस्तनजघनायाः कुलीनायाः । काञ्चनं;  
वलम्; 'एवमुक्ता तु पुत्रेण भूरिद्रविणतेजसा । माता  
सत्यवती भीष्ममुवाच तदनन्तरम्'—इति महाभारते  
(१।१०।३।१९) । पुं. घरनाम्नो वसोः पुत्रविशेषः;  
'धरस्य पुत्रो द्रविणो द्रुतहव्यवहस्तथा'—इति महाभारते  
१।६६।२१) । पृयोः पुत्रविशेषः; 'पुत्रानुत्पादयामास

पञ्चाचिष्यात्मसम्मत्तान् । विजितारवं घूम्रकेशं हयंषं  
द्रविणं वृकम्—इति भागवते (४।२।२।५४) । कुश-  
द्वीपद्विष्यतसीमागिरिभेदः; 'तेपां वर्षेषु सीमागिरयो  
नद्यश्चाभिजाताः सप्त सप्तैव वभ्रुश्चतुः शृङ्गः कपिल-  
दिचनकूटो देवानीक ऊर्ध्वरोमा द्रविण इति'—इति  
भागवते (५।२०।१५) । कौञ्चद्वीपस्यवर्षंपुरुषविशेषः;  
'यासामम्भः पवित्रममलमुपयुञ्जानाः पुरुषर्षभद्रविण-  
देवकसंज्ञा वर्षंपुरुषाः'—इति भागवते (५।२०।२२) । ८०  
द्रव्यम् क्ली. [ द्रोश्चि । द्रु+ 'द्रव्यञ्च भव्ये' इति यत्  
प्रत्ययेन निपातनात् साधु ] वित्तं; वस्तु; 'एकमेव  
दहत्यग्निनरं दुरुपनापिणम् । कुलं दहति राजाग्निः  
सपशुद्रव्यसञ्चयम्'—इति मनुः (७।१९) । 'लिङ्ग-  
संख्यानवित्त्वं द्रव्यत्वम्' इति शाब्दिकाः । पित्तलं,  
पृथिव्यादि; विलेपनं; कशीवं; भेषजं; भव्यं;  
द्रोविकारः [ 'द्रोश्च' इति यत् ] द्रुमविकारे त्रि. ।  
द्रुमावयवः; जतु; दिनयः; मद्यम्; 'सगवदं न पिबेत्  
द्रव्यम्'—इति कुलाणवतन्त्रम् । ८०

द्राक् अव्य. [ द्रातोति, द्रा+वाहुलकात् कु ] द्रुतम्;  
शीघ्रम्; 'आकस्मिकः पक्षपुटाहनायाः क्षितेस्तदा यः  
स्वन उच्चचार । द्रागन्यविन्यस्तदृगः न तस्याः सभ्रान्त-  
मन्तःकरणं चकार'—इति नैपथे (३।२) । ६९७

द्राक्षा स्त्री. [ द्राक्षयने काडक्षयने इति । द्राक्षि काड-  
क्षायाम् + धञ् । आगमयोग्यनस्यानित्यत्वान् नुमभावः ]  
फलाविशेषः; मृद्वीका; गोस्तनी; स्वाद्वी; मधुरसा;  
चारुफला; कृष्णा; प्रियाला; तापनप्रिया; रसा;  
गुच्छफला; रन्नाला; अमृतफला; 'दाख, अंगूर'  
—इति भाषा । ९३

द्राग्भूतकम् क्ली. [ द्राग् एव तत्कालमेव भूतमुदञ्चितम्,  
ततस्तादव्यं क ] तत्त्वणोद्धृतं तोयं; सद्यः पानीयम् । ६४९

द्रुः पुं. [ द्रवति ऊर्ध्व गच्छतीति । द्रु+मित्त्वादिस्त्वात्  
डु ] वृक्षः; 'आद्दीताय पङ्भागं द्रुमांसमधुसर्पिषाम्'  
—इति मनुः (७।१३१) । गतौ स्त्री. । १७७

द्रुघणः पुं. [ द्रुवृक्षः हन्यन्तेऽनेनेति । हन्+ 'करणेऽयो-  
विद्रुपु' इति अप् घनादेशश्च, 'पूर्वपदात् संज्ञायामगः'  
इति णत्वम् । द्रुममयो घनः इति वा ] मुद्गरः; मुद्गरा-  
कारलोहमयास्त्रभेदः; परशुवल्लोहास्त्रम्; 'द्रुघण-  
स्त्वायसाङ्गः स्यात् वक्रप्रीवो बृहच्छिराः । पञ्चाशदङ्गु-

लोत्सेधो मुष्टिसम्मिमतमण्डलः । 'उन्नामनं प्रपातश्च  
स्फोटनं दारणं तथा । चत्वार्येतानि द्रुघणे वल्गितानि  
श्रितानि वै ।' [ द्रुः संसारवृक्षो हन्यतेऽनेनेति ] ब्रह्मा;  
कुठारः; भूमिचम्पकः; (दन्त्यनान्तोऽपि) । ४७५  
द्रुणा स्त्री. [ द्रुणं धनुराश्रयत्वेनास्त्यस्याः । अच्+टाप् ]  
ज्या । ४६४

द्रुणिः स्त्री. [ द्रुणति जलादिकमिति । द्रुण गतौ+  
'इगुपधात् कित्' इति इन् ] कच्छपी; कमठी; कूर्मी;  
द्रोणी । ६५६

द्रुणो स्त्री. [ द्रुण्+इन् वा डीप् ] कच्छपी; दुली;  
कणजलोकाः; काष्ठाम्बुवाहिनी । ६५६

द्रुतम् त्रि. [ द्रवति स्मेति । द्रु+गत्यर्थेति कर्तरि  
क्त ] जातद्रवीभावधृतमुवर्णादि; अवदीर्णं; विलीनं;  
विद्रुतं, शीघ्रं; 'वाय्वीरिताभिः सुमनोहराभिर्दृता-  
भिरत्यर्थसमुत्थिताभिः । गङ्गोर्मिमिर्भानुमतीभिरिन्द्राः  
सहस्ररश्मिप्रतिमा भवन्ति'—इति महाभारते (१।३।२६।  
८१) । विद्रावः; पलायितः; 'जग्राह स द्रुतवराह-  
कुलस्य मार्गं सुव्यवतमार्गपदपङ्क्तिभिरायताभिः'—इति  
रघुवंशे (९।५९) । २७६

द्रुतः पुं. [ द्रवति स्म ऊर्ध्वमिति । द्रु+क्त ] वृश्चिकः;  
द्रुमः; वृक्षः; क्ली. [ द्रु+क्त ] नृत्यविषयकशीघ्रगम-  
नम्; औषः; शीघ्रलयः; [ नृत्यगीतादी द्रवन्ति गच्छन्ति  
समुदायगतिप्रदर्शनार्थं करादयोऽत्र ] 'द्रुतामध्ययने  
वृत्ति प्रयोगार्थे तु मध्यमाम् । शिष्याणामुपरोवार्ये  
विलम्बितां समाचरेत्'—इति वेदव्यवस्था । क्षिप्रम्;  
'अभ्याघातेषु मध्यस्याब् शिष्याच्चौरानिच द्रुतम्'  
—इति मनुः (९।२७२) । क्रियाविशेषगत्वात्स्य  
क्लीवता । ६४५

द्रुतम् अव्य.— झटिति; अञ्जसा; शीघ्रम् । ६९७

द्रुमः पुं. [ समुदाये वृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते  
'इति न्यायाद् द्रुः शाखा विद्यतेऽस्य । 'द्युद्रुम्यां मः'  
इति म ] वृक्षः; 'निर्भयं तु भवेद्यस्य राष्ट्रे बाहुबलश्रि-  
तम् । तस्य तद्वर्द्धते नित्यं सिच्यमान इव द्रुमः'—इति  
मनुः (९।२५५) । पारिजातः; कुवेरः; किम्पुरु-  
पेश्वरविशेषः; 'द्रुमः किम्पुरुपेशश्च उपास्ते घन-  
देश्वरम्'—इति महाभारते (२।१०।२८) । नृप-  
विशेषः; 'यस्तु राजन् ! शिविर्नाम दैतेयः परिकीर्तितः ।

द्रुम इत्यभिविख्यातः स आसीद्द्रुवि पार्थिवः—इति महा-  
भारते (१।६७।८)। रुक्मिणीगर्भजातः कृष्णस्य  
पुत्रविशेषः; 'चारुभद्रश्चारुगर्भः सुदंष्ट्रो द्रुम एव च'—  
इति हरिवंशे (१६०।६)। १७१

द्रुहणः पुं. [ द्रुं संसारगतिं हन्तीति । हन्+अच्, 'पूर्व-  
पदात् संज्ञायामगः'—इति णत्वम् ] ब्रह्मा । ७

द्रुहिणः पुं. [ द्रुहति दुष्टेभ्यः इति । द्रुह्+ 'बहुलमन्य-  
त्रापि' इति इनन्, गुणाभावश्च ] ब्रह्मा; 'द्रुहिणे सृष्टि-  
शक्तिश्च हरौ पालनशक्तित्वा'—इति देवीभागवते  
(१।८।२८) । ७

द्रोणः पुं. [ द्रोणः कलस उत्पत्तिस्थानत्वेनास्त्यस्य ।  
द्रोण्+अच् ] दग्धकाकः; द्रोणकाकः; वनकाकः;  
काकोलः; अरण्यवायसः; वनवासी; महाप्राणः; क्रूर-  
रावी; पलप्रियः; काकलः; 'के शव' पतितं दृष्ट्वा  
द्रोणो हर्षमुपागतः। रुदन्ति पाण्डवाः सर्वे हा हा के शव!  
के शव!!' द्रोणाचार्यः; अयं कुरुपाण्डवानाम  
आचार्यः अस्य पिता भरद्वाजः। वृश्चिकः; चतुः-  
शतघनुःपरिमितजलाशयः; यथा—'शतेन घनुभिः  
पुष्करिणी। त्रिभिः शतैर्दीपिका। चतुर्भिर्द्रोणः। पञ्च-  
भिस्तडागः। द्रोणाद्दशगुणा वापी'—इति जलाशय-  
तत्त्वम्। मेघनायकः; 'त्रियुते शाकवर्षे तु चतुर्भिः  
शेषितते क्रमात्। आवर्तं विद्धि संवर्तं पुष्करं द्रोणमम्बु-  
दम्। आवर्तो निर्जलो मेघः संवर्तश्च बहूदकः। पुष्करो  
दुष्करजलो द्रोणस्तस्यप्रपूरकः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्।  
पुं-कली. [ द्रवतीति, द्रु गती+ 'कृवृजृषिद्रुपन्यनिस्वपि-  
म्यो नित्' इति न ] आढकपरिमाणम्; आढकचतुष्टयम्;  
'द्रोणस्तु खार्याः खलु षोडशांशः स्यादाढको द्रोणचतुर्थ-  
भागः'—इति लीलावती। (३२ सेर इति लौकिक-  
मानम्; ) घटः; कलसः; उन्मानं; लवणः; अर्मणः;  
अरणीकाष्ठम्; 'ऋत्वा हि द्रोणे अज्यसेज्जनेवाजी न  
कृत्व्यः'—इति ऋग्वेदे (६।२।८) : 'हे अग्ने ऋत्वा  
कर्माणा मन्यनरूपेण द्रोणे द्रुमे काष्ठेऽरण्यां विद्यमानस्त-  
मज्यसे हि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। काष्ठ-  
निर्मितकलशः; 'प्रो द्रोणे हरयः कर्माग्निं पुनानास  
ऋज्यन्तो अभूवन्'—इति ऋग्वेदे (६।३७।२)।  
'द्रोणे द्रोणकलशे ऋज्यन्त ऋजु गच्छन्तोऽभूवन्'  
इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। द्रुममयरथः; 'आ ते वृषन्

वृषणो द्रोणमस्युः'—इति ऋग्वेदे (६।४।२०)।  
'द्रोणं द्रुममयं रथमस्युः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः।

२४६

द्रोणदुग्धा स्त्री. [ द्रोणपरिमितं दुग्धं यस्याः ] द्रोणक्षीरा;  
द्रोणदुग्धा। २७१

द्रोणदुग्धा स्त्री. [ द्रोणं दोग्धीति । दुह्+ 'दुहः क्व घश्च'  
इति कप् घश्चान्तादेशः ] द्रोणपरिमितदुग्घदात्री गोः;  
द्रोणक्षीरा; द्रोणमाना; द्रोणघा; पयस्विनी; द्रोण-  
दुग्धा; द्रोणमानपयस्विनी। २७१

द्रोहः पुं. [ द्रुह्+भावे घञ् ] जिघांसा; अनिष्टचिन्तनम्;  
अपक्रिया; 'देवद्रोहाद् गुरोर्द्रोहः कोटिकोटिगुणाधिकः'  
—इति कूर्मपुराणे। छद्मवधः; 'पैशुन्यं साहसं द्रोहः  
ईर्ष्यासूयार्थदूषणम्। वाग्दण्डश्चापि पारुष्यं क्रोधजोऽपि  
गणोऽष्टकः'—इति मनुः (७।४०)। 'द्रोहश्छद्मवधः'  
इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ७७१

द्वन्द्वम् क्ली. [ द्वन्द्व+पृषोदरादित्वाद् वस्य लोपः ]  
मिथुनम्। ७००

द्वन्द्वम् क्ली. [ द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ । 'द्वन्द्वं रहस्यमर्यादा-  
वचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभिव्यक्तिपु'—इति द्विश-  
ब्दस्य द्विवचनं पूर्वपदस्याम्भावोऽञ्चोत्तरपदस्य  
नपुंसकत्वं च निपात्यते ] कलहः; 'शतं दद्यान्न विवदे-  
दिति प्राज्ञस्य लक्षणम्। विना हेतुमपि द्वन्द्वमेतन्मूर्खस्य  
लक्षणम्'—इति हितोपदेशे (३।३२)। युगम् (७००);  
'द्वन्द्वयुद्धञ्च पार्येन कर्तुमिच्छाम्यहं प्रभो'—इति महा-  
भारते (१।१३७।१५)। मिथुनं; 'परस्परारक्षिसादृश्य-  
मद्गुरोर्जितवर्त्मसु। मृगद्वन्द्वेपुं पश्यन्तो स्यन्दनाबद्ध-  
दृष्टिषु'—इति रघो (१।४०)। रहस्यं; शीतोष्णादि;  
'सर्वतुंनिवृत्तिकरे निवसन्नुपैति न द्वन्द्वदुःखमिह  
किञ्चिदकिञ्चनोऽपि'—इति माघे (४।६४)। क्ली.  
पुं. दुर्गम्। पुं. [ द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ इति निपात-  
नात् साधुः; चार्थे द्वन्द्व इति निर्देशात् पुंस्त्वम् ] रोग-  
विशेषः; समासभेदः; द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गृहे नित्य-  
मव्ययीभावः। ४५३

द्वाः [ र् ] स्त्री. [ द्वारयतीति, द्व वरणे+णिच् बाहुल-  
कात् क्विप् ] द्वारं; 'द्वारि द्युनद्या ऋषभः कुरुषां  
मंत्रेयमासीनमगाधबोधम्'—इति भागवते (३।५।१)।  
उपायः; 'ज्ञानद्वारा भवेन्मुक्तिः' इति ज्ञानशास्त्रम्। ३००

द्वैतः पुं. [ द्वारि तिष्ठतीति । स्या+क ] द्वारपालः; द्वैतः स्थितः; 'ब्राह्मणैः क्षत्रवन्धुहि द्वारपालो निरूपितः । स कथं तद्गृहे द्वैतः सभाषडं भोक्तुमर्हति'—इति भागवते (१११८।३४) । नन्दिकेश्वरः । ४२४

द्वैतशात्मा [ न् ] पुं. [ द्वादश आत्मानो मूर्तयो यस्य ] सूर्यः; 'द्वादशात्मारविन्दाक्षः पिता माता पितामहः'—इति महाभारते (३।३।२६) । अर्कवृक्षः । ३७

द्वैतपरः पुं. [ द्वयोर्विषययोः परस्तत्परः आसक्तः । पृषो-दरादित्वात् साधुः ] सन्देहः; [ द्वैसत्यत्रेतायुगौ परौ श्रेष्ठौ यस्मात् ] युगविशेषः; द्वैतपरयुगम्; 'अष्टौ शतसहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि नु । चतुःषष्टिसहस्राणि वर्षाणां द्वैतपरं युगम्'—इति मत्स्यपुराणे । ७८९

द्वैतम् क्ली. [ द्वैरति निर्गच्छति गृहाम्यन्तरादनेनेति । द्व+घञ् ] निर्गमनं; द्वैतः; प्रतीहारः; वारकं; 'गृहिणां शब्दं द्वैतं प्राकारस्य गृहस्य च । न मध्यदेशे कर्तव्यं किञ्चिन्न्यूनाधिकं शुभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ३००

द्वैतपालः त्रि. [ द्वैतं पालयतीति । द्वैत+पालि+कर्म-ण्यण् ] इत्यण् ] द्वैतः; द्वैतरक्षकः; प्रतीहारः; द्वैत-स्थितः; दर्शकः; वेत्रधारकः; द्वैतः साधिकः; वर्तकः; गर्वाटः; दण्डवासी; द्वैतस्थः; क्षत्ता; द्वैतपालकः; द्वैतवारिकः; वेत्री; उत्सारकः; दण्डी । ४२४

द्वैतः पुं. [ द्वारि तिष्ठतीति । स्या+सुपिस्थः ] इति क, 'खर्परे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः' इति विसर्गस्य पाक्षिकलोपः ] द्वैतपालः । ४२४

द्विजः पुं. [ द्विजाति इति । जन्+अन्येष्वपि दृश्यते ] इति ड ] अण्डजः; स पक्षिसर्पमत्स्यादिः; 'ऐन्द्रः किल नखैस्तस्या विददार स्तनौ द्विजः'—इति रघुवंशे (१२।२२) । संस्कृतब्राह्मणः ( ३९१ ) ; 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते'—इति स्मृतिः । सद्वृत्तब्राह्मणः; 'जात्या कुलेन वृत्तेन स्वाध्यायेन श्रुतेन च । एभिर्भुक्तो हि यस्तिष्ठेन्न नित्यं स द्विज उच्यते । 'न जातिर्न कुलं राजन् ! न स्वाध्यायः श्रुतं न च । कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम्'—इति वह्नियपुराणे । दन्तः (५२७) ; 'न च्छित्त्वा द्विजैर्भक्ष-येत्'—इति चरकः । तुम्बुरुवृक्षः; क्षत्रियः; वैश्यः; 'मातुर्यदग्रे जायन्ते द्वितीयं मौञ्जिवन्धनात् । ब्राह्मण-क्षत्रियविशस्तस्मादेते द्विजाः स्मृताः'—इति याज्ञ-

वल्क्यः ( १।३९ ) । द्विजति त्रि. । २३८

द्विजन्मा [ न् ] पुं. [ द्वे जन्मनी यस्य ] ब्राह्मणः; 'यतीनां भूषणं ज्ञानं सन्तोषो हि द्विजन्मनाम्'—इति देवी-भागवते । दन्तः; पक्षी; क्षत्रियः; वैश्यः; त्रि. द्वैतारजन्मयुक्तः । (द्वैत्यां जायमानः) 'अभिद्वि-जन्मा त्रिवृदन्नमृज्यते । संवत्सरे वावृधे जग्धमी पुनः'—इति ऋग्वेदे ( १।१४० ) २ । 'द्वैत्यामरणीम्यां जायमानत्वात् यद्वा मन्यनेनाधानसंस्कारेण चोत्पन्नत्वात् द्विजन्मत्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३९१

द्वितीयम् क्ली. [ द्वौ अवयवौ अस्य । द्वि+संख्याया अवयवे तयप् ] इति तयप् ] द्वयम्; 'अत ऊर्ध्वमङ्गारकोऽपि योजनलक्षद्वितय उपलभ्यमानस्त्रिभस्त्रिभिः पक्षैरेकैक-शो राशीन् द्वादशानुभुङ्क्ते'—इति भागवते ( ५।२२। १४ ) । द्विसंख्याविशिष्टे त्रि. । 'द्रुमसानुमतां किमन्तरं यदि वायौ द्वितयेऽपि ते चला'—इति रघौ ( ८।९० ) । ७००

द्वितीयवयः [ स् ] त्रि. [ द्वितीयं वयो यौवनमित्यर्थः; यस्य ] तरुणः पुमान्; वधूटी स्त्री; युवकुलम् । ४०४

द्वितीया स्त्री. [ द्वितीय+टाप् ] गेहिनी; भार्या; त्रि-विशेषः; सा चन्द्रस्य द्वितीयकलाक्रियारूपा । सा च अश्विनीकुमारयोर्जन्मतिथिः; 'निखिलगुणगभीरी दान-शीलो दयालुः स्वकुलकुमुदचन्द्रः स्वच्छचित्तोऽतिशूरः । निजभुजबलगर्वाच्छादितारातिवर्गो भवति विपुलकौतियो द्वितीयाप्रसूतः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ८०२

द्वैतम् क्ली. [ द्वयोः भावः; 'तस्य भावस्त्वतलौ ] युगं; युगलं; द्वन्द्वम् । २८३

द्विपः पु. [ द्वैत्यां मुखशुण्डाभ्यां पिवतीति । पा+क ] हस्ती; 'तेजोमहद्भिस्तमसेव दीपैः द्वैतैरसम्बाधमयाम्ब-भूवे'—इति माघे ( ३।६७ ) । पुं. नागकेशरः । २१४

द्विमुखः पुं. [ द्वे मुखे यस्य ] राजसर्पः । मुखद्वययुक्ते त्रि. । ६४३

द्विरवः पुं.— स्त्री. [ द्वौ रदौ दन्तौ प्रधानतया यस्य ] हस्ती; 'क्षोभयन्तं तथा सेनां द्विरदं नलिनीमिव । घन-वज्रयं भूतगणाः साधु साध्वित्यपूजयन्'—इति महा-भारते ( ७।२६।२७ ) । २१४

द्विरवकराग्रम् क्ली. [ द्विरवस्य राजस्य कराग्रं शुण्डा-ग्रम् ] पुष्करम् । ८५८

द्विरसनः पुं. [ द्वे रसने जिह्वे यस्य ] सर्पः । ६४०

द्विरेफः पुं.- स्त्री. [ द्वी रेफौ रकारवर्णौ यस्मिन्; भ्रमर-  
इति नाम्नि ] भ्रमरः; 'निवेगयामास मधुद्विरेफान्  
नामाक्षराणीव मनोभवस्य'—इति कुमारे (३१२७) ।

वर्वरे त्रि. १ २५५

द्विषन् [ त् ] त्रि. [ द्वेष्टीति, द्विष्+ 'द्विषोऽमित्रे'—इति  
शतृ ] शत्रुः; 'यियक्षमाणेनाहूतः पार्थेनाथ द्विषन् मुरम्'  
—इति भावे (२११) । ४५६

द्विसीत्यम् त्रि. [ द्विवारं सीतया सम्मितम् । द्विसीता+  
'नीवयोचमैति' यत् ] वारद्वयकृष्टक्षेत्रं; द्विगुणा-  
कृतं; द्वितीयाकृतं; शम्बाकृतं; सम्बाकृतं; द्विहृत्यम् ।

५७६

द्वीपः पुं.- क्ली. [ द्विर्गता द्वयोर्दिशोर्वा गता आपो यत्र,  
काकाक्षिगोलकन्यायेन द्वयोरित्युक्तेऽपि चतुर्दिक्षु तत्सत्ता ।  
'ऋकूपूरवृत्ति' अ, 'द्वयन्तरूपसर्गोऽप ईत्' इति  
ईत् ] वारिमध्यतटं; जलवेष्टितभूमिः; अन्तरीपम्;  
क्ली. [ द्वी वर्णौ ईयते इति । इ गती+बाहुलकात् प ]  
व्याघ्रचर्म । ६७०

द्वीपवती स्त्री. [ द्वीपाः सन्त्यस्याः इति । द्वीप+मतुप्,  
मस्य वः, डीप् ] नदी; 'अलङ्कृतं द्वीपवत्या मालिन्या  
रम्यतीरया'—इति महाभारते (११७०।२८) । भूमिः ।

६६६

द्वीपी [ न् ] पुं. [ द्वीपं कर्तुरचर्म अस्त्यस्येति । द्वीप+  
'अत इतिठौ' इति ठन् ] चित्रकः; व्याघ्रः; 'नानामृग-  
गणैर्द्वीपितरक्ष्वृक्षगणैर्वृतः'—इति रामायणे (२।१४।७) ।

३२६

द्वेषः पुं. [ द्विष्+भावे घञ् ] शत्रुता; वैरं; विरोधः;  
विद्वेषः; द्वेषणम्; 'नास्तिक्यं वेदनिन्दां च देवतानां च  
कुत्सनम् । द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्षणं च वर्जयेत्'  
—इति मनुः (४।१६३) । ८१५

द्वेषी [ न् ] त्रि. [ द्वेष्टि तच्छीलः । द्विष्+ 'संपृचानुरु-  
धेति' षिनुण् ] शत्रुः । ४५६

द्वेष्यः त्रि. [ द्वेष्टुमर्हः, यत् ] द्वेषविषयः; वि द्वेषार्हः;  
अधिगतः; 'सुखं वा यदि वा दुःखं द्वेष्यं वा यदि वा  
प्रियम् । ययावत् सर्वमाचक्ष्व श्रुत्वा घास्यामि यत्  
क्षमम्'—इति महाभारते (४।१६।१८) । [ द्विष्यते-  
ऽभाविति । द्विष्+ष्यत् ] शत्रुः; 'द्विष्योऽपि सम्मतः

शिष्टस्तस्यार्तस्य ययोषधम् । त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्या-  
सीदङ्गुलीवोरगक्षता'—इति रघौ (१।२८) । ३६६  
द्वैगुणिकः त्रि. [ द्विगुणार्थं द्रव्यं द्विगुणं तत्प्रवच्छति,  
द्विगुणं ग्रहीतुमेकगुणं ददातीत्यर्थः । द्विगुण+ 'प्रयच्छति  
गर्हाम्' इति ठक् ] वृद्ध्याजीवः; [ द्विगुणं गृह्णाति यः  
इत्यर्थे षिणकप्रत्ययः ] । ५७१

द्वैपायनः पुं. [ द्वीपम् अयनम् उत्पत्तिस्थानं यस्य स ।  
स्वार्थे प्रज्ञादित्वाद् वा अण् ] व्यासः; 'एवं द्वैपायनो  
जज्ञे सत्यवत्यां पराशरात् । न्यस्तो द्वीपे स यद्वाल्मीकिस्तस्मा-  
स्माद्द्वैपायनः स्मृतः'—इति महाभारते (१।६३।८५)  
हृदविशेषः; 'आसाद्य च कुरुश्रेष्ठ ! तदा द्वैपायनं  
हृदम् । स्तम्भितं घातैराष्ट्रेण दृष्ट्वा तं सलिलाजयम् ।  
वासुदेवमिदं वाक्यवदीत् कुशमन्दनः'—इति महाभारते  
(१।३३।२) । ४१३

ध

घनम् क्ली. [ दधन्ति घान्यादिकमुत्पादयतीति । घन्  
घान्ये+अच् । यद्वा दधाति सुखमिति । घा+ 'कूपवृजि-  
मन्दिनिवाकः क्युः' इत्यत्र बाहुलकात् केवलादपि क्यु ]  
द्रविणं; द्रव्यं; वित्तं; स्वापतेयं; रिक्यम्; ऋक्व्यं;  
वसु; हिरण्यं; द्युम्नम्; अर्थः; राः; विभवः;  
काञ्चनं; लक्ष्मीः; भोग्यं; सम्पत्; वृद्धिः; श्रीः;  
व्यवहार्यं; रैः; भोगः; स्वः; मघः; रेक्णः; वेदः;  
वरिवः; श्वात्रं; रत्नं; रयिः; क्षत्रं; भगः; मीलः;  
गयः; इन्द्रियं; रायः; रावः; भोजनं; तना; नृम्णं;  
बन्धुः; मेघाः; यज्ञाः; ब्रह्म; श्रवः; वृद्धः; वृत्तम् ।  
'घनैर्निष्कुलीनाः कुलीना भवन्ति; घनैरापदं मानवा  
निस्तरन्ति । घनेभ्यः परो नास्ति बन्धुहि लोके, घनान्यर्ज-  
यध्वं घनान्यर्जयध्वम्'—इत्युद्भटः । स्नेहपात्रं; गोघनम्;  
'अनुजग्मुश्च गोपालाः कालयन्तो घनानि च'—इति  
हरिवंशे (७३।३३) । जीवतोपायः । ८०

घनञ्जयः पुं. [ घनं जयति सम्पादयतीति । घन+जि+  
खच्+मुम् । 'घनमिच्छेद् हुताशनात्' इत्युक्तेरस्य तथा-  
त्वम् ] अग्निः; चित्रकवृक्षः; [ घनं जयति अरीन्  
निजित्य अर्जयतीति, जि+खच्+मुम् च ] अर्जुनः;  
'सर्वान् जनपदान् जित्वा वित्तमाश्रित्य केवलम् । मध्ये  
घनस्य तिष्ठामि तेनाहुर्मां घनञ्जयम्'—इति महा-

भारते (४४२।१३) । नागभेदः; स तु जलाशयाधि-  
पतिः । 'कम्बलाश्वतरौ नागौ घृतराष्ट्रवलाहकौ ।  
मणिमान् कुण्डधारश्च कर्कोटकधनञ्जयी'—इति  
महाभारते (२।९।९) । देहमास्तः; 'न जहाति  
मृतं चापि सर्वव्यापी धनञ्जयः'—इति सुबोधिनी ।  
अर्जुनवृक्षः; गोत्रविशेषः; यिष्णुः; षोडशद्वीपरस्य  
व्यासः । ६४

**धनवः** पुं. [ धनं दयते पालयतीति । देह पालने + 'आतो-  
ऽनुपसर्गे कः' इति क ] कुवेरः; हिज्जलवृक्षः; [ धनदः  
आर्षयित्वेनास्त्यस्येति, अच् ] हिमयत एकदेशः; 'धनदं  
समतिक्रम्य हिमवन्तं च पर्वतम्'—इति महाभारते  
(१३।१९।१६) । [ धनं ददातीति, क ] दातरि त्रि. ।  
'उद्वेजयति भूतानि क्रूरवाक् धनदोऽपि सन्'—इति  
कामन्दकीयनीतिसारे (३।२३) । ७८

**धनवान्** [ त् ] त्रि. [ धनमस्त्यस्येति । धन + मतुप्, मस्य  
व ] धनविशिष्टः; धनी; 'नाराजके जनपदे धनवन्तः  
सुरक्षिताः । शेरते विवृतद्वाराः कृपिगोरक्षजीविनः'—  
इति रामायणे (२।६७।१९) । ३५८

**धनाध्यक्षः** पुं. [ धनानामध्यक्षः ] कुवेरः; धनाधिकृतः;  
कोषाध्यक्षः । ७८

**धनाया स्त्री**. [ धनस्य गर्भः लिप्सा । 'असनायोदन्य-  
धनाया बुभुक्षापिपासागर्भेषु'—इति क्षयन्तो निपा-  
तितः, टाप् च ] तृष्णा; धनलोभः । ३६४

**धनिष्ठा स्त्री**. [ अतिशयेन धनवती । धन + इष्ठम् + टाप् ]  
अद्विबन्धादिसत्त्वविशतिनक्षत्रान्तर्गतत्रयोविंशतक्षत्रं; अ-  
विष्ठा; वसुदेवता; भूतिः; निधानं; धनवती;  
'आचारजातादरचारशूलो, धनाधिशाली बलवान्  
दयालुः । यस्य प्रसूतो च भवेद्वनिष्ठा, महत्प्रतिष्ठा-  
सहितो नरः स्यात्'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ५१

**धनुः** पुं [ धनतीति धन् + 'भृमृशीतृचरीति' उ ] चापः;  
'धनुर्वंशविशुद्धोऽपि निर्गुणः किं करिष्यति'—इति हितो-  
पदेशे । राशिविशेषः; पियालवृक्षः । ४६४

**धनुः** [ स् ] स्त्री. [ धनतीति, धन् शब्दे + 'अतिपूर्व-  
पीति' उति, स च नित् ] क्षरनिःक्षेपयन्त्रं; चापः; धन्वः;  
शरासनं; कोदण्डं; कार्मुकम्; इज्वासः; स्थावरं;  
गुणी; शरावापः; तृणता; त्रिणता; श्रेयः; अस्त्रं;  
धनुः; तारकं; काण्डम्; आसनविशेषः; 'पादाद्गुण्ठी

तु पाणिभ्यां गृहीत्वा श्रवणावधि । धनुराकर्षणं कुर्याद्वि-  
नुरासनमुच्यते'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (१।२५) ।  
चतुर्हस्त परिमाणं; 'चतुर्विंशाङ्गुलो हस्तास्तच्चतुष्कं  
धनुः स्मृतम्'—इति जलाशयतत्त्वम् । मेधाविद्वादश-  
रास्यन्तर्गतनवमराशिः; तौक्षिकः; 'बहुकलाकुशलः प्रबलो  
महान्, विमलताकलितः सरलोक्तिभाक् । शशधरे हि  
धनुर्धरणे नरो, धनकरो न करोति धनव्ययम्'—इति  
जातकचन्द्रिकायाम् । 'धनुर्लग्ने समुत्पन्नो नीतिमान्  
धनवान् सुखी । कुलमध्ये प्रधानश्च प्राप्तः सर्वस्य पोषकः'  
—इति कोष्ठीप्रदीपः । ४६४

धन्व [ न् ] क्ली. [ धन्वते गम्यते द्रुगमादिस्यलेऽनेनेति ।  
धन्व गतो, सौत्रो घातुः + कनिन् ] धनुः; [ धन्वते गम्यतेऽत्र  
इति ] स्थलम् । ४६४

धन्वम् क्ली. [ धनतीति, धन् शब्दे + 'उल्वादयश्च' इति  
वनप्रत्ययेन निपातनात् साधु ] धनुः; 'धनुर्धराय देवाय  
प्रियधन्वाय धन्विने । धन्वन्तराय धनुषे धन्वाचार्याय  
ते नमः'—इति महाभारते (७।२००।४३) । ४६४

धन्वा [ न् ] पुं. [ धन्वति जलाभावं गच्छतीति । धन्व +  
'कनिन् युवृषीति' कनिन् ] मरुदेशः; 'जनं न धन्वन्नभि  
सं यदापः सत्रा वावृषुद्वंवनानि यज्ञैः'—इति ऋग्वेदे  
(६।३४।४) । अन्तरिक्षं; लक्षणाद् उदकमपि; 'धन्व-  
च्युत इपं न यामनि पुरुषैषा अहन्यो नैतशः'—इति  
ऋग्वेदे (१।१६८।५) । 'धन्वच्युत इत्यत्र धन्वन्-  
शब्दोऽन्तरिक्षस्य वचनः, तेन तत्स्थमुदकं लक्ष्यते उदक-  
साविणो मेधा इव' इति तद्भाष्ये सामानाचार्यः । १५८

**धमनिः** स्त्री. [ धम्यते इति, धम् + अतिशृषृषमीति'  
अनि ] धमनी; श्रीवा; नाडी; 'यास्त्रे शतं धमनयो-  
ऽङ्गान्यनु विष्टिताः'—इति अथर्ववेदे (६।९०२) ।  
प्रह्लादभ्रातुर्हृदिस्य पत्नी; 'ह्लादस्य धमनिर्मायसित  
वातापिरित्वलम्'—इति भागवते (६।१८।१५) ।  
वाक्; शब्दः; 'दूरे पारे वाणीं वर्षयन्त इन्द्रेयितां धमनि  
पप्रयन्ति'—इति ऋग्वेदे (२।११।८) । ५१६

**धमनी** स्त्री. [ धमनि + वा ङीप् ] श्रीवा; नाडी; 'दश  
विद्याद् धमन्योऽत्र पञ्चेन्द्रियगुणावहः । याभिः सूक्ष्माः  
प्रजायन्ते धमन्योऽन्याः सहस्रशः'—इति महाभारते  
(१२।२१४।१७) । हृद्विलासिनी; हरिद्रा; पृश्नि-  
पर्णी; नलिका । ५१६

**धम्मिल्लः** पुं. [ धमतीति, धम्+विच् । मिलतीति, मिल्+बाहुलकार्लक् । ततः कर्मधारयः ] संयताः कचाः; कुसुमगर्भो मौक्तिकपद्मरागलतिकादिना ब्रहिः संयतो वद्धः केशकलापः; 'साकूतस्मितमाकुलाकुलगलद्धम्मिल्ल-मुल्लासितभ्रूवल्लोकमलीकर्दाशितभुजावालाद्धहस्तस्तनम्'—इति गीतगोविन्दे (२।२१) । ५३०

**धरः** पुं. [ धरति पृथिवीमिति । धृ+अच् ] पर्वतः; 'उत्कं धरं द्रष्टुमवेक्ष्य शौरिम् उत्कन्धरं दासक इत्युवाच'—इति माघे (४।१९) । कार्पासतूलकः; कूर्मराजः; वसुभेदः; 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलानलौ । प्रत्यूपश्च प्रभासश्च वसवो नामभिः स्मृताः'—इति हरिवंशे (३।३९) । महादेवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।१०३) । विष्णुः; श्रीकृष्णः; 'सर्वशोकमयो नित्यः शास्ता धाता धरो ध्रुवः'—इति महाभारते (६।६३।३३) । धारके त्रि. । यथा—काकपक्षधरः । १६५

**धरणिः** स्त्री. [ धरति जीवादीनिति । धृ+अतिसृ-धमीति' इति ] पृथिवी; 'ज्योतिर्धरणिवायुरहिते अन्धे जलैकार्णवे लोके'—इति महाभारते (१२।३४२।४) । १५६

**धरणिधरः** पुं. [ धरतीति, धृ+अच् । धरण्याः धरः ] विष्णुः; कच्छपः; पर्वतः; शेषः । २२

**धरणी** स्त्री. [ धरणि+वा डीप् ] पृथिवी; 'यदा तु भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्रियम्'—इति विष्णुपुराणे (१।१।१४१) । शाल्मलिवृक्षः; नाडी; कन्दविशेषः; धारणीया; धीरपत्नी; मुकुन्दकः; कन्दालुः; वनकन्दः; कन्दाढ्यः; दण्डकन्दकः । १५६

**धरा** स्त्री. [ धरति जीवसंघात्रिति । धृ+अच्; यद्वा ध्रियते शेषेण इति । धृ+अप्+टाप् ] पृथिवी; 'धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी-विस्तारयोगतः'—इति भागवते (३।१३।८) । गर्भाशयः; मेदः; नाडी; महादानविशेषः; 'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धरादानमनुत्तम् । पापक्षयकरं नृणामसाङ्गल्यविनाशनम्'—इति मत्स्यपुराणे । १५६

**धरात्मजः** पुं. [ धरायाः आत्मजः ] मङ्गलग्रहः; भीमः; नरकामुरः । ४६

**धराधारा** स्त्री. [ धराणां गिरिवृक्षादीनामाधारो यत्र ]

पृथिवी; भूमिः; १५७  
**धरित्री** स्त्री. [ धरति जीवजातमिति, ध्रियते शेषेण वा । धृ+अशिन्नादिभ्य इत्रोत्री' इति इत्र, गीरादित्वाद् डीप् ] पृथिवी; 'स्वमूर्तिलाभप्रकृति धरित्रीं लतेव सीता सहसा जगाम'—इति रघुवंशे (१४।५४) । १५६

**धर्मः** पुं.—क्ली. [ धरति लोकान्, ध्रियते पुण्यात्मभिरिति वा । धृ+अतिस्तुद्धमिति' मन् ] शुभादृष्टः; पुण्यः; श्रेयः; सुकृतः; वृषः; 'एक एव सुहृद्धर्मो निघनेऽप्यनुयाति यः । शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति'—इति हितोपदेशे (१।५९) । स्वभावः (७।८२); न्यायः; आचारः; उपमा; क्रतुः; 'कृत्वा प्रवर्ग्य धर्माख्यं यथावद् द्विजसत्तमाः । चक्रुस्ते विधिवद्राजंस्तथैवाभिपद्यं द्विजाः'—इति महाभारते (१४।८।२१) । अहिंसा; उपनिषत्; दानादिके क्ली. । 'प्राणायामस्तथा ध्यानं प्रत्याहारोऽथ धारणा । स्मरणं चैव योगोऽस्मिन् पञ्च धर्माः प्रकीर्तिताः'—इति योगसारे । पुं. धनुः; यमः; सोमपः; सत्सङ्गः; अहंन्; देवताविशेषः; स ब्रह्मणो दक्षिणस्तनाज्जातः । 'अङ्गुष्ठाद्दक्षिणाद्दक्षः प्रजापतिरजायत । धर्मस्तनान्तादभवद् हृदयात् कुसुमायुधः'—इति मत्स्यपुराणे (३।१०) । द्रुह्युवंशीय-नृपविशेषः; 'द्रुहोस्तु तनयो वभ्रुः सेतुस्तस्यात्मजस्ततः । आरब्धस्तस्य गान्धारस्तस्य धर्मस्ततो धृतः'—इति भागवते (१।२३।१४) । १२५

**धर्मचिन्ता** स्त्री. [ धर्मस्य चिन्ता भावना ] पुण्यभावना; उपाधिः । ७७०

**धर्मध्वजी** [ न् ] त्रि. [ धर्मो ध्वजश्चित्तम् । स एवास्त्यस्येति । धर्मध्वज+इति ] जीविकायं जटादिधारो, न तु परमार्थतो धर्मानुष्ठानकारो; लिङ्गवृत्तिः; 'धर्मध्वजी सदालुब्धश्छादमिको लोकदम्भकः । वैशालव्रतिको ज्यो हिन्नः सर्वाभिसन्वकः'—इति मनुः (४।१९५) । ४०५

**धर्मराजः** पुं. [ धर्मण राजते इति । धर्म+राज+अच् ] यमः । [ धर्मश्चासी राजा चेति समासे टच् ] 'धर्मराजः प्रहृष्टात्मा सावित्रीमिदमन्नवान्'—इति महाभारते (३।२९६।५४) । जिनः; नरपतिः; युधिष्ठिरः; 'अपृच्छद् धर्मराजो हि शरत्तल्पगतं पुरा'—इति हरिवंशे (१६।८) । धर्मप्रधाने त्रि. । 'धृत्या च ते

प्रीतमनाः सदाहं त्वं वा वरुणो धर्मराजो धर्मो वा—इति  
महाभारते (१।५५।११) । ७२

धर्षणिः स्त्री. [ कर्षतीति । कृष्+कृषेरादेश्च घः—इति  
अनि आदेश्च घः ] वन्वकी; असती; वृषलीः । ४९६  
धर्षणीः स्त्री. [ धर्षणि+कृदिकारादिति वा डीप् ] धर्षिणी,  
असती । ४९६

धर्षिणी स्त्री. [ धर्षति हिन्स्ति कुलमिति । धृष्+णिनि+  
डीप् ] असती; पुंश्चली । ४९६

धवः पुं. [ धुनोति धवतीति वा । धु, धू वा+अच् ] पतिः;  
स्वामी; 'मा विद्या च हरेः प्रोक्ता तस्या ईशो यतो भवान् ।  
तस्मान्माधवनामासि धवः स्वामीति शब्दितः—इति  
हरिवंशे । (८१२) वृक्षविशेषः; घुरन्धरः; शाकटाख्यः;  
दूढतरुः; गौरः; कर्षायः; मधुरत्वक्; शुष्कवृक्षः;  
पाण्डुतरुः; धवलः; पाण्डुरः । 'धवो घटो नन्दितरुः  
स्थिरो धौरो घुरन्धरः । धवः शीतप्रमेहाशः पाण्डुपित्त-  
कफापहः । मधुरस्तुवरस्तस्य फलं च मधुरं मनाक्—  
इति भावप्रकाशः । [ धुब् कम्पने+ 'ऋदोरप्' इति भावे  
अप् ] कम्पनम्; नरः; 'शौचविशिष्ट्याप्यस्ति किञ्चित्  
कार्यं क्वचिन्मृदा । निर्घनेन धवनेह न तु किञ्चित्  
प्रयोजनम्—इति पञ्चतन्त्रे (२।१०९) । धूतः । ४९७  
धवलः पुं [ धावतीति, धावु गतिशुद्धयोः+ 'धावतेर्वाहुल-  
काद् ह्रस्वत्वञ्च' इति कल ह्रस्वश्च ] शुवलः;  
धववृक्षः; चीनकर्पूरः; रागविशेषः; वृषश्रेष्ठः; त्रि.  
सुन्दरः; श्वेतगुणयुक्तः; 'धवलनखलक्ष्म दुर्वलम-  
कलितनेपथ्यमलकपिहितोक्ष्याः—इति आर्यासप्तशत्याम्-  
(३०६), श्वेतमरिचे क्ली. । ७३२

धवलितः त्रि. [ धवलः गुणः संजातः अस्य ] शुक्लीकृतः ।  
२९४

धाता [ ऋ ] पुं. [ दधातीति, धा+तृच् ] ब्रह्मा; 'धातारं  
तपसा प्रीतं यथाचे स हि राक्षसः । दधातु सर्गादिवध्यत्वं  
मर्त्येष्वस्थापराङ्मुखः—इति रघो (१०।४३) ।  
विष्णुः; 'आधारनिलयो धाता पुष्पहासः प्रजागरः—  
इति महाभारते (१३।१४९।११५) । 'संहारसमये सर्वाः  
प्रजा धमति धिब्रतीति धाता, घट्टं पाने इति धातुः,  
इति शाङ्करभाष्यम् । महादेवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च  
मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः—इति महाभारते (३।१।७।  
१०३) । भृगुमुनिपुत्रः; अनपञ्चाशद्वाय्वन्तर्गतवायुवि-

शेषः; 'धाता दुर्गो धितिर्भीमस्त्वभिपुंक्तस्त्वपात् संहः ।  
द्युतिर्धंपुरनाप्योयवासः कामो जयो विराट् । इत्येको-  
नास्य पञ्चाशन्मस्तः पूर्वसम्भवाः—इति वह्नपुराणे ।  
आदित्यविशेषः; 'अदित्यां द्वादशादित्याः सम्भूता  
भुवनेश्वराः । ये राजन् ! नामतस्तांस्ते कीर्तयिष्यामि  
भारत ! धाता मित्रोऽयं मा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च—  
इति महाभारते (१।६५।१४-१५) । ब्रह्मणः पुत्रविशेषः;  
'द्वौ पुत्रौ ब्रह्मणस्त्वन्पौ ययोस्तिष्ठति लक्षणम् । लोके  
धाता विधाता च यो स्थितो मनुना सह—इति महा-  
भारते (१।६६।५१) । धारकः; पालके त्रि. । ६

धातुः पुं. [ धीयते सर्वमस्मिन्निति । धा+ 'सितनिगमीति'  
तुन् ] अश्मविकृतिः; सा तु गैरिकमनःशिलादि;  
'अकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्—इति कुमार (१।४) ।  
अस्थि (६३२); महाभूतानि (८५७); यथा—  
पृथिवी, जलम्, तेजः, वायुः, आकाशः । तद्गुणाः;  
यथा—गन्धः, रसः, रूपम्, स्पर्शः, शब्दः । इन्द्रियाणि;  
यथा—घ्राणम्, जिह्वा, चक्षुः, त्वक्, श्रोत्रम् । शरीरः-  
धारकवस्तूनि; यथा—कफः, वातः, पित्तम् । 'रसा-  
सृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः । सप्त द्रव्या  
मला मूत्रशकृत्स्वेदादयोऽपि च—इति वाग्भटे । 'एते  
सप्त स्वयं स्थित्वा देहं दधति यन्नृणाम् । रसासृङ्-  
मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः ।' शब्दमूलम्;  
तच्च साधु शब्दप्रकृतिः भू-पच्-पठ्प्रभृतिः । स्वर्णादिः;  
'सुवर्णरूप्यमाणिक्यहरितालमनः शिलाः । गैरिकाञ्जन-  
कासीससीसलोहाः सहिङ्गुलाः—इति शब्दमाला ।  
नवधातवः; 'हेमतारारनागाश्च ताम्रवज्जे च तीक्ष्णकम् ।  
कांस्यकं क्रान्तलोहश्च धातवो नव कीर्तिताः—इति  
सुखबोधे । अष्ट धातवः; 'हिरण्यं रजतं कांस्यं ताम्रं  
सीसकमेव च । रङ्गमायसरैत्यञ्च धातवोऽष्टौ प्रकी-  
र्तिताः—इति दानसागरे । सप्त धातवः; 'स्वर्णं रूप्यं  
च ताम्रं च रङ्गं यशदमेव च । सीसं लोहं च सप्तौ  
धातवो गिरिसम्भवाः—इति भावप्रकाशः । 'माक्षिकं  
तुल्यिकाभ्रं च नीलाञ्जनशिलालकाः । रसकश्चेति  
विज्ञेया एते सप्तोपधातवः । 'स्तन्यं रजश्च चारीणां  
काले भवति गच्छति । शुद्धमांसभवः स्नेहो यः सा  
संकीर्त्यते वसा । स्वेदो दन्तास्तथा केशास्तथैवोजश्च  
सप्तमम् । इति धातुभवा ज्ञेया एते सप्तोपधातवः—



इति सुखबोवः । १७०

धात्री स्त्री । [ धीयते पीयते इति । घेट् पाने+ 'सर्वधातुभ्यः  
ष्टन्' इति कर्मणि ष्टन् । पित्वाद् डीष् । स्तनदुग्ध-  
पानात्तयात्वम् । यद्वा दधाति धरतीति, धा+तृच्+  
डीष् । दधाति धारयति सर्वमिति ] क्षितिः; उपमाता  
(५०७) ; 'कुमाराः कृतसंस्कारास्ते धात्रीस्तनपायिनः ।  
आनन्देनाग्रजेनेव समं ववृधिरे पितुः'—इति रघुवंशे  
(१०।७८) । आमलकीवृक्षः (६१८) ; अस्याः पर्यायाः—  
'धात्री कर्षफलं तिष्या वयस्यामलकी शिवा'—इति  
वैद्यकरत्नमाला । माता; 'पुनर्धात्री पुनर्गर्भोजस्तस्य  
प्रधावति । अष्टमे मास्यतो गर्भो जातः प्राणैर्विमुच्यते'—  
इति याज्ञवल्क्यसंहिता (३।८२) । गायत्रीस्वरूपिणी  
भगवती; 'धात्री धनुर्धरा धनुर्धारिणी धर्मचारिणी'—  
इति देवीभागवते (१२।६।७८) । गङ्गा; 'धर्मोमि-  
वाहिनी धुर्या धात्री धात्रीविभूषणम्'—इति काशीखण्डे  
(२१।९२) । १५६

धाना स्त्री । [ धीयते इति, धा+ 'धापवस्यज्यतिभ्यो नः'  
इति न, टाप् ] भृष्टयवाः; धान्यकम्; 'धान्यकं धानकं  
धान्यं धाना धानेयकं तथा । कुन्टी घेनुकाच्छ्रा  
कुस्तुम्बुरी वितुन्नकम्'—इति भावप्रकाशः । अभिनवः;  
अङ्कुरः; मित्रः; चूर्णसक्तवः । ५८५

धानाः स्त्री । [ धीयन्ते इति, धा+ 'धापवस्यज्यतिभ्यो नः'  
इति न, टाप् ] भृष्टयवाः । बहुवचनान्तोऽयं शब्दः ।  
'प्रसेतामश्वा वि मुचेह शोणा दिवे दिवे सदृशीरद्धि  
धानाः'—इति वेदे । 'त्वन्तु सदृशीरेकल्पान् धाना भृष्टय-  
वान् दिवे दिवे प्रतिदिवसमद्धि भक्षय' इति तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । 'यदास्तु निस्तुषा भृष्टाः स्मृता धाना  
इति स्त्रियाम् । धानाः स्युर्दुजरा रूमास्तृट्प्रदा गुरवश्च  
ताः । तथा मेदःकफच्छदिनाशिन्यः सम्प्रकीर्तिताः'—  
इति राजनिघण्टुः । 'धानासंज्ञास्तु ये भक्ष्याः प्रायस्ते  
लेखनात्मकाः । शुष्कत्वात्तर्षणा चैव विष्टन्मिन्त्वाच्च  
दुर्जराः । विष्टधानाः शष्कुल्यो मधुकीढाः सपिण्डकाः ।  
रूपाः पूषुलिकाद्याश्च गुरवः पैष्टिकाः परम् । 'धाना  
पपंट्रूपाद्यास्तान् नुद्ध्वा निदिशेतवा'—इति चरकः ।  
५८५

धान्यम् क्ली । [ धाने पोषणे साधु इति । धान+ 'क्षत्र  
काप्' इति षट् । यद्वा दधातीति, धा+ 'दधातेर्धन् नुट्

च' इति यन् नुट् च ] सतुषतण्डुलादि; भोग्यं; भोगार्हम्;  
अन्नम्; अर्घं; जीवसाधनं; स्तम्बकरिः; श्रीहिः; 'धान'  
इति भाषा । 'विश्वं स देवः प्रति वारमग्ने घत्ते धान्यं  
पत्यते वसव्यैः'—इति ऋग्वेदे (६।१३।४) । धन्याकम्;  
'धन्याकं धान्यकं धान्यं कुस्तुम्बुर धनीयकम् । धन्या  
कुस्तुम्बुरी चान्या वेषलोम्ना वितुन्नकम्'—इति वैद्यक-  
रत्नमालायाम् । परिपेलं; चतुस्तिरुपरिमाणम् । ५८५  
धान्यकम् क्ली । [ धान्यमिव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृती'  
इति कन् ] धान्याकम्; 'धान्यकं चाजगन्धा च सुमुखा-  
श्चेति रोचनाः । सुगन्धा नाति कटुका दोषानुत्कलेशयन्ति  
तु'—इति चरकः । [ धान्यमेव, स्वार्थे कन् ] धान्यं;  
पुं. क्षत्रियनृपतिवि शेषः; 'राजन्याविच्छटकुलोद्भूता-  
वुदयधान्यकौ'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।१०।५) ।  
६१७

धान्यकोष्ठकम् क्ली । [ धान्याय धान्यरक्षणाय यत् कोष्ठकं  
गृहम् ] धान्यरक्षार्थगृहम् । ३१२

धान्यशीर्षकम् क्ली । [ धान्यस्य शीर्षकम् अग्रभागः ]  
धान्यमञ्जरी । ५७९

धान्यशूकम् क्ली । [ धान्यस्य शूकम् ] किशारुः; धान्य-  
शिखा । ५७९

धान्याकम् क्ली । [ धान्यमकति सादृश्यत्वेन प्राप्नोतीति ।  
अक् गती+अण् ] धन्याकं; 'धनिया' इति भाषा । ६१७

धान्याम्लम् क्ली । [ धान्याद् धान्यविकारात् जातम्  
अम्लम् ] काष्ठीकम्; 'धान्याम्लं शालिचूर्णानां कोद्र-  
वादिकृतं भवेत् । धान्याम्लं धान्ययोनित्वात् प्रीणनं लघु  
दीपनम् । अरुचौ वातरोगेषु सर्वेष्व्वास्यापने हितम्'—  
इति भावप्रकाशः । 'धान्याम्लं भेदि तीक्ष्णोष्णं पित्तकृत्  
स्पर्शाशीतलम् । अन्नमलमहरं रुच्यं दीपनं वस्तिशूलनुत् ।  
शस्तमास्यापने हृद्यं लघुवातकफापहम्'—इति वाग्भटः ।  
३१८

धाम [ न् ] क्ली । [ दधाति गृहस्यादिकं, धीयते द्रव्य-  
जातमस्मिन्निति वा । धा+ 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति  
मनिन् ] रमिः; 'पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः  
किमेतदित्याकुलमीक्षितं जनैः'—इति माघे (१।२)  
गृहम् (२९१); 'मर्तुः कष्टञ्चविरितिगर्भैः सादरं  
वीक्ष्यमाणः । पुष्यं पायास्त्रिभुवनगुरोर्बाम चम्प्री-  
श्चरस्य'—इति मेघदूते (३५) । सिद्ध (७९८) ।

देहः; प्रभावः; 'सहते' न जनोऽप्यधःक्रियां किमु लोकाधिकधाम राजकम्—इति किराते (२।४१) । स्थानम्; 'त्रिषु धामसु यद्भोग्यं भोक्ता भोगश्च यद्भवेत् । तेभ्यो विलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोऽहं सदा शिवः'—इति पञ्चदश्याम् (७।२।१४) । जन्म; विष्णुः; 'गुरुर्गुस्तरो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः । धाम ज्योतिः, नारायणः परं ज्योतिरिति मन्त्रवर्णात् । सलोकानामास्पदत्वाद् वा धाम । परं ब्रह्म परं धाम इति श्रुतेः' इति तद्भाष्यम् । ३९

**धारा स्त्री.** [ धार्यन्ते अश्वा यथा । धृ+णिच्+अञ्, स्त्रियां टाप् ] प्रवाहः; 'सहस्राक्षं शतधारमृषिभिः पावनं कृतम् । तेन त्वामभिषिञ्चामि पावमान्यः पुनन्तु ते'—इति याज्ञवल्क्यः (१।२८०) । अश्वानां पञ्चधागतिः; 'अश्वानां तु गतिर्धारा विभिन्ना सा च पञ्चधा । आस्कन्दितं धोरितकं रैचितं वलितं प्लुतम्'—इति वैजयन्ती । सैन्याग्रिमस्कन्धः; घटादिच्छिद्रम्; सन्ततिः; 'उत्पपात ततो धारा वारिणो विमला शुभा'—इति महाभारते (६।११८।२४) । द्रवस्य प्रपातः; 'त्वया द्वादश वर्षाणि वसोद्वारिद्रुतं हविः । उपयुक्तं महाभाग ! तेन त्वां गलानिवाशित्'—इति महाभारते (१।२२४-५९) । खड्गादेनिशितमुखम्; 'द्रुवं स नीलोत्पल-पत्रधारया शमीलतां छेतुमृषिव्यवस्यति'—इति शाकुन्तले । उत्कर्षः; रयचक्रम्; 'आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेवं कलङ्करेखा'—इति रघौ (१३।१५) । यथा; अतिवृष्टिः; 'पर्जन्यस्य यथा धारा यथा च दिवि तारकाः । सिकतारेणको यद्वत् संख्यया परिवर्जिताः । गुणाः संख्यापरित्यक्तास्तद्वदस्य महात्मनः' इति पञ्चतन्त्रे (२।६२) । समूहः; घनासारव-र्षणं; सद्गुहा; मालवदेशस्थपुरीविशेषः; तीर्थविशेषः; 'प्रदक्षिणमुपावृत्य गच्छेत् भरतर्षभ ! धारां नाम महाप्राज्ञ ! सवंपापप्रमोचनीम् । तत्र स्नात्वा नख्याघ्न ! न शोचति नराधिप !'—इति महाभारते (३।८४।२३) । ज्वरादिशान्त्यर्थं श्रीनृसिंहादिभूषणि जलधारापातन-विधिः; 'तथा महाज्वरप्रस्ते धारां देवस्य मूर्द्धनि । सन्ततां नारसिंहस्य कुर्पांश्च कारयेत् द्विजैः'—इति नृसिंहपुराणे । ६६९

**धाराशब्द क्ली.** [ धारायाः अस्त्रतीक्ष्णभागस्य अग्रं कोटिः ]

बाणमुखम्; अस्त्रफलाग्रम् । ४६९

**धाराधरः पुं.** [ धरतीति, धृ+अच् । धाराणां धरः ] मेघः; 'रे धाराधर ! धीरजीरनिकरैरेषा रसा नीरसा, शोषा पूषकरोत्करैरतिखरैरापूरि मूरि त्वया । एकान्तेन भवन्तमन्तरगतं स्वान्तेन सम्बन्तयन्, आश्चर्यं परि-पीडितोऽभिरमते यन्चातकस्तुष्ण्या'—इति उत्तर-चातकाष्टके (४) । खड्गः । ५८

**धारासम्पातः पुं.** [ धाराणां सम्यक् पातो यत्र ] महा-वृष्टिः; धारा; सम्पातः; आसारः; 'धारासम्पात आसारस्त्रितयं चापि कुत्रचित्'—इति शब्दरत्नावली । 'ततो देवि ! परस्परं करितुरगरथपदातीनां निरन्तर-धारनिकरधारासम्पातोपदेशितदुर्दिनानां तेषामस्माकं च योधानां तुमुलः सम्प्रहारः प्रावर्तत'—इति प्रवोष-चन्द्रोदये ५ अङ्के । ५९

**धार्तराष्ट्रः पुं.** [ धृतराष्ट्रे भवः इति रामाश्रमी, 'धृतराष्ट्रः स्वमे सपे सुराजि क्षत्रियान्तरे' इति ह्यैः ] कृष्णवर्ण-पञ्चुचरणयुक्तहंसः; 'सत्यधा मधुरगिरः प्रसाधिताशा मदोद्धतारम्भाः । निपतन्ति धार्तराष्ट्राः कालवशा-न्मेदिनी पृष्ठे'—इति वेणीसंहारे (१।६) । सपुंविशेषः; धृतराष्ट्रपुत्रः; 'लाक्षागृहानलविषाघ्नसमाप्रवेशैः प्राणेषु वित्तनिवहेषु च नः प्रहृत्य । बाह्येष्टपाण्डवधूपरिधान-केशाः स्वस्था भवन्तु मयि जीवति धार्तराष्ट्रः'—इति वेणीसंहारे १ अङ्के । २५२

**धिषणः पुं.** [ धृष्णोति प्रागल्भ्यं ददातीति । धृप्+धृषे-धिष च संज्ञायाम् ] इति ष्यु । बृहस्पतिः । ४७

**धिषणा स्त्री.** [ धृष्णोत्यनयेति, धृष् प्रागल्भ्ये+क्यु धिषादेशश्च ] बुद्धिः; 'विवेष यन्मा धिषणा जजान स्तवैः पुरा पायोदिन्द्रमहः'—इति ऋग्वेदे (३।३२।१४) । स्तुतिः; 'तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममृतत्रनुम् । वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम्'—इति ऋग्वेदे (८।१५।७) । 'धिषणा स्तुतिः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । वाक्; 'क्षयां वस्ता जनिता सूर्यस्य विभक्ता भागं भागं धिषणेव वाजम्'—इति ऋग्वेदे (३।४९।४) 'धिषणेव । यथा-दधानां वाक् अस्येदमिति विभागं करोति तद्वत्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । प्रस्तरः; 'पवस्व धिषणाम्यः'—इति ऋग्वेदे (९।५९।२) 'किञ्च धिषणाम्यो प्रावम्यः पवस्व क्षर' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । धारयित्री;

द्यावापृथिव्योः द्विवचनान्तः; 'यं सुकृतं धियणे विस्वतष्टं घनं वृत्राणां जनयन्त देवाः—इति ऋग्वेदे (३।४९।१) 'धियणे देवमनुष्यादीनां धारयिष्यी। यद्वा प्रगल्भ्ये समये स्वाश्रितान् रक्षितुमिति धियणे द्यावापृथिव्यो' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। हविर्द्वानस्य पत्नी; 'हविर्द्वानात् प्रडाग्नेयी धियणा जनयत् सुतान्। प्राचीन-वर्हिषं साङ्गं यमं शुक्रं बलं शुभम्।' इति मात्स्ये (४।४५)। क्ली. स्थानम्; 'तदा विकुण्ठधियणात् तयोनिपतमानयोः। हाहाकारो महानासीद्विमानाप्रेषु पुत्रकाः—इति भागवते (३।१६।३२) 'विकुण्ठस्य धियणात् स्थानात्' इति तट्टीकायां श्रीवरस्वामी। ३३४

**विष्णुः** पुं. [ घृष्णोति प्रगल्भो भवतीति। घृष्+ण्य, निपातनात् साधुः ] शुक्राचार्यः; अग्निः। ४८

**विष्णुयम्** क्ली. [ घृष्णोति प्रगल्भो भवतीति। घृष्+सानसिवर्णसिपणसीति' ष्यप्रत्ययः निपातनाद् ऋकारस्य च इकारः ] स्थानम्; 'धीरक्षिणी चक्षुरभूत् पतङ्गः प्रक्षमाणि विष्णोरहनी उभे च। तद्भ्रुविजृम्भः परमेष्ठिधियण्यमापोऽस्य तालू रस एव जिह्वा'—इति भागवते (२।१।३०)। 'परमेष्ठिधियण्यं ब्रह्मपदम्—इति तट्टीकायां स्वामी। गृहम् (२९१); 'स्वर्गे लोके श्ववतां नास्ति विष्णुमिष्टापूर्तं क्रोधवशा हरन्ति—इति महाभारते (१७।३।१०)। नलवम् (५१); 'सापेन्द्रपोष्यधियण्यानामन्त्याः पादाः भसन्वयः—इति सूर्यसिद्धान्ते (११।२१)। अग्निः; 'ये भक्षयन्तो न वसून्त्यानृवृथानिग्नयो अन्वतप्यन्त विष्ण्याः—इति अथर्ववेदे (२।३५।१)। शक्तिः; उल्काभेदः; 'दिवि भुक्तशुभकलातां पततां रूपाणि यानि तान्युल्काः। विष्ण्योल्काग्निविद्युत्पारा इति पञ्चधा भिन्नाः—इति बृहत्संहितायाम् (३।३।१)। प्राणभिमानी देवः; 'अग्ने ! दिवा अणमच्छा जिगास्यच्छा देवा ऊचिषे धियण्या ये—इति ऋग्वेदे (३।२२।३)। 'धियं बुद्धयुपहितं देहम् उष्णन्ति उष्णीकुर्वन्तीति विष्ण्याः प्राणभिमानी देवाः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ५१

**धीः** स्त्री। [ धृषि चिन्तायाम्+भावे क्विप्-सम्प्रसारणं च ] बुद्धिः; धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीविद्या सत्यमक्रोवो दशकं परमलक्षणम्—इति मनुः (६।९२)। ३३४

**धीमान्** [त्] पुं. [ धीरस्यास्तीति। धी+मत्तुप् ] वि. पण्डितः; 'तस्य कर्मविवेकार्थं शेषाणामनुपूर्वशः। स्वायम्भुवो मनुर्वीमानिदं शास्त्रमकल्पयत्—इति मनुः (१।१०२)। बृहस्पतिः; नरपुत्रस्य विराजपुत्रः; 'नरो गयस्य तनयः तत्पुत्रोऽभूत् विराट् ततः। तस्य पुत्रो महावीर्यो धीमांस्तस्मादजायत—इति विष्णुपुराणे (२।३९)। पुरूरवसः उर्वशीगर्भजातपुत्रविशेषः; 'पट् सुता जज्ञिरेऽथेलादायुर्धोमानसावसुः। दृढायुश्च वनायुश्च शतायुश्चोर्वशीसुताः—इति महाभारते (१।७५।२४)। ३३२

**धीरः** वि. [ धियम् ईरयतीति। ईर्+अण् ] यद्वा धिय रातीति। रा+क ] पण्डितः; 'तथापरे चात्मसमाधियोगवलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम्। त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति तेषां श्रमः स्यान्न तु सेवया ते—इति भागवते (३।६।४५)। बलयुतः; धैर्यान्वितः; स्वैरः; मन्दः; 'देहे समीहे भवतो विद्यार्तुं धीरं समीरं नलिनीदलेन—इति रसमेञ्जयम्। विनीतः; गम्भीरः; 'अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव'—इति रघो (३।४४)। ३३२

**धीवरः** पुं. [ दधाति जत्स्यानिति। धा+छित्त्वरच्छत्त्वर-धीवरपीवरेति' ष्वरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] कवतः; 'यतो हि निम्नं भवति नयन्ति हि ततो जलम्। यतश्छिद्रं ततश्चापि नयन्ते धीवरा जलम्—इति महाभारते (२।२०।१७)। ५९४

**धुनिः** स्त्री. [ घृष्णोति वेतसादिनदीजातवृक्षादीनिति। घृष् कम्पने+बहुलवचनान् नि, स च कित् ] नदी; 'पथोदरन्तीरनुजोपमस्मै दिवे दिवे धुनयो यन्त्यथम्—इति ऋग्वेदे (२।३०।२)। पुं. जलप्रतिरोधकोऽमुरविशेषः; 'त्वं चुनिरिन्द्र धुनिमती ऋणोरपः सीरानवन्तीः—इति ऋग्वेदे (१।१७।१९)। 'हे इन्द्र त्वं धुनि कम्पयिता शत्रूणामसि। अतो धुनिमतीः कम्पयन्तरङ्गवतीः अथवा धुनिताम जलप्रतिकार्यामुरः स एव प्रतिवन्धकतया यासां तादृशीरपः—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। [ धूनयति कम्पयति शत्रूनििति ] मरुद्विशेषः; 'उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च—इति यजुःसंहितायाम् (३।९।७)। कम्पयतिरि वि. 'हिरण्यकेशो रजसोविंसारे हिवुनिवाति इव ध्रुजीमान्—इति ऋग्वेदे (१।७९।१)। ६६५

घृनी स्त्री. [ घृनि+कृदिकारादिति वा डीप् ] नदी; 'स त्वं विचक्ष्य मृगवेष्टितमात्मनोऽन्तः चित्तं नियच्छ हृदि कर्णघृनीं च चित्ते'—इति भागवते (४।२९।५५) ।

६६५

घुर्यः त्रि. [ घुरं वहतीति । घुर-+घुरो यड्ढकौ इति यत् । 'न मकुच्छुराम्' इति न दोषः ] घुरीणः; अनड्वान्; अश्वादिः; 'पुनरपि चान्योऽन्यस्वार्थी ब्राह्मण आगच्छत् । त्वरितोऽय तस्मै अपनह्य वामं घुर्यमददद् अथ प्रायात्'—इति महाभारते (३।१९७।१२) । घुरन्धरः; 'तामेकतस्तव विभति गुरुविनिद्रस्तस्या भवानपरघुर्यपदावलयी'—इति रघौ (५।६६) । श्रेष्ठः; 'वैन्यस्तु घुर्यो महतां संस्थित्याध्यात्मशिक्षया'—इति भागवते (४।२२।४९) । २६५

घूर् [ र् ] स्त्री. [ घूर्वतीति । घूर्व+क्विप् ] यानमुखं; रथादेरप्रभागः; 'क्षणत् प्रांशुः क्षणाद्घ्रस्वः क्षणान्च रयघूर्गतः'—इति महाभारते (१।१३६।२१) । भारः; 'तेन घूर्जंगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे'—इति रघौ (१।३४) । चिन्ता; अग्रम्; 'अपांसुलानां घुरि कीर्तनीया'—इति रघौ (२।२) । हिसके त्रि. । 'दशघुरो दशयुक्ता बहुङ्गयः'—इति ऋग्वेदे (१०।९४।७) । 'दशमिर्वुरो घूर्मिर्हिसितुभिः तृतीयायै प्रयमा'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । २६५

घूमकेतुः पुं. [ घूमः केतुश्चिह्नं यस्य ] अग्निः; 'प्रभां समुत्सृज्येदकौ घूमकेतुस्तयोऽमताम्'—इति महाभारते (१।१०३।१७) । उत्पातविशेषः; सवृमाभा तारका; 'भवत्कञ्चवरोदीर्गस्तारकास्यो महासुरः । उपप्लवाय लोकानां घूमकेतुरिवोत्थितः'—इति कुमारे (२।३२) । ग्रहमदः; 'घूमकेतो समुत्पन्ने ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः । ग्रहाणां सङ्गरेचैव न कुर्यान्मङ्गलक्रियाम् । उल्कापाते च त्रिदिनं घूमं पञ्च दिनानि च । वज्रपाते दिनं चैकं वजयेत् सवकर्ममु'—इति गर्गद्वयनम् । ८४०

घूमध्वजः पुं. [ घूमः ध्वजश्चिह्नं यस्य ] अग्निः; 'कथमन्यथा घूमोऽलम्मानन्तरं घूमध्वजे प्रज्ञायतां प्रवृत्तिरुपपद्येत'—इति चाविकीर्तनम् । ६२

घूमसंहतिः स्त्री. [ घूमस्य संहतिः समूहः ] घूमसमूहः । ६६

घूम्या स्त्री. [ घूम्यानां समूहः इति । घूम+पाशादित्वाद् यः ] घूमसमूहः । ६६

घूम्याटः पुं. [ घूम्या इव अटतीति । अट्+अच् ] पक्षिविशेषः; कुलिङ्गः; भृङ्गः । २४८

घूम्रः पुं. [ घूमं घूमवर्णं रातीति । रा+क; पृषोदरादित्वात् साधुः ] इयामरक्तमिश्रितवर्णः; घूमलः; कृष्णलोहितः; तद्वति त्रि. । 'घूमंघूम्रो वसागन्धो ज्वालावभ्रुशिरोरुहः । क्रव्याद्गणपरीवारश्चिताग्निरिव जङ्गमः'—इति रघुवंशे (१५।१६) । तुरुष्कः; असुरविशेषः; 'समुद्रो रभसश्चण्डो धूम्रश्चैव महासुरः'—इति हरिवंशे (२३२।८) । स्कन्दस्य सैनिकविशेषः; 'शृणु नामानि वाण्येषां येऽप्ये स्कन्दस्य सैनिकाः । घूम्रः श्वेतः कलिङ्गश्च सिद्धार्थो वरदस्तथा'—इति महाभारते (१।४५।६२) । ७३७

घूर्जटिः पुं [ घूर् भारभृता जटियंस्य । यद्वा जट् संघाते+इन्, घूर्गङ्गा जटिष्वस्येति । घुरस्त्रैलोक्यचिन्ताया जटिः संघातो यत्र वा ] शिवः; 'क्रुद्धः सुदण्डोष्णपुटः स घूर्जटिर्जटां तडिद्धिंसटोप्ररोचिपम्'—इति भागवते (४।५।२) । १२

घूर्तः त्रि. [ घूर्वति हिनस्तीति । घूर्व+हिसमृग्निण्-वामिदमिलूपूर्वव्यस्यस्तन् इति तन् ] वञ्चकः; मायी; विटः; 'प्रिया हि घूर्ता मम देविनः सदा, भवांश्च देवोपम ! राज्यमर्हति'—इति महाभारते (४।६।१२) । 'नराणां नापितो घूर्तः पक्षिणां चैव वायसः । दंष्ट्रिणां च शृगालश्च श्वेतभिक्षुस्तपस्विनाम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१३) । घूर्तकृत्; पुं. [ घूर्वति, हन्तीति । घूर्व+तन् ] घुस्तूरवृक्षः; चोरकः; खण्डलवर्णः, क्ली. विडलवर्णः; लौहिके म् । ३४९

घूलिः स्त्री. [ घूर्वति घृयते वेति । घूर्+बाहुलकात्-लि ] पायिवचूर्णः; रेणुः; पांशुः; रजः; घूली; पांसुः; क्षितिकणः; क्षौद्रः; चूर्णम्, तृस्तं; महीद्रवः; वातकेतुः; नभःकेतुः; कणा; क्षितिकणा । 'श्मशानचक्रानिल-घूलि घूर्नविकीर्णविधोतजटाकलापः । भस्मावगुण्डामलह्वमदेहो देवस्त्रिभिः पश्यति देवरस्ते'—इति भागवते (३।१४।२४) । ४४३

घूली स्त्री. [ घूलि+डीप् ] घूलिः । ४४३

धूसरः पुं. [ घृनातीति, घूर्+कृधूमदिभ्यः कित् इति सरन् स च कित् ] ईषत्पाण्डुवर्णः; तद्वति त्रि.; 'श्येन-पक्षिपरिधूसरालकाः सान्ध्यमेघरुधिराद्रिवाससः'—इति रघौ (१।१।६०) । उच्छ्रः; गदभः; कपोतः; तैलकारः;

धूसरवस्तूनि; यथा—लूता, धूलिः, करभः, गृहगोधिका, कपोतः, मूषिकः, रङ्गमः, काककण्ठः, खरादिः। ७३७

**धृष्टः** त्रि. [ धृष्+क्त ] निलज्जः; धृष्णकः; वियातः; धृष्णुः; दधृक्; धषितः; प्रगल्भः; 'जनस्य गोप्तासि विकत्यमानो न शोभसे वृद्धसभासु धृष्टः'—इति भागवते (५।१२।७)। पुं. चतुर्विधपत्यन्तर्गतपति-विशेषः; चेदिवंशीयकुन्तेः पुत्रः; 'कुन्तेर्धृष्टः सुतो जज्ञे रणधृष्टः प्रतापवान्'—इति हरिवंशे (३६।२४)। सप्तममनोः पुत्रविशेषः; 'मनुविवस्वतः पुत्रः श्राद्धदेव इति श्रुतः। सप्तमो वर्तमानो यस्तदपत्यानि मे शृणु। इक्ष्वाकुर्नभगरश्चैव धृष्टः शर्यातिरेव च'—इति भागवते (८।१३।२)। ३७१

**धेनुः** स्त्री. [ धयति लेढि सुतान्, धीयते वत्सैरिति वां। घेट् पाने+घेट इच्च' इति नु ] नवप्रसूता गौः; नवसूतिका; नवप्रसूतिका; 'यास्तु पापविनाशिन्यः पठयन्ते दश धेनवः। तासां स्वरूपं वक्ष्यामि नामानि च धनाधिप'—इति मत्स्यपुराणे। २६९

**धेनुका** स्त्री. [ धेनुरिव प्रतिकृतिः। धेनु+कन्+टाप् ] हस्तिनी; [ धेनुरेव, स्वार्थे कन् ] गौः; 'इमां ते तरुणीं भार्यां त्वदाधिमिरभिप्लुताम्। कथं सन्वारयिष्यामि विवल्गमिव धेनुकाम्'—इति महाभारते (७।७६।१८)। ७९९

**धोरजम्** बळी. [ धोरति. गच्छत्यनेनेति। धोर+करणे ल्युट् ] बाहनमात्रं; हस्त्यश्वरथदोलादिः; अक्षप्रथम-गतिः; धोरितकृत्; धोर्यः; धोरितम्। ४४९

**धौतम्** त्रि. [ धाव्यते स्मेति, धाव्+कर्मणि क्त ] मार्जितं; निर्णिकतं; शोधितं; मृष्टं; क्षालितं; प्रक्षालितम्; 'धोया' इति भाषा। 'ईषद्धौतं स्त्रिया धौतं यद्धौतं रजकेन च। अधौतं तद्विजानीयाद्दशा दक्षिणपश्चिमे'—इति कर्मलोचनम्। बली. रूप्यम्। (४७४) निशितः; तेजितः। ४०८

**धौतकौशेयम्** बली. [ धौतं क्षालितं कौशेयम् ] पत्रोर्णम्; कौशेयमेव धौतं प्रक्षालितं पत्रोर्णस्यै; वटलकुचादि-पत्रेषु क्रिमिभिरुर्णायाः कृतत्वात् पत्रसम्बन्धिनी ऊर्णा अत्रेति पत्रोर्णम्। ५४९

**धौर्यः** पुं. [ धुरं वहतीति, 'धुरो यद्दुर्कौ' इति डक् ] अनद्वान्; त्रि. रयलाङ्गलादिभारबोढा। २६५

**ध्माकारः** पुं. [ ध्मा अग्निसंयोगस्तं करोतीति। ध्मा+कृ+अण् ] लोहकारकः। ५८८

**ध्रुवम्** त्रि. [ ध्रु गतिस्थैर्ये+बाहुलकात् क ] सन्ततं; शाश्वतं; स्थिरं; निश्चितम्; 'धो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणि निषेवते। ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव हि'—इति चाणक्यशतके। पुं. [ ध्रुवति स्थिरीभवतीति, ध्रु+बाहुलकात् क ] शङ्कुः (६३); वटः; शिवः; 'घाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।३०३)। विष्णुः; 'विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः'—इति महाभारते (१३।१४९।१९)। उत्तान-पादजः; वसुभेदः; 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चै-वानिलोऽनलः। प्रत्यृषश्च प्रभासश्च वसवोऽप्यौ प्रकी-र्तिताः'—इति मात्स्ये (५।२१)। योगभेदः; 'गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा'—इति ज्योतिषे। तत्र जातफलम्; 'नरीनर्ति वाणी सदा ववन्नपथे चरीकति काव्यं बरीमर्ति बन्धून्। ध्रुवास्ये प्रसूतिर्ध्रुवा तस्य कीर्तिर्दिगन्ते नितान्तं भवेच्चारुमूर्तिः'—इति कोष्ठी-प्रदीपः। स्थाणुः; शरारिपक्षी; ध्रुवकः; रोहिणीगर्भे वसुदेवाज्जातः पुत्रविशेषः; 'बलं गदं सारणं च दुर्मदं विपुलं ध्रुवम्। वसुदेवस्तु रोहिण्यां कृतादीनुदपादयत्'—इति भागवते (९।२४।४६)। पाण्डवपक्षीयः कश्चित् क्षत्रियवीरः; नहुषस्य पुत्रविशेषः; 'यति ययाति संयातिम् आयातिम् अयाति ध्रुवम्। नहुषो जनयामास षट् सुतान् प्रियवासासि'—इति महाभारते (१।७५।३०)। पुरु-वंशीयरन्तिनावस्य पुत्रविशेषः; 'ऋतेयो रन्तिनावोऽभूत् त्रयस्तस्यात्मजा नृप! सुमतिर्ध्रुवो प्रतिरथः कण्वो प्रतिरथात्मजः'—इति भागवते (९।२०।६)। रीमावर्त-विशेषः; 'द्वावुरस्यो शिरस्यो द्वौ द्वौ द्वौ रन्ध्रोपरन्ध्रयोः। एको भाले ह्यपाने च दशावर्ता ध्रुवाः स्मृताः'—इति शब्दार्थचिन्तामणौ। यज्ञीयग्रहपान्नविशेषः; 'यजमान-स्ततो ग्रहग्रहणमाध्रुवात्'—इति कात्यायनश्रीतसूत्रे (९।५।१७)। नासाग्रम्; 'अरुन्धतीं ध्रुवं चैव विष्णो-स्त्रीणि पदानि च। आसन्नमृत्युर्नो पश्येच्चतुर्थं मातृ-मण्डलम्। अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमुच्यते। विष्णोः पदानि भ्रूमध्ये नेत्रयोर्मातृमण्डलम्'—इति काशीखण्डे (१२।१३।१४)। ध्रुवगणः; यथा—उत्तरा-

फाल्गुनी, उत्तरापाठा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी । ताराविशेषः; 'मेरोरुभयतो मध्ये ध्रुवतारे नभःस्थिते । निरदादेशसंस्थानामुभये क्षितिमाश्रिते । भचक्रं ध्रुवयोर्वद्धमाक्षिप्तं प्रवर्हानिलैः । पर्येत्यजसं तन्नद्धा ग्रहकक्षा यथाक्रमम्—इति सूर्यसिद्धान्ते । क्ली. [ ध्रुवति स्थिरीभवतीति, ध्रु+ 'स्रुवः कः' इत्यत्र बाहुलकाद् ध्रु स्थैर्ये अतोऽपि क ] निश्चितम्; 'ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेतुमृपिव्यवस्यति'—इति शाकुन्तले । तर्कः; आकाशम् । १२५

ध्रुवकः पुं. [ ध्रुव+स्वार्थे कन् ] स्थाणुः; गीताङ्गविशेषः; 'उत्तमः पट्पदो ज्ञेयो मध्यमः पञ्चमः स्मृतः । कनिष्ठश्च चतुर्भिः स्याद् ध्रुवकोऽयं मयोदितः'—इति सङ्गीत-दामोदरः । ४५१

ध्वजः पुं—क्ली. [ ध्वजति उच्छ्रितो भवतीति । ध्वज्+पचाद्यच् ] पताका; 'किं तेन जातु जातेन मातुर्योवनहरिणा । आरोहति न यः स्वस्य वंशस्याग्रे ध्वजो यथा'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३२) । खट्वाङ्गं; मेडम्, 'विदग्धैस्तु मिरास्नायुत्वङ्मांसैः क्षीयते ध्वजः'—इति सुश्रुतः । चिह्नम्; 'तं वज्रे बाहनं विष्णु-गं कन्मन् महाबलम् । ध्वजं च चक्रे भगवानुपरि स्थास्यतीति तम्'—इति महाभारते (१।३३।१७) । गर्वः; दर्पः; पूर्वदेशो गृहं; पताकादण्डः; केतनम्; 'ततोऽर्जुनः सुगर्माणं विद्ध्वा सप्तभिर्गशुगैः । ध्वजं धनुश्चास्य तथा क्षुराभ्यां समकृन्तत'—इति महाभारते (७।२७।६) । पुं. [ ध्वजोऽस्त्यस्येति । ध्वज+अशं आदित्वाद्यच् ] गौण्डिकः; 'दग्धसूनासमं चक्रं दद्यात्क्रसमो ध्वजः । दग्धध्वजममो वेशो दशवेधसमो नृपः'—इति मनुः (७।८५) । ४५८

ध्वजिनी स्त्री. [ ध्वजोऽस्त्यस्या । ध्वज+इनि+ङीप् ] मेनाः; 'मन्त्रध्वजा वायुवशाद्विशेषं मुँसैः प्रवृद्धध्वजिनी-रजांनि । बभु. पिवन्तः परमार्थमत्स्याः पर्याविलानीव नवीदकानि'—इति रघुवंशे (७।४०) । ४५७

ध्वनिः पुं. [ ध्वननमिति, ध्वन्+ 'खनिकप्यञ्ज्यसीति' इ ] शब्दः; मृदङ्गादिशब्दः; 'शब्दो ध्वनिश्च वर्णश्च मृदङ्गादिभवो ध्वनिः । ऋणसंयोगजन्मानो वर्णस्ति काद्यो मनाः'—इति भाषापरिच्छेदः । [ ध्वन्यतेऽस्मिन्निति । ध्वन्+अधिकरणे इ ] उत्तमकाव्यम्;

'इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्वुधैः कथितः'—इति काव्यप्रकाशः । 'वाच्यातिशयिनि व्यङ्ग्ये ध्वनिस्तत्काव्यमुत्तमम्'—इति साहित्य-दर्पणे (४।१) । ५४०, १४३, १५१

ध्वाङ्क्षः पुं. [ ध्वाङ्क्षति उच्चैः रोतीति । ध्वाक्षि घोरवासिते, अच् ] काकः; 'शुष्कवृक्षस्थितो ध्वाङ्क्ष आदित्याभिमुखस्तथा । मयि चोदयते वामं चक्षुर्धोरम-संशयम्'—इति मृच्छकटिके ९ अङ्के । मत्स्यभक्षक-पक्षी (८०७); तक्षकः; भिक्षुकः । ('ध्माङ्क्षः' इति केचित् ।) २४५

ध्वाङ्क्षारातिः पुं. [ ध्वाङ्क्षणागारातिः शत्रुः ] पेचकः; उलूकः । २४६

ध्वानः पुं. [ ध्वन्+भावे घञ् ] शब्दः; 'श्यामाक्रन्दित-ध्वानो न च चीरो व्यव्यत'—इति राजतरङ्गिण्याम् । १३८

ध्वान्तम् क्ली. [ ध्वन्+ 'क्षुब्धस्वान्तव्वान्तेति' क्त प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] अन्वकारः; 'फणात्पद्मायुनमूर्द्धरत्न-द्युभिर्हृतध्वान्तयुगान्तनोये'—इति भागवते (३।८।२४) । ११०

न

नःक्षुद्रः त्रि [ नमा नामिकया क्षुद्र ] क्षुद्रनासिकः । ६०७  
नकुलः पुं. [ नास्ति कुल यस्य । 'नभ्राण्यनपादिति' नजो न लोपादि ] जन्तुविशेषः; पिङ्गलः; सर्पहा; वज्रु; सूचीवदनः; सर्पारिः; लोहिताननः; 'नेउला' इति भाषा । 'सत्त्वैः सत्त्वा हि जीवन्ति दुर्बलैर्वलवत्तरा । नकुलो मूषिकानति विडालो नकुलं तथा । विडालमनि श्वा राजन् ! श्वानं व्यालमृगमन्था'—इति महाभारते (१२।१५।२०) । पाण्डुराजस्य चतुर्थपुत्रः; स माद्रीगर्भे अश्विनीकुमाराभ्यां जातः । पुत्रः; शिवः; 'युधिष्ठिरस्य या कन्या नकुलेन विवाहिता । पूजिता सहदेवेन सा कन्या वरदा भवेत्'—इति विदग्धमुखमण्डने । कुलरहिते त्रि. । ८१६

नक्तञ्चरः पुं. [ नक्तं रात्रि चरतीति । चर्+ 'चरेष्टः' इति ट ] राक्षसः; गुग्गुलुः; चौरः; पेचकः; रात्रि-चरमात्रे त्रि. । 'नक्तञ्चरेभ्यो भूतेभ्यो बलिमाकाशतो हरेत्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (२९।२०) । ७३

नक्षत्रमालः पुं. [ नक्तं रात्रौ आ सम्यक्प्रकारेण अलति पर्याप्नोति । नक्तम्+आ+अल्+अच् ] करञ्जवृक्षः; 'स नर्मदारोधसि सीकराद्रैर्मर्षिद्धिरानतितनक्तमाले'— इति रघुवंशे (५।४२) । १९८

नक्षत्रमुखा स्त्री. [ नक्तं नक्तव्रताङ्गं मुखम् आदिभागो यस्याः ] रात्रिः । १०७

नक्रः पुं. [ न क्रामति दूरस्थलमिति । न+क्रम्+अन्येष्व-पीति ] ड । 'नभ्राडिति' नलोपो न ] कुम्भीरः; 'नक्रः स्वस्थानमासाद्य गजेन्द्रमपि कर्षति । स एव प्रच्युतः स्थानात् शुनापि परिभूयते'—इति पञ्चतन्त्रे (३।४३) । मकरः; 'तया चेन्नाचरेयं नयेत नक्रकेतनः क्षणेनैकेना-कीर्तनीयां दशां जनं चैनम्'—इति कादम्बर्याम् । ग्राहः; 'स तीरभूमी विहितोपक्रायामानायिभिस्तामपकृष्टनं-क्राम्'—इति रघुवंशे (१६।५५) । क्ली. [ नक्रवत् आकृतिरस्त्यस्येति, अच् ] अग्रदारः; नासिका । ६५६

नक्षत्रम् क्ली. [ न क्षरति क्षीयते वा । ष्टृन्प्रत्यये सति 'नभ्राण्नपादिति' निपातितः । न क्षत्रं वा, देवत्वात् क्षत्रियभिन्नत्वेन तथात्वम् । नक्षति शोभां गच्छति स्थानान्तरं गच्छति वा । णक्ष् गती+अभिनक्षिय-जिवधिपतिम्योऽत्रन्' इति अत्रन् ] तारा; ऋक्षं; भं; तारका; उडु; तारकं; तारः । दाक्षायण्यः (क्रान्तिवृत्त्यसप्तविंशतिनक्षत्राणि 'दाक्षायण्यः' इत्यु-च्यन्ते), तास्तु अश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका ३, रोहिणी ४, मृगशिराः ५, आर्द्रा ६, पुनर्वसुः ७, पुष्यः ८, आश्लेषा ९, मघा १०, पूर्वाफाल्गुनी ११, उत्तरा-फाल्गुनी १२, हस्तः १३, चित्रा १४, स्वातिः १५, विशाखा १६, अनुराधा १७, ज्येष्ठा १८, मूलम् १९, पूर्वाषाढा २०, उत्तराषाढा २१, श्रवणः २२, धनिष्ठा २३, शतभिषा २४, पूर्वाभाद्रपदा २५, उत्तराभाद्रपदा २६, रेवती २७ । नक्षत्रचतुर्भ्यभागवोयकानि चत्वारि नामाद्यक्षराणि यया—चु चे चो ल १, लिलु ले लो २, अ इ उ ए ३, ओ व वि वु ४, वे वी क कि ५, कु ष ङ छ ६, के को ह हि ७, हु हे हो ड ८, डि दु डे डो ९, म मि मु मे १०, मो ट टि टु ११, टे टो प पि १२, पु प ण ठ १३, पे पो र रि १४, रु रे रो त १५, ति तु ते तो १६, न नि नु ने १७, नो य यि यु १८, ये यो भ मि १९, भु व फ ढ २०, भे भो ज जि

२१, जु जे जो ख (अभिजित्), खि खु खे खो २२, ग गि गु गे २३, गो श शि शु २४, शो शो द दि २५, डु थ ङ्ग २६, दे दो च चि २७ । 'ऋ-लृ-युक्तश्चा-कारयुक्तेन ज्ञेयः । ह्रस्वेन दीर्घो ज्ञेयः । तालव्यशकारेण दन्त्यसकारो ज्ञेयः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । एतेषां लिङ्ग-ज्ञानं च तन्त्रान्तरे—'हस्तस्वातिश्रवणा अवलीवे मृगशिरा नपुंसि स्यात् । पुंसि पुनर्वसुपुष्यौ मूलं त्वस्त्री स्त्रियः शेषाः ।' वचनज्ञानं चैतेषां कर्मप्रदीपे—'आग्ने-याद्येऽथ सर्पाद्ये विशाखाद्ये तथैव च । आपाढाद्ये धनिष्ठाद्ये अश्विन्याद्ये तथैव च । द्वन्द्वान्येतानि बहुवद् ऋक्षाणां जुह्यात्सदा । द्वन्द्वद्वयं द्विवच्छेपमवशिष्टान्य-थैकवत् ।' एवं चाद्याश्चतस्रः स्त्रियां बहुत्वे, मृगशिराः स्त्रीकलीवयोरेकत्वे, आर्द्रा स्थ्येकत्वे, पुनर्वसुपुष्यौ पुंस्येकत्वे, आश्लेषाद्ये स्त्रीबहुत्वे, फाल्गुन्यौ स्त्रीद्वित्वे, हस्तो मिथुनैकत्वे, चित्रा स्थ्येकत्वे, स्वातिमिथुनैकत्वे, विशाखाद्ये स्त्रीबहुत्वे, ज्येष्ठा स्थ्येकत्वे, मूलमस्त्रि-यामेकत्वे, आपाढाद्ये स्त्रीबहुत्वे, श्रवणो मिथुनैकत्वे, धनिष्ठाद्ये स्त्रीबहुत्वे, भाद्रपदाद्वयं स्त्रीद्वित्वे, रेवती स्थ्येकत्वे इति निष्कर्षः । मुकुटस्तु यदाह 'अश्विनी भरणी रोहिणी मृगशिर आर्द्रा पुष्या-श्लेषा हस्त चित्रा स्वात्यनुराधा ज्येष्ठा मूलाषाढा श्रवण धनिष्ठा शतभिषगरेवतीनामेकवचनान्तत्वम्, पुनर्वसु फाल्गुनी विशाखा भाद्रपदानां द्विवचनान्तत्वम्, कृत्तिका मघयोर्बहुवचनान्तत्वम् । तत्रोक्तार्पवाक्य-विरोधः स्पष्टएवेतिव्याख्यासुधायांदाधिमयः । ५१

नक्षत्रमाला स्त्री [ नक्षत्रसंख्यिका-माला ] सप्तविंशति भौक्तिककृतहारः; 'सप्तविंशतिरूपाद्यै रूपकै रूप-रूपकैः । नृत्ये नक्षत्रमाला स्यान्मुक्तावलिरिवोज्वला'— इति सङ्गीतदासोदरः । नक्षत्राणां माला समूहः; नक्षत्र-श्रेणी; 'यावन्नक्षत्रमाला विरचति गगने भूपयन्तीह भासा; तावन्नक्षत्रभूतो विचरति सह तैर्ब्रह्मणोऽहोऽव-शेषम्'—इति बृहत्संहितायाम् (१०५।१३) । ५६३

नखम् क्ली.—पुं. [ न खम् इति, 'नभ्राण्नपादिति' निपातितः । यद्वा नख्यते इव शरीरे । णह् वन्वने+नहेर्हलोपश्च' इति ख, हलोपश्च ] अङ्गुलीकण्टकः; पुनर्भवः; कर-रुहः; नखरः; कामाङ्कुशः; करजः; पाणिजः; अङ्गुलीसम्भूतः; पुनर्भवः; कारग्रजः; करकण्टकः;

स्मराङ्कुशः; रतिरथः; करचन्द्रः; कराङ्कुशः।  
 'न नखैर्विलिखेद् भूमिं गां च सद्देशयेन्नहि । न स्वाङ्गे  
 नखवाद्यं वै कुर्यान्नाञ्जलिना पिबेत्'—इति कूर्मैः।  
 क्लीं। [ नखमिद आकृतिरस्त्यस्येति अच् ] नखीनामगन्ध-  
 द्रव्यं; शुक्तिः; शङ्खः; खुरः; कोलदलं; करजाख्यः;  
 अश्वखुरः; नखः; व्याघ्रनखः; नखी; कररुहः;  
 सिम्ब्री; शफः; चलः; कोशी; करजः; हनुः; नागहनुः;  
 पाणिजः; वदरीपत्रः; रूप्यः; पण्यविलासिनी; सन्धि-  
 नालः; पाणिरुहः; व्याघ्रायुधं; चक्रकारकं; शङ्ख-  
 नखः; नखरी । 'नखं व्याघ्रनखं व्याघ्रायुधं तच्चक्र-  
 कारकम् । नखं स्वल्पं नखी प्रोक्ता हनुर्हृद्विलासिनी ।  
 नखद्वयं ग्रहश्लेष्मवातास्रज्वरकुण्ठहृत् । लघूप्यं शुक्र-  
 लं वर्ण्यं स्वादुन्नपविपापहम् । अलक्ष्मीमुखदौर्गन्ध्यहृत्पा-  
 करसयोः कटु'—इति भावप्रकाशः । पुं. [ नह्यतेऽनेनेति,  
 नह+ख । हस्य लोपः ] खण्डम् । ५११

नखरः पुं.—क्लीं। [ न खनति खन्यते वा । 'डडरेकवकाः ।'  
 नखं रातीति, रा+क वा ] नखः; 'किं पुनरलङ्कृतस्त्वं  
 सम्प्रति नखरक्षतैस्तस्याः'—इति साहित्यदर्पणे । अस्त्र-  
 विशेषः; 'सकम्पनर्णिनखरा मुयलानि परस्वधाः'—  
 इति महाभारते (७।२९।१७) । 'पादाताश्चाग्रतोऽ-  
 गच्छन् धनुश्चर्मासिपाणयः । अनेकशतसाहस्रा नखर-  
 प्रासयोधिनः'—इति महाभारते (६।१८।१७) । ५११  
 नखरायुधः पुं. [ नखरमेव आयुधं यस्य ] सिंहः; व्याघ्रः;  
 कुक्कुटः । २१४

नगः पुं. [ न गच्छतीति, न+गम्+ड । यद्वा दह्यते इति,  
 दह्+ 'दहेर्गोलो नो दश्च नः' इति ग धातोर्नलोपो  
 दस्य च नः ] पर्वतः; 'नवे दुकूले च नगोननीतं प्रत्यग्रहीत्  
 सर्वममन्त्रवज्रं'—इति कुमारे (७।७२) । वृक्षः  
 (१७७); 'तं दग्ध्वा स नगं नागः कश्यपं पुनरब्रवीत् ।  
 कुंभ यत्नं द्विजश्रेष्ठ ! जीवयैनं वनस्पतिम्'—इति महा-  
 भारते (१।४३।६) । स्यावरमात्रम्; 'मूढ्या नगा  
 यतश्चोभता मुख्यसर्गस्ततस्त्वयम्'—इति विष्णुपुराणे  
 (१।५।६) 'नगाः स्यावराः' इति तट्टीकायां स्वामी ।

१६५

नगरम् क्लीं। [ नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र । 'नग-  
 पांसुराण्डुम्पश्च' इत्युक्तश्च र ] बहुलोकवासस्थानं;  
 पूः; पुरी; पुरिः; पुरं; नगरी; पत्तनं; पट्टनं; पट्टनी;

पुटभेदनं; पटभेदनं; स्थानीयं; निगमः; कटकं;  
 पट्टम् । 'स्थिरराशिगते भानी चन्द्रे च स्थिरभोदये ।  
 शुद्धे काले दिने चैव नगरं कारयेन्नृपः ।' 'दीर्घं वा चतुरस्रं  
 वा नगरं कारयेन्नृपः । तत् श्यस्रं वर्तुलं वापि कदाचिदपि  
 कारयेत्'—इति युवितकल्पतरुः । २८५

नगरी स्त्री. [ नगर+ङीप् ] नगरम्; 'प्रीत्या वदो स  
 कर्णाय मालिनीं नगरीमथ । अङ्गेषु नरशार्दूल ! स  
 राजासीत् सपत्नजित्'—इति महाभारते (१२।५।६) ।

२८५

नगोकाः [ स् ] पुं. [ नगो वृक्षः पर्वतो वा ओक आश्रय-  
 स्थानं यस्य ] पक्षी; सरभः; सिंहः; काकः; नगर-  
 वासिनि त्रि । २३८

नग्ना स्त्री. [ नग्न+टाप् ] विवस्त्रा स्त्री; कोटवी;  
 कोटवी; नग्निका; नग्नयोपित्; अनुद्भिन्नकुचा कन्या;  
 'ऋतुमत्यां तु तिष्ठन्त्यां स्वेच्छादानं तु दीयते । तस्मादु-  
 द्वाहयेद् नगनां मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्'—इति पञ्चतन्त्रे  
 (३।२।७) । ४८३

नग्नाटः पुं. [ नग्नः सन् अटतीति । अट्+अच् ] दिगम्बरः;  
 नग्नाटकः । ३४५

नग्निका स्त्री. [ नग्नैव, स्वार्थे कन् । टापि अत इत्वम् ]  
 विवस्त्रा स्त्री; कोटवी; कोटवी; कोटरी; अप्राप्त-  
 रजस्का; गौरी; अनागतातंवा; गौरिका; अजात-  
 कुचकन्या; 'अव्यञ्जना भवेत्कन्या कुचहीना तु नग्निका'  
 इति पञ्चतन्त्रे (३।२।३) । ४८४

नटः पुं. [ नटति नृत्यतीति, नट्+अच् । यद्वा नमतीति,  
 नम्+डट ] नर्तकः; शैलाली; शैलूपः; जायाजीवः;  
 कृशाश्वी; भरतः; सर्ववेशी; भरतपुत्रकः; धात्रीपुत्रः;  
 रङ्गजीवः; रङ्गावतारकः । 'तं क्रीडसे निजविनिमित्त-  
 मोहजाले नाट्ये यथा विहरते स्वकृते नटो वै'—इति  
 देवीभागवते (१।७।४२) । अशोकवृक्षः; किष्कुपर्वा;  
 मदनफलम्; 'मदनश्छर्दनः पिण्डी नटः पिण्डीतक-  
 स्तथा । करहाटो मरुवकः शल्यको विपपुष्पकः'—इति  
 भावप्रकाशः । अशोकः; 'अशोको हेमपुष्पश्च वञ्जुल-  
 स्ताम्रपल्लवः । कङ्कैलिः पिण्डपुष्पश्च गन्धपुष्पो नट-  
 स्तथा'—इति भावप्रकाशः । वर्णसङ्करजातिविशेषः;  
 'शौचिक्यां शौण्डिकाज्जातो नटो वल्ल एव च'—इति  
 पराशरपद्धती । त्रात्यायां क्षत्रियाज्जातः; 'क्षल्लो



मल्लश्च राजन्यात् ब्राह्म्यान्निच्छिविरेव च । नटश्च  
करणश्चैव खसो द्रविड एव च—इति मनुः (१०।२२)  
श्रीरागस्य पुत्रः हनुमन्मते दीपकरागस्य रागिणी । ५९२  
नटनारायणः पुं. [ नटानां नारायण इव ] रागविशेषः ।

१०० अ

नटी स्त्री. [ नटति शोभते इति । नट्+अच्+ङीप् । नटति  
नृत्यतीति, नट्+अच्+ङीप् वा ] नटपत्नी; 'जगुर्भ-  
द्राणि गन्धर्वा नटधश्च ननृतुर्जगुः'—इति भागवते  
(८।८।१२) । इयं हि पञ्चमकारपूज्यकुलनायिकान्त-  
र्गता; 'नटी कापालिनी वेश्या रजकी नापिताङ्गना ।  
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका । माला-  
कारस्य कन्या च नव कन्याः प्रकीर्तिताः'—इति तन्त्र-  
सारे । नलीनामगन्धर्व्यं; वेश्या । ५९२

नटीसुतः पुं. [ नटथाः सुतः पुत्रः ] नाटेरः । ५०१  
नड्वलः त्रि. [ नडाः सन्त्यत्र । नड्+नडशादाद् ड्व-  
लच्' इति ड्वलच् ] नलत्रहुलदेशः; नडवान्; 'यो नड्व-  
लानीव गजः परेषां बलान्यमृदान्नलिनाभवक्वः'—  
इति रघुः (१८।५) । १५९

नतः त्रि. [ नम्+क्त ] कुटिलः; वक्रः; नम्रः (७६०);  
'पतन्ति युगपत् सर्वे पादयोर्मूर्द्धभिर्नताः'—इति हरिवंशे  
(२०।१।३९) । क्ली. तगरपादी; तगरमूलम्; 'काला-  
नुशास्त्रावाकं तगरं कुटिलं शठम् । महोरयं नतं जिह्वं  
दीनं तगरपादिकम्'—इति वैद्यकरत्नमाला । पुं.  
[ नमति स्मेति, नम्+क्त ] जन्मनाडिकाविशेषः; 'अस-  
कृत्कर्मणा येन यान्ति दृक्तुल्यतां दिवि । नतोन्नतौ  
ततः साध्यौ भावाः खेटवलानि षट् । दिनाद्द्वान्तिरिता  
जन्मनाडिका नतनाडिका । पूर्वापराद्धे जातस्य प्राक्-  
पराख्या दिने भवेत् । रात्रेर्गतघटीशेषघटीदिनाद्ध-  
संयुता । परपूर्वाभिधा ज्ञेया रजन्यां नतनाडिका'—  
इति कोष्ठीप्रदीपः । ६९६

नदः पुं. [ नदति प्रवाहवेगेन शब्दायते इति । णद्+अच् ]  
पुंवाचकाकृत्रिमस्नातावच्छिन्नजलप्रवाहः । स च सिन्धु-  
भैरवशोणदामोदरब्रह्मपुत्रादयः, पुनर्वहः; मिथः;  
उद्व्यः; सरस्वान्; 'अष्टपष्टिस्तु तीर्थानि नदाश्च  
दशकोटयः'—इति पाद्मे । 'यथा नदीनदाः सर्वे सागरे  
यान्ति संस्थितिम् । तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति  
संस्थितिम्'—इति मनुः (६।९०) । ६६६

नदी स्त्री. [ नदतीति, नद्+अच्, पचादिगणे नदट् इति  
निर्देशात् टिड्ढेति ङीप् ] अष्टसहस्रधनुर्न्यूनव्याप्त-  
तोया; सरित्; तरङ्गिणी; शैवलिनी; तटिनी;  
हृदिनी; धुनी; स्रोतस्वती; द्वीपवती; स्रवन्ती;  
निम्नगा; आपगा; ह्लादिनी; धुनिः; स्रोतस्विनी;  
स्रोतोवहा; सागरगामिनी; अपगा; निर्झरिणी; सर-  
स्वती; समुद्रगा; कूलङ्कपा; कूलवती; शैवालिनी;  
सिन्धुः; समुद्रकान्ता; सागरगा; कृष्णा; रोधोवती;  
वाहिनी । 'धनुःसहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां न विद्यते ।  
न ता नदीशब्दवहा गतास्ताः परिकीर्तिताः'—इति तिथि-  
तत्त्वम् । अस्या वैदिकपर्यायाः—'अवनयः; यद्वाः;  
स्वाः; सीराः; स्रोत्याः; एन्यः; धुनयः; रुजानाः;  
वक्षणाः; स्वादोअर्णाः; रोधचक्राः; हरितः; सरितः;  
अश्रुवः; नमन्वः; वध्वः; हिरण्यवर्णाः; रोहितः;  
सन्भुतः; अर्णाः; सिन्धवः; कुल्याः; वर्यः; उर्व्यः;  
इरावत्यः; पार्वत्यः; स्रवन्त्यः; ऊर्जस्वत्यः; पयस्वत्यः;  
सरस्वत्यः; तरस्वत्यः; हरस्वत्यः; रोधस्वत्यः; भास्व-  
त्यः; अजिराः; मातरः; नद्यः'—इति सप्तत्रिंशत्त्र-  
दीनामानि वेदनिघण्टौ (१।१३) । ६६५

नदीमातृकः त्रि. [ नदी मातेव पोषिका यस्य, कप् ]  
नद्यम्बुसम्पन्नत्रीहिपालितदेशः । १६१  
नद्धः त्रि. [ नह्यते स्मेति, नह्+क्त ] बद्धः; संयतः;  
'दिव्यश्च कववेर्नद्धा दिव्यैश्चैवोच्छ्रितैर्ध्वजैः'—इति  
हरिवंशे (२३।१।७) । उद्धतः । ३४०

नद्धो स्त्री. [ नह्यतेऽनया, नह्+दाम्नीति ष्ट् नतो-  
ङीप् ] चर्मरज्जुः; 'अत्रापि विग्जनुषि पुत्रकलत्रमित्र-  
नद्धयावनद्धहृदयो न च तं स्मरामि'—इति प्रद्युम्न-  
विजये चतुर्थाङ्के । ५९६

नद्यम्बुजीवनः पुं. [ कुल्यादिरूपेण नद्यम्बुना जीवतीति,  
ल्यु ] स देशः नदीमातृकः; नद्यम्बुसम्पन्नत्रीहि-  
पालितदेशः । १६१

ननु अव्य. [ न नुदति प्रेरयतीति । न+नुद्+मितद्वा-  
दित्वात् ङु ] प्रश्नार्थः; यथा—नन्वद्येष्यामहे । अवधा-  
रणे; 'उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्त्रेणु यस्य मे । देवीनां  
मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम्'—इति रघुवंशे  
(१।६०) । पृच्छा; निश्चयः; 'लोको देवं समालोक्य  
उदासीनो भवेन्ननु'—इति महाभारते (१३।६।२९) ।

अनुज्ञा; 'ननु सन्दिशेति सुदृशोदितया त्रपया न किञ्चन किलाभिदधे'—इति माघे (१।६१) । अनुमतिः; अनुनयः; सान्त्वनम्; आमन्त्रणम्; सम्बोधनम्; 'विधुरां ज्वलनात्सिर्जनात् ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकम्'—इति कुमारे (४।३२) । विनिग्रहः; अनुप्रश्नः; विरोधोक्तिः; परकृतिः; अधिकारः; सम्भ्रमः; आक्षेपः; प्रत्युक्तिः; वाक्यारम्भः; उत्प्रेक्षालङ्कारव्यञ्जकम्; 'मन्ये शङ्के ध्रुवं नूनं किं वा प्रायोनु वेदमि च । ननु नाम हि जानामि' उत्प्रेक्षालङ्कारकानि च । ८८४

नन्दकः पुं. [ नन्दयतीति, नन्द्+ण्वल् ] विष्णुखण्डः; 'रथाङ्गेनाथ शाङ्गेण गदया नन्दकेन च । प्रहराहृष्ट गडं दृढो भूत्वा जनार्दन'—इति हरिवंशे (१२७।४४) । भेकः; त्रि. हर्षकः; कुलपालकः; पुं. कृष्ण-पिता; आनन्दः; नन्दः; आनन्दकारकः; नागविशेषः; स्कन्दस्यानुचरविशेषः; धृतराष्ट्रस्य पुत्रविशेषः । २६  
नन्दनम् क्ली. [ नन्दयतीति, नन्द्+नन्दिग्रह्णिच्चादिभ्यो ल्युण्णित्यचः ] इति ल्यु ] इन्द्रवनम्; 'अभिज्ञाश्छेदपातानां क्रियन्ते नन्दनद्रुमाः'—इति कुमारे (२।४।१) । अप्टा-दशाक्षरवृत्तिविशेषः; आनन्दः; 'स्वस्ति वाच्याहंतो विप्रान् प्रयाहि भरतर्षभ ! । दुर्हदामप्रहर्षयि सुहृदां नन्दनाय च'—इति महाभारते (२।२५।६) । हर्षके त्रिः । 'पश्य दिव्यं सुरचिरं भीम पुष्पनुत्तमम् । गन्व-संस्थानसम्पन्नं मनसो मम नन्दनम्'—इति महाभारते (३।१४६।५) । ५५

नन्दनः पुं.-स्त्री. [ नन्दयतीति, नन्द्+ल्यु ] सुतः; 'अतीन्द्रियेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः'—इति रघुवंशे (३।४१) । भेकः; विष्णुः; 'आनन्दो नन्दनो नन्दः'—इति महाभारते (१३।१४९।६९) । महादेवः; 'नन्दीश्वरश्च नन्दी च नन्दनो नन्दिवद्धनः'—इति महाभारते (१३।१७।७५) । वत्सरविशेषः; 'नन्दनोऽयं विजयो जयस्तथा मन्मथो परतश्च दुर्मुखः'—इति बृहत्संहितायाम् (८।३८) । जिनबलावशेषः; स्कन्दस्यानुचरविशेषः; 'वद्धनं नन्दनं चैव सर्वविद्या-विशारदी । स्कन्दाय ददतुः प्रीतावश्विनौ भरतर्षभ !' इति महाभारते (१।४५।३६) । विपविशेषः; 'अन्व-पाचककर्तरीवसौरीयककरघाटकर्मनन्दनवराटकानि सप्तत्वकृमारनिर्वासविषाणि'—इति सुश्रुते । पर्वत-

प्रभेदः; 'तीरे तु चन्द्रकुण्डस्य नन्दनो नाम वे गिरिः । तस्मिन् वसति शकस्तु कामाख्यासेवने रतः'—इति कालिकापुराणे । ४९७

नन्दिकेश्वरः पुं. [ नन्दयति वपुःसौष्ठवगमनगायन-तालादिना इति नन्दी, नन्दी एव नन्दिकः; । नन्दिकः ईश्वरश्च ] शिवद्वारपालः; नन्दीः; शालङ्कायनः; ताण्डवतालिकः; नन्दीश्वरः; तण्डुः; नन्दिकेशः । 'ततो नन्दि महादेवः प्राह गम्भीरया गिरा । नन्दिकेश्वर ! संयाहि यतो बाणो रणे स्थितः'—इति हरिवंशे (१८२।८६) । उपपुराणविशेषः । १४

नन्द्यावर्तः पुं. [ नन्दयतीति नन्दी, नन्दिजनक आवर्तो यत्र ] घनिनां सघविशेषः; 'दक्षिणानुगतालिनन्दनयं यत्पश्चिमामुखम् । पूजनीयोत्तरोच्छ्रायं नन्द्यावर्तं वदन्ति तत्'—इति भरतघृतसाञ्जः । मत्स्यभेदः (६५९); तगरद्रुमः (८१२) । ३०५

नपुंसकम् क्ली. [ न स्त्री न पुमान् । 'नभ्राण्णपादिति' निपातनात् स्त्रीपुंसयोः पुंसक आदेशः ] क्लीबम्; 'उभयोर्वीजसामान्ये जायते वै नपुंसकम्'—इति सुख-वोधः । 'समवीर्यरजस्त्वेन नरः स्त्रीप्रकृतिर्भवेत् । नपुंसकमिति ख्यातं न स्त्री न पुरुषो वदेत् ।' 'समदोष-बलेनापि प्रकृत्या विकृतेरपि । समो भवेदसूक् शुक्रो नपुंसकसमुद्भवः'—इति हारीतः । ४३०

नप्ता [ ऋ ] पुं. [ न पतन्ति पितरो येनेति । पत्+नप्तृ-नेष्ट्वष्टिति' तृच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] कन्या-पुत्रयोः पुत्रः; पौत्रः; सुतस्य सुतः; 'नाती' इति भाषा । 'कथं शुकस्य नप्तारं देवयान्याः सुतं प्रभो ! । ज्येष्ठं यदुमतिक्रम्य राज्यं पूरोः प्रदास्यति'—इति महाभारते (१।८५।२०) । ५०५

नभः [ स् ] क्ली. [ नह्यते मेघैरिति । णह् वन्धने+ 'नहेद्विभश्च' इति असुन् भश्चान्तादेशः ] श्रावणमासः; आकाशम् (१३७); 'नक्षेत्रोद्यन्तमादित्यं नास्तं यान्तं कदाचन । नोपसृष्टं न वारिस्थं न मध्यं नभसो गतम्'—इति मनुः (४।३७) । पुं. [ णम् हिसायाम्, पचा-द्यच् ] स्वारोचिपस्य मनोः पुत्रः; मन्वन्तरदेवविशेषः । ११४ ।

नभस्यः पुं. [ नभसे भेदाय साधुः । नभम्+तत्र साधुः' इति यत् ] भाद्रपदमासः । 'नभो नभस्येऽयं निरीक्ष्य

मासि कामस्तदा तोयदवृन्दकीर्णम्—इति हरिवंशे  
(१५२।१) । ११५

नभस्वान् [त्] पुं. [आकाशाद्वायुरिति श्रुतेः नभः  
उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्येति । नभस्+मत्तुप्, मस्य वः ]  
वायुः; 'स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः ।  
आददे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः'—इति  
'रघुवंशे' (४।८) । ७६

नभस्वत्या स्त्री. [ नभस्य+भावे अ, स्त्रियां टाप् ] पूजा ।  
७७६

नभः शि. [ नमतीति, णम्+'नभिकम्पीति' र ]  
नतः । 'यन्नम्रं सरलञ्चापि यञ्चापत्सु न सीदति ।  
धनुर्मम्रं कलत्रं च दुर्लभं शुद्धवंशजम्'—इति पञ्च-  
तन्त्रे (२।१८९) । ७६०

नभयनम् क्ली. [ नीयते दृष्टिविषयोऽनेनेति । नी+करणे  
ल्युट् ] चक्षुः; 'नीलोत्पलाभनयनां पीनश्रोणिपयोधराम्'-  
इति मार्कण्डेये (१८।४०) । [ णीञ् प्रापणे इत्यस्मा-  
द्भावे ल्युट् प्रत्ययः ] प्रापणम्; आनयनम्; 'तत्त्वं हितं  
च देवेश ! श्रूयतां वदतो मम । नयनं पारिजातस्य  
द्वारकां मम रोचते'—इति हरिवंशे (१२७।११) ।

५१९

नभयनजलम् क्ली. [ नयनस्य नेत्रस्य जलं वारि ] अस्तु;  
अश्रुः ५१९

नभयनमध्यतारा स्त्री. [ नयनस्य नेत्रस्य मध्ये तारा ]  
कनीनिका । ५२०

नभयोपान्तः पुं. [ नयनयोश्चान्तः प्रान्तभागः ] अपाङ्गः ।  
५२०

नभः पुं. [ नृणातीति, नृ+अच् ] मनुष्यः; 'बुद्धिमत्सु  
नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः'—इति मनुः  
(१।९६) । 'यदा कदापि दैत्येन्द्र ! नार्यास्ति मरणं  
ध्रुवम् । न नरेभ्यो महाभाग ! मृतिस्ते महिषामुर !'  
—इति देवीभागवते (५।२।१४) । विष्णुः; महादेवः;  
'गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तो रतिर्नरः'—इति  
महाभारते (१३।१७।११५) । अर्जुनः (नरमुनेरंश-  
जातत्वादस्य तथात्वम्); शङ्कुः; हरेरंशभूतो धर्म-  
पुत्रः ऋषिः; 'हरेरंशी स्थितौ तत्र नरनाराग्रणावृषी ।  
पूर्ण वर्षसहस्रं तु चक्रते तप उतमम्'—इति देवीभाग-  
वते (४।५।१५) । देवयोनिविशेषः; 'नरकिन्नर-

रक्षांसि वयःपशुमृगोरगान्'—इति विष्णुपुराणे  
(१।५।५८) । क्ली. [ नृणाति प्रापयति आनन्दमिति,  
नृ प्रापणे+अच् ] रामकपूर्तरुणम् । ३३१

नरकः पुं. [ नृणाति क्लेशं प्रापयतीति । नृ+'कृणादिभ्यः  
संज्ञायां वुन्' इति वुन् ] पापिनां यातनास्थानं; नारकः;  
निरयः; दुर्गतिः; 'पातालानां च सप्तानां लोकानां  
यदनन्तरम् । सुचिरं तानि कथ्यन्ते भवनानि चतुर्दश ।  
अष्टाविंशति विख्यातास्ततो नरककोटयः । नरकाणाम-  
घस्तात्तु धूमः कालाग्निसम्भवः । तस्याघस्तादनन्ता-  
ह्यो रुद्रः सर्वमयो महान् । तदधो धर्मचक्रन्तु येनेदं  
धार्यते जगत्'—इति बह्मिपुराणे । देवगतिप्रभेदः;  
[ नरस्य मनुष्यस्य कं शिरो यत्र ] दैत्यविशेषः; 'मानुषस्य  
शिरस्तत्र मृतस्य प्राप्य बालकः । स्वशिरस्तत्र विन्यस्य  
रुदंस्तस्यो क्षणं तदा । नरस्य शीर्षे स्वशिरो निधाय  
स्थितवान् यतः । तस्मात्तस्य मुनिश्रेष्ठो नरक नाम वै  
व्यधात्'—इति कालीपुराणे । ६२५ ।

नरदेवः पु. [ नरो देव इव ] राजा; 'रितोधाः पुत्र उन्न-  
यति नरदेव ! यमक्षयात्'—इति हरिवंशे (३२।१२) ।  
४२१

नरवाहनः पुं. [ नरो वाहनं यस्य । 'क्षुम्नादिपु च' इति  
न णत्वम् ] कुबेरः; 'विजयदुन्दुभिनां ययुरर्णवा घनरवा  
नरवाहनसम्पदः'—इति रघुवंशे (९।११) । नृपति-  
विशेषः; 'सोऽनुगैः सह निर्द्रोहं जवान द्रोह्यङ्कया ।  
दूरं दार्वीभिसारेणं शर्वयीं नरवाहनम्'—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् । पुरुषयानविशिष्टे त्रि. । 'जज्ञे धन-  
पतिर्यत्र कुबेरो नरवाहनः'—इति महाभारते (३।८।९।  
५) । ७९

नरस्कन्धः पुं. [ नराणां स्कन्धः; नर+स्कन्दिर् गति-  
शोषणयोः+कर्मणि घञ् । पृषोदरादिः ] नरसमूहः;  
जनता । ८११

नरेन्द्रः पुं. [ नर इन्द्र इव, नराणामिन्द्रो वा ] राजा;  
'रक्षणादायैर्वृत्तानां कण्टकानां च शोथनात् । नरेन्द्रा-  
स्त्रिदिवं यान्ति प्रजापालनतत्पराः'—इति मनुः (९।  
२५३) । वातिकः; विपवैद्यः; 'मुनिग्रहा नरेन्द्रेण  
फणीन्द्रो इव शत्रवः'—इति माघे (२।८८) । वृक्ष-  
विशेषः; 'पृतीकार्कस्नुग्नरेन्द्रद्रुमाणां मूत्रैः पिष्टाः  
पल्लवाः सौमनाश्च'—इति मुश्रुतः । एकविंशत्यक्षर-

वृत्तिविशेषः; 'चामररत्नरज्जुवरपरिगतविप्रगणाहित-  
शोभः, पाणिविराजिपुष्पयुगविरचितकङ्कणसङ्गतगन्धः ।  
चारुसुवर्णकुण्डलयुगलकृतरोचिरलङ्कृतवर्णः, पिङ्गल-  
पत्रगेश इति निगदति राजति वृत्तनरेन्द्रः'—इति  
चिन्तामणिः । ८४०

नर्तनस्थानम् क्ली. [ नर्तस्य नृत्यस्य स्थानम् ] रङ्ग-  
भूमिः; नृत्यशाला । १७

नर्म [ न् ] क्ली. [ न् नये + 'सर्वधातुस्यो मनिन्' इति  
मनिन् ] परीहासः; 'न नर्मयुक्तं वचनं हिनस्ति, न  
स्त्रीषु राजत्र विवाहकाले । प्राणात्यये सर्वधनापहारे,  
पञ्चानृत्यान्वाहुरपातकानि'—इति महाभारते ( १।  
८२।१७ ) । ४३२

नर्मदा स्त्री. [ नर्म ददातीति । नर्म + दा + क, स्त्रियां टाप् ]  
नदीविशेषः; रेवा; मेकलकन्या; सोमसुता; 'त्रिभिः  
सारस्वतं तोयं सप्तभिस्त्वथ यामुनम् । नार्मदं दशभि-  
र्मसैर्गाङ्गं वर्षेण जीर्यति । नर्मदा सरितां श्रेष्ठा रुद्रदेह-  
विनिःसृता । तारयेत् सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च'  
—इति मात्स्ये । पृक्का । ६७४

नलः पुं. [ नल् बन्धने + पचाद्यच् ] तृणविशेषः; धमनः;  
पोटगलः; नालः; नडः; कुक्षिरन्ध्रः; कौचकः;  
दीर्घवंशः; शून्यमध्यः; विभीषणः; छिद्रान्तः;  
मृदुपत्रः; वंशपत्रः; मृदुच्छदः; नालवंशः; 'नलः  
पोटगलः शून्यमध्यश्च धमनस्तथा । नलस्तु मधुरस्तिक्तः  
कषायः कफरक्तजित् । उष्णो हृद्दस्तियोन्यतिदाहपित्त-  
विसर्पहृत्'—इति भावप्रकाशः । सूर्यवंशीयनिपध-  
राजपुत्रः; 'अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञे निपधस्तस्य चात्मजः ।  
नलस्तु नैपवस्तस्मान्नभस्तस्मादजायत ।' वीरसेन-  
राजपुत्रः; 'नली द्वावेव विख्याता वंशे कश्यपसम्भवे ।  
वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्वाकुकुलोद्भवः'—इति हरि-  
वंशे ( १५।३४ ) । चन्द्रवंशीयनिपधराजपुत्रः; अयं तु  
दमयन्तीपतिः । 'आसीद्राजा नलो नाम वीरसेनसुतो  
क्ली । उपपन्नो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः'—इति  
महाभारते ( ३।५३।१ ) । ( अयं वीरसेनस्तु सूर्यवंशीय-  
वीरसेनाद्भिन्नः । ) बानरविशेषः; 'ततोऽब्रवीत् रघु-  
श्रेष्ठं सागरो विनयान्वितः । नलः सेतुं करोत्वस्मिन्  
जले मे विश्वकर्मणः'—इति अध्यात्मरामायणे । पितृ-  
देवः; दैत्यविशेषः; 'वंश्यः शल्यश्च बलवान् नलश्चैव

तथा बलः । वातापिनमुचिश्चैव इत्वलः स्वसुमस्तथा'  
—इति ब्रह्मपुराणे २ अध्याये । १५९

नलकम् क्ली. [ नल इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृतौ' इति  
कन् ] शास्त्रास्थिः; 'तरुणास्थीनि नम्यन्ते भज्यन्ते  
नलकानि तु'—इति सुश्रुते । ६३४

नलकूवरः पुं. [ नलः कूवरो युगन्धरो यस्य ] कुवेरपुत्रः;  
'विलोकनकयापि मे न नलकूवरे न स्मरे, किमन्यदमृत-  
द्युतेरपि न दर्शनं प्रार्थये । अयं नयनगोचरं व्रजति शेष-  
दृशामुत्सवः, समग्रमणीमनोमधुपमाधवः क्षमाधवः'—  
इति राजेन्द्रकर्णपूरे ( ६९ ) । ८३

नलमीनः पुं. [ नलाश्रयो मीनः ] चिलचिममत्स्यः । 'नल-  
मीनः कफात्मकः'—इति हारीते । ६५८

नलसंयुतः त्रि. [ नलैः संयुतः संकुलः ] नड्वलः; नल-  
बहुलदेशः । १५९

नलिनम् क्ली. [ नल्यते इति, नल् बन्धने + 'बहुलमन्यत्रापि'  
इति इनच् ] पद्मम्; 'यदास्य नाम्यान्नलिनादहमासं  
महात्मनः । नाविदं यज्ञसम्भारान् पुरुषावयवादृते'  
इति भागवते ( २।६।२२ ) । नीलिका; जलम्; पुं.  
सारसपक्षी; कृष्णपाकफलः । ६७९

नलिनी स्त्री. [ नलानि पद्मानि सन्त्यत्र । नल + 'पुष्करा-  
दिभ्यो देशे' इति इनि, डीप् ] विसिनी; पद्मिनी;  
'रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति  
हसिष्यति पद्मजालम् । इत्थं विचिन्तयति कोपगते  
द्विरेफे, हा हन्त ! हन्त ! नलिनीं गज उज्जहार'  
—इति भ्रमराष्टके । पद्मयुक्तदेशः; [ नलानां  
पद्मानां समूहः । 'खलादिभ्यः इनिर्वक्तव्यः' इत्युक्त्या  
इनि ] पद्मसमूहः; पद्मलता; 'नलिनी स्यात्  
पङ्कजिनी विशिनी च सरोजिनी । पद्मिनीति च पंथायः  
पद्मपण्डे तदाकरे'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।  
व्योमनिम्नगा; 'श्रीणि प्रथमीमभिमुखं प्रतीचीं श्रीण्य-  
थैव च । स्रोतांसि त्रिपथगायाः प्रत्यपद्यन्त सप्तधा ।  
नलिनी ह्लादिनी चैव पावनी चैव प्राच्यगा'—इति  
मात्स्ये ( १२०।४० ) । कमलाकरः; नलिका; नारि-  
केलसुरा; वामनासिका; 'नलिनी नालिनी च प्राग्-  
द्वारावेकत्र निमित्ते'—इति भागवते ( ४।२५।४८ ) ।  
'नलिनी नालिनी च वामदक्षिणनासिके'—इति तट्टीकायां  
स्वामी । ६८२

मासि कामस्तदा तोयदवृन्दकीर्णम्—इति हरिवंशे  
(१५२।१) । ११५

नभस्वान् [त्] पुं. [आकाशाद्वायुरिति श्रुतेः नभः  
उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्येति । नभस्+मनुप्, मस्य वः ]  
वायुः; 'स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः ।  
वाग्दे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः'—इति  
'रघुवंशे' (४।८) । ७६

नभस्वा स्त्री. [ नमस्य+भावे अ, स्त्रियां टाप् ] पूजा ।  
७७६

नभः द्वि. [ नमतीति, णम्+'नमिकम्पीति' र ]  
नतः । 'यन्नम्रं सरलञ्चापि यञ्चापत्सु न सीदति ।  
धनुर्मित्रं कलत्रं च दुर्लभं शुद्धवंशजम्'—इति पञ्च-  
तन्त्रे (२।१८९) । ७६०

नभयन् क्ली. [ नीयते दृष्टिविषयोऽनेनेति । नी+करणे  
ल्युट् ] चक्षुः; 'नीलोत्पलाभनयनां पीनश्रोणिपयोधराम्'-  
इति मार्कण्डेये (१।८।४०) । [ णीञ् प्रापणे इत्यस्मा-  
द्भावे ल्युट् प्रत्ययः ] प्रापणम्; आनयनम्; 'तत्त्वं हितं  
च देवेश ! श्रूयतां वदतो मम । नयनं पारिजातस्य  
द्वारकां मम रोचते'—इति हरिवंशे (१२७।११) ।  
५१९

नभयनजलम् क्ली. [ नयनस्य नेत्रस्य जलं वारि ] अक्षुः;  
अश्रुः ५१९

नभयनमध्यतारा स्त्री. [ नयनस्य नेत्रस्य मध्ये तारा ]  
कनीनिका । ५२०

नभयनोपान्तः पुं. [ नयनयोऽपान्तः प्रान्तभागः ] अपाङ्गः ।  
५२०

नभः पुं. [ नृणातीति, नृ+अच् ] मनुष्यः; 'बुद्धिमत्सु  
नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः'—इति मनुः  
(१।१९६) । 'यदा कदापि दैत्येन्द्र ! नार्यास्ते मरणं  
ध्रुवम् । न नरेभ्यो महाभाग ! मृतिस्ते महिषासुर !'  
—इति देवीभागवते (५।२।१४) । विष्णुः; महादेवः;  
'गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तौ रतिर्नरः'—इति  
महाभारते (१३।१७।११५) । अर्जुनः (नरमुनेरंश-  
जातत्वादस्य तथात्वम्); शङ्कुः; हरेरंशभूतो धर्म-  
पुत्रः ऋषिः; 'हरेरंशी स्थिता तत्र नरनारायणावप्री ।  
पूर्णं वर्णसहस्रं नृ चक्रते तप उत्तमम्'—इति देवीभाग-  
वते (४।५।१५) । देवयोनिविशेषः; 'नरकिन्नर-

रक्षांसि वयःपशुमृगोरजान्'—इति विष्णुपुराणे  
(१।५।५८) । क्ली. [ नृणाति प्रापयति आनन्दमिति,  
नृ प्रापणे+अच् ] रामकर्पूरतृणम् । ३३१

नरकः पुं. [ नृणाति क्लेशं प्रापयतीति । नृ+क्लृवादिभ्यः  
संज्ञायां वुन् इति वुन् ] पापिनां यातनास्थानः; नारकः;  
निरयः; दुर्गतिः; 'पातालानां च सप्तानां लोकानां  
यदनन्तरम् । सुचिरं तानि कथ्यन्ते भवनानि चतुर्दश ।  
अष्टाविंशति विख्यातास्ततो नरककोटयः । नरकाणाम-  
घस्तात्तु घूमः कालाग्निसम्भवः । तस्यावस्तादनन्ता-  
स्थो रुद्रः सर्वमयो महान् । तदयो धर्मचक्रन्तु येनेदं  
धार्यते जगत्'—इति बह्विपुराणे । देवगतिप्रभेदः;  
[ नरस्य मनुष्यस्य कं शिरो यत्र ] दैत्यविशेषः; 'मानुषस्य  
शिरस्तत्र मृतस्य प्राप्य बालकः । स्वशिरस्तत्र विन्यस्य  
रुदंस्तस्यो क्षणं तदा । नरस्य शीर्षे स्वशिरो निधाय  
स्थितवान् यतः । तस्मात्तस्य मुनिश्रेष्ठो नरक नाम वै  
व्यधात्'—इति कालीपुराणे । ६२५

नरदेवः पु. [ नरो देव इव ] राजा; 'रेतोधाः पुत्र उन्न-  
यति नरदेव ! यमक्षयात्'—इति हरिवंशे (३२।१२) ।  
४२१

नरवाहनः पुं. [ नरो वाहनं यस्य । 'क्षुन्नादिपु च' इति  
न णत्वम् ] कुबेरः; 'विजयदुन्दुभितानं ययुरर्णवा घनरवा  
नरवाहेनसम्पदः'—इति रघुवंशे (१।११) । नृपति-  
विशेषः; 'सोऽनुगैः सह निर्दोहं जधान द्रोहशङ्कया ।  
धूरं दावाभिसारेणं शर्वयां नरवाहनम्'—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् । पुरुषयानविशिष्टे त्रि. । 'जने धन-  
पतियत्र कुबेरो नरवाहनः'—इति महाभारते (३।८९।  
५) । ७९

नरस्कन्धः पुं. [ नराणां स्कन्धः; नर+स्कन्धिर् गति-  
शोषणयोः+कर्मणि घञ् । पृषोदरादिः ] नरसमूहः;  
जनता । ८११

नरेन्द्रः पुं. [ नर इन्द्र इव, नराणामिन्द्रो वा ] राजा;  
'रक्षणद्राव्यवृत्तानां कण्ठकानां च शोथनात् । नरेन्द्रा-  
स्त्रिदिवं यान्ति प्रजापालनतत्पराः'—इति मनुः (१।  
२५३) । वार्तिकः; विपबंधः; 'मुनिग्रहा नरेन्द्रेण  
-फणीन्द्रो इव शत्रवः'—इति माघे (३।८८) । वृक्ष-  
विशेषः; 'पृतीकाकंस्तु नरेन्द्रद्रुमाणां मृशैः पिष्टाः  
पल्लवाः सीमनाश्च'—इति मुद्रुतः । पृतीकावत्यक्षर-

वृत्तिविशेषः; 'चामररत्नरज्जुवरपरिगतविप्रगणाहित-  
शोभः; पाणिविराजिपुष्पयुगविरचितकङ्कणसङ्गतगन्धः ।  
चारुसुवर्णकुण्डलयुगलकृतरोचिरलङ्कृतवर्णः, पिङ्गल-  
पन्नगेश इति निगदति राजति वृत्तनरेन्द्रः—इति  
चिन्तामणिः । ८४०

नर्तनस्थानम् क्ली. [ नर्तस्य नृत्यस्य स्थानम् ] रङ्ग-  
भूमिः; नृत्यशाला । ९७

नर्म [ न् ] क्ली. [ न् नये + 'सर्वधातुम्यो मनिन्' इति  
मनिन् ] परीहासः; 'न नर्मयुक्तं वचनं हिनस्ति, न  
स्त्रीषु राजन्न विवाहकाले । प्राणात्यये सर्वधनापहारे,  
पञ्चानृतान्याहुरपातकानि'—इति महाभारते (१।  
८२।१७) । ४३२

नर्मदा स्त्री. [ नर्मं ददातीति । नर्मं + दा + क, स्त्रियां टाप् ]  
नदीविशेषः; रेवा; मेकलकन्या; सोमसुता; 'त्रिभिः  
सारस्वतं तोयं सप्तभिस्त्वथ यामुनम् । नार्मदं दशभि-  
र्भासैर्गाङ्गं वर्षेण जीर्यति । नर्मदा सरितां श्रेष्ठा रुद्रदेह-  
विनिःसृता । तारयेत् सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च'  
—इति मात्स्ये । पृक्का । ६७४

नलः पुं. [ नल् बन्धने + पचाद्यच् ] तृणविशेषः; धमनः;  
पोटगलः; नालः; नडः; कुक्षिरन्ध्रः; कौचकः;  
दीर्घवंशः; शून्यमध्यः; विभीषणः; छिद्रान्तः;  
मृदुपत्रः; वंशपत्रः; मृदुच्छदः; नालवंशः; 'नलः  
पोटगलः शून्यमध्यश्च धमनस्तथा । नलस्तु मधुरस्तिक्तः  
कषायः कफरक्तजित् । उष्णो हृद्भ्रस्तिगोर्न्यातिदाहपित्त-  
विसर्पहृत्'—इति भावप्रकाशः । सूर्यवंशीयनिपध-  
राजपुत्रः; 'अतिथिस्तु कुशाज्जने निपधस्तस्य चात्मजः ।  
नलस्तु नैपधस्तस्मान्नभस्तस्मादजायत । वीरसेन-  
राजपुत्रः; 'नली द्वावेव विख्याता वंशे कश्यपसम्भवे ।  
वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्वाकु कुलोद्भवः—इति हरि-  
वंशे (१५।३४) । चन्द्रवंशीयनिपधराजपुत्रः; अयं तु  
दमयन्तीपतिः । 'आसीद्राजा नलो नाम वीरसेनसुतो  
क्ली । उपपन्नो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः—इति  
महाभारते (३।५३।१) । (अयं वीरसेनस्तु सूर्यवंशीय-  
वीरसेनाद्भिन्नः) वानरविशेषः; 'ततोऽब्रवीत् रघु-  
श्रेष्ठं सागरो विनयान्वितः । नलः सेतुं करोत्वस्मिन्  
जले मे विश्वकर्मणः—इति अध्यात्मरामायणे । पितृ-  
देवः; दैत्यविशेषः; 'वंश्यः शत्यश्च बलवान् नलश्चैव

तथा बलः । वातापिनं मुचिश्चैव इत्वलः स्वसृमस्तथा'  
—इति ब्रह्मपुराणे २ अध्याये । १५९

नलकम् क्ली. [ नल इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृती' इति  
कन् ] शास्त्रास्थिः; 'तरुणास्थीनि नम्यन्ते भज्यन्ते  
नलकानि तु'—इति सुश्रुते । ६३४

नलकूवरः पुं. [ नलः कूवरो युगन्वरो यस्य ] कुवेरपुत्रः;  
'विलोकनकथापि मे न नलकूवरे न स्मरे, किमन्यदमृत-  
द्युतेरपि न दर्शनं प्रार्थये । अयं नयनगोचरं व्रजति श्वेद्  
दृशामुत्सवः; समग्ररमणीमनोमधुपमाधवः क्षमाधवः—  
इति राजेन्द्रकर्णपूरे (६९) । ८३

नलमीनः पुं. [ नलाश्रयो मीनः ] चिलचिममत्स्यः । 'नल-  
मीनः कफात्मकः—इति हारीते । ६५८

नलसंयुतः त्रि. [ नलैः संयुतः संकुलः ] नड्वलः; नल-  
बहुलदेशः । १५९

नलिनम् क्ली. [ नल्यते इति, नल् बन्धने + 'बहुलमन्यत्रापि'  
इति इनच् ] पद्मम्; 'यदास्य नाम्यान्नलिनादहमासं  
महात्मनः । नाविदं यज्ञसम्भारान् पुरुपावयवादृते'  
इति भागवते (२।६।२२) । नीलिका; जलम्; पुं.  
सारसपक्षी; कृष्णपाकफलः । ६७९

नलिनी स्त्री. [ नलानि पद्मानि सन्त्यत्र । नल + 'पुष्करा-  
दिभ्यो देशे' इति इनि, डीप् ] विसिनी; पद्मिनी;  
'रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति  
हसिष्यति पद्मजालम् । इत्थं विचिन्तयति कोपगते  
द्विरेफे, हा हन्त ! हन्त ! नलिनीं गज उज्जहार'  
—इति भ्रमराष्टके । पद्मयुक्तदेशः; [ नलानां  
पद्मानां समूहः । 'स्रलादिभ्यः इनिर्वक्तव्यः' इत्युक्त्वा  
इनि ] पद्मसमूहः; पद्मलता; 'नलिनी स्यात्  
पङ्कजिनी विशिनी च सरोजिनी । पद्मिनीति च पंथायः  
पद्मपण्डे तदाकरे'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।  
व्योमनिम्नगा; 'त्रीणि प्राचीमभिमुखं प्रतीचीं त्रीण्य-  
थैव च । स्रोतांसि त्रिपयगायाः प्रत्यपद्यन्त सप्तधा ।  
नलिनी ह्लादिनी चैव पावनी चैव प्राच्यगा'—इति  
मात्स्ये (१२०।४०) । कमलाकरः; नलिका; नारि-  
केलसुरा; वामनासिका; 'नलिनी नालिनी च प्राग्-  
द्वारावेकत्र निर्मिते'—इति भागवते (४।२।४८) ।  
'नलिनी नालिनी च वामदक्षिणनासिके'—इति तट्टीकायां  
स्वामी । ६८२

नवः त्रि. [ नूयते स्तूयते इति । णु स्तुती+‘ऋदोरप्’ इति अन् ] नूतनः; ‘न स्त्रीणामप्रियः कश्चित् प्रियो वापि न विद्यते । गावस्तृणमिवारण्ये प्रार्थयन्ति नवं नवम्’—इति हितोपदेशे (१।२३४) । तद्वैदिक-पर्यायाः—नवं; नूतनं; नूतं; नव्यम्; इदा; इदानीम्, इति षट् नवनामानि वेदनिघण्टी ३ अध्याये । ७११ नवतः पुं. [ नूयते स्तूयते इति । णु+वाहुलकात् अतच् ] कुथः; करिकम्बलः । ३०८

नवनीतम् क्ली. [ नवं नीयतेऽनेनेति । नव+नी+क्त ] गव्यविशेषः; नवोद्धृतं; सरजं; मन्यजं; हैयङ्गवीनं; दधिजं; सार; हैयङ्गवीनकं; ‘मालिन’ इति भाषा । ‘नवनातं हितं गव्यं वृष्यं वर्णमलाग्निकृत् । संग्राहि वातपित्तासृक्क्षयाशोऽदितकासहृत् । तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः’—इति भावप्रकाशः । ‘नव-नीतं नवं वृष्यं ग्राहि वर्णवलग्निकृत् । चक्षुष्यं बृंहणं स्निग्धं ग्रहण्यशोऽविकारनुत् । क्षीरोत्थितं हिमं ग्राहि रक्तपित्ताक्षिरोगनुत्’—इति राजवल्लभः । २७४

नवप्रसूता स्त्री. [ नवा चासौ प्रसूता कृतप्रसवा ] जात-नूतनप्रसवा गौः; सैवोच्यते धेनुः; कृतनूतनप्रसूतिका स्त्रीजातिः । २६९

नवमल्लिका स्त्री. [ नवा नूतना स्तुत्या वा मल्लिका ] नवमालिका; ‘रम्यं हर्म्यतलं नवाः सुनयना गुञ्जद्-द्विरेफा लताः । प्रोन्मीलन्नवमल्लिकाः सुरभयो वाताः सचन्द्रा निशाः’—इति प्रयोधचन्द्रोदये । २०७

नवमालिका स्त्री. [ नवा नूतना मालिका मल्लिकापुष्पम् ] नवमल्लिकापुष्पं; श्रैष्मी; अतिमोदा; ग्रीष्मोद्भवा; सप्तला; सुकुमारी; सुरभिः; शुचिमल्लिका; सुगन्धा; शिखरिणी; नवाली; भद्रवर्षा; देवलता; गन्धनिलया; मालिका; नवमल्लिका; ‘नेपाली कथिता तज्जैः सप्तला नवमालिका । वासन्ती शीतला लब्धी तिक्ता दोषत्रया-स्रजित्’—इति भावप्रकाशः । २०७

नवीनम् त्रि. [ नवमेव । नव+‘नवस्य न्वादेशो त्नप्तन-प्लाश्च प्रत्यया वक्तव्याः’ इत्युक्त्या ख न्वादेशश्च ] नूतनम्; ‘गदाधरविनिर्मिता विविधदुर्गंतकाट्वी नवीन-पदवीमुदं वितनुतां सतां धीमताम्’—इति गदाधरः । ७११

नव्यम् त्रि. [ नूयते स्तूयते इति । णु स्तुती+‘अचो यत्’

इति यत् । यद्वा नवमेव । ‘शाखादिभ्यो यत्’ इति स्वार्थे यत् ] नूतनम्; ‘नव्या नव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवाना-मसुरत्त्वमेकम्’—इति ऋग्वेदे (३।५।१६) । स्तुत्यम्; ‘कया नो अग्न ऋतयन्नृतेन भुवो नवेदा उच्यस्य नव्यः’—इति ऋग्वेदे । (५।१३।३) । क्ली. स्तुति; [ णु स्तुती, भावे अप्, नवशब्दात् स्वार्थे यत्रि निष्पन्नः ] पुं. [ नूयते इति, नु+यत् ] रक्तपुनर्नवा । ७११

नश्यत्प्रसूतिः स्त्री. [ नश्यन्ती प्रसूतिः सन्ततिर्यस्याः ] मृतवत्सा; भिन्दुः; मृतपुत्रिका; नश्यत्प्रसूतिका । ४८८ नष्टः त्रि. [ नश्+क्त ] अदर्शनविशिष्टः; तिरोहितः; ‘नष्टं मृतमतिक्रान्तं नानुशोचन्ति पण्डिताः । पण्डितानां च मूर्खाणां विशेषोऽयं यतः स्मृतः’—इति पञ्चतन्त्रे (१।३७८) । अघमः; ‘असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः सन्तुष्टा इव पाथवाः । सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जास्तु कुलस्त्रियः’—इति चाणक्यः (८०) । प्रचलितः; ‘तृतीये तु मुहूर्ते सा नष्टा वाणपुरात् तदा । स्त्रीप्रियं चिकीर्षन्ती पूजयन्ती तपोधनान्’—इति हरिवंशे (१७४।१२३) । पलायितः; ‘नष्टं वर्षवरेमनुप्य-गणनाभावादपास्य त्रपाम्’—इति रत्नावल्याम् । निष्फलः; ‘नष्टं देवलके दत्तम् अप्रतिष्ठन्तु वार्द्धुषी’—इति मनुः (३।१८०) । नाशाश्रयः; ‘योगो नष्टः परन्तप’—इति श्रीभगवद्गीतायाम् । नाशे क्ली. । ४७९

नस्तितः पुं. [ नस्ता सच्छिद्रनासिका संजाता अस्य । तारकादित्वादितच् ] नासानिहितरज्जुर्वलीवर्दादिः; नस्योतः; नस्तोतः । २६७

नस्तोतः पुं. [ वेब् तन्तुसन्ताने+भावे क्त । नस्ते नासि-कायाम् ऊतं वयनं यस्य ] नस्तितः; नस्योतः; नासा-निहितरज्जुर्वलीवर्दादिः । २६७

नस्योतः पुं. [ नस्यया नासारज्ज्वा ऊतः ] नस्तितः; ‘मणिः सूत्र इव प्रोतो नस्योत इव गोवृषः’—इति महाभारते (३।३०।३६) । २६७

न [ ऋ ] पुं. [ नयति नीयते वा । णीब् प्राणो+‘नयतेडिच्च’ इति ऋप्रत्ययः स च डित् ] पुरुषः; ‘विधाय वैरं सामर्षे नरोऽरी य उदासते । प्रक्षिण्योर्दक्षिणं कक्षे शेरते तेऽभिमारुतम्’—इति माघे (२।४२) । ३३१

नाकः पुं. [ न कं सुखमिति अकं दुःखं, तन्नास्त्यत्रेति ]

स्वर्गः; 'सन्तर्पणो नाकसदां वरेण्यः'—इति भट्टिः (११४) ।  
 नमः; 'य एष दिवि विष्णवेन नाकं व्याप्नोति तेजसा'—  
 इति महाभारते (१।१७२।६) । क्लीं. अस्त्रजाति-  
 विशेषः; 'काकुदीकं शुकं नाकमक्षिसन्तर्जनं तथा ।  
 सन्तानं नर्तकं घोरमास्थमोदकमष्टमम् । एतैर्विद्धाः  
 सर्व एव मरणं यान्ति मानवाः'—इति महाभारते  
 (५।१६।४०) । क्षत्रियजातिविशेषः; नव नाकास्तु  
 भोक्ष्यन्ति पुरीं चम्पावतीं नृपाः'—इति वायुपुराणे । ३  
 नाकुः पुं. [ नम्यतेऽनेनेति । णम् + 'फलिपाटिनमिमनि-  
 जनां गुक् पटिनाकिघतश्च' इति उ, धातोर्नाकि, इकार  
 उच्चारणार्थः ] वल्मीकः; मुनिविशेषः; पर्वतः । ६४४  
 नागः पुं. [ नगे भवः । नग+अण् । यद्वा दहत्यस्मात्  
 विपाग्निनेति । दह् + 'दहेगो लोपो दश्च नः' इति ग,  
 अन्तलोपः दस्य नः । बाहुलकात् नकारस्य ना ] पन्नगः;  
 'जगूहश्च विषं नागाः क्षीरोदाच्च समुत्थितम्'—इति  
 विष्णुपुराणे (१।९।१६) । हस्ती (७९७); 'भजे  
 भिन्नकटैर्नागैरन्यानुपहरोवयैः'—इति रघुवंशे (४।८३) ।  
 क्रूरचारी; मेघः; नागकेशरः; पुत्रागः; नागदन्तकः;  
 मुस्तकः; देहानिलप्रभेदः; 'उद्गारे नाग इत्युक्तो नील-  
 जीमूतसन्निभः'—इति शारदातिलकटीका । उत्तरपद-  
 स्थिते श्रेष्ठवाचकः; सीसकम्; 'दृष्ट्वा भोगिसुतां रम्यां  
 वासुकिस्तु मुमोच यत् । वीर्यं जातस्ततो नागः सर्व-  
 रोगापहो नृणाम् ।' 'नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति,  
 व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति । वीह्य प्रदीपयति  
 कामबलं करोति, मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितः सः ।  
 पाकेन हीनो किल वङ्गनागो कुष्ठानि गुल्मांश्च तथाति-  
 कष्टान् । कण्डूं प्रमेहानिलपादशोय—भगन्दरादीन्  
 कुशतः प्रयुक्तौ'—इति भावप्रकाशः । ताम्बूली;  
 देशभेदः; पर्वतविशेषः; 'शङ्खकूटोऽथ ऋपभो हंसो  
 नागस्तथापरः । कालञ्जराद्याश्च तथा उत्तरे केशरा-  
 चलाः'—इति विष्णुपुराणे । [ नगे गिरौ चन्दनादितरौ  
 वा भवः । न गच्छतीति अगः, न अगः नागः इति वा ]  
 तक्षककौटकप्रभृतिदेवयोनिर्मनुष्याकारः फणालाङ्गूल-  
 युक्तः; काद्रवेयः । ६४०

नागकेशरः पुं. [ नागस्येव केशरोऽस्य ] नागकेशरवृक्षः;  
 'नल्लनैलेयकं पुष्पकं पञ्चकं नागकेशरम्'—इति हरिदे ।

नागकेशरः पुं. [ नागस्येव केशरो यस्य ] पुष्पवृक्षविशेषः;  
 चाम्पेयः; केशरः; काञ्चनाह्वयः; केशरः; नागकेशरः;  
 'नागपुष्पः स्मृतो नागः केशरो नागकेशरः । चाम्पेयो  
 नागकिञ्जल्कः कथितः काञ्चनाह्वयः । नागपुष्पं  
 कषायोष्णं रूक्षं लघ्वामपाचनम् । स्वरकण्डूतृपास्वेदच्छ-  
 दिहृल्लासनाशनम् । दौर्गन्ध्यकुष्ठबीसर्पकफपित्तविषा-  
 पहम् ।' 'त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धिस्त्रिजातकम् ।  
 नागकेशरसंयुक्तं चतुर्जातकमुच्यते । तद्द्वयं रेचकं रूक्षं  
 तीक्ष्णोष्णं मुखगन्धहृत् । लघु पित्ताग्निद्रव्यं कफवात-  
 विषापहम्'—इति भावप्रकाशः । २०६

नागरम् क्ली. [ नगरे भवम् । नगर+अण् ] शुण्ठी;  
 'नागरं दीपनं वृष्यं ग्राहि हृद्यं विदग्धनुत् । रुच्यं लघु  
 स्वादु पाकं स्निग्धोष्णं कफवातजित्'—इति वाग्भटे ।  
 'मुण्डीतकवचायुक्तं मरीचं नागरं तथा । चर्वित्वा च  
 इमं सद्यो जिह्वया ज्वलनं लिहेत्'—इति गारुडे ।  
 मुस्ता; रतिवन्धः; पुं. नागैरदेशीयाक्षरम्; [ नागरो  
 विदग्धस्तद्भ्रूवोऽस्त्यस्येति, अच् ] देवरः; नागरङ्गः;  
 त्रि. [ नगरे भवः, 'तत्र भवः' इत्यण् ] विदग्धः;  
 'नागरगीतिरिवासी सामस्थित्यापि भूमिता सुतनुः ।  
 कस्तूरी च मृगोदरवासवसाद्विसतामेति'—इति आर्या-  
 सप्तशत्याम् (३२३) । नगरोद्भवः; 'नागरा धृत्-  
 राष्टस्य सर्वे तत्र समाययुः'—इति देवीभागवते  
 (२।६।६६) । नगरहितः; 'धनुर्वेदस्य सूत्रं वै यन्त्रसूत्रं  
 च नागरम्'—इति महाभारते (२।५।१२२) । ६१५  
 नागलोकः पुं. [ नागानां लोकः ] पातालम्; 'रसातले स  
 सदृशे नागलोकमिमं यथा'—इति हरिवंशे । (८२।८४) ।

६२३  
 नागवल्ली स्त्री. [ नाग इव दीर्घा वल्ली लता ] नाग-  
 वल्लिका; ताम्बूली; नागवल्लरी; ताम्बूलवल्ली;  
 पर्णलता; सप्तशिरा; सर्पलता; फणिवल्ली; भुज-  
 गलता; भक्ष्यपत्रा; ताम्बूलवल्लिका; पर्णवल्ली;  
 ताम्बूलिः; नागिनी । २००

नाटारः पुं. [ नट्या नटस्य वा अपत्यम् । 'आरगुदीचाम्'  
 इति आरक् ] नट्या अपत्यं; नटीसुतः; नाट्येः; नाटेरः ।

५०१  
 नाट्येः पुं. [ नट्या अपत्यम् । नटी+अण् ] नटीमुत्तः;  
 नाटारः; नाट्येः । ५०२



नाटेरः पुं. [ नट्या अपत्यमिति । नटी+ङ्क् ] नटीसुतः;  
नाटेयः; नाटारः । ५०१

नाट्यम् क्ली. [ नटानां कार्यम् । नट+‘छन्दोगीकथिक-  
याज्ञिकवह्वृचनटाञ्च्यः’ इति ञ्य ] नृत्यगीतवाद्यं;  
तौर्यत्रिकम्; ‘नाट्यं तनोपि सगुणा विविधप्रकारं  
नो वेत्ति कोऽपि तव कृत्यविधानयोगम्’—इति देवी-  
भागवते (१।७।३०) । नटानां समूहः । नाट्यारम्भ-  
नक्षत्राणि, यथा—अनुरावा, धनिष्ठा, पुष्यः हस्तः,  
चित्रा, स्वाती, ज्येष्ठा, शतभिषा, रेवती । ९३

नाडिः स्त्री. [ नाड्यतीति, नड् भ्रंशे+णिच्+इन् ]  
नाडी; नाडिका; पटक्षणाः; साधारिका; घटिका;  
‘घड़ी’ इति भाषा । १०५

नाडिन्धमः पुं. [ नाडीं वंशनीं धमतीति । ध्मा शब्दा-  
ग्निसंयोगयोः+‘नाडीमुष्टघोश्च’ इति खग्, ‘पाद्माध्मा-  
स्थेति’ धमादेशः, ‘खित्यनव्ययस्य’ इति पूर्वपदस्य  
ह्रस्वः ] स्वर्णकारः; [ उच्चनीचाधिरोहणात् मुहुर्मुहु-  
निश्वासैर्नाडीं धमति उपतापयतीति ] श्वासकारके  
त्रि. । ‘सत्त्वमेजर्यामिहाढ्यान् स्तनन्धयसमत्विपी । कथं  
नाडिन्धमान् मार्गानागती विपमोपलान्’—इति भट्टिः ।  
५८८

नाडी स्त्री. [ नाडि+‘कृदिकारादक्तिनः’ इति वा डीप् ]  
पटक्षणाकालः; नाडिः । (८४६) कायनाडी; शिरा;  
धमनिः; सिरा; नाडिः; नालिः; नाली; धमनी;  
धरणी; धरा; तन्तुकी; जीवितज्ञा; सिंहा; नालं;  
व्रणान्तरं; गण्डहृवी; कुहनचर्या । ‘आमाश्रये पुष्टि-  
विवर्धनेन भवन्ति नाड्योऽग्रभुजाभिवृत्ताः । आहार-  
मान्यादुपवासतो वा तथैव नाड्यो भुजगाग्रमानाः’  
— इतिनाडीप्रकाशः । १०५

नाडीन्धमः पुं.— स्वर्णकारः । ५८८

नादः पुं. [ णद् अव्यक्ते शब्दे+भावे घञ् ] शब्दः;  
‘विभान्ति ते देववराः ससाध्याः प्रध्मातशङ्खस्वनमिह-  
नादाः’—इति हरिवंशे (२३।५।५६) । अर्द्धचन्द्राकृति-  
वर्णः; अर्द्धेन्दुः; अर्द्धमात्रा; कलाराशिः; सदाशिवः;  
अनुच्चार्या; तुरीया; विश्वमातृकला; परा; ब्रह्मस्वरूप-  
घोषविशेषः; मुनिविशेषः; अयं तु ईश्वरमुनेः पुत्रः;  
न्यायतत्त्वयोगरहस्ययोः प्रणेता, अस्य वासस्थानं दाधि-  
णात्यप्रदेशः । १३८

नाना अव्य. [ न+‘विनञ्म्यां नानाञी न सह’ इति  
नाञ् प्रत्ययः ] अनेकार्थम्; ‘वह्नीषु चैकजातानां नाना-  
स्त्रीषु निबोधत’—इति मनुः (१।१४८) । उभयार्थः;  
विनार्थम्; ‘न नाना शम्भुना रामाद् वर्षेणाधोऽक्षजो  
वरः’—इति मुग्धवोधे । ८८४

नापितः पुं. [ न आप्नोति सरलतामिति । न+आप्+  
‘नञ्याप इट् च’ इति तन् इट् च ] वर्णसङ्करजातिविशेषः;  
क्षुरी; मुण्डी; दिवाकीर्तिः; अन्तावसायी; छत्री;  
वात्सीसुतः; नवकुट्टः; ग्रामणीः; चन्द्रिलः; मुण्डः;  
भाण्डपुटः; ‘नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः ।  
दंष्ट्रिणां च शृगालस्तु श्वेतभिधुस्तपस्विनाम्’—इति  
पञ्चतन्त्रे (३।७३) । ५८९

नाभिः पुं. [ नह्यते वन्नाति विपक्षादीनिति । णह् वन्धने+  
‘नहो भश्च’ इति इञ् भश्चान्तादेशः ] चक्रमध्यम्;  
‘अरैः मन्त्रार्थते नाभिर्नाभी चाराः प्रतिष्ठिताः’—इति  
पञ्चतन्त्रे (१।९३) । क्षत्रियः; प्रियव्रतराजपीठः;  
अग्नीध्रस्य पुत्रः; ‘तस्य पुत्रा बभूवुस्तु प्रजापतिममा  
नव । ज्येष्ठो नाभिरिति ख्यातस्तस्य किपुरुषोऽनुजः’  
—इति ब्रह्माण्डे । गोत्रं; प्रधानम्; ‘मुतोऽभवन्  
पङ्कजनाभकल्पः कृत्स्नस्य नाभिर्नृपमण्डलस्य’—इति  
रघुवंशे (१८।२०) । महादेवः; ‘नाभिर्नन्दिकरो भावः  
पुष्करः स्थपतिः स्थिरः’—इति महाभारते (१३।१७।  
९२) । पुं.—स्त्री. [ णह् वन्धने+इञ् भश्चान्तादेशः ]  
प्राण्यङ्गः; नाभी; तुन्दकूपी; उदरावतः; ‘विष्णु-  
नाभेः समुद्रभूतो वेधाः कमलजस्ततः । विष्णुरेवेश इत्या-  
हुर्लोकं भागवता जनाः’—इतिपञ्चदश्याम् (६।११७) ।  
कस्तूरिकामदे स्त्री । ४४७

नाम अव्य. [ नामयतीति, नामयते नाम्यतेऽनेन वा ।  
नम्+णिच्+वाहुलकान् ड ] उपगमः; अभ्युपगमः;  
सामूयोऽङ्गीकारः; ‘एवं नामान्तु’; प्राक्काश्यम्; ‘हिमा-  
लयो नाम नगाधिराजः । हिमालयः प्रकाशोऽतिप्रसिद्धः  
इत्यर्थः । सम्भावनायाम्; ‘इह नाम सीता भविष्यति ।  
कोवः; ‘ममापि नाम दशाननस्य परैरभिभवः । कुत्सतन्म;  
‘को नामायं भवितुरुदयेः स्वापमेवं विद्यते ।’ विस्मयः;  
‘अन्धो नाम गिरिमारोहति ।’ स्मरणं; विकल्पः । ८८६  
नाम [ न् ] क्ली. [ म्नायति अन्यस्यते यत् तत् ।  
म्ना अभ्यासे+‘नामन्सीमन्व्योमन्निति’ मनिन् प्रत्ययेन

निपातनात् साधु ] संज्ञा; आख्या; आह्ला; अभिधानं; नामधेयम्; आह्लानं; लक्षणं; व्यपदेशः; आह्लयः; गोत्रम्; अभिख्या; लिङ्गम्; 'उणाद्यन्तं कृदन्तं च तद्धितान्तं समासजम् । शब्दानुकरणं चैव नाम पञ्चविधं स्मृतम्'—इति गोपीचन्द्रः । अव्यक्तनामानि—'आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिक्रमणस्य च । प्राणान्तेऽपि न वक्तव्यं ज्येष्ठपुत्रकलययोः'—इति कर्मलोचनम् । १५२

नामधेयम् क्ली. [ नामैव । नाम + 'भागरूपनामभ्यो धेयः' इति धेय ] नाम; संज्ञा; आख्या; आह्ला; अभिधानम्; आह्लानं; लक्षणं; व्यपदेशः; आह्लयः; गोत्रम्; अभिख्या । 'नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वास्य कारयेत् । पुण्ये त्रिथौ मुहूर्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते'—इति मनु. (२।३०) । नामकरणं; नामकर्म । १५२

नायकः पुं. [ नयति प्रापयतीति । नी + ण्वल् ] नेता । 'नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते'—इति गीतायाम् (१।७) । हारमध्यमणिः (५६४), श्रेष्ठः; 'तमुपागतमालक्ष्य सर्वे सुरगणादयः । प्रणोमः सहस्रोऽथाय ब्रह्मेन्द्रव्यक्षनायकाः'—इति भागवते (४।७।१९) । अशेरिकः; सेनापतिः; 'वध्यमानं बलं दृष्ट्वा बहुशस्तैः पुरन्दरः । स्वसैन्यनायकार्थाय चिन्तामाप भृशं तदा'—इति महाभारते (३।२२।४) । शृङ्गारसाधकः; अङ्गादिविकृत्या हासकारी विदूषकः । ३४३

नारकः त्रि. [ नरके भवः, 'तत्र भवः' इत्यण् ] नरकस्थ-प्राणी; 'अनुकम्पामिमामद्य नारकेष्विह कुर्वतः । तदेव शतसाहस्रं संख्यामुपगतं तव'—इति मार्कण्डेये (१।५।७३) । पुं. [ नरक एव, प्रज्ञाद्यण् ] नरकः । ६२५

नाराचः पुं. [ नारं नरसमूहम् आचामतीति । चम् अदने + अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड ] लौहमयवाणः; प्रक्षेडनः; लोहनालः; 'सर्वलौहास्तु ये वाणा नाराचास्ते प्रकीर्तिताः । पञ्चभिः पृथुलैः पक्षैर्युक्ताः सिध्यन्ति कस्यचित्'—इति बृहत्साराङ्गधरे । दुर्दिनम्; अष्टादशाक्षरवृत्तिविशेषः; 'इह ननरचतुष्कसृष्टन्तु नाराचमाचधते'—इति छन्दोमञ्जरी ! वैद्यकोक्तवृत्तविशेषः; नाराचवृत्तं; कृत्रिमवृत्तभेदः; 'स्तुक्क्षीरदन्तीत्रिफलाविडङ्गसिंहीत्रिवृच्चित्रकसूर्यकल्कैः । घृतं विपक्व कुडवं प्रमाणं तोयेन तस्याक्षसमेन कर्पम् । पीतोऽप्यमम्भोऽनुपिबेद्विरेफे पेयं रसं वा प्रपिबेद्विद्विज्ञः । नाराचमेनं

जठरामयानामुक्तं प्रयुक्तं प्रवदन्ति सन्तः'—इति नाराच-घृतम् । ४६७

नारायणः पुं. [ नराज्जाताः, आपो वै नरसूनवः इत्युक्तेः । नारा आप अयनं स्थानं यस्य । अय् गती + भावे ल्युट् । सर्वे गत्यर्याः प्राप्त्यर्याश्च इति नियमात् नारस्य ज्ञानस्य मुक्तेर्वा अयनं प्राप्त्यस्मात् इति वा । 'नराणां समूहो नारं तन्नायनं स्थानं यस्य, नारायणः । सर्वप्राणिबुद्धिगुहानिवासाच्छुद्धचैतन्यमित्यर्थः ] विष्णुः; 'सारूप्यमुक्तिवचनो नारेति च विदुर्वुधाः । यो देवोऽप्ययनं तस्य स च नारायणः स्मृतः । नाराश्च कृतपापाश्चाप्ययनं गमनं स्मृतम् । यतो हि गमनं तेषां सोऽयं नारायणः स्मृतः । नार च मोक्षणपुण्यम् अयनं ज्ञानमीप्सितम् । तयोर्ज्ञान भवेद्यस्मात् सोऽयं नारायणः स्मृतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः । अयनं तस्य तः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः'—इति विष्णुपुराणे । 'नराज्जातानि तत्त्वानि नाराणीति विदुर्वुधाः । तान्येव चायनं तस्य तेन नारायणः स्मृतः । 'यच्च किञ्चिज्जगत् सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि च । अन्तर्बहिश्च तत् सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः । 'प्रकृतेः पर एवान्यः स नरः पञ्चविंशकः । तस्येमानि च भूतानि नाराणीति प्रचक्षते । तेषामप्ययनं यस्मात्तस्मान्नारायणः स्मृतः । 'क्वचिन्मन्वन्तरे नरनामरूपेरेपत्यतां गतः इति नारायणः' इत्यमरकोषस्य टीकाया भरतः । 'नराणामयनाच्चापि ततो नारायणः स्मृतः'—इति महाभारते (५।७।१०) । अजामिलपुत्रः; 'कान्यकुब्जे द्विजः कश्चिद्दासीपतिरजामिलः । नाम्ना नटसदाचारो वास्या संसर्गदूषितः । तस्य प्रवयसः पुत्रा दश तेषां तु योऽवमः । बालो नारायणो नाम्ना पित्रोश्च दयितो भृशम्'—इति भागवते (६।१) । सैन्यविशेषः; 'मत्सहननतुल्यानां गोपानामर्बुदं महत् । नारायणा इति ख्याताः सर्वे सङ्ग्रामयोधिनः'—इति महाभारते (५।७) । धर्मपुत्रपि-विशेषः; 'धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिगट मूर्त्या नारायणो नर इति स्वतपःप्रभावः'—इति भागवते (२।७।६) । यतिधर्मः; 'दण्डग्रहणमात्रेण नरो नारायणो भवेत् । कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'गर्भो नारायणो हंसो विन्दुर्नादधिरः शिखा'—इति मुक्तिकोपनिषदि ।

चूणी'पधविशेषः; तैलविशेषः। २४

**नारी** स्त्री. [ नुर्नरस्य वा घर्म्या । नृ+ 'ऋतोऽञ्' इति अञ् । नर+ 'नराच्चेति वक्तव्यम्' इति अञ् । 'शाङ्ग-रवाद्ययोर्डीन्' इति डीन् ] नुर्नरस्य वा घर्माचरोऽस्याम्; नुर्नरस्येयम्; नरघर्माचारयुक्ता; स्त्री; योषित्; अबला; योषा; सीमन्तिनी; वधूः; प्रतीपदाशिनी; वामा; वनिता; महिला; प्रिया; रामा; जनिः; जनी; योषिता; जोषित्; जोषा; जोषिता; धनिका; महेलिका; महेला; शर्वरी; योषीत्; सिन्दूरतिलका; सुभ्रूः । 'मातृरक्तोत्तरा नारी । 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः । यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः'—इति मनुः (३।५६) । श्यक्षरवृत्तिविशेषः; 'मो नारी । गोपानां नारीभिः शिल्पोऽव्यात् कृष्णो वः'—इति छन्दोमञ्जरी । ४८१

**नालम्** क्ली. [ नलतीति, नल् वन्धने+ 'ज्वलितिकसन्तेम्यो णः'—इति ण ] उत्पलादिदण्डः; नाला; नाली; नालिका । 'कश्चित् कराम्यामुपगूढनालम् आलोलपत्राभिहतद्विरेकम्' । रजोभिरन्तः परिवेषदन्धि लीला-रविन्दं भ्रमयाञ्चकार'—इति रघी (६।१३) । [ अर्द्ध-च्चादित्वात् पुल्लङ्गोऽपि ] हरितालं; नले पुं. । ५७९

**नाभारोहः** पुं. [ नावम् आरोहयति, 'कर्मण्यण्' ] नाविकः; नीचालकः; तरिवाहकः । ३९०

**नाविकः** पुं. [ नावा तरतीति, नौ+ 'नौद्वचषठ्' इति ठन् । नौरस्त्यस्येति । 'त्रीह्यादिम्यश्च' इति ठन् वा ] कर्णधारः; 'भिन्ननीका यथा राजन्! द्वीपमासाद्य निर्वृताः । भवन्ति पुष्यव्याघ्र ! नाविकाः काल-पर्यये'—इति महाभारते (८।७७।०), । ३९०

**नाव्यम्** त्रि. [ नावा तार्यम् । नौ+ 'नौवयोधमेति यत् ] गभीरजलं; नौकागम्यदेशादि; 'मरुपृष्ठान्यु-दम्भांसि नाव्याः सुप्रतरा नदीः । विपिनानि प्रकाशानि शक्तिमत्त्वाच्चकार सः'—इति रघुवंशे (४।३१) ।

[ नवस्य भावः, नव+ष्यञ् ] नवत्वम् । ६४९

**नाशः** पुं. [ नश्+भावे घञ् ] निघनं; मृत्युः; 'पित्या-दृणादनिर्मुक्तस्तेन तप्ये तपोधनाः । देहनाशे ध्रुवो नाशः पितृणामेव निश्चयः'—इति महाभारते (१।१२०। १६) । पलायनम्; अनुपलम्भः; अदर्शनं; परिध्वंस्तिः; जीवानां नाशहेतुः; 'संगात् संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते । क्रोधाद्भवति सम्माहः सम्मोहात्

स्मृतिविभ्रमः । 'स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति'—इति भगवद्गीतायाम् । कुलनाशकारणम्—'अनृतात् पारदार्याच्च तथाऽभक्ष्यस्य भक्षणात् । अश्रीत-धर्माचरणात् क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् । अश्रोत्रिये वेददानाद् वृषलेषु तथैव च । विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् ।' ६२८

**नासत्यौ** पुं. [ नास्ति असत्यं ययोस्तौ । 'नभ्राण्णपादिति' नञः प्रकृतिभावः ] अश्विनीकुमारी । नित्यद्विवचना-न्तोऽयं शब्दः । 'आयुर्वेदं निरुद्धेगं तौ ययाचे शचीपतिः । नासत्यौ सत्यसन्धेनं शक्रेण किल याचितौ । आयुर्वेदं यथाधीतं ददतुः शतमन्यवे । नासत्याभ्यामधीत्यैप आयु-र्वेदं शतक्रतुः । अघ्यापयामास बहूनात्रेयप्रमुखान् मुनीन्'—इति भावप्रकाशे । ८४

**नासा** स्त्री. [ नासते शब्दायते इति । नास् शब्दे+ 'गुरोश्च'—इति अ, टाप् नास्यतेऽनयेति । नास्+करणे घञ् वा ] नासिका; 'शुकनासः सुखी स्याच्च शुष्कनासेऽतिजीवनम् । छिन्नाग्ररूपनासः स्यादगम्या-गमने रतः । दीर्घनासे च सौभाग्यं चीर आकुञ्चितेन्द्रियः । स्त्रीमृत्युश्चिपिटानास ऋजुर्भाग्यवतां भवेत् । अल्पच्छिद्रा सुपुटा च अवक्रा च नृपेश्वरे । क्रूरे दक्षिण-वक्रा स्याद्धनिनां च क्षुतं सकृत्'—इति गरुडपुराणे । वासकवृक्षः; द्वारोपरिस्थितदारु । ५२१

**नासिका** स्त्री. [ नासते शब्दायते इति । नास शब्दे+ 'ष्वुल् तृची' इति ष्वुल् । टापि अत इत्वम् ] घ्राणेन्द्रियं; घ्राणं; गन्धवहा; घोणा; नासा; शिङ्घुणी; नासिक्यं; नस्या; गन्धनाली; गन्धवन्धा; नका; 'श्रोत्रं त्वक् चक्षुषी जिह्वा नासिका चैव पञ्चमी । पायूपस्थं हस्तपादं वाक् चैव दशमी स्मृता'—इति मनुः (२।९०) । ५२१

**नाहलः** पुं. [ नाहं पर्वतशिखरादिकं लाति आश्रयत्वे-न गृह्णातीति । नाह+ला+क ] म्लेच्छजातिविशेषः । ५९९

**निःशलाकः** त्रि. [ निर्गता शलाका यस्मात्, शलाकाया निर्गतो वा ] रहः; निर्जनं; निर्भक्षिकम् । ७०८

**निःशेषम्** त्रि. [ निष्कान्तं शेषात्, 'निरादयः' इति समा-सः ] समस्तं; सम्पूर्णम्; 'उच्छिन्नसर्वसङ्कल्पो निःशेषा-शेषचेष्टितः । स्वावगम्यो लयः कोऽपि जायते वाग-गोचरः'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (४।३२) । शेष-रहितम् । ७७०

निःशोष्यम् त्रि. [ निरगतं शोष्यं यस्मात् । शोष्याधिगत-  
मिति वा । 'निरादयः' इति समासः ] शोधितं; मृष्टम् ।

७७०

निःश्रेणिः स्त्री. [ निनिश्चिता श्रेणिः सोपानपद्धक्तिः यत्र ]  
अधिरोहिणी; 'चक्रे त्रिदिवनिःश्रेणिः सरयूरनुयायिनाम्'  
—इति रघुवंशे (१५।१००) । खजूरीवृक्षः; घोटक-  
विशेषः; 'उपर्युपरि यस्य स्पुरावर्ता अलिके त्रयः ।  
निःश्रेणिः स तु विज्ञेयो राष्ट्रवृद्धिकरः परः'—इति  
नकुलकृताश्वचिकित्सिते । ३०९

निःश्रेणो स्त्री. [ निःश्रेणिः+कृदिकारादिति वा डोष् ]  
निःश्रेयणी; निःश्रेणिः; निःश्रेणिका; अधिरोहिणी;  
निःश्रेयिणी; 'सीढी' इति भाषा । ३०९

निःश्रेयसम् क्ली. [ निश्चितं श्रेयः, 'अचतुरविचतुरेति'  
निपातनात् साधुः ] मोक्षः; 'वेदाभ्यासस्तपो-  
ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः । अहिंसा गुस्तेवा च  
निःश्रेयसकरं परम्'—इति मनुः (१२।८३) । शुभम्;  
'इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् । उत्तम-  
श्लोकचरितं चकार भगवानृषिः । निःश्रेयसाय लोकस्य  
धन्यं स्वस्त्ययनं परम्'—इति भागवते (१।३।४०) ।  
विद्या; अनुभावः; भक्तिः; पुं. [ निनिश्चितं श्रेयो  
मङ्गलं यस्मात् ] शङ्करः । १२४

निःसरणम् क्ली. [ निर+सृ+त्युट् ] गेहादिमुद्धं;  
मरणम्; उपायः; निर्वाणं; निगमः; 'गर्भनासे महद्दुःखं  
दशभासनिवासनम् । तथा निःसरणे दुःखं योनियन्त्रेऽति-  
दारुणे'—इति देवीभागवते (४।२।२८) । २८९

निकरः पुं. [ निकरोति व्याप्नोतीति । नि+कृ+अच् ]  
समूहः; 'इत्यादिमुग्धबुद्धेरसमञ्जसवर्णनं रहः कृत्वा ।  
गृह्णाति कनकनिकरं नृत्यंस्तत्तन्मनोरथैः पापः'—इति  
कलाविलासे (२।१६) । सारः; न्यायदेयघनं; निधिः ।  
६८६

निकषा स्त्री. [ निकषति हिनस्तीति । कष् हिंसायाम्+  
पचाद्यच्+टाप् ] राक्षसमाता; सा सुमालिकन्या  
विश्रवसो भार्या । ११९

निकषा अव्य. [ नि+कष् गतौ+आः समिष्णिकपि-  
म्याम्' इति आ ] निकटं; समीपम्; 'पयोधिमावद्ध-  
चलज्जलाविलं विलङ्घ्य लङ्कां निकषा हनिष्यति'—  
इति माघे. (१।६८) । मध्यम् । ८७९

निकायः पुं. [ निचीयते इति, नि+चि+सङ्घे चानौ-  
त्तराधये' इति घञ् आदेशच क ] संहतानां समुच्चयः;  
'नीरुध्रनिर्यत्सुमनोनिकायकाषायपट्टप्रणयादशोकः'—  
इति श्रीकण्ठचरिते (६।१८) । निलयः; 'एते मनुस्तु  
सप्तान्यानसृजन् भूरितेजसः । देवान् देवनिकायांश्च  
महर्षींश्चामितौजसः'—इति मनुः (१।३६) । परमात्मा;  
लक्ष्यं; सधर्मिप्राणिसंहतिः; 'तथा देवनिकायानां सेन्द्राणां  
च दिवौकशाम्'—इति महाभारते (१।१२३।४५) । ६८६

निकाय्यः पुं. [ निचीयतेऽस्मिन् धान्यादिकमिति । नि+  
चि+पाय्यसांनान्यायनिकाय्येति' ष्यत्प्रत्ययेन निपातनात्  
साधुः ] गृहम्; 'न प्रणाय्यो जनः कश्चिन्नि-  
काय्यं तेऽधिपतिष्ठति । देवकार्यविधाताय धर्मद्रोही  
महोदये'—इति भट्टिः (६।६६) । २९१

निकारः पुं. [ नि+कृ+घञ् ] विप्रकारः; अपकारः;  
उत्कारः; धान्यस्योध्वक्षेपणं; खलीकारः; धिक्कारः ।

७०४

निकुञ्जम् पुं. क्ली. [ नितरां कौ पृथिव्यां जातम् इति ।  
जन्+ड । पृषोदरादित्वान् मुसागमे साधु ] कुञ्जम्;  
'रचिते निकुञ्जपत्रैर्भिक्षुकपात्रे ददाति सावज्ञम् ।  
पर्युसितमपि सुतीक्ष्णश्वासकदुष्णं वधूरक्षम्'—इति  
आर्यासप्तशत्याम् । १६७

निकुरम्बम् पुं. क्ली. [ निकुरतीति, नि+कृ+बाहुलकात्  
अम्बच् ] समूहः; 'आरक्तगण्डश्चिचिद्रुमदण्डभाजो,  
यस्यास्ति फेननिकुरम्ब इवाट्टहासः'—इति श्रीकण्ठ-  
चरिते (१८।४०) । ६८६

निकृतः त्रि. [ नि+कृ+क्त ] प्रत्याख्यातः; निराकृतः;  
तिरस्कृतः; शठः; वञ्चितः; नीचः । ३८३

निकृतिः स्त्री. [ नि कृ+कित् ] शाठ्यम्; 'न समय-  
परिरक्षणं क्षमन्ते निकृतिपरेषु परेषु भूरिधाम्नः'—इति  
किराते (१।४५) । दैन्यम्; भस्सनं; क्षीपः; शठः । ७४०

निकृष्टः त्रि. [ नि+कृप्+क्त ] अधमः; तुच्छः; जाल्या-  
चारादिनिन्दितः । ३३७

निकेतनम् क्ली. [ निकेतति निवसत्यस्मिन्निति । नि+  
कित्+अधिकरणे ल्युट् ] गृहम्; 'विसर्जिताय सा  
तेन गता शाल्वनिकेतनम् । उवाच तं वरारोहा राजानं  
मनसेप्सितम्'—इति देवीभागवते (१।२०।४२) ।  
पलाण्डो पुं. । २९१

निक्षेपः पुं. [ नि+क्षिप्+घञ् ] समर्पितवस्तु; उपनिधिः; न्यासः; 'स्वद्रव्यं यत्र विश्रम्भान्निक्षिपत्यविशङ्कितः । निक्षेपो नाम तत्प्रोक्तं व्यवहारपदं बुधैः । असंख्यातम- विज्ञातं समुद्रं यन्निधीयते । तज्जानीयादुपनिधिं निक्षेपं गणितं विदुः । निक्षेपं वृद्धिक्षेपं च क्रयं विक्रयमेव च । याच्यमानो न चेद्द्यादृद्धते पञ्चकं शतम्'—इति मिताक्षरायां नारदः । क्षेपणः; त्यागः । ८२

निखिलम् त्रि. [ निवृत्तं खिलं शेषो यस्मात् ] समस्तं; सम्पूर्णम्; 'निखिलमलगणानां नाशकृत् कामकन्दम् प्रकटय भगवत्या नामयुक्तं पुराणम्'—इति देवी- भागवते (१।२।४०) । ७१३

निगडः पुं.- क्ली. [ निगलति वन्नातीति । नि+गल्+ अच्, लस्य डत्वम् ] हस्तिनां लोहमयपादवन्धोपकरणं; शृङ्खलः; अन्दूकः; हिज्जीरः; अन्वुः; 'बद्धापराणि परितो निगडान्यलावीत् स्वातन्त्र्यमुज्ज्वलमवाप करेणु- राजः'—इति माघे (५।४८) । २२३

निगदितः त्रि. [ नि+गद् व्यक्त्यायां वाचि+वत्, इडागमः ] भाषितः; कथितः; उक्तः । ४७५

निगमः पुं. [ नितरां गच्छन्त्यत्र, 'गोचरसञ्चर' इति निपातितः ] अध्वा; पुरी (२८५); वेदः (७९६); 'कथञ्कारं वाच्यः सकलनिगमागोचरगुणप्रभाव- स्वं यस्मात् स्वयमपि न जानासि परमम्'—इति देवी- भागवते (१।५।१६) । वाणिजः; कटः; वाणिक्यः; हट्टः; निश्चयः; 'तस्या एव प्रतिजाया हेतुभिर्दृष्टान्तो- पनयनिगमैः स्थापना'—इति चरकः । उपदेवाः; 'इमं स्वनिगमं ब्रह्मज्ञवेत्य- मदनुष्ठितम् । अदान्मे जानमैश्वर्यं स्वस्मिन् भावं च क्रेगवः'—इति भागवते (१।५।३९) ।

- २६०

निगूहनम् क्ली. [ निगूह्यते संव्रियते इति । नि+गूह्+ ल्युट् ] गोपनं; संवरणम् । ७७२

निगन्धनम् क्ली. [ नि+ग्रथि कौटिल्ये+भावे ल्युट् ] मारणं; हननं; विनाशनम् । ४७८

निघ्नः त्रि. [ निहन्यते निगूह्यते इति । नि+हन्+वञर्थे क । नियम्यत्वादेवास्य तथात्वम् ] अधीनः; आयुक्तः; 'आश्वस्य रामावरजः सतीं ताम् आख्यातवाल्मीकि- निकेतमार्गः । निघ्नस्य मे भर्तृनिदेशरीक्ष्यं देवि ! क्षम- स्वेति बभूव नम्रः'—इति रघुवंशे (१।४।५८) ।

अङ्कपुरणं; गुणनम्; 'पुनर्द्वादशनिघ्नाच्च लम्पते यत्फलं बुधैः'—इति सूर्यसिद्धान्ते (३।२९) । सूर्य- वंशीयनृपभेदः; 'अनरण्यसुतो निघ्नो निघ्नपुत्री वभू- वतुः'—इति हरिवंशे (१५।२२) । ३४१

निचितम् त्रि. [ निचीयते मस्मेति । नि+चि+क्त ] पूरितं; व्याप्तम्; 'पश्य नानाविधाकारैरग्निभिर्नि- चितां महीम्'—इति महाभारते (३।१२९।१४) । सञ्चितम्; 'वायुः प्रवृद्धो निचितं वनाशं नुदत्यवस्ता- दहिताशनस्य'—इति भावप्रकाशः । नदीभेदे स्त्री । 'कीशिकीं त्रिदिवां कृत्यां निचितां रोहितारणीम्'— इति महाभारते (६।१।१८) । ७०२

निचुलः पुं. [ निचोलति समुच्छ्रयतीति । नि+चुल्+ 'इगुपधजेति' क ] इज्जलवृक्षः; 'इज्जलो हिज्जल- श्चापि निचुलश्चाम्बुजस्तथा'—इति भावप्रकाशे । वेतसवृक्षः; निचोलः । १९५

निचोलकः पुं. [ निचोल इव कायतीति । निचोल+ कै+क ] भटादेशचोलाकृतिसन्नाहः; कुपांसः; बारवाणः; कञ्चुकः; कूपसिः; कूपसिकः; अर्द्धचोलकः; निचुलकं; निचोलकं; निचोलः; निचुलः; उत्तरच्छदः; प्रच्छ- दपटः । ५५२

नितम्बः पु. [ निभृतं तम्यते आकाङ्क्षयते पर्वतीयैः कामु- क्कैरिति वा । तमु काङ्क्षायाम्+उल्वादयश्चेति' साधुः । यद्वा नितम्बति षोडशति नायकचित्तमिति । नि+ तम्ब हिंसायाम्+अच् ] कटकः; 'गिरेर्नितम्बं महता विभिन्नं तोयावशेषेण हिमाभमभ्रम्'—इति भट्टिः (२।८) । कटिमात्रम् (५१२); 'तरुण्यलिङ्गितः कण्ठे नितम्बस्थानमाश्रितः । गुरुणां सन्निधानेऽपि कः कुञ्जति मुहुर्मुहुः'—इति विदग्धमुक्त्रमण्डने । स्कन्धः; रोधः; स्त्रीकट्याः पश्चाद्भागः; 'विपुलतरनितम्बा- भोगश्चेत् रमण्याः, शयितुमनधिगच्छन् जीवितेशोऽव- काशम्'—इति माघे (१।१।५) । १६६

नितम्बिनी स्त्री. [ अतिशयितो- नितम्बोऽन्त्यस्या इति । नितम्ब+ 'अत इनिठनी' इति इति, स्त्रियां ङीप् ] स्त्रीमात्रम्; 'नितम्बिनीमिच्छसि मुक्तलज्जां कण्ठे स्वयंश्राहनिपततवाहुम्'—इति कुमारसम्भवे (३।७) । प्रयस्तनितम्बविशिष्टा; 'वैगुण्येऽपि हि महता विनिमित्तं भवति कर्म शोभायै । दुर्बहनिनितम्बमन्वरमपि हरति मनो

नितम्बिनोत्थम्—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५४) ।  
नितम्बविशिष्टे त्रि. । 'लोम्यमाननयनः श्लथांशुकैः मेख-  
लागुणपदैर्नितम्बभिः'—इति रघौ (१९।२६) । ४८२  
नितान्तम् क्ली. [ निताम्यतीति, नि + तम् + कर्त्तरि क्त,  
'अनुनासिकस्येति' दीर्घः ] अतिशयः; 'केनाभ्यसूयापद-  
काङ्क्षिणा ते नितान्तदोषैर्जनितान्तपोभिः'—इति  
कुमारसम्भवे (३।४) । तद्वति त्रि. । ७१८

नित्यम् क्ली. [ नियमेन भवम् । नि + 'त्यञ्' नेर्ध्रुव इति;  
वक्तव्यम्' इति त्यप् ] निरन्तरक्रियावचनं; सततम्;  
अनारतम्; अश्रान्तं; सन्ततम्; अविस्तम्; अनिशम्,  
अनवरतम्; अजस्रं; प्रसवतम्; आसवतम्; अलङ्घ्यम् ।  
तद्वति त्रि. । (६९८) कालत्रयव्यापी, शाश्वतः; ध्रुवः;  
सदातनः; सनातनः; 'दमो दानं भमा बुद्धिर्हृत्ति-  
स्तेज उतमम् । नित्यान्यासन् महासत्त्वे शान्तनी पुष्टवर्षभे'  
—इति महाभारते (१।१००।२) पुं समुद्र. । १२५  
नित्यत्वम् क्ली. [ नित्य + 'तस्य भावस्त्वतलौ' ] नित्यता  
सदा; सना; सर्वदा । ८८७

निदाघः पुं. [ नितरां दह्यतेऽत्र अनेन वा । नि + दह् +  
घञ् । न्यङ्क्त्वादित्वात् कुत्वम् ] ग्रीष्मकालः; उष्णः;  
धर्मः; 'रावणावरजा तत्र राघवं मदनानुरा । अभिपेदे  
निदाघार्ता व्यालीव मलयद्रुमम्'—इति रघौ (१२।३२)  
११६

निदानम् क्ली. [ नि निश्चयो दीयतेऽनेनेति । नि + दा +  
करणे ल्युट् ] आदिकारणम्; 'निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य  
सन्ततेः सुदक्षिणा दीर्हदलक्षणं दधी'—इति रघौ  
(३।१) । रोगनिर्णयः; रोगलक्षणम्; आदानं; रोग-  
हेतुः; 'निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा । सम्प्रा-  
प्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पञ्चधा स्मृतम् । निमित्त-  
हेत्वायतनप्रत्ययोत्थानकारणैः । निदानमाहुः पर्यायैः  
प्रापूर्णं येन लक्ष्यते'—इति माधवकरः । अवसानम्  
(८२५); कारणं; वत्सदामादि; 'उदुश्रियाणाममृज-  
न्निदानम्'—इति ऋग्वेदे (६।३।२) । [ नि + दो  
अवैलण्डने + भावे ल्युट् ] कारणक्षयः; [ नि + दैपृशोवने  
+ भावे ल्युट् ] शुद्धिः; तपःफलयाचनं; पैलुनिकृत्-  
चिकित्साग्रन्थविशेषः; 'पैलो निदानं करथस्तन्नं सर्वंधरं  
परम् । द्वैधनिर्णयतन्नं च चकार कुम्भसम्भवः'—इति  
ब्रह्मवैवर्ते (१।१६।२१) । ६१२

निदिग्धिका स्त्री. [ निदिग्धा + स्वार्थे संज्ञायां वा कन् ।  
टापि अत इत्वम् ] कण्टकारिका; 'अनाक्रान्ता स्पृही व्याघ्री  
भण्डाकी च निदिग्धिका । सिही धामनिका क्षुद्रा बृहती  
कण्टकारिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । एला;  
निदिग्धा; 'कपित्थवृहतीविल्वपटोलेपुनिदिग्धिकाः'  
—इति सुश्रुते (३।१७) । ६१९

निधनः पुं. क्ली. [ नि + धा + ल्युट् ] मरणं; वधतारा;  
सा तु जन्मनक्षत्रत् सप्तमी तारा; 'जन्म सम्पद्विपत्  
क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः । प्रत्यरी लवणं दद्यान्निधने  
तिलकाञ्चनम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । [ निवृत्तं धनं  
यस्य ] धनहीने त्रि. । ६२८

निधिः पुं. [ निधीयतेऽत्रेति । नि + धा + कि ] कुवेरस्य  
नवधा रत्नकोशः; शोवधिः; सेवधिः; 'पद्मोऽस्त्रियां  
महापद्मं शङ्खो मकरकच्छपी । मुकुन्दकुन्दनीलाश्च  
वर्चोऽपि निधयो नव'—इति हारावली । नलिकानाम-  
गन्धद्रव्यं; समुद्रः; 'कन्यां मुकेशीं निधिकन्यकासमां  
मेने तदात्मानमनुत्तमं च'—इति देवीभागवते (३।२२।  
१०) । जीवकीपधिः; आधारः; चिरप्रनष्टस्वामिक-  
भूजातधनविशेषः; अज्ञातस्वामिकचिरनिवातस्वर्णादि;  
'राजा लब्ध्वा निधिं दद्यात् द्विजेभ्योऽर्द्धं द्विजः पुनः ।  
विद्वानशेषमादद्यात् सर्वस्यासौ प्रभुर्यतः । इतरेण  
निधौ लब्ध्वे राजा षष्ठाशमाहरेत् । अनिवेदितविज्ञातो  
दाप्यस्तं दण्डमेव च'—इति मिताक्षरा । 'ममायमिति  
यो ब्रूयान्निधिं सत्येन मानवः । तस्याददीत पङ्भागं  
राजा द्वादशमेव वेति । अंशविकल्पस्तु वर्णकालाद्येप-  
क्षया वेदितव्यः'—इति मनुः । पीरववंशीय नृपविशेषः;  
'बुभुजे पृथिवीमेनां दण्डपाणिर्महाबलः; राजासने ततः  
सोऽपि स्थापयित्वा निधिं सुतम् । स्मरन्नारायणं  
देवं तपसे स वनं ययो । निधिस्तु विधिवद्राज्यं चकार  
नोतिपण्डितः'—इति राजावल्यां मत्स्यपुराणे । विष्णुः;  
'सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतार्दिनिधिरव्ययः । 'प्रलय-  
कालेऽस्मिन् सर्वं निधीयते इति निधिः' इति तद्भाष्ये  
शङ्करः । महादेवः; 'श्रुवहस्तः सुरुपश्च तेजस्तेजकरो  
निधिः'—इति महाभारते (१।३।१७।४३) । ८२

निधुवनम् क्ली. [ नितरां धुवनं हस्तपादादिकम्पनं  
यत्र ] मैथुनम्; 'अनिमिषमविरामारागिणां सर्वं रात्रं,  
नवनिधुवनलीलाः कौतुकेनातिवीक्ष्य । इदमुदवसितानाम-

स्फुटालोकसम्पत्, नयनमिव सनिद्रं घूर्णते दैपमर्चिः—  
इति माघे (१११८) । नर्मः; केलिः; [ नितरां  
ध्रुवनं कम्पनम् ] कम्पः । ५६९

निध्यानम् क्ली. [ नि+ध्वाँ+ल्युट् ] दर्शनं; सोत्कण्ठ-  
स्मरणम् । ५६६

निन्दा स्त्री. [ निन्वन्मिति, निदि+‘गुरोश्च हलः’ इति  
श्चियाम् अ, टाप् ] अपवादः; निन्दनम्; अवर्णः; आक्षेपः;  
निर्वादः; परीवादः; कुत्सा; उपक्रोशः; जुगुप्सा; गर्हणं;  
गर्हा; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; अपक्रोशः; भर्त्सनम्;  
अववादः; गर्हणा; धिक्क्रिया; ‘गुरोर्ग्रंथं परीवादो  
निन्दा वापि प्रवर्तते । कर्णौ तत्र पिघातव्यौ भन्तव्यं वा  
ततोऽन्यतः’—इति मनुः (२।२००) । ‘वेदिनिन्दारतान्  
मर्त्यान् देवनिन्दारतास्तथा । द्विजनिन्दारताश्चैव मन-  
सापि न चिन्तयेत् । न चात्मानं प्रशंसेद्वा परनिन्दां च  
वर्जयेत् । वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्जयेत् ।  
यस्तु देवानुषींश्चैव वेदं वा निन्दति द्विजः । न तस्य  
निष्कृतिर्दृष्टा शास्त्रेष्विह मुनीश्वराः । निन्दयेद्दे-  
गुहं देवं वेदं वा सोपबृंहणम् । कल्पकोटिशतं साग्रं  
रीरवे पच्यते नरः । तूष्णीमासीत् निन्दायां न ब्रूयात्  
किञ्चिदुत्तरम् । कर्णौ पिघाय गन्तव्यं न चैनानवलोक-  
येत् । वर्जयेद्दे परेषान्तु गृहेषु गर्हणां बुधः । न निन्देद्यो-  
गिनः सिद्धान् व्रतिनो वा यतींस्तथा । देवतायतनं  
प्राज्ञो देवानामाकृतिं तथा’—इति कौर्मो । दुष्कृतिः;  
अपवादः । १४७

निपः पुं.- क्ली. [ नियतं पिवत्यनेनेति । नि+पा+घञ्  
क ] कलसः । कदम्बवृक्षे पुं. । ३१६

निपातः पुं. [ नितरां पतनमिति । नि+पत्+घञ् ] मृत्युः;  
‘सङ्गरेषु निपातैषु तथापद्मचसनेषु च’—इति महाभारते  
(५।१२२।९) । पतनम्; ‘वने वा हर्म्ये वा समकर-  
निपातो हिमकरः’—इति आनन्दलहरीयाम् । ८७२

निपानम् क्ली. [ निपीयते अस्मिन्निति । नि+पा+अधि-  
करणे ल्युट् ] निपानकं; कूपसमीपशिलादिनिवद्धपशुपा-  
नार्थकृतकूपोद्धृताम्बुस्थानम्; आहावः; गोदोहनपात्रं;  
जलाशयमात्रम्; ‘परनिपानेषु न स्नानमाचरेत्’—  
इति विष्णुसंहितायाम् । ६८४

निभः पुं. [ नियतं भातीति । नि+भा+क ] व्याजः;  
दि. सदृशः; ‘ब्रह्मपुण्डरीकाक्षं बालातपनिभांशुकम् ।

दिवसं शारदमिव प्रारम्भमुखदर्शनम्’—इति रघुवंशे  
(१०।९) । प्रकाशः । ७०९

निभालनम् क्ली. [ नि+भल्+णिच्+भावे ल्युट् ] दर्शनम्;  
अवलीकनम् । ५६६

निमित्तम् क्ली. [ नि+मिद्+क्त । संज्ञापूर्वकत्वात्  
नत्वम् ] लक्ष्यं; हेतुः; ‘किं निमित्तं महाभाग ! नि-  
स्पृहस्य च मां प्रति । जातं हागमनं ब्रूहि कार्यं तन्मुनि-  
सत्तम ! ’—इति देवीभामवते (१।१९।५) । चिह्नं;  
शकुनः; ‘निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ! ’  
—इति श्रीभगवद्गीतायाम् । ४६८

निमिषः पुं. [ निमिषतीति, नि+मिष्+‘इदुपधेति’ क ]  
निमेषः; कालविशेषः; विष्णुः । ८६९

निमीलनम् क्ली. [ निमीलत्येनेनेति । नि+मील्+करणे  
ल्युट् ] मरणं; [ नि+मील्+भावे ल्युट् ] निमेषः; ‘नयन-  
निमीलनमूलः सुचिरं रनानार्द्रचूलजलसिक्तः । दम्भतपः  
शुचिकुसुमः सुखशतशाखाशतैः फलितः’—इति कला-  
विलासे (१।४७) । कालविशेषः; ‘तद्वदेव विमर्दाद्धं-  
नाडिकाहीनसंयुते । निमीलनोन्मीलनाख्ये भवेतां  
सकलग्रहे’—इति सूर्यसिद्धान्ते (४।१७) । ६२८

निमेषः पुं. [ नि+मिष्+भावे घञ् ] पक्ष्मस्पन्दनकालः;  
निमिषः; दृष्टिनिमीलनम्; ‘पलक मीचन’ इति भाषा ।  
पुंसो यावत्कालमकृत्रिमनेत्रविकाशानन्तरं पक्ष्माकुञ्चनं  
जायते स निमेषः; ‘अक्षिपक्ष्मपरिक्षेपो निमेषः परि-  
कीर्तितः । द्वी निमेषी त्रुटिर्नाम द्वे त्रुटी तु लवः स्मृतः’  
—इति अग्निपुराणे । पक्ष्मस्पन्दनम्; ‘पपी निमेषा-  
लसपक्ष्मपवितरूपोपिताम्यामिव लोचनाम्याम्’—  
इति रघौ (२।१८) । रोगविशेषः; ‘नेत्रस्तम्भं  
निमेषं वा तृष्णां कासं प्रजागरम् । लभते दन्तचालं च  
तांस्ताश्चान्यानुपद्रवान्’—इति सुश्रुते । यक्षविशेषः;  
‘ल्लूकश्वसनाभ्यां च निमेषेण च पक्षिराट् । प्ररुजेन च  
सङ्ग्रामं चकार पुलिनेन च’—इति महाभारते (१।३२।  
१९) । ८६९

निम्नम् त्रि. [ निष्कृष्टा ग्ना अभ्यासः शीलमत्र । यद्वा  
निष्कृष्टं म्नातीति । म्ना+क ] नीचं; गभीरं; गम्भीरं;  
गभीरकम्; ‘क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चयं मनः पयश्च  
निम्नाभिमुखं प्रतीयेत्’—इति कुमारसम्भवे  
(५।५) । पुं. अनमित्रपुत्रः; ‘दिग्निस्तस्यानमित्रश्च

निम्नोऽभूदनमित्रतः । सत्राजितः प्रसेनश्च निम्नस्याथा-  
सतुः सुती'—इति भागवते (१।२४।१२) । ६२४  
निम्नगा स्त्री [ निम्नं गच्छतीति, निम्न + गम् + ड + टाप् ]  
नदी । 'यादृगुणेन भर्त्रा स्त्री संपुज्येत यथाविधि ।  
'तादृगुणा सा भवति समुद्रेणैव निम्नगा'—इति मनुः  
(१।२२) । नीचगामिनि त्रि. । ६६५

नियतः त्रि. [ नि + यम् + क्त ] नियमे स्थितः; निश्चितः;  
'कार्तिके शुक्लपक्षस्य द्वितीयायां नराधिप ! पुष्पाहारो  
वर्षमेकं तत्रैव नियतात्मवान्'—इति भविष्यपुराणे ।  
सेवापरः; 'प्रायच्छत मुनेस्तस्य बल्कलं नियतो गुरोः'—  
इति रामायणे (१।२।७) । नित्यः; 'अन्यथासिद्धि-  
शून्यस्य नियता पूर्ववर्तिता । कारणत्वं भवेत्तस्य त्रैविध्यं  
परिकीर्तितम्'—इति भाषापरिच्छेदे । 'चन्द्रे लक्ष्मीः  
प्रभा सूर्ये गतिर्वायी भुवि क्षमा । एतत्तु नियतं सर्वं  
त्वयि चानुत्तमं यशः ।' [ निपूर्वथम्धातोर्वन्वनायकत्वात् ]  
बद्धः; संपुक्तः; आसक्तः; 'प्रतिज्ञामात्मनो रक्षन् सत्ये  
च निरतः सदा'—इति महाभारते (१।१३।४।५९) ।

७१०

नियतिः स्त्री. [ नियम्यते आत्मा अनयेति । नि + यम् +  
करणे क्तिन् ] भाग्यं; दैवम्; 'आसादितस्य तमसा  
नियतेनियोगाद् आकाङ्क्षतः पुनरपक्रमणेन कालम्'  
—इति माघे (४।३४) । नियमः; चतुर्दशवारिणी-  
देवयोषिद्गणानामन्यतमा । ८६

नियन्ता [ ऋ ] पुं. [ नियच्छति अश्वादीनिति । नि +  
यम् + तृच् ] सारथिः; 'स नियन्तृध्वजरथं विव्याध  
निशितैः शरैः'—इति महाभारते (७।१३।२२) ।  
विष्णुः; 'अपराजितः सर्वसहो नियन्ता नियमो यमः'—  
इति महाभारते । त्रि. शास्ता; 'रेखामात्रमपि क्षुण्णा-  
वामनोर्वर्त्मनः परम् । न व्यतीयुः प्रजास्तस्य नियन्तु-  
र्नैमिवृत्तयः'—इति रघी (१।१७) । ४४८

नियमस्त्यतिः स्त्री. [ नियमे व्रताचरणादौ स्त्यतिः ]  
तपस्या; धर्मानुष्ठानम् । ७७६

निरन्तम् त्रि. [ निर्गच्छति अन्तरं यस्मिन् यस्माद्वा ]  
निविडं; घनं; अनवकाशः; 'सञ्जनयोः स्तनयोरिव  
निरन्तरं सङ्गतं भवति'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(४।३८) । अनवधिः; अपरिवानं; अनन्तधाम्निः;  
अभेदः; अतादर्थ्यम्; अच्छिद्रम्; 'शिलाशयान्तामनि-

केतवासिनीं निरन्तरास्वन्तरवातेवृष्टिषु'—इति  
कुमारसम्भवे (५।२५) । 'अविना, अवहिः, अनात्मीयम्,  
अनवसारः, अमध्यम्, अनन्तरात्मा' एते निरूपसर्गपूर्व-  
कान्तरशब्दार्थाः । ७१७

निरयः पुं. [ निकृष्टः अयो गमनं यत्र ] नरकः; 'कथं च  
शक्तास्ते दातुं निरयस्याः फलं पुनः'—इति हरिवंशे  
(१६।१६) । ६२५

निरयंकम् त्रि. [ निर्गतोऽर्थो यस्मात् । कप् ] निष्फलः;  
मोघं; विफलम्; 'अयं तु साक्षाद्भगवांश्च्यवीशः,  
कूटस्य आत्मा कलयवतीर्णः । यस्मिन्नविद्यारचितं  
निरयंकं पश्यन्ति नानात्वमपि प्रतीतम्'—इति भागवते  
(४।१६।१९) । ७७४

निरवग्रहः पुं. [ निर्गतोऽवग्रहः प्रतिबन्धो यस्मात् ]  
स्वतन्त्रः; 'दुर्दमः कामचारी च स केशी निरवग्रहः'—  
इति हरिवंशे (८०।९) । वृष्टिप्रतिबन्धाभावः;  
महादेवः; 'नीलस्तथाङ्गलुञ्चश्च शोभनो निरवग्रहः'  
—इति महाभारते (१३।१७।८२) । ३७९

निरसनम् क्ली. [ निरस्यते क्षियते इति । निर् + अस् +  
ल्युट् ] वधः; निष्ठीवनं; निःसारणं; प्रत्याख्यानम्;  
'स पितृविक्रियां दृष्ट्वा राज्यान्निरसनं च तत् । नियतो  
वर्तयामास प्रजाहितचिकीर्षया'—इति महाभारते  
(१।४।४।१०) । ४७७

निरस्तः त्रि. [ निर् + अस् + क्त ] निराकरणविशिष्टः;  
प्रत्यादिष्टः; प्रत्याख्यातः; निराकृतः; निकृतः;  
विप्रकृतः; प्रतिक्षिप्तः; अपविद्धः; निष्कृतः; प्रेषितः;  
संत्यक्तः; प्रतिहतः; 'यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्य-  
स्तत्राल्पधीरपि । निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि दुमायते'  
—इति हितोपदेशे । 'आयान्ती वल्लिकृता सा निरस्ता  
महोलकया'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८९।२३) । १४२

निराकृतः त्रि. [ निर् + आ + क्त + क्त ] प्रत्याख्यातः;  
निरस्तः । ७०३

निराकृतिः स्त्री. [ निर् + आ + क्त + क्त + क्त ] अस्वा-  
ध्यायः; अनाकारः; निरसनं; निराकरणम्; पुं.  
पञ्चमहायज्ञानुष्ठानरहितः; 'यक्ष्मी च पशुपालश्च  
परिवेत्ता निराकृतिः'—इति मनुः । निराकृतिः पञ्च-  
महायज्ञानुष्ठानरहितः; तथा च 'निराकृतमिरादीनां  
स विज्ञेयो निराकृतिः'—इति कुल्लूकभट्टः । रोहित-



मनुपुत्रः; 'दक्षपुत्रस्य पुत्रास्ते रोहितस्य प्रजापतेः । मनोः पुत्रो घृष्टकेतुः पञ्चहोत्रो निराकृतिः'—इति हरिवंशे (७।६३) । ४०५

**निरामयः** त्रि. [ निर्गत आमयो व्याधिर्यस्मात् ] रोगरहितः; वार्ताः; कल्यः; नीरुजः; पटुः; उल्लाघः; लघुः; अगदः; निरातङ्कः; अनातङ्कः; आतङ्करहितः; 'निरामयाणां चित्रं तु भक्तमध्ये प्रकीर्तितम्'—इति सुश्रुते । उपद्रवादिशून्यः; 'इदं नगरमध्यासे रमणीयं निरामयम् । वसतेह प्रतिच्छन्ना ममागमनकाङ्क्षिणः'—इति महाभारते (१।१५७।११) । रोगनाशकः; 'किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते ! निरामयं कृष्णरसायनं पिव'—इति मुकुन्दमालायाम् (२१) । पं. [ निर्गतः आमयो यस्मात् ] इडिकः; वनच्छगलः; शूकरः; नृपविशेषः; 'घृष्टकेतुर्वृहत्केतुर्दीप्तकेतुर्निरामयः'—इति महाभारते (१।१२३४) । महादेवः; क्ली. कुशलम्; 'कुरूणां पाण्डवानां च प्रतिपत्स्व निरामयम्'—इति महाभारते (५।७८।८) । ३८०

**निर्ऋतिः** स्त्री. [ निरनियता ऋतिवृणा अशुभं वा यत्र ] अलक्ष्मीः; 'अरुन्तुदं परुषं तीक्ष्णवाचं वाक्कण्ठकैर्वितुदन्तं मनुष्यान् । विद्यादलक्ष्मीकृतमं जनानां मुखे निवद्धा निर्ऋतिं वहन्तम्'—इति महाभारते (१।८७।९) । पापदेवता; 'दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम'—इति ऋग्वेदे (१०।१६५।१) 'निर्ऋत्याः पापदेवतायाः दूतोऽनुचरः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । त्रि. [ निर्गता ऋतिरशुभं यस्मात् ] निरुपद्रवः; दिक्पालविशेषः; स तु नैर्ऋत्यकोणाधिपतिः । राक्षसः; 'वेत्या हि निर्ऋतीनां वज्रहस्तपरिवृजम्'—इति ऋग्वेदे (८।२४।२४) । मृत्युः; 'स चिन्तयन्नित्यमयाशृणोद्यथा, मुनेः सुतोक्तो निर्ऋतिस्तक्षकाख्यः'—इति भागवते (१।१९।४) । ८६

**निर्गुण्डी** स्त्री. [ निर्गतं गुण्डं वेष्टनं यस्याः । डीप् ] वृक्षविशेषः; सिन्दुकः; सिन्दुवारः; इन्द्रसुरिसः; इन्द्राणिका; सिन्धुकः; सिन्धुवारः; इन्द्रमुरसः; निर्गुण्डी; इन्द्राणी; पीलोमी; शक्राणी; कासनाशिनी; विसुन्धकः; सिन्धकं; सुरसः; सिन्धुवारितः; सुरसा; सिन्धुवारकः; करहाटः; नीलशेफालिका; शेफालिका; शेफाली; नीलिका; मलिका; सुवहा; रजनीहासा; निशिपुष्पिका ।

**निर्घन्थः** पुं. [ ग्रन्थेभ्यः श्रुत्यादिनियमेभ्यो निर्गतः ] मुनिः; क्षपणः; गन्धकः; निस्वः; वालिशः; द्यूतकारः; त्रि. ग्रन्थेभ्यो निर्गतः; निवृत्तहृदयग्रन्थिः; 'आत्मारामाश्च मुनयो निर्घन्था अप्युरुक्रमे'—इति भागवते (१।७।१०) 'निर्घन्थाः ग्रन्थेभ्यो निर्गताः, यद्वा ग्रन्थिरेव ग्रन्थः निवृत्तः क्रोत्राहङ्काररूपो ग्रन्थिर्येषां ते निवृत्तहृदयग्रन्थय इत्यर्थः'—इति तट्टीकायां स्वामी । ३४४

**निर्घन्थनम्** क्ली. [ निर्+ग्रथि.कौटिल्ये+भावे ल्युट् ] वधः; मारणम् । ४७८

**निर्जरः** पुं. [ जराया निष्क्रान्तः । 'निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्याः'—इति समासः ] देवः; 'विशन्तु निर्जराः सर्वे कुशलं कथयन्तु वः'—इति देवीभागवते (५।८।१८) । जरारहिते त्रि. । सुधायाम् क्ली. । ४

**निर्झरः** पुं. [ निर्झृणाति जीर्णीभवति उच्चस्थानपतनादिति । निर्+झृ+ञच् ] पर्वतावतीर्णजलप्रवाहः; झुतजलप्रवाहः; झरः; निर्झरी; पर्वताद्वेगेन पतज्जलं; झोराः; 'सरितो निर्झरांश्चैव ददशाद्भुतदशानान्'—इति महाभारते (३।६४।९) । 'शैलसानुस्रवद्वारिप्रवाहे निर्झरो झरः । स तु प्रस्रवणश्चापि तत्रत्यं नैर्झरं जलम् । मधुरं कटुपाकं च वातं स्यादतिपित्तलम् । नैर्झरं रुचि-कृष्णं कफघ्नं दीपनं लघु'—इति भावप्रकाशः । सूर्यघोटकः; तुपानलः । १६६

**निर्झरी** स्त्री. [ निर्+झृ+ञच्+ढीप् ] निर्झरः; नदी । १६६

**निर्झरिणी** स्त्री. [ निर्झर उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्या इति । इनि, डीप् ] नदी; 'सोऽपि तां वीक्ष्य लावण्यरस-निर्झरिणीं नृपः । यत्र प्राप परिष्वङ्गं तृषाक्रान्तो मुमूर्च्छं तत्'—इति कथासरित्सागरे (१७।७) । ६६५

**निर्गन्तम्** त्रि. [ निर्गन्त्यते शुष्यते स्मेति, निर्+गिञ्+क्त ] अपनीतमलं; शोधितम्; 'जलदेवगृह्णैव श्मशानं गोद्विजालयम् । निर्गन्तपादः प्रविशेन्नानिर्गन्तः कदाचन'—इति चिन्तामणिघृतवचनम् । ४०८

**निर्गन्तकः** पुं. [ निर्गन्तेक्ति निर्मलीकरोति वस्त्रमिति । निर्+गिजिर् शौचपोषणयोः +ण्वल् ] रजकः; 'कारुकाशं प्रजां हन्ति बलं निर्गन्तकस्य च । गणास्रं गणिकास्रं च लोकेभ्यः परिक्रन्तति'—इति मनुः (४।२।१९।१) ।

निनिमित्तम् त्र. [ निर्गतं निमित्तं प्रयोजकं प्रयोजनं वा यत्र ] स्वाच्छन्द्यं; यदृच्छा । ७०४

निर्मन्थकाष्ठम् क्ली. [ यज्ञार्थं निःशेषं मन्थनं निर्मन्थः, भावे घञ् । तस्य काष्ठं दारु ] निर्मन्थदारु; अरणिः; यज्ञे अग्न्युत्थापनार्थं घर्षणीयकाष्ठम् । ४१५

निर्मोकः पुं. [ नितरां मुच्यते इति । निर्+मुच्+घञ् ] सर्पत्वकः; अहिकोपः; निल्वयनी; कञ्चुकः; 'निजगात्र-निर्विशेषस्थापितमपि सारमखिलमादाय । निर्मोकं च भुजङ्गो मुञ्चति पुरुषं च वारवधूः—इति आर्यासप्त-शत्याम् (३२८) । त्वङ्मात्रम्; 'मृगनिर्मोकवसना-श्चौरवल्कलवाससः । निर्द्वन्द्वाः सत्यं प्राप्ता बाल-खिल्यास्तपोचनाः—इति महाभारते (१३।१४९।१०१) । [ भावे घञ् ] मोचनम्; आकाशः; सन्नाहः; सार्वणि-मनोः पुत्रविशेषः; 'अष्टमेऽन्तरायायाते सार्वणिर्भविता-मनुः । निर्मोकविरजस्काद्याः सार्वणितनया नृप ।—इति भागवते (८।१३।११) । ६४४

निर्वाणम् क्ली. [ निर्वाति निर्गच्छति मदोऽनेनेति । निर्+वा+करणे ल्युट् ] गजापाङ्गदेशः; 'प्रत्यन्वदन्ति-निशिताङ्कुशद्वारभित्तनिर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी'—इति माघे (५।४१) । मोक्षः; अध्वनिर्गमः; 'निर्याणं च रथेनागु सहसा यत्कृतं त्वया—इति महा-भारते (१३।५।५।६) । पशुषादवन्धनरज्जुः; 'निर्याण-हस्तस्य पुरो दुधुक्षतः—इति माघे (१२।४०) । ५२१७

निर्यामः पुं. [ निर्यम्यतेऽनेनेति । निर्+यम्+घञ् ] पोतवाहः । ६५५

निर्यासः पुं. [ निर्+यस्+घञ् ] क्वाथः; कषायः; वृक्षादिक्षीरं; वैष्टकः; 'लोहितान् वृक्षनिर्यासान् ब्रश्चनप्रभवांस्तथा । शैलुं गव्यञ्च पेयूपं प्रयत्नेन विवर्ज-येत्—इति मनुः (५।६) । [ अर्द्धवादित्वात् क्ली-वेऽपि ] स्वरसः; 'कदलीकन्दनिर्यासि तत्प्रभूनतुलां पचेत् । चतुर्भागावशेषेऽस्मिन् घृतप्रस्थं विपाचयेत्—इति—वैद्यके । ८६१

निल्वयनी स्त्री. [ नितरां लीयते संलीनो भवति अहि-रस्यामिति । निर्+ली+ल्युट्, षूढेदरादित्वात् वकारा-गमः ] कञ्चुकः; सर्पत्वक् । ६४४

निर्वणम् क्ली. [ निर्+वण्+भावे ल्युट् ] दानम्; 'अनर्थावृत्ता कार्यं पिण्डनिर्वणं सुतैः—इति मनुः

(३।२४८) । 'पिण्डदानम्; 'एवं निर्वणं कृत्वा पिण्डांस्तांस्तदनन्तरम् । गां विप्रमजमग्निं वा प्राश्व्ये-दप्यु वा क्षिपेत्—इति मनुः (३।२६०) । पिण्डः; 'तत्समाप्य यथोद्दिष्टं पूर्वकर्म समाहितः । दातुं निर्वणं सम्यक् यथावदहमारभम्—इति महाभारते (१३।८४।१४) । अन्नादिसंविभागः; 'रहूगणैतत् तपसा न याति न चेज्यया निर्वणनाद् गृहाद् वा—इति भागवते (५।१२।१२) । ४१९

निर्वाणम् क्ली. [ निर्+वा गतौ+क्त, तस्य नः ] अपवर्गः; 'मुक्ताश्रयं र्थिह निर्वियं विरक्तं निर्वाणमृच्छति मनः सहसा यथाचिः—इति भागवते (३।२८।३५) । अस्तगमनं; निर्वृत्तिः; सङ्गमः; विश्रान्तिः; गज-मउजन्मः; 'असह्यपीडं भगवन्नृणमन्त्यमवेहि मे । अरुन्तुदमिवालयानमनिर्वाणस्य दन्तिनः—इति रघौ (१।७१) । निश्चलः; शून्यः; विद्योपदेशनः; नाभि-देशे जप्यप्रणवपुटितमातृकापुटितमूलमन्त्रम्; 'कल्लुकां मूर्ध्नि संजप्य हृदि सेतुं विचिन्तयेत् । महासेतुं विशुद्धे तु पीडशारे समुद्धरेत् । मणिपूरे तु निर्वाणं महा-कुण्डल्लिनीमघः । स्वाधिष्ठाने कामवीजं राकिणीमूर्ध्नि संस्थितम्—इत्यागमतत्त्वविलासः । विष्णुः; 'त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिवक्—इति महाभारते (१३।१४९।७५) । समाप्तिः; 'आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतत् पाञ्चभौतिकः—इति भागवते (१।६।२९) । त्रि. [ निर्+वा+क्त, 'निर्वाणोऽवाते' इति निष्ठा-तस्य नः ] मुक्तः; नष्टः; 'निर्वाणभूयिष्ठमथास्य वीर्यं सन्धुक्षयन्तीव वपुर्गुणेन—इति कुमारे (३।५२) । निमग्नः; वाणशून्यः । १२४

निर्वादः पुं. [ निर्वदनमिति । निर्+वद्+भावे घञ् ] पंरीवादः; जनवादः; 'किमात्मनिर्वादिकथामुपेक्षे जाया-मदोपामुत सत्यजामि—इति रघौ (१४।३४) । अवज्ञा । [ निनिश्चितं वादः कथनम् ] निश्चितवादः; वादाभावः । १४८

निर्वाणम् क्ली. [ निर्+वण्+णिच्+ल्युट् ] वयः; दानं; निर्वाणतासम्पादनम्; 'दीपनिर्वाणनात् पुंसः कूर्पाण्डच्छेदनात् स्त्रियः—इति तिथितत्त्वे । [ स्वार्थे णिच् ] वपनम्; 'मया तावन्नीतिवीजनिर्वाणं कृतं, परतस्तद्देवत पर्मायायत्तम्' इति पञ्चतन्त्रे । ४७८

**निर्वासनम्** क्ली. [ निर्+वस्+णिच्+ल्युट् ] वधः ।  
नगरादेर्वहिष्करणम्; 'निर्वासनं च नगरात् प्रव्रज्या च  
परन्तप! । नानाविधानां दुःखानामभिज्ञास्मि जनार्दन !  
'—इति महाभारते (५।९०।५८) । ४७८

**निर्घोरा** स्त्री. [ निर्गतो वीरवत् पतिः पुत्रो वा यस्याः ]  
अवीरा; पतिपुत्रविहीना । ४८६

**निर्वेदः** पुं. [ निर्+विद्+घञ् ] स्वावमाननम्;  
'देवैर्दुर्द्धं कृतं चोश्रं प्रह्लादस्तु पराजितः । निर्वेदं परमं  
प्राप्तो ज्ञात्वाधर्मं सनातनम्'—इति देवीभागवते (४।  
१०।३७) । 'निर्वेदः स्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि  
द्वमो रसः'—इति काव्यप्रकाशः । 'तत्त्वज्ञानापदीष्य-  
देर्निर्वेदः स्वावमाननम्'—इति साहित्यदर्पणम् । पर-  
वैराग्यम्; 'ततः कदाचिन्निर्वेदान्निराकाराश्रितेन च ।  
लोकतन्त्रं परित्यक्तं दुःखार्त्तेन भृशं मया'—इति मोक्ष-  
धर्मः । वैराग्यम्; 'तदा गतासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य  
श्रुतस्य च'—इति श्रीभगवद्गीताध्याम् । [ निर्गतो  
वेदो यस्मादिति ] वेदरहिते त्रि. । ७५४

**निर्वेशः** पुं. [ निर्+विश्+भावे घञ् ] भोगः; भृतिः;  
'भृतिर्वेतनं भोगः सुखं पालनमभ्यवहारो वा' इति भरतः ।  
'अयं हि कृतनिर्वेशो जडमकोट्यहंसामपि । यद्व्याज-  
हार विवशो नाम स्वस्त्ययनं हरेः'—इति भागवते  
(६।२।७) । वेतनं; मूर्च्छनं; विवाहः [ निर्पूर्वक-  
विश्रधातुविवाहार्थः इति स्मृतिः ] । ७५५

**निर्व्ययनम्** क्ली. [ निर्+व्यय्+भावे ल्युट् ] छिद्रं;  
व्ययाभावः; निश्चयेन व्ययनम् । ६२४

**निलयः** पुं. [ निलीयते अस्मिन्निति । नि+ली+एरच्'  
इति अधिकरणे अच् ] गृहम्; 'सञ्चारपूतानि दिगन्त-  
राणि कृत्वा दिनान्ते निलयाय-गन्तुम्'—इति रघुवंशे  
(२।१५) । आश्रयस्थानम्; 'तं भूतनिलयं देवं सुपण-  
मुपवावत्'—इति भागवते (८।१।११) । २९१

**निर्वहणम्** क्ली. [ नियमेन वर्हणम्, वर्हं हिंसायाम्+  
भावे ल्युट् ] मारणं; घातनं; वधः । ४७७

**निवसनम्** क्ली. [ न्युष्यतेऽत्र, नि+वस्+अधिकरणे ल्युट् ]  
गृहम्; अन्तरीयं (५४६); वस्त्रम्; [ भावे ल्युट् ]  
परिधारणम्; 'द्वितीयं च परीद्वी चीरमादाय मैथिली ।  
चीरस्याकुशला देवी सम्यग्निवसने शुभा'—इति रामा-  
यणे (२।३७) । २९२

**निवहः** पुं. [ नितरामुह्यते इति । नि+वह्+पुंसीति घ ]  
समूहः; 'मुकुलं कुशलं सुजनं विहाय कुलकुशलशील-  
विकलेऽपि । आढ्ये कल्पतराविव नित्यं रज्यन्ति जन-  
निवहाः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।८७) । [ नितरां वह-  
तीति । नि+वह्+पचाद्यच् ] सप्तवाय्वन्तर्गतवायु-  
विशेषः; 'निवहो यत्र वातेशः केपाञ्चिन्न सुखप्रदः ।  
न प्रचण्डो न च मृदुः प्रमादो च प्रभञ्जनः'—इति ज्योति-  
पम् । ६८६

**निवापः** पुं. [ नितरामुच्यते इति । नि+वप्+घञ् ]  
मृतोद्देश्यकदानं; पितृदानं; पितृतर्पणं; निवपनं;  
पितृदानकम्; 'अपशोकमनाः कुटुम्बिनीम् अनुगृह्णीष्व  
निवापदत्तिभिः'—इति रघुवंशे (८।८६) । दान-  
मात्रम्; 'येभ्यो निवापाञ्जलयः पितृणाम्'—इति रघो  
(५।८) । [ न्युप्यते बीजमस्मिन्निति ] क्षेत्रम्; 'अर्वाणि  
प्रमदा गाश्च निवापं बहुवापिकम् । तत्ते विश्र ! प्रदा-  
स्यामि न तु वर्मं सकुण्डलम्'—इति महाभारते (३।  
३०९।६) । ६३९

**निविडम्** त्रि. [ नितरां विडतीति । नि+विड्+आक्रोशे+  
क ] निरवकाशं; निरन्तरं; निविरीतं; घनं; साध्यं;  
नीरुध्रं; ब्रह्मलं; दृढं; गाढम्; अविरलम्; 'निविड-  
घटितोऽशुगलां इवासोत्तव्यस्तनापितव्यजनाम्'—इति  
आर्यासप्तशत्याम् (३२०) । 'तस्यापरेष्वपि मृगेषु  
शरान् मुमुक्षोः कर्णान्तमेत्य विभिदे निविडोऽपि मुष्टिः'  
इति रघुवंशे (९।५८) । नासिकाया-नतम्; [ नि+  
'नेविडज्विरीसचौ'—इति विडच् ] अवटीटम्; 'तद्यो-  
गात् नासिका निविडा'—इति सिद्धान्तकौमुदी । ७१८

**निविडोसम्** त्रि. [ 'नेविडज्विरीसचौ' इति विरीसच्,  
डरयोरेकत्वेन रस्य ङः ] निविरीसं; निरवकाशं;  
सघनम्; नासिकाया-नतम् । ७१८

**निविरीसम्** त्रि. [ नि नता नासिका यस्य । 'नेविडज्  
विरीसचौ'—इति विरीसच् ] अवटीटः; निविडम्;  
'उरुनिविरीसनितम्भारङ्गेदि'—इति माघे (७।२०) ।  
७१८

**निवीतम्** क्ली. [ निवीयते स्मेति । नि+व्येन् संवरणे+  
वत्, सम्प्रसारणम् ] कण्ठलम्बितयजमूत्रम्; 'उपवीतं  
भवेन्नित्यं निवीतं कण्ठसञ्जनम्'—इति कूर्मपुराणम् ।  
त्रि. आच्छादनवस्त्रं; प्रावृत्तम् । ४०७

निवृत्तम् त्रि. [ निव्रियते आच्छाद्यते स्मेति । नि+वृ+  
क्त ] परिवेष्टितं; निवीतं; प्रावृत्तम्; आच्छादनवस्त्रम् ।

७१२

निवेशः पुं. [ निविशत्यस्मिन्निति । नि+विश्+  
अधिकरणे षञ् ] शिविरम्; 'तस्य सेनानिवेशो-  
ऽभूदध्यर्द्धमिव योजनम्'—इति महाभारते (५।८।२) ।  
उद्वाहः; 'ततो निवेशाय तदा स विप्रः संशितव्रतः । मही-  
ञ्चचार दारार्थी न च दारानविन्दत'—इति महाभारते  
(१।१४।१) । निवेशनम्; 'निवेशार्थं गृहं दत्तमन्न-  
पानादिकं तथा । सेवकं समनुज्ञाप्य परिचर्यार्थमेव च'—  
इति देवीभागवते (३।११।४४) । ४५२

निवेशनम् क्ली. [ निविशत्यस्मिन्निति । नि+विश्+  
अधिकरणे ल्युट् ] गृहम्; 'स्त्रियोपसंयुतः सोऽथ प्राप्या-  
योध्यां सुदर्शनः । सम्मान्य सर्वलोकांश्च ययौ राजा  
निवेशनम्'—इति देवीभागवते (३।२४।४९) । २९१

निशरणम् क्ली. [ नि+शृंहिसायाम्+णिच्+ल्युट्, संज्ञा-  
पूर्वकविधेरनित्यत्वात् क्वचिद् वृद्धिर्न ] मारणं; वधः;  
घातनम् । ४७७

निशा स्त्री. [ नितरां श्यति तनू करोति व्यापारानिति ।  
नि+शो+क+टाप् ] रात्रिः; रात्री; रक्षोजननी;  
शत्वरी; चक्रभेदिनी; घोरा; श्यामा; याम्या;  
दोषा; तुङ्गी; भौती; शताक्षी; वास्तवा; उषा;  
वासतेयी; तमा; निट्; 'सितेषु हर्म्येषु निशामु योषितां  
सुखप्रभुतानि मुखानि चन्द्रमाः । विलोष्य निर्यन्त्रण-  
मुत्सुकश्चरं निशाक्षये याति ह्यैव पाण्डुताम्'—इति  
ऋतुसंहारे (१।९) । हरिदा; दासहरिदा; 'हरिदा  
पीतिका गौरी काञ्चनी रजनी निशा । मेहणी रञ्जनी  
पीता वर्णिनी रात्रिनामिका'—इति वैद्यकरत्नमाला-  
याम् । मेघवृषभियुनककटधनुर्मकरलग्नानि; 'अजगोप-  
तिप्रगमश्च ककिधन्विमृगास्तथा । निशासंज्ञाः स्मृताश्चैते  
शोषाश्चान्ये दिनात्मकाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । १०७

निशाटनः पुं. [ निशायाम् अटतीति । अट् गती+ल्यु ]  
निशाटः; पेचकः; निशाचरे त्रि. । २४६

निशातः त्रि. [ नि+शो तनूकरणे+क्त, 'शाच्छोरन्यतर-  
स्याम्'—इति पक्षे इत्वाभावः ] तीक्ष्णः; शाणितः ।

४७४

निशान्तम् क्ली. [ निशम्यते विश्रम्यतेऽस्मिन्निति । नि+

शम्+अधिकरणे क्त ] गृहम्; 'तस्याः स राजोपपदं  
निशान्तं कामीव कान्ताहृदयं प्रविश्य'—इति रघौ  
(१६।४०) । [ निशाया अन्तो यत्र ] उषाः; 'न निशान्ते  
परिश्रान्तो ब्रह्माधीत्य पुनः स्वपेत्'—इति मनुः  
(४।९९) । शान्ते त्रि. । २९१

निशामनम् क्ली. [ नि+शम्+णिच्+ल्युट् ] दर्शनम्  
आलोचनं; श्रवणम् । ५६६

निशारणम् क्ली. [ नि+शृंहिसायाम्+णिच्+ल्युट् ]  
मारणम्; [ निशाया रणम् ]-रात्रिगुडम् । [ निशाया  
रणः शब्दः ] रात्रिशब्देऽर्थे पुं. । ४७७

निशितः त्रि. [ नि+शो+क्त ] शाणितः; तीक्ष्णीकृतः;  
'तद्वाक्यसमकालं तु वीभत्सुनिशितैः शरैः । अवार्यैः  
पञ्चभिर्ग्राहं मगनमभस्यताडयत्'—इति महाभारते  
(१।१३।१९५) । ५७४

निशीयः पुं. [ नितरां शेतेऽत्रेति । नि+शी+निशीय-  
गोपीयावगथाः' इति थक्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ]  
अर्धरात्रः; 'निशीयदीपाः सहसा हतस्त्विषा वभूवुरा-  
लेख्यसमर्पिता इव'—इति रघौ (३।१५) । रात्रि-  
मात्रम्; 'तन्त्रीसुगीतं मदनस्य दीपनं शुची निशीयेऽनुभ-  
वन्ति कामिनः'—इति ऋतुसंहारे (१।३) । १०९

निशीयिनी स्त्री. [ निशीयोऽस्त्यस्या इति । इनि, डीप् ]  
रात्रिः; निशीय्या; निषद्वरी; रात्री । १०७

निशीयिनीनायः पुं. [ निशीयिन्या नाथः ] चन्द्रः; निशा-  
कान्तः; निशामणिः; निशापतिः; निशाकरः; चन्द्रमाः । ४३

निशुम्भनम् क्ली. [ नि+शुम्भे हिंसायाम्+भावे ल्युट् ]  
मारणं; वधः । ४७७

निश्चयः पुं. [ निश्चयीयतेऽनेनेति, निस्+चि+ 'ग्रहवृद्-  
निश्चिगमश्च' इति अप् ] निःसंशयज्ञानं; निर्णयः;  
निर्णयनं; निश्चयः; 'देहोऽयं मम बन्धोऽयं न ममेति च  
मुक्तता । तथा धनं गृहं राज्यं न ममेति च निश्चयः'  
—इति भागवते (१।११।३५) । अर्यालङ्कारविशेषः;  
'अन्यन्निषिध्य प्रकृतस्थापनं निश्चयः पुनः'—इति  
साहित्यदर्पणे (१०।५६) । ८४८

निश्चितः त्रि. [ निः शेषं चितः । निस्+चि+क्त ]  
नियतः; पूर्णतया स्थितः; कृतनिश्चयः । ७१०

निश्चितम् क्ली. निर्वाहितं; नूनम् । ८७९

निषङ्गः पुं. [ नितरां सञ्जन्ति शरा यत्र । नि+सञ्ज्+

अधिकरणे घञ् ] तूणीरः; 'ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी वधाय वध्यस्य' शरं शरण्यः । जाताभिपङ्गो नृपति- निपङ्गादुद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृत्तारिः—इति रघुवंशे (२।३०) । सङ्गः । ४६५

निषद्वरः पुं. [ निषीदन्ति विषण्णा भवन्ति जना अत्रेति । नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु+ 'नी सदेः' इति षवरव्, 'सदिरप्रतेः' इति षत्वम् ] कदंमः; पङ्कः; जम्वालः । ६७८

निषादः पुं. [ निषद्यते ग्रामसीमायाम् । यद्वा निषीदति पापमत्र । नि+सद्+कर्मणि अधिकरणे वा घञ् ] चण्डालः; वेनशरीरोद्भवजातिविशेषः; धीवरविशेषः; [ निषीदन्ति षड्जादयः स्वरा यत्र । नि+सद्+घञ् ] सप्तस्वरान्तर्गतस्वरविशेषः; हस्तिस्वरतुल्यस्वरः; 'षड्जादयः षडेतेऽत्र स्वराः सर्वे मनोहराः । निषीदन्ति यतो लोके निषादस्तेन कथ्यते ।' चतस्रः पञ्चमे षड्जे मध्यमे श्रुतयो मताः । ऋषभे धैवते तिस्रो द्वे गान्धारनिषादके—इति सङ्गीतदाभोदरः । ५९८

निषादी [ न् ] पुं. [ निषीदत्यवश्यं हस्त्युपरि । नि+सद्+आवश्यकं णिनि ] हस्त्यारोहः; 'प्रत्यन्तदन्तिनिशिताङ्कु- शद्वरभिन्ननिर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी'—इति माघे (५।४१) । उपविष्टे त्रि. । 'आतपात्ययसंक्षिप्त- नोवारासु निषादिभिः । मृगैर्वतितरोमन्थमुटजाङ्गण- भूमिषु'—इति रघौ (१।५२) । २२५

निषेधः पुं. [ नि+सिध्+घञ् ] प्रतिषेधः; निवृत्तिः; विविधिवरीतः; 'तिथीनां पूज्यता नाम कर्मानुष्ठानतो मता । निषेधस्तु निवृत्तात्मा कालमात्रमपेक्षते'—इति तिथितत्त्वम् । ८३४

निष्कः पुं.—कली. [ निश्चयेन कायति शोभते इति । निस्+कं+आतश्चेति क ] हेमः; सुवर्णः; चतुःसुवर्णमुद्राः; 'घरणानि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः । चतुःसीवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः'—इति मनुः (८।१३७) । साप्तशतसुवर्णः; पलः; दीनारः; उरोभूषणं; वक्षोऽलङ्कारः; 'नामृष्टभोजी नादाता नाप्यनङ्गदनिष्क- घृक्'—इति रामायणे (१।६।११) । स्वर्णकर्षः; स्वर्णपलः; कण्ठभूषा; माषकचतुष्टयम्: 'स्याच्चतु- र्मापकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च'—इति शाङ्गधरः । षोडशद्रम्यः; 'वराटकानां दशकद्वयं यत् सा काकिनी

ताश्च पणश्चतस्रः । ते षोडश द्रम्य इहावगम्यो द्रम्य- स्तथा षोडशभिश्च निष्कः'—इति लीलावत्याम् । १७३ निष्कला स्त्री. [ निर्गता कला यस्याः ] विगतार्तवा; वृद्धा । ४८७

निष्कली स्त्री. [ निष्कल+ङीष् ] ऋतुहीना; निवृत्त- रजस्का; विगतार्तवा; पुष्पहीना; निकल्का । ४८७ निष्काशः पुं. [ निरतिशयं काशते शोभते प्रासादादाविति । निस्+काश्+अच् ] प्रासादाद्युपस्थानं; 'तोरणगृहम् । १०६

निष्कासः पुं. [ निश्चितं कामनं विकासः । निस्+कासुं+घञ् ] प्राकटयः; प्रभातं; वहिष्कारः; वहिर्भविः । १०६

निष्कुटः क्ली.—पुं. [ कुटात् गृहात् निष्क्रान्तः ] कोटरः; वृक्षखातम्; गृहसमीपोपवनम् (८१६); 'परिखा- श्चैव कौरव्य ! प्रतोलीनिष्कुटानि च । न जात्वन्थः प्रपश्येत् गुह्यमेतद्युधिष्ठिर !'—इति महाभारते (२।६९।५५) । क्षेत्रम्; 'इन्द्रकृष्टैर्वर्तयन्ति धान्यैर्घे च नदीमुखैः । समुद्रनिष्कुटे जाताः पारेसिन्धु च मानवाः'—इति महाभारते (२।५०।९) । कपाटः; पत्न्याटः; प्रमदवनम् । १८२

निष्ठयः पुं. [ वर्णाश्रमादिभ्यो निर्गतः । निस्+ 'अव्य- यात् त्यप्' इत्यस्य 'निसो गते' इति त्यप्, 'ह्रस्वात्तादी तद्धिते' इति षत्वम् ] म्लेच्छजातिविशेषः; चण्डालादिः । पुत्रः; 'यं मे निष्ठयो यममात्यो निचखान'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (५।२३) । [ ष्ट्यै स्त्वै शब्दसंघा- तयोः; नितरां स्त्यायति संघात रूपेण सह वर्तते इति निष्ठयः । यद्वा निर्गत्य शरीरात् स्त्यायति विस्तीर्णो भवतीति निष्ठयः पुत्रादिः । यद्वा निर्गतो वर्णाश्रमेभ्यो निष्ठयश्चण्डालादिः । 'निसो गते' इति वार्तिकेन निस् उपसर्गाद् गतार्थे त्यप् । इति काशिकायाम् ] । ५९९

निष्ठा स्त्री. [ नितरां स्थितिः । नि+स्था+ आतश्चो- पसर्गे' इति अङ्, 'उपसर्गादिति' षत्वं ततष्टाम् ] क्लेशः; अवसानम्; अन्तः; व्यवस्था; उत्कर्षः; व्रतं; निष्पत्तिः; समाप्तिः; नाशः; 'यदा क्रितावेव चरावरस्य विदाम निष्ठां प्रभवं च नित्यम्'—इति भागवते (५।१२।९) । निर्वहणं; याचना; वतवतवत् प्रत्ययी [ 'वतवतवत्

निष्ठा 'एतौ निष्ठासंज्ञो स्तः' इति सिद्धान्तकौमुदी । ]  
धर्मादौ श्रद्धा; 'निष्ठया हि प्रतिष्ठा स्वादिनिष्ठस्य कुतः  
कुलम् । शक्नोति नैष्ठिकः स्वीयं धर्मं त्रातुं न चेतः ।'  
'एकस्य देवस्य विहाय मन्त्रम् एकं परश्चेद्भजतेऽपि तस्य ।  
तदा भवेन् मृत्युरनैष्ठिकत्वात् निष्ठाविहीनस्य न कापि  
सिद्धिः'—इति भरतमल्लिकः । प्राप्यम्; 'भगवन्तं  
हृरि प्रायो न भजन्त्यात्मवित्तमाः । तेषामशान्तका-  
मानां का निष्ठा विजितात्मनाम्'—इति श्रीधरः ।  
[ क्विप् ] स्थितिः; 'जाते निष्ठासदधूर्गोषु वीरान्'  
इति ऋग्वेदे (३।३।१।१०) 'निष्ठां पूर्वं यथास्थितिम्'  
इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ८५३

निष्ठीवः पुं. [ नि+ष्ठिञ्+भावे घञ् । पृषोदरादित्वात्  
दीर्घः ] निष्ठीवनं; निष्ठचूतिः; श्लेष्मादीनां मुखेन वमनं;  
निष्ठेवः; निष्ठीतिः; निष्ठेवनं; निष्ठेवा; निष्ठेवम् ।  
'निष्ठीवः पाश्चतो यायादेकस्याध्णो निमीलनम्'—इति  
वाग्भटः । १४२

निष्ठुरम् त्रि. [ नि+स्था+ 'मद्गुरादयश्चेति' उरच्  
पठ्यं; कठिनम्; 'जज्ञे जनेर्मुकुलिताक्षमनाददाने संख्व-  
हस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः'—इति माघे (५।४९) ।  
१४०

निष्ठचूतिः स्त्री. [ नि+ष्ठिञ्+कित् । 'च्छ्वोः शूडि'—  
लृट् ] निष्ठीवनम् । १४२

निष्ठेवः त्रि. [ नि+ष्ठिञ्+घञ् ] निष्ठीवनम् । १४२  
निष्णातः त्रि. [ नितरां स्नाति स्नेति । नि+स्ना+क्त,  
'नितदीभ्यां स्नातेः कौशले' इति पत्वम् ] निपुणः;  
'यस्तु कर्मसु निष्णातो धाट्यर्थाच्छास्त्रवहिष्कृतः ।  
स सत्सु पूजां नाप्नोति वधं चाहति राजतः'—इति  
सुश्रुते । विजः; पारंगतः; 'वैशम्पायन एवैको निष्णातो  
यजुषामुत'—इति भागवते (१।४।२१) । ३३५

निष्पावकः पुं. [ निष्पाव एव । स्वार्थे कन् ] श्वेतशिम्बी;  
'निष्पावको वैपवलासगोफगुक्रान्तको रुक्षगुणो विदाही ।  
कपायकः स्यान्मधुरो गुहश्च स्तन्यास्रपित्तं च करोति  
वातम्'—इति हारीतः । ५८४

निस्तलम् त्रि. [ निरस्तं तलम् अद्यःस्वरूपमस्येति ]  
वर्तुलं, वृत्तम्; 'कण्ठस्य तस्याः स्तनबन्धुरस्य मुक्ता-  
कलापस्य च निस्तलस्य'—इति कुमारे (१।४२) ।  
चलं; नितरां तलं; तलम् । ७५३

निस्त्रिशः पुं. [ निगंतस्त्रिशतोऽङ्गुलिभ्य इति । 'निरादयः'  
इति समासः, 'संख्यायास्तत्पुरुषस्य ङञ् वाच्यः'  
इत्युक्त्या ङच् ] खड्गः; 'नकुलस्यैव निस्त्रिशो  
गुहभारसहो दृढः'—इति महाभारते (४।४।१।२४) ।  
त्रिशचूत्तः; निर्दये त्रि. । 'दत्तोऽस्याः प्रणयस्त्वयैव  
भवता चेयं चिरं लालिता, दैवादद्य किल त्वमेव कृत-  
वानस्या नवं विप्रियम् । त्र्यनुदुःसह एष यात्युपशमं  
नो शान्तवादेः स्फुटम्, हे निस्त्रिश विमुक्तकण्ठकरणं  
तावत् सखी रोदितु'—इति अमरशतके (५) । ७४२  
निहितम् त्रि. [ नि+धा+क्त, 'दधातेहिः' इति हि. ]  
स्थापितम्; 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन  
गतः स पन्थाः'—इति महाभारते (३।३।२।१।१२) ।  
७४७

नीचः त्रि. [ निकृष्टामीं लक्ष्मीं शोभां चिनोतीति । चि+  
'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड ] हीनजातिकर्मा; वर्वरः;  
विवर्णः; पामरः; प्राकृतः; पृथग्जनः; निहीनः; अप-  
सदः; जालमः; क्षुल्लकः; इतरः; अपशदः; खल्लकः;  
हीनः; क्षुल्लः; क्षुण्णः; वेतकः । 'न प्राप्नोति सुखं  
किञ्चिन्नीचसङ्गान्महानपि । प्रेतसङ्गान्महादेवो नग्नो  
भस्मविभूषितः । स्वयं नेतुं न शक्नोति तदा नाययति  
ध्रुवम् । स्थिते गुणेऽपि नीचस्तु यत्नादौषं प्रपद्यते ।  
सतां श्रुत्वा गुणं नीचः श्रोतुमायाति बन्धुवत् । ततः  
समयमासाद्य प्रकाशयति तद्वसन् । मनस्येकं वचस्येकं  
कर्मण्येकं महात्मनाम् । मनस्यन्यद्वचस्यन्यत् कर्मण्यन्य-  
ददुरात्मनाम्'—इति पाद्मे । 'बुद्धिश्च हीयते पुंसां नीचैः  
सह समागमात् । मध्यमे मध्यतां याति श्रेष्ठतां याति  
वित्तमे'—इति महाभारते शान्तिपर्वणि । अनुच्चः;  
वामनः; न्यङ्; खर्वः; ह्रस्वः; नीचकः; 'नीचरोम-  
नखदमश्रुनिर्मलाङ्घ्रिमलायनः । स्नानशीलः ससुरगिः  
सुवेषोऽनृत्वणोज्ज्वलः । धारयेत् सततं रत्नसिद्धमन्त्र-  
महौषधीः'—इति वाग्भटः । निम्नः; 'शैत्यं नाम गुण-  
स्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता, किं ब्रूमः शुचितां  
भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे । किञ्चान्यत् कथयामि  
ते स्तुतिपदं त्वं जीविनां जीवनं, त्वञ्चेत्नीचपथेन गच्छसि  
पयः कस्त्वां निषेद्धुं क्षमः'—इति लक्ष्मणसेनः ।  
चोरकनामगन्धद्रव्ये पुं. । ३४६

नीचकी स्त्री. [ 'निचिः कर्णशिरोदेशः'; कन्, अण्, डीप् ।

पृषोदरादिः] गवां शिरोभागः; उत्तमगवीमांश्च । २६७  
 नीडः पुं.—कली । [ नितराम् ईड्यते स्तूयते मुदृश्यत्वादिति ।  
 नि+ईड् स्तुतौ +घञ् ] पक्षिवासस्थानं; कुलायः;  
 'मार्गन्ति यत्ते मुखपद्मनीडः छन्दःसुपर्णैर्ऋषयो विविकते'  
 —इति भागवते (३।५।३९) । स्थानं; रथ्यघिष्ठान-  
 स्थानम्; 'स भग्ननीडः परिवृत्तकूवरः पपात भूमौ हत-  
 वाजिरम्बरात्'—इति रामायणे (५।१८।३२) । २३८  
 नीडः पुं. [ नीडे जातः इति । नीड+जन्+ङ ] पक्षी;  
 खगः । २३८

नीध्रम् क्ली. [ नितरां ध्रियते इति । नि+घृ+मूलविभु-  
 जादित्वात् क ] वलीकं; वनं; नेमिः; चन्द्रः; रेवती-  
 नक्षत्रम् । ३०३

नीरम् क्ली. [ नयति प्रापयति स्थानात् स्थानान्तरमिति ।  
 नी प्रापणे+स्फायितञ्चीति' रक् । यद्वा 'अग्नेरापः'  
 इति श्रुतेः निर्गतं रादग्नेरिति, 'अद्भ्योऽग्निब्रह्मणः  
 सत्रम्' इति स्मृतेः निर्गतो रोजग्नि र्यस्मादिति वा ।  
 'दूलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' इति रलोपे पूर्वदीर्घः ] जलम्;  
 'छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन पदनखनीरजनित-  
 जनपावन । केशव धृतवामनरूप जय जगदीश हरे'—  
 इति गीतगोविन्दे (१।९) । रसः; नीरे अक्षेपणी-  
 यानि—'निष्ठीवासुकृष्णमूत्रविषाण्यप्सु न संक्षिपेत् ।'  
 'वाप्युद्भवन्तत् प्रवदन्ति धीरा नीरं समासेन  
 निगद्यतेऽत्र । यत् श्रीमताञ्चैव महायतीनां बलप्रदं  
 पथ्यतरं प्रदिष्टम्' । 'विष्मूत्रे तृणनीलिका विषयुतं  
 तप्तं घनं फेनिलं, दन्त्यग्राह्यमनार्तवं हि सलिलं दुर्गन्धि  
 वै गर्हितं । नानाजीवविमिश्रितं गुस्तरं पणौ घपङ्का-  
 विलं, चन्द्राकांशुसुगोपितं न च पिबेन्नैरं सुदोषान्वितम्'  
 —इति हारीतः । ६४८

नीलः पुं. [ नीलतीति । नील्+अच् ] नीलवर्णः । २०५  
 नीलः त्रि. [ नीलं रूपम् अस्ति अस्येत्यत्र 'गुणवचनेभ्यो  
 मत्पुपो लुगिष्टः' इति लुक् ] कृष्णः; 'नीलं सत्त्व-  
 गुणोपेतं प्रादुरास महाद्युति'—इति देवीभागवते ।  
 नीलवर्णवस्तूनि यथा—शुक्रः; शैवालं, दूर्वा, दालतृणं,  
 बुधः; वंशाड्कुरः; इन्द्रनीलमणिः; सूर्यास्वादीनि ।  
 पुं. अजमीढस्यं राज्ञः नीलिन्यां पत्न्यां जातः पुत्रः;  
 'अजमीढस्य नीलिनी नाम पत्नी तस्यां नीलसंज्ञः पुत्रोऽ-  
 भवत्'—इति विष्णुपुराणे । माहिष्मतीवासी नृपति

विशेषः; 'नागविशेषः; 'नीलानीली तथा नागी कल्माष-  
 शवली तथा'—इति महाभारते (१।३।५।७) । वटवृक्षः;  
 मञ्जुघोषः; वानरान्तरः; नीलवर्णः; नीलीषधिः;  
 निधिविशेषः; लाञ्छनं; मणिविशेषः; 'सौरिरत्नं;  
 नीलाश्मा; नीलोत्पलं; तृणग्राही; महानीलः; सुनी-  
 लकः; 'माण्डव्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पक-  
 वज्रनीलम् । गोमेदवैदूर्यकमर्कतः स्यूरत्नान्यथो  
 जस्य मुदे सुवर्णम्'—इति मुहूर्तचिन्तामणिः । पर्वत-  
 विशेषः; 'नीलः श्वेतश्च शृङ्गी च उत्तरे वर्षपर्वताः ।  
 लक्षप्रमाणौ द्वौ मध्यौ दशहीनास्तथापरै'—इति विष्णु-  
 पुराणे । क्ली. नीली; काचलवणं; ताळीशपत्रं;  
 विषं; सीवीरञ्जनम्; 'सुवीरकं पार्वतेयं सीवीरं  
 नीलमञ्जनम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । तुल्यं;  
 नृत्याङ्गाष्टोत्तरशतकरणान्तर्गतकरणविशेषः । ७३४

नीलकण्ठः पुं. [ नीलः नीलवर्णः कण्ठो यस्य ] ग्रामचटकः;  
 पीतसारः; दात्यूहः; खञ्जरीटः; पीतशालयुक्षः;  
 'नीलकण्ठः पीतशालः पीतकः प्रियकोऽसनः'—इति वैद्यक-  
 रत्नमाला । शिवः; 'दधार भगवान् कण्ठे मन्त्रमूर्तिं-  
 महेश्वरः । तदा प्रभृति देवस्तु नीलकण्ठ इति श्रुतः'  
 —इति महाभारते (१।१८।४४) । मयूरः; 'याम-  
 ध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्'—इति मेघ-  
 दूते (७९) । २४३

नीलग्रीवः पुं. [ नीला नीलवर्णा ग्रीवा यस्य ] महादेवः;  
 'देवदेव महादेव नीलग्रीव जटाधर'—इति महाभारते  
 (३।३९।७४) । नीलवर्णग्रीवायुक्ते त्रि. । १२

नीलङ्गुः पुं. [ नीलङ्गति गच्छतीति । नि+लङ्गि गतौ+  
 'खरुशङ्कुपीयुनीलङ्गलिगु' इति कु प्रत्ययेन निपातनात्  
 पूर्वदीर्घे साधुः ] क्रिमिभेदः; अतिक्षुद्रजन्तुमात्रं;  
 शृगालः; भ्रमराली; प्रसूनम् । ६३६

नीललोहितः पुं. [ नीलश्चासी लोहितश्चेति । 'वर्णो  
 वर्णेन' इति समासः । नीलः कण्ठे लोहितश्च केशेष्विति  
 वा ] शिवः; कुमारः (२।५७) । 'चैत्रे शिवोत्सवं  
 कुर्यान्नृत्यगीतमहोत्सवैः । स्नात्वा त्रिसन्ध्यं रात्रौ च  
 हविष्याशी जितेन्द्रियः । किमलभ्यं भगवति प्रसन्ने  
 नीललोहिते । उपोष्य हुत्वा संक्रान्त्यां व्रतमेतत् समपयेत्'—  
 इति बृहद्बर्मपुराणे । कल्पविशेषः; नीलरवतमिथि-  
 तवर्णः । १३

नीलाम्बरः पुं. [ नीलमम्बरं यस्येति ] बलदेवः; राक्षसः; शनैश्चरः। क्ली. [ नीलमम्बरमिव, नीलमम्ब्रतीति वा। अवि+अरण् ] तालीशपत्रं; [ नीलं च तदम्बरं चेति ] नीलवस्त्रं; नीलवस्त्रयुक्ते त्रि.। २८

नीलिका स्त्री. [ नीलक+टाप्। कपि अत इत्वम्। नीलीव, इवार्ये कन्, टाप्, पूर्वह्रस्वः ] शैवालं; नीलसिन्दुदारः; नीलिनो; 'नीली तु नीलिनो तूली कालदोला च नीलिका। रञ्जनी श्रीफली तुच्छा ग्रामीणा मधुपर्णिका। क्लोतका कालकेशी च नीलपुष्पा च ज्ञा स्मृता'—इति भावप्रकाशः। शोभाफालिका; नेत्ररोगविशेषः; नीलिकाकाचरोगः; क्षुद्ररोगभेदः; 'क्रोधायासप्रकुपितो वायुः पित्तेन संयुतः। मुखमागत्य सहसा मण्डलं विसृजत्यतः। नीरुजं तनुकं श्यावं तं व्यङ्गमिति निर्दिशेत्। कृष्णमेवं गुणं गात्रे मुखे वा नीलिकां विदुः'—इति माधवकरः। ६८३

नीलीरागः पुं. [ नीलीवद् गाढः सञ्जातो रागो यस्य ] स्थिरप्रेमपुरुषः; स्थिरसौहृदः; नीलवर्णः; नायकनायिकयोः पूर्वरागविशेषः; 'नीली कुसुम्भमञ्जिष्ठाः पूर्वरागोऽपि च त्रिधा।' 'न चातिशोभते यन्नापैति प्रेम मनोगतम्। नीलीरागः स विज्ञेयो यथा श्रीरामसीतयोः'—इति साहित्यदर्पणे। ३४७

नीलोत्पलम् क्ली. [ नीलं नीलवर्णमुत्पलमिति ] नीलवर्णोत्पलम्; उत्पलकं; कुवलयम्; इन्दीवरं; कन्दोत्पलं; सौगन्धिकं; सुगन्धं; कुड्मलकम्; असितोत्पलम्; 'ज्ञपकुलोत्पलं ह्यनक्षुभितनीरजकुमुदकुवलयकह्लारनीलोत्पललोहितशतपत्रादिवनेषु'—इति भागवते (५।२४।१०)। नीलमणिः; नीलम्। ६८१

नीवारः पुं. [ नि+वृ+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घत्वं च ] तृणधान्यभेदः; अरण्यधान्यं, मुनिधान्यं, तृणोद्भवम्; अरण्यशालिः; 'प्रसाधिका तु नीवारस्तृणान्तमिति च स्मृतम्। नीवारः शीतलो ग्राही पित्तघ्नः कफवातकृत्'—इति भावप्रकाशः। 'नीवाराः शुककोटरार्भकमुखभ्रष्टास्तरुणामधः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। ५८४

नीविः, नीवी स्त्री. [ निव्यंयति, निवीयते वा। नि+व्येञ्+ 'नौ व्यो यलोपः पूर्वस्य च दीर्घः' इति इञ्, यलोपः; निशब्दस्य दीर्घत्वं च। ततः कृदिकारादिति वा डीष् ] कटीवस्त्रवन्धः; 'एकवस्त्रा त्वघोनीवी रोदमाना रज-

स्वला'—इति महाभारते (२।६३।१९)। 'नीवीं विस्रस्य परिहितवस्त्रस्य वामाङ्गग्रन्थि मोचयित्वा आचमनमाह वीधायनः'—इति यजुर्वेदिश्राद्धतत्त्वम्। शूद्रस्य पित्रादिश्राद्धे मोटकवन्धनं; वस्त्रवन्धनमात्रं; राजपुत्रादेर्वन्धकः। (८२४) परिपणः; वणिजां मूलघनम्। ५४७

नीवृत् पुं. [ नियतं वर्तते वसत्यत्र जनसमूहः इति। नि+वृत्+अधिकरणे निवप्। 'नहिवृत्तवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु ववी' इति पूर्वपदस्य दीर्घः ] जनपदः; देशः। २८४ नीवम् क्ली. [ नितरां त्रियते इति। नि+वृ+बाहुलकात् कप्रत्ययेन साधुः ] छदिप्रान्तभागः; वलीकं; पटलप्रान्तं; नीध्रम्; नेमिः; चन्द्रः; रेवतीनक्षत्रं; वनम्। ३०३ नीहारः पुं. [ निर्ह्वयते इति, नि+हृ+घञ्। 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घत्वम् ] धनीभूतशिशिरम्; अवश्यायः; तुषारः; तुहिनः; हिमं; प्रालेयं; मिहिका; खजलं; निशाजलं; निहारः; महिका। 'खाण्डवं च वनं सर्वं पाण्डवो बहुभिः शरैः। प्राच्छादयदभेयात्मा नीहारेणैव चन्द्रमाः'—इति महाभारते (१।२२।८।२)। ६५०

नु अव्य. [ नीति नुदति वा। नु नुद् वा+यथायथं कर्तर्यादिषु मितद्र्वादित्वात् डु ] प्रश्नः; 'कथं नु राजंस्तुपितः क्षुधितः श्रमकर्षितः'—इति महाभारते (३।६३।१२)। चित्तर्कः; 'निष्क पचामरशिखाश्च्युतकर्णभङ्गा धावन्ति वर्त्मनि तरन्ति नु वाजिनस्ते'—इति शाकुन्तले। अपमानः; हेतुः; अपदेशः; अतीतः; अनुनयः; विकल्पः; 'किं नु गहम्यथात्मानमथ भीष्मं दुरासदम्'—इति महाभारते (३।६३।१२)। पुं. अनुस्वारः; 'नुवी पूर्वेण सम्बद्धौ मुन्यौ तु परगामिनी'—इति दुर्गादासः।

८८०

नुतम् त्रि. [ णु स्तुती+क्त ] स्तुतम्; 'तं वेदशास्त्रपरिनिष्ठितशुद्धवृद्धि चर्माम्बरं सुरमुनीन्द्रनुतं कवीन्द्रम्। कृष्णत्विपं कनकपिङ्गजटाकलापं व्यासं नमामि शिरसा तिलकं मुनीनाम्'—इति पुराणम्। १४५

नुतिः स्त्री. [ णु स्तुती+भावे क्तिन् ] स्तुतिः; 'परगुणनुतिभिः स्वान्गुणान् ख्यापयन्तः'—इति भर्तृहरिः। पूजा। १४५

नुतः त्रि. [ नुद्+क्त, 'नुदविदेति' पाक्षिको नत्वाभावः ] क्षिप्तः; नुतः; प्रेरितः। ७६७



नुम्रः त्रि. [ नृद्+क्त, निष्ठातस्य पूर्वदस्य च नत्वम् ]  
नृत्तः; 'प्रसह्य तेजोभिरसंख्यतां गतैरदस्त्वया नुम्र-  
मनृत्तमं तमः'—इति माघे (१२७) । ७६७

नूतः त्रि. [ णू स्तवने+कर्मणि क्तप्रत्ययः ] स्तुतः । १४५  
नूतनः त्रि. [ नव एव । 'नवस्य नूरादेशो तनप्तनप्खाश्च  
प्रत्यया वक्तव्याः' इत्युक्त्या तनप् नवस्य नूरादेशश्च ]  
अपुरातनः; प्रत्यग्रः; अभिनवः; नव्यः; नवीनः; नवः;  
नूतनः; सद्यस्कः; अजीर्णः; अम्यग्रः; प्रतिनवः ।  
'प्रशमस्थितपूर्वपार्थिवं कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम्'—  
इति रघौ (१११५) । ७११

नूतनः त्रि. [ नव एव । नव+तनप् नूरादेशश्च ] नूतनः;  
'न त इन्द्र सुमतयो न रायः संचक्षे पूर्वा उपसो न  
नूतनाः'—इति ऋग्वेदे (७।१९।२०) । ७११

नूनम् अव्य. [ नु ऊनयतीति, ऊन परिहाणे+अम् ]  
तर्कः; ऊहः; यथा—'ओजसामपि खलु नूनमनूनम् ।'  
अवधारणः; निश्चितः; यथा—'नूनं हन्ति स्म रावणम्'  
स्मरणः; वाक्यपूरणः; अर्थनिश्चयः; 'स्वर्गदं च तथा  
प्रोक्तं ज्ञानिनां मोक्षदं तथा । न भविष्यति तन्नूनमनया  
देवकन्यया'—इति देवीभागवते (१।१०।६६) । ८७९

नूपुरम् क्ली-पुं. [ नू+क्विप्, नुवि पुरति इति । पुर  
अग्रगमने+इगुपधेति' क ] पादभूषणविशेषः;  
पादाङ्गदं; तुलाकोटिः; मञ्जीरः; हंसकः; पादकटकः;  
पदाङ्गदम्; 'नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम्'  
—इति मार्कण्डेये (८२।२५) । 'गुणवानपि मौखयति  
पादे लुठति नूपुरः । हारस्तु मूकभावेन कण्ठवल्लभतां  
गतः'—इत्युद्भटः । ५६१

नूत्तम् क्ली. [ नूत्+भावे क्त ] नृत्यं; 'नाच' इति भाषा ।  
'नूत्तज्ञशयप्रवराङ्गानां धनुष्करक्षत्रतपस्विनां च'  
इति बृहत्संहितायाम् (५।७३) । ९३

नृत्यम् क्ली. [ नूत्+ऋदुपवाञ्चावलूपिचृतेः—इति  
क्वप् ] तालमानरसाश्रयसविलासाङ्गविक्षेपः; ताण्डवं;  
नटनं; नाट्यं; लास्यं; नर्तनं; नृत्तं; नाटः; लासः;  
लास्यकं; नृत्तिः; 'देवख्या प्रतीतो यस्तालमानरसा-  
श्रयः । सविलासोऽङ्गविक्षेपो नृत्यमित्युच्यते वृधः'  
इति सङ्गीतदामोदरः । ९३

नृपः पुं. [ नृन् नरान् पाति रक्षतीति । नृ+पा रक्षणे+  
'आतोऽनुपसर्गे क' इति क ] नरपतिः; 'अपुत्रस्य नृपः

पुत्रो निर्धनस्य धनं नृपः । अमातुर्जननी राजा अतातस्य  
पिता नृपः । अभृत्यस्य नृपो भृत्यो नृप एव नृणां सखा ।  
सर्वदेवमयो राजा तस्मात्त्वामर्थये नृप !'—इति  
कालिकापुराणे । ४२१

नृशंसः त्रि. [ नृन् नरान् शंसति हिनस्तीति । नृ+शंस  
हिंसायाम्+कर्मण्यण् इत्यण् ] क्रूरः; परद्रोही; 'ये  
नृशंसा दुरात्मानः प्राणिनां प्राणनाशकाः । उद्वेजनीया  
भूतानां व्याला इव भवन्ति ते'—इति पञ्चतन्त्रे (३।  
१४२) । ३७२

नेता [ ऋ ] पुं. [ नयतीति, नी+तृच् ] प्रभुः; 'आसन्नोप-  
धयो नेतुर्नक्तमस्नेहदीपिकाः'—इति रघुवंशे (४।७५) ।  
निम्बवृक्षः; प्रापके त्रिः; 'तिष्ठ त्वं स्थावर इव यावदेव  
नलः क्वचित् । इतो नेता हि तत्र त्वं शापान्मोक्षमसि  
यत्कृतात्'—इति महाभारते (३।६६।९) । ३४३

नेत्रम् क्ली. [ नीयते नयति वानेनेति, 'दाम्नीशसेति'  
करणे ष्टन् ] चक्षुः; 'नाञ्जयन्तीं स्वके नेत्रे नचाम्य-  
क्तामनावृताम् । न पश्येत्प्रसवन्तीं च तेजस्कामो द्विजो-  
त्तमः'—इति मनुः (४।४४) । वृक्षमूलं (८०९);  
जटा; अंशुकं; मन्थगुणः; 'मन्थानं मन्दरं कृत्वा तथा  
नेत्रं च वासुकिम् । देवा मथितुमारब्धाः समुद्रं निधिम्मभ-  
साम्'—इति महाभारते (१।१८।१३) । नाडी;  
वस्तिशलाका; वृक्षमूलं; रथः; नेतरि त्रि. । 'नावं  
समुद्र इव वालनेत्रामारुह्य घोरे व्यसने निमज्जेत्'  
इति महाभारते (२।६०।४) । ५१९

नेपथ्यम् क्ली. [ नी+विच्+गुणः । नेः नेता तस्य पथ्यम् ]  
वेशः; 'राजेन्द्रनेपथ्यविधानशोभा तस्योदितासीत्  
पुनरुक्तदोषा'—इति रघुवंशे (१।४।९) । अलङ्कारः;  
रङ्गभूमिः; 'वाक्यस्यार्थतया यत्र पात्रं नैव प्रवेक्ष्यते ।  
नेपथ्यमिति प्राकाश्ये प्रषीज्यं तत्र नाटकं'—इति  
भरतः । ५३९

नेमः पुं. [ नयतीति, नी+अतिस्तुमुह्विति' मन् ] खण्डं;  
कालः; अवधिः; प्राकारः; कृतवम्; अर्द्धं; गर्तः;  
नाट्यादिः; अन्यः; सायं; मूलम्; ऊर्ध्वम् । ७१३

नेमिः स्त्री. [ नयति चक्रमिति । नी+नियो मिः' इति मि ]  
चक्रपरिधिः; रथचक्रस्य भूमिस्पर्शभागः; प्रधिः;  
नेमी; 'मनोऽभिरामाः शृण्वन्ती रथनेमिस्वनोन्मुखैः ।

षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः—  
इति रघौ (१३९)। (६८४) कूपपरिस्थपट्ट-  
प्रान्तभागः; प्रान्तभागः; 'अजयदेकरथेन स मेदिनी-  
मुदधिनेमिमधिज्यशराशनः'—इति रघुवंशे (११०)।  
भूमिस्यकूपपट्टः; कूपस्य समीपे रज्जुघारणार्थं त्रिदारुयन्त्रं;  
त्रिका; कूपनिकटसमानस्थानम्; 'नेमिर्नेमीतिका च  
स्यात् कूपान्तिकसमस्थले'—इति शब्दरत्नावली। पुं.  
जिनविशेषः; तिनिशवृक्षः; दैत्यविशेषः; 'हे विप्रचित्ते!  
हे राहो ! हे नेमे ! श्रूयतां वचः। मा युध्यत निवर्तध्वं  
न नः कालोऽयमर्थकृत्'—इति भागवते (१२१११९)।  
[ नयति शत्रून् विनाशमिति ] वज्रः। ४४७

नेमी स्त्री. [ नेमि+वा डीप् ] नेमिः; तिनिशवृक्षः;  
'स्यन्दनस्तिनिशो नेमी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्।  
४४७, ६८४

नैकधेयः पुं. [ निकषाया अपत्यमिति, निकषा+ठक् ]  
निकषापुत्रः; राक्षसः। ७३

नैगमः पुं. [ निगम एव । स्वार्थे अण् ] वणिक्; 'एवं  
दशरथः प्रीतो ब्राह्मणा नैगमास्तथा'—इति रामायणे  
(१।७७।२३) 'नैगमा वणिजः' इति तट्टीकायां रामानुजः।  
ऋतिः (८१५); उपनिषत्; नागरः; नयः; 'तेषां  
प्रतिविधातार्थं प्रवक्ष्याम्यय. नैगमम्'—इति महाभारते  
(१२।१००।४)। निगमसम्बन्धिनि त्रि.। निगमशास्त्र-  
वेत्तरि त्रि.। 'द्विजेभ्यो बलमुख्येभ्यो नैगमेभ्यश्च  
नित्यशः'—इति महाभारते (१३।१६७।४)। ५७१

नैचिकी स्त्री. [ नीचैश्चरतीति ठक् । यद्वा निचिः कर्ण-  
शिरो देशः, ततः स्वार्थे कन्, प्रशस्तं निचिकमस्याः;  
'ज्योत्स्नादिभ्यः' इत्यण् ततो डीप् ] उत्तमा गौः। २७१  
नैर्ऋतः पुं. [ निर्ऋतेरपत्यम् इत्यण् ] राक्षसः; 'तस्यापि  
निर्ऋतिर्भायां नैर्ऋता येन राक्षसाः'—इति महाभारते  
(१।६६।५५)। पश्चिमदक्षिणकोणाधिपतिः (१००)। ७३  
नीः स्त्री. [ नुद्यतेऽनयेति । नुद् प्रेरणे+ 'ग्लानुदिभ्यां डीः'  
इति डी ] नौका; तरिका; वारिरयः; तरणिः; तरणी;  
तरिः; तरी; तरण्डी; तरण्डः; पादालिन्दा; उल्लवाः;  
होडः; वाधूः; वार्वटः; वहिन्नः; पीतः; बहनम्।  
'ततः स प्रेषितो विद्वान् विदुरेण नरस्तदा। पार्थानां  
दर्शयामास मनोमारुतगामिनीम् । सर्ववातसहां नावं  
यन्त्रयुक्तां पत्ताकिनीम् । शिवे भागीरथीतीरे नरै-

विश्रम्भिभिः कृताम्'—इति महाभारते (१।१५०।  
४-५)। ६४९

नौतार्यम् त्रि. [ नावा नौकया तार्यं तरणीयम् ] नाव्यं;  
नौकागम्यदेशादि। ६४९

नौदण्डः पुं. [ नौकायाः परिचालनार्थं यो दण्डः ] नौका-  
दण्डः; क्षेपणी। ६७२

न्यक्षम् क्ली. [ नियतानि अक्षाणि यत्र यस्य वा ]  
कात्स्न्यं; पुं. महिषः; जामदन्यः; निकृष्टे त्रि.। ७७०  
न्यग्रोधः पुं. [ न्यक् रुणद्धि इति । न्यग्रुस्+अच् ] वटवृक्षः।  
'पनसोदुम्बराश्वत्थप्लक्षान्यग्रोवहिङ्गुभिः'—इति भागवते  
(४।६।१६)। व्यामपरिमाणं; शमीवृक्षः; विषपर्णी;  
मोहनाख्यौषधिः; उग्रसेननृपपुत्राणामन्यतमः; 'नवोग्र-  
सेनस्य सुतास्तेषां कंसस्तु पूर्वजः। न्यग्रोधश्च सुनामा च  
कल्कः शल्कः सुभूमिपः'—इति हरिवंशे (३७।३०)।  
१९६

न्यङ्कुः पुं. [ नितराम् अञ्चति गच्छतीति । नि+अञ्चु  
गतौ+ 'नावञ्चे' इति उ, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति  
कुत्वम् ] मृगभेदः; 'न्यङ्कुभिश्च वराहैश्च रुहभिश्च  
निषेवितम्'—इति हरिवंशे (१२।१४१)। मुनि-  
विशेषः। २३०

न्यञ्चितम् त्रि. [ नि+अञ्च+णिच्+क्त ] अंधःक्षिप्तम्।  
७६८

न्यस्तम् त्रि. [ नि+अस्+क्त ] निहितं; स्थापितं;  
निसृष्टं; निक्षिप्तं; त्यक्तं; परिक्षिप्तं; निवृत्तं;  
परीतं; परिवेष्टितम्। ७४७

न्यायः पुं. [ नियमेन ईयते इति । नि+इण्+ 'परिन्यो-  
र्निणोर्धूताभ्रेषयोः' इति घञ् ] उचितः; अभ्रेषः; कल्पः;  
देशरूपं; समञ्जसम्; [ नीयन्ते प्राप्यन्ते विवक्षितार्था  
येनेति । नी+ 'अव्यायन्यायोधावसंहाराश्च' इति घञ्  
प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] नीतिः; जयोपायः; भोगः;  
युक्तिः; प्रतिज्ञाहेतुवाहरणोपनयनिगमनात्मकपञ्चा-  
वयववाक्यम्; पञ्चाङ्गमधिकरणम्; 'न्यायविद्वर्म-  
तत्त्वज्ञः षडङ्गविदनुत्तमः'—इति महाभारते (२।५।३)।  
'न्यायः पञ्चाङ्गमधिकरणम्' इति तट्टीका। पडदसं-  
नान्तर्गतदर्शनविशेषः; तर्कविद्या; आन्वीक्षिकी;  
तर्कशास्त्रम्; 'न्याय वैशेषिकादिः स्यात् तर्कविद्या प्रति-  
ष्ठिता। तस्यामान्वीक्षिकी ज्ञेया तत्रात्मज्ञानमुच्यते'

—इति शब्दरत्नावल्याम् । विष्णुः; 'अग्रणीग्रामिणीः श्रीमान्यायो नेता समीरणः'—इति तस्य सहस्रनाममध्ये । ४२९

न्याय्यम् त्रि. [ न्यायादनपेतम् । 'धर्मपथ्यर्थन्यायादानपेते' इति यत् ] उचितं; न्याययुक्तम्; 'प्रिया न्याय्या वृत्तिर्मलिनमसुभङ्गेऽप्यसुकरम्'—इति नीतिशतके । ७२६  
 ष्युब्जः त्रि. [ न्युब्जन्यस्मिन्निति । नि+उब्ज्+घञ् । 'भुजन्मुब्जौ पाण्युपतापर्याः' इति साधुः । अर्श आद्यच्च ] कुब्जः; अंधोमुखः; रोगादिना वक्रगात्रः । ३८५

पृ

पक्कणः पुं.—क्ली. [ पचति श्वादिनिष्कृष्टमांसमिति । पच्+क्वप् । पक् शबरः, तस्य कणः कलहशब्दः कोलाहलशब्दो वा यत्र, पचनं कलह एव यत्र वा ] शबरालयः; भिल्लवसतिः; 'मध्येविन्ध्याटवि पुरा पक्कणस्थजनाग्रणीः । पल्लीपतिरभूदुग्रः पिङ्गाक्ष इति विश्रुतः' । २६१

पक्वम् त्रि. [ पच्यते स्म यत् इति । पच्+कर्मणि क्त, 'पचो वः' इति निष्ठातस्य वः ] परिणतम्; 'अग्निपक्वाशनो वा स्यात् कालपक्वभुगेव वा'—इति मनुः ( ६।१७ ) । निष्ठां प्राप्तं, सुदृढमिति यावत्, यथा परिणता वृद्धिः । विनाशोन्मुखं; प्रत्यासन्नविनाशम्; अतिपक्वव्यञ्जनदशमूलादौ निष्पक्वं क्वथितं च । क्षीराज्यपाके श्रुतम् । ईपत्पक्वे आपक्वम् । [ भावे क्त ] पाकः; परिणामः; क्ली. स्विघ्नतण्डुलादि । २७६

पक्वशः पुं. [ पक्वानि परिणतानि क्वथ्यफलमूलादीनि इयति, श्रोत्यति खनति वा । पक्व+शो+ड ] अन्त्यजातिः; पुक्कसः । ५९८

पक्षः पुं. [ पक्ष्यते परिगृह्यते देवपितृकार्याय यः । यदा पक्ष्यते चन्द्रस्य पञ्चदशानां कलानामापूरणं क्षयो वा येन । पक्ष्+घञ् । यदा पणते इति, पण् स्तुत्यादौ, 'गृधिपण्योर्दकौ च' इति स, कश्चान्तादेशः ] प्रतिपदादिपञ्चदशाहोरात्राः; 'शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामभ्युदितो रविः । कृष्णपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामस्तमितो रविः' इति तिथ्यादितत्त्वे । ( २३९ ) पक्षिणामवयवविशेषः; गरुत्; छदः; पत्रं; पतत्रं; तनूरुहं; 'पंख' इति भाषा । पारुवः ( ३८९ ) ; कचात् परे समूहार्थः; यया केशपक्षः

( ५३१ ) ; ( ८४९ ) देहाङ्गः; मासाद्धः; पतत्रं; गृहभित्तिः; परिग्रहः; समीपः; शरपक्षः; वाजः; सहायः; गृहं; महाकालः; शिवः [ कालोपाधिभेदात् पक्षस्य तथात्वम् ] ; ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः संख्या समापनः—इति महाभारते ( १३।१७।१३९ ) । ( तात्किकाणाम् ) साध्यम्; सन्दिग्धः साध्यवान् पदार्थः । 'सिपाधयिषया शून्या सिद्धि र्यत्र न विद्यते । स पक्षस्तत्र वृत्तित्वज्ञानादानुमितिर्भवेत्'—इति भाषापरिच्छेदे । विरोधः; बलम्; 'यस्तीर्थानि निजे पक्षे परपक्षे विशेषतः । गुप्तैश्चरैर्नृपो वेत्ति न स दुर्गतिमाप्नुयात्'—इति पञ्चतन्त्रे ( ३।६६ ) । सखा; चुल्लीरन्ध्रं; राजकुञ्जरः; विहगः; वलपं; शुद्धः; वर्गः; पिच्छं; सजातीयवृन्दम्; 'भरतस्यापि वा पक्षं यो गृह्णीयाद् अचेतनः । तं पापमहमद्यैव प्रेषयामि यमक्षयम्'—इति रामायणे ( २।१८।१३ ) । ५०

पक्षः [ स् ] क्ली. [ पचतीति, 'पचिवचिभ्यां सुट् च' इति असुन् सुट् च ] गरुत्; 'पक्षसी च स्मृतौ पक्षी' । २३८

पक्षतिः स्त्री. [ पक्षस्य मूलम्, 'पक्षात्तिः' इति ति ] पक्षमूलः; माघे ( ११।२६ ) । प्रतिपत्तिथिः; 'पक्षत्याद्यास्तु तिथयः क्रमात्पञ्चदश स्मृताः'—इति तिथितत्त्वे । २३९

पक्षमूलम् क्ली. [ पक्षस्य मूलम् ] पक्षतिः । २३९  
 पक्षिराजः पुं. [ पक्षिणां राजा, प्रभुः ] गरुडः । ११९  
 पक्षी [ न् ] पुं.—स्त्री. [ पक्षी विद्येते यस्य । पक्ष+इनि ] विहङ्गमः; खगः; विहङ्गः; विहगः; विहायाः; शकुन्तिः; शकुनिः; शकुन्तः; शकुनः; द्विजः; पतत्री; पत्री, पतगः; पतन्; पत्ररथः; अण्डजः; नगौकाः; वाजी; विकिरः; विः; विष्किरः; पतत्रिः; नीडोद्भवः; गरुत्मान्; पिच्छन्; नभसंगमः; नाडीचरणः; कण्डाग्निः; पतङ्गः; अगौकाः; जञ्चुभृत्; छुरण्डः; सरण्डः; पिपतिपुः; पत्रवाहः; द्युगः । [ पक्षाः कङ्कादीनां पत्राणि सन्त्यस्य । 'अत इनिठनी' इति इनि ] बाणः । २३८

पक्षम् [ न् ] क्ली. [ पक्ष्यते परिगृह्यते आतपतापादिकमनेन । पक्ष्+करणे मनिन् ] अक्षिलोमः; नेत्रच्छदरोमः; 'यमावुतस्वित् तनयो पृथायाः पार्थैर्वृत्तौ पक्षमभिरक्षिणीव'—इति भागवते ( ३।१।३९ ) । किञ्जल्कः; केशरः;

तन्वादेरणीयान्; सूत्रादेरत्यल्पभागः; गरुत्; पक्षः ।  
५२४

पङ्कः पुं—क्ली. [ पच्यते व्याप्यते क्लिद्यते वानेन । पच्+  
घञ्, कुत्वं च ] कर्दमः; 'कङ्कणस्य तु लोभेन मग्नः  
पङ्के सुदुस्तरे । वृद्धव्याघ्रेण सम्प्राप्तः पथिकः संमृतो  
यथा'—इति हितोपदेशे (१।६२) । [ पच्यते व्यक्ती-  
क्रियते दुःखमनेन । पचि विस्तारे व्यक्तीकरणे च ।  
पच् धातोरिदित्वात् नुम्, 'हलश्चेति' करणे घञ्. ततो  
घित्वात् चस्य कुत्वम् ] पापम्; 'न्यङ्काकरे वपुषि कङ्कादि-  
रक्तपुषि कङ्कादिपक्षिविषये, त्वं कामनामयसि किं कारणं  
हृदय ! पङ्कारिमेहिगिरिजाम्'—इति अम्बाष्टके  
(६) । ६७८

पङ्कजम् क्ली. [ पङ्के पङ्काद् वा जातम् इति । पङ्क+  
जन्+कर्त्तरि ड ] पद्मम्; 'तिरश्चकार भ्रमराभिली-  
नयोः सुजातयोः पङ्कजकोषयोः श्रियम्'—इति रघुवंशे  
(३।८) । अयं हि योगरूढशब्दः; 'रूढा गवादयः  
प्रोक्ता यौगिकाः पाचकादयः । योगरूढाश्च विज्ञेयाः  
पङ्कजाद्या मनीषिभिः ।' ६८०

पङ्कित्तिः स्त्री. [ पच्यते व्यक्तीक्रियते श्रेणीविशेषणेति  
यावत् । पचि व्यक्तीकरणे+भावे क्तिन्, इदित्वाच्नुम् ।  
यद्वा पञ्चयति विस्तारयति जातिसंस्थानविशेषमिति ।  
पचि विस्तारे+कर्त्तरि क्तिच् ] सजातीयसंस्थान-  
विशेषः; वीथी; आलिः; आवलिः; श्रेणी; वीथिः;  
आली; आवली; पङ्कती; श्रेणिः; सरणिः; सन्ततिः;  
विञ्जोली; पालिः; पाली; वीथिका; 'विलोक्या  
विशदा चैषां फलपङ्कितः सुभीषणा'—इति मार्कण्डेये  
(४३।४९) । पञ्चाक्षरपादच्छन्दोविशेषः; 'भगी गिति  
पङ्कितः ।' 'कृष्णसनाथा तर्णकपङ्कितः, यामुनकच्छे  
चार चचार'—इति छन्दोमञ्जरी । पङ्कितच्छन्दस  
उत्पत्तिस्थानम्; 'मञ्जायाः पङ्कितस्त्यन्ना बृहती  
प्राणतोऽभवत्'—इति भागवते (३।१२।४६) । [ पञ्च-  
कद्वयं परिमाणमस्य इति । 'पङ्कितविशतित्रिशदिति'  
निपातनात् प्रकृतेः पञ्चन्शब्दस्य टिलोपः तिप्रत्ययश्च ]  
दशाक्षरपादच्छन्दः; दशसंख्या; 'तेन मन्त्रप्रयुक्तेन  
निमेषार्द्धादिपातयत् । स रावणशिरःपङ्कितमज्ञातव्रण-  
वेदनाम्'—इति रघुवंशे (१२।९९) । पृथिवी;  
गौरवं; पाकः । ७२१

पङ्गुः पुं. [ खञ्जति गतिवैकल्यं प्राप्नोतीति । खजि गति-  
वैकल्ये, बाहुलकात् कु । 'खजयोः पगौ नुमागमश्च'  
इति पगौ नुमागमश्च । प्रतिपाद्यग्रहस्य कक्षाया अत्युच्च-  
तया बहुकालेन राशिभागादिभोगान्मन्दगतित्वादस्य  
तथात्वम् ] शनैश्चरः । ४८

पङ्गुः त्रि. [ खजि गतिवैकल्ये । बाहुलकात् कु । खस्य पत्न्ये  
जस्य गादेशः, नुम् च ] जङ्घावैकल्येन चलनाक्षमः;  
श्रोणः; जङ्घाहीनः; 'कच्चिदन्धाश्च मूकाश्च पङ्गून्  
व्यङ्गानवान्धवान् । पितेव पासि घर्मज्ञ ! तथा प्रव्रजि-  
तानपि'—इति महाभारते (२।५।१२५) । परित्राट्;  
'भिक्षार्थं गमनं यस्य विभूमत्रकरणाय च । योजनास्य परं  
याति सर्वथा पङ्गुरेव सः'—इति चिन्तामणी ।  
यानहरणेनैव लोक. पङ्गुर्भवति, यथा—'पुष्पापहृद्हरिद्रः  
स्यात्पङ्गुर्यानापहृन्नरः'—इति मार्कण्डेये (१५।३१) ।  
६१०

पञ्जः पुं. [ पङ्ख्यां जातः । पङ्+जन्+कर्त्तरि ड ]  
शूद्रः; पदजातत्वमुक्तं यथा—'ब्राह्मणोऽस्य मुलमासीद्-  
बाहू राजन्यः कृतः । उरू तदस्य यद् वैश्यः पङ्ख्यां  
शूद्रो अजायत'—इति श्रुतौ । ५८६

पञ्चजनः पुं. [ पञ्चभिर्भूतैर्जन्यतेऽसौ । पञ्च+जन्+  
कर्मेणि घञ्, 'जनिवध्योश्च' इति न वृद्धिः ] पुष्पः;  
'सञ्जावश्रयादिका देव्यस्तेन श्रीशब्दलाञ्छिताः ।  
पञ्च पञ्चजनेन्द्रेण पुरे तस्मिन् निवेशिताः— इति राज-  
तरङ्गिण्याम् । दैत्यविशेषः; 'संज्ञादस्य कृतिर्भार्या-  
सूत पञ्चजनं ततः'—इति भागवते (६।१८।१४) ।  
अपरो दैत्यभेदः, यं श्रीकृष्णो हत्वा सान्दीपनिमुनये तस्य  
मृतं पुत्रं गुरुदक्षिणास्वरूपं ददौ; 'सान्दीपनेः सकृत्  
प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम् । तस्मै प्रादाद् वरं पुत्रं  
मृतं पञ्चजनोदरात्'— इति भागवते (३।३।२) ।  
अस्यास्थना पाञ्चजन्यनामा शङ्खो जातः स च दृष्णस्य,  
यथा—'पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः'—इति  
भगवद्गीतायाम् (१।१५) । प्रजापतिः; 'एषा पञ्च-  
जनस्याङ्ग ! दुहिता वै प्रजापतेः । असिधनी नाम पत्नीत्वे  
प्रजेश ! प्रतिगृह्यताम्'—इति भागवते (६।४।५१) ।  
सगरराजपुत्रः; 'केशिन्यसूत सगरादसमञ्जसमात्मजम् ।  
राजा पञ्चजनो नाम बभूव स महोवलः'—इति हरि-  
वंशे (१५।६) । गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा रक्षांसि

च पञ्चजनपदवाच्यानि भवन्ति । ३३१

पञ्चजनीनः पुं. [ पञ्चसु जनेषु व्यापृतः । 'दिक्संख्ये संजायामिति' समासः । पञ्चजने हितम् । 'पञ्चजनादुपसह्वयानमिति' ख ] भण्डः; पञ्चजनसम्बन्धिनि पञ्चजन्याः प्रभौ च त्रि. । ३६८

पञ्चत्वम् क्ली. [ पञ्चानां क्षित्यादिभूतानां भावः ] मरणं; पञ्चानां भावः; 'पञ्चधा सम्भूतः काथो यदि पञ्चत्वमागतः । पञ्चभिः स्वशरीरोत्पैस्तत्र का परिदेवना ।' 'मृत्यावपानं सोत्सर्गं तं पञ्चत्वे ह्यजोहवीत्'—इति भागवते ( १।१५।४१ ) । ६२८

पञ्चशाखः पुं. [ पञ्च शाखा इवाङ्गुलयो यस्य ] हस्तः; पञ्चानां शाखानां समाहारे क्ली. । पञ्चशाखा-विशिष्टे त्रि. । ५११

पञ्चाननः पुं. [ पञ्च आननानि करचरणमुखरूपाणि, प्रहारकाले इति शेषः; यस्य । अथवा पचि विस्तारे, पञ्चं विस्तृतम् आननं यस्य ] सिंहः; शिवः; अत्युग्रः; ज्योतिषोक्तसिहराशिः; 'पञ्चाननगते भानौ पक्षयोहमयोरपि । चतुर्थ्यामुदितश्चन्द्रो नैक्षितव्यः कदाचन'—इति स्मृतिः । रुद्राक्षविशेषः; तद्धारणे महच्छुभं भवति । २१४

पञ्चालिका स्त्री. [ पञ्चभिर्वर्णैरलति इति । पञ्च+आ+अल् भूषणे+अच्+टाप् ] पुत्तली; पाञ्चालिका ।

४९३

पञ्चेपुः पुं. [ पञ्च इषवो वाणाः यस्य सः ] पञ्चशरः; कन्दर्पः; कामदेवः; पञ्चवाणः; 'सम्मोहोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा । स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्च वाणाः प्रकीर्तिताः । अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका । नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चवाणस्य सायकाः ।' ३२

पटः पुं.-क्ली. [ पटयत्यनेन । पट् वेष्टने, घञर्थे क ] शोभन-वस्त्रं; सुचेलकः; 'यथा धीतो घट्टितश्च लाञ्छितो रञ्जितः पटः । चिदन्तर्यामिसूत्रात्मा विराट् चात्मा तथैर्यते'—इति पञ्चदशी ( ६।२ ) । चित्रपटः; पुं. प्रियालवृक्षः; पुरस्कृतः; क्ली. [ पटतीति, पट्+पचाद्यच् ] छदिः; चालम् । ५४८

पटकुटी स्त्री. [ पटस्य पटनिर्मिता वा कुटी ] वस्त्रवेदम; केणिका; गुणलयनिका; पटमण्डपः; 'तम्बू' इति भाषा ।

४५१

पटचौरः पुं. [ पटानां, लक्षणया जीवनोपयोगिवस्तूनां चौरः ] पाटच्चरः; तम्करः । ३४०

पटच्चरम् क्ली. [ भूतपूर्वं पटत् । भूतपूर्वं चरट् । यद्वा पटदित्यव्यक्तं शब्दं चरतीति । पटत्+चर्+अच् ] जीर्णवस्त्रं; [ पटयते आविष्टयते इति । पट्+बाहुल-काद् अत् । पटदिव चरति यः । चर्+अच् ] चोरे पुं. ।

५५०

पटममञ्जरी स्त्री.— रागिणीविशेषः । १०२ अ  
पटलम् क्ली. [ पटं विस्तृतं लाति । पट्+ला+आतोऽनु-पेति' क । यद्वा पटतीति, पट्+कृपादिभ्यश्चित्' इति कलच् ] पटलप्रान्तं; वलीकं; नीघ्नं; गृहचालिकान्त-भागः; छदिः; नेत्ररोगः; पिटकः; परिच्छदः; तिलकः; 'अस्तमिते दिवसकरे तिमिरभरद्विरदसंसक्ता । सिन्दूर-पटलपाटलकान्तिरिवानन्देभौ सन्ध्या'—इति कलावि-लासे ( १।२५ ) । ( ६८७ ) समूहे क्ली., स्त्री. । 'यस्यानवद्याचरितं मनीषिणो गृणन्त्यविद्यापटलं विभित्सवः । निरस्तसाम्यातिशयोऽपि यत् स्वयं पिशाच-चर्यामचरद् गतिः सताम्'—इति भागवते ( ३।१४।२६ ) । दृष्टेरावरकम्; 'प्रथमे पटले दोषो यस्य दृष्ट्यां व्यव-स्थितः । अव्यक्तानि सरूपाणि कदाचिदय पश्यति'—इति माधवकरः । पुं.- स्त्री. [ पाटयति दीप्यते यः । पट्+कलच् ] ग्रन्थः; वृक्षः; वृन्तः । ३०३

पटलान्तम् क्ली. [ पटलस्य अन्तम् ] पटलप्रान्तं; छदिः-प्रान्तभागः । ३०३

पटहः पुं.-क्ली. [ पटेन हन्यते इति । पट्+हन्+ड । पटत् इति शब्दं जहाति पटहः । पटत्+हा+ड, निपात-नात् तलोपः ] आनक्रवाद्यं; [ पाटयति गमयति योधान् युद्धाय, उत्साहवर्द्धकत्वात् । पट् गती ] युद्धे वाद्यमान-ढक्का; आडम्बरः; समारम्भः; हिसनम् । ९७

पटुः त्रि. [ पाटयतीति । पट् गती ग्रन्थः । 'फलिपाटीति' उ, पटादेशश्च ] तीक्ष्णः; दक्षः; 'अनुभवन् नवदोलमू-तृत्सर्वं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया । अनयदासनरज्जु-परिग्रहे भुजलतां जडतामवलजानः'—इति रघुवंशे ( १।४६ ) । नीरोगः; स्फुटः; निष्फुरः; वृत्तः; चतुरः; 'मघुरः; 'कुम्भपूरणभवः पटुरुच्चैश्चचार निनदोऽम्भ-सि तस्याः'—इति रघौ ( १।७३ ) । ४०

पटोली स्त्री. [ पटोल+जातित्वात् डीप् ], ज्योत्स्नी;

जाली; ज्योत्स्ना; पटोलिका; फलविशेषः । 'पटोली-  
मुस्तकाभ्यां च वासकेन च नाशयेत्'—इति गरुडे  
१९८ अध्याये । २०२

पट्टिशः; पट्टिसः पुं. [ पट् गती + बाहुलकात् टिश (स) च ]  
अस्त्रविशेषः; 'परशुः पट्टिसो नाम स एव च परश्वधः'  
—इति भरतः । 'भुशुण्डिभिश्चक्रमदाष्टिपट्टिशैः  
शक्त्युल्लुक्कैः प्रासपरश्वधैरपि । निस्त्रिशभल्लैः परिघैः  
समुद्गरैः सभिन्दिपालैश्च शिरांसिचिच्छिदुः'—इति  
भागवते (१।११।३६) । ४७६

पणः पुं. [ पण्यतेऽनेन । पण् व्यवहारे + 'नित्यं पणः  
परिमाणे' इति अप् । पणो ग्लहोऽस्त्यस्मिन्, पण +  
'अर्श आदिभ्योऽञ्' इत्यञ् ] ग्लहः; 'प्रतिभूः शुको विपक्षे  
दण्डः शृङ्गात्संकथा गुरुपु । पुरुषायितं पणस्तद् बाले  
परिभाव्यतां दायः'—इति आर्यासप्तशती (३५४) ।  
[ पण्यते व्यवाहृत्ये इति, 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण'  
इति घ ] मूल्यं; धनं; शोण्डिकः; विशतिगण्डकः;  
कार्षापणः; 'यस्तु दोषवतीं कन्यामनाख्याय प्रयच्छति ।  
तस्य कुर्यान्नृपो दण्डं स्वयं पण्यवति पणान्'—इति मनुः  
(८।२२४) । कार्षिकताम्रिकः; स तु पञ्चकृष्णलमाप-  
कारव्यताम्रकपंकृतव्यवहारद्रव्यम् । पूर्वं हि ताम्र-  
वित्तकायाः कपर्दक एको मूल्यमिति अशीतिविराट्मूल्यः ।  
लोके तूपचारात् कार्षापणवत् पणव्यपदेशो मूल्य एव ।  
निर्वेशः; भृतिः; गृहं; [ पण्यते अधिकारिभेदेन सुख-  
भोगादिकं व्यवहरति, साधकस्य सुकृतानुसारेण वैकुण्ठ-  
वासादिफलं प्रददातीत्यर्थः । पचाद्यच् । यद्वा पण्यते  
स्तुयते यः ] विष्णुः; 'ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः  
प्रणवः पणः'—इति महाभारते (१३।१४९।११५) ।

७५९

पणवः पुं. [ पणं स्तुतिं वातीति । पण + वा + क ] गायन-  
पटहः; प्रणवः; पणवा; 'ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पण-  
वानक्रगोमुखाः । सहस्रैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽ-  
भवत्'—इति भगवद्गीता (१।१३) । 'पणवः पणवा  
च स्यात् प्रणवोऽप्यत्र वर्तते'—इति भरतद्विरूपकोशः । १७  
पण्डकः पुं. [ पण्डते निष्फलत्वं प्राप्नोतीति । पण्डि गती +  
पचाद्यच् । यद्वा पण् व्यवहारे, 'अमन्ताड् डः' इति ड,  
स्वार्थे कन् ] क्लीबं; नपुंसकं; निष्फले त्रि. । ४३०  
पण्डितः पुं. [ पण्डा वेदोऽज्वला तत्त्वविपयिणी वा बुद्धिः

सा जाता अस्य । 'तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच्'  
इति इतच् । यद्वा पण्ड्यते तत्त्वज्ञानं प्राप्यतेऽस्मात् ।  
गत्यर्थेति क्त ] शास्त्रज्ञः; विद्वान्; विपश्चित्; दोषज्ञः;  
सन्; सुधीः; कोविदः; बुधः; धीरः; मनीषी; ज्ञः;  
प्राज्ञः; संख्यावान्; कविः; धीमान्; सूरिः; कृती;  
कृष्टिः; लब्धवर्णः; विचक्षणः; दूरदर्शी; दीर्घदर्शी;  
विशारदः; कवी; सूरी; विदग्धः; दूरदृक्; वेदी;  
वृद्धः; बुद्धः; विधानगः; प्रज्ञिलः; कृस्तिः; विज्ञः;  
मेधावी; 'निषेवते प्रशस्तानि निन्दितानि न सेवते ।  
अनास्तिकः श्रद्धधान एतत् पण्डितलक्षणम्'—इति चिन्ता-  
मणिः । 'पठकाः पाठकाश्चैव ये चाप्ये शास्त्रचिन्तकाः ।  
सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः क्रियावान् स पण्डितः'—इति  
महाभारते वनपर्वणि । 'विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे शक्ति  
हस्तिनि । शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः'—  
इति भगवद्गीता (५।१७) । सिद्धकः; महादेवः  
(सर्वज्ञत्वात्); 'न्यायनिर्वपणः पादः पण्डितो ह्यचलो-  
पमः'—इति महाभारते (१३।१७।१२४) । ३३२  
पण्यविक्रयशाला स्त्री. [ पण्यस्य व्यवहार्यद्रव्यस्य विक्रय-  
शाला ] विपणिः; पण्यवीधिका । २९६

पण्याङ्गना स्त्री. [ पणितुं क्रेतुं योग्या पण्या, सा चासी  
अङ्गना ] पण्यस्त्री; वैश्या; वारवधूः । ४९०.

पण्याजीवः पुं. [ पण्येन आजीवतीति । पण्य + आ + जीव् +  
'इगुपधेति' क ] वणिजः; क्रयविक्रयकर्ता । ५७१

पतगः पुं. [ पतेन पक्षेण गच्छति । पत + गम् + ड ]  
विहगः; पक्षी । २३७

पतङ्गः पुं. [ पतति आकाशे गच्छति । पत्लृ गती, 'पते-  
रङ्गच् पक्षिणि' इत्यङ्गच् ] सूर्यः; विहङ्गः । ३५

पतङ्गः पुं. [ पतन् उत्लवन् गच्छति । पतत् + गम् + ड,  
पृषोरादित्वात् डत्वम् ] विहगः; शलभः । (२५७)  
२३७

पतत्रम् क्ली. [ पत् + करणे अत्रन् ] पक्षः; पक्षतिः;  
गरुत्; 'पंख' इति भाषा । २३९

पतत्रिन् पुं. [ पतत्र + 'अत इनिठनी' इति इनि ] पक्षी;  
गस्तमान्; पत्नी । २३७

पतवाहृतम् क्ली. —अनायासगृहीतं; स्वीकृतम् । ७८९  
पतन् पुं. [ पततीति, पत्लृ गती + शतृप्रत्ययः ] लगः;  
द्विजः; पक्षी । २३७

रताका स्त्री. [ पतति गगने उड्डीयते. पत्यतेऽनया वा ।  
पत्लृ गती+बलाकादयश्च' इत्याकप्रत्ययः ] वैजयन्ती,  
ध्वजः । ४५८

पताकिनी स्त्री. [ पताकाः सन्ति यस्याम् । व्रीह्यादित्वा-  
दिनि, डीप् ] सेना; चमूः, ध्वजिनी । ४५७

पतिः पुं. [ पा+डति ] भर्ता; धवः; स्वामी; अधिपः ।  
४९७

पतिवरा स्त्री. [ पतिं वृणीते इति । पति+वृञ्+संज्ञायां  
भृत्वृजि' इति खच् मुमागमश्च ] स्वयंवरा; वर्या । ४८३

पतितः त्रि. [ पत्लृ गती, भूते क्त ] भ्रष्टः; प्रस्कन्नः;  
च्युतः; गलितः; पन्नः (७६७) । ४७९

पतिद्वली स्त्री. [ पतिः विद्यमानः अस्याः । मत्पु, 'अन्त-  
वंप्रतिवतोर्नुक् च' इति नुक् डीप् च ] सभर्तृका;  
जीवत्पतिका; सधवा । ४८६

पतिघ्नता स्त्री. [ पत्यी व्रतं नियमः अस्याः, पतिव्रत-  
मस्या वा । पतिशब्दः पतिसेवायां लाक्षणिकः ] सुच-  
रिता; सती; साध्वी । ४९५

पत्तनम् क्ली. [ पतन्ति गच्छन्ति जना यस्मिन् । पत्  
गती+वीपतिभ्यां तनन्' इति तनन् ] नगरम्; पुरम्;  
'पुरग्रामन्नजोधानभेत्रारामाश्रमाकरान् । खेटखर्वट-  
घोषांश्च ददद्भुः पत्तनानि च'—इति भागवते (७।२।  
१४) । महती पुरी; मृदङ्गः । २८५

पत्तिः पुं. [ पद्यते विपक्षसेनां प्रति पद्भ्यां गच्छतीति ।  
पद् गती+पदिप्रथिभ्यां नित्' इति ति, स च नित् ]  
पदातिकः; 'पत्तिः पदाति रथिनं रथेक्षः तुरङ्गसादी तुर-  
गाविहङ्गम् । यन्ता गजस्याम्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रति-  
द्विन्द्रि वभूव युद्धम्'—इति रघुवंशे (७।३७) ।

[ पद्यते विपक्षं प्राप्नोतीति, पद्+तिन् ] वीरः; स्त्री.  
[ पत् गती+भावे क्तिन् ] गतिः । [ पत्यते विपक्षो यया,  
पत्+करणे क्तिन् ] सेनाविशेषः । 'एकेभैकरथा श्यश्वा  
पत्तिः पञ्चपदातिका'—इत्यमरः (२।८।८०) । ४५०

पत्नी स्त्री. [ पत्युर्पत्ने सम्बन्धो यया । 'पत्युर्नी यज्ञसंयोगे'  
इति नकारादेशः डीप् च ] शास्त्रविधिनोढा; पत्या उद्वाह-  
विहितमन्त्रादिना ऊढा; पाणिगृहीती; द्वितीया; सह-  
धमिणी; भार्या; जाया; दाराः; सधमिणी; धर्म-  
चारिणी; दारः; गृहिणी; सहचरी; गृहाः; क्षेत्रं;  
वधूः; जनी; परिग्रहः; ऊढा; कलयम् । 'पत्नीमूलं

गृहं पुंसां यदि छन्दोऽनुवर्तिनी । गृहाश्रमसमं नास्ति यदि  
भार्या वशानुगा'—इति दक्षसंहितायाम् । ४९४

पत्रम् क्ली. [ पतति वृक्षात् । पत् गती+सर्वधातुभ्यः  
प्त्रन्' इति प्त्रन् ] वृक्षावयवविशेषः; पलाशः; छदनं;  
दलं; पर्णः; छदः; पात्रं; छादनं; वह्नं; वह्णं; पत्रकम्;  
'पत्राण्यपि सपुष्पाणि हरेः प्रीतिकराणि च । प्रवक्ष्यामि  
नृपश्रेष्ठ ! शृणुष्व गदतो मम'—इति नारसिंहे । पक्षि-  
पक्षः; (२३९) वाहनं (४४९); क्षुरिका (४७३);  
तेजपत्रं; तमालपत्रं; पत्रकं; छदनं; दलं; पालाशम्;  
अंशुकं; वासः; तापसं; सुकुमारं; वस्त्रं; तमालकं;  
रामं; गोपनं; वसनं; तमालं; सुरनिर्गन्धं; शरपक्षः ।  
लेखनाधारः; धातुमयपत्राकृतिद्रव्यं; पत्री; लिपिः ।  
१८५

पत्रपाली स्त्री. [ पत्रवत् पालिरग्रभागो यस्याः । डीप् ]  
वाजुः; वाणपक्षतिः; कर्तनी । ४६८

पत्ररथः पुं. स्त्री. [ पत्रं पक्षो रथो यानमिव यस्य ] पक्षी;  
'चित्रस्वनेः पत्ररथैर्विभ्रमद्भ्रमरश्रियम् । नल्लवेषु-  
शरस्तम्बकुशकीचकगह्वरम्'—इति भागवते (१।६।  
१३) । २३७

पत्रवल्ली स्त्री. [ पत्राणां रचितपत्राकृतीनां बल्ली  
लतेव ] पत्रभङ्गः; 'गण्डेषु स्फुटरचनाब्जपत्रवल्ली-  
पर्याप्तं पयसि विभूषणं वधूनाम्'—इति माघे (८।  
५९) । रुद्रजटा; पलाशीलता; पर्णलता । ५४२

पत्रशिरा स्त्री. [ पत्रस्य शिरेव ] पत्रभङ्गः; माळिः;  
पर्णनाडी । ७८३

पत्री [ न् ] पुं. [ पत्रं पक्षो विद्यतेऽस्य । पत्र+इनि ]  
पक्षी 'तं क्षुरप्रशकलीकृतं कृती पत्रिणां व्यमजदा-  
श्रमाद्वहिः'—इति रघो (१।१२९) । वाणः (४६६);  
'शंस किं गतिमनेन पत्रिणा हन्मि लोकमुत ते मखा-  
जितम्'—इति रघो (१।१८४) । श्येनः; 'नभसि  
महसां ध्वान्तव्वाङ्क्षप्रमाणपत्रिणामिहविहरणं श्येन-  
म्यातां रवेरववारयन्'—इति नैपथे (१।९।१२) ।  
[ पत्राणि च्छदानि सन्त्यस्य, अत इनि ] वृक्षः; रथी;  
पर्वतः; तालः; श्वेतकिण्ही; गङ्गापत्री; पाची;  
पत्रविशिष्टे त्रि. । २३७

पयः पुं. [ पयति गच्छति अत्र । पय् गती+अधि-  
करणे क ] पन्याः; मार्गः । २६०

पथ्या स्त्री. [ पथ्य+टाप् ] हरीतकी; 'ततः सैन्धवपथ्या-  
म्यां चूर्णिताम्यां प्रकर्षयेत् । पुनः सप्तदिने प्राप्ते  
रोममात्रं समुच्छिनेत्'—इति हठयोगदीपिकायाम् ।  
(३।३५) । मृगवेरुः; चिभिटा; बन्ध्या कर्कोटकी;  
गङ्गा (संसाररोगस्य पथ्यस्वरूपत्वात् गङ्गापि पथ्य-  
स्वरूपा); 'पथ्यानामपदार्थ्येण प्रसूता पथ्यामालिनी ।  
परद्धिदा पुष्टिकरी पथ्या पूर्तिः प्रभावती'—काशी-  
खण्डे (२९।११२) । ६१८

पद्मः पुं. [ पदाम्यां गच्छतीति । पद+गम्+ 'अन्येभ्योऽपि'  
इति ड ] पदातिकः; पद्भ्यां गमनकर्त्तरि. त्रि. । ४५०

पदविः स्त्री. [ पद्यते गम्यतेऽनया । पद् गतौ+ 'पद्यटिम्या-  
मविः' इति अवि ] पद्धतिः; पन्थाः । २६०

पदवी स्त्री. [ पदवि+ 'कृदिकारान्तादक्तिनः' इति पक्षे  
डीष् ] पन्थाः; 'उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षादलक्तकाङ्क्षां  
पदवीं ततान्'—इति रघो (७।७) । पद्धतिः; 'अलं  
प्रयत्नेन तवात्र मा निषाः पदं पदव्यां सगरस्य सन्तते'  
—इति रघो (३।५०) । पदम्; 'अथ तेन सिंहाय  
अमात्यपदवी प्रदत्ता, व्याघ्राय शय्यापालत्वमिति'  
पञ्चतन्त्रे (१।२५८) । २६०

पदातः पुं. [ पदाभ्यामततीति । पद+अत्+अच् ] पादा-  
तिकः; पदातिकः; पदातिः; पत्तिः; पतगः; पदाजिः;  
पद्गः; पदिकः; पादाविकः; पादात्; पदात्; पायिकः;  
शवरालिः । ४५०

पदातिः पुं. [ पादाभ्यामतति गच्छतीति । 'पादे च'  
इति पाद+अत्+इण्, 'पादस्य पदाज्यातिगोपहतेषु'  
इति पदादेशः ] पदातिकः; पत्तिः; पतगः; पादातिकः;  
पदातिः; पद्गः; पदिकः; पादात्; पादाविकः; पदात्,  
पायिकः; शवरालिः; 'गजानश्वान् रथाश्चैव पातया-  
मास पाण्डवः । पदातीश्च रथाश्चैव न्यवधीदर्जुनाग्रजः'  
इति महाभारते (१।१३।३१) । ४५०

पदातिकः पुं. [ पदाति+स्वार्थे कन् ] पदातिः; पदातः;  
पादातिकः । ४५०

पद्गः पुं. [ पद्भ्यां गच्छतीति । पद्+गम्+ 'अन्येभ्योऽ-  
पीति' ड ] पदातिकः; पदिकः; पदातिः; पदातः ४५०

पद्धतिः, पद्धती स्त्री. [ पद्भ्यां हन्यते । पद+हन्+क्तिन् ।  
'हिमकाषिहतिषु च' इति पद्भावः, 'बह्नादिभ्यश्च'  
इति वा डीष् ] वर्त्म; पद्धक्तिः (५२९); पदवी; 'पथः

श्रुतेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम्'  
—इति रघो (३।४६) । २६०

पद्म क्ली.—पुं. [ पद्यते इति, पद् गतौ+ 'अतिस्तुमुहु-  
स्त्रिति' मन् । यद्वा पद्यालक्ष्मीरस्त्यस्मिन्, 'अर्शाआदिभ्योऽ-  
च्' इति अच् ] पद्यकं; तच्च गजस्य मुख्यादिस्यो विन्दु-  
समूहः; (६८०) पुष्पविशेषः; नलिनम्; अरविन्दं;  
महोत्पलं; सहस्रपत्रं; कमलं; शतपत्रं; कुशेशयं;  
पद्मेरुहं; तामरसं; सारसं; सरसीरुहं; विसप्रसूनं,  
राजीवं; पुष्करम्; अम्भोरुहं; पद्भ्रजम्; अम्भोजम्;  
अम्बुजं; सरसिजं; श्रीवासं; श्रीपर्णम्; इन्दिरालयं;  
वनजं; जलेजातम्; अब्जं; कञ्जं; नलं; नालीकं;  
नालिकम्; अम्लानं; पुटकम्; अब्जः; (८१२)  
पद्मकाष्ठोषधिः; वृक्षविशेषः; व्यूहविशेषः; 'यतश्च  
भयभाशङ्केततो विस्तारेयद्वलम् । पद्मेन चैव व्यूहेन  
निविशते सदा स्वयम्'—इति मनुः (७।१८८) । निधि-  
भेदः; 'निधिप्रवरमुख्या च शङ्खपद्मी घनेश्वरी । सर्वा-  
न्निधीन् प्रगृह्याथ उपास्तां वै घनेश्वरम्'—इति महा-  
भारते (२।१०।३६) । संख्यान्तरं; तच्च दशार्बुदम्;  
'अपुतं प्रयुतं चैव पद्मं खर्वमथार्बुदम्'—इति महाभारते ।  
दश शङ्खाः; पुष्करमूलं; सीसकं; कल्पविशेषः; 'पद्माव-  
साने प्रलये निशासुप्तोत्थितः प्रभुः । सत्त्वोद्विगतस्तदा-  
ब्रह्मा शून्यं लोकमवैक्षत'—इति मार्कण्डेये (४७।३) ।  
शरीरस्थपङ्कपद्मानि; पुं. [ पद्यते इति, पद् गतौ+  
'अतिस्तुस्त्रिति' मन् ] दाशरथिः; नागविशेषः;  
'कृष्णश्च लोहितश्चैव पद्माश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति  
महाभारते (२।९।८) । पद्मोत्तरात्मजः; स तु द्वादश-  
जिनचक्रवर्त्यन्तर्गतचक्रवर्तिविशेषः । बलदेवः; षोडश-  
रतिबन्धान्तर्गतप्रथमबन्धः; 'हस्ताभ्यां च समालिङ्ग्य  
नारीं पद्मासनोपरि । रमेद् गाढं समाकृष्य बन्धोऽयं  
पद्मसंज्ञकः'—इति रतिमञ्जरी । २१९

पद्मनाभः पुं. [ पद्मं नाभौ यस्य । 'अच्' प्रत्यन्वपूर्वात्  
सामलोम्नः' इत्यत्र 'अच्' इति योगविभागाद् अच् ।  
ब्रह्मोत्पत्तिकारणीभूतपद्मस्य नामिजातत्वादस्य तथा-  
त्वम् ] विष्णुः 'अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः'  
—इति महाभारते (१।३।४९।१०) । शयने तस्य  
स्मरणीयत्वं, यथा—'ओषधे चिन्तयेद्विष्णुं भोजने च  
जनादंनम् । शयने पद्मनाभं च विवाहे च प्रजापतिम्'—



इति बृहन्नन्दिकेश्वरपुराणे । महादेवः (हृदयपद्मस्य नाभी, नाभेरीपदुपरिभागे प्रकाशनात्); 'पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्त्रोऽनिलोऽनलः'—इति महाभारते (१३। १७। १०५) । [पद्ममिव वर्तुलाकृतिः नाभिर्यस्य] घृतराष्ट्रपुत्राणामन्यतमः; 'ऊर्णनाभः पद्मनाभः तथा- नन्दोपनन्दकी'—इति महाभारते (१। ६। १। १५) । नागविशेषः; 'कृताधिवासो धर्मात्मा तत्र चक्षुःश्रवा महान् । पद्मनाभो महानाभः पद्म इत्येव विश्रुतः'—इति महाभारते (१२। ३। ५। ४) । भाविजिनविशेषः; स्तम्भनास्त्रविशेषः; 'पद्मनाभो महानाभः सुनाभो दुन्दुभिस्वनः'—इति रामायणे (१। ३। १। ७) । २१

**पद्मनाभिः** पुं. [पद्मं नाभी यस्य । अजिति योगविभागस्य असावर्त्रिकत्वान् न अच् ] पद्मनाभः; विष्णुः । २१

**पद्मभूः** पुं. [पद्मं विष्णुनाभिभवकमलं भूस्त्वत्तिस्थानं यस्य । यद्वा पद्माद् भवतीति । पद्म + भू + क्विप् ] ब्रह्मा; पद्मयोनिः । ६

**पद्मरागः** पुं. [पद्मस्येव रागो यस्य] रक्तमणिविशेषः; शोणरत्नं; लोहितकः; लोहितं; कुर्ष्विन्दकं; 'माणिक' इति भाषा । 'सिंहले तु भवेद्रक्तं पद्मरागमनुत्तमम् । पीतं काणपुरोद्भूतं कुर्ष्विन्दमिति स्मृतम्'—इति राज- निर्घण्टः । १७५

**पद्मवासा स्त्री** । [पद्मं वासो यस्याः] लक्ष्मीः । ३१

**पद्मा स्त्री** । [पद्मं वासस्थलत्वेनास्त्यस्याः । 'अर्श आदि-भ्योऽच्' इति अच्, टाप् ] लक्ष्मीः; 'छायामण्डल-लक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम् । पद्मा पद्मातपत्रेण भेजे साम्राज्यदीक्षितम्'—इति रघी (४। ५) । लवङ्गं; पद्मचारिणी; [पद्यते इति, 'अतिस्तुस्विति' मन्, टाप् ] पद्मगी; मनसा; झञ्जिका; वृत्तार्हन्माता; कुसुम्भ-पुत्रं; बृहद्रथराजकन्या; कल्किदेवेन विवाहिता । ३१

**पद्यः** पुं. [पद्म्यां जातः । पद् + यत् ] शूद्रः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुत्रमासीद् वाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्व यद्वैश्यः पद्म्यां शूद्रो अजायत'—इति यजुषि । ५८६

**पद्या स्त्री** । [पादाय हिता, शरीरावयवत्वात् यत् । 'पद्यत्य-तदर्थे' इति पद्भावः] पद्याः; 'यदाशवः पद्याभिस्तित्रतो रजःपृथिव्याः सानी जङ्घनन्त पाणिभिः'—इति वेदे । पादौ विच्यन्ति पद्याः शर्कराः [ 'विच्यत्यवनुपा' इति यत्, 'पद्यत्यतदर्थे'—इति पदादेशः ] ; स्तुतिः । २६०

**पद्मम्** त्रि. [पद् गती + 'गत्यर्थेति' कर्तरि क्त ] च्युतं; गलितं; पतितं; पुं. [पन् स्तुती + कृवृजृपिद्रपनीति' न, स च नित् ] अधोगमनम् । ७६७

**पद्मगः** पुं. [पद्मम् अधोगमनं पतितं वा गच्छतीति । गम् गती + 'सर्वत्रपन्नधोरुपसंख्यानम्' इति ड । पद्म्यां न गच्छतीति वा विग्रहः] सर्पः; 'पानासक्तं महात्मानं हिरण्यकशिपुं तदा । उपासाञ्चक्रिरे सर्वे सिद्धगन्धर्व-पद्मगाः'—इति विष्णुपुराणे । ओपविमदः; पद्मकाष्ठम् । ६४०

**पयः** [स्] क्ली. [पय्यते पीयते वा । पय् गती, पी पाने वा + 'सर्वघातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्] दुग्धम्; 'कुर्यादह-रहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन वा । पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिभावहन्'—इति मनुः (३। ८२) । जलम् (६४८); 'पयः पूर्वाः स्वनिश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते'—इति रघी (१। ६७) । २७४

**परः** पुं. [पृ + अच्] शत्रुः; अरिः; 'इतः परानर्भकहार्य-शस्त्रान्, वैदर्भि ! पश्यानुमता मयासि'—इति रघी (६। ६७) । ब्रह्मणः आयुः; 'त्रीणि कल्पशतानि स्युस्त-था पष्टिद्विजोत्तमाः । ब्रह्मणः कथितं वर्षं पराख्यं तच्च तत्पदम्'—इति कौर्म ५ अध्यायः । 'कालसंख्यां समा-सेन पूर्वार्द्धद्वयकल्पिताम् । स एव स्यात्परः कालस्तदन्ते परिपूज्यते । 'निजेन तस्य मानेन चायुर्वर्षशतं स्मृतम् । तत्पराख्यं तदद्धं च परार्द्धमभिधीयते'—इति कौर्म ५ अध्याये । शिवः; 'कपिशः कपिलः शुक्लः आयुश्चैव परोऽपरः'—इति महाभारते (१३। १७। १७) । ४५५

**परः** त्रि.—अन्यः; 'परान्नं च परस्वं च परशय्या परस्त्रियः । परवेशमनि वासश्च शक्रादपि हरेच्छ्रियम्'—इति गरुड-पुराणे । श्रेष्ठः (६८९); 'न पार्वत्याः परा साध्वी न गणेशात् परो वंशी । न च विद्यासमो बन्धुर्नास्ति कश्चिद् गुरोः परः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । क्ली. [पृ + 'ऋदोरप्' इति अप्] केवलं; मोक्षः; 'कैवल्यममृतं परम्'—इति मुक्तिपर्याये रत्नावली । ब्रह्म; ब्रह्मा; 'द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परञ्चापरमेव च'—इति श्रुती । विष्णुः; 'प्रभूतस्त्रिककुब्जाम पवित्रं मङ्गलं परम्'—इति महाभारते (१३। १४९। २०) । ब्रह्मणः आयुः; 'एवं तु ब्रह्मणो वर्षमेकं वर्षशतं तु तत् । शतं हि तस्य वर्षाणां परमित्यभिधीयते'—इति मार्कण्डेये (४६। ४२) ।

परम्, अव्य. नियोगः; क्षेपः; त्रि. अरिः; दूरः; उत्तरः; न्यायमते द्रव्यगुणकर्मवृत्तिसत्ता; 'सामान्यं द्विविधं प्रोक्तं परं चापरमेव च । द्रव्यादित्रिकवृत्तिस्तु सत्ता परतयोच्यते । परभिन्ना तु या जातिः सैवापरतयोच्यते । द्रव्यत्वादिकजातिस्तु परापरतयोच्यते । व्यापकत्वात् परापि स्यात् व्याप्यत्वादपरापि च'—इति भाषापरिच्छेदे । ६६७

परच्छन्दः त्रि. [ परस्य छन्दो यत्र ] पराधीनः; अन्यायत्तः; अस्वतन्त्रः; परतन्त्रः । ३४१

परजातः त्रि. [ परेण जातः । परपुष्टत्वात्तथात्वम् ] परैर्धितः; औदासीन्येन परपुष्टः; परस्माज्जातः; अन्येनोत्पन्नः; पुं. कोकिलः (एष हि काकेन पुष्टो भवतीति प्रसिद्धिः) । ३५१

परतन्त्रः त्रि. [ परस्तन्त्रं प्रधानं यस्य ] पराधीनः; 'परतन्त्रं कथं हेतुमात्मानमनुपश्यसि । कर्मणां हि महाभाग ! सूक्ष्मं ह्येतदतीन्द्रियम्'—इति महाभारते (१३।१।१५) ।

कली. [ परस्य तन्त्रम् ] परकीयशास्त्रं; [ परं श्रेष्ठं तन्त्रमिति ] उत्कृष्टशास्त्रम्; उत्तमपरिच्छेदः । ३४१

परपिण्डादः त्रि. [ परस्य पिण्डम् अन्नादिकम् अतीति । अद् भक्षणे + 'कर्मण्यण्' इति अण् ] परान्नोपजीवी । ३५१

परपुष्टः पुं. [ परेण काकेन पुष्टः पालितः । डिम्बपोषणाक्षमया कोकिलया हि नीडस्यं काकडिम्बमपसार्यं स्वडिम्बे तत्र स्थापिते काक्या निजडिम्बबुद्ध्या तत्परिपालयते इति प्रसिद्धेरस्य तथात्वम् ] कोकिलः; परेण पोषिते त्रि. । २४३

परभागः पुं. [ परस्य श्रेष्ठस्य भागः ] गुणोत्कर्षः; 'आभाति लब्धपरभागतयाधरोष्ठे लीलास्मितं सदसनाचिरिव त्वदीयम्'—इति रघो (५।७०) । सुसम्पत्; उत्तरांशः । ७८६

परमात्मा [ न् ] पुं. [ परमः केवलः आत्मा ] परं ब्रह्म; आपोज्मोतिः; चिदात्मा; 'परमात्मा परं ब्रह्म निर्गुणः प्रकृतेः परः । कारणं कारणानां च श्रीकृष्णो भगवान् स्वयम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । विष्णुः; 'पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः'—इति महाभारते (१३।१४९।१५) । महादेवः; 'प्रीतात्मा परमात्मा च प्रयतात्मा प्रधानवृक्'—इति महाभारते (१३।१७। १३७) । ८४२

परमात्मम् क्ली. [ देवपित्रन्नत्वात् परममुत्कृष्टमन्नम् । परमाणामुत्कृष्टानां देवादीनामन्नमिति वा ] पायसम्; क्षीरिका; क्षैरेयी । ३२०

परमेश्वरः पुं. [ परमश्चासौ ईश्वरश्चेति ] शिवः; 'सहस्रारे महापद्मे त्रिकोणनिलयान्तरे । बिन्दुरूपे महेशानि! परमेश्वर ईरितः'—इति महालिङ्गार्चनतन्त्रे । विष्णुः; 'इदं तु द्वादशं प्रोक्तं पत्रं वै केशवस्य हि । द्वादशारं तथा चक्रं यन्नाभिद्विभुजं तथा । त्रिव्यूहन्त्वेकमूर्तिश्च तथोक्तः परमेश्वरः'—इति वामने ५ अध्यायः । ११

परमेष्ठी [ न् ] पुं. [ परमे व्योम्नि चिदाकाशे ब्रह्मपदे वा तिष्ठतीति । स्या गतिनिवृत्तौ, 'परमे कित्' इति इनि स च कित्, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक्, 'स्थास्थित्युत्थणाम्' इति पत्वम् । परमे स्थाने अनावृत्तिलक्षणे तिष्ठतीति ] ब्रह्मा; 'मन्वन्तराण्यसंख्यानि सर्गः संहार एव च । क्रीडन्नैवैतत् कुरुते परमेष्ठी पुनः पुनः'—इति मनुः (१।८०) । विष्णुः; 'ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५८) । महादेवः; 'क्रियतां दर्शने यत्नो देवस्य परमेष्ठिनः । दर्शनात्तस्य कौन्तेय ! संसिद्धः सर्वमेप्यसि'—इति महाभारते (३।३७।५८) । जिनः; शालग्रामविशेषः; 'परमेष्ठी च शुक्लाभश्चक्रपद्मसमन्वितः । स वर्तुलस्तथा पीतःपृष्ठे च शूपिरं ध्रुवम्' इति पुराणे । गुरुविशेषः; 'आदौ सर्वत्र देवेशि! मन्त्रदः परमो गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठी त्वहं गुरुः'—इति बृहन्नीलतन्त्रे । 'मन्त्रदाता गुरुः प्रोक्तो मन्त्रस्तु परमो गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठी त्वहं गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठिगुरुस्त्वहम्'—इति तन्त्रसारे । अजमीढपुत्रः; 'अजमीढो वरस्तेषां तस्मिन् वंशः प्रतिष्ठितः । पट् पुत्रान् सोऽप्यजनयत् तिसृषु स्त्रीषु भारत । ऋक्षं धूमिन्यथो नीली दुष्यन्तपरमेष्ठिनी'—इति महाभारते (१।८४।३१) । परस्थानस्थिते त्रि. । 'अन्यजन्मनि जातोऽसौ चक्षुपः परमेष्ठिनः । चाक्षुपत्वमतस्तस्य जन्मन्यस्मिन्नपि द्विज ।'—इति मार्कण्डेये (७६।२) । ६

परवशः त्रि. [ परस्य परेषां वा वशः वशीभूतः ] अन्यवशीभूतः; परायत्तः; पराधीनः; परच्छन्दः; परवान्; 'यद्यत्परवशं कर्म तत्तद्यत्नेन वर्जयेत् । यद्यदात्मवशान्तु

स्यात्तत्तत् सेवेत यत्नतः—इति मनुः (४।१५९) ।

३४१

परवान् [त्] त्रि. [परः स्वामी अस्त्यस्य । 'तदस्या-  
स्त्यस्मिन्निति' मतुप्, मस्य व ] पराधीनः; 'भवानपीदं  
परवानवैति महान् हि यत्नस्तव देवदारौ'—इति रघौ  
(२।५६) । ३४१

परशुः पुं. [ परान् शत्रून् शृणाति हिनस्त्यनेनेति । शू  
हिंसायाम्+ 'आङ्परयोः खनिशृभ्यां ङिञ्च' इति कु  
सं च ङित् ] अस्त्रविशेषः; पर्शुः; परश्वधः; पश्वधः;  
स्वधितिः; कुठारः; 'ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्य-  
पुङ्गवम् । आहत्य देवीवाणौघैरपातयत भूतले'—इति  
मार्कण्डेये (८९।१४) । ४७४

परशुधरः पुं. [ धरतीति धरः । धृ+अच् । ततः परशोधरः ]  
गणेशः; (परशुशस्त्रप्रधानत्वादस्य तथात्वम्) परशु-  
रामः; जामदग्न्यः; पर्शुरामः; परशुरामकः; भार्गवः;  
भृगुपतिः; भृगूलपतिः । १८

परश्वधः पुं. [ पर+श्वि+ 'अन्येभ्योऽपीति' ङ, ततः  
परश्वं दधातीति । आतोऽनुपेति' क ] कुठारः; 'धरौ  
शितां रामपरश्वधस्य सम्भावयत्युत्पलपत्रसाराम्'—  
इति रघुवंशे (६।४२) । ४७४

परस्परम् त्रि. [ 'सर्वान्मनो द्वे वाच्ये समासवच्च बहु-  
लम्', 'असमासवद्भावे पूर्वपदस्य सुपः सुर्वक्तव्यः ।'  
कस्कादित्वात् विसर्जनीयस्य सः ] अन्योऽन्यम्; इतरे-  
तरम्; 'वनानि तोयानि च नेत्रकल्पैः पुष्पैः सरोजैश्च  
निलीनभृङ्गैः । परस्परं विस्मयवन्ति लक्ष्मीं आलोकयां-  
चकुरिवादरेण'—इति भट्टिः (२।५) । ७२०

परस्वधः पुं. [ परश्वध+निपातनात् सत्वम् ] परश्वधः;  
कुठारः । ४७४

परस्वहरणम् क्ली. [ परस्य अन्यस्य स्वं धनं, तस्य  
हरणम् ] अभिहारः; परवित्ताहरणम् । ८४३

पराक्रमः पुं. [ पराक्रम्यतेऽनेन । परा+क्रम्+ 'हलश्च'  
इति घञ् ] 'नोदात्तोपदेशस्य' इति न वृद्धिः ] विक्रमः;  
द्रविणः; तरः; सहः; बलः; शीघ्रः; स्वामः; शुष्मः;  
शक्तिः; प्राणः; महः; शूष्मः; सामर्थ्यम्; 'पराक्रमं च  
युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान्'—इति देवीमाहात्म्ये  
(२।१३) । विक्रमः; 'यस्य मित्रगुणान् मित्राण्य-  
मित्राश्च पराक्रमम् । कथयन्ति सदा सत्सु पुत्रवांस्तेन

चै पिता'—इति मार्कण्डेये (२०।२५) । उद्योगः;  
निष्क्रान्तिः; विष्णुः; 'बीषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मः  
पराक्रमः'—इति महाभारते (१३।१४९।४४) । ७२३

परागः पुं. [ परागच्छतीति । परा+गम्+अन्येभ्योऽपीति  
ङ ] पुष्पधूलिः; सुमनोरजः; कौसुमरेणुः; पुष्परेणुः;  
'लिप्तं न मुखं नाङ्गं न पक्षती न चरणाः परागेणे । अस्पृ-  
शतेव नलिन्या विदग्धमधुपेन मधु पीतम्'—इति आर्या-  
सप्तशती (५०६) । धूलिः (८०९); 'प्रतापोऽत्रे  
ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम् । ययौ पश्चाद्द्रघादीति  
चतुस्कन्धेव सा चमूः'—इति रघुवंशे (४।३०) ।  
स्थानीयद्रव्यं; गिरिप्रभेदः; विख्यातिः; उपरागः;  
चन्दनं; स्वच्छन्दगमनम् । १८८

पराङ्मुखः त्रि. [ पराक् प्रतिलोमगामि मुखं यस्य ]  
विमुखः; पराचीनः; 'स्वधर्मा विजयस्तस्य नाहवे स्यात्  
पराङ्मुखः'—इति मनुः (१०।११९) । तन्त्रोक्त-  
मन्त्रविशेषे पुं. । 'कामवीजं मुखे माया शिरस्यङ्कुशमेव  
च । असौ पराङ्मुखः प्रोक्तो मध्ये तु विन्दुलाञ्छितः'  
—इति तन्त्रसारे । ७५७

पराचीनः त्रि. [ पराञ्चति अनभिमुखीभवतीति ।  
परा+अञ्चु+ 'ऋत्विग्दधृक्' इति क्विन्, ततः स्वार्थे  
'विभापाञ्चैरदिक् स्त्रियाम्' इति ख ] पराङ्मुखः;  
विमुखः; विपरीतः; अपाचीनः; 'ज्ञानमेकं पराची-  
नैरिन्द्रियैर्ब्रह्म निगुणम् । अवभात्यश्रुत्वेण भ्रान्त्या  
शब्दादिधर्मिणा'—इति भागवते (३।३।२८) । ७५७

पराधीनः त्रि. [ परस्य परेषां वा अधीनः ] परवशः;  
परतन्त्रः; परवान्; नाथवान्; 'स्वाधीनवृत्तेः साफल्यं  
न पराधीनवृत्तित्ता । ये पराधीनकर्माणो जीवन्तोऽपि  
च ते मृताः'—इति गरुडपुराणे ११३ अध्याये । ३४१

परान्नः त्रि. [ परान्नं नित्यमस्त्यस्य । 'अर्श आदिभ्योऽञ्'  
इति अच् ] परान्नोपजीवी; परपिण्डादः; परान्नभोजी;  
परजातः; परधितः; क्ली. [ परस्य अन्नम् ] अन्य-  
स्वामिकभक्तपिष्टकादि; परकर्तृकसस्यपाकजद्रव्य-  
मात्रं; परस्पृष्टान्नम्; 'परान्नं परवासश्च नित्यं धर्म-  
रतस्त्यजेत्'—इति स्मृतिः । 'कांस्यं मांसं मसूरं च चणकं  
कोरदूपकम् । शाकं मधु परान्नं च त्यजेदुपवसन् स्त्रियम् ।'  
'जिह्वा दग्धा परान्नेन करी दग्धी प्रतिग्रहात् । मनो दग्धं  
परस्त्रीभिः कथं सिद्धिर्वरानने !'—इति तन्त्रे । 'गुर्वधं

मातुलान्नं वा श्वशुरान्नं तथैव च । पितुः पुत्रस्य चैवान्नं  
न परान्नमिति स्मृतिः—इत्येकादशीतत्त्वम् । ३५१

परामभवः पुं. [ परामभूयते इति, परामभवनमित्यर्थः । परा+  
भू+भावे अप् ] तिरस्कारः; न्यक्कारः; तिरस्क्रिया;  
परिभावः; विप्रकारः; परिभवः; अभिमत्रः; अत्या-  
कारः; निकारः; विनाशः । ७०४

परायणम् त्रि. [ परं केवलम् अयनम् आसक्तिस्थानम् ]  
तत्परम्; अभीष्टं; नित्यप्रतिष्ठा; शाश्वतप्रतिष्ठा;  
'पादच्छायासुखं भर्तुस्तादृशस्य महात्मनः । स हि नाथो  
जनस्यास्य स गतिः स परायणम्'—इति रामायणे  
(२।४८।१७) । आसङ्गवचनं; यथा-धर्मपरायणो  
धर्मासक्तः । आश्रयः; 'वर्तयंश्च शिलोच्छाम्यामग्नि-  
होत्रपरायणः'—इति मनुः (४।१०) । ३५२

परायत्तम् त्रि. [ परस्य परेषां वा आयत्तम् ] पराधीनं;  
परवशं; परच्छन्दः । 'तत्रायत्तवशाधीनच्छन्दवन्तः  
परात् परे'—इति हेमचन्द्रः । ३४१

पराद्धंघः त्रि. [ पराद्धं पराद्धंसंख्यावत् प्रधानत्वम् अर्ह-  
तीति । पराद्धं+यत् । यद्वा परस्मिद्धं भवः, 'परावरा-  
धमोत्तमपूर्वाच्च' इति यत् ] प्रधानम्; श्रेष्ठः; 'ताम्यस्त-  
याविधान् स्वप्नान् श्रुत्वा प्रीतो हि शल्यिवः । मेने परा-  
द्धर्ममात्मानं गुह्येन जगद्गुरोः'—इति रघौ (१०।  
६४) । ६९०

परासुः त्रि. [ परागताः प्रस्थिता असवः प्राणाः यत्य ]  
मृतः; 'तो दम्पती बहु विलय्य शिशोः प्रहर्त्रां शल्यं निखात-  
मुदहारयतामुरस्तः । सोऽभूत् परासुरस्य भूमिर्पाति शशाप  
हस्तापितैर्नयनवारिभिरेव वृद्धः'—इति रघौ (९।७८) ।  
'वाताष्ठीला तु हृदये यस्योर्ध्वं मनुयायिनी । रुजाश्विद्वेष-  
करी स परासुरसंशयम्'—इति सुश्रुतः । ६२९

परास्कन्दी [ न् ] पुं. [ परान् आस्कन्दितुं शीलमस्य ।  
परा+आ+स्कन्द+णिति ] चीरः । ३३८

परिकरः पुं. [ परिकीर्यते इति, कृ विक्षेपे+ 'ऋदोरप्'  
इति अप् । यद्वा परिक्रियतेऽनेनेति, पुंसीति घ ] परिवारः;  
पर्यङ्कः (४१०); समारम्भः; वृन्दः; प्रगाढगात्रिका-  
वन्धः; 'गाढं परिकरं बद्ध्वां शुल्कमादाय चाधिकम् ।  
स्कन्धे भर्तारमादाय जगाम मृदुगामिनी'—इति मार्क-  
ण्डेये (१६।२५) । विवेकः; सहकारी; 'परिकरः  
सहकारी स च व्याप्तिपक्षधर्मत्वादिः ।' अलङ्कार-

विशेषः; 'उक्तिविशेषणैः साभिप्रायैः परिकरो मतः—  
इति साहित्यदर्पणे (१०।७५) । ३०६

परिकूटम् क्ली. [ परि सर्वतो भूषितं कूटम् ] पुरद्वारकूटकं;  
हस्तिनखः; नगरद्वारकूटकम् । २८८

परिक्रमः पुं. [ परिक्रमणम्, क्रमु पादविक्षेपे+भावे  
घञ्, 'नोदात्तोपदेशस्येति' उपधाया न वृद्धिः ]  
क्रीडार्यं पद्भ्यां गमनम्; विहारः; प्रदक्षिणम्; 'शृणु  
भद्रे ! महापुण्यं पृथिव्यां सर्वतोदिशम् । परिक्रम्य यथा-  
ध्वानं प्रमाणगणितं शुभम् । भूत्वा परिक्रमे सम्यक्  
प्रमाणं योजनानि च'—इति वाराहपुराणे । ७२६

परिक्षिप्तम् त्रि. [ परितः क्षिप्यते स्म इति । क्षिप्+  
क्त ] परिक्षादिना वेष्टितं; निवृत्तम्; सर्वतोभावेन  
क्षेपयुक्तश्च । ७१२

परिखा स्त्री. [ परितः खाता इति । परि+खन्+ 'अन्धेष्य-  
पीति' ङ ] राजधान्यादिवेटनखातं; खेयम्; 'भिन्धा-  
च्चैव तडागानि प्राकारपरिखास्तथा । समवस्कन्दयेच्चैनं  
रात्री वित्रासयेत्तथा'—इति मनुः (७।१९६) । 'प्रस्ये  
च परिखामानं शतहस्तं प्रशस्तकम् । परितः शिविराणां  
च गम्भीरं दशहस्तकम् । सङ्केतपूर्वकं चैव परिखोद्धार-  
मीप्सितम् । शत्रोरगम्यं मित्रस्य गम्यमेव सुखेन च'—  
इति ब्रह्मवेवर्ते । ६७६

परिग्रहः पुं. [ परिग्रहणमिति । परि+ग्रह्+ 'ग्रहवृद्ध-  
निश्चिगमश्च' इति अप् ] परिवारः; प्रतिग्रहः; 'कण्ठा-  
श्लेषपरिग्रहे शिथिलता यन्नादराच्चुम्बसे, तत्ते मूर्तं ।  
हृदि स्थिता प्रियतमा काचिन् ममेवापरा'—इति पञ्च  
तन्त्रे (४।७) । सैन्यपश्चाद्भागः; पत्नी; मायी;  
'समनुकम्प्य सपत्नपरिग्रहाननलकानलकानवमां पुरीम्'  
—इति रघौ (९।१४) । परिजनः; आदानम्; 'अनु-  
भवन्नवदोलमृतत्सवं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया । अनय-  
दासनरञ्जपरिग्रहे भुजलतां जलतामबलाजनः'—इति  
रघौ (९।४६) । स्वीकारः; 'लोके न भावी पितुरेव  
तुल्यः सम्भावितो मौलिपरिग्रहात् सः'—इति रघौ  
(१८।३८) । मूलः; कन्दः; शापः; शपथः; राहु-  
वक्त्रस्थभास्करः; पुत्रदारादिभर्तव्यपरिमाणम्; 'प्रकल्पघ  
तस्य तैर्वृत्तः स्वकुटुम्बाद् यथाहंतः । शक्तिं चावेक्ष्य  
दाक्ष्यं च भूतानां च परिग्रहम्'—इति मनुः (१०।  
१२४) । परिगृह्यतेऽनेनेति विग्रहे हस्तः; विष्णुः; 'ऋतुः

सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः—इति महाभारते (१३।१४।५८) । [शरणार्थिभिः परितो गृह्यते सर्वगतत्वात् परितो ज्ञायत इति वा । पुष्पादिभिर्भक्तैरर्चितं परिगृह्णाति इति वा परिग्रहः]; साधनम्; 'अजिमदण्डभृतं कुशमेखलां यतगिरं मृगशृङ्गपरिग्रहम्'—इति रघो (१।२१) । ३०६

परिचयः पुं. [ परिहन्त्यतेऽनेनेति । परि+हन्+परौ घः इति अप्, धादेशश्च ] लोहबद्धलगुडः; लोहमयलगुडः; लोहमुखलगुडः; परिघातनः; परिघातकः; अर्गलः (३००); 'बाहूनामुत्तमाङ्गानां कार्मुकाणां च भारत ! गदानां परिघाणां च हस्तानाम्चोहभिः सह'—इति महाभारते (६।६७।२४) । परिघातः; परितो हननं; मुद्गरः; शूलः; कलसः; काचघटः; गोपुरं; सप्त; कार्तिकेयानुचरविशेषः; 'परिघं च वटं चैव भीमं च सुमहाबलम् । दहति दहनं चैव प्रचण्डी वीर्यसम्मतौ । अंशोऽप्यनुचरान् पञ्च ददौ स्कन्दाय धीमते'—इति महाभारते (१।४५।३३) । चण्डालविशेषः; 'लम्बकर्णो महावक्रो मलिनो घोरदर्शनः । परिघो नाम चण्डालः शस्त्रपाणिरदृश्यत'—इति महाभारते (१२।१३।११४) । विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गत ऊनविंशतियोगः; 'वज्रोऽसृक् च व्यतीपातो वरीयान् परिघस्तथा'—इति ज्योतिषे । 'परिघस्य त्यजेदूर्ध्वं शुभकर्म ततः परम्' । अस्य अर्द्धांशं परित्यज्य शुभकर्म कुर्यात् । 'उत्पत्तिकाले परिघो यदि स्यात् नरस्तदा वंशकुठारकल्पः । असत्यसाक्षी क्षमया विहीनः स्वल्पानुभोक्ता विजितारिपक्षः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ४७५

परिघातनः पुं. [ परितो घातनं यस्मात् ] परिघास्त्रम्; सर्वतोभावेन हनने क्ली. । ४७५

परिचयः पुं. [ परिं समन्ताच्च चयनं वीधो ज्ञानमित्यर्थः । परि+चि+अप् ] विशेषेण ज्ञानं; संस्तवः; प्रणयः; 'न परिचयो मलिनात्मनां प्रसाधनम्'—इति माघे (७।६१) । अम्यासः; हेतुः परिचयस्वैर्ये वक्तुर्गुणनिकैव सा'—इति माघे (२।७५) । नादस्य अवस्था-विशेषः; 'आरम्भश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च । निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम्'—इति हठयोगदीपिकायाम् (४।६९) । ७७३

परिचर्या स्त्री. [ परिचर्यते परिचरणमित्यर्थः । परि+

चर्+परिचर्यापरिसर्येति ] शो यक् च निपात्यते ] सेवा; वरिवस्या; शुश्रूषा; उपासनं; परिसर्या; उपासना; उपास्तिः; शुश्रूषणा; 'अथवा वार्द्धके प्राप्ते परिचर्या करिष्यति । पुत्रः परमधर्मिष्ठः पुण्यार्थं कलविद्धयोः'—इति देवीभागवते (१।४।११) । १२९

परिच्छदः पुं. [ परिच्छाद्यतेऽनेनेति । परि+छद्+णिच्+पुंसि संज्ञायाम् इति घः; 'छादेर्षेऽद्वयुपसर्गस्य' इति उपवाहस्वः ] परिवारः; 'सहधर्मचारिणी मम परिच्छदः सुतनु नेह सन्देहः । न तु सुखयति तुहिनदिनच्छन्न-छायेव सज्जन्ती'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६७३) । मात्रा (७९६); हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलाद्युपकरणम्; 'परिच्छदे नृपार्होऽर्थे परिवर्होऽव्ययाः परे ।' 'सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनम् । शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्माँवी धनुषि चातता'—इति रघुवंशे (१।१९) । आच्छादनम्; 'पयःफेननिभाः शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः'—इति भागवते । ३०६

परिच्छन्दः पुं. [ परिच्छन्द्यतेऽनेने । परि+छदि संवरणे+घञ् ] परिच्छदः । ३०६

परिणतः त्रि. [ परिणमति स्म । परि+नम्+क्त ] तिर्यग्घातिगजः; 'सततमसुमतामगम्यरूपाः परिणतदिवकरिकास्तटीविर्भाति'—इति माघे (४।२९) । पक्वं (८२५); सर्वतोभावेन नतं च । २२०

परिणयनम् पुं. [ परि+नी+अप्+त्युट् ] परिणयः; विवाहः; उद्वाहः । ४९५

परिणाहः पुं. [ परिणह्यतेऽनेने इति । परि+नह्+घञ् ] विस्तारः; विशालता; 'अरत्नीनां सहस्रं च शतानि दश पञ्च च । परिणाहस्तु वृक्षस्य फलानां रसभेदिनाम्'—इति महाभारते (६।७।२२) । ७८६

परितः [ स् ] अव्य. [ परि+पर्यभिम्याञ्च इति तसिल् ] सर्वतः; चतुर्दिगभिव्याप्तौ; 'पुरोपकण्ठोपवनाश्रयाणां कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ । प्रध्मातशङ्खे परितो दिग्गन्तांस्तूर्यस्वने मूर्च्छति मङ्गलार्थे'—इति रघुवंशे (६।९) । ८७४

परितापः पुं. [ परि सर्वतोभावेन तप्यतेऽनेने । परि+तप्+घञ् ] दुःखम्; 'स तु जनपरितापं तत्कृतं जानता ते, नरहर उपनीतः पञ्चतां पञ्चविंशः'—इति भागवते (७।८।५४) । नरकान्तरं; शोकः; 'एतया तपयया बुद्ध्या संस्तम्या-

त्मानमात्मना । व्याहृतेऽप्यभिषेके मे परित्तापो न विद्यते'  
—इति रामायणे ( २।२२।२५ ) । ६०१

परिदेवनम् क्ली. [ परि+दिव्+त्युट् ] शोकनिमित्तो  
विलापः; विलापः; परिदेवना; 'परिदेवनं च पाञ्च-  
ल्या वासुदेवस्य सन्निधौ । आश्वासनं च कृष्णस्य दुःखा-  
र्त्तायाः प्रकीर्तितम्'—इति महाभारते ( १।२।१४६ ) ।  
अनुशोचनोक्तिः । ६३९

परिधानम् क्ली. [ परिधीयते यत् । परि+धा+कर्मणि  
ल्युट् ] परिधेयवस्त्रम्; अन्तरीयम्; उपसंव्यानम्;  
अधोऽशुकम्; 'वरं वनं व्याघ्रगजादिसेवितं जलेन हीनं  
बहुकण्ठकावृतम् । तृणानि शय्या परिधानवल्कलं  
न बन्धुमध्ये धनहीन जीवनम्'—इति पञ्चतन्त्रे  
( ५।२२ ) । ५४६

परिधानांशुकप्रस्थिः [ परिधानांशुकस्य परिधेयवस्त्रस्य  
प्रस्थिः बन्धनप्रान्तः ] उच्चयः; नीवी । ४५७

परिधिः पुं. [ परिधीयतेऽनेन । परि+धा+उपसर्गे  
घोः किः' इति कि ] परिवेशः; चन्द्रसूर्यसमीप-  
मण्डलम्; 'अनृणत्वमुपेयिवान् बभौ परिधेमुक्त इवोष्ण-  
दीधितिः'—इति रघौ ( ८।३० ) । ( ८०७ ) यज्ञिय-  
तरुशाखा; यज्ञियतरोः पलाशादयर्ज्ञपशुबन्धनार्थं या  
शाखा निखायते तस्याम्; 'खादिरं पालाशं वैकविंशति-  
दाशकमिध्वं करोति त्रयः परिधयः पालाशकाष्ठकाः  
खादिरोदुम्बरविल्वरोहितकविकङ्कतानां ये वा यज्ञिया  
वृक्षाः आद्राः शुष्करसत्वृकाः'—इति आपस्तम्बः ।  
भूगोलदेवैष्टनम्; 'व्यासेमनन्दाग्निहृते विभक्ते खवाण-  
सूपैः परिधिस्तु सूक्ष्मः'—इति लीलावती । क्ली.  
[ परिधीयते यदिति । परि+धा+कर्मणि कि ] परिधेय-  
वस्त्रम्; 'मेवश्यामः कनकपरिधिः कर्णविद्योतविद्युन्मूर्द्धं नि  
भ्राजद्विलुलितकचः स्रग्धरो रक्तनेत्रः'—इति भागवते  
( ८।७।१७ ) । 'कनकं सुवर्णमिव पीतं परिधिः वस्त्रं  
यस्य'—इति तट्टीकायां श्रीधरः । ४१

परिपणम् क्ली. [ परिपण्यते व्यवह्रियतेऽनेन । परि+  
पण्+पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ ] मूलघनं; 'पूजी'  
इति भाषा । ८०७

परिपन्थी [ न् ] त्रि. [ परि सर्वतोभावेन दोषाख्यानं  
पन्थयितुं शीलमस्य । परि+पन्थ+णिनि ] शत्रुः; रिपुः;  
वेरो; अरिः; 'इन्द्रियस्तेन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।

तयोर्न वशयागच्छेत्ती ह्यस्य परिपन्थिनी'—इति भग-  
वद्गीतायाम् ( ३।३४ ) । प्रतिकूलाचारी; 'अपराधिनि  
चेत् क्रोधः क्रोधे क्रोधः कथं नहि । धर्मार्थकाममोक्षाणां  
चतुर्णां परिपन्थिनि ।' ४५५

परिपाटिः स्त्री. [ परिपाटनम् । परि+पट्+स्वार्थ  
णिच्+अच् इः' । यद्वा परिभागेभागेन पाटिः पाटनं  
गतिर्यस्याम् ] आनुपूर्वी; आवृत्; अनुक्रमः; पर्यायः;  
आनुपूर्वं; परिपाटी; क्रमः; आनुपूर्वकम् । ७३९

परिपाटी स्त्री. [ परिपाटि+डीप् ] क्रमः; आनुपूर्वी;  
परिपाटिः । ७३९

परिपूर्णता स्त्री. [ परिपूर्णस्य भावः । परिपूर्णं+तस्य भाव-  
स्त्वतलौ' इति तल्, ततः 'त्वान्तं क्लीवन्तलन्तं स्त्रियाम्'  
अतः स्त्रियां टाप् ] परिपूर्णत्वं; सम्पूर्णता; आभोगः ।  
७५५

परिप्लवम् त्रि. [ परिप्लवते इति, प्लु+अच् ] चञ्चलम्;  
'मत्कुणाविव पुरा परिप्लवी सिन्धुनाथशयने निषेदुयः ।  
गच्छतः स्म मधुकैटभौ विभोः यस्य नैन्द्रसुखविघ्नतां  
क्षणम्'—इति माघे ( १४।६८ ) । पुं. राज्ञः सुखीनलस्य  
पुत्रः; 'सुनीयस्तस्य भविता नृचक्षुर्यत्सुखीनलः । परि-  
प्लवः सुतस्तस्मान्मेधावी सुनयात्मजः'—इति भागवते  
( ९।२२।४२ ) । ६९५

परिवहंः पुं. [ परिवहंतेऽनेन । वहं प्राधान्ये+घञ् ] परि-  
च्छदः; हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलादिः; नृपाहोर्ष्यः; राज-  
योग्यद्रव्यं. सितच्छत्रादिः; निवेश्य गङ्गामनु तां महा-  
नदीं चमूं विधानैः परिवहंशोभिनीम् । उवास. रामस्य  
तदा महात्मनो विचिन्त्यमानो भरतो निवर्तनम्—  
इति रामायणे ( २।८३। २६ ) । ३०६

परिभवः पुं. [ परि+भू+अप् ] अनादरः; तिरस्कारः;  
अपमानम्; 'फलमस्योपहासस्य सद्यः प्राप्स्यसि पश्य  
माम् । मृग्याः परिभवो व्याघ्रघामित्यवेहि त्वया कृतम्'—  
इति रघौ ( १२।३७ ) । ७०४

परिभावः पुं. [ परि+भू+परी भुवोऽवज्ञाने' इति घञ् ]  
परिभवः; अनादरः । ७०४

परिमलः पुं. [ परिमलते सुगन्धिपार्थिवकणान् धरतीति ।  
मल् धारणे+अच् । 'क्षितावेव गन्धः' इति न्यायादस्यं  
तथात्वम् ] आमोदः; गन्धः; सौरभ्यं; सौरभं; सुर-  
भिमाल्यगन्धादिधारणेनोत्पन्नो हृद्यो गन्धः; 'रति-

लुलितललितललनावलमजललववाहिनी मुहुयंत्र ।  
 श्लथकेशकुमुमपरिमलवासितदेहा वहन्त्यनिलाः—  
 इति कलाविलासे (१५) । विमर्दोत्थजनमनोहरगन्धः ;  
 सुरतादिविमर्दोत्थविलेपनकुङ्कुमादिगन्धः ; विमर्दनं  
 (७६९) ; कुङ्कुमादिमर्दनं ; पण्डितसमूहः । ७७

परिमाणम् क्ली. [ परिमीयतेऽनेन । परि+मा+करणे  
 ल्युट् ] परिमितिव्यवहारासाधारणकारणं ; 'माप' इति भाषा ।  
 ८०१

परिमोषी [ न् ] त्रि. [ परिमुष्णातीति, परि+मुष्+  
 णिनि ] परिमोषणशीलः ; चौरः ; चौरः । ३३८

परिरम्भणम् क्ली. [ परिरम्यते इति, परि+रभि+ल्युट्,  
 'रभेरशब्लितोः' इति नुम् ] परिरम्भः ; परीरम्भः ;  
 आलिङ्गनं, क्रीडीकरणम् । ५६८

परिवर्तः पुं. [ परिवर्तनमिति, परि+वृत्+भावे घञ् ]  
 युगान्तः ; (८०१) हायनः ; वर्षः । विनिमयः ; परि-  
 वर्तनं ; परिवर्तनं ; नैमेयः ; व्यतिहारः ; परावर्तः ;  
 वैमेयः ; विमयः ; 'हृष्यन्तृत्तुमुखं दृष्ट्वा नवं नवमि-  
 वागतम् । ऋतूनां परिवर्तनं प्राणिनां प्राणसंक्षयः'  
 —इति रामायणे (२।१०५।२५) । कूर्मराजः ; अप-  
 वर्तनं ; ग्रन्थविच्छेदः ; मृत्युपुत्रस्य दुःसहस्यरीसेन कलि-  
 कन्यानिर्माषिष्ठगर्भजाताष्टपुत्रान्तर्गततृतीयपुत्रः । 'अष्टौ  
 कुमाराः कन्याश्च तथाष्टावतिभीषणाः । दन्ताकृष्टिस्त-  
 थोक्तिश्च परिवर्तस्तयापरः'—इति मार्कण्डेये (५१२) ।

११७

परिवर्हः पुं. [ परिवर्हतेऽनेन । वर्हं प्राधान्ये+घञ् ]  
 परिच्छदः ; परिवर्हः ; हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलादि ; नृपा-  
 हींस्यः ; 'जयोभ्यद्रव्यं सितच्छत्रादि ; 'निवेश्य गङ्गा-  
 मनु तां मानदीं चमूं विधानं परिवर्हंशोभिनीम्—'  
 इति रामायणे (२।१८३।२६) । ३०६

परिवादः पुं. [ परि सर्वतो दोषोल्लेखेन वादः कथनम् ।  
 परि+वद्+भावे घञ् ] अपवादः ; 'नीचसंसर्गनिरताः  
 परवितापहारकाः । परनिन्दापरद्रोहपरिवादपराः  
 दलाः'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१४२) । [ परि+  
 वद्+णिच्+करणे घञ् ] वीणावादनवस्तु । १४८

परिवारः पुं. [ परित्रियतेऽनेन । परि+वृ+करणे घञ् ]  
 परिजनः ; 'मनुष्यवाह्यं चतुरस्रयानमध्यास्य कन्या  
 परिवारशोभि । दिशेश मञ्चान्तरराजमार्गं प्रतिवरा

वलृप्तविवाहवेषा—इति रथी (६।१०) । खङ्गकोशः ;  
 खङ्गकोपः ; परिच्छदः । (जगङ्गो जङ्गमविशेषः परि-  
 जन इत्यर्थः ; खङ्गकोपोऽसिवाचकः ; परिच्छदः शोभा-  
 जनकमुपकरणं छत्रचामरादिः सम्यजनादिश्च ।  
 एषु परिवारः ।) ३०६

परिवाहः पुं. [ पर्व ह्यते तृणादिकं येन । परि+वह्+घञ् ]  
 परीवाहः ; जलोच्छ्वासः ; 'स विवेश पुरीं तथा विना  
 क्षणदापायशशाङ्कदर्शनः । परिवाहमिवावलीकयन्  
 स्वशुचः पीरवधूमखाश्रुषु'—इति रथी (८।७४) । ६७७

परिवृढः त्रि. [ परि सर्वतोभावेन वृंहति वर्द्धते इति ।  
 वृहि वृद्धी+कर्त्तरि क्त । निपातनात् हकारलोपो निष्ठात-  
 स्य ढत्वञ्च ] अविपः ; प्रभुः ; 'जगत्परिवृढः प्रौढप्री-  
 तिस्तं स फलायिनम् । कृत्वा प्रादुर्भूतवपुस्ततो भूयोऽप्य-  
 भाषत'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।२८२) । ३०६

परिवृत्तः त्रि. [ परि सर्वतोभावेन वृत्तः ] आवृत्तः ; वेष्टितः ;  
 'व्यवहारान् नृपः पश्येत् सम्यैः परिवृत्तोऽन्वहम् ।'  
 इति मिताक्षरा । ७१२

परिवृत्तिः पुं. [ परि+वृत्+भावे क्तिन् ] परिवर्तनं ;  
 विनिमयः ; वैमेयः ; 'तस्य कालपरीमाणमकरोत् स पिता-  
 महः । भूतेषु परिवृत्तिञ्च पुनरावृत्तिमेव च'—इति महा-  
 भारते (१।४।१८।२९) । अर्थालङ्कारविशेषः ; 'परि-  
 वृत्तिर्विनिमयः समन्यूनाधिकैर्भवेत्'—इति साहित्य-  
 दर्पणे । [ परिवर्जने वर्तते इति । परि+वृत्+क्तिच् ]  
 परिवृत्तिः ; परवेत्तृज्येष्ठः ; कृतविवाहस्यानूढज्येष्ठ-  
 भ्राता ; 'दाराग्निहोत्रसंयोगं कुर्वते योऽग्रजे स्थिते ।  
 परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवृत्तिस्तु पूर्वजः'—इति मनुः  
 (३।१७१) । ५७३

परिवेशः पुं. [ परितो विश्यतेऽनेन । परि+विश्+घञ् ]  
 परिधिः ; परिवेषः ; 'वातेन मण्डलीभूताः सूर्याचन्द्रमसोः  
 कराः । मालाभा व्योम्नि तनुते परिवेशः प्रकीर्तितः'  
 इति भरतधृतसाहसाङ्कः । वेष्टनम् । ४७

परिवेषः पुं. [ परितो विव्यते व्याप्यतेऽनेन । विप्  
 व्यापने+घञ् ] परिधिः ; 'सम्मूर्च्छता रवीन्द्रोः किरणाः  
 पवनेन मण्डलीभूताः । नानावर्णाकृतयस्तन्वभ्रे व्योम्नि  
 परिवेषाः । ते रक्तनीलपाण्डुरकापोताभ्रामशबलहरि-  
 शुक्लाः । इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसनेशपितामहाग्निकृताः'  
 —इति बृहत्संहितायाम् । परिवृत्तिः ; परिवेषणम् । ४७

परिव्रज्या स्त्री. [ परि+व्रज्+भावे क्यप्+स्त्रियां टाप् ]  
तपस्या; इतस्ततो भ्रमणम्; । 'वासांसि मृतचेलानि  
भिन्नभाण्डेषु भोजनम् । काष्णयिसमलङ्कारः परिव्रज्या  
च नित्यशः'—इति मनुः (१०।५२) । 'लौहवल्यादि  
चालङ्करणं सर्वदा च भ्रमणशीलत्वम्'—इति तट्टी-  
कायां कुल्लूकभट्टः । ७७६

परिव्राजकः पुं. [ परिव्राज+स्वार्थे कन् । परिव्रजतीति,  
परि+व्रज्+ण्वल् वा ] परिव्राद्; परिव्राजः; तप-  
स्वी; 'स परिव्राजकश्छाया महाकायशिरोधरः । प्रति-  
पेदे स्वकं रूपं रावणो राक्षसाधिपः'—इति रामायणे  
(३।५५।२) । ४०९

परिषत् [ द् ] स्त्री. [ परितः सीदन्त्यस्याम् । परि+सद्+  
अधिकरणे क्विप् । 'सदिरप्रतेः' इति षत्वम् ] सभा;  
'यादृशी परिषत् सीते ! दूतश्चायं तथाविधः । ध्रुवमद्यैव  
राजा मां यौवराज्येऽभिषेक्षयति'—इति रामायणे  
(२।१३।१६) । ७४५

परिष्कन्धः त्रि. [ परिष्कन्दतीति, परि+स्कन्दिर् गति-  
शोषणयोः+पचाद्यच् । 'परेश्च' इति षत्वम् ] परि-  
स्कन्दः; परपुष्टः । ३६९

परिष्कारः पुं. [ परिष्क्रियतेऽनेन । परि+कृ+सम्परि-  
म्यां करोती भूषणे' इति सुट्, 'परिनिवीति' षत्वम् ]  
अलङ्कारः; संस्कारः; शुद्धिः । ५४०

परिष्कृतः त्रि. [ परिष्क्रियते स्म इति । परि+कृ+क्त,  
'सम्परिम्यामिति' सुट्, 'परिनिवीति' इति षत्वञ्च ]  
आहितसंस्कारः; यथा—परिष्कृतभूमिः ; भूषितः;  
अलङ्कृतः; वेष्टितः । ४१५

परिष्ठोमः पुं. [ परितः स्तूयते नानावर्णवत्त्वादिति ।  
स्तु+मन् । ततः षत्वम् । 'परेः स्तीति प्रति अनुपसर्गत्वात्  
न षः' इति वा ] परिस्तोमः; आस्तरणं; प्रवेणी । ३०८

परिष्वङ्गः पुं. [ परिष्वञ्जनम् । परि+स्वञ्ज्+घञ् ।  
'परिनिवीति' षत्वम् ] आलिङ्गनं; क्रोडीकरणं;  
परिरम्भः; परीरम्भः; 'अङ्गदप्रमुखानां च हरीणां  
रामदर्शनम् । हनूमतः परिष्वङ्गो राघवेण महात्मना'  
—इति रामायणे (१।४।८८) । ५६८

परिसरः पुं. [ परिसरन्त्यत्र । परि+सृ+पुंसोति'  
घ ] पर्यन्तभूः; नदीनगरपर्वतादेशान्तभूमिः; 'मुक्ता-  
जालैः स्तनपरिसरच्छिन्नसूत्रैश्च हारैः, नैशो मार्गः सवि-

तुहदये सूच्यते कामिनीनाम्'—इति मेघदूते (६९) ।  
मृत्युः; विधिः । २५९

परिसर्पः पुं. [ परि समन्तात् सर्पणम् । परि+सृप्+घञ् ]  
परिक्रिया; परिजनादिना वेष्टनं; समन्तात् सर्पणं;  
सर्पविशेषः; 'गवेधुकः परिसर्पः स्रण्डफणः ककुदः पयो  
महापद्मः'—इति सुश्रुते कल्पस्याने ४ अध्याये । तत्र  
दर्वीकराः । कुष्ठविशेषः; क्षुद्रकुष्ठान्यपि स्थूलाक्षकं  
महाकुष्ठमेककुष्ठं चर्मदलं विसर्पः परिसर्पः सिध्म विच-  
चिका किटिमं पामा रकसा चेति' । ७२६

परिस्कन्धः पुं. [ परिस्कन्दतीति, परि+स्कन्ध्+अच् ।  
'परेश्च' इति पक्षे पत्वाभावः ] प्रेष्यः; परिष्कन्धः;  
परपुष्टः; परेण प्रतिपालितः । ३६९

परिस्तोमः पुं. [ परिस्तूयते प्रशस्यते नानावर्णवत्त्वात् ।  
परि+स्तु+अत्तिस्तुस्विति' मन् । यद्वा परिगतः स्तोमो  
अत्र, वर्णस्तोमत्वात् ] गजपृष्ठस्थचित्रकम्बलः; आस्त-  
रणम्; प्रवेणी । ३०८

परिस्पन्धः पुं. [ परि+स्पन्ध्+अधिकरणे घञ् ] परि-  
वारः; परिकरः; कुसुमप्रकरादेः पत्रावल्यादेश्च रचना;  
[ भावे घञ् ] सर्वतो भावेन स्पन्दनं च; मर्दनम्; 'अहमेनं  
हनिष्यामि प्रेक्षन्त्यास्ते सुमध्यमे ! नायं प्रतिबलो भीरु !  
राक्षसापसदो मम । सोढुं युधि परिस्पन्दमयवा सर्व-  
राक्षसाः' । इति महाभारते (१।१५।४।८) । ३०६

परिस्रुत् स्त्री. [ परिस्रवतीति, परि+सृ+क्विप्+सुक् ]  
मदिरा; 'एमां परिस्रुतः कुम्भ आदध्नः कलशैर्युः'  
—इति अथर्ववेदे (३।१२।७) । सर्वतोभावेन क्षरिते  
त्रि. 'त्वामापः परिस्रुतः परियन्ति स्वसेतवो नम-  
न्तामन्यके समे'—इति ऋग्वेदे (८।३९।१०) । ३३०

परिस्रुतः त्रि. [ परितः स्रूयते स्म । स्रु स्रवणे+गत्यर्थेति'  
क्त ] वारुणी; 'ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं  
परिस्रुतम्'—इति यजुर्वेदे (२।३४) । स्रवयुक्तः;  
सर्वतोभावेन क्षरितः । ३२९

परिस्रुता स्त्री. [ परितः स्रूयते स्मेति । परि+सृ+क्त,  
स्त्रियां टाप् । अन्नादिभ्यः क्षरणेन जातत्वात् तथात्वम् ]  
वारुणी; मदिरा; । ३२९

परिहार्यः पुं. [ परि+हृ+ण्यत् ] पारिहार्यः; बलयः;  
परिहरणीये त्रि. 'न परिहार्ये वस्तुनि पौरवाणां मनः  
प्रवर्तते'—इति शकुन्तलायाम् । १ अङ्के । ५५७



**परिहासः** पुं. [ परि+हस्+भावे घञ् ] परिहसनं; परिहासः; क्रीडा; देवना; वर्करा; 'परिहासः केलिमुखः केलिर्देवननर्मणी'—इति त्रिकाण्डशेषः । 'परिहास-विजल्पितं सखे! परमार्थेन न गृह्यतां वचः'—इति शकुन्तलायाम् २ अङ्के । ४३२-

**परिहृतः** त्रि. [ परितः सर्वतोभावेन हृतः । हृ+क्त ] अस्वीकृतः; प्रतिक्षिप्तः; निरस्तः । ७०३

**परीक्षकः** त्रि. [ परीक्षते अवधारयति प्रमाणेन । यथा वह्निना परीक्षकः स्वर्णस्य स्वर्णकारः । परि+ईक्ष्+ण्वल् ] निरूपकः; कारणिकः; 'परीक्षका यत्रन सन्ति देशे नार्धन्ति रत्नानि समुद्र जानि-आभीरदेशे किल चन्द्रकान्तं त्रिभिर्वराटैर्विपणन्ति गोपाः'—इति पञ्चतन्त्रे ( १८४ ) । ३८९

**परीक्षणम्** क्ली. [ परि+ईक्ष्+ल्युट् ] परीक्षा; राज्ञा धर्मकामार्थभयैरमात्यादेर्भावितत्त्वरूपिणः; 'भेदोपजापन्नपुष्या धर्माद्यैर्यत् परीक्षणम्'—इत्यमरः । सर्वतोभावेन दर्शनं च । ७५७

**परीणाहः**, परिणाहः पुं. [ परिणह्यतेऽनेन । परि+णह् वन्धने+घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' पाक्षिको दीर्घः ] विशालता; दीर्घ्यम् । ७८६

**परीभावः** पुं. [ परिभाव्यते इति । परि+भावि+घञ्, वैकल्पिकदीर्घश्च ] परिभावः; अनादरः । ७०४

**परीवर्तः** पुं. [ परि+वृत्+घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः ] युगान्तः; परिवर्तनम्; प्रतिदानं; नैमेयः; निमयः; परिवर्तः; वैमेयः; विनिमयः; परिदानं; कूर्मराजः । ११७

**परीवादः** पुं. [ परि+वद्+भावे घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः ] दोषोल्लासः; कुत्सा; निन्दा; जुगुप्सा; गर्हा; गर्हणं; निन्दनं; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; आक्षेपः; अवर्णः; निर्वादः; अपक्रोशः; भर्त्सनम्; उपक्रोशः; अपवादः; अववादः । 'परीवादस्तथ्यो भवति वितयो वापि महतां, तथाप्युच्चैर्वाग्मां हरति महिमानं जनरवः । तुलोतीर्णस्यापि प्रकटितहताशेष तमसो, रवेस्तादृक् तेजो नहि भवति कन्यां गंतवतः' वीणादिवादनं; येन काण्डविशेषादिना वीणादिवादिद्यते सः । १४८

**परीवारः** पुं. [ परिव्रियतेऽनेनेति । परि+वृ+घञ्, उप-

सर्गस्य दीर्घः ] परिकरः; खड्गकोशः; खड्गकोषः; जङ्गमः; 'धूमधूमो वसागन्धी ज्वालावभ्रुशिरोरुहः । क्रव्याद्गणंपरीवारश्चित्ताग्निरिव जङ्गमः' इति—रघी ( १५।१६ ) । परिच्छदः; 'परीवारः परिजने खड्गकोषे परिच्छदे'—इति कोषान्तरे । ३०६

**परीवाहः** पुं. [ परितो वहत्यनेनेति । परि+वह्+ 'हलश्च' इति घञ् । 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः ] जलोच्छ्वासः; द्रवद्रव्यप्रवाहः; ( अत्र जलशब्द उपलक्षणमात्रं ज्ञेयम्, द्रवद्रव्यस्य प्रवाहेऽप्यस्यार्थो, बोद्धव्यः । 'रुधिरस्य परीवाहान् पूरयित्वा सरांसि च'—इति महाभारते ( ७।६९।१३ ) । राजयोग्यवस्तु । ६७७

**परीवेशः** पुं. [ परितः विश्रियते किरणैः यत्र । परि+विश् प्रवेशने+घञ्, 'उपसर्गस्येति' पाक्षिको दीर्घः ] सूर्यचन्द्रादेरावरणमण्डलम् । ४७

**परीवेपः** पुं. [ परि+विष्णु व्याप्ती, घञ् । पाक्षिको दीर्घः ] उपसूर्यकं; मण्डलम् । ४७

**परीष्टिः** स्त्री. [ परितः सेवया इष्यते आरोग्यं काम्यते । परि+इषु+ 'परेर्वा' इति पक्षे क्तिन् ] परिचर्या; अन्वेषणा; प्राकाम्यम् । १२९

**परीहासः** पुं. [ परि+हस्+घञ् । उपसर्गस्य दीर्घः ] परीहसनं; द्रवः; केलिः; क्रीडा; लीला; नर्म; परिहासः; केलिमुखं; देवनम्; 'परीवादं न कुर्वति परीहासं च पुत्रक !'—इति माकण्डेये ( ३४।८४ ) । ४३२

**परुषः** पुं. [ पिपतीति । पृ पूर्वो+वाहुलकाद् उ । पुंस्काण्डे रत्नकोषवत्त्वनात्पुंस्त्वम् ] ग्रन्थिः; समुद्रः; स्वर्गलोकः; पर्वतः । १८९

**परुः** [ स् ] क्ली. [ पृ+ 'अतिपृवपियजितनीति' उस् ] ग्रन्थिः; 'काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ति परुषः (सः) परुषस्परि'—इति यजुषि ( १३।२० ) । १८९

**परुषः** त्रि. [ पिपतीति, पृ पूर्वो+ 'पृनहिकलिभ्य उषच्' इति उषञ् ] रूक्षः; 'अय रात्र्यां व्यतीतायां राजा चण्डालतां गतः । नीलवस्त्रधरो नीलः परुषो ध्वस्त-मूढंजः' इति रामायणे ( १।५८।१० ) । निष्ठुरोक्तिः; मलिनः; 'भस्मपरुषेऽपि गिरिशे स्नेहमयी त्वमुचितेन सुभगासि'—इति आर्यासप्तशत्याम् ( ४१९ ) । 'भस्म-परुषेऽपि भस्ममलिनेऽपि'—इति तट्टीका । कर्बुरः; 'असित-विचित्रनीलपरुषो जनघातकरः । सगमृगभैरवसररु-

तैश्च निशाद्यमुखे—इति बृहत्संहिता (३।३९) । ७८३  
परतः त्रि. [ परं लोकमितः ] मृतः; 'अलक्तकाङ्कानि  
पदानि पादयोः, विकीर्णकेशासु परेतभूमिषु—इति  
कुमारे (५।६८) । भूतान्तरे पुं. । ६२९

परैष्टका स्त्री. [ परैरिष्यते इति । इप्+वाहुलकात् तु,  
स्वार्थे कन्, सित्रयां टाप् ] बहुसूतिः; बहुप्रसूता गौः । २७२  
परैधितः त्रि. [ परैरेधितः संवद्धितः ] औदासीन्येन पर-  
पुष्टः; परेण संवद्धितः; पराचितः; परिष्कन्दः; पर-  
जातः । कोकिले पुं. । ३५१

पर्जन्यः पुं. [ पर्षति सिञ्चति वृष्टि ददातीति । पृषु  
सेवने+पर्जन्यः इति निपातनात् षकारस्य जकारत्वे  
साधुः ] इन्द्रः; 'अग्नी पर्जन्याववतं धियं मेऽस्मिन्  
हवे सुहवा सुष्टुति नः—इति ऋग्वेदे (६।५२।१६) ।  
शब्दायमानमेघः (८।१८) ; मेघशब्दः; अगर्जन्नपि  
मेघः; 'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः पर्जन्यादन्नसम्भवः—इति  
भगवद्गीतायाम् । कश्यपपत्न्या मुनेः पुत्रविशेषः;  
स तु गन्धर्वविशेषः; 'तया शालिशिरा राजन् ! पर्जन्य-  
श्च चतुर्दश । कलिः पञ्चदशस्त्वेषां नारदश्चैव षोडशः'  
—इति महाभारते (१।६५।५४) । विष्णुः [ पर्जन्य  
इव सर्वकामप्रदानात् ] ; 'कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः  
पावनोऽनिलः—इति महाभारते (१३।१४९।१००)  
'पर्जन्यवदाध्यात्मिकादितापत्रयं क्षमयति सर्वान् कामान-  
नभिवर्षतीति पर्जन्यः—इति शाङ्करभाष्ये । ५२

पर्णम् क्ली. [ पिपतीति, पृ+धापृवस्यज्यतिभ्यो नः  
इति न । यद्वा पर्णयतीति । पर्णं हारित्ये+अच् ] पत्रम्;  
'स्वयं विशीर्णद्रुमपर्णवृत्तिता परा हि काष्ठा तपसस्तया  
पुनः । तदप्यपाकीर्णमतः प्रियंवदां वदन्त्यपर्णेति च तां  
पुराविदः—इति कुमारे (५।२८) । ताम्बूलम्;  
अनिघाय मुखे पर्णे पूगं स्वादयते नरः । मतिभ्रंशो दरिद्रः  
स्यादन्ते न स्मरते हरिम्—इति राजनिर्घण्टे । [ पिपति  
पालयति गगनपातादिति, पृ+न ] पक्षः; 'तदुत्सृष्ट-  
मभिप्रेक्ष्य तस्य पर्णमनुत्तमम् । हृष्टानि सर्वभूतानि नाम  
चक्रुर्गर्ह्यमतः । सुरूपं पत्रमालक्ष्य तस्य पर्णमनुत्तमम्'  
—इति महाभारते (१।३।२४) । पुं. [ पिप-  
तीति, पृ पालने+धापृवस्यज्यतिभ्यो नः इति न ]  
पलाशवृक्षः; 'अश्वत्ये वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता'  
—इति ऋग्वेदे (१०।९।७।५) । १८५

पर्यङ्कः पुं. [ परितोऽङ्कयते इति । परि+अङ्कि लक्षणे+  
घञ् ] शय्या; खट्वा; मञ्चः; मञ्चकः; पत्यङ्कः;  
पर्यस्तिका; परिकरः; अवसक्तिका; 'अयोपविष्टं  
राजानं पर्यङ्के ज्वलनप्रभे । उपप्लुतं यथा सोमं राहुणा  
रात्रिसंक्षये । उपगम्यान्नवीत् कर्णो दुर्योधनमिदं तदा'  
—इति महाभारते (३।२४६।८) । योगपट्टः (४।१०);  
योगसनम्; 'पर्यङ्कवन्वस्थिरपूर्वकायमृज्वायत सप्त-  
मितोभयांसम्—इति कुमारे (३।४५) । ३०७

पर्यनुयोगः पुं. [ परितोऽनुयोगः पृच्छा । परि+अनु+युज्+  
भावे घञ् ] उपालम्भः; जिज्ञासा; 'एतेनास्यापि पर्यनु-  
योगस्यानवकाशः—इति दायभागः । १५४

पर्यन्तः पुं. [ परिगतोऽन्तम् । प्रादिसमासः ] अन्त्यसीमा;  
'पर्यन्तो लभ्यते भूमेः समुद्रस्य गिरेरपि । न कथंचित्  
महीपस्य चित्तान्तः केनचित् क्वचित्—इति पञ्चतन्त्रे  
(१।१४१) । समीपम्; 'पर्यन्तदेशं सरसेन देवी लिलेप सा  
लोहितचन्दनेन—इति हरिवंशे (१२२।५३) । पाश्वम्;  
'पर्यन्तसञ्चारितचामरस्य कपोलोलोभयकाकपक्षात् ।  
तस्याननादुच्चरितो विवादः चस्त्राल वेलास्वपि  
नार्णवानाम्—इति रघौ (१।८।४३) । २५९

पर्यवस्थाता [ ऋ ] त्रि. [ पर्यवतिष्ठते विपन्नस्थापनाय  
इति । परि+अव+स्था+तृच् ] पर्यवस्थानकर्ता;  
विरोधी; द्वेषी; अरिः; 'अन्तकः पर्यवस्थाता जन्मिनः  
सन्ततापदः । इति त्याज्ये भवे भव्यो मुक्तावृत्तिष्ठते  
जनः—इति किरातार्जुनीये (१।१।१३) । ४५६

पर्यस्तिका स्त्री. [ परितः अस्यते क्षिप्यते शरीरमत्र ।  
परि+अस् क्षेपणे+अधिकरणे क्तिन्, ततः स्वार्थे कन् ]  
खट्वा । ४१०

पर्याणम् क्ली. [ परितो याति गच्छत्यनेनेति । परि+या+  
त्युट् । पृषोदरादित्वात् साधु ] अश्वपत्ययनम्; 'आरोह-  
णमन्यवाजिनां पर्याणादियूतस्थ वाजिनः । उपवाह्य-  
तुरङ्गमस्य वा कल्पस्यैव विपन्नगोभना—इति बृहत्सं-  
हिता (९।३।६) । ४४२

पर्याप्तम् क्ली. [ परि+आप्+भावे क्त ] उपसम्पन्नं;  
भृशं (७।१९); यथेष्टं; तृप्तिः; शक्तिः; निवारणं; त्रि.  
प्राप्तः; शक्तिसम्पन्नः; 'पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमा-  
भिरक्षितम्—इति भगवद्गीता (१।१०) । 'पर्याप्तं  
समर्थं भाति—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । ३२६

**पर्यायः** पुं. [ परि+इण् गती+‘परावनुपात्यय इणः’ इति घञ् । क्रमप्राप्तस्थानातिपातोऽनुपात्ययः ] पर्ययणं; क्रमः; आनुपूर्वी; आवृत्; परिपाटी; अनुक्रमः; आनुपूर्व्यम्; आनुपूर्वम्; आनुपूर्वकं; परिपाटिः; ‘पर्यायसेवामुत्सृज्य पुष्पसम्भारतपराः । उद्यानपाल-सामान्यमृतवस्तमुपासते’—इति कुमारे (२।३६) । प्रकारः; अवसरः; निर्माणं; द्रव्यधर्मः; क्रमेणैकार्थ-वाचकाः शब्दाः पर्यायाः—इति विजयरक्षितः । सम्पर्क-विशेषः; येन सह यत्सम्पर्कः सम्बन्धस्तेन सह तत्पर्यायः । ‘समानं कुलभावश्च दानादानन्तथैव च । तयोर्वशसमानं हि पर्यायं च प्रचक्षते’—इति कुलदीपिका । अर्था-लङ्कारविशेषः; ‘वचिदेकमनेकस्मिन्ननेकञ्चैकं क्रमात् । भवति क्रियते वा चेत् तदा पर्याय इष्यते’—इति साहित्यदर्पणे (१०।१०४) । ७३९

**पर्याहारः** पुं. [ परितः धृत्वा आ समन्तात् ह्रियते नीयते । परि+आ+हृ+घञ् ] शिरःस्कन्धादिवाह्यभरः; भारः ।

७५८

**पर्युञ्चनम्** क्ली. [ पर्युञ्च्यते, परि परिमाणात्, उत् ऊर्ध्वमधिकमित्यर्थः, अच्यते संमान्यते इति । परि+उत्+अञ्च+‘कृत्यत्युटो बहुलम्’ इति ल्युट् ] ऋणम्; उद्धारः । ५७२

**पर्व** [ न् ] क्ली. [ पर्वतीति, पर्वं गती+वाहुलकात् कनिन् । यद्वा पिपतीति, पृ+‘स्नामदिपर्धातिपृशकिय्यो वनिप्’ इति वनिप् ] ग्रन्थिः; ‘तथा बालखिल्या ऋपयोऽङ्गुष्ठपर्वमात्राः षष्टिसहस्राणि पुरतः सूर्यं सूक्तवाकाय नियुक्ताः संस्तुवन्ति’—इति भागवते (५।२१।१७) । प्रस्तावः; महः; लक्षणान्तरं; दर्शप्रतिपदोः सन्धिः; पूर्णिमाप्रतिपदोः सन्धिः; ‘अकालजलदावली किरतु नाभ मुक्तावलीः, अपर्वाणि विधुन्तुदस्तुदतु नाम शीत-द्युतिम्’—इति साहित्यदर्पणे । विषुवत्प्रभृतिः; ग्रन्थ-विच्छेदः; ‘आदिः सभावनिविराटमथोद्यमश्च, भीष्मो गुरु रविजशल्यकसीप्तिकाश्च । स्त्रीपर्वं शान्तिरनुशासन-मश्वमेधव्यासाश्रमो मुषलयानदिवावरोहः’—इति महा-भारते अष्टादशपर्वाणि उक्तानि तट्टीकायाम् । क्षणः; भङ्गी; ‘दिने दिने शैवलवन्त्यधस्तात् सोपान-पर्वाणि विमुञ्चदम्भः’—इति रघुवंशे (१६।४६) । पञ्च पर्वाणि; ‘चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावस्याय पूर्णिमा ।

पवण्येत्तानि राजेन्द्र ! रविसंक्रान्तिरेव च । स्त्रीतैल-मांससम्भोगी पर्वस्वेतेषु वै पुमान् । विष्णुभोजनं नाम प्रयाति नरकं मृतः’—इति विष्णुपुराणे । १८९  
**पर्वतः** पुं. [ पर्वति पूरयतीति, पर्वं पूरणे+‘भृमृदृशियजि-पर्वीति’ अतच् । यद्वा पर्वणि भागाः सन्त्यत्र, ‘पर्वमरुद्-भ्याम् इति तप् ] महीध्रः; शिखरी; क्षमाभृत्; अहार्यः; धरः; अद्रिः; गोत्रः; गिरिः; ग्रावा; अचलः; शैलः; शिल्लोच्चयः; स्थावरः; सानुमान्; पृथुशेखरः; धरणी-कीलकः; कुट्टारः; जीमूतः; धातुभृत्; भूधरः; स्थिरः; कुलीरः; कटकी; शृङ्गी; निर्झरीः; अगः; नगः; दन्ती; धरणीध्रः; भूभृत्; क्षितिभृत्; अवनीधरः; कुधरः; धराधरः; प्रस्थवान्; वृक्षवान्; देवर्षिविशेषः; ‘कश्य-पात्रारदश्चैव पर्वतोऽश्नथी तथा’—इत्यग्निपुराणम् । ‘लोमशस्योपसंगृह्य पादौ द्वैपायनस्य च । नारदस्य च राजेन्द्र ! देवर्षेः पर्वतस्य च’—इति महाभारते (३।१३।२५) । मत्स्यविशेषः; वृक्षः; शाकभेदः; सन्ध्या-सिंविशेषः; स तु शङ्कराचार्यशिष्यस्य मण्डनमिश्रस्य शिष्यविशेषः; ‘वसेत् पर्वतमूलेषु प्रौढो यो ध्यानधार-णात् । सारात्सारं विजानाति पर्वतः परिकीर्तितः’—इति प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे । १६५

**पलम्** क्ली. [ पलतीति, पल्+अच् ] आमिषं; पललं; मांसं; कर्षचतुष्टयं; तोलकचतुष्टयम्; अष्टतोलकं; साष्टरवित्तद्विमाषकतोलकवितयं; मुष्टिः; प्रकुञ्चः; चतुर्थिका; विल्वं; षोडशिकाग्रम्; ‘पलं तु लौकिकै-र्मनैः साष्टरवित्तद्विमापकम् । तोलकत्रितयं ज्ञेयं ज्योति-र्ज्ञैः स्मृति सम्मतम्’—इति तिथ्यादितत्त्वे । विषटिका; सा तु घटिकाषष्टिभागैकभागः षष्टिविपलश्च । पल-दण्डयोः प्रमाणं तु—‘दशगुर्वक्षरोच्चारकालः प्राणः पडात्मकैः । तैः पलं स्यात्तु तत्पष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते’ पुं. [ पलतीति, पल्+अच् ] पलालः; ‘चण्डाश्च शौ-ण्डाश्च महाशनाश्च, चौराश्च दुष्टाश्च पलाश्च वज्र्याः’—इति महाभारते (३।२३।१?) । ६३१

**पलगण्डः** पुं. [ पलं मांसं तद्वत् गण्डति भिक्ती मृदादिना लिम्पतीति । पल+गण्ड+अच् ] लेपकः । ५९१

**पलङ्कः** पुं. [ पलं कपतीति । कप् हिंसायाम्+अच् । ‘तत्पुरुषे कृतीति’ द्वितीयाया अलुक् ] कणगुगुलुः; राक्षसः । ६२०

पललम् क्ली. [ पलति पत्यतेऽनेन वा । पल् गती+ 'वृषा-  
दिभ्यश्चित्' इति कलच् ] मांसम्; आमिषं; पलम्;  
'माज्जिपललं' विष्ठा हरितालं च भावितम् । छागमूत्रेण  
तल्लित्तो मूपिको मूपिकान् हरेत्—इति गारुडे  
१८१ अध्याये । पङ्कम्; 'दोपपङ्कनिमग्नं त्वामयशः  
पललावृतम् । सर्वथा मानुषो रामस्त्वामन्तमुपनेष्यति'—  
इति रामायणे (५।८७।२६) । तिलचूर्णम्; 'पललं  
तिलकलकं स्यात्तिलचूर्णं च पिष्टकः । पललं मधुरं  
रुच्यं पितास्रबलपुष्टिदम्—इति राजनिर्घण्टः । सैक्षव-  
तिलचूर्णम्; 'पललं तु समाख्यातं सैक्षवं तिलपिष्टकम् ।  
पललं मलकृद् वृष्यं वातघ्नं कफपित्तकृत् । वृहणं गुरु  
वृष्यं च स्निग्धं मूत्रनिवर्तकम्—इति वैद्यके । पुं. [ पल-  
तीति, यद्वा पलं मांसं लातीति । ला+क ] राक्षसः । ६३१

पलाशम् क्ली. [ पलं गति कम्पनमित्यर्थः, अदनुते व्याप्नो-  
तीति । पल+अश्+ 'कर्मण्यण्' इत्यण् । पलम् अश्नात्य-  
त्रेति घञ् वा ] पत्रम्; 'वृहच्छाल इवानूपे शाखापुष्प-  
पलाशवान्—इति महाभारते (३।३५।२५) ।  
'बालेन्दुवक्राप्यविकाशभावात् वभुः पलाशान्यतिलोहि-  
तानि । सद्यो वसन्तेव समागतानां नक्षततानीव वनस्थ-  
लीनाम्—इति कुमारै (३।२९) । (१९७) पुं.  
[ पलाशानि पर्णानि सन्त्यस्य, 'अर्श आदिभ्योऽञ्'  
इत्यच् ] वृक्षविशेषः; ब्रह्मवृक्षः; स तु ब्रह्मणः स्वरूपः ।  
'अश्वत्थरूपो भगवान् विष्णुरेव न संशयः । रुद्ररूपो  
वटस्तद्वत् पलाशो ब्रह्मरूपधृक् । दर्शनस्पर्शसेवास्तु ते  
व पापहराः स्मृताः । दुःखापद्रवाधिदुष्टानां विनाश-  
कारिणो ध्रुवम्—इति पाप्मे । [ पले मांसे आशा यस्य ]  
राक्षसः; हरितः; मगधदेशः; त्रि. निर्दयः । १८५

पलित्नी स्त्री. [ पलितमस्या अस्तीति । 'अर्श आदिभ्योऽञ्'  
इत्यच्, 'असितपलितयोर्न' तथा 'छन्दसि वनमेके' इत्युक्ते-  
र्भाषायांमपि तस्य वन इत्यादेशो भवति । ततो नान्तत्वाद्  
ङीप् ] बालगर्भिणी गीः; वृद्धा; पलिता । २७३

पलितम् क्ली. [ पलि+भावे क्त । यद्वा फलनमिति, फल+  
'फलेरितजादेश्च पः' इति इतच्, फस्य मत्वम् ] जरसा  
केशादीं शौक्ल्यं; केशपाकः; 'गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वली-  
पलितमात्मनः । अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्'  
—इति मनुः (६।२) । शौलजं; तापः; कर्दमः; [ पल्  
गती+ 'लोष्टपलितौ' इति क्त प्रत्ययेन निपातनात्

सिद्धम् ] केशपाशः; पुं. [ फलति वृद्धावस्यायां केश-  
शौक्लयादिकं प्राप्नोतीति ] वृद्धः । ५३२

पल्यङ्गः पुं. [ परितोऽङ्कतेऽत्र इति । परि+अकि लक्षणे+  
घञ् । 'परेश्च घाङ्कयोः' इति रस्य ल ] पर्यङ्कः; 'पल्यङ्क-  
मग्नघास्तरणं नानारत्नविभूषितम् । तमपीच्छति वैदेही  
प्रतिष्ठापयितुं त्वयि—इति रामायणे (२।३२।९) ।  
३०७, ४१०

पल्ययनम् क्ली. [ परितः अयति गच्छति अनेन ।  
परि+अय् गती+करणे ल्युट्, रस्य लत्वम् ] पर्याणं;  
'घोडे की जीन' इति भाषा । ४४२

पल्लवः पुं.—क्ली. [ पत्यते इति पल् । पल्+क्विप् ।  
लूयते इति लवः । लू+ 'ऋदोरप्' इति अप् । ततः पल्  
चासौ लवश्चेति ] नवपत्रस्तवकः; किसलयं; प्रवालं;  
नवपत्रं; वलं; किसलं; किशलं; किशलयं; विटपः;  
पत्रयौवनम्; 'अभिनयान् परिचेतुमिवोद्यता मलय-  
मारुतकम्पितपल्लवा । अमदयत् सहकाररता मनः  
सकलिका कलिकामजितामपि,—इति रघौ (९।३३) ।  
'पर्वपत्रादिसङ्घाते शाखायाः पल्लवो मतः—इति  
कोषान्तरम् । विस्तरः; वलं; शृङ्गारः; अलक्तरागः;  
वनं; वलयः; चापलः; देशविशेषः; तद्देशवासिषु पुं.  
भूमिनि । 'अपरान्ताश्च शूद्राश्च पल्लवाश्चर्म खण्डिकाः ।  
गान्धारा गवलाश्चैव सिन्धुसौवीर मद्रकाः—इति  
मार्कण्डेये (५७।३६) । १८५

पल्लवकः पुं. [ पल्लवेन शृङ्गारेण कायतीति । पल्लव+  
कौ+क ] वेश्यापतिः; महामत्स्यविशेषः (६५९);  
[ पल्लव इव कायतीति ] मत्स्यविशेषः; [ पल्लवै  
किसलयैः कायतीति ] अशोकवृक्षः । ३८२

पल्लवाङ्कुरः पुं. [ पल्लवानां नूतनपत्राणाम् अङ्कुरः  
उद्गमः ] प्रवालः; पल्लवाधारः; शाखा । १८४

पल्लवम् क्ली. —पुं. [ पलति गच्छति पिवत्यस्मिन् वा ।  
पल् गती, पा पाने वा+ 'सानसिवर्णसिपर्णसौति' निपात-  
नाद्. वलच्प्रत्ययेन सिद्धम् ] अल्पसरः; लघुजला-  
शयः; 'पल्लवानि च सर्वाणि सर्वे चैव तृणोपलाः ।  
स्यावरं जङ्गमं चैव निःशेषं कुहते जगत्—इति महा-  
भारते (७।५१।९) । अल्पं सरः पल्लवं स्याद्यत्र  
चन्द्रर्क्षणे रवौ । न तिष्ठति जलं किञ्चित्त्रयं वारि  
पाल्लवम्—इति भावप्रकाशः । ६७५

पवनः पुं. [ पुनातीति, पू+ 'बहुलमन्यत्रापीति' युच् ] वायुः;  
'भूवायुरावह इह प्रवहस्तदूढः स्याद्बुद्धहस्तदनु संवहसन्न-  
कश्च । अन्यः परोऽपि, सुवहः परिपूर्वकोऽस्माद् बाह्यः  
परावह इमे पन्ननाः प्रसिद्धाः'—इति सिद्धान्तशिरो-  
मणौ । प्राणवायुः; 'अनेनैव विधानेन प्रयाति पवनो  
लयम् । ततो न जायते मृत्युर्जरारोगादिकं तथा'—इति  
हृद्योगदोषिकायाम् । निष्पावः; उत्तममनुपुत्रविशेषः;  
'तृतीय उत्तमो नाम प्रियव्रतसुतो मनुः । पवनः सूञ्जयो  
यज्ञहोत्राद्यास्तत्सुता नृप !'—इति भागवते (८।  
१।२३) । ७५

पवनाशनः पुं. [ पवनो वायुरशनं भक्ष्यं यस्य ] पवनाशः;  
सर्पः । ६४०

पवनाशनाशः पुं. [ पवनाशस्य सर्पस्य नाशो यस्मात् ।  
यद्वा पवनाशनं सर्पम् अश्नातीति । अश्+अण् ] गरुडः;  
मयूरः; 'स्वयोनिभक्षव्वजसम्भवानां श्रुत्वा निनाद  
गिरिगह्वरेषु । तमोऽरिविम्बप्रतिविम्बधारी रुराव  
कान्ते ! पवनाशनाशः'—इति उत्तरचौरपञ्चाशिका-  
याम् । ३०

पवमानः पुं. [ पवते शोषयतीति । पू पवने+ 'पूयजोः  
शानच्' इति शानच् 'आने मुक्' इति मुगागमः ] वायुः;  
'न खरो न च भूयसा मृदुः पवमानः पृथिवीरुहानिव ।  
स पुरस्कृतमध्यमक्रमो नभयामासं नृपाननुद्धरत्'—इति  
रघौ (८।९) । अनेः स्वाहायां जातः पुत्रः; 'यो साव-  
ग्निरभीमानी ब्रह्मणस्तनयोऽग्रजः । तस्मात् स्वाहासुतान्  
लेभे त्रीनुदारोजसो द्विज ! । पावकं पवमानं च शुचि-  
ञ्चापि जलाशिनम् । तेषां तु सन्ततावन्ये चत्वारिंशच्च  
पञ्च च'—इति मार्कण्डेये (५२।२७।२८) । निर्म-  
थ्याग्निः; स च गार्हपत्याग्निः; 'अथ यः पवमानस्तु  
निर्मथ्योऽग्निः स उच्यते । स च वै गार्हपत्योऽग्निः प्रथमो  
ब्रह्मणः स्मृतः'—इति मात्स्ये ४८ अध्याये । ७५

पविः पुं. [ पुनातीति । पूव् पवने+ 'अच् इः' इति इ ]  
वज्रः; कुलिशम् । ५६

पवित्रः त्रि. [ पू+इत्र ] व्रतादिना शुद्धः; प्रयतः; पूतः;  
शुचिः; पवित्रितः; पुण्यः; पावनः; 'नहि ज्ञानेन सदृशं  
पवित्रमिह विद्यते'—इति भगवद्गीतायम् (४।३८) ।  
[ पूयतेऽनेन । पू+ 'पुवः संज्ञायाम्' इति इत्र ] शुद्धद्रव्यं;  
कौशोः हैमी कौमिका; पूतः; मेध्यः; शुद्धः; शुचिः;

पुण्यं; पूतिवत्; 'वत्यं पवित्रमायुष्यं सुमङ्गल्यं रसायनम्'  
—इति भावप्रकाशः [ एतत्तु गव्यघृतगुणपरम् ] । पुं.  
[ पुनातीति । पू+कर्तरि इत्र ] तिलवृक्षः; पुत्रजीववृक्षः;  
कार्तिकेयस्य नामान्तरम्; 'षष्ठीप्रियस्य घर्मात्मा पवित्रो  
मातृवत्सलः'—इति महाभारते (३।२३।१६) ।  
(८०२) क्ली. [ पूयतेऽनेनेति । पू+ 'पुवः संज्ञायाम्'  
इति इत्र ] कुशम्; 'प्राक्कूलान् पर्युपासीनः पवित्रैश्चैव  
पावितः'—इति मनुः (२।७५) । वर्षणः; ताम्रः;  
पयः; वर्षणः; अर्घोपकरणं; यज्ञोपवीतं; घृतं;  
मधु; पार्वणश्राद्धादावर्घार्थं होमादावाज्यसंस्काराद्यर्थं  
च साग्रनिर्गर्भकुशान्तरवेष्टितप्रादेशमात्रकुशपत्रद्वयम्;  
'अनन्तर्गर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च । प्रादेशमात्रं  
विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित्'—इति श्राद्धतत्त्वम् ।  
विष्णुः; 'प्रभूतस्त्रिककुद्धाम पवित्रं मङ्गलं परम्'—इति  
महाभारते (१२।१४९।२०) । महादेवः; 'पवित्रं च  
महाश्चैव नियमो नियमाश्रितः'—इति महाभारते  
(१२।१७।३५) । १३२

पशुः पुं. [ अविशेषेण सर्वं पश्यतीति । दृशिर् प्रेक्षणे+  
'अजिदृशिकम्यमिपंसीति' कु, पश्यादेशश्च । यद्वा  
'पश्यन्ति पार्श्वहस्ताभ्यां हिताहितम्' ] जन्तुविशेषः;  
गवयप्रभृतयः; प्रमथः; देवः; प्राणिमात्रं; छगलः;  
यज्ञः; संसारिणामात्मा; यज्ञोदुम्बरः; साधकानां  
भावत्रयाणां प्रथमो भावः पशुभावः । अव्य. [ दृश्यते  
इति । दृश्+ भावे कु, पशि आदेशश्च ] दर्शनम् । ४१७

पशुपतिः पुं. [ पशूनां स्थावरजङ्गमानां प्राणिमात्रस्य  
वा पतिः स्वामी प्रभुः ] शिवः; महादेवः; 'ब्रह्माद्याः  
स्थावरान्ताश्च पशवः परिकीर्तिताः । तेषां पतिर्माहादेवः  
स्मृतः पशुपतिः श्रुतो'—इति चिन्तामणिः । 'अहं च  
सर्वविद्यानां पतिराद्यः सनातनः । अहं वै पतिभावेन  
पशुमध्ये व्यवस्थितः । अतः पशुपतिर्नाम त्वं लोके ख्याति-  
मेष्यसि'—इति वराहपुराणे । 'नेपाले च पशुपतिः  
केदारः परमेश्वरः'—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे । ११

पश्चात् अव्य. [ अपरस्मिन् अपरस्मात् अपरो वा वसति  
आगतो रमणीयं वा । 'पश्चात्' इति अपरस्य पश्चभावः  
आतिश्च प्रत्ययोऽस्तातेविषये ] चरमम्; 'प्रतापोऽने  
ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम् । ययो पश्चाद्ब्रह्मादीति  
चतुःस्कन्धेव सां चमूः'—इति रघौ (४।३०) ।

प्रतीची; अधिकारः। ७०७

पश्चात्तापः पुं. [ अग्रतोऽकार्ये कृते पश्चात् चरमे तापः ]  
चरमे शोकः; अनुशोचनम्; अनुतापः; विप्रतीसारः;  
'उक्तेति पदेषु वाक्यं पश्चात्तापसमन्वितः'—इति  
रामायणे (३।५।१।३६)। ७१६

पश्चिमम् त्रि. [ पश्चाद्भवम् । 'अग्रादिपश्चाद् डिमच्'  
इति डिमच् ] पश्चाद्भवम्; 'तदात्मसम्भवं राज्ये  
मन्त्रिवृद्धाः समादधुः । स्मरन्तः पश्चिमामाजां भर्तुः  
संग्रामयायिनः'—इति रघौ (१७।८) । स्त्री.  
[ पश्चिम+टाप् ] अस्ताचलावच्छिन्नदिक्; प्रतीची;  
वारुणो; प्रत्यक्; 'पश्चिमो मासतस्तीक्ष्णः कफमेहविशो-  
षणः । सद्यः प्राणहरो दुष्टः शोषकारी शरीरिणाम्'  
—इति राजनिर्घण्टः। ५२८

पश्यतोहरः त्रि. [ पश्यन्तं जनमनादृत्य हरतीति । ह  
हरणे+अच् । 'षष्ठी चानादरे' इति अनादरे षष्ठी ।  
'वाग्दिक्पश्यद्भवो युक्तिदण्डहरेषु' इति षष्ठ्या  
अलुक् ] चौरः; स्वर्णकारः; 'यः पश्यतो हरेदर्थं स चौरः  
पश्यतोहरः'—इति हेमचन्द्रे (३।४६)। ३३९

पस्त्यम् क्ली. [ अपस्त्यायन्ति सङ्घीभूय तिष्ठन्ति जीवा  
यत्र । अप+स्त्यं सङ्घातशब्दयोः+ 'आतश्चोपसर्गे'  
इति क, उपसर्गस्थाकारलोपो निपातनात् ] गृहम्;  
'प्र पस्त्यमसुर हर्षतं गौराविष्कृधि हरये सूर्याय'—इति  
ऋग्वेदे (१०।१६।११)। २९१

पांसुः पुं. [ पंशयति नाशयति आत्मानमिति । पशि नाशने+  
'अजिदृशिकमीति' कु, दीर्घश्च ] धूलिः; पांसुः;  
'कर्णश्रवेऽनिले रात्रौ दिवा पांसुसमूहने । एतौ वर्षास्वन-  
ध्यापावध्यायज्ञाः प्रचक्षते'—इति मनुः (४।१०२)।  
सस्यार्थचिरसञ्चितगोमयः; पर्पटः; कर्पूरविशेषः। ४४३

पांशुला स्त्री. [ पांशवः दोषाः सन्त्यस्याः । पांशून् लाति  
वा, क । पांशुल+टाप् ] कुलटा; असती; व्यभि-  
चारिणी; भूमिः; केतकी; रजस्वला। ४९६

पांसुः पुं. [ पंसयतीति, पसि नाशने+ 'अजिदृशिकमीति'  
कु, दीर्घश्च ] धूलिः; 'अपरे पूरयन् कूपान् पांसुभिः  
श्वभ्रमायतम् । निम्नभागास्तथैवाशु समाश्चक्रुः सम-  
न्ततः'—इति रामायणे (२।८०।१९)। चिरसञ्चित-  
गोमयः। ४४३

पाकः पुं. [ पच्+भावे घञ् ] पचनं; क्लेदनं; पपा;  
रन्धनम्, 'भर्जनं तलनं स्वेदः पचनं वक्ष्यनं तथा तान्मूर्'  
पुटपाकश्च पाकः सप्तविधो मतः'—इति पाकराजेश्वरः ।  
शिशुः (५०२); परिणतिः; 'स्वकर्मफलपाकेन भर्तुस्त-  
स्य महात्मनः । वियोजिताहं तद्धेतुरयमासीन् निशाचरः'  
—इति मार्कण्डेये (७०।३४)। जरसा केशस्य शोगलजं;  
स्थाल्यादि; पेचकः; राष्ट्र्यादि; भङ्गः; भीतिः; दैत्यः;  
'भो भो दानवदैतेया ! द्विमूर्द्धन् ! श्यस ! शम्बर ! ।  
शतवाहो ! ह्यग्रीव ! नमुचे ! पाक ! इत्त्वल !'  
इति भागवते (७।२।४)। [ पिवतीति, पा+ 'इणभीका-  
पेति' कन् ] पानकर्तारि त्रि.। १८०

पाकशासनः पुं. [ शास्तीति । शास्+ल्यु, ततः पाकश्च  
तदास्थया प्रसिद्धस्य असुरस्य शासनः शास्ता ] इन्द्रः;  
'पाकं जघान तीक्ष्णाग्रैर्मणिर्णैः कङ्कवाससैः । तत्र नाम  
विभुर्लोभे शासनत्वाच्छरैर्दृढैः । पाकशासनतां शक्रः  
सर्वामरपतिविभुः'—इति वामनपुराणे। ५४

पाकस्थानम् क्ली. [ पाकस्य स्थानम् ] महानसं; रसवती।  
२९५

पाञ्चजन्यः पुं. [ पञ्चजने दैत्यविशेषे भवः । 'पञ्चजनादुप-  
संस्थानम्'—इति ञ्य ] विष्णुशङ्खः (पञ्चजनो नाम  
दैत्यः समुद्रे तिमिरूप आसीत् तदस्थिजत्वाद् वा);  
'पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवद्रुतं धनञ्जयः । पौष्टं दध्नी  
महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः'—इति भगवद्गीतायाम्  
(१।१५)। [ पञ्चभिः काश्यपवशिष्ठप्राणाङ्गिरस-  
च्यवनेर्जनैर्निवृत्तः, इत्यर्थे ष्यञ् ] अग्निः; हारीतमुनि-  
वंशीयस्य दीर्घबुद्धेः पुत्रः। २६

पाञ्चालिका स्त्री. [ पञ्चाली+स्वार्थे अण्, ततः कन्,  
तत्पठ्यापि अत इत्वञ्च, पृषोदरादिः ] पञ्चालिका;  
पुत्तली; पाञ्चालिका; पुत्रिका; शालभञ्जी। ४९३

पाञ्चालिका स्त्री. [ पाञ्चाली+स्वार्थे कन् ततो ह्रस्व-  
ष्टाप् च ] वस्त्रदन्तादिकृतपुत्तलिका; पुत्रिका; पञ्चा-  
लिका; शालभञ्जी; पाञ्चाली; शालभञ्जिका;  
पुत्तली; ... 'वर्णः शेषैः पुनर्द्वयोः । समस्तपञ्चप-  
पदो वन्धः पाञ्चालिका मता'—इति साहित्य-  
दर्पणे (१।५)। ४९३

पाटञ्चरः पुं. [ पाटयन् छिन्दन् चरतीति । चर+पचा-  
द्यच् । पृषोदरादित्वात् साधुः ] चौरः; 'मन्त्रिन् !

कुलिङ्गसाहसिकत्वं किलैतस्य पापपाटच्चरस्य'—इति प्रद्युम्नविजये ७ अङ्के । ३४०

**पाटलः** पुं. [ पाटयतीति, पट्+णिच्, वृषादित्वात् कलच् ] श्वेतरक्तवर्णः; तद्वर्णयुक्ते त्रि. । 'स पाटलायां ग्वि तस्थिवांमं घनुर्धरः केशरिणं ददर्श । अधित्यकायामिव धातुमत्यां लोघद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम्'—इति रघुवंशे (२।२९) । आशुधान्यम्; क्ली. [ पाटलो वर्णोऽस्यास्तीति, पाटल+अर्श आदित्वादच् ] पाटलीपुष्पं; सेवान्तिकाख्यपुष्पं; 'गुलाव का फूल' इति भाषा । 'पाटलाशोकवकुलैः कुन्दैः कुरुवकैरपि'—इति भागवते (४।६।१४) । ७३३

**पाठीनः** पुं. [ पाठिं पृष्ठं नमयतीति । पाठि+नम्+णिच्+ 'अन्येभ्योऽपीति' ड, 'अन्येपामपि दृश्यते' इति दीर्घः ] मत्स्यविशेषः; सहस्रदंष्ट्रः; सहस्रदंष्ट्री; वोदालः; वदालकः; 'पाठीनः श्लेष्मलो वृष्यो निद्रालः पिशिताशनः । दूषयेदम्लपित्तं तु कुष्ठरोगं करोत्यसौ'—इति सुश्रुते । पाठकः; गुग्गुलुद्रुमः । ६५८

**पाणिः** पुं. [ पणायन्ते व्यवहरन्त्यनेनेति । पण्+ 'अशिपणायो रुडायलुको च' इति इण् आयप्रत्ययस्य लुक् च ] भुजः; स च मणिवन्व्यावध्यङ्गुलिपर्यन्तभागः; पञ्चशाखः; शयः; समः; हस्तः; करः; कुलिः; भुजादलः; 'मृगनाभिसुगन्धां तां कृत्वा कान्तां मनोरमाम् । जग्राह दक्षिणे पाणी मुनिर्मन्मथपीडितः'—इति देवी भागवते (२।२।१९) । कुलिकवृक्षः; स्त्री. [ पणायन्ते व्यवहरन्त्यस्यामिति ] पण्यवीथी; हट्टः । ५११

**पाणिग्रहणम्** क्ली. [ पाणिग्रहणं यत्र ] विवाहः; 'इति स्वसुभोजकुलप्रदीपः सम्पाद्य पाणिग्रहणं स राजा । महीपतीनां पृथग्रहणार्थं समादिदेशाधिकृतानविश्रीः'—इति रघौ (७।२९) । ४९५

**पाणिजः** पुं. [ पाणी जातः इति । पाणि+जन्+ 'सप्तम्यां जनेर्डः' इति ड ] नखः; करभूः । ५११

**पाणिमुक्तम्** क्ली. [ पाणिम्यां गृहीत्वा मुक्तं परित्यक्तम् ] अस्त्रं; तच्चशक्तिचक्रपरिधादिरूपम् । 'यन्त्रमुक्ते पाणिमुक्ते विमुक्ते मुक्तधारिते । अस्त्राचार्या निरुद्धेः कुशलश्च विशिष्यते'—इति मात्स्ये (२०२।४०) । ४६३

**पाणिमूलम्** क्ली. [ पाणेर्मूलम् पूर्वभागः ] मणिवन्वः ।

**पाण्डुरः** पुं. [ पण्डते मनोऽस्मिन्, पडि गती, बाहुलकाद् अर, दीर्घश्च ] श्वेतवर्णः; [ पाण्डुरः शुक्लवर्णोऽस्त्यस्येति; अच् ] मरुवकवृक्षः; पर्वतविशेषः; 'अञ्जनः कुक्कुटः कृष्णः; पाण्डुरश्चात्रलोत्तमः'—इति मार्कण्डेये (४४।१०) । ऐरावत कुलोत्पन्ननागविशेषः; 'पारावतः पारिजातः पाण्डुरो हरिणः कृशः । विहङ्गः शरभो भेदः प्रमोदः संहतापनः । ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।११-१२) । पक्षिविशेषः; 'गृध्रः कङ्कः कपोतश्च उलूकः श्येन एव च । चित्तलश्च घर्मचित्तलश्च भासः पाण्डुर एव च । गृहे यस्य पतन्त्येते गेहं तस्य विपद्यते'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । तद्वर्णविशिष्टे त्रि. । 'असिताम्बरसंवीतं पाण्डुरं पाण्डुरासनम्'—इति हरिवंशे (८२।५०) । क्ली. [ पाण्डुरो वर्णोऽस्त्यस्येति, अच् ] कन्दपुष्पं; गैरिकम् । ७३२

**पाण्डुः** पुं. [ पडि गती+ 'मृगय्वाद्यश्च' इति कु प्रत्ययः निपातनात् धातोर्दीर्घश्च ] शुक्लपीतमिश्रितवर्णः; हरिणः; पाण्डुरः; पाण्डुरः; 'सितपीतसमायुक्तः पाण्डुवर्णः प्रकीर्तितः'—इति सुभूतिः । भेदोऽपि दृश्यते, यथा—'पाण्डुरस्तु रक्तपीतभागी प्रत्युषचन्द्रवत् । पाण्डुस्तु पीतभागाद्धः केतकीबूलिसन्निभः'—इति भरतः । तद्वति त्रि. । 'शरीर सादादसमग्रभूषणा मुखेन सालक्षत लोभ्रपाण्डुना'—इति रघौ (३।२) । नृपतिविशेषः; स तु शन्तनुपुत्रचित्रवीर्यस्य क्षेत्रे व्यासाज्जातः; नागभेदः; श्वेतहस्तीः; सितवर्णः; रोगविशेषः; 'पाण्डुरोगाः स्मृताः पञ्च वातपित्तकफैस्त्रयः । चतुर्थः सन्निपातेन पञ्चमो भक्षणान्मृदः'—इति माधवकरः । स्त्री. [ पडि+कु ] मापपर्णी; पाण्डुवर्णस्त्री । ७३२

**पाण्डुभूमः** त्रि. [ पाण्डुभूमिरत्र इति । 'कृष्णोदकपाण्डुसङ्घ्यापूर्वाया भूमेरजिष्यते' इत्युक्त्या अच् समासे ] पाण्डुवर्णभूमियुक्तदेशः; 'पाण्डूदक् कृष्णतो भूमिः पाण्डूदक् कृष्णमृत्तिका'—इति हेमचन्द्रः । १६०

**पाण्डुरः** पुं. [ पाण्डुरस्यास्तीति । पाण्डु+ 'नगपांशुपाण्डुम्यश्च' इति र ] श्वेतपीतमिश्रितवर्णः । तद्वति त्रि. । 'तत् उच्चैःश्रवा नाम हयोऽमूच्चन्द्रपाण्डुरः । तस्मिन् वलिः स्पृहाञ्चक्रे नेन्द्र ईश्वरशिक्षया'—इति भागवते (८।८।३) । कामलारोगः; क्ली. (६०४) दिवत्ररोगः; कुष्ठरोगविशेषः । ७३२

पातकम् क्ली. [ पातयति अधो गमयति दुष्क्रियाकारिण-  
मिति । पत्+णिच्+प्बुल् ] नरकसाधनम्; अशुभं;  
दुष्कृतं; दुरितं; पापम्; एनः; पाप्मा; कित्त्वषं;  
कलुषं; किण्वं; कल्मषं; वृजिनं; तमः; अंहः;  
कल्कम्; अघं; पङ्कम्; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुव-  
ङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापितैः सह'  
—इति मनुः (११।५५) । ६२७

पातालम् क्ली. [ पतन्त्यस्मिन् दुष्क्रियावन्त इति । पत्+  
'पतिचण्डिम्यामालम्' इति आलम् । पादस्य तले वर्तते  
इति, पृषोदरादित्वात् साधुरित्येके ] भुवनविशेषः;  
अधोभुवनं; बलिसभ; रसातलं; नागलोकः; अधः;  
उरगस्थानम्; 'अतलं नितलं चैव वितलं च गभस्तिमत् ।  
तलं सुतलपातालै पातालानि तु सप्त वै'—इति शब्द-  
रत्नावली । विवरं; वडवानलः; लग्नाच्चतुर्यस्थानम्;  
'पातालं हिवुकं चैव सुहृदम्भश्चतुर्यकम्'—इति ज्योति-  
स्तत्त्वम् । पुं. [ पतति जारणार्थं पारदादिकं यत्र ।  
पत्+आलम् ] औषधपाकार्थयन्त्रविशेषः । 'ऊर्द्धमाप-  
स्तले वह्निर्मध्ये तु रससङ्ग्रहः । पातालयन्त्रमेतद्धि  
शोधयेत् सूतकादिकम्'—इति वैद्यके । ६२३

पातालनिलयः पुं. [ पाताले पातालं वा निलयो यस्य ]  
दैत्यः; सर्पः । ५

पात्रम् क्ली. [ पाति रक्षति क्रियामाधेयं वा । पिबन्त्य-  
नेनेति वा । पा रक्षणे, पा पात्रे वा+ 'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्'  
इति ष्ट्रन् ] आधेयवारणवस्तु; अमत्रं; भाजनं; भाण्डं;  
कोशः; कोषः; पात्रो; कोशी; कोषी; कोशिका;  
कोषिका; 'सकलगुणगणानामेकपात्रं पवित्रम् अखिलभुवन-  
मानुर्नाट्यवद्यद्विचित्रम्'—इति देवीभागवते (१।२।४०) ।  
योग्यं; सूवादि; राजमन्त्री; तीरहयान्तरं; पर्णः;  
नाटयानुकर्ता; आढकपरिमाणम्; 'पात्रं तदेव विज्ञेयं  
चतुः प्रस्थमथाढकम्'—इति चरके । सूवादि (४।१५);  
तीरहयान्तरम् (६६८); त्रि. नानागुणालङ्कृतो  
जनः; 'अपात्रः पात्रतां याति यत्र पात्रो न विद्यते'  
'शुभे पात्रे ये गुणा गोप्रदाने तावान् दोषो ब्राह्मण-  
स्वापहारे'—इति महाभारते (१३। ६९। २२) ।

३२७

पायम् क्ली.—जलं; पानीयम्; नीरम्; अम्बु । ६४८  
पायः [ स् ] क्ली. [ पाति रक्षति जीवानिति । पा+ 'उदके

युट् च' इति असुन् युट् च । पातेरेवोदके वाच्येऽसुन्  
तस्य युडागमः ] जलम्; 'खरसन्तापशमनी खनिः  
पीयूषपायसाम्'—इति काशीखण्डे (२९।४९) । ६४८  
पायेयम् क्ली. [ पयि साधुरिति, 'पय्यतिथिवसति-  
स्वपतेर्हन्' इति ढन् ] पयि व्ययितव्यद्रव्यं; शम्बलं;  
सम्बलम्; 'लुण्ठिता तस्करैर्मणिं वस्त्रमात्रा तथा कृता ।  
पायेयं च हृतं सर्वं बालपुत्रा निराश्रया'—इति देवी-  
भागवते (३।२५।१२) । कन्याराशिः; 'क्रियतावुरिजि-  
तुमकुलीरलेयपायेययूककौपिथ्याः । तौक्षिक आकोकेरी  
हृद्गोश्वान्त्यभंवेद्यम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ३५८

पादः पुं. [ पद्+करणे घञ् ] मयूखः; किरणः; शैल-  
प्रत्यन्तपर्वतः (१६७); वृक्षमूलं (१८३); (५११)  
[ पद्यते गम्यतेऽन्न ] पात्; पत्; अङ्घ्रिः; अङ्घ्रिः;  
चरणः; मन्त्रश्लोकचतुर्थांशः; पादद्वारा पादाक्रमणादि-  
निषेधो यथा—'पादेन नाक्रमेत् पादमुच्छिष्टं नैव लङ्घ-  
येत् । न संहताभ्यां पाणिभ्यां कण्डूयेदात्मनः शिरः'  
—इति कर्मलोचनम् । वृष्णः; तुरीयांशः; चतुर्थभागः;  
महाद्रिसमीपे क्षुद्रपर्वतः; 'उभयोर्विन्ध्यक्षयोः पादे  
नगयोस्तां महापुरीम्'—इति हरिवंशे (९।४।२७) ।  
शिवः; 'न्यायनिर्वापणः पादः पण्डितो ह्यचलोपमः  
—इति महाभारते (१३।१७।१२४) । चिकित्सा-  
पादचतुष्टयम्, 'त्रैद्यो व्याध्युपसृष्टस्तु भेषजं परिचारकः ।  
एते पादादि चिकित्सायाः कर्मसाधनहेतवः'—चरके । ३९  
पादकटकः पुं. [ पादस्य कटक इवेति ] नूपुरः; खशून्य-  
हंसाकृतिचरणभूषणं; हंसकः । : ५६१

पादचारी [ न् ] पुं. [ पादाभ्यां चरतीति । चर् गतौ+  
णिनि ] पदातिः; पद्भ्यां गमनशीले त्रि. । गिरिराट्  
पादचारीव पद्भ्यां निर्जरयन् महीम् । जग्रास स समा-  
साद्य ब्रजिनं सहवाहनम्'—भागवते (६।१२।२६) । ४५०  
पादपः पुं. [ पादेन मूलेन पिबति रसानिति । पा+क ]  
वृक्षः; 'यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्रालपधीरपि ।  
निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते'—इति हितो-  
पदेशे (१।६३) । [ पादो पाति रक्षतीति । पा  
रक्षणे+क ] पादपीठः । १७७

पादवन्धः पुं. [ पादयोगोमहिष्यादीनां बन्धः यद् बन्धनम् ।  
वन्धयत्यनेन, घञ् ] गोमहिष्यादिवन्धनं; शृङ्खला;  
पादवन्धनद्रव्यम् । २२३



पादरक्षणम् क्ली. [ पादयोः रक्षणं यस्मात् ] पादुका;  
पादत्राणम् । ३११

पादघल्मीकः पुं. [ पादे वल्मीक इव ] रोगविशेषः; पाद-  
रोगभेदः; श्लीपदम् । ६०४

पादाग्रम् क्ली. [ पादयोरग्रम् ] चरणाग्रभागः; प्रपदम् ।  
५२९

पादातः पुं. [ पादाभ्यामततीति । अत्+अच् ] पादातिः;  
पादातिकः । 'पदातिपत्तिपादातपादातिकपदाजयः'  
—इत्यमरमाला । ४५०

पादातिः पुं. [ पादाभ्यामततीति । अत्+इन् ] पदातिः;  
पादातिकः । ४५०

पादातिकः पुं. [ पादातिरेव, पादाति+स्वार्थे कन् ]  
पदातिः; पादातिकः । ४५०

पादावर्तः पुं. [ पाद इव आवर्तते इति । पाद+आ+वृत्+  
अच् ] अरघट्टकः; अरघट्टः । ६८५

पादाविकः पुं. [ अच् रक्षणे+भावे घञ् । पादेव अवः  
रक्षणम् । तत्र पादावे, पादेन शरीरादिरक्षणे नियुक्तः ।  
पादाव+तत्र नियुक्तः इति ठक् ] पदातिः; पादा-  
तिकः; पादातिः; पादातः । ४५०

पादुका स्त्री. [ पद्यते अनया, पद् गती+णित्कशिप-  
पद्यतेः इत्यु; पाद्ः । पाद्दरेव, स्वार्थे कन् ततो ह्रस्वः ]  
चर्मादिनिर्मितपादाच्छादनं; पाद्दः; उपानत्; पन्नद्धा;  
पादरक्षिका; प्राणिहिता; पन्नद्धी; पादरथी;  
कौषी । ३११

पादुकाकारः पुं. [ पादुकां करोतीति । कृ+कर्मण्यण्  
इत्यण् ] चर्मकारः; पादुकाकृत्; पाद्दकृत् । ५९६

पापम् क्ली. [ पीयते खगादिभिर्यत्र । पा+अधिकरणे+  
ल्युट् ] कुल्या; [ पा पाने+भावे ल्युट् ] पीतिः; द्रव-  
द्रव्यस्य गलाघः करणम्; 'पयः पानं भुजङ्गानां केवलं  
विषवद्धनम्'—इति हितोपदेशे । भाजनं; [ पा रक्षणे+  
भावे ल्युट् ] रक्षणं; [ पीयते यदिति । कर्मणि ल्युट् ]  
जलं; [ पाति रक्षतीति । पा+ल्यु ] रक्षाकर्तारि त्रि. ।  
'व्रतानि पानो अमृतस्य चारुण उभे नृचक्षा अनु पश्यते  
विशी'—इति ऋग्वेदे ( ९।७०।४ ) । पायनम्; अस्त्र-  
शस्त्राणां तीक्ष्णाग्रतासम्पादनव्यापारभेदः । पुं. [ पीयते  
यस्मादिति । पा+अपादाने ल्युट् ] शौण्डिकः; निश्वासः ।  
६८५

पानगोष्ठी स्त्री. [ पानस्य पानाय वा गोष्ठी ] यत्र  
सम्भूय पीयते; मद्यपानचक्रम्; आपानं; पानगोष्ठिका ।  
३२८

पानीयम् क्ली. [ पीयते यत् इति । पा+अनीयर् ] जलं;  
पातव्ये रक्षणीये च त्रि. । पानार्हद्रव्यविशेषः; 'शरवत'  
इतिभाषा । ६४८

पानीयशाला स्त्री. [ पानीयस्य जलस्य वितरणार्थं शाला  
गृहम् ] जलावस्थानगृहं; प्रपा; पानीयशालिका । २९७

पान्यः त्रि. [ पथि कुशलः, पन्थानं नित्यं गच्छतीति वा ।  
'पथो ण नित्यम्', 'पथः पन्थ च' इत्यनेन पन्थादेशे कृते  
ण ] पथिकः; 'यथा निदाघसमये सूर्यांशुपरिपीडितः ।  
पान्यो याति जल दृष्ट्वा त्वरितं तत्पिपासया'—इति  
हरिवंशे ( ४२।२ ) । अध्वनीनः; अध्वगः । ३५७

पापः त्रि. [ पाति रक्षति अस्मादात्मानमिति । पा+पानी-  
विधिभ्यः पः इति प, तत अर्श आद्यच् ] अधमः; निकृष्टः;  
'पुण्यां योनिं' पुण्यकृतो व्रजन्ति पापां योनिं पापकृतो  
व्रजन्ति । कीटाः पतङ्गाश्च भवन्ति पापा न मे विवक्षास्ति  
महानुभाव !—इति महाभारते ( १।९०।१९ ) ।  
( ६२७ ) अधमः; दुरदृष्टः; पङ्कः; पाप्मा; पापं;  
किल्बिषं; कल्मषं; कलुषं; वृजिनम्; एनः; अधमः;  
अंहः; दुरितं; दुष्कृतं; पातकं; तूस्तं; कण्वं; शल्यं;  
पापकम्; 'अनुष्ठानं निषिद्धस्य त्यागो विहितकर्मणः ।  
नृणां जनयतः पापं क्लेशशोकभयप्रदम्'—इति महा-  
निर्वाणतन्त्रे । 'प्राणाभिपातनं स्तेन्यं परदारमथापि च ।  
त्रीणि पापानि कायेन सर्वतः परिवर्जयेत् ।' असत्प्रलापं  
पारुष्यं पैशुन्यमनृतं तथा । चत्वारि वाचा राजेन्द्र !  
न जल्पेत न चिन्तयेत् । अनभिध्या परस्वेषु सर्वस्वेषु  
सौहृदम् । कर्मणां फलमस्तीति त्रिविधं मनसा चरेत्  
—इति शान्तिपर्वणि । अनिष्टः; ववः; 'तस्मान्न  
लक्ष्मणे रामः पापं किञ्चित् करिष्यति । रामस्तु भरते  
पापं कुर्यादेव न संशयः—रामायणे ( २।८।३२ ) । ३३७

पापार्द्धः स्त्री. [ पापानाम् ऋद्विवृद्धियत्र ] मृगया; आखेटः;  
आखेटकः; 'अस्ति कस्मिश्चिद्वनोद्देशे क्रश्चित् पुलिन्दः ।  
स च पापार्द्धं कर्तुं वनं प्रस्थितः'—इति पञ्चतन्त्रे  
( २।७८ ) । ४३५

पाप्मा [ न् ] पुं. [ पा+नामन्सोमन्निति ] मनिन् पुगागमे  
त्रिपातनात् साधुः; ] पापम्; 'अनेन क्रमयोगेन परिव्रजति

यो द्विजः । स विबूयेह पाप्मानं परं ब्रह्माधिगच्छति—  
इति मनुः (६।८५) । ६२७

पाम [ न् ] क्ली. [ पा+मनिन् ] विचचिका; 'सूक्ष्मा  
बह्वचः पीडकाः श्राववत्यः, पामेत्युक्ताः कण्डूमत्यः  
सदाहाः—' इति माघवकरः । ६०२

पामरः त्रि. [ पाम पापादिदीरात्म्यमस्त्यस्येति । पामन्+  
'अश्मादिभ्यो रः—'इत्युक्त्या र । ततो नलोपे साधुः ]  
नोचः; 'द्वरात् पामरफूक्तैः श्रुतिपथप्राप्तैः प्रबुद्धस्त्वभूद्,  
धृष्टो निशंरवारिभिः सहमनाः स्वभ्रे निमज्जन्निव'  
—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।३७८) । खलः; मूखः;  
'दीनः; असहायः । ३४८

पामा [ न् ] स्त्री. [ पामन्+'मनः' इति न डीप् ] कच्छूः;  
'हरिद्रा हरितालं च दूर्वा गोमूत्रसैन्धवम् । अयं लेपो हन्ति  
दद्रुं पामानं वै गरं तथा ।' 'माहिषं नवनीतं च सिन्दूरं  
च मरीचकम् । पामा विलेपिता नश्येत् बहुलापि वृष-  
ध्वज'—इति मारुडे । ६०२

पायसः पुं.—क्ली. [ पयसा संस्कृतः, पयसो विकारः वा ।  
तदर्थे अण् ] परमाजम्; 'अतप्ततण्डुलो घौतः परिभृष्टो  
घृतेन च । खण्डयुक्तेन दुग्धेन पाचितः पायसो भवेत् ।  
पायसः कफकृद्वत्यो विष्टम्भी मधुरो गुरुः ।' 'पितृनुद्दिश्य  
यो भक्त्या पायसं मधुसंयुतम् । गुडसर्पिस्तिलैः सार्धं  
गङ्गाम्भसि विनिः—क्षिपेत् । तृप्ता भवन्ति पितरस्तस्य  
वर्षशतं हरे ! । यच्छन्ति विविवान् कामान् प्रतितुष्टाः  
पितामहाः—'इति स्कान्दे । ३२०

पायिकः पुं.— पदातिकः । ४५०

पायुः पुं. [ पाति रक्षति शरीरं मलनिस्सारणेनेति ।  
यद्वा पियति वस्त्यौषधमनेनेति । पा+ 'कृवापाजीति'  
उण्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक् ] मलद्वारम्;  
अपानं; गुदं; च्युतिः; अघोमर्मं; शकृद्द्वारं; त्रिवलीकं;  
वलिः; 'रजोऽग्नीः पञ्चभिस्तेषां क्रमात् कर्मन्द्रियाणि  
तु । वाकृपाणिपादपायूपस्थाभिधानानि जज्ञिरे—'इति  
पञ्चदशी (१।२१) । 'अवागृतिरपानश्च पायुर-  
द्यात्ममुच्यते । अधिभूतं विसर्गश्च मित्रस्तत्राधिदैव-  
तम्—'इति महाभारते । भरद्वाजपुत्रविशेषः; 'अश्वयः  
पायवेऽज्ञात्—'इति ऋग्वेदे (६।४७।२४) । 'पायवे  
भरद्वाजपुत्रायैतत्संज्ञायाम्भ्रात्रे चाश्वयोऽश्ववाने-  
तत्संज्ञाः प्रस्तोकोऽज्ञात् दत्तवान्—'इति तद्भाष्ये साय-

णाचार्यः । पालके त्रि. । 'त्वं पायुदंभे यस्तेऽविद्द्'  
—इति ऋग्वेदे (२।१।७) । ५१३

पारम् क्ली. [ पारयतीति, पार+पचाद्यच् ] परतीरम्;  
नदीलङ्घनाद् गन्तव्यतीरम्; 'नादाव्वेस्तु परं पारं च  
जानाति सरस्वती । अद्यापि मज्जनभयात् तुम्बीं वह्निं  
वक्षसि—'इति सङ्गीतदर्पणे । पुं. [ पूर्णतेऽनेनेति, पू+  
घञ् ] पारदः; प्रान्तभागे पुं. क्ली. । ६६७

पारतन्त्र्यम् क्ली. [ परतन्त्रस्य भावः । परतन्त्र+ष्यम् ]  
परतन्त्रता; पराधीनत्वम्; अन्यायत्तता; 'दोषाणां सन्-  
वेतानां विकल्पेऽशांशकल्पना । स्वातन्त्र्यपारतन्त्र्याभ्यां  
व्याधेः प्राधान्यमादिशेत्—'इति माघवकरः । ८५१

पारदः पुं. [ जरामरणसङ्कटादिभ्यः पारं ददातीति । पार+  
दा+क ] धातुविशेषः; रसराजः; रसनायः; महारसः;  
रसः; महातेजः; रसलेहः; रसोत्तमः; सूतराट्;  
चपलः; जैत्रः; शिवबीजं; शिवः; अमृतं; रसेन्द्रः;  
लोकेशः; दुर्द्धरः; प्रभुः; रुद्रजः; हरतेजः; रसवातुः;  
अचिन्त्यजः; खेचरः; अमरः; देहदः; मृत्युनाशकः;  
सूतः; स्कन्दः; स्कन्दाशकः; देवः; दिव्यरसः; रसायन-  
श्रेष्ठः; यशोदः; सूतकः; सिद्धवातुः; पारतः; हरबीजं;  
रजस्वलः; शिववीर्यं; शिवाह्वयः; 'पारा' इति भाषा ।  
'पारदः सकलरोगनाशकः षड्भूती निखिलयोगवाहकः ।  
पञ्चभूतमय एष कीर्तितो देहलोहवरसिद्धिकारकः ।  
मूर्च्छितो हरते व्याधीन् वद्धः खेचरसिद्धिदः । सर्वसिद्धिकरो  
लीनो निरुच्यो देहसिद्धिदः । विविधव्याधिभयोदयमरण-  
जरासङ्कटेऽपि मर्त्येभ्यः । पारं ददाति यस्मात्तस्मादयं  
पारदः कथितः—'इति राजनिर्घण्टः । सगरराजकृत-  
मुक्तकेशम्लेच्छजातिविशेषः; 'कौरता दरदा दर्वाः शूरा  
वैयामकास्तथा । औदुम्बरा दुर्विभागाः पारदाः सह  
वाह्निकैः—'इति महाभारते (२।५।१।३) । ८६१

पारम्पर्यम् क्ली. [ परम्पराया आगतम् । 'तत आगतः'  
इत्यण् । चतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ् । परम्परा+स्वार्थे  
ष्यञ् वा ] आम्नायः; कुलक्रमः; 'यस्मिन्देसो य आचारः  
पारम्पर्यक्रमागतः । तत्र तं नावमन्येत धर्मस्तत्रैव तादृशः'  
—इति विवादमङ्गारणकः । ४०२

पारशावः पुं. [ पारशुरेव, स्वार्थे अण् ] शस्त्रं, तत्तु लौहं;  
शूद्रायां विप्रतनयः, स तु निषादजातिः; 'ब्राह्मणा-  
द्वैश्यकन्यायामम्बुष्ठो नाम जायते । निषादः शूद्रकन्यायां

यः पारशव उच्यते । स पारयन्नेव शवस्तस्मात् पारशवः स्मृतः । स जीवन्नेव शवतुल्यः—इति मनुकुल्लकभट्टौ ।

१७१

पारशीकः पुं. [ पृषोदरादित्वात् सकारस्य शकारः ] पारसीकः घोटकः । ४३९

पारसीकः पुं. [ पारसीके देशे भवः । पारसीक+‘कोपघाच्च’ इत्यण् ] पारसीकदेशोद्भवघोटकः; वनायुजः; परादनः; आवट्टुजः; ‘पारसीकास्ताजिकाभाः कौङ्कणाः केचिदुन्नताः’—इति अश्ववैद्यके (६८) । देशविशेषः; पारसिकः; तद्देशोद्भवे त्रि. । ‘पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थस्य लवर्त्मना’—इति रघौ (४।६०) । ४३९

पारायणम् क्ली. [ पारं समाप्तिम् अयते गच्छति प्राप्नोति ] साकल्यवचनम् [ पारमयन्ते समाप्ति प्राप्नुवन्ति येनेति अय्+ल्युट् करणे ] पुराणपाठः; ‘वर्येद् ब्राह्मणं शान्तं पारायणकृते तदा’—इति देवीभागवते (३।२६।१७) ।

४०१

पारावारः पुं. [ पारावारं तटद्वयं, पारम् अवारं च वा अस्त्यस्येति अच् ] समुद्रः; ‘यदल्पं कीलालं कलयितुमशक्तः स तु नरः, कथं पारावाराकलनचतुरः स्यादृतमतिः’—इति देवीभागवते (१।५।५९) । क्ली. [ पारं नद्यादिपरपारम् आवृणोतीति । आ+वृ+‘कर्मण्यण्’ इत्यण् ] तटद्वयम् । ६५२

पाराशरी [ न् ] पुं. [ पाराशर्येण (पराशरपुत्रव्यासेन) प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते इति । पाराशर्यं+‘पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः’ इति णिनि ] मस्करी; चतुर्थाश्रमी; [ पराशरेण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रम् इत्यर्थे अणि पाराशरं, तद्विद्यतेऽस्याध्ययनार्थेति ] ४०९

पाराशर्यः पुं. [ पराशरस्यापत्यम् । पराशर+‘गर्गादिभ्यो यञ्’ इति यञ् ] व्यासः; ‘पाराशर्यं ! महाभाग ! यत्वं पृच्छसि मामिह’—इति देवीभागवते (१।४।३२) । ४१३

पारिजातकः पुं. [ पारमस्यास्तीति पारी समुद्रस्तस्मात् जातः । समुद्रमन्थनकाले तद्गर्भजातत्वात् तथात्वम् । पारिजात+स्वार्थे कन् । यद्वा पारिणीऽद्रेजातः पारिजातः, स्वार्थे क । ‘पारे जातो विष्णुपद्याः पारिजातेति शब्दितः’ पारि पारं प्राप्तं जातं जन्म यस्य ] देवतरुः; मन्दारः; पारिभद्रवृक्षः; सुस्तरुः; ‘पारिभद्रे तु मन्दारुर्भन्दारः पारिजातकः’—इति हेमचन्द्रः । १३५

पारिपन्थिकः पुं. [ परिपन्थं पन्थानं वर्जयित्वा व्याप्य वा तिष्ठति, परिपन्थं हन्तीति, वा । ‘परिपन्थञ्च तिष्ठति’—इति ठक् ] चौरः; चौरः; तस्करः । ३३८

पारिप्लवम् त्रि. [ परि+प्लु+अच् । ततः प्रज्ञाद्यण् ] चञ्चलम् । ‘तयोपचाराञ्जलिखिलहस्तया ननन्द पारिप्लवनेत्रया नृपः’—इति रघौ (३।११) । व्याकुलः; क्ली. तीर्थविशेषः; ‘ततः पारिप्लवं गच्छेतीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् अग्निष्टोमातिरात्राम्यां फलं प्राप्नोति भारत!’—इति महाभारते (३।८३।१२) । पुं. जलपक्षी; ‘पारिप्लवशतैर्जुष्टा बर्हिक्वीञ्चनिनादिता । रमणीया नदी सीम्या मुनिसङ्घनिषेविता’—इति रामायणे (४।२७।२३) । पञ्चममन्वन्तरीयप्रकृतिविशेषः; ‘देवाश्चाभूतरजसस्तथा प्रकृतयोऽपरे । पारिप्लवश्च रैम्यश्च मनोरन्तरमुच्यते’—इति हरिवंशे (७।२७) । ६९५

पारिभद्रकः पुं. [ परितो भद्रमस्मात् परिभद्रस्ततः प्रज्ञाद्यण्, पारिभद्रः । पारिभद्र एव+स्वार्थे कन् ] वृक्षविशेषः; निम्बतरुः; मन्दारः; पारिजातकः; रक्तकुसुमः; कुमिध्नः; बहुपुष्पः; रक्तकेसरः; देवदारुवृक्षः; ‘पलाशैस्तिलकैश्चूतैश्चम्पकैः पारिभद्रकैः’—इति महाभारते (१।१२५।३) । निम्बवृक्षः; कुष्ठोपधे क्ली. । २००

परियानिकः पुं. [ परियानं प्रयोजनमस्य । परियान+ठक् ] अंध्वरयः; परिघातिकः । ४४५

परिरक्षकः पुं. [ परिरक्षति आत्मानमिति । परि+रक्ष्+ण्वल्; ततः प्रज्ञाद्यण् ] मस्करी; तापसः । ४०९

परिरक्षिकः पुं. [ परिरक्षया चरति, ठक् ] पारिरक्षकः मस्करी, तापसः । ४०९

पार्थिवः पुं. [ पृथिव्या ईश्वरः । पृथिवी+‘तस्येश्वरः’ इति अण् ] राजा; ‘तेषां तु समवेतानां मान्यो स्नातकपार्थिवी । राजस्नातकयोश्चैव स्नातको नृपमानभाक्’—इति मनुः (२।१३९) । वत्सरविशेषः; ‘बहु शस्यानि जायन्ते सर्वदेशे सुलोचने । सौराष्ट्रलाटदेशे च पार्थिवे नाश संशयः’—इति चिन्तामणी । [ पृथिव्या अयम् इत्यण् ] शरावः; [ पृथिव्या विकार इति, ‘सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणौ’ इत्यञ् ] पृथिवीविकृती त्रि. । ‘पार्थिवादारुणो धूमस्तस्माद्रग्निस्त्रीपीमयः’—इति भागवते (१।२।२४) । [ पृथिव्या निमित्तं संयोग उत्पातो वा ]

पृथिवीसम्बन्धिनि त्रि. । 'मधुमत् पार्थिवं रजः' । ४२१  
 पार्वती स्त्री. [ पर्वतो हिमाचलस्तस्य तदधिष्ठातृदेवस्येति  
 भावः, अपत्यमिति । अण्+डीप् ] दुर्गा; उमा; गौरी;  
 शिवा; भवानी; रुद्राणी; 'तिथिभेदे कल्पभेदे पर्वभेद-  
 प्रभेदतः । ख्याती तेषु च विख्याता पार्वती तेन कीर्तिता ।  
 'महोत्सवविशेषश्च पर्वस्विति प्रकीर्तितम् । तस्याधि-  
 देवी यां सा च पार्वती परिकीर्तिता ।' 'पर्वतस्य सुता  
 देवी साविर्भूता च पर्वते । पर्वताधिष्ठातृदेवी पार्वती तेन  
 कीर्तिता'—इति प्रकृतिखण्डे दुर्गापाख्यान ५४ अध्यायः ।  
 शल्लकी; गोपालपुत्रिका; द्रौपदी; जीवनी; सौराष्ट्र-  
 मृत्तिका; क्षुद्रपाषाणभेदा; घातकी; सैहली । १५

पार्वणः त्रि. [ स्पृश्+श्वण् घातोः पृ आदेशश्च ] समीपं;  
 चक्रोपान्तं; [ पशूनां समूहः, अण् ] पशुगणः; पावर्वा-  
 स्थिसमूहः; अनृजुर्पायः । क्ली. -मुं. [ स्पृश्यते इति,  
 स्पृश्+स्पृशोःश्वणशुनौपृच' इति श्वण्, पृ आदेशश्च ]  
 कक्षाधोभागः । 'तिर्यक् प्रणिहिते नेत्रे तथा पार्वर्वा-  
 पीडिते'—इति सुश्रुते । 'न मे दूरे किञ्चित् क्षणमपि न  
 पार्वं रयज्जवात्'—इति शकुन्तलायाम् १ अङ्के ।  
 पुं. जिनः; 'श्रीलश्रीपार्वतीयेशो विश्वसेननृपालये ।  
 ब्रह्मीगर्भे जगन्नाथोऽवतरिष्यति मुक्तये'—इति पार्व-  
 नाथचरित्रे (१०।७१) । 'विश्वसेनपतेर्ब्रह्मयाः स गर्भोऽ-  
 वतरिष्यति । श्रीपार्वनाथ एवाद्यतीर्थकर्ता जगद्गुरुः'  
 —इति पार्वनाथचरित्रे (११।३९) । ६९३

पार्ष्णिः पुं. - स्त्री. [ पृष्यते भूम्यादिकमनेनेति । पृष्+  
 'घृणिपृदिनपार्ष्णिचूणिभूणि' इति निप्रत्ययेन निपातनात्  
 साधुः ] सैन्यपृष्ठम्; 'उशाना तस्य जग्राह पार्ष्णिमाङ्गि-  
 रसस्तदा'—इति हरिवंशे (२५।३२) । पृष्ठं;  
 जिगीषा; 'सैन्यपृष्ठे पुमान् पार्ष्णिः पश्चात्पदजिगी-  
 षयो'—इतिरत्नकोशः । गुल्फस्याधोभागः; पादग्रन्थ्य-  
 धरः; स्त्री. उन्मदस्त्री; कुन्ती । ८२७

पालाशः पुं. [ पलाशस्य वर्णं इव वर्णोऽस्त्यत्रेति+अण् ]  
 हरिद्रणं; 'पालाशताम्रासितकर्बुराणाम्'—इति बृह-  
 त्संहितायाम् । तद्वर्णविशिष्टे पलाशवृक्षसम्बन्धिनि त्रि. ।  
 'ब्राह्मणो वैत्वपालाशो क्षत्रियो वटखादिरौ'—इति  
 मनुः (२।४५) । ७३४

पालिः स्त्री. [ पत्यते पाल्यते इति । पल् पालने+बाहुल-  
 कात् शलतिपलतिभ्याञ्च' इति इण् ] सेतुः; कर्णलता-

ग्रम्; 'यस्य पालिद्वयमपि कर्णस्य न भवेदिह । कर्णपीठं  
 समे मध्ये तस्य विद्धं विवर्द्धयेत्'—इति सुश्रुते । अश्रिः;  
 पङ्क्तिः; 'विपुलपुलकपालिः स्फीतशीत्कारमन्तर्जनि-  
 तजडिमकाकुव्याकुलं व्याहरन्ती'—इति गीतगोविन्दे  
 (६।१०) । अङ्कपभेदः; छात्रादिदेयं; यूका; जात-  
 श्मश्रुस्त्री; प्रान्तः; 'भ्रूपल्लवं धनुरपाङ्गतर्ङ्गितानि  
 वाणा गुणः श्रवणपालिरिति स्मरेण । तस्यामनङ्गज-  
 जङ्गमदेवतायाम् अस्त्राणि निर्जितजयन्ति किमपि-  
 तानि'—इति गीतगोविन्दे (३।१३) । कल्पित-  
 भोजनं; प्रशंसा; उत्सङ्गः; प्रस्थः । ६७६

पालो स्त्री. [ पालि+कृदिकारादिति वा डीप् ] सेतुः;  
 यूका; सश्मश्रुयोषित्; श्रेणी; स्याली; भाषाविशेषः ।

६७६

पावकः पुं. [ पुनातीति, पू पवने+प्वुल् ] अग्निः; 'अपा-  
 वनानि सर्वाणि वह्निसंसर्गतः क्वचित् । पावनानि भव-  
 न्त्येव तस्मात् स पावकः स्मृतः'—इति काशीखण्डे  
 ९ अध्याये । वैद्युताग्निः; 'पावकः पवमानश्च शुचिर-  
 ग्निश्च ते त्रयः । निर्मथ्यः पवमानः स्याद्वैद्युतः पावकः  
 स्मृतः'—इति कौर्म १२ अध्याये । सदाचारः; वह्निमन्थः;  
 'तेजोमन्थो हविर्मन्थो ज्योतिष्को पावकोऽरणिः ।  
 वह्निमन्थोऽग्निमन्थश्च मयनो गणिकारिका'—इति  
 वैद्यकरत्नमालायाम् । चित्रकः; भल्लातकः; विडङ्गः;  
 शोवयितुनरः; रक्तचित्रकः; कुमुम्भः; पवित्रकारके  
 त्रि. । 'मिहः पावकाः प्रतता अभूवन्'—इति ऋग्वेदे  
 (३।३।२०) । ६२

पावनः त्रि. [ पावयतीति, पू+णिच्+ल्यु ] पवित्रः;  
 रघो (१९।५३) । पावयितरि पुं. । व्यासः; पावकः;  
 'पावनः सम्योऽग्निर्यः शीतापनोदनाद्यर्थं बहुषु देशेष्वपि  
 विधीयते'—इति ३।१८५ मनुश्लोकटीकायां कुल्लूकभट्टः ।  
 सिद्धकः; पीतमृङ्गराजः; विष्णुः; 'भूतभव्यभवन्नाथः  
 पवनः पावनोऽनलः'—इति महाभारते (१३।१४९।  
 ४५) । 'पावयतीति पावनः, भीपास्माद्वातः पवते,  
 इति श्रुतेः—इति शङ्करभाष्यम् । सिद्धः; क्ली. [ पावयत्-  
 नेनेति, पू+णिच्+ल्युट् ] जलं; कृच्छ्रं; गोमयं;  
 रुद्राक्षं; कुष्ठं; चित्रकम्; अध्यासः; प्रायश्चित्तं;  
 शुद्धिः; 'सा चेत् पुनः प्रदुष्येत् सद्देशनोपयन्त्रिता ।  
 कृच्छ्रं चान्द्रायणं चैवं तदस्थाः पावनं स्मृतम्'—इति

मनुः (१११७७) । १३२

पाशः पुं. [ पश्यते वध्यते ऽनेनेति । पश्+घञ् ] कचान्ते समूहार्थः; 'श्लथशिरसिजपाशपातभारादिव नितरां नतिमद्भिः संभागैः'— इति माघे (७।६२) । पक्ष्यादि-वन्धनरज्ज्वादि (५९७); 'शकुनीनामिहार्याय पाशं भूमावयोजयत् । कश्चिच्छाकुनिकस्तात ! पूर्वेषामिति शुश्रुम'—इति महाभारते (५।६४।१) । कर्णान्ते शोभनार्थः; छात्राद्यन्ते निन्दार्थः; योगविशेषः; 'यदा राशिपञ्चके सर्वे ग्रहा भवन्ति तदा पाशाख्ययोगो भवति'— इति ज्योतिषे । पारिभाषिकपाशः; 'घृणा शङ्का भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमी । कुलं शीलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः'—इति कुलार्णवे १ उल्लासे । स्वप्नेऽस्य दर्शनफलम्—'कार्पासभस्मा-स्थिकपालशूलं चक्रं च पाशं त्वथवा प्रपश्येत् । तस्यापदो रोगघनक्षयं वा रोगी मूर्तिं त्वा तनुतेऽतिकष्टम्'—इति हारीते । शस्त्रभेदः; 'पाशः सुसूक्ष्मावयवो लौहघातुस्त्रि-कोणवान् । प्रादेशपरिधिः सीसमूलिकाभरणाञ्चितः'—इति वैशम्पायनघनुर्वेदोक्तपाशलक्षणम् । ५३१

पाशापाणिः पुं. [ पाशः पाणौ यस्य ] वरुणः । ७४

पाषाणः पुं. [ पषति पीडयत्यनेनेति । पष् पीडने+वाहुल-कात् आनच् 'पषेणिच्च' इति णित् ] प्रस्तरः; ग्रावः; उपलः; अश्मा; शिला; दृषत्; दृशत्; पारावुकः; पारटीटः; मृन्मरुः; काचकः; 'गतेऽथ नारदे कंसः समाहूयाथ बालकम् । पाषाणे पोययामास सुखं प्राप च मन्दधीः'—इति देवीभागवते (४।२।१।५४) । पाषा-णादिनिमित्तत्वाद् देवताप्रतिमादि; 'पूजा विना प्रतिष्ठां नास्ति न मन्त्रं विना प्रतिष्ठा च । तदुभयविप्रतिपन्नः पश्यतु गोर्वाणपाषाणम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् । १६८

पाषाणसन्धिः पुं. [ पाषाणस्य सन्धिः ] गुहा; कन्दरा; कन्दरी । १६७

पिकः पुं. [ अपिकायति शब्दायते इति । अपि+कै+ 'आतश्चोपसर्गे' इति क । अपेरकारलोपः ] कोकिलः; 'पिक ! विधुस्तव हन्ति समं तमः, त्वमपि चन्द्रविरोधि-कुहूरवः । इति तयोरनिशं हि विरोधिता, कथमहो समता मम तापने'—इत्युद्भटः । २४३

पिङ्गः पुं. [ पिजि वर्णो+अच् कुत्वं च ] पिङ्गलवर्णः; तद्वति त्रि. । 'पद्यपत्राननः पिङ्गस्तेजसा प्रज्वलन्निव'

—इति महाभारते (१।१२३।३२) । मूषकः । ७६  
पिङ्गलः पुं. [ पिङ्गो वर्णोऽस्यास्तीति । पिङ्ग+सिच्म-दिम्यश्च' इति लच् ] नीलपीतमिश्रितवर्णः; कडारः कपिलः; पिङ्गः; पिशङ्गः; कद्दुः; तद्वति त्रि. नागभेदः; 'निष्ठानको हेमगुहो नहुषः पिङ्गलस्तथा'—इति महाभारते (१।३।५।९) । रुद्रः; चण्डांशु पारिपाशिवकः; निधिभेदः; कपिः; अग्निः; मुनि विशेषः; 'ब्रह्माभवत् शाङ्गर्वो अच्वयुश्चापि पिङ्गलः'—इति महाभारते (१।५।३।६) । नकुलः । स्यावर-विषविशेषः; क्षुद्रोलूकः; यक्षविशेषः; 'पिङ्गलो नाम यक्षेन्द्रो लोकस्यानन्ददायकः'—इति महाभारते (३।२३।०।५१) । पर्वतविशेषः; प्रभवादिषष्टिवपन्तिर्ग-तैकपञ्चाशत्तमवर्षः, पिङ्गलाचार्यकृतच्छन्दोग्रन्थविशेषः ।

७३५, ७३६

पिचण्डः पुं. [ अपिचण्डयतेऽनेनेति । अपि+चडि कोपे+घञ्, अपेरलोपः ] उदरं; पशोरवयवविशेषः; पिचिण्डः ।

५१५

पिचिण्डिलः त्रि. [ अतिशयितं पिचण्डमुदरमस्य । पिच-ण्ड+तुन्दादित्वात् इलच् ] तुन्दिलः; 'स्वाहाकारैर्वपट् कारैः सुरा जाताः पिचिण्डिलाः । रचिता गिरयस्तेन सदन्नानां पदे पदे'—इति काशीखण्डे (८७।१२२) ।

६०८

पिचव्यः पुं. [ पिचवे तूलाय साधुः । पिचु+यत् ] कार्पासः । २०२

पिचिण्डः पुं.— उदरं; पशोरवयवविशेषः । ५१५

पिचिण्डिलः पुं. [ अतिशयितः पिचिण्डः उदरमस्य । पिचिण्ड+तुन्दादित्वात् इलच् ] बृहदुदरयुक्तः; पिच-ण्डिलः; बृहत्कुक्षिः; तुन्दी; तुन्दिकः; तुन्दिलः; उदरी; उदरिलः; 'पिचिण्डिलैः स्थूलवक्त्रैर्मेषगम्भीरनिस्वर्नैः'—इति काशीखण्डे । ६०८

पिचुः पुं. [ पेचतीति । पिच् मर्दने+मृगत्वादित्वात् कु ] कार्पासतूलः; 'अशौ वीक्ष्य शलाकयोत्पीडय पिचुवस्त्र-योरन्यतरेण प्रमृज्य क्षारं पातयेत्'—इति शुश्रुते (४।६) । कुष्ठभेदः; कर्षः; असुरविशेषः; भैरवः; सस्यभेदः; चिकित्सोपयोगिपञ्चकर्मन्तर्गतक्रियाविशेषः; 'कामि-न्यां पूतियोन्यां च कर्तव्यः स्वेदनी विधिः । क्रमः कार्यस्ततः स्नेहपिचुभिस्तपणं भवेत् । शल्लकीजिङ्गिनीजम्बुष-

वत्वक्पञ्चवल्कलैः । कषायैः साधितैः स्नेहः पिचुः  
स्याद्विप्लुतापहः—इति वैद्यकचक्रपाणिमं ग्रहे । २०२

पिचुमन्दः पुं. [ पिचुं कुण्डविशेषं मन्दयति नाशयतीति ।  
मन्द्+अण् ] निम्बवृक्षः; 'पश्यानु रूपमिन्दरेण माकन्द  
शेखरो मुखरः । अपि च पिचुमन्दमुकुले मौकुलिकुल-  
माकुलं मिलति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३४९) ।

१९६

पिचुमर्दः पुं. [ पिचुं कुण्डविशेषं मर्दयति मृदनातीति वा ।  
मृद्+अण् ] निम्बवृक्षः; 'असतामुपकाराय दुर्जनानां  
विभूतयः । पिचुमर्दः फलाढयोऽपि काकैरैवोपभुज्यते'  
—इति देवीभागवते (३।१०।१२) । 'कैटयैः पिचुमर्द-  
श्च निम्बोऽरिष्टो वरत्वचा । दद्रुघ्नो हिङ्गुनिर्यास-  
सर्वतोभद्र इत्यपि'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १९६

पिचुलः पुं. [ पिचुं लातीति । ला+क ] झावुकः; इज्जलः;  
जलवायसः; वृलः । १९५

पिच्छम् क्ली. [ पिच्छतीति, पिच्छ्+अच् ] तनूरुहम्;  
मयूरपुच्छं; शिखण्डः; वहैः शिखिपुच्छं; शिखण्डकम्;  
'तस्यारिबलभीमस्य ध्वजदण्डस्य लाच्छनम् । दर्पदीप्तः  
क्षुरप्रेण मायूरं पिच्छमच्छिनत्'—इति अनर्घराघवे  
(६।६५) । चूडा; पुं. लाङ्गूलम् । २३९

पिच्छिलम् त्रि. [ पिच्छा भक्तसम्भूतमण्डम् अस्त्यस्येति ।  
पिच्छादित्वात् इलच् ] पङ्कः; भक्तमण्डयुक्तं; सरस-  
व्यञ्जनादि; सूपानि; स्निग्धसूपानि; मण्डयुक्तभक्तं;  
जलयुक्तव्यञ्जनं; विजिलं; विजयिनं; विजिनं;  
विज्जलं; इज्जलं; लालसीकम्; 'तरुणं सर्षपशाकं  
नवीदनं पिच्छिलानि च दधीनि । अल्पव्ययेन सुन्दरि !  
ग्राम्यजनोमिष्टमश्नाति'—इति छन्दोमञ्जर्याम् । पिच्छ-  
युक्तः; स्निग्धसरसपदार्थविशेषः; 'काले वारिधरा-  
णामपतितयानैव शक्यते स्थातुम् । उत्कण्ठितासि तरले !  
नहि नहि सखि पिच्छिलः पत्याः'—इति साहित्य-  
दर्पणे (१०।१५) । पुं. [ पिच्छं चूडास्त्यस्येति, पिच्छा-  
दित्वात् इलच् ] श्लेष्मान्तकवृक्षः । ६७८

पिञ्जरः पुं. [ पिजि+अर ] पीतरक्तवर्णः; अश्वभेदः;  
सुमेरुपश्चिमपार्श्वस्थपर्वतविशेषः; 'पिञ्जरोऽथ  
महाभद्रः सुरसः कपिलो मधुः'—इति मार्कण्डेये (५।  
९) । पीते त्रि. । 'प्रियंया कुङ्कुमपिञ्जरपाणिद्वय-  
योजनाङ्कितं वासः । प्रहितं मां याचंन्नाञ्जलिसहस्र-

किरणाय शिक्षयति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९१) ।  
क्ली. हरितालं; स्वर्णं; नागकेशरं; पक्ष्यादिवन्धन-  
गृहं; कायास्थिवृन्दम् । ७३७

पिटकः पुं. [ पेटतीति, पिट्+क्वृन् ] विस्फोटः; पिडकः;  
स्फोटकः; 'इति पिटकविभागः प्रोक्त आ मूर्द्धतोऽर्थं  
व्रणतिलकविभागोऽप्येवमेव प्रकल्प्यः । भवति मशक-  
लक्ष्मावर्तजन्मापि तद्वन्निगदितफलकारि प्राणिनां देह-  
संस्थम्'—इति बृहस्संहितायाम् (५२।१०) ।

वंशवेत्रादिमयसमुद्गकः; पेटकः; पेटा; मञ्जूपा; पेटः;  
पेटिका; तरिः; तरी; मञ्जुपा; पेटिका; 'पिटारी,  
पिटारां'—इति भाषा । 'कुट्टालदात्रपिटकास्तद्वत् स्या-  
त्यादिभाजनम्'—इति मार्कण्डेये (५०।८६) । ६०४

पिठरः पुं. [ पिठयते क्लिश्यतेऽनेनेति । पिठ्+करन् ]  
स्थाली; पिठरी; 'गृह्णीष्व पिठरं ताम्रं मया दत्तं  
नराधिप ! । यावत् वत्स्यति पाञ्चाली पात्रेणानेन  
सुव्रत !'—इति महाभारते (३।३।७२) । गृहभेदः;  
कुद्रङ्कः; उद्घाटः; 'विद्युज्ज्वालावलयितजलधरपिठरो-  
दराद्वि निर्यान्ति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५२) ।  
अग्निविशेषः; 'पिठरः पतनः स्वर्गश्चागाधो भ्राज एव  
च । स्वधाकाराश्रयाः पञ्च अयुष्यस्तेऽपि चाग्नयः'  
इति हरिवंशे (१७।३३) । दानविशेषः; 'घटो-  
दरो महापावर्कः क्रथनः पिठरस्तथा'—इति महाभारते  
(२।१।१३) । क्ली. [ पिठं रातीति, रा+क ] मुस्ता;  
मन्यानदण्डः । ३१४

पिडकः पुं. [ पीडयतीति, पीड्+ण्वुल् । निपातनात् साधुः ]  
स्फोटकः; पिटकः । ६०४

पिडका स्त्री. [ पीडयतीति, पीड्+ण्वुल्+टाप् ] स्फोटक-  
विशेषः; पिडिका । ६०४

पिण्डः पुं. क्ली. [ पिण्डते संहतो भवतीति । पिडि संहती+  
अच् । पिण्डयते राशीक्रियते इति, कर्मणि घञ् वा ]  
देहमात्रम्; 'एकान्तविच्वंसिपु मद्रिधानां पिण्डेष्व-  
नास्या खलु भौतिकेषु'—इति रघुवंशे (२।५७) ।  
बोलः; 'विद्वान् गोलः पिण्डकश्च पिण्डी बोली रसो रसः  
—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । बलं; सार्द्रं; देहैकदेशः;  
'द्वौ चास्य पिण्डावधरेण कण्ठादजातरोमी सुमनोहरो  
च'—इति महाभारते (३।११।३) । निवापः;  
पितृतर्पणम्; 'श्रीस्तु तस्माद्द्विशेषात् पिण्डान् कृत्वा

भिर्वरमा पिशङ्गैः शुभे कं यान्ति रथ त्भिर्श्वैः—इति ऋग्वेदे (१।८।८।२) । 'पिशङ्गमीञ्जीयुजमर्जुनच्छवि वसानमेणाजिनमञ्जनद्युति । सुवर्णसूत्राकलिताधरा- म्वरां विडम्बयन्तं शितिवाससस्तनुम्'—इति माघे (१।६) । नागभेदः; 'भैरवो मुण्डवेदाङ्गः पिशङ्गश्चोद्रपारकः'—इति महाभारते (१।५७।१६) । ७३६

**पिशच्चः** पुं. [ पिशितं मांसमश्नातीति । पिशित्+अश्+ 'कर्मण्यण्' ततः 'पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्' इति शित- भागस्य लोपः; अशभागस्य शाचादेशः ] देवयोनिविशेषः; 'यक्षरक्षःपिशाचाश्च गन्धर्वाप्सरसोऽसुरान्'—इति मनुः (१।३७) । प्रेतः; 'अशौचान्ताद्द्वितीयेऽह्नि यस्य नोत्सृज्यते वृषः । पिशाचत्वं भवेत्तस्य दत्तः श्राद्धशतै- रपि'—इति शुद्धितत्त्वे । ८७

**पिशितम्** क्ली. [ पिशति अवयवीभवतीति । पिश्+ 'पिशोः किञ्च' इति इतन् स च कित् । यद्वा पिश्यते स्मेति, क्त ] मांसम्; 'हासोऽस्थिसन्दर्शनमक्षियुग्म् अत्युज्ज्वलं तर्जनमङ्गनायाः । कुचादिपीनं पिशितं घनं तद् स्यान्नं रतेः किं नरकं न योपित्'—इति मार्कण्डेय-पुराणे । ६३१

**पिशिताशनः** पुं. [ पिशितं मांसम् अश्नाति यः सः ] मांस- भक्षकः; पिशिताशी । ११९

**पिशुनः** त्रि. [ पिश्+उनन् स च कित् ] अप्रकाशेनानु- चितप्रबोधकः; परस्परभेदशीलः; दोषग्राही; पुरो- भागी; द्विजिह्वः; मत्सरी; 'द्विजिह्वः सूचकः कर्णेजपः पिशुन इत्यपि । दुर्जनो दुर्वधो विश्वकद्रुश्च पिशुनः खलः'—इति जटाधरः । 'कर्णेजपः सूचकः स्यादनी- चित्यप्रबोधके । परस्परं भेदशीले पिशुनो दुर्जनः खलः'—इति शब्दरत्नावली । 'अनुग्रहेण न तथा व्यथयति कटुकूजितैर्यथा पिशुनः । रुधिरादानादधिकं दुनोति कर्णे ववणन् मशकः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५९) । क्रूरः; 'भ्रामरी गण्डमाली च श्वित्र्ययो पिशुनस्तथा'—इति मनुः (३।१६१) । ३४६

**पिहितम्** त्रि. [ अपिधीयते स्मेति । धा+क्त, 'दधातेहिः' इति ह्यादेशः; अपेरल्लोपः ] आच्छादितं; संवीतं; रुद्धम्; आवृतं; संवृतं; छन्नं; स्थगितम्; अपवारितम्; अन्त- हितं; तिरोहितम्; 'ध्वजेन पिहिताः सर्वा दिशो न प्रति- भ्रान्ति मे । गाण्डीवस्य च शब्देन कर्णो मे वधिरी-

कृती'—इति महाभारते (४।४४।१८) । ७४३  
**पीठम्** त्रि. [ पेटन्त्युपविशन्त्यस्मिन्निति । पिठ्+ 'हलश्च' इति घञ्, बाहुलकादिकारस्य दीर्घः । यद्वा पीयतेऽवेति । पीड्य पाने+बाहुलकात् ठक् ] उपवेशनाधारः; आसनम्; उपासनं; पीठी; विष्टरः; व्रतिनामासनं; कुशास- नादि; वृषी; 'पीठं दत्त्वा साधवेऽम्यागताय आनीयापः परिनिर्णिज्य पादी । सुखं पृष्ट्वा प्रतिवेद्यात्मसंस्थां ततो दद्यादन्नमवेक्ष्य घोरः'—इति महाभारते (५।३८।२) ३१०

**पीडा** स्त्री. [ पीडनमिति, पीड्+ 'पिद्भिदादिभ्योऽड्' इति अड्, ततष्टाप् ] पीडनं; वाधा; व्यथा; दुःखम्; अमानस्यं; प्रसूतिजं; कष्टं; कृच्छ्रम्; आभीलम्; आवावा; शूलं; रुक्; वेदना; आर्तिः; तोदः; रजा; 'यदावगच्छेदायत्यामाधिक्यं ध्रुवमात्मनः । तदात्वे चाल्पिकां पीडां तदा सन्धि समाश्रयेत्'—इति मनुः (७।१६९) । कृपा; शिरोमाला; सरलद्रुः । ६२६

**पीडितम्** त्रि. [ पीड्+क्त । यद्वा पीडास्य जातेति, तारका- दित्वाद् इतच् ] व्याधितं; व्यथितं; दुःखितम्; आवाधितं; स्त्रीणां करणं; यन्त्रितं; मदितं; मन्त्रभेदः; 'सहस्रा- णांधिका मन्त्रा दण्डकाः पीडिता ह्ययाः'—इति तन्त्र- सारे । ७६७

**पीतम्** त्रि. [ पीतो वर्णोऽस्यास्तीति, अच् ] पीतवर्णयुक्तं; हारिद्रम्; 'ये त्विमे निशिताः पीताः पृथवो दीर्घवाससः । हेमशुङ्गास्त्रिपर्वाणो राज्ञ एते महाशराः'—इति महाभारते (४।४१।२०) । [ पा+कर्मणि क्त ] कृतपानम्; 'हाला- हलमपि पीतं बहुशो भिक्षापि भक्षिता भवता । अनयो- रवगतरसयोः कियदन्तरं वद योगिन्' ! [ पीतं पान- मस्त्यस्येति, अच् । यद्वा पीतं नीरं क्षीरं वा येन इत्युत्तर- पदलोपः । यथा--रघो (२।१) 'अथ...वनाय पीत०' ] ७३५

**पीतरक्तम्** त्रि. [ पीतं रक्तञ्च, 'वर्णो वर्णेनेति' सभासः ] पिञ्जरः; क्ली. पुष्परगमणिः । ७३७

**पीतवासाः** [ 'स्' ] पुं. [ पीतं वासो वस्त्रं यस्य ] श्रीकृष्णः; पीतवस्त्रयुक्ते त्रि. 'यः स चक्रगदापाणिः पीतवासाः शितप्रभः'—इति महाभारते (१।६४।५३) । २१

**पीतशालः** पीतशालः पुं. [ पीतः शालो वृक्षविशेषः ] असनवृक्षः; 'पीतशालः परिमलो विमर्दी कासनस्तथा'—इति कालिकापुराणे । १९९

पीनः त्रि. [ ओप्यायी वृद्धौ+क्त, 'ओदितश्च' इति निष्ठातस्येन ] स्थूलः; 'वक्षःस्थलसुप्ते मम मुखेमुपघातं न मौलिमालभसे । पीनोत्तुङ्गस्तनभरदूरीभूतं रतश्रान्तौ—इति आर्यासप्तशत्याम् (५६१) । ३४२

पीनसः पुं. [ पीनं स्थूलमपि जनं स्पति नाशयतीति । सो+क ] नासिकारोगविशेषः; प्रतिश्यायः; अपीनसः; प्रतिश्यायः; नासिकामयः; 'सर्वेषु सर्वकालं पीनसरोगेषु जातमात्रेषु । मरिचं गुडेन दध्ना भुञ्जीत नरः सुखं लभते—इति भावप्रकाशः । 'पिप्ली त्रिकलाचूर्णं मधुसैन्धवसंयुतम् । सर्वरोगज्वरस्वासशोषपीनसहृद्भवेत्—इति गारुडे । ६०५

पीनोद्धनी क्ली. [ पीनं स्थूलमूषोऽस्याः, 'बहुव्रीहेरूपसो डीप्' इति डीप्, 'ऊवपोऽनङ्'—इति उवोऽन्तस्य बहुव्रीहेरनङादेशः ] पीवरस्तनी गीः । २७६

पीयूषम् क्ली. [ पीयते इति, पीय सौत्रधातुः+पीयेरूपन्' इति ऊपन्' अमृतम्; 'खरसन्तापशमनी खनिः पीयूषपायसाम्'—इति काशीखण्डे (२९।४९) । दुग्धम् (२७४); 'पानीयं क्लमनाशनं श्रमहरं मूर्च्छांपिपासापहं, तन्द्राच्छदिविवन्धहृदलकरं निद्राहरं तर्पणम् । हृद्यं गुप्तरसं ह्यजोर्णमशकं नित्यं हितं शीतलं, लघ्वच्छं रसकारणं तु विगते पीयूषवज्जीवनम्—इति भावप्रकाशः । पुं.—क्ली. अभिनवं पयः; नवप्रसूताया गीः सप्तदिनाभ्यन्तरीणदुग्धम्; 'अथ पीयूषपेयूषे नवं सप्तदिनावधि—इति शब्दार्णवः । 'आसप्तरात्रप्रभवं क्षीरं (पी) पेयूष उच्यते—इति हारावली । १३३

पीयूषरुचिः पुं. [ पीयूषं पीयूषमयी रुचिस्त्विद् यस्य ] चन्द्रः; [ पीयूषे अमृते रुचियस्य ] अमृतप्रियः । ४३

पीलुः पुं. [ पीलति प्रतिष्ठन्नातीति । पील्+ 'मृगव्यादयश्च' इति कु ] मतङ्गजः; कोङ्कणादिदेशे प्रसिद्धः फलवृक्षविशेषः; गुडफलः; श्रंसी; शीतसहः; घानी; विरेचनः; फलशाखी; श्यामः; करभवल्लभः; 'उष्ट्रवामीस्त्रिशतञ्च पुष्टाः पीलुशमीङ्गुर्दः—इति महाभारते (२। ५०।४१) । ८३३

पीव [न्] त्रि. [ प्यायते इति, प्यै वृद्धौ+ 'व्याप्योः सम्प्रसारणं च' इति क्वनिप् सम्प्रसारणं च, 'हलः' इति दीर्घः ] स्थूलम्; 'पीवानं श्मश्रुलं प्रेष्ठं मीद्वानं याभकोविदम् । स एकोऽज्वषस्तासां बह्वीनां रतिवर्द्धनः—

इति भागवते (९।१९।६) । ३४२

पीवरस्तनी स्त्री. [ पीवरो स्थूली स्तनी यस्याः । 'स्वाङ्गोपसर्जनाविति' डीप् ] पीनोद्धनी; स्थूलस्तनयुक्ता नारी; 'व्यपोहितुं लोचनतो मुखानिलैरपारयन्तं किल पुष्पं रजः । पयोधरेणोरसि काचिदुन्मनाः प्रियञ्जघानोन्नतपीवरस्तनी—इति किरातार्जुनीये (८।१९) । २७१

पुंश्चली स्त्री. [ पुंसो भक्तुः सकाशात् चलति पुरुषान्तरं गच्छतीति । चल्+अच् । गौरादित्वाद् डीप् ] असती; घृष्टा; दुष्टा; धर्मिता; लङ्का; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'अहो! को वेद भुवने दुर्ज्ञेयं पुंश्चलीमनः । पुंश्चल्यां यो हि विश्वस्तो विधिना स विडम्बितः—इति ब्रह्मवैवर्ते (२३।२४।३२) । ४९६

पुङ्खः पुं.—क्ली. [ पुमांसं खनतीति । खन्+ड ] काण्डमूलम्; 'सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव चित्रापितारम्भ इवावतस्ये—इति रघी (२।३१) । मङ्गलाचारः । ४६८

पुच्छः पुं.—क्ली. [ पुच्छतीति, पुच्छ प्रमादे+अच् ] लाङ्गुलम्; 'खुरघातैस्तया देवान् पुच्छस्य भ्रमणेन च । स जघान रूपाविष्टो महिषः परमाद्भुतः—इति भागवते (५।७।१६) । पश्चाद्भागे पुं. । 'उत्का ज्वलन्ती सङ्ग्रामे पुच्छेनावृत्य सर्वशः—इति महाभारते (७।६। २८) । क्ली. लोमवल्लाङ्गूलं; कलापः । ४४१

पुच्छमूलम् क्ली. [ पुच्छस्य मूलम् ] पुच्छाग्रम् । २१९

पुञ्जः पुं. [ पिञ्ज्यते पिञ्ज्यतीति वा, पिजि+अच् । पृषोदरादित्वात् साधुः ] समूहः; राशिः; 'गृहीतपक्षिपुञ्जश्च शवमात्यैरलङ्कृतः—इति मार्कण्डेये (८।८२) । ६८६

पुटभेदः पुं. [ पुटं संश्लिष्टं भिनत्तीति । भिद्+ 'कर्मण्यण्' इत्यण् ] नदीचक्रम्; 'प्रायेणेव हि मलिना मलिनानामाश्रयत्वमुपयान्ति । कालिन्दीपुटभेदः कालियपुटभेदनं भवति—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९८) । पत्तनम्; आतोद्यं; नदीचक्रम् । ६७१

पुटभेदनम् क्ली. [ पुटं रश्चखुरैर्भिद्यते इति । भिद्+कर्मणि ल्युट् ] नगरम्; 'स हास्तिनपुरे रम्ये कुरुणां पुटभेदने । वसन् सागरपर्यान्तामन्वशासद्वसुधराम्—इति महाभारते (१।१००।१२) । २८५

पुण्डरीकः पुं. [ पुण्डरीकवर्णोऽस्त्यस्येति, अच् ] अग्नि-कोपस्यदिनाजः; व्याघ्रः (२२६); कोपकारभेदः;



सहकारः गणधरः; गजज्वरः; राजिलसर्पः; दमनक वृक्षः; धान्यविशेषः; 'पुष्पाण्डकः पुण्डरीकस्तथा महिष-मस्तकः'—इति भावप्रकाशः। कमण्डलुः; श्वेतवर्णः; क्रीञ्चद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'देवावृतः परेणापि पुण्डरीको महान् गिरिः। एते रक्तमयाः सप्त क्रीञ्चद्वीपस्य पर्वताः'—इति मात्स्ये (१२१।८१)। तीर्थविशेषः; 'शुक्लपक्षे दशम्यां च पुण्डरीकं समाविशत्। तत्र स्नात्वा नरो राजन् ! पुण्डरीकफलं लभेत्'—इति महाभारते (३।८३।७६)। यज्ञविशेषः; 'अश्वमेधो राजसूय पुण्डरीकोऽथ गोसवः। एतैरपि महायज्ञैरिष्टं ते भूरि-दक्षिणैः'—इति महाभारते (३।३०।१७)। नाग-विशेषः; 'नागानामेकवंश्यानां यथा श्रेष्ठन्तु मे शृणु। द्वी पद्मी पुण्डरीकश्च पुष्पो मुद्गरपर्णकः'—इति महाभारते (५।१०३।१३)। रामचन्द्रवंशीयनृप-विशेषः; 'तेन द्विपानामिव पुण्डरीको राजामजय्योऽजनि पुण्डरीकः। शान्ते पितर्याहृतपुण्डरीका यं पुण्डरीका-क्षमिवश्रिता श्रीः'—इति रघौ (१८।८)। [ पुण्डरीकाः सन्त्यत्रेति अच् ] पुण्डरीकविशिष्टे त्रि। 'पयोदस्तु ह्रदो नीलः सशुभः पुण्डरीकवान्। पुण्डरीकात् पयोदाच्च तस्माद् द्वे सम्प्रसूयताम्'—इति मात्स्ये (१२०।६८)।

१०४

पुण्डरीकम् क्ली। [ पुण्डति अन्यपुष्पाणां गर्वं चूर्णीकरो-तीति। पुण्ड मर्दे + 'पर्फरीकादयश्च' इति ईकन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः। 'पुण्तेः पुण्डरीकम्' इत्युज्ज्वलदत्तः ] शुक्लपद्मं; सिताम्भोजं; शतपत्रं; महापद्मं; सिता-म्बुजं; 'पुण्डरीकात्पत्रस्तं विकसत्काशचामरः। ऋतुविडम्ब्यामास न पुनः प्राप तच्छ्रियम्'—इति रघौ (४।१७)। पद्ममात्रं; श्वेतच्छत्रं; भेषजभेदः; सप्त-महाकुशष्ठानामन्यतमः; 'श्वेतं रक्तपर्यन्तं पुण्डरीकदलो-पमम्। सोत्सेवं च सरागं च पुण्डरीकं तदुच्यते'—इति माघवकरः। ६८०

पुण्डरीकाक्षः पुं। [ पुण्डरीकवदक्षिणी नेत्रे यस्य, समासान्तः पच् ] विष्णुः; 'पुण्डरीकं परं धाम नित्यमक्षरमव्ययम्। तद्भावात् पुण्डरीकाक्षो दस्युत्रासाज्जनार्दनः'—इति महाभारते (५।७०।६)। 'अपवित्रः पवित्रो वा सर्वा-वस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्या-भ्यन्तरः शुचिः'—इति वामने। जलचरपक्षिविशेषः;

'उत्क्रोशः पुण्डरीकाक्षो मेघरावोऽम्बुकुक्कुटी'—इति चरके। क्ली। [ पुण्डरीकवदक्षिणी यस्मात्, पच् समासे ] पुण्डर्यम्। २४

पुण्ड्रम् क्ली। [ पुण्डचन्ते गुडशर्कराद्यर्थं चूर्णीक्रियन्ते इति। पुडि मर्दे + 'स्फायितञ्चीति' रक् ] तिलकं; पुं. इक्षुभेदः; दैत्यविशेषः; अतिमुक्तकः; चित्रं; क्रिमिः; पुण्डरीकं; देशविशेषे पुं भूमिन्, यथा—'प्राग्ज्योतिषं च पुण्ड्राश्च विदेहास्ताम्रलिप्तकाः। शाम्भुमागवगोनर्दाः प्राच्या जनपदाः स्मृताः'—इति मात्स्ये (११३।४५)। तिलकः वृक्षः; ह्रस्वप्लक्षः; अश्वदेहस्यचिह्नविशेषः; बलि-राजस्य क्षेत्रजः पुत्रविशेषः। यत्रास्नैव पुण्ड्रदेशो विख्यातः (महाभारते १।१०।४।४७-५१)। ८५५

पुण्यम् क्ली। [ पुयतेऽनेनेति। पू + 'पूडो यण्णुग्नस्वश्च' इति यत् णुगागमो ह्रस्वश्च ] शुभादृष्टः; धर्मः; श्रेयः; सुकृतं; वृषः; 'पण्डितेनापि किं तेनं समर्थेन च देहिनाम्। यत्पुण्यं भारमुद्रोढुमशक्तं पारलौकिकम्'—इति अग्नि-पुराणे। सुगन्धिः; शोभनकर्म; त्रि. सुन्दरम्। (१३२) पावनं; पवित्रम्। १२५

पुण्यक्षेत्रम् क्ली। [ पुण्यजनकं क्षेत्रम्। मध्यपदलोपी समासः ] पुण्यभूमिः; तीर्थस्थानम्। ८६२

पुण्यजनः पुं। [ पुण्यः विरुद्धलक्षणया पापी चासी जन-श्चेति ] राक्षसः; यलः; 'सर्पैः पुण्यजनेश्चैव वीरुद्धिः पर्वतैस्तया'—इति हरिवंशे (२।२६)। पुण्याश्रितो जनः; सज्जनः। ७९०

पुण्यजनेश्वरः पुं। [ पुण्यजनानां यक्षाणाम् ईश्वरः प्रभुः ] कुबेरः; 'समतया वसुवृष्टिं विसर्जनैर्नियमनादसताञ्च नराधिपः। अनुययी यमपुण्यजनेश्वरी सवरुणावरुणा-ग्रसरं रुचा'—इति रघौ (९।६)। ७९

पुतौ पुं—कटिप्रोथौ; कटिप्रान्तस्थमांसपिण्डौ। द्वि-वचनान्तोऽयं शब्दः। ५१३

पुत्रः पुं। [ पुनाति पित्रादीनिति। पू + 'पुवो ह्रस्वश्च' इति वत्र, धातोर्ह्रस्वत्वञ्च। तकारद्वये तु पुत्रामनरकात् त्रायते इति। पुत् + त्रै + ड। पितृन् पातीति व्युत्पत्त्या पुषोदरादित्वात् साधुः ] पुंसन्तानः; पुत्रामनरकत्राता; आत्मजः; तनयः; सूनुः; सुतः; तनूजः; अपत्यं; दायादः; कुलधारकः; नन्दनः; आत्मजन्मा; द्वितीयः; प्रसूतिः; स्वजः; 'पुत्राम्नो नरकाद्यस्मात् पितरं त्रायते

सुतः । तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयम्भुवा'—  
इति महाभारते (१।७।४।३७) । 'पुत्राम्भो नरकाद्  
यस्मात् पितरं त्रायते सुतः । तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः  
पितृन् यः पाति सर्वतः'—इति रामायणे (२।१०७।१२) ।

४९७

पुत्रका स्त्री. [ पुत्र+स्वार्थे संज्ञायां वा कन् + टाप्,  
'भूतकापुत्रिकावृन्दारकाणां वेति वक्तव्यम्' इति  
डोन्, इवर्णस्य षष्ठकारः ] पुत्रिका; कन्या । ४९३  
पुत्रवधूः स्त्री. [ पुत्रस्य वधूः ] स्नुषा; पुत्रपत्नी । ५०४  
पुत्रिका स्त्री. [ पुत्री+स्वार्थेकन्+टाप् । 'केऽणः'इति  
ह्रस्वः । पुत्री+'इवे प्रतिष्ठतो' इति कन् ह्रस्वश्च ]  
पुतलिका; यावतूलकः; पुत्रस्वरूपत्वेन कृता कन्या;  
'अपुत्रोऽनेन विधिना सुतां कुर्वीत पुत्रिकाम् । यदपत्यं  
भवेदस्यां तन्मम स्यात् स्वधाकरम्'—इति मनुः (१।१२८)  
'ताः सर्वास्त्वनवद्याङ्गयः कन्याः कमललोचनाः ।  
पुत्रिकाः स्थापयामास नष्टपुत्रः प्रजापतिः'—इति महा-  
भारते (१।६६।१२) । कन्या; आत्मजा; दुहिता;  
पुत्री; तनुजा; सुता; अपत्यं; पुत्रका; स्वजा; तनया;  
नन्दिनी । ४९३

पुत्री स्त्री. [ पुत्र+'शाङ्करवाद्यलोडोर्ङीन्' इति डोन्, यद्वा  
गौरादित्वाद् डोष् ] सुता; कन्या; वृक्षविशेषः । ५०५  
पुनर्नवः पुं. [ पुनरपि छिन्ने भूयोऽपि नवः ] नखः । ५११  
पुनर्भूः स्त्री. [ पुनर्भवति जायास्त्वेनेति । भू+क्विप् ] द्विरूढा;  
द्विधिष्णुः; 'परपूर्वाः स्त्रियस्त्वन्याः सप्त प्रोक्ता यथाक्रमम् ।  
पुनर्भूस्त्रिविधा तासां स्वैरिणी च चतुर्विधा । कन्वैवाक्ष-  
तयोनिर्या पाणिग्रहणद्वयिता । पुनर्भूः प्रथमा प्रोक्ता  
पुनः संस्कारकर्मणा'—इति मिताक्षरा । पुनर्नरजाते  
त्रि. । ४८५

पुत्रागः पुं. [ पुमान् नाग इव श्रेष्ठत्वात् ] बृहत्पुष्पवृक्ष-  
विशेषः; पुरुषः; तुङ्गः; केशरः; देवयत्नः; कुम्भीकः;  
रक्तकेशरः; पुत्रामा; पाटलद्रुमः; रक्तपुष्पः;  
रक्त-  
रेणुः; अरुणः; सितोत्पलः; जातीफलः; नरश्रेष्ठः;  
पाण्डुनागः । २०८

पुमान् [ स् ] पुं. [ पाति रक्षतीति, पा+'पातेडुमसुन्'  
'इति डुमसुन्, डित्वात् टिलोपः ] मनुष्यजातिपुण्यः;  
'पञ्चजनः; पूषः; पुषः; ना; 'स्वदेशजातस्य

जनस्य लोके गुणाधिके पुंसि भवत्यवज्ञा । निजाङ्गना  
यद्यपि रूपराशिस्तथापि पुंसां परदारचेष्टा'—इत्यु-  
द्भटः । मनुष्यजातिः; पुंल्लिङ्गमात्रश्च; कूटस्थ-  
पुरुषः; 'सदक्षरं ब्रह्म य ईश्वरः पुमान् गुणोर्मिसृष्टि-  
स्थितिकालसंलयः । प्रधानबुद्ध्यादिजगत्प्रपञ्चं स  
नोऽस्तु विष्णुर्गतिभूतिभूक्तिदः'—इति विष्णुपुराणे ।  
'अक्षरमिति विकारं निराकरोति पुमान् कूटस्थः'—  
—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । ३११, ३७०, ३७२  
पुरः पुं. [ पिपत्तीति, पृ+क ] गुग्गुलुः; 'गुग्गुलुर्देवेषूपश्च  
जटायुः कौशिकः पुरः । कुम्भोलूखलकं क्लीवे महिषाक्षः  
पलङ्कषः'—इति भावप्रकाशे । ६२०

पुरम् क्ली. —स्त्री. [ पिपत्तीति, पृ+मूलविभुजादित्वात् क ।  
यद्वा पुरति अग्रे गच्छतीति । पुर+'इगुपवज्ञाप्तीकरः कः'  
—इति क ] हृद्वादिविशिष्टस्थानं; बहुग्रामीयव्यवहार-  
स्थानं; पूः; पुरीः; नगरं; पत्तनं; स्थानीयं; कटकं;  
पट्टं; निगमः; पुटभेदनम् । २८५

पुरम् क्ली. [ प्रियते पूर्यते इति । पृ+पृती+क ] देहः;  
पलङ्कषः (६२०); कणगुग्गुलुः; गेहम्; पाटलिपुत्रम्;  
पुष्पादीनां दलावृत्तिः; नागरमुस्ता; चर्म; गृहोपरि-  
गृहम् । ५१०

पुरः [ स् ] अव्य. [ पूर्वस्मिन् पूर्वस्मात् पूर्वो वा, एवं पूर्वस्याः  
पूर्वस्यामित्यादि । पूर्व+'पूर्वाधारावराणामसिपुरधवश्चै-  
पाम्' इति असि, तद्योगेन पुर इत्यादेशश्च ] अग्रतः ।

७०७

पुरद्वारम् क्ली. [ पुरस्य द्वारम् ] नगरद्वारं; गोपुरम्;  
'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत् । पश्चिमोत्तर-  
पूर्वस्तु ययायोग्यं द्विजन्मनः'—इति मनुः (५।९२) ।

२८८

पुरन्दरः पुं. [ अरीणां पुरो दारयतीति । दृ+णिच्+'पू-  
सर्वयोर्दारिसहो' इति खच्, 'वाचंयमपुरन्दरी च'  
इति निपातितः ] इन्द्रः; 'कालैयभयसन्त्रस्तो देवः  
साक्षात् पुरन्दरः । जगाम शरणं शीघ्रं तन्तु नारायणं  
प्रभुम्'—इति महाभारते (३।१०।१।९) । [ पुरं गेहं  
दारयतीति, दारि+खच्, निपातितः ] चौरः; 'समांस-  
मीना यदि पाकशाला समांसमीना दश धेनवः स्युः ।  
पुरन्दरस्याविषयं यदि स्यात् पुरन्दरस्यापि पुरं न याचे'  
—इत्युद्भटः । ५३

पुरन्ध्रः, पुरन्ध्री स्त्री. [ स्वजनसहितं पुरं धारयतीति । धृञ्+खच् । गौरादित्वाद् डीप् । पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वो वा ] स्त्रीमात्रं; पतिपुत्रदुहित्रादिमती; कुटुम्बिनी; 'ती स्नातकैर्वन्धुमता च राज्ञा पुरन्ध्रभिश्च क्रमशः प्रयुक्तम् । कन्याकुमारी कनकासनस्थी आद्रक्षितारोपणमन्वभूताम्'—इति रथी (७।२८) । ४८१

पुरः [ स् ] अव्य. [ पूर्वस्मिन् पूर्वस्मात् पूर्वो वा, एवं पूर्वस्याः पूर्वस्यामित्यादि । पूर्व+पूर्वाधारावराणामसिपुरयवश्चैपाम्' इति अस्ति, तद्योगेन पुर् इत्यादेशश्च ] अग्रतः; 'अयि जीवितनाथ ! जीवसीत्यभिधायोत्थितया तया पुरः । ददशे पुरुषाकृति क्षिती हरकोपानलभस्म केवलम्'—इति कुमारे (४।३) । प्राच्यां दिशि; प्रथमे काले; 'उदेति पूर्वं कुमुमं ततः फलं धनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः । निमित्तनैमित्तिकयोरयं विधिस्तव प्रसादस्य पुरस्तु सम्पदः'—इति शाकुन्तले । 'पुरार्थे, अतीते'—इति भरतः । ७०७

पुरा अव्य. [ पुरति अग्रे गच्छतीति । पुर+वाहलकात् का ] प्राक्; 'इदं सर्वं पुरा सृष्टेरकमेवाद्वितीयकम् । सदेवासीन्नामरूपे नास्तामित्यारुणैर्वचः'—इति पञ्चदश्याम् (२।१४) । प्रबन्धः; वाक्यरचना; पुराणादिः; यथा—पुराविदः । चिरम्; चिरन्तनम्; पुराणमित्यर्थान्तरम् । अतीतं; भूतं; चिरातीतं; यथा—इतिहासः पुरावृत्तम् । निकटः; सन्निकटः; आगामिकम्; अनागतं; निकटागामिकः; भविष्यदासतिः; भीरुः । स्त्री. [ पुरतीति, पुर+क+टाप् ] पूर्वदिक्; सुगन्धिद्रव्यविशेषः; गन्धवती; दिव्या; गन्धाढ्या; गन्धमादनी; सुरभिः; भूरिगन्धा; कुटी; गन्धकुटी । ७०७

पुराणः त्रि. [ पुरा पूर्वस्मिन् काले भव इति । पुरा+सायचिरंप्राह्लेप्रगेऽव्ययभ्यष्टयुट्चुली तुट् च' इति-ट्यु, निपातनात् तुडभावः ] पुरातनः; 'दभूर्वाहि पुराडाशा भक्ष्याणां मृगपक्षिणाम् । पुराणेऽपि यजेत् ब्रह्मक्षत्रसवेषु च'—इति मनुः (५।२३) । पणः; शिवः; 'वलवांश्चोपशान्तश्च पुराणः पुण्यचञ्चुरी'—इति महाभारते (१३।१७।१०६) । कार्पापणे पुं- क्ली.; 'ते षोडश त्याद्वरणं पुराणं चैव राजतम् । कार्पापणस्तु विज्ञेयस्तान्त्रिकः कार्षिकः पणः'—इति मनुः (८।१३८) । क्ली. [ पुरा नीयते इति, नी+ड णत्वञ्च ] व्यासादि-

मुनिप्रणीतवेदार्थवर्णितपञ्चलक्षणान्वितशास्त्रं; पञ्चलक्षणम् । ७११

पुरातनः त्रि. [ पुरा पूर्वस्मिन् काले भवः । पुरा+सायचिरेति' ट्यु तुट् च ] पूर्वकालभवः; पुराणः; प्रतनः; प्रतनः; चिरन्तनः; चिरतनः; 'नवं वस्त्रं नवं छत्रं नव्या स्त्री नूतनं गृहम् । सर्वत्र नूतनं शस्तं सेवकाश्च पुरातने'—इति नीतिशास्त्रे । पुं. पुराणः; प्रदिवः; प्रवयाः; सनेमिः; पूर्वम्; अह्नाय; विष्णुः; 'उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः'—इति महाभारते (१३।१४९।६६) । ७११

पुरिः स्त्री. [ पूर्यते इति । पृ+कृ गृ श् पृ कुटीति' इ, स च कित् ] पुरी; नदी; शरीरम् । २८५

पुरी स्त्री [ पुरि+वा डीप् ] नगरी; 'नृपावासः पुरी प्रोक्ता विशां पुरमपीष्यते'—इति श्रीधरः । २८५

पुरीतत् पुं.- क्ली. [ पुरीं शरीरं तन्नोतीति । तन् विस्तारे +क्विप् । 'गमः क्वी' इत्यत्र 'गमादीनामिति वक्तव्यम्' इति अनुनासिकलोपः तुगागमश्च । पुरिं तनोतीति वाक्ये 'नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिपु क्वी' इति पूर्वपदस्य दीर्घः ] अन्त्रम्; 'अत' इति भाषां । ६३५

पुरीपम् क्ली. [ पिपति शरीरमिति । पृ+शृपृभ्यां किच्च' इति ईपन् स च कित् ] विष्ठा; [ पूरयति जगत् प्रलयकाले, पूर्यते अनेन तडाकादि, पालकं वा, जगतः सस्योत्पत्तिहेतुत्वात्, प्रीणातेर्वा बाहुलकात् कोपन् प्रत्ययः । ईकारस्योकारादेशः स च पकारात् परो द्रष्टव्यः—इति तत्र देवराजयज्वा ] उदकम्; 'यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त् समुद्रादुत वा पुरीपात्' इति ऋग्वेदे (१-१६३।१) 'पुरीपात् सर्वकामानां पूरकादुदकात्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ६३७

पुः पुं. [ पिपति पूर्यते वेति । पृ+पृभिदिव्यधिगृधिधृषिदृशिभ्यः' इति कु, 'उदोष्चपूर्वस्य' इति उत्त्वम्, 'उरण् रपरः' इति रपरत्वम् ] प्रचुरः; 'स्फुरति तिमिरस्तोमः पङ्कप्रपञ्च इवोच्चकैः । पुषसितंगश्चञ्चञ्चञ्चपूटस्फुट्चुम्बितः'—इति नैपथे (१९।५) । पुं. देवलोकः; नृपभेदः; स च ययातेः कनिष्ठपुत्रः; पराणः; दैत्यः; नदीभेदे त्रि. । राजविशेषः; 'सुकर्मा चेकितानश्च पुरुश्चामित्रं कर्षणः'—इति महाभारते (३।४।२७) । चाक्षुषमनोः पुत्रभेदः; 'उरूपुषातद्युम्नप्रमुखाः सुमहा-

बलाः—इति मार्कण्डेये (७६।५५)। पर्वतभेदः; 'पर्वतस्य पुरुषमि यत्र जातः पुरुखाः'—इति महाभारते (३।१०।२२) शरीरम्; 'पुरुसंज्ञे शरीरेऽस्मिन् शयनात् पुरुषो हरिः'—इति शङ्करविजये। ६९९

पुरजः त्रि. [पुरोः जातः। पुरु+जन्+ङ] प्रचुरः; प्राज्यः। ७०१

पुरुषः पुं. [पुरति अग्रे गच्छतीति, पुर+पुरः कुपन् इति कुपन्] आत्मा; 'पुराण्यनेन सृष्टानि नृतिर्य-गृषिदेवताः। शैते जीवेन रूपेण पुरेषु पुरुषो ह्यसौ'—इति भागवते। 'पुरुसंज्ञे शरीरेऽस्मिन् शयनात् पुरुषो-हरिः। शकारस्य पकारोऽयं व्यत्ययेन प्रयुज्यते'—इति शङ्करविजये (१३ अध्याये)। (३३१) [पिपति पूरयति बलं यः, पुर्णुं शैते य इति वा] पुमान्; पूरुषः; ना; नरः; पञ्चजनः; अर्याश्रयः; अधिकारी; कर्माहं; जनः; अर्यवान्; मनुष्यः; मानवः; मर्त्यः; मानुषः; मनुः; रसिकराजः; धनकामाधामा; मदन-शायकाङ्कः; मन्मथशायकलक्ष्यः; साङ्ख्यतत्त्वज्ञः; पुत्रागपादपः; 'कुम्भीकः पुरुषस्तुङ्गः पुत्रागो रक्तकेशरः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। विष्णुः; 'एवं पुराणः पुरुषो विष्णुर्वेदेषु पठ्यते। अचिन्त्यश्चाप्रमेयश्च गुणेश्वरश्च परस्तथा'—इति हरिवंशे (१२।८।२०)। शिवः; 'धाम्यायाव्यक्तरूपाय सद्वृते शङ्कराय च। क्षेम्याय हरिकेशाय स्थाणवे पुरुषाय च'—इति महाभारते (१४।८।१४)। जीवः; 'प्रकृतिः क्षरमित्यूक्तं पुरुषोऽक्षर उच्यते। ताविमौ प्रेरयत्यन्यः स परः परमेश्वरः'—इति शिवपुराणे। दुर्गा; 'महानिति च योगेषु प्रधानद्वैव कथ्यते। त्रिगुणा व्यतिरिक्ता सा पुरुषश्चेति बोध्यते'—इति देवीपुराणे। अश्वस्थानकभेदः; 'पश्चिमेनाग्र-पादेन भुवि स्थित्वाग्रपादयोः। उर्ध्वप्रेरणया स्थान-मश्वानां पुरुषः स्मृतः'—इति माघे (५।५६) श्लोक-टीकायां मल्लिनाथधृतवचनम्। मेघमिथुनासिंहनुला-धनुःकुम्भराशयः; 'क्रूरोऽय सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽय युगं विपमः समश्च। चरस्थिरद्वधात्मक-नामधेया मेघादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति ज्योति-स्तत्त्वम्। १३४

पुरुषोत्तमः पुं. [पुरुषेषु उत्तमः] विष्णुः; 'पुराणात् सदनाच्चापि ततोऽसौ पुरुषोत्तमः'—इति महाभारते

(५।७०।१०)। 'हरिर्यैकः पुरुषोत्तमः स्मृतः महेश्वर-स्यम्बक एव नापरः। तथा विदुर्मां मुनयः शतक्रतुं द्वितीयगामी न हि शब्द एष नः'—इति रघौ (३।४९)। जिनराजविशेषः; सोमभूः; पुरुषेषु मध्ये उत्तमः; 'विशेषसमभावस्य पुरुषस्थानघस्य च। अरिमित्रेऽप्यु-दासीने मनो यस्य समं ब्रजेत्। समो धर्मः समः स्वर्गः समो हि परमं तपः। यस्यैवं मानसं नित्यं स नरः पुरुषोत्तमः'—इति धर्मपुराणे। [पुरुषोत्तमो जगन्नाथोऽ-स्त्यत्रेति, अच्] उत्कलखण्डकदेशः; 'गयायां मङ्गला प्रोक्ता विमला पुरुषोत्तमे'—इति देवीभागवते। ग्रन्थकर्तृविशेषः; स तु प्रयोगरत्नमालाव्याकरणस्य द्विरूपैकाक्षरहारावलीकोषागाम् अन्येषां च कतिपय-ग्रन्थानां प्रणेता। २५

पुरुहूतः पुं. [पुरु प्रचुरं हूतमाह्वानं यज्ञेषु यस्य। पुरु यथा स्यात्तथा हूयते यज्वभिरिति वा। यद्वा पुरुणि बहूनि हूतानि नामानि यस्य] इन्द्रः; 'पुरुहूतादयं जज्ञे कुन्त्यामेव धनञ्जयः'—इति महाभारते (१।१२६।२५)। प्रचुर-नामविशिष्टे त्रि.। 'स विश्वकायः पुरुहूत ईशः सत्यः स्वयं ज्योतिरजः पुराणः'—इति भागवते (८।१।१३)। स्त्री. भगवती; सा तु पुष्करे पीठस्थाने विराजते। 'विश्वे विश्वेश्वरीं प्राहुः पुरुहूतां च पुष्करे'—इति देवी-भागवते (७।३०।५९)। ५३

पुरोगः त्रि. [पुरोऽग्रे गच्छतीति। पुरम्+गम्+ङ] प्रधानः; अग्रगामी; 'ज्याघातरेखे सुभुजां भुजाभ्यां विभक्ति यश्चापभृता पुरोगः'—इति रघौ (६।५५)। ६९०

पुरोधाः [स्] पुं. [पुरोऽग्रे दधाति मङ्गलमिति। पुरस्+धा+पुरसि च इति असि स च टि] पुरोहितः; शान्त्यादिकर्ता; धर्मकर्मादिकारकः; 'स जातकर्मण्य-खिले तपस्विना तपोवनादत्य पुरोधसा कृत'—इति रघुः। ४२६

पुरोभागो [न्] त्रि. [पुरः पूर्वमेव भजते इति। पुरस्+भज्+णिनि] दोगमात्रदर्शी; दोगग्राही; 'कुपितोऽपि स यज्ञनां न्यवधीद्रागमोहितः। तेनेवागात् पुरोभागिवित्त-कांतङ्कपात्रताम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।८३)। ३४६  
पुरोहितः पुं. [पुरो दृष्टादृष्टकलेषु कर्मसु धीयते आरूप्यते यः। यद्वा पुर आदावेव हितं मङ्गलं यस्मात्] शान्त्यादि-कर्ता; पुरोधाः; धर्मकर्मादिकारकः; 'वेदवेदाङ्ग-

तत्त्वज्ञो जपहोमपरायणः । आशीर्वादिवचोयुक्त एष राज-  
पुरोहितः—इति चाणक्यः । 'काणं व्यङ्गमपुत्रं वान-  
भिन्नमजितेन्द्रियम् । न ह्रस्वं व्याधितं वापि नृपः  
कुर्यात् पुरोहितम्'—इति कालिकापुराणम् । 'पुरोहितो  
हितो वेदस्मृतिज्ञः सत्यवाक् शुचिः । ब्रह्मण्यो विमलाचारः  
प्रतिकर्तृपिदामृजुः'—इति कविकल्पलता; 'दोषा-  
गन्तुजमृत्युम्यो रसमन्त्रविशारदी । रक्षेतां नृपतिं नित्यं  
यत्नाद्वैद्यपुरोहितां । ब्रह्मा वेदाङ्गमष्टाङ्गमायुर्वेदम-  
भापत । पुरोहितमते तस्माद्धर्तते भिषगात्मवान्'—  
इति मुश्रुते । ४२६

पुलकः पुं. [ पुल+स्वार्थे कन् ] रोमाञ्चः; रोमोद्भेदः;  
त्वक्पुष्पं; त्वगङ्कुरः; 'प्रेमलघूकृतकेशवक्षोभविपुल-  
पुलककुचकलसा । गोवर्द्धनगिरिगुश्तां मुग्धवधूनिभूत-  
मुपहसति'—इति आर्यासप्तशत्याम् । शरीरान्त-  
र्वहिर्भवकोटः (६३६); तुच्छवान्यम्; 'पुलका इव  
धान्येषु प्लुतिका इव पक्षिषु । मशका इव मर्त्येषु येषां  
धर्मो न कारणम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।९९) । प्रस्तर-  
विशेषः; 'पुण्येषु पर्वतवरेषु च निम्नगासु स्थानान्तरेषु  
च तयोत्तरदेशगत्वात् । संस्थापिताश्च नखरा भुजगैः  
प्रकाशं सम्पूज्य दानवर्षति प्रयिते प्रदेशे । दाशार्णवा-  
गदवमेकलकालगादौ गुञ्जाञ्जनक्षीद्रमृणालवर्णाः ।  
गन्धर्ववह्निकदलीसद्शावभासा एते प्रशस्ताः पुलकाः  
प्रसूताः'—इति गरुडे । मणिदोषविशेषः; हरितालं;  
गजान्नपिण्डं; गन्धर्वविशेषः; असुराजी; गत्वर्कः;  
क्ली. [ पुलतीति, पुल्+क ततः संज्ञायां कन् ] कङ्कुकुष्ठं;  
तच्च पर्वतीयमृत्तिकाविशेषः । ६५१

पुलाकः पुं. [ पोलति उच्छ्रितो भवतीति । पुल्+वलाकाद-  
यश्च इति आकप्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] भक्त-  
सिद्धयर्कं; भक्तगुलिका; क्षिप्रं, यथा—पुलाककारी ।  
तुच्छधान्यम्; 'पुलाकाश्चैव धान्यानां जीर्णाश्चैव  
परिच्छदाः'—इति मनुः (१०।१२५) । संक्षेपः;  
अल्पत्वम् । ८२९

पुलिनम् क्ली. [ पोलतीति । पुल् महत्त्वे+तलिपुलि-  
न्याञ्च इति इनन्, स च कित् ] द्वीपं; तोयोत्थिततटम्;  
'क्वचिन्मणिनिकाशोदां क्वचित् पुलिनशालिनीम् ।  
क्वचिन् सिद्धजनाकीर्णां पश्य मन्दाकिनीं नदीम्'—इति  
रामायणे (२।९५।९) । जलादचिरोत्थितं तटं; तत्स-

णतोयत्यक्तद्वीपं; क्रमेणोत्थितं तटं; जलमव्यस्यमुत्थितं  
तटं; यक्षविशेषे पुं. । 'उलूकश्वसनाभ्याञ्च निमिषेण  
च पक्षिराट् । प्ररुजेन च संग्रामं चकार पुलिनेन  
च'—इति महाभारते (१।३२।१९) । ६७०

पुलिन्दः पुं. [ पुल् महत्त्वे+कुणिपुल्योः किन्दच् इति  
किन्दच् ] चण्डालभेदः; स च म्लेच्छशब्दवाच्यः;  
पुलिन्दकः । ५९८

पुष्करम् क्ली. [ पुष्णातीति, पुष् पुष्ठी+पुपः कित्  
इति करन् स च कित् ] व्योम; 'मेघाः सूर्यशिलासमान-  
रचयो ह्यल्पस्रवाल्पस्वना, हंशालीकमलालिमण्डित-  
जलः पद्माकरः शोभनः । तीव्रस्निग्धमयूखचन्द्रविमला  
स्वानन्दिनी कौमुदी, चित्राधर्मविपक्वतोयसुरसा स्यान्नि-  
र्मलं पुष्करम्'—इति हारीते । हस्तिगुण्डाग्रम् (२।१९);  
'आलोलपुष्करमुखोल्लसितैरभीक्ष्णम् उक्षाम्बभूवुर-  
मितो वपुरम्बुवर्षे'—इति माघे (५।३०) । पद्मम्  
(६७९); 'सखीवच्च विगाहस्व सीते ! मन्दाकिनीं  
नदीम् । कमलाच्यवमज्जन्ती पुष्कराणि च भामिनि !'—  
इति रामायणे (२।९५।१४) । (८५८) पद्मं; खड्गफलं;  
व्योम; वाद्यभाण्डमुखम्; 'नदद्भिः स्निग्धगम्भीरं  
तूर्ये राहतपुष्करैः'—इति रघौ (१७।११) । कुष्ठीपवम्;  
'उक्तं पुष्करमूलं तु पीष्करं पुष्करं च तत् । पद्मपत्रं च  
काश्मीरं कुष्भेदमिमं जगुः'—इति भावप्रकाशः ।  
जलम्; 'आपो वै पुष्करं प्राणोऽयथा प्राणो वा'—इति  
शतपथब्राह्मणे (६।४।२।२) । तीर्थभेदः; 'गोकर्णे  
पुष्करारण्ये तथा हिमवतस्तटे'—इति महाभारते  
(१।३६।३) । खड्गकोषः; काण्डं; द्वीपभेदः; पुं.  
[ पुष्+पुपः कित् इति करन्, स च कित् ] रोग-  
विशेषः; नागविशेषः; सारसपक्षी (२४४); नृपभेदः;  
स तु नलराजभ्राता । अयं हि कलिसाहाय्येन अक्षयूते  
नलं विजित्य निपधाधिपाऽभवत् । 'स समाविश्य च  
नलं समीपं पुष्करस्य च । गत्वा पुष्करमाहेदमेहि दीव्य  
नलेन वै'—इति महाभारते (३।५९।४) । वरुणपुत्रः;  
पर्वतविशेषः; वाद्यविशेषः; 'प्रावाचन्त ततस्तत्र वेणु-  
वीणादिददुराः । पणवाः पुष्कराश्चैव मृदङ्गाः पट-  
हानकाः'—इति मार्कण्डेये (१०६।६१) । सप्तद्वीपानां  
मध्ये द्वीपविशेषः; 'शाकद्वीपस्य विस्ताराद्विगुणेन  
समन्ततः । क्षीरार्णवं समावृत्य द्वीपः पुष्करसंज्ञितः'—

इति कीर्त्तौ । पुष्करद्वीपराजा; पुष्करद्वीपरथः; 'लोकेश्वरः सोऽपि नृभिर्मुनीन्द्रैः देवैः सहैन्द्रैरथ ब्रह्मचारी । द्वीपे शुभे पुण्यजनैरुपैते उवास राजा स तु पुष्करस्थः । तेनैव नाम्ना स तु पुष्करोऽपि सदोच्यते देवगणैः ससिद्धैः । तेनैव धानेन तथाम्बुजेन बभूव नाम्ना तमथाह्वयन्ति'— इत्यग्निपुराणम् । ब्रह्मकृततीर्थविशेषः; रूपतीर्थ; मुखदर्शनं; मेघनायकविशेषः; 'त्रियुते शकवर्षे तु चतुर्भिः शेषिते क्रमात् । आवर्तं विद्धि संवत् पुष्करं द्रोणमम्बुदम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वे । क्रूरवारभद्रातिथि-भग्नपादनक्षत्रघटिताशुभजनकयोगविशेषः; 'पुनर्वसूत्तरापाढा कृतिकोत्तरफाल्गुनी । पूर्वभाद्रं विशाखा च रविभौमशनैश्चराः । द्वितीया सप्तमी चैव द्वादशी तिथिरेव च । एतेषामेकदा योगे भवतीति त्रिपुष्करः'—

१३७

पुष्करिणी स्त्री. [ पुष्करवत् आकृतिरस्त्यस्या इति । पुष्कर+इनि; ततो झेप् । पुष्कराणि पद्मानि सन्त्यश्र्येति वा ] जलाशयः । शतधनुः परिमितसमचतुरस्रजलाधारः; खातं; जलकूपी; पीष्करिणी; 'कूपवापीपुष्करिण्यो दीधिका द्रोण एव च । तडागः सरसी चैव सागरश्चाष्टमो मतः । सिद्धिर्जलाशयः कार्यो यत्नाधाम्योत्तरायतः'—इति वायुपुराणे । स्थलपद्मिनी; पुष्करमूलम् । [ पुष्करं शुण्डादण्डोऽस्त्यस्या इति, इनि ] हस्तिनी; सरोजिनी ।

६७५

पुष्कलम् क्ली. [ पुष्पति पुष्टि गच्छत्यनेनेति । पुष्+ 'कलश्च' इति कलन् स च 'कित्' बहु; 'राजानो हि महात्मानो योनिकर्मविशोधिताः । उद्धरन्ति प्रजाः सर्वास्तप आस्थाय पुष्कलम्'—इति महाभारते ( ३।३। १० ) । ७०१

पुष्पम् क्ली. [ पुष्पयति विकसति यः । पुष्प् विकसने+अच् ] तरुलतादीनां प्रसवः; प्रसूनं; कुसुमं; सुमनसः; सूतं; प्रसवः; सुमनः; 'उपहार्याणि पुष्पाणि मम कर्म-परायणः । यो मामुपानयेद् भूमे मम कर्मपथे स्थितः । पुष्पाणि तत्र यावन्ति मम मूर्द्धनि धारयेत् । स कृत्वा पुष्कलं कर्म मम लोकाय गच्छति'—इति वराह-पुराणम् । घोटकलक्षणविशेषः; 'आगन्तवस्तुरङ्गस्य ये भवन्त्यन्यवर्णगाः । बिन्दवः पुष्पसंज्ञास्तु ते हिताहित-संज्ञकाः'—इति अश्ववैद्यके ( ३।८२ ) । स्त्रीरजः;

'स्त्रीणां पुष्पं हरत्यन्या प्रवृत्तं सा तु कन्यका'—इति मार्कण्डेये ( ५१।४२ ) । विकाशः; धनदस्य विमानं; नेत्ररोगविशेषः; 'हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च । विभीतकस्य मज्जा च शङ्खनाभिर्मनःशिला । सर्वमेतत् समं कृत्वा छागीक्षीरेण पेषयेत् । नाशयेत् तिमिरं कण्डूं पटलान्यर्बुदानि च । अधिकानि च मांसानि यश्च रात्रौ न पश्यति । अपि द्विवापिकं पुष्पं मासेनैकेन साधयेत् । वर्तिश्चन्द्रोदया नाम नृणां दृष्टि-प्रसादनी'—इति चक्रपाणिदत्तः । १८६

पुष्पकम् क्ली. [ पुष्पमिव पुष्पैर्वा कायति प्रकाशते इति । पुष्प+कै+क । पुष्प+संज्ञायां कन् वा । पुष्पमिव प्रतिकृतिः । पुष्प+'इवे प्रतिकृतौ' इति कन् ] धनदस्य विमानं; कुवेरविमानं; नेत्ररोगः; रत्नकङ्कणं; रसाञ्जनं; लोहकांस्यं; मृदङ्गारशकटी; कासीसं; [ पुष्प+स्वार्थे कन् ] पुष्पं; प्रसूनम्; 'सप्ताभिमन्त्रितं कृत्वा करवीरस्य पुष्पकम् । स्त्रीणामग्रे भ्रामर्यच्च क्षणाद्वै सा वशा भवेत्'—इति गारुडे । पुं. निर्विपसंपंजातिभेदः; 'निर्विपास्तु गलगोली शूकपत्रोऽजगरौ दिव्यको वपंहिकः पुष्पशकली ज्योतीरथः क्षीरिकः पुष्पकोऽतिपताकोऽन्वाहिको गौराहिको वृक्षेशयः'—इति सुश्रुते । पर्वतभेदः; 'स्वर्णशृङ्गी शातशृङ्गी पुष्पको मेघपर्वतः'—इति मार्कण्डेये ( ५५।१३ ) । प्रासादस्य मण्डपभेदः; 'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मण्डपानां च लक्षणम् । मण्डपान् प्रवरान् वक्ष्ये प्रासादस्यानुरूपतः । विविधा मण्डपाः कार्याः श्रेष्ठमध्यकनीयसः । नामतस्तान् प्रवक्ष्यामि शृणुष्वं द्विजसत्तमाः । पुष्पकः पुष्पभद्रश्च सुवृत्तोऽमृतनन्दनः । कौशल्यो बुद्धिसंकीर्णो गजभद्रो जयावहः'—इति विश्व-कर्मप्रकाशे । ८३

पुष्पदन्तः पुं. [ पुष्पमिव शुक्लो दन्तोऽस्य ] वायुकोणस्थ-दिग्गजः; ( १२० ) द्विवचनान्ते चन्द्रार्कौ; सूर्यचन्द्रौ । विद्याधरविशेषः; जिनभेदः; नागभेदः; 'अपीं कृत्वैलपुत्रश्च पुष्पदन्तश्चभ्यम्बकः'—इति महाभारते ( ७।२००।७० ) । पार्वतीप्रदत्तः कातिकेयस्यानुचर-विशेषः; 'उन्मादं पुष्पदन्तं च शङ्कुकर्णं तथैव च । प्रददावग्निपुत्राय पार्वती शुभदर्शना'—इति महाभारते ( १।४५।४९ ) । विष्णोरनुचरविशेषः; 'जयन्तः श्रुतदेवश्च पुष्पदन्तोऽय सात्वतः'—इति भागवते

(८।२१।१७) । शिवगणभेदः; 'प्रसादवित्तकः शम्भोः पुष्पदन्तो गणोत्तमः । न्यपेधि च प्रवेशोऽस्य नन्दिना द्वारि तिष्ठता'—इति कथासरित्सागरे (१।४९) । गन्धर्वविशेषः; पुष्पदन्तकः; स च महिम्नः स्तोत्रस्य कर्ता । १०४

पुष्पधन्वा [ न् ] पुं. [ पुष्पाणि घनुरस्येति । 'घनुपदच' इति अनङ्गादेशः ] कामदेवः; पुष्पधनुः; पुष्पचापः; पुष्पशरः; पुष्पशरासनः; पुष्पकेतनः; 'सहचरमधुहस्तन्य-स्तवृताङ्कुरास्त्रः, शतमखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्पधन्वा'—इति कुमारसम्मवे (२।६४) । ३३

पुष्पपत्रः पुं. [ बाणस्य मुखाकारवोधनाय पुष्पपत्रादिशब्दाः उत्तरपदे प्रयुज्यन्ते, अतः पुष्पपत्रान्तादिवाणप्रभृति-वोधकाः शब्दाः तत्तद्विशेषवाचिनो भवन्ति इति भावः ] बाणविशेषः । ४६९

पुष्परथः पुं. [ पुष्पम् इव, तद्वत् कोमल स्पर्शः इत्यर्थः, रथः ] क्रीडारथः; सुकुमाररथः । ४४६

पुष्परसः पुं. [ पुष्पाणां रसः ] मधु; मकरन्दः; 'पलं पलं चापि कटुत्रयं च तथा चतुर्जातफलं विचूर्णम् । पलानि पद् पुष्परसस्य चापि विनिक्षिपेत्तत्र विमिश्रयेच्च'—इति भावप्रकाशे । ६२१

पुष्परसाह्वयम् क्ली. [ पुष्परसः इत्याह्वयः आख्या यस्य ] मधु । ६२१

पुष्पलकः पुं. [ पुष्पं, तद्वत् तनुनिम्नस्यूलोर्ध्वम् आकार-मित्यर्थः, लति । पुष्प+ला+क, संज्ञायां कन् ] कीलकः; शङ्कुः । ४५१

पुष्पलिङ्गः पुं. [ पुष्पाणि निक्षति च्मुन्वति । पुष्प+णिङ्+ 'कर्मण्यण्', पृषोदरादित्वात् नस्य लः ] मधुकरः; मधुपः; भ्रमरः । २५५

पुष्पलिट् [ ह् ] पुं. [ पुष्पं लेडीति । लिह्+क्विप् ] भ्रमरः; भृङ्गः । २५५

पुष्पवती स्त्री. [ पुष्पमस्त्यस्या इति । पुष्प+मत्तुप्; मस्य वः ततो डोप् ] रजस्वला; 'कालमेही भवेत् सोऽपि पुष्पवत्याश्च घर्षणात्' तीर्थविशेषः; 'पुष्पवत्या-मुपस्पृश्य त्रिरात्रोपोषितो नरः । गोसहस्रफलं लब्ध्वा पुनाति स्वकुलं नृप !'—इति महाभारते (३।८५।१२) । पुष्पविशिष्टे त्रि. । 'पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावद्भि-र्मनोरमैः'—इति रामायणे (२।९४।१०) । ४८८

पुष्पधन्तो पुं. [ पुष्प विकसने+भावे घन्, पुष्पो विकासो-ऽस्त्यनयोरिति । पुष्प+मत्तुप्, मस्य वः ] एकयोक्त्या चन्द्रसूयी । द्विवचनान्तोऽयं शब्दः । १२०

पुष्पवाटी स्त्री. [ पुष्पाणां वाटी ] पुष्पोद्यानं; पुष्पवाटिका । 'वाटी पुष्पाद्वृक्षाच्चासी क्षुद्रारामः प्रसेविका'—इति हैमः । २१३

पुष्पहीना स्त्री. [ पुष्पेण हीना ] निष्कला; निष्कली; रजःशून्या । पुं. उडुम्बरवृक्षः । ४८७

पुष्प्यः पुं. [ पुष्प्यन्त्यस्मिन्नर्थ्या इति । पुष्+ 'पुष्पसिध्यौ नक्षत्रे' इति क्यप् ] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रा-न्तर्गताष्टमनक्षत्रं; सिध्यः; तिष्यः; पुष्या; 'प्रसन्नगात्रः पितृमातृभवतः स्वधर्मयुक्तोऽभिनयभियुक्तः । भवेन्मनुष्यः खलु पुष्प्यजन्मा सम्मानचामीकरवाहनाढ्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । पीपमासः; कलियुगं; सूर्यवंशीयनृप-विशेषः; 'तस्य प्रभानिजितपुष्परागं पीप्यां तिथौ पुष्पमसूत पत्नी । तस्मिन्नपुष्पनुदिते समग्रां पुष्टिं जनाः पुष्प्य इव द्वितीये'—इति रघौ (१।८।३२) । [ पुष्+भावे क्यप् ] पुष्टिः; 'त्रिः सप्त विष्णुलिङ्गका विपस्य पुष्पमक्षन्'—इति ऋग्वेदे (१।१९।१।२२) 'विपस्या-स्मदावरकस्य पुष्प्यं पीपमक्षन्'—इति तद्भाष्ये सायणा-चार्यः । ५१

पुष्परथः पुं. [ पुष्प इव रथः, पुष्पे यात्रोत्सवादी रथो वा ] यत् चक्रयानं युद्धार्थं न भवति, किन्तु यात्रोत्सवादी सः; क्रीडार्थं चक्रयानम्; 'महारथः पुष्परथं रथाङ्गी क्षिप्रं क्षपानाय इवाधिरुढः'—इति माघे (३।२२) । ४४६

पुष्पलकः पुं. [ पुष्पं पुष्टिं लक्षति लाकयति वा । पुष्प+लक्+अच् ] कीलकः; क्षपणकः; गन्धमृगः; 'केशेषु चमरीं हन्ति सीम्नि पुष्पलको हतः'—इति व्याकरणान्तरम् । पाणिनीये 'पुष्कलकः' इति पाठः । ४५१

पुस्तककर्मा त्रि. [ पुस्तं शोभाकरं कर्म यस्य ] लेप्यादि-शिल्पकर्मकर्ता । ५९१

पूग्ः पुं. [ पूयतेऽनेनेति, पू+ 'छापूखण्डिम्यः कित्'—इति गन् स च कित् ] गुवाकः; समूहः (६८६); 'अनन्त-तेजा गोविन्दः शत्रुपूगेषु निर्व्यथः । पुरुषः सनातनतमो यतः कृष्णस्ततो जयः'—इति महाभारते (६।२१।१४) । छन्दः; भावः; कण्टकिवृक्षः । २००

पूजा स्त्री. [ पूजनमिति, पूज्+ 'चिन्तिपूजिकथिकुम्बि-

चर्चश्च' इति अङ्क ततष्टाप् ] पूजनं; नमस्या; अपचितिः; सपर्या; अर्चा; अर्हणाः. नुतिः; 'अपि रामे महाभागा मम माता यशस्विनी। वन्यैरुपाहरत् पूजां पूजाहं सर्वदेहिनाम्'—इति रामायणे (१।५।१।५)। १२८

पूजितः त्रि. [ पूज्+क्त ] अचितः; अञ्चितः; प्राप्त-पूजः; 'निवृत्ते भरते धीमानत्रे रामस्तपोवनम्। प्रपेदे पूजितस्तस्मिन् दण्डकारण्यमीयिवान्'—इति भट्टिः (४।१)। ३८४

पूज्यः त्रि. [ पूजयितुमर्हः, पूज्+अर्हं कृत्यतृचश्च' इति यत् ] पूजनीयः; पूजितव्यः; पूजिलः; प्रतीक्ष्यः; 'अहं हि पूर्वं वयसा भवद्भ्यस्तेनाभिवादं भवतां न युक्तम्। यो विद्यया तपसा जन्मना वा वृद्धः स पूज्यो भवेति द्विजानाम्। अष्टक उवाच—'अवादीश्चेद्वयसास्मि प्रवृद्ध इति वैराजाम्यधिकः कथञ्चित्। यो वै विद्वांस्तपसा स वृद्धः स एव पूज्यो भवति द्विजानाम्'—इति मात्स्ये ३९ अध्याये। ३८४

पूपः पुं. [ पू+क्विप् ] पुवं पवित्रं पाति रक्षतीति। पू+पा+क ] पिष्टकः; 'मधु हृत्वा नरो दंशः पूपं हृत्वा पिपीलिकः'—इति मार्कण्डेये (१।५।२४)। ३१९

पूपलिका स्त्री. [ पूपं तदाकारं लातीति। पूप+ला+क+टाप् ] पीलिका; पूपली; पूपिका; पूलिका; पूपः। ३१९

पूरः पुं. [ पूरयतीति, पूर+क ] जलसमूहः; अपां वेगः; 'महोदधेः पूर इवेन्दुदर्शनाद् गुरुः प्रहर्षः प्रबभूव नात्मनि'—इति रघौ (३।१७)। व्रणसंशुद्धिः; खाद्यविशेषः; प्राणायामादिकर्तुर्नासारन्ध्रेण बहिः पवनाकर्षणम्; 'प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः। प्रतिकूलेन वा चित्तं यथास्थिरमञ्ज्वलम्'—इति भागवते (३।२।८।९)। बीजपूरः; 'बीजपूरो मानुलुङ्गः सुफलः फलपूरकः। लुङ्गुधः पूरकः पूरो बीजपूर्णांश्चक्रुः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। क्ली. [ पूरयति सुगन्धेनेति। पूर+क ] दाहागुरु। ६६८

पूरुषः पुं [ पूरति अग्रे गच्छतीति। पूरु+पूरुः कुषन्'—इति कुषन्। 'अन्येषामपि दृश्यते दीर्घः ] पूरुषः; पुमान्। ३३१

पूर्णः त्रि. [ पूर्यते स्मेति। पू पूरी वा+क्त, 'वा दान्तशान्त-पूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नन्ताः'—इति इडभावो निपात्यते ] पूरितः; संकलः; 'तदर्यस्य च पारोक्ष्यं यद्येवं किं ततः

शृणु। पूर्णानन्दैकरूपेण प्रत्यबोधोऽवतिष्ठते'—इति पञ्चदश्याम्। शक्तः; स्वीयमुखेच्छावदन्यः; प्रधायाः पुत्रभेदः; 'सिद्धः पूर्णश्च वही च पूर्णायुश्च महायशाः'—इति महाभारते (१।६।५।४७)। नागभेदः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलीमकः'—इति महाभारते (१।५।७।५)। ७०२

पूर्णमासी स्त्री. [ पूर्णो मासश्चान्द्रमासो यत्र। गीरादित्वात् डीप् ] पूर्णिमा; पूर्णमा; पीर्णमासी। तस्यां जातफलम्—'कन्दर्पतुल्यो युवतोऽप्रियश्च न्यायाप्तवित्तः सततं सहर्षः। शूरो बली शास्त्रविचारदक्षश्चेत्पूर्णमा जन्मनि यस्य जन्तोः।' ११२

पूर्वः त्रि. [ पूर्व् पूरणे निवासे वा+अच् ] प्रथमः; 'यदैव पूर्वं जनने शरीरं सा दक्षरोषात् सुदती ससर्ज। तदा प्रभृत्येव विमुक्तसङ्गः पतिः पशूनामपरिग्रहोऽभूत्'—इति कुमारे (१।५३)। 'गुरोः कुले न भिक्षेत न ज्ञाति-कुलवन्वुषु। अलाभे त्वन्यगेहानां पूर्वं पूर्वं विवर्जयेत्'—इति मनुः (२।१०४)। आदिः; 'ब्राह्मणः प्रणवं कुर्यादादावन्ते च सर्वदा। सवत्यनोऽङ्कृतं पूर्वं पुरस्ताच्च विशीर्यति'—इति मनुः (२।७४)। प्राग्दिग्देशकालाः; 'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्। पश्चिमोत्तर पूर्वैस्तु यथायोगं द्विजन्मनः'—इति मनुः (५।९२)। समग्रम्; अग्रः; 'त्रिराचामेदपः पूर्वं द्विः प्रसृज्यात्ततो मुखम्। खानि चैव स्पृशेद्विरात्मानं शिर एव च'—इति मनुः (२।५०)। ७०७

पूर्वजः पुं. [ पूर्वस्मिन् जातः इति। पूर्व+जन्+ङ ] ज्येष्ठ-भ्राता; पूर्वकालोत्पन्ने त्रि.। 'तामद्भिः परिपिच्यतां महर्षिरभिवाद्य च। मातरं पूर्वजः पुत्रो व्यासो वचन-मन्नवीत्'—इति महाभारते (१।१०।५।२६)। ५०६

पूर्वदिव्यपतिः पुं. [ पूर्वदिशः पतिरधिपतिः ] इन्द्रः। ५३

पूर्वदेवः पुं. [ पूर्वश्चासी देवश्चेति। यद्वा पूर्वं देव इति सुप्सुपेति समासः ] असुरः; नरनारायणावृषी, तत्र द्विवचनान्तोऽयम्। तेषां मनश्च तेजश्चाप्याददाना-विवीजसा। पूर्वदेवो व्यतिक्रान्ती नरनारायणावृषी'—इति महाभारते (५।४।९।५)। ५

पूर्वरङ्गः पुं. [ पूर्वं रज्यतेऽस्मिन्निति। पूर्व+रञ्ज्+अधिकरणे घञ् ] नाट्योपक्रमः; प्राक्संगीतं; गुणनिका; 'येनाट्यवस्तुनः पूर्वं रङ्गविष्णोपशान्तये। कुशीलवाः



प्रकुर्वन्ति पूर्वरङ्गः स उच्यते—इति साहित्यदर्पणे  
(६।१०) । ९५

पूर्वा स्त्री. [ पूर्व+टाप् ] पूर्वदिक्; प्राची; पुरा; माघोनी;  
ऐन्द्री; माघवती । 'पूर्वस्तु मधुरो वातः स्निग्धः कटुर-  
सान्विनः । गुरुविदाहशमनो वातदः पित्तनाशनः'—इति  
राजनिर्घण्टः । पुं. पूर्वजाः; पूर्वपुरुषाः । बहुवचनान्तो-  
ऽयम् । 'मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमार्वजितं मया । पयः  
पूर्वः स्वनिश्वासः कवोष्णमुपभुज्यते'—इति रघो  
(१।६७) । १०१

पूषा [ न् ] पुं. [ पूषतीति । पूष् वृद्धो+श्वन् उक्षन्  
पूषन् फ्लीहन्निति' कनिन् प्रत्ययान्तो निपात्यते ] सूर्यः;  
'आदित्यं भास्करं भानुं सवितारं दिवाकरम् । पूषाणमर्थ-  
मणञ्च स्वर्भानुं दीप्तदीधितिम्'—इति मार्कण्डेये  
(१०९।६४) द्वादशादित्यानामन्यतमः; 'धाता मित्रोऽर्धमा  
शक्रो वरुणस्त्वंश एव च । भगो विवस्वान् पूषा च सविता  
दशमस्तथा । एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते ।  
जवन्यजस्तु सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः'—इति महा-  
भारते (१।६५।१५-१६) । ३५

पूक्तम्, पूक्तम् क्ली. [ पूच्यते स्म संवध्यते स्मेति । पूच्  
सम्पर्क+क्त । थकारान्ते पृषोदरादिः ] धनं; रिकथम्;  
सम्पर्कयुक्ते त्रि. । 'पूक्तस्तुपारैगिरिनिर्झराणाम् अनो-  
कहाकम्पितपुष्पगन्धी'—इति रघो (२।१३) । ८०

पृतना स्त्री. [ प्रियते इति, पृच् व्यायामे+वाहुलकात् तनन्  
गुणाभावश्च ] सेना; सेनाभेदः; वाहिनीत्रयम् (२४३  
गजाः, ७२९ अश्वाः, २४३ रथाः; १२१५ पदातिकाः  
समुदायेन २४३०); 'त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी  
तु गणास्त्रयः । स्मृतास्तिस्रस्तु वाहिन्यः पृतनेति  
विचक्षणैः'—इति महाभारते (१।२।२१) । [ व्या-  
प्रियन्तेऽत्र योद्धारः इति ] संग्रामः; 'शूरा इवेद्युधयो  
न जंगमयः अवस्य वो न पृतनासु येतिरै'—इति ऋग्वेदे  
(१।८५।८) । 'पृतनासु संग्रामेषु येतिरै'—इति तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । ४५७

पृतनापाद् [ साह्. ] पुं. [ पृतनां सहते इति । सह+  
'छन्दसि सहः' इति ण्वि । सहैरिति षः ] इन्द्रः । ५३

पृथक् अव्य. [ प्रथयतीति, प्रथ् विक्षेपे+प्रथः कित्  
सम्प्रसारणं च' इति अजि, कित् सम्प्रसारणं च घातोः ]  
भिन्नं; विना; अन्तरेण; ऋते; हिरक्; नाना;

वर्जनम्; 'तेषामेतेः सितैः शस्त्रैर्मुहुर्विलपतां त्वचः ।  
पृथक् कुर्वन्ति वै याम्याः शरीरादतिदारुणाः'—इति  
मार्कण्डेये (१४।६६) । ५३

पृथग्जनः पुं. [ पृथक् सज्जनेभ्यो विभिन्नो जनः ] नीचः;  
'यत्किञ्चिदपि वर्षस्य दापयेत् करसंज्ञितम् । व्यवहारेण  
जीवन्तं राजा राष्ट्रे पृथग्जनम्'—इति मनुः (७।१३७) ।  
मूर्खः; पापी; भिन्नलोकः । ३४८

पृथ्वी स्त्री. [ 'प्रथेः पिवन् संप्रसारणं च' इति कस्य-  
चिन्मते पवन्, पित्वाद् डीप् ] पृथ्वी; भूमिः । १५६

पृथिविः स्त्री. [ पृथिवी+डोषो वा ह्रस्वः ] पृथिवी । १५६

पृथिवी स्त्री. [ प्रथते विस्तारं यातीति । प्रथ्+प्रथेः पिवन्  
संप्रसारणं च' इति षिवन् सम्प्रसारणं च, डीप् ] मर्त्याध-  
धिष्ठानभूता; भूः; भूमिः; अचला; अनन्ता; रसा;  
विश्वम्भरा; स्थिरा; धरा; धरित्री; धरणी; क्षीणी;  
ज्या; काश्यपी; क्षितिः; सर्वसहा; वसुमती; वसुधा;  
उर्वी; वसुधरा; गोत्रा; कुः; पृथ्वी; क्षमा; अग्निः;  
मेदिनी; मही; भू; भूमी; धरणिः; क्षोणिः;  
क्षोणी; क्षोणिः; क्षमा; अवनी; महिः; रत्नगर्भा;  
सागराम्बरा; अग्निमेखला; भूतवात्री; रत्नावती;  
देहिनी; पारा; विपुला; मध्यमलोकवर्त्मा; धरणीधरा;  
धारणी; महाकान्ता; जगद्धा; गन्धवती; खण्डनी;  
गिरिकणिका; धारयित्री; धात्री; सागरमेखला;  
सहा; अचलकीला; गौः; अग्निद्वीपा; द्विरा; इडा;  
इडिका; इला; इलिका; उदधिवस्त्रा; इरा; आदिमा;  
ईला; वरा; उर्वरा; आद्या; जगती; पृथुः; भुवन-  
माता; निश्चला; वीजमसूः; श्यामा; क्रोडकान्ता;  
खगवती; अदितिः; पृथ्वी अन्तरिक्षम्; 'स दाधार  
पृथिवीं धामृतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम'—इति  
ऋग्वेदे (१०।१२।११) । 'पृथिवीत्यन्तरिक्षनाम'—  
इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । १५६

पृथुः त्रि. [ प्रथ्+कु सम्प्रसारणं च ] महत्; 'उल्लसित-  
भ्रूवनुषा तव पृथुना लोचनेन रुचिराङ्गि ! अचला अपि  
न महान्तः के चञ्चलभावमानीताः'—इति आर्या-  
सप्तशत्याम् (११७) । निपुणः; स्त्री. [ प्रथते विस्तार-  
मेतीति ] कृष्णजीरकः; कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गार-  
शोषनः । कालाजाजी तु सुपवी कालिका चोपकालिका ।  
पृथ्वीका कारवी पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुञ्चिका । उप-

कुञ्ची च कुञ्ची च वृहज्जीरक इत्यपि—इति भाव-  
प्रकाशः। त्वक्पर्णी; हिङ्गुपत्री; हिङ्गुपत्री तु कवरी  
पृथ्वीका पृथुका पृथुः—इति भावप्रकाशः। अहिफेनः;  
पुं. [ प्रथते त्रिख्यातो भवतीति। प्रथ्+प्रथिन्प्रदिस्त्रज्ञां  
सम्प्रसारणं सलोपश्च' इति कु, सम्प्रसारणं च ] त्रेतायुगे  
सूर्यवंशीयपञ्चमनृपः; धेननृपस्य वक्षिणकरमथना-  
ज्जातः; 'पृथुना प्रविभवता च शोभिता च वसुन्धरा।  
शस्यरत्नवती स्फीता पुरपत्तनशालिनी'—इति  
पावोत्तरखण्डे। अरेणराजपुत्रः; 'अयोधस्तस्य पुत्रोऽभूत्  
ककुत्स्थो नाम वीर्यवान्। ककुत्स्थस्य अरेणाभूत्स्य पुत्रः  
पृथुः स्मृतः—इति अग्निपुराणे। अग्निः; प्रियव्रत-  
वंशोद्भवस्य विभोः पुत्रः; 'भुवस्तस्मात् तयोद्गीय-  
प्रस्तारस्तत्सुतो विभुः। पृथुस्ततोऽभवन्नवतो नक्तस्यापि  
गयः सुतः—इति विष्णुपुराणे (२।१।३८)। तामस-  
मन्वन्तरे ऋषिविशेषः; 'ज्योतिर्धामा पृथुः काव्यश्चैत्रो-  
ऽग्निर्वलकस्तथा। पीवरश्च तथा ब्रह्मन् ! सप्त सप्तर्षयो  
ऽभवन्—इति मार्कण्डेये (७।४।५९)। ६९९

पृथुकः पुं. क्ली. [ पृथुरेव, संजायां कन्। यद्वा प्रथते इति,  
प्रथ्+अभकपृथुकेति' कुकन्, सम्प्रसारणं च ] चिपिटकः;  
'द्विः स्वन्नमन्नं पृथुकं शुद्धं देगविशेषके। नात्यन्तशस्तं  
विप्राणां भक्षणे च निवेदने। अभक्ष्यं च यतीनां च  
विधवात्रह्नाचारिणाम्—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'पृथुका  
गुरवो वल्याः कफविष्टम्भकारिणः—इति वाग्भटे।  
चाक्षुषमन्वन्तरे देवगणभेदः; 'आद्या प्रसूता ऋभवः  
पृथुकाश्च दिवोकसः—इति हरिवंशे (७।३२)। ५८५  
पृथुकः त्रि. [ प्रथते इति, प्रथ्+अभकपृथुकपाका वयसि'  
इति कुकन् सम्प्रसारणं च। यद्वा पृथु यथा स्यात् तथा  
कायति शब्दायते इति, कै शब्दे+क ] वालकः;  
'प्रक्रीडितान् रेणुभिरेत्य तूर्णं निगुर्जनन्यः पृथुकान्  
पथिम्यः—इति माघे (३।३०)। पृथुका = वालिका।

५०२

पृथुरोमा [ न् ] पुं. [ पृथूनि रोमाणि लोमस्थानीयानि  
शल्कान्यस्येति ] भस्वयः; वृहल्लोमयुक्ते त्रि.। ६५७

पृथुलम् त्रि. [ पृथु पृथुत्वमस्थास्तीति। पृथु+सिध्मादि-  
त्वाल् लच्। यद्वा पृथु लातीति, ला+क ] महत्;  
'श्रोणिषु प्रियकरः पृथुलासु स्पर्शमाप सकलेन तलेन—  
इति माघे (१०।६५)। ६९९

पृथ्वी स्त्री. [ पृथुः स्यूलत्वगुणयुवता। 'वोतो गुणवचनात्'  
इति डीप् ] पृथिवी; 'मधुकैटभयोर्मैदःसंयोगान् भेदिनी  
स्मृता। धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी विस्तारयोगतः—  
इति देवीभागवते (३।१।३।८)। 'पृथोर्दुहितृत्वस्वीकारा-  
देतन्नाम, यथा—'दुहितृत्वमनुप्राप्ता देवी पृथ्वी तथो-  
च्यते—इति अग्निपुराणे। हिङ्गुपत्री; कृष्णजीरकः;  
'कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गारशोधनः। कालाजाजी  
तु सुपवी कालिका चोपकालिका। पृथ्वीका कारवी  
पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुञ्चिका। उपकुञ्ची च कुञ्ची च  
वृहज्जीरक इत्यपि—इति भावप्रकाशः। वृत्ताहन्माता;  
पुनर्नवा; स्यूलैला; सप्तदशाक्षरपादकश्छन्दोभेदः। ११५६  
पृदाकुः पुं. [ पदंते, इति, पदं कुत्सिते शब्दे+पदंनि-  
सम्प्रसारणमल्लोपश्च' इति काकु, रेफस्य सम्प्रसारणम्  
अल्लोपश्च ] सर्पः; 'स भीमं सहसाम्येत्य पृदाकुः कुपितो  
भृशम्। जप्राहाजगरो ग्राहो भुजयोल्भवोर्बलात्—  
इति महाभारते (६।१७।८।२७)। वृश्चिकः; व्याघ्रः;  
चित्रकः; कुञ्जरः; वृक्षः। ६४०

पृश्निः त्रि. [ स्पृश्यते इति, स्पृश् संस्पर्शो+ 'घृणिपृश्नीति'  
नि, निपातनात् साधुः ] अल्पतनुः; 'दक्षां पृश्निं वृहतीं  
विप्रकृष्टां शिवामृद्धां भगिनीं सुप्रसन्नाम्। विभावरीं  
सर्वभूतप्रतिष्ठां गङ्गां गता ये त्रिदिवं गतास्ते—  
इति महाभारते (१।३।२६।८६)। खर्वदुर्वलात्पास्थिः;  
किरातः; शुक्लवर्णः; 'धेनुं च पृश्निं वृषभं सुरेतसम्—इति  
ऋग्वेदे (१।१।६०।३)। 'पृश्निं शुक्लवर्णां धेनुम्' इति  
तद्भाष्ये सायणाचार्यः। प्राप्ततेजाः; 'आयं गौः पृश्निर-  
क्रमीदसदन्मातरं पुरः—इति ऋग्वेदे (१०।१।८९।१)।  
स्त्री. [ स्पृशति द्रव्यजातं स्पृश्यते वा ] रश्मिः, अन्नं;  
वेदाः; जलम्; अमृतं; सुतपीराजपत्नी; सैव जन्मान्तरे  
देवकी भूता। ६११

पृषत् क्ली. [ पर्वति सिञ्चतीति। पृष् सेचने+ 'वर्तमाने  
पृषद्बृहन्महर्दिति' अतिप्रत्ययो गुणाभावश्च निपात्यते।  
शतृवदस्य कार्यं विज्ञेयम् ] जलविन्दुः; 'पृषदपरुष-  
विषाणाग्रेण लुठति' इति भागवते ५ स्कन्धे ८ अध्यायः।  
'पृषत् जलविन्दुस्तद्वत् अपरुषेण मृदुना विषाणाग्रेण  
लुठति सङ्घट्टयति—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी।  
इदं द्विवचनवहुवचनान्तमपि भवति। ६७७

पृषतः पुं. [ पर्वतीति। पृषु सेचने+ 'पृषिरञ्जिम्यां कित्'

इति अतच् स च कित् ] श्वेतविन्दुयुक्तमृगः; रङ्कुः; शवलपृष्ठकः; 'हरिणर्ष्यकुरङ्गकरालकृतमालशरभ-श्वादंष्ट्रपृषतचारुस्करमृगमातृकाप्रभृतयो जङ्घाला मृगाः । कपाया मधुरा लघवो वातपित्तहरास्तीक्ष्णा हृद्या वस्तिशोधनाश्च'—इति सुश्रुते । विन्दुः (६७७); 'करीव सिकतं पृषतैः पयोमुचां शुचिव्यपाये वनराजि-पल्वलम्'—इति रघौ (३।३) । द्रुपदराजस्य पिता; 'भरद्वाजसखा चासीत् पृषतो नाम पार्थिवः । तस्यापि द्रुपदो नाम तदा समभवत् सुतः'—इति महाभारते (१।१३।१७) । मण्डलिसर्पान्तर्गतसर्पविशेषः; 'आदर्श-मण्डलः श्वेतमण्डलो रक्तमण्डलश्चित्रमण्डलः पृषतो रोध्रपुष्पः'—इति सुश्रुते । २३०

पृषत्कः पुं. [ पृष्यते सिच्यते क्षिप्यते इति । पृष्+अति । ततः संज्ञायां कन् ] वाणः; 'अप्यद्वंभागे परवाणलूना धनुर्भृतां हस्तवतां पृषत्काः'—इति रघौ (७।४५) । ४६६

पृषदश्वः पुं. [ पृषन् मृगविशेषोऽश्व इव वाहको यस्य ] वायुः; 'स हि स्वसूतं पृषदश्वो युवा गणेश्या ईशान-स्तवीषिभिरावृतः'—इति ऋग्वेदे (१।८७।४) । राजपि-भेदः; 'व्यश्वः सदश्वो वधश्वः पृथुवेगः पृथुश्रवाः । पृषदश्वो वसुमनाः क्षुपश्च सुमहाबलः'—इति महाभारते (२।८।१२) । विरूपस्य पुत्रः; 'विरूपः केतुमान् शम्भुरम्बरीपमुतास्त्रयः । विरूपात् पृषदश्वोऽभूत् तत्पुत्रस्तु रथीतरः'—इति भागवते (९।६।१) । ७५

पृष्ठम् क्ली. [ पृष्यते सिच्यते इति । पृष्+तिथ्यपृष्ठ-गूययूथप्रोथाः' इति थक्प्रत्ययेन निपातनात् सिद्धम् ] शरीरपश्चाद्भागः; 'न विगर्हांकथां कुर्याद् वहिर्माल्यं न धारयेत् । गवां च यानं पृष्ठेन सर्वथैव विगर्हितम्'—इति मनुः (४।७२) । चरममात्रं; स्तोत्रविशेषः; 'त्रिवृतस्तीमाद्रथन्तरं पृष्ठं निरमिमीत'—इति शतपथ-ब्राह्मणे (८।१।१।५) । ५२८

पृष्ठग्रन्थिः पुं. [ पृष्ठस्य ग्रन्थिः ] गडुः । ६०४

पृष्ठबाह्यः पुं. [ पृष्ठे बाह्यं वहनीयद्रव्यमस्य ] भारवाहक-वृषः; स्थीरी; पृष्ठचः । २६६

पृष्ठास्थि क्ली. [ पृष्ठस्य अस्थि ] पृष्ठवंशः । ८०३

पृष्णिः त्रि. [ पृष्नि+पृषोदरादित्वात् साधुः ] पृष्निः; अल्पतनुः; प्रश्नी; पार्ष्णिः । ६११

पेचकः पुं. [ पचति पच्यते वा । पच्+चमच्यो॥

इति वुन्, उपधाया इच्च ] करिपुच्छमूलोपान्तः; पृष्ठाच्छादकमांसपिण्डविशेषः; पर्यङ्कः; यूकः; मेघः; पक्षिविशेषः; उलूकः; वायुसारातिः; शक्राख्यः; दिवान्धः; वक्रनासिकः; हरिनेत्रः; दिवाभीतः; नखाशी; पीयूः; घर्घरः; काकभीरुः; नवतचारी; निशाचरः; कौशिकः; रूपनाशनः; पेचः; रक्त नासिकः; भीरुकः । २१९

पेटकम् क्ली. [ पेटतीति, पिट्+ण्वुल् ] मण्डलं; समूहः, वंशवेशादिमयसमुद्गकप्रायः पिटकः; पेटा; मञ्जूषा । ६८७

पेटा स्त्री. [ पिट्+अच्+टाप् ] मञ्जूषा । ३१२

पेटाकः पुं. [ पेटक+पृषोदरादित्वात् साधुः ] पेटकम्; मञ्जूषिका । ६८७

पेलवम् त्रि. [ पेलं कम्पनं वातीति । पेल+वा+क. ] कृशं; विरलं; कोमलम्; 'पदं सहेत भ्रमरस्य पेलवं शिरीष पुष्पं न पुनः पतन्निणः'—इति कुमारे (५।४) । ७१७

पेशलः त्रि. [ पिश् अवयवे+भावे वच् । पेशं लांतीति, ला+क । यद्वा पेशोऽस्यास्तीति, सिष्मादित्वात् लच् ] सुन्दरः; 'युवतयः कुसुमं दधुराहितं तदलके दलकेसर-पेशलम्'—इति रघौ (९।४०) । चारुः; 'महिषस्य वचः श्रुत्वा पेशलं मन्त्रिसत्तमः । जगाम तरसाकामं गजाश्वरथसंयुतः'—इति देवीभागवते (५।९।५९) । दक्षः; चतुरः; कोमलः; 'इदं शरीरं परिणामपेशलं पतत्यवश्यं श्लथसन्निवर्जं रम् । किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते ! निरामयं कृष्णरसायनं पिव'—इति मुकुन्दमालायाम् (२१) । धूर्तः; पुं. विष्णुः । ६०९

पेशी स्त्री. [ पिश्+इन् वा डीप् ] अण्डम्; गर्भावेष्ट-नचर्ममयकोषः; 'घमनीस्रोतोऽवस्थितद्विवरपेशीप्रभृतिषु वा शरीरप्रदेशेषु'—इति सुश्रुते । सुपक्वकलिका; 'मधुकं विल्वपेश्यंश्च शर्करामधुसंयुताः । अतीसारं निहन्युश्च शालीपण्टिकयोः कणाः'—इति सुश्रुते । खड्गपिधानकं; मांसी; मांसपिण्डी; 'तां स मांसमयीं पेशीं ददर्श जपतां वरः ।' नदीभेदः; पिशाचीविशेषः; राक्षसीविशेषः; वाद्यविशेषः; 'तथा भैरवश्च पेश्यश्च क्रकचा गौविषाणिकाः । सहसैवाम्यहन्यन्त स शब्दस्तु-मुलोऽभवत्'—इति महाभारते (६।४२।४३) । २४०

पेशीकोशः पुं. [ पेश्याः कोशः मांसकलिकापिण्डः ] अण्डः;  
पक्षिगर्भः; देहस्यग्रन्यविशेषः । २४०

पोगण्डः त्रि. [ अपकृष्टः गण्डः एकदेशोऽयम् । पृषोदरादिः ]  
अपोगण्डः; स्वभाक्तो न्यूनाधिकः; ऊनविशत्यङ्गु-  
लीकैकविशत्यङ्गुलीकादिजनः; विकलाङ्गः; विक-  
लाङ्गकः; पुं. [ पुनातीति, पू+विच्, पीः शुद्धो गण्डो  
यस्य ] दशवर्षीयबालकः; 'रोगी वृद्धस्तु पोगण्डः  
कुर्वन्त्ययैत्रंतं सदा'—इति ब्रह्मपुराणम् । ३८७

पोटा स्त्री. [ पुटति स्त्रीपुरुषस्वरूपं संश्लिष्यतीति ।  
पुट्+अच्+टाप् ] स्त्रीपुंसलक्षणा; स्त्रीपुंसयोर्लक्षणं  
स्तनश्मश्र्वादिरूपं यस्यां सा । (४९२) कोटा; दासी ।

४३०

पोतः पुं. [ पुनाति इति, 'पू+हंसिभूषिणवामिदमिलू-  
पूधूर्विम्यस्तन्' इति तन् ] किशोरकः; पुं.- स्त्री. शिशु-  
(५०२); 'तत्रस्यात् स्वर्णमूलाख्याद् गिरेः संप्रेष्य  
राक्षसान् । आनाययत् पक्षिपोतं गण्डान्वयसम्भवम्'—  
इति कथासरित्सागरे (१२।१३३) । वस्त्रं (५४८);  
(६५५) समुद्रयानं; वहिन्नम्; 'सम्प्राप्य मानुषभवं  
सकलाङ्गयुक्तं पोतं भवार्णवजलोत्तरणाय कामम् ।  
सम्प्राप्य वाचकमहो न शृणोति मूढः सो वञ्चितोऽत्र  
विधिना सुहृदं पुराणम्'—इति देवीभागवते (१।३।४२) ।  
'पोतारूढास्ततः सर्वे पोतवाहरुपासिताः । अपारे दुस्तरेऽ-  
गाधे यान्ति वेगेन नित्यशः'—इति वाराहे । गृहस्थानं;  
वेश्मभूमिः; पोतः; दशवर्षीयहस्ती । ४४०

पोतवणिक् पुं. [ पोतेन पोतस्य वा वणिक् ] वहिन्नेण  
वाणिज्यकर्ता; चौवाणिज्यकरः; सांयात्रिकः; समुद्र-  
यानचारी । ६५५

पोताधानम् क्ली. [ आघीयतेऽत्रेति, ल्युट्, आधानम् ।  
पोतानाम् अण्डजमत्स्यानामाधानम् ] क्षुद्राण्डमत्स्य-  
संघातः; बीजरूपा मत्स्यशिशवः । ६६१

पोत्रम् क्ली. [ पूयतेऽनेनेति । पू+हलशूकरयोः पुवः'  
इति ष्टुन् ] लाङ्गलमुखाग्रं; शूकरमुखाग्रं; वज्रं;  
वहिनं; पोतनामत्त्वजः पात्रभेदः; 'मरुत ! पिवत  
ऋतुना पोत्राद्यज्ञं पुनीतन, यूयं हिष्ठा सुदानवः'—  
इति ऋग्वेदे (१।१५।२) । 'पोत्रात् पोतनामकस्य  
ऋत्विजः पात्रात् सोमं पिवत'—इति - तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । ८३२

पोत्री [ न् ] पुं. [ पोत्रमस्यास्तीति, पोत्र+इनि ] शूकरः;  
पोत्रविशिष्टे त्रि. । २२६

पोत्रः पुं. [ पुत्रस्यापत्यम् । पुत्र+अनूप्यानन्तर्ये विदा-  
दिभ्योऽन् इति अन् ] पुत्रस्य पुत्रः; नप्ता; 'नाती'  
इति भाषा । 'पुत्रेण लोकाञ्जयति पीत्रेणानन्त्यमश्नुते ।  
अथ पुत्रस्य पीत्रेण द्रघ्नस्याप्नोति पिष्टपम'—इति  
वशिष्ठहारीतवचनम् । ५०५

पीरः पुं. [ पुरे वसति, शैपिकोऽण् ] पुरोद्भूतः; नाग-  
रिकः; 'इति समगुणयोगप्रोतयस्तत्र पीराः, श्रवणकटु  
नृपाणामेकवाक्यं विवब्रुः'—इति रघौ (६।८५) । पुरु-  
राजपुत्रः; 'शग्धी नो अस्य बद्धं पीरमाविथ धिय इन्द्र  
सिपासतः'—इति ऋग्वेदे (८।३।१२) । [ पूरः पूरक  
एव, स्वार्थे अण् ] उदरपूरके त्रि. । 'पृणन्तस्ते कुक्षी  
वर्द्धयन्त्वित्या सुतः पीर इन्द्रमाव'—इति ऋग्वेदे  
(२।११।११) । क्ली. [ पुरे भवम् । पुर+तत्र भवः'  
इत्यण् ] रोहिपतृणं; 'रामकपूर' इति भाषा । 'कतृणं  
रोहिषं देवजग्ध सौगन्धिकं तथा । भूतीकं व्यासपीरं च  
श्यामकं धूमगन्धिकम्'—इति भावप्रकाशः । ८६४

पीरुषम् क्ली. [ पुरुष+अण् ] पुरुषस्य तेजः; पुरुषकारः;  
'क्लीवा हि देवमेवैकं प्रशंसन्ति न पीरुषम् । देवं पुरुष-  
कारेण धनन्ति शूराः सदोद्यमाः'—इत्यग्निपुराणम् ।  
'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्देवेन देयमिति कापुरुषा  
वदन्ति । देवं निहत्य कुरु पीरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते  
यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः'—इति हितोपदेशः ।  
त्रि. [ पुरुषस्य कर्म । पुरुषस्य भावः ] (८०५)  
ऊर्ध्वविस्तृतदोःपाणिनृमाणम्; पुरुषपरिमाणम्; पुरुष-  
वाह्यः; 'पणं यानं तरे दाप्यं पीरुषोऽर्धपणं तरे'—इति  
मनुः (८।४०४) । ७२३

पीरोगत्रः पुं.- स्त्री. [ पुरोऽग्रे गौर्नेत्रं यस्येति । पुरोगु +  
ततः प्रज्ञाद्यण् ] प्राकशालाव्यक्षः; सूदाध्यक्षः; 'वृक्षा-  
म्लसौवर्चलचुकूपूर्णान् पीरोगवोक्तानुपजहुरेपाम्'—  
इति हरिवंशे (१४६।५८) । ४३१

पीर्णमाती स्त्री. [ पूर्णो मासोऽस्यां वतंते इति । 'पूर्ण-  
मासादण् वक्तव्यः' इत्यण्, ततो ङीप् ] पूर्णिमा । ११२  
पीलस्त्यः पुं. [ पुलस्त्यस्यापत्यमिति । पुलस्त्य+गर्गा-  
दित्वाद् यञ् ] कुवेरः; रावणः; 'मुमोच रक्षः पीलस्त्यं  
पुलस्त्येनानुयाचितः'—इति हरिवंशे (३३।३५)

वृक्षः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहृदचतुरङ्गुलः ।  
आरखवघोऽय सम्पाकः कुतमालः सुवर्णकः'—इति  
वैद्यकरत्नमालायाम् । [ प्र+ग्रह्+भावे अप् ] इन्द्रिया-  
दीनां निग्रहः; 'व्यर्थो हि केवलं तस्य प्रग्रहो बाह्यगो-  
चरः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनार्दन'  
—इति हरिवंशे (८।७८) । धारणम्; 'उद्धवोऽय  
महाबुद्धिरुग्रसेनो महाबलः । अन्ये च यादवाः सर्वे  
कवचप्रग्रहे रताः'—इति हरिवंशे (२२।४) । अव-  
लम्बनम्; 'नृपेष्वय प्रनष्टेषु जगत्यप्रग्रहाः प्रजाः ।  
क्षणेन निर्वृते चैवं हत्वा चान्योऽन्यमाहवे'—इति हरि-  
वंशे (४१।१६९) । विष्णुः; 'प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रोऽनैक-  
शृङ्गो गदाग्रजः'—इति महाभारते (१३।१४९।९४) ।  
प्रकृष्टाधिष्ठानादौ त्रि. । 'तामार्यगणसम्पूर्णा भरतः  
प्रग्रहां सभाम् । ददर्श बुद्धिसम्पन्नः पूर्णचन्द्रां  
निशामिव'—इति रामायणे ( २।८२।१ ) 'प्रग्रहा  
प्रकृष्टैर्विशिष्टादिभिर्ग्रहोऽधिष्ठानं यस्यां सा'—इति  
तट्टीका । उद्यतवाहः; 'एवमुक्तस्तु मुनिना  
प्राञ्जलिः प्रग्रहो नृपः । अभ्यवादयत प्राज्ञस्तमृषिं  
सत्यशालिनम्'—इति रामायणे (७।९५।१४) । ३९

**प्रघणः** पुं. [ प्रविशद्भिर्जनेः पादैः प्रकर्षेण हन्यते इति ।  
प्र+हन्+अंगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च' इति कर्मणि  
अप् नत्वं च ] वहिर्हारप्रकोष्ठकं; प्रघाणः; अलिन्दः;  
आलिन्दः; ताम्रकुम्भः; लौहमुद्गरः; गृहाम्यन्तर-  
शय्यार्धपिण्डिका; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारवाह्यप्रको-  
ष्ठके । गृहाम्यन्तरशय्यार्धपिण्डिकायामपि त्रयम्'—  
इति शब्दरत्नावली । २९९

**प्रघाणः** पुं. [ प्रहृष्यते इति, प्र+हन्+अंगारैकदेशे  
प्रघणः प्रघाणश्च' इति अप् पक्षे वृद्धिश्च ] स्कन्वः; प्रघणः  
( २९९ ); 'नयति भगवानम्भोजस्यानिबन्धवान्धवः,  
किमपि मघवत्प्रासादस्य प्रघाणमुपघ्नन्ताम् । अपसर-  
दरिध्वान्तप्रत्यग्विवयत्पथमण्डली, लगनफलदश्रान्तस्वर्णा-  
चलन्नमविम्रमः'—इति नैपथे ( १९।११ ) । १८२

**प्रघातः** पुं. [ प्रकर्षेण हन्यते यत्रेति । प्र+हन्+घञ्,  
'हनस्तोऽचिण्लोः' ] युद्धम् । ४५४

**प्रचलः** त्रि. [ प्रकर्षेण चलतीति । प्र+चल्+अच् ] चपलः ।  
६९५

**प्रचलाकः** पुं. [ प्रकर्षेण चलतीति । प्र+चल्+आकन् ]

शिखण्डः; शराघातः; भुजङ्गमः । २४२

**प्रचलाको** [ न् ] पुं. [ प्रचलाकः शिखण्डोऽस्यास्तीति ।  
प्रचलाक+इनि ] मयूरः; 'कूजत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटा-  
घूत्कारवत्कीचक, स्तम्बाडम्बरमूकमीकुलिकुलकौञ्चा-  
वतोऽयं गिरिः । एतस्मिन् प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः  
कृजितैः, उद्वेलन्ति पुराणचन्दनतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—  
इति उत्तररामचरिते २ अङ्के । २४१

**प्रचुरम्** त्रि. [ प्रचोरतीति । प्र+चूर्+इगुपघञेति' क,  
यद्वा प्रगतञ्चुराया इति । प्रादिसमासः ] प्रभूतं;  
प्राज्यम्; अद्रभ्र; वहलं; बहु; अनेकं; पुरुहं; पुरु;  
भूयिष्ठं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अहो नृजन्माखिल-  
जन्मशोभनं किं जन्मभिस्त्वपरैरप्यमुष्मिन् । न यद्  
हृषीकेशयशः कृतात्मनाम् महात्मनां वः प्रचरः समागमः'—  
इति भागवते ( ५।१३।२१ ) । ७०१

**प्रचेताः** [ स ] पुं. [ प्रचेततीति, प्र+चित्+असुन् ] बहणः;  
'हृदिपे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः । भुजङ्गपिहित-  
द्वारं पातालमधितिष्ठति'—इति रघौ ( १।८० ) ।  
मुनिविशेषः; 'मरीचिमन्थङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ।  
प्रचेतसं वशिष्ठं च भृगुं नारदमेव च'—इति मनुः  
( १।३५ ) । [ प्रकृष्टं चेतोऽस्य ] प्रकृष्टहृदि त्रि. ।  
प्राचीनवहिराजपुत्रः; 'प्राचीनवहिरभगवान् सर्वशस्त्र-  
भृतां वरः । समुद्रतनयायां वै दश पुत्रानजीजनत् । प्रचेत-  
सस्ते विख्याता राजानः प्रथितीजसः'—इति कौर्म ।  
प्रकृष्टज्ञानयुक्ते त्रि. । 'देवाश्चित् ते असुर्यप्रचेतसो  
बृहस्पते यज्ञियं भागमानश्रुः'—इति ऋग्वेदे ( २।२३।२ ) ।  
'हे बृहस्पते ! प्रचेतसः प्रकृष्टज्ञानास्ते त्वदीया देवाश्चित्  
देवा अपि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७४

**प्रच्छदः** पुं. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+करणे  
व, 'छादेर्वेऽच्युपसर्गस्य' इति उपधाया ह्रस्वः ] आच्छा-  
दनम्; 'प्रच्छद्गान्तगलिताश्रुबिन्दुभिः क्रोयभिन्नवलयैवि-  
वर्तनैः'—इति रघौ ( १९।२२ ) । ३०८

**प्रच्छन्नम्** क्ली. [ प्र+छद्+क्त ] अन्तर्द्वारम्; आच्छन्ने  
त्रि. । 'प्रच्छन्ना हि महात्मानश्चरन्ति पृथिवीमिमाम्'—  
इति महाभारते ( ३।७।१३१ ) । ७०८

**प्रच्छेदनम्** क्ली. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+  
ल्युट् ] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावरणं; संब्यानम्; उत्तरीयकं;  
नेत्रच्छदम्; 'प्रच्छादनं भवेद्वर्त्म चाक्षिकूटमतः परम्'—

वृक्षः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहश्चतुरङ्गुलः ।  
 आरग्वधोऽय सम्पाकः कुतमालः सुवर्णकः'—इति  
 वैद्यकरत्नमालायाम् । [ प्र+ग्रह्+भावे अप् ] इन्द्रिया-  
 दीनां निग्रहः; 'व्यथो हि केवलं तस्य प्रग्रहो बाह्यगो-  
 चरः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनादेन'  
 —इति हरिवंशे (८१७८) । धारणम्; 'उद्धवोऽय  
 महाबुद्धिरुग्रसेनो महाबलः । अन्ये च यादवाः सर्वे  
 कवचप्रग्रहे रताः'—इति हरिवंशे (२२१४) । अव-  
 लम्बनम्; 'नृपेष्वय प्रनष्टेषु जगत्यप्रग्रहाः प्रजाः ।  
 क्षणेन निर्वृते चैवं हत्वा चान्योऽन्यमाह्वे'—इति हरि-  
 वंशे (४१११६९) । विष्णुः; 'प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रोऽनैक-  
 शृङ्गो गदाग्रजः'—इति महाभारते (१३११४९१४) ।  
 प्रकृष्टाधिष्ठानादौ त्रि । 'तामार्यगणसम्पूर्णा भरतः  
 प्रग्रहां सभाम् । ददर्श बुद्धिसम्पन्नः पूर्णचन्द्रां  
 निशामिद'—इति रामायणे (२१८२११) 'प्रग्रहा  
 प्रकृष्टैर्विशिष्टादिभिर्ग्रहोऽधिष्ठानं यस्यां सा'—इति  
 तट्टीका । उद्यतवाहः; 'एवमुक्तस्तु मुनिना  
 प्राञ्जलिः प्रग्रहो नृपः । अभ्यवाद्यत प्राज्ञस्तमृषि  
 सत्यशालिनम्'—इति रामायणे (७१९५११४) । ३९  
**प्रघणः** पुं. [ प्रविशद्भिर्जनैः पादैः प्रकर्षणे हन्यते इति ।  
 प्र+हन्+ 'अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च' इति कर्मणि  
 अप् नत्वं च ] बहुद्वारप्रकोष्ठकं; प्रघाणः; अलिन्दः;  
 आलिन्दः; ताम्रकुम्भः; लोहमुद्गरः; गृहाम्यन्तर-  
 शय्यार्धपिण्डिका; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारवाह्यप्रको-  
 ष्ठके । गृहाम्यन्तरशय्यार्धपिण्डिकायामपि त्रयम्'—  
 इति शब्दरत्नावली । २९९  
**प्रघाणः** पुं. [ प्रहृष्यते इति, प्र+हन्+ 'अगारैकदेशे  
 प्रघणः प्रघाणश्च' इति अप् पक्षे वृद्धिश्च ] स्कन्धः; प्रघणः  
 (२९९); 'नयति भगवानम्भोजस्यानिबन्धवान्धवः,  
 किमपि मघवत्प्रासादस्य प्रघाणमुपधनताम् । अपसर-  
 दरिव्रान्तप्रत्यग्वियत्पथमण्डली, लगनफलदश्रान्तस्वर्णा-  
 चलग्रमविग्रमः'—इति नैपथे (१९१११) । १८२  
**प्रघातः** पुं. [ प्रकर्षणे हन्यते यत्रेति । प्र+हन्+घञ्,  
 'हनस्तोऽचिण्णलोः' ] युद्धम् । ४५४  
**प्रचलः** त्रि. [ प्रकर्षणे चलतीति । प्र+चल्+अच् ] चपलः ।  
 ६९५  
**प्रचलाकः** पुं. [ प्रकर्षणे चलतीति । प्र+चल्+आकन् ]

शिखण्डः; शराघातः; भुजङ्गमः । २४२  
**प्रचलाकी** [ न् ] पुं. [ प्रचलाकः शिखण्डोऽस्यास्तीति ।  
 प्रचलाक+इनि ] मभूरः; 'कूजकुञ्जकुटीरकौशिकघटा-  
 धूतकारखत्कीचक, स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलकौञ्चा-  
 वतोऽयं गिरिः । एतस्मिन् प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्देजिताः  
 कूजितैः, उद्देलन्ति पुराणचन्दनतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—  
 इति उत्तररामचरिते २ अङ्के । २४१  
**प्रचुरम्** त्रि. [ प्रचोरतीति । प्र+चुर्+ 'इगुपवजेति' क,  
 यद्वा प्रगतञ्चुराया इति । प्रादिसमासः ] प्रभूतं;  
 प्राज्यम्; अदम्य; बहुलं; बहु; अनेकं; पुरुहं; पुरु;  
 भूविष्टं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अहो नृजन्माखिल-  
 जन्मशोभनं किं जन्मभिस्त्वपरैरप्यमुष्मिन् । न यद्  
 हृषीकेशयशः कृतात्मनाम् महात्मनां वः प्रचरः समागमः'—  
 इति भागवते (५१३३२१) । ७०१  
**प्रचेताः** [ स ] पुं. [ प्रचेततीति, प्र+चित्+अमुन् ] वरुणः;  
 'हृषिपे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः । भुजङ्गपिहित-  
 द्वारं पातालमविनिष्ठति'—इति रघौ (११८०) ।  
 मुनिविशेषः; 'मरीचिमव्यङ्गिरसो पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ।  
 प्रचेतसं वशिष्ठं च भृगुं नारदमेव च'—इति मनुः  
 (११३५) । [ प्रकृष्टं चेतोऽस्य ] प्रकृष्टहृदि त्रि. ।  
 प्राचीनवर्हिराजपुत्रः; 'प्राचीनवर्हिर्भगवान् सर्वशस्त्र-  
 भूतां वरः । समुद्रतनयायां वै दश पुयानजीजनत् । प्रचेत-  
 सस्ते विख्याता राजानः प्रथितो जसः'—इति कौर्मौ ।  
 प्रकृष्टज्ञानयुक्ते त्रि. । 'देवासिचत् ते असुर्यंप्रचेतसो  
 बृहस्पतिं यज्ञियं भागमानशुः'—इति ऋग्वेदे (२१२३१२) ।  
 'हे बृहस्पते ! प्रचेतसः प्रकृष्टज्ञानास्ते त्वदीया देवासिचद्  
 देवा अपि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७४  
**प्रच्छदः** पुं. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+च्छद्+णिच्+करणे  
 व, 'छादेवोऽद्युपसर्गस्य' इति उपवाया ह्रस्वः ] आच्छा-  
 दनम्; 'प्रच्छद्रान्तगलिताश्रुविन्दुभिः क्रौञ्चभिन्नवलयैर्वि-  
 वर्तनैः'—इति रघौ (१९१२२) । ३०८  
**प्रच्छन्नम्** क्ली. [ प्र+च्छद्+क्त ] अन्तर्द्वारम्; आच्छन्ने  
 त्रि. । 'प्रच्छन्ना हि महात्मानश्चरन्ति पृथिवीमिमाम्'—  
 इति महाभारते (३१७१३१) । ७०८  
**प्रच्छोदनम्** क्ली. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+च्छद्+णिच्+  
 ल्युट् ] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावरणं; संब्यानम्; उत्तरीयकं;  
 नेत्रच्छदम्; 'प्रच्छादनं भवेद्वस्त्रं चाक्षिकूटमतः परम्'—

वृक्षः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहश्चतुरङ्गुलः । आरखवधोऽथ सम्पाकः कुतमालः सुवर्णकः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । [ प्र+ग्रह्+भावे अप् ] इन्द्रियादीनां निग्रहः; 'व्यर्थो हि केवलं तस्य प्रग्रहो बाह्यगोचरः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनार्दन'—इति हरिवंशे (८।७८) । धारणम्; 'उद्धवोऽथ महाबुद्धिरुग्रसेनो महाबलः । अन्ये च यादवाः सर्वे कवचप्रग्रहे रताः'—इति हरिवंशे (२२।४) । अवलम्बनम्; 'नृपेष्वथ प्रनष्टेषु जगत्यप्रग्रहाः प्रजाः । क्षणेन निर्वृते चैवं हत्वा चान्योऽन्यमाहवे'—इति हरिवंशे (४।१।१६९) । विष्णुः; 'प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रोऽनैकशृङ्गो गदाग्रजः'—इति महाभारते (१३।१४९।१४) । प्रकृष्टाधिष्ठानादौ त्रि । 'तामार्यगणसम्पूर्णा भरतः प्रग्रहां सभाम् । ददर्श बुद्धिसम्पन्नः पूर्णचन्द्रां निशामिव'—इति रामायणे (२।८२।१) 'प्रग्रहा प्रकृष्टैर्विशिष्टादिभिर्ग्रहोऽधिष्ठानं यस्यां सा'—इति तट्टीका । उद्यतवाहः; 'एवमुक्तस्तु मुनिना प्राञ्जलिः प्रग्रहो नृपः । अम्यवाद्यत प्राज्ञस्तमृषि सत्यशालिनम्'—इति रामायणे (७।९५।१४) । ३९

**प्रघणः** पुं. [ प्रविशद्भिर्जनैः पादैः प्रकषेण हन्यते इति । प्र+हन्+अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च इति कर्मणि अप् नत्वं च ] वहिर्द्वारप्रकोष्ठकं; प्रघाणः; अलिन्दः; आलिन्दः; ताम्रकुम्भः; लौहमुद्गरः; गृहाम्यन्तरशय्यार्थपिण्डिका; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारवाह्यप्रकोष्ठके । गृहाम्यन्तरशय्यार्थपिण्डिकायामपि त्रयम्'—इति शब्दरत्नावली । २९९

**प्रघाणः** पुं. [ प्रहृण्यते इति, प्र+हन्+अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च इति अप् पक्षे वृद्धिश्च ] स्कन्धः; प्रघणः (२९९); 'नयति भगवानम्भोजस्यानिबन्धवान्धवः, किमपि मघवत्प्रासादस्य प्रघाणमुपघ्नन्ताम् । अपन्नरदरिध्वान्तप्रत्यग्विवयत्पथमण्डली, लगनफलदश्रान्तस्वर्णाचलम्रमविम्रमः'—इति नैपथे (१९।११) । १८२

**प्रघातः** पुं. [ प्रकषेण हन्यते यत्रेति । प्र+हन्+घञ्, 'हनस्तोऽचिण्णलोः' ] युद्धम् । ४५४

**प्रचलः** त्रि. [ प्रकषेण चलतीति । प्र+चल्+अच् ] चपलः ।

६९५

**प्रचलाकः** पुं. [ प्रकषेण चलतीति । प्र+चल्+आकन् ]

शिखण्डः; शराघातः; भुजङ्गमः । २४२

**प्रचलाकी** [ न् ] पुं. [ प्रचलाकः शिखण्डोऽस्यास्तीति । प्रचलाक+इनि ] मयूरः; 'कूजत्कुञ्जकुटीरकीशिकघटाघूत्कारवत्कीचक, स्तम्बाडम्बरमूकमीकुलिकुलक्रीञ्चावतोऽयं गिरिः । एतस्मिन् प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैः, उद्वेलन्ति पुराणचन्दनतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के । २४१

**प्रचुरम्** त्रि. [ प्रचोरतीति । प्र+चुर्+इगुपघञेति ] क, यद्वा प्रगतञ्चुराया इति । प्रादिसमासः ] प्रभूतं; प्राज्यम्; अदम्यः; बहुलं; बहु; अनेकं; पुरुहं; पुरु; भूविष्टं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अहो नृजन्माखिलजन्मशोभनं किं जन्मभिस्त्वपरैरप्यमुष्मिन् । न यद् हृषीकेशयशः कृतात्मनाम् महात्मनां वः प्रचुरः समागमः'—इति भागवते (५।१३।२१) । ७०१

**प्रचेताः** [ स ] पुं. [ प्रचेततीति, प्र+चित्+असुन् ] वरुणः; 'हृविषे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः । भुजङ्गपिहितद्वारं पातालमधितिष्ठति'—इति रघौ (१।८०) । मुनिविशेषः; 'मरीचिमथ्यङ्गरसौ पुलस्त्यं पुलहं ऋतुम् । प्रचेतसं वशिष्ठं च भृगुं नारदमेव च'—इति मनुः (१।३५) । [ प्रकृष्टं चेतोऽस्य ] प्रकृष्टहृदि त्रि. । प्राचीनब्रह्मराजपुत्रः; 'प्राचीनब्रह्मभंगवान् सर्वशस्त्रभृतां वरः । समुद्रतनयायां वै दश पुत्रानजीजनत् । प्रचेतसस्ते विख्याता राजानः प्रथितौजसः'—इति कौर्म । प्रकृष्टजानयुक्ते त्रि. । 'देवाश्चित् ते असुर्यप्रचेतसो बृहस्पते यजियं भागमानश्रुः'—इति ऋग्वेदे (२।२३।२) । 'हे बृहस्पते ! प्रचेतसः प्रकृष्टजानास्ते त्वदीया देवाश्चित् देवा अपि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७४

**प्रच्छदः** पुं. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+करणे व, 'छदेर्वोऽच्युपसर्गस्य' इति उपधाया ह्रस्वः ] आच्छादनम्; 'प्रच्छन्नान्तगलिताश्रुविन्दुभिः क्रोधिभिन्नवल्लयैर्विवर्तनैः'—इति रघौ (१।९।२२) । ३०८

**प्रच्छन्नम्** क्ली. [ प्र+छद्+क्त ] अन्तर्द्वारम्; आच्छन्ने त्रि. । 'प्रच्छन्ना हि महात्मानश्चरन्ति पृथिवीमिमाम्'—इति महाभारते (३।७।१३१) । ७०८

**प्रच्छोदनम्** क्ली. [ प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+ल्युट् ] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावरणं; संब्यानम्; उत्तरीयकं; नेत्रच्छदम्; 'प्रच्छादनं भवेद्वर्त्म चाक्षिकूटमतः परम्'—

इत्यश्ववैद्यके । 'वर्त्म नेत्रच्छदं प्रच्छादनं प्रच्छादना-  
परनामकं भवेत् । वर्त्म नेत्रच्छदेष्वनोऽत्यमरः' इति  
तट्टीका । [ भावे ल्युट् ] गोपनम्; 'आत्मप्रच्छादनार्थं वै  
वाहुवीर्यमुपाश्रितः । विप्ररूपं विधायेदं मन्ये मां प्रति  
युध्यसे'—इति महाभारते ( १११११७ ) । ५४६  
प्रच्छादितम् त्रि. [ प्र+छद्+णिच्+क्त ] आच्छादितम् ।

७८१

प्रजनः पुं. [ प्रजायतेऽनेनेति । प्र+जन्+करणे घञ्,  
'जनिवध्योश्च' इति न वृद्धिः ] उपसरः; स्त्रीगव्यादिषु  
पुङ्गवादीनां प्रथमगर्भाधानाय मैथुनाभियोगः; स्त्रीगव्येषु  
पुङ्गवानां प्रथमगमनं; मैथुनसाधनोपस्थेन्द्रियम्;  
'वाच्यगिन मित्रमुत्सर्गं प्रजने च प्रजापतिम्'—इति मनुः  
( १२।१२१ ) । [ प्र+जन्+भावे घञ् ] पुत्रोत्पादनम्;  
'उपसर्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते । पिता प्रधानं प्रजने  
तस्माद्धर्मण तं भजेत्'—इति मनुः ( १।१२१ ) ।  
जनयितरि त्रि. । 'ईशो नगानां प्रजनः प्रजानां प्रसीदतां  
नः स महाविभूतिः'—इति भागवते ( ८।५।३४ ) ।  
'प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः'—इति  
भगवद्गीतायाम् ( १०।२८ ) । २७२

प्रजा स्त्री. [ प्रजाता इति । प्र+जन्+उपसर्गं च संज्ञा-  
याम् इति ड ] जनः; 'प्रजानां विनयाधानाद् रक्षणाद्  
भरणादपि । स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः'—  
इति रघी ( १।२४ ) । सन्ततिः; पितृमातृगुणदोषेण  
प्रजा विभिन्ना भवन्ति, यथा—'मातृणां शीलदोषेण पितृ-  
शीलगुणेन च । विभिन्नास्तु प्रजाः सर्वा भवन्ति भवशीलि-  
नाम्'—इति अग्निपुराणे । उत्पत्तिः; 'प्रजायै मृत्यवे  
त्वत्पुनर्माताण्डिमाभर्त्'—इति ऋग्वेदे ( १०।७२।९ ) ।

२८४

प्रजागरः पुं. [ प्र+जाग्+जगर्त्तेरः' इति भावे अ ]  
प्रकर्षेण जागरणम्; 'देवतानां पितृणां च घोरं कृत्वा  
प्रजागरम् । त्रेतायुगे चतुर्थशे रावणस्तपसः क्षयात् ।  
रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमीयिवान्'—इति अग्नि-  
पुराणे । विष्णुः; 'अध्वारनिलयो धाता पुष्पहासः  
प्रजागरः'—इति महाभारते ( १३।१४९।११५ ) । 'नित्य-  
बुद्धस्वरूपत्वात् प्रजागरः विष्णु'—इति तद्भाष्यम् ।  
प्राणः; 'ते चण्डवेगानुचराः पुरञ्जनपुरं यदा । हर्तुमारै-  
भिरे तत्र प्रत्यवेधत् प्रजागरः'—इति भागवते ( ४।२७।

१५ ) । 'प्रजागरः प्राणः'—इति तट्टीकायां श्रीधर-  
स्वामी । ६०३

प्रजाता स्त्री. [ प्रजातं प्रजननं सुतादीनामुत्पत्तिरित्यर्थः,  
तदस्या अस्तीति । अच्+टाप् ] जातापत्या; प्रसूता;  
'स्त्रीणामप्रजातानां प्रजातानां तथाहितैः । दाहज्वरकरो  
घोरो जायते रक्तविद्रधिः'—इति सुश्रुते । अश्व-  
विशेषे पुं. । 'प्रजाते वायव्यम्' इति कात्यायनश्रौतसूत्रे  
( २०।३।२० ) । 'वडवायां कृतरेतःस्कन्दनः प्रजात  
इत्युच्यते'—इति तद्भाष्यम् । ५००

प्रजापतिः पुं. [ प्रजानां पतिः ] ब्रह्मा; 'यस्मात् पितामहो  
जज्ञे प्रभुरेकः प्रजापतिः । ब्रह्मा सुरगुहः स्थाणुर्मनुः कः  
परमेष्ठयथ'—इति महाभारते ( १।१।३२ ) । महीपालः  
( ४२१ ); दक्षादिः; दक्षप्रजापतिः; इन्द्रः; 'अयमेव  
विषाता हि तथैवेन्द्रः प्रजापतिः'—इति महाभारते ( ३।  
१८५।१६ ) । जामाता; दिवाकरः; वह्निः; त्वष्टा,  
यथा वाजसनेयसंहितायाम् ( १२।६१ ) 'तां विश्वेदे-  
वेऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा विमुञ्चतु ।'  
दश प्रजापतयः; एकविंशति प्रजापतयः; मनुः; 'न तौ  
प्रति हि तान् घर्मान् मनुराह प्रजापतिः'—इति मनुः  
( १०।७९ ) । पिता; 'जनको जन्मदानाच्च रक्षणाच्च  
पिता नृणाम् । ततो विस्तीर्णकरणात् कलया स प्रजा-  
पतिः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । कीटभेदः । ७

प्रजावती स्त्री. [ प्रजास्त्यस्याः इति । प्रजा+मनुषु, मस्य  
वृः, स्त्रियां डीप् ] भ्रातृजाया; भ्रातृवधूः; ज्येष्ठभ्रातृ-  
पत्नी; 'प्रजावती द्रोहदशसिनी ते तपोवनेषु स्पृहयालुरेव ।  
स त्वं रथी तद्वचपदेशनेयां प्रापय्य वाल्मीकिपदं त्यजेताम्'  
—इति रघी ( १४।४५ ) । प्रियव्रतपत्नी; 'प्रियव्रतात्  
प्रजावत्यां वीरात् कन्या व्यजायत'—इति मार्कण्डेये  
( ५३।१३ ) । सन्तानविशिष्टा; 'साम्प्रतं सर्गकर्तृत्व-  
मादिष्टं ब्रह्मणा मम । सोऽहं पत्नीमभीप्सामि धन्यां  
दिव्यां प्रजावतीम्'—इति मार्कण्डेये ( ९७।१८ ) । ५०४

प्रजा स्त्री. [ प्र+ज्ञा+क्, टाप् ] बुद्धिः; मतिः; 'आकार-  
सद्दशप्रज्ञः प्रजया सद्दशागमः'—इति रघी ( १।१५ ) ।  
'एकाग्रता; 'तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वति ब्राह्मणः'  
—इति पञ्चदश्याम् ( ७।१०६ ) । प्राज्ञी; प्रकर्षेण जानाति  
या; सरस्वती, बुद्धिर्बुद्धिकपर्यायाः—'केतुः, केतः, चेतः,  
चित्तं, क्तुः, अंसुः, धीः, सचीः, माया, वयुनम्, अभिस्था'



इत्येकादश नामानि वेदनिघण्टी। ३३४

प्रणतिः स्त्री. [ प्रकृष्टं नमनमिति । प्र+णम्+भावे क्तिन् ] प्रणामः; प्रणिपातः; नमस्कारः; अनुनयः; 'राघवोऽपि चरणी तपोनिघेः क्षम्यतामिति वदन् समस्पृशत् । निर्जितेषु तरसा तरस्विनां शत्रुषु प्रणतिरेव कीर्तये'—इति रघौ (११।८९)। ७४९

प्रणयः पुं. [ प्रणयनम् । प्र+णी+ 'एरच्' इति अच् ] प्रेम; 'सखेति मत्वा प्रसमं यदुक्तं हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति । अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात् प्रण-  
नेन वापि'—इति भगवद्गीतायाम् (११।४) । प्रीत्या प्रार्थनम्; प्रश्रयः; प्रसरः; सम्बन्धमाभाषण-  
पूर्वमाहुर्वृत्तः स नो सङ्गतयोर्वनान्ते । तद् भूतनाथानुग ! नाहंसि त्वं सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम्—इति रघौ (२।५८) । यात्रा; विश्रम्भः; निर्वाणः । ७७३

प्रणवः पुं. [ प्रकर्षेण नूयते स्तूयते आत्मा स्वेष्टदेवता वानेनेति । प्र+णु स्तुतौ+ 'ऋदोरप्' इति अप्, 'उपस-  
गदिसमासेऽपि णोपदेशस्य' इति णत्वम् । यद्वा ब्रह्मवि-  
ष्णुमहेशरूपत्वात् प्रणम्यते इति । प्र+णम्+कर्मणि षञ्, संज्ञापूर्वकत्वात् वृद्धभावाः, पृथोदरादित्वात् मस्य वः ] ओङ्कारः; 'ओङ्कारः प्रणवस्तारो वेदादिवर्तुलो ध्रुवः । त्रैगुण्यं त्रिगुणो ब्रह्म सत्यो मन्त्रादिरज्ययः । ब्रह्मबीजं त्रितत्त्वं च पञ्चरश्मिस्त्रिदैवतः'—इति बीजवर्णाभि-  
धानम् । 'ओङ्कारो वर्तुलस्तारो वामश्च हंसकारणम् । मन्त्राद्यः प्रणवः सत्यं बिन्दुशक्तिस्त्रिदैवतम् । सर्व-  
बीजोत्पादकश्च पञ्चदेवो ध्रुवस्त्रिकः । सावित्री त्रिशिखो ब्रह्म त्रिगुणो गुणजीवकः । आदिवीजं वेदसारो वेद-  
बीजमतः परम् । पञ्चरश्मिस्त्रिकूटे च त्रिभवे भवनाशनः । गायत्री बीजपञ्चांशी मन्त्रविद्याप्रसूः प्रभुः । अक्षरं मातृकासूत्रानाद्रिदैवतमोक्षदो'—इति तन्त्रम् । ८  
प्रणायः त्रि. [ प्रणीयते इति, प्र+णी+ण्यत्, 'प्रणाय्योऽ-  
सम्मती' इति साधुः ] असम्मतः; 'न प्रणाय्यो जनः कश्चित् निकाय्यं तेऽधितिष्ठति ।'—इति भट्टिः (६।६६) ।  
अभिलाषविवर्जितः; साधुः; प्रियः । ३६६  
प्रणाली स्त्री. [ प्रणाल+गीरादित्वाद् डीप् ] जलनि-  
सरणमार्गः; 'तद्वाक्यं कर्णं राज्ञः श्रुत्वा दीनस्य भाषितम् । कौशल्या व्यसृजद्वाष्पं प्रणालीव नवीदकम्'—  
इति रामायणे (२।६२।१०) । ६८५

प्रणिधानम् क्ली. [ प्रणिधीयतेऽनेनेति, प्र+नि+धा+  
ल्युट् ] समाधिः; 'सोऽपश्यत् प्रणिधानेन सन्ततेः स्तम्भ-  
कारणाम्'—इति रघौ (१।७४) । प्रयत्नः; 'प्रणिधानेन धैर्येण रूपेण वयसा च मे । मनः प्रविष्टो देवर्षे ! गुण-  
केश्याः पतिर्वरः'—इति महाभारते (५।१०३।२१) ।  
प्रवेशनम्; 'बहुशः क्षता हीनशस्त्रप्रणिधानेनापविद्धा'—  
इति सुश्रुते । १२८

प्रणिधिः पुं. [ प्रणिधीयते इति, प्र+नि+धा+कि ] चरः;  
'प्रणिधिं प्रेषयामास हयारिस्तु शचीपतिम्'—इति देवी-  
भागवते (५।३।९) । प्रार्थनम्; अवधानं; बृहद्रथपुत्रः;  
'बृहद्रथस्य प्रणिधिः कश्यपस्य बृहत्तरः । भानुरङ्गिरसो  
धीर ! पुत्रो वर्चस्य सौरभः'—इति महाभारते (३।२१-  
२।९) । ४२५

प्रणिपातः पुं. [ प्र+नि+पत्+घञ् ] प्रणामः; नमस्कारः;  
प्रणतिः; 'तस्याः सखीभ्यां प्रणिपातपूर्वं स्वहस्तलूनः  
शिशिरात्ययस्य । व्यकीर्यत श्यम्बकपादमूले पुष्पोच्चयः  
पल्लवभङ्गभिन्नः'—इति कुमारे (३।६१) । ७४९

प्रणीतः पुं. [ प्रणीयते इति, प्र+णी+क्त ] संस्कृतानलः;  
यज्ञे मन्त्रादिना संस्कृताग्निः; त्रि. [ प्र+णी+क्त ]  
उपसम्पन्नः; पाकेन रूपरसादिसम्पन्नव्यञ्जनादि;  
क्षिप्तः; विहितः; प्रवेशितः; कृतम्; स्त्री. [ प्रणीत+  
टाप् ] यज्ञपात्रविशेषः । ४१५

प्रततिः स्त्री. [ प्रतनोतीति । प्र+तन्+क्तिच् ] बल्ली;  
लता; विस्तृतिः । १८०

प्रतती स्त्री. [ प्रतति+ङीष् ] लता; प्रतानिनी; बल्ली;  
व्रततिः; प्रततिः; व्रतती । १८०

प्रतनः त्रि. [ प्र+ 'नश्च पुराणे प्रात्' इति चकारात् तनप्  
प्रत्ययः ] पुरातनः; जीर्णः; पुराणः । ७११

प्रतलः पुं. [ प्रकृष्टं तलमस्य ] विस्तृताङ्गुलिपाणिः;  
चपेटः; क्ली. [ प्रकृष्टं तलम् ] पातालभेदः । ५३७

प्रतानिनी स्त्री. [ प्रतानो विस्तारोऽस्त्यस्या इति । प्रतान+  
इनि ] विस्तृतलतादिः; प्रतानवती । १८०

प्रतापः पुं. [ प्र+तप्+घञ् ] पौरुषम्; 'समः समविभ-  
क्ताङ्गः स्निग्धवर्णः प्रतापवान्'—इति रामायणे (१।१।  
११) । 'प्रतापः स्मृतिमात्रेण रिपुहृदयविदारणक्षमं  
पौरुषम्'—इति तट्टीकायां रामानुजः । तापः; 'यथा  
प्रह्लादनाञ्चन्द्रः प्रतापात् तपनो यथा । तथैव सोऽभू-

दन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात्—इति रघौ (४।१२) ।  
कोषदण्डजेजः; कोषो धनं, दण्डो दमः, तद्वेतुत्वात्  
सैन्यमपि दण्डः, ताम्यां यत्तेजो जायते सः; प्रभावः;  
'प्रतापयुक्तस्तेजस्वी नित्यं स्यात् पापकर्मसु'—इति  
मनुः (१।३।१०) । तेजः; अकंनृषः; युवराजस्य छत्रे  
कली. 'नीलो दण्डश्च वस्त्रं च शिरः कुम्भस्तु कानकः ।  
सौवर्णं युवराजस्य प्रतापं नाम विश्रुतम्'—इति भोज-  
युक्तिकल्पतरौ । ७२३

प्रतारणम् क्ली. [ प्र+तृ+णिच्+भावे ल्युट् ] प्रतारणा;  
वञ्चनं; व्यलीकं; अभिसन्धानम्; 'सूदे दामोदरीये  
यत्तस्यासीत् स्वकृतं पुरम् । सेतुना तेन तत्रैच्छत् कर्तुं  
सोऽन्मःप्रतारणम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१५७) ।  
७४८

प्रतारणा स्त्री. [ प्र+तृ+णिच्+युच्+टाप् ] वञ्चना;  
कौतवम्; उपाधिः । ७४८

प्रति अव्य. [ प्रथते इति । प्रथ् विख्यातौ+बाहुलकाद् ङिति ]  
मुख्यसदृशः; यथा—प्रद्युम्नः केशवात् प्रति । व्याकरणे  
उपसर्गविशेषः; प्रतिनिधिः; वीप्सा; व्याप्तुमिच्छा;  
लक्षणं; चिह्नं; भागः; स्वीक्रियमाणोऽंशः; प्रतिदानं;  
स्तोकम्; अल्पं; क्षेपः; निश्चयः; व्यावृत्तिः; प्रशस्तिः;  
विरोधः; समाधिः; आभिमुख्यं; स्वभावः । ८८१

प्रतिकर्म [ न् ] क्ली. [ प्रत्यङ्गं प्रतिख्यातं वा कर्म । शाकप-  
थिवादिवत् समासः ] प्रसाधनं; वेशः; 'आस्तीर्णतल्प-  
रचितावसयः क्षणेन वेश्याजनः कृतनवप्रतिकर्मकाम्यः'—  
इति माघे (५।२७) । प्रतीकारः; 'उषिताः स्मो वने  
वासं प्रतिकर्मचिकीर्षवः । कोषं नाहंसि नः कर्तुं सदा  
समरदुर्जय !'—इति महाभारते (४।५६।१८) । अङ्ग-  
संस्कारः । ५३९

प्रतिक्रियः पुं. [ प्रतिगतः कायो यत्र ] प्रतिरूपकं; शर-  
व्यम् । १३०

प्रतिकूलम् त्रि. [ प्रतीपं कूलादिति ] अननुकूलं; विपक्षः;  
प्रसव्यम्; अपसव्यम्; अपष्टुः; प्रतीपम्; 'राज्ञः कोषाप-  
हत्' इव प्रतिकूलेषु च स्थितान् । घातयेद्विषैर्दण्डैररी-  
णाञ्चोपजापकान्'—इति मनुः (१।२७५) । ७४३

प्रतिकृतः त्रि. [ प्रति+कृ+क्त ] द्विरावृत्या कृतः । ७६५

प्रतिकृतिः स्त्री. [ प्रकृष्टा कृतिः ] प्रतिनिधिः; चित्रकृतिः;  
'तेनाष्टी परिगमिताः समाः कथञ्चिद् बालत्वादवित्तय-

सूनूतेन सूतोः । सादृश्यप्रतिकृतिदर्शनः प्रियायाः स्वप्नेषु  
क्षणिकसमागमोत्सर्वस्व'—इति रघौ (८।१२) ।  
[ प्रति+कृ+भावे क्तित् ] प्रतिकारः; प्रतीकारः;  
'शृणुष्वं देवताः सर्वाः शत्रुप्रतिकृति पराम् । जवभ्या  
दानवाः सर्वे ऋते षाङ्करमव्ययम्'—इति हरिवंशे  
(२५७।२३) । प्रतिमा । १३०

प्रतिक्षणम् अव्य. [ क्षणं क्षणं प्रति ] पौनः पुन्यं; भूयः;  
असकृत्; 'प्रतिक्षणं सा कृतरोनयिक्रियां क्रताय धीञ्चीं  
त्रिगुणां बभार धाम् । अकारि तत्पूर्वनिबद्धया सदा सराण-  
मस्या रथानागुणास्पदम्'—इति कुमाररे (५।१०) । ७२४

प्रतिक्षिप्तः त्रि. [ प्रतिक्षिप्यते स्मेति । प्रति+क्षिप्+क्त ]  
अधिक्षिप्तः; प्रत्याख्यातः; प्रत्यादिष्टः; निराकृतः;  
निरस्तः; अपविद्धः; परिहृतः; वारितः; प्रेषितः । ७०३

प्रतिग्रहः पुं. [ प्रति ग्रहणमिति । प्रति+ग्रह्+ग्रहण्यु-  
निधिचगमश्च' इति भावे अप् ] सैन्यपृष्ठः; स्वीकरणम्;  
[ प्रति गृह्णाति निष्ठीवनादिकमिति । प्रति+ग्रह्+  
'विभाषा ग्रहः' इति पक्षे अच् ] पतद्ग्रहः; [ प्रतिगृह्यते  
इति, प्रति+ग्रह्+अप् ] द्विजैर्म्यो विधिपद्मेभ्यः; तद्ग्रहः;  
ग्रहमेदः; ब्राह्मणस्यायः प्रतिग्रहाजितः । ७९२

प्रतिघः पुं. [ प्रतिहन्त्यनेनेति । प्रति+हन्+घ । न्यञ्जना-  
दित्वात् कुत्वम् ] क्रोधः; 'प्रतिघः क्रुतोऽपि समुपेत्य  
नरपतिगणं समाश्रयत्'—इति माघे (१५।५३) ।  
प्रतिहननं; प्रतिघातः; मूर्च्छा । ३६२

प्रतिच्छन्दः [ स् ] क्ली. [ छन्दोऽभिप्रायः, प्रतिगतं छन्दः  
इति प्रादिसमासः ] प्रतिरूपम्, ( अकारान्तोऽपि ) १३०.  
प्रतिच्छन्दः पुं. [ छन्दोऽभिप्रायः, प्रतिगतः छन्दम् ] प्रति-  
रूपम्; 'रक्षःशिरःप्रतिच्छन्दैः स्थिरप्रणतिसूचकः ।  
सनायशिक्षरान् प्रावात् तस्मै रक्षः पतिर्ध्वजान्'—इति  
राजतरङ्गिण्याम् (३।७७) । १३०

प्रतिच्छाया स्त्री. [ प्रतिगता छायामिति ] प्रतिकृतिः;  
मूर्तिसदृशमृच्छिलादिनिमित्तप्रतिरूपम्; 'माययास्य  
प्रतिच्छाया दृश्यते हि नटालये । देहाद्धेन तु कौरव्य ।  
सिधवे च प्रभावतीम्'—इति हरिवंशे (१५।१३०) । १३०

प्रतिजागरः पुं. [ प्रतिजागरणमिति । प्रति+जागृ+घञ् ।  
'जाग्रोऽजीति' गुणः ] प्रत्यवेक्षणम्; अवेक्षा; 'जागर-  
प्रतिनिधिः, प्रतिजागरः' इति शब्दद्वयं 'गृहमेवेक्षस्व'  
इत्यादिनियोगस्यानुष्ठातरि । ७८२

**प्रतिज्ञा स्त्री.** [ प्रतिज्ञायते इति । प्रति+ज्ञा+‘आतश्चोपसर्ग’ इति अङ्+टाप् ] आम्; प्रतिज्ञानम्; अङ्गीकारः; प्रतिश्रवः; ओम्; समाधिः; संवित्; आगूः; आश्रवः; संश्रवः; नियमः; अभ्युपगमः; वाढम्; आत्मा; सन्वा; सङ्गरः; संश्रावः; उररीकारः; श्रवः; ‘पूर्वन्तु रामस्तमिहानुयुज्य श्रुत्वा च वाक्यं भरतस्य तस्य । चिकीर्षमाणो रघुनन्दनस्तां पितुः प्रतिज्ञां स वभूव तूष्णीम्’—इति रामायणे (२।११०।४) । ‘त्वयास्य दैत्याधिपते वाच्यं साम यतो फलम् । प्रतिज्ञा नावरोद्धव्या स्वल्पकेऽपि च वस्तुनि’—इत्यग्निपुराणे ।

७१५

**प्रतिनिधिः पुं.** [ प्रतिनिधीयते सदृशीक्रियते इति । प्रति+नि+धा+‘उपसर्गं धोः किः’ इति कि ] प्रतिमा; सदृशः; ‘सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः । आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुष्या हि सा’—इति रघौ (१।८१) ।

१३०

**प्रतिनिर्मातनम् क्ली.** [ प्रतीपं निर्मातनम् । प्रति+निर्+यत्+स्वार्ये णिच्, भावे ल्युट् । प्रादिसमासः ] कृते परिकृतं; न्यासापर्णम् । ७६५

**प्रतिपक्षः पुं.** [ प्रतिकूलः पक्षः इति । प्रादिसमासः ] शत्रुः; वैरी; रिपुः; ‘अन्योऽन्यं प्रतिपक्षसंहतिमिमां लोकस्थितिं बोधयन्, एष त्रीडति कूपयन्त्रवटिकाच्यायप्रसक्तो विधिः । प्रतिवादी; सादृश्यम्; ‘प्रतिवन्धिप्रतिनिधिप्रतिपक्षविडम्बकाः’—इति काव्यचन्द्रिका । ४५५

**प्रतिपत् स्त्री.** [ प्रतिपद्यते उपक्रम्यतेऽनयेति । प्रति+पद्+करणे क्विप् ] प्रतिपत्तिः; बुद्धिः; द्रगढवाद्यं; तिथिविशेषः; पक्षतिः; ‘मणिकनकविभूषासंयुतश्चास्काः, निजकुलकमलोद्घाटमार्तण्डविम्बः । प्रतिपदि शशिपूर्णां लब्धजन्मा प्रतापी, भवति विमलवेशश्चाकेशः प्रजेशः’—इति कोष्ठीप्रदीपः । ८००

**प्रतिपत्तिः स्त्री.** [ प्रतिपदनमिति । प्रति+पद्+क्तिन् ] प्रागल्भ्यं; प्रगल्भता; बुद्धिः (८००); प्रवृत्तिः; ‘मनस्विनीनां प्रतिपत्तिरीदृशी’—इति कुमारे (५।४२) । गौरवम्; ‘सुभक्तो राजसु तथा कार्याणां प्रतिपत्तिमान्’—इति युक्तिकल्पतरौ । सम्प्राप्तिः; ‘वागर्थविद्य सम्पृक्ती वागर्थप्रतिपतये । जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ’—इति रघौ (१।१) । प्रबोधः; ‘चक्षुषांशेन रूपाणां

प्रतिपत्तिर्यतो भवेत्’—इति भांगवते (३।६।१४) । पदप्राप्तिः; फलशून्यकर्माङ्गं; ‘देवतोद्देशेन यागादौ त्यक्तहविरादेरग्नौ निक्षेपः ।’ ७७९

**प्रतिपादनम् क्ली.** [ प्रति+पद्+णिच्+भावे ल्युट् ] दानं; प्रतिपत्तिः; बोधनं; निष्पादनम्; ‘त्रेता विमोक्षसमये द्वापरः प्रतिपादने’—इति महाभारते (१३।१४।१४) । ७९३

**प्रतिवन्धः पुं.** [ प्रति+वन्ध्+घञ् ] कार्यप्रतिघातः; प्रतिष्टम्भः; ‘स तपःप्रतिवन्धमन्युना प्रमुखाविष्कृतचारुविभ्रमाम् । अशपद्भूव मानुषीति तां शमवेला-प्रलयोर्मिणा भुवि’—इति रघौ (८।८०) । ७६९

**प्रतिबिम्बम् क्ली.** [ प्रतिगतं विम्बमिति । ‘कुगतिप्रादयः’ इति समासः ] प्रतिमा; प्रतिच्छाया; ‘चिदानन्दमय-ब्रह्मप्रतिबिम्बसमन्विता । तमोरजःसत्त्वगुणा प्रकृतिद्विविधा च सा’—इति पञ्चदश्याम् (१।१५) । १३०

**प्रतिभयम् त्रि.** [ भयम् प्रतिगतम् ] भयङ्करम्; ‘दिसश्च प्रदिसश्चैव वभूवुः शरसङ्कुलाः । तमसा पिहितं सर्वमासीत् प्रतिभयं महत्’—इति रामायणे (६।९०।३५) । भये क्ली. । ७०५

**प्रतिभा स्त्री.** [ प्रतिभाति शोभते इति । प्रति+भा+क, टाप् ] बुद्धिः; प्रत्युत्पन्नमतित्वं; नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा । ‘प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता’—इति रुद्रः । ‘सूक्ष्मं साधु समुद्दिष्टं नियतं ब्रह्मलक्षणम् । प्रतिभा त्वस्ति मे काचित् तां ब्रूयामनुमानतः’—इति महाभारते (१२।२५।११) । [ प्रति भाति इति । प्रति+भा+‘आतश्चोपसर्ग’ इति अङ् ] दीप्तिः । ३३४

**प्रतिभान्वितः त्रि.** [ प्रतिभया अन्वितः ] प्रत्युत्पन्नमति-युक्तः; प्रगल्भः । ३७४

**प्रतिभूः पुं.** [ प्रतिरूपः प्रतिनिधिर्वा भवतीति । प्रति+भू+‘भुवः संज्ञान्तरयोः’ इति क्विप् । ‘धनिकाधमर्णयोरन्तरे यस्तिष्ठति विश्वासाथं स प्रतिभूः’ इति सिद्धान्तकौमुदी ] लग्नकः; ‘जामिन्’ इति भाषा । ‘यश्चैकः प्रतिभूः फलेषु कृतिनां यज्ञेषु यज्ञेश्वरो, विघ्नस्तोमतमः-समूहत्पनः सोऽयं स्वयं श्रीहरिः’—इति. प्रद्युम्नविजये १ अङ्के । ३८०

**प्रतिमा स्त्री.** [ प्रतिधीयते अनयेति । प्रति+मा+करणे अङ्+टाप् ] मूर्तिसदृशमृच्छिलादिनिमित्तप्रतिरूपकं;

प्रतिमानं; प्रतिबिम्बं; प्रतियातना; प्रतिच्छाया;  
प्रतिकृतिः; अर्चा; प्रतिनिधिः; प्रतिच्छन्दः; प्रति-  
कायः; प्रतिरूपम्; 'गिरिपृष्ठे तु सा तस्मिन् स्थिता  
स्वसितलोचना । विम्राजमाना शुशुभे प्रतिमेव हिर-  
ण्मयी'—इति महाभारते (११७२।२७) । अनुकृतिः  
(६९४); गजदन्तस्य बन्धः । १३१

प्रतिमानम् क्ली. [ प्रतिमीयतेऽनेनेति । प्रति+मि मा  
वा+ल्युट् ] प्रतिबिम्बं; (२१८) हस्तिललाटदेशः;  
गजदन्तयोष्यभागः; वाहित्यस्याधो भागः; 'प्रति-  
मानेषु कुम्भेषु दन्तवेषु चापरे । निगृहीता  
भृशं नागाः प्रासतोमरशक्तिभिः'—इति महाभारते  
(८।२८।२९) । सादृश्यम्; 'वृष्णो वध्रिः प्रतिमानं  
बुभूषन् । पुरुषा वृत्रो अशयद्वयस्तः'—इति ऋग्वेदे  
(१।३२।७) । 'प्रतिमानं सादृश्यम् इति'—तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । प्रतिनिधिः; 'नास्य शत्रुर्न प्रतिमान-  
मस्ति'—इति ऋग्वेदे (६।१८।१२) । 'प्रतिमानं  
प्रतिनिधिनस्ति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । दृष्टान्तः;  
'यं साधुगाथासदसि रिपवोऽपि सुरा नृप ! प्रतिमानं  
प्रकुर्वन्ति किमुतान्ये भवादृशाः'—इति भागवते  
(७।४।३५) । 'उप्रायुधश्च विक्रान्तः प्रतमानं धनु-  
ष्मताम्'—इति महाभारते (१।२।२६) । धान्यादि-  
परिमाणनिर्द्धारार्थप्रत्ययद्रोणादिकम्; 'तुलाधारणवि-  
द्विद्धिरभियुक्तस्तुलाश्रितः । प्रतिमानसमीभूतो रेखां  
कृत्वावतारितः'—इति यज्ञवल्क्यः (२।१००) । १३०  
प्रतियत्नः पुं. [ प्रतियत्यते इति । प्रति+यत् प्रयत्ने+  
'यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नञ्' इति नञ् ] संस्कारः;  
'सुगन्धितामप्रतियत्नपूर्वा विभ्रान्ति यत्र प्रमदाय  
पुंसाम्'—इति माघे (३।५४) । 'यत्र पुरि न प्रतियत्नः  
संस्कारः पूर्वं यस्यास्ताम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः ।  
लिप्सा; वाञ्छा; वन्दी; उपग्रहः; निग्रहादिः;  
सतो गुणान्तराधानं; ग्रहणादिः; रचना; प्रतिग्रहः;  
'प्रतियत्नस्तु संस्कारलिप्सोपग्रहणेषु च'—इति भेदिनी ।  
प्रयत्नवति त्रि. । ८४३

प्रतियातना स्त्री. [ प्रतियात्यते अनया इति । प्रति+  
यत्+णिच्+ण्यसन्धयो युच् इति युच् ] प्रतिमा;  
प्रतिरूपकः; प्रतिबिम्बम्; 'अनिविदा या विदधै विधात्रा  
पृथ्वी पृथिव्या प्रतियातनेव'—इति माघे (३।३४) ।

नुत्ययातना । १३०

प्रतिरूपम् क्ली. [ प्रतिगतं प्रतिकृतं वा रूपमिति । प्रादि-  
समासः ] प्रतिमा; 'भवान् मे खलु भक्तानां सर्वेषां  
प्रतिरूपधृक्'—इति भागवते (७।१०।२१) । त्रि.  
[ प्रतिगतं रूपमस्य ] अनुरूपः; 'आत्मनः प्रतिरूपोऽप्यौ  
लब्धः पतिरिति स्थिते । विचित्रवीर्यं कल्याण्यौ पूजया-  
मासतुः शुभे'—इति महाभारते (१।१०।२।६) । पुं.  
दानवविशेषः; 'विश्वजित् प्रतिरूपश्च वृषाण्डो विष्करो  
मघुः'—इति महाभारते (१।२।२७।५१) । १३०

प्रतिरोषकः पुं. [ प्रतिरुणद्धि प्रतिरुष्य चौथं करोतीति ।  
प्रति+रुष्+ण्वल् ] चौरः; चोरः; तस्करः । ३३८  
प्रतिलोमः त्रि. [ प्रतिगतं लोम आनुकूल्यं यस्मादिति ।  
'अच प्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोमः' इति समासान्तोऽञ्  
प्रत्ययः ] विलोमः; 'तावुभावप्यसंस्कार्याविति धर्मो  
व्यवस्थितः । वैगुण्याज्जन्मनः पूर्वं उत्तरः प्रतिलोमतः'—  
इति मानवे (९।६९) । वामः; 'बहूनि प्रतिलोमानि  
पुरा स कृतवान् मयि । कृष्णो नारद ! सोढानि म्यातेति  
स्म मयानघ !'—इति हरिवंशे (१२७।१४) । ७४३

प्रतिवत्सरम् क्ली. [ वत्सरं वत्सरं प्रति । 'अव्ययं विभक्तीति'  
वीप्सार्ये समासः ] । प्रतिसंवत्सरं; प्रतिवर्षम् । २७२  
प्रतिबिम्बन् क्ली. [ प्रतिरूपं बिम्बमिति । 'कुगतिप्रादयः'  
इति समासः ] प्रतिमा; प्रतिच्छाया; 'चिदानन्दमय-  
ब्रह्मप्रतिबिम्बसमन्विता । तमोरजःसत्त्वगुणा प्रकृति-  
द्विविधा च सा'—इति पञ्चदश्याम् (१।१५) । १३०  
प्रतिश्यायः पुं. [ प्रतिक्षणं श्यायते इति । प्रति+श्य+  
'श्याद्वधधासुसंस्त्रतीति' ण ] पीनसरोगः; प्रतिश्या;  
'सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपातात् स्युः पीनसे तीव्ररुजेऽति-  
दुःखे । सर्वोऽतिवृद्धोऽहितभोजनात् दुष्टप्रतिश्याय  
उपेक्षितः स्यात्'—इति चरके । ६०५

प्रतिश्रयः पुं. [ प्रतिश्रीयते अस्मिन्निति । प्रति+श्रि+  
अधिकरणे अच् ] आश्रयः; ओकः; 'स सम्यक् पूजयित्वा  
तं विप्रं विप्रर्षभस्तदा । ददी प्रतिश्रयन्तस्मै सदा सर्वात्ति-  
थिव्रतः'—इति महाभारते (१।१६६।४) । निवासः;  
'चण्डालश्चपचानान्तु वहिर्भामात् प्रतिश्रयः'—इति मनुः  
(१०।५१) । 'प्रतिश्रयो निवासः'—इति तट्टीकायां  
मेधातिथिः । समा; यज्ञशाला । २९७

प्रतिश्रवः पुं. [ प्रति+श्रु+ऋदोरप् इति अप् ] अङ्गी-

कारः; 'इति सोभीष्टसम्प्राप्तौ कारयित्वा प्रतिश्रवम् ।  
दूरमुत्क्रान्तमयादिः सङ्गमं तमयाचत'—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् (३।४२४) । ७१५

प्रतिसरः पुं. [ प्रतिसरतीति, प्रति+सु+अच् ] कङ्कणं;  
करसूत्रं; मन्त्रभेदः; माल्यं; व्रणशुद्धिः; चमूपृष्ठं;  
प्रातः । पुं.—कली. गण्डनम्; आरक्षः; नियोज्ये त्रि. ।

५५८

प्रतिसीरा स्त्री. [ प्रतिसिनोति प्रतिवष्णातीति । प्रति+  
सि+शुसिचिभिर्वा दीर्घश्च' इति ऋन् दीर्घश्च ततष्टाप् ]  
ज्वनिका; व्यवधायकपटः । ३०९

प्रतिसूर्यः पुं. [ प्रतिरूपः सूर्यस्य इति । प्रादिसमासः ] कृक-  
लासः; प्रतिसूर्यकः; 'प्रतिसूर्यः पिङ्गभासो बहुवर्णो  
महाशिराः'—इति श्शुभ्रुते । उपसूर्यकमण्डलम्; 'प्रति-  
सूर्याणां माला दस्युभयातङ्कनृपहन्त्री'—इति बृहत्संहिता-  
याम् । (३७।२) २३४

प्रतिहारः पुं. [ प्रतिविषयं प्रत्येकं वा हरति स्वामिसमीप-  
मानयतीति । प्रति+हृ+अण् ] द्वारपालः; 'ज्ञातो हि  
प्रतिहारेण ज्ञानी कश्चिद् द्विजोत्तमः'—इति देवी-  
भागवते (१।१७।३०) । [ प्रति+हृ+अधिकरणे घञ् ]  
द्वारम् (७८८) ; 'ततो नृपाणां श्रुतवृत्तवंशा पुंवल्लगल्भा  
प्रतिहाररत्नी । प्राक्सन्निकर्षं मगधेश्वरस्य नीत्वा कुमारी-  
मवदत् सुनन्दा'—इति रघौ (६।२०) । [ प्रतिल्यं  
हरतीति, हृ+अण् ] मायाकारः; प्रतिहारकः; परमेष्ठिनः  
पुत्रः; 'परमेष्ठी ततस्तस्मात् प्रतिहारस्तदन्वयः'—इति  
विष्णुपुराणे (२।१।३७) । ४२४

प्रतीकः पुं. [ प्रतीयते प्रत्येति वा इति । प्रति+इ+  
'अलीकादयश्चेति' ईकन् प्रत्ययेन साधुः ] एकदेशः;  
अङ्गम्; अवयवः; 'वि सानुना पृथिवी सल्ल उर्वी पृथु  
प्रतीकमध्यवे अग्निः'—इति ऋग्वेदे (७।३६।१) ।  
'तथाग्निः पृथु विस्तीर्णं प्रतीकं पृथिव्या अवयवम्'—इति  
तद्भाष्ये सायणाचार्यः । विलोमः; प्रतिकूले त्रि. । ७४४

प्रतीक्ष्यः त्रि. [ प्रतीक्ष्यते इति । प्रति+ईक्ष्+प्यत् ] पूज्यः;  
'भक्तिः प्रतीक्ष्येषु कुलोचिता ते पूर्वां महाभाग तयाति-  
शये । व्यतीतकालस्त्वहमभ्युपेतः त्वामधिभावादिति मे  
विषादः'—इति रघौ (५।१४) । प्रत्यवेक्षणीयः;  
'प्रतीक्ष्यं तत्प्रतीक्ष्यायं पितृस्त्वत्ने प्रतिश्रुतम्'—इति माघे  
(२।१०८) । ३४८

प्रतीक्षी स्त्री. [ प्रतिसायम् अञ्चति सूर्यमिति । अञ्चु  
गतिपूजनयोः + 'ऋत्विग्दधृक्क्षृदिगुष्णिगञ्चुयुजिऋ-  
ञ्चाञ्च' इति क्विन् तल्लोपो दीर्घश्च, 'उगितश्च'  
इति ङीप् ] पश्चिमदिक्; 'येनासी व्यजयत् कृत्स्नां  
प्रतीचीं दिशमाहवे । कलापो ह्येष तस्यासीन् माद्रीपुत्रस्य  
धीमतः'—इति महाभारते (४।४१।१८) । त्रि.  
पश्चिमाभिमुखी; प्रत्यङ्मुखी; 'विश्वानि देवी भुवनाभि-  
चक्ष्या प्रतीची चक्षुर्विद्या विभाति । विश्वं जीवं चरसे  
बोधयन्ती विश्वस्य वाचमविदन् मनायोः'—इति ऋग्वेदे  
(१।१२।१९) । 'भुवना भुवनानि भूतजातान्यभिचक्ष्याभि-  
प्रकाश्य प्रकाशवन्ति कृत्वानन्तरं प्रतीची प्रत्यङ्मुखी  
सती'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । प्रतिनिवृत्तमुखी;  
'अम्नातेव पुंस इति प्रतीची गतारुगिव सनये धनानाम्'—  
इति ऋग्वेदे (१।१२।४।७) । 'अम्नातेव भ्रातृरहितेव  
पुंसः पित्रादीन् प्रतीची स्वकीयस्थानात् प्रतिनिवृत्तमुखी'  
—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । १०१

प्रतीचीनम् त्रि. [ प्रतीच्यां भवम् । प्रत्यच्+विभाषाञ्चेर-  
दिक् स्त्रियाम्' इति खः । अल्लोपो दीर्घश्च ] प्रत्यक्;  
प्रतीच्यां भवं; पराङ्मुखम्; 'शूरस्येव युध्यतो अन्तमस्य  
प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत्'—इति ऋग्वेदे (३।५।५८) ।  
'विश्वं भूतजातं प्रतीचीनं पराङ्मुखं ददृशे'—इति तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । १०३

प्रतीपम् त्रि. [ प्रतिकूला आपो यस्मिन् । 'ऋक्पूरव्वूः-  
पयामानक्षे' इति अप्रत्ययः; 'द्वधन्तरूपसर्गोम्योऽप ईत्-  
इति ईत् ] प्रतिकूलम्; 'क एनमत्रोपजुहाव जिह्वं दास्याः  
सुतं यद्वलिनैव पुष्टः । तस्मिन् प्रतीपः परकृत्य आस्ते  
निर्वास्यतामात्रु पुराच्छ्वसानः'—इति भागवते (३।१।  
१४) । कली. अर्थालङ्कारभेदः; 'प्रतिद्वत्योपमानस्योपमेयत्व  
प्रकल्पनम् । निष्फलत्वाभिवानं वा प्रतीपमिति कथ्यते'—  
इति साहित्यदर्पणे । पुं. चन्द्रवंशीयऋक्षराजपुत्रः शान्तनु  
राजपिता च; 'प्रतीपः शान्तनुं पुत्रं यौवनस्यं ततोऽञ्च-  
घात्'—इति महाभारते (१।१७।२०) । ७४३

प्रतीपवर्शिनी स्त्री. [ प्रतीपं प्रतिकूलं वामं वा पश्यतीति ।  
दृश्+णिनि+ङीप् ] स्त्रीमात्रम् । ४८२

प्रतीष्टः त्रि. [ प्रतीत्य इष्टः; प्रति+इप्+वत् ] स्वीकृतः;  
ओङ्कृतः । ७८१

प्रतीहारः पुं. [ प्रतिहृत्यते अत्रेति । प्रति+हृ+घञ् ।

उपसर्गस्य दीर्घः । द्वारपालः; 'इङ्गिताकारतत्त्वमो बलवान् प्रियदर्शनः । अप्रमादी सदा दक्षः प्रतीहारः स उच्यते'—इति चाणक्यः । 'प्राङ्कुः सुख्यो दक्षश्च प्रियवादी न चौद्धतः । चित्तप्राहश्च सर्वेषां प्रतीहारो विधीयते'—इति मात्स्ये । द्वारं (७८८); [ प्रति-हृत्यनेनेति । करणे घञ् ] सन्धिविशेषः; 'मयास्योपकृतं पूर्वमयञ्चोपकरिष्यति । इति यः क्रियते सन्धिः प्रतीहारः स उच्यते'—इति हारावली । ४२४

प्रतूर्णम् त्रि. [ प्रकर्षेण त्वरते स्म । प्र+जित्वरा.संभ्रमे, 'गत्यर्थाकर्मके'ति कर्तरि क्त, 'क्ष्यमत्वरसधुपास्वनाम्' इति इडभावपक्षे 'ज्वरत्वरे' त्यूठ्, निष्ठानत्वम् ] शीघ्रं; त्वरितं; तूर्णम् । ३५३

प्रतोदः पुं. [ प्रतुद्यतेऽनेनेति । प्र+तुद्+करणे घञ् ] अश्वादिताडनदण्डः; प्राजनं; प्रवयणं; तोत्रं; तोदनम्; 'चावुक' इति भाषा । 'प्रकालयेद्द्विभः सर्वाः प्रतोदेनेव सारथिः । प्रत्यमित्रश्रियं दीप्तां जिषूक्षुर्भरतर्षभ !'—इति महाभारते (२।५४।१) । ५७७

प्रतोली स्त्री. [ प्रतुल्यते परिमीयते इति । प्र+तुल् परिमाणे +घञ् । गौरादित्वाद् डीप् ] रथ्या; विशिखा; 'बहुपांशुचयाश्चापि परिखापरिवारिताः । तत्रेन्द्रनील-प्रतिमाः प्रतोलीवरशोभिताः'—इति रामायणे (२।८०।१८) । अम्यन्तरमार्गः; हृद्गादिमध्यनिमित्तपयः; दुर्ग-नगरद्वारम् । २८९

प्रतनः त्रि. [ प्र+'नश्च पुराणे प्रात्' इति चक्ररात् लप् ] पुरातनः; 'प्रतनस्य विष्णो रूपं यत् सत्यस्यर्तस्य ब्रह्मणः । अमृतस्य च मृत्योश्च सूर्यमात्मान्मीमहि'—इति भागवते (५।२०।५) । ७११

प्रत्यक् [ च् ] त्रि. [ प्रत्यञ्चतीति । प्रति+अञ्च्+क्विन् ] पश्चिमदिक्; पश्चिमदेशः; 'हिमवद्विन्ध्ययोर्भ्रम्यं यत्प्राग्विनशनादपि । प्रत्यगेव प्रयागाञ्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः'—इति मनुः (२।२१) । पश्चिमकालः; प्रतिलोमम्; 'यः क्षेत्रवित्तपतया हृदि विष्वगाकिः, प्रत्यक् चकास्ति भगवास्तमवेहि सोऽस्मि'—इति भागवते (४।२२।३७) । प्रतिकूलम्; 'प्रत्यगूहुर्महानद्यः प्राङ्मुखाः सिन्धुसप्तमाः । विपरोता दिशः सर्वा न प्राज्ञायत किञ्चन'—इति महाभारते (५।८४।६) । १०३

प्रत्यक्षः त्रि. [ प्रतिवत्तम् अक्षः इन्द्रिवस्य । समासे अच् ।

यद्वा प्रत्यक्षमस्यस्येति । अर्श आदित्वाद् अच् ] इन्द्रिय-माह्यम्; ऐन्द्रियकम्; साक्षात्; 'यत्पादपानखरवृष्टये चात्मशुद्धये । न च दृष्टञ्च स्वप्नेऽपि प्रत्यक्ष-स्यापि का कथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।५२) । 'घ्राणजादिप्रभेदेन प्रत्यक्षं षड्विधं मतम् । घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः'—इति भाषापरि-च्छेदे । अनुभवविशेषः (८७५); अपरोक्षम्; 'फलं त्व-नभिसन्धाय क्षेत्रिणां वीजितान्तथा । प्रत्यक्षं क्षेत्रिणा-मर्थो वीजाद्योनिर्गरीयसी'—इति मनुः (१।५२) । ८७४

प्रत्यगाशापतिः पुं. [ प्रत्यगाशायाः पश्चिमाया दिशः अधिपतिः ] वरुणः । ७४

प्रत्यग्रः त्रि. [ प्रतिगतः अग्रं श्रेष्ठं प्रथमदर्शनं वा ] नूतनः; 'दासीनां निष्ककण्ठीनां मागधीनां शतं तथा । प्रत्यग्र-ययसां दद्यां यो मे ब्रूयाद्वनञ्जयम्'—इति महाभारते (८।३८।१८) । शोधितः; पुं. उपरिचरस्य वसोः पुत्राणामन्यतमः; 'वसुस्तस्योपरिचरो बृहद्रथमुखास्ततः । कुशाम्बमत्स्यप्रत्यग्राश्चेदिपाद्याश्च चेदिपाः'—इति भागवते (१।२२।६) । ७६३

प्रत्यङ्ग [ च् ] त्रि. [ प्रत्यञ्चतीति । प्रति+अञ्च्+क्विन् ] पश्चिमदिक्; पश्चिमदेशः; पश्चिमकालः; [ प्रतिपूर्वाञ्चघातोः कर्तरि विच् प्रत्ययेन निष्पन्नः ] परावृत्तः; 'ऋतवः सर्वे पराञ्चः सर्वे प्रत्यञ्चः इति शतपथब्राह्मणे (१२।८।२।३५) । प्रतिगतः; अभिमुखः; 'प्रत्यङ्ग देवानां विशः प्रत्यङ्गुदेपि मानुषान् प्रत्यङ्ग विश्वं स्वर्दृशे'—इति ऋग्वेदे (१।५०।५) । 'हे सूर्यं त्वं देवानां विशो मरुत्सामकान् देवान्, मरुतो वै देवानां विश इति श्रुत्यन्तरात्, तान् मरुत्संज्ञकान् देवान् प्रत्यङ्गुदेपि, तान् प्रतिगच्छन्तुदयं प्राप्नोषि । तेषामभिमुखं यथा भवति तथेत्यर्थः । तथा मानुषान् मनुष्यान् प्रत्यङ्गुदेपि । तेऽपि यथा स्मदभिमुखमेव सूर्यं उद्देतीति मन्यन्ते । तथा विश्वं व्याप्तं स्वः स्वर्लोकं दृशे द्रष्टुं प्रत्यङ्गुदेपि । यथा स्वर्लोकवासिनो जनाः सर्वेऽपि स्वस्वाभिमुख्येन सूर्यं पश्यन्तीति'—तद्भाष्ये सायणा-चार्यः । अन्तर्यामी; 'प्रत्यञ्चमादिपुरुषमुपतस्थुः समा-हिताः'—इति भागवते (६।१।२०) । १०३

प्रत्यनीकः पुं. [ प्रतिगतः अनीकं युद्धमिति ] शत्रुः; प्रतिपक्षः; विरोधी; 'यस्य यन्ता हृषीकेषो धोदा यस्य

घनञ्जयः । रथस्य तस्य कः संख्ये प्रत्यनीको भवेद्रथः—  
इति महाभारते (७।१०।३६) । 'अतीवायतयामास्तु  
क्षया येष्वुत्पु स्मृताः । तेषु तत्प्रत्यनीकाढ्यं भुञ्जीत  
प्रातरेव तु—इति सुश्रुते । क्ली. प्रतिपक्षसैन्यम्;  
'श्रुतेऽपि त्वो न भविष्यान्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनी-  
केषु योधाः—इति भगवद्गीतायाम् ( १।१३२ ) ।  
बलङ्कारविशेषः; 'प्रतिपक्षमशक्तेन प्रतिकर्तुं तिरस्किया ।  
या तदीयस्य तत्स्तुत्यं प्रत्यनीकं तदुच्यते—इति काव्य-  
प्रकाशे । ४५६

प्रत्यन्तपर्वतः पुं. [ प्रत्यन्तः सन्निकृष्टः पर्वतः ] महापर्वत-  
समीपवर्तिसुद्रपर्वतः । १६७

प्रत्ययः पुं. [ प्रति+इण्+भावकरणादी ययाययम् अच् ]  
विश्वासः । (८४८) शपथः; ज्ञानम्; 'जाप्रत्संस्कार-  
सम्भूतः प्रत्ययो विषयान्वितः—इति गारुडे २३६  
अध्याये । हेतुः; 'अतिष्ठत् प्रत्ययापेक्षसन्ततिः स चिरं  
नृपः—इति रघो (१०।३) । विश्वासः; 'इत्यं रतेः  
किमपि भूतमदृश्यरूपं, मन्दीचकार मरणव्यवसायबुद्धिम् ।  
तत्प्रत्ययाच्च कुसुमायुधवन्वुरेनाम्, आश्वासयत्  
सुचरितार्थपदैर्बचोभिः—इति कुमारे (४।४५) ।  
निश्चयः; 'यदि संशय एव स्यात् लिङ्गानामपि दर्शने ।  
साक्षिप्रत्यय एव स्यात् सीमावादविनिर्णयः—इति  
मनुः (८।२५३) । अधीनः; रणः; शब्दः; प्रथि-  
तत्वम्; आचारः; स्वादुः; सहकारी; व्याकरणे  
प्रकृत्युत्तरजायमानः । (प्रत्याययन्तीति, सुप्तिङ्कृत-  
द्धिताः प्रत्ययाः ।) 'ता नराधिपसुता नृपात्मजैस्ते च  
ताभिरगमनं कृतार्थताम् । सोऽभवद्वरवधूसमागमः प्रत्यय-  
प्रकृतियोगसन्निभः—इति रघो (१।१५६) । ७८०

प्रत्ययीं [ न् ] त्रि. [ प्रतिकूलम् अर्थयते इति । प्रति+अर्थ+  
गिति ] : शत्रुः; 'नेत्रे खञ्जनगञ्जने सरसिजप्रत्यर्थि  
पाणिद्वयं, वक्षोजौ करिकुम्भविग्रमकरीमत्युन्नतिं गच्छतः'  
—इति साहित्यदर्पणे । पुं. प्रतिवादी; 'सभान्तः  
साक्षिणः प्राप्तानर्थिप्रत्यर्थिसन्निधौ । प्राड्बिवाकोऽनु-  
युञ्जीत विधिनानेन सान्त्वयन्—इति मनुः (८।७९) ।  
अर्थिप्रतिपक्षः; 'प्रत्यर्थिनोऽप्रतो लेख्यं यथावेदित-  
मर्थिना । समामासतदद्वाहनमिजात्यादिचिह्नितम् ।'  
'अप्यंते इत्यर्थः साध्यः; सोऽप्यास्तीत्यर्थी तत्रतिपक्षः  
प्रत्ययीं—इति मिताक्षरा । ४५६

प्रत्यवसामम् क्ली. [ प्रति+अव+सो+ल्युट् ] भोजनम्,  
'जग्धिः प्रत्यवसानं च भक्षणं भोजनाशने—इति वैद्यक-  
रत्नमालायाम् । ३२५

प्रत्यवायः पुं. [ प्रत्यवाय्यते इति । प्रति+अव+अय्  
गती+घञ् ] दुरदृष्टम्; 'क्षयं केचिदुपात्तस्य दुरितस्य  
प्रचक्षते । अनुत्पत्तिं तथा चान्ये प्रत्यवायस्य मन्वते—  
इत्येकादशीतत्त्वे । पापम् । ८२४

प्रत्याफारः पुं. [ प्रतिरूपः खड्गेन; सदृश आकारो यस्य ]  
खड्गकोषः । ४७३

प्रत्याख्यातः त्रि. [ प्रति+आ+ख्या+क्त ] दूरीकृतः;  
प्रत्यादिष्टः; निरस्तः; निराकृतः; निकृतः; विप्रकृतः;  
तिरस्कृतः; 'वीरेणाहं तथानेन त्वया वापि यशस्विनि !  
प्रत्याख्याता न जीवामि सत्यमेतद् ब्रवीमि ते—इति  
महाभारते- (१।१५६।८) । ७०३

प्रत्यादिष्टः त्रि. [ प्रत्यादिश्यते स्मेति । प्रति+आ+  
दिश्+क्त ] प्रत्यादेशविशिष्टः; निरस्तः; प्रत्याख्यातः;  
निराकृतः; निकृतः; विप्रकृतः । ७०३

प्रत्यारम्भः पुं. [ प्रतिगतः आरम्भम् । प्रति+आ+रभि+  
भावे घञ् ] 'रभेरशालिः' इति नुम् ] मुहुः; पुनः । ८७६

प्रत्यासरः पुं. [ प्रत्यास्रियते इति । प्रति+आ+सृ+  
ऋदोरप् इत्यप् ] सैन्यपृष्ठम् । ८२७

प्रत्यासारः पुं. [ प्रत्यास्रियते इति । प्रति+आ+सृ+  
घञ् ] व्यूहस्य पश्चाद्भागः; व्यूहस्य पश्चाद्ब्यूहान्तरं;  
व्यूहपाणिः । ८२७

प्रत्युत्पन्नमिति त्रि. [ प्रत्युत्पन्ना मतिर्यस्य ] सूक्ष्मवृद्धियुक्तः;  
कुशाग्रीयमतिः; सूक्ष्मदर्शी; तत्कालधीः; प्रतिभान्वितः;  
'प्रत्युत्पन्नमतिर्दीमान् व्यवसायी विशारदः । सत्यघर्मपरो  
यश्च स भिषक्पाद उच्यते—इति सुश्रुते । ३७६

प्रत्युषः पुं. [ प्रत्योषति विनाशयति अन्धकारमिति । प्रति+  
उष् दाहे+ 'इगुपघञ्जेति' क ] प्रत्युषः; प्रातः; 'प्रत्युषे  
च स्वगृहमभ्युपेत्य द्वारदेशस्थितोऽपि विविधपौर-  
कृत्योत्सुकतया तामाहेति—पञ्चतन्त्रे । १११

प्रत्युषः [ स् ] क्ली. [ प्रत्योषति नाशयत्यन्धकारमिति ।  
प्रति+उष्+ 'उषः कित्' इति असि, स च कित् ]  
प्रत्युषः; 'याति व्यक्ति पुरस्तादरुणकिसलये प्रत्युषः  
पारिजातः—इति सूर्यशतके । १११

प्रत्युषः पुं. [ प्रत्युषति रुजति कामुकानिति । प्रति+उष्

रोगे+क] प्रभातम्; 'दीर्घीकुवन् पटु मदकलं कूजितं सारसानां, प्रत्येषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकपायः'—इति मेघदूते (३३)। सूर्यः; वसुभेदः; 'वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम् । आपो ध्रुवश्च सोमश्च घरश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्येषश्च प्रभावश्च वसवो नामभिः स्मृताः'—इति विष्णुपुराणे (१११५१-१११) । १११

प्रत्ययः [स्] क्ली. [प्रति+ऊप्+असि] प्रभातम्; 'प्रत्ययस्यापराह्णे तु जीर्णोऽत्रे च प्रकृष्यति'—इति सुश्रुते (१२१) । १११

प्रत्ययः पुं. [प्रत्यहनमिति । प्रति+ऊह्+घञ्] विघ्नः; 'भर्तृशुश्रूषणादेव भया प्राप्तं महत् फलम् । सर्वकाम-फलावाप्त्या प्रत्यूहाः परिवर्तिताः'—इति मार्कण्डेये (१६१५५) । ४०१

प्रथमः त्रि. [प्रथते प्रसिद्धो भवतीति । प्रथ्+प्रथेरमच् इति अमच्] आदिमः; आदिः; पूर्वः; पौरस्त्यः; आद्यः; अग्रिमः; प्राक्; 'बाह्यार्थानखिलांश्चित्तं त्याजयेत्प्रथमं नरः'—इति विष्णुपुराणे (१११५२) । प्रधानम्; 'राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः । नामचैवं गुरुश्चक्रे जगत्प्रथममङ्गलम्'—इति रघो (१०१६७) । ७०७

प्रदरः पुं. [प्र+द् विदारणे+'ऋदोरप्' इति भावाद्दी ययायथम् अप्] वाणः; भङ्गः; विदारः; नारीरुग्भेदः; असृग्दरः; तत्तु फलितयोन्या रक्तादिघातुक्षणम् । 'घृततुल्या रुद्रलाक्षा पीता क्षीरेण वै सहा । प्रदरं हस्ते रोगं नात्र कार्या विचारणा'—इति गरुडे । ४६६

प्रविक् [श्] [स्त्री. प्रगता दिग्भ्यः] विदिक्; 'ततो विभ्रान्तमनसो जनाः क्षुद्भयपीडिताः । गृहाणि सम्परित्यज्य वस्युः प्रदिशो दिशः'—इति महाभारते (११७४३९) । प्रकृष्टा दिक्; 'प्रदिशो विदिशश्चैव शरधारा समावृताः । अन्धकारीकृतं व्योम दिनेशो नैव दृश्यते'—इति हरिवंशे (१६३१८) । १०२

प्रदीपनः पुं. [प्रदीपयति । प्र+दीप्+णिच्+ल्यु] स्यावरविषभेदः; 'काकोलो गरलः क्वेडो वत्सनाभः प्रदीपनः । शौक्लिकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो विषः'—इति बँधकरलमालायाम् । 'वर्णतो लोहितो यः स्याद् दीप्तिमान् दहनप्रभः । महादाहकरः पूर्वं' कथितः

स प्रदीपनः—इति राजनिर्घण्टः । प्रकाशके त्रि. । ६४६  
प्रदेशः पुं. [प्रदिश्यते इति, प्र+दिश्+ 'हलश्च' इति घञ्, 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम्' इति पाक्षिको दीर्घाभावः] देशमात्रम्; आस्थानम्; आस्या; भूः; अवकाशः; स्थितिः; पदं; तर्जन्यङ्गुष्ठसम्मितः, भित्तिः; संज्ञा; तन्प्रयुक्तिप्रकारविशेषः; 'प्रकृतस्याति क्रान्तेन साधनं प्रदेशः ।' १६०

प्रदेशनम् क्ली. [प्रदिश्यते अनेनेति । प्र+दिश्+करणे ल्युट्] नृपादेशपढीकनं; प्राभूतम्; उपायनम्; उपग्राह्य । उपहारः; उपदा; 'भेंट, डाली' इति भाषा । देवताभ्यो भक्त्या मित्रादिभ्यश्च प्रीत्या यत् प्रवास्तं मोदकादि दीयते तत्; देवताब्राह्मणराजादिभ्यो यत् श्रद्धया दीयते तत्; उपायनादिचतुष्कं तुभ्यमिदं दीयते त्वयैतत् मम कार्यं साधनीयमिति यदीयते । ४१९

प्रदेशिनी स्त्री. [प्रदिश्यते अनयेति । प्र+दिश्+करणे ल्युट्] तर्जनी । ५३८

प्रदेशिनी स्त्री. [प्रदिशतीति । प्र+दिश्+णिनि+ङीप्] तर्जनी; 'तिऽदर्शयन् प्रदेशिन्या तमेव नृपसत्तमम् । घामिष्ठां मातरं चैव तथाचख्युश्च दारकाः'—इति महाभारते (११८३१६) । 'स्वरङ्गुलैः पादाङ्गुष्ठ-प्रदेशिन्यां ह्यङ्गुलायते । प्रदेशिन्यास्तु मध्यमानामिका कनिष्ठिका यथोत्तरं पञ्चमभागहीनाः'—इति सुश्रुते ३५ अध्याये । ५३८

प्रदोषः पुं. [दोषा रात्रिः, प्रारम्भो दोषाया इति । प्रादि-समासः । प्रक्रान्ता दोषा रात्रिरत्रेति वा ] रजनीमुखं; तत्तु रात्रेः प्रथमदण्डचतुष्टयम्; 'प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । 'वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका विभावरौ यद्यरुणाय कल्पते'—इति कुमारं (५१४४) । दोषः; [प्रकृष्टो दोषो यस्येति] त्रि. दुष्टः; 'ये चान्ये कालयवनशात्वहक्मिद्रुमाद्यः । तमःस्वभावास्तेऽप्येनं प्रदोषमनुयायिनः'—इति माघे (२१९८) । 'ये राजानस्तमःस्वभावाः तमोगुणात्मकाः अतएव तेऽपि प्रदोषं प्रकृष्टदोषम् । 'प्रदोषो दुष्टरात्रो-शाविति'—वैजयन्ती । इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । १०९

प्रद्युम्नः पुं. [प्रकृष्टं द्युम्नं बलं यस्य] कन्दर्पः; कामदेवः; 'एकदेवं चतुष्पादं चतुर्धा पुनरच्युतः । बिभेद वासुदेवोऽसौ प्रद्युम्नो हरिरव्ययः'—इति कौर्म । 'अनिरुद्धः स्वयं



ब्रह्मा प्रद्युम्नः काम एव च । बलदेवः स्वयं शंभुः कृष्णश्च  
प्रकृतेः परः—इति ब्रह्मवैवर्ते । नड्वलागर्भजातो  
मनोरपत्यभेदः; 'मनोरसूत महिषी विरजान् नड्वला  
सुतान् । पुत्रं कुत्सं त्रितं द्युम्नं सत्ववन्तं धृतव्रतम् ।  
अग्निष्टोममतीरात्रं प्रद्युम्नं शिविमुलमुकम्'—इति  
भागवते (४।१३।१५-१६) । ३२

प्रद्योतः पुं. [ प्रकृष्टो द्योतः ] रश्मिः; किरणः; यक्षभेदः;  
'कशेरको गण्डकण्डुः प्रद्योतश्च महाबलः'—इति महा-  
भारते (२।१०।१५) । ३८

प्रद्योतनः पुं. [ प्रद्योतते इति, प्र+द्युत्+अनुदात्तेतश्च  
ह्लादेः ] इति युच् ] सूर्यः; क्ली. [ भावे ल्युट् ] द्युतिः । ३५

प्रधनम् क्ली. [ प्रदधातीति, प्र+धा+कृपूर्वजिमन्दि-  
निधावः क्युः ] इति वाहुलकात् क्यु. आतो लोपश्च ] युद्धम्;  
'वैरं भवति वित्तार्थं दारार्थं वा परस्परम् । एषणारहितौ  
कस्मात् चक्रन्ः प्रधनं महत्'—इति देवी भागवते  
(४।७।५३) । दारणं; [ प्रकृष्टं धनमस्येति ] प्रभूत-  
धनविशिष्टे त्रि. । ४५३

प्रधानम् क्ली. [ प्रधत्ते सर्वमात्मनीति । प्र+धा+युच् ]  
महामात्रः; 'प्रमाणानि च कुर्वीत तेषां धर्म्यान् यथोदि-  
तान् । रत्नैश्च पूजयेदेनं प्रधानपुरुषैः सह'—इति  
मनुः (७।२०२) । (६९०) त्रि. प्रशस्तं; प्रमुञ्जं;  
प्रबैकम्; अनुत्तमम्; उत्तमं; मुख्यं; वर्यं; वरेण्यां;  
प्रबहंम्; अनवराद्धयं; पराद्धयंम्; अग्रं, प्राग्रहरं;  
प्राग्रयम्; अग्र्यम्; अग्रियम्; अग्रिमम्; 'उपसर्ज्जनं  
प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते । पिता प्रधानं प्रजने तस्मा-  
द्धर्मेण तं भजेत्'—इति मनुः (९।१२१) । प्रकृतिः  
(८०२); 'सदक्षरं ब्रह्म य ईश्वरः पुमान्, गुणोमिसृष्टि-  
स्थितिकालसंलयः । प्रधानबुद्ध्यादिजगत्प्रपञ्चसूः;  
स नोऽस्तु विष्णुर्गतिभूतिमुक्तिदः'—इति विष्णुपुराणे  
(१।१।२) पुं. [ प्रधत्ते इति । प्र+धा+ल्यु ] सेनाप-  
त्यादिः; 'महामात्रः प्रधानः स्यात्'—इति पुंस्काण्डे  
बोपालितः । राजधिमभेदः; 'प्रधानो नाम राजा च व्यक्तं  
ते श्रोत्रमागतः । कुले तस्य समुत्पन्नां सुलभां नाम विद्धि-  
माम्'—इति महाभारते (१।२।३०।१८१) । ४२७

प्रधिः पुं. [ प्रधीयते अनेनेति । प्र+धा+उपसर्गे घोः किः  
इति कि ] चक्रधारा; नेमिः; 'मन्ये पर्यायधर्मोऽयं काल-  
स्मात्यन्तगाभिनः । चक्रे प्रधिरिवासक्तो नास्य शक्यं पला-

यितुम्—इति महाभारते (५।५।१।५८) । ४४७, ६८४  
प्रपञ्चः पुं. [ प्रपञ्च्यते इति, प्र+पञ्चि व्यक्तीकरणे+  
घञ् ] विस्तारः; आडम्बरः (८४१); विपर्यासः;  
विस्तरः; 'विपर्यासो वैपरीत्यं भ्रमो वा मायेति स्वामी'  
—इति भरतः । सञ्चयः; प्रतारणं; संसारः; 'पादुका-  
पञ्चकस्तोत्रं पञ्चवक्त्राद्विनिर्गतम् । पडाम्नायफलोपेतं  
प्रपञ्चे चातिदुर्लभम्'—इति गुष्पादुकास्तोत्रम् । ७६६  
प्रपञ्चम् क्ली. [ प्रारब्धं प्रगतं वा पदमिति । प्रादिसमासः ]  
पादाग्रं; 'भूमौ विपरिवर्तेत तिष्ठेद्वा प्रपदैदितम् । स्थाना-  
सनाभ्यां विहरेत् सवनेषूपयन्नपः'—इति मनुः (६।२२) ।  
५२९

प्रपा स्त्री. [ प्रकर्षेण पिबन्त्यस्यामिति । प्र+पा+आत-  
श्चोपसर्गे ] इत्यड, घवर्थे क वा ] पानीयशालिका;  
पानीयशाला; 'यस्तु रज्जुं घटं कृपाद्धरेद्धिद्याञ्च यः  
प्रपाम् । स दण्डं प्राप्नुयान्मायं तञ्च तस्मिन् समाहरेत्'  
—इति मनुः (८।३।१९) । यज्ञशाला; 'विश्वामित्रं  
पुरस्कृत्य शतानन्दं च धार्मिकम् । प्रपामध्ये तु विधिव-  
द्वेदिं कृत्वा महातपाः'—इति रामायणे (१।७।३।२०) ।  
'प्रपामध्ये यज्ञशालामध्ये'—इति तट्टीकायां रामानुजः ।  
२९७

प्रपातः पुं. [ प्रपतत्यस्मादिति । प्र+पत्+अकर्तरि  
कारके संज्ञायाम् ] इति घञ् ] अम्यवस्कन्दः; कूलं  
(६६७); निरवलम्बनपर्वतादिपारश्वम्; यस्मात्  
पतने अवस्थानक्रियाविशेषो नास्ति; अतटः; भृगुः;  
'मधु पश्यति मूढात्मा प्रपातं नैव पश्यति । करोति  
निन्दितं कर्म नरकान् न बिभेति च'—इति देवी भागवते  
(४।७।४९) । ४५२

प्रपुत्राडः पुं. [ पुंमासं नाडयतीति । नड् अञ्जे+अण् ।  
प्रकृष्टः पुत्राडः इति प्रादिसमासः । पृषोदरादित्वात्  
साधुः ] प्रपुत्राडः; 'कफापहं शाकमुक्त्तं वरुणप्रपुत्राडयोः ।  
रुक्षं लघु च शीतं च वातपित्तप्रकोपणम्'—इति  
सुश्रुतः । ६१९

प्रपुत्राडः पुं. [ प्रपुत्राड+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः ] प्रपु-  
त्राडः । ६१९

प्रपुत्राटः पुं. [ पुमासं नाडयतीति । नड्+णिच्+अण् ।  
प्रकृष्टः पुत्राटः इति प्रादिसमासः ] चक्रमर्दः । ६१९  
प्रपुत्राडः पुं. [ पुमासं नाडयतीति । नड्+अण्, प्रकृष्टः

पुत्राड इति प्रादिसमासः ] चक्रमर्दकः ।

प्रपुत्रालः पुं. [ प्रपुत्राड+डस्य लत्वम् ] प्रपुत्राडः । ६१९

प्रबुद्धः वि. [ प्र+बुध्+क्त ] पण्डितः; प्रफुल्लः; 'प्रबुद्ध-  
पुण्डरीकाक्षं बालातपनिभांशुकम् । दिवसं शारदमिव  
प्रारम्भमुखदर्शनम्'—इति रघो (१०।९) । जागरितः;  
'प्रातस्तारां पतन्मिथः प्रबुद्धः प्रणमन् रविम्'—इति भट्टिः  
(४।१४) । ३३२

प्रबोधकः पुं. [ प्र+बुध् अवगमने, णिच्, ण्वुल् ] मङ्गल-  
पाठकः । ४३५

प्रभञ्जनः पुं. [ प्रकषेण भनक्ति वृक्षादीनि । प्र+  
भञ्ज्+युच् ] वायुः; पवनः; 'घटोत्कचसुतः श्रीमान्  
भिक्षाञ्जनचयोपमः । हरोष द्वीणिमायान्तं प्रभञ्जनमि-  
वाद्रिराट्'—इति महाभारते (७।१५४।७८) । मणि  
पुराधिपविशेषः 'राजा; प्रभञ्जनो नाम कुलेऽस्मिन्  
सम्बभूव ह । अपुत्रः प्रसवेनार्थी तपस्तेपे स उत्तमम्'  
—इति महाभारते (१।२१७।१९) । भञ्जनकर्त्तरि  
त्रि. 'प्रभञ्जनो यो लोकानां युगान्ते सर्वनाशनः'—इति  
हरिवंशे (२४५।१३) 'सा सलज्जा विहृत्याह पुत्रं देहि  
सुरोत्तम । बलवन्तं महाकायं सर्वदपंप्रभञ्जनम्'—इति  
—महाभारते (१।२३।१२) ७५ ।

प्रभविष्णुता स्त्री. [ प्रभविष्णुशब्दात् भावार्थे तलप्रत्ययः ]  
प्रभुत्वं; प्रभुता; प्रभावता; यद्यसाध्यानि दुःखानि न्छेतु  
न प्रभविष्णुता । तन्महीपाल ! महतां महत्त्वस्य किम-  
ङ्कनम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (२।४७) । ७८५

प्रभा स्त्री. [ प्रकषेण भातीति । प्र+भा+ 'आतश्चोपसर्गे'  
इति अङ् । भावे अङ् वा ] दीप्तिः; रोचिः; द्युतिः;  
शोचिः; त्विषा; ओजः; भाः; रुचिः; विभा; आलोकः;  
प्रकाशः; तेजः; रुक्; 'व्यराजयत वैदेही वैश्व तत्सु-  
विभूषिता । उदितांशुमतः काले खं प्रभेव विवस्वतः'  
—इति रामायणे (२।३९।१८) । 'स्तीव रूपिणी  
किन्त्वमनङ्गाङ्गविहारिणी । अतीव भ्राजसे सुभ्रु !  
प्रभेवेन्दोरनुत्तमा'—इति महाभारते (४।१३।१७) ।  
गोपीविशेषः; 'दृष्टस्त्वं प्रभया गोप्या युक्तो वृन्दावने  
वने । सद्यो मत्शब्दमात्रेण तिरोधानं कृतं त्वया ।  
प्रभा देहं परित्यज्य जगाम सूर्यमण्डलम् ।  
ततस्तस्याः शरीरे च तीव्रं तेजो बभूव ह'— इति  
ब्रह्मवैवर्ते (१।१।५७।५७) + दुर्गा; यमस्य भगिनी

जाता यमुना तेन सा मता । प्रभा प्रसादशीलत्वात्  
ज्योत्स्ना चन्द्रार्कमालिनी । देवलोकं तयेन्द्राणी ब्रह्मास्येषु  
सरस्वती । सूर्यविम्बे प्रभा नाम मातृणां वैष्णवी मता'  
—इति देवीभागवते (७।३०।८२) । सूर्यपत्नी;  
'विवस्वान् कश्यपात् पूर्वमादित्यामभवत् पुरा । तस्य  
पत्नीत्रयन्तद्भ्रतु संज्ञा राज्ञी प्रभा तथा । रेवतस्य सुता  
राज्ञी रेवन्तं सुपुत्रे सुतम् । प्रभा प्रभावं सुपुत्रे त्वाष्ट्री संज्ञा  
तथा मनुम्'—इति मात्स्ये (१।१२३) । द्वादशाक्षर-  
वृत्तिविशेषः; 'वसुधुगविरतिर्ननी रो प्रभा'—इति वृत्त-  
रत्नाकरटीकायाम् । कुवेरपुरी; अप्सरोभेदः । ३८, ६५

प्रभाकरः पुं. [ प्रभां करोतीति, कृ+ 'दिवाविभानि-  
शाप्रभेति' ट ] सूर्यः; 'कृशानुरपयूमत्वात् प्रसन्नत्वात्  
प्रभाकरः । रक्षीवप्रकृतावास्तामपविद्वशुचाविव' —  
इति रघो (१०।७४) । अग्निः; चन्द्रः; 'तावतीत्य  
रथानीकं विमुक्तौ पुरुषर्षभौ । ददृशाते यया राहो-  
रास्यान्मुक्तौ प्रभाकरौ'—इति महाभारते । 'प्रभाकरौ  
चन्द्रसूर्यौ'—इति तट्टीकायाम् । समुद्रः; अर्कवृक्षः;  
अष्टममन्वन्तरे देवगणभेदः; 'तपस्तप्तश्च शत्रुश्च  
द्युतिर्ज्योतिः प्रभाकरः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८०।  
६) । अत्रिवंशीयमुनिविशेषः; 'ऋषिर्जातोऽत्रिवंशे  
तु तासां भर्ता प्रभाकरः । भद्रायां जनयामास सुतसोमं  
'यशस्विनम्'—इति हरिवंशे (३।१।१०) । नागभेदः;  
'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः'—इति महा-  
भारते (१।३५।१५) । मीमांसकप्रभेदः; तस्य मतं  
दर्शनशास्त्रादौ प्राभाकरमतमिति प्रसिद्धम् । क्ली.  
कुशद्वीपस्यवर्षभेदः; 'महिषं महिषस्यापि पुनश्चापि  
प्रभाकरम्'—इति मात्स्ये (१२।१।६०) । ३६

प्रभातम् क्ली. [ प्रकषेण भातुं प्रवृत्तमिति । प्र+भा+  
आदिकर्मणि क्त । यद्वा प्रकृष्टं भातं दीप्तिरत्रेति ]  
प्रातःकालः; प्रत्यूपः; अहर्मुखं; कल्पम्; उपः; प्रत्युषः;  
प्रत्युषः; दिनादिः; निशान्तं; व्युष्टं; प्रगे; प्राह्वं;  
गोसः; गोसङ्गः; ऊषः; ऊषकं; उपाः; ऊपा; विभातम्;  
'प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं दुर्गा दुर्गाक्षिरद्वयम् । आपदस्तस्य  
नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा'—इति धर्मशास्त्रम् । 'वैद्यः  
पुरोहितो मन्त्री दैवज्ञोऽप्य चतुर्थकः । प्रभातकाले द्रष्टव्यो  
नित्यं स्वश्रियमिच्छता'—इति राजवल्लभः । १११

प्रभावः पुं. [ प्र+भू+भावे घञ् ] शक्तिः; 'प्रभावतो यथा

घात्री लकुचस्य रसादिभिः । समापि कुस्ते दोषत्रित-  
यस्य विनाशनम् । क्वचित्तु केवलं द्रव्यं कर्म कुर्यात्  
प्रभावतः । ज्वरं हन्ति शिरोवद्धा सहदेवी जटा यथा  
—इति भावप्रकाशः । कोषदण्डजतेजः; प्रतापः; 'कोषो  
घनं, दण्डो दमः, तद्वेतुत्वात् सैन्यमपि दण्डः, ताभ्यां  
यत्तेजो जायते स प्रतापः प्रभावश्च कथ्यते'—इति भरतः ।  
तेजः; 'अद्य मेऽङ्गप्रभावस्य प्रभावः प्रभविष्यति ।  
राज्ञश्चाप्रभुतां कर्तुं प्रभुत्वं च तव प्रभो !'—इति  
रामायणे (२।२३।३८) । शान्तिः; प्रभागभंजातः सूर्य-  
पुत्रः; 'प्रभा प्रभावं सुषुवे'—इति मात्स्ये (१।१३) ।  
कलावत्यां जातः स्वरोचिषो मनोः पुत्रविशेषः; 'ततश्च  
जज्ञिरे तस्य त्रयः पुत्राः स्वरोचिषः । त्रिजयो मेरुनन्दश्च  
प्रभावश्च महाबलः'—इति मार्कण्डेये (६६।५) । ८५५

प्रभावता स्त्री. [ प्रभावस्य भावः । प्रभाव+तल् ] प्रभुता;  
प्रभुत्वम् । ७८५

प्रभिन्नः पुं. [ प्र+भिद्+क्त ] क्षरन्मदहस्ती; गर्जितः;  
मत्तः; भ्रान्तः; मदकलः; 'ततो महामेघमहीधराभं  
प्रभिन्नमत्यङ्गुशमत्यसह्यम् । रामोपवाह्यं रुचिरं ददर्श  
शशुञ्जयं नागमुदप्रकायम्'—इति रामायणे (२।१५।  
४६) । 'यथा नलवनं क्रुद्धः प्रभिन्नः षष्टिहायनः ।  
मृदनीयात्तद्वदायस्तः पार्थोऽमृदनाच्चमूतव'—इति महा-  
भारते (७।२७।२०) । प्रकृष्टभेदविशिष्टे त्रि. ।  
'प्रभिन्नवैदूर्यनिभैस्तृणाङ्कुरैः समाचिता प्रोत्थितकन्दली-  
दलैः'—इति ऋतुसंहारे (२।५) । २२०

प्रभुः त्रि. [ प्रभवतीति, प्र+भू+विप्रसंभ्यो ड्वसंज्ञा-  
याम् ] इति डु ] अधिपतिः; स्वामी; ईश्वरः; पतिः;  
ईशिता, अधिभूः; नायकः; नेता; परिवृढः; अधिपः;  
पालकः; 'न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः ।  
न कर्म फलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते'—इति भगवद्गीता-  
याम् (५।१४) । नित्यः; शक्तः; 'आत्मेश्वराणां न हि  
जातु विघ्नाः समाधिभेदप्रभवो भवन्ति'—इति कुमारे  
(३।४०) । श्रेष्ठः; 'वैशेष्यात् प्रकृतिश्रेष्ठ्यात् नियम-  
स्य च धारणात् । संस्कारस्य विशेषाच्च वर्णानां ब्राह्मणः  
प्रभुः'—इति मनुः (१०।३) । पुं. विष्णुः; शिवः;  
'हरश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरः प्रभुः'—इति महा-  
भारते (१३।१७।३१) । पारदः; शब्दः । ३४३

प्रभुता स्त्री. [ प्रभोर्भावः, प्रभु+तल् ] प्रभुत्वम्; ऐश्वर्य-

यम् । ७८५

प्रभूतम् त्रि. [ प्र+भू+क्त ] प्रचुरम्; 'तत्राभूदभिभूत-  
प्रभूतमायानिकायशतधूर्तः । सकलकलानिलयानां धुर्यः  
श्रीमूलदेवास्थः'—इति कलाविलासे (१।१९) । उद्गतां;  
भूतम्; सन्नतम् । ७०१

प्रभ्रष्टकम् क्ली. [ प्र+भ्रंश्+क्त, स्वार्थे कन् ] शिखा-  
लम्बिमाल्यं; चूडातो लम्बमानमाल्यं; प्रभ्रष्टम् । ५५३  
प्रमथः पुं. [ प्रमथतीति, प्र+मथ्+अच् ] शिवपारिषदः;  
'षट्त्रिंशत्स सहस्राणि प्रमथा द्विजसत्तमाः । तत्रैकत्र  
सहस्राणि भागे षोडश संस्थिताः'—इति कालिका-  
पुराणे । घोटकः; धृतराष्ट्रपुत्राणामन्यतमः; 'प्रमथश्च  
प्रमाथी च दीर्घरोमश्च वीर्यवान्'—भारते (१।११७।  
१२) । १४

प्रमदः पुं. [ प्र+मद्+प्रमदसंमदी हर्षे ] इति अप् ] हर्षः;  
'तच्छ्रुत्वा मम राज्ञश्च विषादप्रमदी द्वयोः । अभूतां  
मेघमालोक्य हंसचातकयेरिव'—इति कथासरित्सागरे  
(६।६२) । [ प्रमाद्यत्यनेनेति । प्र+मद्+करणे अप् ]  
धुस्तूरफलं; दानवविशेषः; 'प्रमदो भयः कुपयो हयग्री-  
वश्च वीर्यवान्'—इति हरिवंशे (३।८७) । वशिष्ठ-  
तनयानामन्यतमः; 'वसिष्ठतनयाः सप्त ऋषयः प्रमदा-  
दयः । सत्या वेदश्रुता भद्रा देवा इन्द्रस्तु सत्यजित्'  
—इति भागवते (८।१२।२४) । [ प्रमाद्यतीति । प्र+  
मद्+कर्त्तरि अच् ] मत्ते त्रि. । 'प्रावृषि प्रमदवर्हिणेष्वा-  
भूत् कृत्रिमाद्रिषु विहारविभ्रमः'—इति रघौ (१९।  
३७) । १२३

प्रमदवनम् क्ली. [ प्रमदानाम् उत्तमस्त्रीणां वनं  
काननम् । 'द्व्यापोरिति' ह्रस्वः ] राजोऽन्तः-  
पुरोचितवनं; प्रमदाकाननं; प्रमदकाननं; प्रमदा-  
वनम् । २१३

प्रमदा स्त्री. [ प्रमदयति पुरुषमिति । प्र+मद् हर्षे+  
णिच्+अच् । यद्वा प्रमदो हर्षोऽस्त्यस्या इति । अच्+  
टाप् ] उत्तमयोषित्; 'नयनान्यरुणानि घूर्णयन् वचनानि  
स्खलयन् पदे पदे । असति त्वयि वारुणीमदः प्रमदा-  
नामघुना विडम्बना'—इति कुमारे (४।१२) ।  
चतुर्दशाक्षरवृत्तिविशेषः; 'नजभजला गुरुश्च भवति  
प्रमदा'—इति वृत्तरत्नाकरटीकायाम् । ४८२

प्रमथः पुं. [ प्र+मीळ हिंसायाम्+भाभे अच् ] मथः;

घातनम्; 'दृष्टं दृष्टं नृपोदन्तं वद्वा प्रमयमीयुषाम् ।  
अर्वाककालभवेवैर्वाति यत्प्रवन्धेषु पूर्यते'—इति राजा-  
तरङ्गिण्याम् (११९) । ४७८

प्रमया स्त्री. [ प्रमय+टाप् ] हिंसा; मारणं; वधः । ४७८  
प्रमादः पुं. [ प्र+मद्+भावे घञ् ] अनवधानम्; अनव-  
धानता; 'लोमप्रमादविश्वासैः पुरुषो नश्यते त्रिभिः ।  
तस्माल्लोभो न कर्तव्यः प्रमादो न न विश्वसेत्'—इति  
गारुडे नीतिसारे ११५ अध्यायः । ७५४

प्रमापणम् क्ली. [ प्र+मी हिंसायाम्+स्वार्थे णिच्+  
भावे ल्युट् ] मारणम्; 'अस्थिमतान्तु सप्तवानां सहस्रस्य  
प्रमापणे । पूर्णे चानस्यनस्मान्तु शूद्रहत्याव्रतञ्चेरत्'  
—इति मनुः (१११४१) । ४७७

प्रमीतः त्रि. [ प्र+मी हिंसायाम्+क्त ] मृतः; यज्ञार्थहत-  
पशुः । ६२९

प्रमुखः त्रि. [ प्रकृष्टं मुखमाद्यं यस्य । प्रगतः मुखं मुख्यतां  
वा ] प्रधानम्; 'ज्वलन्मणिशिखाश्चैत्रं वासुकिप्रमुखा  
निशि । स्थिरप्रदीपतामेत्य भुजङ्गाः पर्युपासते'—इति  
कुमारे (२३८) । श्रेष्ठः; 'बलेषु प्रमुखो हस्ती न  
तयान्यो महीपते'—इति हितोपदेशे (३१२४) ।  
प्रथमः; 'नारदप्रमुखास्तस्यामन्तर्वेद्यां महात्मनः ।  
समासीनाः शंशुभिरे सह राजाभिस्तथा'—इति महा-  
भारते (२।६।९) । मान्यः; पुं. [ प्रकृष्टं मुखम् अग्र-  
भागो यस्य ] पुत्रागवृक्षः; समूहः; क्ली. [ प्रकृष्टं  
मुखमारम्भः ] तदात्वं; तत्कालः; सम्मुखम्; 'यानेव  
हत्वा न जिजीविषामस्तेष्वस्थिताः प्रमुखे घातराष्ट्राः'  
—इति भगवद्गीतायाम् (२।६) । ६९०

प्रमोदः पुं. [ प्र+मुद् हर्षे+भावे घञ् ] हर्षः; 'उत्पाद्य  
पुत्रजननप्रभवं प्रमोदं दत्त्वा पुनर्विरहजं किल दुःख-  
भारम् । त्वं क्रीडसे सुललितैः खलु तैर्विहारैः नोचेत्  
कथं मम सुताप्तिरतिवृथा स्यात्'—इति भागवते  
(४।२।४।५५) । आमोदः; गन्धविशेषः; 'अश्विनो-  
रोषधीनां च घ्राणे मोदप्रमोदयोः'—इति भागवते (२।६।  
२) । 'मोदप्रमोदयोः सामान्यविशेषगन्धयोः घ्राणे-  
न्द्रियं परमायनम्'—इति तट्टीकायां श्रीघरस्वामी ।  
नागविशेषः; 'विहङ्गः शरभो मोदः प्रमोदः संहतापनः'  
—इति महाभारते (१।५७।११) । स्कन्दानुचरविशेषः;  
'आनन्दश्च प्रमोदश्च स्वस्तिको ध्रुवकस्तथा'—इति

महाभारते (१।४५।६३) । १२३

प्रयतः त्रि. [ प्र+यम्+क्त । यद्वा प्रयतते घर्माद्यर्थमिति ।  
प्र+यत्+अच् ] पवित्रः; 'ब्रह्मचार्याहरेद्भूक्षं गृहेभ्यः  
प्रयतोऽन्वहम्'—इति मनुः (२।१८३) । नम्रः;  
'वाल्मीकिरय तं दृष्ट्वा सहस्रोत्थाय वाग्यतः । प्राञ्जलिः  
प्रयतो भूत्वा तस्थौ परमविस्मितः'—इति रामायणे  
(१।२।२४) । प्रयत्नविशिष्टः । ४०२

प्रयाणम् क्ली. [ प्र+या+ल्युट्, णत्वम् ] गमनं; प्रस्थानं;  
व्रज्या; अभिनिर्याणं; प्रयाणकम्; 'उद्धादितनवद्वारे पञ्जरे  
विहगोऽनिलः । यतिष्ठति तदाश्चर्यं प्रयाणे विस्मयः  
कुतः'—इत्युद्भटः । 'नव द्वारे का पिञ्जरा, तामें पक्षी  
पीन । रहने में आश्चर्य है, गये अचम्भा कौन' ४५२

प्रयोगः पुं. [ प्र+युज्+भावकर्मादी यथायथं घञ् ]  
प्रयुक्तिः; 'प्रत्यब्रवीच्चैनमिपुप्रयोगे तत्पूर्वभङ्गे वितथ-  
प्रयत्नः'—इति रघौ (२।४२) । कार्मणं; वशीकरणं;  
निदर्शनम्; 'स्वयमात्मेति पर्यायस्तेन लोके तयोः सह ।  
प्रयोगो नास्त्यतः स्वत्वमात्मत्वञ्चान्यवारकम्'—इति  
पञ्चदश्याम् (६।४३) । घोटकः; सामाद्युपायानुष्ठा-  
नम्; 'क्षणशयितविबुद्धाः कल्पयन्तः प्रयोगानुदधिमहसि  
राज्ये काव्यवद्दुर्विगाहे'—इति माघे (११।६) ।  
अभिनयः; 'स प्रयोगनिपुणः प्रयोक्तृभिः सञ्जघर्ष सह  
मित्रसन्निधौ'—इति रघौ (१९।३६) । बृद्धये ऋणदानं;  
स तु धनप्राप्त्युपायेषु अन्यतमः; 'सप्त वित्तागमा धर्म्या  
दायो लाभः क्रमो जयः । प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह  
एव च'—इति मनुः (१०।११५) । ८६६

प्रयोजनम् क्ली. [ प्रयुज्यतेऽनेन इति, प्र+युज्+करणे  
ल्युट् ] हेतुः; 'सर्वस्यैव हि शास्त्रस्य कर्मणो वापि  
कस्यचित् । यावत् प्रयोजनं नोक्तं तावत् केन प्रगृह्यते ।  
सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । ग्रन्थादौ तेन  
वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः'—इति प्राञ्चः । [ प्रयु-  
ज्यते इति, प्र+युज्+ल्युट् ] कार्यम्; उद्देशः । ८६७

प्रलम्बघ्नः पुं. [ प्रलम्बं दनुपुत्रं हन्तीति । हन्+क ]  
बलरामः; प्रलम्बभित् । २८

प्रलापः पुं. [ प्रलपनमिति । प्र+लप्+भावे घञ् ] प्रल-  
पनम्; अनर्थकवाक्यं; निष्प्रयोजनमुन्मत्तादिवचनं;  
रोगाणामुपसर्गः; 'मूर्छा. प्रलापो वमयुः प्रसेकः सादनं  
भ्रमः । उपद्रवा भवन्त्येते मृतिश्च रसक्षीपतः'—इति

भावप्रकाशः । १५०

प्रवणः त्रि. [ प्रवतेऽनेति । प्रु+अधिकरणे ल्युट् ] प्रह्वः;  
'धन्योऽहमितिपुण्योऽहं कोऽन्योऽस्ति सदृशोऽमया । यत्तातो  
मामभिद्रष्टुं करोति प्रवणं मनः'—इति मार्कण्डेये  
(२३।८९) । क्रमनिम्नभूमिः; 'दक्षिणाप्रवणं चैव  
प्रयत्नेनोपपादयेत्'—इति मनुः (३।२०६) । उदरम्;  
आयतः; प्रंगुणः; क्षणः; प्लुतः; स्निग्धः; क्षीणः;  
आसक्तः; 'प्रजास्ता ब्रह्मणा सृष्टाश्चातुर्वर्ण्यव्यवस्थितौ ।  
सम्यक्श्रद्धासमाचारप्रवणा मुनिसत्तम ।'—इति विष्णु-  
पुराणे । पुं. [ प्रवन्ते गच्छन्ति जना अनेनेति, प्रुड् गतीं+  
करणे ल्युट् ] चतुष्पयः । ३५२

प्रवयाः [ स् ] त्रि. [ प्रगतं वयो यस्य ] वृद्धः; 'नृपतिः  
प्रकृतीरवेक्षितं ब्रह्महारासनमाददे युवा । परिवेत्तुमुपांशु-  
धारणां कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरम्'—इति रघो (८।१८) ।  
पुराणः; 'अवा यो विश्वा भुवनानि मज्जनेशानकृतप्रवया  
अभ्यवर्तत'—इति ऋग्वेदे (२।१७।४) । ५०३

प्रवरम् त्रि. [ प्रत्रियते इति । प्र+वृ+अप् ] श्रेष्ठम्;  
'एते षट् सदृशान् वर्णान् जनयन्ति स्वयोनियु । मातृजात्यां  
प्रसूयन्ते प्रवरासु च योनियु'—इति मनुः (१०।२७) ।  
अगरः; गोश्रं; पुं. सन्ततिः; गोश्रप्रवर्तकमुनिव्यावर्तको  
मुनिगणः । तथा च जमदग्निगोश्रस्य प्रवराः जमदग्न्योर्व-  
वशिष्टाः । भरद्वाजगोश्रस्य भरद्वाजाङ्गिरसवार्हस्प-  
त्याः । विश्वामित्रगोश्रस्य विश्वामित्रमरीचिकौशिकाः  
—इति दिक् । ६९०

प्रवर्हः त्रि. [ प्रवर्हति प्रवर्हते इति । प्र+वृह्+अच् ]  
प्रधानं; श्रेष्ठः । ६९०

प्रवहणम् क्ली. [ प्रोह्यते अनेनेति । प्र+वृह्+करणे  
ल्युट् ] कर्गोरयः; स्त्रीरत्नग्रहणार्थमुपरि वस्त्राच्छादित-  
मनुष्पवाह्यमानविशेषः; 'प्रविश्य सप्रवहणश्चेदः'—इति  
मृच्छकटिकनाटके चतुर्थोऽङ्के । पोतः । (६५५) । ४५५

प्रवारणम् क्ली. [ प्र+वृ+णिच्+ल्युट् ] काम्यदानं;  
काम्यस्य कमनीयस्य वस्तुनो वरस्त्रीरत्नादिनो दानं;  
महादानं; प्रकर्षेण वार्यते संगृह्यते प्रवारणं ]; [ प्रकर्षेण  
वारणमिति ] निषेधः । ७७३

प्रवालः पुं.- क्ली. [ प्रवलीति । प्र+वल् प्राणने+ 'ज्वलि-  
तिकसन्तेम्यो णः' इति ण । यद्वा प्र+वल्+णिच्+अच् ]  
किसलयः; 'पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्वाद्'—इति

कुमारे (१।४४) । वीणादण्डः; रक्तवर्णरत्नविशेषः;  
विद्रुमः; अङ्गारकमणिः; अम्भोधिवल्लभः; भीमरत्नं;  
रक्ताङ्गः; रक्ताकारः; लतामणिः; 'शुद्धं दृढं घनं  
वृत्तं स्निग्धं गात्रसुरङ्गकम् । समं गुरु सिराहीनं प्रवालं  
धारयेत् शुभम् ।' 'गौरं रङ्गजलाक्रान्तं वक्रसूक्ष्मं  
सकोटरम् । रुद्रकृष्णं लघु श्वेतं प्रवालमधुमं त्यजेत्'—  
इति राजनिर्घण्टः । १८४

प्रवासनम् क्ली. [ प्र+वस् छेदे+ल्युट् ] वधः; [ प्र+  
वास्+णिच्+ल्युट् ] प्रवासना; 'सीताप्रवासनपटो !  
कृष्णा कुतस्ते'—इति उत्तररामचरिते । ४७७

प्रवाहः पुं. [ प्र+वह्+घञ् ] जलस्रोतः; 'पूर्वं तदुत्पीडित-  
वारिराशिः सरित्प्रवाहस्तटमुत्ससर्प'—इति रघो (५।  
४६) । व्यवहारः; प्रकृष्टाश्वः; पुरीपादेर्निर्गमः; 'प्रवाहेण  
गुदभ्रंशे मूत्राघाते कटिग्रहे । मधुराम्लघृतं तैलं सपिर्वा-  
त्यानुवासनम्'—इति सुश्रुतः । प्रवृत्तिः; 'सर्वैकतानग-  
तयो वचसां प्रवाहैः'—इति भागवते (७।१।८) । ६६९  
प्रविदारणम् क्ली. [ प्रविदारयन्त्यनेति । प्र+वि+दृ+  
णिच्+अधिकरणे ल्युट् ] युद्धं; [ प्र+वि+दृ+णिच्+  
भावे ल्युट् ] अवदारणम्; आकीर्णः; [ प्र+वि+दृ+  
णिच्+कर्त्तरि ल्यु ] त्रि. प्रविदारकः । ४५३

प्रवीणः त्रि. [ प्रकृष्टा संसाधिता वीणास्य । यद्वा प्रवीण-  
यति वीणया प्रगायतीति । प्र+वीण्+णिच्+अच् ।  
वीणया गायकस्य नैपुण्यप्रसिद्धेस्तत्तुल्यनैपुण्यात् तथा-  
त्वम् ] प्रकृष्टं वेत्ति यः; निपुणः; अभिज्ञः; विज्ञः;  
निष्णातः; शिक्षितः; वैज्ञानिकः; कृतमुखः; कृती;  
कुशलः; 'विशवावसुप्राग्रहरैः प्रवीणैः सङ्गीयमानत्रिपुरा-  
वदानः । अध्वानमध्वान्तविकारलङ्घ्यस्ततार ताराधिप-  
खण्डवारी'—इति कुमारे (७।४८) । ३३५

प्रवृत्तिः स्त्री. [ प्रवर्तते इति, प्र+वृत्+वित्तन् ] उदन्तः;  
वार्ता; वृत्तान्तः; 'प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीविता-  
लम्बनार्थी जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्'  
—इति मेघदूते (४) । प्रवाहः; [ प्रवर्तनमिति प्र+  
वृत्+वित्तन् ] प्रवर्तनम्; 'ववृधे हि ततस्तस्य हृदि  
कामो महात्मनः । यथा शुक्लस्य पक्षस्य प्रवृत्तो चन्द्रमाः  
शनः'—इति महाभारते (१२।३०।१६) । [ प्रवर्तते  
व्याप्नोति प्रसिद्धत्वेनेति । प्र+वृत्+वित्तच् ] यज्ञादि-  
व्यापादः; 'असृष्ट सद्सत्त्वं यस्माद्भिरव प्रवर्तते ।

सन्ततिश्च प्रवृत्तिश्च जन्ममृत्युपुनर्भवाः—इति महा-  
भारते (१।१।२५५)। 'सन्ततिर्ब्रह्मादिः । प्रवृत्तियं-  
ज्ञादिः—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । अवन्त्यादिदेशः;  
हस्तिमदः; तार्किक मते यत्नविशेषः; 'प्रवृत्तिश्च निवृ-  
त्तिश्च तथा जीवनकारणम् । एवं प्रयत्नत्रैविध्यं तान्त्रिकैः  
परिदर्शितम् । चिकीर्षा कृतिसाध्येष्वेष्टसाधनत्वमतिस्तया ।  
उपादानस्य चाध्यक्षः प्रवृत्ती जनकं भवेत्—इति  
भाषापरिच्छेदः । १४६

प्रवेकः त्रि. [ प्रविच्यते पृथक् क्रियते इति । प्र+विच्+  
कर्मणि घञ् ] उत्तमः; प्रवानम्; 'श्याभावदाताः  
शतपत्रलोचनाः पिशङ्कवस्त्राः सुवचः सुपेशसः । सर्वे  
चतुर्वाहव उन्मिपन्मणिप्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः'  
—इति भागवते (२।१।११) । ६८९

प्रवेणिः स्त्री. [ प्रकषेण वीयते इति । प्र+वी गती+  
'वीज्याज्वरिभ्यो निः' इति नि, णत्वम् । यद्वा प्रवेणति  
सौन्दर्यं प्राप्नोतीति, प्र+वेण् गती+इन् ] कुष्यः; वेणी ।  
३०८

प्रवेणी स्त्री. [ प्रकषेण वीयते इति । प्र+वी गती+  
'वीज्याज्वरिभ्यो निः' इति नि, णत्वम् । कृदिकारादिति  
पाक्षिको ङीष् ] गजपृष्ठस्थचित्रकम्बलम्; 'अजिनानि  
प्रवेणीश्च सुक् सुव च महीपतिः । कमण्डलूश्च स्यालीश्च  
पिठराणि च भारत'—इति महाभारते (१५।२७।१३)  
वेणी; 'तत्र सीधगतः पश्यन् यमुनां चक्रवाकिनीम् ।  
हेमभक्तिमतीं भूमेः प्रवेणीमिव पिप्रिये'—इति रघी  
(१५।३०) । नदीविशेषः; 'प्रवेण्युत्तरभागो तु पुण्ये  
कण्वाश्रमे तथा । तापसानामरण्यानि कीर्तितानि यथा  
श्रुति'—इति महाभारते (३।८।११) । ३०८

प्रवेशः पुं. [ प्र+विश्+ 'हलश्च' इति भावे घञ् ] अन्त-  
विगाहनम्; 'निर्गमे च प्रवेशे च राजमार्गं समन्ततः  
प्रोत्सारितजनं मच्छेत् सम्यगाविष्कृत्येति'—इति  
कामन्दकीये नीतिसारे (७।३९) । १०६

प्रवेष्टः पुं. [ प्रवेष्टते इति, वेष् वेष्टने+अच् ] बाहुः;  
भुजः; बाहुनीचभागः; हस्तिदन्तमांसं; गजपृष्ठतल्पनम्  
५२२

प्रशंसा स्त्री. [ प्र+शस्+भावे अ, स्त्रियां टाप् ] प्रशंसनं;  
वर्धना; ईडा; स्तनः; स्तोत्रं; स्तुतिः; नृतिः; श्लाघा;  
अर्थवादः; 'धर्मैकस्तु धर्मज्ञाः सतां कृतिमनुष्ठाः ।

मन्त्रवर्जं न दुष्यन्ति प्रशंसां प्राप्नुवन्ति च'—इति मनुः  
(१०।२२७) । 'न चात्मानं प्रशसेद्वा परनिन्दां च  
वर्जयेत् । वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्जयेत्'  
—इति कौर्म १५ अध्याये । १४५

प्रशमनम् क्ली. [ प्र+शम्+णिच्+ल्युट् ] मारणं; बधः  
हिंसा । [ प्र+शम्+ल्युट् ] शमता; प्रशान्तिः; 'सर्षा-  
वाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ! एवमेव स्वया  
कार्यंमस्मद्वैरिनाशनम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (९।  
३५) । प्रतिपादनं; दानम्; 'तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं  
सामान्यं सन्धिविग्रहम् । स्थानं समुदयं गुप्तं लब्धप्रशम-  
नानि च'—इति मनुः (७।५६) । 'प्रशमनानि दानानि'  
इति तट्टीकायां कुल्लूक भट्टः । स्विकीकरणम्; 'लब्ध-  
प्रशमनस्वस्थमर्थेन समुपस्थिता । पार्थिवश्रीद्वितीयेषु  
शरत्पङ्कजलक्षणा'—इति रघी (४।१४) । 'प्रशमनेन  
'स्विकीकरणेन'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ४७७

प्रशस्तम् त्रि. [ प्रशस्यते स्मेति, प्र+शस्+क्त ] अति-  
श्रेष्ठम्; 'स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये दसंश्चतुर्योऽग्नि-  
रिवान्यगारे'—इति रघी (५।२५) । शर्म; प्रशंस-  
नीयम् । ७८१

प्रश्नः पुं. [ प्रच्छनमिति; प्रच्छ्+ 'यजयाचयतेति' नद्ध ।  
च्छ्वोः धूडिति' श । 'प्रश्नेचेति' शापकात् न सम्प्रसारणम्  
जिज्ञासा; अनुयोगः; पृच्छा; 'साक्षिप्रश्नविधानं च धर्म  
स्त्रीपुंसयोरपि'—इति मनुः (१।११५) । 'पृच्छा  
तन्त्राद्यथास्नायं विधिना प्रश्न उच्यते'—इति शरकः ।  
१५४

प्रच्छोही स्त्री. [ प्रच्छवाह्+ 'वाहः' इति ङीष् ] बाल-  
गभिणी; प्रथमगर्भवती गीः [ प्रच्छं प्रथमगर्भं वहति या-  
सा । बाला सती गभिणी प्रथमगर्भेत्यर्थः ] 'प्रच्छोहीनां  
पीवरीणां च तावद् अग्रया गृष्टयो घेनवः सुव्रताश्च'  
इति महाभारते (१३।९३।३३) । २६९

प्रसक्तः त्रि. [ प्र+सज्ज्+क्त ] आसक्तः; 'अनेकचित्त-  
विभ्रान्ता मोहजालसमावृताः । प्रसक्ताः कामभोगेषु  
पतन्ति नरकेऽशुचौ'—इति भगवद्गीतायाम् (१६।  
१६) । नित्यम्; 'प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन भिन्नस्वरः  
कासति शुष्कमेव'—इति माघवः । 'प्रसक्तवेगः सतत-  
कासवेगः'—इति तट्टीकायां विजयरक्षितः । तद्वति त्रि. ।  
३६४

प्रसन्ना स्त्री. [ प्रसन्न+टाप् ] सुरा; मद्यविशेषः; प्रसन्नैरा;  
 धदिरा; 'प्रसन्ना गुल्मदाताशौंविद्यन्धानाहनाशिनी ।  
 सुलप्रवाहिकाटोपकफवाताशंसां हित्वा'—इति राज-  
 वल्लभः । प्रसादविशिष्टा; 'सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां  
 भवति युक्तये'—इति माकण्ड्ये (८१।४३) । ३२९  
 प्रसन्नम् द्वि. [ प्रगता सभा सभाधिकारो यत्र ] बलात्कारः;  
 हठः; 'यस्मिन् विनिर्मितवति प्रसन्नं प्रकोपादत्युग्र-  
 निग्रहनवानुभवोपदेशम्'—इति श्रीकण्ठचरिते (५।  
 ४२) । ७५९

प्रसरः पुं. [ प्र+सृ+भावाद्वा यथायथम् अप् ] वेगः;  
 'इति विनयनशिरसा तेन वचो युक्तमुक्तमववाच्यं ।  
 तसुवाच मूलदेवः प्रीतिप्रसरैः प्रसारितौष्ठाग्रः'—इति  
 फलाविलासे (१।२१) । प्रणयः (८१०); तन्तु-  
 ळणविटपादेर्विसर्पणम् [ प्रकर्मण निकटे सरणं सर्पणं ]  
 विसर्पः; 'तिरस्किप्रन्ते छमितन्तुजालैर्विच्छिन्नवूमप्रसरा  
 ग्वाक्षाः'—इति रघौ (१६।२०) । समूहः; 'स्तन-  
 वृत्तनखलेखालम्ब्री तव घर्मखिन्दुसन्दोहः । आभाति  
 पट्टसूक्ष्मे प्रविशन्निव मौक्तिकप्रसरः'—इति आयसिप्त-  
 सत्यां (५८९) । प्रकृष्टसञ्चरणम्; अत ऊर्ध्वं प्रसरं  
 वक्ष्यामः'—इति सुश्रुतः । युद्धं; नाराचः । ४४३

प्रसवः पुं. [ प्र+सृ+'ऋदोरप्' इत्यप् ] कुसुमं; पुष्पम्;  
 'प्रसवैः सप्तपर्णानां मदगन्धिराहताः । असूययेव  
 तन्नागाः सप्तवैव प्रसुचुबुः'—इति रघौ (४।२३) ।  
 गर्भयोचनं; प्रसूतिः; 'प्रतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखी प्रियां  
 ददर्श काले दिवमभ्रितामिव'—इति रघौ (३।१२) ।  
 गर्भग्रहणम्; 'यथाविध्यमिगम्यैनां शुक्लवस्त्रां शुचि-  
 द्रताम् । पियो भजेताप्रसवात् सङ्कत्सङ्कृद्वावृता'—इति  
 बभ्रुः (९।७०) । उत्पादः; फलं; जन्म; 'ज्ञाने मीनं  
 क्षमा वक्तो त्यागे श्लाघाविपर्ययः । गुणा गुणानुबन्धि-  
 त्वात्तस्य सप्रसवा इव'—इति रघौ (१।२२) ।  
 'सह प्रसवो जन्म येषां ते सप्रसवाः सोदरा इव'—इति  
 तट्टीकायां मल्लिनाथः । अपत्यन्; 'ऋषिदेवगणस्वधा-  
 मुजां, श्रुतयागप्रसवैः स पाथिवः । अनृणत्वमुपेयिवान्  
 वमी, परिवर्मुक्तं ह्रवोष्णदीधितिः'—इति रघौ  
 (८।३०) । आज्ञा; 'मस्तां प्रसवेन जय'—इति वाज-  
 सनेयसंहितायाम् (१०।२१) । 'हे धुर्यं मस्तां देवानां  
 प्रसवेनाज्ञया त्वं जय शत्रूनिति शेषः'—इति तद्भाष्ये

महीधरः । १८६  
 प्रसदधन्वनम् क्ली. [ प्रसवानां पुष्पफलानां वन्वनं यत्र ]  
 वृन्तम्-। १८५  
 प्रसव्यम् त्रि. [ प्रगतं सव्यादिति ] प्रतिकूलं; प्रतिलोमं;  
 प्रतीपं; प्रदक्षिणम्; 'प्रसव्यञ्चापि तञ्चक्रुर्दृष्ट्विजोऽ  
 ग्निचितं नृपम्' । [ प्र+सृ+कर्मणि यत् ] प्रसवनीयः ।  
 ७४३

प्रसावः पुं. [ प्र+सद्+घञ् ] अनुग्रहः; 'तस्याः प्रसवनेन्दु-  
 मुखः प्रसादं, गुरुनृपाणां गुरवे निवेद्य । प्रहर्षचिह्नानु-  
 मितं प्रियायै, शशंस वाचा पुनरुक्तयेव'—इति रघौ  
 (२।६८) । प्रसन्नता; नैर्मल्यम्; 'कल्पान्तवातसंक्षोभ-  
 लङ्घिताशेषभूतः । स्वैर्यप्रसादमयादास्ता एव हि महो-  
 दधेः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये । काव्यप्राणः; स्वास्थ्यं;  
 प्रसक्तिः; वैदर्भीरीतिपुक्तकाव्यगुणः; 'ओजः प्रसाद-  
 माधुर्यगुणान्नितयभेदतः । गौडवैदर्भ्याञ्चाला रीतयः  
 परिकीर्तिताः । व्यक्तार्थपदमयाम्यं प्रसादः परिकीर्तितः'  
 —इति काव्यचन्द्रिका । 'चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्व-  
 नमिवानलः । सः प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च'  
 इति साहित्यदर्पणे । देवनिवेदितद्रव्यं; गुरुणां भुक्ताव-  
 शोपः । 'आसीत्सुञ्जवजो राजा प्रजापालनतत्परः ।  
 प्रसादं सत्यदेवस्य त्यक्त्वा दुःखमवाप सः'—इति  
 स्कान्दे रेवाखण्डे सत्यनारायणव्रतकथा । ७७३

प्रसादना स्त्री. [ प्र+सद्+णिच्+युच्+टाप् ] सेवा;  
 परिचर्या । १२९

प्रसाधनम् क्ली. [ प्रसाध्यतेऽनेनेति । प्र+साध्+ल्युट् ]  
 वेशः; वेपः; 'अस्यञ्जनं स्थापनं च गात्रोत्सादनमेव  
 च । गुरुपत्न्या न कार्याणि केशानां च प्रसाधनम्'—इति  
 मनुः (२।२१७) । कङ्कतिका; प्रकृष्टनिष्पत्तिः; [ प्र+  
 साध्+णिच्+ल्यु ] प्रसाधयितरि त्रि. । 'यो यज्ञस्य  
 प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वगतः'—इति ऋग्वेदे (१०।५३।२) ।  
 ५३९

प्रसितम् त्रि. [ प्र+सिच्+क्त ] आसक्तः; 'इति शत्रुषु  
 चेन्द्रियेषु च, प्रतिपिद्धपरेषु जाग्रती । प्रसितानुदयापर-  
 वर्गयोश्चभयो सिद्धिमुभाववापतुः'—इति रघौ (८।२३) ।  
 क्ली. पूयं; चन्द्रिका । ३६४

प्रसूता स्त्री. [ प्रसूते स्म इति । प्र+सृ+कर्तरि क्त ]  
 जातसन्ताना; जातापत्या; प्रजाता; प्रसूतिका; 'अकाले

च प्रसूता स्त्री स्नेहपानं विवर्जयेत्—इति सुश्रुतः ।  
‘श्रूयन्ते हि स्त्रियो बह्वृषो व्यभिचारव्यतिक्रमः ।  
प्रसूता देवसङ्काशान् पुत्रानमितविक्रमान्—इति हरि-  
वंशे (८४।१०१) । ५००

प्रसूतिः स्त्री. [ प्रसूयते इति, प्र+सू+क्तिन् ] सन्ततिः;  
‘कच्चिन्मृगीणामनघा प्रसूतिः—इति रघो (५।७) ।

तनयः; दुहितः; प्रसवः; ‘छण्णावचा चापि जलेन  
पिष्टा, सैरण्डतला खलु नाभिलेपात् । सुखं प्रसूतिं कुरुते-  
ज्ञानानां, निपीडितानां बहुभिः प्रगादैः ।’ [ प्र+सू+भावे  
क्तिन् ] उद्भवः; ‘आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या  
भवत्युत्सवः, सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनु-  
शायताम्—इति शाकुन्तले । कारकम्; ‘न केव-  
लानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुषां प्रसन्नाम्—  
—इति रघो (२।६३) । उत्पत्तिस्थानम्; ‘त्वं सर्वस्य  
शुभानस्य प्रसूतिस्त्वमेवाग्ने ! भवसि प्रतिष्ठा—इति  
महाभारते (१।२३३।१४) । दक्षपत्नी; सा तु सती-  
जननी; ‘देवहूतिः कर्दमस्य प्रसूतिर्दक्षकामिनी—इति  
ब्रह्मवैवर्ते (२।१।१२८) । २७२, ४९७

प्रसूनकम् क्ली. [ प्रसूयते स्मेति । प्र+सू+क्त, ओदि-  
त्वान्निष्ठातस्य न, संज्ञायां कन् ] पुष्पं; कुसुमम् । १८६

प्रसूतः त्रि. [ प्र+सू+क्त ] नियुक्तः; प्रसक्तः; प्रवृद्धः;  
प्रसारितः; ‘न शशाक नियन्तुं च स व्यासः प्रसूतं मनः’  
—इति देवी भागवते (१।१।५) । विनीतः; वेगितः;  
गतः । ३६४

प्रसूता स्त्री. [ प्र+सू+क्त+टाप् ] जङ्घा । ५१५

प्रसूतिः स्त्री. [ प्र+सू+क्तिन् ] आकुञ्चितपाणिः;  
‘देवानुग्रान् समम्यर्च्यं तत्स्नानोदकमाहरेत् । संश्राव्य  
पाययेत्स्माज्जलात्स प्रसूतित्रयम्—इति याज्ञवल्क्यः  
(२।१।१२) । प्रसतः; सन्ततिः; ‘वदितानि प्रसृत्या  
नै विनताकुलकर्तृभिः—इति महाभारते (५।१०।१३) ।  
पलद्भयम्; ‘पलाभ्यां प्रसूतिर्ज्ञेया—इति शाङ्गधरः ।

५३७

प्रस्कन्नः त्रि. [ प्रकषेण स्कन्नः; प्र+स्कन्द+क्त, ‘रदा-  
भ्यामिति नत्वम् ] पतितः; स्वलितः । ४७९

प्रस्तरः पुं. [ प्रस्तृणाति आच्छादयति यः । प्र+स्तृ+पचा-  
द्यच् ] शिला; ग्रावा; पाषाणः; उपलः; अश्मा;  
दृशत्; दृषत्; पारारकः; पारटीटः; मुन्मरुः; काचकः;

‘पत्वर’ इति भाषा । (८१८) संस्तरः; पल्लवादि-  
चितशय्या; ‘पल्लवाद्यैविरचिते शयनीये तु संस्तरः ।  
प्रस्तरः प्रस्तिरयनेति प्रस्तारोऽपि च कुप्रचित्—इति  
शब्दरत्नावली । ‘गोश्रवोऽप्यग्रानप्रासादप्रस्तरेषु कटेषु च ।  
आसीत् गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनीपु च’—इति मनुः  
(२।२०४) । मणिः । १६८

प्रस्तरघटनीपकरणम् क्ली. [ प्रस्तराणां घटनायाः छेद-  
भेदादेः उपकरणं साधनम् ] टङ्कः; पाषाणदारणः । ८२१  
प्रस्तापः पुं. [ प्र+स्तु+‘प्रद्वस्तुस्तुवः’ इति घञ् ] प्रस्ता-  
वना; उद्घातः; आरम्भः; अवसरः; प्रसङ्गस्तुतिः;  
प्रसङ्गः; ‘प्रस्तावेनाधिकरणिकत्वा द्रष्टुमिच्छतीति’  
—मृच्छकटिके । प्रकरणम्; ‘प्रस्तावदेशकालादेर्वैशि-  
ष्ट्यात् प्रतिनाजुयाम्—इत्यस्यार्थे काव्यप्रकाशः । ७५१

प्रस्थः पुं.- क्ली. [ प्र+स्था+क ] अग्नेः समग्रभागः;  
अग्नेरेकदेशः; स्तुः; सानुः; ‘प्रस्पं हिमाद्रमृगनामिगन्धि  
किञ्चित् ववणत्किन्नरमध्युवास’—इति कुमार (१।५४) ।  
उन्मितवस्तु; विस्तारः; ‘दीर्घे प्रस्थे समानं च प्र-  
कुर्यान्मन्दिरं नुष्ठः—इति ब्रह्मवैवर्ते १०३ अध्यायः ।  
प्रकृष्टस्थितिर्विशिष्टे त्रि. [ प्रकषेण तिष्ठतीति, प्र+  
स्था+‘आतश्चोपसर्गे’ इति क ] यद्वा प्रतिष्ठतेऽस्मिन्ननेन  
वेति घञर्थे क ] परिमाणविशेषः; स तु चतुःकुडयरूपः;  
आढकचतुर्थाशः; द्विशरावपरिमाणम्; ‘बलिने बहु-  
दोपस्य वयःस्थस्य शरीरिणः । परं प्रमाणमिच्छन्ति प्रस्थं  
शोणितमोक्षणं’—इति सुश्रुतः । १६६

प्रस्थानम् क्ली. [ प्र+स्था+ल्युट् ] विजोगीपोः प्रयाणम्;  
‘सेनाभियोगं प्रस्थानं बलसंख्यां यथार्थतः । धीराणां स  
परिज्ञानं कृत्वा मातु त्वरान्वितः—इति देवीभागवते  
(५।४।१२) । गमनयात्रम्; ‘प्रस्थानं ते कुलिशकलना-  
सिद्धितं पण्डिताग्रधैः—इति पदाङ्कदूते । ४५२

प्रस्रवः पुं. [ प्र+स्तु+भावे अप् ] प्रस्रवणं; जलादेः  
निःसृत्य प्रवहणम् । १६६

प्रस्रवणम् क्ली. [ प्रस्रवति जलमस्मादस्मिन् वा । प्र+  
स्तु+अपादाने अधिकरणे वा ‘कृत्यत्युटो बहुलम्’ इति  
ल्युट् ] अजलं मन्दवेगेन जलस्रवणम्; उत्सः; जलप्र-  
स्नावः; ‘स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च’—इति  
मनुः (४।२०३) । [ प्र+स्तु+भावे ल्युट् ] प्रकषेण  
क्षरणं; यत्र स्थाने स्तुत्वा जलं गलति तत्; अविच्छेदेन



सकञ्जलं यत्र स्थाने पतति यत्र निपत्य च बहुलीभवति  
 क्षत्; गिरेरुपरि निर्झरादिप्रभवजलसङ्घातः; 'पुण्यं  
 तीर्थं वरं वृष्ट्या विस्मयं परमं गतः । प्रभावं च सरस्वत्याः  
 प्लासप्रलयणं बलः'—इति हरिवंशे (१।५४।११) । ६७७  
 प्रहृष्टम् त्रि. [ प्रहृष्यते स्मेति, प्र+हृ+क्त ] क्षुण्णं;  
 धितलं; प्रकर्षेण गतं; प्रकर्षेण हिंसितम्; 'प्रहतरथन-  
 राण्यकुञ्जरं प्रतिभयदर्शनमुल्बणव्रणम् । तदहितहत-  
 धावो बलं पितृपतिराष्ट्रमिव प्रजाक्षयं'—इति महा-  
 भारते (८।३०।६) । चित्ताडितम् । 'इत्यं तयोः प्रहृतयो-  
 गंदयोर्नदीरो क्रुद्धो स्वमुष्टिभिरयःस्पर्शैरपिष्टाम्'  
 —इति भागवते (१०।७२।३८) । वादितम्; 'स  
 स्वयं प्रहृतपुष्करः कृती लोलमाल्यबलयो हरन् मनः ।  
 मृतंकीरमिनयातिलङ्घिनीः पाद्वन्वतिषु गरुप्वलज्जयत्'  
 —इति रघौ (११।१४) । ३५२

प्रहरः पुं. [ प्रह्रियते ढवकादिरस्मिन्निति । प्र+हृ+घ,  
 अच् वा ] वासरस्याष्टभागेकभागः; दिनस्याष्टमो भागः;  
 यामः; 'पहर' इति भाषा । 'सङ्केतकं द्वितीयेऽस्मिन् प्रहरे  
 पर्यंकल्पयत्'—इति कथासरित्सागरे (४।३७) । १०६

प्रहरणम् क्ली. [ प्रह्रियतेऽस्मिन्निति ] युद्धम्; प्रह्रि-  
 यतेऽनेनेति । प्र+हृ+करणे ल्युट् ] अस्त्रम् (४६२);  
 'धनुःप्रहरणं श्रेष्ठमतीवात्र पितामह'—इति महा-  
 भारते (१२।१६६।२) । कर्णारयः; 'पञ्चप्रहरणं  
 सप्तवरुणं पञ्चविक्रमम्'—इति भागवते (४।२६।२) ।  
 [ प्र+हृ+भावे ल्युट् ] प्रहारः; 'याने प्रहरणे चैव तथै-  
 वाग्निषु भारत'—इति महाभारते (४।४।७) । ४५३

प्रहारः पुं. [ प्रहरणमिति, प्र+हृ+घञ् ] आघातः;  
 'करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम्'—इति मार्क-  
 ङ्देये । २२०

प्रहिः पुं. [ प्रकर्षेण. ह्रियतेऽनेनेति । प्र+हृ+प्रहृतेः  
 कूपे' इति इण, स च डित् ] कूपः । ६८४

प्रहेलिका स्त्री. [ प्रहिलति अभिप्रायं सूचयतीति । प्र+  
 हिल् अभिप्रायसूचने+क्वुन्, टापि अत इत्वम् ] कुत्रिज्ञा-  
 नार्थप्रश्नः; कूटार्थभाषिता कथा; प्रह्लेहिका; प्रव-  
 ह्लिका; प्रवह्लिः; प्रवह्ली; प्रहेलः; प्रहेली; प्रश्न-  
 दूती; प्रवह्लीका; 'पहेली' इति भाषा । 'व्यक्ती-  
 कृत्य कमप्यर्थं स्वरूपार्थस्य गोपनात् । यत्र बाह्यान्त-  
 रावयो कथ्येते सा प्रहेलिका । सा द्विधार्थी च शान्दी च

विख्याता प्रश्नशासने । आर्थी स्यादर्थविज्ञानात् शान्दी  
 शब्दस्य भङ्गतः । आर्थी यथा—'तृण्यालिङ्गतः  
 कण्ठे नितम्बस्थलमाश्रितः । गुरुणां सन्निधानेऽपि कः  
 कूजति मुहुर्मुहुः'—( पानीयकुम्भः ) । शान्दी  
 यथा—'सदारिमध्यापि न वैरियुक्ता, नितान्त-  
 रदत्ताप्यसितैव नित्यम् । यथोक्तवादिन्यपि नैव दूती  
 का नाम कान्तेति निवेदयन्ति ।' ( सारिका )—इति  
 विदग्धमुखमण्डनम् । १५२

प्रह्लः त्रि. [ प्रहृयते इति । प्र+ह्ले+ 'सर्वनीघृष्वरिष्वेति'  
 वन्, आलोपश्च ] आसक्तिः; नम्रः; 'विभूषणप्रत्यु-  
 पहारहस्तम्, उपस्थितं वीक्ष्य विशाम्पतिस्तत् । सौपर्ण-  
 मस्त्रं प्रतिसञ्जहार प्रह्लेष्वनिर्वन्धरुषो हि सन्तः'—  
 —इति रघौ (१६।८०) । ३५२

प्रह्लिका स्त्री. [ प्रह्लति विचारमूढतां नयति । प्र+  
 ह्लल्+अच्, संज्ञार्थे क, टाप् ] प्रहेलिका; प्रवह्लिका;  
 प्रवह्लिः; प्रश्नदूती; प्रहेली । १५२

प्रांशुः त्रि. [ प्रकृष्टाः अंशवोऽत्र ] उन्नतः; उच्चः; तुङ्गः;  
 उदग्रः । ७५१

प्राक् अव्य. [ प्र+अञ्च् 'दिक्छन्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी-  
 प्रथमाम्यः' इति अस्ताति, 'अञ्चेलुगिति' अस्ताते-  
 लुक् 'लुक् तद्धितलुकि' इति स्त्रीप्रत्ययस्य लुक् पूर्वम्;  
 'प्राङ्नाभिवर्द्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते'—इति मनुः  
 (२।२९) । प्रभातम्; अवान्तरम्; अतीतम्; अग्रम्;  
 क्रमप्राप्तिः; पूर्वदिक्; पूर्वदेशः; पूर्वकालः; प्राचीं  
 दिग् प्राग् देशः कालो वा प्राक् । ७०७

प्राकारः पुं. [ प्रक्रियते इति, प्र+कृ+घञ् । 'उपसर्गस्य  
 घञोति' दीर्घः ) वप्रोपरि अन्यत्र वा इष्टकादिरचित-  
 वेष्टनं, वरणः; सालः; शालः; वप्रः; 'प्राकाररोध-  
 सोर्वप्रः पितृकेदारयोरपि'—इति रत्नकोषः । ऊर्ध्वं  
 विशति हस्तेभ्यः प्राकारं न शुभप्रदम् । ऊर्ध्वं षोडश  
 हस्तेभ्यो नैव कुर्याद् गृहं गृही । प्रस्थे हस्तद्वयात् पूर्वं  
 दीर्घं हस्तत्रयन्तया । गृहिणां शुभदं द्वारं प्राकारस्य गृहस्य  
 च । न मध्यदेशे कर्तव्यं किञ्चिन्न्यूनाधिके शुभम्—  
 इति ब्रह्मवैवर्ते । २८८

प्राकाराग्रम् क्ली. [ प्राकारस्य अग्रम् ] कपिशीर्षम् । ७७८

प्राकृतः त्रि. [ प्रकृष्टमकृतमकार्यं यस्य ] नीचः; अश्रुपातं  
 करोत्यथ विवशः प्राकृतो यथा—इति देवीभागवते

(११५।३१) । अविकारकः; 'वदन्ति षष्ठं चाजीर्षं प्राकृतं प्रतिवासरम्'—इति भावप्रकाशः । प्रकृति-सम्बन्धी; 'इत्युक्त्वासीद्धरिस्तूष्णीं भगवानात्मभायया । पित्रोः संपश्यतोः सद्यो वभूव प्राकृतः शिशुः'—इति भागवते । भाषाभेदे क्ली. । प्रलयविशेषे पुं. । ३४८

प्राग्भागः पुं. [ प्राक् अग्रश्चासी भागः ] सन्मुखप्रदेशः; देहाग्रभागः; उत्सङ्गः । ५२८

प्राग्रम् क्ली. [ प्रकृष्टं च तद् अग्रम् ] ऊर्ध्वभागः; शिखरः; उत्तमाङ्गम् । १८१

प्राग्रहरः त्रि. [ प्राग्रं प्रकृष्टमग्रं हरति । 'हरतेरनुद्यमनेऽञ्' ] श्रेष्ठः; 'तथेति तस्याः प्रणयं प्रतीतः प्रत्यग्रहीत्प्राग्रहरो रघूनाम् । प्ररूप्यभिव्यक्तमुखप्रसादा, शरीरवन्धेन तिरोव भूव'—इति रघुवंशे (१६।२३) । ६८९

प्राग्रघम् त्रि. [ प्रकर्षेणाग्रे भव इति । प्राग्र+यत् ] श्रेष्ठः; 'कृत्वा हि सुमहत् कर्म हत्वा भीष्ममुखान् फुरुन् । जयः प्राप्तो यशः प्राग्रघं वीरं च प्रतियातितम्'—इति महाभारते (१।५८।११) । ६८९

प्राघुणकः पुं. [ प्राघोणते आम्यतीति । प्र+आ+घुण्+क+स्वार्थे कन् । प्राघुण्+संज्ञायां कन् वा ] अतिभिः; प्राघुणः । ३५८

प्राघुणिकः पुं. [ प्राघुण्+स्वार्थे ठक् ] अतिभिः; प्राघुणः । ३५८

प्राघूर्णकः पुं. [ प्र+आ+घूर्ण् अमणे, ण्वुल् ] अतिभिः । ३५८

प्राघूर्णकः पुं. [ प्र+आ+घूर्ण्+भावे घञ् । प्राघूर्णे अमणे साधुः इति, ठक् ] अतिभिः; आगन्तुकः; आवेशिकः । ३५८

प्राङ् त्रि. [ प्र+अञ्च्+क्विप्, 'नाञ्चेः पूजायाम्' इति नलोपाभावः, तस्य कुत्वेन ड् ] पूर्वदिक्; पूर्वदेशः; पूर्वकालः । १०३

प्राङ्गणम् क्ली. [ प्रकृष्टमङ्गनमङ्गं यस्य । प्रकर्षेण अङ्गनं गमनं यत्र वा । णट्त्वम् ] गृहभूमिः; अजिरम्; चत्वरम्; अङ्गनम्; 'आंगन' इति भाषा । 'प्रदोषसमये स्त्रीभिः पूज्यो जीमूतवाहनः । पुष्करिणीं विधायाय प्राङ्गणे चतुरस्रिकाम्'—इति भविष्योत्तरे । 'अभद्रदं सूर्यवेधं प्राङ्गणं च तथैव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते । २९९

प्राचिका स्त्री. [ प्राञ्चति, प्र+अञ्च्+गती+ण्वुल्, टापि

इत्वम् ] पक्षिविशेषः; श्येनस्तत्सदृशो वा । श्येनार्थं पुं. । प्राचिकः; प्राची । स्त्रीत्वे वनमक्षिकेत्येके । २५३

प्राची स्त्री. [ प्रपमं अञ्चति सूर्यं प्राप्नोतीति । प्र+अञ्च्+ङीप् ] पूर्वा दिक् । १०१

प्राचीनः त्रि. [ प्रागेवेति, प्राक्+विभाषाञ्चेरक्षि-स्त्रियाम्' इति ख, तस्येनादेशः ] पूर्वदिग्देशकालमन्त्रः; प्राक्; 'प्राचीनाचलमौलेयया शशी गगनमध्यमधि-वसति । त्वां सखि ! पश्यामि तथा छायामिव संकुचन्या-नाम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३५१) । 'प्राची-नामैः कुशैरासीदास्तृतं वसुधातलम्'—इति भागवते (४।२४।१०) । प्रागग्रम्; 'प्राचीनं वहिरोजसा सहस्र-धीरमस्तृणन्'—इति ऋग्वेदे (१।१८।१४) । 'प्राचीनं प्रागग्रम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । पुं. प्राचीरम्; आवेष्टकः; वृत्तिः । १०३

प्राचीनबहिः [ स् ] पुं. [ प्राचीनः पूर्वः यज्ञेषु निरन्तर-मभिमुखः बहिः अग्निः यत्य ] इन्द्रः; 'स यथी प्रपमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनवहिषा । अहिताननिलोद्धृतेस्तजं-यन्निव केतुभिः'—इति रघी (४।२८) । राजविशेषः; 'अत्रिवंशे समुत्पन्नो ब्रह्मयोनिः सनातनः । प्राचीन-बहिर्भगवांस्तस्मात् प्राचेतसो दश'—इति महाभारते (१।२।२०।८।६) । ५२

प्राचीनावीतम् क्ली. [ प्राचीनं प्रदक्षिणम् आवीयते स्मेति । आ+वी गत्यादौ+क्त । यद्वा प्राचीनं आवेतीति, 'गत्यर्थेति' क्त ] श्राद्धादौ वामकरे वहिष्कृते सति दक्षिणस्कन्वापितयज्ञसूत्रम्; 'सव्यं बाहुं समुद्धृत्य दक्षिणे तु घृतं द्विजाः । प्राचीनावीतमित्युक्तं पित्र्ये कर्मणि योजयेत्'—इति कौर्मै । ४०१

प्राचेतसः पुं. [ प्रचेतसोऽपत्यमिति । प्रचेतस्+अण् ] वाल्मीकिमुनिः; 'अथ प्राचेतसोपज्ञ रामायणमितस्ततः । मैथिलेयो कुशीलवी जगदुर्गुचोदितौ'—इति रघी (१।५।६३) । विष्णुः; 'प्रज्ञया तेजसा योगात् तस्मात् प्राचेतसः प्रभुः । विष्णुरेव महायोगी कर्मणा-मन्तरङ्गतः'—इति हरिवंशे (२०३।१४) । दशः; 'वीरिण्या सह सङ्गम्य दशः प्राचेतसो मुनिः । आत्म-तुल्यानजनयत् सहस्रं संशितव्रतान्'—इति महाभारते (१।७।५।५) । ४१२

प्राचनम् क्ली. [ प्रवीयतेऽनेनेति, प्र+अञ्च्+ण्वुल् । 'वा

यी' इति पक्षे व्यभावः ] तोदनं; प्रतोदः; तोत्त्रम् । ५५७  
श्राद्धिता [ ऋ ] पुं. [ प्राजतीति । प्र+अञ्+तृच्, वीभावा-  
भावः ] सारथिः; प्रकृष्टगन्तरि त्रि. । ४४८

श्राद्धः पुं. [ प्रकर्षणे जानातीति । प्र+ञा+क । ततः प्रक  
एव, स्वार्थे अण् ] पण्डितः; 'पण्डिते च गुणाः सर्वे मूर्खे  
दोषा हि केवलम् । तस्मान्मूर्खसहस्रेषु प्राज्ञ एको  
विशिष्यते'—इत्युद्धटः । कल्किदेवस्य ज्येष्ठस्राता;  
'कल्किं दृष्टुं हरेशमाविभूतं च शम्भले । कवि  
प्राज्ञं सुमन्तं च पुरस्कृत्य महाप्रभम्'—इतिकल्किपु-  
राणे २ अध्यायः । राजशुकः; [ प्रकर्षणे अज्ञः ]  
मूर्खः; त्रि. [ प्रज्ञास्त्यस्येति-अच्, स्वार्थे अण् ] पण्डितः;  
पीरेषु विनिवृत्तेषु विदुरः सर्वधर्मवित् । बोधयन् पाण्डव-  
श्रेष्ठमिदं वचनमत्रवीत् । प्राज्ञः प्राज्ञं प्रलापज्ञः प्रलापज्ञ-  
मिदं वचः—इति महाभारते ( १।१४६।१९ ) । दक्षः;  
विज्ञः; 'नामधेयस्य ये केचिदभिदादं न जानते । तान्  
प्राज्ञोऽहमिति क्लृप्त्वात् स्त्रियः 'सर्वास्तिथैव च'—इति  
मनुः ( २।१२३ ) । ३३२

श्राद्ध्यम् त्रि. [ प्रवीयते इति, प्र+अञ्+ण्यत्, वीभावा-  
भावः ] प्रचुरम्; 'स्वागतं स्वानधीकारान् प्रभावे-  
ष्वलम्ब्य वः । युगपद्युगवाहुभ्यः प्राप्तेभ्यः प्राज्यविक्रमाः'  
इति कुमारे ( २।१८ ) । [ प्रभूतम् आंज्यं घृतं यस्येति ]  
प्रचुरघृतसम्पन्नः; [ प्रकृष्टमाज्यम् ] प्रकृष्टघृते क्ली. ।

७०१

श्राद्धविवाकः पुं. [ पृच्छतीति प्राट्, विविच्य वक्तीति  
विवाकः । ततः कर्मधारयः ] व्यवहारद्रष्टा; अक्ष-  
दर्शकः; व्यवहारदर्शी; 'जज' इति भाषा ।  
सत्यासत्यनिर्णेतः; 'विवादानुगतं पृष्ट्वा पूर्ववाक्यं  
पयत्नतः । विचारयति येनासौ प्राड्विवाकस्ततः स्मृतः'  
इति स्मृतिः । [ अधिप्रत्ययिनी पृच्छतीति प्राट्, तयोर्वचनं  
विहृद्धमविरुद्धं च सम्यैः सह विविनक्ति विवेचयति वेति  
विवाकः । प्राट् चासौ विवाकश्चेति ] 'विवादानुगतं  
पृष्ट्वा ससम्यस्तत् प्रयत्नतः । विचारयति येनासौ  
प्राड्विवाकस्ततः स्मृतः'—इति मिताक्षरा । ४२९

प्राणः पुं. [ प्राणिति जीवति बहुकालमिति । प्र+अन्+  
अच् । प्राणित्यनेनेति करणे घञ् वा ] वलम्; 'वाहु-  
प्राणेन शूराणां समाजोत्सवसन्निधी'—इति हरिवंशे  
( ८६।३६ ), द्रह्या; हुन्मावतः; 'हृदि प्राणो गुदेऽपानः

समानो नाभिसंस्थितः ।' बोलः; काव्ये जीवात्मा;  
अनिलः; पूरिते त्रि. । सूक्ष्मशरीरसमष्ट्युपहितचैतन्यं;  
प्राग्मनवान् नासाग्रस्थानवर्ती वायुः; 'प्राणिनां सर्वतो  
वायुश्चेष्टां वर्तयते पृथक् । प्राणनाच्चैव भूतानां प्राण  
इत्यभिधीयते'—इति महाभारते ( १२।३२१।६५ ) । घालुः  
पुत्रः; 'आयतिनियतिश्चैव भेरोः कन्ये महात्मनः ।  
भार्ये घालुविधात्रोस्ते, तयोर्जाती सुतावुभौ । प्राणश्चैव  
मृकण्डुश्च पिता मम महायशः'—इति मार्कण्डेये ।  
धरपुत्रविशेषः; 'द्रविणो हव्यवाहश्च धरपुत्रावुभौ स्मृती ।  
कल्याणिन्यां ततः प्राणो रमणः क्षिशिरोऽपि च । मनोहरा  
धरात् पुत्रानवापाय हरेः सुता'—मात्स्ये ( ५।२३-२४ )

-७२३

प्राणाः पुं. [ प्राणित्येभिरिति, प्र+अन्+करणे घञ् ]  
अस्रवः; 'प्राणा यथात्मनोऽमीष्टा भूतानामपि ते तथा ।  
आत्मीपम्येन भूतानां दयां कुर्वन्ति साधवः'—इति  
हितोपदेशे ( १।७३ ) । शरीरस्वपञ्चप्राणाः; 'प्राणो-  
ऽपानः समानश्चोदानव्यानी च वायवः । शरीरस्था  
इमे'—इत्यमरः । 'हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभि-  
संस्थितः । उदानः कण्ठदेशे च व्यानः सर्वशरीरगः' ।  
बहुवचनात्तोऽयं शब्दः । १३४

प्राणाविनायः पुं. [ प्राणानामधिनायः ] पतिः; जगत्यतिः;  
यमः । ४९७

प्राणिद्यूतम् क्ली. [ प्राणिभिर्मेपादिभिः कृतं द्यूतमिति ।  
मध्यपदलोपी समासः ] पणपूर्वकमेपकुक्कुटादियुद्धं;  
समाह्वयः; साह्वयः । ७९०

प्राणी [ न् ] त्रि. [ प्राणाः सन्त्यस्येति । प्राण+अत्  
इनिठनी' इति इनि ] प्राणविशिष्टः; मनुष्यादिः;  
चेतनः; जन्मी; जन्तुः; जन्तुः; शरीरी; 'कर्मात्मनां  
च देवानां सोऽमुजत् प्राणिनां प्रभुः । साध्यानां च गणं  
सूक्ष्मं यज्ञं चैव सनातनम्'—इति मनुः ( १।२२ ) । ८६३  
प्रातः [ र् ] अव्य. [ प्राततीति, प्र+अत्+प्राततेररन्'  
इति अरन् ] प्रभातं; प्रगे; सूर्योदयाववित्रिमूर्हत्कालः;  
'प्रातः कालो मुहूर्तस्त्रीन् सङ्गवस्तावदेव तु'—इति  
तिथ्यादितस्त्वम् । 'प्रयता प्रातरन्वेतु सायं प्रत्युदश्रजेदपि'  
इति रघो ( १।९० ) । १११

प्रातिहारकः पुं. [ प्रतिहारक एव । स्वार्थे अण् ] प्रातिहारः;  
प्रातिहारिकः; मालाकारः; मालिकः । 'मायाकारः,

मायिकः—इति अमरमतेऽर्थः । ५८९

प्रातिहारिकः पुं. [ प्रतिहारः प्रतिहरणं प्रापणम् इत्यर्थः, तत् प्रयोजनमस्मेति । प्रतिहारः+‘प्रयोजनम्’ इति ठक् ] प्रातिहारकः; प्रातिहारः; मालाकारः; मालिकः । ५८९  
 प्राथमकल्पिकः पुं. [ प्रथमकल्पः आचारम्भः प्रयोजनं यस्य । ‘प्रयोजनम्’ इति ठक् । यद्वा प्रथमकल्पमधीते इति, ‘विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यमिति’ ठक् ] शैलः; प्रथमारव्ववेदाध्ययनः; प्रथमं शिक्षणीयं कल्पं शास्त्र-मधीते यः । ४९०

प्रादुः [ स् ] अव्य. [ प्रात्तीति, प्र+अद्+बाहुलकाददेर-प्सुसिप्रत्ययः ] प्राकाश्यः; प्रकाशः; सम्भाव्यः; नाम; स्फुटवर्तः; आविः; यया—प्रादुरासीत्, आविर्भूतः । ‘ज्यानिनादमय गृह्णती तयोः प्रादुरास बहुलधापाच्छविः । ताडका चलकपालकुण्डला कालिकेय निविडा वलाकिनी’—इति रघो (११११५) वृत्तिः । ८८१

प्रादेशः पुं. [ प्रदिश्यते इति, प्र+दिश्+‘हलर’ति’ घब्, ‘उपसर्गस्य घभि’ इति दीर्घः ] तर्जनीसहित-विस्तृताङ्गुष्ठः; ‘प्रमाणतो भीमसेनः प्रादेशेनावधिको-ऽर्जुनात्’—इति महाभारते (५।५१।१९) । [ भवेद्य एव, स्वार्थे अण् ] देशमात्रम्; ‘प्रादेशो देशभागे च तर्जन्यङ्गु-ष्ठारम्भिते’—इति मेदिनी । ‘अङ्गुष्ठस्य प्रदेशिन्या व्याप्तः प्रादेश उच्यते’—इति देवीपुराणम् । ५३८

प्रादेशश्च क्ली. [ प्र+आ+दिश्+ल्युट् ] दानम् । ४१९  
 प्राध्वः त्रि. [ प्रगतोऽध्वानमिति । ‘उपसर्गादध्वनः’ इति अच् ] प्रह्वः; बन्धः; ‘ततः शक्ति गदां खड्गं धनुश्च भरतर्षभः । प्राध्वं कृत्वा नमश्चक्रे कुवेराय वृकोदरः’—इति महाभारते (३।१६२।३७) । बहुद्वरगामिरथादिः; द्वरपथः; अव्य. [ प्राध्वनतीति । प्र+आ+ध्वन्+उम् ] अनुकूलम्; ‘सभाजने मे भुजमूर्ध्वबाहुः सव्येतरं प्राध्वमितः प्रयुङ्क्ते’—इति रघो (१३।४३) । ८३९

प्रान्तरम् क्ली. [ प्रकृष्टमन्तरमवकाशो व्यवधानं वा यत्र ] द्वरशून्योऽध्वा; छायातरुजलादिरहिते पथि प्रान्तरे; [ द्वरं शून्यो द्वरशून्यः द्वरवकाशो शून्यश्चेति वा द्वरशून्यो जलादिवर्जितत्वात् । ईदृक् योऽध्वा स प्रान्तरम् । प्रकृष्टमन्तरं व्यवधानमवकाशो वा अत्रेति ] ‘ह्रदे गर्ते प्रान्तरे च प्रासादात् पर्वतादपि । पतिष्यन्ति मरिष्यन्ति मनुजा मदविह्वलाः’—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१।६४) ।

विपिनं; कोटरम् । २६१

प्रादुर्गणः पुं. [ प्रापणाप्यते इति, प्र+आ+पण् व्यवहारे+‘प्राङ्ङि पणिकयः’ इति किकन् ] पण्यविक्रयी; ‘आढ्या-दिव प्रापणिकादजस्रं जग्राह रत्नान्यमितानि लोकः’—इति भाष्ये (४।११) । ५७१

प्राप्तः त्रि. [ प्र+आप्+क्त ] उचितः; युक्तः; न्याय्यः; औपयिकः; प्रस्थापितः; प्रणिहितः; लब्धः; विन्नः; भावितः; आसादितः; भूतः; उत्पन्नः; समुपस्थितः; ‘एतस्मिन्नेनसि प्राप्ते वसित्वा गर्दभाजिनम् । सप्तागारा-द्वरेऽद्भुतं स्वकर्मं परिकीर्तयन्’—इति मनुः (११।१२२) । ७४६

प्राप्तस्त्वः त्रि. [ प्राप्तं रूपं येन ] पण्डितः; मनोज्ञः; रूपवान् । ३३२

प्राभूतम् क्ली. [ प्राभ्रियते स्मेति । प्र+आ+भृ+क्त ] उपढीकनं; प्राभूतकं; कौशलिका; ‘तं दत्तप्राभूतं दूतं स समान्य व्यसर्जयत्’—इति कथासरित्सागरे (१७। १६४) । ४३४

प्रामाणिकः त्रि. [ प्रमाणादागतः । प्रमाण+ठक् ] शास्त्र-सिद्धः; हेतुकः; मर्यादाहं; शास्त्रज्ञः; परिच्छेदकः; प्रमाणकर्ता । ५३६

प्रायः पुं. [ प्रकृष्टमयनमिति । प्र+अय्+घब्, यद्वा प्र+इ+‘एरच्’ इत्यच् ] मरणार्थमनशनम्; ‘अहं वः प्रति-जानामि न गमिष्यामहं पुरीम् । इहैव प्रायनासिष्ये श्रेयो मरणमेव च’—इति रामायणे (४।५३।१२) । मरणं; तुल्यं; बाहुल्यम्; ‘तस्कराः पण्डका मूर्खाः सुखप्राप्तवनास्तथा । लिङ्गिनश्छन्नकामाद्या आसां प्रायेण बल्लभाः’—इति साहित्यदर्पणे (३।१११) (आसां वैश्यानाम्) । वयः; पापं; तपः; क्ली. प्रवेशः; युद्धम्; ‘उपज्येष्ठे वरुधे गभस्ती प्राये प्राये जिगीवांसः स्याम’—इति ऋग्वेदे (२।१८।८) । ‘किञ्च प्राये प्राये सोमपानार्थमिन्द्रस्य यज्ञशालायां प्रवेशे प्रवेशे जिगीवांसः शत्रूणां जेतारो भवेम । यद्वा प्राये प्राये प्रकर्वेण इयते गम्यते योद्वृभिरिति प्रायं युद्धम् । ‘तस्मिन् युद्धे जिगी-वांसः शत्रून् जितवन्तो भवेम’—इति तद्भाष्ये सायणा-चार्यः । त्रि. गमकः; ‘प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य ज्ञप्तिप्रायं प्रकल्पयेत् । ज्ञातिभ्यः सक्तं दत्त्वा दान्यध्वानपि भोज-येत्’—इति मनुः (३।२६४) । ‘तदनु हस्तां प्रक्षाल्याचम्य

ज्ञातिप्रायमन्नं कुर्यात् । ज्ञातीन् प्रैति गच्छतीति ज्ञातिप्रायं कर्मण्यण् । ज्ञातीन् भोजयेदित्यर्थः—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । प्रायः [स्] अव्य. [प्र+अय् गती+असुन्] वाहुल्यम्; 'ततोऽहं शर्ववर्मा च ज्ञातवन्ती क्रमेण ताम् । अत्रान्तरे स च प्रायः पर्यहीयत वासरः'—इति कयासरित्सागरे (६।१२३) । ७६०

प्रार्थनम् क्ली. [प्र+अर्थ्+त्युट्] प्रकर्षेण याचनं; याचना; अभिशस्तिः; याचना; अर्थना; प्रार्थना; 'युगक्षयकृता धर्माः प्रार्थनानि विकुर्वते । एतत् कलियुगं नाम अचिराद्यत् प्रवर्तते'—इति महाभारते (३।१४९। ३७) । ३६०

प्रार्थना स्त्री. [प्र+अय्+णिष्+युच्] प्रकर्षेण याचनम्; 'सन्तो दिग् जलमाकाशं गीरन्नं प्रार्थना विषम् । श्राद्धस्य ग्राहणः कालः कथं वा यक्ष ! मन्यसे'—इति महाभारते (३।३१२।८१) । ३६०

प्रालम्बकम् क्ली. [प्रालम्बते इति, प्र+आ+लवि अवसंसने+अच्, प्रालम्ब+सर्जायां कन्] कण्ठाद् ऋजुलम्बमानं माल्यं; प्रालम्बं; प्रालम्बिका; स्वर्णरचितललन्तिका; सुवर्णहारः । ५५३

प्रालेयम् क्ली. [प्रकर्षेण लीयन्ते लीना भवन्ति पदार्था अत्रेति । प्रलयो हिमालयस्तत आगतम् । प्रलय+अण् । 'केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः' इति यस्येया-वेक्षः ] हिमम्; 'नरनारायणी चैव चेरतुस्तप उत्तमम् । प्रालेयाद्रि समागत्य तीर्थे बदरिकाश्रमे'—इति देवीभागवते (४।५।१३) । ६५०

प्रालेयांशुः पुं. [प्रालेयानि हिमानि तद्वत् शीता वा अंशवो यस्य] चन्द्रः; 'इत्थं नारीर्घटयितुमलङ्कामिभिः काममासन्, प्रालेयांशोः सपदि रुचयः शान्तमानान्तरायाः'—इति माघे (९।८७) । ४२

प्रावरणम् क्ली. [प्रावृणोत्यनेन गात्रमिति । प्र+आ+वृ+करणे ल्युट्] उत्तरीयवस्त्रं; प्रच्छादनं; संव्यानम्; उत्तरीयकम्; 'बन्वकीपादमुद्राङ्कं चारुप्रावरणादि सः । गीरवाहान् दुराचारैः सचिवान् पर्यधापयत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।६७४) । प्रकृष्टावरणम् । ५४६

प्रावृट् [प्] स्त्री. [प्रकर्षेण आ सम्यक् प्रकारेण च वर्धतीति । प्र+आ+वृष्+निवप्] प्रावर्धत्यत्रेति अधिकरणे निवप् वा । यद्वा वर्धनमिति वृट्, प्रकृष्टा-वृट् ।

'नहि वृत्तिवृषीति' पूर्वपदस्य दीर्घः ] वर्षाकालः; श्रावण-भाद्रमासी; 'अव्यास्य चाम्भःपूपतोक्षितानि, शैलेय-गन्धीनि शिलातलानि । कलापिनां प्रावृषि पश्य नृत्यं, कान्तासु गोवर्द्धनकन्दरासु'—इति रघो (६।५१) । ११३

प्रासः पुं. [प्रास्यते क्षिप्यते इति । प्र+अस्+हलश्च इति घञ्] कुन्तास्त्रम्; प्रासकः; 'गदाभिरसिभिः प्रासैर्वाणैश्चानतपर्वभिः'—इति महाभारते (६।६७। २) । 'प्रासास्त्रन्तु चतुर्हस्तं दण्डबुध्नं धुराननम् ।' 'प्रासस्तु सप्तहस्तः स्यादौन्नत्येन तु वैणवः । लोह-शीर्षस्तीक्ष्णपादः कौशेयस्तवकाञ्चितः । आकर्षश्च विकर्षश्च धूनं वेधनं तथा । चतस्र एता गतय उक्ताः प्रासं समाश्रिताः ।' ४७१

प्रासादः पुं. [प्रसीदन्त्यस्मिन्निति । प्र+सद्+हलश्च इत्यधिकरणे घञ्] । 'उपसर्गस्य घञ्यमतुष्ये बहुलम्' इति उपसर्गस्य दीर्घः ] देवगृहं; राजगृहम्; 'देवभूमजां गृहम्'—इत्यमरः । 'इत्युक्त्वा सचिवान् राजा कल्पयित्वा सुरक्षकान् । कारयित्वाथ प्रासादं सप्तभूमिकमुत्तमम्'—इति देवीभागवते (२।१।४२) । २९३

प्रियः त्रि. [प्रीणातीति, प्री+इगुपवज्ञाप्रीकिरः कः] इति क ] हृद्यः; 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यम-प्रियम् । प्रियं च नानूतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः'—इति महाभारते । 'न हि कस्य प्रियः को वा विप्रियो वा जगत्त्रये । काले कार्पवशात् सर्वे भवन्त्येवाप्रियाः प्रियाः'—इति श्रीकृष्णजन्मखण्डे ५ अध्याये । पुं. भर्ता; 'प्रणमति पश्यति चुम्बति संदिलप्यति पुलकमुकुलितैरङ्गैः । प्रियसङ्गाय स्फुरितां वियोगिनी वामवाहुलताम्'—इति आर्यासप्तशत्वाम् (३७७) ।

जामाता; 'राजत्विक्स्नातकगुरुन् प्रियश्चक्षुरमातुलान् । अर्ह्येन्मवुपकण्ठं परिसंवत्सरात् पुनः'—इति मनुः (३।११९) । कार्तिकेयः; 'अमोघस्त्वनघो रीद्रः प्रियश्चन्द्राननस्तथा'—इति महाभारते (२।२३।५) मृगविशेषः; ऋद्धिनामोषघम् । ६८९

प्रियङ्गुः स्त्री. [प्रियं गच्छतीति । प्रिय+गम्+मृग्य्वादित्वात् कुप्रत्ययेन सावुः] सुगन्धिवृक्षविशेषः; श्यामा; महिलाह्वया; लता; गोवन्दी; गुन्द्रा; फलिनी; फली; विष्वक्सेना; गन्धफली; कारम्मा;

प्रियकः; प्रियवल्ली; फलप्रिया; गौरी; यूता; कङ्गुः; कङ्गुनीः भङ्गुरा; गौरवल्ली; शुभगा; पर्णभेदिनी; शुभा; पीता; मङ्गल्या; श्रेयसी; 'वामे चक्रगदाघरः स भगवान् क्रोडो प्रियङ्गोस्तले । हस्तोद्यच्छुकशालि- मञ्जरिकमा देव्यां धरण्या सह'—इति महागणपति- तोत्रे (१०)। कङ्गुः (५८२); राजिका; पिप्पली; कंदुकी । १९३

प्रियवाक् त्रि. [ प्रिया हृद्या वाक् वाणी यस्य ] वदान्यः; कामधुकः; दानवीरः । ३६६

प्रियवाग्दानशीलः त्रि. [ प्रियायाः वाचः दानस्य शीलम् अस्य ] मनोऽभिलषितवचनमुच्चवार्यं तत्प्रपूरकः; वदान्यः; वाञ्छाप्रपूरकः । ३६६

प्रियं वायमम् क्ली. [ प्रियं मनोज्ञं वाक्यम् उक्तिः ] हृदय- ज्ञमं; चटुः; चाटु । १४६

प्रीतिः स्त्री. [ प्रीव् तर्पणे+भावे क्तिन् ] तृप्तिः; मृतः; प्रमदः; हर्षः; प्रमोदः; आमोदः; सम्मदः; आनन्दयुः; आनन्दः; शर्मः; सातं; सुखं; कामपत्नी; विष्कम्भादि- सप्तविंशतियोगान्तर्गतद्वितीययोगः; 'प्रसूतिकाले यदि प्रीतियोगो नरो ह्यरोगः सुखवान् विनोदी । रक्तानु- रक्तो विदुषां प्रपन्नः सम्प्राप्तितो यच्छति वित्तमेव'— इति कोष्ठीप्रदीपः । प्रेम (७०६) । १२३

प्रेक्षा स्त्री. [ प्रकर्षेण ईक्ष्यते यथेति । प्र+ईक्ष्+गुरोश्च हलः ] इति अ, टाप् । प्र+ईक्ष्+भावे अ टाप् वा ] ईक्षणम्; 'यत्सेवया चरणपद्मविक्ररेणुं, सद्यः क्षता- खिलमलं प्रतिलम्बशीलम् । न श्रीविरक्तमपि मां विजहाति यस्याः प्रेक्षालवार्यं हतरे नियमान् वहन्ति'— इति भागवते (३।१६।७) । प्रजा (३३४); 'सा तस्मै सर्वमाचष्ट यवक्रीभाषितं शुभा । प्रयुक्तं च यवक्रीतं प्रेक्षापूर्वं तथात्मनाम्—इति महाभारते (३।१३६।८) । नृत्येक्षणम्; 'प्रतिषिद्धापि चेद्या तु मद्यमम्युदयेष्वपि । प्रेक्षासमाजं गच्छेद्या सा दण्ड्या कृष्णलानि षट्'—इति मनुः (१।८४) । शाखा; शोभा; प्रेक्षा क्षिपन्तं हरितोपलादेः, सन्ध्याभ्रनीवेहहृत्कममूद्धनः । रत्नो- दधावोषधिसीमनस्यवनेत्रजो वेणुभुजाङ्घ्रिपाङ्घ्रे !—इति भागवते (३।८।२४) । 'हरितोपलात्रेभैरकत- शिलामयपर्वतस्य प्रेक्षां शोभां क्षिपन्तं स्वलावण्याति- शयेन तिरस्कुर्वन्तम्'—इति तट्टीकायां स्वामी । ९५

प्रेक्षा स्त्री. [ प्रेक्ष्यते गम्यतेऽनयेति । प्र+इक्षि गतौ+ करणे घञ्+टाप् ] दोला; प्रेक्षोलनम् । ७६३

प्रेक्षितम् त्रि. [ प्र+इक्षि गतौ+क्त ] कम्पितं; दोलितं; तरलितं; लुलितं; घृतं; चलितं; घृतं; वेलितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेक्षोलनम् क्ली. [ प्रेक्षोल्यते चलयतेऽनेनेति । प्रेक्षोल+ करणे ल्युट् ] दोला; प्रेक्षा; [ भावे ल्युट् ] कम्पनम्; 'विरचनप्रेक्षोलनाजीर्णगर्भशातनप्रभृतिभिर्विशेषैर्बन्धना- न्मुच्यते गर्भः फलमिव वृन्तबन्धनादभिघातविशेषैः— इति सुश्रुतः । ७६३

प्रेक्षोलितम् त्रि. [ प्रेक्षोल+क्त ] दोलितं; तरलितं; लुलितं; प्रेक्षितं; घृतं; चलितं; कम्पितं; घृतं; वेलितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेतः पुं. [ प्र+इ गतौ+क्त ] नरकह्यप्राणी; भूतमेदः; मृतः (६२९); 'आचार्ये तु सल्लु प्रेते गुह्यपुत्रे गुणान्विते । गुह्यारे सपिण्डे या गुह्यवद् वृत्तिमाचरेत्'—इति मनुः (२।२४७) । ६२५

प्रेतपतिः पुं. [ प्रेतानां पतिः ] यमः; प्रेताधिपः; प्रेतेशः; प्रेतेश्वरः, प्रेतराजः; 'दण्डः प्रेतपतेः क्षातिर्देवसेनापते- स्तथा । अन्येषां चैव देवानामायुधानि स विश्वरुत् । चकार तेजसा भानोर्भासुरापरिखान्तये'—मार्कण्डेये (१०।८।४) । ७१

प्रेत्य अव्य. [ प्र+इ+क्त्वा, ल्यप् ] लोकान्तरम्; अमृतः; 'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः । इह कीर्ति- भवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्'—इति मनुः (२।१९) । ८७७

प्रेष्ठः त्रि. [ अयमेवामतिशयेन प्रिय इति । प्रिय+इष्ठन्, प्रादेशः ] अतिशयप्रियः; प्रेरान् । ६८९

प्रेष्यः त्रि. [ प्र+ईष्+कर्मणि ष्यत् ] दासः; सेवकः; 'प्रेष्यो ग्रामस्य राज्ञश्च कुनस्त्री श्यावदन्तकः'—इति मनुः (३।१५३) । प्रेरणीयः । ३६९

प्रेष्या स्त्री. [ प्र+ईष्+ण्यत्+टाप् ] दासी; सेविका; पारिवारिका । ४९१

प्रेष्यः पुं. [ प्र+इष्+कर्मणि ष्यत्, 'प्रदूहोढोढयेष्येषु' इति वृद्धिः ] प्रेष्यः । ३६९

प्रोक्षितम् त्रि. [ प्र+उक्ष्+क्त ] निहतं; सिकतं; यज्ञार्थं मन्त्रैः संस्कृतमांसादि; 'भक्षयेत् प्रोक्षितं मांसं सकृद्

ब्राह्मणकाम्यया । देवे नियुक्तः श्राद्धे वा गिद्यधे कु  
विकर्जेयेत्—इति महाभारते । 'आरण्याः सर्वदेवत्याः  
प्रोक्षिताः सर्वशो मृगाः । जगस्थेन पुरा राघ्नन् !  
मृगया येन पूज्यते—इति तिथ्यादितस्त्वम् । ४१७

श्रीः पुं.—प्ली. [ प्रकृते इति, प्रु गती+ 'तियपृष्ठगूथयूथ-  
प्रोथाः' इति थक्, निपातनाद् गुणः । यद्वा प्रोयते इति,  
प्रोय पर्याप्ती+ 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ ]  
अध्वनासिका; 'रिरसयिषति भ्रूयः शष्यमग्रे विकीर्णं  
पटुतरथपलीष्ठः प्रस्फुरत्प्रोथमश्वः—इति माघे (११।  
११) । शूकरनासिका; पुं. कटी; शाटकः; स्त्रीगर्भः;  
गतः; भीषणः; स्फिक्; अश्वमुखम्; त्रि. अध्वगः;  
प्रथितः; स्थापितः । ४४१

श्रीः पुं. [ प्रकृष्ट ओष्ठोऽप्येति । 'श्रोत्वोष्ठयोः समासे  
वा' इति वा वृद्धिः ] प्रोष्ठीमत्स्यः । ६५८

श्रीः स्त्री. पुं. [ प्रकृष्ट ओष्ठो यस्याः । प्रोष्ठ +  
नासिकोदरोऽप्येति, जातेरिति वा झीष् ] मत्स्यभेदः;  
श्रीः; शफरी; शफरः; श्वेतकोलः । ६५८

श्रीः त्रि. [ प्रोष्ठते स्मेति । प्र+यह्+क्त । सम्प्रसारणम्,  
'प्राद्धोढोढयेष्वेषु' इति वृद्धिः ] वृद्धितं; प्रवृद्धम्;  
एधितम्; 'त्वत्सम्पर्कात् पुलकितमिव श्रीःपुष्पैः कदम्बैः—  
इति मेघदूते (२७) । प्रगल्भः (३८६); 'प्रासातिमात्र-  
चटुलैः स्मरतः सुनेत्रैः प्रीढप्रिया नयनदिग्भ्रमचेष्टितानि—  
इति रघौ (१।५८) । निपुणः; 'इक्षितभाः पुरुश्रीः  
एकारामाश्च सात्त्वताः—इति भागवते (३।२।९) ।  
प्रकर्षेण ऊढः । २६९; ४८३ ।

प्लवः पुं. [ प्लु+ 'ऋदोरप्' इत्यप् ] मेलः; उडुपः; तल्पः;  
तल्ली; [ प्लूयतेऽनेनेति, 'करणे अप्' ] 'प्लवा ह्येते  
अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म । एतच्छ्रेयो  
येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति—  
इति मुण्डकोपनिषदि (१।२।७) । प्लवनम्; 'सागरा-  
नूपविपुलां प्रागुदक्प्लवशीतलाम् । सर्वतोऽधिगम्य-  
स्थामभेद्यां त्रिवशैरपि—इति हरिवंशे (१२।१०१) ।  
[ प्लवते सन्तरीतीति । प्लु+अच् ] भेकः; अविः;  
श्वपचः; कपिः; जलकाकः; 'प्लवानामिक्षुरसासवः—  
इति सुश्रुते (१।४६) । कुलकः; प्रवणः; पर्कटीद्रुमः;  
कारण्डवविहगः; शब्दः; प्रतिगतिः; प्रेरणः; शवुः;  
जलान्तरः; पलवः; जलकुक्कुटः; 'कलविकू प्लवं हंसं

अश्वत्थं आमकुक्कुटम् । सारसं रज्जुवालं च दात्युह  
धुकसारिके—इति मनुः (५।१२) । वकविशेषः;  
'श्याङ्गहंसा नल्पहाः प्लवाः कारण्डवाः परे । तथ  
पुंस्कोकिलाः क्रीञ्चा विसंशा भ्रेजिरे दिशः—इति  
रामायणे (२।१०३।४३) । 'प्लवाः वकविशेषाः  
—इति तट्टीकायां रामानुजः । जलचरपक्षिमात्रम्;  
'हंससारसकाचाक्षवकक्रीञ्चसरारिकाः । नन्दीमुखे  
सकादम्बा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः । प्लवन्ते सलिले  
यस्मादेते तस्मात् प्लवाः स्मृताः ।' ६७१

प्लवङ्गः पुं. [ प्लवते इवेति । प्लु+अच् । ततः स्वाद्यं  
संज्ञायां वा कन् ] चण्डालः; श्वपचः; भेकः (६६२);  
मण्डूकः; खड्गधारादिनतकः; केलकः; केकलः; नर्तुः;  
केलिकोपः; कलायनः; सन्तरणोपजीवी; 'गायन  
नतकाश्चैव प्लवका वादकास्तथा । कथका योधकाश्चैव  
राजब्राह्मन्ति केतनम्—इति महाभारते (१३।२३।१५)  
वानरः; प्लक्षः । ५९८

प्लवगः पुं. [ प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति । गम्+  
'अन्वेष्वपि दृश्यते' ति ड ] भेकः; सूर्यसारथिः;  
प्लवपत्नी; शिरीषवृक्षः; वानरः (२३१); 'स सेत्  
बन्धयामास प्लवगैर्लवणाम्भसि । रसातलादिवोन्मग  
द्येषं स्वप्नाय शार्ङ्गणः—इति रघौ (१।२।७०) । ६६२

प्लवङ्गः पुं. [ प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति । गम्+  
गमश्च इति खच्, 'सच्च डिद्वा वाच्य' इति डित्, डित्वात्  
टेलोपः, मुमागमः ] वानरः; 'प्लवङ्गा वृद्धिचका दंशा  
मशकाश्चैव कानने । सरीसृपाश्च कीटाश्च मामूवन्  
गहने तव—इति रामायणे (२।२।१८) । 'प्लवङ्गा  
वानराः—इति तट्टीकायां रामानुजः । मृगः; प्लक्ष-  
वृक्षः । २३१

प्लवङ्गमः पुं. [ प्लवेन गच्छतीति । प्लय+गम्+  
गमश्च इति खच्, मुमागमः ] वानरः; 'एष्यन्ति प्रेषितास्तत्र  
रामदूताः प्लवङ्गमाः । आरुपेया राममहिषी त्वया तेम्यो  
विहङ्गम !—इति रामायणे (४।६२।११) । (६६२)  
भेकः; मण्डूकः; वर्षामूः; दर्दुरः । प्लुतगतिपुक्ते त्रि. ।  
२३१

प्लाः स्त्री. [ प्ला+भावे क्विप् ] भक्षपम्; अक्षन्त्या;  
बुभुक्षा; जिघत्सा; क्षुधा । ३६१

प्लातः त्रि. [ प्ला+क्त ] बुभुक्षितः; भक्षितम् । ३६०

फ

फटः पुं.- स्त्री. [ स्फुट् विकसने+पचाश्च् पृषोदरादिः ]

फणा; फणं; फटा; फणः। ६४१

फटा स्त्री. [ फट+स्त्रियां टाप् ] फणा; फणं; फणः;

फटः; फटी; 'निर्विदेषापि सर्पेण कर्तव्या महती फटा।

विषं भवतु मा वास्तु फटाटोपो भयङ्करः'—इति

पञ्चतन्त्रे (३।८३)। दम्भः; कितवः; 'स्यात्पवर्ग-

द्वितीयादि फटायान्तु स्फटापि च'—इति भरतधृत-

सद्वभेदः। ६४१

फणः त्रि. [ फणति विस्तृति गच्छतीति। फण्+अच् ]

सर्पस्य विस्तृतमस्तकं; फणा; फणं; फटा; फटः;

स्फटः; स्फटा; दर्वी; भोगः; स्फुटः; स्फुटा; दर्विः;

फटी; 'परिखावं श्रुवाणे हि दुरात्मा वै महाजने। प्रकाश-

यति दोषास्तु सर्पः फणमिवोच्छ्रितम्'—इति महाभारते

(१२।११४।१५)। जन्मूर्ध्वस्थमर्मविशेषः; 'जन्मूर्ध्व

मर्माणि चतस्रो धमन्योऽष्टौ मातृकाः, द्वे कृकाटिके, द्वे

विषुरे, द्वौ फणौ, द्वावपाङ्गौ, द्वावावतो, द्वावुल्लेपी,

द्वौशङ्खाविका स्यपनी, पञ्च सीमन्ताश्चत्वारि शृङ्गाट-

कान्येकोऽधिपतिरिति'—इति सुश्रुते (३।६)। ६४१

फणभृत पुं. [ फणं विभर्तीति। भृ+क्विप्+तुक् ] फणवान्;

फणकरः; फणाकरः; फणघरः; फणाघरः; फणाभरः;

फणावान्; सर्पः; फणिः; फणो; 'व्याप्तव्योमतले मृगाङ्क-

घवले निधौ तदिङ्मण्डले, देव ! त्वद्यशसि प्रशान्ततमसि

प्रौढे जगत्प्रेयसि। कैलासन्ति महीभृतः फणभृतः शेषन्ति

पायोधयः, क्षीरोदन्ति सुरद्विपन्ति करिणो हंसन्ति

पुंस्कोकिलाः'—इति राजेन्द्रकण्ठपुरे (४)। ६४०

फणा स्त्री. [ फणति प्रसारसङ्कोचं गच्छतीति। फण् गतौ+

अच्+टाप् ] सर्पफटा; 'ज्वलति चलितेन्धनोऽग्निर्वि-

प्रकृतः पन्नगः फणां कुर्वते। तेजस्वी संक्षीभत् प्रायः

प्रतिपद्यते तेजः'—इति अभिज्ञानशाकुन्तले। ६४१

फलम् क्ली. [ फलतीति। फल् निष्पत्ती, फला विशरणे

वा+अच् ] व्युष्टिः; लाभः; 'शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति

च दाहुः कुतः फलमिहास्य। अथवा भवितव्यानां द्वाराणि

भवन्ति सर्वत्र'—इति शाकुन्तले। सस्यम्; 'फलानि

सर्वभक्ष्याश्च प्रदद्याद्द्वे दलेषु च। फलानि सर्वभक्ष्याश्च

परिशुष्काणि यानि च। तानि दक्षिणपार्श्वे तु भुञ्जान-

स्पोपकल्पयेत्'—इति सुश्रुतः। 'उदेति पूर्वः कुसुमं तलः

फलं, घनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः'—इति शकुन्तला-

याम्। फलकं; शारिफलकार्षे; 'वैदूर्यान् काञ्चन्यान्

दान्तान् फलैर्ज्योतीरसैः सह। कृष्णाक्षान् लोहिताक्षोश्च

निर्वत्स्नामि मनोरमान्'—इति महाभारते (४।१।२४)।

हेतुकृतं; जातीफलं; त्रिफला; 'हरीतकी चामरुकी

विभीतकमिदं त्रयम्। त्रिफला फलमित्युक्तं तच्च श्रेयं

फलत्रिकम्'—इति अथकपरिभाषायाम्। कदकोलं;

वाणाग्रम्; आवतं; फालः; दानं; मुष्कः; 'अफलो

भुज्यते मेघः सफलस्तु न भुज्यते'—इति रामायणे।

प्रमेयभेदः; 'आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनःप्रवृत्तिदोषत्रे-

त्यभावफलदुःखायदगास्तु प्रमेयम्'—इति गीतमसुधम्।

जीषस्य कर्मफलभुक्तिः; 'जीवः कर्मफलं मुञ्चते

आत्मा निर्लिप्त एव च। आत्मनः प्रतिविम्बश्च देही

जीवः स एव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते। वेदादीनां प्रयोजनम्;

'स तं प्राह फलं ब्रूहि वेदस्य च घनस्य च। दारश्रुतस्य

विप्रादेः स्वर्गापवर्गहेतवे।' 'अग्निहोत्रफला वेदा यत्-

भुक्तफलं घनम्। रतिपुत्रफला दाराः शीलवृत्तफलं

श्रुतम्'—इति बह्विपुराणे। प. कृतजवृक्षः। ७७६

फलकम् क्ली.-पुं. [ फल+संज्ञायां कन् ] चर्म; 'ठाल' इति

भाषा। 'शाङ्गं वाणं कृपाणं फलकमरिगदे पंथशङ्खी

सहस्रम्, त्रिशाणाः शस्त्रजालं मम ददतु हरेर्वैह्वयो-

मोहहानिम्'— इति विष्णुपादादिकेशान्तस्तोत्रे (३३)।

पुं. अस्त्रिषण्डः; नागकेशरं; काष्ठादिफलकम्; 'पाण्डु-

लेख्येन फलके भूमौ वा प्रथमं लिखेत्। ऊर्ध्विकं तु

संशोध्यं पश्चात् पत्रे निवेशयेत्'—इति व्यवहारतरये।

'भुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्भुतम्। काली करा-

लवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी'—इति मार्कण्डेये

(८७।५)। रजकपट्टम्; 'शात्मले फलके श्लक्ष्णे

निज्याद्वासांसि नेजकः। न च वासांसि वासोभिर्निर्हरेन्न

च वासयेत्'—इति मिताक्षरा। ४६०

फलवान् [ त् ] त्रि. [ फलमस्यास्तीति। फल+मतुप्, मस्य

व ] फलयुक्तवृक्षः। फलिनः; फली; फलितः; 'अपुण्याः

फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः। पुष्पिणः फलिनश्चैव

वृक्षास्तुभयतः स्मृताः'—इति सनुः (१।४७)। १७८

फलिनः त्रि. [ फलानि सन्त्यस्येति। फल+बहुलमन्यत्रामिं

इति इतच् ] फलवान्; पुं. पनसः; फलवान् वृक्षः। १७८



फलिनी स्त्री. [ फलमस्या अस्तीति । इनि, डीप् ] प्रियङ्गु-  
वृक्षः; 'प्रियङ्गुः फलिनी कान्ता लता च महिला ह्वया ।  
गुन्द्रा गुन्द्रफला श्यामा विष्वक्सेनाङ्गना प्रिया'—इति  
भावप्रकाशे । अग्निशिखावृक्षः । १९३

फली [ न् ] त्रि. [ फलमस्यातीति । फल+इनि ] फल-  
युक्तवृक्षादिः; फलवान्; फलिनः; फलितः; स्त्री.  
[ फलमस्त्यस्या इति । अशं आदित्वाद् अच् । स्त्रियां  
ङोन् ] प्रियङ्गुवृक्षः; 'विश्वक्सेना प्रिया कान्ता  
प्रियङ्गुः फलिनी फली'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।  
[ फलि+वा डीष् ] फलिमत्स्यः । १७८

फल्गु त्रि. [ फल् निष्पत्ती+ 'फलपाटिनमिमनिजनाम्'-  
इत्यु, गुणागमश्च ] असारम्; 'तरीषु तत्रत्यमफल्गु  
भाण्डं, सांयात्रिकानावपतोऽम्यनन्दत्'—इति माघे  
(३।७६) । निरर्थकम्; 'न फल्गुवा यैः प्रतिबोधनीयो  
राजा तु वीरैरिति नीतिशास्त्रम्'—इति देवीभागवते  
(५।१५।३२) । सामान्यं; क्षुद्रम्; 'अहस्तानि सहस्ता-  
नामपदानि चतुष्पदाम् । फल्गूनि तत्र महतां जीवो  
जीवस्य जीवनम्'—इति भागवते (१।१३।४७) ।  
स्त्री. गयास्यनदीभेदः; काकोदुम्बरिका; 'भद्रा मल्लपूः  
फल्गुः स्यात्काकोदुम्बरिका च सा'—इति वैद्यकरत्नमा-  
लयाम् । रेणुभेदः; मिथ्यावाक्यं; वसन्तर्तुः; 'फागु',  
'फाग' इति भाषा । ७७७

फाणितम् क्ली. [ फण् गती+णिच्+क्त ] अर्धावर्तिते-  
क्षुस्तः; 'फल्गुनीपूर्वसमये ब्राह्मणानामुपोषितः ।  
भक्ष्यान् फाणितसंयुक्तान् दत्त्वा सौभाग्यमृच्छति'—  
इति महाभारते (१३।६४।२३) । 'इक्षो रसस्तु यः  
पक्वः किञ्चिद् गाढो बहुद्रवः । स एवेक्षुविकारेषु ख्यातः  
फाणितसंज्ञया'—इति भावप्रकाशः । 'शिराहर्षेऽञ्जनं  
कुर्यात् फाणितं मधुसंयुतम्'—इति वैद्यके । 'फाणितं  
सक्तवः सर्पिर्दधिमण्डोऽल्लकाञ्जिकम् । तर्पणं मूत्र-  
कृच्छ्रमनुदावर्तहरं पिबेत्'—इति चरकः । ३२४

फाण्टम् त्रि. [ फण्यते स्मेति । फण गती+ 'क्षुब्धस्वान्त-  
ध्वान्तेति' निपातनात् साधु ] अनायासकृतं; कषायभेदः;  
'क्षिप्तोष्णतोये मृदितः फाण्ट इत्यभिधीयते । 'क्षुण्णद्रव्य-  
पले सम्यक् जलमुष्णं विनिःक्षिपेत् । पात्रे चतुःपलमिति  
ततस्तु स्त्रावयेज्जलम् । सोऽथ्यं चूर्णद्रवः फाण्टो भिषग्भि-  
रभिधीयते'—इति वैद्यकरिभाषा । 'स चौषधीभिः

फाण्टाभिः स्नात्वाद्भिः पावनैरपि'—ऋग्विधाने । ७७४  
फालः पुं. [ फल्यते विदार्यते क्षेत्रमनेनेति । फल्+करणे  
घञ् ] लाङ्गलस्यभूमिविदारकलीहः; फल्यते विशीर्यते  
भूमिरनेन सः; कृषिकः; कृषकः; फलं; कृषिका;  
फालं; कुशिकं; क्ली. [ फलाय सस्याय हितम्, फल्+  
अण् । यद्वा फल्यते विदीर्यते भूमिरनेनेति, फल्+घञ् ]  
हलोपकरणं; महादेवं; बलदेवं; कार्पासवस्त्रे त्रि. ।  
नवविषदिव्यान्तर्गताण्टमदिव्यम्; 'आयसं द्वादशपलघटितं  
फालमुच्यते । अष्टाङ्गुलं भवेद् दीर्घं चतुरङ्गुलविस्तरम्'-  
इति दिव्यतत्त्वम् । ५७५

फेनः पुं. [ स्फायते वद्धते इति । स्फाय्+ 'फेनमीनो' इति  
नक् फेशब्दादेशश्च ] हिण्डीरः; अविकफः; हिण्डिरः;  
समुद्रकफः; जलहासः; फेनकः; 'पयः फेननिभा शय्या  
दान्ता रुमपरिच्छदाः'—इति पुराणम् । 'वानीरं गगनं  
फेनमूनञ्च' दन्त्यनान्वितम् । आहुर्गगनमिच्छन्ति  
केचिन्मूर्द्धन्यणाचितम्'—इति भरतसुखलेखने । अमर-  
टीकायां रघुनाथचक्रवर्ती णान्तमप्याह, यथा—  
'हंसश्रेण्यो नदीतीरे निनदैः संप्रतीयिरे । यथा सारस्वता  
मन्त्रा अन्तरे फेण संगताः ।' 'मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भि-  
भिन्नान् द्विधा पश्य समुद्रफेनान्'—इति रघौ (१३।११) ।  
तरलद्रव्योपरि समुत्थितबुद्बुदाकारवस्तुमात्रम्; 'भोः  
फेनं पिबामि यमिमे वत्सा मातृणां स्तनान् पिबन्त  
उद्विगन्ति'—इति महाभारते (१।३।५२) । उषाद्रयस्य  
पुत्रः; 'उषाद्रथो महाराज फेनस्तस्य सुतोऽभवत्'  
—इति हरिवंशे (३।१२९) । ६६८

फेरः पुं. [ फे इति शब्दं राति ददतीति । फे+रा+क ]  
गोमायुः; शृगालः । २२९

फेरण्डः पुं. [ फे इत्यव्यवतशब्देन रण्डतीति । फे+रण्ड+  
अच् ] शृगालः; क्रोष्टा । २२९

फेरवः पुं. [ फे इति रवो यस्य ] शृगालः; 'नृत्यतां तरतां  
रक्ते नदतां चोत्सवाय सः' । शूराणां फेरवाणाञ्च  
भूतानाञ्चामवद्रणः'—इति कथासरित्सागरे (४७।५३) ।  
राक्षसः; त्रि. घूर्तः; हिंस्रः । २२९

फेशः पुं. [ फे इति शब्देन रीतीति । फे+श शब्दे+  
मितद्वादित्वाद् डु ] शृगालः; 'गृहेषु येष्वतिथयो  
नाचिताः सलिलैरपि । यदि निर्यान्ति ते नूनं फेरराज-  
गृहोपमाः'—इति भागवते (८।१६।७) । २२९

फेलिका स्त्री. [ फेलिरेव+स्वार्येक न्. टान् ] उच्छिष्टं;  
भुवतसमुज्झितं; फेली; फेलि; फेला; फेलकः;  
फेलम् । ३२६

व

वकः पुं. [ वङ्कते कुटिलीभवतीति । वकि+अच् । वृषोदरा-  
दित्वाद् वत्वं नलोपश्च ] पक्षिविशेषः; कङ्कः; द्वार-  
वलिभुक्; कक्षेः; शुक्लवायसः; दीर्घजङ्घः; बकोटः;  
गृहवलिप्रियः; निशैतः; शिखी; चन्द्रविहङ्गमः; तीर्थ-  
मेवी; तापसः; मीनघाती; मृषाध्यायी; निश्चलाङ्गः;  
दाम्भिकः; 'पश्य लक्ष्मण पम्पायां वकः परमधा-  
मिकः । शनैः शनैः पदं धत्ते जीवानां वधशङ्कया ।  
'शरारिवककाकाशच दात्यूहाः पवनापहः'—इति रत्ना-  
वली । पुष्पवृक्षविशेषः; शिववल्ली; पाशुपतः; एका-  
ष्टीलः; वसुः; वृकः; एकाष्टीला; वसुकः; वसूकः; वक-  
पुष्पः; शिवमल्ली; काकशीर्षः; स्थूलपुष्पः; शिवप्रियः;  
काकनामा; वसहट्टः; स्वपूरकः; रक्तपुष्पः; मुनितरुः;  
अगस्तिः; वङ्गसेनकः; अगस्त्यः; शीघ्रपुष्पः; मुनि-  
द्रुमः; यणारिः; दीर्घफलकः; वक्रपुष्पः; सुरप्रियः ।  
'वकः पाशुपतस्त्रैव शिवापीडश्च सुव्रतः । वसुकश्च  
शिवाङ्कश्च शिवेष्टः क्रमपूरकः । शिवमल्लः शिवा-  
ह्लादः शाम्भवो रविसंमितः । वकोऽतिशिशिरस्तक्तो  
मधुरो मधुगन्धकः । पित्तदाहकफरवासध्रमहारी च  
दीपनः'—इति राजनिर्घण्टः । २५०

बकोटः पुं. [ वकि+बाहुलकात् कोटच् प्रत्ययः ] वकः । २५०  
वत अव्य.—खेदः; निन्दा; विस्मयः; 'अहो वत महत्पापं  
कतुं व्यवसिता वयम्'—इति गीतासु । ८७८

वदरः पुं. [ वदति स्थिरीभवति, छिन्नेऽपि पुनः प्ररोहतीति ।  
वद्+वर ] कोलिवृक्षः । १९४

वदरिः स्त्री. [ वद्+बाहुलकादरि ] कोलिवृक्षः; वदरः;  
वदरवृक्षः । १९४

वदरी स्त्री. [ वदर+गौरादित्वाद् डीप्, वदरि+  
कृदिकारादिति पक्षे डीप् वा ] कोलिवृक्षः; सौवीरं;  
ककंबुः; कोलं; फेनिलं; कुवलं; घोण्टा; अजाप्रिया;  
कुहा; कोलिः; विषमः; भयकण्टकः; सौवीरकः;  
गुडफलः; बालेष्टः; फलशैशिरः; दृढबीजः; 'तस्मिन्  
स आश्रमे व्यासो वदरीवण्डमण्डिते'—इति भागवते

( १।७।३ ) । कार्पासी; कपिकच्छुः । १९४

वद्धम् त्रि. [ वध्यते स्म इति । वन्ध्+कर्मणि क्त ] वन्धन-  
युक्तं; सन्दानितं; मूर्णम्; उद्धितं; सन्धितं; सितं;  
निगडितं; नद्धं; कीलितं; यन्धितं; संयतम्; 'वर्णने  
यया पार्श्वेद्व एवाभिदृश्यते । तथा पापान्निगृह्णीयात्  
व्रतमेतद्धि वारुणम्'—इति मनुः ( ९।३०८ ) । ( ७४७ )  
पिनद्धम्; आमुवतम्; अपिनद्धम् । ३४०

वद्धभूमिफम् क्ली. [ वद्धा भूमिका भूमिरचना यस्य ]  
कुट्टिमं; वद्धमूः । २९४

वद्धमुष्टिकरः पुं. [ वद्धमुष्टिश्चासौ करः ] सप्रकोष्ठवद्ध-  
मुष्टिहस्तः; रत्निः; अरत्निभ्रमः । ५३६

वधिरः त्रि. [ वध्नाति कर्णमिति । वन्ध्+'इपिमदि-  
मुदीति' किरच् ] श्रवणेन्द्रियरहितः; श्रुतिशक्तिहीनः;  
एडः; कल्लः; श्रवणापटुः; उच्चैःश्रवाः; 'एवं कर्म-  
विशेषेण जायन्ते सद्विर्गहिताः । जडमूकान्वधिरा  
विकृताकृतयस्तथा'—इति मनुः ( ११।५२ ) । ६०९

वन्वो स्त्री. [ वन्ध्यते इति, वदि+इन्+ङीप्, वृषोदरादि-  
त्वेन वः ] प्रग्रहः; ग्रहकः; कारानिक्षिप्तः । ७५९

वन्धः पुं. [ वन्ध्+'हलश्चेति' घञ् ] वन्धनम्; आधिः;  
शरीरं; गुहादिवेष्टनं; षोडशप्रकाररतिवन्धाः; हठ-  
योगप्रदीपोक्ता योगसाधकवन्धाः । ५३०

वन्धकी स्त्री. [ वध्नाति मनः यत्र । वन्ध्+ङ्कुल, गौरादि-  
त्वाद् डीप् ] पुंश्चली; असती; कुलटा । ४९६

वन्धकीपुत्रः पुं.—असतीपुत्रः; पुंश्चलीसुतः । ५०१

वन्धनम् क्ली. [ वन्ध्+भावे ल्युट् । वध्यतेऽस्मिन् इति,  
अधिकरणे ल्युट् ] कारागारं; वन्धनस्थानम्; 'वसुदेवस्य  
देवक्यां जातो भोजेद्धवन्धने'—इति भागवते ( ३।२।२५ ) ।

वन्धनक्रिया; उद्दानं; कङ्कन; वन्धः; संयमनम्;  
'आपदामापतन्तीनां हितोऽप्यायाति हेतुताम् । मातु-  
जङ्घा हि वत्सस्य स्तम्भोभवति वन्धने'—इति हितो-  
पदेशे ( १।९५ ) । वधः; हिंसा; रज्जुः [ ध्यतेऽ-  
नयेति करणव्युत्पत्त्या ]; पुं. [ वन्ध्+कर्त्तरि ल्यु ]  
महादेवः; 'वन्धनो वन्धकर्ता च सुवन्धनविमोचनः'  
—इति महाभारते ( १३।१७।१०० ) । वन्धनकर्त्तरि त्रि. ।  
'वन्धनस्त्वसुरेन्द्राणां युधि शत्रुविनाशनः'—इति महा-  
भारते ( १३।१७।६१ ) । ६२६

वन्धनप्रत्ययः पुं. [ वन्धनाय प्रत्ययः, वन्धनस्य रज्ज्वादेः

बन्धुः संयमगार्थं धन्वनम् ] पाशः; गोलधन्वनयुता रज्जुः; गालाहिणी रज्जुः । ५९७

बन्धुः पुं. [ बन्ध् धन्वने + 'ध्वस्यस्निहिष्पीति' उ ] स्नेहेन मनो बध्नाति मः; सगोत्रः; बान्धवः; ज्ञातिः; स्वः; स्वजनः; बायाधः; गोत्रः; 'आत्मपितृष्वसुः पुत्राः आत्ममातृष्वसुः सुताः । आत्ममातुलपुत्राश्च विज्ञेया आत्मदान्धयाः । पितुः पितृष्वसुः पुत्राः पितुर्मातृष्वसुः सुताः । पितुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेयाः पितृवान्धवाः । मातुः पितृष्वसुः पुत्रा मातुर्मातृष्वसुः सुताः । मातुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेया मातृवान्धवाः—इति मिताक्षरा । बन्धूकः; अन्धर्व्यं बन्धुपुष्पमालयेति—इति अशोक वधे (२९) । मित्रम्; 'बन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्त- नृत्योपहारः—इति मेघदूते (३४) । भ्राता; 'अयानायाः प्रकृतयो मातृबन्धुनिवासिनम् । मौलैरानाययामा- सुमंरतं स्तम्भिताश्रुभिः—इति रघी (१२।१२) ।

५०९

बन्धुकः पुं. [ बन्ध् + उक् । यद्वा बन्धुर्व्यन्धूकवृक्ष एव । बन्धु + स्वार्थे कन् ] बन्धुकीपुत्रः; बन्धूकवृक्षः; बन्धु- जीवः । ५०५

बन्धुफी स्त्री.— बन्धुकी; पुंश्चली । ४९६

बन्धुकीपुत्रः पुं.— बन्धुकीपुत्रः । ५०१

बन्धुजीवः पुं. [ बन्धुरिव जीवयति रसादिनेति । बन्धु + जीव + अच् ] बन्धूकवृक्षः; 'वीक्ष्य वेदिमथ रक्तविन्दुभि- बन्धुजीवपृथुभिः प्रदूषिताम्—इति रघी (११।२५) । २०८

बन्धुरः त्रि. [ बन्ध् + उर ] नम्रः; रम्यम्; 'श्रेयः स्वयः स देयानमम विमलदृशो बन्धुरं सिन्धुरास्यः—इति महा- गणपतिस्तोत्रे (१५) । उन्नतानतम्; 'बध्नाति मे बन्धुरगान्धिं चक्षुर्वृष्टः शकुघानिव चित्रकूटः—इति रघी (१३।४७) । क्ली. मुकुटं; रयबन्धनम्; 'अन्ये छत्रं वरुणं च बन्धुरं च तयापरे । गन्धर्वा बहुसाहस्रास्ति- लक्षो व्यधमन् रयम्—इति महाभारते (३।३।३१) । 'द्वीपं द्विचक्रमेकाक्षं त्रिवेणुं पञ्चबन्धुरम्—इति भागवते (४।२६।१) । पुं. स्त्रीचिह्नं; तिलकलकं; बन्धूकः; बधिरः; हंसः; विडम्बः; ऋषनीषधः; बकः; विहङ्गः । ७६०

बन्धूकः पुं. [ बध्नाति सौन्दर्येण क्लृप्तमिति । बन्ध् + 'उल्लादयश्च' इति ऊक ] पुष्पवृक्षविशेषः; रक्तकः;

बन्धुजीवकः; बन्धुकः; बन्धुः; बन्धुलः; बन्धुजीवकः; बन्धुजीवः; बन्धूलिः; बन्धुरः; रक्तः; माध्याह्निकः; ओष्ठपुष्पः; अर्कवल्लभः; मध्यन्दिनः; रक्तपुष्पः; रागपुष्पः; हरिप्रियः; खडूपे क्ली. । 'बन्धूको बन्धुजीवे स्यात् खडूपे स्थान्नपुंसकम्—इति हेमचन्द्रः । २०८ बन्धुः त्रि. [ बन्ध् + यक् ] ऋतुप्राप्तावधिफलरहित- वृक्षादिः; अफलः; अवकेशी; विफलः; निष्फलः; 'सिक्तं स्वयमिव स्नेहाद् बन्धुमांश्रमपादपम्—इति रघी (१।७०) । बन्धनीयः; [ बन्ध् + कर्मणि यत् ] 'अबन्धुं यश्च बध्नाति बद्धं यश्च प्रमुञ्चति—इति याज्ञवल्क्ये (२।२।४६) । पुं. निवर्तितवारिः सेतुः; 'सेतुश्च द्विविधो ज्ञेयः खेयो बन्धुस्तथैव च । तोयप्रवर्तनात् खेयो बन्धुः स्यात्तन्निवर्तनात्—इति मिताक्षरा ७६० ।

बन्ध्या स्त्री. [ बन्ध् + 'अध्यादयश्च' इति यक् ] अपत्य- शून्यगीः; वशाः; बालाख्यगन्धद्रव्यम्; अप्रजस्त्री; 'रूपीदार्यवयोजन्मविद्यैवर्वयंश्रियादिभिः । सम्पन्नस्य गुणैः सर्वैश्चिन्ता बन्ध्यापतेरभूत्—इति भागवते ६। १४।१२) । 'बन्ध्याप्येऽधिवेद्याध्वे दशमे तु मृतप्रजा।—इति मनुः (१।८।१) । वृपलीविशेषः; 'बन्ध्या च वृषली ज्ञेया वृपली च मृतप्रजा । अपरा वृपली ज्ञेया कुमारी य रजस्वला—इति प्रायश्चित्तविवेकः । योनिरोग- विशेषः; 'उदावर्ता तया बन्ध्या विप्लुता च परिप्लुता । वातलां योनिजो रोगो वातदोषेण पञ्चधा । 'बला सिता सातिवला मधूकं वटस्य शुङ्गं गजकेशरं च । एतन्मधुक्षीरघृतेर्निपीय बन्ध्यां सुपुत्रं नियतं प्रसूते—इति भावप्रकाशः । २६९

बन्धुः त्रि. [ विभर्तीति, भृ + 'कुभ्रश्च' इति कु, द्वित्वञ्च ] पिङ्गलः; 'बन्धु बालारुणवभ्रुवल्कलं पयोधरोत्तेध- विशीर्णसंहतिः—इति कुमारे (५।८) । 'धूमधूमो वसागन्धी ज्वालावभ्रुशिरोरुहः—इति रघी (१५।१६) ।

७३६

बन्धुः पुं. [ विभर्ति भरति वा । भृ + 'कुभ्रश्च' इति कु, द्वित्वञ्च ] विष्णुः; 'रुद्रो बहुशिरा वभ्रुविश्वयोनिः शुचिभ्रवाः—इति महाभारते । नकुलः (८।१६); 'सञ्जायते महावक्रो मूषिको वभ्रुसन्निभः—इति मार्क- ष्ठेये (१५।९) । अग्निः; विशालः; मुनिविशेषः; देशभेदः; शितावरथाकः; खलतिः; शिवः; 'शुङ्गी

शृङ्गप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः— इति शिवसहस्र-  
नामकथने । (१३१४९१२६) । कपिलो वर्णः; तद्गुण-  
युक्ते त्रि । 'नाकामेत्कामतश्छायां वभ्रुणो दीक्षितस्य  
च । इति मनुः (४।१३०) । लोमपादसुतः; 'रोम-  
पादसुतो वभ्रुर्वभ्रोः कृतिरजायत—इति भागवते  
(९।२।४७) । देवावृधसुतः; 'वभ्रुदंवावृधसुतस्तयोः  
श्लोकौ पठन्त्यमू—इति भागवते (९।२।४९) । ययाति-  
पुत्रस्य द्रुह्योः सुतः; 'द्रुह्योश्च तनयो वभ्रुः सेमुस्तस्यात्म-  
जस्ततः— इति भागवते (९।२।१४४) । पञ्चगन्धर्व-  
पतिषु अन्यतमः; 'तत्रगन्धर्वपतयः पञ्च सूर्यं समप्रभाः ।  
शैलूपी ग्रामणीः शिक्षः शुको वभ्रुस्तथैव च—इति  
रामायणे (४।४।१।४२) । विश्वामित्रपुत्रभेदः; 'अक्षी-  
णश्च शकुन्तश्च वभ्रुः कालपयस्तथा—इति महाभारते  
(१३।४।५०) । विश्वगर्भस्य पुत्रः; स तु यादवा-  
नामन्यतमः; 'वसुर्वभ्रुः सुपेणश्च सभाक्षश्चैव वीर्यवान् ।  
यदुप्रवीरा विख्याता लोकपाला इवापरे—इति हरि-  
वंशे (९।४।४८) । 'आलप्यालमिदं वभ्रोर्यत्स दारा-  
नपाहरत्—इति माघे (२।४०) । स्त्री. कपिला  
गौः; 'स्रङ्गभादाय तरसा प्रलीनोडु णे निशि । अजानघ्र-  
हनन्वभ्रोः शिरः शार्दूलशङ्कया—इति भागवते (९।२।  
६) । २३

पलः पुं. [ बलते निरूपयति स्वेष्टमिति । बल्+अच् ।  
बलदेवपक्षे नामैकदेशग्रहणाच्चापि सिध्यति भीमादिवत् ]  
बलदेवः; 'पूष्णो ह्यपातयद् दन्तान् कलिङ्गस्य यथा  
बलः—इति भागवते (४।५।१९) । 'रेवती नाम  
तनयां रेवतस्य महीपतेः । उपयेमे बलस्तस्यां जज्ञाते  
निशठोल्मकौ—इति विष्णुपुराणे (५।२।५।१९) ।  
काकः (८०९); 'गृध्राः श्येना बलाः कङ्का वायसाश्च  
सहस्रशः—इति महाभारते (७।६।२५) । वरुणवृक्षः;  
वायुना प्रदत्तः कार्तिकेयानुवरभेदः; 'बलञ्चातिबल-  
ञ्चैव महावक्रौ महाबलौ । प्रददौ कार्तिकेयाय वायु-  
भंरतसत्तम्—इति महाभारते (९।४।५।४२) । राम-  
पुत्रस्य कुशस्यान्वये जातस्य पारियात्रस्य पुत्रविशेषः;  
'देवानीकस्ततोऽनीहः पारियात्रोऽय तत्सुतः । ततो बलः  
स्थलस्तस्माद्भ्रजनाभोऽङ्गसम्भवः—इति भागवते (९।  
१।२।२) । दनायुषः पुत्रविशेषः; 'दनायुषः पुनः पुत्रा-  
श्चत्वारोऽसुरपुङ्गवाः । विक्षयो बलवीरो च वृत्रश्चैव

महासुरः—इति महाभारते (१।६।५।३३) । मेघः;  
दैत्यविशेषः; 'आसीद् दैत्यो बलो नाम महाबलपराक्रमः ।  
देवगन्धर्वयक्षाणां चन्द्रेन्द्रभयकारकः—इति देवीपुराणे ।

२९

यलम् क्ली. [ बलते विपक्षान् हन्तीति । बल्+पचाद्यच् ]  
सैन्यम्; 'अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ।  
पर्याप्तन्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्—इति भग-  
वद्गीतायाम् (१।१०) । शुक्रम् (६३८); 'धातूणां  
यत्परं तेजस्तत् खल्वोजस्तदेव बलमित्युच्यते—इति  
सुश्रुतः । द्रविणं (७२३); तरः; सहः; शौर्यं; स्वामः;  
शुष्मं; शक्तिः; पराक्रमः; प्राणः; महः; क्षुष्मः;  
ऊर्जः; 'पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जञ्च यच्छति—  
इति मनुः (२।५५) । गन्धरसः; रूपं; वपुः; 'कीदृशो  
वै प्रभावोऽस्य किं बलं कः पराक्रमः—इति रामायणे  
(७।१।३३) । पल्लवं; रवतः; [ बलमस्यास्तीति ।  
बल+अर्श आद्यच् ] बलयुक्ते त्रि. । ४५७

बलक्षः पुं. [ बलतेः निवप्, बलम् अंक्षत्यस्मिन्, घञ् । अय-  
लक्षते इति बलक्षः, घञ्, अकारलोपः । अन्तःस्था-  
दिरपि ] भवलः; 'द्विरददन्तबलक्षमलक्षतस्फुरितभृङ्गभृ-  
गच्छविकेतकम्—इति माघे (६।३४) । ७३२

यलजम् क्ली. [ बलात् जातम् इति । यल+जन्+उ ]  
पुरदारः; क्षेत्रं; सस्यं; युद्धं; धान्यराशिः; 'त्वं समीरण  
इव प्रतीक्षितः कर्षकेण बलजान् पुपुषता—इति माघे  
(१।४।७) । बलजन्ये त्रि. । ३००

बलदेवः पुं. [ बलेन दीव्यतीति । बल+दिव्+अच् ]  
बलरामः; बलभद्रः; प्रलम्बधनः; अच्युताग्रजः;  
रेवतीरमणः; रामः; कामपालः; हलायुधः; नीलाम्बरः;  
रौहिण्यः; तालाङ्कः; मुसलीः; हली; सख्युर्ध्वणः;  
सीरपाणिः; कालिन्दीभेदनः; बलः; शक्तिमदपः; मधु-  
प्रियः; हलधरः; हलभृत्; हालभृत्; सौनन्द्यी; गुप्त-  
वरः; संवर्तकः; बली; 'बलदेवं द्विधाष्टं च शास्त्र-  
कुन्देन्दुसन्निभम् । वामे हलायुधधरं मुसलं दक्षिणे करे ।  
हालालोलं नीलवस्त्रं हेलावन्तं स्मरेत् परम् । 'शेषस्यां-  
शश्च नागस्य बलदेवो महाबलः—इति महाभारते  
(१।६।७।१५१) वायुः । २८

बलभद्रः पुं. [ बलं भद्रं श्रेष्ठमस्य, यद्वा बलमस्यास्तीति  
बलः, अर्श आद्यच् । यतो बलवानपि भद्रः सौम्यः ] बल-

देवः; अनन्तः; बलशाली; लोभः; गवयः । २८

बलवान् [त्] त्रि. [बलमस्यास्तीति । बल+मत्तुप्  
भस्य वः] बलविशिष्टः; मांसलः; अंशलः; वीर्यवान्;  
बली; अंसलः; 'आकाशात्तु विकुर्वाणात् सर्वगन्धवहः  
शुचिः । बलवान् जायते वायुः स वै स्पर्शगुणो मतः'  
—इति मनुः (१।७६) । ३८१

बलसूदनः पुं. [बलं तन्नाम्ना प्रसिद्धमसुरं सूदयतीति ।  
बल+सूद्+ल्यु] इन्द्रः; 'नोचेद्वज्रं गृहाणाशु युद्धाय  
यलसूदन !'—इति देवीभागवते (५।३।१३) ।  
विष्णुः । ५२

बलश्री स्त्री. [बलते इति, बल संवरणे, 'बलाकादयश्च'  
इति अक् । यद्वा बलेन अकतीति । बल+अक् कुटिल-  
गती+पचाद्यच्] वकजातिविशेषः; विषकण्ठिका;  
विषकण्ठी; बलाकी; कारायिका; लिङ्गलिका;  
शुष्काङ्गा; दीर्घकन्धरा; घमान्ता; कामुकी; श्येना;  
मेघानन्दा; जलाश्रया; कामवती । २५०

बलहृत् पुं. [बलेन हीयते इति] । बल+हा+वृन् ।  
यद्वा वारीणां बाहकः] मेघः; 'बलाहकच्छेदविभक्त-  
रागाम् अकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्'—इति कुमारे  
(१।४) । मुस्तकः; पर्वतः; दैत्यविशेषः; नागविशेषः;  
'कम्बलाश्वतरो नागी घृतराष्ट्रबलाहकी'—इति महा-  
भारते (२।१।९) । रमागर्भोद्भवः कल्किदेवपुत्रः;  
श्रीकृष्णरयाश्वविशेषः; 'स्यन्दनस्तु शतानन्दः सारथि-  
श्चास्य दारुकः । तुरङ्गाः शैव्यसुग्रीवमेघपुष्पबलाहकाः'  
—इति त्रिकाण्डशेषः । जयद्रयस्य भ्रातृविशेषः; 'जय-  
द्रयो नाम यदि श्रुतस्ते सीवीरराजः सुभगे ! स एषः ।  
तस्यापरे भ्रातरोऽधीनसन्त्वा बलाहकानीकविदारणा-  
द्याः'—इति महाभारते (२।२५।४।१२) । नदविशेषः;  
स तु लवणसमुद्रगामी; 'बलाहकश्च ऋषभश्चक्रो मनाक  
एव च । विनिविष्टाः प्रतिदिशं निमग्ना लवणाम्बुधिम्'  
—इति मात्स्ये (१२०।७२) । कुशद्वीपस्यपर्वतविशेषः;  
'बलाहकस्तृतीयस्तु जाल्यञ्जनमयो गिरिः'—इति  
मात्स्ये (१२१।५५) । तारापीडस्य राज्ञः स्वनाम-  
स्थातो बलाधिकारी; 'चन्द्रापीडमानेतुं राजा बलाधि-  
कृतं बलाहकनामानमाहूयं बृहत्तुरगबलददातिपरिवृत-  
मतिप्रशस्तेऽर्हनि प्राहिणोत्'—इति कादम्बर्याम् । ५८  
बलिः पुं. [बल्यते वीयते इति । बल् दाने+सर्वधातुभ्य

इन्' इतीन्] उपहारः; पूजासामग्री; 'ददतुस्ती बलि  
चैव निजगात्रासुगुहितम्'—इति मार्कण्डेये (१३।८) ।  
( ४३३ ) करः; राजप्राप्तो भागः; 'सावत्सरिक-  
माप्तैश्च राष्ट्रदाहारयेद्वलिम्'—इति मनुः (७।८०) ।  
'राजा शक्तैरमात्यैर्वैश्राह्यं धान्यादिभागमानयेत्'  
—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । चामरदण्डः; बलि-  
वैश्वदेवात्मकपञ्चमहायज्ञान्तर्गतभूतयज्ञः । १२८

बलिपुष्टः पुं. [वैश्वदेवेन बलिना पुष्टः] काकः; पर-  
पिण्डादः । २४५

बलिभुक् [ज्] पुं. [बलिं वैश्वदेवबलिं गृहस्यदत्तद्रव्यं  
वा भुङ्क्ते इति । बलि+भुज्+क्विप्] काकः; 'अहो  
अधर्मः पालानां पीठानां बलिभुजामिव'—इति भागवते  
(१।१८।३३) । २४५

बलिभुजः पुं. [बलिमुखे यस्य । पद्मा बलिश्चर्मसङ्कोचस्त  
द्युक्तं मुखं यस्य] वानरः । २३१

बलीभुजः पुं. [बलीयुक्तं मुखं यस्य] वानरः । २३१

बलीयर्षः पुं. [ ईर्लक्षीः; वर् वरणम्, । वर् ईप्सायां क्विप् ।  
ईश्च वाश्च ईवरी, ती ददातीति ईवर्दः । बलमस्यास्तीति  
बली । ततो बली च ईवर्दश्च इति ] वृषः; अनड्वान्;  
'बलीवर्दसमारूढः शृणु तस्यापि यत्फलम् । नरके वसते  
घोरे गवां क्रोधे हि दारुणे । सलिलं च न गृह्णन्ति पितर-  
स्तस्य देहिनः'—इति मात्स्ये । २६३

बहिर्षोः पुं. [बहिः बाह्यस्य योगः सम्बन्धः] बाह्येन  
संपर्कः; [ एतदर्थे 'अन्तरं बहिर्षोः गोपसंख्यानयोः' इत्यन्त-  
रस्य सर्वनामत्वे] अन्तरे गृहाः; बाह्याः; अवकाशः । ८७१

बहु त्रि. [ बहते इति । बहि बृद्धी+लङ्घिवंह्योर्नलोपश्च'  
इति कु नलोपश्च] त्र्यादिसंख्या; अनेकं; विपुलं;  
प्रभूतं; प्रचुरं; प्राज्यम्; अदभ्रं; बहुलं; पुरुहं; पुरु;  
भूयिष्ठं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अल्पं वा बहु वा प्रेत्य  
दानस्यावाप्यते फलम्'—इति मनुः (७।८६) । 'एकोऽ-  
लुब्धस्तु साक्षी स्याद् बहुघ्नः शुच्योऽपि न स्त्रियः'—इति  
मनुः (८।७७) । बहुमतं; बहुमानम्; 'रामस्तुं जितकैला-  
समरार्तिं बहुमन्यत'—इति रघी (१२।८९) । ७०१  
बहुस्वम् बली. [बहूनां भावः । बहुशब्दात् त्वप्रत्ययेन  
निप्पन्नम्] बहुता; 'बहुत्वान्नामधेयानि पन्नगानां तपो-  
घन !'—इति महाभारते (१।३५।४) । ५३१

बहुवचन स्त्री. [ बहुवचस्य त्रिवचस्य स्त्री+टाप्] सप्ता-

धियो जिह्वाभेदः; दुर्गा; 'अरूपा परमावत्वाद्बहुरूपा क्रियात्मिका। जाता शैलेन्द्रगेहे सा शैलराजसुता ततः'—इति देवीपुराणे। ६८

**बहुलः** पुं. [ बहूनर्थान् लातीति । बहु+ला+क ] कृष्ण-पक्षः; बहुलेऽपि गते निशाकरस्तनुतां दुःखमनङ्ग! मोक्षयति—इति कुमारे (४।१३)। अग्निः (६२); महादेवः; 'मन्यानो बहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः'—इति महाभारते (१३।१७।१२८)। त्रि. (३४२) स्यूलः; पीनः। प्रचुरः (७०१); 'नाघामिके वसेद् ग्रामे न व्याधिबहुले मृशम्'—इति मनुः (४।६०)। घनः (७१७); कृष्णवर्णः; क्ली. [ बृहते वृद्धिं गच्छतीति, बृहि वृद्धी, कुलच् नलोपश्च ] आकाशं; सितमरीचम्। ५०

**बहुलाः** स्त्री. कृतिकानक्षत्रम्। मपुञ्जमयत्वेन नित्यबहुवचनान्तोऽयं शब्दः। ५०

**बहुला** स्त्री. [ बहूनर्थान् लाति या । बहु+ला+क+टाप् ] गौः; नीलिका; एला; 'एला स्यूला च बहुला पृथ्वीका त्रिपुटापि च । भद्रैला बृहदेला च चन्द्रबाला च निष्कुटिः'—इति भावप्रकाशः। देवीविशेषः; 'दृष्टा सा तेन मुनिना निःसृत्य रविमण्डलात् । बहुला ह्यागता तूर्णं प्रस्यं मानसमूभृतः। प्रत्यहं तत्र सावित्री गायत्री बहुला तथा । सरस्वती च द्रुपदा पञ्चैता मानसाचले'—इति कालिकापुराणे। नदीभेदः; 'चीनाश्चैव तुखाराश्च बहुला बाह्यतो नदाः'—इति मार्कण्डेये (५७।३९)। उत्तमराजपत्नी; 'बाभ्रव्यां बहुलां नाम उपयेमे स घर्म-वित् । उत्तानपादतनयः शचीमिन्द्र इवोत्तमः'—इति मार्कण्डेये (५७।२९)। २६८

**बहुव्ययी** पुं. [ बहु परिणाममविचार्य आयादधिकं व्ययते । वि+अय्+णिनि, ततः समासः ] स्यूलक्षः; अपव्ययी। ३६५

**बाढम्** क्ली. [ बाह् प्रयत्ने+क्त, 'सुब्बस्वान्तध्वान्तेति' निपातनात् साधुः ] अतिशयः; 'बाढं मया सा नगरी दृष्टा विद्यायिना सता'—इति कथासरित्सागरे (२४।६८)। सत्यम्; 'बाढमेषु दिवेषु पापियः कर्म साधयति पुत्रजन्मने'—इति रघौ (१९।५२)। प्रतिज्ञा। बाढ-मित्यव्ययमपीति वृद्धाः; 'बाढं त्रिषु दृढे क्लीवमनुमत्यामथ त्रिषु'—इति नानार्थरत्नमाला। ८३६

**बाणः** पुं. [ बघनं बाणः शब्दस्तदस्यास्तीति । बाण+

अच् ] अस्त्रविशेषः; पृषत्कः; विशिखः; अजिह्वागः; खगः; आशुगः; कलम्बः; मार्गणः; शरः; पत्नी; रोपः; इपुः; चित्रपुङ्खः; शायकः; वीरतरः; तूण-क्षेडः; काण्डः; विपर्षकः; शरः; बाजी; पत्रवाहः; अस्त्रकण्टकः; लौहमयबाणः; प्रक्ष्वेडनः; लोहनालः; नाराचः। बलिराजस्य ज्येष्ठपुत्रः; 'बलेः पुत्रशतं त्वासी-द्वाणज्येष्ठन्ततो द्विजाः। बाणः सहस्रबाहुः स्यात् सर्वास्त्र-गुणसंयुतः'—इति मत्स्यपुराणे। गोस्तनः; केवलः; अग्निः; काण्डावयवः; भद्रमुञ्जः; पुं.—स्त्री. नील-क्षिप्ती; 'विकचबाणदलावलयोऽधिकं रश्चिरे रश्चिरे-क्षणविभ्रमाः'—इति माघे (६।४६)। [ बभ्यते शब्दघते इति, बण् शब्दे+ 'अकर्त्तरि च कारके संज्ञायाम्' इति घञ्, डीष् च ] वाक्; इक्ष्वाकुवंशीयोऽभ्यो-ध्याराजः विकुक्षेः पुत्रः; 'इक्ष्वाकोस्तु सुतः श्रीमान् कुक्षिरित्येव विश्रुतः। कुक्षोरयात्मजः श्रीमान् विकुक्षि-रुदपद्यत। विकुक्षेस्तु महातेजा बाणः पुत्रः प्रतापवान्। बाणस्य तु महातेजा अनरण्यः प्रतापवान्'—इति रामायणे (१।७०।२२-२३)। कादम्बरीहर्षचरित-प्रणेता कविविशेषः; बाणमहः। ४४६

**बाणमुक्तिः** स्त्री. [ बाणस्य मुक्तिः क्षेपणम् ] व्यवच्छेदः; बाणमोक्षणम्। ४७०

**बाणाश्रयः** पुं. [ बाणस्याश्रयः ] तूणीरम्; उपासङ्गः; तूणं; तूणी; निषङ्गः; इषुधिः; कलापः। ४६५

**बाणासनम्** क्ली. [ बाणस्य आसनम् ] घनुः; शरा-सनम्। ४६४

**बाबरः** पुं. [ बदराया जातः, जातार्थे अण् ] पिचव्यः; कर्पासः; तूलकः; पिचुः। २०२

**बाबरम्** क्ली. [ बदराया विकारः फलम् । 'फले लुक्' इत्यणो लुक् । बाबरस्य तूलस्य विकारः, विकारार्थे पुनरण् ] कार्पासवस्त्रम्। ५५०

**बाधा** स्त्री. [ बाध्+घञ्+टाप् ] पीडा; 'दुर्वृत्ताः सन्ति शतशो दानवाः पापयोनयः। तेभ्यो न स्याद् यथा बाधा मुनीनां त्वं तथा कुरु'—इति मार्कण्डेये (२।३।३)। निषेधः। ८३४

**बान्धवः** पुं. [ बन्धुरेव । बन्धु+ 'प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थे अण् ] ज्ञातिः; सुहृत्; 'नातिवर्षस्य कर्तव्या बान्ध-वैरुदकक्रिया'—इति मनुः (५।७०)। ५०९

**बालः** त्रि. [ बलतीति । बल् प्राणने + 'ज्वलितिकसन्तेभ्यो षः' इति ण ] मूर्खः; 'अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः । अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम्'—इति मनुः (२।१५३) । 'वै' शब्दोऽवधारणे; अज्ञ एव बालो भवति नत्वल्पवयाः—इति तट्टीकायां कुल्लूक-भट्टः । (५०२) अर्भकः; माणवकः; बालकः; माणवः; किशोरः; वटुः; मुष्टिन्वयः; वटुकः; किशोरकः; पाकः; गर्भः; हितकः; पृथुकः; शिशुः; शावः; अर्भः; डिम्भकः; डिम्बः; षोडशवर्षपर्यन्तः; प्रथमवयस्कः; 'आषोडशाद्भवेद्बालस्तर्षणस्तत उच्यते । वृद्धः स्यात्सप्तते-रुद्धं वर्षीयान् नवतेः परम्'—इति स्मृतिः । 'अनाथ-बालवृद्धानां रक्षकाः सर्वदैवताः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ३३६

**बालः** पुं. [ बलति मस्तकं रक्षति संवृणोतीति वा । बल् + ण ] शिरोभवाच्छादनविशेषः; चिकुरः; कचः; केशः; कुन्तलः; कुञ्जरः; शिरोरुहः; शिरसिहट्टः; शिरोरुट्टः; शिरजः । घोटकशिशुः; किशोरः; अश्वबालधिः; करि-बालधिः । नारिकेलः । पञ्चवर्षीयहस्ती; 'पञ्चवर्षो गजो बालः स्यात्पतो दशवर्षकः'—इति हेमचन्द्रः । 'यो लोकवीरसमिती घनुरैशमुग्रं सीतास्वयंवरगृहे त्रिश-तोपनीतम् । आदाय बालगजलील इवेक्ष्यष्टिः सज्यीकृतं नृप ! विकृष्य बभञ्ज मध्ये'—इति भागवते (१।१०।६) । मत्स्यविशेषः; पुच्छः; 'लज्जां तिरश्चां यदि चेतसि स्यादसंशयं पर्वतराजपुत्र्याः । तं केशपाशं प्रस-मीक्ष्य क्रुध्युर्बालप्रियत्वं शिथिलं चमर्यः'—इति कुमारे (१।४८) । ५३०

**बालगर्भिणी** स्त्री. [ बाला प्रथमवयस्का चासी गर्भिणी ] प्रथमगर्भवती गौः; प्रष्ठीही; पलिकनी; बालगर्भवती । २७३

**बालतृणम्** क्ली. [ बालं नवजातं तृणम् ] नवतृणं; शष्पम्; 'गङ्गायाः प्रपातस्तस्यान्ते समीपे विरूढानि जातानि शष्पाणि बालतृणानि यस्मिन् तत्'—इति रघौ (२।२६) । इलोकटीकायां मल्लिनाथः । १९०

**बालबायजम्** क्ली. [ बालबाये वैदूर्यप्रभवे देशविशेषे जातम् इति । जन् + ड ] वैदूर्यम् । १७५

**बालिशः** त्रि. [ बाड् + इन् । डस्य लत्वं, बालि वृद्धि एयतीति । बालि + शो + आतोऽनुपेति क । बालिशः शिष्यवृत्तयः ] मूर्खः; अज्ञः; 'अपाङ्गस्थो यावतः पाङ्गस्थान्

भुञ्जानाननुपश्यति । तावतां न फलं तत्र दाता प्राप्नोति बालिशः'—इति मनुः (३।१७६) । 'बालिशोऽज्ञः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । शिशुः (८०६); 'बालिशा बत यूयं वा अन्नमे धर्ममानिनः'—इति भागवते (४।१४।२३) । ३३६

**बालेयः** पुं. [ बलये उपकरणाय साधुः । बलि + 'छदिरूप-धिबलेर्ढञ्' इति ङञ् ] रासभः; 'एकच्छागं द्विबालेयं त्रिगवं पञ्चमाहिषम् । षडश्वं सप्तमातङ्गं गृहं यक्षाशु शोषय'—इति मार्कण्डेये (५०।८५) । [ बलेः स्वनाम-ख्यातस्य दैत्यस्यापत्यं पुमान् । बलि + ङञ् ] दैत्यविशेषः (बलिः विरोचनपुत्रस्तस्य बाणज्येष्ठं पुत्रशतं जातं, ते च बालेयनाम्ना विख्याताः); 'विरोचनस्य पुत्रस्तु बलिरकः प्रतापवान् । बलेः पुत्रशतं जज्ञे राजानः सर्व एव ते । तेषां प्रधानाश्चत्वारो विक्रान्ताः सुमहाबलाः । सहस्रबाहुज्येष्ठश्च कन्ये द्वे च बलेः शुभे । बलेः पुत्रास्तु पीशाश्च शतशोऽथ सहस्रशः । बालेयो नाम विख्यातो गणो विक्रान्तपौरुषः'—इति अग्निपुराणे । जनमेजय-वंशोद्भवस्य सुतपसो राज्ञः पुत्रो बलिस्तस्य पञ्च पुत्राश्च बालेयाः; 'फेनस्य सुतपा जज्ञे जज्ञे सुतपसो बलिः । जातो मानुषयोनी तु स राजा काञ्चनेषुधिः । महायोगी स तु बलिर्बभूव नृपतिः पुरा । पुत्रानुत्पादयामास पञ्च वंशकरान् भुवि । अङ्गः प्रथमतो जज्ञे वङ्गः सुहास्तथैव च । पुण्ड्रः कलिङ्गश्च तथा बालेयं क्षत्रमुच्यते । बालेया ब्राह्मणाश्चैव तस्य वंशकरा भुवि । बलेस्तु ब्रह्मणा दत्ता चराः प्रीतेन भारत !'—इति हरिवंशे (३।१।३०।३३) । अङ्गारवल्लरीः; चाणक्यमूलकः; त्रि. [ बालाय हितः; बाल + ङञ् ] मृदुः; बालहितः । [ बलये उपहाराय हितः । बलि + 'छदिरूपधिबलेर्ढञ्' इति ङञ् ] तण्डुलः; बालि योग्यः; 'पुष्यं फलञ्चार्तवमावहन्त्यो बीजं च बालेयम-कृष्टरोहि । विनोदयिष्यन्ति नवाभियङ्गामुदारबाभो मुनिकन्यकास्त्वाम्'—इति रघौ (१।४।७७) । वितुष-कनाम्नो वृक्षस्य त्वचि क्ली. । 'कुटस्रटं दासपुरं बालेयं परिपेलवम् । प्लवगोपुरगोनदकं वर्तीमुस्तकानि च । मुस्तावत् पेलवपुटं शुक्राभं स्याद्वितुषकम्'—इति भावप्रकाशः । २८०

**बाहुः** पुं-स्त्री. [ बाधते शत्रून् इति । बाध् + 'अजिदृशि-कन्यमिपधिबाधामुजिपशितुग्धुग्धीर्बहकाराप' इति

कुप्रत्ययोऽन्तस्य हकारादेशश्च ] कलाद्यङ्गुल्यप्रपर्यन्ता-  
वयवविशेषः; 'भुजः; प्रवेष्टः; दोः; दोषः; बाहः;  
'ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि सह ओजो बाहोर्वो बलं  
हितम्'—इति ऋग्वेदे (५।५।७।६) । कूर्परस्य ऊर्ध्व-  
भागः; 'मुखं बाहू प्रबाहू च मनः सर्वेन्द्रियाणि च ।  
रक्षत्वग्याहृतैस्वर्यस्तव नारायणोऽव्ययः'—इति विष्णु-  
पुराणे (५।५) । 'बाहू प्रबाहू च कूर्परस्य ऊर्ध्वबाधो-  
भागा'—इति तट्टीकायाम् । ५२२

बाहुमूलम् क्ली. [ बाह्वोर्मूलम् ] कक्षाः; 'वगल' इति  
भावा । 'कापि कुन्तलसंघानसंयमव्यपदेशतः । बाहु-  
मूलं स्तनी नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्य-  
दर्पणे (३।१२३) । ५२५

बाहुलेयः पुं. [ बहुलानां कृत्तिकादीनामपत्यं पुमान् ।  
बहुला+ठक् ] कार्तिकेयः । १९

बिडालः पुं. [ वेडति विडधते वा, विड् आक्रोशे, 'तमि-  
विशिविडि' इति कालन् ] वृषदंशकः; मार्जारः । २३६

बिब्लोकः पुं. [ विवानम्, वि+वा गतिगन्धनयोः, मृग-  
व्यादित्वात् कु, विवुः । उच्यते समवैत्यय, उच् समवाये,  
घञर्थे क, 'ओक उचः के' इति निपातितः । विवोः ओकः  
स्थानम् । पृषोदरादिः ] बिब्लोकः; स्त्रीणां शृङ्गार-  
चेष्टा । ८९

बिलम् क्ली. [ विलति भिनत्ति विल्यते वा, विल् भेदने,  
'इगुपधेति' क । वनयोरैक्यम् ] विवरं; गर्तः । ६२४

बीजम् क्ली. [ विशेषेण ईजते । वि+ईज् गतिकुत्सनयोः,  
अच् । नवयोरभेदाद् बः ] प्रसवकारणं; शुकं; धीर्यम् ।  
६३८

बीजकोशः पुं. [ बीजानां कोशः गुप्तिस्थानम् । बीज+  
कुश् निष्कर्षे+घञ् ] वराटकः; कणिका; बीजकोषः ।  
६८२

बीजकोशी स्त्री. [ गौरादित्वाद् ङीष् ] शमी; शिम्बा ।  
१८९

बीमत्सः त्रि. [ बष् बन्धने, 'बधेद्विचतविकारे' इति सन्,  
'मान्बधदान्धान्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य, अ प्रत्ययः,  
टाप् । बीमत्सा घृणास्त्यत्र । अर्श आद्यच् ] विकृतम्;  
शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गतषष्ठरसः; 'जुगुप्सास्थायिमा-  
वस्तु बीमत्सः कथ्यते रसः'—इति साहित्यदर्पणे  
(३।२६३) । क्रूरः; 'यदाश्रीषं द्रोणपुत्रादिभिस्तं-

ईतान् पञ्चालान् द्रौपदेयांसच सुप्तान् । कृतं बीमत्स-  
मयशस्यञ्च कर्म तदा नाशसे विजयाय सञ्जय'—इति  
महाभारते (१।१।२१०) । घृणात्मा; 'तथापि प्रणता  
भार्या तममन्यत देवतम् । तं तथाप्यतिबीमत्सं सर्वश्रेष्ठ-  
ममन्यत'—इति मार्कण्डेये (१६।१८) । विकृतिः;  
दुष्टैर्दोषैः पृथक् सर्वैर्बीमत्सालोकनादिभिः'—इति  
माधवकरः । पापी; पुं. [ बीमत्स्यतेऽनेन । बष्+सन्+  
करणे घञ् ] अर्जुनः । ९२

बुक्कम् त्रि. [ बुक्कयति बुक्बुक् इत्यव्यक्तशब्दं करोतीति ।  
बुक्क्+पचाद्यच् ] वक्षोऽभ्यन्तरमांसविशेषः; अप्रमांसं;  
हृदयं; हृत् । पुं. [ बुक्कयति शब्दायते इति, बुक्क्+अंश् ]  
छागः; समये पुं. — स्त्री. । ६३६

बुद्धः पुं. [ बुध्यते स्म इति । बुष्+क्त । यद्वा भावे क्त,  
बुद्धं ज्ञानमस्यास्तीति, अर्श आद्यच् ] भगवदवतारविशेषः;  
सर्वशः; सुगतः; धर्मराजः; तयागतः; समन्तभद्रः;  
भगवान्; मारजित्; लोकजित्; जिनः; पठभिन्नः;  
दशबलः; अद्वयवादी; विनायकः; मुनीन्द्रः; श्रीघनः;  
शास्ता; मुनिः; धर्मः; त्रिकालज्ञः; घातुः; बोधि-  
सत्त्वः; महाबोधिः; आर्यः; पञ्चज्ञानः; दशार्हः;  
दशभूमिगः; चतुस्त्रिंशज्जातकज्ञः; दशपारमिताधरः;  
द्वादशाक्षः; त्रिकायः; संगुप्तः; दयाकूचः; स्वजित्;  
विज्ञानमातृकः; महामैत्रः; धर्मचक्रः; महामुनिः;  
असमः; सप्तमः; मैत्री; बलः; गुणाकरः; अकनिष्ठः;  
त्रिशरणः; बुधः; वक्त्री; वागाशनिः; जितारिः;  
अर्हणः; अर्हन्; महासुखः; महाबलः । पण्डितः; त्रि-  
बुधितः । ८५

बुद्धाण्डकम् क्ली. [ बुद्धस्य अण्डकम् अण्डाकृति स्तूपादि ]  
चैत्यः; मृतबीदस्मृतिस्थानम् । ८३१

बुद्धिः स्त्री. [ बुध्यतेऽजयेति । बुष्+प्तिन् ] निश्चया-  
त्मिकान्तःकरणवृत्तिः; सविकल्पकज्ञानं; मनीषा;  
धिवणा; धीः; प्रज्ञा; शोभुषी; मतिः; प्रेक्षा; उप-  
लब्धिः; चित्; सवित्; प्रतिपत्; शक्तिः; चेतना;  
धारणा; प्रतिपत्तिः; मेधा; मननं; मनः; ज्ञानं;  
बोधः; हल्लेखः; संख्या; प्रतिभा; आत्मजा; पण्डा;  
विज्ञानम्; 'बुद्धिर्विवेचनारूपा सा ज्ञानजननी श्रुती'—  
इति ब्रह्मसंहिता । ३३४

बुद्धिसहायः पुं. [ बुद्धी बुद्ध्या कृते कार्ये इति भावः,



सहायः] मन्त्री; मत्याः साहाय्यकर्ता; अमात्यः । ४२६  
 बुधः पुं. [ बुध्यते यः । 'बुध्+इगुपवशाप्रीकिरः कः'  
 इति क ] नवग्रहान्तर्गतचतुर्थग्रहः; बृहस्पतिभार्या-  
 तारागर्भे चन्द्राज्जातः; रौहिणेयः; सौम्यः; हेमा;  
 वित्; ऋः; वोधनः; इन्दुपुत्रः । 'गुणी गुणज्ञः कुशलः  
 क्रियादी विलासशाली मतिमान् विनीतः । मृदुस्वभावः  
 कमनीयमूर्तिर्बुधस्य वारे प्रभवो मनुष्यः'—इति  
 कोष्ठीप्रदीपः । पण्डितः; विद्वान्; विपश्चित्;  
 दोषज्ञः; सन्; सुधीः; कोविदः; धीरः; मनीषी;  
 ऋः; प्राज्ञः; संख्यावान्; कविः; धीमान्; सूरिः;  
 कृती; कृष्टिः; लब्धवर्णः; विचक्षणः; दूरदर्शी;  
 दीर्घदर्शी; विदग्धः; दूरदृक्; सूरी; वेदी; वृद्धः;  
 बुद्धः; विधानगः; प्रज्ञिलः; व्यक्तः; प्राप्तरूपः; सुरूपः;  
 अमिरूपः; बुधानः; कवितावेदी; वप्ता; विदितः ।  
 सूर्यवंशीयराजविशेषः; 'तस्मात् कृतिरथस्तस्य देवामी-  
 ष्टस्ततो बुधः । बुधाच्च विबुधश्चैव तस्मान्महाभृतिस्ततः'  
 —इत्यग्निपुराणे । वेगवती राज्ञः पुत्रः; 'तत्सुतः  
 केवलस्तस्मात् बन्धुमान् वेगवांस्ततः । बुधस्तस्या भवद्  
 यस्य तृणबिन्दुमंहीपतिः'—इति भागवते (१।२।३०) ।

४६

बुध्नः पुं. [ वध्नातीति, बन्ध्+बन्धने, 'बन्धेर्ब्रधिवुधी च'  
 इति नक्, बुधादेशश्च ] वृक्षमूलः; मूलदेशः; अग्रभागः;  
 'गृहस्य बुध्न आसीनास्ता इन्द्रो वज्रेणाधि तिष्ठतु'  
 —इति अथर्ववेदे (२।१४।४) । शिवः; 'निवेश्य  
 बुध्ने चरणं स्मितानना गुहं समारोढुमथोपचक्रमुः'  
 —इति हरविलासे राजशेखरः । १८१

बुधुक्षा स्त्री. [ भोक्तुमिच्छा । भुज् पालनाभ्यवहारयोः  
 + 'घातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इति सन् ।  
 ततः 'अ प्रत्ययात्' इत्य ततष्ठाप् ] क्षुधा; अशानाया;  
 प्सा; जिघत्सा; क्षुत्; 'अतीववातस्तिमिरं बुभुक्षा  
 चास्ति' नित्यशः । भयानि च महान्त्यत्र ततो दुःखतरं  
 वनम्—इति रामायणे (२।२।१८) । ३६१

बुभुक्षितः त्रि. [ बुभुक्षा भोजनेच्छा सञ्जातास्य । बुभुक्षा+  
 'तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्' क्षुधितः; क्षुद्धान्;  
 प्सातः; जिघत्सुः । ३६१

बुधः पुं. [ बुस् उत्सर्गं, क, पृषोदरादिः ] कडङ्गरः । ५७८  
 बुधम् क्ली. [ बुस्यते उत्सृज्यते यत् । बुस् उत्सर्गं+इगु-

घेति' क । पृषोदरादित्वात् षत्वम् ] बुसं; तुच्छधान्यं;  
 कडङ्गरः; बूषम् । ५७८

बुसम् क्ली. [ बुस्यते तुच्छत्वादुत्सृज्यते इति । बुस् उत्सर्गं+  
 'इगुपवशाप्रीकिरः कः' इति क ] तुच्छधान्यं; कडङ्गरः;  
 बुषं; बूषम्; उदकम्; 'आविः स्वः कृणुते गृहते बुसम्'—इति  
 ऋग्वेदे (१०।२७।२४) । 'बुसमुदकम्' इति तट्टीकायां  
 सायणाचार्यः । (बुसम् अमरमते क्लीबम्) ५७८

बोडा स्त्री. [ विड् + घञ्, टाप् ] तरी; मीः; मङ्गिनी । ६७२  
 बोधिः पुं. [ बुध्+ 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन् ] पिप्ल-  
 वृक्षः; 'पिप्लो बोधिरश्वत्यश्चैत्यवृक्षो गजाशनः'  
 —इति वैद्यकरत्नमालायाम् । समाधिभेदः; बोधः;  
 ज्ञातरि त्रि. । १९६

ब्रध्नः पुं. [ बन्ध्+बन्धने, 'बन्धेर्ब्रधिवुधी च' इति नक्, ब्रधा-  
 देशश्च ] सूर्यः; 'युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्तुषः ।  
 रोचन्ते रोचना दिवि'—इति ऋग्वेदे (१।६।१) । ३७

ब्रध्नः पुं.—तण्डुः; शिवः; अर्कवृक्षः; दिनः; चतुर्दशमनो-  
 भौत्यस्य पुत्रभेदः; 'गुहर्गभीरो ब्रध्नश्च भरतोऽनुग्रह-  
 स्तथा । तेजस्वी सुवलश्चैव भौत्यस्यैते मनोः सुताः'—  
 इति मार्कण्डेये (१००।३२) । रोगविशेषः; 'अभ्यभिष्य-  
 न्दिगुर्वामसेवनान्निचयं गतः । करोति ग्रन्थिवच्छोयं  
 दोषो वळक्षणसन्धिषु । ज्वरशूलाङ्गसादाढ्यं तं ब्रध्नमिति  
 निर्दिशेत्'—इति माधवकरः । ८३७

ब्रह्मचर्यम् क्ली. [ ब्रह्मणे वेदार्थं चर्यम् आचरणीयम् ]  
 आश्रमविशेषः; 'स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ।  
 सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिवृत्तिरेव च । एतन्मैथुन-  
 मष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः । विपरीतं ब्रह्मचर्यमेत-  
 देयाष्टलक्षणम् । यमभेदः; 'अहिंसासत्यास्तेयब्रह्म-  
 चर्यापरिग्रहा यमाः'—इति पातञ्जले (२।३०) ।  
 'ब्रह्मचर्याश्रमो नास्ति वानप्रस्थोऽपि न प्रिये ! गार्हस्थ्यो  
 भैक्षुकश्चैव आश्रमो द्वौ कलौ युगे'—इति महानिर्वा-  
 णतन्त्रे । ३९७

ब्रह्मचारी [ न् ] पुं. [ ब्रह्म ज्ञानं तपो वा चरतीति । ब्रह्म+  
 चर्+आवश्यके णिनि ] गाङ्गेयः; कार्तिकेयः; (३९४)  
 प्रयमाश्रमी; उपनयनानन्तरं नियमं कृत्वा गुरोः  
 संनिधौ स्थित्वा साङ्गवेदाध्ययनं करोति यः; 'भिक्षा-  
 चर्याथ शुश्रूषा गुरोः स्वाध्याय एव च । सन्व्याफर्माग्नि-  
 कार्यं च धर्मोऽयं ब्रह्मचारिणः'—इति गारुडे । गन्धर्व-

विशेषः; 'ब्रह्मचारी बहुगुणः सुवर्णश्चेति विश्रुतः । विश्वावसुभूमन्युश्च सुचन्द्रश्च शरस्तया'—इति महाभारते (१।१२३।५५) । २०

**ब्रह्मण्यः** पुं. [ ब्रह्मणे हितः । ब्रह्मन् + 'खलयवभापतिलवृषब्रह्मणश्च' इति यत् । 'ये चाभावकर्मणोः' इत्यन् प्रकृत्या ] ब्रह्मणे हितः; विष्णुः; 'ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्द्धनः । ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मशो ब्राह्मणप्रियः'—इति महाभारते (१३।१४९।८४) । 'ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः । ब्रह्मण्यः पुण्डरीकाक्षो ब्रह्मण्यो विष्णुरच्युतः'—इत्याह्निकचन्द्रिका । ब्रह्मदाश्वक्षः; मुञ्जतृणः; तूलवृक्षः; शनैश्चरः; स्त्री. दुर्गा; 'वेदश्रुतिमहापुण्ये ब्रह्मण्ये जातवेदसि । जम्बूकटकचैत्येषु नित्यं सन्निहितालये'—इति महाभारते (६।२२।२६) । ब्रह्मणि साधौ त्रि. । ४०६

**ब्रह्मणे हितम्** त्रि.— ब्रह्मण्यम् । ४०६

**ब्रह्मपुत्रः** पुं. — विपभेदः । 'वर्णतः कपिलो यः स्यात्तया भवति मारकः । ब्रह्मपुत्रः स विज्ञेयो जायते मलयात्रले'—इति भावप्रकाशः । 'काकोलो गरलः क्ष्वेडो ऋत्तनाभः प्रदीपनः । शौकिलकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो विषः'—इति वैद्यकरलमालायाम् । [ ब्रह्मणः पुत्रः ] सत्यः; धर्मः; मरीच्यादिः; नारदः; वशिष्ठः; मनुः; 'मन्वन्तरे च दशमे ब्रह्मपुत्रस्य धीमतः । सुखासीना निरुद्धाश्च त्रिः प्रकाराः सुराः स्मृताः'—इति मार्कण्डेये (९४।११) । क्षेत्रभेदः; नदभेदः; अर्माषानन्दनः; लौहित्यः; लोहितः; 'पृथिव्यां यानि तीर्थानि सरितः सागरादयः । सर्वे लौहित्यमायान्ति चैत्रे मासि सिताष्टमीम् । ब्रह्मपुत्र महाभाग शान्तनोः कुलनन्दन । अमोघगर्भसम्भूत ! पापं लौहित्य-मे हर—इति तिथ्यादितत्त्वम् । ६४६

**ब्रह्मबन्धुः** पुं. [ ब्रह्मणो बन्धुरिव ] अधिक्षेपः; निन्दित-ब्राह्मणः; निर्देशः; अग्राह्यनामकब्राह्मणः; 'ब्रह्मबन्धोः सुता न त्वं बाले ! नैव तपस्विनः । सुता त्वं मम यो देवान् कर्तुमन्यान् समुत्सहे'—इति मार्कण्डेये (७५।६०) । 'वपनं द्रविणादानं स्थानान्निपिणं तथा । एष हि ब्रह्मबन्धूनां वधो नान्योऽस्ति दैहिकः'—इति भागवते १ स्कन्धे । ४०५

**ब्रह्मवर्चसम्** क्ली. [ ब्रह्मणो वेदस्य तपसो वा वर्चस्तेजः । 'ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः' इति अच् ] ब्राह्मणस्य वृत्ताध्यय-

नद्धिः; वेदवोधितस्याचारस्य परिपालनं वृत्तं, व्रतग्रहण-पूर्वकं गुह्यमुखेन वेदान्यासोऽध्ययनं, तयोर्ऋद्धिस्तत्परिपालनकृतस्तेजस उपचयो ब्रह्मवर्चसं स्यात् । 'तपःस्वाध्यायजं यच्च तेजस्तु ब्रह्मवर्चसम्'—इति जटाधरः । 'ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः । प्रज्ञां यथाश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च'—इति मनुः (४।९४) । ३९७

**ब्रह्मवृक्षः** पुं. [ तदाख्यया प्रसिद्धो वृक्षः । यदा ब्रह्मणे वेद-कर्मार्थं यो वृक्षः ] पलाशवृक्षः; किशुकः; त्रिपत्रकः; उडुम्बरः; उडुम्बरवृक्षः । १९७

**ब्रह्मसूत्रम्** क्ली. [ ब्रह्मणि वेदग्रहणकाले उपनयनसमये घृतं यत् सूत्रम् ] यज्ञसूत्रं; पवित्रं; यज्ञोपवीतं; द्विजा-यनी; उपवीतं; सावित्रं; सावित्रीसूत्रं; ब्रह्मनिर्णय-सूत्रम्; 'तस्योपनीयमानस्य सावित्रीं सविताव्रवीत् । बृहस्पतिर्ब्रह्मसूत्रं मेखलां कश्यपोऽवदात्'—इति भागवते (८।१।८।१४) । 'ऋषिभिर्वहुधा गीतं छन्दोभिर्वि-विधैः पृथक् । ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः'—इति भगवद्गीतायाम् (१३।४) । ४०७

**ब्रह्मा** [ न् ] पुं. [ बृंहति वर्द्धते यः । बृहि वृद्धौ + 'बृ' हेनोऽञ्च ] इति मनिन् नकारस्याकारश्च ] सृष्टिकर्तृ देवताविशेषः; आत्मभूः; सुरज्येष्ठः; परमेष्ठी; पितामहः; हिरण्य-गर्भः; लोकेशः; स्वयम्भूः; चतुराननः; धाता; अब्जयोनिः; द्रहिणः; विरिञ्चिः; कमलासनः; स्रष्टा; प्रजापतिः; वेधाः; विधाता; विश्वसृष्टः; विधिः; दूषणः; विरिञ्चः; स्वयम्भुः; पद्मयोनिः; पद्मासनः; देवदेवः; पद्मगर्भः; गुणसागरः; वेदगर्भः; बहुरेताः; स्वभूः; सन्ध्यारामः; सुधावर्षी; कृपाद्वैतः; खसपर्णः; लोकनाथः; महावीर्यः; सरोजी; मञ्जुप्राणः; नाभि-जन्मा; बहुरूपः; जटाधरः; सनत्; शतघृतिः; कञ्जजः; प्रभुः; चिन्तामणिः; पद्मपाणिः; पुराणगः; अष्टकर्णः; हंसरथः; सर्वकर्ता; चतुर्मुखः; कः; आः; शतपत्र-निवासः; स्वायम्भुवमनुषिता; मः; नाभिजन्मा; अण्डजः; पूर्वः; निघनः; कमलोद्भवः; सदानन्दः; रजोमूर्तिः; सत्यकः; हंसवाहनः । (१२४) मुक्तिः; मोक्षः । ऋत्विग्भेदः; विप्रः; अहंबुपासकविशेषः; योगविशेषः; स तु विष्कम्भादिसंप्तविंशतियोगान्तर्गत-पञ्चविंशयोगः; 'नानाशास्त्राम्यासन्तीतकालो वर्णा-चारैः संयुतश्चादकीर्तिः । शान्तो दान्तो जायते चाहकर्मा

सूती यस्य ब्रह्मयोगप्रयोगः—इति कोष्ठीप्रदीपः । ६  
**ब्रह्मणी स्त्री.** [ ब्रह्माणमणति कीर्तयतीति । अण् शब्दे,  
 कर्मण्यण्+ङीप् । यद्वा ब्रह्माणमानयति जीवयतीति ।  
 अन् प्राणने, प्यन्तादस्मात् कर्मणि अणि कृते 'णेरनिटि'  
 इति णिलोपः, 'टिड्ढेति' ङीप्, 'पूर्वपदादिति' णत्व-  
 ष्च ] दुर्गा; 'ब्रह्मणी ब्रह्मजननाद् ब्रह्माक्षरपरा मता'  
 —इति देवीपुराणे ४५ अध्याये । ब्रह्मणः पत्नी; 'ततः  
 संजपतस्तस्य भित्वा देहमकल्पयम् । स्त्रीरूपमद्वैमकरो-  
 दद्वं पुरुषरूपवत् । शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च नि-  
 गद्यते । सरस्वत्यय गायत्री ब्रह्मणी च परन्तप'—इति  
 मत्स्यपुराणे ३ अध्याये । 'हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रक-  
 मण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्मणी साभिधीयते'  
 —इति मार्कण्डेये पुराणे (८८।१४) । रेणुकानाम-  
 गन्धद्रव्यं; राजरीतिः । १७

**ब्राह्मम् क्ली.** [ ब्रह्मण इदम् । ब्रह्मन्+तस्येदम् इत्यण्,  
 'ब्राह्मोऽजाती' 'नस्तद्धिते' इति टिलोपः ] ब्रह्मसम्बन्धिनि  
 त्रि । 'ब्राह्मस्य तु क्षपाहस्य यत्रमाणं समासतः ।  
 एकैकशो युगानान्तु क्रमशस्तन्निवोधत'—इति मनुः  
 (१।६८) । ब्रह्मतीर्थं; तत्तु अङ्गुष्ठस्य मूले वर्तते ।  
 'अन्तर्जानु-क्षुची देश उपविष्ट उदरमुखः । प्राग्वा ब्राह्मेण  
 तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत् । अङ्गुष्ठोत्तरतो रेखा या  
 पाणेर्दक्षिणस्य च । एतद् ब्राह्ममिति ख्यातं तीर्थमाच-  
 मनाय वै'—इति आह्निकतत्त्वे । [ ब्रह्मा देवतास्य इति,  
 ब्रह्मन्+सास्य देवता इत्यण् । टिलोपः ] ब्रह्मदेवता-  
 कमत्सादि; 'अमोघं सन्धे चार्स्म घनुष्येकघनुद्धरः ।  
 ब्राह्ममस्त्रं प्रियाशोकशल्यनिष्कर्षणोपघम्'—इति  
 रघौ (१२।९७) । पुं. [ ब्रह्मणोऽपत्यं पुमान् इति,  
 ब्रह्मन्+तस्यापत्यम् इत्यण्, 'नस्तद्धिते' इति टिलोपः ]  
 नारदः । [ ब्रह्मण इवायमिति, अण् ] विवाहविशेषः;  
 वरमाहूय यथाशक्त् यलङ्कृता कन्या यत्र दीयते सः;  
 'आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतशीलवते स्वयम् । आहूय  
 दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः'—इत्युद्वाहतत्त्वम् ।  
 कालविशेषः; 'रात्रेश्च पश्चिमे यामे मुहूर्तो ब्राह्म  
 उच्यते । 'बाह्ये मुहूर्ते बुद्धयेत धर्माधौ' चानुचिन्तयेत्'  
 —इति मनुः (४।९१) । ११५

**ब्राह्मणः पुं.** [ ब्रह्मणः (त्रिप्रस्य) अपत्यम्, ब्रह्म  
 (बेदम्) अधीते, ब्रह्म (परमात्मानम्) जानाति वा ।

ततदर्थेषु यथायथमण्, 'अन्' इति प्रकृतिभावः ]  
 द्विजातिः; अप्रजन्मा; भूदेवः; वाडवः;  
 विप्रः; द्विजः; सूत्रकण्ठः; ज्येष्ठवर्णः; अप्रजातकः;  
 द्विजन्मा; वक्रजः; मैत्रः; वेदव्यासः; नयः; गुरुः;  
 ब्रह्मा; षट्कर्मा; द्विजोत्तमः; 'ब्राह्मण्यां ब्राह्मणाज्जातो  
 ब्राह्मणः स्यान्न संशयः । क्षत्रियायां तथैव स्याद्द्वैश्यायामपि  
 चैव हि'—इति महाभारते अनुशासने (४७।२८) ।  
 विष्णुः; 'ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः'  
 —इति महाभारते (१३।१४९।८४) । शिवः;  
 'गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः'—इति  
 महाभारते (१३।१७।३२) । ब्रह्म जानातीति व्युत्पत्त्या  
 परब्रह्मवेत्तरि त्रि । ३९१

**ब्राह्मणब्रुवः पुं.** [ ब्राह्मणश्चासौ ब्रुवः कुत्सितः । 'कुत्सितानि  
 कुत्सने' इति समासः ] दुर्ब्राह्मणः; द्विजाधमः; [ ब्राह्मण-  
 वंशोत्पन्नतया वेदोक्तकर्माकुर्वन्नपि आत्मानं ब्राह्मणं  
 ब्रवीतीति । ब्राह्मण+ब्रू+क+वाहुलकाद् न वच्यादेशः ]  
 ब्राह्मणजातिमान्नोपजीवी; 'विप्रः संस्कारयुक्तो न नित्यं  
 सन्ध्यादि कर्मयः । नैमित्तिकं च नो कुर्याद् ब्राह्मणब्रुव  
 उच्यते । युक्तः स्यात्सर्वसंस्कारैर्द्विजस्तु नियमप्रतैः ।  
 कर्म किञ्चिन्न कुरते वेदोक्तं ब्राह्मण ब्रुवः । गर्भाधानादि-  
 मिर्युक्तस्तथोपनयनेन च । न कर्मकृषं चाधीते स ज्ञेयो  
 ब्राह्मणब्रुवः । अध्यापयति नो शिष्यान्नाधीते वेदमुत्तमम् ।  
 गर्भाधानादिसंस्कारैर्युतः स्याद् ब्राह्मणब्रुवः'—इति पाषो-  
 त्तरखण्डे १०८ अध्यायः । ४०६

**ब्राह्मी स्त्री.** [ ब्रह्मण इयम् । ब्रह्मन्+अण्, टिलोपः, स्त्रियां  
 ङीप् ] सस्वती; दुर्गा; 'बृहदश्वशरीरं यदप्रमेयं  
 प्रमाणतः । बृहद्विस्तीर्णमित्युक्तं ब्राह्मी देवी ततः स्मृता'  
 —इति देवीपुराणे ४५ अध्याये । सप्तमातृकान्तगत-  
 मातृकाविशेषः; सा च ब्रह्मशक्तिः; शाकभेदः; सुरेष्टा;  
 ब्रह्मकन्यका; मण्डूकमाता; मण्डूकी; सुरसा; मेघ्या;  
 वरा; वीरा; भारती; परमेष्ठिनी; दिव्या; मत्स्याक्षी;  
 वयस्या; सोमवल्लरी; ब्राह्मीशाकः; सरस्वती;  
 सौम्या; सुरश्रेष्ठा; सुवर्चला; कपोतवेगा; वैशानी;  
 दिव्यतेजा; महौषधी; स्वायम्भुवी; सौम्यलता;  
 शारदा; 'वच्चा त्रिकटुकं चैव लवणं चूर्णमुत्तमम् ।  
 ब्राह्मीरसे भावितं च मधुसर्पिःसमन्वितम् । सप्ताहं भक्तिं  
 कुर्यान्महेश्वर्यं मतिं पराम्'—इति गारुडे १९९ अध्याये ।

'ब्राह्मी कपोतवल्ली स्यात् सोमवल्ली सरस्वती'—इति भावप्रकाशः । फञ्जिका; पङ्कगडमत्स्यः; सोमलता; महाज्योतिष्मती; वाराहीकन्दः; हिलमोचिका; रोहिणीनक्षत्रम् [ब्रह्म+अण्+डीप् ।] ब्रह्माधिष्ठा-  
तृदेवताकत्वात् तथात्वम् ]; सूर्यमूर्तिः; 'ब्राह्मी माहेश्वरी चैव वैष्णवी चैव ते तनुः । त्रिधा तस्य स्वरूपन्तु भानोर्भास्वान् प्रसीदतु'—इति मार्कण्डेय (१०९।७१) । त्रि. ब्रह्मप्राप्तियोग्या; 'स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः । महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः'—इति मनुः (२।२८) । ब्रह्मभवा; 'एषा ब्राह्मी स्वितिः पार्थ ! नैनं प्राप्य विमुह्यति'—इति भगवद्गीतायाम् । (२।७२) । ८

## भ

भम् क्ली. [ भातीति, भा दीप्ती+बाहुलकाद् ड ] नक्षत्रं; तारका; तारा; 'प्रागगित्वमतस्तेषां भगणैः प्रत्यहं गतिः । परिणाहवशाद्भिन्ना तद्वशाद्भानि भुञ्जते'—इति सूर्यसिद्धान्ते (१।२६) । ग्रहः; राशिः; 'राशिनामानि च क्षेत्रं भमृक्षं गृहनाम च'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । पुं. [ भातीति, भा दीप्ती+बाहुलकाद् ड ] शुक्राचार्यः; भ्रमरः; भ्रान्तिः । ५१

भक्तम् क्ली. [ भज्यते स्मेति, भज् सेवायाम्+कर्षणि क्त ] अक्षम्; 'भक्तमन्नं तयान्वश्च क्वचित् कूरं च कीर्तितम् । ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्सा दीदिविः पुंसि भाषितः । 'सुधोतास्तण्डुलान् स्फीतास्तोये पञ्चगुणे पचेत् । तद्भक्तं प्रसृतं चोष्णं विशदं गुणवन्मतम् । भक्तं वह्निकरं पथ्यं तर्पणं रोचनं लघु । अधीतमसृतं शीतं गुर्वश्चयं कफप्रदम्'—इति भावप्रकाशः । त्रि. तत्परः; 'न त्वां दृष्ट्वा पुनरन्यां द्रष्टुं कल्याणि ! रोचये । प्रसीद वशागोऽहन्ते भक्तं मां भज भाविनि'—इति महाभारते । पूज्यविषयकानुरागो भक्तिस्तद्दाश्च । ३१९.

भक्तसिक्च्यम् पुं.—क्ली. [ भक्तस्यान्नस्य सिक्चं मण्डः ] अन्नाप्रमरः; मासरः; आचामः; निःस्रावः; पिच्छा; भक्तमण्डः । ८२९

भक्तिः स्त्री. [ भज्यते .इति, भज्+क्तिन् ] सेवा; विभागः; गौणवृत्तिः; भङ्गी; अनुरागविशेषः; ईश्वरे परानुरक्तिः; उपासना; परमेश्वरविषये परमभ्रमः

'अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम् । आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुच्यते'—इति भक्तिरसामृतसिन्धौ । 'नाथ ! योनिःसहस्रेषु येषु येषु ब्रजाम्यहम् । तेषु तेष्वच्युता भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि । या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी । त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्माप-  
सर्पतु'—इति विष्णुपुराणे (१।२०।१८-१९) । श्रद्धा ।

१२९

भक्षकः त्रि. [ भक्षयतीति, भक्ष्+ 'प्बुलृचौ' इति ष्वुल् ] खादकः; भक्षणतत्परः; घस्मरः; अक्षरः; 'भक्ष्य-  
भक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तेः कारणं महत् । शृगालात् पाशवद्वोऽप्यौ मृगः काकेन रक्षितः'—इति हितोपदेशे (१।१३५) । ३५०

भक्षणम् क्ली. [ भक्ष्+भावे ल्युट् ] द्रवेतरद्रव्यगलाघः-  
करणं; न्यादः; स्वदनं; खादनम्; अशनं; निघसः; वल्भनम्; अन्ववहारः; जग्धिः; जक्षणं; लेहः; प्रत्यवसानं; घसितः; आहारः; प्सानम्; अवष्वाणं; विष्वाणं; भोजनं; जेमनम्; अदनम्; 'क्षणशाकं वृथामांसं करेण मथितं दधि । तर्जन्या दन्तघावश्च सद्यो गोमांसभक्षणम्'—इति कर्मलोचने । ३२५

भगः पुं. [ भज्यते इति, भज् सेवायाम्+ 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ । 'खनो घ च' इति घित्करणाद् वा घ ] रविः; क्लीवेऽव्ययम्; 'ज्ञानवैराग्ययोर्योनी भगमस्त्री तु भास्करे'—इति रुद्रः । भजनीये त्रि. । 'इन्द्रो भगो वाजदा अस्य गावः प्रजायन्ते दक्षिणा अस्य पूर्वी'—इति ऋग्वेदे (३।३६।५) । 'भगः सर्वैर्भजनीयः स इन्द्रः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । द्वादशादित्यभेदः; 'घाता मित्रोऽर्थमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च । भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा । एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते । जघन्यजस्तु सर्वेषामादि-  
त्यानो गुणाधिकः'—इति महाभारते (१।६५।१५-१६) । ऐश्वर्यादिषट्कम्; 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः । ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इती-  
ज्जना । भोगास्पदत्वम्; 'प्रागल्भ्यं प्रश्रयः शीलं सह ओजो बलं भगः । गाम्भीर्यं स्वयंमास्तिक्यं कीर्तिमानीऽनहं-  
कृतिः'—इति भागवते (१।१६।२९) । 'भगः भोगा-  
स्पदत्वम्'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । स्थूलमण्डला-  
भिमानी; 'विष्णोः स्थानं महेन्द्रस्य स्थानञ्चैव

विवस्वतः। सोमस्थानं भगस्थानं स्थानं कौवेरमेव च—इति रामायणे (३।१२।१८)। 'भगः स्थूल-मण्डलाभिमानी'—इति तट्टीकायां रामानुजः। ३५

**भगम्** क्ली.—पुं. [ भज्यते अनेनास्मिन् वेति, एतदाश्रित्यैव कन्दर्पं सेवते इति भावः। भज् सेवायाम्+पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ ] स्त्रीचिह्नं; योनिः; वराङ्गम्; उपस्यः; स्मरमन्दिरं; [ भजन्यनेनेति भगो मेहनम्। भजन्यस्मिन्निति भगं योनिः ] रतिगृहं; जन्मवर्त्म; अवहं; अवाच्यदेशः; प्रकृतिः; अपयं; स्मरकूपः; अप्रदेशः; प्रकृतिः; पुष्पी; संसारमार्गः; गुह्यं; स्मरागारं; स्मरध्वजं; रत्यङ्गं; रतिकुहरं; कलत्रं; अवः। 'ब्रह्मा बृहस्पतिविष्णुः सोमः सूर्यस्तथाशिवनी। भगोऽथ मित्रावरुणौ वीरं ददतु मे सुतम्'—इति वाग्भटः। श्रीः; वीर्यम्; इच्छा; ज्ञानं; वैराग्यं; कीर्तिः; माहात्म्यम्; ऐश्वर्यम्। 'यद्वेनमुत्पयगतं द्विजवाक्यवज्रनिष्प्लुष्टपौरुषभगं निरये पतन्तम्'—इति भागवते (२।७।९)। 'निष्प्लुष्टं दग्धं पौरुषं भगमैश्वर्यं च यस्य' इति तट्टीकायां स्वामी। यत्नः; धर्मः; मोक्षः; पुंसां गुदमुष्कमध्यभागः; सौभाग्यम्; 'यस्य राष्ट्रे प्रजाः सर्वास्त्रस्यन्ते साध्वसाधुभिः। तस्य मत्तस्य नश्यन्ति कीर्तिरायुर्भंगो गतिः'—इति भागवते (१।१७।१०)। 'भगो भाग्यम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। कान्तिः; सूर्यः; शम्भुविशेषः; चन्द्रः; पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रम्; 'अक्षता माययुक्ताश्च भगो सर्पिस्तदुत्तरे'—इति ज्योतिस्तत्त्वे। ५१४

**भगवती** स्त्री. [ भगः 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव घण्णां भग इतीङ्गना' इत्युक्तलक्षणं पडैश्वर्यमस्त्यस्या इति। भग+तदस्यास्त्य-स्मिन्निति मतुप्' इति मतुप्, मस्य वः। 'भूमनिन्दा-प्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने। संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुवादायः'—इति काशिकोवर्तेनित्ययोगेऽत्र मतुप् प्रत्ययः। ततः स्त्रियां ङीप् ] गौरी; सा च प्रकृति-रूपिणी मायादेवी। 'ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा। बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति'—इति मार्कण्डेये (८।१।४२)। सरस्वती; 'सामां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा'—इति पौराणिकाः। गङ्गा; 'भगवति ! भवलीला-

मीलिमाले तवाम्भःकणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति—इति शङ्कराचार्यकृतगङ्गास्तोत्रे। १६

**भगवान्** [ त् ] त्रि. [ भगः 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव घण्णां भग इतीङ्गना' इत्युक्तलक्षणं पडैश्वर्यमस्त्यस्येति। भग+नित्ययोगे मतुप्, मस्य वः ] पूज्यः; पुं; बुद्धः; श्रीकृष्णः; 'भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः। वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः'—इति भागवते। शिवः; 'निवेदनः सुखाजातः भुगन्धारो महाधनुः। गन्धपाली च भगवान् उत्थानः सर्वकर्मणाम्'—इति महाभारते (१३।१७।१२७)। १५५

**भगिनी** स्त्री. [ भगं कल्याणं यत्नः इच्छा वा, पित्रादितो द्रव्यादाने विद्यतेऽस्या इति। इति ] स्वसा। [ भगं योनिरस्या अस्तीति, भग+इनि+ङीप् ] स्त्रीमात्रम्; 'परिगृह्या च वामाङ्गी भगिनी प्रकृतिर्नरी'—इति शब्दचन्द्रिका। ५०७

**भगिनीपतिः** पुं. [ भगिन्याः पतिः ] स्वसृभर्ता; आवुत्तः; भामः; भावुकः; भगिनीभर्ता। 'भगिनीपतिरावुत्तो भावो विद्वानथावुकः'—इति नाट्योक्तावमरः। १९

**भग्नम्** त्रि. [ भञ्ज्+क्त । संघाद् विश्लिष्टत्वात् तथा-त्वम् ] वक्रं; कुटिलं; पराजितं; ऋटितं; चूर्णितम्; 'चिरकालोपितं जीर्णं कीटनिस्कुपितं धनुः। किं चित्रं यदि रामेण भग्नं क्षत्रियकान्तिके'—इति भट्टिः। क्ली. [ भज्यते आमद्यते विश्लिष्यते इति, भञ्ज्+क्त ] रोगविशेषः; 'लवणं कटुकं क्षारमम्रं मथुनमातपम्। व्यायामं च न सेवेत भग्नो रूक्षाश्रमेव च'—इत्यायु-र्वेदः। ६९६

**भग्नशङ्कः** त्रि. [ भग्ने खण्डिते शृङ्गे यस्य ] कूटः; ऋटितविषाणः। २६७

**भङ्गः** पुं. [ भज्यते इति, भञ्ज्+कर्मणि घञ् ] तरङ्गः; वीचिः; पराजयः; [ भञ्ज्+भावे घञ् ] भेदः; रोग-विशेषः; कौटिल्यं; भयं; विच्छित्तिः; रोगमात्रं; गमनं; जलनिर्गमः; नागभेदः; 'उच्छिन्नः शरभो भङ्गो बिल्वतेजा विरोहणः'—इति महाभारते (१।५७।९)। ६५३

**भङ्गिः** स्त्री. [ भज्यते इति, भञ्ज्+इत् । न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम् ] व्याजः; कलनिभः; कलकालः; भङ्गः; [ भङ्गं

करोतीति । भङ्ग+णिच्+इ ] कौटिल्यभेदः; विन्यासः; विच्छेदः; 'यानादवातरददूरमहीतलेन मार्गेण भङ्ग-रचितस्फटिकेन रामः'—इति रघो (१३।६९) । ७६२  
भङ्गी स्त्री. [ भङ्गि+कृदिकारादिति पक्षे डीप् ] भङ्गीः; 'जानामि मानमलसाङ्गि ! घचोविभङ्गीं भङ्गीशतं नयन-योरपि चातुरीञ्च । आभीरनन्दनमुलाम्बुजसङ्गशंसी वंशीरवो यदि न मामवशीकरोति—इत्युद्भटः । ७६२  
भङ्गुरः त्रि. [ भज्यते स्वयमेवेति, भञ्ज्+भञ्ज-भासभिदो घुरच्' इति कर्मकर्तरि घुरच् । घित्वात् कुत्वमिति काशिका ] कुटिलः; स्वयं भञ्जनशीलः; 'कामान् कामयते काम्यैर्यदर्थमिह पूरुषः । स वै देहस्तु पारक्यो भङ्गुरो यात्युपैति च'—इति भागवते (७।७।४३) । ६९६

भङ्गधम् क्ली. [ भङ्गाया भवनं क्षेत्रमिति । भङ्गा+ 'विभाषा तिलमापोमाभङ्गाणुम्बः' इति पक्षे यत् ] भङ्गाक्षेत्रं; भङ्गीनं; [ भङ्गमर्हतीति । भङ्ग+दण्डा-दित्वाद्यत् ] भङ्गाहो त्रि. । १७३

भटः पुं. [ भट्यते भ्रियते इति । यद्वा भटतीति । भट् भृती+अच्' वीरः; 'पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा न तेषु हिसारस एष पूर्यते । विगीदृशन्ते नृपते ! कुविक्रमं कृपाश्रये यः कृपणो पतत्रिणि'—इति नैषधे (१।१३२) । म्लेच्छभेदः (५९९); पामरविशेषः; रजनीचरः; वर्णसङ्करविशेषः; 'वर्द्धकाराद्भटो जातो नाटिक्यां वरवाहकः'—इति पराशरपद्धतिः । योद्धा; 'उष्ट्रैः केचिदिभैः केचिदपरे युयुधुः खरैः । केचिद् गौरमुखैः ऋक्षैर्द्वीपिभिर्हरिभिर्मटाः'—इति भागवते (८।१०।९) । ३५४

भट्टिग्रम् त्रि. [ भटति भट्यते वेति । भट्+ 'अशिन्नादिभ्यः' इतीत्र ] शूल्यं; क्ली. शूलपक्वमांसादि; 'कबाव' इति भाषा । वेतनमित्युणादिकोषः । ३२३

भट्टारकः त्रि. [ भट्टं स्वाम्यम् ऋच्छति, कर्मण्यण्, भट्टार+संज्ञायां कन् ] पूज्यः; 'प्रविष्टेषु ततः कोपात् पुरं शुभघरादिषु । भट्टारकमठं दण्ड्वा भूयः पुत्रं प्यसर्जयत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।२४०) । पुं. नाट्योक्तौ राजा; देवः; तपोधनः; सूर्यः । १५५

भट्टिनी स्त्री. [ भट्टं स्वामित्वमस्या अस्तीति । भट्ट्+इनि+डीप् ] नाट्योक्तौ अकृताभिषेका राजपत्नी ।

ब्राह्मणभार्या । ४८०

भद्रम् क्ली. [ भन्दते इति, भदि कल्याणै+ 'ऋषेन्द्रा-प्रवज्रविप्रकुम्भचक्रसुरसुरभद्रोप्रेति' रन्, नलोपश्च निपात्यते ] मङ्गलं; भद्राकः; श्रेयसं; 'किरीटमणि-चित्रेषु मूर्धसु ध्राणकारिषु । नाकृत्वा विद्विषां पादं पुरुषो भद्रमश्नुते'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (१३।१२) । 'यजस्व वीर ! प्रविहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये'—इति ऋग्वेदे (२।२६।२) । मुस्तं; काञ्चनं; क्ली.—स्त्री. करणविशेषः । १२२

भद्रः पुं. [ भन्दते इति, भदि+रन् नलोपो निपातितश्च ] करिजातिविशेषः; वृषभः (८०७); शिवः; सञ्जरीटः; कदम्बकः; नवशुक्लावलान्तर्गतगिनभेदः; रामचरः; सुमेहः; स्नुही; चन्दनम्; 'श्रीलण्डं चन्दनं न स्त्री भद्रः श्रीस्तैर्लार्णिकः । गन्धसारी मलयजस्तथा चन्द्रद्युतिश्च सः'—इति भावप्रकाशः । साध्यमौलिकानां पद्धति-विशेषः; 'विष्णुर्नागः खिलपिलगत इन्द्रो गुप्तः पालो भद्रः'—इति कुलाचार्यकारिका । वसुदेवस्य पुत्रभेदः; 'सुभद्रो भद्रवाहुश्च दुर्मदो भद्र एव च । पीरव्यास्तनया स्येते भूताद्या द्वादशामवन्'—इति भागवते (९।२४।४७) । सरोवरविशेषः; 'अरणोदं मानसं चं सितोदं भद्रसंज्ञितम् । तेषामुपरि च वारि सरांसि च वनानि च'—इति मत्स्यपुराणे (११२।४६) । तृतीयमनो-रुत्तमस्यान्तरे देवगणभेदे बहुवचनान्तोऽयम्; 'वशिष्ठ-तनयाः सप्त ऋषयः प्रमदादयः । सत्या वेदश्रुता भद्रा देवा इन्द्रस्तु सत्यजित्'—इति भागवते (८।१।२४) । स्वायम्भुवमन्वन्तरे विष्णोर्दक्षिणागर्भजातलुषितनामक-देवगणभेदः; 'तां कामयानां भगवानुवाह यजुषां पतिः । तुष्टायां तोषमापन्नोऽजनयद्वादशात्मजान् । तोषः प्रतोषः सन्तोषो भद्रः शान्तिरिडस्पतिः । इध्मः कविर्विभुः स्वाह्नः सुदेवो रोचनो द्विषट्'—इति भागवते (४।१-६-७) । पर्वतविशेषः; 'अरक्षः शिखिरीतश्च सको वैदूर्यपर्वतः । कंपिलः पिङ्गलो भद्रः सुरसश्च महाचलः'—इति ब्रह्माण्डपुराणे । एकादशद्वापरजातो महेश्वरस्य ऋषिमूर्त्यवतारविशेषः; 'एकादशे द्वापरे तु व्यासस्तु त्रिवृषो यदा । तदाप्यहं भविष्यामि गङ्गाद्वारे युगान्तिके । भद्रो नाम महातेजास्तथापि मम पुत्रकाः । भविष्यन्ति महा मानो सुवृता वेदपारगाः'—इति ब्रह्माण्डे २७

अध्याये । त्रि. श्रेष्ठः; साधुः; 'भद्र ! करटक! अयं तावदस्मत्स्वामी पिङ्गलक उदकग्रहणार्थं यमुनाकच्छम-वतीर्थं स्थितः'—इति पञ्चतन्त्रे (११२६) । २१५  
शुद्धाकरणम् क्ली. [ भद्र+डाच् । कृ+ल्युट् ] क्षीरं; मुष्टनं; वपनम् । ७२१

भद्रासनम् क्ली. [ भद्राय लोकहिताय आसनम् ] नृपासनं; राजहर्मसिंहासनं; योगिनामासनविशेषः; 'सौवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्येद् गुल्फयुगं सुनिश्चलम् । भद्रासनं समुद्दिष्टं योगिभिः परिकल्पितम्'—इति तन्त्रसारे । ४२३

भयम् क्ली. [ भी+ 'एरच्' इत्यत्र 'भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्त्यर्थम्' इति अपादाने अच् ] विभेत्य-स्मात् तत्; दरः; त्रासः; भीतिः; भीः; साध्वसं; रद्दासः; साधुसम्भवः; प्रतिभयम्; आतङ्कः; आशङ्का; भिया; 'रौद्रशक्त्या तु जनितं चित्तवैकल्यदं भयम्'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । कुञ्जकपुष्पं; घोरे त्रि. । पुं. रोगः; निर्ऋतेः पुत्रभेदः; 'तस्यापि निर्ऋतिर्भायां नैर्ऋता येन राक्षसाः । घोरास्तस्यास्त्रयः पुत्राः पाप-कर्मरताः सदा । भयो महाभयदश्चैव मृत्युर्भूतान्तकस्तथा । न तस्य भार्या पुत्रो वा कश्चिदस्त्यन्तको हि सः'—इति महाभारते (१।६६।५५-५६) । द्रोणस्य वसोरभिमति-नामिकायां पत्न्यां जातः पुत्रभेदः; 'द्रोणस्याभिमतेः पत्न्या हर्षशोकभयादयः'—इति भागवते (६।६।११) । यवनराजविशेषः; 'ततो विहतसङ्कल्पा कन्यका यवने-श्वरम् । मयोपदिष्टमासाद्य वने नाम्ना भयं पतिम्'—इति भागवते (४।२।७।२३) । ७२५

भयद्रुतः त्रि. [ द्रु+कर्तरि क्त । भयेन द्रुतः ] भीत्या पलायितः; कान्दिशीकः । ४७९

भयानकः पुं. [ विभेत्यस्मादिति । भी+ 'आनकः शीङ्गभियः' इति आनक ] रसविशेषः; स तु शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गत-पष्टरसः; 'भयानको भयस्यापिभावः कालाविदैवतः । स्त्रीनीचप्रकृतिः कृष्णो मतस्तत्त्वविशारदः । यस्मा-दुत्पद्यते भीतिस्तदत्रालम्बनं मतम् । चेष्टा घोरतरास्तस्य भवेदुद्दीपनं पुनः । अनुभावोऽत्र वैवर्ण्यं गद्गदस्वर-भाषणम् । प्रलयस्वेदरोमाञ्चकम्पदिक्रमप्रक्षणादयः । जुगुप्सावेगसंमोहसंत्रासगलानिदीनताः । शङ्कापस्मार-संभ्रान्तिनृत्याद्या व्यभिचारिणः'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । (७०५) त्रि. भयङ्करः; भयावहः; 'वक्त्राणि

ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि । केचिद्विलगना दशनान्तरेषु संदृश्यन्ते चूणितैस्तमाङ्गैः'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१२७) । ९२

भयावहः त्रि. [ आवहतीति, आ+वह्+अच् । भयस्यावहः इति ] भयङ्करः; भयानकः; 'श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनृष्टितात् । स्वधर्मं निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'—इति भगवद्गीतायाम् (३।३५) । ७०५  
भरतः पुं. [ विभति स्वाङ्गमिति, विभति लोकानिति वा । भृ+ 'भृमृदृशियजीति' अतच् ] नटः; शौली; चारणः; जायाजीवः; शैलूपः; कुशीलवः; कृशाश्वी; नाट्य-शास्त्रकृन्मुनिविशेषः; स तु अलङ्कारादिशास्त्रस्य नाट्यसूत्रकर्ता । भरतस्य शिष्यः [ तस्येदमित्यण्, अणो लुक् ]; रामानुजः; शबरः; तन्तुवायः; क्षेत्रः; भरतौत्मजः; दौष्यन्तिः; दुष्यन्तराजपुत्रः; शाकुन्तलेयः; शकुन्तलापुत्रः; सर्वदमनः; ऋषभदेवात् इन्द्रदत्तजयन्त्यां कन्यायां जातशतपुत्रान्तर्गतज्येष्ठपुत्रः । ५९२

भरद्वाजः पुं. [ द्वाभ्यां जात इति । द्वि+जन्+ठ, आत्व-मार्षम् । भृ+अप्, भरः । भरश्चासौ द्वाजश्चेति कर्म-धारयः ] पक्षिविशेषः; व्याघ्राटः; भरद्वाजकः; मुनि-विशेषः; स च उतथ्यपत्न्यां ममतायां बृहस्पतिवीर्या-ज्जातः; 'मूढे भर द्वाजमिमं भरद्वाजं बृहस्पते ! या तौ यदुक्ता पितरो भरद्वाजस्ततस्त्वयम् ।' गोत्रभेदः; 'शाण्डिल्यः काश्यपश्चैव वात्स्यः सावर्णकस्तथा । भरद्वाजो गौतमश्च सौकालीनस्तथापरः'—इति मनुः । [ भृ+शतृ, भरत्+वाजः ] संस्त्रियमाणहविलक्षणाम्ने यजमानादौ त्रि. । 'यदयातं दिवोदासाय वर्तिर्भरद्वाजा-याश्विना हयन्ता'—इति ऋग्वेदे (१।११६।१८) । 'भरद्वाजाय संस्त्रियमाणहविलक्षणाम्नाय यजमानाय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । २४८

भरितः त्रि. [ हरितः । पृषोदरादित्वाद् हस्य भ ] पूर्णः; हरिद्वर्णः; पुष्टः; भारयुक्तः; [ भरोऽस्य जात इत्यर्थे इतच् प्रत्ययेन निष्पन्नः । ] ७०२

भरुकम् क्ली. [ भृ+बाहुलकाद् ऊट । संज्ञायां कन् ] भृष्टामिषम्; भृष्टमांसम् । ३२३

भर्गः पुं. [ भृज्यते कामादिरनेनेति । भृज्+ 'हलश्च' इति घञ् ] शिवः; 'प्रत्युवाच ततो भर्गः पुरा दक्षप्रजापतेः । देवि ! त्वञ्च तथान्याश्च बह्वर्थाऽजायन्त कन्यकाः ।

स मह्यं भवतीं प्रादात् धर्मादिभ्योऽपराश्च ताः—  
इति कथासरित्सागरे (१।३४) । वीतिहोत्रस्य पुत्रः;  
'वीतिहोत्रोऽस्य भर्गोऽतो भार्गभूमिरभूधृष!'—इति  
भागवते (१।१७।९) । 'आदित्यान्तर्गततेजः;  
'आदित्यान्तर्गतं त्रयो भर्गोऽस्यं तन्मुमुक्षुभिः ।  
जन्ममृत्युविनाशाय दुःखस्य त्रितयस्य च । ध्यानेन  
पुरुषो यश्च द्रष्टव्यः सूर्यमण्डले—इत्याह्निक-  
कतत्वम् । १२

भर्ता [ ऋ ] पुं. [ विभति पुष्पाति पालयति धारयतीति  
वा । भृ धारणपोषणयोः+ 'प्वुलृत्' इति तृच् ]  
विवाहितायाः पतिः; 'भार्याया भरणाद्भर्ता पालनाच्च  
पतिः स्मृतः । अहं त्वां भरणं कृत्वा जात्यन्वं ससुतं  
तदा । नित्यकालं श्रेणेणार्ता न भरेयं महातपः—इति  
महाभारते (१।१०।४।२८) । अधिपतिः; अधिपः; ईशः;  
नेता; परिवृढः; अधिभूः; पतिः; इन्द्रः; स्वामी;  
नायः; आर्यः; प्रभुः; ईश्वरः; विभुः; ईशिता; इनः;  
नायकः; [ प्रपञ्चाधिष्ठानवत्त्वेन भरणात् ] विष्णुः;  
घातरि पोष्टरि च त्रि. 'भर्ता वज्रस्य धृष्णोः पिता  
पुत्रमिव प्रियम्—इति ऋग्वेदे (१०।२२।३) । ४९७

भर्तृदारकः पुं. [ भर्ता द्वियते इति । भर्तृ+इ आदरे+  
कर्मणि घञ्, ततः स्वार्थे क । भर्तुः दारकः पुत्रो वा ]  
नाट्योक्ता युवराजः; कुमारः । ९८

भर्मन् क्ली. [ भ्रियतेऽनेनेति । भृ+वाहलकात् मन् ]  
स्वर्णः; भृतिः; नाभिः । १७३

भर्म [ न् ] क्ली. [ भ्रति भ्रियते वेति । भृञ्+ 'सर्व-  
घातुभ्यो भनिन्' इति भनिन् ] स्वर्णः; वेतनं; घुस्तूरं;  
नाभिः; भरणम्; 'हविष्यान्तमजरं स्वर्विदि दिवि-  
स्पृश्याहुतं जुष्टमग्नी । तस्य भर्मणे भुवनाय देवा  
धर्मणे कं स्वधया प्रथन्त—इति ऋग्वेदे (१०।८।११)  
'भर्मणे भरणाय—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । १७३

भल्लः पुं. [ भल्लते इति । भल्ल्+अच् ] भल्लुकः; ऋक्षः;  
अच्छः; अच्छभल्लः; देशभेदः; 'ब्रह्मपुरदावडामर-  
वनराज्यकिरातचीनकौण्डिन्दाः । भल्लापलोलजटासुर-  
कुण्ठलसघोषकुचिकाख्याः—इति बृहत्संहितायाम्  
(१।४।३०) । पुं.—क्ली. [ भल्लते हन्तीति । भल्ल्+  
अच् ] शस्त्रभेदः; 'भाला' इति भाषा । 'स च शल्यो-  
द्धारणकः प्रोच्यते वैद्यकागमे । नाराचबाणशूलाद्यैर्भल्लैः

कुन्तैश्च तोमरैः—इति हारीतः । २२८

भल्लुकः पुं. [ भल्ल्+स्वार्थे कन् ] भल्लुकः; ऋक्षः;  
'भालू' इति भाषा । पक्षिभेदः; 'काकगृध्रकश्येन-  
भासभल्लकवर्हिणः । संसारसचक्राह्नकाकोलूकादयः  
खगाः ।' २२८

भल्लुकः पुं. [ भल्लुक+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः ] भालुकः;  
भल्लुकः; ऋक्षः । २२८

भल्लुकः पुं. [ भल्लते इति । भल्ल्+ 'उलूकादयश्च' इति  
ऊकप्रत्ययेन साधुः ] जन्तुविशेषः; ऋक्षः; भल्लः;  
सशल्यः; दुर्घोषः; भल्लुकः; पृष्ठदृष्टिः; द्राधिष्ठः;  
दीर्घकेशः; चिरायुः; दुश्चरः; दीर्घदर्शी; भालुकः;  
भालुकः; अच्छः; भाल्लुकः; भीलुकः; अच्छभल्लः;  
'सिंहव्याध्रगणाः क्रूरा मत्ताश्चैव महागजाः । द्वीपिनः  
खड्गभल्लूका ये चान्ये भीमदशानाः—इति महाभारते  
(१२।११६।६) । कोशस्यप्राणिविशेषः; 'शङ्खशङ्खनख-  
शुक्तिशङ्खकभल्लुकप्रभृतयः कोशस्याः—इति सुश्रुतः ।  
कुक्कुरः; कुकुरः; श्योनाकप्रभेदः; 'श्योनाको भूतपु-  
ष्पश्च पूतिवृक्षो मुनिद्रुमः । दीर्घवृन्तश्च कट्वङ्गो  
भल्लुकष्टुष्टकोऽरण्यः—इति वैद्यकरत्नमाला । २२८

भवः पुं. [ भवत्यस्मादिति । भू+अपादाने अप् ] शिवः;  
रुद्रः; कपर्दी; महादेवः; 'तमन्नवीद भवोऽस्तीति तद्यदस्य  
तन्नामाकरोत् पर्जन्यस्तद्रूपमभवत् पर्जन्यो वै भवः—  
इति शतपथब्राह्मणे (६।१।३।१५) । 'भवाय जलमूर्तये  
नमः—इति पार्थिवशिवलिङ्गपूज प्रयोगः । (८०६)  
[ भवति उत्पद्यतेऽस्मिन्निति । भू+अधिकरणे अप् ]  
संसारः; 'अनघस्त्वं तद्यैवेयं देवी सर्वभवारणिः—इति  
मार्कण्डेये (१९।७) । सत्ता; प्राप्तिः; क्षेमः; 'को हि  
नाम भवेनार्थी साहसेन समाचरेत्—इति महाभारते  
(१।२२।१।२८) । जन्म; 'भवो जातिसहस्रेषु प्रिया-  
प्रियविपर्ययः—इति याज्ञवल्क्यः (३।१६४) । क्ली.  
[ भवति भूयते वा । भू+अच् अप् वा ] भव्यम् । ११

भवत् त्रि. [ भाति दीप्यते इति । भा+डवतु प्रत्ययः ]  
युष्मदर्थम्; तस्य लिङ्गत्रये रूपाणि—भवान्, भवती,  
भवत् । 'भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः—  
इति मार्कण्डेये (८।५।५) । वर्तमानार्थम्; [ अत्र भू धातोः  
शतप्रत्ययेन निष्पन्नम् ] तस्य लिङ्गत्रये रूपाणि—भवन्,  
भवन्ती, भवत् । 'चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाश्चत्वारश्चाश्रमाः



पृथक् । भूतं भवद्भविष्यं च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति—  
इति मनुः (१२।१७) । १५५

भवनम् क्ली. [ भवत्यस्मिन्निति । भू+अधिकरणे ल्युट् ]  
गृहम्; 'स त्वप्सु तं घटं प्रास्य प्रविश्य भवनं स्वकम्—  
इति मनुः (११।१८) । प्रासादः; 'देवराजस्य भवनं  
विविधाते सुपूजितौ'—इति महाभारते (३।५४।१३) ।  
[ भू+भावे ल्युट् ] भावः; 'ननु प्रागसतो घटस्य भवनं  
दृश्यते'—इति तार्किकाः । २९१

भवानी स्त्री. [ भवस्य पत्नी । भव+इन्द्रवरुणभवशर्वेति'  
स्त्रियां डीप्, आनुक् चागम इति ] दुर्गा; पार्वती;  
भवस्य भार्या; 'रुद्रो भवः समाख्यातो भवः संसार-  
सागरः । भवः कामस्तया सृष्टिर्भवानी परिकीर्तिता'—  
इति देवीपुराणे (५५ अध्याये) । 'भवानि ! त्वत्पाणि-  
ग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ।' १५

भवान्तरम् क्ली. [ अन्यो भवः, सुप्सुपेति समासः ] अमुत्र;  
लोकान्तरम् । ८७७

भविकम् क्ली. [ भवः प्रभावः एश्वर्यादिकमित्यर्थः,  
उत्पाद्यत्वेनास्त्यस्येति ठन् ] मङ्गलं; कुशलं; भावुकं;  
तद्वति त्रि. । १२२

भवितव्यता स्त्री. [ भवितव्य+भावे तल् ] भाग्यं;  
भागधेयं; विपाकः; 'तन्ममाचक्ष्व तावत् त्वं कथयि-  
ष्याम्यहं च ते । यदस्तु कोऽन्यथा कर्तुं शक्तो हि भवि-  
तव्यताम्'—इति कथासरित्सागरे (२७।८६) । १२६

भव्यम् त्रि. [ भवतीति, भू+कर्तरि 'भव्यगेयेति' निपातनात्  
वा यत् ] शुभं; मङ्गलं; 'भग्न्यायां भव्ययाच्चायां तस्मै  
विदुर ! चुक्रुधुः'—इति भागवते (४।१४।३०) ।  
सत्यं; योग्यं; भावि; 'भूतभव्यभवन्नाथाः शृणु चैतत्  
त्रयं द्विज !'—इति मार्कण्डेये (७९।७) । श्रेष्ठम्;  
'यत्पादपद्मभवाय भजन्ति भव्याः'—इति भागवते  
(१।१५।१७) । 'भव्याः श्रेष्ठाः'—इति तट्टीकायां  
स्वामी । प्रसन्नम्; 'स मे नाथो ह्यनाथस्य भव  
भव्येन चेतसा'—इति रामायणे (१।६२।७) ।  
पुं. [ भवति उत्पद्यते, भू+निपातनात् कर्तरि वा यत् ]  
कर्म्मरङ्गवृक्षः; रसभेदे पुं.—क्ली. । [ भवतीति भूयते इति  
वा । भू+भव्यगेयेति' यत् । भव्यादयः शब्दाः  
कर्तरि वा निपात्यन्ते इति काशिका ] क्ली. फलविशेषः;  
भवं; भविष्यं; भवनं; वक्त्रशोधनं; लोमफलम्;

पिच्छिलबीजम्; 'भयं स्वादु कषायाम्लं हृद्यमास्य-  
विशोधनम् । तदेव पक्वं दोषघ्नं गुरु ग्राहि विषापहम्—  
इति राजवल्लभः । अस्थि । १२२

भयकः पुं.—स्त्री. [ भयतीति, भप्+व्वुन् शिल्पिसंज्ञयोर-  
पूर्वस्यापि' इति व्वुन् ] कुक्कुरः; 'कूकुर' इति भाषा । २८१  
भयणः पुं. [ भप् कुक्कुरादिशब्दे । भप्+ल्यु ] कुक्कुरः;  
भयः; कुक्कुरः; कुक्कुरः; क्ली. वृक्कनं; कुक्कुरशब्दः;  
स्वरवः । २८१

भसितम् क्ली. [ भस्+क्त् ] भस्म; 'चन्दनं वामदेवाख्ये  
हरितालं च पीरूपे । ईशाने भसितं केचिदालेपनमिती-  
दृशम्'—इति शिवपुराणे । ६९

भस्म [न्] क्ली. [ वभस्तीति, भस् भस्संनदीपयोः+  
'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन् ] दग्धकाष्ठादिविकारः;  
शिवाङ्गभूषणम्; 'शिवाङ्गभूषणं भस्म विभूतिभूतिरस्य  
तु'—इति शब्दरत्नावली । 'अम्भसा हेमरूप्यायः  
कांस्यं शृण्वति भस्मना । अम्लैस्ताम्रं च रैत्यं च पुनः  
पाकेन मृण्मयम्'—इति शुद्धितत्त्वम् । ६९

भा स्त्री. [ भा दीप्ती+पिङ्गिदादिभ्योऽङ् इत्यङ्,  
टाप् ] प्रभा; दीप्तिः; 'भायै दार्वाहारमिति'—इति  
वाजसनेयसंहितायाम् (३०।१२) । ३८

भाः [ स् ] स्त्री. [ भासते इति । भासु दीप्ती+भ्राज-  
भासधुर्विद्युतोर्जिपृजुर्भावस्तुवः क्विप्—इति क्विप् ]  
दीप्तिः; 'अभूद् भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः'—इति  
ऋग्वेदे (१।४६।१०) । पुं. सूर्यः; मगूळः; इच्छा । ३८

भागः पुं. [ भज्यते इति, भज्+कर्मणि घञ् ] अंशः;  
रूप्याढकः; भाग्यम्; एकदेशः; राशेस्त्रिशभागैक-  
भागः; 'त्रिंशांशकस्तथा राशेर्भाग इत्यभिधीयते'—इति  
तिथ्यादितत्त्वम् । [ भज्+भावे घञ् ] भजनम् [ भगा-  
नाम् ऐश्वर्याणां समूहः इति, अण् ] ऐश्वर्यसमूहः । ५२८  
भागधेयम् क्ली. [ भाग एव । भाग+भागरूपनामर्थ्यो  
धेयः' इति धेय प्रत्ययः । अभिधानान्नपुंसकत्वम् ] भाग्यं;  
भवितव्यता; विपाकः । १२६

भागधेयः पुं. [ भागेन धीयते इति । घा+कर्मणि यत् ]  
राजकरः; बलिः; दायदः । ४३३

भागार्हः त्रि. [ भागम् अंशम् अहंतीति । भाग+अर्हं+  
अण् ] भजनीयः; अंशयोग्यः; वितरणार्हः; दायः । ८४४  
भागार्हपित्र्यरिक्थम् क्ली. [ भागार्हं पित्र्यं पितुरागतं

रित्यं धनम् ] दायः । ८४४

भागिनियः पुं. [ भगिन्या अपत्यम् । भागिनी+स्त्रीभ्यो ढक् ] इति ढक् ] भगिनीपुत्रः; स्वामीयः; स्वस्त्रियः; 'ऋत्विक् पुत्रो गुरुभ्राता भागिनेयोऽथ विट्पतिः । एभिरेव हुतं यत्तु तद्भुतं स्वयमेव हि'—इति तित्थ्यादित्त्वम् । 'दोहित्रो भागिनेयश्च शूद्रैस्तु क्रियते सुतः । ब्राह्मणादित्रये नास्ति भागिनेयः सुतः क्वचित्'—इति दत्तकचन्द्रिकायाम् । ५०७

भागीरथी स्त्री. [ भागीरथस्येयम् । भागीरथ+अण्+ङीप् ] गङ्गा; 'भागीरथोऽनया स्तुत्या स्तुत्वा गङ्गां च नारद ! जगाम तां गृहीत्वा च यत्र नष्टाश्च सागराः । वैकुण्ठं ते ययुस्तूर्णं गङ्गायाः स्पर्शवायुना । भागीरथेन सानीता तेन भागीरथी स्मृता । इत्येवं कथितं सर्वं गङ्गोपाख्यानमुत्तमम् । पुण्यदं मोक्षदं सारं किं भूय. थोतुमिच्छसि'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ६७३

भाग्यम् क्ली. [ भज्यतेऽनेन इति । भज्+ऋहलोर्ण्यत् ] इति ण्यत् । 'चजोः कु धिण्यतोः' इति कुत्वम् ] विपाकः; प्राक्तनशुभाशुभकर्म; देवं; दिष्टं; भागधेयं; नियतिः; विधिः; भागः; भवितव्यता; प्राक्तनकर्म; फलोन्मुखीभूतपूर्वदैहिकशुभाशुभं कर्म; 'समुद्रमन्यने लेभे हरिर्लक्ष्मीं हरो विषम् । भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम्'—इति प्राञ्चः । उत्तराफाल्गुनीनक्षत्रम्; 'श्रवणानिलहस्ताद्राभिरणीभाग्योपगः सुतोऽर्कस्य । प्रवुरसलिलोपगुहां करोति धात्रीं यदि स्निग्धः'—इति बृहत्संहितायाम् । [ भागो वृद्धचादिरस्मिन् दीयते इति । भाग+ 'भागाद्यच्च' इति यत् ] भागिके त्रि. [ भागमर्हति । भाग+ 'दण्डादिभ्यो यत्' इति यत् ] भागार्हम्; [ भज्+ण्यत् ] भजनीयम् । १२६

भाङ्गीनम् त्रि. [ भङ्गाया भवनं धेत्रम् । विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाण्युभ्यः' इति पक्षे खञ् ] 'भङ्गाक्षेत्रं; भाङ्गयम्; 'एवं माष्यन्तु मापीणं कोद्रयं कोद्रवीणवत् । तथा भाङ्गयं च भाङ्गीनमुभ्यमीमीनमित्यपि'—इति शब्दरत्नावल्याम् । १६३

भाजनम् क्ली. [ भाज्यते इति । भाज् पृथक्करणे+ल्युट् ] पात्रम्; 'राजतं भाजनं हत्वा कपीतः सम्प्रजायते'—इति महाभारते. (१३।११।१०२) । योग्यम्; 'तस्माज्जितात्मा राजा स्याद्युक्तदण्डो विशेषवित् ।

प्रजानुरागादेवं हि स भवेद्भाजनं श्रियः'—इति कथासरित्सागरे (३४।२०५) । 'यः संवादयते नित्यं योऽभवादांस्तिर्तिक्षति । यश्च तप्तो न तपति दृढं सोऽर्थस्य भाजनम्'—इति मत्स्यपुराणम् । आढकपरिमाणम् । ३२७

भाटकः पुं.—कली. [ भटतीति, भट् भूतो+ण्वल् ] व्यवहारार्थं दत्तशकटादिलभ्यधनम्; 'भाड़ा' इति भाषा । 'परभूमौ गृहं कृत्वा भाटयित्वा वसेत्तु यः । स तद् गृहीत्वा निर्गच्छेत् तृणकाष्ठेष्टकादिकम् । गृहवाप्यापणादीनि गृहीत्वा भाटकेन यः । स्वामिनो नार्पयेद्यावत्तावद्वाप्यः स भाटकम् । 'हस्तयश्चगोखरोष्ट्रादीन् गृहीत्वा भाटकेन यः । स्वामिनो नार्पयेद्यावत् तावद्वाप्यः स भाटकम् । 'यो भाटयित्वा शकटं नीत्वा नान्यत्र गच्छति । भाटं न दद्याद्वाप्योऽक्षानुदस्यापि भाटकम् ।' ५७३

भाण्डागारः पुं. [ भाण्डानां पात्रादीनामागारः ] गृहविशेषः; मन्थरः; 'भाण्डागारायुधामारान् योधागारांश्च सर्वशः । अश्वागारान् गजागारान् बलाधिकरणानि च'—इति महाभारते (१२।६९।५४) । ७९७

भाण्डादिरतः पुं [ भाण्डादयो नटविदूषकादयः तेषु रतः ] पञ्चजनीनः; भण्डोक्तिनृत्यादिप्रामक्तः । ३६८

भानुः पुं. [ भाति चतुर्दशभुवनेषु स्वप्रभया दीप्यते इति । भा+ 'दामाम्यां नुः' इति नु ] सूर्यः; 'अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः'—इति महाभारते (३।३।२४) । किरणः (३९); 'भद्रा ददृक्ष उचिया विभास्युत्ते शोचिर्भानवो यामपप्तान्'—इति ऋग्वेदे (६।६४।२) । 'भानवो रश्मयः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । अर्कवृक्षः; प्रभुः; राजा; वृत्ताहंत्पितृविशेषः; यादवविशेषः; 'कन्यां भानुमतीं नाम भानोर्दुहितरं नृप ! जहारात्मवथाकाङ्क्षी निकुम्भो नाम दानवः'—इति हरिवंशे (१४।७।२) । विष्णुः; 'सर्वगः सर्वविद्भानुविष्वक्सेनो जनार्दनः'—इति महाभारते (३।३।२४) । प्राधायाः पुत्रभेदः; 'विश्वावसुश्च भानुश्च मुचन्द्रो दशमस्तथा । इत्येता देवगन्धर्वाः प्राधायाः परिकीर्तिताः'—इति महाभारते (१।६५।४८) । अङ्गिरःसृष्टस्तपसः पुत्रभेदः; 'तपसश्च मनुं पुत्रं भानुं चाप्यङ्गिराः सृजत्'—इति महाभारते (३।२२०।८) । स्त्री. [ भातीति । भा+नु ] भानुमती; दक्षकन्याभेदः; 'शृणुष्वं देव-

मातृणां प्रजाविस्तारमादितः । मरुत्वती वसुधामि लम्बा  
भानुरखन्वती—इति मत्स्यपुराणे (५।१५) । ३६

भानुमान् [ त् ] पुं. [ भानवः सन्त्यस्येति । भानु+मतुप् ]  
सूर्यः; रविः; आदित्यः; 'अथोपनिष्ये गिरिक्षाय गौरी  
तपस्विने ताम्रघ्वा करेण । विशोषितां भानुमतो मयूखै-  
र्मन्दाकिन्युष्करवीजमालाम्—इति कुमारसम्भवे  
(३।६५) । कलिङ्गदेशजनपतिविशेषः; 'भानुमास्तु  
ततो भीमं शरवर्षेण दारयन् । ननाद वलवन्नादं नादयानो  
नभस्तलम्—इति महाभारते (६।५१।३३) । केशि-  
ध्वजस्यं पुत्रः; 'भानुमास्तस्य पुत्रोऽभूच्छतद्युम्नस्तु  
तत्सुतः—इति भागवते (९।१३।२१) । दीप्तिपुक्ते  
त्रि. । 'चर्मण्यपि च गात्रेषु भानुमन्ति दृढानि च—  
इति महाभारते (१।३०।४७) । ३६

भामिनी स्त्री. [ भामते इति, भाम् क्रोधे+ गिनि+ङीप् ]  
स्त्रीमात्रम्; 'एकदा दानवेन्द्रस्य शमिष्ठा नाम कन्यका ।  
सखीसहस्रसंयुक्ता गुरुपुत्री च भामिनी—इति भागवते  
(९।१८।६) । कोपना स्त्री; तुनयनाभकगन्धर्वस्य  
दुहिता; 'राजपुत्र ! सुतेयं मे भामिनी नाम भामिनी ।  
अभिशापादगस्त्यस्य विशालतनयाभवत्—इति मार्क-  
ण्डेयपुराणे (१२।८।७) । ४८१

भारः पुं. [ म्रियते इति, भृ भरणे+अकर्तरि च कारके  
संज्ञायाम् ] इति घञ् [ विंशतितुलापरिमाणं; तत्तु  
अष्टसहस्रतोलकात्मकम् । वीवधः; 'अविश्रामं वहेद्भारं  
शोतोष्णं च न विन्दति । ससन्तोषस्तथा नित्यं श्रीणि  
शिक्षते गर्दभात्—इति चाणक्यः । विष्णुः; गुरुत्वं;  
गुरुत्वगुणवद्भस्तु । ७५८

भारती स्त्री. [ भृ+अतच्, प्रज्ञाद्यणि स्त्रियां ङीप् ]  
सरस्वती; 'वीणापुस्तकरञ्जितहस्ते ! भगवति !  
भारति ! देवि ! नमस्ते—इति कालिदासः । वचनम्;  
'तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि—इति कुमारे  
(६।७९) । पक्षिभेदः; वृत्तिभेदः; 'शृङ्गारे कौशिकी  
वीरे सात्वत्यारभटी पुनः । रसे रीद्रे च बीभत्से वृत्तिः  
सर्वत्र भारती । 'भारतीवृत्तिस्तु भारती, संस्कृतप्रायो  
वाग्व्यापारो नराश्रयः—इति साहित्यदर्पणे ६ परिच्छेदः ।  
ब्राह्मी; शङ्कराचार्यशिष्यतोटकस्य शिष्याणामन्यतमस्य  
उपाधिविशेषः; 'विद्याभारेण सम्पूर्णः सर्वभारं परित्य-  
जेत् । दुःखभारं न जानाति भारती परिकीर्तितः—इति

प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे । नदीविशेषः; 'भारती  
सुप्रयोगा च कावेरो मूर्मुरा यथा—इति महाभारते  
(३।२२।२५) । ८

भारयष्टिः स्त्री. [ भारस्य यष्टिः ] भारवहनदण्डः;  
विहङ्गिका । ७५८

भार्गवः पुं. [ भृगोरपत्यम्, तद्गोत्रापत्यमिति । भृगु+  
अण् ] शुक्राचार्यः; 'तस्मिन्नियुक्ते विधिना योगक्षेमाय  
भार्गवे । अन्यमुत्पादयामास पुत्रं भृगुरनिन्दितम्—इति  
महाभारते (१।६६।४५) । परशुरामः; घन्वी; गजः;  
भारतवर्षमध्ये प्राच्यदेशान्तर्गतदेशविशेषः; 'ब्रह्मोत्तराः  
प्रविजया भार्गवा ज्ञेयमर्दकाः—इति मार्कण्डेयपुराणम् ।  
कुलालः; 'गत्वा तु तां भार्गवकर्मशालां पाथौ पृथां  
प्राप्य महानुभावी—इति महाभारते (१।१९।२।१) ।  
'भृगुः-स्वघटवृत्तिः, जीविकार्थं भृगुणा व्यवहर्तीति  
भार्गवः कुलालः—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । मार्क-  
ण्डेयः; 'इत्युक्त्वा ते जग्मुराशु चत्वारोऽमिततेजसः ।  
पृथिवीकाश्यपश्चाग्निः प्रकृष्टायुश्च भार्गवः—इति  
महाभारते (१।३।२।१५) । शीनकः; 'तथेति चात्रवी-  
द्विष्णुर्ब्रह्मणा सह भार्गव !—इति महाभारते (१।१७।  
६) । भृगुवंशीये त्रि. । 'शृणु रामस्य राजेन्द्र भार्गवस्य  
च धीमतः—इति महाभारते (३।९९।४।७) । ४८

भार्या स्त्री. [ भरणीया इति । भृ+ऋहलोर्षत् ] इति  
ष्यत्, टाप् । यद्वा भयां दीप्त्या आर्या ] वेदविधाने-  
नोढा; विधिपूर्वकविवाहिता; पत्नी; पाणिगृहीती;  
द्वितीया; सहधर्मिणी; जाया; दाराः; धर्मचारिणी;  
दारः; कलत्रं; कलत्रकम्; 'सा भार्या या गृहे दक्षा सा  
भार्या या प्रियंवदा । सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या  
या पतिव्रता—इति गारुडे । ४९४

भालुकः पुं. [ भलते हिनस्ति प्राणिनः इति । भल् हिंसा-  
याम्+बाहुलकात् उक, ततः प्रज्ञाद्यण् ] भल्लुकः;  
'भालू' इति भाषा । 'भालूको भालुको भल्लोऽच्छभल्लोऽ-  
प्यच्छभल्लुकः—इति कोषान्तरे । २२९

भालूकः पुं. [ भलते हिनस्ति जीवानिति । भल्+उलू-  
कादयश्च इति ऊक, ततः प्रज्ञाद्यण् ] भल्लूकः; ऋक्षः;  
'भालू' इति भाषा । २२८

भाल्लुकः पुं.—भल्लूकः; ऋक्षः; 'भालू' इति भाषा २२८  
भावः पुं. [ भावयति चिन्तयति पदार्यानि । भू+

णिच्+पचाद्यच् । भवतीति । भू+भवतेश्चेति वक्तव्यम् इति काशिकोक्तेर्ण वा ] मानसविकारः; सत्ता; 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः । उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः'—इति भगवद्गीतायाम् (२।१६) । नाटयोक्तौ विद्वान् (९८); स्वभावः; अभिप्रायः; 'तस्य धर्मार्थविदुषो भावमाज्ञाय सर्वशः । ब्राह्मणा बलमुख्याश्च पीरजानपदैः सह'—इति रामायणे (२।२।१९) । 'दानधर्मं निषेवेत नित्यपौष्टिकपौतिकम् । परितुष्टेन भावेन पात्रमासाद्य भक्तिततः'—इति मनुः (४।२२७) । (८५०) चेष्टा; आत्मा; जन्म; चित्तं; अभिप्रायः । क्रिया; लीला; विभूतिः; बुधः; जन्तुः; पदार्थः; 'अतीन्द्रियेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः'—इति रघो (३।४१) । गौरवितः; अभिनयान्तरम्; विषयः; 'अवश्यम्भाविनो भावा भवन्ति महतामपि । नग्नत्वं नीलकण्ठस्य महाहिशयनं हरेः'—इति हितोपदेशे । पर्यालोचना; 'यदा भावेन भवति सर्वभावेषु निस्पृहः । तदा सुखमवाप्नोति प्रेत्य चेह च शाश्वतम्'—इति मनुः (६।८०) । प्रेम; 'इति मत्वा भजन्ते माम् बुधा भावसमन्विताः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।८) । घात्वर्थः; 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' 'यस्य क्रियाया क्रियान्तरं लक्ष्यते'—इति सिद्धान्तकौमुदी । योनिः; उपदेशः; संसारः; नवग्रहाणां शयनादिद्वादशचेष्टाः; 'शयनं चोपवेशश्च नेत्रपाणिप्रकाशनम् । गमनं गमनेच्छा च सभायां वसतिस्तथा । आगमनं भोजनं च नृत्यलिप्ता च कौतुकम् । निद्रा ग्रहाणां भावाश्च द्वादशैते प्रकीर्तिताः'—इति ज्योतिषे । स्त्रीणां यौवनकाले स्वभावजाष्टाविंशत्यलङ्कारान्तर्गताङ्गजप्रथमालङ्कारः; 'यौवने सत्त्वजास्तासामष्टाविंशतिसंख्यकाः । अलङ्कारास्तत्र भावहावहेलास्त्रयोऽङ्गजाः । निर्विकारात्मके चित्ते भावः प्रथमविक्रिया'—इति साहित्यदर्पणे । 'सञ्चारिणः प्रधानानि देवादि विषया रतिः । उद्बुद्धमात्रः स्थायी च भाव इत्यभिधीयते'—इति साहित्यदर्पणे । भगवद्भावः; 'शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्याशुसाम्यभाक् । रुचिभिश्चित्तमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते'—इति भक्तिरसामृतसिन्धुः । ९०

भावनम् क्ली. [ भू+णिच्+ल्युट् ] भव्यं; [ भावे ल्युट् ]

भावना; 'सुखदुःखादिभिर्भाविर्भावस्तद्भावभावनम्'—इति साहित्यदर्पणे । [ भावयतीति । भू+णिच्+ल्युट् ] उत्पादके प्रि. । 'दृष्ट्वैव च स राजानं शङ्करो लोकभाषनः । उवाच परमप्रीतः श्वेतर्किं नृपसत्तमम्'—इति महाभारते (१।२२४।४५) । ८७५

भाषुकः त्रि. [ भू+उकञ् ] नाटयोक्तौ भगिनीपतिः । ९९  
भाषुकन् क्ली. [ भवतीति, भू+लपपतपदस्याभूवृषेति उकञ् ] मङ्गलम्; 'शक्र ! सर्वत्र कुशलमस्नाकम् । अपि भाषुकं वः सुराणाम्'—इति प्रद्युम्नविजये १ अङ्के । तद्वति त्रि. । त्रि. भवनाश्रयः । भवति यः [ इति कर्तरि भूषातोनिष्पन्नः ]; रसविशेषभावनाचतुरः; 'निगमकल्पतरोर्गलितं फलं, शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम् । पिवत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः'—इति भागवते (१।१।३) । १२२

भाषणम् क्ली. [ भाष्+भावे ल्युट् ] कथनम्; 'संलापो भाषणं मियः'—इत्यमरः । 'हास्यलोभमयक्रोधप्रत्याख्याने निरन्तरम् । आलोच्य भाषणेनापि भाषयेत् सूनुतं व्रतम्'—इति सर्वदर्शनसंग्रहे आर्हतदर्शने । १५०

भाषा स्त्री. [ भाष्यते शास्त्रव्यवहारदिना प्रयुज्यते इति । भाष्+गुरोश्च हलः' इत्यप्रत्ययः । टाप् ] वाग्देवता; ब्राह्मी; भारती; गीः; वाक्; वाणी; सरस्वती; व्याहारः; उक्तिः; लपितं; भाषितं; वचनं; वचः; वाक्यम्; 'संस्कृतैः प्राकृतैर्वाक्यैरर्थं शिष्यानुरुपतः । देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरुः स्मृतः'—इति व्यवहारतत्त्वम् । ८

भाषा स्त्री.—राणिणीभेदः । १०४ अ

भासः पुं. [ भास्यते इति, भास्+भावे घञ् ] दीप्तिः; 'चन्द्रनक्षत्रभासेश्च वदनैश्चारुकुण्डलैः'—इति महाभारते (८।५८।३१) । [ भासन्ते गावोऽत्र । भास्+अधिकरणे घञ् ] गोष्ठं; [ भासते दीप्यते इति । भास्+कर्तरि अच् ] कुक्कुटः; मूषः; पर्वतप्रभेदः; 'हिमवान् पारियात्रश्च सह्यो विन्ध्यस्त्रिकूटवान् । श्वेतो नीलश्च भासश्च कोष्ठवांश्चैव पर्वतः'—इति महाभारते (१।१३।७०) । स्वनामख्यातपक्षिविशेषः; शकुन्तः; 'कृत्रिमं भासमारोप्य वृक्षाग्रे शिल्पिभिः कृतम् । अभिज्ञानं कुमाराणां लक्ष्यभूतमुपादिशत्'—इति महाभारते (१।१३।७०) । कविशेषः; 'भासो हासः कविकल्-

गुरुः कालिदासो विलासः । २४७

भास्करः पुं. [ भाः करोतीति । भास्+कृ+ 'दिवाविभेति' ट ] । सूर्यः; 'प्रतिगृह्येप्सितं दण्डमुपस्थाप्य च भास्करम् । प्रदक्षिणं परीत्याग्निं चरेद्भूक्षं ययाविधि'—इति मनुः ( २।४८ ) । अग्निः; वीरः; अर्कवृक्षः; ब्रह्मसूत्रभाष्य-कृद् भास्करभट्टः; भास्कराचार्यः; स च सिद्धान्तशिरोमण्यादिज्योतिर्ग्रन्थकर्ता । क्ली. सुवर्णम् । ३५

भास्वान् [ त् ] पुं. [ भासः सन्त्यस्येति । भास्+ 'तदस्या-स्त्यस्मिन्निति मनुप्' इति मनुप्, मस्य वः ] सूर्यः; रविः; आदित्यः; इनः; 'यथा चाराधितो देव्या सोऽदित्या कश्यपेन च । आराधितेन चोक्तं यत् तेन देवेन भास्वता'—इति मार्कण्डेयपुराणे ( १०१।१६ ) । अर्कवृक्षः; दीप्तिः; वीरः; दीप्तिविशिष्टे त्रि. । 'यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सं, मेरौ स्थिते दोगधरि दोहदक्षे । भास्वन्ति रत्नानि महीपधीश्च पृथूपदिष्टां दुदुर्धरित्रीम्'—इति कुमार-सम्भवे । ( १।२ ) । प्रकाशकः; 'वीर्योरपि विकुर्वाणा-द्विरोचिष्णु तमोनुदम् । ज्योतिरुत्पद्यते भास्वत्तद्रूपगुण-मुच्यते'—इति मनुः ( १।७७ ) । 'भास्वत् प्रकाशकम्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । ३५

भिक्षुः पुं. [ भिक्ष् याचने+ 'सनाशंसभिक्ष उः' इति उ ] भिक्षणशीलः; ब्रह्मचर्याश्रमचतुष्टयान्तर्गतचतुर्थ्या-श्रमी; परिव्राट्; कर्मन्दी; पाराशरी; मस्करी; परि-व्राजकः; पराशरी; व्रजकः; भिक्षुकः; 'भिक्षीर्वर्म प्रवक्ष्यामि तन्निबोधत सत्तमाः । वनाद् गृहाद्वा कृत्वेष्टि सर्ववेदसदक्षिणाम्'—इति गारुडे । 'चतुर्थश्चाश्रमो भिक्षोः प्रोच्यते यो मनीषिभिः । तस्य स्वरूपं गदतो मम श्रोतुं नृपार्हसि । पुत्रद्रव्यकलत्रेषु त्यक्तस्नेहो नराधिप ! चतुर्थमाश्रमस्थानं गच्छेन्निर्यतमत्सरः'—इति विष्णुपुराणे । बुद्धभेदः; श्रावणीक्षुपः; कोकिल-क्षः । ४०९

भिक्षुकी स्त्री. [ भिक्षुरेव, भिक्षु+स्वार्ये कन् । स्त्रियां ङीप् । यद्वा भिक्षते इति । भिक्ष+उक+स्त्रियां ङीप् ] याचकी; भिक्षोपजीविनी स्त्री । ४८७

भित्तम् क्ली. [ भिद्यते स्मेति । भिद्+क्त । 'भित्तं शकलम्' इति निष्ठातकारस्य नत्वाभावो निपात्यते ] खण्डम् । ७१३

भित्तिः स्त्री. [ भिद्यते इति । भिद्+क्तिन् ] गृहादिम्-

दिष्टकादिमयी वृत्तिः । कूड्यं; भित्तिका; कुड्यं; कुड्यकम्; 'मानेनानेन विस्तारो भित्तीनान्तु विधीयते । पादे पञ्चगुणं कृत्वा भित्तीनामुच्छ्रयो भवेत्'—इति विश्वकर्मप्रकाशे । प्रभेदः; संविभागः; अक्काशः; प्रदेशः; 'अथोपरिष्ठाद् भ्रमरैर्भ्रमद्भिः प्राक् सूचितान्तः-सलिलप्रवेशः । निर्धो तदानामलग्ण्डभित्तिर्वन्यः सरित्तो गज उन्ममज्ज'—इति रथौ ( ५।४३ ) । ८४९

भिवक्त् क्ली. [ भिनत्तीति, भिद्+क्वुन् ] वज्रं; पुं. खड्गः । ५६

भिविरम् क्ली. [ भिनत्ति विदारयतीति । भिद्+ 'इपि-यदिमुद्विदिच्छिदिभिदिमन्दीति' किरच् ] वज्रं; भिदकं; भिदिः; भिदुः । ५६

भिवुरम् क्ली. [ भिनत्तीति, भिद्+ 'विदिभिदिच्छिदेः कुरच्' इति कुरच् ] वज्रं; भिदुः; भिविरं; भिदिः; भिदकं; भिदः । ५६

भिद्यः पुं. [ भिनत्ति कूलमिति । भिद्+ 'भिद्योद्धची नदे' इति वयप् निपातितः ] नदः; 'समुत्तरन्तावव्यव्ययी नदान् भिद्योद्धसन्निभान् । सिध्यताराभिव ख्यातां शयरी-मापतुर्वने'—इति भट्टिः ( ६।५९ ) । ६६६

भिण्डियालः पुं.— भिन्दिपालः; भिन्दिवालः; शस्य-जातिभेदः; सुगः । ४७६

भिन्दिपालः पुं. [ भिद्+इन् । भिन्दि विदारणं पालय-तीति । पालि+अण् ] हस्तप्रमाणकाण्डः; नालिकास्यं; हस्तक्षेप्यलगुडः; सुगः; 'भिन्दिपालस्तु वक्राङ्गो नम-शीर्षो बृहच्छिराः । हस्तमात्रोत्सेधयुक्तः करसम्मि-तमण्डलः'—इति वैशम्पायनसंहितायाम् । ४७६

भिन्दिवालः पुं.—भिन्दिपालः; सुगः; शस्त्रजातिभेदः । ४७६

भिन्दुः स्त्री. [ भिद्+मृगट्वादित्वात् कु-वाहुलकाश्रुम् च ] नश्यत्प्रसृतिः; अजीवतुष्टिका स्त्री । ४८८

भिल्लः पुं. [ भेल्यति भिल्लीति वा । भिल्+वाहुलकात् लक् ] म्लेच्छजातिविशेषः; 'भील' इति भाषा । 'माला भिल्लाः किराताश्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः'—इति हेमचन्द्रः । 'रजकश्चर्मकारश्च नटो वरुड एव च । कैवर्त-मेदभिल्लाश्च सप्तैते अन्त्यजाः स्मृताः'—इति प्रायश्चित्त-तत्त्वम् । 'पुलिन्दमेदभिल्लाश्च पुल्लो मल्लश्च वावकः । कुन्दकारो डोखलो वा मृतपो हस्तिपस्तया । एते वै तीवराज्जाताः कन्यायां ब्राह्मणस्य च'—इति पराशर-

पदतिः । ५९९

मिषक् [ ज् ] पुं. [ विभेति रोगो यस्मादिति । विभी भये, + 'मियः पुग् ह्रस्वश्च' इति अजि, पुगागमो ह्रस्वश्च ] वैद्यः; आयुर्वेदी; दोषज्ञः; चिकित्सकः; 'अज्ञातीपथिमन्त्रस्तु यश्च व्याघरतत्त्ववित् । रोगिन्योऽर्थ समादत्ते स दण्ड्यश्चौरवद्भिषक्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ६१२

भिस्ता स्त्री. [ वभस्तीति, भस् दीप्तौ+बाहुलकात् स, 'छन्दसि बहुलमितीत्वम् । ब्राह्मणभिस्तेति भाष्य-प्रयोगाल्लोकेऽपि । यद्वा भेदनमिति, भिद्+क्विप्, भिदं स्पतीति । सो+ 'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क । पृषोदरा-दित्वात् साधुः ] अन्नं; भक्तम्, अन्धः; क्रूरम्; ओदनः; दीदिविः; 'भक्तमन्नं तथान्धश्च क्वचित् क्रूरं च कीर्तितम् । ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्ता दीदिविः पुंसि भाषितः'—इति भावप्रकाशः । ३१९

भीतः त्रि. [ भी भये+क्त ] भययुक्तः; परितः; चकितः; व्रस्तः; 'यस्तु भीतः परावृत्तः संप्राप्ते हन्यते परैः । मर्त्येद् दुष्कृतं किञ्चित् तत्सर्वं प्रतिपद्यते'—इति मनुः (७।९४) । भयं; भीतिः । ३५४

भीमः पुं. [ विभेत्यस्मादिति, भी+मक् ] शिवः; महादेवः; 'भवं सर्वं तयेशानं तथा पशुपतिं प्रभुः । भीममुग्रं महादेव-मुवाच स पितामहः'—इति मार्कण्डेये (५२।७) । भयानकरसः; 'भयानको भयस्यापिभावः कालाधि-देवतः । स्त्रीनीचप्रकृतिः कृष्णो मतस्तत्त्वविशारदः'—इत्यमरटीकायां भरतः । विष्णुः; 'अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः'—इति महाभारते । भीम-सेनः; वीरवेणुः; वृकोदरः; बकजित्; कीचकजित्; मध्यमपाण्डवः; 'तस्माज्जज्ञे महाबाहुर्भीमो भीमपरा-क्रमः'—इति महाभारते (१।१२३।१३) । अम्लवेतसः; महादेवस्याष्टमूर्तघन्तर्गाताकाशमूर्तिः; 'भीमाय आका-शमूर्तये नमः' इति शिवपूजाप्रयोगः । गन्धर्वविशेषः; 'भीमश्चित्ररथश्चैव विख्यातः सर्वविद्वशी'—इति महा-भारते (१।६।४३) । पुरुवंशीयस्य ईलिनस्य पुत्रः; 'ईलिनो जनयामास दुष्यन्तप्रभृतीन् नृपान् । दुष्यन्तं शूरभीमौ च प्रवत्सु वसुमेव च'—इति महाभारते (१।९४।१८) । १२

भीमन् त्रि. [ विभेत्यस्मादिति । भी+ 'मियः पुग्वा'

इति मक् ] भयहेतुः; भैरवः; दारुणः; भीषणः; भीष्मः; घोरः; भयानकः; भयङ्करः; प्रतिभयः; भयावहम्, आभी-लम्; 'भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनाम् । अवृषपश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवाणवः'—इति रघौ (१।१६) । ७०५

भीरुः त्रि. [ विभेतीति, भी भये+ 'मियः ऋक्लुक्नौ' इति ऋ ] भयशीलः; व्रस्तुः; भीरुकः; भीलुकः; भीलुः; द्रितः; चकितः; भीतः; व्रस्तः; कातरः । स्त्री. भयप्रकृतिका (४८१); 'सत्यं भीरु वदस्येतत् परिहा-सोऽथवा शुभे !, दिनमेकमहं मन्ये त्वया सार्द्धमिहासि-तम्'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।३३) ! शतावरी; 'बहुपुत्री वरा भीरुः शतमूली शतावरी । महापुरुषदन्ता च पीवरीन्दीवरी वरी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । कण्टकारी; शतपादिका; अजा; छाया; स्त्री । पुं. शृगालः; व्याघ्रः; इक्षुभेदः । ३५४

भीषणः त्रि. [ भीषयते इति । भी+णिच्+ततो नच्चा-दित्वात् ल्यु पुगागमश्च ] दारुणः; भीष्मः; भयानकः; 'पर्णशालामय क्षिप्रं विष्णुष्टासिः प्रविश्य सः । वैरूप्य-पीनरुक्तेन भीषणां तामयोजयत्'—इति रघौ (१२।४०) । गाढः; पुं. भयानकरसः; कुन्दुरुकः; कपोतः; हिन्तालः; शिवः; शल्लकी; भयोत्पादने क्ली. 'व्यसनं भेदनं चैव शत्रूणां कारयेत्ततः । कर्षणं भीषणं चैव युद्धे चैव बलक्षयम्'—इति महाभारते (१५।७।४) । ७०५

भीष्मम् त्रि. [ विभेत्यस्मादिति । भी+ 'मियः पुग् वा' इति मक् पुगागमश्च ] भयानकः; भयङ्करम्; 'सहोवाच भीष्मं वत भोः पुरुषान् वा'—इति शतपथब्राह्मणे (१।१।६।१।३) । 'भीष्मं भयङ्करम्'—इति तद्भाष्ये महीधरः । पुं. भयानकरसः; शिवः; राक्षसः; गाङ्गेयः; स च शान्तनुराजचक्रवर्तिनो गङ्गायां भार्यायां जातः; भीष्मपितामहः । ७०५

भुक्तशेषम् त्रि. [ आवी भुक्तं पश्चात् शेषं परित्यक्तम् ] भुक्तसमुज्जितं; फेला; पिण्डः; फेलिः; भुक्तोच्छिष्टः; विषसः । ३२६

भुक्तिः स्त्री. [ भुज्+क्तिन् ] भोजनं; भोगः; 'भुक्ति-स्त्रिपुरुषो सिद्धयेदपरेषां न संक्षयः । अनिवृत्ते सपिण्डत्वे सकुल्यानां न सिद्धयति । आहर्ता शोधयेद्भुक्तिमाग-मञ्चापि संसदि । तत्सुतो भुक्तिमेवैकां पीत्रादिषु न

किञ्चन—इति दायतत्त्वम् । रविभुक्तिः; भोगः; ग्रहादिभोगः; प्रमाणचतुष्टयान्तर्गतप्रमाणविशेषः; 'प्रमाणं लिखितं भुक्तिः साक्षिणश्चेति कीर्तितम् । एषामन्यतमाभावे दिव्यान्यतममुच्यते—इति व्यवहार-तत्त्वम् । रविभुक्तिर्यथा—'साद्धंसप्त क्षये मेघे वसुः साद्धं घटे वृषे । दशैव मकरे द्वन्द्वे पलानि प्रतिवासरम् । कुलीरसिंहप्रमदातुलालिकामुकेषु च । पलान्येकादश तथा रविभुक्तिं प्रचक्षते—इति ज्योतीरत्नमाला १८२८

भुक्तोच्छिष्टम् त्रि. [ भुक्ताद् उच्छिष्टम् ] भुक्तसमु-ज्जितं; भुक्तशेषम् । ३२६

भुग्नः त्रि. [ भुजो कौटिल्ये+क्त, 'ओदितश्च' इति निष्ठातस्य न ] वक्रः; कुटिलः; नतः; 'साश्रुणी कल्पे रक्ते भुग्ने लुलितपक्ष्मणी । अक्षिणी पिण्डकापाश्वर्मूढ-पर्वास्थिरुभ्रमः—इति वाग्भटः । 'पीने भटस्योरसि वीक्ष्य भुग्नास्तनुत्वचः पाणिरुहान् सुमध्या—इति भट्टिः (१११८) । रोगादिना कुटिलीकृतः; रुग्णः । ६९६

भुजः पुं-स्त्री. [ भुजति वक्रीभूदतीति, भुज्+ 'इगुपघ-ञेति' क । यद्वा भुज्यतेऽग्नेनेति, भुज्+ 'हलश्चेति' घञ्, 'भुजन्युञ्जी पाण्युपतापयोः' इति घञि गुणाभावः, कुत्वा-भावश्च निपात्यते ] बाहुः; प्रवेष्टः; दोः; वाहः; वाहा; भुजा; दोषः; दोषा; करः । 'भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्घुरमाससञ्ज—इति रघी (२।७४) । हस्तिशुण्डः; 'नकुलस्तस्य नागस्य समीपपरिवर्तितः । सविपाणं भुजं मूले खड्गेन निरकृन्तत—इति महा-भारते (३।२७०।२१) । ग्रहस्पष्टीकरणार्थं राशि-त्रयादूनकेन्द्रग्रहादिः; (राशित्रयादधिकनवपर्यन्तपञ्च-रितावशेषः । नवराशिभ्योऽधिकं चेत् तदा द्वादशराशिभ्यः शोध्यश्च भुजः स्यात् ।) 'दोस्त्रिभोनं त्रिभोर्ध्वं विशेष्यं रसैश्चक्रतोऽङ्गाधिकं स्याद्भुजोनं त्रिभम् । कोटि-रेकैकं त्रिभिः स्यात्पदं सूर्यमन्दोच्चमष्टाद्रयोऽज्ञा भवेत्—इति ग्रहलाघवम् । क्षेत्रस्य परिमाणविशेषः; 'कोटिश्चतुष्टयं यत्र दोस्त्रयं तत्र का श्रुतिः । कोटि दोः कर्णतः कोटिश्रुतिभ्यां च भुजं वद । इष्टो बाहुयः स्यात्त-त्स्पष्टिभ्यां दिशीतरो बाहुः । त्र्यस्ये चतुरस्रे वा सा कोटिः कीर्तिता तज्जैः । तत्कृत्योर्गोपदं कर्णः दोः कर्णवर्गयो-विवरात् । मूलं कोटिः तच्छ्रुतिकृत्योरन्तरात् पदं बाहुः—इति लीलावत्यां क्षेत्रव्यवहारः । ५२२

भुजगः पुं. [ भुजः वक्रः सन् गच्छतीति । भुज्+गम्+ 'अन्येष्वपि' इति ड, ततः टिलोपः ] सर्पः; 'तस्मिन् हित्वा भुजगवलयं शम्भुना दत्तहस्ता, क्रीडाशैले यदि च विचरेत् पादचारेण गीरी—इति मेघदूते (६२) । ६४०

भुजङ्गः पुं. [ भुजः वक्रः सन् गच्छतीति । भुज्+गम्+ खच्, खित्वान्मुम्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति ङित्त्वपक्षे टिलोपः ] पिङ्गः; वेद्यापतिः । (६४०) विपधरः; सर्पः; 'आक्रान्तपूर्वमिव मुक्तविषं भुजङ्गं प्रोवाच कोशलपतिः प्रथमापराद्धः—इति रघी (१।७९) । सीसम्; 'सीसं वध्रं च वध्रं च योगेष्टं नागनामकम्—इति भावप्रकाशः । नागनामकं; नागः; भुजङ्गः; 'त्रिशङ्कागा भुजङ्गस्य गन्धपाषाणपञ्चकम् । शूरता-लकयोर्द्वौ द्वौ वङ्गस्यैकोऽञ्जनात् त्रयम् । अन्वमूपीकृतं ध्मात् 'पक्वं विमलमञ्जनम्—इति वाग्भटः । ३८२

भुजङ्गमः पुं. [ भुज् कौटिल्ये+ 'इगुपघेति' क, भुजः कुटिलीभवन् गच्छतीति । भुज्+गम्+ 'गमेः सुपि वाच्यः' इति खच्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति ङित्त्वपक्षे टिलोपा-भावः ] सर्पः; 'आरूढमद्रीनुदधीन् वितरीणं भुजङ्गमानां वसति प्रविष्टम्—इति रघी (६।७७) । सीसके वली । ६४०

भुजसध्यम् क्ली. [ भुजयोर्मध्यम् ] उरः; वक्षः; --रघुवंशे (१३।७३) । ५२७

भुजशिलरम् क्ली. [ भुजस्य शिलरम् ] भुजशिरः; स्कन्वः । ५४२

भुजा स्त्री. [ भुज्+टाप् ] बाहुः; करः; 'अविरत-कुसुमावचायखेदाग्निहितभुजालतयैकयोपकण्ठम्—इति माघे (७।७१) । ५२२

भुजाग्रम् क्ली. [ भुजस्य अग्रम् ] भुजशिरः; स्कन्वः । ५२५

भुजिष्यः पुं. [ भुङ्क्ते स्वाम्युच्छिष्टमिति, मुज्यते इति वा । भुज्+ 'ञिभुजिभ्यां किप्यन्' इति किप्यन् ] दासः; किङ्करः; सेवकः; 'किमहो नृपाः समममीभिरुपपतिसुतेर्न पञ्चभिः । वध्यमभिहत भुजिष्यमयं सह चानया स्थविर-राजकन्यया—इति माघे (१५।६३) । रोगः; स्वतन्त्रः; हस्तसूत्रम् । ३६५

भुवनम् क्ली. [ भवन्त्यस्मिन् भूतानीति । भू+ 'भूस्-धूभ्रस्जिभ्यश्छन्दसि' इत्यत्र क्युन् ] जगत्; 'गुणैर्वरं

भुवनहितच्छलेन यं सनातनः पितरमुपागमत् स्वयम्  
—इति भट्टिः (१११) । सलिलं (६४८) ; गगनं ;  
जनः ; भूतजातम् ; 'युवं ह गर्भं जगतीषु धृत्यो युवं  
विश्वेषु भुवनेष्वन्तः'—इति ऋग्वेदे (१११५७।५) ।  
'यस्यामिदं विश्वं भुवनमाविशेशतस्यां नो देवः सविता  
धर्मं साविषत्'—इति यजुःसंहितायाम् (१।५) ।  
भावनम् ; 'तस्य भर्मणे भुवनाय देवा धर्मणे कं स्पधया  
पप्रथन्त'—इति ऋग्वेदे (१०।८८।१) । पुं. मुनिविशेषः ;  
'नितम्भूर्भुवनो धौम्यः शतानन्दोऽकृतव्रणः'—महा-  
भारते (१३।२६।८) । १३३

भूः स्त्री. [ भवत्यस्यामिति, भू+अधिकरणे क्विप् ]  
पृथिवी ; 'न चैनं भुवि शक्नोति कश्चिदप्यभिवीक्षितुम्'  
—इति मनुः (७।४६) । 'भूर्भूमिः पृथिवी पृथ्वी  
भेदिनी वसुधावनिः । क्षितिर्ध्वी मही क्षीणी क्षमा धरा  
कुर्वंसुन्धरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । स्थानमात्रम् ;  
'यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै विवादादसंवादभुवो भवन्ति'  
—इति भागवते (६।४।३१) । यज्ञाग्निः । १५६

भूच्छायम् क्ली.-स्त्री. [ भुवश्छाया । 'विभाषा सेनासुरा-  
च्छायाशालानिशानाम्' इति तत्पुरुषे विभाषया नपुंस-  
कत्वम् ] अन्धकारः ; पृथ्वीप्रतिबिम्बम् । ११०

भूतम् त्रि. [ भू+क्त ] प्राणी ; जन्तुः 'धिया चक्रे वरेण्यो  
भूतानां गर्भमादधे'—इति ऋग्वेदे (३।२७।९) ।  
'भूतानां च चतुर्विधा योनिर्जराव्यण्डस्वेदोद्भिदः'—इति  
चरकः । क्ली. पृथिव्येतजोवाय्वाकाशपञ्चकम् ;  
'तावुभौ भूतसम्पृक्तौ महान् क्षेत्रज्ञ एव च । उच्चावचेषु  
भूतेषु स्थितं तं व्याप्य तिष्ठतः'—इति मनुः (१२।१४) ।  
अतीतम् ; 'भूतं भवद् भविष्यद् वा किं तत् स्याज् जगति  
प्रिये !, भवती यन्न जानीयादिति शर्वोऽप्युवाच ताम्'  
—इति कथासरित्सागरे (१।२४) । पुं. देवयोनि-  
विशेषः ; 'विक्षिपेज्जुहुयाच्चैवानलं मित्रं च कीर्तयेत् ।  
भूतानां मातृभिः सार्द्धं बालकानां तु शान्तये'—इति  
मार्कण्डेयपुराणे (५।१।५३) । कुमारः ; योगीन्द्रः ;  
कृष्णचतुर्दशी ; भूतनाशकौषधम् ; 'श्वेतापराजितामूलं  
पिष्टं तण्डुलवारिणा । तेन नस्यप्रदानं स्याद्भूतवृन्दस्य  
विद्रवम् । अगस्त्यपुष्पनस्यो वै समरीचश्च भूतहृत् ।  
भुजङ्गवर्म वै हिङ्गा निम्बपत्राणि वै यवाः । गौरसर्षप  
एभिः स्याल्लेपो भूतहरः कृतः । गोरोचना मरीचानि

पिप्पली सैन्धवं मधु । अञ्जनं कृतमेभिः स्याद् ग्रहभूतहरं  
शिवे । वचा त्रिकटुकं चैव करञ्जं देवदारु च । मञ्जिष्ठा  
त्रिफला श्वेता शिरीषो रजनीद्वयम् । प्रियङ्गुनिम्बत्रिकटु-  
गोमूत्रेणावर्षितम् । नस्यमालेपनञ्चैव स्नानमुद्वर्तनं  
तथा । अपस्मारविषोन्मादशोषालक्ष्मीज्वरापहम् ।  
भूतेभ्यश्च भयं हन्ति राजद्वारे च शासनम्'—इति गारुडे  
(१९२।१९९ अध्यायः) । शम्भुगणः ; वसुदेवस्य  
पौरवीगर्भजातद्वादशपुत्राणां ज्येष्ठतमः ; 'पौरव्यास्तनया  
ह्येते भूताद्या द्वादशाभवन्'—इति भागवते (१।२।४  
४७) । क्ली. युक्तं ; न्याय्यः ; क्षमादिः ; ऋतं ; सत्यं ;  
पिशाचादि ; 'एषा घोरतमा वैला घोरानां घोरदर्शना ।  
चरन्ति यस्यां भूतानि भूतेशानुचराणि ह'—इति भागवते  
(३।१४।२१) । जन्तुः ; 'स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्या-  
द्दान्तो मैत्रः समाहितः । दाता नित्यमनादाता सर्वभूतानु-  
कम्पकः'—इति मनुः (६।८) । स्थावरजङ्गमात्मकं  
द्रव्यम् ; 'रक्षन् धर्मेण भूतानि राजा वध्याश्च धातयन् ।  
यजतेऽहर्हयज्ञैः सहस्रशतदक्षिणैः'—इति मनुः (८।  
३०६) । वस्तुतत्त्वम् 'छलं निरस्य भूतेन व्यवहारान्नये-  
न्नृपः । भूतमप्यनुपन्यस्तं हीयते व्यवहारतः'—इति  
भिताक्षरायाम् । ८५९

भूतप्रायः पुं. [ भूतानां प्रायः समूहः ] प्राणिसमूहः ; जन्तु-  
समूहः । ८११

भूतघात्री स्त्री. [ भूतानि घरतीति । भू+घृ+तृच्+  
ङीप् ] पृथिवी ; 'निष्पन्नशालीक्षुयवासिसस्यां भयैवि-  
मुक्तामुपशान्तवैराम् । संहृष्टलोकां कलिदोषमुक्तां  
क्षत्रं तदा शास्ति च भूतघात्रीम्'—इति बृहत्सं-  
हितायाम् (८।३०) । १५७

भूतिः स्त्री. [ भवत्यनयेति । भू+क्तिच्वती च संज्ञायाम्  
इति क्तिच् ] भस्म ; 'क्षणं क्षणोत्क्षिप्रगजेन्द्रकृत्तिना  
स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना'—इति माघे (१।४) ।  
भ्रूटकम् (३।२३) ; ऐश्वर्यं (८०९) ; महादेवस्य  
अणिमाद्यष्टप्रकारवैभवं ; शम्भुवृत्तभस्म ; सम्पत्तिः ;  
उत्तरोत्तरवृद्धिः ; 'यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्यो  
धनुर्धरः । तत्र श्रीविजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम'—  
इति भगवद्गीतायाम् । हस्तिशृङ्गारः ; ग्रजमण्डनम् ;  
'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्, भवित-  
च्छेदैरिव विरचितां भूतिमङ्गे गजस्य'—इति मेघदूते



(१९) । जातिः; पितृगणभेदः; 'विश्वो विश्वभुगा-  
राध्यो धर्मो धन्यः शुभाननः । भूतिदो भूतिकृद्भूतिः  
पितृणां ये गणा नव'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१६।  
४३) । लक्ष्मीः; 'यस्तयोः पुंस्वः साक्षाद्विष्णुर्यज्ञ-  
स्वरूपधृक् । या स्त्री सा दक्षिणा भूतेरंशभूतानपायिनी'  
—इति भागवते (४।१।४) । 'भूतेलंक्ष्म्याः'—इति  
तट्टीकायां स्वामी । वृद्धिनामौषधं; रोहिण्यतृणं; भूतृणं;  
[ भवनमिति, भू+भावे क्तिन् ] उत्पत्तिः; सत्ता । ६९

**भूतेशः** पुं. [ भूतानां प्राण्यादीनां प्रमथादीनां बालग्रहाणां  
च ईशः ] शिवः; परमेश्वरः; महादेवः; 'म्लेच्छै-  
सञ्छादिते देशे स तदुच्छित्तये नृपः । तपःसन्तोषिता  
ल्लेभे भूतेशात् सुकृती सुतम्'—इति राजतरङ्गि-  
ण्याम् (१।१०७) । विष्णुः; ब्रह्मा । ११

**भूपतिः** पुं. [ भुवः पतिः ] राजा; 'भूपुत्री यस्य पत्नी  
स तु भवति कथं भूपती रामचन्द्रः'—इति रामायणे  
केकयीवाक्यम् । ऋषभौषधं; वटुकभैरवः; 'भूघरो  
भूघराधीशो भूपतिर्भूघरात्मकः'—इति वटुकभैरव-  
स्तोत्रे । ४२१

**भूपतिवेश्म** [ न् ] क्ली. [ भूपतेः वेश्म ] विच्छन्दकः;  
स्वस्तिकः; नन्दावर्तः; हर्म्यम् । ३०५

**भूमिः** स्त्री. [ भवन्ति भूतान्यस्यामिति । भू+भुवः क्ति'  
इति मि, स च कित् ] पृथिवी; पृथ्वी; 'भूर्भूमिः पृथिवी  
पृथ्वी मेदिनी वसुधावनिः । क्षितिर्बुवी मही क्षीणी क्षमा  
धरा कुर्वसुधरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् (४।१५) ।  
यज्ञवेदी; परिष्कृता भूः; स्थानमात्रं; जिह्वा; योगि-  
नाम्रवस्याविशेषः; 'निरुद्धे चेतसि पुरा सविकल्पसमा-  
धिना । निर्विकल्पसमाधिस्तु भवेदत्र त्रिभूमिकः । व्युत्ति-  
ष्ठते स्वतन्त्राद्ये द्वितीये परबोधितः । अन्ते व्युत्तिष्ठते  
नैव सदा भवति तन्मयः । एवं प्राग्भूमिसिद्धावप्युत्त-  
रोत्तरभूमये । विधेया भगवद्भक्तिस्तां विना सा न  
सिद्धयति ।' १५६

**भूमिदेवः** पुं. [ भूमौ देव इव, भूम्या देवो वा ] ब्राह्मणः;  
विप्रः; द्विजः; 'अद्य क्रियाः कामदुघाः क्रतूनां सत्याशियः  
सम्प्रति भूमिदेवाः । आसंसृतेरस्मि जगत्सु जातस्त्वय्या-  
गते यद्वदुमानपात्रम्'—इति किराते (३।६) । ३९१

**भूमिस्पृक्** [ श् ] पुं. [ भूमि स्पृशतीति । भूमि+स्पृश्+  
'स्पृशोऽनुदके क्विन्' इति क्विन् ] वैश्यः; मानुषः;

मनुष्यः; चौरभेदः; चौरविशेषः; अन्यः; खञ्जः । ५७०  
**भूयः** [ स् ] अव्य. [ भुवे भावाय यस्यति यतते वा इति ।  
भू+यस्+क्विप् ] पुनरर्थम्; असकृत्; मुहुः । त्रि.  
[ बहु+ईयसुन्, 'बहोर्लोपो भू च बहोः' ] भूयान्(स्);  
बहुतरः; 'पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च'  
—इति मनुः (२।१३७) । ७२४

**भूरि** क्ली. [ भवति भूयते वेति । भू+अदिशदिभूशु-  
मिम्यः क्तिन् इति क्तिन् ] स्वर्णं; सुवर्णम्; अष्टापदम् ।  
१७३

**भूरिः** त्रि. [ भवतीति, भू+अदिशदिभूशुभिम्यः' इति  
क्तिन् ] प्रचुरः; 'संयोजनायुवते शुचिदन् भूरि चिदन्नास-  
मिदति सद्यः'—इति ऋग्वेदे (७।४।२) । पुं. विष्णुः;  
ब्रह्मा; शिवः; ब्रासवः; इन्द्रः; सोमदत्तस्य पुत्रभेदः;  
'कौरव्यः सोमदत्तश्च पुत्राश्चास्य महारथाः । समवेतास्त्रयः  
शूरा भूरिर्भूरिश्चवाः शलः'—इति महाभारते (१।१८७।  
१४) । ७२४

**भूरिमायः** पुं.-स्त्री. [ भूरिः माया यस्य ] शृगालः;  
मृगधूर्तकः । २२९

**भूषणम्** क्ली. [ भूष्यते अनेनेति । भूष्+करणे ल्युट् ]  
अलङ्कारः; 'नक्षत्रभूषणं चन्द्रो नारीणां भूषणं पतिः'  
—इति चाणक्यः । पुं. [ भूषयति भक्तवृन्दमिति, भूष्यते-  
जेनेति वा । भूष्+ल्यु वा ल्युट् ] विष्णुः; 'भूशयो  
भूषणो भूर्तिविशोकः शोकनाशनः'—इति विष्णुसहस्र-  
नामस्तोत्रम् । राजविशेषः; 'वसुदत्तादयश्चैते राजानोऽर्थ-  
रया इमे । अङ्कुरी सुविशालश्च दण्डभूषणसोमिलाः'  
—इति कथासरित्सागरे । कविविशेषः । ५३९, ५४०

**भूषा** स्त्री. [ भूष्+भावे अ, टाप् च ] अलङ्कार्या;  
'दम्पत्योः पर्यदात् प्रीत्या भूषावासःपरिच्छदान्'—इति  
भागवते (३।२।२२) । ८८५

**भृकुटिः** स्त्री. [ कुट् कौटिल्ये+इन्, भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम् ।  
निपातनात् वा सम्प्रसारणम् ] भृकुटिः; भ्रुकुटिः;  
'रचितभृकुटिवन्धं नन्दिना द्वारि रुद्धे'—इति भरतधृत-  
हरविलासः । ७७९

**भृकुटी** स्त्री. [ भृकुटि+कृदिकारादिति डीप् ] भ्रुकुटिः;  
भ्रुकुटिः; 'भृकुटीकुटिलाननी'—इति मार्कण्डेयपुराणे  
देवीमाहात्म्ये । ७७९

**भृगुः** पुं. [ तपसा भृज्यते, पञ्चतपादिभिर्वेति । भ्रस्ज्+

‘प्रथिन्नदिभ्रस्त्रां सम्प्रसारणं सलोपश्च’ इति कु, सम्प्रसारणं, सलोपः, न्यङ्क्त्वादिवात् कुत्वञ्च । यद्वा भृञ्जतीति, क्विप्, भृक् ज्वाला तथा सहोत्पन्न इति, उ ] निरवल्भनपर्वतादिपाश्वर्यः; प्रपातः; अतटः; दरत्; पतनस्थानं; जमदग्निः; सानुः; अरण्यकण्टकव्याप्तगिरिपाश्वर्योच्चदेशः; शुक्रग्रहः; शिवः; मुनिविशेषः, अस्य भार्या कर्दममुनिकन्या, पुत्री धाता विधाता च, कन्या श्रीः । ‘पुरुषा वपुषा युक्ताः स्वैः स्वैः प्रसवजैर्गुणैः । भृगित्येव भृगुः पूर्वमङ्गरेभ्योऽङ्गिराभवत् । अङ्गारसंश्रयाच्चैव कविरित्यपरोऽभवत् । सह ज्वालाभिस्तत्रो भृगुस्तस्माद्भृगुः स्मृतः’—इति महाभारते (१३।८५।१०५-१०६) । १६६

भृञ्जः पुं. [ विभर्त्यनुरागमिति । भृञ्+भृञः कित् नुट् च’ इति गन्, स च कित् नुट् च ] कलिङ्गपक्षी; धूम्याटः; (२५५) भ्रमरः; पिङ्गः; भृङ्गराजः, भृङ्गारः; भृङ्गरोलः; ‘भृङ्गराजः केशराजो भृङ्गः पत्तङ्गमार्कवम्’—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । ‘भृङ्गराजो भृङ्गरजो मार्कवो भृङ्ग एव च । अङ्गारकः केशराजो भृङ्गारः केशरञ्जनः’—इति भावप्रकाशः । २४८

भृङ्गारः पुं. [ भृ+आरन्, नुम् गुक् च । अथवा भृङ्गं जलमित्यर्त्थनेनेति, भृङ्ग+ऋ+करणे घञ् ] कनकालुका; गुडुकः; गडुकः; स्वर्णघटितवारिपात्रं; ‘जलझारी’ इति भाषा । ‘नाद्य पश्यामि ते छत्रं भृङ्गारमथवा पुनः’—इति मार्कण्डेयपुराणे (८।२०३) । भृङ्गाराजः; राज्ञोऽभिषेकपात्रम्; ‘राज्ञोऽभिषेकपात्रं यद्भृङ्गार इति तन्मतम् । तदष्टवा तस्य मानमाकृतिश्चापि चाष्टवा’—इति युक्तिकल्पतरौ । क्ली. [ डुभृञ् धारणपोषणयोः । भृ+‘शृङ्गारभृङ्गारी’ इति आरन् निपातनात् नुम्, गुक् च ] लवङ्गः; सुवर्णम् । ३१५

भृतिः स्त्री. [ भ्रियते अनयेति । भृ+क्तिन् ] वेतनं; मूल्यं; भरणं; भृतिर्वेतनं कृतकर्मणे दत्तं; सप्तविधदत्तान्तर्गतदत्तविशेषः; ‘पण्यमूल्यं भृतिस्तुष्ट्या स्नेहात्प्रत्युपकारतः । स्त्रीशुल्कानुप्रहार्यं च दत्तं दानविदो विदुः’—इति मिताक्षरा । ७२८

भृत्या स्त्री. [ भ्रियते अनया, भरणमिति वा । भृ+‘संज्ञार्थां समजनिषदनिपतमनविदपुञ्जोऽभृतिः’ इति क्यप् । स्त्रियां टाप् ] वेतनं; भरणक्रिया; ‘आसन्निधून्

हृत्स्वसोमयो भूरय एषां भृत्यामृणषत्त जीवात्’—इति ऋग्वेदे (१।८।१६) । ७२८

भृशम् क्ली. [ भृश्यति प्राचुर्येण वर्तते इति । भृश्+क ] अतिशयः; तद्वति त्रि. । ‘भृशमाराधने यतः स्वाराध्यस्य मरुत्वतः’—इति भारविः (१।१।४६) । ७१८

भृशम् अव्य. [ भृश्+क ] प्रकर्षार्थः; मुहुरर्थः; शोभनम् । ७१८

भृष्टः त्रि. [ भ्रस्ज् पाके+कर्मणि क्त ] जलोपसेकं विना पक्वः; (३२३) क्ली. भृतिः; मरुटकम् । ५८५  
भेकः पुं. [ विभेति इति । भी+‘इण् भीकापाशयतीति’ कन् ] जन्तुविशेषः; मण्डूकः; वर्षाभूः; शालूरः; प्लवः; दर्दुरः; वृष्टिभूः; सालूरः; प्लवङ्गमः; व्यङ्गः; प्लवगः; शल्लः; नन्दनः; गूढवर्च्चाः; अजिह्वः; जिह्वामोहनः; नन्दकः; कृतालयः; रेकः; मण्डः; हरिः; लुलुकः; लूलकः; शालूकः; कटुरवः; मेघः; ‘संवृणुतेऽग्नीनुदधिनिदाघनघ्नो न भेकमपि’—इति आर्यासप्तशत्याम् (४।५१) । ६६२

भेदः पुं. [ भिद्+घञ् ] विशेषः; (७८०) शत्रुवशीकरणोपायचतुष्टयान्तर्गततृतीयोपायः; उपजापः; परतो विश्लेष्य आत्मसात् करणं भेदः; ‘भिन्ना हि शक्या रिपवः प्रभूताः स्वल्पेन सैन्येन निहन्तुमाजी । सुसंहतानां हि ततस्तु भेदः कार्यो रिपूणां नयशास्त्रविद्धिः’—इति मात्स्ये । (८८१) अन्तरः; तु; द्वेषः; विदारणम्; ‘पुरश्च पश्चाच्च यदा समयः तदाभियायान्महते फलाय । पुनः प्रसर्पन्नविशुद्धपृष्ठः प्राप्नोति तीरं खलु पाणिभेदम्’—इति कामन्दकीये (१।५।१६) । विरेकः; ‘काशे धूमस्तुपाणां वलवति मस्ते स्वेदभेदोपवासा, वह्नेर्मान्द्ये च पिष्टं सपिशितमनिशं वारिपानं कफतो’—इति हास्यार्णवनाटके । २२२

भेरिः स्त्री. [ विभ्यति शत्रवोऽप्या इति । भी+‘वङ्कथादयश्च’ इति क्तिन्, वाहुलकाद्गुणः ] बृहद्वक्त्रा; आनकः; दुन्दुभिः; भेरी; आनकदुन्दुभिः; आनकदुन्दुभी; ‘यतो भेरिवेषुवीणामृदङ्गतालपटहशाङ्खाह्लादिभेदेन शब्दा अनेकविधाः’—इति पञ्चतन्त्रे प्रथमतन्त्रम् । ९८

भेरी स्त्री. [ विभ्यति शत्रवोऽप्या इति । भी+क्तिन् । कृदिकारादिति पञ्चे डोष् ] दुन्दुभिः; भेरिः; ‘भेरी-शब्दमकृत्वा तु यस्तु मां प्रतिबोधयेत् । बधिरौ जायते

भूमे ! जन्मैकं च न संशयः । तस्य वक्ष्यामि सुश्रोणि  
प्रायश्चित्तं मम प्रियम् । किल्विपाद् येन मुच्येत भेरी-  
ताडनमोहितः—इति वराहपुराणे । ९८

**भेवजम् क्ली.** [ भिषजो वैद्यस्येदमित्यण् । निपातनादेत्वम् ।  
यद्वा भेवं रोगं जयतीति । भेव+जि+ङ ] औषधम् ;  
'वीर्याधिकं भवति भेवजमन्नहीनं हन्यात्तदामयमसंशय-  
माशु चैव । तद्वालवृद्धयुवतीमृदुभिश्च पीतं ग्लानिं परां  
नयति चाशु वलक्षणं च ।' 'देवान् गुह्यस्तथा विप्रान्  
पूजयित्वा प्रणम्य च । आशिषश्च समादाय श्रद्धया भेवजं  
भजेत्—इति चरकः । ६१३

**भैरवम् त्रि.** [ भीरोरिदं आसकृत् । भीरु+अण् ] भया-  
नकं ; भयङ्करं ; भयावहम् ; 'सव्येन च कटीदेशे गृह्य  
वाससि पाण्डवः । तद्रक्षो द्विगुणं चक्रे खन्तं भैरवं रवम्'  
—इति महाभारते (१।१६४।२७) । रागभेदः  
(१००अ.) ; पुं. [ भीर्मयङ्करो रवो यस्य इति, भीरव+  
+ततः स्वार्थे अण् ] शङ्करः ; भयानकरसः ; नदविशेषः ;  
शिवगणाधिपविशेषः ; 'नन्दी भृङ्गी महाकालो वेतालो  
भैरवस्तथा । अङ्गं भूत्वा महेशस्य वीतभीतास्तपोधनाः ।  
ये मानुषशरीरेण प्रापिरे तपसो बलात् । गणानामाधि-  
पत्यन्तु ते जानन्ति हरं परम्—इति कालिकापुराणे ।  
अष्टभैरवाः—'आदौ महाभैरवं च संहारभैरवं तथा ।  
असिताङ्गभैरवं च रुद्रं भैरवसेव च । ततः कालं भैरवं  
च क्रोधभैरवमेव च । ताम्रचूर्डं चन्द्रचूडम् अन्ते च भैरव-  
द्वयम् । एतान् सम्पूज्य मध्ये च नवशक्तीश्च पूजयेत्'  
—इति ब्रह्मवैवर्ते । नागभेदः ; 'भैरवो मुण्डवेदाङ्गः  
पिशङ्गश्चोद्रपारकः—इति महाभारते (१।५७।१६) ।  
करवीरपुरराजचन्द्रशेखरपत्नीतारावतीगर्भे महादेवा-  
ज्जातपुत्रः ; स च पुरा भृङ्गी बभूव । पार्वतीशापात्  
वानरमुखो भूत्वा भैरव इति नाम्ना ख्यातः । 'प्रविवेश  
ततो देवी स्वयं तारावतीतनी । महादेवोऽपि तस्यान्तु  
कामार्थं समुपस्थितः । कामावसाने तस्यान्तु सद्यो जातं  
सुतद्वयम् । अश्वन्नृपशार्दूल ! तथा शाखामृगाननम् ।  
ज्येष्ठो भैरवनामाभूद् भीरोः पुत्रो भयङ्करः । वेतालसदृशः  
कृष्णो वैतालोऽभूत्तयापरः—इति कालिकापुराणे । ७०५  
**भैरवी स्त्री.** [ भैरव+ङीप् ] चामुण्डा ; चर्चा ; चर्चिका ;  
दुर्गा ; 'चामुण्डा चर्चिका चर्ममुण्डा माजरकरिणिका ।  
कर्णमोटी महागन्धा भैरवी च कपालिनी—इति हेम-

चन्द्रः । रागिणीविशेषः (१०४ अ.) ; सा च भैरव-  
रागस्य पत्नी ; 'भैरवी कौशिकी चैव भाषा वेलावली  
तथा । बङ्गाली चेति रागिण्यो भैरवस्यैव वल्लभाः ।'  
मालवरागस्य पत्नी ; 'धानसी मालसी चैव रामकीरी  
च सिन्धुडा । आशावरी भैरवी च मालवस्य प्रिया इमाः ।'  
'सरोवरस्या स्फटिकस्य मन्दिरे सरोरुहैः शङ्करमर्चयन्ती ।  
तालप्रयोगप्रतिबद्धगीतिः गीरीतनूनारद भैरवीयम् ।'  
'विभाषा ललिता चैव कामोदी पठमञ्जरी । रामकीरी  
रामकेली वेलोयारी च गुर्जरी । देशकारी च शुभगा  
पञ्चमी च गडा तुडी । भैरवी चाय कौमारी रागिण्यो  
दश पञ्च च । एताः पूर्वाह्निकाले तु गीयन्ते गायनोत्तमैः'  
—इति सङ्गीतदामोदरः । १७

**भैषज्यम् क्ली.** [ भेवजमेवेति, भेवज+अनन्तावसथेति-  
हभेवजाब् व्यः—इति व्य ] औषधम् ; 'भैषज्यं भेपजं  
चायुर्द्रव्यमगदमौषधम्—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।  
'तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते—इति चरकः ।  
६१३

**भोः [ स् ] अव्य.** [ भातीति, भा+वाहुलकाद् डोसि ] सम्बो-  
धनं ; प्याट् ; पाट् ; अङ्ग ; हे ; ह्यै ; हंहो ; हुम् ; हो ;  
अरे ; अये ; अयि ; 'भो भो विप्रेन्द्र ! बुध्यस्व बुद्ध्या  
बोध्यं बुधात्मक !—इति मार्कण्डेये (३।५२) ।  
प्रश्नः ; विषादः । ८८३

**भोक्ता [ ऋ ] पुं.** [ भुङ्क्ते जीवरूपेणेति । भुनक्ति पालय-  
तीति वा । भुञ्+तृच् ] भर्ता ; विष्णुः ; 'भ्राजिष्णु-  
भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः—इति विष्णुसहस्र-  
नामस्तोत्रे । त्रि. भोजनकर्ता ; 'यज्ञेश्वरो ह्यव्यसमस्तकव्य-  
भोक्ताव्ययात्मा हरिरीश्वरोऽत्र—इति श्राद्धप्रयोग-  
तत्त्वम् । सुखादिभोगकर्ता ; 'कर्ता च देही भोक्ता च  
आत्मा भोजयिता सदा । भोगो विभवभेदश्च निष्कृति-  
भुक्तिरेव च—इति ब्रह्मवैवर्ते । ४९७

**भोगः पुं.** [ भुज्यतेऽसौ इति । भुञ्+घञ् ] सर्पशरीरम् ;  
'लक्ष्यते स्म तदन्तरं रविः वद्धभीमपरिवेशमण्डलः ।  
वैनतेयशमितस्य भोगिनः भोगवेष्टित इव च्युतो मणिः'  
—इति रघुवंशे (१।१।५९) । सर्पस्य फटा ; सुखं ;  
स्त्रयादिभूतिः ; पण्यस्त्रीणां भूतिर्भाडिः । आदिना  
हस्त्यश्वादिकर्मकराणां च भूतिः ; धनम् ; 'हिरण्यभूत-  
भोगं ससान हृत्वीं दस्यूनं प्रायं वर्णमावत्—इति ऋग्वेदे

(३।३।१९) । 'हिरण्यं सुवर्णमयं भोगं धनम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । गृहम्; (ययामुस्मिन्नेव मन्त्रे 'भोग शब्दव्याख्याने भुज्यतेऽस्मिन्निति भोगो गृहं वा सप्तान अयिभ्यो ददौ' इति सायणाचार्यः ।) पालनम्; अम्यवहारः; सर्पः; देहः; मानः; पुण्यपापजननयोग्य-कालः; 'अतीतानागतो भोगो नाड्यः पञ्चदश स्मृतः ।' इति तिथ्यादितत्वम् । पुरम्, 'नव यदस्य नवति च भोगान् साकं वज्रेण मघवा विवृश्चत्'—इति ऋग्वेदे (५।२९।६) । 'भोगान् पुराणि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । भूभ्यादीनां भोगः; 'तथारूढविवादस्य प्रेतस्य व्यवहारिणः । पुत्रेण सोऽर्थः संशोष्यो न तं भोगो निवर्तयेत्'—इति व्यवहारतत्त्वम् । विभवभेदः; 'कर्ता च देही भोक्ता च आत्मा भोजयिता सदा । भोगो विभवभेदश्च निष्कृतिर्भूक्तिरेव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते । व्यूहभेदः; 'यदि स्यादण्डबाहुल्यं तदा चापः प्रकीर्तितः । मण्डलोऽसंहतो भोगो दण्डश्चेति मनीषिभिः । गौमूत्रिका हि सञ्चारी शकटो मकरस्तथा । भोगभेदाः समाख्यातास्तस्या परिपतन्तकः । असंहतास्तु षड् व्यूहा भोगव्यूहाश्च पञ्चधा'—इति कामन्दकीयनीतिसारे । ६४२

भोगो [ न् ] पुं. [ भोगोऽस्यास्तीति । भोग+इनि ] सर्पः; 'एकार्णवे तु त्रैलोक्ये ब्रह्मा नारायणात्मकः । भोगिशय्या-गतः शेते त्रैलोक्यग्रासवृंहितः'—इति विष्णुपुराणे (१।३।२३) । भोगयुक्तः; 'भवताल्लिङ्गं भुजङ्गी जातः किल भोगिचक्रवर्तित्वम्'—इति आर्या-सप्तशत्याम् (४।२४) । ग्रामपात्रः; नृपः; नापितः; वैयावृत्तिकरः । ६४०

भोजनम् क्ली. [ भुज्+ 'ल्युट् च' इति भावे ल्युट् ] भक्षणं; कठिनद्रव्यस्य गलावःकरणं; जग्घिः; जेमनः; लेपः; आहारः; निघसः; न्यादः; जमनः; विघसः; अम्य-वहारः; प्रत्यवसानम्, अशनं; स्वदनं; निगरः; 'भोज-नाग्रे सदा पथ्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम् । अग्निसन्दीपनं हृद्यं लवणाद्रकभक्षणम् ।' 'ततो भोजनवेलायां कुर्यान्म-ङ्गलदर्शनम् । तस्य प्रदक्षिणं नित्यमायुधर्मविवर्द्धनम्'—इति वैद्यके । 'पितृमातृसुहृद्वैद्यापापकृद्वंसर्वाहिणाम् । सारसस्य चकोरस्य भोजने दृष्टिरुत्तमा । हीनदीनक्षुर्धा-तानां पापपण्डैरोगिणाम् । कुक्कुटादिशुनां दृष्टि-भोजने नैव शोभना ।' भुजिक्रियाया वैदिकपर्यायाः—

'आवयति, भवति, बभस्ति, वेति, वेवेष्टि, अवि-ष्यन्, वप्सति, भस्यः, वव्याम्, ह्वरति'—इति वेदनि-घण्टी २ अध्यायः । ३२५

भोजनत्यागः पुं. [ भोजनस्य त्यागः ] प्रायः; अनशनम् । उपवासः । ७५९

भोजनाच्छादो पुं. [ भोजनं च आच्छादश्च ] प्रासाच्छा-दनं; कशिपुः; भोजनाच्छादनम्; अशनवसनम् । १२१

भूमिः पुं. [ भूमेरपत्यम्, भूमि+शिवादित्वाद्गण् ] मङ्गल-ग्रहः; 'पश्यन् शस्तं सौम्यो घृतमधुतैलक्षयाय राज्ञां च । भूमिः समरविमर्दं शिखिकोपं तस्करभयं च'—इति

बृहत्संहितायाम् (५।६०) । नरकराजः; 'तासां पुरवरं भौमोऽकारयन्मणिपर्वतम्'—इति हरिवंशे

(१२०।१४) । [ तस्येदमित्यण् ] भूमिभवे त्रि. । 'भौमेन प्राविशद्भूमिं पार्वतेनाभवद्गिरिः । अन्तर्धानेन चास्त्रेण पुनरन्तर्हितोऽभवत्'—इति महाभारते (१।

१३६।२०) । अम्बरः; रक्तपुनर्नवा । ४६

भ्रुकुटिः स्त्री. [ भ्रुवोः कुटिः कौटिल्यम्, 'भ्रुकुंसादीनाम-कारो भवतीति वक्तव्यम् ] भ्रुकुटिः । ७७९

भ्रमः पुं. [ भ्रमु अनवस्थाने+भावे घञ् ] भ्रमणम्; अप्रमा; 'एवं किलोल्का व्यसृजत् तं भ्रमाय वणिक्सुतम्'—इति कथासरित्सागरे (२७।४६) । मिथ्याज्ञानं;

भ्रान्तिः; मिथ्यामतिः; अम्बुनिर्गमः; कुन्दः; 'अवन्ति-नाथोऽयमुदग्रवाहृविशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः । आरोप्य चक्रभ्रममुण्णतेजास्त्वष्ट्रेव यत्नील्लिखितो विभाति'—इति रघौ (६।३२) । 'चक्रभ्रमं चक्राकारशस्त्रोत्ते-जनयन्त्रम्, भ्रमोऽम्बुनिर्गमे भ्रान्तौ कुन्दाख्ये शिल्पि-यन्त्रके' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । भ्रमणशीले त्रि. । 'अधभ्रमस्त उर्विया विभाति यातयमानो अधिसानुपूश्ने'—इति ऋग्वेदे (६।६।४) । 'भ्रमो भ्रमणशीलो ज्वालामूहः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । रोगविशेषः;

'मूर्च्छा पित्ततमःप्राया रजःपित्तानिलाद्भ्रमः । चक्रवद्भ्र-मतो गात्रं भूमौ पतति सर्वदा । भ्रमरोग इति ज्ञेयो रजः-पित्तानिलात्मकः'—इति माघवकरः । 'शतावरी बलामूलद्राक्षासिद्धं पयः पिबेत् । ससितं भ्रमनाशाय वीजं वाट्यालकस्य च । पिबेद्दुरालभाकवायं सघृतं भ्रमशान्तये । त्रिफलायाः प्रयोगो वा प्रयोगः पयसोऽपि वा'—इति चक्रपाणिसंग्रहः । ६६८

अमरः पुं. [ अमति प्रतिकुसुममिति । 'अतिकमीत्यादिना' अर ] कीटविशेषः; मधुव्रतः; मधुकरः; मधुलिट्; मधुपः; अली; द्विरेफः; पुष्पलिट्; भृङ्गः; षट्पदः; अलिः; कलालापः; शिलीमुखः; पुष्पन्वयः; मधुकृतः; द्विपः; भसरः; चञ्चरीकः; मुकाण्डी; मधुलोलुपः; इन्द्विन्दरः; मधुमारकः; मधुपरः; लम्बः; पुष्पकीटः; मधुसूदनः; भृङ्गराजः; मधुलेही; रेणुवासः; कामुकः; 'अमरैः कुसुमानुसारिभिः'—इति रघौ (८।३८) ।

२५५

अमरकः पुं. [ अमर इवेति, अमर+इवे प्रतिकृतौ इति कन् ] कुलः; ललाटस्थितचूर्णकुन्तलः; अमरालकः; ललाटलम्बितचूर्णकुन्तलः । [ स्वार्थे कन् ] भृङ्गः; बालमूषिकः; अम्बुअमः । ५३१

आता [ ऋ ] पुं. [ आजते इति, आज्+नप्तुनेष्ट्वष्टृहोत्रिति' तृन् निपात्यते ] एकगर्भाजातः; सहोदरः; समानोदर्यः; सोदर्यः; सगर्भः; सहजः; सोदरः; 'भाई' इति भाषा । 'विभृयाद्वेच्छतः सर्वान् ज्येष्ठो आता यथा पिता । आता शक्तः कनिष्ठो वा शक्तचपेक्षा कुले स्थितिः । कुटुम्बार्थेषु चोद्युक्तस्तत्कार्यं कुरुते तु यः । स भ्रातृभिवृंहणीयो प्रासाच्छादनवाहनैः । अन्योऽन्यभेदो भ्रातृणां सुहृदां वा बलान्तकः । भवत्यानन्दकृद्देव ! द्विपतां नात्र संशयः'—इति दायतत्त्वम् । ५०८

आतृजः पुं. [ आतृः सहोदरात् जातः इति । जन्+पञ्चम्यामजातौ इति ड ] आतुरपत्यं; आत्रीयः; आतृव्यः; आतृपुत्रः; आतृपुत्रः । [ स्त्रियां टाप् ] आतृजा; आतृपुत्री । ५०६

आतृपुत्रः पुं. [ आतृः पुत्रः ] आतृजः; आतृव्यः । ५०६  
आतृवधूः स्त्री. [ आतृः वधूः जाया ] आतृपत्नी; आतृजाया; प्रजावती; आतृजाया । ५०४

आतृव्यः पुं. [ आतुरपत्यमिति । 'आतृव्यञ्च' इति व्यत् ] आतृपुत्रः; आतृपुत्रः; आत्रीयः; आतृजः । 'जयराजानुजं राज्ञा यशोराजं निवेशितम् । तन्मतेनावचस्कन्द आतृव्यं राजकामिषः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२८।४२) । (४५६) [ भ्रातृ+व्यन् सपत्ने' इति व्यन् ] शत्रुः; रिपुः; वैरी; 'आतृव्यमेतं त्वमदभ्रवीर्यमुपेक्षयाव्येधितमप्रमत्तः'—इति भागवते (५।११।१७) । 'तस्मात् आतृव्यं शत्रुम्'—इति तट्टीकायां स्वामी । ५०६

आत्रीयः पुं. [ आतुरपत्यं पुमानिति । भ्रातृ+ 'आतृव्यञ्च' इत्यत्र 'चकाराच्छश्च' इति काशिकोक्तेः छ ] आतृपुत्रः; आतृजः; भातृसम्बन्धिनि त्रि. । ५०६

भ्रान्तिः स्त्री. [ भ्रम्+वितन्, 'अनुनासिकस्य विवक्षलोः किङ्कति' इति दीघः ] अनवस्थितिः; भ्रमणं; भ्रमः; मिथ्यामतिः; 'षाण्मासिके तु संप्राप्ते भ्रान्तिः संजायते यतः । धान्नाक्षराणि सृष्टानि पत्रारुढान्यतः पुरा'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । 'युक्तिहीनप्रकाशत्वाद् भ्रान्तेर्न हस्ति लक्षणम् । यदि स्याल्लक्षणं किञ्चिद् भ्रान्तिरेव न सिध्यति'—इति तार्किकाः । ६९१

भ्रामकः पुं. [ भ्रामयति, भ्रमं जनयतीति । भ्रम्+णिच् । 'ण्वुल्तृचौ' इति ण्वुल् ] प्रस्तरभेदः; अयस्कान्तविशेषः; चुम्बकः; शृगालः; घूर्तः; सूर्यवर्तः । १६९

भ्राष्ट्रः पुं. [ भृज्यते अत्रेति । भ्रस्ज्+भ्रस्जिगमिनमिह निविश्यशां वृद्धिश्च' इति ष्ट्रन् ] यत्र कलायचणकादिकं भृज्यते सः; अम्बरीपः; 'रीद्रे चक्षुषि तज्जितस्तनुमुनु भ्राष्ट्रं च यश्चिक्षिपे'—इति नैषधे (३।१२८) 'अनुभ्राष्ट्रं भर्जनपात्रसदृशेन'—इति तट्टीका । आकाशम् । ३१३  
भ्रुकुटिः स्त्री. [ भ्रुवः कुटिः कौटिल्यमिति पष्ठीसमासः । अभ्रुकुंसादीनामिति वा ह्रस्वः ] क्रोधादिना भ्रुवः कौटिल्यं; भ्रुकुटी; भ्रुकुटिः । ७७९

भ्रूः स्त्री. [ भ्राम्यति नेत्रोपरि इति । भ्रम्+भ्रमेश्च डू' इति डू ] दृग्भ्यामूढ्वभागः; चिल्लिका; नयनोढ्वभाग-रोमराजी; 'विशालोन्नता सुखिनि द्रिद्रा विषमभ्रुवः । धनी दोर्घा संसक्तभ्रूवलिनद्वन्नतसभ्रुवः । आढघा निःस्वश्च खङ्गभ्रूर्मध्याश्च विनतभ्रुवः'—इति गारुडे ६६ अध्याये । ५२०

भ्रूकुटिः स्त्री. [ भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम् ] क्रोधादिना भ्रुवः कौटिल्यं; भ्रुकुटिः । ५२०

भ्रूणः पुं. [ भ्रूण्यते आशास्यते इति । भ्रूण्+घञ् ] स्त्रीगर्भः; क्लीवमपि । 'चत्तो इतश्चतामृतः सर्वाभ्रूणान्याख्या'—इति ऋग्वेदे (१०।१५।५।२) । बालकः । ४९९

भ्रूणः पुं. [ तादृम्यात्ताच्छब्दयमिति लक्षणया पुलिङ्गस्य स्त्रियामपि प्रवृत्तेः ] गर्भिणी । ८०९

न

मकरः पुं. [ कृणातीति, कृ हिंसायाम्+अच् । ततः मनुष्याणां करः हिंसकः । यद्वा मुखं करोतीति । मुख+क+क । उभयत्रापि पृषोदरादित्वात् साधुः ] जलजन्तु-

विशेषः; पादिनां गणान्तर्गतो जलजन्तुविशेषः; 'कुम्भी-  
रकूर्मनकाश्च गोधामकरश्चक्रवः । घण्टिकः शिशुमार-  
श्चेत्यादयः पादिनः स्मृताः'—इति भावप्रकाशः ।  
'मत्स्यानां मकरः श्रेष्ठो दीपनो वातनाशनः । रुचिप्रदः  
शुक्रकरो ग्राही चोष्णविकारहा । मूत्राश्मरीणां शमनो  
गुल्मातीसारनाशनः'—इति हारीतः । मेघादिद्वादश-  
राश्यन्तर्गतो दशमराशिः; आकोकेरः । रवियुक्तमकर-  
जातफलम्—'सदाटनो मित्रगणो विपक्षतां प्रयाति नूनं  
घनवर्जितः स्यात् । यद्युष्णरश्मिमकरोपगः स्यात् प्रसूति-  
काले स तु भाग्यहीनः ।' चन्द्रयुक्तमकरजातफलम्—  
'कलितशीतभयः किल गीतवित्तमरुषा सहितो मदनातुरः ।  
निजकुलोत्तमवृत्तिकरः परं हिमकरे मकरे पुच्छो भवेत् ।'  
भौमयुक्तमकरजातफलम्—'पराक्रमप्राप्तवरः प्रतिष्ठः  
सदङ्गनाप्राप्तिवराङ्गनः स्यात् । श्रिया समेतो मकरे  
महीजे प्रसूतिकाले कुलपालकश्च ।' द्युस्थितमकरजात-  
फलम्—'रिपुभयेन युतः कुमतिर्नरः स्मरविहीननरः  
परकर्मठः । मकरगो सति शीतकरात्मजे व्यसनतः स नतः  
पुच्छो भवेत् ।' गुर्वाश्रितमकरजातफलम्—'न मनोरथ-  
सिद्धिमुपैति नरो वचसामधिपे मकरोपगते । भवयुक्  
कुमतिः परकर्मरतो बहुतोषयुक्तो मदनापहतः ।' शुक्राश्रित-  
मकरजातफलम्—'अतिरतिर्जनने त्वजने नृणां व्यय-  
भयं कृशता बहुचिन्तया । भृगुमुते मृगराशिगते सदा  
कविजने विजनेऽपि मतिर्भवेत् ।' शनिग्रहस्थितमकरजात-  
फलम्—'मकरोपगतः खलु भानुसुतः कृपया सहितो  
नृपमानयुतः । वरगन्धविभूषणभूषितगात्रः तरुणीरमणः  
पङ्कजनेत्रः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । व्यूहभेदः; 'यायाद्-  
व्यूहेन महता मकरेण पुरो भये'—इति कामन्दकीये  
नीतिसारे (१८।४८) । ६६०

मकरध्वजः पुं. [ मकरेण चिह्नितो ध्वजो यस्य । मकरः  
ध्वजे यस्येति वा ] मकरकेतनः; मीनकेतनः; कन्दर्पः;  
कामदेवः; 'शरीरिणा जैत्रशरेण यत्र निःशङ्कमूषे मकर-  
ध्वजेन'—इति माघे (३।६१) । रससिन्दूरविशेषः;  
चन्द्रोदयः । ३२

मकरन्दः पुं [ मकरमपि अन्दति बध्नाति धारयतीति वा ।  
मकर+अदि बन्धने+अण् ततः शकन्वादिवात् साधुः ]  
पुष्परसः; मधु; 'प्रस्थानप्रणतिभिरङ्गुलीषु चकुम्भी-  
लिसक्च्युतमकरन्दरेणु गौरम्'—इति रघौ (४।८८) ।

कुन्दपुष्पवृक्षः; किञ्जल्के वली । १८८

मखः पुं. [ मखन्ति गच्छन्ति देवा अत्रेति । मख् सपणे+  
'हलश्च' इति घञ् । संज्ञापूर्वकत्वात् नृद्धिः । यद्वा पुंसीति  
घ ] यज्ञः; 'कृत्वा तस्य मखं पूर्णं करिष्यामि तवापि वै'  
—इति भागवते (१।१९।२३) । ४१४

मघवा [ न् ] पुं. [ महते पूज्यते इति । मह्, पूजायाम्+  
'इवश्रुक्षन्पूपन्प्लीहभ्रिति' कनिन् । निपातनाद् हस्य  
घः अवुगागमश्च ] इन्द्रः; 'दुदीह गां स यज्ञाय सस्याय  
मघवा दिवम् । सम्पद्धिनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्'  
—इति रघौ (१।२६) । जिनानां द्वादशचक्रवर्त्यन्तर्गत-  
चक्रवर्तिविशेषः; सप्तमद्वापरस्य व्यासः; 'मघवा सप्तमे  
प्राप्ते वशिष्ठस्त्वष्टमे स्मृतः'—इति देवीभागवते  
(१।३।२८) । ५२

मङ्गलु अव्य. [ मज्जतीति, मस्ञ्+बाहुलकात् सु, 'मस्जि-  
नशोः' इति नुम्, 'स्कोः' इति सलोपः, अव्ययसंज्ञा ]  
शीघ्रं; द्रुतम्; आशु; क्षिप्रम् । ६९६

मङ्गः पुं. [ मङ्गति सर्पतीति । मगि+अच् ] नौकाशिरः ।

६७२

मङ्गलम् त्रि. [ मङ्गति हितार्थं सर्पति, मङ्गति दुरदृष्ट-  
मनेनास्माद्वेति । मगि+'मङ्गैरलच्' इत्यलच् ] भावुकं;  
भव्यं; कल्याणं; भविकं; शुभं; क्षेमं, प्रशस्तं; मद्रं;  
द्वः श्रेयसं; शिवम्; अरिष्टं; कुशलं; रिष्टं; मद्रं;  
शस्तम्; 'मङ्गलाय च लोकानां क्षेमाय च भवाय च'  
—इति भागवते (५।१४।३४) । 'कल्याणं मङ्गलं  
क्षेमं शातं शर्म शिवं शुभम्'—इति वैद्यकरत्न-  
मालायाम् । सर्वाशिरक्षणं; पुं. ग्रहविशेषः; अङ्गारकः;  
भौमः; कुजः; वक्रः; महीसुतः; वर्षाचिः; लोहिताङ्गः;  
खोन्मुखः; ऋणान्तकः; आरः; क्रूरदृक्; आवनेयः;  
'उग्रः प्रतापी क्षितिपालमन्त्री, रणप्रियो वक्रवचाः  
सरोषः । सत्यान्वितः शूरगणप्रणेता, कुजस्य वारे प्रभवो  
मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः १२२

मङ्गलपाठकः पुं. [ पठतीति, पठ्+ण्वल् । मङ्गलस्य  
पाठकः ] वृन्दी; 'आः पाप ! दुरात्मन् । वृथामङ्गल-  
पाठक !'—इति वेणीसंहारे ४३५

मङ्गल्यकः पुं. [ मङ्गल्य+संज्ञायां कन्, यद्वा मङ्गलस्य  
मङ्गलग्रहस्य प्रियः इति यत्, ततः स्वार्थे कन् ] मसूरः;  
मसूरकः; मङ्गल्यः; 'मङ्गल्यको मसूरः स्यान्म-

ङ्गत्या च मसूरिका'—इति भावप्रकाशः । ५८१  
**मङ्गिनी** स्त्री. [ मङ्गो नोशिरस्तदस्या अस्तीति । इनि,  
 डीप् ] नौका । ६७२

**मज्जा** [ न् ] पुं. [ मज्जति अस्थिष्विति । मज्ज्+ 'श्वन्,  
 उक्षन्, पूषन्, प्लीहन्, क्लेदन्, स्नेहन्, मूर्द्धन्, मज्जन्निति'  
 कनिन् निपात्यते ] अस्थिमध्यस्थस्नेहविशेषः; कौशिकः;  
 शुक्रकरः; अस्थिस्नेहः; अस्थिसम्भवः; अस्थिसारः;  
 तेजः; वीजम्; अस्थिजं; जीवनं; देहसारः; 'अस्थि  
 यत् स्वाग्निना पक्वं तस्य सारो द्रवो घनः । यः स्वेदवत्  
 पृथग्भूतः स मज्जेत्यभिधीयते । 'स्यूलास्थिषु विशेषेण  
 मज्जा त्वम्यन्तरे स्थितः'—इति भावप्रकाशः । 'बल-  
 शुक्ररसश्लेष्मभेदोमज्जविवर्द्धनः । मज्जा विशेषतोऽ-  
 स्थनाञ्च बलकृत् स्नेहने हितः'—इति चरकः ।  
 वृक्षादेवृत्तमस्थिरभागः; सारः; 'यस्य यस्य फलस्थेह  
 वीर्यं भवति यादृशम् । तस्य तस्यैव वीर्येण मज्जानमभि-  
 निदिशेत्'—इति राजवल्लभः । ८५३

**मज्जा** स्त्री. [ मज्जतीति, मज्ज्+अच्, अजादित्वात्  
 टाप् ] अस्थिसारः । ८५३

**मज्जरी** स्त्री. [ मज्जू मनोज्ञत्वम् ऋच्छति । मज्जू+  
 ऋ+ 'अच इ' इति इ, गुणे, मज्जू+अरि, शकन्ध्वा-  
 दित्वम् ] वल्लरीः; मज्जरी; वल्लरी; 'मज्जरिमं-  
 ज्जरी मज्जिमंज्जरं त्रिषु वल्लरी । वल्लरं त्रिषु वल्लिश्च  
 वल्लरिः पत्रनालिका'—इति हर्षद्वचन्द्रः । लता; पङ्क्तिः;  
 अङ्कुरः । १८५

**मज्जरी** स्त्री. [ मज्जरि+कृदिकारादिति पक्षे डीप् ]  
 मज्जरिः; वल्लरी; मज्जी; 'वापीकच्छे वासः कण्टक-  
 वृतयः सजागरा भ्रमराः । केतकविटप! किमेतैर्ननु वारयसि  
 मज्जरीगन्धम् ।' वल्लरीमज्जरयोर्भेदः, यथा—अभिनव-  
 निर्गता आयता सुकुमारा सुकुसुमा अकुसुमा च मज्जरिः ।  
 यथा—चूतमज्जरिः; कदलीमज्जरिः । सैव पुरातनी  
 वृद्धि गता वल्लरिः । पुनश्चिरमूतापि यथा—तालम-  
 ज्जरिः, गुवाकमज्जरिः । लता; 'निर्गते मज्जरीकु-  
 ञ्जादपश्यत् पुरतस्ततः । कन्ये नीलनिचोलिन्यौ स के-  
 चिच्चालोचने'—इति राजतरङ्गिण्याम् । तुलसी । १८५

**मज्जरी** पुं.—कली. [ मज्जति मधुरं शब्दायते इति ।  
 मज्ज् ध्वनी, सौत्रघातुः+बाहुलकाद् ईरन् ] नूपुरः;  
 'मज्जरीरोष्नी सनूपुरः'—इति रभसः । 'मूलरमभीरं

त्यज मज्जरीं रिपुमिव केलिषु लोलम्'—इति गीत-  
 गोविन्दे (५।११) । पुं. [ मज्ज्+ईरन् ] मन्वान-  
 दण्डरज्जुवन्धनार्थस्तम्भः; विष्कम्भः; कुटरः । ५६१

**मज्जु** त्रि. [ मज्जतीति, मज्ज् ध्वनी, सौत्रघातुः, 'मृग-  
 श्वादयश्च' इति कु ] मनोज्ञः; प्रियः; मधुरः; मज्जुलं;  
 सुन्दरम्; 'त्यक्त्वा गेहं झटिति यमुनामज्जुकुञ्जं  
 जगाम'—इति पदाङ्कदूते । ६८९

**मज्जुकेशी** [ न् ] पुं. [ मज्जुवो मनोहराः केशाः सन्त्यस्य,  
 इनि ] श्रीकृष्णः; सुन्दरकेशविशिष्टे त्रि. । २१

**मज्जुघोषा** स्त्री. [ मज्जुर्मनोहरो घोषः शब्दो यस्याः सा ]  
 स्वर्श्या; अप्सरोविशेषः । ८८

**मज्जुलः** त्रि. [ मज्जू मज्जुत्वमस्थास्तीति । मज्जू+  
 सिध्मादित्वाल् लच् ] सुन्दरः; प्रियः; मधुरः; मज्जुः;  
 'मज्जुलं यौवनोद्भेदं प्राप श्रीरिव माषवे'—इति  
 कालिकापुराणे । पुं. जलरङ्गपक्षी; क्ली. जलाञ्चलं;  
 निकुञ्जं; शबलः; स्त्री. नदीभेदः; 'चित्रोपलां चित्र-  
 रयां मज्जुलां वाहिनीं तया'—इति महाभारते  
 (६।१।३४) । ६८९

**मज्जुषा** स्त्री. [ मज्जूषा+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः ]  
 मज्जूषा पेटा; 'पिटारी, पेटो' इति भाषा । 'मज्जुषापि  
 च मज्जूषा पेटा च पेटिकेऽप्यपि'—इति शब्दरत्नावली ।  
 ३१२

**मज्जूषा** स्त्री. [ मज्जति द्रव्यमस्मिन् । 'महजेनुम् च'  
 इति मह्ज्+ऊषन् नुम् च, स चाचोऽन्त्यात् परः । ततो  
 जश्त्वश्चुत्वे मध्यमस्य लोपात् साधुः ] पिटकः;  
 'मज्जूषायां सुतं कुन्ती मुञ्चन्ती वाक्यमब्रवीत्'—इति  
 देवीभागवते (२।६।३३) । पाषाणः; मञ्जिष्ठा;  
 'मञ्जिष्ठा विकसा जिङ्गी समञ्जा कालमेषिका । मण्ड-  
 कपर्णी भण्डीरीः मण्डी योजनवत्त्यपि । रसायन्यरणा  
 काला रक्ताङ्गी रक्तयष्टिका । भण्डीतकी च गण्डीरी  
 मज्जूषा वस्त्ररञ्जिनी'—इति भावप्रकाशः । ३१२

**मठः** पुं. [ मठन्ति वसन्ति यत्र । मठ् मदनिवासयोः, 'हलश्च'  
 इति घञ्, संज्ञापूर्वकत्वात् वृद्धिः । यद्वा कर्त्तरि जिजर्थ-  
 कात् पञ्चम्यच् ] त्रतिस्थानं; यतीनां स्थानं, छात्रादि-  
 निलयः; छात्रशाला; गन्त्रीरयः । २९८

**मणिः** पुं.—स्त्री. [ मण्+ 'सर्वघातुभ्य इन्' इति इन् ]  
 मुक्तादिकं; रत्नं; मणी; पाषाणभेदः; अष्टप्रजातिः;

'रत्नं क्लीवे मणिः पुंसि स्त्रियामपि निगद्यते । तत् पाषाणभेदोऽस्ति मुक्तादि च तदुच्यते'—इति भाव-  
प्रकाशः । 'मणी वज्रसमुत्कीर्णं सूत्रस्येवास्ति मे गतिः'—  
इति रघौ (११४) । अजायाः कण्ठस्थितस्तनः;  
लिङ्गाग्रम्; अलिञ्जरः; योन्यग्रभागः; नागभेदः;  
मणिबन्धः; मुनिभेदः; 'असितो देवलश्चैव जैगिषव्यश्च  
तद्ववित् । ऋषभो जितशत्रुश्च महावीर्यस्तथा मणिः'—  
इति महाभारते (२।११।२२) । १७६

**मणिकम्** क्ली. [ मणिरेवेति, मणि + 'यवादिभ्यः कन्'  
इति स्वार्थे कन् ] अलिञ्जरः; गर्गरी; 'स तमादाय  
मणिके प्राक्षिपज्जलचारिणम्'—इति मात्स्ये (१।२१) ।  
३१७

**मणिकारः** पुं. [ मणिं करोतीति । कृ + अण् ] मणि-  
निर्मितालङ्कारादिकर्ता; वैकटिकः; न्यायचिन्तामणि-  
ग्रन्थकर्ता गङ्गेशोपाध्यायः । ५८८

**मणितम्** क्ली. [ मण् + भावे क्त ] मैथुनकालिकध्वनिः;  
रतकूजितं; 'सौकृतानि मणितं करुणोक्तिः स्निग्ध-  
मुक्तमलमर्थवचांसि'—इति माघे (१०।७५) । ५६९

**मणिदोषः** पुं. [ मणेः दोषः ] रत्नदुश्चिह्नं; रत्नावगुणः;  
स एव त्रासः । ८०८

**मणिबन्धः** पुं. [ मणिबन्धयते यत्र । अधिकरणे घञ् ]  
प्रकोष्ठपाण्योः सन्धस्थानं; करस्यादिभागः; मणिः;  
करग्रन्थिः; करग्रन्थिकः; 'मणिबन्धनिगूढैश्च सुदिलष्ट-  
शुभसन्धिभिः । नृपाहीनैः करच्छेदैः सशब्दैर्धनवज्रिताः—  
इति गारुडे ६५ अध्यायः । ५३३

**मण्डनम्** क्ली. [ मण्डयते अनेन इति । मडि भूषायाम् +  
करणे ल्युट् ] भूषणम्; 'किमिव हि मधुराणां मण्डनं  
नाकृतीनाम्'—इति शाकुन्तले (१।४) । अलङ्कारिष्णुनि  
त्रि. । 'चतुर्धा मण्डनं वासोभूषामाल्यानुलेपनैः'—इति  
महाभारते । ५३९

**मण्डपः** पुं. — क्ली. [ मडि + भावे घञ्, मण्डः, मण्डं पाति,  
पा + क ] जनविभ्रामगृहं; जनाश्रयः; 'गङ्गातीरे शुभां  
भूमिं मापयित्वा द्विजोत्तमैः । कुर्वन्तु मण्डपं स्वस्थाः  
शतस्तम्भं मनोहरम्'—इति देवीभागवते (२।११।५०) ।  
देवादिसमर्पितवेशमः; 'प्रदक्षिणायास्तु समस्त्वप्रतो  
मण्डपो भवेत् । तस्य चाद्वेन कर्तव्यस्त्वप्रतो मुखमण्डपः—  
इति विश्वकर्मप्रकाशे । [ मण्डं पिबतीति । पा + क ]

मण्डपानकर्तारि त्रि. । २९८

**मण्डलम्** क्ली. [ मण्डयति भूषयतीति । मडि + 'कल-  
स्तूपश्च' इति कल ] चन्द्रसूर्ययोर्बहिर्वेष्टनं; चन्द्रसूर्ययो-  
रत्वातजरश्मिमण्डलं; परिवेशः; परिधिः; उपसूर्यकं;  
परिवेषः; चक्रवालम्; 'वातेन मण्डलीभूताः सूर्याचन्द्रमसोः  
कराः'—इति साहस्राङ्कः । कोठरोगः; द्वादशराजकम्;  
'उपेतः कोपदण्डाम्यां सामात्यः सह मन्त्रिभिः । दुर्ग-  
स्थश्चिन्तयेत्साधु मण्डलं मण्डलाधिपः'—कामन्दकीये  
नीतिसारे । बिम्बः; देशः; गोलं; चक्रं; संघातः;  
नखाघातः; घन्विनां स्थानपञ्चकान्तर्गतस्थितिविशेषः;  
'मण्डलाकारपादाभ्यां मण्डलं स्थानमीरितम्'—इति  
शब्दरत्नावली । व्याघ्रनखाख्यगन्धद्रव्यं; व्यूहविशेषः;  
'तिर्गुवृत्तिश्च दण्डः स्याद्भोगोऽन्वावृत्तिरेव च ।  
मण्डलं सर्वतोवृत्तिः पृथग्वृत्तिरसंहतः'—इति भरत-  
धृतकामन्दकीये । अस्य पुंस्त्वमपि, 'भोष्मेण घातं राष्ट्राणां  
व्यूहः प्रत्यङ्मुखो ययी । मण्डलः सुमहाव्यूहो दुर्भेदोऽ-  
भिन्नघातिनाम्'—इति महाभारते (६।७८।२०) ।  
ग्रहादीनां मण्डलसंस्थानं तत्परिमाणम्; 'सर्वेषां तु  
ग्रहाणां वै अवस्ताच्चरते रविः । एवंरुद्वर्षं स्थितः सोमः  
सोमाश्रयमण्डलम्'—इति देवीपुराणे । त्रि. बिम्बं  
(४४); पुं. [ मण्डं लाति गृह्णातीति । मण्ड + ला +  
क ] कुक्कुरः; सर्पविशेषः; देहस्याष्टप्रकारसन्ध्यन्तर्गत-  
सन्धिविशेषः; 'कण्ठहृदयनेत्रकलोमनाडीषु मण्डलाः—  
इति सुश्रुतः । बिम्बं (५४२); संघातः (६८७) । ४१

**मण्डली** स्त्री. [ मण्डलमस्त्यस्या इति । अशं आद्यच्,  
गौरादित्वाद् डीप् ] गोलाकारेण समूहः; दूर्वा; गुडूची;  
'गुडूची मधुपर्णी स्यादमृतामृतवत्तली । छिन्ना च्छिन्नरूहा  
च्छिन्नोद्भवा वत्सादनीति च । जीवन्ती तन्निका सोमा  
सोमवल्ली च कुण्डली । चक्रलक्षणिकाधीरा विशल्या च  
रसायनी । चन्द्रहासी वयस्या च मण्डली देवनिर्मिता—  
इति भावप्रकाशः । पुं. मण्डली (न्) [ मण्डल +  
इनि ] सर्पः; विडालः; जाह्नकः; वटवृक्षः; गोना-  
शसर्पः । ७७

**मण्डली** [ न् ] पुं. [ मण्डलं कुण्डलं कुण्डलाकारेण शरीर-  
वेष्टनमस्थास्तीति । मण्डल + इनि ] जाह्नकः; गात्र-  
संकोची; विडालविशेषः; 'वनबिलाव' इति भाषा ।  
सर्पः; विडालः; वटवृक्षः; गोनाशसर्पः । २३६



मण्डलाग्रः पुं. [ मण्डले मण्डलाकारेण भ्रामणे अग्रम् अग्रभागो यस्य । तथा भ्रामणे अग्रभाग एव प्राधान्येन छेदको भवतीति तथात्वम् ] कृपाणः; तलवारि; खड्गः । ४७२

मण्डलेश्वरः पुं. [ मण्डलस्य ईश्वरः ] एकजन्मा; भयापहः; मण्डलेशः; भूम्येकदेशाधिपः; एकदेशाधिपः; 'चतुर्यो-जनपर्यन्तमधिकारं नृपस्य च । यो राजा तच्छतगुणः स एव मण्डलेश्वरः।' [ मण्डलस्य पुच्छस्य ईश्वरः ] कुक्कुरः; [ मण्डलस्य देहवलयस्य ईश्वरः ] सर्पः । ४२२

मण्डूकः पुं. [ मण्डयति भूषयति जलाशयमिति । मडि+ 'शलिमण्डिम्यामूकण्' इति ऊकण् ] भेकः; 'मण्डूकः प्लवगो भेको वर्षाभूदुर्दुरो हरिः । मण्डूकः इलेष्मलो नातिपित्तलो बलकारकः'—इति भावप्रकाशः । शोणकः; मुनिविशेषः; गाढतेजाः; बन्धविशेषे क्ली. । अद्व-जातिभेदः; 'तत्र तित्तिरिक्लमापान् मण्डूकाख्यानं ह्योत्तमान्'—इति महाभारते (२।२।६) । ६६२

मतिः स्त्री. [ मन्यतेऽनयेति । मन्+क्तिन् ] बुद्धिः; मनीषा; धिषणा; 'मतिस्तु द्विविधा लोके युक्ता-युक्तेति सर्वथा'—इति देवीभागवते (१।१७।२९) । इच्छा; स्मृतिः; आर्यः; शाकभेदः; 'विप्रेन्द्र ! का प्रशंसेयं जन्म ते ब्रह्ममानसे । यस्य यत्र कुले जन्म तन्मतिस्तादृशी भवेत्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । मतिकरौषधम्; 'पाठा द्वे जीरके कुष्ठमश्वगन्वाजमोदकम् । वचा त्रिकटुकं चैव लवणं चूर्णमुत्तमम् । ब्राह्मीरसैर्माषितं च सर्पिर्मधुसमन्वितम् । सप्ताहं भक्षितं कुर्यान्महेश्वर्यं मतिं पराम्'—इति शारुडे अध्याये १९८ । ३३४

मतिमान् [ त् ] त्रि. [ मतिरस्यास्तीति । मति+प्रशंसायां मनुप् ] बुद्धिमान्; विचक्षणः; मेधावी; धीमान्; स्त्री. मतिमती । ३३३

मत्तः त्रि. [ माद्यतीति, मद्+कर्तरि क्त, 'न घ्याख्येति' नत्वाभावः ] मत्तताविशिष्टः; सुरापानेन विकलान्त-करणः; शौण्डः; उत्कटः; क्षीवः; मद्योद्धतः; 'ते पीत्वा मदिरां मत्ताः कृत्वा युद्धं परस्परम्'—इति देवीभागवते (२।८।४) । पुं. (२२०) क्षरन्मदहस्ती; प्रमिन्नः; गर्जितः; मत्तङ्गः; क्षरन्मदः; धुस्तूरः; कोकिलः; महिषः; हृष्टः । [ मदी हर्षे, वत ] अविवेकी; 'बला-न्मत्तो महाबलः'—इति रामायणे (१।४४।१०) ।

'मत्तोऽविवेकी'—इति तट्टीकाकृद्रामानुजः । ३८६  
मत्तकाशिनी, मत्तकासिनी स्त्री. [ मत्तेव काशते भाति मत्तकाशिनी, तालव्यमध्या । मत्त इव क्षीव इव कसति गच्छति मत्तकासिनी । मत्त+कस् गतो+ग्रह्यादि-त्वाणिनि, दन्त्यमध्यापि ] उत्तमस्त्री; मुख्या नारी; वरारोहा; वरस्त्री; 'न तासां सदृशीं मन्ये त्वामहं मत्तकाशिनि!'—इति महाभारते (१।१७३।३९) ।

४८९

मत्तवारणम् क्ली. [ मत्तं वारयतीति । वृ+णिच्+ल्यु ] प्राङ्गणावरणम्; अपाश्रयः; प्रासादवीथीनां वरण्डः; 'वराभदा' इति भाषा । 'दिव्यघराधरभूरिव राजति मत्त-वारणोपेता'—इति कुट्टनीमते (९) । 'प्रासादवीथीनां वरण्डकः'—इति तट्टीका । प्रासादवीथीनां कुण्डवृक्ष-वृत्तिः; कुन्दवृक्षवृत्तिः; पूगचूर्णम्; पुं. [ वार्यते संयम्यते शृङ्खलास्त्रिभिः इति वारणः । वृ+णिच् कर्मणि ल्युट् । मत्तश्चासौ वारणश्चेति ] प्रविललन्नकटकुञ्जरः; मत्त-हस्ती । ३०७

मत्सरी [ न् ] त्रि. [ मत्सरोऽन्यशुभद्वेषोऽस्त्यस्येति । मत्सरो+इनि ] अन्यशुभद्वेषः; कर्णेजपः; दुर्जनः; पिशुनः; सूचकः; नीचः; द्विजिह्वः; खलः; 'परि-भोक्ता कृमिर्भवति कीटो भवति मत्सरी'—इति मनुः (२।२०१) । ३४६

मत्स्यः पुं.-स्त्री. [ माद्यन्ति लोका अनेनेति । मद्+ 'ऋतन्यञ्जीति' स्यन् ] जलजन्तुविशेषः; पृथुरोमा; झपः; मीनः; वैसारिणः; अण्डजः; विसारः; शकली; शन्धली; झसः; आत्माशी; संवरः; मूकः; जलेशयः; कण्टकी; शल्की; मच्छः; अनिमिषः; शुङ्गी; 'मत्स्यो मीनो विकारश्च उषो वैसारिणो-ऽण्डजः । शकुलः पृथुरोमा च स सुदर्शन इत्यपि । रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मत्स्याः परिकीर्तिताः । मत्स्याः स्निग्धोष्णमधुरा गुरवः कफपित्तलाः । वातघ्ना बृंहणा वृष्या रोचका बलवर्द्धनाः । मद्यव्यवायसक्तानां दीप्ताग्नीनां च पूजिताः'—इति भावप्रकाशः । पुं. मीनविशेषः; विराटदेशः; नारायणः; देश-विशेषे बहुवचनान्तः । द्वादशराशिः; 'मत्स्यो घटी नृमियुनं सगदं सवीणम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । अष्टादशपुराणान्तर्गतपुराणविशेषः; 'पुष्यं पवित्रमायुष्य-

मिदानीं शृणुत द्विजाः । मात्स्यं पुराणमखिलं यज्जगाद  
गदाधरः—इति मत्स्यपुराणे १ अध्यायः । दशम  
वतारान्तर्गतप्रथमावतारः; 'एक एवाभवन्मत्स्यावतारः  
कल्प आदिमे । तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि भुवितमुवित-  
प्रदायकम्'—इति मेस्तन्त्रे । ६५७

मत्स्यण्डी स्त्री. [ मद् मधुरसं स्यन्दते इति । मत्+  
स्यन्द्+कर्मण्यण्, डीप् । पृषोदरादिः ] मत्स्यण्डिका;  
शर्कराविशेषः; खण्डविकारः; 'राव' इति भाषा । 'इक्षो  
रसो यः सम्पक्वो घनः किञ्चिद् द्रवान्वितः । मन्दं यत्  
स्यन्दते यस्मान्मत्स्यण्डीति निगद्यते । मत्स्यण्डी मेदिनी  
वल्गु लघ्वी पित्तानिलापहा । मधुरा वृंहणी वृष्या  
रक्तदोषापहा स्मृता—इति भावप्रकाशः । ३२४

मत्स्यबन्धनम् क्ली. [ बन्धयति अनेन इति बन्धनम् ।  
बन्धि+करणे ल्युट्, मत्स्यानां बन्धनम् ] जालं;  
वडिशम् । ७६४

मत्स्यबन्धी [ न् ] पुं. [ मत्स्यान् बन्धुं धर्तुं शीलमस्य ।  
मत्स्य+बन्ध्+इनि ] कौवर्तः; धीवरः; दाशः; जालिकः;  
'अयान्येद्युस्तैर्यमकिङ्कराभैर्मत्स्यबन्धिभिः प्रभात आगत्य  
जालैराच्छादितो ह्रदः—इति पञ्चतन्त्रे (५।२९) ।  
५९४

मत्स्यबन्धिनी स्त्री. [ मत्स्यबन्धिन्+स्त्रियां डीप् ] मत्स्य-  
घानी; मत्स्यरक्षार्थपात्रं; कुवेणी; मत्स्यकरण्डिका;  
खारयिका; कुवेणिः; कुवेणा; कुपिनी; कुपिनिः । ७६४

मत्स्यवेधनम् क्ली. [ मत्स्यो विध्यतेऽनेनेति । मत्स्य+  
विष्+करणे ल्युट् । मत्स्यानां वेधनमिति वा ] वडिशम् ।  
७६४

मत्स्यवेधनी स्त्री. [ मत्स्यवेधन+डीर् ] वडिशं; मद्गु-  
पक्षी । ७६४

मत्स्यसंघातः पुं. [ मत्स्यानां बीजभूतमत्स्यशिशूनां संघातः  
समूहः ] झुद्राण्डं; पोताघानम् । ६६१

मथितम् क्ली. [ मथ्+क्त ] निर्जलघोलं; तक्रं; 'ससरं  
निर्जलं घोलं मथितं सरवजितम्—इति हारीतः ।  
'घोलं तु मथितं तक्रमुदशिवच्छच्छिकापि च । ससरं  
निर्जलं घोलं मथितत्त्वसरोदकम् । तक्रं पादजलं प्रोक्तम्  
उदशिवत्त्वद्वारिकम् । छच्छिका सारहीना स्यात्  
स्वच्छा प्रचुरवारिका—इति भावप्रकाशः । २७५

मथुरा स्त्री. [ मथ्यते पापराशियंया इति । मथ्+मन्दिवा-

शोत्यादिना' उरच् ] रागिणीभेदः; पुरीविशेषः; मधू-  
पन्नं; मधुपुरी; मधुरा; मयूरा; 'अयोध्या मथुरा  
माया काशी काञ्च अवन्तिका । पुरी द्वारवती चैव  
सप्तैता मोक्षदायिकाः—इति विष्णुपुराणे । १०५ अ  
मदः पुं. [ मदयतीति, मद्+अच् ] हस्तिगण्डजलं; दानम्;  
'मदसिक्तमुखैर्मृगाधिपः करिभिर्वर्तयते स्वयं हतैः—इति  
किरातार्जुनीये (२।१८) । गर्वः (७२२); 'मदमान-  
समुद्धतं नृपं न वियुङ्क्ते नियमेन मूढता—इति  
किरातार्जुनीये (२।४९) । [ मद्यते इति । मद्+  
'मदोऽनुपसर्ग' इति अप् ] हर्षः; आमोदः; 'उप नः  
सवनागहि सोमपाः पिव गोदा इद्रेवतो मदः—  
इति ऋग्वेदे (१।४।२) 'मदो हर्षः' इति तद्भाष्ये  
सायणाचार्यः । रेतः; कस्तूरी; 'मृगनाभिमृगमदो  
मदः कस्तूरिकाण्डजः—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।  
रोगविशेषः; 'स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां विभक्तिं च—  
इति माधवः । मद्यं; क्षैत्र्यं, मत्ततेति यावत्; 'मृगयाक्षो  
दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः । तौर्यत्रिकं वृथाटथा  
च कामजो दशको गणः—इति मनुः (७।४७) ।  
नदः; कल्याणवस्तु; मदलक्षणम्—'अहं महात्मा  
धनवान् मत्तुल्यः कोऽस्ति भूतले । इति यज्जायते चित्तं  
मदः प्रोक्तः स कोविदैः—इति पात्रे । 'बुद्धेर्माहः  
समभवदहङ्कारादभूमदः—इति मात्स्ये । दानवभेदः;  
'असिलोमा सुकेशी च शठश्च वलको मदः—इति हरि-  
वंशे (३।८६) । २१७

मदनः पुं. [ मदयतीति, मद्+णिच्, ल्यु ] कामदेवः;  
अङ्गजः; 'मदनान्मदनाख्यस्त्वं शम्भोर्दंपतिं सदपकः ।  
तथा कन्दर्पनाम्नापि लोके ख्यातो भविष्यसि—इति  
कालिकापुराणे । योगाचार्यरूपः शिवस्यावतारविशेषः;  
श्रीकृष्ण उवाच—'युगावर्तेषु सर्वेषु योगाचार्यच्छलेन  
तु । अवताराणि शर्वस्य शिष्याश्च भगवन् ! वद ।  
उपमन्युरुवाच 'श्वेतः सुतारो मदनः सुहोत्रः कङ्क एव  
च—' इति शिवपुराणे । [ मदयति भक्तानां मनः ।  
मद्+ल्यु । मनसि आनन्दजनकत्वादस्य तथात्वम् ]  
महादेवः; 'उन्मादो मदनः कामो ह्यद्वत्योऽङ्ककरो  
यशः—इति महाभारते (१३।१७।६९) । मत्तता;  
वरारोहाणां कामिनीनां भावविशेषः इति यावत् । 'सौधु-  
पानेन चात्पेन तुष्ट्या मदनेन च । विलासनेश्च विविधैः

प्रेक्षणीयतराभवत्—इति महाभारते (३।४६।१३) ।  
 वसन्तः; धृस्तुरः । धृस्तुरार्थे पर्यायो यथा—‘धृस्तुर-  
 धृत्तर्षत्तूरा उन्मत्तः कनकाह्वयः । देवता कितवस्तूरो  
 महामोहः शिवप्रियः । मातुलो मदनश्चास्य फले मातुल-  
 पुत्रकः’—इति भावप्रकाशः । सिक्क्यकं; वृक्षभेदः;  
 पिबुकः; मुचुकुन्दः; कण्टकी; पिण्डीतकः; मरुवकः;  
 श्वसनः; करहाटकः; शाल्यः; ‘मदनश्छर्दनः पिण्डो  
 नटः पिण्डीतकस्तथा । करहाटो मरुवकः  
 शाल्यको विषपुष्पकः । मदनो मधुरस्तिकतो वीर्योष्णो  
 लेखनो लघुः’—इति भावप्रकाशः । भ्रमरः; मायः;  
 खदिरवृक्षः; मङ्कोटवृक्षः; बकुलवृक्षः; वृक्षविशेषः;  
 शाल्यः; कट्यः; पिण्डः; धाराफलः; तगरः; करहाटः;  
 पिण्डीतकः; श्वसनः; मरुवकः; आलिङ्गनविशेषः;  
 मयनम्; ‘मयनं तु मधूच्छिष्टं मधुशेषं च सिक्क्यकम् ।  
 मध्वाधारो मदनकं मधूपितमपि स्मृतम् । मदनं मृदु  
 सुस्निग्धं भूतघ्नं व्रणरोपणम् । भग्नसन्धानकृद्वातकुष्ठ-  
 वीसर्पंरक्तजित्’—इति भावप्रकाशः । मण्डलिसर्पान्तर्गत-  
 सर्पविशेषः; ‘शिशुको मदनः पाल्हिहिरः इत्यादि’—  
 इति सुश्रुतः । ३२

मदिरा स्त्री. [ माद्यति अनया, मद्+किरच्, अजादित्वात्  
 टाप् ] मादकद्रव्यविशेषः; सुरा; हलिप्रिया; हाला;  
 परिस्सुत्; वरुणात्मजा; गन्धोत्तमा; प्रसन्ना; इरा;  
 कादम्बरी; परिस्सुता; कश्यं; मद्यं; मानिका; कपिशी;  
 गन्धमादिनी; माधवी; कत्तीयं; मदः; कापिशायनं;  
 वारुणी; मत्ता; सीता; चपला; कामिनी; प्रिया;  
 मदगन्धा; माध्वीकं; मधु; सन्धानम्; आसवः;  
 अमृता; वीरा; मेधावी; मदनी; सुप्रतिभा; मनोज्ञा;  
 विधाता; मोदिनी; हली; गुणारिष्टं; सरकः;  
 मधूलिका; मदोत्कटा; महानन्दा; सीधुः; मीरेयं;  
 बलवल्लभा; कारणं; तच्चम्; मदिष्ठा;  
 परिस्सुता; कल्पं; स्वादुरसाः; शुण्डा; हारहरः; माद्रीकं;  
 मदना; देवस्रष्टा; कापिशम्; अग्निजा । ‘शराव’ इति  
 भाषा । [ माद्यत्यनयेति । मद्+‘इषिमदीति’ किरच् ]  
 ‘हिकका-श्वास-प्रतिश्याय-कासवर्चोग्रहारचौ । वम्यानाह-  
 विबन्धेषु वातघ्नी मदिरा हिता’—इति चरकः ।  
 मत्तस्रञ्जनः; ‘यदि मदिरायतनयनां तामधिष्ठत्य प्रहर-  
 तीति’—इति शाकुन्तले (३।५) । वसुदेवपत्नी;

‘पौरवी रोहिणी भद्रा मदिरा रोचना इला । देवकी-  
 प्रमुखाश्चासन् पत्य आनकद्रुद्रुभेः’—इति भागवते  
 (१।२४।४५) । ३२९

मदिष्ठा स्त्री. [ मदोऽस्या अस्तीति । मद्+इनि । इयमति-  
 शयेन मदिनीति । इष्टन्; इनो लोपः ] मदिरा । ३२९  
 मद्गुः पुं. [ मज्जतीति । मस्ज्+‘भृमृशीतुचरित्सरितनि-  
 धनिमिमस्जिज्म्य उः’ इति उ, न्यङ्ङवादित्वात् कुत्वम्,  
 जश्त्वेन सस्य दः ] पक्षिविशेषः; जलवायसः; पर्ण-  
 मृगभेदः; ‘मद्गुमूपिकवृक्षशायिकावकुशपूतिधासवानर-  
 प्रभृतयः पर्णमृगाः’—इति सुश्रुतः । २५०

मद्गुरः पुं. [ माद्यति जलं प्राप्य हृष्यतीति । मद्+  
 ‘मद्गुरादयश्च’ इति उरच्, निपातितश्च ] मत्स्यविशेषः;  
 मद्गुरकः; ‘श्रमणो गौतमः श्यामको बत भौ श्रमणो  
 गौतमो मद्गुरच्छविः’—इति ललितविस्तरे (३२०।७) ।  
 ‘मद्गुरो वातहृद्वत्यो वृष्यः कफकरो लघुः’—इति  
 भावप्रकाशः । वर्णसङ्करजातिविशेषः; ‘निपादं मद्गुरं  
 सूते दाशं नावोपजोविनम्’—इति महाभारते (१३।-  
 २५।८३) । ‘मद्गुन् मीनविशेषान् राति आवत्ते इति ।  
 रा+क, तम्—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । ६५९

मद्यम् क्ली. [ माद्यति जनोऽनेन । मद्+‘गदमदयमश्चानु-  
 पसर्गो’ इति करणे यत् ] सुरा; वारुणी; मदिरा;  
 ‘भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरूपे किं तेन मद्यं विना,  
 मद्यं चापि तव प्रियं प्रियमहो वाराङ्गनाभिः सह ।  
 वेश्याप्यथंरुचिः कुतस्तव धनं हृतेन चौर्येण वा, एता-  
 वानपि सद्ग्रहोऽस्ति भवतो नष्टस्य कान्या गतिः’—  
 इति साहित्यदर्पणे । ३३०

मधुः पुं. [ मन्+‘फलिपाटि’ इत्यु नस्य च धः ] चैत्रमासः;  
 ‘रेजतुर्गतिवशात् प्रवर्तिनो भास्करस्य मधुमाधवाविद’—  
 इति रघौ (१।१।७) । मधुद्रुमः; वसन्तर्तुः; ‘निवेशया-  
 मास मधुद्विरेफान्नामाक्षराणीव मनोमदस्य’—इति  
 कुमारसम्भवे (३।२७) । दैत्यभेदः; ‘मधुश्च कुपितस्तत्र  
 हरिणा सह संयुगे’—इति देवीभागवते (१।१।१५) ।  
 (इमं हत्वा विष्णुर्मधुसूदनोऽभूत् ।) अशोकवृक्षः; यष्टि-  
 मधु; असुरविशेषः; ‘शत्रुघ्नश्च मधोः पुत्रं लवणं  
 नाम राक्षसम् । हत्वा मधुवने चक्रे मधुरां नाम  
 वै पुरीम्’—इति भागवते (१।१।१४) । स च  
 शत्रुघ्नेन हतः, यस्य नाम्ना मधुरा मधुपुरीति ख्याता । ११४

मधु क्ली. [ मन्यन्ते विशेषेण जानन्ति जना यस्मिन् । मन् + 'फलपाटिनमिमनिजनां गुक्पटिनाकिषतश्च' इति उ घञान्तादेशः ] पुष्परसः; मकरन्दः; मरन्दः; मरन्दकः; (६३१) क्षुद्राभिर्मक्षिकाभिः कृतं; क्षौद्रं; माक्षिकं; माक्षीकं; कुसुमासवं; पुष्पासवं; पवित्रं; पित्र्यं; पुष्परसाह्वयं; माध्वीकं, सारघं; मक्षिका-वान्तं; वरटीवान्तं; भृङ्गवान्तं; पुष्परसोद्भवम्; 'मधु पुष्परसं क्षौद्रं मकरन्दश्च माक्षिकम्'—इति वैद्यक-रत्नमालायाम् । मधुम् (३२९, ३३०); 'मधुमदवीत-श्रीढा यथा यथा लपति सम्मुखं बाला'—इति आर्या-सप्तशत्याम् । क्षीरं; जलं; रसभेदः; मधुररसः इति यावत् । स्त्री. जीवन्तीवृक्षः । १८८

मधुकम् क्ली. [ मध्विवेति । मधु + 'संज्ञायां च' इति कन् । यद्वा मधु मधुरं कायतीति । कै + क ] मधु; (६१५) यष्टिमधुका; यष्टिमधु; 'यष्ट्याह्वं मधुकं यष्टि क्लीतकं मधुयष्टिका । यष्टिमधु स्थले जाता जलजाति-रसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । पं. [ मधु मधुरं कायतीति । कै + क ] वन्दिभेदः; यष्ट्याह्वः; विहगान्तरम् । १७२

मधुकरः पं. [ करोति सञ्चिनोतीति । कृ + अच् । मधुनः करः ] भ्रमरः; 'सर्वतः सारमाद यथात्ते मधुकरो बुधः'—इति भागवते (४।१८।२) । कामी; भृङ्गराजवृक्षः । २५५

मधुपः पं. [ मधु पिबतीति । मधु + पा + क ] भ्रमरः; 'गन्धूतिमात्रमासश्रे देवीधामनि धैर्यवान् । धुन्वन् कराम्यां मधुपान् धावति स्म स धीरधीः'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (३।४०९) । [ मधु जलं पातीति । पा + क ] वारिरक्षके त्रि. । 'त्यं चिदणं मधुपं शयान-मसिन्वं वनं मंहादद्रुमः'—इति ऋग्वेदे (५।३२।८) । 'मधुपं मधुनोऽम्भसः पातारं पालयितारम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । मधुपानकर्त्तरि त्रि. । 'स्वसा यदां विश्वगूर्तीमराति वाजायेद्रे मधुपाविषे च'—इति ऋग्वेदे (१।१८०।२) । 'हे मधुपी मधुरस्य सोमरसस्य पातारौ'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । २५५

मधुमक्षिका स्त्री. [ मधुसञ्चायिका मक्षिका ] कीटविकोपः; सरघा; क्षुद्रा । २५६

मधुमधुमः पं. [ मधुं तन्नामानं दैत्यं मथ्नातीति । मन् +

त्यु ] विष्णुः; 'सर्वामिनि निरन्तरं निवृत्तमनसः कथमुह वा एते मधुमथन ! पुनः स्वार्थं कुशला ह्यात्मप्रियसुहृदः साधवस्त्वच्चरणाम्बुजानुसेवां विसृजन्ति न यत्र पुनरयं संसारपर्यावर्तः'—इति भागवते (६।१।३९) । २२

मधुरः त्रि. [ मधु माधुर्यमस्यास्तीति । 'ऊषसुषिमुष्कमधो रः' इति र ] प्रियः; मधुररसविशिष्टः; स्वादुः; 'न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणं न चापि वेदाध्ययनं दुरात्मनः । स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः'—इति हितोपदेशे (१।७९) । पं. मिष्टरसः; गौल्यः; रसज्येष्ठः; गुल्यः; स्वादुः; मधूलकः; 'मधुरस्तु रसश्चिनोति केशान् वपुषः स्थैर्यं बलौजोवीर्यं दायी । अति सेवनतः प्रमेहशैत्यजडतामान्द्यमुखान् करोति दोषान्'—इति राजनिर्घण्टः । जीवकः; रक्तशिपुः; राजान्नः; रक्तेक्षुः; गुडः; शालिः; वीजपूरविशेषः; 'वीजपूरोऽपरः प्रोक्तो मधुरो मधुकर्कटी'—इति भावप्रकाशः । स्कन्द-स्य सैनिकभेदः; 'मधुरः सुप्रसादश्च किरीटी च महाबलः'—इति महाभारते (९।४५।६९) । ६८९

मधुरवाक् [ च् ] त्रि. [ मधुरा कोमला वाक् वाणी यस्य ] मधुरभाषी; एलक्ष्णः; मृदुभाषी; प्रियवाक् । ३६५

मधुव्रतः पं. [ मधु मधुसञ्चयो व्रतं व्रतमिव सततानु-शीलनीयं यस्य । यद्वा मधु व्रतयति नियतं भुङ्क्ते इति । मधु + व्रति + अण् ] भ्रमरः; 'मालां मधुव्रतवरुच्यगिरोप-जुष्टाम्'—इति भागवते (३।२।२८) । [ मध्वर्थं व्रतं कर्म यस्य ] उदकार्यकर्मणि त्रि. । 'मधुनो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुद्वन्द्वता मधुदुग्धे मधुव्रते'—इति वेदे । 'मधुव्रते उदकार्यकर्मणौ'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । २५५

मधुसखः पं. [ मधोर्वसन्तस्य सखा । 'राजाहःसखि-म्यष्टच्' इति टच् ] कामदेवः; मधुसारधिः; मधु-सुहृत् । ३२

मधुच्छिष्टम् क्ली. [ मधुनः उच्छिष्टमवशिष्टम् ] मध्वव-शिष्टं; सिक्थकं; शिक्थकं; शिक्थं; मधूत्थितं; 'मोम' इति भाषा । 'शैलेयकमांसीतगरकुण्डरससैन्धवादि-वल्लीजम् । मधुररसमधुच्छिष्टानि चौरकश्चेति जीवस्य'—इति बृहत्संहितायाम् (१६।२५) । ५५५

मधूत्थितम् क्ली. [ मधुनः उत्थितम् ] सिक्थकं; 'मोम' इति भाषा । ५५५

मध्यः पं. -वली. [ मन् + यक् । तस्य च ध ] देहमध्यभागः;

मध्यमम्; अवलग्नम्; विलग्नम्; 'दधाना वलिभं मध्यं कर्णजाहविलोचना'—इति ऋट्टिकाव्ये (४११६) । (८५१, ८७१) मध्यभागमात्रम्; 'नेक्षेतोद्यन्त-मादित्यं नास्तं यान्तं कदाचन । नोपसृष्टं न वारिस्थं न मध्यं नभसो गतम्'—इति मनुः (४१३७) । आयुष्कालस्य मध्यमावस्याविशेषकालः; 'षोडश-सप्तत्योरन्तरे मध्यं वयस्तस्य चिकल्पो वृद्धिर्यौवनं सम्पूर्णता हानिरिति । तत्राविशतेवृद्धिरात्रिशतो यौवन-माचत्वारिंशतः सर्वंघात्त्विन्द्रियबलवीर्यसम्पूर्णता । अत ऊर्ध्वंभीषत् परिहानियावत् सप्ततिरिति'—इति सुश्रुतः । पुं. ग्रहस्फुटसाधकाङ्कविशेषः; स च अहर्गणाज्जात-देशान्तरादिसंस्काररहिताङ्करूपग्रहः । त्रि. न्यायः; अन्तरः; अवमः; मध्यमः; 'उत्तमाधममध्यानि बुद्ध्या कार्याणि पाथिवः । उत्तमाधममध्येषु रूपेषु नियोजयेत्'—इति मात्स्ये ८९ अध्यायः । क्ली. दशान्त्यसंख्या; शतसागरसंख्या; 'मध्यं चैव परद्वंद्वं च सपरं चात्र पण्यताम्'—इति महाभारते । अवसानं; विरामः; मन्दत्वशीघ्रत्वोभयेतरत्ययुक्तनृत्यविषयकगमनविशेषः; लयविशेषः; मध्यमा वृत्तिः; 'विलम्बितं द्रुतं मध्यं तत्त्वमोषो घनं क्रमात्'—इति अमरे (२।६।७९।) ५१७

मध्यन्दिनः पुं. [ दिनस्य मध्यम् । राजदन्तादित्वात् मध्य-शब्दस्य पूर्वनिपातः । पृषोदरादित्वात्कारागमः । मध्य-न्दिनं पुष्पविकासकत्वेनास्यास्तीति । अच् ] वन्वूकवृक्षः । मध्यमे त्रि. । मध्याह्ने क्ली. । 'मध्यन्दिनेऽर्द्धरात्रे च श्राद्धं भुव वा च सामिषम्'—इति मनुः (४।१३१) ।

७७५

मध्यमम् क्ली.—पुं. [ मध्ये भवम्, मध्य+ 'मध्यान्मः' इति म दिहमध्यभागः; मध्यः; अवलग्नम्; विलग्नम् । ५१७

मध्यमः त्रि. [ मध्ये भवः । मध्य+ 'मध्यान्मः' इति म ] मध्यभवः; माध्यमं; मध्यमीर्यं; माध्यन्दिनम्; 'ततो-ऽर्द्धं मध्यमस्य स्यात् तुरीयन्तु यवीर्यसः'—इति मनुः (९।११२) । वयोमध्यसमयः; 'वयश्चतुर्विधं प्रोक्तं मध्यमाधममुत्तमम् । हीनं च हारीत ! ह्यत्र तानि वक्ष्यामि साम्प्रतम् । पथि श्रान्तः श्रमक्षीणः बालश्रीः सुकुमारकः । एतेषां मध्यमा संज्ञा प्रोच्यते वैद्यकागमे । मध्यमः सप्ततिं यावत् परतो वृद्ध उच्यते'—इति हारीतः । ७७५

मध्यमः पुं. [ मध्ये भवः । मध्य+म ] मण्डलेश्वरः; माण्डलिकः; सप्तस्वराणां मध्ये पञ्चमस्वरः; मध्य-देशः; उपपतिविशेषः; ग्रहाणां सामयिकसंज्ञाविशेषः; 'द्युचरचक्रहतो दिनसञ्चयः क्वहहतो भगणादिफलं ग्रहः । दशशिरःपुरमध्यमभास्करे क्षितिजसन्निधिगे सति मध्यमः'—इति सिद्धान्तशिरोमणिः । मृगभेदः; राग-भेदः । ४२२

मध्यमा स्त्री. [ मध्यम+टाप् ] कर्णिका; अङ्गुलिभेदः; दृष्टरजस्का नारी; मध्यमिका; श्यक्षरच्छन्दः; हृदयोत्थितवृद्धियुतनादरूपवर्णः; 'पश्चात् पश्यन्त्यथ हृदयगो बुद्धियुद्मध्यमाख्यः'—इति अलङ्कारकौस्तुभः । स्वीयाद्यन्तर्गतनायिकाभेदः; जम्बुभेदः; 'सूक्ष्म-कृष्णफला जम्बुदीर्घपत्रा च मध्यमा'—इति वैद्यकरत्न-मालायाम् । ५३८

मध्यनीयम् त्रि. [ मध्यमे भवं, मध्यमस्येदं, मध्यमाय हितं वेति । 'गहादिभ्यश्च' इति छ ] मध्यमं; मध्यमसम्बन्धि । ७७५

मध्यरात्रः पुं. [ मध्यं रात्रेः । 'पूर्वापराधरेति' समासः । 'अहःसर्वकेति' समासान्तोऽच्, पुंस्त्वञ्च ] निशीथः; अर्द्धरात्रः; 'उदके मध्यरात्रे च विण्मूत्रस्य विसर्जने । उच्छिष्टः श्राद्धभुक् चैव मनसापि न चिन्तयेत्'—इति मनुः (४।१०९) । १०९

मध्याङ्गुलिः स्त्री. [ मध्या चासौ अङ्गुलिः ] मध्या; मध्य-माङ्गुलिः; मध्यमा । ५३६

मध्यासवः पुं. [ मधु मवूकपुष्परसस्तेन कृत आसवः ] मधूकपुष्पकृतमद्यं; माधवकः; मधु; माध्वीकं; शीघु; सुरा; 'मुखप्रियः स्थिरमदो विज्ञेयोऽनिलनाशनः । मधु मध्वासवश्छेदी मेहुकुष्ठविपापहः'—इति सुश्रुतः । ३३०

मनः [ स् ] क्ली. [ मन्यते बुध्यतेऽनेनेति । मन्+ 'सर्वधा-तुभ्योऽसुन्' इति असुन् ] चित्तं; चेतः; हृदयं; स्वान्तं; हृत्; मानसम्; अनङ्गकम्; अङ्गम्; 'मनो महान् मतिर्ब्रह्मा पूर्वद्विः ख्यातिरीश्वरः । प्रज्ञा संविच् चितिश्चैव स्मृतिश्च परिपठ्यते । पर्यायाचकाः शब्दा मनसः परिकीर्तिताः'—इति महाभारते । 'सर्वे सान्ता अदन्ता-श्चेति' प्रमाणात् अकारान्तमनशब्दोऽप्यस्ति, यथा— 'मनस्यं मनमध्यस्यं मध्यस्यं मनवर्जितम् । मनसा मनमालोक्य स्वयं सिद्धयन्ति योगिनः'—इति

उत्तरगोतायाम् १३ अध्याये । 'वधितमनोत्साहः—  
इति कादम्बरी । ५३४

मनसिजः पुं. [ मनसि. जात इति । जन्+ङ्, 'हलदन्तात्  
सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक् ] कामदेवः; 'कामं प्रिया  
न सुलभा मनस्तु तद्भावदर्शनाश्वसि । अकृतार्थेऽपि  
मनसिजे रतिमुभयप्रार्थना कुरुते'—इति शाकुन्तले ।  
मनोजाते त्रि. । ३२

मनसिजः पुं. [ मनसि शोते इति । शी+ 'अधिकरणे शोते'  
इति अच्, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक् ]  
कामदेवः । ३३

मनाक् अव्य. [ मन्यते इति, मन् ज्ञाने । बाहुलकाद् वाक्  
प्रत्ययः ] अल्पम्; 'मरुधन्वमतिक्रम्य सौवीरासीरयोः  
परान् । आनतान् भागवोपागाच्छ्रान्तवाहो मनाग्  
विभुः'—इति भागवते (११०।३५) । मन्दः । ८८२

मनीषा स्त्री. [ ईष्+अ, टाप् । मनसः ईषा गमनम् ।  
'शकन्ध्वदिषु पररूपं वाच्यम्' इत्युक्त्या साधुः ] बुद्धिः;  
विषणां; प्रज्ञा; मतिः; 'असमं क्षत्रमसमा मनीषा'—  
इति ऋग्वेदे (१।५४।८) । स्तुतिः; 'उत प्रजाम्योऽविदो  
मनीषाम्'—इति ऋग्वेदे (५।८३।१०) । 'मनीषां स्तुति-  
मविद प्राप्तवानसि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३३४

मनीषी [ न् ] पुं. [ मनीषा अस्त्यस्येति । मनीषा+  
श्रीह्लादित्वात् इनि ] पण्डितः; 'यन्मृत्यं वयवाः सूक्ष्मा-  
स्तस्ये मान्याश्रयन्ति षट् । तस्माच्छरीरमित्याहुस्तस्य  
मूर्ति मनीषिणः'—इति मनुः (१।१७) । बुद्धियुक्ते

त्रि. । 'चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदु-  
र्ब्राह्मणा ये मनीषिणः'—इति ऋग्वेदे (१।१६।४५) ।  
'मनीषिणो भेषाविनः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३३२

मनुजः पुं. [ मनोजात इति । जन्+ङ् ] मनुष्यः; मानुषः;  
'स्वर्गापिवगौ' मानुष्यात् प्राप्नुवन्ति नरा मुने ! ।  
यथाभिचक्षितं स्थानं तद्यान्ति मनुजा द्विज !'—इति

विष्णुपुराणे (१।६।१०) । ३३१

मनुष्यः पुं. [ मनोरपत्यमिति । मनु+ 'मनोजातावव्यती षुक्  
च' इति यत् षुगागमश्च ] मनोरपत्यं; मानुषः; मर्त्यः;  
मनुजः; मानवः; नरः; भूमिजः; द्विपदः; चेतनः;  
भूस्थः; मनुः; पञ्चजनः; पुरुषः; पूरुषः; पुमान्;  
ना; मर्णः; विट्; 'रक्षांसि च पिशाचाश्च मनुष्याश्च  
जरायुजाः'—इति मनुः (१।४३) । त्रि. स्तुतिकारकः;

'होता मनुष्यो न दक्षः'—इति ऋग्वेदे (१।५।१४)  
'मनुष्यो लौकिको वन्दी दातारं प्रभुं बहुविधया स्तुत्या  
स्तीति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । मनुष्यसम्बन्धी;

'प्रमिनती मनुष्या मनुष्या युगानि'—इति ऋग्वेदे  
(१।९२।११) । मनुष्यहितः; 'दशारित्रो मनुष्यः स्वर्षाः'  
—इति ऋग्वेदे (२।१८।१) । 'मनुष्यो मनुष्याणां हितः  
स्वर्षाः स्वर्गस्य दाता' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३३१

मनुष्यधर्मा [ न् ] पुं. [ मनुष्यस्येव धर्म आचारो यस्य ।  
'धर्मादिनिच् केवलात्' इति समासान्तोऽनिच् ] कुबेरः;  
धनदः; यक्षराट् । ७८

मनोभवः पुं. [ मनसः मनसि वा भवतीति । मू+अच् ।  
मनसः भवः उत्पत्तिर्यस्येति वा ] कन्दर्पः; मनोजन्मा;  
मनोभूः; कामदेवः; 'ते तां दृष्ट्वाप्रतो दैत्याः सामि-  
लाया मनोभवम् । न शेकुः शक्यं धैर्यान्मनसा वोढुमातुराः'  
—इति मार्कण्डेये (१।८।४१) । मनोजन्ये त्रि. । 'दृश्यमाना  
विनायनं न दृश्यन्ते मनोभवाः । कर्मभिर्ध्यायितो नाना  
कर्माणि मनसोऽभवन्'—इति भागवते (६।१५।२४) ।

३३

मनोरथः पुं. [ मनसः रथ इव, मन एव रथोऽप्रेति वा ]  
इच्छा; 'इतस्ततश्च वंदेहीमन्वेष्टुं भर्तृचोदिताः ।  
कपयश्चेहरातंस्य रामस्येव मनोरथाः'—इति रघौ  
(१।१।५९) । कविविशेषः; 'मनोरथः शङ्खदत्तश्चटकः  
सन्धिमांस्तथा । बभूवुः कवयस्तस्य वामनाद्याश्च  
मन्त्रिणः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।५।९६) । ५३५

मनोहरम् त्रि. [ हरतीति, हृ+अच् । मनसो. हरमिति ]  
मनोज्ञः; मनोहारिः; 'स्त्रीणां सुखोद्यमकूरं विस्पष्टार्थं  
मनोहरम्'—इति मनुः (२।३३) । 'स ददर्श तदा तत्र  
होमधेनुं मनोहराम्'—इति मार्कण्डेये (१।१।२३) ।  
कुन्दवृक्षे पुं. । सुवर्णं क्ली. । ६८९ .

मनुः पुं. [ मन्यते इति, मन्+ 'कमिमनिजनिगाभाया-  
हिम्यश्च' इति तुन् ] अपराधः; 'सतीव्रतस्तीव्रमिमन्तु  
मन्तुमन्तवरं वज्रिणि माजितास्मि'—इति नैषधचरिते  
(६।११०) । मनुष्यः; प्रजापतिः; त्रि. ज्ञाता; 'य  
ईश्वरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थानुर्जगतश्च  
मन्तवः'—इति ऋग्वेदे (१०।६३।८) । 'मन्तवः सर्वस्य  
वेदितारः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७४९ -

मन्त्रः पुं. [ मन्त्र्यते गुप्तं परिभाष्यते इति । मंत्रि गुप्त-

भाषणे+घञ् । यद्वा मन्त्रयते गुप्तं भाषते इति, मन्त्रि +अच्] वेदभेदः; स च मन्त्रस्वरूपभागः; 'प्रनूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थम्'—इति ऋग्वेदे (६७।४।-७४) । 'निषेकादिशमशानान्तो मन्त्रैर्यस्तोदितो विधिः । तस्य शास्त्रेऽधिकारोऽस्मिन् ज्ञेयो नान्यस्य कस्यचित्'—इति मनुः (२।१६) । तन्त्राद्युक्तमन्त्रभागश्च; 'सुपरोक्षितमन्त्राद्यमद्यान्मन्त्रैर्विपापहैः'—इति मनुः (७।२१७) । गुप्तवादः; स तु रहसि कर्तव्यावधारणं मन्त्रणेति ह्यातं; परामर्शः; मन्त्रणा; 'मन्त्रो यो ध इवाधीरः सर्वाङ्गैः संवृत्तरपि । चिरं न सहते स्थातुं परेभ्यो भेदशङ्कया'—इति माघे (२।२९) । देवादीनां साधनम्; 'तन्मन्त्राद्यपडक्षीणं यत् तृतीयाद्यद्यगोचरम् । रहस्यालोचनं मन्त्रो रहस्यत्रयमुपह्वरम्'—इति हेमचन्द्रः । 'मननात् त्रायते यस्मात्सामन्मन्त्रः प्रकीर्तितः । यथा ज्वरादिनाशकमन्त्रः; 'वानराकृतिमालिख्य खटिकाभिः पुन शृणु । गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपैरर्चयेत् भिषजां वरम् । मन्त्रः—'ओम् ह्रीं ह्रीं श्रीं सुप्रीवाय महाबलपराक्रमाय सूर्यपुत्राय अमिततेजसे ऐकाहिक-द्वयाहिक-त्रयाहिक चातुर्थिक-महाज्वर-भूतज्वर-भयज्वर-शोकज्वर-क्रोधज्वर-वेलाज्वरप्रभृतिज्वराणां दह दह हन हन पच पच अवतर अवतर किलि किलि वानरराज ज्वराणां वन्ध वन्ध ह्रां ह्रीं हूं फट् स्वाहा'—इति हारीतः । ८७०

मन्त्री [न्] पुं. [ मन्त्रो गुप्तभाषणमस्यास्ति । मन्त्र+ इनि । यद्वा मन्त्रयते इति, मन्त्र्+ 'नन्दिग्रहीति' णिनि ] मन्त्रजातकर्तव्यनिश्चयकर्ता; धीसचिवः; अमात्यः; सचिवः; धीसखः; सामवायिकः; त्रि. बुद्धिमान् । 'मन्त्री भक्तः शुचिः शूरोऽनुकृतो बुद्धिमान् क्षमी । आन्वीक्षिवयादिकुशलः परिच्छेदो सुदेशजः'—इति कविकल्पलता । 'बहुभिर्मन्त्रयेत् कामं राजा मन्त्रं पृथक् पृथक् । मन्त्रिणामपि नो कुर्यान्मन्त्री मन्त्रप्रकाशनम् । न वचिक्तकस्य विश्वासो भवतीह सदा नृणाम् । निश्चयश्च सदा मन्त्रे कार्यं एकेन सूरिणा । भवेद्वा निश्चयावाप्तिः परबुद्धयानुजीवनात् । एकस्यैव मही-भर्तुर्मूढः कार्यो विनिश्चयः'—इति मत्स्यपुराणे । ८६२

मन्थः पुं. [ मथयतेऽनेन । मन्थ्+करणे घञ् ] मन्थदण्डकः; 'रई' मथानी' इति भाषा । तत्पद्यायाः 'मन्थानदण्डः; वैशाखः मन्थानः; मन्थाः; मन्थनः; करहर्षकः; भक्तटाटः;

तक्राटः; खजकः; 'आमध्य मतिमन्थेन ज्ञानोदधि-मनुत्तमम् । नवनीतं तथा दध्नो मलयोच्चन्दनं यथा'—इति महाभारते (१२।२४३।११) । [ मथ्यते विलोडयते इति, मन्थ्+कर्मणि घञ् ] साक्तवः; 'सक्तुभिः सर्पिषाम्भक्तैः शीतवारि परिप्लुतैः । नात्यच्छो नाति-सान्द्रश्च मन्थ इत्यभिधीयते—इति राजनिघण्टः । पेयविशेषः; तस्य विधिः—'जले चतुष्पले शीते क्षुण्णं द्रव्यं पलं क्षिपेत् । मृत्पात्रे मन्थयेत् सम्यक् तस्माच्च द्विपलं पिबेत् । क्षुण्णं चूर्णीकृतं मन्थयेत् मृदनीयात्'—इति भावप्रकाशः । [ मथनाति स्वकरेण त्रिभुवनं पीडयतीति, मन्थ्+अच् ] दिवाकरः; [ मन्थ्+भावे घञ् ] मारणः; नेत्रमलः; नेत्रामयः; अंशुः; कुन्थनः; विलोडनम्; इति मन्थधात्वर्थदर्शनात् । यथा—'अतिष्ठत् प्रत्ययापेक्ष-सन्ततिः स चिरं नृपः । प्राङ् मन्थादनभिव्यवतरत्नोत्पत्ति-रिवार्णवः'—इति रघौ (१०।३) । २७६

मन्थनी स्त्री. [ मथ्यते अस्याम् । मन्थ्+अधिकरणे ल्युट्, डीप्. ] गगरी; मन्थनघटी; दधिमन्थनपात्रम् । ३१७

मन्थरः त्रि. [ मन्थति पादाविति । मथि+अरन् ] मन्दः; 'दत्ते सालसमन्थरं भुवि पदं निर्याति नान्तः पुरात्'—इति साहित्यदर्पणे (३।६८) । जडः; वक्रः; पृथुः; निश्चलः; 'राज्याभिषेकसलिलक्षालितमालैः कथासु कृष्णस्य । गर्वंभरमन्थराक्षी पश्यति पदपङ्कजं रावा'—इति आर्या-सप्तशत्याम् (४८८) । नीचः; मन्दगामी; पुं. [ मन्थ्+वाहुलकात् अरन् ] कोपः; फलः; वाघः; मन्थानः; सूचकः; मन्दगामियोवा; कोपः; क्ली. कुसुम्भी । ३८७

मन्थाः [ थिन् ] पुं. [ मन्थ्+ 'मन्थः' इति इनि स च कित् ] मन्थानदण्डः; मन्थदण्डकः; वैशाखः; मन्थः; मन्थानः; करहर्षकः; मन्थनः; भक्ताटः; तक्राटः; खजकः । 'मूहुःप्रणुन्नेपुं मथां विवर्तनेनन्दत्सु कुम्भेषु मृदङ्गमन्थरम्'—इति किरातार्जुनीये (४।१६) । मन्था स्त्री. [ मथ्यते इति, मन्थ्+घञ् ततः स्त्रियां टाप् ] मेथिका; 'वल्लरी चन्द्रिका मन्था-मित्रपुष्पा च कैरती'—इति भावप्रकाशः ।

२७६

मन्थानः पुं. [ मथ्यते अनेनेति । मन्थ्+वाहुलकात् आनच् ] मन्थदण्डकः; मन्थः; मन्थनः; मन्थाः; वैशाखः; खजकः; 'मन्थानारिणिसंयोगान्मन्थनाच्च नमद्भुवः । पावकस्य यथा तद्वत् कथं मे स्यात् सुतोद्भवः'—

इति देवीभागवते (१११०२५) । आरग्वधः; (समुद्र-  
मन्यनदण्डकत्वादस्य तथात्वम्) मन्दरपर्वतः; 'प्रवि-  
वेशाय पातालं मन्थानः पर्वतोत्तमः'—इति रामायणे  
(११४५१२७) । महादेवः; 'मन्थानो बहुलो वायुः  
सकलः सर्वलोचनः'—इति महाभारते (१३११७१२८)

२७६

मन्द्रः पुं. [ मन्द्ते इति, मदि+अच् ] हस्तिजातिविशेषः;  
शनिः; 'शुक्रेन्दुवृधजीवानां वाराः सर्वत्र शोभनाः ।  
भानुभूसुतमन्दानां शुभकर्षसु केव्वपि'—इति ज्योतिवे ।  
यमः; 'तत्र मन्दमिवालोक्य साभिप्रायः स मां नृपः ।  
पप्रच्छ रे किमीदृक् त्वं सञ्जातः कथ्यतामिति'—इति  
कयासरित्सागरे (३२११५५) । प्रलयः; जठरानल-  
विशेषः; 'तीक्ष्णः पिप्साधिकत्वेन जायते जठरान्निकः ।  
वातश्लेष्माधिकत्वेन जायते मन्दसज्जकः'—इति हारीतः ।

२१५

मन्द्रः त्रि. [ मदि+अच् ] मूर्खः; अल्पः; निर्भाग्यः;  
'मन्द्रः कवियशःप्रार्थी गमिष्याम्नुपहास्यताम्'—इति  
रघुवंशे (११३) । (३८२) अतीक्ष्णः; कुण्ठः; अलसः  
(३८७); 'प्रायेणाल्पायुषः सम्य ! कलावस्मिन् युगे  
जनाः । मन्दाः सुमन्दमतयो मन्दभाग्या ह्युपद्रुताः—  
इति भागवते (१११११०) । 'मन्दाः अलसाः'—इति  
तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । मन्दरतः; सलः । ३३६

मन्दाकिनी स्त्री. [ मन्दाकानि स्रोतांसि मन्थस्याः इति ।  
मन्दाक+णिनि । यद्वा मन्दनाम्नः सरसः अकति गच्छ-  
तीति ] स्वर्गङ्गा; वियद्गङ्गा; स्वर्णदी; सुरदीधिका;  
स्वर्गङ्गा; देवभूतिः; स्वर्णपद्मा; सुरेश्वरी; 'मन्दाकिनी-  
नन्दनयोर्विहारे देवे भवद्देवरि माधवे वा'—इति नैपथ-  
चरिते (६।८२) । 'प्रधानधारा या स्वर्गे सा च मन्दाकिनी  
स्मृता । योजनायुतविस्तोर्णा प्रस्थेन योजना स्मृता ।  
क्षीरतुल्यजला शश्वदत्युत्तुङ्गतरङ्गिणी । वैकुण्ठाद्  
ब्रह्मलोकं च ततः स्वर्गं समागता'—इति ब्रह्मवैवर्ते ।  
संक्रान्तिविशेषः; चित्रकूटस्थनदीविशेषः; 'ततो  
गिरिवरश्रेष्ठे चित्रकूटे विनाम्पते । मन्दाकिनीं समासाद्य  
मन्त्रपापप्रणाशिनीम्'—इति महाभारते (३।८५।५८) ।  
द्वारकास्थनदीविशेषः; 'वैदूर्यपत्रैर्जलजैस्तथा मन्दाकिनी  
नदी । भानि पुष्करिणी रम्या पूर्वस्यां दिशि भारतः'—  
इति महाभारते हरिवंशपर्वणि (१५५।२२) । छन्दो-

विशेषः; 'न न र र घटिता तु मन्दाकिनी'—इति  
छन्दोमञ्जर्याम् । ६७३

मन्दाक्षम् क्ली. [ मन्दे सङ्कुचिते अक्षिणी नेत्रे यस्मात् ।  
'अक्ष्णोऽर्जनात्' इति समासान्तः अच् ] लज्जा; ह्रीः;  
त्रपा; 'मन्दाक्षमन्दाक्षरमुद्रमुक्ता तस्यां समाकुञ्चित-  
वाचि हंसः । तच्छसिते किञ्चन संगयालुगिरा  
मुक्ताम्भोजमयं युयोज'—इति नैपथे (३।६१) । ५६७  
मन्दारः पु. [ मन्द्यते स्तूयते प्रशस्यते वेति । यदि स्तुति-  
मोदमदस्वानकान्तिगतिषु+ 'अङ्गिमदिमन्दिभ्य आरन्'  
—इति आरन् ] स्वर्गीयपञ्चवृक्षान्तर्गतदेवतरुविशेषः;  
'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः । सन्तानः  
कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम्'—इत्यमरः ।  
'अन्तर्गतप्रार्थनमन्तिकस्थं जयन्तमुद्गीक्ष्य कृतस्मिनेन ।  
आमृष्टवधोहरिचन्दनाङ्गा मन्दारमाला हरिणा पिनढा'—  
इत्यभिज्ञानशाकुन्तले ७ अङ्के । पारिभद्रवृक्षः (२००);  
'पारिभद्रो निम्बतरुमन्दारः पारिजातकः'—इत्यमरः ।  
अर्कवृक्षः; 'अर्का ह्रस्वमुकास्फोटगणरूपविकीरणाः ।  
मन्दारश्चाकंपर्णोऽत्र शुक्लेऽलर्कप्रनापनी'—इत्यमरः ।  
हस्तः; धृन्ः; तीर्थविशेषः । १३५

मन्दिरम् क्ली [ मन्द्यते सुच्यतेऽत्र, मन्द्यते स्तूयते इति  
वा । मदि स्वप्ने स्तुनी च, 'इयिमदिमुदीति' किरच् ]  
गृहम्; 'नगर मन्दिर पुरम्'—इति पुंनपुंसकयोः । स्त्री.  
मन्दिरा । देवगृहं; प्रासादस्थानम्; अश्वजानुपश्चिम-  
भागः; 'अधरे च ततो जानु निर्दिष्टं शास्त्रकोविदैः ।  
मन्दिरं पश्चिमो भागः कलाची जानुनोऽग्रिमः'—इति  
अश्ववैद्यके (२।२१) । पुं. (मदि+किरच्) समुद्रः ।  
जानुपश्चाद्भागः । २९१

मन्दुरा स्त्री. [ मन्द्न्ते स्वपन्ति मोदन्ते वा अश्वा यत्र ।  
मन्द्+ 'मन्दिवाशिमधीति' उरच्+स्त्रियां टाप् ]  
वाजिशाला; अश्वशाला; 'घुडसाल' इति भाषा ।  
'उपाहरत्नश्वमजस्रचञ्चलैः क्षुराञ्चलैः क्षोभितमन्दुरो-  
दरम्'—इति नैपथे (१।५७) । शयनीयाथं वस्तु । २९६

मन्द्रः पुं. [ मन्द्यते बृध्यते अनेन । मदि+ 'स्फायितञ्चोति'  
रक् ] गम्भीरध्वनिः; 'मन्द्रस्निग्धं चर्चनिभिरवला वेणि-  
मोक्षीत्सुकानि'—इति मेघदूते (१००) । वाद्यविशेषः;  
मड्डुः; मूदङ्गकः; त्रि. हृष्टः; 'होता मन्द्रो वरेण्यः'  
इति ऋग्वेदे (१।५।७) । 'मन्द्रो हृष्टः'—इति तद्भाष्ये



सायणाचार्यः । मादनशीलः ; 'अग्ने ! जुषस्व प्रतिहर्यतद्वचो मन्द्रस्वभावऋतजात सुकृतो'—इति ऋग्वेदे (१।१४।७) । 'मन्द्र ! मादनशील !' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । १४०  
मन्मथः पुं. [ मनो मथ्नाति विकरोतीति । मन्+पचाद्यच् । पृषोदरादित्वात् साधुः ] कामदेवः 'न मन्मथस्त्वं सहि नास्ति मूर्तिः'—इति नैषधे (८।२९) । 'मनो मथ्नाति सर्वेषां पञ्चवाणैश्च कामिनाम् । तन्नाम मन्मथस्तेन प्रवदन्ति मनीषिणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।४।७) । कपित्यवृक्षः । कामचिन्ता । ३२

मन्या स्त्री. [ मन्यते ज्ञायते स्तम्भदुःखादिकमनया । मन्+करणे क्यप्, स्त्रियां टाप् ] ग्रीवायाः पश्चाच्च शिरा; मन्याका; गलपार्श्वशिरा; घमनिः; ग्रीवा; दोषास्तु दुष्टास्त्रय एव मन्यां संपीड्य घाटां सुरजां सुतीव्राम् । कुर्वन्ति साक्षिभ्रुवशङ्खदेशे स्थितिं करोत्याशु विशेषतस्तु'—इति सुश्रुतः । ५१६

मन्युः पुं. [ मन्यते ज्ञायतेऽसौ । मन्+यजिमनिशुन्धिदसिज-निम्नो युच् इति युच् ] शोकः; 'मन्युर्मन्ये ममास्तम्भीद्विषादोऽस्तमदुद्यतिम्'—इति भट्टिः (६।३०) । दैन्यं; ऋतुः; 'आविर्बभूवाभिमन्युः शतमन्युरिवापरः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१७४) । क्रोधः; 'यः सन्धारयते मन्युं योऽतिवादांस्तितीक्षते । यश्च तप्तो न तपति दृढं सोऽर्षस्य भाजनम्'—इति महाभारते (१।७९।५) । बहद्धारः; क्रोधाभिमानिदेवः; 'यस्ते मन्यो ! विषद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक'—इति ऋग्वेदे (१०।८३।१) । वितथपुत्रः; 'वितथस्य सुतान् मन्योर्वृहत्क्षत्रो जयस्ततः'—इति भागवते (९।२।११) । रुद्रदेवः; 'आज्ञप्त एव कुपितेन मन्युना स देवदेवं परिचक्रमे विभुम्'—इति भागवते (४।५।५) । ८४६

मयः पुं. [ मयते द्रुतं गच्छतीति । मय्+पचाद्यच् ] उष्ट्रः; दानवविशेषः; 'स तु दैत्यानां शिल्पी, अयं हि युधिष्ठिरस्य राज्ञः सभां विरचितवान्, तस्य सप्तापत्यानि । 'उपनीय विन्दुसरसौ मयेन या मणिदारुचारि किल बार्षपवर्णम् । विदधेऽवभूतसुरसद्यसम्पदं समुपासदत् सपदि संसदं स ताम्'—इति माघे (१३।५०) । 'मयस्य जाता हेमायां पुत्राः सप्त महाबलाः । मायावी दुन्दुभिश्चैव वृषश्च महिषस्तथा । बालिका वज्रकन्या च कन्या मन्दोदरी तथा'—इति वह्नपुराणे । सुखं; त्रि. गन्ता; 'हयोऽ-

स्यंत्योऽसि मयोऽस्यवांसि'—इति यजुःसंहितायाम् (२२।१९) 'मयोऽसि मयते गच्छति मयः; मय् गतौ पचाद्यच् । यद्वा मय इति सुखनाम, सुखरूपोऽसि'—इति तद्भाष्ये महीधरः । २८०

मयुः पुं. [ मय् गतौ+न्यङ्क्वादित्वात् कु । यद्वा मिनोति सुशब्दं करोतीति, मि+भूमृशीतृचरित्सरितनिघनिमि-मस्जिम्य उः' इति उ ] किन्नरः; मृगः; 'मयुं पशुं मेधमग्ने ! जुषस्व तेन चिन्वानस्तन्मे निषीद'—इति यजुःसंहितायाम् (१३।४७) । 'मयुं पशुं तुरङ्गवदनं किम्पुरुषं पशुं मयुं कृष्णमृगं वा जुषस्व'—इति तद्भाष्ये महीधरः । ८२

मयूखः पुं. [ मापयन् गगनं प्रमाणयन् ओखति गच्छतीति । पृषोदरादिः । यद्वा माति परिमातीव, मा+माड ऊवो मय च' इति ऊख मयादेशश्च ] किरणः; 'व्यसृजच्छतधा राजन् ! मयूखानिव भास्करः'—इति महाभारते (३।३९।४३) । दीप्तिः; ज्वाला; 'अथान्वकारं गिरिगह्वराणां दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन् । भूयः स भूतेश्वरपार्श्ववर्ती किञ्चिद्विहस्यार्थपति वभापे'—इति रघौ (२।४६) । शोभा; कीलः; पर्वतः; 'दाघर्थं पृथिवीमभितो मयूखैः'—इति ऋग्वेदे (७।९९।३) । 'मयूखैः पर्वतैः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३९

मयूरः पुं. [ मयुरिव रीति शब्दायते इति । मयु+रु+क । पृषोदरादित्वात् साधुः । यद्वा मिनाति हन्ति सर्पानिति, मी+मीनातेरुर्न' इति ऊर्न् ] पक्षिविशेषः; बर्हिणः; बर्ही; नीलकण्ठः; भुजङ्गभुक्; शिखावलः; शिखी; केकी; मेघनादानुलासी; प्रचलाकी; चन्द्रकी; सितापाङ्गः; ध्वजी; मेघानन्दी; कलापी; शिखण्डी; चित्रपिच्छकः; भुजगभोगी; मेघनादानुलासकः; 'हेमन्तकाले शिशिरे वसन्ते सेव्यं हि मायूरमुशन्ति मांसम् । उष्णो हि बर्ही विषभोजनैश्च वर्षाशरद्ग्रीष्ममुखष्व-पथ्यः'—इति राजनिर्घण्टः । मयूरशिखाक्षुपः; खराशवा; कारवी; दीपः; लोचमस्तकः; अपामार्गः; 'पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकमयूरवर्षाभूसिद्धं वा क्षीरं पिबेत्'—इति सुश्रुतः । असुरविशेषः; 'मयूर इति विख्यातः श्रीमान् यस्तु महासुरः । स विश्व इति विख्यातो बभूव पृथिवीपतिः'—इति महाभारते (१।६७।३६) । सुमेरोरुत्तरवर्ती पर्वतविशेषः; 'स्वर्णशृङ्गी शातशृङ्गी

पुष्पको मेघपर्वतः । विरजाक्षो वराहाद्रिमंयूरो दासुधि-  
स्तथा—इति मार्कण्डेये (५५।१३) । कविविशेषः;  
मयूरभट्टः; अपं वाणभट्टस्य श्वसुरः उज्जयिन्यां वृद्ध-  
भोजमहोपतेः सभायामासीदिति भानतुङ्गाचार्यप्रणीत-  
भक्तामाराख्यस्तोत्रटीकाप्रारम्भे मेरुतुङ्गप्रणीतप्रबन्ध-  
चिन्तामणी च समुपलभ्यते । प्रबन्धचिन्तामणी वाणभट्टो  
मयूरस्य भगिनीपतिर्लिखितः । 'अहो प्रभावो वाग्देव्या  
यन्मातङ्गदिवाकरः । श्रीहर्षस्याभवत् सम्यः समो वाण-  
मयूरयोः—इति शाङ्गंवरपद्वत्यादिप्रसिद्धराजशेखर-  
पद्येनापि वाणमयूरयोः समकालत्वं प्रतीयते । अयं हि  
कुष्ठरोगग्रस्तः सूर्यमारिरासुः सूर्यशतकं नाम स्तोत्रग्रन्थं  
प्रणीय ततः सम्यक्निष्कृतिमवाप । सूर्यशतकस्यान्तिमः  
श्लोको यथा 'श्लोका लोकस्य भूत्यै शतमिति रचिताः  
श्रीमयूरेण भक्त्या, युक्तश्चैतान् पठेद् यः  
सकृदपि पुष्यः सर्वपापैर्विमुक्तः । आरोग्यं सत्कवित्वं  
मतिमतुलञ्चलं कान्तिमायुः प्रकर्षं, विद्यामैश्वर्यमर्थं सुख-  
मपि लभते सोऽत्र सूर्यप्रसादात् ।' २४१

मरकतम् क्ली. [ मरकं मारिभयं तरन्त्यनेन । तन्+ड ।  
यदा मरकं मरणं तनोतीति ] हरिद्वर्णमणिविशेषः;  
गारुत्मतम्; अश्मगर्भः; हरिन्मणिः; मरकतं; राज-  
नीलं; गहडाङ्कितं; रोहिणेयं; सौपर्णं; गरुडोद्गीर्णं;  
बुधरत्नम्; अश्मगर्भजं; गरुलारिः; वापबोलं;  
गारुडं; गहडोत्तीर्णं; वाप्रवालं; 'पन्ना' इति भाषा ।  
'स्वच्छं च गुरु सच्छायं स्निग्धं गात्रं च मादं वसमेतम् ।  
अव्यङ्गं वहुरङ्गं शृङ्गारी मरकतं शुभं विभूयात् ।'  
'शर्करिलकलिलल्लक्षं मलिनं लघुहीनकान्ति कल्माषम् ।  
त्रासयुतं विकृताङ्गं मरकतममरोऽपि नोपयुञ्जीत ।'  
१७५

मरकतम् क्ली. [ मरकत+पृषोदरादित्वात् साधु ]

मरकतमणिः । १७५

मरणम् क्ली. [ म्रियतेऽनेनेति । मृ+करणे ल्युट् ।  
भावे ल्युट्वा ] विजातीयआत्ममनःसंयोगध्वंसः; पञ्चता;  
कालधर्मः; दिष्टान्तः; प्रलयः; अत्ययः; अन्तः; नाशः;  
मृत्युः; निघनं; भूमिलाभः; निपातः; आत्ययिकं;  
मृतिः; कीर्तिशेषः; महानिद्रा; महापथगमः; संस्था-  
नम्; 'मरणे यानि दुःखानि प्राप्नोति शृणु तान्यपि—  
इति विष्णुपुराणे । 'मरणं प्राप्नुयात्तत्र शुक्रस्थानगते

ज्वरे । शोफसः स्तब्धता मोक्षः शुक्रस्य तु विशेषतः'  
—इति माधवकरः । 'अपानः कर्षति प्राणं प्राणोऽपानं  
तु कर्षति । शङ्खिनी तु यदा भिन्ना तदैव मरणं ध्रुवम्'  
—इति वैद्यकम् । ६२८

मरिचम् क्ली. [ म्रियते नश्यति श्लेष्मादिकमनेनेति ।  
मृ+बाहुलकात् इच ] कक्कोलं; कक्कोलकं;  
वर्तुलाकारकटुद्रव्यविशेषः; पदितं; श्यामं; कोलम्;  
ऊषणं; यवनेष्टं; वृत्तफलम्; शाकाङ्गं; धर्मपत्तनं;  
कटुकं; शिरोवृत्तं; वीरं; कफविरोधि; मृषं; सर्वहितं;  
कृष्णं; वेल्लजम्; 'पिप्पलीमरिचशुङ्खवेराणि त्रिकटुकम्'  
—इति सुश्रुतः । 'स्वादुपाक्याद्रमरिचं गुरुश्लेष्मप्रसेकि  
च । कटुष्णं लघु तच्छुष्कमवृष्यं कफवातजित् । नात्युष्णं  
नातिशीतं च वीर्यतो मरिचं सितम् । गुणवन्मरिचेभ्यश्च  
चक्षुष्यं च विशेषतः—इति सुश्रुतः । 'मरिचं वेल्लजं  
कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम् । मरिचं कटुकं तीक्ष्णं दीपनं  
कफवातजित्—इति भावप्रकाशः । पुं. [ म्रियते  
नश्यतीति, मृ+इच ] मरुक्कवृक्षः । ६१६

मरीचम् क्ली. [ मृ+बाहुलकात् ईच् ] वेल्लजं; कोलकं;  
कृष्णम्; 'मारीचोद्भ्रान्त हारीता मलयद्रेरुपत्यकाः'  
—इति रघौ (४।४६) । 'मारीचेषु मरीचवनेषूद्-  
भ्रान्ताः—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ६१६

मरीचिः पुं-स्त्री. [ म्रियन्ते नश्यन्ति क्षुद्रजन्तवस्तमांसि  
वानेन । मृ+ईचि ] किरणः; 'गर्भं दधत्यकंमरीचयोऽम्माद्  
विवृद्धिमन्नाशनुवते वसूनि—इति रघौ (१३।४) ।  
'मरीचीनसतो मेघान् मेघान् वाप्यसतोऽम्बरे । विद्युतो  
वा विना मेघैः पश्यन् मरणमृच्छति—इति चरकः ।  
षट्त्रसरेणुपरिमाणं; स्त्री. [ म्रियन्ते इव देवा यद्दृशाना-  
दिति । मृ+ईचि ] अप्सरोविशेषः; 'मरीचिः शुचिका  
चेव विद्युद्वर्णा तिलोत्तमा । अम्बिका लक्षणा क्षेमा देवी  
रम्मा मनोरमा—इति महामारुते (१।१२३।५९) ।  
[ म्रियन्ते वारिभ्रमेण जीवा यस्याः । मृ+अपादाने  
ईचि ] मृगतृष्णा; मरीचिका; मृगतृष्णिका; मृगतृट्;  
मृगतृषा; 'वेश्याप्रेमणि सद्भावो यदस्मिन् बुध्यते  
त्वया । सत्यं भवति किं जातु जलं मरुमरीचिषु—इति  
कथासरित्सागरे (५७।९१) । ३९

मरुः पुं. [ म्रियतेऽस्मिन्निति । मृ+'भृमृशीति' उ ]  
निर्जलदेशः; 'अदृश्या गच्छ भीरु त्वं सरस्वति! मरुन्

प्रति—इति महाभारते (१३।१५४।२७) । (८३८)  
 दशेरकदेशः; धन्वा; 'शाल्वास्तु कारकुक्षीया मरवस्तु  
 दशेरकाः—इति हेमचन्द्रः । पर्वतः; 'तत्रापश्याम वै  
 सर्वे मधु पीतममाक्षिकम् । मरुप्रपाते विषमे निविष्टं  
 कुम्भसम्मितम्—इति महाभारते (५।६४।१८) ।  
 मरुवकवृक्षः; निमिवंशीयहर्यंश्वपुत्रः; 'तस्माद्बृहद्रथस्तस्य  
 महावीर्यः सुवृत्तिता । सुपृतेर्धृष्टकेतुवै हर्यंश्वोऽथ  
 मरुस्ततः—इति भागवते (१।१३।१५) । सूर्यवंशीय-  
 भाविराजविशेषः; 'मरो । त्वामभिषेक्ष्यामि निजायोव्या-  
 पुरेऽधुना । हृत्वा म्लेच्छानधर्मिष्ठान प्रजाभूतविहि-  
 रकान्—इति कल्किपुराणे । वसूनामन्यतमः;  
 'वासवानुगता देवो जनयामास वै सुतान् । मरुं वै  
 प्रथमं देवं द्वितीयं ध्रुवमव्ययम्—इति हरिवंशे (१९६।  
 ४७) । १५८, ८३८

मरुतः पुं. [ म्रियन्ते प्राणिनो यदभावादिति । मृ+वाहुल-  
 लकात् उत ] देवः; वायुः; 'तदेनां मुखमरुतेन विशदां  
 करवाणि—इति अभिज्ञानशाकुन्तले । घण्टापाटलि  
 वृक्षः । ४

मरुत् पुं. [ म्रियते प्राणी यस्याभावादिति । मृ+मृशो-  
 रतिः' इति उक्त् ] वायुः; 'भृशतापभृता मया भवान्  
 मरुदासादि तुषारसायकान्—इति नैपथ्यचरिते  
 (२।५३) । देवः (४); 'मरुतां पश्यतां  
 तस्य शिरांसि पतितान्यपि । मनो नातिविशश्वास पुनः  
 सन्धानशङ्कितानाम्—इति रघो (१२।१०१) । साध्य-  
 विशेषः; 'धर्माल्लक्ष्मण्डवः कामः साध्या साध्यान्  
 व्यजायत । प्रभवं च्यवनं चैवमीशानं सुरभीं तथा ।  
 अरण्यं मरुतञ्चैव विश्वावसुत्रलध्रुवौ—इति हरिवंशे  
 (१९६।४५) । भ्रातृवत्सलदेवताविशेषः; 'भ्रातृणां  
 प्रायणं भ्राता योऽनुतिष्ठति धर्मवित् । स पुण्यवन्धुः  
 पुरुषो मरुद्भिः सह मोदते—इति भागवते । 'प्रायणं  
 प्रकृष्ट गमनं, पुण्यमत्र बन्धुयस्य, मरुद्भिर्भ्रातृवत्सलै-  
 दवै—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । मरुवकः; 'मरु-  
 दग्निप्रदो हृद्यस्तीक्ष्णोष्णपित्तलो लघुः । वृश्चिकादि-  
 विषरुलेष्णवतकुष्ठकिमिप्रणुत् । कटुपाकरसो रुच्यस्ति-  
 क्तो रुद्रः सुगन्धिकः—इति भावप्रकाशः । हिरण्यं;  
 ऋत्विक्; ग्रन्थिपर्णं क्ली. । पृक्कायां त्रि. । ७५

मरुत्वान् [ त् ] पुं. [ मरुतो देवाः पालनीयत्वेन सन्त्यस्य

इति । मरुत्+ 'मर्वादिभ्यश्च' इति मत्तुप्, मस्य वः ।  
 'तसो मत्वर्थे' इति भक्ते न तस्य दः ] इन्द्रः; 'दिवं मरु-  
 त्वान् इव भोक्ष्यते भुवं दिगन्तविश्रान्तरथो हि तत्सुतः'  
 —इति रघो (३।४) । धर्मपुत्रदेवगणभेदः; 'धर्मस्य  
 वसवः पुत्रा रुद्राश्चामिततेजसः । विश्वे देवाश्च साध्याश्चं  
 मरुत्वन्तश्च भारत !—इति महाभारते (१२।२०७।  
 २३) । [ मरुज्जनकत्वेनास्त्यस्योति, मनुप्, मस्य वः ]  
 हनूमान्; वायुविशिष्टे त्रि. । सर्वोद्गाहरण यथा—'वभी  
 मरुत्वान् विकृतः समुद्रो वभी मरुत्वान् विकृतः समुद्रः ।  
 वभी मरुत्वान् विकृतः समुद्रो वभी मरुत्वान् विकृतः  
 समुद्रः—इति भट्टिः (१०।२९) । स्त्री. दक्षस्य प्रचेतमः  
 कन्या; 'भानुर्लम्बा ककुद्यामिदिश्व साध्या मरुत्वती ।  
 वसुर्मुहूर्ता संकल्पा धर्मपत्यः सुताम् शृणु—इति  
 भागवते (६।६।४) । ५४

मरुद्धर्म्मं क्ली. [ मरुतां वायूनां देवानां वा वर्त्म पन्थाः ]  
 आकाशम् । १३७

मर्कटः पुं. [ मर्कति गच्छति । मर्क् + 'शकादिभ्योऽण्'  
 इति अटन् ] ऊर्णनाभः; लूता; 'अयमुद्गृह्णातवडियः  
 ककट इव मर्कटः पुरतः—इति आयतान्ताश्वत्याम्  
 (३२२) । 'मर्कटो लूता' इति तट्टीका । वानरः; 'यमाय  
 कृष्णो मनुष्यराजाय मर्कटः—इति यजुःसंहितायाम्  
 (२४।३०) । स्थावरविषभेदः; गल्लगण्डपक्षी । २५६

मर्कटकः पुं. [ मर्कट+स्वार्थे संज्ञायां वा कन् ] वानरः;  
 लूता; ऊर्णनाभः; मत्स्यभेदः; दैत्यः; सस्यभेदः;  
 'श्यामाकास्त्वथ नीवारा जतिलाः सगवेधुकाः । तथा  
 वेणुयवाः प्रोक्तास्तद्वन् मर्कटका मुने—इति त्रिपुण्ड-  
 पुराणे (१।६।२५) । २३१

मर्त्यः पुं. [ म्रियन्तेऽनेति मर्तो भूलांकस्तत्र भवः । मर्त् +  
 यत् । यद्वा म्रियते' इति, मृङ् + 'हिसमृग्रिण्' इति तन्,  
 स्वार्थे यत् ] मनुष्यः; नरः; पुरुषः; मानवः; मानुषः;  
 मनुजः; 'गृहे च गृहलक्ष्मीश्च मर्त्यानां गृहिणां तथा'  
 —इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।२६) । मध्यमलोकः; क्ली.  
 शरीरम्; 'तस्यास्तद्योगविधुतमात्यं मर्त्यमभूत् सरित्—  
 —इति भागवते (३।३३।३१) । ३३१

मर्म [ न् ] क्ली. [ मृ+ 'सर्वधानुस्यो मनिन्' इति मनिन् ]  
 जीवस्थानम्; 'सन्निपातः शिरास्नायुसन्धिमासास्थि-  
 सम्भवः । मर्माणि तेषु तिष्ठन्ति प्राणाः खलु विशयन्तः'

—इति भावप्रकाशः । स्वरूपं; तत्त्वम्; 'मृगया न विगीयते नृपैरपि घमगिममर्मपारणैः । स्मरसुन्दर ! मां यदत्यजस्तव घर्मः सदयो दयोज्ज्वलः—इति नवधे (२।९) । सन्धिस्थानम् । ५२९

**मर्मरः** पुं. [ मर्मं तत्त्वं ममत्यव्यक्तशब्दं वा रातीति । रा+क ] वस्त्रस्य पत्रस्य च ध्वनिः; शुष्कपर्णध्वनिः; दस्त्रध्वनिः; 'अभ्यभूयत वाहानां चरतां गात्रशिञ्जितैः । मर्मरः पवनोद्धूतराजतालीवनध्वनिः—इति रघुवंशे (४।५६) । १५१

**मर्यादा** स्त्री. [ मर्येति सीमार्थे अव्ययं, तत्र दीयते । म्रियन्ते-ऽत्रेति मर्या, तां ददातीति । मर्या+दा+अङ् ] सीमा; अवधिः; कूलम् (६५४); 'कल्पान्त्वातसक्षोभलङ्घिताशेषभूभृतः । स्थैर्यप्रसादमर्यादास्ता एव हि महोदधेः—इति प्रबोधचन्द्रोदये (१।६) । न्याप्यपयस्थितिः; संस्था; धारणा; मर्यादायां स्थितो धर्मः शमश्चैवास्त्य लक्षणम्—इति महाभारते (१५।२२। २५) । देवातिथेः पत्नी; 'देवातिथिः खलु वैदेहीमुपयेमे मर्यादां नाम—इति महाभारते (१।९५।२३) ।

२५९

**मर्षः** पुं. [ मृप् धातोभवि घञ् प्रत्ययेन निष्पन्नः ] क्षान्तिः; क्षमाः; मर्षणं; तितिक्षा; सहिष्णुता; 'अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहादैनं न विद्विषादरः—इति किराते (१।३३) । ७२५

**मलः** पुं-कली. [ मृज्यते शोष्यते इति । मृज्+मृजेष्टिलोपश्च ] इति अलच्, टिलोपश्च । यद्वा मलते धारयति व्याघ्यादिदुर्गन्धमिति । मल्+अच् ] विष्ठा; विट्; 'पूयं चिकित्सकस्यान्नं पुरुचल्यास्त्वन्नमिन्द्रियम् । विष्ठा वाह्नीपिकस्यान्नं शास्त्रविक्रयिणो मलम्—इति मनुः (४.२२०) । 'विष्ठा मलमेकमेव च—इति तद्वाप्ये मेवातिथिः । पापम्; 'पश्चिमान्तु समासीनो मलं हन्ति देवाकृतम्—इति मनुः (२।१०२) । 'दिवाजितं पापं निहन्ति—इति तट्टीकायां कुल्लुकभट्टः । किट्टम्; 'छाया न मूर्च्छति मलोपहतप्रसादे शूद्धे तु दर्पणतले सुलभावकाशा—इति शाकुन्तले । 'पापं किल्बिषं, विट् विष्ठा, किट्टं कलङ्को मण्डूरादे, त्वेदादि च; एषु मलः । 'वसा शुक्रमसृष्ट मज्जाभूथं विट् कर्णविण्णखाः । श्लेष्माश्रु हृषिका स्वदेो द्वादशते नृणां मलाः—इति स्मृतिः । कर्पूरं;

वातपित्तकफाः; 'सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः । तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाहितसेवनम्—इति माधवकरः । पारिभाषिकमलम्; 'क्षत्रियस्य मलं भैक्ष्यं ब्राह्मणस्यान्नं मलम् । मलं पृथिव्या बाहीकाः स्त्रीणां मदश्रियो मलम्—इति महाभारते (८।४५।२३) ।

६३७

**मलघारी** [ न् ] पुं. [ मलं धरति अवश्यं देहनखकेशादौ यः । मल+धृ+ 'आवश्यकामणयोर्णिनि' इति णिनि ] जीवकः; जैनः; आजीवः; निर्ग्रन्थः । ३४५

**मलयजम्** क्ली०-पुं. [ मलये जातमिति । जन्+ङ् ] चन्दनं; श्रीखण्डम्; 'हृदि विपलताहारो नायं भुजङ्गमनायकः, कुवलयदलश्रणी कण्ठे न सा गरलद्युतिः । मलयजरजो नेदं भस्म प्रियाराहंते मयि, प्रहर न हरभ्रान्त्यानङ्ग ! ऋधाकिमु धावसि—इति गीतगोविन्दे (३।११) । मलयजाते त्रि. । 'उत्पतद्भ्रिखाकाशं वृक्षमलयजैरपि—इति महाभारते (१।२७।६) । 'राहु मलयजं शूद्रं पैठीनं द्वादशाङ्गुलम् । कृष्ण कृष्णाम्बरं सिंहासनं ध्यात्वा तथा ह्वयेत्—इति ग्रहयज्ञतत्त्वे । ५४४

**मलिनम्** त्रि. [ मलते धारयतीति । मल्+ 'बहुलमन्यत्रापि' इति इनच् । यद्वा 'मलशब्दादिनजीमसचो प्रत्ययो निपात्येते' इति काशिकाक्तया इनच् ] मलयुक्तवस्तु; मलीमसं; कच्चरं; मलद्वीपतम्; 'परस्त्रांहरणे पापशङ्काभयविवर्जिताः । निर्धना मलिना दीना दरिद्राश्चिररोगिणः—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१।४३) । दूषितम्; 'परपट इव रजकीभिर्मलिनो भुक्तापि निर्दयं ताभिः । अयं ग्रहणेन विना जघन्य ! मुक्तोऽसि कुलटाभिः—इति आर्यासप्तशत्याम् (४०२) । नित्यनैमित्तिकक्रियात्यागी; कृष्णं; निकृष्टः; 'द्युतिमग्रहीद् ग्रहणो लघवः प्रकटीभवन्ति मलिनाश्रयतः—इति माघे (९।२३) । 'मलिनाश्रयतः निकृष्टाश्रयणात्—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । क्लो. [ मलते धरति दोषमिति । मल्+इनच् ] घोलं; दोषः; टङ्गणः । ७२७

**मलिम्लुचः** पुं. [ मली सन् म्लोचतीति । मलिन्+म्लुच् गत्याम्+क ] चौरः; चोरः; प्रहितः प्रधनाय माधवा-नहमाकारयितुं महोभृता । न परेषु महोसशखलादपकुर्वन्ति मलिम्लुचा इव—इति माघे (१६।५२) । वायुः; पञ्चयज्ञपरिभ्रष्टः; अग्निः; मलमासः; अधिक-

मासः; अधिमासः; असंक्रान्तिमासः; नपुंसकमासः; 'तमतिक्रम्य तु रविर्यदा गच्छेत् कयञ्चन । आद्यो मल्लिम्बुचो ज्ञेयो द्वितीयः प्रकृतः स्मृतः'—इति मलमासतत्त्वम् । ३३८

**मलीमसम्** त्रि. [ मलमस्यास्तीति । मल्+ज्योत्सनात्मि-  
स्त्रेति' ईमसच् प्रत्ययेन निपातितम् ] मलिनम्; 'उपप्लुतं  
पातुमदो मदोद्धतैस्त्वमेव विश्वम्भर ! विश्वमीशिषे ।  
ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः क्षपातमस्काण्डमलीमसं  
नभः'—इति माघे ( १।३८ ) । कृष्णवर्णः; 'मलीमस-  
श्रीर्मधुपानसक्तो भेजे लताः पुष्पवतीः स्फुटं यः । स  
एव चैत्रेण वत द्विरेफः पुष्पपुराज्ये विहितः पुरोधाः'  
—इति श्रीकण्ठचरिते ( ६।३८ ) । क्ली. लौहं; पुष्प-  
कासीसम् । ७२७

**मल्लारी** स्त्री. [ मल्लार+डीप् ] मेघरागस्य रागिणी;  
मल्लारिका; 'मल्लारी सपहीना स्याद् ग्रहांशन्यासधै-  
वता । औडवा पीवरीयुक्ता वर्षामुं सुखदा सदा'—इति  
सङ्गीतदर्पणे । 'घ नि रि ग म ध ।' 'गौरी कृशा कोकिल-  
कण्ठनादा गीतच्छलेनात्मर्षति स्मरन्ती । आदाय वीणां  
मलिना रुदन्ती मल्लारिका यौवनदूनचिता'—इति  
सङ्गीतदर्पणे । वसन्तरागस्य रागिणी; 'आन्दोलिता च  
देशाख्या लोला प्रथममञ्जरी । मल्लारी चेति रागिण्यो  
वसन्तस्य सदानुगाः'—इति सङ्गीतदामोदरः । १०६ अ.

**मल्लिकः** पुं. [ मल्यते धार्यतेऽसी, मल्ल्+इन्, स्वार्थे  
कन् ] मलिनचञ्चुचरणयुक्तहंसः; मलिनैः किञ्चिद्भू-  
सरवर्णैरालोहितैश्चञ्चुचरणैरुपलक्षितः शुक्लहंसः;  
नृणामुपाधिविशेषः । २५२

**मल्लिका** स्त्री. [ मल्लिरैवेति । मल्लि+स्वार्थे कन्,  
स्त्रियां टाप् ] यद्वा मल्लिहंस इव, शुक्लत्वात् । मल्लि+  
इवार्थे कन् ] पुष्पवृक्षविशेषः; 'मल्लिकामुकुले चण्डि !  
भाति गुञ्जन्मधुव्रतः । प्रयाणे पञ्चवाणस्य शङ्खमापूर-  
यन्निव'—इति काव्यादर्शे । तत्पर्यायाः—तृणशून्यं;  
भूपदी; शतभीरुः; तृणशून्या; शीतभीरुः; भद्रवल्ली;  
गौरी; वनचन्द्रिका; प्रिया; सौम्या; नारीष्टा; गिरिजा;  
सिता; मल्ली; मदयन्ती; चन्द्रिका; मोदिनी ।  
मृत्पात्रभेदः ( ३१६ ) ; मत्स्यविशेषः; पानपात्रम् । २०६  
**मल्लिकाभाः** पुं. [ मल्लिकापुष्पमिव अक्षिणी यस्येति ।  
'अङ्गोऽदर्शनात्' इति अच् ] शुक्लवर्णवेष्टितचक्षुर्द्वय-

युक्तहयः; 'मल्लिकाक्षान् विल्पाक्षान् क्रीञ्चवर्णान्  
मनोजवान् । अश्वसैन्यं महाबाहुस्तदप्रतिमपीरुषः ।  
निसूदयामास वली गदया भीमविक्रमः'—इति हरिवंशे  
( २४।१२५-२६ ) । मलिनचञ्चुचरणयुक्तहंसः; मल्लि-  
काख्यः । ४३८

**मसुरः** पुं. [ मस्यते परिमीयतेऽसी । मस्+मसेश्च  
इति उरन् ] मसुरकलायः; मसूरः; ब्रीहिभेदः; मङ्ग-  
ल्यकः; ब्रीहिकाञ्चनः; मसूरा; मसुरा; रागदालिः;  
मङ्गल्यः; पृथुवीजकः; शूरः; कल्याणवीजः; गुड-  
वीजः; मसूरकः; मङ्गल्या; मसूरका । ५८१

**मसूरः** पुं. — स्त्री. [ मस्यते परिमीयतेऽसी । मस्+मसे-  
रुन् इति ऊरन् ] ब्रीहिभेदः; मङ्गल्यकः; मसुरः;  
ब्रीहिकाञ्चनः; मसूरा; 'वस्त्राविककुतुपानां, मसूर-  
गोधूमरालकयवानाम् । स्थलसम्भवीषधीनां कनकस्य  
च कीर्तितो मेघः'—इति बृहत्संहितायाम् ( ४।१२ ) ।  
५८१

**मस्करः** पुं. [ मस्कते गच्छत्यनेनेति । मस्क्+बाहुलकादर ।  
यद्वा मकर+मस्करमस्करिणी वेणुपरिव्राजकयोः' इति  
सुट् निपां यते, इति काशिका ] वंशः; रन्ध्रवंशः । २०४  
**मस्करी** [ न् ] पुं. [ मस्कते इतस्ततो गच्छत्यनेनेति ।  
मस्क्+बाहुलकादर । मस्करो दण्डः सोऽस्त्यस्येति ।  
मस्कर+इनि । यद्वा मा कर्तुं कर्म निषेद्धं शीलमस्य ।  
'मस्करमस्करिणी वेणुपरिव्राजकयोः' इति इनि ] भिक्षुः;  
तापसः; 'अधीयन्नात्मविद्विद्यां धारयन् मस्करिव्रतम् ।  
वदन् बहुङ्गुलिस्फोटं भ्रूक्षेपं च विलोकयन्'—इति  
भट्टिकाव्ये ( ५।६३ ) चन्द्रः । ४०९

**मस्तकः** पुं.—क्ली. [ मस्यते परिमीयते । मस्+इष्मशिम्यां  
तकन् इत्यत्र 'बाहुलकात् मस्यतेरपि तकन्' ] प्रषानाङ्गम्;  
उत्तमाङ्गं; शिरः; शीर्षं; मूर्धा; मुण्डं; शिरः; वराङ्गं;  
कं; पुण्ड्रं; मौलिः; कपालं; केशभूः; मस्तम्; 'बिभ्रत्  
क्लेशमवाप्नोति सोऽप्येवं शिरसा शिलाम् । क्षुत्क्षामोऽ-  
हनिशं भारपीडाव्यथितमस्तकः'—इति मार्कण्डेय-  
पुराणे ( १।४।७८ ) । ५१८

**मस्तकस्नेहः** पुं. [ मस्तकस्य स्नेहः ] शिरोमज्जा; मस्ति-  
ष्कं; गोदं; गोदं; मस्तुलुङ्गकः; 'मगज' इति भाषा ।  
'गोदन्तु मस्तकस्नेहो मस्तिष्को मस्तुलुङ्गकः'—इति  
हेमचन्द्रः ( ३।२०९ ) । ६३५

मस्तिष्कम् क्ली. [ मस्तं मस्तकम् इष्यति स्वाधारत्वेन प्राप्नोतीति । मस्त+इष् गती+क । पृषोदरादित्वात् साधुः ] गोर्दं; गोर्दं; मस्तकस्नेहः; मस्तुलुङ्गकः; मस्तुलुङ्गः; 'मगज' इति भाषा । 'यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामि ते'—ऋग्वेदे (१०।१६३।१) ।

६३५

मस्तु क्ली. [ मस्यति परिणमतीति, मस्+ 'सितनिगमि-मसिसत्त्यविधाञ् ऋशिम्यस्तुन्' इति तुन् ] दधिभवमण्डं; दधिजलं; द्विगुणवारियुतं दधि; 'उष्णाम्लं रुचिपित्तदं श्रमहरं बल्यं कषायं सरं, भुक्तिच्छन्दकरं तृषोदरगद-प्लीहाशंसां नाशनम् । स्रोतः शुद्धिकरं कफानिलहरं विष्टम्भशूलोपहं, पाण्डुश्वासविकारगुल्मशमनं मस्तु प्रशस्तं लघु'—इति राजनिर्घण्टः । 'मस्तु' क्लमहरं स्वल्पं लघु भुक्ताभिलाषकृत् । स्रोतोविशोधनं ह्लादि कफतृष्णाविलापहम् । अवृष्यं प्रीणनं शीघ्रं भिनत्ति मलसंग्रहम्—इति भावप्रकाशः । ३२१

महः पुं. [ मह्यते पूज्यतेऽस्मिन्निति । मह्+ 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ । मह्+अच् ] उत्सवः; 'न खलु-द्वरगतोऽप्यति वर्तते महमसाविति वन्धुतयोदितैः'—इति माघे (६।१९) । [ मह्यते पूज्यते इति ] तेजः; यज्ञः; 'तस्मात् प्रावृषि राजानः सर्वे शक्रं मुदा युताः । महैः सुरेशमर्चन्ति वयमन्ये च मानवाः'—इति हरिवंशे (७।१।१८) । महिपः; त्रिः महत्; बृहत्; विशालं; विस्तीर्णम् । 'महे वृणते नान्यं त्वत्'—इति ऋग्वेदे (१०।९।१८) । 'महे महति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७६३

महः [ स् ] क्ली. [ मह्यते पूज्यतेऽस्मिन्निति । मह्+ 'सर्व-धातुभ्यांऽमुन्' इति असुन् ] उत्सवः; [ मह्यते पूज्यते इति । मह्+असुन् ] तेजः; 'अन्तरायतिमिरोपशान्तये शान्तपावनमचिन्त्यवैभवम् । तं नरं वपुषि कुञ्जरं मुखे मन्महे किमपि तुन्दिलं महः'—इति रघुटीकारम्भे मल्लिनाथः । [ मह्यन्ते पूज्यन्ते देवादयोऽस्मिन्निति । मह्+असुन् ] यज्ञः; जलम्; उदकं; पूज्यमाने त्रि. । 'जिह्वा मे भद्रं वाङ्महो मनो मन्युः स्वरान् भामः'—इति यजुःसंहितायाम् (२०।६) । 'वाक् वाग्निन्द्रियं महः पूज्यमानास्तु'—इति तद्भाष्ये महीधरः । महत्; 'महो राये तमु त्वा समिचीमहि'—इति ऋग्वेदे (८।२३।१६) ।

'महो महते राये वनाय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ६९९

महत् त्रि. [ मह्यते पूज्यते ऽसा इति । मह्+ 'वर्तमाने पृषद्वृहन्महज्जगच्छतृवच्च' इति अति निपात्यते ] बृहत्; विशालं; विशङ्कटं; पृथुः; पृथुलं; बडम्; उदः; विपुलं; पुलं; विस्तीर्णम्; 'तस्मिन् रामशरो-त्कृत्ते बले महति रक्षसाम्'—इति रघौ (१२।४०) । पुं. प्रकृतेराद्यो विकारः; 'स वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः; प्रकृतेर्महान् महतोऽहङ्कारः'—इति सांख्य-सूत्रम् (१।६१) । 'शङ्खे तैले तथा मांसे वैद्ये ज्योतिषिके द्विजे । यात्रायां पथि निद्रायां महच्छब्दो न दीयते ।' (दीयते चेदमङ्गलवाचकः) —इति भट्टिप्रथमसर्गाय-चतुर्थश्लोकटीकायां भरतः । क्ली. राज्यम्; 'अथ यदि महज्जगमिषेदमावास्यायां दीक्षितः पूर्णमास्यां रात्रौ'—इति छान्दोग्योपनिषदि (५।२।४) । ब्रह्म; श्रुतेन श्रोत्रियो भवति तपसा विन्दते महत्'—इति महाभारते (३।३।१२।४४) । उदकं; जलम् । ६९९

महत्त्वम् क्ली. [ महत्+त्व ] महतो भावः; श्रेष्ठत्वम्; 'जनश्च शूद्रोऽपि महत्त्वमीयात्'—इति रामायणे (१।१।१०१) । 'महत्त्वं श्रेष्ठ्यम्'—इति तट्टीका । ६५३

महाकालः पुं. [ महंश्चासौ कालश्चेति ] लताविशेषः; उष्कालः; किम्पाकः; काकमर्दकः; काकमर्दः; देव-दालिका; दाला; दालिका; जलङ्गः; घोषकाकृतिः; 'अन्तर्मलिनदेहेन बहिराह्लादकारिणा । महाकाल-फलेनेव कः खलेन न वञ्चितः'—इत्युद्भटः । विष्णु-स्वरूपाखण्डदण्डायमानसमयः; 'कालो घटवान् महा-कालत्वात्'—इति न्यायव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणे । महा-देवः; शिवः; महेशः; शङ्करः; उमापतिः; 'कलनात् सर्वभूतानां महाकालः प्रकीर्तितः । महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिका परा'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (४।३१) । प्रमथगणविशेषः; उज्जयिनीस्थः शिवलिङ्ग-विशेषः; 'अस्तीहोज्जयिनी नाम नगरी भूपणं भुवः । हसन्तीव सुधाघोतैः प्रासादैरमरावतीम् । यस्यां वसति विश्वेशो महाकालवपुः स्वयम् । शिथिलीकृतकैलास-निवासव्यसनी हरः'—इति कथासरित्सागरे (१।१।३१-३२) । तीर्थविशेषः; 'महाकालं ततो गच्छन्नियतो नियताशनः । कोटितोर्थमुपस्पृश्य हयमेधफलं लभेत्'

—इति महाभारते (३।८२।४७) । शिवपुत्रविशेषः; 'देव्यास्तु दक्षिणे भागे महाकालं प्रपूजयेत्'—इति कुमारीकल्पे । २०३

**महातेजाः** [ स् ] पुं. [ महदतिशयं तेजो बलमस्य ] कार्तिकेयः; अग्निः; महादेवः; 'उग्रतेजा महातेजा जन्मो विजयकालवित्'—इति महाभारते (१३।१७।५६) । अतिशयतेजस्विनि त्रि. । 'स्वारोत्रिपश्चोत्तमिश्च तामसो रैवतस्तथा । चाक्षुपश्च महातेजा विवस्वत्सुत एव च'—इति मनुः (१।६२) । महातेजः (स्) क्ली. ; [ महदतिशयं तेजोऽस्य ] पारदः । २०

**महात्मा** [ न् ] त्रि. [ महानात्मा स्वभावोऽस्य ] उत्तमस्वभावयुक्तः; महेच्छः; उद्भटः; उदारः; उदात्तः; उदीर्णः; महाशयः; महामनाः । पुं. परमान्मा; 'युगपत्तु प्रलीयन्ते यदा तस्मिन् महात्मनि । तदायं सर्वभूतात्मा सुखं स्वपिति निर्वृतः'—इति मनुः (१।५४) । 'तस्मिन् परमात्मनि'—इति तट्टीकायां कुल्लुकभट्टः । महत्तत्त्वम्; 'मनः पृथिव्यां तामद्भिस्तेजसापोऽनिलेन तत् । खे वायुं धारयस्तच्च भूतादी तं महात्मनि'—इति भागवते (९।७।२५) । 'महात्मनि महत्तत्त्वे'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । पितृगणविशेषः; 'महान् महात्मा महितो महिमावान् महाबलः'—इति मार्कण्डेये (९६।४६) । महादेवः; 'महारूपो महाकायो वृषरूपो महायशः । महात्मा सर्वभूतात्मा विश्वरूपो महाहनुः'—इति महाभारते (१३।१७।३४) । ३५६

**महादानम्** क्ली. [ महच्च तदानं चेति ] श्रेष्ठदानं; तनु तुलापुरपादिषोडशप्रकारम्; 'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महादानस्य लक्षणम् । आद्यन्तु सर्वदानानां तुलापुरसंज्ञितम्'—इति मत्स्यपुराणे । ७७३

**महादेवः** पुं. [ महाश्चासी देवश्चेति । यदा महतां देवादीनां देवः ] शिवः; 'ब्रह्मादीनां सुराणां च मुनीनां ब्रह्मवादिनाम् । तेषां च महतां देवो महादेवः प्रकीर्तितः । महतां पूजिता विश्वे मूलप्रकृतिरीश्वरी । तस्या देवः पूजितश्च महादेवः स च स्मृतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । १३

**महादेवी** स्त्री. [ महादेवस्य पत्नीति, पत्न्यर्थे ङीप् । यदा महती चासी देवी चेति ] दुर्गा; 'पूज्यते या सुरैः सर्वमंहतीति प्रमाणतः । धातुमंहति पूजायां महादेवी ततः स्मृता'—इति देवीपुराणे । राज्ञी; महिषी; पट्टाहर्षी;

पट्टदेवी, 'पटरानी' इति भाषा । 'अलिखत् स महादेवीं योगनन्दं च तं पटे । स गैवमिव तच्छिद्यं वाक्चेष्टारहितं बभौ'—इति कथासरित्सागरे (५।२९) । १६

**महानन्दः** पुं. [ महानानन्दोऽत्र ] मुक्तिः; मोक्षः; [ महान् आनन्दः ] अतिशयाह्लादः; नृपतिविशेषः; 'इत्युक्त्वा तान् महीपालान् महानन्दमुखान् बली । अथाब्रवीत्तदा सर्वान् महारिदमनो दमः'—इति मार्कण्डेये (१३।४।४०) । 'वेणुविशेषः; 'महानन्दस्तथानन्दो विजयोऽथ जयस्तथा । चत्वार उत्तरे वंशा मातङ्गमुनि-सम्मताः'—इति सङ्गीतदामोदरे । १२४

**महानसम्** क्ली - पुं. [ महच्च तत् अनश्चेति । 'अनोऽश्मायःसरसां जातिसंज्ञयोः'—इति संज्ञायां टच् । 'आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः'—इति महत् आकारादशः ] रन्धनगृहं; रसवती; पाकस्थानम्; 'सूदंशास्त्रविधानज्ञाः पराभेद्याः कुलोद्गताः । सर्वे महानसे धार्या लुप्तकेशनखा जनाः'—इति मात्स्ये १८९ अध्यायः । २९५

**महानिशा** स्त्री. [ महती घोरा निशा ] निशामध्यभागः; निशाद्धः; निशीथः; मध्यमरात्रिः; मध्यरात्रः; अर्धरात्रः; मध्यरात्रिः; 'यन्मुहूर्ते व्यतीते तु रात्रावेव महानिशा । लभते ब्रह्महत्यां च तत्र भुक्त्वा च नारद । गोमांसविषभूत्रसमं ताम्बूलं च फलं जलम् । पुंसामभक्ष्यं शुद्धायामोदनस्यापि का कथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते पुराणे । १०९

**महाप्रलयः** पुं. [ महाश्चासीं प्रलयो जगतामवसानमिति ] त्रिलोकनाशः; संहारः; तार्किकमते जन्यभावानधिकरणकालः; स च चरमध्वंसरूपः । ११७

**महाबलः** पुं. [ महदुत्कृष्टं बलम् ऐश्वर्यं यस्य ] वायुः; बुद्धः; पितृगणविशेषः; 'महान् महात्मा महितो महिमावान् महाबलः । गणाः पञ्च तथैवैते पितृणां पापनाशनाः'—इति मार्कण्डेये (९६।४६) । बलीयसि त्रि. । 'नियुज्यमानो राज्याय नैच्छद्राज्यं महाबलः । स जगाम वनं बीरो रामपादप्रसादकः'—इति रामायणे (१।१।३४) । क्ली. [ महदतिशयितं बलं सामर्थ्यमस्मात् । महत् बलमस्येति वा ] मीसकं; नागम्; 'नागं महाबलं चीनं पिष्टं योगेष्टमीसकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।

महामत्स्यः पुं. [ महाश्चासी मत्स्यः । कर्मधारयः ] बृहत्मत्स्यः; रोहितः; पाठीनः । ६५९, ६६०

महामनाः [ स् ] त्रि. [ महत् प्रशस्तं मनो यस्य ] महाशयः; महात्मा; 'महेच्छे तृद्धटोदारोदात्तोदीर्णमहाशयाः । महामना महात्मा च'—इति हेमचन्द्रः । 'इन्द्रस्य वृष्णो वरुणास्य राज्ञ आदित्यानां मरुतां शर्ध उग्रम् । महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्यात्'—इति ऋग्वेदे (१०।१०३।९) । 'महामनसाम् उदारमनसाम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । महाशाल-पुत्रः; 'महामना नाम सुतो महाशालस्य धामिकः'—इति हरिवंशे (२।१२०) । ३५५

महामात्रः पुं. [ महती मात्रा मर्यादा परिमाणं यस्य ] हस्तिपकाधिपः; 'इहत्यश्च महामात्रो द्विरदेङ्गितवित्तदा । मद्येन क्षीयतां नेयो नैतश्चेतयते यथा'—इति कथासरित्सागरे (१।३।१०) । प्रधानः (४२७); [ सेनापत्यादिषु महती मात्रा धनं परिच्छेदो वा यस्य सः ]; 'यत्र वृद्धो महामात्रः सिद्धार्थो नाम नामतः । शुचिर्बहुमतो राज्ञः कंकेयीमिदमन्नवीत्'—इति रामायणे (२।३६।१८) । सम्बुद्धः; 'राज्ञे भोजकटस्याय महामात्राय धीमते'—इति महाभारते (२।२।१।६०) । अमात्यः; 'दूषिते हि महामात्रे रिपुशत्रोऽपि धीमता । स्वपक्षे यस्य विश्वास इत्यंभूतश्च निष्क्रियः'—इति कामन्दकीये (९।६९) । महादेवः; 'महामूर्द्धा महामात्रो महानेत्रो निशालयः' २५५

महारजतम् क्ली. [ महच्च तद्रजतञ्चेति ] सुवर्णः; हेमः; स्वर्णम्; 'महारजतसङ्काशा जायन्ते तत्र मानवाः'—इति मार्कण्डेये (६०।४) । धुस्तूरः; बृहद्रीष्यम् । १७४

महारजनम् क्ली. [ रज्यतेऽनेनेति । रञ्ज्+करणे ल्युट् । ततः 'अनिदिताम्' इत्यत्र 'रजकरजनरजःसुपसंख्यातं कर्तव्यम्' इति काशिकोक्त्या नलोपः । महच्च तद्रजनं चेति कर्मधारयः ] कुसुम्भपुष्पं; स्वर्णं; सुवर्णम् । ६२०

महावृक्षः पुं. [ महान् वृक्षः ] स्नुहीवृक्षः; 'वज्रवृक्षो महावृक्षः स्नुही स्नुच्च सुधा गुडा'—इति सुश्रुते । 'महावृक्षपदयोर्तयैवाम्बुस्तण्डुलैः कृता'—इति सुश्रुतः । बृहद्वृक्षः । १९७

महाशालिः पुं. [ महाश्चासी शालिश्च ] धान्यविशेषः;

स्यूलशालिः; सुगन्धिकः; 'रक्तशालिः सकलमः पाण्डुकः शकुनाहतः । सुगन्धकः कर्दमको महाशालिश्च दूपकः'—इति भावप्रकाशः । ५८०

महाशूद्रः पुं. [ महान् उत्तमः शूद्रः; 'सच्छूद्रौ गोपनापितौ' इत्युक्तेः ] आभीरः; गोपालः; वल्लवः । ५८७

महासेनः पुं. [ महती सेना यस्य ] कार्तिकेयः; 'महासेनो यस्य प्रमदयमदंष्ट्रासहचरैः, शरैर्मुक्तो जीवद्विरिव शरजन्मा समभवत् । इमां च क्षत्राणां भुजवनमहादुर्गविपमामयं वीरो वारानजयदुर्गविशान् वसुमतीम्'—इति अनर्घराघवे (४।३२) । [ महती सेना अनुचराः अस्य ] शिवः; महासेनापतिः; 'स च राजा दशार्णेषु महानासीत् सुदुर्जयः । हिरण्यवर्मा दुद्धर्षो महासेनो महामनाः'—इति महाभारते (५।१९।१।११) । वृत्ताहंतिपतृविशेषः; राजविशेषः; 'जयसेनस्य तस्याय पुत्रोऽप्रतिमदोर्बलः । समुत्पन्नो महासेननामा नृपतिःकुञ्जरः'—इति कथासरित्सागरे (१।१।३४) । २०

महास्नायुः पुं. [ महती स्नायुः अस्थिवन्वननाडी ] कण्डरा । ६३४

महिला स्त्री. [ मह्यते इति, मह् पूजायाम्+सलिकल्यनि-महीति' इलच्+टाप् ] स्त्रीमात्रं; प्रियङ्गुलता; महिला-ह्वया; मदमत्ता स्त्री; रेणुकानामकगन्धद्रव्यम् । ४८२

महिषः पुं. [ महति पूजयति देवाननेनेति । मह्+अवि-मह्योऽष्टिषच्' इति टिषच् ] पशुविशेषः; लुलायः; बाहद्विषन्; कासरः; सैरिभः; यमवाहनः; विपञ्चरत्न-वंशभीरुः; रजस्वलः; आनूपः; रक्ताक्षः; अश्वारिः; क्रोधी; कलुषः; मत्तः; विपाणी; गवली; बली; लुलापः । 'विपक्षे ह्यसन्नासं कुस्ते येन हेतुना । भारं वहति वा दूरं महिषोऽस्मान्निरूप्यते । ब्रह्मक्षत्रियविट्-शूद्रान्त्यजभेदेन पञ्चधा'—इति युक्तिकल्पतरुः । 'महिषो घोटकारिः स्यात्कासरश्च रजस्वलः । पीनस्कन्धः कुण्ठकायो लुलायो यमवाहनः । महिषस्यामिषं स्वाहुस्तिगधोष्णं वातनाशनम् । निद्राशुक्रबलस्तन्पतनुदीर्घकरं गुह । वृष्यञ्च सृष्टविष्णुमन्नवातपित्तालनाशनम्'—इति भावप्रकाशः । श्मश्रुधारिभ्लेच्छजातिविशेषः; अहंद्ब्रज-विशेषः; महिषासुरः; 'महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे । तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम् । जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभूममहिषासुरः'—इति मार्कण्डेये



(८२।१-२) । देवगणभेदः; 'अपामुपस्ये महिषा अगृ-  
ष्णात् विशो राजानमुपतस्थुः ऋग्निमयम्'—इति निरुक्ते  
(७।२६) । 'महिषा माध्यमिका देवगणाः अथवा  
महिषाः त एव महान्तः'—इति तट्टीकायां दुर्गाचार्यः ।  
कुशद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'षष्ठस्तु पर्वतस्तत्र महिषो  
मेषसन्निभः'—इति मात्स्ये (१२।१५९) । अग्नि-  
विशेषः; 'तस्मिन् सोऽग्निनिवसति महिषो नाम योऽ-  
प्सुजः'—इति मात्स्ये (१२।१६०) । कुशद्वीपस्य वर्ष-  
विशेषः; 'महिषं महिषस्यापि पुनश्चापि प्रभाकरम्'  
—इति मात्स्ये (१२।१६८) । कृताभिषेको भूपालः;  
'कृपाभिषेके भूपाले लुलाये महिषः स्मृतः'—इति रुद्रः ।  
देशभेदः; 'भरणीपूर्वं मण्डलमक्षचतुष्कं सुभिक्षकरमाद्यम् ।  
वङ्गाङ्गमहिषवाह्लिककलिङ्गदेशेषु भयजननम्'—इति  
बृहत्संहितायाम् (९।१०) । अनुह्लादस्य पुत्रभेदः;  
'अनुह्लादस्य सूर्यायां वास्कलो महिषस्तथा'—इति  
भागवते (६।१८।१६) । साध्यापुत्रः; 'महिषं च  
तनूजं च विज्ञातमनसावपि'—इति हरिवंशे (१९६।  
५५) । २२७

**महिषाक्षः** पुं. [ महिषस्य अक्षीवेति । 'अक्ष्णोऽशनात्'  
इति समासान्तोऽच् ] गुग्गुलुः; महिषाक्षकः; पुरः;  
देवधूपः; 'जटायुः कालनिर्यासः कौशिको गुग्गुलुः पुरः ।  
देवधूपः सर्वसहो महिषाक्षः पलङ्कपा'—इति वैद्यक-  
रत्नमालायाम् । 'महिषाक्षो महानीलो गजेन्द्राणां हिता-  
वुभी । विशेषेण मनुष्याणां कनकः परिकीर्तितः । कदाचि-  
न्महिषाक्षश्च यतः कौशिकवृणावपि'—इति भावप्रकाशः ।  
६२०

**महिषी** स्त्री. [ महिषस्य कृताभिषेकस्य नृपस्य पत्नी ।  
'पुंयोगादाख्यायाम्' इति डीष् ] कृताभिषेका राजपत्नी;  
'इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं समं महिष्या महनीयकीर्तेः ।  
सप्त व्यतीयुस्त्रिगुणानि तस्य दिनानि दीनोद्धरणो-  
चितस्य'—इति रघौ (२।२५) । सैरिन्ध्री; ओषधि-  
भेदः; महिषयोपित्; मन्दगमना; महाक्षीरा; पय-  
स्विनी; लुलायकान्ता; कलुषा; तुरङ्गद्विषणी;  
'नवनीतं महिष्यास्तु वातश्लेष्मकरं गुहं । दाहपित्त-  
श्रमहरं भेदःशुक्रविवर्द्धनम्'—इति भावप्रकाशः ।  
'महिषीणां गुहतरं गव्याच्छीततरं पयः । स्नेहानूनमनि-  
द्राय हितमत्यग्नये च तत्'—इति चरकः । ४८०

**मही** स्त्री. [ मह्यते इति । मह्+अच्, गौरादिभ्यश्च'  
इति डीष् । यद्वा महि+कृदिकारादिति डीष् ] पृथिवी;  
'उत्तिष्ठतस्तस्य जलार्द्रकुक्षेर्महावराहस्य महीं विचार्य ।  
विधुन्वतो वेदमयं शरीरं रोमान्तरस्था मुनयो जुषन्ति'  
—इति विष्णुपुराणे । नदीविशेषः; सा चं मालवदेशे  
वर्तते; 'महीजलं तु सुव्वाद्बु बल्यं पित्तहरं गुहं'—इति  
राजनिर्घण्टः । गीः; हिलमोचिका; लोकः; 'तिस्रो  
महीरुपरस्तस्थुः'—इति ऋग्वेदे (३।५६।२) । 'महीः  
लोकाः'—इति तद्भाष्ये सायणः । १५६

**महीभृत्** पुं. [ महीं विभर्ति धरतीति । मही+भृ+क्विप्,  
'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' इति तुगागमश्च ] पर्वतः;  
'महीभृत्ः पुत्रवतोऽपि दृष्टिस्तस्मिन्नपत्ये न जगाम  
तृप्तिम् । अनन्तपुष्पस्य मयोर्हि चूते द्विरेफमालाः  
सविशेषसङ्गाः'—इति कुमारसम्भवे (१।२७) । [ महीं  
विभर्ति पालयतीति । भृ+क्विप् ] राजा; 'ये ममानुगता  
नित्यं प्रसादघनभोजनैः । अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्य-  
महीभृताम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८।१।३३) । २११

**महेच्छः** पुं. [ महती इच्छा यस्य । ह्रस्वश्च सामासिकः ]  
महाशयः; महोत्साहः; महोद्योगः; महामनाः;  
उदात्तः; उदीर्णः; महात्मा; उदारः; 'प्रत्यन्तधनि-  
महेच्छव्यवसायपराक्रमोपेताः'—इति बृहत्संहितायाम्  
(१६।३८) । ३५५

**महोक्षः** पुं. [ महान् उक्षा । 'अचतुरविचतुरेति' समासान्तः  
अच् निपातितश्च ] बृहद्दूषः; वृषमः; वृषः; पुङ्गवः;  
बली; गोनाथः; ऋपभः; गोप्रियः; उक्षा; गोपतिः ।  
'महोक्षः स त्वया दृष्टः संस्तवश्च कृतो यदि । तदिहानय  
तं युक्त्या तावत् पश्यामि कीदृशः'—इति कथासरि-  
त्सागरे (६०।६६) । २६५

**महोत्पलम्** क्ली. [ महच्च तद् उत्पलं च ] पत्रं; कमलं;  
महापत्रं; सारसपक्षी । ६७९

**महोत्साहः** त्रि. [ महान् उत्साहो यस्य ] अतिशयोत्साह-  
युक्तः; महोद्यमः; विष्णुः; 'अतीन्द्रियो महामायो महो-  
त्साहो महाबलः'—इति महाभारते (१३।१४९।३१) ।  
पुं. [ महान् उत्साहो यस्य ] राज्याङ्गप्राप्तराजपुरुषः;  
'सम्पन्नस्तु प्रकृतिभिर्महोत्साहः कृतश्रमः'—इति शब्द-  
माला । अतिशयोद्यमः । ३५५

**महोदयम्** क्ली. [ महान् उदय उन्नतियस्मिन् ] पुरविशेषः;

कान्यकुब्जं; कान्याकुब्जं; गाधिपुरं; कौशं, कुशस्थलं; पुं. [ महान् उदयः समुत्थित्यस्मिन् ] कान्यकुब्जेदेशः; अपवर्गः; [ महान् उदय उल्कर्वो यस्य ] स्वामी; [ महान् उदयः फलं यस्मिन् यस्माद्वा ] महाफले त्रि. । 'अपि यत्सुकरं कर्म तदप्येकेन दुष्करम् । विशेषतोऽसहायेन किन्तु राज्यं महोद्यमम्'—इति मनुः (७।५५) । 'महोद्यं महाफलम्'—इति तट्टीकायां कुल्लूक भट्टः १२८७

महोद्यमः त्रि. [ महान् उद्यमो यस्य ] महोद्यसाहः; 'अय निजित्य दायार्दाल्लब्धा लक्ष्मीं क्षितीश्वरः । जिष्णुदि- ग्विजयं कर्तुं श्रीमानासौमहोद्यमः'—इति राजतरङ्गि- ण्याम् (५।१४१) । महानुद्यमः; अतिशयोद्योगे पुं. ।

३५५

महोद्योगः त्रि. [ महान् उद्योगो यस्य ] महोत्साहः । ३५५

महोषधम् क्ली. [ महत् औषधम् ] शुष्ठी; विश्वभेषजं; नागरम्; 'शुष्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् । ऊषणं कटुभद्रं च शृङ्गवेरं महोषधम्'—इति भाव- प्रकाशः । भूम्याहुत्स्यं; लशुनः; 'लशुनस्तु रसोनः स्यादुग्रगन्धो महोषधम् । अरिष्टो म्लेच्छकन्दश्च यवनेष्टो रसोनकः'—इति भावप्रकाशः । वाराहीकन्दः; वत्स- नामः; पिप्पली; अतिविषा; महाभेषजम्; 'स्वभर्तृन् प्रप्यं तेषां च महासत्वान्महोषधैः । चिकित्सां कारयामा- सुर्नोत्स्युश्च तदन्तिकार्त्'—इति कथासरित्सागरे (६६।३९) । ६१५

मा स्त्री. [ माति परिमाति अदृष्टं धनदानाय । मा+ क्विप् । यद्वा मा+क, ततष्टाप् ] लक्ष्मीः; माता; 'मारमा सुषमा चारुचा मारवधूत्तमा । मात्तधूर्ततमावासा सा वामा मेज्जु मा रमा'—इति साहित्यदर्पणे (१०) । मानम् । अव्य. [ मा+क्विप् ] वारणं; निवारणम्; 'मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः'— इति रामायणे (१।२।१५) । विकल्पः; त्रि. [ अस्मद्+ द्वितीयैकवचने 'त्वामी द्वितीयायाः' इति मामित्यस्य स्थाने विकल्पेन आदेशः ] मदीया कर्मता; 'सिन्धोः पुत्र्यां रोषिता किं त्वमाद्ये ! कस्मादेनां प्रेक्षसे नाथ- हीनाम् । क्षन्तव्यस्ते स्वांशजांतापराधो व्युत्पाप्यैनं मोदितां मा कुरुष्व'—इति देवी भागवते (१।५।६६) ।

३१

मांसम् क्ली. [ मन्त्यते इति । मन् ज्ञाने+ 'मनेर्दीर्घश्च'

इति स दीर्घश्च ] रक्तजघातुविशेषः; पिशितं; तरसं; पललं; ऋव्यम्; आमिषं; पलम्; अलजं; जाङ्गलं; कीरम्; 'वयस्यं निविषं सद्योहृतं मांसं प्रशस्यते । मृतञ्च व्याधितं व्युष्टं वृद्धं बालं विवर्हंतम् । अगोचरहतं व्याल- सूदितं मांसमुत्सृजेत्'—इति राजनिर्घण्टः । 'मांसं वातहरं सर्वं बृहणं बलपुष्टिकृत् । प्रीणनं गुष् हृद्यञ्च मधुरं रसपाकयोः'—इति भावप्रकाशः । पुं. कालः; कीटः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'चतुरो मागधी सूते क्रूरान्मायोपजीविनः । मांसं स्वादुकरं क्षीद्रं सौगन्धमिति विश्रुतम्'—इति महाभारते (१३।४८।२२) । ६३१

मांसविक्रयी [ न् ] त्रि. [ मांसविक्रयोऽस्यास्तीति '। मांसविक्रयेण जीवति चेति, इनि ] आमिषविक्रयकर्ता; वैतंसिकः; कौटिकः; मांसिकः; शौनिकः; कौटिकिकः; 'चिकित्सकान् देवलकान् मांसविक्रयिणस्तथा । विपणेन च जीवन्ती वज्याः स्पृहृण्यकव्ययोः'—इति मनुः (३ १५१) । ५९१

मांसादी [ न् ] त्रि. [ मांसम् अत्ति इति । मांस+अद्- णिनि ] शौष्कलः; मांसभक्षः; मांसभक्षकः । ३५१

माक्षिकम् क्ली. [ मक्षिकाभिः कृतम् । मक्षिका+ 'संज्ञायाम् इति ठक् ] मधु; नीलवर्णमध्यममक्षिकाकृततैलवर्णमधु; धातुविशेषः; 'माक्षिकं द्विविधं प्रोक्तं हेमाह्वं तारमाक्षि- कम् । भिन्नवर्णं विशेषत्वाद्भ्रसवीर्यादिकं पृथक् । तारपादा- दिके तारमाक्षिकञ्च प्रशस्यते । देहे हेमाभकं शस्तं रोगहृद्बलपुष्टिदम्'—इति राजनिर्घण्टः । उपधातु- विशेषः; 'माक्षिकं तुल्यताभ्रे च नीलाञ्जनशिलालकाः । रसकं चेति विज्ञेया एते सप्तोपधातवः'—इति सुखबोधे । ६२१

माक्षीकम् क्ली. [ मक्षिकाभिः कृतमित्यण् । निपातना- दीर्घत्वम् ] मधु; धातुविशेषः; 'माक्षीकषातुमधुपार- दलोहचूर्णं, पथ्याशिलाजतुविडङ्गघृतानि योज्यात् । सैकोनविंशतिरहानि जरान्वितोऽपि सोऽजीतिकोऽपि रमयत्यबलां युवेव'—इति कथासरित्सागरे (७६।३) । ६२१

मागघः पुं. [ मागघस्य तद्वंशस्यापत्यम् । 'द्व्यब्जमागघ- कलिङ्गसूरमसादध्' इति अण् ] वंशक्रमेण महत्त्ववेदि- राजापस्तुतिकारी; मधुकः; चन्दी; स्तुतिपाठकः; 'तस्मिन्नेव महायज्ञे जज्ञे प्राज्ञोऽय मागघः । प्रोक्तौ तदा

मुनिवरस्तावुभौ सूतमागधी । स्तूयतामेष नृपतिः पृथुर्वैत्यः प्रतापवान्—इति विष्णुपुराणे । वर्णसङ्करजातिविशेषः; स तु क्षत्रियायां वैश्याज्जातः; 'भाट' इति भाषा । [ मगधेषु भवो मागधः ] जरासन्धराजः; 'मागधो न च हन्तव्यो भूयः कर्ता वलोद्यमम्'—इति भागवते १० स्कन्धः । शुक्लजीरकः; मगधदेशोद्भवे त्रि । 'अन्ध्राश्च बहवो राजन्नन्तर्गिर्यास्तयेव च । बहिर्गिर्याङ्गमलदा मागधा मालववाज्जटाः'—इति महाभारते (६।१।४९) । ४३५

मागधी स्त्री । [ मगधे जाता । मगध+अण्+डीप् ] मालती; जातिः; यूथिका; (६१४) कृष्णा; उपकुल्या; वैदेही; पिप्पली; कणा; मागधा; मागधिका; 'पिप्पली च पलाशौण्डी वैदेही मागधी कणा । कृष्णोपकुल्या मगधी कोला स्यात्किन्ततण्डुला'—इति वैद्यकरत्नम लायाम् । वृटिः; शर्करा; भाषाविशेषः; 'अत्रोक्ता मागधी भाषा राजान्तःपुरचरिणाम्'—इति साहित्यदर्पणे । तद्देश-भवे त्रि । 'अनश्वा खलु मागधीमुपयेमे अमृतांनाम तस्यामस्य जज्ञे परीक्षित्'—इति महाभारते (१।९५ ४१) । २०५

माञ्जिष्ठम् क्ली । [ मञ्जिष्ठया रक्तम् । 'तेन रक्तं रागात्' इत्यण् ] लोहितवर्णः; 'कल्माषवभ्रुकपिल-विचित्रमाञ्जिष्ठहरितशवलाभाः'—इति बृहत्संहितायाम् (३०।१२) । तद्वति त्रि । ७३३

माठी स्त्री । [ मठयते न्युस्यते देहः अस्याम् । मठ्+घञ्, डीप् ] कवचः; वारवाणः; दंशनम् । ४५९

माढिः स्त्री । [ महति अनया, मह्+अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति क्तिन् ] पत्रशिरा; पत्रभङ्गिः; देशभेदः; दन्तभेदः; दैन्यप्रकाशनं; दीनता; 'माढिर्दैन्यं पत्रशिरार्चामूढ-स्तन्द्रिते जडे'—इति हेमचन्द्रः । ७८३

माणवकः पुं । [ अल्पो मानवः, 'अल्पे' इति कन्, 'ब्राह्मण-माणव' इति निपातनाणत्वम् ] बालकः; स च षोडश-वर्षपर्यन्तः; प्रथमवयस्कः; 'एष ते स्थानमैश्वर्यं श्रियं तेजो यंशः श्रुतम् । दास्यत्याच्छिद्य शक्राय माया-माणवको हरिः'—इति भागवते (८।१९।३२) ।

[ माणवको बालः स इव ] हारभेदः (५६२); स तु विशतियष्टिकः, किन्तु बृहत्संहितामते षोडशयष्टिको हारः । 'द्वात्रिंशत्ता गुच्छो विशत्या कीर्तितोऽद्रुंगुच्छास्यः ।

षोडशभिर्माणवको द्वादशभिश्चाद्रमाणवकः'—इति बृहत्संहितायाम् (८।१।३३) । कुपुरुषः; वटुः । ५०२  
माणिवन्धम् क्ली । [ मणिवन्धे गिरी भवम् । मणिवन्ध+अण् ] सैन्धवलवणम् । ६१४

माणिमन्थम् क्ली । [ मणिमन्थगिरी भवम् । मणिमन्थ+अण् ] सिन्धुजलवणम्; 'सैन्धवोऽस्त्री शीतशिवं माणि-मन्थं च सिन्धुजम्'—इति भावप्रकाशः । ६१४

मातङ्गः पुं । [ मतङ्गस्येदम्, मतङ्गस्यापत्यं पुमान् वा । मतङ्ग+अण् ] हस्ती; 'विन्ध्यपर्वतजैमैतैः पूर्णाहिम-वतैरपि । यदान्वितैरतिबलमैतङ्गैः पर्वतोपमैः'—इति रामायणे (१।६।२३) । श्वपचः (५९८); 'सुदूर-मन्वगायातं कार्याय कृतसंविदम् । सख्या दुर्गपिशाचेन मातङ्गपतिना युतम्'—इति कथासरित्सागरे (७३।२) । अश्वत्थवृक्षः; किरातजातिविशेषः; अर्हदुपासकविशेषः । २१४

मातरिश्वा पुं । [ मातरि अन्तरिक्षे श्वयति वर्द्धते इति । यद्वा मातरि जनन्यां श्वयति वर्द्धते (दितिजठरे सप्त-सप्तकमरुतामुत्पत्तेः) । मातृ+ङि+शिव+श्वन्—उक्षन्निति' कनिन्, सप्तम्या अलुक्, धातोरिकारलो-पश्च निपातितः ] वायुः; 'आन्यं दिवो मातरिश्वा ज-भारामन्थादन्यं परिश्येनो अद्रेः'—इति ऋग्वेदे (१।९३।६) । 'मातरिश्वा वायुः'—इति तद्भाष्ये सायणा-चार्यः । [ मातर्यन्तरिक्षे श्वसिति चेष्टते इति । श्वस्+कनिन् ] अग्निभेदः; 'तनूनपादुच्यते गर्भम् आसुरो नरा शंसो भवति यद्विजायते । मातरिश्वा यदमिमीत मातरि-वातस्य सर्गो अभवत् सरीमणि'—इति ऋग्वेदे (३।२९।११) । 'यदाग्निररणीषु गर्भरूपतया वर्तते तदा तनून-पान्नामको भवति, यदान्तरिक्षे विद्योतते तदा मातरिश्व-नामको भवति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७६.

मातलिः पुं । [ मतं लातीति । ला+क । पृषोदरादित्वात् साधुः । मतल्स्यापत्यं पुमानिति वा, मृतल्+अत् इञ् इतीञ् ] इन्द्रसारथिः; शक्रसारथिः; 'मतस्त्रिलोक-राजस्य मातलिर्नाम सारथिः । तस्यैकैव कुले कन्या रूपतो लोकविश्रुता'—इति महाभारते (५।९७।११) । ६१

माता [ ऋ ] स्त्री । [ मान्यते पूज्यते या सा । मान् पूजायाम्, 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपीतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ'—इति

तृच् निपात्यते । स्वस्त्रादित्वाट्टाप् न ] सप्त दे -  
मातरः; 'ब्राह्मी च वैष्णवी चैन्द्री रौद्री वाराहिकं  
तथा । कौबेरी चैव कौमारी मातरः सप्त कीर्तिताः—  
इत्यमरटीकायां भरतः । (५०४) जनयित्री; प्रसू; ;  
जननी; सवित्री; जनिः; जनी; जनित्री; अक्का;  
अम्बा; अम्बिका; अम्बालिका; मातृका । 'जनको  
जन्मदातृत्वात् पालनाच्च पिता स्मृतः । गरीयान् जन्म-  
दानुश्च योऽन्नदाता पिता मुने ! विनाम्नाप्रश्वरो देहो  
न नित्यः पितुरुद्भवः । तयोः शतगुणे माता पूज्या मान्या  
च ब्रह्मिन्दाता । गर्भधारणपोषाम्नां सां च ताम्नां गरीयसी—  
इति ब्रह्मवैवर्ते । 'स गुह्यं क्रियाः कृत्वा वेदमस्मै  
प्रयच्छति । उपनीय ददद्वेदमाचार्यः स प्रकीर्तितः ।  
एकादश उपाध्याया ऋत्विग् यज्ञकृदुच्यते । एते मान्या  
यथापूर्वभेद्यो माता गरीयसी—इति गारुडे । 'गुरुणा-  
मपि सर्वेषां पूज्याः पञ्च विशेषतः । तेषामाद्यास्त्रयः  
श्रेष्ठास्तेषां माता सुपूजिता—इति कौर्मै । १७  
माता स्त्री । [ मान्यते पूज्यते इति । मान् पूज्याम्+  
तन् तत्श्टापि निपातनात् साधुः ] जननी; 'विश्वेश्वरीं  
विश्वमातां चण्डिकां प्रणामाम्यहम्—' इति शिवरहस्ये  
दुर्गास्तवदर्शनाद् आबन्तोऽयं शब्दः । ५०४  
मातृमुखः पुं । [ माता एव मुखः उपदेशकः, न तु गुर्वादिः,  
यस्य सः ] जडः; अज्ञः; मातृशासितः; मूर्खः । ३७७  
मातृशासितः पुं । [ मात्रा शासितः । स्नेहाधिकत्वात्  
केवलं मात्रैव शासितः, न तु पित्राचार्यादिभिरिति भावः ]  
मूर्खः । ३३६  
मात्रा स्त्री । [ मीयते अनया । मा+ 'हुयामाश्रुभसिन्म्यस्त्रन्'  
इति षन्, टाप् ] अल्पः । (७९६) परिच्छदः;  
हस्त्यश्वदिः; परिमाणम्; 'किं हस्तिमात्रोऽङ्कुशः ।'  
'अद्भुतमेकं भवति मात्राः—इति बृहत्संहितायाम्  
(५८२) । कर्णभूषा; वित्तम्; अक्षरावयवः; छन्दसां  
ह्रस्वदीर्घादिप्रभेदः; 'यस्या' पादे प्रथमे द्वादश मात्रा-  
स्तया तृतीयेऽपि—इति श्रुतबोधे । कालविशेषः;  
'कालेन यावता पाणिः पर्येति जानुमण्डले । सा मात्रा  
कविभिः प्रोक्ता ह्रस्वदीर्घप्लुते मता ।' वाम जानुनि  
तद्वस्तभ्रमणं यावता भवेत् । कालेन मात्रा सा ज्ञेया  
मुनिभिर्वेदपारगैः—इति तन्त्रसारः । इन्द्रियवृत्तिः;  
'मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय ! शीतोष्णसुखदुःखदाः ।

आगमापायिनो नित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत !—  
इति भगवद्गीता । 'मीयन्ते आभिविषया, मात्रा  
इन्द्रियवृत्तयः—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी ।  
'इन्द्रियम्' इति पूर्वोक्तश्लोकटीकायां मधुसूदनसरस्वती ।  
अंशः; 'न योषिद्भूषः पृथग्दद्यादवसानदिनादृते ।  
स्वभर्तृपिण्डमात्राम्यस्तृप्तिरासां यतः स्मृता—इति  
श्राद्धतत्त्वम् । शिलोच्चयः; 'प्र मात्राभी रिरिचे' इति  
ऋग्वेदे (३।४६।३) । 'मात्राभिः, मीयन्ते परिच्छिद्यन्ते  
इति मात्रा. शिलोच्चयाः—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः ।  
शक्तिः; 'का मात्रा समुद्रस्य यो मम प्रसूतिं दूषयिष्यति—  
इति पञ्चतन्त्रे (१।३५९) । अवयवः; 'चन्द्रवित्तेशयो-  
श्चैव मात्रा नि त्य शाश्वतीः—इति मनुः (७।४) ।  
'मात्रा अवयवाः—इति तट्टीकायां मेघातिथिः । रूपम्;  
'तस्य मात्रा गुणः शब्दः—इति भागवते (२।५।२५) ।  
'मात्रा सूक्ष्मं रूपम्—इति तट्टीकायां स्वामी । ६८८  
माधवः पुं । [ मधोर्वसन्तस्यायम्, मधूनि मधुमन्ति कुसुमानि  
अस्मिन् वा । मधु+ 'मधोर्लं च' इति ञ ] वैशाखमासः;  
'स तेन सख्या सहितो जगामाम्रवणं वनम् । पत्नीभिः  
स समं रन्तुं माधवे मासि पायिवः—इति मार्कण्डेये  
(१।७।२७) । [ यदुपुत्रस्य मधोरपत्यं पुमान् । मधु+  
अण् । यद्वा मा लक्ष्मीस्तस्याः धवः । माया विद्याया धव  
इति ] विष्णुः; 'मा च ब्रह्मस्वरूपा या मूलप्रकृति-  
रीश्वरी । नारायणीति विख्याता विष्णुमाया सनातनी ।  
महालक्ष्मीस्वरूपा च वेदमाता सरस्वती । राधा वसुन्धरा  
गङ्गा तासां स्वामी च माधवः—इति ब्रह्मवैवर्ते । मधु+  
स्वार्थे अण् । वसन्तः; 'मधुमाववो वसन्तः—इति सुश्रुते  
(१।१९।९) । 'माधवप्रथमे मासि नभस्यप्रथमे पुनः—इति  
चरकः । मधुकवक्षः; कृष्णमुद्गः; भीत्यमन्वन्तरीय-  
सप्तर्षीणामन्यतम ऋषिविशेषः; 'अग्नीध्रश्चाग्नि बाहुश्च  
शुक्तिर्मुक्तोऽयं माधवः । शुक्रोऽजितश्च सप्तैते तदा सप्तर्षयः  
स्मृताः—इति मार्कण्डेये (१००।३१) । सायणाचार्यस्य  
भ्राता । यथा सायणकृतघातुवृत्तौ; 'इति पूर्वदक्षिण—  
पश्चिमसमुद्राधीश्वरकम्बराजसुतसङ्गमराजमहामन्त्रिणः  
मायणपुत्रेण. माधवसहोदरेण सायणाचार्येण विरचिता  
माधवीया घातुवृत्तिः ।' ११४  
माधवकः पुं । [ मधु मधुकपुष्पं तेन कृतः संधितः । कुलाला-  
दिभ्यो बुञ् ] आसवः; मधु; माञ्चीकं; मध्वासवः । ३२९

माधवी स्त्री. [ मघी साधु पुष्यति । मधु+कालात् साधुपुष्यत्पच्यमानेषु' इत्यण्, डीप् ] पुष्यलताविशेषः; अतिमुक्तः; पुण्ड्रकः; वासन्ती; लता; अतिमुक्तकः; माधविका; माधवीलता; चन्द्रवल्ली; सुगन्धा; भ्रमरोत्सवा; भृङ्गप्रिया; भद्रलता; भूमिमण्डपभूषणा; वसन्तदूती; लतामाधवी; 'आम्रनीर्पैर्मधुकैश्च माधवी-मण्डपावृताम्'—इति देवीभागवते (१।१२।७) । 'माधवी स्यात्तु वासन्ती पुण्ड्रको मण्डकोऽपि च । अति-मुक्तो विमुक्तं च कामुको भ्रमरोत्सवः । माधवी मधुरा शीता लघ्वी दोषत्रयापहा'—इति भावप्रकाशः । मिसिः; मधुशर्करा; कुट्टनी; [ मधुनो विकार इत्यण्, डीप् ] मदिरा; 'अस्ति मे शयनं दिव्यं त्वदर्थमुपकल्पितम् । एहि तत्र मया साद्धं पिबस्य मधुमाधवीम्'—इति महाभारते (४।१५।३) । [ माधवस्येयमित्यण् डीप् । तरिप्रयत्वात्तयात्वम् ] तुलसी; [ मघी वसन्ते सेव्यार्च-नीयेति अण् ] दुर्गा । माधवस्य पत्नी; मधुवंशजा कन्या; 'जनमेजयः खल्वनन्तां नामोपयेसे माधवीं तस्यामस्य जज्ञे प्राचिन्वान्'—इति महाभारते (१।९५।१२) ।  
माधवीलता स्त्री. [ माधव्याख्या लता ] पुष्यलताविशेषः; वासन्ती; लता । २०८  
माधवीकम् क्ली. [ माध्वी+स्वार्थे कन् ] मधूकपुष्पकृत-मद्यं; मध्वासवः; माधवकः; मधु; मकरन्दः; पुष्परसः; 'धयतु नलिने माध्वीकं वा न वाभिनवागतः, कुमुदमकरन्दीवैः कुक्षिम्भरिभ्रमरोत्करः । इह तु लिहते रात्रीतर्पं रथाङ्गविहङ्गमा, मधु निजवधूकवक्त्राम्भोजेऽधुनाऽधरनामकम्'—इति नैषधे (१९।३३) । 'माध्वीकं मकरन्दम्'—इति तट्टीकायां नारायणः । 'मधुमाक्षीक-माध्वीकसौद्रसारध्यमीरितम् । मक्षिकावरटीभृङ्गवात-पुष्परसोद्भवम्'—इति भावप्रकाशः । ३३०  
मानः पुं. [ मन्त्यते वृष्यतेऽनेन इति । मन्+घञ् ] चित्त-समुन्नतिः; 'द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्'—इति मनुः (४।१६३) । आत्मनि पूज्यता-बुद्धिः; अनुरक्तयोर्दम्पत्योर्भावविशेषः; 'दम्पत्योर्भाव एकत्र सतीरप्यनुरक्तयोः । स्वाभीष्टाश्लेषवीक्षादि-निरोधी मान उच्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । पूज्यत्वम्; 'अधमाः कलिमिच्छन्ति सन्विमिच्छन्ति मध्यमाः । उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम् । मानो हि

मूलमर्थस्य माने म्लाने धनेन किम् । प्रअष्टमानदर्थस्य किं धनेन किमायुषा । अधमा धनमिच्छन्ति धनमानी हि मध्यमाः । उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम्'—इति गारुडे । ग्रहः; परिच्छेदेके त्रि. । 'वृहन्तं मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहन्ते'—इति ऋग्वेदे (७।८८।५) । 'मान्त्यस्मिन् सर्वाणि भूतानि इति मानं सर्वस्य भूतजातस्य परिच्छेदकमित्यर्थः' इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. मन्त्रः; 'अवोचाम निवचनान्य-स्मिन्मानस्य सूनुः सहंसाने अग्नी'—इति ऋग्वेदे (१।१८९।८) । 'मीयत इति', मानो मन्त्रः तस्य सूनुरग्निः मन्त्रेणोत्पद्यमानत्वात्, सप्तम्यर्थे प्रथमा'—इति तद्भाष्ये सायणः । निर्माता; 'यं ते श्येनश्चारुमवृक पदाभरदरुणं मानमन्धसः'—इति ऋग्वेदे (१०।१४४।५) । 'मानं यागद्वारा निर्मातारम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । (८०५) क्ली. [ मीयतेऽनेनेति । मा+करणे ल्युट् ] परिमाणं; यौतवं; द्रुवयं; पाय्यं; पीतवम्; अङ्गुल्यां हस्तादि; प्रस्थेन द्रोणादि; प्रमाणम् । ७२२  
मानवः पुं. [ मनोरपत्यं मनोर्गोत्रापत्यं वा पुमान् । मनु+अण् ] मनोरपत्यम्; मनुष्यः; 'मनोर्वशो मानवानां ततोऽयं प्रथितोऽभवत् । ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्मान्मनोर्जातास्तु मानवाः'—इति महाभारते (१।७५।१२) वालः; [ मनुना प्रोक्तम् । मनु+अण् ] उपपुराणविशेषः; 'सन-त्कुमारं प्रथमं नारसिंहं ततः परम् । नारदीयं शिवं चैव दीर्घससमनुत्तमम् । कापिलं मानवं चैव तथा चौशनसं स्मृतम्'—इति देवीभागवते (१।३।१३) ३३१  
मानसम् क्ली. [ मन एव । मनस्+प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थे अण् ] मनः; 'यज्ञदानतपांसीह परत्र च न भूतये । भविन्त तस्य यस्यातं परित्राणे न मानसम्'—इति मार्क-ण्डेये (१।५।६१) । 'परापरत्वं संख्याद्याः पञ्च वेगश्च मानसे'—इति भाषापरिच्छेदः । [ मनसि भवो जातो वा । मनस्+अण् ] मनोभवे त्रि. । 'सङ्कल्पः कर्म मानसम्'—इत्यमरः । 'दिवसेष्वतिसंरागो मानसो मल उच्यते'—इत्येकादशीतत्त्वम् । 'अनुष्ठानङ्गपीडेव ममेयं मानसी व्यया'—इति प्राञ्चः । मानसतापः; 'काम-क्रोधभयद्वेषलोभमोहविषादजः । शोकासुधावमानेष्यां मात्सर्यादिभयं तथा । मानसोऽपि द्विजश्रेष्ठ ! तापो भवति नैकधा'—इति दिष्णुपुराणे । [ मनसा सङ्कल्पेन

कृतमित्यण् । सरोवरविशेषः । मानससरोवरम् । 'कैलास-  
पर्वते राम ! मनसा निर्मितं परम् । ब्रह्मणा नरशार्दूल !  
तेनेदं मानसं सरः । तस्मात् सुखाव सरसः सायोध्या-  
मुपगूहते । मरित् प्रवृत्ता सरयूः पुण्या ब्रह्ममरश्च्युता'—  
इति रामायणे । पं. नागविशेषः । 'अमाहठः कामठकः  
सुपेगो मानसो व्ययः'—इति माहभारते (१।५७।१६) ।  
शाल्मलीद्वीपस्य वर्षविशेषः । 'श्वेतश्च हरितश्चैव  
जीमूतो रोहितस्तथा । वैद्युतो मानसश्चैव केतुमान् सप्त-  
मन्थ'—इति मानस्ये (५३।२३) । पुष्करद्वीपस्थपर्वत-  
विशेषः । 'द्वीपाद्गम्य परिधिपतः पश्चिमे मानसो  
गिरिः'—इति मानस्ये । ५३४

मानसोकाः [ म् ] पं. [ मानसं सर ओको वामस्थानं  
यस्य ] हंगः । 'वयं हंसाश्चरामेमां पृथिवीं मानसोकाः'  
—इति महाभारते (८।४१।१३) । २५१

मानुषः पु. [ मनोजातः । मनु+ 'मनोजाता इव यतो पुक्  
च' इत्यञ्, पृगागमश्च ] मनुष्यः । 'चिकित्सकानां सर्वेषां  
मिथ्या प्रचरतां दमः । अमानुषेषु प्रथमो मानुषेषु तु  
मध्यमः'—इति मनुः (१।२८४) । [ मनुष्यस्येदम्,  
अण् ] मनुष्यमम्बन्धिनि त्रि. । 'अकृत्वा मानुषं कर्म यो  
दैवमनुवर्तते । वृथा श्राम्यति सम्प्राप्य पति क्लीव-  
मिवाङ्गना'—इति महाभारते (१३।६।२०) । ३३१

मान्द्यं क्ली. [ मन्दस्य भावः कर्म वा । मन्द+ 'पत्यन्त  
पुरोहितादिभ्यो यक्' इति यक् ] रोगः । मन्दता;  
'विश्वस्ते च ततस्तस्मिन् पुरोधमि चकार सः । मान्द्य-  
मल्पनराहारकृषीकृततनुर्मुषा'—इति कथामरित्सागरे  
(२४।१३५) । ६००

मापत्यः पं. [ मा विद्यतेऽपत्यमस्य ] कामदेवः । मदनः;  
मन्मथः । ३४

माया स्त्री. [ मीयते अपरोक्षवन् प्रदर्शनेऽनया इति । मा+  
'माच्छासिसुम्भो यः' इति य, टाप् ] इन्द्रजालादिः;  
शाम्बरी; इन्द्रजालः; कुहकं; कुसृतिः; शाम्बरिः;  
माम्बरी [ मानि विश्वमस्यां, शकन्ध्वादिः । मयस्य दैत्यस्य  
इयं, तेन प्राड्निमित्तत्वात् ]; बुद्धिः; [ मिमीते जानाति  
संख्यात्यनयेति । मा+य+टाप् ] कृपा; दम्भः;  
शठता; 'माया तु शठता शठयं कुमूर्तिर्निकृतिश्च सा'—  
इति हेमचन्द्रः । प्रजा; 'अधारयत् पृथिवीं विश्वधायस-  
मस्त्रभान् मायया धामवससः'—इति ऋग्वेदे (२।१७) ।

५) 'मायया प्रजया'—इति तद्भाष्ये सायणः । राज्ञां  
क्षुद्रोपायविशेषः; 'मायोपेक्षेन्द्रजालानि क्षुद्रोपाया इमे  
त्रयः'—इति हेमचन्द्रः । लक्ष्मीः; बुद्धमाता; दुर्गा;  
'दुर्गे शिवेऽभये माये नारायणि सनातनि । जये मे मङ्गलं  
देहि नमस्ते सर्वमङ्गले ! राजन् ! श्रीवचनो माश्च  
याश्च प्रापणवाचकः । तं प्रापयति या नित्यं सा माया  
परिकीर्तिता'—इति ब्रह्मदेवर्ते । 'विचित्रकार्यकारणा  
अचिन्तितफलप्रदा । स्वप्नेन्द्रजालवल्लोके माया तेन  
प्रकीर्तिता'—इति देवीपुराणे । शक्तिः; सामर्थ्यम्;  
'दासानामिन्द्रो मायया'—इति ऋग्वेदे (४।३।२१) ।  
'मायया स्वकीयया शक्त्या'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
७४०

मायावी [ न् ] पं. [ भूयसी माया कापट्यमस्त्यस्येति ।  
माया+ 'अस्मायामेधात्मजो विनिः' इति विनि ]  
मायाकारः; व्यंसकः; मायी; मायिकः; ऐन्द्रजालिकः;  
'मायावी दानवः सांश्रु मुनिरूपं समास्थितः । स प्राह  
राजपुत्रं तं पूर्ववैरमनुस्मरन्'—इति मार्कण्डेये (२२।७)  
विडालः; मोहनशक्तियुक्तः परमात्मा; 'स्वतश्चि-  
दन्तर्यामी तु मायावी सूक्ष्मसृष्टितः । सूत्रात्मा स्थूल-  
सृष्ट्यैव विराडित्युच्यते परः'—इति पञ्चदश्याम  
(६।४) । ३४९

मायिकः पं. [ माया अस्त्यस्य । माया+ 'त्रीह्यादिभ्यश्च'  
इति ठन् ] मायाकारः; मायावी; मायी; 'यन्माया-  
मोहितश्चाहं सदा वर्ते परा मनः । परवान् दारुपाञ्चाली  
मायिकस्य यथा वशे'—इति देवीभागवते (४।१९।१४) ।  
मायाविशिष्टे त्रि. । मायाफले क्ली. । ३४९

मायी [ न् ] पं. [ मायाऽस्त्यस्य । माया+ 'त्रीह्यादिभ्यश्च'  
इति इनि ] मायाकारः; धूर्तः; वञ्चकः; व्यंसकः;  
कुहकः; दाण्डाजिनिकः; जालिकः; मायायुक्ते त्रि. ।  
'यज्वभिः सम्भृतं हव्यं विततेष्वध्वरेषु सः । जातवेदो-  
मुवान् मायी मियतामाच्छिनत्ति नः'—इति कुमारे  
(२।४६) । मायोपाधिकः; परमेश्वरः; 'मायां तु  
प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्'—इति पञ्च-  
दश्याम् (६।१२३) । ३४९

मायुः पं. [ मिनोति प्रक्षिपति देहे उष्माणमिति । मि  
प्रक्षेपणे+ 'कुवापाजिमिस्वदिसाध्यशूम्भ उण्' इति उण्,  
'मीनातिमिनोतिदीडां त्यपि च' इत्यात्वम्, 'आतो युक्

चिण्कृतीः' इति युक् ] पित्तं; शब्दः; 'सूक्काणं धर्मम-  
भवावशाना मिमाति मायुं पयते पयोभिः—इति  
ऋग्वेदे (११६४।२८) । 'मायुं शब्दं मिमाति निर्माति  
करोति'—इति तद्भाष्ये सायणः । वाक् । ६०५

मारः पुं. [ म्रियन्ते प्राणिनो जनेन । मृ+घञ् ] कामदेवः;  
मदनः; मन्मथः; 'अनुममार न मार ! कथं नु सा,  
रतिरतिप्रथितापि पतिव्रता । विरहिणीशतघातनपातकी  
दयितयापि तयापि किमुज्जितः'—इति नैषधे (४।  
७९) । [ मृ+भावे घञ् ] मृतिः; 'क्षुमारकृद्घटनिभः  
खण्डौ नृपहा विदीधितिर्भयदः'—इति बृहत्संहितायाम्  
(३।३१) । विघ्नः; [ मृ+णिच्+घञ् ] मारणं;  
घुस्तूरः । ३२

मारजित् पुं. [ मारं कामदेवं जितवान् । जि+क्विप्  
तुगागमः ] बुद्धः; शौद्धोदनिः; मायादेवीसुतः; समन्त-  
भद्रः । ८५

मारणम् क्ली. [ मार्यते इति, मृ+णिच्+भावे ल्युट् ]  
वधः; हिंसा; 'घावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वो ह मार-  
णम् । वृथापशुघ्नः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि'  
—इति मनुः (५।३८) । अभिचारविशेषः; 'एवन्तु  
मारणं देवि ! विशेषात् कथयामि ते । सान्तं वह्निंसमा-  
युक्तं वामनेत्रविभूषितम्'—इति योगिनीतन्त्रे । ४७७

मारिषः पुं. [ मर्यति दोषानिति । मृष+अच् । निपातनात्  
सिद्धः । यद्वा मा रिष्यति हिनस्ति कञ्चिदपीति, मा+  
रिष्+क ] नाट्योक्तौ श्रेष्ठः; 'साहाय्यं ते करिष्यामि  
मन्त्रशक्त्या महामते । भविता यदि संग्रामस्तव चेन्द्रेण  
मारिष !'—इति देवीभागवते (१।१।६५) । 'दार्य-  
माणां चमूं दृष्ट्वा भगदत्तेन मारिष !'—इति महाभारते  
(७।२६।१२) । तण्डुलीयशाकविशेषः; कन्धरः;  
मारिकः; 'मारिषो वाष्पको मार्षः श्वेतो रक्तश्च स  
स्मृतः । मारिषो मधुरः शीतो विष्टम्भी पित्तनुद् गुरुः ।  
वातश्लेष्मकरो रक्तपित्तनुद्विषमग्निजित् । रक्तमार्षो  
गुरुर्नाति सक्षारो मधुरः सरः । श्लेष्मलः कटुकः पाके  
स्वल्पदोष उदीरितः'—इति भावप्रकाशः । ९९

मारुतः पुं. [ मरुदेव, मरुत्+ 'प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थेऽण् ]  
वायुः; 'अतिथिं चाननुज्ञाप्य मारुते वाति वा भृशम् ।  
रुधरे च स्तुते गात्राच्छस्त्रेण च परिक्षते । सामध्वना-  
वृग्यजुषी नाधीयीत कदाचन'—इति मनुः (४।१२२-

१२३) । जनपदविशेषः; 'मारुतां धेनुकाश्चैव तद्गणाः  
परतद्गणाः । बाह्लीकास्तिरिराश्चैव चोलाः पाण्ड्याश्च  
भारत !, एते जनपदा राजन् ! दक्षिणं पक्षमाश्रिताः'  
—इति महाभारते (६।४७।४९-५०) । अग्निभेदः;  
'अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते'—इति  
गृह्यसंग्रहपरिशिष्टे (१।२) । मरुत्सम्बन्धिनि त्रि. ।  
'रासि क्षयं रासि मित्र मम्मे रासि शर्ष इन्द्र मारुतं नः'  
—इति ऋग्वेदे (२।११।१४) । 'मारुतं मरुतां देव-  
विशां सम्बन्धि'—इति तद्भाष्ये सायणः । ७५

मार्गः पुं. [ मार्ग्यते संस्क्रियते पादेन, मृग्यते गमनाया-  
न्विष्यते इति वा । मार्गं वा मृग्+घञ् ] पन्थाः;  
'त्रिशद्वनूषि विस्तीर्णो देशमार्गस्तु तैः कृतः । विशद्वनु-  
ग्राममार्गः सीमामार्गो दशैव तु'—इति देवीपुराणे ।  
'एका बालानभिन्ना च मार्गाणामतथोचिता । क्षुत्पिपा-  
सापरीताङ्गी दुष्करं यदि जीवति'—इति महाभारते  
(३।६७।१७) । (८०७) अन्वेषणं; मार्गणम् । गुदं;  
पायुः; तनुहृदः; अपानं; मृगमदः; [ मृगस्येदम्,  
मृग्+अण् ] मृगसम्बन्धिनि त्रि. । 'मार्गाद्विक्रान्त-  
जङ्घालं सदा वनचरं सुतम् । तद्वर्ज्यं सलिलं तात !  
सदव पितृकर्मणि । मार्गमाविकमोष्टं च सर्वमैकशफं च  
यत्'—इति मार्कण्डेये (३।२।१७) । [ मृगो मृग-  
शिरास्तद्युक्ता पौर्णमास्यत्र । मृग्+अण् ] मार्गशीर्ष-  
मासः; मृगशिरोनक्षत्रं; विष्णुः; 'विक्षरो रोहितो मार्गो  
हेतुदीमोदरः सहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५३)

२६०

मार्गणः पुं. [ मार्गयति लक्ष्यमिति । मार्गं+ल्यु ] शरः;  
बाणः; 'ते सर्वे दृढधन्वानः संयुगेष्वपलायिनः । बहुधा  
भीष्ममानच्छूर्मांगैः कृतमार्गणैः'—इति महाभारते  
(६।११५।४४) । [ मार्गयति घनार्थं दातार्यमिति ।  
मार्गं+ल्यु ] मार्गणकः; याचकः; क्ली. [ मार्यते  
अन्विष्यते इति । मार्गं+भावे ल्युट् ] अन्वेषणं; संवी-  
क्षणं; विचयनं; मृगणाः; मृगः; याच्याः; प्रणयः;  
[ मार्गयतीति, मार्गं+ल्यु ] याचके त्रि. । ४६६

मार्गणकः पुं. [ मार्गणं+स्वार्थे कन् ] अर्थी; याचकः ।

३५९

मार्जारः पुं. [ मृज्+ 'कञ्जिजृजिभ्यां चित्' इति आरन्,  
चित् । 'मृजेद्विः' ] ओतुः; विडालः; वृषदंशकः;

आखुभुक्; मार्जारकः; 'मार्जारः किल दुष्टात्मा निश्चेष्टः सर्वकर्मसु'—इति महाभारते (५।१५९।१६) । खट्वासः; पारिभाषिकमार्जारः; 'दम्भार्थं जपते यश्च तंप्यते यजते तथा । न परत्रार्थमुद्युक्तो मार्जारः परिकीर्तितः'—इति वामनपुराणे । २३६

मार्तण्डः पुं. [ मृतश्चासौ अण्डश्च, तत्र भवतीति । 'तत्र भवः' इति अण्, शकन्वादिः ] सूर्यः; 'अनिष्पन्नेषु, गात्रेषु पुत्रं दृष्ट्वा पिताम्रवीत् । आतंस्त्वं भव माण्डेति मार्तण्डस्तेन स स्मृतः' । 'मार्तण्डस्य रवेर्भार्या तनया विश्वकर्मणः । संज्ञा नाम महाभाग ! तस्यां भानुरजीजनत्'—इति मार्कण्डेय (७७।१) । अर्कवृक्षः; शूकरः ।

३५

मार्ष्टः स्त्री. [ मृञ्+क्तिन्, 'मृजेर्वृद्धिः' इति वृद्धिश्च ] मार्जनं; समालम्भनं; चर्चा; तैलप्रक्षणम्; तैलमल्पं यदङ्गेषु न भवेत् बाहुसङ्गतम् । सा मार्ष्टः पृथगम्यङ्गो मस्तकादी प्रकीर्तितः—इत्याह्निकतत्त्वम् । ५४०

मालः पुं. [ मातीति । मा+रन् । रस्य लत्वम् ] जातिविशेषः; म्लेच्छजातिः; 'माला भिल्लाः किराताश्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः । तत्रेमे कुरुपाञ्चालाः शाल्वा माद्रेयजाङ्गलाः । शूरसेनाः पुलिन्दाश्च योधा मालास्तथैव च'—इति महाभारते (६।१।३९) । जनः; देशविशेषः; स वङ्गदेशेऽपि मालभूमित्वेन ख्यातः; । विष्णुः; 'मां लक्ष्मीं लातीति मालो विष्णुः तम् अततीति मालती'—इति मालतीशब्दटीकायां भरतः । क्ली. [ माति मानहेतुर्भूवतीति । मा+ 'ऋञ्जेन्द्राग्रवज्जेत्यादिना' .रन् । पृषोदरादित्वाद्रस्य लत्वम् ] क्षेत्रम्, 'सद्यः सीरोत्कण-सुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं, किञ्चित्पश्चाद्भ्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण'—इति मेघदूते (१६) । कपटं; वनं; हरितालम्; 'हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम् । पिञ्जकं रोमहरणं तालकं पातमित्यपि'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः । ४९९

मालती स्त्री. [ मलते शोभां धारयतीति । मल्+ 'भृद्-शियजीत्यादि' इत्यत्र बाहुलकाद् मलतेरतच् । गौरादिनिपातनादुपधाया दीर्घत्वम् । डीष् ] पुष्पलताविशेषः; सुमना ; जातिः; सुमनाः; जाती; मागधी; यूथिका; 'ज्वलयति मदनानि मालतीनां रजोभिः'—इति माघे (११।१८) । 'जातिजाती च सुमना मालती राज-

पुत्रिका । चेतिका हृद्यगन्धा च सा पीता स्वर्णजातिका'—इति मावप्रकाशः । युवती; काचमाली; विशल्या; चन्द्रिका; चन्द्रिमा; कौमुदी; ज्योत्स्ना; निशा; रात्रिः; नदीविशेषः; सुवर्चला; 'चणको मालती धौमी रुद्रपत्नी सुवर्चला'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।

२०५

मालवः पुं. [ मालः उन्नतक्षेत्रमस्त्यत्र । माल+ 'केशाद्वोऽ-न्यतरस्याम्' इत्यत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति काशिकोक्तेः व प्रत्ययः ] रागविशेषः; भैरवरागः; 'आदौ मालवरागेन्द्रस्ततो मल्लारसंज्ञितः । श्रीरागस्तस्य पश्चाद्द्वै वसन्तस्तदनन्तरम् । हिल्लोलश्चाथ कर्णाट एते रागाः प्रकीर्तिताः । 'नितम्बिनीचुम्बितवक्त्रपद्मः शुक्रद्युतिः कुण्डलवान् प्रमत्तः । सङ्गीतशालां प्रविशन् प्रदोषे मालाधरो मालवरागराजः'—इति सङ्गीतामोदरः । अवन्तिदेशः; 'अङ्गा वङ्गा मद्गुरका अन्तगिरिबहिर्गिरी । सुह्योत्तराः प्रविलया मार्गवागेयमालवाः'—इति मात्स्ये (११।१४४) । [ मालवेषु जात इत्यण् ] तद्देशजे त्रि. । अश्वपते राज्ञो मालव्यां जातः पुत्रगणः; 'पितुश्च ते पुत्रशतं भविता तव मातरि । मालव्यां मालवा नाम शाश्वताः पुत्रपौत्रिणः । भ्रातरस्ते भविष्यन्ति क्षत्रियास्त्रिदशोपमाः'—इति महाभारते (३।२९६।५८) । स्त्री. नदीविशेषः; 'हिरण्वती वितस्ता च तथा प्लक्षवती नदी । वेदस्मृतिर्वेदवती मालवायाश्वत्यपि'—इति महाभारते (१३।१६५।२५) । १०१ अ

मालवकौशिका स्त्री.— रागिणीभेदः । १०१ अ

माला स्त्री. [ माति मानहेतुर्भवतीति । मा+ 'ऋञ्जेन्द्राग्रवज्जे'ति रन्, रस्य लत्वम्, टाप च् । यद्वा मां शोभां लाति इति, ला+क, टाप् ] मूर्ध्नि न्यस्तपुष्पदाम; माल्यं; स्रक्; मालिका; मालाका; मालका; गणनिका; गुणान्तिका; 'माला तु त्रिविधा देवि ! वर्णाक्षपर्वभेदतः'—इति मत्स्यसूक्तवचनम् । श्रेणिः; श्रेणी; राजिः; लेखा; तती; बीची; आली; आवलिः; पङ्कितः; धारणी । ५५२

मालाकरः पुं. [ करोति रचयति इति करः, मालायाः करः । पचाद्यच् ] मालाकारः; मालिकः । ५८९

मालाकारः पुं. [ मालां करोतीति । कृ+अण् ] वर्णसङ्करजातिविशेषः; मालिकः; मालाकरः; पुष्पाजीवी;



वनार्चकः; पुष्पलावः; पुष्पलावकः; 'माली' इति भाषा । 'न पर्यपितदोषोऽस्ति तुलसीबिल्वचम्पके । जलजे बकुलेऽगस्त्ये मालाकारगृहेषु च'—इति मेस्तन्त्रे । 'हस्ते नापितचाक्रिकचीरभिषक्सूचिकद्वीपग्राहाः । बन्धव्यः कौशलका मालाकाराश्च पीडयन्ते'—इति बृहत्संहितायाम् (१०।९) । [ स्त्रियां ङीप् ] 'भिक्षुणिका प्रव्रजिता दासी धात्री कुमारिका रजिका । मालाकारी दुष्टाङ्गना सखी नापितो दूत्यः'—इति बृहत्संहितायाम् (७८।९) ।

५८९

मालिकः पुं. [ मालास्य पण्यम् । माला+तदस्य पण्यम् ] इति ठक् । यद्वा मालाग्रयनं शिल्पमस्येति । 'शिल्पम्' इति ठक् ] मालाकारः; माली [ माला पण्यत्वेनास्त्यस्य । माला+ 'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि ] 'निदाघे पुष्पताम्बूली पण्यत्रातिशीतले । न्यस्यद्भिर्मालिकैर्दन्तात् सा जीवेद्भाटकादिति'—इति; राजतरङ्गिण्याम् (६।१९) । पक्षिभेदः; रञ्जकः । ५८९

मालूरः पुं. [ मां परेषां वृक्षान्तराणां श्रियं प्रभावं लुनातीति । मा+लू+वाहुलकात् र ] बिल्ववृक्षः; श्रीफलः; 'सवारनारीकुचसञ्चितोपमं ददर्श मालूरफलं पत्रेलिमम्'—इति नैषधे (१।९४) । 'बिल्वो महाकपित्थाख्यः श्रीफलो गोहरीतकी । पूतिवातोऽथ माङ्गल्यो मालूरश्च महाफलम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'बिल्वः शाण्डिल्यशैलूषो मालूरश्रीफलावपि'—इति भावप्रकाशः । १९४

माल्यम् क्ली. [ मालैव । माला+चबुर्वर्णादित्वात् ष्यञ् ] मूर्द्ध न्यस्तपुष्पदामः; माला; स्रक्; मालिका; मालाका; मालका; गणनिका; गुणान्तिका; पुष्पस्रक्; 'वृष्यं सौगन्ध्यमायुष्यं काम्यं पुष्टिवलप्रदम् । सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम्'—इति चरकः । 'गन्धमाल्यैरलङ्कारैस्तुष्टा हृष्टाश्च नित्यशः । गन्धमाल्यप्रदा ये तु दाननिश्चयतत्पराः । धर्मज्ञाः सत्यशीलाश्च सर्वदुःखविजिताः । मुचिरं देवतैः साद्धं क्रीडन्ति हि महामुने'—इति बृहत्पुराणम् । ५५२

माषीणम्, माष्यम् क्ली. [ माषाणां भवनं क्षेत्रम् । माष+ 'विभाषा तिलमाषोमामञ्जाणुम्यः' इति यत्, पक्षे खञ् ] माषक्षेत्रम्; 'तिल्यतैलीनवनमाषोमाणुमञ्जा द्विरूपता'—इत्यमरः । 'यथा तिलस्य क्षेत्रं तिल्यं तैलीनं

च भवति तथा माषादीनामपि द्विरूपता द्वैरूप्यं भवति, —इति तट्टीकायां भरतः । १६३

मासः पुं. [ मस् परिमाणे+भावे घञ् । मस्यते परिभीयते असावनेनेति वा । मस्+घञ् ] शुक्लकृष्णपक्षद्वयात्मकः कालः; त्रिशदहोरात्रः; 'चक्रवत् परिवर्तते सूर्यः कालवशाद्यतः । अतः सांवत्सरं श्राद्धं कर्तव्यं मासचिह्नितम् । मासचिह्नं तु कर्तव्यं पीपमाषाद्यमेव हि । यतस्तत्र विधानेन स मासः परिकीर्तितः'—इति लघुहारीतः । कात्तिकादिद्वादशसंज्ञकः; 'अन्त्योपान्त्यौ त्रिभौ ज्ञेयो फाल्गुनश्च त्रिभो मतः । शेषा मासा द्विभा ज्ञेयाः कृत्तिकादिव्यवस्थया । 'चान्द्रः शुक्लादिदशान्तः सावनस्त्रिशता दिनेः । एकराशौ रविर्यवित् कालं मासः स भास्करः'—इति ब्रह्मसिद्धान्ते । 'नाडीषष्ट्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रचक्षते । तत्रिशता भवेन्मासः सावनोऽर्कोदयस्तथा'—इति सूर्यसिद्धान्ते । मासपरिमाणं; 'मासा' इति भाषा ।

११३

मासाद्धम् क्ली. [ मासस्य अद्धम् ] पक्षः; पञ्चदश दिनानि । ८४९

माहिषः त्रि. [ माहिष्या अयम् । अण् ] महिषसम्बन्धी; 'माहिषं च शरच्चन्द्रचन्द्रिकाधवलं दधि'—कालिदासः । ७६४

माहेयो स्त्री. [ मह्याः सुरभ्याः अपत्यमिति । मही+ 'नद्यादिभ्यो ठक्' इति ठक् । स्त्रियां ङीप् ] गौः; सुरभिः; सौरभेयी; 'सर्वश्वेतेव माहेयी वने जाता त्रिहायणी । उपातिष्ठत पाञ्चाली वासितेव महावृषम्'—इति महाभारते (४।१६।१०) । 'सुरभिः सौरभेयी च माहेयी गौरदाहता'—इति भावप्रकाशः । २६८

मितम्पद्यः त्रि. [ मितं परिमितं पञ्चतीति । मित+पच्+ 'मितनखे च' इति खश्, 'अर्द्धपदजन्तस्य मुम्' इति मुम् च ] कृपणः; परिमितपाककर्ता । ३४७

मित्रः पुं. [ मेधाति स्निह्यति, मिद्+ 'अमिचिमिदिशसिभ्यः वत्रः' इति वत्र ] सूर्यः; भानुः; रविः; 'स्वस्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति रुद्रादिशन्तु ते'—इति रामायणे (२।२५।२२) । द्वादशादित्यानामन्यतमः; 'घाता मित्रोऽर्ष्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च'—इति महाभारते (१।६५।१५) । मरुतामन्यतमः; 'मरुत्वती मरुत्वन्तो देवानजनयत् सुतान् । अग्निश्चक्षुर्हृद्विज्योतिः सावित्रो

मित्र एव च—इति हरिवंशे (१९६।५२)। वशिष्ठस्य ऊर्जा-  
गर्भजातः पुत्रभेदः; 'चित्रकेतुः सुरोचिश्च विरजा मित्र  
एव च। उत्त्वणो वसुभृद्यानो सुमान् शक्तत्वादयोऽपरे'—  
इति भागवते (४।१।३७) (४२८) क्ली. वन्धुः; सखा;  
सुहृत्। 'न कश्चित् कस्यचिन्मित्रं न कश्चित् कस्य-  
चिद्रिपुः। व्यवहारेण जायन्ते मित्राणि रिपवस्तथा।'  
'सा श्रीर्यां न मदं कुर्यात् स सुखी तृष्णयोजितः। तन्मित्रं  
यस्य विश्वासः पुरुषः स जितेन्द्रियः—इति गारुडे  
(१३।१४।१५)। 'यस्य मित्रेण सम्भाषो यस्य मित्रेण  
संस्थितिः। यस्य मित्रेण संलापस्ततो नास्तीह पुण्यवान्—  
इति हितोपदेशः। [मिनोति मानं करोति इति]  
शत्रोः परम्; 'राजा शत्रुरिति ख्यात एकार्थमिनि-  
वेशतः। भूम्यैकान्तरितो राजा स मित्रं मित्रकार्यतः'  
—इति शब्दरत्नावली। ३७

मिथः [स्] अव्य. [मेयति इति, मेथृ सङ्गमे, असुन्,  
पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] अन्योऽप्यं; परस्परम्; रहः;  
'व्यवहारी मिथस्तेषां विवाहः सदृशैः सह'—इति मनुः  
(१०।५३)। ७२०

मिथिला स्त्री. [मथ्यन्ते शत्रवो यस्याम्। मथ्+ 'मिथिला-  
दयश्च' इति इलच् अकारस्येत्वं निपात्यते] नगरीविशेषः;  
जनकराजपुरी; विदेहा; 'ततः कोषं समादाय वाहनानि  
च भूरिशः। पाण्डुना मिथिलां गत्वा विदेहाः समरे  
जिताः—इति महाभारते (१।११३।२८)। 'जन्मना  
जनकः सोऽभूद्वेदेहस्तु विदेहजः। मिथिलो मथनाज्जातो  
मिथिला येन निर्मिता—इति भागवते। 'निभेः पुत्रस्तु  
तत्रैव मिथिनाम महान् स्मृतः। प्रथमं भुजवलैर्येन  
तेरहूतस्य पाश्वंतः। निमित्तं स्वीयनाम्ना च मिथिलापुर-  
मुत्तमम्। पुरोजननसामर्थ्यात् जनकः स च कोतितः—  
इति भविष्यपुराणम्। २८७

मिथुनम् क्ली. [मेथतीति, मिथ्+ 'क्षुधिपिशिमिथः कित्'  
इति उनन्, किङ्गावाद् गुणाभावश्च] स्त्रीपुंसयोर्गुम्;  
द्वन्द्वम्; 'मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः  
समाः। यत्कौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्—  
इति रामायणे (१।२।१५)। युगलम्; मेघादिद्वादश-  
राश्यन्तर्गततृतीयराशिः; जितुमः; 'मिथुनोदयसंजातो  
मानो स्वजनवत्सलः। त्यागी भोगी धनी कामी दीर्घ-  
सूत्रोऽरिर्मर्दनः—इति कोष्ठीप्रदीपः। ७००

मिथ्या अव्य. [मयते इति, मन्थ् विलोडने, मेथते हिनस्ति  
वेति। मथ् वा मेथ्+ क्यप्। निपातनात् साधु] असत्यं;  
मृषा; वितथः; अनृतम्; 'पृष्ठास्तु साक्ष्ये प्रवदन्ति  
येऽन्यथा भवन्ति मिथ्यापतिता नरेन्द्र!' एकार्थता-  
यान्तु समाहितायां मिथ्या वदन्तं ह्यनृतं हिनस्ति—  
इति मात्स्ये ३१ अध्यायः। १४४

मिथ्याचर्या स्त्री. [मिथ्या चरणम्, 'गदमदचरयमश्च'  
इति यत्, टाप्] ईर्ष्या; ईर्ष्या; कुहना; दम्भः; कुक्कुटिः;  
मिथ्याचारः; कपटाचारः। ७४०

मिथम् क्ली. [मिथ्+ क] छलम्; 'प्रियासु वालासु  
रतक्षमासु च द्विपत्रितं पल्लवितं च विभ्रतम्। स्मराजितं  
रागमहोरुहाड्कुरं मिषेण चञ्च्वाश्चरणद्वयस्य च—  
इति नैषधे (१।११८)। पु. स्पन्दनम्; 'इति व्यायमिषं  
कृत्वा तदेवास्फुटया गिरा। निर्गत्यैव विरक्तात्मा  
धनदेवान्ति कं यमी'—इति कथासरित्सागरे (६४।  
१२५)। ७०९

मिष्टान्नम् क्ली. [मिष्टमन्नम्] मधुरद्रव्यम्; 'मिष्टान्न-  
पानदाताय सततं श्रद्धयान्वितः। देवपूजापरो नित्यं  
न प्रेतो जायते मृतः—इत्यग्निपुराणम्। ३२१

मिहिका स्त्री. [मेहति स्निह्यतीति। मिह्+ संज्ञायां क्वन्+  
टाप्, अत इत्वम्] नीहारः; 'विशति युवतित्यागो रात्रीमुचं  
मिहिकारुचम्। दिनमणिमणिं तापे चितान्निजाञ्च  
धियासति—इति नैषधे (१।१।३५)। ६५०

मिहिरः पुं. [मेहति सिञ्चति मेघजलेन भूमिमिति।  
'मिह्+ 'इषिमदिमुदिखिदिच्छिदिभिदिमन्दिचन्दि-  
मिमिहीति' किरच्] सूर्यः; 'भवतिमिरासवपानमदाद्  
भवति विलोहितविग्रहकात्। मिहिर! विभासि यतः  
सुतरां त्रिभुवनभावनभानिकरैः—इति मार्कण्डेये  
(१०७।७)। अर्कवृक्षः; वृद्धः; मेघः; वायुः; चन्द्रः;  
विक्रमादित्यभूपस्य नवरत्नान्तर्गततरलविशेषः; वराह-  
मिहिरः; 'धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कुचेतालभट्ट—  
घटकपर्कालिदासाः। ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः  
समायां रत्नानि वै वररुचिर्नैव विक्रमस्य—इति  
नवरत्नम्। ३६

मीनः पुं. [मीयते हिंस्यते हिनस्ति वा इति। मी हिंसायाम्  
+ 'फेनमीनो' इति नक् निपातितश्च] मत्स्यः; झषः;  
जलचरः; 'दुर्भंगो बत लोकोऽयं यदवो नित्तरामपि।

ये संवसन्तो न विदुर्हरिं मीन इवोडुपम्—इति भागवते (३।२।८) । मेवादिद्वादशराद्यन्तर्गतान्तिमराशिः; अन्त्यभम्; 'मीनलग्ने समुत्पन्नो रत्नकाञ्चनपूरितः । अशरोमा महाप्राज्ञो दीर्घकालपरीक्षकः—इति कोष्ठी-प्रदीपकः । मत्स्यावतारः । ६५७

मीमांसा स्त्री. [ मान् पूजायाम् + 'मान्वचदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य' इति जिज्ञासायां सन्, अ, टाप् । अभ्यासस्येकारस्य दीर्घश्च ] पङ्कशान्तान्तर्गतदर्शनशास्त्र-विशेषः; जैमिनीयं; विचारणा । १०

मुकुटम् क्ली. [ मङ्कते मण्डयति, मकि + उटन्, नलोप-श्चेति न्यासः । बाहुलकाद् घातोरत् उः ] शिरोभूषण-भेदः; किरीटं; मौलिः; कोटीरम्; उष्णीयं; मकुटं; मीलीकः; शेखरम्; अवतंसः; वतंसः; उत्तंसः; उष्णीषकं; कीटीरकम्; 'मुकुटश्चापतत्स्य काञ्चनो वज्र-भूषितः—इति हरिवंशे (८६।७७) । 'रजांसि मुकुटा-न्वेपामुत्थितानि व्यधर्षयन्—इति महाभारते (१।३।३८) । [ स्त्रियां टाप् ] मुकुटा; मातृगणविशेषः । कालेहिका वामनिका मुकुटा चैव भारत—इति महा-भारते (१।४६।२३) । [ डीप् ] मुकुटी; अङ्गुलि-मोटनम् । ५६५

मुकुन्दः पुं. [ मुकुं मुक्तिं ददाति । मुकुं + दा + क, पृषोदरादि-त्वम् ] विष्णुः; 'मुकुमव्ययं मान्तञ्च निर्वाणमोक्षवाचकम् । तद्ददाति च यो देवो मुकुन्दस्तेन कीर्तितः । मुकुं भक्तिरस-प्रेमवचनं वेदसम्मतम् । यस्तद्ददाति विप्रेभ्यो मुकुन्दस्तेन कीर्तितः—इति ब्रह्मवैवर्ते । निधिविशेषः; 'यत्र पद्म-महापद्मी तथा मकरकच्छपी । मुकुन्दो नन्दकश्चैव नीलः शङ्खोऽष्टमो निधिः—इति मार्कण्डेयपुराणे (६।८।५) । पारदः; रत्नभेदः; कुन्दुरुः; 'कुन्दुरुस्तु मुकुन्दः स्यात् सुगन्धः कुन्द इत्यपि—इति भावप्रकाशः । २१

मुकुरः पुं. [ मक् + 'मकुरददुरौ' इति उरच्, बाहुलकादकारस्थाने उकारः, मुञ्चति ज्योतिरिति वा ] दर्पणः; आदर्शः; 'कुरु करे गुरुमेकमयोधनं बहिरितो मुकुरं च कुरुष्व मे—इति नैषधे (४।५९) । वकुल-द्रुमः; कुलालदण्डः; मल्लिकापुष्पवृक्षः; 'मुकुरकुसुम-भृङ्गानातपत्रध्वजं वा दधि फलमथ वीकामन्नताम्बूल-वस्त्रम् । कमलकलशशङ्खं भूषणं काञ्चनं वा भवति सकलसिद्धयै श्रेयसे रोगिणां च—इति हारीतः ।

कुलवृक्षः; कोरकः । ५५५

मुकुलः पुं.-क्ली. [ मुञ्चति कलिकात्वम् । मुच् + घुलक्, इति भरतः । मुञ्चरलः कत्वमुत्त्वञ्चेति कत्वे अकार-स्योत्वे मुकुलः, इति रायः ] कुड्मलः; मकुलः; पीट-कोरकः; ईषद्विकसितकलिका; 'उपहितं शिशिरा-पगमश्रिया, मुकुलजालमशोभत किशुके—इति रघौ (९।२१) शरीरम्; आत्मा; राजपुरुषविशेषः; 'इत्यं लब्धजया राज्ञी तत्क्षणान्यग्रहीद्रुषा । यशोधरं शुभधरं मुकुलं च सवान्धवम्—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।२५३) । १८६

मुयता स्त्री. [ मुच्यते स्म । मोच्यते निःसार्यते इति वा । मुच् + क्त + टाप् ] रत्नविशेषः; मौक्तिकं; सौम्या; शौक्तिकेयं; तारं; तारा; भौतिकं; तौतिकम्; अम्भ-सारं; शीतलं; नीरजं; नक्षत्रं; इन्दुरत्नं; लक्ष्मीः; मुक्ताफलं; विन्दुफलं; मुक्तिका; शौक्तेयकं; शुक्ति-मणिः; शशिप्रभं; स्वच्छं; हिमं; हिमवलं; सुधांशुभं; शुधांशुरत्नं; लक्षं; शशिप्रियं; हेमवतं; भूस्हं; शौक्तिकं; शुक्तिवीजं; हारी; 'स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे जयन्त्याः स्वरसेन च । मणिमुक्ताप्रवालानि यामैकं शोधनं भवेत्—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः । 'रेवत्यश्विघनिष्ठासु हस्तादिषु च पञ्चसु । शङ्खविद्रुम-मुक्तानां परिधानं प्रशस्यते—इति समयप्रदीपः । रास्ना । ६६४

मुक्तागुणः पुं. [ मुक्तायाः गुणः वैशिष्ट्यम् । मुक्ताफले तरलत्वगुणविशेषः; सोऽस्त्यस्येति अच् वा ] मुक्तारत्नं; श्रेष्ठमौक्तिकं; तारः । मुक्तामाला । ७९८

मुक्तामुक्तः त्रि. [ मुक्तश्च अमुक्तश्चेति विशेषणयोर्द्वन्द्वः ] क्षिप्ताक्षिप्तः । अस्य प्रयोगः अस्त्रे शस्त्रे च प्रायो वर्तते, यथा यष्ट्यादि । ४६३

मुक्तास्फोटः पुं. [ मुक्तानां स्फोटः विकाशोऽत्र ] शुक्तिः; मुक्तावरणम् । ६६४

मुक्तास्फोटा स्त्री. [ मुक्तास्फोट + टाप् ] शुक्तिः; मुक्ता-शिम्बी । ६६४

मुक्तिः स्त्री. [ मुच् + भावे क्तिन् ] आत्यन्तिकदुःख-निवृत्तिः; नित्यसुखावाप्तिः; (शरीरेन्द्रियाम्याम् आत्मनो मुक्तत्वं मुक्तिः); मोक्षः; कैवल्यं; निर्वाणं; श्रेयः; निःश्रेयसम्; अमृतम्; अपवर्गः; अपुनर्भवः;

स्थिरः; अक्षरम्; 'मुक्तिस्तु द्विविधा साध्वि ! श्रुत्युक्ता सर्वसम्भता । निर्वाणपददात्री च हरिभक्तिप्रदा नृणाम् । हरिभक्तिस्वरूपाञ्च मुक्तिं वाञ्छन्ति वैष्णवाः । अन्ये निर्वाणरूपां च मुक्तिमिच्छन्ति साधवः—इति ब्रह्म-वैवर्ते । 'मुक्तिमिच्छसि रे तात ! विषयान् विषवत् त्यज । क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद्भुज'—इति अष्टा-वक्रसंहितायाम् ( ११२ ) । १२४

मुखम् क्ली. [ खनति विदारयति अन्नादिकमनेन, खन्यते विधात्रा मुखमनेनेति वा । खन् + 'डित् खनेर्मुट् चोदात्तः' इति करणे अच्, स च डित् मुडागमश्च ] निःसरणं; गृहस्य निष्क्रमणप्रवेशनवर्त्म; गृहादिद्वार-प्रवेशः; हृद्गण्डपादेः प्रवेशनिर्गमः; गृहाङ्गणादिनिःसरणपथः । अग्रभागः ( ४६९ ) ; 'तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रबोधयितुमीश्वरीम् । ब्रह्मद्वारमुखे सुप्ते मुद्राम्यासं समाचरेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् ( ३१५ ) । ( ५१८ ) शरीरावयवविशेषः; वक्त्रम्; आस्यं; वदनं; तुण्डम्, आननं; लपनम्; 'मुखं विमुच्य स्वसितस्य धारया वृथैव नासापथधावनश्रमः । 'ओष्ठी च दन्त-मूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च । गलो गलादि सकलं सप्ताङ्गं मुखमुच्यते'—इति भावप्रकाशः । प्रारम्भः; 'अथोपितं भर्तृरुपस्थितोदयं सखीजनोद्दी-क्षणकौमुदीमुखम् । निदानमिषवाकुकुलस्य सन्ततेः, सुदक्षिणा दौहृदलक्षणं दधौ'—इति रघुवंशे ( ३११ ) । 'कौमुद्याः मुखं प्रारम्भम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । उपायः; सन्धिविशेषः; 'मुखं बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थ-रससम्भवा । अङ्गानि द्वादशैतस्य बीजारम्भसमन्वयात्'—इति दशरूपके ( ११२३ ) । नाटकादेः शब्दः; आद्यम्; 'अचक्षुर्विषयं प्रायाद् यथाकः क्षणदा-मुखे'—इति रामायणे ( २५०१७ ) । प्रधानम्; 'राजा मुखं मनुष्याणां नदीनां सागरो मुखम् । नक्षत्राणां मुखं चन्द्र आदित्यस्तेजसां मुखम् । पर्वतानां मुखं मेरुर्गण्डः पततां मुखम् । सदेवकेषु लोकेषु भगवान् केशवो मुखम्'—इति महाभारते ( २१३८१७-२९ ) । द्वारम्; 'लिपेर्यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं नदीमुखेनैव समुद्रमाविशत्'—इति रघुवंशे ( ३१२८ ) । 'नद्या मुखं द्वारम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । 'मुखं तु वदने मुख्यारम्भे द्वाराभ्युपाययोः'—इति वैजयन्तीकोषः । पुं. डहुः;

'लकुचो लिकुचो नुत्तः खगवन्नो मुखो डहुः'—इति शब्दचन्द्रिका । २८९

मुखण्डी स्त्री. [ खण्डयतीति खण्डी, अच्, डीप् । मुक्ता सती खण्डी । मुखं खण्डयति वा । पृषोदरादिः ] मुख-भञ्जिका; शस्त्रजातिः; शस्त्रविशेषः । ४७६  
मुखपूरणम् क्ली. [ मुखं पूर्यते अनेनेति । मुख + पूर + करणे ल्युट् ] गण्डूषः । ७८५

मुखरः त्रि. [ मुखम् अस्यास्तीति । मुख + 'उपसुषि-मुष्कमधो रः'—इत्यत्र 'रप्रकरणे खमुखकुञ्जेभ्य उपसंस्थानम्' इति काशिकोक्त्या र । निन्दितं मुखमस्यास्तीति वा ] अप्रियवादी; दुर्मुखः; अवद्वमुखः; 'एका भार्या प्रकृतिमुखरा चञ्चला च द्वितीया'—इत्यु-द्धटः । शब्दायमानः; 'त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽथ गन्धश्च भीरु ! मुखराणि च नूपुराणि'—इति मृच्छकटिके १ अङ्के । अग्रयायी; 'यदि कार्ये विपत्तिः स्यान्मुखरस्तत्र हन्यते'—इति हितोपदेशे । पुं. [ मुख + र ] काकः; शङ्खः । ३७७

मुख्यः त्रि. [ मुखे आदी भवः । यत् । व्रीहिभिर्यजे-तेत्याविव उल्कृष्टत्वाद् मुखमिव मुख्यः; 'शाखादिभ्यो यः' इति इवार्थे य ] श्रेष्ठः; अग्रच; प्रधानः; प्रमुखः; 'प्रधानमुत्तमं रग्यं श्रेष्ठं मुख्यमनुत्तमम् । वरं वरेष्यं प्रमुखं परार्द्धं प्रवरं तथा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'मुख्या नाम पुरस्ताद् द्वास्तयापणबहूदनी'—इति भागवते ( ४।२५।४९ ) । पुं. प्रथमः कल्पः; यागादिषु शास्त्रोक्तः प्रथमः कल्पो मुख्यः स्यात् । ६९०

मुञ्जः पुं. [ मुञ्ज्यते मृज्यते अनेन । मुञ्ज् + करणे अच् ] तृणविशेषः; मीञ्जीतृणाख्य; ब्राह्मण्यः; तेजनाह्वयः; वान्तीरकः; मुञ्जनकः; शीरी; दर्भाह्वयः; दूरमूलः; दूढतृणः; दूढमूलः; बहुप्रजः; रञ्जनः; शत्रुभङ्गः । 'वाण, मूज' इति भाषा । 'मुञ्जो मुञ्जातको वाणः स्थूल-दर्भः सुमेघसः । मुञ्जद्वयं तु मधुरं तुवरं शिशिरं तथा । दाहत्तृणाविसर्पासिमुत्रवस्त्यक्षिरोगजित् । दौपत्रयहरं वृष्यं मेखलासूपयुज्यते'—इति भावप्रकाशः । शरः उपनयनकाले मुञ्जमेखलाधारणविधिः—'अयं माणव-कम् आचार्यस्त्रिप्रदक्षिणं त्रिवृतं मुञ्जमेखलां परिधा-पयन् मन्त्रद्वयं वाचयति'—इति दशकर्मपद्धतिः । ११९१  
मुण्डम् क्ली. [ मुण्डयन्ते उप्यन्ते केशा अस्मात् । यद्वा

मुण्डते मज्जतीति । मुण्ड्+अच् ] धिरः; 'अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दन्तविहीनं जातं तुण्डम् । करधृतकम्पित-क्षोभितदण्डं तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम्'—इति मोहमुद्गरे (१५) । उपनिद्वेषिशेषः; 'ईशकेन-कठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतिक्तिरि । छान्दोग्यं बृहदारण्य-मैत्रेयं तथा दश ।' बोलं; मुण्डायसं; पुं. [ मुण्डन मुण्डः केशापनयनम्, मुडि खण्डने, भावे घञ् । ततः अर्श आघ-ञ् ] बलिराजस्य सैनिकदैत्यविशेषः; 'एकाक्ष एक-पान्मुण्डो विद्युदक्षश्चतुर्भुजः'—इति भविष्यपर्वणि हरिवंशे (२३२।५) । शुम्भसेनापतिदैत्यभेदः; 'हि चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुलैः परिवारितौ'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८।७।२८) । [ मुण्डमेवावयवत्वेना-स्त्यस्य । अच् ] राहुग्रहः; [ मुण्डं मुण्डनं जीविकात्वेना-स्त्यस्य । अच् ] नापितः; [ मुण्ड स्कन्धावच्छेदे खण्डन-मस्त्यस्य+अच् ] स्याणुवृक्षः; पुं.-क्ली. [ मुण्ड्+अच् ] मूर्द्धा । ५१८

**मुण्डनम्** क्ली. [ मुण्ड्+त्युट् ] केशच्छेदनं; भद्राकरणं; वपनं; परिव्रापनं; क्षीरम्, 'आतुरस्य हितं वाक्यं शृणु धर्मज्ञसत्तम !, दण्ड एव हि राजेन्द्र ! क्षत्रधर्मो न मुण्डनम्'—इति महाभारते (१२।२३।४६) । ७२१  
**मुण्डा** स्त्री. [ मुण्ड्+स्त्रियां टाप् ] मुण्डिता स्त्री; श्रमणा; भिक्षुकी; मुण्डीरिका । ४८७

**मुत्** [ ट् ] स्त्री. [ मोदनमिति, मुद्+भावे क्विप् ] हर्षः; मुद्रा; सुखम्; आनन्दयुः; 'उवाच धात्र्या प्रथमादितं वचो यथौ तदीयामवलम्ब्य चाङ्गुलिम् । अभूच्च नमः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः'—इति रघुवंशे (३।२५) । १२३

**मुद्गः** पुं. [ मोदते अनेन इति । मुद्+मुदिप्रोङ्गां इति गक् ] शमीधान्यभेदः; सूषश्रेष्ठः; वर्णाहः; रसा-त्तमः; भुक्तिप्रदः; हयानन्दः; सुफलः; वाजिभोजनः; 'प्रधाना हरितास्तत्र वनमुद्गास्तु मुद्गवत् । कृष्णमुद्गा महामुद्गा गौरा हरितपीतकाः । श्वेता रक्ताश्च निर्दिष्टा लघवः पूर्वपूर्ववत्'—इति राजवल्लभे । १६२

**मुद्गरः** पुं. [ मुद्+गु+अच् ] अस्त्रविशेषः; द्रुघणः; धनः; द्रुघनः; प्रधणः; 'मुद्गरः कौरकास्त्रयोः'—इति हेमचन्द्रः । 'पादपार्श्विद्वपरिधः शिलांनिर्वप्यमुद्गरः'—इति रघी (१२।७३) । मुद्गरकः; कर्मारवृक्षः;

पुष्पवृक्षविशेषः; गन्धसारः; सप्तपत्रः; अतिगन्धः; गन्धराजः; विटप्रियः; प्रियः; जनेष्टः; मृगेष्टः । ४७५  
**मुधा** अव्य. [ मुह्यतीति, मुह्+बाहुलकात् का । पृषोदरा-दित्वात् ह्रस्व घः ] व्यर्थकम्; 'मुधा ज्ञानं मुधा वृत्तं मुधा सेवा मुधा श्रमः । एवं यो युक्तधर्मः स्यात्सोऽमुत्रात्यन्त-मश्नुते'—इति महाभारते (१४।३।७।४) । ७६०

**मुनिः** पुं. [ मनुते जानाति यः इति । मन्+मनस्त्वं इति इन्+अत उच्च ] मौनव्रती; वाचयमः; मौनी; व्रती; ऋषिः; शापास्त्रः; सत्यवाक्; 'फलेन मूलेन च वारि-भूषां मुनेरिवेत्यं मम यस्य वृत्तयः'—इति नैषधे (१।१३३) । 'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्वहः । वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते'—इति, भग-वद्गीता । वङ्गसेनतण्डः; जिनः; प्रियालवृक्षः; पलाश-वृक्षः; दमनकवृक्षः; स्त्री. दक्षकन्या; 'मरीचिः कश्यपः पुत्रः कश्यपात्तु इमाः प्रजाः । प्रजज्ञिरे महाभागा दक्षकन्यास्त्रयोदश । अदितिदितिर्दनुः काला दनायुः सिहिका तथा । क्रोधा प्राधा च विश्वा च विनता कपिला मुनिः'—इति महाभारते (१।६।५।११-१२) । अष्टव-स्वन्तर्गतस्य आपनामकस्य वसोः पुत्रे पुं. । आपस्य पुत्रो वैतण्ड्यः श्रमः श्रान्तो मुनिस्तथा'—इति हरिवंशे भविष्यपर्वणि (३।४०) । कौञ्चद्वीपस्य देशविशेषः; 'कौञ्चस्य कुशलां देशा वामनस्य मनाऽनुगः । मनाऽनु-गात् परे चाप्यस्तृतीयोऽपि स उच्यते । उर्ध्वात् परे पावनकः पावनादन्यकारकः । अन्यकारकदेशात् मुनिदेशस्तथापरः'—इति मत्स्यपुराणे (१२।१।८३-८५) । द्युतिमतः पुत्रागामन्यतमः; 'तथा द्युतिमतः सप्त पुत्रास्तांश्च निबोध मे । मुनिश्च द्रुद्विभश्चैव, सप्तमः परिकीर्तितः'—इति मार्कण्डेय (५।३।२२) । कुक्षपुत्रभेदः; 'अविक्षितमभिष्वस्तं तथा चैत्रथ मुनिम्'—इति महाभारते (१।९।४।४९) । ३४४, ४१२

**मुरजः** पुं. [ मुरात् संवष्टेनाज् जातः असौ । मुर+जन्+ङ ] मृदङ्गः; 'मुरजपणवमेघघोषवद् दशरथवेदम वभूव यत्पुरा । विलपितपरिदेवनाकुलं व्यसनगतं तद-भूत् सुदुःखितम्'—इति रामायणे (२।३।९।४१) । ९७

**मुरारिः** पुं. [ मुरस्य अरिः शत्रुः ] मुररिपुः; श्रीकृष्णः; विष्णुः; 'मुरः क्लेशो च सन्तापे कर्मभोगे च कर्मिणाम् । दैत्यभेदेऽप्यरिस्तेषां मुरारिस्तेन कान्तः'—इति

ब्रह्मवैवर्ते । 'कोऽसौ मुरारिर्देवर्षे ! देवो यक्षो नु किं नरः । दैत्यो वा राक्षसो वापि पार्थिवो वा तदुच्यताम् ।' 'योऽसौ रजःसत्त्वमायागुणवांश्च तमोमयः । निर्गुणः सर्वगो व्यापी मुरारिर्मुधुसूदनः'—इति वामने । अनर्घ-  
राघवग्रन्थकर्ता; 'अस्ति मौद्गल्यगोत्रसमुद्भूतस्य महाकवेर्भट्टश्रीवर्धमानात्मजस्य तन्तुमतीहृदयनन्दनस्य मुरारिनामधेयस्य कवेः कृतिरनर्घराघवं नाम नाटकं तत्प्र-  
युञ्जानाः सामाजिकानुपास्महे'—इति तत्कृतनाटक-  
गद्यम् । २१

**मुशलिका स्त्री.** [ मुस्+वृषादिभ्यश्चित् इति कलश्चित् स्यात्, टाप् । ततः संज्ञायां कन्, अकारस्योत्वम्, पृषोदरादित्वात् शत्वम् ] मुसली; गृहगोधिका; पल्ली; तालमूली; सुवहा; तालपत्रिका; गोषापदी; हेम-  
पुष्पी; भूताली; दीर्घकन्दिका; मुषली; तालिका; तालमूलिका; अर्शोघ्नी । २३४

**मुशाली, मुसली [ न् ] पुं.** [ मुसलं प्रहरणत्वेनास्यास्तीति । मुसल+इनि, पूर्ववत् शत्वम् ] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः; मुष्टिकान्तकः । २८

**मुष्कः पुं.** [ मुष्णाति वीर्यमिति । मुष्+सृवभूशधि-  
मुषिभ्यः कक्, इति कक् ] अण्डकोशः; 'स्थानाच्छ्युत-  
ममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः'—इति वाग्भटे । मोक्षक-  
वृक्षः; संधातः; तस्करः; मांसल । ५२३

**मुष्टिः पुं-स्त्री.** [ मुष्+कित्च् ] त्तरुः; 'परिघैरायसं-  
स्तीक्ष्णैः सन्निकर्षे च मुष्टिभिः । निघ्नतां समरेऽन्योन्यं-  
शब्दो दिवमिवास्पृशत्'—इति महाभारते (१।११।  
१७) । (५२३,५३७) सङ्ग्राहः; बद्धपाणिः; सम्पि-  
ण्डिताङ्गुलिपाणिः; मुस्तुः; मुचुटी; मुष्टिका; 'मुट्ठी'  
इति भाषा । ४७३

**मुष्टिकः पुं.** [ मुष्टिः प्रयोजनमस्य । मुष्टि+कन् ]  
स्वर्णकारः; नाडिन्धमः; कलादः; सुवर्णकारः;  
[ मुष्णाति परवीर्यमिति । मुष्+कित्च् । संज्ञायां कन् ]  
कंसराजमल्लविशेषः; 'नागं कुवल्यापीडं चाणूरं  
मुष्टिकं तथा'—इति हरिवंशे (४।११६०) । ५८८

**मुस्तकः पुं.** [ मुस्तयति संहतीकरोति रुधिरमिति । मुस्त  
+क, ततः संज्ञायां स्वार्थे वा कन् ] तृणमूलविशेषः;  
कुहविन्दः; मेघनामा; मुस्ता; मुस्तः; राजकसेरुः;  
मेवाह्वं; गाङ्गेयं; भद्रमुस्तकम्; अन्ननामकः;

श्रीभद्रा; भद्रकः; भद्रा; 'मुस्तकं न स्त्रियां मुस्तं त्रिपु-  
वारिदनामकः । कुहविन्दश्च स ह्यातोऽपरः कोरकसेरुकः ।  
भद्रमुस्तश्च गुन्द्रा च तथा नागरमुस्तकः । मुस्तं कटु-  
हिमं ग्राहि तिक्तं दीपनपाचनम् । कपायं कफपित्तास-  
तृड्ज्वराश्चिजन्तुहृत्'—इति भावप्रकाशः । पुं. स्यावर-  
विषविशेषः; 'चत्वारि वत्सनामानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते'  
—इति सुश्रुतः । ६२२

**मुहुः [ स् ] अव्य.** [ मुहु+ 'मुहेः किच्च' इति उसि किच्च ]  
पुनः पुनः; असकृत्; वारं वारम्; प्रतिक्षणम्; अभीक्ष्णं;  
भूयः; 'स्वस्वन्नमापरोक्षेण दृष्ट्वा पश्यन् स्वजागरम् ।  
चिन्तयेदप्रमत्तः सन्नुभावनुदिनं मुहुः'—इति पञ्च-  
दश्याम् (७।१७१) । ७२४

**मुहुर्दृष्टः त्रि.** [ मुहुः दृष्टः ] अवगीतः । अवगीतशब्दो-  
ऽत्रावलोक्यताम् । ७५५

**मुहुर्भाषा स्त्री.** [ मुहुः भाषा भाषणम् ] पुनः पुनः कथनम्;  
अनुलापः; मुहुर्बचः । १५०

**मूकः त्रि.** [ 'मू' इति कायति । मू+का+क ] वाक्य-  
रहितः; अवाक्; जडः; कडः; 'गर्भो वातप्रकोपेण  
दौहृदे चावमानिते । भवेत्कुञ्जः कुणिः पङ्गुर्मुको मिष्मिण-  
एव च'—इति सुश्रुते । 'आवृत्य वायुः संकफो घमनीः  
शब्दवाहिनीः । नरान् करोत्यक्रियकान् मूकमिष्मिण  
गद्गदान्'—इति सुश्रुतः । पुं. [ मव्यते बध्यते जालिकैरिति ।  
मव्+कक्+ऊङ् ] मत्स्यः; दैत्यः; दानवभेदः; 'स  
सन्निकर्षमागत्य पार्थस्याक्लिष्टकर्मणः । मूकं नाम दनोः  
पुत्रं ददशाद्भुतदर्शनम्'—इति महाभारते (३।३९।७) ।  
दीनः; तक्षकपुत्रः; 'शिली शलकरो मूकः सुकुमारः  
प्रवेपनः । मुद्गरः शिशूरोमा च सुरोमा च महाहनुः ।  
एते तक्षकजा नागाः प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महा-  
भारते (१।५७।१०) । ६०९

**मूढः त्रि.** [ मुहु+क्त, ढत्वधत्वलोपदीर्घाः ] मूर्खः; मातृ-  
शासितः; बालः; जडः; 'अन्योन्याध्यासरूपेण कूटस्था-  
भासयोर्वपुः । एकीभूयभवेन्मुख्यस्तत्र मूढैः प्रयुज्यते'  
—इति पञ्चदश्याम् (७।१०) । तन्द्रितः । ३३६

**मूर्खः त्रि.** [ मुहु+ख, मूरादेशः ] मुह्यति यः; अज्ञः;  
मूढः; यथाजातः; वैधेयः; बालिशः; 'मित्रं स्वच्छतया  
रिपुं नयन्नल्लुब्धं घनैरीश्वरं, कार्येण द्विजमादरेण युवतीं  
प्रेम्णा गुणैर्निघवान् । अत्युग्रं स्तुतिर्भिर्गुरुं प्रणतिर्भूर्खं

कयाभिर्बुधं, विद्याभी रसिकं रसेन सकलं शीलेन कुयद्दि-  
शम्—इति नवरत्नानि । 'पयःपानं भुजङ्गानां केवलं  
विपवर्द्धनम् । उपदेशो हि मूर्च्छाणां प्रकोपाय न शान्तये'  
—इति हितोपदेशः । ३३६

**मूर्च्छा स्त्री.** [ 'मूर्च्छन्म्, मूर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः+  
'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप् ] संमोहः; कश्मलं; मोहः;  
मूर्च्छनं; मूर्च्छायः; 'संज्ञोपघातो मूर्च्छायो मूर्च्छा स्यान्मू-  
च्छनं तथा । कश्मलं प्रलयो मोहः संन्यासस्तु मृतोपमः'  
—इति कोषान्तरम् । 'नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमय-  
वारुणम् । पश्यंस्तमः प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते ।  
वेपथुश्चाङ्गमदंश्च प्रपीडा हृदयस्य च । काश्यं श्यावारुणा  
छाया मूर्च्छायै वातसम्भवे । 'सैकावगाहा मणयः  
सहाराः शीताः प्रदेया व्यजनानिलाश्च । शीतानि पानानि  
च गन्धवन्ति सर्वान्मु मूर्च्छास्वनिवारितानि ।' 'सिद्धानि  
वर्गे मधुरे पयांसि सदाडिमा जाङ्गला रसाश्च । तथा  
यवा लोहितशालयश्च मूर्च्छासु पथ्याः ससतीनमुद्गाः ।'  
'कोलमज्जोषणोशोरं केशरं शीतवारिणा । पीतं  
मूर्च्छां जयेल्लीढा कृष्णा वा मधुसंयुता ।' 'ताम्बूलं पत्र-  
शाकानि दन्तघर्षणमातपम् । विरुद्धान्यन्नपानानि व्यवायं  
स्वेदनं कटुम् । तूडनिद्रयोर्वेगरोषं तत्रं मूर्च्छामयी त्यजेत्'  
—इति वैद्यके । ८३९

**मूर्तिः स्त्री.** [ मूर्च्छ् + क्तिन्, 'राल्लोपः', 'न घ्याख्येति'  
न तकारस्य नत्वम् ] शरीरम्; तनुः; देहः; गात्रं;  
कायः; कलेवरम्; 'खं सन्निवेशयेत् खेषु चेष्टनस्पर्शनेऽ-  
निलम् । पक्तिवृष्टयोः परं तेजः स्नेहेऽप्यो गाञ्च मूर्तिषु'  
—इति मनुः (१२।१२०) । काठिन्यं; प्रतिमा;  
स्वरूपः; 'आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः पिता मूर्तिः प्रजापतेः ।  
दयाया भगिनी मूर्तिर्धर्मस्यात्मातिथिः स्वयम् । अग्नेर-  
भ्यागतो मूर्तिः सर्वभूतानि चात्मनः—इति भागवते  
(६।७।२९-३०) । ब्रह्मासार्वणिपुत्रविशेषः; 'तत्सुता  
भूरिवेणाद्या हविष्मत्प्रमुखा द्विजाः । सुवासना विरुद्धाद्या  
जयो मूर्तिस्तदा द्विजाः—इति भागवते (८।१३।  
२१-२२) । ५१०

**मूर्द्धजः पुं.** [ मूर्द्धिन् जातः । जन् + ड ] केशः; 'बहुमूल-  
विषमकपिलाः स्थूलस्फुटिताप्रपक्षह्रस्वाश्च । अति-  
कुटिलाश्चातिघनाश्च मूर्द्धजा वित्तहीनानाम्—इति  
बृहत्संहितायाम् (६८।८२) । मूर्द्धिन् जाते त्रि. । ५३०

**मूर्धपिण्डः पुं.** [ मूर्द्धिन् जातः पिण्डः, तदाकारः शीर्षभागः ]  
करिकुम्भः; हस्तिशिरोऽर्धभागः; (तच्छिरसोः भाग-  
द्वयं कुम्भद्वयरूपेण कथ्यते) । २१६

**मूर्धवेष्टनम्** क्ली. [ मूर्द्धनः वेष्टनम् ] उष्णीपः ।  
७९६

**मूर्द्धा [ न् ] पुं.** [ मूर्धति बध्नाति यत्रेति । मुर्व + 'श्वननुक्षन्-  
पूषन्' इति कनिन्, उकारस्य दीर्घः वकारस्य घकारः ]  
मस्तकः; शिरः; 'लोहे पात्रे तण्डुलान् कोद्रवाणां शुक्ले  
पवर्बाल्लोहचूर्णेन साकम् । पिष्टान् सूक्ष्मं मूर्द्धिन् शुक्ला-  
म्लकेशे, दत्त्वा तिष्ठेद्वेष्टयित्वाकंपत्रैः—इति बृहत्सं-  
हितायाम् ( ७२।२ ) । 'मूर्द्धां मूर्द्धां  
शिरोदेशे पुंसि स्यातामिमौ समौ—इत्युणादिकोषः ।  
'दृष्ट्वा वेणीं कृतां मूर्द्धिन् कज्जलं लोचने तथा । अंसि  
गृहीत्वा तरसा छेद्यहं नान्यथा सुखम्—इति देवी-  
भागवते (२।७।२८) । ५१९

**मूर्द्धाभिषिक्तः पुं.** [ मूर्धन्यभिषिक्तो मूर्धाभिषिक्तः ।  
राज्यारोहणसमये प्रथमं क्षत्रियो मूर्धन्यभिषिच्यते ]  
क्षत्रियः; राजा; 'राज्ञो मूर्धाभिषिक्तस्य वधो ब्रह्मवधाद्-  
गुहः । तीर्थसंसेवया चांहो जह्यङ्गाच्युतचेतनः—इति  
भागवते (१।१५।४१) । वर्णसङ्करविशेषः; स तु  
विप्रात् क्षत्रियायां जातः; मूर्धावसिक्तः; प्रधानः;  
मन्त्री । ४२१

**मूलम्** क्ली. [ मवते बध्नाति वृक्षादिकमिति । मू + 'मू-  
शक्यविभ्यः क्लः' इति क्ल ] शिफा; ब्रह्मः; अर्द्धाघ्न-  
नामकः; कन्दः; वृष्णः; जटा; पादः; 'भक्ष्यं भोज्यं  
च विविधं मूलानि च फलानि च । हृद्यानि चैव मांसानि  
पानानि सुरभीणि च—इति मनुः (३।२२७) ।  
आद्यम्; 'कुतोमूलमिदं दुःखं ज्ञानुमिच्छामि' तत्त्वतः ।  
विदित्वाप्यपकर्षेयं शक्यं चेदपकर्षितुम्—इति महाभारते  
(१।१६।११) । नक्षत्रविशेषः; 'कुर्वन्तश्चानुराघासु  
लभन्ते चक्रवर्तिताम् । आषिपत्यं च ज्येष्ठामु मूले चारोग्य-  
मुत्तमम्—इति मार्कण्डेये (३३।१३) । निकुञ्जः;  
अन्तिकम्; 'जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः'  
—इति मार्कण्डेये (८६।६) । मूलवित्तं; मूलधनम्;  
'अथ मूलमनाहार्यं प्रकाशक्रयशोधितः । अदण्डयो मुच्यते  
राज्ञा नाष्टिको लभते धनम्—इति मनुः (८।२०२) ।  
निजं; चरणम्; 'त्रेधा मूलं यातुवानस्य वृश्च'—इति

ऋग्वेदे (१०।८७।१०) । 'मूलं पादम्—इति तद्भाष्ये सायणः । टीकाहर्ग्रन्थः; पुष्करमूलं; शूरणं; पिप्पलीमूलं; कारणम्; 'धर्मस्य ब्राह्मणो मूलमग्रं राजन्य उच्यते'—इति मनुः (१।१।८४) 'मूलं कारणम्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । त्रि. [मूलतीति । मूलं प्रतिष्ठायाम्+क] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गतोर्नविंशतनक्षत्रम्; 'मूलमाद्ये शिफायां च निकटे भे तु वा शिष्याम्'—इति शब्दरत्नावली । 'मूलं विरुद्धावयवं समूलं कुलं दहत्येव वदन्ति सन्तः । चेदन्यथात पुरुषाविशेषात् सौभाग्यमायुश्च कुलानुवृद्धिः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । १८३

मूलीकर्म [ न् ] क्ली. [ अमूलः विमुखः मूलः विश्वस्तः क्रियते यत्र । मूल+ञ्चि+कृ+मनिन् ] संवननं; कामर्षणं; वशीकरणम् । ७१६

मूल्यम् क्ली. [ मूलेन आनम्यते अभिभूयते, मूलेन समं वा इति । मूल+नीवयोधर्मत्यादिना यत् । मूल्यते अर्प्यते इदम् ] कर्मण्या; विधा; भृत्या; भृतिः; भर्म; वेतनं; भरष्यं; भरणं; निर्वेशः; पणः; 'मूल्येन यः कर्म करोति स भृतकः'—इति मिताक्षरायाम् । त्रि. [ मूलं रोपणमर्हतीति । मूल+यत् ] प्रतिष्ठायोग्यः; रोपणयोग्यः; इति मूलधात्वर्थदर्शनात् । [मूलतः उत्पाटनं येषाम् इति । 'मूलमस्याबर्हि' इति यत् ] मूलत उत्पाटनयोग्ये मुद्गादौ । ७२८

मूषकः पुं. - क्ली. [ मूष+स्वार्थे कन् ] उन्दुरः; आखुः; वृषः; उन्दरः; खनकः; 'रजसाम्यवकीर्णानि परित्यक्तानि देवतैः । मूषकैः परिधावद्भ्रूलैरावृत्तानि च'—इति रामायणे (२।३३।१९) । २३५

मूषिकः पुं. [ मुष्णाति द्रव्याणीति । मूष्+ 'मुषेदीर्घश्च' इति किकन् दीर्घश्च ] जन्तुविशेषः; उन्दुरः; आखुः; मूषः; मूषीकः; उन्दुरः; वभ्रुः; वृषः; आखनिकः; वृशः; मूषकः; पिङ्गः; उन्दुरकः; नली; खनकः; विलकारी; धान्यारिः; बहुप्रजः; 'मूषिको मधुरः स्निग्धो व्यवायी बलवर्धनः'—इति राजवल्लभः । जनपदविशेषः; 'द्विविडाः केरलाः प्राच्या मूषिका वनवासिका'—इति महाभारते (६।१।५८) । २३५

मृगः पुं. [ मृगयते अन्वेप्यति तृणादिकम्, मृग्+ङ्गुषत्वात् कर्तरि क ] चन्द्रहृदयलाञ्छनं;

हस्तिविशेषः (२१५); (२३०) [ मृगयते अन्विष्यतेऽसौ व्याधैः ] पशुविशेषः; कुरङ्गः; वातायुः; हरिणः; अजिनयोनिः; सारङ्गः; चाश्लोचनः; जिनयोनिः; कुरङ्गमः; ऋष्यः; ऋश्यः; रिष्यः; रिश्यः; एणः; एणकः; 'सम्बरो रोहितो न्यङ्कुकुरङ्गमुद्गो रूहः । एणश्च हरिणश्चेति मृगा नवविधा मताः'—'समूह रोहितो न्यङ्कुकुः सम्बरो बभ्रुणो रूहः । शशैर्हरिणाश्चेति मृगा नवविधा मताः । हरिणश्चापि विज्ञेयः पञ्चभेदोऽत्र भैरव! ऋष्यः खङ्गो रूहश्चैव पृषतश्च मृगस्तथा । एते बलिप्रदाने च चर्मदाने च कीर्तिताः'—इति कालिकापुराणे । पशुमात्रम्; 'आरण्यानां च सर्वेषां मृगाणां माहिषं विना'—इति मनुः । (५।९); 'मृगशब्दोऽत्र नहिषपर्युदासात् पशुमात्रपरः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । नक्षत्रभेदः; 'अश्विनीमृगमूलाश्च पुष्या पुनर्वसुस्तथा'—इति इन्द्रजालतन्त्रे । अन्वेषणम्; 'जनस्थाने भ्रान्तं कनकमृगतृष्णान्वितधिया, वचो वैदेहीति प्रतिपदमुदश्रु प्रलपितम् । कृता लङ्कामर्तुर्वदनपरिपाटीषु घटना, मयाप्तं रामत्वं कुशलवसुता न त्वधिगता'—इति साहित्यदर्पणे (४।१७) । कनकस्य सुवर्णस्य मृगे अन्वेषणे; पक्षे कनकमृगे हेमहरिणे या तृष्णा इत्यर्थः । याञ्जा; मार्गशीर्षमासः; यज्ञविशेषः; मृगनाभिः; मकरराशिः; 'मृगकंकटसंक्रान्तौ द्वे तूदग्दक्षिणायने । विषुवती तुलामेषे गोलमध्ये तथापराः'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । चतुर्विधपुरुषमध्ये पुरुषविशेषः; 'वदति मधुरवाणीं दीर्घनेत्रोऽतिभीरश्चपलमतिमुदेहः शीघ्रवेगो मृगोऽयम् । 'शशके पथिनी तुष्टा मृगे तुष्टा च चित्रिणी'—इति रतिमञ्जरी । अन्वेष्टा; 'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः'—इति ऋग्वेदे (१।१५।४।२) । 'मृगः अन्वेष्टा'—इति तद्भाष्ये सायणः । ४४

मृगजालिका स्त्री. [ मृगाणां जालिका ] मृगबन्धनार्थं जालं; वागुरा; मृगबन्धनी । ५९७

मृगवंशः पुं. [ मृगान् पशून् दशति । मृग+वंश+ष्वल् ] कुक्कुरः; कुकुरः; मृगदंशकः; मृगारिः; मृगारातिः; सारमेयः; कौलिकः; भयणः; शालावृकः । २८१

मृगधूर्तकः पुं. [ मृगेषु पशुषु धूर्तः, वञ्चकत्वात् । मृगधूर्त+स्वार्थे कन् ] शृगालः; मृगधूर्तः । २२९

मृगनाभिः पुं. [ मृगस्य नाभिः । तदम्यन्तरे जातत्वात्



तथात्वम् ] कस्तूरी; मृगनाभिजा; 'मृगनाभिर्मृगमदः कथितस्तु सहस्रभिः । कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा स्मृता' । 'मृगनाभिर्मृगमदो मदः कस्तूरिकाण्डजः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । ५४४

मृगपतिः पुं. [ मृगाणां पशूनां पतिः, यथेष्टं भक्षणरक्षणगौदी स्वामी ] सिंहः; 'यल्लीलां मृगपतिराददेऽनवद्यामादातुं स्वजनमनांस्युदारवीर्यः'—इति भागवते (५।२५।१०) । 'मृगपतिः सिंहः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । काम-प्रदश्रेष्ठः; यथा तत्रैव टीकायाम् 'मृग्यन्त इति मृगाः कामप्रदास्तेषां पतिर्मुख्यः ।' २१४

मृगमदः पुं. [ मृगाः माद्यन्ति अनेनेति । मृग+मद्+अप् ] कस्तूरी; मृगनाभिजा; 'मृगमदकृतचर्चापीतकौपेयवासा रुचिरशिखिशिखण्डा वद्धधम्मिल्लपाशा'—इति छन्दोमञ्जर्याम् (२।१५।४) । ५४४.

मृगया स्त्री. [ मृग्यन्ते पशवोऽस्यामिति । मृग्+णिच्, 'इच्छा' इत्यत्र 'परिचर्यापरिसर्यामृगयाटाटघानामुपसंख्यानम्' इति शे यकि णिलोपः ] वनेषु राज्ञां मृगहननक्रिया; [ मृग्यन्ते अन्विष्यन्तेऽस्याम् ] आच्छेदनं; मृगव्यं; आखेटः; 'शिकार' इति भाषा । 'चचार मृगयां तत्र दृप्त आत्तेषुकामुकः । विहाय जायामतदहौ मृगव्यसनलालसः'—इति भागवते ४ स्कन्धे २६ अध्यायः ।

४३५

मृगयुः पुं. [ मृगं यातीति । मृग+या+ 'मृग्यवादयश्च' इति कु निपात्यते ] व्याधः; लुब्धकः; वागुरिकः; मृगवित् (घ्) ; 'मृगयुमिव मृगोऽय दक्षिणेर्मा दिशमिव दाहवतो मरावुदन्यन्'—इति भट्टिकाव्ये (४।४४) । ५९६

मृगरिपुः पुं. [ मृगाणां पशूनां रिपुः शत्रुः ] सिंहः; 'मृगारिः; पशुपतिः; मृगपतिः । २१४

मृगव्यम् क्ली. [ मृगान् विध्यति अत्र इति । व्यध्+ 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति काशिकोक्त्या अधिकरणेऽ ] मृगया; आखेटः; 'कदाचिद्राजपुत्रोऽसी मृगव्यमचरदने'—इति मार्कण्डेये (१२७।१) । ४३४

मृगाङ्कः पुं. [ मृगः अङ्के यस्य ] चन्द्रः; 'विनिद्रपत्रालिगतालिकेतवान् मृगाङ्कचूडामणिवर्जनाजितम्'—इति नैषधचरिते (१।७८) । कर्पूरः; वायुः; मृगचिह्नः; चन्द्रे तच्चिह्नकारणं यथा—'लोकच्छायामयं लक्ष्म तवाङ्के शशसंस्थितम् । न विदुः सोमदेवापि ये च नक्षत्रयोगिनः'—

इति महाभारते हरिवंशः । यक्षमरोगस्य औषधविशेषः; 'स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् । गन्धकस्तु समस्तेन रसपादस्तु टङ्कणः । सर्वं तद्गोलकं कृत्वा फाञ्जिकेन विशोषयेत् । भाण्डे लवणपूर्णेऽय पचेद्यामचतुष्टयम् । मृगाङ्गसंज्ञको ज्ञेयो रोगराजनिघ्नतनः ।' 'रसस्य भस्मनो हेम पिष्टीकृत्य प्रयोजयेत् । गुञ्जाचतुष्टयञ्चाज्यमरिचैर्भक्षयेन्नरः'—इति मधुमती । 'रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं द्वयम् । दोषं बुद्धवानुपानेन मृगाङ्गोऽयं क्षयापहः' ।—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः । ४३

मृगारिः पुं. [ मृगाणां पशूनाम् अरिः वैरी ] मृगादनः; क्षुद्रव्याघ्रः; तरक्षुः; तर्क्षुः; तरक्षुः; तरक्षकः; व्याघ्रः; 'चीता, वाघ' इति भाषा । सिंहः; कुकुरः; कुकुरः; वृक्षविशेषः; रक्तशिमुः । २२६

मृङः पुं. [ मृडति हृष्यतीति, मृड+ङ्गुपवत्वात् कर्तरि क ] शिवः; महादेवः; 'प्राङ् निषण्णं मृडं दृष्ट्वा नामृष्यत्तदनादत्तः'—इति भागवते (४।२।७) । १३

मृडा स्त्री. [ मृड+जात्यर्थे टाप् ] दुर्गा; शिवा । १५

मृडानी स्त्री. [ मृडस्य पत्नी । 'इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडेति' डीष् आनुक् च ] मृडा; मृडपत्नी; शिवा; पार्वती; हैमवती; अम्बिका । १५

मृणालम् क्ली.— पुं. [ मृण्यते हिंस्यते भक्षणाद्यर्थं यत् । मृण् + 'तमिविशिविडिमृणिकुलिकपिपलपञ्चिम्यः' इति कालन् ] पङ्कजादीनां नालः; विसं; विशं; पशनालः; मृणाली; मृणालिनी; पद्मतन्तुः; विसिनी; नलिनीरुहं; 'मदर्यसन्देशमृणालमन्यरः प्रियः कियद्दुर इति त्वयोदिते'—इति नैषधे (१।१३७) । शालूकविशेषः; 'पद्मादिकन्दः; शालूकं करहाटश्च कथ्यते । मृणालं मूलं भिष्माण्डं लज्जाशूकं च कथ्यते ।' 'मृणालं शीतलं वृष्यं पित्तदाहास्रजिद्वगुर । दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम् । सङ्ग्राहि मधुरं रूक्षं शालूकमपि तद्गुणम्'—इति भावप्रकाशः । क्ली. [ मृण्+कालन् ] वीरणमूलम्; 'मृणालमभयं सेव्यं लामज्जकमुशीरकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'स्यादुशीरं मृणालं च सेव्यं लामज्जकं तथा'—इति गारुडे । ६२८

मृत् [ द् ] स्त्री. [ मृदनाति प्रलये चूर्णतया स्वकारणे लीयत इति । मृद्+कर्तरि क्विप् ] मृत्तिका; 'कपाया

भारुतं पित्तमुपरा मधुरा कफम् । कोषयेन्मृद्रसादीश्च  
रीश्याद्भुक्तञ्च रूक्षयेत् । पूरयत्यविषकवेव स्रोतासि  
निरुणद्धचपि । इन्द्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौ जसी  
तया । पाण्डुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनम्—  
इति माघवकरः । तुवरी । १५९

मृतः त्रि. [ मृ+क्त ] गतप्राणः; परासुः; प्राप्तपञ्चत्वः;  
परेतः; प्रेतः; संस्थितः; प्रमीतः; 'मरा' इति भाषा ।  
'धर्मः प्रव्रजितस्तपः प्रवसितं सत्यं च दूरे गतम्, पृथ्वी  
मन्दफला जनाः कपटिनो लौत्ये स्थिता ब्राह्मणाः ।  
मर्त्याः स्त्रीवशगाः स्त्रियश्च चपला नीचा जना उन्नता,  
हा कष्टं ! खलु जीवितं कलियुगे घन्या नरा ये मृताः'  
—इति गारुडे ११५ अध्यायः । 'चतुर्थं तु मन्त्रे मूढो  
भग्नद्राविव निष्क्रियः । कार्याकार्यविभागान्नो मृतादप्य-  
परो मृतः—इति माघवकरः । 'उत्तिष्ठोत्तिष्ठ-गच्छ त्वं  
वद मीनं समाचर । ये पराधीनतां यान्ति तेऽपि जीवन्ति  
के मृताः—इत्युद्धटः । याचितवस्तु; क्ली. याचितं  
[ याचनवृत्तिगैरणिव दुःखजनकत्वाद् मृतं, भावे कर्मणि  
वा क्त ] ; मृत्युः । ६२९

मृतस्नानम् क्ली. [ मृतमुद्दिश्य स्नानम् ] मृतोद्देशेन  
स्नानम्; अपस्नानम् । ६३९

मृत्तिका स्त्री. [ मृदेव इति । मृद्+ 'मृदस्तिकन्' इति  
स्वार्थे तिकन्, स्त्रियां टाप् ] मृत्; मृदा; मृत्तिः; तुवरी;  
'मिट्टी' इति भाषा । 'मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्य-  
तमो मलः । कषाया भारुतं पित्तं उपरा मधुरा कफम्'  
—इति माघवकरः । १५९

मृत्युः पुं.- क्ली. [ म्रियते अस्मादिति । मृ+ 'भुजिमृद्भ्यां  
युक्त्युको' इति त्युक् ] प्राणवियोगः; पञ्चता; काल-  
धर्मः; दिष्टान्तः; प्रलयः; अत्ययः; अन्तः; नाशः;  
मरणः; निषर्गः; पञ्चत्वः; मृतः; मृत्तिः; नैषर्गः; संस्था;  
कालः; परलोकगमः; परलोकगमनः; दीर्घनिद्रा;  
निमीलनम्; अस्तम्; अवसानं; भूमिलाभः; निपातः;  
विलयः; आत्ययिकम्; अप्ययः । 'क्षीणस्य यस्य क्षुत्तृष्णे  
हृद्यौमिष्टैर्हितैस्तया । न शाम्यतोऽन्नपानैश्च तस्य मृत्यु-  
रुपस्थितः । प्रवाहिका शिरःशूलं कोष्ठशूलं च दारुणम् ।  
पिपासा बलहानिश्च तस्य मृत्युरुपस्थितः—इति  
सुश्रुतः । पुं. यमः; मारकः (कंसः); 'प्रत्यर्प्यं मृत्यवे पुत्रान्  
मौचये कृपणामिमाम् । सुता मे यदि ज्ञाबैरन् मृत्युर्वा

न म्रियेत चेत्'—इति भागवते (१०।१।४९) । ६२८  
मृत्ता स्त्री. [ प्रशस्ता मृत् इति । मृत्+ 'सन्तो प्रशंसायाम्'  
इति स+टाप् ] प्रशस्तमृत्तिका । १५९

मृत्तना स्त्री. [ प्रशस्ता मृत् इति । मृत्+सन्+टाप् ]  
प्रशस्तमृत्तिका; 'त्वमादिरन्तो जगतोऽस्य मध्यं घटस्य  
मृत्स्नेव परः परस्मात्—इति भागवते (८।६।१०) ।  
काक्षी; 'सौराष्ट्री पार्वती मृत्तना काक्षी च पङ्कपपंटी'  
—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १५९

मृदङ्गः पुं. [ मृद्यते आह्वयते असी इति । मृद्+ 'विड-  
दिभ्यः कित्' इति अङ्गु च स च कित् । मृदा मृत् अङ्ग-  
मस्येत्यमरटीकायां रघुनाथः ] वाद्यविशेषः; मुरजः;  
'रजनिविरतिशंसी कामिनीनां भविष्यद्विरहविहित-  
निद्रामङ्गमुच्चैर्मृदङ्गः—इति माघे (१।१२) ।  
पटहः; घोषः; वंशः । ९७

मृद्भाण्डम् क्ली. [ मृदः भाण्डम् बृहत्पात्रम् ] उष्ट्रिका;  
मृत्पात्रम् । ७९०

मृद्वीका स्त्री. [ मृदु+बाहुलकात् ईकन्, टाप् ] द्राक्षा;  
कपिलद्राक्षा; मृद्धी; गोस्तनी; गोस्तना; हारहूरा;  
'जम्बूवेतसवानीरकदम्बोदुम्बराजुनाः । वीजपूरकमृद्धी-  
कालकुचाश्च सदाडिमाः—इति बृहत्संहितायाम्  
(५५।१०) । १९३

मृषम् क्ली. [ मृषंते क्लियतीति । मृष्+क ] युद्धम्;  
'अपयाते ततो देवे कृष्णे चैव महात्मनि । पुनश्चावतंत  
मृषं परेवां लोमहर्षणम्—इति हरिवंशे (१८।१) ।  
४५३

मृषा अव्य.— मृषा; वृषा; मिथ्या । १४४

मृषा अव्य. [ मृष्यत इति । मृष्+का ] मिथ्या; 'मृषामृषं  
सादिबले कुतूहलान्नलस्य नासीरगते वितेनतुः—इति  
नैषधचरिते (१।६८) । वृषा । १४४

मेकलकन्यका स्त्री. [ मेकलः मेखलायुक्तः तन्नामा वा  
विन्ध्यपर्वतः तस्य कन्यका । तस्य नितम्बदेशान् निःसृते-  
त्यर्थः ] नर्मदानदी; मेकलाद्रिजा; मेखलाद्रिजा । ६७४

मेखलकन्यका स्त्री. [ मेखलस्य मेखलोपलक्षितस्य  
विन्ध्य-गिरेःकन्यकेव प्रसृता ] नर्मदा । ६७४

मेखला स्त्री. [ मीयते प्रक्षिप्यते कायमध्यभागे इति । मि+  
संज्ञायां खल, गुणश्च, स्त्रियां टाप् ] स्त्रीकट्या-  
भरणं; काञ्ची; सप्तकी; रत्तना; सारसनं;

काञ्चिः; रशना; कक्षा; रसनं; रशनं; कक्ष्या;  
सप्तका; सारशनं; कलापः; 'कर्धनी' इति भाषा।  
कटिदेशः (८२४) स्त्रीकट्याः; वस्त्रग्रन्थनम्; अष्ट  
यष्टिका; 'एकयष्टिर्भवेत् काञ्ची मेखला त्वष्टयष्टिका।  
रसना षोडश ज्ञेया कलापः पञ्चविंशकः। 'खड्गादि-  
निवन्धनं; शिक्कनिका; चर्मरज्ज्वादि; मुष्टिदाढ्यार्थम्  
उपर्यधो लौहवन्धः; शैलनितम्बः; नर्मदानदी; पृश्नि-  
पर्णी; उपनयनकाले धारणीयमुञ्जनिर्मितसूत्रत्रयम्;  
'अथैनं माणवकमाचार्यस्थिः प्रदक्षिणं त्रिवृत्तमुञ्ज-  
मेखलां परिधापयन् मन्त्रद्वयं वाचयति'—इति दशकर्म-  
पद्धतिः। 'गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे स्वसूत्रोन्तविधानतः।  
दण्डी च मेखली सूत्री कृष्णाजिनवरो मुनिः। मौञ्जी  
त्रिवृत्समा श्लक्षणा कार्या विप्रस्य मेखला। मौञ्ज्यभावे  
कुशोनाहुर्ग्रन्थिनैकेन च त्रिभिः—इति कौर्मै। होम-  
कुण्डोपरि मूद्घटितवेष्टनविशेषः; 'यावान् कुण्डस्य  
विस्तारः खननं तावदिष्यते। हस्तैके मेखलास्तिस्त्री-  
वेदाग्निनयनाङ्गुलाः। कुण्डे द्विहस्ते ता ज्ञेया रसवेदगुणा-  
ङ्गुलाः। चतुर्हस्ते तु कुण्डे ता वसुतर्कयुगाङ्गुलाः—इति  
वशिष्टपञ्चरात्रे। यज्ञवेष्टनसूत्रम्; 'रुज्युयज्ञपात्राणि  
तथैकेऽग्नीननाशयन्। कुण्डेष्वमूत्रयन् केचिद्विभिदुर्वदि-  
मेखलाः—इति भागवते (४।५।१५)। 'मेखलाः  
सीमासूत्राणि'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ५६०  
मेघः पुं. [ मेहतीति। मिह् + अच्, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च'  
इति कुत्वम्। मेहति सिञ्चति यः ] अब्रं; वारिवाहः;  
स्तनयित्नुः; बलाहकः; धाराधरः; जलधरः; तडित्वान्;  
वारिदः; अम्बुमूतः; घनः; जीमूतः; मुदिरः; जलमुक्;  
धूमयोनिः; अब्रं; पयोधरः; अम्भोधरः; व्योमधूमः;  
घनाघनः; वायुदारुः; नभश्चरः; कन्धरः; कन्धः;  
नीरदः; गगनध्वजः; वारिमुक्; वार्युक्; वनमुक्;  
अब्दः; पर्जन्यः; नभोगजः; मदयित्नुः; कदः; कन्दः;  
गवेहुः; गदामरः; खतमालः; वातरथः; श्वेत-  
नीलः; नागः; जलकरङ्कः; पेचकः; भेकः; दर्दुरः;  
अम्बुदः; तोयदः; अम्बुवाहः; पाथोदः; गदाम्बरः;  
गाडवः; वारिमसिः। तद्वैदिकपर्यायाः—अद्रिः;  
ग्रीवा; गीत्रः; बलः; अश्रः; पुरुभोजाः; बलिशानः;  
अरमा; पर्वतः; गिरिः; ब्रजः; घरः; वराहः;  
शम्बरः; रौहिणः; रैवतः; फलिगः; उपरः; उपलः;

चमसः; अहिः; हतिः; ओदनः; वृषन्विः; वृत्रः;  
असुरः; कोशः। 'आवर्तो निर्जलो मेघः सम्भर्तदच  
बहूदकः। पुष्करो दुष्करजलो द्रोणः सस्यप्रपूरकः'  
—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। षड्रागान्तर्गतरागविशेषः;  
'भैरवोऽथ वसन्तश्च नटी नारायणस्तथा। श्रीरागो मेघ-  
रागश्च पडते पुरुषाह्वयाः।' 'ललिता मालसी गौडी  
'नाटी देवकिरी तथा। मेघरागस्य रागिण्यो भवन्तीमाः  
सुमध्यमाः—इति सङ्गीतशास्त्रम्। मुस्तकः; राक्षसः। ५८  
मेघतिमिरम् क्ली. [ मेघेन तिमिरम् अन्धकारो यत्र ]  
मेघाच्छन्नदिनं; दुर्दिनम्। ५९  
मेघपुष्पम् क्ली. [ मेघस्य पुष्पमिव ] जलं; पानीयं;  
नीरं; सलिलं; पिण्डाभ्रं; नदीजलम्। पूं. [ मेघ इव  
पुष्प्यति प्रकाशते इति। पुष्प विकशनं + अच् ] शक्रहयः;  
श्रीकृष्णाश्वः; 'तं मन्ये मेघपुष्पस्य जवेन सदृशं हयम्'  
—इति महाभारते (४।४३।२१)। ६४८  
मेघरागः पुं. [ मेघनामको रागः ] षड्रागान्तर्गतराग-  
विशेषः। १०० अ  
मेघवह्निः पुं. [ मेघस्य मेघजन्यो वा वह्निः ] मेघज्योतिः;  
वज्राग्निः; इरम्मदः। ७०  
मेघवाहनः पुं. [ मेघो वाहनस्य ] इन्द्रः; 'अविलम्बि-  
तैलविलपाणिपल्लवः श्रयति स्म मेघमिव मेघवाहनः'  
इति माघे (१३।१८)। ५४  
मेचकः पुं. [ मंचति वर्णान्तरेण मिश्रीभवतीति। मच् +  
'कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन्। ततः 'पचिमच्यो-  
रिञ्च' इति इत्वे लघूपधगुणः ] मयूरचन्द्रकः; धूमः;  
मेघः; शोभाञ्जनः; श्यामलः। २४२  
मेचकम् त्रि. [ मेचकः कृष्णनीलमिश्रितः वर्णः अस्ति अस्य।  
अंशं आद्यच् ] श्यामलगुणयुक्तः; कृष्णनीलः; 'मेचकः  
कृष्णनीलः स्यादतसीपुष्पसन्निभः—इति शब्दार्णवः।  
क्ली. श्रोतोऽञ्जनम्; अन्धकारः; नीलाञ्जनम्;  
'मेचकं मर्दानाञ्जनपिण्डवदीवत् कृष्णरूक्षम्—इति  
माधवकरः। ७३४  
मेहुः पुं. [ मिह् सेचने + ष्टृन् ] शिशनः; मेघः; 'मेढो मेढो  
हुडो मेघ उरअ उरणोऽपि च'—इति भावप्रकाशः।  
५१४  
मेघिः, मेढिः पुं. [ मेघन्ते पशवोऽप्रेति। मेघृ सङ्गमे +  
'सर्वधातुभ्यः' इति इन्। ठयन्ते पशोर्वरादिः ] खले पशु-

बन्धनार्थन्यस्तदारुः; मेधिः; 'मेधिभूतस्तु वै सर्वान्' वायुपार्श्वनियन्त्रितान् । आकल्पं तत्पदं तिष्ठन् भ्रामयन् ज्योतिषां गणान्—काशीखण्डे (२१।८०) । 'मेधि-र्मैथिः खलेवाली खले गोबन्धदारु यत्'—इति हेमचन्द्रः । स्त्री. मेधिका; मेधिनी; मेयी; दीपनी; बहुपत्रिका; बोधिनी; गन्धवीजा; ज्योतिः; गन्ध-फला; वल्लरी; चन्द्रिका; मन्या; मिश्रपुष्पा; कौरवी; कुञ्चिका; बहुपर्णी; पीतवीजा; 'मेथी' इति भाषा । 'मेधिका मेधिनी मेधिर्दीपनी बहुपत्रिका । बोधिनी बहु-बीजा च ज्योतिर्गन्धफला तथा । वल्लरी चन्द्रिका मन्या मिश्रपुष्पा च कौरवी । कुञ्चिका बहुपर्णी च पीतवीजा मुनिच्छदा । मेधिका वातशमनी श्लेष्मघ्नी ज्वरनाशिनी । ततः स्वल्पगुणा दन्या वाजिनां सा तु पूजिता'—इति भाव-प्रकाशाः । ५७८

भेदः [ स् ] क्ली. [ मेधति स्निह्यतीति । मिद्+सर्व-धातुभ्योऽसुन्' इति असुन् ] मांसप्रभवघातुविशेषः; वपाः; वसा; भेदः; 'यन्मांसं स्वाग्निना पक्वं तन्भेद इति कथ्यते । तदतीव गुरु स्निग्धं बलकार्यतिवृंहणम् । 'भेदो हि सर्वभूतानामुदरेष्वस्यपु स्थितम् । अतएवो-दरे वृद्धिः प्रायो भेदस्विनो भवेत्'—इति भावप्रकाशः । रोगविशेषः; 'अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः । मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्भेदो विवर्द्धयेत्'—इति सुश्रुतः । पुं. [ मेधति स्निह्यतीति । मिद्+अच् ] वपा; वसा; मांसप्रभवघातुविशेषः; 'तृष्णाकण्डुकमिहरो मलघ्नो भेदकुष्ठहा'—इति भरतधृतशालिहोत्रः । म्लेच्छ-जातिविशेषः; अलम्बुषा; ऐरावतकुलजो नागविशेषः; 'विहङ्गः शरभो भेदः प्रमोदः संहतापनः । ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।११) । ६३५

भेदिनी स्त्री. [ भेदोऽस्या अस्तीति । भेद+इनि । डीष् ] पृथिवी; [ भेदो विद्यतेऽस्यामिति, सान्त्वान्भेदः शब्दा-दिन्, सलोपश्च निपात्यते इति परे । स्वमते भेदः सामानार्थो-ऽन्तो भेदशब्दोऽस्ति ] 'मधुकैटभयोर्भेदःसंयोगान्भेदिनी स्मृता । धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी विस्तारयोगतः' । गतप्राणी तदा जाती दानवी मधुकैटभौ । सागरः सकलो व्याप्तस्तदा वै भेदसा तयोः । भेदिनीति ततो जातं नाम पृथ्व्याः समन्ततः । अभक्ष्या मृत्तिका तेन कारणेन मूनी-

स्वराः—इति ब्रह्मवैवर्ते । भेदा; ओपधिभेदः; भेदो-द्भवाः; जीवनी; श्रेष्ठा; मणिच्छिद्रा; विभावरी; वसा; स्वल्पपणिका; भेदःसारा; स्नेहवती; मधुरा; स्निग्धा; मेधा; द्रवा; साध्वी; शाल्यदा; बहुरन्ध्रिका; पुरुषदन्तिका; काश्मरी । १५६

भेधा स्त्री. [ भेधते सङ्गच्छते अस्यामिति । भेध्+ 'षिद्धि-दादिभ्योऽङ्' इत्यङ्+टाप् ] धारणावती बुद्धिः; 'नाय-मात्मा प्रवचनेन लभ्यो न भेधया न बहुना श्रुतेन । यमे-वैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैव आत्मा विवृणुते तन्नं स्वाम्'—इति मृण्डकोपनिषदि (३।२) । 'शङ्खपुष्पी वचा सोमा ब्राह्मी ब्रह्ममुवर्चला । अभया च गुडुची च अट-रूषकवाकुची । एतैरक्षसमैर्भागैर्वृतं प्रस्थं विपाचयेत् । कण्टकार्या रसप्रस्थं बृहत्या च समन्वितम् । एतद् ब्राह्मी-धृतं नाम स्मृतिमेधाकरं परम्'—इति गारुडे । दक्षप्रजा-पतिकन्याविशेषः; 'कीर्तिलक्ष्मीवृत्तिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः'—इति बह्मपुराणे । धनम् । ३३४

मेधावी [ न् ] पुं. [ मेधास्त्यस्येति । मेधा+ 'अस्माया-मेधास्रजो विनिः' इति विनि ] पण्डितः; विशारदः; शुकपक्षी; मदिरा; व्याडिः; कस्यचिद् ब्राह्मणस्य पुत्रः; 'द्विजातेः कस्यचित् पार्थ ! स्वाध्यायनिरतस्य वै । बभूव पुत्रो मेधावी भेध.वी नाम नामतः'—इति महाभारते (१२।१७५।३) । मेधायुक्ते त्रि. । 'स तु मेधाविनौ दृष्ट्वा वेदेषु परिनिष्ठितौ । वेदोपबृंहणार्थाय ताव ग्राह्यत प्रभुः'—इति रामायणे (१।५।६) । ३३३

मेधिः पुं. [ मेध्यते खले स्थाप्यते इति । भेध्+ 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन् ] खले पशुबन्धनार्थन्यस्तदारुः; खले धान्यमदनस्थानमध्ये पशुबन्धननिमित्तं निहितं यदाह तत्; मेधिः; खलेवाली; 'मेधिर्मैथिः खलेवाली खले गोबन्धदारु यत्'—इति हेमचन्द्रः । ५७८

मेध्यम् त्रि. [ मेध्यते इति, भेध्+ 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत् । यद्वा मेधामर्हतीति । मेधा+दण्डादित्वाद् यत् ] पवित्रम्; 'ज्ञानेन मेध्यमखिलममेध्यं ज्ञानतो भवेत् । ब्रह्मज्ञाने समुत्पन्ने मेध्यामेध्यं न विद्यते'—इति चिन्ता-मणी । 'पूतं मेध्यं पवित्रं स्याद्वीध्रं प्रयतनिर्भलम् । निशोध्यं शोधितं मृष्टं निर्णक्तमनवस्करम्'—इति शब्दरत्नावली । नित्यमेध्यम्; 'नित्यं शुद्धः कारुहस्तः पण्ये यच्च प्रसारितम् । ब्रह्मचारिगतं भैक्ष्यं नित्यमेध्य-

मिति स्थितिः—इति मनुः (५।१२९) । शुचिः; 'तत्तादृक् तृणपूलकोपनयनक्लेशाचिरद्वेषिभि, मॅध्या वत्स-  
तरी विहस्य वटुभिः सोल्लुण्ठमालम्यते'—इति अनर्घ-  
राघवे (२।१४) । मेघाजनकः; 'मण्डूकपर्ण्याः स्वरसः  
प्रयोज्यः, क्षीरेण यष्टीमधुकस्य चूर्णम् । रसो गुड-  
च्यास्तु समूलपुष्पः कल्कः प्रयोज्यः खलु शङ्खपुष्पाः ।  
आयुःप्रदान्यामयनाशनानि बलाग्निवर्णस्वरवर्द्धनानि ।  
मेघ्या विशेषेण च शङ्खपुष्पी'—इति चरकः । पुं.  
[ मेघाय हितः । मेवा+ 'उगवादिभ्यो यत्' इति 'यत्' ]  
खदिरः; यवः; छागः । १३२

मेनका स्त्री. [ मन्वते इति + मन्+ 'मनेराशिपि च' इति  
वुन् । ततः 'नशिंमन्योरलिट्येत्वं वक्तव्यम्' इत्युत्त्वा  
अकारस्य एत्वम् ] स्ववेश्या; तस्याः कन्यां शकुन्तला;  
'विश्वामित्रात्मजैवाहं त्यक्त्वा मेनकया वने । वेदैतद्भगवान्  
कण्वो वीर ! किं करवाम ते'—इति भागवते (९।२०।  
१३) । [ मेनैव, मेना+ 'स्वार्थं कन्' ] उमामाता । ८८

मेनकात्मजा स्त्री. [ मेनकाया आत्मजा ] दुर्गा; पार्वती;  
शकुन्तला; 'नेमां हिस्मृद्वेने बालां ऋग्व्यादा मांसगृद्धिनः ।  
पर्यरक्षन्त तां तत्र शकुन्ता मेनकात्मजाम्'—इति महा-  
भारते (१।७२।११) । १६

मेरुः पुं. [ मि+ 'मिपीम्यां रुः' इति रु ] पर्वतविशेषः;  
सुमेरुः; हेमाद्रिः; रत्नसानुः; सुरालयः; [ मिनोति  
क्षिपति ज्योतीषि, उच्चत्वात् ] 'देवापिगन्धर्व-  
युतः प्रथमो मेरुरुच्यते । प्रागायतः ससौवर्ण उदयो नाम  
पर्वतः'—इति मात्स्ये । १३५, १३६

मेघः पुं. [ मिपति अन्योऽन्यं स्पन्दते इति । मिप् स्पन्दायाम्+  
अच् ] पशुविशेषः; मेढुः; उरभ्रः; उरणः; ऊर्णयुः;  
वृष्णिः; एडकः; भेडः; हुडः; शृङ्गिणः; अकिः;  
लोमशः; बली; रौमशः; भेडुः; भेडकः; मेण्टः;  
हुलुः; मेण्टकः; हुडुः; संपलः; 'भेषेण सूषकाराणां  
कलहो यत्र वर्तते । स भविष्यत्यसन्दिग्धं वानराणां भया-  
वहः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।६२) । लग्नविशेषः; औषध-  
विशेषः; 'भेषस्य पुष्पमधुकेन संयुतं तदञ्जनं सर्वकृते  
प्रयोजयेत् । क्रियाश्च सर्वाः क्षतजोद्भवे हिताः  
क्रमः परिम्लाघिनि चापि पित्तहृत्'—इति सुश्रुतः ।  
राशिविशेषः; 'भेषलमे समुत्पन्नश्चण्डो मानी धनी  
शुभः । क्रौघी स्वजनहन्ता च विक्रमी परवत्सलः'—इति

कोष्ठीप्रदीपः । 'मेघे दिनेशे पुरुषः सुवेशः सत्साहसः  
स्यान्नृपतेः समानः । बुद्ध्या युतः पित्तकृता च पीडा  
वक्त्रोद्भवा वा सततं महौजाः' २७९

मेहनम् क्ली. [ मेहति सिञ्चति मूत्ररेतसीति । मिह्,  
सेचने+ ल्यु ] शिशनः; 'मेहनाद्धनं कारणाल्लीम'—इति  
ऋग्वेदे (१०।१६३।५) । 'मेहनात् मेढात्'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । मूत्रम्; 'वस्तवद्विलपन् यश्च भूमौ-  
पतति संस्तमुष्कस्तव्वमेढो भग्नग्रीवः प्रणष्टमेहनश्च  
मनुष्यः'—इति सुश्रुतः । [ भावे ल्युट् प्रत्यये मूत्रो-  
त्सर्गश्च ] पुं. [ मेहति सिञ्चति रसमिति । मिह्+  
ल्यु ] मुष्ककवृक्षः । ५१४

मैत्रम् क्ली. [ मित्रादागतमिति । मित्र+अण् ] मित्रता;  
मैत्री; मित्रभावः; विदृत्यागः । ७०६

मैत्रावरुणः पुं. [ मित्रश्च वरुणश्चेति । 'देवताद्वन्द्वे च'  
इत्यनञ् ततः 'देवताद्वन्द्वे च' इति मित्रस्य वृद्धिः ।  
'दीर्घाच्च वरुणस्य' इति वरुणस्य न वृद्धिः ।  
तयोरपत्यमिति । अण् ] वाल्मीकिः; अगस्त्यः; 'न  
वपं मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यमभिवर्षते'—इति अथर्ववेदे  
(५।१९।१५) । 'उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या  
ब्रह्मन् मनसोऽधिजातः । द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्ये न-विश्वे  
देवा पुष्करे त्वादन्त'—इति ऋग्वेदे (७।३३।११) ।

४१२

मैत्रावरुणिः पुं. [ मित्रावरुणयोरपत्यमिति । मित्रावरुण+  
'अत इञ्' इति इञ् ] अगस्त्यः; 'तेऽभिगम्य महात्मानं  
मैत्रावरुणिमच्युतम् । आश्रमस्य तपोराशिं कर्मभिः  
स्वैरभिष्टुवन्'—इति महाभारते (३।१०३।१४) ।

४१२

मैत्री स्त्री. [ मैत्र+ङीप् । यद्वा मित्र+भावे ष्यञ्+  
ङीप् । ततः 'हलस्तद्धितस्य' इति यलोपः ] मित्रस्य  
भावः; मित्रस्य कर्म; मित्रता; 'विद्विष्टपतितोन्मत्त-  
बहुवैरातिकीटकैः । बन्वकीवन्धकीभर्तृ क्षुद्रानृतकर्मैः सह ।  
तयातिव्ययशीलैश्च प्ररीवादरतैः शठैः । बुधो मैत्रीं न  
कुर्वीत नैकः पन्यानमाश्रयेत्'—इति विष्णुपुराणे । ७०६

मैथुनम् क्ली. [ मिथुने सम्भवतीति । मिथुन+ 'सम्भूते'  
इति अण् । मिथुनस्येदमित्यण् वा ] सङ्गतं; सम्बन्धः;  
'सङ्गतिः सङ्गमो वा संयोगो विवाहः'—इति कलिङ्गः ।  
रतं; ग्राह्यधर्मः; सुरतम्; अभिमानितं; घषितं;

सम्प्रयोगः; अनारतम्; अग्रहाचयंकम्; उपसृष्टं; त्रिभद्रं; श्रीडारत्नं; महासुखं; व्यायः; निषुवनं; 'ऋतुस्नाता तु या नारी स्वप्ने मैयुनमावहेत्'—इति सुश्रुतः । अन्याधानम्; 'असपिण्डा च या मातुर-सगोत्रा च या पितुः । सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैयुने'—इति मनुशातातपी । परस्यादिगमने दण्डः ।

८३८

मैरेयम् पुं.— क्ली. [ मारं कामं जनयतीति । मार+ढक् । निपातनात् साधुः । मिरायां देशभेदे ओषधिविशेषे वा भवम् । नद्यादित्वाद् ढक् इति वा ] मद्यविशेषः; 'तीक्ष्णः कपायो मदकृद् दुर्नामकफगुल्महृत् । कृमिमेदोऽ-निलहरो मैरेयो मधुरो गुरुः'—इति सुश्रुतः । 'मद्यं तु सीधुर्मैरेयमिरा च मदिरा सुरा । कादम्बरी वारुणी च हालापि बलवल्लभा'—इति भावप्रकाशः । 'सीवुरिक्षु-रसैः पक्वैरपक्वैरासवो भवेत् । मैरेयं घातकीपुष्पगुड-घानाम्लसंहितम्'—इति माधवः । ३३०

मोक्षः पुं. [ मोक्ष् असने+भावे घञ् । मोक्षयते दुःखमनेन । मोक्ष्+करणे घञ् ] मुक्तिः; 'न मोक्षो नभसः पृष्ठे न पाताले न भूतले । सर्वाशांसंशये चेतःक्षयो मोक्ष इति श्रुतेः'—इति सांख्यसारे (२।७।२५) । पाटलिपुत्रः (८।१२); मोचनम्; 'ताम्यो मोक्षस्तव यदि सखे ! धर्मलब्धस्य न स्यात्, श्रीडालोलाः श्रवणपर्वर्गजित्त-र्भोष्येस्ताः'—इति मेघदूते (६१) । मृत्युः; विश्लेषः; 'जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये । ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम्'—इति भगवद्गीतायाम् (७।१९) । 'मोक्षाय विश्लेषणार्थम्'— इति तट्टीकाया-मानन्दगिरिः । आत्मस्वरूपदर्शनं; निरसनं; पतनम्; 'मदोद्धताः प्रत्यनिलं विचेरुर्वनस्पलीमर्मरपत्रमोक्षाः'—इति कुमारसम्भवे (३।३१) । 'मर्मरपत्रमोक्षाः जीर्णपर्णपाताः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । १२४

मोघम् त्रि. [ मुह्यतेऽस्मिन्निति । मुह्+घञ् । न्यङ्क्वा-दित्वात् कुत्वम् ] निरर्थकं; मुघा; विफलम्; 'यदन्य-नोष् वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम् । गोमिनामेव ते वत्सा मोघं स्कन्दितमार्षभम्'—इति मनुः (९।५०) । प्रेत-भूतपिशाचाश्च रक्षांसि विविधानि च । मरणाभिमुखं नित्यं नृपसर्पन्ति मानवम् । तानि भेषजवीर्याणि प्रति-ज्जन्ति जिवांसया । तस्मान् मोघाः क्रियाः सर्वा भवन्त्येव

गतायुषः'—इति सुश्रुतः । हीनम्; 'सज्जन एव हि विद्या शोभायै भवति दुर्जने मोघा'—इति आर्यासप्त-शत्याम् (६७०) । पुं. [ मुह्यत्यस्मिन् । मुह्+घञ् । कुत्वम् ] प्राचीरम् । ७६०

मोचा स्त्री. [ मुञ्चति त्वचमिति । मुच्+अच्+टाप् ] कदलीवृक्षः; 'कदली वारणा मोचाम्बुक्षारांशुमतीफला'—इति भावप्रकाशः । शाल्मलिवृक्षः; 'शाल्मलिस्तु भवेन्मोचा पिच्छिला पूरणीति च । रक्तपुष्पा स्थिरा-युश्च कण्टकाढ्या च तूलीनी'—इति भावप्रकाशः । नीलीवृक्षः । १९२

मोटकी स्त्री. [ मोटक+डीप् ] रागिणीविशेषः । १०६ अ

मोहः पुं. [ मोहनमिति । मुह्+भावे घञ् ] अविद्या; मोहयं; मूर्च्छा; 'संज्ञावहासु नाडीसु पिहित्वास्वनिला-दिभिः । तमोऽभ्युपैति सहसा सुखदुःखन्यपोहकृत् । सुखदुःखव्यपोहान्च नरः पतति काष्ठवत् । मोहो मूर्च्छति तां प्राहुः पड्विधा सा प्रकीर्तिता'—इति सुश्रुतः । दुःखं; देहादिषु आत्मबुद्धिः; 'बुद्धेर्मोहः समभवदहङ्कारादभून्मदः । प्रमोदश्चाभवत् कण्ठान्मृत्युर्लोचनतो नृप !'—इति मात्स्ये २ अध्यायः । 'मम माता मम पिता ममेयं गृहिणी गृहम् । एतदन्यं ममत्वं यत् स मोह इति कीर्तितः'—इति पाद्ये । धर्मविमू-ढत्वम्; 'अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन नश्यति । कामतस्तु कृतं मोहात् प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः'—इति प्रायश्चित्तविवेकः । ८३९

मोहनम् क्ली. [ मुह्यतेऽनेनेति । मुह्+ल्युट् ] सुरतं; मैयुनम्; 'प्रविश्य गर्भमल्पेको भुक्त्वा मोहयतेऽपराम् । जायन्ते मोहनात् तस्याः सर्पमण्डूककच्छपाः'—इति मार्कण्डेये (५१।७७) । नगरभेदः; 'मोहनं पत्तनं चैव त्रिपुरां कोशलां तथा । एतान् सर्वान् विनिर्जित्य करमादाय सर्वंशः'—इति महाभारते (२।२५३।९) । पुं. [ मोहयतीति । मुह्+णिच्+ल्यु ] घुस्तूरवृक्षः; कामदेवस्य पञ्चबाणान्तर्गतवाणविशेषः; 'काम-स्यैव जगज्जैत्रमोहनास्त्राधिदैवतम् । तद्रूपहृतचित्ताभूत् समाविस्येव तत्क्षणम्'—इति कथासरित्सागरे (७।१।१३२) । नृपविशेषः; 'वीक्ष्य प्रलम्बं निहतं मोहनो नाम भूपतिः । सन्निपत्याट्टहासं तं ताडयामास सायकैः'—इति कथासरित्सागरे (४७।६१) । मोहकारके त्रि. ।

'यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः । निद्रालस्य-  
प्रमादोत्थं तत्तामसमूदाहृतम्'—इति भगवद्गीता-  
याम् (१८।३९) । 'अत्र मोहनं मोहकरम्'—इति  
तट्टीकायामानन्दगिरिः । ५६९

**मौक्तिकः** पुं । [ मुकुलं मृतस्य देहं पेश्यण्डादिकं वा अहंति ।  
'अत इब् ' मुकुं मुक्तिं लातीति मुकुलः बलिपिण्डः,  
तदति वा ] काकः; मौद्गलिः; 'कूजत्कुञ्जकुटीर-  
कौशिकघटात्घृकारवत्कौचक, स्तम्बाडम्बरमूकमीकु-  
लिकुलः कौञ्चावतोऽपि गिरिः । एतस्मिन् प्रचलाकिनां  
प्रचलतामुद्भेजिताः कूजितं, रुद्धेल्लन्ति पुराणचन्दनतरु-  
स्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के ।  
२४६

**मौक्तिकम्** क्ली । [ मुक्तैव, मुक्ता+ 'विनयादिभ्यष्ठक्'  
इति ठक् ] मुक्ता; शौक्तिकेयः; 'मौक्तिकं शौक्तिकं  
मुक्ता तथा मुक्ताफलं च तत् । अभावे मौक्तिकस्यापि  
मुक्ताशुक्ति प्रयोजयेत्'—इति भावप्रकाशः; 'शैले  
शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे । साधवो नहि  
सर्वत्र चन्दनं न वने वने'—इति चाणक्यः । ६६४

**मौढ्यम्** क्ली । [ मूढस्य भावः कर्म वा । मूढ+ 'गुणवचन-  
ब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' इति ष्यब् ] मोहः; 'यो मां  
'सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम् । हित्वाचां भजते  
मौढ्याद्भस्मन्येव जुहोति सः'—इति भागवते (३।२९।  
२२) । पुं. मूढस्यापत्यम्; [ मूढ+ 'कुर्वादिभ्यो ष्यः'  
इति ष्य ] मूढपुत्रः । ८३९

**मौद्गीनम्** क्ली । [ मुद्गानां भवनं क्षेत्रमिति । मुद्ग+  
'धान्यानां भवने क्षेत्रे खब्' इति खब् ] मुद्गभवोचित-  
क्षेत्रम् । १६२

**मौनम्** क्ली । [ मुनेर्भावेः इति । मुनि+अण् ] शब्द-  
प्रयोगरहित्यम्; अभाषणं; तूष्णीं; तूष्णीकाम्; 'ज्ञाने  
मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः । गुणा गुणान्-  
बन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव'—इति रघुवंशे (१।२२) ।  
'उच्चारे मैयुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने । स्नाने भोजन-  
काले च षट्सु मौनं समाचरेत्'—इति तिथ्या-  
दितचवम् । ८८३

**मौर्वी** स्त्री । [ मूर्वाया विकारः । मूर्वा+ 'अवयवे च  
प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः' इति व्यण्+ङीप् ] धनुर्गुणः; ज्या,  
'शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिमौर्वी धनुषि चातता'—इति

रघौ (१।१९) । अजशृङ्गी; मूर्वामयी; 'मौर्वी त्रिवृत्समा  
श्लक्ष्णाकार्या विप्रस्य भेखला । क्षत्रियस्य तु मौर्वी ज्या  
वैश्यस्य शणतान्तवी'—इति मनुः (२।४२) । ४६४

**मौलिः** पुं.-स्त्री । [ मूलस्यादूरे भवः । मूल+सुतङ्गमादि-  
त्वाद् इब् ] मस्तकम्; 'भालनयनेऽग्निरिन्दुमौलौ  
गात्रे भुजङ्गमणिदीपाः'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(४२४) । चूडा; 'एवमुक्त्वा स वामेन पदा मौलि-  
मुपास्पृशत् । शिरश्च राजसिंहस्य पादेन समलोडयत्'—  
इति महाभारते (९।५९।५) । किरीटम्; 'इयं च सा  
मया मौलिरुद्धता वरुणलयात्'—इति हरिवंशे (९७।  
३०) । संयतकेशः; 'स चापकोटीनिहितकवाहुः शिरश्च-  
निष्कर्षणभिन्नमौलिः । ललाटवद्धश्रमवारिविन्दुमीर्तां  
प्रियामेत्य वचो वभाषे'—इति रघौ (७।६६) ।  
प्रधानः; 'मौलयस्ते महाकायाः शाकपीतकरम्भकाः'—  
इति मार्कण्डेये (५९।१४) । ५१८

**मौहूर्तिकः** पुं । [ मुहूर्तं तद्वोधकं शास्त्रमधीते वेद वा ।  
मुहूर्तं+ 'ऋतृक्यादिसूत्रान्ताद् ठक्' इति ठक् ] ज्योति-  
र्वेत्ता; सांघत्सरः; ज्योतिषिकः; ज्यौतिषिकः;  
ज्ञानी, ज्योतिषी, देवज्ञः; 'ततो मौहूर्तिका-  
देशादन्येद्युर्वरकन्यका । सा मया परिणीताभूमिलिता-  
खिलवन्धुना'—इति कथासरितसागरे (२२।१३३) ।  
दक्षकन्यामुहूर्तोद्भवदेवगणविशेषः; 'मौहूर्तिका देवगणा  
'मुहूर्तायाश्च जज्ञिरे'—इति भागवते (६।६।९) ।  
मुहूर्तोद्भवे त्रि । 'मौहूर्तिकाद्यस्य समागमाच्च मे  
दुस्तकंमूलोऽपहतोऽविवेकः'—इति भागवते (५।१३।  
२२) । ४३०

**म्लानम्** त्रि । [ म्लै हर्षक्षये+ 'संयोगादेरातोघातोऽयन्तः' ।  
इति निष्ठातस्य न ] मलिनं; कच्चरं; कश्मलं;  
मलीमसम्; 'मलिनं कच्चरं म्लानं कश्मलं च मली-  
मसम्'—इति हेमचन्द्रः । 'स चिन्तयामास तदा किं  
न्वेया गजगामिनी । निश्वासपवनम्लाना गिरावत्र  
वरूयिनी'—इति मार्कण्डेये (६२।१६) । दुर्बलम्;  
'अन्तेषु शूनं परिहीणमध्यं म्लानन्तथान्तेषु च मध्य-  
शूनम्'—इति माधवः । [ म्लै+भावे क्त ] ग्लानिः;  
'रथ्यावसर्पणस्नानक्षत्पानम्लानकर्मसु । आचामेच्च यथा-  
न्यायं वासो विपरिषाय च'—इति मार्कण्डेये (३।५।  
२४) । ७२७

मिलष्टम् क्ली. [ म्लेच्छ+क्त+ 'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्न-  
मिष्टविरिन्धेत्यादिना' निपातितम् ] अविस्पष्टं;  
अस्पष्टवाक्यं; त्रि. अव्यक्तवाक्; म्लानः। १४१  
म्लेच्छः पुं. [ म्लेच्छयति वा म्लेच्छति असंस्कृतं वदतीति ।  
म्लेच्छ+अच् ] किरातशबरपुलिन्दादिजातिः; पामर-  
भेदः; पापरक्तः; अपभाषणम्। ५९९

## य

यकृत् क्ली. [ यज्+ 'शकेऋतिन्' इत्ययं 'बाहूलकाद्  
यजोः कश्च' इति ऋतन् जस्य च कः ] कुक्षेर्दक्षिण-  
भागस्थमांसखण्डं; कालखण्डं; कालखण्डं; कालेयं;  
कालकं; करण्डा; महास्नायुः; 'यस्मिं मतस्नाम्यां  
यक्तः प्लाशिम्यो विवृहामि ते'—इति ऋग्वेदे (१०-  
१६३।३)। 'यवनः हृदयसमीपे वर्तमानः कालमांस-  
विशेषो यकृत् तस्माद्'—इति तद्भाष्ये सायणः। रोग-  
विशेषः; 'प्लीहोद्दिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृत्यपि समाचरेत् ।  
कार्यं च दक्षिणे वाही तत्र शोणितमोक्षणम् । क्षारं च  
विडङ्गुष्णाम्यां पृथिकस्याम्बुनिखुंतम् । पिबेत् प्रातर्यथा-  
वह्नि यकृत्प्लीहप्रशान्तये'—इति भावप्रकाशः। ६६५  
यक्षः पुं. [ यक्षयते पूज्यते इति । यक्ष्+घञ् । यद्वा ई  
लक्ष्मीमक्षणोतीति । यक्ष्+अण् ] गुह्यकामात्रं; गुह्य-  
केशवरः; धनरक्षकः; 'आजगम्यक्षनिकराः कुबेरवर-  
किङ्कराः। शैलजप्रस्तरकरा अञ्जनाकारमूर्तयः । विकृता-  
कारवदनाः पिङ्गालाक्षा महोदराः । स्फटिका  
रक्तवेशाश्च दीर्घस्कन्धाश्च केचन'—इति ब्रह्मवैवर्ते ।  
इन्द्रग्रहम् । ७९, ८७।

यजमानः पुं. [ यजतीति, यज्+शानच् ] अध्वरे आदेष्टा;  
व्रती; यष्टा; यजिः; दीक्षितः; 'नाहं तथापि यजमान-  
हविर्विताने श्नोतद्धृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन'—इति  
भागवते (३।१६।८)। ४२०

यज्ञः पुं. [ इज्यते हविर्दीयतेऽत्र । इज्यन्ते देवता अत्र वा ।  
यज्+ 'यजयाचयत्विच्छप्रच्छरक्षो नङ्' इति नङ् ]  
यागः; सवः; अध्वरः; सप्ततन्तुः; मखः; ऋतुः;  
इष्टिः; इष्टं; वितानं; मन्तुः; आहवः; सवनं; हवः;  
अभिषवः; होमः; हवनं; महः; 'अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः  
पितृयज्ञस्तु तर्पणम् । होमो देवो बलिर्भौ तो नृयज्ञोऽतिथि-  
पूजनम्'—इति गारुडे। ४१४

यज्ञास्तः पुं. [ यज्ञस्य अन्तोऽवसानं यस्मिन् ] अवभृथः;  
यागान्तस्नानम्; विष्णुः; 'यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यमक्षमन्नाद  
एव च'—इति महाभारते (१३।१४९।११८)। ४१७

यज्वा [ न् ] पुं. [ यज्+ 'सुयजोऽर्चनिप्' इति ङ्वनिप् ]  
विधिना इष्टवान्; वेदविधानेन कृतयागः; 'राजा स  
यज्वा विबुधन्नजत्रा कृत्वाध्वराज्योपमयैव राज्यम् ।  
भुङ्क्ते भ्रितश्रोत्रियसात्कृतश्रीः पूर्वं त्वहो शेषमशेष-  
मन्त्यम्'—इति नैषधचरिते (३।२४)। ४२०

यत्तम् [ यमनं नियमनमिति । यम्+भावे क्त ] गजस्य  
चालनार्थपादकर्मभेदः; हस्तिपकेन स्वपादसङ्केत-  
द्वारा गजचालनम्। २२२

यतिः पुं. [ यतते चेष्टते मोक्षार्थमिति । यत्+ 'सर्वधातुभ्य  
इन्' इति इन् ] निजितेन्द्रियग्रामः; यती; भिक्षुः;  
संन्यासिकः; कर्मन्दी; रक्तवंसनः; परित्राजकः; तापसः;  
पाराशरी; परिकाङ्क्षी; मस्करी; पारिरक्षकः; 'अष्टौ  
मासान् विहारस्य यतीनां संयतातानाम् । एकत्र चतुरो  
मासानब्दं वा निवसेत् पुनः । अविमुक्ते प्रविष्टानां  
विहारस्तु न विद्यते । यतिभिर्मोक्षकामैश्च अविमुक्तं  
निषेच्यते'—इति मात्स्ये । निकारः; विरतिः; ब्रह्मणः  
पुत्रविशेषः; 'सनकाद्या नारदश्च ऋमुहंसोऽश्णिर्यतिः ।  
नेते गृहान् ब्रह्मसुता ह्यावसन्नद्वैरेतसः'—इति श्रीमद्-  
भागवते (४।८।१) । नहुवपुत्रः; 'यति ययाति संयाति  
मायातिमयाति ध्रुवम् । नहुषो जनयाभास षट् सुतान्  
प्रियावाससि'—इति महाभारते (१।७५।३०) । विस्वा-  
मित्रपुत्रः; 'आराणिर्नाचिकं चैव चाम्पेयोज्जयनी तथा ।  
नवतन्तुर्वकनखः समनो यतिरेव च'—इति महाभारते  
(१३।४।५७) । त्रि. कर्मसूपरतोऽयष्टा; 'येनायतिभ्यो  
भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविष्य'—इति ऋग्वेदे  
(८।३।९) । 'येन सुवीपेण यतिभ्यः कर्मसूपरतेभ्योऽ-  
यष्टभ्यो जनेभ्यः सकाशात् धनमाहृत्य भृगवे महर्षये  
प्रयच्छसि'—इति तद्भाष्ये सायणः। स्त्री. [ यम्यते रस-  
नात्रेति । यम्+ 'स्त्रियां क्तिन्' इति क्तिन्, 'अनुदात्तो-  
पदेशवनतितनोत्यादीनामिति' मकारलोपः ] पाठ-  
विच्छेदः; जि ह्येष्टविश्रामस्थानम्; 'यतिर्जि ह्येष्टविश्राम-  
स्थानं कविभिरुच्यते । सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या  
निजेच्छया । क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्व-



कृतिभिः, पदान्ते सा शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च ।  
पुनस्तत्रैवासी स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां, यथा कृष्णः  
पुष्पात्वतुलमहिमा मां करुणया । श्वेतमाण्डवव्य मुख्यास्तु  
नेच्छन्ति मुनयो यतिम् । इत्याह भट्टः स्वग्रन्थे गुह्यं  
पुरुषोत्तमः—इति छन्दोमञ्जरी (१११६-१८) ।  
[ यम्यते इति । यम्+क्तिन् । यतते चेष्टते व्रतादि-  
रक्षार्थं वा । यत्+‘सर्वघातुम्य इन्’ इति इन् ] विधवा;  
रागः; सन्धिः; वाद्याङ्गप्रबन्धविशेषः; ‘यतिरोढाप्य-  
वच्छेदो गजरो रूपकं ध्रुवम् । गणपः सारिगोणी च  
नादश्च कथितं तथा । प्रहरणं वृन्दनं च प्रबन्वा द्वादश  
स्मृताः । यथा दं यातः इत्येकताल्यां यतिः ।’ इति  
सङ्गीतदामोदरः । सा त्रिविधा, यथा—‘चतुर्विधं पदं  
तालं त्रिप्रकारं लयत्रयम् । यतित्रयं तथा तोद्यं मया  
दत्तं चतुर्विधम्’—इति मार्कण्डेयपुराणे (२३।५३) ।  
३४४, ३९४

यथाकामी [ न् ] त्रि. [ यथा कामयते इति । यथा+  
कामि+णिनि । यद्वा काममनतिक्रम्य प्रवृत्तिरस्यास्तीति ।  
यथाकाम+‘अत इनिठनाविति’ इनि ] स्वेच्छाचारी;  
स्वर्षचिः; स्वच्छन्दः; स्वैरी; अपावृतः; स्वतन्त्रः;  
निरवग्रहः; निर्यन्त्रणः; ‘यथाकामी भवेद्वापि स्त्रीणां  
वरमनुस्मरन् । स्वदारनिरतश्चैव स्त्रियो रक्षया यतः  
स्मृताः’—इति याज्ञवल्क्यसंहितायाम् (१।८१) । ३७९  
यथातयम् अव्य. [ तथानतिक्रम्य वर्तते इति । अनति-  
वृत्ती अव्ययीभावाः, ‘अव्ययीभावश्च’ इति नपुंसकत्वम्,  
‘ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य’ इति ह्रस्वः । ‘नाव्ययी-  
भावादतोऽस्वपञ्चम्याः’ इति प्रथमाविभक्तेरमादेशः ]  
यथार्थम्; ‘येन स्वधाम्नी भावा रजसत्त्वतमोमयाः ।  
गुणनामक्रिगारूपैविभाव्यन्ते यथातयम्’—इति श्रीमद्-  
भागवते (६।१।४१) । १४४

यथार्थवर्णः पुं. [ यथार्थं यथावृत्तं वर्णयति । यथार्थं+  
वर्ण्+अच् ] चरः; सन्देशहरः; दूतः । ४२५  
यथाहवर्णः पुं. [ यथाहं यथायोग्यं वर्णयति । यथाहं+  
वर्ण्+अच् ] चरः । यथायोग्यमक्षरं जातिश्च । ५२४  
यथाविधि अव्य. [ विधिम् अनतिक्रम्य वर्तते इति ] विध्यनु-  
सारं; सविधि । ३९८

यथोदगतः त्रि. [ उदगतम् उत्पत्तिम् अनतिक्रम्य वर्तते इति  
यथोदगतम्, तदस्यास्तीत्यच् ] मूढः; मूर्खः । ३३६

यथुच्छा त्रि. [ ऋच्छन्म् ऋच्छा, ऋच्छ्+‘गुरोश्च हलः’  
इत्य । या चासौ ऋच्छा, विशेषणसमासः ] स्वातन्त्र्यं;  
स्वैरिता; स्वरिता; स्वतन्त्रता; स्वाधीनता; ‘यदृच्छया  
चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् । सुखिनः सत्रियाः पार्थ !  
लभन्ते युद्धमीदृशम्’—इति गीतायाम् (२।३२) । ७७४  
यथुच्छिष्यः पुं. [ यत् किमप्यनिश्चितं भविष्यम् आयति-  
रस्य ] देवपरः; भाग्यवादी । ३७७  
यद्भवः पुं. [ यत् किंचिदप्यसम्बद्धं वदति । यद्+वद्+  
अच्, बाहुलकात्त्वच् वा ] अनुत्तरः; उत्तरदानाशक्तः ।  
३७७

यन्त्रमुक्तम् क्ली. [ मुच्यते इति मुक्तम्, वर्तमाने क्त ।  
यन्त्रेण मुक्तम् ] अस्त्रभेदः; यन्त्रक्षेप्यशारादिः । ४६२  
यमः पुं. [ यमयति नियमयति जीवानां फलाफलमिति ।  
यम्+अच् ] दक्षिणदिकपालः; धर्मराजः; पितृपतिः;  
समवर्ती; परेतराट्; कृतान्तः; यमुनाभ्राता; शमनः;  
यमराट्; कालः; दण्डधरः; श्राद्धदेवः; वैवश्वतः;  
अन्तकः; धर्मः; धर्मराट्; जीवितेशः; महिषध्वजः;  
औडम्बरः; दण्डधारः; कीनाशः; दहनः; महिषवाहनः;  
शीर्णपादः; भीमशासनः; कङ्कः; हरिः; कर्मकरः ।  
‘यां काञ्चित् सरितं प्राप्य कृष्णपक्षे चतुर्दशीम् ।  
यमुनायां विशेषेण नियतस्तर्पयेद्यमान् । यमाय धर्म-  
राजाय मृत्यवे चान्तकाय च । वैवश्वताय कालाय-  
सर्वभूतक्षयाय च । औडम्बराय दध्नाय नीलाय  
परजेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै  
नमः । एकैकस्य तिलैर्मिश्रास्त्रीस्त्रीन् दद्यात् जला-  
ञ्जलीन् । संवत्सरकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति’—  
इति तिर्य्यादित्तत्वे । (७००) त्रि. यमलः; युग्मः; शरीर-  
साधनापेक्षनित्यकर्म; उपायान्तरनिरपेक्षं शरीरमात्र-  
साध्यं नित्यं यावज्जीवमवश्यकं यत्कर्म सत्यास्तेयादि  
तद्यमः । ‘अहिंसा सत्यवचनं ब्रह्मचर्यमकल्कता । अस्तेय-  
मिति पञ्चैते यमाश्चैव व्रतानि च’—इति मनुः ।  
अष्टाङ्गयोगान्तर्गताङ्गविशेषः; ‘ब्रह्मचर्यं दया क्षान्तिर्ध्यानं  
सत्यमकल्कता । अहिंसास्तेयमाधुर्यं दमश्चैते यमाः  
स्मृताः’—इति गारुडे १०९ अध्यायः । ‘अहिंसा सत्य-  
मस्तेयं ब्रह्मचर्यापिप्पिहौ । यमाः पञ्चाथ नियमाः  
शौचं द्विविधमोरितम्’—इति गारुडे २३० अध्यायः ।  
‘अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापिप्पिहा यमाः’—इति पातञ्जले

साधनपादे (३०) । [ यच्छति नियच्छति इन्द्रियप्राप्त-  
मनेनेति । यम्+घञ् ] संयमः; 'वियामो वियमो यामो'  
यमः संयामसंयमौ—इत्यमरः । काकः; शनिः; विष्णुः,  
यथा महाभारते (१३।१४।३०) । 'अतीन्द्रः संग्रहः  
सर्गो घृतात्मा नियमो यमः ।' 'अन्तर्यच्छतीति यमः'  
—इति तद्भाष्ये शाङ्कराचार्यः । त्रि. [ यच्छति एकत्र  
गर्भाशये निरतो भवतीति, यम्+अच् ] यमजः;  
'बहिर्वर्णेषु चारित्र्याद्यमयोः पूर्वजन्मतः । तस्य जातस्य  
यमयोः पश्यन्ति प्रथमं मुखम् । सन्तानः पितरश्चैव  
तस्मिन् ज्येष्ठं प्रतिष्ठितम् ।' ७२, १००.

यमलम् क्ली. [ यमं मिलितं लातीति, यम+ला+क ]  
युग्मं; त्रि. यमजः; यमः; एककालीनैकगर्भजात-  
सन्तानद्वयम्; 'सुमित्रातनयो जाता यमलौ द्वौ मनोहरौ ।  
ते जाता वै किशोराश्च धनुर्वाणधराः किल'—इति  
देवीभागवते (३।२।५) । ७००

यमुना स्त्री. [ यमयतीति । यमि+ 'अजियमिशीङ्भ्यश्च'  
इति उनन्+टाप् । यच्छति उपरमति गङ्गायामिति वा ]  
नदीविशेषः; कालिन्दी; सूर्यतनया; शमनस्वसा;  
तपनतनूजा; कलिन्दकन्या; यमस्वसा; श्यामा; तापी;  
कलिन्दनन्दिनी; यमनी; यमी; कलिन्दशैलजा; सूर्य-  
सुता । 'सर्वाणिर्मेषुषे तु तपो धोरं चकार ह । अद्यापि  
भविता लोके मनुः सावर्णिकेऽन्तरे । भ्राता शनैश्चर-  
श्चास्य ग्रहणं स तु लब्धवान् । तयोर्वीयसी या तु  
यमस्वसा यशस्विनी । अभवत् सा सरिच्छेष्ठा यमुना  
लोकपावनी—इति वह्नपुराणे । दुर्गा; 'सर्वाणि  
हृदयस्थानि मङ्गलानि शुभानि च । ददाति चेप्सितान्  
लोके तेन सा सर्वमङ्गला । सङ्गमाद् गमनाद्गङ्गा लोके  
देवी विभाव्यते । यमस्य भगिनी जाता यमुना तेन सा  
मता—इति देवीपुराणे । ६७४

यमः पुं. [ यूयते अम्भसा इति । यु मिश्रणे+अप् ] शूकधान्य-  
विशेषः; सितशूकः; शितशूकः; मेघ्यः; दिव्यः;  
अक्षतः; कञ्चुकी; धान्यराजः; तीक्ष्णशूकः; तुरग-  
प्रियः; सक्तुः; महेष्टः; पवित्रधान्यं; युवकः । 'यवः  
कपायमधुरो बहुवातशकृद्गुहः । रूक्षः स्यैर्करः शीतो  
मूत्रमेदकफापहः—इति राजवल्लभः । परिमाण-  
विशेषः; स तु चतुर्धान्यमानरूपः; षट्सर्षपपरिमा-  
णात्मकः; 'जालान्तरगते भानौ यच्चानु दृश्यते रजः ।

तैश्चतुर्भिर्भद्रेल्लिक्षा लिक्षापङ्क्तिश्च सर्षपः । षट्-  
सर्षपैर्वयस्स्वेको गुञ्जैका तु यवैस्त्रिभिः—इति शब्द-  
चन्द्रिका । अङ्गुलिस्थयवाकाररेखाविशेषः; 'तर्जनीमूल-  
सम्पृक्तौ यवी पुत्रार्थदौ क्रमात् । मध्यमायां यदि यवो  
दृश्यते च सुशोभनः । तदान्यसञ्चितं द्रव्यं प्राप्नोत्यङ्-  
गुष्ठके यवे । यस्यापि चक्रमङ्गुष्ठे यवपूर्णं च दृश्यते ।  
तदा पितामहादोनाम् अजितं लभते धनम्—इति  
सामुद्रिके । पूर्वपक्षः; 'एकत्रिंशतास्तु वत प्रजा असृज्यन्त  
यवाश्चायवाश्चाधिपतय आसन्—यजुःसंहितायाम्  
(१४।३१) । 'यवाः पूर्वपक्षाः अयवा अपरपक्षाः'  
इति तट्टीकायां महीधरः । ५८६

यवसम् क्ली. [ यौतीति, यु+ 'बहियुभ्यां णित्' इत्यसच् ।  
संज्ञापूर्वकत्वात् न वृद्धिः ] तृणं; घासः; 'तत्स्यादायुध-  
सम्पन्नं धनधान्येन वाहनैः । ब्राह्मणैः शिल्पिभिर्यन्त्रैर्वय-  
सेनोदकेन च—इति मनुः (७।७५) । १९१

यवागूः स्त्री. [ यूयते मिश्र्यते इति । यु+ 'स्युवचिभ्योऽ-  
न्युजागूजबुचः' इति आगूच् ] पङ्गुजलयवधनद्रव-  
द्रव्यविशेषः; उष्णिका; श्राणा; विलेपी; तरला;  
'यवागूः पङ्गुजले सिद्धा स्यात् कृशरा घना । यवागू-  
ग्राहिणी बल्या तर्पणी वातनाशिनी—इति शाङ्गधरः ।  
३२०

यव्यम् त्रि. [ यवानां भवनं क्षेत्रम् । यव+ 'यवयवक-  
षष्टिकाद् यत्' इति यत् ] यवादिभवनोचितक्षेत्रम्;  
यवक्यं; यवोचितं; यवकोचितं; [ यवेभ्यो हितम् ।  
घव+ 'खलयवमापतिलवृषव्रह्माणश्च' इति यत् ] यवहितः;  
पुं. [ वेभ्यो हितः ] मासः; 'यव्यद्वयं श्रावणादि सर्वा नद्यो  
रजस्वलाः । तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः—  
इति प्रायश्चित्ततत्त्वे गङ्गामाहात्म्यम् । स्त्री. नदीभेदः;  
'वाणंत्वा यव्याभिर्वर्द्धन्ति शूरब्रह्माणि—इति ऋग्वेदे  
'यव्याभिः नदीभिः, अवनयः यव्याः इति नदीनामसु  
पाठात्—इति तद्भाष्ये सायणः । १६३

यशः [ स् ] क्ली. [ अश्नुते व्याप्नोतीति । अश्+ 'अशो-  
द्वेने युट् च' इत्यमुन्, युट् च ] सुख्यातिः; कीर्तिः;  
समज्ञा; समाख्या; कीर्तना; अभिव्याणम्; आज्ञा;  
समज्या; 'दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं यशः—  
इति माधवी । अन्नम्; 'वयं स्याम यशसो जनेषु—इति  
ऋग्वेदे (४।५२।११) । 'यशसः कीर्तोरत्नस्य वा—इति

तद्भाष्ये सायणः । त्रि. यशस्वी; 'त्वमिन्द्र यशा अस्पृजीषी शवसस्पते'—इति ऋग्वेदे (८।७९।५) । 'त्वं यशाः यशस्विन्नसि भवसि—इति तद्भाष्ये सायणः । १५३

यष्टा [ ऋ ] पुं. [ यजते इति, यज्+तृच्, 'न्नश्चेति' षत्वम् ] यजमानः; यज्ञकर्ता । 'स दानशीलो यष्टा च यज्ञानामवनीपतिः'—इति मार्कण्डेये (१२०।२) । ४२०

यष्टिः पुं.—स्त्री. [ यजते सङ्गच्छते । यज्+ति ] शस्त्रभेदः; दण्डः; लगुडः; 'यष्टि ये तु प्रयच्छन्ति नेत्रहीने सुदुर्वले । तेषां तु विपुलः पुंसां सन्तानो मोहर्वाजितः'—इति वह्निपुराणे । तन्तुः; हारलता; हारावलिः; 'क्वचित्प्रभालेपिभिन्दिन्द्रनीलैः मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा । अन्यत्र माला सितपङ्कजानाम् इन्दीवरैरुत्खचितान्तरेण'—इति रघो (१३।५४) । 'यष्टिः हारावलिः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । भार्गी; मधुका; स्त्री-शाखा;

'चूतयष्टिरिवाम्यासे मधौ परभृतोन्मुखी'—इति कुमारे (६।२) । 'चूतयष्टिः चूतशाखा इव'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । यष्टिमधु; 'यष्ट्या ह्वं मधुकं यष्टिः क्लीतकं मधुयष्टिका । यष्टिमधु स्थले जाता जलजातिरसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । पुं. [ इज्यते इति । यज्+वाहुलकात् ति ] ध्वजदण्डः; भुजदण्डः । ७२६

यष्टिमधु क्ली. [ यष्ट्यां मधु माधुर्यमस्य ] यष्टिमधुका; क्लीतकं; यष्टीमधु; मधुकं; मधुमुष्टिका; यष्ट्या ह्वं; यष्टिः; यष्ट्या ह्वं मधुकं यष्टिः क्लीतकं मधुयष्टिका । यष्टिमधु स्थले जाता जलजातिरसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । ६१५

यागः पुं. [ इज्यते इति, यज्+घञ् ] यज्ञः; 'स्वल्पेनैव तु द्रव्येण महापुण्यं यथा भवेत् । तदहं श्रोतुमिच्छामि ग्रहयागं सुरेश्वर ! । ४१४

याचकः पुं. [ याचते इति । याच्+ण्वल् ] याच्नाकर्ता; वनीयकः; याचनकः; मार्गणः; अर्थी; वनीपकः; भिक्षुकः; भिक्षाकरः । 'तृणादपि- लघुस्तूलस्तूलादपि च याचकः । वायुना किं न नीतोऽसौ किञ्चित्प्रार्थन-शङ्कया । 'कुञ्जस्य कीटघातस्थ वाताभिष्कासितस्य च । शिखरे वसतस्तस्य वरं जन्म न याचितम् । जगत्पतिहि याचित्वा विष्णुर्वामिनतां गतः । कोऽन्योऽधिकतरस्तस्य योऽर्थी-याति न लाघवम्'—इति गारुडे नीतिसारे ११५ अध्यायः । ३५९

याचना स्त्री. [ याच्+स्वार्थे णिच्+युच्, टाप् ] याच्ना; याचनम्; अर्थना; भिक्षा; अर्दना; अभिशस्तिः; 'नयस्व मां साधु कुरुष्व याचनाम्'—इति रामायणे (२।२७।२३) । ३६०

याच्ना स्त्री. [ याचनमिति । याच्+यजयाचयतविच्छ-प्रच्छरक्षो नङ् इति नङ् ] याचनम्; अभिशस्तिः; याचना; अर्थना; भिक्षा; अर्दना; लालसा; ईमहे; यामि; मन्महे; दद्धि; शग्धि; पूर्द्धि; मिमिद्धि; मिमीहि; रिरिद्धि; रिरिहि; पीपरत्; यन्तारः; यन्वि; इषुर्धयति; मदेमहि; मनामहे; मायते । 'ज्यायान्-गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः । इमां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन याच्नामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः'—इति भागवते (२।७।१७) । ३६०

यातम् क्ली. [ या+क्त ] निपादिनामङ्कुशद्वारा गज-नियमनम्; अङ्कुशेन हस्तिचालनम्; अङ्कुशवारणम्; 'अपष्टं त्वङ्कुशस्याग्रं यातमङ्कुशवारणम् । निपादिनां पादकर्म यातं वीतं तु तद् द्वयम्'—इति हैमः । २२२

यातना स्त्री. [ यत्+णिच्+ 'प्यासश्रन्थो युच्' इति युच्+टाप् ] गाढवेदना; कारणा; तीव्रवेदना; अति-व्यथा; 'हिरण्यकशिपुः पुत्रं प्रह्लादं केशवप्रियम् । जिघासुरकरोन्नानायातना मृत्युहेतवे'—इति भागवते (७।१।४१) । नरकरुजा । ६२६

याता [ ऋ ] स्त्री. [ यततेऽन्योऽन्यभेदायेति । यत्+तृन् इति तृन् ] पतिभ्रातृपत्नी; 'स्वामी निश्वसितेऽप्य-सूयति मनोजिघ्रः सपत्नीजनः, श्वश्रूरिङ्गितदैवतं नयन-योरीहालिहो यातरः'—इति साहित्यदर्पणे (३।७८) । [ या+तृच् ] गमनकर्तारि त्रि. । 'उल्का शुभदा पुरतो दिवाकरविनिःसृता यातुः'—इति बृहत्संहितायाम् (३।३।१३) । सारथ्यादिः; 'यानस्य चैव यातुश्च यानस्वामिन एव च । दशातिवर्तनान्याहुः शेषे दण्डो विधीयते'—इति मनुः (८।२९०) । 'यातुः सारथ्यादेः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । हन्ता; 'अहेयातारं कमपश्य इन्द्र'—इति ऋग्वेदे (१।३२।१४) । ५०८

यातु क्ली.—पुं. [ सर्वेषामन्तं यातीति । या+कमिमनिज-नीति तु ] राक्षसः; 'यातु यातुप्रवीराणां प्रणम्य चरणानसी । 'न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न'—इति ऋग्वेदे

(७।२।१५) । 'यातवो राक्षसाः'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
पुं. कालः; अश्वगः; वायुः; स्त्री. यातना; 'मानो  
रक्ष आवेशीदाघृणोवसो मा यातुपतिु भावताम्'—इति  
ऋग्वेदे (८।४९।२०) । 'यातुपतिना पीडा' इति तद्भाष्ये  
सायणः । कर्मनाशकरी हिंसा; 'गहं यातुं सहसा न  
द्वयेन ऋतं शपाम्यरुषस्य वृष्णः'—इति ऋग्वेदे (५।१२।  
२) । 'यातुं कर्मणां नाशकरीं हिंसाम्'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । त्रि. [यातीति । या+ 'कर्ममनीति' तु ]  
गन्ता । [ क्रियापदं चेत् ] गच्छतु । ७३

यातुधानः पुं [ यातूनि रक्षांसि दधाति पुष्पातीति ।  
यातु+धा+ 'बहुलमन्यत्रापीति' युच् । स्वजाति-  
योपकत्वात्तथात्वम् ] राक्षसः; 'दाक्षिण्यदिष्टां कृत-  
मात्विजीनेस्तथातुधानैश्चिचिते प्रसपत्'—इति भट्टि-  
काव्ये (२।२९) । ७३

यात्यः पुं. [ यत् निकारोपस्कारयोः, णिच्, यातमितुं  
यातनामनुभवितुं योग्यः । कर्मणि यत् ] प्रेतः; त्रि.  
यतितव्यं; यतनीयम् । ६२५

यात्रा स्त्री. [ या+ 'ह्यामाश्रुभसिन्धस्त्रन्' इति वृत्+  
टाप् ] विजिगीषोः प्रयाणः; व्रज्या; अभिनिर्याणः;  
प्रस्थानं; गमनं; गमः, प्रस्थितिः; यानं; प्राणनं;  
यापनम्; 'यात्रामात्रं त्वहरहर्द्वैवातुपनयत्युत'—इति  
भागवते (१०।८९।१५) । उत्सवः; 'यात्रामुपवनं  
द्रष्टुं जगाम सखिभिः सह'—इति कथासरित्सागरे  
(१०।८७) । व्यवहारः; 'शरीरयात्रापि च ते न  
प्रसिद्धचेदकर्मणः'—इति भगवद्गीतायाम् (३।८)  
'शरीरयात्रा देहव्यवहारः'—इति तट्टीकायां नील-  
कण्ठः । उपायः । ४५२

यावः [ स् ] क्ली. [ यान्ति वेगेनेति । या+असुत्, वाहुल-  
काद् दुर्गागमश्च ] जलजन्तुः; 'अनन्तश्चास्मि नागानां  
वरुणो यादसामहम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।  
२९) । जलम् । ६५६

यादसांनायः पुं. [ यादसां जलजन्तूनां नायः पतिः ।  
पञ्चया अलुक् ] यादसां पतिः; यादःपतिः; वरुणः;  
'अश्विनी वसवस्त्वष्टा कुबेरो यादसां पतिः'—इति देवी-  
भागवते (३।९।३५) । समुद्रः । ७४

यानम् क्ली. [ यान्त्यनेनेति । या+ल्यप् ] हस्त्यश्वरथदो-  
लादिः; वाहनं; युग्मं; पत्रं; धोरणं; विमानं; चङ्कुरं;

यापनं; गतिमित्रकम्; 'शिल्पेन व्यवहारेण शूद्रापत्यैश्च  
कैवलैः । गोभिरश्वैश्च यानैश्च कृप्या राजीपसेवया ।  
अपाज्ययाजनेश्चैव नास्तिकयेन च कर्मणाम् । कुल्यान्याशु  
चिनश्यन्ति यानि हीनानि मन्त्रतः'—इति मनुः (३।६४।  
६५) । फलप्राप्तिहेतौ त्रि. । 'तनूनपात् पथ ऋतस्य  
यानान् मध्वा समञ्जन् स्वदया सुजिह्व'—इति ऋग्वेदे  
(१०।११०।२) । 'यानान् फलप्राप्तिहेतुन् पयो मार्गान्'  
इति तद्भाष्ये सायणः । [ या+भावे ल्यप् ] गतिः;  
'यानं खरोष्ट्रमार्जारकपिशार्दूलशूकरैः । यस्य प्रेतैः  
शृगालैर्वा स मृत्योर्वर्तते मुखे'—इति वाग्भटः । ४४९  
याप्यमानम् क्ली. [ याप्य् अघमं यानं वाहनम् ] शिबिका ।

४५०

यामः पुं. [ याति याच्यते वा । या+ 'अतिस्तुमुहृमृक्षि-  
क्षुभायावापद्वियक्षिनीम्यो मन्' इति मन् । यम्+घञ्  
वा ] दिवाराश्वोश्चतुर्थभागकभागः; प्रहरः; 'उत्थाय  
पश्चिमे यामे कृतशीचः समाहितः । हुताग्निर्ब्राह्मणां-  
श्चाच्यं प्रविशेत् स शुभां सभाम्'—इति मनुः  
(७।१४५) । संयमः; गमनम्; 'उपो ये ते प्र यामेषु  
युञ्जते'—इति ऋग्वेदे (१।४।४) । 'यामेषु गमनेषु'  
इति तद्भाष्ये सायणः । गमनसाधनः; 'कुवित्सदेवीः  
सनयो नवो वा यामो बभूयादुपसो वो अघ'—इति  
ऋग्वेदे (४।५।१४) । 'यामो गमनसाधनः स रथः'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । देवगणभेदः; 'यक्षस्य दक्षिणायास्तु पुत्रा  
द्वादश जज्ञिरे । यामा इति समाख्याता देवाः स्वाय-  
म्भुवेज्जतरे'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१।५।१८) । १०६

यामिनी स्त्री. [ यामाः सन्त्यस्याम् । याम+इनि+ङीप् ]  
रात्रिः; यामिका; तमी; तमा; तमिन्ना; तमस्विनी;  
विभावरौ; नक्तमुखा; शर्वरी; क्षपा; त्रियामा;  
क्षणदा; निशीथिनी; निशा; दंपा; रजनी; 'ततः  
शयनमाविश्य प्रसुप्ता मधुसूदनः । याममात्राद्धंशोपायां  
यामिन्यां प्रत्यबुध्यत'—इति महाभारते (१२।५३।१) ।  
हरिद्रा; कश्यपपत्नी; 'ताश्वर्यस्य विनता कद्रुः पतञ्जी  
यामिनीति च । पतञ्जसून पतगान् यामिनी शलभानय'-  
इति भागवते (६।६।२१) । प्रह्लादस्य द्वितीया  
तनया; 'प्रह्लादो यामिनां नाम द्वितीयां तनयां ददौ'  
इति कथासरित्सागरे (४६।२०) । १०७

याम्या त्रि. [ यमस्येयं, यमो देवतास्या इति वा । यम+

'यमान्वेति वक्तव्यम्' इति वार्तिकोक्त्या प्य+टाप् ]  
दक्षिणदिक्; 'प्रगृह्य तु महीपालो जलपूरितमञ्जलिम् ।  
दिशं याम्यामभिमुखो रुदन् वचनमब्रवीत्'—इति  
रामायणे (२।१०३।२६) । यमसम्बन्धिनि त्रि; 'कथयिष्ये  
सभां याम्यां युधिष्ठिर ! निबोध ताम् । वैवस्वतस्य  
यां पार्थ ! विश्वकर्मा चकार ह'—इति महाभारते  
(२।८।१) । क्ली.- स्त्री. भरणीनक्षत्रं; पुं. [ यामी दिग्  
निवासोऽस्य । यामी+यत् ] अगस्त्यमुनिः; चन्दनवृक्षः;  
(यमस्यायमिति, यम+प्य) यमदूतः; 'कृष्यपाणस्य  
याम्यैश्च नरकेषु च पात्यतः । पुनश्च गर्भो जन्माथ  
मरण नरकस्तथा'—इति मार्कण्डेये (११।३०) । १०१  
यायजूकः पुं. [ पुनः पुनः यजति । यज्+यञ्, 'यजजपदशां  
यङ्' इति ऊक् ] पुनः पुनर्गणिकर्ता; इज्याशीलः;  
'या गतिः सर्वभूतानां तां गतिं ते पिता गतः । राजा  
महात्मा तेजस्वी यायजूकः सतां गतिः'—इति रामायणे  
(२।७२।१५) । ४२०

यावकः पुं. [ यव एव यावः, स इवेति इवार्ये कन् । यद्वा  
याव एव । याव+ 'यावादिभ्यः कन्' इति स्वार्ये कन् ]  
अलक्तकः; 'इह सनियमयोः सुरापगायामुपसि  
सयावकसव्यपादलेखा । कथयति शिवयोः शरीरयोगं  
विषमपदा पदवी विवर्तनेषु'—इति किराते (५-३९) ।  
यावान्नं; कुल्मासः; कुल्मापः; 'यवकः स्यात्तु कुल्मापः  
कुल्मासो यावकोऽपि च । वोरवास्ये षष्टिके वा  
कुल्ये कश्मीरदेशजे । शालिघान्येषु चत्वार इति  
केचित् प्रचक्षते'—इति शब्दरत्नावली । यावान्नम्;  
'सङ्करापात्रकृत्यासु मासं शोधनमैन्दवम् । मल्लिनी  
करणीयेषु तप्तः स्याद्यवकैस्त्रयहम्'—इति मनुः  
(११।१२६) । ५५५

युक्तम् त्रि. [ युज्यते स्म इति, युज्+क्त ] न्याय्यं; तत्तु  
न्यायागतद्रव्यादिकम्; 'जन्म यस्य पुरोर्वशे युक्तरूपमिदं  
तव । पुत्रमेवं पुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि'—इति  
शाकुन्तले १ अङ्के । अपृथग्भूतं; मिलितम्; 'शिवः  
शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं, न चेदेवं  
देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि । अतस्त्वामाराध्यां  
हरिहरविरिञ्च्यादिभिरपि, प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथम-  
कृतपुण्यः प्रभवति ।' स्त्री. [ युक्त+टाप् ] वृक्षविशेषः;  
क्ली. [ युज्+क्त ] हस्तचतुष्टयम्; पुं. [ युज्यते स्म

योगेनेति, युज्+क्त ] अम्यस्तयोगी; 'योगजो द्विविधः  
प्रोक्तो युक्तयुञ्जानभेदतः । युक्तस्य सर्वदा भानं  
चिन्तासहकृतोऽपरः'—इति भाषापरिच्छेदे (६६) ।  
'ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः । युक्त  
इत्युच्यते योगी समलोप्टाश्मकाञ्चनः'—इति भगवद्-  
गीतायाम् (६।८) । रैवतमनोः पुत्रः; 'अथ पुत्रा-  
निमांस्तस्य निबोध गदतो मम । धृतिमानव्ययो युक्त-  
स्तत्त्वदर्शी निरुत्सुकः'—इति हरिवंशे (७।२८) । ७४६  
युगम् क्ली. [ युज्यते इति । युज्+घञ्, कुत्वम्, संज्ञा-  
पूर्वकत्वाद् न गुणः ] युग्मम्; 'उपनेतुमुन्नतिमेतेव  
दिवं कुचयोर्युगेन तरसा कलिताम् । रभसोत्थितामुपगतः  
सहसा परिरम्य कश्चन वधूमरुघत्'—इति माघे  
(९।७२) । कृतादिकालचतुष्टयं; सत्यत्रेताद्वापरकलि-  
रूपान्यतमम्; 'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च  
दुष्कृताम् । धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे'—  
इति भगवद्गीतायाम् (४।८) । वृद्धिनाभौषधं; हस्त-  
चतुष्कम्; 'द्वे वितस्ती तथा हस्तो ब्राह्मतीर्थादिवेष्टयन् ।  
चतुर्हस्तं धनुर्दण्डो नाडिका युगमेव च'—इति मार्कण्डेये  
(४९।३६) । पुं. [ युजेते वलीवदौ अस्मिन्निति ।  
युज्+घञ् । युजेर्घञन्तस्य निपातनादगुणत्वम् इति  
काशिका ] रथहलाद्यङ्गम्; 'नावेव नः पारयतं  
युगेव नभ्येव न उपवीव प्रधीव'—इति ऋग्वेदे  
(२।३९।४) । 'युगा इव यथा रथस्य युगे नभ्या इव'  
इति तद्भाष्ये साम्प्रणः । 'तस्यैकदा वणिज्यार्थं गच्छतो  
मथुरां पुरीम् । भारवोढा युगं कर्षन् भारेण युगभङ्गतः'  
इति कथासरित्सागरे (६०।१२) । ७००

युगकीलकः पुं. [ युगस्य कीलकः ] युगकाष्ठस्य कीलकः;  
शम्या । ५७५

युगन्धरः पुं. [ युगं धारयतीति । युग+धारि+ 'संज्ञायां  
भूतवृजिधारिसहितपिदमः' इति खच्, 'अरुद्धिपदजन्त-  
स्य मुम्' इति मुम् ] यत्र रथस्य युगकाष्ठमासज्यते तत्;  
(रथस्याश्वा यत्र वध्यन्ते तद्युगकाष्ठं, तद्युगं धरति  
युगन्धरः) कूवरः; पर्वतविशेषः । 'निपद्यो माल्यवान्  
विन्ध्यो हेमकूटो युगन्धरः'—इति शब्दरत्नावली ।  
तृणपुत्रः; स च सात्यकेः पौत्रः; 'तृणयुगन्धरः पुत्र इति  
वंशः समाप्यते'—इति हरिवंशे (१६०।३१) । ४४७  
युगलम् क्ली. [ युज्यते परस्परं सङ्गच्छते इति । युज्+

वृषादिभ्यः कलच्, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम् ] युग्मम्, 'पस्पर्श पादयुगलमाह चोत्सङ्गलालिताम् ।—इति भागवते (४।२६।२०) । ७००

युगान्तः पुं. [ युगानामन्तो यत्र । युगानामन्तो षा ] प्रलयः; 'उवर्तयन् दस्युसंधान् समेतान् प्रवर्तयन् युग-मन्यद्युगान्ते । यदा धक्ष्याम्यग्निवत्, कौरवेयास्तदा तप्ता घातराष्ट्रः सपुत्रः—इति महाभारते (५।४८।६५) । युगलोपः । ११७

युग्मम् स्त्री. [ युज्यते इति । युज्+युजिष्ठचितिजां कुश्च' इति मक् ] द्वयं; द्वन्द्वं; युगलं; युग्मम्; 'पादु-कोपानहञ्चैव युगान्यत्र सहस्रशः—इति रामायणे (२।९।१।७६) । 'कूरोऽय सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽय युग्मं विषयः समश्च । चरस्त्विद्वद्भात्मक-नामधेया मेधादयोऽमी कमशः प्रदिष्टाः—इति ज्योति-स्तत्त्वम् । द्वितीया; मेलनम्; 'युग्माग्निष्कृतभूतानि षण्मुन्योर्वसुर्द्वयोः । रुद्रेण द्वादशी युक्ता षतुर्दस्याप पूर्णिमा । प्रतिपदाप्यमावास्या तिथ्योर्द्युम' महाफलम् । एतद्वधस्तं महाधोरं हन्ति पुष्यं पुराकृतम् । द्वयविक्षिष्टे त्रि. । 'युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु । तस्माद् युग्मासु पुत्रार्थी संविशेदात्तैवे त्रियम्—इति मनुः (३।४८) । ७००

युग्मम् स्त्री. [ युगाय हितम् । युग+उगवादिभ्यो यत् इति यत् । युगमहंतीति वा, दण्डादित्वाद् यत् । यदा युज्यते इति, युज्+युग्म् च पत्रे' इति क्यबन्तो निपा-तितः ] वाहयं; यानम्; 'हिरण्यस्य सुवर्णस्य यान-युग्यस्य वाससाम् । आविष्टः कलिना धूते जीयते स्म नलस्तदा—इति महाभारते (३।५९।९) । 'यत्रापयतंते युग्यं वैगुण्यात् प्राजकस्य तु । तत्र स्वामी भवेद्दृष्टो हिंसायां द्विशतं दमन्—इति मनुः (८।२९३) । वाच्यलिङ्गेषु दृश्यते, यथा 'युगो गीः । युगोऽश्वः । युगो हस्ती—इति काशिका (३।१।१२१) । पुं. [ युगं वहतीति, युग+तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्' इति यत् प्रत्ययः ] युगवोढा । ४४९

युत् [ ष् ] स्त्री. [ योधनमिति, युष्+क्विप् ] युद्धं; त्रि. युद्धकर्ता । 'इति ब्रुवाणावन्योऽन्यं धर्मजिज्ञासया नृः ! युयुधाते महावीर्याविन्द्वन्वी युधां पती—इति भागवते (६।१२।२३) । ४५३

युद्धम् स्त्री. [ युज्यते इति । युष्+भावे क्त ] योधनम्; वागोधनं; जन्वं; प्रधनं; प्रविदारणं; मृधम्; आस्कन्दनं; संख्यं; समीकं; साम्यरायिकं; समरम्; अनीकं; रणः; कलहः; शिद्धहः; सम्प्रहारः; अभिसम्पातः; कलिः; संस्फोटः; संयुगः; अन्यामदं; समाघातः; सङ्ग्रामः; अन्त्यागमः; आह्वः; समुदायः; संयत्; समितिः; आग्निः; समित्; युत्; संरावः; आनाहः; सम्परायकः; विदारः; धारणः; संवित्; सम्परायः; तीक्ष्णम्; आम्बरीषं; बलजम्; आनतं; अभिमरः; समुदयः; 'लडाई' इति भाषा । 'धर्मलाभोऽर्थलाभश्च यशो-लाभस्तार्थेषु च । यः शूरो ब्रह्मते युद्धे विमृदन् परवाहि-नीम्—इति दार्दिपुराणे । ४५३

युयुः पुं. [ यातीति, या+यो द्वे च' इति कु, द्वित्वं च । पृथोदरादित्वादन्यात्तस्य उत्त्वम् । अश्वः; षोटकः; 'ययुरश्वोऽश्वमेधीकः ।' ४३६

युवतिः स्त्री. [ युवन्+यूनस्तिः' इति ति ] प्राप्तयौवना; युवती; तरुणी; 'शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्ति सपत्नीजनने, भर्तुर्दिप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः । भूदिष्टं भव दक्षिणा परिजनने भोगेष्वनुत्तेकिनी, यान्त्यैवं दृहिषीरुदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः—इति अग्निशागसाङ्गन्तले ४ अङ्के । स्त्रीसामान्यम्; 'प्रमदा चेति विज्ञेया युवतिश्च तथा स्मृता—इति भागुरिः । ४८९

युवती स्त्री. [ यु+शतृ+ञीप्, इति सिद्धान्तकौमुदी (४।१।७७) । ह्रदिति ङीप् ] प्राप्तयौवना; युवतिः; युनी; तरुणी; तलुनी; दिक्करी; धनिका; धनीका; मन्थमा; दृष्टरक्षा; मध्यमिका; ईश्वरी; कर्वा; बयत्सा; योग्या; 'आषोडशाद्भवेद्बाला तरुणी निशता मता । पञ्चपञ्चाशतः प्रौढा वृद्धा भवति तत्परम् ।' 'बाला तु प्रापया प्रोक्ता युवती प्राणहारिणी । प्रौढा करोति वृद्धं वृद्धा मरणमादिशेत् । निदाधशरदोर्बाला प्रौढा वर्षविसरतरोः । हेमन्ते शिशिरे योग्या न वृद्धा क्वापि शस्यते ।' स्त्रीसामान्यम्; 'प्रमदा चेति विज्ञेया युवतिश्च तथा स्मृतिः—इति भागुरिः । प्राप्तयौवना; हरिदा । ४८२

युवा [ न् ] वि. [ योतीति, यु+कनिन् युवयितक्षिराजि-धन्विद्युप्रतिदिक्' इति कनिन् ] तरुणः; 'ऊर्ध्वं प्राणा

सुत्क्रामन्ति यूनः स्यविर आयति । प्रत्युत्थानामि-  
वादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते—इति मनुः (२।१२०) ।  
श्रेष्ठः; निसर्गबलशाली । ५०३

**युवा** [ न् ] पुं. [ यौतीति, यु+कनिन् ] यौवनावस्था-  
विशिष्टः; षोडशवर्षात् त्रिंशद्वर्षपर्यन्तवयस्कः; षोडश-  
वर्षात् सप्ततिवर्षपर्यन्तः; वयस्यः; तरुणः; वयःस्यः;  
तलुनः; गर्भरूपः; वेदकः; 'आषोडशाद्भूवेदालस्तरुणस्तत  
उच्यते । वृद्धः स्यात्सप्ततेरुद्धं वर्षीयान् नवतेः परम्—  
इति भरतवृत्तस्मृतिः । 'आषोडशाद्भूवेदालः पञ्चत्रिंशद्  
युवा नरः—इति हारीतः । ५०३

**यूषम्** क्ली. [ यु मिश्रणे+ 'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथाः' इति थक्  
प्रत्ययेन निपातितम् ] सजातीयसमूहः; 'तत्र कुञ्जर-  
यूषानि मृगयूथानि चैव हि । विचरन्ति वनान्तेषु तानि  
द्रक्ष्यसि राधव !'—इति रामायणे (२।५४।४१) । ६८६

**यूषिका** स्त्री. [ यूथं पुष्पवृन्दमस्या अस्तीति । यूथ+ठन्+  
टाप् ] पाठा; अम्लानकः; गणिका; अम्बुष्ठा; मागची;  
हेमपुष्पिका; यूथी; प्रहसन्ती; शिखण्डिनी; वासन्ती;  
बालपुष्पिका; बहुगन्धा; भृङ्गानन्दा; पुष्पविशेषः;  
'पटोलशैलसुनिषण्णयूषिका । वटातिमुक्ताङ्कुरमिन्दु-  
वारजम्—इति सुश्रुतः । 'विश्रान्तः सन् व्रजवननदी-  
तोरजातानि सिञ्चन्, उद्यानानां नवजलकर्णैर्यूषिका-  
जालकानि—इति मेघदूते (१।२८) । २०५

**योषत्रम्** क्ली. [ युज्यतेऽनेनेति । युज्+ 'दाग्नीशसयुयुज-  
स्तुतुदेति' ष्टन् ] युगेन सह ईषा लाङ्गलदण्ड आचर्यते  
अनेन तत्; आवन्वः; योषत्रम्; 'स त्वं न इन्द्र धियमानो  
अर्कहंरीणां; वृषन् यो व्रमश्रेः—इति ऋग्वेदे (५।३३।  
२) । 'योषत्रं नियोजनरज्जुम् अश्रः आश्रयसि—इति  
तद्भाष्ये सायणः । मन्यनरज्जुः; 'ततो निश्चित्य मयनं  
योषत्रं कृत्वा तु वासुकिम् । मन्यानं मन्दरं कृत्वा ममन्यु-  
रमितौजसः—इति रामयणे (१।४५।१८) । ५७५

**योग्यता** स्त्री. [ योग्यस्य भावः । योग्य+तल्+टाप् ]  
क्षमता; 'तद्यान्यानप्ययोग्यानि योग्यतां यान्ति कालतः ।  
योग्यान्ययोग्यतां यान्ति कालवश्या हि योग्यता—  
इति मार्कण्डेये (१।३।१९) । शाब्दबोधकारणविशेषः;  
स तु पदार्थानां परस्परसम्बन्धे बाधाभावः । न्यायमते  
तत्पदार्थे तत्पदार्थवत्ता; 'पदार्थे तत्र तद्वत्ता योग्यता  
परिकीर्तिता—इति भाषापरिच्छेदः । २६४

**योग्या** स्त्री. [ योग्य+टाप् ] अम्यासः; 'अपरः प्रणिधान-  
योग्यया मरुतः पृथ्वशरीरगोचरान्—इति रघौ  
(८।१९) । 'अपरो रघुः प्रणिधानयोग्यया समाध्य-  
म्यासेन—इति मल्लिनाथः । अर्कयोषित्; शस्त्रा-  
म्यासः; सुरली; श्रमः; अम्यासः; 'एवमादिषु मेघावी  
योग्यार्हेषु यथाविधि । द्रव्येषु योग्यां कुर्वाणो न प्रमुह्यति  
कर्मसु । तस्मात् कौशलमन्विच्छन् शस्त्ररक्षाग्निकर्मसु ।  
यस्य यत्रेह साधर्म्यं तत्र योग्यां समाचरेत्—इति सुश्रुतः ।  
युवती; 'निदाघशरदोर्वाला प्रौढा वपविसन्तयोः । हेमन्ते  
शिशिरे योग्या न वृद्धा क्वापि शस्यते । 'योग्या युवती—  
इति राजवल्लभः । ४७०

**योग्यारथः** पुं. [ योग्यायै युद्धाम्यासाय रथः ] वैनयिकः;  
युद्धगतिशिक्षको रथः । ४४५

**योनिः** पुं. — स्त्री. [ यौति संयोजयतीति । यु+ 'बहिश्चि-  
श्रुयद्गुलाहात्वरिम्यो नित्' इति नि- ] भगं; वराङ्गम्;  
उपस्थः; स्मरमन्दिरं; रतिगृहं; जन्मवर्त्मं; अधरम्;  
अवाच्यदेशः; प्रकृतिः; अपथं; स्मरकूपकः; अप्रदेशः;  
प्रकृतिः; पुष्पी; संसारमार्गकः; संसारमार्गः; गुह्यं;  
स्मरगारं; स्मरध्वजं; रत्यङ्गं; रतिकुहरं; कलयम्;  
अधः; रतिमन्दिरं; स्मरगृहं; कन्दर्पकूपः; कन्दर्प-  
सम्बाधः; कन्दर्पसन्धिः; स्त्रीचिह्नम्; आकरः; कारणम्;  
'ऋषयो राक्षसीमाहुर्वाचमुन्मत्तदृप्तयोः । सां योनिः  
सर्ववैराणां सा हि लोकस्य निऋतिः—इति उत्तर-  
रामचरिते । जलं; कुशाद्वीपस्थनदीविशेषः; 'धृतपापा  
नदी नाम योनिश्चैव पुनः स्मृता । सीता द्वितीया  
विज्ञेया सा चैव हि निशा-स्मृता—इति मार्कण्डेये  
(१।२।७१) । तन्त्रशास्त्रविशेषः; 'सन्तुमारकं तन्त्रं  
योनितन्त्रं प्रकीर्तितम् । तन्त्रान्तरं च देवेशि ! नव-  
रत्नेश्वरं तथा—इति महासिद्धिसारस्वते । प्राणिना-  
मृत्वत्तिस्थानम्; 'जलजा नव लक्षाणि स्थावरा लक्ष-  
विंशतिः । कृमयो रदसङ्ख्याकाः पक्षिणां दशलक्षकम् ।  
त्रिशल्लक्षाणि पशवश्चतुर्लक्षाणि मानुषाः । सर्वयोनिं  
परित्यज्य ब्रह्मयोनिं ततोऽभ्यगात्—इति बृहद्विष्णु-  
पुराणम् । ५१४

**योषा** स्त्री. [ यौति मिश्रीभवतीति । यु मिश्रणे+बाहुल-  
कात् स । स्त्रियां टाप् ] नारी; योषित्; योषिता;  
'स्त्री वधूरबला नारी प्रिया रामा जनिर्जनी । योषा

योषिद्योषिता च जोषिज्जोषा च जोषिता—इति शब्द-  
रत्नावली । ४८१

योषित् स्त्री. [ योषति पुमांसं, युष्यते पुभिरिति वा ।  
युष्+‘हसुहसिह्युषिय्य इति.’ इति इति ] नारी; स्त्री;  
‘गच्छन्तीनां रमणवसति योषितां तत्र नक्तं,’ रुद्रालोके  
नरपतिपथे सूचिमेघैस्तमोभिः—इति मेघदूते (१।३९) ।  
‘तं प्रेक्ष्य भरतं श्रेष्ठं शत्रुघ्नो वाक्यमब्रवीत् ।  
अवध्याः सर्वभूतानां योषितः क्षम्यतामिति’—इति  
वह्नियपुराणे । ४८१

र

रंहः [ स् ] क्ली. [ रमते येन इति । रम्+‘रमेहुन्च’  
इति असुन् हुगागमश्च घातोः । रहि गतौ वा+‘अहि-  
रहिभ्यामसुन्’ इति । ‘अंहोरंहः’ इति घातुप्रदीपः ] वेगः;  
‘अलं महीपाल ! तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा  
स्यात् । न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति  
मास्तस्य’—इति रघुवंशे (२।३४) । महादेवः;  
‘हरिनेत्राय मुण्डाय कृशायोत्तरणाय च । भास्वराय  
सुतीर्थाय देवदेवाय रंहसे’—इति महाभारते (१४।८।  
१५) । विष्णुः; ‘नमस्कृत्य सुरेशाय तस्मै देवाय रंहसे ।  
प्रयाताः प्राग्दिशं पुण्यां विपुलं कश्यपाश्रमम्’—इति  
महाभारते हरिवंशपर्वणि (२५२।१८) । ४४३

रक्तम् क्ली. [ रज्यते अङ्गमनेनेति । रज्ज्+क्त ]  
शरीरस्थसप्तधात्वन्तर्गतधातुविशेषः; रुधिरम्; असुकु;  
लोहितम्; अस्त्रं; क्षतजं; शोणितं; पलङ्कारं;  
रोहितम्; रङ्गकम्; कीलालम्; अङ्गजं; रोधिरं;  
स्वजं; त्वजं; शोणं; लोहं; चर्मजम्; ‘यदा रसो  
यकृद्याति तत्र रज्जकपित्ततः । रागं पाकं च सम्प्राप्य  
जीवस्याधार उत्तमः । रक्तं सर्वशरीरस्थं स भवेद्  
रक्तसंशकः । स्निग्धं गुरु फलं स्वादु विदग्धं पित्त-  
वद्भवेत्’—इति चाग्भटः । कृडकुमम्; ताम्रं; ‘रक्तं  
वरिष्ठं म्लेच्छाख्यं ताम्रं शल्वमुडुम्बरम्’—इति वैद्यक-  
रत्नमालायाम् । प्राचीनामलकं; पद्मकम्; ‘रक्तं कोकनदं  
पद्ममल्पमन्यदलोहितम्’—इति रत्नमाला । सिन्दूरं;  
हिङ्गुलम्; ‘रक्तं मर्कटशीर्षं च हिङ्गुलं दरदो रसः—  
इति रत्नमाला । रक्तचन्दनभेदः; ‘पतङ्गं रज्जनं रक्तं  
पद्मङ्गं च कुचन्दनम्’—इति रत्नमाला । पुं. लोहित-

वर्णः; कुसुम्भः; हिज्जलः; बन्धूकः; ‘बन्धूको बन्धु-  
जीवश्च रक्तो माध्याह्निकोऽपि च’—इति भाव-  
प्रकाशः । ६२२

रक्तः त्रि. [ रज्ज् करणे+क्त ] लोहितः; अनुरक्तः;  
नील्यादिरञ्जितः; श्रीडारतः । ७३३

रक्तशालिः पुं. [ रक्तवर्णः शालिः ] रक्तवर्णवान्यविशेषः;  
ताम्रशालिः; शोणशालिः; लोहितः; ‘रक्तशालिर्वर-  
स्तेषु बल्यो वर्णस्त्रिदोषजित् । चक्षुष्यो मूत्रलः स्वयं:  
शुक्लस्तुडुं ज्वरापहः । विषवर्णश्वासकासदाहनुद्वह्नि-  
पुष्टिदः’—इति भावप्रकाशः । ५८०

रक्तश्यामः त्रि. [ विशेषणसमासः ] धूम्रः; धूमलः । ७३७  
रक्तहंसा स्त्री. [ रक्तां वशीभूता हंसा अत्र ] रागिणी-  
विशेषः । १०४ अ

रक्ता स्त्री. [ रक्त+टाप् ] सप्ताचिषो जिह्वामेदः;  
गुञ्जा; ‘रक्ता सा काकचिञ्चीस्यात् काकानन्ती च  
रक्तिका । काकादनी काकपीलुः सा स्मृता काकवल्लरी’—  
इति भावप्रकाशः । लासा; मञ्जिष्ठा; उष्ट्रकाण्ठी ।

६८

रक्ताक्षः पुं. [ रक्ते लोहिते अक्षिणी अस्य । ‘अक्षोऽ-  
दर्शनात्’ इति अच् ] महिषः; पारावतः; चकोरः;  
ऋरः; सारसः; अब्दविशेषः; ‘रक्ताक्षमब्दं कथितं  
तृतीयं यस्मिन् भयं दंष्ट्रकृतं गदाश्च’—इति बृहत्संहिता-  
याम् (८।५१) । रक्तवर्णंचक्षुर्धुवते त्रि. । ‘कथमिन्दीवर-  
श्यामो रक्ताक्षः प्रिघदर्शः । सुखभागी न दुःखार्हो  
शयितो भुवि राघवः’—इति रामायणे (२।८।१९)  
‘न श्रीस्त्यजति रक्ताक्षं नार्थः कनकपिङ्गलम् । न दीर्घ-  
बाहुमैश्वर्यं न सीर्यं प्रहसन्मुखम्’—इति ज्योतिः  
सागरे । २२७

रसः [ स् ] क्ली. [ रक्षत्यस्मादिति । रक्ष्+‘सर्वधातु-  
ऽभ्योसुन्’ इति असुन् ] राक्षसः; ‘दृष्ट्वा तु विकलान्  
व्यङ्गाननाथान् रोगिणस्तथा । दया न जायते यस्य  
स रस इति मे मतिः’—इत्यानये । मनुस्वाच—‘रक्षो-  
घ्नानि विषघ्नानि यानि धार्याणि भूभुजा । अगदानि  
समाचक्ष्व तानि धर्मभूतांवर !’ मत्स्य उवाच—  
‘पत्रिका रोहिणी चैव रक्तमाला महौषधी । तथा मलक-  
वन्दारं या च चित्रपटोलिका । काकोली क्षीरकाकोली  
पीलुपर्णी तथैव च । केशिनी वृश्चिकाली च महानागा



शंतावरी । तथा गरुडवेगा च स्थले कुमुदिनी तथा ।  
स्थले धोत्वलिनी या च महाभूमिलता च या । उन्मादिनी  
सोमराजो सर्वरत्नानि पार्थिव ! विशेषान्मरकतान्यग  
कीटपक्ष्यविशेषतः । जीवजाताश्च मषयः सर्वे धार्या  
विशेषतः । रक्षीघ्नाश्च यशस्वाश्च हत्यापिताल-  
नाशनाः' —इति मात्स्ये १९२ अध्यायः । ७३

**रक्षिवर्गः** पुं. [ रक्षिणां वर्गः समूहः ] राजाङ्गरक्षक-  
गणः; अनीकस्थः । ४३३

**रक्षुः** पुं. [ रमते इति । रम्+वाहुलकात् कु ] गुर्वाभ्योपः  
स तु शबलपृष्ठहरिणः । २३०

**रङ्गः** पुं. [ रञ्ज्+घञ् ] नाट्यस्थापयम्; 'इयं रङ्गप्रवेशेन  
कलानाञ्चोपशिक्षया । वञ्चनापण्डितत्वेन स्वरनेपुण्य-  
माश्रिता'—इति मृच्छकटिकप्रकरणे १ । लक्षणया नाट्य-  
स्थानस्थितो जनः; सूत्रधारः—'आर्षे! साधु गीतम् ।  
अहो रागापहृतचित्तवृत्तिरालिखित इव पिभाति सर्वतो  
रङ्गः । तदिदानीं कतमं प्रयोगमाश्रित्वैव नारायणम्'—  
इति अभिज्ञानशाकुन्तले, १ प्रस्तावनायाम् । राजमार्गः;  
'अवतार्य तदा रङ्गे तां भार्यां नृपसत्तमः'—इति  
देवीभागवते । टङ्कणः; खादिरसारः; रागः; चासो  
यथा रङ्गवशं प्रयाति तथा स तेषां वक्षमभ्युपैति'—  
इति महाभारते (५।३६।१ ) । मूल्यम्; 'रङ्गोपजीवी  
कैवर्तः कुण्डासी गरदस्तया । स्रुषीपाहिकल्पैव पर्व-  
कारी च यो द्विजः'—इति विष्णुपुराणे (२।२६।२०) ।  
[ रजति आसज्जति मल्लोऽत्र । रञ्ज्+अधिकरणे  
घञ् ] । रणभूमिः; 'वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रङ्गं  
गतः सायजः'—इति भागवते (१०।४३।१७) ।  
क्ली-पुं. [ रङ्गतीति । रङ्ग्+अञ् । रञ्जते अस्मिन् ।  
रञ्ज्+अधिकरणे घञ् वा ] धातुविशेषः; यपुः;  
त्रपुषम्; आपुषं; वङ्गं; मधुरं; हिमं; कुरूष्यं;  
पिच्वटं; पूतिगन्धं; 'रागा' इति आषा । 'श्वेतं मृदु  
लघु स्वच्छं स्निग्धमुष्णसहं हिमम् । सूत्रपथकरं कान्तं  
त्रपु श्रेष्ठमुदाहृतम् । क्षुरकं मिश्रकं चापि द्विविधं  
वङ्गमुच्यते । उत्तमं क्षुरकं तत्र मिश्रकं त्वहिलं मतम्'—  
इति राजनिर्घण्टः । ९७

**रङ्गाजीवः** पुं. [ रङ्गो हरितालकदिस्तेनाजीवतीति ।  
रङ्ग+जीव्+अण् । यद्वा रङ्ग आजीवोऽस्य ] चित्रकरः;  
नटः । ५९१

**रचना** स्त्री. [ रच्यते इति, -रच्+णिच्+'प्यासश्चन्यो  
युच्' इति युच् ] निर्मितः; कृतिः; सन्दर्भः; गुम्फः;  
सन्पनं; श्रन्यनं; ग्रन्यनं; रचनं; निर्माणम्; 'असा-  
धारणचमत्कारकारिणी रचना हि निर्मितः'—इत्य-  
लङ्कारकौस्तुभे १ किरणः । कुसुमप्रकारादेः पत्रावल्या-  
देश्य रचनं; परिस्पन्दः; परिप्यन्दः; 'भूषाणामर्द्ध-  
रचना वृथा विश्वगवेषणम् । रहस्याख्यानमीपञ्च  
विक्षेपो दयितान्तिके'—इति साहित्यदर्पणे (३।१४९) ।  
यथाक्रमेण स्थापनं; निवेशः; स्थितिः; 'मृगु व्यूहस्य  
रचनामर्जुनस्य यथागतः'—इति महाभारते (८।४६।  
१०) । उद्यमः; 'देवाहृताथंरचना क्रययोऽपिन्देव !  
युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति'—इति भागवते  
(३।१।१०) । 'देवेनाहृताः सर्वतः प्रतिहृताः अर्यानां  
रचनाः अर्यापौधमाः येषाम्'—इति तट्टीकायां श्रीधर-  
स्वामी । [ रचयतीति, रचि+त्पु+टाप् ] विश्वकर्मणो  
भार्या; 'त्वष्टुर्द्वैत्यात्मजा भार्या रचना नाम कन्यका ।  
सन्निवेशस्तयोर्जज्ञे विश्वरूपश्च वीर्यवान् ।' ७३०, ७९५ ।

**रजः** [ स् ] क्ली. [ रञ्जयते. रजतीति वा । रञ्ज्+भूर-  
ञ्जिभ्यां कित् इत्यसुन् ] रेणुः; धूलिः; 'पादाहतं यदुद्याय  
मूर्द्धनिमधिरोहति । स्वस्यादेवापमानेऽपि देहिनस्तद्वरं  
रजः'—इति माघे (२।४६) । 'आयुष्कामो न सेवेत  
तथा. सम्मार्जनीरजः । तथापवरयथात्यानां गवां चैव  
रजः क्षुभम् । अशुभं च विजानीयात् सर्रोष्ट्राजाविकेषु  
च । गवां रजो धान्यरजः पुत्रस्याङ्गमव रजः । एतद्रजो  
महाशस्तं महापातकनाशनम् । अजारजः सररजो यत्  
सम्मार्जनीरजः । एतद्रजो महापापं महाकिल्बिष-  
कारणम्'—इति गरुडे ११४ अध्यायः । रजः;  
उदकम्; 'बिपत्तिरोषसणमच्युतं रजोतिष्ठिपो दिव  
आतासु बहणा'—इति ऋग्वेदे (१।५६।५) 'रज  
उदकम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । भुवनम्; 'अमूर्ते  
सुते रजसि निपते ये भूतानि समकृष्णत्रिमानि'—इति  
ऋग्वेदे । 'रजसि लोके'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
ज्योतिः; 'बीन्द्र यासि दिव्यानि रोचना विपार्थिवानि  
रजसा पुरुषुत'—इति ऋग्वेदे (१०।३२।२) । रजसा  
आत्पीयेन ज्योतिषा विद्युलक्षणैः, यद्वा रजः शब्दाच्छस  
आकारः पार्थिवान् लोकान्—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
स्त्रीणां मासि मासि योनिनिःसृतरक्तं; पुष्यम्;

आतंयम्; ऋतुः; कुसुम; रजम्; भासि भासि रजः स्त्रीणां रसजं स्रवति अग्रहम् । वत्सराद् द्वादशाङ्घ्र्यं याति पञ्चाशतः क्षयम्—इति वाग्भटः । प्रकृतेर्गुणविशेषः; तत्तुः रागद्वेषात्मकं दुःखहेतुः । रजोऽन्तः पुल्लिङ्गोऽपि । 'रजोऽयं रजसा सार्द्धं स्त्रीपुष्पगुणधूलिषु' । दुःखजनकगुणः; तस्य धर्मः—कामः, क्रोधः, लोभः, मानः, दर्पश्च । 'काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः । महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्'—इति भगवद्गीतायाम् । परागः; 'पद्मकोशरजो दिक्षु विक्षिपत्यवनोत्सवम्'—इति भागवते (४।२।४।२२) । ५४३

रजः पुं. [ रज्ययतीति । रज् + अच् । निपातनात्रलोपः ] रेणुः; घूलिः; 'अर्याः पादरजोपमाः'—इति उज्ज्वलदत्तः (४।२।१६) । गुणभेदः; आतंयं; स्कन्दस्य सेनाविशेषः; 'दण्डवाहुः सुवाहुश्च रजः क्लोकिलकस्तया'—इति महाभारते (९।४५।७१) । विरजपुत्रः; 'त्वष्टा त्वष्टश्च विरजो रजस्तस्याप्यमृतसुतः'—इति विष्णुपुराणे (१।१०।१३) । परागः; 'पद्मपुष्परजोन्मिथो वृक्षान्तरविनिःसृतः । निश्वास इव सीताया वायुर्वाति मनोरमः'—इति रामायणे (३।७९।२९) । क्ली. रजम् [ रज्ययतीति, रज् + अच् । निपातनात् सिद्धम् ] स्त्रीकुसुमम् । ४४३, ५४३

रजकः पुं. [ रजति निर्णोजनेन श्वेतिमानमापादयति वस्त्रादीनामिति । रज् + नृतिखनिरञ्जिभ्यः परिगणनं कर्तव्यम् इति ष्वन् ] वर्णसङ्करजातिविशेषः; स च तीव्ररपल्यां भ्रौवरज्जातः; निर्णोजकः; शौच्यः; कर्मकीलकः; धावकः; रजोहरः; 'वासांसि फलकैः श्लक्ष्णैर्निणिज्याद्रजकः शनैः । अतोऽन्यथा हि कुर्वीत दण्डयः स्माद्भुवममापकम्'—इति मात्स्ये २०१ अध्यायः । 'रजके चैव शैलूषे वेणुचर्मोपजीविनि । एतेषां यस्तु भुञ्जीत द्विजश्चान्द्रायणं चरेत्'—इति प्रायश्चित्तविवेकः । अंशुकः; रजकी; रजकपत्नी । ५९३

रजतम् क्ली. [ रजति प्रियं भवति, रज्यते इति वा । रज् + पृषिरञ्जिभ्यो कित् इति अतच्, कित्कार्यं च ] रूप्यं; हारः (७९३); हस्तिदन्तः; धवलः; शोणितं; हृदः; शैलः; पर्वतप्रभेदः; स तु शाकद्वीपस्य एव । 'रत्नमालान्तरमयः शाल्मलश्चान्तरालकृत् । तस्या परेण रजतो महानस्तो गिरिः स्मृतः'—इति मात्स्ये (१२।१।१४) । स्वर्णः; शुक्लवर्णविशिष्टे त्रि. । 'सौवर्ण

राजतं ताम्रं पितृणां पात्रमुच्यते । रजतस्य कथा चापि दर्शनं दानमेव वा । राजतैर्भजिनैरेषामयवा रजतान्वितैः । वार्यपि श्रद्धया दत्तमक्षयायोपकल्प्यते । ययार्घ्यपिष्टभोज्यादी पितृणां राजतं मतम् । शिवनेत्रोद्भवत्समादृतं तत्पितृवल्लभम् । अमङ्गलं तद्यज्ञेषु देवकार्येषु वर्जितम्'—इति मात्स्ये १७ अध्यायः । १७२

रजनिः स्त्री. [ रजन्ति लोका यत्र । रज् + बाहुलकादपि ] रात्रिः; रजनी; निशा; निशीयिनी । १०७

रजनिकरः पुं. [ रजनि करोतीति । रजनि + कृ + ट ] चन्द्रः; चन्द्रमाः । ४३

रजनी स्त्री. [ रजनि + कृदिकारादिति ङीष् ] रात्रिः; 'सा व्युष्ट्या रजनीं तत्र पितृवैशमनि भाविनी । विश्रास्ता मातरं राजन् ! इदं वचनमब्रवीत्'—इति महाभारते (३।६९।२८) । हरिद्रा; 'हरिद्रा पीतिका गीरी काञ्चनी रजनी निशा । मेहुष्नी रजनी पीता वर्जनी रात्रिनामिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'अस्ताः सुराधीशदिशः पुरासीत् यदन्वरं पीतमिदं रजन्या । चन्द्रांशुचूर्णव्यतिचुम्बितेन तेनाधुना नूनमलोहितापि'—इति नैषधे (२२।४९) । जतुका; 'इत्यमृताञ्चन-रजनीसुवर्णपुष्पाग्निमन्याश्च'—इति बृहत्संहितायाम् (४।४।९) । नीलिनी; 'शाल्मलीद्वीपस्यनदीभेदः; 'अनुमती सिनीवाली सरस्वती क्रुह रजनी नन्वा राकेति'—इति भागवते (५।२०।१०) । १०७

रजनीकरः पुं. [ रजनीं करोतीति । रजनी + कृ + ट ] चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'हित्वा गृहान् सुतान् भोगान् वैदर्भी मदिरक्षणम् । अन्वधावत पाण्डपेशं ज्योत्स्नेव रजनी-करम्'—इति भागवते (४।२।८।३४) । ४३

रजनीमुखम् क्ली. [ रजन्या मुखम् ] प्रदोषः; 'ततः शशाङ्कधवले सञ्जाते रजनीमुखे । पाणिनालम्य भूपालं शय्यावेश्म विवेश सा'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।४३३) । १०९

रजस्वला स्त्री. [ रजोऽस्त्यस्याः । 'रजःकृष्णामुतीति' वलच् + टाप् ] रजोपुमता; स्त्रीधर्मिणी; अर्वा; आत्रेयी; मलिनी; पुष्पवती; ऋतुमती; उदक्या; दुरिः; पुष्पहासा; वली; पुष्पिता; अवीरा; विफली; निष्फली; म्लाना; पांशुला; 'रजस्वला तु संस्पृष्टा ब्राह्मण्या ब्राह्मणी यदि । एकरात्रं निराहारा पञ्च-

गव्येन शुष्यति । रजस्वला तु संस्पृष्टा राजन्या ब्राह्मणी तु या । त्रिरात्रेण विशुद्धिः स्यात् व्याघ्रस्य वचनं यथा । रजस्वला तु संस्पृष्टा वैश्याया ब्राह्मणी च या । पञ्चरात्रं निराहारा पञ्चगव्येन शुष्यति । रजस्वला तु संस्पृष्टा शूद्रया ब्राह्मणी यदि । षड्रात्रेण विशुद्धयेत् ब्राह्मणी कामचारतः । अकामतश्चरेदद्धं ब्राह्मणी सर्वजातिषु—इति काश्यपः । 'प्रथमे दिवसे कान्तां यो हि गच्छेद्रजस्वलाम् । ब्रह्महत्याचतुर्थांशं लभते नात्र संशयः । स पुमान्नाहि कर्माहो दैवे पित्र्ये च कर्मणि । अघमः स च सर्वेषां निन्दितश्चायशस्करः । द्वितीयदिवसे नारीं यो ब्रजेच्च रजस्वलाम् । कामतः परिपूर्णां च ब्रह्महत्यां लभेद् ध्रुवम् । आजीवनं नाधिकारी पितृविप्रसुरार्चने । अमनुष्योऽयशस्यः स्यादित्याङ्गिरसभाषितम् । तृतीयदिवसे जायां यो हि गच्छेद्रजस्वलाम् । समूहो ब्रह्महत्यां च लभते नात्र संशयः । पूर्ववत् पतितः सोऽपि न चाहः सर्वकर्मसु । असत्पुत्रा चतुर्योऽह्नि न गच्छेतां विचक्षणः—इति ब्रह्मवैवर्ते । रजोयुक्ते त्रि । ४८८

रजोहरणधारी [ न् ] पुं. [ रजसो मलस्य ह्रणं यस्मात् तत् रजोहरणं शुभ्रवस्त्रं, तद्वारयति । व्यधिकरणवहुव्रीहौ कर्मण्यण् ] श्वेतवासाः; सिताम्बरः । ३४४

रज्जुः स्त्री. [ सृज्यते रच्यते इति । सृज् + 'सृजेरसुश्च' इति उ, असुगागमश्च, धातुसकारलोपश्च । आगमसकारस्य जश्त्वम् दकारः, तस्यापि चुत्वम् जकारः । अप्राणिजातेश्चरज्वादीनामिति कथनात् न ऊङ् ] बन्वनसाधनवस्तु; शूलं; वटाटकः; घटी; गुणः; शुल्ला; शुल्वं; शुल्वः; शुल्वः; शुल्वी; सुष्मं; वटाटः; वटाकरः; घटीगुणः; 'कार्पासकीटजीर्णानां द्विशफैकशफस्य च । पक्षिगन्धोषधीनां च रज्ज्वाश्चैव अहं पयः—इति मनुः (१११६९) । वेणी; प्रत्यङ्ग-विशेषः; 'रज्जवः सेवन्यः संघाताः—इति सुश्रुते शारीरस्थाने ५ अध्याये । ५९७

रणम् क्ली. — पुं. [ रणन्ति शब्दायन्तेऽत्रेति । रण् + 'अहे' इत्यत्र 'वक्षिरण्योरुपसंख्यानम्' इति काशिकोक्त्या अप् ] युद्धम्; 'न कूटैरायुधैर्हन्त्याद्युध्यमानो रणे रिपून् । न कर्णभिर्नापि दिग्दैर्नाग्निज्वलिततेजनेः—इति मनुः (७१९०) । रमणम्; 'शाचिगो शाचि पूजनाय रणाय ते सुतः—इति ऋग्वेदे (८।१७।१२) । 'रणाय

रमणाय'—इति तद्भाष्ये सायणः । रमणीये त्रि. । 'एकस्यावन्त्यो रावतं रणाय वशमश्विनासनये सहस्रा'—इति ऋग्वेदे (१।११६।२१) 'रणाय रमणीयाय'—इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. [ रण् + अप् ] शब्दः; कर्णः; गतिः । ४५३

रणरणकः पुं. — उत्कण्ठा; औत्सुक्यम् 'अये सैवेयं रणरणकदायिनी चित्रदर्शनाद्विरहभावना देव्याः स्वप्नोद्वेगं करोति'—इति उत्तररामचरिते प्रथमाङ्के । ७४२

रतकूजितम् क्ली. [ रतस्य कूजितम् ] मैथुनकालिकध्वनिः; मणितम् । ५६९

रतापिनी स्त्री. [ रतमर्थयेते इति । रत + अर्थ + णिनि + डोप् ] मैथुनाभिलाषिणी । ४८५

रतिः स्त्री. [ रम्यतेऽनया इति । रम् + क्तिन् ] कामदेवपत्नी; 'मनो मथ्नाति सर्वेषां पञ्चवाणेन कामिनाम् । तन्नाम मन्मथस्तेन प्रवदन्ति मनीषिणः । तस्य पुंसो वामपाश्वात् कामस्य कामिनी वरा । बभूवातीव ललिता सर्वेषां मोहकारिणी । रतिर्वभूव सर्वेषां तां दृष्ट्वा सस्मितां सतीम् । रतीति तेन तन्नाम प्रवदन्ति मनीषिणः—इति ब्रह्मवैवर्ते । निधुवनम् (५६९); अनुरागः; 'नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम्—इति भागवते (१।२।८) । रतम्; 'कामिनीं प्रथमधीवनान्वितां मन्दवल्गुमुदुपीडितस्वनाम् । उत्तनीं समवलम्ब्य या रतिः सा न धातृभवेत्सि मे मतिः—इति बृहत्संहितायाम् (७।४।१८) । गुह्यम्; अप्सरोविशेषः; 'विद्युता प्रशमी दान्ता विद्योता रतिरेव च । एताश्चान्याश्च वै बह्व्यः प्रनृत्ताप्सरसः शुभाः—इति महाभारते (१३।१९।४५) । प्रीतिः; 'तेषां केतुरिव ज्येष्ठो रामो रतिकरः पितुः—इति रामायणे (१।१८।२४) । 'रतिः प्रीतिः—इति तट्टीकायां रामानुजः । ३४

रतिपतिः पुं. [ रत्याः पतिः ] कामदेवः; रतिप्रियः; रतिरमणः; 'पश्चात्पिप्लमाश्रितो रतिपतिर्देवस्य रत्योत्सले, विभ्रत्या सममैसवं धनुरिषून् पीप्लान् वहन् पञ्च च—इति महागणपतिस्तोत्रे (१०) । देशविशेषस्थस्त्रीणां स्थानविशेषे तस्याविर्भावो यथा—'वाचि श्रीर्मायुरीणां जनकजनपदस्यायिनीनां कटाक्षे, दन्ते गौडाङ्गनानां सुललितजघने चोत्कलप्रेयसीनाम् । तैलङ्गीनां नितम्बे

सजलवनशची केरलीकेशपाश, कार्णाटीनां कटौ च स्फुरति रतपतिर्गुर्जरीणां...स्तनेषु—इति साहित्य-दर्पणम् । ३२

रतिप्रियः पुं. [ रतेः प्रियः ] कामदेवः; सुरतप्रियः; स्त्री. शक्तिविशेषः; 'गोदावर्या त्रिसन्ध्या तु गङ्गाद्वारे रति-प्रिया—इति देवीभागवते (७।३०।६८) । ३२

रत्नम् क्ली. [ रमयति हर्षयतीति । रन्+णिच्+रमेस्त च' इति न, तकारश्चान्तादेशः ] अश्मजातिः; मुक्तादि; मणिः; 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्—इति कुमारे (५।४५) । स्वजातिश्रेष्ठः; 'स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विया—इति मार्कण्डेये (८५।४५) । 'जाती जाती यदुत्कृष्टं तद्रत्नमिह कथ्यते ।' माणिक्यं; वज्रम् । १७६

रत्नगर्भा स्त्री. [ रत्नानि गर्भे मध्येऽस्याः ] पृथिवी (उपचाराद् गुणवत्पुत्रवती) । १५७

रत्नप्रभा स्त्री. [ रत्नानां प्रभात्र ] रत्नसूः; रत्नसूतिः; भूमिः; जिनानां नरकविशेषः; 'रत्नशर्करावालुका-पङ्कधूमतमप्रभाः । महातमप्रभा वेत्यवोऽवो नरक-भूमयः—इति हेमचन्द्रः । १५७

रत्नसानुः पुं. [ रत्नानि सानो प्रस्ये यस्य ] सुमेरुपर्वतः । १३६

रत्नसूतिः स्त्री. [ रत्नानां सूतिः उत्पत्तिर्यत्र ] पृथिवी । १५७

रत्नाकरः पुं. [ रत्नानामाकरः उत्पत्तिस्थानम् ] समुद्रः; 'दुर्ग समाश्रित्य महोमिमन्तं रत्नाकरं वरुणस्यालयं स्म—इति महाभारते (३।१०।१२३) । रत्नोत्पत्ति-स्थानं; कविविशेषः; 'मा स्म सन्तु हि चत्वारः प्रायो रत्नाकरा इमे । इतीव स कृतो घात्रां कविरत्नाकरो-ऽपरः—इति राजशेखरः ६५२

रत्निः पुं. [ ऋच्छति प्राप्नोत्यनेनेति । ऋ+रतन्त्य-ञ्नीति कलि ] वद्धमुष्टिहस्तः; स्त्रीपुंसयोः रत्य-रत्नी; 'अष्टरत्नमहाबाहुर्व्यूढोरत्नकः सुदुर्जयः—इति महाभारते (८।७२।२७) । ५३६

रथः पुं. [ रम्यतेऽनेनात्र वा, रथ्+हिनिकुषिनीरमि-काशिम्यः क्यन्' इति क्यन् अनुनासिकलोपश्च ] चक्रविशिष्टयुद्धार्ययानं; शताङ्गः; स्यन्दनः; स्यन्दन-मात्रम्; 'हस्त्यश्वरथदोलाद्यैर्भ्रमणं वातकोपनम् । स्थिरी-

करणमङ्गानां बल्यं वह्निविवर्द्धनम्—इति राजवल्लभः । कायः; 'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव च—इति उपनिषदि । चरणः; वेतसवृक्षः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वञ्जुलरतया । अन्नपुष्पश्च विदुलो रथः शीतश्च कीर्तितः—इति भावप्रकाशः । तिनिश-वृक्षः । ४४४

रथकरः पुं. [ करोतीति । कृ+अच् । रथस्य करः ] रथकारः; वर्धकः । ५८७

रथकारः पुं. [ रथं करोतीति, कृ+अण् ] रथनिर्माणकर्ता; स तु करणीगर्भे माह्विष्याज्जातः; तक्षा; वर्द्धकः; त्वष्टा; काष्ठतट्; सूत्रधारः; वर्द्धक्यः; रथकरः; काष्ठतक्षकः । ५८७

रथगोपनम् क्ली. [ रथस्य गोपनं शस्त्रादिभ्यो रथार्थ-मावरणम् ] रथगुप्तिः; वरुणः; रथसंवृतिः । ४४९

रथाङ्गः पुं. [ रथस्य अङ्गं चक्रं यस्य नाम्नीति शेषः ] कोकः; चक्रः; रथाह्वयः; रथनामकः; चक्रवाकपक्षी; रथनामा; 'विरहतरलजिह्वा बह्वाह्वयन्त्यतिविह्वला-मिह सहचरी नामग्राहं रथाङ्गविहङ्गमाः—इति नैपथे (१९।३५) । क्ली. चक्रं; सुदर्शनचक्रं; रथावयव-मात्रम् । २४४

रथाङ्गपाणिः पुं. [ रथाङ्गं सुदर्शनचक्रं पाणी यस्य ] विष्णुः; 'स वेद घातुः पदवीं परस्य दुरन्तवीर्यस्य रथाङ्गपाणेः—इति भागवते (१।३।३८) । २२

रथी [ न् ] पुं. [ रथोऽस्यास्तीति । रथ्+इनि ] रथ-स्वामी; राजादिः; रथिकः; रथिनः; रथारोही; रथिरः; साराक्षः; स्यन्दनारोहः; 'पत्तिः पदाति रथिनं रथेशस्तु-रङ्गसादी तुरगाधिरूढम्—इति रघो (७।३७) । ३९०

रथ्या स्त्री. [ रथानां समूहः । रथ्+खलगोरयात्' इति यत् ] अभ्यन्तरमार्गः; प्रतीली; विशिक्षिता; आवर्तनी; रथसमूहः; रथकट्या; रथकड्या; [ रथाय हिता, रथ+रथाद्यत्' इति यत् । यद्वा रथं वहतीति, 'तद् वह-तीति' यत् ] पत्न्याः; 'पानागारेषु रथ्यासु सर्वतीर्थेषु चाप्यथ । चत्वरेषु च कूपेषु पर्वतेषु वनेषु च—इति महाभारते (१।१४०।६०) । चत्वरम् । २८९

रदः पुं. [ रदतीति । रद् विलेखने+पचादित्वाद् अच् ] दन्तः; 'भ्रमसि-प्रकटयसि रदं करं प्रसारयसि तूणमपि श्रयसि । षिद्धं मानं तव कुञ्जर! जीवं न जुहोषि

जठराग्नी—इति आर्यासप्तशत्याम् । बिलेखनम् । ५२७  
 रत्नः पुं. [ रत्नतेऽनेनेति । रत्+करणे ल्युट् । रदतीति,  
 रत्+ल्यु वा ] दन्तः; 'रदनैः पक्षगरिषुं करेण शिरसा  
 सदा ।' ऐरावतो गजप्रतिराजधान नक्षत्राणां—इति  
 हरिवंशे (१३०।८७) । [ रत्+भावे ल्युट् ] उत्खनने  
 क्ली. । ५२७  
 रत्नी [ न् ] पुं. [ रदनी प्रशस्तदन्तावस्य स इति । रत्+  
 इति ] रदनी; हस्ती; हन्ती । २१४  
 रत्नम् क्ली. [ रत्नयति हिनस्त्यनेनेति । रत्+वाहुलकाद्  
 रत्, नुम् ] छिद्रम्; 'नासानयनकर्णानां द्वे द्वे रन्ध्रे प्रकीर्तिते  
 मेहनापानवक्त्राणाम् एकैकं रन्ध्रमुच्यते । दशमम् मस्तके  
 प्रोक्तं रन्ध्राणीति नृणां विदुः । स्त्रीपान्त्रीष्यधिकानि  
 स्युः स्तनयोगैर्भवर्त्मनः । सूक्ष्मच्छिद्राणि चान्यानि मतानि  
 स्वचि जन्मिनाम्—इति शार्ङ्गधरे । दूषणम्; 'रन्ध्रा-  
 न्दूषणदक्षाणां द्विषामामिषतां ययौ—इति रत्नी  
 (१२।११) । योनिः; रन्ध्रागतमयाश्वानां शिखोद्भे-  
 दश्च बहिषाम् । नैत्ररोगः कोकिलस्य ज्वरः प्रोक्तो  
 महात्मना—इति महाभारते (१२।२८२।५३) । ६२४  
 रत्नः पुं. [ रत्ने रमयतीति वा । रत्+णिच् वा, ल्यु ]  
 पतिः; 'वचनीयमिदं व्यवस्थितं रमण ! त्वामनुयामि  
 यद्यपि—इति कुमाररे (४।२१) । [ रमयति स्त्री-  
 पुरुषाणामन्तःकरणमिति । रत्+णिच्+ल्यु ] कामदेवः;  
 गर्दभः; वृषणः; महारिष्टः; धरदसुपुत्राणामन्यतमः;  
 'कल्याणिन्यां ततः प्राणो रमणः शिशिरोऽपि च । मनोहरा  
 धरात् पुत्रानवापाथ हरेः सुता—इति मात्स्ये (५।२६) ।  
 रमणीये त्रि. । 'रमणं विहरन्तीनां रमणैः सिद्धयोपिताम्—  
 इति भागवते (४।६।१०) । क्ली. [ रमयतीति, रत्+  
 णिच्+ल्यु ] पटोलमूलः; जघनं; [ रत्+भावे ल्युट् ]  
 यमनम्; अन्नहाचर्यकं; ग्राम्यधर्मः; सुरतं; रतं;  
 सम्प्रयोगः; निधुवनं; मैथुनं; रतिः; उपसृष्टं;  
 षण्डितं; क्रीडारत्नं; महासुखं; त्रिभद्रं; योगमिथुनम्;  
 अभिमानितम्; 'विकचकमलगन्धैरन्धयन् भृङ्गमालाः,  
 सुरमितमकरन्दं मन्देमावाति वातः । प्रमदमदनमाद्य-  
 चीवनोद्दामरामाः, रमणरभसखेदस्वेदविच्छेददक्षः—  
 इति भावे (११।१९) । क्रीडनं; रत्युत्पादनम्; 'रामेति  
 लोकरमणादलं बलवदुच्छ्रयात्—इति भागवते (१०।  
 २।१३) 'कोकिलस्य रत्नकाद् रत्नत्वात्पनत्—इति लट्टीकावां

स्वामी । वनविशेषः; 'भाति चैत्रवनं चैव नन्दन च  
 वनं महत् । रमणं भावनं चैव वेणुमहं समन्ततः—  
 इति हरिवंशे (१५५।२१) । ४९७  
 रमणा स्त्री. [ संज्ञाविशेषे टाप् ] स्त्री; रमणी; पीठस्थ-  
 शक्तिविशेषः; 'रमणा रामतीर्थे तु यमुनायां मृगावती'  
 इति देवीभागवते (७।३०।६७) । ४८२  
 रमणी स्त्री. [ रमतेऽस्यामिति । रम्+ल्युट्+ङीप् ]  
 नारी; उत्कृष्टस्त्रीविशेषः; या वपुर्गुणोपचारेण सौभा-  
 ग्येन कान्तं रमयति सा; सुन्दरी; 'रथेन रमणीयुक्त  
 प्रजानां दत्तकौतुकः—इति कथासरित्सागरे (५२।  
 २१४) । बालाख्यवृक्षः; 'बाला च रमणी रामा बन्ध्या  
 कामकलापि च—इति शब्दचन्द्रिका । ४८२  
 रम्भः पुं. [ रम्भते रागमूर्च्छनादिकमनेनेति । रभि+  
 कर्मणि घञ् ] वैणवः; लगुडः; दण्डः; यष्टिः; वेणुः;  
 [ रम्भते उद्यमशीलो भवति निरन्तरमुदरभरणायैति  
 भावः, रभि+अच् ] वानरविशेषः; महिषासुरपिता;  
 'आराधितो महादेवो रम्भेण सुरवैरिणा । चिरेण स च  
 सुप्रीतस्तपसा तस्य शङ्करः—इति कालिकापुराणे  
 ५९ अध्यायः । रक्तबीजः; 'दनोः पुत्री महाराज !  
 विख्याता क्षितिमण्डले । रम्भश्चैव करम्भश्च द्वावास्तां  
 दानवोत्तमां—इति देवीभागवते (५।२।१७) । ७२६  
 रम्भा स्त्री. [ रभि+अच्+टाप् ] अप्सरोविशेषः; 'अरुणा  
 रक्षिता चैव रम्भा तद्वननोरमा—इति महाभारते  
 (१।६५।५०) । कदली (१९२); 'तरुमूर्युगेन सुन्दरी  
 किमु रम्भां परिणाहिना परम्—इति नैषधे (२।३७) ।  
 गौरी; सा तु पीठस्थ शक्तीनामन्यतमा; 'गौरी प्रोक्ता  
 कान्यकुब्जे रम्भा तु मलयाचले—इति देवीभागवते  
 (७।३०।५८) । गोध्वनिः; वेत्या । ८८  
 रम्यः पुं. [ रयते अनेनेति । रय्+पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण'  
 इति घ । रिणात्यनेनेति वा, री गतौ +घ प्रत्ययेन साधु-  
 रिति ] वेगः; प्रवाहः (६६९); 'प्रवाहः पुनरोधः  
 स्पाद्वेणी धारा रयश्च सः—इति हेमचन्द्रः । 'कथमन्तं  
 न गच्छेम वृक्षस्येव नदीरयाः—इति महाभारते  
 (२।१७।६) । पुरुवसः पुत्रभेदः; 'ऐलस्य चोर्वशीगर्भात्  
 षडासन्नात्मजा नृप !, आयुः श्रुतायुः सत्यायू रयोऽथ  
 विजयो जयः—इति भागवते (१।१५।१) । ४४३  
 रत्नः पुं. [ रत्नं रत्, निष्पत्तुनासिकलोपे, रत् इच्छा,

तां र्जाति, क रल्लस्ततः स्वार्थे कन् ] कम्बलः; पक्ष्म;  
मृगविशेषः १-५५१

रवः पुं. [ रूयते इति, रु शब्दे+भावे अप् ] शब्दः;  
'धनुरधिज्यमनाधिरुपादे नरवररो रवरोपितकेशरी'—  
इति रघौ (१५४) । १३८

रवणः पुं. [ रीतीति । रु+सुयुरुवृजो युच् इति युच् ]  
उष्ट्रः; 'उत्यातुमिच्छन् विवृत्तः पुरो बलान्निधीयमाने  
भरभाजि यन्त्रके । अर्द्धाञ्जितोद्गारविक्रमरस्वरः  
स्वनाम नित्ये रवणः स्फुटार्थताम्'—इति माघे (१२१९) ।  
कोकिलः; क्ली. कास्यं; [ रु+भावे ल्युट् ] रवः; त्रि.  
शब्दनः; तीक्ष्णः; भण्डकः; चञ्चलः । २००

रविः पुं. [ रूयते स्तूयते इति । रु+अव इः' इति इ ]  
सूर्यः; 'मापमापिपमांसं च मसूरं निम्बपत्रकम् । भक्ष-  
येद्यो रवेवारे सप्तजन्मन्यपुत्रकः । आद्रकं मधु मत्स्यं च  
भक्षयेद्यो रवेदिने । सप्तजन्म भवेद्रोगी जन्म जन्म दरि-  
द्रता । निम्बं मांसं मसूरं च विल्वकाञ्जिकमाद्रकम् ।  
भक्षयेद्यो रवेवारे सप्तजन्मन्यपुत्रकः'—इति कर्मलोचने ।  
'अवतीमांसं च त्रीं लोकांस्तस्मात् सूर्यः परिभ्रमात् ।  
अचिरात् प्रकाशते अवेनात् स रविः स्मृतः'—इति  
मात्स्ये १०१ अध्यायः । पर्वतः (८३९); अर्कवृक्षः । ३५  
रशना, रसना स्त्री. [ रसयति स्वादयतीति, नन्द्यादित्वाल्  
ल्यु, षूषोदरादित्वात् शत्वम् ] जिह्वा; 'रशना काञ्चि-  
जिह्वयोः'—इति धरणिः । [ अश्नुते व्याप्नोतीति,  
अशू व्याप्ती+अशो रश् च' इति युच् धातो रशादेशश्च ]  
काञ्ची (५६०); 'इयमप्रतिबोधशायिनी रशना त्वां  
प्रथमा रहः सखी'—इति रघौ (८५८) । रज्जुः;  
'होता यक्षद्वनल्पतिमभि हि पिष्टतमया रभिष्ठया  
रशनयाधित'—इति बाजसनेयसंहितायाम् (२१४६) ।  
'रशनया रज्ज्वा कृत्वा अधित धृतवान् पशून् इति शेषः'  
इति तद्भाष्ये महीधरः । अङ्गुलयः । अत्र सदा बहुवचन-  
प्रयोगो भवति । ५२१

रश्मिः पुं. [ अश्नुते व्याप्नोतीति । अशू व्याप्ती+अश्नोते-  
रश्च' इति मि, धातो रशादेशश्च ] किरणः; 'मक्षिका  
विश्रुवश्छाया गौरश्चः सूर्यं रश्मयः । रजो भूर्वायुरग्निश्च  
स्पर्शं मेघ्यानि निर्दिशन्'—इति मनुः (५१३३) ।  
प्रभा (६५); दल्गा (४४२); कुशा; (५७५) योक्त्रम्,  
आवन्धः; पक्ष्म; अश्वरज्जुः; 'यत्र मन्थां विवचने

रसमीन् यमित वा इव'—इति ऋग्वेदे (१२८४) ।  
'रसमीन् अश्ववन्वनार्थान् प्रग्रहान्'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । ३८

रसः पुं. [ रसतीति, रस्+पचाद्यच् । यद्वा रस्यते इति । रस्  
आस्वादाने+पुसिसंज्ञायां घः प्रायेण' इति घ ] विषम्;  
'ये मन्त्रेषु रसेषु च प्रणिहितास्तरैव ते घातिताः'—इति  
मुद्राराक्षसे २ अङ्के । शृङ्गारसदिनवप्वन्यतमः (८६१);  
'शृङ्गारवीरवीभत्सरीद्रहास्त्रभयानकाः । कण्ठाद्भूत-  
शान्ताश्च नव नाट्ये रसाः स्मृताः'—इति रत्नकोषः ।  
'रीद्रोऽद्भुतश्च शृङ्गारो हास्यवीरो दया तथा । भयान-  
कश्च वीभत्सः शान्तः सप्रेमभक्तिकः'—इति प्राचीनः ।  
'शृङ्गारहास्यकण्ठरीद्रवीरभयानकाः । वीभत्साद्भुत-  
संज्ञो चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः । कट्वम्बल-  
मधुरलवणतिक्तकपायाः; पारदः; 'रसेन्द्रः पारदः  
सूतः सूतराजश्च सूतकः । शिवतेजो रसः सप्त नामान्येवं  
रसस्य तु । 'शिववीजं रसः सूतः पारदश्च रसेन्द्रकः ।  
एतानि रसनामानि तथान्यानि यथा शिवे । रागः;  
'कविता कोमलवनिता रसयति रसिकं रसेन मिलिता ।  
सा यदि दुर्जनहस्ते पतिता प्रतिपदभग्ना संशयभग्ना'  
—इत्युद्भटः । द्रवः; निर्यासः; वीर्यः; गुणः; गन्धरसः;  
'विद्वान् गोलः पिण्डकश्च पिण्डो बोलो रसो रसः ।'  
विषं; घृतादिः; जलम्; 'प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो  
बलिमग्रहीत् । सहस्रगुणमुत्सृष्टुमादत्तं हि रसं रविः'  
—इति रघुवंशे (११८) । शिरालसः; 'कपिनामा  
कपिनैलं कृत्रिमं कपिलश्चलः । तुष्टको मुक्तिमुवतश्च  
पिण्डातेः सिद्धको रसः । हिङ्गुलम्; 'रक्तं मर्कट-  
शीर्षं च हिङ्गुलं दरदो रसः'—इति वैद्यकरत्नमाला-  
याम् । ६४६

रसज्ञा स्त्री. [ रसं जानातीति । ज्ञा+क+टाप् ] जिह्वा;  
गङ्गा; रसवेत्तरि त्रि. । 'यो हेमकुम्भस्तननिःसृतानां  
स्कन्दस्य मानुः पयसां रसज्ञः'—इति रघौ (२३६) ।

५२१

रसना स्त्री. [ रस्+युच्+टाप् ] जिह्वा; 'घ्राणं च  
तत्पादसरोजसौरभं श्रीमत्तुलस्या रसनां तदर्पिते'—इति  
भागवते (१४१९) । न्यायमते रसनन्द्रियग्राह्यो रसो  
रसत्वादिसहितः; 'रसस्तु रसनाग्राह्यो मधुरादिरनेकधा ।  
सहकारी रसज्ञाया नित्यतादि च पूर्ववत् । घ्राणस्य

गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः । तथा रसो रस-  
ज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतः—इति भाषापरिच्छेदः ।  
'तथारस इति रसत्वादिसहित इत्यर्थः—इति सिद्धान्त-  
मुक्तावली । रास्ना; 'रास्ना युक्तरसा रस्या सुवहा  
रसना रसा । एलापर्णी च सुरसा सुगन्धा श्रेयसी तथा'  
—इति भावप्रकाशः । गन्धभद्रा; काञ्ची (५६०);  
'कस्याश्चिदासीद्रसना तदानीम् अङ्गुष्ठमूलापितसूत्र-  
शेषा'—इति रघौ (७।१०) । रज्जुः । ५२१

रसवती स्त्री. [ रसो विविधखाद्यरसो विद्यतेऽस्यामिति ।  
रस+ 'रसादिभ्यश्च' इति मत्तुप्, मस्य वत्वम् ]  
महानसं; पाकस्थानम्; 'यथा धूमाद्बह्वित्वसामान्य-  
विशेषः पर्वते अनुमीयते तस्य च बह्वित्वसामान्य-  
विशेषस्य स्वलक्षणो बह्वित्वविशेषो दृष्टो रसवत्याम्—  
इति सांख्यतत्त्वकौमुद्याम् । रसविशिष्टे त्रि. । 'रोपोऽपि  
रसवतीनां न कर्कशो वा चिरानुवन्धी वा'—इति  
आर्यासप्तशती (४९८) । २९५

रसा स्त्री. [ माधुर्यादिरूपो विविधो रसोऽस्त्यस्यामिति ।  
'अशं आदिभ्योऽच्' इति अच् । रसति शब्दायते इति वा ।  
रस+अच्+टाप् ] पृथिवी; जिह्वा । रसना; 'रास्ना  
युक्तरसा रस्या सुवहा रसना रसा । एलापर्णी च सुरसा  
सुगन्धा श्रेयसी तथा'—इति भावप्रकाशः । पाठा;  
'पाठाम्बष्ठाम्बष्ठकी च प्राचीना पापचेलिका । एका-  
ष्ठीला रसा प्रोक्ता पाठिका वरतिक्तिका'—इति भाव-  
प्रकाशः । शल्लकी; 'शल्लकी गजभक्ष्या च सुवहा  
सुरभी रसा । महेरुणा कुन्दुरुकी वल्लकी च बहुस्रवा'  
—इति भावप्रकाशः । कङ्कगु; द्राक्षा; काकोली;  
रसातलम्; 'रसा दिशश्च प्रतिनेदिरे जनाः पेतुः  
क्षिती वज्रनिपातशङ्कया'—इति भागवते (१०।६।  
१२) । 'सृजतो मे क्षितिर्वारिभिः प्लाव्यमाना रसां गता'  
—इति भागवते (३।१३।१६) । 'रसां रसातलं गता'  
इति तट्टीकायां स्वामिपादाः । नदी; 'याभी रसां क्षोद-  
सोद्रः पिपिण्युः'—इति ऋग्वेदे (१।११२।१२) ।  
'रसां नदीम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । १५६

रसातलम् क्ली. [ रसायाः तलं निम्नभागस्थलोकविशेषः ]  
पातालम्; 'जग्राह वेदानखिलान् रसातलगतो हरिः'  
—इति महाभारते (१२।३४७।५६) । पातालभेदः;  
'मतलं वितलं चैव नितलं च तलातलम् । महातलं च

सुतलं सप्तमं च रसातलम् । पातालभेदाः सप्तैव नामतः  
कीर्तिता अमी । तत्र पातालमेकैकं दशसाहस्रयोजनम्'  
—इति शब्दमाला । ६२३

रहः [ स् ] अव्य. —क्ली. [ रमन्तेऽस्मिन् । रम्+ 'देशे ह च'  
इति असुन्प्रत्ययः हकारश्चान्तादेशः ] रतिः; (७०८)  
निर्जनं; विविक्तः; विजनः; छन्नः; निःशलाकः;  
रहः; उपांशुः; 'तदाननं मृतसुरभि क्षितीश्वरो रहस्यु-  
पात्राय न तृप्तिमाययी'—इति रघौ (३।३) ।  
तत्त्वम्; गुह्यम्; 'रहो निधुवनेऽपि स्याद्रहो गुह्ये  
नर्पुंसकम्'—इति रभसः । 'देशाद्बन्धुत्वं रहोऽव्ययं  
शब्दान्तरं वास्ति सुरतवाचकम्'—इत्युज्ज्वलः (४।  
२।१४) । ५६९

रहस्यम् क्ली. [ रहसि भवम् । यत् ] वेदान्तः; उपनिषत्;  
तथा च मनुस्मृतिः (२।१६५) । ९

रहस्यम् त्रि. [ रहसि भवम् । रहस्+दिगादित्वाद् यत् ]  
गोपनीयं; रहसि भवम्; 'न सर्पशस्त्रैः क्रीडेत स्वानि  
खानि न संपृशेत् । रोमाणि च रहस्यानि नाशिष्टेन  
सदा ब्रजेत्'—इति कौर्मो १५ अध्यायः । ७०८

रहितम् त्रि. [ रह्+क्त ] वजितम्; 'जातसूतकमादौ  
च अन्ते च मृतसूतकम् । गुरोस्तद्रहितं कृत्वा जपकर्म  
समाचरेत्'—इति तन्त्रसारः । 'दिग्घ्नोऽब्दश्चाश्वि-  
रहितो जन्मसाढ्यो भशेपितः । भं भवेदब्दवेशोऽत्र योगे-  
ऽप्येवं विचिन्तयेत्'—इति जातकपद्धतिः । ४८६

राः [ ऐ ] पुं. [ रा दाने+ 'रातेडं' इति डे ] धनम्;  
'आत्मानमनु ये चेह ये रायः पशवो गृहाः'—इति भाग-  
वते (३।२५।३८) । स्वर्णं (१७३); शब्दः; स्त्री.  
श्रीः; 'स चत्तयदुपसः सूर्येण चित्रामस्य केतवो राम-  
विन्दन्'—इति ऋग्वेदे (१०।११।१७) । 'चित्रां  
नानावर्णां रां रायं श्रियमविन्दन् अलभन्त'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । ८०

राका स्त्री. [ रायते दीयते देवेभ्य हविर्यस्याम् । रा दाने+  
'कृदाधाराचिकलिभ्यः कः' इति क, बहुलवचनादेव न  
ह्रस्वः ] सम्पूर्णन्दुतिथिः; पूर्णिमा; 'राकामहं सुहवां  
सुष्टुतीहुवे शृणोत्तु नः सुभगा बोधतु त्मना'—इति  
ऋग्वेदे (२।३२।४) । 'सम्पूर्णचन्द्रा पूर्णमासी राका'  
—इति सायणाचार्यः । नवजातरजाः स्त्री (४८८);  
नदीविशेषः; 'तेषु वर्षाद्रयो नद्यश्च सप्तैवाभिजाताः

सुरसः शतशृङ्गो वामदेवः कुन्दः कुमुदः पुष्पावर्षः सहस्रश्रुतिरिति । अनुमती सिनीवाली सरस्वती कुहू रजनी नन्दा राकेति—इति भागवते (५।२०।१०) । कच्छरोगः; राक्षसीविशेषः; सा च खरस्य शूर्पणखायाश्च जननी । 'मालिनी जनयामास पुत्रमेकं विभीषणम् । राकायां मिथुनं जज्ञे खरः शूर्पणखा तथा'—इति महाभारते (३।२७।४।) । ११२

राक्षसः पुं. [ रक्षन्त्यस्माद् रक्षः, रक्ष एव राक्षसः ] कौण्यः; क्रव्यात्, क्रव्यादः; अस्रपः; आशरः; रात्रिञ्चरः; रात्रिचरः; कर्वूरः; निकपात्मजः; यातुघानः; पुण्यजनः; नैर्ऋतः; यातु; रक्षः; सन्ध्याबलः; क्षपाटः; रजनीचरः; कीलापाः; नृचक्षाः; नक्तञ्चरः; पलाशी; पलाशः; भूतः; नीलाम्बरः; कल्पायः; कटप्रूः; अगिरः; कीलालपाः; नरधिष्मणः; 'रजो मात्रात्मिकामेव ततोऽप्यां जगृहे तनुम् । ततः क्षुद्रब्रह्मणो जाता जज्ञे कोपाश्रयात्ततः । क्षुत्क्षामानन्याकारांश्च सोऽभृजद्भृगवांस्ततः । विरूपाः श्मश्रुला जातास्तेऽप्यघावन्त तं प्रभुम् । नैवं भो रक्ष्यतामेष तैश्कतं राक्षसास्तु ते'—इति बृहत्संहितापुराणम् । अष्टप्रकारविवाहान्तर्गतविवाहविशेषः; 'सामुरो ब्रविणादानाद्गान्धर्वः समयान्मियः । राक्षसो युद्धरणात् पैशाचः कन्यकाच्छलात्'—इत्युद्वाहृतत्वम् । 'हत्वा च्छिन्त्वा च भित्त्वा च क्रोशन्तीं रुदतीं गृहात् । प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते'—इति मनुः (३।३३) । अब्दविशेषे पुं.—कली । 'इन्द्राग्निदैवं दशमं युगं यत् तत्राद्यमवदं परिधाविसंज्ञम् । प्रमाद्यथानन्दमतः परं यत् स्याद्राक्षसं चानलसंज्ञितञ्च'—इति बृहत्संहितायाम् (८।४५) । रक्षः सम्बन्धिनि त्रि. । ७३, ८७

रागः पुं. [ रञ्जनमिति, रज्यतेऽनेनेति वा । रञ्ज्+भावे करणे वा घञ्, 'घञि च भावकरणयोः' इति नलोपः ] प्रीतिः; 'त्रोतरागभयक्रोधस्थितधोर्मुनिरुच्यते'—इति भावद्गीताश्लोकटीकायां श्रीधरस्वामी । 'सुखमप्यधिकं चित्ते सुखत्वेनैव रज्यते । यतस्तु प्रणयोत्कर्षात् स राग इति कीर्त्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । मात्सर्यः; लोहितादिः; 'रागेण बालारुणक्रोमलेन चूतप्रबालोष्ठमलं चकार'—इति कुमारः (३।३०) । अनुरागः; 'तानवमेत्य छिन्नः परोपहितरागमदनसङ्घटितः । कर्ण इव कामिनीनां न शोभते निर्भरः प्रेमा'—इति आर्या-

सप्तशत्याम् (२७०) । गान्धारादिः; नृपः; चन्द्रः; सूर्यः; लाक्षादिः; 'तमिमं कुरु दक्षिणेतरे चरणं निमित्त-रागमेहि मे'—इति कुमारे (४।१९) । रक्तिमत्विट्; रञ्जनम्; अमिमत्तविषयाभिलापः; स तु पञ्चवलेशान्तर्गतः, यथा—'अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्चवलेशाः ।' 'रागोऽभिमत्तविषयाभिलापः' इति शिशुपालवधटीकायां मल्लिनाथः (४।५६) । 'सुखानुशयी रागः'—इति पतञ्जलिः । गानशास्त्रीयरागाः । भरतमते हनूमत्मते च रागः पङ्क्तिः— भैरवः, कौशिक, हिन्दोलः, दीपकः, श्रीरागः, मेघः । किन्तु कल्लिनाथसोमेश्वरमते षड्रागा इमे—श्री रागः, वसन्तः, भैरवः, पञ्चमः, मेघः, नटनारायणः । ८६१

राजधानी स्त्री. [ धीयतेऽस्यामिति । धा+अधिकरणे ल्युट्+ङीप् । राज्ञां धानी नगरो ] राजधानिका; कोट्टः; राजधानकं; स्कन्धावारः; राजधानं; राजपुरम् । २८६  
राजन्यः पुं. [ राज्ञोऽपत्यमिति । 'राजन्+' 'राजश्वशुराद् यत्' इति यत् ] क्षत्रियः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति ऋग्वेदे (१०।१०।१२) । राजपुत्रः; [ राजति दीप्यते इति । राज्+'राजेरन्यः' इति अन्य ] अग्निः; क्षीरिकावृक्षः । ४२१

राजयक्ष्मा [ न् ] पुं. [ राजश्चन्द्रस्य क्षयकारको यक्ष्मा, राजा चासौ यक्ष्मा चेति वा ] क्षयरोगः; यक्ष्मा; रोगविशेषः; क्षयः; शोषः; रोगराट्; 'मा वेदि यदसावेको जेतव्यश्चेदिराडिति । राजयक्ष्मेव रोगाणां समूहः स महीभूताम्'—इति माघे (२।१६) । 'अनेकरोगानुगतो बहुरोगपुरःसरः । राजयक्ष्मा क्षयः शोषो रोगराडिति च स्मृतः । नक्षत्राणां द्विजानां च राज्ञोऽभूद् यदयं पुरा । यच्च राजा च यक्ष्मा च राजयक्ष्मा ततो मतः'—इति वाग्भटः । ६०२

राजराजः पुं. [ राज्ञामपि राजा घनाधिपत्वात् । 'राजाहःसखिम्यष्टच्' इति टच् ] कुबेरः; 'इत्युक्त्वा सपदि हितं प्रियं प्रियाहं धाम स्वंगतवति राजराजभृत्ये । सोत्कथं किमपि पृथासुतः प्रदध्यो सन्वत्ते भृशमरति हि सद्भियोगः'—इति किराते (५।५१) । सार्वभौमः; 'प्रयाणमिति च श्रुत्वा राजराजस्य योपितः । हित्वा यानानि यानार्हा ब्राह्मणं पर्यवारयन्'—इति रामायणे



(२।९२।१४) । सुधाकरः । ७९

राजवाहयः पुं. [ राज्ञां वाहयः ] राजवाहकहस्ती; उप-  
वाहयः; विजयकुञ्जरः; राजवहनीये त्रि. । २२४

राजसर्पः पुं. [ सर्पाणां राजा । राजदन्तादित्वात् परनि-  
पातः ] सर्पविशेषः; भुजङ्गभोजी; सर्पभुक् । ६४३

राजसर्षपः पुं. [ सर्षपाणां राजा, श्रेष्ठत्वात्, परनिपातः ]  
सर्षपविशेषः; कृष्णिका; राजिका; सूरी; मुष्टकः;  
व्यष्टकः; क्षवः; क्षुताभिजननः; क्षुधाभिजननः;  
कृष्णा; तीक्ष्णफला; राजी; कृष्णसर्षपाख्या; आसुरी;  
'राई' इति भाषा । 'त्रसरेणवोऽष्टी विज्ञेया लिक्षैका  
परिमाणतः । ता राजसर्षपस्तिस्त्रस्ते त्रयो गौरसर्षपः'  
—इति मनुः (८।१३३) । 'अष्टी त्रसरेणवो लिक्षैका  
परिमाणेन ज्ञेया तास्तिस्त्रो लिक्षा राजसर्षपो ज्ञेयः ।  
ते राजसर्षपास्त्रयो गौरसर्षपो ज्ञेयः'—इति तट्टीकायां  
कुल्लूकभट्टः । ५८१

राजसूयम् क्ली. —पुं. [ राजा लतात्मकः सोमः सूयतेऽत्र ।  
राजन्+सु+अधिकरणे क्यप् । राज्ञा सोतव्यः राज्ञा वा  
इह सूयते, 'राजसूयसूयति' निपातनाद् दीर्घः ] राजकर्तव्य-  
यज्ञविशेषः; नृपाध्वरः; क्रतुराजः; क्रतूत्तमः; 'यक्षन्ति  
च नरं व्याघ्रा निजित्य पृथिवीमिमाम् । राजसूयाश्च-  
मेघाद्यैः क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः ।' ४२२

राजहंसः पुं. [ हंसानां राजा श्रेष्ठत्वात् । राजदन्तादित्वात्  
परनिपातः ] चञ्चुचरणलोहितश्वेतवर्णहंसः; 'सा  
राजहंसैरिव सन्नताङ्गी गतेषु लीलाञ्छितविक्रमेषु'  
व्यनीयत प्रत्युपदेशलुब्धैरादित्सुभिर्नृपुरशिञ्जितानि'  
—इति कुमारे (१।३४) । कदम्बः; कलहंसः; नृपी-  
त्तमः । २५२

राजा [ न् ] पुं. [ राजते शोभते इति । राज्+कणिन्  
युवृषितक्षिराजीति' कणिन् ] चन्द्रः; चन्द्रमाः; नृपतिः  
(४२१); 'यथा प्रह्लादनाच् चन्द्रः प्रतापात् तपनो  
यथा । तथैव सोऽभूदन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात्'  
—इति रघौ (४।११) । प्रभुः; क्षत्रियः; 'शर्म-  
वद्ब्राह्मणस्य स्याद् राज्ञो रक्षासमन्वितम् । वैश्यस्य  
पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्'—इति मनुः (२।३२) ।  
यक्षः; इन्द्रः; उत्तरपदे चेत श्रेष्ठार्थवाचकः । अथ नृपतेः  
पर्यायाः—राट्; पाथिवः; क्षमाभूत्; नृपः; भूपः; महीक्षित्;  
नरपतिः; पार्वः; नृपतिः; भूपालः; भूभूत्; महीपतिः;

नाभिः; नाराट्; भूमिन्द्रः; नरेन्द्रः; नायकाधिपः;  
प्रजेश्वरः; भूमिपः; इनः; दण्डधरः; अवनीपतिः;  
स्कन्दः; स्कन्धः; भूभुक्; अर्थपतिः । अस्य व्युत्पत्तिः ।  
'महता राजराज्येन पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् । सोऽभिषिक्तो  
महातेजा विधिवद्धर्मकोविदैः । पित्रापरञ्जितास्तस्य  
प्रजास्तेनानुरञ्जिताः । अनुरागात्ततस्तस्य नाम राजेत्य-  
भाषत'—इति विष्णुपुराणे १ अंशे १३ अध्यायः । 'रागी  
राजसिकं स्वर्ग्यं कुरुते कर्म रागतः । रागान्धाश्च राज-  
सिकास्तेन राजा प्रकीर्तितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ४२  
राजिः स्त्री. [ राजते इति, राज्+ 'वसिवपियजिराजीति'  
इत् ] राजी; राजसर्षपः; 'राई' इति भाषा । श्रेणी  
(७२१); 'उल्लसति रोमराजिः स्तेनशम्भोर्गल-  
लेखेव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९३) । रेखा;  
'कलायपुष्पवर्णास्तु श्वेतलोहितराजयः । रथसेनं ह्य-  
श्रेष्ठाः समूह्युद्धदुर्मदम्'—इति महाभारते (७।२२।  
६२) । पुं. आयुपुत्रविशेषः; स तु ऐलपीत्रः; 'नहुषं  
वृद्धशर्माणं राजिं गयमनेनसम् । स्वर्भानवीसुतानेता-  
नायोः पुत्रान् प्रचक्षते'—इति महाभारते (१।७५।  
२५) । ५८१

राजिका स्त्री. [ राजते या, राज्+प्बुल्, टापि अत इत्वम् ]  
राजसर्षपः; कृष्णसर्षपः; क्षवः; क्षुधाभिजननः; कृष्णि-  
का; आसुरी; क्षुताभिजननः; क्षुत्करी; रक्तवर्णसर्षपः;  
राजी; रक्तिका; रक्तसर्षपः; तीक्ष्णगन्धा; मधूलिका;  
क्षवकः; क्षुतकः; क्षवः; 'राजी तु राजिका तीक्ष्णगन्धा  
क्षुज्जनिकासुरी । क्षवः क्षुताभिजनकः कृमिकः कृष्ण-  
सर्षपः । राजिका कफपित्तघ्नी तीक्ष्णोष्णा रक्तपित्त-  
कृत् । किञ्चिद्दक्षामिन्दा कण्डूकुष्ठकोठकृमीन् हरेत् ।  
अतितीक्ष्णा विशेषेण तद्वत् कृष्णापि राजिका'—इति  
भावप्रकाशः । ५८१

राजिलः पुं. [ राजी रेखास्त्यस्येति । राजि+सिध्मादि-  
त्वाल् लृच् । यद्वा राजि लातीति । ला+क. ] दुण्डुभ-  
सर्षपः; दुण्डुभः; 'किं महोरगविसर्पविक्रमो राजिलेषु  
गरुडः प्रवर्तते'—इति रघौ (११।२७) । ६४३

राजी स्त्री. [ राजि+कृदिकारादिति डीप् ] निश्छिद्र-  
पङ्क्तिः; श्रेणिः; 'राजीवराजीवशालोलभृङ्गमुष्णन्त-  
मुष्णन्ततिभिस्तरुणाम्'—इति माघे (४।९०) ।  
राजिका (५८१); 'राई' इति भाषा । 'राजी तु

राजिका तीक्ष्णगन्धा क्षुब्धनिकासुरी । क्षवः क्षुताभि-  
जनकः कृमिकः कृष्णसर्षपः—इति भावप्रकाशः । ७२१  
राजीवः पुं. [ राजी अस्त्यस्येति । राजी+व ] बृहन्मीन-  
भेदः; 'पाठीनरोहितावाद्यौ-नियुक्तौ ह्यप्यकव्ययोः ।  
राजीवान् सिंहनुष्टांश्च सशल्कांश्चैव सर्वशः—इति  
मनुः (५।१६) । हरिणभेदः; 'राजीवस्तु मृगो ज्ञेयो  
राजीभिः परितो वृतः—इति भावप्रकाशः । हस्ती;  
सारसपक्षी; राजोपजीविनि त्रि. । ६५९

राजीवम् क्ली. [ राजी दलश्रेणिरस्मास्तीति । राजी+  
'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इत्युक्त्या व ] पयः; कमलम्;  
'उत्तानपाणिद्वयसन्निवेशात् प्रफुल्लराजीवमिवाङ्कमघ्ये'  
—इति कुमारं (३।४५) । ६८०

राज्ञी स्त्री. [ राज्ञः पत्नी । राजन्+ङीप् । यद्वा राजते  
इति । राज+कनिन्, ततः स्त्रियां ङीप् ] राजपत्नी;  
'राज्ञी' इति भाषा । 'तयोर्जगृहनुः पादान् राजा राज्ञी  
च मागधी । तौ गुहर्गुहपत्नी च प्रीत्या प्रतिनन्दन्तुः'  
—इति रघो (१।५७) । सूर्यपत्नी; 'विवस्वान् कश्य-  
पात् पूर्वमदित्यामभवत् पुरा । तस्य पत्नीत्रयं तद्वत्  
संज्ञा राज्ञी प्रभा तथा । रेवतस्य सुता राज्ञी रेवन्तं  
सुषुवे सुतम् । प्रभा प्रभावं सुषुवे त्वाष्ट्री संज्ञा तथा  
मनुम् । यमश्च यमुना चैव यमलौ तु बभूवतुः—इति  
मात्स्ये । कांस्यं; नीली; प्रतीची दिक्; 'तस्य प्राची  
दिक् जुहर्नाम सहमाना नाम दक्षिणा राज्ञी नाम प्रतीची  
सुभूता नामोदीचीति'—इति छान्दोग्योपनिषदि (३।  
१।५।२) । 'तथा राज्ञी नाम प्रतीची पश्चिमा दिक्  
राज्ञी राज्ञा वरुणेनाधिष्ठिता सन्ध्यारागयोगाद्वा'  
—इति शङ्करभाष्यम् । ९८

राट् [ ज् ] पुं. [ राजते शोभते इति । राज् दीप्ती, क्विप्,  
व्रश्चेति षत्वम् ] राजा; नृपः । ४२१

राडा स्त्री. [ रद् +ओणादिकः क्तप्रत्ययः, बाहुलकादि-  
भावः, ढत्वधत्वष्ट्वलोपदीर्घटापः ] शोभा; सूक्ष्मः;  
पुरीविशेषः; 'गौडं राष्ट्रमनुत्तमं निरुपमा तत्रापि राडा  
पुरी, भूरिश्रेष्ठिकनामधाम परमं तत्रोत्तमो नः पिता'  
—इति प्रबोधचन्द्रोदये । ५६५

रात्रम् क्ली.—रात्रिः; 'क्षेत्रप्रतिग्रहे चैव ग्रहसूतकयो-  
स्तथा । त्रीणि रात्राण्युषोषित्वा तेन पापाद्भिमुच्यते'  
—इति महाभारते (१३।१३६।११) । ज्ञानम्; 'रात्रं,

च ज्ञानवचनं ज्ञानं पञ्चविधं स्मृतम् । तेनदं पञ्चरात्रं च  
प्रवदन्ति मनीषिणः—इति नारदपञ्चरात्रे । (क्वाचि-  
त्कोऽयम्, वृत्तिविषये समासान्तेन प्रयोगात् ।) १०८

रात्रिः स्त्री. [ राति ददाति कर्मभ्योऽवसरं निद्रादिसुखं वा ।  
रा दाने+ 'राशदिभ्यां त्रिप्' इति त्रिप् ] एतद्बद्धीपाव-  
च्छिन्नसूर्यकिरणानवच्छिन्नकालः; शर्वरी; निशा;  
निशीथिनी; त्रियामा; क्षणदा; क्षपा; विभावरी;  
तमस्विनी; रजनी; यामिनी; तमी; श्यामा; घोरा;  
याम्या; तुङ्गी; नक्तं; दोषा; वासतेयी; तमा;  
क्षमा; शताक्षी; क्षणिनी; निशिय्या; चक्रमेदिनी;  
शावरी; शय्या; वासुरा; निपद्वरी; वसतिः; वायु-  
रोया; निशीथः; निट्; यामवती; तारा; भूषा;  
ज्योतिष्मती; तारकिणी; काली; कलापिनी;  
'यदा दिक्षु च अष्टासु मेरोर्भूगोलकोद्भवा । छाया  
भवेत्तदा रात्रिः स्याच्च तद्विरहाद्दिनम्—इति वल्लि-  
पुराणे । हरिद्रा; क्रीञ्चद्वीपस्थ नदीविशेषः । १०८

रात्री स्त्री. [ रात्रि+कृदिकारादिति ङीप् ] निशा;  
रात्रिः; 'रात्री व्यह्यद् आयती पुष्ट्या देव्यक्षमिः'  
—इति ऋग्वेदे (१०।१२७।१) । हरिद्रा । १०८

राट्टान्तः पुं. [ राट्टः सिद्धः अन्तो निर्णयो यस्मात् ]  
कृतान्तः; सिद्धान्तः; समयः; 'अथेदमर्थं पृच्छामो  
भवन्तं बहुवित्तमम् । समस्ततन्त्रराट्टान्ते अवान्  
भागवततत्त्ववित्—इति भागवते (१२।१।१) । १०

रामः पुं. [ रमते इति, रम् क्रीडायाम्+ 'ज्वलितिक-  
सन्तेभ्यो णः' इति ण । रमन्ते योगिनोऽस्मिन्निति  
वा । हलश्चेति घञ् ] बलदेवः; स च अनन्तदेवो  
विष्णोरंशः; यदुवंशीयवसुदेवपुत्रत्वेन द्वापरयुगान्ते कंसादि-  
वधार्थमवतीर्णः । 'निशम्य प्रेष्ठमायान्तं वसुदेवो महा-  
मनाः । अक्रूरश्चोपसेनश्च रामश्चाद्भुतविक्रमः—इति  
भागवते (१।११।७) । परशुरामः; स तु विष्णोरंशः,  
जमदग्निमुनेः पुत्रत्वेन त्रेतायुगादाववतीर्णः एकविंशति-  
वारान् पृथिवीं निःक्षत्रियामकरोत् । असौ एव समन्त-  
पञ्चके पञ्च क्षत्रियशोणितहृदान् विधा पितॄन्  
सन्तर्पयामास । अधोरश्चाय बाणश्च महाकालौ  
प्रकीर्तितौ । भार्गवो राघवो गोपस्त्रयो रामाः प्रकीर्तितौ'  
—इति वल्लिपुराणम् । राघवः; श्रीरामचन्द्रः; स  
च पूर्णब्रह्मस्वरूपः अयोध्याधिपतिदशरथराजतनयत्वेन

त्रेतायुगशेषे रावणादिवधार्थमवतीर्णः । 'रा शब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः । विश्वानामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः । रमते रमया साह्रं तेन रामं विदुर्वुधाः । रमाणां रमणस्थानं रामं रामविदो विदुः । रा चेति लक्ष्मीवचनो मश्चापीश्वरवाचकः । लक्ष्मीपतिं गतिं रामं प्रवदन्ति मनीषिणः । दिव्य-नाम्नां सहस्रस्य स्मरणे यत्फलं लभेत् । तत्फलं लभते नूनं रामोच्चारणमात्रतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । वरुणः; घोटकः; पशुभेदः । २९

रामः त्रि. [ रमते इति, रम्+ण । रम्यतेऽनेनेति, रम्+घञ् वा ] असितः; (८०८) सितः; शुक्लः । मनोज्ञः; 'गावः प्रभूतपयसो नयनाभिरामा रामारतैरविरतं रमयन्ति रामान्'—इति बृहत्संहितायाम् (१९१५) । क्ली. [ रम्यतेऽनेनेति । रम्+घञ् ] वास्तुकं; कुष्ठं; तमालपत्रं; नैशं तमः; 'सुप्रकेतैर्द्युभिरनिर्वितिष्ठन् रुशाद्भ्रवर्णं रभिराममस्यात्'—इति ऋग्वेदे (१०।३।३) 'रामं कृष्णवर्णं शार्वरं तमः अभ्यस्यात्सायं होमकाले अभिभूय तिष्ठति'—इति तद्ब्राह्म्ये सायणः । ७३४

रामकरी स्त्री.—रामकली रागिणी; रामकिरी । १०२अ रामकिरी स्त्री.—रामकली रागिणी; रामकरी । 'पङ्कज-प्रहांशकन्यासा पूर्णा रामकिरी मता । मूर्च्छना प्रथमा ज्ञेया करुणे सा प्रयुज्यते । रिघत्यक्तायवा प्रोक्ता कैश्चित् पञ्चमवर्जिता । त्रिविधा सा समुद्दिष्टा सम्पूर्णा षाडवैडवा । हेमप्रभा भासुरभूषणा च नीलं निचोलं वपुषा वहन्ती । कान्ते समीपे कमनीयकण्ठा मानोन्नता रामकिरी मतेयम्'—इति सङ्गीतदर्पणे । १०२अ रामा स्त्री. [ रमते रमयतीति वा । रम्+ज्वलादित्वात् ण, टाप् । रमतेऽनयेति करणे घञ् वा ] योषा; सुन्दरी, 'स च्छिन्नवन्धद्रुतयुगयशून्यं भग्नाक्षयन्तरयं क्षणेन । रामापरित्राणविहस्तयोघं सेनानिवेशं तुमुलं चकार'—इति रघो (५।४९) । उत्कृष्टस्त्रीविशेषः; गीतकलाभी रमते सा रामा; 'विभज्य नवघात्मानं मानवीं सुरतो-त्सुकाम् । रामां निरमयन् रेभे वर्षपूगान् मुहूर्तवत्'—इति भागवते (३।२३।४३) । हिङ्गु; नदी; हिङ्गुलं; श्वेतकण्ठकारी; गृहकन्या; अंशोकः; आरामशीतला; गीरोचना; बाला; गैरिकम् । ४८१

राशिः पुं. [ रशते इति, रश् शब्दे+इण् । यद्वा अश्नुते

व्याप्नोतीति, अशू व्याप्ती+अशिपणायोरुडायलुको च' इति इण् रुडागमश्च ] धान्यादिसमूहः; पुञ्जः; उत्करः; कूटं; समुच्चयः; समाहारः; 'न खलु न खलु वाणः सन्निपात्योऽथमस्मिन् मृदुनि मृगशरीरे तूलराशा-विवाग्निः'—इति शकुन्तलायाम् । ज्योतिश्चक्रस्य द्वादशांशः; 'मेपवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाश्च वृश्चिकभम् । धनुरथ मकरः कुम्भो मीन इति च राशयः कथिताः ।' ६८६

रासभः पुं. [ रासते शब्दायते इति । रास्+ 'रासिवल्लि-भ्याञ्च' इति अभच् ] गर्दभः; खरः; बालेयः; चक्रीवान्; 'पङ्क्याञ्चाश्वान् समातङ्गान् रासभान् शशकान् मृगान् । उष्ट्रानश्वतरांश्चैव नानारूपाश्च जातयः'—इति मार्कण्डेये (४८।२६) । अश्वतरः; 'खञ्चर' इति भाषा । 'स त्वं रासभयुक्तेन स्यन्दनेनाशु-गाभिना । वारणावतमद्यैव यथा यासि तथा कुरु'—इति महाभारते (१।१४५।७) । २८०

राहुः पुं. [ र्ह् त्यागे+बहुलवचनाद् उण् ] ग्रहविशेषः; तमः; स्वर्भानुः; सैहिकेयः; विद्युन्तुदः; अक्षपिशाचः; ग्रहकल्लोलः; सैहिकः; उपप्लवः; शीर्षकः; उपरागः; सिहिकासूनुः; कृष्णवर्णः; कबन्धः; अगुः; असुरः; 'सिहिकायामथोत्पन्ना विप्रचित्तेश्चतुर्दश । शम्बः शम्ब-लगात्रश्च व्यञ्जः शात्वस्तथैव च । इत्वलो नमुचिश्चैव वातापी हसूपो जिक् । हरकल्पकलिनाभौ भौमश्च नरकस्तथा । राहुर्ज्येष्ठश्च तेषां वै चन्द्रसूर्यप्रमर्दनः । इत्येते सिहिकापुत्रा देवैरपि दुरासदाः । दारुणाभिजना क्रूराः सर्वे ब्रह्मद्विपस्तु ते । दशान्यानि सहस्राणि सैहिकेयो गणः स्मृतः । निहतो जामदग्न्येन भागवैण बलीयसा । स्वर्भानोस्तु प्रभा कन्या पुलोम्नस्तु शची सुता'—इति बह्मिपुराणे । ४९

राहुसंस्पर्शः पुं. [ राहोः संस्पर्शो यत्र ] राहुग्रसनः; राहु-ग्रासः; राहुदर्शनः; राहुपीडाः राहुसूतकः; उपरागः; उपप्लवः । ४१

राहुस्पर्शः पुं. [ राहोः स्पर्शो यत्र ] उपरागः; उपप्लवः; राहुग्रासः; । ४१

रिक्तम् त्रि. [ रिच्+क्त ] शून्यं; रिक्तकम्; 'माण्ड-पूर्णानि यानानि तार्यं दाप्यानि सारतः । रिक्तभाण्डानि यत्किञ्चित् पुमांसश्चापरिच्छदाः'—इति मनुः (८।

४०५) । निर्धनं; क्ली. वनं; शून्यम् । ७७७

**रिक्चम्** क्ली. [ रिक्चन्ते बहिर्गच्छति नश्यतीति । रिच्+  
'पातृतुदिवचिरिचिसिचिम्यस्यक्' इति थक् ] घनम्;  
ऋचयं; पूचयम्; 'बालदायादिकं रिक्चं तावद् राजानु-  
पालयेत् । यावत् स स्यात् समावृत्तो यावच्चातीतशैशवः'  
—इति मनुः (८।२१) । ८०

**रिपुः** पुं. [ अनिष्टं रपतीति । रप् व्यक्तायां वाचि+  
'रपेरिचोपधायाः' इति कु, इकारश्चोपधायाः ] शत्रुः;  
'न कश्चित् कस्यचिन्मित्रं न कश्चित् कस्मचिद्रिपुः ।  
कारणादेव जायन्ते मित्राणि रिथवस्तथा'—इति  
हितोपदेशे । ४५५

**रिष्टम्** क्ली. [ रिप्+क्त ] पापम्; अशुभम्; अमङ्गलम्;  
'स्यालोपिधाने यत्राग्निदंतो दर्वाफलैः वा । गृहे तत्र  
हि रिष्टानामशेषाणां समाश्रयः—इति माकण्डेयै ।  
अभावः; नाशः; शुभस्या भावः; पुं. खड्गः; फेनिलः;  
रक्तशियुः । ८०४

**रिष्टतातिः** त्रि. [ रिष्टं कल्याणं करोति । रिष्ट+  
'शिवशमरिष्टस्य करे' इति बाहुलकात् रिष्टादपि  
लोकेऽपि तातिल् ] क्षेमङ्करः; क्षेमकरः; क्षेमकारः;  
शिवतातिः; शिवङ्करः । ३४०

**रिष्टिः** पुं. [ रेपति हिनस्तीति । रिप्+क्तिच् ] खड्गः;  
निस्त्रिशः; करवालः; कौक्षेयकः; कृपाणः; असिः;  
चन्द्रहासः; तरवारिः; तलवारिः; मण्डलाग्रः । ४७२

**रीढा** स्त्री. [ रिह् निन्दायाम्+ओणादिकः क्त ] हेला;  
अवहेलना; अवज्ञा; अवलीढा । ७१५

**रीतिः** स्त्री. [ री+क्तिच् क्तिन् वा ] आरकूटः; कांस्यं;  
सीराष्ट्रकम्; 'पित्तलं त्वारकूटं स्यादरो रीतिश्च  
कथ्यते । राजरीतिर्ब्रह्मरीतिः कपिला पिङ्गलापि च ।  
रीतिरप्युपधातुः स्यात्ताम्रस्य यशदस्य च । पित्तलस्य  
गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः । संयोजनप्रभावेण  
तस्याप्यन्ये गुणाः स्मृताः—इति भावप्रकाशः । प्रचारः;  
स्यन्दः; लोहकिट्टं; दग्धवर्णादिमलं; सीमा; स्रवणं;  
गतिः; स्वभावः; रूपं; लक्षणं; भावः; आत्मा;  
प्रकृतिः; महजः; रूपतत्त्वं; धर्मः; सर्गः; निसर्गः;  
शीलं; सतरवं; संसिद्धिः । 'निशान्तविलप्टचक्राह्व-  
रीतिहृद्यो रसक्रमः'—इति कथासरित्सागरे (१४।६२) ।  
स्तुतिः; 'महीव रीतिः शवसासरत्पूर्यक्'—इति ऋग्वेदे

(२।२४।१४) । 'महीव रीतिः महती स्तुतिरिव' इति  
तद्भाष्ये सायणः । काव्यपदसंघटनाप्रकारः; गौडीवैदर्भी  
पाञ्चालीलाटीरूपः । १७०

**रुचम्** क्ली. [ रोचते शोभते इति । रुच्+युजिश्चित्तिजां  
कुश्च' इति मक् कवर्गश्चान्तादेशः ] काञ्चनम्; 'रुचम-  
निष्कसहस्रे द्वे षोडशाश्वशतानि च । सत्कृत्य केकयीपुत्रं  
कैकेयो घनमादिशत्—इति रामायणे (२।७०।२१) ।  
धुस्तूरं; लोहम्; 'कृष्णायसं काललोहं रुचमं तत्तीक्ष्ण-  
मप्यथ'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । नागकेशरं; वर्णं  
पुं. । दीप्तिशीले त्रि. । 'दिवि रुचम इवोपरि'—इति ऋग्वेदे  
(५।६।१२) । 'दिवि ध्रुलोके रुचमो रोचमान आदित्य  
इव'—इति तद्भाष्ये सायणः । स्वर्णालङ्कारः—माधे  
(१५।७८) । १७३

**रुक् [ च् ]** स्त्री. [ रुच्+भावे क्विप् ] गमस्तिः; रश्मिः;  
किरणः; (६५) अचिः; कीला; ज्वाला; वर्चः; तेजः;  
त्विवः; ज्योतिः; हेतिः; द्युतिः; शिखा; प्रभा; 'क्षिपति  
योऽनुवनं विततां बृहद्बृहत्तिकांमिव रौचनिकीं रुचम्' इति  
किराते (५।४५) । शोभा; 'दधद्भ्रमितस्तदौ विकच-  
वारिजाम्बूनदैविनोदितदिनक्लमाः कृतश्चश्च जाम्बूनदैः'  
—इति माधे (४।६६) । इच्छा; 'नाना बुद्धिरुचो लोके  
मनुष्यान्नमिच्छसि । ग्रहीतुं स्वगुणैः सर्वास्तेनासि  
हरिणः कृशः—इति महाभारते (१३।१२४।२८) । तेजः;  
'अनुययी यमपुण्यजनेश्वरी सवरुणावरुणाग्रसरं रुचा'  
—इति रघौ (९।६) ३८

**रुक् [ ज् ]** स्त्री. [ रुज्+क्विप् ] रोगः; व्याधिः; आकृत्यं;  
गदः; मान्द्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; उपतापः;  
रुजा; 'दोषस्य दृष्ट्वा गुणलाघवं यथा भिषक् चिकित्सेत  
रुजां निदानवित्—इति भागवते (६।१।८) । रुजति  
पीडयतीति, पीडादायके त्रि. । 'प्रयान्तं देवकीपुत्रं परवीर-  
रुजो दश । महारथा महाबाहुमन्वयुः शस्त्रपाणयः—  
इति महाभारते (५।८।१) । ६००

**रुक्कः** पुं.—क्ली. [ रोचतेऽनेनेति । रुच्+बहुलमन्यत्रापि'  
—इति क्वुन् ] सौवर्चलम्; 'सौवर्चलं स्याद्भु-  
चकमन्यपाकं च तन्मतम् । 'रुक्कं रोचनम्भेदि दीपनं  
पाचनं परम् । सुन्नेहं वातान्नातिपित्तलं विशदं लघु ।  
उद्गारशुद्धिदं सूक्ष्मं विवन्धानाहशूलजित्—इति भाव-  
प्रकाशः । सर्जिकाक्षरम्; अश्वाभरणं; माल्यं; माङ्गल्य-

द्रव्यम् 'हारेण च महार्हेण रुचकेन च भूषितम्'—इति भागवते (३।२।३।३१) 'रुचकेन मङ्गलद्रव्येण' इति तट्टी-कायां श्रीधरः । उत्कटः; स्वाद्यरसः; रोचना; विहङ्गः; लवणं; दक्षिणदिक्; 'प्राक्पश्चिमावलिन्दावन्तगतौ तदवधिस्थितौ शोपी । रुचके द्वारं न शुभदमुत्तरतोऽन्यानि शस्तानि'—इति बृहत्संहिताया (५।३।३५) । मातुलुङ्गकं; [ रोचते इति, रुच्+क्वुन् ] पुं. बीजपूरः; निष्कः; दन्तः; कपोतः; 'जीवेन भवति हंसः सौरेण शशः कुजेन रुचकश्च'—इति बृहत्संहितायाम् (६९।२) । पर्वतविशेषः; 'त्रिकूटः शिशिरश्चैव पतङ्गो रुचकस्तथा'—इति विष्णुपुराणे (२।२।२६) । स्तम्भः; 'समचतुरस्रो रुचको वज्रोऽष्टाश्रिद्विष्यको द्विगुणः'—इति बृहत्संहितायाम् (५।३।२८) । ६१७

रुचिः स्त्री. [ रुच्यते इति । रुच्+'इगुपधात् कित्' इति इन्, सं च कित् ] किरणः; वृभुक्षा; शोभा; 'लक्ष्मी-विनोदयति येन दिग्न्तलम्बी, सोऽपि त्वदाननरुचिं विजहाति चन्द्रः'—इति रघो (५।६७) । (७१०) सृहा; इच्छा; कामना; ईप्सा; आर्शासा; अभिष्वङ्गः; अनुरागः; आसक्तिः; रुचा; 'रुचिकरमपि नार्थवद्भवूव स्तिमितसमाधिषुचौ पृथातनूजे'—इति किराते (१०।६२) । 'अम्लो रुचिकरो हृद्यः प्रीणनो वह्निदीपनः'—इति वैद्यकराजवल्लभे । अभिलापः; गभस्तिः; गोरोचना; आलिङ्गनविशेषः; पुं. [ रोचते शोभते इति । रुच्+इन् स च कित् ] प्रजापतिविशेषः; स च रोच्यमनुपिता, 'रुचिः प्रजापतिः पूर्वं निर्ममो निरहङ्कृतिः । यत्रास्तमितशायी च चचार पृथिवीमिमाम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे । ३८

रुचिरः त्रि. [ रुच्+किरन् ] सुन्दरः; 'उल्लसितभ्रू-धनुषा तव पृथुना लोचनेन रुचिराङ्गि !, अचला अपि न महान्तः के चञ्चलभावमानीताः'—इति आर्यासप्त-शत्याम् (१।१७) । मिष्टम् । ६८९

रुच्यः पुं. [ रुच्+क्यप् ] पतिः; कान्तः; कमिता; वरयिता; भर्ता; भोक्ता; धवः; अभीक्तः; वरः; अभिकः; रमणः; प्राणाधिनाथः; अनुगः; कस्तकवृक्षः; शालिधान्यं; सुन्दरे त्रि. । रुचिकरः; 'पक्वं वर्णकरं रुच्यं मांसशुकुम्बप्रदम् । पित्तावरोधि वातघ्नं हृद्यं गुर्वेनु-लोमनम्'—इति वैद्यकराजवल्लभे । क्ली. [ रोचते इति,

रुच्+राजसूयसूर्यमृषोद्येति' क्यप् ] सौवर्चलम् । ४९७  
रुजा स्त्री. [ रुच्+क, टाप् ] रोगः; व्याधिः; आकल्पः; गदः; मान्द्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; उपतापः; रुक्; भङ्गः; पीडा; 'निपातात् तव शस्त्राणां शरीरे या भवद्भुजा । तया ते मानुषं कर्म व्यपोढं भृगुनन्दन'—इति महाभारते (८।३।४।१४९) । मेपी; कुष्ठम् । ६००

रुण्डः पुं. [ रुण्डति इति, प्रतिहन्ति इत्यर्थः । पचाद्यच् ] कवन्चः; छिन्नपादहस्तः; 'तेनारोप्य स्थलं पृष्टः स रुण्डः पुरुषोऽम्यघात् । निकृत्तहस्तचरणो नद्यां क्षिप्तोऽस्मि शत्रुभिः'—इति कथासरित्सागरे (६५।११) । ६३०  
रुदितम् क्ली. [ रुद्+क्त ] क्रन्दनं; तद्वति त्रि. । 'केशकी-टावपतितं क्षुतं श्वभिरवेक्षितम् । रुदितं चावधूतं च तं भागं रुक्षसां विदुः'—इति महाभारते (१।३।२३।६) । ६३९  
रुद्रः पुं. [ रोदयतीति, रुद्+णिच्+'रोर्देणिलुक् च' इति रुक् णेश्च लुक् ] शिवः; महादेवः; शङ्करः; उमापतिः; 'त्रिजटश्चौरवासाश्च रुद्रः सेनापतिविभुः'—इति महा-भारते (२।३।१७।४६) । आदित्यपत्रवृक्षः; गणदेवता-विशेषः; अयम् अग्निमूर्तिः; 'अजैकपादहिरघ्नो विरूपाक्षः सुरेश्वरः । जयन्तो बहुरूपश्च अम्रश्चकोऽप्यपराजितः । वैवस्वतश्च सावित्रो हरो रुद्रा इमे स्मृताः'—इति जटाधरः । कर्मपुत्रविशेषः; 'तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तथा नामानि मे शृणु । अजैकपादहिरघ्नस्तवपुत्रा रुद्रश्च बुद्धिमान्'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।१२२) । कविविशेषः; स च विद्याविलासपुत्रः भावविलासप्रणेता । कविरयं मानसिह-पुत्रस्य भार्वासिंहमहीपतेः समये बभूव । 'अन्यापदेश-विनिवेशत्रिदग्धवृद्धिश्रीभार्वासिहनरसिहनियोगयोगात् । सम्पादितो विविधभावविकासमाजां प्रीत्यै भृशं भवतु भावविलास एषः । सद्गुणानां समुद्रेण रुद्रेण ग्रथिता गुणैः । कण्ठस्या श्लोकमाल्यैः कैषां न कुन्ते त्रियम् । विद्याविलासपुत्रस्य न्यायवाचस्पतिरियम् । काव्यालाप-विदग्धानां मुदं निर्मातु निर्मितः'—इति भावविलासे (१।३४-१३६) । (६९९) त्रि. बृहत्; उरु; गुरु; विस्तीर्णः; पुरु; पृथु; पृथुल; महत्; विशालः; व्यूढः; त्रिपुलः; वरिष्ठम् । ११

रुद्राणी स्त्री. [ रुद्रस्य पत्नी । 'इन्द्रवत्तणभवशवं रुद्रेति' डीप् आनुक् च ] दुर्गा; पार्वती; अपर्णा; शिवा;

भवानी; 'रुद्रस्येयं तु रुद्राणी रौद्रं हन्ति करोति या'—  
इति. देवीपुराणे ४५ अध्यायः। रुद्रजटा। १५  
रुधिरम् क्ली. [ रुणद्धि रुष्यते इति वा। रुध्+ 'इषि-  
मदिमुदीति' किरच् ] शरीरस्थरसभवधातुः; रक्तम्;  
अक्षः; त्वग्जं; कीलालं; क्षतजं; शोणितं; लोहितम्;  
असूकं; शोणं; लोहं; चर्मजं; 'तद्विशुद्धं हि रुधिरं  
वलवर्णसुखायुषा। युनक्ति प्राणितं प्राणः शोणितं  
ह्यनुवर्तते।' 'बलदोषप्रमाणाद्वा विशुद्धया रुधिरस्य वा।  
रुधिरं स्नावयेज्जन्तोराशयं प्रसमीक्ष्य वा'—इति चरकः।  
'रुधरे च सूते गात्राच्छ्रेण च परिरक्षते। सामध्वनावृग्-  
यजुषो नाधीयीत कदाचन'—इति मनुः (४।१२२)।  
'देहस्यरुधिरं मूलं रुधिरणव धार्यते। तस्माद्यत्नेन  
संरक्ष्यं रक्तं जीव इति स्थितिः'—इति सुश्रुते।  
कुडकुमम्; 'राममन्मथशरेण ताडिता दुःसहेन हृदये  
निशाचरी। गन्धवद्रुधिरवन्दनोक्षिता जीवितेशवसति  
जगाम सा'—इति रघो (१।१२०)। पुं. [ रुध्+  
किरच् ] मङ्गलग्रहः। ६३२

रुमा स्त्री.— विशिष्टलवणाकरः; सुग्रीवभार्या। १६९

रुहः पुं. [ रौतीति, रु+ 'रुशातिभ्यां क्रुन्' इति क्रुन् ]  
मृगविशेषः; हरिणभेदः; 'रुहन् कृष्णमृगांश्चैव मेध्यां-  
श्चान्यान् वनेचरान्। वाणैरुन्मथ्य विविधैर्ब्राह्मणेभ्यो  
न्यवेदयत्'—इति महाभारते (३।५०।७)। दैत्यभेदः;  
'एकानंशे शिवे दुर्गे नारायणि सरस्वति। भद्रकालि  
महालक्ष्मि सिद्धिहरविदारिणि।' क्रूरसत्त्वविशेषः; 'इह  
लोकेऽमुना ये तु हिंसिता जन्तवः पुरा। त एव रुरवो  
भूत्वा परत्रपीडयन्ति तम्। तस्माद्रौरव मित्याहुः पुराणज्ञा  
मनीषिणः। रुहः सर्पादितिकूरो जन्तुश्चतः पुरातनैः—  
इति देवीभागवते (८।२२।१०-११)। मुनिविशेषः;  
स तु च्यवनस्य पौत्रः। अयमेव निजायुषोऽर्द्धं दत्त्वा प्रियां  
जीवयामास। अस्य विवरणं देवीभागवते २ स्कन्धे ८  
अध्याये तथा महाभारते पर्वणि ५ अध्यायमारम्य  
द्रष्टव्यम्। २३०

रूपम् क्ली. [ रूप्यते कीर्यते, रौतीति वा। रु+ 'स्वष्प-  
शिल्पशष्पेति' प दीर्घश्च। रूपयतीति। रूप्+अच्  
वा ] पशुः; मृगाः; स्वभावः; सौन्दर्यं; नामकं; शब्दः;  
ग्रन्थः; शक्तिः; नाटिकादिः; श्लोकः; आकारः; 'तदध्या-  
स्योद्देहद्वायी सवर्णां लक्षणांस्त्विताम्। कुले महति

सम्भूतां हृद्यां रूपगुणान्विताम्'—इति मनुः (१।७७)।  
स्वरूपम्; 'देशं रूपं च कालं च व्यवहारविधौ स्थितः'—  
मनुः (८।४५)। शुकलादिः; नाणकम्; 'अङ्गान्य-  
भूषितान्येव केनचिद्भूषणादिना। येन भूषितवद्भ्रान्ति  
तद्रूपमिति कथ्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। ८१६  
रूपाजीवा स्त्री. [ रूपेण सौन्दर्येण आजीवतीति।  
रूप्+आं+जीव्+अच्+टाप् ] वेश्या; गणिका;  
पण्याङ्गना; क्षुद्रा; 'रूपाजीवाश्च वादिन्यो वणिजश्च  
महाधनाः। शोभयन्तु कुमारस्य वाहिनीः सुप्रसारिताः'  
—इति रामायणे (२।३६।३)। ४९०

रूप्यम् क्ली. [ आहतं रूपम् अस्यास्तीति। रूप्+ 'रूपादाहत-  
प्रशंसयोर्यप्' इति यप् ] धातुविशेषः; शुभ्रं; वसुश्रेष्ठं;  
रुचिरं; चन्द्रलोहकं; श्वेतकं; महाशुभ्रं; रजतं;  
तप्तरूपकं; चन्द्रभूतिः; सितं; तारं; कलघृतम्;  
इन्द्रलोहकं; रोप्यं; धीतं; सौधं; चन्द्रहासं; खर्जूरं;  
दुर्वर्णं; श्वेतं; रङ्गवीजं; राजरङ्गं; लोहराजकं;  
कलघीतम्; 'सुवर्णस्य मलं रूप्यं रूप्यस्यापि मलं त्रुप।  
ज्ञेयं त्रुपमलं सीसं सीसस्यापि मलं मलम्'—इति महा-  
भारते (५।३९।७९)। आहतस्वर्णरजतं; त्रि. [ प्रशस्तं  
रूपम् अस्यास्तीति। रूप्+ 'रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्' इति  
यप् ] सुन्दरं; क्ली. उपमेयम्; 'तत्र हि तिमिरांशुकयो  
रूप्यरूपकभावो द्वयोरावरकत्वेनस्फुटमिति'—इति  
साहित्यदर्पणे। पुं. प्रत्ययविशेषः; स च तत आगत इत्ये-  
तस्मिन्विषये 'हेतुमनुष्येभ्योऽप्यतरस्यां रूप्यः' इति सूत्रेण  
हेतुमनुष्यवाचकात् पाक्षिको भवति। यया—समा-  
दागतं समरूप्यम्, देवदत्तरूप्यम्। १७२

रुषितम् त्रि. [ रूप्+क्त ] गुण्डितं; छुरितम्; 'यः  
सुखेनोपधानेषु शेते चन्दनरूपितः। वीज्यमानो महार्हाभिः  
स्त्रीभिर्मम सुतोत्तमः'—इति रामायणे (२।४२।१५)।

७६८

रेखा स्त्री. [ लिख्यते इति। लिख् विलेखने+ 'षिद्धिदा-  
दिभ्योऽङ्' इति भिदादित्वाद् अङ्+टाप्। रलयोरैक्याल्  
लस्य रत्वम् ] उल्लेखस्त्वत्र दण्डाकारलिपिविशेषः;  
लेखा; 'यावती यावती रेखा ग्रहाणामष्टवर्गके। तावतीं  
द्विगुणीकृत्य अष्टाभिः परिशोषयेत्। अष्टोपरि भवेद्रेखा  
अष्टाभ्यन्तरविन्दवः। यत्र रेखा न विन्दुश्च तत्समं  
परिकीर्तितम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'ललाटे यस्य

दृश्यन्ते तिस्रो रेखाः समाहिताः । सुखी पुत्रसमायुक्तः स षष्टि जीवते नरः । चत्वारिंशच्च वर्षाणि द्विरेखा-  
दर्शनाक्षरः । विंशत्यब्देमेकरेख आकर्णान्ता शतायुषः ।  
आकर्णान्तरिता रेखास्तिस्रश्च स्युः शतायुषः । सप्तत्या  
मूर्द्धिन् रेखा तु षष्ट्यायुस्ति सृभिर्भवेत् । व्यक्ताव्यक्ताभी  
रेखाभिविंशत्यब्दायुरेव हि । चत्वारिंशच्च वर्षाणि  
हीनरेखस्तु जीवति । भिन्नाभिश्चैव रेखाभिरपमृत्युर्नरस्य  
हि । त्रिशूलं पट्टिशं वापि ललाटे यस्य दृश्यते । घनपुत्र-  
समायुक्तः स जीवेत् शरदः शतम् । कुलरेखा तु प्रथमा  
अङ्गुष्ठादनुवर्तते । मध्यमायाः करे रेखा आयुरेखा  
अतः परम् । कनिष्ठिकां समाश्रित्य आयुरेखां समादिशेत् ।  
अच्छिन्ना वाविभक्ता वा स जीवेच्छरदः शतम् । यस्य  
पाणितले रेखा आयुस्तस्य प्रकाशयत् । शतं वर्षाणि  
जीवेच्च भोगी रुद्र ! न संशयः । कनिष्ठिकां समाश्रित्य  
मध्यमायामुपारता । षष्टिवर्षायुषं कुर्याद् आयुरेखा  
तु मानवम्—इति गारुडे ६३ अध्यायः । 'घनाङ्गुलिश्च  
सघनस्त्रिस्रो रेखाश्च यस्य वै । नृपतेः करतलगा मणिवन्धे  
समुत्थिता । युगमीनाङ्कितकरो भवेत् सत्रप्रदो नरः ।  
वज्राकारश्च घनिनां मत्स्यपुच्छनिभो बुधे । शङ्खात-  
पत्रशिविकागजपद्मोपमा नृपे । कुम्भाङ्कुशपताकाभा  
मृणालाभा निरीश्वरे । चक्रासितोमरधनुःकुन्ताभा  
नृपतेः करे । उद्वललाभा यज्ञाढचे वेदीभाश्चाग्नि-  
होत्रिणि । वापीदेवकुलाभाश्च त्रिकोणाभाश्च धार्मिके ।  
अङ्गुष्ठमूलगा रेखाः पुत्राः सूक्ष्माश्च कारिकाः ।  
प्रदेशिनीगता रेखा कनिष्ठामूलगामिनी । शतायुषं  
च कुस्ते छिन्नया तस्तो भयम् । निःस्वाश्च बहुरेखाः  
स्युनिर्द्रव्याश्चिचवृकैः कृशैः—इति गारुडे ६६ अध्यायः ।  
अल्पकं; छय; आभोगः; उल्लेखः । ५४१

रेणुः पुं.— स्त्री । [ रिणातीति । री गतिरेषणयोः + 'अजि-  
वृरोम्यो निच्च' इति णु.] घूलिः; 'मानुषीकरणरेणुरस्ति  
ते, पादयोरिति कथा प्रथीयसी । क्षालयामि तव पाद-  
पङ्कजं, नाथ ! दारुदृशदोस्तु का भिदा ।' पुं. [ री +  
णु ] पर्षट्; रेणुका; पांशुः; 'दिनकराभिमुखा रणरेणवो  
रुधरे रुधरेण सुरद्विषाम्'—इति रघौ (१।२३) ।  
विडङ्गः; 'जन्तुघ्नं भस्मकं रेणुः क्रिमिघ्नं चित्रतण्डुलम् ।  
क्रिमिशत्रुः विडङ्गश्च गर्दभं तच्च केवलम्'—इति  
वचकरत्नमालायाम् । ४४३

रेतः [ स् ] क्ली. [ रीयते क्षरतीति । री क्षरणे + 'सुरीम्यां  
तुट् च' इति असुन्, तस्य तुट् च ] शुकं; वीर्यं; बलं;  
बीजम्; इन्द्रियं; रेतनं; रेत्रम्; 'स्त्रीणां रजोमयं  
रेतो बीजाढ्यमिन्द्रियं नरे । तस्मात् संयोगतः पुत्रो  
जायते गर्भसम्भवः । प्रथमेऽहनि रेतश्च संयोगात्  
कललञ्च यत्'—इति हारीतः । 'मातापित्रोर्बीजदोषाद-  
शुभैश्चावृतात्मनः । गर्भस्थस्य यदा दोषाः प्राप्य रेतोवहाः  
शिराः । शोषयन्त्याशु तन्नाशाद्रेतश्चाप्युपहन्यते । तत्र  
सम्पूर्णसर्वाङ्गः स भवत्यपुमान् पुमान् । एते त्वसाध्या  
व्याख्याताः सन्निपातसमुच्छ्रयात्'—इति चरकः । 'न  
वामहस्तेनोद्धृत्य पिवेद्वक्त्रेण वा जलम् । नोत्तरेदनु-  
पस्पृश्य नाप्सु रेतः समुत्सृजेत्'—इति कौर्म्ये । पारदं;  
जलम्; 'वृष्टिलक्षणां नाम् अपां देवानां रेतस्त्वाद्रेत  
उच्यते । तथाचोपनिषत्—'देवानां रेतो वर्षमिति'—इति  
तट्टीकायां देवराजयज्वा । यथा—ऋग्वेदे (६।७०।२)  
'अस्ते रेतः सिञ्चतं यन्मनुहितम् ।' ६३८

रेपः त्रि. [ रेप्यते निन्द्यते इति । रेप् + घञ् ] अघमः;  
निन्दितः; क्रूरः; कृपणः । ३३७

रेफाः [ स् ] त्रि. [ रिफतीति । रिफ् + असुन् ] अघमः;  
क्रूरः; दुष्टः; कृपणः । ३३७

रेवतीरमणः पुं. [ रेवत्या रमणः पतिः ] रेवतीशः;  
रेवतीपतिः; बलदेवः; बलरामः; कामपालः; हलायुधः;  
बलभद्रः । २९

रेवा स्त्री. [ रेवते उल्लुत्य गच्छतीति । रेव् + अच् +  
टाप् ] नर्मदानदी; 'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे  
विशीर्णाम्'—इति मेघदूते (२०) । ६७४

रोकम् क्ली. [ रोचतेऽप्रेति । रुच् + घञ् । न्यङ्क्वादित्वात्  
कुत्वम् ] छिद्रं; नौका; चलं; पुं. क्रयभेदः; दीप्तिः;  
'दिवश्चिदाते रुचयन्त रोकाः'—इति ऋग्वेदे (३।६।७) ।  
'ते रोकास्त्वदीया दीप्तयः'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
६२४

रोगः पुं. [ रुज्यतेऽनेनेति । रोजनमिति वा । रुज् + घञ् ।  
यद्वा रुजतीति । रुज् + 'पदरुजविशस्युशो घञ्' इति  
कर्तरि घञ्. ] देहभङ्गकारकः; रुक्; रुजा; उपतापः;  
व्याधिः; गदः; आमयः; अपाटवः; आमः; आतङ्कः;  
भयः; उपघातः; भङ्गः; अतिः; तमोविकारः;  
ग्लानिः; क्षयः; अनाज्वलः; मृत्युभृत्यः; अमः; मान्द्यम्;

आकल्पम्; 'रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता ।  
रोगाद्दुःखस्य दातारो ज्वरप्रभृतयो हि ते'—इति वाग्भटः ।  
कुष्ठौषधम् । ६००

रोगितः त्रि. [ रोगः संजातः अस्य । इतच् ] रोगयुक्तः;  
व्याधितः; विकृतः; ग्लानः; म्लानः; मन्दः; आतुरः;  
अभ्यान्तः; अभ्यमितः; रुग्णः; सामयः; अपटुः;  
आमयावी; ग्लान्तुः । २८२

रोचिः [ स् ] क्ली. [ रोचतेऽनेनेति । रुच्+वाहुलकात्  
इतिन् ] किरणः; अंशुः; प्रभा; 'रथाङ्गपाणेः पटलेन  
रोचिषामृषित्विवयः संवल्लिता विरेजिरे'—इति भाषे  
(१।२१) । ३८

रोदः [ स् ] क्ली. [ रुद्+असुन् ] स्वर्गः; भूमिः; 'एते  
पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशुः'—इति ऋग्वेदे  
(१।२२।५) । [ द्वि. व. ] रोदस्यो, द्यावाभूमी । रोदसी  
स्त्री. 'द्यावापृथिव्यो रोदस्यो; रोदसी रोदसीति च ।  
'प्रसूरस्वापि भूधावो रोदस्यो रोदसी च ते—' इत्यमरः ।  
'रोदश्च रोदसी चापि दिवि भूमी पृथक् पृथक् । सह  
प्रयोगेऽप्यनयो रोदः स्यादपि रोदसी'—इति विश्वः ।  
'रोदसी रोदसा साद्वं पृथ्वीस्वर्गे दिवि क्षितौ'—इत्यजयः ।  
१२१ ।

रोषः पुं. [ रुणद्धि जलमिति । रुष्+पचाद्यच् ] नदीतीरं;  
[ रुष्+घञ् ] रोषनम्; 'अहं वैश्वकुले जातो जन्मन्य-  
स्मात्तु सप्तमे । समतीते गवां रोषं निपाने कृतवान्  
पुरा'—इति मार्कण्डेये (१३।१) । ६६७

रोषः [ स् ] क्ली. [ रुणद्धि वार्यादिकमिति । रुष्+  
'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन् ] नदीतीरम्; 'स नमंदा-  
रोषसि सीकराद्रैर्मर्षिद्भिरानतिनक्तमाले । निवेशयामास  
विलङ्घिताध्वा क्लान्तं रजोघूसरकेतु सैन्यम्'—इति  
रघो (५।४२) । ६६७

रोषवक्रा स्त्री. [ रोषेन वक्रा ] नदी; 'निम्नगा रोषवक्रा  
च लयन्ती सिन्धुरापगा'—इति भागुरिः । ६६६

रोषोवक्रा स्त्री. [ रोषसा वक्रा ] नदी । ६६६

रोषोवती स्त्री. [ रोषोऽस्त्यस्या इति । रोषस्+मनुप्+  
ङीप् ] नदी । ६६६

रोषः पुं. [ रुष्यतेऽनेनेति । रुष् विमोहे+घञ् ] बाणः;  
[ रुष्+णिच्+घञ् ] रोषणं; जननं; प्रादुर्भावः; 'एता  
जात्यस्तु वृक्षाणां तेषां रोषे गुणास्त्वमे'—इति

महाभारते (१३।५८।२४) । ४६६

रोम [ न् ] क्ली. [ रोतीति, रु+ 'नामन्सीमन्व्योमन्-  
रोमन्निति' मनिन् प्रत्ययेन साधु ] शरीरजाताङ्कुरः;  
लोम; अङ्गजं; त्वग्जं; चर्मजं; तनूरुहम्; 'अल्प-  
रोमयुता श्रेष्ठा जङ्घा हस्तिकरोपमा । रोमैकैकं कूपके  
स्यान्नृपाणां तु महात्मनाम् । द्वे द्वे रोमे पण्डितानां  
श्रोत्रियाणां तथैव च । रोमत्रयं दरिद्राणां रोमी  
निर्मासजानुकः'—इति गारुडे ६६ अध्यायः ।  
न सर्पशस्त्रैः क्रीडेत स्वानि खानि न संपृशेत् । रोमाणि  
च रहस्यानि नाशिष्टेन सदा व्रजेत्—इति कौर्मौ ।  
जनपदविशेषः; तद्देशवासिनि पुं. भूमिनि । 'वानायवो  
दशाः पार्श्वीः रोमाणः कुशविन्दवः'—इति महाभारते  
(६।१।५५) । रोमं; क्ली. जलं; लोम; 'द्वौ चास्य  
पिण्डावधरेण कण्ठादजातरोमी सुमनोहरी च'—इति  
महाभारते (३।११।२।३) । जनपदविशेषः । ५२४

रोमविकारः पुं. [ रोम्णां विकारः ] रोमाञ्चः; रोम-  
विक्रिया; रोमोद्गमः; रोमोद्भेदः; रोमहर्षः; रोम-  
हर्षणम् । ६५१

रोमहर्षः पुं. [ रोम्णां हर्षः ] रोमाञ्चः; 'वेपयुश्च शरीरे  
मे रोमहर्षश्च जायते'—इति गीतायाम् (१।२९) । ६५१

रोमाञ्चः पुं. [ रोम्णाम् अञ्चः उद्गमः ] रोमहर्षणम्;  
'स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमाञ्चः स्वरभङ्गोऽथ वेपयुः ।  
वैवर्ष्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्त्विकाः स्मृताः । 'हर्षाद्भूत-  
भयादिभ्यो रोमाञ्चो रोमविक्रिया'—इति साहित्य-  
दर्पणे (३।१६६) । ६५१

रोमोद्गमः पुं. [ रोम्णामुद्गमः ] रोमाञ्चः; रोमहर्षणम्;  
'रोमोद्गमः प्रादुरभूदुमायाः स्विन्नाङ्गुलिः पुङ्गवकेतु-  
रासीत् । वृत्तिस्तयोः पाणिसमागमेन समं विभक्तेव  
मनोभवस्य'—इति कुमारे (७।७७) । ६५१

रोमोद्भेदः पुं. [ रोम्णामुद्भेदः ] रोमाञ्चः; रोमविक्रिया;  
रोमविकारः; 'स्फुरद्भोमोद्भेदस्तरलतरताराकुलदृशो,  
भयोत्कम्पोत्तुङ्गस्तनयुगभरासङ्गसुभगः'—इति प्रबोध-  
चन्द्रोदये १ अङ्के । ६५१

रोषः पुं. [ रुष्+घञ् ] क्रोधः; कोपः; 'मुञ्चसि किं  
मानवतीं व्यवसायाद् द्विगुणमन्युवेगेति । स्नेहभवः पय-  
साग्निः सान्त्वेन च रोष उन्मिषति'—इति आर्यासप्त-  
शत्याम् (४४९) । ३६२



रोषणः त्रि. [ रोषति तच्छीलः । रुष् + 'ऋधमण्डार्थे-  
म्यश्च' इति युच् ] कोपनः; क्रोधनः; क्रोधी;  
अमर्षणः; 'न धर्मः क्रोधशीलस्य नार्थं चाप्नोति रोषणः ।  
नालं सुखाय कामाप्तिः कोपेनाविष्टचेतसाम्'—इति  
भार्कण्डेये (११२।१५) । पारदः; हेमधर्षणोपलः;  
ऊषरभूमिः । ३६१

रोहणद्रुमः पुं. [ रोहणः शुभ्रः स चासौ द्रुमः ] चन्दनवृक्षः;  
मलयजः; श्रीखण्डम् । ५४४

रोहिणी स्त्री. [ रूह् + इनन्, गीरादित्वाद् डीप् ] स्त्रीगवी;  
'प्रीत्या नियुक्ताल्लिहती. स्तनन्वयान्निगृह्य पारीमुभयेन  
जानुनोः । वद्विष्णुधाराध्वनि रोहिणीः पयः चिरं  
निदध्या दुहतः स गोदुहः'—इति माघे (१२।४०) ।  
तडित्; कटुम्भरा; सोमवल्कः; 'कटुफलः सोमवल्कास्यः  
सोमवृक्षश्च रोहिणी'—इति वैधकरत्नमालायाम् ।  
महाश्वेता; 'कटभी किनिही श्वेता महाश्वेता च रोहिणी'  
—इति वैधकरत्नमालायाम् । [ रोहितवर्णविशिष्टा  
स्त्री, रोहित + 'वर्णादनुदात्तोपपधात्तो' नः' इति डीप्  
तस्य नत्वं च ] लोहिता; जिनानां विद्यादेवीविशेषः;  
काश्मरी; हरीतकी; मञ्जिष्ठा; कपिलवर्णा वर्तुला-  
कारा विरेचने प्रशस्ता हरीतकी; बलदेवमाता; सा  
वसुदेवभार्या; कश्यपपत्नीसुरभ्यंशजाता; 'देवकी  
रोहिणी चेमे वसुदेवस्य धीमतः । रोहिणी सुरभिर्देवी  
अदितिर्देवकी ह्यभूत्'—इति महाभारते हरिवंशः ।  
सुरभिकन्या; 'दक्षस्य तनया याभूत् सुरभिर्नाम नामतः ।  
गवां माता महाभागा सर्वलोकोपकारिणी । तस्यां तु  
तनया जज्ञे कश्यपात्तु प्रजापतेः । नाम्ना सा  
रोहिणी शुभ्रा सर्वकामदुघा नृणाम् । तस्यां जज्ञे  
शूरसेनाद्भसोरिति तपोज्वलात् । कामधेनुरिति ख्याता  
सर्वलक्षणसंयुता'—इति कालिकापुराणे । नववर्षीया  
कन्या; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा तु रोहिणी ।  
दशमे कन्यका प्रोक्ता अत ऊर्ध्वं रजस्वला ।' पञ्चवर्षा-  
कुमारी; 'रोहिणी पञ्चवर्षा च षड्वर्षा कालिका  
स्मृता'—इति देवीभागवते (३।२६।४२) । 'रोहिणी  
रोगनाशाय पूजयेद्विधिवन्नरः ।' पूजामन्त्रोऽस्याः—  
'रोहयन्ती च वीजानि प्राग्जन्मसञ्चितानि वै । या देवी  
सर्वभूतानां रोहिणीं पूजयाम्यहम्'—इति देवीभागवते  
(३।२६।५६) । हिरण्यकशिपुकन्या; 'कन्या सा

रोहिणी नाम हिरण्यकशिपोः सुताः'—इति महाभारते  
(३।२२०।१८) । [ रोहिणि + पक्षे डीप् ] अश्विन्यादि-  
सप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गतचतुर्थनक्षत्रम्; रोहिणिः;  
ब्राह्मी । 'स्याद्धर्मकार्यं कुशलः कुलीनः सुचारुदेहो  
विलसत्कलेवरः । स्मराग्निनाकुलिताखिलाशयो यो  
रोहिणीजः स धनी स मानी'—इति कोष्ठीप्रदीपः ।  
गलरोगविशेषः; 'रोहिणी पञ्चषा प्रोक्ता कण्ठशालूक  
एव च । अधिजिह्वश्च बलपेऽलासनाभैरवृन्दकः । ततो  
वृन्दः शतघ्नी च गिलायुः कण्ठविद्रधिः । गलोघः  
प्रस्वरधनश्च मांसतालस्तथैव च । विदाही कण्ठदेशे तु  
रोगा अष्टादश स्मृताः । गलेऽनिलः पित्तकफौ च मूर्च्छितौ,  
प्रदूष्य मांसं च तथैव शोणितम् । गलोपसंरोधकरैस्तथा-  
ङ्कुरैर्निहन्त्यसून् व्याधिरियं हि रोहिणी'—इति भाव-  
प्रकाशः । स्थूले त्रि. । 'नैव ह्रस्वा न महती न कृशा  
नापि रोहिणी । नीलकुञ्चितकेशी च तया दीव्याम्यहं  
त्वया'—इति महाभारते (२।६।१३३) । २६८

रोहिणीवल्कलभः पुं. [ रोहिण्या वल्कलभः ] रोहिणीपतिः;  
रोहिणीरमणः; रोहिणीशः; रोहिणीप्रियः; चन्द्रः;  
चन्द्रमाः; वसुदेवः । ४२

रोहितम् क्ली. [ रूह् + 'रूहे रश्च लो वा' इति इतन् ]  
ऋजुशकशरासनम्; 'विद्युतोऽशनिमेघांश्च रोहितेन्द्र-  
धनूपि च । उत्कानिर्घातकेतुंश्च ज्योतींष्युच्चावचानि  
च'—इति मनुः (१।३८) । कुलकुमं; रक्तम् । ५७

रोहितः पुं. [ रोहतीति । रूह् + 'रूहे रश्च लो वा' इति  
इतन् ] मोनविशेषः; महामत्स्यभेदः; 'रोहितो मास्तहरो  
नात्यर्थं पित्तकोपनः'—इति सुश्रुतः । 'रोहितो दीप-  
नीयश्च लघुपाको महाबलः'—इति चरकः । 'वातघ्नो  
नहि पित्तकृद्गलकरः स्याद्रोहितः सर्वदा'—इति हारीतः ।  
स्वनामख्यातो हरिश्चन्द्रस्य नृपतेः पुत्रः; रोहिताश्वः;  
'राजा पुत्रमुखं दृष्ट्वा सुखमाप महत्तरम् । नामास्य  
रोहितश्चेति चकार विधिपूर्वकम् ।' मृगभेदः; रोहितक-  
वृक्षः; रोहीतवृक्षः; अग्निघोटकः (रोहन्ति आरोहन्ति  
रयं वह्न्यादिवमिति); 'यदयुक्था अरुषा रोहिता  
रथे'—इति ऋग्वेदे (१।९।१०) । रोहिता लोहितवर्णा,  
रोहित इत्यग्नेरश्वस्याख्या, रोहितोऽग्नेरितिदर्शनाद्,  
रोहितेन त्वाग्निर्देवतां गमयन्त्विति मन्त्रवर्णाच्च'—  
इति तद्भाष्ये सायणः । रक्तवर्णः; रक्तवर्णविशिष्टे

त्रि. । 'नमो रोहिताय स्यपतये वृक्षाणां पतये नमः'—  
इति वाजसनेयसंहितायाम् (१६।१९) । ६५९

रोहिताश्वः पुं. [ रोहितः अश्वो यस्य ] अग्निः; वह्निः ।  
६४

रोद्रम् क्ली. — पुं. [ रुद्रस्येदमिति । रुद्र+अण् ] सूर्यतेजः;  
धर्मः; प्रकाशः; द्योतः; आतपः; सप्त रौद्राः—'जठरः  
पिङ्गलो रौद्रो घोराख्यः कालसंज्ञितः । अग्निनामा हतो  
रौद्रः सप्त रौद्राः प्रकीर्त्ताः ।' ४०

रौद्रः पुं. [ रुद्रो देवतास्य । रुद्र+अण् ] नवरसभेदः; 'रौद्रः  
क्रोधस्याग्निभावो रक्तो रुद्राधिदैवतः । आलम्बनं रिपु-  
स्तत्र तच्चेष्टोद्दीपनं मतम् ।' हेमन्तऋतुः; यमः;  
कार्तिकेयः; 'आग्नेयः कृत्तिकापुत्रो रौद्रो गाङ्गेय इत्यपि ।  
श्रूयते भगवान् देवः सर्वदेवमयो गुहः'—इति महाभारते  
(१।१३।८।१३) । त्रि. [ रुद्र+अण् ] तीव्रः; 'ज्वरस्त्रि-  
पादस्त्रिशिराः पङ्भुजो नवलोचनः । भस्मप्रहरणो रौद्रः  
कालान्तकयमोपमः'—इति हरिवंशः । भीषणः; 'तस्य  
ते तद्वचः श्रुत्वा रौद्रं लोमप्रहर्षणम् । प्रचक्रुर्बहुलां पूजां  
कुत्तन्तो घृतराष्ट्रजम्'—इति महाभारते (२।६४।५०) ।  
रुद्रसम्बन्धी । ९२

रोहिण्यः पुं. [ रोहिण्या अपत्यमिति । रोहिणी+ 'शुभ्रा-  
दिभ्यश्च' इति ङक् ] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः;  
'तत्रोषविष्टं पृथुदीर्घबाहुं ददर्श कृष्णः सहरोहिण्यः'—  
इति महाभारते (१।१९२।१९) । (५६) बुधग्रहः;  
सीम्यः; रोहिणीसुतः; रोहिणीभवः । पुरुषोत्तमस्थ-  
तीर्थसञ्चकान्यतमः; 'भार्कण्डेये वटे कृष्णे रोहिण्ये  
महोदधौ । इन्द्रद्युम्नसरः स्नात्वा पुनर्जन्म न विद्यते'—  
इति तीर्थतरुणे । त्रि. गोवत्सः; क्ली. मरकतमणिः । २९

ल

लक्षणम् क्ली. [ लक्ष्यते ज्ञायतेऽनेनेति । लक्ष्+ल्युट् ।  
यद्वा 'लक्षेरट् च' इति नप्रत्ययस्तस्याडागमश्च ]  
चिह्नम्; 'अव्याक्षेपो भविष्यन्त्याः कार्यसिद्धेहि लक्षणम्'—  
इति रघौ (१०।६) । नामः; 'सर्वं परवशं  
दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् । एतद्विद्यात् समासेन लक्षणं  
सुखदुःखयोः'—इति मनुः (४।१६०) । दर्शनं; पुं.  
[ लक्ष्+ 'लक्षेरट् च' इति न तस्याडागमश्च । लक्षणम-  
त्यस्येति अच् वा ] सौमित्रिः; रामभ्राता लक्ष्मणः;

'लक्षणानुगतो यश्च सर्वभूतहिते रतः । चतुर्दश वने  
तप्त्वा तपो वर्षाणि राधवः'—इति हरिवंशे (४।१।२९) ।  
सारसपक्षी; असाधारणधर्मः । ४५

लक्षणा स्त्री. [ लक्षण+टाप् ] सारसी; हंसी; अप्सरो-  
विशेषः; 'अम्बिका लक्षणा क्षेमा देवी रम्भा मनोरमा'—  
इति महाभारते (१।१२३।५९) । शक्यसम्बन्धः;  
'लक्षणा शक्यसम्बन्धस्तात्पर्यानुपपत्तिः'—इति भाषा-  
परिच्छेदः । २४४

लक्ष्म [ न् ] क्ली. [ लक्षयत्यनेन, लक्ष्यते इति वा । लक्ष्+  
मनिन् ] चिह्नम्; 'सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं,  
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति । इयमधिक-  
मनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी, किमिव हि मधुराणां  
मण्डनं नाकृतोनाम्'—इति शाकुन्तले । १ अङ्के ।  
प्रधानम् । ४५

लक्ष्मणा स्त्री. [ लक्ष्मीरस्त्यस्याः । पामादित्वात् अ च,  
टाप् । लक्ष्मणमस्त्यस्या इति वा । अर्श आदित्वाद्  
अच्+टाप् ] सारसी; ओषधिभेदः; लक्ष्मणाकन्दः;  
पुत्रकन्दा; पुत्रदा; नागिनी; नागाह्वा; नागपत्नी;  
तुलिनी; मज्जिका; अस्त्रविन्दुच्छदा; पुच्छदा;  
'पुत्रकर्मकाररक्तात्पबिन्दुभिर्लाञ्छिता सदा । लक्ष्मणा  
पुत्रजननी वस्तगन्वाकृतिर्भवेत्'—इति भावप्रकाशः ।  
मद्राधिपतिकन्या; 'सुतां च मद्राधिपतेर्लक्ष्मणां लक्ष्मणै-  
र्युताम् । स्वयंवरे जहरैकः स सुपर्णः सुधामिव'—  
इति भागवते (१०।५।५७) । दुर्योधनकन्या; सा  
तु श्रीकृष्णपुत्रेण साम्बेन विवाहिता; 'दुर्योधनसुतां  
राजन् लक्ष्मणां समितिञ्जयः । स्वयंवरस्यामहरत् साम्बो  
जाम्बवतीसुतः'—इति भागवते (१०।६।११) । २४४

लक्ष्मीः स्त्री. [ लक्षयति पश्यति उद्योगिनमिति । लक्षि+  
'लक्ष्मिर्दृ च' इति ई प्रत्ययो मुडागमश्च ] विष्णुपत्नी;  
पद्मालया; पद्मा; कमला; श्रीः; हरिप्रिया; इन्दिरा;  
लोकमाता; मा; क्षीरावितनया; रमा; जलधिजा;  
भार्गवी; हरिवल्लभा; दुग्धाब्धितनया; क्षीरसागर-  
सुता; 'नित्यं छेदस्तृणानां क्षितिनखलिखनं पादयोरल्प-  
शौचम्, एकाङ्गे तैलहीनं वसनमलिनता वन्धनं मूर्द्ध-  
जानाम् । द्वे सन्ध्ये चापि निद्रा विवसनशयनं प्रास-  
हासातिरेकः, स्वाङ्गे पीठे च वाद्यं हरति घनपतेः  
केशवस्यापि लक्ष्मीम् ।' शोभा (८।३); दुर्गा;

'स्तुतिः सिद्धिरिति ख्याता श्रिया संश्रयणाच्च वा ।  
लक्ष्मीर्वा ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति  
देवीपुराणे ५५ अध्यायः । सम्पत्तिः; ऋद्धघोषधिः;  
वृद्धिनामौषधिः; फलिनीवृक्षः; सीता; वीरयोषित्;  
स्थलपद्मिनी; हरिद्रा; शमी; द्रव्यं; मुक्ता; मोक्ष-  
प्राप्तिः; शोभा; 'कपालनेत्रान्तरलब्धमार्गैर्ज्योतिःप्ररो-  
हेरुदितैः शिरस्तः । मृणालसूत्राधिकसौकुमार्यां बालस्य  
लक्ष्मीं लपयन्तमिन्दोः'—इति कुमारै (३।४९) ३१

लक्ष्यम् क्ली. [ लक्ष्यते यदिति, लक्ष्+प्यत् ] शरवेध-  
स्थानं; लक्षं; शरव्यं; प्रतिकायः; वेध्यं; वेधम्;  
'कामस्तु बाणावसरं प्रतीक्ष्य पतङ्गवद्वह्निमुखं विविक्षुः ।  
उमासमक्षं हरबद्धलक्ष्यः शरासनज्यां मुहुराममर्श'—  
इति कुमारै (३।६४) । त्रि. लक्षणया बोध्यः; [ लक्ष्यते  
इति, लक्ष्+प्यत् ] दर्शनीयः; इति लक्षधात्वर्थदर्शनात् ।  
व्याजः; 'रोमाञ्चलक्ष्येण स गात्रयाष्टि भिस्वा  
निराक्रामदरालकेश्याः'—इति रघौ (६।८१) । अनुमेयः;  
'इति द्विजाती प्रतिकूलवादिनि प्रवेपमानाधरलक्ष्य  
कोपया'—इति कुमारै (५।८४) । 'छायामण्डल-  
लक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम् । पद्मा पद्मातपत्रेण भजे  
साम्राज्यदीक्षितम्'—इति रघौ (४।५) । ४६८

लगुडः पुं. [ लगति सङ्गं करोति । लगे सङ्गे, बाहुल-  
कादुडच् ] दण्डः; वंशादिमयो दण्डः; लोहमयोऽस्त्र-  
भेदः; लोहमयी यष्टिः; 'लट्ठ' 'लाठी' इति भाषा ।  
'लगुडः सूक्ष्मपादः स्यात् पृथ्वंशः स्थूलशीर्षकः । लौह-  
वद्वाप्रभागश्च ह्रस्वदेहः सुपीवरः । दण्डाकारो दृढाङ्गश्च  
तथा हस्तद्वयोनतः । उत्थानं पातनं चैव पेषणं पोथनं  
तथा । चतस्रो गतयस्तस्य पञ्चमी नेह विद्यते'—इति  
शुक्रनीती । ७२६

लग्नः पुं. [ लग्+क्त, निपातनात् साधुः । यद्वा लस्ज्+  
क्तः । 'ओलस्जी, लस्जेरोदनुबन्धबलादिडभावे  
नत्वम् ] मत्तगजः; प्रभिन्नः; स्तुतिपाठकः; प्रातर्गैयः;  
स्तुतिव्रतः; सूतः; त्रि. सक्तः; लज्जितः; क्ली.  
[ लगति फले इति, लगे सङ्गे+क्षुब्धस्वान्तध्वान्त-  
लग्नेति' निपातनात् साधु ] राशीनामुदयः; अहोरात्र-  
मध्ये द्वादशराशयः उदयन्ति । २२०

लग्नकः पुं. [ लग्न एव+स्वार्थे कन् ] प्रतिभूः; 'जामिन'  
इति यवनभाषा । ३८०

लघु क्ली. [ लङ्घते अनेनेति । लङ्घ्+ 'लङ्घिवंहोर्नलो-  
पश्च' इति कु घातोर्नलोपश्च ] शीघ्रं; क्षिप्रं; झटिति;  
'यावदेव तु सुप्तास्तावदेव वयं लघु । रथमारुह्य गच्छामः  
पन्थानमकुतोभयम्'—इति रामायणे (२।४६।२१) ।  
कृष्णागुरु; लामज्जकम्; 'लामज्जकं सुनालं स्यादमृणालं  
लयं लघु । इष्टकापथकं सेव्यं नलदं चावदातकम्'—इति  
भावप्रकाशः । हस्ताशिवनीपुष्यनक्षत्राणि; 'लघुहस्ताशिव-  
नपुष्याः पण्यरतिज्ञानभूषणकलासु । शिल्पीषधयाना-  
दिषु सिद्धिकराणि प्रदिष्टानि'—इति बृहत्संहितायाम्  
(९८।९) । कालपरिमाणविशेषः; 'क्षणान् पञ्च विदुः  
काष्ठं लघु ता दश पञ्च च । लघूनि वै समाम्नाता दश  
पञ्च च नाडिकाः । पुं. प्राणायामविशेषः; 'लघुमध्योत्त-  
रीयाख्यः प्राणायामस्त्रिघोदितः । तस्य प्रमाणं वक्ष्यामि  
तदलकं शृणुष्व मे । लघुद्वादशमात्रस्तु द्विगुणः स तु  
मध्यमः । त्रिगुणाभिस्तु मात्राभिस्तमः परिकीर्तितः'—  
इति मार्कण्डेये (३।१।१३-१४) । स्त्री. पृक्कानामौ-  
षधिः; 'पृक्कासृग्ब्राह्मणी देवी मरुन्माला लता लघुः ।  
समुद्रान्ता वधूः कोटिवर्षा लङ्घोपिकेत्यपि'—इति भाव-  
प्रकाशः । त्रि. अगुरुः; 'तृणादपि लघुस्तूलस्तूलादपि च  
भिक्षुकः । न नीतो वायुना कस्मादर्थप्रार्थनशङ्कया'—  
इति उद्भटः । मनोज्ञः; इष्टः; 'नाम्भसां कमलशोभिनां  
तथा शाखिनां च न परिश्रमच्छिदाम् । दर्शनं न लघुना  
यथा तयोः प्रीतिमापुरुभयोस्तपस्विनः'—इति रघौ  
(१।१।२) । निःसारः; 'श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं मेने  
तत्सङ्गमोत्सुकः । महार्णवपरिक्षेपं लङ्कायाः परिखा-  
लघुम्'—इति रघौ (१।२।६६) । ह्रस्वः; 'ह्रस्वो  
लघुः, दीर्घो गुरुः । 'मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादि-  
गुरुः पुनरादिलघुर्यः । जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्त-  
गुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः । गुरुरेको गकारस्तु लकारो  
लघुरेककः'—इति छन्दोमञ्जरी । ६६७

लघुहस्तः त्रि. [ लघुः क्षिप्रकारी हस्तो यस्य ] शीघ्र-  
वेधी; 'स राजपुत्रश्छिच्छैव रक्षसस्तस्य तच्छिरः ।  
भूयः खड्गप्रहारेण लघुहस्तो द्विधां करोत्'—इति कथा-  
सरित्सागरे (४।२।१३३) । 'तत्त्वाधिगतशास्त्रार्थी दृष्ट-  
कर्मा स्वयं कृती । लघुहस्तः शुचिः शूरः सज्जोपस्कारमे-  
षजः । प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान् व्यवसायी विशारदः । सत्य-  
धर्मपरो यश्च स भिषक्पाद उच्यते'—इति सुश्रुतः । ४७१

लज्जा स्त्री. [ लज्जनमिति, लज्ज् व्रीडने + 'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप् ] अन्तःकरणवृत्तिविशेषः; अकर्तव्ये कर्मणि परज्ञानभयम्; मन्दाक्षं; ह्रीः; वपा; व्रीडा; 'लाज' इति भाषा। अपत्रपा; मन्दास्यं; लज्या; व्रीडः; व्रीडनम्; 'लज्जा तिरस्त्रां यदि चेतसि स्यादसंशयं पर्वतराजपुत्र्याः। तं केशपाशं प्रसमीक्ष्य कुर्यात्प्रियत्वं शिथिलं चमर्यः'—इति कुमारे (१।४८)। लज्जालुः; क्षुपविशेषः; रक्तपादी; शमीपत्रा; स्यूक्का; खदिर-पत्रिका; सङ्कोचिनी; समङ्गी; नमस्कारी; प्रसारिणी; सप्तपर्णी; खदिरी; गण्डमालिका; लज्जिरी; स्पर्शलज्जा, असुरोधिनी; रक्तमूला; ताम्रमूला; स्वगुप्ता; अञ्ज-विकारिका; महाभीता; वशिनी; महौषधिः। ५६७

लज्जा स्त्री. [ लुञ्च्यते या, लुञ्च् अपनयने, 'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप्, पृषोदरादित्वात्त्वम् ] उपदा; प्राभूतम्; उपग्राह्यम्; उपायनं; उत्कोचः; उपादानम्; उपचारः; आमिपम्। ४३४

लता स्त्री. [ लतति वेष्टयते यान्यमिति। लत् + पचाद्यच्, टाप् ] शाखादिरहिता गुडूच्यादिः; वल्ली; व्रततिः; वल्लिः; वेल्लिः; प्रततिः; लतिका; सा शाखापत्र-समायुक्ता चेतप्रतानिनी; वीश्त्; गुल्मिनी; उलयः। 'अलावृश्चापि कुष्माण्डं मायाम्बुश्च सुकामुकः। खर्जुरी कर्कटी चापि शिबिरे मङ्गलप्रदा। वास्तूकं कारवेल्लश्च वार्ताकुश्च शुभप्रदाः। लताफलं च शुभदं सर्वं सर्वत्र निश्चितम्'—इति विष्णुपुराणे। (२०८) अति-मुक्तकः; वासन्ती; माधवी; शाखा; प्रियङ्गुः; 'प्रियङ्गुः फलिनी कान्ता लता च महिला ह्वया। गुन्द्रा गुन्द्रफला श्यामा विष्वक्सेनाङ्गनाप्रिया'—इति भाव-प्रकाशः। पूक्का; 'तस्करोच्चारकश्चण्डो देवी पूक्का लता लघुः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। अशनपर्णी; ज्योति-ष्मती; 'ज्योतिष्मती स्यात्कटपी ज्योतिष्का कङ्किनीति च। पारावतपदी पण्या लता प्रोक्ता ककुन्दनो'—इति भावप्रकाशः। लताकस्तूरिका; माधवी; दूर्वा; कैव-त्तिका; सारिवा; वृहती; 'भण्टाकी वृहती सिंही वार्ताकी राष्ट्रिकाकुली। प्रसहा रक्तपाका च लता वृहतिका परा। नारी; 'नर्गां परलतां पश्यन् अयुतं यस्तु साधकः। प्रजपेत् स भवेत् शीघ्रं विद्याया वल्लभः स्वयम्'—इति तन्त्रसारे। 'नवा लता गन्धवहेन चुम्बिता

करम्बिताङ्गी मकरन्दशीकरैः। दृशानृपेण स्मितशोभिकु-डमला दरादराम्यां दरकम्पिनी पपे। 'नवा नवीना लता माधवीलता, पक्षे नवा रम्या लता स्त्री' इति तट्टीका। अप्सरोविशेषः; 'अहञ्च सौरभेयी च समीची बुद्बुदा लता। योगपद्येन तं विप्रमम्यगच्छाम भारत !'—इति महाभारते (१।२।१७।२०)। १८०

लतोद्गमः पुं. [ लता इव उद्गमः ] अवरोहः। १८४

लपनम् क्ली. [ लप्यतेऽनेनेति, लप् + करणे ल्युट् ] मुखं; भावे ल्युट् भाषणं [ लपघात्वचंदर्शनात् ] ; सम्भाषणम्; 'प्रकटयति रागमधिकं लपनमिदं वक्रिमाणमावहति। प्रीणयति च प्रतिपदं दूति ! शुकस्येव दयितस्य'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३।८१)। 'शुकस्येव दयितस्य लपनं सम्भाषणम् पक्षे वदनम्'—इति तट्टीका। ५१८

लब्धवर्णः पुं. [ लब्धां वर्णां यशांसि येन ] पण्डितः; 'कुच्छ्रलब्धमपि लब्धवर्णभाक्तं तं दिदेश मुनये सलक्ष्मणम्'—इति रघौ (१।१२)। ३३२

लब्धिः स्त्री. [ लभ् + क्तिन् ] दायः; प्राप्यः; भजनफलम्। ८४४

लम्पटः पुं. [ लम्बते इति, लवि + 'शकादिभ्योऽन्टन्' इत्यटन्, पृषोदरादित्वात् पत्वम् ] आसक्तः; लोलुभः; लोलुपः; लोलः; लालसः; 'यथैहिकामृष्मिककामलम्पटः सुतेषु दारेषु धनेषु चिन्तयन्। शङ्केत विद्वान् कुकलेवरात्ययाद् यस्तस्य यतः श्रम एव केवलम्'—इति भाववते (५।१९।१४)। पिङ्गः; लम्पाकः; 'अथैताराववीन्मैवं यद्यपि स्त्रीषु लम्पटः। तथापि न स दुःखेऽस्मिन्नीदृशः स्यात्तथाविधः'—इति कथासरित्सागरे (४।७।१०१)। ३५३

लम्बितः त्रि. [ लम्ब् + क्त ] संसितः; शब्दितः; निष्पन्नः; 'त्वदधरचुम्बनलम्बितकज्जलमुज्ज्वलय प्रियलोचने'—इति गीतगोविन्दे (१।२।१८)। ५५३

लम्बोदरः पुं. [ लम्बमुदरं यस्य ] हेरम्बः; आखुरथः। गणपतिः; गजवदनः; परशुधरः; एकदन्तः; एकदंष्ट्रः; विनायकः; विघ्नराजः; गणेशः; 'गतिगञ्जितव-युवतिः करो कपोली करोतु मदमलिनी। मुखबन्धमात्र-सिन्धुर लम्बोदर किं मदं वहसि'—इति आर्यासप्त-शत्याम् (१।९८)। नृपविशेषः; भागवते (१।२।१२२)। औदरिके त्रि. 'ततो लम्बोदरेणेत्य पुंसारोपितबाहुकः। सम्पादितः स यात्तस्तद्धनं केशरिणी कृते'—इति कथा-

सरित्सागरे (७०।१०२) । १८

लयः पुं. [ ली+अच् ] तीर्थत्रिकस्य साम्यं; विनाशः; प्रलयः; अक्षण्डवस्त्वलम्बनेन चित्तवृत्तेन्द्रिया; 'चत्वारिंशदिमे प्रोक्ता लया लयविशारदः । लयेन वश्यो भगवान् लये लीनो जनार्दनः'—इतिसंगीतदामोदरः । ९४

ललना स्त्री. [ ललति ईप्सति कामानिति । लल्+ल्यु+टाप् ] कामिनी; 'रतिलुलितललितललनाक्लमजल-लववाहिनो मुहुर्द्यत्र । इत्यकेशकुसुमपरिमलवासितदेहा वहन्त्यनिलाः'—इति कलाविलासे (१।५) । नारीभेदः; लालिनी; जिह्वा । ४८२

ललाटम् क्ली. [ ललम् ईप्सामटति ज्ञापयतीति । लल्+अट्+अण् ] अवयवविशेषः; अलिकं; गोधिः; महाशङ्खः; शङ्खः; भालः; कपालकः; अलीकं; ललाटकम्; 'कपाल' इति भाषा । 'उन्नतैविपुलैः शङ्खैर्ललाटैर्विषमैस्तथा । निहन्ना घनवन्तश्च अर्द्धेन्दुसदृशीर्नराः । आचार्याः शुक्तिविशालैः शिरालैः पापकारिणः । उन्नताभिः शिराभिस्तु स्वस्तिकाभिर्घनेश्वराः । निम्नैर्ललाटैर्वर्धाहार्तः क्रूरकर्मरतास्तथा । संवृत्तश्च ललाटैश्च कृपणा उन्नतैर्नृपाः । ललाटोपसृतास्तिस्रो रेखाः स्युः शतवर्षिणाम् । नृपत्वं स्याच्चतसृभिरायुः पञ्चनवत्यथ । अरेखेणायुर्नवति-विच्छिन्नाभिश्च पुंश्चलाः । केशान्तोपगताभिश्च अशीत्यायुर्नरो भवेत् । पञ्चभिः सप्तभिः षड्भिः पञ्चाशद्बहुभिस्तथा । चत्वारिंशच्च वक्राभिस्त्रिंशद्भ्रू-लग्नगामिभिः । विशतिर्वाभिवक्राभिरायुः क्षुद्राभिरल्पकम् । न पृथु बालेन्दुनिभे भ्रुवी चाथ ललाटकम् । शुभमर्द्धेन्दु-संस्थानमनुज्जं स्यादलोमशम्'—इति गारुडे ६५ अध्याये । 'मस्तकोदरपृष्ठनाभिललाटनासाचिवुकवस्ति-ग्रीवा इत्येता एकैकाः'—इति सुश्रुते । ५२५

ललाटपट्टः पुं. [ ललाटः पट्ट इव फलक इव, यद्वा ललाट एव पट्टः ] ललाटपट्टिका । ५४१

ललाटिका स्त्री. [ ललाटे भवोऽलङ्कारः । 'कर्णललाटात् कनलङ्कारे' इति कन् ] ललाटस्थचन्दनं; शङ्खचर्ची; तिलकः; 'तदा प्रभृत्युन्मदना पितुर्गृहे ललाटिकाचन्दन-घूसरालका । न जातु बाला लभते स्म निर्वृति तुषार-सङ्घातशिलातलेष्वपि'—इति कुमारे (५।५५) । स्वर्णादिरचितललाटाभरणम्; पत्रपाश्या; 'टीका' इति भाषा । ५४१

ललाम् [ न् ] क्ली. [ लड्+अम्+कनिन् ] ललामम्; यथाह रुद्रः—'प्रधानव्वजशृङ्गेषु पुण्ड्रवालधिलक्ष्मसु । भूपावाजिप्रभावेषु ललामं स्यात्ललाम च ।' प्रधाने; रघौ (५।६४) । 'तत्र स्वयंवरसमाहूतराजेलोकं, कन्याललाम कमनीयमजस्य लिप्सोः ।' ८५५

ललामम् पुं.—क्ली. [ लड् विलासे+क्विप्, तम् अमति प्राप्नोतीति । अम् गती+अण्, डस्य लत्वम् ] भूपा; 'पौत्रस्तव श्रीललनाललामं द्रष्टास्फुरत्कुन्तलमण्डितानाम्'—इति भागवते (३।१४।४८) । लाङ्गूलं; पुच्छं; लूमं; बालहस्तः; बालधिः; लङ्गूलं; लाङ्गूलं; लुलामः; अवालः; लज्जः; पिच्छः; बालः । प्रधानम्; 'प्रधानव्वजशृङ्गेषु पुण्ड्रवालधिलक्ष्मसु । भूपावाजि-प्रभावेषु ललामं स्यात् ललाम च'—इति रुद्रः । शृङ्गः; प्रभातः; पुण्ड्रं; ध्वजः; लक्ष्मः; चिह्नं; तुरङ्गः । अश्वललाटे अन्यवर्णचिह्नं; गवादीनां ललाटचिह्नम्; अश्वस्य भूपा; पुरुषः; 'ललामोऽस्त्री ललामापि प्रभावे पुरुषे ध्वजे । श्रेष्ठभूपापुण्ड्रशृङ्गपुच्छचिह्नाश्व-लिङ्गेषु'—इति यादवः (वैजयन्तीकोशः) । त्रि. रम्यः; श्रेष्ठः; 'ललामैर्हंसिभिर्युक्तः सर्वशब्दसहैर्युधि । राज्ञां मध्ये महेष्वासः शान्तभीरम्यवर्तत'—इति महाभारते (७।२२।१३) । ८५५

ललामकम् क्ली. [ ललाटपर्यन्तमागतं ललामकं, ललामं तिलकमिव इति इवार्ये क ] पुरोन्यस्तमाल्यं; तदेव माल्यं पुरः संमुखभागे न्यस्तम् । ५५३

ललितम् क्ली. [ लल्+क्त ] शृङ्गारभावजक्रियाविशेषः; सुकुमारविधानेन भ्रूनेत्रादिक्रियासचिवकरचरणाङ्ग-विन्यासो ललितम्; 'सुकुमाराङ्गविन्यासे मसृणा ललितं भवेत् । 'सुभ्रूभङ्गं करकिशलयावर्तनैरापतन्ती, सा लिम्पन्ती ललितललिता लोचनस्याञ्जनेन । विन्यस्यन्ती चरणकमले लीलया स्वरयाते, निःशङ्का च-प्रथमवयसा नतिता पङ्कजाक्षी ।' 'भ्रूनेत्रादिक्रियाशालिसुकुमार-विधानतः । हस्तपादाङ्गविन्यासस्तस्या ललितं विदुः ।' 'अनाचार्योपदिष्टं स्यात्ललितं रतिचेष्टितम् ।' 'विन्यास-भङ्गिरङ्गाणां भ्रूविलासमनोहरा । सुकुमारा भवेद्यत्र ललितं तदुदीरितम् ।' [ लल् ईप्सायाम्, भावे क्त । लड् विलासे इत्यस्य डलयोरेकत्वेन डस्य लत्वं वा । इति भरतः ] माघे (१।७९) किराते (१०।५२) । पुं.

[ लल्यते ईप्स्यते इति । लल्+कर्मणि क्त ] रागविशेषः; 'प्रफुल्लसप्तच्छदमाल्यधारी युवातिगौरोलसलोचनश्रीः । विनिःसरन् वासगृहात् प्रभाते विलासिवेशो ललितः प्रदिष्टः ।' 'प्रातर्गोयास्तु देशागो ललितः पटम्ञ्जरी । विभाषा भैरवी चैव कामोदो गोण्डकीर्यपि'—इति सङ्गीतदामोदरः । त्रि. सुन्दरः; 'अथ तस्य विवाह-कौतुकं ललितं विभ्रत एव पाथिवः'—इति रघौ (८।१) । ईप्सितः; चलितः । ८९

लवः पुं. [ लवनमिति । लू+अप् ] लेशः; 'वक्रैतराभैरल-कैस्तदण्यश्चूर्णारुणान् वारिलवान् वमन्ति'—इति रघौ (१६।६६) । विनाशः; छेदनं; रामपुत्रः; कालभेदः; 'अष्टादशनिमेपास्तु 'काष्ठा काष्ठाद्वयं लवः'—इति हेमचन्द्रः । 'तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम् । भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः'—इति भाग-वते ( १।१८।१३ ) । लावनामपक्षी; किञ्जल्कः; पक्षः; गोपुच्छलोम; 'स ती कुशलवोन्मूढगर्भकलेदी तदास्यया । कविः कुशलवावेव चकार किल नामतः'— इति रघौ (१५।३२) । ६८८

लवणम् क्ली. [ लुनाति जाड्यमिति । लू+नन्धादित्वात् ल्यु । नन्धादिगणे णत्वपाठाद् णत्वम् ] क्षाररसयुक्त-द्रव्यम्; 'सामुद्रं यत् लवणम् अक्षीवं वसिरं च तत् । सैन्ववोऽप्री शीतशिवं माणिमन्थं च सिन्धुजे । रौमकं वसुकं पाक्यं विडं च कृतके द्वयम् ।' 'सौवर्चलेऽक्षं रुचके' इत्यमरः । 'चक्षुष्यं सैन्ववं हृद्यं रुच्यं लघ्वग्निदीपनम् । स्निग्धं समधुरं वृष्यं शीतं दोषघ्नमुत्तमम् । सामुद्रं मधुरं पाके नात्युष्णमविदाहि च । भेदनं स्निग्धमीषच्च शूलघ्नं नार्तिपित्तलम् । सक्षारं दीपनं रूक्षं शूलहृद्रोग-नाशनम् । रोचनं तीक्ष्णमुष्णं च विडं वातानुलोमनम् । लघु सौवर्चलं पाके वीर्योष्णं विशदं कटु । गुल्मशूल-विवन्धघ्नं हृद्यं सुरभि रोचनम् । रोमकं तीक्ष्णमत्युष्णं व्यवायि कटुपाकि च । वातघ्नं लघु विस्पन्दि सूक्ष्मं विडभेदि मूत्रलम् । लघु तीक्ष्णोष्णमुत्तलेदि सूक्ष्मं वातानुलोमनम् । सतिक्तं कटु सक्षारं विद्याल्लवण-मौद्धिदम् । कफवातकिमिहुरं लेखनं पित्तकोपनम् । दीपनं पाचनं भेदि लवणं गुटिकाह्वयम् । ऊषःसूतं बालुकैलं शैलमूलाकरोद्धवम् । लवणं कटुकं छेदि विहिनं कटु रोच्यते'—इति सुश्रुतः । [ लू+भावे ल्युट् ]

छेदनम्; 'लवोऽभिलावो लवने'—इत्यमरः । सङ्गयुद्ध-प्रकारविशेषः; 'आहितं चित्रकं क्षिप्तं क्रुद्रवं लवन घृतम्'—इति हरिवंशे । पुं. [ लुनातीति । लू+ल्यु ] सिन्धुभेदः; 'लवणेन समुद्रेण समन्तात् परिवारितः'— इति महाभारते (६।५।१५) । राक्षसविशेषः; रघौ (१५।२) । रसविशेषः; 'कटुतीक्ष्णोष्णलवणक्षारा-म्लादिभिस्त्वणैः । मातृभुक्तैरुपस्पृष्टः सर्वाङ्गोत्थित-वेदनः'—इति भागवते (३।३।१७) । पृथिव्यग्नि-गुणबाहुल्याल्लवणः; पटुः; 'लवणो रुचिकृद्रसोऽग्नि-दायी पचनः स्वादुकरश्च सारकश्च । रसितो नितरां जरां च पित्तं शितिमानं च ददाति कुष्ठकारी'—इति राजनिर्घण्टः । 'लवणः शोषनो रुच्यः पाचनः कफपित्तदः । पुंस्त्ववातहरः कायशैथिल्यमृदुताकरः । सोऽसित्युक्तोऽक्षि-पाकास्रपित्तकुष्ठक्षयापकृत्'—इति राजवल्लभः । त्रि. लवणरसयुक्तः; 'मधुरस्त्वविदग्धः स्याद्विदग्धो लवणः स्मृतः'—इति सुश्रुतः । लावण्ययुक्तः । ३२२

लवणाकरः पुं. [ लवणस्य आकरः खनिः ] रुमा । १६९  
लवणोत्तमम् क्ली. [ लवणेषु उत्तमम् ] सैन्धवम् । ६१४  
लवणोवकः पुं. [ लवणम् उदकं जलं यस्य ] लवणसमुद्रः । ३२२

लवित्रम् क्ली. [ लूयतेऽनेनेति । लू+अति लूयस्खनसहचर इत्रः' इति इत्र ] दानम् । ५७७

लहरिः, लहरी स्त्री. [ सर्वतोऽङ्कितम्रयादिति पाक्षिको डीष् ] महातरङ्गः; उल्लोलः; कल्लोलः; 'सरित इव यस्य गेहे शुष्यन्ति विशालगोत्रजा नायः । क्षारास्वेव स तृप्यति जलनिघिलहरिषु जलद इव'—इति आर्या-सप्तशत्याम् (६१४) । ६५३

लाक्षा स्त्री. [ लक्ष्यतेऽज्येति । लक्ष्+गुरोश्च हल् ] इति अ, टाप् । यद्वा बाहुलकात् राजतेरपि स । कपिलि-कादित्वाद् वा लत्वम्, इत्युज्ज्वलः ] रक्तवर्णवृक्षा-निर्यासविशेषः; राक्षा; जतु; यावः; अलक्षतः; द्रुमामयः; खदिरिका; रक्ता; रङ्गमाता; पलङ्कषा; क्रिमिहा; द्रुमव्याधिः; अलक्षतकः; पलाशी; मुद्गिणी; दीप्तिः; जन्तुका; गन्धमादिनी; नीला; द्रवरसा; पित्तारिः; 'लाक्षा वर्ष्णा हिमा वत्या स्निग्धा च तुवरा लघुः । अनुष्णा कफपित्ताम्लहिष्काकासज्वरप्रघृत् । वसोरःक्षतवीसपंक्चमिकुष्ठगदापहा । अलक्षतको गुणै-

स्तद्वद्विशेषाद्वचननाशनः—इति भावप्रकाशः । शतपत्री ;  
सेवन्ती ; 'गुलाव' इति भाषा । 'शतपत्री तरुण्युक्ता  
कर्णिका चारुकेशरा । महाकुमारी गन्वाढ्या लाक्षा  
कृष्णातिमङ्गला'—इति भावप्रकाशः । ५५५

लाङ्गलम् क्ली. [ लङ्गतीति, लगि गती+वाहुलकात्  
कलच् वृद्धिश्च धातोः, इति उणादिवृत्तौ उज्ज्वलदत्तः ]  
भूमिकर्षणयन्त्रविशेषः ; हलं ; गोदारणं ; सीरः ; हलः ;  
हालं ; हालः ; शीरः ; 'लाङ्गलं पवीरवत्सुशेव  
सोमपितृसह'—इति यजूः संहितायाम् (१२।७१) ।  
लिङ्गम् ; पुष्पविशेषः ; तालवृक्षः ; गृहदार । ५७५

लाङ्गलपद्धतिः स्त्री. [ लाङ्गलस्य पद्धतिः ] लाङ्गलरेखा ;  
शीताः सीता । ५७६

लाङ्गलम् क्ली. [ लगि+ 'खजिपिञ्जादिभ्य ऊरोलची'  
इति ऊलच्, वाहुलकाद् वृद्धिश्च ] पशुपश्चाद्वति-  
लम्बमानलोमाभ्रात्रयवविशेषः ; पुच्छं ; लूम ; बाल-  
हस्तः ; बालधिः ; लङ्गूलं ; लाङ्गूलं ; लुलामः ; अवालः ;  
लञ्ज ; पिच्छः ; बालः । 'लाङ्गूलविक्षेपविंशतिशोभे-  
रितस्ततश्चन्द्रमरीचिगौरैः । यस्यार्थयुक्तं गिरिराजशब्दं  
कुर्वन्ति बालव्यजनैश्चमर्यः'—इति कुमारे (१।१३) ।  
'लाङ्गूलेनोद्धृतं तोयं मूर्ध्ना गृह्णाति यो नरः ।  
सर्वतीर्थफलं प्राप्य सर्वपापैः प्रमुच्यते'—इति बराह-  
पुराणे गोलङ्गलजलमाहात्म्यम् । शोफः ; कुशलः । ४४१

लाजाः पुं. भूमिन् [ लज्यन्ते ये ते । लज्+घञ् ] भृष्ट-  
धान्यम् ; अक्षतं ; लाजा ; अक्षताः ; 'एते च व्रीहयो  
भृष्टास्ते लाजा इति संशिताः । यवाद्यश्च ये भृष्टास्ते  
धानाः परित्तीतिताः । लाजाश्च यवधानाश्च तर्पणाः  
पित्तनाशनाः । गोधूमयावनालोत्थाः किञ्चिदुष्णाश्च  
दीपनाः । तृष्णातीसारशमनो धातुसाम्यकरः परः ।  
मन्दाग्निविषमाग्नीनां बालस्थविरयोषिताम् । देयश्च  
सुकुमाराणां लाजमण्डः सुसंस्कृतः'—इति राजनिर्घण्टः ।  
लाजा स्त्री. ; अक्षतम् ; 'पैत्तिकं शर्करालाजामधुकैः  
सारिवायुतैः'—इति सुश्रुते (४।१६) । क्ली. [ लाज्+  
अच् ] उपीरं ; भृष्टधान्यम् ; 'येषां स्युस्तण्डुलास्तानि  
धान्यानि सतुपाणि च । भृष्टानि स्फुटितान्याहुर्लाजानीति  
मनीषिणः । लाजाः स्युर्मधुराः शीता लघवो दीपनाश्च  
ते । स्वल्पमधुमला रूक्षा बल्याः पित्तकफच्छिदः ।  
छर्दयतीसारदाहास्रमेहेमेदस्तृषापहाः'—इति भाव-

प्रकाशः । पुं. आर्द्रतण्डुलः । ५८५

लाञ्छनम् क्ली. [ लाञ्छ्+ल्युट् ] चिह्नम् ; 'दिवापि  
निष्ठचूतमरीचिभासा बालादनाविष्कृतलाञ्छनेन ।  
चन्द्रेण नित्यं प्रतिभिन्नमौलेश्चूडामणेः किं ग्रहणं हरस्य'—  
इति कुमारे (७।३५) । नाम ; पुं. [ लाञ्छतीति ।  
लाञ्छ्+ल्यु ] रागीधान्यं ; लाञ्छनी । ४५

लालसः पुं. [ लस्+यङ्, ततः 'अ प्रत्ययात्' इति अ ]  
लोलुभः ; लोलुपः ; लोलः ; लम्पटः । ३५३

लालसा पुं. — स्त्री. [ लस्+यङ्, ततः 'अ प्रत्ययात्'  
इति अ+टाप् ] दोहदं ; दीहदं ; श्रद्धा ; 'दोहदं दोहदं  
श्रद्धा लालसा सूतिमासितु'—इति हेमचन्द्रः । ४९८  
महाभिलापः ; औत्सुक्यं ; याचना ; लोलः ; लोलुपे  
त्रि. । 'छायां निजस्त्रीचटुलालसानां मदेन किञ्चिच्  
चटुलालसानाम् । कुर्वाणमुत्पिञ्जरजातपत्रैर्विहङ्ग-  
मानां जलजातपत्रैः'—इति माघे (४।६) । 'तस्मिन्  
मुहूर्ते पुरसुन्दरीणां ईशानसन्दर्शनलालसानाम्'—इति  
कुमारे (७।५६) । ४९८

लास्यम् क्ली. [ लस्+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत् ] नृत्यं ;  
लास्यकं ; तीर्थत्रिकम् । भावाश्रयं नृत्यं । ताललयाश्रयं  
नृत्तम् । 'पुंनृत्यं ताण्डवं प्राहुः स्त्रीनृत्यं लास्यमुच्यते'—  
इति सङ्गीतनारायणे नारदसंहिता । 'सम्भोगस्नेह-  
चातुर्यैर्हविलास्यमनोहरैः । राजानं रमयामास तथा  
रेमे तथैव सः'—इति महाभारते (१।९८।१०) ।

पुं. [ लास्यमस्त्यस्येति । लास्य+अच् ] नर्तकः ; लास्या  
स्त्री. ; [ लास्यमस्त्यस्या इति, लास्य+अच्+टाप् ]  
नर्तकी । ९३

लिङ्गम् क्ली. [ लिङ्ग्यते अनेन इति । लिङ्ग्+घञ् ]  
अभिधानात् क्लीबत्वम् ] शोफः ; शिश्नः ; स्मरस्तम्भः ;  
उपस्थः ; मन्दाङ्कुशाः ; कन्दर्पमुषलः ; मेहनं ; शोफः (स्) ।  
मेढ्रम् ; लाङ्गाः ; ध्वजः ; रागलता ; व्यङ्ग्यः ; लाङ्गूलं ;  
साधनं ; सेफः ; कामाङ्कुशाः । चिह्नम् ; 'येन लिङ्गेन  
यो देशो युक्तः समुपलक्ष्यते । तेनैव नाम्ना तं देशं  
वाच्यमाहुर्मनीषिणः'—इति महाभारते (१।२।१२) ।  
अनुमानं ; साङ्ख्योक्तप्रकृतिः ; 'तत्र जरामरणकृतं दुःखं  
प्राप्नोति चेतनः पुरुषः । लिङ्गस्याविनिवृत्तेस्तस्माद्दुःखं  
स्वभावेन'—इति सांख्यकारिकायाम् (५५) । शिव-  
मूर्तिविशेषः ; व्याप्यं ; व्यक्तं ; पुंस्त्वादिः । 'एका लिङ्गे

गुदे तिस्रस्तथैकत्र करे दश । उभयोः सप्त दातव्या  
मृदः शुद्धिमभीप्सता—इति मनुः (५।१३६) ।  
सामर्थ्यम्; 'यावतामेव घातूनां लिङ्गं रुढिगतं भवेत् ।  
अर्थश्चैवाभिधेयस्तु तावद्विगुणविग्रहः'—इति तिथ्यादि-  
तत्त्वे । पुराणविशेषः; 'एकादशसहस्राणि लिङ्गाख्यं  
चातिविस्तृतम्—इति देवीभागवते (१।३।१०) ।  
हेतुः; 'लिङ्गज्ञानजन्यं लिङ्गज्ञानमनुमितिः'—इति  
तर्ककौमुद्याम् । 'ज्ञायमानं लिङ्गं तु करणं न हि'—इति  
भाषापरिच्छेदः । सूक्ष्मशरीरम्; 'बुद्धिकर्मेन्द्रियप्राण-  
पञ्चकैर्मनसा धिया । शरीरं सप्तदशभिः सूक्ष्मं तल्लिङ्ग-  
मुच्यते'—इति पञ्चदश्याम् (१।२३) । ८६६

लिङ्गवृत्तिः पुं. [ लिङ्गं बाह्यलक्षणमेव वृत्तिर्जीवनीपायो  
यस्य ] धर्मध्वजी; जीविकार्थं जटादिचिह्नधारी;  
'जीविकादिनिमित्तं तु यो विभति जटादिकम् । धर्मध्वजी  
लिङ्गवृत्तिर्द्वयं तत्र निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली ।

४०५

लिङ्गी [ न् ] पुं. [ लिङ्गमस्त्यस्येति । इनि ] तपस्वी;  
मुनिः; यतिः; व्रती; हस्ती; त्रि. धर्मध्वजी; लिङ्ग-  
वृत्तिः जीविकार्थजटादिचिह्नधारी; 'अलिङ्गी लिङ्ग-  
वेशेन यो लिङ्गमुपजीवति । स लिङ्गिनां हरेदेनस्ति-  
र्यग्योनो च गच्छति'—इति कौर्म. १५ अध्यायः ।  
वासनाश्रयः; 'तेनास्य तादृशं राजन् लिङ्गिनो देह-  
सम्भवम् । श्रद्धत्स्वाननुभूतोऽर्थी न मनः स्पष्टमिच्छति'—  
इति भागवते (४।२९।६५) । ३४४

लिपिः स्त्री. [ लिप्+इगुपधात् कित् इति इन् । स च  
कित् ] लिखितवर्णः; लिखितम्; अक्षरसंस्थानं; लिपिः;  
लेखनम्; अक्षरविन्यासः; लिपी; लिपी; अक्षररचना;  
लिपिका; 'अयं दरिद्रो भवितेति वैषसी लिपिं ललाटेऽर्थि-  
जनस्य जाग्रतीम् । मृषा न चक्रेऽल्पितकल्पपादपः प्रणोय  
दारिद्र्यदरिद्रतां नृपः'—इति नैषधे (१।१५) ।  
'मुद्रालिपिः शिल्पालिपिर्लिपिलेखनिसम्भवा । गुण्डिका-  
घुणसम्भूता लिपयः पञ्चधा स्मृताः'—इति बाराही-  
तन्त्रे । ७२८

लिपिकरः पुं. [ लिपिं करोतीति । लिपि+कृ+ 'दिवा-  
विभानिशेति' ट ] लेखकः; लिपिकारः । ५८६

लिपिकारः पुं. [ लिपिं करोतीति । कृ+अण् ] लेखकः;  
लिपिकरः । ५८६

लिपिसंख्या स्त्री. [ लिपेः वर्णमालायाः संख्या वर्णनं  
यत्र ] ग्रन्थः । ८४४

लिपी स्त्री. [ लिपि+कृदिकारादिति डीप् ] लिपिः;  
लिपिका; अक्षररचना; लेखनं; लिखनम्; अक्षर-  
विन्यासः । ७२८

लिप्ता स्त्री. [ लब्धुमिच्छा । लभ्+सन्+ञ+टाप् ]  
इच्छा; तृष्णा; अभिलाषा; आशा; धनाया; गर्धना;  
'लिप्तां चक्रे प्रसेनात् मणिरत्ने स्थमन्तके । गोविन्दो  
न च तं लेभे शक्तोऽपि न जहार ह'—इति हरिवंशे  
(३।२।२६) । ३६४

लिप्सुः त्रि. [ लभ्+सन्+उ ] लब्धुमिच्छुः; गृधुः;  
गर्धनः; तृष्णकः; लुब्धः; अभिलाषुकः; लोलुपः;  
लोलुभः; 'सोऽप्युपायनलोभात्तत् श्रद्धे कल्पितायतिः ।  
उपप्रदानं लिप्सुनामेकं ह्यकार्कणौषधम्'—इति कथा-  
सरित्सागरे (२४।१।१९) । ३६३

लिपिः, लिपिः स्त्री. [ लिप्+इन्, बाहुलकात् पस्य  
वत्वम् ] लिपिः; लिपिका । ७२८

लिपिकरः, लिपिकरः पुं. [ लिपिं करोतीति । कृ+  
'दिवाविभानिशेति' ट ] लिपिकरः; लिपिकारः । ५८६  
लिपिङ्करः, लिपिङ्करः पुं. [ लिपिं करोतीति । कृ+ट,  
बाहुलकाद् द्वितीयाया बलुक् ] लिपिकारः; लिपिकरः ।  
५८६

लिपी स्त्री. [ लिपि+कृदिकारादिति डीप् ] लिपिः । ७२८  
लीला स्त्री. [ लयनिमित्तं, ली+सम्पदादित्वात् क्विप् ।  
लियं लातीति, ली+ला+क ] शृङ्गारभावचेष्टा;  
केलिः; विलासः; खेला; 'अथास्याहि हरेर्धोमन्नवतार-  
कयाः शुभाः । लीला विदधतः स्वैरमीश्वरस्यात्म-  
मायया'—इति भागवते (१।१।१८) । 'अलव्वप्रिय-  
समागमया स्वचित्तविनोदार्थं प्रियस्य या । वेशगति-  
दृष्टिहसितमणितैरनुकृतिः क्रियते सा लीला ।' ८९

लुप्तपदम् त्रि. [ लुप्तं रहितं पदं शब्दः यस्मात् ] ग्रस्तं;  
न्यूनपदकं वाक्यं; त्रुटितं वाक्यम् । १४२

लुब्धः त्रि. [ लुभ्+क्त ] आकाङ्क्षी; गृधुः; गर्धनः;  
अभिलाषुकः; तृष्णकः; 'लुब्धो यशसि नत्वर्थे भीतः  
पापान्न शत्रुतः । मूर्खः परापवादेषु न च शास्त्रेषु योऽभवत्'  
—इति कथासरित्सागरे । ३६३

लुब्धकः पुं. [ लुब्ध एव । स्वार्थे कन् ] मृगयुः; मगद्युः;



व्याधः; वागुरिकः; 'अस्माकमीदृशं मांसं ददते लुब्धका इति'—इति कथासरित्सागरे (८।२४) । ५९६

लुलायः पुं. [ लुल्यते इति, लुल् विमर्दने+भिदादित्वाद् अङ् । लुलाम् आप्नोतीति । लुला+आप्+अण् ] महिषः; सैरिभः; रक्ताक्षः; कासरः; घोटकारिः; रजस्वलः; पीनस्कन्धः; कृष्णकायः; यमवाहनः; 'लुलापं खङ्गेन छिन्धि छिन्धि'—इति दुर्गाभक्तितरङ्गिण्याम् । 'महिषो घोटकारिः स्यात्कासरश्च रजस्वलः । पीनस्कन्धः कृष्णकायो लुलापो यमवाहनः'—इति भावप्रकाशः ।

२२७

लुलायः पुं. [ लुल्, घञर्थे क, तमयते, अच् ] महिषः; सैरिभः; रक्ताक्षः; कासरः; घोटकारिः; रजस्वलः; पीनस्कन्धः; कृष्णकायः; यमवाहनः । २२७

लुलितः त्रि. [ लुल्+क्त ] प्रेङ्गोलितः; तरलितः; आन्दोलितः; प्रेङ्खितः; 'हत्वा रथाश्वान्दिचच्छेद शिरो लुलितकुण्डलम्'—इति कथासरित्सागरे (३७।७०) । 'प्रेङ्खोलितस्तरलितो लुलितान्दोलितावपि'—इति कोषान्तरे । विकीर्णः; 'युधितुरगरजोविधूम्रविष्वक् कचलुलितश्रमवार्थलङ्कृतास्ये'—इति भागवते (१।१। ३४) । व्याप्तः; 'न स्म विभ्राजते देवी शोकाश्रु-लुलितानना ।' ग्लानः; 'प्रार्तान्द्राति यथा यथात्मजा लुलितनिःसहैरङ्गैः । जामातरि मुदितमनास्तथा तथा सादरा श्वश्रूः'—इति आर्यासप्तशत्याम् । उन्मूलितः; 'विशीर्णवा हृदिःप्रशिरोरुहोऽपतत् यथा नगेन्द्रो लुलितो नभस्वता'—इति भागवते (३।१९।२४) । खण्डितः; कित्त्वन्तकासिलुलितात् पततां विमानात्'—इति भागवते (४।१।१०) । विव्वस्तः; 'येऽस्मत्पितुः कुपितहास-विजृम्भितभ्रूविस्फूर्जितेन लुलिताः स तु ते निरस्तः'—इति भागवते (७।१।२३) । ७४६

लूता स्त्री. [ लुनातीति । लू+बाहुलकात् तन् गुणा-भावश्च ] कीटविशेषः; तन्तुवायः; ऊर्णनाभः; स्रकटकः; लूतिका; ऊर्णनाभिः; शनकः; कृमिः; जालिकः; तन्त्रवायः; 'लूतातन्तुनिरुद्धद्वारः शून्यालयः पतल्पतगः । पथिके तस्मिन्नञ्चलपिहितमुखो रोदितीव सखि'—इति आर्यासप्तशत्याम् । पिपीलिका; रोगविशेषः; मर्मत्रणः; वृक्का; 'यस्माल्लूनतूर्णं प्राप्ता मुनेः प्रस्वेद-विन्दवः । तेभ्यो जातास्ततो लूता इति स्यातास्तु

षोडश'—इति सुश्रुतः । 'रजनीयुग्मपत्राङ्गमञ्जिष्ठाना-गकेशरैः । शीताम्बुपिष्टैरालेपः सद्यो लूतां विनाशयेत्'—इति भावप्रकाशः । 'रोधं सेव्यं पद्यकं पद्यरेणुः काली-याख्यं चन्दनं यच्च रक्तम् । कान्ता पुष्पं दुग्धिनीका मृणालं लूताः सर्वा घ्नन्ति सर्वक्रियाभिः'—इति वाग्भटः । २५३

लूनः त्रि. [ लूयते स्मेति । लू+क्त, 'त्वादिभ्यः' इति निष्ठातस्य नः ] छिन्नः; दातः; 'दैवेन वैरिणां संस्थे लूनबाहुवनः कृतः'—इति कथासरित्सागरे (२७।१४३) । उपचितः; 'तस्याः सखीभ्यां प्रणिपातपूर्वं स्वहस्तलूनः शिशिरात्ययस्य । व्यकीर्णत श्यम्बकपादमूले पुष्पोच्चयः पल्लवमङ्गभिन्नः'—इति कुमारे (३।६१) । ५५७

लूमम् क्ली. [ लूयते इति, लू+बाहुलकाद् मक् ] लाङ्गलः; पुच्छम् । ४४१

लेखः पुं. [ लिख्यते इति, लिख्+घञ् ] देवः; सुरः; देवता; लेख्यः; 'ब्रजन्ति विद्यावरसुन्दरीणाम् अनङ्ग-लेखक्रिययोर्पयोगम्'—इति कुमारे (१।७) । ४

लेखकः पुं. [ लिखतीति । लिख्+ण्वल् ] लेखनकर्ता; लिपिकरः; अक्षरचणः; अक्षरचुञ्चुः; वोलकः; करकः; मसीपण्यः; करप्रणीः; वर्णी; 'श्रुत्वैतत्प्राह विघ्नेशो यदि मे लेखनी क्षणम् । लिखतो नावतिष्ठेत तदा स्यां लेखको ह्यहम् । व्यासोऽप्युवाच तं देवमुदुह्वा मा लिख क्वचित् । ओमित्युवत्वा गणेशोऽपि वभूव किल लेखकः'—इति महाभारते (१।१।७८-७९) । 'सकृदुक्तगृहीतार्थो लघुहस्तो जिताक्षरः । सर्वशास्त्रसमालोकी प्रकृष्टो नाम लेखकः'—इति चाणक्यसंग्रहः । ५८६

लेखा स्त्री. [ लिख्यते इति, लिख्+बाहुलकात् अप्+टाप् ] पङ्क्तिः; रेखा; लिपिः । ५४२

लेपकः पुं. [ लिम्पतीति । लिप्+ण्वल् ] जातिविशेषः; पलगण्डः; लेपी; लेप्यकृत्; लेपनकर्तारि त्रि. । ५९१

लेप्यम् त्रि. [ लिप्+कर्मणि ण्यत् ] लेपनीयः; लेप्तव्यम्; 'शैली दास्यमयी लीही लेप्या लेख्या च सैकती । मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता'—इति भागवते (१।१।२७।१२) । ५९१

लेप्यमयी स्त्री. [ लेप्य+मयट्+ङीप् ] काष्ठादिघटित-पुत्तलिका; पुत्रिका; पाञ्चालिका; अञ्जलिकारिका ।

लेशः पुं. [ लिश्+घञ् ] कणः; सूक्ष्मम्; 'एष ते राज-  
घर्माणां लेशः समनुवर्णितः'—इति महाभारते (१२।  
५८।२४) । ६८८

लोष्टुः पुं. [ लिश्यते इति । लिश्+वाहुलकात् तुन् ]  
लोष्टम्; मृत्सिण्डखण्डः । ५७६

लोकः पुं. [ लोकयते इति, लोक्+घञ् ] भुवनं; विष्टपं;  
जगत्, 'भूर्भुवः स्वमंहश्चैव जनश्च तप एव च ।  
सत्यलोकश्च सतीते लोकास्तु परिकीर्तितः'—इत्यग्नि-  
पुराणम् । (२८४) जनः; प्रजा; मनुष्यः । १३३

लोकपालः पुं. [ लोकान् पालयतीति । लोक+पाल्+  
णिच्+अण् ] राजा; 'उत्तमो लोकपालोऽयमिति लक्ष्म  
प्रशस्तिषु । यः प्राप्तवान् विना यज्ञं चक्षमे न पशुक्षयम्'—  
इति राजतरङ्गिण्याम् (१।३४९) । दिक्पालः; 'इन्द्रो  
वह्निः पितृपतिर्निर्ऋतिर्वह्णोऽनिलः । घनदः शङ्करश्चैव  
लोकपालाः पुरातनाः'—इति वह्निपुराणम् । 'सोमान्य-  
कानिलेन्द्राणां वित्ताप्यत्योर्यमस्य च । अष्टानां लोक-  
पालानां वपुर्धारयते नृपः'—इति मनुः (५।९६) । ४२१

लोचनम् क्ली. [ लोचतेऽनेनेति । लोच्+ल्युट् ] चक्षुः;  
नेत्रं; नयनम्; 'वक्रान्तैः पद्मपत्राभ्रैर्लोचनैः सुख-  
भागिनः । मार्जारलोचनैः पापो महात्मा मधुपिङ्गलैः ।  
क्रूराः केकरनेत्राश्च हरिणाक्षाः सकल्मषाः । जिह्वैश्च  
लोचनैः क्रूराः सेनान्यो गजलोचनाः । गम्भीराक्षा  
ईश्वराः स्युर्मन्त्रिणः स्थूलचक्षुषः । नीलोत्पलाक्षा विद्वांसः  
सोभाग्रं श्याम्बचक्षुषाम् । स्पृत्कण्ठतारकाक्षणास्रणा-  
मुत्पाटनं किल । मण्डलाक्षश्च पापाः स्युर्निःस्वाः  
स्पृदीर्घलोचनाः । दृक् स्निग्धा विपुला भोगे अल्पायु-  
र्नाभिरुन्नता । विशालोन्नताः सुखिनो दरिद्रा विपमभ्रुवः'—  
इति गारुडे ६५ अध्यायः । ५१९

लोतम् क्ली. [ लुनातीति, लू+'हंसमृश्रिणिति' तन् ]  
अपहृतद्रव्यं; स्तेयघनं; लोष्ट्रं; लोष्ट्री; लोत्रं;  
लुम्पं; पुं. नेत्राम्बु; चिह्नं; लवणम्; अश्रुपातः । ३३९

लोत्रम् क्ली. [ लुनातीति, लू+'सर्वधातुस्यष्टन्' इति  
ष्टन् । यद्वा ला+'अशिवादिभ्य इत्रोत्रौ' इति उत्र ]  
लोतं; स्तेयघनं; लोष्ट्रं; लोष्ट्री; लुम्पं; नेत्रजलम् ।  
३३९

लोषामुद्रापतिः पुं. [ लोषामुद्रायाः पतिः भर्ता ] अगस्त्य-  
मुनिः; अगस्तिः; घटयोनिः; लोषापतिः । ४१३

लोष्ट्रम् क्ली. [ लुर्+ष्ट्रन् ] स्तेयघनं; लोतम्; अपहृतं  
द्रव्यम्; 'ते तस्यावसथे लोष्ट्रं दस्यवः कुससत्तम!  
निवाय च भयाल्लीनास्तत्रैवानागते वले'—इति महा-  
भारते (१।१०७।५) । ३३९

लोष्ट्रो स्त्री. [ लोष्ट्र+षित्वाद् डीप् ] लोष्ट्रं; स्तेयघनं;  
लोतम्; अपहृतं द्रव्यम् । ३३९

लोलः वि. [ लोडतीति । लुङ् विलोडने+अच्, डल-  
योरेक्यम् ] साकाङ्क्षः; लोलुभः; लोलुपः; लालसः;  
लम्पटः; 'ह्रौयन्त्रणामानशिरे मनोज्ञामन्योऽन्यलोलानि  
विलोचनानि'—इति रघौ (७।२३) । (६९५)  
चञ्चलः; चपलः; चट्टलः; प्रचलः; तरलः; परिप्लवः;  
अधीरः; पारिप्लवः; चलाचलः; 'पल्लवोपमिति-  
साम्यसपक्षं दष्टवत्यधरविम्बमभोष्टे । पर्यकूजि सरुजेव  
तरुण्यास्तारलोलवलयेन करेण'—इति साहित्यदर्पणे  
(३।१४१) । पुं. तामसमनुः । ३५३

लोलुपः वि. [ गहितं लुम्पतीति । लुप्+यङ्+अच् ]  
अतिलुब्धः; 'तथापि वाचालतलायुनिक्त मां मिथस्त्वदा-  
भाषणलोलुपं मनः'—इति माघे (१।४०) । ३५३

लोलुभः वि. [ भृशं लुम्पतीति । लुम्+यङ्+अच् ]  
लोलुपः; 'स्त्रियोऽपीच्छन्ति पुंभावं यं दृष्ट्वा रूप-  
लोलुभाः । तस्यास्ते को भवेन्नार्थी तुल्यरूपः स किं  
पुनः'—इति कथासरित्सागरे (११७।४६) । ३५३

लोष्टः पुं.—क्ली. [ लोष्टयते इति । लोष्ट्+घञ् । यद्वा  
ल्यते इति, लू+'लोष्टपलितौ' इति क्त प्रत्ययेन  
निपातितः ] मृत्तिकाखण्डं; लोष्टुः; दलिः; 'अहौ  
वा हारे वा बलवति रिपो वा सुहृदि वा मणौ, वा लोष्टे  
वा कुसुमशयने वा दृपदि वा । तृणे वा स्त्रैणे वा मम  
समदशायान्तु दिवसाः, क्वचित्पुण्येऽरण्ये शिव शिव  
शिवेति प्रलपतः'—इति वेतालपञ्चाविशत्याम् । क्ली.  
[ लोष्टते इति, लोष्ट्+अच् ] लोहमलं; लेष्टुः । ५७६

लोष्टकः पुं. [ लोष्ट्+संज्ञायां कन् ] लोष्टः; लोष्टुः;  
दलिः; मृत्तिकाखण्डं; 'हेला' इति भाषा । ५७६

लोष्टघ्नः पुं. [ लोष्टं हन्तीति । लोष्ट्+हन्+टक् ]  
लेष्टुभेदनः; कोटिषः । ७५६

लोष्टभेदनः पुं. [ भिनत्तीति । भिद्+ल्यु । लोष्टस्य  
भेदनः ] लोष्टभङ्गसाधनमुद्गरः; लेष्टुभेदनः;  
लोष्टघ्नः; लेष्टुघ्नः; कोटिषः; कोटीषः; 'हेगा'

इति भाषा । ५७६

लोष्टः पुं. [ मृगधादित्वात् साधुः ] लोष्टः । ५७६

लोहः पुं.—क्ली. [ लूयतेऽनेनेति । लू+वाहुलकात् ह ।

रोहति रूहते वा, अच् वा घञ्, कपिलकादित्वाल् लत्वम् ] लोहं; जोङ्गकं; सर्वतैजसं; रुधिरं; मुण्डं; मुण्डायसं; दूषत्सारं; शिलात्मजम्; अश्मजं; कृषि-लोहम्; आरं; कृष्णायसं; तीक्ष्णं; शस्त्रायसं; शस्त्रं; पिण्डं; पिण्डायसं; शठम्; आयसं; निशितं; तीव्रं; खड्गं, मुण्डनम्; अयः; चित्रायसं; चीनजम् । क्ली. अगुहः; 'अगुहप्रवरं लोहं राजार्हं योगजं तथा । वंशिकं क्रिमिजं वापि क्रिमिजग्धमनार्यकम्'—इति भावप्रकाशः ।

रक्तवर्णः त्रि. । पुं. छागः; पार्वत्यजातिविशेषः । १७१

लोहकारः पुं. [ लोहं लोहमयं शस्त्रादि करोतीति ।

लोह+कृ+अण् ] लोहकारकः; ध्माकारः; लोहकारकः; व्योकारः; लोहकारः; अयस्कारः; कर्मकारः; कर्मारः; वर्णसङ्करजातिविशेषः । ५८८

लोहलः त्रि. [ लोहमिव लातीति । लोह+ला+क ]

अव्यक्तवाक्; 'हकला' इति भाषा । लोहग्राहकः; पुं. [ लोहं लातीति, ला+क ] शृङ्खलाचार्यः । ३८७

लोहितम् क्ली. [ रूहते इति । रूह्+रुहेरश्च लो वा'

इति इतन्, रस्य लत्वम् ] रुधिरम्; 'नाप्यु मूत्रं पुरीषं वा ङ्गीवनं वा समुत्सृजेत् । अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा'—इति मनुः (४।५६) । रक्तगोशीर्षं; कुङ्कुमं; रक्तचन्दनं; पतङ्गं; हरिचन्दनं; तृण-कुङ्कुमं; युद्धं; सरोवरविशेषः; माणिक्यं; लोहितकः; 'माणिक्यं पद्मरागः स्याच्छोणरत्नं च लोहितम्'—इति भावप्रकाशः । पुं. [ रूह्+इतन् । रस्य ल ] नदविशेषः; सागरविशेषः; 'ततो रक्तजलं भीमं लोहितं नाम सागरम् । गत्वा प्रेक्षत ताञ्चैव बृहतीं कूटशाल्मलीम्'—इति रामायणे (४।४०।३९) । भीमः; 'मध्येन यदि मयानां गतागतं लोहितः करोति ततः । पाण्ड्यो नृपो विनश्यति शस्त्रोद्योगाद्भयमवृष्टिः'—इति बृहत्संहिता-याम् (६।८) । रक्तवर्णः; रोहितमत्स्यः; मृगविशेषः; सर्पः; 'वासुकिस्तक्षकश्चैव नागश्चैरावणस्तथा । कृष्णश्च लोहितश्चैव पयश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।१।८) । सुरान्तरः; मसूरः; रक्तालुः; रक्त-

शालिः; 'पण्डिका यवगोधूमा लोहिता ये च शालयः । मुद्गाढकी मसूराश्च घान्धेपु प्रवराः स्मृताः'—इति सुश्रुते (१।४६) । बलभेदः; पर्वतविशेषः; कुशद्वीपस्य-वर्णविशेषः । त्रि. रक्तवर्णयुक्तः (७३३); 'लोहितान् वृक्षनिर्यासान् व्रश्चनप्रभवांस्तथा । श्लेष्णुं गव्यं च पेयूपं प्रयत्नेन विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।६) । ६३२

लोहितचन्दनम् क्ली. [ लोहितं चन्दनमिव ] कुङ्कुमं; रक्त-चन्दनम्; 'परिभ्रमलं लोहितचन्दनोचितः पदातिरन्त-गिरिरेणुहृषितः'—इति किरातार्जुनीये (१।३४) ।

५४३

लोहिताङ्गः पुं. [ लोहितमङ्गं यस्य ] मङ्गलग्रहः; 'वामे च दक्षिणे चैव स्थितौ शुक्रबृहस्पती । शनैश्चरो लोहि-ताङ्गो लोहितार्कसमद्युतिः'—इति हरिवंशे (२२।८।१२) । कम्पिल्लकः । ४६

लोहिनी स्त्री. [ लोहिता+वर्णादिनुदात्तादिति ] डीप् तकारस्य नकारादेशश्च ] रक्तवर्णा स्त्री; 'रोहिणी रोहिता रक्ता लोहिनी लोहिता च सा'—इति जटाधरः । ७३८

लौल्यम् क्ली. [ लोलस्य भावः, प्यञ् ] चञ्चलता; चञ्चलत्वम् । ३९९

व

वंशः पुं. [ वमति उद्गिरति पुरुषान्, वन्यते इति वा । यद्वा-वृष्टि उश्यते इति वा, वंश् कान्तो+अच् घञ् वा, ततो नुम् ] पुत्रपौत्रादिः; सन्ततिः; गोत्रं; जननं; कुलम्; अभिजनः; अन्वयः; अन्ववायः; सन्तानः; निधनं; जातिः; 'क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः । तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्'—इति रघो (१।२) । (२०४) तृणजातिविशेषः; त्वक्सारः; कर्मारः; त्वचिसारः; तृणध्वजः; शत-पर्वा; यवफलः; वेणुः; मस्करः; तेजनः; किष्कुपर्वा; वम्भः; तृणकैतुकः; कण्टालुः; कण्टकी; महाबलः; दूढग्रन्थिः; दूढपत्रः; धनुर्द्रुमः; धानुष्यः; दूढकाण्डः; 'वाँस' इति भाषा । 'ध्वनति पवनविद्धः पर्वतानां दरीषु स्फुटति पटुनिनादः शुष्कवंशस्थलीषु । प्रसरति तृणमध्ये लब्धवृद्धिः क्षणेन क्षपयति मृगयूथं प्राप्ताग्नां दवाग्निः'—इति ऋतुसंहारे । (८०३) पृष्ठास्थि; पृष्ठावयवः;

भागवते (११।८।३३) । पुत्रः; 'नृपस्य वंशः सुमति-  
भूतज्योतिस्ततो वसुः'—इति भागवते (९।२।१७) ।  
गृहोर्ध्वकाष्ठम्; 'वंशः पृष्ठास्थि गृहोर्ध्वकाष्ठे वेणौ  
गणे कुले'—इति केशवः । पृष्ठावयवः; 'यदस्थिभिर्निमित्त-  
वंशवंश्यस्थूणं त्वचा रोमनखैः पिनद्धम्'—इति भागवते  
(११।८।३३) । वर्गः; 'उत्थापितः संयति रेणुरस्रैः  
सान्द्रीकृतः स्यन्दनवंशचक्रैः'—इति रघौ (७।३९) ।  
वाद्ययन्त्रविशेषः; 'वंसी' इति भाषा । मुरली; 'स  
कीचकैर्मांसतपूर्णरन्ध्रैः कूजझिरापादितवंशकृत्यम् ।  
शुश्राव कुञ्जेषु यशः स्वमुच्चैर्दृग्यमानं वनदेवताभिः'—  
इति रघौ (२।१२) । वंशशर्करा; वंशलोचना; वंश-  
रोचना; वंसकः; इक्षुभेदः; सालवृक्षः; प्राधागर्भ-  
सम्भूताप्सरोविशेषे स्त्री । 'अनवद्यां मनुं वंशामसुरां  
मार्गणप्रियाम् । अनूपां सुभगां भासीमिति प्राधा  
व्यजायत'—इति महाभारते (१।६।५।४६) । ३९६  
वंशाङ्कुरः पुं. [ वंशस्य अङ्कुरः ] करीरं; वंशाग्रं;  
यवफलाङ्कुरः । ८२८

वकः पुं. [ वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये, अच्, अनित्य-  
त्वाच्च नुम् । वक्ति वा, अच्, न्यङ्कत्वदिः ] वकोटः; वकः;  
वकोटः । २५०

वकुलः पुं. [ वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये गत्यर्थो वा, बाहुल-  
कादुलच्, आगमशास्त्रानित्यत्वेन नुम् न ] मौलिश्रीति  
ख्यातः; केशरः; केसरः; वकुलः । २०६

वकोटः पुं.— वकः; वकः; वकोटः । २५०

वक्त्रम् क्ली. [ वक्ति अनेनेति । वच्+ 'गुधृवीपचिवचिय-  
मिसदिसदिभ्यस्त्रः' इति व्र ] मुखं; तुण्डं; वदनं; लपनम्;  
आस्यम्; आननम्; 'धर्मोपदेशं दर्पेण विप्राणामस्य  
कुर्वतः । तप्तमासेचयेत्तैलं वक्त्रे श्रोत्रे च पाथिवः'—  
इति मनुः (८।२७२) । तगरमूलं; वक्त्रभेदः; छन्दो-  
विशेषः; 'भवत्यर्द्धसमं वक्त्रं विषयं च कदाचन ।  
तयोर्द्वयोसपान्तेऽत्रच्छन्दस्तदधुनोच्यते । वक्त्रं युग्म्यां  
मगौ ह्यपातामब्धेयोऽनुष्टुभिः ख्यातम् ।' 'वक्त्राम्भोजं सदा  
स्मेरं चक्षुर्नीलोत्पलं फुल्लम् । वल्लवीनां सुराराते-  
श्चेतोमङ्गलं जहारोच्चैः'—इति छन्दोमञ्जरी । ५१८

वक्रः पुं. [ वञ्चतीति, वञ्च गती+ 'स्फायितञ्चिवञ्चीति'  
रक्, न्यङ्कत्वादित्वात् कुत्वम् ] अङ्गारकः; कुजः;  
भीमः; लोहिताङ्गः; धरात्मजः; मङ्गलग्रहः । शनैश्चरः;

रुद्रः; त्रिपुरासुरः; पर्पटः; वक्रगतिविशिष्टग्रहः;  
करूपदेशीयनृपतिभेदः; 'तमेव च महाराज ! शिष्यवत्  
समुपस्थितः । वक्रः करूपाधिपतिर्मायायोधी महाबलः'—  
इति महाभारते (२।१४।११) । ४६

वक्रः त्रि. [ वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये+ रन् । पृषोदरा-  
दित्वान् नलोपः । यद्वा वञ्चि+ रक् ] अनृजुः; अरालं;  
वृजिनं; जिह्वाम्; ऊर्मिमत्; कुञ्चितं; नतम्; आविद्धं;  
कुटिलं; भुग्नं; वैलिलतं; वङ्कुरं; वेङ्कुः; विनतम्;  
उन्दुरम्; अवनतः; आनतः; भङ्गुरः; 'स वै तथा  
वक्र एवाम्य जायदष्टावक्रः प्रथितो वै महर्षिः'— इति  
महाभारते (३।१३२।१२) । क्ली. वङ्कः; नदीवङ्कः;  
पुटभेदः; तगरपादिकम्; 'कालानुसारिवा वक्रं तगरं  
कुटिलं शठम् । महोरगं नतं जिह्वं दीनं तगरपादिकम्'—  
इति वैद्यकरत्नमालायाम् । त्रि. क्रूरः । ६९६

वक्रसंस्थम् त्रि. [ वक्रा तिर्यक् संस्था स्थितिः समाप्ति-  
र्वा यस्य ] जिह्वसंस्थं; तिर्यंगास्तीर्णं; गृहाद्याच्छादनम् ।

३०३

वक्षः [ स् ] क्ली. [ उच्यतेऽनेनेति । वच्+ 'पचिवचिभ्यां  
सुट् च' इति असुन्, सुट् । वक्षतेरसुन् वा ] अङ्गविशेषः;  
स तु हृदयोपरि कण्ठादधोभागः; क्रोडं; भुजान्तरम्;  
उरः; वत्सम्; अङ्कः; उत्सङ्गः; वक्षणं; गणपीठकम्;  
'अय वक्षश्च वत्सं स्यादुरो वक्षस्थले त्रयम्'—इति  
शब्दरत्नावली । 'अन्नवान् समवक्षाः स्यात्पीनेर्वक्षोभि-  
रुजितः । वक्षोभिविषमैनिःस्वः शस्त्रेण निघनं तथा'—  
इति गारुडे ६६ अध्यायः । पुं. [ वहतीति, वह्+असुन्  
सुट् च ] अनड्वान् । ५२७

वक्षोरुहः पुं. [ वक्षसि रोहतीति । वक्षस्+रुह्+क ]  
वक्षोजः; स्तनः; उरसिजः; पयोधरः; कुचः; 'मा शबर-  
तरुणिः पीवरवक्षोरुहयोभरेण भज गर्वम् । निर्मोकरपि  
शोभा ययोर्मुजङ्गीभिरनुक्तैः'—इति आर्यासप्त-  
शत्याम् (४४६) । ५२६

वङ्कक्षणः पुं. [ वक्षति संहृत् भवतीति । वक्ष् सङ्घाते+  
ल्यु । पृषोदरादित्वात् नुम् ] ऊरुसन्धिः; 'चतुर्दशास्थनां  
सङ्घाताः, तेषां त्रयो गुल्फजानुवङ्कक्षणेषु'—इति सुश्रुते ।

५२६

वङ्गम् क्ली. [ वङ्गतीति, वगि गती+अच् ] धानुविशेषः;  
त्रपुः; स्वर्णजं; नागजीवनं; मृद्वङ्गं; रङ्गं; गुरुपत्रं;

पिचचटं; चक्रसंज्ञं; तमरं; नागजं; कस्तीरम्; आलीनकं; सिंहलं; स्ववेतं; नागं; त्रपु; 'सिंहो यथा हस्तिगणं निहन्ति तथैव वङ्गोऽखिलमेश्वरगम् । देहस्य सौख्यं प्रवलेन्द्रियत्वं नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम्— इति भावप्रकाशः । सीसकं; देशविशेषे पुं. भूमिन्, एकवचनान्तोऽपि । 'अङ्गस्याङ्गोऽभवद्देशो वङ्गो वङ्गस्य च स्मृतः ।' 'रत्नाकरं समारम्य ब्रह्मपुत्रान्तगं शिवे !, वङ्गदेशो मयाः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदर्शकः—इति शक्तिसङ्गमत्तन्त्रे ७ पटलः । पुं. चन्द्रवंशीयवलिराजपुत्रः; 'वलेः सुतपसो जज्ञे अङ्गवङ्गकलिङ्गकाः । सुह-पोण्ड्राश्च वालेया अनपानस्तयाङ्गतः—' इति गारुडे १४४ अध्यायः । १७२

वङ्गुला स्त्री.— रागिणीविशेषः; वङ्गाली । १०५ अ वचः [ स् ] क्ली. [ उच्यते इति, वच् + 'सर्वधातुम्योऽसुन्' इति असुन् ] उक्तिः; वाक्म्; 'इति अगल्भं-पुरुषाधिराजो मृगाधिराजस्य वचो निशम्य । प्रत्याहतास्त्रो गिरिश-प्रभावादात्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार—' इति रघौ (२।४१) । १३९

वचनीयता स्त्री. [ वचनीयस्य भावः । वचनीय+तल् ] लोकापवादः; जनप्रवादः; कौलीनं; विगानम्; 'जन-प्रवादः कौलीनं विगानं वचनीयता—इति हेमचन्द्रः (२।१८४) । 'कामं नीचमिदं वदन्ति पुरुषाः स्वप्ने च यद्वदन्ते, विश्वस्तेषु च वञ्चनापरिभवस्चौर्यं न शौर्यं हि तत् । स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं वद्धो न सेवा-ञ्जलिः, मार्गो ह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना—' इति मृच्छकटिके तृतीयाङ्के । वचनीयं; निन्दा । १४७.

वज्रम् पुं.— क्ली. [ वजतीति, वज् गती + 'ऋज्जेन्द्राग्रवज्र-विप्रेति' रन्प्रत्ययेन निपातितः ] इन्द्रस्यास्त्रविशेषः; 'ह्लादिनी; कुलिशं; भिदुरं; पविः; शतकोटिः; स्वरुः; शम्भ्रः; दम्भोळिः; अशनिः; कुलिशं; भिदिरं; भिदुः; स्वरुः; सम्भ्रः; संवः; अशनी; वज्राशनिः; जम्भारिः; त्रिदशायुधं; शतवारं; शतारम्; आपोत्रम्; अक्षजं; गिरिकण्ठकः; गीः; अत्रोत्स्यं; मेघभूतिः; गिरिज्वरः; जाम्बविः; दम्भः; भिद्रः; अम्बुजम्; 'अहर्भाहि पर्वन्ते शिश्रियाणां त्वष्टास्मै वज्रं स्वयं ततक्ष—' इति ऋग्वेदे (१।३२२) । रत्नविशेषः; इन्द्रायुधं; हीरं; भिदुरं;

कुलिशं; पविः; अमेधम्; अशिरं; रत्नं; दृढं; भार्गवकं; पटकोणं; बहुधारं; शतकोटिः; हीरकः । 'हीरकः पुंसि वज्रोऽस्त्री वन्द्रो मणिवरश्च सः । स तु श्वेतः स्मृतो विप्रो लोहितः क्षत्रियो मतः । पीतो वैश्योऽ-सितः शूद्रश्चतुर्वर्णात्मकश्च सः । रसायनो मतो विप्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः । क्षत्रियो व्याधिविध्वंसो जरा-मृत्युहरः परः । वैश्यो घनप्रदः प्रोक्तस्तथा देहस्य दाढं चकृत् । शूद्रो नाशयति व्याधीन् वयस्तम्भं करोति च—' इति भावप्रकाशः । अन्नविशेषः; पुं. [ वज् + रन् ] कोकिलाक्षवृक्षः; श्वेतकुशः; सेहण्डवृक्षः; श्रीकृष्ण-प्रपीत्रः; 'अनिरुद्धात् सुभद्रायां वज्रो नाम नृपोऽभवत् । प्रतिवाहुर्वज्रसुतश्चास्तस्य सुतोऽभवत्—' इति गारुडे १४४ अध्यायः । विश्वामित्रपुत्रभेदः; 'वल्गुजङ्घश्च भगवान् गालवश्च महानृषिः । रुचिर्वज्रस्तथाख्यातः सालङ्कायन एव च—' इति महाभारते (१३।४।५१) । 'विश्वामित्रात्मजाः सर्वे मुनयो ब्रह्मवादिनः—' इति महा-भारते (१३।४।५९) । विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगा-न्तर्गतपञ्चदशयोगः; 'गुणी गुणज्ञो बलवान् महौजाः सद्रत्नवस्त्रादिपरीक्षकः स्यात् । वज्राभिधाने यदि चेत् प्रसृतो वज्रोपमः स्वाम्निपुकामिनीनाम्—' इति कोष्ठी-प्रदीपः । ५६

वज्रज्वाला स्त्री. [ वज्रस्य ज्वाला ] वज्राग्निः; 'वज्र-ज्वालान्तरंमघः शाल्मलश्चान्तरालकृत्—' इति मात्स्ये (१२।१।१४) । ५७

वज्रधरः पुं. [ धरतीति । धृ + अच् । वज्रस्य धरः ] इन्द्रः; वज्रपाणिः; वज्री; 'अरुन्धती वा सुभगा वशिष्ठं लोपामुद्रा वापि यथा ह्यगस्त्यम् । नलस्य वा दमयन्ती यथामूद् यथा शची वज्रधरस्य चैव—' इति महाभारते (३।११।३।२२) । जिनविशेषः; बल्लापुत्राधिपतिराज-विशेषः; 'उपरागे नवे सज्जे पार्वतीयास्त्रयो नृपाः । चाम्पेयी जासटो वज्रधरो बल्लापुत्राधिपः—' इति राज-तरङ्गिण्याम् । ५२

वज्रनिर्घोषः पुं. [ वज्रस्य निर्घोषः ] स्फूर्ज्युः; वज्र-निष्पेयः; वज्रजनितशब्दः । ५७

वज्रनिष्पेयः पुं. [ वज्राणां निष्पेयः सङ्घर्षध्वनिः ] वज्र-निर्घोषः; स्फूर्ज्युः; वज्रजनितशब्दः । ५७  
वञ्चनम् क्ली. [ वञ्च् + भावे ल्युट् ] अतिसन्धानं;

व्यलीकं; प्रतारणं; वञ्चना; प्रतारणा; 'वञ्चनं चापमानं च मतिमात्रं प्रकाशयेत्'—इति चाणक्यः ।

७४८

**वञ्जुलः** पुं. [ वजतीति, वज् गती+बाहुलकाद् उलच् नुम् च ] वेतसवृक्षः; वञ्जुलप्रियः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वञ्जुलस्तया । अन्नपुष्पश्च विदुलो ह्यथ शीतश्च कीर्तितः'—इति भावप्रकाशः । पक्षिविशेषः (२५४); तिनिशवृक्षः; 'तिनिशः स्यन्दनो नेमी रयदुर्वञ्जुलस्तया'—इति भावप्रकाशः । अशोकवृक्षः; वञ्जुलद्रुमः; स्थलपद्मवृक्षः । २०१

**वटः** [ वटति वेष्टयति मूलेन वृक्षान्तरमिति । वट्+पचाद्यच् ] वृक्षविशेषः; न्यग्रोधः; बहुपात्; वृक्षनाथः; यमप्रियः; रक्तफलः; शृङ्गी; कर्मजः; ध्रुवः; क्षीरी; वैश्रवणावासः; भाण्डीरः; जटालः; रोहिणः; अवरोही; विटपी; स्कन्धरुहः; मण्डली; महाच्छायः; भृङ्गी; यक्षावासः; यक्षतरुः; पादरोहणः; नीलः; शिफारुहः; बहुपादः; वनस्पतिः; 'वटः शीतो गुरुर्ग्राही कफपित्तव्रणापहः । वर्षो विसर्पदाहघ्नः कषायो योनिदोषहृत्'—इति भावप्रकाशः । (५९७) त्रि. [ वटतीति, वट्+अच् ] गुणः; शुल्वा; रज्जुः; वराटः; तन्त्रीगणः । पुं. कपर्दः; गोलः; भक्ष्यं; वटकः; पिष्टकविशेषः; 'वडा' इति भाषा । क्ली. ब्रजमण्डलाम्यन्तरीणवटसंज्ञकपोडश वनानि । १९६

**वटुः** पुं. [ वटतीति, वट्+कटिवटिभ्याञ्च इति उ ] माणवकः; 'वटुः पुनर्माणवको भिक्षास्य ग्रासमात्रकम्'—इति हेमचन्द्रः । ब्रह्मचारी; 'वटुर्वर्णी ब्रह्मचारी'—इति शब्दरत्नावली । 'तस्माद् ब्रुवन्तु सर्वेऽत्र वटुरेप धनुर्महत् । आरोपयतु शीघ्रं वै तथेत्युचुर्द्विजर्षभाः'—इति महाभारते (१।१८।१५) । कुटन्नटवृक्षः; 'मण्डूकपर्णः श्योनाकः शुक्रनासः कुटन्नटः । ऋक्षो वटुर्दिवं वृन्तो दीवं वृन्तक इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । बालकः; 'बालको माणवो बालः किशोरो वटुरित्यपि'—इति शब्दरत्नावली । ५०२

**वडवा** स्त्री. [ वल सामर्थ्यमधिकमस्याः । 'अन्येभ्योऽपीति' इति । दलं वाति, क वा । वड-डलानामैक्यात् वडौ ] अर्चनी; वामी; वाजिनी; द्विजयोपित्; दासी । ४४०

**वडवानलः** पुं. [ वडवारूपः अनलः । तथारूपस्य समुद्रे

पुराणेषु श्रुतत्वात् ] और्वः; समुद्रबहिः; वाडवः । ७०

**वडवामुखः** पुं. [ वडवाया इव मुखं यस्य ] वडवाग्निः; और्वः; समुद्रबहिः; वाडवः । (६२३) पातालः; वैरोचननिकेतनम्; अधोभुवनं; नागलोकः; रसातलम् । ७०

**वडिशम्** क्ली. [ वलिनः मत्स्यान् श्यति । वलित्+शो+क । ऐक्याद् वत्वडत्वे ] मत्स्यबन्धनं; वलिशं; वडिशं; बलिशम् । ७६४

**वणिक्** [ ज् ] पुं. [ पणते, पण् व्यवहारे+पणतेरिज्यादेश्च वः' इतीज् वत्त्वं च ] पण्णाजीवः; प्रापणिकः; वणिजकः; नैगमः; वैदेहः । ५७१

**वणिज्यम्** क्ली., वणिज्या स्त्री. [ वणिजां कर्म, वणिज्+ 'दूतवणिग्यां च' इति येति काशिका । वणिजि साधुरिति यत् वा । स्त्रीत्ववादिमाधवमते टाप् ] वाणिज्यं; वणिजकर्म । ७६१

**वत** अव्य. [ वनु याचन, वन्यते स्मेति, क्त, अनुनासिकलोपः ] निन्दा; विस्मयः; 'अहो वत महच्चित्रम् ।' खेदः; अनुकम्पा; 'क्व वत हरिणकानां जीवितञ्चातिलोलं, क्व च निशितनिपाता वज्रसाराः शरास्ते'—इति शकुन्तलायाम् १ अङ्के । ८७८

**वत्सः** पुं. [ वदतीति, वद्+वृतृवदिह्निकमिकपिम्यः सः' इति स ] गोशिशुः; शकुत्करिः; तर्णकः; दोग्धा; दोषकः; दोषः; रोहिण्येयः; बाहुल्येयः; तन्तुभः; तर्णभः; कचः; 'बाछा' 'वछड़ा' इति भाषा । कुमारः (१।२) । वर्षः (८०८); पुत्रादिः; 'न वत्स ! नृपतेर्धिष्यं भवानारोहमर्हति । न गृहीतो मया यत्त्वं कुक्षावपि नृपात्मज !'—इति भागवते (४।८।११) । दिवोदासपुत्रः; 'तत्पुत्रः केतुमालस्य जज्ञे भीमरथस्ततः । दिवोदासो द्युमांस्तस्मात् प्रतर्दन इति स्मृतः । स एव शक्रजिद् वत्स ऋतपञ्च इतीरितः । तथा कुवल्याश्चेति प्रोक्तोऽलकदियस्ततः'—इति भागवते (९।१७।५-६) । देशभेदः; 'अस्ति वत्स इति ख्याती देशो दर्पोपशान्तये । स्वर्गस्य निर्मितो घात्रा प्रतिमल्ल इव क्षिती'—इति कथासरित्सागरे (९।४) । २६४

**वत्सम्** क्ली. [ वदतीति, वद् व्यक्तायां वाचि+वृतृवदिह्निकमिकपिम्यः सः' इति स ] वक्षः; भुजमध्यं; उरः; हृदयस्थानम् । ५२७

वत्सकामा स्त्री. [ वत्सं कामयते इति । वत्स+कम्+  
अच्+टाप् ] वत्सला; वत्सामिलापिणी गीः; पुत्रादि-  
कामा स्त्री । २७०

वत्सतरः पुं. [ प्रथमवया वत्सः । 'वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्चेति'  
ष्टरच् ] प्राप्तदमनकालो गीः; दम्यः; दुर्दान्तः;  
गडिः; रघो (३।३२) । २६०

वत्सनाभः क्ली.—पुं. [ वत्सान् नम्यति हिनस्तीति । नभ्  
हिंसायाम्+कर्मण्यण् इत्यण् ] विषवृक्षविशेषः;  
अमृतं; विषम्; उग्रं; महौषधं; गरलं; मारणं;  
नागः; स्तोककं; प्राणहारकं; स्थावरादि; 'सिन्दुवार-  
सदृक्पत्रो वत्सनाभ्याकृतिस्तया । यत्पाश्वे न तरोर्वृद्धि-  
र्वत्सनाभः स भाषितः'—इति भावप्रकाशः । 'चत्वारि  
वत्सनाभानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते । 'श्रीवास्तम्भो  
वत्सनाभे पीतविष्मूत्रनेत्रता'—इति सुश्रुते । ६४७

वत्सला स्त्री. [ वत्से कामोऽत्यस्या इति, लच् । यद्वा वत्सं  
लातीति, ला+क ] वत्सकामा गीः; 'साहं गौरिव  
सिहेन विवत्सा वत्सला कृता । कंकेय्या पुरुषव्याघ्र बाल-  
वत्सव गोर्वलात्'—इति रामायणे (२।४३।१८) । २७०

वत्सादनी स्त्री. [ वत्सैरद्यते प्रियत्वादिति । अद्+ल्युट्+  
ङीप् ] अमृता; गुडूचो । ६१५

वदनम् क्ली. [ वदन्त्यनेनेति । वद्+करणे ल्युट् ] तुण्डं;  
वक्त्रं; लपनं; मुखम्; आस्थम्; 'दर्शनविनीतमाना  
गृहिणी हर्षोल्लसत्कपालतलम् । चुम्बननिपेवमिपतो  
वदनं पिदधाति पाणिभ्याम्'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(२७६) । अग्रभागः; 'त्रीण्यन्यानि ( यन्त्राणि )  
जाम्बववदनानि त्रीण्यङ्कुशवदनानि षड्वाग्निकर्मस्वभि-  
प्रेतानि'—इति सुश्रुते । [ वद्+भावे ल्युट् ] कथनम् ।

५१८

वदान्यः त्रि. [ वदति सर्वेभ्य एव दास्यामीति मनोहर-  
वाक्यम् । वद्+वदेरान्यः' इति आन्य ] वल्गुवाक्;  
बहुप्रदः; 'गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे माभूत् परी-  
वादनवावतारः'—इति रघो (५।२४) । ऋषिविशेषः;  
'निवेष्टुकामस्तु पुरा अष्टावक्रो महात्पाः । ऋषेरय  
वदान्यस्य वद्रे कन्या महात्मनः'—इति महाभारते  
(१३।१९।११) । ३६६

वधः पुं. [ हननमिति । हन्+अप्, वधादेशः ] प्राण-  
वियोगफलकव्यापारः; प्रमापणं; निवहणं; निकारणं;

निशारणं; प्रवासनं; परासनं; निसूदनं; निहंसनं;  
निर्वासनं; संज्ञपनं; निर्गन्धनम्; अंपासनं, निस्तर्हणं;  
निहननं; क्षणनं; परिवर्जनं; निर्वापणं; विशासनं;  
मारणं; प्रतिघातनम्; उद्वासनं; प्रमथनं; ऋथनम्;  
उज्जासनम्; आलम्भः; पिञ्जः; विशरः; घातः;  
उन्मथ्यः; हिंसा; घातनं; विदारणं; पिञ्जकं;  
पातः; परिघः; परिघातनं; कदनं; निवारणं;  
समाघातः; निर्गन्धनं; मारिः; मारी; उत्पातः;  
मारकः; मरकः; मारः; सङ्घातः । ३२२

वधुटी स्त्री.— वधूटी; युवतिः । ४८४

वधूः स्त्री. [ उह्यते पितृगेहात् पतिगृहम् । वह्+वहो  
धश्च' इत्यू ] स्त्री; नारी; (४९४) दाराः; क्षेत्रं;  
कलत्रं; भार्या; सहचरी; सधर्मचारिणी; पत्नी;  
जाया; गृहिणी; गृहम् । (५०४) स्नुषा; जनी;  
पुत्रवधूः । ४८२

वधूटी स्त्री. [ वधूट्+वयस्यचरमे इति वाच्यम्' इति  
डीप् । वधूट्चिरण्टशब्दौ यौवनवाचिनौ ] चिरण्टी;  
द्वितीयवयस्का स्त्री । ४८४

वध्रम् क्ली. [ वध्नाति अनेन, वध्+स्फायितञ्चीति'  
बाहुलकात् रक् वत्वं च ] वध्री; नद्ध्री; वर्धी;  
वध्रम् । ५९६

वध्री स्त्री. [ वध्+बाहुलकाद् रकि डीप् ] नद्ध्री;  
वर्धी; वर्ध; वर्धिका । ५९६

वनम् क्ली.—स्त्री. [ वनतीति, वन्+पचाद्यच् ] बहुवृक्ष-  
युक्तस्थानम्; अटवी; अरण्यं; विपिनं; गहनं; काननं;  
दावः; दवः; अटविः; भीरुकं; झाटं; गुहिनं; शत्रं;  
समजं; प्रान्तरं; विकतं; कान्तारम्; 'परस्त्रियं  
योऽभिवदेत्तीर्थारण्ये वनेऽपि वा । नदीनां वापि सम्भेदे  
स संग्रहणमाप्नुयात्'—इति मनुः (८।३५६) । 'कालो  
मधुः कुपित एव च पुष्यधन्वा धीरा वहन्ति रतिखेदहृराः  
समीराः । केलीवनीयमपि वञ्जुलकुञ्जमञ्जुदूरे पतिः  
कथय कि करणीयमद्य'—इति साहित्यदर्पणे । क्ली.  
[ वन्त्ये सेव्यते इति । वन्+पुसि संज्ञायां घः प्रायेण'  
इति घ, इति तिघण्टी देवराजयज्वा ] जलम् (६४८);  
'नमयति स्म स केवलमुन्नतं वनमुच्चं तंमुचैररये शिरः'  
इति रघो (९।२२) । निवासः; आलयः; चमसः; 'अध्वयवः  
कर्तनाः श्रुष्ठिमस्मै वने निपूतं वन उन्नयध्वम्'—इति

ऋग्वेदे (२।१४।९) 'वने सम्भजनीये वने उदके निपूत-  
माप्यायनेन शोधितं सोममुन्नयध्वमुद्ध्वं नयत। यद्वा  
वने तद्विकारे चमसे निपूतं दशापवित्रेण शोधितं सोमं  
वने चमसे उन्नयध्वम्—इति तद्भाष्ये सायणः।  
प्रववणं; रश्मिः; 'अबुध्ने राजा वरुणो वनस्य'—इति  
ऋग्वेदे (१।२४।७०)। पुं. शङ्कराचार्यशिष्यस्य  
हस्तामलकस्य शिष्याणामुत्राधिविशेषः; 'सुरम्ये निर्धरे  
देशे वने वासं करेति यः। आशापाशविनिर्मुक्तो वननामा  
स उच्यते'—इति प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे। २१०  
वनचरः पुं. [ वने चरति यः ] व्याघ्रादिः; निल्लः;  
किरातः। २३३

वनमाली [ न् ] पुं. [ 'आजानुलम्बिनी माला सर्वतु-  
कुसुमोज्वला। मध्ये स्थूलकदम्बाढया वनमालेति  
कीर्तिता।' सा वनमाला अस्त्यस्येति। इनि ] श्रीकृष्णः;  
नारायणः; 'कमलयामलया वनमालिनं गिरिजया  
गिरिशञ्च निशा विधुम्। सुविवृता परियोजयतो  
विधेश्चतुरस्ता ह्यनु रूपसमागमे'—इति प्रद्युम्नविजये  
३ अङ्के। २४

वनराजिः, वनराजी स्त्री. [ वनस्य राजिः पङ्क्तिः ]  
वनावली; अरण्यानी। २११

वनवह्निः पुं. [ वनस्य वनोद्भवो वा वह्निः ] दावानलः;  
वडवामुखः; वनहुताशनः; वनाग्निः; वनोपप्लवः;  
'फगारत्नप्रभाजालजटिलं वनवह्निना। गृहीतमिव तेजो-  
ग्रहेतिहस्तेन मूर्द्धनि'—इति कथासरित्सागरे (५६।  
३४३)। ७०

वनस्पतिः पुं. [ वनस्य पतिः। पारस्करादित्वात् सुट् ]  
वृक्षमात्रम्; 'कथं नु शाखास्तिष्ठेरश्लिन्नमूले वनस्पती'—  
इति महाभारते (१।१४।११६)। विना पुष्पं फलिद्रुमः।  
(१७९); अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः—  
इति मनुः (१।४७)। स्थालीवृक्षः; 'नन्दीवृक्षोऽवत्य-  
भेदः प्ररोहो गजपादपः। स्थालीवृक्षः क्षयतरुः क्षीरो च  
स्याद्वनस्पतिः'—इति भावप्रकाशे। १७७

वनायुजः पुं. [ वनायी देशे जातः इति। जन्+ङ ] वाना-  
युजः; वनायुदेशोद्भवघोटकः। ४३९

वनाश्रयः पुं. [ वनमेव आश्रयो यस्य ] द्रोणकाकः;  
काकोलः; मौकलिः; मौकुलिः; द्रोणः; कृष्णकाकः।  
अरण्याश्रयिणि त्रि.। 'सीदिष्यत्यखिलो लोकस्त्वयि

भूप! वनाश्रये'—इति मार्कण्डेये (१०९।४३)। २४६  
वनिता स्त्री. [ वन्+क्त+टाप् ] स्त्रीसामान्यम्;  
'वशिष्ठधेनोरनुयायिनं तमावर्तमानं वनिता वनान्तात्।  
पपी निमेषालसपक्षमपङ्क्तिरूपीपिताम्यामिव लोचना-  
म्याम्'—इति रघौ (२।१९)। जातरागस्त्री। ४८२  
वनौयकः त्रि. [ वनि याचनमिच्छतीति। क्यच्+प्पुल् ]  
अर्या; मार्गणकः; याचकः; वनीकः। ३५९  
वनौकाः [ स् ] पुं. [ वनमेव ओको गृहं यस्य ] वलीमुखः;  
मर्कटकः; मर्कटः; प्लवङ्गमः; प्लवगः; प्लवङ्गः;  
हरिः; कपिः; कीशः; शाखाभृगः; वानरः; वनरः;  
वनवासिनि त्रि.। 'धर्मोऽग्निः कश्यपः शक्रो मुनयो ये  
वनौकसः। चरन्ति दक्षिणीकृत्य भ्रमन्तो यस्ततारकाः'—  
इति भागवते (४।९।२१)। २३१

वन्दनमाला स्त्री. [ वन्दनार्था माला यत्र सा ] वन्दन-  
मालिका; तोरणं; [ वन्दनार्था माला इति कर्मधारिये ]  
रम्भास्तम्भचतुष्टयवेष्टिताध्रपत्ररचितमाला; 'कुर्याद्-  
वन्दनमालां यो रम्भास्तम्भैः सुशोभनैः। चूतवृक्षोद्भवैः  
पत्रजगरे चक्राणिनः। युगानि पत्रसंख्यानां स्वर्गे  
तस्योत्सवो भवेत्। पूज्यते वासवाद्यश्च क्रीडते चाप्सरो-  
वृतः'—इति हरिभक्तिविलासे १३ विलासः। ३०१

वन्दना स्त्री. [ वन्द्+घट्टिवन्दिविदिभ्यश्चेति वाच्यम् ]  
इत्युक्तया युच्, टाप् ] नमस्या; वन्दनी; स्तुतिः;  
समीची; हौमभस्मना तिलकम्; 'ऐशान्यामाहरेद्भस्म  
सुचा वायु सुवेण वा। वन्दनां कारयेत्तेन शिरःकण्ठां-  
सकेषु च। कश्यपस्येति मन्त्रेण यथानुक्रमयोगतः'—इति  
तिथ्यादितत्त्वम्। ७७६

वन्दिः स्त्री. [ वन्दते स्तोति नृपादिकं स्वमुवत्यर्थमिति।  
वदि+सर्वधातुस्य इन् इति इन् ] कृतवन्धनमनुष्य-  
गवादिः; प्रग्रहः; उपग्रहः; वन्दी; वन्दी; वन्दिका;  
सोपानकः; ग्लहः; 'वन्द्यक्षैः कैतवैश्चौर्ध्वेहिता वृत्ति-  
मास्थितः'—इति भागवते (६।१।२२)। पु. स्तुति-  
पाठकः; 'सूतमागधवन्दोनामैकेकस्य सहस्रिकम्'—इति  
हरिवंशे (११२।५०)। ७५९

वन्दी स्त्री. [ वन्दि+कृदिकारादवितनः इति डीप् ]  
वन्दिः; वन्दिः; वन्दी; 'कैदी' इति भाषा। ७५९  
वन्दी [ न् ] पुं. [ वन्दते स्तोति नृपादीनि। वदि स्तुती+  
जिनि ] गजादीयानादी वीर्यादिस्तुतिकारकः; स्तुति-



पाठकः; मागधः; मगवः; 'परिकल्पितसान्निध्या काले काले च वन्दिषु । स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती'—इति रघी (४१६) । भृत्यः; 'ओमित्यां-देशमादाय न वा तं सुरवन्दिनः । उर्वशीमप्सरः श्रेष्ठां पुरस्कृत्य दिवं ययुः'—इति भागवते (१२।४।१५) । 'सुरवन्दिनो देवभृत्याः' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी ।

४३५

वपनम् क्ली. [ वप्+भावे ल्युट् ] वपः; केशमुण्डनं; क्षीरं; भद्राकरणं; मुण्डनम्; 'शूद्राणां मासिकं कार्यं वपत्रं न्यायवर्तिनाम्'—इति मनुः (५।१४०) । वीजाधानम् । ७२१

वया स्त्री. [ उप्यतेऽत्रेति । वप्+भिदाद्यङ्+टाप् ] छिद्रम्, 'अथ वल्मीकवपा सुषिरा व्यव्वे निहिता भवति'—इति शतपथब्राह्मणे (६।३।३।५) । भेदः (६३५); 'पतत्रिण-स्तस्य वपामुद्भूय नियतेन्द्रियः । ऋत्विक् परमसम्पन्नः स्नपयामास शास्त्रतः'—इति रामायणे (१।१४।३६) ।

६२४

वपुः [ स् ] क्ली. [ उप्यन्ते देहान्तरभोगसाधनवीजी-भूतानि कर्माण्यत्रेति । वप्+अतिपूर्वपियजोति' उसि ] शरीरम्; 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च'—इति रघी (२।४७) । प्रशस्ताकृतिः; अंशः; 'अष्टानां लोकपालानां वपुर्वारयते नृपः'—इति मनुः (५।९६) । 'वपुस्तेजोऽशः' इति तट्टीकायां मेधातिथिः । स्त्री. दक्षकन्या; धर्मराजपत्नी; 'वृद्धिलज्जा वपुः शान्तिः सिद्धिः कीर्तिस्त्रयोदशी । पत्ययै प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः'—इति मार्कण्डेये (५०।२१) ।

५२८

वप्ता [ ऋ ] पुं. [ वपति बीजमिति । वप्+तृच् ] जनकः; तातः; पिता; कविः; नापितः; 'यदा ते वातो अनुवाति शीचिर्वप्लेव इमश्च वपसि प्रभूम'—इति ऋग्वेदे (१८।१४२।४) 'यथा वप्ता नापितो वपति मुण्डयति तथा भूम भूमिं प्रवपसि प्रकर्षेण मुण्डयसि'—इति तद्भाष्ये सायणः । त्रि. [ वपतीति । वप् बीजोप्ती+तृच् ] वापकः; कर्षकः; 'यथेरिणे बीजमुप्त्वा न वप्ता लभते फलम् । तयानृचे हविर्दत्त्वा न दाता लभते फलम्'—इति मनुः (३।१४२) । ५०४

वप्रम् क्ली.—पुं. [ उप्यतेऽत्रेति । वप्+वृविवपिम्यां रन् ]

इति रन् ] दुर्गनगरे परिखाया उद्धृतमृत्तिकास्तूपबद्धे, यदुपरि प्राकारो निवेश्यते तत्; चयः; मृत्तिकास्तूपः; 'लग्नं जघने तस्याः सुविशाले कलितकरिकरक्रीडे । वप्रे सक्तं द्विपमिव शृङ्गारस्तां विभूषयति'—इति आर्यासप्त-शत्याम् । (५०५) । (५७४) [ वपति बीजमत्र ] केदारः क्षेत्रं; निष्कृतः; वनजं; वाजिका; पाटीरः; 'शालीकुमत्पि धरा धरणोवराभवाराधरोजितपयःपरिपूर्णवप्रा'—इति बृहत्संहितायाम् (१९।१६) । पर्वतसानुः (८१०); 'नानारत्नज्योतिषां सन्निपाततैश्छन्नेष्वन्तः सानुव-प्रान्तरेषु'—इति किराते (५।३६) । रेणुः; तटः; 'तत्पूर्वं प्रतिविदधे सुरापगाया वप्रान्तस्वलितविवर्तनं पयोभिः'—इति किराते (७।११) । २८८

वमयुः पुं. [ वमनमिति । वम्+ट्वितोऽथुच्' इति अथुच्' । हस्तिशुण्डनिर्गतजलकणः; करशीकरः; 'रजनिवमयु-प्रालेयाम्भःकणक्रमसंभूतैः, कुशकिशलयस्याच्छैर्योशयैरुद-विन्दुभिः'—इति नैषधे (११।६) । वमिः; प्रच्छदिका; 'दौर्जल्यश्वासकाशज्वरवमयुमदाः पाण्डुतादाहमूर्च्छाः'—इति सुश्रुतः । २१६

वम्रः पुं. [ वमति उदगिरति आद्रंमुदमिति । वम्+वाहुलकाद् र ] वम्री उपदेहिका; पिपीलिका । ६४५  
वम्री स्त्री. [ स्त्रीत्वे ङोप् ] वम्रः; पिपीलिका; उपदेहिका ।

६४५

वम्रीकूटम् क्ली.—पुं. [ वम्रीकृतं कूटम् ] नाकुः; वल्मीकः; वामलूरः । ६४४

वयः [ स् ] क्ली. [ वयते, वेति, अजतीति वा । वय् गतौ, वी गतौ, अज् गतौ वा +असुन् अजतेर्वीभावः ] पक्षी; 'ततः स्वच्छन्दनोऽन्यानि वयांसि वयसोऽसृजन्'—इति विष्णुपुराणे । वाल्यादिः; 'तुल्यशीलवयोयुक्तां तुल्याभिजनसंयुताम् । नपथोऽर्हति वेदभीं तं चैयमसि-तेक्षण'—इति महाभारते (३।६८।२३) । अन्नम्; 'वयं ते वय इन्द्र विद्धि पुणः प्रभरामहे वाजयुनैरयम्'—इति ऋग्वेदे (२।२०।१) । यौवनम्; 'वालयं वृद्धिर्वयो रूपं चक्षुस्त्वक् श्रोत्ररेतसी । दशकेन निवर्तन्ते मनः सर्वेन्द्रियाणि च'—इति महाभारते । २३७

वयस्यः पुं. [ वयसा तुल्यः । वयस्+नीवयोवर्मेति' यत् ] समानवयस्कः; स्निग्धः; सवयाः; मित्रं; सखा; सुहृत्; 'बहुयोषिति लाक्षारुणशिरसि वयस्येन दयित

उपहसिते । तत्कालकलितलज्जा पिशुनयति सखीषु  
सीभाग्यम्—इति आर्यासप्तशत्याम् (४०३) । ४२८  
वयस्या स्त्री. [ वयस्य+टाप् ] आली; सखी; 'अत्यर्थं सा  
च दृष्ट्वा त्वां जायते मदनातुरा । तां भजस्व वयस्यां  
मे ततः क्षेममवाप्स्यासि—इति कयासरित्सागरे  
(१०।१४५) । इष्टका; 'एकया न विंशतिर्वयस्यास्ता  
एकचत्वारिंशद्द्वितीया चितिः—इति शतपथब्राह्मणे  
(१०।४।३।१५) । तथा च वाजसनेयसंहिताभाष्ये  
(१४।९) 'वयस्यासंज्ञका इष्टका उपदधात्येकोन-  
विंशतिमन्त्रैः' इत्यर्थः । ४८७

वरः पुं. [ वृ+अप् ] पतिः; वरणं; वृत्तिः; 'तपोभिरिष्यते  
यस्तु देवेष्वः स वरो मतः—इति भरतः । जामाता;  
'प्रमुदितवरपक्षमेकतस्तत् क्षितिपतिमण्डलमन्यतो  
वितानम्—इति रघी (६-८६) । पिङ्गः; गुग्गुलुः;  
निग्रहः; 'न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा  
दिव्या यथाशनिः—इति ऋग्वेदे (१।१४३।५) ।  
'योऽग्निर्वराय वरणाया निग्रहाय शक्तो न भवति—इति  
तद्भाष्ये सायणः । त्रि. श्रेष्ठः (६८९); 'राजांसं  
राजच्छत्रं वराश्वा वरवारणाः । यस्य पुण्यानि तस्यैते  
मत्सैतत् शाम्य पुत्रक—इति विष्णुपुराणे (१।११।१८) ।  
क्ली. [ त्रियते इति, वृ+कर्मणि अप् ] कुङ्कुमं;  
मनाक्प्रियम्; 'वरं प्राणास्त्याज्या न च शिशुविना-  
शेष्वभिरति, वरं मीनं कार्यं न च वचनमुक्तं यदनूतम् ।  
वरं क्लीवं भाव्यं न च परकलत्राभिगमनं, वरं भिक्षाशित्वं  
न च परघनानां हि हरणम्—इति वामनपुराणे ।  
त्वचम्; आर्द्रकम्; अव्य. मनाक्प्रियम्; 'मनागिष्टे  
वरं क्लीवं केचिदाहुस्तदव्ययम्—इति मेदिनी । ४९७

वरटा स्त्री. [ वरट+टाप् ] हंसी; वरला; वारला;  
हंसकान्ता; वरटी; 'मदेकपुत्रा जलनी जरातुरा नव-  
प्रसूतिर्वरटा तपस्विनी—इति नैषधे (१।१३५) ।  
कुसुम्भबीजम्; 'वरटा मधुरा स्निग्धा रक्तपित्तकफा-  
पहा । कषाया शीतला गुर्दी स्यादवृष्यानिलापहा—  
इति भावप्रकाशः । पुं. [ वरति सेवते सरोवरमिति ।  
वृ-सेवायाम्, 'शकादिभ्योऽटन्' इति अटन् ] हंसः;  
कीटविशेषः; गन्धोली; वरला; वरली; क्षुद्रा; क्रूरा;  
क्षुद्रवर्णा । २५१

वरटी स्त्री. [ वरट+जातौ डीष् ] हंसी; गन्धोली;

'सूक्ष्मतुण्डोच्चटिङ्गवरटीशतपदीशूकवलभिकाभृङ्गीप्र-  
मराः शूकतुण्डविषाः—इति सुश्रुतः । २५१

वरणः पुं. [ त्रियते अनेन, वृणोतीति वा । वृ+सुयुर्वृजो  
युच् अति युच् ] संक्रमः; प्राकारः; वरणवृक्षाः; 'इह  
सिन्धवश्च वरणावरणाः करिणां मुदे सनलदानलदाः—  
इति किराते (५।२५) । उष्ट्रः; क्ली. [ वृ+भावे  
ल्युट् ] कन्यादिवरणम्; 'न च विप्रेष्वधीकारो विद्यते  
वरणं प्रति । स्वयंवरः क्षत्रियाणामितीयं प्रथिता श्रुतिः—  
इति महाभारते (१।१९०।७) । वेष्टनं; पूजनादि ।

६७१

वरत्रा स्त्री. [ त्रियतेऽनयेति । वृ+वृवश्चित्—इति अत्रन्  
+टाप् ] हस्तिकक्षरज्जुः; चूषा; कक्ष्या; कक्षा;  
चर्मरज्जुः; नद्धी; वद्धी; वर्द्धी; वाद्धी; 'यथायुगं  
वरत्रया नहति घृणायकम्—इति ऋग्वेदे (१०।  
६०।८) । २२१

वरयिता [ ऋ ] पुं. [ वृ+णिच्+तृच् ] मर्ता; कान्तः;  
कमिता; पतिः; भोक्ता; धवः; रुच्यः; अभीकः;  
वरः; अभिकः; रमणः; प्राणाधिनाथः; अनुगः ।  
वरणकारयिता । ४९७

वरला स्त्री. [ वृ+अलच्+टाप् ] हंसी; वरटा; वरली ।  
२५१

वरली स्त्री. [ वरल+डीप् ] वरटा; हंसी; हंसकान्ता ।  
२५१

वरस्त्री स्त्री.— मुख्या नारी; वरारोहा; वराङ्गना;  
मत्तकासिनी; मत्तकाशिनी । ४९८

वराङ्गम् क्ली. [ वरमङ्गानाम् ] भगः; योनिः; उपस्थः;  
स्मरमन्दिरं; मस्तकं; गुह्यं; गुडत्वक्; श्रेष्ठावयवः  
[ वराण्यङ्गान्यस्य ]; तद्युक्ते त्रि. । चोचम्; 'त्वक्पत्रं-  
च वराङ्गं स्याद् भृङ्गं चोचं तपोत्कटम्—इति भाव-  
प्रकाशः । पुं. [ वराणि स्थूलान्यङ्गानि यस्य ] हस्ती;  
विष्णुः; 'सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी—  
इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् । ५१४

वराङ्गः पुं. [ वरं मन्दमटतीति । वर+अट्+कर्मणि अण् ]  
रज्जुः; शूल्वा; 'रज्जुः शूल्वा वराटो ना—इति  
रत्नकोषः । (६६४) कपर्दकः; कपर्दः; वराटकः;  
वराटिका । ५९७

वरारोहा स्त्री. [ वर आरोहो नितम्बो वस्याः ] उत्तमा

स्त्री; 'यदा तु वैदिको दीक्षां दीक्षा पीराणिकी तथा । न स्यास्यति वरारोहे ! तदैव प्रबलः कलिः'—इति विश्वः । कटिः । ४८९

वराहः पुं. [ वरान् आहन्ति । हन्+ङ ] पशुविशेषः; वाराहः; शूकरः; घृष्टिः; कोलः; पोत्री; किरिः; कितिः; दंष्ट्री; घोणी; स्तव्वरोमा; क्रोडः; भूदारः; किरः; मुस्तादः; मुखलाङ्गलः; स्थूलनासिकः; दन्तायुधः; वक्रनक्रः; दीर्घतरः; आखनिकः; भूक्षित्; ब्रह्मसुः । 'भुक्त्वा वाराहमासं तु यस्तु मामुपसर्पति । वराहो दशवर्षाणि भूत्वा वै चरते वनम्'—इत्येकादशी-तत्त्वम् । विष्णोरखतारविशेषः; 'वराहपर्वतो नाम यः पुरा हरिर्निर्मितः । स एव भूतो भगवानाजगामा-पुरान्तिकम्'—इति बह्निपुराणम् । विष्णुः; मानभेदः; पर्वतभेदः; मुस्ता; शिशुमारः; वाराहीकन्दः; अष्टादश-द्वीपान्तर्गतक्षुद्रद्वीपविशेषः; 'गन्धर्वो वरुणः सौम्यो वराहः कङ्क एव च । कुमुदश्च कसेरुश्च नागो भद्रारक-स्तथा । चन्द्रेन्द्रमलयाः शङ्खयवाङ्गकगभस्तिमान् । ताम्राकुश्च कुमारी च तत्र द्वीपा दशाष्टभिः'—इति शब्दमाला । कृष्णपिण्डीरः; 'वराहः कृष्णपिण्डीरः कृष्णपिण्डीतकस्तुः सः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् ।

२२६

वरिवस्या स्त्री. [ वरिवसः पूजायाः करणम् । वरिवस्+ 'नमोवरिवश्चित्रदः क्यच्' इति क्यच्, 'अ प्रत्ययात्' इत्य, टाप् ] शुश्रूषा; परिचर्या; उपासना; परीष्टिः; सेवा; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः । १२९

वरिष्ठः त्रि. [ अयमेषामतिशयेन वर उर्वा । अतिशयने इष्टन्, 'प्रियस्थिरेति वरादेशः ] वरतमः; 'हत्वा स्वविक्रयस्पृष्ट आततायिनो युधिष्ठिरो घमंभूतो वरिष्ठः'—इति भागवते (११.०.११) । उरुतमः; 'यत्सीं वरिष्ठे बृहती विमिष्वनु वद्वोक्षांप्रयानेभिरेवै'—इति ऋग्वेदे (४.५.६१) । वत्सः; पुं. [ वर+इष्टन् ] तित्तिरिपक्षी; नारङ्गवृक्षः; चाक्षुषमनुपुत्रः; 'वरिष्ठो नाम भगवांश्चा-क्षुषस्य मनोः सुतः'—इति महाभारते (१३.१८.२०) । घमंसार्वणिमन्वन्तरस्य ऋषिविशेषः; 'हविष्मांश्च वरिष्ठश्च ऋष्टिरन्यस्तथाऋणिः । निश्चरश्चानघश्चैव रिष्टिश्चान्यो महामुनिः । सप्तर्षयोऽन्तरे तस्मिन्नग्नि-

देवश्च सप्तमः'—इति मार्कण्डेये (९.४.१९) । दैत्य-विशेषः; 'वरिष्ठश्च गविष्ठश्च भूतलोन्मथनो विभुः । सुप्रसादः किरीटी च सूचीवक्त्रो महासुरः'—इति हरिवंशे (२३.२।१३) । स्त्री. [ वरिष्ठ+टाप् ] आदि-त्यभक्ता । ६९९

वरुणः पुं. [ वृणोति सर्वं, त्रियते अन्यैरिति वा । वृ+ 'कृवृदारिम्य उनन्' इति उनन् ] प्रचेताः; पांशी; यादसांपतिः; अप्पतिः; यादःपतिः; अपांपतिः; जम्बुकः; मेघनादः; जलेश्वरः; परञ्जयः; दैत्यदेवः; जीवनावासः; नन्दपालः; वारिलोमः; कुण्डली; रामः; सुखाशः । वृक्षविशेषः; सेतुः; तिक्तशाकः; कुमारकः; श्मरीधनः; वराणः; सेतुकः; शिखिमण्डनः; श्वेत-वृक्षः; श्वेतद्रुमः; साधुवृक्षः; तमालः; मारुतापहः; जलः; सूर्यः; 'घाता मित्रोऽर्षमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च । भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा'—इति महाभारते (१.१५।१५) । मुनिगर्भजातकश्यप-पुत्रविशेषः; महाभारते (१.१५।४२) । ७४

वरुथः पुं. [ त्रियते रथोऽनेनेति । वृ. वरणि+ 'जूवृ-म्यामूथन्' इति ऊथन् ] परप्रहरणाभिघातरक्षार्थं रथस्य सन्नाहवद्यदावरणकादिद्रव्यं तत्; रथगुप्तिः; रथसंवृतिः; 'उरगध्वजदुर्द्वयं सुवरुथं स्वपस्करम्'—इति रामायणे (६.५.७।२६) । ग्रामविशेषः; 'तोरणं दक्षिणाद्धेन जम्बूप्रस्थं समागतम् । वरुथं च ययौ सम्यक् ग्रामं दशरथात्मजः'—इति रामायणे (२।७.१।११) क्ली. तनुत्राणं; चर्म; गृहम्; 'भवा वरुथं गृणते विभावो भवा मघवन् मघवद्भयः शर्म'—इति ऋग्वेदे (१।५.८।९) । सैन्यम्; 'तेऽनीकपा रघुपतेरभिपत्य सर्वे द्वन्द्वं वरुथमिभपत्तिरयाश्वयोधैः । जघन्दुर्मैगिरिगदेपु-भिरङ्गदाद्याः सीताभिमर्षहतमङ्गलरावणशान्'—इति भागवते (९।१९।२०) । ४४९

वरुथिनी स्त्री. [ वरुथं तनुत्राणादिकमस्त्यस्यां इति । वरुथ+इनि+डीप् ] सेना; पृतना; ध्वजिनी; पता-किनी; वाहिनी; बलं; सैन्यं; चक्रः; चमूः; अनी-किनी; अनीकम्; 'तस्य जातु मरुतः प्रतीपगावत्सु ध्वजतरुप्रमाथिनः । त्रिविलशुभ्रशतया वरुथिनीमत्तटा इव नदीरयाः स्थलीम्'—इति रघौ (१.१।५८) ।

वरेण्यः त्रि. [ वृ+एण्य ] प्रधानः; श्रेष्ठः; वरः;  
 'पुण्यो महाब्रह्मासमूहजुष्टः सन्तर्णो नाकसदां वरेण्यः'—  
 इति भट्टिः ( ११४ ) वरणीयः; 'संस्कारपूतेन वरं वरेण्यं  
 ववूं मुखप्राह्मनिबन्वनेन'—इति कुमारे ( ७१९० ) ।  
 पुं. पित्रृगणानामन्यतमः; 'वरो वरेण्यो वरदो पुष्टिद-  
 स्तुष्टिदस्तया'—इति मार्कण्डेये ( ९६१४५ ) ।  
 भृगुपुत्रविशेषः; 'भृगोस्तु पुत्राः सप्तासन् सर्वे तुल्या  
 भृगोर्गुणैः । च्यवनो वज्रशीर्षश्च शुचिरीर्वस्तथैव च ।  
 क्षुक्रो वरेण्यश्च विभुः सवनश्चेति सप्त ते'—इति महा-  
 भारते ( १३१८५१२९ ) । महादेवः; 'वरो वराहो  
 वरदो वरेण्यः सुमहास्वनः'—इति शिवसहस्रनामकीर्तने  
 ( १३१७१३६ ) । क्ली. [ त्रियते लोकैरिति । वृ+  
 'वृन् एण्यः' इति एण्य ] कुड्कुमम् । ६८९  
 वरकरः पुं. [ वृक्यते गृह्यते इति । वृक् आदाने+बहुल-  
 वचनात् अर ] युवपशुः; तरुणपशुः; भेषशावकः;  
 छागः; परिहासः; 'कान्तः केलिरुचिर्वया सहृदयस्तादृक्  
 पतिः कातरे, किन्नो वरकरकरैः प्रियशतैराक्रम्य विक्रीयते'  
 —इति अमरशतके ( ७ ) । २७८  
 वरकराटः पुं. [ वरकरं परिहासम् अटति गच्छतीति । अट्+  
 अच् ] कटाक्षः ।  
 वर्गः पुं. [ वृज्यते इति, वृजी वर्जने + घञ् ]  
 स्वजातीयसमूहः; 'व्रताय तेनानुचरेण धेनोन्यंबेधि  
 शेषोऽप्यनुयायिवर्गः' — इति रघौ ( २१४ ) ।  
 समानवर्गिभिः प्राणिभिरप्राणिभिश्चोपलक्षितं वृन्दम्;  
 यया—कवर्गः ग्रन्थपरिच्छेदः; 'सर्गो वर्गपरिच्छेदोद्घाता-  
 ध्यायाङ्कसंग्रहाः । उच्छ्वासः परिवर्तश्च पटलः कोण्ड-  
 मस्त्रियाम् । स्थानं प्रकरणं पर्वाह्लिकं च ग्रन्थसन्धयः'—  
 इति त्रिकाण्डशेषः । समानाङ्कद्वयस्य गुणनं; कृतिः;  
 स्त्री. अप्सरोविशेषः; 'अप्सरारिम् महावाहो देवारण्य-  
 विहारिणी । इष्टा धनपतेर्नित्यं वर्गा नाम महाबल !'  
 —इति महाभारते ( ११२१७१५ ) । ५०८  
 वर्चः [ स् ] क्ली. [ वर्चते इति, वर्च+ 'सर्वघातुम्योऽमुन्'  
 इति अमुन् ] तेजः; 'अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वच्वः  
 सुवीर्यम्'—इति ऋग्वेदे ( ९।६६।२१ ) । 'वर्चः तेजः'  
 इति तद्भाष्ये सायणः । ( ६३७ ) विष्ठा; वर्चस्कः ।  
 'शूलाविष्टः सक्तमूत्रोऽत्रकृजी सस्तापानः सन्नकटधू  
 रजङ्घः । वर्चो मुच्वत्यल्पमल्पं सफेनं रुक्षं श्यावं सानिलं

मास्तेन'—इति मुश्रुतः । रूपम्; अन्नम्; 'अग्ने सहस्व  
 पृतना अभियातीरपास्य । दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चोघायज्ञ-  
 वाहसे'—इति ऋग्वेदे ( ३।२४।१ ) । 'वर्चोघाः अन्नं  
 देहि'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६५  
 वर्चस्कः पुं. क्ली. [ वर्चस्+स्वार्थे कन् ] विष्ठा; वर्चः;  
 उच्चारः; अवस्करः; शकृत्; गूथः; कीटः; विट्;  
 पुरीषः; शमलः; मलः । दीप्तिः; 'देविकायामुपस्पृश्य  
 तथा सुन्दरिकाहृदे । अश्विन्यां रूपवचस्कं प्रेत्य वै लभते  
 नरः'—इति महाभारते ( १३।२५।१९ ) । ६३७  
 वर्जनम् क्ली. [ वृज्+ल्युट् ] मारणं; घातनं; निशरणं;  
 निवर्हणं; सूदनं; हिंसा; त्यागः । ४७७  
 वर्णम् क्ली. [ वर्णयतीति, वर्ण्+अच् ] कुड्कुमं;  
 घुसृणम् । ५४३  
 वर्णः पुं. [ त्रियते इति, वृ+ 'कृवृजृषिदुजुपन्यनिस्वतिभ्यो  
 नित्' इति न, स च नित् ] शुक्लादिः; ब्राह्मणादिः;  
 शोभा; अक्षरः; व्रतं; गीतक्रमः; स्तुतिः; वेषः । ८६०  
 वर्णनम् क्ली. [ वर्णं स्तुती विस्तारे रञ्जनादौ+ल्युट् ]  
 वर्णना; स्तवनम्; 'इत्थं निशम्य दमघोषसुतः स्वपीठा-  
 दुत्याय कृष्णगुरुवर्णनजातमन्युः । उत्क्षिप्य बाहुमिदमाह  
 सदस्यमर्षी संश्रावयन् भगवते परुषाण्यभीतः'—  
 इति भागवते ( १०।७४।३० ) । विस्तरणं; शुक्लादि-  
 वर्णयोजनं; दीपनम् । १५०  
 वर्णना स्त्री. [ वर्णं+णिच्+युच्+टाप् ] गुणकथनम्;  
 इडा; स्तवः; स्तोत्रं; स्तुतिः; नृतिः; श्लाघा;  
 प्रशंसा; अर्थवादः; 'विदग्धा अपि वर्णयन्ते विटवर्णनया  
 स्त्रियः'—इति कथासरित्सागरे ( ३२।१६६ ) । १४५  
 वर्णपुष्पम् क्ली. [ वर्णवन्ति नानावर्णानि पुष्पाणि यस्य ]  
 कुराटकः; पुष्पविशेषः । २०७  
 वर्णिनी स्त्री. [ वर्णोऽस्त्यस्या इति । वर्णं+इनि+ङीप् ]  
 वनिता; स्त्री; हरिद्रा । ४८१  
 वर्णा [ न् ] पुं. [ वर्णः प्रशस्तिः अस्यास्ति । वर्णा अक्षराणि  
 लेख्यत्वेन सन्त्यस्येति वा । वर्णं+ 'वर्णाद् ब्रह्मचारिणि'  
 इति इनि ] ब्रह्मचारी; 'वर्णा स्यात्लेखके चित्रकरेऽपि  
 ब्रह्मचारिणि'—इति मेदिनी । लेखकः; [ वर्णाः नील-  
 पीतादयः लेख्यत्वेन सन्त्यस्येति इनि ] चित्रकरः;  
 'अङ्गारकुशमुञ्जानां पलाशशरवणिनाम् । यवसेन्धन-  
 दिग्धानां कारयेत् च सञ्चयान्'—इति महाभारते

(१२।६९।५७) । वर्णविशिष्टे त्रि. । [ वर्णोत्तरपदात् तु 'धर्मशीलवर्णान्ताच्च' इति इनि स्यात् ] 'याजना-  
प्यापने शुद्धे विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः । वृत्तित्रयमिदं  
प्राहुर्मुनयो ज्येष्ठवर्णिनः'—इति कामन्दकीये नीतिसारे  
(१।१९) । ज्येष्ठवर्णिनो ब्राह्मणस्त्येत्यर्थः । ३९४

वर्तनम् क्ली. [ वर्ततेऽनेनेति । वृत्+करणेऽप्युट् ] वृत्तिः;  
साधारणवर्तुलं; क्ली.—स्त्री. तूलनाला; तर्कुपीठः;  
जीवनं; पुं. [ वृत्+युच् ] वामनः; वर्तिष्णी त्रि. । ७८७  
वर्तनिः स्त्री. [ वर्ततेऽनयेति । वृत्+'वृतेश्च' इति अनि ]  
पन्याः; पुं. पूर्वदेशः । २६०

वर्तनी स्त्री. [ वर्तनि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष् ] पन्याः;  
पेषणम् । २६०

वर्तमानः त्रि. [ वर्तते इति, वृत्+शानच्, मुक् ] तत्काल-  
वृत्तः; अद्यतनः; अधुनातनः; उपस्थितः; 'प्रवृत्तो-  
परतश्चैव वृत्ताविरत एव च । नित्यप्रवृत्तः सामीप्यो  
वर्तमानश्चतुर्विधः ।' पुं. प्रयोगाधिकरणभूतकालः । ८८०

वर्तिः स्त्री. [ वर्ततेऽनया इति । वृत्+हृपिषिषिहृवृत्ति-  
विदिच्छिदिकीर्तिभ्यश्च' इति इन् ] वस्तिः; दशा;  
सिचः; भेषजनिर्माणं; नयनाञ्जनं; लेखः; गात्रा-  
नुलेपनी; दीपदशा; 'यथा प्रदीपो धृतवर्तिमश्नन्  
शिखाः सधूमा भजति ह्यन्यदा स्वम्'—इति भागवते  
(५।११।८) । दीपः; वर्तिविशेषः । 'कतकस्य फलं  
शङ्खः सैन्धवं श्रूषणं वचा । फेनो रसाञ्जनं क्षौद्रं  
विडङ्गानि मनःशिला । एषां वर्तिर्हन्ति कासं तिमिरं  
पटलं तथा'—इति गारुडे । [ वर्ततेऽनयेति, वृत्+  
'वृतेश्छन्दसि' इति इ । बाहुलकात् लोकेऽपि ] योग-  
कर्मद्रव्यम् । ५५१

वर्तुलम् त्रि. [ वर्तते इति, वृत्+बाहुलकात् उलच् ]  
गोलवस्तु; निस्तलं; वृत्तं; मण्डलायितम् । 'वृत्तानि  
बाहुनारङ्गस्कन्धधम्मिल्लमोदकाः । रथाङ्गलावककुत्तु-  
कुम्भिकुम्भाण्डकादयः । कर्णपाशाभुजापाशाकृष्टपाप-  
घटाननम् । मुद्रिकापरिखायोगपट्टहारस्रगादयः'—इति  
कविकल्पलतायाम् । क्ली. गृञ्जनं; पुं. कलायविशेषः;  
'कलायस्य त्रयो भेदास्त्रिपुटो वर्तुलोऽङ्कटी'—इति शब्द-  
माला । ७५३

वर्तुम् [ न् ] क्ली. [ वर्ततेऽनेनास्मिन् वेति । वृत्+मनिन् ]  
पन्याः; वर्तनिः; वर्तनी; अच्चा; पद्यतिः; एकपदी;

सरणिः; मार्गः; 'गोमातरो यच्छुभयन्ते अञ्जिभस्तनूषु  
शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः । बाधन्ते विश्वमभिमातिनम-  
पवर्तमान्येषामनुरीयते धृतम्'—इति ऋग्वेदे (१।८।३) ।  
'वर्तमानि मार्गाननुसृत्य'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
'पुरस्कृता वर्तमानि पाथिवेन प्रत्युद्गता पाथिवधर्मपत्न्या ।  
तदन्तरे सा विरराज धेनुदिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'—  
इति रघो (२।२०) । (७९२) नेत्रच्छदः; नयनच्छदः ।  
'सितासितं च तन्मध्ये नेत्रयोर्मण्डलं हि तत् । प्रच्छादनं  
भवेद्वर्तुम् चाक्षिकूटमतः परम्'—इति अश्ववैद्यके  
(२।१०) । २६०

वर्धकम् क्ली. [ वर्धते इति, वृध्+णिच्+ण्वुल् ] कल्पनं;  
कर्तनं; छेदनं; पुं. ब्राह्मणयण्टिका; [ वर्धयतीति, वर्ध  
पूरणे छेदने च, ण्वुल् ] पूरके छेदके च त्रि. । ७२९

वर्द्धकः पुं. [ वर्द्धते छिद्यते इति । वृध्+अच् । वर्द्ध कप-  
तीति । कष् हिंसायाम्+बाहुलकात् डि ] त्वष्टा; तक्षा;  
रथकारः; वर्धकी; 'वर्द्धई' इति भाषा । 'कर्मान्तिकान्  
शिल्पकरान् वर्धकीन् खनकानपि । गणकान् शिल्पिनश्चैव  
तथैव नटनर्तकान्'—इति रामायणे (१।१३।७) । ५८७  
वर्धकी [ न् ] पुं. [ वर्द्धको वर्धोऽस्ति अस्येति । वर्धक+  
इनि ] त्वष्टा; वर्द्धकः; तक्षा; सूत्रधारः; रथकारः;  
रथकारः; काष्ठतट्ट; काष्ठतक्षकः; 'अरभङ्गे बलभेदो  
नेम्या नाशो बलस्य विज्ञेयः । अर्थक्षयोऽश्मभङ्गे तथाणि-  
भङ्गे च वर्धकिनः'—इति बृहत्संहितायाम् (४३।२२) ।  
५८७

वर्धनी स्त्री. [ वर्धयति अवस्करमिति । वर्ध+अनुदात्तेतश्च'  
इति युच् ] सम्मार्जनी; घटी (३१७) ; गलन्तिका;  
कर्करी; सनालपानविशेषः; 'आलुः स्त्री कर्करी पारी  
वर्धनी च गलन्तिका'—इति जटाधरः । 'प्रतिष्ठा यस्य  
देवस्य तदारुणं कलसं न्यसेत् । ऐशान्यां पूजयेद्दाम्यं  
अस्त्रेणैव च वर्धनीम् । कलसं वर्धनीं चैव प्रहान्  
वास्तोष्पतिं तथा । आंसने तानि सर्वाणि प्रणवारुणं  
जपेद् गुरुः'—इति गारुडे । ३०२

वर्धमानः पुं. [ वर्धते इति, वृध्+वृद्धी+शानच् ] 'वनिनां  
गृहविशेषः; स्वस्तिकः; नन्द्यावतीदिः; 'द्वारालिन्दोऽ-  
न्तगतः प्रदक्षिणोऽन्यः शुभस्ततश्चान्यः । तद्वच्च वर्धमाने  
द्वारं तु न दक्षिणं कार्यम्'—इति बृहत्संहितायाम्  
(५३।३३। (३१५) शरावः; शालाजिरः; वर्ध-

मानकः; 'तया गाः कपिला दोग्ध्रीः सवत्साः पाण्डुनन्दनः । हेमशृङ्गी रूप्यखुरा दत्त्वा चक्रे प्रदक्षिणम् । स्वस्तिकान् वर्धमानांश्च नन्द्यावतांश्च काञ्चनान्'—इति महाभारते (७।८।१९) । एरण्डवृक्षः; 'शुक्ल एरण्ड आमण्डु-श्चित्रो गन्धर्वहस्तकः । पञ्चाङ्गुलो वर्धमानो दीर्घ-दण्डोऽप्यदण्डकः । वातारिस्तरुणश्चापि रूक्कश्च निगद्यते'—इति भावप्रकाशः । पशुभेदः; विष्णुः; 'वर्धनो वर्धमानश्च द्विविक्तः श्रुतिसागरः'—इति महाभारते (१३।१४।४१) । जिनविशेषः; वीरः; चरमतीर्थकृत्; महावीरः; देवाप्यः; अज्ञातनन्दनः; देशविशेषः; 'प्राच्यां मागधशौणी च वारेन्द्रीगौडराढकाः । वर्धमान-तमोलिप्तप्रारज्योतिषोदयाद्रयः'—इति ज्योतिषतत्त्वे कर्मचक्रम् । भद्राश्ववर्षस्य कुलपर्वतविशेषः; 'विशालः कम्बलः कृष्णो जयन्तो हरिपर्वतः । विशोको वर्धमानश्च सप्तैते कुलपर्वताः'—इति मार्कण्डेये (५९।१२) । वृद्धि-विशिष्टे त्रि. । ३०५

वर्धो स्त्री. [ वर्धते इति । वृ+अच्, वर्द्धं+गौरादित्वाद् ङीष् ] चर्मरज्जुः; नद्वी; वद्वी; वरना; वर्धिका ।

५९६

वर्मन् [ न् ] क्ली. [ वृणोति आच्छादयति शरीरमिति । वृ+मनिन् ] तनुत्रं; सन्नाहः; कवचं; तनुत्राणम्; उरश्छदः; जगरः; कङ्कटः; माठी; दंशनः; जालिका; 'अभ्यभूयत वाहानां चरतां गात्रशिञ्जितैः । वर्मन्भिः पवनोद्धूतराजतालीवनञ्चनिः'—इति रघो (४।५६) । गृहम्; 'छिन्नभिन्नकृमिखातकण्टकिल्लुप्तकृत्तिलैर्न-सत्कुजैः । क्रूरपक्षिभुतनिन्द्यनामभिः शुष्कशीर्णबहुपर्ण-वर्मभिः'—इति बृहत्संहितायाम् (५।१।३) । पुं. क्षत्रियस्य पद्धतिः; 'शर्मन्तं ब्राह्मणस्य स्याद्दर्मन्तं क्षत्रियस्य च । गुप्तशासान्तकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इति शाता-तपवचनम् । ४५९

वर्मितः त्रि. [ वर्म करोतीति । वर्म+णिच्, वर्मि+कर्मणि क्त । वर्म सञ्जातमस्येति । इतच् वा ] वर्मयुक्तः; कृतसन्नाहः; सस्रद्धः; सज्जः; दंशितः; 'व्यूहकङ्कटः; ऊढकङ्कटः; 'वाजिनां वर्मिताङ्गानां क्रुद्धस्य मम सायकाः । अद्य भित्त्वा प्रवेक्ष्यन्ति शरीराणि मयेरिताः'—इति रामायणे (२।९।१।५) । ४६०

वर्धम् त्रि. [ वर्धते प्रार्थ्यते इति । वर ईप्सायाम्+अचो

यत्' इति यत् ] प्रधानं; वरेण्यं; वरः; 'यथा धर्मादय-श्चार्या मुनिवर्षानुकीर्तिताः । न तथा वासुदेवस्य महिमा ह्यनुवर्णितः'—इति भागवते (१।५।९) । श्रेष्ठम्; 'माहेन्द्रं नगमभितः करेणुवर्षाः पर्यन्तस्थितजलदा दिवः पतन्तः'—इति किराते (७।२०) । पुं. कामदेवः । ६८९

वर्षा स्त्री. [ त्रियते इति, वृ+अवद्यपप्यवर्षेति' अप्रतिवन्द्ये यत् ] पतिवरा कन्या । ४८३

वर्षरः पुं. [ वृणोति दोषानिति । वृ+ष्वरच् ] पामरः; नीचजातिविशेषः; केशः; चक्रलः; देशविशेषः; तद्देश-वासिनि पुं. भूमि । 'काम्बोजा दरदाश्चैव वर्षरा हर्ष-वर्धनाः'—इति मार्कण्डेये (५७।३८) । फञ्जिका; वृक्षविशेषः; सुमुखः; गरघ्नः; कृष्णवर्षरकः; मुकुन्दजः; गन्धपत्रः; पूतिगन्धः; सुवाहकः; क्ली. हिङ्गुलं; पीतचन्दनं; बोलम् । ३४८

वर्षेः पुं.-क्ली. [ वृष्यते इति, वृषु सेचने+अज्विधौ भया-दीनामुपसंस्थानमित्यच् । यद्वा त्रियते प्रार्थ्यते इति, वृ+वृतृवदिह्निकामिकविभ्यः सः' इति. स ] वत्सरः; हायनः; अब्दः; संवत्सरः; समा; 'वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत शतं समाः । मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम्'—इति मनुः (५।५३) । वृष्टिः;

'विद्युत्स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च संप्लवे । आकालिक-मनघ्यायमेतेषु मनुब्रवीत्'—इति मनुः (४।१०३) । जम्बुद्वीपः; [ वर्षतीति, वृष्+पचाद्यच् ]-मेघः; वर्षके त्रि. । 'नमाम्यभीक्ष्णं नमनीयपादं सरोजमल्वीयसि कामवर्षम्'—इति भागवते (३।२।२०) । ११६

वर्षधरः पुं. [ वर्षस्य पूरकस्य धरः आश्रयकर्ता ] क्लीवः; नपुंसकः; मेघः । ४३०

वर्षवरः पुं. [ वरतीति, वर आवरणे+अच् ! वर्षस्य रेतोवर्षणस्य वरः आवरकः ] पण्डः; क्लीवः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपामन्तः कञ्चुकि-कञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः'—इति रत्नावल्याम् २ अङ्के । ४३०

वर्षा स्त्री. बहुवचनान्तः [ वर्ष+अर्धा आदित्वात् अच्, टाप् ] वर्षतुः; प्रावृट्; तपात्ययः । ११६

वर्षाभिः स्त्री. [ वर्षाभ्यु भवतीति । वर्षा+भू+क्विप् ] भेकी; वर्षाभ्वी; भेकवधूः; पुनर्नवा; 'निलपर्णिका-वर्षाभिचित्रमूलकपोतिकालसुनपलाण्डुकलायप्रभृतीनि'—

इति सुश्रुतः । वर्षाभवे त्रि । पुं. भेकः; 'मण्डूकः  
प्लवगो भेको वर्षामूर्द्धुरो हरिः'—इति भावप्रकाशः ।  
इन्द्रगोपः; भूलता । ६६२

वर्षुकाम्बुदः पुं. [ वर्षुकश्चासी अम्बुदश्चेति कर्मधारयः ]  
वर्षणशीलमेघः; वर्षुकाम्बुदः; घनाघनः । ८२६

वर्ष्मं [ न् ] क्ली. [ वर्षति वृष्यते वेति । वृष्+मनिन् ]  
शरीरं; वर्षर्मम्; 'ददर्श च समीपेऽस्य पिशाचानां  
शतैर्वृतम् । काणभूति पिशाचं तं वर्षमणा शालसन्निभम्'—  
इति कथासरित्सागरे ( २।५ ) । प्रमाणम्; ( प्रमाण-  
मत्रोन्नतिः ) 'अयापश्यदृपीन् ह्रस्वान् अङ्गुष्ठोदर-  
वर्ष्मणः । पलालवृत्तिकामिकां बहतः संहतान् पथि'—  
इति महाभारते ( १।३।१८ ) । इयत्ता; अतिसुन्दरा-  
कृतिः; उन्नते स्थिरे च त्रि । 'सरोरुवद्वृषमस्तिग्ममृद्भो  
वर्ष्मन्तस्थौ वरिमन्ना पृथिव्याः'—इति ऋग्वेदे  
( १०।२।८ ) । 'वर्ष्मन् शब्द उन्नतवचनः स्थिरवचनो  
वा'—इति तद्भाष्ये सायणः । 'वर्षीयान्; 'ॐ नमो भगवते-  
ऽकूपाराय सर्वसत्त्वगुणविशेषणाय नमोऽनुपलक्षितस्थानाय  
नमो वर्षमणे नमो भूमने नमोऽवस्थानाय नमस्ते'—  
इति भागवते ( ५।१।३० ) । 'वर्ष्मणे वर्षीयसे'—इति  
तट्टीकायां श्रीधरः । ५१०

वर्ष्मं क्ली. — शरीरं; कायः; देहम् । ५१०  
वर्हम् क्ली.— पुं. [ वर्हयति दीप्यते इति । वर्ह्+अच् ।  
वर्हतीति वा, वृह्वृद्धौ+अच् ] पयम्; 'विलासिनी-  
विभ्रमदन्तपत्रमापाण्डुरं केतकवर्हमन्यः । प्रियानितम्बो-  
चितसन्निवेशीविपाट्यामास युवा नखाग्रैः'—इति रघौ  
( ६।१७ ) । मयूरपिच्छम् ( २४२ ); 'यथा वर्हाणि  
चित्राणि विभ्रति भुजगाशनः । तथा बहुविधं राजा रूपं  
कुर्वति घर्मवित्'—इति महाभारते ( १२।१२०।४ ) ।  
ग्रन्थिपर्णः; परीवारः । १८५

वर्हिणः पुं. [ वर्हमस्त्यस्येति । वर्ह्+ 'फलवर्हाम्यामिनच्'  
इति इनच् । यद्वा 'बहुलमन्यत्रापि' इत्यनेन सिद्धः ।  
पृषोदरादित्वेन वकारादिः ] मयूरः; केकी; शिखी;  
शिखण्डी; प्रचलाकी; कलापी; सपशिनः; शिखावलः;  
इयामकण्ठः; 'सृच्छन्दारिः शुभान् गन्धान् पत्रशाकं तु  
वर्हिणः । श्वावित् कृतान्नं विविचमकृतान्नं तु शल्यकः'—  
इति मनुः ( १२।६५ ) । क्ली. तगरम्; 'कालानुसार्य  
तगरं कुटिलं मधुरं मतम् । अपरं पिण्डतगरं दण्डहस्ती

च वर्हिणम्'—इति भावप्रकाशः । २४१

वर्हिणवाहनः पुं. [ वर्हिणो मयूरो वाहनं यानं यस्य ]  
मयूरवाहनः; कार्तिकेयः; कुमारः । २०

बलक्षः त्रि. [ बलं क्षायत्यस्मात् । बल+क्ष+क । यद्वा  
अबलक्ष्यते, घञ्, भागुरिनतेनाकारलोपः ] गौरः; श्वेतः;  
सितः; शुभ्रः; धवलः; अर्जुनः; माघे ( ६।३४ ) । ७३२  
बलभिः, बलमी स्त्री, [ बल् संवरणे, बाहुलकादभच् इत्वं  
च । बलभि+कृदिकारादिति वा डीप् ] बडभी; 'हर्म्य-  
प्रासादबलभोष्वन्विष्यन् सोऽभ्रमन्निशि'—इति कथा-  
सरित्सागरे ( ८७।१२ ) । पुरीविशेषः; 'काव्यमिदं  
विहितं मया बलभ्यां, श्रीधरसेननरेन्द्रपालितायाम् ।  
कीर्तिरतो भवताम्रपस्य तस्य, क्षेमकरः क्षितिपो यतः  
प्रजानाम्'—इति भट्टिः ( २३।३५ ) । ३०३

बलयः पुं.— क्ली. [ बलते आवृणोति हस्तादिकमिति । बल्+  
'बलिमलितनिम्यः कयन्' इति कयन् ] स्वर्णादिरचित-  
प्रकोष्ठाभरणम्; आवापकः; परिहार्यः; कटकः;  
पारिहार्यः; शङ्खकः; कम्बुः; कुण्डलम्; 'सहेमसूत्रैर्म-  
णिभिः केयूरैर्वलयैरपि'—इति रामायणे ( २।३।५ ) ।  
मण्डलम्; 'अभ्रान्तः सकलं भूमेर्वलयं तुरगोत्तमः ।  
समर्थः क्रान्तुमर्केण तवायं प्रतिपादितः'—इति मार्कण्डेये  
( २०।४९ ) । अस्थिविशेषः; 'कपालरुचकतश्चणवलय-  
नलकसंज्ञानि । पाणिपादपाश्वर्षुष्योरःसु बलयानि'—  
इति सुश्रुतः । वैद्यकोक्ताग्निकर्मविशेषः; 'तत्र रोगाधि-  
ष्ठानमेदादिनिकर्म चतुर्धा भिद्यते । तद्यथा बलयबिन्दु-  
लेखाप्रतिसारणानीति, दहनविशेषाः'—इति सुश्रुतः ।  
वेष्टनम्; 'सवेलावप्रबलयां परिखीकृतसागरार्म् ।  
अनन्यशासनामुर्वी शशासैकपुरीमिव'—इति रघौ  
( १।३० ) । पुं. [ बलयवदाकृतिरस्त्यस्येति । अर्श  
आदित्वात् अच् ] अष्टादशगलरोगान्तर्गतगलरोगविशेषः;  
'दलास एवायतमुश्रतं च शोयं करोत्यभ्रगतिं निवार्य ।  
त सर्वथैवाप्रतिवार्यवीर्यं विवर्जनीयं बलयं वदन्ति'—  
इति भावप्रकाशः । वेला; कङ्कणं; दण्डव्यूहविशेषः;  
'सुखाख्यो बलयश्चैव दण्डमेदाः सुदुर्जयः'—इति कामन्द-  
कीये नीतिसारे ( १९।४५ ) । ५५७

बलयितम् त्रि. [ बलयवत् कृतमिति । बलय+तत्करो-  
तीति णिच्, ततः क्त । यद्वा बलयं तदाकृतिर्जातमस्येति ।  
बलय+इतश् ] वेष्टितं; निवृतं; परिवृतं; परिक्षिप्तम्;

'नीलनलिनमिव पीतपरागपटलभरवलयितमूलम्'—इति गीतगोविन्दे (११२६) । 'इन्वनमालावलयितबाहुः परधनहरणे साक्षाद् राहुः । रण्डायौवनमञ्जनवीरः कीर्तनपतने मल्लशरीरः'—इति वैरागिमञ्जले । ७१२ वलीकः पुं.- क्ली. [ वलते आवृणोति भित्त्यादिकम् । 'अलीकादयश्च' इति साधुः ] नीघ्रं; पटलान्तम् । ३०३ वल्कम् क्ली. [ वलते इति, वल संवरणे + 'शूकवल्कोल्का' इति कप्रत्ययान्तो निपातितः ] वल्कलः; 'गुणवत्-सुतरोपितश्रियः परिणामे हि दिलीपवंशजाः । पदवीं तर्षवल्कवाससां प्रयताः संयमिनां प्रपेदिरे'—इति रघौ (८।११) । शल्कः; खड्गं; पुं. पट्टिकालोघ्नः । १८३ वल्कलः पुं.- क्ली. [ वल ते संवृणोतीति, वल् + बाहुलकात् कलन् ] वृक्षत्वक्; त्वक्; वल्कं; त्वचा; त्वचं; चोचं; चोलकं; शल्कं; छल्लकं; छल्लिः; छल्ली; चीतकम्; 'ती तु पूर्वेण कालेन तपोयुक्तौ बभूवतुः । क्षुत्पिपासा-परिश्रान्ती जटावल्कलवारिणौ'—इति महाभारते (१।१५६।२) । क्ली. त्वचम्; 'दालचीनी' इति भाषा । १८३

वल्गा स्त्री. [ वलयतेऽश्वोऽनयेति । वल्गु + करणे घञ् + टाप् ] दन्तालिका; अवक्षेपणी; रश्मिः; कुशा; 'लगाम' इति भाषा । 'वल्गन्मध्येऽश्ववाराणां नृत्यते वाग्रवाजिना । वल्गाङ्घ्रिनोद्वहल्लम्बं शिरसा वामपाणिना'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।३४७) । ४४२ वल्गुः त्रि. [ वलते इति, वल् संवरणे संचरणे च + 'वलेर्गुक् च' इति उ प्रत्ययः गुगागमश्च धातोः ] मुन्दरः; 'तद्वल्गुना युगपदुन्मिषितेन तावत् सद्यः परस्परतुलामधिरोहतां द्वे । पस्पन्दमानपह्वेतस्तारमन्तः चक्षुस्तव प्रचलितभ्रमरं च पद्मम्'—इति रघौ (५।६८) । पुं छागः । ४४२

वल्भनम् क्ली. [ वल्भ भक्षणे + भावे ल्युट् ] भक्षणम् । ३२५ वल्मिकः पुं.- क्ली. [ पृषोदरादित्वेन ह्रस्वमध्यः ] वल्मीकः; वाल्मीकिः; वल्मीकूटं; वामलूरः । ६४४ वल्मीकः पुं.- क्ली. [ वलते इति, वल् संवरणे + 'अलीका-दयश्च' इत्यत्र वलतेर्मुडागमश्चेति उज्ज्वलदतोक्त्या क्रीकनन्तो निपातितः ] उपदीकाकीटकृतमृत्तिकास्तूपः; वामलूरः; नाकुः; वल्मिकः; वाल्मीकः; वाल्मिकिः; वाल्मीकिः; पुगलकः; शक्रमूर्द्धा; कृमिशैलकः;

'वल्मीकाप्रात् प्रभवति धनुःखण्डमाखण्डलस्य'—इति मेघदूते (१५) । पुं. [ वल्मीकः उपदीकाकृतमृत्तिकास्तूपः उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्येति, अच् ] वाल्मीकिमुनिः; रोगविशेषः; 'क्षीद्रसर्पवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक् । गाढमुत्सादनं कुर्याद्गुरुस्तम्भे प्रलेपनम् । 'शस्त्रेणोक्तृत्य वल्मीकं क्षाराग्निभ्यां प्रसाधयेत् । विधानेनार्बुदोक्तेन शोधयित्वा च रोषयेत्'—इति भावप्रकाशः । ६४४ वल्मीकिः पुं.- वल्मीकः; वामलूरः । ६४४

वल्लः पुं. [ वल्लते संवृणोतीति । वल्ल् + अच् ] निष्पा-वकः । गुञ्जात्रयपरिमाणम्; 'वल्लस्त्रिगुञ्जो धरणञ्च तेऽष्टौ'—इति लीलावती । द्विगुञ्जा; 'विषटङ्कवल्लि-म्लेच्छदन्तीवीजं क्रमाद् बहु । इत्यम्बुमार्दितं यामं रसस्त्रि-पुरभैरवः । वल्लं व्योषेण चार्द्रस्य रसे च सितया सह'—इति रसेन्द्रसारसंग्रहः । सार्द्धगुञ्जा; 'गोधूमद्वितयोन्मिता तु कथिता गुञ्जा तथा सार्द्धया । वल्लो वल्लचतुष्टयेन भिषगां माषा मतस्तच्चतुः'—इति राजनिर्घण्टः । ५८४ वल्लकी स्त्री. [ वल्लते इति ] वल्ल् + क्वुण्, गौरादित्वाद् डोष् ] घोषवती; वीणा; विपञ्ची; परिवादिनी; माघे (१।९) । सल्लकीवृक्षः; 'वल्लकी गजमक्ष्या च सुवहा सुरभीरसा । महैरुणा कुन्दुरुकी सल्लकी च बहुस्रवा'—इति भावप्रकाशः । ९६

वल्लभः त्रि. [ वल्ल् संवरणे + 'रासिवल्लिभ्यां च' इति अभच् ] दयितः; चक्षुष्यः; सुभगः; प्रियः; 'पुत्रेभ्यश्च नमस्क्रुयाद् वल्लभेभ्यश्च भूषतेः'—इति कामन्दकीय-नीतिसारे (५।१९) । अध्यक्षः; गवाध्यक्षः; पुं. दयितः; सल्लक्षणतुरङ्गमः; जह्नुवंशीयवलाकाश्वस्य पुत्रः; स च कुशिकस्य पिता । 'वल्लभस्तस्य तनयः साक्षाद्धर्म इवापरः । कुशिकस्तस्य तनयः सहस्राक्षसम-द्युतिः'—इति महाभारते (१३।४।५) । ३६७

वल्लरम् क्ली. [ वल्लते इति, वल्ल् + अरन् ] मञ्जरिः; कृष्णागुरुः; गहनं; कुञ्जम् । १८५

वल्लरिः, वल्लरी स्त्री. [ वल्ल् + क्विप् । वल्लं संवरणं ऋच्छतीति । ऋ + 'अच इः', कृदिकारादिति वा डोष् ] मञ्जरी; 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी'—इति कुमारे (४।३१) । चित्रमूलं; मेथिका; 'मेथिका मिथिनिर्मेथिर्दीपनी बहुपुत्रिका । दोधिनी बहु-बीजा च जातिगन्धफला तथा । वल्लरी चैव कामन्या



मिश्रपुष्पा च कैरवी । कुञ्चिका बहुपर्णी च पित्त-  
जिह्वायुनुद्विधा—इति भावप्रकाशः । १८५

वल्लवः त्रि. [ वल्लमानन्दं वातीति । वल्ल+वा+क ]

आरालिकः; सूपकारः; सूदः; वल्लवः । ४३१

वल्लवः पुं. [ वल् प्रीतौ सौत्रः+ततो घञ्, वल्लं प्रीति

वातीति, वा+क ] गोपः; आभीरः; महाशूद्रः;

गोपालः; वल्लवः; द्रुततरकरदक्षाः क्षिप्तवैशाखशैले,

दधति दधनि क्षीरानारवान् वारिणीव । शशिनमिव

सुरीवाः सारमुद्धतुमेते, कलसिमुदधिगुर्वी वल्लवा

लोडयन्ति—इति माघे (११।८) । भीमसेनः; विराट-

नगरे छद्यवासकाले एवास्य एतन्नाम आसीत् । 'पीरोगवो

ब्रुवाणोऽहं वल्लवो नाम नामतः । उपस्थास्यामि राजानं

विराटमिति मे मतिः—इति महाभारते (४।२।१) । ५८७

वल्लिः स्त्री. [ वल्लते संवृणोति वृक्षादीनि । वल्ल्+

'सर्वं वातुभ्य इत्' इतीन् ] लता; प्रतानिनी; वल्ली;

प्रततिः; व्रततिः; 'वल्लिवेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव

गच्छति—इति महाभारते (१२।१८४।१३) ।

पृथिवी । १८०

वल्ली स्त्री. [ वल्लि+डोप् ] लता; सा च भूमिप्रसारा

वर्षमात्रस्यायिनी कूपमाण्डाद्या । 'विदारीसारिवास्जनी-

गुडूच्योऽजशृङ्गी चेति वल्लीसंज्ञाः—इति सुश्रुतः ।

अजमोदा; कैवर्तिका; चव्यम् । १८०

वल्लजः पुं. [ वल्ले पर्वते जातः इति । वल्ल+जन्+ङ ]

तृणविशेषः; मीञ्जीपत्रा; वल्लजः; उलपः; दृढपत्री;

तृणक्षुः; तृणवल्लजा; दृढतृणा; पातीयाश्वा; दृढक्षुरा;

'मुञ्जालाभे तु कर्तव्याः कुशाश्मान्तकवल्जैः । त्रिवृता

ग्रन्थिनैकेन त्रिभिः पञ्चभिरेव वा—इति मनुः (२।४३) ।

१९१

वशा स्त्री. [ वष्टि कामयते, वश् कान्ती+अच्+टाप् ।

'वक्षिरयो रूपसंख्यानम्' इति अच् वा ] करिणी;

हस्तिनी; 'असिञ्च्यत स ताभिश्च वशाभिरिव वारणः'

—इति कयासरित्सागरे (६।११०) । वन्ध्या (२६९);

'वशाऽपुत्रासु चैवं स्याद्रक्षणं निष्कुलासु च । पतिव्रतासु

च स्त्रीषु विषवास्वानुरासु च—इति मनुः (८।२८) ।

(४८२) योपा; युक्ती; सुता; स्त्रीगवी; वन्ध्या-

गयी; 'त्वं नो असि भारताग्ने वशाभिरुक्षभिः—इति

ऋग्वेदे (२।७।५) । 'वशाभिवन्ध्याभिर्गोभिः—इति

तद्भाष्ये सायणः । वशीभूता; 'सप्तभिर्मन्त्रितं कृत्वा

करवीरस्य पुष्पकम् । स्त्रीणामग्रे भ्रामयेच्च क्षणाद्वै

सा वशा भवेत्—इति गारुडे १८३ अध्याये । २२५

वशीकरणम् क्ली. [ वश्+कृ+भावे ल्युट् । अभूततद्भावे

च्चि ] मणिमन्त्रीपर्वरायत्तीकरणं; वशक्रिया; संवदनं;

मूलीकर्म; कामेणं; संवननम् । ७१६

वषट्कृतम् त्रि. [ वषडिति मन्त्रेण कृतम् ] हुतम्;

'अग्नी हुतं तु यद्व्यं तत् स्यात्त्रिषु वषट्कृतम्—इति

शब्दरत्नावली । ४१७

वष्कयणी, वष्कयिणी स्त्री. [ वष्कय एकहायनो वत्सः

तेन नीयते इति । नी+क्विप् । गौरादित्वाद् डोप् ]

चिरप्रसूता गौः; प्रौढवत्सा गौः । २६९

वसतिः स्त्री. [ वस् निवासे+ 'वहिवस्यतिम्यश्चित्' इति

भावाधिकरणादौ अति ] यामिनी; निशा; रात्रिः;

जैनाश्रमः (८०७); वासः; 'धीरं वारिधरस्य वारि

किरतः श्रुत्वा निशीथे ध्वनिं, दीर्घोच्छ्वासमुदश्रुणा

विरहिणीं वालां चिरं ध्यायता । अध्वन्येन विमुक्त-

कण्ठकरणं रात्री तथा क्रन्दितं, ग्रामीणैर्ब्रजतो जनस्य

वसतिप्रभे निषिद्धा यया—इति अमरुशतके (११) ।

निकेतनम्; 'रजनीतिमिरग्वगुण्डिते. पुरमार्गे धनशब्द-

विवलवाः । वसति प्रिय ! कामिनां प्रियाः त्वदृते

प्रापयितुं क ईश्वरः—इति कुमारे (४।११) । १०८

वसती स्त्री. [ वसति+कृदिकारादिति डोप् ] यामिनी;

रात्रिः; वासः; निकेतनम् । १०८

वसन्तः पुं. [ वसन्त्यत्र मदनीत्सवा इति । वस्+ 'तुभूवहि-

वसिभासिसाधिगडिमण्डिजिनन्दिम्यश्च' इति झच् ]

ऋतुविशेषः; चैत्रवैशाखमासद्वयात्मकः; पुष्पसमयः;

सुरभिः; मयुः; माधवः; ऋतुराजः; पुष्पमासः;

पिकानन्दः; कान्तः; कामसखः; 'द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं

सपद्मं, स्त्रियः नकामाः पवनः सुगन्धिः । सुताः प्रदोषा

दिवसाश्च रम्याः सर्वे प्रिये ! चाहतरं वसन्ते—इति

ऋतुसंहारे (६।२) । अतिसारः; पडरागान्तर्गत-

द्वितीयरागः; 'रागाः षडेव तु प्रोक्ता रागिण्यश्चिन्नादेव

तु । भैरवोऽयं वसन्तश्च नटनारायणस्तथा । ११३

वसन्तजा स्त्री. [ वसन्ते वसन्तकाले जाता इति । वसन्त+

जन्+ङ ] रागिणीभेदः; वासन्तीलता; वसन्त-

कालीद्भवे त्रि. । १०२ अ

वसन्तसखः पुं. [ वसन्तस्य सखा । 'राजाह-  
सखिम्यष्टच्' इति टच् ] कामदेवः ।

वसा स्त्री. [ वसति वस्ते वा । वस् निवासे, वस् आच्छादने  
वा+अच् । स्त्रियां टाप् ] मांसप्रभवघातुविशेषः; मेदः;  
वपा; 'शुद्धमांसस्य यः स्नेहः सा वसा परिकीर्तिता'—  
इति सुश्रुतः । मांसरोहिणी । ६३५

वसुः पुं. [ वसतीति, वस्+उ ] रश्मिः; किरणः; अंनलः  
(६२); क्ली. [ वसत्यनेनेति, वस्+शुस्वृस्निहीति'उ ]  
घनम् (८०); 'बलमातंभयोपशान्तये विदुषां सत्कृतये  
वहुश्रुतम् । वसु तस्य विभोर्न केवलं गुणवत्तापि परप्रयो-  
जनम्'—इति रघौ (८।३१) । रत्नं (१७६); (८५०)  
अग्निः; अनलः; वनं; रश्मिः; रत्नं; गणदेवता-  
विशेषः; त्रिदशविशेषः; 'धरो ध्रुवश्च सोमश्च विष्णु-  
श्चैवानिलोऽनलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ  
ऋमात् स्मृताः'—इति भरतः । 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च  
धरश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ  
प्रकीर्तिताः'—इति महाभारते । क्ली. वृद्धोषधं; श्यामं;  
हाटकं; जलं; पुं. वकवृक्षः; योक्त्रं; राजा; घनाधिपः;  
साधुः; पीतमुद्गः; वृक्षः; पुष्करिणी; शिकः; सूर्यः;  
निष्णुः; 'वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हरिः'—इति  
महाभारते (१३।१४९।८७) । 'वसन्ति भूतान्यत्र,  
एतेषु स्वयमपीति वसुः'—इति तत्र शङ्करभाष्यम् ।  
अष्टसंख्या; 'युरमानि कृतभूतानि षण्मनोर्वसुर्नद्योः'—  
इति तिथ्यादितत्त्वम् । वकुलः; बृहद्वोलसरी; 'शिवमल्ली  
पाशूपत एकाष्ठीलो वुको वसुः'—इति भावप्रकाशः ।  
स्त्री. [ वस्+उ ] दीप्तिः; वृद्धोषधं; दक्षस्य कन्या-  
विशेषः; सा तु धर्मस्य परतीनामन्यतमा; त्रि.  
मधुरं; शुष्कम् । ३९

वसुदेवः पुं. [ वसुना घनेन दीव्यतीति । वसु+दिव्+  
अच् ] श्रीकृष्णजनकः; आनकडुन्दुभिः; शूरः; कृष्ण-  
पिता; 'कश्यपो वसुदेवश्च देवमातां च देवकी । पूर्व-  
पुण्यफलेनैव संप्राप श्रीहरिं सुतम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । कलि-  
युगराजविशेषस्य देवभूतेरमात्यः; 'शुङ्गं हत्वा देवभूतिं  
कण्वोऽमात्यस्तु कामिनम् । स्वयं करिष्यते राज्यं वसुदेवो  
महामतिः'—इति भागवते (१२।१।१८) । [ वसवो  
देवता यस्य ] घनिष्ठानक्षत्रे क्ली. । वसुदेवता; 'धोरा  
श्रवणः वाष्पं वसुदेवं वाष्णं चैव'—इति बराह-

संहितायाम् (७।११) । २७

वसुधा स्त्री. [ वसूनि रत्नानि दधाति धारयतीति । वसु+  
धा+क ] पृथ्वी; पृथिवी; 'राष्ये सारं' वसुधा  
वसुधायां पुरं पुरे सौवम् । सौवे तल्पं तल्पे बराङ्गना  
सर्वस्वम्—इति साहित्यदर्पणे । [ वसु घनं दधाति दत्ते  
इति । धा+क्विप् ] घनदातरि त्रि. । 'वसुश्चेतिष्ठो  
वसुघातमश्च'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२७।१५) ।  
'वसुघातमः वसूनां घनानां दातृतमः निवबन्तात् तमप्'—  
इति तद्भाष्ये महीधरः । १५६

वसुन्धरा स्त्री. [ वसूनि धारयतीति । वसु+घृ+संज्ञायां  
भृत् वृजिधारिसहितपिदमः' इति खच्, 'खचि ह्रस्वः' इति  
ह्रस्वः, 'असद्विपदजन्तस्य मुम्' इति मुम् ] पृथिवी;  
पृथ्वी; भूमिः; 'निरीक्ष्य तं तदा देवी पातालतल-  
मागतम् । तुष्टाव प्रणता भूत्वा भक्तिनम्रा वसुन्धरा'—  
इति विष्णुपुराणे (१।४।११) । स्वफल्कस्य कन्या;  
'विश्रुता शाम्बमहिषी कन्या चास्य वसुन्धरा ।  
रूपयौवन सम्पन्नासर्वसत्त्वमनोहरा'—इति हरिवंशे  
(३।८।५३) । पुं. प्लक्षद्वीपस्य वर्षपुरुषभेदः; 'प्लक्षदर्व-  
पुरुषाः श्रुतिधरवीर्यधरवसुन्धरेषुन्धरसंज्ञा भगवन्तं  
वेदमयं सोममात्मानं वेदेन यजन्ते'—इति भागवते  
(५।२०।११) । १५७

वसुमती स्त्री. [ वसूनि घनरत्नानि सन्त्यस्या इति । वसु+  
मत्तुप्+डीप् ] पृथिवी; 'तदलं तदपायचिन्तया विप-  
दुत्पत्तिमतामुपस्थिता । वसुधेयमेवेक्ष्यतां त्वया वसुमत्या  
हि नृपाः कलत्रिणः'—इति रघौ (८।८३) । १५६

वस्कयनी स्त्री. [ वस्कयः एकहायनो वस्तः तेन नीयते  
इति । वस्कय+नी+क्विप्+डीप् ] चिरप्रसूता गौः;  
वष्कयणी; 'वस्कयन्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत्  
पयः'—इति भावप्रकाशः । २६९

वस्तः पुं. [ वस्त्यते यस्मात् वव्यते इति । वस्त्व+कर्मणि  
घल् ] छागः; वस्तः; छागलः; छागः; बर्करः; 'यस्य  
वस्तसमो गन्धो गात्रे शवसमोऽपि वा । तस्याद्धंमासिकं  
ज्ञेयं योगिनो नृप ! जीवितम्'—इति मार्कण्डेय  
(४३।१२) । २७७

वस्तिः स्त्री. [ 'वस्+वसेस्तिः' इति ति ] वस्त्रस्य  
दशा; अमरमते बहुवचनान्तोऽयम् पुंस्यपि; 'स्त्रियां  
बहुत्वे वस्त्रस्य दशाः स्युर्वस्तयो द्वयोः'—इत्यमरः

(२।६।११४)।पुं-स्त्री। [ वसति मूत्रादिकमत्र वस् + 'वसेस्तिः' इति ति ] नाभेरधोभागः; [ वस्ते आच्छादयति मूत्राशयपुटम् ] मूत्राशयपुटः। ५५१

वस्त्रम् क्ली। [ वस्यते आच्छाद्यतेऽनेनेति । वस् आच्छादनं + सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन् इति ष्ट्रन् ] परिधानाद्युपयुक्त-कार्पासादिनिर्मितवस्तु; आच्छादनं; वासः; चेलं; वसनम्; अंशुकं; सिचयः; प्रोतः; लक्तकः; कर्पटः; शाटकः; कशिपुः; वासनं; द्विचयं; प्रोतं; छादं; वासम्; 'सूर्ये चाल्पघनं व्रणः शशिदिने क्लेशः सदा भूमिजे, वस्त्राणां बहुता वृधे सुरगुरो विद्यागमः सम्पदः । नानाभोगयुतः प्रमोदशयनं दिव्याङ्गना भार्गवे, शीरे स्युः खलु रोगशोककलहा वस्त्रे घृते नूतने'—इति कर्मलोचनम्। ५४८

वस्त्रस्यान्तःपुं-वस्त्रान्तः; अञ्चलः; वस्त्राञ्चलः। ५५०  
वहः पुं। [ वहति युगमनेनेति । वह् + 'गोचरसञ्चरेति' घ प्रत्ययेन साधुः ] वृषस्कन्धप्रदेशः; 'यस्य बाहू समी दीधौ ज्याघातकठिनत्वचो । दक्षिणे चैव सव्ये च गवामिव वहः कृतः'—इति महाभारते (४।२।२१) । [ वहतीति । वह् + अच् ] षोटकः; वायुः; पन्याः; नदः; वाहके त्रि । 'आकाशात्तु विकुर्वाणात् सर्व-गन्धवहः शुचिः'—इति मनुः (१।७६) । २६७

वह्निः पुं। [ वहति धरति हव्यं देवार्थमिति । वह् + 'वहिश्रिभ्रुय्विति' नि ] अग्निः; जातवेदाः; अनलः; 'जुम्भकोद्दीपकश्चैव विभ्रमभ्रमशोभनाः । आवसथ्याहव-नीयी दक्षिणाग्निस्तथैव च । अन्वाहार्यो गार्हपत्य इत्येते दश वह्नयः ।' चित्रकः; भल्लातकः; 'मञ्जिष्ठाक्षी वासको देवदारु पथ्यावह्नी व्योषघात्रीविडङ्गम्'—इति सुश्रुतः । निम्बकः; रेफः; दैत्यविशेषः; 'बाणः कार्तस्वरो वह्निर्विश्वदंष्ट्रोऽयनैर्ऋतिः'—इति महाभारते (१२।२२।७।५०) । तुर्वशुपुत्रः; 'तुर्वसोस्तु सुतो वह्निर्गोमानु-स्तस्य चात्मजः'—इति हरिवंशे (३।२।११७) । कुकुरपुत्रः; 'कुकुरस्य सुतो वह्निर्विलोमा तनयस्ततः'—इति भागवते (१।२।४।१९) । मित्रविन्दागर्भजातः कृष्णस्यपुत्रविशेषः; 'महांशः पावनो वह्निर्मित्रविन्दा-त्मजाः क्षुधिः'—इति भागवते (१०।६।१।१६) । ६२  
वह्निरेताः [ स् ] पुं। [ वह्नी रेतो यस्य । अग्निनिष्कृत-धीर्यत्वादेवास्य तथात्वम् ] शिवः; स्वर्णम्। १२

वा अव्य. [ वा + क्विप् ] विकल्पः; 'धर्मार्थो यत्र न स्यातां शुश्रूषा वापि तद्विधा । तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे'—इति मनुः (२।१।१२) । उपमा; इवार्थः; 'व्योमपश्चिमकलास्थितेन्द्र वा, पङ्कशेषमिव धर्मपल्वलम्'—इति रघो (१९।५१) । वितर्कः; 'किं ते हिडिम्ब एतैर्वा सुखसुप्तैः प्रबोधितैः । मामा-सादय दुर्वृद्धे तरसा त्वं नराशन!'—इति महाभारते (१।१५।४।२३) । पादपूरणम्; 'देवासुरगणान् वापि सगन्धर्वोरगान् भुवि । यैरमित्रान् प्रसह्याजौ वशीकृत्य जयिष्यसि'—इति रामायणे (१।२।५।३) । समुच्चयः; एवार्थः; 'सुता न यूयं किमु तस्य राज्ञः सुयोधनं वा न गुणैरतीताः'—इति किराते (३।१३) । ८७३

वाः क्ली। [ वारयतीति, वृञ् + णिच् + क्विप् ] जलं; सलिलं; नीरम्; 'गन्धर्वपालिभिरनुद्रुत आविशद् वाः श्रान्तो गजीभिरिभराडिव भिन्नसेतुः'—इति भागवते (१०।३३।२२) । ६४८

वाक् [ च् ] स्त्री। [ उच्यतेऽसौ, अनयावेति । वच् + क्विप् वचिप्रच्छीति' क्विप्, दीधौऽसम्प्रसारणं च ] सरस्वती; गीः; वाणी; 'प्रणम्य वाचं निःशेषपदार्थोद्योतदीपिकाम् । बृहत्कथायाः सारस्य संग्रहं रचयाम्यहम्'—इति कथा-सरित्सागरे (१।३) । वाक्यम्; वचनम्; 'अहिसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम् । वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या धर्ममिच्छता'—इति मनुः (२।१।५९) । ८

वाक्यम् क्ली। [ उच्यते इति, वच् + ष्यत्, 'वचोः कु धिष्यतोः' इति कुत्वं, शब्दसंज्ञात्वात् 'वचोऽशब्द-संज्ञायाम्' इति निषेधो न ] पदसमुदायः; तिङन्तचयः; सुबन्तचयः; कारकान्विता क्रिया; 'न हि स्यात् सर्व-भूतानि नानृतं च वदेत् श्वचित् । नाहितं नाप्रियं वाक्यं न स्तेनः स्यात्कदाचन ।' १४१

वागुरा स्त्री। [ वातीति, वा गतिबन्धनयोः + 'मद्गुराद-यश्च' इति उरच् प्रत्ययेन गुणागमेन च साधुः ] मृगबन्धनार्थजालविशेषः; मृगबन्धनी; मृगजालिका । ५९७

वागुरिकः पुं। [ वागुरया चरतीति । वागुरा + 'चरति' इति ठक् ] व्याघ्रः; वागुरया मृगादीन् बध्नाति यः; मृगयुः; लुब्धकः; 'श्वगणिवगुरिकैः प्रथमास्थितं व्यप-गतानलदस्यु विवेश सः'—इति रघो (९।५३) । ५९६

वागुसः पुं.—महामत्स्यविशेषः । ६५९

वाचंयमः पुं. [ वाचो वाक्याद् यच्छति विरमतीति । वाच्+यम् उपरमे+ 'वाचि यमो व्रते' इति खच् । 'वाचंयमपुरन्दरौ च' इति अमन्तत्वं निपात्यते ] मुनिः; मीनव्रती; 'वाचंयमोऽप्रसाहः स यदि स्त्रियं पश्येत् समृद्धं कर्मेति विद्यात्'—इति छान्दोग्ये (५।२।८) । ४१२  
वाचस्पतिः पुं. [ वाचः पतिः, 'पष्ठ्याः पतिपुत्रेति' पष्ठ्या अलुक्, विसर्गस्य सः ] वचसाम्पतिः; वृहस्पतिः; 'वाचस्पतिरुवाचेदं प्राञ्जलिर्जलजासनम्'—इति कुमारे (२।३०) । शब्दप्रतिपालके त्रि. 'वाचस्पते निषेधे मान्यया मदवरं वदान्'—इति ऋग्वेदे (१०।१६६।३) 'हे वाचस्पते वाचः शब्दस्य पालयितर्देव'—इति तद्भाष्ये सायणः । ४७

वाजः पुं. [ वजति अनेन । वज् गतौ+ 'हलश्चेति' घञ्, निष्ठायां सेट्त्वान्न कुत्वम् ] पिच्छं; पक्षः; वेगः (४४३); (४६८) शरपक्षः; पत्रपाली; 'विचित्र-वाजैर्निशितैः शिलीमुखैः'—इति भागवते (१०।५९।१६) । निस्वनः; मुनिः; क्ली. घृतम्; 'वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदत्तु'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (९।१) । यज्ञः; अन्नम्; 'यो देवो देवतमो जायमानो महो वाजेभिर्महद्भिश्च शुष्मैः'—इति ऋग्वेदे (४।२।३) । 'वाजेभिरन्नैः'—इति तद्भाष्ये सायणः । वारिः, संग्रामः; 'अस्मभ्यं चर्षणीसहं सस्मिं वाजेषु दुष्टुरम्'—इति ऋग्वेदे (५।३।५।१) । बलम्; 'वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वास्तु पय उस्त्रियासु'—इति ऋग्वेदे (५।८।५।२) । २३९

वाजिनी स्त्री. [ वाजो वेगः अस्ति अस्याः । वाज+इनि, डीप् ] घोटकी; वडवा; वामी; प्रसूका; आर्तवी; अश्वगन्धा; उषा । ४४०

वाजिशाला स्त्री. [ वाजिनां शाला गृहम् ] घोटकगृहं; मन्दुरा; 'अस्तवल' 'घुडसाल' इति भाषा । २९६

वाजी [ न् ] पुं. [ वाजः पक्षो वेगो वास्त्यस्येति । वाज+इनि ] पक्षी; (४३६) घोटकः; 'शतैस्तमक्ष्यामनिमेष-वृत्तिभिर्हृरि विदित्वा हरिभिरुच वाजिभिः'—इति रघो (३।४३) । [ वाजः पक्षोऽस्त्यस्येति ] बाणः; वासकः; [ वजति गच्छतीति, वज्+णिनि ] त्रि. चलनवान्; 'वाजी वहन्वाजिनं जातवेदो देवानां वक्षिप्रियमासधस्यम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२९।१) । 'वजति वाजी,

वज् गती, चलनवान्'—इति तद्भाष्ये महोषरः । [ वाज-मन्नमस्यास्तीति ] अन्नवान्; 'तमीमहे नमसा वाजिनं बृहत्'—इति ऋग्वेदे (३।२।१४) । 'वाजिनम् अन्नवन्तम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । [ वाजः पक्षोऽस्त्यस्येति ] पक्षविशिष्टः; 'मुष्णंस्तेज उपातीतस्ताक्ष्येण स्तोत्रवा-जिना'—इति भागवते (४।७।१६) । २३८

वाञ्छा स्त्री. [ वाञ्छन्मिति, वाछि इच्छायाम्, गुरो-श्चेत्य, टाप् ] आत्यवृत्तिगुणविशेषः; इच्छा; काङ्क्षा; स्पृहा; ईहा; तृट्; लिप्सा; मनोरथः; कामः; अभिलाषः; तर्षः; आकाङ्क्षा; कान्तिः; अप्रचयः; दोहदः; अभिलाषः; अभिलाषा; रुक्; रुचिः; मतिः; दोहलं; छन्दः । 'सन्दिदेश च यद्यस्ति वाञ्छा मच्छिष्यतां प्रति । त्वत्पुत्र्यास्तदिहैवैषा भवता प्रेष्यता-मिति'—इति कथासरित्सागरे (११।२७) । ७१०  
वाञ्छितम् त्रि. [ वाञ्छ+क्त ] अभिलषितम्; 'अविच्छेदं पठेद्धीमान् ध्यात्वा देवीं सरस्वतीम् । शुक्लाम्बरधरां देवीं शुक्लाभरणभूषिताम् । वाञ्छितं फलमाप्नोति स लोके नात्र संशयः । इति ब्रह्मा स्वयं प्राह सरस्वत्याः स्तवं शुभम्'—इति तन्त्रसारः । ५३५

वाञ्छितोऽर्थः पुं.—मनोरथः । ५३५

वाटः पुं. [ वटयते वेष्टयते इति । वट्+घञ् ] आवेष्टकः; वृत्तिः; मार्गः; वृत्तिस्थानम्; 'मुखं निःसरणे वाटे प्राचीनावेष्टकी वृत्तिः'—इति हेमचन्द्रः । वास्तु; मण्डपः; 'छत्रं सदण्डं सजलं कमण्डलुं विवेश विभ्रद्भय-भेषवाटम्'—इति भागवते (८।१।८।३) । [ 'वटस्येद-मिति, वट्+अण् ] वटसम्बन्धिनि त्रि. 'ब्राह्मणो वैत्वपालाशौ क्षत्रियो वाटखादिरो । पैलव्यौदुम्बुरौ वश्यो दण्डानर्हन्ति घर्मतः'—इति मनुः (२।४५) । क्ली. वरण्डः; गात्रभेदः; 'वाटः पथि वृती वाटं वरण्डे गात्रभेदयोः'—इति हैमः । २९०

वाडधः पुं. [ वडवाया अपत्यं, वडवानां सम्भूतो वा, अण् ] वडवानलः; और्वः; समुद्रवह्निः; वडवाग्निः; (३९१) ब्राह्मणः; विप्रः । ७०

वाडधेयः पुं. [ वडवा+ठक् ] अनड्वान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः; वलीवर्दः । २६३

वाडम् अव्य. [ वह्+क्त, ढ्त्वादयः ] अवश्यं; भृशम् । ८३६

वाणः पुं. [ वण् शब्दे+घञ् ] नीला क्षिण्टी; नीलक्षिण्टी ।

२०५

वाणिज्यम् क्ली. [ वणिजां कर्म, ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्, वृद्धिः ] वणिज्यं; वणिज्या । ७६१

वाणिनी स्त्री. [ वण् शब्दे+णिनि+ङीप् ] विदग्धा; मत्ता; मत्तस्त्री । 'यस्मिन् महीं शासति वाणिनीनां निद्रां विहारार्थपथे गतानाम् । वातोऽपि नासंसम-दंशुकानि कोलम्बयेदाहरणाय हस्तम्'—इति रघौ (६।७५) । नर्तकी; षोडशाक्षरच्छन्दोविशेषः; 'नज-भजरैर्यदा भवति वाणिनी गयुक्तेः ।' ४८९

वाणी स्त्री. [ वण् शब्दे, इञ्, वाणि+ङीप् ] सरस्वती; वाक्; वचनम्; 'चक्षुःपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम् । सत्यपूतां वदेद्वाणीं बुद्धिपूतं च चिन्तयेत्'—इति मार्कण्डेये (४।१।४) । वपनम् । ८

वातः पुं. [ वातीति, वा+क्त ] पञ्चभूतान्तर्गतचतुर्थ-भूतम्; गन्धवहः; वायुः; पवमानः; महाबलः; पवनः; स्पर्शनः; गन्धवाहः; मरुत्; आशुगः; श्वसनः; मातरिस्वाः; नमस्वान्; मास्तः; अनिलः; समीरणः; जगत्प्राणः; समीरः; सदागतिः; जीवनः; पृषदश्वः; तरस्वी; प्रभञ्जनः; प्रधावनः; अनवस्थानः; धूननः; मोटनः; खगः; रोगभेदः; 'पलद्धवं सैन्धवं च शुष्ठी चित्रकपञ्चकम् । पञ्चप्रस्थं त्वारनालं तैलप्रस्थं पचेत्ततः । ग्रहगृह्यप्लवज्जीहसर्ववातविकारनुत्'—इति गारुडे । ७५

वातकी [ न् ] त्रि. [ वातोऽतिशयितोऽस्त्यस्येति । वात+ 'वातातीसाराम्यां कुक् च' इति इति, कुक् च-] वात-रोगी; वातव्याधियुक्तः । ६०६

वातप्रमीः पुं.-स्त्री. [ वातं प्रमिमीते वाताभिमुखं गच्छ-तीति । वात+प्र+मा माने+ 'वातप्रमीः' इति ईप्रत्ययेन साम्; ] वातमृगः; हरिणभेदः; वातायुः; हरिणः; नकुलः; अश्वः; वायुवद्वैगामिनि त्रि. । 'सिन्धोरिव प्राहवणे धूधनासो वातप्रमियः पतयन्ति यद्वाहः'—इति ऋग्वेदे (४।५।८।७) । २३०

वातरोगी [ न् ] त्रि. [ वातरोगोऽस्त्यस्येति । वातरोग+ इति ] वातरोगयुक्तः; वातकी; वातसहः । ६०६

वातसहः त्रि. [ वातं वातजनितरोगं सहते । वात+ सह्+ञ् ] अत्यन्तवायुयुक्तः; वातरोगी; वातकी;

'वातासहो वातसहो वातूली वातुलोऽपि च'—इति शब्दरत्नावली । ६०६

वातायनम् क्ली. [ वातस्य अयनं गमनागमनमार्गः ] गवाक्षः; 'लीलागारस्य बहिः सखीषु चरणातिथो मयि प्रियया । प्रकटीकृतः प्रसादो दत्त्वा वातायने व्यजनम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५।१०) । पुं. [ वातस्येव अयनं गतिर्यस्य ] घोटकः । ३०४

वात्या स्त्री. [ वातानां समूहः । वात+ 'पाशादिभ्यो यः' इति य ] वातसमूहः; 'आसङ्गिनी च वाताली स्याद्वात्य वातमण्डली'—इति त्रिकाण्डशेषः । 'ववो वायुः सुदुस्पर्शः फोत्कारानीरयन् मुहुः । उन्मूलयन्नगपतीन् वात्यानीको रजोध्वजः'—इति भागवते (३।१।७।५) । ७७

वादनदण्डः पुं. [ वादनस्य वाद्यस्य दण्डः यष्टिका ] वाद्य-यष्टिका; कोणः । ९८

वाद्यम् क्ली. [ वद्+णिच्+कर्मणि यत् ] वाद्यन्ति ध्वनयन्ति यत्; वादित्रम्; आतोद्यम्; 'ततं वीणादिकं वाद्यमानद्धं मुरजादिकम् । वंश्यादिकं तु शुषिरं कांस्य-तालादिकं धनम्'—इत्यमरः । ९३

वाद्यभाण्डमुखम् क्ली. [ वाद्यभाण्डानां मृदङ्गभेरी-दुन्दुभ्यादीनां मुखम् ऊर्ध्वभागः ] पुष्करः; वादित्र-वक्त्रम् । ८५८

वाध्रीणसः पुं.-खड्गी; गण्डकः । २२७

वाध्रीनसः पुं.-वाध्रीणसः; खड्गी; गण्डकः । २२७

वानम् त्रि. [ वं शोपणे+क्त । ओदितश्चेति नत्वम् ] शुष्कफलं; शुष्कम् । [ वनस्येदमिति, वन+अण् ] वनसम्बन्धि; क्ली. [ वा+ल्युट् ] स्यूतिकर्म; कटः; गतिः; सुरङ्गा; सौरभः; गोकौरजं; तवकीरं; जल-सप्लुतवातोमिः । १८९

वानप्रस्थः पुं. [ वनप्रस्थे भवः, अण् ] वैखानसः; तृतीया-श्रमः; पुत्रमुत्पाद्य वनवासं कृत्वा अकृष्टपच्यफलादि भक्षयित्वा ईश्वराराधनं करोति यः सः; मधूकवृक्षः; 'मधूको गुडपुष्पः स्यान्मधुपुष्पो मधुश्रवः । वानप्रस्थो मधुष्ठीलो जलजेत्रमधूलकः'—इति भावप्रकाशः । पलाश-वृक्षः; 'वातपोथः पलाशः स्याद्धानप्रस्थश्च किशुकः । राजादनो ब्रह्मवृक्षो हस्तिकर्णो दलोऽपरः'—इति वैद्यक-रत्नमालायाम् । ३९४

वातरः पुं.-स्त्री. [ नाविकल्पितो नरः; यद्वा वानं वने

भवं फलादिकं रातीति । वान+रा+क ] पशुविशेषः;  
कपिः; प्लवङ्गः; प्लवगः; शालामृगः; वलीमुखः;  
मर्कटः; कीशः; वनौकाः; मर्कः; प्लवः; प्रवङ्गः;  
प्रवगः; प्लवङ्गमः; प्रवङ्गमः; गोलाङ्गूलः; कपि-  
त्यास्यः; दधिशोणः; हरिः; तरुमृगः; नगाटनः;  
झम्नी; झम्पारः; कलिप्रियः; किखिः; शालावृकः ।  
'हत्वा हंसं बलाकां च वकं वहिणमेव च । वानरं श्येन-  
भासी च स्पर्शयेद् ब्राह्मणाय गाम्'—इति मनुः  
(१११३६) । २३१

वानस्पत्यः पुं. [ वनस्पती भवः । वनस्पति+दित्य-  
दित्यादित्येति ण्य ] पुष्पजातफलवद्बृक्षः; स तु आम्र-  
जम्बादिः । वनस्पतीनां समूहः; वनस्पतिसमूहे क्ली. ।  
वनस्पतिजाते त्रि. । 'अद्विरसि वानस्पत्यः'—इति वाज-  
सनेयसंहितायाम् (१११४) । 'हे उदूखल त्वं यद्यपि  
वानस्पत्यः दारुमयस्तथापि दृढत्वाद् अद्विरसि'—इति  
तद्भाष्ये महीधरः । 'तस्य सप्तसु यज्ञेषु सर्वमासी-  
द्विरण्मयम् । वानस्पत्यं च भौमं च यद् द्रव्यं नियतं  
मले । चपालयूपचमसाः स्थाल्यः पाण्यः स्रुचः स्रुवाः'—  
इति महाभारते (३।१२१४) । १७९

वानोरः पुं. [ वायति शुष्यति इति व+क्विप् । वा  
शुष्यत् नीरं यस्मात् । ] वेतसवृक्षः; वञ्जुलः; वृत्-  
पुष्पः; शाखालः; जलवेतसः; व्याधिघातः; परिव्यावः;  
नादेयः; जलसम्भवः; शीतः; विदुलः; वेतसः । २०१  
वापिः स्त्री. [ उच्यते पद्मादिकमस्यामिति । वप्+वसि-  
वपियजिराजिन्नजीति इञ् ] वापी; दीधिका । ६८४  
वापी स्त्री. [ वापि+कृदिकारादिति डीष् ] आहावः;  
दीधिका; कूपः । [ उच्यते पद्मादिकम् अस्याम् ] 'वाप्यां  
वापिरपि स्मृता'—इति द्विरूपकोषः । 'यो वापीमथवा  
कूपं देशे वारिविवर्जिते । खानयेत् स दिवं याति  
विन्दो विन्दो शतं समाः'—इति वायुपुराणे । ६८४

वामः त्रि. [ वमति वम्यते वेति । वम् उद्गिरणे+ज्वलि-  
तिकसन्तेभ्यो णः' इति ण, मित्संज्ञायां वा इत्यनुवृत्तेर्न  
वृद्धिवाचनम् । यद्वा वातीति । वा गतिगन्धनयोः+अति-  
स्तुषुहुसृषृक्षिभुभायावापदीति मन् ] चारुः; सुधमः;  
सव्यः (७५६); 'भाल' वह्निशिखाङ्कितं दधदधि-  
श्रोत्रं वहन् सम्भूत-क्रोडत्कुण्डलिजृम्भितं जलधि-  
जच्छायाच्छकण्ठच्छविः । वक्षो विभ्रदहीनकञ्चुकचितं

वद्वाङ्गनाद्धस्य वो, भागः पुङ्गवलक्षणोऽस्तु यशसे  
वामोऽथवा दक्षिणः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (११२) ।  
(८०८) प्रतिकूलम्; प्रतीपः; विरुद्धः; 'दुःखेनो-  
पाज्यन्ते पाल्यन्ते प्रत्यहं च लाल्यन्ते । वामाः स्त्रियो  
विमूढैश्चभुञ्जाना सुखं विगुणम्'—इति वैराग्यशतके  
(५३) । वल्गुः; सुन्दरः; 'स दक्षिणं तूणमुखेन वामं  
व्यापारयन् हस्तमलक्ष्यताञ्जी । आकर्णकृष्टा सकृदस्य  
योद्धुः मौर्वीव वाणान् सुषुवे रिपुघ्नान्'—इति रघो  
(७।५७) । अधमः; वननीयः; 'अभि नो नयं वसु  
वीरं प्रयतदक्षिणं वामं गृहर्पाति नय'—इति ऋग्वेदे  
(६।५३।२) 'वामं वननीयम्'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
सायणः । वननीयं याचनीयं, वनु याचने इत्यस्य प्रयोगो  
ज्ञातव्यः । पुं. [ वातीति । वा गतिगन्धनयोः+मन् ]  
हरः; शिवः; महादेवः; 'प्रजापतेस्ते श्वशुरस्य साम्प्रतं  
निर्यापितो यन्नमहोत्सवः किल । वयं च तत्राभिसराम  
वाम ! ते यद्यथितामी विवृधा ब्रजन्ति'—इति भागवते  
(४।३।८) । कामदेवः; पयोधरः; श्रीकृष्णस्य भद्रा-  
गर्भोत्पन्नः पुत्रविशेषः; संग्रामजित् बृहत्सेनः शूर-  
प्रहरणोऽरिजित् । जयः सुभद्रो भद्राया वाम आयुश्च  
सत्यकः'—इति भागवते (१०।६।१।१७) । क्ली. धनं;  
वास्तूकम् । ६८९

वामदेवः पुं. [ वामः श्रेष्ठः सुन्दरः, फणिकपालादिना  
विपरीतो वा देवः ] शिवः; शङ्करः; महादेवः;  
'उमापतिः; 'वामदेवश्च वामश्च प्राग्दक्षिणश्च वामनः'—  
इति महाभारते (१३।१७।७०) । ऋषिप्रभेदः; मुनि-  
विशेषः; 'आंगामिप्रतिबन्धश्च वामदेवे समीरितः ।  
एकेन जन्मना क्षीणो भरतस्य त्रिजन्मभिः'—इति पञ्च-  
दश्याम् (१।४५) । १२

वामनः पुं. [ वामयति वमति वा मदमिति । वम्+  
णिच्+त्यु ] दक्षिणदिग्गजः; कुमुदाञ्जनः; 'तदु-  
परिष्ठाच्चतसृष्वाशास्वात्मयोनिनाखिलजगद्गुण्णावि-  
निवेशिता ये द्विरदतपयः ऋषभः पुष्करचूडो वामनोऽ-  
पराजित इति सकललोकस्थितिहेतवः'—इति भागवते  
(५।२०।३९) । ह्रस्वः; रघो (१९।५१) । 'प्रांगुलम्ये  
फले लोभादुद्बुधुरिव वामनः'—इति रघो (१।३) ।  
अङ्कोटवृक्षः; हरिः; 'उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोषः शुचि-  
रुजितः'—इति महाभारते (१३।१४।३०) । शिवः;

'वामदेवश्च वामश्च प्रागदक्षश्च वामनः'—इति महा-  
भारते (१३।१७।८०) । अश्वभेदः; 'एकेनाङ्गेन  
हीनेन भिन्नेन च विशेषतः । यमजं वाजिनं विन्ध्याद्वामनं  
वामनाकृतिम्'—इति अश्ववैद्यके (३।१५३) । दत्तोः  
पुत्रभेदः; 'अयोमुखः शम्बरश्च कपिलो वामनस्तथा'—  
इति हरिवंशे (३।८२) । भुजङ्गभेदः; 'कालियो  
मणिनागश्च नागश्चापूरणस्तथा । नागस्तथा पिञ्जरक  
एलापत्रोऽयं वामनः'—इति महाभारते (१।३।५।६) ।  
गहडवंशोयपक्षिविशेषः; 'पङ्कजिद्वज्रनिष्कुम्भो वैन-  
तेयोऽयं वामनः । वातवेगो दिशाचक्षुर्निमिषोऽनिमिष-  
स्तथा'—इति महाभारते (५।१०।१।१०) । हिरण्य-  
गर्भस्य सुतभेदः; 'गार्गः पृथुस्तथैवाग्रयो जान्यो वामच  
एव च'—इति हरिवंशे (२।५।३।६) । कौञ्चद्वीपस्य  
पर्वतविशेषः; 'कौञ्चद्वीपे महाराज ! कौञ्चो नाम  
महागिरिः । कौञ्चात्परो वामनको वामनादन्धकारकः ।  
अन्धकारात्परो राजन् मंनाकः पर्वतोत्तमः । मंना-  
कात्परो राजन् ! गोविन्दो गिरिरुत्तमः'—इति महा-  
भारते (६।१२।१७-१८) । तीर्थभेदः; 'ततस्तु वामनं  
कृत्वा सर्वपापप्रमोचनम्'—इति महाभारते (३।८।४।  
१२२) । महापुराणान्यतमः; 'अयुतं वामनाख्यं च  
वायव्यं पट् शतानि च । चतुर्विंशतिसंस्थातः सहस्राणि  
तु शौनक !'—इति देवीभागवते (१।३।७) । विष्णोः  
पञ्चमावतारः; 'मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहश्च  
वामनः । रामो रामश्च कृष्णश्च क्रमाद् द्वौ बुद्धकल्किर्नौ ।  
'वामनो वृद्धिदो दाता द्रव्यस्थो वामनः स्वयम् । वामनं  
च प्रतिग्राही तेन मे वामने रतिः । वामनः प्रतिगृह्णाति  
वामनोऽपि ददाति च । वामनस्तारको द्वाभ्यां तेनेदं  
वामने नमः'—इति श्रीहरिभक्तिविलासे १५ विलासः ।

१०४

वामनः त्रि. [ वामयतीति । वम्+णिच्+ल्यु ] अतिक्षुद्रः;  
न्यङ्गः; नीचः; खर्वः; ह्रस्वः; अनुच्चः; अनायतः;  
'विधिस्तुपारर्तुदिनानि कर्तुं कर्तुं विनिर्माति तदन्त-  
भिन्नेः । ज्योत्स्नीर्न चेतत्प्रतिमा इमा वा कथं कथं  
तानि च वामनानि'—इति नैषधे (२।२।५७) । ६११  
वामनेत्रा स्त्री. [ वामं सुन्दरे अराले वा नेत्रे यस्याः ]  
नारी; वामलोचना; वामा; अङ्गना; वामाक्षी;  
कली. [ वर्णन्यासे वामं नेत्रं स्पृश्यं येन ] दीर्घकारः;

'ईस्त्रिमूर्तिर्महामाया लोलाक्षी वामलोचनम्'—इति  
वर्णाभिधानम् । 'ईशो वैश्वानरस्थः शशधरविलसद्दाम-  
नेत्रेण युक्तो, बोजन्ते द्वन्द्वमन्यद्विगलितचिकुरे कालिके  
ये जपन्ति'—इति श्यामास्तोत्रम् । ४८१

वामलूरः पुं. [ वामं यथा तथा लुनातीति । वाम+लू+  
वाहुलकाद् रक् ] वम्रीकूटः; नाकुः; वल्मीकः;  
'जटाटवीकोटरान्तः कृतनीडाण्डजाश्च ये । प्रहृद-  
वामलूराङ्गाः स्नायुनद्धास्थिसञ्चयाः'—इति काशी-  
खण्डे (२।२।१९) । ६४४

वामा स्त्री. [ वमति सौन्दर्यम् इति । वम्+ज्वलादित्वाद्  
ण+टाप् । यद्वा वमति प्रतिकूलमेवार्थं कथयति ।  
यद्वा वामः कामोऽस्त्यस्या इति । 'अर्श आदिभ्योऽञ्'  
इत्यच् ] सामान्या स्त्री; 'शिल्प्यति कामपि चुम्बति  
कामपि कामपि रमयति वामाम् । पश्यति सस्मित-  
चारुपरामपरामतुगच्छति रामाम्'—इति गीतगोविन्दे  
(१।४६) । दुर्गा; 'वामं विशद्वरूपं तु विपरीतं तु गीतये ।  
वामेन मुखदा देवी वामा तेन मता बुधैः'—इति देवी-  
पुराणे ४५ अध्यायः । लक्ष्मीः; सरस्वती । ४८१

वामी स्त्री. [ वमति गर्भम् । वम्+ज्वलितकपन्तेभ्यो  
णः ] इति ण, गौरादित्वाद् ङीप् । 'अनाचमिकमिवमी-  
नाम्' इति न 'नोदात्तेति' वृद्धिवाधकता ] अर्धती;  
वडवा; व्राजिनी; 'अयोऽट्टवामीशतवाहितार्थं प्रजेश्वरं  
प्रीतमना महर्षिः'—इति रघौ (५।३२) । शृगाला;  
रासभी; करभी । ४४०

वायसः पुं. [ वयते इति । वय् गती+वयश्च इति असच्  
स च णित् ] अरिष्टः; करटः; कागः; काकः; वलि-  
पुष्टः; सकृत्प्रजः; एकदक्; वलिभुक्; ध्वाङ्क्षः;  
चिरञ्जीवी; अगह्वृक्षः; श्रीवासः; वायनसम्बन्धिनि त्रि. ।  
'स काकं पञ्जरे वद्ध्वा विषयं क्षेमदर्शिनः । सर्वं पर्यचर-  
द्युक्तः प्रवृत्त्ययीं पुनः पुनः । अर्धाध्वं वायसीं विद्यां  
शंसन्ति मम वायसाः । अनागतमतीतं च यच्च सम्प्रति  
वर्तते'—इति महाभारते (१२।८।१७-८) । २४५

वायुः पुं. [ वातीति, वा गतिगन्धनयोः+कृवापाजिमिस्व-  
दिसाध्यशूभ्य उण् ] इति उण्, 'आतो युक् चिण्कृताः'  
इति युक् ] उत्तरपश्चिमदिक्क्रांशाधिपतिः; पञ्च-  
भूतान्तर्गतभूतभेदः; श्वसनः; स्थर्शनः; मातारिश्वा;  
सदागतिः; पृषदश्चः; गन्धवहः; गन्धवाहः; अनिलः;

आशुगः; समीरः; मारुतः; मरुत्; जगत्प्राणः; समीरणः; नभस्वान्; वातः; पवनः; पवमानः; प्रभञ्जनः; अजगत्प्राणः; खश्वासः; वाहः; धूलि-  
ध्वजः; फणिप्रियः; वातिः; नभःप्राणः; भोगिकान्तः; स्वकम्पनः; अक्षतिः; कम्पलक्ष्मा; शशीनिः; आवकः;  
हरिः; वासः; सुखाशः; मृगवाहनः; सारः; चञ्चलः;  
विहगः; प्रकम्पनः; नभःस्वरः; निश्वासकः; स्तनूनः;  
पृषतांपतिः; 'वायोरनियमस्पर्शो वादस्थानं स्वतन्त्रता।  
बलं शैघ्रं च मोक्षश्च कर्म चेष्टात्मता भवः'—इति  
महाभारते। असुरविशेषः; 'दीर्घजिह्वोऽर्कनयनो मृदु-  
चापो मृदुप्रियः। वायुर्मरिष्टो नमुचिः शम्बरो विजयो  
महान्'—इति हरिवंशे (२।८५)। ७५

वायुसूत्रः पुं. [ वायोः सखा, 'राजाहःसखिम्यष्टच्' इति  
टच् ] अग्निः; वह्निः। ६२

वायुसखा [ खि ] पुं. [ वायुः सखा यस्येति विग्रहे समा-  
सान्ताभावपक्षे टजभावात् 'अनङ्गसौ' इति अनङ्गदेशः ]  
अग्निः; वह्निः; अनलः। ६२

वारः पुं. [ वारयति त्रियते वेति। वृ+णिच्+अच्। वृ+  
घञ् वा ] समूहः; (७५०) अवसरः; क्षणः; 'एकैक-  
श्चापि पुरुषस्तत्रयच्छति भोजनम्। स वारो बहुभि-  
र्वर्षेभ्यस्त्यसुतरो नरैः'—इति महाभारते (१।१६।७)।  
सूर्यादिवासरः; द्वारः; हरः; कुञ्जवृक्षः; बालः;  
'वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वा मत्यो न रथ्यो दोषवोति  
वारान्'—इति ऋग्वेदे (२।४।४)। वरणीये त्रि.। ६८७

वारणः पुं. [ वारयति परबलमिति। वृ+णिच्+ल्यु ]  
हस्ती; करो; गजः; 'इयं च तेऽन्या पुरतो विडम्बना,  
यद्वृडया वारणराजहार्यया। विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं  
त्वया, महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति'—इति कुमारे  
(५।७०)। वारवाणः; कञ्चुकः; कवचः; वाणवारः;  
'वारणा यस्य सौवर्णाः पृष्ठे भासन्ति दंशिताः। सुपाश्वं  
सुग्रहं चैव कस्यैतद्धनुस्तमम्'—इति महाभारते  
(४।४०।२)। [ वारि जले रणति चरतीति। वार+  
रण्+अच् ] जलजाते त्रि.। 'ततो वैभाण्डकिस्तस्य  
वारणं शक्रवारणम्। अवतारयामास महो मन्त्रवाहन-  
मुत्तमम्'—इति हरिवंशे (३।१।४८)। 'वारि जले  
रणति चरतीति वारणः समुद्रोद्भवः'—इति तट्टीकायां  
नीलकण्ठः। २१४

वारमुख्या स्त्री. [ वारे वेश्यासमूहे मुख्या श्रेष्ठा ] जनैः  
सकृता वेश्या; 'वारमुख्याश्च शतशो यानैस्तद्दर्शनो-  
त्सुकाः'—इति भागवते (१।१।२०)। ४९०

वारयिता पुं. [ वारयति दुर्नीतिरिति। वृ+णिच्,  
तृच् ] पतिः। ४९७

वारला स्त्री. [ वारं लातीति। वार+ला+क ] वरटा;  
वरला; हंसकान्ता; हंसी। २५१

वारवाणः पुं.—क्ली. [ वारं वारणीयं वाणं यस्मात् ]  
वारवाणः; कञ्चुकः; कवचः (७९५); 'पीन-  
कुचतटनिपीडदलद्वारवाणमुरसा लिलिङ्गरे'—इति माघे  
(१५।८४)। ५५२

वारस्त्री स्त्री. [ वारस्य जनसमूहस्य स्त्री.। यद्वा वारे  
अवसरे सति यस्य कस्यापि स्त्री ] वेश्या; गणिका;  
रूपाजीवा; पण्याङ्गना; क्षुद्रा; वारमुख्या; वाराङ्गना;  
वारमारी; वारवाणिः; वारवाणी; वारविलासिनी;  
वारसुन्दरी; वारवनिता। ४९०

वारणसी स्त्री. [ वरणा च असी च, तयोर्नद्योरदूरे  
भवा। 'अदूरभवश्च' इत्यण्+ङीप्। पृषोदरादित्वात्  
साधुः ] मोक्षदपुरीविशेषः; वारणसी; काशी; शिव-  
पुरी; जित्वरी; तपःस्थली; वरणसी; तीर्थराजी;  
काशिका; 'वरणासी च नद्यौ द्वे पुण्ये पापहरे उभे।  
तयोरन्तर्गता या तु सैषा वारणसी स्मृता।' २८७

वारि क्ली. [ वारयति तृषामिति। वृ+णिच्+  
'वसिवपि-  
यजिराजिन्नजिसदिहनिवाशिवादिवारिभ्य इञ्' इति  
इञ् ] जलम्; 'न कुर्वीत वृथा चेष्टां न वार्यञ्जलिना  
पिवेत्। नोत्सङ्गे भक्षयेत्भक्ष्यान् न जातु स्यात्कृतूहली'—  
इति मनुः (४।६३)। ६४८

वारिः स्त्री. [ वारयतीति, वारि+इञ् ] गजबन्धनभूमिः;  
'संहारविक्षेपलघुक्रियेण, हस्तेन तीराभिमुखः सशब्दम्।  
वभौ सभिन्दन् वृहतस्तरङ्गान् वार्यगंलाभङ्ग इव प्रवृत्तः'  
—इति रघौ (५।४५)। वाक्; सरस्वती; गजबन्धनी;  
वन्दिः; वरणीये त्रि.। 'बहुम्य आ सङ्गतेम्य एष मे  
देवेषु वसु वार्यायस्यते'—इति वाजसनेयसंहितायाम्  
(२।१।६१)। 'एषोऽग्निर्मो मह्यं देवेषु वारि वरीतुं योग्यं  
वारि वरणीयं वसु धनसायस्यते'—इति तद्वाप्ये  
महीधरः। २२३

वारी स्त्री. [ वार्यतेऽनयेति। वृ+णिच्+  
'वसिवपिवजि-



राजिब्रजिसदिहिनराशिवादिवारिभ्य इब् इति इब्,  
पा.डीप् [ गजवन्वनी; रघुवंशे (४।४५) । कलसी ।

२२३

वारुणी स्त्री. [ वरुणस्येयम् । 'तस्पेदम्' इत्यण्+डीप् ]  
पविचमदिक्; 'वद विघुन्तुदमालि मदीरित्तैस्त्यजसि कि  
द्विजराजधिया विघुम् । किमु दिवं पुनरेति यदीदृशः  
पतित एष निषेव्य हि वारुणीम्'—इति नैषधे (४।६०) ।  
सुरा (३३०); 'अज्ञानाद्दारुणीं पीत्वा संस्कारेणैव  
शुष्यति । मतिपूर्वमनिर्देश्यं प्राणान्तिकमिति स्थितिः'—  
इति मनुः (१।१।१४७) । मदिराधिष्ठात्री देवी;  
'किमेतदिति सिद्धानां दिवि चिन्तयतां ततः । बभूव  
वारुणी देवी मद्यधूणितलोचना'—इति विष्णुपुराणे  
(१।९।९३) । 'वारुणी मद्याधिष्ठात्री देवी'—इति  
सटीकाया श्रीधरस्वामी । वरुणपत्नी; वारुणोवल्लभ-  
शब्ददर्शनात् । 'यस्यामास्ते स वरुणो वारुण्या च समन्वि-  
तः । दिव्यरत्नाम्बरधरो दिव्याभरणभूषितः'—इति महा-  
भारते (२।९।६) । नदीविशेषः; 'पूर्वेण वारुणीं तीर्त्वा  
क्रुक्षेत्रे सरस्वतीम् । सरांसि च प्रफुल्लानि नदीश्च  
विमलोदकाः'—इति रामायणे (२।७०।१२) । विद्या-  
विशेषः; 'आनन्देन जातानि जीवन्ति आनन्दं प्रत्यभि-  
संविशन्तीति सैषा भार्गवी वारुणी विद्या'—इति  
तैत्तिरीयोपनिषदि (३।६) । अश्वानां छायारविशेषः;  
'शुद्धस्फटिकसङ्काशा मुस्निग्धा चैव वारुणी'—इति अश्व-  
वैद्यके । शतभिषानक्षत्रं; गण्डदूर्वा; इन्द्रवारुणी; दूर्वा;  
शतभिषानक्षत्रयुक्तचैत्रकृष्णत्रयोदशी; 'वारुणेन समा-  
युक्ता मघी कृष्णा त्रयोदशी । गङ्गायां यदि लभ्येत  
कोटिसूर्यग्रहेः समा । शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी  
स्मृता । शुभयोगसमायुक्ता शनी शतभिषा यदि ।  
महामहेति विख्याता त्रिकोटिकुलमुद्धरेत्' १०१

वार्तः त्रि. [ वृत्तिराहारः अस्त्यस्येति । 'प्रज्ञाश्रद्धार्चा-  
वृत्तिभ्यो णः' इति ण ] निरामयः; वृत्तिशाली; क्ली.  
असारम्; आरोग्यम् । ३८०

वार्ता स्त्री. [ वृत्तिरस्याम् अस्तीति । 'प्रज्ञाश्रद्धार्चा-  
वृत्तिभ्यो णः' इति ण+टाप् ] उदन्तः; 'यावद्वित्तोपाजंन-  
सक्तः तावन्नजपरिवारो रक्तः । तदनु च जरया  
जर्जरदेहे वार्ता कोऽपि न पृच्छति गेहे'—इति मोह-  
नुदगरे (८) । वृत्तिः (५७०); जनश्रुतिः; वातिङ्गणः;

वार्ताकुः; वार्ताकः; वार्ताकी; हिङ्गुली; सिंही;  
भण्टाकी; दुष्प्रधर्षिणी; शाकविल्वः; राजकूष्माण्डः;  
वार्तिकः; वातिगमः; वृन्ताकः; वङ्गणः; अङ्गणः;  
कण्टवृन्ताकी; कण्टालुः; कण्टपत्रिका; निद्रालुः;  
मांसकफना; वृन्ताकी; महोटिका; चित्रफला; कण्ट-  
किनी; महती; कट्फला; मिश्रवर्णफला; नीलफला;  
रक्तफला; शाकश्रेष्ठा; वृन्तफला; नृपप्रियफला; 'वैगन,  
भंटा, भांटा' इति भाषा । दुर्गा; 'पश्वादिपालनादेवी  
कृषिकर्मान्तकारणात् । वर्तनाद्वारणाद्वापि वार्ता सा  
एव गीयते'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः । कृष्णादि;  
'वैश्यस्तु कृतसंस्कारः कृत्वा दारपरिग्रहम् । वार्तायां  
नित्ययुक्तः स्यात्पशूनां चैव रक्षणे'—इति मनुः  
(९।३२६) । 'कृषिवाणिज्यगोरक्षाः कुसीदं तुय्यमुच्यते ।  
वार्ता चतुर्विधा तत्र वयं गोवृत्तयोर्निशाम्'—इति  
भागवते (१०।२।४।२१) । १४६

वार्तिकः पुं. [ वृत्ति वेदेति । वृत्ति+उक्थादित्वात् ठक् ]  
चरः; 'दुर्गतो वार्तिकजनो लोभार्त्तिक नाम नाचरेत्'—  
इति कथासरित्सागरे (३।४।७६) । प्रवृत्तिज्ञः; [ वार्ता  
कृष्णादिस्तत्र साधुः; ठक् ] वैश्यः । [ वार्ता आरोग्ये  
साधुरिति । ठक् ] वर्तिकपक्षी; वार्ताकी; [ वृत्ती  
साधुरिति, वृत्ति+ 'कथादिभ्यष्ठक्' इति ठक् ] सूत्र-  
वृत्तिनिपुणे त्रि. । क्ली. [ वृत्तिग्रन्थसूत्रवृत्तिः । तत्र  
साधुः । वृत्ति+ 'कथादिभ्यष्ठक्' इति ठक् ] उक्तानुक्त-  
दुरुक्तार्थव्यक्तीकारकग्रन्थः; 'उक्तानुक्तदुरुक्तार्थचिन्ता-  
कारि तु वार्तिकम्'—इति हेमचन्द्रः । ८८०

वार्धुषिकः पुं. [ वृद्धधर्मं द्रव्यं वृद्धिः तां प्रयच्छतीति ।  
'प्रयच्छति गर्ह्यम्' इति ठक्, 'वृद्धेर्धुषिभावां वक्तव्यः'  
इति वृधुषिभावः ] वृद्धिजीवी; लम्प्यभुक्; कुसीदकः;  
वृद्धयाजीवः; वार्धुषिः; कुसीदः; कुसीदिकः; 'समर्थ  
धान्यमादाय महार्धं यः प्रयच्छति । स वै वार्धुषिको नाम  
हव्यकव्यवहिष्कृतः'—इति स्मृतिः । ५७१

बालः पुं.—केशः; बालः; कचः; चिकुरः; शिरसिजः;  
शिरोरुहः । ५३०

बालकः पुं.—क्ली. [ वलते, वल् संवरणे, ष्वल् ] ह्रीविरः;  
गन्धयुक्तद्रव्यविशेषः; 'त्वक्कुष्ठरेणुनलिकास्पृक्कारस-  
तगरबालकंस्तुव्यः । केशरपत्रविमिश्रंनरपतियोग्यं शिरः-  
स्नानम्'—इति बृहत्संहितायाम् (७७।५) । पारि-

हार्यः; अङ्गुरीयके त्रि। पुं. बालकः। ६२२

पालधिः पुं. [ बालः केशा धीयन्ते अत्र। 'कर्मण्यधिकरणे च' इति कि ] बालधिः; बालहस्तः; केशवल्लाङ्गूलम्। ४४१

बालहस्तः पुं. [ बालानां हस्तः समूहः; बालाः हस्त इव वा, दंशादिवारकृत्वात् ] बालधिः। ४४१

बालुका स्त्री. [ बल् प्राणने, बाहुलकादुष्, संज्ञायां कन्, टाप् च। पृषोदरादित्वेन वत्वम् ] सिकता; बालुका। ६७०

बालुकी स्त्री. [ बालुक+डीप् ] बालुकी; कर्कटी। २०९  
बाल्मीकः पुं. [ बल्मीके भवः स्थित इत्यर्थः। 'तत्र भवः' इत्यण् ] बाल्मीकः। ४१२

बाल्मीकः पुं. [ बल्मीके भवः, 'अत इक्' इतीञ् ] मैत्रावरुणः। ४१२

बाशिता स्त्री. [ बाश्+क्त+टाप् ] बासिता; स्त्रीमात्रं; करिणी। ४०१

बाष्पः पुं. [ ओवै शोषणे, यद्वा बाधते इति, बाष् लोडने+ 'खष्पशिल्पशष्पवाष्परूपपर्यतत्वाः' इति पप्रत्यये घस्य षत्व् निपातनात् ] उष्मा; 'तस्याप्रतिद्वन्द्वभवाद्दिषादात् सद्यो विमुक्तं मुखमावभासे। निश्वासवाष्पापगमात् प्रपन्नः प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः'—इति रघौ (७।६८)। अश्रुः (५।१९); 'प्राङ्गण एव कदा मां झिलष्यन्ती मन्युकम्पिकुचकलसा। अंशनिषण्णमुखी सा स्नपयति बाष्पेण मम पृष्ठम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९४)। ६७

बासः [ म् ] क्ली. [ वस्यतेऽनेनेति। वस् आच्छादने+ 'वसेणित्' इत्यसुन् स च णित् ] वस्त्रम्; 'उपानहौ च वासश्च धृतमन्यैर्न धारयेत्'—इति मनुः (४।६६)। पत्रकम्। ५४८

बासतेयी स्त्री. [ वसती साधुरिति। वसति+ 'पथ्यतिथि-वसतिस्वपतेर्देव्' इति षञ्, डीप् ] रात्रिः; रजनी; निशा; वसतिसाधुमात्रे त्रि। 'वनेषु वासतेषु निवसन् पर्णसंस्तरः। शय्योत्थाय मृगान् विष्यन्नातिथेयो विचक्रमे'—इति भट्टिः (४।८)। १०८

बासना स्त्री. [ वासयति कर्मणा योजयति जीवमनांसीति ] वस्+णित्+युच्+टाप् ] स्मृतिहेतुः; संस्कारः; भावना; देहात्मवृद्धिर्जन्यमिथ्यासंस्कारः; दुर्गा; 'वसत्यदृष्टा सर्वेषु भूतेष्वन्तर्हिताय च। धातुर्वस निवासेति वासना

तेन सा स्मृता'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः। अर्कस्य भार्या; 'अर्कस्य वासना भार्या पुत्रास्तर्षाप्यः स्मृताः'—इति भागवते (६।६।१३)। ज्ञानं; प्रत्याक्षा; 'शाब्दस्य हि ब्रह्मण एष पन्था यन्नामभिर्ष्याविति धीरपायैः'—इति भागवते (२।२।२)। ७८०

वासन्तिकः त्रि. [ वसन्तमधीते वेद वा इति। वसन्त+ 'वसन्तादिभ्यषठ्क्' इति ठञ् ] विदूषको; केलिकिलः; वैहासिकः; 'वासन्तिकः केलिकिलो वैहासिकः विदूषकः'—इति हेमचन्द्रः। [ वसन्तस्येदमिति। 'वसन्ताञ्च' इति ठञ् ] वसन्तसम्बन्धिनि त्रि.। 'सप्रणवशिरस्त्रिषड् सावित्री ग्रैमवासन्तिकान् मासानघीयानमप्यसमक्षेत्-रूपं ग्राहयामास'—इति भागवते (५।१।५)। ४३२  
वासन्ती स्त्री. [ वसन्तस्येयमिति। वसन्त+अण्+डीप् ] माधवी; पुष्पलताविशेषः; प्रहसन्ती; वसन्तजा; महा-जातिः; शीतसहा; मधुवहुला; वसन्तद्वती; यूथी; 'मालतीमल्लिकापद्मकरवीराश्च पुष्पिताः। केतक्यः सिन्धुवाराश्च वासन्त्यश्च सुपुष्पिताः'—इति रामायणे (४।१।७७)। पाटला; कामोत्सवः; चैत्रावलिः; चैत्रावली; मधूत्सवः; सुवसन्तः; काममहः; कर्दनी; गणिकारी; नवमल्लिका; नवमालिका; 'नेपाली कथिता तज्जैः सप्तला नवमालिका। वासन्ती शीतला लक्ष्मी तिक्ता दीपत्रयासजित्'—इति भावप्रकाशः। चतुर्द-शाक्षरवृत्तिविशेषः। २०८

वासरः पुं. - क्ली. [ वासयतीति, वस्+णित् ]+ 'अति-कमिभ्रमिचमिदेनिवासिम्यश्चित्' इति अर ] दिवसः; वाश्रः; 'प्रवृत्ते चावयोर्वदि प्रयाताः सप्त वासरः'—इति कथासरित्सागरे (४।२३)। पुं. नागप्रभेदः; सर्पविशेषः। १०६

वासवः पुं. [ वसुरेव। प्रज्ञाघण् ] इन्द्रः; मधवा; 'सहस्राक्षनियोगात् स पायः शक्रासनं गतः। अध्यक्षाम-दमेयात्मा द्वितीय इव वासवः'—इति महाभारते (३।४३।२२)। क्ली. शनिष्ठानक्षत्रम्। ५२

वासा स्त्री. [ वासयतीति, वस्+णित्+अच्+टाप् ] वासकः; वृक्षविशेषः; वैद्यमाता; सिही; वासिका; वृषः; अटरुषः; सिहास्यः; वाजिदन्तकः; वाशा; वाशिका; वृशः; अटरुषः; वाशकः; वासः; वाजी; वैशसिही; मातृसिही; वासका; सिहपर्णा; सिहिका;

भिषङ्गमाता; वसादनी; सिंहमुखी; कण्ठीरवी; शित-  
कर्णी; वाजिदन्ती; नासा; पञ्चमुखी; सिंहपत्री;  
मृगेन्द्राणी; 'वासको वासिका वासा भिषङ्गमाता  
सिंहिका। सिंहास्यो वाजिदन्तः स्यादाटरूपोऽटरूपकः।  
आटरूपो वृषो नाम्ना सिंहपर्णश्च स स्मृतः। वासको  
वासकृत सर्धः कफपित्ताम्लनाशनः। तिक्तस्तुवरको हृद्यो  
लघुः शीतस्तुडतिहृत्। श्वासकासज्वरच्छर्दिमोहकुष्ठ-  
क्षयापहः'—इति भावप्रकाशः। 'वासायां विद्यमानायामा-  
शायां जीवितस्य च। रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमव-  
सीदति'—इति वैद्यके। १९८

वासागारम् क्ली। [ वासाय वासस्य वा अगारम् ] वास-  
गृहं; भोगगृहं; कन्याटः; पल्घाटः; निष्कुटः। २९५  
वासिता स्त्री। [ वासयतीति, वस् निवासे + णिच् + क्त +  
टाप् ] स्त्रीमात्रं; करिणी; हस्तिनी। ४८१

वासुदेवः पुं। [ वसुदेवस्यापत्यमिति। वसुदेव + ऋष्यन्धक-  
वृष्णिकुरुम्यश्च ] इति अण्। यद्वा सर्वत्रासौ वसत्यात्म-  
रूपेण विश्वम्भरत्वादिति। वस् + बाहुलकाद् उण् वासुः।  
वासुश्चासौ देवश्चेति कर्मधारयः ] श्रीकृष्णः; वसुदेवभूः;  
सव्यः; सुभद्रः; वासुभद्रः; षडङ्गजित्; षड्विन्दुः;  
प्रश्निशृङ्गः; प्रश्निभद्रः; गदायज्ञः; मार्जः; वभ्रुः;  
लोहिताक्षः; परमाण्वङ्गकः; 'सर्वत्रासौ समस्तं च  
वसत्यत्रेति वैयतः। ततः स वासुदेवेति विद्वद्भिः परि-  
गीयते।' 'सर्वाणि तत्र भूतानि वसन्ति परमात्मनि।  
भूतेष्वपि च सर्वात्मा वासुदेवस्ततः स्मृतः। खोण्डिक्य-  
जनकायाह पृष्टः केशिध्वजः पुरा। नामव्याख्यामनन्तस्य  
वासुदेवस्य तत्त्वतः। भूतेषु वसते सोऽन्तर्वसन्त्यत्र च  
तानि सत्। घाता विघाता जगतां वासुदेवस्ततः प्रभुः'—  
इति विष्णुपुराणे। २३

वास्तुः पुं. — क्ली. [ वसन्ति प्राणिनो यत्र। वस् निवासे +  
'वसेरगारे णिच्च' इति तुन्, स च णित् ] गृहकरणयोग्य-  
भूमिः; वेष्टमभूः; पोतः; वाटी; वाटिका; गृहपोतकः;  
'वास्तु संक्षेपतो वक्ष्ये गृहादौ विघ्ननाशनम्। ईशान-  
कोणादारम्य ह्येकाशीतिपदे त्यजेत्'—इति मात्स्ये।  
क्ली. शाकविशेषः; वास्तुकं; वास्तू; वसुकं; वस्तुकं;  
हिलमोचिका; शाकराजः; राजशाकः; चक्रवर्ती;  
'वयूत्रा' इति भाषा। २९१

वास्तु क्ली. [ 'अगारे णिच्च' इति वसेस्तुन् ] गेहं;

गृहम्। २९२

वास्तोष्पतिः पुं. [ वास्तोर्गृहक्षेत्रस्य पतिरधिष्ठाता।  
'वास्तोष्पतिगृहमेधाच्छ च' इति निपातनाद् अलुक्  
पत्वञ्च। यद्वा वास्त्वन्तरिक्षं तस्य पतिः पाता विभुत्वेन ]  
इन्द्रः; देवतामात्रम्; 'वास्तोष्पतीनां च गृहैर्बलभी-  
भिश्च निर्मितम्। चातुर्वर्ण्यजनाकीर्णं यदुदेवगृहोल्लसत्'  
—इति भागवते (१०।५०।५३)। 'किञ्च नगरगृहादौ  
वास्तोष्पतीनां देवानां च गृहैर्बलभीभिश्चन्द्रमालिका-  
भिश्च निर्मितम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। गृहपाल-  
यितरि त्रि.। 'वास्तोष्पते प्रतिजानीं ह्यस्मान् स्वावेशो  
अनमीवो भवानः'—इति ऋग्वेदे (७।५४।१)।  
'हे वास्तोष्पते गृहस्य पालयितर्देव त्वम् अस्मान् त्वदीयान्  
स्तोतृनि प्रतिजानीहि'—इति तद्भाष्ये सायणः। ५२  
वाहः पुं. [ उह्यतेऽनेनेति। वह् + करणे घञ् ] घोटकः;  
अश्वः; 'इत्याज्ञप्तः मुमन्त्रोऽपि रथं वाहैरयोजयत्'—  
इति अध्यात्मरामायणे (२।५।५६)। परिमाणत्रिशेषः;  
'पलं प्रकुञ्चकं मुष्टिः कुडवस्तच्चतुष्टयम्। चत्वारः  
कुडवाः प्रस्थः चतुःप्रस्थमथाढकम्। अष्टाढको भवेद्द्रोणो  
द्विद्रोणः सूर्प उच्यते। सार्द्धं सूर्पो भवेत्खारी द्वे खारी  
गोण्युदाहृता। तामेव भारं जानीयात् वाहो भारचतुष्ट-  
यम्'—इति भरतः। 'चतुराढको द्रोणः, षोडशद्रोणा  
खारी, विशतिद्रोणः कुम्भः; दशकुम्भो वाहः'—इति  
स्वामी। भुजः; वृषः; वायुः; प्रवाहः; 'यत्राचिराज्य-  
धूमादिमार्गाविव समागती। गङ्गायमुनयोर्वाही भातः  
सुगतये नृणाम्'—इति कथासरित्सागरे (९३।८१)।  
वाहनं; यानम्; 'तच्छ्रुत्वा तत्र भेकानां राजा  
वाहसमुत्सुकः। जलादुत्तीर्य तत्पृष्ठमारोहद् गतभीर्मुदा'  
—इति कथासरित्सागरे (६२।१५७)। ४३६

वाहनम् क्ली. [ वहत्यनेनेति। वह् + करणे ल्युट् ] 'वाहन-  
माहितात्' इत्यत्र 'वहतेर्ल्युटि वृद्धिरिहैव सूत्रे निपात-  
नात् ] हस्त्यश्वरथदोलादि; यानं; युग्यं; पत्रं; धोर-  
णम्; 'पूर्ववृत्तकथितैः पुराविदः, सानुजः पितृसखस्य  
राघवः। उह्यमान इव वाहनोचितः, पादचारमपि न  
व्यभावयत्'—इति रवी (११।१०)। [ वाहयतीति,  
वह् + स्वार्थे णिच् + ल्यु ] वाहके त्रि.। 'स वाहनानां  
नागानां शीकराम्बुमहाभरैः। शूकरप्रेयसीपृष्ठे स्वयं चक्रे  
कृपि नृपः। नागानां वाहना मेघाः शूकरप्रेयसी क्षितिः।

विष्णोः शूकररूपस्य सा हि प्रियतमोच्यते । तस्यां मेघा-  
म्बुमिर्धान्यमुत्पन्नं चैत्किमद्भूतम्—इति कथासरि-  
त्सागरे (१२४।२२०-२२२) । ४४९

वाहसः पुं. [ उह्यते इति । वह् + 'वहियुस्यां णित्' इति  
असच्, स च णित् ] अजगरः; सर्पविशेषः; 'त्वाष्ट्राः  
प्रतिश्रुत्कार्यै वाहसः'—इति तैत्तिरीयसंहितायाम्  
(५।५।१४।१) । वारिनिर्याणं; सुनिषण्णकम् । ६४२

वाहिनी स्त्री. [ वाहा वाहानानि घोटकादीनि सन्त्यस्या-  
मिति । वाह+इनि+डीप् ] सेना; 'लक्ष्मणानुचरमेव  
राघवं नेतुमैच्छदृषिरित्यसौ नृपः । आशिषं प्रयुयुजे न.  
वाहिनीं सा हि रक्षणविधौ तयोः क्षमा'—इति रघौ  
(११।६) । [ वाहः प्रवाहोऽस्त्यस्या इति ] नदी;  
'उत्तिष्ठत प्रवृष्यध्वं भद्रमस्तु हि वः सदा । नावः  
समुपकर्षध्वं तारयिष्याम वाहिनीम्'—इति रामायणे  
(२।८।१।९) । सेनाभेदः; 'एको रथो गजश्चैको नराः  
पञ्च पदातयः । त्रयश्च तुरगास्तज्जैः पतिरित्यभिधी-  
यते । पतिं तु त्रिगुणामेतामाहुः सेनामुखं बुधाः ।  
त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते । त्रयो गुल्मा  
गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः । स्मृतास्तिस्त्रस्तु वाहिन्यः  
पृतनेति विचक्षणैः'—इति महाभारते (१।२।१९-२१) ।  
प्रवाहशोला; 'यमुना च नदी जज्ञे कलिन्दान्तरवाहिनी'  
—इति मार्कण्डेये (७।८।२९) । ४५७

वाहिनीपतिः पुं. [ वाहिन्याः सेनायाः पतिः ] सेनापतिः;  
'प्रवादेनेह मत्स्यानां राजा नाम्नायमुच्यते । अहमेव हि  
मत्स्यानां राजा वै वाहिनीपतिः'—इति महाभारते  
(४।२।१।९) । [ वाहिन्या नद्याः पतिः ] समुद्रः । ४३३

वाह्लिकः, वाह्लिकः पुं.- वाह्लिकदेशजातघोटकः; देश-  
विशेषः; वाह्लिकदेशः; कम्बोजः; गन्धर्वविशेषः;  
प्रतीपपुत्रविशेषः; 'प्रतीपः खलु शैब्यामुपयेमे सुनन्दां  
नाम तस्यां पुत्रानुत्पादयामास देवापि शान्तन्तु वाह्लिकं  
चेति'—इति महाभारते (१।९५।४४) । क्ली.  
कुडकुमं; हिङ्गु; तद्देशजाते त्रि. 'पृष्ठधानामपि  
षाश्वानां वाह्लिकानां जनार्दनः । ददौ शतसहस्राणि  
कन्याघनमनुत्तमम्'—इति महाभारते (१।२।२।४९) ।

४३९

विः पुं.- स्त्री. [ वाति गच्छतीति । वा + 'वातेडिच्च'  
इति इण्, स च डित् ] पक्षी; शकुनः; खगाः; अण्डजः;

'के यूय स्थल एव सम्प्रति वयं प्रददौ विशेषाश्रयः, किं  
ब्रूते विहगः स वा फणिपतियंत्रास्ति सुप्तो हरिः'—इति  
साहित्यदर्पणे (१०) । अव्य. निग्रहः; पादपूरणं;  
निश्चयः; असहनं; हेतुः; अव्याप्तिः; विनियोगः;  
ईषदर्थः; परिभवः; शुद्धम्; अवलम्बनं; विज्ञानं;  
विशेषः; गतिः; आलम्बः; पालनम्; उपसर्गविशेषः ।

२३८

विकटः त्रि. [ वि + 'सम्प्रोदश्च कटच्' इति कटच् ]  
विशालः; 'उत्तरीयविनय' त्रयमाणा, रुन्धती किल  
तदीक्षणमागंम् । आवरिष्ट विकटेन विवोदुर्वंक्षसैव  
कुचमण्डलमन्या'—इति माघे (१०।४२) । श्रेष्ठः  
(७।९४); विकरालः; सुन्दरः; दन्तुरः; 'करालविकटैः  
कृष्णैः पुरुषैरुद्यतायुधैः । पाषाणस्ताडितः स्वप्ने सद्यो  
मृत्युं लभेन्नरः'—इति मार्कण्डेये (४३।२०) । विकृतः;  
पुं. [ विकटति पूयरक्तादिकं वर्षतीति । वि + कट् +  
पचाद्यच् ] विस्फोटकः; साकुरण्डवृक्षः; घृतराष्ट्रस्य  
पुत्रविशेषः; 'दुर्मदो दुष्प्रहृष्टश्च विवित्सुविकटः समः'  
—इति महाभारते (१।६।७।९६) । ७५३

विकल्पनम् क्ली. [ विकल्प्यते इति । वि + कल्प् श्लाघा-  
याम् + भावे ल्युट् ] स्तुतिः; मिथ्याश्लाघा; 'श्लाघा  
प्रशंसार्यवादः सा तु मिथ्याविकल्पनम्'—इति हेमचन्द्रः ।  
'शय्यासनाटनविकल्पनभोजनादिध्वैकाह्वयस्य ऋत-  
वानिति विप्रलम्बः'—इति भागवते (१।१।५।१९) ।  
[ विकल्प्यते आत्मानमिति । वि + कल्प् + ल्यु ] आत्म-  
श्लाघाकारिणि त्रि. 'असूयितारं द्वेषारं प्रवक्तारं  
विकल्पनम् । भीमसेननियोगात्ते हन्ताहं कर्णमाहवे'  
—इति महाभारते (२।७।३।३२) । स्त्री. [ वि +  
कल्प् + णिच् + युच् + टाप् ] आत्मश्लाघा; 'शाम्भवो-  
क्तापि शाक्तानां न प्रशस्ता विकल्पना । शरदीयघन-  
ध्वानैर्वचोभिः किं भवादृशाम्'—इति विख्यातविजय-  
नाटके (२) । १४५

विकर्तनः पुं. [ विशेषेण कर्तनं यस्य । विश्वकर्मयन्त्रला-  
तत्त्वावस्य तथात्वम् ] सूर्यः; भानुः; रविः; आदित्यः;  
सविता; अर्कवृक्षः । ३५

विकल्पपाणिकः पुं. [ विकल्पः स्वभावहीनः पाणिर्नस्य, कन् ]  
कुणिः; स्वभावहीनपाणियुक्तः । ६१०

विकलाङ्गः त्रि. [ विकलानि अङ्गानि यस्य ] स्वभावतो

न्यूनाङ्गः; अपोगण्डः; पोगण्डः; अङ्गहीनकः; 'जन-  
यामास पुत्री द्वावर्षणं गरुडं तथा । विकलाङ्गोऽरुणस्तत्र  
भास्करस्य पुरः सरः'—इति महाभारते (१।३।१।३४) ।

३८७

विकल्पः पुं. [ विरुद्धं कल्पनमिति । वि+कृप्+घञ् ]  
भ्रान्तिः; 'विकल्पोपहतस्त्व' वै दूरदेशमुपागतः । न मे  
विकल्पसन्देहो निविकल्पोऽस्मि सर्वथा'—इति देवी-  
भागवते (१।१९।३२) । कल्पनम्; 'तत्रापि प्रिय-  
व्रतरयचरणपरिखातैः सप्तभिः सप्त सिन्धव उपबलृप्ताः ।  
यत एतस्याः सप्तद्वीपविशेषविकल्पस्त्वया भगवन् खलु  
सूचितः'—इति भागवते (५।१६।२) । संशयः; 'रात्रि-  
न्दिविभागेषु यथादिष्टं महीक्षिताम् । तत्सिधेवे नियो-  
गेन स विकल्पपराङ्मुखः'—इति रघौ (१७।४९) ।  
नानाविधः; 'प्रच्छन्नं वा प्रकाशं वा तन्निषेवेत यो नरः ।  
तस्य दण्डविकल्पः स्यात्तथेष्टं नृपतेस्तथा'—इति मनुः  
(९।२२९) । विविधकल्पः; 'स्मृतिशास्त्रे विकल्पस्तु  
आकाङ्क्षापूरणे सति'—इति भविष्ये । देवता;  
'दैकारिको विकल्पानां प्रधानमनुशायिनाम्'—इति  
भागवते (१०।८५।११) । 'विकल्पा देवास्तेषां कारणम्'  
—इति तट्टीकायां स्वामी । ६९१

विकारः पुं. [ वि+कृ+घञ् ] प्रकृतेरन्यथाभावः; परि-  
णामः; विकृतिः; विक्रिया; विकृत्या; 'अपि शयन-  
सखिम्यो दत्तवाचं कयञ्चित्, प्रमथमुखविकारैर्हासया-  
मास गूढम्'—इति कुमारै (७।९५) । प्रकृतिविकृतिः;  
'शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्वस्तथैव च । प्रकृतिश्च  
विकारश्च यन्वान्यत् कारणं महत्'—इति हरिवंशे  
(२४९।३५) । रोगः; 'विकारो धातुवैषम्यं  
साम्यं प्रकृतिरुच्यते । सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारो दुःख-  
मेव च'—इति चरकः । मस्त्यः; 'मस्त्यो मीनो विकारश्च  
क्षयो वैशारिणोऽण्डजः । शकुलो पृथुरोमा च स सुदर्शन  
इत्यपि । रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मस्त्याः परिकीर्तिताः'  
—इति भावप्रकाशः । ९०

विकाशः पुं. [ वि+काश् दीप्तौ+घञ् ] स्फुटीभावः;  
विकाशनम्; 'विकाशः केषाञ्चित् नयनविषमैवियु-  
दुदयैः, परेषामुद्भूतिः श्रवणकट्टिभिर्दोषैरसितैः । न चेष्टा  
काम्यन्योपकृतिपरिहीना जलमुचो, जडो वपादन्यं वप-  
यति गुणं नास्ति तु धनः'—इति रावतरङ्गिण्याम्

(४।१५८) । रहः; विजनः; 'विकाशो विजने  
स्फुटे'—इत्यजयः । १८७

विकिरः पुं. [ विकिरति मृत्तिकादीन् भोजनार्थमिति ।  
वि+कृ विक्षेपे+ङ्गुपधेति क ] पक्षी; 'पक्षी खगो विहङ्ग-  
श्च विहगश्च विहङ्गमः । शकुनिर्विः पतत्रो च विष्करो  
विकिरोऽण्डजः'—इति भावप्रकाशः । कूपः; [ विकीर्यते  
इति । वि+कृ+घञ्+क ] पूजाकालिकविघ्नोत्साराणार्थ-  
क्षेपणोयतण्डुलादिः; 'लाजचन्दनसिद्धार्थभस्मदूर्वाकुशा-  
क्षताः । विकिरा इति सन्दिष्टाः सर्वविघ्नोघनाशकाः'  
—इति तन्त्रसारः । अग्निदग्धादीनां पिण्डम्; 'असं-  
स्कृतप्रमीतानां योगिनां कुलयोपिताम् । उच्छिष्टं भाग-  
धेयं स्याद्भेषु विकिरश्च यः'—इति मनुः (३।२४५) ।  
'पिण्डनिर्वापरहितं यत्तु श्राद्धं विधीयते । स्वधावाचन-  
लोपोऽत्र विकिरस्तु न लुप्यते'—इति श्राद्धतत्त्वम् ।  
'ये वा दग्धाः कुले बालाः क्रियायोग्या ह्यसंस्कृताः ।  
विपन्नास्तेऽत्रविकिरसम्मार्जनजलाशिनः'—इति मार्क-  
ण्डेय (३।१।२) । जलविशेषे क्ली. । 'नद्यादिनिकटे  
भूमिर्यां भवेद्बालुकामयी । उद्भाव्यते ततो यत्तु तज्जलं  
विकिरं विदुः । विकिरं शीतलं स्वच्छं निर्दोषं लघु च  
स्मृतम् । तुवरं स्वादु पित्तघ्नं मनाक् कफकरं स्मृतम्'  
—इति चिन्तामणिः । २३८

विकृतिः स्त्री. [ वि+कृ+कृत् ] विकारः; विकृतम्;  
'यथाप्रदेशं भुजगेश्वराणां करिष्यतामाभरणान्तरत्नम् ।  
शरीरमात्रं विकृतिं प्रपेदे तथैव तस्युः फणरत्नशोभाः'  
—इति कुमारै (७।३४) । रोगः; डिम्बः; मद्यादिः;  
सांख्योक्तविकृतिः; 'मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृति-  
विकृतयः सप्त । षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः  
पुरुषः'—इति सांख्यकारिकायाम् (३) । ३२४

विक्रमः पुं. [ वि+कृ+भावे घञ् ] विशेषेण क्रम-  
तीति । वि+कृ+कर्त्तरि अच् ] पराक्रमः; विष्णुः;  
'ईश्वरो विक्रमो धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः'—इति  
विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । शौर्यातिशयः; अतिशक्तिता;  
'अन्योऽन्यदर्शनप्राप्तविक्रमावसरं चिरात् । रामरावण-  
योर्द्वन्द्वं चरितार्थमिवामवत्'—इति रघौ (१२।८७) ।  
कान्तिमात्रं; पादविक्षेपः; 'आजानुवाहुः सुशिराः सुल-  
लाटः सुविक्रमः'—इति रामायणे (१।१।१०) । विक्र-  
यादित्थराजा; सप्तसाङ्गः; राकारिः; संवत्कर्ता;

उज्जयिनीदेशाधिपतिभेदः; 'धन्वन्तरिक्षपणकामरसिह-  
शङ्कुवेतालभट्टघटकपर्करकालिदासाः । ख्यातो वराह-  
मिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य'  
—इति नवरत्नश्लोकः । चरणः; शक्तिः; स्थितिः;  
'सम्प्लवः सर्वभूतानां विक्रमः प्रतिसङ्क्रमः । इष्टापूर्तस्य  
काम्यानां त्रिवर्गस्य च यो विधिः'—इति भागवते  
(२।८।२०) । 'विक्रमः स्थितिः प्रतिसंक्रमो महाप्रलयः'  
—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । प्रभवादिपण्डितसंवत्स-

रान्तर्गतचतुर्दशवर्षम्; 'जायन्ते सर्वसंस्थानि मेदिनी  
निरुपद्रवा । लवणं मधु गव्यं च महार्घ्यं विक्रमे प्रिये'  
—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । कविविशेषः; 'तद्दुःखाच्च प्रचुर-  
कवितुः कालिदासस्य काव्यादन्त्यं पादं सुरचितवान् मेघ-  
दूताद् गृहीत्वा । श्रीमन्नेमश्चरितविशदं साङ्गणस्याङ्ग-  
जन्मा चक्रे काव्यं बुधजनमनःप्रीतये विक्रमाख्यः'  
—इति नेमिदूते । वत्सीपुत्रः; 'तस्य तस्यां सुनन्दायां  
पुत्रा द्वादश जजिरे । प्रांशुः प्रवीरः शूरश्च सुचक्रो विक्रमः  
क्रमः'—इति मार्कण्डेये (११७।१) । ७२३

विक्रमहीनः त्रि. [ विक्रमेण पराक्रमेण हीनः रहितः ]  
पराक्रमरहितः; क्लीवः । ८२०

विक्रान्तः पुं. [ वि+क्रम् + क्त ] शूरः; वीरः; सिंहः;  
मदालसागर्भजातऋतध्वजपुत्रः; 'मदालसायाः सञ्जज्ञे  
पुत्रः प्रथमजस्ततः । तस्य चक्रे पिता नाम विक्रान्त इति  
धीमतः'—इति मार्कण्डेये (२५।८) । हिरण्याक्ष-  
पुत्रविशेषः; 'हिरण्याक्षमुताः पञ्च विद्वांसः सुमहाबलाः ।  
झञ्जरः शकुनिश्चैव भूतमन्तापनस्तथा । महानाभश्च  
विक्रान्तः कालनाभस्तथैव च'—इति हरिवंशे (३।  
७८-७९) । क्ली. वैक्रान्तमणिः; त्रि. शूरः; वीरः;  
'विक्रान्तैर्नयशालिभिः सुमचित्रैः श्रीर्वक्रनासादिभिः'  
—इति मुद्राराक्षसे (१) । ३५४

विक्रुष्टम् त्रि. [ वि+क्रुष्+क्त ] निष्ठुरं; कठोरम् ।  
१४०

विकलवः त्रि. [ विकलवते इति । वि+कलु+पचाद्यच् ]  
विह्वलः; 'नूनं महायेन वियोगविकलवा पुरः पुरश्चौरपि  
नियंयी तदा'—इति माघे (१२।६३) । क्ली. दुःखं;  
'किमिदानीमिदं देवि ! करोनि हृदि विकलवम्'—इति  
रामायणे (२।४।२५) । ३८३

विक्षिप्तः त्रि. [ वि+क्षिप्+क्त ] त्यक्तः; 'वायुविक्षिप्त-

कुसुमैस्तथान्वैरपि पादपैः'—इति महाभारते (१।  
२७।७) । कम्पितः; 'सन्नोडस्मितविक्षिप्तभ्रूविलारा-  
वलोकनैः । दैत्ययूपपचेतः सु काममुद्दीपयन् मुहुः'—इति  
भागवते (८।८।४६) । क्ली. चित्तवृत्तिविशेषः; 'क्षिप्तं  
मूढं विक्षिप्तमेकाग्रनिरुद्धमितिचित्तभूमयः । क्षिप्ताद्विशिष्टं  
विक्षिप्तमिति मणिप्रभा'—इति पातञ्जलभाष्ये ५५३  
विगतनासिकः त्रि. [ वियता विशेषेण गता नासिका यस्य ]  
विग्रः; गतनासिकः । ६१०

विगानम् क्ली. [ विरुद्धं गानं परस्य ] वचनीयता; निन्दा ।  
१४७

विग्रः त्रि. [ विगता नासिकास्य । 'विग्रो वक्तव्यः' इत्युक्त्या  
नासिकाया ग्रः ] गतनासिकः; विगतनासिकः; त्रि.  
[ विविधं गृह्णात्यर्थानिति, विपूर्वाद् गृहेः 'अन्येष्वपि  
दृश्यते' इति ड ] मेघावी; 'परेहि विग्रमस्तृतमिन्द्रं  
पृच्छापि पञ्चितम्'—इति ऋग्वेदे (१।४।४) । ६१०

विग्रहः पुं. [ विविधं मुखदुःखादिकं गृह्णातीति । वि+ग्रह्+  
अच् । यद्वा विविधैर्दुःखादिभिर्गृह्यते इति । वि+ग्रह्+  
'ग्रहवृद्धनिश्चिगमश्च' इति अप् ] युद्धम्; 'सन्धिं च विग्रहं  
चैव यानमासनमेव च । द्वधीभावं संश्रयं च षड्गुणादिच-  
न्तयेत् सदा'—इति मनुः (७।१६०) । शरीरम्; 'विग्र-  
हेण मदनस्य चारुणा सोऽभवत् प्रतिनिधिर्न कर्मणा'  
—इति रघौ (१।१।३) । वाक्यभेदः (८०५); विस्तरः;  
स तु समासार्थबोधकवाक्यं; विरोधमात्रम्; 'त्यजत  
मानमलं वत विग्रहैर्न पुनरेति गतं चतुरं वयः । परभृता-  
भिरितोव निवेदिते स्मरमते रमते स्म बधूजनः'—इति  
रघौ (९।४७) । विभागः; 'मासेन तु शिरो द्वाभ्यां  
वाङ्मङ्ग्रद्याद्यङ्गविग्रहः । नखलोमास्थिमर्माणि लिङ्ग-  
च्छिद्राद्भ्रुवस्त्रिभिः'—इति भागवते (३।३।१३) ।  
[ वीनां पक्षिणां ग्रहो ग्रहणमिति वाक्ये ] विहङ्गग्रहणम्;  
'नो मन्व्या हितमत्तरा तव तनी वत्स्याम्यह सन्धिना,  
न प्रीतासि वरोह ! चेत्कथय तत्प्रस्तीमि किं विग्रहम् ।  
कार्यं तेन न विञ्चिदस्ति गृह ! मे वीनां ग्रहेणेति वी,  
दिश्युर्नः प्रतिवद्भक्तेशिवयोः श्रेयांसि वक्रोक्तयः'  
—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (४) । ५१०

विग्रहः पुं - क्ली. [ विगृह्यन्ते शत्रवो यस्मिन् । वि+ग्रह्+  
अप् ] युद्धं; संग्रामः; रणः; आयोधनम्; 'यदा प्रहृष्टा  
मन्येत सर्वास्ताः प्रकृतीर्भूशम् । अत्युच्छ्रितं तथात्मानं

तदा कुर्वीत विग्रहम्—इति मनुः (७।१७०) । 'सन्धि च विग्रहं चैव यानमासनमेव च । द्वैधीभावं संश्रयं च पङ्गुणाश्चिन्तयेत् सदा'—इति मनुः (७।१६०) ४५४  
**विघसः** पुं. [ वि+अद्+अप् ] भोजनशेषः; द्रवपित्र-  
 तिथिगुर्वादिभुक्तस्य शेषः; 'विघसाशी भवेन्नित्यं नित्यं  
 वामृतभोजनः । विघसो भुक्तशेषं तु यज्ञशेषं तथामृतम्'  
 —इति मनुः (३।२८५) । आहारः; 'अयि वनप्रिय !  
 विस्मृत एव किं वलिभुजो विघसो भवताधुना । गदनयैव  
 कुहूरिति विद्यया न पततश्चरणौ धरणौ तव'—इत्युद्भटः ।  
 क्ली. सिकथं; सिकथकं; मधूच्छिष्टं; 'मोम' इति  
 भाषा । ३२६

**विघ्नः** पुं. [ विहन्यते अनेनेति । वि+हन्+घञर्थे कवि-  
 धानम्' इयुक्त्या क ] व्याघातः; अन्तरायः; प्रत्यूहः;  
 व्यवायः; 'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य  
 विघ्ननिहता विरमन्ति मध्याः । विघ्नैः पुनः पुनरपि  
 प्रतिहन्यमानाः प्रारब्धमुत्तमगुणा न परित्यजन्ति'  
 —इति मुद्गराक्षे । कृष्णपाकफला । ४०१

**विघ्नराजः** पुं. [ विघ्नानां राजा, तेषां निवारणादिशासन-  
 कर्मणि समर्थः । 'राजाहःसखिम्यष्टच्' इति टच् ]  
 गणेशः; विघ्नविनायकः; विघ्ननायकः; विघ्नेश्वरः;  
 विघ्ननाशकः; विघ्ननाशनः; विघ्नहारी; विघ्नेशः;  
 विघ्नेशानः । १८

**विचकिलः** पुं. [ विकच+इलच्, पृषोदरादित्वाद् वर्ण-  
 विपर्ययः ] मल्लोप्रभेदः; मल्लिकाभेदः; मल्लिविशेषः;  
 मल्लिकाविशेषः; मदनकवृक्षः; मदनपादपः; मदनवृक्षः;  
 'कुन्दः कन्दलितव्ययं विचकिलः कम्पाकुलं केतकः ।  
 सातङ्गं मदनः सदन्यमलसं मुक्तोऽतिमुक्तद्रुमः'—इति  
 राजेन्द्रकर्णपुरे (७०) । २०६

**विचक्षणः** पुं. [ विशेषेण चष्टे धर्मादिमुपदिशतीति ।  
 वि+चक्ष्+अनुदात्तेश्च हलादेः' इति कर्तरि युच् ]  
 पण्डितः; 'ततो यथावद् विहिताध्वराय, तस्मै स्मया-  
 वेशविर्वाजिताय । वर्णाश्रमाणां गुरवे संवर्णां, विचक्षणः  
 प्रस्तुतमाचक्षते'—इति रघुवंशे (५।१९) । निपुणे  
 प्रि. 'विचक्षणोऽस्यर्हति वेदितुं विभो अनन्तपारस्य  
 निवृत्तितः सुखम्'—इति भागवते (१।५।१६) । नानार्थ-  
 दर्शी; 'विचक्षणः प्रययन्नापृणभुर्वजीजनत् सविता सुमन-  
 मुवच्यम्'—इति ऋग्वेदे (४।५।३२) । 'विचक्षणः

विविधद्रष्टा'—इति तद्भाष्ये सायणः । २०६  
**विचारणा** स्त्री. [ वि+चर्+णिच्+युच्+टाप् ]  
 मीमांसाशास्त्रम्; विचारः; 'जीवो ब्रह्म सदैवाहं नात्र  
 कार्या विचारणा । भेदबुद्धिस्तु संसारे वर्तमाना प्रवर्तते'  
 —इति देवीभागवते (१।१८।४२) । १०

**विचिकित्सा** स्त्री. [ विचिकित्सनमिति । वि+कित्+  
 सन्+अ+टाप् ] संशयः; सन्देहः; 'तुभ्यं मद्विचिकित्सा-  
 यामात्मा मे दर्शितोऽब्रुहिः । नालेन सलिले मूलं पुष्करस्य  
 विचिन्वतः'—इति भागवते (३।९।३६) । ६९१

**विच्छन्दकः** पुं. [ विशिष्टं छन्दोऽभिप्रायोऽत्र । किं वा  
 विशिष्टेच्छया छन्दते निर्मायत । घञ्, क ] धनिनां  
 सद्यभेदः; विच्छर्दकः; आढ्यसद्यप्रभेदः; जनेश्वरगृहं;  
 विच्छन्दः; 'उपर्युपरि यद् गेहं तद्विच्छन्दकसंज्ञकम्'  
 इति भरतः । ३०५

**विच्छर्दकः** पुं. — विच्छन्दकः; विच्छन्दः; ईश्वरगृहम् ।  
 ३०५

**विजनः** त्रि. [ विगतो जनो यस्मात् ] निर्जनः; विविक्तः;  
 छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशुः; 'ततो भीमो वनं  
 घोरं प्रविश्य विजनं महत् । न्यग्रोधं विपुलच्छायं रमणीयं  
 ददर्श ह'—इति महभारते (१।१५२।१५) । ७०८  
**विजपिलम्** क्ली. — पिच्छलं; पिच्छिलं; पङ्कः; श्लादः;  
 निषद्वरः; जम्बालः; कर्दमः; इचिकिलम् । ६७८

**विजाता** स्त्री. [ विशेषेण जातः पुत्रो यस्याः ] जातापत्या;  
 प्रजाता; प्रसूतिका; प्रसूता; 'विजाता च प्रजाता च  
 जातापत्या प्रसूतिका'—इति हेमचन्द्रः । ५००

**विजृम्भितः** त्रि. [ वि+जृम्भ्+क्त ]-विकस्वरः; उन्मी-  
 लितः; उन्मिपितः; स्मितः; उन्निरः; हसितः; उद्बुद्धः;  
 व्याकोशः; 'तदादिराजस्य यशो विजृम्भितं गुणेशोपे-  
 गुर्णवत्सभाजितम्'—इति भागवते (१०।२।१८) ।  
 व्याप्तः; 'आधृण्वतो लोचनमार्गमाजी रजोऽन्धकारस्य  
 विजृम्भितस्व'—इति रघो (७।४२) । [ विजृम्भा  
 सञ्जाता अर्थेति, तारकादित्वादित्त् ] जृम्भायुक्तः;  
 'सुशरं सवनुष्कं च दृढात्मानं विजृम्भितम् । ततो ननाद  
 भूतात्मा स्निग्धगम्भीरनिःस्वनः'—इति हरिवंशे  
 (१८।१६) । क्ली. चेष्टा; 'अथागत्य समाह्वयात्  
 तत्सह्यं मन्त्रिवन्धनम् । उद्गाढमुपकेयाया नवानङ्ग-  
 विजृम्भितम्'—इति कथासरित्सागरे (४।१३) । १८७

विटः पुं. [ वेत्तीति, विट्+क ] विङ्गः; पल्लवकः; पल्लविकः; भुजङ्गः; वैश्यापतिः; कामुकः; विदग्धः; नागरः; भविलः; छिदुरः; व्यलीकः; पट्प्रज्ञः; कामकेलिः; विदूषकः; पीठकेलिः; पीठमर्दः । 'सतामयं सारभृतां निसर्गो यदर्थवाणीश्रुतिचेतसामपि । प्रतिक्षणं नव्यवदच्युतस्य यत् स्त्रिया विटानामिव साधु वार्ता'—इति भागवते (१०।१३।२) । कामुकानुचरः; घूर्तः; कामतन्त्रकलाकोविदः; पर्वतप्रभेदः; लवणभेदः; खदिरविशेषः; मूषिकः; नारङ्गवृक्षः । ३८२

विटङ्कः पुं.—कली. [ विशेषेण टङ्क्यते सौघादिपु इति । वि+टङ्क बन्धने+घञ् ] कपोतपालिका; कपोतपाली; विटङ्ककः; 'रतान्तरे यत्र गृहान्तरेषु वितर्दिनिर्यूह-विटङ्कनीडः । रतानि शृण्वन् वयसां गणोऽन्तेवासित्व-माप स्फुटमङ्गनानाम्'—इति माघे (३।५५) । सुन्दरे त्रि. । 'देवाववक्षत गृहीतगदौ पराद्वयंकेयूरकुण्डलकिरी-टविटङ्कवेशी'—इति भागवते (३।१५।२७) । ३०३

विटङ्ककः पुं.—कली. [ विटङ्क एव । स्वार्थे कन् ] विटङ्कः; कपोतपाली; कपोतपालिका । ३०३

विटपः पुं.—कली. [ वेदति शब्दायते इति । विट्+विटप-पिष्टपविशिपोलपाः' इति कपन् प्रत्ययेन साधुः ] वृक्षः; तरुः; द्रुमः; पादपः । (१८१) शाखापल्लवसमुदायः; विस्तारः; स्तम्भः । (१९०) वीरुत्; शाखा; 'बाहुभि-विटपाकारैर्विद्याभरणभूषितैः । आविर्भूतमपां मध्ये पारिजातमिवापरम्'—इति रघौ (१०।११) । पल्लवः; 'तरुविटपलताग्रालिङ्गनव्याकुलेन दिशि दिशि परिदग्धा भूमयः पावकेन'—ऋतुसंहारे (१।२४) । कली. मुष्क-वङ्क्षणान्तरम्; 'विटपं तु महावीज्यमन्तरामुष्कवङ्क्षणम्'—इति हेमचन्द्रः । 'वङ्क्षणवृषणयोरन्तरे विटपं नाम तत्र पाण्ड्यमल्पशुक्ता वा भवति'—इति सुश्रुते (३।६) । पुं. [ विटानु पातीति, पा+क ] विटाधिपः; पारदारिकभ्रष्टः; आदित्यपत्रः । १७७

विटपी [ न् ] [ विटपः शाखादिरस्त्यस्येति । विटप+इनि ] वृक्षः; 'यूयपते तव कश्चिन्नहि मानस्यानुरूप इह विटपी । प्रेरय दिनं निदाघद्राघीयः क्व खलु ते च्छाया'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४८६) । वटः; विटपयुक्ते त्रि. । 'अङ्कुरं कृतवांस्तत्र ततः पण्ड्रयान्वितम् । पला-शिनं शाखिनं च तथा विटपिनं पुनः'—इति महाभारते

(१।४३।१०) । १७७

विट् [ श् ] पुं. [ विश्+क्विप् ] मनुजः; मनुष्यः; (५७०) अर्यः; भूमिस्पृक्; वैश्यः; ऊरव्यः । ३३१  
विट् [ प् ] स्त्री. [ विष् व्याप्ती+क्विप् ] विष्टाः कन्या; व्याप्ते त्रि. । ६३७

विडालः पुं. [ विड् आक्रोशे+तमिविशिविडीति' कालन् ] पशुविशेषः; ओतुः; मार्जारः; वृषदंशकः; आखुभुक; विरालः; विलालः; दीप्ताक्षः; नक्तञ्चरी; जाहकः; विडारकः; त्रेशङ्कुः; जिह्वापः; मेनादः; सूचकः; मूषिकारातिः; शालावृकः; मायावी; दीप्तलोचनः; विडालकः । 'विडालकाकाखूच्छिष्टं जग्ध्वा श्वनकुलस्य च । केशकीटावपन्नं च पिवेद् ब्रह्मसुवर्चलाम्'—इति मनुः (१।१।६०) । नेत्रपिण्डः; नेत्रोपधविशेषः । २३६  
विडोजाः [ स् ] पुं. [ विष् व्याप्ती+क्विप्, विट् व्यापकं ओजो यस्य ] इन्द्रः । ५४

विडोजाः [ स् ] पुं. [ विडम् आक्रोशि. शत्रुद्वेषमसहिष्णु ओजो यस्य ] इन्द्रः; 'रघुः शशाङ्काद्धैमुखेन पत्रिणा शरासनज्यामलुनाद्विडोजसः'—इति रघौ (३।५९) । ५४

वितथम् त्रि. [ विगतं तथा यस्मात् । 'अच्' इति योग-विभागात् समासान्तोऽच् ] मिथ्या; वितथ्यम्; असत्यं; मृषा; अनृतम्; अलीकम्; 'अवाकशिरास्तमस्यध्वे किल्विपी नरकं व्रजेत् । यः प्रश्नं वितथं ब्रूयात् पृष्टः सन् धर्मनिश्चये'—इति मनुः (८।९४) । निष्फलः; व्यर्थः; 'तस्यैव' वितथे वंशे तदर्थं यजतः सुतम् । मरु-त्सोमेन मरुतो भरद्वाजमुपाददुः'—इति भागवते (९।२०।३५) । पुं. भरद्वाजपुत्रः; स च दौष्यन्तेभरतस्य पौत्रः; 'ततोऽथ वितथो नाम भरद्वाजात् सुतोऽभवत् । पौत्रेऽथ क्लित्थे जाते भरतस्तु दिवं ययौ । वितथञ्चान्-भिषिच्यथा भरद्वाजो वनं ययौ'—इति हरिवंशे (३।२।१८।१९) । १४४

वितथ्यम् त्रि. [ विगतं तथ्यं यस्मात् ] असत्यं; मिथ्या; मृषा; अलीकम्; अनृतं; वितथम् । १४४

वितरणम् क्ली. [ वि+तृ+भावे ल्युट् ] दानं; विश्रान्तं; विहापितम्; अंहतिः; अपवर्जनं; निर्वपणं; स्पृष्टानम्; उत्सर्गः; प्रदेशनम्; 'विस्तेन किं वितरणं यदि नास्ति तस्य ।' ४१९



वितर्कः पुं. [ वि+तर्क+घञ् ] संशयः; सन्देहः; शङ्का; 'वी ती कुमारविंवे कार्तिकेयी द्वावद्विचनेयाविति मे वितर्कः'—इति महाभारते (१।१९०।२३) । ऊहः; तर्कः; 'सरस्वत्यास्तटे राजन् ऋषयः सत्रमासत । वितर्कः समभूत्तेषां त्रिष्वधीशेषु को महान्'—इति भागवते (१०।८।९।१) । ज्ञानसूचकः; वितर्कणम् । ६९१

वितर्दिका स्त्री. [ वितर्दिरेव । स्वार्थे कन् ] वितर्दी; वितर्धी; वेदिका; वितर्दिः; वितर्धिः; 'क्षेमराजाभिवानेन डामरेशेन सोऽन्वितः । शिलां वितर्दिकातुल्यामध्यास्त स्वप्रमव्यगाम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२६८५) । २९९

वितस्तिः पुं-स्त्री. [ वि+तसु उपक्षेपे+ 'वी तसेः' इति ति ] त्रिस्तनमकनिष्ठाङ्गुलः; द्वादशाङ्गुलः; द्वे वितस्ती तथा हस्तौ ब्राह्मतीर्थीदिवेष्टनम्'—इति मार्कण्डेये (४।९।३९) । ५३८

वितानम् क्ली. [ वितान्यते यत् । वि+तन्+घञ् ] चन्द्रातपः; उल्लोचः; कदकः; 'वितानसहितं तत्र भजे पैतृकमासनम् । चूडामणिभिरुद्धृष्टपादपीठं महीक्षिताम्'—इति रघो (१।७।२८) । पुं-क्ली. [ वि+तन्+घञ् ] (४।१४) ऋतुः; यज्ञः; 'सोमपायिनि भविष्येते मया वाञ्छितोत्तमवितानयाजिना'—इति माघे (१।४।१०) । समूहः ( ६८६ ) ; 'नवकनकपिशाङ्गं वासराणां विधानुः, ककुभि कुलिशपाणेर्भाति भासां वितानम्'—इति माघे (१।१।४३) । विस्तारः (४४८); 'यज्ञस्य च वितानानि योगस्य च पथं प्रभो । नैष्कर्म्यस्य च साह्यस्य तन्त्रं वा भगवत्समृतम्'—इति भागवते (३।७।३१) । त्रि. शून्यः; 'बृहत्तुलैरप्यतुलैर्वितानं मालापिनद्वैरपि चावितानैः'—इति माघे (३।५०) । क्ली. अवसरः; क्षणः; पुं. वृत्तिविशेषः; पुं-क्ली. व्रणबन्धनविशेषः; 'तत्र कोशदामस्त्रस्तिकानुवेतिलतप्रतोलमण्डलस्वगिकायमकरवद्वाचीनविदन्धवितानगोफणाः पञ्चाङ्गी चेति चतुर्दश बन्धविशेषाः'—इति सुश्रुते (१।१८) । त्रि. तुच्छः; 'गगनमश्वखुरोद्धतरेणुभिर्नृसविता च वितानमित्राकरोत्'—इति रघो (३।५०) । मन्दः । ३१० वित्तम् क्ली. [ 'वद+क्त्, 'वित्तो भोगप्रत्यययोः' इति साधु ] धनम्; 'अनृतं तु वदन् दण्डयः स्ववित्तस्यांश-

मष्टमम् । तस्यैव वा निधानस्य संख्ययाऽप्ययीयसां कलाम्'—इति मनुः (८।३६) । त्रि. विचारितः; विज्ञातः; लब्धः; विख्यातः । ८०

विदग्धः त्रि. [ वि+दह्+क्त् ] छेकः; कुशलः; नागरः; 'विदग्धाया विदग्धेन सङ्गमो गुणवान् भवेत्'—इति देवीभागवते (९) । निपुणः; 'लिप्तं न मुखं नाङ्गं न पक्षती चरणाः परारोणे । अस्पृशतेव नलिन्या विदग्धमधूपेन मधुपीतम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५०६) । पण्डितः; विशेषेण दग्धः; 'शोकयोरुपनाहं तु कुर्यादामविदग्धयोः । अविदग्धः शमं याति विदग्धः पाकमेति च'—इति सुश्रुते (४।१) । ३८५

विदिक् [ श् ] स्त्री. [ दिग्भ्यां विगता ] दिशोर्मध्यम्; अग्निनिर्घृतिवाय्वीशानकोणचतुष्टयम्; अपदिजं; प्रदिक्; विदिशं; प्रदिशं; कोणः; 'सा दिशा विदिशा देवी रोदसी चान्तरं तयोः । धावन्ती तत्रतत्रैतं ददर्शानुद्यतायुधम्'—इति भागवते (४।१।७।१६) । १०२

विदुलः पुं. [ विशेषेण दोलयतीति । वि+दुल्+क ] वेतमः; अम्रुवेतसः; जलवेतसः; गन्धरसः । २०१ विदेहा स्त्री. [ विदेहानां निवासः । 'सोऽस्य निवासः' इत्यण्, 'जनपदे लुक्' इति लुक्, स्त्रीत्वे टाप् ] जनकान्वयभूमिः; विदेहनृपस्य भूमिः; मिथिला; विदेहनगरी । २८७

विद्याधरः पुं. [ विद्यां मन्त्रादिकं धरति, पचादित्वाद् ] पुष्पदन्तादिः; कामरूपी खेचरः; देवयोनिविशेषः; 'तस्मिन् क्षणे पालयितुः प्रजानामुत्पद्यतः सिंहनिपातमुग्रम् । अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याधरहस्तमुक्ता'—इति रघो (२।६०) । 'लोकेऽस्मिन् गणशस्त्रानि मन्त्रविद्याविचारिणाम् । विद्याधरास्तयान्वेऽपि विद्यावल्लममन्विताः'—इति बह्मिपुराणे । पोडशरतिबन्धान्तर्गतचरमबन्धः; 'नार्या ऊरुधुगं धृत्वा करान्यां ताडयेत् पुनः । कामयेन्निर्भरं कामी बन्धो विद्याधरो मतः'—इति रतिमञ्जर्याम् । ८७

विद्युत् स्त्री. [ विशेषेण द्योतते इति तच्छीला वा । वि+द्युत्+ 'आजभासेति' विवप् ] विद्योतते या; शम्पा; शतहृदा; ह्लादिनी; ऐरावती; क्षणप्रभा; तडिन्; सौदामिनी; चञ्चला; चपला; वीपा; सीदाम्नी; चिलमौलिका; सर्जः; अचिरप्रभा; सीदामनी;

अस्विरा; मेघप्रभा; अशनिः; चटुला; अचिररोचिः; राधा; नीलाञ्जना; 'अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानीह पोडश । बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः'— इति विष्णुपुराणे । 'वाताय कपिला विद्युदातपाय हि लोहिता । पीता वर्षाय विज्ञेया दुर्भिक्षायासिता भवेत् । सन्ध्या; त्रि. [ विगता द्युत् कान्तिर्यस्य ] निष्प्रभः; [ विशिष्टा द्युत् दीप्तिर्यस्येति ] विशेषेण दीप्तिशाली; 'हस्काराद्विद्युत्स्पर्शतो जाता अबन्तु नः'—इति ऋग्वेदे (१२३।१२) । 'हस्कारात् दीप्तिकारात् विद्युतो विशेषेण दीप्यमानात्'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६०  
विद्वान् [ स् ] पुं. [ वेत्तीति, विद्+शत्, 'विदेः शतुर्वसुः' इति शतुर्वसुरादेशः ] आत्मवित्; प्राज्ञः; पण्डितः; 'वाह्यणेपु तु विद्वान्सी विद्वत्सु कृतबुद्धयः । कृतबुद्धिपु कर्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः'—इति मनुः (१।९७) ।

३३२

विधवा स्त्री. [ विगतो विशेषेण गतो धवो भर्ता यस्याः ] मृतभर्तृका; विश्वस्ता; जालिका; रण्डा; यतिनी; यतिः; 'ताम्बुलाम्यञ्जनं चैव कास्यपात्रे च भोजनम् । यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत्'—इति प्रचेताः । ४८७

विधिः पुं. [ विदधाति विश्वमिति । विपूर्वकाद् धाब्-धातोः 'उपसर्गे षोः किः' इति कि प्रत्ययः ] ब्रह्मा; वेदाः; 'विधिविधत्ते विधुना वधूनां किमानन काञ्चन-सञ्चकेन'—इति नैषधे (२२।४७) । विष्णुः (२५); (८६) भाग्यं; नियतिः; [ विधीयते सुखदुःखे अनेनेति । वि+धा+कि ] 'राज्यनाशं सुहृत्त्यागो भार्यानिनय-विक्रयः । हरिश्चन्द्रस्य राजर्षेः किं विधे ! न कृतं त्वया'—इति मार्कण्डेये (८।१८२) । (८३६) कालः; समयः; कल्पः; निधोगः; क्रमः; विधानं; विधिवाक्यम्; 'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः । न स सिद्धि-मवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्'—इति गीतायाम् (१६।२३) । प्रकारः; क्रमः; 'तस्मात्सूर्यः शशाङ्कस्य क्षयवृद्धिविधेविभुः'—इति देवीपुराणे । गजान्नं; वैद्यः; यागोपदेशकग्रन्थः; पङ्क्तिविधयुक्तलक्षणान्तर्गतमूत्रविशेषः; 'संज्ञा च पञ्चिभाषा च विधिर्नियम एव च । अतिदेशोऽधि-कारश्च पङ्क्तिविधं सूत्रलक्षणम् ।' ६

विधुः पुं. [ विध्यति विरहिणं विध्यते राहुणेति वा ।

व्यध् ताडने+ 'पृभिव्यधीति' कु ] चन्द्रः; चन्द्रमाः; सोमः; 'पिक ! विद्युस्तव हन्ति समं तमस्त्वमपि चन्द्र-विरोधिकुहूरवः । तदुभयोरनिशं हि विरोधिता कथमहो समता मम तापने ।' [ विध्यति असुरानिति ] विष्णुः; कर्पूरः; ब्रह्मा; राक्षसः; आयुधः; वायुः; कर्तारि त्रि. । 'विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार'—इति ऋग्वेदे (१०।५।५) । 'विधुं विधातारं सर्वस्य युद्धादेः कर्तारं, विपूर्वो दधातिः करोत्यर्थे'—इति तद्भाष्ये सायणः । ४३

विधुन्तुदः पुं. [ विधुं तुदति पीडयतीति । विधु+तुद्+ 'विध्वस्तोस्तुदः' इति खश्, मुम् ] स्वर्भानुः; संहिकेयः; तमः; राहुः; 'नीतिरापदि यद्गम्यः परस्त-न्मानिनो ह्यिये । विधुर्विधुन्तुदस्येव पूर्णस्तस्योत्सवाय सः'—इति माघे (२।६१) । ४९

विधुरम् क्ली. [ विगता धूर्भारो यस्मात् । समासे अ ] प्रत्यवायः; प्रविश्लेषः; विश्लेषः; 'विधुरं प्रत्यवाये स्यात्कष्टविश्लेषयोरपि'—इति यादवकृतवैजयन्ती-कोपः । कैवल्यं; कष्टम्; 'विधुरं किमतः परं परै-रवगीतां गमिते दशामिमाम् । अवसोवति यत्सुरैरपि त्वयि सम्भावितवृत्ति पौरुषम्'—इति किराते (२।७) । त्रि. [ विगता धूः कार्यभारो यस्मात्, ऋकूपरित्य ] विकलः; 'तदिदं क्रियतामनन्तरं भवता बन्धुजनप्रयोजनम् । विधुरां ज्वलनातिसर्जनान्नम् मां प्रापय पत्युरन्तिकम्'—इति कुमाररे (४।३२) । ८२४

विनता स्त्री. — गरुडमाता; सा तु दक्षप्रजापतेः कन्या; कश्यपपत्नी; 'क्रोधो प्राधा च विश्वा च विनता कपिला मुनिः । कद्रूश्च मनुजव्याघ्र ! दक्षकन्यैव भारत'—इति महाभारते (१।६५।१२) । पिडिकाभेदः; 'महती पिडिका नीला पिडिका विनता स्मृता'—इति सुश्रुते (२।६) । ११९

विना अव्य. [ वि+ 'विनञ्म्यां नानाञी न सह' इति ना ] वजनं; पृथक्; अन्तरेण; ऋते; हिरक्; नाना; व्यति-रेकः; 'विना वातं विना वर्षं विद्युत्प्रपन्नं विना । विना हस्तिकृतान्दोषान् केनेमी पातितो द्रुमो'—इति काशि-कोक्त्या । 'शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निः'—इति रघुवंशे (२।१४) । 'चित्रं यथाश्रयमुते स्थाण्वादिभ्यो विना यथा च्छाया । तद्वद्विना विशेषेण तिष्ठति निराश्रयं

लिङ्गम्—इति सांख्यकारिकायाम् (४१) । ८७६  
विनायकः पुं. [ विशिष्टो नायकः ] हेरम्बः; लम्बोदरः;  
आखुरयः; एकदंष्ट्रः; एकदन्तः; विघ्नराजः; विघ्नेशः;  
गणेशः; गणपतिः; 'अस्तीह प्रमदोद्याने तरुमण्डल-  
मध्यगः । दृष्टप्रभावो वरदो देवदेवो विनायकः'—इति  
कथासरित्सागरे (३०।५५) । बुद्धः; गरुडः; विघ्नः;  
'राक्षसाश्च पिशाचाश्च भूतानि च विनायकाः'—इति  
हरिवंशे (१८१।६५) । गुरुः । १८

विनिमयः पुं. [ वि+नि+मी+अप् ] परिवृत्तिः; वैभेयः;  
परिदानं; प्रतिदानम्; 'दुदोहं गां स यज्ञाय सस्याय  
मघवा दिवम् । सम्पद्धिनिमयेनोमी दधतुर्भुवनद्वयम्'  
—इति रघौ (१।२६) । वन्धकः; 'विक्रयैर्गां विनि-  
मयैर्देवता गोमांसखादके । व्रतं चान्द्रायणं कुर्याद्वधे साक्षा-  
द्वधी भवेत्'—इति गोभिलः । ४७३

विनोदः पुं. [ वि+नुद्+घम् ] कौतूहल्यं; कौतूहलं;  
कौतुकं; कुतूहलम्; 'वाघते तं च नैकट्यात् सर्वं स  
मगधेश्वरः । तन्तत्र रक्षाहेतोश्च विनोदायतनस्य ताम्'  
—इति कथासरित्सागरे (१५।१२५) । क्रीडा;  
'नैतावता अघिपतेर्वत विश्वभर्तुस्तेजः क्षतं तव न  
तस्य स ते विनोदः'—इति भागवते (३।१६।२४) ।  
अपनयनम्; 'विनोदमिच्छन्नय दर्पजन्मनो रणेन कण्ड्वा-  
स्त्रिदशैः समं पुनः'—इति माघे (१।४८) । प्रमोदः;  
'काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् । व्यस-  
नेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा'—इति हितोपदेशे ।  
आलिङ्गनविशेषः; 'नायको नायिकाया दक्षिणपादं  
वामपादं वा स्वमध्यदेशे स्वदक्षिणपादं वामपादं वा  
नायिकामध्यदेशे निधाय वक्षसि वक्षः ओष्ठे  
ओष्ठं दत्त्वा यदाश्लिषति तत्'—इति कामशास्त्रम् ।  
राजगृहविशेषः; 'दीर्घं त्रयो राजहस्ताः प्रसरे द्वौ प्रति-  
ष्ठितौ । विनोद एव द्वाराणि त्रिशत्कोष्ठद्वयं भवेत्'  
—इति युक्तिकल्पतरुः । 'द्वादशैतान् गृहान् वक्ष्ये तेषां  
लक्षणमग्रतः । सुनन्दः सर्वतोभद्रो भव्यो नान्दीमुखस्ताया ।  
विनोदश्च विलासश्च विजयो विमलस्ताया । रङ्गः  
केलिर्जयो वीरोद्वादशैते प्रकीर्तिताः'—इति भविष्योत्तर-  
पुराणे । ७२०

विन्दुः पुं. [ विदि अवयवे+वाह्लकावु । पृषोदरादित्वाद्  
वकारादित्त्वम् ] विन्दुः; पृषत्; पृषतः; विप्रुद्;

पृषन्ति; विप्लुद्; जलकणः; 'जलविन्दुप्रपातेन  
क्रमशः पूर्यते घटः । स हेतुः सर्वशास्त्रस्य धर्मस्य च घनस्य  
च'—इति पञ्चतन्त्रे । दन्तक्षतविशेषः; भ्रुवोर्मध्यम्;  
रूपकार्यप्रकृतिः; अनुस्वारः; 'शिवो वह्निसमायुक्तो  
वामाक्षिविन्दुभूषितः । एकाक्षरो महामन्त्रः श्रीसूर्यस्य  
प्रकीर्तितः'—इति सूर्यकवचम् । त्रि. [ वेत्ति तच्छीलः ।  
विद् ज्ञाने+ 'विन्दुरिच्छुः' इति उ प्रत्ययो नुमागमश्च  
निपात्यते ] ज्ञाता; दाता; वेदितव्यः । ६७७

विन्दुजालकम् क्ली. [ विन्दूनां जालकम् ] गजस्य  
मुखादिस्थो विन्दुसमूहः; पद्मकं; पद्मम्, पद्मी=हस्ती ।  
विन्दुजालं; विन्दुसमूहः । २१९

विपक्ष्यम् त्रि. [ विशेषेण अपाचि इति । वि+पच्+कर्मणि  
क्त, 'पचो वः' इति वत्वम् ] कृतपाकम्; अग्नौ संस्कृतं  
कालपक्वं च । ३२३

विपक्षः पुं. [ विरुद्धः पक्षो यस्य ] शत्रुः; रिपुः; वैरी;  
अरिः; अमित्रम्; 'तत्र वंशा विभज्यन्तां विपक्षः पक्ष  
एव च । पुत्राणां हि तयो राज्ञो भविता विग्रहो महान्'  
—इति हरिवंशे (५३।५४) । 'इन्दोरगतयः पक्षे सूर्यस्य  
कुमुदंज्जवः । गुणास्तस्य विपक्षेऽपि गुणिनो लेभिरेऽ-  
न्तरम्'—इति रघौ (१७।७५) । न्यायमते साध्या-  
भाववत्पक्षः; 'यः सपक्षे विपक्षे च भवेत्साधारणस्तु सः'  
—इति भाषापरिच्छेदे (७३) । 'सपक्षविपक्षवृत्तिः  
साधारणः । सपक्षः साध्यवान् । विपक्षः साध्याभाववान्'  
—इति मुक्तावली । विकल्पः; पक्षः; उक्ताकरणम्;  
'प्रतिभूः शुको विपक्षे दण्डः शृङ्गारसंकथां गुरुषु'—इति  
आर्यासप्तशत्याम् (३५४) । त्रि. [ विगतः पक्षो यस्य ]  
पक्षहीनः । ४५५

विपञ्चो स्त्री. [ वि+पञ्च्+अच् । स्त्रियां गौरादि-  
त्वाद् डीप् ] विपञ्चिका; घोषवती; वीणा; परि-  
वादिनी; वल्लकी; 'अहं ह्येतद्विजानामि तन्त्रीशृङ्गार-  
लक्षणैः । इत्युक्त्वा गुणशर्माङ्कान्तां विपञ्चो मुमोच  
सः'—इति कथासरित्सागरे (४९।२०) । ९६

विपणिः पुं.-स्त्री. [ विपण्यतेऽयामिति । वि+पण्+  
'सर्वधातुम्य इन्' इति इन् ] पण्यविक्रयशाला; हट्टः;  
हट्टमण्डपः; हट्टमध्यस्थपण्यविक्रयवीथी; पण्यवीथिका;  
आपणः; पण्यवीथी; पण्यं; निपद्या; वणिक्पयं;  
विपणं; वीथी; 'बाजार' इति भाषा । 'निपद्या

विपणिः पण्यवीथिका त्वापणिस्तथा । पण्यविक्रयशालायां भवेदेतच्चतुष्टयम्—इति शब्दरत्नावली । 'विपणिः पण्यवीथ्यां च भवेदापणपण्ययोः—इति भेदिनी । 'विपण्यापणपण्याना नानाजनशतेवृत्तः—इति महा-भारते (१।३५।३०) । वाणिज्यम्; 'विद्या शिल्पं भृतिः सेवा गोरक्ष्यं विपणिः कृषिः । घृतिर्भक्ष्यं कुसीदं च दश जीवनहेतवः—इति मनुः (१०।११६) । २९६

विपणी स्त्री. [ विपणि+वा डीष् ] हृद्; 'ययौ भोजन-मूल्यार्थी विपणीमात्तमूलकः—इति कथासरित्सागरे (२०।६५) । २९६

विपरीतः त्रि. [ वि+परि+इ+क्त ] विपर्ययः; प्रति-सव्यः; प्रतिकूलः; अपसव्यः; अपष्ठुः; विलोमकः; प्रसव्यं; पराचीनं; प्रतीपम्; 'मत्तो जातः कलञ्जाशी विपरीतानि भाषसे । सत्यं ब्रवीषि पितृवत् त्वत्तो जातः कलञ्जमुक्—इति शङ्करदिग्विजये । मुमूर्षुः; 'स च न प्रतिजग्राह रावणः कालचोदितः । उच्यमानं हिनं वाक्यं विपरीत इवौषधम्—इति रामायणे (६।१७।१५) । षोडशरतिवन्वान्तर्गतदशमबन्धः; 'पादमेकमुरी कृत्वा द्वितीयं कटिसंस्थितम् । नारीषु रमते कामी विपरीतस्तु बन्धकः—इति रतिमञ्जरी । 'पादमेक-मुरी कृत्वा द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम् । कामिन्याः काम-येत्कामी बन्धः स्याद्विपरीतकः—इति स्मरदीपिका ।

७५७

विपर्ययः पुं. [ वि+परि+इ+ 'एरच्' इत्यच् ] व्यतिक्रमः; व्यत्यासः; विपर्यासः; व्यत्ययः; विपर्यायः; 'विपर्ययो वा किं न स्याद् गतिर्धातुर्दुरत्यया । उपस्थितो निवर्तते निवृत्तः पुनरापतेत्—इति भागवते (१०।१।५०) ।

७२९

विपर्यासः पुं. [ वि+परि+अस्+घञ् ] व्यत्ययः; विपर्यायः; वैपरीत्यं; विपर्ययः; विपरीतता; विपरीतत्वम्; 'पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां, विपर्यासं यातो धनविरलभावः क्षितिरुहाम् । ब्रह्मेर्दृष्टं कालाद-परमिव मन्ये वनमिदं, निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं द्रव्यति—उत्तररामचरिते (२) ।

अप्रमात्मकशुद्धिभेदः; 'तच्छून्ये तन्मतिर्या स्यादप्रमा सा निरूपिता । तत्प्रपञ्चो विपर्यासः संशयोऽपि प्रकीर्तितः । आद्यो देहे ह्यात्मबुद्धिः शङ्खादौ पीततामतिः—इति

भाषापरिच्छेदे । 'आद्यो विपर्यासः—इति मुक्तावली । ७२९

विपश्चित् त्रि. [ विशेषं पश्यति, विप्रकृष्टं चेतति चिनोति चिन्तयति वा । पृषोदरादित्वात् साधुः ] पण्डितः; 'सर्वेषां तु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता—इति मनुः (७।५८) । ३३२

विपाकः पुं. [ वि+पच्+भावे कर्मणि वा घञ् ] फलमात्रं; भागधेयं; भाग्यं; भवितव्यता; 'जरासन्धवधः कृष्ण भूर्यथायोपकल्पते । प्रायः पाकविपाकेन तव चाभिमतः ऋतुः—इति भागवते (१०।७।१०) । चरमोत्कर्षः; 'स वै धिया योगविपाकतीव्रया हृत्पद्मकोषे स्फुरितं तडित्प्रभम्—इति भागवते (४।१।२) । पचनम्; 'तावदुभयोरपि रोषसौर्या मृत्तिका तद्रसेनानुविध्यमाना वाय्वर्कसंयोगविपाकेन सदा मरलोकाभरणं जाम्बूनदं नाम सुवर्णं भवति—इति भागवते (५।१६।२०) । स्वेदः; कर्मणो विसदृक्फलं; परिणामः; दुर्गतिः; स्वादुः; जातिः; आयुः; भोगः; 'जाठरेणामिना योगाद् यदुदेति रसान्तरम् । रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः—इति सुश्रुतः । 'श्लेष्मकृन्मधुरः पाको वातपित्तहरो मतः । अम्लस्तु कुरुते पित्तं वात-श्लेष्मगदापहः । कटुः करोति पचनं कफं पित्तं च नाशयेत् । विशेष एष रसतो विपाकानां निर्देशितः—इति भावप्रकाशः । १२६

विपिनम् बली. [ वेपन्ते जना यत्रेति । 'वेपितुह्योह्रस्वश्च' इति इनन्, ह्रस्वत्वं च ] वनं; काननम्; अरण्यम्; 'यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति, यच्चेतसां न गणितं तदिहाम्युपैति । प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती, सोऽहं ब्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी—इति महानाटके । भीतिप्रदे त्रि. । 'स एकदा तु मृगयां विचरन् विपिने वने । यदृच्छयाश्रमपदं जमदग्नेत्पाविशत्—इति भागवते (१।१५।२३) । २१०

विपुलः त्रि. [ विशेषेण पीलतीति । वि+पुल् महत्त्वे+क ] बृहत्; विशालः; 'विपुलेन सागरशयस्य कुक्षिणा—इति साहित्यदर्पणे (१०) । अगाधं; पुं. [ वि+पुल्+क ] मेरुपश्चिमभूधरः; 'विपुलः पश्चिमे पार्वते सुपाश्व-श्चोत्तरे स्मृतः—इति विष्णुपुराणे (२।३।१७) । 'विपुले विपुला देवी कल्याणी मलयाचले—इति देवी-भागवते (७।३०।६६) । सुमेरुः; हिमाचलः; वंसुदेव-

पुत्रः; 'वलं गदं सारणं च दुर्मदं विपुलं ध्रुवम् । वसुदेवस्तु रोहिण्यां कृतादीनुदपादयत्'—इति भागवते (१।२४।४६) । ६९९

विपुला स्त्री. [ वि+पुल् महत्वे+क । ततः स्त्रियां टाप् ] पृथिवी; पृथ्वी; भूमिः; आर्याच्छन्दोभेदः; 'पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च । गीत्युपगीत्युद्गीतय आयांगीतिश्च नववायां । संलक्ष्य गणत्रयमादिमं सकलमोर्द्धयोर्भवति पादः । यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति । 'पुंसां कलिकालव्यालहृतानां वास्त्युपहतिरत्यापि । वीर्यविपुला मुखे चेदस्याद् गोविन्दाख्यमन्त्रकला'—इति छन्दोमञ्जरी । विपुलपर्वतस्या देवी; 'विपुले विपुलादेवी कल्याणी मलयाचले'—इति देवीभागवते (७।३।०।६६) । १५६

विप्रः पुं. [ उच्यते धर्मबीजमय, वप्+ऋञ्जेन्द्राप्रवच्छेति' निपातनात् रप्रत्ययेन सावुः ] ब्राह्मणः; [ विशेषेण प्राति पूरयति पद् कर्माणि, वि+प्रा पूर्तो इत्यस्मात् कप्रत्ययः ] 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते । विद्यया याति विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रियलक्षणम्'—इति प्रायश्चित्तविवेकः । अश्वत्यः; त्रि. मेधावी; 'निषुसीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम्'—इति ऋग्वेदे (१०।११।२।९) । 'विप्रतमम् अतिशयेन मेधाविनम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । स्तवकर्ता; 'विप्रस्य वा यजमानस्य वा गृहम्'—इति ऋग्वेदे (१०।४।०।१४) 'विप्रस्य मेधाविनः स्तोतुवां'—इति तद्भाष्ये सायणः ।

३९१

विप्रकारः पुं. [ वि+प्र+कृ+भावे घञ् ] उपमर्दः; अपकारः; निकारः; 'तेषां तु विप्रकारेषु तेषु तेषु महामतिः । मोक्षणे प्रतिकारे च विदुरोऽवहितोऽभवत्'—इति महाभारते (१।६।२।१४) । खलीकारः; तिरस्कारः; विविधप्रकारः; 'स बाधते प्रजाः सर्वा विप्रकारैर्महाबलः । ततो नस्त्रातु भगवान्प्रान्यस्त्राता हि विद्यते'—इति महाभारते (३।२।७।५।३) । ७६९

विप्रकृष्टः त्रि. [ वि+प्र+कृप्+क्त ] दूरः; विप्रकृष्टकः; आरात्; व्यवहितः; परः । ६९३

विप्रतिसारः पुं. [ वि+प्रति+सृ+घञ् ] विप्रतीसारः; पश्चात्तापः; अनुतापः; अनुशयः; 'प्रापि चेतसि स विप्रतिसारे सुभ्रुवामवसरः सरकेण'—इति माघे

(१०।२०) । कौकृत्यः; रोपः । ७१६

विप्रतीसारः पुं.— अनुतापः; अनुशयः; कौकृत्यः; रोपः । ७१६

विप्रलब्धः त्रि. [ वि+प्र+लभ्+क्त ] निकृतः; विप्रकृतः; तिरस्कृतः; वञ्चितः; 'दशार्णराजो राजंस्त्वामिदं वचनमब्रवीत् । अभिपङ्गात् प्रकुपितो विप्रलब्धस्त्वयानघ'—इति महाभारते (५।१९।१।२१) । ३८३

विप्रलम्भः पुं. [ वि+प्र+लभ्+घञ्+नुम् ] विसंवादः; विप्रलापः; 'विप्रलम्भोऽयमत्यन्तं यदि स्युरफलाः क्रियाः'—इति महाभारते (३।३।१।२७) । वञ्चनम्; 'ततो दशार्णाधिपतेः प्रेष्याः सर्वा न्यवेदयन् । विप्रलब्धं यया वृत्तं स च चुकोप पार्थिवः'—इति महाभारते (५।१९।१।१६) । विप्रयोगः; विच्छेदः; शृङ्गाररसभेदः; 'नामान्येतानि शृङ्गारे कैशिकः शुचिरुज्ज्वलः । सम्भोगो विप्रलम्भश्च तस्य भेदद्वयं भवेत्'—इति शब्दरत्नावल्याम् । शृङ्गाराङ्गविशेषः; 'यूनोरयुक्तयोर्भावो युक्तयोर्वाय यो मिथः । अभीष्टालिङ्गनादीनामनवाप्त्यं प्रहृष्यते । स विप्रलम्भो विज्ञेयः सम्भोगोऽतिकारकः'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ७४८

विप्रलापः पुं. [ वि+प्र+लप्+घञ् ] विरोचोक्तिः; परवचनविरोधिवचनम्; अन्योऽन्यविवदनमिति यावत् । [ विरुद्धः प्रलापः, घञ् ] 'स धर्मराजस्य वचो निशम्य रुक्षाक्षरं विप्रलापापविद्धम्'—इति महाभारते (६।८।२।२५) । अनर्थकवाक्यम्; 'सत्यं श्रेयः पाण्डवविप्रलापं तुल्यञ्चात्रं तहमोज्यं सहायैः'—इति महाभारते (३।५।२।१) । ७४८

विप्रियम् पुं.—क्ली. [ विरुद्धं प्रीणातीति । वि+प्री+क ] अपराधः; मन्तुः; व्यलीकम्; आनः; 'यन्नस्त्वं कर्मसन्धानां सायूनां गृहमेधिनाम् । कृतवानसि दुर्मपं विप्रियं तव मपितम्'—इति भागवते (६।५।४।२) । अप्रिये त्रि. । 'पिण्डं पितॄणां व्युच्छिद्येत्तत्तेषां विप्रियं भवेत्'—इति महाभारते (१।१६।०।८) । ७४९

विप्रुट् [ प् ] स्त्री. [ विशेषेण प्रोपति दहति पापानि । वि+प्रुप्+क्विप् ] विन्दुः; पृषतः; पृषता; जलविन्दुः; 'मक्षिकः विप्रुपश्छाया गौरश्वः सूर्यरश्मयः । रजो भूर्वायुरग्निश्च स्पर्शं मेव्यानि निर्दिशेत्'—इति मनुः ।

६७७

विप्लवः पुं. [ वि+प्लु+अप् ] राष्ट्राद्युपद्रवः; डिम्बः; डमरः; 'सर्वा मडवराज्योर्वी वीरः शमितविप्लवाम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।१०४१) । परचक्रादिभयम्; अस्त्रकलहः; क्लेशः; उपद्रवः; 'विप्लवोऽभूद्दुःखितानां दुःसहः कर्षणात्मनाम्'—इति भागवते (४।२६।९) । विनाशः; 'संमन्थ कौतुकात् पापास्तद्भार्याशील-विप्लवम् । चिकीर्षवो ययुः शीघ्रं ताम्रलिप्तीमलक्षिताः'—इति कथासरित्सागरे (१३।८२) । [ विप्लवते इति, अच् ] जलोपर्यवस्थितः; 'वणिजो नावि भग्नायाम-गाधे विप्लवा इव'—इति महाभारते (९।३।५) । १२७ विप्लुट् [ ष् ] स्त्री. [ विशेषेण प्लोषतीति । वि+प्लुप्+क्विप् ] विप्रुट्; विन्दुः । ६१७

विबुधः पुं. [ विशेषेण दुष्यते इति । वि+बुध्+क ] देवः; सुरः; देवता; 'गन्धर्वा गुह्यका यक्षा विबुधानु-चराश्च ये'—इति मनुः (१२।४७) । पण्डितः; 'त्रयोमि विबुधः खेदं जनानां निह्विते कथम् ।' चन्द्रः; चन्द्रमाः । ४

विभवः पुं. [ वि विशेषो भवति, पचाद्यच् । विशिष्टो भवत्यनेन वा, 'ऋदोरप्' ] घनं; घृन्मं; द्रव्यम्; 'न जीर्णमलवद्वासा भवेच्च विभवे सति'—इति मनुः (४।३४) । मोक्षः; ऐश्वर्यम्; 'भवता हरे स वृजिनोऽ-वसादितो नरसिंह नाथ विभवाय नो भव'—इति भागवते ( ७।८।५५ ) । प्रभवादिषष्टिसंवत्सरान्तर्गतद्वितीय-संवत्सरः; 'सुभिक्षं क्षेममारोग्यं सर्वे व्याधिर्विवाजिताः । प्रशान्ता मानवास्तत्र बहुसस्या वसुन्धरा । हृष्टास्तुष्टा जनाः सर्वे विभवे च वरानने !'—इति भविष्यपुराणे । ८०

विभववान्-त्रि — घनवान्; आढ्यः; सम्पत्तिशाली; ऐश्वर्यवान् । २१३

विभा स्त्री. [ विशेषेण भातीति । वि+भा+क्विप् ] किरणः; प्रकाशः; शोभा; 'कमलेव मतिर्मतिरिव कमला तनुरिव विभा विभेव तनुः । धरणीव धृतिर्धृतिरिव धरणी सततं विभाति वत यस्य तव'—इति साहित्यदर्पणे (१०।६६७) । प्रकाशके त्रि. । 'यदुष औच्छः प्रथमा विभानाम्'—इति ऋग्वेदे (१०।५५।४) 'विभानां विभासकानां ग्रहनक्षत्रादीनाम्'—इति तद्भाष्ये सायणः ।

३८

विभागः पुं. [ वि+भञ्+घञ् ] भागः; अंशः; 'विभागो-

ऽर्षस्य पित्र्यस्य पुत्रैर्षत्र प्रकल्प्यते । दायभाग इति भोक्तं तद्विवादपदं ब्रूवैः'—इति नारदवचनम् । चतुर्विंशतिगुणावान्तरगुणविशेषः; 'शब्दाहेतुद्वितीयः स्याद् विभागोऽपि त्रिधा भवेत् । एककर्माद्भवस्त्वाद्यो द्वयकर्माद्भवः परः । विभागजस्तृतीयः स्यात्तृतीयोऽपि द्विधा भवेत् । हेतुमात्रविभागोत्थहेत्वहेतुविभागजः'—इति भाषापरिच्छेदः । ७९३

विभातम् क्ली. [ वि+भा+वत् ] कल्पम्; उपः; प्रत्यूपः; प्रणे; प्रभातः; विभाति । १११

विभावरी स्त्री. [ त्रिभाति नक्षत्रादिभिः, वि+भा+ 'अन्येभ्योऽपीति' क्वनिप्, 'वनो र च' इति डीवर्त्वे ] रात्रिः; यामिनी; निशा; निशीथिनी; शर्वरी; 'प्रभातायां विभावर्या यथास्थानस्थितो नृपः । आकार्यतां मातृगुप्त इति क्षत्तारमादिशत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।२०७) । मन्दारविद्याधरकन्या; 'मन्दारविद्याधरजा सखी मम विभावरी'—इति मार्कण्डेये (६३।१४) । सुमेरुत्तरस्था पुरी; 'उत्तरतः सौम्यां विभावरीं नाम'—इति भागवते (७।५।२१।७) । हरिद्रा; कुट्टनी; वक्रयोषित्; विवादवस्त्रमुण्डी; मौखर्यनिरतस्त्री; मुखरस्त्री; मेदावृक्षः । १०७

विभावसुः पुं. [ विभा प्रभा एव वसु समृद्धिर्यस्य ] अग्निः; बर्हिः; अनलः; 'निवद्धां धूमजालेन प्रभामिव विभावसोः'—इति महाभारते (३।६८।७) । अर्कवृक्षः; चित्रक-वृक्षः; चन्द्रः; हारभेदः; सूर्यः; 'वद्धंनः कुरुवंशस्य विभावसुसमद्युतिः'—इति महाभारते (१।८६।७) । वसुपुत्रविशेषः; 'वसवोऽष्टौ वसोः पुत्रास्तेषां नामानि मे ऋणु । द्रोणः प्राणो ध्रुवोऽर्कोऽग्निर्दोषो वास्तुविभा-वसुः । विभावसोरसूतोषा व्युष्टं रोचिषमातपम्'—इति भागवते (६।६।१०) । मुरासुरपुत्रः; 'ताम्रोऽन्तरिक्षः श्रवणो विभावसुः वसुर्नभस्वानरुणश्च सप्तमः'—इति भागवते (१०।५९।१२) । दनुपुत्रोऽसुरविशेषः; 'त्रिमूर्द्धा शम्बरोऽरिष्टो हयग्रीवो विभावसुः'—इति भागवते (६।६।३०) । ६३

विभीतः त्रि. [ विगतं भीतं रोगभयमस्मात् । यद्वा विशिष्टं भीतं यस्मात्, भूतकलयोराश्रयत्वात् ] वृक्षविशेषः; विभीतकः; विभीतकी; अक्षः; तुपः; कर्पकलः; भूतवासः; कलिद्रुमः; कल्पवृक्षः; संवर्तः; तैलफलः;

भूतावासः; संवर्तकः; वासन्तः; कलिवृक्षः; कलिरक्षः;  
वहेडुकः; हार्यः; विषध्नः; अनिलध्नः; कासध्नः;  
'प्रियालतालखजूरहरीतकविभोतकैः'—इति महाभारते  
(३।६४।५) । 'विभीतं भेदि तीक्ष्णोष्णं वैस्वर्यक्रिमि-  
नाशनम् । चक्षुष्यं स्वादुपाकं च कषायं कफपित्तनुत्'—  
इति राजवल्लभः । ६१८

**विभूषणम्** क्ली. [ विशेषेण भूषयत्यनेनेति । वि+भूष्+  
णिच्+त्युट् ] आभरणम्; 'अस्ति पाटलिपुत्राख्यं पुरं  
पृथ्वीविभूषणम्'—इति कथासरित्सागरे (१७।६४) ।

५५७

**विभूषा** स्त्री. [ वि+भूष् भूषणे+ 'गुरोश्च हलः' इत्य,  
स्त्रियां टाप् ] राढा; शोभा; अभिल्या; सुपमा,  
'ततः प्रवृद्धः शुचिरिष्टदेवः श्रीमद्विभूषो ज्वलितः प्रहृष्टः'—  
इति कामन्दकीये (१५।४६) । आभरणम्; 'मानग्रह-  
गुरुकोपादनुदयितात्येव रोचते मह्यम् । काञ्चनमयी  
विभूषा दाहाञ्चित्तशुद्धभावेव'—इति आर्यासप्तशत्याम्  
(४५९) । ५६५

**विभ्रमः** पुं. [ वि+भ्रम्+घञ् ] हावभेदः; स तु स्त्रीणां  
शृङ्गारभावजक्रियाभेदः; 'स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं  
विभ्रमो हि प्रियेषु'—इति मेघदूते (२९) । (६९१)  
भ्रान्तिः; शङ्का; सन्देहः; संशयः; विकल्पः; वितर्कः;  
विचिकित्सा; 'तमत्रिभगवानैकत् त्वरमाणं विहायसा ।  
आमुक्तमिव पाषण्डं योऽधर्मं धर्मविभ्रमः'—इति भागवते  
(४।२१।१२) । शोभा (८१३); 'ललाटे शूलमुद्राङ्गे  
जराशुक्लाः शिरोरुहाः । तस्य शम्भुभ्रमासङ्गिगङ्गाभो-  
विभ्रमं दधुः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।३६७) ।  
'ज्याकृष्टिद्वद्धखटकामुखपाणिपृष्ठे प्रेङ्खन्नखांशुचयसं-  
लितोऽम्बिकायाः । त्वां पातु मञ्जरितपल्लवकर्ण-  
पूरलोभभ्रमदभ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्षः'—इति अमरुशतके  
(१) । संशयः; 'पूरयन् बहुनादाभिर्वाहिनीभिर्भुवस्त-  
लम् । कुत्रेन्नकाण्डनिर्मेषवर्षासमयविभ्रमम्'—इति कथा-  
सरित्सागरे (१९।३५) । भ्रमणः; विकारविशेषः;  
'तीव्रातिरपि नाजीर्णां पिबेच्छूलध्नमौषधम् । आम-  
सन्नोऽनलो नालं पक्तुं दोषोपघाशनम् । निहन्यादपि  
चैतेषां विभ्रमः सहसातुरम् । जीर्णांशने तु भैषज्यं  
युञ्ज्यात् स्तब्धगुरुदरे'—इति वाग्भटः । मदराग-  
हर्षजनिविपर्यासः; वस्त्राभरणमाल्यानामकारणतः

खण्डनं माननं च; 'क्रोधः स्थितं च कुसुमाभरणादि-  
याच्चा, तद्वर्जनं च सहसैव विमण्डनं च । आक्षिप्य  
कान्तवचनं लपनं सखीभिर्निष्कारणोत्थितगतं वद विभ्रमं  
तत् । 'चित्तवृत्त्यनवस्थानं शृङ्गाराद्विभ्रमो भवेत् ।'  
'विभ्रमस्त्वरया काले भूपास्थानविपर्ययः ।' योषितां  
यौवनजो विकारः; 'वल्लभप्राप्तिवेलायां मदेनावेश-  
संभ्रमात् । विभ्रमो हारमाल्यादिभूपास्थानविपर्ययः—  
इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ८९

**विमलम्** त्रि. [ विगतो मलो यस्मात् ] निर्मलं; वीध्रं;  
प्रयतं; शुचिः; मेध्यं; पवित्रं; पुण्यं; पावनं; विशदम्;  
उज्ज्वलम्; अनाविलम्; 'प्रलविष्यन्ति त्तोयानि विम-  
लानि महीधराः । विदर्शयन्तो त्रिविधान् भूयस्त्रिन्नांश्च  
निर्झरान्'—इति रामायणे (२।४८।१४) । चारु;  
'रुचिधाम्नि भर्तारि भृशं विमलाः परलोकमम्युपगते  
विविशुः'—इति माघे (९।१३) । क्ली. तारहेमद्विधा-  
कृतम्; उपरसविशेषः; निर्मलं; स्वच्छम्; अमलं;  
स्वच्छवातुकम्; 'मूत्रारनालतैलेषु गोदुग्धे कदलीरसे ।  
कौलत्ये कोद्रवक्वाथे माक्षिकं विमलं तथा । मुहुः  
शूरणकन्दस्थं स्वेदयेद्वरविणिनि !, क्षाराम्ललवणैश्चैव  
तैलसर्पिःसमन्वितम् । पुटत्रयं प्रदातव्यं ततस्तु शोधितं  
भवेत् । जम्बीरस्य रसे स्विन्नो मेपशृङ्गीरसैस्तथा ।  
रम्भातोयेन वा पाच्यं धस्रं विमलशुद्धये'—इति वैद्यक-  
रसेन्द्रसारसंग्रहः । पुं. [ विगतो मलः पामं यस्मात् ]  
अहन्तं; सुद्युम्नपुत्रः; 'तस्योत्कलो गयो राजन् विमलश्च  
त्रयः सुताः'—इति भागवते (९।१।४१) । १३२

**विमानम्** पुं.—क्ली. [ विगतं मानमुपमा यस्य ] देवरथः;  
व्योमयानं; देवयानम्; 'भुवनालोकनप्रीतिः स्वर्गिभित्तानु-  
भूयते । खिलीभूते विमानानां तदापातभयात् पथि'—  
इति कुमारे (२।४५) । सार्वभौमगृहं; सप्तभूमिगृहम्;  
'सर्वरत्नसमाकीर्णं विमानग्रहशोभिताम्'—इति रामायणे  
(१।५।१६) । 'विमानोऽस्त्री देवयानं सप्तभूमौ च  
सद्यनि'—इति कोपान्तरम् । घोटकः; यानमात्रं; त्रि-  
परिच्छेदकम्; 'सोमापूषणा रजसो विमानं सप्तचक्रं  
रथमविश्वमिन्धम्'—इति ऋग्वेदे (२।४०।३) ।  
'विमानं परिच्छेदकं सर्वमानमित्ययं'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । साधनम्; 'पिता यन्नानामसुरो विपदिचितां  
विमानमग्निर्दयुनं च वाद्यताम्'—इति ऋग्वेदे (३।३।४) ।

‘विमानं विमीयतेऽनेन फलमिति विमानं यज्ञादिकर्म-  
साधनम्’ इति तद्भाष्ये सायणः । [ विगतो मानो  
यस्येति ] अवज्ञातः; ‘कर्हिस्मचित् क्षुद्ररसान् विचिन्वं-  
स्तन्मक्षिकाभिर्व्यथितो विमानः । तत्रातिकृच्छ्रं प्रति-  
लब्धमानो बलाद्विलुम्पन्त्यथ तांस्ततोऽन्ये’—इति भागवते  
(५।१३।१०) । ८३

**विम्बः** पुं.— क्ली. [ वी+‘उल्वादयश्च’ इति वन् प्रत्ययेन  
निपातनात् साधुः ] मण्डलमात्रं; विम्बम्; ‘नितम्ब-  
विम्बं सुदुकूलमेखलैः स्तनैः सहाराभरणैः सचन्दनैः ।  
शिरोरुहैः स्नानकषायवासितैः स्त्रियो निदाघं शमयन्ति  
कामिनाम्’—इति ऋतुसंहारे (१।४) । ‘आत्मान-  
मालोक्य च शोभमानमादर्शविम्बे स्तिमितायताक्षी ।  
हरोपयाने त्वरिता बभूव स्त्रीणां प्रियालोकफलो हि  
वेशः’—इति कुमारे (७।२७) । सूर्यचन्द्रमण्डलम्;  
‘असौ त्वदन्यो न सनातनः पुमान्, भवान् न देवात्पुरुषोत्त-  
मात् परः । स एव भिन्नस्त्वमनादिमायया द्विधेव विम्बं  
सलिले विवस्वतः’—इति प्रबोधचन्द्रोदये ६ अङ्के ।  
‘ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रविम्बानुकारिं कनकोत्तम-  
कान्तिकान्तम्’—इति मार्कण्डेये (८।४।११) । पुं.  
कृकलासः; क्ली. प्रतिविम्बं; कमण्डलुः; मूर्तिः;  
‘प्रदर्शयति पततपसामवितृप्तदृशां नृणाम् । आदायान्तर्द-  
घाद् यस्तु स्वविम्बं लोकलोचनम्’—इति भागवते  
(३।२।११) । ‘मेघवाहनभूर्भर्तृपत्न्या भिन्नाख्यया कृते ।  
विहारेऽपि तथा बृद्धविम्बं साधु निवेशितम्’— इति  
राजतरङ्गिण्याम् (३।४।६६) । विम्बिकाफलं; तुण्डि-  
केरी; रक्तफला; विम्बिका; पीलुपर्णी; ओष्ठी;  
विम्बी; विम्बा; विम्बकं; विम्बजा; ‘विम्बं रक्तफला  
तुम्बी तुण्डिकेरी च विम्बिका । ओष्ठीपमफला प्रोक्ता  
पीलुपर्णी च कथ्यते । विम्बीफलं स्वादु शीतं गुरु  
पित्तास्रवातजित् । स्तम्भनं लेखनं रुच्यं विवन्धाध्मान-  
कारकम्’—इति भावप्रकाशः । ४४

**विम्बा** स्त्री. [ विम्बं फलमस्त्यस्यामिति । विम्ब+अच्+  
टाप् ] विम्बिका । २०३

**विम्बी** स्त्री. [ विम्ब+गौरादित्वाद् डीप् ] विम्बिका;  
विम्बं; पीलुपर्णी; ओष्ठी, तुण्डिका; ‘काकादनीं चित्र-  
फलां विम्बीं गुञ्जाश्च धारयेत्’—इति सुश्रुतः । २०३

**वियत्** क्ली. [ वियच्छति न विरमतीति ! वि+यम्+

‘अन्येभ्योऽपि दृश्यते’ इति क्विप्, ‘क्वौ च गमादीनामिति’  
मलोपे तुक् ] आकाशम्; ‘तह्येव तन्नाभिसरःसरोज-  
मात्मानमम्भः श्वसनं वियच्च । ददर्श देवो जगतो  
विधाता नातः परं लोकविसर्गदृष्टिः’—इति भागवते  
(३।८।३३) । धावापृथिव्यौ; अत्र द्विवचनस्य प्रयोगः;  
‘धावापृथिवी सहास्ताम् । ते वियती अब्रूताम्’—  
इति तैत्तिरीयब्राह्मणे (१।१।३।२) । ‘तयोवियत्योर्यो-  
ऽन्तरेणाकाश आसीत् तदन्तरिक्षमभवत्’—इति शतपथ-  
ब्राह्मणे (७।१।२।२३) । त्रि. [ वि+या+शत् ] गमन-  
शीलः; ‘कुटुम्बपोषाय वियन्निजायुर्न बुध्यतेऽयं विहतं  
प्रमत्तः’—इति भागवते (७।६।१४) । ‘वियद्वित्तस्य  
ददतो लब्धं लब्धं बुभूषतः । निष्किञ्चनस्य धीरस्य  
सकुटुम्बस्य सीदतः । व्यतीयुरष्टचत्वारिंशदहान्यपिबतः  
किल’—इति भागवते (९।२।१३) । ‘वियद्वित्तस्य  
वियतो गगनादिव उद्यमं विनैव देवादुपस्थितं वित्तं भोग्यं  
यस्य । यद्वा वियत् व्ययं प्राप्नुवद्वित्तं भोग्यं यस्य’—इति  
तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । १३७

**वियराडी** स्त्री.—रागिणीविशेषः । १०३ अ

**बियातः** त्रि. [ विरुद्धं निन्दनीयं यातं यस्य ] निर्लज्जः;  
घृष्टः । ३७१

**वियुतार्थकम्** त्रि. [ वियुतः च्युतः अर्थः यस्मात् ] अवद्धम्;  
आसत्तिहीनवाक्यम् । १४१

**वियोगः** पुं. [ वि+युज्+घञ् ] विच्छेदः; विप्रलम्भः;  
विप्रयोगः; विरहः; ‘यस्य योगं न वाञ्छन्ति वियोग-  
भयकातराः । भजन्ति चरणाम्भोजं मुनयो हरिमेघसः’—  
इति भागवते (९।१।३।९) । ७४२

**विरञ्चः** पुं. [ विशदं रचयति, वि+रच्+अच्, पृषो-  
दरादित्वाञ्जुम् ] ब्रह्मा; स्रष्टा; देवाः । ७

**विरञ्चिः** पुं. [ वि+रच्+णिच्+‘अच इ’, नुम् ]  
ब्रह्मा; विधाता । ७

**विरलेतरः** त्रि. [ विरलादितरः ] निरन्तरः; घनः; सान्द्रः;  
सघनः । ७१७

**विरहः** पुं. [ वि+रह्, त्यागे+घ ] विच्छेदः; विप्रलम्भः;  
विप्रयोगः; वियोगः; ‘सङ्गमविरहविकल्पे वरमिह विरहो  
न सङ्गमस्तस्याः । सङ्गे सैव तथैका त्रिभुवनमपि तन्मयं  
विरहे’—इति साहित्यदर्पणे (१०) । ‘पानं दुर्जनसंसर्गः  
पत्या च विरहोऽनम् । स्वप्नोऽन्यगहे वासश्च नारीणां



दूषणानि षट्—इति मनुः (१।१३) । ७४२  
 विरागाहः त्रि. [ विरागम् अहंतीति । विराग+अहं+  
 अच् ] विरागयोग्यः; वैरङ्गकः । ७४२  
 विरिञ्चः पुं. [ वि+रच्+पृषोदरादित्वात् साधुः ] ब्रह्मा;  
 विरिञ्चिः; विरिञ्चनः; विधाता; सृष्टिकर्ता;  
 कमलासनः । ६  
 विरिञ्चिः पुं. [ वि+रच्+णिच्+इ प्रत्ययः; निपातनात्  
 नुम् इत्वं च । ब्रह्मा; शिवः; विष्णुः । ६  
 विरूक्षणम् क्ली. [ वि+रूक्ष् पाठ्ये+भावे ल्युट् ] शापः;  
 आक्रोशः । १४९  
 विरूपाक्षः पुं. [ विरूपे अक्षिणी यस्य । 'सकथ्यक्षणेः  
 स्वाङ्गात् पच्' इति पच् ] शिवः; शङ्करः; महादेवः;  
 उमापतिः; 'दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः ।  
 विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुमो वामलोचनाः'—इति  
 साहित्यदर्पणे (१०) । रुद्रभेदः; तस्य पुरी सुमेरोर्नैर्ऋत्य-  
 कोणे वर्तते; 'तथा चतुर्थे दिग्भागे नैऋताधिपतेः सुता ।  
 नाम्ना कृष्णावती नाम वीरूपाक्षस्य धीमतः'—इति  
 वाराहे, रुद्रगीता । विरूपे त्रि. । 'वपुर्विरूपाक्षमलक्ष्य-  
 जन्मता दिग्म्बरत्वेन निवेदितं वसु'—इति कुमारे  
 (५।७२) । १३  
 विरोकः पुं. [ वि+रूच्+घञ् । कुत्वम् ] सूर्यकिरणः;  
 प्रातः; 'पूर्वीं ऋतस्य संदृशश्चकानः संदूतो अद्यो दुषको  
 विरोके'—इति ऋग्वेदे (३।५।२) । 'विरोके विरोचने  
 प्रातःकाले'—इति तद्भाष्ये सायणः । क्ली. छिद्रम्;  
 'नासाविरोकपवनोन्नमितं तनीयो रोमाञ्चतामिव जगाम  
 रजः पृथिव्याः'—इति माघे (५।५४) । ३९  
 विरोचनः पुं. [ विशेषेण रोचते इति । वि+रूच्+  
 'अनुदात्तेतश्च हलादेः' इति युच् ] सूर्यः; आदित्यः;  
 मानुः; रविः; मार्तण्डः; दिवाकरः; दिनकरः;  
 प्रमाकरः; विमाकरः; 'दिवाकरः सप्तसप्तिर्धामकेशी  
 विरोचनः'—इति महाभारते (३।३।६३) । अर्कवृक्षः;  
 प्रह्लादतनयः; वलिराजपिता; (माघे १४-७५) ।  
 'प्रह्लादस्य त्रयः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत । विरोचनश्च  
 कुम्भश्च निकुम्भश्चेति भारत'—इति महाभारते  
 (३।३।६३) । अग्निः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'तासां तद्वचनं  
 श्रुत्वा दक्षः सोममयाव्रवीत् । समं वर्तस्व भार्यासु मा  
 त्वां शप्ये विरोचन!'—इति महाभारते (१।३।५।५३) ।

रोहितकवृक्षः; व्योनाकप्रभेदः; घृतकरञ्जः; त्रि.  
 दीप्तिशाली; 'तेजसाभ्यधिकी सूर्यात् सर्वलोकविरोचनात्'  
 —इति महाभारते (१२।३४३।३४) । ३६  
 विरोधी [ न् ] पुं. [ विरुणद्धीति । वि+रूष्+णिनि ]  
 शत्रुः; 'सर्वान् परित्यजेदर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः'  
 इति मनुः (४।१७) । [ विरोधोऽस्त्यस्मिन्निति । विरोध+  
 इनि ] प्रभवादपिष्टिसंवत्सरान्तर्गतत्रयोविशवर्षम्;  
 'अनग्निप्रवला लोका धान्योपधिप्रपीडनम् । जायते  
 मानुषे कष्टं विरोधिनि न संशयः'—इति ज्योति-  
 स्तत्त्वम् । विरोधविशिष्टे त्रि. । 'विरोधिसत्त्वोऽजित-  
 पूर्वमत्सरं द्रुमैरभोष्टप्रसवाचितातिथि'—इति कुमारे  
 (५।१७) । ४५५

विलग्नम् क्ली. [ विशेषेण लग्नम् ] मध्यः; अवलग्नं;  
 मध्यमः; कटः; कटिः; 'मध्योऽवलग्नं विलग्नं मध्य-  
 मोऽय कटः कटिः'—इति हेमचन्द्रः । जन्मलग्नम्;  
 'गोचरे वा विलग्नं वा ये ग्रहा रिष्टसूचकाः । पूजयेत्  
 तान् प्रयत्नेन पूजिताः स्युः शुभांवाहः ।' मेपादिलग्न-  
 मात्रम्; 'शुभग्रहार्कवारे च मृदुक्षिप्रध्रुवेषु च । शुभराशि-  
 विलग्नं च शुभं शान्तिकपीष्टिकम्'—इति दीपिका ।  
 संलग्नं त्रि. । 'विलग्नं न स्त्रियां मन्ये त्रिपुं स्याललग्न-  
 मात्रकं'—इति मेदिनी । ५१७

विलापः पुं. [ वि+लप्+घञ् ] अनुशोचनोक्तिः; परि-  
 देवनं; क्रन्दनादः; 'क्रन्दनादो विलापः स्यात्परिदेवन-  
 मित्यपि'—इति शब्दरत्नावली । 'विलापो दुःखजं वचः'-  
 इत्युज्ज्वलनीलमणिः । 'उन्मदमदनभनोरथपथितवधूज-  
 नजनितविलापे । अलिकुलसङ्कुलकुसुमसमूहनिराकुल-  
 वकुलकलापे'—इति गीतगोविन्दे (१।२९) । ६३९

विलालः पुं. [ डलयोरेकत्वस्मरणात् ] विडालः; यन्त्रम् ।  
 २३६

विलासः पुं. [ वि+लस्+घञ् ] हावभेदः; स्त्रीशृङ्गार-  
 चेष्टा; 'लतासु तन्वीसु विलासचेष्टितं विलालदुष्टं  
 हरिणाङ्गनासु च'—इति कुमारे (५।१५) । लीला;  
 क्रीडा; 'तैर्दशं नीवायवैरुदारविलासहासेक्षितवाम-  
 सूक्तः'—इति भागवते (३।२।५।३५) । ८९

विलीनः त्रि. [ वि+ली+क्त, 'स्वादय ओदितः' इत्युक्तेः  
 'ओदितश्च' इति नत्वम् ] प्राप्तद्वीभावाघृतादिः;  
 विद्रुतः; द्रुतः; विदिलिष्टः; विशेषेण लीनः; 'कदादस्य

भ्रष्टे ननु शिखरिणी दृश्यति शिखोर्विलीनाः स्मः सत्यं नियतमवधेयं तदखिलैः। इति त्रस्यद्गोपानुचितनिभृता-लापजनितस्मितं, विभ्रद्देवो जगदवतु गोवर्धनवरः— इति छन्दोमञ्जरी। २७६

विलेपनम् क्ली. [ विलिप्यन्तेऽङ्गान्यनेनेति । वि+लिप्+ल्युट् ] अङ्गरागः; गात्रानुलेपनयोग्यं पिष्टं घृष्टं वा सुगन्धिद्रव्यम्; गात्रानुलेपनी; वर्तिः; वर्णकम्; द्वे गात्रानुलेपनयोग्ये वर्तितविलेपने । वर्णकादिद्वयं घृष्ट-चन्दनादिविलेपने । कुङ्कुमादिलेपनं; समालम्भः । ५४५

विलेपनी स्त्री. [ विलिप्यतेऽसाविति । वि+लिप्+कर्मणि

करणे वा ल्युट् । स्त्रियां ङीप् ] यवागूः; सुवेशा स्त्री । ३२०

विलेपिका स्त्री. [ विलिप्यतेऽसाविति । वि+लिप्+

कर्मणि घञ्, स्त्रियां ङीप्, विलेपी+क टाप् च ]

विलेपी; यवागूः; विलेप्यः; उष्णिका; श्राणः; तरला;

‘अन्नं पञ्चगुणे साध्यं चतुर्गुणे विलेपिका । मण्डश्चतुर्दश-

गुणे यवागूः षड्गुणेऽम्भसि’—इति वैद्यकोक्तो भेदः । ३२०

विल्वः पुं. [ विल्वं संवरणे, वा विल्वं भेदने+‘उल्वादयश्चेति’

साधुः ] फलवृक्षविशेषः; शाण्डिल्यः; शैलूषः; मालूरः;

श्रीफलः; महाकपित्थः; गोहरीतकी; पूतिवातः;

अतिमङ्गल्यः; महाफलः; शल्यः; हृद्यगन्धः; शालादुः;

कर्कटाह्लः; शैलपत्रः; शिवेष्टः; पत्रश्रेष्ठः; त्रिपत्रः;

गन्धपत्रः; लक्ष्मीफलः; गन्धफलः; दुरारोहः; त्रिशाख-

पत्रः; त्रिशिखः; शिवद्रुमः; सदाफलः; सत्यफलः;

सुभूतिकः; समीरसारः । ‘काञ्जिके संस्थितं विल्व-

मग्निसंदीपनं परम्’—इति वैद्यकम् । ‘विल्वं बालं

कपायोष्णं पाचनं वह्निदीपनम् । संग्राहिं तित्तकटुकं

तीक्ष्णं वातकफापहम् । पक्वं सुगन्धि मधुरं दुर्जरं ग्राहि

दोषलम् । फलेषु परिपक्वेषु यो गुणः समुदाहृतः ।

विल्वादन्यत्र स ज्ञेयो विल्वमामं गुणोत्तरम् । कफवाता-

मपित्तघ्नी ग्राहिणी विल्वपेयिका’—इति राजवल्लभः ।

१९४

विवक्षितः त्रि. [ वच् धातोः सनि क्त प्रत्ययेन निष्पन्नोऽयम् ]

वक्तुमिष्टः; शक्यार्थः; शोभनः । ८०२

विवधः पुं. [ विविधो वधो हननं गमनं वा यत्र ] पर्याहारः;

वीवधः; भारः; सागः; पन्थाः; व्रीहितृणादेः पर्याहारणं;

उपरितो बद्धशिक्यस्कन्धवाह्यकाष्ठम् । ७५८

विवरम् क्ली. [ विवृणोतीति, वि+वृ+पचाद्यच् ] छिद्रं;

विलम्; ‘यच्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स

रामसायकः । अग्रविष्टविषयस्य रक्षसां द्वारतामगम-

दन्तकस्य तत्’—इति रघी (१११८) । दोषः;

‘एकाग्रः स्यादविवृतो नित्यं विवरदर्शकः । राजन् राज्यं

सपत्नेषु नित्योद्विग्नः समाचरेत्’—इति महाभारते

(११४११७) । अवकाशः; ‘विशेषबुद्धेर्विवरं मनाक्

च पश्याम यत्र व्यवहारतोऽन्यत्’—इति भागवते

(५।१०।१२) । ६२४

विवरणम् क्ली. [ वि+वृ+ल्युट् ] व्याख्या; स्पष्टी-

करणम् । ४००

विवर्णः त्रि. [ विकृतो वर्णो यस्य ] मूढः; मन्दः; मूर्खः;

मातृशासितः; मलिनः; ‘विवर्णवदनं दृष्ट्वा तं प्रस्विन्न-

ममर्षणम् । आह दुःखाभिसन्तप्ता किमिदानीमिदं प्रभो’—

इति रामायणे (२।२६।८) । पुं. [ विरुद्धो वर्णः ]

नीचः; ‘भैक्षचर्या विवर्णेषु जघन्या वृत्तिरिष्यते’—

इति मार्कण्डेये (४।१।१०) । ३३६

विवस्थान् [ त् ] पुं. [ विशेषेण वस्ते आच्छादयतीति ।

वि+चस्+विप् । विवस्तेजोऽस्यास्तीति, विवस्+

मनुप्, मस्य वः, ‘तसौ मत्वर्थे’ इति भस्वादुल्वाभावः ]

सूर्यः; ‘भवति दीप्तिरदीपितकन्दरा तिमिरसंवलितेव

विवस्वतः’—इति किराते (५।४८) । देवता (८।१४);

अर्कवृक्षः; अरुणः; वैवस्वतमनुः; मनुष्यः; त्रि.

परिचरणशीलः; ‘देवभ्यो दाशद्वविषा विवस्वते’—

इति ऋग्वेदे (१०।६५।६) । ‘हविषा अन्नेन देवान्

विवस्वते परिचरते’—इति तद्भाष्ये सायणः । ३५

विवाहः पुं. [ विशिष्टं वहनम् । वि+वह्+घञ् ]

दारपरिग्रहः; उपयमः; परिणयः; उद्वाहः; उपयामः;

पाणिपीडनं; दारकर्म; करग्रहः; पाणिग्रहणं; निवेशः ।

‘ब्राह्मो विवाह आहूय दीयते शक्यलङ्कृता । तज्जः

पुनात्युभयतः पुरुषानेकविशतिम् । यत्रस्थार्यात्वजे दैव-

मादायार्पन्तु गोयुगम् । चतुर्दशप्रथमजः पुनात्युत्तरजश्च

षट् । इत्युक्त्वा चरतां धर्म-सह या दीयतेऽथिने । सकायः

पावयेत्तज्जः षड् वश्यांश्च सहात्मना । आसुरो द्रविणा-

दानात् गान्धर्वः समयान्मथः । राक्षसो युद्धहरणात्

पैशाचः कन्यकाच्छलात्’—इति याज्ञवल्क्यः । ४९५

विट् [ श् ] पुं. [ विश्+विप् ] मनुजः; मनुष्यः; मानवः;

मर्त्यः; मानवः; ‘अथ प्रदोषे दोषतः संवेशाय विशां पतिम् ।

सूनुः सूनुतवाक् स्रष्टुविससर्जोदितश्रियम्—इति रघौ (१।३३)। (५७०) वैश्यः; ऊरव्यः; अर्यः; भूमि-  
स्पृक्; 'गर्भाष्टमेऽन्द्रे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम् ।  
गर्भादिकादशो राज्ञो गर्भाच्च द्वादशो विशः—इति मनुः  
(२।३६)। प्रवेशः। ३३१

**विशङ्कटः** त्रि. [ वि+‘वेः शालच्छङ्कटचौ’ इति शङ्कटच् ]  
विशालः; 'विशङ्कटो वक्षसि बाणपाणिः सम्पन्नताल-  
द्वयसः पुरस्तात्—इति भट्टिः (२।५०)। भयानकः;  
मांसासृग्मत्तवेतालतालवाद्यविशङ्कटः। अभून्नृत्य-  
त्कवन्वोऽसी भूतप्रीत्यै रणोत्सवः—इति कथासरित्-  
सागरे। ७५३

**विशदः** त्रि. [ वि+शद्+अच् ] विमलः; शुचिः; मेघ्यः;  
पवित्रः; पुण्यः; पावनः; वीघ्नः; उज्ज्वलः; अनाविलः;  
'प्रसादसुमुखे तस्मिन् चन्द्रे च विशदप्रभे। तदा चक्षुष्मतां  
प्रीतिरासीत् समरसा द्वयोः—इति रघौ (४।१८)।  
(७५२) प्रकटः; स्पष्टः; प्रकाशः; स्फुटः; व्यक्तः;  
'विशदोच्छ्वसितेन मेदिनी कथयामास कृतार्थतामिव—  
इति रघौ (८।३)। शुक्लगुणयुक्तः; उज्ज्वलः;  
'स्वच्छाम्भःस्नपनविधौ तमङ्गमोष्ठस्ताम्बूलद्युतिविशदो  
विलासिनीनाम्। वासश्च प्रतनु विविक्तमस्त्वितीया-  
नाकल्पो यदि कुसुमेपुणा न शून्यः—इति माघे  
(८।७०)। श्वेतवर्णः; जयद्रथपुत्रः; 'बृहत्कायस्तत-  
स्तस्य पुत्र आसीज्जयद्रथः। तत्सुतो विशदस्तस्य  
स्येनजित् समजायत—इति भागवते (९।२१।२३)।

१३२

**विशसनम्** क्ली. [ वि+शस् हिंसायाम्+ल्युट् ] मारणम्;  
'तस्मिन् विशसने घोरे चक्रलाङ्गलसम्प्लवे। दारुणानि  
प्रवृत्तानि रक्षांस्यौत्पातिकानि च—इति हरिवंशे  
(९।१४३)। नरकविशेषः; 'प्राणरोधो विशसनं  
लालाभक्षः सारमेयादनमरोचिरयःपानमिति—भागवते  
(५।२६।७)। विनाशकारिणि त्रि.। 'यमदण्डोपमां  
गुर्वीमिन्द्राशनिमस्त्रनाम्। अपश्याम महाराज ! रोद्रीं  
विशसनीं गदाम्—इति महाभारते (६।५९।६०)।  
पुं. [ विगसति हिनस्तीति, वि+शस् हिंसायाम्+ल्युट् ]  
खङ्गः; 'असिंविशसनः खङ्गस्तीक्ष्णवारो दुरासदः।  
श्रीगर्भो विजयदत्तैव धर्मपालस्तथैव च—इति महाभारते  
(१२।१६६।८४)। ४७७

**विशाखः** पु. [ विशेषेण शाखति, शाख् व्याप्ती+पचाद्यच् ]।  
विशाखायां जातो वा, 'श्रविष्ठाफल्गुनीति' जातार्थानो  
लुक् ] कार्तिकेयः; 'प्रभुर्नेता विशाखश्च नैगमेयः  
सुदुश्चरः—इति महाभारते (३।३३।१७)। धन्विनां  
वितस्त्यन्तरेण पादसंस्थानम्; याचकः; पुनर्नवा;  
[ विगता शाखा यस्य ] त्रि. शाखाविहीनः; 'कवन्धो-  
ज्वस्यितः संह्ये विशाख इव पादपः—इति हरिवंशे  
(४।८।५२)। १९

**विशायः** पुं. [ वि+शी+‘व्युपयोः शोतेः पर्याये’ इति घञ् ]  
प्रहरिकादीनां क्रमेण शयनं; उपशायः; 'उपशायो  
विशायश्च पर्यायशयनार्थकौ—इति अमरे। ७३९

**विशारदः** त्रि. [ विशिष्टः शारदः, प्रादिममासः।  
विशिष्टा शारदा यस्य वा ] विद्वान्; 'दूतं चैव प्रकुर्वीत  
सर्वशास्त्रविशारदम्—इति मनुः (७।६३)। प्रगल्भः;  
प्रसिद्धः; श्रेष्ठः; पुं. वक्रुलवृक्षः। ३३३

**विशालः** त्रि. [ वि+‘वेः शालच्छङ्कटचौ’ इति शालच् ]।  
यद्वा विश् प्रवेशने, 'तमिंविशिविडीति' कालन् ] वृहत्;  
'अवन्तिनाथोऽयमुदप्रवाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः—  
इति रघौ (६।३२)। [ विगतः शालः स्तम्भो यस्य ]  
स्तम्भरहितः; 'गृहैर्विशालैरपि भूरिशालैः।' पुं. [ विश्+  
कालन् ] मृगभेदः; पक्षिभेदः; नृपभेदः; वृक्षभेदः;  
वृक्षविशेषः। (७।५३) विशङ्कटः; करालः; विकटः। ६९९  
**विशालता** स्त्री. [ विशालस्य भावः। विशाल+तल् ]  
विशालत्वं; पार्श्वविस्तारः; परिणाहः; 'उन्नत-  
मीपच्छृङ्गं नीसंस्थाने विशालता चोक्ता—इति  
बृहत्संहितायाम् (४।८)। ७८६

**विशिखः** पुं. [ विशिष्टा शिखा यस्य ] शरः; बाणः;  
'सन्दधे विशिखं भूमेः क्रुद्धस्त्रिपुरहा यथा—इति भागवते  
(७।१७।१३)। शरवृक्षः; तोमरः; त्रि. [ विगता  
शिखा यस्य ] शिखारहितः; 'विशिखोऽनुपवीती च कृतं  
कर्म न तत्कृतम्—इति स्मृतिः। ४६६

**विशिला** स्त्री. [ वि शोते, 'शीङ् किद् ह्रस्वश्च' इति ख,  
टाप् ] रंथ्या; प्रतोली; [ विशिखान्तराण्यतिपपात  
सपदि जवनैः स बाजिभिः—इति माघे (१५।१७)।  
खनित्री; नालिका। २८९

**विशेषः** पुं. [ वि+शिप्+घञ् ] प्रभेदः; 'प्रजनार्थं महा-  
भागाः पूजार्हा गृहदीप्तयः। स्त्रियः श्रियश्च गृहेषु न

विशेषोऽस्ति कश्चन'—इति मनुः (१।२६) । प्रकारः; व्यक्तिः; तिलकः; सप्तपदार्थान्तिर्गतपदार्थविशेषः; 'द्रव्यं गुणस्तथा कर्म सामान्यं सविशेषकम् । समवायस्तथाभावः पदार्थाः सप्त कीर्तिताः'—इति भाषापरिच्छेदः । अलङ्कारप्रभेदः; 'विशेषः ह्यातमाधारं विनाप्याधेयवर्णनम् । गते सूर्येऽपि दीपस्थास्तमश्छिन्दन्ति तत्कराः । विशेषः सोऽपि यद्येकं वस्त्वनेकत्र वर्ण्यते । अन्तर्बहिः पुरः पश्चात् सर्वदिश्यपि सैव मे । किञ्चिदारम्भतोऽशक्यवस्त्वन्तरकृतिश्च सः । त्वां पश्यता मया लब्धं कल्पवृक्षनिरीक्षणम्'—इति चन्द्रालोकः । पृथिवी; 'विशेषस्तु विकुर्वाणादम्भतो गन्धवानभूत्'—इति भागवते (२।५।२९) । 'विकारैः सहितो युक्तैर्विशेषादिभिरावृतः'—इति भागवते (३।११।४०) । त्रि. अतिशयितः; 'शशाम वृष्ट्यापि विना दवानिरासीद्विशेषा फलपुष्पवृद्धिः'—इति रघौ (२।१४) । १६९, ३०५

विशेषकः पुं. —क्ली. [ विशेष एव । स्वार्थे कन् ] ललाटकृततिलकः; तमालपत्रं; चित्रकं; पुष्पम्; 'विशेषको वा विशिष्ये यस्याः श्रियं त्रिलोकीतिलकः स एव'—इति भाषे (३।६३) । पुं. तिलकवृक्षः; क्ली. पद्यविशेषः; 'द्वाम्यान्तु युग्मकं प्रोक्तं त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकम् । कलापकं चतुर्भिः स्यात् तद्ब्रह्मकुलकं स्मृतम् ।' विशेषमितरि त्रि. । ५४१

विशेषणम् क्ली. [ विशिष्यतेऽनेनेति । वि+शिष्+ल्युट् ] विशेष्यधर्मः; विशेष्यगुणः; अग्रधानं; शेषः । ८८१

विश्रब्धः त्रि. [ वि+श्रम्+क्त ] स्थिरः; अनुद्भूतः; शान्तः; विश्वस्तः; 'विश्रब्धभृत्यः शृङ्गारनामा चाप्यब्रवीत् प्रभोः । तं दृष्ट्वाऽस्तुतीयेऽङ्गि शयनेऽवगणं स्थितम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२।१२१) । अत्यर्थः; गाढः; निविशङ्कः; 'नियुज्यमानो विश्रब्धः किं न कुर्यामिहं प्रियम्'—इति रामायणे (२।१९।५) । ३७०

विश्रम्भः पुं. [ वि+श्रम्+घञ् ] विश्वासः; 'नित्यं पर्यचरत् प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम् । विश्रम्भेणात्मशीचेन गौरवेण दमेन च'—इति भागवते (३।२३।२) । केलिकलहः; प्रणयः; वधः । ७६९

विश्राणनम् क्ली. [ वि+श्रण्+णिच्+ल्युट् ] दानम्; 'कथं नु शक्योऽनुनयो महवविश्राणनाच्छान्द्यपयस्विनीनाम्'—इति रघौ (२।५५) । ४१९

विश्लेषः पुं. [ वि+श्लिष्+घञ् ] विधुरः; अयोगः; 'सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेकमुर्व्याम् । अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव वद्धमीनम्'—इति रघौ (१।३।२३) । ८२४

विश्वः त्रि. [ विश्+क्वन् ] सकलः; सर्वः; समग्रः; समस्तः; कृत्स्नः; निखिलम्; अखिलम्; 'यस्तु विश्वस्य जगतो बुद्धिमाक्रम्य तिष्ठति । तं प्राहुरध्यात्मविदो विश्वजिन्नाम पावकम्'—इति महाभारते (३।२।८।१६) । बहुः; पुं. गणदेवताविशेषः; 'वसुसप्त्यो ऋतुदक्षो कालकामी धृतिः क्रुः । पुरुखा माद्रवाश्च विश्वेदेवाः प्रकीर्तिताः'—इति भरतः । नागरः; स्यूलशरीरव्यष्टधुपहितचैतन्यं; परिमाणविशेषः; 'गुञ्जापण्णवतिस्तोलो दशघ्नं तद्भवेत् पलम् । विश्वा विशपलं प्रोक्तं दिव्यं कोटिगुणं हितत् । सैव कोटिगुणा ब्राह्मी विश्वाः सस्यादिसम्भवाः'—इति ज्योतिष्मती । क्ली. [ विशति स्वकारणमिति । विश् प्रवेशने+ 'अशुप्रपिलटिफणीति' क्वन् ] जगत्; संसारः; 'विश्वं वै ब्रह्म तन्मात्रं संस्रियतं विष्णुमायया । ईश्वरेण परिच्छिन्नं कालेनाव्यक्तमूर्तिना'—इति भागवते (३।१०।१२) । बोलः; शृण्ठी; 'विश्वं महीषधं शृण्ठीनागरं विश्वभेषजम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'शृण्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् । ऊषणं कटुभद्रं च शृङ्गवेरं महीषधम्'—इति भावप्रकाशः ।

७१३  
विश्वकद्रुः पुं. [ विश्वकं सर्वं द्रवति । द्रु गती, मितद्रवादि-त्वाद् द्रु । विश्वं कन्दति, कदि आह्वाने, 'जत्रवादित्वेन साधुः ] मृगयाकुशलकुक्कुरः; मृगव्यकुशलकुक्कुरः; ध्वानः; त्रि. खलः । २८२

विश्वकर्मा [ न् ] पुं. [ विश्वेषु विश्व वा कर्म यस्य ] देवशिल्पी; त्वष्टा; विश्वकृत्; देववर्द्धकिः; 'दृष्ट्वा च विश्वकर्माणं व्यादिदेश पितामहः'—इति महाभारते (१।२।१२।१०) । मुनिभेदः; 'विश्वकर्मा प्रभासस्य पुत्रः शिल्पप्रजापतिः । प्रासादभवनोद्यानप्रतिमाभूषणादिषु । तडागारामकूपेषु स्मृतः सोऽमरवर्द्धकिः'—इति मात्स्ये ५ अध्यायः । चेतनाधातुः; सूर्यः । ८४

विश्वकृत् पुं. [ विश्वं कृतवान् इति । विश्व+कृ+क्विप् ] विश्वकर्मा; 'त्रिषु लोकेषु यत्किञ्चित् भूतं स्थावर-जङ्गमम् । समानयद्दर्शनीयं तत्तदत्र सं विश्वकृत्'—

इति महामारते (१२१२।१३) । ब्रह्मा; 'निवेदितो-  
ऽयाङ्गिरसा सोमं निर्मत्स्यं विश्वकृत् । तारां स्वभर्त्रे  
प्रायच्छदन्तर्वत्नीमवैत्पतिः'—इति भागवते (१।१४।८) ।

८४

विश्वभेषजम् क्ली. [ विश्वेषां भेषजम् ] शुष्ठी; नागरं;  
महोपधं; विश्वा; विश्वम्; 'विश्वभेषजमृद्धीकाचित्र-  
कर्मत्रभाविताः'—इति सुश्रुतः । 'सस्नेहं दीपनं वृष्यमुष्णं  
वातकफापहम् । विपाके मधुरं हृद्यं रोचनं विश्वभेषजम्'  
—इति धरकः । ६१५

विश्वम्भरा स्त्री. [ विश्वं विभर्तीति । भृ+खच्, मुष्,  
टाप् ] पृथिवी; पृथ्वी; 'विश्वम्भरा तद्धरणाच्चा-  
नन्तानन्तरूपतः । पृथिवी पृथुकन्यात्वाद्विस्तृतत्वान्महा-  
मुने'—इति ब्रह्मवैवर्ते । 'विश्वम्भरा भगवती भवतीमसूत  
राजा प्रजापतिसमो जनकः पिता ते'—इति उत्तर-  
रामचरिते १ अङ्के । १५६

विश्वरूपः पुं. [ विश्वमेव रूपं यस्य ] विष्णुः; अच्युतः;  
महादेवः; 'विश्वे देवाश्च यत्तस्मि विश्वरूपस्ततः  
स्मृतः'—इति महामारते (७।२००।१२४) । त्वष्टृ-  
पुत्रः; 'त्वष्टृश्चाप्यात्मजः पुत्रो विश्वरूपो महायशाः'—  
इति विष्णुपुराणे (१।१५।१२२) । त्रि. सर्वरूपः—  
'स सर्वनामा स च विश्वरूपः प्रसीदतामनिष्कृतात्म-  
शक्तिः'—इति भागवते (६।४।२८) । २१

विश्वस्ता स्त्री. [ विफलं श्वसिति स्म । वि+श्वस्+क्त,  
आगमस्य प्रायिकत्वाभेदं ] विषवा; 'स्तनयुगमुक्ता-  
भरणाः कण्टककलिताङ्गयष्टयो देव । त्वयि कुपितेऽपि  
विश्वस्ताः प्रागेव रिपुस्त्रियो जाताः'—इति साहित्य-  
दर्पणे १० परिच्छेदे । विश्वासकर्तारि त्रि. । ४८७

विश्वा स्त्री. [ विश्व+टाप् ] विश्वभेषजं; चुष्ठी; नागरं;  
महोपधं; [ विश्+क्वन्+स्त्रियां टाप् ] अतिविपा;  
शातावरी; विश्वस्या; पिप्पली; दक्षकन्याविशेषः;  
'श्लोधा प्राधा च विश्वा च वनिता कपिला मुनिः'—  
इति महामारते (१।६५।१२) । ६१५

विश्वासः पुं. [ वि+श्वस्+घञ् ] प्रत्ययः; विश्रम्भः;  
आश्वासः; आश्रमः; 'लोभप्रमादविश्वासैः पुरुषो  
नश्यति त्रिभिः । तस्माल्लोभो न कर्तव्यः प्रमादो न न  
विश्वसेत् । सा श्रीर्या न मदं कुर्यात् स सुखी तृष्ण-  
योऽजितः । तन्मित्रं यस्य विश्वासः पुरुषः स जितेन्द्रियः'—

इति गारुडे । 'यस्य यावांश्च विश्वासस्तस्य सिद्धिश्च  
तावती । एतावानिति कृष्णस्य प्रभावः परिभीयते'—  
इति गारुडे । 'न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नाति-  
विश्वसेत् । विश्वासाद्भयमुत्पन्नं मूलादपि निकृन्तति'—  
इति गारुडे । 'नखिनां च नदीनां च शृङ्गिणां शस्त्र-  
पाणिनाम् । विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु  
च । न विश्वसेदविश्वस्ते मित्रे चापि न विश्वसेत् ।  
कदाचित् कुपितं मित्रं गुप्तदोषं प्रकाशयेत्'—इति  
चाणक्यः । ७६९

विषम् क्ली.—पुं. [ विष्+क ] श्वेडः; गरलम्; आह्वेयम्;  
अमृतं; गरदं; कालकूटं; कलाकूलं; हारिद्रं; रक्त-  
शृङ्गिकं; नीलं; गरं; घोरं; हालाहलं; हलाहलं;  
शृङ्गी; भूगरं; जाङ्गलं; तीक्ष्णं; रसः; रसायनं;  
गरः; जङ्गुलं; जाङ्गुलं; काकोलः; वत्सनाभः;  
प्रदीपनः; शौलिकेयः; ब्रह्मपुत्रः । 'पुंसि क्लीवे च  
काकोलकालकूटहलाहलाः । सौराष्ट्रिकः शौलिकेयो  
ब्रह्मपुत्रः प्रदीपनः । दारदो वत्सनाभश्च विषभेदा अमी  
नव'—इति पातालवर्गोऽमरः । 'विषः श्वेडो रसस्तीक्ष्णं  
गरलोऽथ हलाहलः । वत्सनाभः कालकूटो ब्रह्मपुत्रः  
प्रदीपनः । सौराष्ट्रिकः शौलिकेयः काकोली दारदोऽपि  
च । अहिच्छत्रो मेपशृङ्गकुष्ठवालूकनन्दनाः । कैराटको  
हैमवतो मर्कटः करवीरकः । सर्पपो मूलको गौराद्रकः  
सक्तुककर्दमी । अङ्गोल्लसारः कालिङ्गः शृङ्गिको मधु-  
सिक्क्यकः । इन्द्रो लाङ्गलिको विस्फुलिङ्गपिङ्गलगतमाः ।  
मुस्तको दालवश्चेति स्थावरा विषजातयः'—इति  
हेमचन्द्रः । क्ली. [ विष् सेचने+क ] जलं; पद्मकेशरं;  
वोलं; वत्सनाभः; सामान्यविषम्; 'न विषं विषमित्याहु-  
र्ब्रह्मस्वन् विषमुच्यते । देवस्वन् चापि यत्नेन सदा परि-  
हरेत्ततः'—इति कौर्म । 'दुरधीता विषं विद्या अजीर्णं  
भोजनं विषम् । विषं गोष्ठी दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी  
विषम् । विषं चङ्क्रमणं रात्रौ विषं राज्ञोऽनुकूलता ।  
विषं स्त्रियोऽप्यन्यहृदो विषं व्याधिरवीक्षितः'—इति  
चाणक्यः । ६४१, ६४६

विषधरः पुं. [ विषं धरतीति । धृ+अच्, विपस्य धरो वा ]  
सर्पः; 'कालियविषवरगञ्जनजनरञ्जन'—इति गीत-  
गोविन्दे । स्त्रियां विषधरी; 'धावद्घोरदिभावरी-  
विषधरी भोगस्य भीमो मणिः ।' ६४०

विषभिषक् [ञ्] पुं. [ विपस्य भिषक् ] विपवैद्यः;  
जाङ्गुलिकः; जाङ्गलिकः; नरेन्द्रः; कौशिकः; कथा-  
प्रसङ्गः; चक्राटः; व्यालप्राही; जाङ्गुलिः; जाङ्गलिः;  
आहितुण्डिकः; व्यालप्राहः; गारुडिकः; विषघ्नमन्त्र-  
वेत्ता; विपवैद्यचिकित्सकः; 'ओहा' इति भाषा । ६१३  
विषमायुधः पुं. [ विषमाणि अयुग्मानि आयुधानि यस्य ।  
तस्य पञ्चदाणत्वान्तथात्वम् । यद्वा विषमम् अत्युग्रम्  
असह्यम् इत्यर्थः; आयुधं यस्य ] कामदेवः; पञ्चशरः;  
विषमेधुः । ३३

विषमोन्नतः त्रि. [ विषमश्चासौ उन्नतश्च ] गोलोकारः;  
वर्तुलः; स्यपुटः; विषमोन्नतावनतदृषदाद्याकुलः । ७५३  
विषयः पुं. [ विसीयन्ते अत्र, वि+पिञ् बन्धने, 'एरच्',  
'परिनिवीति' षत्वम् । विसिन्वन्ति विषयिणं स्वेन  
रूपेण निरूपणीयं कुर्वन्ति । वि+पि+कर्त्तरि अच् वा ]  
देशः; 'यच्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स  
रामसायकः । अप्रविष्टविषयस्य रक्षसां द्वारतामभव-  
दन्तकस्य तत्'—इति रघौ (११।१८) । चक्षुरादि-  
ग्राह्यः; शब्दस्पर्शरूपरसगन्धरूपः; गोचरः; इन्द्रि-  
यार्थः; अव्यक्तः; शुकः; जनपदः; कान्तादिः;  
नियामकः; 'विशब्दो हि विशेषार्थः सिनोतेर्बन्ध  
उच्यते । विशेषेण सिनोतीति विषयोऽनोनियामकः'—  
इति भट्टकारिका । आरोपाश्रयः; 'सारोपान्या तु  
यत्रोन्नती विषयी विषयस्तथा । विषय्यन्तः कृतेऽन्यस्मिन्  
सा स्यात् साध्यवसानिका ।' २८४

विषयग्रामः पुं. [ विषयाणां ग्रामः सङ्घः ] इन्द्रियसमूहः;  
करणग्रामः । ८८१

विषाणम् पुं. -बली. [ व्यस्ति, वि+अस्, 'ताञ्छील्यबयोवच-  
नेति' चानश्, 'इनसोरल्लोपः', 'उपसर्गप्रादुरिति' षत्वम् ]  
हस्तिदन्तः; 'न जातु वैनायकमेकमुद्भूतं विषाणप्रघापि  
पुनः प्ररोहति'—इति भाषे (१।६०) । पशुशृङ्गम्  
(२६७) ; 'क्षिपसि शुकं वृषदंशकवदने मृगमर्षयसि  
मृगादनरदने । वितरसि तुरगं महिषविषाणे निदधञ्चेतो  
भोगविताने'—इति साहित्यदर्पणे (१०) । कौलदन्तः;  
वराहदन्तः; विशेषेण मददातरि त्रि. । 'विषाणं परिपान-  
मन्ति ते'—इति ऋग्वेदे (५।४।११) । 'विषाणं  
विशेषेण मदस्य दातारम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । २१७  
विष्कम्भः पुं. [ विष्कम्भाति रणद्वीति । वि+ष्कम्भ्+

अच् ] प्रतिबन्धः; रूपकाङ्गप्रभेदः; योगिनां बन्धभेदः;  
वृक्षः; अर्गलः; विस्तारः; 'उच्छ्रायोऽङ्गुलतुल्यो  
द्वारस्यार्द्धेन विष्कम्भः'—इति बृहत्संहितायाम् (५३-  
२४) । सप्तविंशतियोगान्तर्गतप्रथमयोगः । शुभकर्मणि  
तस्य पञ्च दण्डास्त्यात्या, यथा—'त्यजादौ पञ्च  
विष्कम्भे सप्त शूले च नाडिकाः । गण्डव्याघातयोः षट्  
च नव हर्षणवज्रयोः । वैधृतिव्यतिपातौ च समस्तौ  
परिवर्जयेत्'—इति सत्कृत्यमुक्तावली । 'विष्कम्भ-  
योगो यदि जन्मकाले कार्ये स्वतन्त्रो मनुजस्तदानीम् ।  
सुहृत्कलत्रालमजसौख्यमुग्रं गृहस्य निर्माणविधौ समर्थः'—  
इति कोष्ठीप्रदीपः । ७६९

विष्किरः पुं. [ विकिरतीति । वि+कृ विक्षेपे+इगुपधेति'  
क । 'विष्किरः शकुनिर्विकिरो वा' इति मुट्, 'परि-  
निविन्म्यः' इति षत्वम् ] पक्षी; तित्तिरिमयूरकुक्कुटादयः ।  
'लावाद्या वैष्किरो वर्गः प्रतुदा जाङ्गला मृगाः । लघवः  
शीतमधुरा सकषाया हिता नृणाम्'—इति राजवल्लभः ।  
'वर्तकालावविकिरकपिञ्जलकतित्तिराः । कलिङ्गकुक्कु-  
टाद्याश्च विष्किराः समुदाहृताः । विकीर्य भक्षयन्त्येते  
यस्मात्तस्माद्धि विष्किराः ।' 'विष्किरा मधुराः शीताः  
कषायाः कटुपाकिनः । वल्या वृष्यास्त्रिदोषघ्नाः पथ्यास्ते  
लघवः स्मृताः'—इति भावप्रकाशः । २३८

विष्टपम् बली. -पुं. [ 'विटपविष्टपविशिपोलपाः' इति  
विष् घातोः कपन् प्रत्ययेन साधु ] भुवनं; पिष्टपं;  
पिष्टपः; 'बाष्पभिन्नहृदया निपेतुषी सा स्वकाननभुवं  
न केवलाम् । विष्टपत्रयपराजयस्थिरां रावणश्रियमपि  
व्यकम्पयत्'—इति रघौ (११।१९) । १३३

विष्टम्भः पुं. [ वि+स्तम्भ्+अच् ] प्रतिबन्धः; विष्क-  
म्भः; 'स वृष्टिविष्टम्भप्रहोपशमनः'—इति भागवते  
(५।२२।१२) । रोगविशेषः; स तु आनाहुरोगः । त्रि.  
विशेषेण स्तम्भयिता 'दिवो विष्टम्भ उपमो विचक्षणः'  
—इति ऋग्वेदे (१।८।२५) । ७६९

विष्टरः पुं. [ विस्तार्यते इति । वि+स्तृ+अप्, 'वृक्षासन-  
योर्विष्टरः'—इति निपातनात् षत्वम् ] वृक्षः; अर्हपः;  
अङ्घ्रिपः; क्षितिरुहः; शिखरी; शाखी; शालः;  
वनस्पतिः; अगः; विटपः; विटपी; कुठः; कुटः;  
अद्रिः; कुजः; तरुः; अनोकहः; हुः; नगः; हुमः;  
पादपः । (३।१०) पीठम्; आसनं; कुशासनान्दिग्रहः;

'काञ्ची गुणोल्लसच्छोणि हृदयाम्भोजविष्टरम् ।  
दर्शनीयतमं शान्तं मनोनयनवर्द्धनम्'—इति भागवते  
(३।२८।१६) । दर्भमुष्टिः; 'ऊर्द्ध'वकेशो भवेद् ब्रह्मा  
लम्बकेशस्तु विष्टरः । दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु  
विष्टरः । 'दर्भसंख्या न विहिता विष्टरास्तरणेष्वपि ।'  
'पञ्चाशद्भिर्भवेद् ब्रह्मा तदद्धेन तु विष्टरः'—इति छन्दोग-  
परिशिष्टम् । १७७

विष्टरभवाः [ स् ] पुं. [ विष्टराविव दर्भमुष्टीव श्रवसी  
कर्णो श्रवः यशो वा यस्येति । विष्टरेऽश्वत्थवृक्षे श्रूयते  
नित्यं तत्र वसतीति । असुन्नन्तः ] विष्णुः; अच्युतः;  
'उत्पाद्य वृक्षं दैत्येन्द्रः शतशाखं महाशिखम् । तेन तं  
पोथयामास विष्टरस्रवसं प्रभुम्'—इति हरिवंशे  
भविष्यपर्वणि (५।१।१७) । २४

विष्टा स्त्री. [ विविधप्रकारेण तिष्ठति उदरे इति ।  
वि+स्था+क । उपसर्गादिति षः ] पुरीषम्; उच्चारः;  
अवस्कारः; शमलं; शकृत्; गूथं; वर्चस्कं; विट्;  
वर्चः; अमेध्यं; दूर्यं; कल्लं; मलं; किट्टं; पूतिकम् ।  
'गुरोहितं प्रकर्तव्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः । अहिता-  
चरणादेव विष्टायां जायते क्रिमिः'—इति कृष्णा-  
नन्दोयतन्त्रसारे । ६३७

विष्णुः पुं. [ वेवेष्टि व्याप्नोति विश्वं यः । विष्णुं व्याप्तौ,  
'विषेः किञ्च' इति नु । वेपति सिञ्चति आप्यायते  
विश्वमिति वा । विष्णाति विद्युनक्ति भक्तान् माया-  
पसारेण संसारादिति वा । विशति सर्वभूतानि, विशन्ति  
सर्वभूतानि यत्र वा । 'यस्माद्विश्वमिदं सर्वं तस्य शक्त्या  
महात्मनः । तस्मादेवोच्यते विष्णुविशयातोः प्रवेशनात्'—  
इति विष्णुपुराणे । 'बृहत्वाद्द्विष्णुरुच्यते'—इति महा-  
भारते (५।७।०।३) च ] नारायणः; कृष्णः; वैकुण्ठः;  
विष्टरभवाः; दामोदरः; हृषीकेशः; केशवः; माधवः;  
स्वभूः; दैत्यारिः; पुण्डरीकाक्षः; गोविन्दः; गरुडह्वजः;  
पीताम्बरः; अच्युतः; शाङ्गी; विष्वक्सेनः; जनार्दनः;  
उपेन्द्रः; इन्द्रावरजः; चक्रपाणिः; चतुर्भुजः; पद्मनाभः;  
मधुरिपुः; वासुदेवः; त्रिविक्रमः; देवकीनन्दनः;  
शौरिः; श्रीपतिः; पुष्योत्तमः; वनमाली; बलिध्वंसी;  
कंसारातिः; अधोसजः; विश्वम्भरः; कैटभजित्;  
विधुः; श्रीवत्सलाञ्छनः; पुराणपुरुषः; वृष्णिः;  
शतघामा; गदाप्रजः; एकशृङ्गः; जगन्नाथः; विश्व-

रूपः; सनातनः; मुकुन्दः; राहुभेदी; वामनः; शिव-  
कीर्तनः; श्रीनिवासः; अजः; वासुः । २१

विष्णुपदम् क्ली. [ विष्णोः पदम् ] आकाशम्; 'चसुन्धरा  
विष्णुपदं द्वितीयम्, अघ्यारुरोहेव रजश्छलेन'—इति  
रघुवंशे (१६।२८) । क्षीरोदः; पद्मं; तीर्थविशेषः;  
'तत्र विष्णुपदे स्नात्वा अर्चयित्वा च वामनम् । सर्वपाप-  
विशुद्धात्मा विष्णुलोकं स गच्छति'—इति महाभारते  
(७।८३।१५) । कैलासपर्वतस्य स्थानविशेषः; 'अत्र  
विष्णुपदं नाम क्रमता विष्णुना कृतम्'—इति महाभारते  
(५।११।१।२२) । पर्वतविशेषः; 'तेन चित्ररथेनाथ  
तदा विष्णुपदे गिरौ'—इति हरिवंशे (३।१।४३) ।  
विष्णोः स्थानम्; 'अपुण्यपुण्योपरमे क्षीणाशेषापत्तिहेतवः ।  
यत्र गत्वा न शोचन्ति तद्विष्णोः परमं पदम् । धर्म-  
ध्रुवाद्यास्तिष्ठन्ति यत्र ते लोकसाक्षिणः । तत्सार्ष्ट्योत्पन्न-  
योगेद्वास्तद्विष्णोः परमं पदम् । यत्रैतदेतं प्रोतं च यद्भूतं  
सचराचरम् । भाव्यं च विद्वं मैत्रेय तद्विष्णोः परमं  
पदम् । दिवीव चक्षुराततं विततं तन्महात्मनाम् ।  
विवेकज्ञानवृद्धं च तद्विष्णोः परं पदम्'—इति विष्णु-  
पुराणे । १३७

विष्णुपदी स्त्री. [ विष्णोः पदं स्थानं यस्याः । गीरादित्वाद्  
ङीप् ] गङ्गा; भागीरथी; सुरसरित्; जाल्हीवी;  
मन्दाकिनी; त्रिपयगा; सरिद्वरा; त्रिदशदीर्घिका;  
सुरदीर्घिका; वियद्गङ्गा; 'इति व्यवच्छिद्य स पाण्ड-  
वेयः प्रायोपवेशं प्रति विष्णुपद्याम् । दध्यौ मुकुन्द्राङ्घ्रि-  
मनन्यभावो मुनिव्रतो मुक्तसमस्तसङ्गः'—इति भागवते  
(१।१९।७) । ६७३

विष्वक् अव्य. [ विपु साम्येनाञ्चति । 'ऋत्विगिति'  
क्विन् ] परितः; सर्वतः; समन्तात्; समन्ततः;  
'कृतान्त इव लोकानां युगान्तसमये यथा । विष्वग्वि-  
वर्द्धमानं तमिपुमात्रं दिने दिने'—इति भागवते  
(६।१।१३) । क्ली. विपुवम्; विष्वम् अञ्चति इत्यर्थे  
त्रि. । 'युधि तुरगरजोविधुर्भ्रविष्वक्कचलुलितश्रमवार्य-  
लङ्कृतास्ये'—इति भागवते (१।१।३४) । ८७४

विष्वक्सेनः पुं. [ विष्वक्, उगित्त्वान्ङीप्, विपूची सेना  
यस्य । चत्वरस्यासिद्धत्वाद् गान्तत्वेन गकारव्यवधानात्  
पः ] विष्णुः; जनार्दनः; अच्युतः; 'साम्यमाप  
कमलासखविष्वक्सेनसेवितयुगान्तपयोधेः'—इति माघे

(१०५५) । विष्णोर्निर्मात्यघारी; 'निर्मात्यघारी विष्णोस्तु विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः'—इति कालिकापुराणे । त्रयोदशमनुः; 'ततश्च मेरुसावर्णः ब्रह्मसूनुर्मनुः स्मृतः । ऋतुरच ऋतुघामा च विष्वक्सेनो मनुस्तथा'—इति भात्स्ये । २१

विसम् क्ली. [ विस्यति, विस् प्रेरणे, 'इगुपधेति' क ] मृणालम्; 'नयविसकिसलयकवलनकषायकलहंसकलरवो यत्र । कमलवनेषु प्रसरति लक्ष्म्या इव नूपुरारावः'—इति कलाविलासे (६) । ६८२

विसंवादः पुं. [ वि+सम्+वद्+घञ् ] विप्रलम्भः; विप्रलापः; 'अद्वोहमविसंवादं प्रवर्तन्ते तदाश्रयाः'—इति महाभारते (१२।२५०।११) । ७४८

विसकण्ठिका स्त्री. [ विससदृशः शुभ्रः कण्ठः यस्या इति । बहुव्रीही कन्, टापि अत इत्वम् ] बलाका; विसकण्ठी । २५०

विसप्रसूनम् क्ली. [ विसस्य प्रसूनं पुष्पम् ] कमलं; विसकुसुमं; पद्मं; विसपुष्पम्; अम्बुजम् । ६७९

विसरः पुं. [ विसरतीति । वि+सृ+पचाद्यच् ] समूहः; प्रसरः । ६८६

विसर्गः पुं. [ वि+सृज्+घञ् ] मोक्षः; मुक्तिः; मलनिर्गमः; वचः; दानम्; 'आदानं हि विसर्गयि सतां जलमुचामिदं'—इति रघुवंशे (४।८६) । त्यागः; 'नानाशस्त्रविसर्गैस्तैर्वैभ्यमानः समन्ततः'—इति महाभारते (१।३२।१३) । विसर्जनीयः; 'अः सर्गो रसना वक्त्रं विसर्गंश्च द्विविन्दुकः । नादोऽङ्घ्रिन्दुरङ्घ्रमात्रा कला राशी सदाशिवः । अनुच्चार्या तुरीया च विश्वमातृकला परा'—इति बीजाभिधानम् । सूर्यस्यायनभेदः; विसृष्टः; विशेषसृष्टिः; 'पुरुषानुगृहीतनामेतेषां वासनामयः । विसर्गोऽयं समाहारो बीजाद्वीजं चराचरम्'—इति भागवतम् । ८३५

विसारः पुं. [ विशेषेण सरतीति । सृ गती+व्याधि-मत्स्यबलेस्त्विति वक्तव्यम् इत्युक्त्या घञ् ] मत्स्यः; मीनः; झपः । ६५७

वितिनी स्त्री. [ विसमस्त्यस्या इति । विस+पुष्करा-दिभ्यश्च' इति इनि, डीप् ] पद्मिनी; नलिनी; मृणालम् । ६८२

विस्तरः पुं. [ वि+स्तृ+प्रथने वाकशब्दे' इति घञ्प्रति-

षेधे 'ऋदोरप्' इत्यप् ] आयामः; विस्तारः; 'प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे'—इति गीतायाम् (१०।१९) । शब्दस्य विस्तृतिः; 'सुविस्तरतरा वाचो भाष्यभूता भवन्तु मे'—इति माधे (२।२४) । वेदाङ्गम्; 'सान्दीपनेः सकृत्प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम्'—इति भागवते (३।३।२) । प्रणयः; पीठः; समूहः; त्रि. बहुः; 'अपेक्षितं परित्यज्य नीरसं वस्तु विस्तरम् । यदा सन्दर्शयेच्छेषमामुखानन्तरं तदा'—इति साहित्य-दर्पणे (६।३।१४) । ७६६

विस्तारः पुं. [ वि+स्तृ+प्रथने वाकशब्दे' इति घञ् ] विटपः; (७६६) विस्तीर्णता; विग्रहः; व्यासः; 'वंशावलम्बनं यद्यो विस्तारो गुणस्य यावन्ततिः । तज्जालस्य खलस्य च निजाङ्गसुप्तप्रणाशाय'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५८) । स्तम्भः । १८१

विस्तीर्णः त्रि. [ वि+स्तृ+क्त, 'रदाम्यामिति' न ] विपुलम्; 'विस्तृतं विकटं बद्धं विशालं विपुलं पृथु'—इति जटाधरः । 'पर्णानि स्वर्णवर्णानि विस्तीर्णा-कर्णलोचने । तूर्णमानोयतां तूर्णं पूर्णंचन्द्रनिभानने'—इत्युद्भटः । ६९९

विस्फारः पुं. [ वि+स्फृ+घञ् । 'स्फुरतिस्फुल्लयोर्धञि' इत्यात्वम् ] धनुर्गुणशब्दः; धनुर्ध्वनिः; विष्फारः; 'विस्फारस्तस्य धनुषो यन्त्रस्यैव तदा वशी'—इति महाभारते (३।२७९।३६) । विस्तृतिः; 'विस्फारश्चेतसो यस्तु स विस्मय उदाहृतः'—इति साहित्यदर्पणे (३।२०७) । १५१

विस्फुलिङ्गः पुं. [ विशिष्टः स्फुलिङ्गः ] विपविशेषः; विषभेदः । अतिनकणा । ६४७

विस्मयः पुं. [ वि+स्मि+एरच्' इत्यच् ] स्थायिभावः; 'विविधेषु पदार्थेषु लोकसीमातिवर्तितु । विस्फारश्चेतसो यस्तु स विस्मय उदाहृतः'—इति साहित्यदर्पणम् । (७४५) चित्रम्; अद्भुतम्; आश्चर्यं; चोद्यम्; अहोः; हीः; 'अद्भुतो विस्मयस्थायिभावो गन्धर्वदैवतः । पीतवर्णो वस्तु लोकातिगमालम्बनं मतम्'—इति भावरासयोः पर्वयत्वमद्भुतस्य विस्मयस्थायिभावात्मकत्वात्—इति भरतः । दर्पः; 'यसोऽनृतेन क्षरति तपः क्षरति विस्मयात्'—इति मनुः (४।२३७) । सन्देहः; [ विगतः स्मयो गर्वो यस्येति ] नष्टगर्वं त्रि. । 'तं वीरमारदादिभि-



पद्य विस्मयः शयित्यसे वीरवाये स्वभिर्वृतः—इति भागवते (३।१७।३०) । ९१

विह्वलम् क्ली. [ विस् प्रेरणे, 'स्फायितञ्चीति' बाहुलकाद् रक् । विस् उत्सर्गं इत्यतो वा ] आमगन्धः; इदं चिन्ता-धूमादिगन्धे अपववमांसगन्धे च । 'समाश्लिष्यच्च घावित्वा सिञ्चन् धाराश्रुभिः स तम् । मीनोदरदरी-वासवित्प्रं प्रक्षालयन्निव'—इति कथासरित्सागरे (७।४।१९६) । तद्विशिष्टे त्रि. । 'अहमेनं न शक्नोमि प्रहीतुं विस्त्रिपिच्छलम्'—इति कथासरित्सागरे (८।२।७) ।

६३१

विह्वल्यः त्रि. [ वि+स्रम्भु विश्वासे+कर्तरि भावे वा क्त ] विश्रवः; विश्वस्तः; 'विस्रव्वं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीम् ।' ३७०

विह्वल्यः पुं. [ वि+स्रम्भु+घञ् ] विश्वासः; 'विस्रम्भा-दुरसि निपत्य लब्धनिद्राम्'—इति उत्तररामचरिते १ । प्रणयः; परिचयः शृङ्गारप्रार्थना च; 'परिचय-प्रार्थनयोः प्रणयः परिकीर्तितः'—इत्यमरमाला । शीडा-पारतन्त्र्यम्; 'विजनेऽपि वने सीता दासं प्राप्य गृहेष्विव । विस्रम्भं लभतेऽभीता रामे विन्यस्तमानसा'—इति रामायणे (२।६०।७) । केलिकलहः; वधः । ७६९

विह्वल्यः स्त्री. [ विस्त्रंसतेऽनया । संसु अधःपतने, भिदाद्यञ्, टाप् ] जरा; वार्धकम् । ५०३

विह्वल्यः पुं. [ विहायसा गच्छतीति । विहायस्+गम्+अन्तात्यन्ताप्वेति' ङ, 'ङे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः' विहायः शब्दस्य विहादेशः ] पत्नी; 'सुपणवत्सा दिहगाश्चरं वाऽश्चरमेव च'—इति भागवते (४।१८।२४) । बाणः; 'अयोमुखैश्च विहगैर्द्रावियिष्ये महारथान्'—इति महाभारते (७।१९३।४०) । सूर्यः; चन्द्रः; ग्रहः । २३७

विह्वल्यः पुं. [ विहायसा गच्छतीति । 'गमश्चेति' खच्, 'विहायसो विह च' इति विहादेशः; 'खच्च द्विधा वस्तव्यः' इति ङिञ्च ] पत्नी; 'सैकान्ते मुनिकन्यामि-स्तदापोजितवृक्षकम् । विश्वासाय विहङ्गानामालवा-लाम्बुपायिनाम्' इति रघौ (१।५१) । बाणः । 'त्वत्प्रेरितैर्लोहिताङ्गैर्विहङ्गैः'—इति महाभारते (८।६६।३५) । मेघः; चन्द्रः; सूर्यः; नागविशेषः; 'विहङ्गःशरभो मेघः प्रमोदः संहतोपमः'—इति महाभारते

(१।५।११) । २३७

विह्वल्यः पुं. [ विहायसा गच्छतीति । 'खच्प्रकरणे गमेः सुप्युपसंख्यानम्' इति काशिकोक्त्या खच्, पक्षे ङित्वाभावः; 'विहायसो विह च' इति विहादेशः ] पत्नी; 'आक्रम्य रत्नान्यहरत्कामरूपी विहङ्गमः'—इति महाभारते (३।२७।३९) । सूर्यः; 'छन्दो-भिरद्वरूपैश्च सङ्घुक्तेर्विहङ्गमम्'—इति मार्कण्डेये (१०९।१७) । २३७

विह्वल्यः स्त्री. [ विहायसि स्कन्धलम्बमानत्वेनाधरे गच्छति । विहङ्गम+टाप् ] भारयष्टिः; विहङ्गिका ।

७५८

विह्वल्यराजः पुं. [ विहङ्गानां राजा । 'राजाहःसखि-म्यष्टच्' ] गरुडः; 'विहङ्गराजाङ्गरुहैरिवायतैर्हिरण्ययो-र्वीरुहवल्लितन्तुभिः'—इति माघे (१।७) । ३०

विह्वल्यिका स्त्री. [ विहङ्ग+संज्ञायां कन्, टाप्, इत्वम् ] भारयष्टिः; विहङ्गमा । ७५८

विह्वल्यः त्रि. [ व्यग्रौ हस्तौ यस्य ] व्याकुलः; 'रामा-परिभ्राणविह्वल्ययोषं सेनानिवेशं तुमुलं चकार'—इति रघौ (५।४९) । पण्डितः; 'नानायुधविह्वल्यानां त्वरि-तानां प्रवावताम् । श्वेडितोत्कृष्टनिनदगैर्जवृहित-निस्त्वनैः'—इति हरिवंशे (२३।७।२८) । [ विगती हस्तौ यस्य ] विकरः; हस्तरहितः; हस्तहीनः; 'विगतरथ-विह्वल्यस्तशस्यप्रभतस्वलितगतिभयातान् नैव जातु प्रहर्ता'—इति विख्यातविजये २ अङ्के । पण्डे पुं. । ३८२

विह्वल्यः क्ली. [ वि+हा+णिच्+क्त ] विश्राणनं; विश्राणनम्; अंहतिः; अपवर्जनं; कितरणं; निर्वपणं; स्पर्शनम्; उत्सर्गः; प्रदेशनं; दानम् । ४१९

विह्वल्यः [ स् ] क्ली. -पुं. [ विशेषेण हाययति गमयति विमानादीन् । ह्य् गतो, ष्यन्तादसुन् । विजहाति भुवम् वा ] आकाशः; 'कान्तायते स्पर्शसुखेन वारि वारीयते स्वच्छतया विहायः'—इति साहित्यदर्पणे (१०) । पुं. पत्नी (२३७); त्रि. महान्; 'विहायसस्तेभिरिन्द्रम्' इति निरुक्ते (४।१५) 'विहायसो महान्तः'—इति यास्कः । 'तद्वाजी वाजम्भरो विहायाः'—इति ऋग्वेदे (४।११।४) । 'विहायाः महान्'—इति तद्भाष्ये सायणः । १३७

विहायसम् क्ली. -पुं.—आकाशः; 'आत्तिष्ठस्व रथं राजन् विक्रमस्य विहायसम्'—इति महाभारते (१।९३।१४) ।

पुं. पक्षी (२३७) । १३७

विहायसा अव्य.— आकाशः । १३७

विहारः पुं. [ वि+हृ+घञ् ] क्रीडार्थं पद्भ्यां गमनं; परिक्रमः; 'यञ्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासन्-भोजनेषु'—इति गीतायाम् (११।४२) । भ्रमणं; स्कन्वः; लीला; प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले—इति रघौ (६।४८) । सुगतलयः; विन्दुरेसकपक्षी; वैजयन्तः ।

७२६

विह्वलः त्रि. [ वि+ह्वल्+ञच् ] मयादिनाभिभूतः; स्वाङ्गधारणाशक्तः; विकलवः; 'क्षणमात्रसखीं सुजातयोः स्तनयोस्तामवलोक्य विह्वला । निमिमौल नरोत्तमप्रिया हुतचन्द्रा तमसैव कौमुदी'—इति रघौ (८।३७) । विलीनम् । ३८६

घोकाशः पुं. [ विकशनमिति । वि+कश्+घञ् । 'इकः काशे' इति वेरूपसर्गस्य दीर्घः ] प्रकाशः; स्फुटः; रहः ।

८३७

वीह्वल स्त्री. [ वीह्वनमिति । वि+इह्वल्+गुरोश्च हल्' इति अ, टाप् ] गतिः; विहारः; परिसर्पः; परिक्रमः; गतिभेदः; नर्तनम्; अश्वगतिभेदः; सन्धिः । ७२६  
वीचिः पुं. — स्त्री. [ वयति जलं तटे वद्धंयतीति । वे+वेजो डिच्च' इति ईचि, स च डित् ] तरङ्गः; 'सरसीष्वर-विन्दानां वीचिविक्षोभशीतलम् । आमोदमुपजिघ्रन्ती स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति रघुवंशे (१।४३) । स्वल्पतरङ्गः; अवकाशः; सुखम्; अल्पः; किरणः ।

६५३

वीची स्त्री. [ वीचि+कृदिकारादिति डीप् ] वीचिः; 'सरःषु नलिनीच्छत्रनिस्तरविरश्मिषु । हंसांसाक्षिप्त-कह्लारवीचीविमलवारिषु'—इति बृहत्संहितायाम् (५६।४) । ६५३

वीणा स्त्री. [ वेति दृष्टिमात्रमपगच्छतीति । वी गती, 'रास्नासास्नास्थूणावीणाः' इति न, निपातनाद् गुणाभावो णत्वं च । वेति श्रोतुश्चित्तं व्याप्नोतीति । वी व्याप्ती+न ] वाद्यविशेषः; वल्लकी; विपञ्ची; सप्त-तन्त्रीयुक्ता परिवादिनी; ध्वनिमाला; वङ्गमल्ली; विपञ्चिका; धोषवती; कण्ठकृष्णिका; 'सप्तपर्वयः सप्त चाप्यहृणानि सप्ततन्त्री प्रथिता चैव वीणा'—इति महाभारते (१।१३।१४) । विद्युत् । ९६

वीतम् क्ली. [ वेति स्म, वी+क्त ] हस्तिपकपादसंकेते-नाङ्कुशेन च गजप्रेरणं; यतयाते; निपादिपादाङ्कुश-कर्म; 'निर्धूतवीतमपि बालकमुल्ललन्तं यन्ता क्रमेण परिसान्त्वन्तर्जनाभिः'—इति माघे (५।४७) । असार-हृत्स्यश्वं, युद्धाक्षममित्यर्थः । सांख्योक्तानुमानविशेषः; 'प्रथमं तावद् द्विविधं वीतमवीतं च । अन्वयमुखेन प्रवर्तमानं विषायकं वीतम्' । त्रि. कमनीयः; 'तं शश्वतीषु मातृषु वन आ वीतमश्रितम्'—इति ऋग्वेदे (४।७।६) । 'वीतं कान्तम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । त्रि. [ विशेषेण एति स्म । वि+इण्+क्त ] शान्तः; गतः; 'स मृण्मये वीतहिरण्यमयत्वात् पात्रे निघायाधर्ममनर्घ्यशीलः'—इति रघौ (५।२) । २२२

वीतरागः पुं. [ वीतो गतो रागो विषयवासना यस्य ] जिनेन्द्रः; अर्हन्; केवली; त्रिकालवित्; बुद्धः; त्रि. विगतरागः; 'दुःखेष्वनुद्धिनमनाः सुखेषु विगतस्मृहः । वीतरागमयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते'—इति भगवद्-गीतायाम् । 'वीतरागश्च पुत्रस्ते परमात्मा भविष्यति । महेश्वरप्रसादेन नैतद्वचनमन्यथा'—इति महाभारते (१२।३४९।४७) । ८६

वीतिहोत्रः पुं. [ वी गतिकान्त्यसनस्वाधनेषु+कर्मणि क्तिन् । वीतिः पुरोडाशादिः हूयते अस्मिन्निति । 'हुयामाश्रुभसिम्यस्त्रन्' इति त्रन् । अथवा वीतये पानाय होत्रं हव्यं यस्य ] अग्निः; वह्निः; अनलः; सूर्यः; 'अस्मिस्तु वीतिमारुढे वीतिहोत्रसमे नृपे'—इति राजतरङ्गिण्याम् (७।३७७) । प्रियव्रतपुत्रान्यतमः; भागवते (५।१।२५) । राजविशेषः; 'रक्षोवाहान् वीतिहोत्रान् त्रिगर्तान् मातिकावतान्'—इति महाभारते (७।६८।१०) । हैहयवंशीयरजविशेषः; 'तेषां कुले महाराज हैहयानां महात्मनाम् । वीतिहोत्रः सुजातश्च भोजस्त्वावन्तयः स्मृताः'—इति हरिवंशे (३३।५०) । त्रि. प्राप्तयज्ञः; 'कर्म देवा आवहानाशु होमको मंसते वीतिहोत्रः सुदेवः'—इति ऋग्वेदे (१।८।१।१८) । 'वीतिहोत्रः प्राप्तयज्ञः । वीतिहोत्रः, वी गत्यादियु अस्मात् कर्मणि मन्त्रे वृषेत्यादिना क्तिन् स चोदात्तः । होत्रं होमः, हुयामाश्रुभसिम्यस्त्रन् इति त्रन् प्रत्ययः । वीतिः प्राप्तो होमो येन, बहुव्रीही पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । कान्तयज्ञः; 'नूनं देवम्यो

विदधाति रत्नमयाभजद्वीतिहोत्रं स्वस्ती—इति ऋग्वेदे (२।३।८।१) 'वीतिहोत्रं कान्तयज्ञं यजमानं स्वस्ती अविनाशे क्षेमे आ अमजद्भागिनं करोतु'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६४

वीथिः स्त्री. [ विध्यतेऽनया । विथ्+इगुपवात् किदि'तीन्, वाहुलकादीर्घः ] वीथी; 'पङ्क्तिवर्त्मगृहाङ्गेषु वीथिवीथी च वीथिका'—इति रत्नकोषः । 'तद्विना नगरं कुत्र पवित्राः सुलभा भुवि । सुभगाः सिन्धुसम्भेदाः क्रीडावसथ-वीथिषु'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।३६२) । वर्त्म; 'चिरं खलु खिलीभूताः कृतज्ञत्वस्य वीथयः । धीर त्वयैव न त्वासु सञ्चारो यदि दश्यते'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (३।३०७) । ७२१

वीथी स्त्री. [ वीथि+वाङीष् ] पङ्क्तिः; आली; श्रेणी; आवली; वीथिः; राजी; गृहाङ्गम्; 'तावप्युभौ सुवचनौ जगन्मुमाल्यकारणात् । वीथीं माल्यापणानां वै गन्वाघ्रातौ द्विपाविब'—इति हरिवंशे (८३।१८) । नाट्यरूपकः; वर्त्म; 'वीथीं कुर्वन् महाबाहुद्रावियन् मम वाहिनीम् । नृत्यन्निव गदापाणिर्गुगान्तं दर्शयिष्यति'—इति महाभारते (५।५।१।३२) । ७२१

वीध्रः त्रि. [ वि+इन्+क्रन् ] विमलः; शुचिः; मेघ्यः; पवित्रः; पुण्यः; पावनः; क्ली. [ विशेषेण इन्वते दीप्यते इति । वि+इन्+वाक्निवे' इति क्रन् ] नभः; 'वीध्रे सूर्यमिय सर्पन्तं मा पिशाचं तिरस्करः'—इति अथर्व-वेदे (४।२०।७) । वायुः; अग्निः । १३२

वीरः पुं. [ वीरयतीति, वीर विक्रान्तो+पचाच्च । यद्वा विशेषेण ईरयति दूरीकरोति शत्रून् । वि+ईर्+इगुपवात् क । यद्वा अजति क्षिपति शत्रून् । अज्+स्फायितञ्चोत्यादिना' रक्, अजेर्वी ] शृङ्गाराद्यष्ट-रसान्तर्गतरसविशेषः; उत्साहवर्द्धनः; 'उत्तमप्रकृतिवीर उत्साहस्यापिभावकः । महेन्द्रदेवतो हेमवर्णोऽयं समुदाहृतः' । (३।५४) शौर्यविशिष्टः; दूरः; विक्रान्तः; गण्डीरः; तरस्वी; 'मृगराजो वृक्षश्चैव बुद्धिमानपि मूपिकः । निर्जिता यत्त्वया वीरास्तस्माद्वीरतरो भवान्'—इति महाभारते (१।१४।१।४५) । 'वीरान्मा नो रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमि त्वा हवामहे'—इति ऋग्वेदे (१।११।४।८) । पतिः; पुत्रः; 'वीरैः स्याम सधमादः'—इति ऋग्वेदे (५।२०।४) । 'वीरैः पुत्रैश्च सधमादः

सह माद्यन्तः स्याम तथा कुरु'—इति तद्भाष्ये सायणः । 'न चालपेज्जनद्विष्टां वीरहीनां तथा स्त्रियम् । गृहा-दुच्छिष्टविष्मूत्रपादाम्भांसि क्षिपेद्वहिः'—इति मार्कण्डेये (३।५।३१) । 'अवीरा निष्पत्तिमुता'—इत्यमरः । दनायु-दैत्यपुत्रः; 'दनायुषः पुनः पुत्राश्चत्वारोऽमुरपुङ्गवाः । विकसरो बलवीरो च वृक्षश्चैव महासुरः'—इति महा-भारते (१।६।५।३३) । जिनः; नटः; विष्णुः; 'वीरोऽनन्तो घनञ्जयः'—इति विष्णुसहस्रनाम । तान्त्रिकभावविशेषः; 'तत्रैवं त्रिविधो भावो दिव्यवीर-पशुक्रमः । दिव्यवीरैकजः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः'—इति रुद्रयामले ११ पटलः । तण्डुलीयः; वराहकन्दः; लताकरञ्जः; करवीरः; अर्जुनः; यज्ञाग्निः; उत्तरः; सुभटः; वीराचारविशिष्टः; 'कुलाचाररतो वीरः कुल-सङ्गी सदा भवेत्'—इत्युत्पत्तितन्त्रम् । त्रि. श्रेष्ठः; कर्मठः; 'इमं वा वीरो अमृतं वीरं कृष्वीत मर्त्यः'—इति ऋग्वेदे (८।२३।१९) । 'वीरः कर्मणि समर्थः इति तद्भाष्ये सायणः । 'कर्ता वीराय सुप्यव उ लोकां दाता वसु स्तुवते कीरये चित्'—इति ऋग्वेदे (६।२३।३) । 'वीराय यज्ञादिकर्मसु दक्षाय'—इति तद्भाष्ये सायणः । प्रेरयिता; 'इदा हि वो विषते रत्नमस्तोदा वीराय दाशुष उपासः'—इति ऋग्वेदे (६।६।५।४) । 'वीराय प्रेरयित्रे'—इति तद्भाष्ये सायणः । विक्रान्तः; समर्थः; 'अतो य एपि वीरको गृहं गृहं विचाकशत्'—इति ऋग्वेदे (८।८।०।२) । 'वीरको वीरः समर्थस्त्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । अपकृष्टदेशविशेषवासी; 'कारस्करान् माहिप-कान् कालिङ्गान् केरलांस्तथा । ककॉटकान् वीरकांश्च दुर्द्धमांश्च विवर्जयेत्'—इति महाभारते (८।४४।४२) । चाक्षुषमन्वन्तरीयमुन्यन्यतमः; 'मुनयस्तत्र वै राजन् ह्यंस्मद्वीरकादयः'—इति भागवते (८।५।८) । ९२ वीरणम् क्ली. [ वि. पक्षिणमीरयति । वि+ईर्+ल्यु ] उशीरतुणः; कटायनः; वीरतरः; वीरभद्रम्; 'स्याद्वीरणं वीरतर वीरं च बहुमूलकम् । वीरणं पाचनं शीतं स्तम्भनं लघु तिक्तकम्'—इति भावप्रकाशः । पुं. प्रजापतिविशेषः; 'सनत्कुमारादपि च वीरणो वै प्रजापतिः । कृतादौ कुरुशार्दूल ! धर्ममेतदधीतवान्'—इति महाभारते (१।२।३४।८।४१) । 'वीरणस्यात्मजायान्तु चक्षुर्मनुमजीजनत्'—इति मात्स्ये (४।४०) । ६२२

वीरणीमूलम् क्ली.—उशीरम्; अभयं; नलदं; लामज्ज-  
कम्; अमृणालम् । ६२२

वीरहा [ न् ] पुं. [ वीरमग्निं हतवान् । वीर+हन्+  
क्विप् ] नष्टाग्निब्राह्मणः; त्यक्ताग्निद्विजः; विष्णुः;  
'वीरहा माधवो मधुः'—इति विष्णुसहस्रनाम । वीर-  
हन्तरि त्रि. । ४०४

वीरुत् [ ध् ] स्त्री. [ विशेषेण रुणद्धि वृक्षानन्यान् । वि+  
रुध्+क्विप्, 'अन्येषामपीति' दीर्घः । अथवा विरोहतीति  
वीरुत् । 'विपूर्वस्य रुहेः क्विपि धकारो विधीयते' इति  
काशिका ] विस्तृता लता; गुल्मिनी; उल्पः; वीरुधा;  
प्रताना; कञः; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्वाति-  
शयेन वीरुधाम्'—इति रघुवंशे ( ८१३६ ) । ओषधिः;  
'वियो वीरुत् सुरोधन्महित्वीत प्रजा उत्त प्रसूष्वन्तः'—  
इति ऋग्वेदे ( ११६७५५ ) 'वीरुस्तु ओषधोषु'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । वृक्षमात्रे पुं. । 'यानि पश्यति वं  
ब्रह्मन् मूलानीहास्य वीरुधः । एते नस्तन्तवस्तात कालेन  
परिभक्षिताः'—महाभारते ( १४५१२४ ) । 'सोमं  
नमस्य राजानं यो जज्ञे वीरुधां पतिम्'—इति ऋग्वेदे  
( ११११३१२ ) । 'वीरुधां वनस्पतीनामिति'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । लतानां वीरुधां च कथञ्चिद्भेदेमाह  
'वनस्पत्योषधिलता त्वक्सारो वीरुधो द्रुमाः'—इति  
भागवते ( ३११०१९ ) । 'ये पुष्पं विना फलन्ति ते  
वनस्पतयः, ओषधयः फलपाकान्ताः, लता आरोहणा-  
पेक्षाः, त्वक्सारा वेण्वादयः, लता एव काठिन्येनारोहणान-  
पेक्षा वीरुधः, ये पुष्पैः फलन्ति ते द्रुमाः'—इति तट्टीकायां  
श्रीधरस्वामी । १९०

वीरुधा स्त्री. [ विशेषेण रुणद्धीति । वि+रुध्+'इगुपधा-  
दिति' क, ततः स्त्रियां टाप् । ] वीरुत्; उल्पः; 'चण्डि  
भागुरिरल्लोषम् अवाप्योरुपसर्गयोः । टाप् चापि  
हलन्तानां धुधा वाचा निशा गिरा ।' १९०

वीर्यम् क्ली. [ वीरे साधु, 'तत्र साधुः' इति यत् । यद्वा  
वीर्यतेऽनेनेति, वीर विक्रान्तौ+'अचो यत्' इति यत् ।  
यद्वा वीरस्य भावः, यत् ] चरमघातुः; शुक्रे; तेजः;  
रेतः; दीजम्; इन्द्रियं; बलम्; 'भूतप्रभावातिशयो  
द्रव्यं पाके रसे स्थितः । चिन्त्याचिन्त्यक्रियाहेतुवीर्यं  
धन्वन्तरेर्मतम् ।' अतिशयशक्तिभागुत्साहः; प्रभावः;  
'अग्निः सनोति वीर्याणि विद्वान् सनोति वाजममृताय

पूषन्'—इति ऋग्वेदे ( ३१२५१२ ) । 'वीर्याणि पशु-  
पुत्रादिसम्पद्रूपाणि सामर्थ्यानि'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
'ज्ञानवैराग्यवीर्याणां नहि कश्चिद्वधपाश्र्वयः'—इति  
भागवते ( ६११७३१ ) । शरीरसामर्थ्यम्; 'स इद्राजा  
प्रतिजन्यानि विश्वाशुष्मेण तस्थगभि वीर्येण'—इति  
ऋग्वेदे ( ४५०१७ ) । 'वीर्येण शरीरसामर्थ्येन'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । शक्तिः; 'न ब्राह्मणोऽवेदयेत  
किञ्चिद्वाजनि धर्मवित् । स्ववीर्येणैव तान् शिष्यान्  
मानवानपकारिणः'—इति मनुः ( १११३१ ) । 'स्ववीर्या-  
द्राजवीर्याच्च स्ववीर्यं बलवत्तरम् । तस्मात् स्वेनैव  
वीर्येण निगृह्णीयादरोन् द्विजः ।' मनःशक्तिः; 'कृत्वा  
वत्सं सुरगणा इन्द्र सोममदूदुहन् । हिरण्मयेन पात्रेण  
वीर्यमोजो बलं पयः'—इति भागवते ( ४११८१५ ) ।  
तेजः; चेतः; दीप्तिः । ६३८

वीर्यधः पुं. [ विविधो वधो हननं गमनं वा अनेन । 'प्रादिभ्यो  
धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः' इति समासे  
अन्येषामपीति दीर्घः ] विवधः; भारः; पर्याहारः;  
[ परितः आह्वयतेऽसौ ] धान्यतण्डुलादिः; 'निरुद्ध-  
वीवधासारप्रसारा गा इव ब्रजम् । उपरुन्धन्तु दाशार्हाः  
पुरीं माहिष्मतीं द्विषः'—इति माधे ( २१६४ ) । मार्गः;  
पन्थाः । ७५८

वृंहितम् क्ली. [ वृहि+क्त ] हस्तिगर्जनं; करिर्गर्जितं;  
वारणध्वनिः; 'शङ्खकुन्दुभिधोषश्च वारणानां च  
वृंहितः । नेमिधोषै रथानां च दीर्यतीव वसुन्वरा'—इति  
महाभारते ( ६११८१२ ) । १५१

वृक् पुं. [ वृणोतीति, वृध्+'सृवृभृशुषिमुषिभ्यः कक्'  
इति कक् ] कुक्कुरप्रमाणहरिणघ्नजन्तुविशेषः; कोकः;  
ईहामृगः; वत्सादनः; विरुक्; गोवत्सादी; छागभोजी;  
छागलान्त्री; जनाशनः; अरण्यश्वः; 'शवा शृगालो  
वृको व्याघ्रो मार्जारः शशशल्लकौ'—इति भागवते  
( ३११०१३ ) । क कः; पोतकः; वकवृक्षः; शृगालः;  
'अजाविके तु संरुद्धे वृकेः पाले त्वनाघति । यां प्रसह्य  
वृको हन्यात् पाले तत्किल्बिषं भवेत्'—इति मनुः  
( ८१२३५ ) । 'वृकैः शृगालप्रभृतिभिः'—इति तट्टीकायां  
मेधातिथिः । क्षत्रियः; अनेकधूपः; सरलद्रवः; तस्करः;  
[ वृक् आदाने+क ] वज्रः । २२८

वृक्षः पुं. [ वृश् छेदने+'स्तुवृश्चिक्कृत्युपिभ्यः कित्' इति

स, स च कित् । वृक्ष वरणे अतोऽप्यन्वृणोतीति वृक्ष इति वा सिद्धे प्रपञ्चार्यं ऋषिचग्रहणम् ] स्थावरयोनिविशेषः; महीरुहः; शाखी; विटपी; पादपः; तरुः; अनोकहः; कुटः; सालः; पलाशी; द्रुः; द्रुमः; आगमः; अगच्छः; विष्टरः; महीरुट्; कुचिः; स्थिरः; कारस्करः; नगः; अगः; कुटारः; विटपः; कुजः; वनस्पतिः; अद्रिः; शिखरी; कुठः; कुञ्जः; क्षितिरुहः; अङ्घ्रिपः; भूफहः; भूजः; महीजः; वरणीरुहः; क्षितिजः; शालः; 'वृक्षगुल्मलतावल्लयस्त्वक्सारास्तृणजातयः । पडेते वृक्षजातीयास्तासां रोपे फलं शृणु । यः पुमान् रोपयेद्वृक्षान् छायापुष्पफलोपगान् । सर्वसत्त्वोपयोगाय स याति परमां गतिम्'—इति पाप्मे । १७७

वृक्षोत्पलः पुं.— कर्णिकारः । १९९

वृजनम् क्ली. [ वृज् + 'कृपुवृजीति' क्यु ] पापम्; आकाशं; निराकरणं; संग्रामः; 'त्वं शुष्णं वृजने पक्षे'—इति ऋग्वेदे (१।६३।३) । 'वृजन इत्यादीनि त्रीणि संग्रामनामानि अत्र पूर्वे विशेषणे वृजने वर्जनयुक्ते संग्रामे हि वीराः पुरुषा वर्ज्यन्ते हिंस्यन्ते'—इति तद्भाष्ये सायणः । बलम्; 'विद्यामेघं वृजनं जीरदानुम्'—इति ऋग्वेदे (१।१६६।१५) । 'वृजनं बलम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । प्राणिजातम्; 'जरयन्ती वृजनं पद्वदीयते'—इति ऋग्वेदे (१।४८।५) । 'वृजनं गमनशीलं जङ्गमं प्राणिजातं जरयन्ती । वृजी वर्जने, वर्ज्यते इति वृजनं प्राणिजातं, कृपुवृजिमन्दिनिवाञ्म्यः क्युरिति क्यु प्रत्ययः, कित्त्वाल्लघूपवगुणाभावः, योरनादेशे प्रत्ययस्वरः'—इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. [ वृज् + क्यु ] केशः; त्रि. कुटिलः; बाधकः; 'तमानूनं वृजनमन्यया चिच्छूरो'—इति ऋग्वेदे (६।३५।५) 'वृजनं बाधकम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६२७

वृजिनम् क्ली. [ वृजी वर्जने + 'वृजेः किच्च' इति इनच् स च कित् ] पापम्; 'तन्नः प्रसीद वृजिनार्दनं तेऽङ्घ्रि-मूलम्'—इति भागवते (१०।२९।३८) । दुःखम्; 'वृजिनं नार्हति प्राप्तुं पूज्यं बन्धममीक्षणशः'—इति भागवते (१।७।४६) । रक्तचर्मः; भुग्नः; त्रि. पाप-विक्षिष्टम्; 'वृजिनां गतिमाप्नोति श्रेयसोऽप्युपहन्ति च'—इति महाभारते (२।२२।४) । पुं. केशः (७९७); त्रि. कुटिलः (६९६); 'असमने अध्वनि वृजिने पथि

श्येनां इव श्रवस्यतः'—इति ऋग्वेदे (६।४६।१३) ।

'वृजिने कुटिले पथि'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६२७

वृत्तिः स्त्री. [ वृत् + क्तिन् ] वेष्टनं; वरः; वाटः; आवेष्टकः; 'न हि च्छायादानैः पथिकजनसन्तापहरणं, फलं पितृपुण्यैर्वा न सुरमनुजप्रीणनमपि । अरे रे मन्दारद्रुम ! सहजमेतत् त्वनुचितं, वृतीभूतो रक्षस्यपरमपरेषां फलमपि'—इत्युद्धटः । प्रार्थनाविशेषः; वरणं; गोपनम् । २९०

वृत्तम् क्ली. [ वृत् + क्त ] आचारः; 'अनेन विप्रो वृत्तेन वर्तयन् वेदशास्त्रवित् । व्यपेतकल्मषो नित्यं ब्रह्मलोके महीयते'—इति मनुः (४।२६०) । चरित्रम्; 'तत्र तस्युनिजान् भर्तुं ध्यायन्त्यः किलष्टवृत्तयः । आपद्यपि सतीवृत्तं किमुञ्चन्ति कुलस्त्रियः'—इति कथासरित्सागरे (३।१४) । पद्यम्; 'पद्यं चतुष्पदी तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा । वृत्तमक्षरसंख्यात् जातिर्मात्राकृता भवेत् । सममद्वंसमं वृत्तं विपमञ्चेति तत् त्रिधा'—इति छन्दो-मञ्जर्याम् । वृत्तिः; वेदबोधितस्याचारस्य परिपालनं; वार्ता; 'न मार्गवृत्तमेतन्मे वाच्यं पितृगृहे त्वया'—इति कथासरित्सागरे (५।८।११६) । ३९७

वृत्तः त्रि. [ वृत् + क्त ] वर्तुलः; 'स्तनी व्यञ्जितकेशोरो समवृत्ती निरन्तरी'—इति भागवते (४।२५।२४) । कृतावरणः; अधीतः; मृतः; निष्पन्नः; 'स वृत्तचूड-श्चलकाकपक्षकैरमात्यपुत्रैः सवयोभिरन्वितः'—इति रघौ (३।२८) । जातः; 'सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुर्वृत्तः स नो सङ्गतयोर्वनान्ते'—इति रघौ (२।५८) । पुं. कूर्मः; नागविशेषः; 'वृत्तसंवर्तकी नागी द्वी च पद्मा-विति श्रुती'—इति महाभारते (१।३५।१०) । ७५३

वृत्तान्तः पुं. [ वृत्तः अनुवर्तनीयः अन्तः समाप्तियस्य ] संवादः; वार्ता; प्रवृत्तिः; उदन्तः; श्रुतिः; उदन्तकः; 'सर्वमाजन्म वृत्तान्तं विस्तरादिदमन्नवीत्'—इति कथा-सरित्सागरे (२।२९) । प्रक्रिया; कात्स्न्यं; वार्ता-प्रभेदः; प्रस्तावः; 'न ब्राह्मणक्षत्रिययोरापद्यपि हि तिष्ठतोः । कस्मिंश्चिदपि वृत्तान्ते शूद्रा भार्योपदिश्यते'—इति मनुः (३।१४) । 'वृत्तान्ते इतिहासाख्याने'—इति तट्टीकार्यां कुल्लूकमेघातिथी । अवसरः; भावः; एकान्तवाचकः । १४६

वृत्तिः स्त्री. [ वृत् + क्तिन् ] जीवनम्; आजीवः; वार्ता; जीविका; 'एषोदिता गृहस्थस्य वृत्तिविप्रस्य शाश्वती'

—इति मनुः (४।२।५९) । विवरणम्; 'सूत्रस्यार्थ-  
विवरणं वृत्तिः'—इति कातन्त्रे । प्रवर्तनम्; 'उत्पक्षमणो-  
नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं वाष्पं कुरु स्थिरतया विरतानुबन्धम्'  
—इति शाकुन्तले (४) । विधृतिः; कौशिक्यादिवृत्तयः ।  
'शृङ्गारे कौशिकी वीरे सात्वत्यारभती पुनः । रसे रीद्रे  
च वीमत्से वृत्तिः सर्वत्र भारती । चतस्रो वृत्तयो ह्येताः  
सर्वनाट्यस्य मातृकाः'—इति साहित्यदर्पणे (६) ।  
व्यवहारः; 'गुरोर्गुरो सन्निहिते गुरुवद्वृत्तिमाचरेत्'  
—इति मनुः (२।२०५) । [ वर्ततेऽस्मिन्निति  
व्युत्पत्त्या ] आधेयः; 'सिषाधयिषया शून्या सिद्धिर्यत्र  
न विद्यते । स पक्षस्तत्र वृत्तित्वज्ञानादानुमितिर्भवेत्'  
—इति भाषापरिच्छेदे । चित्तस्यावस्थाविशेषः;  
'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'—इति पातञ्जले (२) ।  
व्यापारः; 'अर्थसन्निकृष्टस्य इन्द्रियस्य वृत्तौ सत्यां तमोऽ-  
भिभवे यः सत्त्वसमुद्भेकः'—इति सांख्यतत्त्वकौमुद्याम् ।  
मुक्तार्थः; 'कारकप्रतियोगिभ्यां यद्यदन्यदपेक्षते । अपे-  
क्षलुवाचित्वाद्द्वित्तिस्तत्र तु नेष्यते'—इति कातन्त्रे ।

५७०

**वृत्रः** पुं. [ वृत् + 'स्फायितञ्चिवञ्चोति' रक् ] दानव-  
विशेषः; त्वाष्ट्रः; स तु त्वष्ट्रपुत्रः इन्द्रेण हतः; 'तथा  
वृत्रवधे प्राप्ते साहाय्यार्थं वृत्तौ मया'—इति हरिवंशे  
(१२७।१७) । मेघः; 'इन्द्रो अस्मा अरवद्वज्रबाहुर-  
पाहन् वृत्रं परिधिं नदीनाम्'—इति ऋग्वेदे (३।३३।६) ।  
'वृत्रं वृणोति आकाशमिति वृत्रो मेघस्तं मेघमपाहन्  
जधान्'—इति तद्भाष्ये सायणः । पर्वतविशेषः; इन्द्रः;  
शब्दः; अन्धकारः; शत्रुः; 'इन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम्'  
इति ऋग्वेदे (७।४८।२) 'वृत्रं शत्रुम्'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । ८४६

**वृत्रारिः** पुं. [ वृत्रस्य वृत्रासुरस्य अरिः शत्रुः ] वृत्रद्विष्टः;  
वृत्रहा; इन्द्रः । ५२

**वृथा** अव्य. [ वृणीते, वृद्ध संभक्तौ + बाहुलकात् धाक् ]  
निरर्थकः; मुधा; व्यर्थकम्; अविधिः; 'अदण्डपाशिको  
ग्राम अदासीकं च यद् गृहम् । अनाज्यभोजनं यच्च वृथा  
तदिति मे मतिः'—इति वह्नपुराणे । 'वृथा वृष्टिः  
समुद्रस्य तृप्तस्य भोजनं वृथा । वृथा दानं समुद्रस्य  
नीचस्य सुकृतं वृथा'—इति गारुडे । 'वृथारेता वृथा-  
मांसो वृथावादी वृथामतिः । निन्दको द्विजदेवानां स

प्रेतो जायते नरः'—इति वह्नपुराणे । ७८४

**वृथामिनिवेशः** पुं. [ वृथा निःसारः अभिनिवेशः आग्रहः ]  
आहोपुरुषिका । ७८४

**वृद्धः** त्रि. [ वृष् वृद्धौ + क्त । 'यस्य विभाषा' इति नेट् ]  
पण्डितः; विद्वान्; (५०३) गतयीवनः; प्रवृद्धः;  
प्रवयाः; स्यविरः; जीनः; जीर्णः; जरन्; यातयामः;  
जर्जरः; पलितः; पुं. वृद्धदारकः; क्ली. शैलज-  
नामगन्धद्रव्यम् । ३३२

**वृद्धश्रवाः** [ स् ] पुं. [ वृद्धात् बृहस्पतेः शृणोतीति । वृद्ध +  
श्रु + असुन् । 'वृद्धेभ्यः शृणोतीति वृद्धश्रवाः', 'वृद्धं प्रभूतं  
श्रवः श्रवणं स्तोत्रं हविलक्षणमत्रं वा यस्य'—इति ऋग्भाष्ये  
सायणः (१।८९।६) । 'वृद्धं श्रवो धनं कीर्तिर्वा यस्य'  
इति वेददीपे महीधरः (१०।९) ] इन्द्रः; पुरन्दरः । ५२  
**वृद्धिः** स्त्री. [ वृष् + क्तित् ] कलान्तरं; 'सूद' इति भाषा ।  
अभ्युदयः; समृद्धिः; 'अथ तत्र पाण्डुतनयेन सदसि विहितं  
मघुद्विषः । मानमसहत् न चेदपतिः परमवृद्धिमस्तारि  
मनो हि मानिनाम्'—इति माघे (१५।१) । अष्टव-  
र्गान्तर्यतीपविशेषः; योग्या; ऋद्धिः; सिद्धिः; लक्ष्मीः;  
पुष्टदा; वृद्धिदात्री; मङ्गल्या; श्रीः; सम्पत्; आशीः;  
जनेष्टा; भूतिः; मृतुः; सुखं; जीवभद्रा; 'ऋद्धि-  
वृद्धिश्च मधुरा सुस्निग्धा तित्तवशीतला । रुचिमेषाकरी  
श्लेष्मकुष्ठकिमिहरा परा । प्रयोगेष्वनयोरेकं यथालाभं  
प्रयोजयेत् । तत्र यद्वातुमिष्टिः स्याद्द्वयमप्यत्र योजयेत्'  
—इति राजनिर्घण्टः । नीतिवेदिनां क्षयादित्रिवर्गान्त-  
र्गतवर्गविशेषः; वृद्धनं; स्फातिः; 'एष सर्वाणि भूतानि  
पञ्चभिर्ग्याप्य भूतिभिः । जन्मवृद्धिक्षयैर्नित्यं संसारयति  
चक्रवत्'—इति मनुः (१२।१२४) । विष्कम्भादि-  
सप्तविंशतियोगान्तर्गतैकादशयोगः; 'प्रसूतिकाले यदि  
वृद्धियोगो नरः सुभोगो विनयान्वितश्च । धनप्रयोग-  
ग्रहणेषु दक्षो विचक्षणः स्यात् ऋषिक्रमाम्याम्'—इति  
कोष्ठीप्रदीपः । कुरण्डरोगः; हर्षः; समूहः; शैलेयं;  
धनम् । ५७२

**वृद्धिजीवनम्** क्ली. [ वृद्ध्या जीवनम् ] कुपीदं; कुसीदं;  
कुशीदं; वृद्धिजीविका । ५७२

**वृद्धिजीविका** स्त्री. [ वृद्ध्या जीविका ] ऋणदानजीविका;  
अर्थप्रयोगः; कुपीदं; कलाम्बिका । ५७२

**वृद्धोः** पुं. [ वृद्धश्चासौ उक्षा चेति । 'अचतुरेत्यादि' ना

अच् प्रत्ययः ] वृद्धवृषः; जरद्वगवः; 'विलोक्य वृद्धोक्ष-  
मधिष्ठितं त्वया महाजनः स्मेरंमुखो भविष्यति'—इति  
कुमारे (५।७०) । २६५

**वृद्धधालीवः** त्रि. [ वृद्ध्या आजीवतीति । वृद्धि+आ+  
जीव्+अच् ] वृद्धयुपजीवी; वार्द्धपिः; वार्द्धपिकः;  
कुपीदः; कुपीदिकः; साधुः । ५७१

**वृन्तम्** क्ली. [ वृणोति पुष्पादिकम् । वृन् वरणे+ 'अञ्जि-  
घृषीति' बाहुलकात् क्त, नुम् च ] फलपुष्पपत्रादिर्येन  
घायते तत्; प्रसवबन्धनम्; 'वृन्तरथं हरति पुष्प-  
मनोकहानाम्'—इति रघुवंशे (५।६९) । घटीवारा;  
(५२६) कुचाग्रं; कुचमुखं; चूचुकः; शिखा । १८५  
**वृन्वम्** क्ली. [ वृन्+ 'अब्दादयश्चेति' दन्, नुम्, गुणा-  
भावश्च निपात्यते ] समूहः; 'भृत्या स्वया कुटिलकुन्तल-  
वृन्दजुष्टम्'—इति भागवते (३।२८।३०) । पुं. दशा-  
वृन्दः; शतकोटिः; महावृन्दः । ६८६

**वृन्दारकः** पुं. [ वृन्दमस्यास्तीति, वृन्द+ 'शृङ्गवृन्दाभ्या-  
मारकन् वक्तव्यः' इत्युक्त्या आरकन् ] देवता; 'अपि  
वृन्दारका यूयं न जानीय शरीरिणाम्'—इति  
भागवते (६।१०।३०) । यूधपाता; 'वृन्दारकः सुरे  
श्रेष्ठे मनोज्ञे यूधपातरि'—इति व्याडिः । त्रि. [ वृन्दार  
+स्वार्ये कन् ] मनोज्ञः; 'युवा वृन्दारकः शूरो विक्रान्तः  
पुरुषपुत्रः'—इति महाभारते (१।१।१९।५) । श्रेष्ठः;  
'वृन्दारको रूपिमुख्यो'—इत्यमरः । ४

**वृश्चिकः** पुं. [ वृश्चू छेदने+ 'वृश्चिकृष्योः किकन्' इति  
'किकन्' कीटविशेषः; अलिः; द्रोणः; वृश्चनः; द्रुणः;  
पृदाकुः; अरुणः; अली; 'जीरकस्य कृतः कल्को घृत-  
सैन्धवसंयुतः । मुखोष्णो मधुना लेपाद्वृश्चिकस्य विषं  
हरेत् । गन्धमाघ्राय मृदितसूयवर्तदलस्य तु । वृश्चिकेन  
नरो विद्वः क्षणाद्भवति निविषः'—इति भावप्रकाशः ।  
मेपादिद्वादशाराश्यन्तर्गताष्टमराशिः; 'वृश्चिकोदयसंजातः  
शौर्यवानतिदुष्टघोः । भवेद्विज्ञानसम्पन्नो विग्रही  
सुभगः सुवीः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ओषधिभेदः;  
हालिकः; हालः; मदनवृक्षाः; कर्कटः; गोमयकीटः;  
आग्रहायणमासः । ६४५

**वृश्चिकलाङ्गुलम्** क्ली. [ वृश्चिकस्य लाङ्गुलम् ] अलम्;  
वृश्चिक पुच्छं; 'विच्छू का डंक' इति भाषा । ६४५  
**वृषः** पुं. [ वर्पति सिञ्चति रेत इति । वृष सेचने+क ।

वर्पति कामान् इति वा । वृष्+क ] धर्मः; पुष्यं; श्रेयः;  
सुकृतम्; 'वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम् ।  
वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्'—इति मनुः  
(८।१६) । (२३५) मूषिकः; आसुः; उन्दुरः;  
खनकः; मूषकः । (२६३) पुरुषगवः; पुङ्गवः; उक्षा;  
भद्रः; बलीवर्दः; ऋपमः; वृषभः; अनड्वान्; सोर-  
भेयः; गौः; शृङ्गी; कक्रुद्यान्; शिखी; गन्धमैगुनः;  
'ये शुक्लाः शृचयः शृद्धा भृशं भारवहा अपि । वृद्धाशिनः  
स्वल्पः रोपास्ते वृषाः सात्त्विका मताः । व्यक्ताव्यक्तस्यः  
शृद्धा दृढा भारवहाः शुभाः । वृद्धाशिनो बहुबलास्ते  
वृषा राजसा मताः । विवर्णा विकृताङ्गाश्च निर्दला  
स्वल्पभोजिनः । अपवित्रा बृहद्रोपास्ते वृषास्तामसा मताः;  
—इति वात्स्यः । मेपादिद्वादशाराश्यन्तर्गताद्वितीयराशिः;  
तावुरिः; 'स्थिरमतिं सुमतिं कमनीयतां कुशलतां हि  
नृणामुपभोगताम् । वृषगतो हिमगुर्भृशमादिशेत् सुकृतिनः  
कृतिनेश्च सुखान्यपि ।' 'वृषलग्ने भवेज्जातो गुहमन्तः  
प्रियंवदः । गुणी कृती घनी लुब्धः शूरः सर्वजनप्रियः'  
—इति कोष्ठीप्रदीपः । चतुर्विधपुरुषमध्यं पुरुषविशेषः;  
'पद्मिनी चित्रणी चैव शङ्खिनी हस्तिनी तथा । शशो  
मृगो वृषोऽश्वश्च स्त्रीपुंसोर्जातिलक्षणम्'—इति रति-  
मञ्जरी । 'वहुगुणवहुबन्धः शीघ्रकामो नताङ्गः, सकल-  
रुचिरदेहः सत्यवादी वृषोऽयम्'—इति रतिमञ्जरी ।  
एकादशमन्वन्तरीयेन्द्रः; 'एकैकस्त्रिशकस्तेषां गणा-  
श्चेन्द्रस्य वै वृषः । दशश्रीवो रिपुस्तस्य स्त्रीरूपो  
घातयिष्यति'—इति गारुडे । शृङ्गी; उत्तरपद-  
स्थश्चेत् श्रेष्ठः; 'शारदं वर्पणं यद्वत् सहेन्द्रो  
गवापतिः । तद्वद्यदुवृषः सेहे वाणवर्षमरिन्दमः'—इति  
हरिवंशे (१४।१।३८) । शुक्लः; वास्तुस्थानभेदः;  
वासकः; श्रीकृष्णः; शत्रुः; कामः; कामदेवः; मदनः;  
वलवान्; ऋपभोषणं; पतिः; 'स्ववृषं या परित्यज्य  
परवृषे वृषायते । वृषली सा हि विज्ञेया न शूद्रा वृषली  
भवेत्'—इति काशीखण्डे । १२५

**वृषणः** पुं. [ वर्पति वंशवीजम् । वृष्+बाहुलकात् ण्य,  
युचि संज्ञापूर्वकत्वेन गुणाभावः ] अण्डकोपः; मुष्कः;  
'स्थूललिङ्गो दरिद्रः स्याद् दुःस्थैकवृषणी भवेत् । विषम  
स्त्रीचञ्चलो वै नृपः स्याद्वृषणे समे । प्रलम्बवृषणोऽ-  
ल्पार्थनिर्द्रव्यो मणिभिर्भवेत् ।' 'जलान्त एकवृषणो

वृषणाभ्यां चलः स्त्रियाम् । समाभ्यां क्षितिपः प्रोक्तः  
प्रलम्बेन शताब्दान्—इति गारुडे । ५२३

वृषदंशः पुं. [ वृषं मूषिकं दशतीति । वृष+दंश्+पचा-  
द्यच् ] विडालः; ओतुः; मार्जारः । २३६

वृषदंशकः पुं. [ वृषं मूषकं दशतीति । वृष+दंश्+ण्वल् ]  
विडालः; ओतुः; मार्जारः; वृषदंशः; आखुमुक् ।  
२३६

वृषभः पुं. [ वृष् सेचने+ऋषिवृषिम्यां कित् ] इति  
अभच् स च कित् ] उक्षः; अनड्वान्; वलीवर्दः; ककु-  
चान्; वृषः; ऋषभः; सौरभेयः; गौः; वाडवेयः;  
शाकवरः; 'यदन्यगोषु वृषभो वत्साना जनयेच्छतम्'  
—इति मनुः (१।५०) । श्रेष्ठः; 'सूञ्जयैः सह  
कैकेयैर्वृष्णोनां वृषभेण च'—इति महाभारते (३।३३।  
८७) । वैदर्भीरीतिभेदः; आविजिनः; कर्णरन्ध्रं;  
ऋषभनामौषधम्; चतुर्विधपुरषान्तगतपुरषविशेषः;  
'शशके पद्मिनी तुष्टा चित्रिणी रमते मृगम् । वृषभे  
शङ्खिनी तुष्टा हस्तिनी रमते हयम्'—इति रतिमञ्जरी ।  
२६३

वृषलः पुं. [ वृषं धर्मं लुनाति छिनत्तीति । वृष+लूज्  
छेदने+अन्धेभ्योऽपीति ङ ] अपशूद्रः; 'नाज्ञातेन समं  
गच्छेद्वैको न वृषलः सह'—इति मनुः (४।१४०) ।  
'वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुशते ह्यलम् । वृषलं  
नं विदुदेवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्'—इति मनुः (८।१६) ।  
चन्द्रगुप्तराजः; वाजी; अधामिकः । ५८६

वृषस्यन्ती स्त्री. [ वृषं नरं शुक्रलं वा इच्छति मैथुनाय ।  
वृष+सुप आत्मनः क्यच् ] इति क्यच्, 'अश्वक्षीरेति'  
सुगागमः । ततः 'लटः शतृशानचाविति' शतृ, 'उगितश्च'  
इति डीप् ] रताशिनो; कामुको; वृषेण लब्धुमिच्छन्ती  
गौः; 'लक्ष्मणं सा वृषस्यन्ती महोक्षं गौरिवागमत् ।  
मन्मथायुधसम्भातव्यध्यमानमतिः पुनः'—इति भट्टिः ।  
४८५

वृषा स्त्री. — मूषिकपर्णी; कपिकच्छूः; वासा; अट-  
रूपकः; वासकः । १९८

वृषा [ न् ] पुं. [ वर्षतीति, वृष् सेचने+कनिन् युवृषित-  
क्षीति' कनिन् ] इन्द्रः; मघवा; पुरन्दरः; शचीपतिः;  
'प्राजापत्यापनीत तद् अन्नं प्रत्यग्रहीश्रुपः । वृषेव पयसां  
सारमाविष्कृतमुदन्वता'—इति रघी (१०।५२) ।

कर्णः; वेदनाज्ञानं; दुःखं; वृषः; वृषभः; 'वृषा न  
क्रुद्धः पतयद् रजःसु'—इति ऋग्वेदे (१०।४३।८) ।

'रजःसु लोकेषु वृषा न यथा वृषभः क्रुद्धः सन् प्रतिवृषभ-  
वधाय पतयद् गच्छति'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
घोटकः; वाजी; अश्वः; 'आवां रथो रोदसी वर्द्धमानो  
हिरण्ययो वृषभियात्वश्वैः'—इति ऋग्वेदे (७।६९।१) ।  
'हे अश्विनी वां रथो वृषभिः युवभिरश्वैर्वृक्तः सन्नायातु'  
इति तद्भाष्ये सायणः । पिता; 'वृषां जजान वृषर्षणं रणाय'  
—इति ऋग्वेदे (७।२०।५) 'वृषा सेक्ता पिता कश्यपो  
वृषणं कामानां वषितारमिन्द्रम्'—इति तद्भाष्ये सायणः ।  
त्रि. वर्षकः; 'ब्रह्मणस्पतिवृषभिवराहैः'—इति ऋग्वेदे  
(१०।६७।७) । 'वृषभिवंषितुभिवंराहैवराहारैः'  
इति तद्भाष्ये सायणः । ५२

वृषाकपिः पुं. [ वृषः धर्मः कपिस्तद्वद्वश्यो यस्येति ।  
'अन्येषामपीति' दीर्घः । वृषं न कम्पयति वृषेण आकम्प-  
यति दैत्यानिति वा । वृषः कामपूरकश्चासी आकपिश्च  
वा ] विष्णुः; कृष्णः; 'ततो विभुः प्रवरवराहर्षुषुक्  
वृषाकपिः प्रसभमथैकदंष्ट्रया'—इति हरिवंशे (२।१६।  
४७) । शिवः; 'वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवत-  
स्तया'—इति हरिवंशे (३।५२) । अग्निः; इन्द्रः;  
वृषा; 'एवं सञ्चोदितो विप्रमैस्त्वानहनद्रिपुम् । ब्रह्म-  
हत्या हते तस्मिन्नाससाद वृषाकपिम्'—इति भागवते  
(६।१३।१०) । सूर्यः; 'त्वं हंसः सविता भानुरंशु-  
माली वृषाकपिः'—इति महाभारते (३।३।६१) । २२

वृषाङ्गः पुं. [ वृषोऽङ्गो ध्वजचिह्नं यस्य ] शिवः; 'पीते  
गरे वृषाङ्गेण प्रीतास्तेऽमरदानवाः'—इति भागवते  
(८।८।१) । साधुः; भल्लातकः; षण्डः । १२

वृषी स्त्री. [ वर्षति सुखम्, इगुपधत्वात् क, डीप् । न्वन्तः  
सीदन्त्यश्रेति पृषीदरादिर्वा ] व्रतिनां कुशादिमयासनम्;  
'शिष्यो ददौ वृषीं तस्मै गुहणा नोदितस्तदा'—इति  
देवीभागवते (५।३२।३०) । पुं. मयूरः; [ वृष+  
णिनि ] वृषवान् । ४११

वृष्टिः स्त्री. [ वृष्+क्तिन् ] मेघाज्जलविन्दुपतनं; वर्षः;  
गोधृतं; परामृतं; वर्षणम्; 'अमृतादित्रये यत्र भवन्ति  
सर्वलक्षराः । तदा वृष्टिः क्रमाज्जेया धृत्यर्कवसुवासरैः'  
—इति स्वरोदयः । 'नृवन्तु परमार्थं च किमिन्द्राद्दृष्टिः  
रेव च । सूर्यादि जायते तोयं तोयात् सस्यानि शाखिनः'



—इति ब्रह्मवैवर्ते । १६१

बुध्निः पुं. [ वृष्+‘सृवृषिम्भां कित्’ इति नि, स च कित् ] किरणः; मयूखः; सूर्यकिरणः; अंशुः; (२७९) मेघः; अविः; ऊर्णापुः; उरभ्रः; हुडुः; उरणः; मेढुः; मेण्डः । मेघः; यादवः; ‘यथा हि सर्वास्वापत्सु पासि वृष्णीनरिन्दम तथा ते पाण्डवा रक्षयाः पाह्यस्मान्महतो भयात्’— इति महाभारते (५।७।२।४) । कृष्णः; इन्द्रः; अग्निः; वायुः । ३९

बृहत्, वृहत् त्रि. [ वृह वृद्धौ+‘वर्तमाने पृषद्वृहन्महज्ज- गच्छतृवच्च’ इति अतिप्रत्ययेन निपातनात् साधु, पृषोद- रादित्वाद् वत्वम् ] महत्; ‘वृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदी- यानपि गच्छति । सम्भूयाम्मोषिमभ्येति महानथा नगापगा’—इति माघे (२।१०) । ६९९

बृहतिक स्त्री. [ वृहती+‘वृहत्या आच्छादने’ इति स्वार्थे कन् ] उत्तरीयवस्त्रं; वैकक्षं; बृहतिका; वृहती लता; - क्षुद्रवाताकी । ४०९

बृहत्कुक्षिः त्रि. [ वृहन् कुक्षिर्यस्य ] तुन्दिलः; वृहत्कुक्षिः; पिचण्डिलः । ६०८

बृहद्भानुः पुं. [ वृहन्तो भानवो रमयो यस्य ] अग्निः; वह्निः; ‘तंपसरच्च मनुं पुत्रं भानुञ्चाप्यङ्गिराः सृजत् । वृहद्भानुं तु तं प्राहृद्ब्राह्मणा वेदपारगाः’—इति महाभारते (३।२२०।८) । चित्रकवृक्षः; सत्यभामापुत्रः; ‘चन्द्र- भानुर्वृहद्भानुरतिभानुस्तयाष्टमः’—इति भागवते (१। ६।१।१०) । सत्रायणपुत्रः; ‘सत्रायणस्य तनयो वृह- द्भानुस्तदा हरिः’—इति भागवते (८।१३।३५) । पृथुलाक्षस्य पुत्रः; ‘चतुरङ्गो रोमपादात् पृथुलाक्षश्च तत्सुतः । वृहद्रथो वृहत्कर्मो वृहद्भानुश्च तत्सुताः’—इति भागवते (९।२३।११) । वृहद्रथिमविशिष्टे त्रि. । ‘वृहद्भानो यविष्टयः’—इति ऋग्वेदे (१।३६।१५) । ‘हे अग्ने हे वृहद्भानो वृहन्तो भानवो यस्य तादृश’— इति तद्भ्राष्ये सायणः । ६४

बृहस्पतिः पुं. [ वृहतां वाचां पतिः । ‘पारस्करेति’ सुट् निपात्यते ] अङ्गिरसः पुत्रः; वृहस्पतिः; सुराचार्यः; गोप्यतिः; विषण्णः; गुरुः; जीवः; आङ्गिरसः; वाच- स्पतिः; चित्रशिखण्डिजः; उत्तय्यान्जुजः; गोविन्दः; चारुः; द्वादशरथिमः; गिरीशः; दिदिवः; पूर्वफल्गुनी- मवः; सुरगुरुः; वाक्पतिः; वचसांपतिः; इन्द्रेज्यः;

देवेज्यः; इज्यः; वृहताम्पतिः; वागीशः; चक्षाः; दीदिविः; द्वादशकरः; प्राक्फाल्गुनः; गीरथः; स च शिवस्य गुरुपुत्रः धर्मशास्त्रप्रयोजकः; ‘कृष्णस्य वर- पुत्रोऽयं स्वयमेव वृहस्पतिः । अतो हेतोः सुरगुरुर्गुरुपुत्रः शिवस्य च’—इति ब्रह्मवैवर्ते । वारविशेषः; ‘नृपेन्द्र- मन्त्री नृपलब्धकामो विद्याविनोदो चतुरः प्रगल्भः । आचार्यपूज्यो मधुरस्वभावो वारे भवेद्देवगुरोर्मनुष्यः’—इति कौष्ठीप्रदीपः । नवग्रहमध्ये षष्ठमग्रहः; पुरो- हितः; त्रि. मन्त्रपालकः; ‘वृहस्पति यः सुभृतं विभति’—इति ऋग्वेदे (४।५।८।७) । ४७

बृहस्पतिलयः पुं. [ वृहस्पतेः सवः ] यज्ञविशेषः । ४१८  
 वैगः पुं. [ विज्+घब् ] जवः; रहः; तरः; रयः; स्यदः; ‘मृतोयैः शुष्यते शोष्यं नदी वेगेन शुष्यति’—इति मनुः (५।१०८) । प्रवाहः; ओषः; वेणी; धारा; रेतः; मूत्रविष्ठादिनिर्गमप्रवृत्तिः; ताकिकसंस्कारविशेषः; ‘स्पर्शादयोऽष्टौ वेगास्यसंस्कारो मरुतो गुणाः । अष्टौ स्पर्शादयो रूपं द्रवो वेगश्च तेजसि । स्पर्शादयोऽष्टौ वेगश्च द्रवत्वं च गुरुत्वकम् । रूपं रसस्तथा स्नेहो वारि- ष्यते चतुर्दशः’—इति भाषापरिच्छेदः । ‘ततोऽभि- पद्याम्यहनन्महासुरो रुवा नृसिंहं गदयोरुवेगया’—इति भागवते (७।८।२५) । ४४३

वेगी [ न् ] त्रि. [ वेगोऽस्यास्तीति । वेग+इनि ] वेगवान्; जङ्घाकारिकः; जाङ्घुकः; तरस्वी; त्वरितः; प्रजवी; जवनः; जवः; ‘अश्वाश्च वेगिनः सन्ति रथा वायुजवा मम’—इति हरिवंशे भविष्यपर्वणि (२०।१४) । श्येनपक्षी । ३५८

वेष्ठा स्त्री. [ विच् पृथग्भावे+घञ्+टाप् ] मूल्यं; वेतलम् । ७२८

वेणिः स्त्री. [ वी+‘वीज्याज्वरिभ्यो निः’ इति नि । पृषोदरादित्वाद् णत्वम् ] प्रोपितभर्तृकादिधार्यकेश- रचनाविशेषः; विरहिणीवद्धकचः; प्रवेणिः; वेणी; प्रवेणी; वेणिका; केशवन्धनविशेषः; ‘तत्र नित्य- विहितोपहृतिषु प्रोपितेषु पतिषु द्युयोपिताम् । गुम्फताः शिरसि वेणयोऽभवन्नप्रफुल्लसुरपादपत्रजः’—इति माघे (१।४।३०) । (६६९) ओषः; प्रवाहः; धारा; स्रोतः; रयः । जलसमूहः, यथा प्रयागे गङ्गा- यमुनासरस्वतीमेलनं त्रिवेणी । ५३०

वेणी स्त्री. [ वेणि+वा डीप् ] प्रवेणी; वेणिः; प्रेवेणिः; वेणिका; केशवन्धनभेदः; 'तस्यात्मा शितिकण्ठस्य सेनापत्यमुपेत्य वः । मोक्ष्यते सुरवन्दीनां वेणीवीर्यविभूतिभिः'—इति कुमारे (२।६१) । (६६९) ओषः; प्रवाहः; धारा; स्रोतः; रयः; देवताङ्गवृक्षः; मेपी; नदीविशेषः; 'कृष्णावेण्योस्तटाद्यस्माच्छिवविष्णुगणैः पुरा । वणिक्शरीरात् कलहा निरस्ताः कथितास्त्वया'—इति पाषोत्तरखण्डे । जलसमूहः; प्रयागे गङ्गायमुनासरस्वतीमेलनं द्विवेणी । ५३०

वेणुः पुं. [ अञ्+ 'अजिवृरोम्यो निच्च' इति णु स च नित् । अजैर्वीभावो गुणश्च ] त्वचिसारः; वंशः; त्वक्सारः; मस्करः; 'वांस' इति भाषा । 'तं तु देशमतिक्रम्य शैलोदा नाम निम्नगा । उभयोस्तीरयोस्तस्याः कीचका नाम वेणवः'—इति रामायणे (४।४३।१७) । नृपविशेषः; वंशी । २०४

वेतनम् क्ली. [ वी+ 'वीपतिभ्यां तनन्' इति तनन् ] कर्मदक्षिणा; कर्मण्या; विधा; भृत्या; भृतिः; भर्म; भरण्यं; भरणं; मूल्यं; निर्वेशः; पणः; विष्टिः; वेचा; 'पणो देयोऽवकृष्टस्य षडुकृष्टस्य वेतनम्'—इति मनुः (७।१२६) । जीवनीपायः; आजीवः; जीवनं; वार्ता; जीविका; वृत्तिः; रूप्यम् । ७२८

वेतसः पुं. [ वे+ 'वेस्तुट् च' इति असच् तुडागमश्च । वेति जलप्लवतां गच्छति इति वेतसः ] लताविशेषः; रयः; अन्नपुष्पः; विदुलः; शीतः; वानीरः; वञ्जुलः; प्रियः; गन्धपुष्पः; रथाभः; वेतसी; निचुलः; दीर्घपत्रकः; कलमः; मञ्जरीनम्रः; सुवेषः; गन्धपुष्पकः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो रञ्जनस्तथा । अन्नपुष्पं च विदुलो रथः शीतश्च कीर्तितः । वेतसः शीतलो दाहशोथार्शोयोनिहृन्नान् । हन्ति वीसर्पकृच्छ्रासपित्ताश्मरिकफानिलान्'—इति भावप्रकाशः । जलजाताग्निः; 'हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम्'—इति ऋग्वेदे (४।५८।५) । 'वेतसोऽप्सस्मभवोऽग्निः'—इति तद्भाष्ये सायणः । २०१

वेतसी स्त्री.—वेतसः; वेत्रलता; 'देवारोधसि वेतसीतस्तले चेतः समुत्कण्ठते'—इति साहित्यदर्पणे (१) । २०१

वेत्रधरः पुं. [ वेत्रस्य धरः ] द्वाःस्थः; द्वाःवारिकः; क्षता; वेत्री; द्वारपालकः; दण्डी; वेत्रधारकः; द्वार-

पालः । यष्टिधारके त्रि. । ४२४  
वेत्रासनम् क्ली. [ वेत्रस्य आसनम् ] वेत्रनिमितासनम्; आसन्दी । ३११

वेदः पुं. [ विद्+घञ् ] ब्रह्ममुखनिर्गतधर्मज्ञापकशास्त्रं; श्रुतिः; आम्नायः; आगमः; छन्दः; ब्रह्म; निगमः; प्रवचनं; स्वाध्यायः; विष्णुः; 'वेदो वेदविषयज्ञो वेदाङ्गो वेदवित् कविः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् । वृत्तं; यज्ञाङ्गः; वित्तम् । ९

वेदनम्, वेदना क्ली.—स्त्री. [ विद्+त्युट् । पक्षे 'षट्ठि-वन्दिनिदिभ्य उपसंख्यानम्' इति युच् ] आवाधा; दुःखम्; अतिः; पीडा; व्यथा; (८१९) संवित्तिः; संवेदः; अनुभवः; ज्ञानं; विवाहः; 'पाणिग्रहणसंस्कारः सवर्णासूपदिश्यते । असवर्णास्वयं ज्ञेयो विधिख्दाह-कर्मणि । शरः क्षत्रियया ग्राह्यः प्रतोदो वैश्यकन्यया । वसनस्य दशा ग्राह्या शूद्रयोत्कृष्टवेदने'—इति मानवे ३ अध्यायः । ६२६

वेदान्तः पुं. [ वेदानाम् अन्तः ] उपनिषत्; रहस्यम्; उत्तरमीमांसा; ब्रह्मविद्या; शास्त्रविशेषः । ९

वेदिः स्त्री. [ विद्यते पुण्यमस्यामिति । विद्+ 'दृपिपरिहृ-वृत्तिविदीति' इन् ] परिष्कृता भूमिः; 'वीक्ष्य वेदिमथ-रक्तविन्दुभिः'—इति रघो (१।१२५) । अङ्गुलिमुद्रा; गृहोपकरणविशेषः; 'वेद्वयंज्यामलनीलविद्रुमैर्भुवता हरिर्द्विवलभीपु वेदिषु'—इति भागवते (१०।४।१२१) । पुं. [ वेत्तीति, विद्+इन् ] पण्डितः । ५१५

वेदिफा स्त्री. [ वेदिरेव, स्वार्थे कन् ] मङ्गलकर्मार्थं निर्मितवेदिः; परिष्कृता भूमिः; वितदिः; वितर्दी; वेदिः; वेदी; वितदिका; 'स द्वेवदारुद्रुमवेदिकायां शार्दूलचर्मव्यवधानवत्याम्'—इति कुमारे (३।४४) । (८२३) अङ्गुलिमुद्रा; वेदिः । २९८

वेदी स्त्री. [ वेदि+कृदिकारादिति वा डीप् ] वेदिः; सरस्वती । ५१५

वेधः [ स् ] पुं. [ विवधातीति, वि+धा+ 'विधाञो वेध च' इति असि वेधादेशश्च सोपसर्गधातोः ] ब्रह्मा; 'तं वेधा विवधे नूनं महाभूतसमाधिना । तथाहि सर्वं तस्यासन् परार्थकफला गुणाः'—इति रघो (१।२९) । विष्णुः (२५); सूर्यः; पण्डितः; श्वेताङ्गवृक्षः; शिवः; 'नमस्ते शितिकण्ठाय नीलग्रीवाय वेधसे'—इति हरिवंशे

भविष्यपर्वणि (१५।१२) । अनन्तपुत्रः; 'अनन्तस्य च पुत्रोऽभूद् वेवो नाम महाप्रभुः । आनर्तविषये तेन पुरी कुशस्यली कृता'—इति बह्निपुराणे । प्रजापतिर्दे-  
क्षादिः; 'परतोऽपि परश्चापि विधाता वेवसामपि'—  
इति कुमारे (२।१४) । त्रि. मेघावी; विविधकर्ता;  
'आवेधसं नीलपृष्ठं बृहन्तम्'—इति ऋग्वेदे (५।४३।  
१२) । 'कीदृशं देवं वेधसं विविधकर्तारम्'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । ६

वेद्यम् क्ली. [ विष्+ण्यत् ] लक्ष्यं; शस्त्रं; निमित्तम्;  
'प्राणो घनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म वेद्यमनुत्तमम् । अप्रमत्तेन  
वेद्यव्यं शरवत् तन्मयो भवेत्'—इति मार्कण्डेये (४२।  
७) । वेधनीये त्रि. । 'पट्टकर्णोत्पत्तिमाशङ्क्य भानोः  
शुद्ध्या समेऽपि च । कर्णो वेध्या न दोषः स्यादन्यथा  
मरणं भवेत्'—इति मलमासतत्त्वम् । ४६८

वेपथुः पुं. [ वेपनमिति । वेप्+ 'द्वितोऽयुच्' इति अयुच् ]  
कम्पः; 'वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते'—इति  
भगवद्गीतायाम् (१।२९) । ६०१

वेला स्त्री. [ वेल्यतेऽजयेति । वेल्+ 'गुरोश्च हल्' इत्य,  
ततष्टाप् ] वारिवृद्धिः; समुद्रजलविकारः; 'संरम्भं  
मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम् । निवातस्तिमितां  
वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः'—इति रघौ (१२।३६) ।  
कालः; समयः; क्षणः; वारः; अवसरः; प्रस्तावः;  
प्रक्रमः; अन्तरम्; 'अक्षिपद्मपरिक्षेपो निमेषः परि-  
कीर्तितः । द्वौ निमेषौ त्रुटिर्नाम द्वे त्रुटी तु लवः स्मृतः ।  
द्विलवः क्षण इत्युक्तः काष्ठा प्रोक्ता दश क्षणाः । दश  
काष्ठाः कला नाम तत्पष्ट्या स्याच्च नाडिका । घटिके  
द्वे मुहूर्तः स्यात्स्त्रिंशत्या दिवानिशम् । चतुर्विंशति-  
वेलाभिरहोरात्रं प्रचक्षते । सूर्योदयाद्वि विज्ञेयो मूहूर्तानां  
क्रमः सदा । पश्चिमादूर्ध्वान्नादि होराणां निश्चते क्रमः ।  
ज्ञेयं पिथ्यमहोरात्रं पक्षी कृष्णसितासितौ । त्रिंशता च  
दिनैर्मासो द्विमास ऋतुश्च्यते । भवेद्विष्यमहोरात्रं  
पद्भिस्तदक्षिणी । वर्षं द्वादशभिर्मासैर्मलमासस्त्र-  
योदशः'—इति बह्निपुराणे । मर्यादा; 'धिगस्तु नष्टः  
खलु भारतानां धर्मस्तथा क्षत्रविदां च वृत्तम् । यत्र  
ह्यतीतां कुल्भमंवेलां प्रेक्षन्ति सर्वे कुरवः सभायाम्'  
—इति महाभारते (२।६३।३९) । समुद्रकूलम्;  
'स वेलात्रप्रवलयों परिक्षीकृतसागराम् । अनन्यशासना-

मुर्वी शशासैकपुरीमिव'—इति रघौ (१।३०) ।  
अक्लिष्टमरणं; रागः; ईश्वरस्य भोजनं; रोगः; वाक्;  
दुवस्त्री; दन्तमांसम् । ६५४

वेलाउली स्त्री.— रागिणीविशेषः । १०५ अ  
वेलावनम् क्ली. [ वेलायां समुद्रतटे यद् वनम् ] सागर-  
तटीयं वनं; समुद्रकूले काष्ठविशेषः । ६५४

वेल्लजम् क्ली. [ वेल्लं चलनं जायते, जनयतीत्ययं ;  
वेल्ल+जन्+ 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड ] मरिचम्;  
ऊपणम्; ऊपणा । ६१६

वेल्लितः त्रि. [ वेल्ल+क्त ] वक्रः; वृजिनः; भङ्गुरः;  
आविद्धः; नतः; जिह्वः; मग्नः; अरालः; कुटिलः;  
व्याकुञ्चितः; ऊर्मिमान्; कम्पितः । क्ली. गमनम् ।  
६९६

वेशः पुं. [ विशन्ति नयनमनांस्पत्रेति । विश्+अधिकरणे  
घञ् । यद्वा विशति अङ्गमिति, 'पदरुजविशस्पृशो घञ्'  
इति घञ् ] अलङ्काररचतादिकृतशोभा; आकल्पः;  
नेपथ्यं; प्रतिकर्म; प्रसाधनं; वेपः । 'नरदेवोऽसि वेशेन  
नटवत् कर्मणा द्विजः'—इति भागवते (१।१७।५) ।  
[ विशन्ति कामुका यत्रेति । अधिकरणे घञ् ] वेद्यागृहं;  
गृहमात्रं; वस्त्रगृहम्; 'शकटापणवेद्याश्च यानयुग्यं  
च सर्वशः । तत्संगृह्य ययो राजा ये चापि परिचारकाः'  
—इति महाभारते (५।१५।१।५३) । प्रवेशः [ विश्  
धात्वर्थदर्शनात् ] ; पण्यस्त्रिया भृत्तिः; 'न राज्ञः प्रतिगृह्णी-  
यादराजन्यप्रसूतितः । सूनाचक्रध्वजवतां वेशेनैव च  
जीवताम् । दशमूनासमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः । दश-  
ध्वजसमो वेशो दशवेशसमो नृपः'—इति मनुः (४।८४।  
८५) । ५३९

वेशान्तः पुं. [ विशन्त्यत्र भेकादयः इति । विम्+ 'जुवि-  
शिम्यां झच्' इति झच् ] पल्लवः; तल्लः; क्षुद्रसरोवरः ।  
अग्निः; वह्निः । ६७५

वेशवारः पुं. [ वेशनं देशः, वेशं वृणुते । वेश+वृ+घञ् ]  
उपस्करः; वेसवारः; 'मसाला' इति भाषा । ३२१

वेशम् [ न् ] क्ली. [ विशन्त्यत्रेति । विश्+मनिन् ] गृहं;  
गेहम्; 'अद्वारेण च नातीयाद् ग्रामं वा वेशम् वावृतम्'  
—इति मनुः (४।७३) । २९१

वेश्या स्त्री. [ वेशमर्हति, वेशेन दीव्यन्त्याचरति, वेशेन  
पण्ययोगेन जीवति वा । वेश—'दिगादिभ्यो यत्' ]

स्त्रीविशेषः; वारस्त्री; गणिका; रूपाजीवा; वेध्या; सूद्रा; शालभञ्जिका; अक्षरा; शूला; वारविलासिनी; वारवाणिः; भण्डहासिनी; भञ्जिका; बन्धुरा; कुम्भा; कामरेखा; वर्बटी; साधारणस्त्री; पण्याङ्गना; पणाङ्गना; भुजिष्या; वारवधूः; भोग्या; स्मरवीथिका; पतिव्रता चैकपत्नी द्वितीये कुलटा स्मृता । तृतीये वृषली ज्ञेया चतुर्थे पुंश्चली स्मृता । वेश्या च पञ्चमे पष्ठे युङ्गी च सप्तमेऽष्टमे । तत ऊर्ध्वं महावेश्या सास्पृश्या सर्वजातिपुं—इति ब्रह्मवैवर्ते । ४९०

वेश्यापतिः पुं. [ वेद्यायाः पतिः ] भुजङ्गः; विटः; पल्लवकः; पल्लविकः । ३८२

वेषः पुं. [ वेदेष्य व्याप्नोति अङ्गं वेपः । पचादित्वाद् च । मूर्द्धन्यान्तः । विशन्ति नयनमनांस्यत्रेत्याधारे षभि वेशस्तालव्यान्तश्च ] नेपथ्यं; वेशः; आकल्पः; मण्डनं; प्रतिकर्म; प्रसाधनं; भूषणम्; अलङ्कारः; नेपथ्याभरणम्; विनीतवेपाभरणः पश्येत्कार्याणि कायिणाम्—इति मनुः (८।२) । वेश्याजनसमाश्रयः; वेद्यजनाश्रयः; वेश्यालयः; वेशः; वेश्याश्रयः; पुरं; वेद्यम् । ५३९

वेषवारः पुं. [ विप्लू व्याप्ती, वेपणं वेपः, घञ् । वेपं व्यञ्जनाविलतां वृणुते, वेप+वृ+घञ् ] वेशवारः; वेसवारः; उपस्करः; धन्याकसर्वपादिपिष्टः । ३२१  
वेष्टितः त्रि. [ वेष्ट्+क्त ] निवृतः; परिवृतः; वलयितः; परिक्षिप्तः; संवीतः; रुद्धम्; आवृतः; नदीप्राचीरादिना कृतवेष्टनम् । ७१२

वेसरः पुं. [ वेसं राति, वेगेन सरति वा । पूपोदरादित्वात् साधुः ] अश्वतरः; वेशरः; 'तूर्णं प्रणेत्रा कृतनादमुच्चकैः प्रणोदितं वेसरव्यमध्वनि'—इति माघे (१२।१९) । ४५०

वेसवारः पुं. [ विस् प्रेरणे, वेसं वृणुते । घञ् ] धन्याकसर्वपादिपिष्टः; उपस्करः; वेपवारः; वेशवारः; 'मुद्गादिवेसवारानां पूर्णा विष्टम्भिर्नो मृताः । वेसवारः सपिशितः सम्पूर्णं गुह्वं हृणाः—इति सुश्रुते । ध्यञ्जनविशेषः; 'निरस्थि पिशितं पिष्टं सिद्धं गुह्वृता-न्तितम् । कृष्णामरिचसंयुक्तं वेसवार इति स्मृतम् । वेसवारो गृहः स्निग्धो बलोपन्नयवर्धनः—इति राजवल्लभः । 'हिङ्गवाद्रं कमरीचजीरकहरिद्राधन्याकाः

ऋणेण द्विगुणपरिमाणेनैकत्रीकृताः—इति पाकराजेश्वरे पाकपरिभाषा । ३२१

वेहत् स्त्री. [ विशेषेण हन्ति गर्भमिति । वि+हन्+संश्च-त्पृष्ठेहत्' इति अति प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] गर्भोपधातिनी गौः; वृषभोपगता; अनृती वृषोपगमनादिवशात् यस्या गर्भपातो भवति सा । 'वेशा च मे ऋयभश्च मे वेहच्च मेऽनड्वांश्च मे'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१।८।२७) । २६९

वैकक्षम् क्ली. [ विशिष्टः कक्षः येन विकक्षम् उरस्तत्र भवम् । विकक्ष+अण् ] उत्तरासङ्गः; वृहतिका; वैकक्षकम् उरसि तिर्यग् उपवीतवत् कण्ठात् क्षिप्तमाल्यम्; तिर्यग्वक्षोलम्बिमाल्यम् । ४१०

वैकक्षकम् क्ली. [ वैकक्षमेव । स्वार्थे कन् ] तिर्यग्वक्षोलम्बिमाल्यं; वैकक्षम्; उरसि तिर्यग् यज्ञोपवीतवत् कण्ठात् क्षिप्तमाल्यम् । ५५३

वैकटिकः, वैकतिकः पुं. [ विकटे छेदनमाजनदन्तुरवर्तुलादिकर्मणि साधुः । विकट+ठक् ] मणिकारः । ५८८

वैकुण्ठः पुं. [ विकुण्ठाया अपत्यम् इति । शिवादित्वाद् अण् । विगता कुण्ठा यस्माद् वा, प्रज्ञाघण् ] कृष्णः; जनादेन; विष्णुः; 'चाक्षुषस्यान्तरे देवो वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः । विकुण्ठायामसौ जज्ञे वैकुण्ठे दैवतैः सह'—इति विष्णुपुराणम् । इन्द्रः; सितार्जकः; तत्रस्थदेवगणे पुं. भूमि । 'पत्नी विकुण्ठा शुभ्रस्य वैकुण्ठैः सुरसत्तमैः । तयोः स्वकलया जज्ञे वैकुण्ठो भगवान् स्वयम्'—इति भागवते (८।५।४) । २२

वैखानसः पुं. [ विखनसं ब्रह्माणं वेत्ति तपसा । विखनम्+तदधीते तद्वेदे' इत्यण्, अनुशक्तिकादेराकृतिगणत्वाद्भुभयपदवृद्धिः ] वानप्रस्थः; 'वानप्रस्थो वैखानसोऽग्रहः—इति त्रिकाण्डशेषः । 'वैखानसा ये मूनयो मिताहारा जितव्रताः । तेऽपि मुह्यन्ति संसारे जानन्तोऽपि ह्यसत्यताम्—इति देवीभागवते (१।१९।१७) । [ वैखानसस्येदमित्यर्थेऽणि ] वैखानससम्बन्धिनि त्रि. । 'वैखानसं किमनया व्रतमाप्रदानाद् व्यापारोधि मदनस्य निषेवितव्यम्—इति शाकुन्तले । ३९४

वैजननः पुं. - क्ली. [ विजायतेऽस्मिन्निति । वि+जन्+अधिकरणे ल्युट्, ततः स्वार्थे अण् ] प्रसवमासः; सूतिमासः; 'अथ वैजनने मासि सा देवी दिव्यलक्षणम् । निर्दग्धस्या-

न्वयतरोरङ्कुरं सुपुत्रे सुतम्—इति राजतरङ्गिण्याम् १४९९  
 वैजयन्ती स्त्री. [ विशेषेण जयति शत्रुमिति । जि अमि-  
 भवे+तृभूवर्हि' इति झच्, 'तस्येदम्' इत्यण्, डीप् ]  
 पताका; वैजयन्तिका; केतुः; केतनः; ध्वजः । ४५८  
 वैणवः पुं. [ वेणोरवयवो विकारो वा । वेणु+ 'वित्वादिभ्यो-  
 ऽण्' इत्यण् ] उपनयने वेणुदण्डः; राम्भः; वेणुः; 'भेरी-  
 मृदङ्गनिन्दः शङ्खवैणवनिस्वनैः—इति महाभारते  
 (५।९०।१६) । क्ली. [ वेणोरिदम् । वेणु+अण् ]  
 वेणुफलः; वेणुसम्बन्धिनि त्रि. । 'ब्रह्मशापोपसृष्टानां  
 कृष्णमायावृतात्मनाम् । स्पष्टाक्रोधः क्षयं निन्ये वैणवोऽ  
 निर्यथा वनम्—इति भागवते (११।३०।२४) । ७२६  
 वैतंसिकः त्रि. [ वीतंसो मृगपक्ष्यादिवन्धनोपायस्तेन चर-  
 तीति । वीतंस+ 'चरति' इति ठक् ] मांसविक्रेता;  
 कौटिकः; मांसिकः; कौटिकिकः; सौनिकः । ५९५  
 वैतालिकः पुं. [ विविधेन मङ्गलगोतवाद्यादिकृततालशब्देन  
 चरतीति । विताल+ठक् ] वीचकरः; प्रवीचकः; मागधः;  
 वन्दिः; सूतः; मङ्गलपगठकः; निशान्ते वीचकारकः;  
 निशान्तं निवेदयन्तो ये नृपं वीचयन्ति जागरयन्ति ते  
 वीचकराः । 'वैतालिकाः स्फुटपदप्रकटार्थमुच्चैर्भोगावलीः  
 कलगिरोऽवसरेषु पेटुः—इति माघे (५।६७) खेट्टि-  
 तालः; 'वैतालिकः पुमान् खेट्टिताले वीचकरे त्रिपु—  
 इति मेदिनी । 'वैतालिकः खङ्गताले (खेट्टिताले) मङ्गल-  
 पाठकेऽपि च—इति हैमः, वैतालसम्बन्धिनि त्रि. । ४३५  
 वैदूर्यम् क्ली. [ विदूरात् प्रभवतीति । विदूर+ 'विदूरा-  
 ष्यः' इति ञ्य ] मणिविशेषः; स तु कृष्णपीतवर्णः ।  
 बालवायजः; केतुरत्नं; कैतवं; प्रावृष्यम्; अश्ररोहं;  
 खराब्दाङ्कुरं; विदूररत्नं; विदूरजम्; 'मुक्ताविद्रुम-  
 वज्रेन्द्रवैदूर्यस्फटिकादिकम् । मणिरत्नं सरं शीतं कपायं  
 स्वादु लेखनम् । चक्षुष्यं धारणात्तच्च पापालक्ष्मीविनाश-  
 नम्—इति राजवल्लभः । १७५  
 वैदेहः पुं. [ विदेहस्यापत्यमिति । विदेह+अण् ] वणिकः;  
 पण्याजीवः; प्रापणिकः; नैगमः; वैदेहकः; निमि-  
 राजपुत्रः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'वैश्यान्मागववैदेही  
 राजविप्राङ्गनासुती—इति मनुः (१०।११) । ५७१  
 वैदेही स्त्री. [ विदेहेषु भवा, विदेहस्यापत्यं स्त्री वा ।  
 विदेह+अण्+डीप् ] कोल्या; उपकुल्या; मागवा;  
 मागधी; पिप्पली; कणा; वणिक्स्त्री; वणिक्पत्नी;

वैदेहपत्नी; 'आहिण्डिको निपादेन वैदेह्यामेव जायते'  
 —इति मनुः (१०।३७) । रोचना; सीता; 'रामोऽपि  
 सह वैदेह्या वने वन्येन वर्तयन् । चचार सानुजः  
 शान्तो वृद्धेष्वाकुव्रतं युवा—इति रवी (१२।२०) ।  
 'वैदेहि ! याहि कलसोद्भवधर्मपत्नीं तस्याः पुरः कथय  
 पूर्वकथाः समस्ताः । पृष्टापि मा वद पयोनिधिवन्धनं मे  
 सेयं पुनश्चुलुकिताम्बुनिधेः कलत्रम्—इत्युद्भटः । त्रि.  
 विदेहदेशोत्पन्नमात्रम्; 'देवातिथिः खलु वैदेहीमुपयेमे  
 मर्यादां नाम तस्यामस्य जने अरिहो नाम—इति महा-  
 भारते (१।९५।२३) । ६१४  
 वैद्यः पुं. [ विद्यां वेदेति । विद्या+ 'तदधीते तद्वेद' इति अण् ]  
 आयुर्वेदवेत्ता; स चांम्बुजजातिश्चिकित्सावृत्तिश्च; रोग-  
 हारी; अगदङ्कारः; भिपक्; चिकित्सकः; स्रष्टा;  
 विधिः; विद्वान्; आयुर्वेदी; दोषज्ञः; 'वैद्योऽश्विनी-  
 कुमारेण जातश्च विप्रयोगिपति । वैद्यवीर्येण शूद्रायां  
 बभूवुर्वह्वो जनाः—इति ब्रह्मवैवर्ते । पण्डितः; 'नावि-  
 द्यानां तु वैद्येन देयं विद्यायनं क्वचित् । समविद्याधिकानां  
 तु देयं वैद्येन तद्वनम्—इति कात्यायनः । 'वैद्येन विदुषा'  
 —इति दायतत्त्वम् । वासकवृक्षः; त्रि. वेदसम्बन्धी  
 यः [ वेदशब्दाद् उगवादित्वाद् यति स्वार्थेऽणि च निष्पन्न-  
 भेत्त ] । ६१२  
 वैधेयः त्रि. [ विधि पद्धतिभेवानुसृत्य व्यवहरति । विधि+  
 ठक् । यद्वा, विधेये कर्तव्ये अनभिज्ञः । विधेय+अण् ।  
 यद्वा, विरुद्धं धेयमस्य, ततः स्वार्थे अण् । पद्धतिमाश्रित्य  
 क्रियाकारित्वाद् युक्तायुक्तविवेकशून्यत्वाच्च तथात्व-  
 मस्य ] मूर्खः; 'पुंश्चली जाल्मवैधेयवाल्का द्रोग्यनिर्भरा ।  
 समभूदप्रवेशार्हा राजपर्पन्मनस्विनाम्—इति राजतरङ्गि-  
 ण्याम् (६।१५९) । विधिसम्बन्धी; विधेयसम्बन्धी । ३३६  
 वैनतेयः पुं. [ विनतायाः अपत्यमिति । विनता+ 'स्त्रीभ्यो  
 ठक्' इति ठक् ] गरुडः; विहङ्गराजः; गरुमान्;  
 तार्क्ष्यः; 'समानीयामृतं मात्रे वैनतेयः समर्पयत्—इति  
 देवीभागवते (२।१२।२९) । अरुणः; विनतापत्य-  
 मात्रम्; 'तार्क्ष्यश्चारिष्टेनेमिश्च तथैव गरुडारुणौ ।  
 आरुणिर्वारुणिश्चैव वैनतेयाः प्रकीर्तितौ—इति महा-  
 भारते (१।६५।४०) । ३०  
 वैनयिकः पुं. [ विनयः शिक्षाम्यासः प्रयोजनमस्य, ठक् ।  
 'विनयादिभ्यष्टक्' इति स्वार्थे वा ठक् ] शस्त्राभ्यासरयः;

योग्यारयः; विनयसम्बन्धिनि त्रि. । 'सर्वं वैनयिकं कृत्वा विनयशो बृहस्पतिम् । दक्षिणानन्तरो भूत्वा प्रणम्य विधिपूर्वकम् । विधिं पप्रच्छ राज्यस्य सर्वलोकहिते रतः'—इति महाभारते (१२।६८।४) । ४४५  
वैपरीत्यम् क्ली. [ विपरीतस्य भावः । विपरीत+प्यञ् ] व्यत्यासः; विपर्यासः; विपर्ययः; व्यत्ययः; 'स्वभाव-वैपरीत्यं तु प्रकृतेश्च विपर्ययः'—इति मार्कण्डेये (४३।३४) । ७२९

वैमेयः पुं. [ विमायनं विमेयः, ङुमिञ् प्रक्षेपणे+ 'एरच्' इत्यच्, स्वार्थेऽण् ] परिवृत्तिः; विनिमयः; द्रव्यव्यव-हरणम् । ५७३

वैरिङ्गकः त्रि. [ विरङ्गं नित्यमहंतीति । 'छेदादिभ्यो नित्यम्' इति ठञ् ] विरागाहः । ३६९

वैरी [ न् ] पुं. [ वैरमस्यास्तीति+इनि ] अरिः; रिपुः; शत्रुः; अमित्रम्; 'वैरिणं नोपसेवेत सहायं चैव वैरिणः'—इति मनुः (४।१३३) । वीरसम्बन्धिनि त्रि. । ४५६

वैरोचननिकेतनम् क्ली. [ वैरोचनस्य बलेः निकेतनम् ] बलिसद्यः; पातालम् । ६२३

वैरोचननिकेतनम् क्ली. [ विरोचनस्यापत्यम् वैरोचनिः तस्य निकेतनम् ] पातालम्; अधोभुवनं; वडवामुखं; नागलोकः; रसातलम् । ६२३

वैवस्वतः पुं. [ विवस्वतोऽपत्यमिति । विवस्वत्+अण् ] यमः; कृतान्तः; यमुनाभ्राता; कालः; 'एवं शशः सप्ततिहायनोऽयं वैवस्वतस्यालयमभ्युपैति'—इति बृहत्संहितायाम् (६९।२३) । 'वैवस्वतं संगमनं जनानां ययं राजानं हविषादुवस्य'—इति ऋग्वेदे (१०।१४।१) । 'वैवस्वतं विवस्वतः सूर्यस्य पुत्रम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । रुद्रविशेषः; शनिः; सप्तमो मनुः; 'वैवस्वतो मनुनाम माननीयो मनीषिणाम्'—इति रघो (१।११) । ७१

वैशाखः पुं. [ विशाखा प्रयोजनमस्य । विशाखा+ 'विशाखा-पादादिति' अण् ] मन्थानदण्डः; मन्था; मन्थः; मन्थानः; खजकः; 'दूततरकरदक्षाः क्षिप्तवैशाखशैले'—इति माघे (१।१।८) । [ वैशाखी पूर्णमासी अस्मिन्, 'सास्मिन् पूर्णमासीति' इति अण् ] द्वादशमासान्तर्गतद्वितीय-मासः; माधवः; राधः; 'विशाखातारकायुक्ता वैशाखी पूर्णिमा भवेत् । सा वैशाखी यत्र मासे स वैशाखः

प्रकीर्तितः'—इति शब्दरत्नावली । 'पुमान् विनीतो द्विजदेवभक्तो धर्मस्य कर्ता सुजनस्य भर्ता । गुणाभिरामोऽयं जगत्प्रियः स्याद् वैशाखमासे खलु जन्म यस्य'—कोष्ठीप्रद्वीपः । क्ली. [ विशाख एव । स्वार्थे अण् ] धनुर्विदां संस्थानभेदः; 'स्थानान्यालीढवैशाखप्रत्यालीढानि मण्डलम् । समपादं च'—इति हेमचन्द्रः । पुर-विशेषः; 'वैशाखाख्ये पुरे राशः पुत्रावावां द्विमातृको'—इति कथासरित्सागरे (६७।५) । २७६

वैश्यः पुं. [ विशतिं कृष्यादौ, विश्+विप्, ततः स्वार्थे ष्यञ् ] ब्रह्मोद्देशजाततृतीयवर्णः; ऊरव्यः; ऊरुजः; अर्यः; भूमिस्पृक्; विद्; द्विजः; भूमिजीवी; व्यवहर्ता; वार्तिकः; वणिक्; पणिकः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्ब्राह्म राजन्यः कृतः । ऊरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति ऋग्वेदे (१०।१।१२) । वैश्यसम्बन्धिनि त्रि. । 'क्षात्राणि वैश्यानि च सेवमानः शीद्राणि कर्माणि च ब्राह्मणः सन् । अस्मिँल्लोके निन्दितो मन्दचेताः परे च लोके निरयं प्रयाति'—इति महाभारते (१२।६२।४) । ५७०

वैश्रवणः पुं. [ विश्रवसो मुनेरपत्यम् । विश्रवस्+ 'शिवादिभ्योऽण्' इत्यत्र विश्रवणरवणावादेशी निपात्येते, अण् च ] कुबेरः; ऐलविलः; पौलस्त्यः; धनदः; 'तपसा निर्मिता राजन् स्वयं वैश्रवणेन सा'—इति महाभारते (२।१०।२) शिवः; 'धन्वन्तरिर्धूमकेतुः स्कन्दो वैश्रवणस्तथा' इति महाभारते (१३।१७।१०३) । रावणः । ७८

वैश्वानरः पुं. [ विश्वे नरः अस्पृति । 'नरे संज्ञायाम्' इति दीर्घः; विश्वानरस्यापत्यम्+ 'ऋष्यन्धकेति' अण् ] अग्निः; वह्निः; 'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः । प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।५।१४) । चित्रकवृक्षः । ६२

वैसारिणः पुं. [ विशेषेण सरतीति विसारी मत्स्यः, स एव । 'विसारिणो मत्स्ये' इति अण् ] मत्स्यः । ६५७

वैहासिकः पुं. [ विहास+ठक् ] विहासं करोति यः; वासन्तिकः; केलिकिलः; विदूषकः; प्रहासी; प्रीतिदः; दूरारूढस्तिमिरजलधेर्वाडवदिचित्रभानुर्भानुस्ताम्यद्वनरुह-वनीकेलिवैहासिकोऽयम्—इति नैपथे (१।१।६४) । ४३२

बोटा स्त्री. [ पोटयति कार्यं व्यापृता सती भावते । पुट्+अच्, वत्वे-पूषोदरादिः ] पोटा; चेटी; दासी; कुट्टि-हारिका; कुट्टहारिका; 'पोटा बोटा च चेटी च दासी च कुट्ट (ट्टि) हारिका'—इति हेमचन्द्रः । ४९२

व्यंसकः पुं. [ वि+अंस्+ण्वुल् ] दाण्डाजिनिकः; कुहकः; कापटिकः; जालिकः; कौसृतिकः; घूर्तः; मायात्री; मायिकः; मायी । ३४९

व्यक्तः त्रि. [ वि+अञ्जू व्यक्त्यादी+क्त ] प्राज्ञः; पण्डितः; स्फुटः; 'विभावेनानुभावेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा । रसतामेति रत्यादिः स्थायिभावः सचेतसाम्'—इति साहित्यदर्पणे (३११) । पुं. विष्णुः; 'व्यक्तो चायुरघोषजः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । ३३३

व्यजनम् क्ली. [ व्यजत्यनेनेति । वि+अज्+त्युट्, 'वा यी' इति पक्षे बीभावो नास्ति ] तालवृन्तकं; तालवृन्तं; व्यजः; 'स चन्दनाम्बुव्यजनोद्भवानिलैः सहारयप्टिस्तनमण्डलार्पणैः । सवल्लकीकाकालिगीतनिस्वनैः प्रबुध्यते सुप्त इवाद्य मन्मथः'—इति ऋतुसंहारे (११८) । ३१०

व्यञ्जनम् क्ली. [ व्यज्यते अक्ष्यते अन्नादि संयोज्यते-ऽनेनेति । वि+अञ्जू+त्युट् ] अन्नोपकरणं, तत्तु सूपशाकादिः; तेमनं; निष्ठानं; तेमः; मिष्टान्नम्; 'व्यञ्जनं शाकमत्स्याख्यं हृद्यं वृष्यं च पुष्टिदम् । द्रव्येण येन येनेह व्यञ्जनं मत्स्यमांसयोः । तस्य तस्य तयोश्चैतद् गुणदोषैर्विभावयेत्'—इति वल्लभः । चिह्नं; व्यञ्जना; 'अवाच्यत्वादिकं तस्य वक्ष्ये व्यञ्जनरूपणे'—इति साहित्यदर्पणे (३१५९) । श्मश्रुः; 'कुत एष परित्यक्तुं सुतं शक्याम्यहं स्वयम् । बालमप्राप्तवयसमजातव्यञ्जनाकृतिम्'—इति महाभारते (११५८-३४) । अवयवः; दिनम्; उपस्यः; स्त्रीपुंसयो-रशुद्धदेशः । अद्धमात्रकं; ककारादिककारान्तवर्णाः; 'सत्यर्थे पृथगर्यायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः । क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते'—इति साहित्यदर्पणे (१०१६४०) । ३२१

व्यतिरेकः पुं. [ वि+अति+रिच्+घञ् ] विना; पृथक्; अन्तरेण; ऋते; अभावः; 'न प्रतिव्यतिरेकेण सुस्त्रीणामपरा गतिः'—इति कथासरित्सागरे (३९११६६) । अलङ्कारविशेषः; 'व्यतिरेको विशेषश्चेदुपमानोप-

मेययोः । शैला इवोन्नताः सन्तः किन्तु प्रकृतिकोमलाः'—इति चन्द्रालोकः । 'उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः'—इति काव्यप्रकाशः (१०) । ८७६

व्यत्ययः पुं. [ व्यत्ययनमिति । वि+अति+इ+ 'एरच्' इत्यच् ] व्यतिक्रमः; व्यत्यासः; विपर्यासः; विपर्ययः; वैपरीत्यम्; 'परावरेपां स्थानानां कालेन व्यत्ययो महान्'—इति भागवते (७।१०।४४) । ७२९

व्यत्यासः पुं. [ व्यत्यसनमिति । वि+अति+अस्+घञ् ] विपर्ययः; व्यत्ययः; वैपरीत्यम्; विपर्यासः; व्यतिक्रमः । 'मात्रासि वञ्चिता भद्रे ! चरुव्यत्यासहेतुना । भविष्यति हि पुत्रस्ते क्रूरकर्मातिदारुणः'—इति हरिवंशे (२७।२९) । ७२९

व्यथकः त्रि. [ व्यथयति पीडयतीति । व्यथ्+णिच्+ण्वुल् ] व्यथाकारी; अरुन्दुदः; 'अव्युत्थानं व्यथकस्तु स्यान्मर्मस्पृगरुन्दुदः'—इति हेमचन्द्रः । 'परिणामसुखे गरीयसि व्यथकेऽस्मिन् वचसि क्षतीजसाम् । अतिवीर्यवतीव भेषजे चहुरल्पीयसि दृश्यते गुणः'—इति किराते (२।४) । ३७१

व्यथा स्त्री. [ व्यथ्+अङ्+टाप् ] आवाधा; वेदना; दुःखम्; अर्तिः; पीडा; 'स्नेहं दयां तथा सौख्यं यदि वा जानकीमपि । आराधनाय लोकानां मुञ्चती नास्ति मे व्यथा' इति उत्तररामचरिते । ६२६

व्यपदेशः पुं. [ वि+अप्+दिश+घञ् ] कतवः; कपटः; कूटः; व्याजः; छद्मः; उपधिः; छलः; मिपः; निमः; 'कापि कुन्तलसंन्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनी नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३१५५) । नाम; वाक्यविशेषः; 'व्याजेनात्माभिलाषोक्तिर्व्यपदेश इतीर्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ७०९

व्यलीकम् क्ली. [ विशेषेण अलतीति । वि+अल्+ 'अलीकादयश्च' इति कीकन् प्रत्ययेन निपातनात् साधु ] अपराधः; 'मुद्गः सरसव्यलीकतप्तस्तरमा श्लिष्टवतः सघोवनोष्मा'—इति माघे (१।८५) । (७४८) प्रतारणा; वञ्चनम्; अतिमन्थानम्; पीडार्थः; गतिविपर्ययः; कामजापराधः; 'कृत्यं नैव विजानाति परेणापकृतं वचिन् । कृत्यं च संस्मरे-देतदसत्यं च न जल्पति । व्यलीकेषु निवृत्तो यः पर्येति कृतनिश्चयः । नित्यं च धृतिमान् किञ्चित् परोक्षेऽपि

न च क्षिपेत् । ऋतुकालेऽभिगच्छेत अपत्याय स्वकां  
स्त्रियम् । ईदृशास्तु नरा भद्रे मम कर्मपरायणाः—इति  
वाराहे । अप्रियम्; 'न हि तेन मम आत्रा सुसूक्ष्ममपि  
किञ्चन । व्यलोकं कृतपूर्वं वै प्राज्ञेनामितबुद्धिना—  
इति महाभारते (३।६।९) । अकार्यः; वैलक्ष्यम्;  
'यस्मिन्ननैश्वर्यकृतव्यलीकः पराभवं प्राप्त इवान्त-  
कोऽपि । धुन्वन्तुः कस्य रणे न कुर्यान् मनो भयैक-  
प्रवणं स भीष्मः—इति किराते (३।१९) । दुःखम्;  
'दिग् दक्षिणा गन्धर्वहं मुखेन व्यलीकनिश्वासमिवोत्स-  
सर्जं—कुमारे (३।२५) । तद्वति त्रि । 'यद्युत्तम-  
श्लोक भवान् ममेरितं वचो व्यलीकं सुरवर्यं मन्यते ।  
करोम्यृतं तन्न भवेत् प्रलम्भनं पदं तृतीयं कुरु शीर्षिण  
मे निजम्—इति भागवते (८।२।२।२) । पुं. [ वि+  
अल् पर्याप्तौ+कीकञ् ] नागरः; पिङ्गः; पटप्रज्ञः;  
कामकेलिः; विदूषकः; पीठकेलिः; पीठसर्दः; भङ्गिलः;  
छिदुरः; विटः । ७४९

व्यवच्छेदः पुं. [ वि+अव+छिद्+घञ् ] वाणमुक्तिः;  
पृथक्त्वं; विरामः; निवृत्तिः; 'जीवस्य न व्यवच्छेदः  
स्याच्चेत्तत्प्रतिक्रिया—इति भागवते (४।२।९।३२) ।  
४७०

व्यवधानम् क्ली. [ वि+अव+घा+ल्युट् ] आच्छादनं;  
तिरोधानम्; अन्तर्द्धिः; अपवारणं; छदनं; व्यवघा;  
अन्तर्द्धिः; विधानं; स्मरणं; व्यवधिः; अपिधानम्;  
'दृष्टि विमानव्यवधानमुक्तां पुनः सहस्रांश्चपि सन्नि-  
धत्ते—इति रघौ (१।३।४४) । भेदः; 'परात्मनोर्षद्  
व्यवधानकं पुरस्तात् स्वप्ने यया पुरुषस्तद्विनाशे—  
इति भागवते (४।२।२।२७) । विच्छेदः; 'वपुस्त्वलिप्त-  
परिरम्भसुखव्यवधानभीहकतया न वधुः—इति माघे  
(९।५१) । समाप्तिः; 'यावदन्यं न विन्देत व्यवधानेन  
कर्मणाम्—इति भागवते (४।२।९।७७) । ७१९

व्यवस्था स्त्री. [ वि+अव+स्था+ 'आतश्चोपसर्गे' इत्यञ्ज,  
तत्पठार ] शास्त्रनिरूपितविधिः; संस्था; 'दीर्घ-  
कालं ब्रह्मचर्यं धारणं च कर्मण्डलोः । देवरेण  
सुतोत्पत्तिर्नकन्या । प्रदीयते । एतानि लोकगुप्यर्थ  
कलेरादौ महात्मभिः । निवर्तितानि कर्माणि व्यवस्था  
पूर्वकं बुधैः—इति पुराणम् । स्थितिः (८३७); नियमः;  
'एवं कृतगृह्णन्को महारत्नानि शङ्करः । उत्पाद्य

भगवांस्तत्र व्यवस्थामादिदेश सः—इति कथासरि-  
त्सागरे (१०९।७१) । निष्ठा (८५३) । ८१९

व्यवस्थानम् क्ली. [ वि+अव+स्था+ल्युट् ] व्यवस्थितिः;  
'चातुर्वर्ण्यं व्यवस्थानं यस्मिन्देशे न विद्यते । तं म्लेच्छदेवं  
जानीयादायावर्तस्ततः परम्—इति भरतः । पुं.  
विष्णुः; 'व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो  
ध्रुवः—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । ८३९

व्यवहितम् त्रि. [ वि+अव+घा+क्त ] विप्रकृष्टं; परं;  
दूरम्; आरात्; व्यवधानविशिष्टः; 'कर्तृकर्मव्यवहिता-  
मसाक्षाद्धारयत् क्रियाम् । उपकुर्वत् क्रियासिद्धी शास्त्रे-  
ऽधिकरणं मतम्—इति वैयाकरणभूषणम् । ६९३

व्यवायः पुं. [ विशेषेण अवायनम् अवरोधनम्, वा अधः  
संश्लेषणम् । वि+अव+इ+घञ् ] विघ्नः; अन्तरायः;  
प्रत्यूहः; (८१५) मैथुनः; मुरतम्; 'व्यायामञ्च  
व्यवायञ्च स्नानं चक्रमणं तथा । ज्वरमुक्तो न सेवेत्  
यावन्न बलवान् भवेत्—इति वैद्यके । 'अडम्यास-  
व्यवायेऽपि—इति पाणिनिः (६।१।१३६) । अन्त-  
र्धानम्; शुद्धिः; परिणामः; 'पश्यन्ति युक्ता मनसा  
मनोपिणो गुणव्यवायेऽप्यगुणं विपश्चित्तः—इति भाग-  
वते (८।६।११) । ४०१

व्याकुञ्चितम् त्रि. [ विशेषेण आ समन्तात् कुञ्चितम् ।  
वि+आ+कुञ्च् कौटिल्ये, क्त, सजापूर्वकत्वान् न  
नलोपः ] वक्रं; वृजिनं; भङ्गुरम्; आविद्धं; वेत्तिल्लं;  
नतं; जिह्वं; भग्नम्; अरालं; कुटिलम्; ऊर्मिमत् ।

६९६

व्याकुलः त्रि. [ विशेषेण आकुलः ] शोकादिभिरति-  
कनं व्यताशून्यः; विहस्तः; 'हरोद सा शोकवती  
वाष्पव्याकुललोचना—इति महाभारते (५।१।७७।  
२५) । उपद्रुतः; 'एने चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान्  
स्वयम् । इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगं युगे—इति  
भागवते (१।३।३८) । ३८२

व्याकृतिः स्त्री. [ विशिष्टा आकृतिः । वि+आ+कृद्  
शब्दे+कितन् ] भङ्गिः; मुखादिभावः । ७६२  
व्याकोशः त्रि. [ व्याकृतः कोशः सङ्ख्यावोऽस्मात् । 'प्रादिभ्यः'  
इति समासः ] विकसितः; 'दोषाणि नूनमहिमांशुरसौ  
किलेति व्याकोशकोकनदतां दधते नलिन्यः—इति  
माघे (४।४६) । [ भावे घञ् ] प्रस्फुटनम्; 'पद्य



व्याकोषं भास्करं बालचन्द्रं, वापीविस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम् । तत्कस्मिन् देशे दर्शयाम्यात्मशिल्पं, दृष्ट्वा श्वो यद्विस्मयं यान्ति पीराः—इति मृच्छकटिके ३ अङ्के । १८७

**व्याकोषः** त्रि. [ कुष् निष्कर्षे+भावे घञ्, वि+आ+कोष्, प्रादिसमासः । व्याकुष्णाति मुकुलीभावाद्बहिर्निःसरतीति । वि+आ+कुष्+अच् वा ] प्रफुल्लः; उन्मीलितः; उन्मिषितः; स्मितः; उन्निद्रः; विजृम्भितः; हसितः; उद्बुद्धः; 'तं पयनिकराकारं पयपत्रनिर्भक्षणम् । व्याकोषपस्याभिमूलो नलो विव्याध सायकैः—इति महाभारते (७।३।२२) । १८७

**व्याख्या** स्त्री. [ व्याख्यानिमिति । वि+आ+ख्या+ 'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्, ततष्टाप् ] विवरणम्; 'न शिष्यान्नुबन्धीत ग्रन्थान्नैवाभ्यसेद्बहून् । न व्याख्यामुपयुञ्जीत नारम्भानारभेत क्वचित्—इति भागवते (७।१।३।८) । ग्रन्थः; 'शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां, व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलसं विद्याञ्च हस्ताम्बुजैः । विभ्राणां कमलासनां कुचलतां वाग्देवतां सस्मितां, वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सीमागयसम्पत्करीम् ।' ४००

**व्याघ्रः** पुं. [ व्याजिघ्रतीति । वि+आ+घ्रा+क ] जन्तु-विशेषः; शार्दूलः; द्वीपी; पृदाकुः; वानश्वः; चियकः; पुण्डरीकः; हिस्रपशुः; व्याडः; हिस्रकः; हिसारः; श्वापदः; पञ्चनखः; व्यालः; गुहाशयः; तीक्ष्णदंष्ट्रः; भीरुः; नखायुधः; स तु कश्यपभार्यादंष्ट्रासन्तानः; 'दंष्ट्रा त्वजनयत् पुत्रान् व्याघ्रसिंहांश्च भाविनी । द्वीपिनश्च सुतास्तस्या व्यालाद्याश्चामिषप्रियाः—इति वह्निसुराणे । नरादिशब्दोत्तरस्यः श्रेष्ठार्थवाचकः; 'किञ्च दुःखतरं शक्यं मया द्रष्टुमतः परम् । योऽहमद्य नर-व्याघ्रान् सुप्तान् पश्यामि भूतले—इति महाभारते (१।१५।२।९) । रक्तैरण्डः; करञ्जः । २२६

**व्याघ्राटः** पुं. [ व्याघ्र इव अटतीति । अट् गती+पचाद्यच् ] भरद्वाजपत्नी । २४८

**व्याघ्री** स्त्री. [ व्याघ्र+ङीप् ] कण्टकारी; कण्टकारिका; निदिग्धिका; व्याघ्रपत्नी; 'व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती—इति भर्तृहरिः (३।१०९) । 'मृगाः परिभवो व्याघ्रचामित्यत्रेहि त्वया कृतम्—इति रघो

(१२।३७) । ६१९

**व्याजः** पुं. [ व्यजति यथार्थं व्यवहारोदपगच्छत्यनेनेति । वि+अज्+घञ् । घञि वीभावो नास्ति ] कपटः; कैतवं; कूटं; छयः; उपधिः; छलं; मियं; निर्भः; व्यपदेशः । ७०९

**व्याघः** पुं. [ विध्यति मृगादीन् । व्यघ्+ 'स्याद्व्यधेति' ण ] मृगहिंस्रजातिः; मृगवधाजीवः; मृगयुः; लुन्धकः; मृगावित्; द्रोहाटः; मृगजीवनः; बलपांशुनः; 'विद्धा मृगी व्याघशिलीमुखेन मृगोऽपि तत्कातरवीक्षणेन । असून् परित्यज्य गतव्यया सा मृगस्य जीवावधिराधिरासीत्—इत्युद्भटः । द्रुष्टः; 'व्याघस्याप्यनुकम्प्यानां स्त्रीणां देवः सतीपतिः—इति भागवते (३।१।४।३४) । ५९६

**व्याघामः** पुं. [ घम् ध्वाने सौत्रः, भावे घञ् । विशिष्टः आसमन्ताद् घामः यस्य ] वज्रः; पविः; अशनिः; शतधारः; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरः; व्याघावः; स्वरुः; इन्द्रप्रहरणः; शम्बः । ५६

**व्याधिः** पुं. [ विविधा आघयोऽस्मात् । यद्वा वि+आ+घा+ 'उपसर्गे घोः किः' इति कि ] रोगः; रुक्; अकल्यः; गदः; मान्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; आतङ्कः; उपतापः; रुजा; 'द्विविधो जायते व्याधिः शारीरो मानसस्तथा । परस्परं तयोर्जन्म निर्द्वन्द्वं नोपलभ्यते—इति महाभारते (१२।१६।८) । कुष्ठं; कामव्यथासन्तापजन्यकृशता । ६००

**व्यापावनम्** क्ली. [ वि+आ+पद्+णिच्+ल्युट् ] मारणम्; 'अतीते च दिने बालामात्मव्यापादनोद्यताम् । सुरभिः प्राह नायं त्वां प्राप्स्यते दानवाधमः—इति मार्कण्डेये (२।१।३२) । परानिष्टचिन्तनम् । ४७८

**व्याप्तम्** त्रि. [ वि+आप्+क्त ] सम्पूर्णम्; पूर्णम्; आचितं; छन्नं; पूरितं; भरितं; निचितम्; 'द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वः—इति भगवद्गीतायाम् (१।१।२०) । ख्यातं; समाक्रान्तं; स्थापितम्; 'व्याप्तं प्रणिहिते समे ।' ७०२

**व्यामः** पुं. [ विशेषेण आस्यतेऽनेनेति । वि+आ+अम् गती+घञ् ] तियंक् पार्श्वं ततयोः सहस्तयोर्बाह्वोरन्तरम्; व्यामनं; मानविशेषः; 'व्यामव्यायामन्य-ग्रीवास्तिर्यग्बाहू प्रसारितौ—इति हेमचन्द्रः । 'ततो भीमो महाबाहुरारुज्य तरसा द्रुमम् । दश व्याममयो-

द्विदं निष्पन्नमकरोत् तदा—इति महाभारते  
(३।११।३९)। ८०५

व्यालः पुं. [ विशेषेण आसमन्ताद् अलतीति । वि+आ+  
अल् पर्याप्ती+अच् ] दुष्टगजः; 'व्यालद्विपा यन्तृमि-  
रुन्मदिष्णकः कथञ्चिदारादपयेन निन्द्यरे'—इति माघे  
(१२।२८)। (६४०) सर्पः; अहिः; अर्थव्ययसहः  
(८३२); हिल्लपशुः; श्वापदः; 'पशवश्च मृगाश्चैव  
व्यालाश्चोभयतोदतः । रक्षाति च पिशाचाश्च मनुष्याश्च  
जरायुजाः'—इति मनुः (१।४३) । चित्रकः; व्याघ्रः;  
राजा; त्रि. [ वि+आ+अल्+अच् ] शठः; घृतः । २२५  
व्यालप्राहः पुं. [ व्यालं गृह्णातीति । व्याल+ग्रह्+  
अण् ] व्यालप्राही; 'व्यालप्राहानुञ्चवृत्तीनन्यांश्च वन-  
चारिणः'—इति मनुः (८।२६०) । ६१०

व्यालप्राही [न्] पुं. [ व्यालं गृह्णातीति । व्याल+  
ग्रह्+णिनि ] भिक्षार्थं संप्रवारी; संप्रखेलकः; अहि-  
तुण्डिकः; जाडगुलिः; जाङ्गलिः; आहितुण्डिकः;  
व्यालप्राहः; गार्हडिकः; विषवैद्यः । ६१३

व्यासः पुं. [ व्यस्यति वेदानिति । वि+अस्+बाहुलकात्  
ण ] मुनिविशेषः; वेदव्यासः; माठरः; द्वैपायनः;  
पाराशर्यः; कानीनः; नादरायणः; कृष्णद्वैपायनः;  
सत्यभारतः; पाराशरिः; सात्यवतः; नादरायणिः;  
सत्यवतीसुतः; सत्यरतः; पाराशरः; सात्यवतेयः; स  
च सत्यवत्यां कन्याकाले पराशराज्जातः; 'यो व्यस्य  
वेदाश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः । लोके व्यासत्वभापेदे  
काष्णर्पात् कृष्णत्वमेव च'—इति महाभारते (१।१०५।  
१४) । (७६६) [ वि+अस्+घञ् ] विस्तारः;  
प्रपञ्चः; विस्तारः; 'विस्तीर्येत् न महज्ज्ञानमृषिः संक्षिप्य  
चात्रवीत् । इष्टं हि विदुषां लोके समासव्यासधारणम्'—  
इति महाभारते (१।१।५१) । 'समासः संक्षेपः व्यासो  
विस्तरः'—इति तट्टीका । मानभेदः; पाठकब्राह्मणः;  
'विस्पष्टमद्भुतं शान्तं स्पष्टाक्षरपदं तथा । कलस्वर-  
समायुक्तं रसभावसमन्वितम् । बुध्यमानः संदर्पं वै  
ग्रन्थार्थं कृत्स्नशो नृप । ब्राह्मणादिषु सर्वेषु ग्रन्थार्थञ्चाप्यं-  
येनृप । य एवं वाचयेद् ब्रह्मन् स विप्रो व्यास उच्यते'—  
इति तिथ्यादितत्त्वम् । गोलस्य मध्यरेखा; 'व्यासे  
भवन्दाग्निहते विभक्ते, खनाणसूर्यः परिधिस्तु सूक्ष्मः ।  
द्राविशतिष्णे विहृतेऽप शैलैः स्पूलोऽपवा त्याद्वयवहार-

योग्यः । विष्कम्भमानं किल यत्र सप्त तत्र प्रमाणं परिधे  
प्रचक्ष्व । द्राविशतियत् परिधिप्रमाणं तद्व्याससंख्यां च  
सखे विचिन्त्य'—इति लीलावती । ४१०

व्याहारणम् क्ली. [ वि+आ+ह्+ल्युट् ] उचितः; व्या-  
हारः; कथनः; भाषितम् । १५३

व्याहारः पुं. [ वि+आ+ह्+घञ् ] उचितः; लपनः;  
वाक्यम्; 'श्वभिरस्त्रिशवावयवप्रवेशनं मन्दिरेषु  
भरकाय । पशुशस्त्रव्याहारे नृपमृत्युर्मुनिवचश्चेदम्'—  
इति बृहत्संहितायाम् (४६।७१) । १३८

व्युत्थानम् क्ली. [ वि+उत्+स्था+ल्युट् ] स्वातन्त्र्यकृत्यं;  
स्वतन्त्रवृत्तिः; व्युत्थितिः; विरोधाचरणम्; 'एवं  
ते द्रविडाभीरा पुष्ट्राश्च शवरैः सह । वृषलत्वं परिगता  
व्युत्थानात् क्षत्रधमिणः'—इति महाभारते (१।४।  
२१।१६) । प्रतिरोधनः; समाधिपारणः; नृत्यभेदः;  
विशेषणोत्थानं; चित्तस्यावस्थाविशेषः । ७७८

व्युत्पन्नः त्रि. [ वि+उत्+पद्+क्त ] प्रहतः; क्षुण्णः;  
संस्कृतः; व्युत्पत्तियुक्तः; विशेषणोत्पन्नः; ३५२

व्युष्टम् पुं.- क्ली. [ वि+वस्+क्त ] प्रभातः; कल्पम्;  
उषः; प्रत्यूर्ध्वः; प्रगे; विभातम्; अहर्मुखः; दिवसमुखः;  
गोसर्गः; प्रातः; 'व्युष्टं प्रयाणं च वियोगवेदनाविद्वान-  
नारीकमभूत् समन्तदा'—इति माघे (१२।४) । फलं  
(७७७); दिनः; पर्युषितं; पुं. दोषायाः पुनः; 'प्रदोषो  
निशियो व्युष्ट इति दोषासुतास्त्रयः । व्युष्टः सुतं  
पुष्करिण्यां सर्वतेजसमादधे'—इति भागवते (४।१३।  
१४) । त्रि. [ वि+वस्+क्त ] उचितः; 'सा व्युष्टा  
रजनीं तत्र पितुर्वैशम विभाविनी'—इति महाभारते  
(३।६९।२८) । दग्धः । १११

व्युष्टिः स्त्री. [ वि+वस्+कित् ] फलं; व्युष्टम्;  
'महतस्तपसो व्युष्ट्या पश्यन्नोकी परावरो'—इति  
महाभारते (१२।२२।८।४) । समृद्धिः; स्तुतिः; प्रकाशः;  
'व्युष्टिषु शवसा शस्वतीनाम्'—इति ऋग्वेदे (१।१७।१-  
५) । 'व्युष्टिषु सतीषु प्रकाशेषु सत्सु'—इति  
सायणः । ७७७

व्यूढः त्रि. [ विशेषेण उहते स्म । वि+वह्+क्त ] बृहन्;  
उरुः; गुरुः; विस्तोर्णः; पुरुः; पृथुः; पृथुलः; महान्;  
विशालः; विपुलः; रुद्रः; वरिष्ठः; 'व्यूढोरस्को वृष-  
स्कन्धः शालप्राशुमहाभुजः । आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो

धर्म इवाश्रितः—इति रघी (१।१३)। विन्यस्तः; संहतः; व्यूहरचनयाधिष्ठितः; 'दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूहं दुर्योधनस्तदा। आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत्—इति भगवद्गीतायाम् (१।२)। ६९९

व्यूहः पुं. [ वि+ऊह्+घञ् ] समूहः; निकरः; उत्करः; (७९५) निर्माणं; रचना। तर्कः; देहः; यः सात्वतैः समविभूतय आत्मवद्भिः व्यूहेर्चितः सवनशः स्वरतिक्रमाय—इति भागवते (१।१।६।१०)। सैन्यम्; परिणामः; लिङ्गम्; यावद्वुद्धिमनोऽक्षार्थगुणव्यूहो ह्यनादिमान्—इति भागवते (४।२९।७०)। युद्धार्थ-सेनारचना; बलविन्यासः; 'समग्रस्य तु सैन्यस्य विन्यास-स्थानभेदतः। स व्यूह इति विख्यातो युद्धेषु पृथिवी-भुजाम्—इति शब्दरत्नावली। ६८७

व्योम [ न् ] क्ली. [ व्ययति, व्येञ् संवरणे+ 'नामन् सीमन्' इत्यादिना मन्नन्तं निपातितम् ] आकाशः; गगनं; नभः; त्रियत्; विष्णुपदम्; 'रजोमिः स्यन्दनोद्ध-तैर्गजैश्च घनसन्निभैः। भुवस्तलमिव व्योम कुर्वन् व्योमेव भूतलम्—इति रघी (४।२९)। जलं; पानीयं; भास्करस्याचंनश्रयः; सूर्यमन्दिरम्; अभ्र-कम्। १३७

व्योमकेशः पुं. [ व्योम एव केशा यस्य, विराम्पूर्वित्वादस्य तथात्वम्। व्योमिन् केशाः यस्य वा। कैलासशिखर-स्यत्वात् ] शिवः; महादेवः; शङ्करः; उमापतिः; रुद्रः; 'सूर्याचन्द्रमसी लोके प्रकाशन्ते रश्चश्च याः। ते केशसंज्ञितास्थक्षे व्योमकेश इति स्मृतः—इति महाभारते (७।२००।१२९)। १२

व्योमकेशी [ न् ] पुं. [ गङ्गाधारणकाले व्योमव्यापिनः केशा अस्य सन्तीति। मध्यपदलोपिसमासे व्योमकेश-शब्दात् इन् प्रत्ययेन निष्पन्नः ] महादेवः; शिवः; शङ्करः। १२

व्योमम् क्ली. [ विशेषेण व्योपतीति। उप् दाहे+पचाद्यच् ] त्रिकटुः; श्युषणम्; 'व्योषं त्रिजातकं मुस्ता विडङ्गामलके तथा—इति सुश्रुते (१।४४)। ६१७

व्रजः पुं. [ व्रजन्ति सङ्घाभूय यान्त्यत्र। व्रज् गती+ 'गोचर-संचरति' घ प्रत्ययेन निपातनात् साधुः ] गोष्ठम्; 'निरुद्धं वीवधासारप्रसारा गा इव व्रजम्। उपरुन्वन्तु दाशाहोः पुरीं माहिष्मतीं द्विवः—इति माघे (२।६४)।

समूहः (६८६); 'ततः प्रतापः सुमहान् शब्दश्चैव विभावसोः। प्रादुरासीत् तदा तेन बुबुधे स जनव्रजः—इति महाभारते (१।१४९।१२)। 'पन्याः; मेघः; अग्रवणमयुरयोश्चतुष्पाश्वर्वतिदेशः; 'व्रजमण्डलभूगोलं शोपनागफणं वरम्। कुमुदास्यं महाश्रेष्ठं सर्वेषां मध्य-संस्थितम्—इति मात्स्ये। २६२

व्रज्या स्त्री. [ व्रजनमिति। व्रज् गती+ 'व्रजयजोर्भवि क्यप्' इति क्यप् ] अट्या; गतिः; पर्यटनं; जिगीषोः प्रयाणं; गमनं; वर्गः; रङ्गः; सजातीयानामेकत्र सन्निवेशः; 'कोपः शोकसमूहस्तु स्यादन्योऽन्यानपेक्षकः। व्रज्याक्रमेण रचितः स एवातिमनोहरः—इति साहित्यदर्पणे। ७७६  
व्रणः पुं.—क्ली. [ व्रणयति गात्रमिति। व्रण गात्रविचूर्णने +पचादित्वाद् अच् ] क्षतम्; ईर्मम्; अरुः; ईर्मः; 'व्रणो द्विधा परिज्ञेयो दोषजागन्तुभेदतः। दोषजो दुष्ट-दोषैः स्यादन्यः शस्त्रादिसम्भवः। स्तब्धः कठिन-संस्पर्शा मन्दस्त्रावो महारुजः। तुद्यते स्फुटितस्यावो व्रणो मारुतसम्भवः।' तृष्णामाहङ्गवरकलेददाहदुःखा-वदारणैः। व्रणं पित्तकृतं विद्यात् स्यावर्गन्वैश्च पूतिकैः।

६३०

व्रतम् क्ली.—पुं. [ त्रियते इति, दृञ् वरणे+वाहुलकाद् अतच् स च कित् ] पुण्यजनकोपवासादि; नियमः; पुण्यकं; नियामः; संयमः; निष्ठा; व्रणम्; 'अभुक्त्वा प्रातराहारं स्नात्वा चैव समाहितः। सूर्यादिदेवताभ्यश्च निवेद्य व्रतमाचरेत्। ब्रह्मचर्यं तथा शौचं सत्यमामिषवर्जनम्। व्रतेष्वेतानि चत्वारि वरिष्ठानीति निश्चयः—इति देवलः। ८५३; ८६०

व्रततिः स्त्री. [ प्र+तन् विस्तारे+चितच्, पृषोदरादित्वात् पस्य व ] लता; प्रतानिनी; वल्ली; प्रततिः; 'अपि वृश्च पुराणवद् व्रततेरिवपुष्पितमोजी दासस्य दम्भय—इति ऋग्वेदे (८।४०।६)। 'व्रततेरिव यथा लताया पुष्पितं निर्गतां शाखा वृश्चति—इति तद्भाष्ये सायणः। विस्तारः। १८०

व्रतती स्त्री. [ व्रतति+पठो डीप् ] लता; प्रतानिनी; वल्ली; प्रततिः; 'अपश्यता दाशरथी जनन्या छेदादिवो-पघ्नतरोव्रतत्यौ—इति रघी (१।४।१)। विस्तारः। १८०  
व्रतादानम् क्ली. [ व्रतस्य त्यागरूपस्य आदानं ग्रहणम् ] परिव्रज्या; यतिवृत्तिः। ७७७

व्रती [ न् ] पुं. [ व्रतमस्यास्तीति । व्रत+इति ] ब्रह्मचारी ; तपस्वी ; संयतः ; शान्तः ; मुनिः ; लिङ्गी ; यतिः ; पाराशरी ; भिक्षुः ; मस्करी ; तापसः ; कर्मन्दी ; पारिरक्षिकः ; परिव्राजकः ; 'भैक्षेण वतंयेन्नित्यं नैका-  
त्रादी भवेद् व्रती । भैक्षेण व्रतिनी वृत्तिरुपवाससमा-  
स्मृता—इति मनुः ( २।१८८ ) । यजमानः ( ४२० ) ;  
व्रतविशिष्टे त्रि. । 'तिथ्यन्ते चोत्सवान्ते वा व्रती कुर्वीत  
पारणम्—इति तिथ्यादितस्त्वम् । ३४४, ४०९

व्रातः पुं. [ व्रत्यते इति, 'मुण्डमिश्रेति' व्रतशब्दाणिचि  
भावे घञ् । व्रतिनां संघ इव समूहः इत्यर्थे अण् वा ]  
समूहः ; निकरः ; 'नानारण्यमृगव्रातंरनावाघे मुनि-  
व्रतैः । आहूतं मन्यते पान्यो यत्र कोकिलकूजितैः—इति  
भागवते ( ४।२५।१९ ) । व्याधादिः ; मनुष्यः ; क्ली.  
शरीरायासजीविकर्म । ६८६

व्रात्यः पुं. [ व्रातः शरीरायासजीवी व्याधादिः स इव ।  
'शाखादिभ्यो यत्' इति यत् ] दशसंस्काररहितः ;  
पोडशवर्षादूर्ध्वम् अकृतव्रतवन्धो भ्रष्टपायत्रीकः ;  
संस्कारहीनः ; सावित्रीहीनः ; वाग्दुष्टः ; परधोक्तिकः ;  
'अय व्रात्यविधिं देवि ! प्रायश्चित्तं तु यद्भवेत् । तत्  
शृणुष्व महेशानि ! सर्ववर्णं विशेषतः—इति मत्स्य-  
सूक्ते । ४०४

व्रीडः पुं. [ व्रीड्+भावे घञ् ] लज्जः ; अपत्रपा ; त्रपा ;  
मन्दाक्षम् ; 'न नूनमारूढरुपा शरीरमनेन दग्धं कुसुमा-  
युधस्य । व्रीडादम् देवमुदीक्ष्य मन्ये सद्यस्तदेहः स्वयमेव  
कामः—इति कुमारे ( ७।६७ ) । ५६७

व्रीडा स्त्री. [ व्रीड्+'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप् ] लज्जा ;  
त्रपा ; 'अथ मन्दाक्षमन्दास्यं लज्जा लज्या च ह्रीस्त्रपा ।  
व्रीडो व्रीडा व्रीडनं च लज्जापर्याय ईरितः—इति शब्द-  
रत्नावली । 'प्रातरुपागत्य मृपा वदतः सखि नास्य  
विद्यते व्रीडा । मुखलग्नयापि योऽयं न लज्जते दग्ध-  
कालिक्रया—इति आर्यासप्तशत्याम् ( ३५७ ) । ५६७

व्रीहिः पुं. [ वर्हति वृद्धिं गच्छतीति । वृह् वृद्धौ+'इगुपघात्  
कित्' इति इन् । पृषोदरादित्वात् साधुः ] धान्यमात्रम् ;  
आशुधान्यम् ; 'यथोक्तवस्त्वसम्पत्तो ग्राह्य तदनुकारि  
यत् । यन्मनामिव गाधूमा ब्राह्मणांमिव शालयः—इति  
तिथ्यादितस्त्वम् । ५७९

व्रीहयम् क्ली. [ व्रीहिणां भवनं क्षेत्रम् । व्रीहि+व्रीहि-

शाल्योढक' इति ढक् ] आशुधान्योपयुक्तभूम्यादिः ;  
शालेयः । १६२

## श

शम् क्ली. [ शमयति आधिव्याध्यादीन् । शम् उपशमे+  
णिच्+'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच् ] सुखं ; प्रमोदः ;  
प्रमदः ; हर्षः ; प्रीतिः ; उत्कर्षः ; उद्धवः ; सम्मदः ;  
मुत् ; आनन्दः ; शर्म ; जोषम् ; 'न च हर्म्ये वने शं मे  
दीधिकार्यां न पर्वते—इति देवीभागवते ( ३।१८।७ ) ।  
अव्य. कल्याणम् ; 'यः कीर्तो भवतो वतो नृपगुणैर्यः  
शान्तन्ः शान्तन्ः—इति राजेन्द्रकर्णपुरे ( ५१ ) । सुखं ;  
शास्त्रं ; शुभम् ; पुं. शिवः ; शस्त्रम् । १२३

शकटः पुं.-क्ली. [ शक्नोति भारं बोद्धमिति । शक्+  
'शकादिभ्योऽट्' इति अट् ] यानविशेषः ; अनः ;  
अक्षः ; शताङ्गः ; 'गाडी' इति भाषा । श्रीकृष्णवध्यासुर-  
विशेषः । द्विसहस्रपलपरिमाणं ; भारः ; आचितः ;  
शाकटीनः ; शलाटः ; 'शकटः शाकिनी गावो यान-  
मस्कन्दनं वनम् । अनूपः पर्वतो राजा दुर्मिक्षे नव  
वृत्तयः—इति भरतः । तिनिसवृक्षः ; व्यूहविशेषः ;  
'दण्डव्यूहेन तन्मार्गं यायात् शकटेन वा—इति मनुः  
( ७।१८७ ) । ( शकटाकृतित्वात् ) रोहिणीनक्षत्रम् ;  
'रोहिणीशकटमध्यस्थिते चन्द्रमस्यशरणीकृता जनाः ।  
क्वापि यान्ति शिशुयाचिताशनाः सूर्यतप्तपिठराम्बु-  
पायिनः—इति बृहत्संहितायाम् ( २।४।३० ) । ४४४

शकलम् क्ली. [ शक्नोतीति, शक्+'शकिसभ्योऽनित्' इति  
कल ] शिरसोऽस्थि ; कपालं ; करोटिः ; करोटी ;  
त्वक् ; खण्डम्, 'अयान्धकारं गिरिगङ्गाणां दंष्ट्रा-  
मयूखैः शकलानि कुर्वन्—इति रघौ ( २।४६ ) । राग-  
वस्तु ; वल्कलं ; शल्कं ; मत्स्यत्वक् । ६३३

शकलः पुं.-क्ली. [ शक्+कल ] खण्डं ; भित्तम् ; भित्तं  
शकलखण्डेवा पुंस्यद्धोऽर्द्धं समंशके—इत्यमरः । ७१३  
शकली [ न् ] पुं. [ शकलं शल्कमस्यास्तीति+इनि ] मत्स्यः ;  
मीनः ; झेपः ; वैसारिणः ; विसारः ; पृथुरोमा ; जलचर-  
विशेषः ; तिमिः ; अनिमिपः ; शल्को । ६५७

शकुनः पुं. [ शक्+'शक्नोन्तोन्त्युनयः' इति उन ]  
पक्षिमात्रम् ; 'तं वने विजने गर्भं सिंहव्याघ्रसमाकुले ।  
दृष्ट्वा शयानं शकुनाः समन्तात् पर्यवारयन्—इति

महाभारते (१७२।१०) । पक्षिविशेषः; गृध्रः; कश्यपपत्नीताम्रायाः श्येनगृध्रादयः पुत्राः; विप्रभेदः; गीतविशेषः; स तु उत्सवादिषु मङ्गलार्थगेयः । शुभशांती; क्ली। [ शक्नोति शुभाशुभं विज्ञानुमनेनेति ] शुभशांति निमित्तं; फललक्षणं; 'सगुन' इति भाषा । २३८

शकुनिः पुं. [ शक्नोति उन्नेतुमात्मानमिति । शक्+ 'शकेःनोन्तोन्त्युनयः' इति उनि ] पक्षिमात्रं; विहगः; 'ऋग्यादान् शकुनीन् सर्वास्तथा ग्रामनिवासिनः । अनिदिप्टांश्चैकशफाण्टिट्टिभं च विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।११) । (२५०) आतापी; आतापी; चिल्ल-पक्षी; सौवलः; स तु कोरवमातुलः । अयं हि दुर्योधन-मन्त्री द्यूते पाण्डवान् जित्वा वनं प्रेषयामास । कोरव-युद्धे च स सहदेवेन निहतः । ववाद्येकादशकरणान्त-गंताष्टमकरणम्; 'परजनधनहर्ता वञ्चकः क्रूरचेष्टः; करवृत्तकरवाली व्याहृतस्वामिपक्षः । अतिशयपरदार-सक्तचित्तः सरोषो, भवति शकुनिजन्मा मानवः शीघ्र-कर्मा'—इति कोष्ठीप्रदीपः । दुःसहपुत्रः; 'दुःसहस्या-भद्रद् भार्या निर्माष्टिर्नाम नामतः । जाता कलेस्तु पाप्मयायाम् ऋतौ चण्डालदर्शनात् । तयोरपत्यान्यभवन् जगद्व्यापीनि षोडश । अष्टौ कुमाराः कन्याश्च तयाष्टावति भीषणाः । दन्ताकृष्टिस्तथोक्तिश्च परिवर्त-स्तथा परः । अङ्गधुक् शकुनिश्चैव गण्डप्रान्तरतिस्तथा । तस्य पञ्च पुत्राः; 'श्येनकाकक्रपोतांश्च गृध्रोल्लूकौ च वै सुतान् । अवाप शकुनिः पञ्च जगृहुस्तान् सुरासुराः'—इति मार्कण्डेये । विकुक्षिपुत्रः; 'वैवस्वतमनोरासी-दिक्ष्वाकुः पृथिवीपतिः । तस्य पुत्रशतं चासीद्विकुक्षि-ज्येष्ठ उच्यते । सोऽप्योष्याधिपतिर्वीरस्तस्य पञ्चदश स्मृताः । शकुनिप्रमुखाः पुत्रा रक्षिता रोमहर्षिताः'—इति बृहत्पुराणे । २३७

शकुन्तः पुं. [ शक्नोति उत्पत्तितुमिति । शक्+ 'शके-रनोन्तोन्त्युनयः' इति उन्त ] पक्षी; विहगः; पक्षिमात्रम्; 'नेमां हिंस्युर्वने वालां ऋग्यादा मांसगृहिनः । पर्यरक्षन्त तां तत्र शकुन्ता मेनकात्मजाम्'—इति महाभारते (१७२।११) । भासपक्षी (२४७); कीटभेदः । २३७  
शकुन्तिः पुं. [ शक्नोति उत्पत्तितुमिति । शक्+उन्ति ] पक्षिमात्रम्; 'अवक्रन्द दक्षिगतो गृहाणां सुमङ्गलो भद्रवादी शकुन्ते !'—इति ऋग्वेदे (२।४२।३) । भास-

पक्षी (२४७) । २३७

शकुलः पुं. [ शक्नोति गन्तुं वेगेनेति । शक्+ 'मद्गुराद-यश्च' इति उरच् । रस्य लः ] मत्स्यविशेषः; महा-मत्स्यभेदः; शकुली; 'नातिगाधे जलाधारे सुहृदः शकुलास्त्रयः । प्रभूतमत्स्ये कौन्तेय ! बभूवुः सहचारिणः'—इति महाभारते (१२।१३७।३) । ६५९

शकुली स्त्री. [ शकुल+ङीप् ] शकुलः । ६५९  
शकृत् क्ली. [ शक्नोति सत्तुमिति । शक्+ 'शकेःऋतिन्' इति ऋतिन् ] विष्ठा; 'स दृष्ट्वा त्रस्तहृदयः शकृन्मूत्रं विमुञ्चति'—इति भागवते (३।३०।१९) । ६३७

शक्तः त्रि. [ शक्+क्त ] शक्तिविशिष्टः; समर्थः; सहः; क्षमः; प्रभुः; उष्णः; 'ध्रातृणां यस्तु नेहेत धनं शक्तः स्वकर्मणा । न निर्भाग्यः स्वकादंशात् किञ्चिद्दत्वोप-जीवनम्'—इति मनुः (९।२०७) । प्रियंवदः । ३८६  
शक्तिः स्त्री. [ शक्यते जेतुमनया । शक्+क्तिन् ] अस्त्र-भेदः; 'कासूः; शर्वलानामास्त्रम्; [ भावे क्तिन् ] कायजननसामर्थ्यम्; 'या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता' सामर्थ्यमात्रं; द्रविणं; तरः; सहः; बलं; शौर्यं; स्वामः; शुष्मं; पराक्रमः; प्राणः; शुष्मः; सहम्; ऊर्जः; गोरी; लक्ष्मीः । ४६३

शक्तिपाणिः पुं. [ शक्तिरस्त्रविशेषः पाणी हस्ते यस्य ] कात्तिकेयः; शक्तिभृत्; अग्निभूः; स्कन्दः । १९

शक्रः पुं. [ शक्नोति दैत्यान् नाशयितुम् । शक्+ 'स्फायित-ञ्चीति' रक् ] इन्द्रः; 'धनुर्भूतामग्रत एव रक्षिणां जहार शक्रः किल गूढविग्रहः'—इति रघौ (३।३९) । कुटजवृक्षः; अर्जुनवृक्षः; ज्येष्ठानक्षत्रम्; 'शक्रो निऋति-स्तोयं विश्वविरिञ्ची हरिर्वसुर्वरुणः । यजपादोऽहिब्रह्म-पूषा चेतीश्वरा भानाम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । समर्थे त्रि. । 'विश्वानि शक्रो नर्याणि विद्वानपो रिरेच सखिभिनि-कामैः'—इति ऋग्वेदे (४।१६।६) । 'विद्वान् जानन् शक्रः समर्थ इन्द्रः'—इति तद्भाष्ये सायणः । ५४

शक्रक्रीडाचलः पुं. [ शक्रस्य क्रीडाचलः क्रीडापर्वतः ] सुमेरु-पर्वतः । १३६

शक्रशरासनम् क्ली. [ शक्रस्य इन्द्रस्य शरासनं धनुः ] इन्द्रधनुः । ५७

शक्रसारथिः पुं. [ शक्रस्य इन्द्रस्य सारथिः सूतः ] मातलिः ।

शङ्करः पुं. [ शं कल्याणं सुखं वा करोतीति । शम्+ङ्+  
'शमिधातोः संज्ञायाम्' इति अच् ] शिवः; महादेवः;  
शम्भुः; 'सदा ध्यानाच्च भक्तानां पवनं यन्निरामयम् ।  
भूतनाथत्वमप्यस्मात्तेनाहं शङ्करः स्मृतः'—इति स्कन्द-  
पुराणम् । शिवावतारविशेषः; शङ्कराचार्यः; 'एवंप्रकारैः  
किल कल्मषघ्नैः शिवावतारस्य शुभैश्चरित्रैः । द्वात्रिंश-  
दस्योज्ज्वलकीर्तिराशेः समा व्यतीयुः किल शङ्करस्य'—  
इति माघवीयसंक्षेपशङ्करविजये । मङ्गलकारके त्रि. ।  
क्षेमङ्करोऽरिष्टतातिः स्यान्मद्रङ्कुरशङ्कुरी'—इति त्रिका-  
ण्डशेषः । 'हिरण्यगर्भं भद्रं ते लोकानां शङ्कुरो भव'  
—इति महाभारते (३।२२।८।६) । ११

शङ्कुरा स्त्री. [ शङ्क+ञ, स्त्रियां टाप् ] वितर्कः; सन्देहः;  
संशयः; अरेकः; विभ्रमः; विचिकित्सा; विकल्पः;  
भ्रान्तिः; भागवते (८।२।६) । त्रासः; 'शङ्कामिः  
सर्वमाक्रान्तमग्नं पानं च भूतले । प्रवृत्तिः फुत्र कर्तव्या  
जीवितव्यं कथं नु वा'—इति हितोपदेशे । वितर्कः;  
'यत्र सङ्गीतसन्नादैर्नन्दद्गुहममर्षया । अभिगर्जन्ति हरयः  
धलाघिनः परशङ्कया'—इति भागवते (८।२।६) । ६९१

शङ्कितः त्रि. [ शङ्का जाता अस्य । शङ्का+इतच् ] दरितः;  
चकितः; भीतः; व्रस्तः; मीरुः; कातरः; क्षुभितः;  
'अशङ्क्यमपि शङ्केत नित्यं शङ्केत शङ्कितान् ।'  
वितर्कितः; पुं. चोरकनामगन्धद्रव्यम् । ३५५

शङ्कुः पुं. [ शङ्क्यते लक्ष्यतेऽस्मादिति । शङ्क+ 'खरुशङ्कु-  
पीयुनीलङ्गुगुलिगु' इति कु प्रत्ययेन निपातितः ] ध्रुवकः;  
शिवकः; पुष्पलकः; पुष्पलकः; कीलकः; स्याणुः;  
मत्स्यविशेषः; शल्यास्त्रं; संख्याविशेषः; दशलक्ष्य-  
कोटिः; कीलः; 'निक्षेप्योऽधोमयः शङ्कुर्जलघ्नास्ये  
दशाङ्गुलः'—इति 'मनुः (८।२७।१) । ईशः; कल्पः;  
'पत्रशिराजालः; मेढ्रः; राजसः; नवीनामगन्धद्रव्यं;  
दीपसूर्ययोश्छायापरिमाणार्थं काष्ठादिनिमित्तः ऋणेण  
सूक्ष्माग्रद्वादशाङ्गुलपरिमितः कीलकः; 'अकाङ्गुला तु  
सूक्ष्मप्रा काष्ठी इच्छङ्गुलमूलिका । शङ्कुसंज्ञा भवेच्चैव  
तच्छायां परिकल्पयेत् । मध्याह्नहीनेरादित्ययुक्तैश्छाया-  
ङ्गुलैर्हरेत् । षट्पूर्तिदिवाखण्डं लब्धं दण्डादिकं भवेत् ।  
पूर्वाह्णच्छाययातीतं पराह्णच्छाययैष्यकम् । शून्यैकराम-  
बाणेभदिशोऽरुदाः क्रमोत्क्रमः ॥ (०।१।३।५।८।१०।११)  
(१।१।१०।८।५।३।१।०) आषाढादिपु मासेषु च्छाया

माध्याह्निकी मता । अयनांशाजमासान्ते व्युत्क्रमेणादितो  
वृष्टः । संख्योक्तान्यदिने भागहारे वृद्धीतरे तथा'—इति  
ज्योतिस्तत्त्वम् । नरविशेषः; जनमेजयस्य पुत्रः; 'भवतो  
वपुष्टमायां द्वी पुत्री जज्ञाते शतानीकः शङ्कुश्च'—इति  
महाभारते (१।१५।८६) । उग्रसेनस्य पुत्रविशेषः;  
'कंसः सुतामा न्यग्रोधः कङ्कः शङ्कुः मुहुस्तथा । राष्ट्र-  
पालोऽय वृष्टिश्च तुष्टिमानोप्रसेनयः'—इति भागवते  
(१।२।४।२४) । ४५१

शङ्कुमत् त्रि. [ शङ्कुवः सन्त्यस्य । मनुप् ] कीलमयम् ।  
८३०

शङ्कुमर्गतम् क्ली. [ शङ्कुमत् दन्तुरितशूलितं गर्तं  
गह्वरम् ] कुकूलम् । ८३०

शङ्कुः पुं.-क्ली. [ शाम्यति अशुभमस्मादिति । शम्+  
'शमेः खः' इति ख ] समुद्रभवजन्तुविशेषः; कम्बुः;  
कम्बोजः; अञ्जः; जलजः; अणोभवः; पावनध्वनिः;  
अन्तः; कुटिलः; महानादः; श्वेतः; पूतः; मुखरः;  
दीर्घनादः; बहुनादः; हरिप्रियः । 'कम्बुशङ्कु-  
नखाश्चापि शुक्तिशम्बुकककटाः । जीवा एवं  
विधाश्चान्ये कोपस्याः परिकीर्तिताः । कोपस्या मधुराः  
स्निग्धाः पित्तवातहरा हिमाः । वृंहणा बहुवर्चस्का  
वृध्याश्च बलवद्धनाः'—इति भावप्रकाशः । रत्नविशेषः;  
क्षीरोदकूलेऽपि सुराष्ट्रदेशं तदन्यतोऽपि प्रभवन्ति शङ्काः ।  
अरुष्कवर्णाः शशिशुभ्रासः सुसूक्ष्मवक्त्रा गुरवो महाग्तः;  
—इति युक्तिकल्पतरुः । रणवाद्यविशेषः; 'भक्ततूर्यं  
गन्धतूर्यं रणतूर्यं महास्वनः । संग्रामपटहः शङ्कुस्तथा  
चाभयडिण्डिमः । महाद्वन्द्वी नृपाभीरुर्भीरुः कोलाहलोऽपि  
च । युद्धवाद्यस्य पर्यायाश्चान्ये भेदाः शलादयः'—इति  
शब्दरत्नावली । ललाटास्थिः; 'तत्र भ्रूण्डशङ्कुलला-  
टाक्षिपुटोऽष्ठदन्तवेष्टकक्षाकुक्षिवङ्कणेषु तिर्यवच्छेद उवतः'  
—इति सुश्रुते (१।५) । निधिविशेषः; 'निधि-  
प्रवरमुख्यो च शङ्कुपद्मो धनेश्वरौ'—इति महाभारते  
(२।१०।३६) । नवीनामगन्धद्रव्यम्; 'मनःशिला-  
श्रृषणशङ्कुमाक्षिकैः ससिन्धुकासीसरसाञ्जनैः क्रियाः'  
—इति सुश्रुते (६।१७) । कर्णसमीपास्थिः; 'कर्णां  
शङ्कौ श्रुवौ दण्डवेष्टावोष्ठी ककुन्दरे'—इति याज्ञ-  
वल्क्यः । अष्टनागनायकान्तर्गतनागविशेषः । 'अनन्तो  
वासुकिः पद्मो महापद्मश्च तक्षकः । कुलीरः कर्कटः

शङ्खो ह्यष्टौ नागाः प्रकीर्तिताः—इति मनसापूजा-  
पद्धतौ । हस्तिदन्तमध्यं; दशनिखर्वसंख्या; लक्षकोटिः;  
'एकं दश शतं चैव सहस्रमयुतं तथा । लक्षं च नियुतं  
चैव कोटिरर्बुदमेव च । वृन्दं खर्वो निखर्वश्च शङ्खपद्मी  
च सागरः । अन्त्यं मध्यं परार्द्धं च दशवृद्धया ययाक्रमम्'  
—इति ब्रह्माण्डपुराणे । तथाहि—

१ एकम् ।

१० दश ।

१०० शतम् ।

१००० सहस्रम् ।

१०००० अयुतम् ।

१००००० लक्षम् ।

१०००००० नियुतम् ।

१००००००० कोटिः ।

१०००००००० अर्बुदम् ।

१००००००००० वृन्दम् ।

१०००००००००० खर्वः ।

१००००००००००० निखर्वः ।

१०००००००००००० शङ्खम् ।

१००००००००००००० पद्मम् ।

१००००००००००००००० सागरः ।

धर्मशास्त्रप्रयोजकमुनिविशेषः; 'मन्त्रत्रिविष्णुहारीतथाज्ञ-  
वल्क्योशनोऽङ्गिराः । यमापस्तम्बसंवर्ताः कात्यायन-  
वृहस्पती । पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगोतमौ ।  
शास्तातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रपयोजकाः—इति याज्ञ-  
वल्क्यवचनम् । ६६४

शक्तिः स्त्री. [ शच् व्यक्तायां वाचि+सर्वधातुभ्य इन्  
इति इन् ] इन्द्रपत्नी; पुलोमजा; शची; इन्द्राणी;  
सची; सचिः; पूतक्रतायी; पौलोमी; माहेन्द्री; जय-  
वाहिनी; ऐन्द्री; शतावरी । ५५

शक्ती स्त्री. [ शचि+कृदिकारादिति डोप् ] इन्द्रपत्नी;  
पुलोमजा; इन्द्राणी; शचिः; सची; सचिः; पूतक्रतायी;  
पौलोमी; माहेन्द्री; ऐन्द्री; जयवाहिनी; शतावरी;  
'उमावृषाङ्गी शरजन्मना यया यया जयन्तेन शची-  
पुरन्दरी । तथा नृपः सा च सुतेन मागधी ननन्दतुस्त-  
त्सदृशेन तत्समी'—इति रघो (३।१३) । शतमूली;  
स्त्रीकरणान्तरं; विष्टिकरणं; कर्म; 'न किरस्य शचीतां

नियन्ता सूनृतानाम्—इति ऋग्वेदे (८।३२।१५) ।  
प्रज्ञा; वाक् । ५५

शतधारम् क्ली. [ शतं धाराः कोणाः यस्य ] वज्रं;  
पविः; अशनिः; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरं;  
व्याधामः; स्वरः; इन्द्रप्रहरणम्; शतधारायुवते त्रि. ।  
'वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः वित्रमसि सहस्रधारम् ।  
वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा काम धुस्व'—इति  
यजुः संहितायाम् । ५६

शतपत्रम् क्ली. [ शतं पत्राणि यस्य ] पद्मं; कमलं;  
सहस्रपत्र; पङ्कजम्; 'इमामसितकेशान्तां शतपत्रायते-  
क्षणाम्'—इति महाभारते (३।६०।२०) । ६७९

शतपत्रः पुं. [ शतं पत्राणि पक्षाः यस्य ] दारवाघाटपक्षी;  
शतपत्रकः; मयूरः; सारसः; राजकीरः; 'मयूरैः  
शतपत्रैश्च जीवञ्जीवककोकिलैः'—इति महाभारते  
(३।१०।८) । ७९५

शतमखः पुं. [ शतं मखाः यज्ञाः यस्य ] इन्द्रः; शतमन्युः;  
शतक्रतुः; पुरन्दरः; 'सहचरमधुहस्तन्यस्तचूताङ्कुरास्त्रः;  
शतमखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्यधन्वा'—इति कुमारे  
(२।६४) । ५२

शतमूलिका स्त्री. [ शतं मूलानि यस्याः, ततः स्वार्थे  
कन् ] शतमूली; ओषधिविशेषः; बहुसुता; भभीरुः;  
इन्दीवरी; वरी; ऋष्यप्रोक्ता; भीरुपत्नी; नारायणी;  
शतावरी; अहेरुः; रङ्गिणी; शटी; द्वीपिशत्रुः;  
ऋष्यगता; शतपदी; पीवरी; धीवरी; वृष्या;  
दिव्या; दीपिका; दरकण्ठिका; सूक्ष्मपत्रा; सुपत्रा;  
बहुमूला; शताह्वया; स्वादुरसा; शताह्वा; लघु-  
पर्णिका; आत्मगुप्ता; जटा; मूला; शतवीर्या;  
महौषधी; मधुरा; शतमूला; केशिका; शतपत्रिका;  
विश्वस्या; वैष्णवी; पाष्णी; वासुदेवप्रियङ्करी;  
दुर्मना; तैलवल्ली । ६१९

शतयष्टिः पुं. [ शतं यष्टयो गुच्छा यस्य ] शतलतिकहारः;  
देवच्छन्दः; देवच्छदः; शतयष्टिकः । ५६२

शतह्रदा स्त्री. [ शतं ह्रदा अर्वापि यस्याः । यद्वा शतं  
ह्रदाः शब्दाः यस्याः, निपातनाद् ह्रस्वः ] शम्पा;  
चपला; क्षणिका; ह्लाद्रिनी; तडित्; विद्युत्;  
सौदमिनी; अचिरांशुः; ऐरावती; सौदामनी । 'समुद्र-  
मेघः स रराज राजन् शतह्रदास्त्रीप्रभयाभिरामः'—

इति हरिवंशे (१४६।४८) । वज्रम् । दक्षकन्याविशेषः ।  
'ददी च वाहुपुत्राय द्वी तडिच्च शतहृदा । ययोः  
पुत्राश्च विद्वांसश्चतस्रो विद्युतः शुभाः—इति वह्नि-  
पुराणे । ६०

शताङ्गः पुं. [ शतम् अङ्गानि अवयवा यस्य ] रयः; अनः;  
शकटः; तिनिस्वृक्षः; युद्धरथः; दानवविशेषः; 'करालो  
ज्वालजिह्वश्च शताङ्गः शतलोचनः—इति हरिवंशे  
(२३२।६) । शतावयवविशिष्टे त्रि. । 'शताङ्गानि तु  
तुषोणि वादकाः समवादयन्—इति महाभारते  
(१।१८९।२२) । ४४४

शतानन्वः पुं. [ शतं बहुलाः आनन्दा यस्य ] ब्रह्मा;  
विधाता; विरञ्चिः; मुनिभेदः; स तु जनकराज-  
पुरोहितः । देवकीनन्दनः; गीतममुनिः; विष्णुरथः;  
गीतममुनिपुत्रः; विष्णुः; 'स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो  
नन्दिज्योतिर्गणेश्वर—इति महाभारते (१३।१४९।  
७९) । ६

शतुः पुं. [ शातयति इति, शद्लृ शातने + णिच् + 'ह्य-  
दिग्भां क्नु' इति क्नु ] रिपुः; नेरीः; सपत्नः; अरिः;  
द्विषः; वेषणः; दुर्हृदः; द्विष्टः; विपक्षः; अहितः;  
अमित्रः; दस्युः; धातवः; अभिघाती; परः; अरातिः;  
प्रत्ययी; परिपन्थी; नृपः; प्रतिपक्षः; द्विषन्;  
घातकः; द्वेषी; विद्विषः; हिसकः; विद्विष्टः; लप्रियः;  
अभियातिः; अहितः; दोहृदः; स्वदेशादनन्तरो-  
व्यवहितैकविषयाभिनिवेशिराजः; 'विषयानन्तरो राजा  
शत्रुमित्रमतः परम् ।' ४५६

शनैश्चरः पुं. [ कक्षादीर्घत्वात् शनैर्मन्दं भन्दं चरतीति । चर्  
गतौ + पचाद्यच् ] शनिः; सौरिः; नीलवासाः; मन्दः;  
छायात्मजः; पातङ्गिः; ग्रहनायकः; छायासुतः;  
मास्करिः; नीलाम्बरः; आरः; क्रोडः; वक्रः; कोलः;  
सप्ताशुः; पङ्गुः; कालः; सूर्यपुत्रः; असितः; शौरिः;  
छायातनयः; 'नीलाञ्जनचयप्रहयं सूर्यपुत्रं महाग्रहम् ।  
छायाया शनैःसम्भूतं वन्दे भक्त्या शनैश्चरम् । व्यासे-  
नोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठेत् प्रथतो नरः । विद्या वा यदि  
वा रात्रौ शान्तिस्तस्य न संशयः—इति व्यासभाषित-  
स्तोत्रम् । ४८

शपथः पुं. [ शप् आक्रोशे + शीघ्रशपिश्शमीति' वथ ]  
शपनः; शपः; सत्यः; सम्यः; शापः; प्रत्ययः;

अभिषङ्गः; गालिः; 'वृथा तु शपथं कृत्वा कीटस्य  
वषसंयुतम् । अनृतेन च युज्येत वधेन च तथा नरः ।  
तस्मान्न शपथं कुर्यान्नरो मिथ्यावधेषितम्—इति  
व्यवहारतत्त्वम् । ८४८

शफः पुं.—क्ली. [ शम् + ल्यच्, पृषोदरादित्वान् मस्य फ ]  
गवादीनां खुरः; 'हेमश्चङ्गा शफे रोप्यैः सुशीला वस्त्र-  
संयुता । सकांस्यपात्रा दातव्या क्षीरिणी गौः सदक्षिणा—  
इति याज्ञवल्क्यः (९।२०४) । वृक्षमूलम् । ४४९

शफरः पुं.—स्त्री. [ शफं राति, शफ + रा + क, स्त्रियां ङीष् ]  
मत्स्यविशेषः; 'कैवर्तककंशकरात् शफरश्च्युतोऽपि जाले  
पुनर्निपतितः करुणो विपाकेः ।' 'अगाधजलसञ्चारी  
विकारी न च रोहितः । गण्डूषजलमात्रेण शफरी  
फर्फरायते—इत्युद्भटः । ६५८

शशरः पुं. [ शवति, शव् गती + वाहुलकादर, यद्वा शवं राति  
गृह्णातीति, शव + रा + क । पृषोदरादित्वान्मध्ये  
वकारः ] शवरः; अन्त्यजातिः । ५९९

शशरालयः पुं. [ शशरस्य आलयः ] पक्वणः; शक्कणः;  
शशरालयः । २६१

शश्वलः पुं. [ शप् आक्रोशे + 'शपेवंश्च' इति कल, वश्चान्ता-  
देशः ] कर्बुरवर्णः; तद्वति त्रि. । 'अश्वश्च मल्पच्छेन  
संछन्नं शश्वलस्तनयम्—इति भागवते (३।२३।२४) ।  
७३६

शब्दः पुं. [ शब्द् + भावे धञ् । यद्वा शप् आक्रोशे +  
'शाशपिभ्यां ददनी' इति दन्, पकारस्य वकारः ]  
श्रोत्रप्राप्त्यगुणपदार्थविशेषः; निनादः; निनदः; ध्वनिः;  
ध्वानः; रवः; स्वनः; स्वानः; निर्घोषः; निहृदिः;  
नादः; निस्वानः; निस्वनः; आरवः; आरावः; संरावः;  
विरावः; संरवः; रावः; घोषः; 'शब्दो ध्वनिश्च  
वर्णश्च मृदङ्गादिभयो ध्वनिः । सर्वः शब्दो नभोवृत्तिः  
श्रोत्रोत्पन्नस्तु गृह्यते—इति भाषापरिच्छेदः । १३८

शब्दप्राप्तः पुं. [ शब्दानां प्राप्तः ] शब्दसमूहः; शब्द-  
सङ्घातः । ८११

शब्दः पुं. [ शम्पते इति, शम् + 'हलश्चेति' धञ्, 'नोदात्तो-  
पदेशेति' दृढथभावः ] शान्तरसस्य स्थायिभावः; 'शान्तः  
शमः स्थायिभावः उत्तमप्रकृतिर्मतः—इति साहित्य-  
दर्पणे (३।३३८) । शान्तिः; 'विरागशैलमयितात् तस्य  
चित्तमहोदधेः । प्रकोपकालकूटस्य पश्चात् शमसुधो-



दयात्—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।३८१) । मोक्षः; पाणिः; उपचारः; अन्तरिन्द्रियनिग्रहः; अन्तःकरण-संयमः; 'बुद्धिज्ञानमसंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।४) । विक्षेपककर्मोपरमः; वास्येन्द्रियनिग्रहः; 'सत्यं शौचं दया मीनं बुद्धिर्हीनः श्रीवैशः क्षमा । शमो दमो भगवचेति यत्सङ्गाद्याति संक्षयम्'—इति भागवते (३।३२।३३) । सर्वकर्म-निवृत्तिः; 'योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते'—इति भगवद्गीतायाम् (६।३) । 'शमः उपरमः सर्व-कर्मभ्यो निवृत्तिः'—इति तट्टिकायां शङ्करभाष्यम् । निवृत्तिः; 'अमवन्निर्मलं व्योम देवीकृत्यैः सह क्रमात् । साकं भूपालशोकेन दुर्भिक्षं च शमं ययौ'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (२।५६) । १९

शमनः पुं. [ शमयति पापिनां कर्म आलोचयतीति । कर्तरि ल्यु ] यमः; समवर्ती; प्रेतपतिः; पितृपतिः; कीनाशः; वैवस्वतः; कृतान्तः; कालिन्दीसोदरः; कालः; अन्तकः घर्मराजः; दण्डधरः; हरिः; दक्षिणाशापतिः; श्राद्ध-देवः; प्रेतराट्; मृगभेदः; कलायः; क्ली. [ शम्+त्पुट् ] यत्नार्थपशुहननं; शान्तिः; 'वातस्य शमनं कोपनं वा'—इति काशिका । चर्वणं; हिंसा; प्रति संहारः; 'निमेषकाष्ठादिमयः कालरूपःक्षयात्मकः । प्रसीद स्वेच्छया रूपं स्वतेजः शमनं कुरु'—इति मार्कण्डेये (७८।१३) । निवारकः; 'दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि ! शीलम्'—इति मार्कण्डेये देवीमाहात्म्ये । ७१

शमलम् क्ली. [ शम्+शकशम्पोनिन्त् ] इति कल ] वचः; उच्चारः; वचस्कः; अवस्करः; शकृत्; गूयः; कीटः; विट्; विष्टा; पुरीषः; मलम्; पापम्, 'ऊचे ययात्मशमलं गुणसङ्गपङ्कम्'—इति भागवते (२।७।३) ।

६३७

शमिः स्त्री. [ शम्+सर्वंघातुम्य इन् ] इति इन् प्रत्ययः ] शिम्वा । १८९

शमी स्त्री. [ शम्+इन्, वा डीप् ] बीजकोशी; शिम्वा; वृक्षविशेषः; शक्तुफला; शिवा; शक्तुफली; शान्ता; तुङ्गा; कचरिपुफला; केशमयनी; ईशानी; लक्ष्मीः; तपनतनया; इष्टा; शुभकरी; हविर्गन्धा; मेघ्या; दुरितदमनी; शक्तुफालिका; समुद्रा; मङ्गल्या; सुरभिः; पापशमनी; भद्रा; शङ्करी; केशहन्त्री;

शिवाफला; सुपत्रा; सुखदा; 'शमी शक्तुफला तुङ्गा केशहन्त्री शिवाफला । मङ्गल्या च तथा लक्ष्मीः शमीरः स्वल्पिका स्मृता । शमी तिक्ता कटुः शीता कपाया रेचनी लघुः । कम्पकासश्रमशवासकुष्ठाशः कृमिजित् स्मृता'—इति भावप्रकाशः । वागुजिः; कर्म; 'ईजे यज्ञभिः शशमे शमीभिः'—इति ऋग्वेदे (६।२।२) 'शमीभिः कर्मभिः कृच्छ्रचान्द्रायणादिभिः'—इति तद्भाष्ये सायणः । १८९

शम्पा स्त्री. [ शं सुखं पिबति, भयङ्करत्वात् । 'आतोऽनुपेति' क । 'शम्वा इति पक्षे शम्बयति नायनं तेजः'—इति स्वामी ] चपला; क्षणिका; शतहृदा; ह्लादिनी; तडित्; विद्युत्; सोदामिनी; अचिरांशुः; ऐरावती; सोदामनी; सोदाम्नी । ६०

शम्बः पुं. [ शम्बु सम्बन्धने, शम्बयति शत्रून् । अच् । शम्+ 'शमेर्वन्' इति वन् वा । यद्वा शमस्त्यस्येति, शम्+ 'कंशंभ्यां वभयुस्तितुतयसः' इति व ] वज्रः; पविः; अशनिः; शतवारं; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरं; व्याधामः; स्वरुः; इन्द्रप्रहरणम्; 'उग्रो यः शम्बः पुष्हृत तेन'—इति ऋग्वेदे (१०।४२।७) 'शम्ब इति वज्रनाम'—इति तद्भाष्ये सायणः । मुसलाप्रस्यलोह-मण्डलकं; लौहकाञ्ची; अनुलोमकर्षणं; दरिद्रः; भाग्यवति त्रि. । ५६

शम्बरः पुं. [ शम्बु+अरच् ] वातप्रमी; कृष्णसारः; न्यङ्कुः; रङ्कुः; एणः; कुरङ्गः; हरिणः; मृगः; सारङ्गः; ऋष्यः; पृषतः; रुहः; मृगभेदः; दैत्य-विशेषः; 'अरन्धयो तिथिगवाय शम्बरम्'—इति ऋग्वेदे (१।५।१।६) 'शम्बरम् एतन्नामानमसुरम्' इति तद्भाष्ये सायणः । 'शम्बरो नमुचिश्चैव पुलोमा चेति विश्रुतः । असिलोमा च केशी च दुर्जयश्चैव दानवः'—इति महा-भारते (१।६।५।२२) । मत्स्यविशेषः; शैवविशेषः; जिनभेदः; युद्धं; श्रेष्ठः; चित्रकवृक्षाः; लोघ्रः; अर्जुन-वृक्षः; वाराहीकन्दः; क्ली. सलिलं; जलं; पानीयं; व्रतं; वित्तं; चित्रं; वीद्व्रतविशेषः; मेघः; 'अददं मन्युना शम्बराणि'—इति ऋग्वेदे (२।२।४।२) 'शम्ब-राणिमेघनामैतन् मेघान् व्यददः वर्षणाय विदारितवान्'—इति तद्भाष्ये सायणः । २३०

शम्बरसूचनः पुं. [ शम्बरं सूदयतीति । शम्बर+सूद्+

ल्यु ] शम्वारारिः; शमान्तकः; कामदेवः; मदनः;  
मन्मथः; मारः । ३२

शम्बलः पुं.—क्ली. [ शम्बयत्यनेन, शब्द सम्बन्धने  
बाहुलकादलच् ] सम्बलं; पाथेयं; कूलं; तीरं; तटं;  
मत्सरः । ३५८

शम्बली स्त्री.— कुट्टिनी; चुन्दी; शम्बली । ४९२

शम्बाकृतम् त्रि. [ शम्ब+कृवो द्वितीयतृतीयशम्ब-  
बीजात्कृषी' इति डाच् ] द्विवारकृष्टक्षेत्रं; द्विगुणा-  
कृतं; द्वितीयाकृतं; द्विहृत्वं, द्विसीत्यम् । ५७६

शम्बुकः पुं. [ शम्बु+स्वार्थे कन् ] सूम्बुकः; शम्बुः;  
जलजन्तुविशेषः; 'शम्बुकः शुम्बुको ज्ञेयः पूर्वः कान्तस्तु  
सर्वदा । ककारेण विना शेषो दृश्यते ग्रन्थविस्तरे'—  
इति हट्टचन्द्रः । ६६४

शम्बुकः पुं.— स्त्री. [ शम्+ 'उल्लादयश्चेति' ऊक, वृगा-  
गमश्च निपात्यते ] जलजन्तुविशेषः; जलशुवितः;  
शम्बुका; शम्बुकः; शम्बुक्कः; शाम्बुकः; शम्बुः;  
शाम्बुक्कः; जलडिम्बः; दुश्चरः; पङ्कमण्डकः; कपर्दी;  
वराटः; क्षुल्लकः; क्षुद्रशङ्खः; शङ्खः; पुं. गजकुम्भान्त-  
भगिः; घोङ्गः; शूद्रतापसः; 'दत्ताभये त्वयि यमादपि  
दण्डधारे, सञ्जीवितः शिशुरयं मम चेयमुद्धिः । शम्बुक  
एष शिरसा चरणौ नतस्ते, तत्सङ्गजानि निधनान्यपि  
तारयन्ति'—इति उत्तरचरिते । दैत्यविशेषः । ६६४

शम्बली स्त्री. [ शम्भं कल्याणयुक्तं नायकादिकं लाति  
गृह्णातीति । शम्भ+ला+क । गौरादित्वाद् डीष् ]  
कुट्टिनी; कुट्टनी; शम्बली । ४९२

शम्भुः पुं. [ शं मङ्गलं भवत्यस्मादिति, शं भवति भाव-  
यतीत्यर्थः, इति वा । शम्+ 'मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्'  
इत्युक्त्या डु ] ब्रह्मा; सृष्टिकर्ता; 'तामुवाच महाराज  
भूमि भूमिपतिः प्रभुः । प्रभवः सर्वभूतानामीशः शम्भुः  
प्रजापतिः'—इति महाभारते ( १६४।४५ ) । ( ११ )  
शिवः; महादेवः; शङ्करः; 'एतद्भगवतः शम्भोः  
कर्मदक्षाध्वरदुहः । श्रुतं भागवतात् शिष्यादुद्धवान्ने  
वृहस्पतेः'—इति भागवते ( ४।७।५७ ) । विष्णुः ।  
( २५ ) ; 'त्रिचक्षुःशम्भुरेकस्त्वं विभुदमिदरोऽपि च'—  
इति महाभारते ( १२।४३।७ ) । एकादशरुद्राणामन्य-  
तमः; 'हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्चापराजितः । वृषा-  
कपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रवतस्तथा । मृगव्याधश्च

शर्वश्च कपाली च महामुने । एकादशैते प्रथिता रुद्रास्त्रि-  
भुवनेश्वराः'—इति विष्णुपुराणे ( १।५।१२३-१२४ ) ।  
बुद्धः; सिद्धः; श्वेताकः; अग्निः; 'शम्भुमग्निमथ  
प्राहुर्ब्राह्मणा वेदपारगाः । आवसथ्यं द्विजाः प्राहुर्दीप्त-  
मग्नि महाप्रभम्'—इति महाभारते ( ३।२२०।५ ) ।  
सुखस्य भावयितरि त्रि. । 'मनुष्वच्छम्भू आगतम्'—  
इति ऋग्वेदे ( १।४६।१३ ) । 'हे शम्भू सुखस्य भावयि-  
तारौ'—इति तद्भाष्ये सायणः । ७

शम्या स्त्री. [ शम्भतेऽनयेति । शम्+यत्+टाप् ] युग-  
कीलकः; 'उद्ध उम्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि  
मुञ्चत'—इति ऋग्वेदे ( ३।३३।१३ ) । दक्षिणहस्त-  
गृहीततालविशेषः; दण्डयष्टिः; 'शम्यापातास्त्रयो  
वापि त्रिगुणो नगरस्य तु'—इति मनुः ( ८।२३७ ) ।  
५७५

शयः पुं. [ शते सर्वमस्मिन्निति, प्रायो वस्तुनः कराधीन-  
त्वात् । शी+पुंसीति घ ] पाणिः; पञ्चशाखः; करः;  
हस्तः; शय्या; सर्पः; निद्रा; पणः । ५११

शयनम् क्ली. [ शी+ल्युट् ] पर्यङ्कः; पल्यङ्कः; शय्या;  
तल्पः; तलिनः; शयनीयकः; तिलमः; 'आसनानि च  
दिव्यानि यानानि शयनानि च । विधातव्यानि पाण्डूनां  
यथा तुष्येत वै पिता'—इति महाभारते ( १।१४५।१४ ) ।  
निद्रा; मैथुनम् । ३०७

शयनस्थानम् क्ली. [ शयनस्य स्थानम् ] वासागारं;  
शयनागारं; शयनगृहम् । २९५

शयनासनम् क्ली. [ शयनाय आसनम् ] औशीरम् । [ शयनं  
च आसनं च शयनासने युग्मे औशीरशब्दवाच्ये इति  
स्वामी । शयनपीठमिति सुमूर्तिः ] । १२१

शयानकः पुं. [ शी+शानच्+ततः कन् । यद्वा 'आनकः  
शीडभियः' इति आनक ] कृकलासः; सरटः; प्रति-  
सूर्यः; सर्पः । २३४

शयुः पुं. [ शते इति, शी+उ ] अजगरः; वाहसः; शयुनः;  
ऋषिविशेषः; 'याभिर्नरा शयवे याभिरत्रय'—इति  
ऋग्वेदे ( १।२१।१६ ) 'हे नरा नेतारावश्विनौ पुरा  
पूर्वस्मिन् काले शयवे एतत्संज्ञकाय ऋषये'—इति  
तद्भाष्यम् । शयाने त्रि. । 'कस्ते मातरं विधवामचक्रत्  
शयुं कस्त्वामजिघांसञ्चरन्तम्'—इति ऋग्वेदे ( ४।  
१।१२ ) 'कस्त्वतोऽन्यः शयुं शयानं चरन्तं जायतं वा

त्वाम् अजिघांसत्—इति तद्भाष्ये सायणः । ६४२  
शय्या स्त्री. [ शी शयने+संज्ञायां समजेति क्यप् ] शीयते  
यत्र सा; शयनीयं; शयनं; तल्पं; शयनीयकं; शयः;  
पर्यङ्कः; पत्यङ्कः; तलिनं; तलिनम्; 'सुखशय्यासनं  
सेव्यं निद्रापुष्टिवृत्तिप्रदम् । श्रमानिलहरं शस्तं विपरीत-  
मतोज्ञय्या । भूशय्यानिलपित्तघ्नी वृंहणी शुक्रवर्धिनी ।  
स्रद्धा तु वातला प्रोक्ता पट्टी रूक्षोऽतिवातलः—  
इति राजवल्लभः । 'भूशय्या वातलातीव रूक्षा पितास्र-  
नाशिनी । सुशय्याशयनं हृद्यं पुष्टिनिद्रावृत्तिप्रदम् ।  
श्रमानिलहरं वृष्यं विपरीतमतोज्ञय्या'—इति भाव-  
प्रकाशः । ३०७

शरः पुं. [ शृणात्यनेनेति । शृ हिंसायाम्+'ऋदोरप्'  
इति अप् ] तृणविशेषः; इषुः; काण्डः; वाणः; मुञ्जः;  
तेजनः; गुन्द्रकः; उत्कटः; शायकः; क्षुरः; इक्षुप्रः;  
क्षुरिकापत्रः; विशिखः; 'मूज' इति भाषा । 'आचार्यः  
कलसाज्जातो द्रोणः शस्त्रभूतांवरः । गीतमस्यान्ववाये  
च शरस्तम्बाच्च गीतमः'—इति महाभारते (१।१३८।  
१५) । वाणः (४६६) ; 'तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात्  
प्रशमितारिभिः । प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्य-  
भिदः शराः'—इति रघो (१।६१) । 'दध्यप्रभागः  
(दुग्धशरः=सन्तानिका) दधिसारः; दधिस्नेहः;  
कट्टरम्; उशीरः; महापिण्डीतरुः; हिंसा [ शृष्णा-  
त्वर्थदर्शनात् ]; ज्योतिषोक्तपञ्चसंख्या; 'वेदखाग्नि-  
शराः शुद्धैरिषुवाणाग्निसायकाः'—इति साहित्यदर्पणे  
(४।२६४) । १९१

शरजन्मा [ न् ] पुं. [ शरे शरवणे जन्म यस्य ] शरजः;  
शरोद्भवः; शरभवः; कार्तिकेयः; शम्भुतनयः; शम्भु-  
नन्दनः; शरभूः; 'उमावृषाङ्गी शरजन्मना यथा, यथा  
जयन्तेन शचीपुरन्दरी । तथा नृपः सा च सुतेन मागधी  
ननन्दनुस्तसदृशेन तत्समी'—इति रघो (३।२३) । २०  
शरणम् क्ली. [ शृणाति दुःखमनेनेति । शृ+त्युट् ]  
अगारं; गृहम्; 'ततोऽम्बिकायां प्रथमं नियुक्तः सत्य-  
वागृषिः । दीप्यमानेषु दीपेषु शरणं प्रविवेश ह'—इति  
महाभारते (१।१०६।४) । रक्षिता; 'त्यज संसारमसारं  
भज शरणं पार्वतीरमणम् । विद्वसिहि श्रुतिशिक्षरं  
विश्वमिदं तव निवेशकरम्'—इति वैराग्यशतके (९१) ।  
रक्षणं; वधः; घातः । २९२

शरत् [ द् ] स्त्री. [ शृ हिंसायाम्+'शृदभसोऽदिः' इति  
अदि ] वत्सरः; हायनः; अब्दः; वर्षः; संवत्सरः;  
समाः; 'पृथिवीं शासतस्तस्य पाकशासनतेजसः ।  
किञ्चिद्भूतमनूतर्द्धः शरदामयुतं ययी'—इति रघो  
(१०।१) । ऋतुविशेषः; आश्विन कार्तिकमास-  
द्वयात्मकः; आश्वयुजकार्तिकमासद्वयात्मकः; शरदा;  
कालप्रभातः; कालप्रभातं; वर्षविसानम्; मेघान्तः;  
प्रावृडत्ययः; 'सरितः कुर्वती गाधाः पयश्चाशयान-  
कर्ममान् । यात्रायै चोदयामास तं शक्तेः प्रथमं शरत्'—  
इति रघो (४।२४) । 'नरः शरत्संज्ञकलब्धजन्मा  
भवेत्सुकर्मा मनुजस्तरस्वी । शुचिः सुशीलो गुणवान्  
सुमानी धनान्वितो राजकुलप्रपन्नः'—इति कोष्ठी-  
प्रदीपः । ११६

शरदा स्त्री. [ शरत्+टाप् ] शरदृतुः; वत्सरः । ११३  
शरव्यम् क्ली. [ शरवे हिंसाय दानशिक्षायै वा साधु ।  
शरु+उगवादिभ्यो यत्' इति यत् । यद्वा शरान व्यर्थति,  
शर+व्ये+ड ] लक्ष्यं; वेद्यं; निमित्तम्; 'विद्वति  
जनतामनः शरव्यव्यवपटुमन्मयचापनादशङ्काम्'—इति  
माघे (७।२४) । ४६८

शराटिः स्त्री. [ शरं जलम् अटति प्राप्नोतीति । शर+  
अट्+इन् ] शरालिपक्षी; शराडिः; शरातिः; शगरिः;  
आटिः । २४९

शराडिः स्त्री. [ शर+अड् उद्यमे+इन् ] शरालिपक्षी;  
आतिः; आडिः; आटिः; आडी । २४९

शरातिः स्त्री. [ शरं जलम् अततीति । शर+अत्+इन् ]  
शरालिपक्षी । २४९

शरारिः पुं. [ शरं जलम् ऋच्छतीति, शर+ऋ गती+  
'अच इः' इति इ ] शरालिपक्षी; आटिः; आतिः;  
शराडिः; शरातिः; शरालिका; शराली; आडिः;  
आडी; शराडी; आडिका; शराटिः । 'प्रफुल्लनीलोत्प-  
लशोभितानि शरारिकादम्बविघट्टितानि । प्रसन्नतोयानि  
सशैवलानि सरांसि चैतांसि हरन्ति यूनाम्'—इति ऋतु-  
संहारे (४।९) । २४९

शरारुः त्रि. [ शृणातीति, शृ+'शृवन्द्योराहः'—इति  
आह ] हिलः; घातकः; नृगंसः; क्रूरकर्मकृत् । ३७२

शरालिः स्त्री. [ शर+अल् भूषणे+इन् ] शरालिपक्षी;  
शरालिका; शराली । २४९

शराली स्त्री.— शरारिपक्षी; आटिः आडिः; आडी; शराडी । २४९

शरावः पुं.— क्ली. [ शरं जलम् अवति रक्षति । शर+अव रक्षण+अण् ] मृत्पात्रविशेषः; वद्धमानकः; मातिकः; सरावः; शालाजिरम्; पार्थिवं; मृत्कांस्यम्; 'उदितोऽपि तुहिनगहने गगनप्रान्ते न दीप्यते तपनः । कठिनघृतपूर- पूर्णं शरावशिरसि प्रदीप इव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१२६) । कुडवद्वयपरिमाणं; चतुःषष्टितोलकात्मकं; मानिका । ३१५

शरीरम् क्ली. [ शीर्यते रोगादिना यत् । शृ+कृशूपकटि- पटिशौटिम्य ईरन् इति ईरन् ] कलेवरं; गात्रं; वपुः; संहननं; वषमं; विग्रहः; कायः; देहः; मूर्तिः; तनुः; तनूः; क्षेत्रं; पुरं; घनः; अङ्गः; पिण्डः; भूतात्मा; स्वर्गलोकेशः; स्कन्धः; पञ्जरः; कुलं; बलम्; आत्मा; स्कन्धः; इन्द्रियायतनं; भूः; मूर्तिमत्; करणं; वेरं; सञ्चरः; बन्धः; पुद्गलः; व्याधि- मन्दिरम्; 'शरीरे भस्मसाद्भूते प्रतिबिम्बः स चात्मनः । जीवस्तत्रान्तरीक्षस्थ उवाच विनयं विभुम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । शरीरान्नम्; 'शरीरमापः सोमश्च विविधं चान्नमुच्यते । प्राणो ह्यग्निस्तथादित्यस्त्रिभोक्ता एव एव तु'—इति गारुडे । ५१०

शर्म [ न् ] क्ली. [ शृ+सर्वधातुभ्यो मनिन् इति मनिन् ] सुखम्; 'तस्मा अग्निर्भारतः शर्म यं सत्'—इति ऋग्वेदे (४।३५।४) । 'शर्म सुखम्' इति तद्भाष्ये सायणः । 'स्वामिभक्तस्तदेतस्य शर्मोपायमिमं शृणु'—इति कथा- सरित्सागरे (७।८।४९) । तद्वति त्रि. । गृहम्; 'स. नः शर्माणि वीतयेऽग्निर्यच्छतु शन्तमा'—इति ऋग्वेदे (३।१३।४) । 'शर्माणि, शर्मशब्दो गृहवाची, छाया शर्मति तन्नामसु पाठात्'—इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. ब्राह्मणस्योपाधिविशेषः; 'ततश्च नाम कुर्वति पितैव दशमेऽहनि । देवपूर्वं नराख्यं हि शर्मवर्मादि- संयुतम् । शर्मति ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेति क्षत्रसंश्रयम् । गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इति विष्णु- पुराणे (२।१०।८९) । (दशमेऽहनि अतीते इति शेषः) ।

१२३

शर्वः पुं. [ शृणाति सर्वाः प्रजाः संहरति प्रलये, संहारयति वा भक्तानां पापानि । शृ+कृशूदभ्यो वः इति व ]

शिवः; महादेवः; शङ्करः; शम्भुः; रुद्रः; उमापतिः; 'कतिचिदवनिपालः शर्वरीः शर्वकल्पः'—इति रघुवंशे (११।९३) । विष्णुः; 'शर्वः सर्वः शिवः स्थाणु- भूतादिनिधिरव्ययः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । ११. शर्वरी स्त्री. [ शृणाति चेष्टामिति । शृ+कृशू- वृचतिभ्यः ष्वरच् इति ष्वरच्, षित्वात् डीष् ] रात्रिः । 'अतिस्कन्दन्ति शर्वरीः'—इति ऋग्वेदे (५।५२।३) । योषित्; हरिद्रा; सन्ध्या । १०७

शर्वाणी स्त्री. [ शर्वस्य शिवस्य भार्या । 'इन्द्रवरुणभवेति' डीष् ] पार्वती; उमा; शिवा; भवानी; दुर्गा; सर्वाणी; 'निपत्य पादयोस्ताभ्यां जयया सह बोधता । शापान्तं प्रति शर्वाणी शनैर्वचनमब्रवीत्'—इति कथा- सरित्सागरे (१।५८) । १५

शलम् क्ली.—पुं. [ शल्+ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः इति ण- स्याभावपक्षे पचाद्यच् ] सूची; शल्लकीरोम; शल्ली; पुं. शल्लं; भृङ्गी; क्षेत्रभेदः; ब्रह्मा; कुन्तास्त्रम्; उष्ट्रः; वासुकिवंशीयसर्पविशेषः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलीमकः'—इति महाभारते (१।५७। ५) । शन्तनुराजपुत्रः; 'शलश्च शन्तनोरासीद् गङ्गायां भीष्म आत्मवान्'—इति भागवते (१।२।१८) । शल्यराजः; 'नप्तृत्रिगर्तशलसैन्धववाह्लिकाद्यैः'—इति भागवते (१।१५।१६) । कंसाम्नात्यः; 'ततो मुष्टिक- चाणूरशलतोशलकादिकान्'—इति भागवते (१०।३६। २१) । २३३

शललः पुं. [ वृषादित्वात्कलच् ] शल्लकः; शल्लकीजन्तुः; श्वावित्; शलका; शल्यः; ऋकचपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्यः; विलेशयः । २३३

शल्लम् क्ली. [ शल् चलनसंवरणयोः+वृषादित्वात् कलच् ] शल्लं; शल्लकीलोम; शल्लकण्टकः । २३३

शलली स्त्री. [ शल्ल+गौरादित्वाज्जातित्वाद्वा डीष् ] शली; स्वल्पशल्यकः; श्वावित्; शलम् । २३३.

शलाका स्त्री. [ शल्+बलाकादयश्च इति आक । स्त्रियां टाप् ] शल्यं; मदनवृक्षः; शारिका; शल्लकी; छत्रादिकाष्ठी; 'अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन- शलाकया । चक्षुहन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः'— इति गुरुगीतायाम् । शरः; आलेख्यकूर्चिका; अस्थि ।

८३४

शलाटुः त्रि.—अपक्वफलम्; 'मदनशलाटुवूर्णान्येवं वा वकुलरम्यकोपयुक्तानि मधुलवणयुक्तानि'—इति सुश्रुते (१।४३) । पुं. मूलविशेषः; विल्वः । १८९  
 शल्कली [ न् ] पुं. [ शल्कलमस्यास्तीति । शल्कल+इनि ] मत्स्यः; मीनः; झपः; ६५७  
 शल्की [ न् ] पुं. [ शल्कमस्यास्तीति । शल्क+इनि ] शल्कली; मत्स्यः; मीनः; झपः; वैसारिणः; विसारः; पृथुरोमाः; जलचरविशेषः; तिमिः; अनिमिषः । ६५७  
 शल्यम् क्ली.—पुं. [ शलति चलतीति । शल्+सानसि-वर्णसिपर्णसीति' य ] शलाका; आयुधं; शस्त्रविशेषः; शङ्कुः; दीर्घायुधं; शलः; कुन्तः; विषाङ्कुरः; क्ली. क्ष्वेडः; इपुः; 'शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं, तापादन्तःशल्य इवासीत् क्षितिपोऽपि'—इति रघौ (१।७५) । तोमरं; वंशकम्बिका; दुःसहं; दुर्वाक्यं; पापम्; अस्थि । पुं. [ शल् गती+य ] मदनवृक्षः; स्वावित्; 'वृका वराहा महिषक्षंशल्या गोपुच्छशाला-वृकमकंटाश्च'—इति भागवते (८।२।२२) । नृपभेदः; स तु युधिष्ठिरमातुलः । अयं हि दुर्योधनेन कापटघात् वशीकृतः क्रुहपाण्डवमुद्धे दुर्योधनपक्षं समाश्रयत् । 'मद्राजं च राजानमायान्तं पाण्डवान् प्रति । उपहारै-र्वञ्चयित्वा वर्त्मन्येव सुयोधनः । वरदं तं वरं वज्रे साहाय्यं क्रियतां मम । शल्यस्तस्मै प्रतिश्रुत्य जगामो-द्दिश्य पाण्डवान्'—इति महाभारते (१।२।२१६) ।

८३४

शल्लकः पुं. [ शल्ल एव, स्वार्थे कन् ] शल्लकीजन्तुः; स्वावित् ; शलका; शल्यः; ऋक्चपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्यः; विलेशयः । 'भक्ष्याः पञ्चनखाः सर्वे गोवाकच्छपशल्लकाः । शशाश्च मत्स्येष्वपि हि सिंहतुण्डकरोहिताः'—इति याज्ञ-वल्क्यः (१।१७७) । शोणवृक्षः; क्ली. त्वक् । २३३  
 शल्लकी स्त्री.—पशुविशेषः; स्वावित्; शलका; शल्यः; ऋक्चपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्यः; विलेशयः; वृक्षविशेषः; गजभक्ष्या; सुवहा; सुरभिः; रसा; महेरणा; कुन्दुकी; ह्लादिनी; गजभक्षा; सुरभी; महेरणा; महारणा; सुरभीरसा; शिल्लकी; सिंहकी; सिंहभूमिका; अश्वसूत्री; कुन्ती; 'क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलं प्रेक्ष्य च काननम् । शल्लकी-

बदरीभिर्भ्रं रान वन्वैश्च यामुनैः । स पन्थाश्चित्रकूटस्य गतस्य बहुशो मया'—इति रामायणे (२।५।५९) । २३३  
 शब्दः पुं.—क्ली. [ शवति दर्शनेन चित्तं विकरोतीति । शव् गती (विकारे)+अच् ] मृतशरीरं; कुणपः; क्षिति-वर्धनः; मृतकः; 'शवे स्पृष्टेऽपराधस्य एष ते कथितो विधिः'—इति वाराहे । क्ली. [ शवति गच्छतीति, शव्+अच् ] जलम् । ६२९

शशाङ्कः पुं. [ शशोऽङ्कश्चिह्नं अङ्गे क्रोडे वा यस्य ] शशभृत्; शशधरः; इन्दुः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; शशी; 'स जनैर्दृशो तत्र शिखरे ज्वलितोपधौ । शशाङ्क इव पूर्वद्वैरुदयस्यो विद्वषकः'—इति कथासरित्सागरे (१।८।३९५) । ४२

शशिशेखरः पुं. [ शशी शेखरः शिरोभूषणं यस्य ] शिवः; शङ्करः; महादेवः; उमापतिः; 'तस्याः स्तुतिवचो हृष्टस्तामङ्कमधिरोप्य सः । किं ते प्रियं करोमीति वभाषे शशिशेखरः'—इति कथासरित्सागरे (१।२२) । बुद्धभेदः; हेरम्बः; हेष्कः; चक्रसम्बरः; देवः; वज्र-कपाली; निशुम्भी; वज्रटीकः । ११

शश्वत् अव्य. [ शश्+वाहुलकात् वत् ] पुनः पुनः; सततं; सन्ततम्; अनिशं; नित्यम्; अजस्रम्; अश्रान्तम्; अविरतम्; अनवरतम्; अनारतम्; असक्तम्; 'क्षिप्रं भवति घमात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति'—इति भगवद्गीतायाम् (६।३१) । ६९८

शष्पम् क्ली. [ शस्यते, शस् हिंसायाम्+खष्पशिल्पशष्प-वाष्परूपपतल्पाः' इति निपात्यते ] बालतृणम्; 'गङ्गा-प्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोर्गङ्गापरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६) । १९०

शस्त्रम् क्ली. [ शस्यते हिंस्यते अनेन । शस् हिंसायाम्+अभिचिभिदिशसिभ्यः क्वः' इति क्व । यद्वा 'दाम्नीशसुयु-जेति' ष्टन् ] लोहम्; (४६२) अस्त्रं; हेतिः; प्रहरणम्; आयुधम्; 'अस्त्रे शस्त्रं प्रहरणमुद्घातो हेतिरायुधः'—इति शब्दरत्नावली । पुं. खड्गः; 'रिष्टिः खड्गस्तर-वारिः शस्त्रो भद्रात्मजश्च सः'—इति त्रिकाण्डशेषः । वैदिकस्तुतिवाक्यम् । १७१

शस्त्राजीवः त्रि. [ शस्त्रेण आजीवतीति । शस्त्र+आ+जीव्+अच् ] असिजीवी; काण्डपृष्ठः; आयुधीयः; आयु-धिकः; काण्डस्पृष्टः; काण्डपृष्ठः; शस्त्रधारणजीवकः;

शास्त्रोपजीवी । ४०५

शास्त्रिका स्त्री. [ शस्+ष्टृन्+टाप् ] छुरिकाः; असि-  
पुत्रिका; असिधेनुः; शास्त्री । ४७३

शास्त्रम् क्ली.— बालतृणं; प्रतिभाहानिः । ११०

शाकम् क्ली.— पुं. [ शक्यते भोक्तुमिति, शक्+घञ् ]  
पत्रपुष्पादि; शिपुः; सिपुः; 'पत्रं पुष्पं फलं नालं कन्दं  
संसेवजं तथा । शाकं षड्विधमुद्दिष्टं गुरु विद्याद् यथो-  
त्तरम् ।' 'प्रायः शाकानि सर्वाणि विष्टम्भीनि गुरुणि  
च । रूक्षाणि बहुवर्चासि सृष्टविष्मारुतानि च ।' 'शाकं  
भिनन्ति वपुरस्थि निहन्ति नेत्रं, वर्णं विनाशयति रक्तम-  
थापि शुकम् । प्रजाक्षयं च कुस्ते पलितं च नूनं, हन्ति  
स्मृतिं गतिमिति प्रवदन्ति तज्जाः । शाकेषु सर्वे निवसन्ति  
रोगाः सहेतवो देहविनाशनाय । तस्माद् बुधः शाकविवर्जनं  
च कुर्यात्तयाम्लेषु स एव दीपः'—इति भावप्रकाशः ।  
'सर्वंशाकमचाक्षुष्यमलङ्घ्यमभैयुनम् । ऋते पटोलवास्तूक-  
काकमाचीपुनर्नवाः'—इति राजवल्लभः । पुं. वृक्षवि-  
शेषः; शाकवृक्षः; शाकाख्यः; शरपत्रः; अर्जुनोपमः;  
ऋकचपत्रः; शरपत्रः; अतिपत्रः; अहिहहः; श्रेष्ठकाष्ठः;  
स्थिरसारः; गृहद्रुमः; 'साखू' इति भाषा । शक्तिः; शिरीष-  
वृक्षः; नृपभेदः; द्वीपविशेषः; कर्म; 'शचीवतस्ते पुरु-  
शाक शाका गवामिव श्रुतयः सञ्चरणीः'—इति  
ऋग्वेदे (६।२।४।४) । 'हे पुरुशाक बहुकर्मभिन्द्रशचीवतः  
प्रजावतस्ते त्वदीयाःशाकाः शक्तयः कर्माणि वा'—इति  
तद्भाष्ये सायणः । समर्थे त्रि. । 'सन्ता हन्द्रो असृजदस्य  
शाकैर्यदि सोमासः सुषुता अमन्दन्'—इति ऋग्वेदे  
(५।३०।१०) । 'शाकैः शक्तैर्मरिद्धिः सह' इति—तद्भाष्ये  
सायणः । १६०

शाकशाकटम् क्ली. [ शाकानां भवनं क्षेत्रम् । शाक+  
'भवने क्षेत्रे शाकटशाकिनौ' इत्युक्त्या शाकट ] शाक-  
क्षेत्रं; शाकशाकिनम् । १६४

शाकशाकिनम् क्ली. [ शाकानां भवनं क्षेत्रम् । शाक+  
शाकिन ] शाकक्षेत्रं; शाकशाकटम् । १६४

शाककरः पुं. [ शककर एव, स्वार्थे अण् । यद्वा शङ्करं  
वहति इत्यर्थे अण्, पृषोदरादिः ] अनड्वान्; वृषः;  
वृषभः । २६३

शाक्यः पुं. [ शकोऽभिजनोऽस्येति । शक+शण्डिकादिभ्यो  
ज्यः'—इति ज्ये । यद्वा शाके शाकवृक्षच्छाये भवः

स्थितः । दिगादित्वाद् यत् ] बुद्धः; शाक्यमुनिः;  
खजित्; श्वेतकेतुः; धर्मकेतुः; महामुनिः; पञ्चजानः;  
सर्वदर्शी; महाबोधिः; महाबलः; बहुसूक्ष्मः; त्रिमूर्तिः;  
सिद्धार्थः; शकः; शाक्यसिंहः; 'शाकवृक्षप्रतिच्छत्रं  
वासं यस्मात् प्रचक्रिरे । तस्मादिक्ष्वाकुवंश्यास्ते भुवि  
शाक्या इति श्रुताः'—इति भरतः । ८५

शाककरः पुं. [ शाङ्कर+पृषोदरादित्वेन वर्णविकारः ।  
शकृत्करि+इत्यस्य विकृतिर्वा ] शाककरः; उक्षा;  
अनड्वान्; बलीवर्दः; ककुच्चान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः;  
सौरभेयः; बाडवेयः । २६३

शाखा स्त्री. [ शाखति गगनं व्याप्नोतीति । शाख्+  
अच्+टाप् ] वृक्षाङ्गविशेषः; लता; लङ्का; शिखा;  
'डाल' इति भाषा । पक्षान्तरं; वाहुः; वेदभागः;  
'यत्नेन भोजयेच्छ्राद्धे बहुवृचं वेदपारगम् । शाखान्तगम-  
थवाध्वर्युं छन्दोगन्तु समाप्तिकम्'—इति मनुः (३।  
१४५) । ग्रन्थभेदः; अन्तिकः; प्रकारः; 'बहुशाखा  
ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽयवशाधिनाम्'—इति भगवद्गी-  
तायाम् (२।४१) । ८०७

शाखानगरम् क्ली. [ शाखेव नगरम् ] मूलनगरादन्यत्  
पुरम्; अभिष्यन्दिरमणम्; उपनगरं; शाखापुरम्;  
'आरम्य मूलनगरादपरं नगरं हि यत् । तदभिष्यन्दि-  
रमणं शाखानगरमित्यपि'—इति शब्दरत्नावली । २८६  
शाखामृगः पुं. [ शाखाया मृगः ] बलीमुखः; मर्कटः;  
मर्कटकः; वनोकाः; प्लवङ्गमः; प्लवगः; प्लवङ्गः;  
हरिः; कपिः; कीशः; वानरः । 'मुक्ताफलाय करिणं  
हरिणं पलाय सिंहं निहन्ति भुजविक्रमसूचनाय । का  
नीतिरीतिरियती रघुवंशवीर ! शाखामृगे जरति यस्तव  
बाणमोक्षः'—इत्युद्भटः । २३१

शाखास्थि क्ली. [ शाखारूपम् अस्थि ] नलकम्;  
उपास्थि । ६३४

शाखी [ न् ] पुं. [ शाखास्त्यस्येति । शाखा+इनि ] वृक्षः;  
द्रुमः; तरुः; पादपः; 'सीताया हृदि यच्छिरीपकुसुम-  
प्राये पफालोच्चकैः, पौलस्त्यस्य नितान्तकुण्डकुलिशे  
वज्राधिके वक्षसि । आपुङ्खं निममज्ज मन्मथशरस्तत्रैव  
जानीमहे, कः शाखी सखि ! यस्य पुष्पमभवत् पुष्पायुध-  
स्यायुधम्'—इत्युद्भटः । वेदः; तुरुष्काख्यजनः; राज-  
भेदः । १७७

शाब्दलः त्रि. [ शाड्+ड्वलच् ] शाब्दलः; हरितः । १५९  
शातः त्रि. [ शो+क्त ] दुर्बलः; क्षामः; कृशः; क्षीणः;  
पेलवः; तलिनः; निशितः; घुस्तूरः; क्ली. सुखं;  
तद्वति त्रि. । विनाशः; 'पाणिप्राप्तं पाणिदाहं नखशातं  
करोति च'—इति सुश्रुते (४।१) । ७१७

शातकुम्भम् क्ली. [ शतकुम्भे पर्वते भवम् । शतकुम्भ+  
अण् ] काञ्चनम्; 'द्रुतशातकुम्भनिभमंशुमतो वपुरद्धं-  
भग्नवपुषः पर्यसि'—इति माघे (९।९) । घुस्तूरः;  
पुं. करवीरवृक्षः । १७३

शातकौम्भम् क्ली. [ अनुशक्तिकादेराकृतिगणत्वाद् उभय-  
पदवृद्धिः ] स्वर्णः; सुवर्णनिमित्ते त्रि. । 'शतं च  
शातकौम्भानां कुम्भानामग्निवर्चसाम्'—इति रामायणे  
(२।३।११) । १७३

शात्रवः पुं. [ शत्रुरेव, स्वार्थे अण् ] शत्रुः; 'तत्र नाभ-  
वदसौ महाहवे शात्रवादिव पराङ्मुखोऽथिनः'—इति  
माघे (१४।४४) । क्ली. [ शत्रोर्भावः समूहो वा,  
शत्रु+अण् ] शत्रुभावः; शत्रुसंहतिः; शत्रुसम्बन्धिनि  
त्रि. । 'ताम्बूलीनां दलैस्तत्र रचितापानभूमयः । नारि-  
केलासवं योषाः शात्रवं व्रं पर्युशः'—इति रघौ (४।४२) ।

४५६

शाद्दलः त्रि. [ शाद+नडशादाद् ड्वलच् ] इति ड्वलच् ]  
नवतृणवहलदेशः; [ शादो नवतृणं विद्यतेऽत्र ] हरितः;  
'शाद्दलेषु यदा शिष्ये वनान्ते वनगोचरा । कुयास्तरण-  
वुक्तेषु किं स्यात्सुखतरं ततः'—इति रामायणे (२।३०।  
१४) । १५९

शादः पुं. [ शो तनूकरणे+शाशपिम्यां ददनी' इति द ]  
कदम्बः; पिच्छिलः; विजपिलः; पङ्कः; निपट्टरः;  
जम्बालः; इक्षिलः । (८००) शप्यं; शस्यं; बाल-  
तृणम् । ६७८

शान्तः पुं. [ शम्+क्त, 'वा दान्तशान्तेति' निपा-  
तितः ] रसभेदः; 'न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता न  
द्वेषरागो न च काचिदिच्छा । रसः स शान्तः कथितो  
मुनीन्द्रैः सर्वेषु भावेषु समप्रमाणः ।' अभियुक्तः;  
शान्तम्; अव्य. वारणं; त्रि. उपशमं प्रापितः; प्राप्तो-  
पशमः; शमितः; श्रान्तः; जितेन्द्रियः; शमान्वितः ।  
(३४४) तपस्वी; संयतः; मुनिः; लिङ्गी; यतिः;  
व्रती; श्रान्तः (३९९); सन्नः (७६७) । ९२

शापः पुं. [ शपनमिति, शप्+घञ् ] आक्रोशः; अकरणिः;  
अजोवनिः; अजननिः; अवग्रहः; निग्रहः; अभि-  
सम्पातः; शपनं; शपयः । मिथ्यानिरसनम्; 'संमो-  
चितः सत्त्ववता त्वयाहं शापाच्चिरप्रार्थितदर्शनेन'—  
इति रघौ (५।५६) । उपद्रवः; 'उवास रजनीं तत्र  
ताडकाया वने सुखम् । मुक्तशापं वनं तच्च तस्मिन्नेव  
तदाहनि । रमणीयं विवभ्राज यथा चैत्ररयं वनम्'—  
इति रामायणे (१।२६।३५) । 'मुक्तशापं अपगतोप-  
द्रवम्' इति तट्टीका । जलम्; उदकम्; 'प्रतीपं शापं  
नद्यो वहन्ति'—इति ऋग्वेदे (१०।२८।४) । 'नद्यो  
गङ्गाद्याः सरितः प्रतीपं प्रतिकूलं शापम् उदकं वहन्ति'  
—इति तद्भाष्ये सायणः । १४९

शाम्बरी स्त्री. [ शम्बरस्य दैत्यविशेषस्य इयं कृतिः ।  
अण्, डीप् ] शम्बरदत्यनिमित्तमाया; इन्द्रजालादिमाया;  
कुसृतिः; निकृतिः; माया; पथकल्पना । ७४०

शारः त्रि. [ शू+घञ् ] कर्बुरवणः; करवं; कंवरः;  
सम्पूक्तः; खचितः; पुं. [ शीर्यतेऽनेन शृणाति वा ।  
शू+शूवायुवर्णनिवृत्तेषु' इत्युक्त्या घञ् ] वायुः;  
अक्षोपकरणं; हिंसनं; कर्बुरवणः; कुशे स्त्री. । ७४१

शारदः त्रि. [ शारदि भवः । शारद्+सन्धिवेलाद्यनु-  
नक्षत्रेभ्योऽण् ] इति अण् ] शालीनः; अधृष्टः; नूतनः;  
अप्रतिभः; शरज्जातः; 'वासन्तशारदैर्मध्येर्मुन्यन्नेः स्वय-  
माहृतैः'—इति मनुः (६।११) । पुं. कासः; वकुलः;  
हरिन्मुद्गः; वत्सरः; पीतमुद्गः; रोगः; क्ली.  
श्वेतकमलम्; 'शारदोत्पलपत्राक्ष्या शारदोत्पलगन्धया ।  
शारदोत्पलसेविन्या रूपेण श्रीसमानया'—इति महा-  
भारते (२।६।३४) । सस्यम् । ३७५

शाङ्गम् क्ली. [ शृङ्गस्य विकारः । शृङ्ग+तस्य विकारः'  
इति अण् ] विष्णुधनुः; विष्णुचापः; धनुर्मात्रम्;  
'शाङ्गं क्वजितविज्ञेयप्रतियोधे रजस्यभूत्'—इति रघौ  
(४।६२) । आर्द्रकं; शृङ्गसम्बन्धिनि त्रि. । २६

शाङ्गी [ न् ] पुं. [ शाङ्गं मस्यास्तीति । शाङ्गं+इनि ]  
विष्णुः; 'स सेतुं वन्वयामास प्लवगैर्लवणाम्मसि ।  
रसातलादिवोन्मग्नं शेषं स्वप्नाय शाङ्गिणः'—इति  
रघौ (१२।७०) । धन्विमात्रं; शिवः; महादेवः;  
शङ्करः; शम्भुः । २१

शाद्दलः पुं. [ शू हिंसयाम्+स्वजिपिच्छादिभ्य ऊरोलचौ'

इति ऊलष् प्रत्ययेन साधुः ] ध्याघ्रः; द्वीपी; पुण्डरीकः;  
तरसुः; चित्रकायः; मृगारिः; उत्तरपदे श्रेष्ठार्थ-  
वाचकः; राक्षसः; पशुभेदः; सरभः; शरभः; पक्षि-  
विशेषः; चित्रकः । २२६

शालः पुं. [ शल्यते प्रशस्यते इति, शल्+घञ् ] वृक्षमात्रं;  
द्रुमः; तरुः; पादपः; अंघ्रिपः; अङ्घ्रिपः; (२८८)  
प्राकारः; वप्रः । मत्स्यभेदः (६५९); (८१२) वृक्ष-  
विशेषः; सर्जः; कार्प्यः; अश्वकर्णकः; सस्यसम्बरः;  
शङ्कुवृक्षः; नदभेदः । शालनृपः; शालिवाहनराजः ।

११७

शाला स्त्री. [ शो+बाहुलकात् श्यतेरपि कालन् इति  
कालन् ] वृक्षस्य स्कन्धशाखा; (२९१) गृहं; गेहम्;  
'धूपामोदितशालायां जुष्टायां माल्यदीपकैः'—इति  
भागवते (८।९।१६) । गृहैकदेशः । १८२

शालाजिरः पुं—कली. [ शालानां चतुर्दिग्गृहाणाम् अजिर-  
मिव, वर्तुलविस्तृतसाधर्म्यात् ] शरावः; सरावः;  
वर्षमानः । ३१५

शालाबृकः पुं. [ शालायां गृहे वृक इव ] कुकुरः; कुकुर;  
कुकुरः; कौलेयकः; सारमेयः; भवणः; श्वा; शुकः;  
मृगदंशः; वानरः; शृगालः; मृगः; विडालः । २८१

शालिः पुं. [ शृणोतीति, शृ+बाहुलकाद् इम्, रस्य  
लत्वम् ] षष्टिकादिधान्यं; मधुरः; रुच्यः; व्रीहिश्रेष्ठः;  
नृप प्रियः; धान्योत्तमः; कंदारः; सुकुमारकः; कलमादि-  
धान्यम्; 'राजाश्लषष्टिकसितेतररक्तमण्डस्यूलाणुगन्ध-  
तिरियादिकशालिसंज्ञाः । व्रीहिस्तथेति दशधा भुवि  
शालयः स्युः; तेषां क्रमेण गुणनामगणं ब्रवीमि'—इति  
राजनिर्घण्टः । गन्धमार्जारः; पक्षी । १६२, ५८८

शाली [ न् ] त्रि. [ शालास्यास्तीति+इनि ] श्रेयान्;  
श्लाघ्यः; 'दयालुः शालिनीमाह शुक्लाभिव्याहृतं स्मरन्'  
—इति भागवते (३।२।४१) । शालाविशिष्टः; पदान्ते  
युक्तवाचकः; 'चन्दनचञ्चितनीलकलेवरपीतवसन-  
वनमाली । केलिचलन्मणिकुण्डलमण्डितगण्डयुगास्मित-  
शाली'—इति जयदेवः । 'शाली स्त्री; कृष्णजीरकः ।

३७५

शालीनः त्रि. [ शालाप्रवेशनमर्हतीति । शाला+ 'शालीन-  
कौपीने' अघृष्टाकार्ययोः' इति खञ् ] अघृष्टः; शारदः ।

३७५

शालूकः पुं. [ शल्यते शलति वा । शल् चलनसंवरणयोः+  
'शलिमण्डिम्यामूकण्' इत्यूकण्, वृद्धिः ] भेकः; क्ली.  
कुमुदादिमूलम् । ६८२

शालूरः पुं. [ शलते प्लवते गच्छतीति । शल्+ 'खजि-  
पिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ' इति ऊर ] भेकः; मण्डूकः;  
वपाम्बुः; ददुरः; हरिः; प्लवकः; प्लवङ्गमः; प्लवगः;  
शालूरः; शालूकः; शालूरः । ६६२

शालेयम् त्रि. [ शालीनां क्षेत्रम् । शालि+ 'व्रीहिशाल्योढेक'  
इति ङक् ] शाल्युद्भवक्षेत्रं; व्रीहेयं; शालासम्बन्धि;  
शालसम्बन्धि; पुं. मधुरिका; स्त्री. [ शालेय+टाप् ]  
मिश्रेया । १६२

शापः पुं. [ शप्यते प्राप्यते इति । शप् गतौ+घञ् ] शिशुः;  
वालः; पाकः; अभंकः; पोतः; पृथुकः; डिम्भः;  
शावकः; 'शिलाविभङ्गैर्मृगराजशावः तुङ्गं नगोत्सङ्ग-  
मिवारुरोह'—इति रघो (६।३) । त्रि. [ शवस्यायम्,  
शव+अण् ] शवसम्बन्धिनि; 'ग्रहणे शावमाशौचं  
विमुक्तौ सौतिकं स्मृतम् । तयोः सम्पत्तिमात्रेण  
उपस्पृश्य क्रियाक्रमः'—इति ब्रह्माण्डपुराणे । ५०२

शाश्वतम् त्रि. [ शाश्वत्त्वम् । शाश्वत्+अण् ] नित्यं;  
सनातनं; ध्रुवम्; अनश्वरम्; 'मा निषाद प्रतिष्ठां  
त्वमगमः शाश्वतीः समाः । यत्कौञ्चमियुनादेकमवधीः  
काममोहितम्'—इति रामायणे (१।२।१५) । 'शाश्वतं  
देवपूजादि विप्रदानं च शाश्वतम् । शाश्वतं सगुणा विद्या  
सुहृन्मित्रं च शाश्वतम्'—इति गारुडे । पुं. वेदव्यासः;  
शिवः; 'प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च नियतः शाश्वतो ध्रुवः'  
इति महाभारते (१३।१७।३२) । १२५

शास्त्रम् क्ली. [ शिष्यते अनेन । शास्+ 'सर्वघांतुभ्यः ष्ट्रन्'  
इति ष्ट्रन् ] ग्रन्थः; 'पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा  
स्मृतम्'—इति मात्स्ये ३ अध्याये । निदेशः । ८४४

शास्त्रवित् [ द् ] त्रि. [ शास्त्रं वेत्तीति । विद्+ 'सत्-  
सृद्धिषेति' क्विप् ] शास्त्रदर्शी; शास्त्रज्ञः; अन्तर्वाणिः;  
शास्त्री; शास्त्रचर्णः; शास्त्रचारणः । ३९९

शिक्षयम् क्ली. [ क्ष्+क्षंसेः शि कुट् किञ्च' इति यत्  
स च कित्, कुडागमः शिरादेशश्च ] द्रव्यरक्षार्थरज्जु-  
मयाधारविशेषः; काचः; शिक्षया; शिक्षः; 'छीका'  
इति भाषा । 'हस्ताग्राह्ये रचयति विधि पीठकोलू-  
खलाद्यैश्छिद्रं ह्यन्तर्निहितवपुनः शिक्षयभाण्डेषु तद्वित्'—



हृति भागवते (१०।८।३०) । ७५८

शिक्षितम् त्रि. [ शिक्ष्ये स्थापितमित्यर्थे प्रातिपदिकाद् घात्वर्थे णिच्, ततः क्त ] शिक्ष्यस्थापितवस्तु; काचित् ।

७६८

शिक्षितः त्रि. [ शिक्ष्+क्त ] चतुरः; क्षेत्रज्ञः; कृतहस्तः; कृतमुखः; कृतकर्मा; दक्षः; कुशलः; अभिज्ञः; निष्णातः; विज्ञः; प्रवीणः । (४७१) कृतपुङ्खः; शिक्षायुक्तः; 'आपरितोषाद्विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम् । बलवदपि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययं चेतः'—इत्यभिज्ञानशकुन्तलायाम् १ अङ्कः । ३३५

शिक्षितायुधः त्रि. [ शिक्षितानि अम्यस्तानि आयुधानि येन ] सहस्तः । ३७३

शिक्षण्डः पुं.-क्ली. [ शिक्षाममति, शिक्षा+अम्+ 'अमन्ताड् डः; इति ड, शकन्वादित्वात् पररूपम् ] मयूरपुच्छः; प्रचलाकः; कलापः; वर्हः; 'शिक्षण्डोऽस्त्री पिच्छवर्हे शिक्षपुच्छशिक्षण्डके'—इति शब्दरत्नावली । चूडा । २४२

शिक्षण्डकः पुं. [ शिक्षण्ड इव+कन् ] काकपक्षः; शिक्षण्डकः; [ शिरसि खण्डते शिक्षण्डकः पृषोदरादिः ] 'तौ पितुर्नयनजेने वारिणा किञ्चिदुक्षितशिक्षण्डकावुभौ । घन्विनी तमृषिमन्वागच्छतां पीरदृष्टिकृतमार्गतोरणी'—इति रघौ (११।५) । मयूरपुच्छे क्ली. ।

५३२

शिक्षण्डिका स्त्री.—काकपक्षः; शिक्षा; 'चूडा केशी केशपाशी शिक्षा शिक्षण्डिका समाः'—इति हेमचन्द्रः ।

५३२

शिक्षण्डी [ न् ] पुं. [ शिक्षण्डोऽस्त्यस्य, इनि ] केकी; शिक्षी; प्रचलाकी; बहिणः; कलापी; सर्पाशिनः; मयूरः; शिक्षावलः; श्यामकण्ठः; 'पद्मसंवादिनीः केका द्विधाभिन्नाः शिक्षण्डिभिः'—इति रघौ (१।३९) । कुक्कुटः; वाणः; मयूरपुच्छः; स्वर्णयुधिका; विष्णुः; 'शिक्षण्डी नहुषो वृषः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् । गाङ्गेयारिः; द्रुपदराजपुत्रः; गुञ्जा; शिवः; 'जटी चर्मी शिक्षण्डी च सर्वाङ्गः सर्वभावनः'—इति महाभारते

(१३।१७।३१) । २४१

शिक्षरम् क्ली. [ शिक्षास्यास्तीति । 'वृञ्छण्कठजिति' अदमादित्वाद् र, ह्रस्वश्च ] पर्वताग्रं; कूटं; शृङ्गः

शैलाग्रदेशकम्; 'विदारयन् गिरिशिखराणि पत्रिभिः'—इति महाभारते (१।१९।२८) । १६६

शिखरः पुं.-क्ली. [ शिक्षास्त्यस्येति । शिक्षा + र, ह्रस्वश्च ] वृक्षाग्रं; शिरः; अग्रं; शिरः; प्राग्रं; पर्वतशृङ्गं; पुलकः; कक्षः; पक्वदाडिमवीजाभ-माणिक्यं; सकलाग्रं; कोटिः । १८१

शिखरी [ न् ] पुं. [ शिखरोऽस्यास्तीति । शिखर+इनि पर्वतः; 'बसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्'—इति गीतायाम् । (१०।२३) । (१७७) वृक्षः; द्रुमः; पादपः; अंहिणः; अडिघपः; तरुः । कोयष्टिः (२४९); अपामार्गः; कोट्टः; वन्दाकः; कर्कटशृङ्गी; कुन्दुशकः; यावनालः; कोटिविशिष्टे त्रि. । 'दन्तैः शुक्लैः शिखरिभिः सिंहसंहननो महान्'—इति महाभारते (१।७।४।४) । १६५

शिक्षा स्त्री. [ शी+'शीडो ह्रस्वश्च' इति ख, ह्रस्वो गुणाभावश्च, स्त्रियां टाप् ] अग्निज्वाला; ज्वाला; कीलः; अचिः; हेतिः; शिक्षा; 'त्रिविद्युते वाडवजातवेदसः शिक्षाभिराश्लिष्ट इवाम्भसां निधिः'—इति माघे (१।२०) । (५३२) शिरोमध्यस्थकेशः; चूडा; केशपाशी; जुटिका; जूटिका; केशी; शिक्षण्डिका । 'गायत्र्या तु शिक्षां वद्ध्वा नैऋत्यां ब्रह्मरन्ध्रतः । जुटिकां च ततो वद्ध्वा ततः कर्म समारभेत' (५६२) कुचमुखं; चूचुकं; वृन्तं; चूडामार्गं (७९९); (२४२) मयूरशिक्षा; शाखा; बहिचूडा; 'रन्ध्रागतमयांश्वाना शिक्षोद्भेदश्च बहिणाम्'—इति महाभारते (१३।२८।५३) । लाङ्गलिकी; अग्रमात्रम्; 'सटाशिखोद्भूतशिखाम्बुविन्दुभिः'—इति भागवते (३।१३।४४) । चूडामार्गं; प्रपदं; प्रधानं; शिफा; घृणिः; 'स्फुरद्भ्रजःशिक्षाजालं धात्रा मोहतमोऽपहम्'—इति कयासरित्सागरे (२।१।८५) । स्मरज्वरः । ६५

शिक्षावलः पुं. [ शिक्षा विद्यतेऽस्य । शिक्षा + दन्तशिखात् संज्ञायाम्' इति वलच् ] मयूरः; केकी; शिक्षी; शिक्षण्डी; प्रचलाकी; बहिणः; कलापी; सर्पाशिनः; श्यामकण्ठः; त्रि. शिक्षावलं नगरं, शिक्षावला स्थूणा; [ शिक्षा+वलच्+टाप् ] मयूरशिक्षा । २४१

शिक्षी [ न् ] पुं. [ शिक्षास्यास्तीति, शिक्षा + 'श्रीह्यादि-म्यश्च' इति इनि ] केतुः; आद्रालुब्धकः; बलिः

(६२); मयूरः (२४१); 'शिखिपत्रनिभः सलिलं न करोति द्वादशाब्दानि'—इति बृहत्संहितायाम् (३१२८) ।

४९

शितिः त्रि. [ शतिः सौत्रो धातुः + 'ऋमितमिशतिस्तम्भामत इच्च' इति इन्, स च कित्, अत इकारश्च ] असितः; कृष्णः; कालः; नीलः; मेचकः; श्यामलः; श्यामः; रामः; 'शितितारकानुमितताम्नयनमरुणीकृतं क्रुधा'—इति माघे (१५।४८) । शुक्लः; भूर्जवृक्षे पुं. । 'शितिस्त्रिपु सिते कृष्णे भूर्जे सारेऽपि च द्वयोः—' इति शब्दरत्नवाली । ७३४

शियिलः त्रि. [ श्र्य + 'अजिरशिशिरशियिलेति' किरच् प्रत्ययेन साधुः ] श्लयः; 'शियिलावयवो यर्हि गन्धर्वैर्हृत-पौरुषः—' इति भागवते (४।२८।१५) । क्ली. मन्द-बन्धनं; मन्थरत्वं; संयोगविशेषः; 'प्रचयः शियिलाख्यो यः संयोगस्तेन जन्यते'—इति भाषापरिच्छेदः । ७७७

शिपिविष्टः पुं. — शिपिविष्टः; शिवः; शम्भुः; शङ्करः; महादेवः; महेश्वरः । १३

शिपिविष्टः पुं. [ शिपिपु रश्मिपु पशुपु वा विष्टः प्रविष्टः ] महेश्वरः; शिवः; शिपिविष्टः; (६०८) खलतिः; ऐन्द्रलुप्तिकः; (८१७) दुश्चर्मा; कुण्ठी; विष्णुः; 'नैकरूपी बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः—' इति विष्णु-सहस्रनामस्तोत्रम् । पशुप्रविष्ट त्रि. । 'पुरोडाशं निरवपन् शिपिविष्टाय विष्णवे'—इति भागवते (४।१३।३५) ।

१३

शिफः पुं. [ शिते, शीङ् + बाहुलकात् फक्, ह्रस्वश्च ] शिफा; जटा; मूलम् । १८३

शिफा स्त्री.— वृक्षाणां जटाकारमूलं; जटा; मूलं; नदी; 'हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः'—इति ऋग्वेदे (१।१०।४३) । 'शिफायाः शिफा नाम नदी तस्याः—' इति तद्भाष्ये सायणः । मांसिका; माता; शतपुष्पा; हरिद्रा; पद्मकन्दः । लता; 'शिफाविदलरज्ज्वादे-विदव्यान्नृपतिर्दमम्'—इति मनुः (९।२३०) । १८३

शिम्वी स्त्री. [ शिनोति, शिञ् निशाने, 'उल्बादयश्च' इति साधुः, टाप् ] शिम्विः; शिम्विका; बीजकोशी; फली; कलायादित्क्; समी, सिम्वा; सिम्बी; शिम्वी; शमी; सिम्बिका; शमिः । १८९

शिम्विः स्त्री.— शिम्वी; एरका । १८९

शिरः [ स् ] क्ली. [ श्रि + 'श्रयतेः स्वाङ्गे शिरः किच्च' इत्यमुन्, स च कित्, धातोः शिरादेशश्च ] शिखरम्; 'यथा वज्रेण वै दीर्णं पर्वतस्य महच्छिरः—' इति महा-भारते (४।२३।२) । (५१८) मस्तकम्; 'शिरः सपुष्पं चरणी सुपूजितौ—' इति लक्ष्मीचरित्रे । मस्तक-रोगनाशकौषधम्; 'शिरोरोगहरं लेपात् गुञ्जामूलं सकाञ्जिकम्—' इति गारुडे । प्रधानम्; 'योगाय सांख्य-शिरसे प्रकृतीश्वराय—' इति भागवते (५।१४।४५) । सेनाग्रम् । १८९

शिरसिजः पुं. [ शिरसि जातः इति । जन् + ड ] केशः; बालः; शिरसिरुहः; शिरजः; शिरोरुहः; शिरोरुह् (ह्); 'श्लथशिरसिजपाशपातभारादिव नितरां नति-मद्भिरसभागैः—' इति माघे (७।६२) । ५३०

शिरा स्त्री. [ शिञ् निशाने, 'बहुलमन्यत्रापि' इति रक्, टाप् ] नाडी; धमनिः; स्नसा; स्नायुः । ६३४

शिरोगृहम् क्ली. [ शिरसो गृहम् ] अट्टालिकोपरिगृहं; चन्द्रशाला । ३०४

शिरोधरम् क्ली.— ग्रीवा; 'दीक्षानुजन्मोपसदः शिरो-धरम्—' इति भागवते (३।१३।३७) । ५१६

शिरोधरा स्त्री. [ शिरसो धरा ] ग्रीवा; धमनिः; मन्या; शिरोधिः; कन्धरा; 'सङ्गोतवद्रोदनवदुन्नमय्य शिरो-धराम् । व्यमुञ्चन् विविधा वाचो ग्रामसिंहास्ततस्ततः—' इति भागवते (३।१७।१०) । ५१६

शिरोरुहः पुं. [ शिरसि रोहतीति । रुह् + क ] केशः; बालः; 'चीरवासा व्रतक्षामा वेणीभूतशिरोरुहा—' इति भागवते (४।२८।४४) । ५३०

शिला स्त्री. [ शिलति, शिल् उञ्छे, इगुपधत्वात्क, टाप् ] उपला; पापाणः; 'गोऽश्वोऽपद्रयानप्रासादस्रस्तेषु कटेषु च । आसीत् गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनोपु च—' इति मनुः (२।२०४) । द्वाराधःस्थितदारुः; स्तम्भशीर्ष; मनःशिला; कर्पूरः । १६८

शिलीन्ध्रम् क्ली. [ शिलीं धरति । धृ + क, पृषोदरादि-त्वान् नुम् ] छत्रकः; शिलीन्ध्रकं; गोमयछत्रिका; पुं. वृक्षविशेषः । क्ली. कदलोपुष्पम्; 'नवकदम्बरजो-रुणिताम्बरैरधिपुरन्धिःशिलीन्ध्रसुगन्धिभिः—' इति माघे (६।३२) । करका; त्रिपुटा; पुं. मत्स्यविशेषः; चित्र-फलकमत्स्यः । ८३१

शिलीमुखः पुं. [ शिलीव मुखं यस्य ] भ्रमरः; मधुकरः;  
 ; मधुपः; द्विरेकः; 'कटेवु करिणां पेतुः पुत्रागोम्यः शिली-  
 मुखाः—इति रघौ (४।५७) । वाणः (४६६);  
 'कस्यायं शायको दीर्घः शिलीपृष्ठः शिलीमुखः—इति  
 महाभारते (४।४०।११) । जडीभूतः; युद्धम् । २५५  
 शिलोच्चयः पुं. [ शिलाया उच्चयो यत्र ] पर्वतः; शैलः;  
 गिरिः; 'न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति  
 मारुतस्य—इति रघौ (२।२७) । १६५  
 शिल्पशाला स्त्री.—क्ली. [ शिल्पानां शाला ] आवेशनं;  
 शिल्पशाला; शिल्पशालम् । २९६  
 शिल्पशाला स्त्री.—क्ली. [ शिल्पिनां शाला ] शिल्पशाला;  
 स्वर्णकारादीनां कर्मगृहम्; आवेशनं; शिल्पशालं;  
 शिल्पशालं; 'कारखाना' इति भाषा । २९६  
 शिल्पी [न्] त्रि. [ शिल्पं क्रियाकौशलमस्यास्तीति,  
 इति ] शिल्पकर्ता; कारुः; शिल्पकारः; शिल्पविद्या-  
 व्यवसायी; शिल्पकारी । ५९३  
 शिष्यः पुं. [ शी + 'सर्वनिघृष्वेति' वन् प्रत्ययेन निपातनात्  
 साधुः । शिवं कल्याणं विद्यतेऽस्य, श्यति अशुभमिति वा ।  
 शेरतेऽवतिष्ठन्ते अणिमादयोऽष्टौ सिद्धयः अस्मिन् इति  
 वा ] शम्भुः; ईशः; पशुपतिः; शूली; महेश्वरः;  
 ईश्वरः; शर्वः; ईशानः; शङ्करः; चन्द्रशेखरः; भूतेशः;  
 खण्डपरशुः; गिरीशः; गिरिशः; मूडः; मृत्युञ्जयः;  
 कृत्तिवासाः; पिनाकी; प्रमथाधिपः; उग्रः; कपर्दी;  
 श्रीकण्ठः; शितिकण्ठः; कपालभृत्; वामदेवः; महादेवः;  
 विरूपाक्षः; त्रिलोचनः; कृशानुरेताः; सर्वज्ञः; धूर्जटिः;  
 नीललोहितः; हरः; स्मरहरः; भर्गः; त्र्यम्बकः;  
 त्रिपुरान्तकः; गङ्गाधरः; अन्वकरिपुः; ऋतुर्ध्वंशी;  
 वृषध्वजः; व्योमकेशः; भवः; भीमः; स्याणुः; रुद्रः;  
 उमापतिः; वृषपर्वा; रेरिहाणः; भगाली; पांशुचन्दनः;  
 दिगम्बरः; अट्टहासः; कालञ्जरः; पुरद्विड्; वृषाकपिः;  
 महाकालः; वराकः; नन्दिवर्द्धनः । मोक्षः; कीलग्रहः;  
 बालुकं; गुग्गुलुः; वेदः; पुण्डरीकद्रुमः; कृष्णघुस्तूरः;  
 पारदः; देवः; लिङ्गः; विष्णुम्भादिसप्तविंशति-  
 योगान्तर्गतविंशतितमयोगः; महेशभक्तः श्रुतिपारदृश्वा  
 जितेन्द्रियश्चासतनुमहात्मा । शिवाभिवानः खलु  
 योगराजः प्रसूतिकाले यदि मानवानाम्—इति कोष्ठी-  
 प्रदीपः । क्ली. मङ्गलम् (११२); 'उपपन्नं ननु शिवं

सप्तस्वङ्गेषु यस्य मे । देवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमा-  
 पदाम् ।' सुखं; जलं; सैन्धवं; समुद्रलवणं; श्वेततट्टर्णं;  
 मङ्गलवति त्रि. 'तत्र रम्ये शिवे देशे कौरवस्य  
 निवेशनम्—इति महाभारते (१।२०।८।३६) । ११  
 शिवकः पुं. [ संज्ञायां कन् ] कीलकः; ध्रुवकः; शङ्कुः;  
 पुष्पलकः । ४५१  
 शिवकरः त्रि. [ शिवस्य करः ] मङ्गलकारकः; कल्याण-  
 कारी; पुं. चतुर्विंशतिभूतार्हदन्तर्गतजिनविशेषः । ३४०  
 शिवङ्करः त्रि. [ शिवं करोतीति । 'क्षेमप्रियभद्रेऽण्' ]  
 इति बाहुलकात् खन्, मुम् ] मङ्गलकर्ता; क्षेमङ्करः;  
 अरिष्टतातिः; शिवतातिः; कल्याणकारी । पुं.  
 बालग्रहविशेषः; 'संघट्टनः संकुचनः काष्ठभूतः शिवङ्करः—  
 इति हरिवंशे (१६६।७५) । ३४०  
 शिवतातिः स्त्री. [ 'शिवशमरिष्टस्य करे' इति तातिल्  
 कल्याणकारिणी; [ भावेऽपि तातिल्विधानात् ] शिव-  
 त्वम् । ३४०  
 शिवा स्त्री. [ शिव+टाप् ] दुर्गा; उमा; भगवती;  
 चण्डी; भवानी; शर्वाणी । (२२७) गोमायुः; भूरि-  
 मायुः; शृगालः; जम्बूकः; फेरण्डः; फेरवः; फेरुः;  
 क्रोष्टा; मृगधूर्तकः । (६१८) घात्री; आमलकी;  
 मुक्तिः; 'शिवा मुक्तिः समाख्याता योगिनां मोक्ष-  
 गामिनी । शिवाय यां जयेद्देवीं शिवा लोके ततः स्मृता—  
 इति देवोपुराणे । 'शिवा कल्याणरूपा च शिवदा च  
 शिवप्रिया । प्रिये दातरि वा शब्दः शिवा तेन प्रकीर्तितः'  
 —इति ब्रह्मवैवर्ते । शमीवृक्षः; हरीतकी; तामलकी;  
 बुद्धशक्तिविशेषः; द्वाविंशजिनमाता; हरिद्रा; द्वर्वा;  
 गोरोचना । १६  
 शिविका स्त्री. [ शिवं सुखं करोतीति । शिव+णिच्+  
 ण्वुल्+टाप् ] यानविशेषः; याप्ययानं; शिवीरयः;  
 'डोली, पालकी' इति भाषा । ४५०  
 शिविपिष्टः पुं. — महादेवः; शिपिविष्टः; शिपविष्टः;  
 शिवः । १३  
 शिविरम् क्ली. [ शेरते राजवलान्यत्र । शी स्वप्ने +  
 बाहुलकात् किरच् ] निवेशः; 'शिविरं तु निवेशे च  
 बलीवं तु युद्धवेशमनि—इत्युणादिकोपः । आगन्तुक-  
 सैन्यवासः; कटकः; नृपस्य मूलस्थानम् । ४५२  
 शिशिरः त्रि. [ शश् प्लुतगतौ+किरच् प्रत्ययेन साधुः ]

शीतगुणयुक्तः; 'शीतं गुणे तद्वदर्थः सुधीमः शिशिरो जडः । सुपारः शीतलः शीतो हिमः सन्ताप्यलिङ्गकाः— इत्यमरः । 'आनन्दजः शोकजमश्च वाष्पस्तयोरशीतं शिशिरो बिभेद'—इति रघो (१४।३) । पुं.—बली. ऋतु- विशेषः; माघफाल्गुनमासद्वयात्मकः; कम्पनः; शीतः; हिमकूटः; कोटनः; कोडवः । 'मिष्टान्नभोजी मधुर- प्रणादी कलत्रवित्तादियुतः क्षुधार्तः । क्रोधी सुधीश्चारु- कलेवरश्च यस्य प्रसूतिः शिशिराभिधाने'—इति कोष्ठोप्रदीपः । पुं. हिमः; विष्णुः; 'शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः'—इति महाभारते (१३।१४९।११०) । ६५०

शिशुः पुं. [ श्यतीति, शो+शः कित् सन्वच्च' इति उ ] बालकः; पोतः; पाकः; अर्भकः; डिम्बः; पृथुकः; शावकः; शावः; अर्भः; शिशुकः; पोतकः; भिष्टकः; गर्भः; 'चतुर्थाद्विस्तराद्बुध्वं यावदष्टौ समा वयः । शिशोर्ब्रतं प्रकुर्वन्ति गुरुसम्बन्धिवान्धवाः'—इति ब्रह्मपुराणवचनम् । ५०२

शिवः पुं.—क्ली. [ शशतीति, शश्+बाहुलकात् नक्, पृषोदरादिः ] शोकः; स्मरस्तम्भः; शिवनः; उपस्थः; मदनाङ्कुशः; कन्दर्पमुषलः; मेहनः; शोकः [ स् ]; मेदः; लाङ्गुः; ध्वजः; रागलता; व्यङ्गः; लाङ्गूलः; साधनः; सेफः; कामाङ्कुशः; लिङ्गम् । ५१४  
शिविदानः त्रि. [ श्वेतितुमिच्छतीति । शिवत्+सन्+ 'श्वितेर्दश्च' इति आनच्, सनो लुक्, तकारस्य दकारः ] पापकर्मा; कृष्णकर्मा; दुराचारी; 'स्त्राङ्गिक ! छिद्यतां छिद्यताम् एष क्षुद्रः शिविदानः'—इति प्रद्युम्नविजये ७. अङ्के । अकृष्णकर्मा; शुक्लकर्मा; 'शिविदानः कृष्णकर्मा शुक्लकर्मेति कस्यचित्'—इति जटाधरः । ४४०

शिष्यः त्रि. [ शिष्यतेऽसाविति । शास्+ 'एतिस्तुशास्वृद्- जुपः क्यप्' इति क्यप्, 'शास इदङ्गहलोः'—इति इः, 'शासिब्रसीति' ष ] उपदेश्यः; छात्रः; अन्तेवासी; अन्तेसत्; अन्तेपदः; 'छात्रान्तेवासिशिष्यान्तेपद एकार्थका इमे'—इति जटाधरः । 'वाङ्मनः कायवसुभिर्गुरुशुश्रूपणे रतः । एताद्दशगुणोपेतः शिष्यो भवति नारद । देवताचार्य- गुरुभूपुर्मनोवाककायकर्मभिः । शुद्धभावो महोत्साहो बोद्धा शिष्य इति स्मृतः'—इति दीक्षातत्त्वम् । ४००

शीघ्रबोधी [ न् ] पुं. [ शीघ्रं विध्यतीति, शीघ्र+व्यध् ताडने+णिनि, 'ग्रहिज्या' इति सम्प्रसारणम् ] क्षिप्रशर- वेधकर्ता; लघुहस्तः । ४७१

शीतः पुं. [ श्यै+क्त ] वेतसवृक्षः; बहुवारकवृक्षः; अशन- पर्णी; पर्पटः; निम्बः; कर्पूरः; हिमऋतुः; त्रि. शीतलः; 'शीतस्तत्र सुखी वायुः सुगन्धो जीवनः शुचिः । सर्वरत्नविचित्रा च भूमिः पुष्पविभूषिता'—इति महा- भारते (३।१६८।५०) अलसः; क्वथितः । २०१

शीतकः पुं. [ शीत+स्वार्थे कन् ] सुस्थितः; दीर्घसूत्री; शीतकालः; अशनपर्णी; वृश्चिकः; देशविशेषः; 'माणहल- हूणकोहलशीतकमाण्डव्यभूतपुराः'—इति बृहत्संहिता- याम् । ३८७

शीतांशुः पुं. [ शीताः अंशवः यस्य ] शीतरश्मिः; शीत- मरीचिः; इन्दुः; शीतमयूखः; शीतभानुः; शीतकिरणः; शीतकरः; चन्द्रः; चन्द्रमाः । ८५६

शीघुः पुं.—क्ली. [ शीतेऽनेनेति । शी+ 'शीडो धुग्लग्वलम्- बालनः' इति धुक् ] पक्वेधुरसकृतमद्यम् । ३२९

शीनम् त्रि. [ श्यै गती+क्त, 'द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः' इति सम्प्रसारणम्, 'श्योऽप्यशौ' इति न ] घनीभूतघृतादिः; पुं मूर्खः; अजगरः । २७६

शीर्षम् क्ली. [ 'कुमारशीर्षयोः' इति ज्ञापकात् शिरः- शब्दस्य शीर्षदिशः ] मस्तकम्; 'शीर्षाणां वै सहस्रं तु विहितं शाङ्गधन्वना । सहस्रं चैव कायानां वहन् सङ्कर्षणस्तदा'—इति हरिवंशे (१७८।६) । कृष्णा- गरः । ५१८

शीलम् क्ली. [ शीलयतीति । शील समाधाने, ष्यन्ता- दच् । यद्वा शीङ् स्वप्ने, 'शीडो धुग्लग्वलञ्चालनः' इति लक्, अर्द्धच्चादित्वात् पुल्लिङ्गमपि ] चरित्रं; चरितं; चारित्र्यं; चारिष्यं; स्वभावः; सद्बृत्तम् । 'साध्वीनान्तु स्थितानान्तु शीले सत्ये श्रुते स्थिते । स्त्रीणां पवित्रं परमं पतिरेको विशिष्यते'—इति रामायणे (२।३९।२४) । ब्रह्मण्यतादित्रयोदशविधधर्ममूलं; राग- द्वेषवर्जनम्; 'वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् । आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव'—इति मानवे २ः अध्यायः । शीलं ब्रह्मण्यतादिरूपम्; रागद्वेषपरित्यागः;

पुं. [ शीलमस्यास्ति, अच् ] अजगरसर्पः; ३९६  
शुकः पुं. [ शुभ् दीप्तौ+ 'शुकवल्कोल्काः' इति निपातनात्

क प्रत्ययेन साधुः ] पक्षिविशेषः; कीरः; वक्रतुण्डः; मेवावी; दाडिमप्रियः; रक्ततुण्डः; दक्रवञ्चुः; चिमिः; चिमिकः; शूकः; प्रियदर्शनः; मञ्जुपाठकः। 'वामः पठन् राजशुकः प्रयाणे शुभं भवेद्दक्षिणतः प्रवेशे। वनेचराः काष्ठशुकाः प्रयातुः स्युः सिद्धिदाः संमुखमापतन्तः'— इति वसन्तराजशाकुने ८ वर्गः। व्यासपुत्रः; 'पराशर-कुलोत्पन्नः शुको नाम महायशाः। व्यासादरण्यां सम्भूतो विब्रूमोऽग्निरिव ज्वलन्। स तस्यां पितृकन्यायां पीवयां जनयिष्यति। कृष्णं गीरं प्रभुं शम्भुं तथा भूरिश्रुतं जयम्। कन्यां कीर्तिमतीं पृष्ठीं योगिनीं योगमातरम्। ब्रह्म-दत्तस्य जननीं गृहिणीमनुहस्य च'—इति विष्णुपुराणे (४।१९)। रावणमन्त्री, शिरीषवृक्षः; वृक्षविशेषः।

२४८

शुक्तम् क्ली। [ शोक्ति याति मनः यस्मिन्। शुक्+क्त ] द्रवद्रव्यविशेषः; घान्याम्लः; आरनालः; सन्धानम्; काञ्जिकं; सौवीरं; अभिपवः; अवन्तिसोमं; सुपोद-कम्; 'कन्दमूलफलादीनि सस्नेहलवणानि च। यत्र द्रव्ये-ऽभिपूयन्ते तच्छुक्तमभिधीयते। त्रि. निष्ठुरं; पूतम्; अम्लं; शिलष्टं; निजंनं; स्त्री-। शुक्त+टाप् ] चुक्रिका।

३१८

शुक्तिः स्त्री। [ शुक्+क्तिन् ] जलजन्तुविशेषः; मुक्ता-स्फोटः; शुक्तिका; मुक्तिप्रसूः; महाशुक्तिः; तौतिकः; मौक्तिकप्रसवा; मौक्तिकशुक्तिः; मुक्तामाता; कपाल-खण्डं; शङ्खः; शङ्खनखः; नखी; अश्वावर्तः; अशौरोगः; चक्षुरोगविशेषः; कर्षद्वयपरिमाणं; चतुस्तोलकपरिमाणम्; अष्टमिका। ६६४

शुक्रः पुं। [ शोचन्त्यस्मिन्+शुक् शोके, 'ऋञ्जेन्द्रेति' रक् कत्वं च ] ग्रहविशेषः; दैत्यगुरुः; काव्यः; उशनाः; भार्गवः; कविः; सितः; आस्फुजित्; शतपर्वेशः; भृगुमुतः; भृगुः; षोडशाक्षिः; मघाभूः; श्वेतः; श्वेतरथः; षोडशाक्षुः; वारविशेषः; अग्निः; चित्रक-वृक्षः; ज्येष्ठमासः; विष्णुमहादिसप्तविंशतियोगान्तर्गत-चतुर्विंशयोगः; 'हास्यो विवादे विजयी सभायां सद्गन्ध-माल्याम्बररत्नयुक्त्रः। जितेन्द्रियः स्यान्मनुजो महौजाः शुक्राभिवात् जननं हि यस्व'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ४८

शुक्रम् क्ली। [ शुक् शोके, शोचयत्यनेन+ऋञ्जेन्द्राप्रवर्जोति' र्न् प्रत्ययेन साधु ] मज्जजातघातुः; पुंस्त्वं; रेतः;

बीजं; वीर्यं; पीरुषं; तेजः; इन्द्रियम्; अन्नविकारः; मज्जारसः; रोहणं; बलम्; 'रसाद्रक्तं ततो मासं मांसान्मेदः प्रजायते। मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जात् शुक्रस्य सम्भवः।' 'शुक्रं शोष्यं सितं स्निग्धं बलपुष्टिकरं स्मृतम्। गर्भबीजं वपुःसारो जीवस्याश्रय उत्तमः'— इति भावप्रकाशः। नेत्ररोगविशेषः; शुक्लं; चक्षुः-शुक्लभागजरोगः। ६३८

शुक्रशिष्यः पुं। [ शुक्रस्य शिष्यः ] असुरः; दानवः; दैत्यः; दैतेयः; सुरशत्रुः; पूर्वदेवः; पातालनिलयः। बहुत्ये प्रयुज्यते। ५

शुक्लः पुं। [ शुक्+रन्। रस्य लः ] वर्षविशेषः; शुभ्रः; शुचिः; श्वेतः; विशदः; श्येतः; पाण्डुरः; अवदातः; सितः; गौरः; बलक्षः; धवलः; अर्जुनः; श्वेता; श्येता; श्येनी; विपदः; सिता; अवलक्षः; शितिः; पाण्डुः; रामः; खरुः; शक्रयोगः; श्वेतैरण्डः; शुक्ल-पक्षः; शुक्लकः; 'तत्र पक्षावुभौ मासे शुक्लकृष्णी क्रमेण हि। चन्द्रवृद्धिकरः शुक्लः कृष्णश्चन्द्रक्षयात्मकः'— इति तिथ्यादितत्त्वम्। शुक्लगुणयुक्ते त्रि.। मली. रजतं; नवनीतम्; अक्षिरोगविशेषः; शुक्रं; चक्षुःशुक्लभागज-रोगः; 'प्रस्तारिशुक्लक्षतजाधिमांससाग्वमंसशाः खलु पञ्च रोगाः।' 'सुश्वेतं मृदुशुक्लामं शुक्लं तद्रद्धंते चिरात्'—इति वैद्यके। ८०८

शुचिः पुं। [ शुचिं करोतीति णिच्+इगुपवात् कित् ] इति इन्, स च कित् ] अग्निः; वह्निः; अनलः; पावकः; 'पावकः पवमानश्च शुचिरित्यनयः पुरा। वशिष्ठशापादुत्पन्नाः पुनर्योगगतिं गताः'—इति भागवते (४।२४।४)। चित्रकवृक्षः; आपाढमासः; शुक्लवर्णः; शृङ्गाररसः; ग्रीष्मः; शुद्धमन्त्री; ज्येष्ठमासः; सौराग्निः। 'पावकः पवमानश्च शुचिरग्निश्च ते त्रयः। निर्मथ्यः पवमानः स्याद् वैद्युतः पावकः स्मृतः। यश्चासौ तपते सूर्यः शुचि-रग्निस्त्वसौ स्मृतः। तेषां तु सन्तताभन्ये चत्वारिंशत् पञ्च च। पावकः पवमानश्च शुचिस्तेषां पिता च यः। एते चैकोनपञ्चाशद्ब्रह्मणः परिकीर्तिताः'—इति कौर्मै। कार्तिकेयः; चन्द्रः; शुक्रः; ब्राह्मणः; सूर्यः; 'तपनस्ताप-नश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः'—इति साम्बपुराणे। अन्धकस्य पुत्रविशेषः; 'कुतुरो मज्जमानश्च शुचिः कन्दलवह्निः'—इति भागवते (१।२४।१९)। स्त्री.

[ शुच्+इन् ] कश्यपपत्न्यास्ताम्रायाः सुता; 'षट् सुताश्च महासत्त्वास्ताम्रायाः परिकीर्तिताः । शुकी श्येनी च भापा च सुग्रीवी शुचिगृध्रिके'—इति गारुडे ६ अध्यायः । ६२

शुचिः त्रि. [ शुच्+इन् ] शुक्लगुणविशिष्टः; शुद्धः; 'क्रीडावसाने ते सर्वे शुचिवस्त्राः स्वलङ्कृताः'—इति महाभारते (१।१२०।४९) । अनुपहतः; परस्वर्णस्पर्शं हस्तप्रक्षालनाद् यथा भवति सः; 'दैवात् परस्त्रियं दृष्ट्वा विरमेद् यो हरिं स्मरन् । स्पृष्ट्वा परसुवर्णं च हस्तप्रक्षालनात् शुचिः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । निरपराधी; 'अहो धिक् घृतराष्ट्रस्य वृद्धिर्नास्ति समञ्जसी । यः शुचीन् पाण्डुदायादान् दाहयामास शत्रुवत्'—इति महाभारते (१।१४९।१४) । शुद्धान्तःकरणः; 'वृद्धाश्च नित्यं सेवेत विप्रान् वेदविदो शुचीन् । वृद्धसेवी हि सततं रक्षोभिरपि पूज्यते'—इति मनुः (७।३८) । ८०८

शुष्ठीः स्त्री. [ शुठि शोषणे+इन् ] शुष्ठी; 'तस्मिन् गताद्रंभावे वीतरसे शुष्ठीशकल इव परुषे । अपि भूतिभाजि मलिने नागरशब्दो विडम्बाय'—इति आयसिप्तशत्याम् (२७१) । ६१५

शुष्ठी स्त्री. [ शुष्ठी+वा डीष् ] शुष्कार्द्रकं; महौषधं; विश्वं; नागरं; विश्वभेषजं; शुष्ठीः; विश्वा; महौषधी; इन्द्रभेषजं; भेषजं; विश्वौषधं; कटुग्रन्थिः; कटुभद्रं; कटुर्णं; सौपर्णं; शृङ्गवेरं; कफारिः; चान्द्रकं; शोषणं; नागराह्वं; 'सौठ' इति भाषा । 'शुष्ठी रक्ष्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः । स्निग्धोष्णा मधुरा पाके कफघातविघ्नवन्तुत् । वृष्या स्वर्या च निःश्वासशूलकासहृदामयान् । हन्ति श्लीपद शोयाशं-आनाहोदरमास्तान् । आग्नेयगुणभूयिष्ठा तोयांशं परिशोषयेत् । संगृह्णन्ति मलं तत्तु ग्राहि शुष्ठाद्यादयो यथा । विघ्नभेदिनी या तु सा कथं ग्राहिणी भवेत् । शक्तिविघ्नभेदे स्याद्यतो न मलपातने'—इति भावप्रकाशः । 'शुष्ठी तु कफघातघ्नी सस्नेहा लघुदीपनी । विपाके मधुरा वृष्या हृद्योष्णा कटुरोचनी'—इति राजवल्लभः । ६१५

शुष्ठाघम् क्ली.—शुष्ठी । ६१५

शुष्ठा स्त्री. [ शुन् गतौ+अमन्ताड्ड+टाप् ] सुरा; शीघ्रः; मद्यपानगृहम्; अम्बुहस्तिनी; वेश्या । (८०६) हस्तिहस्तः; कुञ्जरकरः; 'सूड' इति भाषा । नलिनी;

कुट्टनी; कुट्टिनी । ३२९

शुद्धान्तः पुं. [ शुद्धः अन्तो यस्य । शुद्धा रक्षकाः अन्ते यस्य इति वा ] राजयोषित्; 'शुद्धान्तसंभोगनितास्तुष्टे, न नैषधे कार्यमिदं निगद्यम् । अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुषारा'—इति नैषधे (३।९३) । अन्तःपुरम् (४८०); 'विधिप्रयुक्तसत्कारैः स्वयं मार्गस्य दर्शकः । स तैराक्रमयामासं शुद्धान्तं शुद्धकर्म्मणि'—इति कुमारे (६।५२) । अशौचान्तः । ३१३  
शुनकः पुं. [ शुनति इतस्ततो गच्छतीति । शुन् गतौ+ 'ववुन् शिल्पिसंज्ञयोर्पूर्वस्यापि' इति ववुन् ] कुक्कुरः; कुकुरः; 'भिक्षभाण्डं च खट्वां च कुक्कुटं शुनकं तथा । अप्रशस्तानि सर्वाणि यश्च वृक्षो गृहेषुः'—इति महाभारते (१३।१२७।१६) । ऋषिविशेषः; 'असितो देवलः सत्यः सर्पमाली महाशिराः । अर्कावसुः सुमित्रश्च मैत्रेयः शुनको बलिः'—इति महाभारते (२।४।१०) । २८१  
शुनकी स्त्री. [ शुनक+डीष् ] सरमा; शुनी; कुक्कुरी । २८२

शुभम् क्ली. [ शोभते इति, शुभ दीप्तौ+क ] मङ्गलम्; 'अहो मूर्खोऽयमशुभं शुभमित्यभिनन्दति'—इति कथासरित्सागरे (१२४।११२) । पद्मकाष्ठम्; उदकम् । पुं. विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतत्रयोविंशत्योगः; 'शुभप्रसूतः शुभकृत्तराणां शुभोदयेष्टो विदुषां समाजे । करोति नित्यं शुभकर्म धीमान् शोभाधिकः शोभनवेशधारी'—इति कोष्ठीप्रदीपे । १२२

शुभः त्रि. [ शुभमस्यास्तीति । अशं आद्यच् ] क्षेमशाली; श्वश्रेयसं; कल्याणं; श्वोवसीयं; शिवं; भद्रं; भविकं; भावुकं; श्रेयं; भव्यं; मङ्गलं; (६८९) मनोहरं; सुन्दरं; खसञ्चारिपुरम् । १२२

शुभंयुः त्रि. [ शुभमस्यास्तीति । शुभम्+अहंशुभमोयुस् इति युस् ] शुभसंयुतः; मङ्गलान्वितः; मङ्गलयुक्तः; शुभान्वितः; 'अधिकं शुशुभे शुभंयुना द्वितयेन द्वयमेव सङ्गतम्'—इति रघौ (८।६) । ३७८

शुभ्रः त्रि. [ शुभ्र+रक् ] शुक्लगुणयुतः; गौरः; श्वेतः; सितः; वलक्षः; धवलः; अर्जुनः; 'पपी वशिष्ठेन कृताभ्यनुजः शुभ्रं यशो मूर्तिमिवात्तिवृष्णः'—इति रघौ (२।६९) । उदीप्तः; पुं. शुक्लवर्णः; चन्दनं; क्ली. अन्नकं; गुडलक्षणं; रौप्यं; कासीसम् । ७३२

शुल्कम् पुं. — क्ली. [ शुल्क + घञ् ] घट्टादिदेयं; पथिदेयं; करः; 'योऽरक्षन् बलिमादत्ते करं शुल्कं च पार्थिवः । प्रतिभागं च दण्डं च स सद्यो नरकं व्रजेत्'—इति मनुः ( ८।३०७ ) । स्त्रीघनं; वरादर्थग्रहणम्; 'न कन्यायाः पिता विद्वान् गृह्णीयात् शुल्कमण्वपि । गृह्णन् शुल्कं हि लोभेन स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी'—इति मनुः ( ३।५१ ) । पणः; 'इत्युक्तो धनुरायम्य शुल्कावासं महाबलः । भ्राता भीमेन सहितस्तस्थौ गिरिरिवाचलः'—इति महाभारते ( १।१९१।४ ) । ८२८

शुल्लम्, शुल्ला क्ली.—स्त्री.—रज्जुः; 'रज्जुः शुल्ला वराटो ना' इति रत्नकोशः । ताम्रम् । ५९७

शुल्चम् क्ली. [ शुल्चयत्यनेनेति । शुल्च् माने + घञ् । यद्वा शुच् शोके + 'उल्वादयश्च' इति बन् प्रत्ययेन निपातनात् साधु ] ताम्रं; यज्ञकर्म; आचारः; जलसन्निधिः; रज्जुः; 'गृह्णीत यद्यदुपवन्धममुष्य माता शुल्चं सुतस्य न तु तत्तदमुष्य माति'—इति भागवते ( २।७।३० ) । १७०

शुल्वा स्त्री.—शुल्वी; वराटः; रज्जुः; वटः; तन्त्री-गणः । ५९७

शुश्रूषा स्त्री. [ श्रु + सन् 'अ प्रत्ययात्' इति अ ] उपासनं; वरिवस्या; परिचर्या; उपासना; परीष्टिः; सेवा; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः; शुश्रूषणम्; 'धर्मार्थो यत्र न स्यातां शुश्रूषा वापि तद्विधा । तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे'—इति मनुः ( २।११२ ) । कथनं; श्रोतुमिच्छा; 'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा । ऊहोऽपोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः'—इति कामन्दकीये ( ४।२२ ) । १२९

शुषिरम् क्ली. [ शुष् शोषणे, 'इपिमदिमुदि'—इति किरच् । यद्वा शुषिश्छिद्रमस्यास्तीति । शुषि + ऊपशुषि-मुष्कमघोरः' इति र ] विवरं; रन्ध्रं; गर्तं; विलं; बंध्या दिवाद्यं; संरन्ध्रे त्रि. । आकाशः; पुं. भूषिकः; अग्निः; स्त्री. [ शुषिर + टाप् ] नदी; नलीनाम-गन्धद्रव्यम् । ६२४

शुष्कपत्रम् क्ली. [ शुष्क पत्रम् ] स्नेहरहितदलं; शुष्क-पर्णः; आतपादिशोषितपटशाकम्; 'शुष्कपत्रं पयोमिश्रं पित्तश्लेष्मज्वरापहम् । 'तत् शुष्कपत्रं जलदोषनाशनं विशेषतः पित्तकफज्वरापहम् । जलं च तस्यापि च

पित्तहारकं सुरोचनं व्यञ्जनयोगकारकम्'—इति राज-वल्लभः । १५१

शुष्कपर्णम् क्ली.—शुष्कपत्रम् । १५१

शुष्कफलम् क्ली.—निसनेहफलं, स्नेहरहितफलम् । १८९

शुष्मम् क्ली. [ शुष्यत्यनेनेति । शुष् शोषणे + 'अविसि-विसिशुषिम्यः कित्' इति मन्, स च कित् ] तेजः; पराक्रमः; पुं. सूर्यः; अग्निः; वायुः; पक्षी; अचिः; 'शुष्मोर्जचि-हुताशने'—इति शुभाङ्कः । ७२३

शुष्म [ न् ] क्ली. [ शुष् + मनिन् । संज्ञापूर्वकत्वात् न गुणः ] तेजः; शौर्यम् । ७२३

शूकः पुं. — क्ली. [ शो तनूकरणे + 'उलूकादयश्च' इति ऊक प्रत्ययेन साधुः ] अनुक्रोशः; कृपा; दया; कृपा; घृणा; श्लक्ष्णतीक्ष्णाग्रं; किशारुः; शुङ्गा; कोशी; सविपाल्पडण्डुभाविजलमलोद्भवजन्तुः; शूकप्रप्रार्नलिङ्ग-वृद्धिकरयोगः; 'अक्रमान्छेफसो वृद्धि योऽभिवाञ्छति मूढधीः । व्याघयस्तस्य जायन्ते दश चाष्टौ च शूकजाः' । ७२४

शूकरः पुं. [ शूकं तद्वल्लोमं रातीति । शूक + रा + क ] पशुविशेषः; वराहः; स्तब्धरोमा; रोमशः; किरिः; चक्रदंष्ट्रः; किटिः; दंष्ट्री; क्रोडः; दन्तायुधः; बली; पृथुस्कन्धः; पोत्री; घोणी; भेदनः; कोलः; पोत्रायुधः; शूरः; बह्वपत्यः; रदायुधः; 'गच्छ शूकर भद्रं ते वद सिंहो मया हतः । पण्डिता एव जानन्ति सिंहशूकरयो-र्वलम् ।' २२६

शूकलः पुं. [ शूकवत् क्लेशं लाति ददातीति । शूक + ला + क ] दुविनीताश्वः; दुर्वृत्तघोटकः; शूकलः । ४४०

शूद्रः पुं. [ शोचतीति, शुच् शोके + 'शुचेर्दश्च' इति रक् दश्चान्तादेशो घातोर्दीर्घश्च ] चतुर्वर्णान्तर्गतचतुर्वर्णः; अवरवर्णः; वृषलः; जघन्यजः; दासः; पादजः; अन्त्यजन्मा; जघन्यः; द्विजसेवकः; पद्यः; अन्त्यवर्णः; पज्जः; चतुर्थः; द्विजदासः; उपासकः; 'विप्राणामर्चनं नित्यं शूद्रधर्मो विधीयते । तद्द्वेषी तद्धनप्राही शूद्रश्चा-ण्डलतां व्रजेत् ।' ३९२, ५८६

शून्यम् त्रि. [ शून + यत् । यद्वा शुने हितम् । ध्वन् + 'शूनः सम्प्रसारणं वा च दीर्घत्वम्' इत्युक्त्वा यत् सम्प्रसारणं दीर्घत्वं च ] निर्जनं; वितानम्; 'केन संविद्व्रते नान्यस्त्वत्तो बान्धववत्सलः । विरोधि शून्यं

प्रोर्णोमि कथं मन्युसमुद्भवम्—इति भट्टिः (१८१२९) । अतिशयेन ऊनः; अभावविशिष्टः; असम्पूर्णः; वशिकः; तुच्छः; अङ्गेषु विन्दुः; रिक्तकः; शून्यम्; 'अविद्या-जीवनं शून्यं दिक् शून्या चेदबान्धवा । पुत्रहीनं गृहं शून्यं सर्वशून्या दरिद्रता—इति चाणक्यः । ८४८

शूरः पुं. [ शूरयति विक्रामतीति । शूर+अच् । यदा शवति वीर्यं प्राप्नोतीति । शु+ 'शुसिचिमिनां दीर्घश्च'—इति क्त्वा दीर्घश्च ] वीरः; विक्रान्तः; भटः; चारभटः; 'शूराश्च कृतविद्याश्च सन्तश्च सुखिनोऽभवन्—इति महाभारते (१।१०९।४) । पादवः; श्रीकृष्णस्य पिता-महः; 'शूरो विद्वरथादासीत् भजमानस्तु तत्सुतः—इति भागवते (९।२४।२६) । सूर्यः; सिंहः; शूकरः; चित्रकः; सालः; लकुचः; मसूरः । ३५४

शूर्पकारातिः पुं. [ शूर्पकस्तजामासुरः अरातिर्यस्य ] कामदेवः । ३३

शूलः पुं.—कली. [ शूलति लोकानिति । शूलं रोगे+अच् ] भाजनविशेषः; रोगविशेषः; अस्त्रविशेषः; मृत्युः; केतनः; विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतनवमयोगः । 'भीतो दरिद्रो दयिताप्रियश्च शूलोद्भवः शूल इव स्वबन्धोः । विद्यामगम्यां रहितोऽप्य शूली करोति लोके न हितं कदाचित्—इति कोष्ठीप्रदीपः । सुतीक्ष्णः; अय.क्रीलः; 'ततस्ते शूल आरोप्य तं मुनिं रक्षिणस्तदा । प्रतिजग्मुर्महीपालं धनान्यादाय तान्यथ—इति महा-भारते (१।१०७।१२) । व्यथा; विक्रेतव्यम्; 'अट्टशूला जनपदाः शिवशूलश्चतुष्पथाः । प्रमदाः केशशूलिन्यो भविष्यन्ति कलौ युगे—इति महाभारते । ३२३

शूलकः पुं. [ शूल इव, दुर्विनीतत्वात्, कन् ] दुर्वृत्तघोटकः; दुर्विनीताश्वः; 'विनीतस्तु साधुवाहो दुर्विनीतस्तु शूलकः—इति हेमचन्द्रः । ४४०

शूली [ न् ] पुं. [ शूलमस्यास्तीति । शूल+इनि ] शिवः; शङ्करः; महादेवः; 'ततो गृध्रवटं गच्छेत् स्थानं देवस्य शूलिनः—इति महाभारते (३।८४।८४) । शशाः, त्रि. शूलास्त्रधारकः; शूलरोगयुक्तः; 'वर्जयेद्द्विदलं शूली कुण्डी मांसं क्षयी स्त्रियम्—इति वैद्यके । ११

शूल्यम् त्रि. [ शूलेन संस्कृतम् । शूल+ 'शूलोखाद् यत्' इति यत् ] शूलाकृतं; भट्टिः; 'कवाब' इति भाषा । वासितारः; शूलिकम्; 'कालखण्डादिमांसानि प्रथितानि

शालाकया । घृतं सलवणं दत्त्वा निर्धूमे दहने पचेत् । तत्तु शूल्यमिति प्रोक्तं पाककर्मविचक्षणैः । 'शूल्यं बल्यं सुधातुल्यं रुच्यं वह्निकरं लघु । कफवातहरं वृष्यं किञ्चित् पित्तहरं हि तत्—इति भावप्रकाशः । ३२३

शृङ्गालः पुं.—शृङ्गालः । २२९

शृङ्गालः पुं. [ सृजति मायामिति । सृज्+कालन्, षोडशो-दित्वात् साधुः ] पशुविशेषः; शिवा; भूरिमायः; गोमायुः; मृगधूर्तकः; वञ्चकः; कोष्टुः; फेरुः; फेरवः; जम्बुकः; सृङ्गालः; जम्बुकः; मूत्रमत्तः; कुरवः; घोरदासनः; वनश्वः; फेरः; श्वधूर्तः; शालावृकः; गोमी; कटस्वादकः; शिवालुः; फेरण्डः; व्याघ्रनायकः; दैत्यभेदः; वासुदेवः; निष्ठुरः; खलः; भीरुः । २२९

शृङ्गलः त्रि. [ शृङ्गात् प्राधान्यात् खल्यते अनेन । षोडशो-दरादित्वात् साधुः ] हस्त्यादीनां लौहमयपादबन्धोप-करणम्; उन्दुकः; निगडः; शृङ्गला; हिञ्जरिः; 'शय्यां जहत्युभयपक्षयिनीतनिद्राः, स्तम्बेरमा मुखर-शृङ्गलकपिणास्ते—इति रघो (५।७२) । लौहरज्जुः; बन्धनं; पुंस्कटधारणम् । २२३

शृङ्गलकः पुं. [ शृङ्गलं बन्धनमस्य । 'शृङ्गलमस्य बन्धनं करभे' इति कन् ] दासरेकः; क्रमेलकः; उष्ट्रः; मयः; रवणः; क्रूरभः; 'तीव्रोदित्यतास्तावदसह्यरंहसो विशृङ्गलं शृङ्गलकाः प्रतस्थिरे—इति माघे (१।२।७) । पला-यननिषेधाय पादेषु दारुमयपाशालक्षितकरभः; शृङ्गलः [ शृङ्गल+स्वार्थे कन् ] । २८०

शृङ्गला स्त्री. — निगडः; पुंस्कटीवस्त्रबन्धः । २२३

शृङ्गम् क्ली. [ शृं हिंसायाम्+ 'शृणाते ह्रस्वश्च' इति गन् धातोर्ह्रस्वत्वं कित्त्वं नुट् च प्रत्ययस्य ] पर्वतोपरिभागः; कूटं; कूटः; शिखरं; दन्तः; प्राग्भारः; शैलाग्रम्; 'एतद् गिरेर्माल्यवतः पुरस्तादाविर्भवत्यम्बरलेखि शृङ्गम्—इति रघो (१३।२६) । सानुः; प्रभुत्वं; चिह्नं; क्रोडाजलयन्त्रम्; 'वर्णोदकैः काञ्चनशृङ्गमुक्तैस्तमाय-ताक्ष्यः प्रणयादसिञ्चन्—इति रघो (१६।७०) । विषाणम् (२६७); 'वन्यैरिदानीं महिषैस्तदम्भः शृङ्गा-हृतं क्रोशति दीघिकाणाम्—इति रघो (१६।१२) । उत्कर्षः; 'शृङ्गं स दृप्तकिनयाधिकृतः परेषामत्युच्छ्रितं न ममूषे न तु दीर्घमायुः—इति रघो (९।६२) । ऊर्ध्वम्; 'विमानशृङ्गाण्यवगाहमानः शशांस सेवासरं



शृङ्गवेरम्:—इति कुमारे (७।४०) । तीक्ष्णं; पङ्कजं; कोटिः; 'अयं सललितयोषिद् भ्रूलनाचारशृङ्गं, रति वलयपदाङ्के चापमासज्य कण्ठे'—इति कुमारे (२।६४) । स्तनम्; 'किं सम्भृतं रुचिरयोर्द्विज शृङ्गयोस्ते । मध्ये कृशो बहसि तत्र दृशिः श्रिता मे'—इति भागवते (५।२।११) । 'शृङ्गयोः स्तनयोः किं सम्भृतं किं पूर्ण-यस्ति मनोहरं किञ्चिदस्ति इत्येतावत् जानामि'—इति तट्टीकायां स्वामी । महिषादिशृङ्गनिमित्तवाद्य-विशेषः; 'क्वचिद्वनाशाय मनो दधद्रजात्, प्रातः समुत्थाय वयस्यवत्सपान् । प्रबोधयन् शृङ्गारवेण चारुणा, विनिर्गतो वत्सपुरःसरो हरिः'—इति भागवते । कामो-द्रेकः; 'शृङ्गं हि मन्मयोद्भेदस्तदागमनहेतुकः । उत्तम-प्रकृतिप्रायो रसः शृङ्गार उच्यते'—इति साहित्यदर्पणे (३।२।१०) । १६६

शृङ्गवेरम् क्ली. [ शृङ्गस्येव वेरं शरीरं, यस्य ] आर्द्रकं; शृङ्गवेरकं; शण्ठी; 'पिप्पलीमरीचशृङ्गवेराणि त्रिकटु-कम्'—इति सुश्रुते ( १।३८ ) । गुहनिपादपुरम्; 'मास्ते ! गच्छ शीघ्रं त्वमयोध्यां भरतं प्रति । जानीहि कुशलः कश्चिज् जनो नृपतिमन्दिरे । शृङ्गवेरपुरं गत्वा ब्रूहि मित्रं गुहं मम । जानकीलक्ष्मणोपेतमागतं मां निवेदय'—इत्यध्यात्मरामायणे । पुं. कूर्चशीर्षक-वृक्षः; मुनिभेदः । ६१६

शृङ्गाटकम् क्ली. [ शृङ्गाटमेव, स्वार्थे कन् ] शृङ्गाटं; चतु-ष्पयं; संस्थानम्; 'तां शून्यशृङ्गाटकदेवमरथ्यां रजो ऽरुणद्वारकपाटयन्त्राम्'—इति रामायणे ( २।७।१।४५ ) । जलजलताफलविशेषः; जलसूचिः; संघाटिका; वारि-कंटकः; शृङ्गाटः; वारिकुञ्जकः; क्षीरशुक्लः; जलण्टकः; शृङ्गाटकः; शृङ्गरुहः; जलवल्लो; जलाशयः; शृङ्गकन्दः; शृङ्गमूलः; विषाणी; खाद्यविशेषः; 'समोसा' इति भाषा । 'शुद्धमांसं तनूकृत्य कतिं तं स्वेदितं जले । लवङ्गं हिङ्गुसहितं लवणार्द्रकसंयुतम् । एलाजीरकधन्याक-निम्बूरससमन्वितम् । घृते सगन्धे तद्गुणं पूरणं प्रोच्यते बुधैः । शृङ्गाटकं समितया कृतं पूरणपूरितम् । पुनः सर्पिपि संभृष्टं मांसं शृङ्गाटकं वदेत् । मांसं शृङ्गाटकं रुच्यं वृंहणं बलकृद्गुरु । वातपित्तहरं वृष्यं कफघ्नं षीर्यवद्वनम्'—इति भावप्रकाशः । पुं. [ शृङ्गाट एव, स्वार्थे कन् ] जलकण्टकः । २८९

शृङ्गारः पुं. [ शृङ्गं कामोद्रेकमुच्छतीति । शृङ्ग+ ऋ गतौ+कर्मण्यण् इत्यण् । यद्वा शृ हिंसायाम्+ 'भृङ्गारशृङ्गारी' । इति आरन् प्रत्ययेन साधुः ] नाट्य-रसः; 'पुंसः स्त्रियां स्त्रियाःपुंसि संयोगं प्रति या स्पृहा । स शृङ्गार इति ख्यातो रतिक्रीडादिकारणम्'—इति भरतः । 'शृङ्गं हि मन्मयोद्भेदस्तदागमनहेतुकः । उत्तम-प्रकृतिप्रायो रसः शृङ्गार इत्येतं'—इति साहित्यदर्पणम् । सुरतं; मैथुनं; गजभूषणम् । ९२

शृङ्गारचेष्टा स्त्री. — हावभावभेदः । ८९

शृङ्गारयोनिः पुं. [ शृङ्गारे योनिरुत्पत्तिर्यस्य ] मदनः; मन्मथः; कामदेवः । ३१

शृङ्गीः स्त्री. — मत्स्यविशेषः; शृङ्गी; 'मद्गुरस्य प्रिया शृङ्गी शृङ्गिरित्यपि कुत्रचित् । स्यादप्रिया मद्गुरसीति च नामद्वयं क्वचित्'—इति शब्दरत्नावली । ६५९

शृङ्गीकम् क्ली. — विषभेदः । ६४७

शृङ्गी स्त्री. [ शृङ्गी+वा डीप् ] महामत्स्यविशेषः; मद्गुरी; मद्गुरसी; शृङ्गीः; अतिविषा; ऋषभौषधं; कर्कटशृङ्गी; प्लवः; वटः; विषम्; अलङ्कारसुवर्णं; 'स्त्री शृङ्गी मण्डनस्वर्णं'—इति रत्नकोषः । पुं. शृङ्ग+इनि ] हस्ती; वृक्षः; पर्वतः; 'रुरोव रामं शृङ्गीव टङ्गच्छिन्नमनःशिलः'—इति रघौ ( १२।८० ) । ऋषिविशेषः; स तु शर्माकपुत्रः । अभिमन्युजः परीक्षिद् अननामिशप्तः । शृङ्गयुक्ते त्रि. । 'महिषाः शृङ्गीणी-रोद्रा न ते द्रुह्यन्तु पुत्रक'—इति रामायणे ( २।२।५। २० ) । ६५९

शृतम् त्रि. [ श्रा पाके+वत्, 'शृतं पाके' इति शृभावः ] [ पक्वं; श्राणं; पक्वक्षीराज्यपयांसि; 'शृतमन्नं विवर्ज-येत्'—इति भरतः । क्वयितम् । २७६

शेखरः पुं. [ शिखि गतौ+बाहुलकाद् अरप्रत्ययेन साधुः ] शिखावस्थितमाल्यम्; , आपीडः; उत्तंसः; अवतसः; 'शिखाविन्यस्तमालायामापीडः शेखरोऽपि च'—इति शब्दरत्नावली । 'नवकरनिकरेण स्पष्टबन्धूकसुनस्तव-करचितमेते शेखरं विभ्रतीव'—इति माधे ( १६।४६ ) । शिरोभूषणमात्रम्; 'बभूव भस्मैव सिताङ्गरागः कपाल-मेवामलशेखरश्रीः'—इति कुमारे ( ७।३२ ) । गीतस्य ध्रुवविशेषः; 'द्वादशाक्षरपादः स्यात् स चात्यशुभमृत् प्रभोः । हंसके च रवे वीरे गीयते शेखरो ध्रुवः'—

इति सङ्गीतदामोदरः । 'लघुर्गुरुभवेद्यत्र स भवेल्लघु-  
शेखरः'—इति सङ्गीतदामोदरः । शृङ्गम्; 'ततोऽस्त-  
गिरिशेखरं व्रजति वासरेखे शनैः, सखीं पुनरुपागम-  
प्रणयिनीं समापृच्छथ ताम् । क्षणं जनितविस्मया  
गगनमार्गमुत्पत्य सा, जगाम वसतिं निजां प्रसभमेव  
सोमप्रजा'—इति कथासरित्सागरे (२८।१८९) । ५५४  
शेषः पुं. [ शी+बाहुलकात् प ] शेषः; शिशनः; लिङ्गं;  
शेषः; मेढ्रम् । ५१४

शेषः पुं. [ शी+बाहुलकात् फ ] शिशनः; शेषः; शेषः;  
मेढ्रः; लिङ्गम्; 'विकटाः काललम्ब्रीष्ठा बृहच्छेफाण्ड-  
पिण्डकाः'—इति महाभारते (१०।७।३८) । ५१४  
शेषः [ स् ] क्ली. [ शोते रेतःपातानन्तरमिति । शी+वृद्ध-  
शीङ्म्यां स्वरूपाङ्गयोः पुट् च' इति असुन् । अत्र  
केचित् फ चेति पठन्ति, इत्यतः फ ] शिशनः; शेषः;  
शेषप्रशोपसी शेषशोपी शेषश्चेति पञ्च रूपाणि भवन्ति ।  
'ऋजुवृत्तशेषसो लघुशिरालशिशनाश्च घनवन्तः'—इति  
बृहत्संहितायाम् (६८।८) । ५१४

शेषुषी स्त्री. [ शोते इति शोः मोहः, शी+विच्, तं मुष्णा-  
तीति । शो+मुष् स्तेये+मूलविभुजादित्वात् क । गौरा-  
दित्वाद् डीष् ] प्रेक्षा; प्रज्ञा; प्रतिभा; धीः; धिषणा;  
मनीषा; बुद्धिः; मतिः; मेधा; संख्या; संवित्तिः;  
उपलब्धिः; 'स्विन्नस्य हि विपर्येति तत्त्वज्ञस्यापि  
शेषुषी'—इति राजतरङ्गिण्याम् । (३।२०६) । ३३४

शेषुः पुं. [ शोल्तीति, शेषु गतो+उ ] बहुवारकवृक्षः;  
श्लेष्मातकः; श्लेष्मातः; श्लेष्मान्तकः; बहुवारः;  
पिच्छिलः; द्विजकुत्सितः; शीतफलः; शीतः; शाकटः;  
कर्तुर्दारकः; भूतद्रुमः; गन्वपुष्पः; 'लसोडा' इति  
भाषा । शेषुफलानि; 'शेषुं गव्यं च पेयूषं प्रयत्नेन  
विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।६) । १९७

शेषः पुं. [ शोते रेतःपातानन्तरमिति । शी+'इण्शीङ्-  
भ्यां वन्' इति वन् ] मेढ्रः; शेषः; लिङ्गं; शिशनः;  
अहिः; उन्नते त्रि. । क्ली. सुखं; त्रि. सुखकरम्; 'मित्रं  
न शेषं दिव्याय जन्मने'—इति ऋग्वेदे (१।५८।६) ।  
'मित्रं न शेषं यथा सखा सुखकरो भवति तद्वत् सुखकर-  
मित्यर्थः'—इति तद्भाष्ये सायणः । ५१४

शेषधिः पुं. [ शेषं सुखं धीयतेऽस्मिन्निति । शेष+धा+कि ]  
निधिः; 'विद्या ब्राह्मणभेदथाह शेषधिस्तेऽस्मि रक्ष माम् ।

असूयकाय मां मादास्तथा स्यां वीर्यवत्तमा'—इति मनुः  
(२।११।४) । 'विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपायस्व मां  
शेषधिष्टेऽहमस्मि । असूयकायानृजवेऽनृताय मा मां पूर्य  
वीर्यवती यथा स्याम्'—इति श्रुतिः । ८२

शैवलम् क्ली.— शैवालम् । ६८३

शैवालम् क्ली. [ शोते जले इति । शी+'शीङो घुगल्गल्-  
वालनः' इति वालन् ] शैवालं; शैवलम्; 'शङ्के पशु-  
पतति यतते बालशैवालमूले, कूले लोलः किमपि कुष्ठे  
कर्म वैकुण्ठकर्मः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (२५) । ६८३  
शैक्षः पुं. [ शिक्षामधीते इति । शिक्षा+अण् ] प्रायग-  
कल्पिकः; प्रथमारव्ववेदाध्ययनः; [ शिक्षणं शिक्षा,  
प्रथमोपदेशः । तत्साहचर्याद् ग्रन्थोऽपि शिक्षा, ताद-  
धीयते शैक्षाः । शिक्षा शीलमस्येति, 'छन्नादिभ्यो षः'  
इति ण ] शिक्षाशीले त्रि. । ४००

शैलः पुं. [ शिलाः सन्त्यत्रेति । शिला+ज्योत्स्नादित्वा-  
दण् ] पर्वतः; 'ततो गीरीगुहं शैलमारुरोहाश्वसाधनः ।  
वर्द्धयन्निव तत्कूटानुद्धूतेर्चातुरेणुभिः'—इति रघो (४।  
७१) । शिलासम्बन्धिनि त्रि. । 'शैली दारुमयी लोही  
लेप्या लेख्या च सैकती । मनोमयी दारुमयी प्रतिमाष्ट-  
विवा स्मृता'—इति भागवते (१।१२।७।१२) । क्ली.  
[ शिलायां भवम्, शिला+अण् ] शैलेयं; ताक्ष्यशैलं;  
शिलाजंतु । १६५

शैलाली [ न् ] पुं. [ शिलालिना प्रोक्तं नटसूय-  
मधीते इति । शिलालि+पाराशर्यशिलालिम्यां मिधु-  
नटसूययोः' इति णिनि ] शैलूयः; कुशीलकः; चारणः;  
कृशादवी; जायाजीवः; भरतः; नटः; 'अयोपपाति  
छलनापरोऽपरामवाप्य शैलूय इवैष भूमिकाम्'—इति  
माघे (१।६९) । बिल्ववृक्षः; धूर्तः; तालघारकः ।

५९२

शैवलः पुं. [ शी+वलन् ] शैवालः; शेषः; शैवलं;  
शैवालम् । ६८३

शैवलिनी स्त्री. [ शैवलमस्या अस्तीति । इनि ] नदी ।  
६६५

शैवालः पुं.— क्ली. [ शी+बाहुलकाद् वालन् ] जलजद्रव्य-  
विशेषः; जलनीली; शैवलः; शोपालं; शैवलं; शीवलं;  
शोपालः; जलनीलिका; जलनीलः; सैवालः; सैवालं;  
शैवालं; वारिचामरं; सैपालं; सलिलकुन्तलं; हट-

पर्णी; अम्बुतालम्; अरकः; जलकेशः; कावारं;  
जलजम् । ६८३

शोकः पुं. [ शुच्+घञ् ] चित्तविकलता; इष्टवियोगानु-  
चिन्तनम्; बन्ध्वादिवियोगजनिता मनःपीडा; मन्युः;  
शुक्; शुचा; निशमः; शोचनं; खेदः । ९१

शोचनम् क्ली. [ शुच्+ल्युट् ] शोकः; खेदः । ८७५

शोचिः [ स् ] क्ली. [ शुच्यत्यनेनेति । शुच् प्रतीभावे,  
'अचिश्चिहुसृपीति' हसि ] प्रभा; किरणः; 'तद्विश्व-  
गुर्वधिकृतं भुवनैकवन्धं दिव्यं विचित्रविबुधाप्रद्यविमान-  
शोचिः'—इति भागवते (३।१५।२६) । ३८

शोणः पुं. [ शोण् वर्णे+अच् ] लोहिताश्वः; रक्ताश्वः;  
(६७४) नदविशेषः; हिरण्यवाहः; हिरण्यवाहः;  
स तु अमरकण्टकदेशाद् निर्गम्य पाटलिपुत्रे गङ्गायां  
मिलितः । (७३३) रक्तोत्पलतुल्यवर्णः; कोकनदच्छविः;  
रक्तोत्पलनिभः; रक्तोत्पलाभः; 'स उच्चकाशे धवलो-  
दरोदरोऽप्युह्रकमस्याधरशोणशोणिमा'—इति भाग-  
वते (१।११।२) । अग्निः; रक्तेक्षुः; श्योनाकः;  
समुद्रविशेषः; रक्तसागर; श्योनाकप्रभेदः; त्रि. कोक-  
नदच्छायः; रक्तवर्णः; 'न्यस्ताक्षरा घातुरसेन यत्र  
भूर्जत्वचः कुञ्जरबिन्दुशोणाः'—इति कुमारे (१।७) ।  
क्ली. [ शोणतीति, शोण् वर्णे+पचाद्यच् ] सिन्दूरः;  
रुधिरम् । ४३७

शोणादमा [ न् ] पुं. [ शोणः रक्तवर्णः अश्मा उपलः ] शोण-  
रत्नं; पद्मरागमणिः; शोणोपलः; माणिक्यम् । १७५

शोणितम् क्ली. [ शोण् वर्णे+क्त । शोण+जातार्थे  
इतच् वा ] क्षतजं; लोहितम्; अस्त्रं; रुधिरम्; असूक्;  
रक्तं; 'शोणितं यावतः पांशून् संगृह्णाति महीतले ।  
तावन्त्यब्दसहस्राणि तत्कर्ता नरके वसेत्'—इति मनुः  
(१।१।२०८) । कुङ्कुमं; त्रि. रक्तवर्णः । ६३२

शोषः पुं. [ शवतीति, शु गती+बाहुलकात् घन्, इत्यु-  
णादिवृत्तौ उज्ज्वलः ] रोगविशेषः; शोफः; श्वययुः;  
शोषकः; 'रक्तपित्तकफान्वायुर्दुष्टो दुष्टान् बहिः शिराः ।  
नीत्वा रुद्धगतिस्तैर्हि कुर्यात् त्वद्धमांससंश्रयम् । उत्तेषं  
संहतं शोथं तमाहुर्निचयादतः'—इति वैद्यके । 'स्नेहोष्म-  
मर्दनाद्यैः प्रशाम्येत स च वातिकः । यश्चाप्यरुण-  
वर्णः स्यात् शोथो नक्तं प्रशाम्यति'—इति चरकः ।

६०२

शोफः पुं. [ शु गती । बाहुलकात् फ ] शोथः; श्वययुः;  
'तद्दुष्टं शोणितमनिह्यमाणः कण्डूशोफरागदाहपाक-  
वेदना जनयेत्'—इति सुश्रुते (१।१४) । ६०२

शोभनः त्रि. [ शोभते इति । शुम्+ल्यु ] विवक्षितः;  
सुन्दरः; वक्तुमिष्टः; पुं. [ शुम्+ल्यु ] ग्रहः; विष्क-  
म्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतपञ्चमयोगः; 'स्याच्छो-  
भनः शोभनयोगजन्मा दक्षो विपक्षप्रतिलव्यवित्तः ।  
सुदन्तुरक्षकारुवपुः सुधीरः संमानयुक्तो मनुजः प्रवीणः'  
—इति कोष्ठीप्रदीपः । क्ली. पद्मं; शुभम्; 'अहो  
वतेषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः'  
—इति भागवते (५।११।२१) । ८०२

शोभा स्त्री. [ शोभन्तेज्या । शुम्+करणे घञ्+टाप् ]  
दीप्तिः; कान्तिः; द्युतिः; छविः; द्युती; छवी; अभि-  
ख्या; शुभा; भाः; श्रीः; भासा; भा; सुयमा; छाया;  
विभा; दृक्प्रिया; भानं; भातिः; कमा; रमा; 'सा  
शोभा रूपभोगाद्यैर्न स्यादङ्गविभूषणम् । शोभैव  
कान्तिराख्याता मन्मयाप्यायनोज्ज्वला'—इत्युज्ज्वल-  
नीलमणिः । गोपीविशेषः; 'दृष्टस्त्वं शोभया गोप्या  
युक्तश्चन्दनकानने । सद्यो मच्छब्दमात्रेण तिरोधानं कृतं  
त्वया । शोभा देहं परित्यज्य जगाम चन्द्रमण्डलम् ।  
ततस्तस्याः शरीरं च स्निग्धं तेजो बभूव ह'—इति  
ब्रह्मवैवर्ते । हरिद्रा; गोरोचना । ५६५

शोषः पुं. [ शुप्+भावे घञ् । शुष्यत्यनेनेति । शुप्+  
करणे घञ् ] राजयक्ष्मा; क्षयः; यक्ष्मरोगः; 'वचा  
त्रिकटुकं चैव करञ्जं देवदारु च । मञ्जिष्ठा त्रिफला  
श्वेता शिरीषो रजनीद्वयम् । प्रियङ्गुनिम्बत्रिकटु गोमूत्रे-  
णावधायितम् । नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्रतनं तथा ।  
अपस्मारविषोन्मादशोपालक्ष्मीज्वरापहम् । भूतेभ्यश्च  
भयं हन्ति राजद्वारे च शासनम्'—इति गारुडे । शोषणं;  
रसाकर्षणं; रसादानं; स्नेहरहितीकरणम् । ६०२

शोक्तिकेयम् क्ली. [ शुक्तिकायां भवामिति । शुक्तिका+  
ठक् ] मुक्ता; मौक्तिकं; शोक्तेयम् । ६६४

शौण्डिकः पुं. [ शुण्डा पण्यमस्य । शुण्डा+तदस्य पण्यम्'  
इति ठक् ] जातिविशेषः; मण्डहारकः; शुण्डारः;  
शौण्डी; शुण्डकः; ध्वजः; पानः; पणः; कल्पपालः;  
कल्पपालः; सुराजीवी; वारिवासः; पानवणिकु;  
ध्वजी; आसुतीवलः; 'ततो गान्धिककन्यायां कैवतदिव

शीण्डिकः । कैवर्तस्य च कन्यायां शोण्डिकादेव शोचिकः'  
—इति पराशरपद्धतिः । 'श्ववतां शीण्डिकानां च चेल-  
निर्णेजकस्य च । रञ्जकस्य नृशंसस्य यस्य चोपपतिर्गृहे'  
—इति मनुः । (४।२।१६) । एषां गृहे नाद्याद् इत्यर्थः ।  
शुण्डिकादागते त्रि. [ 'शुण्डिकादिभ्योऽण्' इत्यण् ] ।

५६३

श्रीशिवः पुं. [ शुद्धोदनस्यापत्यं पुमानिति । शुद्धोदन+  
'अत इञ्' इति इञ् ] शाक्यवंशावतीर्णशुद्धमुनिविशेषः;  
दशवल्; बुद्धः; शाक्यः; तथागतः; सुगतः; मार-  
जित्; अद्वयवादी; समन्तभद्रः; जिनः; सिद्धार्थः । ८५

श्रीनिकः पुं. [ शूना प्राणिवधस्थानं प्रयोजनमस्य । शूना+  
ठक् ] भांसविक्रयकर्ता; वैतंसिकः; कौटिकः; मांसिकः;  
'वैतंसिकः कौटिकश्च मांसिकः श्रीनिकः समाः'—इति  
हेमचन्द्रः । मृगया । ५९५

श्रीरिः पुं. [ शूरस्यापत्यमिति । शूर+इञ् ] विष्णुः;  
अच्युतः; 'तनीयांसं पाशुं तव चरणपङ्केरुहभवं, विरिञ्चिः  
सञ्चिन्वन् विरचयति लोकानविकलम् । वहत्येनं श्रीरिः  
कथमपि सहस्रेण शिरसां, हरः संक्षुभ्येनं भजति भसितो-  
द्भूतनविधिम्'—इति आनन्दलहरीम् । (४८) शनै-  
श्चरग्रहः; असितः; क्रोडः; पङ्गुः; छायातनयः; शूर-  
वंशीयमात्रे; वसुदेवः; 'क्वचित् कुरुणां परमः सुहृन्नो  
भामः स आस्ते सुखमङ्गु श्रीरिः'—इति भागवते (३।  
१।२६) । बलदेवः; 'ततोऽभ्ययाद्भीमवलो रीहिण्यं  
महाबलम् । सर्वं चागमने हेतुं स तस्मै संन्यवेदयत् ।  
प्रत्यवाच ततः श्रीरिघातं राष्ट्रमिदं वचः'—इति  
महाभारते (५।७।२५) । कृष्णः; 'अथ दूरागतान्  
श्रीरिः कौरवान् विरहातुरान् । संनिवर्त्य दृढं स्निग्यान्  
प्रायात् स्वनगरीं प्रियैः'—इति भागवते (१।१०।३३) ।

२१

श्रीर्यम् क्ली. [ शूरस्य भावः कर्म वा । शूर+प्यञ् ]  
आरभटी; गुणभेदः; शक्तिः; 'सत्त्वेन वीर्येण पराक्रमेण  
धीर्येण श्रीर्येण च तेजसा च'—इति रामायणे (६।१५।३) ।

८६५

श्रीलिककेयः पुं. [ शुल्किको देशभेदस्तत्र भवः, ढञ् ]  
विपभेदः । ६४६

श्रीशुकलः त्रि. [ शुष्कलीमत्तीति । शुष्कली+अण् ] आमि-  
पाशी; शाष्कुलः; मांसाशी; शाष्कलूः; मांसादी;

'शुष्कली शुष्कमांसे स्थान्मांसमात्रेऽपि दृश्यते ।'  
श्रीशुकलः; [ शुष्कं मांसं लाति इति शुष्कलः, प्रजादि-  
त्वात् अण् ] । ३५१

श्मशानम् क्ली. [ श्मनां शवानां शानं शयनं यत्र, यद्वा  
शवानां शयनमिति । 'पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्'  
इति शवशब्दस्य श्मादेशः शयनशब्दस्यापि शानशब्द  
आदेशः ] शवदाहस्थानं; पितृवनं; शतानकं; रुद्रा-  
क्रीडः; दाहसरः; अन्तशय्या; पितृकाननम्; 'श्मशब्देन  
शवः प्रोक्तः शानं शयनमुच्यते । निर्वचन्ति श्मशानार्थं  
मुने शब्दार्थकोविदाः । महान्त्यपि च भूतानि प्रलये  
समुपस्थिते । शस्तेऽत्र शवा भूत्वा श्मशानं तु ततो भवेत् ।'  
'उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे शत्रुविग्रहे । राजद्वारे श्मशाने  
च यस्तिष्ठति स बान्धवः'—इति चाणक्यः (१७) ।

६३८

श्मश्रु स्त्री.—क्ली. [ श्म मुखं श्रयति आश्रयतीति । श्म+  
श्रि+ 'श्मनि श्रयतेर्ङुन्' इति ङुन् ] पुंमुखे वर्द्धितलोमः;  
मुखगतवालः; 'नित्तं ववत्रमपुत्राणां कृपणानां च ह्रस्व-  
कम् । सम्पूर्णं भोगिनां कान्तं श्मश्रुस्तिग्धं शुभं मृदु ।  
संहतं चास्फुटिताग्रं रक्तश्मश्रुश्च चौरकः । रक्ताल्प-  
परुषश्मश्रुकर्णाः स्युः पापमृत्यवः' — इति गारुडे  
६६ अध्यायः । ५२४

श्यामः त्रि. [ श्यायते मनो यस्मात् । श्यै+मक् ] कृष्णगुण-  
विशिष्टः; असितः; शितिः; कृष्णः; कालः; नीलः; मेचकः;  
श्यामलः; रामः; 'यत्र श्यामो लोहिताक्षो वण्डश्चरति  
पापहा । प्रजास्तत्र न मुह्यन्ति नैता चेत् साधु पश्यति'  
—इति मनुः (७।२५) । हरिद्गुणविशिष्टः; पुं.  
[ श्यै+मक् ] मेघः; वृद्धदारकः; कोकिलः; कृष्णवर्णः;  
हरिद्वर्णः; धुस्तूरः; पीलुवृक्षः; श्यामाकः; दमनकवृक्षः;  
गन्धतृणं; प्रयागस्य वटः; 'त्वया पुरस्तादुपयाचितो यः  
सोऽयं वटः श्याम इति प्रतीतः । राशिर्मणीनामिव गारु-  
डानां सपत्न्यारागः फलितो विभाति'—इति रघो (१३।

५३) । ७३४

श्यामकः पुं. [ श्यामं वर्णम् अकतीति । झक् गतौ+  
क, शकन्ध्वादित्वात् साधुः ] श्यामाकः; कङ्गुः; तृण-  
धान्यभेदः; श्यामः; त्रिवीजः; अविप्रियः; सुकुमारः;  
राजधान्यं; तृणबीजोत्तमः; शूरस्य पुत्रविशेषः; स  
तु वसुदेवस्य भ्राता; भागवते (१।२।४।२९) । ५८४

**श्यामकण्ठः** पुं. [ श्यामः कण्ठो यस्य ] केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रचलाकी; वहिणः; कलापी; सर्पाशनः; मयूरः; शिखावलः; शिवः; पक्षिविशेषः । २४१

**श्यामलः** पुं. [ श्यामः वर्णः अस्त्यस्येति । श्याम+‘सिष्मा-दिभ्यश्च’ इति लृच् ] कृष्णवर्णः; कृष्णगुणवति त्रि. । ‘जयतु जयतु मेघश्यामलः कोमलाङ्गो जयतु जयतु पृथ्वी भारनाशो मुकुन्दः’—इति मुकुन्दमालायाम् (२) । पुं. पिप्पलः । ७३४

**श्यामा स्त्री.** [ श्यामो वर्णोऽस्त्यस्या इति, अच्+टाप् ] रात्रिः; निशा; (१९३) प्रियङ्गुः; फलिनी; फली; छाताविशेषः; शारिवीषधिः; अम्रसूताङ्गना; बागुजिः; यमुना; नीलिका; कृष्णत्रिवृतिका; गुग्गुलुः; सोमलता; गुन्द्रा; कृष्णा; अम्बिका; गुडूची; कस्तूरी; षटपत्री; वन्दा; पिप्पली; नीलपुनर्नवा; हरिद्रा; नीलदूर्वा; तुलसी; गौः; पद्मनीजं; स्त्री; छाया; कृष्णसारिवा; शिशपा; नारीविशेषः; ‘योषिद्वन्द्वारिका तस्य दयिताहंसनादिनी । दूर्वाकाण्डमिव श्यामा न्यग्रोध-परिमण्डला,’—इति ऋट्टिः (५।१८) । ‘शीते सुखोष्ण-सर्वाङ्गी शीष्मे च सुखशीतला । तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते ।’ पक्षिविशेषः; वाराही; घाकुनी; कुमारी; दुर्गा; देवी, चटका; कृष्णा; पोतकी; पाण्डविका; वामा; कालिका; शितिसिन्ध्विनी ।

१०८

**श्यामाकः** पुं. [ श्यामं श्यामवर्णंमकतीति । श्याम+अक् गती+अण् ] तृणधान्यभेदः; श्यामकः; श्यामः; त्रिवीजः; अविप्रियः; सुकुमारः; राजधान्यं; तृणवीजोत्तमः; ‘श्यामाकः शोषणो रूक्षो वातलः कफपित्तकृत्’—इति भावप्रकाशः । ५८४

**श्यालः** पुं. [ श्यायते नमार्यं प्राप्यतेऽसी इति । श्यै+बाहुल-कात् कालन् ] परनीभ्राता; वाक्कीरः; श्यालिकः; श्वशुर्ध्वः; आत्मवीरः; श्यालकः; ‘साला’ इति भाषा । ‘आचार्यपत्नीपुत्रीपाष्यायमातुलश्वशुरश्वशुर्ध्वसहाय्यायि-शिष्येभ्येकरात्रेणेति’—इति शुद्धितत्त्वम् । भगिनीपतिः; ‘भग्नी पुत्रो भगिनेयो भ्रातृपुत्रश्च भ्रातृजः । श्यालस्तु भगिनीकान्तो भगिनीपतिरेवच ।’ ८४०

**श्यावः** पुं. [ श्यै+बाहुलकाद् व ] कपिशः; कृष्णपीतमिश्र-वर्णः; सपुंस्ते त्रि. । ‘श्यावतनुः स्फूर्ष्टवः स्फुरन्तो वा श्युस्त-

मरामयचौरमयाय’—बृहत्संहितायाम् (४।२९) । ७३५  
**श्येनः** पुं. [ श्यै गतौ+‘श्यास्त्याह्वविभ्य इनच्’ इति इनच् ] पक्षिविशेषः; शशादनः; पत्री; कपोतारिः; पतङ्गीरः; घातिपक्षी; ग्राहकः; मारकः; शशादः; ऋष्यादः; क्रूरः; वेगी; खगान्तकः; करगः; नील-पिच्छः; लम्बकर्णः; रणप्रियः; रणपक्षी; पिच्छवाणः; स्यूनीलः; भयङ्करः; शशाघातकः; प्राजिकः; ‘प्रद-क्षिणीकृत्य नरं व्रजन्तो यात्रासु वामेन गताः प्रवेशे । श्येनाः प्रशस्ताः प्रकृतस्वरास्ते शान्ताः प्रदीप्ता वितत-स्वरास्ते । श्येनो नृणां दक्षिणवामपृष्ठभागेषु भाग्यैः स्थितिमादधाति । तिष्ठन् पुरस्तान्मृतये करोति युद्धे जयं छन्नरथञ्चजस्थः’—इति वसन्तराजशाकुने । पाण्डु-रवर्णः । २५३

**श्येनी स्त्री.** [ श्येन+डीप् ] श्वेतवर्णा; कुमुदपत्राभा; श्येनपत्नी; सा तु कश्यपाद् दक्षकन्यायां ताम्रायां समु-त्पन्ना; ‘ताम्रा च सुषुवे श्येनीप्रमुखाः कन्यका द्विज । यासां प्रसूताः खगमाः श्येनभासशुकादयः’—इति मार्क-ण्डेये (१०४।८) । ७३८

**श्रद्धा स्त्री.** [ श्रद्धानमिति । श्रत्+घा+‘षिद्भिदादिभ्योऽङ् इत्यङ्+टाप् ] स्पृहा; दौहदः; दौहदः; दौहदः; लालसा; ‘चिच्छेद जीविते श्रद्धां धर्मो यशसि चात्मनः’—इति रामायणे (२।३।८२) । (७८०) संप्रत्ययः; प्रत्ययः; आदरः; शुद्धिः; शास्त्रार्थे दृढप्रत्ययः; ‘प्रत्ययो धर्मकार्येषु यथा श्रद्धेत्युदाहृता । नास्ति ह्यश्रद्ध-धानस्य धर्मकृत्ये प्रयोजनम्’—इति स्मृतिः । ‘बभौ च सा तेन सतां मतेन श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना’—इति रघौ (२।१६) । चेतसः प्रसादः । ४९८

**श्रन्धनम्** क्ली. [ श्रन्थ्+भावे ल्युट् ] ग्रन्थनं; गुम्फः; सन्दर्भः; रचना; ‘सन्दर्भो रचना गुम्फः श्रन्थनं ग्रन्थनं समाः’—इति हेमचन्द्रः । ७३०

**श्रमणः** पुं. [ श्राम्यति तपस्यतीति । श्रम्+ल्यु ] यति-विशेषः; स तु बौद्धसंन्यासी; रजोहरणधारी; श्वेत-वासाः; सिताम्बरः; नगनाटः; दिग्वासाः; क्षपणः; क्षपणकः; यतिः; ‘मुक्तिमोक्षोऽपवर्गोऽयं मुमुक्षुः श्रमणो यतिः । वाचंयमो व्रती सावुरनागार ऋषिर्मुनिः । निग्रन्थो भिक्षुरस्य स्युस्तपोयोगशामादयः’—इति हेमचन्द्रः । ‘तापसा मूर्च्छते चापि श्रमणाश्चैव मूर्च्छते’—इति

रामायणे (१।१४।१२) । निन्द्याजीविनि त्रि. । ३४५  
श्रमणा स्त्री. [ श्रमण+स्त्रियां टाप् ] श्रमणी; भिक्षुकी;  
मुण्डा; सुदर्शना; मांसी; मुण्डीरी; श्वरीभेदः । ४८७  
श्रमणी स्त्री. [ श्रमण+ङीष् ] श्रमणा; भिक्षुकी; मुण्डा ।  
४८७

श्रमस्थानम् क्ली. [ श्रमस्य व्यायामस्य स्थानं, श्रमस्य  
शस्त्राम्यासस्य वा ] खलूरिका । ४७०  
श्रवः पुं. [ श्रूयतेऽनेनेति । श्रु+ऋदोरप् इत्यप् ] कर्णः;  
'तुमुलप्रोल्लसच्छब्दपिहितान्यरवश्रवः । चचाल स  
बलाम्भोधिस्तयोगंम्भीरभीषणः'—इति कथासरि-  
त्सागरे (१०३।१५८) । [ श्रु+भावे अप् ] श्रवणम्;  
'सुप्तसर्प इव दण्डघट्टनाद् रोषितोऽस्मि तव विक्रम-  
श्रवात्'—इति रघौ (१।१७१) । [ श्रूयते इति, कर्मणि  
अप् ] शब्दः; 'नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय  
च प्रतिश्रवाय च'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१६।  
३४) । ५१६

श्रवः [ स् ] पुं - क्ली. [ श्रूयतेऽनेनेति । श्रु+  
'सर्वघातुम्यो-  
ऽमुत्' इत्यसुन् ] कर्णः; अन्नम्; 'अधिश्रवांसि घेहि नस्त-  
नूषु'—इति ऋग्वेदे (३।१९।५) । धनं; यशः;  
'श्रवः सुश्रवसः पुण्यं सर्वदेहकयाश्रयम्'—इति भाग-  
वते (४।१७।६) । शब्दः; 'गन्धाकृतिस्पर्शरस-  
श्रवांसि विसर्गंरत्यर्त्यभिजल्पशिल्पाः'—इति भागवते  
(५।११।९) । ५१६

श्रवणः पुं. - क्ली. [ श्रूयतेऽनेनेति । श्रु+करणे ल्युट् ]  
कर्णः; श्रोत्रं; श्रुतिः; श्रवः; 'न स्त्रियां श्रवणः कर्णः'  
—इति हेममाली । श्रुतिः; कर्णोद्विजानं; 'समक्षदर्शनात्  
साक्ष्यं श्रवणाच्चैव सिध्यति'—इति मनुः (९।७४) ।  
नीतिशास्त्रोक्तधीगुणानामन्यतमम्; 'शुंयूषा श्रवणं चैव  
ग्रहणं धारणं तथा । ऊहोऽपोहोऽर्ष्यविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च  
धीगुणाः'—इति कामन्दकीये (४।२२) । श्रवणनक्षत्रम्,  
'अमार्कपाते श्रवणं यदि स्यात्'—इति स्मृतिः ] ५१६

श्रविष्ठा स्त्री. [ श्रवणमिति श्रवः, सोऽस्या अस्तीति,  
मनुप् । अतिशयेन श्रववती, 'अतिशयाने तमविष्ठ-  
नो' इति इष्ठन्, 'विन्मतोलुंगिति' मनुपो लुक् ] घनिष्ठान-  
क्षत्रम्; 'श्रविष्ठायां तथा पृष्ठं शालिभक्तं च दोहदे ।  
पुष्ये मुखं पूजयेत दोहदे घृतपायसम्'—इति वामन-  
पुराणे । श्रवणः; श्रवणा; अधिघन्याद्यन्तर्गतद्वाविशति-

नक्षत्रम् । ५१

श्राणम् त्रि. [ श्रा+क्त ] पक्वं; घृतदुग्धजलभिन्नपक्व-  
द्रव्यम् । २७६

श्राणा स्त्री. [ श्रायते स्मेति, श्रा+क्त +टाप् ] यवागू;  
ऊष्णिका; तरला; विलेपिका । ३२०

श्राद्धदेवः पुं. [ श्राद्धस्य देवः ] श्राद्धदेवता; यमः;  
'श्राद्धदेवेन कथितं विश्वामित्रस्य चेष्टितम्'—इति  
मार्कण्डेये (८।१५६) । मनुभेदः; स तु विवस्वतः  
संज्ञायां पत्न्यां जातः; 'मनुर्वेवस्वतो ज्येष्ठः श्राद्धदेवः  
प्रजापतिः । ततो यमो यमी चैव यमली सम्बभूवतुः'  
—इति मार्कण्डेये (१०६।४) । ७२

श्रान्तः पुं. [ श्रम्+क्त ] शान्तः; निवृत्तेन्द्रियलौत्यः;  
जितेन्द्रियः; श्रमयुक्ते त्रि. । [ श्रम् तपःखेदयोः+  
इत्यस्मात् क्त प्रत्ययेन निष्पन्नः ] 'सखि मत्प्राणनापं  
तु साधयन्ती निरन्तरम् । अतिश्रान्तासि सद्भाषि-  
स्नेहयोरियमीचिती'—इति काव्यचन्द्रिका । ३९९

श्रीः स्त्री. [ हरि श्रयतीति । श्रि+ 'क्विब्चिप्रच्छीति'  
क्विप्, दीर्घश्च ] लक्ष्मीः; कमला; पद्मा; पद्मवासा; हरि-  
प्रिया; क्षीरोदतनया; मा; इन्दिरा; लोकमाता;  
'श्रियं च देवदेवस्य पत्नी नारायणस्य या'—इति  
विष्णुपुराणे (१।८।१३) । शोभा (८।३३);  
'एवमादिभिराकीर्णः श्रियं पुष्यत्रयं गिरिः'—इति  
रामायणे (२।९।४।१०) । लवङ्गं; वेशरचना; सर-  
स्वती; सरलवृक्षः; त्रिवाङ्गः; विद्या; उपकरणं;  
विभूतिः; मतिः; अधिकारः; प्रभा; कीर्तिः; वृद्धिः;  
सिद्धिः; वृत्तार्हन्माता; कमलं; वित्त्ववृक्षः; वृद्धिना-  
मीषधं; सम्पत्तिः; 'न दातुं नोपभोक्तुं वा शक्नोति  
कृपणः श्रियम् ।' देवादिनाम्नः पूर्वं श्रीशब्दप्रयोगः  
कर्तव्यः । यथा—'देवं गृहं गुहस्थानं क्षेत्रं क्षेत्राधि-  
देवताम् । सिद्धं सिद्धाधिकारांश्च श्रीपूर्वं समुदीरयेत्'  
एकाक्षरच्छन्दोविशेषः; पुं. [ श्रि+क्विप् दीर्घश्च ]  
रागविशेषः; षड्रागान्तर्गतपञ्चमरागः । ३१

श्रीकण्ठः पुं. [ श्रीः शोभा कण्ठे यस्य ] शिवः; कुसजा-  
ङ्गलदेशः; स तु हस्तिनापुरस्य उत्तरपश्चिमे वर्तते ।  
पक्षिविशेषः; 'स्त्री संज्ञा भासभयककपिश्रीकर्णच्छि-  
क्कराः । शिखिश्रीकण्ठपिम्पीकरुश्येनाश्च दक्षिणाः'—इति  
बृहत्संहितायाम् (८६।३०) । श्रीकण्ठपदलाञ्छनः; पुं.

[ श्रीकण्ठ इति पदं लाञ्छनं यस्य ] भवभूतिः । स तु मालतीमाघवादिनाटककर्ता । यथा — 'अस्ति खलु तत्र भवान् काश्यपः श्रीकण्ठपदलाञ्छनो भवभूतिर्नाम' — इति उत्तरचरिते प्रस्तावनायाम् । ११

श्रीकण्ठसखः पुं. [ श्रीकण्ठस्य शिवस्य सखा । 'राजाहः-सखिम्यष्ट' ] कुबेरः; ऐलविलः; पौलस्त्यः; वैश्रवणः; किन्नरेश्वरः; धनदः; श्रीदः; यक्षः; मनुष्यधर्मा; घनाध्यक्षः; उत्तराशापतिः; नरवाहनः; गुह्यकः; राजराजः; घनी; पुण्यजनेश्वरः । ७८

श्रीखण्डः पुं.— क्ली. [ श्रियः शोभायाः खण्ड इव यत्र ] चन्दनः मलयजं; रोहणद्रुमः; 'तद्युक्तं विपरीतकारिणि तव श्रीखण्डचर्चाविषम् । शीतांशुस्तपनो हिमं हुतवहः क्रीडामुदो यातनाः'—इति गीतगोविन्दे (१।१०) । ५४४

श्रीदः पुं. [ श्रियं ददातीति । श्री+दा+क ] श्रीकण्ठसखः; कुबेरः; शोभादातरि त्रि. । विष्णुः; सहस्रनामस्तोत्रे । ७८

श्रीघरः पुं. [ धरतीति, वृ+अच्, श्रिया घरः ] विष्णुः; 'मा भैर्मन्दमनो विचिन्त्य बहुधा यामीश्चरं यातनाः, नामी नः प्रभवन्ति पापरिपवः स्वामी ननु श्रीघरः । आलस्यं व्यपनीय भक्तिमुलभं ध्यायस्व नारायणं, लोकस्य व्यसनापनोदनकरो दासस्य किं न क्षमः'—इति मुकुन्दमालायाम् (९) । २३

श्रीनन्दनः पुं. [ श्रियः नन्दनः ] कामदेवः; लक्ष्मीपुत्रः; घनिकः; आनन्दकर्दमादयः । ३२

श्रीपतिः पुं. [ श्रियः पतिः ] विष्णुः; अच्युतः; गोविन्दः; जनादनः; 'सेव्यः श्रीपतिरेव सर्वजगतामेकान्ततः साक्षिणः । प्रह्लादश्च विभीषणश्च करिराट् पाञ्चाल्यहल्या ध्रुवः'—इति मुकुन्दमालायाम् (१६) । पृथिवीनायः । २१

श्रीफलः पुं. [ श्रीयुक्तं फलमस्य ] बिल्ववृक्षः; मालूरः; राजादनी । १९४

श्रीरागः पुं.— पङ् रागाणां मध्ये तृतीयरागः; 'गान्धारी देवगान्धारी मालवश्रीश्च सारदी । रामकीर्षिणि रागिण्यः श्रीरागस्य प्रिया इमाः'—इति सङ्गीतदामोदरः । १०१ अ.

श्रीवत्सः पुं. [ श्रीयुक्तं वत्सं वक्षो यस्य ] विष्णुः; गोविन्दः; श्रीकृष्णः; जनादनः; विष्णुचिह्नविशेषः (२७);

स तु वक्षस्य शुक्लवर्णदक्षिणावर्तलोमावली । 'प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं लक्ष्मीविभ्रमदर्पणम् । कौस्तुभाभ्यमपां सारं विभ्राणं बृहतीरसा'—इति रघौ (१०।१०) । अहंतां ध्वजः; सुरङ्गाभेदः । २४

श्रीवत्साङ्कः पुं. [ श्रीवत्सः अङ्कश्चिह्नं यस्य ] विष्णुः; श्रीवराहः; जनार्दनः; 'लब्धवराः क्षीरोदं गत्वा ते तुष्टुवुः सुराः सेन्द्राः । श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभमणिकिरणोद्भासितोरस्कम्'—इति बृहत्संहितायाम् (४३।३) । २१

श्रीवृक्षः पुं. [ श्रीप्रदः श्रीप्रियो वा वृक्षः । शाकपार्थिवादिवत् समासः ] अश्वत्थवृक्षः; पिप्लवः; बोधिद्रुमः; अश्वस्य हृदावतः (४३८); श्रीवृक्षकः; माघे (५।५६) । बिल्ववृक्षः; 'इपे मास्यसिते पक्षे नवम्यामाङ्गयोगतः । श्रीवृक्षे बोधयामि त्वां यावत् पूजां करोम्यहम्'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । विष्णोर्वृक्षः स्थलस्थशुभावर्तविशेषः; 'वक्षः श्रीवृक्षकान्तं मधुकरनिकरस्यमलं शाङ्गपाणे । संसाराध्वश्रमार्तेरुपवनमिव यत् सेवितं तत्प्रपद्ये'—इति विष्णुपादादिकेशान्तवर्णनस्तोत्रे (२८) । १९६

श्रीवृक्षकौ पुं. [ श्रीवृक्षकः तन्नामकरोमचिह्नं विद्यते अस्य ] हृदावतःशिवः । ४३८

श्रुतिः स्त्री. [ श्रूयतेऽन्येति । श्रु+श्रूयजिस्तुम्यः करणे ] इत्युक्त्या करणे क्तिन् । श्रूयते गुरुपदेशाद् या वा ] वेदः; आम्नायः; स्वाध्यायः; निगमः; छन्दः; आगमः; 'श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः'—इति मनुः (२।१०) । (५।१६) कर्णः; श्रोत्रं; श्रवः; श्रवणम्; 'करो हरेर्मन्दिरमार्जनादिषु श्रुति चकाराच्युतसत्कथोदये'—इति भागवते (१।४।१८) । श्रुतीन्द्रियग्राह्यः शब्दः; घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः । तथा रंसो रसज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतेः—इति भाषापरिच्छेदः । [ श्रु+भावे क्तिन् ] श्रोत्रकर्म; 'यन्नामश्रुतिमात्रेण पुमान् भवति निर्मलः । तस्य तीर्थपदः किं वा दासानाम्ब्रशिष्यते'—इति भागवते (१।१५।१६) । वार्ता; 'व्यावृत्ता यत्परस्वेम्यः श्रुती तस्करता स्थिता'—इति रघौ (१।२७) । श्रवणनक्षत्रं; पङ्जाचारम्भिका; 'रणाङ्गराघट्टनया नभस्वतः पृथक्-विभिन्नश्रुतिमण्डलैः स्वदैः'—इति माघे (१।१०) । ९

श्रेणिः पुं.— स्त्री. [ श्रयति श्रीयते वा । श्रि+वर्हिश्श्रु-

युद्धिवति' नि ] निश्छिद्रपङ्क्तः; पङ्क्तः; श्रेणी; विञ्जोली; वीथी; आलिः; पालिः; आवलिः; वीथिः; वीथिका; राजी; राजिः; रेखा; लेखा; 'न षट्पद-श्रेणिभिरेव पङ्क्तं सशैवलासङ्गमपि प्रकाशते';—इति कुमारः (५१९) । समानशिल्पिसंहतिः; सेकपात्रम् । ७२१

श्रेणी स्त्री. [ श्रेणि+कृदिकारादिति लोष् ] श्रेणिः;

'श्रेणीवन्धाद्वितन्वाद्भिरस्तम्भां तोरणलजम् । सारसैः कलनिर्ह्रादैः कचिदुन्नमिताननी'—इति रघौ (११४१) । ७२१

श्रेयः [ स् ] क्ली. [ इदमनघोरतिशयेन प्रशस्यम् । प्रशस्य+ईयसुन्, 'प्रशस्यस्य श्रः' इति श्र ] शुभं; शिवं; भद्रं; कल्याणं; 'प्रतिबन्नाति हि श्रेयः पूज्यपुजाव्यतिक्रमः'—इति रघौ (११७९) । शाली (३७५); श्रेष्ठः; 'प्रतिग्रहाच्छिलः श्रेयांस्ततोऽप्युच्छः प्रशस्यते'—इति मनुः । (१०११२) । (१२५) धर्मं; पुण्यं; सुकृतं; वृषम् । मुक्तिः; चतुर्वर्ग एव श्रेयः । 'धर्मार्थावुच्यते श्रेयः कामार्थो धर्म एव च । अर्थ एवेह वा श्रेयस्त्रिवर्ग इति तु स्थितिः'—इति मनुः (२।२२४) । १२२

श्रेष्ठः त्रि. [ प्रशस्य+इष्ठन् ] प्रशस्तः; श्रेष्ठः; अनुत्तमः; वरं; वरः; श्रेयान्; पुष्कलः; सत्तमः; अतिशोभनः; मुख्यः; वरेण्यः; प्रमुखः; अग्रः; अग्रहरः; उत्तमः; प्रग्रहः; वनूत्तमः; अग्रियः; प्रवेकः; अग्रधः; अग्रियः; अनवरः; अग्रिमः; प्राग्रः; प्राग्रहरः; प्रवहः; वृद्धः; ज्येष्ठः; क्ली. गोदुग्धं; पुं. कुवेरः; नृपः; द्विजः; विष्णुः; महादेवः; 'विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरो बलो गणः'—इति महाभारते (१३।१७।४०) । ६८९-

श्रेणः पुं. [ श्रेणतीति, श्रेण संवाते+अच् ] पङ्क्तुः; खञ्जः । ६१०

श्रेणिः स्त्री. [ श्रेणं सङ्घाते+इन् । यद्वा श्रु श्रवणे+ 'वहिश्रिश्रुद्विति' नि ] कटिः; 'फुल्लतीरदुमोत्तसाः सङ्गम-श्रेणिमण्डलाः । पुलिनाम्युन्नतोऽस्या हंसहासाश्च निम्नगाः'—इति बृहत्संहितायाम् (५६।७) । पन्थाः । ५१२

श्रोत्रम् क्ली. [ श्रूयतेऽनेनेति । श्रु+ 'हुयामाश्रुभसिम्य-स्त्रन्' इति त्रन् ] कर्णम्; श्रुतिः; श्रवः; श्रवणं; 'इत्यु-द्गताः पीरवधूमुल्लेभ्यः शृण्वन्कथाः श्रोत्रसुखाः कुमारः'—इति रघौ (७।१६) । श्रोत्रियता । ५१६

श्रोत्रियः पुं. [ छन्दोऽधीते इति । छन्दस्+ 'श्रोत्रियश्छन्दो-ऽधीते' इति घन् प्रत्ययेन साधुः ] वेदाध्योत्ब्राह्मणः; छान्दसः; अनुचानः; सर्ववेदः; 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते । विद्याभ्यासी भवेद्विप्रः श्रोत्रिय-स्त्रिभिरेव हि'—इति पाप्मे । 'एकां शाखां सकल्पां वा पङ्क्तिभिरङ्गैरधीत्य च । षट्कर्मनिरतो विप्रः श्रोत्रियो नाम धर्मवित्'—इति दानकमलाकरः । ३९५

श्लक्ष्णम् त्रि. [ शिल्प् आलिङ्गने+ 'श्लेषेरञ्चोपघायाः' इति कस्न्, अकारश्चोपघायाः ] मधुरवाक्; अल्पं (६८८); मनोहरं; श्लक्ष्णकम्; 'अहिंसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम् । वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या भूतिभिच्छता'—इति मनुः (२।१५९) । ३६५

श्लयः त्रि. [ श्लययतीति । श्लय्+अच् ] शिथिलः; प्रश्लयः; 'शिथिलः प्रश्लयः श्लयः'—इति जटाधरः । 'श्लयशिरसिजपातभारादिव नितरां नतिमद्भिरंसभाणैः'—इति माघे (७।६२) । दुर्बलः । ७७७

श्लायी स्त्री. [ श्लाय् कत्यने+अ+टाप् ] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तोत्रम्; ईडा; स्तुतिः; नुतिः; विकत्यनं; स्तवः; वर्णना; 'ज्ञाने मौनं क्षमा शक्ती त्यागो श्लायीवि-पर्ययः । गुणा गुणानुबन्धित्वात् तस्य सप्रसवा इव'—इति रघौ (१।२२) । परिचर्या; अभिलाषः । १४५

श्लीपवम् क्ली. [ श्रीयक्तं वृद्धिमत् पदमत्रेति । पृषोदरा-दित्वात् साधु ] स्फीतपादादिः; पादवल्मीकं; 'लङ्घना-लेपनस्वेदरेचनं रक्तमोक्षणैः । प्रायः श्लेषमहरेदण्यैः श्लीपदं समुपाचरेत् । 'घत्तूरैण्डनिर्गुण्डीवर्षाभूशिशुसर्षपैः । प्रलेपः श्लीपदं हन्ति चिरोत्थमपि दाहणम् ।' ६०४

श्लेषः पुं. [ शिल्प्+घञ् ] संयोगः; सन्धिः; दाहः; आलिङ्गनं; शब्दालङ्कारविशेषः; 'वाच्यभेदेन भिन्ना यद्युगपद्भाषणस्पृशः । श्लेष्यन्ति शब्दाः श्लेषोऽसावक्ष रादिभिरष्टधा ।' २८९

श्लेषमणः त्रि. [ श्लेषमा अस्त्यस्येति । श्लेषमन्+ 'लोमादि-पामादिपिच्छादिभ्यः शनेलच्' इति न ] कफी; श्लेषमलः; श्लेषमयुक्तः । ६०६

श्लेषमलः त्रि. [ श्लेषमास्त्यस्येति । श्लेषमन्+ 'सिष्मादि-भ्यश्च' इति लच् ] श्लेषमयुक्तः; श्लेषमणः; कफी; पुं. [ श्लेषमन्+लच् ] वृक्षविशेषः । ६०६

श्लेष्या [ न् ] पुं. [ शिल्प्+ 'सर्वघातुभ्यो मनिन्' इति



मनिन् ] कफः; श्लेषकः । ६०५

**श्लेषमातकः** पुं. [ श्लेषमात एव+स्वार्थे कन् । श्लेषमाण-  
मततीति, श्लेष्म + अत् + अच् ] बहुवारकवृक्षः ;  
श्लेषमातः; शैलुः; बहुवारः; पिच्छिलः; द्विजकुत्सितः,  
‘धर्जयेन्मघु मांसं च भीमानि कवकानि च । भूस्तृणं  
क्षिप्रुं चैव श्लेषमातकफलानि च ।’ १९७

**श्लेषमान्तकः** पुं. [ श्लेषमणा स्वसेवनजनितकफेन अन्त-  
यति नाशयति । श्लेष्म+अन्त+णिच्+प्बुल ] वृक्ष-  
विशेषः; श्लेषमातकः; बहुवारः; पिच्छिलः; द्विज-  
कुत्सितः; शैलुः; शीतफलः; शीतः; शाकटः; कर्बु-  
दारकः; भूतद्रुमः; गन्वपुष्पः । १९७

**श्लोकः** पुं. [ श्लोक्यते इति । श्लोक् संघाते+घञ् ]  
कीर्तिः; यशः; अभिव्या; समाख्या; ‘पुण्यश्लोको नलो  
राजा ।’ यशः; [ श्रु श्रवणे, ‘इभीकापाशयतिर्मचिभ्यः  
फन्’ इति कन् प्रत्ययो बाहुलकाद्भवति; गुणः, कपिल-  
कादित्वाल्लत्वम् । श्रूयते इति श्लोकः । यद्वा, श्लोक्  
संघाते, ‘पुंसि संज्ञायां घः’, श्लोक्यते पद्यरूपेण संहन्यते  
कविभिः श्लोकः ] श्लोकनामकारणम्—‘मा’ निपाद  
प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः । यत्क्रीञ्चमिथुनादेक-  
मदधीः काममोहितम् । तस्यैत्यं ब्रूवतश्चिन्ता बभूव  
हृषि वीक्षतः । शोकार्तेनास्य शकुनेः किमिदं व्याहृतं  
मया । चिन्तयन् स महाप्राज्ञश्चकार मतिमान् मतिम् ।  
क्षिप्यं चैवात्रवीद्वाक्यमिदं स मुनिपुङ्गवः । पादबन्धोऽ-  
क्षरसमस्तन्त्रीलयसमन्वितः । शोकार्तेस्य प्रवृत्तो मे  
श्लोको भवतु नान्यथा—इति वाल्मीकीयं रामायणे  
बालकाण्डे २ स्वर्गः । १५३

**श्वः श्रेयसम्** क्ली. [ श्वः आगामिदिने श्रेयो यत्र । ‘श्वसो  
वसीयः श्रेयसः’ इति अच् ] कल्याणं; श्वोवसीयसं;  
श्वोवसीयं; शिवं; शुभं; भविकं; भावुकं; श्रेयः;  
भग्यं; भद्रं; मङ्गलम्; ‘श्वः श्रेयसमवाप्तासि भ्रातृभ्यां  
प्रत्यभाणि सा’—इति भट्टिः (४।३८) । युक्ते त्रि. । १२२  
**श्वदंष्ट्रा** स्त्री. [ शुनो दंष्ट्रेव, कण्ठकावृत्तत्वात् ] गोक्षुरः;  
स्पलशृङ्गाटः; त्रिकण्ठकः; श्वदंष्ट्रकः; गोक्षुरकः;  
‘पिप्ल्यादीनां श्वदंष्ट्रावसुकासवः कूर्पाण्डादीनां  
दार्शिकरासवः’—इति सुश्रुते (१।४६) । २०१

**श्वपचः** पुं. [ श्वानं पचतीति । श्वन्+पच्+अच् ]  
चण्डालः; चाण्डालः; अन्त्यावसायी ‘चाण्डालः श्वपचः’

क्षता मृतो वैदेहकस्तथा । मागधायोगवो चैव सप्तैते-  
ऽन्त्यावसायिनः ।’ ५९८

**श्वपाकः** पुं. [ शुनां पाकः कार्यत्वेन यस्य ] चण्डालः;  
श्वपचः; श्वपक्; ‘क्षतुर्जातस्तयोप्रायां श्वपाक इति  
कीर्त्यते’—इति मनुः (१० अध्यायः) । ५९८

**श्वभ्रम्** क्ली. [ श्वभ्रयते यदिति । श्वभ्र गत्याम्+कर्मणि  
घञ् ] छिद्रम्; अगाधं; गर्तं; शुभिरं; वपा; विलं;  
विवरम्; अन्तरः; अवटुः; निव्यथनं; रन्ध्रं; रोकं;  
कुहरम्; ‘पततो यस्य वै गर्ते स्वप्ने द्वारं पिबियते ।  
न चोत्तिष्ठति यः श्वभ्रात् तदन्तं तस्य जीवितम्’—इति  
मार्कण्डेये (४३।२९) । ६२४

**श्वयथुः** पुं. [ शिव गतिवृद्धयोः+‘ट्वितोऽयुच्’ इति अथुच् ]  
शोयः; शोफः; श्वयः; श्वयनम्; ‘श्वयथुश्वसोन्माद-  
ज्वरकासभवा वणिक्पीडा’—इति बृहत्संहितायाम्  
(३२।१०) । ६०२

**श्वयनम्** क्ली.—श्वयः; शोफः; शोयः; श्वयथुः । ६०२  
**श्वशूर्यः** पुं. [ श्वशूरस्यापत्यमिति । श्वशूरं+‘राजश्व-  
शुराद्यत्’ इति यत् ] श्यालः; ‘ददौ वैदेहदेशे च राज्यं  
गोपालकाय सः । सत्कारहेतोर्नृपतिः श्वशूर्यायानुगच्छते’  
—इति कथासरित्सागरे (१९।५७) । देवरः । ८४०

**श्वसनः** पुं. [ श्वसितीति । श्वस्+त्यु ] वायुः; पवनः;  
मस्तु; अनिलः; मास्तु; ‘इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसने-  
शपितामहाग्निऋताः’—इति बृहत्संहितायाम् (३४।२) ।  
मदनवृक्षः; क्ली. [ श्वस्+त्युट् ] श्वसितं; निश्वासः;  
‘श्वसनचलितपल्लवाधरोष्ठे नवनिहितेर्ष्यमिवावधून-  
यन्ती’—इति किराते (१०।३४) । स्पर्शनम्; ‘घ्राणेन  
गन्वं रसनेन वै रसं ह्यं च दृष्ट्या श्वसनं त्वचैव’—इति  
भागवते (२।२।२९) । ७५

**श्व** [ न् ] पुं. [ श्वयति गच्छतीति । शिव गती+‘श्वश्रु-  
क्षन्पूपन्निति’ कश्चिन् प्रत्ययेन साधुः ] कुक्कुरः;  
कुक्कुरः; कुकुरः; कौलेयकः; सारमेयः; भयणः; श्वानः;  
शुनकः; मृगदंशः; शालावृकः; ‘कुक्कुरः श्व च भयक  
शुनको मृगदंशकः । कौलेयको रन्तिदेवः सारमेयो रत-  
व्रणः ।’ ‘कुक्कुरो दीर्घसुरतः श्वानो ग्राममृगोऽपि च ।  
वक्रपुच्छः श्यालुः स्यात् शरत्काम्यरतत्रयः । औषधादि-  
योगितः श्व स्यादलकौऽप्यलकः । मृगयाकुशलः श्व  
तु विश्वकदुःपुमानयम्’—इति शब्दरत्नावली । २८१

श्वापदः पुं [ शुन इव पद यस्य । 'शुनो दन्तदंष्ट्राकर्ण-  
कुन्दवराहपुच्छपदेयु' इत्युक्त्या दीर्घः ] हिलपशुः;  
व्याघ्रादिवनचरपशुः; 'श्वापदो द्विखुरो हस्ती वानरः  
पक्षिपञ्चमः । औदकाः पशवः पष्ठाः सप्तमास्तु सरी-  
सृपाः— इति विष्णुपुराणे (१।५।५१) । व्याघ्रः । २३३  
श्वान्वित् [ घ् ] पुं. [ श्वानं विध्यतीति । श्वन् + व्यघ् +  
क्विप्, 'नहिवृतीति' दीर्घः ] शल्यः; शलली; शललः;  
शललकः; शललकी । २३३

श्वित्रम् क्ली. [ श्वेतते इति । श्विता वर्णो + 'स्फायित-  
ञ्चिवञ्चोति' रक् ] श्वेतकुष्ठं; कुष्ठं; श्वेतं; श्वेत्रम्;  
'शपतोरसकृद्विष्णुं यद्व्रह्म परमव्ययम् । श्वित्रं न जातं  
जिह्वायां नान्वं विविशतुस्तमः—इति भागवते (७।  
१।१८) । 'कुष्ठैकसम्भवं श्वित्रं किलासं चारुणं भवेत् ।  
निदिष्टमपरिस्त्रावि त्रिधातुद्भवसंश्रयम् ।' 'अरुणं रक्तगो  
वाते ताम्रं पित्ते पलङ्गते । श्वेतं श्लेष्मणि मेदःस्थे श्वित्रं  
कुष्ठं परं परम्—इति चरकः । ६०४

श्वेतः त्रि. [ श्वेतो वर्णोऽस्यास्तीति । श्वेत + अशं आद्यच् ]  
शुक्लवर्णयुक्तः; 'ललाटोदयमाभुग्नं पल्लवस्निग्ध-  
पाटला । विभ्रती श्वेतरोमाङ्गं सन्ध्वेव शशिनं नवम्'  
—इति रघो (१।८३) । पुं. [ श्वेतते इति । श्वित् +  
पचाद्यच् ] शुक्लवर्णः; क्षीरोदधेयोत्तरतो  
हि द्वोपः श्वेतः स नाम्ना प्रथितो विशालः—इति महा-  
भारते (१२।३३५।८) । पर्वतभेदः । स तु जम्बूद्वीप-  
पर्वतानामन्यतमः; 'हिमवान् हेमकूटश्च ऋषभो मेरुरेव  
च । नीलः श्वेतस्तथा शृङ्गी सप्तास्मिन् वर्षपर्वताः—इति  
मार्कण्डेये (५।४।९) । कपर्दकः; शुकग्रहः; श्वेताभ्रः; शङ्खः;  
जीवकः; शिवावतारविशेषः; राजविशेषः; नागवि-  
शेषः; (७९१) क्ली. रूप्यं; श्वेतकं; रजतम् । ७३२

श्वेतच्छदः पुं. [ श्वेतः छदो यस्य ] हंसः; चक्राङ्गः;  
मानसीकाः; श्वेतगरुत्; श्वेतगरुतः; गन्धपत्रः । २५१  
श्वेतरोचिः [ स् ] पुं. [ श्वेतं रोचिर्यस्य ] चन्द्रः; चन्द्रमाः;  
इन्दुः; सोमः । ४२

श्वेतवासाः [ स् ] पुं. [ श्वेतं वासो यस्य ] शुक्लवस्त्र-  
धारिसंन्यासी; जैनयतिः; रजोहरणधारी; सिताम्बरः;  
परिहितशुक्लवसने त्रि. । ३४४

श्वोवसीयः [ स् ] क्ली. [ वसुशब्दः प्रशस्तवाची, तत ईय-  
सुनि वसीयः । श्वःशब्द उतरपदार्यप्रशंसामाशीविषय-

तामाह । मयूरव्यंसकादित्वात् समासः । 'अनित्यत्वेन  
श्वसो वसीयःश्रेयसः' इति नाच् ] कल्याणं; शिवं;  
भद्रः; मङ्गलं; शुभम् । १२२

श्वोवसीयसम् क्ली. [ श्वोवसीयस् + 'श्वसो वसीयःश्रेयसः'  
इति अच् ] कल्याणम्; 'श्वःश्रेयसं शुभशिवे कल्याणं  
श्वोवसीयसं श्रेयः । क्षेमं भावुकभविककुशलमङ्गल-  
भद्रमद्रशस्तानि— इति हेमचन्द्रः । तद्वति त्रि. । १२२

ष

षट्कम् क्ली.— षट्संख्यासंहतिः । २८३

षट्कर्मा [ न् ] पुं. [ षट् कर्माणि यजनादीनि यस्य ]  
यागादिभिर्युतो ब्राह्मणः; 'इज्याध्ययनदानानि याजना-  
ध्यापने तथा । प्रतिग्रहश्च तैर्युक्तः षट्कर्मा विप्र उच्यते ।'  
३८१

षट्चरणः पुं. [ षट् चरणा यस्य ] भ्रमरः; मधुकरः;  
मधुपः; मधुव्रतः; शिलीमुखः; भृङ्गः; पुष्पलिट्;  
इन्दुन्दिरः; अलिः; चञ्चरीकः; अली; द्विरेफः;  
'षट्चरणक्रीटजुष्टं परागघुणपूर्णमायुधं त्यत्ववा ।  
त्वां मुष्टिमेयमध्यामधुना शक्ति स्मरो वहति—इति  
आयसिप्तशत्याम् (५८७) । यूका; षट्पादः । २५५

षड्गवम् क्ली. [ षट् गावो यत्र । समासे अच् ] पशु-  
षट्कसंख्या; त्रि. गोषट्कयुक्तहलादि; 'अष्टागवं धर्म्य-  
हलं षड्गवं जीविकार्थिनाम् । चतुर्गवं नृशसानां द्विगवं  
ब्रह्मघातिनाम्—इत्याह्निकतत्त्वम् । प्रत्ययविशेषः;  
स तु 'प्रकृत्यर्थस्य षट्त्वे षड्गवच्' इति वार्तिकोक्त्या  
भवति । 'पशुभ्यो गीयुगं युग्मे परं षट्त्वे तु षड्गवम्'  
—इति हेमचन्द्रः । 'अन्यं तस्मै वरं दद्यां सोवर्णं हस्ति-  
षड्गवम् ।' 'पण्णां गवां समाहारः' इति द्विगुसमास-  
निष्पन्नम् । तत्र क्ली. । २८३

षड्जः पुं. [ षड्म्यः स्थानेभ्यः जातः इति । षप् + जन् +  
ड ] तन्त्रीकण्ठोत्थितस्वरविशेषः; 'नासां कण्ठमुस्तालु  
जिह्वां दन्ताश्च संश्रितः । षड्म्यः संजायते यस्मात्  
तस्मात् षड्ज इति स्मृतः । 'षड्जं रीति मयूरो हि गावो  
नर्दन्ति चर्षभम् । अजा विरीति गान्धारं क्लौञ्चो नवद्वि  
मध्यमम्—इति भरतः । ८६३

षड्वशानः पुं. [ षड् दशना रदना यस्य ] षड्दन्तः; षड्-  
दन्तवृषभादिः । २६७

षण्डः पुं. [ पणु दाने + 'अमन्ताड् डः' इति ड । बहुल-  
वचनात् सत्त्वाभावं ] षण्डः; शण्डः; शण्डः; क्लीवं;  
समूहः (८११); 'नता निश्चलमूढानि बभूवुस्ते महो-  
रगाः । सायाह्ने कदलीषण्डे कम्पितास्तस्य वायुना'—इति  
हरिवंशे (३३।३२) । पुं.—क्ली. [ पणु दाने + ड ]  
अञ्जादिकदम्बं; पद्मकुमुदादिसमूहः; 'कलरवमुपगीते  
पट्टपदौघेन वत्तः कुमुदकमलषण्डे तुल्यरूपामवस्याम्'  
—इति षाघे (११।१५) । चिह्नम्; 'यानि रूपाणि  
जगृहे इन्द्रो हयजिहीर्षया । तानि पापस्य षण्डानि लिङ्गं  
षण्डमिहोच्यते'—इति भागवते (४।१९।२३) । ४३०  
षण्डः पुं. [ शाम्यति शिरनाभावात् । शम् + 'शमेर्ढः'  
इति ढप्रत्ययेन साम्नुः ] नपुंसकः; क्लीवं; वर्षवरः; षण्डः;  
षण्डकः; उभयव्यञ्जनः; पीटा; तृतीयाप्रकृतिः;  
षण्डकः । ४३०  
षण्डतिलः पुं. [ षण्डः निष्फलः तिलः ] तिलपिञ्जः;  
तिलपेजः; अरण्यातिलः । ८८३  
षण्मुखः पुं. [ षड् मुखानि यस्य ] कार्तिकेयः; षडाननः;  
षड्वदनः; षड्वक्त्रः; अग्निभूः; 'त्वं श्रीडसे षण्मुख !  
कुक्कुटेन ययेष्टनानाविध कामरूपी'—इति महा-  
भारते (३।२३।१।१६) । १९  
षष्टिक्यम् त्रि. [ षष्टिकानां भवनं क्षेत्रम् । षष्टिक +  
'यवयवकपष्टिकाद् यत्' इति यत् ] षष्टिकघान्योप-  
युक्तक्षेत्रादिः; षष्टिकक्षेत्रम् । १६३  
षोडन् [त्] पुं. [ षड् दन्ता अस्य । 'पृगोदरादीनि  
यथोपदिष्टम्' इति 'पय उत्वं दतृदशषासूत्ररपदादेः  
ष्टुत्वञ्च ] षड्दन्तयुक्तवृषः । २६७

## स

संयत् पुं.—स्त्री. [ संयम्यतेऽनेति । सम् + यम् + क्त्रिप्  
'गमादीनाम्' इत्युत्पत्त्या मलीपः; तुक् ] युद्धं; रणं;  
'उत्थापितः संयति रेणुरश्वैः साञ्जीकृतः स्यन्दनवंशचक्रैः'  
—इति रघौ (७।३९) । ४५३  
संयतः त्रि. [ सम् + यम् + क्त ] बद्धः; नद्धः; 'मायामिव  
परिभ्रष्टा हरिणीमिव संयताम्'—इति रामायणे  
(१।१०।२५) । कृतसंयमः; 'यो यः कश्चित्तीर्थयात्रान्तु  
गच्छेत्, सुसंयतः स च पूर्वं गृहे स्वे । कृतोपवासः शुचिर-  
ग्रमतः, सम्भूजयेद्भक्तिमत्रो ननेदम्'—इति प्राव-

दिचत्तत्त्वम् । ३४०

संयतः पुं.— तपस्वी; शान्तः; मुनिः; लिङ्गी; यतिः;  
व्रती । ३४४

संयमः पुं. [ सम् + यम् + 'यमः समुपनिविषु च' इति अप् ]  
व्रताद्यज्ञपूर्वदिनकर्तव्याचारः; वियामः; वियमः;  
यामः; यमः; संयामः; संयमनः; नियमः; बन्धनम्;  
'कापि कुन्तल्यं व्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनौ  
नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे  
(३।१५५) । सङ्कोचः; 'मयि दृष्टे सदा यस्मात्  
कुरुपे नेत्रसंयमम् । तस्माज्जनिष्यते मूढे प्रजासंयमनं  
यमम्'—इति मार्कण्डेये (७७।४) । ३९७

संयुगः पुं.—क्ली. [ सम् + युजिर् युगे + घञ् । उक्थादिषु  
युगशब्दस्य पाठान्निपातनादगुणत्वम् । 'विशेषोऽज्ञी निपात-  
नमिष्यते कालविशेषे रथाद्युपकरणे च'—इति वृत्तिः ।  
सङ्गता रथयुगा यस्मिन् वा ] युद्धं; संग्रामः; समरः;  
रणम्; आयोवनः; संगरं; अनयस्यानुपायस्य संयुगे  
परमः क्षयः । संशयो जायते साम्याद् जयश्च न भवेद्  
द्वयोः—इति महाभारते (२।१७।५) । ४५३

संयोगः पुं. [ सम् + युज् + घञ् ] मेलनः; न्यायमते गुण-  
पदार्थः; 'अप्राप्तयोस्तु या प्राप्तिः सैव संयोग ईरितः'  
—इति मायापरिच्छेदः । उदयात्पूर्वं दशम्याः शेषः;  
'उदयात्प्राग्दशम्यास्तु शेषः संयोग इष्यते । उपरिष्ठात्  
प्रवेशस्तु तस्मात् तां परिवर्जयेत्'—इति तिथ्यादि-  
तत्त्वम् । सम्बन्धमात्रम् । ६०६

संरम्भः पुं. [ सम् + रम् + घञ् + नुम् ] दर्पः; मदः; अव-  
लैपः; मानः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः; संवेगः;  
सम्भ्रमः; आटोपः; 'न संरम्भेण सिध्यन्ति सर्वायाः  
सान्त्वया यथा'—इति भागवते (८।६।२४) । क्रोधः;  
'ताडयित्वा तृणेनापि संरम्भान्मतिपूर्वकम् । एक-  
विशतिमाञ्जतीः पापयोनियु जायते'—इति मनुः (४।  
१६६) । वेगः; 'संयम्य मन्युसंरम्भं मानयन्तो मुनेर्वचः ।  
उपगीयमानानुचरैर्ययुः सर्वे त्रिविष्टपम्'—इति भागवते  
(८।६।२४) । उत्साहः; 'कार्यरम्भेषु संरम्भः स्वये  
उत्साह इष्यते'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । ७२२

संलापः पुं. [ सम् + लप् + घञ् ] मिथोभाषणं; परस्पर-  
भाषणम्; अन्योऽन्यं प्रीतिभाषणम्; उचितप्रत्युचित-  
भाषेण विरोधरहितमन्योऽन्यभाषणं; रहसि भाषणं;

समन्ताल्लपनम्; उक्तिप्रत्युक्तिमद्वाक्यम् । १५०  
 संवत्सरः पुं. [ संवसन्ति ऋतवो यत्र । सम्+वस् निवासे+  
 'संपूर्वाञ्चित्' इति त्सरन् ] हायनः; शरत्; समाः;  
 वत्सरः; संवत्; वर्षः; 'अधुना विक्रमादित्यराजवत्सरः;  
 'संवत्सरे तथा दानं तिलस्य च महाफलम् । परिपूर्वं  
 तथा दानं यवानां च द्विजोत्तमाः । इदापूर्वेष्ववस्त्राणां  
 धान्यानां चानुपूर्वके । उदासंवत्सरे दानं रजतस्य  
 महाफलम् । ज्योतिर्विदस्त्वियमध्यात्प्रभवादेश्च  
 सम्भवम् । ऊवुस्तद्वत्समाद्यादिवर्षाणामपि सम्भवम्—  
 इति मलमासतत्त्वम् । ११६

संवदनम् क्ली. [ सम्+वन्+ल्युट् ] मूलिकर्म; कामणं;  
 वशीकरणं; संवदनम्; 'हृदयानुप्रवेशो हि प्रभोः  
 संवननं महत्'—इति कथासरित्सागरे (३४।१६९) ।  
 ७१६

संवर्तः पुं. [ सम्+वृत्+घञ् ] परिवर्तः; क्षयः; युगान्तः;  
 जगद्विनाशः; कल्पान्तः; समग्रुप्तिः; संहारः; महा-  
 प्रलयः; प्रलयः; 'दहन्निव दिशो दिग्भिः संवर्ताग्नि-  
 रिवोत्थितः'—इति भागवते (८।१५।२६) । (८०१)  
 परिवर्तः; हायनः; वर्षः; संवत्; संवत्सरः । मुनिविशेषः;  
 अयं हि धर्मशास्त्रप्रयोजकानामन्यतमः । 'ऋत्विक्  
 तस्य तु संवर्तो बभूवाङ्गिरसः सुतः । भ्राता बृहस्पतेर्विप्र  
 महात्मा तपसां निधिः'—इति मार्कण्डेये (१३०।११) ।  
 कर्षकलवृक्षः; मेघः; 'शुश्रुवे सुमहान् शब्दः संवर्तनिनदो  
 यथा'—इति हरिवंशे (१२०।९०) । मेघनायक-  
 विशेषः; 'त्रियुते शकवर्षे तु चतुर्भिः शेषिते क्रमात् ।  
 आवर्तं विद्धि संवर्तं पुष्करं द्रोणमम्बुदम् । आवर्तो निर्जलो  
 मेघः संवर्तश्च बहूदकः । पुष्करो दुष्करजलो द्रोणः  
 सस्यप्रपूरकः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ११७

संवसयः पुं. [ संवसत्यत्रेति । सम्+वस् + 'उपसर्गे वसे'  
 —इति अथ ] ग्रामः; ग्रामघानः; खेटकः ।

संवाहकः त्रि. [ संवाहयतीति । सम्+वह्+प्+घञ् ]  
 अङ्गमर्दी; संवाहः; अङ्गविमर्दकः; अङ्गमर्दकारकः;  
 अङ्गमर्दकः; अङ्गमर्दः; 'प्रसाधका भोजकाश्च गात्र-  
 संवाहका अपि । जलताम्रमूलकुसुमगन्धभूषणदायकाः ।  
 कर्तव्याश्च सदा ह्येते ये चान्येऽभ्यासवर्तितः'—इति  
 कामन्दकीयनीतिसारे (१२।४५) । ५९०

संवित्तिः स्त्री. [ सम्+विद्+कित् ] प्रेक्षा; प्रज्ञा;

प्रतिभा; धीः; विषणा; शेमुषी; मनीषा; बुद्धिः;  
 मतिः; मेधा; संख्या; उपलब्धिः; 'छायां चिनिर्द्वय  
 तमीमयीन्तां तत्त्वस्य संवित्तिरिवाप विद्याम्'—इति  
 किराते (१६।३२) । प्रतिपत्तिः; जनस्याविवादः;  
 चेतना; अनुभवः; 'श्वस्त्वया सुखसंवित्तिः स्मरणीया-  
 धुनातनी । इति स्वप्नोपमान् मत्वा कामान्  
 मागास्तदङ्गताम्'—इति किराते (११।३४) । ३३४  
 संवीतः त्रि. [ सम्+व्ये+क्त ] अपवारितः; पिहितः;  
 संवृतः; स्थगितः; (७८१) आवृतः; संवृतः; प्रच्छा-  
 दितः; 'तिरस्कृत्योच्चरेत् काष्ठलोष्टपत्रतृणादिना ।  
 नियम्य प्रयतो वाचं संवीताङ्गोऽवगुण्ठितः'—इति मनुः  
 (४।४९) । ७४३

संवृतः पुं. [ सम्+वृ + क्तप्रत्ययेन निष्पन्नः ]  
 आवृतः; अपवारितः; पिहितः; संवीतः; स्थगितः ।  
 ७४३

संवेगः पुं. [ सम्+विज्+घञ्, 'चजोः कुः' ] दर्पः;  
 मदः; अवलेपः; मानः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः;  
 संरम्भः; संभ्रमः; आटोपः; भयादिजनितत्तरां;  
 'अथ सभ्याः सभामध्ये समुच्छ्रितकरास्तदा । ऊचुर्द्विग्न-  
 मनसः संवेगात्सर्व एव हि'—इति महाभारते (२।७२।  
 १४) । सम्यग्वेगः; 'अभग्नशमसंवेगलब्धसिद्धिर्नरा-  
 धिपः । श्रीपर्वतादावद्यापि भव्यानामेति दृक्पयम्'—  
 इति राजतरङ्गिण्याम् । (४।३९०) । ७२२

संवेद्यः पुं. [ सम्यक् वेत्तुं लब्धुं योग्यः नदीयुग्मेन ]  
 सम्भेदः; नदीसङ्गमः; सिन्धुनद्योः सङ्गमः । ६६९

संवेशनम् क्ली. [ सम्+विश्+ल्युट् ] रतिक्रिया; निधुवनं;  
 सम्प्रयोगः; रहः; रतिः; सुरतम्; मोहनं; मैथुनम्;  
 उपवेशनम्; 'शीतोष्णवातवर्षेषु वृष इवानावृताङ्गः  
 पीनः संहननाङ्गः स्थण्डिलसंवेशनामर्दनामज्जनरजसा  
 महामणिरिव...विचचार'—इति भागवते (५।९।१०) ।  
 ५६९

संव्यानम् क्ली. [ संवीयतेऽनेनेति + सम्+व्ये+ल्युट् ]  
 उत्तरीयवस्त्रम्; विपाण्डुसंव्यानमिवानिलोद्धतं निरुद्धतीः  
 सप्तपलाशजं रजः'—इति किराते (४।२८) ।  
 वस्त्रम् । ५४६

संशयः पुं. [ सम्+शी+अच् ] सन्देहः; शङ्का; विचि-  
 कित्सा; वितर्कः; आरेफः; विभ्रमः; विकल्पः; भ्रान्तिः ।

'स संशयो भवेद्या धीरेकत्राभावभावयोः । साधारणादि-  
धर्मस्य ज्ञानं संशयकारणम्'—इति भाषापरिच्छेदः । ६९१  
संज्ञितम् त्रि. [ सम्+श्चिन्मिषाने, शो तनूकरणे वा  
+क्त ] सम्यक् सम्पादितं; सुनिश्चितम्; व्रतविषयक-  
यत्नवत्; अतितीक्ष्णम् । ४०२

संश्रवः पुं. [ सम्+श्रु+अप् ] अङ्गीकारः; आगूः; सङ्करः;  
सन्धा; प्रतिश्रवः; प्रतिज्ञा; 'अथ भीमः सुहृन्मध्यं  
वाहशब्दं तदाकरोत् । संश्रवे घृतराष्ट्रस्य शान्ध्याया-  
श्चाप्यमर्षणः'—इति महाभारते (१५।३।६) । ७१५

संश्लेषः पुं. [ सम्+दिलिप्+घञ् ] मेलनं; सन्धिः; 'अनन्त-  
रैश्च संश्लेषमभ्येत्य तदनन्तरम् । तेषामन्यतमैर्भृत्यैः  
समाक्रम्यानयद्वशम्'—इति मार्कण्डेये (३७।१५) ।  
आलिङ्गनम्; 'संश्लेषं च परस्त्रीभिर्देस्युरेतानि वर्जयेत्'  
—इति महाभारते (१२।१३।१७) । ८३५

संसत् [ द् ] स्त्री. [ संसीदन्त्यस्यासिति । सम्+सद्+  
क्विप् ] समा; परिषद्; सदः; समाजः; गोष्ठी;  
आस्थानी; 'तदद्भुतं संसदि रात्रिवृत्तंप्रातर्द्विजेभ्यो नृपतिः  
शशंस'—इति रघौ (१६।२४) । ७४५

संसर्गः पुं. [ सम्+सृज्+घञ् ] सम्बन्धः; स च समवायादिः ।  
संसृष्टः; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः ।  
महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह'—इति मनुः ।  
८४५

संसारः पुं. [ संसरत्यस्मादिति । सम्+सृ गती+घञ् ]  
भवः; संसरणं; दुःखलोकः; कष्टकारकः; संसृतिः;  
'भोक्तारमक्षरं शुद्धं सर्वत्र समवस्थितम् । तस्मादज्ञान-  
मूलोऽयं संसारः सर्वदेहिनाम्'—इति कौर्मौ । 'पितृ-  
मातृसुहृद्भ्रातृकलत्रादिकृतेन च । हृष्टोऽसकृत्तया  
दैन्यमश्रुपूर्णाननो गतः । एवं संसारचक्रेऽस्मिन् भ्रमता तात  
सङ्कटे । ज्ञानमेतन्मया प्राप्तं मोक्षसम्प्राप्तिकारणम्'  
—इति मार्कण्डेये । मिथ्याज्ञानजन्यवासना; मिथ्या-  
धीप्रभवा वासना; स्वादृष्टोपनिबद्धशरीरपरिग्रहः । ८०६

संसारो [ न् ] पुं. [ संसारोऽस्त्यस्येति+इनि ] संसार-  
विक्षिप्तप्राणी; शरीरी; चेतनः । १३४

संसिद्धः त्रि. [ सम्+सिद्+क्त ] परमसिद्धः; विशेषेण  
सिद्धः । ३२२

संसिद्धिः स्त्री. [ सम्+सिद्+क्तिन् ] साधनं; सम्यक्-  
सिद्धिः; प्रकृतिः; स्वभावः; मदोप्रा; परमा सिद्धिः;

मोक्षः; 'मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् । नाप्नु-  
वन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः'—इति भगव-  
द्गीतायाम् (८।१५) । फलम्; 'अतः पुंभिर्द्विजश्रेष्ठा  
वर्णाश्रमविभागशः । स्वनुष्ठितस्य धर्मस्य संसिद्धि-  
हंरितोषणम्'—इति भागवते (१।२।१३) । ८६६

संस्कारः पुं. [ सम्+कृ+घञ् ] 'संपरिम्यां करोती  
भूषणे' इति सुट् वासना; प्रतियत्नः; अनुभवः;  
मानसकर्म; गुणविशेषः; पृथिव्यादिचतुःपदार्थगुणः;  
'संस्कारभेदो वेगोऽयं स्थितिस्थापकभावने । मूर्तमात्रे  
तु वेगः स्यात् कर्मजो वेगजः क्वचित् । स्थितिस्थापक-  
संस्कारः क्षिती केचिच्चतुर्ष्वपि । अतीन्द्रियः स विज्ञेयः  
क्वचित् स्पन्देऽपि कारणम् । भावनास्थस्तु संस्कारो  
जीववृत्तिरतीन्द्रियः । उपेक्षानात्मकस्तस्य निश्चयः  
कारणं भवेत् । स्मरणे प्रत्यभिज्ञायामप्यसौ हेतुरुच्यते'  
—इति भाषापरिच्छेदे । शुद्धिः; अदृष्टविशेषजनक-  
कर्म । ७८०

संस्कारहीनः पुं. [ संस्कारेण हीनः रहितः ] संस्कार-  
वर्जितः; ब्राह्मणः; उपनयनसंस्कारहीनः; संस्काररहितः;  
असंस्कृतः । ४०४

संस्कृतः त्रि. [ सम्+कृ+क्त, सुट् ] व्युत्पन्नः; प्रहतः;  
क्षुण्णः; प्रशस्तः (७८१); कृत्रिमः; पक्वः; शस्तः;  
भूषितः; शोधितः; 'पुराणमुत्तमं पुण्यं श्रीमद्भागवताभि-  
धम् । अष्टादशसहस्राणि श्लोकास्तत्र तु संस्कृताः'  
—इति देवी भागवते (१।२।११) । क्ली. लक्षणो-  
पेतं; पाणिन्यादिकृतव्याकरणमुपगतो लक्षणोपेतः  
साधुशब्दः; देववाणी; गीर्वाणवाणी । ३५२

संस्कृता भूमिः स्त्री.— स्यण्डिलः; यज्ञवेदिका; मण्डपः ।  
७६२

संस्तरः पुं. [ संस्तीर्यते इति । सम्+स्तृ+अप् ] याः;  
यज्ञः; ऋतुः; स्तोमः; सप्ततन्तुः; मखः; अच्चरः;  
वितानः; बहिः; सवः; सत्रः; प्रस्तरः (८१८);  
शय्या; पल्लवादिरचितशय्या; 'नवपल्लवसंस्तरेऽपि ते  
मृदु द्रुपेत यदङ्गमापितम् । तदिदं विपहिष्यते कथं वद  
वामोह! चिताविरोहणम्'—इति रघौ (८।५१) ।  
४१४

संस्तवः पुं. [ सम्+स्तु+अप् ] परिचयः; 'विहाय वाञ्छा-  
मुदिते मदात्पयादरक्तकण्ठस्य स्ते शिखण्डिनः । श्रुति

श्रयत्यन्मदहंसनिःस्वनं गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः  
—इति किराते (४।२५) । सम्यक्स्तुतिः; 'इति मे  
छिन्नसन्देहा मुनयः सनकादयः । सभाजयित्वा परया  
भक्त्यागृणत संस्तवैः'—इति भागवते (१।१।३।४१) ।

७७३

संस्त्यायः पुं. [ सम्+स्त्यै+घञ्, आतो युक् ] गृहं;  
गोहम्; अगारं; संघातः; सन्नवेशः; संस्थानं; विस्तृतिः ।

२९१

संस्था स्त्री. [ संतिष्ठतेऽनयेति । सम्+स्था+अङ् ] निवनः;  
नाशः; मृत्युः; मरणं; पञ्चत्वम्; अत्ययः; कालः; दिष्टा-  
न्तः; निर्मूलनं; दौर्घनिद्रा; व्यवस्था (८१९); 'सर्वेषां  
तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक् । वेदशब्देभ्य एवादौ  
पृथक् संस्थाश्च निर्ममे'—इति मनुः (१।२१) ।  
न्यायप्रस्थितिः; [ सन्तिष्ठतेऽनया, सम्यगवस्थानं वा ]  
मर्त्याशः; 'अपि शक्तः परिहर्तुं ययातिशापं हरिहंते  
कसे । राजासनं न भेजे पुरातनीं पालयेत् संस्थाम्'  
—इति उपदेशशतके (९०) । प्रतिज्ञा; 'तस्य वीक्ष्य  
ललितं वयुः शिशोः पार्थिवः प्रथितवंशजन्मनः । स्वं  
विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं पीडितो दुहिनुशुल्कसंस्थया'  
—इति रघो (१।१।३८) । स्थितिः; सादृश्यं; व्यक्तिः;  
क्रतुभेदः; 'दीक्षायाः पशुसंस्थायाः सौत्रामण्याश्च सत्तमाः ।  
अन्यत्र दीक्षितस्यापि नात्रमशनं हि दुष्यति'—इति भाग-  
वते (१०।२।३।८) । समाप्तिः; प्रलयचतुष्टयम्;  
'नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः । संस्थेति  
कविभिः प्रोक्तश्चतुर्धास्य स्वभावतः'—इति पुराणम् ।

६२८

संस्थानम् क्ली. [ सम्+स्था+ल्युट् ] चतुष्पथः; आकृतिः;  
मृत्युः; चिह्नं; सम्यक्स्थितिः; व्यवस्था; 'लोकसंस्थान-  
विज्ञान आत्मनः परिखिद्यतः । तमाहागाघया वाचा  
करमलं शमयन्निव'—इति भागवते (३।१।२७) ।  
सन्नवेशः; 'भर्तारं लङ्घयेद् या तु स्त्री ज्ञातिगुणदपिता ।  
तां स्वभिः खादयेद्वाजा संस्थाने बहुसंस्थिते'—इति  
मनुः (८।३।७) । २८९

संस्थितः त्रि. [ सम्+स्था+क्त ] परासुः; उपसम्पन्नः;  
प्रमातः; मृतः; 'संस्थितस्थानपत्यस्य समोवात्पुत्रमाह-  
रेत् । यत्र यदृक्यजातं स्यात् तत्तस्मिन् प्रतिपादयेत्'  
—इति मनुः (९।१९०) । सम्यक्स्थितिर्बिशिष्टः;

'इदं तु पञ्चदशमं पुराणं कौर्ममुत्तमम् । चतुर्धा संस्थितं  
पुष्यं संहितानां प्रभेदतः'—इति कौर्म (१।२१) । ६२९  
संस्फोटः पुं. [ सम्+स्फिट् अनादरे+अधिकरणे घञ् ]  
युद्धं; समरः । ४५३

संस्फोटः पुं. [ संस्फोटत्यत्रेति । सम्+स्फुट् भेदने+घञ् ]  
युद्धं; संस्फोटिः; संस्फोटः; रणं; सङ्ग्रामम्; आयो-  
घनं; संगरः; आजिः । ४५३

संस्फोटिः स्त्री.— युद्धं; संस्फोटः । ४५३

संस्मरणम् क्ली. [ सम्+स्मृ+ल्युट् ] संस्मृतिः; संस्कार-  
जन्यज्ञानम्; 'व्यायेन्नारायणं नित्यं स्नानादिषु च कर्मसु ।  
तद्विष्णोरिति मन्त्रेण स्नायादप्सु पुनः पुनः । गायत्री  
वैष्णवी ह्येषा विष्णोः संस्मरणाय वै'—इति तिथ्यादि-  
तत्त्वम् । ८८३

संहतिः स्त्री. [ सम्+हन्+कित् ] समूहः; 'अल्पानामपि  
वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका । तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्ब-  
ध्यन्ते मत्तदन्तिनः'—इति हितोपदेशे । ६८६

संहननम् क्ली. [ संहन्यते इति । सम्+हन्+ल्युट् ] शरीरं;  
गात्रं; देहं; कलेवरम्; 'आग्नीध्रसुतास्ते मातुरनुग्रह-  
दौत्पत्तिकेनैव संहननवलोपेताः पित्रा विभक्ता आत्म-  
तुल्यनामभिर्ययाविभागं जम्बूद्वीपवर्षाणि बुभुजुः'—इति  
भागवते (५।२।२१) । सम्यग्घातनं; शक्तिः; कठिने  
त्रि. । 'शीतोष्णवातवर्षेषु वृष इवानावृताङ्गः पीनः  
संहननाङ्गः विचचार'—इति भागवते (५।१।१०) ।  
'संहन्यन्ते निविडीभवन्ति अङ्गानि यस्य । कठिनावयव  
इत्यर्थः'—इति तट्टीकायां स्वामी । ५१०

संहर्षः पुं. [ सम्+हर्ष+घञ् ] स्पर्द्धा; 'संहर्षद्वारयन्  
श्रोत्रं धन्वी सग्वी रयस्थितः । समरे नाशयेत् शत्रूनमोघो  
नाम पावकः'—इति महाभारते (३।२।१।२४) ।  
प्रमोदः; बायुः; लोमहर्षः; 'दाहसंहर्षताम्रत्वशोय-  
निस्तोदगौरवैः'—इति सुश्रुते (६।६) । ७८६

संहारः पुं. [ संहियतेऽनेनेति । सम्+ह+अध्यायन्यायेति'  
घञन्तः साधुः ] संवर्तः; परिवर्तः; क्षयः; युगान्तः;  
कल्पान्तः; जगद्दिनाशः; समसुप्तिः; महाप्रलयः; प्रल-  
यः; 'मन्वन्तराध्यसंस्थानि सर्षः संहार एव च । क्रीड-  
न्निवैतत् कुष्ठे परमेष्ठी पुनः पुनः'—इति मनुः (१।८०) ।  
नरकविशेषः; संक्षेपः; संहरणम्; 'समोहनं नाम सखे !  
ममास्त्रं प्रयोगसंहारविभक्तमन्त्रम्'—इति रघो (५।

५७) । ११७

सकलम् त्रि. [ कल्या सह वर्तमानम् ] समुदायः; समं सर्वं; विश्वम्; अशेषं; कृत्स्नं; समस्तं; निखिलम्; अखिलं; निःशेषं; समग्रं; पूर्णम्; अखण्डम्; अमूलकम्; अनन्तम्; 'द्वाभिः प्रविश्य सुभृशं प्रादयन् सकलां पुरीम् ।' [ कला प्रकृतिस्तया सह वर्तते इति ] सगुणम्; 'निष्कलं सकलं ब्रह्म निर्गुणं गुणगोचरम्'—इति महाभारते (१३।१६।८) । ७१३

सकृत् अव्य. [ एक+एकस्य सकृच्च' इति सुच् सकृदादेशश्च । संयोगान्तरस्येति सुचो लोपः ] एकवारम्; 'सकृदंशो निपतति सकृत् कन्या प्रदीयते । सकृदाह ददानोति त्रीण्येतानि सकृत् सकृत्'—इति महाभारते । सह । २७३

सकृत्प्रजः पुं. [ सकृद् एकवारमेका प्रजा यस्य ] अरिष्टः; करटः; काकः; कागः; वलिपुष्टः; एकदृक्; वलिभुक्; ध्वाङ्गलः; चिरञ्जीवी; वायसः; जातैकमात्रापत्ये त्रि. । २४५

सकृत्प्रसूता स्त्री. [ सकृद् एकवारं प्रसूता ] सकृत्प्रसूतिका; गृष्टिः; एकमात्रप्रसूता स्त्री । २७३

सखिय [ न् ] क्ली. [ सज्यते इति । सञ्ज् सञ्जे+असि-सञ्जिभ्यां कियन्' इति कियन् ] ऊरुः; 'नृणां पदे स्थिता लक्ष्मीनिलयं संप्रयच्छति । सख्यनोश्च संस्थिता वस्त्र तथा नानाविधं वसु'—इति मार्कण्डेये (१८।४९) । शकटावयवविशेषः । ५१५

सखा [ इ ] पुं. [ समानः ख्यायते इति । समानं+ख्या+समानेख्यः स चोदात्तः' इति इञ्, टिलोपयलोपी, समानस्य सभावश्च ] मित्रं; सुहृत्; वयस्यः; सवयाः; स्निग्धः; सहचरः; आक्रन्दः; 'सखा गरीयान् शत्रुश्च कृत्रिमस्तौ हि कार्यतः । स्याताममित्रौ मित्रे च सहजप्राकृतावपि'—इति माघे (२।३६) । सीहार्दयुक्तः; सहायः; 'गुस्तल्पव्रतं' कुर्वाद् रेतः सिकत्वा स्वयोनियु । सख्युः पुत्रस्य च स्त्रीषु कुमारीष्वन्त्यजासु च'—इति प्रायश्चित्त-तत्त्वम् । ४२८

सखी स्त्री. [ 'सख्यशिश्वोति भाषायाम्' इति लोप् ] सहचरी; आलिः; वयस्या; सध्रीची; आली; 'अ'—इति प्रायश्चित्त-तत्त्वम् । ४२८

लक्षणं दधी'—इति रघौ (३) । ४८७  
सख्यम् क्ली. [ सख्युर्भावः कर्म वा । सखि+यत् ] सखित्वं; सखिता; मित्रता; सीहृदं; सीहार्दं; साप्तपदीनं; मैत्रं; जर्ष्यं; सङ्गतं; स्नेहः; मैत्री; प्रीतिः; अजर्यं; सभाजनम्; 'वधनिर्घूतशापस्य कवन्वस्योपदेशतः । मुमुच्छं सख्यं रामस्य समानव्यसने हरी'—इति रघौ (१३।५७) । ७०६

सगर्भः पुं. [ समानो गर्भो यस्य, समानस्य सः ] सहोदरः; सगर्भ्यः; समानोदर्यः; सोदर्यः; सोदरः; त्रि. अम्यन्तरित-सूक्ष्मपत्रादियुक्तः; 'दर्भान्सगर्भानिदाय नव सप्त च पञ्च वा । साग्रान्समूलानच्छिन्नान् द्विजो दक्षिण-पाणिना । अन्वारब्धेन सव्येन तर्पयेत् पङ् विनायकान्'—इति काशीखण्डे । गर्भविशिष्टः; 'अनलोऽपि सगर्भोऽभूत् तेन वीर्येण धूर्जटेः'—इति कथासरित्सागरे (२०।८४) । ५०८

सगर्भ्यः पुं. [ समाने गर्भे भवः । 'सगर्भसयूयसनुता-द्यत्' इति यत् ] सहोदरः; सगर्भः; सोदर्यः; सोदरः; 'अनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूध्यः'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (४।२०) । ५०८

सगोत्रः पुं. [ समानं गोत्रमस्य । 'ज्योतिर्जनपदरात्रीति' समानस्य सः ] ज्ञातिः; आत्मीयः; स्वजनः; वन्धुः; आप्तः; वान्धवः; सनाभिः; सपिण्डः । 'सगोत्रवान्ध-वज्ञातिवन्धुस्वस्वजनाः समाः'—इत्यमरः । 'संस्थितस्या-नपत्यस्य सगोत्रात्पुत्रमाहरेत्'—इति मनुः (९।१९०) । क्ली. [ समानं गोत्रमिति । समानस्य सः ] कुलं; वंशः; गोत्रम्; 'कुलं गोत्रं सगोत्रं च वुल्यगोत्रे निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली । ५०९

सङ्कटम् त्रि [ सम्+सम्प्रोदश्च कटच्' इति कटच् ] संचावः; अल्पावकाशो वर्तमादी; [ सम्यक् कटति आवृणोति सङ्कटम्, अच्, वाच्यलिङ्गता च ] दुःखे क्ली. । 'सर्वावाधानु धोरामु वेदनाम्यदितोऽपि वा । स्मरन्म-र्मतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात्'—इति देवी-माहात्म्ये । 'सङ्कटं दुःखमुत्तरार्द्धमुत्तरान्वयि'—इति तट्टीकायां नागोजिमट्टः । ८२७

सङ्ख्या स्त्री. [ सम्यक् कथा ] अन्योऽन्यसङ्गीतिः; परस्पर-भाषणम्; 'उल्लापः काकुवागन्योऽन्योवितः संलाप-

सङ्कथे—इति हेमचन्द्रः । 'पृथा भ्रातृन् स्वसुर्वीक्ष्य  
त्रुपुत्रान् पितरावपि । भ्रातृपत्नीमुकुन्दं च जहाँ  
सङ्कथया शुचः'—इति भागवते (१०।८२।१७) ।  
सम्यक्करणं; सम्यग्भाषणं; सङ्कथनम् । ७७९

सङ्करः पुं. [ सङ्कीर्यते इति । सम्+कृ विक्रमे+अप् ]  
सम्भार्जन्याक्षिप्तधूल्यादिः; अवकरः; सङ्कारः; अग्नि-  
चटकारः; मिश्रितत्वम्; 'भेदाख्यानाय न द्वन्द्वो  
नैकशेषो न सङ्करः'— इत्यमरः । परस्परान्त्यन्ताभाव-  
समानाधिकरणयोरैकाधिकरण्यम्; यथा—मूर्तत्व  
मनसि वर्तते भूतत्वं नास्ति, आकाशे भूतत्वं वर्तते मूर्तत्व  
नास्ति, पृथिव्यां भूतत्वं वर्तते मूर्तत्वं चास्तीति  
जातिमाङ्ग्यम् । 'व्यक्तेरभेदस्तुल्यत्वं सङ्करोऽथान-  
वस्थितिः । रूपहानिरसम्बन्धो जातिबाधकसंग्रहः'—  
इति सिद्धान्तमुक्तावली । वर्णसङ्करजातिः; 'वक्ष्ये  
सङ्करजात्यादि गृहस्थादिविधिं परम् । विप्रान्मूढावि-  
सिक्तो हि क्षत्रियायां विशः स्त्रियाम् । जातोऽन्वष्टस्तु  
शूद्रायां निपादः पापतोऽपि वा । माहिष्योग्री प्रजायेते  
विट्शूद्राङ्गनयोर्नृपात् । वैश्यां शूद्राच्च राजन्यां  
माहिष्योग्री सुती स्मृती । शूद्रायां करणो वैश्याद्  
विद्वान् एव विधिः स्मृतः । ब्राह्मण्यां क्षत्रियात् सुतो  
वैश्याद्वैदेहकस्तथा । शूद्राङ्गजातस्तु चाण्डालः सर्वधर्म-  
बहिष्कृतः । क्षत्रिया मागधं वैश्यात् शूद्रात् क्षत्तारमेव  
च । शूद्रादायोगवं वैश्या जनयामास वै सुतम् । माहिष्येण  
करण्यां तु रथकारः प्रजायेते । असंस्तुताश्च विज्ञेयाः  
प्रातिलोमानुलोमजाः । जात्युत्कर्पाद् द्विजो ज्ञेयः सप्तमे  
पञ्चमेषु वा । व्यत्यये कर्मणां साम्ये पूर्ववच्चोत्त-  
रावरम्—इति गारुडः । ३०२

सङ्कर्षणः पुं. [ सम्यक् कर्षतीति । सम्+कृप्+ल्यु ]  
बलदेवः; बलभद्रः; मुसली; नीलाम्बरः; प्रलम्बघ्नः;  
सीरी; सात्वतः; तालध्वजः; एककुण्डलः; अनन्तः;  
रौहिण्यः; कालिन्दीकर्षणः; बलः; रेवतीरमणः; रामः;  
कामपालः; हलायुधः; बलरामः; 'कर्षणेनास्य गर्भस्य  
रवगर्भाच्चवाचितस्य वै । सङ्कर्षणो नाम शुभे तव पुत्रो  
भविष्यति'—इति हरिवंशे (५९।६) । [ सम्यक् कर्षणं  
यस्य माययेति शेषः ] 'गर्भसङ्कर्षणात् तं वै प्राहुः सङ्कर्षण  
भुवि'—इति भागवते (१०।२।१३) । क्ली सम्यक्  
प्रकारेण कर्षणम्; आकर्षणम्; एकीकरणं; 'तस्य

मूलदेशे त्रिशद्योजनसहस्रान्तरे आस्ते या वै कला  
भगवतस्तामसी समाख्याता अनन्त इति सात्वतीया  
द्रष्टृदृश्ययोः सङ्कर्षणम् अहमित्यभिमानलक्षणं यं  
सङ्कर्षण इत्याचक्षते'—इति भागवते (५।२५।१) ।

२९

सङ्कल्पः पुं. [ सम्+कृप्+भावे घञ् । गुणे कृते रस्य लः ]  
मानसं कर्म; 'मनसा सङ्कल्पयति, वाचा अभिलपति,  
कर्मणा चोपपादयति'—इति हारीतः । 'सङ्कल्पेन विना  
राजन् यत्किञ्चित्कुरुते नरः । फलं चात्पात्पकं तस्य  
धर्मस्याद्धक्षयो भवेत्'—इति भविष्यपुराणे । ७७३

सङ्कल्पजन्मा [न्] पुं. [ सङ्कल्पाद् जन्म यस्य ]  
सङ्कल्पजः; सङ्कल्पभवः; सङ्कल्पयोनिः; कामदेवः;  
मदनः; मन्मथः; प्रद्युम्नः; 'दग्धोऽपि कामः सङ्कल्प-  
जन्मा शर्वेण निमित्तः'—इति कथासरित्सागरे  
(४९।२३८) । ३२

सङ्कारः पुं. [ सङ्कीर्यते इति । सम्+कृ विक्रमे+घञ् ]  
अवकरः; सङ्करः; सम्भार्जन्याक्षिप्तधूल्यादिः; अग्नि-  
चटकारः । ३०२

सङ्काशः त्रि. [ सम्यक् काशते प्रकाशते इति । सम्+  
काश्+पचाद्यच् ] सदृशः; 'आजगाम ततो देवो धर्मो  
मन्त्रबलात् ततः । विमाने सूर्यसङ्काशे कुन्ती यत्र  
जपस्थिता'—इति महाभारते (१।१२३।३) । अन्ति-  
कम् । ७३८

सङ्कुलम् त्रि. [ सम्+कुल संस्त्याने+क ] जनादिभिर्निर-  
वकाशम्, शङ्कुलं; सङ्कीर्णम्; आकीर्णं; कलिलं;  
गहनम्; आचितं; निचितं; व्याप्तं; छन्नं; कीर्णम्;  
आकुलं; भरितं; पूर्णम्; 'ततः सेनामुपादाय पाण्डुनिना-  
विषध्वजाम् । प्रभूतहस्त्यश्वयुतां पदातिरयसङ्कुलाम्'—  
इति महाभारते (१।११३।२६) । वली. युद्धम्, 'ततो  
वलेन महता गजानीकेन चाप्यथ । उभयोरन्तरं ताम्यां  
सङ्कुलं समपद्यत'—इति हरिवंशे (९।१९५) । परस्पर-  
पराहतवाक्यं; त्रिल्लटं; द्वे पूर्वापरविरुद्धे वाक्ये; यथा—  
'यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी पिता मम । माता च  
मम बन्ध्या स्यात् स्मरामोऽनुपमो भवान् ।' यद्वा  
'यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी च मे पिता । माता  
तु मम बन्ध्वीव पुत्रहीनः पितामहः ।' सङ्कीर्णता;  
'एतस्मिन् सङ्कुले तात वर्तमाने भयङ्करे । अति-



भारतसुमती योजनानां शतं गता—इति महा-  
भारते (३।१४२।३८) । ७०२

सङ्केतः पुं. [ सङ्कृत्यते अत्र । सम्+क्ति+घञ् । सङ्केत  
इति चोरादिकाद् वा ] स्वाभिप्राय- व्यञ्जकचेष्टा-  
विशेषः; प्रज्ञप्तिः; परिभाषा; शैली; समयः;  
आकारः; 'सङ्केतप्रियशङ्कया निजपतिं प्राबोचदध्व-  
श्रमम्'—इति रससंग्रहः । 'सङ्केतकालमनसं विटं  
ज्ञात्वा विदग्धया । हसन्नेत्रांपिताकूतं लीलापद्यं  
निमीलितम्'—इति साहित्यदर्पणे । ८२२

सङ्केतकः पुं. [ सङ्केत+कन् ] समयः; सङ्केतः । ८३९

सङ्क्रन्दनः पुं. [ सङ्क्रन्दयति असुरानिति । सम्+क्रन्द  
+णिच्+त्यु ] इन्द्रः; भौत्यस्य मनोः पुत्रविशेषः;  
'स्त्रीमानी च प्रतीरश्च विष्णुः सङ्क्रन्दनस्तथा ।  
तेजस्वी सुवलश्चैव भौत्यस्यैते मनोः सुताः ।' क्ली.  
[ सम्+क्रन्द्+भावे त्युट् ] रोदनम्; 'द्विष्ट्या नैनं  
महाराज दारुणं भरतक्षयम् । कुण्डं सङ्क्रन्दनं घोरं  
युगान्तमनुपश्यसि'—इति महाभारते (१।१।२३।४) ।  
[ सङ्क्रन्दयति शत्रूनि ] शत्रुतापके त्रि. । 'तस्य-  
मीर्वीमपाकर्षत् शूरः सङ्क्रन्दनो युधि । कुले नास्ति  
समी रूपे यस्येति नकुलः स्मृतः'—इति महाभारते  
(४।५।२६) । ५२

सङ्क्षेपः पुं. [ सम्+क्षिप्+घञ् ] स्तोकेन भूयसोऽभि-  
धानं; स्वल्पम् । ७६६

सङ्क्षयम् क्ली. [ सम्पद्य् क्ख्यायतेऽनेति । सम्+ख्या+  
वाहुलकात् क ] युद्धम्; 'एवमुक्त्वार्जुनः सङ्क्षये रथोपस्थ  
उपाविशत्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।४६) । सङ्क्षयेपे  
त्रि. । ४५३

सङ्क्षया स्त्री. [ सङ्क्षयायतेऽनेति । सम्+ख्या+अङ्+  
टाप् ] प्रेक्षा; प्रज्ञा; प्रतिभा; धीः; धिषणा; शोमुपी;  
मनोषा; वृद्धिः; मतिः; मेधा; संवित्तिः; उपलब्धिः;  
विचारणा; यो वेत्ति सङ्क्षयां निकृती विधिज्ञश्चेष्टास्व-  
खिन्नः कितवोऽज्ञाजु । महामतिर्यश्च जानाति द्यूतं  
सर्वं सर्वं सहते प्रक्रियासु'—इति महाभारते (२।५।७।७) ।  
एकत्वादिः; सङ्क्षयेपे त्रि. । सङ्क्षयानम्; 'विषणो विक्रयः  
सङ्क्षयाः सङ्क्षयेपे ह्यादशत्रिपु । विशत्याद्याः सदैकत्वे  
सर्वाः सङ्क्षयेपसङ्क्षययोः । सङ्क्षयार्थं द्विवहुत्वे स्तस्तासु  
चानवतेः श्त्रियः । पङ्कतेः शतसहस्रादि कपाद्श-

गुणोत्तरम्—इत्यमरः । ३३४

सङ्क्षयावान् पुं. [ सङ्क्षया वृद्धिरस्त्यस्येति । मतुप्, मस्य  
व ] पण्डितः; वृद्धिमान्; बुधः; सुवीः; कृती; कृष्टिः;  
कविः; व्यक्तः; विशारदः; विचक्षणः; मेधावी;  
मतिमान् । ३३३

सङ्क्षतम् क्ली. [ सम्+गम्+क्त ] सख्यं; साप्तपदीनं;  
सौहार्दं; सौहृदं; स्नेहः; मैत्री; प्रीतिः; अजर्यं; सभाजनं;  
मित्रता; सखित्वं; सखिता; 'यतः सतां सन्नतगात्रि !  
सङ्क्षतं मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते'—इति कुमारे  
(५।३९) । युक्तियुक्तवाक्यं; हृदयङ्गमं; पुं. मौर्य-  
वंशीयनृपतिविशेषः; 'सुयशा भविता तस्य सङ्क्षतः  
सुयशः सुतः'—इति भागवते (१२।१।१३) । ७०६

सङ्क्षतिः स्त्री. [ सम्+गम्+क्तिन् ] सङ्गमः; सङ्गः;  
मेलनं; समितिः; सम्भेदः; नद्यादिमेलकः; ज्ञानं;  
मेलनम्; 'क्षणमिहसज्जनसङ्क्षतिरेका भवति भवार्णव-  
तरणे नौका'—इति मोहमुद्गरे (६) । युक्तिः;  
'त्वमद्य भव नो राजा राजपुत्र महायशाः । सङ्क्षत्या  
नाप्रराधनोति राज्यमेतदनायकम्'—इति रामायणे  
(२।७।१३) । ८२१

सङ्गमः पुं.-क्ली. [ सम्+गम्+ग्रहवृद्धिनिश्चिगमश्च'  
इति अप् ] सम्भेदः; नद्यादिमेलकः; सङ्गः; 'सङ्गमविरह-  
विकल्पे वरमिह विरहो न सङ्गमस्तस्याः । सङ्गे सैव  
तथैका त्रिभुवनमपि तन्मयं विरहे'—इति साहित्य-  
दर्पणे । स्त्रीनृसोमिपुनीभावः । ८२१

सङ्गारः पुं. [ संगृणन्ति शब्दायन्ते वीरा यत्र । सम्+  
गृ शब्दे+अप् ] युद्धं; सङ्कटे हि परीक्ष्यन्ते प्राजाः  
शूराश्च सङ्गारे'—इति कथासरित्सागरे (३।१।९३) ।  
(७।१५) आगूः; सन्वा, प्रतिश्रवः; संश्रवः, प्रतिज्ञा ।  
आपत्; अङ्गीकारः; 'तयेति तस्या वित्तयं प्रतीतः  
प्रत्यग्रहीत् सङ्गारमग्रजन्मा'—इति रघो (५।२६) ।  
संवित्; क्रियाकारः; विषयं; क्ली. [ सङ्गीर्यते इति,  
सम्+गृ+अप् ] शमीवृक्षफलम् । ४५३

सङ्गीतम् क्ली. [ सम्+गै+क्त ] प्रेक्षणार्थं नृत्यगीत-  
वाद्यं; 'गीतवाद्यनृत्यत्रयं नाट्यं तौर्यत्रिकं च तत् ।  
सङ्गीतं प्रेक्षणार्थेऽस्मिन् शास्त्रोक्ते नाट्यवर्गमिक्का'—  
इति हेमचन्द्रः । नृत्यगीतवाद्यस्य शास्त्रम् । ९५

सङ्गीतिः स्त्री. [ सप्+गै+'स्थागापापचो भावे' इति

वित्तन् ] आलापः; सङ्ख्या; परस्परभाषणं; सङ्गीतम् ।

७७९

सङ्ग्रहः पुं. [ सम्+प्रह्+अप् ] संक्षेपः; समाहृतिः; 'कोशेनाश्रयणीयत्वमिति तस्यार्थसङ्ग्रहः । अम्बुगर्भो हि जीमूतश्चातकैरभिनन्दते—इति रघौ (१७।६०) । [ संक्षेपेण गृह्यन्ते नानास्थाने विप्रकीर्णा अर्था बुध्यन्तेऽनेनेति सङ्ग्रहः । सम्+प्रह् उपादाने+अप् ] लक्षसङ्ख्या व्याकरणग्रन्थः; 'विस्तरेणोपदिष्टानामर्थानां सूत्रभाष्ययोः निबन्धो यः समासेन सङ्ग्रहं तं विदुर्बुधाः ।' ग्रन्थविशेषः; 'चतुष्पादं धनुर्वेदं शास्त्रग्रामं ससङ्ग्रहम् । अचिरेणैव कालेन गुरुस्तावम्यशिक्षयत्—इति हरिवंशे (८९।७) । बृहत्; उत्तुङ्गः; ग्रहणम्; 'नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्ड-विच्छेददर्शिनः । न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वघासंग्रह-तत्पराः—इति रघौ (१।६६) । मुष्टिः; स्वीकारः; महोद्योगः । ७६६

सङ्ग्रामः पुं. [ सङ्ग्राम+णिच्+भावे घञ् ] युद्धं; समरः; रणम्; 'न निवर्तेत सङ्ग्रामात् क्षात्रं धर्ममनुस्मरन्—इति मनुः (७।८७) । ४५३

सङ्ग्राहः पुं. [ सङ्ग्रहणमिति । सम्+प्रह्+समि मुष्टौ ] इति घञ् ] मुष्टिः; सङ्ग्रहः । ५२३

सङ्घः पुं. [ सम्+हन्+सङ्घोद्यी गणप्रशंसयोः—इति अप् टिलोपो षत्वञ्च निपात्यते ] समूहः; सजातीय-विजातीयअनुबृन्दः; 'तत्रापि तपसि श्रेष्ठे वर्तमानः स वीर्यवान् । सिद्धवारणसङ्घानां बभूव प्रियदर्शनः—इति महाभारते (१।१२०।१) । ६८६

सङ्घातः पुं. [ सम्+हन्+घञ्, 'हो हृत्तेजिणिश्रेषु' इति षत्वं, हनस्तः ] समूहः; 'न जातु बाला लभते स्म निवृतिं तुपारसङ्घातशिलातिलेष्वपि—इति कुमारे (५।५५) । नरकभेदः; हननं; निविडसंयोगः; 'द्रवः सङ्घातकठिनः स्थूलः सूक्ष्मो लघुर्गुहः । व्यक्तो व्यक्तेतरश्चासि प्राकाम्यं ते विभूतिवु—इति कुमारे (२।२१) । कफः; नाटके गतिविशेषः । ६८६

सचिः स्त्री. [ सच् समवाये+सर्वघातुम्य इन् ] इति इन् ] शची; इन्द्राणी; इन्द्रपत्नी । ५५

सचिवः पु. [ सच् समवाये+इन् । तथा सचिं वातीति, वा+क ] मन्त्री; सहायः; बुद्धिसहायः; अमात्यः; 'इत्पुत्रत्वा सचिवान् राजा कल्पयित्वा सुरक्षकान् ।

कारयित्वाथ प्रासादं सप्तभूमिकमुत्तमम् । आहरोहीत्तरा-सूनुः सचिवैः सह तत्क्षणम्—इति देवीभागवते (२।१।४२) । कृष्णघत्तूरकः । ४२६

सची स्त्री. [ सचि+कृदिकारादिति डीप् ] शची; इन्द्राणी; इन्द्रपत्नी । ५५

सज्जनः पुं. [ सन् चासी जनश्चेति ] सत्कुलोद्भवः; महा-कुलः; कुलीनः; आर्यः; सम्यः; साधुः; कुलजः; सम्बः; साधुजः; 'निजाचारग्राहिणो ये कुर्वन्तो वेद-सम्मतम् । पापाभिलाषरहिताः सज्जनास्ते प्रकीर्तिताः—इति पाप्मे । 'नलिनीदलगतजलवत्तरलं तद्वज्जीवन-मतिशयचपलम् । क्षणमिह सज्जनसङ्गीतिरेका भवति भवार्णवतरणे नौका—इति मोहमुद्गरः । ३७२

सज्जितः त्रि. [ षसञ् गतौ+क्त ] सन्नद्धः; वर्मितः; भूषितः; कृतसज्जः । २२१

सञ्चयः पुं. [ सञ्चयीते इति । सम्+चि+एरच् ] इत्यच् ] समूहः; निकरः; निकायः; उत्करः; 'तस्यौ संसेवमानस्तं राजानं स तदाश्रितः । भुञ्जानश्च सहाय्यैस्तैर्ब्राह्मणैर्प्रमिसञ्चयम्—इति कथासरित्सागरे (१८।१२८) । सङ्ग्रहः; सञ्चयनं; 'शक्तेनापि हि शूद्रेण न कार्यो धनसञ्चयः । शूद्रो हि धनमासाद्य ब्राह्मणानेव बाधते—इत्याह्निकाचारतत्त्वम् । ६८६

सञ्चारिका स्त्री. [ सञ्चारयति नायकयोर्वातामिति । सम्+चर्+णिच्+प्बुल् ] द्रुती; युगलं; कुट्टनी; घ्राणम् । ४९१

सञ्जवनम् क्ली. [ सञ्जवन्ति संमिलन्त्यत्रेति । सम्+ज् गतौ+अधिकरणं ल्युट् ] अन्योन्याभिमुखगृहचतुष्टयम्; चतुःशालं; संयमनं; चतुःशाली; सञ्जीवनं; शाला; निलयः; चतुःशालकम्; 'तस्मिन् सुविहिताः सर्वे रुमदण्डाः पताकिनः । सदनं वासुदेवस्य मार्गसञ्जवन-ध्वजाः—इति हरिवंशे (१५।५।६) । २९२

सञ्जीवनम् क्ली. [ सञ्जीव्यतेऽस्मिन्निति । सम्+जीव्+अधिकरणं ल्युट् ] सञ्जवनम् [ सम्+जीव्+भावे ल्युट् ] सम्यक्प्रकारेण प्राणधारणम्; 'व्यामो-होद्दलनोपधं मुनिमनोवृत्तिप्रवृत्त्योपधं, दंत्यानर्थकरोपधं त्रिजगतां सञ्जीवनैकौपधम् । भक्तातिप्रशमोपधं भव-भयप्रध्वंसि दिव्योपधं, श्रेयः प्राप्तिकरोपधं पिब मनः श्रोक्व्यनामोपधम्—इति मुकुन्दमालायाम् (३०) ।

नरकविशेषः; 'नरकं कालसूत्रं च महानरकमेव च ।  
सञ्जीवनं सहावीचि तपनं सम्प्रतापनम्'—इति मनुः  
(४।८९) । २९२

सञ्ज्ञपनम् (संज्ञपनम्) क्ली. [ सम्+ज्ञा+णिच्+ल्युट् ]  
मारणं; हिंसा; 'दृष्ट्वा संज्ञपनं योगं पशूनां स पतिर्मखे'—  
इति भागवते (४।५।२२) । विज्ञापनम् । ४७८

सञ्ज्ञा (संज्ञा) स्त्री. [ सम्+ज्ञा+अङ् ] आख्या; अभिधा;  
आह्वानं; नाम; नामधेयम्; 'लोकसंव्यवहारार्थं याः  
संज्ञाः प्रथिता भुवि । ता प्ररूप्यसुवर्णानां ताः प्रवक्ष्याम्य-  
शेषतः'—इति मनुः (८।१३१) । (८२२) सङ्केतः;  
हस्ताक्षरार्थसूचना; हस्तभ्रूलोचनादिभिः प्रयोजनस्य  
ज्ञापना; 'मुखापितैकाङ्गुलिसञ्ज्ञैव मा चापलायेति  
गणान् व्यनैपीत्'—इति कुमारे (३।४१) । चैतन्यं;  
चेतना; 'रतिखेदसमुत्पन्ना निद्रा संज्ञाविपर्ययः'— इति  
कुमारे (६।४४) । बुद्धिः; ज्ञानम्; 'गुरोर्नाधिगतः  
संज्ञां परीक्षन्भगवान्स्वराट् । ध्यायन् धिया सुरैर्युक्तः  
शर्म नालभतात्मनः'—इति भागवते (६।७।१७) ।  
'नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमिते'—इति  
भगवद्गीतायाम् (१।७) । गायत्री; सूर्यपत्नी;  
'मातृण्डस्य रवेर्भायां तनया विश्वकर्मणः । संज्ञा नाम  
महाभागा तस्यां भानुरजीजनत्'—इति मार्कण्डेये  
(७।७।१) । १५२

सटम् क्ली. [ सटतीति । सट् अवयवे+अच् ] जटा;  
'जटा जटिर्जटो जूटो जुटकं तु सटं सटा । कौटीरं जूटकं  
हस्तं शिखायां व्रतिनामपि'—इति शब्दरत्नावली ।  
५३२

सटा स्त्री. [ सट् अवयवे+अच् ] जटा; सटः; 'जटा जटि-  
र्जटो जूटो जुटकं तु सटं सटा'—इति शब्दरत्नावली ।  
केशरः; 'तं वाहनादवनतोत्तरकायमीपद् विध्यन्त-  
मुद्धतसटाः प्रतिहन्तुमीयुः'—इति रघो (१।६०) ।  
शिखा; 'क्रुद्धः सुदध्दोष्पुटः स धूर्जटिर्जटां तडि-  
द्वह्लिसटोप्ररोचिपम्'—इति भागवते (४।५।२) । ५३२  
सण्डः पुं.—पण्डः; समूहः । ४३०

सम् त्रि. [ अस्तीति । अस्+शत् ] सूरिः; प्राज्ञः;  
पण्डितः; धीरः; सत्यम्; अर्थाहितं; प्रशस्तं;  
विद्यमानम्; 'दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालङ्कृतोऽपि  
सन् । मणिना भूपितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः'—इति

हितोपदेशे । साधुः; 'रामं नमति सानन्दं धर्मानभि-  
निविश्य सन्'—इति मुग्धबोधे । क्ली. ब्रह्म;  
'ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः । ब्राह्मणा-  
स्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा'—इति भगवद्-  
गीतायाम् । 'सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।  
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ।' 'यतो  
विद्यमानजन्मनि उत्कृष्टचरिते च सदित्येतत्प्रयुज्यते  
अतो यज्ञादी कर्मणि प्रथमतः सच्छब्दः प्रयुज्यते'  
इति भगवद्गीताव्याख्या । ३३२

सततम् क्ली. [ सन्तन्यते स्मेति । सम्+तन्+क्त ।  
'समो वा हितततयोरिति' पक्षे मलोपः ] निरन्तर-  
क्रिया; तद्वति त्रि. । अव्य. सन्ततम्; अनिगं; नित्यम्;  
अजलं; शश्वत्; अश्रान्तम्; अविरतम्; अनवरतम्;  
अनारतम्; असक्तम् । ६९८

सती स्त्री. [ अस्तीति । अस्+शतृ, उगित्वाद् डीप् ]  
साध्वी; पतिव्रता; सुचरिता; 'सती सती योगविसृष्ट-  
देहातां जन्मने शैलवधूं प्रपेदे'—इति कुमारे (१।२१) ।  
दुर्गा; सीराष्ट्रमृत्तिका; दानम्; अवसानं; सावित्री;  
विद्यमाना; 'तथा समक्षं दहता मनोभवं पिनाकिना  
भग्नमनोरया सती । निनिन्द रूपं हृदयेन पार्वती प्रियेषु  
सौभाग्यफला हि चास्ता'—इति कुमारे (५।१) ।  
४९५

सत्तमः त्रि. [ अयमेपायतिशयेन सन् । सत्+तमप् ]  
उत्तमः; 'तद्भेदानपि वक्ष्यामि शृणु देवपिसत्तम'—इति  
देवीभागवते (१।१।६।३) । ६९०

सत्ता स्त्री. [ सतो भावः । सत्+तल् ] विद्यमानता;  
'यद्यपि पापस्य कार्यान्वितत्वेन तत्सत्तायामप्रामाण्यं  
प्रतिभाति'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । साधुता; भावः;  
जातिविशेषः । ८५०

सत्त्वम् क्ली. [ सतः साधून् त्रायते इति । सत्+त्रै+क ।  
यद्वा सीदन्ति सज्जना यत्र । सद् गतो+गुधुवीपचि-  
वचीति' त्र ] अरण्यम्; अटवी; कान्तारं; काननं;  
वनं; विपिनं; गहनम्; 'अयमेव मृगव्यसत्त्रकामः' इति  
किराते (१।३।९) । (४।१४) यागः; यज्ञः; ऋतुः;  
स्तोमः; सप्ततन्तुः; मलः; अध्वरः; विज्ञानः; संस्तरः;  
बहिः; सवः; 'अभयस्य हि यो दाता सम्पूज्यः सततं  
नृपः । सत्त्वं हि वदंते तस्य सदैवाभयदक्षिणम्'—इति

मनुः (८।३०३) । सदादानम्; आच्छादनं; धनं; गृहं; दानं; सरोवरं; कैतवम्; 'सत्त्रेण नूनं छत्रं हि चरन्तं पार्थमर्जुनम् । उत्तरः सारथिं कृत्वा नियतिं नगराद् बहिः'—इति महाभारते (४।३६।३८) । यागविशेषः; 'नैमिषेऽनिमिषक्षेत्रे ऋषयः शीनकादयः । सत्त्रं स्वर्गाय लोकाय सहस्रसममासत । कलिमागलमाज्ञाय क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णवे वयम् । आसीना दीर्घसत्त्रेण कथायां सक्षणा हरेः'—इति भागवते (१।१) । सदक्षिणं सततान्नदानम्; 'नालपेज्जनविद्विष्टान् वीरहीनां तथा स्त्रियम् । देवतापितृसञ्छास्त्रयज्ञसत्त्रादिनिन्दकैः । कृत्वा तु स्पर्शनालाप शुद्धयेताकार्वाकनात्'—इति मार्कण्डेये । 'सत्त्रं सदक्षिणं सततान्नदानम्'—इति तट्टीका । २१०

सत्त्रम् अव्य.—सह; सत्त्रा; साकम् । ८७७  
सत्त्रशाला स्त्री. [ सत्त्रस्य शाला ] अन्नादिदानगृहं; प्रतिश्रवः; 'ततः सा सत्त्रशालान्तः प्रविशेत् वणिक्सुता । अन्वगाद् राजपुत्रोऽपि स तां गुप्तमवेक्षितुम्'—इति कथासरित्सागरे (२।१।७४) । २९७

सत्त्रा अव्य.—सह; समं; सत्त्रम् । ८७७  
सत्त्वम् क्ली. [ सतो भावः । सत्+त्व ] प्रकृतेर्गुणविशेषः; अत्र सत्त्वं प्रकाशकज्ञानं सुखहेतुः । सत्त्वं द्वितकार्मिति । 'सत्त्वं रजस्तमश्चैव त्रीन् विद्यादात्मनो गुणान् । वैष्णव्येमान् स्थितो भावान् महान् सर्वानशेषतः'—इति मनुः (१।२।२४) । सत्ता; विद्यमानता; स्याम; बलं; 'शशंस तुल्यसत्त्वानां सैन्ययोर्वैष्णवसम्भ्रमम् । गुहाशयानां सिंहाना परिवृत्यावलोकितम्'—इति रघी (४।७२) । भूतः; पिशाचादिः; 'अद्य नूनं दशरथः सत्त्वमाविश्य भाषते । न हि राजा प्रियं पुत्रं विवासयितुमर्हति'—इति रामायणे ( २।३३।१० ) । द्रव्यं; व्यवसायः; असुः; 'ततो भूतोपसृष्टेव वेपमाना पुनः पुनः । धरण्यां गतसत्त्वेव कौशल्ये सतमन्नवीत्'—इति रामायणे (२।६०।१) । स्वभावः; 'सत्त्वविहितमतुलभुजयोर्बलमस्य पश्यत मूषेऽधिकुप्यतः'—इति किराते (१।२।२९) । आत्मा; चित्तं; रसः; आयुः; कुत्रेः; धनम्; आत्मता; पुं.—क्ली. [ सत्त्वमस्त्यस्येति । अशं आदित्वाद् ] जन्तुः; 'रक्षापदेशान्मुनिहोमघेनोर्वन्यान् विनेष्णन्निव दृष्टसत्त्वान्—इति रघी (३।८) ।

सत्त्वरम् अव्य.—क्ली. [ सह त्वरया वर्तते इति ] शीघ्रं; द्राक्; चपलं; लघु; मङ्गु; स्राक्; तूर्णं; त्वरितम्; आशु; अरम्; अह्वयं; क्षिप्रं; द्रुतम्; अञ्जसा; झटिति; 'राजा सत्त्वरमाहूय व्यापृतं वित्तसञ्चये । उवाच देशकालज्ञो निश्चितं सर्वतः शुचिः'—इति रामायणे (२।३९।१४) । तद्वति त्रि. । 'त्रिंशद्वर्षो वहेत् कन्यां हृद्यां द्वादशवार्षिकीम् । त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षा वा धर्मो सीदति सत्त्वरः'—इति मनुः (९।९४) । ६९७  
सत्वनम् क्ली. [ सीदन्त्यत्रेति । सद्+अधिकरणे ल्युट् ] गृहं; गेहम्; 'तिष्ठ मा मागमः पुत्रः यमस्य सदनं प्रति । इवो मया सह गन्तासि जनन्या च समेधितः'—इति रामायणे (२।६४।३६) । जलम् । २९१

सदः [ स् ] स्त्री—क्ली. [ सीदन्त्यस्यामिति । सद्+सर्वधातुभ्योऽसुन् ] इति असुन् ] सभा; समाजः; संसत्; आस्थानी; परिषत्; गोष्ठी; 'विपदि धैर्यमयाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः । यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्'—इति हितोपदेशे । ७४५

सदा अव्य. [ सर्व+सर्वकान्य' इति दा, 'सर्वस्य सोऽन्यतरेति' सादेशः ] सर्वकालः; सर्वदा; नित्यत्वं; सना; 'परोपकारनियतः सदा भव महाजन !'—इति विष्णुपुराणम् । ८८७

सदागतिः पुं. [ सदा सर्वदा गतिर्यस्य ] पवनः; श्वसनः; वायुः; मरुत्; अनिलः; मासतः; जगत्प्राणः; पूषदश्वः; पवमानः; प्रभञ्जनः; स्पर्शनः; वातः; नभस्वान्; मातरिश्वा; समीरः; समीरणः; गन्धवहः; गन्धवाहः; हरिः; महाबलः; 'एवमुक्तस्तथा शक्रः सन्दिदेश सदागतिम् । प्रातिष्ठत तदा काले मेनका वायुना सह'—इति महाभारते (१।७२।१) । सूर्यः; निर्वाणं; मोक्षः; मुक्तिः; सदीश्वरः; सर्वदागमनशीले त्रि. । 'चतुर्विंशतिपर्वं त्वा षण्णाभि द्वादशप्रथि । तत्रिषष्टिशतारं वै चक्रं पानु सदागतिः—इति महाभारते (३।१३।२५) । ७६  
सद्वक् [ श् ] त्रि. [ समान इव दृश्यतेऽस्मी । समान+दृश्+समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम्' इत्युक्त्वा क्विन्, 'दृग्दृशवतुषु' इति समानस्य सः ] तुल्यः; सदक्षः; समानः; सदृशः; प्रह्यः; प्रकाशः; प्रतिमः; प्रकारः; समं; सन्नियमः; 'न त्वया सदृग्नोऽस्ति त्रैलोक्येऽपि

धनुर्धरः—इति कथासरित्सागरे (३१।८९) । ६९४  
सदृक्षः त्रि. [ समान इव दृश्यते इति । समान+दृश्+  
क्स । समानस्य सादेशः ] सदृशः; समः; सदृक्; समानः;  
'कच्चिद्धरेः सौम्य सुतः सदृक्ष आस्तेऽग्रणी रथिनां साधु  
साम्बः'—इति भागवते (३।१।२९) । ६९४

सदृशः त्रि. [ समान इव दृश्यतेऽसौ । समान+दृश्+  
कञ् । 'दृग्दृशवत्तुप्' इति समानस्य सः ] समानः;  
सदृक्; 'आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः । आगमैः  
सदृशारम्भ आरम्भसदृशोदयः'—इति रघौ (१।१५) ।  
उचितः । 'तुल्यः समानः सदृक्षः सरूपः सदृशः समः ।  
साधारणसधर्माणी सवर्णः सन्निभः सदृक्'—इति  
हेमचन्द्रः । ६९४

सद्य [ न् ] क्ली. [ सीदन्त्यत्रेति । सद्+मनिन् ] गृहं;  
गेहं; भवनम्; आलयः; 'न केवलं सद्यनि यागधीपतेः  
पथि व्यजृम्भन्त दिवीकसामपि'—इति रघौ (३।१९) ।  
जलं; [ साद्यन्ते अवसाद्यन्ते प्राणिनो यत्रेति ] सद्यग्रामः ।  
२९१

सद्यः [ स् ] अव्य. [ समाने अहनि इति । 'सद्यः परत्परायै'-  
षम' इति घस् प्रत्ययः समानस्य सभावश्च निपात्यते ]  
तत्क्षणं; सपदि; तत्कालम् । ७५२

सद्यस्कः त्रि. [ सद्यः कायतीति । सद्यस्+कै+क ] प्रत्यग्रः;  
नूतनः; नवीनः; 'नवनीतं पुनः सद्यस्कं लघु सुकुमारं  
मधुरमिति'—सुश्रुते । ७६३

सधर्मचारिणी स्त्री. [ सह धर्मं चरतीति । सह+धर्मं+चर्+  
णिनि, 'वोपसर्जनस्य' इति सहस्य सः ] पत्नी; जाया;  
गृहिणी; गृहाः; दाराः; दारा; क्षेत्रं; कलयं; भार्या;  
सहचरी; वधुः; सधर्मिणी; गृहणी; पाणिगृहीती;  
'एतन्मे संशयं सर्वं वक्तुमर्हसि वै' प्रभो । सधर्मचारिणी  
चाहं भक्ता चेति वृषभ्यज्—इति महाभारते (१३।  
१५०।४८) । ४९४

सना अव्य.—नित्यं; नित्यत्वं; सनात्; 'सना पुराणमध्ये  
म्यारात्'—इति ऋग्वेदे (३।५।४।९) । ८८७

सनातनः त्रि. [ सना भवः । 'सायञ्चरमिति' टघुटचुलो  
नुट् च ] नित्यं; ध्रुवं; शाश्वतं; सुनिश्चलः; 'एषोऽनु-  
पस्कृतः प्रोक्तो योषधर्मः सनातनः । अस्माद्धर्मान्न च्यवेत  
क्षत्रियो घनन् रणे रिपून्'—इति मनुः (७।१८) ।  
(२५) पुं. विष्णुः; शिवः; ब्रह्मा; पितृणामतिथिः;

दिव्यमनुष्यः; 'सनत्कुमारो धर्मश्च सनकश्च सनातनः ।  
सनन्दश्चापि सूर्यश्च येऽन्ये वा ब्रह्मणः सुताः । विचक्षणा  
न यद्वक्तुं के वान्ये जडबुद्धयः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । वैष्णव-  
राजः । १२५

सनाभिः पुं. [ समानो नाभिर्गोत्रमस्य । 'ज्योतिर्जनपदेति'  
समानस्य सः ] सपिण्डः; ज्ञातिः; आत्मीयः; स्वजनः;  
वन्धुः; आत्मा; बान्धवः; सगोत्रः; त्रि. [ समानो  
नाभिर्वस्येति । समानस्य सः ] तुल्यः; स्नेहयुक्तः ।  
५०९

सनिष्ठीवम् क्ली. [ नि+ष्ठिवु निरसने+घञ्, संज्ञापूर्व-  
कत्वान्न गुणः । निष्ठीवेन सह वर्तमानम् ] सनिष्ठेवम्;  
अम्बुकृतम्; सयूक्तारवचनम् । १४२

सनिष्ठेवम् क्ली. [ निष्ठेवो मुखवारिबिन्दुः तेन सह वर्तते  
इति । निपूर्वच्छिबेर्घञ्, गुणः ] अम्बुकृतम् । १४२

सनीडः त्रि. [ नीडस्य वासस्थानस्य समीपमिति ।  
प्रादिसमासः ] निकटम्; 'सम्पत्य तत्सनीडेऽसौ तं  
वृत्तान्तमशिश्रवत्'—इति भट्टिः (५।३१) । नीडयुक्तः ।  
६९२

सन्तः पुं. [ सच्छब्दस्य प्रथमावहुवचनान्तरूपम् ] 'तं  
सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्वचनितहेतवः । हेमनः संल-  
क्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा'—इति रघौ  
(१।१०) । ३९८

सन्ततम् क्ली. [ सम्+तन्+क्त । 'समो वा हितततयोः'  
इति पक्षे मलोपाभावः ] सततं; तद्वति त्रि. । अव्य.  
सततम्; अनिशं; नित्यम्; अजस्रं; शश्वत्; अश्रान्तम्;  
अचिरतम्; अनवरतम्; अनारतम्; असवतम् । ६९८

सन्ततिः स्त्री. [ सम्+तन्+क्तिन् ] पुत्रः; (कन्या);  
सूनुः; आत्मजः; तनुजः; प्रसूतिः; सुतः; तुक्; तोकं;  
तनयः; नन्दनः; अपत्यम् । 'सन्तत्या पितृकृष्णं तु  
शोषयित्वा परिब्रजेत्'—इति स्मृतिः । गोघ्नम्; 'सन्ततिः  
शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे'—इति रघौ (१।६९) ।  
पङ्क्तिः; 'तच्छ्रुत्वा नेत्रयुगलात् स तत्याजाथुसन्ततिम्'—  
इति कथासरित्सागरे (१।१।५२) । विस्तारः; 'विदधाद्  
यज्ञसन्तत्यं वेदमेकं चतुर्विधम्'—इति भागवते  
(१।४।१९) । परम्पराभवः । ४९७

सन्तमसम् क्ली. [ समन्तात् तमः । 'अवसमन्वेभ्यस्तमसः'  
इति अच् ] विष्वक्तमः; व्यापकान्वकारः; अवतमसः;

अन्धतमसः; 'अवधार्य' कार्यगुस्तामभवन्न भयाय सान्द्रत-  
मसन्तमसम्—इति माघे (१।२२) । मोहः; महामोहः;  
'ममापि किं नो दयसे दयाघन त्वदङ्घ्रमन्नं यदि वेत्य  
मे मनः । निमज्जयन् सन्तमसे पराशयं विधिस्तु वाच्यः  
क्व तदागसः कथा'—इति नैषधे ९ सर्गः । ११०

सन्तानः पुं. [ सन्तनोति विस्तारयति पत्रपुष्पादीनिति ।  
सम्+तन् विस्तारे+ 'तनोतेरुपसंख्यानम्' इत्युक्त्या ण ]  
कल्पवृक्षः; [ सन्तन्यते इति । सम्+तन्+घञ् ] वंशः;  
विस्तारः; 'तयोस्तपादयापत्यं सन्तानाय कुलस्य नः ।  
मश्रियोगान्महाबाहो धर्मं कर्तुमिहाहंसि'—इति महा-  
भारते (१।१०३।१०) । अपत्यं; तुक्; तोकं; तनयः;  
तोकम; तकम; शेषः; अप्नः; गयः; जाः; यहुः; सुनुः;  
नपात्; प्रजा; वीजं; क्ली. अस्त्रविशेषे । 'सन्तानं  
नर्तकं घोरमास्यमोदकमष्टमम् । एतैर्विद्धाः सर्व एव  
मरणं यान्ति मानवाः'—महाभारते (५।१६।४०) । १३५

सन्दर्भः पुं. [ सम्+दृभं ग्रन्थे+घञ् ] ग्रन्थनं; ग्रन्थनं;  
गुम्फः; रचना; 'कविसमरसिहनादः स्वरानुवादः  
सुवैकसंवादः । विद्वद्विनोदकन्दः सन्दर्भोऽयं मया सृष्टः—  
इति आर्यासप्तशत्याम् । प्रवन्धः; ग्रन्थनम्; 'सन्दर्भो  
रचना गुम्फः ग्रन्थनं ग्रन्थनं समाः—इति हेमचन्द्रः ।  
'गूढार्थस्य प्रकाशश्च सारोक्तिः श्रेष्ठता तथा । नानार्थ-  
वत्त्वं वेद्यत्वं सन्दर्भः कथ्यते बुधैः'—इति सन्दर्भकारिका  
७३०

सन्धानम् क्ली. [ संदीयते इति, सम्+धा+ल्युट् ।  
संपूर्वो दाण् बन्धने वर्तते ] दामनी; दाम; पशुबन्धनं;  
रज्जुः । २७७

सन्देहः पुं. [ सम्+दिह्+घञ् ] एकवचिकविरुद्धभावा-  
भावप्रकारकं ज्ञानं; विचिकित्सा; संशयः; द्वापरः;  
शङ्का; वितर्कः; आरेकः; विभ्रमः; विकल्पः;  
भ्रान्तिः; 'तान् समीक्ष्य ततः सर्वान् निर्विशेषाकृतीन्  
स्थितान् । सन्देहादथ वेदभीं नाम्यजानास्रलं नृपम्—  
इति महाभारते (३।५७।११) । ६९१

सन्दोहः पुं. [ सम्+दुह्+घञ् ] समूहः; सङ्घः; समुदायः;  
उत्करः; 'स्तननूतनखलेखालम्बी तव धर्मबिन्दु-  
सन्दोहः । आभाति पटुसूत्रे प्रविशन्नैव मौक्तिकप्रसरः—  
इति आर्यासप्तशत्याम् (५८९) । ६८६

सन्धा स्त्री. [ सम्+धा+अञ् ] प्रतिज्ञा; आगू; सङ्गरः;

'प्रतिश्रवः; 'गङ्गां निषादाहृतनीनिवेशस्ततार' सन्धामिव  
सत्यसन्धः—इति रघौ (१।४।५२) । (८।१८) अवधिः;  
सीमा; स्थितिः; सन्धानं; सन्ध्या; 'सन्ध्या द्विजमैत्री  
पितृप्रसूः'—इति वाचस्पतिः । ७१५

सन्धानम् क्ली. [ सन्धीयते इति । सम्+धा+ल्युट् ]  
मद्यसज्जीकरणम्; अभिषवः; सन्धानी; सन्धिका;  
धान्याम्लम्; आरनालं; काञ्जिकं; सौवीरः; अवन्ति-  
सोमः; तुपोदकं; शुक्तं; सङ्घट्टनम्; 'मुखेन सा पद्म-  
सुगन्धिना निशि प्रवेपमानाधरपत्रशोभिना । तुयार-  
वृष्टिक्षतपद्मसम्पदां सरोजसन्धानमिवाकरोदपाम्—  
इति कुमारं (५।२७) । मदिरा; अवदंशः; सौराष्ट्रं;  
धनुषि वाणयोजनम्; 'तदाश् कृतसन्धानं' प्रतिसंहर  
शायकम् । आतंत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि'—  
इत्यभिज्ञानशाकुन्तले १ अङ्कः । अन्वेषणं; सन्धिः;  
'एवं कृते तु सन्धाने वृत्रः प्रमुदितोऽभवत् । यतः  
समभवच्चापि शक्रो हर्षसमन्वितः'—इति महाभारते  
(५।१०।३३) । [ सन्धातीति । सम्+धा+ल्युट् ] धारके  
त्रि. । 'मधु तु मधुरं कषायानुरसं...हृद्यं सन्धानं शोधनं  
रोपणमिति'—इति सुश्रुते (१।४५) । ३१८

सन्धिः पुं. [ सन्धानमिति । सम्+धा+कि ] सुरङ्गा;  
(८।३५) संश्लेषः; रन्ध्रं; राजादीनां षड्गुणान्तर्गत-  
गुणविशेषः; ऐक्यम्; एकता; 'मेल' इति भाषा ।  
'पणवद्धो भवेत् सन्धिः स्वयं हीनस्तमाचरेत् । मर्यादो-  
ल्लङ्घनं नास्ति यदि शत्रोरिति स्थितिः । मर्यादोल्लङ्घनं  
यत्र शत्रो संशयितं भवेत् । न तं संशयितं कुर्यादित्युवाच  
बृहस्पतिः । बलवद्विगृहीतः सन् नृपोऽनन्यप्रतिश्रयः ।  
आपन्नः सन्धिभावेन विदध्यात्कालयापनाम् । ये च  
देवेनोपहता राष्ट्रं येषां च दुर्गतम् । बहुवो रिपवो  
येषां तेषां सन्धिविधीयते । दुर्मन्त्रो भिन्नमन्त्रश्च  
नीचधर्मरतश्च यः । एतैः सन्धि न कुर्वीत विशेषात्  
पूर्वपीडितैः । सन्धि हि तादृशैः कुर्वन् प्राणैरपि हि  
हीयते'—इति भोजयुक्तिकल्पतरुः । संयोगः; श्लेषः;  
'तडागान्युदपानानि वाप्यः प्रस्रवणानि च । सीमासन्धिषु  
कार्याणि देवतायतनानि च'—इति मनुः (८।२४९) ।  
भगं; सङ्घट्टनं; रूपकाणां मुखाद्यङ्गं; सावकाशः;  
भेदः; साधनम्; 'तस्य सावरणदृष्टसन्धयः काम्यवस्तुषु  
नरेषु सङ्गिनः । बलभाभिरुपसृत्य चक्रिरे सामिभुक्त-

विषयाः समागमाः—इति रघी (१९।१६) । अक्षरद्वयस्य मेलनम्; 'सन्धिमात्रं न जानासि मा शब्दोदकशब्दयोः । न च प्रकरणं वेत्सि मूर्खस्त्वं कथमीदृशः'—इति कथा-सरित्सागरे (६।११७) । 'सन्धिरेकपदे नित्यो नित्यो घातूपसर्गयोः । सूत्रेषु च भवेन्नित्यः स चान्यत्र विभाषया'—इति प्राञ्चः । ७७१

सन्ध्या स्त्री. [ सम्+सम्भक् ध्यायत्यस्यामिति । सम्+ध्वे चिन्तायाम्+'आतरचोपसर्गे' इत्यङ् । यद्वा सन्दघातीति । सम्+घा+'अघ्न्यादयश्च' इति यक् प्रत्ययेन निपातितः ] कालविशेषः; दिवारात्रिसम्बन्धिवदण्डद्वयरूपः; पितृप्रसूः; सन्धा; द्विजमैत्री; सायं; दिनान्तं; निशादि; दिवसात्ययः; सायाह्नः; विकालः; ब्रह्मभूतिः; सायः; 'कालस्य तिस्रो भार्याश्च सन्ध्यारात्रिदिनानि च । याभिर्विना विधात्रा च संख्या कर्तुं न शक्यते'—इति ब्रह्मवैवर्ते । रात्रेराद्यन्तदण्डचतुष्टयात्मककालः; 'रवेस्तु मण्डलाद्वास्तात् सायं सन्ध्या त्रिनाडिका । तयैवाद्धोदयात्पूर्वं प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका ।' 'त्रियामां रजनीं प्राहुस्त्यक्त्वाद्यन्तचतुष्टयम् । नाडीनां तदुभे सन्ध्ये दिवसाद्यन्तसंज्ञिते'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । 'समुद्रे हिमवत्पार्ष्वे नद्यामस्यां च दुर्मते । रात्रावहनि सन्ध्यायां कस्य गुप्तः परिग्रहः'—इति तिथ्यादित्तरवम् । त्रिसन्ध्याकालिकोपासना; तत्कालोपास्या देवता; सन्ध्योपासनम्; प्रातःसन्ध्या; मध्याह्न-सन्ध्या; सायंसन्ध्या; 'अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि सन्ध्यो-पासनिकं विधिम् । अनर्हः कर्मणां विप्रः सन्ध्याहीनो यतः स्मृतः ।' 'एतत्सन्ध्यात्रयं प्रोक्तं ब्राह्मण्यं यदधिष्ठितम् । यस्य नास्त्यादरस्तत्र न स ब्राह्मण उच्यते ।' 'सर्वास्योऽपि यो विप्रः सन्ध्योपासनतत्परः । ब्राह्मण्याच्च न हीयेत अन्यजन्मगतोऽपि सन्'—इति याज्ञवल्क्यः । 'यावज्जीवनपर्यन्तं यस्त्रिसन्ध्यं करोति च । स च सूर्यसमो विप्रस्तेजसा तपसा सदा'—इति कौर्म । नदी-विशेषः; युगसन्धिः; चिन्ता; संश्रवः; सीमा; सन्धानं; कुसुमविशेषः । १०६

सन्नः त्रि. [ सद्+क्त ] शान्तः; अवसन्नः; 'कश्मलाभि-हिता सन्ना बभौ सा रावणोरसि ।' पं. पियालवृक्षः ।

७६७

सन्नदः त्रि. [ सम्+नह्+क्त ] वमितः; कबचितः;

दंशितः; कृतसन्नाहः; 'सन्नदो रथमास्थाय शरं धनुर्मुपादे'—इति भागवते (७।१०।६६) । व्यूढः; व्यूहविन्यासयुवतः; आततायी; वधोद्यतः; मन्त्रादि-संयुतः; आवद्धः; 'कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । सञ्जातः; 'पुराण-पत्रापगमादनन्तरं लतेव सन्नद्धमनोज्ञपल्लवा'—इति रघी (३।७) । ४६०

सन्नाहः पुं. [ संनह्यतेऽसौ इति । सम्+नह्+घञ् ] अङ्गत्राणं; वर्म; कङ्कटः; जगरः; कबचं; दंशः; तनुत्रं; माठी; उरश्छदः; तनुत्राणं; दंशनं; जालिका; 'पृथक् काञ्चनसन्नाहान् रथेष्वश्वानयोजयत्'—इति महाभारते (४।३०।१७) । उद्योगः; 'ततो रामशरान् दृष्ट्वा विमानेषु गृहेषु च । सन्नाहो राक्षसेन्द्राणां तुमुलः समपद्यत'—इति रामायणे, (६।७५।४७) । ४५९

सन्नाह्यः पुं. [ संनह्यते इति, सम्+नह्+घञ् ] समरोचित-गजः; युद्धयोग्यहस्ती; 'राजवाह्यस्तूपवाह्यः सन्नाह्यः समरोचितः'—इति हेमचन्द्रः । २२४

सन्निकर्षः पुं. [ सम्+नि+कृप्+घञ् ] सान्निध्यं; पार्ष्वं; समीपं; सविधं; समीपाभ्यासं; सवेशः; अन्तिकं; सदेशः; अम्यग्रं; सनीडं; सन्निधानम्; उपान्तं; निकटम्; उपकण्ठं; सन्निकृष्टं; समर्यादम्; अम्यणंम्; आसन्नः; सन्निधिः; 'स्त्रीसन्निकर्षं परिहर्तुमिच्छन् अन्तर्दधे भूतपतिः सभूतः'—इति कुमारे (३।७४) । विषयेन्द्रियसम्बन्धः; ज्ञानस्य कारणम् । ६९२

सन्निकृष्टः त्रि. [ सम्+नि+कृप्+क्त ] सन्निकर्ष-विशिष्टः; निकटः; सन्निधं; सन्निधानं; समीपः; समीपम् । ६९२

सन्निघम् क्ली. [ सम्+नि+घा+क ] सन्निधानं; निकटं; समीपम् । ६९२

सन्निधानम् क्ली. [ सम्+नि+घा+ल्युट् ] निकटं; समीपम्; 'श्रेयो मुहूर्तं तव सन्निधानं ममैव कृत्स्नादपि जीवलोकात्'—इति रामायणे (२।२१।५३) । [ सम्यक् निधीयतेऽस्मिन्निति ] आश्रयः; 'आवृतः संशयानाम-विनयभवनं पत्तनं साहसानाम्, दोषाणां सन्निधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम् । दुस्त्याज्यं यन्महद्भिः सुरनरवृषभैः सर्वमायाकरण्डं, स्त्रीरूपं केन लोके विष-ममृतमयं धर्मनाशाय सृष्टम्'—इति शान्तिशतकम् ।

अवस्थानम्; 'यस्मिन् गृहे च लिखितमेतत् तिष्ठति नित्यदा । सन्निवानं कृते श्राद्धे तत्रास्माकं भविष्यति'—इति मार्कण्डेये (१७।३५) । ६९२

**सन्धिः** पुं. [ सम्+नि+धा+कि ] सन्निकर्षः; समीपं; निकटम्; 'हीनान्नवस्त्रवेशः स्यात् सर्वदा गुरुसन्निवो'—इति मनुः (२।१९४) । इन्द्रियगोचरः; अवस्थानम्; 'गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । कावेरि नर्मदे सिन्धो जलेऽस्मिन् सन्धिं कुरु'—इति जलशुद्धिप्रकरणे । ६९२

**सन्धिः** त्रि. [ सम्यक् निभातीति । सम्+नि+भा+क ] सदृशः; 'भगवान् यज्ञपुरुषो जगर्जागेन्द्रसन्धिः'—इति भागवते (३।१३।३२) । ६९४

**सन्निवेशः** पुं. [ संनिविशन्ते अत्रेति । सम्+नि+विश्+घञ् ] संस्थानम्; 'उत्तानपाणिद्वयसन्निवेशात् प्रफुल्लराजीवमिवाङ्गमध्यै'—इति कुमारे (३।४५) । पत्तनादिषु दिगादिपरिच्छिन्नप्रदेशः; पूर्वदिगाद्यवच्छिन्नगृहम्; पुरादेवर्हिर्विहरणभूमिः; स्वाम्यादयः; निकर्षणम्; 'नगरादिवहिः स्वैरविहारचारुभूमिषु । तत्र द्वयं निगदितं सन्निवेशो निकर्षणम्'—इति शब्दरत्नावली । 'अशून्यतीरां मुनिंसन्निवेशैस्तमोऽपहन्त्री तमसां वगाह्य'—इति रघौ (१४।७६) । ७७८

**सन्न्यासः** पुं. [ सम्+नि+अस्+घञ् ] प्रायः; भोजनत्यागः; अनशनम्; जटामांसी; काम्यकर्मणां न्यासः; 'काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्न्यासं कवयो विदुः । सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः'—इति भगवद्गीतायाम् १८ अध्याये । 'सन्न्यासः कर्मणां न्यासः कृतानामकृतैः सह । कुशलाकुशलान्यां तु प्रहाणं न्यास उच्यते'—इति मात्स्ये । चतुर्थाश्रमः; 'अश्वालम्भं गवालम्भं सन्न्यासं पलपंतुकम् । देवरेण सुतोत्पत्तिं कलौ पञ्च विवर्जयेत्'—इति कलौ सन्न्यासनिषेधकं क्षत्रियवैश्वविषयकमिति मलमासतत्त्वम् । ७६०

**सपत्राकरणम्** क्ली. [ सपत्रशब्दात् कृत्रो योगे 'सपत्रनिष्पत्रादतिव्ययने'—इति डाच् ] परस्यातिपीडनं; सपत्राकृतिः; निष्पत्राकृतिः; अत्यन्तपीडनम् । ७६५

**सपत्नः** पुं. [ सह पतति एकार्ये इति । सह+पत्+न, सहस्य सः ] शत्रुः; 'संरक्ष तात मन्त्रांश्च सपत्नांश्च ममोद्धर । निपुर्णेनाभ्युपापायेन यद् ब्रवीमि तथा कुरु'

—इति महाभारते (१।१४।५।) । ४५६

**सपदि** अव्य. [ सह पद्यते इति, पद् गती+इन्, सहस्य सः ] द्रुतं; तत्क्षणम्; 'सपदि मुकुलिताक्षीं रुद्रसंरम्भभीत्या, दुहितरमनुकम्प्यामद्रिरादाय दो याम् । सुरगज इव विभ्रत् पद्मिनीं दन्तलग्नां, प्रतिपथगतिरासीद् वेगदीर्घी-कृताङ्गः'—इति कुमारे (३।७६) । ७५२

**सपर्या** स्त्री. [ सपर पूजयाम्+कण्वादिभ्यो यक्' इति यक्, 'अप्रत्ययात्' इति अ, टाप् ] पूजा; अर्चा; 'तमर्घ्यमर्घ्यादिकयादिपुरुषः सपर्याया साधु स पर्यंपुपुजत्'—इति माघे (१।१४) । १२८

**सपिण्डः** पुं. [ समानः पिण्डो मूलपुरुषो निवापो वा यस्य ] समानस्य सः सप्तपुरुषान्तर्गतज्ञातिः; सनाभिः; सगोत्रः; आत्मीयः; स्वजनः; 'पञ्चमात् सप्तमादूर्ध्वमातृतः पितृतः क्रमात् । सपिण्डता निवर्तते सर्ववर्णेष्वयं विधिः'—इत्युद्गाहतत्त्वम् । ५०९

**सपीतिः** स्त्री. [ पा पाने+वितन्, 'धुमास्थायोति' ईत्वम् । सह एकत्र पीतिः पानं, सहस्य सः ] सहपानकं; तुल्यपानं; सहपीतिः; आत्मीयजनैः सह मिलित्वैककालपानम्; 'सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे कृधिश्च मे.....यज्ञेन कल्पताम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१८।९) । ३२८

**सप्तकी** स्त्री. [ सप्तभिः स्वरैरिव कायति शब्दायते इति । सप्त+कै+क, गौरादित्वाद् डीष् ] काञ्ची; मेखला; रसना । ५६०

**सप्ततन्तुः** पुं. [ सप्तभिर्भूरदिभिर्महाव्याहृतिभिरग्निजिह्वाभिर्वा तन्यते इति । तनु विस्तारे+ 'सितनिगमीति' तुन् । सप्त तन्तवः संस्था यस्येति वा ] यागः; यज्ञः; ऋतुः; स्तोमः; मखः; वितानः; संस्तरः; बहिः; स्वः; सत्रम् । 'सप्ततन्तुमधिगन्तुमिच्छतः कुर्वन्नुग्रहमनुज्ञया मम । मूलतामुपगते खलु त्वयि प्रापि धर्ममयवृक्षता मया'—इति माघे (१।४।६) । ४१४

**सप्तला** स्त्री. [ सप्त पत्राणि मनोबुद्धीन्द्रियाणि वा लातीति । सप्त+ला+क ] नवमालिका; नवमल्लिका; चर्मकषा; गुञ्जा; पटला । २०७

**सप्तविंशतिमौक्तिका** स्त्री. [ सप्तविंशतिः मौक्तिकानि यस्यां सा ] नक्षत्रमाला । ४६२

**सप्तार्चिः** [ स् ] पुं. [ सप्त अर्चीसि यस्य ] अग्निः; वह्निः; अनलः; 'सप्तसमीपगीतं त्वां सप्ताणवजलेशयम् ।



सप्ताचिर्मुखमाचक्षुः सप्तलोकैकसंश्रयम्—इति रघी  
(१०।२१) । चित्रकवृक्षः; शनिग्रहः; क्रूरचक्षुषि  
त्रि. । ६२

सप्ताश्वः पुं. [सप्त अश्वा यस्य.] सूर्यः; अर्कवृक्षः;  
'आ सूर्यो यातु सप्ताश्वः क्षेत्रं यदस्योर्विया दीर्घयाथे'  
—इति ऋग्वेदे (५।४५।९) । 'सूर्यः सर्वस्य प्रेरको  
देवः सप्ताश्वः सर्पणस्वभावाश्वोपेतः सप्तसंख्याकाश्वो  
वा आयातु अस्मदभिमुखमागच्छतु'—इति तद्भाष्ये  
सायणः । ३६

सप्तः पुं. [पप् समवाये + 'सपिनसिवसिपदिभ्यस्तिप्']  
सपति सङ्ग्रामेषु सहसा समवेति । सर्वति, सृषि गतौ,  
अस्माद्वा तिप्रत्यये गुणे च रेफलोपे बाहुलकात् साधुः ]  
अश्वः; अर्वा; गन्धर्वः; वाजी; तुरङ्गमः; तुरगः;  
तार्क्ष्यः; हरितः; तुरङ्गः; युयुः; घोटकः; हयः;  
बाहः । ४३६

सभा स्त्री. [सह भान्ति शोभन्ते यत्रेति । सह+भा  
दीप्तौ+भिदादित्वाद् अधिकरणे अङ्, सहस्य सः ] सह  
भान्ति अत्र; समज्या; परिपत्; गोष्ठी; समितिः;  
संसत्; आस्थानी; आस्थानं; सदः; समाजः; पर्वत्;  
'यस्मिन् देशे निपीदन्ति विप्रा वेदविदस्त्रयः । राज्ञ-  
श्चाधिष्ठतो विद्वान् ब्राह्मणस्तां सभां विदुः'—इति मनुः ।  
सामाजिकः; द्यूतगृहं; समूहः; गृहम् । ७४५, ८२१  
सभाजनम् क्ली. [सभाज प्रीतिदर्शनयोः+णिच्+ल्युट्]  
मैत्री; मित्रता; सहयं; सखिता; गमनागमनादिसमये  
सुहृदादेः आलिङ्गनारोग्यप्रश्नस्वागतादिनानन्दोत्पादनम्;  
आनन्दनम्, आप्रच्छनं; गमनसमये सुहृदमालिङ्गय  
गमनानुज्ञाग्रहणम्; आगतस्य वा स्वागता रोग्यादिपृच्छा;  
'सभाजने मे भुजमूर्ध्वबाहुः सव्येतरं प्राध्वमितः प्रयुङ्क्ते'  
—इति रघी (१३।४३) । [सभाजयतीति, सभाज  
प्रीतौ+ल्यु] प्रीतिदायके त्रि. । 'प्रभूतनागाश्वरयं सभा-  
जनं समृद्धिपुक्तं बहुपानभोजनम् । मनोहरं काञ्चन-  
चित्रभूषणं गृहं महत् शोभयतामियं मम'—इति महा-  
भारते (४।१३।१०) । ७०६

सभिकः पुं. [सभा द्यूतसभा आश्रयत्वेनास्त्यस्येति ।  
सभा+प्रोहादित्वात् ठन्] सभिकः; द्यूतकारकः;  
दुरोदरम्; 'दुरोदरं च निग्रन्धद्यूतकारकलानकाः ।  
सभिकः प्रतिभूषेति'—इति जटाधरः । ३८८

सभिकः पुं.—द्यूतकारकः; सभिकः; 'ग्लहे शतिकवृद्धेस्तु  
सभिकः पञ्चकं शतम् । गृह्णीयाद्धर्तकितवादितराद्दशकं  
शतम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।२०२) । ३८८

समम् अव्य.—सहितम्; 'सार्द्धं तु साकं सत्रा समं सह'  
इत्यमरः । 'विद्ययैव समं कामं मर्तव्यं ब्रह्मवादिना ।  
आपद्यपि हि घोरायां नत्वेनाभिरिणो वपेत्'—इति मनुः  
(२।११३) । त्रि. [समतीति, सम् वैकल्ये + पचाद्यच्]  
सर्वं; (सर्वनामसंज्ञम्) 'नमः समस्तात् पूर्वस्मा अन्तरस्मा  
अमेघसाम्'—इति मुग्धवोवे । समानम्; 'समायैषु  
परायैषां मुक्तयेऽर्थान्तराय च'—इति मुग्धवोषे ।  
साधुः; पुं. राशिविशेषाणां संज्ञाविशेषः; 'क्रूरोऽय  
सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च, ओजोऽय युग्मं विषमः समश्च ।  
चरस्थिरद्वयात्मकनामधेया, मेषादयोऽमी क्रमशः  
प्रदिष्टाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । मानस्य प्रकारविशेषः;  
वर्गमूलानयनार्थम् - अङ्कोपरि दत्तऋजुरेखाविशेषः;  
'त्यक्त्वान्त्याद्विपमात् कृति द्विगुणयेन्मूलं समे तद्धृते ।  
त्यक्त्वा लब्धकृति तदाद्यविपमाल्लब्धं द्विनिघ्नं न्यसेत्'  
—इति लीलावती । ८७७

समग्रः त्रि. [समं समकालमेव गृह्णातीति । सम+ग्रह+  
ड] सकलं; सर्वं; समस्तं; कृत्स्नं; विश्वं; निखिलम्;  
अखिलम्; 'चतुर्दश हि वर्षाणि समग्राण्युष्य कानने ।  
भ्रात्रा सह मया चैव पुनः प्रत्यागमिष्यति'—इति रामा-  
यणे (२।५२।८४) । पूर्णः; 'अवेक्षमाणस्तस्याश्च  
हिडिम्बो मानुषं वपुः । स्रग्दामपूरितशिवं समग्रेन्दु-  
निभाननम्'—महाभारते (१।१५३।१३) । ७१३

समन्ततः [स्] अव्य. [समन्त+आद्यादित्वात् तसि]  
चतुर्दिगभिव्याप्तः; पस्तिः; सर्वतः; विद्वक्; समन्तात्;  
'स्त्रियश्च सर्वा रुद्रुः समन्ततः पुरं तदासीत् पुनरेव  
सहकुलम्'—इति रामायणे (२।५७।३४) । ८७४

समयः पुं. [सम्यगेतीति । सम्+इण् गतौ+पचाद्यच्]  
सिद्धान्तः; कृतान्तः; राद्धान्तः; कालः (८६९);  
'समयः समवर्तत इवैष यत्र मां समनन्दयत् सुमुखि !  
गीतमापितः । अयमागृहीतकमनीयकङ्कणस्तव मूर्ति-  
मानिव महोत्सवः करः'—इति उत्तरचरिते १ अङ्के ।  
शपयः; संवित्; क्रियाकारः; निर्देशः; सद्भूतः;  
आचारः; 'ऋषीणां समये नित्यं ये चरन्ति युधिष्ठिर !,  
निश्चिताः सर्वधर्मज्ञास्तान् देवान् ब्राह्मणान् विदुः'

—इति महाभारते (१३।१०।५०) । भाषा; 'देशा-  
चारान् समयान् जातिधर्मान् बुभूषते यः सः परावरज्ञः'  
—इति महाभारते (५।३३।११६) । व्यवहारः; 'न तैः  
समयमन्विच्छेत् पुरुषो धर्ममाचरन्'—इति मनुः  
(१०।५३) । सम्पत्; नियमः; 'अतो भजिष्ये समयेन  
साध्वीं, यावत्तेजो विभृयादात्मनो मे'—इति भागवते  
(३।२२।१८) । अवसरः । १०

समया अव्य. [ समयनमिति । सम्+इण् गती+ 'आः  
समिण्+निकपिभ्याम्' इति आ प्रत्ययः ] निकटं;  
निकषा; हिहक्; सामीप्यम्; 'कुटजानि वीक्ष्य शिखिभिः  
शिखरीन्द्रं समयावनी घनमदभ्रमराणि । गगनं च गीत-  
निनदस्य गिरोच्चैः समया वनीघनमदभ्रमराणि'—इति  
माघे (६।७३) । मध्यः; 'समया निकटे मध्ये मध्ये  
च निकपान्तिके । हिहृद्ध मध्ये विनार्ये च'—इति रुद्रः ।  
कालविज्ञापनम् । ८७९

समरः पुं.—कली. [ सम्यग् अरणं प्रापणमिति । सम्+ऋ  
गती+अप् । यद्वा सम्यक् ऋच्छत्यत्रेति । 'मन्दरकन्दर-  
शीकरेति' बाहुलकाद् अरप्रत्ययेन साधुः ] युद्धं; संग्रामः;  
संख्यं; रणम्; 'इतराण्यपि रक्षांसि पेतुर्वानरकोटिषु ।  
रक्षांसि समरोत्थानि तच्छोणितनदीष्विव'—इति रघो  
(१२।८२) । ४५३

समरोचितम् त्रि.—युद्धयोग्यम् । २२४

समर्थावः त्रि. [ मर्यादिया सह वर्तमानः ] समीपः; निकटः ।  
६९२

समवर्ती [ न् ] पुं. [ समं वर्तते इति । सम्+वृत्+णिनि ]  
यमः; शमनः; प्रेतपतिः; पितृपतिः; कीनाशः; वैवस्वतः;  
कृतान्तः; कालः; कालिन्दीसोदरः; अन्तकः; धम-  
राजः; दण्डधरः; हरिः; दक्षिणाशापतिः; श्राद्धदेवः;  
यमुनाभ्राता; 'शासितारं च पापानां पितृणां समवर्ति-  
नम् । असृजत्सर्वभूतात्मा निषिधं च घनेश्वरम्'  
—इति महाभारते (१२।२०७।३५) । तुल्यवर्तन-  
शीले त्रि. । ७१

समवायः पुं. [ समवाय्यते इति । सम्+अव+अय्+  
घञ् ] समूहः; 'अनघ्यायो रुद्रमाने समवाये जनस्य च'  
—इति मनुः (४।१०८) । सम्बन्धविशेषः; 'घटा-  
दीनां कपालादौ द्रव्येषु गुणकर्मणोः । तेषु जातेश्च सम्बन्धः  
समवायः पकीर्तितः'—इति भाषापरिच्छेदः । 'अवय-

वावयविनोर्गुणगुणिनोः क्रियाक्रियावतोर्जातिव्यक्तयो-  
नित्यद्रव्यविशेषयोश्च यः सम्बन्धः स समवायः'—इति  
सिद्धान्तमुक्तावली । ६८६

समसुप्तिः पुं. [ समेषां सर्वेषां सुप्तिर्यत्र ] कल्पान्तः;  
महाप्रलयः; स्त्री. [ समा सुप्तिरिति ] तुल्यशयनम् ।  
११७

समस्तम् त्रि. [ सम्+अस्+क्त ] सम्पूर्णः; समं; सर्वं;  
विश्वम्; अशेषं; कृत्स्नं; निखिलम्; अखिलं; नि-  
शेषं; समग्रं; सकलं; पूर्णम्; अखण्डम्; अनूनकम्;  
अनन्तम्; अन्यूनम्; अनूनम्; 'सूक्तान्यशेषाणि शटा-  
कलापो घ्राणं समस्तानि हवीषि देव'—इति विष्णु-  
पुराणे (१।४।३३) । ७१३

समा स्त्री. [ सम् वैकलव्ये+पचाद्यच्, ततष्टाप् ] वत्सरः;  
हायनः; अब्दः; शरत्; वर्षः; संवत्सरः; [ समति  
विकलयति भावान् । समा नित्यबहुवचनान्ता स्त्रिया-  
मिति वामनादयः । 'समां समां विजायते' इत्येकत्वेऽपि  
दृश्यते । अतएव समाः इति बहुवचनं तथा समेति एक-  
वचनमपि ] 'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः  
समाः । यत्क्रीञ्चमिथुनादेकमवधोः काममोहितम्'—इति  
रामायणे (१।२।१५) । ११६

समांसमीना स्त्री. [ समां समां विजायते इति । 'समां  
समां विजायते' इति ख ] प्रतिवर्षप्रसूतगवी । २७२

समाख्या स्त्री. [ समाख्यायतेऽनेति । सम्+आ+ख्या+  
अङ् ] कीर्तिः; श्लोकः; यज्ञः; अभिख्या; संज्ञा; 'सपि-  
ण्डीकरणसमाख्यासिद्धचर्यं सुतरां तत्र तथा चरणम्'  
—इति तिथ्यादितत्त्वम् । १५३

समाघातः पुं. [ समाहन्यतेऽनेनेति । सम्+आ+हन्+  
घञ् ] युद्धं; रणः; समरः; आयोधनम्; 'संस्फोटस्तु  
समाघातः क्रुद्धसत्वरयोर्द्वयोः'—इति साहित्यदर्पणे  
(६।४२१) । वधः । ४५४

समाजः पुं. [ संवीयतेऽनेति । सम्+अज्+घञ्, 'अजेव्यं-  
घञपोः' इति वीभावो न । 'अजिब्रज्योश्च' इति कुत्व-  
निषेधः ] पशुभिन्नानां सङ्घः; सङ्घातः; उत्करः;  
हस्ती; (७।४५) सभा; संसत्; आस्थानी; परिषत्;  
सदः; 'धर्मव्यतिक्रमो हास्य समाजस्य ध्रुवं भवेत् ।  
यत्राधर्मः समुत्तिष्ठेन्न स्थेयं तत्र कर्हिचित्'—इति भाग-  
वते । ६८६

समाधानम् क्ली. [ सम्+आ+धा+ल्युट् ] ब्रह्मणि मनः-  
स्थिरीकरणं; चित्तैकाग्र्यम्; अवधानं; प्रणिधानं;  
समाधिः; स्वधिष्ण्यानामेकदेशे मनसा प्राणधारणा ।  
वैकुण्ठलीलाभिध्यानं समाधानं तथात्मनः—इति भाग-  
वते (३।२।६) । १२८

समाधिः पुं. [ समाधीयतेऽस्मिन् मनो जनैरिति । सम्+  
आ+धा+उपसर्गे घोः किः ] इति कि ] प्रणिधानं;  
समाधानं; चित्तैकाग्रता; ब्रह्मणि मनःस्थिरीकरणं;  
समर्थनं; नीवाकः; नियमः; 'अयाचतारण्यनिवास-  
मात्मनः फलोदयान्ताय तपः समाधये'—इति कुमारे  
(५।६) । ध्यानं; काव्यगुणविशेषः; अर्थालङ्कार-  
विशेषः; 'समाधिः सुकरे कार्ये देवाद्वस्त्वन्तरागमात्'  
—इति साहित्यदर्पणे (१०।७४०) । ] समाधीयते-  
ऽनेनेति करणे कि ] कारणसामग्री; 'तं वेधा विदधे नूनं  
महाभूतसमाधिना । तथाहि सर्वे तस्यासन् परार्थैक-  
फला गुणाः'—इति रघौ (१।२९) । इन्द्रिय-  
नेरोवनम्; 'नित्यं शुद्धं बुद्धिपुक्तं सत्यमानन्दमद्वयम् ।  
तुरीयमक्षरं ब्रह्म अहमस्मि परं पदम् । अहं ब्रह्मेत्यव-  
स्थानं समाधिरिति गीयते'—इति गारुडे ४४ अध्याये ।  
'द्वादशध्यानपर्यन्तं मनोब्रह्मणि यो नरः । तुष्टे तु संयतो  
मुक्तः समाधिः सोऽभिधीयते । ध्येयमेव हि सर्वत्र ध्याता  
तल्लयतां गतः । पश्यति द्वैतरहितं समाधिः सोऽभि-  
धीयते—इति गारुडे २४० अध्याये । 'तस्यैव कल्पना-  
हीनं स्वरूपग्रहणं हि तत् । मनसा ध्याननिष्पाद्यं समाधिः  
सोऽभिधीयते'—इति विष्णुपुराणे (६।७।९०) । 'इमं  
गुणसमाहारमनात्मत्वेन पश्यतः । अन्तः शीतलता यस्य  
समाधिरिति कथ्यते'—इति योगवाशिष्ठे । योगाङ्ग-  
विशेषः; स्वनामधेयतवैश्वविशेषः; अयं हि महामाया-  
भाराव्य परं ज्ञानमलभत् । अस्य विशेषवृत्तान्तस्तु देवी-  
माहात्म्ये द्रष्टव्यः । १२८

समानम् वि. [ समानितीति सम्यक्प्रकारेण प्राणितीति ।  
सम्+आ+अन्+ल्यु । यद्वा समानं मानमस्य, 'समानस्य  
च्छन्दसीति' स ] समं; सदृशः; तुल्यः; सन्निभः; ।  
'भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्धूरमाससब्ज'  
—इति रघौ । सत्; एकम्; 'नोपगच्छेत् प्रमत्तोऽपि  
स्त्रियमातं वदशने । समानसायने चैव न शयीत तथा  
सह'—इति मनुः (४।४०) । [ मानेन सह वर्त-

मानम् ] गवसहितम्; 'स्वैर्यं समानमहरन्मधुमानिनीनां  
रोमोत्सवो मम यदडिघ्नविटिङ्कतायाः—इति भागवते  
(१।१६।३६) । पुं. [ समन्तादित्यनेनेति । सम्+  
अन्+घञ् ] नाभिसंस्थितवायुः; शरीरस्थवायुविशेषः;  
'हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः ।' वर्ण-  
भेदः । ६९४

समानोदर्यः पुं. [ समाने उदरे शयितः । 'समानोदरे शयित  
ओ चोदात्तः' इति यत् । 'विभाषोदरे' इति पक्षे सादेशो  
न ] सहोदरः; सोदर्यः; सगर्भः; सोदरः । ५०८

समाप्तिः स्त्री. [ सम्+आप्+क्तिन् ] अवसानम्;  
अन्तः; 'सद्यः प्रवालोद्गमचारुपत्रे नीते समाप्ति नव-  
चूतवाणे । निवेशयामास मधुद्विरेफान् नामाक्षराणीव  
मनोभद्रस्य'—इति कुमारे (३।२७) । समर्थनं; परि-  
प्राप्तिः । ८८७

समालम्भनम् क्ली. [ सम्+आ+लम्भ्+ल्युट् ] कुङ्कु-  
मादिविलेपनं; विच्छित्तिः; कपायः; समालम्भः;  
विलेपनं; चर्चा; माष्टिः; 'समालम्भनमादाय गौरो-  
वनमनःशिलाम् । आजगमुस्तत्र मुदिता वराः कन्याश्च  
पोडश'—इति रामायणे (४।२६।२८) । सम्यङ्  
मारणं; सम्यक्स्पर्शनम् । ५४०

समासः पुं. [ सम्+अस्+घञ् ] समग्रहारः; संक्षेपः;  
सङ्ग्रहः; 'सर्वेषां तु विदिव्रैषां समासेन चिकीर्षितम् ।  
स्थापयेत् तत्र तद्वंशं कुर्याच्च सम्यक्रियाम्'—इति  
मनुः (७।२०२) । समर्थनम्; ऐकपद्यम् । ७६६

समाहारः क्ली. [ सम्+आ+हृ+घञ् ] समाहरणं;  
समासः; संक्षेपः; सङ्ग्रहः; समुच्चयः; बहूनां भिन्नानां  
ब्राह्मव्यापारेण बुद्ध्या वा राशीकरणम्; 'समासस्तु  
समाहारः संक्षेपः संग्रहोऽपि च'—इति हेमचन्द्रः ।  
'समाहारः स्वरितः'—इत्यष्टाध्यायी । ७६६

समाह्वयः पुं. [ समाह्वयतेऽप्रेति । सम्+आ+ह्वे+पुंसीति  
घ । बाहुलकात् नात्वम् ] सङ्गरः; युद्धं; सम्परायः;  
समाघातः; संज्ञा (८।१९); आह्वानं; घूर्तः; सङ्गरम्;  
'घूर्तं समाह्वयं चैव राजा राष्ट्रान्निवारयेत् । राज्यान्त-  
करणावेतो द्वौ दोषो पृथिवीक्षिताम् । प्रकाशमेत-  
त्तास्कर्यं यदेवनसमाह्वयी । तयोर्नित्यं प्रतीघाते नृपति-  
र्यत्नवान् भवेत् । अप्राणिभिर्यत् क्रियते तल्लोके घूर्त-  
मुच्यते । प्राणिभिः क्रियते यस्तु स विज्ञेयः समाह्वयः ।

यूतं समाह्वयं चैव यः कुर्यात् कारयेत् वा । तान्त्वान्  
घातयेद्राजा शूद्रांश्च द्विजलिङ्गनः—इति मनुः

(१।२२१-२२४) । ४५०

समित् स्त्री. [ समीयतेऽनेति । सम्+इण्+क्विप् ] युद्धं;

रणः; 'पाण्ड्यश्च राजा समितीन्द्रकल्पो युधि प्रवीरै-  
र्वह्निभिः समेतः— महाभारते (५।२२।२३) । ४५३

समित् [ घ् ] स्त्री. [ समिच्यतेऽनेति । सम्+इण्+

क्विप्, तुक् ] इन्धनम्; एषम्; इन्धम्; एषः; समि-  
न्धनम्; अग्निस्न्दीपनार्थतृणकाष्ठादिः; 'अर्कः पलाशः

खदिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः । उडुम्बरः शमी दूर्वाः  
कुशाश्च समिवः क्रमात्—इति याज्ञवल्क्यः । 'प्रादेश-

मात्राः सशिखाः सवल्काश्च पलाशिनीः । समिधः कल्प-  
येत् प्राज्ञः सर्वकर्मसु सर्वदा—इति मत्स्यपुराणे ।

'नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्याद् देवर्षिपितृतर्पणम् । देवता-  
भ्यर्चनं चैव समिदाधानमेव च—मनुः (२।१७६) । ६९

समित्तिः स्त्री. [ संयन्त्यस्यामिति । सम्+इण्+क्विप् ]

युद्धम्; 'ये वा मध्ये समितिशालिन आत्तचापाः,  
काम्बोजमत्स्यकुलसृञ्जयकैकयाद्याः—इति भागवते

(२।७।३४) । (८२१) सङ्गतिः; सङ्गः; सन्निपातः;  
'प्रकृत्तिलक्षणं निष्ठा पुमान् यर्हि गृहाश्रमे । स्वधर्मो

चानुतिष्ठेत् गुणानां समितिर्हि सा—इति भागवते  
(१।१।२५।८) । साम्यं; सभा; 'प्रभाते राजसमितौ

सञ्जयो यत्र वा विभोः । ऐकात्म्यं वासुदेवस्य प्रोक्त-  
वानर्जुनस्य च—इति महाभारते (१।२।२२४) । ४५३

समीकम् क्ली. [ सम्+अलीकादयश्चेति ईक ] युद्धं,

रणः; 'तमिन्नरो विह्वयन्ते समीके रिखिवासस्तन्वः  
कृण्वतत्राम्—इति ऋग्वेदे (४।२४।३) । ४५३

समीचीनम् क्ली. [ सम्यगेव, सम्यक्+विभाषाञ्चे-

रदिक् स्त्रियाम् इति ख ] यथार्थं; सत्यं; सम्यक्;  
ऋतं; तथ्यं; यथातथ्यं; यथास्त्यतं; सद्भूतं; तद्वति

त्रि. । 'समीचीनं वचो ब्रह्मन् सर्वज्ञस्य तवानघ ।  
तमो विशीयते मह्यं हरेः कथयतः कयाम्—इति भाग-

वते (२।४।५) । १४४

समीपः त्रि. [ सङ्गता आपो यत्र । 'ऋक्पूरुषूःपथामानघो'

इति अ; 'द्वयन्तरुपसर्गोऽप्येव इत् इति इत् ] निकटः;  
'अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमास्थितः । सावित्रीमप्य-

धीयीत गत्वारण्यं समाहितः—इति मनुः (२।१०४) । ६९२

समीरः पुं. [ सम्यगीर्त्तं गच्छतीति । सम्+ईर् गतो

कम्पने च+क. ] वायुः; पवनः; समीरणः; 'समीर-  
शिथिरः शिरःसु वसतां सतां ज्वनिका निकाममुखि-

नाम्—इति माघे (४।५४) । ७६

समीरणः पुं. [ समीरयतीति । सम्+ईर्+ल्यु ] पवनः;

श्वसनः; वायुः; मस्तु; अनिलः; मास्तः; जगत्प्राणः;  
पृषदश्वः; पवमानः; प्रभञ्जनः; स्पर्शनः; वातः;

नभस्वान्; मातरिश्वाः; समीरः; समिरः; सदागतिः;  
गन्ववहः; हरिः; महाबलः; 'यः पूरयन् कीचकरन्ध-

भागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन । उद्गास्यतामिच्छति  
किन्नराणां तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम्—इति कुमारे

(१।८) । मखकः; पथिकः; क्ली. [ सम्+ईर्+ल्युट् ]

प्रेरणम्; 'शराभिघाताच्च ख्वा च राजन् स्वया च  
भासास्त्रसमीरणाच्च—इति महाभारते (८।८।२३) ।

प्रेरेके त्रि. । 'सोऽपिबत् पाण्डुराभ्राभस्तत्कालं ज्ञाति-  
मिर्वृतः । वनान्तरगतो रामः पानं मदसमीरणम् ।' ७६

समुखः त्रि. [ मुखेन सह वर्तमानः ] वाग्मी; वावदूकः ।

३७४

समुच्छ्रयः पुं. [ सम्+उत्+श्रि+अच् ] उत्सेधः; समु-

च्छ्रायः; आरोहः; 'कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिनी वित्तमसा  
तमसासरयुतटाः—इति रघो (१।२०) । विरोधः ।

१८१

समुदयः पुं. [ सम्+उत्+इण्+अच् ] युद्धं; संग्रामः;

समरः; रणः; 'द्रोणः पाञ्चालपुत्रेण समागम्य महारणे ।  
महासमुदयं चक्रे शरैः सन्नतपर्वभिः—इति महा-

भारते (६।११३।४४) । (६८६) सार्थः; यूप्यं;  
समूहः; 'तमुपाजग्मतुस्तौ च सेनासमुदयान्वितौ । तं

विज्ञायैव सम्बन्धं मुदा दुहितुवत्सली—इति कथासरि-

त्सागरे (१०।१९६) । समुद्गमः; दिवसः; लग्नम् ।

४५३

समुद्गः पुं. [ समुद्गच्छतीति । सम्+उद्+गम्+अन्ये-

ष्वपीति-ठ ] सम्पुटकः; सम्पुटः; समुद्गकः; 'शुक्लांश्च-

न्दनकल्कांश्च समुद्गेष्ववतिष्ठतः—इति रामायणे

(२।९।१७५) । [ मुद्गेन सह वर्तमानः ] मुद्गसहितः ।

७६४

समुद्रः पुं. [ चन्द्रोदयाद् आपः सम्यगुन्दन्ति विलघन्ति

अत्र । चन्द्रोदयात् सद्गुन्दयति वा । उन्दी वलेदने+

‘स्फायितञ्ची’ति रक् । ‘अनिदितामिति’ नलोपः ।  
मुद्रा मर्यादा तथा सह वर्तते इति वा । सम्यगुद्गतो  
रोऽग्निरथ । मुद्रं रान्ति ददति इति डे, मुद्राणि रत्नादीनि  
तै सह वर्तते इति वा ] अश्विः; अकूपारः; पारावारः;  
सरित्पतिः; उदन्वान्; उदधिः; सिन्धुः; सरस्वान्;  
सागरः; अर्णवः; रत्नाकरः; जलनिधिः; याद-  
पतिः; अपांपतिः; महाकच्छः; नदीकान्तः; तरोयः;  
द्वीपवान्; जलेन्द्रः; मन्विरः; क्षौणीप्राचीरं; मक-  
रालयः; सरिताम्पतिः; जलधिः; नीरनिधिः; नीरधिः;  
अम्बुधिः; पाथोनिधिः; पाथोधिः; यादसाम्पतिः;  
नदीनः; इन्द्रजनकः; तिमिकोपः; वारानिधिः;  
वारिनिधिः; वार्द्धिः; वारिधिः; तोयनिधिः; कीला-  
लधिः; धरणीपूरः; क्षीरान्विः; धरणिप्लवः; वाङ्कः;  
कचङ्गलः; पेरुः; मितद्रुः; बाहिनीपतिः; गङ्गाधरः;  
दारदः; तिमिः; प्राणभास्वान्; ऊर्मिमाली; महाशयः;  
अम्भोनिधिः; अम्भोधिः; तरिपः; कूलङ्कपः; तारिपः;  
वारिराशिः; शैलशिविरं; पराकुदः; तरन्तः; मही-  
प्राचीरं; पयोधिः; सरित्नायः; अम्भोराशिः; धुनी-  
नाथः; नित्यः; कन्विः; अपानाथः; ‘अपां चैव समुद्रेन  
स समुद्र इति स्मृतः’—इति वायुपुराणम् । ‘सामुद्रमुदकं  
धारं सर्वदोषप्रकोषणम्’—इति राजवल्लभः । मुद्रा-  
युक्ते त्रि । ‘हृदि कामो भ्रुवोः कोधो लोभश्चाधरदच्छ-  
दात् । आस्याहाक् सिन्धवो मेढ्राद् निःकृतिः पायोरघा-  
श्रयः’—इति भागवते (३।१२।१३) । ६५२

समुद्रकान्ता स्त्री. [ समुद्रस्य कान्ता ] नदी; सिन्धुः;  
स्रवन्ती; सटिनी; तरङ्गिणी; धुनी; निर्झरिणी;  
निम्नगा; कूलङ्कपा; शैवालनी; सरस्वती; हृदिनी;  
आपगा; ज्योतः; श्रोतस्विनी; कर्पूः; कुल्या; द्वीपवती;  
सरित्; समुद्रगा; पृक्का । ६६५

समुद्ररमणा स्त्री. [ समुद्रो रमण इव यस्याः ] पृथ्वी;  
समुद्ररसना । १५६

समुद्ररसना स्त्री. [ समुद्रः रसनेव यस्याः ] समुद्रमेखला;  
पृथ्वी; समुद्ररमणा; समुद्राम्बरा । १५६

समुद्ररसना स्त्री.—समुद्ररसना; समुद्रमेखला; समुद्र-  
रमणा; समुद्राम्बरा; समुद्रान्ता; पृथ्वी; पृथिवी;  
भूमिः; अचला । १५६

समुद्रवह्निः पुं. [ समुद्रस्य वह्निः ] वाडवानलः; और्वः;

वाडवः; वडवानलः; वडवामुखः । ७०

समुद्रद्वः त्रि. [ सम्+उत्+नह्+क्त ] अतिगर्वितः;  
गर्वितः; पण्डितम्मन्यः; प्रभुः; समुद्रूतः; ऊर्ध्ववदः ।  
३८३

समुद्रः पुं. [ समुह्यते इति । सम्+ऊह्+घञ् ] अनेकः;  
निवहः; व्यूहः; सन्दोहः; विसरः; व्रजः; स्तोमः;  
ओधः; निकरः; व्रातः; वारः; सङ्घातः; सञ्चयः;  
समुदायः; समुदयः; समवायः; चयः; गणः; संहतिः;  
वृन्दं; निकुरम्बं; कदम्बकं; पूगः; सन्नयः; स्कन्धः;  
निचयः; जालम्; अग्रं; पटलं; काण्डं; मण्डलं;  
चक्रं; विस्तरः; उत्करः; समुच्चयः; आकारः;  
प्रकरः; सङ्घः; प्रचयः; जातम्; ‘एवं दण्डविधिं  
कुर्याद्द्वारिकः पृथिवीपतिः । ग्रामजातिसमूहेषु समय-  
व्यभिचारिणाम्’—इति मनुः(८।२२१) । ६८६

समुद्रः त्रि. [ सम्+ऋधु वृद्धी+क्त ] समुद्धियुक्तः;  
अधिकद्धिः; सम्पत्तिशाली; आढ्यः; धनवान्; इनः;  
ईशः; धनी; ईश्वरः; ‘संहृष्टमनुजोपेतां समुद्र-  
विपणापणाम्’—इति रामायणे (२।१४।२७) । पुं.  
नागविशेषः; महाभारते (१।५७।१७) । ३५६

सम्पत्तिः स्त्री. [ सम्+पद्+कित् ] विभवोत्कर्षः;  
श्रीः; लक्ष्मीः; सम्पत्; सम्पद्; ऋद्धिः; भूतिः;  
‘तदैव च ददौ तस्मै सुतां क्लेशविर्वाद्धिताम् । निजां शिवाय  
सम्पत्तिमिव मूढत्वहारिताम्’—इति कथासरित्सागरे  
(२।४।६१) । ३९७

सम्परायः पुं. [ सम्पक् परे काले ईयते इति । सम्+पर+  
इण्+घञ् ] युद्धं; सम्परायकं; सम्परायिकं; योधनं;  
समरः; कलहः; संग्रामः; रणः; आयोधनं; जयः;  
प्रधनं; प्रविदारणं; मूर्धः; संशयम् । आपत्; उत्तरकालः ।  
४५४

सम्पिण्डिताङ्गुलिः स्त्री. [ सम्पिण्डिताः संकुचिताः  
अङ्गुलयः यत्र ] मुष्टिः । ५३७

सम्पुटः पुं. [ सम्+पुट्+क ] सम्पुटकः; आधारविशेषः;  
समुद्गः; समुद्गकः; कुक्कपुष्पं; पेटा; एकजातीयो-  
भयमव्यवर्ती; ‘सकामः सम्पुटो जप्यो निष्कामः संपुटं  
विना’—इति तन्त्रसारः । ‘केवलां मातृकां कृत्वा मातृका  
तारसम्पुटा । मातृकापुटितं तारं न्यसेत् साधकसत्तमः’  
—इति तन्त्रसारः । रतिवन्धविशेषः; ‘सम्प्रसार्योभयोः

पादौ शय्यागतकपोलकः । भगलिङ्गस्य संयोगाद् रमते सम्पुटो हि सः—इति रतिमञ्जरी । ७६४

सम्पूक्तः त्रि. [ सम्+पृक्+क्त ] मिश्रितः; करम्बः; कवरः; मिश्रः; खचितः । ७४१

सम्प्रदायः पुं. [ सम्प्रदीयतेऽनेन पारंपर्योपदेशः । सम्+प्र+दा+घञ्, 'आतो युक् चिष्कृतोः' इति युक् ] गुरुपरम्परागतसदुपदेशः; शिष्टपरम्परावतीर्णोपदेशः; आम्नायः; पारम्पर्यः; गुरुक्रमः; 'सम्प्रदायविगमाद्दुपेयुषी रेखाशमविनाशिविग्रहः । स्मर्तुमप्रतिहतस्मृतिः श्रुतीर्दंत इत्यभवदत्रिगोत्रजः—इति भाषे (१४।७९) । गुरुपरम्परागतसदुपदिष्टव्यक्तिसमूहः; 'सम्प्रदायानुरोधेन पीर्वापर्यानुसारतः । श्रीभागवतभाषार्थदीपिकेयं प्रतन्यते—इति श्रीधरस्वामी । ४०२

सम्प्रयोगः पुं. [ सम्+प्र+युज्+घञ् ] निघुवनं; संवेशनं; रहः; रतिः; रतं; सुरतं; मोहनम्; अन्वितिः; सम्बन्धः; 'ज्णत्वमन्यातपसम्प्रयोगात् शैत्यं हि यत् सा प्रकृतिर्जलस्य—इति रघौ (५।५४) । कामर्षणं; वशीकरणादिकर्म; अर्थिते त्रि. । ५६९

सम्प्रश्नः पं. [ सम्यक् पृच्छनम् । सम्+पृच्छ्+नञ् ] हुं; सम्पृच्छो । ८७६

सम्प्रहर्षः पुं. [ सम्यक् प्रकृष्टो हर्षः ] हन्तः; आनन्दधुः । ८७५

सम्प्रहारः पुं. [ सम्यक् प्रकारेण प्रह्रियतेऽत्रेति । सम्+प्र+हृ+घञ् ] युद्धं; सङ्ग्रामः; रणः; समरः; 'व्यश्वी गदाव्यायतसम्प्रहारौ भग्नायुषी बाहुविमर्दनिलो—इति रघौ (७।५२) । गमनं; हननम् । ४५३

सम्बन्धः पुं. [ सम्बन्धते इति । सम्+बन्ध्+घञ् ] सम्बन्धकः; 'सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । ग्रन्थादी तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः ।' योनिजसम्पर्कः; 'सम्बन्धो येषु येषां यः सर्वजातिषु सर्वतः । तं त्वां ब्रवीमि वेदोक्तं ब्रह्मणा कथितं पुरा । सम्बन्धस्त्रिविधः पुंसां विप्रेन्द्र ! जगतीतले । विद्याजो योनिजश्चैव प्रीतिजश्च प्रकीर्तितः । मित्रं तु प्रीतिर्जं ज्ञेयं स सम्बन्धः सुदुर्लभः । मित्रमाता मित्रभार्या मातृतुल्या न संशयः—इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे । समृद्धिः; न्यायः; सख्यः; संसर्गः; त्रि. शक्तः; हितः । ८६८

सम्बाधः पुं. [ सम्यग् बाधा यत्र ] सङ्कटः; 'संस्कृतीविपुलतया मिथो नितम्बैः सम्बाधं वृहदपि तद् बभूव वत्मं—इति भाषे (८।२) । भगं; भयम्; 'व्यायामसहमत्यर्थं तृणराजसमं महत् । सर्वायुधमहामात्रं शत्रुसम्बाधकारकम्—इति महाभारते (४।३।८।७) । नरकवर्त्म । ८२७

सम्भवः पुं. [ सम्+भू+अप् ] उत्पत्तिः; 'महतां प्रियेण निर्मितमप्रियमपि सुभग ! सह्यतां याति । सुतसम्भवेन यौवनविनाशनं न खलु खेदाय—इति आर्यासप्तशत्याम् । (४।५८) । हेतुः; मेलकः; आघेयस्य आघारानतिरिक्तत्वम्; सङ्केतः; अपायः; वर्तमानकल्पीयाहङ्कृतः । ८८१

सम्भाव्यः त्रि. [ सम्भवितुं योग्यः । सम्+भू+ओरावश्यके' इति ण्यत् ] किल; संभवनीयता । ८७४

सम्भेदः पुं. [ सम्+भिद्+घञ् ] सिन्धुनद्योः सङ्गमः; 'परस्त्रियं योऽभिवदेत् तीर्थेऽरण्ये वनेऽपि वा । नदीनां वापि सम्भेदे स संग्रहणमाप्नुयात्—इति मनुः (८।३५६) । नदीमात्रसङ्गमः; 'नदः शोणो गङ्गा तेषाननयेति स्फुटमिमम्, त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघे—सौन्दर्यलहरी । स्फुटनम्; कौष्यं गतिक्षयोऽङ्गानां सम्भेदः क्षतसर्षणम्—इति सुश्रुते (२।५) । मेलनम् । ६६९

सम्भोगः पुं. [ सम्+भुज्+घञ् ] रतिः; सुरतम्; 'रत्युन्मादिसमारम्भाः साक्षात्कारकरा मम । आत्मप्रदानसम्भोगान्मामुद्धतुं त्वमर्हसि—इति महाभारते (४।१३।२८) । भुक्तिः; भोगः; 'सम्भोगो दृश्यते यत्र न दृश्येतागमः क्वचित् । आगमः कारणं तत्र न सम्भोग इति स्थितिः—इति मनुः (८।२००) । जिनज्ञासनं; हर्षः; केलिनागरः; शृङ्गारभेदः; 'दर्शनस्पर्शानादीनि निषेवेते विलासिनी । यत्रानुरक्तत्वान्योऽन्यं सम्भोगः समुदाहृतः—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । ८२८

सम्भ्रमः पुं. [ सम्+भ्रम्+घञ् ] दर्पः; मदः; अवल्लेपः; मग्नः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः; संवेगः; संरम्भः; आटोपः; भयादिजनितत्वरा; आवेगः; प्रवेगः; त्वरा; त्वरिः; 'वीक्ष्य वेदिमय रक्तविन्दुभिर्बन्धुजीवपृथुभिः प्रदूषिताम् । सम्भ्रमोऽभवदपोढकर्मणाम् ऋद्विजां च्युतविकङ्कतसुचाम्—इति रघौ (१।१२५) । आदरः; महाभ्रमः; सूत्रम्; सयम्; 'सम्भ्रमस्त्याज्यतामेव

सर्वैर्वालोकृते महान्—इति रामायणे (४।२।१४) ।

७२२

सम्मदः पुं. [ सम्+मद्+‘प्रमदसंमदो हर्षो’ इति. अप् ]  
हर्षः; प्रमोदः; प्रमदः; प्रीतिः; उत्कर्षः; उद्धवः;  
मुत्; आनन्दः; शर्म; जोषः; शं; सुखम्; ‘मदसम्मद-  
पीडाद्यैवेस्वर्यं गद्गदं विद्मुः—इति साहित्यदर्पणे  
(३।१६७) । मत्स्यविशेषः; ‘बह्वृचश्च सौभरिर्नाम  
महर्षिरन्तर्जले द्वादशाब्दकालमुवास । तत्र चान्तर्जले  
मत्स्यः सम्मदो नामातिबहुप्रजोऽतिप्रमाणो मीनाधि-  
पतिरासीत्—इति विष्णुपुराणे (४।२।१९) । तद्वति  
त्रि. १२३

सम्मदः पुं. [ संमृद्यतेऽत्रेति । सम्+मृद्+घञ् ] युद्धं;  
समरः; संग्रामः; ‘जवे प्रहारे सम्मदं सर्वं एवातिमानुपाः ।  
सर्वैजिता महीपाला दिग्जये भरतर्षभ—इति महा-  
भारते (५।१६८।१०) । परस्परविमर्दः (७६९);  
परिमलः; ‘यद्गोप्रतरकल्पोऽभूत् संमर्दस्तत्र मज्जताम् ।  
अतस्तदाह्यया तीर्थं पावनं भूवि पश्ये’—इति रघौ  
(१५।१०१) । ४५४

सम्मार्जनी स्त्री. [ संमृज्यते संशुद्धयतेऽन्येति । सम्+मृज्+  
ल्युट्+ङोप् ] धूल्यादिमार्जनीसाधनी; शोधनी; ऊहनी;  
समूहनी; बहुकरी; वद्धनी । ३०२

सम्यक् [ च् ] त्रि.-अव्य. [ सम्+अञ्च्+ऋत्विगादिना  
क्विन् । ‘समः समि’ इति सम्यादेशः ] सत्यवचनम्;  
ऋतं; सत्यं; समीचीनं; तथ्यं; यथायथम्; [ अर्थेन  
सह समञ्चति सङ्गच्छते ] मनोज्ञः; सङ्गतः; ‘तन्तुं ततं  
संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुधे पयस्वती’—  
इति ऋग्वेदे (२।३।६) । १४४

सम्राट् [ ज् ] पुं. [ सम्यक् राजते इति । सम्+राज्+  
क्विप् । ‘मो राजि समः क्वी’ इति समो मकारस्य मादेश-  
स्तेन नानुस्वारः ] चक्रवर्ती; सार्वभौमः; येन राजसूयेन  
इष्टम्, यो मण्डलस्येश्वरः, आज्ञया राज्ञः शास्ति यः,  
(राजसूयश्चक्रवर्तिसाध्यो यगविशेषः । तेन येन इष्टं  
यागः कृतः । यो मण्डलस्य द्वादशराजमण्डलस्य ईश्वरः ।  
यश्च राज्ञो नृपान् आज्ञया शास्ति भृत्यवद्व्यापारेषु  
नियोजयति स सम्राडुच्यते ।) केचित्तु समुच्चयेन त्रीण्ये-  
तान्याहुः । राजसूयराजी यः स सम्राट् चतुरन्घ्रिसीमा-  
बन्धिज्ञाया भूम्यं ईश्वरः सोऽपि । यश्च कियत्परि-

माणया भूमेः पतीनाज्ञया शास्ति सोऽपि । [ इह परत्र  
च सम्यक् राजते इति क्विप् ] ‘आस्वादवद्भिः कवलै-  
स्तृणानां कण्डूयनैर्दशनिवारणैश्च । अव्याहतीः स्वैरागैः  
स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्—इति रघौ  
(२।५) । ४२२

सरः [ स् ] क्ली. [ सरतीति । सृ+‘सर्वधातुम्योऽसुन्’  
इति असुन् ] सरोवरः; तडागः; ‘तथैव वनदुर्गेषु पुष्पित-  
द्रुमसानुषु । सरःसु रमणीयेषु पद्मोत्पलयुतेषु च’—इति  
महाभारते (१।१५६।२४) । नीरं; जलम्; ‘सरो  
नीरे तडागे च’—इति रुद्रः । ६७५

सरम् क्ली. [ सरतीति । सृ+अच् ] सरोवरः; जलं;  
पुं. दध्यग्रं; गतिः; वाणः; लवणः; निर्झरे पुं.-स्त्री ।  
त्रि. सारकः; भेदकः; । ८१२

सरकः पुं.-क्ली. [ सरतीति । सृ+वुन् ] शीघ्रपात्रं;  
गल्बकः; अनुतर्षः; चषकः; शीघ्रपानम्; इक्षुशीघ्र;  
अच्छिन्नाध्वगपडिक्तः; मद्यपरिवेणम्; ‘प्राप्तायां निशि  
पप्रच्छ निजं परिजनं च सः । किमद्य रात्रिपर्याप्त-  
मस्ति नः सरकं न वा’—इति कथासरित्सागरे (५४।  
१९९) । क्ली. [ सरमेव+स्वार्थे कन् ] सरोवरः;  
आकाशः; त्रि. [ सुष्ठु सरतीति । सृ+‘प्रसृत्वः समभि-  
हारे वुन्’ इति वुन् ] गतिशीलः । ३२७

सरघा स्त्री. [ सरं मधुविशेषं हन्तीति । सर+हन्+ङ ।  
घत्वनिपातनात् साधुः ] मधुमक्षिका; क्षुद्रा; ‘भल्लाप-  
वज्जितैस्तेषां शिरोभिः इमश्चुलैर्महीम् । तस्तार सरघा-  
व्याप्तैः सक्षीद्रपटलैरिव’—इति रघौ (४।६३) । २५६

सरटः पुं. [ सरतीति । सृ गतो+शकादित्वादटन् ] कृक-  
लासः; प्रतिसूर्यः; शयानकः; प्रतिसूर्यकः; ‘गिरगिट’  
इति भाषा । ‘पल्ल्याः प्रपाते च फलं सरटस्य प्ररोहणे ।  
शीर्षे राजप्रियोऽवाप्तिभलि चैश्वर्यं मेव च ।’ वातः ।

२३४

सरणिः स्त्री. [ सरन्त्यनयेति । सृ गतो+‘अतिसृष्ट्वमीति’  
अनि ] पन्थाः; अघ्रा; पद्धतिः; एकपदी; वर्त्म;  
वर्तनी; अयनं; पदवी; मार्गः; पद्या; निगमः;  
मृतिः; ‘सरलां सरणिं त्यक्त्वा जीवितस्मृह्या समम् ।  
गुहा तेन ततः सान्द्रतमोभीमा व्यगाह्यत’—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् (३।४०१) । पडिक्तः; प्रसारिणी;  
सरणा; सरणी । २६०

सरणी स्त्री. [ सरणि+वाङीष् ] पन्थाः; मार्गः; अध्वा;  
पदविः; सृतिः; पङ्क्तिः; प्रसारिणी; सरणिः;  
सरणा। २६०

सरमा स्त्री. [ सृ+वाहुलकाद् अम । यद्वा रमया शोभया  
सह वर्तमाना ] कुक्कुरी; कुकुंरी; कुकुरी; शुनकी;  
श्वानी; सारमेयी; शुनी; देवशुनी; देवकुक्कुरी;  
राक्षसीभेदः; सा च विभीषणपत्नी, इयं लङ्कावास-  
समये सीतायाः प्रणयिनी आसीत् । कश्यपपत्नीविशेषः;  
दक्षपुत्री; 'गोलाङ्गुलश्चकोरश्च चैत्पापत्यं तयैव च ।  
अपत्यं सरमायाश्च गणो वै भ्रमरादयः'—इति बह्नि-  
पुराणे । २८२

सरलः त्रि. [ सरतीति । सृ+वृषादिभ्यश्चित् इति  
कल्च् । बाहुलकाद् गुणः ] अवक्रः; ऋजुः; दक्षिणः;  
'आदिश्यानाययामास गणकान् सरलाशयः'—इति कथा-  
सरित्सागरे । उदारः; पूं. वृक्षविशेषः; पीतद्रुः; पूति-  
काष्ठः; धूपवृक्षकः; पीतदारुः; भद्रदारुः; मनोज्ञः;  
पीतः; स्निग्घदाहसंज्ञः; स्निग्घः; मरिचपत्रकः; पीत-  
वृक्षः; सुरभिदारुः; 'सरलः पीतवृक्षः स्यात् तथा सुरभि-  
दांशकः । सरलो मधुकस्तिक्तः कटुपाकरसो लघुः ।  
स्निग्घोष्णः कर्णकण्ठाक्षिरोगरक्षाकरः स्मृतः । कफा-  
निलस्वेदयूककामलाक्षित्राणापहः'—इति भावप्रकाशः ।  
बृद्धः; अग्निः । ३८५

सरव्यम् क्ली. [ सरं रागं व्ययतीति । सर+व्ये+उ ]  
लक्ष्यं; वेध्यं; निमित्तं; शरव्यम् । ४६८ -

सरसम् क्ली. [ रसेन जलेन सह वर्तमानम् ] सरोवरः;  
रसयुक्ते त्रि. । 'कविता कोमलवनिता आघाता सुख-  
दायिका । बलादानीयमाना सा सरसा विरसा भवेत्'  
—इत्युद्भटः । ६७५

सरसी स्त्री. [ सृ+असुन् । गीरादित्वाद् ङीष् ] सरोवरः;  
सरः; 'सरसीश्वरविन्दानां वीचिविक्षीमशीतलम् ।  
आमोदमुपजिघ्रन्ती स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति  
रघी (१।४३) । ६७५

सरस्वती स्त्री. [ सरो नीरं ज्ञानं वा तद्वद् रसो वास्त्यस्या  
इति । सरस्+मत्तुप्, मस्य वः । 'तसौ मत्वर्थ' इति भक्त्वात्  
पदकार्यम् ] वाणी; 'उच्चचार पुरस्तस्थ गूढरूपा सरस्वती'  
—इति रघी (१।५।४६) । नदी (६६५); 'ते तथा  
तैश्च सा वीरैः पतिभिः सह पञ्चभिः । बभूव परमप्रीता

नागैरिव सरस्वती'—इति महाभारते (१।२।१।४।३) ।  
स्त्रीरत्नं; गौः; नदीभेदः; मनुपत्नी; ज्योतिष्मती;  
ब्राह्मी; सोमलता; बृद्धशक्तिविशेषः; दुर्गा; 'स्वराः  
स्वरणशीलत्वाद् गेयास्थाः सप्त कीर्तिताः । अति प्रापण-  
दाने वा तेन देवी सरस्वती'—इति देवीपुराणे । वाग्दे-  
देवता; ब्राह्मी; भारती; भाषा; गौः; वाक्; वाणी;  
इरा; शारदा; गिरा; गिरादेवी; गौर्देवी; ईश्वरी;  
वाचा; वचसामीशा; वाग्देवी; वर्णमातृका; गौः;  
श्रीः; वाक्येश्वरी; अन्यसन्ध्येश्वरी; सार्यसन्ध्यादेवता;  
'आदौ सरस्वतीपूजा श्रीकृष्णेन विनिर्मिता । यत्प्रसादा-  
न्मुनिश्रेष्ठ मूर्ध्ना भवति पण्डितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ८  
सरस्वान् [ त् ] पूं. [ सरो नीरमस्त्यस्येति । मत्तुप्, 'तसौ  
मत्वर्थ' इति भक्त्वात् पदकार्यम् ] रत्नाकरः; उदविः;  
उदन्वान्; सरित्पतिः; अकूपारः; पारावारः; तोय-  
निधिः; अणवः; जलराशिः; सागरः; समुद्रः; नदः;  
रसिके त्रि. । ६५२

सरित् स्त्री. [ सरतीति, सृ गती+ह्रसृह्रियुषिभ्यः  
इति इति इति ] नदी; 'सरितो मार्गवाहिन्यस्तथा-  
संस्तत्र पातिते'—इति देवीमाहात्म्ये । सूत्रं; दुर्गा;  
'क्रियाकारणरूपत्वात् सरणाच्च सरिन्मता । सङ्गमाद्  
गमनाद् गङ्गा लोके देवी विभाव्यते'—इति देवीपुराणे ।  
६६६

सरित्पतिः पूं. [ सरितां पतिः ] सरितां नायः; सरिता-  
म्पतिः; सरितायः; समुद्रः; सागरः । ६५२

सरिद्धरा स्त्री. [ सरित्सु वरा श्रेष्ठा ] सरितांवरा;  
भागीरथी; सुरसरित्; विष्णुपदी; जाह्नवी; गङ्गा;  
मन्दाकिनी; त्रिपथगा; त्रिदशदीधिका; 'महाभिषं तु  
तं दृष्ट्वा नदी दैवैर्व्यूतं नृपम् । तमेव मनसा ध्यायन्त्यु-  
पावर्तत्सरिद्धरा'—इति महाभारते (१।९।६।८) । नदी-  
श्रेष्ठे त्रि. । 'सा तमग्निसमं विप्रमनुचिन्त्य सरिद्धरा ।  
शतषा विद्वता यस्माच्छतद्वुरिति विश्रुता'—इति महा-  
भारते (१।७।८।९) । ६७२

सरीसृपः पूं. [ कुटिलं सर्पतीति । सृप्+नित्यं कौटिल्ये  
गती' इति यद्गुलिक पचाद्यच् ] अहिः; सर्पः; भुजगः;  
उरगः; भुजङ्गमः; 'वनं च दोषबहुलं बहुव्यालसरी-  
सृपम् । परिक्लेशश्च वो मन्वे ध्रुवं तत्र भविष्यति'  
—इति महाभारते (३।२।३) । जङ्गमे त्रि. । 'पातं



न शेकुद्विपदश्चतुष्पदः सरोसृपं स्याणु यदत्र दृश्यते'  
—इति भागवते (५।१८।२७) । ६४०

सरोजम् क्ली. [ सरसि जातमिति । सरस्+जन्+ङ ]  
पद्मं; कमलं; सरोरुहम् । ६९७

सरोरुहम् क्ली. [ सरसि रोहतीति । सरस्+रुह्+क्विप् ]  
पद्मं; कमलं; सरोजम् । ६७९

सर्जः पुं. [ सृजति निर्यासादीनि । सृज्+अच् ] सर्जकः;  
शालवृक्षः; सालः; सर्जरसः; पीतशालः; 'कदम्ब-  
सर्जाभुंननीपकेतकीविकम्पयस्तत्कुमुमाधिवासितः । सशी-  
कराम्भोधरसङ्गशीतलः समीरणः कं न करोति सोत्सुकम्'  
—इति ऋतुसंहारे (२।१७) । १९५

सर्पः पुं. [ सृप्यते इति, सृप्+घञ् । सर्पति इतस्ततो गच्छ-  
ति, सृप्+अन् ] हिंस्रजन्तुविशेषः; पृदाकुः; भुजगः;  
भुजङ्गः; अहिः; भुजङ्गमः; आशीविषः; विषधरः;  
चक्री; व्यालः; सरोसृपः; कुण्डली; गूढपात्; चक्षु-  
श्रवाः; काकोदरः; फणी; दर्वीकरः; दीर्घपृष्ठः;  
दन्दशूकः; विलेशयः; उरगः; पन्नगः; भोगी; जिह्मगः;  
पवनाशनः; विलेशयः; कुम्भीनसः; द्विरसनः; भेक-  
भृक्; श्वसनोत्सुकः; फणाधरः; फणावान्; फणवान्;  
फणाकरः; फणकरः; समकोलः; व्याडः; दण्टी;  
विषास्यः; गोकर्णः; उरङ्गमः; गूढपादः; विलवासी;  
दविभृत्; हरिः; प्रचलाक्की; द्विजिह्वः; जलरुण्डः;  
कञ्जुकी; चिकुरः; भुजः । 'अप्रियेणास्य तान् दृष्ट्वा  
केशाः शीर्यन्त वेधसः । हीनाः स्वशिरसो भूयः समारोहन्  
ततः शिरः । सर्पणात्तेऽभवन् सर्पा हीनत्वाद्दहयः स्मृताः'  
—इति बह्निपुराणे । नागकेशरः; गमनं; इमश्रुधारी  
म्लेच्छजातिविशेषः । पुरा अयं क्षत्रिय आसीत्, सगर-  
राजेन अस्य वेदयागादौ अजधिकारित्वं कृत्वा वेशान्यत्वं  
घर्मनाशश्च कृतः । ६४०

सर्पभुक् [ ज् ] पुं. [ सर्पं भुङ्क्ते इति । सर्पं+भुज्+  
क्विप् ] राजसर्पः; भुजङ्गभोजी; सर्पविशेषः; मयूरः;  
सर्पमलके त्रि. । ६४३

सर्पाशनः पुं. [ सर्पं मश्नातीति । सर्पं+अश्+ल्यु ] मयूरः;  
सर्पारतिः; सर्पारिः; केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रच-  
लाक्की; बहिणः; कलापी; शिखावलः; श्यामकण्ठः;  
गदहः । २४१

सर्पिः [ प् ] क्ली. [ सर्पंतीति, सृप् गतौ+अधिष्णुचिहु-

सृपीति' इति ] घृतम्; आज्यम्; आधारः; अपि नः  
स कुले जायाद् यो नो दद्यात् त्रयोदशीम् । पायसं मधु-  
सर्पिर्म्याप्राक्छाये कुञ्जरस्य च'—इति मनुः (३।२७४) ।  
उदकं; जलं; पानीयम् । २७५

सर्वः त्रि. [ सृ+वन् ] सम्पूर्णः; समग्रं; सकलं; समस्तं,  
कृत्स्नं; विश्वं; निखिलम्; अखिलम्; 'सर्वरत्नमयो  
मेरुः सर्वाश्रयमयं नमः । सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्ववेदमयो  
हरिः'—इति बह्निपुराणे । पुं. शिवः; विष्णुः; 'असतश्च  
सतश्चैव सर्वस्य प्रभवाव्ययः । सर्वस्य सर्वदा ज्ञानात्  
सर्वमेतं प्रचक्षते'—इति विष्णुपुराणम् । ७१३

सर्वसहा स्त्री. [ सर्वं सहते इति । सर्वं+सह्+ 'पूःसर्वयो-  
दारिसहोः' इति खच्, अरुद्विपदिति मुम् ] वसुमती;  
पृथिवी; पृथ्वी; 'ऊढामुनातिवाहय पृष्ठे लग्नापि  
कालमचलापि । सर्वसहे कठोरत्वचः किमङ्केन कमठस्य'  
—इति आर्यासप्तशत्याम् (१३९) । राज्ञि पुं. । सर्व-  
क्लेशादिसहे त्रि. । 'कामं सन्तु दृढं कठोरहृदयो रामो-  
ऽस्मि सर्वसहो, वैदेही तु कथं भविष्यति हहा हा  
देवि धीरा भव'—इति साहित्यदर्पणे (२।२०) । १५६

सर्वगः पुं. [ सर्वं गच्छतीति । सर्वं+गम्+ङ ] शिवः;  
'प्रभवः सर्वगो वायुरयं मा सविता रविः'—इति महा-  
भारते (१३।१७।१०४) । ब्रह्मा; आत्मा; भीमस्य  
पुत्रः; 'भीमोऽपि कादद्यां बलवरां नामोपयेमे वीर्यशुल्कां  
तस्यां सर्वगं नामोत्पादयामास'—इति महाभारते  
(१।९५।७७) । सर्वत्रगामिनि त्रि. । 'करणैरन्वि-  
तस्यापि पूर्वज्ञानं कथञ्चन । वेति सर्वगतां कस्मात्  
सर्वगोऽपि न वेदनाम्'—इति याज्ञवल्क्यः (३।१३०) ।  
क्ली. जलम् । ११

सर्वज्ञः पुं. [ सर्वं जानातीति । सर्वं+ज्ञा+क ] शिवः;  
'सुवर्णरेताः सर्वज्ञः सुवीजो वीजवाहनः'—इति महा-  
भारते (१३।१७।३९) । सुगतः; बुद्धः; विष्णुः;  
'सर्वदर्शीविमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम्'—इति महा-  
भारते (१३।१४९।६१) । सकलज्ञातरि त्रि. । 'सर्वज्ञ-  
स्त्वयमविज्ञातः सर्वयोनिसस्त्वमात्मभूः'—इति रघौ  
(१०।२०) । ११

सर्वतः [ स् ] अव्य. [ सर्वं+तसिल् ] परितः; विष्वक्;  
समन्तात्; समन्ततः; चतुर्दिगभिव्याप्तः; 'सर्वतः प्रति-  
गृह्णीयान्मध्वघामयदक्षिणाम्'—इति मनुः (४।२४७) ।

'अमति गवययूथः सर्वतस्तोयमिच्छन्, शरभकुलम-  
जिह्वां प्रोद्धरत्यम्बु कृपात्'—इति ऋतुसंहारे (१।२३) ।

८७४

सर्वभक्षः त्रि. [ सर्वान् भक्षयतीति । भक्ष्+अण् ] सर्व-  
भक्षणकर्ता; सर्वांशिनः; 'इति श्रुत्वा पुलोमाया भृगुः  
परममन्युमान् । शशापाग्निमतिक्रुद्धः सर्वभक्षो भवि-  
ष्यसि'—इति महाभारते (१।६।१४) । ३५१

सर्ववेदाः [ स् ] पुं. [ सर्व धनं वेदयति निवेदयति ऋत्विगम्य  
इति । विद्+णिच्+असुन् ] सर्वस्वदक्षिणयागो येनेष्टः  
सः; सर्वस्वं दक्षिणा यत्र स सर्वस्वदक्षिणो विश्वजिघ्राम  
यागः स येनेष्टः सम्पादितः स सर्ववेदा उच्यते । सर्व-  
स्वं वेदयति लम्भयति ऋत्विजे इति सर्ववेदाः । ३९५  
सर्वसन्नहनम् क्ली. — पुं. [ सर्वेषां सन्नहनं यत्र ] सर्वसन्नाहः;  
चतुरङ्गसैन्यसन्नाहः; सर्वाभिसारः; सर्वाधः । ४६१  
सर्वसन्नाहः पुं. [ सर्वेषां सन्नाहो यत्र ] सर्वात्मा; सर्व-  
सन्नहनम् । ८०१

सर्वसत्या स्त्री. [ सर्वाणि सस्यानि जायन्ते यत्र ] उर्वरा  
भूमिः; उर्वरक्षेत्रम् । १५८

सर्वस्वम् क्ली. [ सर्वं स्वम् ] समुदायघनम्; 'गुरवे  
दक्षिणां दद्यात् प्रत्यक्षाय शिवात्मने । सर्वस्वं वा  
तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा तदाज्ञया'—इति तन्त्रसारः । ५१८

सर्वाणी स्त्री. [ सर्वस्य पत्नी । सर्व + इन्द्रवरुणभव-  
सर्वेति' डीष् आनुगागमश्च ] दुर्गा; अपर्णा; पार्वती;  
शर्वाणी; 'सर्वांशोक्षं प्रापयति जन्ममृत्युजरादिकम् ।  
चराचरांश्च विश्वस्थान् सर्वाणी तेन कीर्तिता'—इति  
ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिसण्डे । १५

सर्वात्मा [ न् ] पुं.—सर्वरूपः; सर्वाधिवासी; सर्वसन्नाहः ।  
८०१

सर्वांशिनः त्रि. [ सर्वांशानि भक्षयतीति । सर्वांश+  
'अनुपदसर्वांशायानयमिति' ख ] सर्वांशभोजी; सर्वेषा-  
मन्नभक्षकः; सर्वप्रकाराम्नभक्षकः; सर्वभक्षः । ३५१

सर्वाभिसारः पुं. [ सर्वेषामभिसारो यत्र ] चतुरङ्ग-  
सैन्यवाहः; सर्वाधः । ४६१

सर्वायसः त्रि.—लौहकृतः । ४६७

सर्वपः पुं. [ सरतीति । सृ गती+सर्त्तपः पुक् च' इति  
अप, षुगागमश्च ] सिद्धार्थः; सत्यविशेषः; तन्तुभः;  
कदम्बकः; सरिपपः; तन्तुकः; कटुस्नेहः; शर्षपः;

राजदावकः; 'सर्वपः कटुकस्नेहस्तन्तुभश्च कदम्बकः ।  
गीरस्तु सर्वपः प्राज्ञैः सिद्धार्थ इति कथ्यते । सर्वपस्तु  
रसे पाके कटुहृद्यः सतिक्तकः'—इति भावप्रकाशः ।  
स्थावरविषभेदः; षड्लिक्षापरिमाणम्; 'जालान्तरगते  
भानो यच्चाणुर्दृश्यते रजः । तैश्चतुभिर्भवेल्लिक्षा  
लिक्षापड्भिश्च सर्वपः'—इति शब्दचन्द्रिका । ५८१  
सलिलम् क्ली. [ सलति गच्छतीति । सल् गती+सलि-  
कल्पनीति' इलच् ] जलं; नीरं; पानीयम्; उत्तरा-  
षाढानक्षत्रम् । ६४८

सल्लकी स्त्री. [ सत्कृत्य लक्यते खाद्यते राजभिरिति ।  
सत्+लक्+क्वन् । गीरादित्वाद् डीष् ] वृक्षविशेषः;  
गजप्रिया; गजभक्ष्या; सुवहा; सुरभी; रसा;  
महेरणा; कुन्दुहकी; ह्लादिनी; गजभक्षा; सुरभिः;  
सुरभीरसा; महेरणा; शल्लकी; सिल्लकी; शिल्लकी;  
ह्लादिनी । १९९

सवः पुं. [ सूयते सोमोऽत्रेति । सू+अप् ] यज्ञः; यागः;  
ऋतुः; स्तोमः; सप्ततन्तुः; मखः; अध्वरः; वितानः;  
संस्तरः; बर्हिः; सत्रः; 'राजसूयाद्वमेघाद्यैः सोऽयजद्  
बहुभिः सवैः'—इति महाभारते (१।९।२५) ।  
सन्तानः; सूर्यः; चन्द्रः; अन्नं त्रि. । 'सविता त्वा सवानां  
सुवताम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (९।३९) ।  
'सविता सवानां प्रसवानामज्ञानामाधिपत्ये हे यजमान  
त्वा त्वां सुवतां प्रेरयतु'—इति तद्भाष्यम् । ४१४

सवनम् क्ली. [ सु अभिषवे+ल्युट् ] यज्ञस्नानम्; आप्ल-  
वनं; स्नानं; सूत्या; अभिषवः; 'प्रविवेश गामिव कृशस्य  
नियमसवनाय गच्छतः । तस्य पदविनमितो हिमवान्  
गुस्तां नयन्ति हि गुणा न संहतिः'—इति किराते  
(१२।१०) । सोमसन्धानं; सोमपानम्; अध्वरम्;  
'अथ तं सवनाय दीक्षितः प्रणिधानाद् गुरुराश्रमस्थितः ।  
अभिषङ्गजडं विजज्ञिवान् इति शिष्येण किलान्व-  
बोधयत्'—इति रघो (८।७५) । सोमनिर्दलनं;  
प्रसवः; [ सु+युच् ] पुं. चन्द्रः; [ वनेन सह वर्तमान-  
मिति विग्रहे ] वनविशिष्टे त्रि. । 'अथ पर्वतराजानं  
तमनन्तो महाबलः । उज्जहार बलाद् ब्रह्मन् सवनं  
सवनौकसम्'—इति महाभारते (१।१।८) । ४०८  
सविता [ ऋ ] पुं. [ सूते लोकादीनि । सू+तृच् ]  
सूर्यः; 'विजित्य नैत्रप्रतिघातिनीं प्रभामनन्यदृष्टिः'

सवितारमैसत'—इति कुमारे. (५।२०) । 'धीशब्द-  
वाच्यं ब्रह्माणं प्रबोधयति सर्वदा । सृष्टधर्यं भगवान्  
विष्णुः सविता स तु कीर्तितः । सर्वलोकप्रसवनात्  
सविता स तु कीर्त्यते । यतस्तद्देवता देवी सावित्री-  
त्युच्यते ततः'—इति बह्निपुराणे । अर्कवृक्षः; शिवः;  
इन्द्रः; ब्रह्मा । ३५

सवित्री स्त्री. [ सूते या । सू+तृच्+ङीप् ] माता;  
'तया दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया  
चकाशे'—इति कुमारे (१।२४) । गीः । ५०४

सविधः त्रि. [ समाना विवास्येति ] निकटं; समीपं;  
सनीडः; सनीलः; 'अग्रे सविधमागत्य राजस्तस्योपविष्ट-  
वान्'—इति कथासरित्सागरे (५३।३०) । समान-  
प्रकारः; 'आसां मुहूर्तं एकस्मिन् नानागारेषु योषिताम् ।  
सविधं जगृहे पाणीननुरूपः स्वमायया'—इति भागवते  
(३।३।८) । ६९३

सवेशम् त्रि. [ वेशेन सह वर्तमानम् ] निकटं; समीपं;  
पार्श्वं; वेशान्वितः । ६९२

सव्यः त्रि. [ सू प्रेरणे+ 'माच्छाससिसूम्यो यः' इति य ]  
वामः; 'उद्धृते दक्षिणे पाणावुपवीत्युच्यते द्विजः ।  
सव्ये प्राचीन आवीती निवीती कण्ठसज्जने'—इति  
मनुः (२।६३) । दक्षिणः; 'एकेन सव्यपाणिना  
विश्विखमुत्त्राय किमाह रावणः । सावु रे मनुष्यडिम्भ  
साधु'—इति अनर्घराधवे (६।७०) 'सव्यपाणिना  
दक्षिणहस्तेन' इति तट्टीका । प्रतिकूलः । पृ. [ सूते  
विश्वमिति, सू प्रसवे+ 'माच्छाससिसूम्यो यः'—इति  
य ] विष्णुः । ७५६

सव्येष्ठः पृ. [ सव्ये तिष्ठतीति, । सव्य+स्था+क ।  
'स्यास्थिन्स्यृणाम्' इत्युक्त्या पत्वम् । हलदन्तादि-  
त्यलुक् ] सारथिः; सूतः । ४४९

सव्येष्ठः [ ऋ ] पृ. [ सव्ये तिष्ठतीति, सत्य+स्था+  
'सव्ये स्वश्चन्दसि' इति छन्दसि ऋ, स च ङित् ।  
'स्यास्थिन्स्यृणाम्' इति पत्वम्, सप्तम्या अलुक् ]  
सारथिः; सूतः । ४४९

ससीम [ न् ] त्रि. [ सीम्ना सह वर्तते इति ] समीपं,  
निकटम् । ६९२

सस्यम् क्ली. [ सत् स्वप्ने+ 'माच्छाससिसूम्यो यः'  
इति य ] धान्वं; सीत्यं; शस्यं; ब्रीहिः; 'धान्यस्तु

सस्यं सीत्यं च ब्रीहिस्तम्बकरिश्च तत्'—इति हेमचन्द्रः ।  
बृक्षादीनां फलम्; 'संसर्गं सीसकं सस्यं स्रस्तं सास्ना  
च साध्वसम्'—इति भरतः । शस्त्रं; गुणः; 'जीर्णमन्नं  
प्रशंसीयात् भार्यां च गतयीवनाम् । रणात् प्रत्यागतं  
शूरं सस्यं च गृहमागतम्'—इति चाणक्यः । ५७४

सह अव्य. [ सहते, सह्+पचाद्यच् ] सहितं; साकं;  
सादृष्टं; सत्रं; समं; 'सजूः; 'यत्र त्वेते परिध्वंसा  
जायन्ते वर्णदूषकाः । राष्ट्रिकैः सह तद्राष्ट्रं क्षिप्रमेव  
विनश्यति'—इति मनुः (१०।६१) । साकल्यं; विद्य-  
मानं; सादृश्यं; योगपद्यं; समृद्धिः; सम्बन्धः;  
सामर्थ्यं; क्ली. [ सहते इति, सह्+अच् ] पांशुलवणं;  
(११४) पृ. आग्रहायणमासः; मार्गशीर्षः; 'सहश्च  
सहस्यश्च हेमन्तिकवृत्त'—इति वाजसनेयसंहितायाम्  
(१४।२७) । महादेवः; शिवः; शङ्करः; उमापतिः;  
क्षमे त्रि. । 'गदापरिधशक्तीनां सहाः परिधवाहवः ।  
त एरकाभिनिहताः पश्य कालस्य पर्ययम्'—इति महा-  
भारते (१६।८।१०) । पृ.—क्ली. वलम् । ८७७

सहः [ स् ] क्ली. [ सहते इति, सह्+ 'सर्वघातुम्योऽमुन्'  
इति असुन् ] वलं; ज्योतिः; 'सदयं वृभुजे महाभुजः  
सहसोद्वेगमियं ब्रजेदिति । अचिरोपनतां स मेदिनीं  
नवपाणिग्रहणां वधूमिव'—इति रघो (८।७) । ७२३  
सहकारः पृ. [ सह युगपत् कारयति विक्षेपयति सोगन्ध्य-  
मिति । सह+कृ+णिच्+अच् ] अतिसीरमात्रः;  
चूतः; च्यूतः; आम्रः; 'मन्दोत्कण्ठाः कृतास्तेन गुणाधिक-  
तया गुरी । फलेन सहकारस्य पुष्पोद्गम इव प्रजः'—  
इति रघो (४।९) । १९२

सहचरी स्त्री. [ सह चरति या, सह+चर्+अच् ।  
पचादियु चरतेष्वित्करण्णाद्ङीप् ] पीतक्षिण्टी; (४९४)  
पत्नी; भार्या; जाया; गृहिणी; 'लक्ष्मीकृतस्य हरिणस्य  
हरिप्रभावः, प्रेक्ष्य स्थितां सहचरीं व्यवधाय देहम् ।  
आकर्णकृष्टमपि कामितया स धन्वी, वाणं कृपामृदुमनाः  
प्रतिसञ्जहार'—इति रघो (९।५७) । सखी; आलिः;  
वयस्या; सप्रीची । २०५

सहदेवा स्त्री. [ सह दीव्यतीति, सह+दिव्+अच्+टाप् ]  
दण्डोत्पलः; कर्णिकारवृक्षविशेषः; बला; धारि-  
वौषधिः; अहंमाता; देवककन्याभ्यतमा; सा तु  
वसुदेवपत्नी; 'शान्तिदेवोपदेवा च श्रीदेवा देवरक्षिता ।

सहदेवा देवकी च वसुदेव उवाह ताः—इति भागवते (१।२।४।२३) । पृ. पाण्डवविशेषः; स च पाण्डुराजस्य पञ्चमपुत्रः; माद्रीगर्भे अश्विनीकुमाराभ्यां जातः; जरासन्धसुतः; स युधिष्ठिराश्वमेधकाले भगवेषु राजासीत् । हर्षश्वनसुतः; 'हर्षश्वनसुतो राजा सहदेवः प्रतापवान् । सहदेवस्य धर्मात्मा नदीन इति विश्रुतः—इति हरिवंशे (२।१।३) । सोमदत्तपुत्रः; 'सोमदत्तस्य दायादः सहदेवो महायशाः । सहदेवसुतश्चापि सोमको नाम पार्थिवः—इति हरिवंशे (३।२।८०) । देवैः सह वर्तमाने त्रि. । 'श्रूयतां ब्रह्मर्षयो मे सहदेवाः सहाग्नयः । साधूनां ब्रुवतो वृत्तं नाज्ञानान्न च मत्सरात्—इति भागवते (४।२।८) । १९९

सहपानकम् क्ली. [ सह मिलित्वा पानम्, सहपान+स्वार्थे कन् ] सपीतिः; आत्मीयजनः सहैककालपानं; तुल्यपानं; सहपीतिः; एकत्र मद्यसेवनम् । ३२८

सहसा अव्य. [ सह मर्षणे+असाप्रत्ययः ] हठात्; अतर्कितः; अकस्मात्; 'सहसा विदधीत न क्रिया-मविवेकः परमापदां पदम् । वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः—इति किराते (२।३०) । हास्ययुक्ते त्रि. । 'प्रियतमेन यथा सख्या स्थितं न सहसा सहसा परिरम्य तम् । श्लथयितुं क्षणमक्षमतां गता न सहसा सहसा कृतवेषयुः—इति माघे (६।५७) । ८८४

सहस्तः त्रि. [ हस्तैः कृतशस्त्राभ्यासैरिति लक्षणया, सह वर्तमानः ] शिक्षितायुधः । ३१३

सहस्यः पुं. [ सहसि बले साधुः । 'तत्र साधुरिति' यत् ] पौषमासः; 'निनाय सात्यन्तहिमोत्किरानिलाः सहस्य-रात्रीरुदवासतत्परा'—इति कुमारि (५।२६) । ११४

सहस्रकिरणः पुं. [ सहस्रं किरणानि यस्य ] सहस्रांशुः; सहस्ररश्मिः; सहस्रकरः; सहस्रदीधितिः; सहस्रधामा; सहस्रपादः; सहस्रमरीचिः; सूर्यः; भानुः; रविः; भास्करः; प्रभाकरः; दिनकरः; दिवाकरः; 'राशौ राशौ यस्मिन् शिशिरमयूखः सहस्रकिरणो वा'—इति बृहत्संहितायाम् (४।२।१३) । ३५

सहस्रदंष्ट्रः पुं. [ सहस्रं दंष्ट्राः यस्य ] पाठीनमत्स्यः; 'रोहितपाठीनपाटलाराजीवर्वामिगोमत्स्यकृष्णमत्स्यवागु-ञ्जारमुरलसहस्रदंष्ट्रप्रभृतयो नादेयाः—इति सुश्रुते (१।४६) । ६५८

सहस्रनयनः पुं. [ सहस्रं नयनानि यस्य ] सहस्रनेत्रः; इन्द्रः; 'केयं सहस्रनयनप्रेक्षणीया किमप्सराः । वनश्रीरथवा पुष्पलग्नाप्रकरपल्लवा'—इति कथासरित्सागरे (१०।१-२२७) । त्रि. 'किञ्चात्र बहुभिः सूक्तैर्हेतुवादैः पुरन्दर । सहस्रनयनं दृष्ट्वा त्वामेव सुरसत्तम'—इति महाभारते (१३।१।२०४) । ५२

सहस्रपत्रम् क्ली. [ सहस्रं पत्राणि यस्य ] पत्रं; कमलम्; 'तासां मुखैरासवगन्धर्वर्ष्याप्तान्तराः सान्द्र-कुतूहलानाम् । विलोलनेत्रभ्रमरैर्गंवाक्षाः सहस्रपत्रा-भरणा इवासन्—इति रघौ (७।११) । ६७९

सहाः [ स् ] पुं. [ सहते इति । सह् + असुन् ] आप्रहायण-मासः; मार्गशीर्षः ११४

सहायः पुं. [ सह अयते इति । सह् + अय् + अच् ] अनुकूलः; अनुप्लवः; अनुचरः; अभिसरः; अनुजीवः; सेवकः; अनुगुः; 'अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः । आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह'—इति मनुः (६।४९) । 'सद्ब्रताश्च तथा पुष्टाः सततं प्रतिमानिताः । राज्ञा सहायाः कर्तव्याः पृथिवीं जेतुमिच्छता'—इति मात्स्ये (२।१५।७४) । ४२८

सहिष्णुता स्त्री. [ सहिष्णोर्भावः । सहिष्णु + तल् ] सहिष्णोर्भावः; तितिक्षा; क्षमा; क्षान्तिः; मर्षः; सहिष्णुत्वम्; 'श्रमकलमपिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता'—इति सुश्रुते (४।२४) । ७२५

सहृदयः त्रि. [ हृदयेन अन्तःकरणेन सह वर्तमानः ] चिद्रूपः; प्रशस्तमनाः; 'कुह साधुप्रदानं मे बाले सहृदया हासि'—इति रामायणे (२।१३।२२) । काव्य-मर्मज्ञः ३७३।

सांयात्रिकः पुं. [ संयात्रा द्वीपान्तरगमनं, सा प्रयोजनम-स्येति । संयात्रा + तदस्य प्रयोजनम् इति ठक् ] पोत-बणिक्; 'सिद्धिः सांयात्रिकाणां तु वेला त्वं सागरस्य च'—इति हरिवंशे (५।८।१४) । ६५५

सांवत्सरः पुं. [ संवत्सरं तज्ज्ञानोपयोगि शास्त्रं वेत्ति अधीते वा । संवत्सर + अण् ] गणकः; दैवज्ञः; ज्योति-षिकः; ज्योतिषिकः; ज्योतिषी; ज्योतिषी; मौहूर्तिकः; सांवत्सरिकः । 'मुहूर्तं तिथिनक्षत्रमृतवश्चायने तथा । सर्वाण्येवाकुलानि स्युर्न स्यात्सांवत्सरो यदि । तस्मा-द्राज्ञाभिगन्तव्यो विद्वान् सांवत्सरोऽग्रणीः । जयं यशः

श्रियं भोगान् श्रेयश्च समभीप्सता—इति बृहत्संहिता-  
याम् (२।१०-११)। फले पर्वणि च क्ली। [ संवत्सरस्ये-  
दमिति+अण् ] संवत्सरसम्बन्धिनि त्रि। 'स संवत्सर-  
दीक्षायां दीक्षितः षट्पुरालये। आवर्तया शुभे तीरे  
सुनद्या मुनिजुष्टया—इति हरिवंशे (१४०।३)।

४०३

साकम् अव्य. [ सह+अक्+आभीक्ष्ये णमुल्, सहस्य  
सः ] सहाय्यं; सार्धं; समं; सत्रा; 'अहं जनन्या गुरु-  
भिश्च साकम् आसाद्य लक्ष्मीमवसं चिराय—इति  
कथासरित्सागरे (४।१३६)। ८७८

साकल्यवचनम् क्ली. [ साकल्येन सामस्त्येन वचनम्  
उच्चारणम् ] पारायणं; साद्यन्तपाठः। ४०१

साक्षात् अव्य. [ सह अक्षणा साक्षं, तमतति, क्विप् ]  
प्रत्यक्षं; स्वयंदृष्टिः; 'साक्षाद्दृष्टोऽसि न पुनर्विचस्त्वां  
वयमञ्जसा। प्रसीद कथयात्मानं न धियां पथि वर्तसे—  
इति कुमारे (६।२२)। तुल्यः; सदृशः। ८७४

सागरः पुं. [ सगरस्य राज्ञोऽयमिति। सगर+अण्। यद्वा  
न गरः मृत्युः येन स अगरः अमृतं स्यमन्तमणिर्वा,  
तेन सह वर्तमानः ] समुद्रः; अकूपारः; अग्निः; सरित्पतिः;  
'लवणः क्षीरसंज्ञश्च घृतोदो दधिंसंज्ञकः। सुरोदेक्षु-  
रसोदो च स्वाद्दूदः सप्तमो भवेत्। चत्वारः सागराः  
स्याताः पुष्करिण्यश्च ताः स्मृताः।' [ सगरस्यापत्यं  
पुमानिति। सगर+अण् ] सगरपुत्रः; 'वध्यमानास्ततो  
लोकाः सागरैर्मन्दबुद्धिभिः। ब्रह्माणं शरणं जग्मुः  
सहिताः सर्वदैवतैः—इति महाभारते (३।१०७।७)।  
मृगविशेषः; दशपद्मसंख्या; 'वृन्दः सवो निखर्वश्च  
शङ्खपद्मी च सागरः—इति ब्रह्माण्डपुराणम्। [ सागर-  
स्येदमिति ] सागरसम्बन्धिनि त्रि। 'आद्यत्स्र सरितां  
नाय त्यक्त्वेमां सागरौ तनुम्—इति हरिवंशे (५३।-  
३८)। ६५२

सातिसारः त्रि. [ अतिसारेण सह वर्तमानः ] अतिसार-  
रोगयुक्तः; अतिसारकी। ६०६

सातीनः पुं. [ सति जीवे इनः, सप्तम्यलुक्, सतीन एव।  
स्वायिकोऽण् ] कलायः; खण्डिकः; सातीनकः; साती-  
लकः; सतीलकः; सतीनः; सतीनकः; 'मटर' इति  
भाषा। ५८२

सात्यव्रतेयः पुं. [ सत्यवत्याः सत्यगन्धायाः अपत्यं पुमान्।

स्रोम्यो ङक् ] पाराशर्यः; पाराशरिः; 'पाराशरः;  
द्वैपायनः; व्यासः; सात्यवतः; वेदव्यासः; माठरः;  
कानीनः; वादरायणः; कृष्णद्वैपायनः; सत्यभारतः;  
वादरायणिः; सत्यरतः; सत्यवतीसुतः। ४१३

सात्वतः पुं. [ सात्वतस्यापत्यं पुमानिति+अब् ] बलदेवः;  
बलभद्रः; 'ततस्तत्र महाबाहुः शयानः शयने शुभे।  
आपगानां वनानां च कथयामास सात्वते—इति महा-  
भारते (१।२११।१२)। यादवमात्रे; 'अर्थलुब्धान्  
न वः पार्थो मन्यते सात्वतान् सदा। स्वयंवरमनाधृष्यं  
मन्यते चापि पाण्डवः—इति महाभारते (१।२२२।३)।

[ सत्त्वमेव सात्त्वं, तत् तनोतीति, तन्-+ङ ] विष्णुः।  
[ सत्त्वध्वेन सत्त्वमूर्तिर्भगवान् स उपास्यतया विद्यते-  
ऽस्येति, मनुप्, ततः स्वार्थे अण् ] विष्णुभक्तविशेषः;  
'सत्त्वं सत्त्वाश्रयं सत्त्वगुणं सेवेत केशवम्। योऽनन्यत्वेन  
मनसा सात्वतः समुदाहृतः। विहाय काम्यकर्मादीन्  
भजेदेकाकिनं हरिम्। सत्त्वं सत्त्वगुणोपेतो भवदद्या तं  
सात्त्वतं विदुः। मुकुन्दपादसेवायां तन्नामश्रवणेऽपि च।  
कीर्तने च रतो भक्तो नाम्नः स्यात्स्मरणे हरेः। वन्दना-  
चर्चनयोर्भक्तिरनिशं दास्यसख्ययोः। रतिरात्मार्षणे यस्य  
दृढानन्तस्य सात्त्वतः—इति पाञ्चोत्तरे ९९ अध्यायः।  
यदुवंशीयसत्वतराजपुत्रः; 'अनोस्तु पुरुकुत्सोऽभूदंशु-  
स्तस्य तु रिक्वभाक्। अयांशोः सत्वतो नाम विष्णु-  
भक्तः प्रतापवान्। महात्मा दाननिरतो धनुर्वेदविदां  
वरः। स नारदस्य वचनाद्वासुदेवार्चनान्वितः। शास्त्रं  
प्रवर्तयामास कुण्डगोलादिभिः श्रुतम्। तस्य नाम्ना तु  
विख्यातं सात्त्वतं नाम शोभनम्। प्रवर्तते महाशास्त्रं  
कुण्डादीनां हितावहम्। सात्वतस्तस्य पुत्रोऽभूत् सर्वशास्त्र-  
विशारदः। पुण्यश्लोको महाराजस्तेन चैतत् प्रकीर्तितम्।  
सात्वतः सत्त्वसम्पन्नः कौशल्यान् सुपुत्रे सुतान्। अन्धकं  
वैमहं भोजं विष्णुं देवावृधं नृपम्—इति कौर्मै। वर्ण-  
सङ्करजातिविशेषः; 'वैश्याज् जायते ब्राह्म्यात् सुधन्वा-  
चार्य एव च। कारूपश्च विजन्मा च मैत्रः सात्त्वत  
एव च—इति मनुः (१०।२३)। २८

साधी [ न् ] पुं. [ सद् गतो+णिनि ] अश्वाह्वः; अश्वा-  
रोहः; 'पूर्वं प्रहर्ता न जघान भूयः प्रतिप्रहाराक्षममश्व-  
सादी—इति रघौ (७।४७)। गजारोहः; रथारोहः।

साधनम् क्ली. [ साध्+करणं भावे च ल्युट् ] उपकरणं; करणकारकविशेषः; तृतीयाविभक्तिः; द्रविणं; धनं; द्रव्यं; लिङ्गं; मेढ्रं; यातना; सेनाङ्गं; संसिद्धिः । कारणं; हेतुः; 'औषधान्यगदो विद्या दैवी च विविधा स्थितिः । तपसैव प्रसिष्यन्ति तपस्तेषां हि साधनम्'—इति मनुः (११।३।३८) । मारणम्; 'अथो शरस्तेन मदर्थमुज्झितः फलं च तस्य प्रतिकायसाधनम् । अविक्षते तत्र भयात्मसात् कृते कृतार्थता नन्वधिका चमूपतेः'—इति किराते (१४।१७) । मृतसंस्कारः; अग्निदानं; गतिः; गमनं; द्रव्यं; धनम्; अर्थदापनम् [ अर्थस्य धनभूम्यादेर्दापनम् ]; निर्वर्तनं; निष्पादनम्; 'वाषिकं सञ्जहारेन्द्रो धनुर्जत्रं रघुर्दधौ । प्रजार्थसाधने तौ हि पर्यायोद्यतकार्मुकी'—इति रघो (४।१६) । उपकरणं; सामग्री, यथा युद्धोपकरणहस्त्यश्वादिः । 'रम्यः प्रदोष-समयः स्फुटचन्द्रभासः, पुंस्कोकिलस्य विरुतं पवनः सुगन्धिः । मत्तालियूथविरुतं निशि शीघ्रगानं, सर्वं हि साधनमिदं कुसुमायुधस्य'—इति ऋतुसंहारे (६।३४) । अनुन्नय्या; अनुगमनं; सैन्यं; सिद्धीपथिः; उपायः; 'तपोभिः प्राप्यतेऽभीष्टं नासाध्यं हि तपस्यतः । दुर्भगत्वं वृथा लोको वहते सति साधने'—इति मत्स्यपुराणम् । मंत्रम्; ऊधः; सिद्धिः; कारकम्; प्रमाणं; व्याप्यम्; 'अनुमा त्वनुमानं स्याद् व्याप्यं लिङ्गं च साधनम्'—इति त्रिकाण्डशेषः । मोहनं; जवः; साधना; 'शशाप पार्वती हृष्टा स्त्रीस्वभावाच्च चापलात् । सर्वेषां साधनेनैव क्षन्तुमर्हन्ति साधवः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । मन्त्रसिद्धि-करणम्; 'मत्स्यं मांसं च मद्यं च मुद्रा मेषुनमेव च । दिव्यानां चैव वीराणां साधनं भवसाधनम्'—इति मुण्डमालातन्त्रम् । ८६६

साधुः त्रि. [ साध्+उण् ] सज्जनः; आर्यः; चारुः (६८९); 'न किञ्चिद्वचनं राज-न्नब्रवीत् साध्वसाधु वा'—इति महाभारते (१।१०७।८) । वार्षिकिकः; पुं. उतमकुलोद्भवः; महाकुलः; कुलीनः; आर्यः; सम्भ्यः; सज्जनः; कुलजः; साधुजः; कुलकः; कुलिकः; कुल्यः; कौलेयकः; जिनः; मुनिः; 'न प्रहृष्यति सम्माने नावमानेन कुप्यति । न क्रुद्धः परुषं ब्रूयादेतत् साधोस्तु लक्षणम्'—इति गार्हडे (१।३।४२) । 'त्यक्तात्मसुखभोगेच्छाः सर्वसत्त्वसुखैषिणः । भवन्ति

परदुःखेन साधवो नित्यदुःखिताः । परदुःखानुरा नित्यं स्वसुखानि महान्त्यपि । नापेक्षन्ते महात्मानः सर्वभूतहिते रताः । परार्थमुद्यताः सन्तः सन्तः किं किं न कुर्वन्ते । आत्मानं पीडयित्वापि साधुः सुखयते परम् । ह्लादयन्ना-श्रितान् वृक्षो दुःखं च सहते स्वयम्'—इति वह्नपुराणे । ३७२

साध्वसम् क्ली. [ अस्यतीति असम्, अच्, साधूनामसम् आतङ्कः; भयम्; आशङ्का; दरः; त्रासः; 'अन्तकालेऽपि पुरुष आगते गतसाध्वसः । छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृह-देहेऽनु ये च तम्'—इति भागवते (२।१।१५) । [ स्यति नाशयतीति । सो+ 'स्यतेर्धुक्' इति असच्, धुक् च ] प्रतिभा; भाणिकाङ्कविशेषः । ७२५

साध्वी स्त्री. [ साध्+डीप् ] सती; पतिव्रता; सुचरिता; सुचरित्रा; 'आतर्ते मुदिता हृष्टे प्रोषिते मलिना कृशा । मृते म्रियेत या पत्यौ साध्वी ज्ञेया पतिव्रता'—इति हारीतः । 'साध्वीनामेव नारीणामग्निप्रपतनादते । नान्यो धर्मो हि विज्ञेयो मृते भर्तरि कर्हिचित्'—इति शुद्धि-तत्त्वम् । 'साध्वी स्त्री मातृतुल्या च सर्वथा हितकारिणी । असाध्वी वैरितुल्या च शश्वत मन्तापदायिका'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ४९५

सानुः पुं- क्ली. [ सन्त्यते सेव्यते मुनिप्रभृतिभिरिति । षण् संभक्तौ+ 'दूसनिजनीति' बृण् ] पर्वतस्थसमभूभागः; स्नुः; प्रस्थः; 'भवांस्तु सह वैदेह्या गिरिसानुषु रंस्यते । अहं सर्वं करिष्यामि जाग्रतः स्वपतश्च ते'—इति रामायणे (२।३।१२७) । वनं; वात्या; मार्गः; अग्रं; कोविदः; अकं; पल्लवः । १६६

सानुनयः त्रि.- अनुनयसहितः; विनीतः; नम्रः । ८२२  
सानुमान् [ त् ] पुं. [ सानुविद्यतेऽस्येति । सानु+मनुप् ] पर्वतः; अचलः; शिलोच्चयः; शैलः; क्षितिधरः; गिरिः; गोत्रः; अहार्यः; नगः; शिखरी; धरः; अद्रिः; कुध्रः; अगः । 'न पृथग्जनवच्छुचो वशं वशिनामुत्तम ! गन्तुमर्हसि । द्रुमसानुमतां किमन्तरं यदि वायौ द्वितयेऽपि ते चलाः'—इति रघो (८।९०) । त्रि. 'आपगाश्च महानूपाः सानुमन्तश्च पर्वताः'—इति रामायणे (२।४।१०) । १६५

सान्त्वम् क्ली. [ सान्त्व सामप्रयोगे+घञ् ] अत्यर्थमधुरं; तत्तु कर्णमनःप्रीतिजनकं वाक्यं; सान्त्वनं; सान्त्वना;



‘मनोर्वैवस्वतस्यैते वर्तन्ते साम्प्रतेऽन्तरे । इक्ष्वाकुप्रमुखा-  
श्चैव दश पुत्रा महात्मनः’—इति हरिवंशे (७।३७) ।  
‘तस्य ते कीर्तयिष्यामि मनोर्वैवस्वतस्य ह । विसर्ग  
भरतश्रेष्ठ साम्प्रतस्य महाद्युतेः’—इति हरिवंशे  
(७।३७) । युक्तम्; ‘इतः स दैत्यः प्राप्तश्रीर्नैत  
एवाहति क्षयम् । विववृक्षोर्षि संवद्धर्षं स्वयं छेतुम-  
साम्प्रतम्’—इति कुमारं (२।५५) । ८८०

साम्यम् क्ली. [ समस्य भावः । सम+ष्यञ् ] लयः;  
समता; तुल्यत्वम्; ‘चाण्डालान्त्यस्त्रियो गत्वा भुक्त्वा  
च प्रतिगृह्य च । पतत्यज्ञानतो विप्रो ज्ञानात् साम्यं तु  
गच्छति’—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । साम्यन्वैकस्यानत्वम् ।  
साम्यावस्थापक्षे त्रि. । ‘नमः शान्ताय घोराय मूढाय  
गुणवर्मिणे । निर्विशेषाय साम्याय नमो ज्ञानधनाय च’—  
इति भागवते (८।३।१२) । ९४

साम्यावस्था स्त्री.—तुल्यदशा; त्रैगुण्यम् । ८६४  
सायः पुं. [ स्यति दिनम् । षोऽन्तकर्मणि+‘स्याद्ब्यघेति’  
ण ] दिनान्तः; दिवावसानम्; ‘दिनान्ते पृथि सायः  
स्यात् सायाह्ने सायमव्ययम्’—इति शब्दार्णवः । १०९  
सायम् अव्य. [ स्यति समापयति दिनमिति । षो+  
बाहुलकाद् णम् युगगमश्च ] सायाह्नः; सन्ध्याः;  
सायंकालः; सायंसन्ध्यासमयः; ‘स दुष्प्रापयशाः  
प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः । सायं संयमिनस्तस्य महर्षे-  
र्महिषीसखः’—इति रघौ (१।४८) । १०९

सायकः पुं. [ स्यति छिनत्तीति । षो+ष्वुल्+युक् ]  
शायकः; वाणः; ‘अभेद्ये कवचे दिव्ये तूणी चाक्षय्य-  
सायकौ’—इति रामायणे (२।३।३०) । खड्गः;  
तलवारिः; तरवारिः; ‘कस्य पाञ्चनखे कोपे सायको  
हेमविग्रहः । प्रमाणरूपसम्पन्नः पीत आकाशसन्निभः’—  
इति महाभारते (४।४८।१४) । पञ्चमसंख्या; ‘सङ्करेण  
त्रिरूपेण संसृष्ट्या चैकरूपया । वेदखाग्निसाराः शुद्धैरिषु-  
बाणाग्निसायकाः’—इति साहित्यदर्पणे (४।२६४) । ४६६

सारम् क्ली. —पुं. [ सार दीर्घल्ये+अच् । सू गतौ+घञ्  
वा ] घनं; कित्तं; हिरण्यं; विभवः; द्रव्यं; रिक्यं;  
पृथ्व्यम्; ‘परस्परं विज्ञातस्तेषूपायनपाणिषु । राज्ञा  
हिमवतः सारो राज्ञः सारो हिमाद्रिणा’—इति रघौ  
(४।७९) । जलं; न्याय्यं; लौहं; विपिनं; [ सरात्  
जातम् । सर+अण् ] नवनीतम्; ‘क्षीरशोषं च तन्मध्यं

शीतं सारमुपाहरेत्’—इति उत्तरतन्त्रे (२६) । अमृतम्;  
‘धर्मादयः किमगुणं च काञ्छितेन सारंजुषां चरणयो-  
रुपगायतां नः’—इति भागवते (७।६।२५) । सारं-  
वस्तूनि—‘सारं रसानां तु घृतं घृतसारं हुतं च यत् ।  
हुतस्य सारं स्वर्गं च स्वर्गात् सारं तु योषितः । अतो राजन्  
प्रदेयाः स्युः स्त्रियः स्वर्गमभीप्सतां । तथैवेह सुखं ताभिः  
सह राज्यं नृपोत्तम’—इति वह्नपुराणे । ‘असारे  
खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम् । काश्यो वासः सतां  
सङ्गो गङ्गाम्भः शम्भुसेवनम्’—इति पुराणे । ८०  
सारः पुं. [ सू+‘सृ स्थिरे’ इति घञ् ] मज्जा; (८।५३)  
त्रि. वरः; श्रेष्ठः; ‘सर्वसारो यथा कृष्णो व्रतानां पुण्यकं  
तथा’—इति ब्रह्मवैवर्ते । पुं. बलं; स्थाम; सामर्थ्यं;  
‘तरस्व भीम मा क्रीड जहि रक्षो विभीषणम् । पुरा  
विक्रुषते मायां भुजयोः सारमप्यं’—इति महाभारते  
(१।१५५।२३) । घनम्; ‘परस्परं विज्ञातस्तेषूपायन-  
पाणिषु । राज्ञा हिमवतः सारो राज्ञः सारो हिमाद्रिणा’—  
इति रघौ (४।७९) । शुकं; वीर्यं; स्थिरांशः;  
‘प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं लक्ष्मीविभ्रमदर्पणम् । कौस्तु-  
भाख्यमपां सारं विभ्राणं बृहतीरसा’—इति रघुः  
(१०।१०) । वज्रक्षारं; वायुः; रोगः; पाशकः;  
दध्युत्तरम्; अर्थालङ्कारविशेषः; ‘उत्तरमुत्कर्षो  
वस्तुनः सार उच्यते’—इति साहित्यदर्पणे । ‘राज्ये  
सारं वसुधा वसुधायामपि पुरं पुरे सौधम् । सौधे तल्पं  
तल्पे वराङ्गना सर्वस्वम् । १८३

सारधम् क्ली. [ सरधाभिर्मधुमक्षिकाभिः कृतमिति ।  
सरधा+अण् ] माक्षिकं; क्षौद्रं; मधु; पुष्परसः;  
‘पीत्वा मुकुन्दमुखसारधमक्षिभृङ्गैस्तापं जह्विरहजं  
व्रजयोषितोर्जिह्वि’—इति भागवते (१०।१६।४३) ।

सारङ्गः पुं. [ सरतीति, सू गतौ, ‘सूवृजोर्वृद्धिश्च’ इति  
अङ्गच्, वृद्धिश्च ] हरिणः; मृगः; कुरङ्गः; ‘शोमायुसारङ्ग-  
गणाश्च सम्यग् नायासिषुर्भूममरासिपुश्च’—इति भट्टिः  
(३।२६) । चातकपक्षी (२४८); ‘उष्णमन्तर्दधे सद्यः  
स्निग्धा ददृशिरं घनाः । ततो जह्विरे सर्वे भेकसारङ्ग-  
वह्निः’—इति रामायणे (२।६३।१६) । मतङ्गजः;  
पक्षिभेदः; भृङ्गः; ‘नानुद्वेष्टि कलिं सम्राट् सारङ्ग इव  
सारमुक् । कुशलान्याशु सिध्यन्ति नेतराणि कृतानि यत्



—इति भागवते (१११८।७) । छत्रं; राजहंसः; चित्र-  
मृगः; 'आक्रीडन्तो वहन्ति स्म सारङ्गशवला हयाः'—  
इति महाभारते (७।२२।२१) । वाद्यभेदः; अंशुकं;  
नानावर्णः; मयूरः; कामदेवः; घनुः; केशः; स्वर्णम्;  
आभरणं; पद्मं; शङ्खः; चन्दनं; कर्पूरं; पुष्पं;  
कोकिलः; मेघः; पृथिवी; रात्रिः; दीप्तिः; सिंहः;  
त्रि. शवले; 'शारङ्गश्चातके ख्यातः शवले हरिणेऽपि  
च'—इत्यजयः (अत एव सारङ्गो दन्त्यादिस्ताल-  
ध्यादिश्च) । २३०

सारणिः स्त्री. [ सृ+णिच्+अनि ] क्षुद्रनदी; प्रसारिणी;  
पानम् । ६८५

सारणी स्त्री. [ सारणि+वा डीष् ] प्रसारिणी; स्वल्प-  
नदी; पानम्; 'आलवालवलयेषु भूरूहां मांसलस्तिमित-  
मन्तरान्तरा । केरलीचिकुरभङ्गिभङ्गगुरं सारणीषु  
पुनरम्बु दृश्यते'—इति अनर्घराघवे । ६८५

सारधिः पुं. [ सरत्यश्वानिति.। सृ+अन्तर्भाविण्यर्थः+  
'सर्तेणिञ्च' इति घथिन् ] रथादिघोटकनियोगकर्ता;  
नियन्ता. प्राजिता; यन्ता; सूतः; क्षत्ता; सव्येष्ठा;  
दक्षिणस्यः; रथकुटुम्बी; सादी; सव्येष्ठः; नियामकः;  
चानुरिकः; प्रवेता; रथनागरः; [ सरत्यस्यापत्यं सारधिः,  
बाह्वदित्वादिब् ] 'निमित्तशकुनज्ञानो ह्यशिक्षा-  
विशारदः । ह्यायुर्वेदतत्त्वज्ञो भूरिभागविशेषवित् ।  
स्वामिभक्तो महोत्साहः सर्वेषां च प्रियंवदः । शूरश्च  
कृतविद्यश्च सारधिः परिकीर्तितः'—इति मात्स्ये  
(२१५।२०-२१) । समुद्रः । ४४८

सारमेयः पुं. [ सरमाया अपत्यं पुमानिति, ठक् ] कुक्कुरः;  
कुक्कुरः; कुक्कुरः; श्वानः; कौलेयकः; भयणः; शुकः;  
'अन्योऽन्यस्यावलुम्पन्ति सारमेया इवामियम् । राजानो  
भरतश्रेष्ठ भोक्तुकामा वसुन्वराम्'—इति महाभारते  
(६।१।७३) । २८१

सारशनम् क्ली. [ सारमुत्कृष्टं सनं रचना यस्य । सार+  
षणु+थ, शत्वे षपोदरादिः ] मेखला; काञ्ची;  
सारसनम् । ५६०

सारसः पुं- स्त्री. [ सरसि भवः+अण् ] पक्षिविशेष;  
पुष्कराङ्गः; गोमर्दः; नाङ्कुरः; लक्ष्मणः; लक्षणः;  
सरसीकः; सरोत्सवः; रसिकः; कामी; दार्वाघाटः;  
पुष्कराक्ष्यः; 'इष्टार्थसिद्धिः सकलासु दिक्षु स्यात्सारस-

द्वन्द्वविलोकनेन । श्रुत्वास्य पृष्ठे निन्दं न गच्छेत्  
सिध्यत्यभीष्टं गृह एव यस्मात् । वामेन योषित्कुल-  
लाभकारी शब्दे तथापि नृपतेऽर्थलब्धयै । यः सारसाम्यां  
युगपद्विरावः कृतोऽचिरेण क्रमतोऽपि वामः । स वेदितव्यः  
कथितार्थकारी क्रीञ्चद्वयस्याप्ययमेव वर्गः'—इति  
वसन्तराजशाकुने सारसवर्गः । २४४

सारसनम् क्ली. [ सारं सनोति ददातीति । षणु दाने+  
अच् । सह अरसनेन स्वल्पध्वनिना वा ] सप्तकी; काञ्ची;  
मेखला; रसना; रसना; कटिसूत्रं; सारसनम् । ५६०  
सारसी स्त्री. [ सारस+जाती डीष् ] सारसपत्नी;  
लक्ष्मणा; लक्षणा; 'हंसगद्गदभाषिष्यो दुःखशोक-  
प्रमोहिताः । सारस्य इव रासन्यः पतिताः पश्य माधव !'  
—इति महाभारते (११।१८।१४) । २४४

सारिफलकः पुं. [ सारीणां पात्राकानां फलकः पट्टः ]  
आकर्षः; खेलनाधारः । ८४५

सार्षः पुं. [ सरतीति, सृ+सर्तेणिञ्च' इति थन् स च  
णित् ] समूहमात्रं; निकरः; निकायः; उत्करः; 'पश्चिमे  
शर्वरीभागे नप्तृकोलूकपिङ्गलाः । सर्वे एव विपर्यस्ता  
ग्राह्याः सार्षेषु योषिताम्'—इति बृहत्संहितायाम्  
(८६।४९) । जन्तुसङ्घः; वणिक्समूहः; 'वापीष्विव  
स्रवन्तीषु वनेषूपवनेष्विव । सार्षाः स्वैरं स्वकीयेषु  
चेरुर्वेश्मस्विवाद्रिषु'—इति रघौ (१७।६४) । त्रि.  
[ अर्थेन सह वर्तमानः ] अर्थयुक्तः; सार्थकः; 'सार्षः  
प्रवसतो मित्रं भार्या मित्रं गृहे सतः । आतुरस्य भिपद्य मित्रं  
दानं मित्रं मरिष्यतः'—इति शुद्धितत्त्वम् । ६८६

साद्धम् अव्य- सहितं; साकं; समं; सत्रा; सहाय्यम्;  
'सुशर्मा भ्रातृभिः साद्धं युद्धार्थी पृष्ठतोऽवयात्'—इति  
महाभारते (७।२७।२) । त्रि. [ अद्धेन सह वर्तमानम् ]  
अद्धयुक्तम्; 'मुनिभिद्विरथनं प्रोक्तं विप्राणां मर्त्य-  
वासिनां नित्यम् । अहनि च तथा तमस्विन्यां साद्धं-  
प्रहरयामान्तः'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । 'गतेऽद्धे द्वितये  
साद्धं पङ्कपक्षे दिनद्वये । दिवसस्याप्यष्टमे भागे पतत्येको-  
ऽधिमासकः'—इति मलमासतत्त्वम् । ८७७

सारिष्यः त्रि. [ सपिपः अयम्, सपिपा संस्कृतो वा । सपिप्+  
अण् ] सपिःसम्बन्धी; सपिःसंस्कृतवस्तु; घृतमिश्रम् ।  
३२२  
सारिष्यम् त्रि. [ सपिप्+संस्कृतम्' इति ठक् ] सपिपा

संस्कृतम्; 'सार्विकं दायिकं सार्वदधिभ्यां संस्कृतं क्रमात्'—इति हेमचन्द्रः । ३२२

सार्वभौमः पुं. [ सर्वभूमौ विदितः । 'तत्र विदित इति च 'तत्पेश्वरः' इति वा अण् ] उत्तरदिग्गजः; (४२२) सम्राट्; सर्वभूमौश्वरः; चक्रवर्ती; एकजन्मा; नृपाग्रणीः; 'भरतस्य च वीरस्य सार्वभौमस्य पार्थिव !, ध्रुवं प्राप्स्यति दुष्प्रापान् लोकांस्तोयंपरिप्लुतः'—इति महाभारते (३।१३।१९) । विदूरथपुत्रः; 'परीक्षितनपत्योऽभूत् सुरथो नाम जाह्नवः । ततो विदूरथस्तस्मात् सार्वभौमस्ततोऽभवत्'—इति भागवते (१।२२) । पुष्वंशीयाहंयातिपुत्रः; 'अहंयातिः खलु कृतवीर्यदुहितरमुपयेमे भानुमतीं नाम । तस्यामस्य जज्ञे सार्वभौमः । सार्वभौमः खलु जित्वा जहार कैकेयीं सुनन्दां नाम तामुपयेमे'—इति महाभारते (१।१५।१५-१६) । १०४

सालः पुं. [ शल्पते इति । शलु गती + घञ्, सत्वे षोडरादिः ] वृक्षविशेषः; [ सारोऽस्त्यत्रेति, अच्, रस्य लः ] सर्जः; सर्जरसः; कलः; कललजोद्भवः; वल्लीवृक्षः; चौरपर्णः; रालकार्यः; अजकर्णकः; वस्तकर्णः; कपायी; ललनः; गन्धवृक्षकः; वंशः; शालनिर्यासः; दिव्यसारः; सुरेष्टकः; शूरः; अग्निवल्लभः; यक्षधूपः; सिद्धिकः; 'सालस्तु सर्जकार्यशिवकर्णकाः सस्यसम्बरः । अश्वकर्णः कपायः स्याद् व्रणस्वेदकफक्रिमीन् । व्रधनविद्रधिवाधिर्योनिकर्णगदान् हरेत्'—इति भावप्रकाशः । शालमत्स्यः; वृक्षमात्रं; प्राकारः; रालः । १९५

सास्ना स्त्री. [ षस् स्वप्ने + 'रास्नासास्नास्युणावीणाः' इति नप्रत्ययेन साधुः ] गलकम्बलः; 'रोमन्थमन्थरचलद्गुरुसास्नमासांचक्रे निमीलदलसेक्षणमीक्षिकेण'—इति माघे (५।६२) । २६६

सिंहः पुं. [ सिञ्चति तेजः पशुषु इति । सिच् + 'सिचेः संज्ञायां हनुमी कश्च' इति क, अन्त्यादेशो हकारः, नुम् च । षोडरादित्वाद् अन्तविपर्यये हिनस्तीति सिंह इत्यपि भवति ] मृगेन्द्रः; पञ्चास्यः; हर्मक्षः; केशरी; हरिः; पारोन्द्रः; श्वेतपिङ्गलः; कण्ठीरवः; पञ्चशिक्षः; शैलाटः; भीमविक्रमः; सटाङ्कः; मृगराट्; मृगराजः; मरुत्त्वः; केशी; लम्बीकाः; करिदारकः; महावीरः; श्वेतपिङ्गः; गजमोचनः; मृगारिः; इभारिः; नक्षरापुधः; महानादः; मृगपतिः; पञ्चमुखः; नखी;

मानी; क्रव्यादः; मृगाधिपः; शूरः; विक्रान्तः; द्विरदान्तकः; बहुबलः; दीप्तः; बली; विक्रमी; दीप्तपिङ्गलः; 'सिंहो बली द्विरदकुञ्जरमांसभोजी, संवत्सरेण कुरुते रतिमेकवारम् । पारावतः खलु शिलाकणमात्रभोजी, कामी भवेदनुदिनं वद कोऽत्र हेतुः' पदान्ते श्रेष्ठार्थवाचकः; 'क्व यास्यसि महाराज ! हित्वेमं दुःखितं जन्म । हीनं पुरुषसिंहेन रामेणाविलष्टकर्मणा' अहंतां ध्वजः; रक्तशिम्बुः; 'तुत्यालकट्काव्योपसिंहार्कहयमारकाः'—इति सुश्रुते (४।९) । मेपादिद्वादशराश्यन्तर्गतपञ्चमराशिः; लैयः; मेपादिद्वादशलग्नान्तर्गतपञ्चमलग्नम्; 'सिंहलग्ने समुद्भूतो भोगी शत्रुविमर्दनः । स्वल्पोदरोऽप्युत्रश्च सोत्साही गजविक्रमः'—इति-कोष्ठीप्रदीपः । २१४

सिंहध्वनिः पुं. [ सिंहस्य ध्वनिः ] सिंहशब्दः; सिंहनादः; 'तुपारसंघातशिलाः खुरायैः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुब्धान् । दृष्टः कथञ्चिद् गवयैर्विचिग्नैरसोढोसिंहध्वनिस्त्रनाद'—इति कुमारसम्भवम् । ७८५

सिंहनादः पुं. [ सिंहस्येव नादः ] योधानां रणोत्साहजरवः; श्वेडा; गजयूथदर्शनात् तद्भङ्गाय यथा सिंहस्य नादस्तथा परवलभङ्गाय स्वोत्साहविवृद्धये च यो रावः सः; [ सिंहस्येव नादः सिंहनादः ] 'कविसमरसिंहनादः स्वरानुनादः सुधैकसंवादः । विद्वद्विदोदकन्दः सन्दर्भोऽयं मया सुष्टः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (७००) । सिंहशब्दः; सिंहध्वनिः; महादेवः; शिवः; शङ्करः; शम्भुः । ७८५

सिंहासनम् क्ली. [ सिंहवर्चितमासनम् ] स्वर्णमयराजासनं; राज्ञो वरासनम्; 'राज्ञो वरासनं नाम श्रीसिंहासनमुच्यते । 'शुभे मुहूर्ते शुभमासवर्षे सुवारवेलातिथिचन्द्रयोगे । काले निरुत्पातनिरीतिभावे सिंहासनावस्थविधिं वदन्ति'—इति युक्तिकल्पतरुः । चतुराजीक्रीडायां जयविशेषः; 'अन्यद्राजपदं राजा यदा यातो युधिष्ठिर । तदा सिंहासनं तस्य भण्यते नृपसत्तम । राजा च नृपति हत्वा कुर्यात् सिंहासनं यदा । द्विगुण वाहयेत् पण्यमन्यथैकगुणं भवेत् । मित्रसिंहासनं पार्थं यदा रोहति भूपतिः । तदा सिंहासनं नाम सर्वं नयति तद्वलम् । यदा सिंहासनं कर्तुं राजा पठ्यपदाश्रितः । तदा धातेन हन्तव्यो बलेनापि सुरक्षितः'—इति त्रिय्यादितत्वम् । योगासनविशेषः; 'गुल्फी च वृषणस्याघः सीवन्त्याः पार्श्वयोः क्षिपेत् ।

दक्षिणे सव्यगुल्फं तु दक्षगुल्फं तु सव्यक्रे । हस्तौ च जान्वोः संस्थाप्य स्वाङ्गुलीः सम्प्रसायं च । व्यात्तवक्त्रो निरीक्षेत नासाग्रं सुप्तमाहितः । सिंहासनं भवेदेतत् पूजितं योगिभिः सदा । वन्धत्रयस्य सन्धानं कुरुते चासनोत्तमम्—इति हठप्रदीपे । पुं. [ सिंहस्य आसनम् उपवेशनमिव आसनं यत्र ] षोडशरतिवन्धान्तर्गतचतुर्दशवन्धः; 'स्वजङ्घाद्वयवाहू च कृत्वा योपापदद्वयम् । स्तनी घृत्वा रमेत् कामी वन्धः सिंहासनो मतः—इति रतिमञ्जरी । ४२३

सिक् स्त्री. [ सिञ्चति शोभाम् । क्विप् ] वर्तिः; वस्तिः; दशा; वस्त्रतटम् । ५५१

सिकता स्त्री. [ सिक् सेवने + बाहुलकाद् अतच् ] बालुका; सिकतिलः; बालुकायुक्तभूमिः । ६७०

सिकता स्त्री. भूमि [ सिक् + अतच् ] बालुका; 'सिकता वपन् सव्यसाची राजानमनुगच्छति । असक्ताः सिकतास्तस्य यथा सम्प्रति भारत । असक्तं शरवर्षाणि तथा मोक्षप्रति शत्रुषु'—महाभारते (२।७६।१६) । ६७०

सिक्कयम् क्ली. [ सिञ्चति सिच्यते वा, पिच् क्षरणे + 'पातुतुदिवचि' इति थक्, स्वार्थे कन् ] मघ्च्छिष्टम्; पुं. भक्तपुलाकः; 'सिक्कयं रहितो मण्डः पेया सिक्कयसमन्विता । यवागू बहुसिक्कया स्याद्विलेपी विरलद्रवा'—इति वैद्यके । 'दत्तैर्नागा गोहयाद्याश्च लोम्ना हेम्ना भूपाः सिक्कयेन द्विजाद्याः । तद्द्रव्येषा वर्षमासा दिशश्च शेषद्रव्याण्यात्मरूपस्थितानि'—इति बृहत्संहितायाम् (२६।८) । ५५५

सिक्कितम् वि. [ शिक्के घृतम्, प्रातिपदिकाणिच्, क्त ] काचितम् । ७६८

सिद्धिनी, सिद्धिणी स्त्री.— नासिका; नासा; घ्राणं; घोणा । ५२१

सिचयः पुं. [ सिचं सिञ्चनमेति प्राप्नोतीति । सिच् + इग् + अच् ] वस्त्रम्, 'भूपाभोगिफणारत्नरोचिःसिचयचारत्रे । नमः प्रलीनमुक्ताय हरकल्पमहीश्वहे'—इति राजतरङ्गिण्याम् । जीर्णवस्त्रम् । ५४८

सिञ्जनी स्त्री.— बाणासनं; द्रुणा; मौर्वी; ज्या; गुणा; जीवा; शिञ्जनी; घतुर्गुणः । (५६१) नूपुरः; शिञ्जनी; पादकटकः । ४६४

सितः वि. [ सितः शुक्लवर्णोऽस्यास्तोति + अच् ] शुक्लवर्णमुक्तः; गौरः; श्वेतः; शुभ्रः; बलशः; भवलः;

अर्जुनः; 'सितं सितिम्ना सुतरां मुनेर्वपुर्विसारिभिः सौवमिवाथ लम्भयन्—इति माधे (१।२५) । [ सो + क्त ] समाप्तः; निवद्धः; जातः । क्ली. रोप्यं; मूलकं; चन्दनं; शुक्लचन्दनम् । 'सितं मलयजं शीतं गोशीर्षं सितचन्दनम्—इति गरुडे । पुं. शुक्लवर्णः; शुक्राचार्यः; शरः । ७३२

सिताम्बरः पुं. [ सितमम्बरं यस्य ] श्वेतवस्त्रपरिहितव्रती; रजोहरणधारी; श्वेतवासाः; नगनाटः; दिग्वासः; क्षपणः; श्रमणः; शुक्लवस्त्रपरिधायिनि त्रि. । ३४४

सिताम्बुजम् क्ली. [ सितम् अम्बुजम् ] पुण्डरीकं; श्वेतकमलम् । ६८०

सिताम्बोजम् क्ली. [ सितम् अम्बोजम् ] श्वेतपद्मम् । ६००

सितेतरौ [ सितश्च इतरश्च ] कृष्णशुक्लौ [ द्वि. व. ]; 'नानालक्षणवेपाम्यां कृष्णरामी विरेजतुः । स्वलङ्कृतौ बालगजौ पर्वणीव सितेतरौ—इति भागवते (१०।४१।४१) । पुं. [ सितवितरः ] श्यामशालिः; कुलत्थः; त्रि. सितेतरः=कृष्णः; शुक्लेतरवर्णः; कृष्णः; 'नीवीमतिक्रम्य सितेतरस्य तन्मेखलामध्यमणेरिवाचिः'—इति कुमारे (१।३८) । २५२

सितेतरगतिः पुं. [ सितेतरा कृष्णगतिरस्य ] वह्निः; अग्निः । ६२

सिद्धः पुं. [ सिप् + क्त ] देवयोनिविशेषः; स तु अग्निमादिगुणोपेतो विश्वावसुप्रभृतिः; 'उद्वेजिता वृष्टिभिराश्रयन्ते शृङ्गाणि यस्यात्पवन्ति सिद्धाः'—इति कुमारे (१।५) । व्यासादिः; व्यवहारः; कृष्णघुस्त्ररः; गुडः; विस्क्रम्मादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतैकविंशयोगः; 'जितेन्द्रियः सर्वकलानिधानो गौरोऽतिशूरो मधुरो विनीतः । सत्योपपन्नः कृतभूरिभोगो यस्य प्रसूतो किल सिद्धयोगः'—इति क्रोष्टीप्रदीपः । क्ली. सैन्ध्रवलवर्णः; त्रि. प्रसिद्धः; 'एवं तौ लोकसिद्धाभिः फ्रीडामिश्चेरतुर्वने'—इति भागवते (१०।१८।१६) । नित्यः; निरप्यन्नः; 'सिद्धायः खलु सौमित्रियंश्चन्द्रविमलोपमम् । मुखं पश्यति रामस्य राजीदासं महाद्युतिम्—इति रामायणे (२।९८।८) । मुक्तः; 'अहो दानव सिद्धोऽग्निसि यस्य ते रतिरोद्गी'—इति भागवते (६।१२।१९) । पक्वम्; 'पर्यसितं पुनः सिद्धमगोऽयमन्यत्र हिरण्योदक-

स्पर्शात्—इति श्राद्धतत्त्वम् । मन्त्रसिद्धिविशिष्टः; 'सम्यगनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते । पुनस्तेनैव कर्तव्यस्ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम्'—इति तन्त्रसारः । सिद्धिविशिष्टः; 'चतुस्त्रिंशद्विधः सिद्धः सर्वकर्मोपकारकः । तमुपैति स्वयं सिद्धं सर्वसाधनकारणम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ८७

सिद्धान्तः पुं. [ सिद्धः वादिप्रतिवादिभ्यां निर्णीतः अन्तः अर्थः यस्य ] पूर्वपक्षं निरस्य सिद्धपक्षस्थापनं; राद्धान्तः; कृतान्तः; समयः । १०

सिद्धार्थः पुं. [ सिद्धोऽर्थो यस्य ] शाब्दसिद्धः; शौद्धोदनिः; दशबलः; बुद्धः; शाक्यः; तथागतः; सुगतः; मारजित्; अद्वयवादी; समन्तभद्रः; जिनः । (५८१) [ सिद्धोऽर्थो यस्मात् ] श्वेतसर्पः; गौरसर्पः; 'ध्रुवाय पथि दृष्टाय तत्र तत्र पुरस्त्रियः । सिद्धार्थाक्षितदध्यम्बु दूर्वा पुष्पफलानि च । उपजहुः प्रमुञ्जाना वात्सल्यादाशिषः सतीः'—इति भागवते (४।१।५८) । वृत्ताहृत्यता; वटोवृक्षः; प्रसिद्धार्थः; 'सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । ग्रन्थादौ तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः'—इति व्याकरणटीका । ८५

सिध्म [ न् ] क्ली. [ सिध्+मन् स च कित् ] किलास-रोगः; 'क्षुद्रकुष्ठान्यपि स्पूलारुजं महाकुष्ठमेककुष्ठञ्च-र्मदलं विसर्पः परिसर्पः सिध्म विचर्चिका किटिमं पामा रकसा चैति'—सुश्रुते (२।५) । ६०२

सिध्मन् क्ली. [ सिध्+वाहलकान् मक् ] किलासरोगः; सप्तमहाकुष्ठान्तर्गतकुष्ठरोगविशेषः; 'श्वेतं ताम्रं तनु च यद्रजो घृष्टं विमुञ्चति । प्रायश्चोरसि तत् सिध्म-मलावुकुसुमोपमम्'—इति भागवकरः । ६०२

सिध्मलः त्रि. [ सिध्मम् अस्यास्तीति । सिध्म+ 'सिध्मादि-भ्यश्च' इति लच् ] किलासी; 'विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलं भूद्वै जागरणमभूद्वै इति'—वाजसनेयसंहितायाम् (३।०।१७) । ६०६

सिनीवाली स्त्री. [ सिनी क्षुंबला बाला चन्द्रकला अस्या-मिति । यद्वा सिन्या शुक्लया चन्द्रकलया वत्यते मिश्रघटे या । बल् मिश्रणे+घञ् । ततो ङीष् ] दृष्टेन्दुकलामा-वास्या; सा चतुर्दशयुक्तामावास्या; 'पौर्णमास्यां सिनीवाल्यां द्वादस्यां श्रवणेऽथवा'—इति भागवते (४।१२।४८) । दुर्गा । ११२

सिन्धुवारः पुं. [ सिन्धुं गजमदं वारयति तिवत्-त्वात् । सिन्धु+वृ+अण् । पाक्षिको घस्य दः ] वृक्ष-विशेषः; सिन्दुकः; इन्द्रसुरिसः; निर्गुण्डी; इन्द्राणिका; सिन्धुकः; सिन्धुवारकः; इन्द्राणी; पीलोमी; शक्राणी; कासनाशिनी; श्वेतपुष्पः; सिन्धुवारकः; स्थिरसाधनकः; अनन्तः; सिद्धकः; अर्थसिद्धकः; [ स्यन्दं वारयति सिन्धुवारः । केचित्तु सिन्धुं समुद्रमपि वारयति शोषयति तीक्ष्णरसत्वेन कफघ्नत्वात्, सिन्धुकसिन्धुवारी तव-गंचतुर्थवन्तावित्याहुः ] 'सिन्धुकः स्मृतिदस्तिवत्तः कषायः कटुको लघुः । केशयो नेत्रहितो हन्ति शूलशोथाममा-स्तान् । कुमिकुष्ठारुचिश्लेष्मव्रणान् नीलापि तद्विधा । सिन्धुवारदलं तत्तु वातश्लेष्महरं लघु'—इति भाव-प्रकाशः । २००

सिन्धुः स्त्री. [ स्यन्दते इति । स्यन्द+उ, सम्प्रसारणं, दस्य घश्च ] सरित्; नदी; 'अन्तः समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्मात् स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरूपाः । अतश्च सर्वा ओषधयो रसाश्च येनैव भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा'—इति मुण्डको-पनिषदि (२।१।१९) । नदीविशेषः (८३८); 'शतद्रो-विपाशायुजः सिन्धुनद्याः, सुशीतं लघु स्वादु सर्वाभय-घ्नम् । जलः निर्मलं दीपनं पाचनं च, प्रदत्तं बलं बुद्धि-मेधायुषं च'—इति राजनिघण्टः । पुं. [ स्यन्दते इति । स्यन्दू प्रस्रवणे+ 'स्यन्देः सम्प्रसारणं घश्च' इति उ, धकारादेशः सम्प्रसारणं च ] समुद्रः; 'तावत्सिन्धुवर्णं सद्यः कल्पान्तैर्धितसिन्धवः । प्लावयन्त्युत्कटाटोप-चण्डवातेरितोर्भयः'—इति भागवते (३।१।१३१) । वमयुः; गजमदः; सिन्धुवारवृक्षः; श्वेतदङ्कणः; देश-विशेषः; 'युधाजितश्च सन्देशात् स देशं सिन्धुनामकम् । ददौ दत्तप्रभावाय भरताय भूतप्रजः'—इति रघो (१५।८७) । नदविशेषः; 'विनीताध्वभ्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः । दुधुवर्वाजिनः स्कन्धाल्लंगकुडकुम-केशरान्'—इति रघो (४।६७) । रागविशेषः; स च मालकोशरागपुत्रः; 'भाववः शोभनः सिन्धुमदि-मेवाहुकुन्तलाः । कलिङ्गः सोमसंयुक्तः कौशिकस्य सुता इमे' । ६६५

सिन्धुपारजः पुं. [ सिन्धुपारे तदाख्यतदप्रान्तदेशे जातः । जनैर्दं ] सिन्धवः । ४३९

सिन्धुमन्थजम् क्ली. [ सिन्धुमन्थाज् जातम् इति । जन्+

ड ] सैन्धवं; सिन्धुलवणम् । ४३९

सिन्धुरः पुं. [ सिन्धुं मदं राति ददातीति । सिन्धु+रा+क ] हस्ती; गजः; 'गतिगञ्जितवरयुक्तिः करी कपोलौ करोतु मदमलिनी । मुखवन्धमात्रसिन्धुरलम्बोदर कि मदं वहसि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१९८) । २१४

सिन्धुवारः पुं. [ सिन्धुमपि वृणोति गत्वेति । सिन्धु+वृ+अण् । सिन्धुं मदजलमपि वारयति तिरस्करोति तिवतरसेन । सिन्धु+वृ+णिच्+अण् ] सिन्धुवारवृक्षः; सिन्धुवारकः; 'विमुन्धकः सिन्धुवारः सिन्धुकं सुरसोऽपि च । तथेन्द्रसुरसस्तिवन्द्रसुरिसः सिन्धुवारितः । निर्गुण्डीन्द्राणिकेन्द्राणी सुरसा सिन्धुवारकः'—इति शब्दरत्नावली । 'सिन्धुवारो विपश्लेष्मव्रणकुण्ठक्षयापहः'—इति राजवल्लभः । २००

सिन्धूत्यम् क्लो. [ सिन्धु+उद्+स्था+ 'सुपि स्थः' इति क ] सिन्धूपलं; माणिमन्यं; माणिवन्धं; सैन्धवं; लवणोत्तमं; सिन्धुलवणम् । ६१३

सीकरः पुं. [ शीकयतेऽनेनेति । शीकृ सेचने+वाहुलकाद् अरन् । षृपोदरादित्वात् सः ] वातप्रेरितजलकणाः; शौकरः; वातास्तवारिः; अम्बुकणाः; 'स नर्मदारोवसि सीकरार्द्रमर्षिन्द्रानतितनक्तमाले । निवेशयामाम विलङ्घिताध्वा क्लान्त रजोवूसरकेतु सैन्यम्'—इति रघो (५।४२) । ५९

सीता स्त्री. [ सिनोतीति, पित्र् वन्धने+वाहुलकात् क्त दीर्घश्च । लाङ्गलरेखया सिनोति खनति भूमिम्, पित्र् वन्धने क्त, निपातनाद्दीर्घः । सीता दन्त्यसादिः, शोते भुवि इति शीता, तालव्यशादिश्च ] लाङ्गलपद्धतिः; 'न वैधि स प्राथितदुर्लभः कदा, सखीभिरलोतरमीक्षिताभिमाम् । तपःकृशामम्युपपत्स्यते सखीं, वृषेव सीतां तदवग्रहक्षताम्'—इति कुमारे (५।६१) । जनकराजनन्दिनी ; सा तु श्रीरामपत्नी; वैदेही; मैथिली; जानकी; धरणीसुता; भूमिसम्भवा; 'अथ मे कृपतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोषयता लब्धा नाम्ना सीतेति विभ्रुता'—इति रामायणे (२।६।१३) । लक्ष्मीः; उमा; सस्याधिदेवता; स्वर्गङ्गा; मदिरा; गङ्गान्नोतः; 'गङ्गायां तु भद्रमोमा महानद्राय पाटला । तस्याः नोतमि नोता च वटकुभद्रा च कीर्तिता । तद्भूदेऽलकनदापि धारिणी स्वल्पनिम्नगा'—इति शब्दमाला ।

नदीविशेषः; 'गङ्गां शतद्रुं सीतां च यमुनामथ कौशिकीम् । एताश्चान्याश्च सरितः पृथिव्यां या नरोत्तम । परिक्रामन् प्रपश्यामि तस्य कुक्षौ महात्मनः'—इति महाभारते (३।१८८।१००) । ५७६

सीत्यम् क्ली. [ सीतया निर्वृत्तमिति । सीता+यत् ] सस्यं; शस्यं; धान्यं; त्रि. [ सीतया समितम् । सीता+नौवयोषमैति यत् ] कृष्टक्षेत्रादि । ५७४

सीमन्तः पुं. [ सीमनोऽन्तः, शकन्ध्वादित्वात् साधुः ] केशेषु वर्त्म; केशवपेः; स्त्रीकेशमध्यपद्धतिः; 'अपश्यन्त तथा चैनमाकाशे नागमुत्तमम् । सीमन्तमिव कुर्वाणं नभसः पद्मवर्चसम्'—इति महाभारते (१।४४।२) । सीमन्तोन्नयनसंस्कारः; 'गर्भाधानमृती पुंसः सवनं स्पन्दनात् पुरा । पष्ठेऽपठे वा सीमन्तः प्रसवे जातकर्म च'—इति याज्ञवल्क्यः । प्रत्यङ्गविशेषः; 'चतुर्दशैव सीमन्ताः ये चास्थिसंघातवद् गणनीया यतस्तैर्युक्ता अस्थिसंघाताः । ये ह्युक्ताः संघातास्तु खल्वष्टादशैकेषाम्'—इति सुश्रुते (३।५) । ५२९

सीमन्तिनी स्त्री. [ सीमन्तोऽस्या अस्तीति । इनि+ङीप् ] नारी; अङ्गना; सुन्दरी; अवला; स्त्री; 'मास्म सीमन्तिनी काचिज् जनयेत् पुत्रमीदृशम् । सीमित्रे ! योऽहमम्वाया दधि शोकमनन्तकम्'—इति रामायणे (२।३५।२१) । ४८१

सीमा [ न् ], सीमा स्त्री. [ सीयते इति, सि+ 'नामन्-सीमन्व्योमत्रिति' मनिन् प्रत्ययेन साधुः, 'डावुभाम्यामन्यतरस्याम्'—इति पाक्षिको ङाप् ] ग्रामादीनामवधारितान्तभागः; मर्वादा; अवधिः; आघाटः । २५९

सीरः पुं. [ मिनोति सीयते इति वा । सि वन्धने+ 'शुसि-चित्मिवां दीर्घश्च' इति कर्त् दीर्घश्च ] हलः; लाङ्गलः; शीरः; 'सद्यः सीरोत्कपणसुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं, किञ्चित्त्वश्वाद् ब्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण'—इति मेघदूते (१६) । सूर्यः; अर्कवृक्षः । ५७५

सीरी [ न् ] पुं. [ सीरोऽस्यास्तीति, इनि ] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः । २८

सीसकम् क्ली. [ सीसमेव, स्वार्थे कन् ] घातुविशेषः; नागं; योगेष्टं; वध्रं; सीसं; सीसपत्रकं; गण्डूपदभवम्; सिन्दूरकारणं; वध्रं; स्वर्णारिः; यवनेष्टं; सुवर्णकं; वध्रं, पिच्चटं; सुवर्णारिः; त्रपुः; त्रपुः; वध्रकं; महाबलं;

यवनेष्टकं; बहुमलं; चीनं; पिष्टं; जडं; भुजङ्गमम्;  
उरगं; कुरङ्गं; परिपिष्टकं; मृदुकृष्णायसं; पसं;  
तारशुद्धि; शिरावृत्तं; वयोवद्धं; चीनपिष्टम् । १७२  
सीसपत्रम् क्ली.— सीसपत्रकं; सीसं; सीसकम् । १७२  
सुकृतम् क्ली. [ सु+कृ+क्त ] पुष्पं; धर्मः; श्रेयः; वृषः;  
सुकृतिः; 'अथ ते मुनयो दिव्याः प्रेष्य हैमवतं पुरम् ।  
स्वर्गाभिसन्धिसुकृतं वञ्चनामिव मेनिरे'—इति कुमारे  
(६।५७) । शुभं; सुविहिते त्रि. । 'क्रियमाणे कर्मणीदं  
दैवे पित्र्येऽथ मानुषे । यत्र यत्रानुकीर्येत तत्तेषां सुकृतं  
विदुः'—इति भागवते (८।२३।३१) । 'सुकृतं दुष्कृतं  
लोके गच्छन्तमनुगच्छति । तस्माद्वित्तं समासाद्य दैवाद्वा  
पौषपाद्य । दद्यात् सम्यग् द्विजातिभ्यः कीर्तनानि च  
कारयेत्'—इति वल्लिपुराणे । १२५

सुकेशी स्त्री. [ शोभनाः केशा यस्याः, डीप् ] स्वर्ग-  
वेश्याभेदः; अप्सरोविशेषः; 'मनोहरा सुकेशी च सुमुखी  
हासिनी प्रभा । एताश्चान्याश्च वै बह्व्यः प्रनृत्ताप्सरसः  
शुभाः'—इति महाभारते (१३।१९।४५) । सुकेशा;  
सुन्दरकेशयुक्ता; शोभनकेशयुक्ते त्रि. । 'सुभूः सुकेशी  
सुश्रोणी सुकुचा सुद्विजानना । सा विवेशाश्रमपदं  
वीरसेनसुतप्रिया'—महाभारते (३।६४।६४) । ८८

सुखम् क्ली. [ सुखयतीति । सुख्+अच् ] आत्मगुण-  
विशेषः; मनसो धर्मः; मुत्; प्रीतिः; प्रमदः; हर्षः;  
प्रमोदः; आमोदः; संमदः; आनन्दयुः; आनन्दः; शर्म;  
शातं; मदः; भोगः; रभसः; निर्वृतिः; धृतिः; कीचिः;  
संमोदः; मोदः; नन्दयुः; नन्दः; मुदा; सौख्यम्;  
उपजोषम्; आनन्दः; जोषम्; 'सुखं तु जगतामेव काम्यं  
धर्मेण जन्यते । अवर्मजन्यं दुःखं स्यात्प्रतिकूलं सचेत-  
साम् । मनोग्राह्यं सुखं दुःखमिच्छा द्वेषो मतिः कृतिः'  
—इति भाषापरिच्छेदः । १२३

सुगतः पुं. [ सु शोभनं गतं गमनं ज्ञानं वा अत्येति ] शीघ्रो-  
दनिः; दशबलः; बुद्धः; शाक्यः; तथागतः; मारजित्;  
अद्र्यवादी; समन्तभद्रः; जिनः; सिद्धार्थः; शाक्यसिंहः;  
'तेनाभिपूज्य सुगतान् भासयामास तत्र सा'—इति कथा-  
सरित्सागरे (२९।४०) । सुन्दरगमनविशिष्टे त्रि. । ८५

सुगन्धिता स्त्री. [ सुगन्धेर्भावः । सुगन्धि+तल्+टाप् ]  
सौगन्ध्यं; सौरभम्; आमोदः; परिमलः; सौरभ्यं;  
सुगन्धिः; 'सुगन्धितामप्रतियत्नपूर्वा विभ्रन्ति यत्र प्रम-

दाय पुंसाम् । मधूनि वक्त्राणि च कामिनीनामामोदकर्म-  
व्यतिहारमीयुः'—इति माघे (३।५४) । ७७

सुचरिता स्त्री. [ शोभनं चरितं यस्याः ] सती; साध्वी;  
पतिव्रता; सुचरित्रा । ४९५

सुचरित्रा स्त्री. [ शोभनं सुन्दरं चरित्रं यस्याः ] सती;  
साध्वी; पतिव्रता; सुचरिता । ४९५

सुतः पुं. [ सूयते स्मेति । सु+क्त ] पुत्रः; सूनुः; सन्ततिः;  
आत्मजः; तनुजः; प्रसूतिः; तुकः; तोकं; तनयः;  
नन्दनः; अपत्यम्; 'शीलं संभजते पुत्रो मातुस्तातस्य  
वै सुता । यथाशीला भवेन्माता तथाशीलो भवेत्सुतः'—  
इति वल्लिपुराणे । पाथिवः; राजा; उत्पन्ने त्रि. । ४९७

सुत्रामा [ न् ] पुं. [ सु+त्रै+मनिन् । सुष्टु त्रायते भुवनम् ]  
इन्द्रः; 'यत्राशयो लगति तत्रागजा वसतु कुत्रापि  
निस्तुलशुका । सुत्रामकालमुखसत्राशनप्रकरसुत्राणकारि-  
चरणा'—इति अम्बाष्टके (३) । त्रि. 'इन्द्राय  
सुत्राम्णे पच्यस्व'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१०।३१) ।  
'सुष्टु त्रायते इति सुत्रामा तस्मै सुत्राम्णे शोभनत्राणकर्त्रे  
सुत्रातव्याय वा इन्द्राय पच्यस्व' इति तद्भाष्यम् । ५३

सुदर्शनः पुं.— क्ली. [ शोभनं दर्शनमस्येति ] विष्णुचक्रं;  
क्ली. [ सुष्टु दृश्यते इति । सु+दृश्+ल्युट् ] शोभनं  
दर्शनमस्येति वा ] इन्द्रनगरम् । २६

सुधा स्त्री. [ सुखेन धीयते पीयते इति । सु+धेट् पांने+  
'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्, टाप् ] अमृतं; पीयूषं; पेयूषं;  
त्रिदशाहारः; 'न पश्चात्तेऽपि मन्यन्ते सुधामपि सुरो-  
पमाः'—इति रामायणे (२।६।१।१३) । लेपनद्रव्यम्;  
'सेनासुधाक्षालितसौघसम्पदां पुरां बहूनां परभागमाप  
सा'—इति माघे (१२।६२) । मूर्वी; स्नुही; 'सेहण्डः  
सिहतुण्डः स्याद्वच्ची वज्रद्रुमीऽपि च । सुधा समन्तदुग्धा  
च स्तुक् त्रिधां स्यात् स्नुही गुडा'—इति भाव-  
प्रकाशः । गङ्गा; इष्टका; विद्युत्; रसः; तोयम्;  
'रसायनमिववीणां देवानामामृतं यथा । सुधेवोत्तम-  
नागानां भेषज्यमिदमस्तु ते'—इति सुश्रुते । धात्री;  
हरीतकी; मधु; शालपर्णी । १३३

सुधीः पुं. [ सुष्टु ध्यायतीति, सु+ध्यै+क्विप् ] पण्डितः;  
बुधः; स्त्री. [ शोभना धीः ] सुन्दरबुद्धिः; सुष्टुधीः;  
[ शोभना धीर्यस्य ] शोभनबुद्धियुक्ते त्रि. । 'मात्राति-  
मात्रं शुभयैव बुद्ध्या चिरं सुधीरभ्यधिकं समाधात्'

— इति भट्टिः । ३३३

सुनासीरः पुं. [ सुष्टु नासीरम् अग्रगामिसैन्यं यस्य ] इन्द्रः; शुनाशीरः; सुनाशीरः; 'ततो मोढ्वांसमामन्त्र्य सुनासीराः सहर्षिभिः । भूयस्तद्देवयजनं समीढ्वद्वेषो ययुः'—इति भागवते (४।७।७) । ५३

सुनिश्चितः त्रि. [ सुष्टु निश्चितः ] सुन्दरनिश्चयविषयो-भूतः; संशितः । ४०२

सुन्दरः त्रि. [ सुष्टु उन्नति आर्द्धीकरोति चित्तमिति । सु+उन्दी क्लेदने+अर । शकण्वादित्वात् साधुः ] मनोहरं; रुचिरं; चारु; सुपमं; साधु; शोभनं; कान्तं; मनोरमं; रुच्यं; मनोज्ञं; मञ्जु; मञ्जुलं; मनोहारि; सौम्यं; भद्रकं; रमणीयं; रामणीयकं; वन्धूरं; वन्धुरं; पेशलं; पेशलं; वामं; रामम्; अभिरामं; नन्दितं; सुमनः; वल्लु; हारि; स्वरूपम्; अभिरूपं; दिव्यम् । पुं. [ सु+उन्द्+अर ] कामदेवः; वृक्षविशेषः; 'जम्बुव-द्वोल्लखदिरसिन्धुवाराश्च सुन्दरः । एषामन्यतमाङ्गारं निर्मलाम्बुनि भावयेद्'—इति सुखबोधः । ६८९

सुन्दरी स्त्री. [ सुन्दर+गौरादित्वाद् डीप् ] अङ्गना; स्त्री; अवला; नारीभेदः; रूपलावण्यसम्पन्ना स्त्री; तरुभेदः; हरिद्रा; त्रिपुरसुन्दरी; 'अङ्गुष्ठानामिका-योगाद् वामहस्तस्य पार्वति । तपयेत् सुन्दरीं देवीं समुद्राञ्च सवाहनाम्'—इति तन्त्रसारः । योगिनी-विशेषः; 'तावन्मन्त्रं जपेद्विद्वान् यावदायाति सुन्दरी । ज्ञात्वा दृढं साधकेन्द्रं निशीये याति निश्चितम्'—इति तन्त्रसारे । ४८१

सुपर्णः पुं. [ सुष्टु पर्णं पक्षो यस्य ] विहङ्गराजः; गरुडः; सुपर्णकः; गरुत्मान्; ताक्ष्यः; सुपर्णातनयः; वैनतेयः; पवनाशनाशः; सुरेन्द्रजित्; कश्यपनन्दनः; 'उहयन्ते स्म सुपर्णेन वेगाकृष्टपयोमुखा'—इति रघौ (१०।६१) । स्वर्णचूडपक्षी; कृतमालकवृक्षाः; पक्षिमात्रम्; 'नागान् सर्पान् सुपर्णाश्च पितृणां च पृथगगणान्'—इति मनुः (१।३७) । विष्णुः; शोभनवर्णविशिष्टे त्रि. । ३०

सुपर्णकेतुः पुं. [ सुपर्णः गरुडः केतौ भ्वजे यस्य सः ] विष्णुः; गरुडध्वजः । २२

सुपर्वा [ न् ] पुं. [ सुष्टु पर्वं उत्सवो यस्य ] देवता; अमरः; सुरः; बाणः; वंशः; पर्वः; भूमः; स्त्री. इमेतद्रूर्वा; सुन्दरवर्णविशिष्टा । ४

सुप्रतीकः पुं. [ शोभनाः प्रतीकाः अङ्गानि यस्य ] ईशान-दिग्गजः; 'मदपुटनिनद्विद्धर्वोधिषतो राजहंसैः सुरगज द्वव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः'—इति रघौ (५।७५) । शिवः; कामदेवः; साधुः; 'एवं घाष्टथान्युशति क्रुशते मेहनादीनि वास्तौ, स्तेयोपायैविरचितकृतिः सुप्रतीको ययास्ते'—इति भागवते (१०।८।३१) । [ शोभनः सुन्दरः प्रतीकः अङ्गम् ] शोभनाङ्गं; तद्युक्ते त्रि. । 'भगवान् भागवतवात्सल्यतया सुप्रतीक आत्मानमपराजितं निज-जनाभिप्रेतार्थविधित्सया गृहीतहृदयः'—इति भागवते (५।३।२८) । १०४

सुप्रभा स्त्री. [ सुष्टु प्रभा यस्याः ] अग्निजिह्वाविशेषः; सप्तार्चिषो जिह्वाभेदः; 'सुप्रभा पद्मरागाभा वारु-ण्यां दिशि संस्थिता'—इति तन्त्रसारः । शोभनदीप्तिः; वाकुची । ६८

सुभगः त्रि. [ सुन्दरः भाः श्रीयस्य ] सुदृश्यः; चक्षुष्यः; वल्लभः; दयितः; प्रियः; 'केवलोऽपि सुभगो नवाभ्नुदः किं पुनस्त्रिदशचापलाञ्छितः'—इति रघौ (११।८०) ।

३६७

सुमनाः [ स् ] पुं. [ शोभनं मनो यस्य ] देवता; पण्डितः; पूतिकरञ्जः; निम्बः; महाकरञ्जः; गोधूमः; शोभन-चित्ते त्रि. । 'ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे बकं दाल्भ्यमपूजयन् । युधिष्ठिरे स्तूयमाने भूयः सुमनसोऽभवन्'—इति महा-भारते (३।२६।२१) । स्त्री. [ सुष्टु मनो यस्याः ] पुष्यं; (१८६) मालती; जाती; शतपत्री; 'स्त्रियां सुमनसो भूमिन् पुष्ये जाती च भेदतः । विदुष्यपि यदा दृष्टस्तदा भेदेन शिष्यते'—इति व्याडिः । 'सुमनाः पुष्यमालत्योः स्त्रियां ना धीरदेवयोः'—इति मेदिनी । ४

सुमेधाः [ स् ] त्रि. [ सुष्टु मेधा यस्य ] सुधीः; प्राज्ञः; सुबुद्धिः; 'इमे अङ्गिरसः सत्रमासतेऽद्य सुमेधसः'—इति भागवते (९।४।३) । ज्योतिष्मती । ६२०

सुमेरुः पुं. [ सुष्टु मिनोति क्षिपति ज्योतीपि इति । सु+मि+मिपीम्यां रुः इति रु ] पर्वतप्रभेदः; मेरुः; हेमाद्रिः; रत्नसानुः; सुरालयः; अमराद्रिः; भूस्वर्गः; शकनीडा-चलः; हेमपर्वतः; त्रिदशालयः । १३६

सुरः पुं. [ सुष्टु राति ददात्यभोष्टमिति । सु+रा+क । यद्वा सुरति शोभते इति, यर् प्रसवैश्वर्ययोः +इग्-पठेति क । यद्वा सुनोतीति, ए अमिषदे+सुसूषाब्-

गृधिम्यः क्रन्' इति क्रन् ] देवः; देवता; अमरः; 'चुकोप तस्मै स भृशं सुरश्रियः प्रसह्य केशव्यपरोपणादिव'—इति रघौ (३।५६) । सूर्यः; पण्डितः; स्वरः; 'लक्षणानि सुरास्तोमा निरुक्तं सुरपङ्क्तयः'—इति महाभारते (१३।८५।८१) । ४

सुरङ्गः पुं. [ सुष्ठु रङ्गो यस्मात् ] गर्तविशेषः; सन्धिः; नागरङ्गः; क्ली. हिङ्गुलं; पत्रङ्गम् । ७७१

सुरङ्गा स्त्री. [ सु बहु रज्यतेऽस्यां रजसा । सु+रञ्ज रागे, 'हलश्चेति' घञ्, 'चजोरिति' कुत्वम्, टाप् ] तिर्यग्भू-  
खातः; सन्धिः; कैवतिका । ७७१

सुरज्येष्ठः पुं. [ सुरेपु ज्येष्ठः ] ब्रह्मा; पितामहः । ६

सुरतम् क्ली. [ सुष्ठु रत् रमणं यत्र ] निबुवनं; मैथुनं; 'भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः'—इति कुमारे (१।१०) । 'सुरते सात्त्विका भावाः सीत्काराः कुड्मलाक्षता । काञ्चीकङ्कणमञ्जीर-  
रवाधरनखक्षतिः'—इति कविकल्पलता । दयालौ त्रि. । क्रीडायुक्तः । ५६९

सुरतरुः पुं. [ सुराणां देवानां तरुः वृक्षः ] मन्दारः; पारि-  
जातः; पारिजातकः; हरिचन्दनः; कल्पवृक्षः; सन्तानः;  
सुरपादपः । १३५

सुरपतिः पुं. [ सुराणां पतिः ] सुरेन्द्रः; सुरेशः; सुरे-  
श्वरः; सुरोत्तमः; मधवा; इन्द्रः । ५२

सुरपणिका स्त्री. [ सुरपणी+संज्ञायां कन् ] पुत्रागः;  
वृक्षविशेषः । २०८

सुरपर्वतः पुं. [ सुराणां पर्वतः ] मेरुः; सुमेरुः; हेमाद्रिः ।  
१३५

सुरभिः स्त्री. [ सुष्ठु रभते रभते वा । सु+रभ्+इन् ]  
गीः; अघ्न्या; माहेयी; बहुला; सौरभेयी; उस्त्रा;  
अर्जुनी; रोहिणी; अनडुही; अनड्वाही; शल्लकी;  
मातृभेदः; मुरा; रुद्रजटा; वनमालिका; तुलसी;  
पाची; पृथिवी; गीः; गोमाता; 'सुतां तदीयां सुरभेः  
कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः । आराधय सपत्नीकः प्रीता  
कामदुषा हि सा'—इति रघौ (१।८१) । 'गवाम-  
धिष्ठातृदेवी गवामाद्यो गवां प्रसूः । गवां प्रधाना सुरभिः  
गोलांके सा समुद्भवा'—इति ब्रह्मवैवर्ते । २६८

सुरभिः त्रि. [ सुष्ठु रभन्ते अत्र, सु+रभ्+इन् ] श्रेष्ठः;  
सुगन्धिः; 'उपवेश्य तु तान् विप्रान्नासनेष्वजुगुप्सितान् ।

गन्धमालयैः सुरभिभिरुर्वयेद्देवपूर्वकम्'—इति -मनुः  
(३।२०९) । धीरः; विख्यातः; कान्तः; 'निवर्त्य  
राजा दयितां दयालुस्तां सौरभेयीं सुरभिर्मयोभिः ।  
पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां जुगोप गोलुपधरामिवोर्वीम्'  
—इति रघुः (२।२) । पुं. सुगन्धिः; चम्पकः; वसन्त-  
र्तुः; जातीफलवृक्षः; शमीवृक्षः; कदम्बवृक्षः; कण-  
गुगुलुः; गन्धतुर्णः; वकुलवृक्षः; रालः; सर्जरसः;  
चैत्रमासः; धीरः; पन्धफलः; क्ली. स्वर्णः; गन्धाश्मः;  
सुन्दरः; साधुगन्धः । ८००

सुरशत्रुः पुं. [ सुराणां शत्रुः ] सुरवैरी; असुरः; सुर-  
विद्विद्; दानवः; दैत्यः; दैतयः; पूर्वदेवः; शुकशिष्यः;  
यातालनिलयः; सुरारिः; सुरद्विद् । ५

सुरसप्त [ न् ] क्ली. [ सुराणां सप्त ] स्वर्गः; सुरलोकः;  
स्वः; स्वर्गलोकः; सुरालयः; त्रिदशावासः; त्रिविष्टपं;  
त्रिदिवं; द्यौः; नाकः; अमर्त्यभुवनं; देवगृहम्;  
'एत मोक्षं प्रयातेति वदन्त्यामिव दूरतः । वाताक्षिप्त-  
समुत्क्षिप्तैः सुरसप्तध्वजांशुकैः'—इति कथासरित्सागरे  
(९३।८३) । ३

सुरसरित् स्त्री. [ सुराणां देवानां सरित् नदी ] गङ्गा;  
सुरसिन्धुः; सुरापगा; सुरेश्वरी; सुरदीर्घिका; सुर-  
नदी; सुरनिम्नगा; 'सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठयूत-  
मैशम्'—इति रघौ (२।७५) । ३७३

सुरा स्त्री. [ सु अभिषवे+क्रन् स्त्रियां टाप् । यदा सुष्ठु  
रायन्त्यनयेति । सु+रै शब्दे+ 'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्,  
टाप् ] मध्वासवः; शीघ्रः; प्रसन्ना; परिस्रुता; मदिरा;  
मदिष्ठा; कादम्बरी, स्वादुरसा; शुण्डा; गन्धोत्तमा;  
माधवकः; हाला; कत्यः; कश्यः; मधं; मुरैयं;  
कापिशायनं; माध्वीकम्; आसवः; परिस्रुतः; वारुणी;  
मधु; 'कृशानां सक्तमूत्राणां ग्रहण्यशौविकारिणाम् ।  
सुरा प्रशस्ता वातघ्नी स्तन्यरक्तक्षयेषु च'—इति राज-  
वल्लभः । 'सुरापाने विकलता स्वल्पं वचने गती ।  
लज्जामानञ्च्युतिः प्रेमाधिक्यं रक्ताक्षता भ्रमः'—इति  
कविकल्पलता । ३२९

सुरङ्गा स्त्री. [ सुष्ठु रज्यते मज्यते । सु+रञ्जो भङ्गे,  
घञ्, कुत्वं, नुमि ष्योदरादिः ] सुरङ्गा; सन्धिला;  
सन्धिः; 'सैष, सुरङ्ग' इति भाषा । 'ज्ञात्वा तु तद् गृहं  
सर्वभादीप्तं पाष्णुनन्दनाः । सुरङ्गां विविमुत्स्रं मात्रा



साद्वमरिन्दमाः—इति महाभारते (११४९।११) ।

७७१

सुरेन्द्रजित् पुं. [ सुरेन्द्रं देवराजं जितवानिति । सुरेन्द्र+जि+विप्रप्, सुगागमश्च ] विहङ्गराजः; गरुडः; गरुत्मान्; ताक्ष्यः; सुपर्णातनयः; सुपर्णः; वैनतेयः; पवनाशिनाशः; कश्यपनन्दनः; इन्द्रजित्; सीपर्णयः । ३०

सुवर्णम् क्ली. [ शोभनो वर्णो यस्य ] धातुविशेषः; स्वर्णं; कनकं; हिरण्यं; हेमः; हाटकं; तपनीयं; शातकुम्भं; गाङ्गायैवं; भर्मः; कर्वुरं; चामीकरं; जातरूपं; महारजतं; काञ्चनं; रुचमं; कार्तस्वरं; जाम्बूनदम्; अष्टापदं; शातकौम्भं; कर्वुरं; कर्चुरं; रुचमं; भद्रं; भूरि; पिञ्जरं; द्रविणं; गैरिकं; चाम्पेयं; भरुः; चन्द्रः; कलघौतम्; अन्नकम्; अग्निवीजं; लोहवरम्; उदधारुकं; स्पर्शमणिप्रभवं; मुख्यधातुः; उज्ज्वलं; कल्याणं; मनोहरम्; अग्निवीर्यम्; अग्निः; ज्ञास्करं; पिञ्जाननम्; अपिञ्जरं; तेजः; दीप्तम्; अग्निभं; दीप्तकं; मङ्गल्यं; सौमञ्जकं; भृङ्गारं; जाम्बवम्; आग्नेयं; निष्कम्; अग्निशिखम्; 'सुवर्णं शीतलं वृष्यं वल्यं गुरु रसायनम् । स्वादु तिक्तं च तुवरं पाके च स्वादु पिच्छिलम् । पवित्रं वृंहणं नेत्र्यं भेषास्मृतिमतिप्रदम् । हृद्यमायुष्करं कान्तिचाणिवशुद्धिस्थिरत्वकृत् । विपद्बन्धयोन्मादत्रिदोषज्वरशोषजित् । बलं सवीर्यं हरते नराणां रोगव्रजं पोषयतीह काये । असौख्यकार्षेव सदा सुवर्णमशुद्धमेतन्मरणं च कुर्यात् । असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलं वीर्यं च नाशयेत् । करोति रोगान्मृत्युं च तद्धन्याद्यत्नतस्ततः'—इति भावप्रकाशः । हरिचन्दनं; स्वर्णगैरिकं; धनं; नागकेशरं; पुं.—क्ली. [ सुष्ठु वर्णोऽस्य ] हेम्नोऽश्रः; स अशीतिरक्ति-कापरिमितस्वर्णः; विस्तः; कर्पपरिमाणम्; 'विद्यात् कर्पं तथा चापि सुवर्णं कवलग्रहम्'—इति गरुडे ।

पुं. [ शोभनो वर्णो यस्य ] स्वर्णकर्पः; यज्ञविशेषः; घुस्तूरः; कणगुगुलुः; सुष्ठुवर्णं त्रि. । 'वाससां सम्प्रदानेन स्वदारनिरतो नरः । सुवर्णश्च सुवेशश्च भवतीत्यनुशुभम्'—इति महाभारते (१३।६८।३३) । १७३

सुवर्णकारः पुं. [ सुवर्णं स्वर्णभूषणादिकं करोतीति । सुवर्णं+कृ+अण् ] स्वर्णकारः; नाटिन्यमः; कलादः; मुष्टिकः; सुवर्णकृत्; सुवर्णकर्ता । ५८८

सुवासिनी स्त्री. [ सुजेन वसतीति । सु+वस्+गिनि,

झीष् ] किञ्चित्प्रौढा; 'सुवासिन्यां घिरष्टी स्याद् द्वितीयवयसि स्त्रियाम्'—इति ऋदः । चिरिष्टी । ४८३  
सुपमम् त्रि. [ सुष्ठु समं सर्वं यस्मात् । 'सुविनिर्दुम्बः सुपिसृत्तिसमाः' इति पत्वम् ] शोभनं; सौम्यं; चारुः समम् । ६८९

सुषमा स्त्री. [ सु शोभनं समं सर्वं यस्याः ] परमा शोभा; 'जय जय महाराज प्राभातिकीं सुपमामिमां सफलयतमां दानादक्ष्णोर्दंरालसपक्ष्मणोः'—इति नैपद्ये (११।२) । ५६५  
सुहृत् पुं. [ सु शोभनं हृत् हृदयं यस्य ] मित्रं; सखा; वयस्यः; स्निग्धः; 'सुहृदां हितकामानां यः शृणोति न भाषितम् । विपत्सन्निहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः ।' लग्नाच्चतुर्यस्यानम्; 'पातालं हिवुकं चैव सुहृदम्भश्चतुर्यकम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । 'शशिजः सुहृद्गृहगतः करोति चातुर्यहास्यं धनवन्तं वचसामधिपः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । महादेवः; महाभारते (१३।१७।९९) ।

४२८

सूक्ष्मः त्रि. [ सूच्+स्मन् ] लेशः; लवः; श्लक्ष्णः; क्षुद्रः; दध्रः; कणः; अणुः; किञ्चित्; मात्रं; तनुः; स्तोत्रं; ह्रस्वः; अल्पं; त्रुटिः; 'अल्पे स्तोके क्षुल्लसूक्ष्मे क्षुल्लकं च कृशं तनु । दध्रं खुल्लं खुल्लकं च स्त्रियां मात्रा त्रुटी ऋणा । पुमानणुलंबो लेशः कणोऽपि च निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली । क्ली. कैतवम्; अध्यात्मम्; 'तस्यार्थसूक्ष्माभिनिविष्टदृष्टेरन्तर्गतोऽर्थो रजसा तनीयान्'—इति भागवते (३।१८।१४) । अलङ्कारविशेषः; 'सूक्ष्मं पराशयाभिज्ञे त्वरसाकूतचेष्टितम् । मयि पश्यति सा केशैः सीमन्तमणिमावृणोत्'—इति चन्द्रालोकः । पुं. कतक वृक्षः । ६८८

सूक्ष्मदर्शी [ न् ] त्रि. [ सूक्ष्मं पश्यतीति । सूक्ष्म+दृश्+गिनि ] सूक्ष्मदृष्टिः; कुशाग्रीयमतिः; अतिपायवृद्धिमान्; तत्पालधीः; प्रत्युत्पन्नमतिः; दूरदर्शी; 'न विदुर्यस्य भवनमादित्याः सूक्ष्मदर्शिनः । स कथं नरमात्रेण शक्यो ज्ञातुं सतां गतिः'—इति महाभारते (१३।१४।२३) ।

३७३

सूचनम् क्ली. [ सूच्+ल्युट् ] गन्धनं; जापन. सूचना; 'भङ्गिसूचनविधौ विशारदो नारदो मुनिरदर्शनं ययौ'—इति कथासरित्सागरे (१५।१४८) । ८७०

सूचना स्त्री. [ सूच्+गिच्+युच्+टाप् ] गन्धनं; सूचनं;

ज्ञापनम्; 'यत्र स्यादङ्ग एकस्मिन्नङ्गानां सूचनाखिला । तदङ्गमुखमित्याहुवौजार्यख्यापकं च तत्—इति साहित्य-दर्पणे (६।३१२) । व्यधनं; दृष्टिः; अभिनयः । ८७०

सूचिकः पुं. [ सूच्या जीवति यः ] सौचिकः; सौचिः; तुन्नवायः; सूत्रभित् । ५९०

सूची स्त्री. [ सीव्यतेऽनया । षिवु+सिषेष्टेरू च' इति चट्, टेहृत्वं च ] शललं; शलं; सीवनद्रव्यं; 'सूई' इति भाषा । 'यावद्धि सूच्यास्तीक्ष्णाय विध्येदश्रेण मारिष । तावदप्यपरित्याज्यं भूमेनः पाण्डवान् प्रति'—इति महाभारते (५।५८।१८) । आङ्गिकाभिनयविशेषः; अङ्गद्वारा चेष्टाकरणं; दृष्टिः; केतकीपुष्पं; व्यूह-विशेषः; 'बराहमकराभ्यां वा सूच्या वा गरुडेन वा'—इति मनुः (७।१८७) । २३३

सूच्यम् त्रि. [ सूच्+यत् ] सूचनायोग्यं; सूचनार्हम् । ९४  
सूतः पुं. [ पू प्रेणे ऐश्वर्ये प्रसवे च+क्त ] प्रबोधकः; मागधः; वन्दिः; वैतालिकः; मङ्गलपाठकः; वन्दी; 'सूतात्मजाः सवयसः प्रथितप्रबोधं प्राबोधयन्नुषसि वाग्भिरुदारवाचः'—इति रघौ (५।६५) । पारदः; 'हृतो हन्ति जराच्याधि मूच्छितो व्याधिघातकः । वद्धः खेचरतां धत्ते कोऽन्यः सूतात् कृपाकरः'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः । सूर्यः; पुराणवक्ता; 'सूतः सूत्यां समुत्पन्नः सौत्येऽहनि पुराणवित् । तेषां यज्ञे पुनस्त्वेव-मुत्पन्नो सूतमागधौ'—इति बह्निपुराणे । ४३५

सूतः पुं.—सव्येष्टः; सव्येष्टा; सारथिः; नियन्ता; प्राजिता; यन्ता; क्षता; दक्षिणस्थः; रथकुटुम्बी; सादी; नियामकः; चातुरिकः; प्रवेता; रथनागरः; 'स पूर्वतः पर्वतपक्षशातनं ददर्श देवं नरदेवसम्भवः । पुनः पुनः सूतनिषिद्धचापलं हरन्तमश्वं रथरश्मिसंयतम्'—इति रघौ (३।४२) । त्वष्टा; क्षत्रियाद् ब्राह्मणीसुतः; 'क्षत्रियाद् विप्रकन्यायां सूतो भवति जातितः'—इति मनुः (१०।११) । अश्वसारथ्यमेवैतेषां जीविका । 'सूतानामश्वसारथ्यमम्बष्ठानां चिकित्सितम्'—इति मनुः (१०।४७) । पुं.—क्ली. [ सू+क्त ] पारदः; 'रसोनकरसैः सूतो नागवल्लीदलोत्थितः । त्रिफलाया-स्तथा क्वार्थं रसो मर्द्यः प्रयत्नतः । ततस्तेभ्यः पृथक्कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः । सर्वदोषविनिर्मुक्तं योजयेद्रस-कर्मसु'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः । त्रि. प्रसूतः;

प्रेरितः । ४४९

सूतिकाभवनम् क्ली. [ सूतिकाया भवनम् ] प्रसवगृहं; सूतिकागारं; सूतिकागृहं; प्रसवालयः; अरिष्टं; सूतकागृहं; सूतीगृहं; सूतिगृहं; सूतिकागृहं; सूति-कावासः; अरिष्टगेहम् । ४९९

सूतिमासः पुं. [ सूतेः प्रसवस्य मासः ] प्रसवमासः; वैजननः; सूतीमासः; 'सूतिमासो वैजननो नवमो दशमोऽपि च'—इति जटाधरः । ४९९

सूत्रम् क्ली. [ सूत्रयतेऽनेनेति । सूत्र ग्रन्थने+णिच्+ 'एरच्' इत्यच् । यद्वा षिवु तन्तुसन्ताने+ 'षिविमुच्योष्टेरू च' इति ष्टन् टेहृ च ] वस्त्रारम्भकं; तन्तुः; सूत्रतन्तुः; 'अथवा कृतवाह्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः । मणी वज्रसमुत्कीर्णं सूत्रस्येवास्ति मे गतिः'—इति रघौ (१।४) । यज्ञसूत्रम्; 'ब्राह्मण्यचिह्नमेतावत् केवलं सूत्रधारणम्'—इति महानिर्वाणे (१।४८) । शास्त्रादि-सूचनाग्रन्थः; 'स्वल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम् । अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः ।' कारणं; निमित्तम्; 'त्वमेव धर्मार्थदुष्पाभिपत्तये दक्षेण सूत्रेण ससर्जियाध्वरम्'—इति भागवते (४।६।४.३) । ५४९

सूदः पुं. [ सूदयति रसानिति । सूद क्षरणे+णिच्+अच् ] आरालिकः; सूपकारः; वल्लवः; पाककर्ता; आस-न्धिकः; औदनिकः; गुणः; पाचकः; पाकुकः; भक्ष्यङ्कारः; 'तं दृष्ट्वा नित्यमद्युक्तमिष्वस्त्रं प्रति फाल्गुनम् । आहूय वचनं द्रोणी रहः सूदमभाषत'—इति महाभारते (१।१३।४।२१) । सूपः; सारथ्यम्; अपराधः; लोभः; पापम्; 'भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च चोष्यं लैह्यमथापि वा । उपाकृतं नरेस्तत्र कुशलैः सूदकर्मणि'—इति महाभारते (१।१२।८।३४) । ४३१

सूदनम् क्ली. [ सूद्+ल्युट् ] हननं; मारणं; हिंसा; 'वैष्णवास्त्रं प्रयच्छास्मै वधार्थं शम्बरस्य च । अभ्रेद्यं कवचं तस्य प्रयच्छासुरसूदने'—इति हरिवंशे (१६३।४२) । अङ्गीकरणं; निःक्षेपणं; तद्वति त्रि । 'तत्र दिव्यं धनुर्दृष्ट्वा नरस्य भगवानपि । चिन्तयामास तच्चक्रं विष्णुर्दानवसूदनम्'—इति महाभारते (१।१९।२०) । ४७७

सूदाध्यक्षः पुं. [ सूदानां सूपकाराणामध्यक्षः ] पीरोगवः; पुरोगमः; पाकशालाध्यक्षः; 'अनाहार्यः शुचिर्दक्ष-

श्चिकित्सितविदांवरः । सूदाशस्त्रविशेषज्ञः सूदाध्यक्षः प्रशस्यते—इति मात्स्ये । ४३१

सूना स्त्री. [सूयते स्मेति । सूङ्ग+क्त+टाप् । सुब् अभिषवे+‘सुबो दीर्घश्च’ इति न, दीर्घश्च घातोः] वधस्थानं; घातनस्थानं; गलशुण्डिका; मृगादिमांस-विक्रयः; मृगपक्षिवधस्थानम्; ‘अभ्यर्थितस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददौ । द्यूतं पानं स्त्रियः सूना यत्रा-धर्मश्चतुर्विधः’—इति भागवते (१।१७।३८) । जाता ।

५९५

सूनुः पुं. [सूयते इति । सू+‘सुवः कित्’ इति नु, स च कित् ] सन्ततिः; आत्मजः; तनुजः; पुत्रः; प्रसूतिः; सुतः; तुक्तः; तोकः; तनयः; नन्दनः; अपत्यम्, ‘सूनुः सुनूतवाक् सष्टुर्विससर्जोदितश्रियम्’—इति रघुः (१।९५) । अनुजः; सूर्यः; अर्कवृक्षः । ४९७

सूनुः स्त्री. [सू+नु, वा ऊङ् ] कन्या । ४९७

सूनुकम् क्ली. [सुनृत्यत्यनेनेति । सु+नृत+घञर्थे क । उपसर्गस्य दीर्घः] सत्यप्रियवाक्यम्; ‘भाषते सूनुतं स्निग्धमनुरक्ता नितम्बिनी’—इति साहित्यदर्पणे (३।१५।५) । मङ्गलं; तद्वति त्रि. । ‘प्रणम्य मूर्ध्नावहितः कृताञ्जलिर्नत्वा गिरा सूनुतयान्वपृच्छत्’—भागवते (१।१९।३१) । १४१

सूपकारः पुं. [सूपं व्यञ्जनविशेषं करोतीति । सूप+कृ+अण् ] पाककर्त्ता; बल्लवः; आरालिकः; आन्वसिकः; सूदः; औदनिकः; गुणः; पाचकः; पाकुकः; भक्ष्यङ्कारः; ‘इङ्गिताकारतत्त्वज्ञो बलवान् मिष्टपाचकः । शूरश्च कठिनश्चैव सूपकारः स उच्यते’—इति चाणक्यः । ४३१

सूरः पुं. [सूते जगदिति । सू+‘सुसूषाञ्जुधिभ्यः क्रन्’ इति क्रन् ] सूर्यः; ‘सूरादश्वं वसवो निरत्नाट’—इति ऋग्वेदे (१।१६।३२) । अर्कवृक्षः; वृत्तार्हन्तिपविशेषः; पण्डितः । ३५

सूरता स्त्री.—अचण्डी गौः; विनम्रा धेनुः । २७०

सूरिः पुं. [सूते सद्वाक्यानीति । सू+‘सूङ् क्रिः’ इति क्रि ] पण्डितः; प्राज्ञः; ‘जन्मावस्य यतोञ्ज्वयादि-तरतश्चार्येष्वभिज्ञाः स्वराट्, तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुमुक्षन्ति यत् सूरयः’—इति भागवते (१।१।१) । वादकः; सूर्यः । ३३२

सूरी [न्] पुं. [सूरः सूर्यः उपास्मत्वा अस्यत्वेति ।

सूर+इनि ] पण्डितः; प्राज्ञः; धीरः; अभिरूपः । ३३२  
सूर्मी स्त्री. [शोभना ऊर्मिः विद्यते यस्याम् । डीष् ]  
शूर्मी; शूर्म्मिः; शूर्मिका; लौहप्रतिमा; लोहमयी मूर्तिः । १३१

सूर्यः पुं. [सरति आकाशे, सुवति कर्मणि लोकं प्रेरयति वा । सृ गतौ, सू प्रेरणे वा+‘राजसूर्यसूर्यमृषोद्येति’ क्यप् प्रत्ययेन साधुः] ग्रहविशेषः; सूरः; अर्यमा; आदित्यः; द्वादशात्मा; दिवाकरः; भास्करः; अहस्करः; व्रज्जः; प्रभाकरः; विभाकरः; भास्वान्; विवस्वान्; सप्ताश्वः; हरिदश्वः; उष्णरश्मिः; विकर्तनः; अर्कः; मार्तण्डः; मिहिरः; अरुणः; पूषा; द्युमणिः; तरणिः; मित्रः; चित्रभानुः; विरोचनः; विभावसुः; ग्रहपतिः; त्विषाम्पतिः; अहःपतिः; भानुः; हंसः; सहस्रांशुः; तपनः सविता; रविः; शूरः; भगः; वृष्णः; पद्मिन्नेबल्लभः; हरिः; दिनमणिः; चण्डांशुः; सप्त-सन्तिः; गभस्तिभान्; अंशुमाली; काश्यपेयः; खगः; भानुमान्; लोकलोचनः; पद्मबन्धुः; ज्योतिष्मान्; अव्यथः; तापनः; चित्ररथः; खमणिः; दिवामणिः; गभस्तिहस्तः; हेलिः; पतङ्गः; अर्चिः; दिनप्रणीः; वेदोदयः; कालकृतः; ग्रहराजः; तमोनुदः; रसाधारः; प्रतिदिवा; ज्योतिःपीथः; इनः; कर्मसाक्षी; त्रयीतपः; प्रद्योतनः; खद्योतः; लोकबान्धवः; पद्मिनीकान्तः; अंशुहस्तः; पद्मपाणिः; हिरण्यरेताः; पीतः; अद्रिः; अगः; हरिवाहनः; अम्बरीषः; धामनिधिः; हिमारातिः; गोपतिः; कुञ्जारः; प्लवगः; सूनुः; तमोपहः; गभस्तिः । ३५

सूर्यकान्तः पुं. [सूर्यः कान्तो यस्य । सूर्यस्य कान्तः प्रियो वा ] स्फटिकः; सूर्यमणिः; सूर्यशिमा; दहनोपलः; तपनमणिः; तापनः; रविकान्तः; दीप्तोपलः; अग्नि-गर्भः; ज्वलनाश्मा; अर्कोपलः; ‘ज्योतिरिन्धननिपाति भास्करात् सूर्यकान्त इव ताडकान्तकः’—इति रघो (१।१।२१) । षुष्पवृक्षविशेषः; सूर्यमणिः; पुष्परक्तः; पचत्युटः । १७६

सूक [न्] क्ली. [सृजति लालादीनिति । सृज्+बाहुलकात् कनिन् ] सूकणी (द्विवचने डीवन्ते च); ओष्ठयोः प्रान्तभागः; ओष्ठप्रान्तभागः; ‘महा-सूकायसोभितो नृसिंहनखाग्रश्च’—इति कृताश्लेषे ।

'भयात्संस्तम्भितभुजः सूक्तणी लेलिहन्मुहुः—इति महाभारते (३।१२५।२) ! ५२०

सूक्तम् क्ली.—सूक्तणी; सूक्व; सूक्तणी; सूक्वि; सूक्वं; सूक्वणी; सूक्विणी; सूक्वि; ओष्ठपर्यन्तभागः; 'जन्तवश्चात्र मूर्च्छन्ति सूक्तस्थोभयतो मुखात्—इति सुश्रुते (२।१६) । 'सूक्ते द्वे चैव विज्ञेये चत्वारिंशच्च वक्त्रजाः ।' ५२०

सूक्वम् क्ली.—ओष्ठप्रान्तभागः; सूक्तम् । ५२०  
सूक्व [ न् ] क्ली. [ सृजति लालादीनि । सून् + वनिप् ] ओष्ठप्रान्तभागः; 'प्रान्तावोष्ठस्य सूक्वणी'—इत्यमरः ।

'स्मितस्य सम्भावय सूक्वणा कणान्—इति नैघण्टे । ५२०  
सूक्वि क्ली.—ओष्ठप्रान्तभागः; सूक्तम् । ५२०

सृणिः स्त्री. [ सृ + नि, णत्वञ्च ] अङ्कुशः; 'आरक्ष-मग्नमवमत्य सृणिं सिताग्रमेकः पलायत जवेन कृतार्त-नादः—इति माघे (५।५) । पृ. [ सरतीति । सू + 'सृविषिभ्यां कित्' इति नि, स च कित् णत्वं च ] शत्रुः । २२४

सृणी स्त्री. [ सृणि + कृदिकारादिति डीष् ] अङ्कुशः । २२४

सेतुः पुं. [ सिनोति वघ्नाति जलमिति । सिञ् वन्धने + 'सितनिगमिसीति' तुन् ] वरुणः; वरुणवृक्षः; सेतुकः; 'वरुणो वराणः सेतुस्तिकतशाकोऽग्निदीपनः । वरुणः पित्तलो मेदः श्लेष्मकृच्छ्राश्ममारुतान् । निहन्ति गुल्म-वातास्रकिमीश्वोष्णोऽग्निदीपनः । कपायो मधुरस्तिकतः कटुको रूक्षको लघुः—इति भावप्रकाशः । क्षेत्रादे-रालिः; आली; पूरणः; पिण्डलः; पङ्कारः; जङ्गलः; सञ्चरः; पिण्डलः; धरणः; 'सेतुप्रदानादिन्द्रस्य लोक-माप्नोति मानवः । प्रपाप्रदानाद्वरुणलोकमाप्नोत्यसंशयम् । संक्रमाणां तु यः कर्ता स स्वर्गं तरते नरः । स्वर्गलोके च निवसेदिष्टकासेतुकृतं सदा—इति मठादिप्रतिष्ठातत्त्वम् । प्रणवः; 'मन्त्राणां प्रणवः सेतुस्तस्तेतुः प्रणवः स्मृतः । स्रवत्यनोऽङ्कृतं पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते । नमस्कारो महामन्त्रो देव इत्युच्यते सुरैः । द्विजातीनामयं मन्त्रः शूद्राणां सर्वकर्मणि । अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः । वेदत्रयात् समुद्धृत्य प्रणवं निर्ममे पुरा । स उदात्तो द्विजातीनां राशौ स्यादनुदात्तकः । स्वरितश्चो-रुजातानां मनसापि तथा स्मरेत् । चतुर्दशस्वरो योज्यौ

सेतुरीकारसंज्ञकः । स चानुस्वारचन्द्राम्यां शूद्राणां सेतु-रुच्यते । निःसेतुश्च यथा त्र्योयं क्षणाग्निम्नं प्रसर्पति । मन्त्रस्तथैव निःसेतुः क्षणात् क्षरति यज्वनाम् । तस्मात् सर्वेषु मन्त्रेषु चतुर्वर्णां द्विजातयः । पार्श्वयोः सेतुमादाय जपकर्म समारभेत् । शूद्राणामादिसेतुर्वा द्विसेतुर्वा यथेच्छतः । द्वे सेतू वः समाख्याताः सर्वदैव द्विजातयः—इति कालिकापुराणे । ६७१

सेना स्त्री. [ सिनोति शत्रूनि । सिञ् वन्धने + 'कृवृष्-पीति' न, स च नित् + टाप् ] चतुरङ्गबलः; घ्वजिनी; वाहिनी; पूतना; अनीकिनी; चमूः; वरुथिनी; बलं; सैन्यं; चक्रम्; अनीकं; वाहना; पूतना; गुल्मिनी; वरचक्षुः; 'सेना परिच्छदस्तस्य दृक्-मेवार्यसाधनम् । शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मावीर्षी धनुषि चातता—इति रघौ (१।१९) । ४५७

सेनाङ्गम् क्ली. [ सेनाया अङ्गम् ] हस्त्यश्वरथपदातीनां समूहः; 'हस्त्यश्वरथपदादात् सेनाङ्गं स्याच्चतुष्टयम्—इत्यमरः । 'सेनाङ्गेषु नृपाणां गृहत्तशैलेषु चापि दशानाम्—इति बृहत्संहितायाम् (१।१४२) । ८६६

सेनानीः पुं. [ सेनां नयतीति । सेना + नी + 'सत्सृष्टिवेति' क्विप् ] कार्तिकेयः; अग्निभूः; गुहः; स्कन्दः; सेना-पतिः; 'अथैनमद्रेस्तनया शुशोच सेनान्यमालोढमिबा-सुरास्त्रैः—इति रघौ (२।३७) । वाहिनीपतिः (४३३); 'स तु कामाग्निस्तप्तः सुदेष्णामभिगम्य वै । प्रहसन्निव सेनानीरिदं वचनमब्रवीत्—इति महाभारते (४।२।६) । १९

सेवकः त्रि. [ सेवते इति, षेव् सेवने + ष्वल् ] अनुचरः; अनुगः; अनुजीवी; भृत्यः; 'पूर्वेण सलिलपूर्णां करोति वसुधां समागतो दैत्यः । पश्चात् कर्षकसेवकवीजविना-शाय निर्दिष्टः—इति बृहत्संहितायाम् (५।३४) । आश्रयिता; 'दृढव्रतः सत्यसन्धो ब्रह्मण्यो वृद्धसेवकः । शरण्यः सर्वभूतानां मानवो दीनवत्सलः—इति भागवते (४।१६।१६) । पुं. [ सेवते इति, सेव् + ष्वल् ] प्रसेवकः । ४२८

सेवा स्त्री. [ षेव् सेवने + 'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप् ] वरिवस्या; परिचर्या; शुश्रूषा; उपासना; परीष्टिः; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः; सेवनं; ह्ववृत्तिः; 'सत्पानृतं च बाणिज्यं तेन चैवापि

जीव्यते । सेवा श्ववृत्तिराख्याता तस्मात् तां परिवर्जयेत्—  
इति मनुः (४।६) । उपभोगः; आश्रयणम्; वेदाभ्यास-  
स्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः । अहिंसा गुरुसेवा च  
निःश्रेयसकरं परम्—इति मनुः (१२।८७) । १२९  
सैहिकेयः पुं. [ सिंहिकाया अपत्यं पुमानिति । सिंहिका+  
ङ् ] सैहिकः; राहुः; स्वर्भानुः; तमः; विधुन्नुदः;  
'प्रियते यावदेकोऽपि रिपुस्तावत् कृतः सुखम् । पुरः  
विलशनाति सोमं हि सैहिकेयोऽमुरद्विषाम्'—इति माघे  
(२।३५) । ४९

सैकतम् क्ली. [ सिकताः सन्त्यत्रेति । सिकता+अण् ]  
वालुकामयतदं; पुलिनं; द्वीपम्; 'मन्दाकिनी सैकत-  
वेदिकाभिः सा कन्दुकैः कृत्रिमपुत्रकैश्च । रेमे मुहुर्मध्य-  
गता सखीनां क्रीडारसं निर्विशतीव चाल्ये'—इति  
कुमारे (१।२९) । त्रि. सिकतामयः; सिकतिलः;  
सिकतावान्; 'शैली दारुमयी लीही लेप्या लेख्या च  
सैकती । मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता'—  
इति भागवते (१।१२।८।१२) । ६७०

सैन्धवी स्त्री.—रागिणीविशेषः । १०६ अ  
सैन्धवः पुं. [ सिन्धुरभिजनोऽप्येति । सिन्धु+सिन्धु-  
तक्षशिलादिभ्योऽणौ ] इति अण् ] घोटकविशेषः;  
सिन्धुपारजः; स तु सिन्धोरदूरभवः; 'स एकदा  
महाराज ! विचरन् मृगयां वने । वृतः कतिपयामात्यै-  
रश्वमारुह्य सैन्धवम्'—इति भागवते (९।१।२३) ।  
सिन्धुदेशाधिपतिः जयद्रथः; 'यदा द्रोणः कृतवर्मा  
रूपश्च कर्णो द्रौणिमद्रराजश्च शूरः । अमर्षयन् सैन्धवं  
वध्यमानं तदा नाशसे विजयाय सञ्जय'—इति महा-  
भारते (१।१।१९६) । सिन्धुदेशोत्पन्नमात्रे त्रि. ।  
'हारदूणांश्च चीनांश्च तुखारान् सैन्धवांस्तथा'—इति  
महाभारते (३।५।१२४) । ४३९

सैम्भवम् क्ली.—पुं. [ सिन्धो समुद्रतीरे सिन्धुदेशे वा भवम् ।  
सिन्धु+अण्वौ च' इति अण् ] लवणविशेषः; स तु  
सिन्धुनद्युपलक्षितदेशोद्भवः; शीतशिवं; माणिमन्थं;  
सिन्धुजं; वशिरं; सिन्धुदेशजं; माणिबन्धं; शितशिवं;  
नादेयं; शिवं; सिद्धं; शिवात्मजं; पथ्यम्; 'सैन्धवं  
लवणं वृष्यं चसृष्यं दीपनं रुचि । पूतं स्वादु त्रिदोषघ्नं  
अशोषिविबन्धजित् । सैन्धवं द्विविधं श्रेयं सितं रक्तमिति  
क्रमात् । रसवीर्यविपाकेषु गुणाढयं कथितं सितम्—

इति राजनिर्घण्टः । ६१४

सैन्यम् क्ली. [ सेना एव, चतुर्वर्णादित्वात् प्यञ् ] सेना;  
पृतना; ध्वजिनी; पताकिनी; वाहिनी; बलं; चक्रं;  
चमूः; व्रथुयिनी; अनीकिनी; अनीकम्; 'हतशेषं ततः  
सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सुमहावीर्यं  
दिशो भेजे भयातुरम्—मार्कण्डेये (८७।२१) । ४५७  
सैन्यः पुं. [ सेनां समवेतीति । सेना+सेनाया वा' इति  
प्य ] सेनासमवेतः; 'सेना यत्र तत्र ये समवेता एकदेशी-  
भूतास्ते सैन्याः सैनिकाश्च'—इति भरतः । 'सैन्यं क्लीवे  
बलंऽप्ये ना समवेते तु वाच्यवत्'—इति मेदिनी । ४५७  
सैरन्ध्री स्त्री. [ स्वैरं स्वातन्त्र्यं धरति । स्वैर+घृ+  
मूलविभुजादित्वात्क, पृषोदरादित्वात् साधुः । गौरा-  
दित्वाद् डीप् ] गन्धकारिका; सैरिन्ध्री; अन्यवेशमस्या  
स्वतन्त्रा शिल्पजीविनी; 'सैरन्ध्रीमभिजानीष्व सुनन्दे  
देवरूपिणीम् । वयसा तुल्यतां प्राप्ता सखी तव  
भवत्स्वियम्'—इति महाभारते (३।६५।५१) । द्रौपदी;  
वर्णसङ्करसम्भूतस्त्री; 'अगम्यागमनाच्चैव जायते वर्ण-  
सङ्करः । बाह्यानामनुजायन्ते सैरन्ध्र्यां मागधेषु च ।  
प्रसाधनोपचारज्ञमदासन्दासजीवनम्'—इति महाभारते  
(१।२।४।१९) । ४९२

सैरिन्ध्री स्त्री [ स्वैरं स्वाच्छन्धं धरतीति । स्वैर+  
घृ+मूलविभुजादित्वात् क । पृषोदरादित्वात् साधुः;  
गौरादित्वाद् डीप् ] गन्धकारिका; सैरन्ध्री; परवेशमस्या  
स्ववशा शिल्पकारिका; सैरन्धी; सैरन्धिः; 'वासश्च  
परिघायैकं कृष्णं सुमलिनं महत् । कृत्वा वेशं हि सैरिन्ध्याः  
कृष्णा च व्यचरत् तदा'—इति महाभारते (४।८।२) ।  
वर्णसङ्करसम्भूतस्त्री; महल्लिका; द्रौपदी; 'यथा  
सैरिन्ध्रीदोषेण न ते राजभिदं पुरम् । विनाशमेति वै  
क्षिप्रं तथा नीतिर्विधीयताम्'—इति महाभारते  
(४।२३।५) । ४९२

सैरिन्धः पुं. [ सीरे लाङ्गलवहने इभ इव । शकन्ध्वादित्वात्  
साधुः । ततः स्वार्थे अण् ] महिपः; रक्ताक्षः; कासरः;  
लुलायः; लुलापः; स्वर्गः । २२७

सौत्रासम् क्ली. [ उत्प्रासेन आधिक्येन सह वर्तमानम् ]  
सौल्लुण्ठं; सौल्लुण्ठनं; स्तुतिपूर्वकदुर्वादः; व्यङ्ग्योक्तिः;  
प्रियावाक्यम्; 'सौल्लुण्ठनं तु सौत्रानं चटु चाटु प्रियो-  
दितम्'—इति शब्दरत्नावली । पुं. सशब्दाहस्पम्;

अट्टहासः; महाहासः; प्रहासः; 'सोत्रास आच्छुरित-  
कमवच्छुरितकं तथा । अट्टहासो महाहासो हासः प्रहास  
इत्यपि—इति शब्दरत्नावली । १४९

सोत्रासहसितम् क्ली. [ उत्प्रासेन सहितं यद् हसितम् ]  
उपहसितम् । ७३१

सौदरः पुं. [ सह समानम् उदरं यस्य । 'सहस्य सः' ]  
समानोदर्यः; सोदर्यः; सगर्भः; सहोदरः; 'भार्या  
पुत्रश्च दासश्च शिष्यो भ्राता च सोदरः । प्राप्ता-  
पराधास्ताड्याः स्पू रज्वा वेणुदलेन वा'—इति मनुः  
(८।२२९) । स्त्री. सोदरा; सहोदरा भगिनी । ५०८

सोदर्यः पुं. [ समाने उदरे शयितः । सोदर+सोदराद्  
यः' इति य ] सहोदरः; सोदरः; समानोदर्यः; सगर्भः;  
'स हत्वा लवणं वीरस्तदा मेने महीजसम् । भ्रातुः  
सोदर्यमात्मानमिन्द्रजिद्वधशोभिन्ः'—इति रघौ (१५।  
२६) । ५०८

सोपहासः त्रि.— सोल्लुण्ठः; सोत्रासः; सोल्लुण्ठनं;  
प्रियावाक्यं; व्यङ्ग्योक्तिः; स्तुतिपूर्वकदुर्वक्तिम् । १४९  
सोपानम् क्ली. [ उपानमुपरि गमनं तेन सह विद्यमानम् ]  
आरोहणं; निःश्रेणिः; निःश्रेणी; निःश्रयणी; निः-  
श्रयिणी; अधिरोहिणी; निःश्रेयिणी; 'आरोहणं च  
सोपानं पैठा इति समा ह्वये । सोपाने काण्डघटिते निः-  
श्रेणिस्त्वधिरोहिणी । निःश्रेणी स्यान्निःश्रयणी तथा  
निःश्रेयिणीत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । 'सध्येन सा  
वेदिविलग्नमध्या बालित्रयं चारु बभार वाला । आरोह-  
णार्थं नवयीत्रनेन कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम्'—इति  
कुमारे (१।२९) । ३०१

सोमः पुं. [ सूते अमृतमिति । पू प्रसवे+अतिस्तुसूहृत्सिति'  
मन्' चन्द्रः; चन्द्रमाः; इन्दुः; कुमुदवान्धवः; 'द्विजानां  
वीरुधां चैव नक्षत्रग्रहयोस्तथा । यज्ञानां तपसां चैव सोमं  
राज्येऽन्धयेचयत्'—इति हरिवंशे (४।२) । कर्पूरः;  
वानरः; कुबेरः; यमः; चायुः; वसुभेदः; 'आपो  
ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोज्जलः । प्रत्यूपश्च  
प्रभासश्च वसवोऽष्टौ कीर्तिताः'—इति मात्स्ये  
(५।२१) । जलं; सोमलतौषधिः; 'ब्रह्मादयोऽसृजन्  
पूर्वममृतं सोमसंज्ञितम् । जरामृत्युविनाशाय विधानं तस्य  
वक्ष्यते'—इति सुश्रुते । 'सोमनामौषधिराजः पञ्चदश-  
पर्णः स सोम इव हीयते वर्द्धते च'—इति चरकः ।

शिवः; दीधितिः; दिव्यौषधिः; सोमलतारसः;  
'मुन्यन्नानि पयः सोमो मांसं यच्चानुपस्कृतम् । अक्षार-  
लवणं चैव प्रकृत्या हविरुच्यते'—इति मनुः (३।२५७) ।  
अमृतं; पर्वतविशेषः । ४२

सोमपः पुं. [ सोमं पिबतीति । सोम+पा+क ] यागे  
पीतसोमलतारसः; सोमपीती; सोमपाः; 'त्रैविद्या मां  
सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गंति प्रार्थयन्ते'—इति  
गीतायाम् (९।२०) । ३९१

सोमपाः पुं. [ सोमं पिबतीति । सोम+पा+क्विप् ]  
यागे सोमलतारसपानकर्ता; सोमरसपानशीले त्रि. ।  
'तत्श्रद्धयाक्रान्तमतिः पितृदेवव्रतः पुमान् । गत्वा  
चान्द्रमसं लोकं सोमपाः पुनरेष्यति'—इति भागवते  
(३।३।१) । ३९१

सोल्लुण्ठः त्रि. [ उल्लुण्ठेन सह वर्तमानः ] सोल्लु-  
ण्ठनः; सोत्रासः; सोपहासः; स्तुतिपूर्वकदुर्वदिः;  
व्यङ्ग्योक्तिः; 'दुर्वदिः स्यादुपालम्भस्तत्र यः स्तुति-  
पूर्वकः । सोल्लुण्ठस्तु सनिन्दस्तु यस्तत्र परिभाषणम्'—  
इति जटाधरः । १४९

सौगन्धिकम् क्ली. [ सुगन्धोऽस्त्यस्येति । सुगन्ध+ठन्  
ततः स्वार्थे अण् ] कल्लारं; श्वेतपुष्पवृक्षविशेषः;  
कत्तूणं; सौगन्धम्; 'सौगन्धिकं च सौगन्धं रामकपूरके  
तूणं'—इति शब्दरत्नावली । 'कत्तूणं रोहिषं देवजगधं  
सौगन्धिकं तथा । भूतिकं व्यामपीरं च श्यामकं धूम-  
गन्धिकम्'—इति भावप्रकाशः । पञ्चरागमणिः;  
नीलोत्पलम्; 'इन्दीवरं कुचलयं पद्मं नीलोत्पलं स्मृतम् ।  
सौगन्धिकं शतदलमञ्जं कमलमुच्यते'—इति गारुडे ।  
'अपश्यत्तत्र पाञ्चाली सौगन्धिकमनुत्तमम् । अनिलोढमितो  
नूनं सा बहूनि परीप्सति'—इति महाभारते (३।१५४।  
२) । पुं. गन्धकः; सुगन्धव्यवहारी; 'गन्धी' इति  
भाषा । श्लेष्मनिमित्तकक्रिमिविशेषः; 'तेषां त्रिविधानां  
श्लेष्मनिमित्तानां क्रिमीणां नामानि अन्नादा उदरादा  
हृदयादाश्चुरवो दर्भपुष्पाः सौगन्धिका महागुदाश्च'—  
इति चरकः । ६८१

सौचिकः पुं. [ सूच्या जीवतीति । सूची शिल्पम् अस्य वा ।  
सूची+ठक् ] सूचीकर्माणोपजीवी; तुन्नवायः; सूचिकः;  
सौचिः; सूत्रभित्; 'दर्जी' इति भाषा । ५९०  
सौदामनी स्त्री. [ सुदामा मेघः पर्वतो वा तेन एकदिक् ।

सुदामन्+ 'तेनैकदिक्' इति अण् ] विद्युत्; शम्पा; चपला; क्षणिका; शतह्रदा; ह्लादिनी; तडित्; सौदामिनी; सौदाम्नी; अचरांशुः; ऐरावती; [ सुदामा ऐरावतः तस्य स्त्री ऐरावती, सौदामिनी ] 'खेऽञ्जं जगाम काञ्चनसरसमसौदामनीलताधामास्तम् । कुवलय-मयमिव सरजः सरसमसौदामनीलताधामास्तम्'— इति हरिप्रबोधयमकात् । अप्सरोभेदः; विद्युद्भेदः; 'एवं कृष्णमतेर्ब्रह्मन्नासक्तस्यामलात्मनः । कालः प्रादुरभूत् काले तडित् सौदामिनी यया'—इति भागवते (१।६। २८) । ६०

**सौदामिनी स्त्री.**— विद्युत्; सौदाम्नी; सौदामिनी; ऐरावती; 'नष्टं धनुर्वलभिदो जलदोदरेषु सौदामिनी स्फुरति नाद्य विद्यत्यताका'—इति ऋतुसंहारे (३।१२) । तडिद्भेदः; 'तत्र स्म राजते भैमी सर्वाभरणभूषिता । सलीमध्येऽनवद्याङ्गी विद्युत् सौदामिनी यथा'—इति महाभारते (३।५३।१२) । अप्सरोभेदः; देशविशेषः । ६०  
**सौनिकः** पुं. [ सूतया पश्वादिवधेन चरतीति । सूना+ ठक् ] पशुपक्षिमांसविक्रयकर्ता; वैतसिकः; मांसिकः; कौटिकः; शौनिकः; 'दश सूनासहस्राणि यो चाहयति सौनिकः । तेन तुल्यः स्मृतो राजा धोरस्तस्य प्रतिग्रहः'— इति मनुः (४।८६) । ५९५

**सौप्तिकम्** क्ली. [ सुप्ती सुप्तिकाले भवम् । सुप्ति+ ठक् ] रात्रियुद्धं; निशारणं; रात्रिमारणम्; अवस्कन्दः; प्रपातः; 'अहन्तु कदनं कृत्वा शत्रूणामद्य सौप्तिके । ततो विश्रमिता चैव स्वप्ता च विगतज्वरः'—इति महाभारते (१०।४।३३) । महाभारतीयपर्वविशेषः; 'आदिः सभावनविराटमयोद्यमश्च भीष्मो गुरु रविजम-द्रजसौप्तिकं च । स्त्रीपर्वं शान्तिरनुशासनमश्वमेधव्या-साश्रमो मुपलयानदिवावरोहः'—इति महाभारतटीका । सुप्तसम्बन्धिनि त्रि. । ४५२

**सौम्यः** पुं. [ सोमस्य चन्द्रस्य अपत्यं पुमान् । सोम+ ष्यञ् ] बुधग्रहः; रोहिण्यः; चान्द्रमसायनः; चान्द्र-मसायनिः; 'पश्यन् ग्रस्तं सौम्यो घृतमधुतैलक्षयाय राजां च'—इति बृहत्संहितायाम् (५।६०) । [ सोम इव सौम्यः, ततः प्रज्ञावर्ण ] विप्रः; उडम्बरवृक्षः; वृषकर्कट-कन्यावृश्चिकमकरमीनराशयः; 'शूरोऽथ सौम्यः पुरुषो-ऽङ्गना च ओजोऽथ युग्मं विपमः समश्च । चरस्थिर-

द्वधात्मकनामधेया मेधादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'— इति ज्योतिस्तत्त्वे । भूखण्डविशेषः; 'गन्धर्वो वरुणः सौम्यो बहवः कङ्क एव च । कुमुदश्च कसेरश्च नागो भद्रारकस्तथा । चन्द्रेन्द्रमलयाशङ्खयवाङ्गकगभस्तिमान् । ताम्राकुश्च कुमारी च तत्र द्वीपदशाष्टभिः'—इति शब्द-माला । सौम्यकृच्छ्रव्रतम्; 'प्राजापत्यः सान्तपनः शिशु-कृच्छ्रः पराककः । अतिकृच्छ्रः पर्णकृच्छ्रः सौम्यः कृच्छ्राति-कृच्छ्रकः । 'सौम्यः सौम्यकृच्छ्रः' इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । पितृगणविशेषः; 'अग्निदग्धानग्निदग्धान् काव्यान् वहिषदस्तथा । अग्निध्वात्तांश्च सौम्यांश्च विप्राणामेव निदिशेत्'—इति मनुः (३।१९९) । त्रि. [ सोमो देव-तास्य, सोम+ 'सोमाद् ट्यण्' इति ट्यण् ] सोमदैवतः; अनुग्रः; मनोज्ञः; 'संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम् । निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः । भवतः; 'नमस्तस्मै भगवते वासुदेवाय वेधसे । पपुर्जानमयं सौम्या यन्मुखाम्बुह्रासवम्'—इति भागवते (२।४। २३) । भास्वरः । (६८९) त्रि. साधुः; चारुः । ४६

**सौरभेयः** पुं. [ सुरभेरपत्यमिति । सुरभि+ ठक् ] उक्षा; अनड्वान्; वलीवदः; ककुष्मान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः; गौः; वाडवेयः; शाक्वरः; 'मा सौरभेयात्र शुचो व्येतु ते वृषलाद् भयम्'—इति भागवते (१।१७।९) । सुरभिसम्बन्धिनि त्रि. । २६३

**सौरभेयी स्त्री.** [ सुरभेरपत्यं स्त्री । सुरभि+ ठक्+ डीप् ] अघ्न्या; गौः; माहेयी; सुरभिः; बहुला; सौरभी; उक्षा; अर्जुनी; रोहिणी; अनडुही; अनड्वाही; 'निवर्त्य राजा दयितां दयालुस्तां सौरभेयीं सुरभिर्य-शोभिः । पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां जुगोप गोरूपधरा-मिवोर्वीम् । सुरभिसम्बन्धिनि त्रि. । अप्सरोविशेषः; 'विश्वाची सहजन्वा च प्रम्लोचा उर्वशी इरा । वर्गा च सौरभेयी च समीची बुद्ध्या लता'—इति महाभारते (२।१०।११) । २६८

**सौरभ्यम्** क्ली. [ सुरभेर्भावः । सुरभि+ ष्यञ् ] सौगन्ध्यम्; आमोदः; परिमलः; सुगन्धिता; सौगन्धिः; 'गुण-विधृता सखि तिष्ठसि तथैव वेहेन किन्तु हृदयं ते । हृतममुना मालायाः समीरणेनेव सौरभ्यम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२।१३) । गुणगौरवम् । ७७

**सौराष्ट्रकः** पुं. [ सुराष्ट्र एव+अण्, सौराष्ट्र+संज्ञायां

कन् ] कांस्यं; सौराष्ट्रं; देशविशेषः । १७०  
**सौराष्ट्रिकम्** पुं - क्ली. [ सुराष्ट्रे देशो भवम् । अघ्यात्मा-  
दित्वाद् ठञ् ] विषभेदः; 'विषं तु गरलं क्ष्वेडस्तस्य  
भेदानुदाहरे । वत्सनाभः स हारिद्रः सक्तुकश्च प्रदीपनः ।  
सौराष्ट्रिकः शृङ्गिकश्च कालकूटस्तथैव च । हलाहलो  
बहुपुत्रो विषभेदा अमी नव । सुराष्ट्रविषये यः स्यात्  
स सौराष्ट्रिक उच्यते'—इति भावप्रकाशः । सौराष्ट्र-  
देशसम्बन्धिनि त्रि. । ६४६

**सौवर्चलम्** क्ली. [ सुवर्चले देशो भवम् । सुवर्चल+अण् ]  
सुवर्चलदेशभवलवणम्; अक्षं; रुचकं; कृष्णलवणं;  
तिलकं; हृद्यगन्धकं; रुच्यं; कौद्रविकम्; 'सौवर्चलं  
लघु क्षारं कटूष्णं गुल्मशूलहृत् । ऊर्ध्वं वातामशूलाति-  
विबन्धारोचकान् जयेत्'—इति राजनिर्घण्टः । 'सौवर्चलं  
स्याद्गुचकमक्षयं पाक्यं च तन्मतम् । रुचकं रोचनं भेदि  
दीपनं पाचनं परम् । सस्नेहवातनुक्ष्णातिपित्तलं विशदं  
लघु । उद्गारशुद्धिदं सूक्ष्मं विबन्धानाहशूलहृत्'—  
इति भावप्रकाशः । सर्जिकाक्षारः; सुवर्चलासम्बधिनि  
त्रि. । ६१७

**सौवस्तिकः** पुं. [ स्वस्ति, तत्करणे साधु । स्वस्ति+  
ठक् ] पुरोधाः; पुरोहितः; स्वस्तिसम्बन्धिनि त्रि. ।  
४२६

**सौविदः** पुं. [ सुष्टु वेत्तीति । सु+विद्+क । ततः  
प्रज्ञायण् ] अन्तःपुररक्षकः; सौविदलः; कञ्चुकी;  
स्थापत्यः; स्थपतिः; सुविदः; सौविदलकः; महल्ल-  
रक्षकः । ४२७

**सौवीरम्** क्ली. [ सुष्टु वीरा यत्र, ततः स्वार्थे अण् ]  
धान्याम्लम्; आरनालं; सन्धानं; काञ्जिकम्; अभि-  
पवम्; अवन्तिसोमं; तुषोदकं; शुकुतम्; 'सौवीरं तु  
यवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुषैः कृतम् । गोधूमैरपि सौवीर-  
माचार्याः केचिद्विचिरे । सौवीरं तु प्रहृष्यशःकफघ्नं  
भेदि दीपनम् । उदावर्ताङ्गमदीप्त्यशूलानाहेषु शस्यते'—  
इति भावप्रकाशः । वदरम्; 'सौवीरं वदरं महत्'—  
इति रत्नमाला । सौवीराञ्जनम्; 'सुवीरकं पार्वतेयं  
सौवीरं नीलमञ्जनम्'—इति रत्नमाला । स्रोतोऽञ्जनं;  
पुं. देशविशेषः । 'सौवीरराजः शैव्यश्च पाण्डयश्च  
बलिनां वरः'—इति हरिवंश (९०।१९) । ३१८  
**सौष्ठवम्** क्ली. [ सुष्टु भावः । सुष्टु+प्राणभुञ्जाति-

वयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ् इत्यञ् ] प्रशंसनम्;  
अवष्टम्भः; 'आयुःक्षेत्राण्युपचयो लक्षणं रूपसौष्ठवम्'—  
हरिवंश (४०।३४) । आतिशयम्; 'तुल्येष्वस्व-  
प्रयोगेषु लाघवे सौष्ठवेषु च । सर्वेषामेव शिष्याणां  
बभूवाम्यधिकोऽर्जुनः'—इति महाभारते (१।१३।१४) ।  
नाटकाङ्गविशेषः । ७५९

**सौहार्दम्** क्ली. [ सुहृदः सुहृदयस्य वा भावः कर्म वा ।  
सुहृद् वा सुहृदय+हायनान्तयुवादिभ्योऽण् इत्यण् ।  
हृदयस्य हृदादेशः । 'हृद्गगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च' इति  
उभयपदवृद्धिः ] सुहृदो भावः; सख्यं; सौहृदं;  
साप्तपदीनं; मैत्री; अजयं; सङ्गतं; सखिता;  
मित्रता; स्नेहः; प्रीतिः; सौहृद्यं; सभाजनं; संगतम्;  
'सौहार्दं चानुरागे च वेत्थ मे भक्तिमुत्तमाम् । न मामहंसि  
घर्मज्ञ ! त्यक्तुं भक्तामनागसम्'—इति महाभारते  
(१।७७।११) । पुं. [ सुहृदः मित्रस्य अपत्यं पुमान्,  
सुहृद्+अण् ] मित्रपुत्रः । ७०६

**सौहार्द्यम्** क्ली. [ सुहृदयस्य भावः । सुहृदय+प्यञ् । 'वा  
शोकप्यञ्जरोगेषु' इति हृदयस्य हृदादेशः ] सौहृदं;  
मैत्री; सख्यं; स्नेहः । ७०६

**सौहित्यम्** क्ली. [ सुहितस्य भावः कर्म वा । सुहित+  
'परान्तपुरोहितादिभ्यो यक्' इति यक् ] तृप्तिः; 'अहेरिख  
गणाद्गीतः सौहित्यात्तरकादिव । कुणपादिव च स्त्री-  
भ्यस्तं देवा ब्राह्मणं विदुः'—इति महाभारते  
(१।२।२४।१३) । ३२६

**सौहवम्** क्ली. [ सुहृदः कर्म भावो वा । सुहृद्+अण् ]  
सख्यं; सौहार्दं; मैत्री; सखित्वं; सखिता; मित्रता;  
'तद् भुज्यते यद् द्विजमुक्तशेषं स बुद्धिमान् यो न करोति  
पापम् । तत् सौहृदं यत्क्रियते परोक्षे दम्भैविना यः  
क्रियते स घर्मः'—इति गारुडे । ७०६

**सौहृद्यम्** क्ली.— सुहृदयता; स्नेहः; मैत्री; सख्यं;  
सौहार्दं; सखिता । ७०६

**स्कन्दः** पुं. [ स्कन्दते उत्प्लुत्य गच्छति, स्कन्दति  
शोपयति दैत्यान् वा । स्कन्द+अञ् ] कार्तिकेयः;  
स्वामी; अग्निभूः; गुहः; षडाननः; 'किमर्थमेषकः  
क्रीञ्चो भिन्नः स्कन्देन सुव्रत । एतन्मे विस्तराद् ब्रह्मन्  
कथयस्वामितद्युते !'—इति कालिकापुराणे । महादेवः;  
नृपतिः; शरीरं; पारदः; नदीतटं; पण्डितः; बालकस्य



ग्रहविशेषः; 'स्कन्दो विशाखो मेपाख्यः स्वग्रहः पितृ-  
संज्ञितः । × × × × स्कन्दात्संस्तेन वैकल्यं मरणं वा  
भवेद् ध्रुवम्'—इति वाग्भटः । १९

स्कन्धः पुं. [ स्कन्धत्तेऽपी इति । स्कन्द्+घञ् । पृषोदरा-  
दित्वात् साधुः । स्कन्द्+असुन्, घञ्चान्तादेशो वा ]  
अवयवविशेषः; भुजशिरः; अंसः; दोः शिखरम्;  
'यथा हि पुरुषो भारं शिरसा गुरुमुद्रहन् । तं स्कन्धेन  
स आघत्ते तथा सर्वाः प्रतिक्रियाः'—इति भागवते  
(४।२।३३) । (१८२) तरोर्मूलादिशाखापर्यन्तं;  
प्रकाण्डः; काण्डः; दण्डः; प्रधानः; 'खर्जूरीस्कन्ध-  
नद्धानां मदोद्गारसुगन्धिषु । कटेषु करिणां पेतुः पुत्रागम्यः  
शिलीमुखाः'—इति रघी (४।५७) । समूहः (८११);  
नृपतिः; सम्परायः; कायः; 'सूक्ष्मयोनीनि भूतानि  
तर्कगम्यानि कानिचित् । पक्ष्मणोऽपि निपातेन येषां  
स्यात् स्कन्धपर्ययः'—इति महाभारते (१२।१५।२६) ।  
भद्रादिः; छन्दोभेदः; विज्ञानादिपञ्च; 'सर्वकार्य-  
शरीरेषु मुक्त्वाङ्गस्कन्धपञ्चकम् । सौगतानामि-  
वात्मान्यो नास्ति मन्त्रो महीभृताम्'—इति माघे  
(२।२८) । 'रूपवेदनाविज्ञानसंज्ञासंस्काराः पञ्च  
स्कन्धाः । तत्र विषयप्रपञ्चो रूपस्कन्धः । तज्ज्ञान-  
प्रपञ्चो वेदनास्कन्धः । आलयविज्ञानसन्ताने विज्ञान-  
स्कन्धः । नामप्रपञ्चः संज्ञास्कन्धः । वासनाप्रपञ्च-  
संस्कारस्कन्धः । एवं पञ्चधा परिवर्तमानो ज्ञानसन्तान  
एवात्मा इति बौद्धाः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः ।  
व्यूहः; 'प्रतापोऽग्रे ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम् ।  
ययौ पश्चाद्द्रावादीति चतुःस्कन्धेव सा चमूः'—इति रघी  
(४।३०) । पत्न्याः; 'तथाब्रवीन्महासेनं महादेवो  
वृहद्ध्रुवः । सप्तमं भास्तस्कन्धं रक्ष नित्यमत्तन्द्रितः'—  
इति महाभारते (३।२३।०।५५) । ग्रन्थपरिच्छेदः;  
'स्कन्धैर्द्विदशभिः प्रोक्तं श्रीमद्भागवतं प्रभो । शुक्रस्त-  
च्छ्रावयामास महाराजं परोक्षितम्'—इति पाद्ये । १८२  
स्कन्धदेशः पुं. [ स्कन्धस्य देशः ] स्कन्धमात्रम्; अवयव-  
विशेषः; भुजशिरः; अंसः; स्कन्धः; दोः शिखरं;  
'कन्धा' इति भाषा । 'त्रिपुरारिः स्कन्धदेशे कण्ठे  
कामाङ्गनाशनः'—इति माहेश्वरकवचम् । गजस्य  
स्कन्धः; यत्र हस्तिपक उपविशति । आसनम् । २६७  
स्कन्धवाहकः पुं. [ स्कन्धेन वहतीति । स्कन्ध+वह्+

प्वुल् ] शकटादिवाहकवृषः; स्कन्धवाहः; स्कन्धिकः ।

२६६

स्कन्धशाखा स्त्री. [ स्कन्धस्य शाखा ] वृक्षस्य मुख्यशाखा;  
शाला; 'यथा हि स्कन्धशाखानां तरोर्मूलावसेचनम् ।  
एवमारोघनं विष्णोः सर्वेषामात्मनश्च हि'—इति भागवते  
(८।५।४९) । १८२

स्कन्धावारः पुं. [ स्कन्धेन सैन्यसमूहेन व्यूहेन नृपतिना  
वा आब्रियते इति । स्कन्ध+आ+वृ+घञ् ] राज-  
धानी; 'ते तु दृष्ट्वा परं तच्च स्कन्धावारं च पाण्डवाः ।  
कुम्भकारस्य शालायां निवासं चकिरे तदा'—इति महा-  
भारते (१।१८।५।६) । कटकः; सैन्यस्थितिः; 'एत-  
स्मिन्नन्तरे चक्रुः स्कन्धावारनिवेशनम्'—इति रामा-  
यणे (६।४।२।२२) । २८०

स्कन्धिकः पुं. [ स्कन्धेन वहतीति । स्कन्ध+ठक् ] स्कन्ध-  
वाहकवृषः; स्कन्धवाहः; स्कन्धवाहकः । २६६

स्तनः पुं. [ स्तन्यते शब्दचते कामुकैः, स्तनयति कथयति  
वक्षः शोभामिति वा । स्तन् शब्दे+घञ् ] अवयवविशेषः;  
कुचः; कूचः; उरोजः; वक्षोजः; पयोधरः; वक्षोरुहः;  
उरसिजः; चूचुकम्; 'अरोमशी स्तनी पीनी घनाव-  
विपमी शुभी । कठिनावरोमपुरो मृदुप्रीवा च कम्बुभा'  
—इति गारुडे (५६।१५) । ५२६

स्तनयित्नुः पुं. [ स्तनयतीति । स्तन् शब्दे+'स्तनिहृयि-  
पुपीति' इत्नुच्, 'अयामन्तेति' अयादेशः ] अभ्रम्;  
अब्दः; घनः; मेघः; पयोधरः; धाराधरः; धूमयोनिः;  
जीमूतः; बलाहकः; 'किमव्यक्तेऽसि निनदे कुतस्त्वेऽपि  
त्वमीदृशी । स्तनयित्नुर्मयूरीव चकितोत्कण्ठिता स्थिता'  
—इति उत्तररामचरिते ३ अङ्के । मुस्तकः; मेघ-  
ध्वनिः; विद्युत्; मृत्युः; रोगः । ५८

स्तन्यम् क्ली. [ स्तने भवम् । स्तन्+'शरीरावयवाच्च'  
इति यत् ] ऊधस्यं; क्षीरं; दुग्धं; पयः; पीयूषम्; 'स  
नन्दिनीस्तन्यमनिन्दितात्माशुद्रत्सलो वत्सहुतावशेषम् ।  
पपो वशिष्ठेन कृताम्बुनृजः शुभ्रं यशो मूर्तमिवात्तितृष्णः'  
—इति रघी (२।६९) । [ स्तनाय हितमिति, 'शरीरा-  
वयवाद् यत्'—इति यत् ] स्तनहिते त्रि. । २७५

स्तन्धत्वम् क्ली.— स्तम्भः; जडीभावः; स्तन्धता;  
निष्प्रतिभता; जडत्वं; जाड्यम् । ८३४

स्तम्भः पुं. [ स्तम्भु रोधनार्थः सौत्रः, ततः क ] अजः

वस्तः; छागः; छगलः; छगलकः; छगः; स्तुनकः । २७७  
स्तम्बः पुं. [ तिष्ठतीति । स्या+स्थः स्तोम्बजवकौ  
इति अम्बच् स्तादेशश्च ] प्रकाण्डरहितवृक्षः; गुल्मः;  
उल्पः; स तु झिण्टिकादिः । तृणादिः; गुच्छः;  
गुत्सः; विटपः; काण्डम्; 'आरण्यकोपात्तफलप्रसूतिः  
स्तम्बेन नीवार इवावशिष्टः'—इति रघी (५।१५) ।

१९०

स्तम्बकरिः पुं. [ स्तम्बं करोतीति । स्तम्ब+कृ+स्तम्बश-  
कृत्तोरिन्' इति इन् ] धान्यं; व्रीहिः; 'पुंसि स्तम्ब-  
करिर्धान्यं व्रीहिर्ना धान्यमात्रके'—इति शब्दरत्नावली ।

५७९

स्तम्बेरमः पुं. [ स्तम्बे रमते इति । स्तम्ब+रम्+स्तम्ब-  
कर्णयो रमिजपोः' इत्यच्, 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' इति  
सप्तम्या अलुक् ] मातङ्गः; द्विरदः; द्विपः; करी;  
गजः; अनेकपः; कुम्भी; कुञ्जरः; वारणः; इभः;  
रदी; सामोद्भवः; सिन्धुरः; हस्ती; 'शय्यां जहत्यु-  
भयपक्षविनीतनिद्राः, स्तम्बेरमा मुखरशृङ्खलकषिणस्ते'  
—इति रघी (५।७२) । २१४

स्तम्भः पुं. [ स्तम्भनातीति । स्तम्भु+पचाद्यच् ] स्यूणा;  
आलानम्; 'खूँटा' इति भाषा । स्तम्भत्वं; जडीभावः;  
निष्प्रतिभता; जाड्यं; जडत्वम्; 'स्तम्भं महान्तमुचितं  
सहसा मुमोच, दानं ददावतितरां सहसाग्रहस्तः । बद्धा-  
पराणि परितो निगडान्यलावीत्, स्वातन्त्र्यमुज्ज्वल-  
मवाप करेणुराजः'—इति माघे (५।४८) । 'महान्तं  
स्तम्भम् आलानं जाड्यं च सहसा मुमोच । स्तम्भः  
स्यूणजडत्वयोः इति विश्वः'—इति तट्टीका । ८३४

स्तम्भतीर्थी स्त्री.— रागिणीभेदः । १०३ अ

स्तवः पुं. [ स्तूयतेऽनेनेति, स्तु+ऋदोरप्' इत्यप् ] प्रशंसा;  
स्तोत्रं; नुतिः; स्तुतिः; स्तवनं; वर्षः; अर्थवादः; ईडा;  
विकल्पनं; श्लाघा; वर्णना; 'तुष्टाव च तमीशानं  
मारीचः कश्यपस्तदा । वेदोक्तैः स्वकृतैश्चैव स्तवैः  
स्तुत्यं जगद्गुहम्'—इति हरिवंशे (१२९।२८) । १४५

स्तवकः पुं. [ तिष्ठतीति । स्या+स्थः स्तोम्बजवकौ  
इति अवक, धातोश्च स्तादेशः ] गुच्छकः; गुच्छः;  
गुत्सः; गुत्सकः; 'पुष्पादिस्तवके गुच्छो मुक्ताहार-  
कलापयोः'—इति रन्तिदेवः । 'स्याद् गुच्छः स्तवके  
स्तम्बे हारभेदकलापयोः'—इति मेदिनी । 'स्तवके

हारभेदे च गुत्सः स्तम्बे च कीर्तितः'—इति रुद्रः । 'गुत्सः  
स्यात् स्तवके स्तम्बे हारभिद्ग्रन्थिपर्णयोः'—इति  
मेदिनी । मुकुरः कुङ्मलश्चापि स्तवको गुत्सकाविति'  
इति हड्डः । [ स्तूयते इति, ष्टुञ् स्तुती, अप्,  
स्तवः+स्वार्ये क ] स्तुतिः; ग्रन्थपरिच्छेदः; समूहः;  
स्तवकारके त्रि. । १८८

स्तुतिः स्त्री. [ स्तु+क्तिन् ] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तोत्रं;  
ईडा; नुतिः; विकल्पनं; स्तवः; श्लाघा; वर्णना;  
'इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदन्विमप्युत्तरलीक-  
रोति'—इति नैपथे (३।११६) । दुर्गा; 'स्तुतिः  
सिद्धिरिति ख्याता श्रियाः संश्रयणाच्च सा । लक्ष्मीर्वा  
ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति देवी-  
पुराणे ४५ अध्याये । १४५

स्तेनः पुं. [ स्तेनयतीति, स्तेन्+पचाद्यच् ] ऐकागारिकः;  
तस्करः; दस्युः; प्रतिरोधकः; परास्कन्दी; चौरः;  
चोरः; मल्लिच्छः; स्तेन्यः; परिमोषी; पारि-  
पत्यिकः; तृप्नुः; तक्का; रिभ्वा; रिपुः; रिक्का;  
स्त्येनः; रिहायाः; तायुः; वनर्गुः; हुरश्चित्; मुपी-  
वान्; अधशंसः; वृकः । 'स्तेनस्यातः प्रवक्ष्यामि विधिं  
दण्डविनिर्णये । परमं यत्नमातिष्ठेत् स्तेनानां निग्रहे नृपः ।  
स्तेनानां निग्रहादस्य यशो राष्ट्रं च वद्धते । अत्रादे भ्रूणहा-  
मार्ष्टि पत्यौ भायपिचारिणी । गुरो शिष्यश्च याज्यश्च  
स्तेनो राजनि कित्विषम् । यस्तु तान्युपकल्पतानि द्रव्याणि  
स्तेनयेन्नरः । तमाद्यं दण्डयेद्राजा यश्चाग्निं चौरयेद्  
गृहात् । येन येन यथाङ्गेन स्तेनो नृषु विचेष्टते । तत्तदेव  
हरेत्तस्य प्रत्यादेशाय पार्थिवः'—इति मानवे ८ अध्यायः ।  
देवायानिवेद्यान्नादिभोक्ता; 'इष्टान् भोगान् हि वो देवा  
दास्यन्ते यज्ञभाविताः । तैर्दत्तानप्रदायैर्म्यो यो भुङ्क्ते  
स्तेन एव सः ।' ३३८

स्तेयम् क्ली. [ स्तेनस्य भावः कर्म वा । स्तेन+स्तेना-  
द्यन्नलोपश्च' इति यत् नलोपश्च ] चौर्यं; चौरस्य  
भावः तस्य कर्म च; स्तैनं; स्तैन्यम्; 'प्रत्यक्षं वा परोक्षं  
वा रात्री वा यदि वा दिवा । यत्परद्रव्यहरणं स्तेयं  
तत्परिकीर्तितम्'—इति प्रायश्चित्तविवेके । ३३९

स्तैनम् क्ली. [ स्तेनस्य चौरस्य भावः कर्म वा । स्तेन+  
अण् ] चौर्यम् । ३३९

स्तैन्यम् क्ली. [ स्तेनस्य भावः कर्म वा । स्तेन+ण्यञ् ]

चौर्यः महाभारते (३१२७२।७) । ३३९

स्तोकम् त्रि. [ ष्टुच्+घञ् ] अल्पं; सूक्ष्मं; लेशः; लवः; श्लक्ष्णः; क्षुद्रः; दम्नः; कणः; अणुः; किञ्चित्; मात्रं; तनुः; ह्रस्वं; द्रुष्टिः; 'सञ्जयैवंगते प्राणास्त्यक्नुमिच्छामि मा चिरम् । स्तोकं ह्यपि न पश्यामि फलं जीवितधारणे'—इति महाभारते (१।११२१८) । पुं. [ ष्टुच् प्रसादे+घञ् ] चातकपक्षी; स्तोककः; विन्दुः; कणा; 'वृष्ट्यावहृद्वैरभ्वन् स्रोतःखातानि निम्नगाः । ये पुरस्तादपां स्तोका आपन्नाः पृथिवीतले'—इति मार्कण्डेये (४९।५९) । 'एवं गृहेष्वभिरतो विपयान् विविधैः सुखैः । सेवमानो न चातुष्यदाज्यस्तोकैरिवानलः'—इति भागवते (९।६।४८) । ६८८

स्तोत्रम् क्ली. [ स्तूयतेऽनेनेति । स्तु+ 'दाम्नीशसयुयुजेति' ष्टृन् ] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तुतिः; ईडा; नृतिः; विकृत्यनः; स्तवः; श्लाघा; वर्णना; 'अत्र वो वर्णयिष्यामि विधिं मन्वन्तरस्य तु । ऋचो यजूंषि सामानि यथावत् प्रति दैवतम् । विधिहोत्रं तथा स्तोत्रं विधिस्तोत्रं तथैव च । तथैवाभिजनस्तोत्रं स्तोत्रमेतच्चतुष्टयम् । मन्वन्तरेषु सर्वेषु यथा भेदाद्भवन्ति ये । प्रवर्तयन्ति तेषां वै ब्रह्मस्तोत्रं पुनः पुनः'—इति मात्स्ये । १४५

स्तोमः पं. [ स्तु+मन् ] यागः; यज्ञः; ऋतुः; सप्ततन्तुः; मखः; अवरः; वितानः; संस्तरः; वहिः; सवः; सत्रं; (६८७) निकरः; निकायः; समूहः; 'ऋषीणामुग्रतपसां यमुनातीरवासिनाम् । लवणत्रासितः स्तोमस्त्रातारं त्वामुपस्थितः'—इति उत्तरचरिते १ अङ्के । स्तवः; क्ली. मस्तकं; घनं; सस्यं; लोहाग्रदण्डः; वक्त्रे त्रि. । ४१४

स्त्यानः त्रि. [ स्त्यै शब्दसंघातयोः, स्त्यायति स्म, क्त ] शीनः; संहतः; संहतिकर्ता; ध्वनिकर्ता; क्ली. स्निग्धं; प्रतिघ्वानं; घनत्वम्; 'दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूनामनुरसितगुरुणि स्त्यानमम्बूकृतानि'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के । २७६

स्त्री स्त्री. [ स्त्यायति गर्भो यस्यामिति । स्त्यै+ 'स्त्यायते-इदं' इति इट्, डित्वाट् टिलोपः, टित्वान् डीप् ] स्तनयोच्यादिमतो; योषित्; अवला; योषा; नारी; सीमन्तिनी; ववूः; प्रतीपदशिनी; वामा; वनिता; महिला; प्रिया; रामा; जनिः; जनी; योषिता;

जोषित्; जोषा; जोषिता; वनिका; महेला; महेलिका; शर्वरी; सिन्दूरतिलका; सुभ्रूः; सुनयना; वामदृक्; अङ्गना; ललना; कान्ता; पुरन्ध्री; वर्वाणिनी; सुतनुः; तन्वी; तनुः; कामिनी; तन्वङ्गी; रमणी; कुरङ्गनयना; भीरुः; भाविनी; विलासिनी; नितम्बिनी; मत्तकासिनी; सुनेत्रा; प्रमदा; सुन्दरी; अञ्चितभ्रूः; ललिता; वासिता; भामिनी; वराहोहा; नताङ्गी; त्रिनता; वरा; श्यामा; चारुवर्द्धना । 'रहःस्थलनियुक्तश्च न दृश्यः स्त्रीयुतः पुमान् । स्त्रीसंसक्तं च पुरुषं यः पश्यति नराधमः । करोति रसभङ्गं वा कालसूत्रं ब्रजेद् ध्रुवम् । तत्र तिष्ठति पापीयान् यावच्चन्द्रदिवाकरो । विशेषतश्च पितरं गुहं वा भूमिपं द्विज । रहःसु रतिसंसक्तं न हि पश्येद्विचक्षणः । कामतः कोपतो वापि यः पश्येत्सुरतोन्मुखम् । स्त्रीविच्छेदो भवेत्तस्य ध्रुवं सप्तसु जन्मसु । श्रोणीं वक्षःस्थलं वक्त्रं यः पश्यति परस्त्रियाः । कामतो वापि मूढश्च पण्डो भवति निश्चितम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते (४२।१०।१४) । 'विद्याघातो ह्यनम्यासः स्त्रीणां घातः कुचेलता । व्याधीनां भोजनं जीर्णं शस्त्रैर्वातः प्रगल्भता । दुर्जनाः शिल्पिनो दासा दुष्टाश्च पटहाः स्त्रियः । ताडिता मार्दवं यान्ति न ते सत्कारभाजनम्'—गारुडे १०९ अध्याये । पत्नी; स्त्रीलिङ्गः । ४८१

स्त्रीघनम् क्ली. [ स्त्रिया घनम् ] स्त्रीस्वत्वास्पदी-भूतघनं; शुल्कम्; 'अध्यग्न्यध्यावाह्निकं भर्तृदायं तथैव च । भ्रातृदत्तं पितृभ्यां च पद्भिवं स्त्रीघनं स्मृतम्'—इति दायभागधृतनारदवचनम् । 'प्राप्तं शिल्पेस्तु यद्वित्तं प्रीत्या चैव यदन्यतः । भर्तुः स्वाम्यं भवेत्तत्र शेषं तु स्त्रीघनं स्मृतम्'—इति कात्यायनः । ८२८

स्त्रीपुंसौ पुं. [ स्त्री च पुमांश्च, 'अचतुरविचतुरेति' अच् ] स्त्रीपुंसयोर्युग्मं; मियुनं; द्वन्द्वम्; (द्विवचनान्तोऽयम्) 'एषोदिता लोकयात्रा नित्यं स्त्रीपुंसयोः शुभा'—इति मनुः (९।२५) । ७००

स्थगितम् त्रि. [ स्थग्+क्त ] तिरोहितं; संवीतं; रुद्धम्; आवृतं; संवृतं; पिहितं; छन्नम्; अपवारितम्; अन्तर्हितं; तिरोधानम्; 'उदूढवृक्षः स्थगितैकदिग्मुखो विकृष्टविस्फारितचापमण्डलः'—इति किराते (१४। ३१) । ७४३

स्थण्डिलम् क्ली. [ तिष्ठत्यस्मिन्निति । स्था+‘मिथिला-  
दयश्चेति’ निपातनाद् इलच् चत्वरं; यज्ञार्थं  
परिष्कृताऽनिम्नोन्नता विस्तृता भूमिः; संस्कृता  
भूमिः; ‘यज्ञे परिष्कृतस्थाने स्यातां स्थण्डिलचत्वरं’  
—इति शब्दरत्नावली । ‘तस्मात् सम्यक्परीक्ष्यैवं  
कर्तव्यं शुभवेदिकम् । हस्तमात्रं स्थण्डिलं वा संक्षिप्ये  
होमकर्मणि’—वशिष्ठसंहितायाम् । ७६२

स्थपतिः पुं. [ तिष्ठन्त्यस्मिन्निति, स्था+क, स्थः स्थानम्,  
तं पातीति, पा+वाहुलकाद् अति ] गीष्पतीष्टियज्वा;  
बृहस्पतिसवननामयज्ञकर्ता; कारुभेदः; ‘वास्तुविद्या-  
विधानज्ञो लघुहस्तो जितश्रमः । दीर्घदर्शी च शूरश्च  
स्थपतिः परिकीर्तितः’—इति मात्स्ये । कञ्चुकी;  
कुवेरः; अधीशः; ‘स तु रामस्य वचनं निशाम्य प्रतिगृह्य  
च । स्थपतिस्तुणं प्राह्य सचिवाग्निदमब्रवीत्’—इति  
रामायणे (२।५२।५) । त्रि. [ तिष्ठन्ति स्वधर्मं इति  
स्याः सन्तस्तेषां पतिः ] सत्तमः । ४१८

स्थपुटम् त्रि.— विपमोन्नतं; विपमसञ्चारजीवी; निम्नो-  
न्नतस्थानगतः । ७५३

स्थलम् क्ली.— स्त्री. [ स्थल्यते स्थीयतेऽत्र, स्थल् स्थाने+  
अच् ] जलशून्याकृत्रिमभूभागः; स्थली; ‘स्थन्दनाश्वैः  
समे युष्पेदनूपे नौद्विपैस्तया । वृक्षगुल्मावृते चापैरसि-  
चर्मापिधैः स्थले’—इति मनुः (७।१९२) । ‘यज्ञो  
यजमानाय वर्षति स्थलयोदकं परिगृह्णन्ति’—इति  
तैत्तिरीयसंहितायाम् (१।६।१०।५) । क्ली. स्थान-  
मात्रम्; ‘उवाच वाग्मी दशनप्रभाभिः संवद्धितोरः-  
स्थलतारहारः’—इति रघौ (५।५२) । वस्त्रगृहम्;  
‘पटवासः पटमयं दूष्यं वस्त्रगृहं स्थलम्’—इति त्रिकाण्ड-  
शेषः । १५८

स्थलभृङ्गाटः पुं. [ स्थलजातः शृङ्गाटः ] गोक्षुरवृक्षः;  
स्थलभृङ्गाटकः; गोक्षुरकः; श्वदंष्ट्रा; श्वदंष्ट्रकः;  
त्रिकण्टकः । २०१

स्थला स्त्री. [ स्थल+टाप् ] जलशून्या कृत्रिमभूमिः;  
स्थलम् । १५८

स्थली स्त्री. [ स्थल+‘जानपदकुण्डगोणस्थल’ इति  
अकृत्रिमार्ये डोप् ] जलशून्याकृत्रिमा भूमिः; स्थलम्;  
‘सैपा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेक-  
मुभ्याम् । अकृष्यत त्वञ्चरणारविन्दविरलेषदुःखादिव

वद्धमौनम्’—इति रघुवंशे (१३।२३) । १५८  
स्थविरः त्रि. [ तिष्ठति सुचिरम् । स्था+‘अजिरशिशिरेति’  
किरच् ] वृद्धः; यातयामः; प्रवयाः; ‘ऊर्ध्वं प्राणा ह्यु-  
त्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति । प्रत्युत्यानाभिवादाभ्यां  
पुनस्तान् प्रतिपद्यते’—इति मनुः (२।१२०) । भिक्षुः;  
अचलः; पुं. ब्रह्मा; क्ली. शैल्यम् । ५०३

स्थाणुः पुं. [ तिष्ठतीति । स्था+‘स्यो णुः’ इति णु ] शिवः;  
शम्भुः; शङ्करः; रुद्रः; महादेवः; उमापतिः; ‘समुत्ति-  
ष्ठञ्जलात्तस्मात् प्रजास्ताः सृष्टवानहम् । ततोऽहं  
ताः प्रजा दृष्ट्वा रहिता एव तेजसा । क्रोधेन महता  
युक्तो लिङ्गमुत्पाद्य चाक्षिपम् । उद्विष्यत् सरसो मध्ये  
ऊर्ध्वमेव यदा स्थितम् । तदा प्रभृति लोकेषु स्थाणु-  
रित्येव विश्रुतम्’—इति वामने । कौलः (७९७);  
ब्रह्मा; ‘यस्मात् पितामहो जज्ञे प्रभुरेकः प्रजापतिः ।  
ब्रह्मा सुरगृहः स्थाणुर्मनुः कः परमेष्ठयय’—इति  
महाभारते (१।१।३२) । जीवकगन्धर्व्यम्; ‘जीवके  
जीवनो जीवो निधिः स्थाणुः प्रकीर्तितः’—इति शब्द-  
चन्द्रिका । पुं.— क्ली. निःशाखवृक्षः; ध्रुवः; शङ्कुः;  
अशाखवृक्षः; ‘छायायामातपे चैव समदर्शी महातपाः ।  
ध्यानं कृत्वा तथैकान्ते स्थितः स्थाणुरिवाचलः’—इति  
देवीभागवते (१।१।७।५३) । अस्त्रभेदः; त्रि. स्थिरः;  
‘अव्ययं च व्ययं चैव यदिदं स्थाणु जङ्गमम् । तत् ससर्ज  
तदा ब्रह्मा भगवानाविकृद्भिः’—इति विष्णुपुराणे  
(१।५।५८) । ११

स्थानम् क्ली. [ स्था+‘त्युट् ] गृहं; गेहम्; अयनं (७६२);  
नीतिवेदिनां त्रिवर्गान्तर्गतवर्गविशेषः; सादृश्यम्; अव-  
काशः; स्थितिः; ‘स्थानासनाभ्यां विहरेत् सवने-  
पूपयन्नृपः’—इति मनुः (६।२२) । सन्निवेशः; वसतिः;  
‘स्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं स्थानस्थितः कापुरुषोऽपि  
सिंहः । ग्रन्थसन्धिः; भाजनं, निकटम्; ‘त्वामत्र  
कृत्तिकास्थाने कथयामासुरीश्वर । सर्वे धर्मादयो देवा  
धर्माधर्मस्य साक्षिणः’—इति ब्रह्मवैवर्ते । २९१

स्थानकम् क्ली. [ स्थानमिव, कन् । स्थाने कं जलं यत्रेति  
वा ] आलवालं; नगरं; फेनं; [ स्थानमेव । स्वार्थे  
कन् ] ‘तत्स्थानकं ब्राह्मणमपीप्समानैर्गङ्गा सदैवारम-  
वशैस्पास्या’—इति महाभारते (१३।२६।९४) । १८४

स्थानस्थः पुं. [ ‘सुपि स्थः’ इति क ] गृहवासी । ३६८

स्थानीयम् क्ली. [ स्थानाय हितमिति । स्थान+छ ]  
नगरं; पतनं; पुरम्; अधिष्ठानं, निगमं; पुटभेदनं;  
नगरी; ब्रह्मः; पूः; पुरी; स्थानसम्बन्धिनित्रि. । २८५  
स्वापत्यः पुं. [ स्वपतिरेव । स्वपति+प्यञ् ] अन्तः-  
पुररक्षकः; सौविदः; सौविदल्लः; कञ्चुकी; क्ली.  
स्वपतेर्भावः कर्म वा । ४२७

स्याम [ न् ] क्ली. [ तिष्ठत्यनेनेति । स्या+सर्वधातुभ्यो  
मनिन् ] इति मनिन् ] सामर्थ्यं; प्राणः; बलं; द्युम्नं;  
द्युन्नम्; ओजः; शुष्मः; तरः; सहः; प्रतापः; पीरुष्यं;  
तेजः; विक्रमः; पराक्रमः । ७२३

स्याधिभावः पुं. [ स्यायी भावः ] रसस्य त्रिधाभावान्त-  
गंतभावविशेषः; 'सञ्चारिणः प्रधानानि देवादिविषया  
रतिः । उद्बुद्धमात्रः स्यायी च भाव इत्यभिधीयते ।  
न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः । परस्पर-  
कृता सिद्धिरनयो रसभावयोः ।' ९१

स्थालम् क्ली. [ तिष्ठत्यस्मिन् अन्नादिकमिति । स्या+  
'स्याचतिमृजेरिति' आलच् ] हेमादिकृतभोजनपात्रं;  
[ स्थलति तिष्ठति अन्नादिकमत्र, स्थल् स्थाने+धञ् ]  
अस्थिविशेषः; 'स्थालः सह चतुःषष्टिर्दण्डा वै विशति-  
र्नखाः'—इति याज्ञवल्क्यः । 'स्थालानि दन्तमूलप्रदेश-  
स्थान्यस्थीनि'—इति तत्र मिताक्षरा । ३२७

स्थाली स्त्री. [ तिष्ठत्यत्रान्नादीनि । स्या+आलच्,  
गोरादित्वाद् डीप् ] पाकपात्रविशेषः; पिठरः; उखा;  
कुण्डं; पिठरी; स्थालं; उपा; कुण्डी; कुण्डा; कुण्डयका;  
पाकः; पातिली; 'पूरयित्वाग्निना स्थालीं गन्धवाश्च  
तमद्बुधन् । अनेनेष्ट्वा च लोकात्रः प्राप्स्यसि त्व  
नराधिप'—इति हरिवंशे ( २६।४० ) । पाटलावृक्षः ।  
३१४

स्थासकः पुं. [ तिष्ठति, स्या+बाहुलकात् स, स्वार्थे  
कन् ] चाचिवयं; हस्तविम्बं; चन्दनादिना देहविलेपन-  
विशेषः; जलादेर्बुद्बुदम्—माघे ( १८।५ ) । ५४०  
स्वित्तः त्रि. [ स्या+क्त ] ऊर्ध्वः; ऊर्ध्वन्दमः; कृत-  
प्रतिज्ञः; प्रतिज्ञातवान्; 'पक्षीर्ध्रवचनं श्रुत्वा दानवेन्द्रो-  
ऽश्वीदिदम् । स्वित्तोऽस्मि समये तस्य अनन्तस्य महात्मनः'  
—इति हरिवंशे ( २५५।९५ ) । निश्चलः; वर्तमानः;  
गतिनिवृत्तिविशिष्टः; 'स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां  
निवेदुपीमासनबन्धधोरः । जलामिलायी जलमाददानां

छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्'—इति रघौ ( २।६ ) ।  
क्ली. [ स्या+भावे क्त ] अवस्थानं; कुलमर्यादा;  
'साध्वीनां तु स्थितानां तु शीले सत्ये श्रुते स्थिते ।  
स्त्रीणां पवित्रं परमं पतिरेको विशिष्यते'—इति  
रामायणे ( २।३९।२४ ) । ३८६

स्थितिः स्त्री. [ स्या+वितन् ] स्थानं; व्यवस्था; न्याय्य-  
पयस्थितिः; संस्था; मर्यादा; धारणा; संस्थितिः;  
'स मानसीं मेरुसखः पितृणां कन्यां कुलस्य स्थितये  
स्थितिज्ञः । मेनां मुनीनामपि माननीयामात्मानुरूपां  
विधिनोपयेमे'—इति कुमारे ( १।१८ ) । अवस्थानम्;  
आस्या; आसना; 'प्रस्थितायां प्रतिष्ठेयाः स्थितायां  
स्थितिमाचरेः'—इति रघुवंशे ( १।८९ ) । सीमा;  
नियमः; 'श्येनः कपोतानत्तीति स्थितिरेषा सनातनी ।  
मा राजन् सारमज्ञात्वा कदलीस्कन्धमासजः'—इति  
महाभारते ( ३।१३।२० ) । ८३७

स्थिरः त्रि. [ स्या+किरच् ] विश्रब्धः; विस्रब्धः;  
कठिनः; निश्चलः; 'अब्रह्मच्छाया खलैः प्रीतिः पर-  
नारीषु सङ्गतिः । पञ्चैते अस्थिरा भावा यौवनानि  
धनानि च । अस्थिरं जीवितं लोके अस्थिरं धनयौवनम् ।  
अस्थिरं पुत्रदाराद्यं धर्मः कीर्तिर्यशः स्थिरम्'—इति  
गारुडे ( १।१५।२५-२६ ) । ३७०

स्थिरप्रेम त्रि.— स्थिरसौहृदम्; अचलमैत्री । ३७४  
स्थिरा स्त्री. [ स्या+किरच्+टाप् ] पृथिवी; पृथ्वी;  
भूः; भूमिः; अचला; शालपर्णी; काकोली; शाल्मलि-  
वृक्षः; स्वैर्ययुक्ता स्त्री । १५६

स्थूलम् क्ली. [ स्थूल्यते, स्थूल परिबृंहणे, घञ्, पूषोदरा-  
दित्वेन ह्रस्वः ] द्रुष्यं; पटकुटी; वस्त्रवेश्म; केणिका;  
'शुक्लैः सतारैर्मुकुलोकृतैः स्थूलैः'—इति माघे ( १।२।४ ) ।

४५१

स्थूणा स्त्री. [ तिष्ठतीति । स्या+'रास्नासास्नास्थूणा-  
वीणाः' इति नप्रत्ययेन साधुः ] शूर्मी; लोहप्रतिमा;  
लोहमयी मूर्तिः; सूर्मी; गृहस्तम्भः; 'वृद्धोज्ज्वः पतिरेप  
मञ्चकगतः स्थूणावशेषं गृहं, कालोऽम्यर्णजलागमः  
कुशलिनी वत्सस्य वार्तापि नो । यत्नात् सञ्चिततैल-  
बिन्दुघटिका भग्नेति पर्याकुला, दृष्ट्वा गर्भभरालसां  
निजवधूं स्वश्रूश्चरं रोदिति'—इति साहित्यदर्पणे  
( ३।१७२ ) । १३१

स्यूरी [ न् ] पुं. [ सादृश्येन स्यूरो वृषोऽस्यातीति, इति ]  
खरवृषभवत् पृष्ठेन भारवाहकोऽश्वः; स्यूरी; स्यूरी;  
पृष्ठवाह्यवृषभः । २६६

स्थूलम् त्रि. [ स्थूलयतीति, स्थूल+अच् ] उपचिता-  
वयवं; पीनं; पीवं; पीवरं; 'मोटा' इति भाषा ।  
'द्रवः सङ्घातकठिनः स्थूलः सूक्ष्मो लघुगुरुः । व्यक्तो  
व्यक्तेतरश्चासि प्राकाम्यं ते विभूतिषु'—इति कुमारे  
(२।११) । जडः; 'न यः संसत्सु कथयेद् ग्रन्थार्थं  
स्थूलबुद्धिमान् । स कथं मन्दविज्ञानो ग्रन्थं वक्ष्यति  
निर्णयात्'—इति महाभारते (१२।३०५।१६) ।  
(४५१) क्ली. दूष्यं; पटकुटी; गुणलयनी; केणिका  
—माघे (१२।४) । कूटं; समूहः; पुं. विष्णुः;  
महाभारते (१३।१४९।१०३) । कन्दविशेषः; रक्त-  
लशुनः; 'स्थूलशूरणमाणकप्रभृतयः कन्दा ईषत्कषायाः  
कटुकारुक्षा विपटम्भिनी गुरवः कफवातलाः पित्तहरा-  
श्च । 'माणकं स्वादु शीतं च गुरु चापि प्रकीर्तितम् ।  
स्थूलकन्दस्तु नात्युष्णः शूरणो गुदकीलहा'—इति  
सुश्रुतः । ३४२

स्थूललक्षः त्रि. [ स्थूलं प्रचुरं लक्षयति दानार्थमिति ।  
स्थूल+लक्ष+अण् ] बहुप्रदः; बहुव्ययी; 'महोत्साहः  
स्थूललक्षः कृतज्ञो बृद्धसेवकः । विनीतः सत्त्वसम्पन्नः  
कुलीनः सत्यवाक् शुचिः'—इति याज्ञवल्क्यः । ३६५

स्थूललक्ष्यः त्रि. [ स्थूलं प्रचुरं वस्तु लक्ष्यमस्य ] बहु-  
प्रदः; बहुव्ययी; 'अकथयतो मानयिता स्थूललक्ष्यः  
प्रियंवदः । सुहृदश्चाभयानेन विविधेनाभिवर्षति'—  
इति महाभारते (३।४५।११) । ३६५

स्थूलोच्चयः पुं. [ स्थूलानामुच्चयो यत्र ] गजानां मध्यम-  
गतिः; हस्तिमध्यमगतिः; 'स्थूलोच्चयेनागमदन्तिका-  
गतां गजोऽप्रयाताग्रकरः करेणुकाम्'—इति माघे  
(१२।१६) । असाकथ्यं; वरुण्डः; हस्तिदन्तरन्ध्रं;  
गण्डोपलः । २२२

स्थेयः पुं. [ विवादनिर्णयार्थं स्यात्तु योग्यः । स्था+यत् ]  
विवादपक्षस्य निर्णोता; 'प्राड्विवाकः; अक्षदृक्;  
'कार्तान्तिको भिषक् सभ्यो गुरुमन्त्रो पुरोहितः । दूतः  
स्थेयो लेखको वा न तदाभूदपण्डितः'—इति राज-  
तरङ्गिण्याम् (६।१३) । पुरोहितः; स्थिरतरे त्रि. ।  
क्ली. [ स्था+भावे यत् ] स्यातव्यम्; 'बलिनः

सन्निकर्षे तु न स्थेयं पण्डितेन वै । अपक्रामेद्धि कालज्ञः  
समर्थो युद्धमावहेत्'—इति हरिवंशे (९।५।७) । ४२९  
स्नसा स्त्री. — स्नायुः; शिरा; नाडी; ६मनी । ६३४  
स्नातकः पुं. [ स्नात एव । स्नात+यावादिभ्यः कन्  
इति स्वार्थे कन् ] आप्लुतव्रती; ब्रह्मचर्यं त्यक्त्वा यो  
गृहस्थाश्रमं गतः सः; समाप्तवेदाध्ययनो यः स्नानशीलः  
आश्रमानन्तरं न गतः । ३९४

स्नानम् क्ली. [ स्ना+ल्युट् ] मज्जनम्; अवगाहनम्;  
आप्लावः; आप्लवः; अभिषेकः; उपस्पर्शनं; सवनं; सर्ज-  
नम्; 'स्नानं पवित्रमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम् । शरीर-  
वलसन्धानं केश्यमोजस्करं परम् । उष्णाम्बुनाथः कायस्य  
परिषेको बलावहः । तेनैव तूत्तमाङ्गस्य बलकृत्  
केशचक्षुषोः । स्नानं वचाधनैरिष्टं श्लेष्मघ्नं तिमिरा-  
पहम् । विनिहन्ति शिरःस्नानं तूष्णातात्वास्थशोषणम् ।  
मलोष्णपीडकाकण्डू शिरोरोगाश्च पैत्तिकान् । मधुकाम-  
लकैः स्नानं पित्तघ्नं तिमिरापहम् । स्नानं कृष्णतिलैश्चापि  
चक्षुष्यमनिलापहम् । अस्नातस्य शरीरस्य उष्मा सर्वाङ्ग-  
गोचरः । स्नानेनैकत्वमायाति तेन दीप्यति पावकः ।  
स्नानमदितनेत्रास्यकर्णरोगातिसारिषु । आप्मानपीन-  
साजीर्णभुक्तवत्सु च गहितम् । दोग्धं गौरवं कण्डूं  
कच्छूं मलमरोचकम् । स्वेदं बीभत्सतां हन्ति शरीर-  
परिमारजनम्'—इति राजवल्लभः । ४०८

स्नायुः स्त्री. [ स्ना+वाहुलकात् उष्ण, 'आतो युक् चिष्ण-  
कृतो' इति युक् ] वायुवाहिनी नाडी; वस्नसा; स्नसा;  
नसा; शिरा; 'शिराशतानि सप्तैव नवस्नायुशतानि च'  
—इति याज्ञवल्क्यः (३।१००) । ६३४

स्निग्धः पुं. [ स्निह्यति स्मेति । स्निह्+अकर्मकत्वात्  
कर्तरि क्त ] वयस्यः; मित्रं; सखा; सुहृत्; रक्तैरण्डः;  
सरलवृक्षः; क्ली. शिक्थकं; त्रि. स्नेह्यवतः; अरुक्षः;  
चिककणं; मसृणम्; आमृष्टं; चिक्वं; चिकवणम्;  
'स्निग्धं तु वत्सलो वत्सः स्नेह्युक्तजने भवेत्'—  
इति शब्दरत्नावली । ४२८

स्तुषा स्त्री. [ स्तौति मनो यस्यामिति । स्तु प्रसवणे+  
'स्तुव्रश्चिकृत्पृषिभ्यः कित्' इति स, स च कित् ] जनी;  
पुत्रवधूः; वधूः; 'स किलाश्रममत्यमाश्रितो निवसन्ना-  
वसथे पुराद्बहिः । समुपास्यत पुत्रभोग्यया स्तुपयेवा-  
विकृतेन्द्रियः श्रिया'—इति रघौ (८।१४) । स्तुहीवृक्षः;

स्नुहा; स्नुहिः । ५०४

स्नुहा स्त्री. [ स्नुह्+टाप् ] स्नुहीवृक्षः; साहुण्डः; व्रजद्रुः;  
शुकु; गुडा; समन्तदुग्धा; सिहुण्डः; शीहुण्डः; वज्रः;  
स्नुहिः; गुडी; गुडः; वज्री; सुधा; वज्रकण्टकः;  
छुण्णसारः । १९७

स्नेहः पुं. [ स्निह्+धञ् ] सख्यः; सखिता; साप्तपदीनं;  
सौहार्द्यं; सौहार्दः; सौहृदं; मैत्री; मित्रता; प्रेमा;  
'पक्षिने स्पर्शने वापि श्रवणे भाषणेषु वा । यत्र द्रवत्यन्त-  
रङ्गं स स्नेह इति कथ्यते । यत्र स्नेहो भयं तत्र स्नेहो  
दुःखस्य भाजनम् । स्नेहमूलानि दुःखानि तस्मिंस्त्यक्ते  
महत्सुखम्—इति गारुडे (११३।५९) । तैलादि-  
रसभेदः; 'मृदु व्यवहितं तेजो भोक्तुमर्थान् प्रकल्पते ।  
प्रदीपः स्नेहमादत्ते दशयाम्पन्तरस्यया—इति माघे  
(२।८५) । ७०६

स्नेहनः पुं. [ स्पन्द्+ह्युट् ] वृक्षविशेषः; क्ली. प्रस्फुरणम्;  
ईषत्कम्पनम्; 'गर्भाधानमृती पुंसः सवनं स्पन्दनात्  
पुरा । षष्ठेऽष्टमे वा सीमन्तो मास्येते जातकर्म च'  
—इति याज्ञवल्क्यः (१।११) । ८१२

स्पर्धा स्त्री. [ स्पर्ध्+भिदादित्वाद्भङ्+टाप् ] संहर्षः;  
'महानदीभिर्वह्नीभिः स्पर्धयेव सहस्रशः । अभिसार्य-  
नाणमनिशं ददृशाते महार्णवम्—इति महाभारते  
(१।२१।१७) । क्रमसमुन्नतिः; साम्यम् । ७८६

स्पर्शनः पुं. [ स्पृशतीति । स्पृश्+ल्यु ] पवनः; श्वसनः;  
वायुः; मरुत्; अनिलः; मास्तः; जगत्प्राणः; समीरणः;  
शुष्यदश्वः; गन्धवहः; पवमानः; प्रभञ्जनः; वातः;  
पमस्वान्; मातरिश्वा; समीरः; सदागतिः; हरिः;  
महाबलः । ७५

स्पर्शनम् क्ली. [ स्पृश्+ल्युट् ] विश्राणनं; विश्रगनं;  
विहापितम्; अंहतिः; अपवर्जनं; वितरणं; निर्वपणम्;  
उत्सर्गः;—प्रदेशनं; दानं; स्पर्शः; 'तस्मिन्त्यस्तधियः  
पाप्याः सहेरन् विरहं कथम् । दर्शनस्पर्शनालापशयनासन-  
भोजनैः—इति भागवते (१।१०।१२) । सम्बन्धः;  
'तद्रक्ष कल्याणपरम्पराणां भोक्तारमूर्जस्वलमात्मदेहम् ।  
महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृदं हि राज्यं पदमन्द्रमाहुः'  
—इति रघुवंशे (२।५०) । ४१९

स्पर्शः पुं. [ स्पृशतीति । स्पृश्+पचाधञ् ] अपसर्पः;  
पटः; पारः; प्रजिभिः; नूतपुलवः; वषाधर्वकः;

मन्त्रज्ञः; हेरकः; 'वयन्तु यदि दाहस्य विम्यतः प्रद्रवे-  
महि । स्पर्शानो घातयेत् सर्वान् राज्यलुब्धः सुयोजनः'  
—इति महाभारते (१।१४।७।२५) । युद्धम् (८।१८);  
अभिसारः; प्राणनिरपेक्षो यो द्रव्यार्थं व्यालं हस्तिनं  
वा योषयति सः । ४२५

स्पष्टम् त्रि. [ स्पश्यते स्मेति । स्पश्+णिच्+क्त ।  
'वा-दान्तशान्तेति' साधुः ] व्यक्तं; स्फुटं; प्रव्यक्तम्;  
उल्वणम्; उद्रिक्तं; प्रकटम्; 'भोः सूत हे मागध सौम्य  
वन्दिँल्लोकेऽधुनास्पष्टगुणस्य मे स्यात् । किमाश्रयो मे  
स्तव एष योज्यतां मा मय्यभूवन् वितथा गिरो वः'  
—इति भागवते (४।१५।२२) । ७५२

स्पष्टेतरः त्रि. [ स्पष्टादितरः ] अव्यक्तः; अस्पष्टः;  
गूढः । ८४२

स्पृहा स्त्री. [ स्पृह्+अङ्+टाप् ] इच्छा; वाञ्छा;  
काङ्क्षा; कामना; ईप्सा; रुचिः; आर्शासा; आकाङ्क्षा;  
'तपो धनं ब्राह्मणानां तपः कल्पतस्तथा । तपस्या काम-  
धेनुश्च सन्ततं तपसि स्पृहा । ऐश्वर्यं क्षत्रियाणां च वाणिज्यं  
च तथा विशाम् । शूद्राणां विप्रसेवायां स्पृहा वेदेष्व-  
निन्दिता । क्षत्रियाणां च तपसि स्पृहातीव प्रशंसिता ।  
ब्राह्मणानां विवादेषु स्पृहातीव विनिन्दिता । क्षत्रियाणां  
रणो धर्मो रणे मृत्युर्न गंहितः । रणे स्पृहा ब्राह्मणानां  
लोके वेदे विडम्बना । तपोधनानां विप्राणां वाग्बलानां  
युगे युगे । शान्तिस्त्वस्त्ययनं कर्म विप्रधर्मो न सङ्करः—  
इति ब्रह्मवैवर्ते गणपतिखण्डे (३।५।७३।८५) । ७१०

स्फटिकः पुं. [ स्फट् विकसने+बाहुलकाद् इकन् ] सूर्य-  
कान्तमणिः; स्फटिकं; स्फाटकं; भासुरः; स्फाटिको-  
पलः; शालिपिष्टं; धौतशिलं; सितोपलः; विमलमणिः;  
निर्मलोपलः; स्वच्छः; स्वच्छमणिः; अमररत्नं;  
निस्तुपरत्नं; शिवप्रियः; 'मुक्ताविद्रुमवज्रेन्द्रवैदूर्य-  
स्फटिकादिकम् । मणिरत्नं शरं शीतं कपायं स्वादु लेख-  
नम् । त्रदुष्यं धारणात् तच्च पापालक्ष्मीविनाशनम्'  
—इति राजवल्लभः । १७६

स्फटिकम् क्ली. [ स्फटिकमेव । स्वार्थे अण् ] स्फटिकं;  
—महाभारते (२।५।५।१) । स्फटिकसम्बन्धिनि त्रि. ।  
महाभारते (१।६३।१३) । १७६

स्फिक [ ज् ] स्त्री. [ स्फायी वृद्धौ, बाहुलकाद् डिक् डिय्  
वा ] कटिप्रोवः (द्विचनान्ते स्फिकी स्फिकी वा) । ५११

स्फुटम् त्रि. [ स्फुटति, स्फुट् विकसने+क ] प्रकटं;  
स्पष्टं; विकसितम् । ७५२

स्फूर्जंशुः पुं. [ स्फूर्जतीति, स्फूर्ज् वज्रनिर्घोषे+अथुच्,  
ह्रस्वः ] वज्रपातजनितशब्दः; वज्रनिष्पेषः; स्फूर्जंशुः;  
वज्रनिर्घोषः । ५७

स्फुलिङ्गः त्रि. [ स्फुल्+इङ्गच् । यद्वा स्फु इति करणेन  
लिङ्गतीति । स्फु+लिंगि+अच् ] अग्निकणः; स्फ-  
लिङ्गः; स्फुलिङ्गा; स्फुलिङ्गम्; 'बलाहकादुच्चरतः  
सुभोमान् विद्युत्स्फुलिङ्गानिव घोररूपान्'—इति महा-  
भारते (५।४८।५४) । ६७

स्फुलिङ्गिनी स्त्री. [ स्फुलिङ्गोऽस्या अस्तीति । इनि,  
ङीप् ] अग्निसप्तजिह्वान्तर्गतजिह्वाविशेषः; 'काली  
कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा ।  
स्फुलिङ्गिनी विश्वरूपी च देवी लोलायमाना इति सप्त  
जिह्वाः'—इति मुण्डकोपनिषदि (१।२।४) । ६७

स्फूर्जंशुः पुं. [ स्फूर्जन्म्, स्फूर्ज् वज्रनिर्घोषे+अथुच् ]  
वज्रपतनजनितशब्दः; वज्रनिष्पेषः; स्फूर्जंशुः; विस्फूर्जं-  
शुः; वज्रनिर्घोषः । ५७

स्फोटकः पुं. [ स्फुटतीति, स्फुट्+प्बुल् ] रोगविशेषः;  
पिटकः; गण्डः; स्फोटः; विस्फोटः; भेदकपरीहास-  
कयोस्त्रि. । ६०४

स्म अव्य.—संस्मरणम्; श्लोकपादपूरणम्; 'यद्येतदशुभं  
कर्म न स्म मे कथयेः स्वयम् । फलेत मूर्द्धा स्म ते राजन्  
सद्यः शतसहस्रवा'—इति रामायणे (२।६४।२२) ।  
एतद्योगे अतीतकाले लट्लकारो भवति, 'लट् स्मे',  
'यजति स्म युधिष्ठिरः, हन्ति स्म रावणं रामः'—इति  
सिद्धान्तकौमुदी । ८८३

स्मरः पुं. [ स्मारयति उत्कण्ठयतीति । स्मृ+णिच्+अच् ]  
कामदेवः; प्रद्युम्नः; मदनः; मन्मथः; मारः;  
कामपालः; अङ्गजः; 'स्मरसि स्मर! मेखलागुणैस्त  
गोत्रस्खलितेषु बन्धनम् । च्युतकेशरदूषितेक्षणान्यवतं-  
सोत्पलताडनानि वा'—इति कुमारे (४।८) । [ स्मृ+  
अप् ] स्मरणम् । ३२

स्मरकूपकः पुं. [ स्मरस्य कूप इव, कन् ] भगं; स्त्रीयोनिः;  
स्मरकूपिका; स्मरगृहं; स्मरध्वजं; स्मरमन्दिरम् । ५१४

स्मरकूपिका स्त्री. [ स्मरकूप+टाप् ] भगं; स्त्रीयोनिः ।

स्मरमन्दिरम् क्ली. [ स्मरस्य कामदेवस्य मन्दिरं गृहम् ]  
योनिः; भगं; स्मरकूपकः; उपस्थः; वराङ्गं; स्मरा-  
गारम् । ५१४

स्मितम् क्ली. [ स्मिञ् ईषद्वसने+क्त ] ईषदात्यम्;  
'विलज्जमानेव नता दिव्याभरणभूषिता । स्मितपूर्व-  
मिदं वाक्यं भीमसेनमथाब्रवीत्'—इति महाभारते  
(१।१५३।२२) । त्रि. विकसितः (१८७); 'स्मित-  
सरोहनेयसरोजलामतिसिताङ्गविहङ्गहसद्दिवम्'—इति  
माधे (६।५४) । ५६७

स्यदः पुं. [ स्यन्द्+घञ् । 'स्यदो जवे' इति निपातनात्  
साधुः ] वेगः; रंहः; तरः; प्रसरः; रयः; जवः;  
वाजः । ४४३

स्यन्दनः पुं. [ स्यन्दते चलतीति । स्यन्द्+बहुलमन्वत्रापि'  
इति युच् ] रयः; चक्रयुक्तयुद्धप्रयोजनयानम्; 'स्निग्ध-  
गम्भीरनिर्घोषमेकं स्यन्दनमास्थितौ । प्रावृषेभ्यं पयोवाहं  
विद्युदैरावताविव'—इति रघौ (१।३६) । त्तिनिश-  
वृक्षः; वृत्ताहं द्विशेषः; वायुः; त्रि. शीघ्रः; स्यन्दकः;  
'ग्रहैः परिवृतं चन्द्रमवतीर्णमिवाभ्वरात् । रूपोपमान-  
मन्येषाममृतस्यन्दनं दृशोः'—इति कथासरित्सागरे  
(१०।३।६२) । क्ली. [ स्यन्द्+त्युट् ] क्षरणं; जलं;  
गमनम् । ४८४

स्यन्दनारोहः पुं. [ स्यन्दनमारोहतीति । स्यन्दन+आ+  
रुह्+अण् ] रथस्थितयोद्धा; रथी । ३९०

स्रक् [ ज् ] स्त्री. [ सृजति शोभांमिति । सृज्यते इति वा ।  
सृज्+ऋत्विगादिना कर्तरि क मणि वा विवन् ] माल्यं;  
माला; मूर्ध्नि न्यस्तपुष्पदाम; 'उपानहौ च वासश्च  
धृतमन्यैर्न धारयेत् । उपवीतमलङ्कारं स्रजं करकमेव  
च'—इति मनुः (४।६६) । ५५२

स्रवद्गर्भा स्त्री. [ स्रवन् गर्भो यस्याः ] दैववशात् पतित-  
गर्भा गौः; अवतोका; पतितगर्भामात्रम् । २७०

स्रवन्ती स्त्री. [ स्रु+शतृ+ङीप् ] नदी; निम्नगा;  
आपगा; 'उपस्पृशेत् स्रवन्त्यां वा सूक्तं वाञ्छेवतं  
जपेत्'—इति मनुः (१।१।३३) । गुल्मस्थानम्;  
ओषधिभेदः; क्षरणविशिष्टे त्रि. यथा स्रवन्, स्रवन्ती,  
स्रवत् । ६६५

स्रष्टा [ ऋ ] पुं. [ सृजतीति । सृज्+तृच् ] ब्रह्मा;  
विधिः; विधाता; विरिञ्चिः; विरिञ्चिः; प्रजापतिः;



विश्वसृष्टः; 'कारणं सर्वभूतानां स एकः परमेश्वरः । लोकेषु सृष्टिकरणात् स्रष्टा ब्रह्मेति गीयते'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (३।४०) । शिवः (१२); विष्णुः; सृष्टिकर्तारि त्रि. । 'स्रष्टारं वारिधाराणां भुवश्च प्रकृतिं पराम् । देवदानवयक्षाणां मानवानां च साधनम्'—इति महाभारते (७।७।८।४५) । ६

जाक् अव्य. [ स्रु गती+डाक् ] द्राक्; चपलं; लघु; मञ्जु; तूर्णं; त्वरितम्; आशु; शीघ्रम्; अरम्; अह्वय; सत्वरं; क्षिप्रं; द्रुतम्; अञ्जसा; झटिति । ६९७  
 च्नुक् [ च् ] स्त्री. [ स्रवति घृतादिकमस्या इति । स्रु गती+ 'चिक् च' इति चिक् ] यज्ञपात्रविशेषः; 'ध्रुवोपभृज्जुहूर्ना तु स्रुवो भेदाः स्रुचः स्त्रि-जः'—इत्यमरः (२।७।२५) । 'स्रुवादिकं तु यज्ञादौ पात्रमित्यभिधीयते । स्रुवः पुमानेकहस्तो वाहुमात्रा स्रुगीरिता । तद्विशेषाः शरावाग्नाः स्त्री जुहूरुपमृद् ध्रुवा'—इति शब्दरत्नावली । ४१५

स्रोतम् पुं.—क्ली.—स्रोतः; प्रवाहः; 'पतिशोकाकुलां दीनां शुक्ललोतां नदीमिव'—इति महाभारते (२।६।८।१३) । ६६६

स्रोतः [ स्र् ] क्ली. [ स्रवतीति, स्रु गती+ 'स्रुरीम्यां तुट्' इति असुन् तुट् च ] शरीरस्थनवच्छिद्राणि; मनः-प्राणान्नपानादिवहशरीरस्थासंख्यमार्गविशेषाः; इन्द्रियं, हृषीकम्; 'स्रोतांसि खानि छिद्राणि कालखण्डं यच्छन्तम्'—इति राजनिर्घण्टः । (६६६) स्रोतस्विनी; आपगा; नदी; 'स्रायाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाल्लवी'—इति गीतायाम् (१०।३१) । (६६९) स्वतोऽम्बुसरणं; वेगेन जलवहनम्; ओषः; प्रवाहः; वेणी; घारा; रयः; 'स्रोतः सद्यः सकलसलिलं सिंहकं सूक्तमूलम्'—इत्यमरभेदः । 'रुद्धस्वरसप्रसरस्यालिभिरग्रे नतं प्रियं प्रति मे । स्रोतस इव निम्नं प्रति रागस्य द्विगुण आवेगः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४९१) । ५३५

स्रोतस्वती स्त्री. [ स्रोतोऽस्त्यस्यामिति । मतुप्, मत्स्य वः; 'उगितश्चेति' डीप् ] नदी; निम्नगा; आपगा; स्रोतस्विनी; सरित् । ६६६

स्रोतस्विनी स्त्री. [ स्रोतोऽस्त्यस्यामिति । स्रोतस्+ 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' इति विनि ] नदी; सरित् । ६६६

स्वम् क्ली.—पुं. [ स्वन् शब्दे+ 'अन्येभ्योऽपीति' ड ] धनं; द्रव्यं; वित्तम्; 'वित्तव्' ब्राह्मणः शूद्राद् द्रव्योपादानमाचरेत् । न च तस्यास्ति किञ्चित् स्वं भर्तृहार्यधनो हि सः'—इति मनुः (८।४।१७) । पुं. ज्ञातिः; 'न विप्रं स्वेषु तिष्ठत्सु मृतं शूद्रेण नाययेत् । अस्वर्ग्या ह्याहुतिः सा स्यात् शूद्रसंस्पर्शदूषिता'—इति मनुः (५।१०४) । आत्मा; 'सैयं स्वदेहार्पणनिष्क्रमणे न्याय्या मया मोचयितुं भवतः'—इति रघो (२।५५) । विष्णुः; त्रि. आत्मीयं; स्वकं; स्वीयं; स्वकीयः; निजः; 'मया त्वद्य प्रवेष्टव्या स्वा' तनुश्च पुरी च सा'—कथासरित्सागरे (२६।१०५) । ८०

स्वः [ र् ] अव्य.— स्वर्गः; सुरसद्यः; त्रिदशावासः; त्रिविष्टपं; त्रिदिवः; द्यौः; गी; अमर्त्यभुवनं; नाकः; ऊर्ध्वलोकः; त्रिदशालयः; सुरलोकः; 'त्वयि प्रयाते स्वस्तात रामे च वनमाश्रिते । विषवा पृथिवी राजंस्त्वया हीना न राजते'—इति रामायणे (२।७।६।८) । परलोकः; आकाशः; शोभनं; व्याहृतिविशेषः; 'अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः । वेदत्रयाश्रिरदुहद् भूर्भुवः स्वरितीति च'—इति मनुः (२।७।६) ३

स्वच्छन्दः त्रि. [ स्वस्य छन्दोऽभिप्रायो यत्र ] स्वाधीनः; स्वतन्त्रः; यथाकामी; स्वहचिः; निरवग्रहः; अपावृतः; स्वैरी; निर्यन्त्रणः; निरर्गलः; निरङ्कुशः; 'स्वच्छन्दासौ न ते राजन् पाणिस्पर्शमिहार्हति'—इति कथासरित्सागरे (३।३।१८४) । स्वस्य अभिप्राये पुं. । 'बुमुक्षा वा पिपासा वा ग्लानिर्वाप्यथवा जरा । देवद्वारयन्त्यास्ते स्वच्छन्दो न भविष्यति'—इति हरिवंशे (१२।२।२८) । ३७९

स्वजनः पुं. [ स्वस्य जनः ] आत्मीयः; वन्धुः; आप्तः; ज्ञातिः; बान्धवः; सनाभिः; सपिण्डः; सगोत्रः; आत्मीयलोकः; 'स्वजनस्य हि दुःखमग्रतो विवृतद्वारमिवोपजायते'—इति कुमारे (४।२६) । ५०९

स्वतन्त्रवृत्तिः स्त्री. [ स्वतन्त्रं स्वच्छन्दं वृत्तिः जीविका ] स्वाधीनकर्म । स्वच्छन्दवृत्तिके त्रि. । ७७८

स्वदनम् क्ली. [ स्वद्+ल्युट् ] भक्षणं; वल्भनम्; अम्यवहारः; प्रत्यवसानं; जेमनं; जतिघः; खादनम्; अशनम्; आहारः; भोजनं; लैहः । ३२५  
 स्वधितिः पुं.—स्त्री. [ स्वं धियति दधातीति । स्व+

धि+कितच् ] परस्ववः; कुठारः; परशुः; स्वधिति; स्वधितिः; 'सूदा महानसं नीत्वावघ्नन् स्वधितिनाद्भुतम्'—इति भागवते (१०।५।५)। ४७४

स्वनः पुं. [ स्वनंनमिति, स्वन् शब्दे+स्वनहसोर्वा ] इति अप् ] शब्दः; स्वनिः; 'आकाशे दुन्दुभीनां च वभूव तुमुलः स्वनः'—इति महाभारते (१।१२३।४६)।

८६३

स्वनिः पुं. [ स्वन्+इन् ] स्वनः; शब्दः; ध्वनिः। ८६२

स्वभावः पुं. [ स्वस्य भावः ] स्वकीयभावः; संसिद्धिः; प्रकृतिः; स्वरूपं; निसर्गः; भावः; सर्गः; स्वत एव आविर्भावः; 'वचनेषु च बुद्धौ च स्वभावे च चरित्रतः। आचारे व्यवहारे च ज्ञायते हृदयं नृणाम्। लोकाः कर्मवशीभूतास्तत्कर्म यत्कृतं पुरा। स्वकर्मणां फल भुङ्क्ते जन्तुर्जन्मनि जन्मनि। केचिद्वदन्तीति भवेत् स्वकृतेन च कर्मणा। केचिद्वदन्ति दैवेन स्वभावेनेति केचन। त्रिविधाश्च मता वेदे वेदवेदाङ्गप्रारणाः। स्वयं च कर्मजनकस्तत् कर्म दैवकारणम्। स्वभावो जायते नृणामात्मनः पूर्वकर्मणा। स एवात्मा सर्वस्यैव्यः सर्वेषां च फलप्रदः। स च सृजति दैवं च स्वभावं कर्म एव च। अहो श्रीकृष्णदासानां कः स्वभावः सुनिर्मलः। हृतभार्यमुच्छ्रितं च न शशाप रिपुं गुहः'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिलखण्डे (५७।२१-२८)। 'सुदिनं दुदिनं चैव सर्वं कर्मोद्भवे भवेत्। तत्कर्म तपसा साध्यं कर्मणा च शुभाशुभम्। तपः स्वभावसाध्यं च स्वभावोऽभ्यासतो भवेत्। संसर्गसाध्योऽभ्यासश्च संसर्गः पुण्यतो भवेत्'—इति ब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे (४३।५।१।५२)। 'स्वभावो यादृशो यस्य न जहाति कदाचन। अङ्गारः शतघातेन मलिनत्वं न मुञ्चति'—इति चाणक्यवाक्यम्। 'सर्वस्य हि परीक्ष्यन्ते स्वभावा नेतरे गुणाः। अतीत्य हि गुणान् सर्वान् स्वभावो मूर्ध्नि वर्तते'—इति हितोपदेशः। ८५७

स्वयम्भुः पुं. [ स्वयम्भवतीति। स्वयम्+भू+ङु ] ब्रह्मा। ७

स्वयम्भूः पुं. [ स्वयम्भवतीति। स्वयम्+भू+क्विप् ] चतुराननः; स्वयंभुवः; स्वयम्भुः; स्रष्टा; कमलासनः; प्रजापतिः; विधाता। ७

स्वरः पुं. [ स्वरति शब्दायते। स्वं शब्दोपतापयो+पचाद्यच् ] नादः; शब्दः; ध्वनिः। १३८

स्वरः पुं. [ स्वर्यन्ते शब्दा अनेन। स्वं+घ। स्वेन राजते वा, स्व+राज्+ड ] अकारादिवर्णः; दृच्; मात्रा; 'एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते। त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्द्धमात्रकम्। स्वरा विशतिरेकश्च स्पर्शानां पञ्चविंशतिः'—इति शिक्षायाम्। तन्त्रीकण्ठोत्थितनिषादादिध्वनिः; 'निषाद्वर्षभगान्धारपञ्चममध्यमर्षदंताः। पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः'—इत्यमरः। उदात्तादिव्रथम्; 'उदात्तश्चानुदात्तश्च स्वरितश्च त्रयः स्वराः। चतुर्थः प्रचितो नोक्तो यतोऽसौ छान्दसः स्मृतः'—इति भरतः। प्राणिस्वनः; ध्वनिः; शब्दः; निनादः; निनदः। ८६३

स्वरः [ स् ] पुं.—वज्रं; भिदुरं; पविः; कुलिशं; दम्भोलिः; इन्द्रप्रहरणम्। ५६

स्वरः पुं. [ स्वर्यन्ते प्राणिनोऽनेनेति। स्वं शब्दोपतापयो+श्वस्वृस्तिह्रिप्रतीति' उ स च नित् ] वज्रं; भिदुरम्; इन्द्रायुधं; शतघारम्; अशनिः; पविः; व्याधामं; यूपखण्डः; 'शं नः स्वरूपां मितयो भवन्तु'—इति ऋग्वेदे (७।३।५।७)। यज्ञः; शरः; सूर्यरश्मिः; वृश्चिकविशेषः; वृश्चिकभेदः। ५६

स्वरञ्चिः त्रि. [ स्वां स्वकीया रचिर्यस्य ] स्वतन्त्रः; यथाकामी; स्वच्छन्दः; स्वाधीनः; अपावृतः; स्वैरी; निरवग्रहः; नियन्त्रणः; निरमलः; निरङ्कुशः; स्वेच्छा [ स्वस्य रचिः ] स्त्री; 'स्वरच्या क्रियमाणे तु यत्रावश्यं क्रिया क्वचित्। चोद्यते नियमः सोऽत्र ऋतावभिगमो यथा'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। ३७९

स्वरूपम् क्ली. [ स्वस्य रूपम् ] स्वभावः; प्रकृतिः; निजरूपम्; 'स दृष्ट्वा विस्मितस्तस्यावात्मानं विकृतं नलः। स्वरूपधारिणं नागं ददर्श स महीपतिः'—इति महाभारते (३।६६।१३)। 'त्रि. [ स्त्रेनैव रूपं प्रकाशो यस्य ] पण्डितः; मनोज्ञः; प्राप्तरूपः; अभिरूपः। ८६४

स्वर्गः पुं. [ स्वरति गीयते इति। स्वर्+गै+क। यद्वा सुष्ठु अज्यते इति। सु+अर्ज्, अर्जने+घञ् ] देवतानामालयः; स्वः; नाकः; स्वर्लोकः; त्रिदिवः; त्रिदशालयः; सुरलोकः; द्यौः; त्रिपिष्टपः; मन्दरः; अवरोहः; गीः; रमतिः; फलोदयः; देवलोकः; स्वर्लोकः; ऊर्ध्वलोकः; सुखाधारः; सीरिकः; शक्रः

भ्रमनं; दिवानम्; 'मनोऽनुकूलाः प्रमदा रूपवत्यः  
स्वलङ्कृताः। वासः प्रासादपृष्ठेषु स्वर्गः स्याच्छुभ-  
कर्मणः—इति गारुडे (१०९।४४)। 'मनःप्रीतिकरः  
स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः। नरकस्वर्गसंज्ञे वै पापपुण्ये  
द्विजोत्तमाः—इति ब्रह्मपुराणे १९ अध्यायः। ३

स्वर्गीकाः [ स् ] पुं. [ स्वर्ग ओको वासस्थानं यस्य ] देवः;  
देवता; अमरः; विदुषः; सुरः; अदितिनन्दनः;  
स्वर्गी; 'अनर्घ्यमर्घ्येण तमद्रिनाथः स्वर्गोकसामर्चित-  
मर्चयित्वा। आराधनायास्य सखीसमेतां समादिदेश  
प्रयतां तनूजाम्—इति कुमारे (१।५८)। ४

स्वर्णम् क्ली. [ सुष्ठु अर्णो वर्णो यस्य ] सुवर्णम्; अष्टा-  
पदम्; 'सुवर्णं तिक्तमधुरं कपायं गुरु लेखनम्। हृद्यं  
रसायनं बल्यं चक्षुष्यं कान्तिदं क्षुचि। आयुर्मघावयः-  
स्थैर्यवानिवशुद्धिद्युतिप्रदम्। क्षयोन्मादगदात्तानां शमनं  
परमुच्यते—इति राजवल्लभः। १७३

स्वर्णपुष्पी स्त्री. [ स्वर्णवत् पीतं पुष्पं यस्याः। झोष् ]  
आरग्वधः; कृतमालः; स्वर्णकेतकी; हरिद्रावर्णकेतकी-  
पुष्पं; हेमकेतकी; कनकप्रसवा; हैमी; छिन्नरुहा;  
विष्ठासुहा; कामखड्गदला। १९८

स्वर्भानुः पुं. [ स्वराकाशे भातीति। स्वर+भा+दाभा-  
भ्यां नुः ] इति नुः। राहुः; सैहिकेयः; तमः; विधुनुदः;  
अस्रपिशाचः; ग्रहकल्लोलः; सैहिकः; उपप्लवः;  
शीर्षकः; उपरागः; सिंहिकासूनुः; कृष्णवर्णः; कवन्धः;  
अगुः; असुरः; 'तुल्येऽपराधे स्वर्भानुर्भानुमन्तं चिरेण  
यत्। हिमांशुमाशु असते तन्मदिमनःस्फुटं फलम्—इति  
माघे (२।४९)। सत्यभामागर्भजातः श्रीकृष्णपुत्रविशेषः;  
'भानुः सुभानुः स्वर्भानुः प्रभानुर्भानुमांस्तथा। चन्द्रभानु-  
र्वहद्भानुरतिभानुस्तयाष्टमः। श्रीभानुः प्रतिभानुश्च सत्य-  
भामात्मजा दक्ष—इति भागवते (१०।६१।११)। ४९

स्वल्पशरीरः त्रि.—पृथिनः; अल्पतनुः; किरातः। ६११  
स्वसा [ ऋ ] स्त्री. [ सुष्ठु अत्यते क्षिप्यते इति। सु+  
अस्+सुञ्ज्यसेऽर्द्धन् इति ऋन् ] भगिनिः; भगिनी;  
जामिः; भग्नी; 'मातरं वा स्वसारं वा मानुलां भगिनी  
निजाम्। भिक्षेत भिक्षां प्रयमं या चैनं नावमायेत्'  
—इति मनुः (२।५०)। ५०७

स्वस्ति अम्. [ सु+अस्+सावसेः ] इति ति, बहु-  
वचनात् न नूनाः ] आशीः; शोभन्; आशीर्वातः;

मङ्गलादि; पुण्यादि; 'स्वस्ति मङ्गलाशीर्वादिपापनिर्णे-  
जनादिषु—इति भागुरिः। 'स्वस्ति प्राप्नुहि कौन्तेय  
काम्यकं पुनराश्रमम्—इति महाभारते (३।१६६।१३)।  
दानस्वीकारमन्त्रः; 'स्वाहाग्नये स्वधा पित्रे स्वस्ति  
धात्रे नमः सते—इति मुग्धबोधव्याकरणम्। ८८७

स्वस्तिकः पुं.—क्ली. [ स्वस्ति क्षेमं कायति कथयतीति।  
स्वस्ति+कै+क ] आठ्यानां गृहविशेषः; वर्धमानः;  
नन्द्यावर्तः; 'स्वस्तिकं प्राङ्मुखं यत्स्यादनिन्द्यानुगतं  
भवेत्। तत्पाश्वर्णुंगतौ चान्यौ तत्पर्यन्तगतोऽपरः—  
इति साञ्जः। शतावरीशाकः; 'शितिवारः शितिवरः  
स्वस्तिकः सुनिषण्णकः। श्रीवारकः सूचिपत्रः पर्णकः  
कुक्कुटः शिखा—इति राजनिर्घण्टः। योगाङ्गासनम्;  
मङ्गलद्रव्यं; तत्तु तण्डुलचूर्णनिर्मितत्रिकोणाकाराधि-  
वासद्रव्यं; चतुष्पथः; पिष्टकविकारः; रततालिकः;  
जिनानां चतुर्विंशतिचिह्नान्तर्गतचिह्नविशेषः "卐"  
इत्याकारः; 'वृषो गजोऽश्वः प्लवगः क्रौञ्चोऽजं  
स्वस्तिकः शशी। मकरः श्रीवत्सः खड्गी महिषः  
सूकरस्तथा। श्येनो वज्रं मृगदछागो नद्यावर्तो घटोऽपि  
वा। कूर्मो नीलोत्पलं शंङ्खः फणी सिंहोऽर्द्धतो ध्वजाः—  
इति हेमचन्द्रः। रसोनकः; सर्पफणास्थितनीलेखा-  
विशेषः; 'शिरोभिः पृथुभिर्नागा व्यक्तस्वस्तिककलक्षणैः।  
वमन्तः पावकं घोरं ददंशुर्दशनैः शिलाः—इति रामायणे  
(१।१९५)। ३०५

स्वस्त्रीयः पुं. [ स्वसुरपत्यं पुमानिति। स्वसृ+स्वसुष्ठः  
इति छ ] भगिनेयः; स्वस्त्रेयः; जामेयः; भगिनीसुतः;  
'मातामहं मानुलं च स्वस्त्रीयं श्वशुरं गुरुम्। दीहितं  
विट्पतिं बन्धुमृत्विग्याज्यौ च भोजयेत्—इति मनुः  
(३।१४८)। ५०७

स्वस्त्रेयः पुं. [ स्त्रीभ्यो ङक् ] स्वस्त्रीयः। ५०७  
स्वाच्छन्दात् क्ली. [ स्वच्छन्द+यञ् ] स्वच्छन्दस्य भावः ]  
स्वच्छन्दता; यदृच्छा; स्वातन्त्र्यं; स्वतन्त्रता;  
स्वाधीनता; स्वैरता; स्वैरिता; 'शातिभ्यो द्रविणं दत्त्वा  
कन्यायै चैव शक्तिततः। कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो  
धर्म उच्यते—इति मनुः (३।३१)। ७७४  
स्वादुरता स्त्री. [ स्वादुः रसो यस्याः ] मध्वासवः; शीघु;  
सुरा; मदिरा; काकोली; आभ्रातकफलं; शतावरी;  
प्रासा। ३२९

स्वाध्यायः पुं. [ अध्ययनम् अध्यायः। अधि+इङ्+ 'इङ्श्च' इति घञ्। सुष्ठु आवृत्य अध्यायः वेदाध्ययनं यस्येति वा ] वेदः; श्रुतिः; आम्नायः; छन्दः; आगमः; आवृत्य वेदाध्ययनं; जपः; जापः; 'स्वाध्यायो जप इत्युक्तो वेदाध्ययनकर्मणि'—इति शब्दरत्नावली । ९

स्वानः पुं. [ स्वननमिति, स्वन् शब्दे+ 'स्वनहसोर्वा' इति घञ् ] शब्दः; ह्लादः; नादः; ध्वानः; स्वरः; स्वनिः; स्वनः; रवः; घोषः; 'या विभक्ति कल- वल्लकीगुणस्वानमानमतिकालिमाऽलया। नात्र कान्तमुप- गीतया तथा स्वानमानमतिकालिमालया'—इति माघे (४।५७) । १३८

स्वान्तम् क्ली. [ स्वन्त्यते स्मेति। स्वन्+क्त। 'क्षुब्ध- स्वान्तध्वान्तेति' वृद्धिः अनिट्कत्वं च निपात्यते ] चेतः; चित्तं; मनः; हृदयं; मानसम्; 'तस्यालिम्पत शोकाग्निः स्वान्तं काण्ठमिव ज्वलन्। अलिप्तेवानिलः शीतो वने तं न त्वजिह्वयत्'—इति भट्टिः (६।२२) । गह्वरं; स्वस्य अन्ते पुं.—क्ली. । 'यो ह्यात्ममायाविभवं च पर्य- गाद् यथा नमः स्वान्तमथापरे कुतः'—इति भागवते (२।६।३४) । शब्दिते त्रि. । ५३४

स्वापतेयम् क्ली. [ स्वपतेरागतम्, ङञ् । यद्वा स्वपती धनंस्वामिनिः साधु । स्वपति+ 'पथ्यतिशिवसतिस्व- पतेढञ्' इति ङञ्, स्वागतादित्वाञ्छेजागमः ] द्युभ्रं; द्युभ्रं; द्रव्यं; द्रविणं; राः; सारम्; अर्थः; स्वम्; ऋ (रि) क्यं; पृक्यं; वित्तं; धनं; हिरण्यं; वसु; विभवः; 'स्वापतेयमधिगम्य धर्मतः पर्यपालयमवी- वृधं च यत् । तीर्थगामि करवै विधानतस्तञ्जुषस्व जुह्वानि धानले'—इति माघे (१४।९) । ८०

स्वापदः पुं. [ स्वापद+पृषोदरादित्वात् साधुः ] स्वापदः; व्याघ्रादिवनचरपशुः । २३३

स्वामी [ न् ] पुं. [ स्वमस्यास्तीति, 'स्व+स्वामिन्नेवर्व्ये' इति आमिन् ] गौरीपुत्रः; षण्मुखाः; शंक्लिपाणिः; शौचारातिः; कार्तिकेयः; विशाखः; स्कन्दः; तारकारिः; कुमारः; सेनानीः; अग्निभूः; बाहुलेयः; गाङ्गेयः; ब्रह्मचारी; गृहः; बर्हिणावाहनः; महासेनः; महातेजाः; धारजन्मा; राजा; 'स्वाम्यमात्यः सुहृत्कोषो राष्ट्र- दुर्गबलानि च । राण्याङ्गानि प्रकृतयः पीराणां श्रेणयोऽपि च'—इत्यमरः । विमुः; हटः; हरिः; गुरुः; भर्ता;

वात्स्यायनमुनिः; गरुडः; अतीतकल्पीयाहंभूदेः; परम- हंसः, यथा श्रीधरस्वामिप्रभृतयः । १९

स्वामी [ न् ] त्रि. [ स्वमस्यास्तीति । स्व+ 'स्वामिन्नेवर्व्ये' इति आमिन् प्रत्ययेन निपातितः ] अधिपतिः; ईश्वरः; पतिः; ईशिता; अधिभूः; नायकः; नेता; प्रभुः; परि- वृहः; अधिपः; अत्रमतिः; ईशः; आर्यः; पालकः । ३४३

स्वाराद् [ ज् ] पुं. [ स्वः स्वर्गो राजते इति । स्वर्+ राज्+क्विप् ] सुरपतिः; इन्द्रः । ५३

स्वाहा स्वी. [ सुष्ठु आह्रयन्ते देवा अनयेति । सु+आ+ ह्वे+डा ] अग्निभार्या; सा दक्षकन्या; अग्नायी; हुतभुविप्रया; अनलप्रिया; वह्निदधूः; द्विठः; 'स्वाहा देवहविर्दाने प्रशस्ता सर्वकर्मसु । पिण्डदाने स्वधा शस्ता दक्षिणा सर्वतो वरा ।' ॐ ह्रीं श्रीं वह्निजातार्यं देव्यै स्वाहेत्यनेन च । यः पूजयेच्च तां देवीं सर्वेषु लभते ध्रुवम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । बौद्धशक्तिविशेषः; तारा; महाश्रीः; ओङ्कारी; श्रीः; मनोरमा; तारिणी; जया; अनन्ता; शिवा; लोकेश्वरात्मजा; सद्गुरवासिनी; भद्रा; वैश्या; नीलसरस्वती; शङ्खिनी; महातारा; वसुधारा; धनन्ददा; त्रिलोचना; लोचनास्या । अथ्थ. देवहविर्दानमन्त्रः; श्रीपद्; वीषद्; वषद्; स्वधा; 'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका'— इति देवीमाहात्म्ये (१।५४) । ६६

स्वाहापतिः पुं. [ स्वाहायाः पतिः भर्ता ] स्वाहाप्रियः; अग्निः । ६२

स्वाहाप्रियः पुं. [ स्वाहायाः प्रियः ] अग्निः; वह्निः; अनलः; पावकः । ६२

स्वित् अव्य.—प्रश्नः; 'किं ब्राह्मणा वै श्रेयांसो विसिञ्जाः स्वित् विरोचन'—इति महाभारते (५।३५।८) । वितर्कः; 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किं स्वित्दित्युम्मुक्तीभिर्दृष्टो- च्छ्रायश्चकितचकितं मुग्धसिद्धाङ्गनाभिः'—इति मेघदूते (१४) । पादपूरणे; 'स्वित् प्रश्ने च वितर्को च तथैव पादपूरणे'—इति मेदिनी । ८८०

स्वेदनिका स्वी. [ स्वेदनमस्त्यस्या इति । ङञ् ] कन्दुः; स्वेदनी; लीहमयपात्रं; भर्जनपात्रं; भर्जनशाला । ३१३

स्वरः त्रि. [ स्वेन स्वातन्त्र्येण ईर्त्ते इति । ईर् गतौ+अप्, 'स्वातीरेरणो' इत्युक्त्वा वृद्धिः ] गन्धः; 'दयोराः सुवैर्गन्धैर्नाल्यैश्च विविधैस्तथा । आकीर्णसाणः संहृष्टो

नगरं स्वैरमागम्—इति महाभारते (४।६६।४९) ।  
स्वच्छन्दः; 'अव्यःहृतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट्  
समाराधनतत्परोऽभूत्—इति रघौ (२।५) । वृथा-  
लापः; 'नैवान्यथेदं भविता पितरेवं ब्रवीमि ते । नाहं  
मृषा ब्रवीम्येव स्वैरेष्वपि कुतः शपन्—इति महाभारते  
(१।४२।२) । ८३३

स्वैरिणी स्त्री. [ स्वेनव ईरितुं शीलमस्याः । स्व+ईर्+  
णिनि, डीप् । स्वादीरेरिणोरिति वृद्धिः ] व्यभिचारिणी;  
सा तु चतुःपुखगामिनी; पांशुला; बन्धकी; असती;  
पुंश्चली; इत्तरी; धर्षिणी; कुलटा; अविनीता;  
अभिसारिका; 'पाण्डुस्तु पुनरेवैनां पुत्रलोभान्महायशाः ।  
वक्तुमैच्छद्दर्मपत्नीं कुन्ती त्वेनमथाब्रवीत् । नातश्चतुर्थं  
प्रसवमापत्स्वपि वदत्युत । अतः परं स्वैरिणी स्याद्वन्धकी  
पञ्चमे भवेत्—महाभारते (१।१२३।७३-७४) । ४९६

हं

हंसः पुं. [ हन्ति सुन्दरं गच्छति । हन् हिंसागत्योः+  
'वृत्तवदिहनीति' स ] भानुः; रविः; आदित्यः; अंशुः;  
सूर्यः; 'त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः—  
इति महाभारते (३।३।६१) । (२५१) पक्षिविशेषः;  
श्वेतगरुत्; चक्राङ्गः; मानसीकाः; कलकण्ठः;  
सितच्छदः; सितपक्षः; सरःकाकः; पुरुदंशकः;  
धवलपक्षः; मानसालयः; 'स्निग्धं हिमं गुरु वृष्यं मांसं  
जलपक्षिणां तु वातघ्नम् । तेष्वापि च हंसमांसं वृष्यतमं  
तिमिरहरं च—इति राजनिघण्टः । निर्लोभनूपः;  
विष्णुः; 'शुचिश्रवा हृषीकेशो घृताचिर्हंस उच्यते—  
इति महाभारते (३।३।६१) । परमात्मा; मत्सरः;  
योगभेदः; मन्त्रभेदः; गुरुः; पर्वतः; तुरङ्गमप्रभेदः;  
शिवः; विशुद्धः; अग्रतः स्थितः; श्रेष्ठः; गोविशेषः;  
'सितवर्णः पिङ्गाक्षस्ताम्रविपाणेलणो महावक्त्रः । हंसो  
नाम शुभफलो यूथस्य विवर्द्धनः प्रोक्तः—इति  
बृहत्संहितायाम् (६।१।१७) । जरासन्धनूपतेः सेनापति-  
विशेषः; 'स तु सेनापति राजा सस्मार भरतर्षभ !,  
कोशिकं चित्रसेनं च तस्मिन् युद्धे उपस्थिते । ययोस्ते  
नामनी राजन् ! हंसैति डिम्भकेति च । पूर्वं  
संकथिते पुंभिनृलोके लोकसत्कृते—इति महा-  
भारते (२।२।३।१-३२) । मेरोत्तररश्मपर्वत-

विशेषः; 'शङ्खकूटोऽय ऋषभो हंसो नागस्तथा परः ।  
कालञ्जराद्याश्च तथा उत्तरे केशराचलाः—इति विष्णु-  
पुराणे (२।२।२८) । ३७

हंसकः पुं. [ हंस इव कायति, मधुरध्वनित्वात् ] पादकटकः;  
सिञ्जिनी; तुलाकोटिः; नूपुरं; मञ्जीरः; स्त्री-  
चरणाभरणम्; 'पादाङ्गदं तुलाकोटिर्मञ्जीरो नूपुरोऽ-  
स्त्रियाम् । हंसकः पादकटकः किञ्चिणी क्षुद्रघण्टिका—  
इत्यमरः (२।६।१०९) । हंसः; 'राजहंसः [ हंस+  
स्वार्थे कन् ] मरालः; 'सरित इव सविभ्रमप्रयात-  
प्रणदितहंसकभूषणा विरेजुः—इति माघे (७।२३) ।

५६१

हंसकान्ता स्त्री. [ हंसस्य कान्ता पत्नी ] हंसभार्या;  
चक्राङ्गी; वरटा; चक्राकी; वरटी; सरःकाकी;  
हंसिका; वारला; हंसयोषित्; वरला; मराली;  
मञ्जुगमना; मृदुगामिनी । २५१

हंसपादम् क्ली. —पुं. [ हंसस्य पाद इव वर्णो यस्य ] हिङ्गुलं;  
कुरुविन्दम्; 'हिङ्गुलं दरदं म्लेच्छमिङ्गुलं चूर्णपारदम् ।  
दरदंस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मरः शुकतुण्डकः । हंसपाद-  
स्तृतीयः स्यात् गुणवानुत्तरोत्तरम् । चर्मरः शुक्लवर्णः  
स्यात् सपीतः शुकतुण्डकः । जवाकुसुमसङ्काशो हंसपादो  
महोत्तमः—इति भावप्रकाशः । पुं. हंसचरणः । ६२१  
हंहो अव्य. — सम्बोधनम्; आमन्त्रणम्; आह्वानम्;  
'तां गामृषिः स्युमरश्मिः प्रविश्य यतिमब्रवीत् । हंहो  
वेदा यदि मता धर्माः केनापरे मताः—इति महाभारते  
(१।२।२६।७।९) । दर्पः; दम्भः; प्रसन्नः । ८८३

हठः पुं. [ हृत्+पुंसीति घ ] प्रसभः; बलात्कारः; प्रश्नी;  
हठयोगः; 'अशेषतापतप्तानां समाश्रयमठो हठः । अशेष-  
योगयुक्तानामाधारकमठो हठः—इति हठयोगप्रदीपि-  
कायाम् (१।१०) । ७५९

हतकः पुं. [ हत इव+कन् ] आक्षेपः; नीचलोकाः; 'देव  
अजातशत्रो अद्यापि दुर्योधनहतकः—इति साहित्य-  
दर्पणे (६।३९५) । ३७८

हनुः पुं. —स्त्री. [ हन्ति कठिनद्रव्यादिकमिति । हन्+  
'शूस्वृस्निहोति' उ स च नित् ] कपोलद्वयपरमुखभागः;  
यत्र जम्भाख्या दन्ता जायन्ते । गण्डः; गल्लः; कपोलः;  
क्ली. श्मश्रुः; जानुः; गुदः; स्त्री. [ हन्ति पुरुषमिति ।  
हन्+ङ ] हृष्टविलासिनी; रोगः; अन्नं; मृत्युः । ५२२

हन्त अव्य.— विषादः; शोचनं; खेदः; 'रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पञ्जालम् । इत्थं विचिन्तयति कोपगते द्विरेफे, हा हन्त ! हन्त !! नलिनीं गज उज्जहार'—इति भ्रमराष्टके (८) । 'काचमूल्येन विक्रीतो हन्त ! चिन्तामणिर्मया'—इति रामायणे । हर्षः; सम्प्रहर्षः; अनुकम्पा; दया; 'हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः । प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ ! नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे'—इति गीतायाम् (१०।१९) । वाक्यारम्भः; अतिः; वादः; सम्भ्रमः ।

८७५

हयः पुं. [ हयति गच्छतीति । हय् + अच् ] नुरगः; घोटकः; अश्वः; 'हयायुर्वेदमालयास्ये हयैः सर्वार्थरक्षणम् । काकुटीं कृष्णजिह्वश्च कृष्णारुयः कृष्णतालुकः'—इति हयायुर्वेदः । ४३६

हयमारः पुं. [ हयं मारयतीति । हय् + मृ + णिच् + ष्वल् ] हयमारकः; करवीरः; वृक्षविशेषः; हयारिः । १९४

हरः पुं. [ हरति पापानीति । हृ + अच् ] शिवः; शङ्करः; शम्भूः; महादेवः; 'स सेनां महतीं कर्षन् पूर्वसागरगामिनीम् । वभी हरजटाभ्रष्टां गङ्गामिव भगीरथः'—इति रघौ (४।३२) । अग्निः; गर्दभः; हरणं; त्रि. हरणकर्ता; 'एते वयं न्यासहरा रसौकसां गतह्रियो गदया द्राघितास्ते'—इति भागवते (३।१८।११) । ११

हरिः पुं. [ हरति पापानीति । हृ + हृपिषिहोति ] इन् ] सूर्यः; विष्णुः (२३); 'हरिरिव युगदीर्घेर्दोभिरशैस्तदीयैः पतिरवनिपतीनां तैश्चकाशे चतुभिः'—इति रघौ (१०।८६) । (५२) सुरपतिः; इन्द्रः; 'यन्ता हरेः सपदि संहृतकार्मुकज्यभापृच्छय राघवमनुष्ठित-देवकार्यम्'—इति रघौ (१२।१०३) । (७२) धर्मराजः; यमः । (७६) पवनः; वायुः । (२१४) मृगपतिः; सिंहः; 'स न्यस्तशस्त्रो हरयै स्वदेहमुपानयत् पिण्डमिवाभिवस्य'—इति रघौ (२।५९) । (२३१) कपिः; वानरः । (६६२) मण्डूकः; भेकः । (७३५) पिङ्गलवर्णः; कद्दुः; कडारः; पिङ्गलः; कपिलः । (८३६) अर्कः; आदित्यः; सूर्यः । मर्कटः; कपिः; वानरः । मण्डूकः; भेकः । वासवः; इन्द्रः; विष्णुः; वायुः; पवनः । तुरङ्गः; घोटकः; अश्वः; 'ततः स हरिभिर्युक्तं जाम्बूनदपरिष्कृतम् । मेघनादिनमारुह्य श्रिया परमया

ज्वलन्'—इति महाभारते (३।१६६।५) । सिंहः; मृगारिः; रघौ (२।५९) । शीतांशुः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; यमः; धर्मराजः; अन्तकः; शुकपक्षी; सर्पः; शिवः; ब्रह्मा; किरणः; वर्षविशेषः; मयूरः; कोकिलः; हंसः; अग्निः; भर्तृहरिः; हरिद्वर्णः; त्रि. [ हरति नेत्रदुःखमिति । हृ + इन् ] पिङ्गलवर्णः; हरिद्वर्णः; 'शनेस्त-मक्षणामनिमेपवृत्तिभिर्हृरिं विदित्वा हरिभिरच वाजिभिः । अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव'—इति रघौ (३।४३) । पीतवर्णः । ३५

हरिचन्दनम् पुं.— क्ली. [ हरेरिन्द्रस्य प्रियं चन्दनम् ] देव-तरुविशेषः; सुरतरुभेदः; 'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः । सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम्'—इत्यमरः । चन्दनविशेषः; तैलपर्णिकं; गोशीर्षः; सुरार्हः; हरिगन्धः; दिव्यम्; इन्द्रचन्दनं; दिविजं; महागन्धं; नन्दनजं; लोहितजम्; 'हरिचन्दनं तु दिव्यं हिमं तदिह दुर्वहं मनुजैः । पित्ताटोपविलोपि वमयुभ्रमशोषमान्द्यभेदोहृत्'—इति राजनिर्घण्टः । पीतचन्दनम्, 'कालीयकं तु कालीयं पीताभं हरिचन्दनम् । हरिप्रियं कालसारं तथा कालानुसार्यकम्'—इति भावप्रकाशः । चन्दनविशेषः; 'वृष्टं च तुलसीकाष्ठं कर्पूरागुरुयोगतः । अथवा केशरैर्यज्य हरिचन्दनमुच्यते'—इति पाथे । क्ली. [ हरिचन्दनं तद्वर्णोऽस्त्यस्येति + अच् ] ज्योत्स्ना; कुंडकुर्मं; पद्मकेशरं; कान्ताङ्गम् । १३५

हरिणः पुं. [ हरति मनः, ह्रियते गीतादिना वा । हृ + 'शास्त्याहृजविम्य इनच्' इति इनच् ] पशुविशेषः; मृगः; कुरङ्गः; वातायुः; अजिनयोनिः; सारङ्गः; चलनः; पृषत्; भीरुहृदयः; मयुः; चारुलोचनः; जिनयोनिः; कुरङ्गमः; ऋष्यः; ऋष्यः; रिष्यः; रिष्यः; एणः; एणकः; कृष्णतारः; सुलोचनः; पृषतः; 'हरिणः शीतलो बद्धविष्मत्रो दीपनो लघुः । रसे पाके च मधुरः सुगन्धिः सन्निपातहा । एणः कपायो मधुरः पित्तासृक्कफनाशनः । संग्राही रोचनो हृषो बलकृज्ज्वरनाशनः'—इति राजवल्लभः । शुक्लवर्णः; विष्णुः; सूर्यः; हंसः; शिवः; 'आपाढश्च सुपाढश्च ध्रुवोऽथ हरिणो हरः'—इति महाभारते (१३।१७।१९) । ऐरावतवंशोद्भूतनागविशेषः; 'पारावतः पारिजातः पाण्डरो हरिणः कृशः । विहङ्गः शरतो भेदः

प्रमोदः संहतापनः । ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्य-  
वाहनम्—इति महाभारते (१५७।११) । पाण्डु-  
वर्णः; (७३२) त्रि. पाण्डुरः; पाण्डुः; पाण्डरः;  
अवदातः; 'स भोगान् विविधान् भुञ्जन् रत्नानि  
विविधानि च । कथितो घृतराष्ट्रस्य विवर्णो हरिणः  
कृवाः'—इति महाभारते (११।१।३५) । २३०

हरिणी स्त्री. [ हरिण+ङीप् ] हिरण्यमी प्रतिमा; स्वर्ण-  
प्रतिमा; सुवर्णमूर्तिः; (७३४) पालाशः; हरित्;  
हंरिता [ हरित+ङीप् तस्य न ]; शुकाभा (७३८);  
चित्रिणी; नारीभेदः; मृगी; 'घनुभृतोऽप्यस्य दयार्द्र-  
भावमाख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कः । विलोकयन्त्यो वपुरा-  
पुरक्षणां प्रकामविस्तारफलं हरिण्यः'—इति रघौ (२।११) ।  
वृत्तविशेषः; 'नसमरला गः पङ्क्तेर्हयैर्हरिणी मता ।  
स्वर्णयूथी; तरुणी; वरस्त्री; सुराङ्गनाभेदः; 'चरतः  
किल दुश्चरं तपस्तूणविन्दोः परिक्षिङ्कितः पुरा । प्रजिघाय  
समाधिभेदिनीं हरिरस्मै हरिणीं सुराङ्गनाम्—इति  
रघौ (८।७९) । १३५

हरित् स्त्री. [ ह+इति ] आशा; ककुप्; ककुभा;  
काष्ठा; दिशा; दिक्; 'ततार विद्याः पवनाति-  
पातिभिर्विशो. हरिर्द्धिहरितामिवेश्वरः'—इति रघौ  
(३।३०) । हरिद्रा; पुं. नीलपीतमिश्रितवर्णः; पालाशः;  
हरितः; श्यामः; अश्वविशेषः; सूर्याश्वः; 'उत्पाट्य  
मेरुशृङ्गाणि क्षुण्णानि हरितां खुरैः । आक्रीडपर्वतास्तेन  
कल्पिताः स्वेयु वेदमसु'—इति कुमारे (२।४३) । मुद्गः;  
सिंहः; सूर्यः; विष्णुः; हरिद्वर्णविशिष्टे त्रि. । पुं. क्ली.  
तृणम् । (४३६) पुं. [ हरति नयनमनांसीति । ह+  
'हसुहृद्युपिम्य इति' इति इति ] तुरगः; घोटकः;  
अश्वः । १००

हरितः त्रि. [ ह+इतच् ] हरिद्वर्णयुक्तः; शाद्वलः;  
'परिसरविषयेषु लीढमुक्ताः हरिततृणोद्गमशङ्कया  
मृगीभिः'—इति किराते (५।३८) । १५९, ७३४

हरिताली स्त्री. [ हरिताल+ङीप् । हरिता आली पङ्क्ति-  
वर्त्ता ] दूर्वा; हरितालिका; आकाशरेखा; खङ्गलता;  
पार्वती; तन्निमित्तकतृतीयाव्रतं; सौरभाद्रपदीयनक्षत्र-  
विशेषयुक्ता चतुर्थी; 'भाद्रे मासि सिते पक्षे वसुदेवत-  
संयुता । हरिताली चतुर्थी स्यात् शर्वाणीप्रीतिदा सदा ।  
भाद्रे मासि सिते पक्षे चतुर्थ्याख्याभियोगतः । ददाति

किल्बिषं घोरं दृष्टचन्द्रो न संशयः । करचित्रानलर्षेण  
हरी सूर्ये चतुर्थिका । हरिताली समाख्याता रुद्राणी-  
प्रीतिदा सदा'—इति राजमार्तण्डः । १९१

हरिवश्वः पुं. [ हरितः अश्वाः यस्य ] सूर्यः; 'पुष्ये वृद्धि  
हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव वालचन्द्रमाः'—इति रघौ  
(३।२२) । अर्कवृक्षः । ३६

हरिद्रारागः त्रि. [ हरिद्राया राग इव रागो यस्य । अचिर-  
स्यायित्वादेवास्य तथात्वम् ] अस्थिरसौहृदः; क्षणमा-  
त्रानुरागी; हरिद्रारागकः । ३७५

हरिन्मणिः पुं. [ हरिद्वर्णो मणिः ] अश्मगर्भः; मरकतमणिः;  
'हरिन्मणिश्यामतृणाभिरामैर्गृहाणि नीघ्रैरिव यत्र  
रेजुः'—इति माघे (३।४९) । १७५

हरिप्रिया स्त्री. [ हरेः प्रिया ] लक्ष्मीः; श्रीः; कमला;  
पद्मा; पद्मवासा; क्षीरोदतनया; मा; हरिवल्लभा;  
इन्दिरा; तुलसी; द्वादशीतिथिः; पृथिवी । ३१

हरिवान् [ त् ] पुं. [ हरिः हरिद्वर्णोऽस्वीऽस्त्यस्येति ।  
मतुप, 'छन्दसीरः' इति मस्य व ] मघवा; मरुत्वान्;  
शचीपतिः; इन्द्रः; हरिविशिष्टे त्रि. । 'जुपाणे  
वर्हिर्हरिवान् इन्द्रः प्राचीनं सीदत्प्रदिशा पृथिव्याः'—  
इति वाजसनेयसंहितायाम् (२०।३९) । ५४

हरिहयः पुं. [ हरिः हयो यस्य ] मघवा; हरिवान्;  
इन्द्रः; 'द्वितीयस्तु ततस्तेषां श्रीमान् हरिहयोपमः ।  
अपराजित इत्येव स बभूव नराधिपः'—इति महाभारते  
(१।६७।५०) । सूर्यः; कार्तिकेयः; गणेशः । ५२

हरीतकी स्त्री. [ हरिम् पीतवर्णफलमिता प्राप्ता इति  
हरीता, ततः संज्ञायां कन्, गौरादित्वाद् ङीप् ] वृक्ष-  
विशेषः; अमया; अव्यया; पथ्या; वयःस्था; पूतना;  
अमृता; हैमवती; चेतकी; श्रेयसी; शिवा; सुवा;  
कायस्था; कन्या; रसायनफला; विजया; जया;  
चेतनकी; रोहिणी; प्रपथ्या; जीवप्रिया; जीवनिका;  
मिषग्वरा; जीवन्ती; प्राणदा; जीव्या; देवी; दिव्या;  
'उन्मीलिनी वृद्धिवलेन्द्रियाणां निर्मूलिनी पित्तकफा-  
निलानाम् । विस्रंसिनी मूत्रशकृन्मलानां हरीतकी स्यात्  
सह भोजनेन । 'अन्नपानकृतान् दोषान् वातपित्त-  
कफोद्भवान् । हरीतकी हरत्याशु भुक्तस्योपरि योजिता ।  
लवणेन कफं हन्ति पित्तं हन्ति सशर्करा । घृतेन वात-  
जान् रोगान् सर्वरोगान् गुडान्विता'—इति भाव-

प्रकाशः । ६१८

हर्म्यम् क्ली. [ हरति जनमनांसीति । हृ+अध्यादित्वाद् यत् मुट् च ] धनिनां वासः; धनवतां गृहम्; 'हर्म्यं चाक्लेदि भूमिर्नभसि च शयनं शीकरोष्णप्रहीणे'—इति वैद्यके । २९३

हर्षक्षः पुं. [ हरि पिङ्गलं अक्षि यस्य । षच् ] हरिः; मृगपतिः; पञ्चाननः; केसरी; मृगारिः; सिंहः; कुबेरः; पिङ्गलनेत्रे त्रि. । 'तथैवावद्धकवचं कनकोज्ज्वलकुण्डलम् । हर्षक्षं वृषभस्कन्धं यथास्य पितरं तथा'—इति महाभारते (३।३०।५) । २१४

हर्षः पुं. [ हृष् तुष्टो+घञ् ] इष्टश्रवणजन्यसुखम्; आह्लादः; मुत्; प्रीतिः; प्रमदः; प्रमोदः; आमोदः; सम्मदः; आनन्दयुः; आनन्दः; शर्म; शांतं; सुखं; मुदा; मुदिता; आनन्दिः; नन्दिः; सातं; सीख्यम्; 'मुत् प्रीतिः प्रमदामोदसम्मोदमोदसम्मदाः । प्रमोदो हर्ष इत्येव हर्षपर्याय ईरिताः । आनन्दो नन्दयुर्नन्दः सुखमानन्दयुर्मुदा । सीख्यं शर्मोपजोषः स्यादानन्दं जोषमित्यपि । मुदादिजोषपर्यन्तमेकपर्याय इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । रोमाञ्चः; 'हृष्येते हर्षयुतौ भवतः हर्षश्च रोमाञ्चप्रायः'—इति विजयरक्षितः । १२३

हलम् क्ली. [ हलति विलिखति भूमिमिति । हल्+अच् ] लाङ्गलं; गोदारणं; सीरः; कुन्तलः; 'पूर्वाग्निधाम्यफणिपित्र्यशिवान्यभेषु रिक्ताष्टमीविगतचन्द्रतिथि विहाय । द्वयङ्गालिगोसमुदये विकुजाकिवारे शस्तेन्दुयोगकरणेषु हलप्रवाहः'—इति दीपिकायाम् । 'हलं तु लाङ्गलं गोदारणं च सीरकुन्तलौ'—इति जटाधरः ।

५७५

हलमुखम् क्ली. [ हलस्य मुखं विदारणसाधनम् ] पोत्रं; हलस्य तीक्ष्णाग्रलोहावयवः । ८३२

हलायुधः पुं. [ हलमायुधं यस्य ] हलधरः; हलभृत्; बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः; रेवतीरमणः; रामः; कामपालः; 'ततस्ते तद्रचः श्रुत्वा ग्राह्यरूपं हलायुधात् । तूष्णींभूतास्ततः सर्वे साधु साध्विति चानुवन्'—इति महाभारते (१।२२।२३) । २९

हलाहलः पुं. [ हलमिव आ समन्तात् सर्वाङ्गेषु हलति कर्षतीति । हल्+आ+हल्+अच् ] विषभेदः; 'समी

कञ्चुकनिर्मोकौ क्ष्वेडस्तु गरलं विषम् । पुंसि क्लीवे च काकोलकालकूटहलाहलाः'—इत्यमरः । 'हालाहलं हलाहलं हाहलं च हलाहलम्'—इति रुद्रः । 'मधुं तिष्ठति वाचि योषितां हृदये हालाहलमेव केवलम् । अतएव निपीयतेऽधरो हृदयं मुष्टिभिरेव ताडयते'—इति कुलचरितेऽश्वघोषः । मूलजविषभेदः; 'सङ्कोचं मर्कटं शृङ्गविषं हलाहलं तथा । एवमादीनि चान्यानि मूलजानि स्थिराणि च'—इति चरकः । पुं. [ हलाहलोऽस्यास्तीति, अच् ] ब्रह्मसर्पः; अञ्जना; बुद्धविशेषः । ६४७

हविः [ स् ] क्ली. [ ह्वयतेऽनेनेति । हु+अचिश्रुचिहुस्पीति ] इति ] हवनीयद्रव्यं; सात्रायणं; घृतम्; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवत्सर्वं भूय एवाभिवर्द्धते'—इति महाभारते (१।८।५।११) । जलं; विष्णुः; महाभारते (१३।१४।९।५२) । शिवः; महाभारते (१३।१७।१०२) । ४१६

हव्यपाकः पुं. [ हव्याय पाको यस्य ] चरुः । ४१६

हव्यवाहः पुं. [ हव्यं वहतीति । हव्य+वह्+अण् ] अग्निः; अनलः; हव्यवाहनः; हव्याशः; हुताशनः; हव्याशनः; हसनीमणिः; 'एतच्छ्रुत्वा हुतवहाङ्गवगान् सर्वलोकभृत् । हव्यवाहमिदं वाक्यमुवाच प्रहसन्निव'—इति महाभारते (१।२२।४।५८) । ६२

हसन्तिका स्त्री. [ हसतीति, हस्+शतृ+ङीप्, हसन्ती+कन्+टाप् ] हसनी; हसन्ती; अङ्गारधानी; अङ्गारधानिका; अङ्गारशकटी । ३१४

हसन्ती स्त्री. [ हसतीति । हस्+शतृ+ङीप् ] अङ्गारधानिका; हसन्तिका; मल्लिकाविशेषः; शाकिनीभेदः; हास्यं कुर्वती; 'अस्तीहोज्जयिनी नाम नगरी भूषणं भुवः । हसन्तीव सुधाधौतेः प्रासादैरमरावतीम्'—इति कथासरित्सागरे (१।१।३१) । ३१४

हसितः त्रि. [ हस्+क्त ] विकसितः; कृतहासः; क्ली. हास्यम्; 'हसितं शुभदमकम्पं सनिमीलितलोचनं च पापस्य । दुष्टस्य हसितमसकृत् सोन्मादस्यासकृत् प्रान्ते'—इति बृहत्संहितायाम् (६।८।७४) । कामदेवधनुः; हास्यकरणम्; 'अथ कर्मगति चित्रां दृष्ट्वास्य हसितं मया'—इति कथासरित्सागरे (५।९।१५९) । परिहासः; 'कीर्तितानि हसितेऽपि तानि यं व्रीडयन्ति चरितानि



मानिनम्—इति किराते (१३।४७) । १८७

हस्तः पुं. [ हसति विकसतीति । हस् + 'हसिमुग्निष्वामीति' तन् ] शरीरावयवविशेषः; पाणिः; समः; शयः; पञ्चशाखः; करः; भुजः; कुलिः; भुजादलः; 'हस्तावध्यात्ममित्याहुरध्यात्मविदुषो जनाः । अधिभूतं च कर्माणि शुक्रस्तत्राधिदैवतम्—इति महाभारते । विस्तृतकरप्रकोष्ठः; स च चतुर्विंशत्यङ्गुलपरिमितः; 'यवानां तण्डुलैरेकमङ्गुलं चाष्टभिर्भवेत् । अदीर्घयोजितैर्हस्तैश्चतुर्विंशतिरङ्गुलैः—इति तिथ्यादितत्त्वे । 'यवोदरैरङ्गुलमष्टसंख्यैः, हस्तोऽङ्गुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः । हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः, क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम्—इति लीलावती । 'हस्तदत्ताश्च ये स्नेहा लवणं व्यञ्जनानि च । दातारं नोपतिष्ठन्ते भोक्ता भुङ्क्ते तु किल्विषम् । तस्मादन्तरितं कृत्वा पर्णनाथ तृणेन वा । प्रदद्यान्न तु हस्तेन नायसेन कदाचन'—इति वशिष्ठः । हस्तिशुण्डः; 'अग्रहस्तं विधुन्वस्तु हस्ती हस्तमिवात्मनः—इति रामायणे (२।२३।४) । हस्तनक्षत्रम्; 'प्रयाति श्रेष्ठतां सत्यं हस्ते श्राद्धप्रदो नरः—इति मार्कण्डेये (३।३।११) । (५३१) केशात्परे तत्समूहवाचकः; बहुत्वम् । ५११

हस्तविम्बम् क्ली. [ हस्तस्य विम्बं यत्र ] स्थासकः; स तु चन्दनादिना देहविलेपनविशेषः; करप्रतिविम्बः । ५४०

हस्तसूत्रम् क्ली. [ हस्तस्य सूत्रम् ] कङ्कणं; प्रतिसरः; वलयम्; 'कटको वलयं पारिहार्यावापी तु कङ्कणम् । हस्तसूत्रं प्रतिसर ऊर्मिका त्वङ्गुलीयकम्—इति हेमचन्द्रः । विवाहादिकालिकमङ्गुलार्थनिवद्धकरसूत्रम्; 'बबन्ध चास्त्राकुलदृष्टिरस्याः स्थानान्तरे कल्पितसन्निवेशम् । घात्र्यङ्गुलीभिः प्रतिसार्यमाणमूर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम्—इति कुमारे (७।२५) । ५५८

हस्तिनखः पुं. [ हस्तिनो नख इव ] पूड्रारि यत् कूटं तत्; परिकूटम्; 'शनैरनीयन्त रयात् पतन्तो रथाः क्षितिं हस्तिनखादखेदेः । सयत्नसूतायतरश्मिभुग्नग्रीवाग्रसंसक्तयुगैस्तुरङ्गैः—इति माघे (३।६८) । २८८

हस्तिनी स्त्री. [ हस्तिनः स्त्री । डीप् ] गजपत्नी; करेणुः; करेणुः; रेणुका; करेणुका; धेनुका; वासिता; वासा; करिणी; विशा; कटम्भरा; पुष्करिणी; कचा; बसा; गणिका; गजयोषित्; इमी; पद्मिनी; मातङ्गी;

चतुर्विधस्त्रीमध्ये स्त्रीविशेषः; 'स्थूलाधरा स्थूलनितम्बभागा स्थूलाङ्गुली स्थूलकुचां सुशीला । कामोत्सुका यादरतिप्रिया च नितम्बखर्वा खलु हस्तिनी स्यात्—इति रतिमञ्जरी । हृद्विलासिनी । २५५

हस्तिपकः पुं. [ हस्तिप एव । कन् ] गजारोहः; आधोरणः; हस्त्यारोहः; निषादी; 'जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने, संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः । गम्भीरवेदिनि पुरः कवलं करोन्द्रे, मन्दोऽपि नाम न महानवगृह्यसाध्यः—इति माघे (५।४९) । २२५

हस्त्यारोहः पुं. [ हस्तिनमारोहतीति । हस्तिन् + आ + र्ह् + क ] हस्तिपकः । २२५

हाटकम् क्ली. [ हटति शोभते इति । हट् दीप्ती + ण्वल् ] स्वर्णं; सुवर्णम्; 'नवहाटकेष्टकचितं ददर्श सः क्षितिपस्य पस्त्यमथ तत्र संसदि—इति माघे (१३।६३) । 'स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम् । तपनीयं च गाङ्गेयं कलधीतं च काञ्चनम् । चामीकरं शातकुम्भं तथा कार्तस्वरं च तत् । जाम्बूनदं जातरूपं महारजतमित्यपि—इति भावप्रकाशः । धुस्तूरः; स्वर्णनिर्मिते त्रि. । १७३

हायनः पुं.—क्ली. [ जहाति त्यजति, जिहीते प्राप्नोति वा भावानिति । हाक् त्यागे, हाङ् गतौ वा + 'हश्च व्रीहिकालयोः' इति ष्युट् ] वत्सरः; अन्दः; शरत्; वर्षः; संवत्सरः; समा; 'अहं च तद्व्रह्मकुले ऊषिवांस्तद्वेक्षया । दिग्देशकालाव्युत्पन्नो बालकः पञ्चहायनः—इति भागवते (१।६।८) । पुं. व्रीहिभेदः; अग्निशिखा । ११६

हारः पुं. [ ह्रियते मनो येन । ह् + घञ् ] मुक्तामाला; मुक्तावली; हारा; यष्टिः; यष्टी; लता; 'विमुच्य सा हारमहार्यनिश्चया विलोलयष्टि प्रविलुप्तचन्दनम् । बबन्ध बालारुणवध्रु वल्कलं पयोधरोत्सेधविशीर्णसंहति—इति कुमारे (५।८) । [ ह्रियन्ते प्राणा यत्रेति ] युद्धं; [ ह् + भावे घञ् ] हरणम्; 'हंस्यन्मार्गान् हिंसया वर्तमानान्, जन्मैतत्तं भारहाराय भूमेः—इति भागवते (१०।६३।१७) । ५६२

हारहारा स्त्री.—कपिलद्राक्षा । १९३

हारहृता स्त्री.—द्राक्षा; मृद्धीका; गोस्तनी; मृद्धी; स्वादुफला; मधुरसा; 'द्राक्षा स्वादुफला प्रोवता तथा मधुरसापि च । मृद्धीका हारहृता च गोस्तनी चापि

कीर्तिता'—इति भावप्रकाशः । पुं. हारहूरः मद्यम् ।

१९३

हारिद्रः त्रि. [ हरिद्रया रक्तः । हरिद्रा+ 'हरिद्रामहा-  
रजनाभ्यामञ्ज्वक्तव्यः' इत्युक्त्या अञ् ] हरिद्रारञ्जितः;  
हरिद्रावर्णः; पीतः; 'दूर्वाकाण्डश्यामे हारिद्रे वापि  
निदिशेन्मरकम्'—इति बृहत्संहितायाम् (५।५८) ।  
विपभेदः; 'हरिद्रातुल्यमूलो यो हारिद्रः स उदाहृतः'—  
इति भावप्रकाशः । कदम्बवृक्षः । ७३५

हारी [ न् ] त्रि. [ हारोऽस्त्यस्येति । इनि ] मनोहरः;  
रञ्जितः; सुन्दरः; 'तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं  
हृतः । एष राजेव दुष्यन्तः सारङ्गेणातिरंहसा'—इति  
शाकुन्तले प्रस्तावनायाम् । हारविशिष्टः; हारयुक्तः;  
'केपूरवान् कनककुण्डलवान् क्रिरीटी हारी हिरण्मय-  
वपुर्धृतशङ्खचक्रः'—इति नारायणध्याने । [ हरतीति,  
ह+णिनि ] हरणकर्ता; 'ह्रियते वध्यमानोऽपि नरो  
हारिभिरिन्द्रियैः । विमूढसंज्ञो दुष्टाश्वैरुद्भ्रान्तैरिव  
सारथिः'—इति महाभारते (३।२।६५) । ६८९

हारीतः पुं. [ हारि मनोहरम् इतं गमनं यस्य ] पक्षिभेदः;  
'हारीतो रक्तपित्तः स्याद्धरितोऽपि स कथ्यते । 'हारीतो  
रूक्ष उष्णश्च रक्तपित्तकफापहः । स्वेदस्वरकरः प्रोक्त  
ईषद्वातकरश्च सः'—इति भावप्रकाशः । आयुर्वेदकर्ता;  
'अग्निवेशश्च भेलश्च जतूकर्णः पराशरः । हारीतः  
क्षारपाणिश्च जगृहस्तन्मुनेर्वचः'—इति चरकः । मुनि-  
भेदः; स च धर्मशास्त्रकर्ता; 'मन्त्रत्रिविष्णुहारीत-  
याज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः । यमापस्तम्बसंवर्ताः काल्यायन-  
बृहस्पतीः । पराशरज्यासशङ्खल्लिखिता दक्षगीतमौ ।  
शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः'—इति याज्ञ-  
वल्क्यः । अयं च पौराणिक आसीत्; 'त्रय्यारणिः  
कश्यपश्च सावर्णिकरक्तव्रणः । वैशम्पायनहारीतौ षड्  
वै पौराणिका इमे'—इति भागवते (१२।७।५) ।  
कैतवम् । २५४

हालहलम् क्ली. — विपभेदः । ६४७

हालहालम् क्ली. — विपभेदः । ६४७

हाला स्त्री. [ हल्यते कृष्यते इव चित्तमनयेति । हल्+  
घञ्+टाप् ] मद्यं; मध्वासवः; शीघुः; सुरा; मदिरा;  
'मद्यं तु शीघु मरेयमिरा च मदिरा सुरा । कादम्बरी  
वाशुणी च हालापि बलवल्लभा'—इति भावप्रकाशः ।

तालादिनिर्वासमद्यम्; 'योपिदित्यभिललाप न हालां  
दुस्त्यजः खलु सुखादपि मानः'—इति मावे (१०।२१) ।

३२९

हालाहलम् क्ली. — पुं. [ हालामपि हलतीति । हाला+  
हल्+अच् ] विपभेदः; हालहलं; हाहलं; हलाहलं;  
हाहालम्; 'हालाहलं हालहलं हाहलं च हलाहलम्'—  
इति रुद्रः । 'गोस्तनाभफलो गुच्छस्तालपत्रच्छदस्तथा ।  
तेजसा यस्य दह्यन्ते समीपस्था द्रुमादयः । असीं हाला-  
हलो ज्ञेयः किष्किन्धायां हिमालये । दक्षिणाध्वतद देशे  
कोङ्कणेऽपि च जायते'—इति भावप्रकाशः । मद्यं;  
हालाहली; 'कालकून्दवत्साख्यशृङ्गिहालहालादिकम्'—  
इति वाग्भटः । ६४७

हालाहलः पुं. [ हालाहलमस्त्यस्येति । अच् ] अञ्जनिफा;

कीटविशेषः; अञ्जलिका; कुटिलकीटकः । २५७

हायः पुं. [ ह्वे+घञ् ] स्त्रीणां शृङ्गारभावजाः क्रियाः;  
स्त्रीशृङ्गारचेष्टा; 'स्त्रीणां विलासविष्योफविभ्रमा  
ललितं तथा । हेला लीलेत्यमी हावाः क्रियाः शृङ्गार-  
भावजाः'—इत्यमरः 'युवानोऽनेन ह्यन्ते नारीभिर्मप-  
नानले । अतो निरुच्यते हावस्ते विलासादयो मताः ।  
प्रीवारेवकसयुक्तो भूनेत्रादिविकाशकृत् । भावांदीपत्-  
प्रकाशो यः स हाव इति कथ्यते'—इत्युज्ज्वलनील-  
मणिः । ८९

हासः पुं. [ हस्+घञ् ] हास्यं; हसः; हसनं; घर्षरः;  
हासिका; 'संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसोम्यां निनाय  
ताम् । निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः'—इति  
रघो (१२।३६) । विकासः; 'विम्बागतस्तीरवनैः  
समृद्धिं निजां विलोक्यापहृतां पयोभिः । कूलानि  
सामर्षतयेव तेनुः सरोजलक्ष्मीं स्थलपद्महासैः'—इति  
भट्टिः (२।३) । ९१

हास्यम् क्ली. [ हस्+ण्यत् ] रसविशेषः; स च कौतुको-  
द्भवः; हासः; हसः; हसनं; घर्षरः; हासिका;  
'विह्वताकारवाग्वेशचेष्टादेः कुतुकाद्भवेत् । हास्यो हास-  
स्थायिभावः श्वेतः प्रमथद्वैतः । विह्वताकारवाक्चेष्टं  
यदालोक्य हसेज्जनः । तदत्रालम्बनं प्राहुः तच्चेष्टोद्दीपनं  
मतम् । अनुभावोऽक्षिसङ्कोचवदनस्मेरतादिकः । निद्रा-  
लस्यावहित्याद्या अत्र स्युर्ग्रन्थिचारिणः । ज्येष्ठानां  
स्मितहसिते मध्यानां विहसितामहसिते च । नीचानामप-

हसितं तयातिहसितं च षड्भेदाः । ईषद्विकासि नयनं  
स्मितं स्यात् स्पन्दिताधरम् । किञ्चिल्लक्ष्यद्विजं तत्र  
हसितं कथितं बुधैः । मधुरस्वरं विहसितं सांसधिर-  
कम्पमवहसितम् । अपहसितं साक्षात् विक्षिप्ताङ्गं  
भवत्यतिहसितम्—इति साहित्यदर्पणे । ९२

हि अव्य.— विशेषः; हेतुः; 'असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा  
यदार्यमस्यामभिलापि मे मनः । सतां हि सन्देहपदेषु व-  
स्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के ।  
अवधारणं; पादपूरणं; प्रश्नः; 'नाभिवाद्यसे माद्य न च  
मामभिभाषसे । किञ्च शोषे तु भूमौ त्वं वत्स ! कि  
कुपितो ह्यसि ? ।' हेत्वपदेशः; सम्भ्रमः; असूया;  
शोकः । ८८१

हिंसा स्त्री. [ हिंसनमिति । हिस्+अ+टाप् ] घातः;  
मारणं; चौर्यादिकर्म (८१०); 'हिंसा चौर्यादिकर्म च'—  
इत्यमरः । 'हिंसा चैव न कर्तव्या वैधहिंसा तु राजसी ।  
ब्राह्मणैः सा न कर्तव्या यतस्ते सात्त्विका मताः ।' ४७५  
हिंस्रः त्रि. [ हिनस्तीति । हिस् + 'नमिकम्पीति' र ]  
हिंसाशीलः; शरारुः; घातुकः; हिंसकः; हन्ता;  
शार्वरः; 'कृपा कार्या सतां शश्वर्वाहिंसेषु च जन्तुषु ।  
हिंसायां न हि दोषश्च हिंस्राणां च ब्रजेश्वर'—इति  
ब्रह्मवैवर्ते । पुं. घोरः; भीमसेनः; हरः । ३७२

हिंस्रपशुः पुं. [ हिंस्रः पशुः ] हिंस्रकजन्तुः; व्याडः;  
हिंस्रकः; शिविः; श्वापदः; व्यालः । ८३२

हिङ्गु क्ली.—पुं. [ हिनोति प्रहिणोति गन्वम् । हि गति-  
वृद्धयोः+मृगय्वादित्वात् साधु ] मूलविशेषनिर्यासः; स  
तु पारस्यखोरासानमूलतानादिदेशे भवति । सहस्र-  
वेधि; जतुकं; बाह्लीकं; रामठं; बाह्लिकं; जन्तुघ्नं;  
पिण्याकं; बाह्ली; सहस्रवेधी; गृहिणी; मधुरा;  
सूपधूपनं; जतु; केशरम्; उग्रगन्धं; भूतारिः; जन्तु-  
नाशनं; सूपाङ्गं; रक्षोघ्नम्; उग्रवीर्यम्; अगूढगन्धं;  
जरणं; भेदनं; दीप्तम्; 'रामठं हिङ्गुरुच्यते'—इति  
गारुडे २०८ अध्याये । 'हिङ्गुपूर्णं पाचनं रुच्यं तीक्ष्णं  
वातवलासहृत् । रसे पाके च कटुकं स्निग्धं च वल्लिदीप-  
नम् । शूलगुल्मोदरानाहृकमिघ्नं पित्तवर्द्धनम्'—इति  
भावप्रकाशः । 'हिङ्गु तीक्ष्णं कटुरसं शूलाजीर्णविघ्न-  
न्तु । लवूष्णं पाचनं स्निग्धं दीपनं कफवातजित्'—  
इति राजवल्लभः । वंशपत्री; काकादनी; 'हिङ्गु

काकादनी मता'—इति गारुडे २०८ अध्याये । ६१७

हिङ्गुलः पुं.—क्ली. [ हिङ्गुं तद्वर्णं लातीति । हिङ्गु+ला+  
क ] रागद्रव्यविशेषः; हिङ्गुलुः; हिङ्गुलुं; रक्तं; मकं-  
शीर्षं; दरदः; रसः; हंसपादः; कुरुविन्दः; हिङ्गुलिः;  
रक्तपारदः; त्रवरं; सुरङ्गं; सुपरं; रञ्जनं; दरदं;  
म्लेच्छं; चित्राङ्गं; चूर्णपारदं; चर्मारकं; मणिरागं;  
रसोद्भवं; रञ्जकं; रसगर्भम्; 'हिङ्गुलं दरदं म्लेच्छं  
वित्रासं चूर्णपारदम् । दरदस्त्रिविवः प्रीवतश्चर्मारः  
शुकतुण्डकः । हंसपादस्तृतीयः स्याद् गुणवानुत्तरोत्तरः ।  
चर्मारः शुक्लवर्णः स्यात् सपीतः शुकतुण्डकः । जवा-  
कुसुमसङ्काशो हंसपादो महोत्तमः । तिवतं कपायं कटु  
हिङ्गुलं स्यान्नेत्रामयघ्नं कफपित्तहारि । हृत्लासकुष्ठ-  
ज्वरकामलांश्च प्लीहामवाती च गरं निहन्ति । ऊर्ध्व-  
पातनयुक्तया तु डमरुयन्त्रपाचितम् । हिङ्गुलं तस्य  
सूतं तु शुद्धमेव न शोषयेत्'—इति भावप्रकाशः । ६२१  
हिङ्गुलिः पुं. [ हिङ्गु इव वर्णं लातीति । ला+कि ]  
हिङ्गुलः । ६२१

हिङ्गुलुः पुं.—क्ली.—हिङ्गुलुः; 'हिङ्गुले हिङ्गुलुयति'  
दरदः शुकतुण्डकः । रसगन्धकसम्भूतो हिङ्गुलो दैत्य-  
रक्तकः'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः । ६२१

हिङ्गीरः पुं.—हस्तिपादवन्धः; निगडः; शृङ्खलः; अन्दुकः;  
'विन्दुजालं पुनः पद्यं शृङ्खलो निगडोऽन्दुकः । हिङ्गीरश्च  
पादपाशो वारिस्तु गेजवन्धभूः'—इति हेमचन्द्रः । २२३

हिण्डरः पुं.—हिण्डीरः; फेनः । ६६८

हिण्डीरः पुं. [ हिण्डते इतस्ततो गच्छतीति । हिण्ड्+  
ईरन् ] समुद्रफेनः; 'एतद्विभाति चरमाचलचूडचुम्बि  
हिण्डीरपिण्डरश्च शीतमरीचिविम्बम् । उज्ज्वालितस्य  
रजनीं मदनानलस्य घूमं दधत्प्रकटलाञ्छनकैतवेन'  
—इति साहित्यदर्पणे (१०।६८३) । वार्ताकुः;  
पुरुषः; रुचकं; क्ली. दाडिमम् । ६६८

हितम् त्रि. [ हि गतिवृद्धयोः, ङुधाब् धारणपोषणयोः  
वा+क्त ] पथ्यं; गतं; घृतम्; इष्टसाधनं; मङ्गलम्;  
'गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतो न यत् । सर्व-  
सत्त्वहितार्थाय तत् पशोरिव चेष्टितम् । अहितहित-  
विचारशून्यवृद्धेः श्रुतिसमयैर्वहुमिर्विवाजितस्य । उदर-  
भरणमाग्रतुष्टवृद्धेः पुरुषपशोः पशोश्च को विशेषः'  
—इति गारुडे ११५ अध्यायः । मित्रम्; 'हितसमरिपु-

संज्ञा ये निसर्गो निरुक्ता; अधिहितहितमध्यास्तेऽपि तत्कालमित्रैः—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ४०६

**हिमम्** क्ली. [ हन्+मक्, हन्तेहि च ] आकाशवाष्पः; अवशपायः; नीहारः; तुषारः; तुहिनः; प्रालेयः; मिहिका; इन्द्राग्निधूमः; खवाष्पः; रजनीजलम्; 'अथवा मृदु वस्तु हिंसितुं मृदुनैवारभते प्रजान्तकः । हिमसेकविपत्तिरथ मे तलिनी पूर्वेनिदर्शनं मता'—इति रघो (८।४५) । शीतः; कर्पूरः; 'पुंसि क्लीवे च कर्पूरः सिताभ्रो हिमवालुकः । घनसारश्चन्द्रसंज्ञः हिमनामापि स स्मृतः—इति भावप्रकाशः । त्रि. शीतगुणविशिष्टः; शीतलवस्तु; सुषीमः; शिशिरः; जडः; तुषारः; शीतलः; शीतः; 'अपराह्णे हिमाभिरङ्घ्रिः परिषिक्तगात्रः शालीनां पष्टिकानां च पयसा शर्करामधुरैरौदनमश्नीयात्—इति सुश्रुतः । पुं. चन्दनवृक्षः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; कर्पूरः; हेमन्तर्तुः; 'हिमशिशिरवसन्तप्रीमणवर्षाशिरस्तु स्तानतपनवनाम्भो-हृष्यगोदीरपानैः । सुखमनुभव राजस्तद्विषो यान्तु नाशं दिवसकमलज्जाशर्वरीरेणुपङ्कजाः—इति ऋतुसंहारः । हिमालयपर्वतः । ६५०

**हिमसङ्घातः** स्त्री. [ हिमानां सङ्घातः संहतिः ] हिमसमूहः ६५०

**हिमसंहतिः** स्त्री. [ हिमानां संहतिः ] हिमसमूहः; हिमानी; महद्धिमम्; 'वरफ' इति भाषा । ६५०

**हिमानी** स्त्री. [ महद्धिममिति । 'हिमारण्ययोर्महत्त्वे' इत्युक्त्या ङीष् आनुक् च ] हिमसंहतिः; महद्धिमम्; 'हिमान्यां ब्रीह्यवाघाय पतन्त्यां प्रतिवत्सरम् । शीते दार्वाभिमारादो षण्मासान् पार्थिवोऽवसत्—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१९०) । यावनालशर्करा । ६५०

**हिरण्यमयः** त्रि. [ हिरण्य+मयद्, यलोपश्च ] सुवर्णमयः; स्वर्णमयः; 'हिरण्ययी शाललतेव जङ्गमा च्युता दिवः स्यास्नुरिवाचिरप्रभा—इति भट्टिः (२।४७) । पुं. ब्रह्मा; क्ली. भारतवर्षादिनववर्षान्तर्गतवर्षविशेषः । ३३१

**हिरण्यम्** क्ली. [ ह्यन्ति दीप्यते इति । ह्यन् गतिकान्त्योः+ 'ह्यन्ते' कान्यन् हिर च' इति कान्यन् हिरादेशश्च घातोः ] घनः; वित्तः; (१७४) सुवर्णः; हेमः; चन्द्रः; स्वमम्; अयः; पेशाः; कुशनः; लोहं; कनकं; काञ्चनं; भर्म;

अमृतं; मरुतुः; दमः; जातरूपम् । पुस्तूरः; रेतः; द्रव्यं; वराटः; अक्षयम्; अकुप्यं; मानभेदः; रजतं; पुं. गुग्गुलुविशेषः; 'महिषाक्षी महानीलः कुमुदः पप इत्यपि । हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्च जातयः—इति भावप्रकाशः । ८०

**हिरण्यगर्भः** पुं. [ हिरण्यं हेममयाण्डं गर्भं उत्पत्तिस्त्यान-मस्य ] ब्रह्मा; षोडशमहादानान्तर्गतद्वितीयमहादानं; विष्णुः; सूक्ष्मशरीरसमष्ट्युपहितचैतन्यं; प्राणात्मा; सूत्रात्मा । ६

**हिरण्यरेताः** [ स् ] पुं. [ हिरण्यं रेतो यस्य ] अग्निः; वह्निः; 'विभावसुश्चित्रभानुर्महात्मा हिरण्यरेता हुत-भुक् कृष्णवर्त्मा—इति महाभारते (१।५५।१०) । चित्रकवृक्षः; सूर्यः; शिवः । ६४

**हिरण्यवाहः** पुं. [ हिरण्यं वहतीति । हिरण्य+वह्+अण् ] शोणनदः; शिवः; शङ्करः; शम्भुः; महादेवः; उया-पतिः । ६७२

**हिरण्या स्त्री.** — सप्ताचिषो जिह्वाभेदः । ६८

**हीनः** त्रि. [ ओहाक् त्यागे+क्त, 'ओदितश्च' इति नत्वम्, 'धुमास्यागापाजहातीति' ईत्वम् ] गह्वर्यः; अधमः; कदर्यः; कीनाशः; किम्पचानः; मितम्पचः; कृपणः; क्षुल्लकः; क्लीवः; क्षुद्रः; 'आसनावसथी शय्यामनुब्रज्यामुपासनम् । उत्तमेषूत्तमं कुर्याद् हीने हीनं समे समम्—इति मनुः (३।१०७) । प्रति-वादिविशेषः; 'अन्यवादी क्रियाद्वेषी नोपस्थापी निरु-त्तरः । आहूतप्रपलायी च हीनः पञ्चविधः स्मृतः—इति व्यवहारतत्त्वम् । ऊनः; 'तथा हीनं विधातर्मा कथं पश्यन्न द्वयसे । सिक्तं स्वयमिव स्नेहाद् वन्ध्यमा-श्रमपादपम्—इति रघो (१।७०) । ३४७

**हीनवादी** [ न ] त्रि. [ हीनं वदतीति । हीन+वद्+णिनि ] वाक्यवर्जितः; अधरः; विरुद्धार्थवादी; 'पूर्ववाद् परि-त्यज्य योजन्यमालम्बते पुनः । वादसंक्रमणाज्ज्ञेयो हीन-वादी स वै नरः—इति नारदः । 'हीनवादी वण्ड्यो भवति न प्रकृतादयोद्धीयते—इति मिताक्षरा । ३६४

**हुडः** पुं. [ होडतीति । हुड्+क ] मेघः; अविः; ऊर्णापिः; उरभ्रः; उरणः; वृष्णिः; मेण्डः; लगुडः; सैन्यालय-स्थानं; रथोपरि विष्णुमूत्रत्यागशृङ्गम् । २७९

**हुतम्** त्रि. [ हु+क्त ] अनौ प्रक्षिप्तं घृतादि; वषट्-

कृतम्; 'अहमग्निरहं हुतम्'—इति गीतायाम् (१।१६) । तपितम्; 'प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशनमन्तरं भर्तुर-रुचतीञ्च'—इति रघी (२।७१) । होमे वली. । ४१७

हुतवहः पुं. [ वहतीति, वद्+अच्, हुतस्य वहः ] अग्निः; वल्लिः; हुताशः; हुतभुक्; अनलः; पावकः; 'एतच्छ्रुत्वा हुतवहाद् भगवान् सर्वलोककृत् । ह्य्यवाहमिदं वाक्यमुवाच प्रहसन्निव'—इति महाभारते (१।२२४।५८) । ६२

हुताशनः पुं. [ हुतम् आहुतिद्रव्यम् अशनमस्य ] अग्निः; हुतवहः; 'लक्षहोमे तु वल्लिः स्यात् क्रोडिहोमे हुताशनः । पूर्णाहुत्यां मृडो नाम शान्तिके वरदः सदा'—इति तिथ्या-दितत्त्वम् । 'आरोग्यं भास्करादिच्छेद्वनमिच्छेद्दुता-शनात् । ज्ञानं तु शङ्करादिच्छेद्वनमिच्छेज्जनार्दनात्'—इति मत्स्यपुराणम् । शिवः; वटिकोषधविशेषः; 'एक-द्विकं द्वादशभागयुक्तं योज्यं विषं टङ्कणमूषणं च । हुता-शनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धि कफजिन्नराणाम्'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहे । ६४

हृच्छयः पुं. [ हृदि शोते इति । हृद्+शी+अधिकरणे शोतेः इति अच् ] कामदेवः; मदनः; मन्मथः; मारः; प्रधुम्नः; 'तत्प्रसीद न मामातां विसर्जयितुमर्हसि । हृच्छयेन च सन्तप्तां भक्तां च भज मानद !'—इति महाभारते (३।४६।४२) । हृदयधायिनि त्रि. । 'जगत्-पतिरिन्दैश्वर्यः सर्वगः सर्वभावनः । हृच्छयः सर्वभूतानां ज्रेष्ठो रुद्रापि प्रभुः'—इति महाभारते (१३।८५। १७) । पुं. कामः; 'सकृद्यर्शितं रूपमेतत्कामाय तेऽ-नघ !, मत्कामः शनकैः साधुः सर्वान् मुञ्चति हृच्छ-यान्'—इत भागवते (१।६।७) । 'हृच्छयान् कामान्' इति तट्टीकायां श्रीवरः । ३२

हृदयम् क्ली. [ ह्रियते विषयैरिति । हृ+वृहोः पुन्युको च' इति कयन् दुक् च ] हृत्; हृदयं; चेतः; चित्तं; मनः; स्वान्तः; मानसम्; 'चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हन्मानतं मनः'—इत्यमरः । 'उरस्यपि च बुक्कायां हृदयं मानसेऽपि च'—इति त्रिकाण्डशेषः । नुक्तं; वल्लः । ५३४

हृदयङ्गमम् क्ली. [ हृदयं गच्छतीति । हृदय+गम्+खच् मुम् च ] सङ्गतं; युक्तियुक्तवाक्यं; हृद्यार्यं; त्रि. मनोहरः; 'इति तेभ्यः स्तुतीः श्रुत्वा यत्रायां हृदयङ्गमाः ।

प्रसादाभिमुखो वेधाः प्रत्युवाच दिवोकसः'—इति कुमारे (२।१६) । 'हृदयङ्गमाः मनोहराः' इति तट्टी-कायां मल्लिनाथः । १४६

हृदयस्थानम् क्ली. [ हृदयस्य स्थानम् ] वक्षःस्थलं; क्रीडम्; उरः; वक्षः; वत्सं; भुजान्तरं; भुजमध्यं; वत्सः । ५२७

हृद्यः त्रि. [ हृदयस्य प्रिय इति । हृदय+हृदयस्य हृलेख-यदण्लसेषु' इति यत् हृदादेशश्च ] मनोहरः; मनोज्ञः; रुचिरः; पुं. वशकृद्वेदमन्त्रः; क्ली. गुडवक्त्रं; त्रि. हृज्जः; हृद्वितः; हृत्प्रियः; 'भक्ष्यं भोज्यं च विविधं मूलानि च फलानि च । हृद्यानि चैव मांसानि पानानि सुरभीणि च'—इति मनुः (३।२२७) । ६८९

हृद्यार्यम् क्ली.—हृदयङ्गमं; युक्तियुक्तवाक्यम् । १४६  
हृल्लेखः पुं. [ हृदयं लिखतीति, अण् । 'हृदयस्य हृल्लेखेति' हृदादेशः ] औत्सुक्यं; ज्ञानं; तर्कः । ७४२

हृल्लेखा स्त्री. [ हृल्लेख+अजाधित्वात् टाप् ] औत्सुक्यम्; आयल्लकम्; उत्कण्ठा; उत्कलिका; अरतिः; रणरण-कम् । ७४२

हृषीकम् क्ली. [ हृष्यत्यनेनेति । हृप्+अनिहृषिभ्यां किञ्च' इति ईकन् स च कित् ] इन्द्रियं; स्रोतः; करणम्; 'न भारती मेऽङ्ग मृषोपलक्ष्यते न वै क्वचिन्मे मनसो मृषा गतिः । न मे हृषीकाणि पतन्त्यसत्पथे यन्मे हृदौत्कण्ठघ-वता धृतो हरिः'—इति भागवते (२।६।३२) । ५३५

हृषीकेशः पुं. [ हृषीकाणाम् ईशः ] विष्णुः; कृष्णः; अच्युतः; 'हृषीकाणि नियम्याहं यतः प्रत्यक्षतां गतः । हृषीकेश इति स्नातो नाम्ना तत्रैव संस्थितः'—इति वाराहे । २३

हेतिः स्त्री. [ हिनोति इति, हि+क्तिन् निपातनं च ] अचिः; सूर्यकिरणः; [ ह्यतेजयेति । हन्+अति-यूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च' इति कित्न् निपातनं च ] अश्वम् (४६२); 'दैत्यस्त्रीगण्डलेखानां मदराग-विलोपिभिः । हेतिभिश्चेतनावद्भ्रह्मीरितजयस्वनम्'—इति रघी (१०।१२) । अग्निशिखां; शिखा; तेजो-मात्रं; साधनम्; 'सध्रयद्भ्र नियम्य यतयो यमकर्तहेति जह्युः स्वराडिव निपानसनिवमिन्द्रः'—इति भागवते (२।७। ४७) । 'कर्ता भेदः तन्निरासोऽकर्तः तत्र हेति साधनं जह्युः' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । पुं. अशुरविशेषः;

'पुलोमा वृषपर्वा च प्रहेतिर्हेतिरुत्कलः । दैतेया दानवा यक्षा रक्षांसि च सहस्रशः'—भागवते (६।१०।२०) । ६५  
हेतुः पुं. [ हिनोति व्याप्नोति कार्यमिति । हि+ 'कमिमनि-  
जनिगाभायाहिम्यश्च' इति तु ] कारणम् ; निमित्तम् ;  
'प्रत्यहं देशदृष्टैश्च शास्त्रदृष्टैश्च हेतुभिः । अष्टादशसु  
मार्गेषु निबद्धानि, थक् पृथक्'—इति मनुः (८।३) ।  
तौजसघातुविशेषः ; 'यसदं रङ्गसदृशं रीति हेतुश्च तन्म-  
तम्'—इति भावप्रकाशः । ८४८, ८७८, ८८१

हेमम् क्ली. [ हि+मन् ] सुवर्णं ; स्वर्णम् । १७३

हेमः पुं. [ हि+मन् ] कृष्णवर्णश्चिः ; माषकपरिमाणं ;  
दुःखः ; ययातिवंशजरुषद्रथपुत्रः ; 'तितिक्षो रुषद्रथ  
पुत्रोऽभूत् ततो हेमः हेमात् सुतपाः'—इति विष्णु-  
पुराणे (४।१८।१) । ४३७

हेम [ न् ] क्ली. [ हिनोति वर्द्धते स्फुटति वेति । हि+  
मनिन् ] स्वर्णम् ; 'हेमनः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धि  
स्यामिकापि वा'—इति रघी (१।१०) । धुस्तूरं ;  
केशरं ; हिमः । १७३

हेमन्तः पुं.—क्ली. [ हन्ति लोकान् शेत्येनेति । हन्+ 'हन्ते-  
मुट् हि च' इति झच्, हिरादेशः मुडागमो गुणश्च ]  
ऋतुविशेषः ; स तु आग्रहायणपौषमासात्मकः ; हेमनः ;  
उष्मसहः ; शरदन्तः ; हिमागमः ; 'हेमन्ते शिशिरे  
चैव पुण्यानि यः प्रयच्छति । सर्वलोकप्रतापार्थं स पुण्या  
गतिमाप्नुयात्'—इति वल्हियुराणे । 'हेमन्ते दिनलघुता  
शीतयवस्तम्बमरुचकहिमानि'—इति कविकल्पलता । १११

हेमपर्वतः पुं. [ हेममयः पर्वतः ] सुमेरुगिरिः ; शक्र-  
क्रीडाचलः ; मेरुः ; सुमेरुः ; रत्नसानुः ; हेमाद्रिः ;  
त्रिदेशालयः ; हेमाङ्गः ; हेमगिरिः । १३६

हेमपुष्पः पुं. [ हेमवर्णं पुष्पं यस्य ] नागकेशरः ; नागकेशरः ;  
हेमपुष्पकः ; चम्पकवृक्षाः ; 'चाम्पेयश्चम्पकः प्रोक्तो  
हेमपुष्पश्च स स्मृतः'—इति शब्दचन्द्रिका । 'अशोक-  
वृक्षाः ; 'अशोको हेमपुष्पश्च वेङ्गुलस्ताम्रपल्लवः ।  
'कङ्कलिः पिण्डपुष्पश्च गन्धपुष्पो नटस्तथा'—इति  
भावप्रकाशे पूर्वखण्डम् । २०६

हेमाद्रिः पुं. [ हेममयोऽद्रिः ] सुमेरुपर्वतः ; हेमगिरिः ;  
हेमपर्वतः ; क्षत्रियराजविशेषः ; स च चिन्तामणि-  
कामधेनुकल्पद्रुमनामकस्मृतिसडग्रहकारकः । १३६

हेरकः पुं. [ हेरति वेष्टते, हेड्+ष्णुल्, डस्य रः ] हेरिः ;

चरः ; स्पशः ; गूढपुरुषः । ४२५

हेरम्बः पुं. [ हेरणे शिवसमीपे वा रम्बते इति । रवि शब्दे+  
पचाद्यच् ] गणेशः ; लम्बोदरः ; आखुरयः ; गणपतिः ;  
गजवदनः ; परशुवरः ; एकदंष्ट्रः ; एकदन्तः ; विष्णु-  
राजः ; विनायकः । महिषः ; शौर्यगवितः ; वृद्धविशेषः ;  
हेरकः ; चक्रसम्बरः ; देवः ; वज्रकपाली ; निशुम्भः ;  
शशिशेखरः ; वज्रटीकः ; मन्त्रविशेषः ; हेरम्बमन्त्रः ;  
'पञ्चान्तको विन्दुयुक्तो वामकर्णविभूषितः । तारादि-  
इदयान्तोऽयं हेरम्बमनुरीरितः । चतुर्वर्णात्मको नृणां  
चतुर्वर्गफलप्रदः'—इति तन्त्रसारः । १८

हेरिः पुं. [ हि+इक् रुट् च ] अपसर्पः ; चरः ; चारः ;  
प्रणिधिः ; गूढपुरुषः ; ययार्थवर्णः ; मन्त्रज्ञः ; स्वशः । ४२५

हेला स्त्री. [ हिल्+घञ्+टाप् ] स्त्रीणां शृङ्गारभावज-  
क्रियाविशेषः ; (७।१५) अवज्ञा ; अवहेला ; हेलनं ;  
रीढा ; अवलीढा ; अवहेलना ; 'स्वल्पं पुष्यं क्षुभं गन्धं  
हेलया सम्प्रयच्छति । स्पर्शं चाप्ययवा शब्दं रसं रूपमयापि  
वा'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१।४।२९) । (८०५)  
प्रस्तावः ; सुरते प्रीढेच्छा ; हेलिः ; 'प्रीढेच्छा यातिरूढानां  
नारीणां सुरतोत्सवे । शृङ्गारशास्त्रतत्त्वज्ञहेला सा परि-  
कीर्तिता । स एव हेलासुव्यक्तः शृङ्गाररससूचकः ।  
'देहात्मकं भवेत् सत्त्वं सत्त्वाद्भावः समुत्थितः । भावात्  
समुत्थितो हावो हावाद्धेला समुत्थिता । 'हेलिः पुसि रवी  
हेलिर्हेलायामपि योऽपिति'—इति हड्डुः । 'हाव एव भवेद्धेला  
व्यक्तः शृङ्गारसूचकः'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ८९

हेषः पुं. [ भावे घञ् ] हेषा ; अश्वरवः । १५१

हेषा स्त्री. [ हेष्+भावे अ ] अश्वानां निस्वनः ; ह्येषा ;  
ह्येषा ; ह्येषितं ; हेषितम् । १५१

हेमम् त्रि. [ हिमे भवम् । अण् ] हेमजातम् ; आकु-  
ञ्चितप्राङ्गुलिना ततोऽन्यः किञ्चित् समावर्जितनेत्र-  
शोभः । तिर्यग् विसंसपिनस्रप्रभेण पादेन हेम विलिलेख  
पीठम्—इति रघी (६।१५) । क्ली. प्रातर्हिमोद्भव-  
जलं ; हिमभवे त्रि. । 'लघ्वान्तरा सावरणेऽपि रोहे  
योगप्रभावां न च लक्ष्यते ते । विमर्षि चाकारमनिवृत्तानां  
मृणालिनी हेममिवोपरागम्'—इति रघी (१६।७) ।  
पुं. भूनिम्बः ; हेमनो विकारः ; शिवः ; 'हेमो हेमकरो  
यज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः'—इति महाभारते (१३।१७।  
६३) । पर्वतविशेषः ; 'कौलासं मन्दरं हेमं सर्वाननुच-

चार ह। तानतीत्य महाशैलान् करात्, स्थानमुत्तमम्  
—इति महाभारते (१३।१९।५४) । ४२३

हैमवती स्त्री। [ हिमवतीऽप्रत्यं स्त्री ऽअण्, डीप् ] पार्वती;  
शिवा; भवानी; अपर्णा; उमा; दुर्गा; मुञ्जानी;  
चण्डिका; अम्बिका; उमाभिधानां पुरतो देवी हैम-  
वतीं शिवाम्—इति देवीभागवते ४९ (१२।८।५७) ।  
हरीतकी; स्वर्णक्षीरी; कण्डुपर्णी हैमवती हैमक्षीरी  
हिमावती। हेमाह्ला पीतदुग्धा च तन्मलञ्चोकमुच्यते  
—इति भावप्रकाशः। श्वेतवन्त्रा; 'षडग्रन्थ्युग्रा वचा  
प्रोक्ता श्वेता हैमवतीति च'—इति गारुडे। [ हिमवतः  
प्रभवति प्रकाशते प्रथमं दृश्यते इति, 'प्रभवति' इत्यण् ]  
गङ्गा; 'एवमुक्तः प्रत्युवाच राजा हैमवतीं तदा। पिता-  
महा मे वरदे ! कपिलेन महानदि !, अन्वेषमाणा-  
स्तुरगं नीता वैवस्वतक्षयम्'—इति महाभारते (३।१०।८।  
१६) । [ हिमवति भवा इति, अण् ] रेणुका; कपिल-  
द्राक्षा; अतसी। १५

हैयङ्गवीनम् क्ली। [ ह्यो गोदोहस्य विकारः इति, 'हैयङ्ग-  
वीनं संज्ञायाम्' इति खञ् [ह्यिङ्गवादेशश्च] मद्यो गोदो-  
होद्भवं घृतम्; नवनीतं; दधिसारं; सरजं; मन्थजं;  
कल्मश्रुटम्; 'हैयङ्गवीनं क्षीराणि दधि वा किमजीजनन्।  
गोवर्नं सर्वभेदेदं नीरोगं प्रतिपद्यते'—इति हरिवंशे। २७४  
ह्यस्तनम् त्रि। [ ह्यो भवम्, ह्यस्+ 'ऐषमोह्यःश्वसोऽन्य-  
तरस्याम्' इति पक्षे टघट्मुली ] ह्योभवं; ह्यः; कल्प्यः;  
ह्यस्त्यः; गतदिवसीयः; 'ह्यस्तनेन च कोपेन शक्तिर्वै  
प्राहिणोन्मयि'—इति महाभारते (८।१८।६।४) । ८०९

ह्यस्तनविनम् क्ली—ह्यः; गतदिनम्। ८०९

ह्रदः पुं। [ ह्रादते इति, ह्राद् अव्यक्तशब्दे+अच्,  
पृषोदरादित्वाद् 'ह्रस्वः] अगाधजलाशयः; तोयाशयः;  
'ह्रदवारि वह्निजननं मधुरं कफवातहंरि पथ्यं च'  
—इति राजनिर्घण्टः। किरणः। ६१०

ह्रविनी स्त्री। [ ह्रदोऽस्यामस्तीति, ह्रद+इनि+डीप् ]  
नदी; आपगा; निम्नगा; 'तच्छ्रद्धयेति विषवीर्यविलोल-  
जिह्वमुच्चाटयिष्यदुरगं विहरन् ह्रदिन्याम्'—इति  
भागवते (२।७।२८) । ६६५

ह्रस्वः त्रि। [ ह्रस्+वन् ] क्षुद्रवस्तुमात्रं; वामनः; न्यङ्;

नीचः; खर्वः; नीचैः; अनुच्चः; ऋहन्; निवृष्वः;  
माषुकः; प्रतिष्ठा; कृषु; वभ्रकः; दभ्रम्, अर्भकः;  
क्षुल्लकः; अल्पः। पुं.—स्त्री. प्रकृतपुरुषप्रमाणान्यून-  
मनुष्यः; खर्वः; वामनः; वामनी; नीचकः; नीचः;  
अकर्तनः; एकमात्रवर्णं पुं। 'एकमात्रो भवेद्द्रव्यो द्विमात्रो  
दीर्घ उच्यते। त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चाद्वैमात्र-  
कम्'—इति शिक्षा। मेयवृषकुम्भमीनराशयः, यथा—  
'ह्रस्वास्तिमिगोऽविघटाः'—इति ज्योतिस्त वम्। ६८८

ह्रादः पुं। [ ह्राद्+घञ् ] शब्दः; नादः; स्वानः; ध्वानः;  
स्वरः; रवः; घोषः; 'ह्रादेन गजघण्टानां शह्वानां  
निनदेन च'—इति महाभारते (७।८०।२९) । हिरण्य-  
कशिपुपुत्रः; 'हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः सुमहाबलाः।  
प्रह्लादः पूर्वजस्तेषामनुह्लादस्तथैव च। संह्लादश्चैव  
ह्लादश्च ह्लादपुत्रान् शृणुष्व तान्। ह्लादस्य पुत्री द्वावास्तां  
हिण्डिमो मूक एव च'—इति वह्निपुराणे। १३८

ह्लाविनी स्त्री। [ ह्लादते शब्दायते इति। ह्राद्+णिनि,  
डीप् ] विद्युत्; महाभारते (९।११।२६)। वज्रं;  
नदी; शल्लकी। ६० ] ७२३४२

ह्लीः स्त्री। [ ह्ली लज्जायाम्+सम्पदादित्वात् क्विप् ]  
लज्जा; अपत्रपा; व्रीडा; त्रपा; मन्दाक्षम्; 'नाहं  
त्रात ! करिष्यामि पृथिव्याः परिपालनम्। नापैति  
ह्रीर्मे मनसो राज्येज्यं त्वं नियोज्य'—इति मार्कण्डेये  
(१२९।२२) । ५६७

ह्लीवेरम् क्ली। [ ह्रिये लज्जायै वेरमङ्गमस्य, क्षुद्रत्वात् ]  
वालकं; जलं; ह्रवेरम्; 'ह्लीवेरं छदिह्रल्लासतृष्णाती-  
सारनाशनम्'—इति राजवल्लभः। ६२२

ह्लीवेलम् क्ली। [ ह्लीवेर+पृषोदरादित्वाद् रस्य. लः ]  
ह्लीवेलकं; ह्लीवेरं; वालकम्। ६२२

ह्लेषा स्त्री। [ ह्लेषणम्, ह्लेष् शब्दे+ 'गुरोश्च हलः' इत्य,  
टाप् ] ह्लेषितं; हेपितं; ह्लेषः; ह्लेषा; अश्वनादः। १५१

ह्लाविनी स्त्री। [ ह्लादते शब्दायते इति। ह्राद्+णिनि,  
डीप् ] विद्युत्; शम्पा; चपला; क्षणिका; शतह्लादा;  
तडित्; सौदामिनी। 'ह्लादिन्य इव मेधेभ्यः शल्यस्य  
न्यपतन् शराः'—इति महाभारते (९।११।२६) ।  
वज्रं; नदी; शल्लकी; श्रीकृष्णशक्तिभेदः; राधा। ६०